

शब्द-संख्या—२१०८२

मानक हिन्दी कोश

[हिन्दी भाषा का अद्यतन, अर्थ-प्रधान और सर्वांगपूर्ण शब्द-कोश]

चौथा खंड

[फ से ल]

प्रधान सम्पादक

रामचन्द्र वर्मा

सहायक सम्पादक

बबरीनाथ कपूर, एम ए, पी-एच डी



हिन्दी साहित्य सम्मेलन • प्रयाग

प्रथम संस्करण
शकाब्द १८८७ : सन् १९६५

मूल्य
पच्चीस रुपया

मुद्रक
रामप्रताप त्रिपाठी, सम्मेलन मुद्रणालय, प्रयाग

प्रकाशकीय

हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने कुछ वर्षों पूर्व 'मानक हिन्दी कोश' को पाँच खंडों में प्रकाशित करने की योजना कार्यान्वित की थी। तीन खंड प्रकाशित हो चुके हैं। यह चौथा खंड हिन्दी भाषा तथा साहित्य के अध्येताओं के हाथ में प्रस्तुत करते हमें खूबसूरत हर्ष हो रहा है। पाँचवें खंड के प्रकाशन में भी हम यथासम्भव शीघ्रता कर रहे हैं। हमें आशा है कि इस कोश के सभी खंडों के प्रकाशन के बाद इसका दूसरे संस्करण के प्रकाशन का काम भी शुरू करने की मुरत आवश्यकता पड़ेगी, क्योंकि हिन्दी में नये शब्दों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है और हिन्दी की नयी आवश्यकताओं के कारण कोश की मांग भी देश के विभिन्न क्षेत्रों में और विदेशों में भी खूब बढ़ रही है।

पाँचवें खंड के अंत में हम दो परिशिष्ट भी देंगे। इनमें से पहला परिशिष्ट ऐसे छूटे हुए शब्दों और अर्थों का होगा जो इस कोश के मुद्रण काल के उपरान्त संपादकों के ध्यान में आये हैं अथवा भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में प्रयुक्त होते हुए देखे गये हैं। दूसरे परिशिष्ट में अंगरेजी हिन्दी शब्दावली होगी जिसमें अनुमानत ७, ८ हजार ऐसे अंगरेजी शब्द होंगे जो भिन्न-भिन्न राजकीय, वैज्ञानिक, सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्रों में प्रचलित हैं और जिनके हिन्दी पर्याय प्रायः लोग ढूँढा और पूछा करते हैं। इनमें से अधिकतर अंगरेजी शब्दों के हिन्दी पर्याय भारत सरकार की नयी वैज्ञानिक शब्दावली के अनुरूप ही होंगे। सारांश यह कि इस कोश को अद्यतन और परम उपयोगी बनाने में हम अपनी ओर से कोई बात उठा नहीं रखेंगे। हमें आशा है कि इस कार्य में हमें हिन्दी जगत् से उत्तरोत्तर और भी अधिक प्रोत्साहन तथा सहायता मिलती रहेगी।

विछले प्रकाशित तीन खंडों की मनीषियों, शब्द तत्त्ववेत्ताओं, साहित्यिकों और हिन्दी प्रेमियों ने हिन्दी का प्रतिनिधि कोश मानकर उसका जो स्वागत किया है, उसमें हमें यह विश्वास है कि यह खंड भी उन्हीं पूर्ण विशेषताओं के कारण शास्त्र और स्वागताह्वं होगा।

चिन्तनशाल समालोचकों, कोशकारों तथा जागरूक पाठकों में हमारा अनुरोध है कि इस खंड की विशेषताओं और न्यूनताओं की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट कर हमें अनुमोहित करें जिससे हम इस कोश के द्वारा हिन्दी के संवर्द्धन के प्रति अपना कर्तव्य पालन करने में और अधिक समर्थ हो सकें।

हम इस 'मानक हिन्दी कोश' के रचना सिद्धान्त तथा प्रकाशन के उद्देश्य से सबद्ध अपने सक्तप को यहाँ दोहराना चाहते हैं कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन अपने मुद्दतर कर्तव्य के प्रति निष्ठावान् बनकर सतत जागरूक रहेगा।

'मानक हिन्दी कोश' के प्रधान संपादक तथा उनके सहयोगियों एवं उन सभी लोगों के प्रति हम कृतज्ञ हैं जिन्होंने इसके सम्पादन, मुद्रण तथा प्रकाशन में पूर्ण सहयोग प्रदान किया है।

मोहनलाल भट्ट

सचिव

प्रथम शासन-निकाय

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

संकेताक्षरों का स्पष्टीकरण

अ०—अंगरेजी भाषा
 अ०—(कोष्ठक में) अरबी भाषा
 अ०—(कोष्ठक से पहले) अकर्मक क्रिया
 अज्ञेय—म० ह० वात्स्यायन
 अनु०—अनुकरणवाचक शब्द
 अप०—अपभ्रंश
 अर्द्ध० मा०—अर्द्ध-भागधी
 अल्पा०—अल्पार्थक
 अव्य०—अव्यय
 आस्ट्रे०—आस्ट्रेलिया के मूल निवासियों की बोली
 इब्र०—इब्रानी भाषा
 उग्र०—पाण्डेय वेचन दामा 'उग्र'
 उदा०—उदाहरण
 उप०—उपसर्ग
 उभय०—उभयलिङ्ग
 कबीर०—कबीरदास
 कश्०—कश्मीरी भाषा
 केशव०—केशवदास
 कोक०—कोकणी भाषा
 को०—कोटिनीय अर्धंगारत्र
 क्रि०—क्रिया
 क्रि०प्र०—क्रिया प्रयोग
 क्रि० वि०—क्रिया विशेषण
 क्व०—क्वचित्
 गुज०—गुजराती भाषा
 चन्द्र०—चन्द्रवरदाई
 जायसी—मल्लिक मुहम्मद जायसी
 जावा०—जावादीप की भाषा
 ज्यो०—ज्योतिष
 डि०—डिगल भाषा
 डो० मा०—डोला मारू रा दूहा
 त०—तमिल भाषा
 ति०—तिब्बती
 तु०—तुरकी भाषा
 तुलसी०—मोस्वामी तुलसीदास

ने०—नेलगु भाषा
 दाडू—दादूदयाल
 दिनकर—रामधारी सिंह 'दिनकर'
 दीनदयालु—कवि दीनदयालु गिरि
 दे०—देशें
 देव—देव कवि
 देश०—देशज
 द्विवेदी—महावीर प्रसाद द्विवेदी
 नपु०—नपुंसकलिङ्ग
 नागरी—नागरीदास
 निराला—प० सूर्यकान्त त्रिपाठी
 ने०—नेपाली भाषा
 प०—पञ्जाबी भाषा
 पद्याकर—पद्याकर कवि
 पन्त—सुमित्रानन्दन पन्त
 पर्या०—पर्याय
 पा०—पानी भाषा
 पु०—पुलिङ्ग
 पु० हि०—पुरानी हिन्दी
 पुर्न०—पुर्तगाली भाषा
 पू० हि०—पूर्वी हिन्दी
 पैशा०—पैशाची भाषा
 प्रत्य०—प्रत्यय
 प्रसाद—जयशंकर 'प्रसाद'
 प्रा०—प्राकृत भाषा
 प्रे०—प्रेरणार्थक क्रिया
 फा०—फारसी भाषा
 फा०—फासीसी भाषा
 बग०—बगाली भाषा
 बर०—बरमी भाषा
 बह्व०—बहुवचन
 बिहारी—कवि बिहारीलाल
 बू० खं०—बुन्देलखण्डी बोली
 भारतेन्दु—'भारतेन्दु' हरिश्चन्द्र
 भाव०—भाववाचक सज्ञा

भू० कृ०—भूत कृबन्त
भूषण—कवि भूषण त्रिपाठी
मतिराम—कवि मतिराम त्रिपाठी
मल०—मलयालम भाषा
मि०—मिलावे
मुहा०—मुहावर
यहू०—यहूदी भाषा
यू०—यूनानी भाषा
यौ०—यौगिक पद
रघुराज—महाराज रघुराज सिंह, रीवा-नरेंद्र
रसखान—सैयद इब्राहीम 'रसखान'
रहीम—अबुर्हीम खानखाना
राज० त०—राजतरंगिणी
लडा०—लडाकरी बांकी अर्थात् हिन्दुस्तानी जट्टाजियो की बांकी
लै०—लैटिन भाषा
व० वि०—वर्ण-विपर्यय
वि०—विशेषण
वि० दे०—विशेष रूप में देखें
विश्राम—विश्रामनागर

व्या०—व्याकरण
श्रु०—श्रुगार सतसई
स०—संस्कृत भाषा
सयो०—संयोजक शब्दय
सयो० क्रि०—संयोज्य क्रिया
स०—सकर्मक क्रिया
सर्व०—सर्वनाम
सि०—सिंधी भाषा
सिह०—सिहली भाषा
सूर०—सूरदास
स्त्री०—स्त्रीलिंग
स्पे०—स्पेनी भाषा
हरिजीय—प० अयोध्यामिह उपाध्याय 'हरिजीय'
हि०—हिन्दी भाषा

* यह चिह्न इस बात का सूचक है कि यह शब्द केवल पद में प्रयुक्त होता है।
† यह चिह्न इस बात का सूचक है कि इस शब्द का प्रयोग स्थानिक है।

संस्कृत शब्दों की व्युत्पत्ति के संकेत

अत्या० स०—अत्यादि तत्पुरुष समास (प्रा० स० के अन्तर्गत)
 अथ्य स०—अथ्ययीभाष समास
 उप० स०—उपपद समास
 उपमि० स०—उपमित कर्मधारय समास
 कर्म० स०—कर्मधारय समास
 थ० त०—चतुर्थी तत्पुरुष समास
 तू० त०—तृतीया तत्पुरुष समास
 द्व० स०—द्वन्द्व समास
 द्विगु० स०—द्विगु समास
 द्वि० त०—द्वितीया तत्पुरुष समास
 न० त०—नञ्प्रत्यय समास
 न० ब०—नञ्बहुव्रीहि समास
 नि०—निपातनात् सिद्धि
 प० त०—पञ्चमी तत्पुरुष समास
 पुपो०—पुषोदरादित्वात् सिद्धि
 प्रा० ब० स०—प्रादि बहुव्रीहि समास

प्रा० म०—प्रादि तत्पुरुष समास
 ब० स०—बहुव्रीहि समास
 वा०—बाहुलकात्
 मयू० स०—मभूरव्यसकादित्वात् समास
 शक०—शकन्धादित्वात् पररूप
 ष० त०—षष्ठी तत्पुरुष समास
 स० त०—सप्तमी तत्पुरुष समास
 ✓—यह धातु चिह्न है।

विशेष—पुपो०, नि० और वा० ये तीनों पाणिनीय व्याकरण के संकेत हैं। इनके अर्थ हैं, 'पुषोदर' आदि शब्दों की भाँति, 'निपातन' (बिना किसी सूत्र-सिद्धान्त) से और 'बाहुलक' (जहाँ जैसी प्रवृत्ति देली जाय वहाँ उस प्रकार) से शब्दों की सिद्धि। त्रिन शब्दों की सिद्धि पाणिनीय सूत्रों से सम्भव नहीं होती उनकी सिद्धि के लिए, उपयुक्त विधियों का प्रयोग किया जाता है। इन विधियों में किसी शब्द को सिद्ध करने के लिए, वर्णों के आगम, व्यत्यय, लोप आदि आवश्यकतानुसार किये जाते हैं।

मानक हिन्दी कोश

चतुर्थ खण्ड

क

कफाला

क

क—देवनागरी वर्णमाला का वाइसर्वा व्यंजन जो पवर्ग के अन्तर्गत दूसरा वर्ण है तथा जो भाषा-विज्ञान और व्याकरण की दृष्टि से ओष्ठ्य, अघोष, महाप्राण तथा स्पृष्ट वर्ण है।

कंक—रवी० = १. कंक। २. = ककी।

कंकनी—रवी० = ककी।

कंका—पु० [हि० कंकाना] [रवी० अण० ककी] १. अबुलि या हथेली में किया हुआ स्वाद्य पदार्थ (विशेषतः दाने या चुकनी) कंकने या सटके से मुँह में डालने की क्रिया। २. खाद्य-पदार्थ की उतनी मात्रा जितनी एक बार उबत हग या मुँह में डाली जाती हो।

क्रि० प०—मानना।—लगाना।

मुहा०—(किसी चीज का) **कंका करना**—नाश करना। नष्ट करना।

कंका भारत या लगाना—मुँह ग रबकर कंकना।

३. किसी चीज का छोटा खट या टुकड़ा।

ककी—रवी० [हि० कका] १. कोई चीज कंकने की क्रिया या भाव। २. वह चीज जो कंककर खाई जाय। ३. किसी चीज की उतनी मात्रा जितनी एक बार कंक की जाय। (मुहा० के लिए दे० 'कंका' के मुहा०) ४. किमी चीज का बहुत छोटा टुकड़ा।

कंग—पु० [न० बय] १. बधन। २. फदा। ३. अधीनता। ४. अनुराग या प्रेम का बन्धन।

कंटी—पु० = कण्टि।

कड—पु० [अ०] वह मन-राजि जो किसी विशिष्ट उद्देश्य से इकट्ठी की गई अथवा अलग या सुरक्षित रखी गई हो। कोश। जैसे—चेरिटी कड, प्राविडेंट कड।

पु० [स०] उदर। जठर।

कंदा—पु० [हि० कदा] १. फदा। २. जाल। पास। ३. किसी को फँसाने के लिए उसके साथ किया जानेवाला छल या धोखा। ४. फदे में फँसने पर होनेवाला कष्ट। ५. कष्ट। दुःख। ६. मर्म। रहस्य। ७. नय की कंटी को फँसाने का फडा। मुँज।

कंदा—अ० [हि० कदा] १. फदे अर्थात् जाल में फँसाना। २. किसी के धोखे में आना। ३. मूथ होना।

स० १. फदा या जाल बिछाना। २. फदे में फँसाना।

†स० = फादना।

कंदरा †—पु० = फदा।

कंदवार—वि० [हि० कदा+वार (प्रत्य०)] १. फाँदने अर्थात् फंदे या जाल में दूसरो को फँसानेवाला। २. फदा बिछानेवाला।

कंदा—पु० [स० पास या बधन] १. रस्ती आदि में एक विशेष प्रकार की गंठ लगाकर बनाया जानेवाला धेरा जो किसी चीज को फँसाकर रखने या बाँधने के काम आता है। जैसे—(क) कूएँ से पानी निकालने के समय घड़ के गले में लगाया जानेवाला फदा। (ख) फाँसी पर लटकाने के लिए अभियुक्त के गले में डाला जानेवाला उबत प्रकार का धेरा।

क्रि० प्र०—देना।—बनाना।—लगाना।

पद—फविवार। (दे०)

२. कोई ऐसी कष्टपूर्ण बात या योजना जिसका मुख्य प्रयोजन किसी को फँसाना होता है। ३. रस्सियों आदि का बुना हुआ जाल।

मुहा०—**कंदा लगाना**—किसी को फँसाने के लिए छलपूर्ण आयोजन या युक्ति करना। (किसी के) **कंदे में पड़ना या फँसना**—किसी के जाल या धोखे में फँसना।

४. कोई ऐसी बात जिसमें परस्पर मनुष्य विवश हो जाता और कष्ट भोगता हो। ५. कुछ खाने या पीने के समय, अचानक हँसने आदि के कारण खाद्य या पेय पदार्थ का गले में इस प्रकार अटक या एक जाना कि आदमी बोल न सके। उदा०—किसी ने रुमाल में हँसी रोकी तो किसी के गले में चाय का फदा पड़ गया—अजीब बेग बगताई।

कंदाना—स० [हि० फदना] ऐसा काम करना जिससे कोई फदे में जा फँसे।

†स० [हि० फादना] किसी को फाँदने में प्रवृत्त करना।

कंदाना—स० = फादना।

कंदवार—वि० [हि० कंदा] जिसमें फदा लगा या बना हो।

पु० अनाज, सीपन आदि में एसी रचना, जिसमें एक कड़ी या लक के अन्तिम सिरे से कुछ पहले ही दूसरी कड़ी या लक का पहला सिरा आरम्भ होता है।

कंदी—पु० [हि० कंदा+ऐत (प्रत्य०)] १. वह जो फदा डालकर या जाल बिछाकर पशु-पक्षियों को फँसाता हो। बहेलिया। ब्याघ। २. वह पावनू तथा सिंघला हुआ पशु जो अपनी जाति के अन्य पशुओं को जाल में फँसाता है।

कंदाला—अ० [अनु०] १. बौन्दने में हकालाना। २. दूध में उबाल आना।

फॅसना—[म० पाण, हि० फास] १ पाश अर्थात् फंदे में पडना और फलत करना जाना। २ किसी प्रकार के जाल में इस प्रकार अटकना कि उसमें छुटकारा या मुक्ति न हो सके। ३ किसी चीज में किसी दूसरी चीज का इस प्रकार अद्वर चले जाना, अटकना या बाधना कि मूल्य में वह बाधन न निकल सकेगी ही। जैसे—बालतल में काग फॅसना। ४ एक चीज में दूसरी चीज का उलझकर अटक जाना। जैसे—कांटा में पल्ला फॅसना। ५ सांख्यिक अर्थ में, अधिक अथवा विकट कामों में इस प्रकार व्यस्त रहना कि उसे अवकाश या छुटकारा मिलने की जल्दी आशा न हो। जैसे—बासोटा या मुकदम में फॅसना। ६ किसी की चिकनी-चुपड़ी या छलपूर्ण बातों में आना और छला जाना। ७ पर-पुरुष या पर-स्त्री के प्रेम में पडने के कारण उससे ऐसा अनूचित संबंध निघर होना या जल्दी छूट न सके।

फॅसनी—स्त्री० [हि० फॅसना] एक प्रकार की हथोड़ी जिसमें बमरे दोटे, गंगरे आदि का माला बनाते हैं।

फॅसरी—स्त्री० १ =फाँसी। २ =फॅनीरी।

फॅसवारी—पु०=फदा।

फॅसना—म० [हि० फॅसना] १ ऐसा काम करना जिससे कोई चीज फॅसती हो। बगन, फरे या जाल में लाना और जकड़कर रखना। २ कोई चीज इस प्रकार अटकना या किसी दूसरी चीज में उलझना कि वह जल्दी छूट न सके। जैसे—बोलतल में काग फॅसना। ३ घन आदि किसी ऐसे व्यक्ति को देना या ऐसी रिश्त में लगा रखना कि उसमें या वही में जल्दी बहू लौटकर प्राण न हो सकता हो। ४ किसी घाल, घुमिन आदि के द्वारा किसी को इस प्रकार अपने अधिकार में लाना कि उसे ठगा या धावा देकर अपना स्वार्थ साधा जा सके। जैसे—असामी फॅसना। ५ पर-पुरुष या पर-स्त्री को अपने प्रेम-नाम में आबद्ध करके उसमें अनूचित गवध स्थापित करना।

फॅसाव—पु० [हि० फॅसना; आय (प्रत्य०)] १ फॅसने की क्रिया या भाव। २ ऐसी चीज या बात जो दूसरा को फॅसने के लिए हो।

फॅसाहागा—वि० [हि० फास+हाग (प्रत्य०)] [स्त्री० फॅसाहागिन] फॅसानेवाला।

फॅनीरी—स्त्री० [हि० फाँसना; औरी (प्रत्य०)] १ फदा। पाश। २ बहू रखी जिनके फद म अभियुक्त का माला फॅसाकर उसे फाँसी दी जाती है।

फ—पु० [म०/फक्क (नीचे जाना); ३] १ कटु वाक्य। हर्षी बात। २ हुत्कार। ३ व्यर्थ की बातें। ४ यज्ञ करना। ५ अजड। आँधी। ६ जंबाई। ७ फल की प्राप्ति।

फक—वि० [म० स्फटिक] १ स्वच्छ। माफ। २ सूख सफेद। निहरे [फा० फक] १ (व्यक्ति) भय, लज्जा आदि के कारण क्रिमके बिन्दों का रग उठ गया हो।

फि० प्र०—होना।—पडना।

फव—फक रेहन रहन रग्गी हुई चीज का बचक से मुक्त होना।

मूहा—फक कराना। अंधन रग्गी हुई चीज धन देकर छुटवाना।

फकहा—पु० [हि० फकहा] बहुत ही निम्न कोटि और व्यर्थ की शक्ति या मुक्त-बरी।

फकड़ी—स्त्री० [हि० फकडर] १ फकडरगन। २ दुर्दशा। दुर्गति।

फकल—अ० य० [अ० फकल] १ बस इतना ही। २ केवल। निर्गर्।
फकर—पु०=फखर (गर्व)।

फका—पु०=१ फका। २=फाँक।

फकीर—पु० [अ० फकीर] [स्त्री० फकीरन, फकीरनी, भाव० फकीरी] १. भीख अथवा भीख के रूप में कोई चीज माँगनेवाला व्यक्ति। २ रपागी। महाराम। ३ सत। साधु। ४ बहुत ही निर्धन व्यक्ति। कगाल।

फकीरी—स्त्री० [हि० फकीर+ई (प्रत्य०)] १ ऐसी अवस्था जिसमें कोई भीख माँगकर निर्वाह करता हो। फकीर होने की अवस्था या भाव। २ कगालपन। निर्धनता।

वि० फकीर-सम्बन्धी। फकीर का। जैसे—फकीरी दवा।

पु० एक प्रकार का अपूर।

फकड—पु० [हि० फाका=उपवाय] [भाव० फकडगन] १ ऐसा निर्धन व्यक्ति जो फाका या उपवासों के बावजूद भी दूध और मस्त रहता हो। २ ऐसा व्यक्ति जो बहुत ही बुरी तरह से या लापरवाह होकर धन उड़ता हो और अपने भविष्य का कुछ भी ध्यान न रखता हो। ३ बहुत बड़ा उच्छ्वल और उदत व्यक्ति। ४ फकीर। भिखमग।

पु० [स० फक्कका] अस्लीक बात और गाकी-गनीज। कुताप्य। फि० प्र०—बतना।

मूहा—फकड मौतना—मागी-गुफता बरना। जुवाच्य रहना।

फकडबाज—पु० [हि० फा०] [भाव० फकडबाजी] वह जो बहुत फकड अर्थात् गाकी-गुफता बरना या प्राण अस्लीक याने करता हो।

फकडाना—वि० [हि० फकड+ आना (प्रत्य०)] १ फकडो का। २ फकडों की तरह का।

फक्कका—स्त्री० [म०/फक्क; पुब्ल् (भाव में)—अक; टाग, उख] १ वह बात जो शास्त्राथ में दुर्बल स्वल्प को स्पष्ट करने के लिए पूर्व-पक्ष के रूप में कही जाय। कूट-प्रदान। २ अनूचित व्यवहार। ३ धोखे-बाजी।

फकडुरेहन—पु० [अ०] बचक या रेहन रग्गी हुई चीज छुटाना।

फखर—पु० [फा० फख] साहबक अभिमान। गौरवजन्य गर्व। जैसे—अपनी कौम या मुस्क का फखर।

फख—पु०=फखर।

फगा—पु०=फग (बचन)।

फगवा—पु०=फगुआ (फाग)।

फगुआ—पु० [हि० फागुन] १ होलिकोत्सव का दिन। होली। २ उक्त अवसर पर हुनियेवाला आमोद-प्रमोद। ३ उक्त अवसर पर गाये जानेवाले एक तरह के अस्लीक गीत। फाग। ४ उक्त अवसर पर दिया जानेवाला उपहार, भेंट या त्यागारी।

फगुआना—म० [हि० फगुआ] फागुन के महीने में किसी के ऊपर रग छोटाना या उसे मुनाकर अस्लीक गीत गाना।

अ० फागुन के महीने में इतना अधिक उच्छ्वल तथा मस्त होना कि गमना का प्यान न रह जाय।

फगुगहट—स्त्री० [हि० फागुन+हट (प्रत्य०)] १ फागुन मास की तेज हवा।

फि० प्र०—चलना ।
 २. फागुन में होनेवाली वर्षा ।
फगुनिया—पु० [हि० फागुन+दया (प्रत्य०)] त्रिसंधि नामक फूल ।
 वि० १ फागुन-संबन्धी । फागुन का । २ फागुन मास में होनेवाला ।
फगुहरा—पु०=फगुशारा ।
फगुहरा—पु० [हि० फगुआ+हारा (प्रत्य०)] १ वह जो फाग खेलना हो । विशेषतः ऐसा व्यक्ति जो दूसरों के यहाँ फाग खेलने के लिए जाय । २ फाग नामक गीत गातेवाला व्यक्ति ।
फगर—स्त्री० [अ०फञ्च] १ प्रातःकाल । सबेरा । २ प्रातःकाल के समय पड़ी जानेवाली नमाज ।
फजल—पु० [अ० फजल] अनुग्रह । कृपा । मेहरबानी ।
फजा—स्त्री० [अ० फजा] [वि० फजाई] १ खुला हुआ मेढरा । विस्तृत क्षेत्र । २ घोभा । ३ मनोरञ्जक और सुन्दर वातावरण । ४ वातावरण ।
फजअली—स्त्री०=फजीहल ।
फजिरा—स्त्री०=फजर ।
फजिल—पु०=फजल ।
फजहलितार्ई—स्त्री० [अ० फजीहल] १ फजीहल । २ फजीहल करानेवाणी बात ।
फजीता—पु०=फजीहत ।
फजीती—स्त्री०=फजीहत ।
फजीलत—स्त्री० [अ० फजीलत] १ उच्छ्रेयता । २ प्रशानता ।
पद—फजीलत की पगड़ी= (क) विद्वता-सूचक पगड़ी । (ख) विद्वता सूचक कोई चिह्न । (ग) मुसलमानों में एक प्रथा है जिनमें वे गुणी और विद्वान् व्यक्ति को सम्मानित करने के लिए उनके तिर पर पगड़ी बाँधते हैं ।
फजीहत—स्त्री० [अ० फजीहत] १ पूरी या बहुत अधिक बुद्धि । कलकत्तारी तथा धुणित रूप में होनेवाली खराबी । २ बहुत ही धुणित और उत्कृष्ट रूप में होनेवाला समझ या तर्कार ।
पद—पूरुका-फजीहत । (दे०)
फजीहती—स्त्री०=फजीहत ।
फजूल—वि० [अ० फजूल] जो किसी काम का न हो । निरर्थक । अर्थ० व्यर्थ । बे-फायदा ।
फजूलबर्च—वि० [अ० फा०] अधिक बर्च करनेवाला । अपव्ययी । पु० अर्थ का व्यय । अपव्यय ।
फजूलबर्ची—स्त्री० [अ० फा०] व्यर्थ बहुत अधिक व्यय करना । अपव्यय । फजूलबर्च ।
फजल—पु०=फजल ।
फट—स्त्री० [अनु०] १ फटने की क्रिया या भाव । २ किसी चीज के फटने में होनेवाला शब्द । ३ मोटर, मशीन आदि के चलने अथवा चिपटी हलकी चीज के आघात से होनेवाला शब्द ।
पद—फट से या फटाफट=बहुत जल्दी । तुरन्त ।
 †स्त्री०=फटकार ।
फटक—स्त्री० [हि० फटकना] १ फटकने की क्रिया या भाव । २ अन्न को फटकने पर उसमें से निकलनेवाला रद्दी अन्न । फटकना ।

†पु०=स्फटिक ।
 †पु०=फाटक ।
 †अर्थ० [हि० फट] फट से । तत्काल । तुरन्त ।
फटकन—स्त्री० [हि० फटकना] १ फटकने की क्रिया या भाव । २ फटकने, झाड़ने आदि पर निकलनेवाली धूल, मिट्टी आदि । ३ अनाज फटकने पर निकलनेवाला निरर्थक या रद्दी अन्न ।
फटकना—स० [अनु० फट] १ फट-फट शब्द करना । २ कपड़े को इस प्रकार सटके से झाड़ना कि उसमें लगी हुई धूल तथा पड़ी हुई सिलवटें निकल जायें । ३ पटकना । ४ अन्न आदि चलाना या फेंकना । ५ सूप में अनाज रखकर उसे इस प्रकार बार बार उछालना कि उसमें मिला हुआ कूड़ा-करकट छटक अलग हो जाय ।
सूहा—फटकना-पछोड़ना=(क) सूप या छाज पर रखा हुआ अन्न हिलाकर साफ करना । (ख) अच्छी तरह देल-भालकर पता लगाना कि कहीं कोई बूट्ट या दोष तो नहीं है ।
 ६ रूई आदि फटके या धुनकी से धुनना ।
 अ० १ किसी का इस प्रकार कही जा या पहुँचकर उपस्थित होना कि लोग उसकी उपस्थिति का अनुभव करने लगें ।
बिरोध—इस अर्थ में इसका प्रयोग अधिकतर नरिच रूप में होता है । जैसे—बड़ा कोई फटक नहीं सकता (या फटकने नहीं पाता) । पर कुछ उर्दू कवियों ने इसका प्रयोग सकिच रूप में भी किया है । जैसे—अक्सर ओकान आ फकते है ।
 २ अलगा या दूर होना । न रह जाना । ३ विवशता की दशा में हाथ-पैर पटकना । फटकाना । ४ कुछ करने के लिए हाथ-पैर हिलाना । प्रयत्नशील होना ।
 पु० मुँहले का फीता जिसमें गुल्ला रखकर फिकते है ।
फटकनी—स्त्री० [हि० फटकना] १ फटकने की क्रिया या भाव । २ अनाज फटकने का सूप ।
फटकारना—अ० [हि० फटकारना का अ०] फटकारा जाना ।
 †स०=फटबना ।
फटकरी—स्त्री०=फिटकरी ।
फटकवाना—स० [हि० फटकना का प्र०] फटकने में प्रवृत्त करना । फटकने का काम किसी से कराना ।
फटका—पु० [अनु०] १ फटकाने अर्थात् विवश होकर हाथ-पैर पटकने की क्रिया या भाव । २ धुनिये की धुनकी जिसमें वह रूई आदि धुनता है ।
फि० प्र०—खाना ।
 ३ फले हुए पेटों में बँधी हुई वह लकड़ी जिनके माथ बँधी हुई रस्सी हिलाने में उससे फट-फट शब्द होता है । (इसमें फल खानेवाली चिड़ियाँ बड़ा से उड़ जाती या पास नहीं आती ।) ४ काव्य के रस आदि गुणों से हीन ऐसी कविता जिसमें बहुत सी साधारण तुकबन्दी के सिवाय कुछ भी न हो ।
फि० प्र०—जीभना ।
 पु० [हि० फटकन] एक प्रकार की बलुई मृत्ति जिसमें पत्थर के टुकड़े अधिक होते हैं । इसी कारण यह उपजाऊ नहीं होती ।

1 पु०=फाटक।

फटकाना—स० [हि० फटकना] † किसी को कुछ फटकने में प्रवृत्त करना। फटकवाना। २. अलग करना। ३. फेंकना।

फटकार—स्त्री० [हि० फटकारना] † फटकारने की क्रिया या भाव। २. ऐसी कठोर बात जिससे किसी की भर्त्सना की जाय। फटकार कर कहीं हुई बात। छिद्रिका। दुत्तुका।

क्रि० प्र०—पडना।—बताना।—मुनना।—मुगाना।

३. शाप। (बव०) † बहु कोश या चाबूक जो घोड़ो को सधाने-सिखाने के समय जोर की आवाज करने के लिए चलाते या फटकारते हैं।

फटकारना—स० [अनु०] † कोई चीज इस प्रकार बेगपूर्वक और झटके से हिलाना कि उसमें से फट शब्द हो। जैसे—कोश या चाबूक फटकारना। २. एक में मिली हुई बहुत सी चीजें इस प्रकार हिलाना या झटका मारना जिसमें वे छिन्नता आयें। जैसे—जटा या दाढ़ी फटकारना। ३. इस प्रकार झटके से हिलाना कि कोई चीज टूट जा पड़े। झटकारना। ४. शस्त्र आदि का प्रहार करने के लिए द्धर-उधर हिलाना। जैसे—गदा फटकारना। ५. कपड़े को पत्थर आदि पर पटक कर पीना। ६. क्रुद्ध होकर किसी से ऐसी कड़ी बातें कहना जिसमें बहु सुष हो जाय या लज्जित होकर दूर हट जाय। स्त्री और कड़ी बातें कहकर चुप कराना। जैसे—आप जब तक उन्हें फटकारें नहीं, तब तक वे नहीं मानेंगे।

उभ० क्रि०—देना।

७. बहुत धान से या ऐंट दिखाते हुए पत्र अजित या प्राप्त करना। जैसे—दस-पाँच रुपए रोज़ तों बहू बात की बात में फटकार लेता है।
सयो० क्रि०—लेना।

फटकिया—पु० [देश०] मीठा नामक विप का एक भेद जो मोबरिया से कम विषला होता है।

फटकी—स्त्री० [हि० फटक] † बहु शबा जिसमें बहुलिता पच-ही हुई चिडिया रहते हैं। २. दे० 'फटका'।

फटकेवाज—पु० [हि० फटका+वा० वाज] [भाव० फटकेबाजी] बहु जो बहुत ही निम्न कौटि और बाजाव कर्त्तव्य करता हो।

फटन—स्त्री० [हि० फटना] † फटने की क्रिया या भाव। फटने के कारण किसी चीज में पडनेवाली दरार या बन्नेवाला रेखाकार चिह्न। ३. भूगोल में, चट्टानों आदि पर दबाव पडने के कारण होने-वाली दरार। (कस्वीवेज)

फटना—अ० [हि० फाड़ना का अ० रूप] † आघात लगने के कारण या यो ही किसी चीज का बीच में से इस प्रकार खिन्न होना या उसमें दरार पड जाना कि अन्दर की चीजें बाहर निकल पडें या बाहर से दिखाई देने लगे। जैसे—जमीन या दीवार फटना।

मुहा०—फट पडना—अज्ञानक बहुत अधिक मात्रा में आ पहुँचना। सहसा आ पडना। जैसे—(क) दौलत तौ उनके घर मानों फट पडी है। (ख) आफत तौ उनके सिर मानों फट पडी है। **फटा पडना**—इतनी अधिकता होना कि अपने शोभा या आधाम में समान सके। जैसे—उसका रूप तौ मानों फटा पडता था।

२. किसी पदार्थ का बीच से फटकर अलग या दो टुकड़े हो जाना।

जैसे—कपडा फटना। ३. बीच या सीध में से निकलकर किसी ओर असमत रूप से बडना या अलग होकर दूर निकल जाना।

मुहा०—फट जाना या पडना—बीच या सीध में से अज्ञानक निकलकर द्धर या उधर हो जाना। जैसे—यह घोडा चलते चलते राहते में फट पडता है, अर्थात् अज्ञानक सीधा रास्ता छोडकर दाहिनी या बाईं ओर बड जाता है।

४. किसी गाडे द्रव पदार्थ में ऐसा विकार होना जिससे उसका पानी अलग और शर भाग अलग हो जाय। जैसे—वृत्त फटना, दूध फटना। ५. राग, विकार आदि के कारण शरीर के किसी अंग में ऐसी पीडा या वेदना होना कि मानों बहु अंग फट जायगा। जैसे—दरद के मारे आँख या मिर फटना, बहुत अधिक पकावट के कारण पैर फटना, ही-हल्ले से कान फटना। ६. लाक्षणिक रूप में, मन या हृदय पर ऐसा आघात लगना कि उनकी पहचानी साधारण अवस्था न रह जाय। जैसे—किसी के दुर्ग्रहवार से चित्त (मन या हृदय) फटना, शोक से छाती फटना। ७. किसी चीज या शान का अपनी साधारण या प्रथम अवस्था में न रहकर विद्वान अवस्था में आना या होना। जैसे—चिल्लाते-चिल्लाते आवाज (या गला) फटना। ८. किसी पर विपत्ति के रूप में आकर मिरना। उदा०—सीता असमृत्त कौं कटाई नाक बार, सोई अंग कृपा करि राधिका पै फं फाँटी है।—रत्ना०।

फट-फट—स्त्री० [अनु०] † फट-फट शब्द। जैसे—(क) चपल्य या जूते की फट-फट। (ख) मोटर की फट-फट। २. व्यर्थ की बकवाद। ३. कहा-मुनी। तकरार।

फटफटाना—स० [अनु०] फट-फट शब्द उल्लस करना।

अ० †. फट-फट शब्द करते हुए द्धर-उधर व्यर्थ घूमना। माग-मारा फिरना। २. विवदा होने पर कुछ चिन्तित या विकल होना। ३. व्यर्थ का प्रलाप या बकवाद करना।

फटहा—वि० [हि० फटना] † फटा हुआ। २. बड-बड और अस्कील बाने बकनेवाला।

फटा—वि० [हि० फटना] † जो फट गया हो। जैसे—फटा कपडा।

मुहा०—किसी के फटे में पैर देना—दुस्ते की विपत्ति अपने मिर लेना।

२. जो बहुत ही बुरी या हीन अवस्था में आ गया हो।

पद—फटे हाल (या हालो)—बहुत ही दुर्दशाग्रन्त रूप में। जैसे—महीने मर मे ही भागा हुआ लडका फटेहाल (या हालो) घर आ पहुँचा।

३. जो बहुत ही विद्वान अवस्था में हो। जैसे—फटी आवाज।

पु० किसी चीज के फटने से बना हुआ गड्ढा या दरार।

स्त्री० [स० फट+टाप] † सौंफ का फन। २. अतिमान। घमड। ३. छल। धोखा। ४. छिद्र। छेद।

फटाका—पु० [अनु०] फट की तरह होनेवाला जोर का शब्द।

फटाटोप—पु० [स० फ० त०] गीप का फेला हुआ फन।

फटाना—स्त्री० [हि० फटना] † फटना। २. दूध का खोडर।

फटिक—पु० [स० स्फटिक, पा० फटिक] † स्फटिक। बिल्लौर। २. सग-मरकर।

फटिका—स्त्री० [स० स्फटिक] † एक प्रकार की शराब जो

जी आदि से क्षमीर उठाकर बिना चुबाए बनाई जाती है। २. गुलेल की बोरी के बीचो-बीच रखी से दूनकर बनाया हुआ वह चौकोर हिस्सा जिसमें मिट्टी की गोली रखकर चलाई जाती है। उदा०—बीच परे बोरी फटिका से सुघर रह है।—सेनापति।

फटीघर—वि० [हि० फटा+घीर ?] १ (अप्यित) जो फटे-पुराने कपड़े पहनाता हो या पहले रहता हो। २ बहुत ही तुच्छ या हेम।

फटेहाल—क्रि० वि० [हि०+अ०] बहुत ही दीन या दूरी अवस्था में। दुर्भाग्यवत् रूप में।

फट्टा—पु० [हि० फटना] [स्त्री० अल्पा० फट्टी] १ लकड़ी आदि को चीरकर निकाला हुआ छोटा लकड़ा। २ बाँस आदि को चीरकर निकाला हुआ पतला खड या छत्र।

पु० [म० पट] टाटा।

मुहा०—फट्टा उलटना=टाट उलटना। दिवाला निकालना।

फट्टी—स्त्री० [हि० फटना] १ छोटा तलता। २ बाँस की चिरी हुई पतली छड़ी। ३ बच्चों के लिखने की पटिया। पट्टी। (पश्चिम)

फड—पु० [म० फण] १ वह फण्डा जो छोटे दुकानदार जमीन पर बिची की बीजों सजाकर रखने के लिए बिछाते हैं। २ कंठी, टुकान आदि का वह भाग जहाँ बैठकर बीजों खरीदी और बेची जाती है।

पड—फड पर=मुकाबले में। इसमें। उदा०—भगे बलीमुख महाबली लखि फिरेन फड (फड) पर सेरे।—रपुराज।

३ बिछाना। बिछौना। उदा०—मूल से फूलन के फर (फड) पंथिय फूल-छरी ती परी मूसरानी। ४ जूएलाने में, वह स्थान जहाँ जुआरी बैठकर जुआ खेलते हैं। ५ दल। मजूह।

क्रि० प्र०—बाँधना।

पु० [स० पटल या फल] १ गाड़ी का हरसा। २ वह गाड़ी जिस पर लोप रखकर ले चलते हैं। चरख।

† पु० = फल।

फडक—स्त्री० [हि० फडकना] फडकने की क्रिया या भाव। फडकन।
फडकन—स्त्री० [हि० फडकना] १ फडकने की क्रिया या भाव। फडक। फडफडाहट। २ धडकन। ३ उत्सुकता।

वि० १ भडकनवाला। जैसे—फडकन बेल। २ चमल। ३ तेज।

फडकना—अ० [अनु०] १ इस प्रकार बार बार नीचे-ऊपर या इधर-उधर हिलना कि फड-फड शब्द हो। २ शरीर के किसी अंग में स्फुरण होना। अंग का वायु-विकार आदि के कारण रह-रहकर थोड़ा उमरना और दबना। जैसे—अक्ष या छोटा फडकना।

मुहा०—(किसी की) बोटी-बोटी फडकना=(किसी का) बहुत अधिक चंचल होना।

३. कोई बहुत बड़िया या विश्वगण बीज देखकर या बात सुनकर मन में उन्नत प्रकार का स्फुरण होना जो उस बीज या बात के विशेष प्रशंसक होने का सूचक होता है।

सयो० क्रि०—उठना।—जाना।

४. पक्षियों के पर हिलना। फडफडना।

† अ०=फडकना।

फडकना—स० [हि० फडकना का प्रे०] १ किसी को फडकने में

प्रवृत्त करना। २ उत्तेजित करना। भडकाना। ३. विचलित करना। ४ हिलाना-दड़लाना।

फडका-वेलन—पु० [देश०] एक प्रकार का बेल त्रिकला एक मीग सीधा ऊपर की ओर दूसरा नीचे की ओर झुका होता है।

फडनबीस—पु० [फा० फडनबीस] मराठी के राजत्वकाल का एक गजबंद।

विशेष—मूलतः यह पद राजसभा के साधारण लेखका को दिया जाता था। पर बाद में यह दौतानी या मानव विभाग के ऐसे कर्मचारियों को भी दिया जाने लगा था जो बर्ह-बर्ह इनाम या जागीर देने की व्यवस्था करते थे।

फडफडाना—अ० [अनु०] १. फड-फड शब्द होना। २ पक्षियों आदि का पकड़े जाने पर बबन में निकल भागने के लिए जोरों से पर मारते हुए फड-फड शब्द करना। ३ लाक्षणिक अर्थ में घोर कष्ट, विपत्ति, मारक आदि में अत्यधिक सतप्त होना और उगमे छूटकारा पाने के लिए प्रयत्न करना। ४ विशेष उन्मुक्तता के कारण चंचल होना।

म० १ कोई बीज बार-बार हिलाकर फड-फड शब्द उत्पन्न करना। जैसे—पर फडफडाना। २ दे० 'फटफटाना'।

फडबाज—पु० [हि० फड+फा० बाज (प्रत्य०)] [भा० फडबाजी] वह जो अपने यहाँ जुआ खेलने के लिए बुलता हो। अपने यहाँ लोगों को जुआ खेलवानेवाला व्यक्ति।

फडिया—पु० [हि० फड=दुकान+इया (प्रत्य०)] १ वह वनिया जो फुटकर अन्न बेचता हो। २ वह जो अपने यहाँ जूए या फड रखकर लोगों को जुआ खेलता हो। फडबाज।

फडी—स्त्री० [हि० फड] ईंटों, पत्थरों आदि का परिमाण स्थिर करने के लिए लगाया जानेवाला वह डेर जो लोप गज मजबा, एक गज चौड़ा और एक गज ऊँचा हो।

फडआं—पु० [स्त्री० फडहरी] =फावटा।

फडई, फडहरी—स्त्री० १ फडहरी। २ छोटा फावटा।

फडौल्लाना—स० [स० स्फुरण] किसी बीज को उलटना-गलटना। इधर-उधर या ऊपर-नीचे करना।

फण—पु० [म०+फण (विस्तृत होना)+अच्] १ साँप के निर का वह रूप जब वह अपनी गर्दन के दोनों ओर की नलियों में वायु भरकर उसे फुलाकर छत्राकार बना लेता है। फन। २ रखी का गाँठदार फटा। मुद्दी। ३ नाव का ऊपरी अंगला भाग।

फणकर—पु० [म० ब० स०]=फणपर।

फणपर—पु० [स० प० त०] साँप।

फणा—स्त्री० [स० फण+टाप] =फण।

फणाकृति—वि० [म० फणा-आकृति, ब० स०] साँप के फन के आकार का। गोलाकार छिन्नरया या फेला हुआ।

फणि-कन्या—स्त्री० [म० थ० त०] नागकन्या।

फणि-केसर—पु० [ब० स०] नागकेसर।

फणि-घर—पु० [स० मध्य० स०] फलित ज्योतिष में नाडीचक्र जो सर्पाकार होता है और जिससे विवाह में वर-कन्या का माझी मिलान किया जाता है। नाडीनाक्षत्र। (दे०)

फणजिह्वः, फणजिह्विका—स्त्री० [म० ष० त०] १ महाशतावरी । बड़ी मत्तावर । २ कधी नाम का पीथा ।

फणित—भ० क० [म००/फणः।न्त] १ गया हुआ। गन । २ तरल किया हुआ ।

फणितपत्रा—पु० [स० फणित-पत्रा, उपमि० म००, १/गमः।उ] विष्णु ।

फणितनायक—पु० [स० ष० त०] वासुकि ।

फणितपति—पु० [स० ष० त०] १ वासुकि । २ पतञ्जलि ।

फणितप्रिय—पु० [स० ष० त०] वायु । हवा ।

फणितकंठ—पु० [स० ष० त०] आर्कमि ।

फणितभाष्य—पु० [स० मध० म०] पाणिनी के सूत्रा पर लिखा हुआ पतञ्जलि कृत महाभाष्य नामक व्याकरण ग्रन्थ ।

फणितभृत्—पु० [स० फणित्/भृज् (माना)।ऽनित्] वह जो सीपों का भक्षण करना हो । नैमि—गण्ड, मार आदि ।

फणितमुक्ता—स्त्री० [म० ष० त०] सीप की मणिका ।

फणितमुल—पु० [स० ब० म०] साप के मुख के आकार का एक तरह का पुरानी चाल का औजार जिसमें चौर भक्तानी में सेब लगाते हैं ।

फणितरत्ना—स्त्री० [उपमि० म०] तागवल्ली । पान की लता ।

फणितबल्ली—स्त्री० -फणितरत्ना ।

फणोत्तर—पु० [स० फणित उड. प० त०] १ दोपनाम । २ वासुकि । ३ पतञ्जलि ।

फणो (जित्)—पु० [स० फणः।उजि] १ साँप । २ केतुग्रह । ३ सीमा । ४ मरुआ नामक पीथा । ५ गर्मिणी नामक ओषधि ।

फणोत्त—पु० [स० फणित्-उत्त प० त०] १ दोपनाम । २ वासुकि । ३ पतञ्जलि ।

फणोत्तर—पु० [स० फणित्-उत्तर. प० त०] -फणोत्त ।

फणोत्तर-चक्र—पु० [स० मध० म०] तानि की तरह-स्तिपति के आधार पर त्र्यङ्ग, चन्द्र आदि मान हीरों का यन्त्रासुम चक्र जानने का एक चक्र । (उप०) ।

फणवा—पु० [अ० फणवा] धर्म गुरु विदोषत विनी भूस्तयान धर्म-गुरु द्वारा धर्म-मन्त्री विनी विवादागद वान के मन्त्र में दिया हुआ शास्त्रीय अभिहित आवेश । व्यवस्था ।

फणव—स्त्री० [अ० फणव] १ यज्ञ में हनिवाली विजय । जीत । २ किसी काम में हनिवाली महत्-पुण्य मण्डलता । कामयाबी ।

फणव-पेच—पु० [अ० फणवः।० पेच] १ पगड़ी बांधने का एक विनिर्दिष्ट ग या पनाम । २ मन्त्रों में बाल मूँधने और चोट्टी बांधने का एक विनिर्दिष्ट ग या प्रकार । ३ हुक्के का एक प्रकार का नैच ।

फणवहम—वि० [अ०। फा०] [भाव० फणवहमरी] १ विजयी । २ मण्डल ।

फणवहाब—वि० [अ०। फा०] [भाव० फणवहाबी] = फणवहम ।

फणिया—पु० [स० पतम] [स्त्री० फणिया] १ पर्ववाला कोई छोटा कौड़ा । २ पर्ववाला बड़ छोटा कौड़ा जो आम की लपट या बीए की लो के नामों और धूमना रहता है और अम में जल भरता है ।

फणोर—पु० [अ० फणोर] चणारिणों आदि पतानों के निम्न मूँध या तथा मंत्राणों द्वारा तात्रा आदि (समीर स्त्री का विनाम है) ।

फणोल—पु० [अ० फणोल] १ दीए की बत्ती । २ वह बत्ती जो भूत-

प्रेत आदि की बाधा दूर करने के लिए जलाई तथा प्रेत-बाधा से प्रलत व्यथित को दिलाई जाती है । पलीता ।

फणोलसोत्र—पु० [फा० फणोलसोत्र] १ बातु की वह ची-मुखी दीवज जिसमें नीचे-ऊपर कई दीये जलाये जाते हैं । २ दीवज ।

फणोला—पु० [अ० फणोल] १ दीये की बत्ती । २ बत्ती । ३ जरदोजी का काम करनेवालों की लकड़ी की वह तीली जिस पर बेलबूट और फुको की डाकियाँ बनाने के लिए कारीगर तार को लपेटते हैं । दे० 'पलीता' ।

पु० -पलीता (बरतन) ।

फणुही—स्त्री० = फणुही ।

फणुर—पु० [अ० फणुर] १ दीप । विकार । २ उलान । उपवद्र । ३ बाधा । विघ्न । ४ शरासत ।

फणुरिया—वि० [हि० फणुरः। इया (प्रत्य०)] १ उपव्रती । २ शरासती ।

फणुह—स्त्री० [अ० फणुह के बहुवचन रूप फणुह से] १ विजय । २ विजय के उपरांत लूट-पाट में मिला हुआ धन या सम्पति । ३ प्राप्ति । लाभ । ४ समृद्धि । ५ ऊपर से होनेवाली आय ।

फणुही—स्त्री० [अ० फणुही] बिना बाहों की एक तरह की कुश्ती या बडी । स्त्री० [अ० फणुह] लूट-पाट में प्राप्त किया हुआ धन ।

फणो—स्त्री० = फणह ।

फणेह—स्त्री० = फणह ।

फणकता—अ० [अनु०] १ फद- द शब्द होता । २ भाल, रग आदि का फनने मय फद-फद शब्द करके उल्लंघन । लद-बद करना ।

↑ अ० = फणकना ।

फणका—पु० [हि० फणकना] गुड का वह पाग जो बहुत अधिक गांथा न हुआ हो ।

फणकवाला—अ० [अनु०] १ फणक शब्द होता । २ बलों में नई कापने या पतियाँ निकलना । ३ शरीर में बहुत गी फणियाँ या गर्मी के दाने निकल आना । फणकना ।

म० फण-फण शब्द उत्पन्न करना ।

फणिया—स्त्री० -फणिया (एक तरह का लहंगा) ।

फणुषका—पु० [हि० फणुषका] टिड्डी का छोटा बन्धा ।

फण—पु० [स० फण] साँप के निर के आसाम का वह भाग जिसे साँप आवेशा अथवा मस्ती में हवा भरकर फला और फला देता है ।

मूहा—फण भावना=आवेश में आकर विशेष प्रयत्न करना ।

पु० [फा० फण] १ गण । सूत्री । २ विद्या । ३ कला । ४ दलकारी । ५ चालबाजी । धूर्तता । ६ कोशल ।

पव—हृणक बोला=बहुत ही हुणक व्यक्ति । हृण काम में हीशियार ।

फणकता—अ० [अनु०] १ फणक शब्द करना । जैसे—बैल या साँप का फणकना । २ इम प्रकार तेजी में चलना कि हवा से बन्ध फणकन करने लगे ।

फणकार—स्त्री० [अनु०] १ फण-फण होनेवाला शब्द । २ वह फण-फण शब्द जो साँप के फूँकने या बैल आदि के सान लने में होता है ।

फणपना—अ० [हि० फणना] १ धूर्तता आदि का फणियाँ अर्थात् अकुटो ये युक्त होना । २ अच्छी तरह उन्नति करना ।

फणपा—पु० [स० पतम] फणिया ।

। पु० = फुनगा।

फनना—अ० [हि० फाचना] १ फटा बनना या लगना। २ काम का शरम्भ होना। उठना।

फनफनाना—अ० [अनु०] १ मूँह से हवा छोड़कर फन फन शब्द उत्पन्न करना। जैसे—साँप का फनफनाना। २ बचलतापूर्वक इधर-उधर हिलना।

फनस—पु० [स० फनस, प्रा० फनस] कटहल।

फना—स्त्री० [अ० फना] १ पूरा विनाश। बरबादी। २ मृत्यु। मौत।
३ मूफ़ी मत म, भवत का परमात्मा मे लीन होना।
वि० नाट०। बरबाद।

फनाना—स० [हि० फाचना] १ फटा बनाना। २ काम शुरू करना।
ठानना।

फनियाँ—पु०-फणींद्र (साँप)।

फनिय—पु०-फणींद्र (साँप)।

फनि—पु० १ = फणी। २ = फन।

फनिका—पु० = फणिक।

फनिय—पु० [हि० फणिया] फणिया।

। पु० [स० फणिक] साँप।

फनियर—पु० [स० फणियर] साँप।

फनियल—पु० = फणियल।

फनियर—पु० [स० फणियर] १ फनवाग। २ अन्नपर।

फनियला—पु० द० 'तूर'।

पु० = फनियर (साँप)।

फनिराज—पु० = फणींद्र (साँप)।

फनी—पु० = फणी।

स्त्री० = फन (साँप का)।

पु० = फनियर।

वि० [फा० फनी] १ फन-मधवी। २ फन या हुनर जाननेवाला।

३ चालाक। धूर्त।

फनुसा—पु० = फानुस।

फनी—स्त्री० [स० फनी] १ लकड़ी का वह टुकड़ा जो छेद आदि बंद करने के लिए किसी चीज में ठोका जाता है। पन्कर। २ वायुतुकला में, लोहे का वह मोटा पत्तर या कोनिया जो बाहर निकले हुए बौस को मेंभासने के लिए उसके नीचे लगाई जाती है। ३ कभी कभी तरह का बूझा का एक अजीब जो बौस की तीन्धियों का बना होता है और जिसमें बुना हुआ बाना दबाकर ठीक किया जाता है।

फफका—पु० = फफोला।

फफकस—वि० [अनु०] मूल किन्तु बलहीन या शिथिल काया वाला।

फफकना—अ० [अनु०] कक-कक कर और फफ-फफ शब्द करते हुए रोना।

फफका—पु० [अनु०] फफोला। छाला।

फफवना—अ० [?] अधिक विस्तृत होना। इधर-उधर फैलना।

फफसा—पु० [स० फफस] फफडा।

वि० १. फूला हुआ और पोला। २ जिसमे रस या स्वाद न हो।

फोका। ३ (फल) जिसका स्वाद बिगड़ गया हो।

फफूबी—स्त्री० [हि० फुबती] रियों के पंझू पर धोती, लहंगी आदि मे लगाई जानेवाली गटा। विशेष दे० 'नीबी'।

रणी [?] बरसात के दिना मे वनस्पतियों आदि पर जमनेवाली एक तरह की सफेद रंग की काई। भूकडी।

फफोर—पु० [स०] एक प्रकार का त्रयली प्याज।

। पु० = फफोला।

फफोला—पु० [स० प्रस्फोट] १ त्वचा के जलने पर पड़नेवाला यह छाला जिसमें पानी भरा होता है और जा गंदे सिल्ली से युक्त होता है। (डिल्टर) २ शारीरिक विकार के कारण हाँदवाला उजत प्रकार का छाला।

क्रि० प्र०—छालना।—पड़ना।

मूहा—वि० के फफोले फोडना = अपने दिल को जलन या रोप प्रकट करना। दिल का बूवार निकालना।

३ पानी का बूझल।

फफकना—अ० = फफदना।

फफवती—स्त्री० [हि० फफवती] ऐसी अय्यात्मक तथा हास्यपूर्ण बात जो किसी व्यक्ति को तारकात्मक रीति के अनुसार बहुत ही उपयुक्त रूप में फफती अर्थात् ठीक बँटती हो। (रलरी)

क्रि० प्र०—उडाना।—कमना।

फफन—स्त्री० [हि० फफना] १ फफवे अथवा फफट्टए होने की अवस्था या भाव। उदा०—श्रवणें कौं अब तुम फफन देखना।—बायमुकुंद गुप्त। २ सुदरता।

फफना—अ० [स० प्रभवत] १ उपयुक्त प्रकार में अथवा उपयुक्त स्थान पर रखे जान पर किसी चीज का जानम तथा सुंदर लगना। जैसे—लाल माडी पर काली गोट का फफना। २. बान आदि का ठीक मोके पर उपयुक्त और मान्य लगना। जैसे—मुन्हारे मुँह पर गाली नहीं फफती। ३ ज्योति का रश्मिया कपडे आदि पड़ने होने पर सुंदर लगना।

फफाना—पु० [हि० फफना] १ इस प्रकार किसी चीज को उपयुक्त स्थान पर रखना कि वह जोमान या सुंदर जान पडने लगे। २ अच्छे वस्त्र आदि पहनकर किसी का सुंदर बनाना।

फफि—स्त्री० = फफन।

फफोला—वि० [हि० फफि] ५ला (प्रय०)। [स्त्री० फफोली] जो फफ रहा हो। फफवा हुआ।

फफिस्तान—पु० [फा०] इन्डोड।

फफरी—वि० [फा०] अंधरा का।

पु० अंधरे जात का व्यक्ति। फफरी।

फफरअन—पु० [अ० फफरअन] १ भिन्न के प्राचीन राजाओं की उपाधि। (फरो, फराओ) २ लौक-व्यवहार में ऐसा व्यक्ति जो बहुत ही अत्याचारी, अभिमानी तथा उद्ध हो।

फफरक—पु० [अ० फफक] १ अग्याव। पार्यंबय। २ ऐसा भेद जो पार्यंबय के कारण हो अथवा पार्यंबय का सूचक हो। ३ दो विभिन्न वस्तुओं, व्यक्तियों आदि में होनेवाली विपत्ता। ४ विहास-फिनास आदि में मूल-मुट्टि आदि के कारण पडनेवाला अतर। ५ एक रकम या सख्या को दूसरी रकम या सख्या में से घटाने पर निकलनेवाला

शेषाश। बाकी। ६ दो विदुओं या स्थानों में होनेवाली दूरी या फासला। ७ भेद-भाव। दुराव।

†फि० वि० अलग। पृथक्।

†फि०=फड़क।

फरकन—स्त्री० [हि० फरकना] फड़कने की क्रिया या भाव। फड़क।

फरकना—अ० [अ० फरक=अंतर] १ अलग या दूर होना। २ कटकर निकल जाना।

†अ०=फड़कना।

फरकना—पु० [स० फलक] १ ऐसा छप्पर जो अलग से बनाकर बेंडेर पर चढ़ाया या रखा जाता है। २ बेंडेर में एक ओर की छान। पन्दा। ३ क्षापत्रिय, दरवाजों आदि के आगे लगाया जानेवाला टट्टर।

†पु० दं० 'फिरक'।

फरकना—ग० [हि० फरक-अलग] १ अलग या दूर करना। २ फरक या अंतर निकालना या स्थिर करना।

†स० फड़कना।

फरकिल्ला—प० [हि० फार। कील] गाड़ी आदि में लगाया जानेवाला बड़ा लूटा जिनके मगरे ऊपर का ढाँचा खड़ा रहता है।

फरकी—स्त्री० [हि० फरक] १ चिड़ीमारों की लामें से युक्त वह लकड़ी जिग पर चिड़ियों के बैठने पर उनके पैर, पंख आदि चिपक जाते हैं।

२ दीवार की बुनार्द में खेँ बल में लगाया जानेवाला पत्थर। फरकीहो!—वि० [हि० फरकना। आहँ! (प्रत्यय०)] १ फड़कनेवाला। २ फड़कना हुआ।

फरकक—पु०=फरक।

फरगान—पु० [तु० फरगाना] तुर्की के फरगाना नामक प्रदेश का निवासी।

फरगाना—पु० तुर्की के अलग-अलग प्रदेश, जहाँ बाबर का पैतृक राज्य था।

फरबा—वि० [अ० सृष्ट्य, आ० फरस्त] [भाव० फरबाइ] १ (साथ पढ़ाये) जो किसी में जुड़ा न किया हो। २ शूद्ध, माफ या स्वच्छ।

फरबाई—स्त्री० [हि० फरबा। ई (प्रत्यय०)] 'फरबा' होने की अवस्था या भाव। शुद्धता।

फरबाना—ग० [हि० फरबा] १ बगलन आदि धोकर माफ करना।

फरबा रहना। २ पवित्र या शूद्ध करना।

फरबाई—पु० [फा० फरबाई] पुत्र। बेटा।

फरबाई—स्त्री० [फा० फरबाई] पुत्र-भाव। बाप-बेटे का नाता।

मुहा०—[किसी को] फरबाई में लेना=(क) पुत्र या बेटा बनाना।

(ग) दामाद अर्थात् पुत्र-पुत्र बनाना।

फरबाई—पु०=फरबाइ (बेटा)।

फरबा—पु०=फरबा (बाल्य)।

स्त्री०=फरबा (भग)।

फरबा—वि० [फा० फरबाज] [भाव० फरबाजगी] बुद्धिमान।

फरबा—पु० [फा० फरबा] १ अत। समाप्त। २ परिणाम। फरबा।

फरबी—पु० [फा० फरबी] गतरज का क मोहरा जिसे रानी या वजीर भी कहते हैं।

वि० [फा० फरबी] १ कल्पना में होनेवाला। काल्पनिक। २ जो फरब किया या मान लिया गया हो। ३ नकली।

फरबीबं—पु० [फा०] शतरज के खेल में वह स्थिति जिसमें फरबी अर्थात् वजीर किसी प्यादे के जोर पर बादशाह को ऐसी राह देता है कि विपकी की हार हो जाती है।

फरबूत—वि० [फा० फरबूत] अति बुद्ध। बहुत बुद्ध।

फरब—स्त्री० [अ० फरब] १ वह बही जिसमें हिसाब-किताब लिखा होता है। २ सूची। तालिका।

पु० [अ० फरब] १ एक या अकेला आदमी। एक व्यक्ति। २ एक ही तरह की और एक साथ बनेवाली अथवा एक साथ काम में आने-वाली चीजों के बोझ में से हूर एक। जैसे—एक फरद धोनी, एक फरद चादर आदि। ३. हुलाई, रजाई आदि का वह ऊपरी पल्ला जिसके नीचे अस्तर लगाया जाता है। ४ दो चरणों या पदा की कविता। विसोय—यह शब्द उक्त अर्थों में लोक में प्रायः स्त्री रूप में प्रयुक्त होता है।

५. वह पशु या पक्षी जो जोड़े के साथ नहीं, बल्कि अकेला और अलग रहता है। ६ एक प्रकार का पक्षी जो बरफीले पहाटा पर होता है, और जिनके विषय में बीसी ही बातें प्रसिद्ध हैं, जैसी चकवा और चकई के विषय में हैं। ७ एक प्रकार का लकड़ा कबूतर जिसके गिर पर टीका होता है।

वि० १ अकेला। २ बेजोड़।

फरना—अ०=फरना।

फरफर—पु० [हि० फर। अ० फद (जाल)] १ दाग-पंच। छल-कपट। २ केवल दूसरा को दिखाने और धोखे में डालने के लिए किया जानेवाला शूरा आचरण। ३ नखरा। चौचला।

फि० प्र०=खेलना।—दिखाना।—चरना।

फरफरी—पि० [हि० फरफद] १ फरफद करनेवाला। छल-कपट या दाग-पंच करनेवाला। धूर्त। चालबाज। फरबी। २ नान-बाज। नखरीश।

फरफर—पु० [अनु०] किसी पदार्थ के उड़ने, फड़कने या हिलने से उत्पन्न होनेवाला फरफर शब्द।

फि० पि० फरफर शब्द करते हुए।

फरफराना—स० [अनु०] फरफर, शब्द उत्पन्न करना।

अ० फरफर शब्द करते हुए हिलना। जैसे—झडा फरफराना।

†अ०, स०=फरफड़ाना।

फरफुबा—पु०=फरिया।

फरमाबरदार—वि० [फा० फरमाबरदार] [भाव० फरमाबरदारी] आभाकारी।

फरमा—पु० [अ० फ़ेम] १ वह ढाँचा जिसमें रखकर उसी के अनुरूप कोई दूसरी चीज ढाली या बनाई जाती हो। ढोख। साँचा। २ लकड़ी आदि का बना हुआ वह ढाँचा या साँचा जिनपर रखकर चमार जूता बनाते हैं। कालपुत्र।

पु० [अ० फारम] १ कागज का पूरा तबता या ताव जो एक बार में प्रेम में जाता है। जूज। २ पुस्तकों आदि का उतना अंश जितना उक्त प्रकार के कागज पर एक साथ छपा है। जैसे—इस पुस्तक के

१० फरमे छप गये हैं, अभी पाँच फरमे और बाकी हैं। ३ छापेखाने में, बाँचे में कहीं हुई छपनेवाली सामग्री।

फरमाइश—स्त्री० [फा० फ़र्माइश] १ वह चीज जिसके लिए किसी ने अनुरोध किया हो। २ किसी काम या बात के लिए दी जानेवाली आज्ञा विधेयत प्रेमपूर्वक दिया हुआ आदेश।

फरमाइशी—वि० [फा०] १ जो फरमाइश करने बनावया या मंगाया गया हो। जैसे—फरमाइशी जूता। २ फरमाइश के रूप में होनेवाला।

फरमान—पुं० [फा० फ़र्मान] १ कोई आधिकारिक विशेषतः राजकीय आदेश। २. वह पत्र जिसमें उक्त आदेश लिखा हो।

फरमाना—स० [फा० फ़र्मान] कोई बात कहना। (बढ़ों के सबब में सम्मान-सूचक रूप में प्रयुक्त) जैसे—आपका फरमाना बिलकुल दुष्कृत है।

फरमावट—स्त्री० --फरियाद।

फरयाती—स्त्री० [हि० फाल] हल में की वह लकड़ी जिसमें फाल (फल) लगा रहता है। बापी।

फरदाना—अ०, स० --फहराना।

फरलाग—पुं० [अ० फरलाग] भूमि की दूरी नापने का एक माप जो २२० गज के बराबर होता है।

फरलो—स्त्री० [अ० फरलाग] सरकारी नौकरों का आधे वेतन पर मिलनेवाली लकी छुट्टी।

फरली—पुं० [अ० फ़ेरुवरी] अंग्रेजी सन् का दूसरा महीना जो अक्टू-दस दिना का, परन्तु लोद के वर्ष, उल्टीस दिनों का होता है।

फरदाज़—पुं० --सलिहान।

फरबारी—स्त्री० [हि० फरवार+ई (प्रत्य०)] उपजे हुए अन्न या फसल का वह भाग जो किसान खलिहान में से राशि उठाने के समय ब्राह्मण, बर्बई, नाई आदि को देते हैं।

फरबी—स्त्री० [ग० फ़रुन्] १. एक प्रकार का भूना हुआ चावल जो भूने पर अन्दर में पोला हा जाता है। मुरमुरा। २ द० 'लाई', 'फकी'।

फरस—पुं० [अ० फ़र्स] १ बँटने के लिए बिछाने का कपड़ा। बिछावत। २ कमार आदि की पक्की आर समतल भूमि जिस पर लोप बैठते हैं। ३ समतल प्रसाग या फीलाव। जैसे—फूला का फरस।

फरसाव—पुं० [फा०] वह अँचा और समतल स्थान जहाँ गच का फरस बना हो।

फरसी—वि० [अ० फ़र्सी] १ फरस-सबकी। फरस का।

पद—**फरशी सलाम**—बादशाहों आदि को किया जानेवाला वह मलाम जिसमें आदमी को इस प्रकार शुकनाना पड़ता था कि उसका सिर लगभग फरस तक पहुँच जाता था।

२. जो फर्स पर रखा जाता या काम में लाया जाता हो। जैसे—फरशी जूता, फरशी झाड़, फरशी हुक्का आदि।

पद—**फरशी गोला**—आतिशबाजी में वह गोला जो फरस पर पटकने पर आवाज देता है।

स्त्री० १ कुछ खूले मुँह का धातु का वह आधान या पात्र जिस पर नैचा और सटक लगाकर तमाकू पीते हैं। २ उबत पात्र और नैच, सटक आदि से युक्त हुक्का। गुड़गुडी। ३. पुरानी चाल की बहूक का वह अंग जिसमें गज रखा जाता था।

फरसग—पुं० [फा० फ़र्सग] ४००० गज या सवा दो मील की दूरी का एक नाप।

फरस—पुं० १ दे० 'फरसा'। २ दे० 'फरख'।

फरसा—पुं० [स० फरस] १ पैनी और चौड़ी धार की एक प्रकार की कुल्हाड़ी, जो प्राचीन काल में युद्ध के काम आती थी। २. फावडा।

फरसी—[व०, स्त्री० --फरसी।

फरहीग—स्त्री० [फा० फरहग] शब्द-कोश।

फरहादा—पुं० [हि० फाल] [स्त्री० अलगा० फरहीदा] बाँस, लकड़ी आदि की पतली, लची पट्टी।

फरहत—स्त्री० [अ० फ़हत] १ आनंद। प्रसन्नता। २. मन की प्रफुल्लता।

फरहद—पुं० [स० फारिहद, पा० फरिहद; प्रा० फारिहह] एक प्रकार का वृक्ष जो बगाल में समुद्र के तिनारे बहुत होता है। वहाँ के लोग इसे पालितेमदार कहते हैं।

फरहरा—वि० [स० स्फार; प्रा० फार=अलग-अलग, अथवा फरहरा] १ जो एक में लिपटा या मिला हुआ न हो, अलग-अलग हो। जैसे—फरहर भात। २ साफ। स्पष्ट। ३ निर्मल। शुद्ध। ४ (मन) जिसमें उदासीनता, खेद आदि न हो। प्रफुल्लित। प्रसन्न। ५. चालाक। हींसियार।

फरहरता—अ०, स०, [अनु० फरफर] १.==फरफराना। २. ==फहराना।

फरहरा—पुं० [हि० फहराना] १ कपड़े आदि का वह सिकोना या चौकीना टुकड़ा जिसे छत्र के सिरे पर लगाकर धड़ी बनाते हैं और जो हवा के झाने से उड़ता रहता है। २ झडा। पताका।

†वि० --फरहर। (देखें)

फरहराना—अ०, स० --फरहरना।

फरहरी—स्त्री० [हि० फल+हरा (प्रत्य०)] वृक्षों के फल या जहाँ के वर्ग की ओर चीजें जो खार्ई जाती हैं। फहरही।

†वि०, स्त्री० फजाहरी। उदा०—मुख करिआर फरहरी खाना। —जायसी।

फरहा—पुं० [हि० फल] धूम्रियों की क्रमान का वह चौडा भाग जिस पर से होकर ताँत दोनों तिरों तक जाती है।

फरहाव—पुं० [फा० फरहाव] इतिहास-प्रसिद्ध एक प्रेमी जिसने अपनी प्रेमिका शीरी के आदेश पर पहाड़ काटकर नहर बनाई थी। कहते हैं कि जैसी कुटनी के बोया देने पर वह अपना मिर फाँडकर मर गया।

फरही—स्त्री० [हि० फरहा] लकड़ी का वह चौडा टुकड़ा जिग पर उठेंरें बरतन रखकर देती से देते हैं।

फरा—पुं० [देस०] एक प्रकार का भजन जो चावल के आटे को गरम पानी में गूँचकर और पतली बत्तियाँ बनाकर पानी की भाप में उबालने से बनाया है।

फराका—पुं० [फा० फराल] १ मैदान। २. आवताकार स्थान।

वि० लबा-चौडा। विम्बन्त।

पुं० [अ० फ़ाक] छोटी लकड़ियों के पहिनेने का अँग्रेजी ढग का एक तरह का लबा पहनावा।

फराकत—वि० --फरफा।

स्त्री० - फरागत ।

कराख—वि० [फा० कराख] लम्बा-चौड़ा । विस्तृत ।

कराखदिल—वि० [फा० कराख दिल] भाव० फराखदिली उदार हृदयवाला ।

कराखी—स्त्री० [फा० कराखी] १ फराख अर्थात् विस्तृत होने की अवस्था या भाव । विपत्तार । २ धन-पाय आदि की उचित संप्रदात । ३ वह नस्ल या चीड़ा फीता जो घोड़े की पीठ पर बांधकर रखा जाता है । तम ।

करागत—स्त्री० [अ० फरागत] १ छुटकारा । मुक्ति ।

क्रि० प्र०—पाना ।—मिलना ।

२ बाप आदि की ममागति पर होनेवाली निश्चितता । ३ मल-न्याय, पोष आदि की क्रिया । जैम—आप भी फरागत हो आबें ।

क्रि० प्र०—जाना ।

३ दीलनमदी । धन-मपप्रता । ४ सुख ।

वि० जिम किमी काम, बयन आदि से छुटकारा मिल गया हो ।

कराख—वि० [फा० कराख] ऊँचा ।

पद—न शेष व फराख—किमी बान क ऊँच-नीच या भला-बुरा (पक्ष) । ५० ऊँचाई ।

करामुश—वि०—करामोश ।

करामोश—वि० [फा० करामोश] [भाव० करामोशी] १ भुलने-वाला । २ (शक्ति) जो किसी काम या बात का वादा करके भी उसे भूल जाय और फरख वादे के अनुसार काम न करे ।

३ लटक का एक खेल जिसमें वे आगम में एक-दूसरे को कोई चीज देने से, और यदि पानेवा शुरुस्व 'करामोश' कह देता है तो उसकी जीत गमजरी जानी है नहीं तो वह हार जाता है ।

क्रि० प्र०—बदना ।

करामोशी—स्त्री० [फा० करामोशी] भुलने की अवस्था या भाव । निश्चिन्ता ।

करार—वि० [अ० करार] (अपराधी) जो शासन की हिरासत में आने व देने के लिए गरीब भाग अथवा छिप गया हो । फलायित ।

५० द० 'करार' (फिरतार) ।

करारी—स्त्री० [फा० करार] फरार होने की अवस्था, क्रिया या भाव । १ वि० फरार ।

करारना—य०—फरगना ।

करारत—प० [?] झाड़ की जाति का एक प्रकार का बड़ा वृक्ष जो पत्राय, मिष और फारस में अधिकता में होता है ।

५० १ फरगना । २—पलायन ।

करार—प०—फरगना ।

करारीस—प० [अ० फारग] १. फारग देश । २ उबत देश का निवासी ।

स्त्री गुरानी बाल की एक प्रकार की लाल छोट ।

करारीसी—वि० [हि० करारीसी] फारग देश का ।

स्त्री० फारग देश की भाषा ।

प० फारग देश का निवासी ।

करारम—वि० [फा०] [भाव० फराहशी] इकट्ठा किया हुआ ।

करारक—प०—फरना ।

करिया—स्त्री० [हि० फेरना] १ वह लहया जो सामने की ओर सिला नहीं रहता । २ वह ओइनी जो स्त्रियाँ लहया पहनने पर ऊपर से ओइनी है ।

५० [हि० फिरना] रहत के चरखे के बाहर में लगी हुई वे लकड़ियाँ जिन पर मिट्टी की हँथिया की माला लटकी है ।

५० [हि० परी=मिट्टी का कटोरा] मिट्टी की नाँद जो चीनी के कारखानों में पाय छोड़कर चीनी बनाने के लिए रखी जाती है । हीद ।

करियाद—स्त्री० [फा० फर्याद] १ विपत्ति, सड़त आदि में पड़ने पर सहायतापत्र की जानेवाली नुकार । २ विशेषतः दूनार द्वारा सलाये जाने आदि पर प्रमुख अधिकारी या शासक के समक्ष न्याय पान के लिए की जानेवाली प्रार्थना । ३ न्याय की याचना के लिए न्यायालय में दिया जानेवाला प्रार्थना-पत्र ।

करियावी—वि० [फा० फर्यावी] १ फरियाद-सबधी । २ फरियाद के रूप में होनेवाला । ३ फरियाद करनेवाला । ४ अभियोग उपस्थित करनेवाला । अभियोगप्रता ।

करियाना—स० [म० फलन या फकीरगण] १ साफ या रक्छ करना । २ अनाज फटककर उसकी भूमी आदि अलग करके उसे साफ करना । ३ विवाद का इस प्रकार अन्त करना कि दाता पक्षा की भूजे स्पष्ट हो जाय और दोना का न्याय न गतौय हो जाय । निपटना ।

५३० १ साफ या रक्छ जाना । २ अनाज का भूसा आदि म अलग होना । ३ विवाद का निर्णय होना ।

करिस्ता—प० [फा० फरिस्त] १ मूल्यमानी तमय-या क अनुसार ईश्वर का वह रूप जो उसकी आज्ञानुसार पान करता है । जैम—मौन का फरिस्ता । २ देव-पूजा । ३ दाना । ४ फारु और भाग-कारी तथा मान्दिक बुनियादा व्यतिन ।

करिस्तानी—स्त्री० फारसी फरिस्ता का स्त्री० । (फारसी और व्यय) ।

फरी—स्त्री० [अ० फल] १ हल की फाट । कुमाँ । २ गरी की हाजमा । फड । ३ गनक का वार राफा का नमक की डाय ।

फरीक—प० [अ० फरीक] १ हा परम्पर विचारों पदा या व्यतिनाया में से हूर एह पद या व्यतिन ।

पद—फरीके सानी—विकरुड पदा । मुवाकिक दल ।

२ गरी अथवा प्रतिनारी । ३ शत्रु । बंदी ।

फरीकेन—प० [अ० फरीकेन] परम्पर विचारों दोना पक्षा की मामू-हिक मजा । उमयपक्ष ।

फरीडा—प० [अ० फरीड] मुदा का हुजम जिया हा पालन करना बन्दा के लिए कतैय हाता है । जैम—नाजाड, राजा, राज, आदि । २. गनीत कानैय ।

फरीड-बूडी—स्त्री० [अ० फरीड; हि० बूडी] एक प्रकार की वनस्पति जिसकी पत्तियाँ बरतार की तरह हापी है ।

फरआ—प० [?] लकड़ी का वह बरतम जिसमें भिक्षुक भोग लेते है ।

फरई—स्त्री० १—फरवी । २—फरही ।

फरही—स्त्री०—फरही ।

फरहा—प०—फावडा ।

फर्की—स्त्री० [हिं० फावड़ा] १ छोटा फावड़ा। २ फावड़े के आकार का लकड़ी का बना हुआ एक जीवार जिससे खेत में बयारी बनाने के लिए मिट्टी हटाई जाती है। ३ मयानी।

†स्त्री० = फर्की (सूने हुए चावल)।

फरेंद, **फरेंदा**—पुं० [म० फलेन्द्र, प्रा० फलेन्द्र] जामुन की एक जाति जिसके फल बड़े और गुदेदार होते हैं। फलेन्दा।

फरेता—वि० [फा० फिरत] १ लुभाया हुआ। जामबल। मुग्ध। २ धोखा खाया हुआ।

फरेब—पुं० [फा० फिरेब] १ प्रायः सत्य बात को छिपाने तथा अपने का योग्य-भक्त विद्वे करने अथवा दूसरे को धोखा देने तथा अपना काम निपटारने के लिए कही जानेवाली मूढ़ी या बनावटी बात। २ छठ-कपट।

फरेबिया—वि० = फरेबी।

फरेबी—वि० [फा० फिरेब] १ फरेब-सबधी। २ फरेब या छल-काट करनेवाला। धोखेवाज। कपटी।

फरेबा—पुं० = फरहबा।

फरेरी—स्त्री० = फरहरी (कल)।

फरेदा—पुं० [फा० फरिद] एक प्रकार का तोता।

†पुं० = फरेदा।

फरी—वि० [?] १ दबा हुआ। २ जिसका अस्तित्व न रह गया हो। ३ जो हूर हो गया हो।

फरोस्त—स्त्री० [फा० फिरोस्त] बेचने या बिकने की क्रिया या भाव। विक्रय। बिक्री। जैसे—फरोस्त-फरोस्त।

वि० [फा० फिरोस्त] बिका या बेचा हुआ।

फरोस्तगी—स्त्री० [फा० फिरोस्तगी] फरोस्त करने अर्थात् बेचने का काम। विक्रय।

फरोग—पुं० [फा० फुरोग] १ रोगानी। २ रौनक। ३ श्याति। ४ उत्कर्ष। उन्नति।

फरोवस्त—पुं० [फा० फरोवस्त] १ संगीत में एक प्रकार का सकर राग जो गौरी, काट्टा ग्रीः पुरबी के मेल से बना होता है। २ १४ मात्राओं का एक ताल जिसमें ५ आघात २ खाली होते हैं। (संगीत)

फरोब—वि० [फा० फरोबी] [भाव० फरोबी] समस्त पदों के अन्त में, बिक्री करने या बेचनेवाला। जैसे—दिलफरोब, मेयाफरोब।

फरोबी—स्त्री० [फा० फरोबी] १ बेचने की क्रिया या भाव। २ वह माल जो बिक चुका हो। ३ बिके हुए माल से प्राप्त हुआ धन। बिक्री।

फर्क—पुं० = फरक।

फर्क—वि० = फरक।

फर्का—वि० = फरका।

फर्क—पुं० = फरकद। (बेटा)।

फर्क—पुं० [अ० फर्ज] १ मुसलमानी धर्मानुसार वे आवश्यक कर्म जिन्हें न करने से मनुष्य धार्मिक दृष्टि से दोषी और पतित होता है। आवश्यक धार्मिक कृत्य। जैसे—नामाज, रोजा आदि कर्म हर मुसलमान के लिए फर्ज हैं। २ आवश्यक और कर्तव्य कर्म। जैसे—मातृक की शिवभक्त करना नौकर का फर्ज है।

कि० प्र०—अदा करना।

३ तर्क-वितर्क के प्रसंग में, वह तथ्य या बात जो वास्तविक न होने पर कुछ समय के लिए योही कल्पित कर ली या मान ली जाय। अनुमानित बात। जैसे—फर्ज कीजिए कि आप बड़ा चले गये, तो क्या होगा।

फर्की—वि० [फा० फर्की] १ जो फर्ज कर लिया अर्थात् तर्क-वितर्क के लिए मान लिया गया हो। २ कल्पना के आधार पर प्रस्तुत किया हुआ। कल्पित। ३ जिसकी कोई वास्तविक या विशिष्ट सत्ता न हो।

पुं० [फा० फर्की] शतरंज की फर्की नाम की मोंटी।

फर्द—स्त्री० [फा० फर्द] १ कागज, कपड़े आदि का वह टुकड़ा जो किसी के साथ जुड़ा या लगा न हो। २ वह कागज जिस पर कोई लेखा, विवरण या वस्तुओं की सूची लिखी हो। फरद।

फर्द—बुद्धि—किसी के अपराधों या अभियोगों की सूचीवाला पत्र।

फर्दसखा—अपराधों को दिखे हुए दबों आदि का लेखा या विवरण।

पुं० [अ०] १ वह जो अकेला हो या अकेला रहता हो। २ दे० 'फर्द'।

फर्दफर्द—अव्य० [अ० फर्द फर्द] १ एक एक करके। २ हूर एक को। ३ अलग-अलग।

फर्द—पुं० [अ० फर्द] कोई ब्यापारिक बड़ी सत्था।

फर्दानी—स० = फर्दानी।

फर्दवि—स्त्री० = फर्दवि।

फर्द—पुं० [अनु०] १ गेहूँ और धान की फसल का एक रोग जो उसके फूलने के समय तेज हवा चलने पर पैदा होता है। २ मोंटी दूँट।

फर्दटा—पुं० [अनु०] बेग। तेजी। शिघ्रता। जैसे—फर्दटे से सबक सुनाना।

मुह्रा—फर्दटा भरना या मारना = बहुते तजी से दोटना।

अव्य० खूब तेजी से। बेगपूर्वक।

†पुं० = खर्दटा।

फर्दा—पुं० [अ० फर्दा] [भाव० फर्दा] १ प्राचीन काल में वह नौकर जिसका मुख्य काम जमीन पर दरी, चांदनी आदि बिछाना होता था। २ बिदमतगार। सेवक।

फर्दारी—वि० [फा० फर्दारी] १ फर्द-सबधी। जैसे—फर्दारी पक्षा = छत में लगाया जानेवाला पक्षा। २ फर्द पर बिछाया जानेवाला। ३ दे० 'फर्दारी'।

स्त्री० फर्दारी का काम और पद।

फर्द—पुं० [अ० फर्द] १ कमेरे, घर आदि की पक्की तथा समतल जमीन जिस पर बैठते हैं। फर्दा। २ उन्नत पर बिछाने की कोई चीज।

फर्द—वि०, स्त्री० दे० 'फर्दारी'।

फर्दक—पुं० = फर्दक (आकाश)।

†स्त्री० = फर्दक।

फर्दगी—स्त्री० = फर्दगी।

फर्दगवा—अ० = फर्दगवा।

फर्दत—स्त्री० [हिं० फर्दता + अत (प्रत्यय)] पीछे, दूरी आदि के फलने की क्रिया या भाव।

फल—पुं० [सं०√फल+अच्] १ वनस्पतिभू, वृक्षों आदि में विशिष्ट श्रुतुओं में लगनेवाला वह प्रसिद्ध अंग जो उनमें फूल आने के बाद अगता है, जो प्रायः खाया जाता है यथा जिसके अंदर प्रायः उस वनस्पति या वृक्ष के बीज और कुछ अवस्थाओं में मृदा और रस भी होती है।

विशेष—वनस्पति विज्ञान में अनाज के दानों (गेहूँ, चावल, दाल आदि) और वृक्षों के फलों (अनार, आम, नारंगी, सेब आदि) में कोई अन्तर नहीं माना जाता पर लोक-व्यवहार में वे दोनों अलग-अलग चीजें मानी जाती हैं।

२. किसी प्रकार की क्रिया, घटना, प्रयत्न आदि के परिणाम के रूप में होनेवाली कोई बात। नतीजा। जैसे—परीक्षा-फल। ३ धार्मिक क्षेत्र में, किये हुए कर्मों का वह परिणाम जो दुःख-सुख आदि के रूप में मिलता है। ४ जीवन में किये जानेवाले कार्यों के चार वृष परिणाम, जो मनुष्य के लिए अभीष्ट या उद्दिष्ट कहे गये हैं। यथा—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। ५. किये हुए कर्मों का प्रतिफल। बदला। उदा०—सबको न कहे, तुलसी के मते इतनी जग जीवन को फलु है।—तुलसी।

६ किसी प्रकार की प्राप्ति या लाभ। ७ अर्थों आदि के रूप में वह परिणाम जिसकी प्राप्ति के लिए पण्यित की कोई क्रिया की जाती है। जैसे—श्रेय-फल, गुण-फल, योग-फल। ८ गणित में त्रैशिक की हीमरी की रक्ति या निष्पत्ति में का दूसरा पद। ९ फलित ज्योतिष में, दृष्टी की स्थिति और योग के परिणाम के रूप में होनेवाले दुःख, सुख आदि। १० न्याय-शास्त्र में, दोष या प्रवृत्ति के कारण उत्पन्न होने या निकलनेवाला अर्थ जिसे गौतम ने प्रमेय के अन्तर्गत माना है।

११ किसी प्रकार के विस्तार का क्षेत्र-फल। १२ छुरी, तलवार, तीर, भाँसे आदि की वह तेज धारवाला या नुकीला अंग जिससे उक्त चीजें आघात या काट करती हैं। १३ फलक। १४ ढाल। १५ पासे पर का चिह्न या बिंदी। १६ व्याज। सूदा १७ जायफल। १८ कौशल। १९ कोरिया वृक्ष।

फल-कण्टक—पुं० [सं० ब० सं०] १ कटहल। २ श्वेत-पाषाण।

फल-कण्टकी—स्त्री० [सं० फलकण्टक+ङीप्] स्त्रीवरा।

फलका—पुं० [सं० फल+कम्] १ तखता। पट्टी। पटल। २ वह लला-बीटा कायज जिम पर कोई कोटक, मान-चित्र या विवरण अंकित हो। फरद। (शीट) जैसे—दुवृत्त फलक। (देखें) ३ चादर। ४ तबक। बरका। ५ पुस्तक का पन्ना। पृष्ठ। ६ हथेली। ७ चोकी। ८ साट या चारपाई का दुनाबटवाला वह अंश जिस पर छाग बैठते हैं।

पुं० [अ० फलक] १ आकाश। आसमान। २ ऊपरवाला लोक जो मूलमानों में भाग्य का विधाता और सुख-दुःख का दाता माना जाता है।

स्त्री० [अ० फलक] सबेरे का उजाला। उषा।

फलकना—अ० [अ०] १ छलकना। २ उपगाना। ३ दे० 'फडकना'।

फलक-यंत्र—पुं० [सं० मध्य० सं०] ज्योतिष में एक प्रकार का यंत्र जिसकी सहायता से ज्या आदि का निर्णय किया जाता है।

फल-कर—पुं० [सं० व० सं०] वृक्षों के फलों पर लगनेवाला कर।

फलका—पुं० [अ० फलक] १. दो या अधिक खंबोंवाली नाव में का वह

दरवाजा जिसमें वे हौकर लोग ऊपर नीचे आते-जाते हैं। २ मूलायम मिट्टी। ३ अखाडा (पहलवानों का)।

पुं० फकोला।

फल-कास—वि० [सं० फल+कम्+णिङ्+अण, उपपद सं०] किसी विशिष्ट फल की प्राप्ति के लिए किया जानेवाला काम।

फल-काल—पुं० [सं० प० सं०] वह श्रुतु या मीमंषम जिसमें कुछ विशिष्ट वृक्ष फल देते हैं। जैसे—आमों का फल-काल गर्मी और बरसात है।

फल-कृच्छ्र—पुं० [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार का कृच्छ्र व्रत जिसमें फलों का क्वाथ मात्र पीकर एक मास बितया जाता है।

फल-कृष्ण—पुं० [सं० सं० सं०] १ जल ओबला। २ करज।

फल-केसर—पुं० [सं० ब० सं०] नारियल का वृक्ष।

फल-कोष—पुं० [सं० प० सं०] १ पुरुष की इद्रिय। लिंग। २ अङ्क-कोश।

फल-मह—वि०=फलप्राप्ति।

फलप्राप्ति (हिंन्)—पुं० [सं० फल+पृ०+णिनि] वृक्ष। पेड।

वि० फल ग्रहण करनेवाला।

फल-धमस—पुं० [सं०] एक प्रकार का पुराना व्यवज जो बड़ की छाल को कूटकर दही में मिलाकर बनाया जाता था।

फलधारक—पुं० [सं०] १ प्राचीन काल का एक रात्मक्य अधिकारी। २ बौद्ध विहार का एक अधिकारी।

फलधोरक—पुं० [सं० व० सं०,] चोरक या चोर नाम का गणद्वय।

फलङ्गा—पुं०=फल (हृथियारों का)।

फलत—अव्य० [य० फल। तस्] उक्त बात के फल के रूप में परिणाम। इसलिये। जैसे—लोपी ने घन देना बद कर दिया, फलत चिकित्सालय बद हो गया।

फलत—स्त्री० [हिं० फलना] १. वृक्षों के फलने की क्रिया या भाव। २. वह जो कुछ फला हो। बीजों, फलों आदि के रूप में होनेवाली उपज। ३ कुल उपज।

फलप्रथ—पुं० [सं० प० सं०] १ वैद्यक में, द्राक्षा, परशु और कालमीरों इत तीनों फलों का समाहार। २ शिफला।

फल-त्रिक—पुं० [सं० प० सं०] १ भाव प्रकाश के अनुसार सांठ, पीपल और काली मिर्च। २ त्रिकला।

फलव—वि० [सं० फल+वृ+क्] १ फलनेवाला (वृत्त)। २. फल देनेवाला। पुं० पेड। वृक्ष।

फलवाता (नु)—वि० [सं० प० सं०] फल देनेवाला।

फल-वान—पुं० [सं० प० सं०] १ हिंदुओं की एक रीति जो विवाह के पहले बरवण के रूप में होती है। इसे बरसा भी कहते हैं। २. विवाह के पूर्व होनेवाली टीके की रस्म।

फलवार—वि० [हिं० फल+वां० दार (प्रत्य०)] १ (वृक्ष) जिसमें फल लगे हों। २. (अन्न) जिसके आगे धारदार फल लगा हो।

फलदू—पुं० [सं० फलदूम] एक प्रकार का वृक्ष जिसे चोली भी कहते हैं। वि० दे० 'धौली'।

फलन—पुं० [सं०√फल+ल्युट्+अन] [पुं० फ० फलित] १. वृक्षों

में फल उत्पन्न होना या लगना । २. किसी काम या बात का परिणाम निकलना ।

फलना—अ० [स० फलन] १. वृक्ष का फलो से युक्त होना । फल लगाना । २. स्थियों का उलटि, प्रसव आदि करना । ३. गृहस्थों का सतान आदि से युक्त होना । जैसे—सदाचारी गृहस्थ का फलना—फूलना । ४. किसी काम या बात का शुभ फल या परिणाम प्रकट होना । उपयोगी और लाभदायक सिद्ध होना । जैसे—नया मकान उन्हे खूब फला है । उदा०—इतने पर भी किन्तु न उनका भाग्य फला ।—मीथिली शरण । ५. इच्छा या कामना का पूर्ण होना । मफल मनोरथ होना । **पद**—फलना-फूलना = (क) धन-भाग्य, सतान आदि में अच्छी तरह युक्त और युक्ती होना । (ख) उपदेश या गरमी नामक रोग के कारण मारे शरीर में छोटे-छोटे घाव होना । (परिहास और व्यंग्य) ६. शरीर के किसी भाग पर बहुत से छोटे-छोटे दानों का एक साथ निकल आना जिससे पीड़ा होगी है । जैसे—गरमी में मारी कमर (या जीभ) फल गई है ।

†पू० [हि० फाल] सगतरावों की एक तरह की छेनी ।

फल-परिरक्षण—पू० [स० फ० त०] फलो को इस प्रकार रखना कि वे मडने-गमने में पावें । फलो को क्षतिग्रस्त होने से बचाना । (प्रियबंधन आफ फट्स)

फल-पाक—पू० [स० ब० सं०] १ करीदा । २ जल-आवला ।

फल-पुष्प—पू० [स० ब० सं०] वह जन्तुसति जिसकी जड़ में गोट पड़ती हो । जैसे—प्याज, शालजम आदि ।

फल-पुष्प—पू० [स० ब० सं०] [स्त्री० फल-पुष्पा] वह पीवा या वृक्ष जिसमें फल और फूल दोनों हो ।

फल-पूर—पू० [स० फल/पूर+क] दाडिम । अनार ।

फल-प्रिय—पू० [स० ब० सं०] द्रोण काक । डोंम कौवा ।

वि० जिसे खाने में फल अच्छे लगते हैं ।

फलफंद—पू० = फरफंद ।

फल-फूल—पू० [हि०] १ फल और फूल । २ भेंट के रूप में दी जाने-वाली वस्तु ।

फल-भरता—स्त्री० [स० फल+हि० भरता] फलो में भर अर्थात् लदे होने की अवस्था या भाव । उदा०—शुक्र जाती है मन की डाली अपनी फल-भरता के डर में ।—प्रसाद ।

फल-भूमि—स्त्री० [स० ब० त०] स्थान जहाँ कर्मों के फल भोगने पड़ते हैं । जैसे—पृथ्वी, नरक, स्वर्ग आदि ।

फल-भोगी (विन्)—वि० [स० फल/भूज् (भाना) ; भिनि] १ फल खानेवाला । २ केवल फलो पर निर्वाह करनेवाला ।

फल-मंजरी—स्त्री० [स० फ० त०] सर्पित में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी ।

फल-मुक्था—स्त्री० [स० तु० त०] अजमोदा ।

फल-मुपरिका—स्त्री० [स० सं० त०] पिंड भञ्ज ।

फल-योग—पू० [स० फ० त०] नाटक में वह स्थिति जिसमें फल की प्राप्ति या नायक के उद्देश्य की सिद्धि होती है । फलायाम ।

फल-राज—पू० [स० फ० त०] १ फलो का राजा । श्रेष्ठ फल । २. तरबूज । ३. खरबूजा । ४. आम ।

फल-लक्षणा—स्त्री० [स० मध्य० सं०] साहित्य में एक प्रकार की लक्षणा । **फलवति**—स्त्री० [स०] घाव में भरी जानेवाली बत्ती ।

फल-वस्ति—स्त्री० [स०] बैद्यक में एक प्रकार का वस्ति बर्तन जिसमें अंगूठे के बराबर मोटी और बारह अगुल लम्बी पिचकारी गुदा में दी जाती है ।

फलवान्—वि० [स० फल] मत्तुप, म ; व, फलवन् [स्त्री० फलवती] (वृक्ष आदि) जिसमें फल लग रहा ।

पू० फलदार वृक्ष ।

फलविष—पू० [स० फ० त०] वह वृक्ष जिसके फल विषय होते हैं । जैसे—करकभ ।

फलघ्न—पू० = फल-शाक ।

फल-शर्करा—स्त्री० [स० फ० त० या मध्य० सं०] फलो में रहनेवाली शर्करा या चीनी जो ओषधि आदि के कार्यों के लिए विशिष्ट प्रक्रिया से निकाली या बनाई जाती है । (फूट-पूगर)

फल-शाक—पू० [स० मयू० सं०] तरकारी बनाकर खाया जानेवाला फल ।

फल-भूति—स्त्री० [स० फ० त०] १ ऐना कचन जिसमें किसी कर्म के फल का वर्णन होता है और जिसे सुनकर लोगों को वह कर्म करने की प्रवृत्ति होती है । जैसे—यान करने से अदय पुण्य होना है । २ उच्च प्रकार का वर्णन सुनना ।

फल-श्रेष्ठ—पू० [स० फ० त० वा सं० त०] आम ।

फल-सत्कार—पू० [स० फ० त०] ज्योतिष में, आकाश के किसी ग्रह के केंद्र का समीकरण या मद-फल-निष्कर्षण ।

फलसफा—पू० [अ० फलसफ] १ ज्ञान । २ विद्या ३ दर्शन-शास्त्र । ४ तर्क-शास्त्र । ५ तर्क । दलील ।

फलसा—पू० [स० पाली] १ मूहला । २ दरवाजा ।

†पू० = फालगा ।

फल-स्थापन—पू० [स० ब० सं०] फनीकरण या मोमस्तोत्रयन सत्कार ।

फलहरी—स्त्री० [स० फल ; हरी (प्रत्य०)] १ वन के वृक्षों के फल । वन-फल । २ सब प्रकार के फल ।

†वि० = फलहारी ।

फलहार—पू० [स० फलहार] १ फलो का भक्षण । २ व्रत आदि के दिन खाये जानेवाले फल अथवा कुछ विशिष्ट फलों का बनाया जाने वाला व्यजन ।

फलहारी—स्त्री० [स० फल/हृ] अणु, फलहार+डीप्, व० सं०] कालिका देवी ।

वि० [हि० फलहार] १ फलहार-सवधी । २ फलहार के रूप में होनेवाला ।

फला—वि० [फ० फल] कोई अनिश्चित । अमुक ।

फलाय—स्त्री० [?] १ एक स्थान में उखलकर दूसरे स्थान पर जाने की क्रिया या भाव । कुदान । चौकीटी । छल्लाग । प्रि० प्र०—भरना ।—भारता ।

२. उतनी हरी जो फलों से पार की जाय । ३. मालवभ की एक कसरत ।

फलागना—पु० [हि० फलागं + ना (प्रत्य०)] एक रवान में उछलकर दूध में स्नान पर जाना या गिरना। फलाग भरना। फौदान।

फलात—पु० [म० फल-अथ, म० सं०] १ तात्पर्य। १ साराश।

फला—स्त्री० [म० फल्, अच् + टाप्] १ शमी। २ त्रियम्बु। ३ सिन्धुटीट।

फलाकना—म०-फलागना।

फलाकाश—स्त्री० [म० फल-आकाश, प० त०] फल-प्राप्ति की आशा या कामना।

फलागम—पु० [म० फल-आगम, प० त०] १ वृक्षों में फलों के आने का काल। फल लगन की ऋतु या मीगिम। २ वृक्षों में फल आना या लगना। ३ शब्द-ऋतु। ४ साहित्य में, रूपक की पाँच अवस्थाओं में में पाँचवीं और अंतिम अवस्था। प्रथम में नायक आदि के अमीष्ट की निरूपण होती है।

फलाह्वय—वि० [म० फल-आह्वय] फलों में लदा या भंग हुआ।

फलबन—पु० [म० फल-अवन, ब० सं०] १ वह जो फल लाता हो। २ तोषा।

फलावेद्य—पु० [म० फल-आवेद्य, प० त०] १ किसी वान का फल या परिणाम बनाना। फल बहना। २ ज्योतिष में, वे माने जो वहाँ के प्रभाव या फल के रूप में बतलाई जाती है।

फलापल—पु० [म० फल-अपल, प० त०] १ फलों का मालिक या स्वामी। २ देव्यर जो सब प्रकार के फल देता है। ३ विरली का पेड़।

फलाग—स्त्री० [अ० फला] स्त्री की भय। योनि। (वाजसू)

फलागना—म० [हि० फलना का प्रे०] १ किसी को फलन में प्रवृत्त करना। फलन का काम करना। २ फला में युक्त करना।

वि० [अ० फला] [स्त्री० फलागनी] (वह) त्रिवका नाम न लिया गया हो। अमक।

फलामुमेष—वि० [म० फल-अमेष, त० त०] जिसका अनुमान फल या परिणाम दयने में ही किया जाय।

फलापेक्षा—स्त्री० [म० फल-अपेक्षा, प० त०] फल की अपेक्षा या कामना।

फलाफल—पु० [म० फल-अफल, ब० सं०] किसी कर्म या कार्य के दुष्-अनुभव या दुष्ट-अनिष्ट फल। फल और अफल।

फलागम—पु० [म० फल-अगम, ब० सं०] १ खट्टे रसवाला या खट्टा फल। २ अम्लवेद्य। ३ विषाचली। विषाचिह्न।

फलागम-पक्षक—पु० [म० प० त०] बेर, अनाज, विषाचिह्न, अम्लवेद्य और बिजौरा में पाँच खट्टे फल।

फलाग—पु०-फलाहार।

फलागम—पु० [म० फल-आगम, प० त०] फलहार वृक्षों का बाग।

फलागी—वि०-फलाहार।

फलागी (विष्णु)—पु० [म० फल/अर्थ + णिनि] वह जो फल की कामना करे। फलकामी।

फलाकीन—स्त्री०-फलाजिन।

फलाकेत—स्त्री० [अ० फल-केत] एक प्रकार का ऊनी वस्त्र जो बहुत कोमल और डीली-डाली बुनावट का होता है।

फलावरण—पु० [स० फल-आवरण, प० त०] फलनेवाले पेड़-पौधों के फलों का वह ऊपरी आवरण जिसके अन्दर बीज रहते हैं। (परिकार्य)

फलाशन—पु० [स० फल-अशन, ब० सं०] १ वह जो फल खाता हो।

फल खानेवाला। २ तोषा।

फलाशी (विष्णु)—पु० [स० फल अश् + णिनि] वह जो फल खाता हो। फल खानेवाला।

फलासग—पु० [फल-आसग, म० त०] किसी कर्म के फल के प्रति होने-वाला आसग या आसक्ति।

फलासव—पु० [स० फल-आसव, प० त०] चरक के अलग्ग दास, मजूर आदि फलों के आसव जो २६ प्रकार के होते हैं।

फलाहल—स्त्री० [हि० फलाना-फलों में युक्त करना] १ वृक्षों, आदि में फल उत्पन्न करने की क्रिया, भाव या व्यवसाय। २ दुष्टि-कर्म। बंती-बारी। (परिचय)

फलाहार—पु० [स० फल-आहार, प० त०] फल का आहार।

स्त्री० [म० फलाहार] अन्न-वर्ग के खाद्यार्थों में अन्न, कुछ विशिष्ट फलों से बनाये जानेवाले व्यंजन जो विदुषों में बत के दिन खाये जाते हैं। जैसे—**एकवर्गी** का स्त्रियाँ फलाहार करती है।

फलाहारी (रिन्नु)—पु० [स० फलाहार + णिनि] [स्त्री० फलाहारिणी] वह जो फल याकन्न निर्वाह करता हो।

वि० १ फलाहार-सवधी। २ (खाद्य पदार्थ) जिसका गिनती फलाहार में होती है। (फलाहारी बीज में अन्न का मूल नहीं होता।)

जैसे—फ गशारी मिटाई।

फल—पु० [म० फल् + ण्] १ एक प्रकार की मछली। २ प्याला।

फलक—वि० [स० फल् + क्] १ फल का उपभोग करनेवाला। २ किसी कार्य, घटना या बात के उपरान्त उसके फल या परिणाम के रूप में होनेवाला। (रिजलन्ट)

पु० पर्वत। पहाड़।

फलाका—स्त्री० [स० फलिक + टाप्] १ एक प्रकार का बोझ जो हरे रंग का होता है। २ किसी चीज के आगे का नुकीला भाग।

फलित—पु० क्ल [स० फल + इत्] १ फल हुआ। २ पूरा या सफल किया हुआ। ३ जिसमें कुछ विशिष्ट स्थिति आदि के परिणामों का मसबब विचार हुआ हो। जैसे—फलित ज्योतिष। (दे०)

पु० १ पेट। २ तब्यर-कोट। छत्रीटा।

फलित ज्योतिष—पु० [म० कर्म० म० वा प० त०] ज्योतिष की दो शाखाओं में से एक जिसमें दृष्ट, नक्षत्रों आदि के मनुष्य जाति तथा मृष्टि के अर्थ अथवा पर पढ़नेवाले शुभामुभ फलों का विचार हाता है। (एस्ट्रोलोजी) ज्योतिष की दूसरी शाखा गणित ज्योतिष है।

फलित्य—वि० [म० फल् + ण्] जो फलने को हो अथवा फलने के योग्य हो।

फलित—स्त्री० [म० फलित + टाप्] रजस्वला स्त्री।

फलितार्थ—पु० [म० फलित-अर्थ कर्म० म०] १ तात्पर्य। २. साराज। निषोड।

फलिन—वि० [म० फल + टनन्] (वृक्ष) जिसमें फल लगते हैं।

पु० १ कटहला २ दयोनाक ३ रीटा।

फलिनी—स्त्री० [स० फल + णि + णीप्] १ त्रियम्बु। २ अग्नि-शिखा

नामक वृक्ष। ३ मूसली। ४ इलायची। ५ मेहदी। ६ सोना-पाड़ा। ७ भायभापा खता। ८ जल-नीपल। ९ बुद्धी घास।

१० दास से बनाया हुआ आसव या मद्य।

फली—पु० [स० फल+अच्। डीप्] १. सोनापाड़ा। २. कटहल। ३. प्रियंगु। ४. मूसली। ५. आमड़ा।

वि० [स० फल+इति] १. फला से पुक्त। फलवाला। २. जिसमें फल लगते हैं। ३. लाभादायक।

स्त्री० [हि० फल+ई (प्रत्यय)] १. पेड़-पौधों वा फल के रूप में होनेवाला वह लक्षोत्तर अंग जिसके अंदर केवल बीज रहते हैं। गुदा या रस नहीं रहता। (पौंड) २. उन्नत प्रकार का कोई विपदा, छोटा, लक्षोत्तर तथा हल फल जो तरकारी आदि के रूप में खाया जाता हो। छावी। (बीज) जैसे—मेम की फली।

फलीकरण—पु० [स० फल+चि, इत्, दीर्घ, √कृ+ल्युट्—अच्] [भू० क० फलीकृत] १. अनाज को भूने या भूसी से अलग करना। मोहना। फटना। २. भूरी।

फलीता—पु० [अ० फलील] १. फलीता।
वि० प्र०—रिवाजाना।

२. यत्नी। ३. जगदा से बोधा के लिए घोट के मास टाकी जानेवाली डोंगी। ४. गावीज।

मुहा०—फलीता घुसाना=तावीज या यत्र की घुसी देना।

फलीदार—वि० [हि०+फली] (पीसा या फलज) जिसमें फलियाँ लगती हों। (उन्मूलितस)

फलीमूल—भू० क० [स० फल+चि, इत्, दीर्घ, √भू+भत्] जिसका फल या परिणाम प्रत्यक्ष हो चुका या निकल चुका हो।

फलेदा—पु० [स० फलेद] एक प्रकार का आमून जिसका फल बड़ा, गंददार और मीठा होता है। फरेद।

फलेद—पु० [स० फल-उद्, मुमुगा म०] फलेदा या बड़ा जामुन।

फलीतमा—स्त्री० [स० फल-उत्तमा, म० त०] १. वाकलीदास। २. बुद्धी या धृष्टया पाग। ३. झिंकला।

फलीपत्ति—स्त्री० [स० फल-उत्पत्ति, प० त०] १. फल की उत्पत्ति। फल का प्रकट या प्रत्यक्ष होना। २. व्यापार आदि में होनेवाला आधिक लाभ।

पु० आम (वृष)।

फलीपय—पु० [स० फल-उदय, प० त०] १. फल का प्रवृद्ध होना। २. हर्ष। ३. दृढ़। ४. स्वर्ण।

फलीपुंस—पु० [स० फल-पुंस, प० त०] दे० 'फलापेदा'।

फलीपुंस—पु० [स० फल-उद्भव, प० त०] फल में से उपजने या उत्पन्न होने वाला।

पु० फल का उद्भव या उत्पत्ति।

फलीपर्वी (विन्)—वि० [स० फल-पर्वी, षी। णिनि] जिसकी जीविका फलों के व्यवसाय में चलती हो।

फलक—वि० [स० √फल+क] जो फेला हुआ हो अथवा जिसमें अपने अंग फैलाये हैं।

फल्य—वि० [स० √फल+इ, गुमागम] १. जिसमें कुछ तत्त्व न हो।

निस्सार। २. निरपेक्ष। व्यर्थ। ३. छोटा। ४. क्षुद्र। तुच्छ। ५. साधारण। सामान्य।

स्त्री० [स०] बिहार की एक छोटी नदी जिसके तट पर गया नगरी बनी हुई है। २. बसंत काल। ३. मिथ्या वचन। ४. कठगूलर।

फल्य—पु० [स० √फल्+उत्तन्, गुमागम] १. अर्जुन। २. फामुन का महीना।

वि० १. फाल्गुनी नक्षत्र-न्यवधी। २. जिसका जन्म फाल्गुनी नक्षत्र में हुआ हो। ३. लाज।

फाल्गुनाल—पु० [स० फल्युन्/अच्। अच्] फाल्गुन मास।

फल्युनी—स्त्री०—फाल्गुनी।

फाल्गुनीभव—पु० [स० फाल्गुनी/मू। अच्] वृहस्पति।

फाल्गुनाटिका—स्त्री० [स० फल्यु। वादी, प० त०। फन्तु, टाप्, ह्रस्व] कठगूलर।

फल्य—वि० [स० फल+यत्] १. फूल। २. कन्वी।

फला—पु० [दे०] एक प्रकार का रंजम जो बगाल में आता है।

फलकड़ा—पु० [अनु०] टापी फलकड़ तथा वृत्त के चल बैठने का ढग या मुद्रा।

वि० प्र०—मारना।

फलकना—अ० [अनु०] १. चिन्ते, सिचने, दबने आदि के फलस्वरूप काटे का कहीं से कुछ फट जाना। मयकना। २. नीचे बैठना। धंजना। ३. तडकना। फटना। ४. स्त्री या मादा पशु का गर्भवती होना।

वि० १. (पदार्थ) जो जल्दी फलक या मयक जाना हो। २. जो जल्दी धंज या बैठे जाय।

फलकाना—म० [हि० फलकाना का ग०] १. बपेटे का ममकना या दबाकर कुछ फाटना। २. धंजना। ३. गर्भवती कटना।

फलब—स्त्री० [अ० फल्ब] यूनानी या हकीमी चिकित्सा शास्त्र में, नगा या रंग में से निकारकर रक्त निकालने की क्रिया या भाव।

मुहा०—**फलब खुलवाना या खेला**—(क) गरीब का दूषित रक्त निकालना। (ख) मूर्खता या पागलपन का इलाज करना। (अपम)

फलल—स्त्री० [अ० फल्ल] १. ऋतु। मोसम। २. उपपन्न काल या समय। जंग-गेहं या चना बौने की फलल। ३. खन में बंधे हुए अनाजों आदि की पैदावार। (साधारणतः वर्ष में दो फल्ले होती हैं—रबी और खरीफ) ४. खन में खड़े हुए अनाज आदि के पौधे। (ऋतु) ५. खन आदि निकालने के लिए उन्नत के काटे हुए अथवा बाले। (हावेस्ट) ६. अध्याय। प्रकरण।

फसली—वि० [हि० फमल] १. फगल-नम्बन्धी। फगल का। २. किसी विविध फल या ऋतु में होनेवाला। जैसे—फगली बीमारी, फसली बुखार।

स्त्री० हैजा नामक रोग।

फली बीमारी—पु० [अ० फल्ल+हि० बीआ] १. पहाड़ी बीमारी जो गीत ऋतु में पहाड़ से उतरकर मैदान में चला आता है। २. बड़जा कल्ल अच्छे समय में आना स्वार्थ साधन करने के लिए किसी के साथ लया रहे और उनकी विपत्ति के समय काम न आवे। स्वार्थी। मनःथी।

फसली बीमारी—स्त्री० [हि०] हैजा नामक रोग।

फसली वृक्षार—पु० [अ० फसल + वृक्षार] ? दो ऋतुओं के सचिकाल के समय होनेवाला ज्वर। २ वर्षा ऋतु में, जाड़ा देकर आनवाला वृक्षार। जुड़ी। (मलेरिया)

फसली सन्—पु० [?] एक प्रकार का मत्त या सवत्। सम्राट् अकबर द्वारा कजाया गया ए० सन् जिसका उपयोग आजकल जमीन, लगान, माल-गुजारी आदि का हिसाब रखने के कामों में होता है। इसका आरम्भ भाद्रपद पूर्ण प्रतिपदा में होता है।

फसल—पु० [अ० फसाद्] [वि० फसादी] ? विगाड। विकार। खराबी। २ उदात्त। उदात्त। ३ दमा। बलवा। ४ लडाई। झगडा।

फसादी—वि० [फा० फसादी] ? फसाद मडा करनेवाला। २ विकार उत्पन्न करनेवाला। ३ उपदबी। पाजी।

फसाना—पु० [फा० फसान] ? कोई कल्पित तथा साहित्यिक रचना। २ उप-यास।

पद्य—फसानानवोस या फसानानिगार = कहानियाँ लिखनेवाला या उपन्यासकार।

फसाहल—स्त्री० [अ० फसाहल] ? कहने, लिखने आदि की वह शली जिसमें दैनिक बोधचाल के शब्दों तथा प्रयोगों की बहुलता हो और उसी शिष्ट जिसमें स्वाभाविकता तथा प्रसाद गुण हो। २ भाषण या साहित्यिक रचना में होनेवाले उक्त गुण।

फसल—स्त्री० = फसल।

फसली—स्त्री० [अ० फसली] चहादीवारी। परकाटा।

फसोहल—वि० [अ० फसोहल] [भाव० फसाहल] (रचना) जिसमें फसाहल अर्थात् बोधचाल के शब्दों और प्रयोगों की बहुलता हो और फसल जिसमें स्वाभाविकता, प्रसाद गुण तथा प्रवाहशीलता हो।

फसल—स्त्री० = फसल।

फसद—स्त्री० = फसद।

फसल—स्त्री० [अ०] = फसल।

फसली—वि०, पु० [अ०] = फसली।

फहल—स्त्री० [अ० फहल] ? ज्ञान। २ बुद्धि। गमज्ञ। ३ तमीज।
फहलश—स्त्री० [फा० फहलश] ? गिषा। सीख। २ आत्रा। हुकुम। ३ जेताजनी।

फहरन—स्त्री० [हि० फहरना] फहरने की अवस्था, फिया या भाव।

फहरना—अ० [स० प्रवरण] मुँह या कँठे हुए वस्त्र आदि का हवा में फरफर शब्द करने हुए उठना।

फहरन—स्त्री० [हि० फहरना] ? फहराने की क्रिया या भाव। २. दे० 'फहरन'।

फहरना—ग० [हि० फहरना] वस्त्र आदि को इस प्रकार एक तरफ से गुंजा छोड़ना कि यह हवा में फर-फर शब्द करते हुए उड़ने, लहराने या हिलने लगे। जैसे—अडा या हुपट्टा लहराना।

अ० हवा के कारण श्वर-उपर हिलना।

फहररल—स्त्री० = फहररल (सूची)।

फहस—वि० [अ० फुडम] फुहः। अश्लील।

फाक—स्त्री० [ग० फाक] ? फाक आदि का कटा हुआ लंबोत्तरा टुकडा। (विशेषण लंबार्क के बल कटा हुआ टुकडा।) जैसे—आम या मख की फाक। २ नारंगी, मुरासी आदि फलों के अन्दर उक्त प्रकार का

होनेवाला भग जो ऐसे ही अन्य अंगों से जुडा रहता है। ३ खरबूजे आदि फलों पर बने हुए उन प्रकृति चिह्नों में से हर एक जहाँ पर से काट हर फाँके बनाई जाती है।

फाकड़ा—वि० [दिश०] ? बाँका। तिरछा। २ हूट-गुट। तयडा।
फाकना—स० [हि० फकी] ? चुण के रूप में कोई औपाय या अन्य पदार्थ अजलि में फकर सटके से मुँह में डालना। जैसे—गन्धु फाकना, सुर्ती फाकना। २ मूत्रे हुए दाने खाना। जैसे—चने फाकना।

मुहा०—मूल फाकना = व्यर्थ में चारी शोर मूमना तथा मारा-मारा फिटना।

फाका—पु० = फका।

फाकी—स्त्री० [स० फकिषया] ? धोखा देते हुए किसी को किसी काम या बात से अलग रखना। वचित रखना। २ छल। धोखा।

क्रि० प्र०—देना।

†स्त्री० = फाका।

फागा—स्त्री० [?] एक प्रकार का साग।

फागी—स्त्री० = फागी।

फाँट—स्त्री० [हि० फाटना, फटना] ? वया-क्रम कई भागों में बाँटने की क्रिया या भाव।

क्रि० प्र०—बाधना।—लपाना।

पद्य—फाँट बबी = वह कागज जिसमें जमींदारी के हिस्सा का श्योरा लिखा रहता है।

२ उक्त प्रकार से किये हुए विभाग। ३ किसी चीज की दर आदि का बँडाय जानेवाला पदार्थ।

वि० जो आसानी से तैयार किया गया हो।

पु० [?] अंतर्धियों को उबालकर निकाला जानेवाला रस। काड़ा। वयाध।

फाँटना—स० [हि० बाँटना] ? किसी वस्तु को कई भागों में बाँटना। विभाग करना। २ औपधियों का रस निकालने के लिए उन्हे उबालना।

फाँटा—पु० [हि० फाँटना] ? जोड़े या लकड़ी का वह मुका हुआ या कोणा-कार टुकडा या दो बस्तुओं को परस्पर जकड़ रखने के लिए जोड़ पर जडा जाता है। कोनिया।

†पु० = फुटा।

फाँड—पु० = फाँड।

फाँडा—पु० [स० फाँड = फेट] धोती के लबाई के बल का उतना अस जितना कमर में लपेटा जाता है। फेता।

क्रि० प्र०—कमना।—बाँधना।

मुहा०—(किसी का) फाँडा पकड़ना = किसी में कुछ पाने या लेने के लिए इस प्रकार उसे पकड़ना कि वह भागने न पावे।

फाँव—स्त्री० [हि० फाँवना] फाँवने की क्रिया, डग या भाव।

†पु० = फाँ।

फाँवना—अ० [स० फणन, हि० फाँवना] शोक से शरीर को ऊपर उठाकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा पडना। कूदना। उछलना।

स० ? कोई रवाज कूदकर लीधना। जैसे—नाला फाँवना। २ नर-पशु का मादा-पशु से समीप करना।

सं० [हि० फदा] ? किसी को फदे या जाल में फँसाना । २ कोई काम आरम्भ करना । ठानना ।

काँदा—पु०=फदा ।

काँदी—स्त्री० [हि० फदा] ? वह रस्सी जिसे कोई वस्तु या को एक साथ रखकर बाँधने है। गूँडा बाँधने की रस्सी । २ उबन प्रकार से बाँधी हुई चीज । गूँडा ।

काँदा—स्त्री० [दिशा०] दरज । साँध ।

काँदी—स्त्री० [सं० पंवेटी] ? बहुत महीन जिनगी । बारीक तड़ा । २ दूध के ऊपर की मलाई की हलकी तह या परत । ३ आग के ठेके पर पड़नावाला जाला । माडा ।

काँदा—स्त्री० [सं० पाग] ? रस्सी में बनाया हुआ वह फदा जिसे पशु-पक्षियों का फँसाया जाता है । २ वह रस्सी जिसमें उक्त दृष्टि से फदा डाला या बनाया गया हो । फँसा ।

स्त्री० [सं० पनग] ? बाल, सूती लकड़ी आदि का मूढम विन्तु गूँडा तनु जो लम्बा में चूभ जागा है। उदा०—त्रैम भिगिरिदु में मिली फिर बाग की फाँदा।—रहीग ।

कि० प्र०—गडना ।—नुसना ।—निकलना ।—लगना ।
२ लाक्षणिक रूप में, कोई रस्सी अथवा वात जो मन में बहुत अधिक खटकती रहे। गंम । ३ बाल, बेल आदि का चौरकर बनाई हुई पतली तीली । पतली कमाची ।

मुहा०—फाँस निकलना—मन में होनेवाली खटक दूर होना ।

फाँसना—सं० [सं० पाज, प्रा० फास] ? फाँस अर्थात् फंद में किसी पशु या पक्षी का फँसाना । २ छल, ढग, युक्ति आदि में किसीको इस प्रकार अपने अधकार या उस में करना है कि उसमें लाभ उठाया या स्वायं निरुद्ध किया जा सक । ३ बोलचाल में, किसीको फुसलाकर उसमें अनुचित सबब स्थापित करना ।

फाँसा—पु० [हि० फाँगना] वह लम्बा रस्सा (या रस्सी) जिसके एक निर पर फदा बना होता है, और जिसकी मशायन में पशुओं का गला या पंर फँसाकर उन्हें पकड़ा अथवा पशु के गले में फँसाकर उन्हें पकड़ा या मारा जाता है । (कैसा) ।

फाँसी—स्त्री० [सं० पाशी] ? फँसाना का फदा । पाशा । २ रस्सी आदि का वह फदा जिन लोंग अपने गले में फँसाकर आत्म-दण्ड करने के लिए झुल या लटक जाते हैं ।

कि० प्र०—लगाणा ।
३ आज-कल वेग-द्रोहियों, हत्यारों आदि को दंड देने का एक प्रकार जिसमें दो लम्बों के बीच में एक लंबा रस्सा बाँधा रहता है और रस्से के दूसरे निकले सिरे के फंदे में अपराधी का गला फँसाकर इस प्रकार शस्त्रों से उसे नीचे गिरा दिया जाता है कि गला घुटने में बह मर जाता है ।

मुहा०—(किसी के लिए) फाँसी लगी होना—(क) किसीको फाँसी देने जान के लिए उसकी तैयारी होना । (ख) प्राणा का सकट उपस्थित होना । जान-जोखिम होना । फाँसी बंधाना, लटकाना या देना—उक्त प्रकार का दंड देकर मार डालना ।

४ अपराधियों को उक्त प्रकार से दिया जानेवाला प्राण-दण्ड । ५ कोई ऐसा सकटपूर्ण बंधन जिसमें प्राण जाने का भय हो अथवा प्राण निकलने का सा कष्ट हो। जैसे—त्रैम की फाँगी ।

फाँसल—स्त्री० [अ० फाँसल] ? कार्यालय आदि में एक ही प्रकार या विषय के आवश्यक काम-पत्रा की नथी । मिसिल । २ मोटे कागज, दपती आदि का एक तरह का खोल जिसमें उक्त कागज रखे जाते हैं । ३ तार, दफती आदि का बना हुआ वह उपकरण जिसमें उक्त प्रकार के काम-पत्र एक साथ रखे जाते हैं। तली । ४ पत्र, पत्रिका आदि के प्रथा का समुह ।

फाँसा—पु० [अ० फाँस] निराहार रहने की अवस्था या भाव । उपवास । पद—फाँसा कबी, फाँसावस्त ।

मुहा०—फाँसा करना—उपवास का कष्ट भोगते हुए दिन बिताना । कई कई दिन तक भूख रहकर कष्ट भोगना ।

फाँसकश—वि० [अ० ।-फाँस] [भाव० फाँसाकशी] भाजन न मिलने के कारण फाँसे या उपवास करनेवाला ।

फाँसावस्त—वि० [फाँस] [भाव० फाँसावस्ती] जो भूखा रहकर भी आनंदित तथा प्रसन्न रहता हो ।

फाँसावस्ती—स्त्री० [अ० ।-फाँस] ? बुरे दिनों में भी प्रसन्न रहत की वृत्ति ।

फाँसेवस्त—वि०—फाँसावस्त ।

फाँसेवस्ती—स्त्री०—फाँसावस्ती ।

फाँसलई—वि० [हि० फाँसल] पकड़ के रग का । भुरगण जिसे हुए लाल । पु० उक्त प्रकार का रग ।

फाँसल—स्त्री० [अ० फाँसल] [वि० फाँसलई] पकड़ नाम का पत्ती ।

फाँस—पु० [हि० फाँसु] ? फाँसु के महीने में हानवाला उम्व जिसमें लोंग एक दूसरे पर रग या गुल्ल डालते और बगत श्वनु के पीत गाने हैं ।

फि० प्र०—बैलना ।
२ उक्त अवसर पर गाने जानेवाला गीत जो प्राय अलौल होते हैं ।

फाँसु—पु० [सं० फाँसु] सिधिर श्वनु का दूसरा महीना । माघ के बाद का मास । फाँसुग । विक्रमी सबत्त का बारहवाँ महीना ।

फाँसुनी—वि० [हि० फाँसु] फाँसु-सकषी । फाँसु का ।

फाँसल—वि० [अ० फाँसल] ? आनंदकता में अधिक । जरूरत में अयादा । २ बचा हुआ । ३ किसी विषय का बहुत बड़ा ज्ञाता या विद्वान् । स्नातक ।

फाँसल बाकी—स्त्री० [अ०] लेने-देने का हिसाब निकालने पर बची हुई वह रकम जो दी या ली जाने की हो ।

फि० प्र०—निकलना ।—निकलना ।

फाँटक—पु० [सं० फाँटक] ? कारवाणा, बाटा, बड़े मकानों, महला आदि का बड़ा और मरुब द्वार । बड़ा दरवाजा । लोरण ।

मुहा०—(किसी व्यक्ति को) फाँटक में देना—कारागार या जेल में बंद करना । (किसी पशु को) फाँटक में देना—काशीहीन या मर्यादागिने में बंद करना ।

२ मशान की चहारदीवारी में लगा हुआ दरवाजा । पु० [हि० फाँटक] अनाज फटकने पर निकलनेवाला फालतू या र्ही अटा । पछांडन । फटकन ।

फाँटका—पु० [हि० फाँटक] बीजों की दर की केवल तेजी-मदी के विचार

से किया जानेवाला वह कव्य-विक्रय का निश्चय जिसकी गिनती एक प्रकार के जूए में होती है। खेला। सट्टा। (स्पेक्युलेशन)

विशेष—सम्भवत यह पहले बड़े-बड़े बाडों में फाटक के अन्दर होता था, इसी से इनका यह नाम पडा होगा।

फाटकी—स्त्री० [सं० फट् + णञ्, पूर्वा० सिद्धि, डीपृ०] फिटकरी।

फाटना—अ० फटना।

फाड़-फाड़—वि० [हि० फाड़ + खाना] १. फाड़ खानेवाला। कट-लखा। २. बहुत बड़ा शोभी। ३. भीषण।

फाड़न—स्त्री० [हि० फाड़ना] १. फाड़ने की क्रिया या भाव। २. कागड़, कपड़े आदि का टुकड़ा जो फाड़ने से निकले। ३. मयखन की हवाकर धी बनाने के समय उसमें से निकलनेवाली छीछ।

फाड़ना—सं० [सं० फाड़न, हि० फाटना] १. कागड़, वस्त्र आदि विस्तार-धाले किसी पदार्थ का कोई अंश बलपूर्वक इस प्रकार खींचना या लाभना कि वह बीच में दूर तक अपने मूल से अलग हो जाय। जैसे—

(क) कागड़ या कागड़ फाड़ना। (ख) मुकाटा फाड़ना।

सर्वा० कि०—डालना।—देना।—लेना।

२. तेज अस्त्र से किसी चीज पर आपात करके उसे कई अंगों में विभक्त करना। जैसे—गुल्लुआ से लकड़ी फाड़ना। ३. किसी नुकीली या पंजी चीज से किसी वस्तु का कोई अंग काटकर अलग करना या निकालना। जैसे—धेर का आने पडा से किसी का पेट फाड़ना।

विशेष—‘तीरना’ और ‘फाटना’ में मुख्य अन्तर यह है कि ‘तीरना’ में तो किसी वस्तु का कोई खंड बलपूर्वक अलग कर लेने का भाव प्रधान है परन्तु ‘फाटना’ में किसी विस्तार में दूर तक वस्तु को बीच से अलग करने का भाव मुख्य है। इसके अतिरिक्त कोई चीज पटककर तोड़ी तो जा सकती है परन्तु फाड़ी नहीं जा सकती।

४. किसी गोलाकार वस्तु का मूँह साधारण से अधिक और दूर तक फाँटना या बढ़ाना। जैसे—अधे फाडकर देलना, मूँह फाडकर उसमें कोई चीज डालना। ५. किसी गडद द्रव पदार्थ के सवंध में ऐसी क्रिया करना कि उसका जलीय अंश अलग तथा ठोस अंश अलग हो जाय। जैसे—खटाई शलकर दूध फाड़ना।

फाटिहा—पुं० [अ० फाटिह] १. आराम। २. प्रार्थना। ३. बुजान की पहली आयत, जो प्रायः मृत व्यक्तियों की आत्मा की शांति और मर्त्युक्ति की कामना से उनकी पञ्च या सत्वार पर पढ़ी जाती है।

कि० प्र०—पठना।

फाटना—सं० [सं० फाटन] रूई या धूनना।

[सं० [हि० फाटना] १. कार्य आरम्भ करना। ठानना। २. दे० ‘फाटना’।

फानी—वि० [अ० फानी] नष्ट हो जानेवाला। नष्टर।

फानूस—पुं० [अ० फानूस] १. धीसे की चिमनी-जिसमें से रोगानी छत्र कर चारों ओर फैलती है। २. उन्नत आकार-प्रकार का धीसे का वह आधान जो प्रायः छत्रों में लटकाना जाता है और जिसमें लगे हुए गिलासा आदि में अनेक मोमबत्तियाँ जलाई जाती हैं। ३. एक प्रकार का दीपाधार जिसके चारों ओर महीन कपड़े या कागड़ या बेरा बना होता है। कपड़ या कागड़ से मड़ी हुई पत्तों की शकल की एक प्रकार की बड़ी कदील। ४. समुद्र के किनारे का वह ऊँचा स्थान जहाँ रात

को प्रकाश होता है और उसे देखकर जहाज बरसाह पर पहुँचता है। कदीलिया।

पुं० [अ० फानूस] ईंटी आदि की भट्टी जिसमें लोहा आदि गलाने हैं।

फाफर—पुं० [सं० फफट] १. दे० ‘फट’।

फाफा—स्त्री० [अ० फ] दाँत गिर जाने से फा फा करके बालनेवाली बुढ़िया। पोपली बुढ़िया।

पह—फाफे कुटनी—वह बुढ़िया (या स्त्री) जो इधर की बातें अन्धर लोकार दो पत्रों में झगडा करती हो।

फाफुंदा—पुं०—फाँतिया।

फाह—स्त्री० [सं० प्रमा] फवने की क्रिया या भाव। फवन।

फावना—अ० फवना।

फाववा—पुं० [अ० फाववा] १. किसी काम या बात में होनेवाला किसी प्रकार का लाभ। जैसे—वह दवा बुखार में बहुत फाववा करती है। २. बाणिक उद्ये में होनेवाली किसी प्रकार की प्राप्ति। जैसे—

इस साल उद्ये रोजगार में दस हजार रुपयों का फाववा हुआ है। ३. किसी काम या बात से होनेवाला वह द्रष्ट या शुभ परिणाम जो किसी रूप में लाभदायक या हितकर हो। किसी तरह का अच्छा असर या प्रभाव। जैसे—व्यर्थ झगडा बढाने में कोई फाववा नहीं होगा।

फाववेवध—वि० [फा०] लाभदायक। उपकारक।

फावर—पुं० [अ० फावर] १. आय। २. ताँप, बहूक आदि दामने की क्रिया या भाव। फेर।

फावर विधे—पुं० [अ० फ] पुलिम विभाग के अंतर्गत वह दल या वर्ग जिसका काम आम बुझाना, अक्वामत् जमीन के नीचे दब जानेवाले लोगों को निकालना तथा इसी प्रकार के दूसरे काम करना होता है।

फावा—पुं०—फाहा।

फारा—पुं० [सं० फारा] १. खडा टुकड़ा। २. किसी प्रकार का चौरा, पतला अंग का विस्तार। ३. बूझों के पत्ता का वह मुख्य, पतल और चौडा अंग जो ठठल के आगे निकला रहता है। (लैमिना)

पुं०—फाल।

फारखती—स्त्री० [अ० फारिग + फा० खती] १. सयवा अदा होने की रसीद। ऋण-मुक्ति का सूचक पत्र। २. वह कागड़ या लेख जिस पर यह लिखा हो कि अमुक व्यक्ति अपने अधिकार या उत्तरदायित्व आदि से पूर्णतः मुक्त हो गया है और प्रस्तुत निश्चय से उनका कोई संबंध नहीं रह गया है। जैंग—बाग में बटे से फारखती लिखा ली है, अर्थात् यह लिखा लिया है कि हमारी सम्पत्ति पर उनका कोई अधिकार नहीं है।

कि० प्र०—लिखना।—लिखाना।

फारना—सं०—फाड़ना।

फारम—पुं० [अ० फारम] १. प्रार्थना, विवर्ण आदि से सवंध रखनेवाले पत्रों आदि का वह निश्चिंत और ब्रिहित रूप चित्रमें भिन्न-भिन्न शतव्य बातों का उल्लेख करने के लिए अलग अलग कोडक, मंत्र या स्थान बने होते हैं। २. इस प्रकार का बना अथवा छाने हुआ कोई फागड़। ३. खेलों आदि में, खिलाड़ी को वह शारीरिक और मानसिक

स्वयं विहित जो उन्हें अच्छी तरह से लेलने में समर्थ करती है। जैसे—क्रिकेट का अमुक खिलाड़ी फारस में नहीं है।

पु० [अं० फार्म] बेती-बारी की जमीन का वह बड़ा खब या टुकड़ा जिसमें कुछ विशिष्ट रीतियों से अधिक मात्रा में चीजें बोई जाती हों अथवा पशु-पक्षी आदि पालन और बर्चन के लिए रखे जाते हों। (फार्म)

फारस—पु० [स० पारस्य; फा० फ़ार्स] अफगानिस्तान के पश्चिम का एक प्रसिद्ध देश जिसे आज-कल ईरान कहते हैं तथा जिसमें वैदिक युग में अग्नि लोग रहते थे, जहाँ कुछ दिनों बाद फारसी धर्म और अत में इस्लाम का प्रचार हुआ था।

फारसी—वि० [फा० फार्सी] फारस या ईरान देश में होने अथवा उससे संबध रखनेवाला। फारस का।

स्त्री० फारमी अर्थात् आधुनिक ईरान की भाषा जो वस्तुतः आर्य-परिवार की ही है।

फारा—पु० १ =फार (फाल)। २.=फरा (व्यञ्जन)।

फारिग—वि० [अ० फारिग] १ जो अपना कोई काम करके निश्चित हो गया हो। जिम्मे किसी काम से छुट्टी या ली हो। बे-फिक्र। २ जिसे किसी प्रकार के बचन से छुटकारा मिल गया हो। मुक्त। स्वतंत्र। आजाद। ३ काम से फूरसत पाया हुआ। सावकाश। अवकाश-प्राप्त।

फारिग-शब्ती—स्त्री० दे० 'फारशती'।

फारिगुलबाश—वि० [अ० फारिग-उलुगुल] [भा० फारिगुलबाली] १ जिस पर बाल बराबर भी भार न रह गया हो। फलतः सब प्रकार से बेफिक्र या निश्चित। २ जो सब प्रकार से सज्ज और सुखी हो।

फारी—स्त्री० =फरिया (ओड़नी)। उदा०—चनीटा खीरोब फारी। —जायमी।

फार्म—पु० दे० 'कार्म'।

फाल—पु० [स० फाल्-अण् वा/फल्-पञ्] १ महादेव। २ बलदेव। ३ कुछ विशिष्ट पीधों या फला के पेधों से बना हुआ कपड़ा।

विद्योष—मध्य युग में रुई से बना हुआ कपड़ा भी इसी के अन्तर्गत माना जाता था।

४ रुई का पोषा। ५ फारना। फावड़ा।

पु० नी प्रकार की दैवी परीक्षाओं या दिव्यों में से एक जिसमें लोहे की तपाई हुई फाल अपराधी को चटाते थे और जीभ के जलने पर उसे दायी और न जलने पर निदोष ममज्ञते थे।

स्त्री० थोड़े का लबा, चौधौंर छड़ जिसका सिरा नुकीला और पैना होता है और जो हल की लकड़ी के नीचे लगा रहता है। कुम। कुसी। पु० [स० फाल] १ चकने में एक स्थान से उठाकर आगे के स्थान में पेर डालना। डम। २ कूदने में उक्त प्रकार से एक के बाद रखा जाने वाला दूसरा फाल। ३ जानती दूरी जितनी उक्त क्रियाओं के समय एक के बाद दूसरा पेर रखने में पार की जाती है।

फि० प्र०—भरना।—रखना।

मुहा०—फाल बहिषा =फालिग मारना। कूदकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना। उछलकर लौचना।

स्त्री० [स० फलक या हि० फाडना] १ किसी ठोस चीज का काटा या कातरा हुआ पतले ढल का टुकड़ा। जैसे—मुगारी की फाल। २ मुगारी के ढटे हुए टुकड़े। छालिया।

स्त्री० [अ० फ़ाल] रमल में, पाँसा आदि फेंककर शुष-अधुष बतलाने की क्रिया।

फि० प्र०—देखना।—निकालना।

फाल-हुट्ट—पु० फ० [सं० पु० तं०] १ (खेत) जो जोता या बुका हो। २ (अन्न) जो हल से जोते हुए खेत में उपजा हो। ३ छवि या खेती से प्राप्त होनेवाला।

फालसु—वि० [?] १. (पदार्थ) जो उपयोग में न आ रहा हो और यँ-ही पड़ा या रखा हुआ हो। २ जो किसी काम का न हो। जिससे किसी प्रकार का काम न सरता हो। निरर्थक। रद्दी। जैसे—फालसु आदमी।

फाल-नामा—पु० [अ० +फा०] वह पद्य जिसे देखकर फाल की सहायता से शकुनी या शुभा-शुभ का विचार किया जाता है।

फालसई—वि० [हि० फालसा+ई (प्रत्य०)] फालने के रंग का। ललाई लिये हुए कुछ कुछ नीला।

पु० उक्त प्रकार का रंग।

फालसा—पु० [स० पश्क, पुष्य, प्रा० फरस] १ एक प्रकार का छोटा पेड़ जिसमें छडी के आकार की सीधी डालियाँ चारों ओर निकलती हैं और उनमें बोनो और सात-आठ अंगुल भर के गोल लुवरदे पत्ते तथा भटर के आकार के फल लगते हैं। २ उक्त वृक्ष का छोटा गोलकार फल जो वैद्यक में, ज्वर, क्षय तथा बात को नष्ट करनेवाला माना गया है।

पु० [?] मैदानों में भागकर आया हुआ जगली गन्।

फालिज—पु० [अ० फालिज] अर्थय या पक्षाघात नामक रोग। लकवा। फि० प्र०—गिरना।—मरना।

फाल्सा—पु० [फा० फाल्द] १ गेहूँ के सत्त में बननेवाला एक प्रकार का पक्ष पदार्थ। २ निशास्ते, मैदे आदि का बना हुआ एक प्रकार का व्यञ्जन जो सेवई की तरह का होता है और जो शरबत, कुली आदि के साथ खाया जाता है।

फाल्गुन—पु० [सं० फल्+उन्नत्, गुल्+अण्] १. चंद्र वर्ष का अंतिम माहीना जो माघ के बाद और चैत के पहले पड़ता है। फागुन। २. दूसरी नामक सोम पक्ष। ३ अर्जुन का एक नाम। ४. अर्जुन वृक्ष। ५ एक प्राचीन तीर्थ। ६ बृहस्पति का एक वर्ष जिसमें उसका उदय फाल्गुनी नक्षत्र में होता है।

फाल्गुनिक—वि० [स० फल्गुनी या फाल्गुनी+ठल्—इक] १. फल्गुनी नक्षत्र-संबधी। २. फाल्गुनी की पूर्णिमा से संबध रखनेवाला।

पु० फाल्गुन मास।

फाल्गुनी—स्त्री० [स० फाल्गुन+डीप] १ फाल्गुन मास की पूर्णिमा। २ पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र।

फावड़ा—पु० [स० फाल; प्रा० फाव] [स्त्री० अल्पा० फावड़ी] मिट्टी खोदने का प्रसिद्ध उपकरण। फरसा।

फि० प्र०—खलना।

मुहा०—फावड़ा बजना =बुद्धाई का काम आरंभ होना।

फावड़ी—स्त्री० [हि० फावड़ा] १. छोटा फावड़ा। २. फावड़े के आकार का काठ का एक उपकरण जिससे घास, लीड, मैला आदि हटाया जाता है।

काश—वि० [फा० काश] ? खुला हुआ। प्रकट। स्पष्ट।

मुहा०—पेदा काश होना—भेद या रहस्य खुलना। (प्रायः बुरे प्रयोग में)

२ जिसके आगे या ऊपर का आवरण हट गया हो। अनाच्छ।

कासला—पु० [अ० फामिल] अवकाश संबंधी दूरी। अंतर। जैसे—दो मील का फामला।

कासिज्म—पु०—फैसिज्म।

कासिस्ट—पु०—फैमिस्ट।

कासिब—वि० [अ० फामिल] १ फमाब या उपद्रव खरा करनेवाला।

२ खगोलीय या विकार पैदा करनेवाला। ३ बुरा। खोटा।

कासिला—पु०—फामला।

कास्कोरस—पु० [यून०, अ०] एक ज्वलनशील अघातविह तत्त्व जो अपने विशद रूप में नहीं परन्तु आस्त्रीजन, कैलमियम और भयनेशियम के साथ मिला हुआ पाया जाता है।

काहा—पु० [म० फाल-स्ट, या म० फाल-कपडा, प्रा० पोथ, हि० फाहा] ? तेल, घी आदि में तर की हुई कपड़े की पट्टी या रुई का लच्छा। जैसे—अंतर का फाहा। २ घाव, फोड़े आदि पर चिपकाया जानवाला कपड़े का वह टुकड़ा जिसे मरहम लगी रहती है।

काहिशा—वि० [अ० काहिशा] ? अव्यत दर्पित। बहुरूप। २ हेय।

काहिशा—स्त्री० [अ० काहिशा] कुलटा। पुरुषवादी।

काहुरा—पु०—फावटा।

फिकरना—वि०—फैकचना।

फिकवाना—वि०—फैकवाना।

फिका—पु० [म० फालिग+पूर्वो०]—फिना।

फिमा—पु० [म० फिकग] लाल पत्रा, भूरे पत्रा तथा पीली चांचवाला एक तरह का पत्थी। फेगा।

फिकई—स्त्री० [?] चने की तरह का एक माटा अन्न। (बदेक मट्ट)

फिकर—स्त्री०—फिकर।

फिकरा—पु० [अ० फिक] ? वाक्य। २ दूसरों को धोखा देने के लिए बड़ी जानैवाली बात।

पद—फिकरेबाज।

फि० प्र०—देना।—बताना।

मुहा०—(फिसा का) फिकरा चलना धोखा देने के लिए किसी की कहीं हुई बात का अभीष्ट परिणाम या फल होना। फिकरा बनाना या तराशना धोखा देने के लिए कोई बात गड़बड़ करना।

२ जगपूर्णे बात।

मुहा०—फिकरे डालना या मुनाना—व्ययपूर्ण बातें कहना। आवाजा लगाना। (फिसी को) फिकरा देना या बताना—फिसी का झठी आवाज रखन या टालने के लिए झंझर-उधर की बातें बनाना या बहानेबाजी करना।

फिकरेबाजी—पु० [अ० फिक। फा० बाज] [माल० फिकरेबाजी]

१ वह जो लोगों को धोखा देने के लिए बार्ते गड़बड़कर करता हो। झंझा-मट्टी देनेवाला। २. वह जो व्ययपूर्ण बातें कहने अथवा फवर्तियाँ बसने में अग्रणी या बहा हो।

फिकवाना—वि०—फैकवाना।

फिकार—पु०—फिकई (कदम)।

फिकरि—स्त्री०—फिकरि।

फिकेत—पु० [हि० फेकना] [भाव० फिकैती] १ गतका-फरी, पटा-बनेटी आदि का बिलाडी। पटेबाज। २ बरछा या भाला फेकर चलानेवाला योडा।

फिकैती—स्त्री० [हि० फिकैती] ? पटा-बनेटी चलाने का काम या विद्या। पटेबाजी। २ भाला आदि फेकर चलाने की कला या विद्या।

फिक—स्त्री० [अ० फिक] ? वह मानसिक अवस्था जिसमें मन विद्युत्प्रेरक किसी हानेवाली अवस्था वीती हुई बात या उसके परिणाम के संबंध में विकल भाव में बार-बार विचार करता रहता है और साथ ही भयभीत होता तथा दुःखी रहता है। चिंता।

फि० प्र०—लगना।

२ किसी बात के निर्वाह, पालन आदि के संबंध में होनेवाला ध्यान।

जैसे—उस मर्द को अपने बच्चों की चिन्ता थी।

फि० प्र०—होना।

३ कोई काम करने के लिए मन में किया जाने या होनेवाला विचार। ध्यान। उदा०—अब मौत नकारा जान चला चलने की फिक करती थाया।—मन्त्री। ४ उपाय की उदावना या विचार। यत्न।

तदवीर। जैसे—अब तुम हमें छाड़ दो और अपनी फिक करो। ५ गार्हस्थ्य में, काव्य-रचना के लिए किया जानेवाला निरतन या विचार।

फिकमद—वि० [फा० फिकमद] जिसे फिक या भिना लगी हुई हो।

फिकपुर—पु० [म० पिछ-लार] मुच्छी के समय मूँह में मे निरलनेवाली जाम या फेन।

फि० प्र०—गकलना।—बहना।

फिट—वि० [अ० फिट] ? उपयुक्त। ठीक। मूर्तान्वय। २ जिसके गाव अम-उपाय, या कल-पुत्रज बिल्कुल ठीक या दुर्गत हो। हर तरह से तैयार।

मुहा०—(कल या मशीन) फिट करना—यंत्र के पुत्रजे आदि यथा-स्थान बँटाकर उसे ठीक तरह से काम करने के योग्य बनाना।

३ जो नाप आदि के विचार में ठीक या पूरा हो। अपने स्थान पर ठीक बैठनेवाला। उपयुक्त। जैसे—उपड़े यह जग फिट आयेगा।

पु० मिंगी आदि रंगों का वह दौरा जिसमें आरसी बेहाल हो जाता है और उसके मूँह में जाम आदि निकलने लगती है।

मर्जी—फिटहर।

फिटकार—स्त्री० [हि० फिट (अनु०)।कार (प्रत्य०)] ? धिककार। लानत।

फि० प०—खाना।—देना।—पड़ना।—मुनना।

मुहा०—मूँह पर फिटकार बरसना—बहुरा बहुत ही फीका या उतरा हुआ होना। मूल की कति न रहना। श्रीहत होना। (फिसी को)

फिटकार लगाना—फिसी के फिटकारने का परिणाम दिनाई देना। २ हककी मिलावट।

फिटफिरी—स्त्री० [म० स्फटिका] गफंद रंग का एक प्रसिद्ध खनिज पदार्थ जो पत्थर के डंठे की तरह होता और प्रायः अंधक के काम आता है।

(एलम)

फिटकी—स्त्री० [अनु०] १ सुत के छोटे-छोटे फुकरे जो कपड़े की बुनावट में निकले रहते हैं। २. छोटा। ३. फटकी।
†स्त्री०=फिटकिरी।

फिटान—स्त्री० [अ०] पुरानी चाल की एक तरह की चार पहियोंवाली बर्फी घोड़ा-गाड़ी जिसमें एक या दो घोड़े जोते जाते थे।

फिटार—पुं० [अ०] १. कल्ले के पुरले बुरस्त करने और यक्रे में उन्हे यथास्थान बैठानेवाला मिश्रण। २. वह दरजी जो सिले हुए कपड़ों को किसी की नाप-गोथ के बराबर करता हो।

फिटसन—पुं० [देश०] कठमेमल का छोटा वृक्ष जिसकी पत्तियाँ चारे के काम में आती हैं।

फिट्टा—वि० [हि० फिट] जो फटकार खा-सा कर निर्लम्ब हो गया हो। फटकार खाने का अर्थस्त। जैत—फिट्टे मुँह।

पक्—फिट्टे मुँह—तुम्हारे मुँह पर फिटकार पड़े। तुम्हें थिक्कार है।

फितना—पुं० [अ० फितल] १ अकस्मात् होनेवाला उपद्रव। २ उल्हास। उपद्रव। ३ बगा-फसाद। लडाई-झगडा। ४ बगावत। विद्रोह।

फि० प्र०—उठना। —उठाना। —बडा बनना।

५. ऐसा व्यक्तिको बहुत ही दुष्ट प्रकृति का होना दूसरों में लडाई-झगमा करता रहना हो। ६ एक प्रकार का पीया और उसका फल।

७ एक प्रकार का डब।

फितरत—स्त्री० [अ० फितर] १ स्वभाव। प्रकृति। २ गृष्टि। ३ चालाकी। चालवाजी। ४ शरगत।

फितरती—वि० [अ० फितरती] १ चतुर। हीनशास। २ चालाक। धूर्त। ३ शरारत करनेवाला।

फितरो—वि० [अ० फिकी] १ प्राकृतिक। २ जन्म-जात। गहज।

फितुर—पुं०—फतूर।

फितुरिया—वि०—फतुरिया।

फिकची—वि० [अ० फिक्की] १ रवामी-भक्त। आशावादी। २ किसी के लिए जान तक निछावर करनेवाला। ३ निवेदक।

पुं० दास। सेवक। (स्वयं अपने सम्बन्ध में, दम्भनासूचक)

फिहा—पुं० [अ० फिहा] १ किसी पर कुछ न्योछावर या बलिदान करना। २ किसी के लिए आत्म-बलिदान करना। ३ आगवत होने की अवस्था या भाव।

वि० १ दूसरे के लिए आत्म-बलिदान करनेवाला। २ अपने आप को किसी पर निछावर करनेवाला। ३ पूर्णरूप से आगवत।

फिहाई—वि० [अ० फिहाई] १ प्राण निछावर करनेवाला। आत्म-बलिदान करनेवाला। २ जा किसी के प्रेम में पूर्ण तरह से पासल हो रहा हो।

पुं० १ भक्त। २ आधिक।

फिहा—पुं०—फिहा।

फिनागा—पुं०—भुनागा।

फिनिया—स्त्री० [देश०] कन्नो में पहनने का एक आभूषण।

फिनोब—स्त्री० [स्त्री० फिनब] एक प्रकार की छोटी ताव जिस पर दो मस्तूल होते हैं।

फिकरी—स्त्री०—पपडी।

फिफक—पुं०—फेफडा। (राज०)

फिया—स्त्री० [स० प्लीहा] प्लीहा। तिल्ली।

फिरंग—पुं० [अ० फाक] १ यूरोप का देश। गौरी का मुलक। फिरंगिस्तान। २ आतंशक या गरमी नामक रोग।

फिरंगिस्तान—पुं० [अ० फाक+फा० स्तान] फिरंगियों के रहने का देश। गौरी का देश, यूरोप।

फिरगी—वि० [हि० फिरंग] १ फिरंग देश में उपजने वाला। २ फिरंग देश से संबंध रखनेवाला। ३. फिरंग रोग से संबंध रखनेवाला।

पुं० फिरंग देश अर्थात् यूरोप का निवासी। (उपेक्षा सूचक)

स्त्री० बिल्याती तलवार।

फिरंट—वि० [अ० फरट] प्रतिकूल। विरुद्ध। (केवल व्यक्तियों के संबंध में प्रयुक्त) जैसे—आज-कल वृद्ध हमसे फिरंट हो गये हैं।

फिरवर—वि० [हि० फिरना—घूमना] १ बराबर इधर-उधर घूमना-फिरना करनेवाला। २ बराबर इधर-उधर घूमते-फिरते रहने या उससे संबंध रखनेवाला। जैसे—फिरवर अवस्था में रहनेवाली जगती जातियाँ।

फिर—अव्य० [हि० फिरना] १ जैसा एक बार होना या था, वैसा ही दूसरी बार भी। दोबारा। दोबारा। पुनः। जैसे—(क) इन बार तो छंड देता हूँ, फिर कभी ऐसा काम मत करना। (स) उनके मकान के बाहर फिर एक बगीचा पक्ता है।

पक्—फिर फिर—एक म अधिक बार। बार बार।

२ भविष्य में कभी या किसी समय। जैसे—फिर आना तो साने होगी। ३ कोई बात ही बूकने पर। पीछे। अनन्तर। उत्तर। बाद। जैसे—जरा उसमें साने शुरू करो, फिर देखो कि वह क्या क्या करता है।

पक्—फिर क्या है!—नया क्या पूछना है। तब तो कोई अडचन ही नहीं है। जैसे—आज आप वहीं चले जायें ता फिर क्या है ?

५. इयके अतिरिक्ता इन्तरेगिया। जैसे—फिर वह भी तो है कि वह कहाँ जाकर बैठ रहे।

फिरक—स्त्री० [हि० फिरना] एक प्रकार की छोटी गाड़ी जिस पर देहानी लोच पीठों को लावकर इधर-उधर ले जाते हैं (स्त्रील्लवण)

फिरकना—अ० [हि० फिरना] १ फिरकी की तरह घूमना। किसी अड पर घूमना या चक्कर लगाना। २ बिरतना। मानना।

फिरका—पुं० [अ० फिक] १ जाति। २ वर्ग। ३ गिरोह। अन्धा। ४ पक्ष। प्रसारा। ५ अफरीदियों, पल्लूनों आदि में कोई विनिष्ट वर्ग या अलग जाति के रूप में रहता हो।

फिरकी—स्त्री० [हि० फिरकना] १ चमड़े, दपती, धातु आदि का वह गोल या चक्राकार टुकडा जो बीच की कीलों को एक स्थान पर टिककर उसके चारों ओर घूमता हो। २ लडकों का एक प्रकार का छोटा बिल्लोना जो घूमाने से अपनी धुरी पर जोरों से घूमना हुआ चक्कर लगाना है। फिरहरी। भँवरी। ३ बकई या अकरो नाम का बिल्लोना। ४ धातु, लकड़ी या और किसी चीज का वह गोल टुकडा जो चरखे, तकले आदि में लगा रहता है। ५. मालखम की एक कमल जिसमें जिधर के हाथ से मालखम लकटे हैं उसी ओर घूमने दुकाकर

फुगती से दूमरे हाथ के कंधे पर मालखम को लिये हुए उड़ान करते हैं।
६. कुन्ती का एक दाँव या पंच।

फिरकी बंध—पुं० [हि०] एक प्रकार की कमलत या दंड जिसमें दंड करते समय दोनों शायों को जमीन पर जमाकर उनके बीच से से तिर देकर चारों ओर चक्कर लगाते हैं।

फिरकेबंदी—स्त्री० [फा० फिरकें बंदी] दलबंदी।

फिरकैया—स्त्री० [हि० फिरना] १. घूमने या चक्कर लगाने की क्रिया या भाव। उदा०—फिरकैया लै निमं अलायन, बिच बिच तान रस्तीनी।
—अर्न्त फिरकी। २. दे० 'फिरकी'।

फिरगाना*—पुं०=फिरगी।

फिरता—वि० [हि० फिरना या फेरना] १. जो जाकर फिर आया हो। लौटा हुआ। २. जो फेर दिया गया हो। लौटाना या वापस किया हुआ। जैसे—फिरता माल। ३. जो घूम-फिर रहा हो अथवा घूम-फिर कर कोई काम करता हो।

पुं० १. फिरने, लौटने या वापस होने की अवस्था क्रिया या भाव।
२. फेरने, लौटने या वापस करने की क्रिया या भाव। ३. दलाली के रूप में मिलनेवाला धन। (दलाल)

फिरवोस—पुं० [अ० फिरवोस] १. वाटिका। बाग। २. रत्न। बहिन।

फिरवोमी—वि० [अ० फिरवोमी] स्वयं न रहनेवाला।

पं० फारसी भाषा का एक महान कवि जिसकी प्रसिद्ध रचना 'शाहनामा' महानायक है।

फिरना—अ० [हि० फेरना या अ०] १. किसी चीज का ऐसी स्थिति में आना, होना या न्याया जाना कि वह किसी अक्ष या घूरी पर अथवा किसी विंशट में घेरे में या मार्ग पर घूमने या चक्कर रचाने लगे। जैसे—(क) चक्की का पहिया फिरना। (ख) मनका या माला फिरना। २. किसी दिन में घूमना या सूचना अथवा घुमाया या मांडा जाना। घूमना। जैसे—(क) तांछ में तारी फिरना। (ख) यह गली आगे चलकर दाहिनी ओर फिर गई है। ३. किसी मार्ग या पथ पर किसी का घूमना, विद्योयन बार बार चक्कर लगाना। जैसे—गली में चौरा या शहर में निमायाया का फिरना। ४. जहाँ से कोई चला हो उसका लौटकर फिर वहीं आना या पहुँचाना। वापस लौटना। जैसे—साजन अब क्या फिरेंगे। ५. जो चीज जहाँ से आई हो उसका वहीं वापस भेजा जाना। जैसे—बिका हुआ माल फिरना। ६. सूचना आदि के रूप में मं० व. गमनें घुमाया जाना। जैसे—(क) हुमी या डंगी फिरना। (ख) दुःखी फिरना। ७. घूम, मूढ़ या पलटकर विरुद्ध दिशा में आना। जैसे—पीछे की ओर मुँह फिरना।

मूहा०—जो फिरना—चित्त विरक्त होना।

८. उन्मत्त होना। जैसे—धमन फिरना।

मूहा०—फिसी और फिरना—उन्मत्त होना।

९. लाक्षणिक अर्थ में, पहले से बिलकुल विपरीत स्थिति में आना।

दशा बदलना। जैसे—(क) फिरमत फिरना। (ख) दिन फिरना।

१०. सामान्य या माधुर्य अवस्था की अपेक्षा हीन अवस्था को प्राप्त होना। जैसे—(क) बुद्धि फिरना। (ख) आँखें फिरना। (घ) जाना)

मूहा०—सिर फिरना=बुद्धि प्रभट होना। हर बात उलटी समझ में आना।

११. कहीं हुई बात या दिये हुए वचन पर ढूँढ न रहना। भुकरना।
१२. किसी तरल पदार्थ का पीता आना। जैसे—कमरे में बूना या दरवाजा पर रग फिरना। १३. धीरे से मला जाना। जैसे—सिर पर हाथ फिरना। १४. मूढ़ से मूढ़ या विष्टा का त्याग जाना। जैसे—भाडा या टट्टी फिरना।

फिरनी—स्त्री० [?] चीनी, मेवे आदि से युक्त एक प्रकार का खाद्य जो दूध में चीरके को उबाल तथा जमाकर तैयार किया जाता है।

फिरबा—पुं० [हि० फिरना] १. गले में पहनने का एक आभूषण। २. सोने के तार में कई फेरे डालकर बनाई जानेवाली अँगूठी।

फिरवाना—पुं० [हि० फेरना का प्रे०] फेरने का काम दूमरे से कराना।
फिराई—स्त्री० [हि० फिराना] फिराने या फेरने की क्रिया, भाव या मजहुरी।

फिराऊ—वि० [हि० फिरना] १. जो लौट रहा हो। वापस आने या लौटनेवाला। जैसे—फिराऊ मेला। २. जिसके संबंध में यह निश्चय हो कि कोई धर्म पूरी होने या न होने की दशा में फेर या लौटाना जा सकेगा। जैसे—फिराऊ रहन। ३. दे० 'जाक'।

फिराक—पुं० [अ० फिराक] १. बियोग। बिछोह। २. किसी बात की अपेक्षा या आवश्यकता होने पर उसके संबंध की चिंता या साँच। जैसे—नौकरों के फिराक में इधर-उधर घूमना।
†स्त्री०—फ्राक।

फिराब (बि)—स्त्री०=फिरियाद।

फिराना—सं० [हि० फिरना] १. फिरने में प्रवृत्त करना। ऐसा काम करना जिससे कोई या कुछ फिरने लगे। २. घुमाना, टहलाना या गिर कराना। ३. चारों ओर चक्कर देना। घूमना। ४. फेरना। मरोटना। ५. वापस करना। लौटाना। ६. दे० 'फेरना'।

फिरारी—वि०=फारार।

फिरारी—स्त्री० [देश०] तास के खेल में उतनी जीत जिगनी एक हाथ चढ़ने में होती है। एक चाल की जीत।

वि०=फारार (भाग्य हुआ)।

फिरि—क्रि० सिं०=फिर।

फिरियाद—स्त्री०=फिरियाद।

फिरियादी—वि०=फिरियादी।

फिरिस्ता—पुं०=फिरस्ता।

फिरिहुरा—पुं० [हि० फिरना] एक प्रकार की चिड़िया जिसकी छाती लाल और पीठ काल रंग की होती है।

फिरिहुरी—स्त्री० [हि० फिरना+हारा (प्रत्य०)] फिरकी नाम का बिल्लोना।

फिरिती—स्त्री० [हि० फेरना] १. फिराने या फेरने की क्रिया, भाव या मजहुरी। २. यह धन जो ठूकानदार किसी बेबी हुई वस्तु को वापस लेते वक्त विरुध्य-मत्य में से काट लेते हैं। ३. वारण प्राण या लौटने का भाव।

पय=फिरिती में—आती या लौटती बार। वापसी में।

फिराई—पुं०=फिरका।

फिलहकीकत—अव्य० [अ० फिलहकीकत] हकीकत मे। सचमुच। वस्तुतः।
फिलहाल—अव्य० [अ० फिलहाल] इस समय। अभी।
फिलम—स्त्री० [अ० फिल्म] [वि० फिल्मी] १. फोटो या छाया-चित्र उतारने के लिए रासायनिक क्रिया से बनाई हुई एक प्रकार की लची पट्टी। २. उक्त प्रकार की वह पट्टी जिस पर चल-चित्र या मिनेमा के चित्र अंकित होते हैं। ३. उक्त की सहायता से दिखाया जानेवाला चल-चित्र।
फिलम—वि० [अ० क्लिम+हि० ई (प्रथ०)] १. फिल्म-सम्बन्धी। फिल्म का। २. चल-चित्र या सिनेमा सम्बन्धी। जैसे—फिल्मी गाने।
फिल्मी—स्त्री० [देश०] १. कोढ़े की छत्र का एक टुकड़ा जो जुलाहो के करघे मे घूर मे लगाया जाता है।
 स्त्री०—पिटली।
फिस—अव्य० [अनु०] कुछ भी नहीं। (व्यय) जैसे—टाँप टाँप फिस।
फिसलना—वि० [अनु० फिस] [भाव० फिसहीपन] १ जो किसी प्रकार की प्रतियोगिता मे सबसे पीछे रह गया हो या हार गया हो। २ सबसे पीछे भागना आदि। ३. जिससे कुछ करते-धरते न बनता हो। अकर्मण्य। निकम्मा।
फिसलसाना—अ० [अनु० फिस] ढीला, मद्द या शिथिल पड़ना या होना।
फिसलन—स्त्री० [हि० फिसलना] १. फिसलने की क्रिया या भाव।
 २. ऐसा स्थान जहाँ से अथवा जहाँ पर कोई फिसलता हो। ३. ऐसा स्थान जहाँ कोई चिकनाई आदि के कारण पैर फिसलता हो।
फिसलना—अ० [स० प्रसरण] १. किसी स्थान पर काराई, चिकनाहट, डाल आदि के कारण पैरो, हाथो आदि का ठीक तरह से जमकर न बैठना और फलतः उस पर रगड़ खाते हुए कुछ दूर आगे बढ़ जाना। रपटना।
 जैसे—(क) सीढ़ियों पर पैर पर फिसलने के कारण नीचे आ गिरना।
 (ख) शीशे पर हाथ फिसलना। २. लाक्षणिक रूप मे किसी प्रकार का आकर्षक या लाभदायक तत्व देखकर उचित मार्ग से भ्रष्ट होने हुए सहस्र उम और प्रवृत्त होना। जैसे—तुम तो कोई अच्छी बीज देखकर तुरत फिसल पड़ते हो।
 सया० क्रि०—जाना।—पड़ना।
 वि० जिसपर सहज मे कुछ या कोई फिसल सकता है। फिसलवाना।
 जैसे—फिसलना पत्थर।
फिसलाना—ग० [हि० फिसलना का स०] किसी को फिसलने मे प्रवृत्त करना।
फिहरिस्त—स्त्री०=फेहरिस्त (सूची)।
फीचना—ग०=फीचना।
फी—अव्य० [अ० फी] हर एक। प्रत्येक। जैसे—फी आदमी दो आने लगेंगे।
 स्त्री० [अनु०] ऐब। नृदि। दोष।
 क्रि० प्र०—निकालना।
 स्त्री० [अ० फी] फीस।
फीचना—ग० [अनु० फिक् फिक्] कपड़े को गीला करने और बार बार पटककर साफ करना। पछानना।
फीक—स्त्री० [?] चाबूक की मार।
फीका—वि० [स० अपक्व; प्रा० अर्पिक] १ (खाद्य पदार्थ) जिसमे आवश्यक, उपयुक्त अथवा यथेष्ट मिठास, रस अथवा स्वाद न हो। जैसे—

फीका दूध (जिसमे यथेष्ट मिठास न हो), फीकी तरकारी (जिसमे यथेष्ट नमक-मिर्च न हो)। २ (रोग) जो यथेष्ट चमकीला या तेज न हो। घुमिल। मलिन। जैसे—बार दिन मे ही साडी का रंग फीका हो जायगा। ३ (खेल, समासा आदि) जिसमे आनन्द की प्राप्ति न हुई हो। ४ (पदार्थ या व्यक्ति) काति, तेज, प्रभा आदि मे रहित या हीन। जैसे—मुझे देखते ही उनके चेहरे का रंग फीका पड़ गया।
फीका—(फिती व्यक्तिक का) फीका पड़ना—लज्जित होने के कारण निम्न या शीतल होना।
 ५ जिसका अभीष्ट या यथेष्ट परिश्राम न हुआ हो अथवा प्रभाव न पड़ा हो। उदा०—नीकी दर्द अनाकली, फीकी पगी गहारि।—बिहारी।
 ६ (व्यक्ति का शरीर) जो हलके ज्वर के कारण कुछ गरम और तेजहीन या मुस्त हो गया हो। (स्त्रिय) जैसे—हाथ लगाकर देखा तो पिटा फीका लग।
फीता—पु० [पुं०] १ सूत आदि की बुनी हुई बहुत कम चौड़ी और बहुत अधिक लंबी वह धाँजी या पट्टी आ कई प्रकार की चीजे बाँधने और कई प्रकार क कपड़ो पर टाँकने के काम आती है। जैसे—जूता बान्धने का फीता, साडी पर टाँकने का फीता। २. उक्त प्रकार की वह धाँजी या पट्टी जिस पर इचो आदि के चिह्न बने होते हैं और जो चीजों की ऊँचाई, गहराई, लंबाई आदि मापने के काम आती है। (ध०)
फीकरी—स्त्री०=फेकरी।
फीरनी—स्त्री०=फिरनी (खाद्य पदार्थ)।
फीरोज—वि० [फा० फीरोज] १ विजयी। २ सफल। ३ मुग्धी और सम्पन्न। ४. भाव्यमान। फीरोजे के रंग का। हरापन नियो पीले रंग का।
फीरोजा—पु० [फा० फीरोज] एक प्रकार का बहुमूल्य पत्थर या रत्न जो हरापन लिये नीले रंग का होता है।
फीरोजी—वि० [फा० फीरोजी] फीरोजे के रंग का। हरापन लिये नीला।
 पु० उक्त प्रकार का रंग।
फील—पु० [फा० फीली] हाथी।
फीलजाना—पु० [फा०] वह स्थान जिसमे हाथी रथे जाते हैं। हृत्सिमाना। हृत्सिार।
फीलथा—पु० [फा०] एक प्रकार का रोग जिसमे पैर या हाथ फूलकर बहुत मोटा हो जाता है।
फीलथाया—पु० [फा० फीलथा] १ ईंटों का बना हुआ वह माटा खम्भा जिस पर छत ठहराई जाती है। २ पथि सूजन मे एक रोग।
 पु०=फीलथा (रोग)।
फीलथान—पु०=महावत (हाथीवान)।
फीला—पु० [फा० फील] शतरंज के खेल मे हाथी नाम का मोहरा।
फीली—स्त्री०=पिटली।
फीस—स्त्री० [अ० फी] १ कुछ विधिगत व्यवसायियों को उनके विशिष्ट कृत्यों के बदले मे पारिभ्रमिक के रूप मे दिया जानेवाला धन। जैसे—शब्दर या बकील की फीस। २. वह धन जो विद्यार्थी को पढती विद्यालय मे शिक्षा ग्रहण करने के बदले मे मासिक रूप से देना पड़ता है। शुल्क। ३. कर।
फी सदी—अव्य० [फा० फी सदी] हर सी के हिसाब से। प्रतिगण।

फुंकना—अ० [हि० फुंकना या अ० फुण्] १ वस्तु आदि का उत्कर्षण प्रयत्न करना। जैसे—मकान या ढाब फुंकना। २ वायु का फुंकार किसी में भेग जाना। जैसे—मुल्बारा फुंकना। ३ धन आदि का बढ़ा हो बुरी तरह न और व्यर्थ बर्बाद या व्यय होना। ४ पानु, बाम आदि की वह पत्ती नली जिसमें हवा फुंकर अग मुद्राई जाती है। २ भाभी। ३ फुंकीया। (द०) ४ मूदवा (गिर का अंग)।

फुंकरना—अ० [हि० फुंकार] फुंकार करना। फुं, फुं शब्द करना।

फुंकवाना—स० [हि० फुंकना का प्र०] फुंकरने का काम दूसरे में कराना।

फुंकवाना—ग०—फुंकरवाना।

फुंकार—स्त्री०—फुंकार।

फुंकारना—अ०—फुंकरना।

फुंकीया—पु० [हि० फुंकना] १ हवा फुंकरने या फुंकर भरनेवाला व्यक्ति। २ लाने धन नाट, बर्बाद या व्यय करनेवाला व्यक्ति।

फुंकरना प० [हि० फुंकार] १ स्त्री० अर्थात् फुंकीया १ कली, फुंकार आदि के रूप में ऊन, सूत आदि की बनी हुई बड़ छोटी गोंड या लच्छी आ गुप्टे नादर, साडी आदि के किनारे पर बनी या लमी हुई सालर के नीचे लटकाई जाती है। २ उच्च आकार-प्रकार की कोई गोंड। जैसे—गाम्नी की रंडी का फुंकरना।

फुंकारना—वि० [हि० फुंकरना] जिसमें फुंकरने के काम लगे हो।

फुंकीया—स्त्री० [हि० फुंकरना का स्त्री० अर्थात्]।

फुंकी—स्त्री०—बिंदी।

फुंकी—स्त्री० [ग०, पतंगिका, पा० फुंकी] रक्त आदि के विकार के कारण रक्त पर निकालना या ऐसा छोटा दाना जिसमें कुछ मवाद भी है।

फुंका—स्त्री०—गवा।

फुंकारा—पु०—फुंकारा।

फुंकना—स्त्री० [हि० फुंकना] १ फुंकरने की अवस्था या भाव। २ दाह। जलन।

फुंकरना—अ०—फुंकरना।

पु० [स्त्री० अर्थात् फुंकरनी] वह नली जिसमें फुंकर भांरकर आम मुद्राण है।

फुंकरनी—स्त्री० [हि० 'फुंकना' का स्त्री० अर्थात्]।

फुंकारना—ग०—फुंकारना।

फुंकार—वि० [हि० फुंकरना] १ जा जलने या जलाये जाने पर पूर्णतः भूम हो गया हो। २ (पन) जो पूर्णतः बर्बाद या व्यर्थ व्यय हो चुका हो।

पु०—फुंकारक।

फुंकर—वि० [हि० फुंकरना] १ फुंकरने या भूम करनेवाला। २ धन व्यर्थ नाट करनेवाला।

फुंकरा—पु० [देग०] तृतावटवाली वस्तुओं में बाहर निकला हुआ मूत का रंग। जैसे—देग मोटे में जगह-जगह फुंकर निकल आये है।

क्रि० प्र०—निकलना।

फुंकरना—पु० [अ० फुंकर] १ जूटा बचा हुआ भोजन। जूठन। २ गवा हुआ नहीं भवा। मीठा। ३ मल। ४ गूदा। मल।

फुंकर—वि० [अ० फुंकर] १ जिसका जोड़ा न हो। एकाकी। अकेला।

२ जो किसी क्रम या श्रृंखला से अलग हो। पृथक्। जुदा।

वि० [हि० फुंकरना] टूटा हुआ। जैसे—फुंकरत।

पु० [अ०] १ लडाईं नामने का एक उपकरण जो २ इंच लंबा होता है। २. उच्च लडाईं का भाग।

फुंकरक—पु०—फुंकरका। उदा०—पानी पर पराग परि ऐसी चीर फुंकरक भरी आरंभि ऐसी—नदवाग।

फुंकरकर—वि० [स० फुंकरा; हि० कर (प्रत्यय)] १ जो युगम न हो। जिसका जोड़ या जोड़ा न हो। अयुग्म। २ जो किसी बिन्दित मद्द वा धर्म में न हो और पूर्ण कारण उन सबसे अलग रहकर अपना अलग वर्ग बनाता हो। भिन्न भिन्न या अनेक प्रकार का। कई मेल का। जैसे—फुंकरकर कौबल, फुंकरकर खर्च, फुंकरकर चीजों की दुकान। २ (माल या सोदा) जो डकटा या एक साथ नहीं, बल्कि अलग अलग या अलग में आता या रहता हो। धोका का विषयविषय। जैसे—फुंकरकर माल बेचनेवाला दूकानदार।

फुंकरकर—वि०—फुंकरकर।

फुंकरका—पु० [स० फुंकरकर] १ स्त्री० अर्थात् फुंकरकी १ फकोला। छाला। २ उच्च आकार-प्रकार का कोई छोटा दाम या धवला। ३ उच्च आकार-प्रकार का कोई छोटा कण।

क्रि० प्र०—पडना।

४ भूमी हुई ज्वार, धान, मकंके आदि का लडा।

पु० ['] ऊन का रम पकाने का बड़ा कड़ाहा।

फुंकरकी—स्त्री० [स० पुंकरक] १ किसी वस्तु के छोटे लच्छे, जा गम हुए कण जो किसी तन्त्र पदार्थ में अलग अलग ऊपर रते हुए दिखाई पड़ते हैं। बहुत छोटी अंडी। जैसे—(क) जब दूध फट जाता है तब उसके ऊपर फुंकरकी-सी दिखाई पड़ती है। (ख) रोगी के रक्त (या फुंकर) में लून की फुंकरकी दिखाई देती है। ३. फुंकरकी (दिखाया)।

फुंकरनोट—पु० [अ०] पाद-दिपणी।

फुंकरबाल—पु० [अ०] १ हवा भरा हुआ रबड़ का वह भाग जिस पर चमड़े की बोली भी चढ़ी जाती है तथा जिसे पैर की टोंकर में उछालकर खेला जाता है। २ गैर से खेला जानेवाला खेल।

फुंकरमत—पु० [हि० फुंकरना + मत] १ ऐसी निबन्ध जिसमें दो या अधिक पक्षों विषयवत्, पारस्पर, सस्था आदि के विभिन्न मद्दव्यों में किसी बात के मन्त्र में कर्द परस्पर विरोधी मत होने है। मत-भेद। २ फुंकर (देखें)।

फुंकरहरा—पु०—फुंकरहरा।

फुंकरा—पु० [अ० फुंकर] लडाईं नामने का वह उपकरण जिस पर इंच और फुंकरों में निशान और अंक बने रहते हैं। (फुंकर मल)

फुंकरहरा—पु० [हि० फुंकरना। हरग-फल] १ ज्वार, मकई आदि का भूना हुआ वह दाना जो फुंकरकर मिल गया हो। २ सूब जौरा की हली।

मूद्रा—फुंकरहरा फुंकरना—जोर की हँसी हाना। (व्यय)

फुंकरल—वि०—फुंकरल।

फुंकरत—वि० दे० 'फुंकर'।

फुंकरक—पु० [स०] [स्त्री० फुंकरका] एक तरह का कण्डा।

फुंकरल—वि० [स० फुंकर, पा० फुंकर + ऐल (प्रत्यय)] १ पक्षी या पशु

जो झूठ या दल में फुटकर अलग हो गया हो। २ जो अपने जोड़े के साथ न रहता हो। ३ बदकिस्मत। हन-भाग्य।

फुर्—पु०—फुर्।

फुर्तरिया—वि०—फुर्तरिया।

फुर्तरी—वि०—फुर्तरिया।

फुर्कार—पु०—फुर्कार।

फुर्कत—भ० क० [स०] फुर्क हुआ।

फुर्कति—स्त्री० [स० फुर्क/विर्क] फुर्कति (फुर्कार)।

फुर्कना—अ० [अनु०] १ धाँसी धाँसी दूर पर उछलने हुए यहाँ में वहाँ तथा वहाँ में यहाँ आत-जात रहना। जैसे—चिटिया का पेड़ा की हालिया पर फुर्कना। २ उमग में जाकर अथवा प्रसन्नतापूर्वक उछलने हुए दमर-उमर आना-जाना।

फुर्की—स्त्री० [हि० फुर्कना] १ फुर्ककर एक स्थान में दूसर स्थान पर जाने का भाव।

क्रि० प्र०—भरना।

२ एक प्रकार की छोटी चिटिया या उछल-उछलकर या फुर्कती हुई चल्ती है। ३ टिट्टी।

फुर्नग—पु०—फुर्नग।

फुर्न—अव्य० [स० पुन] १ पुन। फिर। २ शींग। ३ भी।

फुर्नक—स्त्री० १ फुर्कार। २—फुर्नगी (छाटा फुर्नगा)।

फुर्नकार—स्त्री०—फुर्नकार।

फुर्नगा—पु० [?] [स्त्री० अत्यां फुर्नगी] १ वृक्षकी शाखा का अथ भाग जिसमें कोमल पत्ते होते हैं। फुर्नग। २ आलू, कपास आदि की फमला का एक राग। मूँड़ी।

फुर्नगा—पु०—फुर्नगा।

फुर्नि—अव्य० फुर् (फिर)।

पर-फुर्नि फुर्नि (क) बार-बार। (ख) गह-गहन।

फुर्फुस—पु० [स०] [वि० फुर्फुसीय] फुर्फुसा।

फुर्फुदी—स्त्री० १—फुर्फुदी (नीची)। २ फुर्फुदी।

फुर्फुकना—अ०—फुर्फुकना।

फुर्फुकार—स्त्री० [अनु०] १ फुर्फुकारने की क्रिया या भाव। २ मूँह में निवाला जानेवाला फुँ फुँ शब्द। फुर्फुकारने में होने-वाला शब्द। जैसे—बैल या माप की फुर्फुकार।

फुर्फुकारना—अ० [हि० फुर्फुकार] क्रोध में आकर मूँह में फुँ फुँ करना (जिसमें आपात करने का भाव भी सूचित होता है)। फुर्फुकार करना।

फुर्फी—स्त्री०—फुर्फी (बूआ)।

फुर्फुनी—स्त्री०—फुर्फुनी।

फुर्फु—स्त्री०—फुर्फु (बूआ)।

फुर्फुरा—वि० [हि० फुर्फु। एरा (प्रत्यय०)] [स्त्री० फुर्फुरी] १ फुर्फु-सबकी। २ फुर्फु से उत्पन्न। जैसे—फुर्फुगा भाई।

फुर्—वि० [हि० फुर्ना] मध्य। सन्धा। उदा०—पिता बचन फुर् चाहिअ कीन्हा—नुलसी।

अव्य० सन्मुख। वास्तव में।

पु० [अनु०] १ पक्षियों के उड़ने पर होनेवाला शब्द।

पव—फुर् से = (क) फुर् शब्द करते हुए। (ख) एकाएक। जल्दी से।

फुर्कत—स्त्री० [अ० फुर्कत] वियोग। जुदाई। बिछोह।

फुर्कना—स० [अनु०] जुगहों की बोली में किसी वस्तु को मूँह से बचाकर घोंग के जोर से धुक्ना।

अ० फुर्कना।

फुर्काना—स०—फुर्काना।

फुर्ती—स्त्री० [स० रफति] [वि० फुर्तीला] १ स्वस्थ शरीर का वह गुण जिसमें कोई उमग में तथा शीघ्रतापूर्वक किसी काम में प्रयुक्त या मगल होता तथा अंधाधुनक बोरे समय में ही उसका सपावन करता है। २ धीरघना।

क्रि० प्र०—करना।

फुर्तीला—वि० [हि० फुर्ती-दीला (प्रत्यय०)] [स्त्री० फुर्तीली] १ जिसमें फुर्ती हो। फुर्ती से काम करनेवाला। २. बहुत तेज चलनेवाला।

फुर्न—स्त्री० [हि० फुर्ना] फुर्ने की क्रिया या भाव।

फुर्ना—अ० [स० स्फुरण, प्रा० फुर्ण] [भाव० फुर्ल] १ स्फुरित होना। उदमग या प्रकट होना। निकलना। जैसे—मूँह में बात फुर्ना। २ ठीक या पूरा उतरना। सत्य निबू होना। ३ अर्थ या आशय समझ में आना। ४ किसी सोची हुई बात का पूरा या सफल होना। ५ चक्कना। ६ परो का फुर्कडाना।

फुर्नी-बाना—पु० [फुर्नी ? + हि० दाना] एक प्रकार का चबूना जिसमें चना और चिरिया एक साथ मिला रहता है और जो प्रायः धी या तेल में भना हुआ होता है।

फुर्फुर्—स्त्री० [अनु०] पक्षियों के उड़ते समय तथा परो के फुर्कडाने में उत्पन्न होनेवाला शब्द।

फुर्फुराना—अ० [अनु० फुर् फुर्] [भाव० फुर्फुराहट] १ किसी चीज का दस प्रकार हिलना कि उससे फुर् फुर् शब्द हो। जैसे—चिटियों या फलिया का फुर्फुराना। २ फुर्हलना।

स० १ कोई चीज इस प्रकार हिलना कि उससे फुर् फुर् शब्द हो। २ फुर्कडाना।

फुर्फुराहट—स्त्री० [अनु०] फुर् फुर् शब्द करने या होने की क्रिया या भाव।

फुर्फुरी—स्त्री० [अनु० फुर् फुर्] १ कुछ समय तक बराबर होना रहनेवाला फुर् फुर् शब्द।

मुहा०—(चिटियों का) फुर्फुरी लेना—उड़ने के लिए पल फुर्कडाना।

फुर्फुराना—पु०—फुर्फुराना।

फुर्फुराना—स०—फुर्फुराना।

फुर्फुरत—स्त्री० [अ० फुर्फुरत] १ अवसर। समय। २ हाथ में कोई काम न होने के कारण अथवाग का समय।

क्रि० प्र०—लेना।—निवाला।—पाना।—मिलना।

पव—फुर्फुरत से = अवकाश के समय।

३ प्रथम, बनें, रींग आदि से होनेवाली मुक्ति।

फुर्फुरा—पु० [?] बाल के रंग का एक प्रकार का छोटा किणु भीषण मृष।

फुर्फुरी—स्त्री० [?] एक प्रकार की सजा जो किसी अपराधी को सजा

भोगते रहन की दशा में फिर पहले का-सा अपराध करने पर भी जाती है और पहले मिली हुई सजा के साथ जोड़ दी जाती है।

फुलहरना—अ० [म० स्फुरण] फुटकर निकलना। प्रादुर्भूत होना।

फुलहरा—पु० [हि० फुलना—स्फुरण] १ ज्वार, मकई आदि के दानो का बड़ा बिल्ला हुआ रूप जो उन्हे भूने पर प्राप्त होता है। २ खूब खोरों की हंसी। ठहाका।

क्रि० प्र०—फुटना।

फुलहरी—स्त्री० [अनु०] १ फुर फुर शब्द करने या होने की अवस्था या भाव। फुरफुराहट। २ पक्षियों के पर फड़फड़ाने का शब्द।

मूढा—(पक्षियों का) **फुलहरी** खाना या लेना—पक्षियों का मनु हूँकर अपने पर फड़फड़ाना।

३ कपड़े आदि के हवा में हिलने की क्रिया या शब्द। फुरफुराहट।

४ सरदों, भय आदि के कारण होनेवाली धरत्यूहाट या रोमांच। रोमांचयुक्त कप।

क्रि० प्र०—आना।—खाना।—लेना।

५ वह सीक जिसके सिर पर हलकी हुई लपेटी हुई धोर जो तैल, दूध, दवा आदि में डूबोकर काम में लाई जाय।

फुलाना—स० [हि० फुर] १ कथन आदि पूरा उतारना। सन्धा ठहराना। २. प्रमाणित या सिद्ध करना।

अ०—फुलना।

फुरा—वि०—फुर।

फुरेरी—स्त्री०—फुरदूरी।

फुरे—स्त्री० [अनु० फुर] १ आनेवा। बोध। २. साहस। हिम्मत। (सुदेल०) उदा०—देवराज के साथ अपने की पाकर विक्रम को फुरेरे आ गई—दुःधावनलाल वर्मा।

फुरे—अव्य० [हि० फुलना] सचमुच।

फुरी—स्त्री०—फुरली।

फुरसत—स्त्री०—फुरसत।

फुलंगी—स्त्री० [हि० फूल ?] पहाड़ी में होनेवाली जगली मींग का वह पोधा जिसमें बीज बिभृकुल नहीं लगते (कलंगो से भिन्न)।

फुल—पु० [हि० फूल] कलंग का वह सक्षिप्त रूप जो उसे समस्त परा क आरम में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—फुलझड़ी, फुलबारी आदि।

पु०—फुल। (पविचम)

फुल—स्त्री० [हि० फूल] वनस्पतिवि में वह सीका जिसके अगले भाग में फूल लगते हैं। जैसे—सरकड़ की फुलई।

फुलका—वि० [हि० 'हलका' का अनु०] फुल की तरह हलका। फुल जैसा। जैसे—हलका फुलका।

पु० [स्त्री० अल्पा० फुलकी] १ हलकी और फूली हुई रोटी। धपानी। २ एक प्रकार का छोटा कबाहा जिसमें रस से चीनी बनाई जाती है। ३ छाला। फकोला।

फुलकारी—स्त्री० [हि० फूल+कारी (प्रत्य०)] १ कपड़े पर सूत आदि में फूल-गतिवों बनाने का काम। २ एक प्रकार का कानडा जिसमें माथूरी मलयल आदि पर रंगीन रेशमी मोरियों से फूल-भूटियाँ आदि काड़ी हुई होती है।

फुलबुही—स्त्री०—फुलसुंपनी (चिडिया)।

फुलझड़ी—स्त्री० [हि० फूल+झड़ना] १. छोटी, पतली डडी की तरह की एक प्रकार की आतिशबाजी जिसमें फूल की-की चिनगाँरियाँ निकलती हैं। २. लाक्षणिक अर्थ में ऐसी बात जिसका मूल उद्देश्य दो पक्षों में झगडा काकर स्वयं तमागा देना होता है।

क्रि० प्र०—फुटना।—छोटाना।

फुलझरी—स्त्री०—फुलझरी।

फुलनी—स्त्री० [हि० फुलना] ऊतर भूमि में होनेवाली एक तरह की घास।

फुलरा—पु०—फुंदना।

फुलवार—स्त्री० [हि० फूल+वर (प्रत्य०)] एक तरह का बूटीदार रेशमी कपडा।

फुलबा—पु० [हि० फूल] १ एक प्रकार की गोंद जो उवटन तथा दूध के रूप में काम आती है। २ एक प्रकार का बैल। ३. देसी सफेद बाल।

पु०—फूल (पुष्प)।

फुलबाई—स्त्री०—फुलबारी।

फुलबाड़ी—स्त्री०—फुलबारी।

फुलवार—वि० [स० फुल्ल] प्रफुल्ल। प्रसन्न।

फुलबारा—पु० [देश०] चिउली नाम का पेड़।

फुलबारी—स्त्री० [हि० फूल+बारी] १ वह छोटा उद्यान या बगीचा जिसमें सुन्दर फूलों के पोथे ही हो, झाडियाँ या वृक्ष न हो। पुष्प-वाटिका। २ कागज के बने हुए फूल और पोथे जो तम्बों पर लगाकर विवाह में बरात के साथ शोभा के लिए निकाले जाते हैं। ३. लाक्षणिक रूप में, बाल-बच्चे जो माता-पिता के लिए परम आनन्ददायक होते हैं।

फुलसरा—पु० [हि० फूल+सारा] काले रंग की एक चिडिया जिसके सिर पर छोटे होते हैं।

फुलसुंधी—स्त्री० [हि० फूल+सुंधना] एक प्रियदा छोटी चिडिया जिसका रंग नीलापन लिये काले रंग का होता है तथा जो फुलों पर फुल-कती तथा चँबरती रहती है। इसका घोंगला बढ़ा ही सुन्दर तथा कलापूर्ण होता है।

फुलहरा—पु० [हि० फूल+हारा] सूत, रथम आदि के बने हुए शब्दे-दार बदनवार जो उसयो में डार पर लगाये जाते हैं।

पु०—फुलहारा (भाली)।

फुलहा—वि० [हि० फूल (धातु)] [स्त्री० फुलही] फुल नामक धातु का बना हुआ। जैसे—फुलही बटलाही।

पु०—फुलवा।

फुलहारा—पु० [हि० फूल+हारा (प्रत्य०)] [स्त्री० फुलहारिन, फुलहारी] भाली।

फुलंग—स्त्री०—फुलंगो (मिग)।

फुलई—स्त्री० [हि० फुलगा] १ फुले हुए होने की अवस्था या भाव। २. फुलाने की क्रिया या भाव। ३. एक प्रकार का बबूल जो पत्राव में सिधु और समलज नटियाँ के बीच की पहाड़ियों पर होता है। फुलाह। ४. वे 'सर-फुलई'।

फुलाना—स० [हि० फुलना] १. बुधा आदि को फुलने से युक्त करना।

पुलित करना । २ किसी चीज को फूलने में प्रवृत्त करना । ऐसी क्रिया करना जिससे कोई चीज हवा से भरकर फूल जाय । जैसे—गुब्बारा फूलाना, फूलका फूलाना ।

सूहा—**माल** या **सूँह** कृष्णान्—अभिमानपूर्वक रूप होना ।

१ किसी को आदिता, कुलविद्या या प्रसन्न करना । ४. किसी के मन में अभिमान या गर्व उत्पन्न करना । गवित करना । घमड़ बड़ाना । जैसे—सून्दी ने तो तारीफ कर करके उमे और फूला दिया है ।

† अ० = फूलना ।

फुलायल—**यु०** = फलेल ।

फुलाव—**यु०** [हि० फुलना] १ फूले हुए होने की अवस्था, क्रिया या भाव । २ दे० 'फुलावट' ।

फुलावट—**स्त्री०** [हि० फुलना] १ किसी चीज के फूले हुए होने की अवस्था या भाव । फुलाव । २ बड़ा आदि के फूलने की अवस्था, क्रिया या भाव ।

फुलावा—**यु०** [हि० फूल] स्त्रियों के सिर के बालों को सूँधने की डोरी जिसमें फूल या फंदने लगे रहते हैं । खजुरा ।

फुलिया—**यु०** [स० स्थानिया, प्रा० फालिया] चित्तगारी ।

फुलिया—**स्त्री०** [हि० फूल] १ किसी चीज का फूल की भाँति उमरा और फैला हुआ माल सिरा । २ लंछे का एक प्रकार का बड़ा कौटा जिसका ऊपरी भाग या सिरा गोलकार फीला हुआ होता है । ३ नाक में पहनने का फूल या लीग नाम का गहना ।

फुलसकेप—**यु०** [अ० फूलस्कैप] आकार के विचार से वह कागज जो १७ इंच लंबा और १२ इंच चौड़ा होता है ।

फुलरिया—**स्त्री०** [देस०] कपड़े का वह टुकड़ा जो छोटे बच्चों के बतुड़ के नीचे बिछाया जाता है । पीतव्रत ।

फुलेरा—**यु०** [फ्र० फूल] फूल की बनी हुई छतरी जो देवताओं के ऊपर लगाई जाती है ।

फुलेला—**यु०** [हि० फूल ; नेल] फूलों की मट्ठक से मुदासित किया हुआ तल भाँ सिर में लगाने के काम आता है । सुगन्धित नेल ।

फु० [हि० फूल] एक प्रकार का पटाई सूय ।

फुलेलौ—**स्त्री०** [हि० फुलेल] नाच आदि का वह बड़ा बरतन जिसमें कुल्ल रहता जाता है ।

फुलेहरा—**यु०** फुलहरा ।

फुलौरा—**यु०** [हि० फूल ; बडा] [स्त्री० अल्पा० फुलौरी] चौड़े, मँदे आदि के घोंल की उबालकर बनाई जानेवाली एक तरह की बरी जो तले जाने पर काफी फूल जाती है ।

फुलौरी—**स्त्री०** = छोटा फुलौरा ।

फुल्ल—**त्रि०** [स०/फुल्ल (खिलना) ; अच्] १ फूला हुआ । विकसित । २ प्रसन्न । हर्षित ।

यु० फूल । पुष्प ।

फुल्लवाम (यु०)—**यु०** [स० य० त०] उन्नीस वर्षों की एक वृत्ति जिसके प्रत्येक चरण में ६, ७, ८, ९, १०, ११ और १७वाँ वर्ष लघु होता है ।

फुल्ला—**यु०** [हि० फुलना] १ अक्ष का वह भाग जो सँकने से फूल गया हो । फुलहरा । (पविचम) २ लील । ३ फली हुई या फूल की तरह की कोई चीज । ४ अक्ष का फूली नामक रोग ।

फुलकी—**स्त्री०** [हि० फूल] १ फूल के आकार का कोई आभूषण या उसका कोई भाग । २ दे० 'फुलिया' । ३ दे० 'फुकी' ।

फुलारा—**यु०** = फुलारा ।

फुल—**यु०** [अनु०] वह शब्द जो सूँह से फूटकर साफ न निकले । बहुत धीमी आवाज । जैसे—फूस से किसी के कान में कुछ कहना ।

फुलकारना—**अ०** [अनु०] फूँक मारना । फुलार छोड़ना ।

फुलकी—**स्त्री०** [अनु०] १ किसी के कान में धीरे से कुछ कहना । २ गुदा मार्ग से निकलनेवाली वह हवा जिससे शब्द नहीं होता । टुसकी ।

फुलड़ा—**यु०** = फुबका ।

फुलफस—**स्त्री०** [अनु०] १ किसी के कान के पास सूँह करके इतने धीरे से कुछ कहना कि आपस-पास के लोग न सुन सकें । २ इस प्रकार आपस में होनेवाली बात-चीत । काना-फुली । (द्विसर)

फुलफुसा—**वि०** [हि० फूस या अनु० फुस] १ जो दबाने से बहुत जल्दी बुर बुर हो जाय । जो कड़ा या कटारा न हो । कमबोर और नरम । २. जिसमें तीव्रता न हो । मय । मस्जिम ।

फुलफुसना—**अ०** [अनु०] फुसफुस शब्द करते हुए कुछ कहना । बहुत ही दबे हुए या धीमे स्वर से बोलना ।

फुल्लाना—**स०** [हि०] किसी को मीठी मीठी बातों से या बड़ी बड़ी आवाज़ें दिलाकर अपने अनुकूल करना । जैसे—बच्चे या स्त्री को फुल्लाना । २ कुछ हृदय व्यक्तिको मनाना ।

मयी० कि० = लेना ।

फुहार—**स्त्री०** [स० फूलार = फूँक से उठा हुआ पानी का छीटा या बुल-बुल] १ आकाश से बरसनेवाली पानी की बहुत ही छोटी छोटी बूँदें जो देखने में झरने या फुहारे से उड़नेवाली बूँदों के समान जान पड़ें । (द्वित्रिक) । २ ऊपर से गिरनेवाली किसी तरल पदार्थ की बहुत छोटी छोटी बूँदें । जैसे—गुलाब जल की फुहार ।

कि० प्र०—गिरना ।—पड़ना ।

फुहारना—**अ०** [हि० फुहार] किसी चीज को धोने, रँगने आदि के लिए उन पर किसी तरल पदार्थ की फुहार डालना ।

फुहारा—**यु०** [हि० फुहार] १. एक विशिष्ट प्रकार का उपकरण जिसकी सहायता से पानी या किसी तरल पदार्थ की बहुत छोटी-छोटी बूँदें सारी और गिराई जाती हैं । जल यन्त्र । २ जल या किसी तरल पदार्थ की तेजधार । जैसे—सिर से लून का फुहारा छूटना ।

कि० प्र०—छूटना ।

फुहौ—**स्त्री०** = फुहौ ।

फुहँकना—**अ०** = फुहकारना । उदा०—भृष्टि के कुल्ल वक्र मरोर, फुहँकता अंध रोष फन खोल ?—पलत ।

फुहँकी—**स्त्री०** [अनु० फुह] १. सूँह से वेगपूर्वक निकाली जानेवाली हवा ।

कि० प्र०—मारना ।

२. श्वास-प्रवाह जो किसी के जीवित होने के सूचक होने हो ।

सूहा—**यु०**—**फूँक निकलना या निकल जाना**—घरिरी से प्राय निकल जाना । मरना ।

३. किसी की शोर मच पड़कर सूँह से छोड़ी जानेवाली यापु जो अनेक प्रकार के प्रभाव उत्पन्न करनेवाली मानी जाती है ।

पव—झड़-फूंक। (देवें)

फूटना—न० [हि० फूंक] १ मूंह का विपर गमटकर वेग के साथ हवा छोड़ना। होठों को चारों ओर से दबाकर धोक में हवा निकालना। जैसे—पह बाजा फूंकने से बजता है।

सया० फि०—देना।

मुहा०—फूंक फूंककर चलना या घेर रखना—बहुत ही गतकं तथा सावधान रहकर आगे बढ़ना।

२ शव, बाँसुरी आदि मूंह से बजाये जानेवाले बाजों को फूंककर बजाना। जैसे—वाल फूंकना। ३ मन आदि पदकर विनी पर फूंक मारना। ४ किसी के काम में धीरे से काई ऐसी बान बहना जिनका कोई अभीष्ट प्रभाव उत्पन्न हो। जैसे—न जाने किगने उन्हें फूंक दिया है कि वे मूंहसे नाराज हो गये है। ५ मूंह की हवा छोड़कर आग दहकाना या मुलगाना। फूंककर अग्नि प्रज्वलित करना। जैसे—बूझा फूंकना। ६ पूरी तरह से भरम करने के लिए आग लगाना। जलाना। जैसे—किनी का घर या झोपड़ी फूंकना। ७ धातुआ का वैद्यक की रासायनिक रीति में अथवा जड़ी-बूटियों की मद्ययाना में भरम करना। जैसे—सोना-फूंकना। ८ पूरी तरह में तप्य वा बरबाद करना। जैसे—दुर्व्यसनों में धन या सम्पत्ति फूंकना।

पद—फूंकना-तापना—मूल-भोग के लिए व्यर्थ और बहुत अधिक नर्च करना। उड़ाना।

९ बहुत दुखी या सतप करना।

फूँका—प० [हि० फूँक] १ भाषी या नली में आग पर फूँक मारने की क्रिया या भाव। २ गोशा-जैसा के स्तनों से अधिक से अधिक दूध उतारने या निकालने की पुर प्राकिया जिसमें बाँस की नली में चरगरी या झालदार चीजे (जैसे—मिचं आदि) भरकर फूँक मारने हुए उनके स्तनों के अन्दर घ्राणिए पड़ना देते हैं कि वे अपने बच्चा के लिए दूध चुगकर न रख सके। ३ बाँस आदि की बड़ नली जिसम उनल क्रिया की जाती है। ४ छाला। फफोला।

फूँक—रनी०—फूँकना।

पद—फूँक-फूँकारा—जिनमें बहुत से शब्धे या फुंदने लगे हैं।

फूँकरी—स्त्री०—छोटा फूँकना। (मुन्देल०) उदा०—महर् लाय रगवाले फूँका की फूँकरी लटक रही थी।—वृन्दावनलाल वर्मा।

फूँका—प०—फूँकना।

फूँकी—स्त्री०—फहरी।

फूँकना—म०—फूँकना।

फूँकना—प० [?] अन्त-व्यस्त होना। बिबरना। (पूरब)

फूट—स्त्री० [हि० फूटना] १ फूटने की क्रिया या भाव। २ जिन लामा का आपग में मिलकर रहना या जो आपग में मिलकर रहते आप हों, उनमें उत्पन्न होनेवाला पारस्परिक विरोध या वैयनम्य। आपसी अनबल या बिगाड।

पद—फूट-फूटकर—आपग में होनेवाली अनबन या फूट।

मुहा०—फूट झालना—जो लोग मिलकर रहते हैं उनमें भेद-भाव या विरोध उत्पन्न करना।

३ एक प्रकार की बड़ी ककडी जो पकने पर प्राय लेनों में ही फूट जाती है।

फूटन—स्त्री० [हि० फूटना] १ फूटने की क्रिया या भाव। २ बड़ लड या टुकडा जो फूटकर अलग हो गया या निकल आया हो। ३ शरीर के जोडा में होनेवाली यह पीडा जिनमें अंग फूटते हुए-में जान पड़ते है। जैसे—हडफूटन।

फूटना—अ० [स० फूटना] १ मिट्टी, धातु आदि की बनी हुई वस्तु का आघात लगने पर अथवा गिरने के फलस्वरूप अनेक छोटे-छोटे टुकडों में विभक्त होना। जैसे—(क) शीशा फूटना। (ख) ग्लेट फूटना। २ विशेषण किसी कडी और प्राय गोलाकार चीज का आघात लगने पर या दबाव पड़ने पर दर दर प्रकार टूटना कि उसके अंदर का अवकाश आस-पास के अवकाश के साथ मिलकर एक हो जाय। जैसे—मटका या हँथिया फूटना। ३ शरीर के किसी अंग में टोकर लगने पर उसमें से रक्त बहने लगा। जैसे—गाँव या गिर फूटना। ४ अंदर का दबाव पड़ने में अथवा किसी प्रकार की बाहरी क्रिया में किसी चीज का ऊपरी आवरण या ग्तर फूटना। जैसे—औँव फूटना, बटहल फूटना, फोडा फूटना। ५ गणायति पदार्थों विशेषत बाल, धम आदि का पतन के साथ फूटना। विरफोट होना। ६ किसी प्रकार या रूप में ऊपर या बाहर आकर दृश्य, प्रकट या स्पष्ट होना। जैसे—(क) चन्द्रमा या सूर्य की किरणें फूटना। (ख) अंग अंग में शांभा या मोदय फूटना। ७ किसी चीज का अपने ऊपरी आवरण को नाप या भेद कर वेगपूर्वक बाहर निकलना। जैसे—हाडर में ने पानी का मोना फूटना। ८ ऊपरी दबाव हटाकर निकलना। बाहर आना अथवा प्रकट होना। जैसे—(क) गम्भी के काण शरीर में दाने फूटना। (ख) वनगनिया में अक्रु या वृक्ष में टाले फूटना।

मुहा०—फूट पड़ना—मन में भंग हुआ आवेश बाहर निकलना या निशालना। जैसे—जी चान्हा कि फूट पड। **फूट-फूटकर रोना**—बिबल्य-बिबल्यकर रोना। बहुत बिग्याप करना।

९ उक्त के आधार पर शाब्दा के रूप में अलग हाकर कर्त्ता मीय में जाना। जैसे—थोड़ी दूर पर गडक में एक और गान्धा फूटा है। १० कली का बिलकर फूल का रूप धारण करना। प्रफुटित होना। ११ मन-भेद, राग-द्वेष आदि होने पर दल, मडली, समाज आदि में से निकट कर किसी का अलग होना। जैसे—(क) दल में से बहुत म लोग फूटकर विरोधिया में जा मिले है। (ख) राम मुकुदमें का एक गवाह फूट गया है। १२ मयुक्त या मायन न रहकर अलग होना। जैसे—यह नर (पशु) अपनी माया से फूट गया है। १३ शरीर के अंगों या जाडों में ऐमा दर्द होना कि वह अंग फटना हुआ-मा जान पडे। फटना।

मुहा०—उंगलियाँ फूटना—लीनेमें या मोड़ने में उंगलियाँ के जोडा का खट खट बोलना। उगलियाँ चटकना।

१४ दस प्रकार या इतना अधिक विवक्त होना कि किसी काम का न रहे जाय। जैसे—फूट फूटना।

पद—फूटी ओखी का तारा—कोई ऐसी बहुत ही प्रिय वस्तु जो उनी प्रकार की बहुत ही वस्तुओं के बन्ध हो आने पर अकेली बच रही हो। जैसे—सात बच्चा में यह एक बच्चा फूटी ओखी का तारा रह गया है।

फूटी कौडी—वह टूटी हुई कोई जिसका कुछ भी महत्त्व या मूल्य न था वही गया हो। जैसे—इसे बचने पर ता फूटी कौडी भी न मिलेगी।

मुहा०—फूटी ओखी न देख सकना—जरा भी देखने की प्रवृत्ति या रुचि

न होता। जैसे—सीधे के लडकों को नौ वह फूटी आंखों नही देख सकती। फूटी आंखों न भाना—जिनके भी अच्छा न लगना। बहुत बुरा या अशुभ लगना। जैसे—मुझ्गा यह आवागमन मुझे फूटी आंखों नही भाता। फूटे मुँह से न बोलना उपेक्षा, द्वेष आदि के कारण किसी से साधारण बाल-बीत भी न करना।

१५ पानी का या तरल पदार्थ का द्रवना बोलना कि उसके तल पर छोटे छोटे बल्बुबों के समूह दिखाई देते लग। जैसे—जब दूध (या पानी) फूटने लगे, तब उससे भाव्य छोटे दाने। १६ पानी या किसी तरल पदार्थ का किसी तल के दम पार में उस पार निकलना। जैसे—यह कागज अच्छा नहीं है, दम पार ग्याही फूटती है। १७ मुँह में शब्द उच्चारण होता या निकलना। जैसे—(क) लाव ममशाओ, पर वह मुँह न कुछ फूटना ही नहीं है। (ख) अब भी नौ मुँह में कुछ फूटो। १८ कोई गुण बात, भेद या रहस्य सब पर प्रकट हो जाना। जैसे—देखो, यह बात कहीं फूटने न पावे, अर्थात् किसी पर प्रकट न होने पावे।

फूटना—[१] फूटना १ फसल की बह जाये जो टूटकर खेतों में गिर पतनी है। २ जरीर के जोशों में होनेवाला वह तरह विममे अंग फूटने हुए जान पड़ते है।

[३] [ग्री० फूटी] १ जो फूट चुका हो। २ फसल खराब या बिगड़ हुआ। जैसे—फूटी आंव।

फूकार—[ग०] [म० फू/क०] पक्ष वह शब्द जो कुछ जनुशों के वयुर्विक गाम वाह्य निद्रालने समय होता है। फ-क० जैसे—तापी फूकार।

फूकृति—[ग्री०] [म० फू/क०] कितन् फूकार। (२०)

फूका—[ग०] [ग्री० फूकी] [वि० फूकरे] गवन ४ बिचार में फूकी अर्थात् बुझा या गति।

फूकी—[ग्री०] [म० पितृवसा, पा० पितृकुछा पा० पितरुछा ?] बाप की बहन। बुझा।

फूकर—[ग्री०] फूकी।

फूर—[ग०]—फूर।

फूना—[ग०]—फूटना।

फूना—[ग०] [म० फूना] १ पीया और बुझा या वह प्रसिद्ध अंग जा कुछ नियत ऋतुओं में गाल या लवी पवडिया के योग में मांश आदि के रूप में बना होता है। कुमुम। पुष्प। मुमल। (फलावर)

विशेष—वनस्पति विज्ञान की दृष्टि में हमें पेश-पौधों की जननेंद्रिय कह सकते हैं, क्योंकि फूल उत्पन्न करनेवाला मूल तन्त्र या जिन ३नी के निहित होती है। भ्रम फलन को के आधा-प्रकार और रूप-रूप भिन्न होते हैं और प्रत्येक वर्ग के फूल में प्रायः कुछ अन्य प्रकार की और विभिन्न ग्रथ या सुगंध भी होती है। लोक में फूल अपनी कोमलता, सुंदरता और हलकेपन के लिए प्रसिद्ध है।

फि० प्र०—बनना।—श्रद्धा।—निकलना।—फूटना।—लगना।—खलना।

फूल-कूसा—बहुत ही सुन्दर, सुकुमार या हलका। फूलों की चादर—फूलों में सूँच कर चादर की तरह का बनाया हुआ वह ताल या मूलमाल पीरो आदि की कसों पर चढ़ाते हैं। फूलों की छड़ी—दे० 'फूल-छड़ी'। फूलों की सेज—वह पत्थर या शय्या जिस पर सजावट और कामलता के लिए

फूलों की पवडियाँ फैलाई या बिछाई गई हैं। (शुमार की एक सामग्री) मुहा०—(पेश पीयो में) फूल खाना—धाव्याओं आदि में फूल उत्पन्न होता या निकलना। फूल उतरना—वेद-पीठों में में फुला का स्रवण होता या गीते जाने पर इस प्रकार अलग होता कि काम में आ सके। जैसे—

बेल की दम क्यारी में गोज सेरो फूल उतरते है। फूल चुनना—बुझा के फूल तोड़कर इकट्ठे करना। (किसी के मुँह से) फूल झनना—मुँह में बहुत ही मनोहर और मठा-वाने निकलना। बहुत ही प्रिय-भागी होना। फूल कंधे कर कटना—बहुत ही कम खाना। अत्यंत प्रिय-भागी होना। जैसे—आप खाते नौ क्या है, फूल गंधकर रहते है।

२ किसी चीज पर अतिन किये या और किसी प्रकार बनाये हुए फूल के आकार के बेल-रूप या लकवाणी। ३ फल के आहार-प्रकार की बनाई हुई कोई चीज या रचना। जैसे—(क) खान या नाक में पहनने का फूल। (ख) मवाणी के डबे के सिने पर का फूल, कागज या चाँदी-गोले के फूल।

मुहा०—(किसी के गालों पर) फूल पडना बोलने, हँसने आदि के समय गालों पर छोटे गीलाकार गहड़े में बनना जो सीधेमुँह तक जाते है। जैसे—जब यह बच्चा मुस्कगता है, तब दमते मांशा पर फूल पडते है।

८ कोई ऐसी चीज जा देखने में बुझा के फूलों के आकार-प्रकार की हो। जैसे—चार फूल भेंची (सूखे हुए दाने), दम फूल लोग। ५ किसी प्रकार के बुझा का वह रूप जिनके दाने या रवे फूल की तरह दिखे हुए और अलग हो। जैसे—आट या चीनी के फूल। ६ किसी चीज का मत्त या गार। जैसे—फूल शराब—मुरामार। ७ किसी पतले या द्रव पदार्थ को मुखाकर जमाया हुआ पत्तर या रवा। जैसे—अश्वत्थान के फूल, देवी म्याही के फूल। ८ एक प्रकार की मिश्र धातु जो ताँबे और रंगे के मेल में बनती है। ९ दीपक की जन्नी हुई बत्ती पर पडे हुए गोल दमकने दाने जा उभरे हुए मासुम होते है। गुल।

फि० प्र०—श्रद्धा।—श्राटना।

मुहा०—(दीपक को) फूल करना—दीक्षा बजाना।

१० जरीर पर पडनेवाला वह लाल या सफेद धब्बा जा खेने कुछ नामक रोग होने पर होता है। ११ स्त्रियों का वह रक्त जो मासिक धर्म में निकलता है। रज। पुष्प।

फि० प्र०—जाना।

पह—फूल के दिन मयी के रक्तस्वला होने के दिन। उदा०—म० महीने में कुवाते ये मूल फूल के दिन। बारे अब की ता मरे टल गये मामूल के दिन।—रगीत।

१२ स्त्रियों का गर्भांग। १३ वृद्धे या पीर की गोल हड्डी। चक्की। टिकिया। १४ दाब जलाने के बाद मून धारण की बच्ची हुई हड्डियाँ जो प्रायः इकट्ठी करके किसी पवित्र जलाशय या नदी में फेंकी या प्रवाहित की जाती है।

फि० प्र०—चूना।

मयी० [हि० फूटना] १ बुझा आदि के फूलने को अवस्था, क्रिया या भाव। फूलावट। २ मन के फूलने अर्थात् प्रफुल्लित होने को अवस्था या भाव। प्रगलना। प्रफूलना। उदा०—मृग नैनी दृग की फनक, उर उछाह, तन फूल।—बिहारी।

वि० (रंगों के संबन्ध में) साधारण से कम गहरा। हलका। (पी० पदों के आरम्भ में 'नील' और 'हवा' की तरह प्रयुक्त)। जैसे—हम साड़ी का रंग गुलाबी नो नहीं, हई फूल-गुलाबी कहा जा सकता है।

फूलकारी—स्त्री० [हि० फूल+फा० कारी] १ बेल-जूते बनाने का काम। २ दे० 'फूलकारी'।

फूलगोभी—स्त्री० [हि० फूल+गोभी] एक प्रकार का पौधा जिसमें बड़े फूल के आकार का बँधा हुआ ठोस पिंड होता है। यह लत्कारी के काम आती है। गोभी।

फूलछड़ी—स्त्री० [हि०] १ श्रृंगार, सजावट आदि के काम आनेवाली वह छड़ी जिसमें चारा और बहुत से फूल टंके या बंधे गये हों। २ चित्रा, मूर्तियों आदि में उबन प्रकार का चित्रण या लक्षण।

फूलबाध—य० [हि०] त्रास आदि की (फूलों के आकार की) सीका का बना हुआ हार, जिसमें महीन फूल बहुत अच्छी तरह माफ होती है।

फूल-बोल—य० [वि० फूल+बोल] नैन सुकल एकादशी को मनाया जानेवाला एक उत्सव जिसमें देवता की मूर्ति को फूलों के हिंडाले में रखकर झुलाते हैं।

फूल डोक—य० [?] १ प्रायः हाथ भर लंबी एक प्रकार की मछली जो भारत के गंगी प्रान्त में पाई जाती है।

फूलदान—य० [हि० फल+का० दान (प्रत्यय०)] मिट्टी, धातु, वीथि आदि का वह पात्र जिसमें सामां के लिए, फूल, गुल्मरत्ने आदि लगाकर रखे जाते हैं। सुन्दान।

फूलदार—वि० [हि० फूल+दार (प्रत्यय०)] जिस पर बेल-जूते बने अर्थात् फूलकारी का पात्र हुआ हो।

फूलना—अ० [हि० फूल+ना (प्रत्य०)] १ पीयो, सुधी आदि का फूलों में युक्त होना। पुष्पित होना। जैसे—वह पौधा वसंत में फूलता है।

मुहा०—(किसी व्यक्ति) फूलना-फलना—लाक्षणिक रूप में, धन धान्य, सन्तति आदि में परिपूर्ण और सुखी रहना। सब तरह से बढ़ना और समृद्ध होना।

२ फूलों का मृदुल डम प्रकार सुन्दता कि उसकी पत्रयियों चारों ओर से पूरे फूल का रूप धारण कर लें। ३ लाक्षणिक रूप में बहुत अधिक आनंद या उल्लास में युक्त होना। बहुत प्रसन्न या मगन होना।

मुहा०—फूलें अगन समाना आनंद का इतना अधिक उड़ेंग होना कि विना प्रकट किये रहा न जाय। अत्यन्त आनन्दित होना। फुले फिरना या फुले फिरना बहुत अधिक आनंद, उल्लाह या उमंग से मरकर निश्चिन्त भाव से इधर-उधर घूमना। उदा०—स्वतंत्र विरताज फिरत कुनूय फुंजे—दीनदयाल गिरि।

४ लाक्षणिक रूप में, मन में विशेष अभिमान या गर्व का अग्रभय करना। जैसे—अपनी प्रशंसा सुनकर वह फूल जाता है। ५ किसी वस्तु के भीतरी अवकाश में किसी चीज के भर जाने का कारण उसका ऊपरी या बाहरी तल बहुत अधिक उभर आना या उभरा हो जाना। जैसे—(क) हवा भरने से गैर फलना। (ख) ताप का विचार होने या बहुत अधिक भोजन करने पर पेट फलना। ६ उक्त के आधार पर अभिमान, रोष आदि के कारण किसी से झठना या कुछ समय के लिए विरक्त होना। जैसे—हम उनके यहाँ नहीं जायेंगे, आज-कल वे हमसे फुले हुए हैं। ७. आघात,

आंतरिक विचार आदि के कारण शरीर के किसी अंग का कुछ उभर आना। सूचना। जैसे—इतने जोर का तमाचा लगा है कि गाल फूल गया है। ८. किसी व्यक्ति का असाधारण रूप से मोटा या स्थूल होना। जैसे—उसका शरीर बाढ़ी से फूला है।

फूल-पत्ती—स्त्री० [हि०] १ वे फूल-पत्ते जो देवी-देवताओं को चढ़ाये जाते हैं। २ वनस्पति विज्ञान में किसी फूल का प्रत्येक दल अथवा पत्ती के आकार का अंग। (पर्णांबर-लीफ)

फूल-पान—वि० [हि० फूल+पान] (फूल या पान के समान) बहुत ही कोमल। नाजूक।

फूल-बत्ती—स्त्री० [हि०] देवताओं की आरती आदि के लिए बनाई जानेवाली रूई की एक प्रकार की बत्ती जो फूलों का भाग किये हुए फूल की तरह मोलाकार फंला हुआ होता है।

फूल-भाग—य० [हि० अ०] वह छोटा बगीचा जिसमें केवल फूलों के पौधे हों।

फूल बिरज—य० [हि० फूल+बिरज] एक प्रकार का बहिया घान।

फूल-भाग—स्त्री० [हि० फूल+भाग] हिमालय में होनेवाली एक प्रकार की भोग। फुलमों।

फूलमती—स्त्री० [हि० फूल+मत (प्रत्यय०)] एक देवी जो गीनला प्रान्त की अधिराज्यो मानी जाती है।

फूल-बाला—वि० [हि० फूल+बाला (प्रत्यय०)] १ फुला या फुलन। २ फूलों अर्थात् बेल-जूतों का काम जिस पर हुआ हो।

य० [स्त्री० फूलवाली] माली, विशेषतः फूल बचनेवाला व्यक्ति।

फूल-शराब—स्त्री० दे० 'सुरसा'।

फूल-संघेस—वि० [हि० फूल+संघेस] बेल या गाय जिन्का एक गींग दाहिनी ओर और दूसरा बाईं ओर गया हो।

फूल सुंधना—स्त्री०—फूल-सुंधनी।

फुला—य० [हि० फुलना] १. भुंने हुए अनाज की मील। २ पक्षियां का होनेवाला एक प्रकार का रोग। ३ गधे का रंग फलने का बड़ा कड़ाहा। ४ फुली (अंडा का रोग)।

फुली—स्त्री० [हि० फूल] १ संकट दाय जो आँसु की फुल्लों पर पड़ जाता है और जिसमें दृष्टि में बाधा होती है। २ एक प्रकार की सज्जी। ३ एक प्रकार की रूई।

फुस—य० [म० तुष, पा० भुग, फुस] १ एक प्रकार की घास जो मुन्हा का छपर आदि डालने के काम आती है। २ तुष। तिनका।

वि० फूल की तरह बहुत ही तुच्छ या हीन। उदा०—पूना मास अनि फुम ए मधि, जववा म फुटेला वालि—वाग्म गीत।

फूह—स्त्री० -फूही (फुहार)।

फूहड़—वि० [?] [भाव० फूहड़पन] १ सम्पत्ती की दृष्टि में, अश्लील और हेय। जैसे—फूहड़ शब्द। २ (व्यक्ति) जो उजड़ या गँवार हो तथा जिसे किसी बात का शऊर न ही। ३ बहुत ही निकम्मा (अपवित्र)।

फूहड़पन—य० [हि० फूहड़+पन (प्रत्यय०)] फूहड़ होने की अवस्था या भाव।

फूहर—वि० -फूहड़।

फूहा—य० [दश०] रूई का गाला। फाहा।

फूही—स्त्री० [हि० फूहार] ? पानी का महीन छीटा। सूदम जल-बण।
 १ भरमनेवाले, पानी की छोटी छोटी बूंदों की झड़ी। झोसी। जैसे—
 फूही फूही लासाब भरता है। उदा०—निधि के तम मे क्षर सर, हलकी
 जल की फूही, धरती की कर गई सजल।—पलत। ३ घी, तूप, मलाई
 आदि के ऊपर दिखाई देनेवाला चिकनाई के छोटे छोटे बण। ४
 फेफूटी। भुङ्कड़ी।

फेंक—स्त्री० [हि० फेंकना] फेकने की क्रिया या भाव।
 [वि० फेकनेवाला (समस्त पदों के अंत में)]। जैसे—दिल-फेक औरत
 या मरद।

फेंकना—स० [स० प्रेयण, प्रा० पेखण] ? हाथ मे ली हुई वस्तु जोर या
 झटके से इस प्रकार छोड़ना कि वह उड़ती-उड़ती कुछ दूर जा गिरे।
 जैसे—(क) ईंट, पत्थर या रोड़ा फेंकना। (ख) नदी मे जाल फेंकना।
 २ हाथ मे ली हुई कोई चीज इस प्रकार पकड़ से अलग करना कि वह
 नीचे जा गिरे। गिरा या छोड़ देना। जैसे—गाठनाला से
 घर आने समय लडका रास्ते मे फिटवा कहीं फेंक आया।
 ३ किसी प्रकार की कमानों, दास आदि से दबी हुई चीज के प्रति ऐसी
 क्रिया करना कि वह जोर या झटके से दूर जा गिरे। जैसे—कमान
 से तीर या ताप से घाला फेंकना। ४ असावधानी, आलस्य, भूल आदि
 के कारण चीज या चीजे अनि-व्यस्त रूप से दूधर-दूधर फेंकना या
 छोड़ देना। जैसे—कपड़े (या पुस्तके) इस तरह फेंका मत करो,
 संभाल कर रखना सीखो। ५ उपेक्षापूर्वक कोई चीज निजी के आगे
 पटकना। जैसे—बच्चा बस्ता फेंककर उसी समय कहीं चला गया।
 ६ आपान, प्रहार आदि के उद्देश्य मे अथवा ठीक लक्ष्य पर पहुँचने के
 लिए वेगपूर्वक कोई चीज उछालते हुए कहीं दूर पहुँचाना। जैसे—(क)
 चिड़ियों (या मछलियों) पर डेले या पत्थर फेंकना। (ख) खेल मे
 गेंद फेंकना। ७ अनावश्यक और व्यर्थ समझकर दूर हटाना। जैसे—
 ये पुगाने कपड़े फेंको और नये कपड़े पहनो। ८ अनावश्यक रूप मे
 या अर्थ व्यय करना। जैसे—तुम सौदा खरीदना नहीं जानते, यो ही
 रुपए फेंक आते हो। ९ जूए के खेल मे, उसका कोई उपकरण दौब
 लाने के लिए चलना। जैसे—कौड़ी, गौंटी, तास आदि का पत्ता या
 पानी फेंकना। १० शरीर के अंगों के सबंध मे, उछालते या ऊपर
 उठाते हुए नीचे गिराना या पटकना। जैसे—यह बच्चा नींद मे प्राय
 हाथ-पैर फेंकता है। ११ क्रिकेट के खेल मे उछली हुई गेंद की ठोक न
 लौक गाने के कारण नीचे गिरा देना। १२. इस प्रकार ऊपर से कोई
 चीज गिराना कि नीचे से उसे कोई लौक ले। १३ कुस्ती मे प्रतिद्वंद्वी
 को जमीन पर गिराना या पटकना। १४ काम-धर्म आदि के सबंध मे,
 न्यय पूरा न करने के उदासीनता या उपेक्षापूर्वक दूसरों पर उसका भार
 डालना। जैसे—तुम सब काम मुझ पर फेंककर निकलित हो जाते हो।

फेंकना—अ० = फेकना।

फेंकाना—अ० [हि० फेंकना] फेका जाना।

फेंक—स्त्री० [हि० फेंक या फेंकी] ? कमर के चारों ओर का घेरा। २
 धोती का लंबाई के बल का उठाना अथवा जोर से फेंकना कि तरह मरोड़कर
 कमर के चारों ओर बांधा या लपेटा जाता है। फेंक। (मूहा० के
 लिए दे० फेंटा के मूहा०)। ३ धुमावा फेंक। लपेट।
 स्त्री० [हि० फेंकना] फेंकने की क्रिया या भाव। जैसे—ताघ के

पत्तो की फेंक।

फेंकना—स० [स० पिष्ट, प्रा० पिष्ट्+ना (प्रत्य०)] ? किसी गाड़े
 द्रव को इस प्रकार उँगलियों अथवा किसी उपकरण से बार बार हिलाना
 कि उसमे कण आदि न रह जायें। जैसे—खोया, दही या पीठी फेंकना।
 २. उँगली से हिलाकर बूब मिलाना। जैसे—यह दवा बहद मे फेंक
 कर खाई जाती है। ३. ताघ के पत्तों को इस प्रकार मिलाना कि उनका
 कम बयल जाय।

फेंटा—पु० [हि० फेंक] [स्त्री० अल्पा० फेंटी] ? कमर का घेरा।
 १२ धोती का वह भाग जो कमर के चारों ओर लपेटकर बाँधा जाता
 है (जिससे धोती नीचे बिसकने या गिरने न पावे)।

मूहा०—(अपना) फेंटा कसना या बाँधना—किसी काम या बात के
 लिए कमर कनकर तैयार होना। फिटवड या मसजद होना। (किसी
 का) फेंटा पकड़ना—धोती का उतत अथवा पकड़कर रोकना या और
 किसी प्रकार किसी को पकड़ रखना।

३ कमरबन्ध। फटका। ४ छोटे या कम लंबे कपड़े से मिर पर बाँधी
 जानेवाली हलकी पगड़ी। ५ अटेरन पर लपेटे हुए सूत की बडी
 अटी।

फेंकना—अ० [अनु० फेंके] ? फूट-फूट कर रोना। बिल्ला-
 बिल्ला कर रोना। २ जोर से बिल्लाते हुए कर्ण-कट्ट शब्द उत्पन्न
 करना। जैसे—गौडक का फेंकना।

फेंकाना—स० [हि० फेंकना] गिर के बाल खोलकर झटकाना।
 (स्त्रियाँ)

फेंकना—पु०—फिर्कत।

फेंक—पु०—पेच। (पूख)

फेंक—स्त्री०—फेंक।

फेंकना—स०—फेंकना।

फेंटा—पु०—फेंटा।

फेड़—पु०—फेड़।

अव्य०—फिर।

फेण—पु०—फेण।

फेणक—पु० [स० फेण+क] ? फेण। २ फेणी नाम का व्यजन।
 बतासफेणी।

फेण—पु०—फेण।

फेण—पु० [दिश०] बूँड़ा। झरूई।

फेण—पु० [स०/रक्षाप (बदना)। नक्, फे—श्रावण] [वि० फेणिल]
 ? बहुत छोटे छोटे बुल्लों का वह गूदा हुआ समूह जो पानी या किसी
 द्रव पदार्थ के बूब हिलने, सड़ने, धौलने आदि से ऊपर दिखाई पड़ता
 है। हाण।

फि० प्र०—उठना।—निकलना।

२ नाक से निकलनेवाला कफ। रेंट।

फेणक—पु० [स० फेण+कन्] ? फेण। हाण। २ ऐसी चीजों से
 शरीर मल या रगड़कर धोना जिसमे से फेण निकलता हो। ३ फेणी
 नाम का व्यजन।

वि० फेण उदात्त करने या बनानेवाला। जिससे फेण उत्पन्न हो।
फेणका—स्त्री० [स० फेण/कै+क+टाप्] एक तरह की पीठी।

फेरना—म० [हि० फेन] ऐसा काम करना जिसमें किसी तरह पदार्थ में फेन उत्पन्न होने लगे।

फेन-मेह—म० [म० ब० म०] एक प्रकार का प्रमेह रोग जिसमें वीर्य फेन की भाँति धाडा-धोडा गिरता है।

फेनल—वि० [म०/फेन। ल्यु] फेनयुक्त। फेनिल।

फेना—म्य० [म० फेन। अञ्] टापू। एक प्रकार का धूप।

फेनाप—म० [म० फेन-अप, प० तं] बदबूदार। बूझला।

फेनिका—म्य० [म० फेन। टन्] टापू। फेनी नाम की मिठाई।

फेनिल—वि० [म० फेन। टन्] जिसमें फेन हो। फेन या झाग से युक्त। पू० रीडा।

फेनी—म्य० [म० फेनिका] लगेटे हुए मूल के लच्छे की तरह मेंदे की एक प्रायः मिठाई जो प्रायः दूध में मिलाकर खाई जाती है।

फे० १ टडा। २ कुटिल।

फेनीछत्रासित—वि० [म० फेन-छत्रासित, न० तं] फोप, परिश्रम आदि के कारण जिसके मुँह में फेन निकल रहा हो।

फेनीस्ववल—वि० [म० फेन-उज्ज्वल, उगमि० म०] फेन की तरह उज्जला।

फेफडा—म० [म० फुफ्फुस। ० हिडा (प्रत्य०)] शरीर के भीतर धोतनी के अन्तर्गत का वह अवयव जो प्रायः दो भागों में होता है तथा जिसके द्वारा जीव तथा अदर स्वीचने तथा बाहर छो देने हे। ध्वनन अग। फफुस। (ल्य)

पद—फेफडे की कसरत पन्थों के राने का परिग्रहान्तरक पद।

फेफडे—म्य० [हि० फफडा] चौगाडा या एक रोग जिसमें उनके फेफडे मज जाते है और उनका रक्त मज जाता है।

म्य० १ पपटी

फेफरी—म्य०—फेफरी।

फेरड—म० [म० फे/रण्ड। अञ्] मीटड। मियार।

फेर—म० [हि० फेरना] १ फेरने या फेरने की क्रिया या भाव।

२ ऐसी स्थिति जिसमें किसी को अपना किसी के चारा ब्रात फेरना पडता है। घुमाव। चक्कर।

फि० प्र०—पडना।

पद—फेर को बात—प्राय की बात। ऐसी बात जो मीची या सरल न हो, बल्कि जिसमें घुमाव-फिगाव, पच या चालाकी भरी हो।

महा०—फेर खाना—सीपे रात में न जाकर घुमाव-फिगाववाले रातने स जाना।

३ किसी प्रकार का ऐसा क्रम या गिरासिला जिसमें आवश्यकतानुसार धोडा-नरुन परिवर्तन होता रहे। जैसे—अभी तो काम धूर किया है, जब कर वें (या वेड) नायगा, तब कुछ न कुछ अच्छा परिग्राम ही निकसेगा।

फि० प्र०—बैचना।—बोथना।—बैठना।—बैठाना।

४ कामे बडा या महत्त्वपूर्ण परिवर्तन। कुछ से कुछ हो जाना।

पद—उलट-फेर (द० स्वतंत्र शब्द)। फिनी (या भाष्य) का फेर

—देवी घटनाओं का ऐसा क्रमिक परिवर्तन जिसका रूप या स्थिति बिना कुछ बदल जाय विशेषतः अच्छी दशा में निकलकर बुरी दशा की हानेवागी प्राणित।

५ ऐसी स्थिति जिसमें भ्रम-बश कुछ का कुछ समझ से आवे। धोखा।

जैमे—(क) ओर कुछ नहीं वह तुम्हारी समझ का ही फेर है। (ख) यदि इय फेर में रहोगे तो बहुत धोखा खाओगे। ६ ऐसी स्थिति जिसमें बुद्धि जल्दी काम न करवाँ हो। अभिन्वय, असमजस

या बुद्धि का ही स्थिति। जैमे—वह खडे फेर में पड गया है कि बया करे। फि० प्र०—मे डालना।—मे पडना।

७ ऐसी स्थिति जो अन मे हानिकर सिद्ध हो। जैमे—उमकी बापों मे आकर मे हुआरा दगा के फेर मे पड गया।

फि० प्र०—मे आना।—मे डालना।—मे पडना।

८ नात्काकी वा धोखेवासी मे भगे हुई चाल या उचिन। जैसे—(क) तुम उमके फेर मे मत पडना वह वृहन बडा पुर्न है। (ख) वह आज-कल तुम्हे फंसामे के फेर मे लगा है। उदा०—फेर कड फिर पौरि न फिरि चिन्डे मुन्हाई—विहारी।

फि० प्र०—मे आना।—मे डालना।—मे पडना।—मे लगना। लगाना।

पद—फेर-फार (द० स्वतंत्र शब्द)।

९ उठाव। नरकीव। युवित। उदा०—देव जो ओरी दृष्टि भिमी, मिले मा कबनेट फेर।—जयसी।

महा०—फेर बाँधना—नरकीव या युचिन लगाना।

१० लेन-देन, व्यवसाय आदि के प्रसंग मे, समय समय पर कुछ लेने और कुछ देने रहने की अवस्था या भाव।

पद—हेर फेर—लेन-देन का क्रम या व्यवसाय। जैसे—हमी नरर. दूर-फेर चलता रहता है।

फि० प्र०—यैचना।—बाँचना।

११ उजाल। समेट। बखेडा। जैसे—प्रेम (या धरपनैने) का फेर बहुत बरा होता है।

पद—निशाबे का फेर—अधिक धन कमाने की चिन्ता या धन।

बिरोध—यह एक ऐसी कडावी के आधार पर बना है जिसमें किसी अप्रत्ययी को डी टा मार्ग पर लाने के उद्देश्य मे (उम १०) दे दिव। अप्रत्ययी मे साचा था कि वे किसी प्रकार पूरे सौ ही वाय, प्राय फलन वह धीने धीरे पर इकट्ठा करने लगा था।

१२ अन-प्रेन का आवेस या प्रभाव। जैसे—कुछ फेर है इमी मे वह अच्छा नहीं हो रहा है। (दम अम मे प्राय उररी फेर पद का ही अधिक प्रयोग होता है।) १३ ओर। तरल। दिशा। उदा०—सगन हाई मुदर मरुल मन प्रमख मव फेर। प्रमु आगमन जनाव वनु नगर म्य चहुँ फेर।—तुक्की। १४ दे० 'फेरा'।

अन्व०—फिर।

पू० [म० फे/र+त] श्रुणाल। गीदप।

फेरना—म० [हि० फेर या फेरा] १ कोई नीच किसी फेर या घेरे मे बार बार मडा-गकार अथवा किसी पूरी पर चारो ओर घूमना। जैसे—

(क) माला फेरना (अर्थात् एक एक दाना या मनका सरकाते हुए बार-बार ऊपर नीचे करने हुए चक्कर देना)। (ख) नक्की फेरना।

(ग) मुपदर फेरना (बार बार घुमाने हुए शरीर के चारो ओर ले जाना और ले आना) धोडा फेरना (धोडे को डीक तरह मे चलना मियाने के लिए थैने या मैदान मे मडलाकार चक्कर लगाने मे प्रवृत्त करना)।

२ किसी तल पर कोई चीज चारो ओर इधर-उधर ऊपर-नीचे ले जाना

और ले आना। जैसे—(क) किसी की पीठ या सिर पर हाथ फेरना (ख) दीवार पर चूना या रंग फेरना। (ग) पान फेरना—पान की गूदी या दोरी के पानों को बार बार उलट-पलटकर देवना और सके-गले पान निकालकर अलग करना। ३ कोई चीज लेकर चारों ओर या चक्कर-ना लगाने हुए सबके सामने आना। जैसे—(क) अतिथियों के सामने पान, इलायची फेरना। (ख) नगर में कुम्भी या मूर्तियाँ फेरना। ४ जो बहुत या व्यस्त जगहों या जगहों में अत्या ही, उसे लौटने हुए वहीं या उसी ओर कर या भेज देना। वापस करना। जैसे—(क) बच्चों के लिए आया हुआ आदमी फेरना। (ख) दुकानदार में लिया हुआ माल या मीठा फेरना। ५ किसी के हाग भेजी हुई वस्तु न लेना और फलन उग लौटा देना। लौटाना। ६ किसी काम या चीज या बात की गिनती दिखाना बदलना। किसी और धामना या मोड़ना। जैसे—(क) गाड़ी या घोड़े को दाहिने या बाएँ फेरना। (ख) कुम्भी या ऐव इधर या उधर फेरना। ७ जो चीज जिसे दिखाने में हा, उमका पार्श्व या मूँह उमग विपरीत दिशा में करना। जैसे—(क) किसी की ओर पीठ फेरना। (ख) किसी की ओर से मंग फेरना। ८ जैसा पूर्व में रहा हो या माथपरान रहना हो, उससे अभ्र या विपरीत करना। उदा०—कदि घरीह रूपि फेरि चलागारि।—तुलसी। ९ किसी चीज या बात की पठल की स्थिति बिलकुल उलट या बदल देना। जैसे—(क) जबान फेरना। बल कहकर मुकर जाना या बचन का पालन न करना। (ख) किसी के दिन फेरना—दिना का घुरी से अन्धी देना में या प्रतिक्रमात लाना। १० अभ्यास या कश्य करने के िग, बार बार उच्चारण करना या दोहराना। जैसे—लटका का पाठ फेरना—अच्छी तरह याद करने के लिए दोहराना।

कोर-पलटा—पु० [हि० फेरना। पलटा] गीना। द्विरागमन।
कोर-फार—पु० [हि० फेर। अनु० फार] १ बहुत बड़ा तथा महत्त्वपूर्ण परिचयन। उलट-फेर। २ धुमाव-फिगव। चक्कर। ३ धुमाव-फिगव या छल-कपट की बात-चीत। धूर्तता का व्यवहार। चालाकी। जैसे—इममें इस तरह की कोर-फार का बाने मत किया करो। ४ जेन-दन या धवक्षान के चलन रहने की अवस्था या भाव। जैसे—राजगणियों कोर-फार चलना रटना चादिर।

कोर-व—पु० [म० कोरव] गीदड़। उदा०—कोरवि फरु फारिग गाइआ। विश्वार्पित।

कोर-व—हि० [स० कोर-व, व० स०] १ धूर्त। चालबाज। २ हिंसक। पु० १ गधम। २ गीदड़।

कोर-वट—स्त्री० [हि० फेरना] १ फेरने या फिरने का भाव। २ फेरने ज्ञान पर होनेवाला चक्कर। फेरा। ३ धुमाव-फिगव। ४. अंतर। फख।

कोर-वा—पु० [हि० फेरना] सोने का वह छल्ला जो तार को, तीन बार लपेटकर बनाया जाता है। लपेटा हुआ तार।

पु०—फेरा।
 पु० पु० [म० कोरव] गीदड़।

कोर—पु० [हि० फेरना] [स्त्री० फेरी] १ किसी चीज के चारों ओर फिरने अर्थात् घूमने की क्रिया या भाव। चक्कर। परिक्रमण। जैसे—

यह पहिना एक मिनट में ही फेरने लगाता है। २ किसी लक्ष्मी तथा लक्ष्मी चीज को दूसरी चीज के चारों ओर घुमाने, आवन करने, लपेटने आदि की क्रिया या भाव। ३ उक्त प्रकार से किया हुआ आवनन, घुमाव या लपेट। जैसे—इस लक्ष्मी पर रस्सी के चार फेरें अभी और लगाने चाहिए।

मगी० कि०—देना।—लगाना।
 ४ बार-बार कहीं आने-जाने की क्रिया या भाव। जैसे—गह भिषममा दिन भर में दस बारभर के चार फेरें लगाना। ५।

मगी० कि०—डालना।—लगाना।
 ५ कहीं जाकर बहाने में लौटना या वापस आना विशेषतः निरीक्षण करने, मिलने, हाल-चाल पूछने आदि के उद्देश्य में किसी के यहाँ पोरी देर या कुछ समय के लिए जाना और फिर वहाँ म वापस लौट आना। जैसे—दिन भर में तकाजे के उद्देश्य से दग फेरने लगाना हूँ।

मगी० कि०—लगाना।—लगाना।
 ६ आवर्तन। घेरा। मडल। ७ विवाह के समय वर-वधु द्वारा की जानवाली अंतिम की परिक्रमा। भाँवर। ८ (विवाह के उपरान्त) लक्ष्मी का समुगल जाने का भाव। जैसे—उसे दूसरे फेरें घड़ी और तीगरे फेरें बादार्नामिल मिली थी। (परिचय) ९. द० फेरें।

कोर-फेरी—स्त्री० [हि० फेरना] १ बार बार इधर-उधर फेरने की क्रिया या भाव। २ द० 'हेरा-फेरी'।

कि० वि०—१ बारी-बारी से। २ रह-रहकर।
कोर—अव्य० [हि० फेर] फिर (घुन)।

पद—कोरि कोरि—फिर फिर। बार बार।
फेरी—स्त्री० [हि० फेरना] १ देवी-देवता आदि की कौ जानेवाली परिक्रमा। प्रदक्षिणा। २ विवाह के समय वर और वधु की वह प्रदक्षिणा, जो आग्नि के चारों ओर की जगह पर और वधु की वह

कि० प्र०—डालना।—पडना।
 ३ भिक्षुओं का भिक्षा के उद्देश्य में गली-गुहल्ले का लगाया जानवाला चक्कर।

कि० प्र०—देना।—लगाना।—लेना।
 ४ छाटे व्यापारी द्वारा गलियों, गावा आदि में फटककर घाफका के हाथ समतल बचने के उद्देश्य में लगाया जानेवाला चक्कर।

पद—फेरीवाला। (दो)
 ५ बार बार कहीं आने-जाने रहना। ६ एक तरह की चर्चों जिनमें रस्मी पर ऐंठन छोड़ी जाती है। ७ फेर। ८ फेरा।

फेरीवार—पु० [हि० फेरी। फा० वार] [भाव० फेरीदारी] वह जो किसी दुकानदार या महाजन की ओर में घूम-घूमकर कर्जदारों में पावना बनल करने का काम करता हो।

फेरीदारी—स्त्री० [हि० फेरीदार] फेरीदार का काम, पद या भाव।
फेरीवाला—पु० [हि० फेरी। वाला] वह छाटा व्यापारी वा मरग-गनी या गाव-गाव में घूम-घूमकर कुटकर घाफका के हाथ मीठा बचना हो।

फेरआ—पु०—फेरवा।
फेरक—पु० [म०] गीदड़। मियार।

फेरीती—स्त्री० [हि० फेरना] टूट-टूटे खपरणों के स्थान पर नव खपरणों रखने की क्रिया या भाव।

फैल—पु० [अ० फ़ैल] १. कार्य, कृत्य या क्रिया । २. बुरा कर्म ।
 पु० [?] एक प्रकार का बूझ जिसे बेचार भी कहते हैं ।
 पु० [स०] १. जूटा भोजन । २. जूटन ।
वि० [अ० फ़ैल] १ जो परीक्षा में अनुत्तीर्ण हुआ हो । २ जो अपने प्रयास में विकल हुआ हो । ३ जो समय पर ठीक और पूरा काम न दे ।
फैला—स्त्री० [स०] १. जूटा भोजन । २. जूटन ।
फैलका—स्त्री०—फैला ।
फैली—स्त्री० [स०] ३० 'फैला' ।
वि० [अ० फ़ैल] १ बुरा या बुरे काम करनेवाला । २. बुराचारी ।
 ३. व्यभिचारी । ४. घृत् ।
फैली—पु० [अ० फ़ैली] १. सहयोगी । २. किसी बहुत उच्च तथा बड़ी रचना या संस्था का सदस्य या समाजद । जैसे—विश्वविद्यालय का फ़ैली ।
फैल्ट—पु० [अ० फ़ैल्ट] १ जमाया हुआ ऊन । नमदा । जैसे—फैल्ट की टोपी ।
 २ एक तरह की टोपी जो बहुत-कुछ हट से मिलती-जुलती होती है ।
फैहरिस्त—स्त्री० [अ० फ़ैहरिस्त] १ सूची । २ सूची-पत्र ।
फैसी—वि० [अ० फ़ैसी] १ जो किसी ठीक कल्पना तथा शक्ति के अनुकूल हो । फलतः अचल तथा सुदृढ़ । २. काट-छाट, रंग-रूप आदि के विचार से अपने वर्ग की ओरतत चीजों से उत्कृष्ट और सुन्दर । जैसे—फैसी साड़ी ।
फैसलटी—स्त्री० [अ०] विश्वविद्यालय के अन्तर्गत किसी विद्या या शास्त्र के पढ़ितों और आचार्यों का वर्ग । विद्यमण्डल ।
फैसल्टरी—स्त्री० [अ०] वह स्थान जहाँ यंत्रों की सहायता से वस्तुओं का उपादन या निर्माण किया जाता हो । कारखाना । निर्माणशाळा ।
फैज—पु० [अ० फ़ैज] १ दानवीलता । २. फायदा । लाभ ।
फ़ि० प्र०—पहुँचाना ।
 ३ उपकार । भलाई । ४ यश । कीर्ति ।
फ़ैजम—पु० [अ०] जलाशयों की गहराई की एक नाप जो छ फुट की होती है । घुरस्ता ।
फ़ैजाब्—वि० [अ० फ़ैजाब्] [भाव० फ़ैजाबी] १ जिसमें फ़ैज अर्थात् दानवीलता हो । दानी । मुक्तहस्त । २. बहुत बड़ा उदार और नलमानस ।
फ़ैजाबी—स्त्री० [अ० फ़ैजाबी] १ फ़ैजाब् होने की अवस्था, गुण या भाव । दानवीलता । २. उदारता ।
फ़ि० प्र०—दिल्लालाना ।
फ़ैर—स्त्री० [अ० फ़ायर] १ बटुक, तोप आदि हथियारों को दागने की क्रिया या भाव । २. उक्त के दागने से होनेवाले शब्द । ३. बटुक आदि की गंधों का लगने या होनेवाला आभास ।
फ़ैल—स्त्री० [हि० फ़ैलना] १ फ़ैलने या फ़ैले हुए होने की अवस्था या भाव । विस्तार । २. लड़कों का बड़े बुराधर जो वे जमीन पर फ़ैल अर्थात् इधर-उधर लोट-पोटक प्रकट करते हैं । ३. और अधिक प्रायः या बमूल करने के लिए किया जानेवाला हठ अथवा इधर-उधर की बातें ।
फ़ि० प्र०—मचाना ।
फ़ि० प्र०—फैल (कर्म) ।
फ़ि० प्र० [अ० फ़ैल] कौशल । शैल ।

फ़ैलाना—अ० [स० प्रसन्न प्रा० पयस्व+ना (प्रत्य०)] १. किसी चीज का चारों ओर दूर तक विस्तृत प्रदेश में स्थित रहना या होना । विस्तार से फैलना होना । जैसे—(क) यह पर्वत (प्रदेश) शीकटों मील तक फैला है । (ख) कपड़े फैलानी पर फैले हैं । २. किसी चीज का अभिव्यक्ति और अथवा पतनकर बहुत दूर तक पहुँचाना । इधर-उधर बढ़ते हुए अधिक स्थान घेरना । जैसे—बागीचे में लताओं का फैलना । ३. किसी क्षेत्र, प्रदेश या स्थान में प्रभावशाली तथा शक्तिशाली होने—(क) शाहर में बीमारी फैलना । (ख) गाँव में आग फैलना । ४. आकार, रूप आदि में पहले से अधिक बड़ा या बड़ा हुआ होना । जैसे—(क) बाड़ी से शरीर फैलना । (ख) आबादी बढ़ने से बस्ती का चारों ओर फैलना । ५. अधि-क्षेत्र या कार्यक्षेत्र की सीमाएँ बढ़ना । जैसे—चिबेदों में व्यापार फैलना । ६. बात आदि का व्यापक क्षेत्र में पचों का विषय बनना । जैसे—हुइताल की खबर फैलना । ७. चारों ओर छितरा या बिखरा हुआ होना । जैसे—कामरे में शारा सामान फैला पड़ा है । ८. किसी प्रकार के अवकाश, विवर आदि का यथा-साम्य अधिक विस्तृत होना । जैसे—गृह फैलना । ९, किसी काम, चीज या बात का प्रचलन या प्रचार में आना । जैसे—आज-कल रिचयों में फैलान बहुत फैल गया है । १०. किसी रूप में दूर दूर तक पहुँचा हुआ होना या लोगों की जानकारी में होना । जैसे—बदनामी फैलना, बदनाम फैलना । ११. व्यक्तियों के सम्बन्ध में, कुछ अधिक पाने या लेने के लिए आग्रहपूर्वक याचना या हठ करना । जैसे—दस रुपए इनाम मिल जाने पर भी पच्चे कुछ और पाने के लिए फ़ैलने लगे । १२. गति के प्रसंग में, लेखे या हिसाब का परिकलन होना या बँडोया पाने ।
फ़ैल-फ़ुट्टा—वि० [हि० फ़ैलना+फुट=अकेला] १. इधर-उधर फैला या बिखरा हुआ । २. फुटकर ।
फ़ैलसूफ—वि० [अ० फ़िलसफ=दार्शनिक] [भाव० फ़ैलसूफी] १. बहुत बड़ा अणव्ययी । फ़ैलसूफर्ची । बहुत टाट-बाट या शान-शौकत से रहनेवाला । २. फ़ैली और घृत् ।
फ़ैलसूफि—स्त्री० [हि० फ़ैलसूफ] १. आवश्यकता से अधिक धन व्यय करना । अणव्ययी । फ़ैलसूफर्ची । २. टूटा और दिखावटी टाट-बाट । ३. चालाकी । घृत्तता ।
फ़ैलाना—स० [हि० फ़ैलना का सं०] १. किसी को फ़ैलने में प्रवृत्त करना । २. कोई चीज खींचकर उस विस्तार या सीमा तक ले जाना, जहाँ तक वह जा सकती हो अथवा जहाँ तक उसे ले जाना आवश्यक या सगत हो । लबाई-चौडाई अथवा चौडाई के बल विस्तार बढ़ाना । पनारना । जैसे—(क) मुझाने के लिए येद या रस्ती पर कपड़े फैलाना । (ख) कुछ पकड़ने या लेने के लिए हाथ फैलाना । ३. किसी चीज को तानते हुए आगे बढ़ाना । जैसे—(क) पथियों को पर फैलाना । (ख) आराम से बैठने के लिए पैर फैलाना । ४. ऐसा काम करना जिससे कोई चीज आवश्यक या उचित से अधिक स्थान घेरे । बिखेरना । जैसे—बैकी पर तो तुमने कागज-पत्र फैला रखे हैं । ५. किसी पदार्थ के क्षेत्र, मर्यादा, सीमा आदि, सीमा आदि का विस्तार करना । बढ़ाना । जैसे—उन्होंने अपने कार-बार सारे देश में फैला रखा है । ६. किसी प्रकार के घेरे या विवर का विस्तार बढ़ाना । जैसे—(क)

कुछ लेने के लिए खोली फैलाना । (क) दस्त आडाने के लिए रूँह फैलाना ।
 ७. ऐसी क्रिया करना जिससे दूर तक किसी प्रकार का परिणाम या प्रभाव पहुँचे । जैसे—यथा (या सुगन्ध) फैलाना । ८. ऐसी क्रिया करना जिससे दूर तक के लोगों को किसी बात की जानकारी या परिचय हो । जैसे—फूलो का सुगन्ध फैलाना । ९. ऐसी क्रिया करना जिससे किसी चीज का लोगों में सम्बन्ध प्रचार या व्यवहार हो । उदा—राज-काज दरबार में फैलावट्ट वृहत् रत्न ।—मारतेनु । १०. कोई चीज ऐसी स्थिति में लाना कि उस पर विशेष रूप से या अधिक लोगों की धृष्टि पड़े या ध्यान आकृष्ट हो । जैसे—आकम्बर या बोंग फैलाना । ११. गणित के क्षेत्र में, किसी प्रकार लेखा या हिसाब तैयार करने के लिए अथवा तैयार किये हुए हिसाब की जाँच करने के लिए किसी प्रकार का परिकल्पन करना । जैसे—(क) ब्याज या सूद फैलाना । (ख) लागत फैलाना ।

फैलाव—स्त्री० [हि० फैलाना] १. फैले हुए होने की अवस्था या भाव । विस्तार । २. उतनी लम्बाई-चौड़ाई जिसमें कोई चीज फली हुई हो ।

फैलावट—स्त्री०=फैलाव ।

फैलाव—पुं० [अ० फैलान] १. समाज में विशेषतः समाज के उच्च वर्गों द्वारा किये जानेवाले बनावट-श्रमण, धारण की जानेवाली बेरा-भूषा आदि का इस रूप में होनेवाला प्रयत्न जिसे जन-साधारण भी अपनाने में अग्रसर हो रहा हो । २. बग । रीति ।

फैसला—पुं० [अ० फैसल] १. न्याय-कर्ता द्वारा की जानेवाली व्यवस्था । निर्णय । निबटारा ।
 मुहा०—फैसला सुनाना=न्यायाधीश अथवा निर्णायक द्वारा किसी विवादाम्यद विषय के सम्बन्ध में अपना निर्णय सुनाना ।
 २. किसी बात के सम्बन्ध में किया जानेवाला अंतिम तथा दृढ़ निश्चय । कि० प्र०=करना ।

फैसलम—पुं० [अ० फैसलम] शासन का वह प्रकार जिसमें प्रभुसत्ता किसी राष्ट्रवादी निरंकुश शासक में केन्द्रीभूत होती है ।

फैसल्ट—पुं० [अ० फ़ैसल्ट] १. वह जो फैसलम के सिद्धान्त मानता हो । २. फैसलम के सिद्धान्तों पर बना हुआ इटली में एक राजनैतिक दल । ३. लासालिक अर्थ में, वह व्यक्ति जो सारा अधिकार अपने हाथ में रखना चाहता तथा विरोधियों को कुचल डालने का पक्षपाती हो ।

फौक—पुं० [सं० फुक] १. तीर का पिछला सिरा जिसपर पल्ल लगाये जाते हैं । २. दे० 'भोगली' ।
 † वि० पुं०=फोक ।

फौकली—स्त्री० दे० 'भोगली' ।

फौका—पुं० [सं० फुक या हिं० फूकना] १. लबा और पोला बोगा । फौकी । २. पोले इटलवाले शरयों की कुन्गी । जैसे—मटर का फौका ।
 † पुं० १ =फूका । २. =सर-फौका ।

फौका मोला—पुं० [हिं० फोक+मोला] चौप का एक प्रकार का लबा मोला ।

फौबा—पुं०=फूटना ।

फौबर—वि० [अनु०] १. खोलला । २. पोला । ३. निस्सार । घोषा ।
 पू० बो तलको के बीच की ऐसी दरज या सन्धि जिसमें से उस पार की चीजें बिबाई देती हैं ।

फौकी—स्त्री० [अनु०] १. गोल छवी नली । छोटा बोगा । २. सुनारी की वह नली जिससे के आग दीकते हैं । ३. दे० 'भोगली' ।

फौक—पुं० [सं० स्फोट] १. वह नीरस अथ जो किसी रसपूर्व पदार्थ के रस निशोर्ग कर निकाल लेने के उपरांत बच रहता हो । छीठी । २. लासालिक अर्थ में ऐसी चीज जिसमें कोई तत्व न रह गया हो ।
 पुं० [?] एक तत्व जिसका साग बनाया जाता है ।

स्त्री० [?] पीड़ा । वेदना ।
 वि० [?] बारा । (दशाल)

फौकट—वि० [सरा० फुकट] १. जिसमें कुछ भी तत्व या सार न हो । निस्सार । २. जिसके लिए कुछ भी परिश्रम या व्यय न करना पड़ा हो । मुफ्त का । जैसे—फौकट का माल ।
 पद—फौकट का=मुफ्त । फौकट में=(क) बिना कुछ व्यय किये । मुफ्त । (ख) व्यर्थ बे-फायदा ।

फौकला—पुं० [सं० बकल, हिं० बोकला] [स्त्री० फौकलाई] किसी फल आदि का ऊपरी छिलका ।
 वि०=फौका ।

फौकलाप—वि० [देश०] चौधर । (दशाल)

फौका—वि० [हिं० फोक] [स्त्री० फौकी] १. फोक के रूप में होनेवाला अर्थात् रस-नीर और बेस्वाद । २. जिसमें मिठास न हो । ३. जिसमें कोई तत्व न हो । ४. खाली । रिक्त । ५. खोलला । पोला ।
 जैसे—फौका बारा । ६. हलके दरजे का । बटिया ।
 अव्य० केवल । निरा ।
 † पुं०=फौका ।

फौकी—स्त्री० [हिं० फौका] ऐसी मुलायम भूमि जिसमें आसानी से हल चल सके ।

फौग—पुं० [देश०] राजस्थान में होनेवाला एक प्रकार का क्षुप ।

फोट—पुं० [सं० स्फोट] स्फोट ।

पुं० [हिं० फूटना] १. फूटने की क्रिया या भाव । २. रूँह से निकलनेवाली मन की बात । उद्धार ।

फोटकी—वि०=फोकट ।

फोटा—पुं० [सं० स्फोटक] १. माघे पर लगाई जानेवाली गोल बिंदी । २. किसी प्रकार का मोलाकार चिह्न । ३. दे० 'टीका' ।

फोटो—पुं० [अ० फोटोग्राफ] १. एक विशिष्ट यांत्रिक उपकरण द्वारा लीया हुआ चित्र । छाया-चित्र । २. वह पत्र जिसपर उक्त चित्र छपा होता है ।
 कि० प्र०=उत्तारना ।=खीचना ।=लेना ।

फोटोग्राफ—पुं०=फोटो ।

फोटोग्राफर—पुं० [अ०] फोटो अर्थात् छाया चित्र बनानेवाला कलाकार ।

फोटोग्राफी—स्त्री० [अ०] फोटो उतारने के यंत्र के द्वारा फोटो या छाया-चित्र बनाने की कला तथा कृत्य ।

फोइन—स्त्री० [हिं० फोइन] वे मसाले जो बाल-तरकारी आदि आँच पर रखने से पहले उन्हें छींकने या बघारने के लिए डाले जाते हैं ।
 तडका ।
 † वि० फोड़नेवाला ।

फोड़ना—स० [सं० स्फोटन; प्रा० फोडन] १. हिं० 'फूटना' का स०

रूप । ऐसा काम करना जिससे कोई चीज फूटे । २ खरी या करारी वस्तुओं को दबाव या आघात द्वारा तोड़ना । खड़ खड़ करना । जैसे—पधा फोड़ना ।

पध—तोड़ना-फोड़ना ।

३ ऊपरी आकरण या तल में स्थान स्थान पर अवकाश उत्पन्न करना कि अन्ध की चीज बाहर निकाल आये या निकलने लगे । जैसे—(क) कच्चा पाग शरीर को फोड़ देता है । (ख) बरमात में जमीन को फोड़कर उनमें से मये कल्पे निकलने हैं । ४ किसी दल या पक्ष के व्यक्ति या व्यक्तियों को प्रलोभन आदि देकर अपनी ओर मिलाना । दूसरों में फूट डालकर उनमें से कुछ को अपनी ओर मिला लेना । जैसे—पत्रकों में कई अधिकारियों को फोड़कर अपनी ओर मिला लिया । ५ व्यर्थ ऐसा परिश्रम करना जिसका कोई फल न हो या बहुत ही कम फल हो । जैसे—(क) किसी महीन काम के लिए आँखें फोड़ना । (ख) किसी को ममझाने के लिए अपना तिर फोड़ना अर्थात् माथा-पसी कटना । ६ किसी का भेद या रहस्य सब पर प्रकट करना । जैसे—किसी का भडा फोड़ना । ७ उँगलियों के सवध में उनके पोरों को इस प्रकार ऐड़ना या मीचना कि उनमें से खटू खटू दण्ड हो । जैसे—बार बार उँगलियाँ फोड़ते रहना अशुभ होता है ।

फोडा—पुं० [म० स्फोटक, प्रा० फोड] [स्त्री० अल्पा० फोडिया] गौरीरिक बिकार के कारण होनेवाला ऐसा रोग जिसमें रक्त सड़कर मवाद का रूप धारण कर लेता है । (एम्बेसे)

फोडिया—पुं० [हि० फोडा, या म० पिडिका] छोटा फोडा ।

फोता—पुं० [फा० फोत] १ कमगन्द । पतका । २ लुगी । ३ पगडी ।

४ बने या जमीन पर लगनेवाला राज-कर । पोट । लगान ।

मूहा—फोला भरना—कर या लगान देना ।

५ धवये आदि रत्नने की येनी । ६ अड-कोण ।

फोतेवार—पुं० [फा० फोतवार] १ कोषाध्यक्ष । सजाची । २ गेकटिया । फोतवार ।

फोनीघाक—पुं० [अ० फोनीघाक] एक प्रकार का यंत्र जिसमें कहीं हुई बातें और बजाये गये बाजों के स्वर आदि पृथियों में भरे रहते हैं और ज्यों के त्यों मुनाई पड़न है । (शामोफोन इमी का विकसित रूप है ।)

फोरना—स०=फोडना ।

फोरमैन—पुं० [अ० फोरमैन] कारखानों में कारीगरो और काम करने वालों का प्रधान या सरदार । जैसे—मेस का फोरमैन ।

फोहा—पुं०=फोहा ।

फोहारा—पुं०=फुहारा ।

फोहन—अ० [अनु०] आवेश में आकर डींग मारना । बोली हँकना ।

फोडना—पुं०=फुडना ।

फोडारा—पुं०=फुहाग ।

फोक—वि० [अ० फोक] १ उच्च । श्रेष्ठ । २ उत्तम ।

३ उच्चता । ऊँचाई । २. प्रधानता । श्रेष्ठता ।

मूहा—(किसी से) फोक ले जाना—किसी से बहुत बड़कर या श्रेष्ठ सिद्ध होना ।

फोज—स्त्री० [अ० फोज] [वि० फोजी] १ सेना । २ झुड । जैसे—बदरो या बच्चों की फोज ।

फोजदार—पुं० [अ० फोज+फा० दार] [भाष० फोजदारी] सेना का एक छोटा अधिकारी ।

फोजदारी—स्त्री० [अ०] १. फोजदार का कार्य या पद । २ वह ग्यायालय जिसमें मार-पीट, हत्या आदि सबधी मुकदमों की मुनवाई होती है । ३ गहरी मार-पीट की कोई बटना ।

फोजी—वि० [फा० फोजी] १. फोज का । जैसे—फोजी अफसर । २ फोज या फौजों में होनेवाला । जैसे—फोजी लडाई ।

फौत—वि० [अ० फौत] १ मरा हुआ । मृत । २ जो नष्ट हो गया हो । जैसे—किसी बात का मतलब फौत होना ।

स्त्री० मृत्यु । मौत ।

फौती—वि० [अ० फौत] १ मृत्यु-सम्बधी । मृत्यु का । ३ मरा हुआ । मृत ।

स्त्री० १ मृत्यु । मौत । २ किसी विशिष्ट म्थनीय सामक विशेषत जन-गणना करनेवाले किसी अधिकारी को दी जानेवाली किसी की मृत्यु की सूचना ।

फौतीनामा—पुं० [अ० फौत+फा० नामा] १ मृत व्यक्तियों के नाम और पते की सूची जो नगरपालिका आदि की चौकी पर नैयाग की जाती है, और प्रधान कार्यालय में भेजी जाती है । २ सेना द्वारा किसी मृत सैनिक के घर उसकी मृत्यु का भेजा जानेवाला समाचार ।

फौतन—क्र० वि० [अ० फौतन] तत्क्षण । उसी समय । जल्दी ही ।

तत्काल । तुरन्त ।

फौरी—वि० [अ० फौरी] (काम) जो बट पट या तुरत किया जाने को हो ।

फोलाव—पुं० [फा० फोलाव] असली लांछा ।

फोलावी—वि० [फा०] १ फोलाव का बना हुआ । जैसे—फोलावी डाँचा । २ बहुत ही दुष्ट या पक्का ।

स्त्री० वह डडा जिसके सिरे पर बल्लम या माला जडा रहता है ।

फोवारा—पुं०=फुहारा ।

फ्रांस—पुं० [अ० यूरोप का एक प्रसिद्ध देश जो स्पेन के उत्तर में है ।

फ्रांसीसी—वि० [हि० फ्राम । ईसी (प्रयाग०)] फ्रांस का ।

पुं० फ्रांस देश का निवासी ।

स्त्री० फ्रांस देश की भाषा ।

फ्राक—पुं० [अ० फ्राक] लष्ठी आस्टीन का डीला डीला एक प्रकार का छोटे बच्चों विशेषत लडकियों के पहनने का कुरता ।

फ्री—वि० [अ० फ्री] १ जिस पर किसी का दबाव या नियन्त्रण न हो । स्वतन्त्र । २ जिसके लिए कोई कर या देन नियन न हो । ३ जो किसी प्रकार का कर या देन चुकाने से मुक्त कर दिया गया हो ।

फ्रीमसन—पुं० [अ०] फ्रीमसनरी नामक सम्प्रदाय का अनुयायी या सदस्य ।

फ्रीमसनरी—स्त्री० [अ०] अमेरिका और यूरोप में मध्ययुग का एक रहस्य सम्प्रदाय ।

फ्रेंच—वि० [अ० फ्रेंच] फ्रान देश का ।

स्त्री० फ्रांस देश की भाषा ।

पुं० फ्रांस देश का निवासी ।

फ्रेंम—पुं० [अ० फ्रेंम] १ चित्रों आदि का या और किसी प्रकार का चौकडा । २ डाँचा ।

ब

ब—देवनागरी वर्णमाला का पचवीस वर्ण जो व्याकरण तथा भाषा-विज्ञान की दृष्टि से ओष्ठ, अघोष, अल्पप्राण तथा स्पृष्ट व्यंजन है।
 पू० [सं०/बल् (जीवन देना)+ङ] १ वरुण। २ समुद्र। ३. बल। पानी। ४ सुगंधि। ५. ताना। ६ घडा। ७. भग। योनि।
 अर्थ० [का] एक अव्यय जो अजी-भारती शब्दों के पहले लगकर ये अर्थ देता है—(क) सहित। साथ। जैसे—बलैरियल—बैरियल से। (ख) पूर्वक। जैसे—बलूबी। (ग) के द्वारा। जैसे—बजरिया जरिये द्वारा। (घ) पर या से। जैसे—ब्लु-ब-ब्लु—आप से आप। (च) किसी की तुलना में। जैसे—ब-जिन्स किसी के ठीक अनुरूप। (छ) अनुसार। जैसे—बदस्तूर, बम्बिब।

बंक—वि० [सं० बक, बक] १ टेड़ा। तिरछा। २. जिसमें पुष्पाधार और विक्रम हो। ३. दुर्गम। ४ विकट।
 पू० दे० 'बैंकर'।
 †पु० अस्थि। हड्डी। उदा०—मचक्करहिं रीठक बंक अमाप।—कविराज सूर्यमल।
 बंकारा—वि० [अ० बंक] बहु महाजनी सस्था जो मुख्य रूप से भूद पर फायो के जिन-देन का काम करती हो।

बंकर—वि० [सं० बक] १. बक। टेड़ा। २. नीत्र। ३ विकट।
 पू० [सं० ब्यंकट?] हनुमान।

बकनाल—स्त्री० [हिं० बक।नाल] १ गुनारो की एक नली जो बहुत बारीक टुकड़ो की ओछाई करने के समय चिराग की लोफूकने के काम आती है। बगनहा। २ कोई टेड़ी पतली नली। ३ हठ-योग में धावनी नाडी का एक नाम।

बकराज—पु० [हिं० बक।राज] एक प्रकार का साँप।

बंकरा—पु० [सं० बक] एक तरह का बड़िया अगहनिया घान।

बंकनाल—पु० [दिशा०] जहाज का बहु बडा कमरा जिसमें मस्तूलों पर चढ़ाई आनेवाली रस्सियाँ या जखीरें ठीक करके रखी जाती है।

बंका—वि० [सं० बक] [भाव० बकाई] १ टेड़ा। तिरछा। २. दुर्गम। ३ विकट। ४ पराक्रमी। ५ बंका।

बंकाई—स्त्री० [हिं० बक+आई (प्रत्य०)] टेड़ागन। तिरछापन। वक्रता।

बंकी—स्त्री०=बंकि।

बंकरा—वि० [भाव० बंकरता]=बंक (वक्र)।

बंकरा—वि०=बक।

बंकेअन—अव्य०, पु०=बकैया।

बंग—पु०=बग।

बंगई—स्त्री० [सं० बग] सिलहट की भूमि में होनेवाली एक तरह की कपास।
 † स्त्री० [हिं० बंगा] १. उर्दुबता। २. शगडालूपन। ३. † बदभाषी।
 लुब्धापन।

बंगरार—पु०=बिनीना।

बंगीगी—स्त्री० [दिशा०] १. लाव या काँच की बनी हुई चूड़ी या कंगन। २. आलू की फसल में होनेवाला एक तरह का रोग।

बंगला—वि० [हिं० बंगाल] १. बंगाल प्रदेश-संबंधी। २ बंगाल में बनने या होनेवाला। जैसे—बंगला मिठाई।
 स्त्री० १ बंगाल देश की भाषा। २. उक्त भाषा की लिपि जो देवनागरी का ही एक स्थानिक रूप है।
 पु० १. एक मजला हवादार तथा बरामदेवाला छोटा मकान जिसकी छत प्रायः ऋषेल् की होती है तथा जो बूले स्थान में बना हुआ होता है। २ कोई छोटा हवादार तथा बरामदेवाला मकान। † ३ बोल-चाल में, ऊपरवाली छत पर बना हुआ हवादार कमरा।

बंगलिया—पु० [हिं० बंगाल] १. एक प्रकार का घान। २. एक प्रकार की मटर।

बंगली—स्त्री० [?] स्त्रियों का एक आमूषण जो हाथों में चूड़ियों के साथ पहना जाता है।
 पु० [हिं० बंगाल] एक प्रकार का घान।
 पु० [?] घोड़ा। (दिंगल)

बंगसार—पु० [?] समुद्र में बनाया हुआ वह चबूतरा जिस पर में यानी जलयान में चढते हैं। बनसार।

बगा—वि० [सं० बक] [स्त्री० बगी] १. टेड़ा। २ शगडालू। ३ पाजी। लुब्धा। ४ अशानी। मूर्ख। ५ उर्दु।

बगारी—पु० [सं० बग+अरि] हुरताल। (डि०)

बंगाल—पु० [सं० बग] १ भारत का एक पूर्वी प्रदेश जिसका आधा भाग पूर्वी बंगाल (पाकिस्तान) और आधा भाग पश्चिमी बंगाल (भारत) के नाम से प्रसिद्ध है। बग प्रदेश। २ सगीन में एक प्रकार का राग जिसे कुछ लोग मंत्र राग का और कुछ लोग मेघ राग का पुत्र मानते हैं।

बंगालिका—स्त्री० [?] एक रागिनी जिसे कुछ लोग मेघराग की पत्नी मानते हैं।

बंगाली—पु० [हिं० बंगाल+ई (प्रत्य०)] बंगाल अर्थात् बग-प्रदेश का निवासी।
 वि० १. बंगाल देश का। बंगाल-सम्बन्धी।
 स्त्री० १ बंगला भाषा। २ संगीत में सम्पूर्ण जाति की रागिनी जो प्रीत्य ऋतु में प्रातःकाल गाई जाती है। ३ विशुद्ध अद्वैत का ज्ञान प्राप्त होने की अवस्था। (बीड)

बंगरी—स्त्री०=बंगली (आमूषण)।

बंग—पु० [दिशा०] १ बग तथा दक्षिण भारत की नदियों में होनेवाली एक तरह की मछली। २ जंगी या नीरा नाम का खिलौना।

बंगीभा—पु० [दिशा०] गंगा और सिंधु नदियों में होनेवाला एक तरह का कछुआ।

बंभक—वि० [भाव० बंभकता]=बंभक (ठग)।

बंभकताई—स्त्री०=बंभकता।

बंभन—पु०=बंभन।

बंभना—सं० [सं० बंभन] ठगना। छलना।
 अ० ठगा जाना।
 स्त्री०=बंभना।

सं [सं वाचन] पड़ना। बचिना।

बंजर—पु०=वनचर।

बंजवना—हि० [सं बचिना का प्रे०] बचिने (पढ़ने) का काम दूसरे से कराना। पढ़वाना।

बंचित—वि०=बंचित।

बंजना—सं० [सं कृष्ण] वाछा अर्थात् इच्छा करना। चाहना।

बंजनीय—वि०-योजनीय।

बंछित—वि०-वाञ्छित।

बंज—पु० [देश०] हिमालय प्रदेश में होनेवाला एक प्रकार का बलुत जिसकी लकड़ी का रस खाकी होता है। इमें सिल और मारू भी कहते हैं।

† पु०=बनिज।

बंजर—वि० [सं वन उजड़] (भूमि) जिसमें कोई चीज न उगती हो फलत जो उपजाऊ न हो। ऊसर।

पु० बजर भूमि।

बंजर भूमि—स्त्री० [सं] शुष्क प्रदेशों में कटा-फटा या ऊबड़-खाबड़ भू-खण्ड जिसमें कोई वनस्पति नहीं होती। ऐसी भूमि में बीच बीच में छोटी-मोटी चट्टानें या टीले भी होते हैं। (बैज लेख)

बजरिया—वि० बजर।

स्त्री०=बन-उगिया।

बंजारा—पु०=बनजारा।

बजल—पु० बजल (अधोक्त)।

बसा—वि०, स्त्री०=बाँसा।

बैठन—पु० [हि० बैठना] बैठने की क्रिया या भाव।

बैठना—अ० [हि० 'बैठना' का अ०] ? अलग अलग हिस्सों में बाँटा जाना। २ किसी प्रकार या रूप में विभक्त या विभाजित होना। सभे० क्रि०=जाना।

† पु०=बटना।

बैठवाई—स्त्री० [हि० बैठवाना] बैठवाने की क्रिया, भाव या पारिश्रमिक।

† स्त्री०=बटाई।

बैठवाना—ग० [हि० बैठना] दूसरो को कोई चीज बैठने में प्रवृत्त करना।

सं=बटवाना।

बैठवारा—पु० [हि० बैठना] ? बैठने का काम। २ माइयों, हिन्दुदारों आदि में होनेवाला मण्डप का विभाजन। अलगोझा। जैसे—(क) खेत का बैठवारा। (ख) देश का बैठवारा।

बंटा—पु० [सं बटक, हि० बटा+गोला] [स्त्री० अल्पा० बंटी] कोई छोटा गोल चौकोर डिब्बा। जैसे—पान का बटा।

वि० छोटे बट का। नाटा।

बैठाई—स्त्री० [हि० बैठना] ? बैठने की क्रिया, भाव या पारिश्रमिक। २ बंटे जाने की अवस्था या भाव। ३ किसी को जोतने-बोने के लिए खेत देने का वह प्रकार जिसमें खेत का मालिक लगान के बदले में उपज का कुछ अंश लेना है। जैसे—वह खेत इस साल बैठाई पर दिया गया है।

बैठावारा—वि० [सं विनष्ट+आधार] पूरी तरह से चौपट, नष्ट या भ्रष्ट किया हुआ। (पूरव)

बैठाना—सं० [हि० बैठना] ? किसी संपत्ति आदि के हिस्से लगवाकर अपना हिस्सा लेना। जैसे—उसने सारी जगदाद बैठी की है। २ किसी काम या बात में इस प्रकार सम्मिलित होना कि दूसरे का मार कुछ हलका हो जाय। जैसे—(क) किसी का दुख बैठाना। (ख) किसी काम में हाथ बैठाना। ३. दे० 'बैठवाना'।

बैठावन—स्त्री० [हि० बैठवाना] बैठवाकर अपना हिस्सा लेनेवाला।

बैठी—स्त्री० [?] हिरन आदि पशुओं को फँसाने का जाल या फँदा।

स्त्री० हि० 'बंटा' का स्त्री० अल्पा०।

बैठेया—वि० [हि० बैठना] बैठनेवाला।

वि० [हि० बैठवाना] बैठवाकर अपना हिस्सा ले लेनेवाला।

बैठ—वि०=बाँधा।

पु०=बडा।

बैठल—पु० [अ०] रस्सी आदि से अच्छी तरह बँधा हुआ पुलिदा।

बैठवा—वि०=बाँधा।

बंठा—पु० [हि० बटा] ? अर्थात् की जाति की एक लता। २. उकत लता के कट जिनकी तरकारी बनाई जाती है। ३. अनाज रखने का बखार।

बंठी—स्त्री० [हि० बाँधा =कटा हुआ] ? बिना अस्तोन की एक प्रकार की कुर्ती। फनुही। मिरबई। २. बगलबन्द नाम का पहनने का कपडा।

बैंडर—स्त्री० [सं बरबड ?] वह बल्गा या शहतीर जिसके ऊपर छाजन का ठाठ स्थित होता है।

बबेरा—पु०=बैंडर।

बैंडेरी—स्त्री०=बैंडर।

बब—पु० [सं बब में फा०] ? वह चीज जो किसी दूसरी चीज को बाँधती हो। जैसे—धोरी, रस्सी आदि। २. लोहे आदि की वह लम्बी पट्टी जो बड़ी बड़ी गठरियों, सड़कों आदि पर इस्माल रखा के विचार से बाँधी जाती है कि माल बाहर बँजते समय उनमें से कुछ चुराया या निकाला न जा सके। ३. किसी प्रकार की लम्बी धज्जी या पट्टी। जैसे—कपड़े या कागज का बन्द। ४. वास्तुरचना में, पत्थर की वह पटियाँ या पत्थरों की वह श्रृंखला जो दीवारों में मजबूती के लिए लगाई जाती है और जिसके ऊपर फिर दीवार उठाई जाती है। ५. पानी की बाढ़ आदि रोकने के लिए बनाया जानेवाला पुस्त। बाँध। ६ फीते की तरह सीकर बनाई हुई कण्ठे की वह धोरी या फीता जिससे औरले, बोली आदि के पल्ले आपस में बाँधे जाते हैं। ७. कागज, धातु आदि की पतली लकी धज्जी। पट्टी। ८. व्याख्यात्मक रूप में, किसी प्रकार का नियंत्रण या बधन। जैसे—बदे के जाये बदी में नहीं रहते। ९. उर्वृ कविता में वह पद जो पाँच या छ चरणों का होता है। १०. कविता का कोई चरण या पद। ११. दारी के अगो का जोड़ या संबन्ध-स्थान। जैसे—बद बध जकडगा या बीला होता है। १२. कोई काम कौशलपूर्वक करने का गुण, योग्यता या क्षमिता। १३. तरकीब। मुक्ति। उदा०—कस्बोहनर के याद हैं जिनको हवार बन्द।—नबीर।

वि० १. (पदार्थ या व्यक्ति) जो चारों ओर से घिरा या रक्ता हुआ हो। जैसे—(क) कोठरी में सब सामान बंद है। (ख) पुलिस ने उसे घेरने में बन्द कर रखा है। २. (स्थान) जो चारों ओर से लुलता या खुला हुआ न हो। फलतः जो इस प्रकार घिरा हो कि उसके अन्दर कुछ या कोई आ-जा न सके। जैसे—बहु मानक तो चारों तरफ से बन्द है; अर्थात् उसमें प्रकाश, वायु आदि के आने का यथेष्ट मार्ग नहीं है। ३. (स्थान) जिसके अन्दर कौनों के आने-जाने की नानाही या रूकावट हो। जैसे—जन-साधारण के लिए किला आज-कल बन्द हो गया है। ४. (निष्ठी प्रसार का मार्ग या रास्ता) जो अवच्छेद हो अर्थात् जिसके आगे डकना, दाका, दरवाजा, या ऐसी ही कोई और बाधक चीज या बात लगी हो जिसके कारण उसके अन्दर पहुँचना या बाहर निकलना न हो सकता हो। जैसे—नाली का मूँह बन्द हो गया है, जिससे छत पर पानी रकता है। ५. डकने, दरवाजे, फस्ले आदि के सबंध में, जो इस प्रकार मंदा या लगाया गया हो कि आने-जाने या निकालने-रखने का रास्ता न रह जाय। जैसे—कमरा (या सड़क) बन्द कर दो। विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग डकने, दरवाजे आदि के सबंध में भी होता है, और उस चीज के सबंध में भी जिसके आगे वे लगे रहते हैं।

६. शरीर के अंगों, यंत्रों आदि के सबंध में, जिनकी क्रिया या व्यापार पूरी तरह से रूक गया हो अथवा रोक दिया गया हो। जैसे—(क) बुढ़ापे के कारण उनके कान बन्द हो गए हैं। (ख) थोड़े के पिछले पेटों दिन से बन्द हैं, अर्थात् ठीक तरह से हिल-डुल नहीं सकते। (ग) पानी की कल (या बिल्ली) बन्द कर दो। ७. किसी प्रकार के मुख या विवर के सबंध में, जिसका अगला भाग अवच्छेद या समुद्रित हो। जैसे—(क) कमल रात में बन्द हो जाता है और दिन में खुलता (या खिलता) है। (ख) थोड़ी मिट्टी डालकर यह गर्दबा बन्द कर दो। ८. (कार्य करने का स्थान) जहाँ अस्थायी या स्थायी रूप से कार्य रोक दिया गया हो या स्थागित हो चुका हो। जैसे—(क) जाड़े में रात को ९ बजे सब हुकाने बन्द हो जाते हैं। (ख) उनका छापाखाना (या डिवालय) बहुत दिनों से बंद पड़ा है। ९. कोई ऐसा कार्य, गति या व्यापार जो चल न रहा हो, बल्कि थम या रुक गया हो। जैसे—(क) अब थोड़ी देर में यहाँ बन्द हो जायगी। (ख) उद्योग प्रकाशन का काम बन्द कर दिया है। १०. (व्यक्तित्व) जो अक्रिय तथा उदास होकर बैठा हो। (क०) जैसे—आज सबेरे से तुम इस तरह बन्द से क्यों बैठे हो? ११. लन-वेन या द्विसाव-किताब जिसके व्यवहार का अन्त हो चुका हो। जैसे—आज-कल हमारा उनका लन-वेन बन्द है। १२. (व्यक्तित्व) जिसके साथ सामाजिक व्यवहार का अन्त हो चुका हो। जैसे—बहु साल मर से विरादरी से बन्द है। १३. कोई परिमित अवधि या समय जिसकी समाप्ति हो गई या हो चली हो। जैसे—एक दो दिन में यह महीना (या साल) बन्द हो रहा है। १४. शस्त्रों की धार आदि के सबंध में, जिसमें कार्य करने की शक्ति न रह गई हो। जो कुट्टित हो गया हो। जैसे—बहु चाकू (या कैंची) तो बिलकुल बन्द है, अर्थात् इससे काटने या फाटने का काम नहीं हो सकता। वि० शब्दों के अन्त में प्रत्यय के रूप में, प्रयुक्त होने पर, जड़ने, बांधने या लगानेवाला। जैसे—कमर-बन्द, माल-बन्द, नौचा-बन्द।

† वि०—बंध (बंधनीय)।

† पू०—विदु।

बंधक—वि० १.—बंधक (बदना करनेवाला)। २. बंधक (बोधने-वाला)।

† वि० [हि० बंद-क (प्रत्य०)] बन्द करनेवाला।

बंधी—स्त्री० [फा०] १. किसी के सामने यह मान लेना कि मैं बन्दा (सेवक) हूँ और आप मालिक (स्वामी) हैं। अधीनता और दीनता स्वीकृत करना। २. मन में उक्त प्रकार का भाव या विचार रखकर की जानेवाली ईश्वर की बन्दना। ईश्वरार्वाधन। ३. किसी को आदरपूर्वक किया जानेवाला अभिवादन। नमस्कार। सलाम। ४. आज्ञा पालन। ५. टटूल। सेवा। उदा०—जैसी बन्दगी, वैसा इनाम। (कहू०)

बंध-गोभी—स्त्री० [हि० बंद-गोभी] १. करमकल्ला। पातगोभी का पौधा। २. उक्त पौधे का फल जिसकी तरकारी बनाई जाती है।

बंधन—पुं० [स० बंदनी-गोरोचन] १. रोचन। रोकी। २. ईगुर। सिद्धू।

प०—बदन।

बदनता—स्त्री०—बदनीयता।

बंदनाना—पुं० [स० बधन] कारागार का प्रधान अधिकारी।

बंदनधार—पुं० [स० बदनमाला] आम, अशोक आदि की पत्तियों को किसी लम्बी रस्सी में जगह-जगह टीकने पर बनेवाली शृङ्खला जो शुभ अवसरों पर दरवाजों, दीवारों आदि पर लटकाई जाती है। तोरण।

बंदनसाला—स्त्री० [सं० बधन+शाला] कारागार।

बंधना—स० [सं० बधन] १. बंदना या आराधना करना। २. नमस्कार या प्रणाम करना।

† स्त्री०—बंधना।

बंधनी—स्त्री० [सं० बंदनी—माघे पर बनाया हुआ चिह्न] स्त्रियों का एक आभूषण जो फिर पर आगे की ओर पहना जाता है। इसे बंदी या सिरबंदी भी कहते हैं।

वि०—बदनीय। जैसे—जव-बदनी।

बंधनीमाल—स्त्री० [सं० बदनमाला] बहु लम्बी माला जो गले से पैरों तक लटकती हो। घुटनों तक लटकती हुई लंबी माला।

बंदर—पुं० [सं० बानर] स्त्री० बंदरिया, बंदरी] १. एक प्रसिद्ध स्तनपायी जीवाणु जो अनेक जातों में मनुष्य से बहुत-कुछ मिलता-जुलता होता और प्रायः बुद्धि आदि पर रहता है। कपि। मकँट। घासा-मुग।

पद—बंदर का धाव =० 'बंदर-सत'। बंदर चुड़की या बंदर जमकी = बंदरों की तरह डरते हुए वी जानेवाली एही धमकी जो दिखाने अर को हो पर जो पुरी न की जाय।

२. राजा सुधीर की सेना का कोई सैनिक।

पुं० [फा०] बंदराण।

बंदर-सत—पुं० [हि० बंदर+सत = भाव] १. बन्दर के शरीर में होनेवाला धाव जिसे बहु प्रायः नोच-नोच कर बढ़ाता रहता है। २. ऐसा कार्य या बात जिसकी खराबी या बुराई जान-बूझकर बढ़ाई जाय।

बंदरगाह—पु० [फा०] समुद्र के किनारे का वह स्थान जहाँ जहाज टहरते हैं।

बंदर बाँट—स्त्री० [हि० बंदर+बाँटना] न्याय के नाम पर किया जाने-वाला ऐसा स्वायत्तपूर्ण बँटवारा जिनमें न्यायकर्ता सब कुछ स्वयं हकम कर लेता है और विवादी पक्षों को विवाद-रसत संपत्ति में से कुछ भी प्राप्त नहीं होती।

बंदरा—पु० दे० 'बंदरा'। २ दे० 'बन्दर'।

बंदरिया—स्त्री० हि० बंदर का स्त्री० रूप।

बंदरी—स्त्री० [फा० बन्दर] १. बन्दर या बन्दरगाह-सम्बन्धी। २. बन्दरगाह में होकर आनेवाला, अर्थात् विदेशी। जैसे—बंदरी तस्कदार।

स्त्री० हि० बन्दर (जानवर) का स्त्री०। मादा बंदर।

बंदली—पु० [देसा०] स्थूलवद में पैदा होनेवाला एक प्रकार का धान जिसे गयमनिया और तिलोकचंदन भी कहते हैं।

बंदबान—पु० [स० बंदी+बान] बंदी गृह का रसक। कैद खाने का प्रधान अधिकारी।

बंदसाली—पु० [म० बंदीशाला] बंदीगृह। कैदखाना।

बदा—पु० [फा० बंद] १ दास। सेवक। २ भक्त। ३ मनुष्य। विशेष—बक्ता नम्रता मूर्चित करने के लिए इसका प्रयोग अपने लिए भी करता है। जैसे—लौजिए बन्दा हाजिर है।

पु० [स० बंदी] कैदी। बंदी।

बदाना-नवाज—वि० [फा० बंद नवाज] [माब० बदाना-नवाजी] १. अश्रितों और दीनार पर अनुग्रह या कृपा करनेवाला। दीन-दास्तान्। २. भक्त-वन्द्य।

बदा-परवर—पु० [फा० बंद परवर] [माब० बदाना-परवरी]—बदाना-नवाज।

बदानो—पु० [?] मालदाज तोप चलानेवाला। (लकरी)

पु० [?] एक प्रकार का हलका मुलाबी रंग जो प्याजी से कुछ गहरा होता है।

वि० उक्त प्रकार के रंग का।

बदाय—वि० [स० बदाय, बन्दा+आह] आदर्शपूर्ण और पुज्य। बदनयी। † पु० बदाय।

बदाल—पु० [?] देवदाली। घघरवेल्।

बदि—स्त्री० [स० बदि] बवन। २. कैद।

† स्त्री०—बदीगृह (कारागार)।

पु०—बदी या बदी (कैदी)।

बदि काँठ—पु० [म० बदीकाँठ] बदीगृह (कारागार)।

बदि छोर—वि०—बदीछोर।

बदिधा—स्त्री०—बदी (आमूषण)।

बदिश—स्त्री० [फा०] १. बांधने की क्रिया या भाव। २. किसी प्रकार का नवन या रसकवट। ३. कविता के चरणों, वाक्यों आदि में होनेवाली शब्द-योजना। रचना-प्रबंध। जैसे—मजल या रीत की बदिश। ४. किसी को चारों ओर से बांध रखने के लिए की जाने-वाली योजना। ५. कोई बड़ा काम छेड़ने अथवा किसी प्रकार की रचना आरंभ करने से पहले किया जानेवाला आयोजन या आरंभिक व्यवस्था। ६. पद्यप्र।

बंदी—पु० [स०] चारणों की एक जाति जो प्राचीन काल में राजाओं का कीर्तिमान किया करती थी। भाट। चारण। दे० 'बंदी'। पु० [स० बन्दिन्] कैदी। बंधुआ।

स्त्री०—बन्दी (शिर पर पहनने का गहना)।

वि० फा० 'बंदा' (दास या सेवक) का स्त्री०।

स्त्री० [फा०] १. बंद करने की क्रिया या भाव। जैसे—टुकान बंदी। २. बांधने की क्रिया या भाव। जैसे—नाकेबंदी। ३. व्यवस्थित रूप में लाने का भाव। जैसे—दलबन्दी।

बंदीखाना—पु० [फा० बंदीखान] जेलखाना। कैदखाना।

बंदीघर—पु० [स० बन्दिगृह] कैदखाना। जेलखाना।

बंदीछोर—वि० [फा० बंदी+हि० छोर (इ) ना] १. कैद में छुड़ाने-वाला। २. संकटपूर्ण बंधन से छुड़ानेवाला।

बंदीवान—पु० [स० बन्दिन्] कैदी।

बंदूक—स्त्री० [अ०] एक प्रसिद्ध अस्त्र जिसमें कारतूस, गोली आदि भरकर इस प्रकार छोड़ी जाती है कि लक्ष्य पर जाकर गिरती है।

क्रि० प्र०—चलाना।—छोड़ना—दागना।

मुहा०—बंदूक भरना—बंदूक में कारतूस, गोली आदि रचना।

बंदूकबी—पु० [अ० बंदूक+बी की (प्रयोग)] १. बंदूक चलाने-वाला सिपाही। २. बंदूक की गोली से लक्ष्य-भेदन करनेवाला व्यक्ति।

बंदूक—स्त्री०—बंदूक।

बंदेरा—पु० [फा० बन्द] [स्त्री० बंदेरी] २. सेवक।

बंदोङ—पु० [फा० बन्द] गुलाम। दास।

बंदोबस्त—पु० [फा०] १. प्रबंध। व्यवस्था। २. खेतों की हदयदी, उनकी मालगुजारी आदि निश्चित करने का काम।

पद—बंदोबस्त आरिजी—कृषि-संबंधी होनेवाली अत्यादी व्यवस्था।

बंदोबस्त-इस्तमरारी या **बदाभी**-पक्की और सदा के लिए निश्चित कृषि व्यवस्था।

बध—पु० [स०/बध (बधना)+पञ्] १. वह चीज जिसमें कोई दूसरी चीज बंधी जाय। जैसे—डोरी, फीता, रस्सी आदि। २. बांधने की क्रिया या भाव। ३. बधन। ४. किसी को पकड़कर बांध रखने की क्रिया। कैद। ५. कोई चीज अच्छी तरह गठ या बांधकर तैयार करना। जैसे—काब्य-ग्रन्थ का संग्रह-बंध। ६. रचना करना। बनाना। ७. कल्पना करना। ८. गद्य या पद्य के रूप में साहित्यिक रचना करना। निबन्ध रचना। ९. लगाव। सबंध। १०. आपस में होनेवाला किसी प्रकार का निश्चय। ११. योग-साधन की कोई मुद्रा। जैसे—उड्डीयान बध। १२. कौक शास्त्र में, रति के मुख्य सोलह आसन में से एक आसन। १३. रति या स्त्री-संयोग करने का कोई आसन या मुद्रा। १४. विचक्रात्म्य में छंद की ऐसी रचना जिसमें कुछ विशिष्ट नियमों के अनुसार उसकी पंक्तियों के अक्षर बँटने से किसी विशेष प्रकार की आकृति या चित्र बन जाय। जैसे—अश्वबध, सङ्गबध, छत्र-बध आदि। १५. बनाये जानेवाले मकान की लंबाई और चौड़ाई का योग। १६. काया। धारी। १७. जलाशय के किनारे का बांध।

† पु० १. —बधु।

बंधक—वि० [स०/बध् (बधना)+पुल्ल्+क] १. बांधनेवाला

२. (पदार्थ) जो किसी से रूपए उधार लेने के समय इस दृष्टि से जमानत के रूप में उसके पास रखा गया हो कि जब तक रूपया (और मूध) चुकाया न जायगा; तब तक वह उसी के पास रहेगा। देहन। ३. अदला-बदली या विनिमय करनेवाला।

पुं० [सं० बध+कन्] केश-देन या व्यवहार का वह प्रकार जिसमें किसी से रूपया उधार लेने के समय कोई मूल्यवान् वस्तु इस दृष्टि से महानत के पास जमानत के तौर पर रखा दी जाती है कि यदि ऋण और रम्याज न चुकाया जा सके तो महानत वह वस्तु बेचकर अपना प्राप्य धन ले सकता है। देहन। (भाटेंगेज)

बंध-करण—पुं० [प० तं०] कैंद करना। कारावास में बंद करना।

बंधक-कर्ता (सुं)—पुं० [स० प० तं०] वह जो कोई चीज बंधक रूप में किसी के यहाँ रखता हो। (भाटेंगेज)

बंधकी—स्त्री० [सं० बधक+डीव] १. व्यभिचारिणी स्त्री। २. रबी। बेरया।

बि० [हिं० बंधक] जो बंधक के रूप में पडा हुआ या रखा गया हो। जैसे—बंधकी मकान।

बंध-संत्र—पुं० [मध्य० सं०] किसी राजा अथवा राज्य की संपूर्ण सैनिक शक्ति। पुरी सेना।

बंधन—पुं० [सं०√बध्+त्सुट्—अन] १. बंधने या बांधने की क्रिया या भाव। २. बांधनेवाली कोई चीज, तत्व या बात। जैसे—जजोर, डोर, रस्ती, प्रतिज्ञा, बचन आदि। ३. कोई ऐसी चीज या बात जो किसी को उच्छ्वल होने या मन-माना आचरण अथवा व्यवहार करने से रोकती हो। कोई ऐसा तत्व या बात जो किसी को नियमित या मर्यादित रूप से आचरण करने के लिए बाध्य करती हो। जैसे—भ्रम या समाज का बधन। ४. वह स्थान जहाँ कोई बांध या रोककर रखा गया हो अथवा रखा जाता हो। जैसे—कारागार आदि। ५. कोई चीज अच्छी तरह गठ या बाँधकर तैयार करना। जैसे—सेतु-बधन। ६. शरीर के अन्दर की रंगे जिनसे भिन्न-भिन्न अंग बँधे रहते हैं।

मूहा०—(किसी के) बंधन ढीले करना = (क) बहुत अधिक मारना-पीटना। (ख) सारी देखी या हूँकड़ी निकाल देना।

७. नदियों आदि का बाँध। ८. पुल। सेतु। ९. बध। हया।

१०. हिंसा। ११. धिय का एक नाम।

बंधन-प्रथि—स्त्री० [प० तं०] १. शरीर में वह हूँकड़ी जो किसी जोड़ पर हो। २. फाँस। ३. पशुओं को बांधने की डोरी या रस्ती।

बंधन-पालक—पुं० [प० तं०] कारागार का प्रधान अधिकारी।

बंधन-रखी (भिन्)—पुं० [सं० बधन+रख्+भिनि] कारागार का प्रधान अधिकारी।

बंधन संत्र—पुं० [प० तं०] वह जग या जूँटा जिससे पशुओं को बाँधा जाता है।

बंधना—अ० [हिं० 'बंधना' का अ० रूप] १. बधन में आना या पड़ना। बाँधा जाना। २. डोरी रस्ती आदि से इस प्रकार छेपटा जाना अथवा कपड़े आदि की गाँठ से इस प्रकार कसा या जकड़ा जाना कि जल्दी उससे छूटा न जा सके। जैसे—गी या घोड़ा बँधना, गाँठी या पारसक बँधना। ३. किसी प्रकार के नियमन, प्रतिबध

आदि से युक्त होना। जैसे—प्रतिज्ञा या वचन से बँधना। ४. कारागार आदि में रखा जाना। कैद होना। जैसे—दोनों गुडे साल-साल मर के लिए बँध गए। ५. अच्छी तरह गठकर ठीक या प्रस्तुत होना। बनाया जाना। रचित होना। जैसे—मजबूत बँधना। ६. पालन, प्रचलन आदि के लिए नियत या निर्धारित होना। जैसे—कायदा या नियम बँधना। ७. किसी के साथ इस प्रकार सबद्ध, संयुक्त या संलग्न होना कि जल्दी अलगवाय वा छुटकारा न हो। उदा०—अबकी कली ही तं बँध्यो आगे कीन हवाल—विहारी। ८. ध्यान, विचार आदि के सबध में, निरंतर कुछ समय तक एक ही रूप में बना या लगा रहना। जैसे—किसी आदमी या बात का स्थाल बँधना।

बंधनागार—पुं० [सं० बधन-आगार, प० तं०] कारागार।

बंधनालय—पुं० [सं० बंधन-आलय, प० तं०] कारागार।

बंधनि—स्त्री०—बंधन।

बंधनी—स्त्री० [सं०√बध्+त्सुट्—अन, डीप्] १. शरीर के अन्दर की वे मोटी नसें जो संवि स्थान पर होती हैं और जिनके कारण दो अवयव आपस में जुड़े रहते हैं। २. वह जिससे कोई चीज बाँधी जाय।

बंधनीय—वि० [सं०√बध्+अनीयर्] जो बाँधा जा सके या बाँधा जाने को हो।

पुं० १. बाँध। २. पुल। सेतु।

बंध-पत्र—पुं० [सं० प० तं०] १. विधिक दृष्टि से मान्य वह पत्र जिस पर हस्ताक्षर करनेवाला व्यक्ति अपने आप को कोई काम करने के लिए प्रतिज्ञा-बद्ध करता है। जैसे—नियत काल तक कोई काम या नौकरी करते रहने, नियत समय पर कहीं उपस्थित होने या कुछ धन देने का बध पत्र। २. एक प्रकार का मार्तजनिक ऋण-पत्र जिनमें निश्चित समय के अन्दर कुछ विशिष्ट नियमों या शर्तों के अनुसार लिया हुआ ऋण चुकाने की प्रतिज्ञा होती है। (बाड)

विशेष—अंतिम प्रकार का बंध-पत्र प्रायः राज्यों, नगर-निगमों और बड़ी बड़ी व्यापारिक संस्थाओं के द्वारा प्रचलित होते हैं।

बंध-भोजनिका—स्त्री० [सं० प० तं०] एक योगिनी का नाम।

बंध-भोजिनी—स्त्री०—बंधमोजनिका।

बंध—पुं०—बंधव।

बंधवाना—सं० [हिं० बाँधना का प्रे०] १. बांधने का काम किसी दूसरे से कराना। किसी को कुछ बांधने में प्रवृत्त करना। जैसे—बिस्तर बँधवाना। २. नियत या मुकर्रर कराना। ३. वास्तु आदि की रचना करना। जैसे—कुआँ या तालाब बँधवाना। ४. बंधन अर्थात् कारागार आदि में डलवाना या रखवाना। जैसे—चोरों को बँधवाना।

बधान—स्त्री० [हिं० बँधना] १. बँधे हुए की अवस्था या भाव। २. वह नियत परम्परा या परिपाटी जिसके अनुसार कुछ विशिष्ट अवसरो को कोई विशिष्ट काम करने का बधन लगा होता है। ४. नगद धन जो उक्त परिपाटी के अनुसार दिया या लिया जाय। ४ सगँठ में गीत, ताल, लय, स्वर आदि के संबंध में बँधे हुए नियम। ५. बाँध।

बंधाना—सं०—बंधवाना।

बंधानी—पुं० [सं० बध] पारस डोनेवाला। मजहूर। कुली।

स्त्री०—बंधान।

बंधाल—प० [हि० बंधान] जलयान, नाव आदि के पदे का वह भाग जिसमें छेदों में से रिसकर आया हुआ पानी जमा होता है और जो बाद में उलोचकर बाहर फेंका जाता है। गमलखाना। गमनरी।

बंधिका—स्त्री० [हि० बंधन] करघे में की वह छोटी जिससे ताने की साधों बांधी जाती है। (जूलाहे)

बंधित—प० कृ० [स० बन्धा] बंश। (हिमाल)

बंधित—प० [स० बन्धः इत्] १ काम-देव। २ तिल (चिह्न)। ४ चमड़े का बना हुआ पसा।

बंधी (धनु)—वि० [स० बन्ध+इति] १ बंधन में नसा जकड़ा या पड़ा हुआ। २ जिसम या जिसके लिए किसी प्रकार का बंधन हो। स्त्री० [हि० बाधना] १ बंधे हुए होने की अवस्था या भाव। २ बेधा हुआ क्रम। नियमित रूप से या नियत समय पर नियत क्रिया जनेवाला काम। जैसे—हमारे यहाँ दूध की बँधी लगी है।

क्रि० प्र०—लगना—लगाना।

बंधु—प० [स० बन्धु (बन्धन)+उ] १ भाई। भ्रान्ता। २ परम आत्मीय और माधवों की तरह साथ रहने या काम आनेवाला व्यक्ति।

३ ऐसा प्रिय मित्र जिसके साथ माधवों का सा व्यवहार हो। ४ पिता।

५ एक वर्ष भूत जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः नील नील सफ़ा और दो दो गुरु होते हैं। दोबन्ध। ६ बन्धु नामक पीधा और उसका फूल।

बंधुआ—वि० [हि० बंधना+आ (प्रत्यय)] १ जो बंधा रहना हो। २ (पशु आदि) जिसे बाँधकर रखा गया हो।

प० कैंदी। बदी।

बन्धुक—प० [स० बन्धु+उक] १ डेढ़-दो फुट ऊँचा एक तरह का क्षुः जिसमें मोलाकार लाल रंग के फूल दोपहर के समय खिलते हैं।

२ उक्त क्षुप का फूल जो वैद्यक में वात तथा पित्त नाशक और कफ बढानेवाला माना गया है। दुग्धरिया। ३ जारज सतान।

बन्धुका—स्त्री० [स० बन्धु+कन्+टाप्] व्यक्तिचारीणी स्त्री।

बन्धुकी—स्त्री० [स० बन्धु+कन्+डोप्] व्यक्तिचारीणी स्त्री।

बन्धु-कृत्य—प० [स० प० तं०] व्यक्ति का अपने भाई-बन्धुओं तथा स्वजनो में प्रति होनेवाला कर्तव्य।

बन्धु-जीव—प० [स० बन्धु+जीव् (जीना)+णिच्+अच्] बन्धु (पोधा और फूल)। दुग्धरिया।

बन्धु-जीवक—प० [स० बन्धुजीव+कन्] बन्धुक। दुग्धरिया।

बन्धुता—स्त्री० [स० बन्धु+तल्+टाप्] १ बन्धु होने की अवस्था या भाव। २ बन्धुओं अर्थात् स्वजनो में परस्पर होनेवाला उचित व्यवहार। भाई-भांग। ३ दोस्ती। मित्रता। ४ भाई-बन्धु तथा स्वजनो का वर्ग।

बन्धुत्व—प० [स० बन्धु+त्व] बन्धुता।

बन्धु-दत्त—प० कृ० [स० प० तं०] बन्धुओं द्वारा दिया हुआ। बन्धुओं से प्राप्त। प० बन्धुओं, स्वजनो आदि द्वारा कन्या को उसके विवाह के अवसर पर दिया जानेवाला धन।

बन्धु-पदा—स्त्री० [स० बन्धु+पदा (देना)+क+टाप्] १ दुर्गाचारीणी स्त्री। बदचलन औरत। २ रदी। शर्मा।

बन्धुमान (मन्)—वि० [स० बन्धु+मन्] जिसके कई या बहुत से बंधु या स्वजन हो।

बन्धुर—प० [स० बन्धु+उरच्] १ बहुरा आदमी। २-हूस। ३-बगला। ४ मुकुट। ५ गुल तुहरिया का पीधा या फूल। ६ काकड़ा-फिषी। ७ बिडवा। ८ चिड़िया। पक्षी। ९ खली।

वि० १-मनोहर। सुन्दर। २-नम्र। विनीत। ३-शुका हुआ। ४-ऊँचा-नीचा।

बन्धुरा—स्त्री०। बन्धुर। टाप्। बन्धुदा। (दे०)

बन्धुल—वि० [स० बन्धु+उल्च्] १ शुका हुआ। वक्र। २ सुन्दर। नम्र।

प० १-वह व्यक्ति जो पर-पुत्र्य में उत्पन्न हुआ हो पर किसी दूसरे के घर में पला हो तथा परग्ये के अन्न से पुष्ट हुआ हो। २-बदचलन स्त्री का लड़का। ३-वेद्या का लड़का।

बंधुआ—प० बंधुआ।

बन्धुक—प० [स० बन्धु+उक] बन्धुक।

बन्धुप—प०-बन्धुक।

बन्धुर—प० [स० बन्धु+उरच्] १ शुका हुआ। २ ऊँचा-नीचा। ३-मनावर।

प० छेद।

बंधन—प० [हि० बंधना+एज (प्रत्यय)] १ कोई नियत और परम्परागत प्रथा। विशेषतः बँधी हुई तथा सर्वमान्य ऐसी परम्परा जिसके अनुसार सबधियों, मेवकों आदि का कुछ विशिष्ट अवसरों पर धन आदि दिया जाता है। २-उक्त प्रथा के अनुगम दिया अथवा किसी को भिन्न-देवाला धन। ३-दे० बांधन (छपाई)। ४-प्रतिबन्ध। न्कावट।

५ ऐसी युक्ति जिसमें बायों को जल्दी स्थलित नहीं होने दिया जाता बाजीकरण।

बन्धु—वि० [स० बन्धु+यच्] १ जो बाधा जा सके अथवा बांधने के योग्य हो। २-कारागार में रने जाने के योग्य। ३-जो तैयार किये जाने, बनाने जाने अथवा निमित्त किये जाने को हो। ४-जा उप-जाऊ न हो। ऊमर। ५-बाज (स्त्री)।

बन्ध्या—स्त्री० [स० बन्धु+टाप्] १ स्त्री या भावा प्राणी जिसे सतान न होनी हो। बाँस।

पद—बन्ध्या-पुत्र। (दे०)

२-यति का एक रास। ३-एक गध-दन्व।

बंध्या—ककठीकी—स्त्री० [स० प० तं०] कडवा। ककठी। बाँस-कोड़ा।

बन्ध्यापन—प०-बन्ध्यापन।

बन्ध्यापुत्र—प० [स० प० तं०] १ बाँस स्त्री का पुत्र अर्थात् ऐसा अनहोना व्यक्ति जो कमी अस्तित्व में न आ सके। २-लाक्षणिक अर्थ में कोई ऐसी बीज या बात जो बन्ध्या के पुत्र के समान अनहोनी हो।

बन्ध्यापुत्र—प० [प० तं०] बन्ध्यापुत्र।

बन्धुलिप्त—स्त्री० [अ० बन्धु+लिप्] सार्वजनिक पोचालय।

बन्धु—प० [अनु०] १-बन्धु शिव शिव आदि शब्दों की ऊँची ध्वनि जो शीव लोग बोलते हैं जो उमर में शिव को प्रसन्न करने के लिए किया करते हैं। २-पुद्गरम में बीरों का उत्साहवर्धक नाद। रणनाद। उदा०—

नादक बन्धु कलाया व्यासदेव कव बन्धु बाजा।—कबीर। ३-बहुत जोर का शब्द।

क्रि० प्र०—देना—भोलना।

४. घोसा। मगाडा। ५. सींग का बना हुआ चुरही की तरह का एक बाजा। ६. दे० 'बम'।
बसई—स्त्री० [स० बसो] १ दीमकी की बाँधी। २ रहस्यवादी सती की भाषा में, देह। धरी।
बंशा—पुं० [अ० मबा] १ श्रोत। सोता। २. उद्गम। ३. पानी की कल। पय। ४ जल-कल। ५ पानी बहाने का मल। ६ कोई लंबोतरा गोल पात्र। जैसे—डाकू की चिट्ठीयाँ डालने का बजा।
बंशाना—अ० [अनु०] गी आदि पशुओं का बाँ बाँ शब्द करना। रंगाना।
बंश—पुं० [मलया० बम्भू-बंस] १ चट्ट पीने की बाँस की नली। २ नली।
 कि० प्र०—पीना।
बसकाट—पुं० [मलया० बन्-अ० काटै] एक प्रकार की टंगि की तरह की मवारी। (पश्चिम)
बंसुर—पुं०—बसूल।
बंसा—पुं०—बसदा।
बंशनाई—स्त्री० [स० ब्राह्मण] १ ब्राह्मणत्व। ब्राह्मणपत्न। २ ब्राह्मणों की यजमानी धोती। ३. दुराह। ४ जिद। छट।
बंस—पुं०—बग।
बसकपूर—पुं० बस-लोचन।
बसकार—पुं० [स० बस] बाँसुरी।
बंसलर—पुं० [हि० बंस+फा० गर (प्रत्य०)] बाँस की चटाईयाँ, टोक-रियाँ आदि बनानेवाला व्यक्ति।
 वि० [स० वग] अच्छे बराबाला। कुलीन।
बंस-दिया—पुं० [हि० बाँस+दिया] गाड़े हुए बाँस के ऊपर की सिरे पर लटकाया जानेवाला दीया। विशेष दे० 'आकाश दीप'।
बंसमुरती—स्त्री० [हि० बाँस+मुरगी] एक प्रकार की चिड़िया जो तालों के किनारे तथा पत्ती झाड़ियों के आम-नास प्रायः रहती है। इसे यहक भी कहते हैं।
बंसरी—स्त्री०—बाँसुरी।
बंसली—स्त्री०—बाँसुरी।
बस-लोचन—पुं०—यशलोचन।
बंसकाड़ा—पुं० [हि० बाँस+बाड़ा (प्रत्य०)] [स्त्री० अल्पा० बंसवाडी] १ वह बाजार या मुकला जहाँ बाँस बेचनेवालों की बहुत सी दुकानें या घर हों। २ एक जगह उंगे हुए बाँसों का समूह। कोठी।
बंसवार—पुं० [स्त्री० अल्पा० बसवारी] बंसवाडा।
बंसहटा—पुं० [हि० बाँस] [स्त्री० अल्पा० बंसहटी] वह चारगाई जिसमें पाटी की जगह बाँस लगे हुए हों।
बंसार—पुं० [देसा०] बगामार। (लखरी)
बंसी—स्त्री० [स० वसी] १ बाँसुरी। बसी। २ देवताओं के चरणों में मानी जानेवाली एक प्रकार की रेखा जो बाँसुरी के आकार की होती है। ३ लाक्षणिक अर्थ में कोई ऐसी चीज या बात जिससे किसी की फँसाया जाता हो। ४ धान के केतों में होनेवाली एक प्रकार की घास। बाँसी। ५. एक प्रकार का रेहें। ६. तीस परभाज्य की एक तीस। तसरेपु।
 स्त्री० [स० बंसिणी] मछली फँसाने की कौटिया।

बसीधर—पुं०—वधीधर (श्रीकृष्ण)।
बंसुला, **बंसूला**—पुं०—बसूला।
बंसौर—पुं० [हि० बाँस] बाँस की चटाईयाँ, टोकरियाँ आदि बनानेवाली एक जाति।
बंहगी—स्त्री० [स० वह] भार होने का एक प्रकार का उपकरण जिसमें एक लंबे बाँस के टुकड़े के दोनों सिंगों पर रस्सियों के बड़े-बड़े छोके या दोरे लटका दिये जाते हैं और जिनमें बोझ रखा जाता है।
 कि० प्र०—उठाना।—डोना।
बंहरणा—पुं० [हि० बाँह] बाँट पर पहनने का एक गहना।
बंहिया—स्त्री० १—बाँह। २—बंहगी।
बंहटा, **बंहटा**—पुं० [हि० बाँह] बाँह पर पहनने का एक प्रकार का गहना।
बंहोल (१)—स्त्री० [हि० बाँह] आस्तीन।
बंहोलीनी, **बंहोली**—स्त्री०—बंहोली।
बंहटना—अ०—बंहटना।
बहर—पुं० १—बैर। २—बेर (पेड़ या फल)।
 वि०—बधिर (बहरा)।
बहरा—पुं० १ दे० 'बौर'। २ दे० 'भौर'।
बहरा—वि०—बाखल।
बहराना—अ०, स०—बौराना।
बक—पुं० [स० वक्/टका होना] ; अच्. पु० [सिद्धि] १ बगल। २ एक प्राचीन ऋषि। ३ अगस्त्य नामक वृक्ष और उसका फूल। ४. कुबेर।
 ५. एक राक्षस जिसे भीम ने मारा था। ६ एक राक्षस जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था।
 वि० बगले की तरह सफेद।
स्त्री० [हि० बकना] १ बकने की क्रिया या भाव। २. बकवाद।
कि० प्र०—लगाता।
पद—बक था बक लक् -(क) बकवाद। प्रलाप। व्यर्थवाद। (ल) फहा-सुनी।
 ३. मूँह से निकलनेवाली बात। वचन।
बकबन—पुं० [देसा०] एक वृक्ष का नाम जिसकी पत्तियाँ गोल और बड़ी होती हैं। अकचपन।
बक-बह—स्त्री० [अनु०] मध्य युग का एक प्रकार का हथियार।
बकचन—पुं०—बकचपन।
 १ स्त्री०—बकुचन।
बकचर—वि० [स० बक्/चर् (गति) +ट] दोषी।
बकचा—पुं०—बकुचा।
बक-चिबिका—स्त्री० [स०] कौआ नाम की मछली।
बकची—स्त्री० बकुची।
बकचुन—स्त्री०—बकुचन।
बकशित—पुं० [स० बक्/जि (जीनता) + क्विप्, मुक्, उप० स०] १ भीम। २ श्रीकृष्ण।
बकठामा—अ० [स० विकृठना] बहुत फसली चीज खाने से भीम का कुछ ऐटना या सिद्धना।
बकतर—पुं० [का० बक्तर] [स्त्री० अल्पा० बकतरी] मध्य-युग में युद्ध

के समय पहना जानेवाला एक तरह का अंगरखा जिसमें आगे और पीछे दो-दो तबे लगे रहते थे। चार-आठना। सप्ताह। (जिन्हू से भिन्न)

बकसर-पौष—पु० [फा० बकसर + पौष] वह योद्धा जो बकसर पहने हो।
बकसार्—पु०—बकसा।

पु०—बखता।
बकसार्—पु०—बकता।
बकसिया—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की छोटी मछली।
बकवर—क्रि० वि० [फा० व+अ० कद] १ अमुक दर, मान या हिसाब से। २ अनुसार।

बक-घ्यान—पु० [स० ष० त०] कौंसे दुष्ट उद्देश्य सिद्ध करने के लिए उसी प्रकार भोले-भाले या सोपे-मादे बनकर विचार करते रहना जिस प्रकार बला जलाशयों में रो मछलियाँ एकडकर साने के लिए चुपचाप सड़ा रहता है। बनावटी साधु-भाव।
क्रि० प्र०—लगाना।

बक-घ्यानी (निन्)—वि० [हिं० बकघ्यान+इनि] बक-घ्यान लगाने-वाला।

बकना—स० [स० वचन] १ उदपटंग या व्यर्थ की बहुत-सी बातें कहना। व्यर्थ बहुत बोलना।

पद—बकना-बकना--कोष में आकर बिगड़ते हुए बहुत-सी खरी खोटी बातें कहना।

२ निर्गमक बातों या शब्दों का उच्चारण करना। प्रलाप करना।
३ विवश होकर अपने अपराध या दोष के सम्बन्ध की सब बातें बतलाना।

बक-निघृणन—पु० [स० ष० त०] १ मीम। २ श्रीकृष्ण।
बक-पंचक—पु० [स० ब० सं०, +कप्] कालिक महीने में शुकलपक्ष की एकादशी से पूर्णिमा तक के पाँच दिन जिनमें मांस, मछली आदि खाना बिल्कुल मना है।

बकम—पु०—वचकम।

बकभौन—पु० [स० ष० त०] अपने दुष्ट उद्देश्य की सिद्धि के निमित्त बागुले की भाँति मीन तथा घात बनकर चुपचाप रहने की क्रिया, भाव या मुद्रा।

वि० ओ उक्त उद्देश्य तथा प्रकार से बिल्कुल चुप या मीन हो।
बक-यंत्र—पु० [स० उपमि० सं०] वैद्यक में औषधों का सार निकालने के लिए एक प्रकार का यंत्र, जो कौंच की बीसी के आकार का होता है।

बकर—पु० [अ० बकर] गाय या बैल।
बकर-ईव—स्त्री०—बकरीद।

बकर-कपडा—पु० [हिं० बकरी+अ० कस्तावा=कसाई] [स्त्री० बकर-कस्तायिन] बकरों का मांस बेचनेवाला पुरुष। कसाई।
बकरना—स० [हिं० बकार अथवा बकना] १ आप से आप बकना। बजबजाना। २ अपने अपराध या दोष की बातें विचर्य होकर कहना।

बकरम—पु० [अ० बकरम] गोंध आदि लगाकर कड़ा किया हुआ वह कारा कपडा जो पहनने के कपड़ों के कालर, आस्तीन आदि में कड़ाई लाने के लिए अन्दर लगाया जाता है।

बकरना—स० [हिं० बकरना का प्रे०] किसी को बकरने में प्रवृत्त करना।
बकरा—पु० [सं० बकार] [स्त्री० बकरी] एक प्रसिद्ध नर पशु

जिसके सींग तिकोने, गठीले और एंठनदार तथा पीठ की ओर झुके हुए होते हैं। पूँछ छोटी होती है और वरीर से एक प्रकार की गंध आती है। अज। छाग।

बकराना—स०—बकराना।
बकली—पु०—बकला।

बकलस—पु०—बकसुआ।
बकला—पु० [सं० बकल] [स्त्री० अल्पा० बकली] १. पेड़ की छाल।
२. फल के ऊपर का छिलका।

बकली—स्त्री० [देश०] एक प्रकार का बरा और सुन्दर वृक्ष जिते घाबा, घव आदि भी कहते हैं।

बकवती—स्त्री० [स० वक+पनुप्, डीप्+वकवती] एक प्राचीन नदी।
बकवाद—स्त्री० [हिं० बक+वाद] लड़ी-बौड़ी, बेतिर-पैर की तथा बिना मतलब की कही जानेवाली बातें।
क्रि० प्र०—करना।

बकबासी—वि० [हिं० बकवाद+ई (प्रत्य०)] १ (व्यक्ति) जो बकवाद करता हो। २. बहुत अधिक बातें करने वाला। जो प्रकृतिवश भाव बातें करता रहता हो। ३. बकवाद सबंधी या बकवाद के रूप में होनेवाला।

बकवाना—स० [हिं० बकना का प्रे०] १. किसी को बकने या बकवाद करने में प्रवृत्त करना। २. किसी से कोई बात कहलया लेना। कहने में विवश करना।

बकवास—स्त्री० [हिं० बकना+वास (प्रत्य०)] १. बकवाद। २. बकवाद या बक-बक करने की प्रवृत्ति या शौक।
क्रि० प्र०—लगाना।

बकबासी—वि०—बकबासी।

बक-वृत्ति—स्त्री० [सं० ष० त०] बकों या बगलों (पक्षियों) की-सी वह वृत्ति जिसमें वह ऊपर से देखने पर तो बहुत मोला-माला या सीपा-सादा बना रहता है, पर अन्दर ही अन्दर अनेक प्रकार के छल-काट की बातें सोचता रहता है।
वि० [ष० त०] (व्यक्ति) जिसकी मनोवृत्ति उक्त प्रकार की हो।
बक-घ्यानी।

बकवती (तिन्)—वि० [सं० बक-वत, ष० त०, +इनि] बक वृत्तिवाला। कपटी।

बकस्त—पु० [अ० बाकस्] १. लकड़ी, लोहे आदि का बना हुआ एक तरह का उबकनदार चौकोर आधान जिसमें बरख यादिर सुरक्षा की मृष्टि से रखे जाते हैं। संकुल। २. गहने, बड़ियाँ आदि रखने का खाना।

बकसना—स० [फा० बक्सा+हिं० ना (प्रत्य०)] १ उदारतापूर्वक किसी को कुछ दान देना। २ अपराधी या दोषी को दण्डित न करने उसे क्षमा करना। माफ करना। ३ दयापूर्वक छोड़ देना या जाने देना।

बकसबाना—स०—बकसबाना।
बकसा—पु० [देश०] जलाशयों के किनारे होनेवाली एक तरह की घास।

[पु०—बकस (संक्र०)]
बकसाना—स० [हिं० 'बकसना' का प्रे० रूप] समा या माफ कराना। बखशयाना।

बकसी—पु०—बकसी।

बकसीला—वि० [हिं० बकडाना] [स्त्री० बकसीली] जिसके लाने में मुँह का स्त्राव विगड़ जाय और जीम एँठने लगे। बकबका।
बकसीस—स्त्री० [फ्रा० बकियास] १. दान। २. इनाम। पुरस्कार।
 ३. शूय अवसरों पर गरीबों तथा सेवकों को दिया जानेवाला दान।
बकसुआ—पुं० [अ० बकल] पीतल, लोहे आदि का एक तरह का चौकोर छल्ला जिससे तम्बे, फोटे आदि बाँधे जाते हैं।
बका—स्त्री० [अ० बका] १. नित्यता। २. अनवरतता। ३ अस्तित्व में बने रहना। ४. जीवन।
बकायन—पुं०=बकायन (बृक्ष)
बकाज—स्त्री०=बकावली।
बकाजरा—स्त्री०=बकावली।
बकाना—स० [हिं० बकना का प्रे० रूप] १. किसी को बकने में प्रवृत्त करना। २ किसी को दबाकर उसके मन की छिपी हुई बात कहलाना।
बकायन—पुं० [हिं० बकना+नीम ?] नीम की जाति का एक पेड़ जिसकी पत्तियाँ नीम की पत्तियों के समान तथा कुछ बड़ी और दुर्गन्ध-युक्त होती हैं। महानिब।
बकाया—वि० [अ० बकाय] बाकी बचा हुआ। अवशिष्ट। शेष।
 पुं० १. वह धन जो किसी की ओर निकल रहा हो। ऐसा धन जिसका मूलतान अभी होने को हो। २. बचा हुआ धन। बचत। ३. किसी काम या बात का वह अंश जिसका अभी संपादन होना शेष हो।
बकायि—पुं० [स० बक-अरि, ष० तं०] बकासुर के शत्रु अर्थात् श्रीकृष्ण।
बकारी—स्त्री० [स० बकार या वाक्य] वह शब्द जो मुँह से प्रस्फुटित हो। मुँह से निकलनेवाला शब्द।
 क्रि० प्र०—निकलना।—मूटना।
 †स्त्री०=बिकारी।
बकावर्—स्त्री०=बकावली।
बकावली—स्त्री० [स० बक-आवली ष० तं०] १. बगलों की पंक्ति। बक-समुह। २. दे० 'गुल-बकावली' (पीया और फूल)।
बकासुर—पुं० [स० बक-असुर, मध्य० सं०] एक दैत्य जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था।
बकानवा—पुं०=बकायन (बृक्ष)।
बकिया—वि० [अ० बकिय] बाकी बचा हुआ। अवशिष्ट।
बकी—स्त्री० [सं० बक+डीप] बकासुर की बहिन पूतना नामक राससी।
बकुचम—स्त्री० [?] १. हाथ जोड़ना। २. मुट्ठी या पंजे में पकड़ना।
बकुचना—अ० [सं० बिकुचन] सिमटना। सिकुटना। संकुचित होना।
बकुचा—पुं० [हिं० बकुचना] [स्त्री० बकुची] १. छोटी गडरी। बकचा। २. डेर। ३. गुच्छ। ४. बड़ा हुआ हाथ।
बकुचाना—स० [हिं० बकुचा] किसी वस्तु को बकुचे में बाँधकर कचे पर लटकाना या पीछे पीठ पर बाँधना।
बकुची—स्त्री० [सं० बाकुची] एक प्रकार का पौधा जो हाथ सवा हाथ ऊँचा होता है। इसके कई अंग औषधि के काम में आते हैं।

†स्त्री० हिं० 'बकुचा' (गडरी) का स्त्री० अल्पा०।
बकुचीहा—अव्य० [हिं० बकुचा+और्हा (प्रत्य०)] [स्त्री० बकुचीहा] बकुचे की माँति। बकुचे के समान।
 वि० जो बकुचे या गडरी के रूप में हो।
बकुचर—पुं० [म० भास्कर या भयकर पृषो० सिद्धि] १. भास्कर। सूर्य। २. बिजली। त्रिभुत। ३. तुरही।
 †पुं०=बकुचर।
बकुरना—अ०=बकरना।
बकराना—स० [हिं० बकुरना का प्रे० रूप] अपराध या दोष कबूल कराना या मुँह से कहलाना।
बकुल—पुं० [स० व/बम्+उरप्, र्-ल] १. मालसिरी। २. सिव। ३. एक प्राचीन देव।
 वि० [स्त्री० बकुली]=बक (टेडा)।
बकुलटर—पुं० [हिं० बकुला+टर अनु०] पानी के किनारे रखनेवाली एक प्रकार की चिड़िया जिसका रंग सफेद होता है और जो धी-धीन हाथ ऊँची होती है।
बकुला—पुं०=बगला।
बकुली—स्त्री० हिं० बक (बगला) की मादा। उदा०—बकुली तेहि जल हस कहुवा।—जायसी।
बकूल—पुं०=बकुल।
बकेन—स्त्री० [सं० बकयणी] ऐसी गाय या भैस, जिसे ब्याये ५-६ महीने से ऊपर हो चुका हो, और जो बराबर दूध देती हो। दे० 'लवाई' का विपर्याय।
बकेना—स्त्री०=बकेन।
बकेवका—स्त्री० [स० बक (टेडा)+उ+एस्क्+कन्, +टाप्,] १. छोटी बकी। २. हवा से झुकी हुई बृक्ष की शाखा।
बकेल—स्त्री० [हिं० बकला] पलाश की जड़ जिसे कुटकर रस्सी बनाते हैं।
बकौड़ा—स्त्री० [सं० बक+ऐर्वा (अव्य०)] छोटे बच्चों का घुटनों के बल चलने की क्रिया।
बकोट—स्त्री० [सं० प्रकोट वा अभिकोष्ट, पा० पकोष्ठ] १. बकोटने की क्रिया या भाव। २. बकोटने के फल-स्वरूप पडा हुआ चिह्न। ३. बकोटने के लिए बनाई हुई उंगलियों और हथेली की मुद्रा। ४. किसी पदार्थ की उतनी मात्रा जितनी उक्त मुद्रा में समाती हो। बगुल। जैसे—एक बकोट बना इसे दे दो।
बकोटना—स० [वि० बकोट+ना (प्रत्य०)] १. नाखून से कोई चीज विशेषतः शरीर की ल्वा या मंस नोचना। २. लाक्षणिक रूप में कोई चीज किसी से बलपूर्वक लेना या बगुल करना। उदा०—ये चदा बकोटनेवाले फिर जल से बाहर आ गये।—मुन्दावनलाल वर्मा।
बकोटा—पुं० [हिं० बकोटना] १. बकोटने की क्रिया या भाव। २. बकोटने से पडनेवाला चिह्न या निशान। ३. उतनी मात्रा जितनी बंगुल या मुट्ठी में आ जाय।
बकोरी—स्त्री०=गुलबकावली।
बकौड़ा—पुं० [हिं० बकल] पलाश के पेड़ की जड़ों का कूटा हुआ बह रूप जिसे बटकर रस्सी बनाई जाती है।

१पू० बकीरा।

बकीरा—पू० [हि० बका] [स्त्री० अल्पा० बकीरी] वह टेढ़ी लकड़ी जो बेलभांश के दोंगों आर पहिण के ऊपर लगाई जाती है। पैगनी। पंजनी।

१पू० बकोड़ा।

बकीरी—स्त्री० गुल-बकावली। उदा०—कोई बोल सिरि पुहुप बकीरी—।—जायगी।

बकील—अव्य० [अ० बकील] [किमी के] कथनानुसार। जैसे—बकीले जासे किसी व्यक्ति के कथनानुसार।

बककम—पू० [अ० बकम] एक प्रकार का युव जो मद्रास, मध्यप्रदेश, तथा बर्मा में अधिक होता है। यह आकार में छोटा और कौटीला होता है। पगय।

बककल—पू० [स० बकल, पा० बकल] १ छिलका। २ छाल।

बकका—पू० [दश०] [स्त्री० अल्पा० बककी] बान की फसल में लगने-वाले एक तरह के मकंद या बाकी रस के छोटे छोटे कीड़े।

बककाल—पू० [अ० बककाल] १ गच्छी बंचनेवाला व्यक्ति। कुंजडा। २ बनिवा। बणिक्। ३ परबुनिया।

बककी—वि० [हि० बकना] बकवाच करनेवाला। बकवादी। स्त्री० [दश०] मादों में पककर नैयाग होनेवाला एक तरह का घान।

बककुर—पू० [म० बाकय] मूह में निकला हुआ शब्द। बोल। बचन। क्रि० प्र०—निकलना।—फूटना।
प०—बककर।

बककर—पू० [दश०] १ काई प्रकार के पीसों की पत्निया और जड़ों आदि को कुटकर नैयाग किया हुआ वह खमीर जो दूसरे पदार्थों में खमीर उठाने के लिए डाला जाता है। २ वह स्थान जहाँ पर गाय-बैल बंधे जाते हैं।

१पू० बबरा। (गुण)।

बकंज—पू० बकोज (मन)।

बकस—पू० बकस।

बकत—पू० १ बकत (समय)। २ बकत (भाग)।

बकतर—पू० बकतर।

बकता—पू० [?] बना हुआ बना जिसका ऊपरी छिलका उतारा जा चुका हो।

बकर—पू० [?] खेत जानने के उपकरण।

प० बवारा।

बकरा—पू० [फा० बकर] १ भाग। हिस्सा। २ किसी चीज या चारा का बटी अंशों में होनवाला वह हिमाजन जो अलग-अलग हिस्सियों को मिलना है।

पू० बवारा।

बकरा—स्त्री० [हि० बवारा का स्त्री अल्पा०] गाँव में, वह मकान या मायाग्य धरो की अपेक्षा बड़ा तथा बड़िया हो।

बकसं—वि० [हि० बवारा। गंत (प्रत्य०)] बवारा या हिस्सा बटानेवाला। हिस्सादार। मात्रादार।

बकसना—अ० बरसाना (क्षमा करना)।

बकसीमा—स्त्री० बकसीमा।

बकसीसना—स० [फा० बकसिष] बकसिष के रूप में देना। प्रदान करना।

बकाम—पू० [म० व्याख्यान, पा० पक्खान] १ बखानने की क्रिया या भाव। २ बखान कर कही जानेवाली बात। ३ विस्तारपूर्वक किया जानेवाला वर्णन। ४ तारीफ। प्रशंसा।

बकानना—स० [हि० बखानना (प्रत्य०)] १ विस्तारपूर्वक कहना या वर्णन करना। २ तारीफ या प्रशंसा करना। ३ विस्तारपूर्वक तथा गालियाँ देने हुए किसी के दुर्गुणों, दोषों आदि का उल्लेख करना। ४ गालियाँ देने हुए किसी का उल्लेख करना। जैसे—किसी का बाप-दादा बखानना।

बबारा—पू० [स० आकार] [स्त्री० अल्पा० बबारी] १ दीवार या टट्टी आदि में धरकर बनाया हुआ गोल और विस्तृत घेग जिसमें गाँवो में अन्न रखा जाता है। २ वह स्थान जहाँ किसी चीज की प्रचुरता हो।

बबारी—स्त्री० [हि० बबारा] छोटा बबारा।

बबिया—पू० [फा० बबिया] एक प्रकार की महीन और मजबूत सिलाई, जिसमें दोहर टाँके लगाये जाते हैं।
क्रि० प्र०—उपड़ना।—उपड़ना।—करना।

मुहा०—बबिया उपड़ना—मेरे सोलना। भडा फोडना।

२ जहाँ। पूँजी। ३ योग्यता। ४ शक्ति। सामर्थ्य। ५ गति। पठ्या।

बबियाना—स० [हि० बबिया] बबिया (सिलाई) करना।

बबीर—स्त्री० [हि० बीर का अन०] गन्ने के रस में चावल पकाकर बनाई जानेवाली एक तरह की बीर।

बबील—वि० [अ० बबील] [भाव० बपीली] कृपण। कज्जम। सूय।

बबीली—स्त्री० [अ० बबीली] कज्जमी। कृपणता।

बबूबी—अव्य० [फा०] १ सूची के साथ। मनी माँति। अच्छी तरह मे। २ पूरी तरह से या पूर्ण रूप से।

बबेडा—पू० [हि० बिवरना] १ किसी चीज के इस प्रकार बिन्दे हुए होने की स्थिति कि उसे झकड़ना करने तथा संवागने में अधिक परिश्रम तथा समय अपेक्षित हो। २ व्यर्थ का विस्तार। जाड़बगर। ३ काई उलझनवाला और बहुत कठिन काम जिसे सरलता से मुलदाया और सफल न किया जा सकता हो। ४ कोई सांसारिक किया कलाप। ५ झगडा। विवाद।

बबेडिया—वि० [हि० बबेडा] दया (प्रत्य०)] बबेडा करनेवाला। बबेडा अर्थात् विवाद करनेवाला। बहुत अधिक झगडापू।

बबेरना—स०—विभेरना।

बबोरी—स्त्री० [दश०] छोटे कद का एक प्रकार का कौटीला वृक्ष जिसके फलों से चमड़ा रखा तथा सिंहाया जाना है। इसे कुत्ती भी कहते हैं।

बबोरना—स० [हि० बोर-गली] बीच रास्ते में छुड़ा या बहुताकर किसी और स्थान पर ले जाना। बहुताकर स्थर-उपर ले जाना। उदा०—माकारि बोरि बबोरि हूमे किन बोरि बबोरि बिबोरो करी कोइ—देव।

बबल—पू० [फा० बबल] किस्म का भाय।

पद—बबली-जला—बहुत बड़ा अभाग।

पु० - वस्त (समय) ।

बकतर—पु० - बकतर ।

बकलाबर—वि० [फा० बकलाबर] [माष० बकलावरी] ? सीमाय-
शाली । २ धनी । मध्यम ।

बकला—वि० [फा० बकला] ? समस्त पदो के अन्त में, देने या प्रदान
करनेवाला। जैसे—जी-बकला-जीवन देनेवाला। २ बकलने अर्थात्
क्षमा करनेवाला। जैसे—बला-बकला अर्थात् क्षमा करनेवाला।
३ नामो के अन्त में बकलाय, देन, प्रसाद। जैसे—करीम-बकला,
मीला-बकला ।

बकलाना—स० [फा० बकल] ? १. प्रदान करना। देना। २ क्षमा
करना। ३ दयापूर्वक छोड़ देना या जाने देना ।

बकलानामा—पु० = बकलशानामा ।

बकलशाना—स० [हि० बकलना का प्रे० रूप] किसी को कोई चीज
बकलीय रूप में देने अथवा किसी अपराधी को क्षमा करने में प्रवृत्त
करना ।

बकलशाना—म० बकलशाना ।

बकलश—स्त्री० [फा० बकलश] ? दानशीलता । २ दान । ३
उत्तम । पुरस्कार । ४ क्षमा ।

बकलशानामा—पु० [फा० बकलशानामा] वह पत्र जिसके अनुसार
कॉर्ट मम्मलिन बकलो या प्रदान की गई हों। दान-पत्र ।

बकला—पु० [फा०] ? मध्य-युग में मैसिको को तनबहाह बाँटनेवाला
एक कर्मचारी । २. मजदूरी । ३. गाव, देहानो में कर बसूल करने-
वाला अधिकारी ।

बकलाश—स्त्री० - बकलाश ।

बकल—पु० = बगला ।

स्त्री० हि० बाग (लगाम) का मशिल रूप । जैसे—बगछट, बग-
मेल ।

बगई—स्त्री० [दिश०] ? एक प्रकार की मक्खी जो कुत्तों पर बहुत
बैठती है। कुत्तरमाछी । २ पत्नी और लम्बी पनियाँवाली एक प्रकार
को धाम, जिससे ठोरियाँ बढी जाती है ।

बगछट—वि० [हि० बाग ; छटना] ? (छोडा) जिसकी बाग या
लगाम छोट दी गई हो और इमी लिए जो बहुत तेजी में दौड़ा जा
रहा हो ।

अव्य० इस रूप में दौडना या मागना कि मानो कोई नियंत्रण न रह
गया हो। बे-तहाशा। सपरत ।

बगदुट—वि०, अव्य० बगछट ।

बगइ—पु० [?] बाडा। घेरा ।

‡ पु० बागइ । (राज०)

‡ स्त्री० बगल ।

बगइरा—पु० [?] गौरैया (बिडिया) ।

बगतरा—पु० - बकतर ।

बगबना—अ० [स० विकृत, हि० बिगडना] ? बिगडना। खराब
होना । २ रास्ता भूलकर कहीं से कहीं चले जाना। भटकना । ३
कन्या, सुभार्ग आदि से व्यूत होना ।

बगबरा—पु० [दिश०] मच्छर ।

बगबाना—स० [हि० बगदाना का प्रे० रूप] किसी को बगदाने में
प्रवृत्त करना ।

बगबहाना—वि० [हि० बगदाना + ह्रा (प्रत्य०)] [स्त्री० बगदही]
? बिगडनेवाला । २ (पशु) जो गुस्से में आकर जल्दी बिगड़ बड़ा
होता हो । ३ लडनेवाला ।

बगबाद—पु० [फा० बगबाद] इराक नामक राज्य की राजधानी ।
बगबाना—स० [हि० बगदना] ? नष्ट या बरबाद करना । २
अभ्र में डालकर भटकाना । ३ गिराना। लुटवाना । ३ कर्तव्य,
प्रतिज्ञा आदि से व्यूत कराना ।

बगना—अ० [म० बगल] ? घूमना-फिरना । २ गमन करना ।
जाना । ३ दौडना । ४ भागना ।

बगनी—स्त्री० [?] ? एक प्रकार का टोटीदार लोटा ।

स्त्री० - बगई (पास) ।

बगबाना—अ० [पु०] ऊँट का काम-बासना से मत होना ।

बग-मेल—पु० [हि० बाग + मेल] ? दूसरे के घोडे के साथ बाग मिला-
कर चलना । एक पक्षि में या बराबर-बराबर चलना । २ घुड़-
सवारों की पक्षि या सतर । ३ यात्रा, युद्ध आदि में होनेवाला संग-
साथ । ४ बगबरी । समानता ।

कि० वि० ? घोडो के सवारो के मसब में, बाग मिलाये हुए और साथ
साथ । २. बराबर साथ रहने हुए ।

बगर—पु० [स० प्रपण, प्रा० पण] ? महल। प्रासाद । २. घर ।
मकान । ३ कम्परा। कोठरी । ४ अर्गन। महल । ५ गीण-मंसै
आदि बाँधने का स्थान ।

‡ स्त्री० = बगल ।

बगरना—अ० [स० विकरण] फैलना । बिखरना । छितराना ।

बगरबाना—स० [हि० बगराना का प्रे० रूप] किसी को कुछ बगराने
अर्थात् बिलेंने में प्रवृत्त करना ।

बगरा—पु० [दिश०] एक प्रकार की छोटी मछली जो जमीन पर उछ-
लती हुई चलती है। इसे धुमा भी कहते हैं ।

बगराना—स० [हि० बगरना का स० रूप] बिलेंरना । छितराना ।
अ० बिलरना ।

बगरियाँ—स्त्री० [दिश०] गुजरात राज्य के कच्छ-काठियावाड
आदि प्रदेशो में होनेवाली एक तरह की कपास ।

बगरी—पु० [हि० बगर का स्त्री० रूप] ? छोटा महल । २
मकान । बवरी । ३ गीण, मंसै आदि बाँधने का छोटा बाडा ।

पु० [दिश०] एक प्रकार का धान ।

बगल—स्त्री० [फा० बगल] ? बाहु-मूल के नीचे का गद्दा। कपिल ।
पद्म—बगल-गध । (देने)

मुहा०—बगल बजाना बहुत प्रसन्नता प्रकट करना । खूब खुशी
मानना ।

विशेष—प्राय लड़के बहुत प्रसन्न होने पर बगल में हथेली रखकर उसे
जोर से बाँध से दबाने हैं जिससे बिलखन शब्द होता है। उन्नी के आचार
पर यह मुहा० बना है ।

२. छाती के दोनों किनारो का वह भाग जो बाँह गिराने पर उनके नीचे
पड़ता है। पार्ष्व ।

पद—बगल-बंदी। (देलें)
मुहा०—(किसी की) बगल गरम करना—सहवास या संभोग करना।
बगल में बाधना या लेना—(क) कोई चीज उठाकर ले चलने के लिए उसे बगल में रखना तथा मुँहा से अच्छी तरह दबाकर धामे रखना। जैसे—गडरी बगल में दबाकर चल पड़ना। (ख) अपने अधिकार में करना। उदा०—लैं गै अनूप रूप-सर्पति बगल में दाबि उचिके अचान कुच कचन पहार से।—देव। **बगलें झांकना**—निरुत्तर या लज्जित होने पर यह समझने के लिए इधर-उधर देखना कि अब क्या करना या कहना चाहिए।

३ कपड़े का वह टुकड़ा जो अँगरसे, कुत्ते आदि की आस्तीन में बगल के नीचे पड़नेवाले अंग में लगाया जाता है। ४ वह जो किसी की दाहिनी या बाईं ओर स्थित या प्रतिष्ठित हो। जैसे—(क) समापति की बगल में अतिथि विराजमान थे। (ख) उनकी दूकान की बगल में पास की एक दूकान है। ५. समीप का स्थान। पास की जगह। जैसे—सड़क के बगल में ही एक नया मकान बना है।

पद—बगल में—(क) पास में। (ख) एक ओर। जैसे—बगल में हो जाओ।

बगल गंध—स्त्री० [हि० बगल+गंध] १. बगल या कान में होनेवाला एक प्रकार का फोड़ा। कँबवार। कँबीरी। २. एक प्रकार का रोग जिसमें बगल या कान में से बहुत बड़बूदार पसीना निकलता है।

बगलगीर—वि० [अ० बगल+गिर+गौर] [भाव० बगलगीरी] १. जो बगल या पाम में स्थित हो। जिसे बगल में मटकार बँटाया गया हो। पादबंधनीं। २. जो गले मिला हो अथवा जिसे गले में लगाया गया हो। आलमिंत।

मुहा०—**बगलगीर होना**—आलमिन करना।

बगलबंदी—स्त्री० [हि० बगल+बंद] एक प्रकार की मिरजई जिसमें बगल में बन्द बांधे जाते हैं।

बगला—पु० [हि० बक+ग (प्रत्य०)] [स्त्री० बगली] १ सारस की जाति का मफेंद रंग का एक पक्षी जिसकी टांग, पाँच और गला लंबा और पंख बहुत छोटी होती है।

पद—बगला-भगत। (देलें)

२ रहस्य संप्रदाय में, मन।

पु० [हि० बगल] थाली की बाड़। अंबल।

पु० [देश०] एक प्रकार का जाड़ोदार पौधा।

बगला भगत—पु० [हि०] वह जो देखने में बहुत धामिक तथा सीधा-साधा जान पड़ता हो, पर वास्तव में बहुत बड़ा कपटी या घतं हो।

बगलाभुकी—स्त्री० [सं०] तप के अनुसार एक देवी। कहते हैं कि इसकी आराधना करने में शत्रु की बाणी कुठिल हो शेष इंद्रियां स्तमित हो जाती हैं।

बगलियाना—अ० [हि० बगल+इयाना (प्रत्य०)] बात-चीत या सामना न करते हुए बगल से होकर निकल जाना। कतारकर निकल जाना। सं० १ बगल में करना या लाना। २ बगल में दबाना। ३ अलग करना या हटाना।

बगली—वि० [हि० बगल+ई (प्रत्य०)] १ बगल से सबंध रखने-वाला। बगल का।

पद—बगली भूँसा। (देलें)

२. एक ओर का।

स्त्री० १ उँटों का एक दोष जिसमें चलते समय उनकी जाँघ की रग पेट में लगती है। २ मुगदर चलाने का एक ढग। ३ वह पैली जिसमें दरजी मूई-तागा आदि रखते हैं। तिलेदानी। ४ दरवाजे की बगल में लगाई जानेवाली सेंध।

क्रि० प्र०—काटना।—मारना।

५ अँगरेजी की आस्तीन में लगाया जानेवाला कपड़े का वह टुकड़ा जो बगल के नीचे पड़ता है। बगल।

स्त्री० [हि० बगला] १ मादा बगला। २ बगले की जाति की एक छोटी चिड़िया जो डीठ होने के कारण मनुष्यों के इतने पास आ जाती है कि लोग इसे 'बंकी बगली' भी कहते हैं।

बगली भूँसा—पु० [हि०] १ वह भूँसा जो किसी की बगल में अथवा किसी की बगल में स्थित होकर लगाया जाय। २ वह वार जो आइ में रहकर अथवा छिपकर किया जाय। ३ वह वार जो साप्पी बनकर या साप्पी होने का ढोग रहकर किया जाय। ४ वह व्यक्ति जो घोसे से उलत प्रकार का वार करता हो।

बगली टाँग—स्त्री० [हि० बगली+टाँग] कुत्ती का एक पंच।

बगली बाँह—स्त्री० [हि० बगली+बाँह] एक प्रकार की कमरत जिसमें दो आदमी बराबर खड़े होकर अपनी बाँह से एक दूसरे की बाँह में धक्का देते हैं।

बगलीबी—स्त्री० [?] एक प्रकार की चिड़िया।

बगलीही—वि० [हि० बगल+बोहा] [स्त्री० बगलीही] बगल की ओर झुका हुआ। तिरछा।

बगलना—म० =बखाना। उदा०—होइ कुवाल हस्तिनी सग बगनी रुचि सुन्दर।—चदवरदायी।

बगा—पु० [सं० बक] बगला।

†पु०=बागा (पहनने का)।

बगाना—स० [हि० बगाना] घूमाना-फिराना। सँर करना।

†स० [सं० विकीरय] फैलाना। बिखेरना। उदा०—दूटि तार अगार बगावै।—नन्ददादा।

†स०=भगाना।

†अ०=भागना।

बगारा—पु० [देश०] गौड़ों के बाँधने का स्थान। गो-खाला।

बगारना—स० [सं० विकीरय, हि० बगलना] १ फैलाना।

२ छितराना। बिखेरना।

स०=भगराना। उदा०—सब देसनि मैं निज प्रभात निज प्रकृति बगारति—रत्नकर।

बगावत—स्त्री० [अ० बगावत] १ शशा, आदेश आदि की जानेवाली स्पष्ट अवज्ञा। २ विद्रोह। सैनिक विद्रोह अथवा युद्धात्मक भावना से युक्त विद्रोह।

बगिलारा—पु० [सं० वक्तु] १ जोर से की जानेवाली पुकार। २ बकबक। बकवाद।

बगिया—स्त्री० [हि० बाग+इया] छोटा बाग विशेषतः फूल-वारी।

बगीचा—पु० [फा० बागच] [स्त्री० अल्पा० बगीची] १. छोटा बाग। २. फूलबारी।

बगुच्छा—पु० [?] पुरानी चाल का एक अस्त्र।

बगुच्छवली—पु० [हि० बगुच्छा+पत्तौख] एक प्रकार का जल-पथी।

बगुला—पु० १. =बगला। २. =बगुला।

बगुली—स्त्री०—बगली (चिड़िया)।

बगुरा—पु०=बगुला।

बगुला—पु० [हि० बाउ (बायु)+गोला] तेज हवा की वह अवस्था जिसमें वह धेरा बंधकर चक्कर लगाती हुई तथा ऊपर उठती हुई आगे बढ़ती है। चक्रवात। बवडर।

बगेरी—स्त्री०—बगेरी (चिड़िया)।

बगेरना—सु० [हि० बगदना] १. चक्का देकर गिरा या हटा देना। २. विचलित करना।

बगेरी—स्त्री० [दिशा०] साकी रस की एक प्रकार की छोटी चिड़िया। बगीधा। भइही।

बगीचा—पु०—बगीचा।

बगी—अय० [अ० बगीर] न होने की दशा में। बिना। जैसे—आपके बगीर काम नहीं चलेगा।

बगीधा—पु० [दिशा०] [स्त्री० बगीधी] बगेरी (चिड़िया)।

बगना-गोटी—स्त्री० [?] लटको का एक प्रकार का खेल। उदा०—तोनों बगना-गोटी खेला करेंगे।—बुन्दाबनलाल वर्मा।

बगी—स्त्री०—बगी।

बाघी—स्त्री० [अ० बांगी] चार पहियों की पाटनदार गाड़ी जिसे एक या दो घोड़े खींचते हैं।

बाघबरा—पु०=बाघबर।

बाघ—पु० [हि० बाघ] हिन्दी 'बाघ' का सजित रूप जो उसे समस्त पदों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—बाघ-छाला, बाघ-नखा।

बाघ-छाला—स्त्री० [हि० बाघ+छाला] बाघ की छाल। बाघबर।

बाघनखा—पु० [हि० बाघ+नखा (सर्वांगाला)] [स्त्री० अल्पा० बाघ-नखी] १. बाघ के नख के आकार-प्रकार के प्राचीन अस्त्र। शेर-पंजा। २. गले में पहनने का एक प्रकार का गहना जिसमें चारों या सोने के लडों में बाघ के नाखून जड़े रहते हैं।

बाघनखी—पु०—बाघनखा।

बाघनहियरी—स्त्री० दे० 'बाघनखा'।

बाघना—पु०=बाघनहा।

बाघबाघा—पु० [हि० बाघ+बायु] बाघ या शेर के शरीर की दुर्गंध।

बाघकरा—पु० [हि० बायु+गंठूरा] बगुला। चक्रवात। बवडर।

बाघबार—पु० [हि० बाघ+बार] बाघ की मूँछ का बाल।

बाघार—पु० [हि० बाघारना] १. बाघारने की क्रिया या भाव। २. वह मसाला जो बाघारते समय धी में डाला जाय। तडका। छौक। क्रि० प्र०—देना।

३. बाघारने से निकलनेवाली सोधी गंध।

क्रि० प्र०—आना।—उठना।—निकलना।

४. पाँचव्या प्रदर्शन के लिए किसी विषय की की जानेवाली बोधी

बर्चा। ५. शराब पीने के समय बीच-बीच में तमाकू, बीड़ी आदि पीने की क्रिया। (व्यय)

बाघारना—स० [स० व्याघारण] १. कलछी या चिम्मच में धी की भाग पर तमाकर और उसमें हीन, जीरा आदि सुगंधित मसाले छोटकर उसे तरकारी, दाल आदि की बटलौई में उसका मूँछ ढांककर छोड़ना जिससे वह सुगंधित हो जाय। तडका देना या लगाना। छौकना। २. अपनी योग्यता, शक्ति का बिना उपयोग अवसर के ही आवश्यक से अधिक या निरर्थक प्रदर्शन करना। जैसे—बगैरेजी या सट्टह बाघारना। ३. बीग या पोली के संबंध में, आंगक जमाने के लिए, बढ़ा-चढ़ाकर बर्चा करना। जैसे—पोली बाघारना।

बाघुरा—पु०=बगुला।

बाघेरा—पु० [हि० बाघ] लकड़बाघ।

बाघेलखंड—पु० [हि० बाघेल (जाति)+खंड] [वि० बाघेलखंडी] आधुनिक मध्यप्रदेश के अन्तर्गत नागौर, रीवा, मीरत आदि भूभाग की सामूहिक सजा।

बाघेलखंडी—वि० [हि० बाघेलखंड] बाघेलखंड का। बाघेलखंड-सवधी। पु० बाघेलखंड का रहनेवाला।

स्त्री० बाघेलखंड की बोली। बाघेली। (देखें)

बाघेली—स्त्री० [हि० बाघेलखंड] बाघेलखंड की बोली जो पूर्वी हिन्दी के अन्तर्गत मानी गई है और अबधी से बहुत कुछ मिलती-जुलती है।

स्त्री० [हि० बाघ+एली (प्रत्य०)] बरतन खरादनेवालों का वह खूँटा जिसका ऊपरी सिरा आगे की ओर कुछ बड़ा होता है।

बाघैरा—पु०—बगेरी (चिड़िया)।

बाघ—स्त्री० [स० बघा] पत्नीय प्रदेश के जलाशयों के तट पर होनेवाला एक प्रकार का पौधा जिसके अंगों का उपयोग औषधों में होता है।

↑ पु० [स० वक्] वचन। बात।

बाघका—पु०=बजका (पकवान)।

बाघकाना—वि० [हि० बच्चा+काना (प्रत्य०)] [स्त्री० अल्पा० बाघकानी] १. बच्चों के पहनने या काम में आनेवाला। जैसे—बाघकानी टोपी। २. बच्चों की तरह छोटे आकार-प्रकार का। जैसे—बाघकाना पेड़। ३. बच्चों के स्वभाव का। जैसे—बाघकानी मुँडि।

बाघत—स्त्री० [हि० बाघना] १. बच्चे हुए होने की अवस्था या भाव। जैसे—इस तरह करने से काम में समय की बहुत बचत होती है। २. व्यय आदि के बाद बचा रहनेवाली धन-राशि। ३. लागत, व्यय आदि निकालने के बाद बचा हुआ धन। मूनाफा। लाभ। (सेवित्र) ४. लाशणिक अर्थ में, किसी प्रकार से होनेवाला छुटकारा या बचाव।

जैसे—सठ बोलने से तुम्हारी बचत नहीं हो सकेगी।

बाघता—पु० [हि० बाघना] [स्त्री० बाघती] देन चुकाने, उपयोग, व्यय आदि करने के उपरांत बचा हुआ धन।

बाघन—पु० [स० वचन] १. मूँह से कही हुई बात। वचन। २. वाणी। ३. वृत्ता, प्रतिज्ञा, शपथ आदि के रूप में कही हुई ऐसी बात जिसमें कभी अन्तर न पड़े। प्रतिज्ञा। जैसे—हम तो अपने बचन से बंधे हैं।

क्रि० प्र०—छोड़ना।—तौड़ना।—देना।—निभाना।—पालना।—लेना।

मुहान—बचन देना—मुह प्रतिज्ञापूर्वक यह कहना कि हम तुम्हारा अमुक काम अवश्य कर देंगे। (किसी से) बचन बंधाना—मूँह प्रतिज्ञा कराना।

उदा०—नाद जगोदा बचन बँधयो, ता कारण देही धरि आयो।
—सुर। बचन बरिगना=किस्ती से यह प्रार्थना करना कि आपने जो
वचन दिया था, उसका पालन करें। बचन हारना=प्रतिज्ञापूर्वक किसी
से कही हुई बात या किसी को दिए हुए बचन का पालन करने के लिए
विषय होना।

४ किमी से निवेदन या प्रार्थनापूर्वक कही जानेवाली बात।

मुहा०—(किस्ती के आगे) बचन डालना=किमी काम या बात के
लिए प्रार्थना या याचना करना।

बचन-विशेषा—स्त्री०=वचन-विशेषा।

बचना—अ० [स० वचन + न पाना] १ उपयोग, कार्य, व्यय आदि
होने चुकने के बाद भी कुछ अन्न, पास या शेष रह जाना। अवशिष्ट
होना। जैसे—(क) दूध खपयो मे मे तीस रूपए बचे है। (ख)
दो कुरते बन जाने पर भी गज भर कण्डा बचेगा। २ वधन, विपद्,
सकट आदि से किमी प्रकार अलग या दूर या सुरक्षित रहना। जैसे—
बह गिरने में बाल बाल बच गया। ३ किसी कार्य में सफल न होना
अथवा प्रयास द्वारा किए जायेवाले कार्यों के परिणाम, प्रतित्रिया, प्रभाव
आदि से अछूता रहना। जैसे—(क) किस्ती के आशेष से बचना।
(ख) बूढ़ बोलने से बचना। ४ किमी का सामना करने या किसी
के सम्पर्क में आने से धबकना या सकोच करना और सहसा उसका
सामना न करना या उसके सम्पर्क में न आना। जैसे—बह तपादा
करनेवालों से बचना फिरता है। ५ किसी गिनती, वर्ग, समाज आदि
के अन्तर्गत न आना या न होना। छूट या रह जाना। जैसे—दूकके
व्यय-वाणों से कोई बच्चा नहीं है।

†म० [स० वचन] कथन करना। कहना।

बचपन—पु० [हि० बच्चा+पन (प्रत्य०)] १ 'बच्चा' (अल्प-
वयस्क) होने की अवस्था या भाव। २ बाल्यावस्था। लटकपन।
३ बालका की तरह किया जानेवाला सयानों द्वारा कोई कार्य। बच-
पना।

बचपना—पु० [हि० बचपन] १ बचपन। २ मयाने व्यक्तियों द्वारा
किया जानेवाला कोई ऐसा अशाभिनीय कार्य जो उनकी बुद्धि की अपरि-
पक्वता का सूचक होता है।

बचप्याँ—पु० [हि० बच्चा] १ बालका। बच्चा। २ हाथ में पड़-
ने की अँगूठी में लगे हुए छोटे घुंजरू। उदा०—उमंगली तेरी छल्ला
सभे, बचपे की बहार। (शुभर)

बचपेया—वि० [हि० बचाना+पेया (प्रत्य०)] बचानेवाला। रसाक।

बच्चा—पु० [स० वत्स, प्रा० वच्छ, हि० वच्चा] [स्त्री० बच्ची] १
छटका। बालक। २ एक प्रकार का तुच्छतासूचक सबाधन। जैसे—
अच्छा बच्चा, तुमसे भी किसी दिन समझ लूँगा।

बच्चाना—स० [हि० बचना का म०] १ ऐसी किया करना जिससे
कुछ या कोई बचे। २ उपयोग, व्यय आदि के उपरत भी कुछ अव-
शिष्ट रहना। जैसे—बह दो-चार रूपए रोज बचा लेता है। ३ किसी
प्रकार के कट, बधन, सफट आदि से किसी प्रकार अलग करके मुक्त या
सुरक्षित करना। जैसे—बुझाने, रोग या मजा से बचाना। ४. दुष्कर्म,
दूषित प्रभाव आदि से अलग और सुरक्षित रखना। जैसे—किमी को
कुमार्य में पढ़ने से बचाना। ५. आपात, आक्रमण आदि से सुरक्षा

करना। ६ सामान न होने देना या संपर्क में न आने देना। जैसे—
(क) किसी से अल्ल बचाना। (ख) किसी का सामना बचाना।

बच्चाव—पु० [हि० बचाना] १ कष्ट, सकट आदि में बचे हुए होने की
अवस्था या भाव। जैसे—इस पेड़ के नीचे धूप (या बर्षा) से बच्चाव
रहेगा २. द्राग। रक्षा। ३. कष्ट, सकट आदि में बचने के लिए
किया जानेवाला उपाय या यत्न। †३ बचत।

बच्चिया—स्त्री० [हि० बच्चा=छोटा] कसीदे के काम में छोटी-छोटी
बुटियाँ।

बच्चुआ—पु० [देश०] एक प्रकार की मछली।

†पु०=बच्चा।

बच्चन—पु० [हि० बच्चा] भालू का बच्चा। (कलदर)

बच्चो—पु० [देश०] एक तरह की लता।

बच्चा—पु० [स० वत्स, प्रा० वच्छ से फा० बच्च] [स्त्री० बच्ची]

१. किसी प्राणी का नवजात शिशु। जैसे—बुने या बिस्की का
बच्चा, आदमी का बच्चा। २ मनुष्य जाति का कम अवस्थावाला
प्राणी। बालक।

पद—बच्चे-कबचे=छोटे छोटे बच्चे। बाल-बच्चे।

मुहा०—बच्चा देना=पगमें म सतान उत्पन्न करना। प्रसव करना।

पद—बच्चों का खेल=बहुत ही तुच्छ, सहज या साधारण काम।

वि० १ कम उमरवाला। २ नादान। ३ अनुभवहीन।

बच्चाकटा—वि० [फा०] बहुत बच्चे जननवाली (स्त्री)।

(विनाद)

बच्चादान—पु० [फा०] गर्भाशय।

बच्ची—स्त्री० [हि० बच्चा का स्त्री० रूप] १ छोटा लड़की। २ वह
छोटी धोडिया जो छत या छानन में बड़ी धोडिया के नीचे लगाई
जाती है। ३. बने बाल जो हाँठ के नीचे बीच में जमते हैं। ४ दे०
'बच्चिया'।

बच्चेदानी—स्त्री०=बच्चादान (गर्भाशय)।

बच्छ—पु० [स० वत्स, प्रा० वच्छ] १ बच्चा। २ देटा। ३
बछड़ा।

बच्छनामा—पु०=बछनाम।

बच्छल—वि०=बत्सल।

बच्छस—पु० [स० वध्म] वस स्थल। छातो।

बच्छा—पु० [स० वत्स, प्रा० वच्छ] [स्त्री० बच्छिया] १. गाय का
बच्चा। बछड़ा। बच्छ। २ किमा पशु का बच्चा। (श्व०)

बछ—पु० [स० वत्स, प्रा० वच्छ] गाय का बच्चा। बछड़ा।

†स्त्री०=बच्च (शोषवि)।

बछड़ा—पु० [हि० वच्छ+डा (प्रत्य०)] [स्त्री० बछड़ी, बछिया]

गाय का बच्चा।

बछनाम—पु० [स० वत्सनाम] एक स्थावर विप। (एकोनाइट)

बछराँ—पु०=बछड़ा।

बछर्राँ—पु०=बछड़ा (गाय का बच्चा)।

बछर्राँ—वि०=बत्सल।

बछरा—पु० [हि० वच्छ] [स्त्री० बछिया] गाय का बच्चा। बछड़ा।

बछराँ—पु०=बच्छा।

बहिष्या—स्त्री० [हिं० बघा] गाय का मादा बच्चा।
पद—**बहिष्या** का शाब्द या **बाबा**—(बैल की तरह) निवृद्धि या मुक्ति।
बछेड़ा—पुं० [सं० बस; प्रा० वच्छ; पुं० हिं० वच्छ] स्त्री० बछेड़ी]
 छोटे का बच्चा।
बछेरा—पुं०=बछेड़ा।
बछेका—पुं०=बछेड़ा।
बछोटा—पुं० [हिं० बाछ+ओटा (प्रत्य०)] वह बच्चा जो हिस्से के मुताबिक लगाया या लिखा जाय।
बचनी—पुं० [हिं० बाजा] १. बाजा बजानेवाला। बजनीया। २. बाजे बजानेवालो की मण्डली। ३. मुसलमानी राज्य-काल में बाजा बजानेवालो से लिया जानेवाला एक तरह का कर।
बचकद—पुं० [सं० बचकद] एक प्रकार की जगली लता।
बचकना—अ० [अनु०] तरल पदार्थ का सड़कर या बहुत गंदा होकर बुलबुले फँकना। बचकजाना।
बचना—पुं० [हिं० बजकना] १. बेसन आदि की वे पकीडियाँ जो दही में डाली जाने से पहले पानी में फुलाई जाती हैं। २. दे० 'बचका'।
बजारी—स्त्री० [म० वज्र] वज्रपात। उदा०—देऊ जवाब होई बजारी—कबीर।
 †वि० दे० 'बज-मारा'।
बज—पुं० [अ०] १. आय-व्यय का मासिक या वार्षिक लेखा। २. आय-व्यय पत्रक।
बजकना—स० [टकराना। २. कड़ी जाकर पहुँचना।
बजड़ा—पुं०=बजरा।
बजकम—पुं० [?] फिरते का फूल जिससे रेशम का सूत रंगा जाता है।
बजना—अ० [हिं० बाजा] १. किसी चीज पर आघात किये जाने पर ऊँची ध्वनि निकलना। जैसे—(क) घटा बजना। (ख) तबला या मृदंग बजना। २. ऐसा आघात लगना जिससे किसी प्रकार का उच्च शब्द उत्पन्न हो। जैसे—किसी के सिर पर बड़ा बजना। ३. अस्त्र-शस्त्र आदि का शब्द करते हुए प्रहार होना। जैसे—लाठी बजना। ४. ऐसी लड़ाई या झगड़ा होना जिसमें मार-पीट भी हो। ५. हठ करना। जिद करना। अडना। ६. किसी नाम से ख्यात या प्रसिद्ध होना।
 †वि० बजनेवाला। जो बजता हो।
 पुं० १. चाँदी का ध्वजा जो ठनकाने या पटकने से बजता अर्थात् शब्द करता है। (दलाल) २. दे० 'बाजा'।
बजनीया—पुं० [हिं० बजना+इया (प्रत्य०)] वह जो बाजा बजाने का श्ववसाय करता हो। वह जिसका पेशा बाजा बजाना हो। (प्रायः ब्याह-शादी आदि के अवसर पर बाजे बजानेवालो के लिए प्रयुक्त)
बजनीया—पुं०=बजनीया।
बजनी—स्त्री० [हिं० बजाना] ऐसी लड़ाई या झगड़ा जिसमें उठा-पटक या मार-पीट भी हो।
 वि० बजने या बजाया जानेवाला। बजनी।
बजनी—वि० [हिं० बजाना] बजने या बजाया जानेवाला। जो बजता या बजाया जाता हो।

बजबजाना—अ० [अनु०] १. उसमें, घरमें आदि के कारण किसी जलीय या तरल पदार्थ में खमीर उठने पर अथवा उसके सड़ने पर उसमें से बुलबुले निकलना। जैसे—कटहल या भात बजबजाना। २. इस प्रकार बुलबुले निकलने से पदार्थ का दूधित होना।
बजभारा—वि० [सं० बज्ज+हिं० मारा] स्त्री० बजभारा] १. बज्ज से आवृत। जिस पर बज्ज पड़ा हो। २. बहुत बड़ा अभाग।
बजरंग—वि० [सं० बज्ज+अंग] १. बज्ज के समान कठोर अंगोंवाला। २. परम शक्तिशाली श्रीर हृष्ट-युष्ट।
 पुं० हनुमान।
बजरंगबली—पुं० [हिं० बजरंग+बली] हनुमान्। महाश्वीर।
बजरंगी बैठक—स्त्री० [हिं० बजरंग+बैठक] एक प्रकार की बैठक जिससे शरीर बहुत अधिक पुष्ट होता है।
बजर—वि० [सं० बज्ज] १. बहुत मजबूत। दृढ़ या पक्का। उदा०—किन्तु सफीला भुरज की, काहू बजर कपाट—बाकीदास। २. कठोर। पुं०=बजर।
बजरबदू—पुं० [हिं० बजर+बदू] १. एक प्रकार के वृक्ष के फल का दाना या बीज जो काले रंग का होता है और जिसकी माला नजर आदि की बाधा में बचाने के लिए लोग बच्चों को पहनाते हैं। २. व्यापक अर्थ में कोई ऐसी चीज जो किसी प्रकार का अपसक्तन तथा दूषित प्रभाव रोक्ती है। ३. एक प्रकार का खिलौना।
बजरबोंग—पुं० [हिं० बजर+बोंग (अनु०)] एक प्रकार का धान जो अगहन मास में पकता है। २. बड़ा भारी या मोटा डडा।
बजर-हुद्वी—स्त्री० [हिं० बजर+हुद्वी] छोड़ो के पैरो में गँठ पड़ने का एक रोग।
बजरा—पुं० [सं० बज्जा] वह बड़ी नाव जो कमरे के समान खिड़कियों तथा पक्की छतवाली होती है।
 †पुं०=बाजरा।
बजरगि—स्त्री०=बज्रगिनि (विजली)।
बजरिया—स्त्री० [हिं० बाजार+इया (प्रत्य०)] छोटा बाजार।
बजरी—स्त्री० [सं० बज्ज] १. पत्थर को तोड़कर बनाये जानेवाले छोटे छोटे टुकड़े जो कपड़ा, सड़क आदि बनाने के काम आते हैं। २. आकाश से गिरनेवाला पत्थर। बोला। ३. वह छोटा नुमायशी कँगूरा जो किले आदि की दीवारों के ऊपरी भाग में बराबर छोड़े-बोड़े अंतर पर बनाया जाता है और जिसकी बगल में गोलियाँ चलाने के लिए कुछ अथकास रहता है।
 †स्त्री० [हिं० बाजरा] वह बाजरा जिसके दाने बहुत छोटे-छोटे हों।
बजबाई—स्त्री० [हिं० बजवाना+ई (प्रत्य०)] १. बाजा बजवाने का काम या भाव। २. वह मजदूरी की किसी से बाजा बजवाने के फल स्वरूप उसे दी जाती है।
बजबाना—स० [हिं० बजाना का भे०] [भाव० बजवाई] किसी को कुछ बजाने में प्रयुक्त करना। जैसे—बाजा बजवाना।
बजबैया—वि० [हिं० बजाना+बैया (प्रत्य०)] बजानेवाला। जो बजाता हो।
बजा—वि० [का० बजा] १. जो अपने उचित, उपयुक्त या ठीक स्थान पर हो। २. उचित। नाथिव।

मुहा०—बजा लाना—(क) पूरा करना। पालन करना। जैसे—
हुकुम बजा लाना। (ख) सम्पादन करना। जैसे—आदाब बजा
लाना।

३. जो दुश्कत तथा शूद्र हो।

बर्जागि—स्त्री० [सं० वज्र] अग्नि वज्र की आग अर्थात् विद्युत्। बिजली।
उदा०—सूत्र आग बर्जागि-दुख तृण पाप बिलाप।—केदाब।
२ भीषण कष्ट देनेवाला ताप। उदा०—विरह-बर्जागि सीहं रष
हृत्का।—जायसी।

बर्जागिन—स्त्री०—बर्जागि।

बर्जाज—पुं० [अ० बर्जाज] [स्त्री० बर्जाजिन, भाव० बर्जाजी] कपडे
का ध्यापारी। कपडा बेचनेवाला।

बर्जाजा—पुं० [हिं० बर्जाज] वह बाजार जिसमें कपडों की बहुत-सी
दुकानें हों।

बर्जाजी—स्त्री० [अ० बर्जाजी] १ बर्जाज का काम। कपडा बेचने
का व्यवसाय। २ बर्जाज की दुकान पर बिकनेवाले या बिकने
योग्य कपडे।

बर्जाना—सं० [हिं० बाजा] १. किसी चीज पर इस प्रकार आपात
करना कि उसमें से शब्द निकलने लगे। जैसे—(क) घटा बर्जाना।
(ख) ताली बर्जाना। २ कोई ऐसी विशिष्ट प्रक्रिया करना जिससे
कोई बाध, सुर, ताल, लय आदि में शब्द करने लगे। जैसे—शहनाई
या सितार बर्जाना।

पद—बर्जाकर—डका पीटकर। लुल्लमलुल्ला।

मुहा०—गाल बर्जाना=दे० 'गाल' के अतंयन मुहा०। बर्बाबर्जाना=
सैनिका को कवायद आदि के लिए बलाने के उद्देश्य से बिगूल
बर्जाना।

३ लाठी, सोंटे आदि से लडाई-सगडा करना।

४ पुकारना। बलाना। (पूरब) ५ खरेपन आदि की परीक्षा के
लिए किसी चीज की उछालकर, पटककर अथवा उसपर आपात करके
शब्द उत्पन्न करना।

पद—ठोकना-बर्जाना—(क) अच्छी तरह जाचना या परखना।
जैसे—जो चीज लो वह ठोक-बर्जाकर लिया करो।(ख) बात या
व्यक्ति के सबब में प्रामाणिकता, सत्यता आदि का निरवचन करना।
जैसे—उन्हे अच्छी तरह ठोक-बर्जाकर देख लो। कही ऐसा न हो,
कि वे पीछे मुकर जायें।

५ आपात या प्रहार करना। मारना-पीटना। जैसे—जते बर्जाना।

६ स्त्री के साथ प्रसंग या सभोग करना। (बाजार)

सं० [फा० बजा+ना (प्रत्य०)] पालन करना। जैसे—तावेदारी
बर्जाना, धुङ्कम बर्जाना।

बर्जाव—अध्य० [फा०] (किसी की) जगह या स्थान पर अथवा बदले में।
जैसे—उन्हे सपथी के बर्जाव कपडा भी मिल जाय तो काम चल जायगा।

बर्जारुं—पुं०—बाजार।

बर्जारी—वि०—बाजारी।

वि० [हिं० बाजना—बोलना] बहुत बड़-बड़कर और व्यर्थ बोलनेवाला।
उदा०—फोति बडो करतूति बजा जन, बाज बडो सो बडोई बजारी।—
सुलसी।

बर्जाकी—वि०—बाजकी।

बर्जावनहारां—वि० [हिं० बर्जाना+हार (प्रत्य०)] बर्जानेवाला।

बर्जावनां—सं०—बाजना।

बर्जुआ—पुं०—बाजू।

बर्जुज—कि० वि० [फा० बर्जुज] अतिरिक्त। सिवा। जैसे—बर्जुज
इसके और कोई चारा नहीं है।

बर्जुल्ला—पुं० [सं० बाजू+उल्ला (प्रत्य०)] बाहं पर पहनने का
बिजायट नाम का गहना।

बर्जूका—पुं० [?] १. धातु का एक प्रकार का बडा नल जिगमें से बिजली
की सहायता से धातुओं पर अग्नि-बाण आदि छोटे जाते हैं। (इसका
प्रयोग पहले-गहल अमेरिका ने दूतरे युरोपीय महायुद्ध में किया था)।
२. दे० 'बिजुल्ला'।

बर्जूशा—पुं० १.—बर्जूका २.—बिजूला।

बर्जना—अ०—बर्जना।

बर्जर—पुं०—बर्ज।

बर्जनात—वि० [फा० बर्जनात] [भाव० बर्जनाती] १ दुष्ट। पाजी।
२ कमीना। नीच। अपम।

बर्जनाती—स्त्री० [फा० बर्जनाती] १. दुष्टता। पाजीपन। २ कमीना-
पन। नीचता। अधमता।

बर्जुन—पुं० [हिं० बर्जना] बाजा।

बर्जम—स्त्री० [फा० बर्जम] १ सभा। २ गोष्ठी।

बर्ज*—पुं०—बर्ज।

बर्ज्जी—पुं०—बर्ज्जी (द्वन्द्व)।

बर्जना—अ० [सं० वड, प्रा० बर्जना+ना (प्रत्य०)] १ बधन में पडना।
बैधना। २ उलझना। फँसना। ३. किसी से उलझकर लडाई-
झगडा करना। ४ जिद या हठ करना।

बर्जवट—स्त्री० [हिं० बौस+वट (प्रत्य०)] १ बौस स्त्री। २ बौंस बौस
मादा पशु। ३. वह डडल जिगमें से बाल तोड़ की गई हों।

स्त्री० बर्जावट।

बर्जाऊ—वि० [हिं बर्जाना] बर्जाने अर्थात् बर्जाने वाला।

पुं०—बर्जाव।

बर्जाव—स्त्री० [हिं० बर्जना] बर्जने या बर्जाने की अवस्था, क्रिया या
भाव। बर्जाव।

बर्जाना—सं० [हिं० बर्जना का सकर्मक रूप] १ बधन में डालना या
लाना। २. उलझाना। फँसाना। ३ जाल में फँसना।
↑अ० बधन में फँसना। जकडा जाना। बर्जना।

बर्जाव—पुं० [हिं० बर्जना] १. जाल, फदे आदि में बर्जाने की
क्रिया या भाव। बर्जावट। २. बर्जाने या फँसनेवाली कोई चीज।
बर्जावट।

बर्जावट—स्त्री० [हिं० बर्जना+आवट (प्रत्य०)] १. बर्जने या बर्जाने
की अवस्था, क्रिया या भाव। बर्जाव। २. उलझना। ३. जाल। बर्जाव।

बर्जावना—सं०—बर्जाना।

बर्जावा—पुं० [हिं० बर्जाना—फँसाना] किसी को फँसाने के लिए
बनाया हुआ जाल या गभीर धोखाना।

बट—पुं० [सं० बट] १ बट का पेट। बट। २ किसी चीज का मोला।

३. सिल पर चीजें पीसने का बट्टा। ४. बाट। सार्थ। रास्ता।
 ५. चीजों को तोलने का बटखरा। बाट। ६. बटा नाम का पकवान।
 पु० [हि० बटना=बल डालना] १ बटे हुए होने की अवस्था या भाव।
 २. रस्सी आदि के बहु ऐंठन जो उसे बटने से पड़ती है। बल।
 कि० प्र०—डाटना।—देना।
 ३. पेट में होनेवाली ऐंठन या पतनेवाली मरोड़।
 पु० हि० बाट का बहु सक्रिय रूप जो उसे भौगिक शक्तों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—बट-खारा, बट-मार।
 पु० [हि० बटना] बँटने पर मिलनेवाला अर्थ। बट। हिलसा। उवा०—
 लाज भ्रजाव मिली औरन काँ मुहु मुसुकानि मेरे बट आई—नारायण
 स्वामी।
 बटई—स्त्री०—बटेर। उवा०—तीतर बटई लवान बधि।—जायसी।
 बटकना—अ०—बचना। (बुल्के०) उवा०—ईसुर कान बटकने
 नइयाँ देस लेख यह ज्वानो।—लोकगीत।
 बटखर—पु०—बटखरा।
 बटखरा—पु० [स० बटक] धातु, पत्थर आदि का किसी नियत तौल का
 टुकड़ा जिसमें अथ्य पदार्थ तराशु पर लीले जाते हैं।
 बट-छीर—पु० [स० बट+हि० छीर] बट वृक्ष की वह छाल जो पहलने
 के काम आती थी। उवा०—झोत प्रात बट-छीर भंगवा।—
 तुलसी।
 बटन—स्त्री० [हि० बटना] १ रस्सी आदि बटने या ऐंठने की क्रिया
 या भाव। २ बटने के कारण रस्सी आदि में पड़ी हुई ऐंठन। बल।
 पु० [अ०] १ धातु, सींग, सीप आदि की बनी हुई चिपटे आकार की
 कटी गोल घुंठी, जो फोट, कुदरे अगखें आदि में टाँकी जाती है और
 जिसे काज नामक छेद में फँसा देने से लुकी जगह बढ हो जाती है और
 कपड़ा पूरी तरह से बदन को ढक लेता है। बूताम। २ उबत आकार-
 प्रकार की वह घुंठी जिसे उठाने, दबाने, हिलाने आदि से कोई
 यांत्रिक क्रिया आरंभ या बच होती है। जैसे—बिजली का बटन।
 कि० प्र०—दबाना।
 ३ बादले का एक प्रकार का तार।
 बटना—स० [अ० बट्—बटना] कई तनुओं, तांगों या तारों को एक साथ
 मिलाकर इस प्रकार मरोड़ना कि वे मज मिलकर एक हो जायें। ऐंठन
 देकर मिलाना। जैसे—डोरी, तागा या रस्सी बटना।
 पु० रस्सी आदि बटने का कोई उपकरण या यन्त्र।
 †स० बाटना (बट्टे से पीसना)।
 पु० [स० उडबँचन; आ० उडवाट्टन] सिल पर पीनी हुई सरसों, चिरीजी,
 आदि का लेप जो सरीर की मील छुड़ाने के लिए मला जाता है।
 उबतन।
 बटपरा—पु०—बटपार।
 बटपार—पु० [स्त्री० बटपारिन] दे० 'बट-मार'।
 बट-पारी—स्त्री० दे० 'बट-पारी'।
 †पु०—बट-पार (बट-मार)।
 बटब—पु० [?] पत्थर गड़नेवालों का एक बीजार जिससे वे कोना नापकर
 ठीक करते हैं। कोनिया।
 †पु०—बटन।

बटब-पाव—पु० [बटम+अ० पाव=ताड़] बंगाल में होनेवाला एक
 प्रकार का ऊँचा पेड़।
 बट-भार—पु० [हि० बाट+भारता] पथिकों या यात्रियों को सार्थ में मारकर
 धन, संपत्ति छीन लेनेवाला लुटेरा।
 बट-पारी—स्त्री० [हि० बटपार] बटमार का काम या भाव।
 बटला—पु० [स० बटूल; आ० बटूल] [स्त्री० अल्पा० बटली] चावल,
 दाल आदि पकाने का चौड़े मुँह का गोल बरतन। बटी बटलोई। देग।
 देगचा।
 बटली—स्त्री०—बटलोई।
 बटलोई—स्त्री० [हि० बटला] छोटा बटला। बटली। देगची।
 बटवाँ—वि० [हि० बाटना=पीसना] सिल पर पीसा या पीसा
 हुआ।
 उवा०—कटवाँ बटवाँ मिला तुबासू।।—जायसी।
 बि० [हि० बटना=बल डालना] बटा हुआ।
 बटवा—पु०—बटवा।
 †पु०—बटला।
 बटवाई—स्त्री० [हि० बटवाना+आई (प्रत्य०)] बटवाने की क्रिया,
 भाव या मजदूरी।
 बटवाना—स० [हि० बाटना का प्रे०] बटाने या पीसने का काम किसी
 से करवाना।
 †स०—बँटवाना।
 बटवार—पु० [हि० बाट] १ रास्ते पर पहरा देनेवाला व्यक्ति।
 पहरेदार। २ रास्ते पर खड़ा होकर वहाँ का कर उगाहनेवाले
 कर्मचारी।
 बटवारा—पु०—बँटवारा।
 बटा—पु० [स० बटक] [स्त्री० अल्पा० बटिया] १ कोई सोलाकार
 चीज। गोला। २. कुकुर। गेंद। ३. पत्थर का टुकड़ा। डोका।
 ४ सिल पर चीजें पीसने का बट्टा।
 पु० [हि० बाट] बटोही।
 पु० १ गणित में एक प्रकार का चिह्न जो छोटी किन्तु सीधी क्षैतिज
 रेखा के रूप में (—) होता है और जो किसी पुरी इकाई का निम्न अर्धांश
 अथ वा खंड सूचित करता है। जैसे— $\frac{1}{2}$ (तीन बटा चार) में ३ और
 ४ के बीच की पाई बटा कहलाती है। २. गणित में निम्न अर्धांश पुरी
 इकाई के तुलनात्मक अथ वा खंड का वाचक शब्द। जैसे—दो बटा
 (या बटे) तीन का अर्थ होगा—पुरी इकाई के तीन भागों में से
 दो भाग।
 बटाई—स्त्री० [हि० बटना] बटने या ऐंठन डालने की क्रिया, भाव
 या पारिस्थितिक।
 †स्त्री०—बँटाई।
 बटाक—पु० [हि० बाट—रास्ता+आक (प्रत्य०)] १ बाट अर्थात्
 राह पर चलना हुआ व्यक्ति। राही। २. अनजान। अपरिचित
 या राह-बल्ला नया आया हुआ व्यक्ति।
 मुहा०—बटाक होना—चलता होना। चल देना।
 पु० [हि० बाटना] १ बँटवाने या विभाग करानेवाला। २. अपना
 अथ वा प्रायः बँटवा या अल्प करार करनेवाला।

बटाक—वि० [हि० बटा ?] १ बड़ा। २ अँचा। ३ विवाह।
बटाटा—पु० [अ० पोटेटो] आरू (कद)।
बटाना—स० [हि० बटना का प्र०] बटने या बाटने का काम किसी और से कराना।
 † अ० पटाना (बन्द होना)।
बटालियन—पु० [अ०] पैदल सेना का एक बड़ा विभाग।
बटाली—स्त्री० [लस०] बड़ियों का एक औजार। खसानी। (लस०)
बटिका—स्त्री०—बटिका।
बटिया—स्त्री० [हि० बटा-गोला] १ गोली। बटी। २ सिल पर पीमने का छोटा बट्टा। लोथिया।
 † स्त्री०—बँटाई (मन की उपज की)।
बटी—स्त्री० [ग० बटी] १ किमी बीज की वनाई हुई छोटी गोली। बटी। २ पीठी की बडी या बरी।
 स्त्री०—बाटिका।
बट्टा—पु०—बट्ट (ब्रह्मचारी)।
बट्टा—पु० [म० बटा या हि० बटना] [स्त्री० अल्पा० बट्टई] १ कपड़े, चमड़े आदि का याने तथा ढकानदार एक उठोआ छोटा आधान जिसमें मग्ये पैसे, आदि रखे जाते हैं।
बट्टई—स्त्री० बटलोई।
बट्टक—पु० बट्टक (ब्रह्मचारी)।
 पु० [?] लय।
बट्टना—अ० [हि० बटोरना का अ०] १ इनकट्टा या एकत्र होना। २ सिमटना। ४ बटाग जाना।
 संयो० कि०—आना।
बट्टरी—स्त्री० [दिश०] खेमांगी या मोठ नाम का कदम।
 स्त्री०—बटलोई।
बट्टला—पु० [स्त्री० अल्पा० बट्टली]=बटला।
बट्ट्या—पु०—बट्टा।
 † पु०—बटला।
बट्टे—पु०—बटा (गणित का)।
बट्टेर—स्त्री० [स० बत्तर] नीतर की तरह की एक छोटी चिड़िया जो अधिक उड़ नहीं सकती। इनका माम खाया जाता है। कुछ शीकीन लग बट्टेरी को आपम में लगते भी हैं।
बट्टेरवाज—पु० [हि० बट्टेर + का० वाज] [भाष० बट्टेरवाजी] बट्टेर पकड़ने, पालने या लगानेवाला न्यमित।
बट्टेरवाजी—स्त्री० [हि० बट्टेर + का० वाजी] बट्टेर पकड़ने, पालने या लगाने का काम या शीक।
बट्टेरा—पु० [हि० बटा] कटोरा।
 † पु०—नर बट्टेर।
बट्टेरी—स्त्री० [हि० बट्टेना] हिन्दुआ में विवाह के समय की एक रस्म जिसमें कन्या-पक्षवाले वर-पक्षवालों की आमृषण, धन, वस्त्र, आदि देते हैं।
बट्टेरी—पु०—बट्टेरी।
 स्त्री०—बटलोई।
बट्टोर—पु० [हि० बटोरना] १. बटोरने की क्रिया या भाव। २ किंसी

विशिष्ट उद्देश्य से बहुत से आदिमियों को इकट्ठा करना। जैसे—बिरावरी के लोगों की अवस्था पंचायत की बटोरी। ३ चीजें बटोर कर उनका लगाया हुआ डेर। ४. कूड़े-करकट का डेर। (कहार)

बटोरना—स्त्री० [हि० बटोरना] १ बटोरने की क्रिया या भाव। २ वह जो कुछ बटोर कर रखा गया हुआ हो। ३ कमरे, घर, आदि के झाड़ू-बुहारे जाने पर निकलनेवाला कूड़ा जो प्राय एक स्थान पर इकट्ठा कर लिया जाता है। ४ खेत में पड़े हुए अन्न के दाने जो बटोर कर इकट्ठे किये जायें।
बटोरना—स० [हि० बटोरना] १. छितरी या बिखरी हुई वस्तुओं को उठा या बिसकाकर एक जगह करना। जैसे—(क) गिरे हुए पैसे बटोरना। (ख) कूड़ा बटोरना।
 कि० प्र०—देना।
 २ इकट्ठा करना, जोड़ना या जमा करना। जैसे—धन बटोरना। ३. फैलाई या फैली हुई चीज समेटना। जैसे—बादर या पैर बटोरना। ४. चुनना।
बटोही—पु० [हि० बाट] बाट अर्थात् रास्ते पर चलनेवाला या चलना हुआ यात्री। राही। पथिक। मुसाफिर।
बट्ट—पु० [हि० बटा] १ बटा। गोला। २ कन्दुक। गेंद। ३. बटलरा। बट।
 पु० [हि० बटना] १ कोई चीज बटने से पटा हुआ बल। बट। २ थिकन। सिलबट।
 † पु०—बाट (रास्ता)।
बट्टन—पु० [हि० बटना] बाटले से भी पतला एवं प्रकार का तार।
बट्टा—पु० [स० बटक, हि० बटा—गोला] [स्त्री० अल्पा० बट्टी, बट्टिया] १ पत्थर का वह गोल टुकड़ा जो मिल पर कोई चीज कूटने या पीसने के काम में आता है। कूटने या पीसने का पत्थर। लोहा। २ पत्थर आदि का कोई गोल-मटोल टुकड़ा। डेला। ३ छोटा गोल डिकवा। जैसे—गहने या पान के चीजे रखने का बट्टा। ४ छोटा गोलाकार दंपण। ५. वह कटोरा या प्याला जिसे औषधि रखकर बाजोगर उसमें किसी वस्तु का आना या निकल जाना दिखलाते हैं।
बट्टेवाज—(बैठे)
 ६ एक प्रकार की उबाली हुई सुगारी।
 पु० [स० बत्ति, प्रा० बाट्ट—बनिये का धवनाय] १ किसी चीज के पूरे दाम में होनेवाली वह कमी जो उस चीज में कोई खोद, मुट्टि, दोष या मिलावट होने के कारण की जाती है।
बट्टे—कूट्टे से—मुट्टि, दाप मिलावट आदि के कारण किसी चीज की अकित, नियत या प्रसन्न दर की अपेक्षा कुछ कम मूल्य पर। जैसे—जिस गहने में टाँके अधिक होते हैं, वह पूरे दाम पर नहीं, बल्कि बट्टे से बिकता है।
 कि० प्र०—काटना।—देना।—लगाना।
 २. सिक्के आदि तुड़ाने या बदलवाने में होनेवाली मूल्य की कमी। माँज। जैसे—सौ रुपए का नोट मुमाने में दो आना बट्टा लगना है।
 कि० प्र०—लगाना।
बट्टे—आक-बट्टा। (देखें)

३. उक्त दृष्टि या बिचार से होनेवाला धाटा या टोटा। जैसे—
बहु बान अन्धर से कटा हुआ निकला था, इसलिए हूकानवार को एक
रुपया बट्टा सहना पड़ा।

क्रि० प्र०—सहना।
पद—बहु-शास्त्रा। (देखें)

४. दस्तूरी, दलानी आदि के रूप में दिया जानेवाला धन। ५
किसी चीज या बात में होनेवाला ऐब, कलक या दोष। दाग। जैसे—
तुम्हारा यह आचरण तुम्हारी प्रतिष्ठा में बट्टा लगानेवाला है।
क्रि० प्र०—लगना।—लगाना।

बहु-शास्त्रा—पु० [हि० बहु+शास्त्रा] महाजनो के यहाँ वह बही या लेखा
जिसमें डूबी हुई अथवा न बसूल हुई सफनेवाली रकमे लिखी जाती हैं।
मुहारा—बहु शास्त्रे लिखना मत प्राप्त हं। सफनेवाली रकम डूबी हुई
रकमों के खाते में चढ़ाना।

बहुवाल—वि० [हि० बहु] इतना चीरस और चिकना कि उस
पर कोई गोला लुङफामा जाय तो लुङकता जाय। खूब समतल और
चिकना।
पु० उक्त प्रकार का चिकना और चीरस समतल स्थान।

बहुबाज—वि०, पु०—बहुबाज।

बहुी—स्त्री० [हि० बहु] १ परवर आदि का छोटा टुकड़ा। २
गिल पर चीजे पीनमे का छोटा बट्टा। ३. किसी चीज का प्राय गोला-
कार सड़। टिकिया। जैसे—सातुन की बट्टी।

बहु—पु० [देश०] १ धारीदार चारखाना। २ दक्षिण भारत में
होनेवाला एक प्रकार का ताड़। बजरबट्टू। ताली। ३ बीडा या
मोबिया नाम की फली। ४ लोहे का वह गोला जिसे मत्त लोग उछालते,
गायब करने और फिर निकालकर दिखलाते हैं। बट्टा। उदा०—जिहि
बिधि मत्त के बट्टू—नागरी दास।

बहु-शास्त्रे—वि० [हि०] (रकम) जो डूब गई हो या बसूल न हो सकती
हो।

क्रि० प्र०—डालना।—लिखना।

बहुबाज—पु० [हि० बहु] फा० बाज] १ नजर-बद का खेल करनेवाला
आचर। २ बहुत बड़ा खालक या पुर्त।
वि० दुश्चरित्रा (स्त्री)। पुश्कली।

बहिया—स्त्री० [देश०] पाषे हुए सूले कठो का डेर। उपलो का डेर।
बहुवा—पु० [हि० बहु] अग+आ (प्रत्य०) [स्त्री० अल्पा० बहुगी]
दीवारों पर लबाई के बल बीचो-बीच रखा जानेवाला बल्ला जिस पर
छाजन टिकी होती है।

बहुंगी—पु० [हि० बहु] अग] चौड़ा। (वि०)

बहुंगू—पु० [देश०] दक्षिण भारत में होनेवाला एक प्रकार का जंगली
पेड़।

बहु—स्त्री० [अनु० बहु बहु] १. बहुबहाने या मूँह से बहु बहु शब्द उत्पन्न
करने की क्रिया या भाव। ३. निरर्थक या व्यर्थ की बातें। प्रलाप।
जैसे—पागलों की बहु। ३. डींग। शैली।
क्रि० प्र०—मारना।—हकना।

पु० [स० वट] बहु का पेड़। वट पुत्र।

वि० १ हि० 'बहा' का बहु सक्षिप्त रूप जो उसे समस्त पदों के आरम्भ

में लगने पर प्रात होता है। जैसे—बहु-बोला, बहु-भागी। २ उदा०—
पुनि दातार ददज बहु कीन्हा।—जायमी।

बहुका—वि० [हि० बहु] [स्त्री० बहुनी] बोल-चाल में (बहु) जो सबसे
बड़ा हो। जैसे—बहके भैया, बहुकी दीदी। (पूरब)

बहु कुंभिया—स्त्री० [हि० बहु+कुंभ] कच्चा कुंभ।

बहु-गोला—पु० [हि० बहु+गोला] बरगद का फल।

बहु-गुल्ला—पु० [हि० बहु+गुल्ला] एक प्रकार का बगला।

बहु-वैत—वि० [हि० बहु+वैत] [स्त्री० बहुवैती] बहु-बडे दातों
वाला।

बहु-दुम—पु० [हि० बहु] फा० दुम] वह हाथी जिसकी पूँछ पाँच तक
लम्बी हो। लंबी दुम का हाथी।
वि० [स्त्री० बहु-दुमी] बड़ी दुम या पँछवाला।

बहुप्यन—पु० [हि० बहु] फा० पन (प्रत्य०)] बहु अर्थात् श्रेष्ठ होने की
अवस्था, गुण या भाव। महत्त्व। श्रेष्ठता। बड़ाई। जैसे—तुम्हारा
बहुप्यन हमी में है कि तुम कुछ मन बोली।

बहु-फर—पु० [हि० बहु] फलक] डाल। (हि०) उदा०—बहु-फरि
ऊछतै विरथि।—प्रिधीराज।

बहु-फली—स्त्री० [हि० बहु] फली] वह मटिया (हाथ में पहनने का
गहना) जो साधारण में अधिक चौड़ी होती है।

बहु-बट्टा—पु० [हि० बहु] बट्टा] बरगद का फल।

बहुबहु—स्त्री० [अनु०] १ मूँह से निकलनेवाले ऐसे शब्द जो न तो स्पष्ट
रूप में दूसरों की सुनाई पड़े और न जिनका अल्दी कोई मगत अर्थ निकल
सकता हो। बहुबहाने की क्रिया या भाव। २ व्यर्थ की बातचीत।
प्रलाप। बहुवाद।

क्रि० प्र०—करना।—लगाना।

३ क्रोध में आकर अपने मन की मझाम निकालने के बिचार से बहुत
धीरे-धीरे मूँह में उच्चरित होने वाले शब्द।

बहुबहाना—अ० [अनु० बहुबहु] १ धीरे-धीरे तथा अस्पष्ट रूप से
इस प्रकार बोलना कि 'बहु बहु' के दिया और कुछ सुनाई न दे। २
क्रोध में आकर आप ही आप कुछ कहते रहना। कुड़बुड़ाना। ३ बहु-
बहक करना। बहुवाद करना।

बहुबहिया—वि० [अनु० बहुबहु] इया (प्रत्य०)] १ बहुबहु अर्थात्
बहुवाद करनेवाला। २ कोई बात अपने मन में न रख सफने
के कारण दूसरों से कह देनेवाला।

बहु-बोल—पु० [हि० बहु+बोल] [स्त्री० बहु-बोली] अपने कर्तुव,
योग्यता, शक्ति आदि का अव्यक्तिपूर्ण कथन। डींग या दोस्ती की बात।
वि०—बहु-बोला।

बहु-बोला—वि० [हि० बहु+बोल] [स्त्री० बहु-बोली] बड़ी बड़ी बातें
बघारने या डींग हँकनेवाला। बहु-बहुकर लंबी-चौड़ी बातें करने-
वाला।

बहु-भाष—वि०—बहुभागी।

बहु-भागी—वि० [हि० बहु+भागी (स० भागिन्)] [स्त्री० बहु-भागी]
बहु अर्थात् उत्तम भाग्यवाला। सोभाग्यवाली। उदा०—ऊनो आज
भई बहु-भागी।—सूर।

बहु-भागी—वि०—बहुभागी।

बह-भुजा—प०—मह-भुजा।

बड़ारा—वि० [स्त्री० बड़ी]—बड़का।

बड़ारना—अ०—बेरना।

बड़वा—स्त्री० [न० बरल+वि+क,+टाप, ल—ड] ? षोडी। २. सूर्य की पत्नी की सभा जिसमें षोडी का रूप धारण कर लिया था। ३. अश्विनी नक्षत्र। ४. वायु देव की एक परिचारिका। ५. एक प्राचीन नदी। ६. दासी। संख्या। ७. ब्रह्मचान।

१५० [हि० बड़ा] भाद्रो मास के अंत में होनेवाला एक प्रकार का धान।

बड़वागिन—स्त्री०—बड़वानल (समद्र की अग्नि)।

बड़वानल—पु० [स० बड़वा+अनल, प० त०] समुद्र के अन्दर चट्टानों में रहनेवाली आग जो सबसे अधिक प्रबल तथा भीषण मानी गई है।

बड़वामुख—पु० [स० बड़वा मुख, प० त०, अन्] ? बड़वागिन। २. शिव का मुख।

बड़वारी—वि० [भाब० बड़वारी] बड़ा।

बड़वारी—स्त्री० [हि० बड़वारी] ? बड़पन। २. बड़ाई। महत्त्व। ३. प्रसभा।

बड़वाल—स्त्री० [देश०] हिमालय की तराई में होनेवाली भेड़ों की एक जाति।

बड़वा-सुत—पु० [स० प० त०] अश्विनीकुमार।

बड़वाहल—पु० [स० वृ० त०] स्मृतियों के अनुसार बह्व्यक्ति जिते किसी दाम्नी में विवाह करने के कारण दामल्य प्रथम करना पडा है।

बड़-हंस—पु० [हि० बड़+स० हंस] एक राग जो मेघ राग का पुत्र माना जाता है। कुछ लोग इसे सकर राग भी कहते हैं।

बड़-हंस-सारंग—पु० [हि० बड़हंस+सारंग] सम्पूर्ण जाति का एक राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

बड़-हंसिका—स्त्री० [हि० बड़+स० हंसिका] एक रागिनी जा हनुमत् के मत से मेघराग की स्त्री कही गई है।

बड़हना—पु० [हि० बड़ा+धान] ? एक तरह का धान। २. उन्नत धान का चावल।

१।—बड़ा।

बड़हना—स्त्री० [पु० ?] वह स्थान जहाँ पर जलाने के लिए सूखे कड़े इकट्ठे करने रखे जाते हैं।

पु०—बड़हल।

बड़हल—पु० [हि० बड़ा+फल] ? एक प्रकार का बड़ा पेड़ जो पश्चिमी घाट, पूर्व बंगाल और कुमाऊं की तराई आदि में बहुत होता है। २. उन्नत पेड़ का फल जो अचार बनाने अथवा यो ही खाने के काम आता है।

बड़हार—प० [हि० वर+आहार] विवाह हो जाने के उपरान्त कन्या-पक्षवालों द्वारा वर और बरातियों को ही जानेवाली ज्योनार।

बड़ा—वि० [स० बड़न, प्रा० बड़हन, हि० बड़ना या स० बू] [स्त्री० बड़ी] ? जो अपने आकार, धारिता, मान, विस्तार आदि के विचार से औरा से बड़-बड़कर हो। प्रथम या साधारण से अधिक बोल-बोले वाला। जैसे—(क) बड़ा पेड़, बड़ा मकान, बड़ा सड़क। (ख) बड़ा दिन।

पद—बड़ा आवधी, बड़ा घर, बड़ा-भूषा। (दे० स्वतंत्र शब्द)

मुहा०—बड़ी बड़ी बातें करना—अपनी अथवा किसी की योग्यता, शक्ति आदि के सबंध में बहुत-कुछ जतुचितसूचक या बड़ा-बड़ाकर बातें करना।

२ जो गरिमा, गुण, मर्यादा, महत्त्व आदि के विचार से औरा से बहुत आगे बड़ा हुआ। जैसे—(क) बड़ा दिल। (ख) बड़ा साहस। (ग) बड़ा कारीगर। ३ जो अधिकार, अवस्था, पद, मर्यादा, शक्ति आदि के विचार से बड़ा हुआ या बड़-बड़कर हो। जैसे—(क) बड़ा अधिकारी। (ख) बड़े-बड़े (या बड़े लोग) जो कहे, वह मान लेना चाहिये। ४ जो कियौर विशेषतः युवावस्था को प्राप्त हो। युवा हो। जैसे—लड़की बड़ी हो गई है अब इसका विवाह कर देना चाहिये। ५ तुलनात्मक दृष्टि से जिसकी अवस्था या वय अपने वर्ग के औरा से अधिक हो। उपादा उमरवाला। जैसे—बड़ा भाई, बड़े मामा। ६ जो माना, मान, सत्स्था आदि के विचार से औरा से बड़-बड़कर हो। जैसे—(ख) उन्हें इस वर्ष सबसे बड़ा इनाम मिला है। (ख) खाने में एक बड़ी रकम खूट गई है। ७ जो बहुत अधिक स्थान घेरता हो। अधिक जगह घेरनेवाला। जैसे—बड़ा कारखाना, बड़ी टूकान। ८ जो देखने में तो बहुत बड़-बड़कर, महत्त्वपूर्ण या प्रभावशाली हो (फिर भी जिनमें कुछ तत्त्व या सार न हो)। जैसे—बड़ा बोल बोलना, बड़ी बड़ी बातें बघारना। ९ कुछ अवस्थाओं में किसी अनिष्ट, अग्रिय या अनुभ किना के ग्लान पर अथवा ऐसी ही किसी सभा के साथ प्रयुक्त होनेवाला विशेषण। जैसे—(क) दीया बड़ा करना (अर्थात् बुझाना), बड़ा जानवर (अर्थात् गोदड़ या साँप)।

क्रि० वि० बहुत अधिक। उद०—बड़ी लबी है जमी, मिलने लाय हमी—) कोई सायद।

पु० [स० बटक, हि० वटा] [स्त्री० अल्पा० बड़ी] ? एक प्रकार का पकवान जो मसाला मिली हुई उर्द की पीठी की गांठ चक्राकार टिकियों के रूप में होता और पी या तेल में तलकर बनाया जाता है। २ उत्तरी भारत में होनेवाली एक प्रकार की बरसाना धान।

बड़ा आवधी—पु० [हि०] ? ऐसा आवधी जिसके पास श्रेष्ठ धन-सम्पत्ति हो। अभीर। धनवान। २ ऐसा आवधी जो गुण, पद, मर्यादा आदि के विचार से औरा से बहुत बड़कर हो।

बड़ाई—स्त्री० [हि० बड़ा+ई (पद०)] ? बड़े होने की अवस्था या भाव। बड़ापन। २ किसी काम या बात में औरा की अपेक्षा बड़-बड़कर होनेवाला कोई विशेष गुण या श्रेष्ठता। ३ उक्त के आधार पर किसी की होनेवाली प्रतिष्ठा या मान-मर्यादा। महिमा। ४ किसी में होनेवाले विशिष्ट गुण के सबंध में कही जानेवाली प्रशंसात्मक उक्ति। ५ प्रशंसा। तारीफ।

मुहा०—(किसी की) बड़ाई देना—किसी के गुण, योग्यता आदि का आदर करते हुए उसका आदर या प्रशंसा करना। (अपनी) बड़ाई सारना—अपने मूँह से आप अपनी योग्यता का बयान या प्रशंसा करना।

बड़ा कुँवार—पु० [हि० बड़ा+कुँवार] केवड़े की तरह का एक पद जिसके पते किसी की तरह लम्बे होते हैं।

बड़ा घर—पु० [हि०] ? कुलीन प्रतिष्ठित और सम्पन्न कुल। ऊँचा और कुलीन घराना। २ लाक्षणिक अर्थ में, कारागार या जेलखाना।

मुहा०—बड़े घर की हवा खाना—फैद भुगतना।

बड़ा दिन—पुं० [हि० बड़ा + दिन] २५ दिसम्बर का दिन जो ईसाइयों का प्रसिद्ध त्यौहार है।

विशेष—प्रायः इसी दिन या इसके कुछ आगे-पीछे दिन-मान का बटना आरम्भ होता है, इसी से इसे बड़ा दिन कहते हैं।

बड़ा नहान—पुं० [हि०] वह स्नान जो प्रसूता को प्रसव के पालीखतों दिन करना जाता है।

बड़ापीरो—वि०=बडा।

बड़ा पीलू—पुं० [हि० बड़ा + पीलू] एक प्रकार के रेशम का कौडा।

बड़ा बानू—पुं० [हि०] किसी कार्यालय का प्रधान लिपिक जिसके अधीन कई लिपिक काम करते हों।

बड़ा-भूढ़ा—पुं० [हि०] ऐसा व्यक्ति जो अवस्था या बय के विचार से भी और गुण, योग्यता आदि के विचार से भी ओरों से बड़-चकर या थेंप हो। नुजुर्ग।

बड़ि (सि)रा—पुं० [स० बलिन/शो (तीक्ष्ण करना) + क, ल—ड] १. मछली फँसाने की कौटिया। बाँसी। ३. शल्य-चिकित्सा में काम आनेवाला एक यन्त्र।

बड़ी—स्त्री० [हि० बड़ा] १ आलू, दाल, सब्जें कुट्टे आदि की पीसकर तथा उसमें नमक, मिरच, मसाला आदि डालकर उसका सुखाया हुआ कोई छोटा टुकड़ा या दाल, नरकारी आदि में डाला जाता है। कुम्ह-होरी। २ मास की बोटोरी। (हि०)।

बड़ी इलायची—स्त्री० [हि०] १ एक तरह का इलायची का पेड़ जिसका फल कुछ बड़ा और काले रंग का होता है। २ उबत का फल जिसके दाने या बीज मसाले के रूप में प्रयुक्त होते हैं।

बड़ी गौरी—स्त्री० [?] चौपायों की एक बीमारी।

बड़ी बात—स्त्री० [हि०] कोई महत्त्वपूर्ण किंतु कठिन काम। जैसे—उन्हें रास्ते पर लागाना कौन बड़ी बात है।

बड़ी भासा—स्त्री० [हि० बड़ी + भासा] शीतला। चेषक। (गोंबस)

बड़ी मेल—स्त्री० [देस०] एक प्रकार की चिड़िया जो बिलकुल लाली रंग की होती है।

बड़ी राई—स्त्री० [हि० बड़ी + राई] एक प्रकार की सरसों जो लाल रंग की होती है। लाही।

बड़जा—पुं०-वि०।

बड़रा—वि० [हि० बड़ा + रा (मत्य०)] [स्त्री० बड़ेरी] १ बड़ा। २ प्रधान। मुख्य।

पुं० [स० बड़ीभि, प्रा० बड़ीहि + रा] [स्त्री० अल्पा० बड़ेरी] कुएँ पर दो खम्भों के ऊपर ठहराई हुई वह लकड़ी जिसमें घिरनी लगी रहती है। पुं० १. = बड़ेर। २. = बवडर।

बड़े लाड—पुं० [हि० बड़ा + ज० लाडें] अग्रेजी शासन-काल में भारत का सर्व-प्रमुख प्रधान शासक। गवर्नर-जनरल।

बड़ौला—पुं० [हि० बड़ा] जगजी सुखर।

बड़ौला—पुं० [हि० बड़ा + ऊल] एक प्रकार का गन्ना जो बहुत लंबा और लस होता है।

बड़ौला—पुं० [हि० बड़ापन] १ बड़ाई। महिना। २ प्रशना। तारीफ।

बड़ू—वि०=बडा।

बड़वान—अ०=बड़वशान।

बड़ती—स्त्री०=बड़ती।

बड़—वि० [हि० बड़ना] १. बड़ा हुआ। २ अधिक। ज्यादा। ३ मूर्ख। ४ हि० बड़ना (फि०) का विशेषण की तरह प्रयुक्त होने वाला सशिक्ष स्वर।

स्त्री० १. =बड़ती। २. बाड़।

बड़ई—पुं० [स० बर्दक; प्रा० वडुड] १. लकड़ी को छील तथा गड़कर उसके उपयोगी उपकरण बनानेवाला कारीगर। २. उबत कारीगरों की जाति या वर्ग। ३. रहस्य संप्रदाय में, गुरु जो शिष्य रूपी कुन्दे को गड़-छीलकर मुन्दर मूर्ति का रूप देता है।

बड़ई मधु-मन्त्री—स्त्री० [हि०] एक प्रकार की मधु-मन्त्री जिसका रंग काला और पल नीले होते हैं। यह मधुओं के काठ तक काट डालती है।

बड़ती—स्त्री० [हि० बड़ना + ती (मत्य०)] १ बड़ने अथवा बड़े हुए होने की अवस्था या भाव। २. गिनती, तील, नाप, मान आदि में उभिन या निहत से अधिक या बड़ा हुआ अंश। ३ धन-धान्य, परिवार आदि की वृद्धि।

पड़—बड़ती का पहरा=उन्नति और समृद्धि के दिन।

४ आश्चर्यका, उन्मत्तता, व्यय आदि की प्रतीति हो चुकने पर भी कुछ बच रहने की अथवा या भाव। बचत (सरफ्लस) ५ मूल्य की वृद्धि।

पड़—बड़ती से=अज्ञ-पण, राज-ऋण, विनिमय आदि की दर के सबब में अकिन या नियत मूल्य की अपेक्षा कुछ अधिक मूल्य पर।

बड़ती फसल—स्त्री० [हि० + अ०] वह फसल जो अमी खेत में बड़ रही हो, पर अमी पूरी तरह से तैयार न हुई हो। (शोधक कोंप)

बड़दार—स्त्री० [हि० बाड=धार?] पथर काटने की टोकी।

बड़न—स्त्री० [हि० बड़ना] बड़ने तथा बड़े हुए होने की अवस्था या भाव। बड़ती। वृद्धि।

बड़ना—अ० [स० बर्दन, प्रा० बडन] १. आकार, क्षेत्र, विस्तार व्याप्ति, सीमा आदि में अधिकता या वृद्धि होना। जितना या जैसा बड़ने रहा हो, उससे अधिक होना। जैसे—(क) पेड़-पौधों या बच्चों का बड़ना। (ख) कमचारियों की छुट्टियाँ बड़ना। (ग) दाढ़ी या नाखूनों का बड़ना। २ परिमाण, मात्रा, संख्या आदि में अधिकता या वृद्धि होना। जैसे—(क) घर का लरब बड़ना। (ख) देश की जन-संख्या बड़ना। (ग) नदी में जल बड़ना। ३ कार्य-क्षेत्र, गुण आदि का विस्तार होना। व्याप्ति में अधिकता या वृद्धि होना। जैसे—(क) झगडा-तकरार या बैर-विरोध बड़ना। (ख) प्रभाव-क्षेत्र या व्यापार बड़ना। ४ नीयता, प्रवृत्ता, बेग, शक्ति आदि में अधिकता या वृद्धि होना। जैसे—(क) किसी चलनेवाली चीज की चाल बड़ना। (ख) रोग या विकार बड़ना। ५ किसी प्रकार की उन्नति या तरक्की होना। जैसे—बड़ तो हमारे देखते देखते इतना बड़ा है। ६ आगे की ओर चलना या अग्रसर होना। जैसे—(क) आज-कल औद्योगिक क्षेत्र में अनेक पिछड़े हुए देश आगे बढ़ने लगे हैं। (ख) आकाश में गुड्डों या पतंग बड़ना। (ग) नुस्खे तो पैर ही नहीं बढ़ते।

मूहा०—बड़ चलना= (क) उन्नति करना। (ख) अपना योग्यता, सामर्थ्य आदि से अतिरिक्त आश्चर्य या व्यवहार करना। (ग) अभिमान या ऐंठ दिखाना। इतराना।

७. प्रतिभांगति, होड़ आदि में किसी से आगे होना। जैसे—अब वह

कई बानों में तुमसे बहुत आगे बढ़ गया है। ८ रोजगार या व्यापार में लाभ के रूप में धन प्राप्त होना। जैसे—चलो, इस सोई में हज़ार रुपए तो बढ़े, अर्थात् हज़ार रुपए की आय या लाभ हुआ। ९ कुछ विशिष्ट प्रयोगों में, मंगल-भाषित के रूप में, कुछ समय के लिए किसी काम, चीज या बात का अन्त या समाप्ति होना। जैसे—(क) किसी स्त्री के हाथ का चूड़ियाँ बढना, अर्थात् उतारी या तोड़ी जान। (ख) वीया बढना, अर्थात् बुझाया जाना, दूकान बढना अर्थात् कुछ समय के लिए बन्द होना।

*स० बढाना। विस्तृत करना। उदा०—खनन सुगत करना सरिता माए बढ़ये वसन उमगी—सूर।

बढ़नी—स्त्री० [स० बढ़नी, प्रा० बढ़नी] १ झाड़। बूहारी। कृपा। माझेनी। २ बहु अनाज या धन जो किसानी को खेती-बारी आदि के काम पर पेसगी दिया जाता और बाद में कुछ बढ़ाकर लिया जाता है। स्त्री० [हि० बढना] पेसगी। अधिम।

बढ़वाना*—स० [हि० बढाना का प्रे०] किसी को कुछ बढ़ाने में प्रवृत्त करना।

बढ़वार—स्त्री०—बढ़नी।

बढ़ना—स० [हि० बढना का म०] १ किसी को बढ़ने में प्रवृत्त करना। ऐसा काम करना जिसमें कुछ या कोई बढ़े। २ कोई चीज या बात का विस्तार करते हुए उसे किसी दूर के बिन्दु, समय आदि तक ले जाना। विस्तार अधिक करना। जैसे—(क) उपन्यास या कहानी का कथामाग बढ़ाना। (ख) नौकरी की अवधि या समय बढ़ाना। (ग) धानु को पीटकर उसका तार या पत्तर बढ़ाना। ३ परिमाण, मात्रा, सम्बन्ध आदि में अधिकता या वृद्धि करना। जैसे—(क) किसी चीज की दर या माप बढ़ाना। (ख) किसी का वेतन (या सजा) बढ़ाना। (ग) अपनी आमदनी बढ़ाना। ४ किसी प्रकार की व्याप्ति में विस्तार करना। जैसे—द्रमडा या बात बढ़ाना। कार-बार या रोजगार बढ़ाना।

पढ़-बढ़ा-बढ़ाकर—(क) हलनी अधिकता करके कि अप्युपित के धरन कर जा पहुँचे। जैसे—बढ़ा-बढ़ाकर किसी की प्रशंसा या कोई बात कहना। (ख) उत्पन्नित या उत्साहित करके। बढ़ावा देकर। जैसे—किसी को बढ़ा-बढ़ाकर किसी के साथ लड़ा देना।

५ जेज आगे चल या जा रही हो, उसके क्षेत्र, गति आदि में अधिकता या वृद्धि करना। जैसे—(क) चलने में कदम या पैर बढ़ाना, अर्थात् जल्दा जल्दी पैर रखते हुए चलना। (ख) गुरुधी या पतंग बढ़ाना अर्थात् उसकी शौर या नन इस प्रकार कीनी करना कि वह दूर तक जा पहुँचे। ६ गुण, प्रभाव, शक्ति आदि में किसी प्रकार की तीव्रता या प्रबलता उत्पन्न करना। जैसे—(क) किसी का अधिकार (या मिजाज) बढ़ाना। (ख) अपनी जानकारी या परिचय बढ़ाना। ७ जो चीज जहाँ स्थित हो, उसे वहाँ से और आगे बढ़ने में प्रवृत्त करना। जैसे—जलूम या बरान बढ़ाना। ८ प्रत्ययोंमात्त आदि में किसी की तुलना में आगे ले जाना या श्रेष्ठ बनाना। जैसे—बूढ़-दीड़ में घोडा आगे बढ़ाना। ९ किसी को यथेष्ट उपन्न, सफल या समृद्ध करना। उदा०—सूरदास करमा-निधन प्रभु जुग जुग भगत बडा दो।—सूर। १० कुछ प्रमाणा में मंगल-भाषित के रूप में, कुछ समय के लिए किसी काम या चीज का अन्त या समाप्ति करना। जैसे—(क) चूड़ियाँ बढ़ाना।

उतारना या तोड़ना। (ख) वीया बढ़ाना—बुझाना। (ग) दूकान बढ़ाना—बन्द करना।

अ० खतम या समाप्त होना। बाकी न रह जाना। चुकाना। उदा०—मेघ सब जल बरसि बढ़ाने विधि गुन गये सिंगई—सूर।

बढ़ा-बढ़ी—स्त्री० [हि० बढना] १ आचरण, व्यवहार आदि में आवश्यकता या अधिचय से अधिक आगे बढ़ने की क्रिया या भाव। मर्यादा या सीमा का उल्लंघन। जैसे—इस तरह की बढ़ा-बढ़ी ठीक नहीं है। २. प्रतिद्वन्द्विता। होड़।

बढ़ार—पु० दे० 'बढ़ार'।

बढ़ाली—स्त्री० [देस०] कटारी। कटार।

बढ़ाव—पु० [हि० बढना+आव (प्रत्य०)] १. बढ़ने या बढ़े हुए होने की अवस्था या भाव। २ फीलाप। विस्तार। ३ मूल्य आदि की वृद्धि। बढ़ती। बाड़।

बढ़ावच—स्त्री० [हि० बढावना] गोबर की टिंभि या जो बन्धों की नजर झाड़ने में काम आती है।

बढ़ावना—स०—बढ़ाना।

बढ़ावा—पु० [हि० बढ़ाव] १ आगे बढ़कर कोई महत्त्वपूर्ण काम करने के लिए किसी को दिया जानेवाला प्रोत्साहन। २ प्रोत्साहित करने के लिए कही जानेवाली बात। क्रि० प्र०—देना।

बढ़िया—वि० [हि० बढना] (पदार्थ) जो गुण, रचना, भाव-गुण, सामग्री आदि की दृष्टि से उच्च कोटि का हो। उन्मा। जैसे—बढ़िया कपडा, बढ़िया चावल, बढ़िया पुस्तक, बढ़िया बात।

पु० १ गन्ने, अनाज आदि की फसल का एक रोग जिसमें कवच नहीं निकलते और बढ़ाव बन्द हो जाता है। २ प्राय डेढ सेर की एक पुरानी तोल। ३ एक प्रकार का कोन्डू।

स्त्री० १ एक प्रकार की दाल। २ जलाशयो आदि की बाड़।

बढ़ियार—वि० [हि० बढना] (जलाशय या नदी) जिसमें बाढ़ आई हो। जैसे—बढ़ियार गंगा।

स्त्री० नदियों आदि में जानेवाली पानी की बाड़।

बढ़ने—स्त्री० [देस०] हिमालय पर पाई जानेवाली एक प्रकार की भेड़।

बढ़ेला—पु० [स० बराह] बनेला सूअर। जगली सूअर।

बढ़ैया—वि० [हि० बढ़ाना, बढ़ना] १ बढ़ानेवाला। २ उपरति करनेवाला।

वि० [हि० बढना] बढ़नेवाला। उपरतिवाला।

†पु०—बढ़ई।

बढ़ोतरी—स्त्री० [हि० बाढ़+उत्तर] १ उत्तरोत्तर होनेवाली वृद्धि। बढ़नी। ३ उपरति। तरक्की। ३ व्यापार में होनेवाला लाभ।

बाणक—पु० [स० बाणिक] १ वह जो बाणिज्य अर्थात् रोजगार या व्यापार करता हो। रोजगारी। व्यवसायी। व्यापारी। २ कोई विशिष्ट चीज बेचनेवाला सोदागर। ३ गर्भित, ज्योतिष में छटा करण।

बाणक-पत्र—पु० [स० बाणिकपत्र] १ बाणिज्य। २ व्यापार की चीजों की आमदनी। प्लतनी। ३ व्यापारी। ४. दुकान। ५. तुला राशि।

बहिष्क-सार्थ—पु० [सं० बहिष्मसार्थ] रे० 'बहिष्क कटक'।
बहिष्कधनु—पु० [सं० बहिष्कधनु] नील का पीषा।
बहिष्कगह—पु० [सं० बहिष्कगह] ऊँट।
बहिष्कबीबी—स्त्री० [सं० बहिष्कबीबी] बाजार।
बहिष्कवृत्ति—स्त्री० [सं० बहिष्कवृत्ति] बहिष्क का पेसा। व्यापार।
बहिष्क—पु०—बहिष्क।
बत—स्त्री० [हिं० 'बात' का सझित रूप] हिंदी 'बात' का सझित रूप जो उसे समस्त पदों के आरम्भ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—
 बत-कही, बत-रस।
 स्त्री० [अ०] १ बतल की जाति की एक मौसिमी चिड़िया जो मटमैले रंग की होती है। २ बतल।
बतल—स्त्री० [हिं० बतल] १ बतल की गर्दन के आकार की एक प्रकार की मुराही जिसमें शराब रक्षी जाती थी। (राज०) २ बतल नाम की चिड़िया।
बत-कट—वि० [हिं० बात+कटाना] १ बात काटने अर्थात् उसकी यथायंता को चुनौती देनेवाला। २ किसी के बोलने के समय बीच में उसे बार-बार टाकनेवाला। उदा०—सत-कट खटिया, बत-कट जोग।—घाप।
बत-कहावाँ—पु०=बत-कही।
बत-कही—स्त्री० [हिं० बात+कहना] १ साधारणतः केवल मन बहलाने या समय बिताने के लिए की जानेवाली झूठ-उधर की बात-चीत। उदा०—कगत बत-कही अनुज सन, मन सिय-रूप लुभाना।—तुलसी। २ बात-चीत की तरह का बहुत ही तुच्छ या साधारण काम। उदा०—दसकधर भार्गव बत-कही।—तुलसी। ३ बाद-विवाद। कहा-मुनी। तकरार। ४ मूठ-मूठ या मन से गड़कर कही जानेवाली बात।
बतल—स्त्री० [अ० बत] इस की जाति की पानी की एक चिड़िया जिसका रस खरोंद, पत्रे सिन्धीदार और चोंच का अय माग बिषदा होता है, और जिसके अंडे मुरगी के अंडों से कुछ बड़े होते हैं।
बत-बल—वि० [हिं० बात+बलना] बकबादी। बकबी।
 स्त्री०=बात-बीत।
बत-छुट—वि० [हिं० बात+छूटना] बिना सोच-समझे अच्छी-बुरी सब तरह की बातें कह डालनेवाला।
बत-घर—वि० [हिं० बात+घर] धारण करनेवाला जो अपनी कही हुई बात या दिने हुए वचन का सदा पूरी तरह से पालन करता हो।
बत-बहाव—पु० [हिं० बात+बहाव] १ बात बड़ने अर्थात् झगडा बढ़ने होने की अवस्था या भाव। २ छोटी या तुच्छ बात को दिया जानेवाला विकट और विस्तृत रूप।
बत-बाती—स्त्री० [हिं० बात] १ बे-सिर्पर की बात। बकबाद। २ किसी से छेड़-छाड़ करने या धमिठना बढ़ाने के लिए की जानेवाली बात-बीत। उदा०—कछुद अमुंटे मिस बनाय दिग आय करत बत-बाती।—आनन्दधन।
बतर—वि०=बतर।
बत-रस—पु० [हिं० बात+रस] बातों से मिलनेवाला आनंद।

बत-रसिया—वि० [हिं० बात+रसिया] १ हर बात में रस लेनेवाला। २ जिसे बहुत बात-चीत करने का चस्का हो। बातों का शौकीन।
बतराना—स्त्री० [हिं० बतराना] बातचीत।
बतराना—अ० [हिं० बात+आना (प्रय०)] बातचीत करना।
 उदा०—हम जाने अब बात तिहारी सूचे नहि बतरानि।—सूर।
बतरानि—स्त्री०—बतरान (बात-बीत)।
बतराबनि—स्त्री० [हिं० बतराना] १ बात-बीत। बातोंलाप।
 उदा०—कलित किशोरी^१ फूल भरनि या मधुर-मधुर बतराबनि।
 —कलित किशोरी। २ बात-बीत करने का उग या प्रकार।
बतरौही—वि० [हिं० बात] [स्त्री० बतरौही] बहुत बातें करनेवाला।
बतलाना—सं०=बताना।
 अ०=बतराना (बात-चीत करना)।
बत-बन्हा—पु० [दिश०] एक तरह का नाव।
बताना—सं० [हिं० बान+ना (प्रय०), या म० वदत=कहना] १ कोई बात बहकर किसी को कोई जानकारी या परिचय कराना। जैसे—तुम्हारी नौकरी लगने की बात मुझे उसी ने बताई थी। २ कोई कठिन काम या बात इस प्रकार कर दिखलाना या समझाना कि उसने अनजानो का ज्ञान या योग्यता बढ़े। जैसे—(क) गुण ही ने अभी तुम्हें ब्याकरण का विषय नहीं बताया है। (ख) नौकर ने मालिक को खर्चे का हिसाब बताया। ३ किसी प्रकार का निर्देश या संकेत करना। जैसे—फिसी की ओर उंगली दिखाकर बताना। ४ नाच-गाने आदि के प्रयोग में ऐसी मुद्राएँ बताना जो गीत के भाव के अनुरूप या उनकी स्पष्ट परिचायक हों। जैसे—बहु माता (या नाचता) तो उतना अच्छा नहीं है, पर माव बहुत अच्छा बताता है।
मुहा०—**माव बताना**—किसी काम या बात के समय स्त्रियों के से हाव-माव प्रदर्शित करना।
 ५ किसी को धमकाने हुए यह आशय प्रकट करना कि हम तुम्हारा अभिमान बुर कर देगे या तुम्हारी बुद्धि ठिकाने कर देगे। जैसे—अच्छा किसी दिन तुम्हें भी बताऊँगा। ६ दिखलाना। जैसे—बावली की आग बताई, उसने के घर में लगाई। (कहा०)
पु० [सं० वतंक एक घातु] १. हाथ में पहनने का कड़ा। २ वह कटा-पुराना या साधारण कपडा जो पगड़ी बाँधने से पहले यों ही सिर पर इसलिये लपेट लिया जाता है कि बालों से पगड़ी गदी या मैली न होने पावे।
बतासा—पु०—बतासा।
बतास—स्त्री० [सं० बानास] १ बात के प्रकोप के कारण होनेवाला गठिया नामक रोग।
कि० प्र०—बतरना।—पकड़ना।
 २ घायु। हवा।
बतासना—अ० [हिं० बतास] हवा चलना या बहना। (पूरब)
बतासफेनी—स्त्री० [हिं० बतासा+फेनी] टिकिया के आकार की एक मिठाई।
बतासा—पु० [हिं० बतास+हवा] १. एक प्रकार की मिठाई जो

बीनी की भासनी टपकाकर बनाई जाती है और जो फूट की तरह फूली हुई और बहुत हलकी होती है। २ एक प्रकार की छोटी आतिशबाजी जो मिट्टी के कसोरे में मसाला रखकर बनाई जाती है। ३ पानी का बूलबूला।

बतारसी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की कालापान लिए हुए नैरे रंग की चिड़िया जिनकी आँख की पुतली गहरी-मूरी, बीच काली और पैर लल-छोह होते हैं।

बतारिया—स्त्री० [स० बतिका, प्रा० बतिका -बत्ती] सर्जनी के काम में आनेवाला कोई छोटा कच्चा ताजा हरा फल। जैसे—कटू या बैंगन की बतिया।

† स्त्री०—बात।

बातपाना—अ० [हि० बात] बातचीत करना।

बातियार—स्त्री० [हि० बात] बातचीत।

बतीसा—पु० [हि० बत्तिस] [स्त्री० अल्पा० बतीसी] १ बत्तिस बस्तुओं का समूह। २ बत्तिस देवाओं और मेवों के योग से बनाया हुआ लड्डू या हलवा जो प्रसूता को पुष्टि के लिए खिलाया जाता है। ३. दाँत से काटने का धावा या चिह्न।

बतीसी—स्त्री०—बत्तिसी।

बतू—पु०—कलाबतू।

बतीला—पु० [हि० बात+बोला (प्रत्य०)] १ घोषा देने के उद्देश्य में कही जानेवाली बात- २ झंसा।

मुहा०—बतले बताना—[क] बातें बताना। (क) मुलावा देना।

बतौर—अव्य० [अ०] १ (किसी की) तरह पर। रीति से। तरीके पर। २ के समूह। के समान।

बतौरी—स्त्री० [?] रसीली।

बतौल बुंती—स्त्री० [हि० बात] कान में बातचीत करने की मकल जो बदर करते हैं। (कलदर)

बत्त—स्त्री०—बात।

बत्तक—स्त्री०—बतक।

बत्तर—वि०—बदतर।

बत्तरी—स्त्री०—बात।

बत्ता—पु० [स० बत्तक] सरकटे के वे मुट्टे जो छाजन के छप्पर के अगले भाग में बांधे जाते हैं।

बतिस—वि०—बत्तिस।

बत्ती—स्त्री० [स० बत्ति, प्रा० बत्ति] १. प्रकाश में निमित्त जलाया जानेवाला सूत, रुई, कगड़े आदि का बटा हुआ लम्बोतरा लम्बा जो तेल आदि में भरे हुए दीप में रखा जाता है।

मुहा०—बत्ती बझाना—शासन में मोमबत्ती लगाना। बत्ती जलाना—अंधारा होने पर प्रकाश के लिए दीपक जलाना। (किसी चीज में) बत्ती लगाना—पूरी तरह से नष्ट-भ्रष्ट करना। जैसे—बहू लाखों रुपए की संपत्ति में बत्ती लगाकर कंगाल हो गया।

३ दीपक। चिराग। ४ रोशनी। प्रकाश।

मुहा०—बत्ती बिखाना—प्रकाश दिखाना।

५. लपेटा हुआ चीपडा जो किसी बस्तु में आग लगाने के लिए काम में लाया जाय। फलीता। पलीता। ६. बत्ती के आकार-प्रकार की कोई

गोलाकार लंबी चीज। जैसे—धाव में भरने की बत्ती, लाह की बत्ती। ७. छाजन में लगाने का फूस आदि का गुला। ८. कपड़े की वह लंबी घञ्जी जो धाव में मवाद साफ करने के लिए भरते हैं। ९. सींक आदि पर गंध-द्रव्य या ज्वलनशील पदार्थ लपेटकर बनाई जानेवाली बत्ती जो पूजन आदि के समय जलाई जाती है। जैसे—अगर-बत्ती, धूप-बत्ती, मोमबत्ती। १०. पगड़ी या चोरे का एटा या बटा हुआ कपडा। ११. कगड़े के किनारे का वह भाग जो सीने के लिए मरोड़कर बत्ती के रूप में लाया जाता है।

बत्तीस—वि० [स० द्विविधत, प्रा० बत्तीमा] गिनती या सख्या में जो तीस से दो अधिक हो।

पु० उक्त की सूचक सख्या जो इस प्रकार लिखी जाती (३२) है।

बत्तीसा—पु० बत्तीसी।

बत्तीसी—स्त्री० [हि० बत्तिस] १ एक ही तरह की बत्तिस चीजों का समूह। २. मनुष्य के मुँह के ३२ दाँतों का समूह।

मुहा०—बत्तीसी खिलाना—मुँह पर स्पष्ट रूप से हँसी दिखाई देना। (किसी की) बत्तीसी झाड़ना—इतना मारना की सब दाँत टूट जायें। **बत्तीसी दिखाना** निर्दंडतापूर्वक हँसना। **बत्तीसी बजना**—सर्दी के कारण दाँतों का काँपकर कटकक शब्द करना।

बत्तीस—वि०, पु०—बत्तिस।

बघना†—अ० [स० व्यया] पीडा या दर्द होना।

बघाना—पु० [स० बास+स्थान] १ पशुओं के बाँध जाने की जगह। पशु-शाला। २ सरोह। झुंड।

स्त्री० [हि० बघना] पीडा। दर्द।

बघिया—स्त्री० [?] सूखे मोबर का डेर।

बघुआ—पु० [स० वास्तुक, पा० बालुआ] १ मोटे, चिकने हरे रंग के पत्तोवाला एक पौधा जो १ से ४ हाथ तक ऊँचा होता है तथा गेहूँ, जौ आदि के खेतों में अधिक होता है। २. उक्त के पत्ते अथवा उनका भाग हुआ साग।

बघ्य—स्त्री० [स० बघ्यु] चीज।

बद—स्त्री० [स० बर्षन=गिलटी] १ आतक या गरमी की बीमारी के कारण या योही सूजी हुई जीभ पर की गिलटी। गोहिया। बाणी। २. चीपों का एक सक्काक रोग जिसमें उनके मुँह में लार बहती है और खुर तथा मुँह में दाने पड़ जाते हैं। वि० [फा०] [भाव० बदी] १. खराब। बुरा। २. दुराचारी। ३. दुष्ट। पाजी।

स्त्री० [हि० बदना] १ पलटा। बदला। एवज। जैसे—इसके बद में कुछ और दे दो। २. किसी का निश्चित पक्ष। जैसे—दो गठ रुई हमारी बद की भी खरीद लो, अर्थात् उसके घाटे-नफे के हम जिम्मेदार रहेंगे।

बद-अमली—स्त्री० [फा० बद+अ० अमल] राज्य या शासन का कुचक्र। शासनिक अव्यवस्था। अराजकता।

बतजायी—स्त्री० [फा०] कुचक्रं। अव्यवस्था।

बदईकार—वि० [फा०] [भाव० बदकारी] १. बुरा काम करने-वाला। कुकर्मी। २. दुराचारी।

बदकारी—स्त्री० [फा०] १. कुकर्मी। २. व्यभिचार।

बदकिसमत—वि० [फा० बद+अ० किसमत] बुरी कियमतवाला।
फूटे भाग्यवाला। अभाग्य।

बदखत—वि० [फा० बदखत] [भाव० बदखती] लिखने में जिसके
अक्षर सुन्दर और स्पष्ट न होते हों।

बदस्वाहा—वि० [फा० बदस्वाहा] [भाव० बदस्वाही] १. बुराई
पाहनेवाला। २. जो शुभचिन्तक न हों।

बद-गुमान—वि० [फा०] [भाव० बद-गुमानी] जिसके मन में किसी
के प्रति बुरी धारणा हो।

बद-गुमानी—स्त्री० [फा०] किसी के प्रति होनेवाली बुरी धारणा।

बद-गो—वि० [फा०] [भाव० बद-गोई] १. दूसरी की निन्दा या
बुराई करनेवाला। २. चुगलखोर। ३. गालियाँ बकनेवाला।

बद-गोई—स्त्री० [फा०] १. किसी के संबन्ध में बुरी बात कहना।
निन्दा या निन्दा करने की क्रिया या भाव। २. बदनामी। ३. चुगल-
खोरी। ४. गाली-गलोज।

बद-चलन—वि० [फा०] [भाव० बद-चलनी] १. बुरे रास्ते पर
चलनेवाला। २. दुष्चरित्र। ३. बेव्यवसायी।

बद-चलनी—स्त्री० [फा०] बद-चलन होने की अवस्था या भाव।

बद-जबान—वि० [फा० बद-जबान] [भाव० बद-जबानी] १. अनु-
चित, गदी या सूचित बातें करनेवाला। २. गाली-गलोज करनेवाला।

बदजात—वि० [फा० बद+अ० जात] [भाव० बदजानी] अधम।
नीच।

बद-तमीज—वि० [फा० बद+तमीज] [भाव० बदतमीजी] शिष्टा-
चार और सलीके का ध्यान न रखने हुए अनुचित आचरण या व्यवहार
करनेवाला (व्यक्ति)।

बद-तमीजी—स्त्री० [फा० बदतमीजी] १. बदतमीज होने की अवस्था
या भाव। २. शिष्टाचार और सलीके से रहित कोई अधोमनीय
आचरण या व्यवहार।

बदार—वि० [फा०] बुरे से बुरा। बहुत बुरा।

बददिमाग—वि० [फा०+अ०] [भाव० बददिमागी] १. जरा
सी बात पर बुरा मान जानेवाला (व्यक्ति)। २. अहिमानी। घमडी।

बद-दिमागी—स्त्री० [फा०+अ०] १. जरा सी बात पर बुरा मानने
की आदत। २. अहंकार।

बद-बुआ—स्त्री० [फा०+अ०] ऐसी अहित कामना जा शब्दों के द्वारा
प्रकट की जाय। शाय।
क्रि० प्र०—देना।

बदम—पु० [फा०] तन। देहा। शरीर।

मूहा—बदमदृष्टा—शरीर की हृदिबन्धों विशेषण जोड़ों में पीड़ा होना।
अंग अंग में पीड़ा होना। **बदम शोषना**—पीडा के कारण अंगों की तानना
और सूखना। **तन-बदम की सुख** न रहना—(फ) अचेत रहना।
बेहोश रहना। (ख) इतना ध्यानस्थ रहना कि आस-पास की बातों
का कुछ भी पता न चले।

†पु० [सं० बदम] मूज। बेहुर। जैसे—गज-बदन।

स्त्री० [हिं० बदना] कोई बात बन्दे की क्रिया या भाव। बदना।

उदा०—बदन बदी की रंग-महल की टूटी मेंईया में ल्याइ उतारयो।
(गीत)

बदन-तोल—स्त्री० [फा० बदन+हिं० तोल] मालखम की एक कसरत
जिसमें हृथी करते समय मालखम को एक हाथ से लपेटकर उठी के
सहारे सारा बदन उठारते या तीलते हैं।

बदन-निकाल—पु० [फा० बदन+हिं० निकालना] मालखम की एक कसरत
जिसमें मालखम के पास खड़े होकर दोनों हाथों की कंची बांधते हैं।

बद-नसीब—वि० [फा०+अ०] [भाव० बद-नसीबी] बुरे नसीबवाला।
अभाग्य।

बद-नसीबी—स्त्री० [फा०] दुर्भाग्य।

बदना—स० [सं०/वद्+कहना] १. कथन या वर्णन करना। कहना।
२. बात करना। बोलना। ३. दुइता या निरूप्यपूर्वक कोई बात
कहना।

पद—बदकर या कह-बदकर—(क) बहुत ही दुइता या निरूप्यपूर्वक
कहकर। जैसे—वह कह-बदकर कुत्ती जीतता है। (ख) दुइता-
पूर्वक आगे बढ़कर।

४. प्रमाण के रूप में मानना। ठीक समझना। सकारना। उदा०—
जोरूह-हाथो सु मैं न बदी, जब नेह-नदी में न दी पग-अंगुरी—नागरी-
दास। ५. आस में नियत, निश्चित या पक्का करना। ठहराना।

जैसे—दोनों पहलवानों की कुस्ती बची गई है। उदा०—(क) बदन
बदी थी रंग-महल की टूटी मेंईया में ल्याइ उतारयो। (ख) अवधि
बदि सीयाँ अजहूँ न आये—गीत। ६. किसी प्रकार की प्रतिद्वन्द्विता
या होइ के संबन्ध में बाजी या शर्त लगाना। जैसे—जुम तो बात बात
में शर्त बदन लगते हो। ७. बड़ा या महत्व का मानना। उदा०—
हिंदय में से जाइहूँ, मरद बदीगी सीहूँ। ८. किसी को किसी गिनती
या लेखे में समझना। ध्यान में लाना। मान्य समझना। जैसे—वह
तो तुम्हें कुछ भी नहीं बदन। उदा०—(क) सकति, सनेहु कर
सुनति करीये, मैं न बदउंगा माई—कबीर। (ख) बदतु हम कीं
नेकु नही, मरहि जो पछिताहूँ—मूर। १०. नियत या मुकरर
करना। जैसे—किसी को अपना गमाइ बदन।

अ० पहले से नियत, निश्चित या स्थिर होना। जैसे—ओ भाग्य में
बदा होगा, बही होगा।

बदनाम—वि० [फा०] [भाव० बदनामी] जिसका बुरा नाम फैला हो,
अर्थात् कुख्यात।

बदनामी—स्त्री० [फा०] वह यहित या निन्दनीय लोक-चर्चा जो कोई
अनुचित या बुरा काम करने पर समाज में विपरीत धारणा फैलने के
कारण होती है। अपकीर्ति। कुख्याति। लोक-निन्दा। (स्कंउल्ल)
क्रि० प्र०—फैलना।—फैलाना।

बदनी—वि० [फा०] १. शारीरिक। २. शरीर से उत्पन्न।
पु० [हिं० बदना] एक तरु का शर्तनामा जिसके अनुसार किसान
अपनी फसल बाजार भाव से कुछ तस्ते मूल्य पर महाजन को उससे
लिए हुए ऋण के बदले में देता है।

बद-नीयत—वि० [फा० बद+अ० नीयत] [भाव० बद-नीयती] १.
जिसकी नीयत बुरी हो। जो सदापाप न हो। बुरे भाववाला। २.
लोभी। लालची। ३. बेईमान।

बदनीयती—स्त्री० [फा०+अ०] १. नीयत बुरी होने की अवस्था
या भाव। २. लालच। ३. बेईमानी।

बदनुमा—का० [का० बद-नुमा-दिखानेवाला] [माव० बद-नुमाई] जो देखने में कुपुत्र, मूढ़ा या मोडा हो।

बद-परहेज—वि० [का० बद-परहेज] [माव० बद-परहेजी] व्यक्ति जो ऐसी चीजों का भोग करता हो जो उसके स्वस्थ के लिए हानिकर हो और जिनसे उसे बन्तु परहेज करना चाहिए।

बद-परहेजी—स्त्री० [का० बद-परहेजी] १ परहेज न करने की अवस्था या माव। बीमार का खाने-पीने में परहेज न करना। २ कुपुत्र का भोग।

बदफेल—वि० [का० बद+अ० फेल] [माव० बद-फेली] दुष्कर्म करनेवाला। दुष्कर्मी।

बदफेली—स्त्री० [का० बद+अ० फेली] १ दुष्कर्म। २ पर-स्त्री के साथ किया जानेवाला समोग।

बदबल—वि० [का० बदबल] [माव० बदबली] अभागा।

बदबली—स्त्री० [का० बदबली] अभागा।

बद-बला—स्त्री० [का० बुडेल] डाहल।

वि० १ बुडेल या डाहन की तरह पाला। २ दुष्ट। ३ उपद्रवी।

बद-बाछ—पुं० [का० बद+हि० बाछ] वेदमानी या अनुचित रूप से प्राप्त किया जानेवाला हिस्सा।

बदबु—स्त्री० [का०] बुरी गध या दुर्गन्ध।

कि० प्र०—अना।—उटना।—निरुद्धना।—कलना।

बदबुरा—वि० [का०] जिसमें मे बुरी बास निकल रही हो। दुर्गन्ध-युक्त।

बद-भजनी—स्त्री० [का० बदभजनी] 'बद-भजा' होने की अवस्था या माव।

बद-भजा—वि० [का० बदभजा] [माव० बद-भजनी] १ (बन्तु) जिसका मजा अर्थात् स्वाद बुरा हो। २ (स्थिति आदि) जिसके रंग में भग पड़ गया हो फलन जिसमें पुरा पूरा आनन्द न मिल सका हो।

बद-भस्त—वि० [का०] [माव० बदभस्ती] १ मदोन्मत्त। २ कामोन्मत्त।

बदभस्ती—स्त्री० [का०] १ बद-भन्न होने की अवस्था या माव। २ मत्ता।

बदभाषा—वि० [का० बद+अ० मभाषा जीविका] [माव० बदभाषी] १ जिसकी जीविका बुरे कामों से चलती हो। २ बुरे और निकृष्ट काम करनेवाला। दुर्वन। ३ कुपुत्रगामी। बदचलन। ४ गुडा और लुब्धा।

बदभाषी—स्त्री० [का० बद+अ० मभाषी] १ बदभाषा होने की अवस्था या माव। २ बदभाषा का कोई कार्य। ३ कोई ऐसा कार्य जो लडाई-अगडा कराने अथवा किसी के अहित के उद्देश्य में जानबूझकर किया जाय। ४ व्यभिचार।

बद-भिजाअ—वि० [का० बदभिजाअ] [माव० बद-भिजाजी] (व्यक्ति) जो चिह्नचिह्न स्वभाव का हो।

बद-भिजाजी—स्त्री० [का० बद+भिजाजी] बुरा स्वभाव। चिह्न-चिह्नापन।

बदरग—वि० [का०] १ बुरे रंगवाला। २ जिसका रंग उड़ गया हो या फीका पड़ गया हो। ३ विवर्ण। ४ खराब। खोटा। ५

(ताश के खेल में वह व्यक्ति) जिसके पाम किसी विशिष्ट रंग का पता न हो।

पुं० १ बदरगी। २ चौसर के खेल में, वह गोटी जो रंग न हुई हो; अर्थात् पूगनेवाले घर में न पहुँची हो।

बदरगी—स्त्री० [का०] १ रंग का फीकापन या महापान। २ ताश के खेल में किसी विशिष्ट रंग के पत्ते न होने की स्थिति।

बदर—पुं० [सं०/बद् (स्थिर होना)] अर्च् १. बेर का पेड़ या फल। २ कपास। ३. विनोला।

कि० वि० [का०] दरवाजे पर। जैसे—दर-बदर नील मँगना।
मुहा०—(किसी को) बदर करना घर से निकालकर दरवाजों के बाहर कर देना। जैसे—किसी को बाहर बदर करना अर्थात् इसलिए दरवाजे तक पहुँचा देना कि वह जहाँ चले जाय, परन्तु लौटकर न आवे। (किसी के नाम) बदर निकालना=किसी के जिम्मे रकम बाकी निकालना। किसी के हिमाव में उसके नाम बाकी बताना।

बदर-नबीसी—स्त्री० [का०] १. हिसाब-किताब की जोष। २. हिसाब-किताब में मे गड़बड़ रकमें छोटकर अलग करना।

बदरा—स्त्री० [सं० बदर+टाप] बगल भाति का पीषा।

पुं०=बादल (मेघ)।

बदराई—स्त्री०=बदरी (आकाश की मेघाच्छप्रता)।

बदरामलक—पुं० [सं० उपमि० सं०] पानी आमला।

बद-राह—वि० [का०] १ बुरे रास्ते पर चलनेवाला। कुमार्गी। २ दुष्ट। पाजी।

बदरि—पुं० [सं०/बद् (स्थिर होना)+अरि, बा०] १ बेर का पेड़। २ उक्त पेड़ का फल।

बदरिका—स्त्री० [सं० बदरी+कन्+टाप, लृत्] १. बेर का पेड़ और उसका फल। बदरि। २ गंगा का उद्गम-स्थान तथा उसके आस-पास का क्षेत्र।

बदरिकाथम—पुं० [सं० बदरिका-आथम, मध्य० सं०] उनर प्रदेश के गड़वाल जिले के अर्थात् एक प्रसिद्ध तीर्थ-स्थल जहाँ किसी समय नर-नारायण ऋषियों ने तपस्या की थी।

बदरी—स्त्री० [सं० बदर+डोष] बेर का पेड़ और उसका फल। बदरि।

†स्त्री०=बदली।

स्त्री० [दिश०] १ धैनी। २ बोंहा। ३ माल का बाहर भेजा जाना।

बदरीच्छद—पुं० [सं० ब० सं०] एक तरह का गध द्रव्य।

बदरीनाथ—पुं० [सं० प० त०] १ बदरिकाथम नाम का तीर्थ। २ उक्त तीर्थ के देवता या उनकी मूर्ति।

बदरी-नारायण—पुं० [सं० प० त०] बदरी-नाथ।

बदरी-पत्रक—पुं० [सं० ब० सं०+कन्] एक प्रकार का सुगन्ध द्रव्य। नवरी।

बदरीफला—स्त्री० [सं० ब० सं०] नील शेफालिका का वृक्ष और उसका फल।

बदरीबध—पुं०=बदरीवन।

बदरी-बन—पु० [स० ष० त०] १. वह स्थान जहाँ बेर के बहुत से पेड़ हैं। २. बदरिकाश्रम।

बदरफल—पु० [?] पत्थर या लकड़ी में की जानेवाली एक प्रकार की जालीदार नक्काशी जिसमें बहुत से कोने होते हैं।

बदरी-बन—सि० [फा०+अ०] [भाष० बदरीबी] १. जिसका रोज होना तो चाहिए, फिर भी कुछ रोज न हो। २. तुच्छ। ३. महा।

बदरीह—सि० [फा० बदरी] बदरचल। बदराह।

पु० [हि० बादल] आकाश में छाये हुए हलके बादल।

बदरीक—सि० [फा० बदरीनक] १ जिसमें कोई शोना न हो। श्री-हीन। २ उजाड़।

बदल—पु० [अ०] १ बदलने की क्रिया या भाव। २ बदले में दी हुई वस्तु। ३ पलटा। प्रतिकार। ४ क्षतिपूर्ति।

पु० [हि० बदलना] बदले हुए होने की अवस्था या भाव।

बद-रुपाय—वि० [फा०] जिसके मुँह में लगाम न हो; अर्थात् जिसे मगान-बुरा कहने में सक्ता न हो। मुँहबंद। मुँहकुर।

बदलना—अ० [अ० बदल-परिवर्तन+ना (प्रत्य०)] १. किसी चीज या बात का अपना पुराना रूप छोड़कर नया रूप धारण करना। एक दशा या रूप से दूसरी दशा या रूप में आना या होना। जैसे—श्वरु बदलना, रग बदलना, स्वभाव बदलना। २. किसी चीज, बात या व्यक्ति का स्थान किसी दूसरी चीज, बात या व्यक्ति को प्राप्त होना। जैसे—(क) हम महीने से कई गाइयो का समय बदल गया है। (ख) जिले के कई अधिकारी बदल गये हैं। (ग) कल सत्रा में हमारा छाता (या जूता) किसी से बदल गया था। ३. आकार-प्रकार, गुण-धर्म, रूप-रंग आदि के विचार से और का और, अथवा पहले से बिल्कुल भिन्न हो जाना। जैसे (क) इतने दिनों तक पहाड़ पर (या विदेश में) रहने से उसकी शकल ही बिल्कुल बदल गई है।

सयो० कि०—जाना।

१ जो कुछ पहले से ही अथवा चला आ रहा हो, उसे हटाकर उसके स्थान पर कुछ और करना, रखना या लाना। जैसे—(क) कपड़े बदलना अर्थात् पुराने या मँले कपड़े उतारकर नये या साफ कपड़े पहनना। (ख) नौकर, पहरेदार या रसोइया बदलना, अर्थात् पुराने को हटाकर नया रखना। २ जो कुछ पहले से ही, उसे छोड़कर उसके स्थान पर दूसरा ग्रहण करना। जैसे—(क) उन्होंने अपना पहलेवाला मकान बदल दिया है। (ख) रास्ते में दो जगह गाड़ी बदलनी पड़ती है। ३ अपनी कोई चीज किसी को देकर उसके स्थान पर उससे दूसरी चीज लेना। विनिमय करना। जैसे—हमने दूकानदार से अपनी कलम (या किताब) बदल ली है।

सयो० कि०—डालना।—देना।—लेना।

४ किसी के आकार-प्रकार, गुण-धर्म, रूप-रंग आदि में कोई तात्त्विक या महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करना। जैसे—(क) उन्होंने मकान की घर-मकान बना कराई है, उसकी शकल ही बिल्कुल बदल दी है। (ख) विद्रोहियों ने एक ही दिन में देश का सारा शासन बदल दिया। (ग) अब मैंने अपना पुराना विचार बदल दिया है।

सयो० कि०—डालना।—देना।

बदलवाना—ग० [हि० बदलना का प्रे०] बदलने का काम दूसरे से कराना।

बदला—पु० [अ० बदल, हि० बदलना] १. बदलने की क्रिया, भाव या व्यथा। २. वह अवस्था जिसमें एक चीज देकर उसके स्थान पर दूसरी चीज ली जाती है। आदान-प्रदान। विनिमय। जैसे—किसी की घड़ी (या छठी) से अपनी घड़ी (या छठी) का बदला करना। ३. किसी की कोई क्षति या हानि हो जाने पर उसकी पूर्ति के लिए दिया जानेवाला धन या कोई चीज। क्षति-पूर्ति। जैसे—यदि आपकी पुस्तक मुझसे लो जायगी, तो मैं उसका बदला आपको दे दूँगा।

बदले—बदले या बदले में—रिक्त स्थान की पूर्ति के लिए। किसी के स्थान पर। जैसे—हमारी जो कलम उनसे टूट गई थी, उसके बदले (या बदले में) उन्होंने यह नई कलम भेज दी है।

४ किसी ने जैसा व्यवहार किया हो, उसके साथ किया जानेवाला वैसा ही व्यवहार। प्रतिकार। पलटा। जैसे—सज्जन पुत्र बुराई का बदला भी मलाई से ही देते हैं। ५ जिसने जैसी हानि पहुँचाई हो, उसे भी अपने मनोपाय वैसी ही हानि पहुँचाने की भावना, अथवा पहुँचाई जानेवाली वैसी ही हानि।

मुहा०—(किसी से) बदला चकाना या लेना—जिसने जैसी हानि पहुँचाई हो, उसे भी वैसी ही हानि पहुँचाना। अपने मनोपाय के लिए किसी के साथ वैसा ही बुरा व्यवहार करना जैसा पहले उसने किया हो। जैसे—मले ही आठ उन्होंने मूत्र पर मूत्रा अभिवोग लगाया हो, पर मैं भी किसी दिन उनसे इसका बदला लेकर रहूँगा।

६ किसी का या बात में प्राप्त होनेवाला प्रतिकार। किसी कान या बात का वह परिणाम या प्राप्त हो या योग्यता पड़े। जैसे—मुझे भी किसी न किसी दिन इसका बदला मिलकर रहेगा।

कि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।

७ वह धन या और कोई चीज जो किसी को कोई काम करने पर उसे प्रसन्न या सन्तुष्ट करने के लिए दिया जाय। एवज। मूआवजा। जैसे—उनकी सेवाओं का बदला यह मामूली पुरस्कार नहीं हो सकता।

बदलाई—स्त्री० [हि० बदलना+आई (प्रत्य०)] १. बदलन की क्रिया या भाव। अदल-बदल। विनिमय। २. बदले में ली या दी जानेवाली चीज। ३. बदलने के लिए बदले में दिया जानेवाला धन। ४. अपकार, हानि आदि करने पर किसी की की जानेवाली क्षति-पूर्ति।

बदलाईना—स० बदलवाना।

† अ० बदलना (बदला जाना)।

बदली—स्त्री० [अ० बदल, हि० (प्रत्य०)] १. बदले हुए होने की अवस्था या भाव। २. किसी सब के कमबारी को एक स्थान से हटाकर दूसरे स्थान पर भेजा जाना। तबदिल। स्थानान्तरण। (ट्रांसफर) स्त्री० [हि० बादल] १. छोटा बादल। २. आकाश में बादलों के छाये हुए होने की अवस्था या भाव।

† स्त्री०—बदरी (बेर का फल)। उदा०—मली बिधि हो बदली मुल लावे।—केदार।

बदलीबल—स्त्री० [हि० बदलना] १. अदल-बदल करने की क्रिया या भाव। २. बदले जाने की अवस्था या भाव।

बदलीबल—स्त्री०. बदनीबल।

बद-शकल—वि० [फा० बदशकल] [भाब० बदशकली] बुरी और भद्दी शकल-सूरत का । कुस्य । बेढीय ।

बदशकर—वि० [फा० बद+अ० शकर] [भाब० बदशकरी] १ जो ठीक ढग से तथा शिष्टतापूर्वक कोई काम करना न जानता हो । २ बदतमीज । ३ मूर्ख ।

बदशपुत—वि० [फा०] १ अशुभ । २ मनहस ।

बदशगुनी—स्त्री० [फा०] शगुन का बरतन होना ।

बदसलीका—वि० [फा० बद+अ० सलीक] १ बदशकर । २ बदतमीज ।

बदसतूकी—स्त्री० [फा० बद+अ० सतूक] बुरा व्यवहार । अशिष्ट व्यवहार ।

बदसूरत—वि० [फा० बद+अ० सूरत] [भाब० बद-सूरती] भद्दी मूरतभावा । कुस्य । बेढीय ।

बदसूरती—स्त्री० [फा० बद+अ० सूरती] बद-सूरत होने की अवस्था या भाव ।

ब-दस्त—अव्य० [फा०] किसी के हाथ से या द्वारा । मारफत । हस्ते ।

बदस्तूर—अव्य० [फा०] १ जिम प्रकार पहले से होता आया हो, उम्मी प्रभाव । २ जिस रूप में पहले रहा हो, उसी रूप में । बिना किसी परिवर्तन या हेर-फेर के । यथापूर्व । यथावत् ।

बदहजामी—स्त्री० [फा० बद+अ० हजमी] १ खार्ई हुई चीज हजम न होने की अवस्था या भाव । अजीब । अपच । २ वह स्थिति जिममें कोई चीज या बात ठीक तरह से नियमित न रखी जा सके, और अनावश्यक रूप में प्रदर्शित की जाय । जैसे—अकल या दीलत की बद-हजामी ।

बदहवास—वि० [फा० +अ०] [भाब० बद-हवासी] १ जिमके होश-बुद्धि-शक्ति न हों । बोधलाया हुआ । २ उद्धिन् । विकल । ३ अचेत । बेहोश ।

बद-शाल—वि० [फा०+अ०] [भाब० बद-शाली] १ दुर्दशाग्रस्त । २ राम से आक्रान्त और पीड़ित । ३ कगाल ।

बदना—स्त्री० [हि० बदना+आम (प्रत्यय०)] १ बदने की किया या भाव । २ बारी या धन का बदा जाना ।

अव्य० १ नव न । बारी लगाकर । २ दुर्दशापूर्वक प्रतिज्ञा करते हुए ।

बदा-बदी—अ० [हि० बदना] १ ऐसी स्थिति जिसमें दोनों पक्ष एक दूसरे से ओगे निकलना अथवा एक दूसरे को नीचा दिखाना चाहते हों । २ 'बदान' ।

वि० वि० बह-बदकर । उदा०—बदा-बदी ज्यों लेत है ए बदरा बदराह ।—बिहारी ।

बदास—प०—बादाम ।

बदासा—प० [फा०] बादाम के आकार-प्रकार का । अडाकार । (श्रावण)

बदासी—प० [हि० बादाम] कौटिल्ये की जाति का एक प्रकार का पत्नी । वि० बादाम के रग का । बादामी ।

बद—स्त्री० [स० वत् -गलट] किसी काम या बात का बदला चुकाने के लिए किया जानेवाला काम या बात । बदला ।

अव्य० १ किसी काम या बात के पलटे या बदले में । २ किसी की वातिर में । ३ लिए । वास्ते ।

† स्त्री० =बदी (हृण्य पक्ष) ।

बदी—स्त्री० [स० बहुल के का व+विचल मे का वि=बदि] चाद मास का हृण्य पक्ष । अंधेरा पाल । 'बुदी' का विपर्याय । जैसे—जायो बदीअपटमी । स्त्री० [फा०] १. बद अर्थात् बुरे होने की अवस्था या भाव । खराबी । बुराई ।

पद—नेकी-बदी—(क) उपकार और अपकार । भलाई और बुराई । (ख) घर-गृहस्थी में होनेवाले शुभ और अशुभ काम या घटनाएँ । (बिवाह, मृत्यु आदि) । जैसे—बहू नेकी-बदी में सबका साथ देते (या सबके बंधे आते जाते) हैं ।

२ किसी का किया जानेवाला अपकार या अहित । जैसे—उन्होंने तुम्हारे नाम कोई बदी तो नहीं की है ।

३ किसी की अनुपस्थिति में की जानेवाली उसकी निंदा ।

बदीत—वि० [स० बदिता] प्रतिबद्ध । मगहूर । उदा०—उग्रन बदीत करी मन-मोहना ।—मीरा ।

बदुषी—स्त्री०—बदक ।

बदूर (ल)—प०—बादल ।

बदे—अव्य० [हि० बद+एक] वास्ते । लिए । वातिर । (पूरब)

उदा०—भेयल छयन बा दूध में खाना तोरे बदे ।—तेगबर्नी ।

प० वह मूल्य जिसमें दलाली की रकम भी सम्मिलित हो । (दलाल)

बदीलत—अव्य० [फा० ब+अ० दीलत] १ कृपापूर्ण अवत्रव या सहारे से । जैसे—उन्हें यह नौकरों आगकी ही बदीलत मिली थी । २ कारण या वजह से ।

बदली—प०—बादल ।

बदली—प०—बादल ।

बहू—प० [अ० बहु] अरब की एक असम खानाबदत जात ।

वि० [फा० बह] =बदानम ।

बद—वि० [स० वृध+क्त] १ जो बौधा हो या बांधा गया हो । अकडा या बंधन में पडा हुआ । २ जो किसी प्रकार के पेंरे में हो । जैसे—सीमा-बद । ३ जिस पर कोई प्रतिबंध या रुकावट नहीं हो । जैसे—नियम-बद, प्रतिज्ञा-बद । ४ जो किसी प्रकार निर्धारित या निश्चित किया गया हो । जैसे—आज्ञा-बद । ५ अच्छी तरह जमाया या बँडा हुआ । रिपत । जैसे—पतित-बद । ६ जो पकडकर कहीं रोक रखा गया है । जैसे—काराबद । ७ किसी के साथ जुडा, लगा या सटा हुआ । जैसे—कर-बद । ८ कुछ विशिष्ट नियम के अनुसार किसी निश्चित और विशिष्ट रूप में लाया या रखा हुआ । जैसे—छथीबद, भाषा-बद । ९ उलझा या फँसा हुआ । जैसे—प्रेम-बद, मोह-बद । १० जिसकी गति, मार्ग या प्रवाह एका हुआ हो । जैसे—कोष्ठ-बद । ११ पामिक क्षेत्र में । जो सांसारिक बंधन या मोह-माया में पडा हो । 'मुक्त' का विपर्याय ।

बदक—वि० [स० बद+क्त] जो बाध या पकडकर मँगाया गया हो । प० बँधुआ । कँदी ।

बद-कल—वि० [स० ब० स०] बद-परिक्कर । तैयार । प्रस्तुत ।

बदकोष्ठ—प० [स० ब० स०] पाखाना कम या न होने का रोग । कब्ज । कब्जियत ।

वि० जिसे उक्त रोग हुआ हो । कब्ज से पीड़ित ।

बढ़-कोष्ठता—स्त्री० [सं० बढ़-कोष्ठ+तल्ल, टाप्] वह स्थिति जिसमें पाचनानुक्रम या न होता हो। कम्बजयत।

बढ़-गुरु—पुं० [सं० बं० सं०] अर्थात् में मल अवच्छेद होने का रोग।

बढ़-गुरोदर—पुं० [सं० बं० सं०] पेट का एक रोग जिसमें हृदय और नाभि के बीच में पेट कुछ बढ़ जाता है और जिसके फलस्वरूप मल रुक-रुककर और थोड़ा-थोड़ा निकलता है।

बढ़-ग्रह—पि० [सं० बं० सं०] हठी।

बढ़-निष्पत्त—वि० [सं० बं० सं०] जिसका मन किसी वस्तु या विषय पर जमा हो। एकाग्र।

बढ़-जिह्व—वि० [सं० बं० सं०] जो चुपकी साथे हो। मौन।

बढ़-दृष्टि—वि० [सं० बं० सं०] जिसकी दृष्टि किसी पर जमी या लगी हो।

बढ़-परिष्कार—वि० [सं० बं० सं०] जो कमर बंधे हुए कोई काम करने के लिए तैयार हो। उद्यत। तत्पर।

बढ़-प्रतिष्ठा—वि० [सं० बं० सं०] प्रतिष्ठा से बढ़ा हुआ। वचन-बद्ध।

बढ़-कल—पुं० [सं० बं० सं०] करज।

बढ़-भूमि—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] १ मकान बनाने के लिए ठीक की हुई भूमि। २. मकान का पक्का फर्श।

बढ़-भुजि—वि० [सं० बं० सं०] १ जिसकी मुट्ठी बंधी रहती हो; अर्थात् जो निर्धनो की भिक्षा, ब्राह्मणों को दान आदि न देता हो। २ बहुत कम खरच करनेवाला। कमजूर।

बढ़-मूल—वि० [सं० बं० सं०] १ जिसने जड़ पकड़ ली हो। २ जो मूलतः दृढ़ और अटल हो गया हो।

बढ़-मौन—वि० [सं० बं० सं०] चुपचा। मौन।

बढ़-रसाल—पुं० [सं० कर्म० सं०] एक प्रकार का बढ़िया आम।

बढ़-राग—वि० [सं० बं० सं०] किसी प्रकार के राग या प्रेम में बढ़ा हुआ। अनुरक्त।

बढ़-वचंस—वि० [सं० बं० सं०] मल-रोषक। कम्बजयत करनेवाला।

बढ़-बाक्—वि० [सं० बं० सं०] बचन-बद्ध।

बढ़-बैर—वि० [सं० बं० सं०] जिसके मन में किसी के प्रति पक्का वैर हो।

बढ़-शिल—वि० [सं० बं० सं०] १ जिसकी शिवा या चोटी बंधी हुई हो। २ अल्पवयस्क।

पुं० छोटा बच्चा। शिशु।

बढ़-शिला—स्त्री० [सं० बढ़-शिल+टाप्] भूम्यामलकी।

बढ़-सुतक—पुं० [सं० कर्म० सं०] रसेचर वरान के अनुसार पारा जो असत, लघुदावी, तेजोविशिष्ट, निर्मल और शुद्ध कहा गया है।

बढ़-स्नेह—वि० [सं० बं० सं०] किसी के स्नेह में बढ़ा हुआ। अनुरक्त। आगस्त।

बढ़ाजाल—वि० [सं० बढ़-अजलि, बं० सं०] सम्मान-प्रदर्शन के लिए जिसने हाथ जोड़े हो। कर-बद्ध।

बढ़ागुराग—वि० [सं० बढ़-अगुरा, बं० सं०]—आसक्त।

बढ़ी—स्त्री० [सं० बढ़+हिं० ई (प्रत्यय०)] १ वह जिससे कुछ कसा या बांधा जाय जैसे—बोरी, तस्मा, फीता आदि। २ माला या सिकड़ी के आकार का पार लड़कों का एक गहना जिसकी दो लड़ें तो गले में लड़ी है और दो लड़ें दोनों कंधों पर से जनेऊ की तरह बाँधी के नीचे होती

हुई छाती और पीठ तक लटक रही है। ३ किसी लंबी बीज की चोट से शरीर पर पड़नेवाला लम्बा चिह्न या निशान। साट। जैसे—बैत की मार से शरीर पर बढ़िया पड़ना।

क्रि० प्र०—पड़ना।

बढ़ाबर—पुं० [सं० बढ़-उबर, बं० सं०] बढ़-गुरोदर रोग। बढ़-कोष्ठ।

बध—पुं०—बध।

†स्त्री०—बड़ती (अधिकता)।

बधाघरा—स्त्री०—बधाई।

बध-गराही—स्त्री० [हिं० बाध+गराही] रस्ती बटने का एक उपकरण।

बधना—सं० [सं० बधु+हिं०ना (प्रत्य०)] बध या हत्या करना। मार बालना।

पुं० [सं० बधनं] मुसलमानों का एक तरह का टोटीदार लोटा।

पुं० [देस०] लाक की बूडिया बनानेवालों का एक औजार।

बध-भूमि—स्त्री० [सं० बध-भूमि] १. बध करने का नियत स्थान।

२ वह स्थान जहाँ अपराधियों को प्राण-बद्ध दिया जाता है।

बधावा—पुं० १—बधावा। २ दे० 'बधाई'।

बधाई—स्त्री० [सं० बधनं, प० बधना—बधना] १ बढने की अवस्था, किया या भाव। बड़ती। २ किसी की उन्नति या भाग्योदय होने अथवा किसी के यहाँ कोई मांगलिक अथवा शुभ कार्य होने पर प्रसन्नतापूर्वक उसका किया जानेवाला अभिनन्दन और उसके प्रति प्रकट की जानेवाली शुभ-कामना। यह कहना कि हम आपके अनुकूल अच्छे काम या बात से बहुत प्रसन्न हुए हैं, और आपकी इसी प्रकार की उन्नति या वृद्धि की हार्दिक कामना करते हैं। मुबारकबाद। (काश्मीर-चुलेखानस) जैसे—किसी के यहाँ पुत्र का जन्म या विवाह होने पर या किसी के प्रतिष्ठित पद पर पहुँचने अथवा कोई बहुत बड़ा काम करने या सफल-मनोरथ होने पर उसे बधाई देना।

क्रि० प्र०—देना।—मिलना।

३. धर में पुत्र जन्म, विवाह आदि शुभ कृत्यों के अवसर पर होनेवाला आनंद-मंगल या उसके उपलक्ष्य में होनेवाला उत्सव। ४ उक्त अवसरों पर होनेवाले नृत्य, गीत आदि।

क्रि० प्र०—माना।—बजना।—बजाना।

५. वह उपहार या धन जो उक्त प्रकार के आनंदमय अवसरों पर अपने आश्रितों, छोटी या निकटस्थ संबंधियों को अपनी प्रसन्नता के प्रतीक के रूप में दिया या बँटा जाता है। जैसे—उन्होंने अपने संबंधियों को दो दो रुपए बधाई के दिये हैं।

क्रि० प्र०—देना।—बँटाना।

बधाऊ—पुं०—१. बधाई। २—बधावा।

बधाणा—सं० [हिं० बधना का प्र०] बधने या हत्या करने का काम दूसरे से कराना।

†अ० [हिं० बधिया] (बैल आदि का) बधिया किया जाना।

†सं०—बढाना।

बधावा—पुं० [हिं० बधाई] १ बधाई। २ बधावा।

बधावाड्डा—पुं०—बधावा।

बधावाभा—सं०—बधावा।

पुं० दे० 'बधाई'।

बषाधा—पु० [हि० बषाई] १ बषाई । २ शुभ अवसर पर होनेवाला आनन्दसमय या गाना-बजाना ।

क्रि० प्र०—बजाना ।

३ वह उपहार या भेट जो गात्रे-वाजे के साथ कुछ विविध सामग्री अवसर पर मनषियों के यहाँ भेजी जाती है । ४ इस प्रकार उपहार ले जातेवाले लोग ।

बषक—पु० [म० घातक] १ बध करने या मार डालनेवाला । हत्याकार । २ वह जो आश्रयियों के प्राण लेता हो । फाली देने या मिर काटने-वाला । जन्माद । ३ व्याघ्र । बड़ेलिया ।

बषिया—वि० [हि० बष—भारता] (वह बेल या कोई नर पशु) जिसका अङ्कशांश कुचल या निकाल लिया गया हो और फलत उम पड़ कर दिया गया हो । ननुमक किया हुआ चीपया । खम्सी । आस्ता । 'अँष्ट' का विपर्याय ।

पु० उक्त प्रकार का बेल जिम पर प्राय बोज़ लादकर ले जाते है ।

बषा०—बषिया बँटना—दुनना अधिक घाटा होना कि कारबार बध हो जाय ।

†पु० [?] एक प्रकार का गन्ना ।

बषियाणा—म० [हि० बषिया] कुछ विविध नर पशुओ का शल्य से अङ्कशांश निकालकर उन्हे बषिया करना । बषिया बनाना ।

बषिर—पु० [म० √बन्ध (बषिया) +करत्, न-लोट] [भाव० बषिरता] जिसमे मुनने की शक्ति न हो या न रह गई हो । बहरा ।

बषिरता—स्त्री० [म० बषिर+तल्, टाप्] श्रवण-शक्ति का अभाव । बहरापन । बषिर होने की अवस्था या भाव ।

बषिरित—मू० कृ० [म० बषिर+किच्+त्त] बहरा किया या बनाया हुआ ।

बषिरिया (मत्त)—स्त्री० [म० बषिर+इमनिच्] बषिरता । बहरापन ।

बष्—स्त्री० [म० √बन्ध (बषिया) +ऊ, न लोट] बष् ।

बष्क—पु०—बष्क ।

बष्टी—स्त्री० [म० बष्+टि; डीप] १ पुत्र की स्त्री । पत्नीहू । ० मोभायवती स्त्री । ३ नई ब्याही हुई स्त्री ।

बष्रा—पु०—बगुला (बषट्ट) ।

बषेया—स्त्री०—बषाई ।

बष्य—वि० [म० बध्य] १ जिसे बध किया जा सके या जो बध किये जाने को हो । ० बध किये या मारे जाने के योग्य ।

बन—पु० [म० वन] १ बध पर्वतीय या मैदानी क्षेत्र जिममे न तो मनुष्य रहन हो और न जिममे लैनी-वारी होती हो, बल्कि जिममे प्रकृति-प्रसन्न पेड़-पौधा तथा जगली जानवरों की बहुलता हो । जगल । कानन ।

बन—बन की धातु—बेक नामक लाल मिट्टी । २ गमट । ३ जल । पानी । ४ उपवन । बगीचा । ५ निराने या नीदने की मजदूरी । निरौनी । निदाई । ६ बध अन्न जो किसान लोग मजदूरों को थैल काटने की मजदूरी के रूप मे देते हैं । ७ कपास का पोषा । उदा०—गानु मुक्की, बीतो बनी, ऊली लई उखारि ।—बहारी । ८ बट भट जो किसान लोग अपने जमीनार को किसी उत्सव के उपलक्ष्य म दते है । गादियाना । ९ दे० 'वन' ।

पु०—बद ।

स्त्री० [हि० वनाना] १ सज-सज । बनावट । २. बाना । भेम ।

बन-आलू—पु० [हि० बन+आलू] जमीकद की जाति का एक कद ।

बनउरी—पु० १—बिनीला । २—भोला ।

बन-कंठा—पु० [हि० बन+कंठा] वह कषा या गोंहनी जो पापकर न बनाई गई हो बल्कि जगल मे गाय-बैल आदि के गोबर के मूब जाने पर आप से आप बनी हो ।

बनक—स्त्री० [मं० वन+क (प्रत्य०)] वन की उपज । जगल की पैदावार । जैसे—गोद, लकड़ी, पाहद आदि ।

स्त्री० [?] एक प्रकार की साटन ।

†स्त्री०—बानक ।

बन-ककडी—स्त्री० [म० वन-ककटी] एक पीषा जिसका गोद दबा के काम आता है ।

बनकटी—स्त्री० [हि० वन (जगल)+काटना] १ जगल काटकर उसे आबाद करने, लैती-वारी अथवा रहने के योग्य बनाने का हक । २ एक प्रकार का पहाड़ी बांस जिससे टोकरे बनाये जाते है ।

बनकर—पु० [म० वनकर] १ शत्रु के चलाये हुए हथियार का निष्फल करने की एक युक्ति । २ मूर्ख । (डि०)

पु० [स० वन+कर] वह कर जो जगल मे होनेवाली वस्तुओं के क्रय-विक्रय पर लगता है ।

बन-कल्ला—पु० [हि० वन+कल्ला] एक प्रकार का जगली पेड ।

बन-कस—पु० [हि० वन+कुषा] एक प्रकार की पाम जिमे बन्दुम, बँभनी, मोप और बाभर भी कहते है । इमने रज्जियाँ बनाई जाती है ।

बनकोरा—पु० [देश०] लीनिया का साग । लोनी ।

बनखंड—पु० [म० वनखंड] १ वन का कोई खण्ड या भाग । २ रज्य प्रदेश ।

बनखंडी—स्त्री० [हि० वन+खंड+टुकडा] १ वन का कोई खंड या भाग । २ छोटा जगल या वन ।

वि० वन या जगल मे रहने या होनेवाला ।

बनखरा—पु० [हि० वन+खरा] वह मृमि जिममे पिछरी फन-दमे कानाम कोई गई हो ।

बनबौर—पु० [देश०] कीर नामक वृक्ष ।

बनगाव—पु० [हि० वन+गा० गाव+हि० गी] १ एक प्रकार का बडा हिरन जिमे रोस भी कहते है । २ एक प्रकार का नेदू (पशु) ।

बनगोभी—स्त्री० [हि० वन+गोभी] एक तरह की जगली घास ।

बनघर—पु० [स० वनघर] १. जगल मे रहनेवाला पशु । श्यव पशु । २ बन या जगल मे रहनेवाला आदमी । जगली मनुष्य । ३ जल मे रहनेवाले जीव-जन्तु ।

वि० वन मे रहनेवाला ।

बनघरी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की जगली घास जिमकी पनियाँ ज्वार की पतियाँ की तरह होती हैं । बरो ।

पु०—बनघर ।

वि० बनघर का । बनघर-सम्बन्धी । जैसे—बनघरी रग-रग ।

बनघारी—वि० [स० वनघारि] वन मे घूमने-फिरने या रहनेवाला ।

पु० १ वन मे रहनेवाले; पशु, मनुष्य आदि । २ जल मे रहनेवाले जीव-जन्तु । जलघर ।

बनचौर—स्त्री० [म० बन+चमरी] पर्वतीय प्रदेशों में होनेवाली

एक तरह की गाय जिसकी पंछ की चंवर बनाई जाती है। सुरमाया।

बनचौरी—स्त्री०—बनचौर।

बनज—पु० [स० बनज] जगल में होने या रहनेवाला जीव।

वि० दे० 'बनज'।

†पु०=वाणिज्य (व्यापार)।

बनजना—स० [हि० बनज] १ व्यापार करना। २ किसी के साथ

किसी तरह की बात-चीत या लेन-देन निश्चित करना। जैसे—किसी की लड़की के साथ अपना लड़का बनजना (अर्थात् ब्याह पक्का करना)।

स० १ व्यापार करने के लिए कोई चीज खरीदना।

†२ किसी को इस प्रकार बश में करना कि मानो उसे मोल ले लिया गया हो।

बनजर—स्त्री०=बजर।

बनजारी—स्त्री० [हि० बन+जारना=जलाना] भूमि का बहु टुकड़ा जो जगल को जला या काटकर के खेती-बारी के लिए उपयुक्त बनाया गया हो।

बनजात—पु० [म० बनजात] कमल।

बनजारा—पु० [हि० बनज+हारा] १ वह व्यक्ति जो बैलों पर अन्न लादकर बेचने के लिए एक देश से दूसरे देश को जाता है। टोबा लादनेवाला व्यक्ति। टेंडेना। टेंडनारिया। बनजारा। २ व्यापारी। सौधार।

बनजी—पु० [म० वाणिज्य] १ व्यापार या रोजगार करनेवाला। सौदागर। २ वाणिज्य। व्यापार।

बनजोत्पत्ता—स्त्री० [स० बनजोत्पत्ता] माधवी लता।

बनडा—पु० [?] बिलावल राग का एक भेद। यह श्रमडा ताल पर गाया जाता है।

पु० [हि० बना=पूछा] विवाह के समय बर-नख में गाया जानेवाला एक प्रकार का गीत।

बनडा जैत—पु० [हि० बनडा+स० जयत] एक शालक राग जो रूपक ताल पर गाया जाता है।

बनडा-बेधपारी—पु० [हि० बनडा+स० देवगिरि] एक शालक राग जो एकताले पर गाया जाता है।

बनत—स्त्री० [हि० बनना+त (प्रत्यय०)] १ किसी चीज के बनने या बनाने जाने का ढंग, प्रक्रिया या भाव। २ किसी चीज की बनावट या रचना का विनिष्ट ढग या प्रकार। अभिकल। भात। (हिजाइन) ३. पारस्परिक अनुकूलता या सामंजस्य। मेल। ४. गोटे-पट्टे की तरह की एक प्रकार की पतकी पट्टी। बाँकड़ी।

बनतार्ई—स्त्री० [हि० बन+तार्ई (प्रत्य०)] १. बन या जगल की सपचना। २. बन की भयकरता।

बनतुर्ई—स्त्री० [हि० बन+तुर्ई] बदाल।

बन-तुलसी—स्त्री० [स० बन+तुलसी] बंबर नाम का पीधा जिसकी पीत और मजरी तुलसी की-सी होती है। बंबरी।

बनद—पु० [स० बनद] बादल। मेघ।

वि० जल देनेवाला। जलद।

बनदारा—स्त्री० [स० बनदारा] बन माला।

बनदेवी—स्त्री० [स० बनदेवी] किसी वन की अधिष्ठात्री देवी।

बनधातु—स्त्री० [स० बनधातु] मेघ या और कोई रगीत मिट्टी।

बनना—ज० [स० बर्णन, प्रा० बण्णन=चित्रित होना, रचना जाना]

१. अनेक प्रकार के उपकरणों, तस्वों आदि के योग से कोई नई चीज तैयार होना अथवा किसी नये आकार या रूप में प्रस्तुत होकर अस्तित्व में आना। जैसे—कल-कारखानों में कागज, चीनी या धातुओं की चीजें बनना।

बन-बना बनाव—(क) जो पहले से बनकर ठीक या तैयार हो। जैसे—बना-बनना कुत्ता मिल गया। (ख) जिसमें पहले से ही पूर्णता हो, कोई कौर-कसर न हो। उदा०—मैं याचक बना-बनाया था।—मीथिलीशरण।

मुहा०—(किसी का) बना रहना—ससारा में कुशलतापूर्वक जीवित रहना। जैसे—दिवर करे यह बालक बना रहते। (किसी का किसी स्थान पर) बना रहना—उपरिस्थित या वर्तमान रहना। जैसे—आप जब तक चाहे तब तक वहाँ बने रहें।

२. किसी पदार्थ का ऐसे रूप में आना जिसमें वह व्यवहार में आ सके। काम में के योग्य होना। जैसे—दवा या भोजन बनना। ३. किसी प्रकार के रूप-परिवर्तन के द्वारा एक चीज से दूसरी नई चीज तैयार होना। जैसे—चीनी से शक्कर बनना, रुई से डोरा या सत बनना। ४. उक्त के आधार पर, पारस्परिक व्यवहार में किसी के साथ पहलेवाले भाव या सबब के स्थान पर कोई दूसरा नया भाव या सबब स्थापित होना। जैसे—(क) मित्र का शत्रु, अथवा शत्रु का मित्र बनना। (ख) किसी का दत्तक पुत्र या मुँह-बोला भाई बनना। ५. आविष्कार आदि के द्वारा प्रस्तुत होकर सामने आना। जैसे—अब तो तिर्यक सैकड़ों तरह के नये नये यंत्र बनने लगे हैं। ६. पहले की तुलना में अधिक अच्छी, उन्नत या सौन्दर्यजनक अवस्था या दशा में आना या पहुँचना। जैसे—बे तो हमारे देवते देखते बने हैं।

बन-बनकर—अच्छी तरह। पूर्ण रूप से। मज़ी-भक्ति। उदा०—मनमोहन से बिछुरे दसही बनि क न अब दिवद द्वै गये है।—पद्माकर। **बन ठनकर**—खूब बनान-सिगार या सजावट करने। जैसे—आज-कल तो बहु खूब बन-ठनकर घर से निकलते हैं।

७. किसी विशिष्ट प्रकार का अवसर, योग या स्थिति प्राप्त होना। **मुहा०—बन भासा**—अच्छा अवसर, योग या स्थिति प्राप्त होना। जैसे—उन लोगों के लड़ाई मगडे में तुम्हारी खूब बन आई है। **प्राणों पर आ बनना**—देरी स्थिति आ पहुँचने कि प्राण जाने का भय हो। जान जाने की नीवत आना। जैसे—तुम्हारे अत्याचारों (या दुर्व्यवहारों) से तो मेरे प्राणों पर आ बनी है। (किसी का) कुछ बन बैठना—बास्तबिक अधिकार, गुण, योग्यता आदि का अभाव होने पर भी किसी पर या स्थिति का अधिकारी बन जाना अथवा यह प्रकट करना कि हम उपयुक्त या वास्तबिक अधिकारी हैं। जैसे—बहु कुछ सरदारों को अपनी ओर मिशकार राजा (या शासक) बन बैठा। (हि० के ही बैठना) मुहा० की तरह प्रयुक्त।

८. किसी काम का ऐसी स्थिति में होना कि वह पूरा या सम्पन्न हो सके। संभव होना। जैसे—जिस तरह बने, उसकी जान बचाओ। ९. किसी प्रक्रिया से ऐसे रूप में आना जो बहुत ही उपयुक्त, ठीक या सुन्दर जान पड़े। जैसे—(क) नई वेल् टंकने से यह साड़ी बन गई है। (ख) दसती

पर चढ़ने और हाथिया लगने से यह तम्बीर बन गई है। १० किसी प्रकार के बोध, विकार आदि दूर किये जाने पर या मरम्मत आदि होने पर किसी चीज का ठीक तरह से काम में आने के योग्य होना। जैसे—पंच वस्ये मे दहू षडी बनकर ठीक हो जायगी। ११ किसी पद या स्थान पर नियुक्त या प्रतिष्ठित होकर नये अधिकार, मर्यादा आदि से युक्त होना। जैसे—किसी कार्यालय का व्यवस्थापक (या मणिर का पुजारी) बनना।

भूरा—**बन बैठना**—अधिकार ग्रहण करने या रूप धारण करने किसी पद या स्थान पर आसीन होना। जैसे—उनके भरते ही उनका मातीजा भालिक बन बैठा।

१२ आधिक क्षेत्र में, किसी प्रकार की प्राप्ति या लाभ होना। जैसे—पलो, इस सोते मे १०) बन गये। १३ आपस में यथेष्ट मित्रता के भाव से और घनिष्ठतापूर्वक आचरण, निर्वाह या व्यवहार होना। जैसे—दुधर कुछ दिनों से उन दोनों मे खुब बनने लगी है।

१४ अमिनय आदि मे किसी पात्र की भूमिका मे दर्शकों के सामने आना। किसी का रूप धारण करना। जैसे—मी अकबर बर्गुगा और तुम महाशया प्रनाप बनना। १५ समाज मे प्रतिष्ठा प्राप्त करने के उद्देश्य से अपने आपको अधिक उच्च कोटि का या योग्य सिद्ध करने के लिए प्राय गंभीर मुद्रा धारण करने और से कुछ अलग अलग रहना। जैसे—धब तो बादू साहब हम लोगो से बनने लगे है। १६ किसी के बडावा देने या बहकाने पर अपने आपको अधिक योग्य या समर्थ समझने लगना, और फलत दूसरों की दृष्टि मे उपहासास्पद तथा मूर्ख सिद्ध होना। जैसे—आज पछिलों की सभा मे शास्त्री जी खुब बने।

बिधे—इस अर्थ मे इस शब्द का प्रयोग प्राय सकर्मक रूप मे ही अधिक होता है। (जैसे—शास्त्री जी खुब बनाये गये।) अकर्मक रूप मे अपेक्षया कम ही होता है।

बननि—**स्त्री**० [हि० बनना] १. बनावट। २. बनाव-सिगार। ३. सजावट।

बननिधि—**पु०** [सं० बननिधि] समृद्ध।

बन-पति—**पु०** [सं० बनपति] सिंह। शेर।

बन-पथ—**पु०** [सं० बनपथ] १ समृद्ध। २. ऐसा रास्ता जिसमे नदियां या जलाशय बहुत पड़ते हो। ३. ऐसा रास्ता जिसमे जंगल बहुत पड़ते हो।

बन-पाट—**पु०** [हि० बन+पाट] जंगली सन। जंगली पट्टा।

बन-पाली—**स्त्री**०—बनस्वति।

बन-पाल—**पु०** [सं० बनपाल] बन या बाग का रक्षक। माली।

बन-पिंडालू—**पु०** [हि० बन+पिंडालू] एक प्रकार का मसाला, जंगली वृक्ष। इसकी लकड़ी कधी, कलमदान या नक्काशीदार चीजें बनाने के काम आती है।

बनप्रिय—**पु०** [सं० बनप्रिय, ब० सं०] कोयल। कौकिल।

बन-पत्नी—**स्त्री**०—बनस्वति। उदा—मण्डप बसत राती बनपती।—जायसी।

बन-फूल—**पु०** [हि० बन+फूल] जंगली वृक्षों के फूल।

बन-प्रार्थ—**वि०** [फा०] १. नीले रंग का। २. हलक हरा।

पु० उभय प्रकार का रंग।

बनपत्ता—**पु०** [फा० बनपत्ता] एक प्रकार की बनस्वति जो नेपाल, कश्मीर और हिमालय पर्वत के अनेक स्थानों मे होती और औषध के काम आती है।

बनबकरा—**पु०** [सं० बन+बकरा] पर्वतीय प्रदेशों मे होनेवाला एक तरह का बकरा।

बन-बास—**पु०** [सं० बनवास] १. बन में जाकर रहने या बनाने की क्रिया या अवस्था। २. प्राचीन भारत मे, एक प्रकार का देश-निकाले का बंध।

बन-बासी—**वि०** [सं० बनवास] १. बन में रहनेवाला। जंगली। २. बन मे जाकर बसा हुआ। ३. जिसे बनवास (दंड) मिला हो।

बनबाहू—**पु०** [सं० बनबाहू] जलघाना। नाव। नौका।

बन-बिलारा—**पु०**—बन-बिलाव।

बनबिलाव—**पु०** [हि० बन+बिलाव=बिल्ली] बिल्ली की तरह का, या उससे कुछ बड़ा और मटमैले रंग का एक जंगली द्विजन्तु जो प्राय झाड़ियों में रहता और चिड़ियों पकड़कर खाता है। कुछ लोग इसे इसलिये पालते भी हैं कि उससे चिड़ियों का पिकार करने मे बहुत सहायता मिलती है। इसके कानों का ऊपरी या बाहरी भाग काला होता है, इसी लिए इसे 'स्याहगोवा' भी कहते है।

बनबेर—**पु०** [हि०] एक प्रकार का जंगली बेर।

बन-मानुस—**पु०** [हि० बन+मानुस] बदरों से कुछ उन्नत और मनुष्य से मिलते-जुलते जंगली जंतुओं का वर्ग जिसमे गोरिल्ला, चिंपेंजी, ऑरंग, कटप आदि जंतु हैं।

बनमाल—**स्त्री**०—बनमाला।

बनमाला—**स्त्री**० [सं० बनमाला] १. जंगली फूलों को पिरों कर बनाई हुई माला। २. पैरों तक लकी बह माला जो तुलसी की पत्तियों और कमल, परजाते और मंदार के फूलों को पिरों कर बनाई जाती है।

बनमाली—**वि०** [सं० बनमाली] जो बनमाला धारण करता या धारण किये हुए हो।

पु० १ श्रीकृष्ण। २. नारायण। विष्णु। ३. बादल। मेघ। ४. ऐसा प्रदेश जिसमे बहुत से बन या जंगल हों।

बनमुरग—**पु०** [हि० बन+फा० मुरग] [स्त्री० बनमुरगी] एक तरह का जंगली मुरगा जो पालतू मुरगों की अपेक्षा कुछ बड़ा होता है।

बनमुरगिया—**स्त्री**० [हि० बन+फा० मुरग+हि० ग्या (प्रत्य०)] हिमालय की तराई में रहनेवाला एक प्रकार का पक्षी जिसका गला और छाती सफेद और सारा शरीर श्यासमानी रंग का होता है।

बनमुरगी—**स्त्री**० [हि० +फा०] कुठुठुटी नामक जंगली चिड़िया।

बनरक्षा—**पु०** [हि० बन+रक्षना=रक्षा करना] १. जंगल और उसमें की संपत्ति की रक्षा करनेवाला व्यक्ति। २. एक जंगली जाति जो पक्षु-पक्षी पकड़ने और मारने का काम करती है।

बनरा—**पु०** [हि० बनना] [स्त्री० बनरी] १. बर। डूहा। २.

बिवाह के समय गाये जानेवाले एक प्रकार के गीत।

पुं०—बंदर।

बनराज—**पु०** [सं० बनराज, ब० तं०] १. बन का राजा अर्थात् सिंह। २. बहुत बड़ा वृक्ष।

पुं०—बूढ़ावन।

बनराया—पु० = बनराज ।
बनराहा—पु० [सं० बन+राज] घना या बड़ा जंगल ।
बनरी—स्त्री० [हि० बनरा का स्त्री०] नई ध्याही हुई बप । कुल्हन ।
 †स्त्री० = बंदरी (भावा बंदर) ।
बनरीठा—पु० [हि० बन+रीठा] एक प्रकार का जंगली रीठे का वृक्ष जिसके बीजों से लोग कपड़े तथा केसा बनाते हैं ।
बनरीहा—स्त्री० [हि० बन+रीहा (रीस) या स० रह-पीया] एक प्रकार का पीया जिसकी घास को बटकर रस्सी बनाई जाती है ।
 रीसा ।
बनरह—पु० [सं० बनरह] १. जंगली पेड़ । २. कमल ।
बनरहिया—स्त्री० [सं० बनरह] एक तरह का पीया और उसकी कृपाय ।
बनरीझ—पु० [हि०] एक प्रकार का बीयाया जो देखने में बड़ी छिद्रकली की तरह होता है । (पेरिमेलिन)
बनबारा—सं० = बनारा ।
बनबारा—पु० = बिनोला ।
बनबसत—पु० [सं० बनबसत] वृक्ष की छाया का बना हुआ कपड़ा ।
बनबारा—पु० [सं० बन+जल; बा(प्रत्य०)] पनहुन्नी नामक जल-पत्थी ।
 पु० [?] एक प्रकार का बछनाम (पिप) ।
बनबाना—सं० [हि० बनाना का प्र० रूप] बनानेका काम हुन? से कराना ।
 किसी को कुछ बनाने में प्रवृत्त करना ।
बनबारी—पु० = बनमाली (श्रीकृष्ण) ।
बनबासी—वि०, पु० = बनवासी ।
बनबैया—वि० [हि० बनाना+बैया (प्रत्य०)] बनानेवाला ।
 वि० [हि० बनबाना+बैया (प्रत्य०)] बनधानेवाला ।
बनस्पती—स्त्री० = बनस्पति ।
बनसार—पु० [सं० बन+शाला] समूह तट का वह स्थान जहाँ से जहाज पर चढ़ा जा जहाँ पर जहाज से उतरा जाता है ।
बनसी—स्त्री० [हि० बसी] १. बान्सी । २. मछलियाँ फँसाने की कटिया ।
बनस्पली—स्त्री० = बनस्पली (वन की भूमि) ।
बनस्पति—पु० = बनस्पति ।
बनहठी—स्त्री० [वेश०] एक प्रकार की छोटी नाव ।
बनहरी—स्त्री० [सं० बन हरिदा] शाल्वृषी ।
बना—पु० [?] एक प्रकार का छत्र जिसमें १०, ८ और १४ के विभाग से ३२ भागएँ होती हैं । इसे 'बंदकला' की कहते हैं ।
 †पु० [हि० बनना] [स्त्री० बनी] बूझा । बर ।
बनाइ—अव्य० [हि० बनाकर=अच्छी तरह] १. अच्छी तरह । मली-मति । (दे० 'बनाना' के अन्तर्गत पद 'बनाकर') २. अधिकता से ।
 ३. निपट । बिलकुल ।
बनाइ—पु० = बनाइ ।
बनाइरि—स्त्री० = बाणाबलि (बाणों की पंक्ति) ।
बनामि—स्त्री० [सं० बनामि] बन में लगानेवाली आग । हावानल ।
बनात—स्त्री० [हि० बनाना] [वि० बनाती] एक प्रकार का बहिया तथा रंटीन अनी कपड़ा ।

बनाली—वि० [हि० बनाल+ई (प्रत्य०)] १. बनात-संबंधी । २. बनात का बना हुआ ।
बनाम—स्त्री० [हि० बनाना] बनाने की क्रिया, रंग या भाव । बनावट ।
बनामा—सं० [हि० बनना का सं०] १. किसी चीज को अस्तित्व देना या सत्ता में लाना । रचना । जैसे—(क) ईश्वर ने यह सत्ता बनाया है । (ख) सरकार ने कानून बनाया है । २. भौतिक वस्तुओं के संबंध में, उन्हें तैयार या प्रस्तुत करना । रचना । जैसे—(क) मकान या कारखाना बनाना । (ख) गंजी या मोजा बनाना । ३. अमौलिक तथा अमूर्त वस्तुओं के संबंध में, विचार-उपगत से ल्कार प्रत्यक्ष करना । जैसे—कविता बनाना ।
पब—बनाकर= खूब अच्छी तरह । मली-मति । जैसे—आज हम बनाकर तुम्हारी खबर लेंगे ।
बुहा—(किसी व्यक्ति को) बनाये रखना—अच्छी दशा में अपना व्योँ का र्थी रखना । रक्षापूर्वक रखना । (किसी व्यक्ति को) बनाये रखना = सुकुशल, जीवित या बर्तमान रखना । जैसे—ईश्वर आपको बनाये रखे । (आधोवाँद) (ख) किसी को अनुकूल या अपने प्रति दयालु रखना । जैसे—अच्छे बनाये रखने से तुम्हारा काम ही होगा । ४. ऐसे रूप में लाना कि वह ठीक तरह से काम में आ सके अथवा मज्जा और सुन्दर जान पड़े । ५. किसी विशिष्ट स्थिति में लाना । जैसे—उन्होंने अपने आपको बना लिया है, अपना अपने लड़के को बना दिया है ।
बुहा—बनाये म बनाना = बहुत प्रयत्न करने पर भी कार्य की सिद्धि या सफलता न होना । जैसे—अब हमारे बनाये तो नहीं बनेगा । उवा०—जौ नहिं जाई रहइ पछितावा । करत विचार न बनइ बनावा ।— तुलसी ।
 ६. आर्थिक क्षेत्र में, उपाजित या प्राप्त करना । लाभ करना । जैसे—उन्होंने कपड़े के रोजगार में लाखों रुपए बना लिए हैं । ७. किसी पदार्थ के रूप आदि में कुछ विशिष्ट क्रियाओं के द्वारा ऐसा परिवर्तन करना कि वह नये प्रकार से काम में आ सके । जैसे—पूड़ से चीनी बनाना ; बालक से मात बनाना , आटे से रोटी बनाना । ८. एक विशिष्ट रूप से दूसरे विपरीत या विरोधी रूप में लाना । जैसे—(क) मित्र को शत्रु अथवा शत्रु को मित्र बनाना । (ख) मूठ को सच बनाना । ९. दोष, विकार आदि दूर करके उचित या उपयुक्त दशा या रूप में लाना । जैसा होना चाहिए, वैसा करना । जैसे—पछोड़ या फटककर अनाज बनाना । १०. जो चीज किसी प्रकार विगड़ गई हो, उसे ठीक करके ऐसा रूप देना कि वह अच्छी तरह काम दे सके । मरम्मत करना । जैसे—कलम बनाना, पड़ी बनाना । ११. किसी प्रकार का आविष्कार करके कोई नई चीज तैयार या प्रस्तुत करना । जैसे—नई तरह का इन्जन या हवाई जहाज बनाना । १२. अकन, लेखन आदि की सहायता से नई रचना अस्तुत करना । जैसे—मजल या तसबीर बनाना । १३. किसी को किसी पद या स्थान पर आसीन अथवा प्रतिष्ठित करके अधिकार, प्रतिष्ठा, मर्यादा आदि से युक्त करना । जैसे—(क) किसी को मठ का मुख्त या सभा का सचिव बनाना । (ख) अपना प्रतिनिधि बनाना । १४. किसी के साथ कोई नया पारिवारिक संबंध स्थापित करना । जैसे—किसी को अपना दामाद, माई या लड़का बनाना । १५. बात-चीत

मे किसी की प्रशंसा करते हुए या उसे बढ़ावा देते हुए ऐसी स्थिति मे लाना कि वह आत्म-प्रशंसा करना करता। औरो की दृष्टि मे उपहासास्पद और मूर्ख सिद्ध हो। जैसे—आज पंडित जी को लोगो मे खूब बनाया। १६ कोई विधिष्ट किया या व्यापार मम्पन्न करना। जैसे—(क) खिलाडी का गोल बनाना। (ख) नाई का दाढ़ी बनाना। (ग) डाक्टर का अंति बनाना।

बनाकर—पु० [स० दम्पकल] ? गजगुप्त क्षत्रियो की एक गाथा।

बना-बनत—स्त्री० [हि० बनाना] वर और बन्धा का सम्बन्ध स्थिर करने से पहले उनकी जन्म-पंथियो का गणित ज्योतिषि के अनुसार किया जाने-वाला मिलाज।

कि० प्र०—निकालना।—बनाना।—मिलाना।

बनाम—अव्य० [फा०] ? किसी के नाम पर। नाम मे। जैसे—बनाने खुदा ईश्वर के नाम पर। २ किसी के उद्देश्य मे किसी के प्रति। ३. किसी के विरुद्ध। जैसे—यह दामा सरकार बनाम बेनीमाषव दायर हुआ है, अर्थात् सरकार ने बेनीमाषव पर मुकदमा चलाया है।

बनाम—अव्य० [हि० बनाकर अच्छी तरह] ? अच्छी तरह बनाकर। २ ठीक ढंग मे। अच्छी तरह। ३ पूरी तरह से। पूर्णतया।

बना—पु० [?] ? चाकम्प नामक औषधि का बूझ। २ काला कसीदा। कासमर्द। ३ एक मध्ययुगीन राज्य जो वर्तमान काशी की सीमा पर था।
†अव्य० दे० 'बनाय'।

बनारना—स० [?] फाटना, विशेषतः काट-काटकर किसी चीज के टुकड़े करना।

बनारस—पु० [स० वाराणसी] [वि० बनारसी] हिन्दुओ के प्रसिद्ध तीर्थ काशी का आधुनिक नाम।

बनारसी—वि० [हि० बनारस+ई (प्रत्य०)] ? बनारस (नगर) संबंधी। २ बनारस मे बने, रहने या होनेवाला। जैसे—बनारसी साड़ी।
पु० बनारस का निवासी।

बनारी—स्त्री० [स० प्रगाळी] कोल्हू मे नीचे की ओर लगी हुई ठाड़ी की वह लकड़ी जिसमे रस नीचे नदिर मे गिरता है।

बनाल—पु० बदाल।

बनाला—पु० बदाल।

बनावत—स्त्री० दे० 'बना-वनत'।

बनाय—पु० [हि० बनना+आव (प्रत्य०)] ? बनने या बनाये जाने की क्रिया या भाव। २ बनावट। रचना। ३ भूगार। सजावट। पद—बनाय-सिपार।

बनावट—स्त्री० [हि० बनना+आवट (प्रत्य०)] [वि० बनावटी] ? किसी चीज के बने या बनाये जाने का ढंग या प्रकार। रचने या रचे जाने की शैली। रूप-विधान। २ किसी वस्तु का वह रूप जो उसे बनाने या बनाये जाने पर प्राप्त होता है। रूप-रचना। गठन। जैसे—इन दोनों कमीजों की बनावट मे बहुत थोड़ा अन्तर है। ३. किसी चीज को विधिष्ट और सुन्दर रूप मे लाने की क्रिया या भाव। रूपाभाव। (कार्यभान) ४ केवल दूसरों को दिखाने के लिए बनाया जानेवाला ऐश आचरण, रूप या व्यवहार जिसमे तथ्य, दुर्ज्ञाना, वास्तविकता, सत्यता आदि का

बहुत कुछ या सर्वथा अभाव हो। केवल दिखावटी आकार-अकार, आचार-व्यवहार या रूप-रत्न। ऊपरी दिखावा। आडंबर। कुत्रिमता। जैसे—(क) यह उनकी वास्तविक सहाय्यमूर्ति नहीं है; कोरी बनावट है। (ख) उसकी बनावट मे मत आना, वह बहुत बड़ा पूत है। ५. वह दमपूर्ण मानसिक स्थिति जिसमे मनुष्य अपने आपको यथार्थ अथवा वास्तविकता से अधिक योग्य, सदाचारी आदि सिद्ध करने का प्रयत्न करता है। पालंठपूर्ण मिथ्या आचरण और व्यवहार। (एफेक्टेजन) जैसे—यों साधारणतः वे अच्छे विद्वान हैं, पर उनमें बनावट इतनी अधिक है कि लोग उनकी बातों से ध्वरते हैं। ६. दे० 'रचना'।

बनावटी—वि० [हि० बनावट] ? जिसमें केवल बनावट हो, तथ्य या वास्तविकता कुछ भी न हो। ऊपरी या बाहरी। जैसे—बनावटी हेली। २ वास्तविक के अनुरूप पर बनाया हुआ। कुत्रिम। नकली। जैसे—बनावटी नगीना।

बनाबन—पु० [हि० बनाना] ? बनाने की क्रिया या भाव। २. अन्न में मिली हुई वे ककडियाँ आदि जो बिनकर निकाली जाती हैं। ३. इस तरह बिनकर मिली हुई रदी चीजों का ढेर।

बनाबनहारा—वि० पु० [हि० बनाना+हारा (प्रत्य०)] ? बनानेवाला। २. भूगारनेवाला।

बनाब-सिमार—पु० [हि०] किसी चीज की विशेषतः दरीर की वह सजावट जो प्रायः दूसरों को आकृष्ट करने या उन पर प्रभाव डालने के लिए की जाती है।

बनास—स्त्री० [देश०] राजपुताने की एक नदी जो अवंली पर्वत से निकलकर चबल नदी मे गिरती है।

बनासवती—स्त्री० बनसवति।

†वि० बनसवतियो से बनाया हुआ। जैसे—बनासवती पी।

बनि—अव्य० [हि० बनाना] पूर्ण रूप मे। अच्छी तरह। बनाकर। उदा०—अमित काल मे कौन्ह मजूरी। आजू दीन्हू त्रिधि बनि मणि मूरी।—तुलसी।

बनिका—पु०—दणिक।

बनिज—पु० [स० वाणिज्य] ? रोजगार। व्यापार। २ व्यापार की वस्तु। सीधा। ३. ऐसा असानी जिससे यथेष्ट आर्थिक लाभ किया जा सके। ४ घनी या सम्पन्न यंत्र। (ठग)
कि० प्र०—फंनना।

बनिजना—स० [स० वाणिज्य, हि० बनिज+ना (प्रत्य०)] ? बरीदना और बेचना। रोजगार करना। २ माल लेना। बरीदना। ३ किसी को मूर्ख बनाकर कुछ रूप्य उठाना।

बनिजारा—पु०—बनजारा।

बनिजार्जिन—स्त्री०—बनजार्जिन।

बनिजारी—स्त्री०—बनजार्जिन।

बनिजी—वि० [स० वाणिज्य] वाणिज्य-सम्बन्धी।

पु० धूम-धूमकर सीधा बेचनेवाला व्यापारी। फेरीदार।

बनित—स्त्री० [हि० बनना] बानक। बाना। बेश।

बनित्त—स्त्री० [स० बनित्त] ? स्त्री। औरत। २. जोरू। पत्नी। मायाँ।

बनिया—पु० [स० वाणिज्य] [स्त्री० बनियाइन, बनैनी] ? व्यापार

करनेवाला व्यक्ति। व्यापारी। वैश्य। २ आटा, दाल, नमक-मिर्च आदि बेचनेवाला दूकानदार। मोदी। ३. लाक्षणिक अर्थ में, व्यापारिक मनोवृत्तिवाला फलस. स्वामी व्यक्ति।

बनिपाइन—स्त्री० [अ० बनिपयन्] कर्मोज, कुतरे आदि के नीचे पहनने का एक तरह का सिला हुआ कम लंबा पहनावा। गजी।

†स्त्री० वि० 'बनिया' का स्त्री०।

बनिस्वत—अध्य० [फा०] किसी की तुलना या मुकाबले में। अपेक्षया। जैसे—उस कपड़े की बनिस्वत यह कपड़ा कहीं अच्छा है।

बनिहार—पु० [हि० बन + हार (प्रत्यय) अथवा हि० बन्नी] बहु आदमी जो कुछ बेतन अथवा उपज का अग लेकर दूसरों की जमीन जोतते, बोते, फसल आदि काटते और खेत की रखवाली का काम करता है।

बनी—स्त्री० [हि० बन] १. बन का एक टुकड़ा। वनस्थली। २ बगीचा। बाटिका। उदा०—महादेव की सी बनी चित्र लेखी।—केसाव।

३ एक प्रकार की कपास।

स्त्री० [हि० बना] १ इड्लय। वपू। २ मुन्दरी स्त्री। नायिका। पु०—बनिया।

बनीती—स्त्री० [हि० बनी। ईनी (प्रत्य०)] १ वैश्य जाति की स्त्री। वनियाँ की स्त्री।

बनीर—पु०—बानीर (बेत)।

बनीठी—स्त्री० [हि० बन + ठी० वण्टि] एक तरह की छोटी जियके दोनो सिरों पर एक एक लट्टू लगा रहता है और जिसका उपयोग मुख्यतः पेटेबाजी के खेलों में होता है।

बनेला—पु० [देग०] रेगम बनानेवाला एक प्रकार का कीड़ा। वि०—बनेला।

बनेला—वि० [हि० बनाना] बनानेवाला। †वि०—बनेला।

बनेला—वि०—बनेला।

बनेला—वि० [हि० बन + ऐला (प्रत्य०)] जगली। वयः।

पु० जगली मुजर।

बनीबास—पु०—बनबास।

बनीआ—वि० [हि० बनाना + औआ (प्रत्य०)] १. बना या बनाया हुआ। २. कृत्रिम। बनावटी।

बनीटा—स्त्री०—बिनवट।

बनीटी—वि० [हि० बन + ओटी (प्रत्य०)] कपास के फूल का सा। कपासी। पु० एक प्रकार का रंग जो कपास के रंग में मिलता-जुलता है।

†स्त्री०—बिनवट।

बनीरी—स्त्री० [हि० बन + ओरी] आकाश से बरसनेवाले हिनकण। ओला।

बना—पु० [हि० बनना या बना] [स्त्री० बन्नी] १. लोक गीतो में, बर। दूतर। २ विशेषतः बहु व्यक्ति जिसका विवाह हो रहा हो। ३ विवाह के समय में, बर पक्ष की स्त्रियों के द्वारा गाया जानेवाला एक तरह का लोकगीत। बनडा।

बनात—स्त्री०—बनात (एक तरह का ऊनी रंगीन कपड़ा)।

बना—वि० [हि० बन] बन में होनेवाला। जैसे—अग्नी त्वयिा, बन्नी मिठी आदि।

स्त्री० [हि० बन्ना] १ बुलिन। २ कन्या जिसका विवाह हो रहा हो। स्त्री० [?] १. खेत में काम करनेवालों को मिलनेवाला बड़ी फसल का कुछ अंश। २. उतनी भूमि जिसमें उक्त अंश हो।

बन्हि—स्त्री०—बहिन (बहिन)।

बपस—पु० [हि० बाप + सं० अला] १ पिता को सपत्ति में से पुत्र को मिलने-वाला अंश। २ वह मूल जो पुत्र को पिता से प्राप्त हुआ माना जाय।

बप—पु० [सं० बप] बाप। पिता।

पु०—बपु (शरीर)।

बपतिस्वा—पु० [अ० बँटिस्म] नव-जात शिशु अथवा अन्य घमाँवलसो को मसीही धर्म में दीक्षित करते समय होनेवाला एक मस्कार।

बपना—सं० [सं० बपन्] बपन करना। बीज बोना।

बप-नार—वि० [हि० बाप + नारना] [माव० बप-नारी] १ जिसने अपने पिता का वध किया हो। २ जो अपने पुत्र और बड़े व्यक्तियों तक का अपकार करने से भी न चूके। बड़ो तक के साथ द्रोह या विद्रोहा-घात करनेवाला।

बपु—पु० [सं० बपु] १. शरीर। देह। २. ईश्वर का शरीरधारी रूप। अवतार। ३. आकृति। रूप। शकल।

बपल—पु० [सं० वपु] देह। शरीर।

बपुरा—वि० बापुरा (बेचारा)।

बपौती—स्त्री० [हि० बाप + औती (प्रत्य०)] १ पिता की ऐनी सपत्ति जो पुत्र को उत्तराधिकार के रूप में मिली हो, मिलने को हो, अथवा उसे प्राप्य हो। २ वह अधिकार जो किसी को अपने पिता तथा पितृ पक्ष की सपत्ति पर होता है।

बप्पा—पु० [हि० बाप] पिता। बाप।

पद—अप्या रे अप्या आश्वयं, दुख आदि के समय मूंह से निकलनेवाला पद।

बफरना—अ० [सं० विस्फालन] १ अग्निमान या गर्वपूर्वक लड़ने के लिए ताल ठोकना या किसी प्रकार का शब्द करना। २ उल्लास या उपद्रव करना।

बफारा—पु० [हि० भाप + आरा (प्रत्य०)] १. अंधविश् में युक्त किये गये जल को उबालने पर उसमें से निकलनेवाली भाप। ३. उक्त भाप से किया जानेवाला सेक। क्रि० प्र०—देना।—लेना।

३. वे अंधविश्वासों को उक्त कार्य के लिए गरम पानी में उबाली जाती हैं।

बफोरी—स्त्री० [हि० भाप] भाप से पकाई जानेवाली या पकी हुई बरी। †अ० [हि० बफरना ?] उछलने की किया या भाव। उछाला।

बबकना—अ०—बमकना। (दे०)

बबर—पु० [अ०] १ विल्ली की जाति का एक बिना पूँछवाला वन्य पशु जो शेर को भी मार डालता है। २ बडा शेर। सिंह। ३ वह कम्बल जिसपर शेर की ताल की सी धारियाँ बनी हाती हैं।

वि० शेर के साथ विशेष रूप में अयुक्त होने पर, नयानक और बिकराल। जैसे—बबर शेर।

बबरी—स्त्री० [हि० बबर] १ लटका हुआ बाल (विशेष कर घोड़े का)। २. बालों की लट।

बबा—पु०—बाबा।

बन्धुआ—पु० [हि० बाबू] स्त्री० बन्धुआइन, बन्धुईं १ दामाद और पुत्र के लिए प्यार का संबोधन। (दूरत्व) २. जमींदार और रईस। ३. छोटे लड़कों के लिए प्यार का संबोधन।

बन्धुई—स्त्री० [हि० बन्धुआ का स्त्री०] १. बेटी। कन्या। २. बड़े जमींदार या रईस की लड़की। ३. पति की छोटी बहन। छोटी ननद।

बन्धुनी—स्त्री० बन्धुई।

बन्धुर—पु० बन्धु।

बन्धुना—पु० [?] एक प्रकार की छोटी चिड़िया जिसका ऊपरी बदन हरा-पन लिये मुनहला पीला और दूध गहरी भूरी होती है। इसकी आँखों के चारों ओर एक सफेद छल्ला-सा रहता है।

बन्धूल—पु० [स० बन्धूर] एक प्रसिद्ध कैंटीला पेड़ जिसकी पतली पतली शाखाएँ दशुअन के काम आती हैं। कीकर।

बन्धुला—पु० [देश०] हाथियों के पाँव में होनेवाला एक प्रकार का फोड़ा। वि० समस्त पदों के अन्त में, उन्नत फोड़े के समान तना और सूजा हुआ।

पच—आग-बन्धुला। (दे०)

पु० १. बन्धुला। २. बन्धुलता। ३. बन्धुला।

बन्धू—पु० [?] उल्लू (पक्षी)।

पु० [हि० बाबू] छोटे बन्धुओं के लिए प्यार का एक संबोधन। (पवित्रत्व)

बन्धुनी—स्त्री० बन्धुनी।

बन्धुत—स्त्री० = १. भन्त। २. विभूति।

बन्धुधी—स्त्री० [स० बन्धु + अधु + डीप्] दुग्गा।

बन्धु—वि० [स० √भु + कु] १. गहरे भूरे रंग का। २. खरवाट। गजा। पु० १. गहरा भूरा रंग। २. अग्नि। ३. नेवला। ४. चातक। ५. विष्णु। ६. शिव।

बन्धुधनुत—स्त्री० [स० कर्म० सं०] १. सोमा। स्वर्षा। २. गेरू।

बन्धु-सोमा (मन्)—वि० [स० व० सं०] भूरे बालोवाला।

बन्धुधनुत—पु० [स० व० सं०] चित्रागदा के गम्रे से उत्पन्न अर्जुन का एक पुत्र जो मणिपुर का शासक था।

बन्ध—पु० [अनु०] १. शिव के उपासकों का वह 'बन्ध बन्ध' शब्द जिससे विवाह का प्रसन्न होना माना जाता है।

बन्धु—बन्ध बान्ना या बाल जाना शक्ति, धन आदि की समाप्ति या अंत हो जाना। बिलकुल खाली हो जाना। कुछ न रह जाना।

२. ग्रहणादाँवलो का वह छोटा नगाड़ा, जो बजाते समय बाईं ओर रहता है। भावा नगाड़ा। नगारियाँ।

पु० [कवच बन्धु बंस] १. बन्धो, फिटन आदि में आगे की ओर लगा हुआ वह लंबा बंस जिसके दोनों ओर छोड़े जोते जाते हैं। २. इक्के, टांगे आदि में के वे बंस या लंबोतेरे अंग जिनमें फोड़ा होता है।

पु० [अ० बाभ्र] १. वह विस्फोटक रासायनिक गोला जिसके फूटने से पार काट होता तथा व्यापक बरबादी और जीव-संहार होता है। २. एक तरह की आतिशबाजी जिसमें से जोर का शब्द निकलता है।

बन्धकाना—अ० [अनु०] १. श्रद्ध होकर जोर से बोलना। २. डींग हड़कना।

बन्धकाना—स० [हि० बन्धकाना] ऐसा काम करना जिससे कोई बन्धके किसी को बन्धकाने में प्रवृत्त करना।

बन्धगोला—पु० [हि० बन्ध + गोला] बन्ध (विस्फोटक तथा रासायनिक गोला)।

वि० १. आफत का परकाला। २. हो-हल्ला करने वाला।

बन्ध-बन्ध—स्त्री० [अनु० बन्ध + बन्धना] १. जोरगुल। हल्ला-मुल्ला। २. लड़ाई-झगडा।

फि० प्र०—बन्धना।—चलाता।—मचाना।—मचाना।

३. कहा-मुनी।

बन्धना—स० [स० बन्धन] १. बन्धन करना। कै करना। २. उगलना। **बन्ध-गुलिस**—पु० = बन्धुगुलिस (सार्वजनिक शौचालय)।

बन्ध-बाज—वि० [हि० बन्ध + का० बाज] [मान० बन्ध-बाजी] १. (बाधु-यान) जो बम गिराता हो। २. (अस्थित) जो शत्रुओं पर बम फेकता हो।

बन्ध-बाजी—स्त्री० [हि० बन्ध + का० बाजी] बम गिराने या फेकने की क्रिया या भाव।

बन्ध-बारी—स्त्री० [हि० बन्ध + का० बारी = बंधा] बमों की धरपा करना। बहुत अधिक बम गिराना या फेकना।

बन्ध-भोला—पु० [हि० बन्ध + भोला] महाबुध। शिव।

बन्ध-बन्धक—पु० [हि० बन्ध + सं० बन्धक] एक तरह का बहुत बड़ा हवाई जहाज जो बम फेकने के काम आता है। (बॉम्बर)

बन्ध-बन्धा—स्त्री० [हि० बन्ध + बन्धा] बन्ध-बारी।

बन्धीठा—पु० = बाँधी (दीमकों की)।

बन्धुकाबला—अव्य० [का० + अ०] १. भुकाबन्धे में। समझ। सामने। २. तुलना में। अपेक्षाया।

बन्धुमिलक—अव्य० [का० + अ०] कठिनाता से।

बन्धुजिक—अव्य० [का० + अ०] अनुसार। मुताबिक। जैसे—शुद्ध बन्धुजिक।

बन्धेल—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की मछली।

बन्धीठ—पु० = बन्धीठा (दीमकों की बाँधी)।

बन्धन—पु० = ब्राह्मण।

बन्धुनी—स्त्री० [स० ब्राह्मण, हि० बान्धुन] १ छिपकली की तरह का एक रेंगनेवाला छोटा पतला कीड़ा। इसकी पीठ चित्तीदार, काली दुम और मुँह लाल चमकीले रंग का होता है। २. आँख की पलकों पर होनेवाली कुत्ती। मुहाजनी। बिलनी। ३. वह गाय जिसकी पलकों पर के बाल झड़ गये हों। ४. ऊल या गन्ने की होनेवाला एक रोग।

५. हाथी का एक रोग जिसमें दुग्ध सड़-गलकर मिर जाती है। ६. ऐसी जमीन जिसकी मिट्टी लाल हो। ७. कुल की जाति का एक तुण। बन्धु-सुता।

बन्ध—पु० [हि० गपद = सं० गजेन्द्र] हाथी। (हि०)

बन्ध—स्त्री० = बन्ध (अवस्था)।

पु० = बँ (चित्रण)।

बन्धन—पु० [स० बन्धन] बाणी। बोली। बात।

बन्धना—स० [स० बन्धन; प्रा० बन्धन] खेत में बीज बोना।

स० [स० बन्धन] कहुना।

।पू०=बैना।

बघनी=वि०[हि० बघन] यौ० के अन्त में; बोलनेवाली। विशेषत मधुर स्वर में बोलनेवाली। जैसे—पिक-बघनी।

बघर=पू०=बर।

बघल=पू०[?]सर्व। (हि०)

बघस=स्त्री०[स० बघष]भवस्था। उमर।

बघसर=स्त्री०[दिस०]कमलाक्ष बुननेवालों की वह लकड़ी जो उनके कपड़े में गुलने के ऊपर और नीचे लगती है।

बघसबास=वि०[स० बघस+हि० बाला]। स्त्री० बघसवाली। युवक। जवान।

बघस-शिरोमणि=पू०[स० बघस शिरोमणि] युवावस्था। जवानी। यौवन।

बघा=पू०[स० बघन+बुनना]पीले तथा चमकीले माथेवाली एक प्रसिद्ध छोटी बिड़िया जो खजूर, ताड़, आदि ऊँचे पेड़ों पर बहुत ही कल्पपूर्ण ढंग से अपना बाँसला बनाती है।

पू०[अ० वागः-बेचनेवाला] वह जो अनाज तोलने का काम करता हो। अनाज तोलनेवाला। तोलिया।

बघाई=स्त्री०[हि० बघा+आई(प्रत्य०)]? 'बघा' का काम या पद। २. अन्न आदि तोलने की मजदूरी। तोलाई।

बघान=पू०[फा०]१ बात-नीत। २. जिक्र। चर्चा। ३. युक्ता। हाल। ४. न्यायालय में अभियुक्त डांग दिया जानेवाला अपना बक्तव्य।

क्रि० प्र०=देना।—लेना।

बघानी=पू०[अ० वै (बिक्री)+फा० आन(प्रत्य०)] वह धन जो किसी वस्तु का खरीददार उसके बेचनेवाले को क्रय-विक्रय की बात पक्की करने के समय पहले देता है। पेघागी।

।अ०=बदबहाना।

बघाबान=पू०[फा०][वि० बघाबानी]१ जगल। २ उजाड़ या सुनसान जगह।

बघाबानी=वि०[फा०]१. जगली। २. बनवासी।

बघार=स्त्री०[स० वायु] हवा। पवन।

मुह्रा०=बघार करना=पखा सलकर किसी को हवा पहुँचाना।

बघार भखना=प्राणायाम करने के लिए नाक से वायु अंदर खींचना।

उदा०=उधो हाथ हम को बघारि मजिबो कही।—रत्नाकर।

बघारा=पू०[हि० बघार]१. हवा का झोका। २. अषड। तुफान।

बघारि=स्त्री०=बघार।

बघारि=स्त्री० बघार (हवा)।

बघाका=पू०[स० बाघ+हि० आला]१. दीवार में का वह छेद जिसमें से साँवक उस पार की घटनाएँ या दृश्य देखे जाते हैं। २. आला। ताश्ला। ३. किले की दीवारों पर तोपें रखने के लिए बना हुआ स्थान।

४. उक्त स्थान के आगे दीवार में बना हुआ वह छेद जिसमें से तोप का मोला बाहर जाकर गिरता है। ५. पटे या पाटे हुए स्थान के नीचे का खाली स्थान।

बघालीस=वि०[स० द्वित्रत्यारिशात्, प्रा० विचत्तालीसा] जो गिनती में बालीस से दो अधिक हो।

पू० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—४२।

४—१०

बघालीसबाँ=वि०[हि० बघालीस+बाँ(प्रत्य०)] कम, संख्या के विचार से बघालीस के स्थान पर पढ़ने या होनेवाला।

बघाली=वि०[स० द्वि+असीति; प्रा० विचत्ती] जो गिनती में अस्सी से दो अधिक हो।

पू० उक्त की सूचक संख्या जो अंकों में इस प्रकार लिखी जाती है—८२।

बराग=पू०[दिश०] अबस्थे कद का एक जगली पेड़ जिसकी लकड़ी का रंग सफेद होता है। पोला।

पू०[?] बकरार। कचब। (हि०)

बरंगा=पू०[दिश०] छत पाटने समय धरनों पर रखी जानेवाली पत्थर की पटिया या लकड़ी की तस्ती।

बरंगिनी=—स्त्री०=बरंगिना (सुन्दरी)।

बर=पू०[स० वृ (वश्य करना)+अपृ]१. वह व्यक्ति जिसका विवाह हो रहा हो या निश्चित हो चुका हो। वर।

पब=बर का पानी=विवाह से पहले नहकूने के समय का वह पानी जो वर की स्नान कराने पर गिरकर बहता है और जो एक पात्र में एकत्र करके फण्या के पत्र उसे स्नान करने के लिए प्रेषा जाता है।

२. वह आधीबौंद-सूचक वचन जो किसी की जमिनाया, प्रार्थना, मनोकामना आदि पूरी करने लिए कहा जाता है। वर।

क्रि० प्र०=देना।—माँगना।—मिलना।

वि० १. अच्छा। बढिया। २. उत्तम। श्रेष्ठ।

पू०[स० वट] वट वृक्ष। बरगद।

पू०[स० बल]१. शक्ति। उदा०पु-बर करि कृपा सिधु उर लाये।

—मुकुली २. रेखा। लकीर। ३. बुद्धता या प्रतिभापूर्वक कही हुई बात।

मुह्रा०=बर लीचन -(क) कोई प्रतिज्ञा करने या बात कहने के समय अपनी दुकृता मूलित करने के लिए उँगली से जमीन पर रेखा खींचना।(ख) किसी काम या बात के लिए जिव या हठ करना।

पू०[स० वर्ण]१. कपड़े या किसी लकी चीज की चौड़ाई। अरज। २. व्युत्पादित दोनों में किसी तरफ़ या मेल की चीजों में का कोई अलग और छोटा टुकड़ा। जैसे=बनारसी कपड़ों के ब्यवसाय में लहंगे, साड़ी या साफे का बर। अर्थात् वह क्षेत्र जिसमें केवल लहंगे, केवल साड़ियाँ अथवा केवल साफे आते हैं।

पू०[दिश०] एक प्रकार का कीड़ा जिसे खाने से पशु मर जाते हैं।

† अन्व० = 'बक' (बल्कि वा बरत्)।

पू०[फा०] वृक्ष का फल।

वि० १. फल से युक्त। सफल। जैसे=किसी की मुराद बर आना, अर्थात् मनोकामना सफल होना। २. किसी की तुलना, प्रतियोगिता आदि में बढ़कर। श्रेष्ठ।

मुह्रा०=(किसी से) बर आना या पाना=प्रतियोगिता, बल-परीक्षा आदि में किसी की बराबरी का ठहरना। जैसे=बालाकी में तुम उससे बर नहीं सकते (या नहीं पा सकते)।(किसी से) बर पड़ना बढकर या श्रेष्ठ सिद्ध होना।

अन्व० [सं० बर से फा०]१. उमर। जैसे=बर-वर=किसी के ऊपर अर्थात् किसी से बढकर। २. आगे। जैसे=बर-आमद=बरामद। ३. अलग। पृथक्। जैसे=बर-तरफ। ४. निपटीत या सामने की दिशा में। जैसे=बर-असत।

बर-अंग—स्त्री० [सं० बर; अंग ?] यौगि। (हि०)

बरई—पु० [हि० बाइ—बयारी] [स्त्री० बरइत] १ पान की खेती तथा व्यापार करनेवाली एक जाति। तमोली। २ इस जाति का कोई व्यंजन।

बरकदाज़—पु० [अ० बर्क; फा० अदाइ] [भाव० बरकदाजी] १. चौकीदार। २ मिपाही। ३ तोपची।

बरक—स्त्री० [अ० बर्क] बिजली। विद्युत्।

बरकत—स्त्री० [अ०] १ वह शुभ स्थिति जिसमें कोई चीज या चीजें इस मात्रा में उगलभ्य हो कि उनमें आवश्यकताओं की पूर्ति सहज में तथा भन्ती-मालि हो जाय। जैसे—(क) घर में माय-मैस होने पर ही दूध-दही की बरकत होती है। (ख) अब तो रुपय-पैसे में बरकत नहीं रह गई। (ग) ईश्वर तुम्हें रोजगार में बरकत दे।

मुहूर्त—(किसी से या किसी चीज में) बरकत, उठना या उठ जाना—पहले की-सौ शुभ स्थिति या सम्प्रदाय न रहना जाना।

२. किसी चीज का यह बोधा सा अंग जो इस मात्रा में बचाकर रख लिया जाता है कि इसी में आगे चलकर और अधिक वृद्धि होगी। जैसे—अब थैला में बरकत क ११) ही बच रहे हैं, बाकी सब खर होच गये। ३ अमगल। उपा। जैसे—यह सब आपके कदमों की ही बरकत है। ४ मगल-भाषिण के रूप में गिनने समय एक की संख्या।

विशेष—प्रायः लोग गिनती आरम्भ करने पर 'एक' की जगह 'बरकत' कहकर तब दो, तीन, चार आदि कहते हैं।

५ मगल-भावित के रूप में अमाव्य या समार्षित का सूचक शब्द। जैसे—आज-कल घर में अनाज (या कपडों) की बरकत ही चल रही है, अपर्णा अमाव्य है, यथेष्टता नहीं है।

बरकली—वि० [अ० बरकत-ई (प्रत्यय) १ जिसके कारण या जिसमें, बरकत हो। बरकतवाला। जैसे—जरा अपना बरकली हाथ लगा दो तो क्या घटेंगे नहीं। २ जो बरकत के रूप में या शुभ माना जाता हो। जैसे—बरकली रुपया।

बरक-दम—स्त्री० [अ० बर्क; फा० दम] एक प्रकार की चटनी जो कच्चे आम का मूनकर उमके पत्ते में चीनी, मिर्च आदि डालकर बनाई जाती है।

बरकना—अ० [सं० वर्जन] १ अलग या दूर रहना या रखा जाना। २ कोई अभिय या अलग बात घटित न होने पाना। ३ सकट आदि से बचने के लिए कही से हटना। ४ बचाया जाना। सं०—बरकाना।

बर-करार—वि० [फा० बर; अ० करार] १ जिसका अस्तित्व या स्थिति वर्तमान हा। सजु,साल, वर्तमान और स्थिर। जैसे—आपकी जिन्दगी बर-करार रहे। २ उपरिष्ठा। मौजूद। ३. पुनर्निश्चय किया हुआ। बहाल।

क्रि० प्र०—बरकना।—रहना।

बर-काज—पु० [सं० बर; काज] शुभ कार्य। जैसे—मुश्न, विवाह आदि अवसरों पर होनेवाले कार्य।

बरकाना—सं० [सं० बरक, बरक] १. कोई अनिष्ट अथवा अभिय घटना या बाधा न होने देना। निवारण करना। बचाना। जैसे—झगडा

बरकाना। २. अपना पीछा छुड़ाने के लिए किसी को मुलाधा देकर अलग करना या दूर रहना। ३. मना करना। रोकना।

बरख—पु०—वर्ष (बरस)।

बरखना—अ०—बरसना (बर्षा होना)।

बरखा—स्त्री० [सं० बर्षा] १ आकाश से जल बरसना। बर्षा। बारिश। मुट्टि। २ बर्षा ऋतु। बरसात।

बरखाना—सं०—बरसाना (बर्षा करना)।

बरखास—वि०—बरखास्त।

बरखास्त—वि० [फा० बरखास्त] [भाव० बरखास्तगी] १. (अधि-वेदान, बैठक, समा आदि के मध्य में) जिसका विसर्जन किया गया या हो चुका हो। समाप्त किया हुआ। २ (व्यक्ति) जिने किसी नौकरी या पद से हटा दिया गया हो। पदच्युत।

बरखास्तगी—स्त्री० [फा० बरखास्तगी] बरखास्त करने या होने की अवस्था, किया या भाव।

बर-खिलाफ—अव्य० [फा० बर; अ० खिलाफ] उलटे। प्रतिकूल। विपरीत। वि०—खिलाफ।

बरखुरदार—वि० [फा० बरखुरदार] [भाव० बरखुरदारी] १ सीमाप्य-शाली। २ सकल-मनोरथ। ३ फला-फूला। सफल।

पु० १ पुत्र। वेदा। २ छोटे के लिए आशीर्वाद सूचक संबोधन।

विशेष—मूलतः बर-खुरदार का शब्दार्थ है—जीविका पर बने रहो, अर्थात् खाने-पीने से सुखी रहो।

बरखुरदारी—स्त्री० [फा० बरखुरदारी] १ बर-खुरदार होने की अवस्था या भाव। २ धन-धन्य आदि की यथेष्टता। सम्पत्ता। ३. आशी-वाद के रूप में, किसी के सीमाप्य तथा सम्पत्ता की कामना।

बर-गर्भा—पु० [सं० बर-गर्भ] मुगलित मसाला।

बरस—पु० [फा० बर्ग] पत्ता। पत्र।

†पु०—बर्ग।

†पु०—वरक।

बरगव—पु० [सं० बट, हि० बड] पीपल, गुलर आदि की जाति का एक बड़ा वृक्ष जो भारत में अधिकता से पाया जाता है। बड का पेड। बट वृक्ष। (साधु सतों की कृतियों में यह दिव्यता का प्रतीक माना गया है।)

बरगमता—वि० [फा० बरगस्त] १ अमागा। हत-माय्य। २ विमुख।

बरगा—वि० [सं० वर्ग] [स्त्री० बर्गी] तरह या प्रकार का। जैसे—उसके बरगा और कौन है?

बर्गी—पु० [फा० बर्गीर] १ अद्वयपाल। साईंस। २ अश्व। घोडा। ३. मुगल काल में पोंडे पर सवार होकर शासन व्यवस्था करनेवाला सैनिक।

बर्गेल—पु० [देवा०] एक प्रकार का लडा (पक्षी) जिसके पंजे कुछ छोटे होते हैं।

बरबर—पु० [देवा०] देवदार की एक जाति।

बरघस—पु० [सं० बर्घस] विपटा। मल। (हि०)

बरछा—पु० [सं० बर; छहा] कन्या पसवालों द्वारा बर को बेशकर पसद कर तथा पत्र आदि देकर वैवाहिक संबंध स्थिर करने की एक रसम।

बरछा—पुं० [सं० बरचन = काटनेवाला] [स्त्री० अल्पा० बरछी] माला नामक अस्त्र । दे० 'माछा' ।

बरछी—स्त्री० [हिं० बरछा] छोटा बरछा ।

बरछैल—पुं० [हिं० बरछा + ऐल (प्रत्य०)] बरछा धारण करने या चलाने वाला । माला-बरछार ।

बरचन—पुं०-वर्जन (मनाही) ।

बरचनहार—वि० [हिं० बरचन + हार (प्रत्य०)] मना करने या रोकने-वाला ।

बरचना—सं० [सं० वर्जन] १. मना करना । रोकना । २. ग्रहण न करना । त्यागना । ३. प्रयोग या उपयोग में न लाना ।

बरजनि—स्त्री०=वर्जन (मनाही) ।

बर-जबान—वि० [फा० बरजबां] जो जबान पर हो अर्थात् रटा हुआ हो । कंठस्थ ।

बर-जबानी—वि०=बर-जबान ।

बरजस्त—वि० [फा० बर-जस्त] बात पकने पर तुरन्त कहा हुआ । बिना पहले से सोचा हुआ (उत्तर, कथन आदि) ।

अर्थ० तुरत । फौरन ।

बरजोर—वि० [हिं० बल + फा० जोर] [माव० बर-जोरी] १. प्रबल । बलवान । जबरदस्त । २. अन्याचारी । ३. बहुत कठिन या मारी ।

उदा०—को कृपाल बिनु पालि है, बिपदाबलि बर जोर।—मुल्सी ।

बर-जोरन—पुं० [सं० बर + जोर + न] [हिं० जोरना = मिलान] १. विवाह में बर और बपू का गठ-बन्धन । २. विवाह । (हिं०)

अर्थ० जबरदस्ती से ।

बरजोरी—स्त्री० [हिं० बरजोर] १. बलात् किया या किसी से कराया जानेवाला कोई काम विशेष कोई अनिश्चित काम । २. बल-प्रयोग ।

क्रि० वि० जबरदस्ती से । बलपूर्वक । बलात् ।

बरटना—अ० [?] सड़ना ।

बरणी—स्त्री० [सं० बरणीया] कन्या । (राज०)

बरत—पुं०-व्रत ।

स्त्री० [सं० व्रत] डोरी । रस्सी । उदा०—डीठि बरत बंधी अटनु बडि पावत न डरत।—बिहारी ।

बरतन—पुं० [सं० वर्तन] मिट्टी, धातु आदि का बना हुआ कोई ऐसा आधान जो मुख्यतः खाने-पीने की चीजें रखने के काम आता हो । पात्र । जैसे—कटीरा, गिलास, घाली, लोटा आदि ।

† पुं० [सं० वर्तन] १. बरतने की क्रिया या भाव । २. बरतान या व्यवहार ।

बरताना—अ० [सं० वर्तन] १. पारस्परिक संबंध बनाये रखने के लिए किसी के साथ आपसदारी का व्यवहार होना । बरताना किया जाना । जैसे—माई-बनों या बिरादरी के लोगों से बरताना । २. किसी के ऊपर कोई घटना घटित होना । जैसे—जैसी उन पर बरती है, वैसी दुःखन पर भी न बरते । ३. समय आदि के संबंध में, व्यतीत होना । गुजरना । जैसे—आज-कल बहुत ही बुरा समय बरत रहा है । ४. उपस्थित या वर्तमान रहना । उदा०—लट छूटी बरतै बिकराल।—कबीर । ५. खाने-पीने की चीजों के संबंध में, भोजन के समय लोगों के आगे परोसा या रखा जाना । जैसे—दाल बरत गई है (परोसी आ चुकी है) ।

सं० १. कोई चीज अपने उपयोग, काम या व्यवहार में लाना । जैसे—कपड़ा या मकान बरताना । २. दे० 'बरताना' ।

बरतनी—स्त्री० [सं० वर्तनी] १. लकड़ी आदि की एक प्रकार की कलम जिसमें छात्र मिट्टी, गुलाब आदि बिछाकर उस पर अक्षर लिखते हैं अथवा तांत्रिक यंत्र आदि करते हैं । २. दाम्ब लिखने में अक्षरों का क्रम । हिज्ज । वर्तनी । (देखें)

बर-तरफ—वि० [फा०] [माव० बरतरी] १. श्रेष्ठतर । अधिक अच्छा । २. ऊँचा ।

बर-तरफ—वि० [फा० बर + अ० तरफ] [माव० बर-तरफी] १. एक ओर । किनारे । बलया । २. नीकरी, बर आदि से अलग किया या हटाया हुआ । बरखास्त किया हुआ ।

बर-तरफी—स्त्री० [फा० बर + अ० तरफी] १. बर-तरफ होने की अवस्था या भाव । २. पद-व्यति ।

बरताना—सं० [सं० वर्तन या वितरण] बारी बारी से कोई चीज अथवा उसका कुछ अथ लोगों में बाँटते चलाना । जैसे—पगन में भोजन करने-वालों को पूरी बरताना ।

संयोग क्रि०—डालना ।—देना ।

बरतान—पुं० [हिं० बरताना का भाव०] १. किसी के साथ बरतने की क्रिया, उंग या भाव । २. किसी के साथ क्रिया जानेवाला आवरण या व्यवहार ।

बरती—वि० [सं० बरतिन्; हिं० ब्रती] जो तब रत्ने हुए हो ।

स्त्री० [?] एक प्रकार का पेड़ ।

† स्त्री०—वनी ।

बरतेल—पुं० [हिं०] जुलाहों की वह छूटी जो कपड़े की दाहिनी ओर रहती है और जिसमें ताने को कसा रखने के लिए रस्सी बंधी रहती है ।

बरतोर—पुं०—बाल-तोड़ ।

बरबना—अ० दे० 'बरदाना' ।

बरबवान—पुं० [हिं० बरद + फा० वान (प्रत्य०)] कमलाब मुननेवालों के कपड़े की एक रस्सी जो पगिया में बँधी रहती है । 'नभिया' भी इसी में बँधी रहती है ।

पुं० [फा० बरबवान] जोर की या तेज हवा । (कहार)

बरबवाना—सं० [हिं० बरदाना का प्रे०] बरदाने का काम किसी से कराना ।

बरबा—स्त्री० [देस०] दक्षिण भारत में होनेवाली एक प्रकार की रुई ।

पुं० [फा० बर्द] गुलाम । दास ।

पद—बरबा करोसा । (देखें)

पुं०=बरबा (बैल) ।

बरबाना—सं० [हिं० बरबा=बैल] गौ, भैंस आदि पशुओं का गर्माधान करने के लिए उनकी जाति के त्वर पशुओं से संभोग या संयोग कराना । जोड़ा खिलाना ।

संयोग क्रिया०—डालना ।—देना ।

अ० गौ, भैंस आदि का जोड़ा खाना ।

बरबा-करोसा—सं० [पुं० बर्द + फा० करोसा] [भाव० बरदा-करोसी] वह व्यक्ति जो गुलामों या दासों का क्रम-विक्रय करता हो ।

बरबा-करोसी—स्त्री० [फा०] गुलाम या दास खरीदने और बेचने का पेसा या व्यवसाय ।

बरदार—वि० [फा०] [भाव० बरदारी] १ उठाने, धारण करने या वहन करनेवाला। जैसे—नाब-बरदार, भाला-बरदार। २ पालन करनेवाला। जैसे—फरमा-बरदार।

बरदारी—स्त्री० [फा०] १. बरदार होने की अवस्था या भाव। २ उठाने, धारण करने या वहन करने का काम।

बरदास्त—स्त्री० [फा०] सहनशीलता। सहन।

बरबि (या)†—पुं०=बरबिया।

बरबुआ—पुं० [दे०] बरमे की तरह का एक औजार जिससे लोहा छेदा जाता है।

बरदौर—पुं० [सं० बर्द+हि० और (प्रत्य०)] गोशाला। मवेशी-शाला।

बरबू—पुं० [म० बलीबर्द] बैल।

बरघा†—पुं०=बरघा।

बरघ-भूतान—स्त्री० [हि० बरघ+भूतना] वह अकन या रेखा जो जमी प्रकार लहरियेदार हो, जिस प्रकार चलते हुए बैल के भूतने से असी पर निशान पड़ता है। गो-भूत्रिका।

बरघबाना—सं०=बरदबाना।

बरघा—पुं० [सं० बलीबर्द मे का बर्द] बैल।

बरघाना—सं०=बरदाना।
अ०=बरदाना।

बरघिया†—पुं० [हि० बरघा] १ वह व्यक्ति जो एक स्थान से दूसरे स्थान पर बैली पर माल डोकर पहुँचाना हो। २ हलवाहा। ३ चरवाहा।

बरघी—पुं० [हि० बरघा ?] एक प्रकार का चमड़ा (कदाचित् बैल का चमड़ा)।

बरघा—पुं०=वर्ण।
अर्थ० [सं० वर्ण] तरह। प्रकार। उदा०—तरुन तमाल बरन तनु सोहा।—तुलसी।
अर्थ० वर्नु (बल्कि)

बरन बरघा†—पुं० दे० 'वर्णार्थम'।

बरनगा—पुं०=वर्णन।

बरनगा—सं० [सं० वर्णन] वर्णन करना।

बरनर—पुं० [अ० बर्नर] लप, लालटेन आदि का एक उपकरण जिसमे बत्ती लगाई जाती है।

बरना—सं० [सं० वरण] १ वर या बध् के रूप मे प्रहण करना। पति या पत्नी के रूप मे स्वीकार करना। वरण करना। ब्याहना। २ कोई काम करने के लिए किसी को चुनना या ठीक करना। नियुक्त करना। ३ दान के रूप मे देना।
स्त्री० [म० वरणा] काशी के पास की वरणा नाम की नदी।
पुं० [सं० वरण] एक प्रकार का सुन्दर वृक्ष जो प्राय सीधा ऊपर की ओर उठा रहता है। बल्ला। बलासी।
† अ०=बलना (अलना)।
†सं० बटना (दौरा रखी आदि)।

बरनाबरन—वि० [सं० वर्ण] १ अनेक वर्णोंवाला। रम-विरगा। २ अनेक प्रकार का। तरह तरह का।

बरनाला—पुं० [हि० परनाला] समुद्री जहाज मे की वह नाली जिसमे से उमका फालतू पानी निकलकर समुद्र मे गिरता है। (लश०)

बरनि—स्त्री० [हि० बरना] बरने अर्थात् अलने की अवस्था या भाव।

बरनी—वि० स्त्री० [सं० वरण] वरण की हुई।
स्त्री० दुहितृन्। उदा०—दुहूँ संकोच संकुचित बर बरनी।—तुलसी।
† स्त्री०=बरणी।

बरनेत—स्त्री० [हि० बरना+वरण करना+एत (प्रत्य०)] विवाह के मूलर्त से कुछ पहले की एक रमन जिममे कन्या पधवाके वर-पल्ल के लोमों को मद्य मे बुलाकर उनसे गणेश आदि का पूजन कराते है।

बरघा†—पुं०=वर्ण।

बरघटे—वि० [हि० बर+पटना] (हिताव) जो पट गया या चुकता हो चुका हो।

बरघा—वि० [फा०] १ जो अपने पैरो पर खड़ा हो। २ (उत्पात या उपद्रव) जो उठ खड़ा हुआ हो। ३ उग्रस्थित।

बरफ—स्त्री० [फा० बर्फ] १ हवा मे मिली हुई भाग के अत्यन्त सूक्ष्म अणुओं की सह जो वातावरण की ठंडक के कारण अनाम मे बनती और भारी होने के कारण जमीन पर गिरती है। पाला। हिम। तुषार।
क्रि० प्र०—गिरना।—गडना।
२ बहुत अधिक ठंडक के कारण जमा हुआ पानी जो ठोस और पारदर्शी हो जाता है और आघात लगने पर टुकड़े-टुकड़े हो जाता है।
क्रि० प्र०—गलना।—जमना।
३ कृत्रिम उपायी या रासायनिक क्रियाओं के द्वारा जमा हुआ पानी जो बहुत ठंडा और ठोस हो जाता है तथा स्थान-स्थान की चीजे ठंडी करने के काम आता है।
क्रि० प्र०—गलना। गलाना।—जमना।—जमाना।
४ उक्त प्रकार से जमाया हुआ दूध, फलों का रस या ऐसी ही और कोई चीज। जैसे—मलाई की बरफ।
वि० जो बरफ के समान ठंडा हो। जैसे—सर्दो से हाथ बरफ हा गये।

बरफानी—वि० [फा० बर्फानी] बर्फ से बना हुआ या युक्त। जैसे—बरफानी तुफान। बरफानी पहाड़।

बरफिस्तान—पुं० [फा० बर्फिस्तान] वह स्थान जहाँ चारों ओर बरफ ही बरफ हो।

बरफी—स्त्री० [फा० बर्फी] १ खोए आदि की बनी एक प्रकार की मिठाई जो चौकोर चुकड़ो के रूप मे बटी हुई होती है और जिममे कभी कभी खोए के साथ और बीजे भी मिली रहती है। जैसे—पिस्ते या बादाम की बरफी। २ बुनाई, सिगाई आदि मे, चौकोर बनाये हुए खड या साने।
क्रि० प्र०—काटना।

बरफीदार—वि० [हि० बरफी+फा० दार (प्रत्य०)] जिसमे बरफी की तरह चौकोर खाने बने हों। जैसे—कईदार अगे मे होनेवाली बरफी-दार सिलाई।

बरफोला—वि० [फा० बर्फ से] [स्त्री० बरफीली] १ जिसमे या जिसके साथ बरफ भी हो। २ जो बरफ के योग से या बरफ की तरह ठंडा हो। जैसे—बरफीली हवा।

बरफीला तुफान—पुं० [हि०+अ०] वह तुफान या बहुत तेज हवा जिसमे

प्रायः बरफ के बहुत छोटे छोटे कण भी मिले रहते हैं। हिम झसावात। (फिलजर्ब)

बिशेष—ऐसे तुफान अधिकतर ध्रुवीय प्रदेशों और बरफ से ढके हुए पहाड़ों की चोटियों पर चलते हैं जिनके कारण आस-पास के प्रदेशों में सर्दरी बहुत बढ़ जाती है। इनकी गति प्रति घण्टे ५०-६० मील होती है और इनमें पड़ने पर किसी को कुछ भी दिखाई नहीं देता।

बरफ़ी-संज्ञित—पु० [फा० बरफ़ी+ब० संज्ञित] एक प्रकार की बगला मिठाई।

बरबट—वि० [सं० बलवत्] १. बलवान्। ताकतवर। २. प्रताप-शाली। ३. उद्बुद्ध। उद्यत। ४. बहुत तेज। प्रखर। प्रचण्ड।

बरबट—अव्य०=बसवस।
 १पु०=बरवट (तिल्ली)।

बरबट्टा—पु० दे० 'बोटा' (फली)।

बरबत—पु० [अ०] एक तरह का बाजा।

बरबर—स्त्री०=बटबट (बकवाट)।

पु० [अ० बर्वर्] [भाव० बर-बरता, बर-बरीयत] १. अधीका का एक प्रदेश। २. उक्त प्रदेश का निवासी।

वि० असम्य और राक्षसी प्रवृत्तिवाला।

बरबोरस्तान—पु० [अ० बर्वर्] अधीका का एक देश।

बरबरी—स्त्री० [दिश०] एक प्रकार की बकरी।

पु० [अ० बर्वर्] बरबर देश का निवासी।

बरबस—अव्य० [म० बल। वस] १. बन्पूर्वक। जबरदस्ती। दृशत। २. निर्यक्त। व्यर्थ। बे-कार्यदे।

वि० जिनका कोई वश न चलता हो। न्याचार।

बरबाद—वि० [फा०] [भाव० बरबादी] १ (रचना) जो पूर्णतया ध्वस्त हो गई हो। २ (देश) जिसकी अवस्था बहुत ही खोचनीय हो गई हो। ३ (शाम) जो चीपट हो, गया हो। ४ (व्यक्ति) जिसकी संपत्ति उसके हाथ से निकल चुकी हो। जो नुट चुका हो।

बरबादी—स्त्री० [फा०] बरबाद होने की अवस्था या भाव। तबाही। विनाश।

बरम—पु०=बर्म (बजब)।

बरमना—पु०=बर्मा।

बर-मला—अव्य० [फा०] १. बूले आम। सबके सामने। २. मन-माने ढंग या रूप से। जी भरकर। जैसे—किसी को बर-मला खारी-खोटी मुनाना।

बरमल—अव्य० [फा०] १. उपयुक्त, ठीक अथवा प्रयत्न अवगम या समय पर। २. बदला लेने की दृष्टि से। मंहनीड।

बरमा—पु० [दिश०] [स्त्री० अल्पा० बरमी] लकड़ी आदि में छेद करने का लोहे का एक प्रसिद्ध औजार।

पु० [म० ब्रह्म देव०] भारत की पूर्वी सीमा पर बंगाल की खाड़ी के पूर्व और आसाम, चीन के दक्षिण का एक पहाड़ी प्रदेश।

१पु०=बर्मा।

बरमी—वि० [हि० बरमा=ब्रह्म देव] बरमा-सम्बन्धी। बरमा देश का। जैसे—बरमी चावल।

पु० बरमा या ब्रह्म देश का निवासी।

स्त्री० बरमा या ब्रह्म देश की भाषा।

स्त्री० [?] धातु, लकड़ी आदि में छेद करने का छोटा बरमा।

स्त्री० [?] गीली नाम का पेड़।

बरम्हूबीट—स्त्री० [हि० बरमा (देश) अ० बोट=नाव] प्रायः चालीस हाथ लंबी एक प्रकार की नाव। इसका पिछला भाग अगले भाग की अपेक्षा अधिक चौड़ा होता है।

बरम्हा—पु० १. दे० 'ब्रह्मा'। २. दे० 'बरमा'। ३. दे० 'बर्मा'।
बरम्हाउ—पु०=बर्माहाव।

बरम्हाना—मं० [म० ब्रह्म] [भाव० बरम्हाव] (ब्राह्मण का) किसी को आधीबर्त देना। उदा०—तीरन तूर न ताल बने बरम्हावत भाट गावत ठाडी।—केशव।

बरम्हावा—पु० [स० ब्रह्म+आव (प्रत्यय०)] १. ब्राह्मणत्व। २. ब्राह्मण का दिया हुआ आधीबर्त। उदा०—बाएँ हाथ देह बरम्हाऊ।—जायसी।

बरराना—अ०=बरनी।

बरदे, **बरदी**—पु०=बर (भिड)।

बरदत—स्त्री० दे० 'तिल्ली' (रोंग)।

बरवल—पु० [दिश०] एक प्रकार की मंड।

बरवहा—पु० [?] मछलियों खाकर निर्वाह करनेवाली एक चिड़िया।

बरवा—पु०=बरवै।

बरवै—पु० [दिश०] एक छद जिसके विषम अर्धात् पहलें और तीसरे चरणों में बाएँ-बाएँ और सम अर्धात् दूसरे और चौथे चरणों में सात-सात मात्राएँ होती हैं। सम चरणों की अंतिम चार-चार मात्राओं का जगण के रूप में होना आवश्यक होता है।

बरव—पु०=बर्व।

बरवणा—अ०=बरमना।

बरवा—स्त्री०=बर्वा।

बरवाना—मं०=बरमना।

बरवासन—पु० [सं० वर्षागन] साल भर की भोजन मामूरी जो एक व्यक्ति अथवा एक परिवार के लिए स्येष्ट हो।

बरस—पु० [सं० वर्ष] १. उतना समय जितना पृथ्वी को सूर्य की पूरी एक परिक्रमा करने में लगता है अर्थात् ३६५ दिन ५ घंटे, ४८ मिनट और ४५ ५१ सेकंड का समय। २. ३६५ दिना का समय। अधिवर्ष में इसका मान ३६६ दिनों का होता है। ३. विभिन्न पंचांगों के द्वारा नियत ३६५ दिनों का विशिष्ट समय।

पव—बरस दिन का दिन—ऐसा दिन। (स्योहार आदि) जो साल में एक ही बार आता हो। बडा स्योहार।

४. वह समय जो एक जन्म-दिन से दूसरे जन्म-दिन तक में पड़ता है। जैसे—इस समय इसका तीसरा वर्ष चल रहा है।

बरस गौठ—स्त्री० [हि० बरस+गौठ] १. वह तिथि या दिन जो किसी के जन्म की तिथि या जन्म-दिन के क्रमात् ३६५-३६५ दिनों के उपरांत पड़ता है। साल-गिरह। २. उक्त दिन मनाया जानेवाला उत्सव।

बरसना—अ० [म० वर्षण] १. बादलों से जल का बूँदों के रूप में गिरना। वर्षा होता। २. वर्षों के जल की तरह ऊपर से वर्षा या छोटे-छोटे टुकड़ों के रूप में गिरना। जैसे—मकानों पर से फूल बरसना।

३ बहुत अधिक मात्रा, मान या मन्थ्या में लगातार आना या आता रहना । जैसे—(क) किसी के घर रूपए बरसना, किसी पर लाठियाँ बरसना (निरतर लाठियों का प्रहार होना) ।

मुहा०—(किसी पर) बरस पड़ना—बहुत अधिक क्रोध होकर लगातार कुछ समय तक डाँटने-बपटने लगना । जैसे—तुम तो जरा-सी बात पर नोकरों पर बरस पड़ते हो ।

४. बहुत अच्छी तरह और यथेष्ट मात्रा में दिखाई देना या लूब प्रकट होना । जैसे—किसी के चेहरे से घरार बरसना, किसी जगह सोभा बरसना । ५. दमिय हुए गल्ले का इस प्रकार हवा में उड़ना जाना जिसमें दाना-भूसा अलग अलग हो जाय । बीसया जाना । डाली होना ।

बरस विषयार—वि० स्त्री० [हि० बरस+विषयार (बच्चा देनेवाली)] हर माल बच्चा देनेवाली (मादा चौपाया) ।

बरसात—स्त्री०—बरसावत ।

बरसात—वि० स्त्री०—बरस-विषयार ।

बरसाक—वि० [हि० बरसाना+आक (प्रत्य०)] बरसनेवाला । वर्षा करनेवाला (बादल आदि) । उदा०—हूँ मैं बरसाक एक बार तो बरसते ।—मोनापति ।

वि० [हि० बरसाना] बरसानेवाला । वर्षा करनेवाला ।

बरसात—स्त्री० [स० वर्षा; हि० बरगना+आत (प्रत्य०)] [वि० बरसाती] १. वर्ष ममय जिसमें आकाश से जल बरस रहा हो । जैसे—बरसात ही रही है, अभी घर से मत निकलो । २. वर्ष की वह ऋतु या मास जिसमें प्रायः पानी बरसता रहता है । वर्षाकाल । ३. वर्षा ।

बरसाती—वि० [हि० बरसात+ई (प्रत्य०)] १. बरसात-मवधी । बरसात का । जैसे—बरसाती हवा । २. बरसात के दिनों में होनेवाला । जैसे—बरसाती तरकारियाँ, बरसाती मेले ।

स्त्री० १. प्लास्टिक, मोमजा में आदि का बना हुआ एक प्रकार का डीला-डाला कौट जिस पहनने में शरीर या कपड़े पर वर्षा के पानी का कोई प्रभाव नहीं पड़ता । २. कौटियों आदि के प्रवेश-द्वार पर बना हुआ वह छायादार षोडाना म्यान जहाँ सवार्नियाँ उतारने के लिए गाड़ियाँ खड़ी होती हैं ।

३. षोडों का एक रोग जो प्रायः बरसात में होता है । २. प्रायः बरसात के दिनों में आँख के नीचे होनेवाला एक प्रकार का धना । ३. बरसात के दिनों में पैरों की उँगलियों में होनेवाली एक प्रकार की फुंसियाँ । ४. बरस नाम का पक्षी । चीनी मोर ।

बरसाना—स० [हि० बरसाना का प्र०] १. बादलों का जल की वर्षा करना । २. वर्षा के जल की तरह लगातार बहना सी चीजें ऊपर से नीचे गिराना । जैसे—कूल बरसाना । ३. बहुत अधिक मात्रा में चारों ओर से प्राप्त करना । ४. अनाज को इस प्रकार हवा में गिराना जिससे दाने और भूसा अलग हो जायें । बीमाना । डाली देना ।

सयो० कि०—डालना ।—देना ।

बरसावत—स्त्री०—बरसावत ।

स्त्री० [स० वट+साधिनी] जेट वदी अभावस जिस दिन स्थिरा वट-साधिनी की पूजा करती है ।

बरसावना—स० बरसाना ।

बरसिया—पु० [हि० बर-ऊपर+हि० सींग] वह बैल जिसका एक सींग लडा और दूसरा सींग नीचे की ओर झुका हुआ हो । मैना ।
†पु०—बारहसिया ।

बरसी—स्त्री० [हि० बरस; ई (प्रत्य०)] १. वह तिथि या दिन जो किसी के मरने की तिथि या दिन के ठीक वर्ष-वर्ष बाद पड़ता हो । २. मृत का पश्चिम आद ।

बरसीला—वि० [हि० बरसना+ईला (प्रत्य०)] बरसनेवाला ।

बरसू—पु० [देश०] एक प्रकार का वृक्ष ।

बरसोबिया—पु० [हरि० बरस+ओबिया (प्रत्य०)] वह नोकर जो साल भर तक कोई काम करने के लिए नियुक्त हुआ या बिना मया हो ।

बरसीही—स्त्री० [बरस+ओही (प्रत्य०)] वर्ष के वर्ष दिया जानेवाला कोई कर ।

बरसीहा—वि० [हि० बरसना+ओहा (प्रत्य०)] [स्त्री०] बरसीही । १. बरसनेवाला । २. जो बरसने को हो ।

बरहटा—पु० [स० भटको] कड़े भटे का पीषा और फल ।

बरह—पु० [का० बग्] दल । पत्ती ।

बर-हूक—वि० [का०] १. जो धर्म अथवा न्याय की दृष्टि में बिल्कुल ठीक हो । २. उचित । वाजिब ।

बरहना—वि० [का० वहेन] विगके शरीर पर कोई वस्त्र न हो । नगा । नन ।

बरहबंका—पु०—ब्रह्माद ।

बरहस—वि० [का० बरहस] [भाव० बरहमी] १. जिसे क्रोध आ गया हो । क्रुद्ध । २. भडका हुआ । उत्तेजित । क्षुब्ध । ३. इधर-उधर छिन्ना या बिखरा हुआ ।
†पु०—बहडा ।

बरहा—पु० [हि० बहना] [स्त्री० अल्पा० बरही] छोटी नानी विशेषतः दो भेड़ों के बीच की वह छोटी नाली जिसमें खेतों को पानी पहुँचाया जाता है ।
पु० [स० वहि] मोर ।
पु० [हि० बरना-वटना] मोटा रस्ता ।
पु० [स० बारहा] [स्त्री० अल्पा० बरही] जगमगी मूत्र ।

बरीह—पु०—बरही ।

बरहिया—स्त्री० [हि० बारह?] पुरानी लाल की एक प्रकार की नाव जो बारह हाथ चौड़ी होती थी ।
बरही—पु० [स० वहि] १. मयूर । मोर । २. साही नामक जगनी जुतु । ३. अग्नि । आग । ४. कुकटु । मुरगा ।
स्त्री० [हि० बारह] १. सत्ता उपलब्ध होने से बारहवाँ दिन । २. उक्त अवसर पर प्रसूता को कराया जानेवाला स्नान और उसके माथ होनेवाला उत्सव ।

स्त्री० [हि० बरहा] १. पत्थर आदि भारी बोझ उठाने का मोटा रस्ता । २. जकाने की लकड़ियों का गट्टर । ईबन का बोझ (रस्सी से बंधी होने के कारण) ।

बरही पीड—पु० [स० वहि पीड] मोर के परो का बना हुआ मुकुट । मोर-मुकुट ।

बरही-मूक—पु० [स० वहिमूक] देवता ।

बरहो—पु० [हि० बरवी]—बरही (सन्तान-जन्म की)।

बरहाना—स०—बरहाना।

बराबल—पु० [दश०] १ जहाज का वह रस्सा जो मस्तूल को सीधा खड़ा रखने के लिए उसके चारा ओर ऊपरी सिरे में लेकर नीचे तक जहाज के भिन्न भिन्न भागों में बाँधे जाते हैं। बराडा। २ जहाजी काम में आनेवाला कोई रस्सा।

बरांदा—पु० १ दे० 'बरायदा'। दे० 'बंढल'।

बरांदा—स्त्री० [अ० बँदी] आड़, सेव आदि के ब्रह्मदेव जानेवाली एक तरह की बड़िया शरा।

बरा—पु० [म० बरी] उरद की पीसी हुई दाल का बना हुआ टिकिया के आकार का एक प्रकार का पक्वान्न जो धो या तेल में पकाकर यो ही अथवा दही, दमली के पानी आदि में डालकर खाया जाता है। बडा।

†पु०—बरायद (बट वृक्ष)।

†पु०—बट्टा (बाह पर पहनने का गहना)।

बराही—स्त्री० [दश०] एक प्रकार का गन्ना।

स्त्री०—बडाई।

बराक—पु० [स० बराक] १ भिन्न। २ युद्ध। लडाई।

वि० १ शीघ्रनीय। मोच करने के योग्य। २ अथम। नीच।

३ पापी। ४ बायुरा। बेचारा।

बराट—पु० [म० बराटिका] कौड़ी।

वि०—बराट।

बराड़ी—स्त्री०—बराड़ी।

बरात—स्त्री० [म० बराया] १ विवाह के समय वर के माथ कन्या-बागों के यहाँ जानेवाले लोगों का दल या समूह जिनके माथ शोभा के लिये बाने, हाथी, घोड़े आदि भी रहते हैं। जनेत।

क्रि० प्र०—आना।—जाना।—निकलना।—सजना।—सजाना।

२. एक साथ मिलकर या दल बाँधकर कहीं जानेवालों का समूह।

बराती—वि० [हि० बरात +ई (प्रत्य०)] बरात-सम्बन्धी।

पु० किसी बरात में मर्मिमलित होनेवाला या होनेवाले व्यक्ति।

बरान कोट—पु० [अ० ब्राउन कोट] १ सिपाहियों के पहनने का एक प्रकार का बडा तथा डीला-डाला ऊनी कोट। २ ओवर कोट।

बराना—स० [स० बारण] १. प्रसंग आने पर भी कोई बात न कहना। मतलब छिपाकर इधर-उधर की बातें कहना। बचाना। २ बहुत सी बस्तुओं या बातों में से किसी एक बस्तु या बात को किसी कारण छोड़ देना। जान-बूझकर अलग करना। चरना। ३ रक्षा या हिंसा-जत करना। छेतो में से चूँटे आदि मगाना।

स० [स० बरण] बहुत सी चीजों में से अपनी इच्छा के अनुसार चीजे चुनना। देख-देखकर अलग करना। चुनना। छंटना।

स० [स० बारि] १ सिपाई का पानी एक नाली से दूसरी नाली में ले आना। २ छेतों में पानी देना। सींचना।

† स०—बालना (जलाना)

बराबर—वि० [फा० बर] १. गुण, महत्त्व, मात्रा, मान, मूल्य, संख्या आदि के विचार से जो किसी के तुल्य या समान हों। जो तुलना के विचार से न किसी से घटकर और न किसी से बढ़कर ही हों। समान।

जैसे—को दोनों किताबें तील में बराबर हैं। (स) कानून की दृष्टि में सब लोग बराबर हैं।

पद—बराबर का—(क) पूरी तरह से तुल्य या समान। जैसे—इसमें आटा और पीसी दोनों बराबर के पकते हैं। (ख) बहुत कुछ तुल्य या समान। जैसे—यह लड़का बराबर का हो जाय, तब उसे मारना-पीटना नहीं चाहिए।

२ (तल) जो ऊँचा-नीचा या खुरदुरा न हो। मग। जैसे—वह सारा मैदान बराबर कर दो। ३. जैसा होता हो या होना चाहिए, वैसा ही। उपयुक्त और ठीक। ४. (ऋण या देन) जो चुका दिया गया हो। चुकता किया हुआ। ५. जिसका अत या समर्पित कर दी गई हो। जैसे—सारा काम बराबर करके तब यहाँ से उठना।

मूहा—(कौई चीज) बराबर करना—समाप्त कर देना। अंत कर देना। न रहने देना। जैसे—उन्होंने दो ही चार बरस में बहों की सारी सम्पत्ति बराबर कर दी।

६ जिसके अभाव, भुटि, दोष आदि की पूर्ति या संशोधन कर दिया गया हो। जैसे—गड़बड़ बराबर करना।

क्रि० वि० १ बिना कहे हुए। लगातार। निरंतर। जैसे—बराबर आगे बढ़ते रहना चाहिए। २. एक ही पक्ति या सीध में। जैसे—सड़क के दोनों तरफ बराबर पेड़ लगे हैं। ३. सदा। हमेशा। जैसे—हमारे यहाँ तो बराबर ऐसा ही होता आया है। ४. पारबंद। बगल में। जैसे—दुग्धन की कब तैरे बराबर बनायेगे।—दाग। ५. बिना किसी परिश्रम, विकृति आदि के। ६ साथ-साथ। जैसे—जीड़ में हमारे बराबर रहना; इधर-उधर मत हो जाना। ७. किसी से समान पूरी पर। समानांतर। जैसे—इसी के बराबर एक और रेखा खींचो।

बराबरी—स्त्री० [हि० बराबर +ई (प्रत्य०)] १ बराबर होने की अवस्था या भाव। समानता। तुल्यता।

पद—बराबरी से—असाधन, राज-ऋण, विनिमय आदि की दर के संबंध में अंकित, नियत या वास्तविक मूल्य पर। (एंट पार)

२ गुण, क्प, शक्ति आदि की तुल्यता या मातृत्व। ३ वह स्थिति जिसमें प्रतियोगिता, स्पर्धा आदि के कारण किसी का अनुकरण करने, अथवा उसके तुल्य या समान बनने का प्रयत्न किया जाता है। मुकाबला। जैसे—वह तो बड़े आदमी हैं, तुम उनकी क्या बराबरी करोगे?

४. कुस्ती, खेल आदि के परिणाम की वह स्थिति जिसमें दोनों पक्ष न तो एक दूसरे को हरा ही सके हों और न एक दूसरे से हारे ही हों।

बराबर—वि० [फा०] १. जो बाहर निकला हुआ हो। बाहर आया हुआ। सामने आया हुआ। २ (बुरा या छिपाकर रखा हुआ पदार्थ) किसी के घर से दूँडकर बाहर निकाला या सामने लाया हुआ। जैसे—किसी के यहाँ से चोरी या चोर-बाजारी का माल बराबर होना। स्त्री० १ बाहर जानेवाला माल। निष्पत्ति। २. प्राप्य धन की होने-वाली बसूली। ३. दे० 'पद-बराट'।

बराबरगी—स्त्री० [फा०] १. बराबर होने अर्थात् बाहर आने की क्रिया या भाव। २. क्षोभ या चोरी गये हुए माल का किसी के पास से निकाल कर प्राप्त किया जाना। ३. विदेशी को माल मेजने की क्रिया या भाव। निर्यात करना।

बरायदा—पु० [फा० बरायद] १. मकानों में वह छाया हुआ लंबा

सेंकरा माग जो कुछ आगे या बाहर निकला रहता है। बाराजा। छम्जा।
२. ओसारा। सालान।

बाराहूना—पु०—ब्राह्मण।

बराय—अव्य० [फा०] वास्ते। लिए। निमित्त। जैसे—बराय नाम—
नाम-मात्र के लिए।
अव्य० बराह।

बराधन—पु० [स० वर+आयन (प्रत्यय०)] लोहे का वह छल्ला जो
व्याह के समय दूल्हे के हाथ में पहनाया जाता है।

बराह—पु० [फा०] वह चढा जो गाँवों में हर घर से लिया जाता
हो।

वि० [फा०] १. खानेवाला। २. किसी के द्वारा लाया हुआ। जैसे—
गण-बराह जमीन।

पु० [देश०] एक प्रकार का जंगली जानवर।

बाराहक—पु० [हि०] हीरा।

बाराही—स्त्री० [स० वराही] सपूर्ण जाति की एक रागिनी जो दोषहृ
में गाई जाती है। कोई कोई इसे मीरच राग की रागिनी मानते हैं।

स्त्री० [हि० बराह प्रदेश] बराह या खानदेश में होनेवाली एक
प्रकार की रुई।

बाराही श्याम—पु० [म०] सपूर्ण जाति का एक सकर राग जिसमें सब
शुद्ध स्वर लगते हैं।

बाराह—पु० [हि० बराना+आव (प्रत्यय०)] बराने अर्थात् बचकर रहने
की क्रिया या भाव। परहेज। जैसे—घर में किसी को बेचक निकलने
पर कई तरह के बराह करने पड़ते हैं।

बारास—पु० [स० पांतास] एक तरह का अत्यधिक सुगन्धित कपूर।
मीमसेनी कपूर।

पु० [अ० बेस] जहाज में पाल की वह रस्सी जिससे पाल का रुब
पुमाया जाता है।

बाराह—कि० वि० [फा०] १. मार्ग या रास्ते से। २. जरिये से।
द्वारा। ३. के तीर पर। के रूप में। जैसे—बराह मेहरबानी रास्ता
दे दे। ४. के विचार से। जैसे—बराह इसफा-इसाफ के विचार
से।

† पु०—बराह।

बाराहमन—पु०—ब्राह्मण।

बाराहिल—पु० [?] करिन्दा। गुमास्ता। (पूरब)

बाराही—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की घटिया ऊल।

† स्त्री०—वाराही।

बरिआ—वि०—बलवान।

बरिआई—स्त्री० [हि० बरियार] १. बलवान होने की अवस्था
या भाव। शक्तिमत्ता। २. बल-प्रयोग। जबरदस्ती।

अव्य० १. बलपूर्वक। जबरदस्ती। २. विवशता के कारण अथवा
स्वयं को न रोक सकने पर। उदा०—कहत देव हूयत बरिआई।—
तुलसी।

† स्त्री०—बडाई।

बरिआत—स्त्री०—बरात।

बरिआछा—पु०—बरछा।

बरिबड—वि० [स० बलवत] १. बलवान। बली। २. प्रचंड। विकट।
३. प्रतापशाली।

बरियाई—स्त्री०—बरिआई।

† अव्य०—बरिआई।

बरियात—स्त्री०—बरात।

बरियार—वि० [हि० बल+आर (प्रत्यय०)] [स्त्री०, भाव० बरियारी]
बल में जो किसी से अधिक हो। बली।

बरियारा—पु० [स० बला] दे० 'बनभेची' (पौधा)।

बरियाल—पु० [देश०] एक प्रकार का पतला बंस। बंसी।

बरिला—पु० [हि० बडा, बरा] पकीड़ी या बड़े की तरह का एक पक-
वान।

बरिलना—पु० [देश०] एक तरह की क्षारयुक्त मिट्टी। सज्जी। मज्जी-
खार।

बरिचना—अ०—बरसना।

बरिषा—स्त्री०—वर्षा।

बरिच्छ—वि०—बरिच्छ।

बरिस—पु०—बरस।

बरी—स्त्री० [स० बरी; प्रा० बरी] १. गोल टिकिया। बटी।
२. उडद, मूंग आदि की पीठी आदि की बडी। ३. मट्टी में फुँके हुए एक
तरह के ककड जिन्हे बुसा तथा पीटकर दीवारों आदि की गोडाई और
फलस्तर के लिए मसाला तैयार किया जाता है।

स्त्री० [स० वर बूहा] गहने, कपड़े, भेदे और मिठाइयों जो दूल्हे
की ओर से दुलहिन के यहाँ भेजी जाती हैं।

स्त्री० [देश०] एक प्रकार की घास जिसके दाने बाजरे में मिलाकर
राजपूताने की ओर गरीब लोग खाते हैं।

वि० [फा०] १. अभियोग, दोष आदि से छूटा हुआ। बरी। मुक्त।
वि० निर्दोष। बेकसूर। ३. अलग। पृथक्। ४. आजाद। स्वतंत्र।

† वि०—बली (बलवान)।

बरोसा—पु०—बरस।

बड—अव्य० [स० वर+अच्छ, भला] १. भले ही। ऐसा ही जाय तो
हो जाय। चाहे। २. बरत्। बल्कि।

बडआ—पु० [स० बटुक, प्रा० बडुअ] १ जिसका यज्ञोपवीत तों हो
गया हो, पर जो अभी तक गृहस्थ न हुआ हो। ब्रह्मचारी। बट्ट। २

उपनयन या यज्ञोपवीत के समय गाये जानेवाले गीत। ३
उपनयन या यज्ञोपवीत नामक स्तम्भार। ५. ब्राह्मण का बालक।

५ पडा-लिखा और पुरोहिताई करनेवाला ब्राह्मण।

पु० [हि० बरना] मूँज के छिलके की बनी हुई बडी जिससे ढलियाँ
आदि बनाई जाती हैं।

बडक †—अव्य०—बडक।

बडन—पु०—बडण।

बडना—पु०—बरना (गुप्त)।

स्त्री०—बडणा (नदी)।

बडनी—स्त्री० [देश०] १ बट-वृक्ष की जटा। (पूरब)

† स्त्री०—बरोनी।

बडला—पु०—बडला (लंबा काठ)।

बषभां—पुं०=बष्भा।

बक्ष्य—पुं०=बक्ष्य।

बक्ष्यी—स्त्री० [सं बक्ष्य] एक नदी जो सई और गोमती के बीच में है।

बरेठा—स्त्री० [सं बरठक+मोला, मोल लकड़ी] [स्त्री० अल्पा० बरेठी] १ छाजन के नीचे लम्बाई के बल सगी हुई लकड़ी। बलीडा। २ लपरल या छाजन के बीचवाला सबसे ऊँचा भाग।

बरे—अव्य० [सं√बल, हि बर] १ जोर से। २ ऊँचे स्वर से। बरपुर्वक। ३ जबरदस्ती। ४. बढ़ते में। ५. निमित्त। लिए। भास्ते।

बरेली—स्त्री० [हिं बाह+रखना] बाह पर पहनने का एक गहना। स्त्री० [हिं बर+रक्षा] विवाह-समय निश्चिन्त और म्बिर करने के लिए बर या कन्या देसना। विवाह की ठहरीनी।

बरेच्छा—पुं०=बरच्छा।

बरेजा—पुं० [सं बाटिका, प्रा० बाटिज] पान का मोटा।

बरेठा!—पुं० [सं बरिच्छ?] धोबी।

बरेता—पुं०=बरेता।

बरेता—पुं० [हिं बरना, बटना+एत (प्रव्य०)] [स्त्री० अल्पा० बरेनी] सन का मोटा रस्ता। नार।

बरेठी!—पुं० [देश०] चरवाहा।

बरेथी—स्त्री० बरेली।

बरेडा!—पुं० बरेडा।

बरा!—स्त्री० [हिं बार+बाल] १ आलू की जड़ का पतला रेशा। (रामरेज) २ एक प्रकार की घास।

बराक—पुं० [हिं बर+रोकना] १ विवाह-समय निश्चित होने के पहले होनेवाला एक कृत्य। विशेष दे० 'बरच्छा'। २ वह पान जो उक्त अवसर पर कन्या-पक्ष की तरफ से बर-पसवाली को दिया जाता है।

अव्य० [फा० व+हिं रोक] बिना किसी रोक-टोक या बाधा के। *पुं० [सं बलीक] सेना।

बरोजां—स्त्री० [सं बट+ज] बरगद की जटा। बरोह।

बरोठा—पुं० [सं डार+कोष्ठ; हिं वार+कोठा] १ ह्योडी। पीठी।

पय—बरोठे का चार-विवाह के समय होनेवाली डार-पूजा।

२. दीवानखाना। बँडक।

बरोभा—पुं० [देश०] बहुशैत जिसमें पिछली फसल कपास की हुई हो।

बरोबर—वि०=बराबर।

बरोह—स्त्री० [सं वा+रोह=आनेवाला] बरगद के पेड़ के ऊपर की डालियों में टंगे हुए सूत या रस्सी के जैसा वह अंग जो क्रमशः नीचे की ओर झुकता तथा जमीन पर पहुँचकर जम जाता तथा नये वृक्ष का रूप धारण करता है।

बरोही—अव्य० [हिं बर-बल] १. किसी के बल या आधार पर। २ बलपूर्वक।

बरोछी—स्त्री० [हिं वार+छोड़ना] वह लूथी जिसमें सूख के बाल लगाये गये हों।

बरोखा—पुं० [हिं बड़ा+ऊख] एक प्रकार का बड़ा गधा।

बरोठा—पुं०=बरोठा।

बरोनी—स्त्री० [सं बरण=ढाँकना] पलकों के आगे के बालों की पतित।

बरोरी—स्त्री० [हिं बड़ी-बरी] बड़ी या बरी नाम का एकवान।

बर्क—स्त्री० [अ० बर्क] बिजली। बिद्युत्।

वि० १. बहुत जल्दी काम करनेवाला। तेज। २. (पाठ) जो इतना कठस्थ हो कि तुल्य कदा या सुनाया जा सके।

बर्कलं—स्त्री०=बरकल।

बर्कर—पुं० [सं बर्कर] १ बकर। २. पशु का बच्चा। ३ हूँसी-मजाक।

बर्की—वि० [अ० बर्की] बर्क अर्थात् बिजली-सम्बंधी। बिद्युत् का।

बर्काल्स—वि० [माव० बर्काल्स्ती] =बर्काल्स्त।

बर्ग—पुं० [फा०] बल। पत्ता। पत्ती।

बर्छा—पुं०=बरछा।

बर्ज—वि० [सं बर या बर्ज] अपने वर्ग में श्रेष्ठ। उदा०—व्यास आदि कवि बर्ज बखानी।—मुलसी।

बर्जना—स०=बरजना।

बर्जन—पुं०=वर्जन।

बर्जना—स० [हिं वर्जन] वर्जन करना। बयान करना।

बर्तं—पुं०=वर्त।

बर्तन—पुं०=बरतन।

बर्तना—स०=बरतना।

बर्तिय—पुं०=बरताव।

बर्द—पुं० [सं वलद] बैल।

बर्दबानी—स्त्री० [बर्दवान (स्यान)] पुरानी चाल की एक प्रकार की तलवार जो कदाचित् बर्दवान में बनती थी।

बर्दहत—स्त्री०=बर्दाहत।

बर्नं—पुं०=वर्ण।

बर्ण्य—वि०=वर्ण्य।

बर्क—पुं०=बरक।

विशेष—'बर्क' के सभी विकारी रूपों के लिए दे० 'बरक' के विकारी रूप।

बर्बट—पुं० [सं√बर्ब(गति)+अटद्] राजमाय।

बर्बटी—स्त्री० [सं बर्बट+डीप्] १ राजमाय। २ बेश्या।

बर्बर—पुं० [सं√बर्ब(जाना)+अरद्?] १ प्राचीन काल में, आर्यों से निम्न कोई व्यक्ति। २ उत्तर काल में कोई ऐसा व्यक्ति जिसमें आर्यों के ते गुण न हों, बल्कि जो अतम्य, क्रूर और हिंसक हों। जंगली व्यक्ति। ३ अगली जातियों का नृप्य। ४ अस्त्री आदि की शकार। ५. समीप में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग। ६ बृषराजके बाह। ७. एक तरह का पीया। ८. एक तरह की मछली। ९. एक तरह का कीड़ा।

वि० [माव० बर्बरा] १. जो अतम्य, क्रूर, जंगली और हिंसक हो। २. उद्वत। उहड़। ३. बृषराला (बाल)।

बर्बरक—पुं० [सं] एक प्रकार का नक्षत्र जिससे शीत चन्दन भी कहते हैं।

बर्बरता—ग्री० [म० बर्बर+मूल+टाए] १ बर्बर अर्थात् परम असभ्य, क्रूर तथा हिंसक होने की अवस्था या भाव । २. बर्बर व्यक्ति का कोई विशिष्ट आचरण या कार्य ।

बर्बरा—स्त्री० [स० बर्बर+टाए] १ बर्बरी । बन-तुलमी । २ एक प्रकार की मक्खी । २ एक प्राचीन नदी ।

बर्बरी—स्त्री० [म० बर्बर+डोए] १ बन तुलमी । २ ईगुरा । सिडूर । ३. पीला चन्दन ।

बर्बरी—पु०—बर् ।

पु० [हिं० बरना] रग्मा-कवी ।

बर्बरक—वि० [अ० बर्बरक] १ जगमगाता हुआ । चमकीला । २. बहुत उजला । मर्कट । २ वेगवान् । तेज । ४ चतुर । चालाक । ५ जिसका पूरी तरह से अभ्यास किया गया हो । ६ कठोर्य । मुखार्थ ।

बर्बरा—अ० [अनु० बर वर] १ बर बर या बड़ बड़ करना । व्यर्थ बोलना । बकना । २ नीद में पड़े पर व्यर्थ की बातें करना ।

बर्बर—पु० [स० बरघण] १ मधु-मखियों की तरह छत्ते बनाकर रहने-वाला एक तरह का मीरे के आकार-प्रकार का बक मारनेवाला कीड़ा जो उड़ते समय मूँ-मूँ शब्द करता रहता है । मित्र । २ वे० 'कुमुद' ।

बर्बरी—पु० [दिश०] एक प्रकार की चिड़िया ।

बर्बरा—ग्री० बरसात ।

बर्ह—पु०—बर्ह (भोर का पक्ष) ।

बर्ही—पु०—बर्ही (भोर) ।

बर्ह—वि० [फा०] १ उच्च । ऊँचा । २ महुत् ।

बर्बरी—स्त्री० [फा०] १ ऊँचाई । २. महान् ।

बर्बरा—ग्री० [स०] मोमसेन की पत्नी । (महाभारत)

बर्बरी—स्त्री० [दिश०] एक प्रकार का पेड़ जिसके फल खट्टे होने हैं और अचार के काम आते हैं । २ उक्त पेड़ का फल ।

बल—पु० [स० बल (जीवन देना) अन्व०] १ वह शारीरिक तन्त्र जिसके सहारे हम चलते-फिरते और सब काम करते हैं । यह वस्तुतः हमारी शक्ति का कार्याकारी रूप है, और चीजे उठाना, मीचन, ड्रैफ़-लाना, फेंकना आदि काम इसी के आधार पर होत हैं ।

मुहा०—बल बांधना विद्यार्थी प्रयत्न करना । जोर लगाना । उदा०—जिन बल यधि बड़ावदु छीनि ।—मूर । **बल भरना**—जोर या ताकत दिखाना या लगाना ।

२ उक्त का वह व्यावहारिक रूप जिसमें दूसरों को दबाना, परिचालित किया अथवा बस में रखा जाता है । ३ राज्य या शासन के सत्तार मैनिको आदि का वर्ग जिसकी सहायता से युद्ध, रक्षा, शांति-स्थापन आदि कार्य होते हैं । (फोर्स, उक्त तीनों अर्थों में) ४ शरीर । ५ पुरुष का बर्ष । ६ ऐसा परकीय आधार या आश्रय जिसके सहारे अपने बूते या शक्ति से बढकर कोई काम किया जाता है । जैसे—मुस नो उन्ही के बल पर बड़-बढकर बातें कर रहे हैं ।

पद—किसी के बल—जिसी के आम्रे या सहारे से । जैसे—हाथ के बल उठना, पैरों के बल बैठना ।

७ पहलू । पाश्व । जैसे—दाहिने (या बाएँ) बल लेटना ।

पु० [स० बल] १ बलराम । बलदेव । २ कौआ । ३ एक राक्षस का नाम । ४ ब्रम्हा नामक वृक्ष ।

पु० [स० बलि—द्वारी, मरोड या बल्य] १ वह घुमाव, चक्कर या फंरा जो किसी लक्ष्यो या नरम चीज के बढने या मरोडने से बीच बीच में पड़ जाता है । ऐठन । मरोड । जैसे—रग्गी त्रल गई. पर उसके बल नही गे ।

फि० प्र०—डालना ।—देना ।—निकालना ।

मुहा०—बल खाना—(क) बढने या घुमाये जाने में घुमाकरदार हो जाना । ऐटा जाना । (ख) कुचित या टेडा होना । बल देना (क) ऐटना । मरोडना । (ख) बढना । जैसे—डोरी या रग्गी में बल देना । २. किसी चीज को यो ही अथवा किसी दूसरी चीज के चारो ओर घुमाने पर हर बार पडनेवाला चक्कर या फंरा । लपेट । जैसे—रग्गी के दो बल डाल दो तो गठरी मजबूती से बंध जायगी ।

फि० प्र०—डालना ।—देना ।

३ गोलाई लिये हुए वह घुमाव या चक्कर जो लहरो के रूप में दूर तक बला गया हो । ४ ऐसा अमिग, न जिसके कारण मनुष्य मरल प्राय में आचरण या व्यवहार न करता हो । जैसे—मुज्जमे टाम डालपा ना मे तुम्हारा सारा बल निकाल दूंगा ।

मुहा०—बल की लेना—घमड करना । इतराना ।

५ ऐसा अभाव, रुटि या दोष जिसके कारण कोई चीज ठोक तरह में काम न करती हो । जैसे—न जाने इस घड़ी में क्या बल है कि यह रोज एक दो बार बढ हो जाती है ।

फि० प्र०—निकालना ।—पढना ।

६ कपडो आदि में पडनेवाली सिलबट । सिकन । जैसे—उस काट में दो जगह बल पडता है; इसे ठोक कर दो । ७ वह अवस्था जिसमें कोई चीज मीरो न रहकर बीच में या ओर कही कुछ मुक, दब या लचक जाती है । लचक ।

मुहा०—(किसी चीज का) बल खाना बीच में में कही कुछ टेना होकर किसी ओर धोडा मुड जाना । झुकना । लचकना । जैसे—कमानी का दबने पर बल खाना । (शरीर का) बल खाना कामलना, दुबलना, सुकुमारता आदि के कारण अथवा भाव-भंगी सुचक रूप में शरीर के किसी अंग का बीच में गे कुछ लचकना । जैसे—चलने से कमर या हूँसेने में परदना का बल खाना ।

८ सहसा झटका लगने पर शरीर के अन्दर की किंगो नम के कुछ इधर-उधर होती जाने की वह स्थिति जिसमें उस नस के उसरी स्थान पर कुछ पीडा होती है । जैसे—आज सबेरे सोकर उठने (या झकनर लौटा उठने) के समय कमर में बल पड गया है ।

फि० प्र०—पढना ।

९ अतर । फरक । जैसे—हमारे और तुम्हारे हिसाब में ५) का बल है ।

फि० प्र०—निकलना ।—पढना ।

मुहा०—बल खाना या सहना—हानि सहना । जैसे—चलो, पांच रुपए हुम ही बल खारें ।

स्त्री०—बाल (अजाज की) ।

पु० हिं० बाल का ससिप्त रूप जो उमे यौगिक पदों के आरम्भ में प्राप्त होता है । जैसे—बल-नोड ।

बलक—पु० [सं०] स्वप्न, विशेषत आधी रात के बाद आनेवाला स्वप्न।
पु० [हिं०] बलकना। बलकने की अवस्था, किया या भाव। वि० दे० 'बलकना'।

बल-कट्टी—स्त्री० [हिं० बाल (अजाज की) + काटना] मुसलमानी राज्य-काल में फसल काटने के समय किसानों आदि से उगाही जानेवाली कर की कित्त।

बलकना—अ० [अनु०] १ उबलना। उफान आना। सौलाना।
२ आवेश या उमग में आना। ३. उमड़ना।

बलकर—वि० [सं० ष० त०] [स्त्री० बलकारी] १ बल देनेवाला।
२ बल बढ़ानेवाला।
पु० अस्त्रि० हड़डी।

बलकल—पु०—बलकल (छाल)।

बलकाना—सं० [हिं० बलकना] १. उबालना। सौलाना।
२ उत्तेजित करना। उमाडना। ३. उमग में लाना। उदा०—
जोवन ज्वर केहि नहि बलकाना।—मुलसी।

बल-काम—वि० [सं०] बल या शक्ति प्राप्त करने का इच्छुक।

बलकुआ—पु० [दिसा०] एक तरह का बीस।

बलवत्—वि० [सं० √बल्+विबृ, बल्+अच्+बृ] श्वेत। सफेद।
पु० मफेद रंग।

बलख—पु० [फा० बलख] अफगानिस्तान का एक प्राचीन नगर।

बलमग—पु० [अ०] [वि० बलामी] नाक, मूँह आदि में से निकलने-वाला एक तरह का लसीला गाढा पदार्थ। कफ। श्लेष्मा।

बलमयी—वि० [फा०] १. बलमय-सम्बन्धी। २. कफ-प्रधान (प्रकृति)।
३. कफजन्य अर्थात् बलमग के कारण होनेवाला।

बलगर—वि० [हिं० बल+गर] १ बलवान्। २ दुष्ट। पक्का। मजबूत
बलवक्र—पु० [सं० मध्य० सं०] १ राज्य। २ राजकीय शासन।
३ नेता।

बलज—पु० [सं० बल/जन् (पैदा होना)+ङ] १ अन्न की रासि।
२ अन्न की फसल। ३ खेत। ४ नगर का मुख्य द्वार। ५. दरवाजा।
द्वार। ६ गुड। लडाई।
हिं० बल से उत्पन्न। बलजगत।

बलजा—स्त्री० [सं० बलज+टाप्] १ पृथ्वी। २ सुंदर स्त्री। ३.
एक तरह की जूही और उसकी कली। ४. रस्सी।

बल-तोड़ा—पु०—बाल-तोड़ा।

बलद—पु० [सं० बल/दा (देना)+क] १. बैल। २ जीवक नामक
वृक्ष। ३ बद्ध गृह्याग्नि जिससे पीठिक कर्म किये जाते थे।
वि० बल देनेवाला।

बल-वर्शा—पु० [सं० ष० त०] प्राचीन भारत में एक प्रकार का सैनिक
अधिकारी।

बलवाङ्ग—पु०—बलदेव (बलराम)।

बलविधा—पु० [हिं० बलद+बैल] १. बैल आदि चरानेवाला। चरवाहा।
२. वनजारा।

बलदेव—पु० [सं० बल/देव+अच्] १. बलराम। २. बापू।

बलमान्—पु० [सं० बल्/अच् (जीवन)+ल्युट्—अन्] बलवान् बवाने की
कित्त। बल देना या बढ़ाना।

बलना—अ० [सं० बहुण या ज्वलन] १. जलना। २ किसी चीज का
इस प्रकार जलना कि उसमें से लपट या ली निकले। जैसे—आग या
दीया बलना।

बल-नीति—स्त्री० [सं० ष० त०] १ आधुनिक राजनीति में बहु नीति
जिसके अनुसार कोई राष्ट्र सैनिक-बल के प्रयोग या सहायता से अपना बल,
प्रभाव, हित आदि बढ़ाने का प्रयत्न करता रहता है। २ प्रतियोगियों
की तुलना में अपना बल या शक्ति बढ़ाने चलने की चाल या नीति।
(पावर-पॉलिटिक्स)

बल-नेह—पु० [हिं० बल+नेह] एक प्रकार का सकर राग जो रामकली,
ध्याम, पूर्वी, मुदरी, गुणकली और पाधार से मिलकर बना है।

बल-वति—पु० [सं० ष० त०] १ बल।

बल-परीक्षा—स्त्री० [सं० ष० त०] १. बहु किया जिसमें किसी का बल
जाना जाता हो। २ विरोधी दलों या बगों में होनेवाला बहु डंड जो
बलपूर्वक एक दूसरे को दबाने अथवा एक दूसरे से अपनी बात मनवाने
के लिए होता है। (सोडाज)

बल-पुच्छक—पु० [सं० ब० सं०] कौआ।

बल-पूर्वक—अव्य० [सं० ब० सं०, कप्] १. बल लगाकर। शक्ति-पूर्वक।
२ किसी की इच्छा के विरुद्ध और अपने बल का प्रयोग करते हुए।
बलत्। जबरदस्ती।

बल-पृच्छक—पु० [सं० ब० सं०,+कप्] रोहू (मछली)।

बल-प्रयोग—पु० [सं०] १ किसी को उसकी इच्छा के विरुद्ध कोई कार्य
करने के लिए शक्ति का किया जानेवाला प्रयोग। (कोअर्सन)
२ अनुचित दबाव।

बल-प्रसू—स्त्री० [सं० ष० त०] बलराम की माता, रोहिणी।

बलबलाना—अ० [अनु० बलबल] [भाब० बलबलाहट] १. जल अथवा
किसी तरल पदार्थ का उबलने समय बल-बल करना। २ ऊँट का
बलबल शब्द करना।

‡अ०—बिलबिलाना।

‡अ०—बड़बड़ाना।

बलबलाहट—स्त्री० [हिं० बलबलाना] बलबलाने से होनेवाला शब्द।
‡स्त्री०—बिलबिलबल।

‡स्त्री०—बड़बड़ाहट।

बलबीज—पु० [सं० बला+बीज] कृषि के बीज।

बलबीर—पु० [हिं० बल (—बलराम)+बीर (—मार्द)] बलराम के
भाई श्रीकृष्ण।

बलबूता—पु० [हिं० बल+बूता] १ बल तथा विसात या सामर्थ्य
जो किसी ठुकर काम के सपादन के लिए आवश्यक होते हैं। २ शारी-
रिक शक्ति और शक्ति सम्पन्नता का समाहार।

बलभ—पु० [सं० बल/भा (धमक)+क] एक प्रकार का विषैला
कीड़ा।

बलभद्र—पु० [सं० बल+अच्, बल-भद्र, कर्म० सं०] १ बलदेव की का
एक नाम। २ लोच का पेड़। ३. नील गाय। ४ पुराणानुसार
एक पर्वत।

बलभद्रा—स्त्री० [सं० बलभद्र+टाप्] १. कुमारी कन्या। २. चाय-
माग लता। ३. नील गाय।

बलभी—स्त्री० [सं० बलभी] मकान की सबसे ऊपरवाली छत पर की कोठरी या कमरा। ऊपर का खड। चौबारा।

बलभ—पुं० [सं० बलभ] भित्तम। पत्ति। बालभ।

बलभीक—पुं०—बलभीक (बाबी)।

बल-भृश—पुं० [सं० बल० तं०] सेनानायक।

बलभय—पुं०—बलभय।

बलभया—स्त्री०—बलभय।

बलभाराम—पुं० [सं० बल० रमण] १. बल, बल-राम, ब० सं०] श्रीकृष्ण-चन्द्र के बड़े भाई जो राहण्य से उत्पन्न थे। बलदेव।

बलल—पुं० [सं० बल० ल (लेना)+क] १. बलराम। २. इन्द्र।

बलभङ्ग—वि० [सं० बलवत्] बलवान्।

बलवत्—वि० [सं० बलवत्] बलवान्। ताकतवर।

बलवर्त—वि० [सं० बल० मनुष्य] (ऐसा बिधान या नियम) जो चलन में ही और इसी लिए जो अपना बल प्रदर्शित कर रहा हो। (इन-फोर्म) १. बलवर्तक। बलवृत्।

बलवती—वि० स्त्री० [सं० बलवत्+डीप्] जो बहुत अधिक प्रबल हो और जिसे रोग या मिटाया न जा सकता हो। जैसे—बलवती इच्छा।

बलवता—स्त्री० [सं० बलवत्+तल्+टाप्] १. बलवान् होने की अवस्था या भाव। २. श्रेष्ठता।

बल-बर्धक—वि० [सं० ब० तं०] बल बढ़ानेवाला।

बल-बर्धन—पुं० [सं० ब० तं०] बल या शक्ति बढ़ाने का काम।

बल-बर्धा—वि०—बलवर्धक।

बलबा—पुं० [फा० बल्ब] १. दो दली या सप्रदायों में होनेवाला वह उग्र समर्थ जिसमें मार-काट, अगिनाह आदि उपद्रव भी होते हैं। २. बगावत। विद्रोह।

बलबाई—पुं० [फा० बलबा+ई (प्रत्य०)] १. बलबा करनेवाला।

२. विद्रोही। बागी।

बलवान् (न)—वि० [सं० बल+मनुष्य, बल्ब] [स्त्री० बलवती, भाव० बलवता] १. जिसमें अत्यधिक बल हो। शक्तिशाली। २. पुष्ट। मजबूत। बलिष्ठ।

बलवार—वि० बलवान्।

बलवीर—पुं०—बलवीर।

बल-व्यसन—पुं० [सं० ब० तं०] सेना की हार। सैनिक पराजय।

बलशाली (फिन)—वि० [सं० बल० शल् (शक्ति)+गिणि] [स्त्री० बलशालिनी] बलवान्। बली।

बल-शाल—वि० [सं० ब० मं०] बलवान्।

बल-सुवन—वि० [हिं० बालु+?] (जमीन) जिसमें बालु हो। बलुआ।

बलसुवन—पुं० [सं० बल० सुव् (नाश)+गिष्+ल्यु—अन] १. इन्द्र। २. विष्णु।

बल-विभक्ति—स्त्री० [सं० ब० तं०] सैनिक शिविर। छावनी।

बलहृन्—पुं० [सं० बल० हृन् (मारना)+किबप्] १. इन्द्र। २. कफ। इच्छा।

बलहा—वि० [सं० बलहृन्] १. बल अर्थात् शक्ति का नाश करनेवाला। २. बल अर्थात् सेना का नाश करनेवाला।

बल-हीन—वि० [सं० तृ० तं०] जिसमें बल न हो। अराक्त। शक्ति-हीन।

बला—स्त्री० [सं० बल+अच्+टाप्] १. बरियारा नामक धूप। २. वैद्यक में पीषो का एक अर्थ जिसके अंतर्गत वे चार पीषो हैं—बला या बरियारा, महाबला या सहदेई, अतिबला या कंगनी और नागबला या गंगेरन। ३. वह क्रिया या विधा जिसके बल से मूत्र-कोश में योद्धाओं की मूत्र-व्यास नहीं लगती की। ४. दश प्रजापति की एक कन्या। ५. नाटकों में छोटी बहुत के लिए मर्दान्य-सूचक शब्द। ६. पृथ्वी। ७. लक्ष्मी। ८. जैनों के अनुसार एक देवी जो वर्तमान अवस्थापिणी के सप्तहर्ष अर्हत् के उपदेशों का प्रचार करनेवाली कही गई है।

स्त्री० [अ०] १. कोई ऐसा काम, चीज या बात जो बहुत अधिक कष्ट-दायक हो और जिससे सहज में छुटकारा न मिल सकता हो। आपत्ति। विपत्ति। सकट। २. कोई ऐसा काम, चीज या बात जो अतिदुष्कारक या कष्टप्रद होने के कारण बहुत ही अप्रिय तथा घृणित मानी जाती हो या जिसमें लोग हर तरह में बचन चाहते हैं। जैसे—विद्योगियों के लिए चाँदनी रात (या बरसात) भी एक बला ही होती है। ३. बहुत ही अप्रिय, घृणित, तुच्छ या हेय वस्तु। जैसे—मूह कर्ता की बला तुम अपने साथ लगा लो।

बल—बला का= (क) बहुत अधिक तीव्र या प्रबल। जैसे—आज ता तरकारी (या दाल) में बला की मिस्से पड़ी हैं। (ख) बहुत ही उग्र, प्रबल, भीषण या विकट। जैसे—वह तो बला का लडाका निर्यात। बला से—कोई चिन्ता नहीं। कुछ प्रवाह नहीं। जैसे—वह धाना है तो जाय, हमारी बला से। हमारी बला ऐसा करे हम कभी गंगा नहीं कर सकते।

मुहा०—(चिसी की) बलाएँ लेना—चिसी के सिर के पास दोनों हाथ ले जाकर धीरे-धीरे उसको दोनों पाशवों पर में नीची की ओर ढालना जो इस बात का सूचक होता है कि तुम्हारे सब कष्ट या मुश्किलियाँ हथ अपने ऊपर लेते हैं। (स्त्रियों का) शुभ-चिन्तना सूचक एक अभिचार या टोटका) ४. मूल-प्रेत आदि अपना उनके कारण होनेवाला उपद्रव या बाधा। (स्त्रियों) जैसे—उसे तो कोई बला लगी है।

बलाह—स्त्री०—बला (विपत्ति)।

बलाक—पुं० [सं० बल० अच् (जाना)+अच्] [स्त्री० बलाका, बल-किण] १. बक। बगला। २. एक राजा जो मागवज के अनूशाण पुरु का पुत्र और जल्लु का पौत्र था। ३. एक राक्षस का नाम।

बलाका—स्त्री० [सं० बलाक+टाप्] १. मादा बगला। बगली। २. बगली की पत्ति। ३. प्रेयसी। ४. कामुक स्त्री। ५. नृत्य में एक प्रकार की गति।

बलाकिका—स्त्री० [सं० बलाक+कन्+टाप्, इल्] १. मादा बगला। बलाका। २. बगली की एक गति।

बलाघात—पुं० [सं० बल० अघ, घ० ल०] १. सेना का अगला भाग। २. सेनापति।

वि० बलवान्। शक्तिशाली।

बलाघात—पुं० [सं० बल० आघात, ल० तं०] १. किसी काम, चीज या बात पर साधारण से कुछ अधिक बल लगाने या जोर देने की क्रिया

या भाव । (द्वेष) २. मनोभाव, विचार और प्रकट करने समय उनकी भावधर्मका, उपयोगिता, महत्त्व आदि की ओर ध्यान दिलाने के लिए उन पर डाला जानेवाला जोर । (एमफैसिस) ३. दे० 'रथराघात' ।

बलाहट—पु० [सं० बल+वृद्ध (जाना) +ञ्च्] मूँग ।

बलाहृष—वि० [सं० बल-आहृष, वृ० तं०] बलवान् ।

पु० उरदः । माघ ।

बलाहृत्—अध्व० [सं० बल+वृत् (निरन्तर गमन) +क्विप्] १. बल-पूर्वक । जबरदस्ती में । बल से । २. हृत्-पूर्वक । हृत्पुं ।

बलाहृत्—पु० [सं० बलाहृत्/हृ (करना) +घञ्] । घञ् । १. बलान या हृत्-पूर्वक कोई काम करना । विशेषतः किसी या दूसरो की इच्छा के विरुद्ध कोई नाम करना । २. पुरुष द्वारा किसी पर-स्त्री की इच्छा के विरुद्ध बलपूर्वक धमकाकर या छलपूर्वक किया जानेवाला समोग । (रेप) ३. स्मृति में, महाजन का ऋषी को अपने यहाँ रोककर तथा मार-पीटकर पावना बन्धुल करना ।

बलाहृत्कारित—पु० कृ० बलाहृत् ।

बलाहृत्कृत—पु० कृ० [सं० बलाहृत्/कृ (करना) +कृत] ? जिसके साथ बलाहृत्कार किया गया हो । २. जिससे बलपूर्वक या जबरदस्ती कोई काम कराया गया हो ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-आहृत्, व० सं०, +कृत] । टाप्, इत् ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-आहृत्, व० सं०, +कृत] । टाप्, इत् ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-अधिहृत्, व० सं०] मेता-विभाग का प्रथम अधिकारी ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-अधिहृत्, व० सं०] सेना का अध्यक्ष । सेनापति ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-अधिहृत्, व० सं०] सेना का अध्यक्ष । सेनापति ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-अधिहृत्, व० सं०] सेना का अध्यक्ष । सेनापति ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-अधिहृत्, व० सं०] सेना का अध्यक्ष । सेनापति ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-अधिहृत्, व० सं०] सेना का अध्यक्ष । सेनापति ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-अधिहृत्, व० सं०] सेना का अध्यक्ष । सेनापति ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-अधिहृत्, व० सं०] सेना का अध्यक्ष । सेनापति ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-अधिहृत्, व० सं०] सेना का अध्यक्ष । सेनापति ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-अधिहृत्, व० सं०] सेना का अध्यक्ष । सेनापति ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-अधिहृत्, व० सं०] सेना का अध्यक्ष । सेनापति ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल-अधिहृत्, व० सं०] सेना का अध्यक्ष । सेनापति ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल+वृत्/अहृत्] अणु ? कफ । २. क्षय ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल+वृत्/अहृत् (फिकना) +अणु] ? कफ । २. कफ के बढने से होनेवाला एक रोग जिसमें गले और फेफड़े में सूजन और पीडा होती है । पु० [सं० बला] बलना नाम का पीषा ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

पु० [सं० बलाहृत्] बलना या बला नाम का पीषा ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बल+वृत्/अहृत् (छोपना) +वभुन्—अक] ? बादल । मेघ । २. सात प्रकार के बादलों में से एक प्रकार के बादल जो प्रलय के समय छाते है । ३. मोघा । ४. श्रीकृष्ण के रथ के एक घोड़े का नाम । ५. सुश्रुत के अनुसार दबीकर सर्पों का एक मेघ या वर्ण । ६. एक तरह का वगल । ७. कुवा द्रोण का एक पर्वत ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलाहृत्कृत—पु० [सं० बलाहृत्+इति] बलाहृत् अर्थात् क्षय (रोग) से पीडित ।

बलि-कर्म (नू)—प० [स० व० त०] बलि देने या चढ़ाने का काम।

बलित—म० ङ० [हि० बलि] (पशु) जो बलि चढ़ाया गया हो।

बलि-दान—प० [म० प० त०] [वि० बलिदानी] १ देवताओं आदि को प्रसन्न करने के लिए उनके उद्देश्य से किसी पशु का किया जानेवाला दान। २ निर्मां उद्देश्य या बात की सहायके के लिए अपने प्राण तक दे देना। ३ जैन—देश सेवा के लिए अपने साधक को अपना बलिदान करना।

पद—बलिदान का बकरा ऐसा व्यक्तित्व जिस पर किसी काम या बात का व्यर्थ ही सारा अपराध या दोष लाद दिया जाय, और तब उसे पूरा पूरा दण्ड दिया जाय। (प्राय अपने आपको उस अपराध या दोष का मागी बनने में बचाने के लिए और दूसरे को उसका मागी बनाने के लिए)।

बलिदानो—वि० [स० बलिदान] १ बलिदान-संबन्धी। बलिदान का।

जो—१—बलिदानो परम्परा, बलिदानो बकरा। २ बलिदान करने या चढ़ानेवाला।

स्त्री० बलिदान।

बलिदत् (धू)—प० [म० बलि/दत् द्विष् (बैर करना) ; विवप्] विष्णु।

बलिधरो (सिन्)—प० [म० बलि/ध्वस् (मास) + गिनि] विष्णु।

बल-नदन—प० [म० व० त०] बाणासुर।

बलि-पशु—प० [स० मध्य० सं०] वह पशु जो यज्ञ आदि में अपना किसी देवता का समुद्र तथा प्रसन्न करने के लिए उसके नाम पर मारा जाता हो।

बलि-पुत्र—प० [नू, न०] कौआ।

बलि-प्रदान—प० [स० प० त०] बलि-दान।

बलि-प्रिय—प० [स० बलि/प्री + क] १. लोथ का पेड़। २ कौआ।

बलि-बधन—प० [म० बलि/बध (बाँधना) + गिच् + युच्—अन] विष्णु, जिन्होंने राजा बलि को बाँधा था।

बलिभूट (नू)—प० [म० बलि/भूट ; विवप्] कौआ।

बलि भूज—प० [म०] बलि-भूक का वह रूप जो उसे सम्बोधन कारक में प्रयुक्त होने पर प्राण होता है। उदा०—किन्तु कौन पा सकता, बलिभूज अमृत कामना पर जय।—पत।

बलिभूत—वि० [म० बलि/भू (मरण करना) ; विवप्, तुक्] १ बलि अर्थां राज-कर देनेवाला। २ अधीनस्थ।

बलिभाषी (जित्)—प० [म० बलि/भूज (खाना) + गिनि] कौआ।

बलि-मधिर—प० [प० त०] राजा बलि के रहने का स्थान, पाताल-लोक।

बलि-मुख—प० [ब० सं०] बन्दर।

बलिधर—प० बलोधर।

बलि-वेद्यम (नू)—प० [प० त०] बलि-मदिर।

बलि-वैश्वदेव—प० [व० सं०] पंच महायज्ञों में से भूतयज्ञ नाम का चौथा महायज्ञ।

बलिश—प० [म० बलि/शो (पीना करना) ; क] मछली फँसाने की कढ़िया। बरी।

बलिष्ठ—वि० [म० बलिन् इष्टन्] जो सबसे अधिक बलवान् हो।

प० ऊँट।

बलिष्णु—वि० [म० वल् (सवरण) ; इष्णुच्] अपमानित।

बलिहरण—प० [प० त०] सब प्रकार के जीवों को बलि देना।

बलिहारना—स० [हि० बलि] शेरना। कोई चीज किसी पर से निखावर करना। जैन—आन बलिहारना।

बलिहारी—स्त्री० [हि० बलि + हारना] बलिहारने अर्थात् निखावर करने की क्रिया या साध। कुर्बान बाना।

मुहा०—बलिहारी जाना—निखावर होना। बलिहारी लेना—बलाए लेना। (दे० 'बला' के अन्तर्गत)।

पद—बलिहारी हूँ=मैं इतना मोहित या प्रसन्न हूँ कि अपने को निखावर करता हूँ। बाह-बाह! क्या बात है!

बलिहूत—वि० [सं० बलि/हू (हरण करना) ; विवप्, तुक्] १ बलि या भेंट लानेवाला। २ कर देनेवाला।

प० राजा।

बलीबा—पु० [स० बरडक] १ छाजन के नीचे लवार्द के बल लगी हुई लकड़ी। बरडा। २ मत्तों की परिमाणा में, शान की उच्च अवस्था।

बली (बिन्)—वि० [स० बल ; इनि] बलवान् । बलवाला। पराक्रमी।

पु० १ भैंसा। २ साँड। ३ ऊँट। ४ सूअर। ५ बलगम।

पु० ६. सैनिक। ७ कक। ८. एक तरह की चमली।

स्त्री० [हि० बल] १. बल। सिन। सिलवट। २. त्वचा पर पड़नेवाली धुरीं।

बलीक—पु० [म०] छप्पर का किनारा।

बलीन—पु० [म० बल + सं—ईन] बिच्छू।

वि०—बलवान्।

बलीना—स्त्री० [प० फीलना] एक प्रकार की हल्ले मछली।

बलीबैठक—स्त्री० [हि० बली + बैठक] एक प्रकार की बैठक (कसरत) जिसमें जूधे पर भार देकर उठना-बैठना पड़ता है।

बलीमुख—पु० [स० व० सं०] बंदर।

बलीधर—पु० [सं० वृ + विवप् + धर, ई ; धर, इ० सं०, ईवर, वृदा ; क, बलिन्-ईवर्द, व० सं०] १. साँड। २. बिल।

बलुआ—वि० [हि० वाट्] [स्त्री० बलुई] (स्थान) जिसकी मिट्टी में बालू भी मिला हुआ हो।

पु० रेतीली जमीन।

बलूक—पु० बलोच।

बलूकस्तान—पु० बलोचस्तान।

बलूची—पु० बलोच।

बलूत—पु० [ब०] ऊँठे प्रदेशों में होनेवाला माजुफल की जाति का एक पेड़।

बलूल—वि० [सं० बल + लृच्—ऊट] बलवान्।

बलूला—पु० बलुलुला।

बली—पु० बलय।

बलीबा—स्त्री० [ब० बला, हि० बलाय] बला। बलाय।

मुहा०—(किसी की) बलीबा होना—दे० 'बला' के अन्तर्गत 'बलाए लेना'।

बलीब—पु० आधुनिक पाकिस्तान के पश्चिमोत्तर में बसनेवाली एक योद्धा मुसलमान जाति।

बलोचिस्तान—पु० [फा०] आधुनिक पाकिस्तान के पश्चिमोत्तर का एक प्रदेश।

बलोची—पु० [हि० बलोच] बलोचिस्तान का निवासी।

स्त्री० बलोचिस्तान की बोलो।

वि० बलोच जाति का।
बल्कल—पु० दे० 'बल्कल'।
बल्कलस—पु० [सं० बल्कल/अस् (फेंकना) + अच्, धाक० परस्पर] आसव की लालछाट।
बल्कि—अव्य० [फा०] एक अव्यय जिसका प्रयोग यहू आशय सूचित करने के लिए होता है कि—एसा नहीं इसके स्थान पर... प्रत्युत।
 वान्। जैसे—मी नहीं, बल्कि आप ही यही चले जायें।
बल्ब—पु० [अ०] १ शीशे की नली का अधिक चौड़ा भाग। २ पतले शीशे का एक उपकरण जो बिजली के योग से धमकने और प्रकाश करने लगता है। लड्डू।
बल्ब—वि० [सं० बल+भत्] बलकारक। शक्ति-वर्धक।
 पु० बीयें। शूक्र।
बल्बा—स्त्री० [सं० बल्य+टाप्] १ अतिबला। २ अश्वगंधा। ३. प्रसाग्नि। ४. चगोनी।
बल्ल—पु० -बल्ल।
बल्लकी—स्त्री० -बल्लकी।
बल्लभ—पु० -बल्लभ।
बल्लभ—पु० [सं० बल, हिं० बल्ला] १ मोटा छद्म। २ लकड़ी का बड़ा और मोटा डंडा। बल्ला। ३. डंडा। सोटा। ४. बहु सुनहला या स्पृहला डंडा जिसे प्रतिहारी या बोनबदार राजाओं या बड़े आदमियों के आगे आगे शोभा के लिए लेकर चलते थे और जो अब भी बरातो आदि के साथ ठेकर चलते हैं।
 पद—आसा-बल्लभ।
 ५. बरछा। माला।
बल्लभट्ट—पु० [अ० बालट्टियर के अनुकरण पर हिं० बल्लभ से] १. स्वेच्छाप्रापक गंगा में भरती होनेवाला सैनिक। २. दे० 'स्वयसेवक'।
बल्लभ नौच—वि० [हिं०] १ जिसकी नोक या अगला सिरा बल्लभ के फल की तरह मुकीला हो। २ बहुत ही चूमनेवाला, सीखा या पना।
 जैसे—गुमने में बूब बल्लभ नोक सवाल किया।
बल्लभ बन्दार—पु० [हिं० बल्लभ+फा० बंदार] वह नौकर जो राजाओं की सवारी या बरात के साथ हाथ में बल्लभ लेकर चलता हो।
बल्लरी—स्त्री० -बल्लरी।
बल्लब—पु० [सं०/बल् (छिपाना)+भञ्ज, बल्/बा (गमन)+क] [स्त्री० बल्लकी] १ चरवाहा। २ बीम का उस समय का कृत्रिम नाम जब वह राजा विराट के यहाँ रसीदया था। ३. उजल के आकार पर, रसीदया।
बल्ला—पु० [सं० बल्ल=लट्टया या डंडा] [स्त्री० अग्ला० बल्लो] १ मन्दी, सीपी और मोटी लकड़ी या लट्टा जिसका उपयोग छलें आदि पाटने और मकान बनाने के समय पाइट आदि बँधने के लिए होता है। २. मोटा डंडा। ३. भाव खेने का डंडा या बँस। ४ गेंद के खेल में छोटे डंडे के आकार का काठ का वह चपटा टुकड़ा जिससे गेंद पर आघात करते हैं। (स्टैट)
 पद—गेंद-बल्ला।
 पु० [सं० बल्य] गोबर की सुलाई हुई गोल टिकिया जो होली अरुने के समय उसमें डाली जाती है।

बल्लारी—स्त्री० [देहा०] सम्पूर्ण जाति की एक रागिनी जिसमें केवल कोमल गायार लगता है।
बल्लि—स्त्री०—बल्लो (लता)।
बल्लो—स्त्री० [हिं० बल्ला] १ लकड़ी का लंबा छोटा टुकड़ा। छोटा बल्ला। २. नाव खेने का बँस।
 †स्त्री० =बल्लो (लता)।
बल्य—पु० [सं०] गणित ज्योतिष में, एक करण का नाम।
बल्यल—पु० [सं०] बल्यल नामक दीप्य का पुत्र जिसका वध बजराम ने किया था।
बल्यना—अ० [सं० व्यावहृत्, प्रा० व्यावहृत्] व्यर्थ हथर-उधर प्यना। मारा-मारा फिरना।
बल्यबर—पु० [सं० बायु-मंडल] १ हवा का वह नेत्र खोला जो चक्कर खाता हुआ चलता है और जिसमें पक्षी हुई घूल गम के रूप में ऊपर उठती हुई दिखाई पड़ती है। चक्रवात। बगुला।
 कि० प्र०—उठना।—चलना।
 २ अधी। भूफान। ३. ध्वंश का बहुत बड़ा उपद्रव।
 कि० प्र०—खड़ा होना।
बल्यारा—पु०—बल्यर।
बल्यियाणा—अ०—बल्यना (भटकना)।
बल्य—पु० [सं०] गणित ज्योतिष में, एक करण का नाम।
बल्यपूरा—पु०—बल्यर (बगुला)।
बल्यन—पु० १ =भयन। २. =धमन।
बल्यन—सं० [सकपन्] १. जमने के लिए जमीन पर बीज डालना। बीना।
 २. छितराना। बिखरना।
 अ० छितराना। बिखरना।
 †पु०—बीना (भामन)।
बल्यर—वि० [स्त्री० बल्यरी]। बायला (पागल)। उदा०—आसन् पवन दूर कर बल्यर।—कबीर।
बल्यल—पु०—बल्यल। (अँसे)
बल्यलीर—स्त्री० [अ० बल्यलिर] गुर्जरिय में मस्से निकालने का एक रोग जो सूनी और बादी दो प्रकार का होता है। (पाइल्ल)
बल्य—पु० [अ०] मनुष्य। आदमी।
बल्यरी—वि० [अ०] [भाव० बल्यरीयत्] मनुष्य-सबधी।
बल्यरीयत्—स्त्री० [अ०] आदमीयत्। मनुष्यत्व।
बल्यतें कि—अव्य० [अ०] शर्त यह है कि।
बल्यिष्ट—पु०—बल्यिष्ट।
बल्यी—वि० [अ०] शुभ सवादा मुनानेवाजा।
बल्यीर—पु० [अ० बल्यीर] एक प्रकार का बारीक रेशमी कपड़ा।
बल्यक—वि० [सं०/मल्क (जाना)। अयन्त, म—ब, पृषो०, मं०—ए] १. (बछड़ा) जो काफी बड़ा हो गया हो। २. हड़लकट्टा।
 हूट-पुष्ट।
बल्यकपी—स्त्री० [सं० बल्यक+इनि+ऊप, त—ग] वह गाय जिसको बल्यक दिये बहुत समय हो गया हो। बकना।
बल्यत्—पु० [सं० बल्यत्] [वि० बल्यती] धमत् ऋतु।
 पद—उज्ज्व बल्यत्—निरा या बहुत बड़ा मूख।

बसत-वहार—पु० [स० बसत] हि० वहार एक प्रकार का सफर राग जो बसन्त और वहार के योग से बनता है।

बसंत भूजारी—पु० [म० बसन्त] मूर्धा] समीप में एक प्रकार का राग।

बसतरा—पु० बसदर (अग्नि)।

बसतना—पु० [म० बसन्त] मूरे राग की एक प्रकार की चिडिया।

पु० [स० बाम] नदी बसने या रहनेवाला। निवासी।

बसती—वि० [हि० बसन्त] १ बसत ऋतु-मन्वयो। २ बसत ऋतु में होनेवाला। ३ सरसों के फूल की तरह का। पीला। जैसे—बसती सेहूरा।

पु० १ सरसों के फूल की तरह का चमकदार और चमकना पीला राग। (फोम) २ पीला देवडा।

स्त्री० एक प्रकार की चूक या मत्ता (रंग)।

बसदर—पु० [म० वैश्वानर] अग्नि। आग।

बस—अव्य० [फा०] १ बसंत है कि। पारंगत है कि। जैसे—बस इतनी ही दया चाहिए। २ मर्मापत्ति का सूचक एक अवयव। जैसे—अब बस करोगे या नहीं। ३ इतना मात्र। केवल। किफ।

वि० १ यंत्रण। पर्याप्त। २ ममात्ता। स्वतन्त्र।

पु० [म० वदा] १ अधिकार या शक्ति। जैसे—(क) यह हमारे बस की बात नहीं है। (ख) वह तो अब पूरी तरह से तुम्हारे बस में है।

बसना—(किसी को) बस करना दे० नीचे 'बस में करना'। (किसी को आगे या सामने) बस चलना—किरी के भूजायंत्र के अधिकार या शक्ति का काम करना। जैसे—दरख्त की इच्छा के आगे किसी का बस नहीं चलता।

बसना—(किसी को) बस में फरना या लाना किसी को इस प्रकार अपने अधिकार में लेना कि वह अपनी इच्छा के अनुसार कोई काम न कर सके। स्त्री० [ज० ओमनी बस का मंशात रूप] प्रायः किसी नगर की सीमा के अन्दर किसी निरिचय गध पर चलने वाली बड़ी मोटर गाडी जो थोड़ी-थोड़ी दूरी पर यात्रियों या जंगली तथा चढाती चलती है।

बसकर—वि० [म० बसोकर] स्त्री० बसन्ती] १ किसी को अपने बस में ले कर लेनेवाला। बसोकर। २ परम आक्रोश और मनोहर। उदा०—बसुधा की बसकरी मरुपत्ता मुषा पति यत्तरामि।—रहीम।

बसतां—स्त्री० [स० बाम] बसा हुआ स्थान। बस्ती।

स्त्री० यन्त्र।

बसतरा—पु० वन्त्र।

बसर्ता—स्त्री० अग्नी।

बसबेसा—पु० [स० बामुदेव] एक जाति जो भौव्य भांगने का पेशा करती है।

बसन्त—पु० [म० वस्-प्रम करना] स्त्री का पति। न्यामी। उदा०—बसन्त हीन नहीं मोह मुरार। मुलसी।

बसना—स० [म० बसन्त निवास करना] १. जीव-जन्तुओं, पक्षियों आदि का बिल या घोसला बनाकर अथवा मनुष्यों का गुफा, झोपड़ी, भवान आदि बनाकर उनमें निवास करना या रहना। जैसे—किसी समय यहाँ जंगली जानवर बगते थे, पर अब तो यहाँ मनुष्य बस गये हैं। २ घर, नगर या किसी प्रकार के स्थान की ऐसी स्थिति में होना

कि उसमें प्राणी या मनुष्य निवास करते हों। जैसे—यह गाँव पहले तो उजड़ चला था, पर अब यह धीरे-धीरे फिर से बसने लगा है। ३ घर या भवन के संबंध में खुदबियों और घन-धाम्य से भरा-पूरा और सुव्यवस्थित होना। जैसे—चाहे किसी का घर बसे या उजड़े, तुम तो मीज करते रहो।

बसना—(किसी को) घर बसना = (क) विवाह होने पर घर में गृहिणी या पत्नी का आना। जैसे—पर-साल उसकी नौकरी लगी थी, इस साल घर में बस गया। (ख) घर घन-धाम्य और बाल-बच्चा से भरा-पूरा या युक्त होना। जैसे—पहले तो घर में पत्नी-यन्त्री दो ही आदमी थे, पर अब बाल-बच्चे जो होने में उनका घर बस गया है। (किसी का घर में)

बसना—किसी का अपने घर में रहकर गृहस्थी के पन्थ्यों या मनुष्यपूर्वक निबिह और पालन करना। जैसे—यह औरत तो चार दिन भी घर में नहीं बसेगी, अपना-घर छोड़कर (किसी के साथ या यों ही) बहो निकल जायगी। उदा०—भादव का उपरान्त सुनि, काहु बसेय का गह।—तुलसी।

४ कुछ समय तक की अवस्थान करना। टिकना। ठहरना। जैसे—हम तो रमने राग में, जहाँ जी बाह्य, वहीं बस-बास दिन बग गये। ५ लाक्षणिक रूप में किसी कीज, बात या व्यक्ति का ध्यान या विचार मन में दृढतापूर्वक जमाना या बैठना। जैसे—(क) तुम्हारी बात मन में बस गई है। (ख) उनके मन में तो भगवान् की भक्ति बसा गई है। सयों क्रि०—जाना।

बिबोध—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग मन के सिद्धांशों के संबंध में भी होता है। जैसे—तुम्हारी सूत्र मेरी जीवों में बसा टूटे है। ६ स्थित होना। ७ बैठना। (बस)

अ० [हि० बसना (गध में युक्त करना) का अ०] किसी मनुष्य का किसी प्रकार की गध या बस में युक्त होना। महक से मन्ना। बसा जाना। जैसे—(क) इध में बसे हुए कपड़े या (मिर के) आटा। (ख) गुलाब से बनी हुई गुंडेरियाँ या रेवडियाँ।

पु० [स० बसन्त] १ वह कपडा जिसमें कोई वस्तु लपेटकर रखी जाय। भाँटा। डेन्टा। जैसे—बन्ही-खाते का बसना। २ बट धेला [मनम दुकानदार अपने बखड़े आवि रखते हैं। ३. टाट आदि की बट गाली-दार धेली जिसमें रुपए आदि भरकर रखे जाते हैं। ४ वह फाँटी जहाँ श्रृण आदि देने का कार-बाग होता है।

पु०—बासन (बरतन)।

बसति—स्त्री० [हि० बसना] निवास। वास।

बसर—स्त्री० [फा०] १. जीवन-निर्वाह। २ गुजारा। निवाह।

बसवार—पु० [स० वास-गध] छोक। बघार।

बसबास—पु० [हि० बसना। स० वास] १. निवासा। रहता। २ डग। रहत-सहत। ठहरने या रहने का सुभीता।

पु०—बिबवास।

बसहा—पु० [स० वृषभ, प्रा० बसह] बैल।

बसबा—वि० [हि० वास-गध] बासा या सुगन्धित किया हुआ। सुगन्धित।

बसा—स्त्री० [शंश०] १. बर। मिड। २. एक प्रकार का मछली।

स्त्री०—बसा (बस्वी)।

बसात—स्त्री०—बिवासा।

बसाना—स० [हि० 'बसत' का सं०] १. व्यक्तिके के सम्बन्ध में रहने

के लिए घर अथवा जीवन-निवाह के लिए उचित माघन या मुभीते देना। जैसे—शरणाधिको को बसाने के लिए सरकार को बहुत अधिक धन व्यय करना पड़ा है। २ स्थान के मन्बन्ध में, नये घर आदि बनाकर अथवा गाँव या बस्तिवाँ बनाकर उनमें लोगों को स्थिर रूप से रखने की व्यवस्था करना। ३. घर-गृहस्थी या जीवन-यापन के साधनों में युक्त करना।

मुहा०—(अपना) घर बसाना (क) विवाह करके पत्नी को घर में लाना। (ख) गृहस्थी की सब सामग्री इस प्रकार एकत्र करना कि कुटुंब के सब लोग मुख में रह सकें। (किसी का) घर बसाना किसी का विवाह करा देना।
 ४ अस्थायी रूप में किसी को कहीं टिकाने या ठहराने की व्यवस्था करना। (बव०) जैसे—उन यात्रियों को दो दिन के लिए अपने यहाँ बसा लो। उदा०—नूपुर जनि मुनिवर कल-हंसनि, रहे नीठ दे बहै बसायो।—मुलसी। ५ स्थिति में लाना स्थान देना। उदा०—मुनि कं मुन सो हृदय बसायो।—मूर। ६ लाक्षणिक रूप में, किसी बात या व्यक्ति का ध्यान अथवा विचार अपने मन में दुःखनापूर्वक स्थित करना। जैसे—वदि आपका उपदेश हृदय में बसा लोमें तो मुझ्हाग बहुत बड़ा कल्याण होगा। ७ स्थापित करना। रखना। ७ बैठाना। (बव०) म० [हि० बाम; ना (प्रत्य०)] बाम अर्थात् गध से युक्त करना। जैसे—मूली से तल बसाना।

†अ०—बसना (गध में युक्त होना)।
 ‡अ० [म० वस] अधिकार, जोर या बस चलना। शक्ति या सामर्थ्य का काम देना अथवा सफल मित्र होना। उदा०—मिळा रहे और ना मिलै नागो कहा बगाय।—कबीर।

बसावत—स्त्री० [अ०] १ देवने की शक्ति। दृष्टि। २ अनुभव करने या समझने की शक्ति। समझ।

बसाव—पु० [हि० बसना + आव (प्रत्य०)] बसने की अवस्था, किया या मात्र। निवासा। जैसे—बसाव अहर का, मोत नहर का।—कहा०।

बसोत—पु० [हि० बासी] १ बप को कुछ विशिष्ट निधियों जिनमें निधियाँ बामी भोजन पानी और यामी पानी पीनी है। बामी। २ वह भोजन जो उचित विधियों में खाने के लिए एक दिन पहले बनाकर रख लिया जाता है। ३. बासी खाने की प्रथा।

बसिया—स्त्री०—बासी।
 स्त्री०—बसी।

बसियाना—अ० [हि० बामी, या बसिया; ना (प्रत्य०)] बासी हो जाना। स० किसी चीज को गम्बर बामी करना।
 अ० [हि० बास] बास अर्थात् गध से युक्त होना।

बसिण्ट—पु०—बसिण्ट।

बसोक्त—स्त्री० [हि० बसना] १. बसने की किया या माव। २ बसने का स्थान। ३ बस्ती। आबादी।

बसोकर—वि०—बसोकर।

बसोकरना—पु०—बसोकरना।

बसोगत—स्त्री०—बसोक्त।

बसोत—पु० [स० अवसुट] १. झूल। २ पैगम्बर। ३ गाँव का मुखिया।

४. हल में का जुवाडा।

बसोठी—स्त्री० [हि० बसोठ] बसोठ होने की अवस्था या माव। दूत का पद या माव।

बसोत—पु० [अ०] जहाज पर का एक यत्र जिसमें सूर्य का अज्ञात जाना जाता है। क्रमान।

बसोता—पु० १. बस्ती। २—बसाव। उदा०—जूड़ जुरे दुर-जोधन सों किह कौत करे जमलोक बसोती।—केशव।

बसोना—पु० [हि० बसना] बसने की किया या माव।

बसोला—वि० [हि० बास-गध] १ बास अर्थात् गध से युक्त। २ दुर्गम युक्त। बवबूदार।

बसु—पु०—बसु।

बसुकला—स्त्री०—बसुकला (वर्ण वृत्त)।

बसुदेव—पु०—बसुदेव।

बसुधा—स्त्री०—बसुधा।

बसमत—स्त्री०—बसुमती।

बसुमी—स्त्री०—बसुमी।

बसुला—पु०—बसुला।

बसुली—स्त्री० १ बसुली। २—बाँसुली।

बसू—पु०—बसु।

बसुना—पु० [म० वायो; ल (प्रत्य०)] [स्त्री० अल्पा० बसुली] बडहयों का एक प्रसिद्ध औजार जिससे वे लकड़ी छीलते और गढ़ते हैं।

बसुनी—स्त्री० [हि० बसुला] १ छोटा बसुला। २ राजाँगों का एक औजार जिसमें वे इंटे गढ़ते या तोड़ते हैं।

†स्त्री०—बसुली।

बसोडा—पु० [हि० बस + डा (प्रत्य०)] [स्त्री० अल्पा० बसोडी] पतला बाम।

बसोधा—वि० [हि० बास-गध] [स्त्री० बसोधारी] १ बनाया अर्थात् गध या बाग में युक्त किया हुआ। २ म्बाबूदार। सुगन्धित।

बसोधा—पु० [हि० बसना] १ बसने या रहने की जगह। २. दे० 'बसरा'।

बसेरा—पु० [हि० बसना] १ वह स्थान जहाँ रहकर यामी रात बिताते हैं। मागं में टिकने की जगह। २ वह स्थान जहाँ ठहरकर चिट्ठियाँ रात बिताती हैं।

मुहा०—बसेरा लेना—रात बिचाने के लिए कहीं टिकना या ठहरना। वि० विश्राम करने के लिए कहीं टिकने या ठहरनेवाला।

बसेरी—वि० [हि० बसेरा] १ बसेरा लेनेवाला। २ निपासी।

बसोधा—वि०—बसोधा।

बसेवा—वि० [हि० बसना] बसनेवाला। रहनेवाला।

वि० [हि० बसाना] बसानेवाला। वसवैया।

बस(बास)—पु० [म० बाम + आवस] १. निवासा। २. निवास-जगान। रहने की जगह।

बसोधी—स्त्री० [हि० बास + ओधी] अव्ययिक लौकिके हुए दूध का वह लच्छेदार रूप जिसमें दूध का अणु काम और मलाई का अणु अतिक होता है तथा जिसमें चीनी, मैदा आदि ची मिलायी गया होना है। रबडी।

बहत्—पु० [अ०] चित्र-कला और मूर्ति-कला में बह चित्र या बह मूर्ति, जिसमें किसी व्यक्ति के मुख और छाती के ऊपर के भाग की आकृति बनाई गई हो।

बहत्—पु० [स०] बहत् (पाचना करना) : धज् १ सूयं २ बकरा।

बहत्तरा—पु० वरत्र (कण्डा)।

बहत्तरि—पु० [स०] बहत्-अर्थ, प० तं०] बकरे का मूत्र।

बहत्ता—पु० [फा० बहत्] १ कण्ठ का बहू चौकोर टुकड़ा जिसमें कागज के मट्टे, बही-खाते और पुस्तकें आदि बांधकर रखते हैं। बेटन।

२ इस प्रकार बंधी हुई पुस्तकें या कागज-पत्र।

क्रि० प्र०—बोधना।

३ धैर्य या बेटन की तरह का बहू उपकरण जिसमें विद्यार्थी अपनी पुस्तकें रखकर विद्यालय में जाता है। जैसे—सब लड़के अपना अपना बहत्ता लाते।

बह्ता—बहत्ता बोधना उठाने या चलने की तैयारी कर पुस्तकें आदि बस्ते में बांध या रखकर चलने की तैयारी होना।

बहत्ताग्रिन—पु० [स०] बहत्-अग्रिन, प० तं०] बकरे की बाल।

बहत्तर—पु० [फा० बहत्] एक में बंधी हुई बहुत-सी बस्तुओं का समूह। मूठा। फुलदा।

बहत्तरा—पु० बहत्तर।

बहत्ती—स्त्री० [स०] बहत्ति १ बहुत से मनुष्यों का एक जगह पर बसाकर रहने का भाव। आवादी। निवास। २ वह स्थान जहाँ बहुत से लोग घर बनाकर एक साथ रहते हैं।

क्रि० प्र०—बहत्ता।—बसना।

बहत्तु—स्त्री०—बहत्तु।

बहत्त—पु०—बहत्त।

बहत्त—वि० बहत्त।

बहत्ताना—अ० [स०] बहत्त] बास अर्थात् दुग्ध से युक्त होना।

बह्ता—पु० [हि० बह्ता की पु०] बड़ी बह्ता।

बह्ती—स्त्री० [स०] बह्तिगणा। तरजू की तरह का एक प्रसिद्ध ढाँचा जिसके दोनों पलकों में बाँस रखकर ढाया जाता है।

बह्त्—स्त्री० [हि० बह्त्] १ बह्त्त की अवस्था, किया या भाव। २ पक्ष-अष्ट होने की अवस्था या भाव। ३ बहुत बड़-बड़कर और शब्द बड़ी जानेधानी बाने। ४ केवल पन्द्रो के ध्वनि-सायुध के आधार पर बिना समझे बड़े या अनुमान से कही हुई कोई बहुत बड़ी भ्रमपूर्ण और हास्यास्पद बात। (हाउअर) जैसे—मयूरा नगरी केकेयी की दासी मन्थरा के नाम पर बनी है।

बह्त्ताना—अ० [?] १ पालतू पशुओं के मवध में, मुत्से, हूट आदि के कारण मोथा मांग छोड़कर गलत मांग की ओर प्रवृत्त होना। २ व्यक्तिव्यो के मवध में, दूसरों के सुलावे में आकर अथवा उनकी देमा-देवी पक्ष-अष्ट होना। ३ आवेश या मद में चूर होना।

मूहा—बह्त्त की बह्त्त बाने करना—आवाश में आकर पागली की सी या बड़ी-बड़ी बातें करना।

४ ठीक लय या स्थान पर न जाकर दूसरी ओर या जगह जा पड़ना। चूचना। जैसे—किसी घर बार करते समय लाठी या हाथ बह्त्ताना।

बह्त्ताना—अ० [हि० बह्त्ताना का सं०] १ किसी की बह्त्तने में प्रवृत्त

करना। २ ऐसा काम करना जिसमें कोई बह्त्त, और ठीक गलता छोड़कर पक्ष-अष्ट हो। चूचना या मुलावा देना।

सयो० क्रि०—देना।

३ दे० 'बह्त्ताना'।

बह्त्ताना—पु० [हि० बह्त्ताना] १ बह्त्ताने की क्रिया या भाव। २ ऐसी बात जो किसी को बह्त्ताने के उद्देश्य में कही जाय। मुलावा।

क्रि० प्र०—देना।

बह्त्त—पु० [देश०] एक प्रकार का छद जिसके प्रत्येक पंख में २२ मात्राएँ और अन्त में जयग होता है।

बह्त्तोल—स्त्री० [हि० बह्त्ता+ओल (प्रत्यय)] पानी बह्त्त कोनाली। **बह्त्तर**—वि० [स०] बह्त्तरति, प्रा० बह्त्तरि जो हम या गिनती के विचार से सत्तर से दो अधिक हो।

पु० उक्त की सूचक मन्था जो इस प्रकार लिखी जाती है—०२।

बह्त्तरति—वि० [हि० बह्त्तर+वी (प्रत्यय)] [स०] बह्त्तरती जो हम या गिनती में बह्त्तर बस्तुओं के पाठे अर्थात् बहत्तर के स्थान पर पड़े।

बह्त्तरा—पु० [देश०] चने, धान आदि की फसल के पना का कोटने-वाला एक प्रकार का कीड़ा।

बह्त्त—स्त्री० [स०] मणिनी, प्रा० बह्त्तिणी १ किसी धर्म (या धर्म) के सबंध के विचार से वह स्त्री (या मादा जीव) जो अपनी के माता-पिता की सतान हो अथवा सतान के गुण हो। २ उस अथवा उक्त की समवयस्क स्त्री के लिए प्रयुक्त होने वाला संज्ञानाम।

पु०—बह्त्त।

बह्त्ताना—अ० [स०] बह्त्त १ द्रव पदार्थ का धारा के रूप में किसी नोब तक की ओर चलना या बहना। प्रवाहित होना। जैसे—रक्त बह्त्ताना, जल बह्त्ताना।

मूहा—बह्त्तों गगन में हाथ धाना—किसी गेमे व्यवसाय या काम में, जिससे और लोग भी लाभ उठा रहे हों, अनायास गमन में काम उठाना। (कही कही ऐसे अवसरों पर 'हाथ धोना' की जगह 'हाथ धानना' का भी प्रयोग होता है।)

२ उक्त प्रकार की धारा में पड़कर उसके साथ भागे चलना या बहना। जैसे—नदी में नाव बहना।

सयो० क्रि०—चलना।

३ किसी आधार या पात्र में पूरी तरह में भर जाने पर पदार्थ का इधर-उधर चलना। जैसे—घोंर धर्म का कारण लाकटा का बहना।

४ किसी पक्ष पदार्थ का गलकर या अपना आगमन छोड़कर द्रव रूप में किसी ओर चलना। जैसे—फोड़ा बहना, सोमवन्ती बहना।

विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग उस पदार्थ के लिए भी होता है जो निकलता है और इन आधार के सबंध में भी होता है जिसमें से वह निकलता है। जैसे—(क) फोड़ा बहना; और (ख) काँटे में से मवाद बहना।

५ अधिक मात्रा या मात्र में निरंतर किसी ओर गतिबद्ध होना। जैसे—हवा बहना। ६ निवृत्त या निवृत्त स्थान में हटकर दूर होना या दूसरे रास्ते पर चलना या जाना। जैसे—(क) पहेनी हुई धोती या

पाजामा बहना, अर्थात् नीचे बिसकना। (ख) गोल में से कबूतर बहना। (ग) हूबा में पतंग बहना। ७. विशेष आवेग के कारण बूब खुलकर किसी ओर प्रवृत्त होना। उदा०—अपनी चाँड़ साँर उन लीन्हो, तू फाड़े अब बूबा बहै रो।—भूर।

बुहा०—बहकर सब खुलकर। मनमाने ढंग से या निलसकोच होकर। उदा०—ताड़ो सो रसाल बाल बहि कि बैराई है।—भास्तेनु। ४. वृद्धतामन होकर इधर-उधर घूमना। मारा-मारा फिरना। उदा०—कच लगि गिरिहो दोन अउर।—भूर।

भुग०—बहा; फिरता-किसी वस्तु की इतनी अधिकता होना कि उसका आदर घट जाय या विशेष मूक्य न रह जाय। जैसे—आज-कल यात्राओं में अमरुद (या आम) बहे फिरते है।

९. व्यक्तित्व का आचरण भ्रष्ट या कुमार्गी होना। समार्ग से व्युत्त होना। जैसे—यह लडका तो बह चला। १०. पशुओं का गर्मसात होना। अडना। जैसे—माय या मँस का बहना। ११. परिश्रम का अधिक या प्राय अडे देना। जैसे—कबूतरी या मुरगी का बहना।

पर०—भात हूमा जोंभा ऐने नर और मादा पशु-परिश्रमों का जोडा त्रिमो गाराणन मे बहुत अधिक अडे निकलते हों।

१२. पन का व्यर्थ के कामों में या बहुर अधिक व्यर्थ होना। जैसे—मात भर में उनके बीम हज़ार रुपए बह गये। १३. किसी चीज या धान का नष्ट, पणित या बिहून होना। उदा०—(क) मुक सनकादि सामन मन माँटे. ध्यामिन ध्यान बस्यो—भूर। (ख) निज दिव्य अन-पर की कहाँ ईश्वर बेतना बह बह गई।—मैथिलीतरण। १४. आधात या पान्य के लिए शक्य या हाथ का ऊपर उठना। उदा०—बहहि न हाग दर्हाँ रिनि छापी।—नुल्मी।

१५. १. धाने उपर भार रखना या लादना। होना। उदा०—निह थरि मरुद पमहू निज म्याय, जम को दंड सभ्यो।—कबीर। २. पशुओं का कोई चीज सीचकर ले चलना। उदा०—खेत तुरग बहै थरु हाँडी।—रघुराज। ३. अपने उत्तरदायित्व, महत्त्व आदि का ध्यान रखकर किसी बात का निर्वाह या पालन करना। उदा०—११. के प्रम, ह्मि अभिगमो, लाज बिद की बहो।—मीरों। ४. कोई चीज अपने शरीर पर धारण करना। पहनना। जैसे—कवच या कुटल बहना।

म० [म० तघ] यथ करना। मार डालना। बचना।
[स्त्री०] [हि० बहन] 'बहन' के लिए संबोधनकारक रूप। जैसे—ना बहन, ऐसा मत कहो।
म० दे० 'बाहना'।

बहनाया—प० [हि० बहन; आया (प्रत्य०)] स्त्रियों का वह पारस्परिक सम्बन्ध जिसमें व एक दूसरी की बहन न होने पर भी ठीक बहनों का-सा व्यवहार करती है। स्त्रियों में बहनों की तरह का होनेवाला पारस्परिक संबंध।

हि० प्र०—बोहना।—लमाना।

बहनाया * -प०—बहनाया।

बहनी—स्त्री० [हि० बहना] १. पानी आदि बहने की नाली। २. वह गगरी जिसमें कोन्हू में से तर निकलकर झकटा होता है।

↑ स्त्री०—बहन।

* स्त्री०—बह्ल (आग)।

बहू—प० [स० बाहन] सगरी।

↑ प०—बहन।

बहनेली—स्त्री० [हि० बहन; एली (प्रत्य०)] स्त्री की दृष्टि से बहू दूसरी स्त्री जिससे उसका बहनों का-मा सबव हो। बनाई, मानी हुई या मूँह-बोली बहनेली।

बहनोंई—प० [स० मगिनीपति] सबव के विचार से किसी की बहन का पति।

बहनेलीकी—स्त्री०—बहनेली।

बहनेलीता—प० [हि० बहन+जोता] बहन का लडका। मौजा। उदा०—स्वय अपने बहनेली के परिचर्या करना चाहती थी।—वृन्दावन लाल धर्म।

बहनेरीयाँ—प० [हि० बहन; औरा (प्रत्य०)] १. सबव के विचार से किसी की बहन का घर। बहन का सत्पुरुष। २. बहनोंई अपना उसके परिवार में होनेवाला सबव।

बहबहा—वि० [भाव० बहबही]—बेहू (बहने अर्थात् इधर उधर व्यर्थ घूमनेवाला।

बहबही—स्त्री० [हि० बहबहा] १. व्यर्थ इधर-उधर घूमते रहने की क्रिया या भाव। २. उपद्रव। ३. नरकडी। ४. धरातर।

बहम—अव्य० [फा० बाहम] १. साव। मग। २. एक दूसरे के साथ या प्रति। परस्पर।

बहमना—प०—ब्राह्मण।

बहर—प० [अ० बह] १. बहुत बडा जलाशय या नदी। २. समुद्र। ३. उर्दू-फारसी कविताओं का कोई छन्द। जैसे—इस बहर मे मैंने भी एक गजल लिखी है।

अव्य० [फा० ब+हर] १. हर एक। प्रत्येक। २. हर प्रकार से। हर तरह से। जैसे—बहर हाल—प्रत्येक दशा मे।

बहरना—१. बहुराणा। २.—बहुराणा।

बहरा—वि० [म० बहर, प्रा० बहिर] [स्त्री० बहरी, भाव० बहुराणा] १. जिसे कानों से सुनाई न पड़ता हो। जिनकी ध्वन-वाक्ति नष्ट हो गई हो। २. किसी की बात पर ध्यान न देनेवाला।

मुहा०—बहरा बनना= जान-बूझकर किसी की सुनी बात अनसुनी करना।

बहराना—प० [हि० बाहर] किस नगर या बस्ती की सीमा पर अथवा उससे बाहुराणा भाग या मुहल्ला।

↑ स० १. बाहर करना या निकालना। २. (ताब आदि) किनारे से दूर और धार की तरफ ले जाना।

अ० १. बाहर होना। निकलना। २. अलग या दूर होना।

स० [हि० मुलाना] १. बहलाना। २. सुनकर भी अन-सुनी करना। टाल मटोल करना। बहलाना। उदा०—जबही मैं बरजति हरि सगई तब ही तब बहुराया।—भूर। ३. बहलाना। ४. फूसलाना।

बहुरिया—प० [हि० बाहर+इया (प्रत्य०)] बल्लम सत्रदाय के मंदिरों के छोटे कर्मचारियों को प्रायः मंडप के बाहर ही रहते हैं।

↑ वि०—बाहरी।

बहुरीयाना—स० [हि० बाहर। इयाना (प्रत्य०)] १. बाहर करना या हटाना। २ (नाव आदि) किनारे से दूर करके घारा की ओर ले जाना। ३. अलग या जुदा करना।

अ० १ बाहर की ओर होना। २ (नाव का) किनारे से दूर हटना। ३ अलग या जुदा होना।

बहुरी—स्त्री० [अ०] एक प्रकार की गिकारी चिड़िया जिसका रूप रंग और स्वभाव बाज का-सा होता है, पर आकार छोटा होता है।

हि० [हि० बाहर। ई (प्रत्य०)] बाहरी।

पद—बहुरी अलग (आर या तरफ) - नगर के बाहर या बस्ती में कुछ दूरी पर का वह एकल और रमणीक स्थान जहाँ लोग प्रायः मीर-मपादे के लिए जाते हैं।

बहुर—प० [देश०] मध्य प्रदेश, बरार और मद्रास में होनेवाला एक प्रकार का मशाला पेठ जिसकी लकड़ी सुन्दर चमकीली और मजबूत होती है।

वि० बहरा।

बहुरूप—प० [हि० बहु। रूप] १ बँटो का व्यवसाय करनेवाला व्यक्ति। २ एक जर्मन जो बँटो का व्यवसाय करता है।

बहुरीयाना—प०—बहुरीयाना।

बहुरी—स्त्री० बहुरी (गली)।

बहुराना—अ० [हि० बहुराना का अ०] १ ऊँचे, बके, खाली बँटो या दुबो व्यक्ति अथवा उमके मन का मनोरंजक या रमणीक वस्तुओं से परचना या कुछ समय के लिए प्रसन्न और शांत होना। २ असह-बन्धे, चिन्ता आदि की बात भूलकर मन का किसी दूसरी ओर लगना, और फलतः कुछ समय या हल्का अनुभव करना। जैसे—दिन भर काम करने के बाद माथा को थोड़ा टहल लेने से मन बहल जाता है। मयों—क्रि०—जाना।

बहुरवान—प० [हि० बहुरा या बहुरी। वान (प्रत्य०)] बहुरा या बहुरी होनेवाला।

बहुराना—स० [फा० बहाल—अच्छी या ठीक दशा में] १ कष्ट, रोग, विरक्ति आदि की दशा में दुबो या चिन्तित को इधर-उधर की बातों में लगाकर प्रसन्न, शांत या मुचो करने का प्रयत्न करना। जैसे—बीमारी के दिनों में पढ़ा पढ़ा में ताया खेलकर मन बहुरा लेता था। २ कष्ट या बन्धे की बातों से अलग रहकर मन की चिन्ताएँ दूर करने का प्रयत्न करना। मनोरंजक कामों, चीजों या बातों से मन पर पड़ा हुआ भार हलका करना। ३ किसी एक काम या बात में लगा हुआ मन उस उद्देश्य में किसी दूसरे काम या बात में लगाना कि विधिकता दूर हो जाय और प्रफुल्लता आ जाय। जैसे—बहर हट एणकार का मन बहुरान के लिए बगिचे चले जाना करते हैं। ४ इधर-उधर की बातें करके किसी को मुलावा देने हुए उसका ध्यान या मन दूसरी ओर लगाना। जैसे—रौने हुए लड़के को बहुराने के लिए उसे बिल्लीना देना। मयी०—क्रि०—देना।

बहुरा—प० [हि० बहुराना] १ बहुराने की क्रिया या भाव। २ मन-बहुराव। मनोरंजन।

बहुराया—प० १ बहुराव। २ बहुरावा।

बहुरालना—प०—बहुरीयाना।

रिमी०—बहुरी।

बहुरी—स्त्री० [स० बाहुरी या बहुरानी] बँटो द्वारा खीची जाने-वाली एक तरह की पुरानी चाल की नवारी गाड़ी।

बहुरला—वि० [फा० बहाल] आनवित। मृत।

प० आना। मुचो।

बहुर—स्त्री० [अ० बहु. म्] १ ऐसा तर्क-वितर्क या बान-बौत जिसमें वा पक्ष अपना अपना मन ठीक सिद्ध करने का प्रयत्न करने हो। तर्क, युक्ति आदि के द्वारा होनेवाला बहुर-मन।

पद—बहुर-मुवाहस्ता।

२ उक्त के फलस्वरूप होनेवाली होड़। उदा०—मोर्दाह तुम्हें बाड़ी बहुर को जीने जदुताज। अपने अपने विन्दू की मुर्दें निवाड़े लाज।—बिहारी। ३ न्यायालय में, मुकदमे में नवाहिये, जिन्हें आदि के उप-रान बकीलो का होनेवाला तर्क-वितर्क पूर्ण मापण।

बहुर-तलब—वि० [अ० बहुर तलब] जिसमें तर्क-वितर्क या वाद-विवाद की आस्था हो। जिसके सम्बन्ध में तर्क-वितर्क ही माना हो या होना आवश्यक नया उचित हो।

बहुरना—अ० [अ० बहुर-ना] १ बहुर या विचार करना। तर्क-वितर्क करना। २ प्रतियोगिता करना। होड़ लगाना।

बहुर-मुवाहस्ता—प० [अ० बहुरी-मुवाहस्ता] तर्क-वितर्क या गण्डन-मउन के रूप में होनेवाला वाद-विचार।

बहा—प० [हि० बहाना] छोटी नहर या नाभा।

बहाउ—प०—बहाव।

बहाऊ—वि० [हि० बहात] १ बहानेवाला। - बहाने जाने के योग्य। २ बुरा। हया। उदा०—मरी पावरी बान की फीन बहाऊ बानि।—बिहारी।

बहावर—वि०—बहादुर।

बहाबुर—वि० [तु०] बीर। शूर। मूरमा।

बहादुराना—वि० [फा० बहादुरान] योग्य मानना। योग्य जैसा। अन्व० बीरता-पूर्वक।

बहादुरी—स्त्री० [तु०] बहादुर होने की अवस्था या भाव। बीरता। वीरता।

बहादुरी टाडो—स्त्री० [हि०] मर्गात में टाडी गिर्गिनी का एक प्रकार या भेद।

बहाना—स० [हि० बहाना क्रिया का स०] १ द्रव पदार्थ को धारा के रूप में किसी ओर चलाना या प्रवृत्त करना। जैसे—तूथ या पानी बहाना। २ ऐसी क्रिया करना कि कोई चीज उन प्रकार की धारा में पड़कर किसी ओर चले या आगे बढ़े। जैसे—पानी गिराकर बहाना या पवरी बहाना। ३ किसी आधार पर या पात्र में का कोई तरल पदार्थ किसी रूप में निकालकर मोचे की ओर ले जाना। जैसे—आंगू बहाना, पानी बहाना, फोंडे में का मवाव बहाना। ४ बेग-पूर्वक गति में धाकर किसी अनिर्दिष्ट दिशा में ले जाना। जैसे—हवा का बहाने को बहाना। ५ नियत या नियमित स्थान में हटाकर दूर ले जाना। ६ किसी को आचरण-छाट करके कुमार्ग में लगाना। ७ बहुत बुरी तरह से नष्ट, पतित या विकृत करना। बहुत ही गवा-बीता कर देना। जैसे—(क) इस लड़के की काली करतूतों ने घर

बहा जाना है। (ख) उन्होंने अपनी सारी मर्वादा बहा दी। ८. ऐसी क्रिया करना जिससे पशु-पक्षियों का घर्म-खाव हो जाय। जैसे—उसने कोई दवा खिलाकर गायिन भंस को बहा दिया। ९. व्यर्थ के कामों में या बिना सोचे-समझे बहुत अधिक धन व्यय करना। जैसे—आज-कल कुछ देना अपना प्रमुख बहाने के लिए पानी की तरह धन बहा रहे हैं। १०. बहुत ही सस्ता या महत्त्वहीन कर देना। जैसे—कुछ लोगों ने पुस्तक प्रकाशन का काम बिलकुल बहा दिया है।

पु० [फा० बहाना = कारण, सबब] १ चारोंकी या घुंतीना की ऐसी बात जो दूसरों को ऐसे तथ्य की प्रतीति कराने के लिए कही जाती है जो यथार्थ अज्ञानाधिक या मिथ्या होता है। जैसे—मंट में दर्द होने का बहाना करके बह चला गया।

विशेष—इसका मुख्य उद्देश्य अपने आपको अमियोप, आक्षोप, कर्तव्य-पातन आदि से बचाने हुए अपने आपको दोष-रहित मित्र करना होता है।

क्रि० प्र०—करना।—बताना।—बनाना।

२ उन अवस्था और रूप में उपस्थित किया जानवाला तथ्य। जैसे—असल में तो उन्हें छुट्टी चाहिए, बीमारी ना मिफे बहाना है। ३ दे० 'मिर्म' और 'हील'।

बहानेबाज—वि० [फा० बहान बाज] बहाने बनानेवाला।

बहानेबाजी—स्त्री० [फा० बहान बाजी] बहाने बनाने का काम।

बहार—स्त्री० [फा०] १ फूलों के मिलने का मौसम। यमत्-क्षुत्।

२ मन वा ज्ञानन्द और प्रफुल्लता। मजा। मोत्र। नस—किसी जगत् (या किसी की वानों) की बहार लेना।
क्रि० प्र०—उठाना।—लुटना।—देना।

३ किसी यन्तु या व्यक्ति का जीवन-काल जिसमें उसे देवकर्म मन प्रमत्त होता है। ४. सौंदर्य आदि के फल-स्वरूप होनेवाली रमणीयता या शोभा। जैसे—पगड़ी पर कलगी लूब बहार देती है।
क्रि० प्र०—देना।

मुहा०—[फिस्ती चीज का] बहार पर आना ऐसी अवस्था में आना या होना कि उसकी शोभा या श्री देवकर्म मन प्रसन्न हो जाय। बहार बक्षना—आनन्द उमड़ना। सुधी छाना। उदा०—मिले तार उनके औरो से नहीं, नहीं बजती बहार।—निराला।

५ मंगीत में, वसल राग में मिलनी-बुलनी एक प्रकार की रागिनी।

बहार-गुजरी—स्त्री० [फा० बहार : म० गुजरी] संपूर्ण जाति की एक रागिनी जिसमें सब स्वर बहल लगते हैं।

बहारना—स०—बुहारना।

बहारबुझ—पु० [फा०, ज०] किले, महल आदि का सबसे ऊंचा वह कमरा जो चारों ओर से लुका होता है और जिसमें बैठकर लोग चारों ओर की शोभा और सौन्दर्य देखते हैं। हवा-महल।

बहारी—स्त्री० बुहारी।

बहाल—वि० [फा०] १ जो फिर उसी हाल (दशा या हालत) में आया हो जिसमें वह पहले था। फिर में अपनी पूर्व दशा या स्थिति में आया हुआ। जैसे—(क) जो कर्मचारी हड़ताल करने के लिए मुश्किल हुए थे, वे फिर बहाल कर दिये गये, अर्थात् अपने पूर्व पद पर लगे लिये गये। (ख) उच्च न्यायालय में अपील स्वीकार करके छोटी अदालत का फैसला बहाल रखा, अर्थात् उसे ज्यों का त्यो उसी रूप में

रहने दिया। ७ (व्यक्ति) शारीरिक दृष्टि में मला-बंता। स्वस्थ। ३. (मन) प्रफुल्लित और प्रसन्न। जैसे—ताजी हवा में रहने से तबीयत बहाल रहती है।

बहाली—स्त्री० [फा०] १ बहाल करने या होने की अवस्था, क्रिया या भाव। २. किसी को फिर से उसी हाल (दशा या हालत) में लाना जिसमें वह पहले रहा हो। ३ अपने पद में अस्थायी रूप से हटाने हुए व्यक्ति को फिर से उस पद पर नियुक्त करने की क्रिया या भाव। ४ आराध्य। बहुरस्ती। ५. प्रमत्तता।

स्त्री० [हि० बहलाना] १ किसी को बहलाने अर्थात् पोषे में रखने की क्रिया या भाव। २ धावा देनेवाली बात। शांसा-पट्टी। दम-मुसा। ३ बहाना।

क्रि० प्र०—देना।—बताना।

बहाव—पु० [हि० बहना] १ बहने की क्रिया या भाव। प्रवाह। २. नदियों आदि के जल की वह गति जो उनमें निम्न तल की ओर जाने या बहने से होती है। ३ समुद्र के जल की वह स्थिति जिसमें उसके तल पर किसी दिशा में बहती हुई दबा लगाने में गति उत्पन्न होती है। (चिपट) ४ पानी का बहती हुई धारा। जैसे—नाव का बहाव में पटना। ५. छाक्षरिक्त रूप में, किसी विनिगट दिशा में होनेवाली ऐसी वेगपूर्ण गति जिसे रोकना या नियंत्रण कराना महत्तम हो। जैसे—आज-कल जिनमें देखो वही अनाचार (या अष्टाचार) के बहाव में बहना चला आ रहा है।

बहि (ह्रस्व)—अव्य० [स० १/वह्, इमुत्] बाहर। 'अन्त' (अन्दर) का विपर्याय।

बहिर—स्त्री० [स० वधुवर हि० वधुवर] स्त्री। औरत।

बहिरिन्त्री—स्त्री० [स० बहि : रु] बाहर के काम करनेवाली मजदूरनी। गृहदासी।

बहिरकम—पु० [स० वय क्रम] अवस्था। उग्र।

बहिर—पु० [स० बहिर] जल-यान, नाव, जहाज आदि।

बहिन—स्त्री०—बहन

बहिनाना—पु० बहनापा।

बहिनाना—पु० बहनपा।

बहिनोता—पु० बहनता।

बहिन्या—स्त्री० बह (मुना)।

बहिया—स्त्री० [हि० बहना] नदियों आदि में आनेवाली पानी की बहाव।

पु० [स० वाही बहन करनेवाला] १ मजदूर। २ नौकर। सेवक।

बहिरा—वि० [स० बहिस-अव, व० म०] १ बाहर का। बाहरी।

'अतरस' का विपर्याय। २ जो किसी क्षोभ, दल, वर्ग आदि से अलग, बाहर या भिन्न हो। ३ अनावश्यक। फाल्गु। (बव०)

पु० १. किसी प्रकार की रचना का बाहरी अंग जो अतर से दिखाई देता है। जैसे—इस पुस्तक का अन्तरंग और बहिरंग दोनों बहुत ही सुन्दर हैं। २ गंगा व्यक्त जो यो ही कही से आ गया या आ पहुँचा हो। ३ पूजन आदि के आरम्भ में किये जानेवाले औपचारिक कृत्य।

बहिरा—वि०—बहटा।

बहिरत—अव्य० [स० बहिः] बाहर।

बहिरति—स्त्री०—बहिरति।

बहिरत्थं—पु० [स० कर्म० स०] बाहर या ऊपर से दिखाई देनेवाला उद्देश्य।

बहिरताना—स०—बहराना (बाहर करना)।
प० बहराना।

बहिरिन्द्रिय—स्त्री० [स० बहिस्-इन्द्रिय, मध्य० स०] बाह्य विषयों को गृह्य करनेवाली इन्द्रिय। कर्मनिष्ठ। जैसे—आँस, नाक, कान, आदि।

बहिरत्न—म० क० [स० बहिस्-गत, द्वि० तं०] १ बाहर आधा या निगल्य हुआ। २ बाहरवाला। बाहर का। ३ अलग, जुदा। पृथक्।

बहिरंगमन—पु० [स० बहिस्-गमन, सुमुपा स०] बाहर जाना। बाहर निकलना।

बहिरंगिने (सिन्धु)—वि० [स० बहिस्-रंगम् (जाना) + गिनि] बाहर या बाहर की ओर जानेवाला।

बहिरंगिरि—पु० [स० बहिस्-गिरि, मध्य० स०] १ पर्वत-माला की बाहरी या निचे पर की पहाड़ी या पहाड़। २ हिमालय की वह बाहरी शृङ्खला जिसमें ६ हजार फुट तक की ऊँचाई के पर्वत हैं। जैग—नेनांगिरि, मन्थरी, शिमला आदि।

बहिरंगमन—पु० [स० बहिस्-जगम्, मध्य० स०] बाह्य अपात दृश्य जगत्।

बहिरजान्—अव्य० [स० बहिस्-जान्, अव्य० स०] हाथों को दोनों पृष्ठों के बाहर निके या निकाले हुए।

बहिरजान्—पु० [स० बहिस्-जीवन, मध्य० स०] १ बाहरी अर्थात् दृश्य और श्रौतिक जीवन। 'आध्यात्मिक जीवन' से विभ्रत। २ इस जीवन के आचरण, व्यवहार आदि।

बहिरदेश—पु० [स० बहिस्-देश, मध्य० स०] १, गाँव या नगर के बाहर का स्थान। परदेश। विदेश। ३ अनजानी या नई जगह।

बहिरदेशी—पु० [स० बहिस्-देश, मध्य० स०] घर का बाहरी दरवाजा।
बहिरदेशी (रिन्द)—वि० [स० बहिरदेश + इनि] जो घर के बाहर ही या हाता हो।

३ फलदार, हाकी आदि का खेक जो लुले मैदानों में खेला जाता हो। (बाउडर)।

बहिरदेशी—स्त्री० [स० बहिस्-देश्या, ब० स०] दुर्गा।

बहिरदेशी—रि० [स० बहिस्-भूत, सुमुपा स०] १ जो बाहर हुआ हो। २ बाहर का। बाहरी। ३ अलग। जुदा। पृथक्।

बहिरदेशी—स्त्री० [स० बहिस्-भूमि, मध्य० स०] बस्ती से बाहर की भूमि, जहाँ जगन प्रायः शीघ्र आदि के लिये जाते हैं।

बहिरदेशी—वि० [स० बहिस्-मन्स, ब० स०] कप जिसका मन किसी दूसरी तरफ लगा हो।

बहिरदेशी—वि० [स० बहिस्-मूल, ब० स०] १ जिसका मुँह बाहर की ओर हो। २ जो प्रकृत या दत्तचित्त न हो। पराङ्मुख। विमुख। ३ विपरीत।

प० वेवाग।

बहिरदेशी (सिन्धु)—वि० [सं०] १ जिसका मुँह या

अगला भाग बाहर की ओर हो। २ जो बाहर की ओर उन्मुख या प्रवृत्त हो।

बहिर्योग—पु० [स० बहिस्-योग, तं० स०] १ बाह्य विषयों पर ध्यान जमाना। २ हठ-योग।

बहिरति—स्त्री० [सं० बहिस्-रति, मध्य० स०] रति के दो मेंदों में से एक। ऐसी रति या समागम जिसके अन्तर्गत, आर्लिंगन, बृद्धन, सप्राय, मर्दन, नम्रदान, रचदान और अवर पान हैं। ('लेमिक' रति से निम्न)

बहिररेखा—स्त्री० [स० बहिस्-रेखा, मध्य० स०] [मू० कृ० बहिररेखित, भाव० बहिररेखत] १. वह रेखा जो किसी दृश्य वस्तु या उसके विभागों का विस्तार या सीमा सूचित करती हो। २ किसी चीज या बात का वह स्पृक्ष रूप जो उसके आकार-प्रकार इतिवृत्ति, सिद्धांत, स्वरूप आदि का ज्ञान कराती हो। (आउट-लाइन) जैसे—विद्युत् धारा-की बहिररेखा।

बहिरलेख—पु० [स० बहिस्-लेख, मध्य० स०] रेखा गठन में वह लेख जो किसी क्षेत्र के बाहर आये हुए आधार पर आकर सिद्धांत और अर्थिक कोण बनाता हो।

बहिरलीपिका—स्त्री० [स० बहिस्-लीपिका, ब० तं०] एक प्रकार की पहेली जिसमें उसके उत्तर का शब्द उस पहेली के मध्ये में नया रहता है। 'अन्तर्लीपिका' का विपर्याय।

बहिरलीम, बहिरलीमा (मन्थु)—वि० [स० बहिस्-लीमन्, ब० स०] जिसके बाल बाहर की ओर निकले हो।

बहिरवाणिज्य—पु० [सं० बहिस्-वाणिज्य, मध्य० स०] किसी देश का दूसरे या बाहरी देशों के साथ होनेवाला वाणिज्य या व्यापार। (एक्स्ट-नेल् ट्रेड)

बहिरवासा (सस्)—पु० [स० बहिस्-वासस्, मध्य० स०] कार्गिन के ऊपर पहनने का कपडा।

बहिरविकार—पु० [सं० बहिस्-विकार, मध्य० स०] गम्यता नाम की बीमारी। आतशक।

बहिरव्यसन—पु० [सं० बहिस्-व्यसन, मध्य० स०] [वि० बहिरव्यसनी] लपटसा।

बहिला—वि० [सं० बेह्लु या हिं बोल ?] ऐसी गाय या भंस जो बच्चा न देती हो। बंसा। ठोठ।

बहिरघर—वि० [सं० बहिस्/घर (बलना) + ट,] १. बाहर जानेवाला। २ बाहरी।

पु० १ बाहरी या दूसरे देश का भेदिया। २. कंकटा।

बहिरहस—पु० [सं० बहिष्-हस, -प्रकाशमान] से फा० बहिहस] स्वर्ग।

बहिरहसी—वि० [हिं० बहिरहस] बहिरहस-सवर्गी।

पु० स्वर्ग का निवासी।

बहिरहक—वि० [सं०] बाहर का।

बहिरहकरण—पु० [सं० बहिस्-करण, सुमुपा स०] १ बाहर करना या निकालना। २ किसी क्षेत्र से अलग या दूर करना। दे० 'बहिरहकार'।

३ शरीर की बाहरी इन्द्रिय। 'अंतःकरण' का विपर्याय।

बहिरहकार—पु० [सं० बहिस्-कार, सुमुपा स०] [वि० बहिरहकृत]

१. बाहर करना। निकालना। २ अलग या दूर करना। हटाना।

३ एक प्रकार का आधुनिक आन्दोलन जिसमें किसी व्यक्ति में या

किसी के काम या बात से असन्तुष्ट और हट होकर उसके साथ सब प्रकार का व्यवहार या सम्बन्ध छोड़ दिया जाता है। ४. देश-विषय के माल का सामूहिक व्यवहार-रत्याग। (बॉयकोट; उक्त दोनों अर्थों में)

बहिष्कृत—पु० कृ० [सं० बहिष्-कृत, सुप्पुपा सं०, स—ए] १. जिसका बहिष्कार हुआ हो या किया गया हो। २. बाहर किया हुआ। निराला हुआ। ३. अलग या दूर किया हुआ। हटाया हुआ। ४. जिसके साथ सम्बन्ध रखना छोड़ दिया गया हो। त्यक्त।

बहिष्कृता—स्त्री० [सं० बहिष्कृत्या, सुप्पुपा सं०] १. किसी चीज पर या उसके सम्बन्ध में बाहर की ओर से की जानेवाली किया। २. बहिष्करण।

बहिष्प्रज्ञ—वि० [सं० बहिष्-प्रज्ञ, ब० सं०] जिसे बाह्य विषयों का अच्छा ज्ञान हो।

बही—स्त्री० [सं० बह; हिं० बंधी ?] लबी पुस्तिका के रूप में बनाई हुई कामगो की वह गद्दी जिस पर कम से नित्य प्रति का लेखा या हिसाब लिखा जाता हो।

बूढ़ा—बही पर चढ़ाना या टीकना=बही पर लिखना। दर्ज करना।

†पु० [सं० बहि; घर से दूर का स्थान। (ब००)]

†स्त्री० [हिं० 'बहा' का स्त्री० अस्त्यं०] १. लंबत सीचने के लिए बनाई हुई पानी की माली। २. कुएँ से पानी खींचने की रस्सी।

बही-खाता—पु० [हिं०] हिसाब-किताब की पुस्तक, बहियाँ, खाते आदि।

बहीर—स्त्री० [?] १. सेना के साथ साथ चलनेवाली भीड़ जिसमें सार्डन, सेवक, दुकानदार आदि रहते हैं। २. सैनिक सामग्री।

†स्त्री० भीड़।

†अव्य० बाहर।

बहीरा—पु० अंडेड़ा।

बहु—वि० [ग०/बहु (बहुना)+हु, न-लौप] १. सख्या में एक से अधिक। अनेक। जैसे—बहुमूली, बहुतरा आदि। २. मान, मात्रा आदि में बहुत अधिक। ज्यादा। जैसे—बहुमत, बहुपुत्र, बहुमूल्य। †स्त्री०=बहु।

बहुवर—स्त्री० [सं० बहुवर] नदी ब्याही हुई स्त्री। बहु।

बहु-कंठक—पु० [सं० बहु कंठ] १. जवाला। २. हिताल ब्रूत।

बहु-कटा—स्त्री० [सं० बहु कंठ] कंठकारी।

बहु-कद—पु० [ब० सं०] सूत।

बहुक—पु० [सं० बहु+कृ] १. केकड़ा। २. आक। मदार। ३. बातक। परीहा। ४. सूर्य। ५. तालाब।

वि० १. बहु-सम्बन्धी। २. बहुत। ३. अधिक दाम का। मँहगा। **बहुकर**—पु० [सं० बहु+कृ (करना)+ट] १. शाब्द देनेवाला। २. ऊँट।

स्त्री० [सं० बहुकरी] झाड़ू। (परिचय)

बहुकरी—स्त्री० [सं० बहुकर+ऊँप] झाड़ू। बुहारी।

बहुकणिका—स्त्री० [सं० बहु सं०, +कृ+टाप, टच] मुसालानी।

बहुक-बाव—पु० [सं० य० तं०] [वि० बहुकवासी] दसों में, बहु

विचार-प्रणाली जिसमें किसी बात या वस्तु के एक ही जगह अनेक या बहुत से मूल कारण या सिद्धान्त माने जाते हैं। 'अद्वैतवाद' का विप-
र्याय। बहुलवाद (प्लूरलिज्म)

बहुकवादी (विष्)—वि० [सं० बहुकवाद+इति] १. बहुकवाद-संबन्धी। २. बहुकवाद के सिद्धान्तों के अनुकूल।

पु० बहुकवाद का अनुयायी।

बहुबंध—पु० [सं० बहु सं०] १. दारपीनी। २. कुनुहा। ३. पीत चन्दन।

बहुबंधा—स्त्री० [सं० बहु सं०, +टाप] १. जुही। २. काला जोरा।

बहुबाव—पु० [सं० बहु सं०, +टच] एक पुनर्वशीय राजा। (भाग-
वत)

बहुबुध—वि० [सं० बहु सं०] १. जिसमें बहुत से गुण हों। २. जो मान या संख्याओं में अनेक गुना अधिक हो। (मस्तिष्क) ३. जो कई अर्थों, तत्त्वों आदि से युक्त हो।

बहुबुना—पु० [हिं० बहु+बुण] चौड़े मूँह का एक गहरा बरतन जिसके पंखे और मूँह का घेरा बराबर होता है।

बहुपरिधि—पु० [सं० बहु सं०] झाड़ू का पौधा।

बहुल—वि० [सं० बहु/शा+क] [भाव० बहुलता] १. बहुत-सी बातें जाननेवाला। २. अनेक विषयों का ज्ञाता।

बहुदनी—स्त्री० [हिं० बहुटा] बाह पर पहनने का एक गहरा। छोटा बहुटा।

बहुल—वि० [सं० प्रभूत, प्रा० पट्टल] १. जो विनयी म दी-चार से अधिक हो। ज्यादा। 'धोड़ा' का विपर्याय। शून्य—आज बहुत दिनों पर आप से मेट हुई है। २. परिमाण, मात्रा आदि में आवरगक या उचित से अधिक। जैसे—बहुत बोलना अच्छा नहीं होता।

पब—बहुत अच्छा—(क) स्वीकृत सूचक वाक्य। एयमस्तु। ऐसा ही होगा। (ख) बराने-थमकाने के लिए कहा जानेवाला शब्द। जैसे—
बहुत अच्छा! तुमसे भी किसी दिन समझ लूँगा। बहुत सम्भ—(क)

अधिकतर अवसरों पर या अधिकतर अवस्थाओं में। प्रायः पट्टया। (ख) बहुत समझ है कि। सम्भवतः। जैसे—बहुत कपड़े तो यह बल चला ही जायगा। बहुत कुछ—विषय, अधिक या यथेष्ट न होने पर भी, आवश्यक अथवा उचित मात्रा या मान में अथवा उमरें कुछ ही कम। जैसे—इस भागड़े में उन्हे सब तो नहीं, फिर भी बहुत-कुछ मिल गया। बहुत हो लिखे—तुप जितना कर सकने से बहुत कर चुके, अब रहने दो, क्योंकि तुमसे यह काम नहीं होगा।

३. जितना होना चाहिए, उतना या उससे कुछ अधिक। यथेष्ट। जैसे—मेरे लिए तो आध सेर दूध भी बहुत होगा।

पब—बहुत पूब = (क) बाह! क्या कहना है। (निर्मां अनोखी बात पर) (ख) हे० ऊपर 'बहुत अच्छा'।

कि० वि० अधिक परिमाण या मात्रा में। ज्यादा। जैसे—
बहुत विगड़ा और उठकर चला गया।

बहुत—वि० [हिं० बहुत+एक अथवा क] बहुत से। बहुतेरे।

बहुतरा—वि०=बहुत।

बहुता—स्त्री० बहु (बहुत) होने की अवस्था या मात्रा। बहुपः।

†वि०=बहुत।

बहुतायत—स्त्री०—बहुतायत ।
बहुताई—स्त्री० [हि० बहुत । आई (प्रय०)] बहुत होने की अवस्था या भाव । बहुतायत । अधिकता । ज्यादाती ।
बहुतायत—स्त्री०—बहुतायत ।
बहुतायत—स्त्री० [हि० बहुत -आयत (प्रय०)] बहुत होने की अवस्था या भाव । अधिकता । ज्यादाती ।
बहुतिवृत्ता—स्त्री० [सं० व० सं०] काकभावी । मर्काय ।
बहुतेरा—वि० [हि० बहुत ; एरा (प्रय०)] स्त्री० बहुतेरी ।
 ? मान या माना में बहुत अधिक । २ प्रचुर । यथेष्ट ।
 कि० वि० बहुत तरह से । अनेक प्रकार से ।
बहुतेरे—वि० [हि० बहुतेर] मर्या में अधिक । बहुत से । अनेक ।
बहुत—पुं० [सं० बहु । त्व] बहुत हानं की अवस्था या भाव । आधिक्य । अधिकता ।
बहुत (च्)—पुं० [सं० व० सं०] भोजन ।
बहुतवाद—पुं० [सं०] [वि० बहुत्वारी] बहुवाद ।
बहुतगिता—स्त्री० [सं० बहुतगित् । तल । टाप्] बहुदर्शा होने की अवस्था या भाव ।
बहुतर्षा (सिन्)—वि० [सं० बहु । दुर्ष । णिनि] [भाव० बहुतगिता] जिनमें समार बहुत कुछ देख-माला हो । विंशत जिसने अच्छी तरह से दुनिया देखी हो ।
बहुबल—पुं० [सं० व० सं०] बेना नाम का अन्न ।
बहुबला—स्त्री० [सं० व० सं० ; टाप्] नेच नाम का साम । च्चु ।
बहुबुध—पुं० [सं० व० सं०] मेह ।
बहुबुधा—स्त्री० [सं० व० सं० ; टाप्] दुषार गाय ।
बहुबुधिका—स्त्री० [सं० व० सं० ; कप्] वृहड ।
बहुदेव-वाद—पुं० [सं० बहुदेव, कर्म० सं०, बहुदेव-वाद, प० सं०] यह मत या सिद्धान्त कि धर्म में बहुत से छोटे-बड़े देवता और देवियाँ होती हैं, और सामान में लोग अपनी अपनी कर्ष के अनुसार उनमें से किसी न किसी के उपासक होने हैं । (प्राचीनार्थस्य)
 जिधो—यह ऐश्वर्यवाद से भिन्न और भाय उसका विरोधी है ।
बहुदेववादी (सिन्)—पुं० [सं० बहुदेववाद ; एनि] वह जो बहुदेव वाद का अनुयायी या समर्थक हो ।
बहुधन—वि० [सं० व० सं०] जिसके पास बहुत धन हो ।
बहुधर—पुं० [सं० व० सं०] शिव । महादेव ।
बहुधा—अध्य० [सं० बहु + धाच्] ? अनेक प्रकार से । बहुत तरह से । २ अधिकतर अवसरी पर । अक्सर । प्रायः ।
बहुधाय—पुं० [सं० व० सं०] साठ सवसरी में से बारहवाँ सवसर ।
बहुधार—पुं० [सं० व० सं०] एक प्रकार का हीरा । बजहीरक ।
बहुनाद—पुं० [सं० व० सं०] शब्द ।
बहुनामा (सन्)—वि० [सं० व० सं०] जिसके बहुत-से नाम हो ।
बहुपरिचय—पुं० [सं० बहु-परिच, व० सं० ; त्व] वह सामाजिक प्रथा जिसमें एक स्त्री एक ही समय या एक साथ कई पुरुषों से विवाह करने उक्त के साथ दाम्पत्य जीवन बिताती है । (पालिजिनी)
बहुपत्नीह—वि० [सं० व० सं० ; कप्] जिसकी बहुत सी पत्नियाँ हों ।
बहुपत्नीत्व—पुं० [सं० व० सं० ; त्व] वह सामाजिक प्रथा जिसमें एक

पुरुष एक ही समय में या एक साथ कई स्त्रियों से विवाह करने उनके साथ दाम्पत्य जीवन बिताता है । (पालिजिनी)
बहुपथ—वि० [सं० व० सं०] बहुत से पत्नीवाला ।
 पुं० १ अन्नक । अवरक । २ प्याज । ३ बदायन । ४ मुचकुद वृक्ष । ५ ढाक । पलाश ।
बहुपथा—स्त्री० [सं० बहुपथ + टाप्] १ तरुणी पुत्रा वृथा । २ बहु-लिगी लता । ३ दूधिया घास । ४ भूजबला । ५ धीकुआर । ६ वृहती । ७ जतुका लता ।
बहुशक्तिका—स्त्री० [सं० व० सं० ; कप् + टाप्, इव] १ मृग्यामलकी । २ महागातावरी । ३ मेथी । ४ बच । वचा ।
बहुपत्नी—स्त्री० [सं० बहु-पत्नी ; डीप्] १ मृग्यामलकी । २ शिव-लिगना लता । ३ तुलसी । ४ जतुका । ५ वृहती । ६ दूधिया घास ।
बहुपद (द्व)—वि०, पुं०—बहुपद ।
बहुपाद—वि० [सं० व० सं०] बहुत में पैरोंवाला ।
 पुं० बरगद का पद । बट वृक्ष ।
बहु-पुत्र—पुं० [सं० व० सं०] १ पाचवे प्रजापति का नाम । २ मातृपणी ।
 वि० जिसके बहुत से पुत्र हों ।
बहु-पुत्रिका—स्त्री० [सं० बहुपुत्रा + कन्, + टाप्, इव] मन्वद की अनुचरी एक मातृका ।
बहुपुत्र्य—पुं० [सं० व० सं०] १ परिभद्र वृक्ष । कन्दर का पद । २ नीम का पेड़ ।
बहुपुत्रिका—स्त्री० [सं० बहुपुत्र्य । कन् + टाप्, इव] गालकी वृत्त । पाय का पद ।
बहु-प्रकार—वि० [सं० व० सं०] बहुविध ।
 अर्थ—बहुत प्रकार से ।
बहु-प्रज्ञ—वि० [सं० व० सं०] जिसके बहुत से वच्चे हों ।
 पुं० १ सूंघर । २ भूज का पीया ।
बहु-प्रव—वि० [सं०] १ बहुत देनेवाला । २ दानवीर ।
बहु-फल—पुं० [सं० व० सं०] १ कदव । २ बन-मग्न । कटाई । विकसत ।
 वि० जिसमें बहुत अधिक फल लगाने हो ।
बहुफला—स्त्री० [सं० बहुफल + टाप्] १ मृग्यामलकी । २ खीरा । ३ एक प्रकार का बन-मटा जिसे क्षविका कहते हैं । ३ वाक-साची । ४ छोटा या जगली करेला । करेली ।
बहु-कली—स्त्री० [सं० बहुकल + डीप्] एक प्रकार की जगली गाजर जिसका पीया अजवाइन का-सा पर उससे छोटा होता है ।
बहु-फेना—स्त्री० [सं० व० सं०] १ पीले दूधवाला वृक्ष । सानला । २ पञ्चाहुली ।
बहु-वत्स—पुं० [सं० व० सं०] सिंह ।
 वि० बहुत अधिक बलवाला ।
बहु-बीज—पुं० [सं० व० सं०] १ बिजौरा नीबू । २ शरीका । ३ बीजदार केल ।
 वि० जिसमें बहुत से बीज हों ।

बहुव्रीहि—पु० [सं० वं० सं०] व्याकरण में समास का वह प्रकार, जिसमें समस्त पदों के योगार्थ से निम्न कोई अन्य अर्थ ग्रहण किया जाता है। जैसे—**बहुबाहु** (राजपण), **चन्द्रमौलि** (शिव)।

बहु-भाग्य—वि० [सं० वं० सं०] बहुभागी।

बहु-भागी (विभ्)—पु० [सं० बहु०/माप्] षोडशोक्ति १ बहुत बोलनेवाला। २ बकबादी।

बहु-भुजा—स्त्री० [सं० वं० सं०+टाप्] दुर्गा।

बहु-भुक्ति—वि० [सं० वं० सं०+कर] कर्द मन्त्रियोवाला।

बहु-भिक्षता (बन्)—वि० [सं० षं० तं०] १ बहुत तरह की चीजों का या बहुत अधिक भोग करनेवाला। २ बहुत साधनेवाला। पेटू। ३ मुक्तव्य।

बहु-भोग्या—स्त्री० [सं० पुं० सं० या षं० तं०] देवता।

बहु-संजरी—स्त्री० [सं० वं० सं०] तुलसी।

बहु-वत—पु० [सं० षं० तं०] १ बहुत से लोगों का अलग-अलग मत।

२ किसी सत्त्वा, समिति आदि के आधे से अधिक सदस्यों का मत।

३ किसी सत्त्वा के दल आदि की ऐसी स्थिति जिसमें समर्थक या अनुयायी कुल सदस्यों में से आधे से अधिक हों। ४ आधे से अधिक पत्रदाताओं का समाहार। जैसे—**दस बंदखोर** में हथपारा बहुमत होगा।

बहुमल—पु० [सं० वं० सं०] सीसा नाम की धातु।

वि० बहुत मैला।

बहुमात्र—वि० [सं० वं० सं०] जो मात्रा में बहुत अधिक हो। बहुत अधिक मानवाला। डेर-सा। (मास) जैसे—**बहु-मात्र** उत्पादन।

बहुभाग्य-उपादान—पु० [सं० धर्म० सं०] आधुनिक उद्योग-धर्मों में कोई चीज एक साथ बहुत अधिक मात्रा या मान में तैयार करना या बनना। (मास प्रोडक्शन)

बहुमान—पु० [सं० कर्म० सं०] अधिक आदर। अधिक मान।

बहुमानी (विभ्)—वि० [सं० कर्म० सं०] बहुत आदरणीय।

बहु-मार्ग—वि० [सं० वं० सं०] जिसमें या जिसके अनेक मार्ग हों।

पु० चौराहा।

बहु-मूत्र—पु० [सं० वं० सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें रोगी को मूत्र बहुत अधिक और बार-बार आता है। पेप्साज अधिक जाने का रोग।

बहुमूर्ति—पु० [सं० वं० सं०] १ बहुरूपिया। २ विष्णु। ३. जन-कपास।

बहुमूल—पु० [सं० वं० सं०] १. रामशर। सरकंडा। २. नरसल। नरकट। ३. शोमाजल। सहिजन।

बहुमूलक—पु० [सं० बहुमूल+कन्] खस। उशीर।

बहुमूला—स्त्री० [सं० बहुमूल+टाप्] धातवीर।

बहुमूल्य—वि० [सं० वं० सं०] १ जिसका मूल्य बहुत हो। २. जो आदर, गुण, महत्त्व आदि की दृष्टि से अति प्रशंसनीय या उपयोगी हो। जैसे—**बहुमूल्य** उपवेश।

बहुरंग—वि०, पु०—**बहुरंगी**।

बहुरंगी—वि० [हिं० बहु+रंग] १ जिसमें बहुत से रंग हों। अनेक रंगों-वाला। २. जिसके मन में अनेक प्रकार के भाव या विचार आते-जाते रहते हों। ३. मन-बीजी। अनेक प्रकार या मूर्ति का।

पु० बहुरूपिया।

५—१३

बहुरंगी-वर्ण—पु० दे० 'सांग'।

बहुरत्ना—अ० [सं० प्रथमं; प्रा० पृहोल्ल] १. वापस आना। लौटना। २. कोई चीज फिर से मिलना या हाथ में आना। फिर से प्राप्त होना।

बहुरि—अव्य० [हिं० बहुरत्ना] १. पुनः फिर। २. अमत्तर। उपरान्त। पीछे।

बहुरिया—स्त्री० [सं० बभूदी, बभूटिका; प्रा० बहुरिजा] नई बहू।

बहुरी—स्त्री० [सं० बाटुक या हिं० भोरला=भूनना ?] भूना हुआ कढ़ा अन्न। चरंग। चबेना।

बहुकथ्य—वि० [सं० वं० सं०] अनेक रूप धारण करनेवाला।

पु० [हिं० बहुरूपिया] वह रूप जो बहुरूपिया धारण करता है।

क्रि० प्र०—मरना।

पु० [सं०] १. विष्णु। २. शिव। ३. ब्रह्मा। ४. कामदेव। ५. एक बुद्ध का नाम। ६. पुराणानुसार एक वर्ष या मूनि-वर्ष का नाम।

७. ऐसा ताड़व नृत्य जिसमें अनेक रूप धारण किये जाते हों।

८. गिरगिट। सट्ट।

बहुकूपक—पु० [सं० बहुकूप+कन्] एक प्रकार का जतु।

बहुकृपा—स्त्री० [सं० बहुकृप+टाप्] १. दुर्गा। २. अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक।

बहुकृपिया—वि० [हिं० बहु+कृप] १. अनेक प्रकार के रूपवाला। २. अनेक प्रकार के रूप धारण करनेवाला।

पु० वह जो जीविका-निर्वाह के लिए अनेक प्रकार के वेप धारण करके या स्वींग बनाकर लोगों के सामने उनका मनोरंजन करता और उनसे पुस्तकार लेता हो।

बहुकृपी—वि० [सं० बहुकृप] अनेक रूप धारण करनेवाला।

पु० बहुरूपिया।

बहुरेता (तस्)—पु० [सं० वं० सं०] ब्रह्मा।

वि० जिसमें बहुत वीर्य हों।

बहुरीसा (भम्)—पु० [सं० वं० सं०] १. मेघ। मेढा। २. लोचवी।

३. बन्दर।

वि० बहुत अधिक बालोवाला। जिसका शरीर बालों से भरा हो।

बहुरी—अव्य० दे० 'बहुरि'।

बहुल—वि० [सं० बहुि (वृद्धि); कुलच्] [माव० बहुलता] अधिक। बहुत।

पु० १. शिव। २. अग्नि। ३. आकाश। ४. काला रंग।

५. चन्द्र मास का कृष्ण पक्ष। ६. सफेद गोल मिर्च।

बहुलच्छत्र—पु० [सं० वं० सं०] लाल सहिजन।

बहुलस्ता—स्त्री० [सं० बहुल+स्त+टाप्] बहुल होने की अवस्था या मात्रा। अमिकता।

बहुला—स्त्री० [सं० बहुल+टाप्] १. गाय। गौ। २. एक त्रिगिण्ट गौ जो पुराणानुसार बहुत ही सत्यनिष्ठ थी और जिसके नाम पर लोभ भावों बड़ी चीज और माघ बड़ी चीज को द्रत रखते हैं। ३. एक देवी का नाम। ४. पुराणानुसार एक नदी। ५. कृत्तिका नक्षत्र। ६. इलायची। ७. नील का पौधा। ८. एक प्रकार की समुद्री मछली।

बहुलाघोष—स्त्री० [सं बहुला। हिं चोष] मादो वदी चोष। इस दिन सत्यवती गी के नाम पर लोम व्रत रखते हैं।
बहुलासाय—वि० [सं बहुल-आलाप, वं सं०] बकवादी।
 पु० बकवाद।
बहुलासन—पु० [सं] वन्दानन के ८४ वनो मे से एक वन।
बहुलस्त—वि० [सं बहुल + इत्च्] कई गुणा बढ़ाया हुआ। (मल्टिपुल) जैसे—बहुलित उदंभ।
बहुली—स्त्री० [सं बहुला] इलायची।
बहुलीकृत—वि० [सं बहुल + कृत्, √ कृ (करना) + क्त] १ बढ़ाया हुआ। वधिषत। २ प्रकट किया हुआ।
बहु-बचन—पु० [सं पं सं०] व्याकरण मे सज्ञा आदि का बहु रूप जिससे एक से अधिक वस्तुओ का बोध होता है।
बहुबचोय—वि० [सं] वर्षानुवर्षी। (वे०)
बहुबन्ध—पु० [सं वं सं०] पिपासाल।
बहुबन्ध—पु० [सं बहु + √ (विभाग करना) + गिच् + अण] लिसोडे का पेड।
बहुबिध—वि० [सं वं सं०] १ जिसने बहुत सी विद्यार्थ पकी या सीखी हो। २ बहुतनी भाते जाननेवाला। बहुज्ञ।
बहुबिवाह—पु० [सं वं सं०] १. बहु सामाजिक प्रथा जिसमे एक व्यक्ति (पुरुष या स्त्री) एक साथ कई व्यक्तियो (स्त्रियो या पुरुषो) के साथ विवाह करते रहना। २. विधेयत बहु सामाजिक प्रथा जिसमे एक पुरुष एक-साथ कई स्त्रियो के साथ विवाह करके दाम्पत्य जीवन व्यतीन करता है। (पॉलिगामी)
बहुबीय—पु० [सं वं सं०] १ विमीतक। बहेडा। २ शारमली। समल। ३. मरुआ।
बहुस—(सस्)—अ० य० [सं बहु + शन्] १ बहुन बार। २. बहुत तरह से।
बहुशय—पु० [सं वं सं०] गीरा पत्नी। चटक।
बहुशिर—(रस्)—पु० [सं वं सं०] विण्णु।
बहुशुंग—पु० [सं वं सं०] विण्णु।
बहुभूत—वि० [सं वं सं०] १ (व्यक्ति) जिसने अनेक विषयो की ज्ञान सम्पन्नी बहुत-सी बाने गुनी तथा स्मरण रखी हो। २. विद्वान्। पण्डित।
बहुसम्बन्ध—वि० [सं वं सं०] कप् १ जिसकी सख्या बहुत अधिक हो। निनसी मे बहुत। २. जिर की सख्या दूसरो की तुलना मे बहुत अधिक हो। जैसे—समद का बहुसम्बन्ध दल।
बहुसार—पु० [सं वं सं०] खरिण। लैर।
बहुसू—स्त्री० [सं बहु + सू + निवप्] भुकीरी। मादा मूअर।
बहुसूत्र—पु० [सं बहु + सू (बहना) + अच्] शल्लकी वृक्ष। सर्लई।
बहुस्वन—पु० [सं वं सं०] १. उल्लू। २ शाय।
बहु-हेतुक—वि० [सं वं सं० + कप्] जिसमे कई या बहुत हेतु हो। (मल्टी-पैज)
बहुदा—पु० [सं बाहुव्य, मा० बाहुद्व] [स्त्री० अल्पा० बहुद्वी] बहि पर पहनने का एक प्रकार का सहना।
बहु—स्त्री० [सं वण्] १ सबक के विचार मे पुत्र की पत्नी। पतोही। २ जांक। पत्नी। ३. नव विवाहिता स्त्री। डुलहिना। ४. रहस्य सप्रदाय मे सुबुद्धि या धार्मिक बुद्धि।

बहुकरी—स्त्री०=बहुकरी।
बहुवक—पु० [सं बहु-उदक, वं सं०] संव्याप्तियो का एक मंद।
बहुवमा—स्त्री० [सं बहु-उपमा, वं सं०] एक अर्थात्कार जिसमे उपमेय के एक ही धर्म के लिए अनेक उभमाना का कथन होता है।
बहेगा—पु० [सं विहमा] १. एक प्रकार का पक्षी जिसे मुजगा भी कहते है। २. चोपया की मृष्ट मे होनेवाला एक रोग।
 वि० १. बहु जो प्राय इधर-उधर व्यर्थ घूमता रहता हो। घुमककड। २. आबारा।
बहेत—स्त्री० [हिं बहना] वह मिट्टी जो बहकर किसी स्थान पर जमा हुई हो।
बहेबा—पु० [देश०] पडे का ढोबा जो चाक पर से गड़कर उतरा जाता है। यही पीटकर बढाने से सूझील घडे के रूप मे हो जाता है। (कुम्हार)
बहेडा—पु० [सं विमीतक, प्रा० बहेडज] १. पर्वतो तथा जंगलो मे होनेवाला एक ऊँचा वृक्ष जिसके पत्ते बट-बुल के पत्तो से कुछ छोटे तथा फल अणकार या गोल होते है। २. उबत वृक्ष का फल जो स्वाद मे कसेला होता है तथा वैद्यक मे, कफ, पित्त तथा क्षीम रोग निवृत्त करनेवाला माना जाता है।
बहेतू—वि० [हिं बहना] १ (व्यक्ति) जो इधर-उधर माग-माता फिरता हो। २. बहुत ही निम्न कोटि का। तुच्छ या हीन।
 ३. (घन या पदार्थ) जो मूलत मे या बिना परिश्रम के प्राप्त होना या हुआ हो।
बहेरा—पु०=बहेडा।
बहेरी—स्त्री० [हिं बहराना] बहाना। हीला।
बहेला—पु० [हिं बहाली] कुत्ती का एक पेश।
 वि० [सं बल्लम ?] प्रिया। प्यारा।
बहेसिदा—पु० [सं वष + हेला] वह व्यक्ति जो छोटे-मोटे पत्-पशियो को पकड़ता तथा उन्हें बेचकर अपनी जीविका का निर्वाह करता हो।
 चिडीमार।
बहोर—पु० [हिं बहुरना] बहुरने की क्रिया या भाव। वापसी। पलटा। फेरा।
 *अव्य०=बहोरि।
बहोरना—सं० [हिं बहुरना] १ गये हुए को फिर पहले या पुराने स्थान पर ले आना। लौटाना। २. चरनेवाले चौपायो का घर की ओर हौकना। ३. सँभालकर ठीक अवस्था मे लाना। उदा०—नबीर इह तनु जाहगा, सकडू त लेडू बहोरि—कबीर।
बहोरि—अव्य० [हिं बहोर] दोबारा। पुन। फिर।
बहोरी—स्त्री० [हिं बहुरना] बहुरने की क्रिया या भाव।
बहुबन्ध—वि० [सं बहु-अर्थ + वं सं०, + कप्] (कथन, बात या शय्य) जिसके बहुत मे अर्थ हो या निकाल सकते हो। (सेन्टेन्स)
बा—पु० [अनु०] गाय के रँगेना के का शब्द।
 पु०=बार (ढका)।
बाँक—स्त्री० [सं बंक] १ टेढ़ापन। वक्रता। २. घुमाव या मोड़।
 जैसे—नदी की बाँक। ३. हाथ मे पहने की एक प्रकार की चुड़ी।
 ४. पैरों मे पहनने का बाँधी का एक प्रकार का गहना। ५. बाँह पर का गहना। ५. बाँह पर पहनने का एक प्रकार का गहना। ६. लोहारो

का वह धिकंजा जिसमें वे बीजों को कसकर रखते हैं। ७. गन्ना छीलने का सदौते के आकार का एक उपकरण। ८. एक प्रकार की टेढ़ी-बढ़ी छुरी या कटाड़ी। ९. उक्त छुरी या कटाड़ी चलाने का कौशल या विद्या। १०. उक्त कौशल या विद्या सीखने के लिए किया जानेवाला अभ्यास।

बि० १. घुमावदार। टेढ़ा। बक। २. दे० 'बाँका'।

स्त्री० [दिशा०] एक प्रकार की शास।

पु० [?] गङ्गा के ढींच में वह शहतीर जो खड़े बल में लगाया जाता है।

बाँकावाँ—पु० [सं० बाँक] छकड़े के आँक की वह लकड़ी जो पुरे के नीचे आड़े बल में लगी रहती है।

बि०=बाँकुड़ा।

बाँकड़ी—स्त्री० [सं० बाँक+हि० डी] कलाबन्त या बाघले की बनी हुई वह पत्थरी बोरी या फीता जो सारियों आदि के किनारों पर धोमा के लिए लगाया जाता है।

बाँक-बोरी—स्त्री० [हि० बाँक] एक प्रकार का शस्त्र।

बाँकनल—पु० [सं० बकनल] सुमारों का एक जीवार जिससे फूँक मारकर टोका लगाते हैं।

बाँकना—स० [सं० बक] टेढ़ा करना।

†अ० टेढ़ा होना।

बाँकपन—पु० [हि० बाँका+पन (प्रत्य०)] १. टेढ़ापन। तिरछापन। २. बाँका होने की अवस्था या भाव। ३. बनावट, रचना या रूप की अनौषी सुन्दरता।

बाँका—बि० [सं० बक] [स्त्री० बाँकी] १. टेढ़ा। तिरछा। २. जिसमें बहुत ही अनौषा माधुन्य और सौन्दर्य हो। जैसे—बाँकी अवा। ३. (अ्यन्ति) जिसकी चाल-चाल, बेष-भूषा, सज-धज आदि में अनौषा सौन्दर्य हो। जैसे—बाँका जवान। ४. छेला। ५. बहादुर और हिम्मतवर। बीर और साहसी। जैसे—बाँका सिपाही। ६. बिकट। बीहड़। (राज०)

पु० १. लोहे का बना हुआ एक प्रकार का हथियार जो टेढ़ा होता है।

२. बहु मुड़ा या बढमास जो बराबर अक्षेण पास उक्त शस्त्र रखता हो।

३. सदा बना-ठना रहनेवाला बढमास और लुब्धा। गुदा। (लखनऊ)

४. बरतों आदि में अथवा किसी जुड़से में बहु बालक या युवक जो लूज सुन्दर बदन और अलंकार आदि से सजाकर तथा धोड़े या पालकी में बैठाकर शोभा के लिए निकाला जाता है। ५. धान की फसल को मुकसान पहुँचानेवाला एक प्रकार का कीड़ा।

बाँकिया—पु० [सं० बक+टेढ़ा] १. नरसिंहा नाम का बाजा जो आकार में कुछ टेढ़ा होता है। २. रथ के पहिये की आगे की वह टेढ़ी लकड़ी जिस पर उसकी घुरी टिकी रहती है।

बाँकी—स्त्री० [हि० बाँका] बाँस को काटकर लपाचियाँ, तीलियाँ आदि बनाने का एक प्रकार का उपकरण।

बि०, स्त्री०=बाँकी।

बाँकुड़—बि० [स्त्री० बाँकुड़ी]=बाँकुड़ा।

बाँकुड़—बि० [हि० बाँका] १. बाँका। टेढ़ा। २. नुकीला। पैना। ३. चतुर। हथियार।

बाँकुड़ा—बि० [हि० बाँका] १. बाँका। टेढ़ा। २. तेज शार का। ३. कुशल। चतुर।

बाँग—स्त्री० [फा०] १. ध्वनि। स्वर। २. नमाज के समय नमाज पढ़ने-वालों को मसजिद में आकर नमाज पढ़ने के लिए बुलाने के निमित्त मुल्ला द्वारा की जानेवाली उच्च स्वर में पुकार। ३. मीर के समय घुरी के बोलने का स्वर।

बाँगड़—पु० [दिशा०] कदाला, रोहतक, हिसार आदि के आस-पास का प्रदेश। हरियाणा।

स्त्री० उक्त प्रदेश की बोली जो लड़ी बोली या पश्चिमी हिन्दी की एक शाखा है। हरियाणा।

बि०=बाँगड़।

बाँगी—बि० [हि० बाँगड़] बाँगड़ या हरियाणा प्रदेश का।

स्त्री०=बाँगड़ (बोली)।

बाँगड़—बि० [हि० बाँगड़] असम्भ, उजबड़ और पूरा गंवार।

बाँगबरा—स्त्री० [फा० बाँग] १. घटे या घड़ियाल की ध्वनि। २. काफिले में प्रस्थान के समय बजनेवाले घण्टों की ध्वनि या आवाज।

बाँगर—पु० [दिशा०] १. छकड़ा गाड़ी का वह बाँस जो फड़ के ऊपर लगाकर फड़ के साथ बाँध दिया जाता है। २. ऐसी जैनी जमीन जिस पर आस-पास के जलाशय की बाढ़ का पानी न पहुँचता हो। 'खादर' का विपर्यय। ३. बहु मृत्ति जो पशुओं के चरने के लिए छोड़ दी गई हो, अथवा जिसमें पशु चरते हों। चरागाह। चरी। (मेरठ) ४. अवय प्रान्त में होने-वाला एक प्रकार का बैल।

बाँगा—पु० [दिशा०] ऐसी कूई जिसमें से बिनीले अभी तक न निकाले गये हों। कपास।

बाँगुर—पु० [सं० बांगुर] १. पशुओं या पक्षियों को फँसाने का जाल। फँदा। २. फँसने या फँसाने का कोई स्थान। उदा०—दुलसीबास यह विपत्ति सुगँह सी बनें निबरे—दुलसी।

बाँचना—स० [सं० बाँचन] १. पढ़ना। २. पढ़कर सुनाना।

†अ०=बचाना।

†सं०=बचाना।

बाँचना—स० [सं० बाँछ] १. इच्छा या कामना करना। चाहना। २. चुनना। छंटना।

स्त्री०=बाँछा (कामना)।

सं० दे० 'बाँचना'।

बाँछा—स्त्री०=बाँछा (इच्छा)।

बाँछित—पु० कृ०=बाँछित।

बाँस—स्त्री० [सं० बंध्या] १. वह स्त्री जिसे किसी शारीरिक विकार के कारण संतान न होती हो। बध्या। २. कोई ऐसा माता जंतु या पशु जिसे शारीरिक विकार के कारण बच्चा न होता हो। ३. ऐसी बनस्पति या वृक्ष जिसमें आन्तरिक विकार के कारण फल, फूल आदि न लगे। बि० संतो की परिभाषा में, अज्ञानी या ज्ञानहीन।

स्त्री० [दिशा०] एक प्रकार का पहाड़ी वृक्ष जिसके फलों की गुठलियाँ बच्चों के गले में, उनको रोग आदि से बचाने के लिए बाँधी जाती हैं।

बाँस—स्त्री०=बाँस (इच्छा)।

बाँसित—पु० कृ०=बाँसित।

बाँस—स्त्री० [सं० बंध्या] १. वह स्त्री जिसे किसी शारीरिक विकार के कारण संतान न होती हो। बध्या। २. कोई ऐसा माता जंतु या पशु जिसे शारीरिक विकार के कारण बच्चा न होता हो। ३. ऐसी बनस्पति या वृक्ष जिसमें आन्तरिक विकार के कारण फल, फूल आदि न लगे। बि० संतो की परिभाषा में, अज्ञानी या ज्ञानहीन।

स्त्री० [दिशा०] एक प्रकार का पहाड़ी वृक्ष जिसके फलों की गुठलियाँ बच्चों के गले में, उनको रोग आदि से बचाने के लिए बाँधी जाती हैं।

बाँस—स्त्री०=बाँस (इच्छा)।

बाँसित—पु० कृ०=बाँसित।

बाँस—स्त्री० [सं० बंध्या] १. वह स्त्री जिसे किसी शारीरिक विकार के कारण संतान न होती हो। बध्या। २. कोई ऐसा माता जंतु या पशु जिसे शारीरिक विकार के कारण बच्चा न होता हो। ३. ऐसी बनस्पति या वृक्ष जिसमें आन्तरिक विकार के कारण फल, फूल आदि न लगे। बि० संतो की परिभाषा में, अज्ञानी या ज्ञानहीन।

स्त्री० [दिशा०] एक प्रकार का पहाड़ी वृक्ष जिसके फलों की गुठलियाँ बच्चों के गले में, उनको रोग आदि से बचाने के लिए बाँधी जाती हैं।

बाँस ककोड़ी—स्त्री० [स० बंध्या-ककोटीक] बनककोड़ा। खेवसा। बन-परखल।

बाँसपन—पु० [हि० बाँस +पन (प्रत्य०)] बाँस होने की अवस्था या कव्यत्व।

बाँट—स्त्री० [हि० बाँटना] १ बाँटने की क्रिया या भाव। २ बाँटने पर हर एक को मिलनेवाला अलग-अलग अथवा भाग। हिस्सा।

सूहा—(कोई चीज किसी के) बाँट या बाँटे पड़ना—इस प्रकार अधिकता से होना कि मानो सब कुछ छोड़कर उसी के हिस्से में आई या उसी को मिली हो। जैसे—जी ही, सारी अकल तो आप के ही बाँटे पड़ी है। (अव्यय)

३ समीत में गीत के नियत बोलों को नियमित तालों में ही मुन्दरता-पूर्वक नही कुछ लीचकर और कही कुछ बढ़ाकर उच्चरित करना।

पु० [देश०] १ गोओ आदि के लिए एक विशेष प्रकार का मोजन, जिसमें खरी, बिनीला आदि चीजे रहती हैं। २ धान के खेत में फसल को हानि पहुँचानेवाली बेंडर नाम की घास। ३ घास या पयाल का बना हुआ एक मोटा सा रस्सा जिसे गाँव के लोग कुआर सुदी १४ को बनाते हैं और दोनों ओर से कुछ लुग लुग उसे पकड़कर तब तक गीचने है जब तक वह टूट नहीं जाता।

†पु०—बाट (बटखरा)।

बाँट-बूँट—स्त्री० [हि० बाँट +बूँट (अनु०)] बाँटने या लोगों को उनका हिस्सा देने की क्रिया या भाव।

बाँटना—म० [स० बणु, गु० बाँटवूँ, मरा० बाटणे] १ किसी चीज को कई भागों में विभक्त करना। जैसे—यह जिला चार तहसीलों में बाँटा जायगा। २ सर्पति आदि के सबब में उसके हिस्सेदार कई विभाग करके उसे उनके अधिकारियों को देना या सौंपना। ३ खानेवाली चीज के सबब में, उसका थोड़ा-थोड़ा अथवा सब लोगों को देना। जैसे—बच्चों को मिठाई बाँटना। ४ आर्थिक क्षेत्र में, किसी निर्माणशाखा या कार्यालय में काम करनेवालों को उनके पावने का भुगतान करना। जैसे—अर्थ-लाभ या वेतन बाँटना।

†स०—बाटना (पीनान)।

बाँटा—पु० [हि० बाँटना] १ बाँटने की क्रिया या भाव। बाँट। २ माने-बजानेवाले लोगों का बताना या पारिस्थिकिक का घन आपस में यथा-योग्य बाँटने की क्रिया या भाव।

कि० प्र०—छगाना।

३ बाँटने या बाँटने पर प्रत्येक को मिलनेवाला अथवा भाग। हिस्सा। उदा०—रुप लुट कोही तुम काहै अपने बाँटे की घरिही स्त्री।—सूर।

कि० प्र०—पाना।—मलाना।

महा०—(किसी चीज का) बाँटे पड़ना—किसी सपत्ति आदि के हिस्से लगाना।

बाँटा बीसस—स्त्री० [स्त्री० बाँट=एक प्रकार का रस्सा +चौदस (निधि)] कुआर सुदी १४ जिस दिन देहात के लोग बाँट (रस्सा) बटकर लीचते और तोड़ते हैं। सि० दे० 'बाँट'।

बाँप—पु० [देश०] दो नदियों के संगम के बीच की भूमि जो वर्षों में नदियों के बढ़ने से बढ़ जाती है और पानी उतर जाने पर फिर निकल आती है।

†पु०—बाँपा।

बाँहा—पु० [स० बड] १ वह पत्तु जिसकी पूँछ कट गई हो। २. वह व्यक्ति जिसकी घन-गृहस्थी या बाल-बन्धने न ही। ३. तोता। वि० [स्त्री० बाँही] जिसकी पूँछ न ही। दुस-कटा या बिना दुम का। पु० [देश०] दक्षिण-पश्चिम की हवा।

बाँही—स्त्री० [हि० बाँहा] १ बिना पूँछ की गाय। २. छोटी लाठी। छाड़ी।

बाँहीबाव—पु० [हि० बाँही फा० बाज] १ लट्टबाज। लटैत। २ उगड़की। सारंगती।

बाव—पु०—वदा (दास)।

बावर—पु०—बदर। (पश्चिम)

बावा—पु० [स० बन्दक] ऐसी वनस्पतियों का वर्ग जो भूमि पर नहीं उगती बल्कि दूसरे वृक्षों पर फँलकर उन्हीं की शाखाओं आदि ॥ रम चमती और अपना पोषण करती हैं।

बावी—स्त्री० [हि० बदा का स्त्री०] लोड़ी। दासी।

पव—बाँवी का बेटा (क) वह जो पूरी तरह में अपने अर्धांग कर लिया गया हो। (ख) तुच्छ। होना। (ग) वर्णमाला। पु० [फा० बवी] कौड़ी। कागवामी।

बाँप—पु० [फा० बवी] कौड़ी। कागवामी।

बाँध—पु० [हि० बाँधना] बाँधने की क्रिया या भाव। २. वह बंधन जो किसी बान को रोकने या उसके आगे बंधन पर नियंत्रण रखने के लिए लगाया जाता हो। (बाट) ३. जलाशय का जब फँलने में रोकने के लिए उनके किनारे लगाया हुआ मिट्टी, पत्थर आदि का भूना। पृथ्वी। बंद। (एम्बेन्मेंट) ४. वह वास्तु-रचना जो किसी नदी की धारा का रोकने के लिए अथवा किसी ओर प्रवृत्त करने के लिए बनाई गई हो। (दैम) जैसे—माँवरा या हीराकूण बाँध। ५. लाक्षणिक अर्थ में दिग्गन्ध, शामा आदि के लिए किसी चीज के ऊपर बाँधी हुई दूसरी चीज।

सूहा०—बाँध बाँधना आडवर रचना।

बावाँहनैय—पु० [स० बघकी; दग्—एय, इनट] अविवाहिता स्त्री का जतरज पुत्र।

बाँसपना—स० [स० बघन] १ डोरी, रस्सी आदि कनक किन्ना चीज के चारों ओर लपेटना। जैसे—घाव पर पट्टी बाँसना। २. डोरी, रस्सी आदि के द्वारा किसी एक चीज के साथ आबद्ध करना। जैसे—कमर में पेटो या नाहा बाँसना। ३. रस्सी आदि के दो छोरों को गाँठ लगाकर आपस में जोड़ना या सम्बद्ध करना।

सूहा०—गाँठ बाँसना—दे० के अन्वयन।

४. रस्सी आदि के बनाए हुए फंदे में कोई चीज इस प्रकार फँसाना कि वह छूटने, निकलने या भागने न पायें। जैसे—गो या भँस बाँसना। ५. पुस्तक के फर्गों की इस प्रकार मिलाई करना कि वे एक ओर से आपस में जुड़े रहें, अलग, अलग न होने पावें और उनके ऊपर में दस्तनी आदि लगाना। जैसे—बिन्द बाँसना। ६. कागज, कपड़े आदि से किसी चीज को इस प्रकार लपेटना कि वह बाहर में निकलने से अथवा सुरक्षित रहे। जैसे—ढाका की पुस्तिका बाँसना, कपड़ों या कित्तवों को गट्टी बाँसना। ७. ऐसी क्रिया करना कि जिसमें कोई चीज किसी विशिष्ट क्षेत्र या सीमा में ही रहे, उससे आगे या बाहर न जाने पायें। जैसे—नदी का पानी बाँसना। ८. उक्त के अन्वय पर लाक्षणिक रूप में, किसी

बात, भाव या विचार को इस प्रकार धाँसी में सजाना कि उसमें कोई कोर-कसर, मुटि या विधिबलता न रहे जाय, अथवा उसे कोई विधिष्ट रूप प्राप्त हो जाय। ९. किसी व्यक्ति को नीच या बंजन में डालना। बँधुआ बनाना। १०. तम-भंग आदि के प्रयोग में ऐसी किया करना जिससे किसी की गति या शक्ति निर्गन्धित और मोहित हो जाय अथवा मनमाना काम न कर सके। जैसे—जादू के जोर से दयाकों की नजर बाँधना, मन्त्र के बल से सौ को बाँधना (अर्थात् इधर-उधर बढ़ने में अक्षम्य कर देना) ११. कोई ऐसी किया करना जिससे दूसरा कोई किसी रूप में अधिकार या वश में आ जाय अथवा किसी रूप में विवश हो जाय। जैसे—किसी को प्रेमसूत्र में बाँधना। १२. किसी चीज को ऐसे रूप या स्थिति में लाना कि वह इधर-उधर न हो सके और अपने नये रूप या स्थान में अथावक रहे। जैसे—किसी चूर्ण से गोली या लकड़ू बाँधना, कमर में कटार या तलवार बाँधना। १३. कुछ विधिष्ट प्रकार की बालु-रचनाओं के प्रसंग में बनाकर तैयार करना। जैसे—हुँआ, घर, नया पालतू बनाना। १४. बौद्धिक क्षेत्र या विचार के प्रसंग में, सोच-समझकर स्थिर करना। जैसे—बन्धिस बाँधना, मन्थूबा बाँधना। १५. साहित्यिक क्षेत्र में, किसी विषय के बर्णन की रचना-साधनों एकत्र करके उसका ढाँचा खड़ा करना। जैसे—आलंकारिक बर्णन के लिए रूपक बाँधना, गजल में कोई मजमून बाँधना। १६. ऐसी स्थिति में लाना कि नियमित रूप से अपना ठीक और पूरा काम कर सके या प्रभाव विखला सके। जैसे—किसी की नमस्कार या सत्ता बाँधना, किसी घर रंग बाँधना, किसी काम या बात का ढोल या हिसाब बाँधना। १७. उत्पन्न देना। साध्य स्थिति करना। उदा०—सब कद को सरो बाँध हैं, न उसको ताड़ बाँध।—काँदी कवि। अर्थात् सब लोग कद की उपमा सरो (बूझ) में देते हैं तुम उनमें उपमा (ताड़ बूझ) से परी। १८. उपक्रम या योजना करना।

बाँधी-पीर—स्त्री० [हि० बाँधना + पीर] वह घेरा या बाड़ा जिसमें पालतू पशुओं का बाँधकर रखा जाता है।

बाँधन—पु० [हि० बाँधना] १. वह उपाय या युक्ति जो किसी कार्य को आरम्भ करने से पहले सोची या सोचकर स्थिर की जाती है। पहले से ठीक की हुई तस्वीर या स्थिर किया हुआ विचार। उपक्रम। मन्थूबा। २. किसी सम्भावित बात के संबंध में, पहले से किया जानेवाला सोच-विचार।

क्र० प्र०—बाँधना।

३. किसी पर लगाया जानेवाला झुंड अभियोग। ४. मनगढ़त बात। ५. रंगने से पहले कपड़े में देलकूटे या बुदकियाँ रखने के लिए उसे जगह जगह धोरी, मोटे या सूत से बाँधने की क्रिया या यणाली।

बध—बधू, कौ रोधी—कपड़े रंगने का वह प्रकार जिसमें चुनरी, माडी आदि रंगने से पहले बुदकियाँ डालने या कलामक आकृतियों बनाने के लिए उन्हें जगह जगह सूतो से बाँधा जाता है। (टाई एण्ड डाई)

३. उक्त प्रकार से रीठी हुई चुनरी या साड़ी का और कोई ऐसा पदार्थ जो इस प्रकार बाँधकर रंगा गया हो। उदा०—कहूँ पदमाकर लयी बाँधनू बसनवारी ब्रज बसनवारी ह्यो हृदयवारी है।—गधाकर।

बाँधव—पु० [स० बन्धु + अण् ट्वाच्] १. भारी। बन्धु। २. नाते-रिस्ते के लोग। ३. धनिष्ठ मित्र। गहटा दोस्त।

बाँधव—पु० [स० बाँधव + ष्यञ्] १. कन्धु होने की अवस्था या साथ।

बन्धुता। २. रक्त-संबंध। नाता। रिस्ता।

बाँधुआ—वि०, पु०—बँधुआ।

बाँध—स्त्री० [बिंश०] एक प्रकार की मछली जो सूप के आकार की होती है।

बाँधा धोड़ी—स्त्री० [१] एक प्रकार का रत्न जो लहसुनिया की जालि का होता है।

बाँधा रवी—पु० [स० वामन] वामन। बीना। बहुत ठिगना।

बाँधी—स्त्री० [स० बन्नी] १. दीपक द्वारा बनाया हुआ मिट्टी का स्थान जो रेखाकार होता है। बँधीटा। २. साँफ का बिल।

बाँधन—पु०—बाँधन।

बाँधी—स्त्री०—बाँधी।

बाँधा—वि०—बाँधा।

बाँधना—स०—देना 'रखना'।

बाँधला—वि०—बाँधला।

बाँस—पु० [म० बस] १. नृप जाति की गन्ने आदि की तरह की एक गांढार वनस्पति, जिसके काष्ठ बहुत मजबूत किन्तु अन्धर से कोखले होते हैं तथा जो छपर आदि छाने और इमारत के दूसरे कामों में आते हैं।

मुहा०—बाँस पर चढ़ाना—(क) बहुत उच्च स्थिति तक पहुँचना। (ख) बहुत प्रसिद्ध होना। (ग) बहुत बदनाम होना।

मुहा०—(किसी को) बाँस पर चढ़ाना—(क) बहुत बड़ा देना। बहुत उन्नत या उच्च कर देना। (ख) बहुत प्रसिद्ध करना। (ग) बहुत बदनाम करना। (घ) अर्थ की प्रशंसा करके चमड़ या भिजाव बड़ा देना। (कलेजा) **बाँसों उछलना**—कलेजे में बहुत अधिक धड़कन या विकलता होना। (व्यक्ति का) **बाँसो उछलना** बहुत अधिक प्रसन्न होना। खूब खुश होना।

२. लवाई की एक मात्र जो सवा तीन गज की होती है। लाठी। ३. पीठ के बीच की हड्डी जो गर्दन से कमर तक चली गई है। रीढ़। ४. माता। (हि०)

बाँसपूर—पु० [हि० बाँस + पूरना] एक तरह की बड़िया महीन मलमल।

बाँसफल—पु० [हि० बाँस + फल] एक प्रकार का धान। बाँसी।

बाँसली—स्त्री० [हि० बाँस + ली (प्रत्य०)] एक प्रकार की जालीदार लकी पतली थैली जिसमें स्याना-नैसा रखा जाता है और जो कमर में बाँधी जाती है। हिमयानी।

†स्त्री०—बाँसुटी (बपी)।

बाँसा—पु० [हि० बाँस] १. बाँस का बना हुआ चांगे के आकार का वह छोटा नल जे हल के साथ बँधा रहता है। इसी में दाने के लिए अन्न भरा जाता है। अरना। तार। २. एक प्रकार की घास जिसकी पत्तियाँ बाँस की पत्तियों की तरह होती हैं।

पु० [स० प्रियावास ?] १. पियावासा नाम का पीथा जिसमें चपई रंग के फूल लगते हैं और जिसकी लकड़ी के कोयले से बाष्प बनती थी।

२. उन्नत पीथं का फूल।

पु० [स० वय - रीठ] १. रीठ की हड्डी। २. नाक के ऊपर की हड्डी जो दोनों नथनों के बीचोबीच रहती है।

मुहा०—बाँसा फिर जाना—नाफ का टेडा हो जाना। (मृत्यु के बहुत समीप होने का लक्षण)

बाईसिनी—स्त्री० [हि० बाँस] एक प्रकार का छोटा बाँस जिसे बरियाल, ऊना अथवा मूल्युक भी कहते हैं।

बाँसी—स्त्री० [हि० बाँस + ई (प्रत्य०)] १ एक प्रकार का छोटा, पतला और मृदायम बाँस जिससे हुकके के नैचे आदि बनते हैं। २ एक प्रकार का गेहूँ। जिसकी बाल कुछ-कुछ काली होती है। ३. एक प्रकार का धान जिसका चावल बहुत सुगन्धित, मृदायम और स्वादिष्ट होता है। इसे बाँसकल भी कहते हैं। ४ एक प्रकार की घास जिसके ढठल कड़े और मोटे होते हैं। ५ एक प्रकार की बिरिया। ६ कुछ सफेदी लिए हुए पीले रंग का एक प्रकार का पत्थर।

बाँसुरी—स्त्री० [हि० बाँस] पतले बाँस का बनाया हुआ एक प्रसिद्ध बाजा जो मूँह से फूँककर बजाया जाता है। मुरली। बंशी।

बाँसुली—स्त्री० [हि० बाँस] १ एक प्रकार की घास जो अन्तर्वेद में होती है। २ बाँसुरी। बंशी।

बाँसुलीकंद—पु० [हि० बाँसुली + सं० कण] एक प्रकार का जंगली मूत्रन या जमीकंद जो गले में बहुत अधिक लगता है।

बाँह—स्त्री० [सं० बाह] १ मनुष्य के शरीर में कंधे से लेकर कलाई के बीच का अवयव। भुजा।

मुहा०—(किसी को) **बाँह ऊँची** (या **बलुँच**) होना—(क) बीर और साहसी होना। (ख) उत्तर और परोपकारी होना। (किसी को)

बाँह चढ़ाना या **पकड़ना**—(क) किसी की सहायता करने के लिए प्रस्तुत होना। सहारा देना। (ख) किसी स्त्री को अपने आश्रय में लेकर और पत्नी बनाकर रखना। पाणिग्रहण करना। **बाँह चढ़ाना**—(क) कुछ करने के लिए उद्यत होना। (ख) किसी से लड़ने या हाथा-बाँही करने के लिए तैयार होना। आसतीन चढ़ाना।

२ कमीज, कुर्ता, कोट आदि का वह अंश जिससे बाँह ढकी रहती है। ३ एक प्रकार की कसरत जो दो आदमी मिलकर करते हैं और जिसमें दोनों विचित्र प्रकार से एक दूसरे की बाँह पकड़कर बलपूर्वक स्वयं आगे बढ़ते और दूसरों को पीछे धकेलते हैं। ४ मुजबल। शक्ति। **मुहा०—**(किसी को) **बाँह को छाँह लेना**—किसी की शरण में जाकर उसके मुजबल का आश्रित होना।

५ वह जो किसी का बहुत बड़ा मदद करनेवाला या सहायक हो।

पद—बाँह-बोल आश्रय या सहायता देने, रक्षा करने आदि के सबब में दिया जानेवाला वचन। उदा०—लाज बाँह-बोल की, नेबाज की समिर साहब, साहेब न राम सां, बलैया लीजै मील की।—तुलसी।

मुहा०—बाँह टूटना बहुत बड़े सहायक का न रह जाना। जैसे—माई के मरने से उसकी बाँह टूट गई।

६ महायाना या सहारे का आसरा। मरोसा।

मुहा०—(किसी को) **बाँह देना**—सहायता या सहारा देना। मदद करना।

बाँहकली—स्त्री०—दे० 'बाँह'। उदा०—राम मोरी बाँहकली जी गहा।—मीरा।

बाँहतोड़—पु० [हि० बाँह। तोड़ना] कुली का एक पेश।

बाँहभोर—पु० [हि० बाँह। बोल वचन] बाँह पकड़ने अर्थात् रक्षा करने या सहायता देने का वचन।

बाँही बोड़ी—कि० वि० [हि० बाँह। बोड़ना] किसी के कंधे के साथ

अपना कंधा मिलाते हुए। साथ-साथ। उदा०—सूरदास दोउ बाँही जोरी राजत स्वामा स्वाम।—सूर।

स्त्री० कंधे से कंधा मिलाकर सहे होने या बैठने की मुद्रा या स्थिति।

बाँही—स्त्री०—बाँह।

बा०—पु०[सं० वा जल] जल। पानी।

पु०—बार (रफा)

स्त्री० [अनु०] माता। माँ। (गुजरात और राजस्थान)

अर्थ० [फा०] १. सहित। साथ। जैसे—बा-अदब = अदब से। २. युक्त। सम्मिलित। जैसे—बा-ईमान (बे-ईमान का विपर्यय)।

स्त्री०—बाई का नक्षत्र रूप। (स्त्रियों का संबोधन)

बा०—हि० 'बाद्' का सक्षिप्त रूप। जैसे—बा० दुर्गाप्रसाद।

बाह—स्त्री० [सं० बापी] छोटा तालाब। बावली। उदा०—अति

अगाध अति औपरो नदी कटु सर बाह।—बिहारी।

*स्त्री०—बाय (ठका)।

बाइनी—स्त्री० [सं० बातां या हि० वाई -बायु ?] व्यर्थ की बकबाद। उदा०—कीन बाइगी मुने ताहि किन मोहि बनायो।—नन्ददास।

बाइबिल—स्त्री० [अ०] ईसाइयों की मुख्य और प्रसिद्ध धर्म-ग्रन्थक।

बाइस—पु० [फा०] सबब। कारण। वजह।

वि०, पु०—बाइस।

बाइसबाँ—वि०—बाईसबाँ।

बाइसकिल—स्त्री० [अ०] आगे-पीछे बंधे हुए दों पहियों की एक प्रसिद्ध सारायी जो पंजों में चलाई जाती है।

बाई—स्त्री० [सं० बायु] बात, जो त्रिदोषों में से एक है। वि० दे० 'बात'।

कि० प्र०—ब्राजा।—उतरना।—चरना।

पद—बाई की झोक—(क) बायु का प्रकोप। (ख) किसी प्रकार के मनोवेग का बहुत ही तीव्र या प्रबल आवेग।

मुहा०—बाई चढ़ाना—(क) बायु का प्रकोप होना। (ख) किसी प्रकार का बहुत ही तीव्र या प्रबल मनोवेग उत्पन्न होना। **बाई पचाना**—

(क) बायु का प्रकोप घात होना। (ख) उम्र या तीव्र मनोवेग शांत होना। (ग) बायु का घमड़ टूटना या गट्ट होना। (किसी की)

बाई पचाना—अभिमान नष्ट करना। घमड़ तोड़ना।

स्त्री० [हि० बाधा] १ स्त्रियों के लिए एक आधार सूचक शब्द। जैसे—लक्ष्मी बाई। २ उत्तर भारत में प्रायः नाचने-गानेवाली बेश्याओं के के साथ लगनेवाला शब्द। जैसे—ब्रानकी बाई, मोती बाई।

पद—बाई की नाचने-गानेवाली बेश्या।

बाईस—वि० [सं० द्वाविंशति, प्रा० बाइसा] जो गिनतों में बीस में दो अधिक हो।

पु० उक्त की सूचक संख्या जो अंकों में इस प्रकार लिखी जाती है—२२.

बाईसबाँ—वि० [हि० बाईस। बाँ (प्रत्य०)] [स्त्री० बाईसवीं] क्रम के विचार से लिखने के स्थान पर पढ़नेवाला।

बाईसी—स्त्री० [हि० बाईस + ई (प्रत्य०)] १ एक ही प्रकार की बाईस वस्तुओं का समूह। जैसे—बटमल बाईसी। २ मुगल सम्राटों के काल में बहु सेना जो उसके बाईस सूबों के सैनिकों में बनाई जाती थी।

३ बाईस हजार सैनिकों की सेना।

मुह्रा—(किसी पर) बाहरी दृष्टि—पूरी धारिता से आक्रमण होना।

बाकी—वि०—बाम (बायाँ)।

कि० वि०—बाएँ।

बाडा—स्त्री०—बायू।

बाडर—वि० [स० बातुल] [स्त्री० बाउरी] ? बाबला। पागल।

२. जोला-माला। ३. बैककफ। मूँह। ४. पूँगा। ५. खराब। घुरा।

बाउरी—स्त्री० [देस०] एक प्रकार की धास।

† स्त्री०—बाबली।

बाउल—पु० [स० बातुल] ? बंगाल का एक वैष्णव सम्प्रदाय जो विवेक

को ईश्वर और अपना प्रियतम मानकर उसी की उपासना करता है।

२. उक्त सम्प्रदाय का अनुयायी।

† वि०—बाबला।

बाङ्ग—पु० [म० बायू] हुवा। पवन।

बाएँ—कि० वि० [हिं० बायाँ] ? बिचर बायाँ हाथ हो उचर अथवा उस

दिशा में। बाएँ हाथ। २. बस्तु आदि के मध्य में, जिस का मूँह जिस

ओर हो उससे उत्तर दिशा में।

बाओटा—पु० [स० बायू] बात के कारण होनेवाला, गडिया नामक रोग।

† पु० ? बायटा (झा)। २. = बाट्टा (बाजबंद)।

बाकाला—वि०—बाचाल।

बाकना—अ०—बकना।

बाकर—वि० [फा० बाकिर] पशित। विद्वान्।

बाकरखानी—स्त्री० [बाकर खाँ नाम] एक प्रकार की मुसलमानी टोटी (या बिचड़ी)।

बाकरी—स्त्री०—बाबली।

बाकल—पु०—बत्कल (छाल)।

बाकलि—पु०—बकरा।

स्त्री०—बत्कल।

बाकली—स्त्री० [स० वकुल] एक प्रकार का वृक्ष जिसके पत्ते देसाभ के

कीड़े को खिलाये जाते हैं। इसे धौरा और बौदार भी कहते हैं।

बाकस—पु०—बसस।

बाकसी—स्त्री० [अ० बैकवेल] अहाज के पाल को एक ओर से दूसरी ओर

करने का काम।

बाका—स्त्री० [स० बाक्] बोलने की धारिता। बागी।

बाकी—वि० [अ० बाकी] ? जो कुल या समस्त में से अधिकांश निकाल

लिये जाने, शेष अथवा शेष होने पर बच रहा हो। २. (काम, चीज या बात) जो अभी किये, बनाये, होने या कहे जाने को हो। जैसे—

बाकी काम कल करूँगा।

कि० प्र०—पडना।—बचना।—रहना।

३. (घन, राशि या रकम) जो अभी किसी को देय हो अथवा किसी से प्राप्य हो। जिसका लेन-देन अभी होने को हो। जैसे—अभी खाते में

श्री रुपए उनके नाम बाकी हैं।

कि० प्र०—निकलना।—पडना।—होना।

४. (अवधि या समय) जो अभी अत्यन्त न हुआ हो। जैसे—अभी

महोना पूरा होने में बार दिन बाकी हैं।

कि० प्र०—रहना।

५. जो अन्त में या सबसे पीछे होने को हो। जैसे—अब तो मरना बाकी है।

स्त्री० ? गणित में बहु क्रिया जो किसी बड़ी संख्या (या मान) में से छोटी संख्या (या मान) घटाने के लिए की जाती है। एक बड़ी और

दूसरी छोटी संख्या का अन्तर निकालने की क्रिया या प्रकार। जैसे—

७ से ५ घटाना या निकालना। २. उक्त क्रिया करने पर निकलने-वाला फल। बहु मान या संख्या जो एक बड़ी संख्या में से दूसरी छोटी संख्या घटाने पर प्राप्त होती है। जैसे—१० में से यदि ६ घटावें तो

बाकी ४ होगा।

कि० प्र०—निकलना।

३. बहु धन या रकम जो अभी तक बसूल न हुई हो और बसूल की जाने

को हो। जैसे—दुतना तो ले लीजिए, और जो बाकी निकले, वह नये खाते में लिख लीजिए। ४. वह जो सबसे अन्त में बचा रहे। जैसे—

अब तो यही बाकी है कि उन पर मुकदमा चलाया जाय। ५. अवशेष। अन्व० परन्तु। मगर। लेकिन। जैसे—आपका कहना तो ठीक है

बाकी मैं स्वयं बलकर उनके घर नहीं जाऊँगा। (बोल-चाल)

पु० [देस०] एक प्रकार का धान।

बाङ्गना—पु० [हिं० कुम्भी] कुम्भी के फूल का सुखाया हुआ केसर जो खाँसी

और सर्दी में रक्ता की गाँठियाँ जाता है।

बाङ्गड़ी—स्त्री०—बाबली (गौ या भैंस)।

बाङ्गर—पु० [देस०] एक प्रकार का वृक्ष।

बाङ्गरी—स्त्री०—दे० 'बन्दी'।

बाङ्गला—स्त्री०—बखरी।

बाङ्गली—स्त्री० [देस०] बहु गाय या भैंस जो बच्चा देने के बाद पाँच

महीने तक दूध दे चुकी हो।

बाङ्गेर—वि० [फा० बा+अ० बैर] खरियत से। कुशलपूर्वक।

बाङ्गेर—पु० [फा० बस्तर] ? पूर्वं। पूरब। २. हिन्दुकुश और बहु

(आरुसस) के बीच एक प्राचीन जनपद। बल्ल नामक प्रदेश।

बाग—पु० [अ० बाग] शीतों के शीघ्र मृत्ति का बहु टुकड़ा जो चारों ओर से

प्रायः दीवार से घिरा होता है तथा जिसमें फूलों और फलोवाले अनेक

प्रकार के पौधे और वृक्ष होते हैं।

स्त्री० [स० बला] ? लयाम। २. शक्ति। सामर्थ्य। उदा०—

मम सेवक कर केतिक बागा।—मुल्लरी।

मुह्रा—बाग बोधना—किसी और चलते हुए को किसी दूसरी ओर

प्रवृत्त करना। किसी ओर घुमाना। बाग हाथ से छूटना—अवसर,

नियन्त्रण आदि हाथ से निकल जाना।

† स्त्री० [स० बाग] बाणी।

बागड़—पु० [?] ? बिना बस्ती का देश। उजाड़। २. दे० 'साइल'।

बागडोर—स्त्री० [हिं० बाग+डोर—रस्सी] ? बहु रस्सी जो घोड़े की

लगाम में बाँधी जाती है और पकड़कर सार्वेय लोग उसे टटलाते हैं।

२. लगाम। ३. लाक्षणिक अर्थ में, कोई ऐसी चीज या बात जिसके द्वारा

किसी को बंध में किया जाता है।

बागदार—पु० [फा० बाग+दार] बाग का स्वामी।

बागना—अ० [फा० बाग] ? बाग में घुमाना। २. सैर करना।

घुमाना।

अ० [स० बाग्-बोलना] १ कहुना। बोलना। २ आक्रमण करना।
३ किसी को दबाने के लिए आगे बढ़ना या उठना होना। उदा०—
सन्धति अहं ई मिस रिघ कोस बल्लसू बागो।—गौरखनाथ।

बागवान—पु० [फ० बागवान] | भाव० बागवानी | वह व्यक्ति जो बाग में पेड़-पौधे उगाना तथा रोपना हो और उनकी देखभाल तथा सेवा-सुधरा करता हो। बाग का माली।

बागवानी—स्त्री० [फा०] | बाग में पेड़-पौधे उगाने तथा उनकी देखभाल करने का काम।

बागबिलास*—पु० बाघिन्दास।

बागर—पु० [देश०] १ नदी के किनारे की वह ऊँची भूमि जहाँ तक नदी का पानी कभी पहुँचना ही नहीं। २ दे० 'बागुर'। ३ चमगादड़। (राज०)

बागल—पु०—बगला।

बागवान—पु० [भाव० बागवानी] | बागवान।

बागो—पु० [फा० बागी] | अगे की तरह का एक तरह का पुरानी चाल का पहनावा।

बागी—पु० [अ० बागी] | देश की प्रभुसत्ता के विरुद्ध तथा शासन उलटने के उद्देश्य से नैतिक विद्रोह करनेवाला व्यक्ति। बगवत करनेवाला।

बागीचा—पु० [फा० बागीच] | छोटा बाग विशेषतः घर के चारों ओर का वह स्थान जिसमें शोभा के लिए पेड़ पौधे लगाये जाते हैं।

बागुर—पु० [देश०] १ वह जाल जिसमें बहेलिये पक्षियों तथा छोटे-मोटे जंगली पशुओं को फँसाते हैं। २ बहेलिया।

बागेश्वरी—स्त्री० [स० बागेश्वरी] १ सरस्वती। २ बागेश्वरी नाम की एक गमिनी जिसे आधी रात के समय याया जाता है तथा जो किसी के मत से मालकोबा राग की स्त्री और किसी के मत से सक्कर गमिनी की है।

बाघबर—पु० [स० व्याघ्राम्बर] १ बाघ की माल जो ओढ़ने, बिछाने आदि के काम आती है। २ एक प्रकार का रोगेदार कंबल जो देखने में बाघ की माल का-ना जल पड़ता है।

बाघ—पु० [स० व्याघ्र] | शेर की जाति का परन्तु उसमें आकार-प्रकार में कुछ छोटा एक हिंसक पशु। व्याध।

बाघ-कूबर—पु० [हि० | स०] | कपड़ों की छपाई, रंगाई, आदि में ऐसी आइट-रियाँ जिनमें बाघ और हाथी की लडाई का दृश्य हो।

बाघो—पु० [हि० बाघ] १ बीपायो का एक रोग जिसमें उनका पेट अत्यधिक फूल जाता है। २ एक प्रकार का कबूतर।

बाघी—स्त्री० [देश०] | आतशक, गरमी आदि के रोगियों को पेड़ और आँध के सधिस्यल पर होनेवाली एक तरह की गिल्ली।

बाघुल—स्त्री० [देश०] | एक प्रकार की छोटी मछली।

बाघ—वि० [स० बाघ्य] १ वर्णन करने के योग्य। २. अच्छा। बधिया। ३ सुन्दर।

‡स्त्री०—बाघा (बागी)।

बाघना—अ०—बचना।

स०—बचाना।

स०—बाचना (पचना)।

बाघा—स्त्री० [स० बाघा] १ बोलने की शक्ति। २ बात-चीत। ३ प्रतिज्ञा। प्रण।

बाघाबंध—वि० बचन-बद्ध।

बाघ—पु० [हि० बाघना] १. बाघने की क्रिया या भाव। २ गाय में कर, चढ़े मालमुजारी आदि का केलया हुआ ऐसा परता जो प्रत्येक हिस्सेदार के हिस्से के अनुसार हो। बछोटा। बेहरी।

‡पु० बाघ।

स्त्री० [प्रा० बच्छ] | होठों का कोना या सिरा।

मुहा०—बाछे | बिलना-इतना प्रसन्न होना कि मूँह पर बरबस मुस्कुराहट या हँसी आ जाय।

बाछड़ा—पु०—बछड़ा।

बाछना—स० [स० विचयन] | चुनना। छंटना।

बाछा—पु० [स० वस्त, प्रा० बच्छ] [स्त्री० बाछी] १ गाय का बच्चा। बछड़ा। उदा०—बाछा बेल पतुरिया जाय, न घर रहे न खेती होय।
—घाघ। २ बच्चों के लिए प्यार का संबोधन।

बाज—पु० [अ० बाज] १ एक प्रकार का बड़ा पिकारों और हिंसक पक्षी। २ एक प्रकार का बगला। ३ वह पत्र जो नीर में लगाया जाता है।

वि० [फा०] | बजित। रहित।

मुहा०—(किसी चीज या बात से) **बाज** आना—(क) उपाशापूर्वक और जान-बूझकर अथवा स्वायत्त या हानिकर समनकर इन छाप देना या बजित करना। जैसे—हम ऐसे मकान (या राग) में बाज आये।

(ख) अलग या दूर रहना। जैसे—मुम बदमाशों में बाज नहीं आओगे। (किसी की किसी काम या बात से) बाज करना—मना करना। रोकना। **बाज रखना**—(क) न रहने देना। (ख) रोक रखना।

बाज रहना—अलग या दूर रहना।

प्रत्य० [फा०] | एक प्रत्यय जो शब्दों के अंत में लगकर निम्न अर्थ देता है—(क) करने या बनानेवाला, जैसे—बहानेबाज। (ग) अपने अनिकार में, यथा में या पास में रखनेवाला अथवा किसी चीज या बात का ब्यसन करनेवाला, जैसे—कबूतरबाज, नमोबाज, रक्षाबाज।

वि० [अ० बजख] | कोई कोई। कुछ-बोझ। कुछ विनिवृत्त। जैसे—बाज आदमी बहुत ही होते हैं।

क्रि० वि० वगैर। बिना। उदा०—अब नेहू बाज रोक भा डोली।
—जायसी।

‡पु० [स० बाज] | घोड़ा।

‡पु० [स० बाघ, हि० बाजा] १ बाजा। २ बाजो से उत्पन्न होनेवाला शब्द। ३. बाजा बजाने का उग या रीति। जैसे—मुझे उनमें में किसी का बाजा पसन्द नहीं आया। ४ सितार के ५ तारों में में पहला जो पक्के लोहे का होता है।

अब्य० [स० बज] | बिना। उदा०—गगन अतारख रक्षा बाज सभ बिनु टेक।—जायसी।

पु० [दिग०] | ताने के सूतों के बीच में देने की लकड़ी।

बाजड़ा—पु०—बाजार।

बाज-बाधा—पु० [फा०] १ दावा वापस लेना। नालिदा वापस लेना। २ वह पत्र या लेख्य जिसमें अपना दावा वापस लेने का बिबरण होता है।

क्रि० प्र०—लिखना।—लिखाना

बाजाना—पु०—बाजा।

बाजना—अ०[सं० व्रजन] १. जाना। २. पहुँचाना।

अ०[सं० याचन] १. तर्क-वितर्क वा बहस करना। २. चर्चाई-संग्रह करना।

अ०[सं० वचन] १. कहना। बोलना। २. किसी नाम से प्रसिद्ध होना। पुकारा जाना। ३. आधात लगाना। प्रहार होना।

वि० बचनेवाला। जो बचता हो।

बाजना—पु०[सं० बर्नी] १. एक प्रसिद्ध पीचा जिसके दानों की गिनती मोटे अन्न में होती है। २. उन्नत पीपों के दाने जो उबाला या पीसकर खाये जाते हैं।

बाजरा मृगं—पु०[हि०।फा०] एक प्रकार की काजी बिड़िया जिसके ऊपर बाजरे की तरह के पीले पीले दाग होते हैं।

बाजहर—पु०—जहर मोहरा।

बाजा—पु०[सं० बाध] १. सगीत में, बहु उपकरणों से ढूँँके अथवा आवाज किये जाने पर बजना है तथा जिसमें से अनेक प्रकार के स्वर आदि निकलते हैं।

क्रि० प्र०—बजाना।—बजाना।

पद—बाजा-गाजा। (दे०)

२. बच्चों के बजाने का कोई खेलौना।

वि०[अ० बजव] कोई-कोई। कुछ। जैसे—बाजे आदमी किसी की पुकार पर आती वहाँ नहीं देते।

बाजा-गाजा—पु०[हि० बाजा। गजना-गजना] तरह तरह के बाजे और उनके साथ होनेवाली धम-धाम या हो-हल्ला। जैसे—बाजे-गाजे में बरान निकलना।

बा-गाजा—अव्य०[अ० वा।फा०]वाचित। जाने के साथ। नियम, विधान आदि के अनुसार। जैसे—किसी के माल की बा-गाजा कुर्ची कराना। वि० जो जाने अर्थात् नियम, विधान आदि के अनुसार ठीक हो।

बाजार—पु०[फा० बाजार]। [वि० बाजारी, बाजार] १. वह स्थान जहाँ किसी एक चीज अथवा अनेक चीजों के विक्रय के लिए पास-पास अनेक दुकानें हो।

मुहा०—बाजार करना—चीजे खरीदने के लिए बाजार जाना और चीजे खरीदना। बाजार गरम होना—बाजार में चीजों या प्राहकों आदि की अधिकता होना। खूब लेन-देन या खरीद-बिक्री होना। (किसी काम या बात का) बाजार गरम होना—किसी काम या बात की बहुत अधिकता या बाहुल्य होना। जैसे—आज-कल चौरियों (या जूए) का बाजार गरम है। बाजार लगाना—(क) बहुत सी चीजों का इधर-उधर डेर लगाना। बहुत-सी चीजों का यों ही सामने रखा होना। (ख) बहुत मीठ-माद इकट्ठी होना और बैसा ही हो-हल्ला का होना बैसा बाजारी में होता है। बाजार लगाना—(ग) चीजें इधर-उधर फैला देना। (घ) अढाला या डेर लगाना। (ङ) मीठ-माद लगाना और बैसा ही हो-हल्ला करना बैसा बाजारों में होता है।

२. वह स्थान जहाँ किसी निश्चित समय, बार, तिथि या अवसर आदि पर सब तरह की चीजों की दुकानें खलती हैं। हाट। पैठ।

मुहा०—बाजार लगाना—बाजार में सब तरह की दुकानें आकर खुलना

या लगाना। बाजार लगाना—ऐसी व्यवस्था करना कि किसी स्थान पर आकर सब तरह की दुकानें लगे। जैसे—राजा साहब हर मंगल-वार को अपने किले के सामने बाजार लगवाते थे।

३. किसी चीज की बिक्री की वह दर या भाव जिस पर वह साधारणतः सब जगह बाजारों में बिकती या मिलती हो।

क्रि० प्र०—उतरना।—गिरना।—चढ़ना।—बढ़ना।

पद—बाजार-भाव—किसी चीज का वह भाव या मूल्य जिस पर वह साधारणतः सब जगह बाजारों में मिलती हो।

मुहा०—(किसी का) बाजार के भाव पिटना—बहुत बुरी तरह से मारा-पीटा जाना। (स्वयं) बाजार देख होना—चीजों की माँग की अधिकता के कारण उनका मूल्य बढ़ना। बाजार मँसा होना—चीजों की माँग कम होने के कारण चीजों का भाव या मूल्य घटना।

४. व्यापारिक क्षेत्रों में व्यापारियों आदि का वह प्रत्यय या साथ जिसके आधार पर उन्हें बाजार से चीजे और रुपए उधार मिलते हैं। जैसे—व्यापारियों को अपना व्यापार चलाने के लिए अपना बाजार बनाये रखना पड़ता है।

बाजारी—वि०[हि० बाजार] १. बाजार-सम्बन्धी। बाजार का। २. जो बहुत अच्छा या बढिया न हो। बाजा। साधारण। ३. बाजार में होनेवाला। बाजार में प्रचलित। जैसे—बाजारी बोल-बाल।

४. बाजार में रहने या बैठनेवाला। जैसे—बाजारी औरत। ५. दे० 'बाजार'।

बाजार—वि०[फा० बाजार] १. बाजार का। बाजारी। (देखें) २. (शब्द या प्रयोग) जिसका प्रयत्न बाजार के साधारण लोगों में ही हो, शिक्षित या चिपट समाज में न होता हो।

बाजिदा—पु०[फा० बाजिद] १. खेल-तमाशे दिखानेवाला। खेलड़ी। २. लोटेन कबूतर।

बाजि—पु०[सं० बाजित, बाज। इति] १. घोड़ा। २. बिड़िया। ३. तीर। बाण। ४. अक्षर। वि० चलनेवाला।

बाजी—स्त्री०[फा० बाजी] १. किसी प्रकार की घटना के अनिश्चित परिणाम के प्रसंग में दो या अधिक पक्षों में होजानेवाला यह पारस्परिक निराध्य क्रि जो पक्ष हार जायगा, उसे जीतनेवाले को इतना धन देना पड़ेगा, अथवा अपनी हार का मुश्किल अमुक काम करना पड़ेगा। खेलों या लम्ब-टोडवामी बातों के संबंध में लगाई जानेवाली ऐसी शर्त जिसके अनुसार हार-जीत के साथ कुछ लेना-देना भी पड़ता हो अथवा पुरस्कार भी मिलता हो। बदान। शर्त। २. इस प्रकार होनेवाला लेन-देन या मिलनेवाला पुरस्कार।

क्रि० प्र०—जीतना।—बदना।—लगाना।—लगाना।—हुराना। मुहा०—बाजी मारना—बाजी जीतना। बाजी के खाना—बाजी जीतना। ३. प्रत्येक बार आदि से अत तक होनेवाला कोई ऐसा मेक जिसमें हार-जीत के माक की प्रभावता हो। जैसे—आजो दो बाजी ताप (या शतरंज) हो जाय।

क्रि० प्र०—जीतना।—हुराना। ४. उन्नत प्रकार के खेलों में प्रत्येक खेलड़ी या हल के खेलने की पारी या बारी। दौर।

स्त्री० [फा० बाज का भाव०] १. 'बाज' होने की अवस्था या भाव । २. किसी काम या बात के व्ययनी या धौकीन होने की अवस्था या भाव । जैसे—कबूतरबाजी, पतंगबाजी । ३. किसी प्रकार की क्रिया कुछ समय तक होती रहने का भाव । जैसे—दोनों में कुछ देर तक मूव पूसबाजी हुई ।

पु० [स० बाजिन्] घोडा ।

पु० [हि० बाजा] वह जो बाजा बजाने का काम करता हो । बजनिया ।

बाजीगर-पु० [फा० बाजीगर] [भाव० बाजीगरी] जाजू के खेल करनेवाला । जादूगर । ऐदमालिक ।

बाजू-अव्य० [फा० बाज] १. बिना । बगर । उदा०—को उठाइ बसाइइ, बाजू पियारे जीबै—जयमी । २. अतिरिक्त । सिवा ।

पु० [फा० बाजू] १. मुजा । बांह । २. बाजूबद ।

बाजू-पु० [फा० बाजू] १. मुजा । बाहु । बांह । २. वह जो हाथ की तरह मटा साथ रहना और पूरी सहायता देता हो । ३. किसी चीज का कोई बिसिष्ट अंग या पक्ष । पार्श्व । ४. पक्षियों का पैर । ५. बाजूबद नाम का गहना । ६. उक्त गहने के आकार का मोताना ।

बाजूबद-पु० [फा० बाजूबद] बांह पर पहनने का एक प्रकार का गहना । मुजबद ।

बाजूबीर-पु०—बाजूबद ।

बाजीटा-पु० [म० बाघः पट] १. चौकी । २. बैठने की ऊँची जगह । (राज०) उदा०—बाजीटा ऊपरि गादी बैठी—प्रियाराज ।

बास-अव्य० [स० वर्जन] बगर । बिना । उदा०—मिस्त न मेरे चाहिए बास गियारे तुज्ज ।—कबीर ।

बासन-स्त्री० [हि० बसना=फँसना] १. बसने या फँसने की क्रिया या भाव । फँसावट । २. उलझन । पेच । ३. झगट । बहसडा । ४. लडाई-मगडा ।

बासना—अ० [हि० बसना] १. उलझना । फँसना । बसना । २. गुल्म-गुल्म या हाथा-बाही होना । ३. दे० 'बसना' ।

बाट-पु० [स० वाट=मार्ग] रास्ता ।

पर-बाट घाट नगर या बस्ती के इधर-उधर के छोटे-मोटे सभी प्रकार के स्थान ।

मुहा०—बाट करना—रास्ता खोलना । मार्ग बनाना । बाट कटना—चलकर रास्ता पार करना । बाट जोहना या देखना—प्रतीक्षा करना । आगना या रास्ता देखना । (किसी के) बाट पड़ना—(क) रास्ते में आ-आकर बाधा देना । नग करना । पीछे पड़ना । (ख) रास्ते में डाकूओं का आकर लूट लेना । डाका पड़ना । बाट पारना—रास्ते में यात्रियों को लूटना । डाका डालना । (किसी को) बाट लगाना (क) ठीक रास्ता बतलाना या ठीक रास्ते पर लाना । (ख) काम करने का ठीक डग बतलाना । बाट रोकना—(क) मार्ग में बाधा या रुकावट खड़ी करना । (ख) किसी के काम में अड़चन खड़ी करना । बाधक होना ।

पु० [स० बटक] १. पत्थर आदि का वह टुकड़ा जो चीखें तीलने के काम आता है । बटखरा ।

मुहा०—बाट हड़ना—(क) हम बात की जाँच या परीक्षा करना कि

कोई बटखरा तोल में पूरा है या नहीं । (ख) किसी की प्रामाणिकता, सत्यता आदि की जाँच या परीक्षा करना । (ग) तग या परीक्षण करना । जैसे—रात दिन मुझसे बाट हड़ता है । (दिलवाँ)

२. पत्थर का वह टुकड़ा जिससे सिल पर कोई चीज पीसी जाती है । बट्टा ।

स्त्री० [हि० बटना] १. थोरी, रस्सी आदि बटने की क्रिया या भाव । २. बटने के कारण थोरी, रस्सी आदि में पड़ी हुई ऐंठन । बल ।

स्त्री० [हि० बटना—पीसना] बटने अर्थात् पीसने की क्रिया, डग या भाव बाटकी—स्त्री०—बटकीयों ।

बाटना—स० [हि० बट्टा या बाट] सिल पर बट्टे आदि से पीसना । चूर्ण करना । उदा०—यों रहीम जस होतु है उपकारी के मग, बाटन वारे के लग्य ज्यो मेहुदी को रग—रहीम ।

†स०—बटना (बल देना) ।

†पु०—बटना ।

बाटसी—स्त्री [अ० बटलाना] जहाज के पाल में ऊपर की ओर लगा हुआ वह रस्ता जो मसूल के ऊपर से होकर फिर नीचे की ओर आता है । इसी को लोकर पाल तानते हैं । (लघु०)

†स्त्री०—बोलल ।

बाटिका—स्त्री० [स० बाटिका] १. छोटा बगीचा जिसमें शोभा के लिए फूल तथा फलों के छोटे-मोटे पीछे लगाये गये हों । २. गद्य काव्य का एक भेद ।

बाटी—स्त्री० [स० बटी] १. मीठी । पिंड । २. उपको या अगारो पर सेका हुआ आटे का गोलाकार लोटा ।

†स्त्री० [स०] चौड़े मुँहवाली एक तरह की बड़ी कटोरी ।

बाडू—न्यो०—बाड । उदा०—यह ससार बाड का टाटा ।—मीर ।

बाडकिल—पु० [अ०] १. छापेखाने में काम आनेवाला एक प्रकार का सूजा जिसमें पीछे की ओर लकड़ी का दस्ता लगा रहता है । २. दम्पती खाने में काम आनेवाला एक प्रकार का सूजा जिसमें दफनी आदि में छेद किया जाता है ।

बाडाना—स० [हि० बडना—पुसना या पीटना का स०] अन्दर प्रविष्ट करना । पुसाना । (पश्चिम)

बाडव—पु० [स० बडना-अण] १. बाडव । २. पोरियों का झुंड । ३. बडवानल ।

वि०—बडवा-सम्बन्धी ।

बाडव-अवल—पु०—बडवानल ।

बाडव-बड्डि—स्त्री०—बडवानल ।

बाडि—पु० [स० वाट] १. चारों ओर से घिरा हुआ कुछ विस्तृत खाली स्थान । २. वह स्थान जहाँ पर गधु आदि पौरकर या बंद करके रखे जाते हो । पशुशाला ।

बाडि—स्त्री०—बाडिस ।

बाडिस—स्त्री० [अ०] स्त्रियों के पहनने की एक प्रकार की अंगरेजी डग की कुर्तनी ।

बाडी—स्त्री०—बाडिस ।

बाडी—स्त्री० [स० वारी] १. बाटिका । बाटी । फुलपारी । २. धर । भकान । (पूरव) जैसे—आडुरवाडी । ३. कपास का लव । (पश्चिम)

स्त्री० [?] कपाड।

बाही-नाह—पु०=अप रजक। (२०)

बाही०—पु०=बाड़।

बाड़—स्त्री० [हिं० बड़ना] १ बड़ने की क्रिया या भाव। बड़ाव।

बुद्धि। जैसे—पेड़-पौधों की बाड़।

मुहा०—बाड़ पर आना—पेशी अवस्था में आना कि निरन्तर बुद्धि होती रहे। जैसे—अब यह पेड़ बाड़ पर आया है।

२. नदी-नाले की बहु स्थिति जब उसका पानी किनारों के बाहर बहने लगता है और आस-पास के झोंपड़ों, मकानों, फसलों, पशुओं आदि को बहाने लगता है।

कि० प्र०—जाना।—उतरना।

३. कंटोले पीचों आदि की बहु लची पंक्ति जो खेतों, बगीचों आदि में इतलिये लगाई जाती है कि पशु आदि अन्दर न आ सके।

कि० प्र०—दबना।—लगाना।

४. कुछ विशिष्ट प्रकार की बीजों में किनारे या सिरे पर की ऊँचाई। जैसे—तोपी या घाली की बाड़। ५. व्यापार आदि में अधिकता से होनेवाला लाभ या बुद्धि। ६. किसी प्रकार का जोर या तेजी। प्रबलता। ७. तोप, बन्दूक आदि से गोली-गोलियों का निरन्तर छूटते रहना। ८. उल्लेख से लगातार होता रहनेवाला प्रहार। जैसे—तोपों की बाड़ के सामने शत्रु सेना न ठहर सकती।

कि० प्र०—रगना।—दागना।

स्त्री० [सं० वाट, हिं० बारी] कुछ विशिष्ट प्रकार के हथियारों की धार जिससे चीजें कटती हैं। जैसे—कैंची, छुरी या तलवार की बाड़।

मुहा०—बाड़ रजना—उत्तल चीजों को सान पर चढ़ाकर उनकी धार तेज करना।

†पु०—टोट (बाँह पर पहनने का गहना)।

बाड़ काड़—स्त्री० [हिं० बाड़—हथियार की धार] १. तलवार। २. खड्ग। साड़ा। (हिं०)

बाड़ना—सं० [हिं० बाड़=धार] १. धारदार चीज से काटना। मार डालना। बच या हत्या करना। ३. मत्त या बर्बाद करना। †बं०—बड़ना।

बाड़ाली—स्त्री० [हिं० बाड़=धार] १. तलवार। २. खड्ग। साड़ा। (राज०)

बाड़ि—स्त्री०=बाड़।

बाड़ी—स्त्री० [हिं० बड़ना या बाड़] १. बड़ती। बुद्धि। २. वह व्यक्त जो किसी को अथ उधार देने पर मिलता है। ३. उधार दिया या लिया हुआ पैसा कृम जिसका मूल दिन पर दिन बढ़ता चलता हो। जैसे—बहु उधार बाड़ी का काम करता है। ४. व्यापार में होनेवाला लाभ। मुनाफा। ५. पानी की बाड़।

बाड़ीधान—पु० [हिं० बाड़=धार+सं० धान्] बहु जो छुरी, कैंची आदि सान पर चढ़ाकर उनकी धार तेज करता हो। औजारों पर सान रखनेवाला।

बाण—पु० [सं०√बाण् (शब्द)+बाण्] १. एक प्रकार का नुकीला अस्त्र जो कमान या धनुष पर चढ़ाकर चलाया जाता है। तीर।

शर। सायक। २. उक्त का अगला नुकीला भाग जो जाकर शरीर के अन्दर घँस जाता है। ३. वह चीज जिसे बेचने के उद्देश्य से बाण या तीर चलाया जाता है। निशाना। लक्ष्य। ४. कामदेव के प्रसिद्ध पाँच बाणों के आधार पर पाँच की संख्या का वाचक शब्द। ५. माय का धन। ६. अग्नि। आग। ७. रामसर। सरपट। ८. नीली कटहरास। ९. दे०=बाणमट्ट।

बाण गंगा—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] हिमालय के सोमेन्द्र गिरि से निकली हुई एक प्रसिद्ध नदी।

बाण घोबर—पु० [प० त०] उतनी बूटी जितनी कोई बाण छूटने पर पार करता है। बाण की पहुँच या मार तक की दूरी।

बाण-यति—पु० [प० त०] बाणासुर के स्वामी महादेव। (हिं०)

बाण-यात्रि—वि० [ब० सं०] बाणों से लैस।

बाणपुर—पु० [प० त०] शोधितपुर (आधुनिक तेजपुर, आसाम) जो बाणासुर की राजधानी थी।

बाणरेखा—स्त्री० [प० त०] बाण से शरीर पर होनेवाला लंबा बाव। बाणरिंग—स्त्री० [मध्य० सं०] नर्मदा मे मिलनेवाला एक प्रकार का सफेद पत्थर जिसका निर्बलिंग बनता है।

बाणविद्या—स्त्री० [प० त०] बहु विद्या जिससे बाण चलाना आवे। बाण चलाने की विद्या। तीरदर्पावी।

बाणमुष्टि—स्त्री० [प० त०] लगातार बाण चलाने रहना। बाणों की वर्षा।

बाणवती—स्त्री० [सं०] बाणासुर की पत्नी का नाम।

बाणबलि—स्त्री० [सं० बाण-अबलि, प० त०] १. बाणों की पंक्ति।

२. धनुषों पर होनेवाली बाणों या तीरों की बौछार।

बाणाश्रय—पु० [सं० बाण-आश्रय, प० त०] तर्कस।

बाणासन—पु० [सं० बाण-आसन, प० त०] धनुष।

बाणासुर—पु० [सं० बाण-असुर, कर्म० सं०] राजा बलि के सो पुत्रों में से सबसे बड़े पुत्र का नाम जो बहुत ही वीर, गुणी और सहस्रबाण था।

बाणिज्या—पु०=बाणिज्य।

बात—स्त्री० [सं० बात] १. किसी से अथवा किसी विषय में कही जानेवाला कोई सार्थक वाक्य। कथन। वचन। दापी। जैसे—तुम तो मुँह से बात भी नहीं निकालने देते।

कि० प्र०—कहना।—निकलना।—निकालना।

मुहा०—(मुँह से) बात न निकलना—मुँह से शब्द तक न निकलना। चुप या मौन हो जाना। (मुँह से) बात फूटना—मुँह से बात या शब्द निकलना।

२. किसी विशिष्ट उद्देश्य से या अपने मन का भाव प्रकट करने के लिए किया जानेवाला कथन।

पद्य—बात कहते—उतनी थोड़ी देर में जितनी में मुँह से कोई बात निकलती है। पल भर में। चटपट। तुरंत। बात का कण्ठा था हैठा=बहु जिसके कथन या बात का सहला विस्वास न किया जा सकता हो।

प्रतिज्ञा, वचन आदि का ध्यान न रखनेवाला। बात का बनी, पक्का था घुरा—बहु जो अपने कथन, प्रतिज्ञा, वचन आदि का पूरी तरह से पालन करता हो। बात का बसंतगड़—साधारण सी बात को व्यर्थ

बहुत बढ़ा-चढ़ाकर झटत या झगड़े-बड़ेके का दिया जानेवाला रूप।
भात की भात मे = बहुत थोड़ी देर मे। लगभग मे। **भात भात पर** -
 (क) प्रत्येक प्रसंग पर। बोधा बात भी कुछ होने पर। हर काम मे।
 (ख) दे० 'भात भात मे'। **भात भात मे** - (ग) जो कुछ कहा जाता
 हो प्राय उस सब मे। प्राय हर बात मे। जैसे—बहुत बात भात मे झूठ
 बोलता है। (घ) बार बार। हर बार। (ङ) दे० 'भात भात पर'।
भात है कथन मात्र है। सत्य नहीं है। ठीक नहीं है। जैसे—जे
 निराधार रहते है, यह तो भात है। **भातो का घनी** वह जो घाने तो
 बहुत-सी कह जाता हो, पर करता-घरता कुछ भी न हो। (व्यय)
मुहा०—(फिस्ती की) **भात उड़ाना** - (क) किसी के आदेश, कथन
 आदि की अवज्ञा करना अथवा उसका पालन न करना। बात न मानना।
 (ख) किसी को कठोर बातें सहना। (अपनी) **भात उखटना**—एक
 बार कुछ कहकर फिर दूसरी बार कुछ और कहना। बात पलटना।
 (फिस्ती की) **भात उखटना**—किसी की कही हुई बात के उत्तर मे उसके
 विरुद्ध बात कहना। किसी की बात का बाधालीनता या उद्बन्धापूर्वक
 उत्तर देना। (फिस्ती की) **भात काटना** - (क) किसी के बोलते समय
 बीच मे बोल उठना। बात मे दखल देना। (ख) किसी के कथन या
 मत का मजबूत या विरोध करना। **भात खाली जाना**—अनुरोध, आग्रह,
 प्रार्थना आदि का मयान न जाना अथवा निष्फल सिद्ध होना। बात
 गड़ना—झूठ बात कहना। मिथ्या प्रसंग की उद्घाटनना करना। बात
 बनाना। **भात घूंटना** या **घूंट** जाना - दे० नीचे 'बात पी जाना'। **बात**
बचा जाना - (क) कुछ कहने कहे रुक जाना। (ख) एक बार कही
 हुई बात को छिपाने या दबावे के लिए किसी दूसरे या बदले हुए रूप मे
 कहना। (मन मे कोई) **बात जपना** या **बैठना**—अच्छी तरह समझ
 मे आ जाना कि जो कुछ हमसे कहा गया है, वह ठीक है। **भात टलना** -
 कथन का अत्यथा सिद्ध होना। जैसा कहा गया हो, वैसा न होना।
 (फिस्ती की) **बात टालना** - (क) पूछी हुई बात का ठीक जवाब
 न देकर इधर-उधर की ओर बात कहना। मुनी-अनुसुनी करना।
 (ख) किसी के आदेश, कथन आदि की अवज्ञा करते हुए उसका पालन
 न करना। (फिस्ती की) **बात डालना**—कहना न मानना। कथन का
 पालन न करना। जैसे—उनकी बात इस तरह टाली नहीं जा सकती।
 (फिस्ती की) **बात बाँहुराना**—किसी की कही हुई बात का उलटकर
 जवाब देना। जैसे—बड़ो की बान दोहराने हो! (फिस्ती मे) **बात न**
करना (क) घमट के मारे किसी से बात-चीत करने को भी तैयार न
 होना। (ख) किसी को इतना मुच्छ या हीन समझना कि उससे बातें करने
 मे भी अपना अपमान प्रतीत होता हो। (फिस्ती की) **बात नीचे डालना**
 किसी की बात पर ध्यान न देकर उसकी अवज्ञा करना। (फिस्ती की)
बात बकना—किसी के कथन मे पारस्परिक विरोध या दोष दिखाना।
 किसी के कथन को उसी के कथन द्वारा अप्रकृत सिद्ध करना। (फिस्ती
 की) **बात या (बातों) पर जाना**—(क) बात का खयाल करना। बात
 पर ध्यान देना। जैसे—तुम भी सड़को की बात पर जाते हो। (ख)
 किसी के कहने के अनुसार या मरसे पर कोई काम करना। **बात पलटना**
 - दे० नीचे 'बात बदलना'। **बात पी जाना**—(क) कोई अनु-
 चित या अभिय घटन होने पर भी या इस प्रकार की कोई बात सुनकर
 भी उस पर ध्यान न देना। (ख) किसी कारण-वश कोई सुनी हुई बात

अपने मन मे ही रखना, दूसरो पर प्रकट न करना। (फिस्ती पर) **बात**
फेंकना—व्यंग्यपूर्ण बात कहना। बोली बोलना। **बात फेंटना** - (क)
 चलते हुए प्रसंग को बीच से उड़ाकर कोई और बात छेड़ना। बात पल-
 टना। (ख) किसी बात का समर्थन करते हुए उसकी प्राणगिहता
 या महत्त्व बढ़ाना। बात बढ़ाना मायापण सी बात का ऐसा रूप
 धारण करना कि समझ-तकगार होने लगे। किसी बात का उग्र या
 विकृत रूप धारण करना। (फिस्ती की) **बात बढ़ाना** किसी के
 कथन की पुष्टि या समर्थन करना अथवा उसका महत्त्व बढ़ाना।
 (कोई) **बात बढ़ाना**—किसी घटना, प्रसंग या विषय का व्यर्थ
 विस्तार करने उसे अनावश्यक तथा अनुचित रूप से उग्र या
 विकृत रूप देना। फजूल का मूल देना। बात बदलना - गड़कर
 एक बार कोई बात कहना, और तब उसमे बदलाव के लिए
 और बात कहना। **बात बनाना**—किसी कही हुई बात से अपनी हानि
 होते देखकर उसे बदलने और अपने अनुकूल करने के लिए कोई नई
 बात कहना। **बात (या बातों) मानना** - (क) असल बात छिपाने के
 लिए इधर-उधर की बातें करना। (फिस्ती पर) **बात मानना** अत्यन्त
 पूर्ण बात कहना। बोली बोलना। **बात मंह पर लाना** बार आदमियों
 के सामने कोई बात कहना। बात मे बात निकालना—बात की खाल
 निकालना। किसी के कथन मे यों ही या व्यर्थ के दोष निकालना। (अपनी)
बात रखना - (क) अपने कहे अनुसार करना। जैसा कहा हो, वैसा
 करना। प्रज्ञा या वचन का पालन करना। (ख) अपने कथन या
 बात के सम्बन्ध मे अनुचित आग्रह या हठ करना। (फिस्ती की) **बात**
रखना - (क) कथन या आदेश का पालन करना। बड़ना मानना।
 (ख) किसी का आग्रह, प्रार्थना आदि मानकर उसकी इच्छा पूरा करना।
 बातें छोटना या **बघारना** - (क) व्यर्थ तरह तरह की बातें कहना।
 (ख) बड़-बड़कर बातें करना डींग हाकना। धाने बनाना (क)
 झूठ-मूठ इधर-उधर की बातें कहना। (ख) बहानेगर्जी या हीन-
 हवाली करना। (ग) किसी को अनुरक्त या प्रसन्न करने के लिए चाप-
 लुपी भी जाने कहना। **बातें मिलाना** - (क) किसी या अमन करने
 के लिए उसकी हँ से हाँ मिलाना। (ख) अपना दोष या मुन छिपाने
 के लिए इधर-उधर की बातें करना। (फिस्ती की) **बातें सुनना** - कठोर
 वचन या डाँट-पठकर सुनना। जैसे—जदि तुम ठीक तरह से रहते
 तो आज तुम्हें शान्ति याने न मुननी पड़नी। (फिस्ती की) **बातें सुनना** -
 ऊँची-नीची या लकी-मोटी बातें कहना। कठोरामुर्वक दोटना-फट-
 नारना। **बातों मे उड़ाना** (क) इधर-उधर की या व्यर्थ बातें कहकर
 असल बात दबाने का प्रयत्न करना। (ख) हँनी उछाते या मुच्छ छे-
 रते हुए टाल-मटोल करना। **बातों मे कुसलाना** या बड़वाता किसी
 को केवल मुहा प्रायवासन देकर उसका ध्यान किसी दूसरी ओर ले जाना।
 ३ दो या अधिक आदमियों मे किसी विषय पर होनेवाला कथोपकथन।
 वार्तालाप। जैसे—आज जो बातें हो मे दो बडे जीन गये।
पद—बात-चीत। (देवें) **बातों** **बातों** में—बात-चीत करते हुए।
 कथोपकथन के प्रसंग मे। जैसे—बातों ही बातों मे बड़ विनाड मरदा
 हुआ।
 ४ किसी के साथ कोई व्यवहार सम्पन्न करने अथवा कोई सबब
 स्थापित या स्थिर करने के लिए चलनेवाला कथोपकथन, प्रसंग या

बात-लायी। जैसे—(क) काम-बन्धे या रोजगार की बात। (ख) ब्याह-शादी की बात।

मुहा०—बात डहरना—किसी विषय में यह स्थिर होना कि ऐसा होगा। मामला तै होना। बात डालना—प्रस्ताव के रूप में किसी के सामने कोई विषय उपस्थित करना। मामला पेश करना। जैसे—घार भले आदिमियों के बीच में यह बात डालकर निपटाओ। (अपनी) बात पर आना या रहना—अपने कहे हुए वचन के अनुसार ही काम करने के लिए प्रस्तुत होना या रहना। यह आग्रह या हठ करना कि जैसा मैंने कहा, वैसा ही हो। बात लगाना बिनाहूँ संबंध स्थिर करने के लिए कही कहना, सुनना या प्रस्ताव रखना। बात हारना—ऐसी स्थिति में होना कि अपनी कही हुई बात या विये हुए वचन का प्राप्न करना आवश्यक हो जाय। जैसे—मैं तो उनसे बात हार चुका हूँ, अब इधर-उधर नहीं हो सकता।

५. मामला रूप से होनेवाली किसी विषय की चर्चा। जिक्त। कि० प्र०—आना।—उठना।—बनना।—छिड़ना।—पड़ना। मुहा०—बात बलाना, छेड़ना या निकालना—ऐसा प्रसंग उपस्थित करना कि किसी विषय या व्यक्ति के संबंध में कुछ बातें हों। चर्चा या जिक्त चलाना। बात पड़ना—किसी विषय का प्रसंग प्राप्त होना। चर्चा आरम्भ होना। जैसे—आत पडी, इसलिये मैंने कहा, नहीं तो मुझ से क्या मतलब ? बात नूह पर लाना—(किसी विषय की) चर्चा कर बैठना। जैसे—किसी के सामने ऐसी बात नूह पर नहीं लानी चाहिए।

६ कोई ऐसा कार्य या घटना जिसकी लोगों में विशेष चर्चा हो। लोक में प्रचलित कोई प्रसंग।

मुहा०—बात उड़ना या फैलना—चारों ओर या बहुत से लोगों में चर्चा होना। बात नाचना—बात चारों ओर प्रसिद्ध होना या बहुत अच्छी तरह फैलना। विशेष प्रसिद्ध होना। उदा०—मेरे ब्याल परी जिन कोऊ बात दमों दिसि नकी।—हितहितवा। बात बहना—किसी बात की चर्चा चारों ओर फैलना। उदा०—जो हम सुनिहि रही सो नाही, ऐंसे ही यह बात बहानी।—सूर।

७ ऐसा कदम या कार्य जो ठीक या प्रामाणिक माना जा सकता हो अथवा सभी दृष्टियों से उचित समझा जा सकता हो। जैसे—मला यह भी कोई बात ही। ८. विशेष महत्त्व का कोई कथन अथवा वृत्त, निश्चित या प्रामाणिक मत, विचार या सिद्धान्त।

मुहा०—बात (किसी के) कान बहना—बात का किसी के द्वारा इस प्रकार सुना जाना कि वह उसका मंत्र समझ जाय और उससे अनुचित लाभ उठा सके। जैसे—जहाँ यह बात किसी के कान पडी, तहाँ मारा काम बिगड़ जायगा।

किसी विषय में किसी की कोई आज्ञा, आदेश, या उपदेश। नसीहत। सीख। जैसे—बड़ों की बात माननी चाहिए।

मुहा०—(किसी की) बात अंधाल या गरि में बाँबना—अच्छी तरह और सदा के लिए अपने ध्यान या मन में बैठाना। उपदेशों या व्यवहारों में लाने के लिए अच्छी तरह याद रखना। जैसे—हमारी यह नसीहत गरि में बाँध रखो, नहीं तो किसी समय बहुत पलाजोये।

१०. किसी काम या चीज में होनेवाला कोई विशिष्ट गुण या लक्ष्य।

जैसे—उसमें अग्र कुछ बुरी बातें हैं तो कई अच्छी बातें भी हैं। ११. कोई उभित, कथन या कार्य जिसमें कुछ विशिष्ट कोशल या चमत्कार हो, अथवा जिससे प्रभावित होकर लोग प्रशंसा करें। जैसे—(क) उनकी हर बात में एक बात होती है। (ख) वे साधारण कार्यों में भी एक नई बात पैदा कर देते हैं। (ग) तुम भी इन्हीं की तरह काम करके दिखलाओ, तब बात है। (घ) उमे हजाना कोई बडी बात नहीं है। उदा०—कितक बात यह धनुष छत्र को सकरु विवस बन लैहो।—सूर। पद—क्या बात है ?—बहुत प्रशंसनीय काम या बात है। (साधारण रूप में भी उदा० ब्यर्थ के रूप में भी) जैसे—(क) क्या बात है ? बहुत सुन्दर चित्र बनाया है। (ख) आप बहुत बहादुर है, क्या बात है।

१२. कोई ऐसा कार्य या घटना जिससे कोई विशेष महत्त्व का प्रयोग सिद्ध होता हो। जैसे—(क) ये मय ब्रगडा छोड़ो, नाम (या मतलब) की बात करो।

कि० प्र०—करना।—कहना।—बनना।—बनाना।—बिगड़ना।—बिगड़ाना।—होना।

१३. किसी के कथन, वचन, व्यवहार आदि की प्रामाणिकता। प्रतीति। साक्ष। जैसे—(क) बाजार में उनकी बडी बात है। (ख) वह तुम बहुत शूठ बोलने लगे हो, इससे मित्र-मडली में तुम्हारी बह बात नहीं रहे गई।

कि० प्र०—बोना।—गँथाना।—बनना।—बनाना। मुहा०—(किसी की) बात जाना—बात की प्रामाणिकता लक्ष्य हो जाना। एतवार या विन्यास न रख जाना। बात रेडो होना—बात की प्रामाणिकता या साक्ष न रख जाना। विद्वयस उठ आने के कारण प्रविष्टा या मान में बहुत कमी होना।

१४. किसी के गुण, महत्त्व आदि के विचार से उनके प्रति मन में उत्पन्न होनेवाला विश्वास-भाव।

मुहा०—बात न पूछना—अज्ञता के कारण ध्यान न देना। तुच्छ समझकर बात तक न करना। कुछ भी कदर न करना। जैसे—तुम्हारी यही चाल रही तो मारे मारे फिरोगे, कोई बात न पूछेगा। उदा०—सिर हेठ ऊपर चरन सकट, बात नहि पूछे कोऊ।—तुलसी। बात न पूछना—दशा पर ध्यान न देना। खयाल न करना। परवाहा न करना। उदा०—मीन वियोग न सहि सकी नीर न पूछे बात।—सूर। बात पूछना—(क) खोज रखना। लवर लेना। सुल या दुख है, इसका ध्यान रखना। (ख) आदर या कदर करना।

१५. लोक या समाज में होनेवाली प्रविष्टा या मान-मर्यादा। धाक। जैसे—बिरादरी (या गृह) में उनकी बडी बात है।

कि० प्र०—बोना।—गँथाना।—जाना।—बनना।—बनाना।—बिगड़ना।—बिगड़ाना।—रखना।—रहना।

१६. मन में छिपा हुआ अभिप्राय या आशय। मन का गुह्य भाव या विचार। जैसे—तुम्हारे मन की बात कोई कैसे जाने।

मुहा०—(मन में कोई) बात बोलना—किसी अभिप्राय या उद्देश्य के सिद्ध न हो सकने पर मन ही मन उसके मन्वन्ध में उद्योग बना रहना। (मन में कोई) बात रखना—अपना अभिप्राय या उद्देश्य किसी पर प्रकट न होने देना। १७. कोई गुप्त या रहस्यमय लक्ष्य या लक्ष्य। मंत्र या मर्म का प्रयोग या विषय। जैसे—(क) उसका आना मतलब से खाली नहीं है, जरूर इसमें कोई

बात है। (ख) उसने मुझे ऐसी बात बतलाई कि मेरी अंभे खुल गई।
मुहा०—बात खूजना या फूटना- भेद, धर्म या रहस्य प्रकट होना।
बात (या बात की तरह) तक पहुँचना दे० नीचे 'बात पाना'। बात पाना- असल मतलब या मूढ़ तत्व समझ जाना।

१८ कोई ऐसा अनुचित कथन या कार्य जिससे किसी पर कोई दोष या लाइन लगता या लग सकता हो।

मुहा०—(किसी पर) बात आना- गंभी स्थिति होना कि किसी पर कोई दोष या लाइन लग सकता हो। (बि सी पर कोई) बात रखना, लगाना या लाना- निगी को दोषी सिद्ध करने का प्रयत्न करना। कलक या दोष की बात फिर्मायें से सिर पर गड़ना।

१९. कोई गंया कथन या बात जो किसी को धोखा देकर अपना कोई दुष्ट उद्देश्य निष्ठ करने के लिए की जाय। जैसे—उनकी बातों में मत शाना, नहीं तो पछताओगे।

मुहा०—बातें बताना- किसी को कौशलपूर्वक अपने अनुकूल करने के लिए तरह-तरह की उड़ी या बनावटी बातें कहना। (किसी की) बात (या बातों) पर आना- (निगी की) बात (या बातों) में आना। (किसी की) बात या बातों में आना- किसी की बातों पर विश्वास करने, उनके अनुसारा आचरण या व्यवहार करना। बात लगाना- निगी को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से निगी दूसरे में उसकी कोई बात कहना। बातों में आना- निगी का ध्यान बंटाने या उसे किसी और प्रश्न होने से रोकने के लिए छद्मपूर्वक उससे दृष्ट-उपरी की बातें छेड़ना। जैसे—उपपर गो उसने मुझे बातों में लगा रखा, और उपपर अपना आदमी भेजकर अपना काम करा दिया।

२०. ऐसा झूठा या बनावटी कथन जो निगी को धोखा देने के लिए हो या जिसमें कोई बहानेवाजी हो। जैसे—यह सब उसकी बात (या बातें) है। २१ अपनी हँसियत, योग्यता, गुण, सामर्थ्य, आदि के सवष में बड़ा-बड़ाकर किया जानेवाला उल्लेख। जैसे—अब तो वह बहुत लकी-चीटी बाने करता है।
 १५० बात।

बात-बीत—स्त्री० [हि० बात + म० चितन ?] १ दो या अधिक व्यक्तियों, पक्षों आदि में परस्पर होनेवाली औपचारिक तथा मौखिक बातें। बातोंलाप। २ जल-देन, समझौता, सधि आदि करने के उद्देश्य से होनेवाली मौखिक बातें या लिखा-पट्टी। जैसे—ठेके की बात-बीत चकर रही है।

बातड़—वि० [स० वानुल] १ वामु-मुकत। वामुवाला। २. बात का प्रयोग उन्पन्न करनेवाला।

बातप—पु० [स० वाताप] हिज। (अनेकार्थ०)
बात फरोमा—पु० [हि० बात + फा० फरोमा] [माव० बात-करोसी] वह जो केवल उटपटाप या व्यर्थ की बातें गड़-गड़कर सुनाता और उन्नी के भरोसे अपने सब काम चलाता हो।

बात-बनाऊ—वि० [हि० बात + बानावा] १ झूठ-मूठ व्यर्थ की बातें बतानेवाला। २ दूसरी का काम पूरा करनेवाला।

बातर—पु० [देग०] पत्राब में धान बोने का एक प्रकार।
बास-बास—पु० [स० बास] एक प्रकार का मीन रोग जिसमें सूई चुभने की-नी पीटा होती है।

बाताबी—पु० [बेटियाया देग०] चकोतरा।
बातासा—पु० [स० बात] हवा। वायु।

बातिस—पु० [अ०] [वि० बातिसी] १. किसी चीज का भीतर भाग। २ अन्त करण।

बातिसी—वि० [अ०] १ मीतर। २ अन्त करण का।
बातिस—वि० [अ०] १ जो सत्य न हो। झूठ। मिथ्या। २. निकम्मा। रूढ़ि। अर्थ। ३ नियम-विषय।

बाती—स्त्री० [म० बती] १ वह लकड़ी जो पान के खेत के ऊपर बिछाकर छपर छाते है। २ दे० 'बत्ती'।
 † स्त्री०—बात।

बातुल—वि० [स० वानुल] पागल। सनकी।
वि० [हि० बात] १ बहुत बातें करनेवाला। बकवादी। २ बहुत बातें बतानेवाला। बातूनी।

बातुनिया—वि०—बातूनी।
बातूनी—वि० [हि० बात + जनी] (प्रय०) १. जिसे बाने करने का चस्का हो। २ बहुत बड़-बड़कर और व्यर्थ की बातें करनेवाला।

बाथ—पु० [?] अंकवार। अक। उदा०—दूग मील मग मोचनी परयो उलटि मुञ्ज बाथ।—बिहारी।

बाथ—पु० [स० वस्तुक, प्रा० वल्यु] बथुआ नाम का साग।
बाद—पु० [स० बाद] १ खडन-मडन की बात-बीत। तब-विकर्क। बहुस-मुबाशसा। २ समझ। तकरार। बाद-विवाद।

क्रि० प्र०—बढाना।
 ३ नामा प्रकार के तर्क-वितर्कों के द्वारा बात का किया जानेवाला व्यर्थ का विस्तार। उदा०—त्यो पचाकर देव पुरान परधो पछि के बहु बाद बढायो।—पचाकर।
 ४ प्रतिज्ञा। ५. बाजी। हौड।

मुहा०—बाद बढाना- दातें बढाना। बाजी लगाना।
अव्य० [स० बाद, हि० बादि]—बाद करके, हट करके, अथ [निष्प्र-योजन। बिना मतलब।] व्यर्थ।
अव्य० [अ०] १. पश्चात्। अनतर। पीछे। २ अनिश्चित। सिवा।

वि० किसी प्रकार के वर्ग से अलग किया या निकाला हुआ। जैसे—आमदनी में से खरच बाद करना, दाम में से लागत बाद करना।
क्रि० प्र०—करना।—देना।

पु० १. छूट या खसूरी जो दाम में से काटी जाती हा। २ किसी अच्छी चीज में की वह पछिया मिलावट जो निकाली जाती हा या जिसके बिचार से चीज का दाम घटता हो। जैसे—इस मोमे में दो रती टाँका (या तबी) बाद जायगा। ४ देन, मूल्य आदि की वह कमी जो किसी चीज के खरच होने या बिगडने के फल-स्वरूप की जाती है। जैसे—पाले के कारण फसल में चार आने बाद है। (पूरब)
पु० [स० बात में फा०] बान। हवा।
 १५०—बाधा।

बाद-कश—पु० [फा०] १ छत से लटगाने का पंखा। २ धीकनी।
बाद-पर्य—पु० [फा०] बबडर। बाला।

बावना—अ० [स० बाद + हि० ना (प्रय०)] १ बकवाद करना।

२ तर्क-निर्तक करना। ३ झगडा या तकरार करना। जैसे—
बाहुहि बाकिन देखत दोहू।—गुलछी। ४ बड़-बड़कर बाते करना।
उदा०—बात बड़े सूर की नाई, अबाहि लेत हौं प्राण तुम्हारे।—सूर।

५. लककारना।

बाधभूना—पु० [फा०] वायु के प्रवाह की विधा सूचित करनेवाला एक प्रकार का यन्त्र। पवन-प्रचारक।

बाधवान—पु० [फा०] नाव या जहाज का पाल। पीत-गट। मजस्ट।

बाधवानी—वि० [फा०] १. बाधवान संबंधी। २. जिसमे बाधवान लयाया जाता है। बाधवान के द्वारा चलनेवाला।

बादर—वि० [स०] १. बादर या बेर नामक फल का, उससे उत्पन्न या उससे सम्बन्ध रखनेवाला। २. कपास या रूई से सम्बन्ध रखने या उससे बननेवाला। ३. भारी या मोटा। बारीक, या सूक्ष्म का विपर्यय।

पु० नैऋत्य कोण का एक देश। (बृहत्संहिता)
पु० [?] १ कपास का पीषा। २. कपास या रूई से बना हुआ। कपडा।

[वि० [?] आनवित। प्रसन्न।

[पु० = बादल (मेघ)।

बादर—स्त्री० [स० बादर + टापु] १ बदरी या बेर का पेड़। २. कपास का पीषा। ३. जल। पानी। ४. रेसाम। ५. दक्षिणार्धत शक।

[पु० = बादल।

बादरायण—पु० [स० बदरी + फक्—आयन] वेदव्यास का एक नाम।

बादरायण सबब—पु० [कर्म० स० ?] बहुत खीचतानकर जोडा हुआ नाम मात्र का सबब। बहुत दूर का लगाव या सम्बन्ध।

बादरायण-सूत्र—पु० [मध्य० स०] ब्रह्मसूत्र।

बादरिया—स्त्री० = बदली (मेघ)।

बादरी—स्त्री० बदली (मेघ)।

बादल—पु० [स० बारिद, हि० बादर] १ आकाश में होनेवाला जल-कणो का वह जमाव जो वायु के दबाव में घनीभूत होने पर होता है। मेघ।

मुहा०—बादलो का फट पड़ना—ऐसी पीर या मीथण वर्षा जो प्रलय का-सा दृश्य उपस्थित कर दे। मेघस्फोट।

कि० प्र०—आना।—उटना।—उमड़ना।—गजरना।—घिरना।—बड़ना।—छटना।—छाना।—फटना।

२. लाक्षणिक अर्थ में, चारी और छाया रहने या मँडरनेवाला तत्त्व या पदार्थ। जैसे—दुल के बादल, घूँफ का बादल। ३. एक प्रकार का पत्थर। जिस पर बैंगनी रंग की बादल की-नी बारियाँ पड़ी होती है।

बादला—पु० [हि० पतला?] सोने या चाँदी का चिपटा चमकीला तार जो मोटा बुनने या कलावतपु बुटने और कपड़ो पर टाँकने के काम आता है। कामदानी का तार।

बादली—स्त्री० बदली।

बादशाह—पु० [फा०] १ वह जो किसी बड़े साम्राज्य का शासक या स्वामी हो। सम्राट्। २. वह जो किसी कला, कार्य, क्षेत्र या बर्ग में सबसे बहुत बड़-बड़कर हो। जैसे—शाहरो का बादशाह, मूठो का बादशाह। ३. वह जिसका आचरण या व्यवहार बादशाहों की तरह उच्च, उदार या स्वेचच्छाचारपूर्ण हो। जैसे—तबीयत का बाद-

शाह। ४ शतरंज का एक मोहरा जो सब मोहरों में प्रधान होता है और किस्त लगाने से पहले केवल एक बार छोड़े की बाल चलता है और पीठ-भूप से बचा रहता है। इसे केवल राह दी जा सकती है, यह मारा नहीं जाता। जब इसके चलने के लिए कोई धर नहीं रह जाता, तब खेल की हार मानी जाती है। ५. ताग का एक पत्ता जिस पर बादशाह की तस्वीर बनी रहती है।

बादशाही—वि० [फा०] १ बादशाहों से संबंध रखनेवाला। २. बादशाहों की तरह का अर्थान् वैभवपूर्ण। जैसे—बादशाही ठाट। ३ शासन या राज्य-सम्बन्धी।

स्त्री० १ बादशाह का राज्य या शासन। २ बादशाहों का-सा मन-माला आचरण या व्यवहार।

बाद-हुवाई—कि० वि० [फा० बाद + ह्वा] फिजूल। व्यर्थ।

वि० १ (काम या बात) जिसका कोई सिर्-पैर न हो। आधार, तत्व, सार आदि में जिक्रकूल रहित। जैसे—मुम तो यों ही बाद-हुवाई बाते किया करते हो।

बादिह—अव्य० [हि० बाद + व्यर्थ] व्यर्थ ही।

बादाम—पु० [फा०] १ मद्योके आकार का एक प्रकार का वृक्ष जो पश्चिमी एशिया में अधिकता से और पश्चिमी भारत (कारमौर और पंजाब आदि) में कही कही होता है। २ उक्त वृक्ष का फल जो मेथों में मिला जाता है और जिसकी गिरी पीठिक होती है।

बादामा—पु० [फा० बादाम] १. एक प्रकार का देशी मी कपडा। २. मुसलमान फिकीरों के पहनने की एक प्रकार की मुदती।

बादामी—वि० [फा० बादाम + ई (प्रत्य०)] १ बादाम के ऊपरी कठोर छिलके के रंग का। २ बादाम के आकार-प्रकार का। लबो-तरा। गोलाकार। जैसे—बादामी बाल, बादामी मोती।

पु० १. बादाम के छिलके की तरह का ऐसा लाल रंग जिसमें कुछ पीलापन भी मिला हो। २ एक प्रकार का पान। ३ एक प्रकार की लबो-तरी गोलकार डिब्बिया जिसमें सिन्धवाँ गहने आदि रखती है।

४ बादशाही महलों में एक हिजडा जिसकी इडिय बहुत छोटी या बादाम की तरह होती थी। ५ बादाम के रंग का घोडा। ६. एक प्रकार की छोटी चिन्टिया जो पानी के किनारे रहती है और मछलियाँ खाती है। किलकिशा।

बादि—अव्य० [स० बारिद] व्यर्थ। निष्प्रयोजन। फिजूल। निष्कल।

पु० [स० बारिज्] घोडा। उदा०—बारि मरि हँ खेल पनाग।—जायसी।

बादित—पु० कृ० = वादित (बजाया हुआ)।

बादिथ—पु० = वादिथ।

बादिया—पु० [देश०] १. कोटरों का पेच बनाने का एक प्रोजार। २ एक प्रकार का कटारा।

बादिहि—अव्य० [हि० बाद + ही] व्यर्थ ही। उदा०—जन्म ती बादिहि गयो सिराई।—सूर।

बादी—वि० [फा० बाद + हुवा में] १. बात सबधी। वायु-संबन्धी। २ घरीर के वायु सम्बन्धी विकार के कारण होनेवाला। जैसे—बादी बवासीर। ३. घरीर में बात या वायु का विकार उत्पन्न करने-

वाला। जैसे—मटर बहुत बादी होता है।

स्त्री० शरीर की वायु के विगड़ने के कारण होनेवाला प्रकोप।

स्त्री० [दंश०] लोठारो का वह औजार जिससे वे लोठे पर सिकली करते हैं।

वि०, पुं० वादी।

बादीगर—पुं० वाजीगर।

बादी-बवासीर—स्त्री० [हिं०] बवासीर के दो भेदों में से एक जिसमें मसूरो में से सून नहीं निकलता। (सूनी बवासीर में विप्र)

बाधुर—पुं० [हिं० गाधुर] चमगादड़।

बाधुना—पुं० [दंश०] हलयाद्यों का एक उपकरण जो घेवर नाम की मिठाई बनाने के काम आता है।

बाधु—पुं० [स०√बाध् (रोकना) +घञ्] [वि० बाध्य, भाव० बाधता, कर्ता बाधक] १ अडचन। बाधा। २ कठिनाता। दिक्कत। मुश्किल।

३. साहित्य में किसी कथन या प्रतिपादन में आनेवाली वह असंगति या कठिनाता जो उसके अर्थ, आशय या वाक्य-रचना में तर्क-ममत सम्बन्ध के अभाव के कारण उत्पन्न दिखाई देती है। जैसे—जहाँ बाध्याय्य ग्रहण करने में अर्ध की बाधा हो वहाँ लयाय्य ग्रहण करना चाहिए। ४ तर्क या ग्याय में वह पक्ष जिसमें साध्य का अभाव-या दिव्यादि देता हो।

५. आज कल किसी प्रकार की उन्नति, प्रगति आदि के मार्ग में किसी विहित उद्देश्य से लड़ी की जानेवाली वह स्क्वाट जिसे पार करने के लिए निश्चित कार्यशक्ता योग्यता, स्थिति आदि दिखानी पड़ती है। जैसे—बड़ी बड़ी सरकारी नौकरियों को कर्मचारियों को समय समय पर कई बाधा पार करने पड़ते हैं। (वार, उक्त सभी अर्थों में) ६ कष्ट। पीडा।

पुं० [स० बद्ध] [स्त्री० बाधि] मूँज की रस्सी जो प्रायः साधारण चारपाइयों बुनने के काम आती है।

बाधक—वि० [स० बाध् (रोकना) +घञ्-अक] [स्त्री० बाधिका, भाव० बाधकता] १. बाधा के रूप में होनेवाला। २. बाधा अर्थात् विघ्न उत्पन्न करनेवाला। ३. किसी काम में अडचन उत्पन्नवाला। ४. ऐसा कष्टदायक जो कुछ हानिकारक भी हो।

पुं० विप्रवि का एक रोग जिसमें उदरे सतत नही होती या सतत होने में बड़ी पीडा या कठिनाता होती है।

बाधकता—स्त्री० [स० बाधक] +तत् +टाप्] १ बाधक होने की अवस्था या भाव। २ बाधा।

बाधय—पुं० बडना। उदा०—बाधय माना बधाइहार।—प्रिधीराज। स०—बाधयना।

बाधन—पुं० [स०√बाध् (रोकना) +लृट्-अन] [वि० बाधित बाधनीय, बाध्य] १ बाधा या विघ्न उत्पन्न करने या स्क्वाट डालने की क्रिया या भाव। २ काट-काटना। पीड़ित करना। ३ किसी अनुचित या निन्दनीय काम के सबब में होनेवाली मनाही। ४. दे० 'अभिनियेध'।

बाधना—स० [स० बाधन] १ बाधा डालना। स्क्वाट या विघ्न डालना। २ कष्ट देना पीड़ित करना।

स्त्री० बाधा। उदा०—नाम रूप ईश की बाधना।—निराला।

†स० [स० बद्धेन] बधना।

†अ०—बद्धना।

बाधयिता—पुं० [स०√बाध् (रोकना) +णिच् +तृच्] वह जो दूसरों के काम या मार्ग में बाधाएँ लड़ी करता हो।

बाधा—स्त्री० [स०√बाध्+अ+टाप्] १ वह बात या स्थिति जो किसी को आगे बढ़ने अथवा कोई काम संपादित करने से रोकती है। उन्नति या प्रगति में बाधक होनेवाला तत्त्व। (आस्टैकल)

क्रि० प्र०—डालना।—देना।—पडना।—पहुँचना।

२. कष्ट। कष्ट। ३ डर। मय। उदा०—कहूँ सठ तौंह न प्रान कई बाधा।—मुलसी। ४ मृत-प्रेत आदि के कारण होनेवाला कोई भौतिक या शारीरिक उपद्रव या कष्ट। जैसे—श्रेण कहते हैं कि उन्से रोग नहीं है, कोई बाधा है।

†पुं० [स० बद्धि] १ बडती। बद्धि। २ सूनाफा। लाम। (परिचम)

बाधित—पुं० कृ० [स०√बाध्+क्त] १ जिसके मार्ग में बाधा लड़ी की गई हो। बाधा में जिनका मार्ग अरुद्ध हो। २. जो किसी प्रकार की बाधा, बंधन आदि के द्वारा परिमित या सीमित किया गया हो। (बाँड) जैसे—अबधि-बाधित। ४ मृत-प्रेत आदि की बाधा से प्रस्त। निषिद्ध छहराया हुआ। ५. दे० 'अभिनियेध'।

बाधिये—पुं० [सं० बाधि। ध्यञ्] बाधिरना (बहुराज)।

बाधी (धिम्)—वि० [सं० बाध+इति, दीर्घ, नलोय] बाधा देनेवाला। बाधक।

बाध्य—वि० [सं० बाध् (रोकना) +घ्यत्] [भाव० बाध्यता] १ जिस पर कोई बाधा या बाधक तत्त्व लगा हो या लगाना गया हो। २ जो आज्ञा, नियम, मनोबन्ध, परिस्थिति आदि में कुछ करने में विवश हो। मजबूर।

बाध्य-रेता (तस्)—पुं० [सं० बं +सं] कनीब। नपुंसक।

बान—पुं० [सं० बाण] १ बाण। तीर। २ उक्त के आकार की एक प्रकार की अतिबाबी जो उबकर आकाश में जाती और वहाँ कड़-झड़ियाँ छोड़ती है। ३ नदी, मनुष्य आदि में उठनेवाली ऊँची तरंग। ४ वह छोटा बडा जिसके दोनों सिरों पर गोलाकार लट्टू लगे होते हैं और जिससे पुनकी (कमान) की तंत को झटका देकर पुनिए लूई धुनते हैं।

पुं० [सं० वर्ण] १ रंग। वर्ण। २ आभा। कानि। चमक।

स्त्री० [हिं० बनना] १ ऐसा अन्नास या श्रावत जो बनने बनने स्वभाव का अंग बन गई हो। टेव। उदा०—होली के दिन मान न करिए, लाडली, कोन तिहारी बान। (होली)

क्रि० प्र०—डालना।—पडना।—लगाना।

२. रचना-प्रकार। बनावट।

पुं० [दंश०] १ जड़हन (धान) रोपने के समय जतनी पेंडियाँ जितनी एक साथ एक धान में रोपी जाती हैं। जड़हन के खेत में रोपी हुई धान की जूरी।

क्रि० प्र०—बैठना—रोपना।

२. अफगानिस्तान से असम प्रदेश तक और प्रायः हिमालय में होनेवाला एक प्रकार का वृक्ष।

†पुं० [हिं० बाध्] खाट बुनने की मूँज की रस्सी। बाध। उदा०—

दोने की बह नार कहावे बिना कलौटी बान दिखाने । (बाट या चारपाई की पहिली)

पु०—बाना (वेप) ।

प्रत्य० [फा०] देख-रेख या रखवाली करनेवाला । रखक । जैसे—
रखान, पिनहवान ।

बाणहस्ता—पु०—बानैत ।

बाणक—पु० [सं० बाणं; हि० बाणक] १. भेस । वेप । २. सुन्दर बनावट या रूप । सज-यव । सजावट । उदा०—या बानकी बट बानिक (बानक) या बन ही बनि आवै।—नन्ददास । ३. डंग । तरीका । उदा०—योग रत्नाकर में ससि षट्ति बूई, कौन ऊषो ह्रम सूषो यह बाणक विचार चुकी।—रत्नाकर । ४. पीले या सफेद रंग का एक प्रकार का रेशम ।

पु० [हि० बनना] किसी घटना के घटित होने के लिए उपयुक्त परिस्थिति या संयोग ।

मुहा०—बाणक बनना या बँठना=(क) किसी काम या बात के लिए बहुत ही उपयुक्त संयोग या सुयोग उपस्थित होना । उदा०—
हम पतित नुम पतिपावत डोक बाणक बने।—मुलसी । (ख) मेल या समति बँठना ।

बाणगी—स्त्री० [सं० बाणं; हि० बाणा] १. वह अह, अवयव या भाग जो अकार-अकार रूप-रंग स्थिति आदि की दृष्टि से किसी गति, बर्ण या गन्ध का परिचायक, प्रतीक और प्रतिनिधि होता है । (सैम्युक) जैसे—गेहूँ (जी या चावल) की बाणगी देखकर सोदा करना चाहिए । २. दे० 'नमूना' ।

बाणनां—स० [हि० बाणा] १. किसी प्रकार या बात का बाना ग्रहण अथवा धारण करना । २. किसी काम या बात का उपक्रम करना । ठानना । उदा०—दिन उठि विषय-बामना बाणन ।—मूर ।

स०—बनाना । उदा०—कदम तीर तै मोहिं बुलायो गड़ि गड़ि बाँत बाणति ।—मूर ।

बाणवे—वि० [स० द्विनवति; प्रा० बाणवह] जो विनती में नब्बे से दो अधिक हो । दो ऊपर नब्बे ।

पु० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—१,२ ।

बाणर—पु० [स० बाणर] [स्त्री० बाणरी] बंदर ।

बाणर—पु० [?] बलकों को जाति की काले रंग की एक प्रकार की बड़ी विधिया जो लगभग तीन फुट की होती है । साँप जैसी लम्बी और पतली गरदन के कारण इसे 'नागिन' भी कहते हैं ।

बाना—पु० [स० बाणं] १. पहनावा । पोशाक । २. विषयतः वह पहनावा जो वीर लोग पहनकर रण-क्षेत्र में जाते थे । जैसे—केसरिया । उदा०—३. कोई विविध प्रकार का वेप-विनया । मेस । बाना—सोना पहिदि लयावे बाना ।—कबीर । ४. वह स्थिति जो किसी को उसके पद, मर्यादा आदि के कारण प्राप्त होती है । (पौबीवन) जैसे—महाराज को अपने बाने की लाज रखने के लिए बहुत बड़ा इनाम देना पडा । ५. वह कार्य या धर्म जो किसी विविध स्थिति में अंगीकृत या गृहीत किया गया हो । अपनाई हुई चाल या रीति । उदा०—हुँ है प्राणविहीन देखि दसरथ को बानो।—वीनदयाल गिरि ।

मुहा०—बाना बाँचना—किसी प्रकार का उत्तरदायित्व, कार्य का भार, बाँक या परिपाटी अपनाता या ग्रहण करना ।

६. व्यापारिक क्षेत्र में, कुछ ऐसी विविध वस्तुओं का वर्ण या समूह जिन्का क्रय-विक्रय होता हो । जैसे—बनारसी बाना, बिसात बाना । पु० [स० बानं—बनान] १. बुनावट । २. बुनावट । ३. कपड़ों की वह बुनावट जो चौड़ाई के बल में समानान्तर होती है । भरनी । (ताने से निभ)

विशेष—कपड़े की लंबाई के बल में लगे हुए सूत 'ताना' और चौड़ाई के बल में लगे हुए सूत 'बाना' कहलाते हैं ।

३. एक प्रकार का बटा हुआ महीन रेशम जिससे कुछ लोग गूढकी या पतंग उड़ाते हैं । ४. शेत में एक बार अथवा पहली बार होनेवाली बोटी । पु० [स० बाण] १. एक प्रकार का हथियार जो तीन या साँडे तीन हाथ लंबा होता है । २. माले या साँगी की तरहू का एक हथियार ।

स० [सं० व्यापन] ऐसी चीज का अगला गोलाकार अंग, छेद या मुँह फेंकना जो साधारणतः बंद रहता या कम खुलता हो । जैसे—मुँह बाना । उदा०—दिबायो मुख बाई ।—मूर ।

मुहा०—(किसी वस्तु के लिए) मुँह बाना—पाने या लेने के लिए बहुत ही अनुपूर या लालायित होना । जैसे—तुम तो हर चीज के लिए मुँह बाये रहते हो ।

पु० [स० बाण]—बजाना । उदा०—रास कह यह बंसली बाई ।—नरपति वाहन ।

पु० [हि० वाहना] बालो में कधी करना ।

बानात—स्त्री०—बनात (कपडा) ।

बानाबरी—स्त्री० [हि० बाण ; फा० आवरी (प्रत्य०)] बाण चलाने की विद्या या उद्यम ।

बानि—स्त्री० [स० बाणं; हि० बाणा] १. वर्षा । रस । २. बाना । मेस । वेप । ३. सुन्दर और सज्जोली बनावट या वेप । उदा०—कर धरि चक्र चरन की धारनि, नहि विवरति वह बानि ।—मूर । ४. आमा । काति । चमक । अव्य० तरहू या प्रकार से । नाति । उदा०—अति बानि कपूर सुजासु ।—जायसी ।

पु० [सं० बाण] (वचन) ।

पु० [सं० बाण] (आदर, टेव) ।

पु० [सं० बाण] (वचन) ।

पु० [सं० बाण] (वचन) ।

पु० [सं० बाण] (वचन) ।

पु० [सं० बाण] (वचन) ।

बानि—स्त्री० [सं० बाणं] १. मुँह से निकला हुआ सार्धक शब्द, बात या वचन । २. दुबता या प्रतिज्ञापुत्रक कही हुई बात । ३. साधु-महात्माओं की उपदेशपूर्ण बात । जैसे—कबीर, दादू या नामक की बानी । ४. यतीनी । मप्रत । ५. सरखती । ६. दे० 'बाणी' ।

स्त्री० [सं० बाण] बाना नामक हथियार ।

स्त्री० [सं० बाण] १. रस । वर्षा । २. आमा । काति । चमक । जैसे—

बाहू बानी का सोना । (दे० 'बाहू बानी') उदा०—एक रूप बानी

जाके पानी की रहति है।—सेनापति। ३. एक प्रकार की पीली मिट्टी जिससे पकाये जाने से पहले मिट्टी के बरतन रचे जाते हैं। कपसा।
वि० [फा०] १. किसी काम या बात की बुनियाद (नींव) डालने या जड़ जमानेवाला। २. आरंभिक या मूल प्रवर्तक।

पु० [स० वपिक०] बनिया।

बागेत—पु० [हि० बागा + ऐत (प्रत्य०)] १. वह जो बागा चलाता या फेरता हो। २. वह जो कोई बागा या वेप भांगन किये हो।
पु० [हि० बान तीर] १. वह जो तीर चलाता हो। तीरदाज। २. मोढ़ा। सैनिक।

बागे—स्त्री० [फा०] महिला अर्थात् मले घर की स्त्री के नाम के साथ लगाना जानेवाला एक आदर्शक शब्द। जैसे—जमीला बागे, हुस्न बागे।

बाप—पु० [स० बाप=बीज बोनेवाला] पिता। जनक।

बाप-बाप—क=पितृक। **बाप-बाबा**—पूर्व-पुरुष। पूर्वज।

बाप-मै- सब प्रकार से पालन और रक्षण करनेवाला। जैसे—सरकार-बाप-मैं हूँ, जो चाहे सो कहे। **बाप रे!**—बहुत अधिक आश्चर्य, भय, सकट आदि के समय कहा जानेवाला पद।

मुहा०—(किसी का) **बाप-दादा बसानना**—किसी के बाप-दादा के दुर्गुण बतलाते हुए उन्हें गालियाँ देना और उनकी निंदा करना। (किसी की) **बाप बनाना**—(क) बहुत अधिक आदर-पूर्वक अपना पूज्य और बड़ा बनाना। (ख) अपना काम निकालने के लिए सुझावद करते हुए बहुत आदर-सम्मान प्रकट करना।

बापा—पु०=बाप।

बापिका—स्त्री०=बापिका (बायली)।

बापी—स्त्री०=बापी (बावली)।

बापु—पु०=बाप।

बापुरा—वि०[?] [स्त्री० बापुरी] १. जिसकी कोई गिनती न हो। मुच्छ। हीन। २. जिसकी देख-रेख करने, बात पूछने या रखा करने-वाला कोई न हो। बेचारा।

बापु—पु० [फा० बाप] १. बाप। पिता। २. पिता तुल्य कोई बुद्ध मुसल।

३. महान्ता माथी के लिए प्रयुक्त होनेवाला एक आदरसूचक शब्द।

बापुकारना—स० [हि० बापु+कारना (प्रत्य०)] 'बापु' कहकर ललकारना। (राज०) उदा०—बेली तदि बालमद बापुकारे।—प्रिथीराज।

बापीती—स्त्री०=बपीती।

बाफ—वि० [फा० बाफ] १. बुननेवाला। जैसे—जर-बाफ, दरी-बाफ। २. बुना हुआ।

† स्त्री०=माप (बाप्य)।

बाफता—पु० [फा० बाफत] एक प्रकार का बूटीदार रेशमी कपडा।

बाब—पु० [अ०] १. पुस्तक का कोई विभाग। परिच्छेद। २. मुकदमा। ३. तरहूँ। प्रकार। ४. विषय। ५. अभिप्राय। भाषण। मतलब।

बाबची—स्त्री० दे० 'बकुची'।

बाबची—स्त्री०=बाबरी।

बाबत—स्त्री० [अ०] १. सबब। २. विषय।

अर्थ=विषय या सबब में। जैसे—इसकी बाबत आप की क्या राय है?

बाबनेट—स्त्री० [अ० बाबिनेट] =बाबरलेट।

बाबर—पु० [फा०] भारत में मुगल राज्य की स्थापना करनेवाला एक प्रसिद्ध सम्राट्।

बाबरची—पु०=बाबरची।

बाबरलेट—स्त्री० [अ० बाबिनेट] एक प्रकार का जालीदार कपडा जिसमें गोल या छक्केने छोटे छोटे छेद होते हैं।

बाबरी—स्त्री० [हि० बबर-सिंह] १. चिर के बड़ाये हुए लब बाल। २. पट्टा। जुफ्त।

बाबक—पु०=बाबक (पिता या बाप)। उदा०—बाबक वेद बुलाइये र पकड़ दिखाई म्हारी बाहू।—मीर।

बाबस—वि० [स० विवश] १. लाचार। विवश। २. निराश। हताश। **बाबा**—पु० [स० बाप, प्रा० बप्य] १. पिता। २. पितामह। बादा।

३. बड़े-बूढ़ो के लिए आदरसूचक सम्बोधन। ४. किसी मंल आरम्भी विशेषतः साधु-महात्माओ के लिए आदरसूचक सम्बोधन। ५. लडकों के लिए स्नेहसूचक सम्बोधन।

बाबिल—पु० [बाबूल देश] एशिया खड का एक अति प्राचीन नगर जो फारस के पश्चिम फरात नदी के किनारे था। (बैबिलोन)

बाबी—स्त्री० [हि० बाबा] १. साधु स्त्री। सत्याभिनी। २. लडकियों के लिए स्नेह सूचक सम्बोधन।

बाबीहा—पु०=परीहा। (राज०)

बाबुना—पु०=बाबुना।

बाबूल—पु० [हि० बाबा] १. बाबू। २. पिता। बाप।

† पु०=बाबिल।

बाबू—पु० [हि० बाप या बाबा] १. एक प्रकार का आदरसूचक शब्द जिसका प्रयोग पहले राजाओ आदि के सम्बन्धियों के लिए होता था, और अब सभी प्रकार के प्रतिष्ठित शयियों, वैय्यों आदि के नाम के साथ होता है। जैसे—बाबू महादेवप्रसाद। २. पिता या बड़ो के लिए सम्बोधन।

बाबूडा—पु० [हि० बाबू +डा (प्रत्य०)] बाबू के लिए उपेक्षा सूचक शब्द।

बाबूना—पु० [देश०] १. पीले रंग का एक पत्ती जिसकी आँखों के ऊपर का रंग सफेद, बीच काली और आँखे लाल होती है। २. एक प्रकार का छोटा पीधा जो फारस और युरोप में होता है।

बाभन—पु० १. दे० 'बाह्यप'। २. दे० 'भूमिहार'।

बाभ—पु० [फा०] १. अटारी। कोठा। २. घर में सबसे ऊपर का कोठा और छन। ३. लबाई, ऊँचाई आदि मापने का एक मान जो माई तीन हाप का होता है। गुरला।

स्त्री० [स० बाबू] १. एक प्रकार की मछली जो देखने में साँप मी पतली, गोल और लंबी होती है। २. कान में पहनने का एक गहना।

† स्त्री०=बाभा।

बाभदेव—पु०=बागदेव।

बाभन—पु०=वामन।

बाभा—स्त्री०=बाभा।

बाभी—स्त्री० १. दे० 'बाबी'। २. दे० 'लाही'।

बायें—वि० [सं० बाय] १. (निजाना) जो अपने ठीक लय पर न लगा हो। चुका हुआ।

मुहा०—**बायें देना**=(क) किसी के बार करने पर इस प्रकार इधर-उधर हो जाना कि आघात न लगने पावे। (ख) उपेक्षापूर्वक छोड़ देना। ध्यान न देना। जाने देना। (ग) किसी के चारों ओर चक्कर या फंरा लगाना।

२ दे० 'बायाँ'।

स्त्री० [अनु०] पशुओं आदि के मुँह से निकलनेवाला बाँ बाँ या बायें बायें शब्द।

बाय—स्त्री० [स० बाय] १ बायू। हवा। २ शरीर में होनेवाला वात का प्रकोप। बाईं।

स्त्री०—**बायली** (बापी)। उदा०—अति अगाध अति औपरी नदी, क्रूर, सर, बाय।—बिहारी।

बायक—पु० [स० बायक] १ बायक। २ वक्ता। ३ पढ़नेवाला। पाठक। ४ दूत।

बायकार—अण० [अ०] बहिष्कार। (देवे)

बायब व **शायब**—अ० [फा०] ऐना अण्डा जैसा होना चाहिए, फिर भी जैसा बहुत कम होगा या सिर्फ़ कमी कमी दिखाई देता हो। जैसे—उसने ऐसे अनोखे करतब दिखाये कि बायब न शायद।

बायन—पु० [स० बायन] १ बह मिटाई या पकवान आदि जो लोग उसव आदि के उपलक्ष्य में अपने इष्ट-मित्रों के यहाँ मेजते हैं। बैना। २ उम्हारा। मेटा। ३ किसी काम या बात का निश्चय करने के लिए उसके सम्बन्ध में पहले में दिया जानेवाला धन। पैसगी। बयान।

कि० प्र०—दना।—पाना।—मिठाना।—लेना।

मुहा०—**बायन देना**—किसी के साथ कोई ऐसा व्यवहार करना, जिसका बदला उसे अंग चलकर चुकाना पड़े। उदा०—मले मयन अब बायन दीना।—मुलसी।

बायबरन—स्त्री०—बायविडन।

बायबंरन—स्त्री० [म० बिडन] एक लता जो हिमालय पर्वत, लका और बरगम में होती है।

बायबिल—स्त्री०—बाइबिल।

बायबी—वि० [सं० बायबीय] ऐसी अपरिचित या बाहरी जिससे किसी प्रकार की आत्मीयता या सम्बन्ध न हो।

बायरी—पु० [दिश०] कुस्ती का एक पेश।

बायल—वि० [हि० बाय, बय] १ (पहार या बुरा) जो खाली गया या निष्फल हुआ हो।

कि० प्र०—जाना।—देना।

२. (जूए का दंड) जो खाली गया हो और किसी का न आया हो। कि० प्र०—जाना।

बायलर—पु० [अ०] १ बह पान जिससे कोई पदार्थ उबाला या गरम किया जाता है। २. विशेषतः इंजन का वह बड़ा आधान जिसमें भरे हुए पानी को गरम करने के साथ तैयार की जाती है तथा जिसकी शक्ति से यन्त्र चलाये जाते हैं।

बायल्ला—वि० [हि० बाय +ला (प्रत्यय)] [स्त्री० बायली] शरीर में बायू का विकार उत्पन्न करने या बढ़ानेवाला। जैसे—किसी को बंगन

बायला किसी को बंगन पय। (कहा०)

बायली—वि०—बायली।

बायव्य—पु०—बायव्य।

बायस—पु०—बायस।

बायस्कथ—पु० [अ०] एक प्रसिद्ध यन्त्र जिसके द्वारा परदे पर चल-चित्र दिखाये जाते हैं।

बायी—वि० [स० बाय] [स्त्री० बाई] १ शरीर के उस पक्ष से संबंध रखनेवाला अथवा होनेवाला जो शारीरिक दृष्टि से अपने विपरीत पक्ष से कुछ दुर्बल और कम कर्मशील होता है। 'दाहिना' का विपर्याय। जैसे—बायाँ हाथ, बाईं आँस। २. जिस ओर उल्ट पक्ष हो, उस ओर में स्थित होनेवाला।

मुहा०—**बायाँ देना**=(क) किनारे से निकल जाना। (ख) उपेक्षा पूर्वक छोड़ देना।

३. मकानों आदि के मजबूत में, उनके मुख्य द्वार की ओर पीठ करने खड़े होने पर बायें हाथ की ओर का। ४. चित्र के उस पार्व से सबब रखनेवाला जिस ओर द्रष्टा का बायाँ हाथ हो (चित्र का वस्तुतः यह दाहिना पक्ष होगा है)। ५. उलटा। 'सीमा' का विपर्याय। ६. प्रति-कूल। विरुद्ध।

पु० तबले के साथ प्रायः बाएँ हाथ से बजाया जानेवाला उसका जोड़। दुग्गी।

बायू—स्त्री०—बायू।

बायें—अण० [हि० बायाँ] १. जिस ओर बायाँ हाथ पड़ता हो उस ओर। बाईं ओर। बाईं तरफ़। २. विपरीत पक्ष में। ३. प्रतिकूल या विरुद्ध पक्ष में। ४. अप्रसन्न और असन्तुष्ट रहकर या हुंकार।

बारबार—अण० [स० बारबार] अनेक, कई या बहुत बार। पुन पुन।

बार—पु० [सं० दवार] १ द्वार। दरवाजा। उदा०—हमिस्त सिंघली बधिं बारा।—जायसी। २. आशय लेने की जगह। ठौर-ठिकाना। ३. राज-समा। दरबार।

स्त्री० [सं० बारा या बेला?] १. काल। वक़्त। समय। २. देर। विलंब। उदा०—मइ बडिं बार जाइ बलिं मिया।—सूर।

कि० प्र०—करना। लगाना।—होना।

*पु० [सं० बारि]—पानी।

स्त्री० [फा०] १. बफा। भरतबा। जैसे—पहली बार, दूसरी बार।

पह—**बार बार**—रह-रहकर कुछ देर बाद। कई फिर। फिरफिर। पुन।

पु० [सं० बार से फा०] १. बोझ। भार।

कि० प्र०—उठाना।—खनना।—लाधान।

२. कही मेजने के लिए गाड़ी, जहाज आदि पर लादा जानेवाला माल।

मूह—**बार करना**—जहाज या फराल लाधान। (लघ०)

३. मुँहो आदि की पैदावार या फसल।

[स्त्री० [स० बाट] १. किसी स्थान को घेरने के लिए बनाया हुआ घेरा। बार। २. किनारा। छोर। बाट। ३. हृष्यापी की तेज धार। बाट। ४. दे० 'बाटी'।

[पु० [स० बाल] बालक। लड़का।

पु०—**बाल** (सिर या शरीर के)।

[स्त्री०—**वाला** (एवती स्त्री)।

बारका—अव्य० [हि० बार + एक] एक वका। एक बार।
स्त्री०—बैरक।
बारककह—पु० [दिश०] एक प्रकार का पीछा जो साँप का विष डूब करने-
 वाला माना जाता है।
बारगाह—स्त्री० [फा०] १ थण्डी। २ बेधा। बेरा। तबू। ३. राजाओं
 आदि का दरबार। कचहरी। ४ राजमण्डल।
बारगी—वि० [फा० बारगाह] लड़ाई का एक ढग या प्रकार।
 पु० [फा०] अथ। धोना।
बारगार—वि० [फा०] बोझ होनेवाला। भारवाहक।
 पु० १ घोड़ों के लिए पास, चारा काटकर लाने और सार्इस की सहायता
 करनेवाला पसियारा। २ मध्ययुग में, बहु सिपाही या सैनिक जो किसी
 राजा या सरदार के घोड़े पर चढ़कर युद्ध आदि करता था। ३ घोड़ा।
 ४ ऊँट। ५ बैल।
बारका—पु० [हि० बार-डार+जा=जगह] १ मकान के सामने के
 दरवाजे के ऊपर पाटकर बसाया हुआ छज्जा। बरामदा। २ कमरे के
 अग्रे का छोटा दालान। ३ छत के ऊपर का कमरा। अटागी। कोटा।
बारणा—पु०=वारण।
बारता—स्त्री०—वार्ता।
बारतिय—स्त्री० [हि० बार +तिय] वेश्या।
बारतुंडी—स्त्री० [ब० सं०] आल का पेड़।
बारताना—पु० [फा० बारतान] १. वह चीज जिसमें बोझ विशेषत
 ध्यपार के सामान बाँधे या रखे जाते हैं। जैसे—खुरजी, बीरा आदि।
 २. वे टाट आदि जिनमें बाँधकर माल के बड़े-बड़े गट्टर बाहर भेजे जाते
 हैं। ३. फौज के खाने-पीने की सामग्री। रसद। ४ टूटी फूटी चीजें
 या सामान। अगड़-खगड़।
बारवार—वि० [फा०] १. जिस पर किसी प्रकार का बार या बोझ हो।
 २. (बुझ) जो फलों से भरा या लदा हो। ३. (स्त्री) जिसे गर्भ हो।
बारण—पु० [सं० बारण] हाथी।
 पु०=वारण।
बारना—अ० [सं० बारण] १. मना करना। २. बाधा डालना।
 सं०=बारना (जलाना)।
 सं०=बारना (निष्कारण करना)।
बारनिश—स्त्री०=बारनिश।
बार-बैदाई—स्त्री० [फा० बार=बोस +हि० बाँटना] दाये जाने से पहले
 कटी हुई फसल का होनेवाला बँदबाप।
बार-बबू—स्त्री० [सं० बारबबू] वेश्या।
बार-बबूटी—स्त्री० [सं० बारबबूटी] वेश्या।
बार-बरतारा—वि० [फा०] [भाव० बारतारदाती] बार उठानेवाला।
 बोस होनेवाला।
बार-बरतारी—स्त्री० [फा०] १. माल या सामान ढोने की क्रिया या भाव।
 २. उक्त के बदले में मिलनेवाला पारिप्रथिक या मजदूरी।
बारमुजी—स्त्री० [सं० बारमुजा] वेश्या।
बारभरवाई—स्त्री० [हि० बार-डार+रोकना] १. विवाह की एक रसम
 जिसमें लक्ष्मीबाल के पर की स्त्रियाँ दरवाजे पर बार को रोककर
 कुछ भोग देती हैं।

बारवा—स्त्री० [दिश०] एक रागिनी जिसे कुछ लोग श्री राग की पुत्रकम्प
 मानते हैं।
बारह—वि० [म० द्वादश, प्रा० बारस, अप० बारह] [वि० बारहवाँ]
 जो सख्या में दस और दो हो।
 पु० उक्त की सूचक सख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—१०।
बारह खड़ी—स्त्री० [म० द्वादश, अप० बारही] १ अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए
 ऐ, ओ औ, अ और अ इन बारह स्वरों की मात्राएँ क्रमात् प्रत्येक
 व्यंजन के क्ता कर बोझने या लिखाने की क्रिया। २ वह रूप
 जिसमें सभी व्यंजनों में उक्त स्वर लगाकर लिखाये गये हों।
बारह टाँपी—स्त्री० [हि०] १. मध्ययुग में यूरोप के बारह प्रमुख राष्ट्र
 जो अपने टोपों की विभिन्नता के कारण प्रसिद्ध थे।
बारहठ—पु० [सं० द्वादस्य] राजपूताने के चारोंफा का एक भेद या वर्ग।
बारहवरी—स्त्री० [हि० बारह+फा० दर-रत्नवाजा] किसी इमारत का
 ऊपरवाला बहू कमरा जिसमें चारों ओर तीन-तीन दरवाजे अर्थात्
 कुल मिलाकर बारह दरवाजे हों।
बारह पत्थर—पु० [हि० बारह+पत्थर] १ वे बारह पत्थर जो पहिले
 छावनी की तरह पर गाँडे जाते थे। २ सैनिक विधिर। छावनी।
बारह बाट—पु० [हि०] १ इधर-उधर फैले हुए बहुत से मार्ग। जैसे—
 बारहबाट अठारह वृंदा। २ व्यर्थ का प्रसार या फैलाव। ३ किर्णा
 विषय में लोगों के ऐसे पत्थर विशेषी मन या विचार जो एकता,
 दुकना आदि में बाधक हों।
 वि० १ छिप्र-निश। तितर-वितर। २ नष्ट-भ्रष्ट। बरबाद।
मुहं०=बारह बाट करना या घालना—तितर-वितर या छिप्र-निप्र
 करना। व्यर्थ इधर-उधर करके नष्ट करना। बारहबाट जाना या
 हँलना—(क) तितर-वितर होना। छिप्र-निप्र होना। (ख) नष्ट
 भ्रष्ट होना। बरबाद होना।
 ३ ऐसा निरर्थक जो धातक भी सिद्ध हो या हो सकता हो।
बारहबाना—पु० [सं० द्वादश वर्ण] [वि० बारहवानी] एक प्रकार का श्वरा
 और बहिया सोना।
 पु० [हि० बारह+बाना] मध्ययुगीन भारत में अच्छे सैनिक के पास
 रहनेवाले ये बारह हथियार—कटाार, कमान, चक्र, जमदाद, तमचा,
 तलवार, बहूक, बकतर, बाँस, बिछुआ और सोंग।
बारह-बाना—वि० [हि०] १ सूर्य के ममान चमक-दमकवाला। २ खरा
 और चोखा (सोना)।
बारह-बानी—वि० [म० द्वादश (आदित्य)] वर्ण, पा० बारस वर्ण]
 १ सूर्य के समान चमक-दमकवाला। बहुत चमकीला। २ (सोना)
 बिलकुल खरा, चोखा और बहिया। ३. जिसमें कोई छोट, दोष या
 विकार न हो। निर्मल और स्वच्छ। ४ जिसमें कोई कसर या द्रुति न
 हो। ठीक और पक्का।
स्त्री० १ सूर्य की सी चमक। २ आमा। चमक। दीर्ति।
 ३. बारह बाना सोना।
बारहबासा—पु० [हि० बारह+भास] वह पथ या गीन जिसमें बारह
 महीनों की प्राकृतिक विशेषताओं का वर्णन किसी विरही या विरहनी
 के मूँह से कराया गया हो।
बारहमासी—वि० [हि० बारह+मास] १. बारहों मास होनेवाला।

२. वर्ष के बारह महीनों में से अलग अलग प्रत्येक मास से सम्बन्ध रखनेवाला। जैसे—बारह-मासी चित्रावली—ऐसी चित्रावली जिसमें चैत, बैसाख, जेठ आदि महीनों की प्राकृतिक स्थिति और उनके ध्यान अर्थात् कल्पित स्वस्वों के अलग अलग चित्र हों। ३. सब ऋतुओं में फलने फूलनेवाला। ४. (काम या बात) जो बराबर या सदा हुआ करे।

बारह बकात—पु० [हि० बारह + अ० बकात] अरबी महीने रबी-उल-अव्वल की वे बारह तिथियाँ, जिनमें मुसलमानों के विद्वानों के अनुसार मूहम्मद साहब बीमार रहकर अन्त में पर-लोकवासी हुए थे।

बारहवाँ—वि० [हि० बारह] [स्त्री० बारहवाँ] संख्या में बारह के स्थान पर पड़नेवाला।
बारहसिया—पु० [हि० बारह + सीमा] एक प्रकार का बड़ा हिरन जो नील चार फुट ऊँचा और सान आठ फुट लंबा होता है। नर के सींगों में कई शाखाएँ निकलती हैं। इसी से इसे 'बारह सिगा' कहते हैं। सिंकार। साल-सोमर।

बारहवाँ—वि० [हि० बारह] जो बारह (अर्थात् बहुत से) लोगों में सबभेग प्रमल हो। जैसे—बारहवाँ मुँदा, बारहवाँ मिस्तर।
वि० बहादुर। बीर।
वि०—बारहवाँ।

बारहवाँ—अव्य० [फा०] अनेक बार। प्रायः १ बहुधा।
बारही—स्त्री०—बरही (जन्म से बारहवाँ दिन)।
बारहवाँ—पु० [हि० बारह] १ किसी मनुष्य के मरने के दिन से बारहवाँ दिन। बारहवाँ। इन्द्रसाह। २ बरही (जन्म से बारहवाँ दिन)।
बार—वि० [फा०] बरसनेवाला।

पु० नरगनेवाला पानी। वर्षा। मेंह।
बारा—वि० [स० बाल] छोटी अवस्थावाला। अल्पवयस्क। 'प्रौढ' या 'वयस्क' का विपर्याय। जैसे—नवहा बारा बच्चा।
पढ—बारे तें*—वात्स्यायन्या से ही। छोटे पन से ही।
प० बच्चा। बालक। लड़का।
पु० [हि० बाट + ईसा विनारा] १ वह कैंगनी जो बेलन के सिरे पर लगी रहती है और जिसके फिन्ने से बेलन फिलता है। २. जें से तार लीचने का काम।
पु० [हि० बारह] मूलक के बारहवें दिन होनेवाला मोज।
पु० [हि० वार] वह दूध जो चरवाहा चौपायों की बराने के बदले में आठवें दिन पाता है।
पु० [?] १. वह आदमी जो कूरै पर लडा होकर मरकर निकले हुए चरने या मोट का पानी उलटकर पिरता है। २. वह गीत जो चरस या मोट लीचनेवाला उक्त समय पर गाता है।

बारा बोरी—फि० वि०—बर-बोरी (बल-पूर्वक)।
बाराल—स्त्री०—बरात।
बाराली—पु०—बराती।
बारखरी—स्त्री०—बारखरी।
बाराली—वि० [फा०] वर्षा संबंधी। बरसाली।
स्त्री० १. ऐसी मूत्र जिसकी तिथाई केवल वर्षा के जल से होती हो। २. उक्त प्रकार की तिथाई से अर्थात् वर्षा के जल में होनेवाली फसल। ३. दे० 'बरसाली' (ओढ़ने का कपडा)।

बारहवाँ—पु०—बारहाह (सूबर)।
बारहवाँ—स्त्री०—बारहवाँ।
बारहवाँ कब्—स्त्री०—बारहवाँ कद।
बारि—पु०—बारि।
स्त्री०—बारि।
बारिक—पु० [अ० बैरक] ऐसे बंगलों या मकानों की श्रेणी या समूह जिनमें फौज के निवाही रहते हैं। छावनी।
बारिचर—पु० [हि० बारी + फा० गर] हथियारों पर बाट या सान रखने-वाला। सिकलीगर।
बारिचर—स्त्री०—बारिचर। उदा०—चिरउर सीहँ बारिचर तानी।
—जायसी।

बारिज—पु०—बारिज।
बारिद—पु०—बारिद।
बारिचर—पु० [अ० बारिचर] १ बावल। मेघ। २. एक वर्णवृत्त।
बारिद—पु०—बारिद।
बारिबाह—पु० [स० बारि + बाह] बादल।
बारिस—स्त्री० [फा०] [वि० बारिसी] १ वर्षा। पृष्ठि। २. वर्षा ऋतु। बरसत।
बारिस्टर—पु०—बैरिस्टर।

बारी—स्त्री० [स० अबार] १. किनारा। तट। २. किसी प्रकार के विस्तार का अनिमत सिरा। किनारा। हाथिया। ३. लेताँ, बगीची आदि के चारों ओर या किसी पाशवें से खडा किया जानेवाला घेरा। बाड़। ४. किसी प्रकार का उदा हुआ किनारा या घेरा। अवैठ। जैसे—कटोरी। या धाली की बारी। ५. किसी प्रकार का पना किनारा या सिरा। धार। बाड़।
स्त्री० [स० बाटी, बाटिका] १. वह स्थान जहाँ बहुत से पेड़ लगाये गये हो। जैसे—आम की बारी। २. उपवन। बगीचा। ३. बगीचे का धाली। बागवाला। उदा०—बारी आराम पुकारै, लिहै सबै कर पूछ।—जायसी। ४. लेताँ बगीचों आदि में अलग किया हुआ विभाग। थारी। ५. घर। मकान। (दे० 'बावी') ६. खिडकी। झरोखा। ७. जहाजों के ठहरने की जगह। बंदरगाह। ८. रास्ते में बिल्हरे हुए काँटे या शाख-अखाय। (पालकी डोनेवाले कहार)
पु० हिंदुओं में दोने, पतले आदि बनानेवाली एक जाति।
स्त्री० [फा० बारी] १. धोड़े धोड़े समय या रूढ़-रूढ़ कर होनेवाले कामों के सबब में, क्रम से हूर-बार आनेवाला अबसर या समय। पारी। जैसे—(क) पहले लड़के के बाद दूसरे लड़के की और दूसरे के बाद तीसरे की बारी आयगी।

फि० प्र०—आना।—पडना।—बचना।
२. उक्त प्रकार के क्रम में, वह आदमी या चीज जिसे नियमत. अबसर मिलता हो, जिसे काम करना पड़ता हो या जिसका उपयोग होता हो। जैसे—आज जिस सिपाही की पहरा देने की बारी है, वह बीमार है।
पढ—बारी बार: सै—कालक्रम में एक के पीछे एक करके। अपनी बारी आने पर। समय के नियत अंतर पर। जैसे—सब लोग एक साथ मत बोधो, बारी देने से बोली।
स्त्री० दे० 'बाली'।

वि० हि० 'बारा' का स्त्री० ।

पु० [अ०] ईश्वर । परमात्मा ।

बारीक—वि० [फा०] [भाव० बारीकी] ? जिसका तल बड़ा पतला हो। बहुत ही थोड़ी मोटाईवाला। महीन। जैसे—बारीक मकमल। २ जिसका धरा या माटाई बहुत ही कम हो। पतला। जैसे—बारीक तार, बारीक मूत। ३ अवेधाकृत बहुत ही छोटा। जैसे—बारीक असर, बारीक सिलारी। ४ जिसके अणु या कण बहुत ही छोटे या सूक्ष्म हो। जैसे—बारीक आटा। ५ (विचार) जिसमें भावों के बहुत ही सूक्ष्म अंतर हो। और इसी लिए जो सहसा सचकी समझ में न आता हो। जैसे—बारीक फरक, बारीक बात। ६ नुड। ७. अटिल।

बारीका—पु० [फा० बारीक] चित्रकारी में, रेखाओं खींचने को एक तरह की महीन कलम।

बारीक—स्त्री० [फा०] ? बारीक होने की अवस्था या भाव । सूक्ष्मता।
 कि० प्र०—निकालना।
 २ गुठना। ३ अटिलता।

बारं(दार)—पु० [हि० बारी पारी+फा० दार (प्रत्य०)] स्त्री० बारीधारी, भाव० बारीधारी। पारी पारी से पहारा देनेवाले पहरे-दारों में से हर एक।

बारीसा—पु०—बारीश (समुद्र)।

बायबी—स्त्री०—बाल्बी (मदिर)।

बायब—पु० [स० बायण] हाथी। (राज०)

बारक—पु० बार (द्वार)। उदा०—महि पूर्वज पाइअ नहि बार।
 —जायमी।

† पु० बालू।

बारक—स्त्री० बारूद।

बारूद—स्त्री० [स० बारूक (अग्नि) से फा०] ? गधक, सोरे, कोयल आदि का वह मिश्रण जो विस्फोटक होता है और अग्निशबाजी तथा तप, बन्दूक आदि चलाने के काम आता है।

पर्व—गोला बारूद—गुड में काम आनेवाली तप, बन्दूक, उनके गोले-गोलियाँ तथा अन्य आवश्यक सामग्री।

२ कोई ऐसा तन्त्र या पदार्थ जो जरा सा सहारा पाकर बहुत भोग्य परिणाम उत्पन्न करता या कर सकता हो।

बारूदखाना—पु० [फा० बारूदखान] वह स्थान जहाँ बारूद तैयार किया जाता अथवा सुरक्षित रखा जाता हो।

बारूद—वि० [फा०] ? बारूद-सम्बन्धी। २ जिसमें बारूद हो अथवा रखा या बिछाया गया हो। जैसे—बारूदी सुरंग।

बारे—अभ्य० [फा०] ? अतल। अलिखकार। २ अस्तु। स्त्री। ३ चलो, अच्छा हुआ। कुसल है कि। जैसे—मुझे तो बहुत चिंता हो रही थी, बारे आप आ गये। अब काम ही जायगा। उदा०—हर महीने में कुड़ाते थे मुझे फूल के दिन। बारे अब की तो मेरे डल गये मामूल के दिन।—रगोन।

पर्व—बारे में = (किसी के) प्रसंग, विषय, या सम्बन्ध में। विषय में। जैसे—उनके बारे में आपकी क्या राय है ?

बारोडा—पु०=बरोडा (द्वार)।

बारोमीटर—पु०=बॅरोमीटर।

बाहर—पु० [अ०] ? छोर। किनारा। २ भोती के किनारे पर की पट्टी। ३ सीमा। हृद।

बाहर—वि० [म० बहर+अणु] ? बहर देश में उत्पन्न। बहर देश का। २ बहर सम्बन्धी।

पु० [अ०] नाई। हुजूमत।

बाह—वि० [स० वह+अणु] ? बहि या मोंर सम्बन्धी। २ मोर के पंख का बना हुआ।

बाहस्पत्य—वि० [स० बृहस्पति+अणु] बृहस्पति-सम्बन्धी।

पु० ? रगित ज्योतिष में, साठ सबसरो में से एक। २ नास्तिक मून्वादिनों का लोकायत सम्प्रदाय जो गुरु बृहस्पति द्वारा प्रवर्तित माना गया है।

बाहिज—वि० [म० बाहिज+अणु] मयूर-सवयी। मोर का।

बालसा—पु० [फा० बाल्सा] एक औषधि जिसके बीज जोंरे की तरह के होते हैं। तृण-मरुका।

बाल—पु० [स० बाल (जीवनदाता)ः ष] स्त्री० बाला। ? यह जो जमी जयन या सहाना न हुआ हो। बच्चा। बालक।

पर्व—बाल-तात्त्विक=बाल-बच्चे। मतान। (मगला-भाषित) जैसे—

बाल-गोपाल मुष्ठी रहे। (अधोपार्थक) २ वह जिसे समझ न हो।

नागमज्ञ। ३ किसी पक्ष का बच्चा। ४. नेत्रबाल। मुग्धदाना।

वि० ? जो सवाना न हो। जो पूरी बाढ़ को न पहुँचा हो। २ जिमें अभी यथेष्ट ज्ञान या समझ न हो। ३ जिसका आरम, उदय या अभु हुग, अभी अधिक समय न हुआ हो। जैसे—बाल पदु, बाल रवि।

† स्त्री०—बाला (पुवती स्त्री)।

पु० [म०] ? जीव-जंतुओं के शरीर में, चमड़े में म ऊपर निपड़े हुग, वे सूक्ष्म तंतु जो रोमों से कुछ अधिक बड़े और मोटे होते तथा प्राय

रहते रहते हैं। केश। जैसे—दाही या मूँछ के बाल, सिर के बाल।

कि० प्र०—गिरना।—झड़ना।— निकलना।

पर्व—बाल बराबर या बाल भर= (क) बहुत ही कम या थोड़ा। (ख) बहुत ही पतल, महीन या सूक्ष्म।

मुहा०—महाते सत्य भी बाल तक न खसना— नाम की भी किसी प्रकार का आधात न लगना या कष्ट अथवा हानि न होना। उदा०—

नित उठि यही मनावति देवन, नृहात लसि जनि वार।—मूर। बाल न

बालकना—वे० नीचे 'बाल बोका न होना। उदा०—परे पहार न बाके

बाक।—जायसी। (किसी काम में) बाल रकाना=(कोई) काम

करने करने) बुद्धे ही जाना। बहुत वित्ती का अनुभव प्राप्त करना।

जैवे—मैंने भी सखारी नौकरी में ही बाल पकाये हैं। बाल

बनबाना—हजारत बनवाना। बाल बनाना—हूजापत बनाना।

बाल बोका न होना कुछ भी कष्ट या हानि न पहुँचाना। पूर्ण रूप में

सुरक्षित रहना। जैसे—निराकत रहो, तुम्हारा बाल तक (या भी)

बोका न होगा। (बृद्धता आदि से) बाल बाल बचाना—बहुत ही

थोड़े अन्तर या कसर के कारण चुपटना, सकट आदि से बच जाना या

सुरक्षित रह जाना। जैसे—मोटर का धक्का लगने (या मरने) से

बाल बाल बचाना।

२. कुछ विशिष्ट प्रकार की बीजों के तल में आधात आदि से चटकने दरकने, फटने आदि के कारण पड़नेवाली वह बहुत पतली धारी या रेखा जो देखने में धारी के बाल की तरह होती है। जैसे—इस भोती (या घोषी) में बाल आ गया है।

किं प्र०—आना।—पडना।

पु० [सं० बल्य या बाल्—तीन रसी की तौल] किसी बीज का बहुत थोड़ा अंश।

मुहा०—बाल भर भी फरक न होना—नाममात्र का भी अन्तर न होना।
स्त्री० कुछ अनाजों के पीसों के डठल का वह अग्र भाग जिसके चारों ओर दाने निकले या लगे रहते हैं। जैसे—जो या नेहूँ की बाल।

स्त्री० [देस०] एक प्रकार की मछली।

पु० [अ० बाल्] १ गेंद। २ दुरोपीय डग का नाच।

बालक—पु० [सं० बाल+कन्] [स्त्री० बालिका, भाव० बालकता] १ वह जिसकी अवस्था अभी अभी १५-१६ वर्ष से अधिक न हो। बच्चा। लड़का। २ पुत्र। बेटा। ३ वह जो किसी बात या विषय में अनजान या अवोध हो। ४ हाथी का बच्चा। उदा०—बालक मृगालिन ज्यो तीरि शरै सब काल, कठिन कराल त्पी अकाल दीह दुबकी।—केशव। ५ घोड़े का बच्चा। बछेड़ा। ६. केना। बाल। ७ हाथी की दुम। ८ कवन। ९ अँगुठा। १० नेत्र-बाला। गन्ध-बाला।

बालकता—स्त्री० [सं० बालक+तल्+टाप्] बालक होने की अवस्था या नाव।

बालकताई—स्त्री० [सं० बालकता+ई] [हिं० ईं (प्रत्य०)] १ बाल्या-बग्या, लड़कपन। २. बालकों की तरह ऐसा आचरण या व्यवहार जिनमें समझदारी कुछ भी न हो या बहुत कम हो। लड़कपन।

बालकपन—पु० [सं० बालक+हिं० पन (प्रत्य०)] १. बालक होने की अवस्था या नाव। २. बालकों की तरह की ना-ममझी।

बालक-प्रिया—स्त्री० [सं० ब० त०] १. केला। २. इद्रवाग्णी।

बालकौड—पु० [सं० मध्य० सं०] रामचरित्र मानस का प्रथम प्रकरण जिसमें मुख्य रूप से भगवान रामचन्द्र जी की बाललीला का वर्णन है।

बाल-काल—पु० [सं० ब० त०] बालक होने की अवस्था। बाल्या-वस्था। बचपन।

बालकी—स्त्री० [सं० बालक+डीप्] १ कन्या। लड़की। २. पुत्री। बेटी।

बालकृषि—पु० [सं० ब० त०] जू।

बाल-कृष्ण—पु० [सं० कर्म० सं०] बहुत छोटी या बाल्यावस्था के कृष्ण।

बाल-केलि—स्त्री० [सं० ब० त०] १. लड़कों का खेल। सिलवाड।

२. ऐसा काम जिसमें बहुत ही थोड़ी बुद्धि या धर्मिक लगती हो।

बाल-कीड़ा—स्त्री० [सं० ब० त०] जैसे खेल आदि जो छोटे छोटे बच्चे किया करते हैं। लड़कों के खेल और काम।

बालकँडी—पु० [?] ऐसा हाथी जिसमें कोई दोष हो।

बालकित्य—पु० [सं०] पुराणानुसार ब्रह्मा के रोएँ से उत्पन्न ऋषियों का एक वर्ग जिसका प्रत्येक ऋषि डीलडौल में अँगुठे के बराबर कहा गया है।

बालकौरा—पु० [फा०] एक प्रकार का रोग जिसमें सिर के बाल झड़ने लगते हैं।

बाल-बीपाल—पु० [सं० कर्म० सं०] १ बाल्यावस्था के कृष्ण। २. गृह-स्थ के बाल-बच्चे।

बाल-गोबिन्द—पु० [सं० कर्म० सं०] कृष्ण का बालक-स्वरूप। बाल-कृष्ण।

बाल-ग्रह—पु० [सं० ब० त०] ऐसे ही ग्रहों का एक वर्ग जो छोटे बच्चों के लिए घालक माने गये हैं। यथा—स्कन्द, स्कन्दापस्तरार, शकुनी, रेनीरी, पूतना, मधुपूतना, शीतपूतना, मूल-महिषा, नीर नैमेष।

बाल-बंदिता—स्त्री० [सं०] समीप में कर्नाटकी पड़ती की एक रागिनी।

बालबर—पु० [सं० कर्म० सं०] १. वह बालक जिसे अनेक प्रकार की सामाजिक सेवाएँ करने की शिक्षा मिली हो। (बॉय स्काउट) २ उक्त प्रकार के बालकों का दल या सघटन।

बालबर्द—पु० [सं० ब० त०] १ बालकों की बर्षा। बाल-भीड़ा। २ [ब० सं०] कानिकेय।

बालछड़—स्त्री० [सं०] जटामासी।

बालटो—स्त्री० [पुर्व० बाल्दे] डोल की तरह का पानी रखने का एक प्रसिद्ध पात्र।

बालटू—पु० [अ० बाल्ट] लोहे आदि का वह पेचदार छल्ला जो एक तरह की पेचदार कील पर चढ़ाया तथा कसा जाता है।

बाल-तंब—पु० [सं० ब० त०] बालकों के पालन पोषण की विद्या। कीमदार मूल्य।

बाल-तनय—पु० [सं० ब० सं०] लैर का पेड़।

बालमीनी—स्त्री० [सं० बाल] कन्या। कुमारी। उदा०—ज्यो नवजीवन गाड लसति गुनवती बालती।—नन्ददास।

बाल-तीडू—पु० [हिं० बाल+तीडना] एक तरह का फोड़ा जो धारी पर किसी बाल के टटने या तोड़ने विशेषतः जड़ से उखड़ने या उखाड़ने के फलस्वरूप होता है।

बालरु—पु० [सं० बलिबर्दे] बैल। उदा०—दास कबीर घर बालद जो लाया, नामदेव की छान छुड़वै।—मीर।

बालरु संज्ञा—पु० दे० 'माल् संज्ञा'।

बालधि—पु० [सं० बाल+धा। णि] दुम। पूँछ।

बालयो—स्त्री० [सं० बालधि] दुम। पूँछ।

बालना—सं० [सं० बालन] जलाना।

बाल-यवन्-त्रि० [सं० कर्म० सं०] १. जो बाल्य अवस्था प्रारम्भिक अवस्था में ही पक्क हो गया हो। २. समय से कुछ पहले पका हुआ।

बाल-यत्र—पु० [सं० ब० सं०] १. लैर का पेड़। २. जबासा।

बालपन—पु० [सं० बाल+हिं० पन (प्रत्य०)] १. बालक होने की अवस्था या नाव। २. बालकों का सा आचरण-व्यवहार। लड़कपन। ३. बालकों की सी मुसंता।

बाल-गुष्पी—स्त्री० [सं० ब० सं०+डीप्] जूही।

बाल-बच्चे—पु० [सं० बाल+हिं० बच्चा] लड़के-बाले। संतान। जौलदार।

बाल-बुद्धि—स्त्री० [सं० ब० त०] बालकों की-सी बुद्धि। छोटी बुद्धि। थोड़ी अक्ल।

वि० जिसकी बुद्धि बालकों की-सी हो।

बाल-बीज—पु० [सं० ब० सं०] देवनागरी लिपि। (मध्य-प्रदेश)
बाल-ब्रह्मचारी (रिनु)—पु० [सं० कर्म० सं०] [स्त्री० बाल-ब्रह्म-
 चारिणी] वह व्यक्ति जिसने बाल्यावस्था से ही ब्रह्मचर्य-व्रत धारण
 कर रखा हो और पूर्ण रूप से उसका पालन किया हो।
बाल-भोग—पु० [सं० प० त०] वह वैवाहिक या देवताओं के आगे संबन्ध
 रखा जाता है।
बाल-भ्रंशव्य—पु० [सं० घ० त०] रसाज।
बाल-भोज्य—पु० [सं० घ० त०] चना।
 वि० बालको या लड़को के लिए उपयुक्त (भाष्य पदार्थ)।
बालम—पु० [म० वल्लभ] ? स्त्री का पति। स्वामी। २ युवती
 या स्त्री की दृष्टि से वह व्यक्ति जिससे वह प्रणय करती हो। प्रेमी।
 प्रियतम।
बालम-वीर्य—पु० [हिं०] १. एक प्रकार का बकिया मोटा
 खीरा।
बालम चावल—पु० [हिं०] १ एक प्रकार का धान। २. उक्त धान
 का चावल।
बाल-मुकुट—पु० [म० कर्म० सं०] १. बाल्यावस्था के श्रीकृष्ण।
 बालकृष्ण। २. श्री कृष्ण की गिष्काल की वह मूर्ति जिसमें से घुंटनी
 के बल चलते हुए दिवाग्य जाते हैं।
बाल-मूलक—पु० [सं० कर्म० सं०] छोटी और कच्ची मूली, जो वैद्यक
 में कटु, उष्ण, तिक्त, तीक्ष्ण तथा रसास, अम्ल, और नेत्ररोग आदि
 की नासक, पाचक एवं बलवर्धक मानी गई है।
बालरत्ना—पु० [हिं० बाल (अनाज की) +रत्न] १. खेतों में
 बना हुआ वह ऊँचा चबूतरा जिस पर बैठकर गल्ले की देख-भाल की
 जाती है। २. खेत की फसल की रखवाली करने का पारिस्थिकिक या
 मजदूरी।
बाल-रस—पु० [सं० मध्य० सं०] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का
 औषध जो पारे, गंधक और सोनासक्तों से बनाया जाता है और बालकों
 के पुराने ज्वर, सर्माई, मूल आदि का नासक कहा गया है।
बालराज—पु० [सं० बाल/राज (सोभित होना) +राज] वैदूर्य मणि।
बाल-श्रीला—स्त्री० [सं० घ० त०] बालकों की क्रीड़ाएँ।
बालश्री—पु० बालमकीरा। उदा०—औ हिंदुजाना बालश्री खीरा।
 —जायसी।
बाल-विधवा—वि० [सं० कर्म० सं०] (स्त्री) जो बाल्यावस्था में
 विधवा हो गई हो।
बाल-विधु—पु० [सं० कर्म० सं०] अमावास्या के उपरांत निकलने-
 वाला नया चन्द्रमा। शुक्लपक्ष की द्वितीया का चन्द्रमा।
बाल-विवाह—पु० [सं० घ० त०] वह विवाह जो बाल्यावस्था में हुआ
 हो। छोटी अवस्था में होनेवाला विवाह।
बाल-धर्मज्ञ—पु० [सं० घ० त०] चामर। चैबर।
बालव्रत—पु० [सं० व० सं०] मञ्जुषी या मञ्जुशोध का एक नाम।
बालसङ्गता—पु० [म० बाल-सङ्गता] कुत्सी का एक पेश।
बाल-साक्षिय—पु० [सं० मध्य० सं०] सिरी पुस्तकें आदि जो मुख्यत
 बालकों का मनोविनोद करने के साथ ही उन्हें अभ्ययन की ओर प्रवृत्त
 करनेवाली भी हैं। (जुनेवाइल लिटररेचर)

बाल-सूर्य—पु० [सं० कर्म० सं०] १. उदयकाल के सूर्य। प्रातःकाल
 के उदये हुए सूर्य। २. वैदूर्य मणि।
बाला—स्त्री० [सं० बाल + टाप्] १. बारह वर्ष से सत्रह वर्ष तक की
 अवस्था की स्त्री। २. जवान स्त्री। युवती। ३. जोड़; पत्नी। भार्या।
 ४. औरत। स्त्री। ५. बहुत छोटी लकड़ी। बच्ची। ६. कन्या।
 पुत्री। ७. दस महाविद्याओं में से एक महाविद्या। ८. एक प्रकार
 का वर्षं वृक्ष जिसके प्रत्येक चरण में तीन रत्न और एक मूष होता
 है। ९. एक वर्ष की अवस्था की घो। १०. [बाल+अच्+टाप्]
 नारियल। ११. हलदी। १२. एक प्रकार की चमेली। १३. धा.
 कुआर। घृतकुमारी। १४. सुगन्धवाला। १५. नैर का पेड़।
 १६. चीनी ककड़ी। १७. गोदया नामक वृक्ष। १८. नीली कट-
 तरैया। १९. इलायची।
 वि० [सं० बाल+बालक] १. बालकों के समान अनजान और मोधा-
 सारा। निरच्छल और निष्कण्ट।
पर्व—**बाला-भोक्ता**—बहुत ही सीधा-सादा। सरल प्रकृति का।
 २. बच्चों की प्रकृति का। जैसे—तिर जाला, मुँह जाला। (कथा०)
 पु० [सं० बलय] ज्ञाप में पहनने का एक प्रकार का कप। (पुत्र०)
 पु० [?] एक प्रकार का कीड़ा जो मूँग की फसल के लिए बहुत धान-र
 होता है।
 वि० [फा०] १. जो मरने के बाद या उपर हो। जैसे—पुद्गलाग
 बोल-बाला ही, अर्थात् पुत्रुहारी बान सबके लिए मान्य हो।
पर्व—**बाला-बाला**—(क) इस प्रकार अलग अलग या उपर उपर
 जिसमें और लोगों की पता न चले। जैसे—पुग्गे धाला-बाला मारी
 बारंबार्द कर ली, और हम लोगों की पता भी न चले दिवा। (ग)
 अलग से या बाहर बाहर बिना परिचित या मुचित विधि। जैसे—व
 यहाँ आये भी और बाला-बाला चले भी गये। हम लोगों का पता ही
 न चला।
 २. सुबने अच्छा, बकिया या श्रेष्ठ। उदा०—पता नाच पंग, मीरा
 बाला जीवन्—बादरा। ३. औरत। पुत्रक।
मुहा०—(किसी को) **बाला बताना**—टाल-मटोल या बनावेवाजी
 करना।
बालाई—वि० [फा०] १. उपर का। ऊपरी। २. वेतन, कृति,
 व्यापार आदि से होनेवाली आय के अतिरिक्त या उसके मिश्र। ऊपरी।
 जैसे—बालाई आमदनी।
 स्त्री० मलार्ई।
बालाबाना—पु० [फा० बाला खानः] १. अष्टालिका। २. मकान का
 सबसे ऊपरवाला कमरा।
बालाप—पु० [सं०] १. शरीर के बाल का अणुल भाग। २. प्राचीन
 काल का एक परिमाण जो ६४ परमाणु या ८ रज के बराबर कहा गया
 है।
बालाव्य—पु० [म० बाल-आव्य, कर्म० सं०] बालसूर्य का तप। मनेरे
 की धूप।
बालावधी—स्त्री० [?] टोह लेने के लिए इधर-उधर घूमना-फिरना।
 उदा०—यह कह (नाजिम) कूर सिंह से बिदा हो बालावधी के वास्ते
 चला गया।—देवकीनन्दन खत्री।

शरणा-वस्त—यं० [फा०] [भाव० बालावस्ती] १. बलवान। जबर-
वस्त। २. प्रधान। मुख्य। ३. श्रेष्ठ। ४. ऊँचा।
शरणावस्ती—स्त्री० [फा०] १. जबरवस्ती। बल-प्रयोग। २. प्रधा-
नता। ३. श्रेष्ठता। ४. ऊँचाई। उच्चता।
शरणावित्य—यु० [सं० शरणा-अवित्य, कर्म० सं०] बालसूर्य।
शरणावसिनी—वि० [फा० बालावसिनी] १. मास्य। प्रतिष्ठित। २
सबसे अच्छा। जैसे—कम शरणा और शरणावसिनी।
यु० वमापति।
शरणापन—यु० [सं० बाल+हिं० पन] शारणावस्था। बचपन।
शरणा-बाला—अध्य० दे० 'शरणा' (फा०) के अन्तर्गत पद।
शरणाव्य—यु० [सं० बाल-आम्य, प० तं०] बच्चों को होनेवाले रोग।
बाल-रोग।
शरणाक—यु० [सं० बाल+अक, कर्म० सं०] १. प्रातःकाल का सूर्य।
बाल-सूर्य। २. कन्या राशि में स्थित सूर्य।
शरालि—यु० [सं० बल; इन्, शिल्ब] किष्किचा का एक प्रसिद्ध बानर
राजा जिसका बध भगवान राम ने किया था।
शरालिका—स्त्री० [सं० बाला+कन्+टाप्, ह्रस्व, इत्थ] १. छोटी
लड़की। कन्या। २. पुत्री। बेटी। ३. कान में पहनने की बाली।
४ छोटी इलायची। ५ बालू। रेत।
शरालि—वि० [अ० बालि] [भाव० बालिणी] (अव्यक्ति) जो
कानून की दृष्टि से युवावस्था प्राप्त कर चुका हो और फलतः जिसे
विधिक दृष्टि से कुछ विशिष्ट कार्य करने का अधिकार प्राप्त हो गया हो।
वयस्क।
शरालिनी—स्त्री० [सं० बाल+इनि; टोप्] अश्विनी नक्षत्र का एक
नाम।
शरालिमा (शर) —स्त्री० [सं० बाल+इमनिच्] बचपन। बाल्यावस्था।
शरालि—यु० [सं०/बाल्+इन्, बाटि/को+ङ, ङ-ल] [भाव०
बालित्य] १ बालक। शिशु। २. अबोध या नासमझ व्यक्ति।
वि० अबोध। नासमझ।
यु० [फा०] लकिया। सिरहाना।
शरालि—यु० [फा०] कोई भीज नामने में हाथ के पजे को भरपूर
फँसाने पर अँगुठे की नोक से लेकर कानी उगली की नोक तक की दूरी,
जो छलमम नौ इंच के बराबर बानी जाती है। बिस्ता।
शरालि—वि० [फा० शरालि; हिं० इया (प्रत्य०)] बहुत ही
छोटा या नाटा।
शरालि—यु० [सं० बालि+प्यब्] १. शारणावस्था। लडकपन।
२. बडे हो जाने पर भी छोटे बालकों की तरह अबोध और कम समझ
होने की अवस्था या भाव। इसकी गणना मानसिक रोगों में होती है।
(एग्नेशिया)
शरालि—वि० [सं० बालि] नासमझ। मूर्ख। उदा०—साही बल
बालिनी बिरोध रचूना सो।—मुजली।
शराली (शिर) —यु० [सं० शरणा+इनि] किष्किचा का एक प्रसिद्ध
बानर राजा जिसका बध भगवान राम ने किया था।
स्त्री० [सं० बालिका] कानों में पहनने का एक तरह का बूलाकार
आभूषण।

स्त्री० [वेश०] हथौड़े के आकार का कसेरों का एक औजार जिससे
के लोग बरतनों की कोर उभारते हैं।
पृथ्वी—बाल (अनाज की)।
वि० [हिं० 'बाल' का स्त्री० रूप] नया। उदा०—पीब कारण
पीली पड़ी बाला जेबन बाली बेश।—मीरी।
शराली-भुमार—यु० [सं०] अणव।
शरालीसबर—यु० [बाली?+हिं० सबरा] एक तरह का उपकरण
जिससे कसेरे बाली, परात आदि की कोर उभारते हैं।
शराली (लुगो) —स्त्री०—बालुकी।
शरालक—यु० [सं०/बल्+उण्+कन्] १. एलुआ नामक वृक्ष।
२. पनियाळू।
शरालका—स्त्री० [सं०/बल्+उण्+कन्+टाप्] १. रेत। बालू।
२. एक प्रकार का कपूर। ३. ककड़ी।
शरालका-यंत्र—यु० [सं० मध्य० सं०] औषध आदि फूँकने का वह यंत्र
जिसमें औषध को बालू मरी हाँडी में रखकर आग से चारों ओर से
ढँकते हैं। (बैद्यक)
शरालका-स्त्रेह—यु० [सं० मध्य० सं०] बालू से मँकने पर होनेवाला
पसीना।
शरालू—यु० [सं० बालुका] पत्थरों का वह बहुत ही महीन सूर्य जो
रेगिस्तानों तथा नदियों के तटी पर अव्यक्त मात्रा में पड़ा रहता है
तथा जो घूने, सीमेट आदि के साथ मिलाकर इमारतों में जोड़ाई के
काम आता है।
पथ—बालू की भीत—ऐसी चीज जो सीध ही नष्ट हो जाय अथवा
जिसका मरोसा न किया जा सके।
स्त्री० [वेश०] एक प्रकार की मछली जो दक्षिण भारत और लंका
के जलाशयों में पाई जाती है।
शरालुङ्गा—यु० [सं० बाल] बच्छा। बालक।
शरालुङ्गानी—स्त्री० [हिं० बालू+फा० ङानी] एक प्रकार की झँझरी-
दार दिबिया जिसमें लेब आदि की स्याही सुखाने के लिए बालू रखा
जाता है।
शरालुङ्ग—वि० [हिं० बालू+फा० दुर्द+ले गया] जो नदी के बालू
के नीचे दब गया हो।
यु० वह भूमि जिसकी उर्वरा शक्ति नदी की बाढ़ या बालू रहने के कारण
नष्ट हो गई हो।
शरालुङ्गाही—स्त्री० [हिं० बालू; शाही=अनुरूप] मँदे की बनी हुई
एक तरह की प्रसिद्ध मिठाई।
शरालुङ्ग—यु० [हिं०] एक प्रकार का छोटा मूबर जो नदी तट की
रेतीली भूमि में रहता और प्रायः रात के समय निकलकर पेड़ों की जड़ों
और मछलियाँ खाता है। कुछ लोग मूल से इसे 'मालू सुअर' भी कहते हैं।
शरालुङ्ग—यु० [सं० बाल+इन्, कर्म० सं०] सुसलपस की द्वितीया का
चन्द्रमा। हूज का चाँद।
शराले-भियाँ—यु०—भागी-भियाँ (महदुम गजमकी का भाजा)।
शराले—वि० [सं० बाल+इन्+एय] १. कोमल। मुडु। २. जो
बलि दिए जाने के योग्य हो। ३ जो बालुकी के लिए लाभदायक या
हितकर हो।

पु० १. बावल। २. गवा।

बालेष्ट—पु० [स० बाल-इष्ट, ष० त०] डेर।

बालोपचार—पु० [स० बाल-उपचार, ष० त०] बच्चों की चिकित्सा।

बालोपवीत—पु० [स० बाल-उपवीत, ष० त०] १. लँगोटी। २. जेठक।

बाल्दी—स्त्री०—बाल्दी।

बाय—वि० [स० बाल+यक्] १. बालक-सम्बन्धी। २. बचपन का।

जीतो—बाय्य अवस्था। ३. बालको का सा। जैसे—बाय्य-स्वभाव।

पु० १. बाल का भाव। २. बचपन। लडकपन।

बाध्यावस्था—स्त्री० [स० बाध्य-अवस्था, कर्म० स०] बालक होने की अवस्था में मालह-समग्र वर्ष तक की अवस्था। युवावस्था से पहले की अवस्था। लडकपन।

बाहूक—वि० [स० बहि+वृच्—अक] बल्लभ देश।

पु० १. बल्लभ देश का निवासी। २. बल्लभ का घोड़ा। ३. केसर।

४. हीरा।

बाहूना—पु० [स० बल्लभ] मियतम। उदा०—(क) बाहूना मैं बैरागिय हूँगी हो।—मीरा। (ख) बाहूना आव हमारे गेहरे।—कबीर।

बाहूक—वि०, पु०—बाहूक।

बाहूक—वि०, पु०—बाहूक।

पु०—बाहूलीक।

बाव—पु० [स० बाय्] १. बाय्। हवा। पवन। २. बात का शारीरिक प्रकोप। बाई। ३. अयान-बाय्। पाद।

क्रि० प्र०—निकलना।—रसना।

†पु० दे० 'बाव'।

बावजा—स्त्री०—बातपीत।

बावजूद—अव्य० [फा० बावजूद] १. यद्यपि। २. इतना होने पर भी।

बावटा—पु० [हि० बाव+हवा] झडा।

बावली—स्त्री०—बावली (जलाशय)।

बावन—वि० [स० द्वि प्रचावाद; पा० द्विपणासा; प्रा० विपण्णा] जो गिनती में पचास से दो अधिक हो।

पव—बावन तोले पाव रसी—हर तरह से ठीक या पुर।

विशेष—कहते हैं कि मध्ययुग के रसायनिकों का विश्वास था कि सारा रसायन वहीं है जो बावन तोले तबि में पाव रसी मिलाया जाय तो वह सब सोना हो जाता है। इसी आधार पर यह पद बना है।

बावनबीर—बहुत बडा बहादुर या बालाक।

पु० उक्त की सूचक सख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—५२।

†पु०—बामन।

बावनवाँ—वि० [हि० बावन+वाँ (प्रत्य०)] [स्त्री० बावनवाी] क्रम, सख्या आदि के विचार से ५२ के स्थान पर पढ़नेवाला।

बावना—वि०—बौना (बामन)।

स०—बावना (हल चलाना)।

बावनी—स्त्री० [हि० बावन] १. एक ही तरह की ५२ चीजों का वर्ण या समूह। जैसे—शिवा-बावनी। २. बहुत से लोगों का जमावडा या समूह। ३. मध्य-युग में वह वर्ण या समूहाय जो होली के अवसर

पर नाच-गाने आदि की व्यवस्था करता था। ४. ठडोलों या मसखरों का डल या वर्ण। ५. ताप के कोट-पीस के खेल में वह स्थिति अब कोई पक्ष तेरहों हाथ बनाता है और जबकि दूसरा पक्ष एक भी हाथ नहीं बना पाता। इसमें ५२ बाजियों की जीत मानी जाती है।

बावभक्त—स्त्री० [हि० बाव=बाय्+अनु० भक्त] बाय् के प्रकोप के कारण होनेवाला पागलपन। सिद्धिपन। झक।

बावधर—पु० [फा०] भक्ती। विश्वास।

वि०, पु०—बावरा (बावला)।

बावधो—पु० [फा०] रसोइया। पाचक।

बावधोखाना—पु० [फा० बावधोखाना] रसोई-घर।

बावरा—वि० [हि० बाव=बाय्+रा (प्रत्य०)] १. शरीर में बाय् या बात का प्रकोप उत्पन्न करनेवाला। उदा०—काहू को बैंगन बावरा काहू को बैंगन पत्य।—कहावत। २. दे० 'बावला'।

बावरी—स्त्री०—बावली (जलाशय)।

वि० हि० 'बावरा' का स्त्री०।

स्त्री० [हि० बावरा+पागल] सभाट् अक्षर के समय की एक प्रसिद्ध मन्त्र महिला जिनके नाम पर एक सप्रदाय भी चला था।

बावल—पु० [स० बाय्] ओठी। अन्ध। (डिवाल)

बावला—वि० [स० बाय्, प्रा० बाडल] बाय् के प्रकोप के कारण जिसका मस्तिष्क विकृत हो गया हो, अर्थात् पागल। विधिपन।

बावलपान—पु० [हि० बावला+पान (प्रत्य०)] पागलपन। सिद्धि-पन। झक।

बावली—स्त्री० [स० बाय्+की पाली (प्रत्य०)] १. चौड़े मुँह का एक प्रकार का कूआँ या जलाशय जिसमें पानी तक पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ बनी हो। उदा०—मजनु की प्यास बहु हुआती, लेला कुछ बावली नहीं थी।—कोई शायर। २. ऐसा छोटा तालवा जिसके किनारे सीढ़ियाँ बनी हो। ३. हजामत का एक प्रकार जिसमें मांसे से लेकर चाँदी के पास तक के बाल चार पाँच अगुल की चौड़ाई में मुँह दिये जाते हैं।

बावनी—वि०, पु०—बायरी।

बाविसवा—वि० [फा० बाविन्द.] रूढ़नेवाला।

पु० निवासी।

बावधर—पु०—बखर (घर)। उदा०—सहज सुभाई बावधर ल्याई।—गोरखनाथ।

बावकल—पु० [स०] १. योद्धा। वीर। २. एक प्राचीन ऋषि। ३. एक उपनिषद। ४. एक दानव।

बाय्य—पु० [स० बा+य, पुक् आगम] माय। बाय्य।

बाय्यकल—वि० [स० मध्य० स०] (शब्द) जो आँसुओं से आँसु बहने के कारण मुँह से स्पृष्ट न निकल रहा हो।

बाय्यद्विन्द—पु०—बाय्यद्वर।

बाय्यद्वर—पु० [स० नृ० त०] आँसु में बहनेवाले आँसुको की धारा।

बाय्य-मोचन—पु० [य० त०] आँसु बहाना। रोग।

बाय्य-प्रुष्टि—स्त्री० [स० ष० त०] आँसु से आँसुओं की धारा बहना।

बाय्य-सलिल—पु० [स० ष० त०] अश्रु-जल। आँसु।

बावरीध—पु० [स० बाय्य-अवृ, ष० त०] अश्रु-जल। आँसु।

बाष्पाकुल—वि० [सं० बाष्प-आकुल, तु०, त०] जो रोता-रोता विकल हो रहा हो।

बाष्पी—स्त्री० [सं० बाष्प+ङीष्] हिण्प्रती।

बासंतिक—वि० [सं० बासंतिक] १ बसंतऋतु-सम्बन्धी। २. बसंत ऋतु में होनेवाला।

बासंत—स्त्री० [सं० बासन्ती] १ अड़सा। बासा। २ माघकी लता। ३. दे० 'बासन्ती'।

वि० [हि० बसंत] पीले रंग का। पीला।

बास—पुं० [सं० बास] १. रहने की क्रिया या भाव। निवास। २. रहने का स्थान। निवास-स्थान। ३. कपड़ा। वस्त्र। ४ एक प्रकार का छन्द।

स्त्री० १. गन्ध। २. महक। २ बहुल ही छोटा या थोड़ा अणु। जैसे—उसमें मल-मनसत की बास तक नहीं है।

रमी० [सं० बासि] १ अग्नि। आग। २. एक प्रकार का वस्त्र। ३ पत्थर, लोह आदि के टुकड़ों जो तोप के गोलों में भरकर फेंके जाते हैं।

†स्त्री०—बासना।

पुं० [सं० बासर] दिन।

पुं० [दशा०] एक प्रकार का बड़ा वृक्ष जिसकी लकड़ी लाल रंग की और बहुत मजबूत होती है। बिपरसा।

*पुं० [सं० बसन] वस्त्र। उदा०—मंद मंद हास बदन बासि (बास) में दुरावे।—अलबेली अलि।

बासकी—पुं० [सं० वासुकि] साँप। उदा०—देवर्षा बासक मेधिया जी।—मीरत।

†पुं०—बासक।

स्त्री० [फा०] जैमाई।

बासक-सज्जा—स्त्री०—बासक-सज्जा (नायिका)।

बासठ—वि० [सं० द्विषट्ठि; प्रा० द्वाषट्ठि बासट्ठि] जो गिनती में साठ और दो हो। इकीस का हूना।

बासठवा—वि० [सं० द्विषट्ठिन, हिं० बासठ+वा (प्रत्य०)] [स्त्री० बासठवी] क्रय या गिनती के विचार से बासठ के स्थान पर पड़नेवाला।

जैसे—बासठवी बर्ष-गाँठ।

बासठेवा—पुं० [सं० वासिदेव] अग्नि। आग। (त्रिगल)

पुं०—वासुदेव।

बासना—पुं०—वस्त्र।

बासना—स्त्री० [सं० बास] १. गंध। महक। २. विशेषतः हल्की गंध। सं०—सुगंधित करना।

स्त्री०—बासना।

बासकूल—पुं० [हिं० बास+कूल] १. एक प्रकार का धान। २. उन्नत धान का बावल।

बासन्ती—पुं० [हिं० बास+महक+मती (प्रत्य०)] १ एक प्रकार का धान। २. उन्नत धान का बावल जो बहुत बढ़िया और सुगंधित होता है।

बासर—पुं० [सं० बासर] १. दिन। २ प्रातःकाल। सवेरा। ३. प्रातःकाल गाये जानेवाले, प्रभाती, मैरवी आदि गीत या मजन।

बासव—पुं०—बासव (वृक्ष)।

बासवी—पुं० [सं० बासवि] अर्जुन। (हिं०)

बासवी विद्या—पुं० [सं० बासवी विद्या] पूर्व विद्या जो इन्द्र की विद्या मानी जाती है।

बासली—पुं० [सं० बास] वस्त्र।

बासा—पुं० [सं० बास=निवास] १. रहने की जगह। निवास-स्थान। २. बसेरा उदा०—मानस पत्त लेहि फिर बासा।—जायसी। ३. वह स्थान जहाँ दाम देने पर पकी-पकाई रसोई, (बावल, दाल, रोटी आदि) खाने को मिलती हो। भोजनालय।

पुं० [सं० बासक] १ अड़सा। २. एक प्रकार की घास।

पुं० [दशा०] एक प्रकार का शिकारी पक्षी।

†पुं० दे० 'पिया-बास'।

पुं० [सं० बास+कपडा] कपड़ा। वस्त्र। उदा०—मद मद हास बदन, बासि में दुरावे।—अलबेली अलि।

†पुं०—बासा।

बासिग—पुं०—बासुकि (नाग)।

बासित—पुं० कृ०—बासित।

बासित—पुं०—बासा (शिकारी पक्षी)।

बासिष्ठी—स्त्री० [सं० बासिष्ठी] ब्रह्मस नदी का एक नाम जो वशिष्ठ जी के तप प्रभाव से उत्पन्न मानी गई है।

बासी—वि० [हिं० बास+दिन+ई (प्रत्य०)] १ (स्राघ पर्याय) जो एक या कई दिन पहले का बना हुआ हो। जैसे—बासी रोटी। २. (फल आदि) जो एक या अनेक दिन पहले देव (या पौधे) से तोड़ा गया हो। 'ताजा' का विपर्याय।

विशेष—बासी अन्न में कुछ नू सी आने लगती है, और बासी फल कुछ मुरझा से जाते हैं।

पद्य—बासी-तिबासी। (देखें)

३ जो कुछ समय तक रखा या यों ही पड़ा रहा हो। जैसे—(क) रात का रखा हुआ बासी पानी। (ख) बासी मूँह।

पद्य—बासी मूँह=विना कुछ सोचे-पिचे हुए।

४. सूखा या कुम्हलाया हुआ। जो हटा-भरा न हो। जैसे—बासी फूल।

मुहा०—बासी कढ़ी में उबाला जाना=बहुत समय बीत जाने पर किसी काम के लिए उल्लूकतापूर्वक प्रयत्न होना।

पुं० १ धार्मिक दृष्टि से कुछ विशिष्ट अवसरों पर पहले दिन का बना हुआ बासी भोजन दूसरे दिन खाना।

२. दे० 'बासीबीर'।

वि०—बासी (निवासी)।

बासी-तिबासी—वि० [हिं० बास+तीन+बासी] दो-तीन दिन का रखा हुआ। जो बासी से भी कुछ और अधिक बिगड़ चुका हो। जैसे—बासी-तिबासी रोटी।

बासु—स्त्री०—बास।

बासुकी—स्त्री०—वासुकि।

बासु—पुं०—वासुकि (नाग)।

बासुर—स्त्री० [अ०] बवासीर।

बासीची—स्त्री०—बासीची (रवड़ी)।

बाह्य—पुं० [सं० वन्तः अण्] १ बकरे से मबध रखनेवाला। २ बकरे से प्राप्त होनेवाला।

बाह्य—पुं० [हिं० बाह्या] जेत जोतने की किया। गेत की जोताई।
†पुं०—बाट।

†पुं०—बाह्य (प्रवाह)।

बाह्य—पुं० [सं० बाह्य] [स्त्री० बाह्यी] १. डोने या ले चलनेवाला कट्टार। उदा०—सजी बाह्यी सभी सुलाई—रघुपरा। २ कट्टार।

बाह्यी—स्त्री० [देश०] यह पिचडी जो मसाला और कुहूबरी डालकर पकाई गई हो।

बाह्य—पुं० [देश०] एक प्रकार का बहुत ऊँचा वृक्ष जिसके पत्ते जाड़े के दिनों में झड़ जाते हैं। सफ़टा।

†पुं०—बाहन।

बाह्या—सं० [सं० बहन] १ बहन करना। २ उठा या ढीकर ले चलना। ३ (अस्त्र-शस्त्र) चलाया या फेंकना। उदा०—बाह्यत अस्त्र नृपति पर आये।—पद्माकर। ३. (जानवर या सवारी) हलकना। ४. बहना या धारण करना। ५. उत्सर्गणिय, कर्तव्य आदि के रूप में अपने ऊपर लेना। अंगीकरण करना। ६ (मंत्र या जमीन) हल चलाकर जोतना। ७ (गौ, बकरी, मंस आदि) नर में मिलाकर गमिन करना।

अ० इधर-उधर घूमना। मटकना। उदा०—मूले मरम दुनी कत बाहो।—कबीर।

बाह्यनी—स्त्री० [सं० बाहिनी] सेना। फौज।

बाह्य—त्रि० वि० [का०] एक दूसरे के प्रति या साथ। आपस में। परस्पर।

बाह्य—अव्य० [सं० बहिस् का दूसरा रूप बाहिर] [वि० बाहरी] १ किसी क्षेत्र, घेरे, विस्तार आदि की सीमा से परे। किसी परिधि से कुछ अलग, दूर या हटकर। 'अदर' और 'भीतर' का विपर्याय। जैसे—यह सामान कमरे के बाहर रख दो।

पर्य—**बाह्य-बाह्य**—विना किसी क्षेत्र, घेरे या विस्तार के अन्दर आये हुए। विना अन्तर्मुख हुए। जैसे—वे पटने से लौटे तो, पर बाह्य-बाह्य लखनाउ चले गये।

२ किसी देश या स्थान की सीमा से अलग या दूर, अथवा किसी दूसरे देश या स्थान में। जैसे—महीने में दस बारह दिन तो उन्हे वीरे पर बाहर ही रहना पड़ता है। ३ किसी प्रकार के अधिक्षेप, मर्यादा, संपर्क आदि से निम्न या रहित। अलग। जैसे—हम आपसे किसी बात में बाहर नहीं हैं, अर्थात् आप जो कहेगें या चाहेगें, हम वही करेंगे। ४. बगैरे। सिवा। (बब०)

†पुं० [हिं० बाह्या] वह आदमी जो कुराँ की जगत पर लडा रहकर मोट का पानी नाली में उन्डटा या गिराता है।

बाह्यजामी—पुं० [सं० बाह्यजामी] ईश्वर का समुण रूप। राम, कृष्ण इत्यादि अवतार।

बाह्यरत्नी—वि०—बाहरी।

बाहरी—वि० [हिं० बाह्यः ई (प्रत्य०)] १ बाहर की ओर का। बाहर-वाला। 'भीतर' का विपर्याय। २ जो अपने देश, वर्ग या समाज का न हो। पराया और निम्न। जैसे—बाहरी आदमी। ३. जो ऊपर

या केवल बाहर से देखने भर को हो। जिसके अन्दर कुछ तथ्य न हो। जैसे—कोरो बाहरी डाठ-बाट। ४. विलकुल अलग या निम्न। उदा०—पर्य हींही रे, हो तो पचने से बाहरी।—देव।

बाह्य—पुं० [डि०] अजगर।

बाह्य-जरी—अव्य० [हिं० बाह्य+जरीना] हाथ में हाथ मिलाये हुए।

बाह्य—पुं० [हिं० बाह्या] यह रस्मी जिससे नाव का ढाँढ बंधा रहता है।

†पुं० [हिं० बहना] १ पानी बहने की नहर या नाली। २. वह छेद जिसमें से होकर कोइला का तेल या रस बहकर नीचे गिरता है।

बाह्य—अव्य० [सं० बाह्य] ऊपर से। बाह्य से देखने में।

वि०—बाह्य (बाहरी)।

बाह्यनी—वि०, स्त्री०—बाह्यनी।

बाह्यी—अव्य०—बाह्य।

बाह्यी—वि०—बाहरी।

स्त्री० [हिं० बाह्या] बाह्ये की किया या माव।

स्त्री० [सं० बाह्य] पहाड़ की मुजा या किसी पस की लवाई।

बाह्य—पुं०—बाह्य-लोक

बाह्य—स्त्री० [सं० √बाष्+ कृ, ह-आदेश] मुजा। बोट।

बाह्य—पुं० [सं०] १ राजा नल का उस समय का नाम जब वे ज्योत्थ्या के राजा के सारथी थे। २ नकुल का एक नाम।

वि०—बाह्यक।

बाह्य-कुम्भ—वि० [ब० सं०] जिसके हाथ कुब्जे या टेढ़े हाँ। लूला।

बाह्यगुण्य—पुं० [सं० बहुगुण+प्यञ्] १ बहु-गुण होने की अवस्था या भाव। बहुत से गुणों का होना।

बाह्य—पुं० [सं० बाह्य/जन्+ङ] क्षत्रिय जिनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के हाथ में मानी जाती है।

वि० बाह्य से उत्पन्न या निकला हुआ।

बाह्यजन्म—वि० [सं० बहुजन+जन्म] जो बहुजन अर्थात् बहुत बड़े जन-समाज में फैला अथवा उसमें सबध रहता हो। बहु-जन सबधों।

बाह्यटा—पुं० [सं० बाह्य] बाह्य पर पहनने का बाजूबंद (पहनना)।

बाह्यकर्ता—अ०—बहुरता।

बाह्यङि—वि० अव्य०—बहुङि।

बाह्य-भाग—पुं० [ब० सं०] चमड़े या लोहे आदि का वह दस्ताना जो युद्ध में हाथों की रक्षा के लिए पहना जाता है।

बाह्यवती (सिन्धु)—पुं० [सं० बहु-वत्, व० सं०, + अण् (स्वायं) + इनि] धर।

बाहुवा—स्त्री० [सं०] १ महाभारत के अनुसार एक नदी। २ राजा परीक्षित की पत्नी।

बाहु-वास—पुं० [सं० कर्म० सं०] दानो बाहो को मिलाकर बनाया हुआ वह घेरा जिसमें किसी को लेकर आलिंगन करते हैं। मूज-भाग।

बाहु-प्रलंब—वि० [सं० व० सं०] जिसकी बाँहे बहुत लम्बी हो। आजाज-बाहु।

बाहु-नल—पुं० [सं० प० तं०] पराक्रम। बहादुरी।

बाहु-भूषण—पुं० [सं० प० तं०] मूज-बंद नाम का गहना।

बाहु-मूल—पुं० [सं० तं०] कंधे और बाह्य का जोड़।

बाहु-युद्ध—पुं० [प० तं०] कुस्ती।

बाहु-बोधी—(बिन्) —पु० [सं० बाहु/पृथ् + भिनि] कुस्ती लड़नेवाला । पहलवान ।

बाहुरना—अ०=बहुरना ।

बाहुक्य—पु० [सं० बहुक्य+क्यञ्] बहुक्यता ।

बाहुल—पु० [सं० बहुल+अण्] १. युद्ध के समय हाथ में पहनने का एक उपकरण जिससे हाथ की रक्षा होती थी । दस्ताना । २. कातिक मार । ३. अग्नि । आग ।

बाहुल-बोध—पु० [सं० ब० सं०] मोर ।

बाहुल्य—पु० [सं० बहुल+क्यञ्] बहुल होने की अवस्था या मात्र । बहुतायत । अधिकता । ज्यादाती ।

बाहु-शिकोट—पु० [सं० ब० सं०] ताल ठोकना ।

बाहु-शिकी (किन्) —पु० [सं० बाहु/वाल्+गिनि] १. शिव । २. भोम । ३. भूतराष्ट्र का एक पुत्र । ४. एक दानव ।

बाहुज, ब-—पु० [सं० ब० सं०] बाहु में होनेवाला एक प्रकार का बाहु रोग जिसमें बहुत पीड़ा होती है ।

बाहु-भूय—पु० [प० बहुभूत+प्यञ्] बहुभूत होने की अवस्था या मात्र । बहुतनी बातों को सुनकर प्राप्त की हुई जानकारी ।

बाहु संभव—पु० [सं० ब० सं०] क्षत्रिय, जिनकी उत्पत्ति ब्रह्मा की बाहु से मानी जाती है ।

बाहु-शुभ्रां—पु०=सहस्रबाहु ।

बाहु—स्त्री०=बाहु ।

ब ह्य—पु०= ब्राह्मण ।

ब ह्य—पु० [सं० बहिस् । यञ्, टि-ल्योण्] १. बाहरी । बाहर का । २. प्रस्तुत विषय से भिन्न । ३. किसी मूल से अलग या भिन्न । जैसे—बाह्य प्रमाण । ४. समस्त पदों के अंत में, क्षेत्र, परिधि, सीमा के बाहर रहने या होनेवाला । जैसे—आलम्बन बाह्य=स्वयं आलम्बन में न होकर अन्य से अलग या बाहर का । ५. किसी घिरे हुए स्थान में न होकर उससे अलग और दूरे हुए स्थान में होनेवाला । जैसे—बाह्य खेल ।

पु० [सं० बाह्य] १. मार डेनेवाला पशु । जैसे—बैल आदि । २. यान । सवारी ।

बाह्य-उपबर्था—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] जैनियों के अनुसार तपस्या का एक भेद जिसमें अनशन, औनोदय, वृत्तिसंश्लेष, रसत्याग, कायकलेश और कीनता ये छ बातें होती हैं ।

बाह्य-मार्ग—पु० [सं० कर्म० सं०] पारे का एक संस्कार । (बैदक)

बाह्य-नाभ—पु० [सं० कर्म० सं०] किसी का नाम और ठिकाना जो उसे भेजे जानेवाले पत्र के ऊपर लिखा जाता है । ठिकाना । पता । (गुप्तस)

बाह्यमभिह—पु० [सं० बाह्यमानम् +टञ्—इङ्] वह जिसके नाम पर और पते से पत्र या और कोई चीज भेजी गई हो । (एजेंसी)

बाह्य-मन्त्रे—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] नाटक का परदा । यन्त्रिका ।

बाह्यम-—पु० [सं० कर्म० सं०] वह जो किसी चीज के बिलकुल अन्तिम सिरे पर स्थित हो । विस्तार के अन्तिम भाग का अंग । (एकस्त्रीय)

बाह्य-प्रवसन—पु० [सं० कर्म० सं०] व्याकरण में, कंड से लघु ध्वनि उत्पन्न करने के उपरान्त होनेवाली क्रिया या प्रवृत्त । इसके बांध और अघोष दो भेद हैं ।

बाह्य-वलि—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] आलिमन, चुबन आदि कार्य जो बाहरी रति के विशेष रूप माने गये हैं ।

बाह्य-रूप—पु० [सं० कर्म० सं०] ऊपरी या बाहरी रूप । दिखाऊ रूप ।

बाह्यवात—वि० [सं० बाह्य/वश् (निवास)+गिनि, उप० सं०] बस्ती के बाहर रहनेवाला । पु० बाह्यल ।

बाह्य-विद्येति—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें शरीर के किसी स्थान में सूजन और कोंठे की सी पीड़ा होती है । इसमें रोगी के मुँह अथवा मुँदा से मवाद भी निकलनी है ।

बाह्य-भूति—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] प्राणायाम का एक भेद जिसमें अन्दर से निकलते हुए श्वास को धीरे-धीरे रोकते हैं ।

बाह्यबल—पु० [सं० बाह्य अचल, कर्म० सं०] बस्ती के बाहर का स्थान । (आउटकर्टेस)

बाह्यतिर—वि० [सं०] बाहर और अन्दर दोनों का । जैसे—बाह्यतर शुद्धि । कि० वि० बाहर और अन्दर दोनों ओर ।

बाह्य/अचर—पु०=बाह्य/आचर ।

बाह्य/आचर—पु० [सं० बाह्य-आचर, कर्म० सं०] वह आचरण विशेषतः धार्मिक या नैतिक आचरण जो केवल दूसरों को दिलाने के लिए ही, शूद्र मन में न हो । आशम्बर । इकोसला ।

बाह्याम्बतर—पु० [सं० इ० सं०] प्राणायाम का एक भेद जिसमें आते और जाते हुए श्वास को कुछ-कुछ रोकते रहते हैं ।

बाह्याम्बतराक्षेप (विन्) —पु० [सं० बाह्याम्बतर-आक्षेप, प० सं०, + इनि, दीर्घ, न-लोप] प्राणायाम का एक भेद जिसमें श्वास बाहु की भीतर से बाहर निकलते समय निकलने न देकर उल्टे लीटाते और अन्दर जाने के समय उसको बाहर रोकते हैं ।

बाह्योद्वेग—स्त्री० [सं० बाह्य-इद्विग, कर्म० सं०] अज्ञ, कान, नाक जीम और त्वचा ये पाँच इन्द्रियाँ जिससे बाहरी विषयों का ज्ञान होता है ।

ब.हलीह—पु०=बाहलीक ।

बिष्णु—पु०=व्याप्य ।

कि० प्र०—छोड़ना ।=बोलना ।

बिजना—पु०=व्यजन ।

बिटा—पु०=वृत्त ।

बिब—पु० [सं० विट्] १. पानी की बूँद । २. वीर्य की बूद जिससे गर्भाधान होता है । ३. दोनों बीबी के बीच का स्थान । भ्रू-मध्य । ४. माथे पर स्थानीय जानेवाली बिंदी । ५. दे० 'विट्' । पु० [?] हुक्हा । बर । (राज०)

बिबक—वि०=विदक ।

बिबना—सं० [सं० बन्दन्] १. बंदना करना । २. ध्यान करना । उदा०—स्वद बन्दीरे अवयसु बद् बन्दी ।—गोरक्षनाथ । ३. प्रशंसा करना । उदा०—कोई निन्दी कोई बिन्दी म्हे तो गुण गोविन्द ।—मीरा ।

बिबा—पु० [सं० विट्] १. माथे पर का गोल और बड़ा टीका । मेदा । मुँदा । बड़ी बिंदी । २. उजल आकार का कोई चिह्न ।

†स्त्री०=मुँदा (गोपी) ।

बिंदी—स्त्री० [सं० विट्] १. शूष्य का सूचक चिह्न । सितार । सुग्रा ।

२. उक्त आकार का छोटा टीका जो माथे पर लगाया जाता है। ३ इस प्रकार का कोई चिह्न या पदार्थ। ४. दे० 'टिडुली'।

विद्-पुं० [सं०/विद् (विभक्त करना) +उ] १ पानी या किसी तरल पदार्थ की बूँद। कतर। २ किसी पदार्थ का बहुत ही छोटा कण। ३ लेख आदि की बिंदी। घूँस। सिकर। ४ बहुत ही छोटा गोलाकार अकन या चिह्न। ५. ज्यामिति मे, उक्त प्रकार का वह अकन या चिह्न जिसके विमाय न हो सकते हो। ६. लेखन आदि मे उक्त प्रकार की वह बिंदी जो अनुस्वार की सूचक होनी है। ७ प्रमेय या प्रेमिका के शरीर प र दंत गडाकर किया जानेवाला क्षत। दंत-अत। ८ मोही ओर ललाट के बीच-बीच का स्थान। ९ नाटक मे अर्थ-प्रकृति की पाँच स्थितियों मे से दूसरी स्थिति जिसमे कोई गौण घटना उसी प्रकार बढकर प्रधान या मुख्य घटना के समान जान पडने लगती है, जिस प्रकार पानी पर गिरी हुई तेल की बूँद फैलकर उस पर छा जाती है। १० योग मे अनाहत नाद के प्रकाश का अस्थक रूप।

†स्त्री०—बँदी (महना)।

विद्बुक्—पुं० [सं० विद्बु+कन्] १ बूँद। २. बिंदी।

विद्बुहित—पुं० कृ० [सं० विद्बुक्+इतच्] जिस पर विद्बु लगे या लगाये गये हो।

विद्बु-चित्र—पुं० [सं० तृ० तं०] एक प्रकार का चित्तीदार हिरन।

विद्बु-तन्त्र—पुं० [सं० ष० तं०] १ चौसर आदि खेलने की विसात और पासा। २ रेंद।

विद्बु-वेध—पुं० [सं० ष० तं०] विध।

विद्बु-पत्र—पुं० [सं० मध्य० सं०] भोजपत्र।

विद्बु-कड—पुं० [उपमा० सं०] मोती।

विद्बुरी—स्त्री०—बिंदी।

विद्बु-रेखा—पुं० [सं० ब० सं०, +कप्] १ अनुस्वार। २ एक तरह का पत्ती।

विद्बु-रेखा—स्त्री० [सं० ष० सं०] वह रेखा जो विन्दुओं के योग से बनी हो।
जैसे . . .

विद्बुल—स्त्री० [सं० विद्बु] रिपयो के माथे का टीका या बिंदी।

विद्बुली—स्त्री०—बिंदी।

विद्बुवासर—पुं० [सं० ष० तं०] वह दिन जिसमे स्त्री को गर्भावान हुआ हो।

विद्बाधन—पुं०—बदायन।

विध—पुं०—विध्याचल।

विधना—अ० [सं० वेधन] १ बीधना का अकर्मक रूप। बीधा जाना। छेदा जाना। विद्ध होना। २. अटकना। उलझना। फँसना।

विधनाना—स० [हिं० विधना का प्रे०] बीधने का काम किसी से कराना।
विधाना—स०—विधनाना।

†अ०—विधना।

विधिना—अ० [हिं० बीधना +ईया (प्रत्य०)] वह जो मोती बीधने का काम करता हो। मोती मे छेद करनेवाला कारीगर।

बि—पुं० [सं०/बी (गमन)]+कन्, नि० सिद्धि] १ किसी आकृति की वह सलक जो किसी पारदर्शक पदार्थ मे दिखाई पडती है। २. पर-छाही। ३. प्रतिमूर्ति। ४ चंद्रमा या सूर्य का मडल। ५. कोई गोलकार चिह्न। मडल। ६. सूय। ७. आभास। झलक। ८ कर्मडल। ९. गिरगिट। १० कूँदर नामक फल। ११. एक प्रकार का छेद।

१२ साहित्य मे, शब्द का लक्षणा या व्यञ्जना शक्ति से निकलनेवाला अर्थ। संकेत का विपर्यय। १३ चंद्रमा, सूर्य या किसी ग्रह का चाली के आकार का वह बिपटा रूप जो साधारणत देखने पर सामने रहता है।

बिबक—पुं० [सं० बिम्ब+कन्] १ चंद्रमा या सूर्य का मडल। २. प्राचीन काल का एक प्रकार का बाला। ३ कुदरू। ४. साँचा।

बिबक-ग्रहण—पुं० म० प०तं०] माया विज्ञान और मनोविज्ञान मे वह बौद्धिक या मानसिक प्रक्रिया जिससे कोई शब्द या बात सुनकर अविभा साहित से निकलनेवाले साधारण अर्थ से निम्न कोई विशेष अर्थ या आशय ग्रहण किया जाता है।

बिब-प्रतिबिबक-भाव—पुं० [सं० बिब-प्रतिबिब, इ० सं०, बिबक-प्रतिबिब-भाव प० तं०] वह अवस्था जिसमे दो वस्तुएँ एक दूसरी की छाया या बिब से युक्त और उसके प्रतिबिब के रूप मे ह्रांती या जान पडती हैं।

बिबक-कल—पुं० [सं० कर्म० मं०] कूँदरू।

बिब-सार—पुं०—बिबिसार।

बिबा—पुं० [सं० बिम्ब +अच्+टाप्] १ कुदरू। २. प्रतिच्छाया। बिब। ३ चंद्रा या सूर्य का मडल।

बिबित—सु० कृ० [सं० बिम्बक+इतच्] जिस पर बिब वा प्रतिबिब पडा हो।

बिबिसार—पुं० [सं०] मगध का एक प्र.चीन राजा जो अजातशत्रु के पिता और गौतमबुद्ध के समकालीन थे।

बिब—पुं० [सं०] सुगुरी का पेड।

बिबो (बी)—इ०—वि० [सं० बिब-ओष्ठ, ब० सं०, पररूप] [स्त्री० बिबो-ठ्ठी] जिसके होठ कुदरू की तरह लाल हो।

पु० कुदरू जैसा लाल होठ।

बि—वि० [सं० ङि० बि० म० वे०] एक और एक। दो।

बिअ*—वि० [सं० द्वि] दो

बिअभूता—वि० [सं० विवाहित] १ जिसके साथ विवाह-नशब हुआ हो। विवाहित वा विवाहिता। २ विवाह-सम्बन्धी। विवाह का।

बिआजा—पुं०—व्याज।

बिआब—स्त्री०—व्याधि।

बिआधि—स्त्री०—व्याधि।

बिआना—स० [हिं० व्याह, सं० विज्ञान] १ स्त्री का सतान प्रसव करना। उदा०—आ पूरु की एक नारी एक माय बिआया।—कवीर।

२ विशेषत मादा पशुओं का बच्चे को जन्म देना।

बिआपी—वि०—व्यापी।

बिआपना—अ० [सं० व्यापन] व्याप्त होना।

बिआपार—वि०, स्त्री०—बिआपार।

बिआसा—पुं०—व्यास।

बिआहना—सं०—व्याहना।

बिआम—पुं०—विद्योम।

बिआमोम—वि०—विद्योमोम।

बिआट—वि०—बिआट।

बिआना—अ० [सं० विक्रय] १ किसी पदार्थ का द्रव्य के बदले मे किसी को

दिया जाना ।। मूल्य लेकर दिया जाना । बेचा जाना । विक्री होना । २. किसी का पूर्ण अनुयायी, अनुचर या दास होना ।

संयो० कि०—जाना ।

विकारय—ए०=१ विक्रमादित्य । २. विक्रम ।

विकरारा—वि०=बेकरार ।

वि०=विकराल ।

विकला—वि०=विकल ।

विकलाही—स्त्री०=विकलता ।

विकलाना—अ० [सं० विकल] विकल या व्याकुल होना । बेचैन होना ।

सं० विकल या व्याकुल करना । बेचैन करना ।

विकलाना—स० [हि० विकलना का प्रे०] बेचने का काम दूसरे से कराना ।

दूसरे को बेचने से प्रवृत्त करना ।

विकलाना—ए० [हि० विकलना+बाला] वह जो कोई चीज बेचता हो । बेचनेवाला । विक्रेता ।

विकसना—अ० [सं० विकसन] १ विकसित होना । खिलना । २. बहुत प्रसन्न होना ।

विकसना—स० [सं० विकसन] १. विकसित करना । खिलाना । २. बहुत प्रसन्न करना ।

†अ०=विकसना ।

विकाज—वि० [हि० विकलना+आज (प्रत्य०)] (वस्तु) जो विक्री के लिए रखी गई हो ।

विकाना।—सं०=विकवाना ।

†अ०=विकना ।

विकारा—ए० [सं० विक+र (करना)+घञ्, विकार] १ विकार । खराबी । २ बीमारी । रोग । ३. ऐब । खराबी । दोष । ४. बुरा काम । दुष्कर्म ।

विकारा—वि० [सं० विकार+इति] १ जिसका रूप विगड़कर और का अर्थ हो गया हो । विकारयुक्त । विकृत । २ विकार उत्पन्न करनेवाला ।

स्त्री० [सं० विकृत या वक्र] एक प्रकार की टेढ़ी पाई जो अंको आदि के आगे सख्या या मान आदि सूचित करने के लिए लगाई जाती है । लिखने में रुपये-पैसे या मन-सेर आदि का चिह्न, जिसका रूप) होता है ।

विकास—ए०=विकास ।

विकासना—सं० [सं० विकास] विकसित करना ।

†अ०=विकसित होना ।

विकुट—ए०=वैकट ।

विकुटा—वि० [हि० वि=दो+कुटा प्रत्य०] [स्त्री० विकुटी] दूसरा । द्वितीय । उदा०—इकुटी विकुटी विकुटी संधि ।—गोरखनाथ ।

विक्रम—ए०=विक्र ।

विक्रमाजीत—ए०=विक्रमादित्य ।

विक्रमी—ए० [सं० विक्रम] वह जिसमें विक्रम हो । पराक्रमी

वि०=वैक्रमीय ।

विक्रं—स्त्री० [सं० विक्रय] १. विकने का भाव । २. बेचने की क्रिया या भाव ।

पह—विक्री-कट्टा—दुकानदारों की होनेवाली विक्री और उससे प्राप्त होनेवाला धन ।

३. वस्तुओं के विक्र जाने पर प्राप्त होनेवाला धन ।

विक्रं-कर—ए० [सं०] यह राजकीय कर जो विजैता बेची जानेवाली वस्तु के दाम के अतिरिक्त भेता से वसूल करता भी तत्पश्चात् राज्य सरकार को देता है । (सेल्स टैक्स)

विक्रं—वि०=विक्राज ।

विक्रं—ए० [सं० विक्र] जहर ।

मुहा०—विक्र बोलना=बहुत बड़े अनर्थ का सूत्र-पात करना । विक्र बोलना=बहुत ही कटु और लगनी हुई बात कहना ।

विक्रस—वि० [सं० विपय] विपय । जहर । गरल ।

†वि०=विपय ।

विक्रव—ए०=विपय ।

अव्य०=विपय में । सम्बन्ध में ।

विक्रयो—वि०=विपयो ।

विकरना—अ० [सं० विकरीण] १. किसी चीज के कणों, रेशों, इकाइयों आदि का अधिक क्षेत्र में फैल जाना ।

संयो० कि०—जाना ।

२ एक-साथ, साथ-साथ या सम्युक्त न होना । अलग-अलग या दूर-दूर होना । जैसे—परिवार के सदस्यों का विक्रना ।

विकराना—सं०=विकरना ।

विकरारा—ए० [हि० विकरना] १ विकरे हुए होने की अवस्था या भाव ।

२. आपस में होनेवाली फूट ।

विकरारा—ए०=विषाद ।

विक्रान—ए० [सं० विषाण] १ पशुओं के सींग । २. सिंगी नाम का बाजा ।

विक्रिया—स्त्री०=विषय-यासना ।

विक्रं—अव्य०, ए०=विषय ।

विकरना—सं० [सं० विकरना का सं०] १. कणों, रेशों आदि के रूप में होनेवाली वस्तु के कणों को अधिक विस्तृत क्षेत्र में यो ही अथवा किसी विशेष दम से गिराना या फैलाना । जैसे—संत में बीज विकरना ।

२. वस्तुओं को बिना किसी सिलसिले के फेंकाकर रखना । जैसे—

पुस्तकें विकरना ।

विक्री—अव्य० [सं० विषय] किसी विषय में । संबंध में । उदा०—जगत

विक्री कोई काम न सखी ।—गुरु गोविंदसिंह ।

ए० १. =विषय । २. =विषय-यासना ।

विक्रींझा—ए० [हि० विक्र-विपय] ज्वारा की जाति की एक प्रकार की बड़ी धास जो बारहों महीने हरी रहती है । काका मुच्छ ।

विषयं—स्त्री० [सं० वि+पय] दुर्गम । बद्द्व ।

विप्रां—ए०=वींग ।

विप्राङ्गना—अ० [सं० विकार, हि० विप्राङ्ग] १. किसी तत्व या पदार्थ के गुण, प्रकृति, रूप आदि में ऐसा विकार या खराबी होना जिससे उसकी उपयोगिता, क्रियाशीलता या महत्व कम हो जाय या न रह जाय । प्रकृत स्थिति से भिन्नकर विस्तृत या खराब होना । जैसे—(क) बासी होने या सड़ने के कारण लाख पदार्थ का विप्राङ्गना । (ख) पुरजान टूटने के कारण कल या यंत्र विप्राङ्गना । २. किसी क्रिया के होते रहने या किसी चीज के

बनने के समय उसमें कोई ऐसी खराबी आना कि काम ठीक या पूरा न उतरे। जैसे—(क) वकाने के समय भोजन या सिलाई के समय कुस्ता या कोट बिगड़ना। (ख) गवाही देते समय गवाह बिगड़ना। ३. अच्छी या ठीक अवस्था से खराब या बुरी स्थिति में आना। जैसे—(क) जरा सी भूल से फिटा-कराया काम बिगड़ना। (ख) घर की स्थिति या देश की शासन-अव्यवस्था बिगड़ना। ४. आपस के व्यवहार में ऐसी खराबी या दोष आना कि सुगमतापूर्वक निर्वाह न हो सके। जैसे—(क) शासन से पीड़ित होने पर प्रजा का बिगड़ना। (ख) माइयो में आपस में बिगड़ना। ५. आचरण, प्रवृत्ति, स्वभाव आदि में ऐसा दोष या विकार उत्पन्न होना जो नीति, न्याय, सम्यता आदि के विरुद्ध समझा जाता हो। उचित पथ से भ्रष्ट होना। जैसे—(क) गलियों के लड़कों के साथ रहने-गहने सुहारी जवान भी बिगड़ चली है। (ख) बुरी सगति में अच्छा आदमी भी बिगड़ जाता है। ६. व्यक्तियों के संबंध में, किसी पर क्रुद्ध या नाराज होकर उसे कड़ी बातें सुनाना। जैसे—आज भाई साहब हम लोगों पर बिगड़े थे। ७. पशुओं आदि के संबंध में, क्रुद्ध होने के कारण नियंत्रण या दबा से बाहर होकर उपद्रव या खराबी करना। जैसे—जुगुं हाथें छोड़ (या बैल) जब बिगड़ जाते हैं, तब गाड़ी (या हल) तक तोंड डालते हैं। ८. सामर्थ्य के संबंध में, बुरी तरह से व्यर्थ व्यर्थ होना। जैसे—मुम्हारे फेर में हमारे दस रुपये बिगड़ गये।

बिगड़ने-दिल—पु० [हि० बिगड़ना + फा० दिल] १. उष या चिकट स्वभाववाला। २. जिनकी प्रवृत्ति प्रायः कुमार्ग की ओर रहती हो। †३. बात बात पर बिगड़ने या नाराज होनेवाला व्यक्तित्व।

बिगड़ने-लि—वि० [हि० बिगड़ना + ऐल (प्रत्य०)] १. जो बात-बात में और बहुत जल्दी बिगड़ने या नाराज होने लगता हो। हर बात में नोच करनेवाला। नोचो स्वभाव का। २. जो प्रायः कुमार्ग की ओर प्रवृत्त रहता हो। ३. जिद्दी। हठी। (स्व०)

बिगत—पु० [?] प्रकार। मॉति। तरह। उदा०—बिगत बिगत के नाम परप्यो यक भाटी के नडे।—कबीर।

*वि० - विगत।

बिगारा—अव्य०—ध्रगैर (विना)।

बिगरना—अ०—बिगड़ना।

बिगराइल—वि०—बिगड़ल।

बिगरायल—वि०—बिगड़ल।

बिगरसना—अ०—बिक्सना।

बिगरसाना—स०—बिक्साना (बिक्सित करना)।

†अ० - बिक्सना (बिक्सित होना)।

बिगहरी—पु०—बीधा (जमीन की नाप)।

बिगही—स्त्री० [देव०] खेत की खपारी। बरही।

बिगाइ—पु० [हि० बिगड़ना] १. बिगड़ने की क्रिया या भाव। विकार। २. ऐब। खराबी। दोष। ३. पारस्परिक संबंध बिगड़े हुए होने की अवस्था या भाव। आपस में होनेवाला द्वेष और वैमनस्य। ४. मुकसान। हानि।

बिगाड़ना—स० [हि० बिगड़ना का स०] १. ऐसी क्रिया करना जिससे किसी काम, चीज या बान में किसी तरह की खराबी हो। इस प्रकार बिगड़त करना कि अच्छी या ठीक स्थिति में न रह जाय। जैसे—असाव-

धानी से कोई काम (या संबंध) बिगाड़ना। २. कोई काम करते समय उधमे ऐसा दोष या विकार आने देना कि वह अनिष्ट या उपयुक्त रूप में न आ सके। जैसे—(क) दरजी ने तुम्हारा कोट बिगाड़ दिया। (ख) चित्रकार ने यहाँ हरा रंग देकर चित्र बिगाड़ दिया। ३. अच्छी दशा या अवस्था से बुरी दशा या अवस्था में लाना। जैसे—किसी को कुमार्ग पर लगाकर उसका घर बिगाड़ना। ४. किसी को उचित या निवृत्त मार्ग से हटाकर अद्विष्ट या द्वेषित मार्ग पर लगाना या ले जाना। जैसे—(क) बुरी आदतें सिखाकर लड़को को बिगाड़ना। (ख) उलटी-सीधी बातें कहकर किसी का मित्राज बिगाड़ना। (ग) डरा-धमका कर किसी का गवाह बिगाड़ना। ५. कुमारी अथवा स्त्री के संबंध में, कौमार्य या सतीत्व नष्ट करना। ६. स्था-वृत्ति के संबंध में, व्यर्थ नष्ट या व्यय करना। जैसे—आज मेले में हम भी पाँच रुपए बिगाड़ आये।

बिगाना—वि०—वेगाना (पराया)।

बिगारा—पु०—बिगाड़।

†स्त्री०—वेगार।

बिगारना—अ० [स० विकीर्ण] १. चाने ओर फैलाना। २. सरना या समाना। उदा०—जूयुं बिगारि प्रतिविव सयाना, उदिक कुम विगणना।—कबीर।

†स० - बिगाड़ना।

बिगारि—स्त्री०—वेगार।

बिगारी—स्त्री०—वेगारी।

पु०—वेगार।

बिग सा—पु०—बिफास।

बिगासना—स०—बिगालना।

बिगाहा—पु०—बिगाहा।

बिगरा—अव्य०—बगैर।

बिगुन—वि० [स० बिगुण] जिसमें कोई दोष न हो। गुण रहित।

वि० - वेगुन (बिना रस्ती का)।

बिगुरचन—स्त्री०—बिगुचन।

बिगुरचना—अ० [स० बिकुचन] असमजस कठिनाता, या सकोच में पड़ना।

बिगुरधा—पु० [दश०] मध्यम का एक प्रकार का हृषिकार।

बिगुचन—स्त्री०—बिगुचन।

बिगुल—पु० [अ०] १. पातधायक का एक प्रकार की तुम्हरी जो प्रायः सैनिकों को एकत्र करने अथवा इसी प्रकार का कोई और काम करने के लिए सकेत रूप में बजाई जाती है। २. उक्त बाज का शब्द।

बिगुवर—पु० [अ०] फौज में बिगुल बजा देनेवाला।

बिगुचन—स्त्री० [स० बिकुचन अथवा बिबेचन] १. वह अवस्था जिसमें मनुष्य किरतव्य-विगुल हो जाता है। असमजस। २. कठिनाता। बिक्कत। अड़बन।

बिगुचना—अ० [स० बिकुचन] १. कठिनाता या बिक्कत में पड़ना। २. असमजस में पड़ना। ३. पकड़ा या दबाया जाना।

†स० - घर दबाता। दबोचता।

बिगुलना—अ०—बिगुलना।

स० [स० बिगत] १. नष्ट करना। २. बिगाड़ना।

* अ० १. नष्ट होना। २. विकृत होना। विगड़ जाना। ३. दुर्दसाग्रस्त होना। उदा०—मैं मेरी करि बहुत विगुता।—कबीर।

† अ० १. दे० 'विपुषता'। २. दे० 'विगुषता'।

विचोद, विचोद—पुं० [हि० विगोना] १. नाश। बरबादी। २. खराबी। बुराई।

विगोना—स० [स० विगोपन] १. खराब या नष्ट करना। विगाड़ना। २. दुखयोग करना। ३. छिपाना। बुराना। ४. तंग, रिक या परेशान करना। ५. बोझ देना। ६. बहुकाना। ७. व्यतीत करना। जिताना। विगाड़ा—पुं० [स० विगाषा] आर्या छंद का एक मंत्र जिसे 'उद्गीति' भी कहते हैं। इसके पहले पद में १२, दूसरे में १५, तीसरे में १२ और चौथे में १८ मात्राएँ होती हैं।

विघ्नाना—पुं०=विघ्नान।

विघ्नह—पुं० [सं० विघह] १. शरीर। देह। २. लग्ना। लग्नाई। ३. विघ्न। ४. दे० 'विघ्नह'।

विघटना—स० [सं० विघटन] १. विघटित करना। तोड़ना-फोड़ना। २. नष्ट करना।

अ० विघटित होना। नष्ट या भ्रष्ट होना।

विघ्नाना—पुं०=विघ्न।

विघ्नहरन—वि० [स० विघ्नहरण] बाधा या विघ्न हरनेवाला। बाधा हूर करनेवाला।

पु०=गम्यं।

विघार—पुं०=बाध।

विघा—कि० वि०=बीच।

विचकना—अ० [सं० विकचन ?] (मूह) इस प्रकार कुछ देखा होना जिससे अप्रसन्नता, अरुचि आदि सुविष्ट हो। जैसे—मुझे देखते ही उनका मूह विचक जाता है।

विचकाना—स० [हि० विचकना का स०] १. कोई चीज देखकर उसके प्रति अपनी अप्रसन्नता, अरुचि आदि प्रकट करते हुए मूह कुछ टेढ़ा करना। जैसे—किसी को देखकर या किसी चीज के अग्रिय स्वाद के कारण मूह विचकाना। २. किसी का उग्रहास करने या मूह चिकाने के लिए उसकी तरह कुछ विकृत करने मूह बनाना। किसी को चिकाने के लिए विगाड़कर उसी की तरह मूह बनाना।

विचकनाना—वि०=विचकण।

विचरना—अ० [सं० विचरण] १. इधर-उधर घूमना। चलना-फिरना। विचरण करना। २. यात्रा या सफर करना।

विचरनाना—अ० [सं० विचरन] १. विचलित होना। इधर-उधर हटना। २. कहकर मुकुरना। ३. साहस या हिम्मत छोड़ना। हतोत्साह होना। ४. सम्बन्ध छोड़कर अलग होना।

† अ० १.—विचलना (फिसलना)। २. विचड़ना। ३. मचलना।

विचला—वि० [हि० बीच+ला (प्रत्य०)] [स्त्री० विचली] १. बीच में होने या पड़नेवाला। २. जो न बहुत बढ़ा हो और न बहुत छोटा। ३. मध्यम श्रेणी का।

विचलाना—स० [सं० विचलन] १. विचलित करना। छिपाना। २. उचित मार्ग से इधर-उधर करना। बहुकाना। ३. तितर-बितर करना। बिखेरना। ४. छिड़ाना।

४—१७

विचवाई—पुं० [हि० बीच+वाई (प्रत्य०)] १. बीच-बचाव करनेवाला। २. मध्यस्थ।

स्त्री० दो आश्रयियों का हागड़ा निपटाने के लिए की जानेवाली मध्य-स्थता।

विचवाना—पुं०=विचवाई।

विचवाली—स्त्री०=विचवाई (मध्यस्थता)।

विचार—पुं०=विचार।

विचारना—अ० [सं० विचार+ना (प्रत्य०)] १. विचार करना।

सोचना। गौर करना। २. प्रश्न करना। पुछना।

विचारा—वि० [स्त्री० विचारी]—बेचारा।

विचारी—पुं० [हि० विचारना] विचार करनेवाला। विचारशील।

विचाल—पुं० [सं० विचाल] अंतर। फरक।

† स्त्री०=बेचाल।

विचुरना—स० [सं० विचयन] १. चयन करना। चुनना। २. कपास से जिनोले अलग करना।

सं० [सं० विचयन] चूण या टुकड़े-टुकड़े करना।

विचिंत—वि० [सं० विचिंतस्] १. मुग्धित। बेहोश। अचेत। २. जिसकी बुद्धि ठिकाने न रह गई हो। बड़-सुहास।

विचौलिया—पुं०=विचौली।

विचौली—पुं० [हि० बीच] ओली (प्रत्य०)। १. वह व्यक्ति जो उत्पन्न-दक से मात्र खरीदकर और बीच में कुछ नफा खाकर दुकानदारों आदि के हाथ बेचता हो। वह व्यक्ति जो किसी प्रकार का देन चुकानेवाले, से बसूल करके मूल अधिकारी या स्वामी को देता हो और इस प्रकार बीच में स्वयं भी कुछ लाभ करता हो। (मिथिल मैन; उनत दोगो अर्पो मे) जैसे—जमींदार, जागीरदार आदि सरकार और किसानों के बीच में रहकर विचौली का काम करते थे।

विचौली—वि० [हि० बीच+औही (प्रत्य०)] बीच का। बीचवाला।

विच्छा—पुं० [हि० बीच] १. बीच की हुरी या जगह। २. बीच का फाल या समय। ३. अंतर। फरक।

† पु० [स्त्री० विच्छी] विच्छू।

विच्छीरि—स्त्री०=विच्छीरि।

विच्छी—स्त्री० [हि०] विच्छू। मादा विच्छू।

विच्छू—पुं० [सं० वृषिक] [स्त्री० विच्छी] १. एक प्रसिद्ध छोटा जड़हीला जनावर जो प्रायः परम देशों में अंधेरे स्थानों में (जैसे—लकड़ियों या पत्तों के नीचे, बिलों में) रहता है। २. एक प्रकार की घास जो शरीर से छू जाने पर जलन उत्पन्न करती है। ३. काकतुड़ी का पीया या फल।

विच्छेषा—पुं०=विशेष।

विच्छेदन—स्त्री० [हि० विच्छेदन] १. विच्छेदने की किया या भाव।

२. विच्छेद हुए होने की अवस्था या दशा। विच्छोह। विद्योग।

विच्छेदना—अ० [सं० विच्छेदन] १. साध रहनेवाले दो व्यक्तियों का एक दूसरे से अलग होना। जुदा होना। अलग होना। २. प्रेमी और प्रेमिका का किसी कारण इस प्रकार एक दूसरे से अलग होना कि दोनों का मन दुःखी हो। ३. साथी के अलग होने या छू जाने के कारण अकेला पड़ जाना।

विचल—स्त्री० [अ० विचल] १ पुरानी अच्छी बात को विगाड़नेवाली चीजें खराब बात। २ खराबी। दोष। ३ कष्ट। तकलीफ। ४ विपत्ति। संकट। ५ अत्याचार। जुल्म। ६ दुर्दशा।
कि० प्र०—मोगना।—सहना।

विछाना—अ० [हि० विछाना का अ०] १ (विस्तर आदि का) विछाना जाना। फैलाया जाना। २. (छोटी छोटी चीजों का) दूर तक फैलाया या बिखरा जाना। जैसे—जमीन पर फूलों का विछाना। ३. (व्यक्ति को) झारे-बीटे जाने के कारण जमीन पर गिर या लेट जाना। जैसे—बगों में बहुत से आदमी बिछ गये (या लागे बिछ गई)।

विछलना—अ०—फिसलना।

विछलाना—अ०—फिसलाना।

विछलाना—स० [हि० विछाना का प्र०] विछाने का काम दूसरे से कराना। दूसरे को विछाने में प्रवृत्त करना।

विछोना—पु०—विछोना।

विछाना—स० [स० विस्तण] १. (विस्तर या कंपने आदि का) जमीन पर उतनी दूर तक फैलाना जितनी दूर तक फैल सके। जैसे—विछोना विछोना। २. विछाना। कोई चीज या चीजें जमीन पर दूर तक फैलाना या बिखराना। जैसे—फाग पर फूल विछाना। ३. इस प्रकार भारतीय पीठना कि आदमी जमीन पर गिरकर पड़े या लेट जाय।

विछोपने—स्त्री०—विछोपना (विछोना)।

विछोपनी—पु०—विछोनी।

विछोपनी—स०—विछोपनी।

विछोपनी—स्त्री० [हि० विच्छू+इयां (श्रव्य०)] पैर की उँगलियों में पहनने को एक प्रकार का छल्ला।

विछोपनी—पि०—विछोपनी।

विछुआ—पु० [हि० विच्छू] १ पैर में पहनने का एक गहना। २ एक प्रकार का छोटा टेढ़ा छुरा जिससे प्रायः प्रहार करते हैं। ३. अग्निपासन।

४ भास आदि का नुसल।

विछुइन—स्त्री०—विछुइन।

विछुइन—अ०—विछुइन।

विछुरता—पु० [हि० विछुइना+अता (श्रव्य०)] १ विछुइनेवाला। २ विछुडा हुआ।

विछुरता—अ०—विछुइना।

विछुरति—स्त्री०—विछुइना।

विछुआ—पु०—विछुइना।

विछुआ—वि० [हि० विछुइना] विछुडा हुआ। जो विछुड गया हो।

†पु०—विछोड़ (विपयोग)। उदा०—जल में ह अगिन सो जान विछुआ।—जासो।

विछोई—पि०, पु० दै०—'विछुना'।

विछोड़ा—पु० [हि० विछुइना] १ विछुइने की क्रिया या भाव। अलग अलग होना। २ विछुइने हुए होने की अवस्था। बिछोह। विपयोग।

विछोड़ा—पु०—विछोह (विपयोग)।

विछोड़ा—पु०—विछोह (विपयोग)। उदा०—निज विछोया कठिन है, जिन सीजों करता।

विछोड़ा—पु०—विछोड़ा (विपयोग)।

विछोही—पि० [हि० विछोह] १ जिससे कोई विछुड गया हो। २ जो विछोह या विपयोग के फलस्वरूप दुःखी हो।

विछोना—पु०—विछोना।

विछोना—पु० [हि० विछाना] १ दरी, गद्दी, चादर आदि ऐसे कपड़े को बँटने या लेटने के लिए जमीन पर बिछाये जाते हैं। विछानना। विस्तर। कि० प्र०—विछाना।

२. बिछो था बिछाई हुई ऐसी वस्तुओं का विस्तार जिस पर लेटा जाय। जैसे—कटो का बिछोना, फूलों का बिछोना, पत्थरों का बिछोना।

स०—विछाना।

बिचोई—वि०—बिचयी।

बिचउर—पु०—बिचोरा (नीनु)।

बिचइ—स्त्री० [?] तलवार। खग। (हि०)

बिचोई—पु० [हि० बिचइ] बड़ी तलवार।

बिचन—पु० [फा० बिचन] जन्ता का बध। बल्ले-आम।

†पु०—बिचन (पक्षी)।

†वि०—बिचन (जन-रहित)।

बिचना—पु० [म० ब्यचन] पक्षी।

वि० [स० बिचन] १ एकान्त (स्थान)। २ जिसके माथ कोई न ही। अकेला।

बिचनी—स्त्री० [स० बिचन] हिमाश्रय पर रहनेवाली एक जंगली जाति।

बिचय—स्त्री०—बिचय।

बिचयपट—पु० [स० बिचयपट] वह बड़ा घटा जो मन्दिरों में लटकाने रहता है।

बिचयसार—पु० [स०] एक प्रकार का बहुत बड़ा जंगली पेड़ जिसके पत्ते पीपल के पत्तों से कुछ छोटे होते हैं। उस पेड़ की लकड़ी डोल आदि बनाने के काम आती है।

बिचरी—स्त्री०—बिचरी।

बिचली—स्त्री० [सि० बिचु, प्र० बिचु] १ एक प्रसिद्ध प्राकृतिक द्रव्य जो तंत्रमात्रे के मूल-भूत अणुओं या कणों में महिह और महिह अथवा आत्मिक और ब्रह्मात्मिक रूपों में वर्तमान रहती है और जो संघर्ष तथा रासायनिक परिवर्तन या विकारों से उत्पन्न होती है। बिचुत्। (इलेक्ट्रिसिटी)

विशेष—इसका कार्य चारों ओर अपनी किण्वी या धारणी फैलाना, आकर्षण तथा विकर्षण करना और पदार्थों में रासायनिक परिवर्तन या विकार उत्पन्न करना है।

२ उक्त को बहू रूप को कुछ विशिष्ट रासायनिक प्रक्रियाओं अथवा जलप्रपातों के संघर्ष आदि से कुछ विशिष्ट पदार्थों के द्वारा उत्पादित किया जाता है और जिसका उपयोग चारों में प्रकाश करने, भांडियाँ, धर्म आदि चलाने और कर्म-कारखाने चलाने के लिए तारों के द्वारा चारों ओर वितरित किया जाता है।

विशेष—आय डार्ड हजार वर्ष पूर्व येल्ले नामक व्यक्ति ने पहली-बहल यह देखा था कि रेशम के साथ कुछ विशिष्ट चीजें रगड़ने से उसमें हलकी नीलों को अपनी ओर खींचने की शक्ति आ जाती है। बाद में लोगों ने देखा कि मोर का पेश भीतर तक रगड़ने, रेशम को खींचने से रगड़ने तथा सोहे को फलाने से रगड़ने पर भी यह शक्ति उत्पन्न होती है। तब से

उपचयन वैसाविक इहके सर्वत्र अनेक प्रकार के अनुसन्धान और परीक्षण करने लगे, जिनके फलस्वरूप अब यह शक्ति सारे संसार के सभ्य-जीवन का एक प्रधान अंग बन गई है; और इन्होंने नौकरों तरह के काम किए बाते लगे हैं। यह धातुओं, प्राणियों के धारी, जल आदि में बहुत ही तीव्र गति से चलती है। जल, चूना, सोम, रेशम, काँह, क्रीडा आदि अनेक ऐसे पदार्थ भी हैं, जिनमें इसका संस्कार नहीं होता। अब इसका उपयोग विना तार के सम्पर्क के दूर दूर तक समाचार भेजने और अनेक प्रकार के यंत्रों की चिकित्सा करने में भी होता गया है।

३. उक्त शक्ति का वह धीमीत रूप जो आकाश के बादलों में प्रवाहित होता और कभी कभी बहुत ही घोर शब्द करता हुआ तीव्र वेग से तथा अधिक प्रबल प्रकाश से युक्त होकर पृथ्वी पर आता या गिरता हुआ दिखाई देता है और जिससे बहुत अधिक नाशक शक्ति होती है। चण्डा। (लाइटनिंग)

कि० प्र०—कड़कना।—चमकना।
 मूला०—विजली कड़कना= बादलों में विजली का प्रवाह या संचार होने के कारण बहुत जोर का शब्द होना, जिसके परिणामस्वरूप बहुत तीव्र प्रकाश दिखाई देता है। और कभी-कभी विजली गिरती भी है।
 विजली की शक्ति या शक्ति= आकाश से विजली गिरती देखा के क्षम में पृथ्वी की ओर बढ़े वेग से चलकर आती है, जिससे रास्ते में पड़नेवाली चीजें जलकर नष्ट हो जाती या टूट-फूट जाती हैं।
 ४. कान में पहुँचने का एक प्रकार का शब्दना, जिसमें बहुत चमकीला लटकन लगा रहता है। ५. गले में पहुँचने का उक्त प्रकार का शब्द।
 ६. आम की गुठली के अन्दर की गिरी।
 वि०? विजली की तरह बहुत अधिक चमकीला। २. विजली की तरह बहुत अधिक तीव्र गति या वेगवाला। ३. विजली की तरह चंचल या चपल।

विजली-घर—पु० [हि०] वह स्थान जहाँ रासायनिक प्रक्रियाओं, जल-प्राप्ति आदि से विजली उत्पन्न करने के काम-कारखाने आदि बसाने और धरो में प्रकाश आदि करने के लिए जगह-जगह तार की सहायता से जुड़ेवाई जाती है।

विजली-बचाव—पु० [हि०] लोहे का वह टुकड़ा और धार जो ऊँची इमारतों आदि पर आकाश से गिरनेवाली विजली आकृष्ट करके जमीन के अन्दर पहुँचाने के लिए लगा रहता है और जिसके फलस्वरूप विजली गिरने के नाशक प्रभावों से रक्षा होती है। सविटलकर। (लाइटनिंग प्रोटेक्टर)

विजली-घर—पु० [हि०] एक प्रकार का बहुत सुन्दर और आयाशाह बना भवन।

विजल—पु० [हि० बीज+जल] अनाओं आदि का ऐसा भाग या ऐसा बीज जिसकी उत्पानन-शक्ति नष्ट हो चुकी हो। निर्विज बीज।

विजली—वि० [सं० विजलीय] १. दृढती याद्वि का। और आदि या तरह का। २. जाति से निकाला हुआ। जाति से बहिष्कृत।

विजला—वि०=अनजान।

विजय—पु० [सं० विजय] राजपूव (राज्या)।

विजय—पु० [वि०] १. जीत। २. शक्ति।

विजयी—स्त्री०=विजयी।

विज्या—पु०=विज्या।

विजुला—पु० [वेस०] १. सेत में गाढ़ा हुआ छोटा ब्रॉस या बड़ा जिस पर क्राफ़ी हीरी ठोकी होती है और जिस का मुख्य प्रयोजन पशु-पक्षियों को इतराकन फलक से दूर रखना होता है। उजका। पोखा। २. इतर। पोखा।

विजो—स्त्री०=विजय।

विजोसार—पु०=विजयसार।

विजोगा—पु०=विजोग।

विजोता—पु० [?] कवय के अनुसार एक छंद का नाम।

विजोता—स० [हि०] जीवना या जेहूला। १. अक्षी तरह देखना। ३. देख-रेख करना।

ज० [हि०] बीज=विजली विजली चमकना।

ज० [हि०] बीज बीज बोना। उदा०—आक्षी गति सुधादि श्री खेव किसान विजोम—बीजवशात् गिरि।

विजोरा—वि० [सं० वि+का०] बीर=ताकत] कमबोर। अशक्त। निर्मल। पु० विजोरा।

विजोरा—पु० [सं० बीजपूरक] एक प्रकार का रींग।

वि० [हि०] बीज+बीरा (प्रत्य०) बीज से उत्पन्न होनेवाला। बीजू 'कलमी' से भिन्न।

विजोरी—स्त्री० [हि०] बीज; बीरी (प्रत्य०) बड़ी कुम्हड़री।

विजुल—स्त्री०=विजली।

विजुला—स्त्री०=विजली।

विजुला—पु० [सं० विजुला] आकाश से गिरती गिरता। चमकना।

विजुला—पु० [सं० विजुल] त्वचा। छिलका।

†स्त्री०=विजली।

विजु—पु० [वेस०] विल्ली की तरह का एक जवानी फलदार। बीजू।

विजुहा—पु० [?] एक वणिज वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में दो इतरण होते हैं।

विजोवारी—स्त्री० [वेस०] छत्तीसराक से बोकी बानेवाली एक उपजाता या बोकी।

विजकना—पु०=विचकना।

विजरा—पु० [हि०] मेसरना=मिछावा] एक से मिछा हुआ मटर, चूना, जेहूँ और जौ।

विजुका—ज० [हि०] शुक्रना १. पड़कना। २. इतरना। ३. उदरे के कारण कुछ टेढा होना। ४. चंचल होना।

ज०=विचकना।

विजुका—पु०=विजुला।

विजुकाना—स० [हि०] विजुका १. पड़कना। २. इतरना। ३. उदरे का टेढा करना।

ज०=विजुका।

विटंका—पु०=विटंका। उदा०—करसि विटंका मरुत लीह काजी।—जायसी।

विटंका—ज० [सं० विटंका] लीह उड़वा।

†स्त्री०=विटंका।

विट—पु० [सं० विट] १. वीर्य। २. दे० 'विट'।

स्त्री०=वीट (पक्षियों की चिकट)।

विटक—पु० [सं० विटक] [स्त्री० अल्प० विटक] जेहूँका।

विद्यप—पु०—विद्यप (वृत्त) ।

विद्यपी—पु०—विद्यपी ।

विद्यरना—अ० [हि० विद्यारना का अ० रूप] रंधोले जाने पर मदा होना ।

विद्यारना—स० [स० विलोडन] १. रंधोलना । २. रंधोलकर मदा करना ।

विद्यिनिया—स्त्री०—वेदी ।

विद्यिया—स्त्री०—वेदी ।

विद्यीरा—पु० [स० विट] ? सूले कडो का डेर । २. डेर । राशि ।

उदा०—करोषी सबनि परनाम, विद्यीरा रूप देतर ।—मगबत रसिक ।
वि० बहुत बडा और भारी ।

विद्युलस—पु० [स० विष्णु, महा० विद्योबा] ? विष्णु का एक नाम । २. विष्णु की एक विशिष्ट मूर्ति जिसकी उपासना प्रायः दक्षिण भारत में होती है और जिसकी प्रधान मूर्ति पदरपुर में है ।

विद्यलाना—स०—बैठाना ।

विद्याना—स०—बैठाना ।

विद्यालना—स०—बैठाना ।

विद्यव—पु० [स० विद्यम्] आडवर । दिखावा ।

विद्यवना—अ० [स० वि/डम्ब-युष्—अन] किसी को चिढ़ाने या उपहास्यास्पद बनाने के लिए उसकी नकल उतारना ।

स्त्री०—विद्यम्बना ।

विद्य—पु० [स० विट] १. गृह । मल । विष्ठा । २. एक प्रकार का नमक ।

वि० ? दुष्ट । पाजी । २. नीच ।

विद्यर—वि० [हि० विद्यरना] बिखरा या छितराया हुआ ।

*वि०—निडर ।

*वि०—विरल ।

विद्यरना—अ० [स० विट—तीक्ष्ण स्वर से पुकारना, चिल्लाना] ? बिखरना । २. पशुओं आदि का बिचकना या बिचकना । ३. नष्ट होना ।

४. विगड़ना ।

अ० [हि० डरना] भयभीत होना । डरना ।

विद्यराना—स० [स० विट—ओर से चिल्लाना] ? द्धर-उधर करना । तितर-वितर करना । बिखराना । २. मगाना ।

*स०—डराना ।

विद्यवना—स० [स० विट—ओर से चिल्लाना] तोड़ना ।

विद्यवने—वि०—विद्यवने । (दलाल)

विद्यवने—वि० [स० बढावने] अधिक । ज्यादा । (दलाल)

विद्यारना—स० [हि० विद्यरना] १. भयभीत करके मगाना । २. बाहर करना । निकालना ।

*स०—विगाड़ना ।

विद्याल—पु० [स० विद्याल] १. बिल्ली । बिलाल । २. दोहे के बीचमें मेद का नाम जिसमें ३ अक्षर गुरु और ४ अक्षर लघु होते हैं । ३. आँख का डेला । ४. आँख के रोगों की एक प्रकार की चिकित्सा । ५. दे० 'विद्यालाल' ।

विद्यारक—पु० [स० विद्यालक] १. आँख का मोलक । नेत्र-पिंड । २. आँखों पर लेप चढ़ाना । ३. नर विद्याल ।

विद्यालाल—पु० [स० विद्यालपाद] एक तौल जो एक कर्प के बराबर होती है ।

विद्यालयचिक—वि० [स० विद्यालयचिक] बिल्ली के समान स्वभाववाला । लोभी, कपटी, दमी, हिसक, सबको धोखा देनेवाला और सबसे टेढ़ा रहनेवाला ।

विद्यालाल—वि० [स० विद्यालाल] जिसकी आँखें बिल्ली की आँखों के समान हों ।

पु० एक प्रसिद्ध गलस जिसे दुर्गा में भारा था ।

विद्यालिका—स्त्री० [स० विद्यालिका] १. बिल्ली । २. हुरताल ।

विद्याली—स्त्री० [स० विद्याली] १. बिल्ली । २. आँखों में होनेवाला एक प्रकार का रोग । ३. एक यौगिनी जो उक्त रोग की अधिष्ठात्री कही गई है ।

विद्यिक—स्त्री० [स० विद्यिक] पान का बीडा । गिलोटी ।

विद्यी—स्त्री०—बीडी ।

विद्यीमा—पु० [स० विद्यीबल] इद्र का एक नाम ।

विद्यती—पु० [हि० बटना] सफा । लाम ।

विद्यवना—स० [स० वृद्धि, हि० बड़ना] १. बड़ाना । २. इकट्ठा करना ।

विद्याना—स०—विद्यवना ।

वित्ता—पु०—दे० 'वित्त' ।

वित्तताना—अ० [स० व्यतिष्ठ] १. व्यथित होना । २. बिलय करना । बिलसना ।

स० दुःखी या संतप्त करना ।

अ० [स० वितान] पसरना । फैलना ।

स० पसारना । फैलाना ।

वित्तनु—वि०—वित्तनु (कामदेव) ।

वित्तपत्र—वि०—व्युत्पन्न ।

वित्तरना—स० [स० वितरण] १. वितरण करना । बंटना । २. चारों ओर फैलाना । बिखेरना ।

वि० [स्त्री० वितरनी] बंटनेवाला । उदा०—बतुनान हरि ईस परम पद विसद वितरनी ।—रत्ना ।

वित्ताराना—स० [हि० वितराना] १. वितरण करना । २. चारों ओर फैलाना ।

अ० [?] ? बुरा कहना या बताना । ऐब या दोष लगाना । २. किसी को झूठा बनाना । यह कहना कि अमुक झूठा है या झूठ बोलता है ।

वित्तवना—स०—वित्ताना ।

वित्ताना—पु०—वित्ताना ।

वित्ताना—स० [स० व्यतीत, हि० वीतना का संक्षिप्त रूप] अवधि, समय आदि के सम्बन्ध में, व्यय या व्यतीत करना । जैसे—उन्होंने सारा दिन सोकर वित्ताना ।

वित्ताना—पु०—वैतान ।

वित्तवना—स०—वित्ताना ।

वित्तारिक्ता—वि०—व्यतिरिक्त (अधिक) ।

वित्तीतना—अ० [स० व्यतीत] व्यतीत होना । बीतना ।

स०—वित्ताना ।

विशुद्ध—पू०=विशुद्ध (हाथी) ।

विशुभा—पू०=विशुभा ।

विस्त—पू० [सं० विस्त] १. धन। दौलत। २. निजी साधनों के बल पर कोई काम कर सकने की सम्पत्ता। विस्तार। धूल। ३. अधिक सम्पत्ता। बीकात। हैसियत। ४. ऊँचाई या आकाश।

विस्ता—पू० [?] १. मनुष्य के एक हाथ के अंगुठे और कनिष्ठिका के सिरों के बीच की अधिकतम दूरी। २. उक्त दूरी की एक नाप जो नौ इंच के बराबर होती है।

वस्—विस्ता भर=आकार में बहुत छोटा।

विस्ती—स्त्री० [सं० विस्त] आय आदि में से धर्म-कार्यों के लिए निकाला हुआ धन।

वि० १. विस्तवाला। सम्पन्न। २. समर्थ।

स्त्री० [?] लड़कों का एक प्रकार का खेल जिसमें एक लड़का कड़क या ठीकरा दूर फेंकता और दूसरा उसे उठाकर लाता है।

विषकना—अ० [हि० यकना] १. यकना। २. पकित होना। ३. मोहित होना।

विषकाना—स० [हि० विषकना] १. यकाना। २. पकित करना। ३. मोहित करना।
अ०=विषकना।

विषरणा—अ० [सं० विस्तरण] १. छितारना। २. अलग-अलग होना। ३. छिन्न-भिन्न या नष्ट-भ्रष्ट होना।

स० १. विखेरना। २. (बीज) बोना। उदा०—बारि बीज विषरै।
—सूर।

विषा—स्त्री०=व्यथा।

विषारना—स० [हि० विषरना] विखेरना।

विषितां—वि०=व्यथित।

विषुरनां—अ०=विषरना।

विषुरानां—स०=विषराना (विखेरना)।

विषुरित—पू० क० [हि० विषुरित] १. विखरा हुआ। २. छिन्न-भिन्न। नष्ट-भ्रष्ट।

विषुरनां—अ०=विषुरना।

विषोरना—स०=विषराना।

विष०—वि० [सं० विद्] जाननेवाला। ज्ञाता। जैते—जोग विद=योग का ज्ञाता।

विषरनां—अ० [सं० विदारण] १. कुछ बरते हुए पीछे हटना। मड़कना। २. विदीर्ण होना। चिरना। फटना। ३. धायल होना।

विषराना—स० [सं० विदारण] १. चीका या बटाकर पीछे हटना। मड़काना। २. चीरना या फाड़ना। ३. धायल करना।

विषर—पू०=वीरदर। (विदमं देव)

पू०=विदुर। (दे०)

विषरन—स्त्री० [सं० विदीर्ण] १. विदीर्ण होने अर्थात् फटने की अवस्था, किया या मात्र। २. बरज। बरार।

वि० विदीर्ण करने या फाड़नेवाला। (सौ० के अन्त में)

विषरनां—अ० [सं० विदारण] १. विदीर्ण होना। फटना। उदा०—

जो बाधना न विषरत अंतर तेई तेई अधिक अनुजर चाहत।—सूर। २. नष्ट होना।

स० विदीर्ण करना। फाड़ना।

विषरी—वि०, स्त्री०=वीरदी।

विषरना—अ० [सं० विखरना] १. दलित करना। २. छिन्न-भिन्न या नष्ट-भ्रष्ट करना।

विषरहना—स० [सं० विषरना] १. भ्रम करना। जलना। २. बहुत अधिक दुःखी या संतप्त करना। ३. धान या ककुनी आदि की फसल में आरम्भ में पाटा या हेंगा चलाना।

विषरहनी—स्त्री० [हि० विखरना] विखरने की किया या मात्र।

विषा—स्त्री० [फा० विषाज] १. कही से कुछ अधिक समय के लिए बले जाना या प्रत्यान करना। खाना होना। प्रस्थान। २. उक्त के लिए मिलने या मींगी जानेवाली अनुमति या आज्ञा।

फि० प्र०=वेना।—मोगना।—मिलना।

३. विवाहित पुत्री का भायके से ससुराल जाना। ४. द्विदामन। गीना।

विषार्—स्त्री० [फा० विषाज + हि० आई (प्रय०)] १. विदा होने की अवस्था किया या मात्र। २. बहु धन जो विदा होनेवाले को विदा देनेवाले देते, है। ३. वह उत्सव जिसमें किसी को सम्मानपूर्वक विदा किया जाता है। ४. विदा होने के लिए मिलनेवाली आज्ञा। ६. विवाहिता कन्या, बहु अवधवा दामाद को विदा करने की रस्म।

विषाम—पू०=बादायाम।

विषानी—वि०, स्त्री०=बादायी।

विषायत—पू० [सं० विषायति] गाने बजानेवालों का वह दल या मण्डली जो मिथिला में घूम घूम कर मैथिल कोकिल विषायति के पद गाती है।

विषाययी—स्त्री०=विदाई।

विषारना—स० [सं० विषारण] १. विदीर्ण करना। चीरना। फाड़ना।

२. नष्ट करना। न रहने देना।

विषारी—पू० [सं० विदारी] १. शालग्र्या। २. मूर्ख। कुम्हड़ा। ३. एक प्रकार का कठोरग। ४. दे०=विषारी कद।

विषारीकद—पू० [सं० विदारी कद] एक प्रकार का कद जिसकी बेल के पत्ते अर्ध के पत्तों के समान होते हैं। बिल्लाई कद।

विषाहनां—स० [?] ज्ञेत को उस समय पुन जोतना जब उसमें नई फसल के अंकुर निकल आते हैं।

विषितां—स्त्री०=विषिता।

विषीरना—स०=विषारना।

विषुराना—अ०=मुस्कुराना।

विषुरानी—स्त्री० [हि० विषुराना] मुस्कुराहट। मुस्कान।

विषुरित—पू० क० [सं० विदूर-इतन्व, विषुरित] दूर किया हुआ या हटाया हुआ।

विषुरवना—अ० [सं० विदूरण] १. दोष या कलंक लगाना। २. लारव करना। बिगाड़ना।

विषुरसक—वि०, पू०=विषुरसक।

विषैस—पू० [सं० विवेस] अपने देस के अतिरिक्त और कोई देस। परदेस। विदेस।

विशेषिया—पुं० [हि० विशेयी] पुरुष में नाये जानेवाले एक प्रकार के गीत जिनमें विशेष गये हुए पति के सम्बन्ध में उसकी प्रियतमा के उच्चारण होते हैं और जिनके प्रत्येक चरण के अन्त में 'विशेषिया' शब्द होता है। जैसे—
—दिनर्षा बितला सद्यर्षा बटिया जोतल तोर रतिषा भीली जागि जागि रे विशेसिया।

विशेसी—वि०=विशेसी।

विशोखं—पुं० [स० विशेख] वैर। वैमनस्य।

विशोराना—सं० [स० विशारण] दीनतापूर्वक मूंह या दाँत खोककर दिखाना।

विद्ध—वि०=विद्ध।

विद्धत—स्त्री० [अ० विद्धजत] १ सराभी। बुराई। २ कष्ट। ३ विपत्ति। ४. अत्याचार। ५ दुर्वेसा।

विदूष—वि०=विदूष।

विषंसेना—सं० [स० विष्वसन] विष्वंस करना। मष्ट करना।

विष—स्त्री० [स० विषि] १ विचाला। बहला। २ तरह। प्रकार।

उदा०—जाही विश राखे राम, ताही विषि रहिये।

फि० प्र०—बैठना—बैठाना।

३ जमा और लखं की मर्दों को जोड़ते-बटाते हुए उनका हिसाब मिलाणे की क्रिया या भाव।

मूहा०—विष मिलना—(क) जोड़ने-बटाने आदि पर आय-भय्य आदि का योग ठीक होना। हिसाब मिलना। (ख) किसी के साथ मेल या संगति बैठना। अनुकूलता होना। जैसे—वर और बभू के प्रहो की विष मिलना। विष मिलाना—(क) आय और व्यय की मर्दों का जोड़ लगाकर यह देखना कि लेखा ठीक है या नहीं। (ख) यह देखना कि अनुकूलता या संगति बैठती है या नहीं।

पुं० [?] हाथियों का चारा या रातिस।

विषना—पुं० [स० विषि+न (प्रत्यय०)] बहला। विघाता।

†अ०=विषना।

विषवती—स्त्री० [हि० विषि=जमा+फा० बंयी] मध्य युग में भूमि-कर देने की वह रीति जिसमें बीधे आदि के हिसाब से कोई कर नियत नहीं होता था, बल्कि सारी जमीन के लिए यों ही कोई भंदाज से कुछ रकम दे डी जाती थी। बिलमुकतात।

विषवपन—पुं०=विषवप।

विषवा—वि०=विषवा।

विषवाना—सं०=विषवाना।

विषातना—सं० [स० विष्वसन] विष्वंस करना। मष्ट करना।

विषार्ह—पुं० [स० विषायक] बहु जो विधान करता हो। विषायक।

विषाता—पुं०=विषाता।

विषान—पुं०=विषान।

विषाना—सं०=विषाना।

†अ०=विषना।

विषानो—पुं०=विषायक।

विषि—स्त्री०=विषि।

पुं०=विषि (बहला)।

विषितात*—पुं० [सं० विषि+तात] बहला का जनक अर्थात् कमल।

विषिना—स्त्री०=विषिना (विघाता)।

विषिषाम—पुं०=ब्रह्मात्म।

विषुपुव—पुं०=विषुपुव (राहु)।

विषुंसना*—सं० [विष्वसन] विष्वंस करना। मष्ट करना।

विषुसी*—पुं० [विषा०] एक प्रकार का बंस जो हिसाबय की तराई में पाया जाता है। नल-बाँस। देव-बाँस।

विष—अव्य०=विना (बौर)।

पुं० विद नाम की जाति।

पुं० [अ०] पुत्र पुं० बेटा।

विषदी—वि०=विषदी।

स्त्री०=विनादी।

विषजा—स्त्री०=विषय।

विषकार—वि० [हि० बुनना] बुनकर। जुलाहा।

विषकारी—स्त्री० [हि० विनकार] जुलाहे का काम।

विनठना—स्त्री० [हि० विनष्ट] मष्ट होना।

सं० मष्ट करना।

विनता—स्त्री० [देस०] पिछकी नाम की चिटिया।

स्त्री० [हि० विनती] १ विषय। २ विषयता। ३. दीनता।

विनति—स्त्री०=विनती।

विनती—स्त्री० [सं० विनय] प्रार्थना। निवेदन। अर्ज।

विनन—स्त्री० [हि० विनना=बुनना] १ विनने या बुनने की क्रिया या भाव। २ विनने या बुनने पर निकलनेवाला कूड़ा-करकट। ३. बुने हुए होने की अवस्था, क्रिया या भाव। बुनावट।

विनना—सं० [सं० बीसाण] १ छोटी छोटी बलुओं को एक एक करके उठाना। बुनना। बीनना। २ छोटकर अलग करना। ३. बे० बुनना।

†सं०=बीधना।

विनय—स्त्री०=विनय।

विनयना*—सं० [सं० विनयन] विनय या प्रार्थना करना।

विषरी*—स्त्री०=अरणी (बूझ)।

विषवट—स्त्री० [?] रुमाल या रस्सी में पैसा आदि बांधकर बनेडी मांजने की क्रिया या मेल।

†स्त्री० १.=विनावट। २.=बुनावट।

विषवना—अ० [सं० विनय] विनय करना। प्रार्थना करना।

विनवाना—सं० [हि० बीनना] बीनने या बुनने का काम किसी से कराना।

सं०=बुनवाना।

विनसना*—अ० [सं० विनाहा] मष्ट होना। बरबाद होना।

सं० मष्ट या बरबाद करना

विनसाना—सं० [सं० विनाहा] विनाश करना। विगाड बागलना। मष्ट कर देना।

†अ० मष्ट या बरबाद होना।

विषवदी*—स्त्री०=विनाहा।

विनहा*—अव्य०=विना।

विना—अव्य० [सं० विना] १. न रखने या न होने की बधा मे। २. बौर। जैसे—धर्ये के विना काम न चलेगा। ३. अतिरिक्त। सिवा।

उदा०—राम बिना कछु जानत नाही।
 स्त्री० [अ०] १. नीच। बुद्धिवाद। २. क्षारण। शकव। वैसे—मही
 तो सारे झगड़े की बिना है।
 विनाहूँ—स्त्री० [हि०] बिनाधा धा बीनना] १. बीनने धा बुनने की क्रिया,
 माके या मजदूरी। २. दे० 'बुनाई'।
 स्त्री० [अ० बीनार्] अर्को की व्योति।
 विनाती—स्त्री०—विनती।
 विनाधा—स०—बुनाधाना।
 विनाही—वि० [सं० विज्ञानी] अज्ञानी। अनयाग।
 स्त्री० [सं० विज्ञान] विविष्ट रूप में किया जानेवाला विस्तन या विचार।
 विनाषट—स्त्री०—बुनाषट।
 विनास—स्त्री० [सं० पीनसः] नाक से खून गिरना या जाना। नकलीर।
 कि० प्र०—फूटना।
 पू०—विनाश।
 विनाशना—स० [सं० विनाश] १. विनाश करना। बरबाद करना।
 २. संहार करना।
 विनाही—पु०—विनाया। उदा०—साकत संग म कोविण जाते हीह
 विनाहूँ—कवीर।
 विनि—अव्य०—विना।
 विना—अव्य०—विना (बनैर)।
 विनुआ—वि० [हि० बीनना] १. ओ बीन तथा बुनकर दृकट्टा किया गया
 हो। वैसे—विनुआ कपड़े। २. छटा हुआ।
 विनुठा—वि० [हि० अनुठा] अनुठा। अनोखा। विलक्षण।
 विनं—स्त्री०—विनय।
 विनीक—पु० [सं० विनायक] बहु पक्षवान जो पहले घात के से निकालकर
 गणेश जो के निमित्त अलग कर देते हैं।
 विनीरा—पु०—विनीला।
 विनीरिया—स्त्री० [हि० विनीला] एक प्रकार की घास जो सर्पिक के
 खेलों में पैदा होती है।
 विनीरी—स्त्री० [हि० विनीला] विनीले के छोटे-टुकड़े।
 विनीला—पु० [?] कपास का बीज।
 विपक्ष—पु०—विपक्ष।
 विपक्षी—वि०, पु०—विपक्षी।
 विपक्ष—पु० [सं० विपक्ष] साधु। बँदी। दुश्मन।
 वि० १. जो विपक्षी पक्ष में हो। २. अप्रसन्न। नाराज।
 विपक्षी—पु०—विपक्षी।
 विपक्षि—स्त्री०—विपक्षि।
 विपक्षा—स्त्री०—विपक्षि।
 विपक्षि—स्त्री०—विपक्षि।
 विपक्षि—स्त्री०—विपक्षि।
 विपक्षि—स्त्री०—विपक्षि।
 विपक्षि—पु०—विपक्षि।
 विपक्षि—स्त्री० [सं० विपक्ष] जाँसत। मुसीबत। विपत्ति।
 विपक्षी—स्त्री०—विपक्षि।
 विपक्षे—पु०—विपक्षि (शाहज)।

विपक्षी—पु० [?] दे० 'बौध' (बुध)।
 विपक्ष—पु०—विपक्षि।
 विपक्ष—वि०—विपक्षि।
 विपक्षना—अ० [सं० विपक्षन ?] १. नाराज होना। विनमना। २. हठ
 करना। ३. अविमान आदि में फूलना। ४. लड़ने को तैयार होना।
 ५. विद्रोह या विप्लव करना। अगो होना।
 व०—विपक्षना।
 विपक्षता—स्त्री०—प्रफुल्लता। उदा०—तो तन पुति अतिबचन विकुलता
 कहै देति छवि निरखत बात।—कलित फिरोदी।
 विपक्षता—अ० [सं० विपक्ष] १. विपक्षी पक्ष में जाना, रहना या होना।
 २. अटकना। उलझना। फँसना।
 विपक्ष—पु०—विपक्षि।
 विपक्षित—पु०—विपक्षित।
 विपक्षना—वि० [सं० विपक्ष] १. विपक्षता रंज करवा हो गया हो। बहरण।
 २. चिंता आदि के कारण विपक्षता रंज प्रतीक बड़ गया हो।
 पु०—विपक्षण।
 विपक्षना—अ० [सं० विपक्षण] १. (बाल) सुलझाना। २. उलझन
 या विफलाङ्ग दूर करना। ३. स्पष्ट रूप से विपक्षण अलग करना।
 विपक्ष—वि०—विपक्षि (बहुल बढ़ा हुआ)।
 विपक्ष—वि० [सं० विपक्ष] १. मजदूर। विपक्ष। २. परानीय। परपक्ष।
 कि० वि० विपक्ष होकर। काबरी हालत में।
 विपक्षना—अ० [हि० विपक्ष] विपक्ष होना।
 विपक्षरा—पु०—विपक्षरा।
 विपक्षी—स्त्री०—विपक्षी।
 विपक्षी—वि०—विपक्षि।
 विपक्षी—स्त्री०—विपक्षी।
 विपक्षना—अ० [सं० विवाद] विवाद करना। झगड़ना।
 विपक्षना—अ० [सं० विवाद] विवाद करना। झगड़ना।
 विधि—वि० [सं० विधि] १. यो। २. दोनो।
 विधि—पु०—विधि।
 विधिधना—सं० [सं० विधिधन] विधिधन करना।
 स्त्री०—विधिधन।
 विधिधक—पु० [सं० विधिधक] स्वार्थिमान, गर्व जादि के फलस्वरूप शिष्य के
 प्रति प्रदत्त की जानेवाली सहायिता।
 विधिधारी—वि०, पु०—विधिधारी।
 विधिधारा—अ० [सं० विधिधारा] का (शब्द) १. धमकवा। २.
 सुयोगित होना।
 व० १. धमकवा। २. सुयोगित करना।
 विधिधारी—वि०, पु०—विधिधारी।
 विधिधारा—सं० [सं० विधिधारा] अलग या बृषह करना।
 विधिधक—वि०—विधिधक।
 विधिधक—स्त्री०—विधिधक।
 विधि—पु०—विधि।
 विधि—वि०—विधि।
 विधि—पु०—विधि।

विभन—वि० [स० विभनम्] [स्त्री० विभना] जिसका मन या चित्त ठिकाने न हो। अन्य-मनस्क। विभन।
 विभकला—पु०—विभकल (कुदक)।
 विभला—स्त्री०=विभला। (दे०)
 विभली—स्त्री० [स० विभल] ढ़डा माडी।
 विभान—पु०=विभान।
 विभानी—वि० [स० वि+मान] जिसे अभिमान न हो। निरभिमान।
 †स्त्री०=अर्द्धमात्री।
 विभन—वि० [स० वि+मु] १ जिसे मोद या प्रसन्नता न हो। फलतः विषय या दुःखी। २ पितित।
 विभोचना—स० [स० विभोजन] मुफ्त कराना। छुडाना।
 विभोहना—स०=मोहना।
 अ०=मोहित होना।
 विभोट, विभोटो—पु०=बोधी (बल्मीक)।
 विभोर—पु० [स० बल्मीक] बोधी। (दे०)
 विभ—वि० [स० द्वि] १. दो। युग्म। २. दूसरा। द्वितीय। ३. अन्य। और।
 †पु०=बीया (बीज)।
 विभत—पु० [स० विभत्] १. आकाश। २. एकात स्थान।
 विभन—पु० [स० विभज] एकान्त स्थान। सुनसान जगह। उदा०—
 विभन मजन वृद्ध गहि रहै तजि कुटुम्ब परिवार।—भुवधरास।
 विभयता—स०=वीजना।
 †पु०=बीज।
 विभर—स्त्री० [अ०] एक तरह का विलायती भावक तथा शीतल पेय जो जी के रस को सघाकर बनाया जाता है। यविरा।
 विभरसा—पु० [देश०] एक प्रकार का ऊँचा पहाड़ी वृक्ष।
 विभतता—वि०=व्याहता।
 विभ्या—वि० [स० द्वि] दूसरा। अन्य। अपर।
 पु० शत्रु। (द्वि०)
 †पु०=बीया (बीज)।
 विभ्याअं—पु०=व्याज (१. सूद २. बहाना)।
 विभ्याऊं—वि० [स० व्याज+ऊं] २ व्याज या सूत-सबधी। २. व्याज के रूप में या व्याज पर दिया जानेवाला (धन)।
 विभ्याइ—पु० [द्वि० विभ्या+इ (प्रस०)] बहु खेत जिसके पीये उखाड़कर अन्य खेतों में रोये जाने को हों।
 विभ्याध (धा)—पु०=व्याध (बहेलिया)।
 विभ्याधि—स्त्री०=व्याधि।
 विभय—पु० [द्वि० विभयाना] विभयने अर्थात् बच्चा देने की क्रिया या भाव। प्रसव।
 विभयाना—स०=व्याना (पशुओं का बच्चा देना)।
 विभयाना—अ० [स० व्याप] व्यापत होना।
 विभयानाम—पु० [स० वि+आप (अल-रहित) से फा०] जंगल। वन।
 विभयानी—वि० [फा०] १ विभयान का जंगल-सबधी। २. जंगली।
 विभयती—स्त्री०=व्याल (रात का मोजन)।
 विभयक—स्त्री०=व्याल।

विभ्याल—पु०=व्याल।
 विभ्यालू—स्त्री०=व्याल (रात का मोजन)।
 विभ्यावां—पु० १. =विभयान। २. =विवाह।
 विभ्यावर—वि० स्त्री० [द्वि० विभयाना=बच्चा देना] (मादा जीव या पशु) जो गामिन हो और जल्दी ही बच्चा देने को हो। जैसे—विभ्यावर गाय या भैंस।
 पद—वरत विभ्यावर। (देवे०)
 विभ्याह—पु०=विवाह।
 विभ्याहता—वि०=व्याहता।
 विभ्याहना—स० [द्वि० व्याह] व्याह करना।
 विभ्याहा—वि० [स० विवाहाहता] [स्त्री० विवाही] जिसका विवाह हो चुका हो।
 विभ्यो—पु० [द्वि०] डेटे का डेटा। पीता।
 विभ्योवां—पु०=विभ्योग।
 विभ्ये (र)—वि० [स० विभ्ये] [स्त्री० विभ्ये] १ कई रंगोंवाला। २ बिना किसी प्रकार के रंग का। वर्णहीन।
 विभ्येता—स०=विभ्येता।
 विभ्येन—पु० [फा०] १. चावल। २ पका हुआ चावल। मात।
 विभ्येओ—स्त्री० [?] लोहे की छोटी कील। छोटा काँटा।
 वि० [फा० विभ्ये] चावल या भात सम्बन्धी।
 विभ्येई—स्त्री० [द्वि० विभ्ये] १ छोटा पीप। २ जड़ी-बूटी।
 विभ्येवां—पु०=वृक्ष।
 विभ्येवन—पु०=वृष्य (बैल)।
 विभ्येवां—स्त्री०=वर्षा।
 विभ्येगि—पु० [अ० विभ्ये] सेना का एक विभाग जिसमें कई रेजिमेंट या पलटने होती हैं।
 विभ्येता—स० [स० विभ्येन] रचना। बनाना।
 अ० [स० वि+गि] १. मन उबटना। २. झगडना। उदा०—विभ्येओ किहि दोष न जानि सकीं जु गयी मन मो तजि रोगन नै।—धनआनद।
 २. अप्रसन्न होना। नाराज होना।
 विभ्येक—पु०=वृक्ष।
 विभ्येछिक—पु०=वृक्षिक।
 विभ्येजां—पु०=वृक्ष।
 विभ्येकूल—पु० [?] एक प्रकार का जड़हन—धान।
 विभ्येसना—अ० [स० विभ्ये] १ उलझना। २ झगडना।
 विभ्येसाना—स० [द्वि० विभ्येसाना] १ उलझना। २. लड़ाई झगडे में किसी को प्रवृत्त करना।
 †अ०=विभ्येसना।
 विभ्येतवां—पु०=वृत्तात।
 विभ्येतवां—पु०=वृत्तात।
 विभ्येता—पु०=वृत्ता (साधर्म्य)।
 विभ्येतामा—स०=व्येताता।
 विभ्येतिया—पु० [स० वृत्ति+इया (प्रत्य०)] १ वह व्यक्ति (विषेधतः नाई या मात) जो एक पक्ष की ओर से दूसरे पक्षवालों के यहाँ वैवाहिक संबंध स्थापित करने के लिए तथा उनकी भाषिक तथा सामाजिक स्थिति

का पता लगाने के लिए भेजा जाता था । २. वह जो दान, पुण्य आदि प्राप्त करने की विकाश करता हो ।

विरचाणं—अध्य०=वृथा (व्यर्थ) ।

विचि०=वृथा (निरर्थक) ।

विरच=वृ०=विरच (यथा) ।

वि०=विरच (संतोहीन) ।

विरचनं=वृ०[हि० विरच+रते (प्रत्य०)] कीर्तिवान् योद्धा । यथास्वी वीर ।

वि० प्रसिद्ध । महाहूर ।

विरचानं=वि०[स्त्री० विरचा]=वृद्ध ।

विरचाई=स्त्री०[हि० वृद्ध+आई (प्रत्य०)] वृद्धावस्था । बुढ़ापा ।

विरचापन=वृ०[सं० वृद्ध+हि० पन (प्रत्य०)] वृद्ध होने की अवस्था या भाव । बुढ़ापा ।

विरचनना=अ०[सं०विरचन] १. किसी पर आसक्त या मोहित होकर उसके प्रेमपाश में फँसना या फँसकर उसके पास चक जाना । २. बिलब करना । देर लगाना ।

अ०[सं० विराम] १. विराम करना । ठहराना । २. आराम करना । सुस्ताना । ३. अलग होना । उदा०—अपने कृत तैं ही नहिं विरमत ।

—सू० ।

विरचानां=सं०[हि० विरचनना का सं० रूप] १. किसी को विरचने में प्रसक्त करना । (दे० 'विरचन') २. किसी को अपने पर आसक्त या मोहित करना । ३. (समय) गुजारना । बिताना ।

वि० दे० 'विरचन' ।

विरला=वि०[सं० विरल] [स्त्री० विरली] १ जो सब जगह या अधिकता से नहीं, बल्कि कभी-कभी और कहीं-कहीं दिखाई देता या मिलता हो । इकना-दुक्का । जैसे—उसका स्वभाव भी कुछ विरला ही है ।

२. अनेक या बहुतों में से ऐसा ही कोई जिसमें किसी विशिष्ट काम को करने की समर्थता तथा साहस होता है । जैसे—कलियुग में परोपकारी कोई विरला ही होता है ।

विशेष—इसके साथ 'ही' का प्रयोग होता है ।

विरल=वृ०=विरला ।

विरचा=वृ०[सं० विरचण, प्रा० विरचणा] १. वृक्ष । पेड़ । २. पीषा ।

उदा०—हीनहार विरचाम के, होत चीकने पान ।—३ चना । बूट ।

विरचाही=स्त्री०[हि० विरचा+ही (प्रत्य०)] १. वह स्थान जहाँ बहुत से पेड़-पौधे हों । २. वह स्थान जहाँ छोटे-छोटे पीषे बिन्नी, रोपाई आदि के लिए उपाय आते हों ।

विरचामं=वृ०=वृचम ।

विरच्य=वृ०[सं० वृच] पेड़ ।

विरचसं=वि०[सं० विरच] जिसमें रस न हो । रसहीन ।

वृ० १. रस (प्रेम) का अभाव । २. अहूर । वि० (हि०)

३. अननस । विचाइ ।

विरचानां=अ०[सं० विचाल] १. विचाल करना । २. भोगना ।

विरहा=वृ०=विरह ।

विरचानां=सं०[सं० विरचन] १. संवित करना । ठीकना-फोड़ना ।

२. नष्ट करना ।

अ० १. संवित होना । २. नष्ट होना ।

विरहा=वृ०[सं० विरह] भोजपुरी बोली में, जो पंक्तिनोंवाला एक प्रसिद्ध लोकछंद ।

विरहायि=स्त्री०[सं० विरह+हि० आग] विरह के कारण प्रिय (या प्रेयसी) को होनेवाली हादिक पीषा या कष्ट ।

विरहाना=अ०[सं० विरह] विरह-व्यथा का अनुभव करना । उदा०—राधा विरह देख विरहानी।—सू० ।

विरही=वृ०=विरही ।

विरहुला=वृ०[पा० विरह्यक=नाम] [स्त्री० विरहुली] सपं । साप ।

उदा०—बोझी सातो बीज विरहुली।—कबीर ।

विरहुली=स्त्री०[हि० विरहुला का अत्या० स्त्री० रूप] १. सर्पिणी ।

२. साप के काटने पर उसका विष उतारने का मंत्र ।

विरामना=अ०[सं० विराम] १. विरत होना । २. समाप्त प्रहृष करना ।

विराजना=अ०[सं० वि+रजत] १. घोषित होना । घोषा देना । उदा०—तीस मोलियन का सेहरा विराजै।—गीत । २. बँटना । (आदरसूचक) जैसे—आष्टर, विराजिए । उदा०—राज-सभा रघु-राज विराजा।—मुल्सी । ३. स्थित होना । जैसे—उनके मुख पर सदा राम नाम विराजता है ।

विरावर=वृ०[फा० बरावर] भाई । भ्राता ।

विरावराना=वि०[फा० बरावरान] (व्यवहार) जैसा माइयों में होता या होना चाहिए । माइयों जैसा ।

विरावरी=स्त्री०[फा० बरावरी] १. नारीचारा बंधुत्व । २. ऐसे लोगों का दल या वर्ग जिनमें परस्पर बंधुत्व या भाईचारे का व्यवहार होता हो । ३. विशेषतः किसी एक ही जाति या वर्ग के वे सब लोग जो सामाजिक उत्सवों पर एक दूसरे के यहाँ आते-जाते हों । जैसे—हिन्दुस्तानी विरावरी ।

विरावां=वि०=विराना (परया) ।

वि०=वीरान ।

विराना=सं०[सं० विरच या अदु०?] किसी को चिढ़ाने या हास्यास्पद बनाने के लिए उसकी आङ्कित को बियाँकर या उसकी मुद्रा का विलक्षण अनुकरण करना । जैसे—किसी का मुँह विराना ।

वि०=वेगाना (परया) ।

विरामां=वि०[हि० वे+आराम] १. बीमार । रोगी । २. बेचैन । विकल ।

वृ०=विराम ।

विराल=वृ०=विडाल ।

विराबना=सं०=विराना ।

विरालां=वृ०=विलास ।

विराली=वि०=विलासी ।

विरिच=वृ०=वृष । २.=वृष ।

विरिच्छां=वृ०=वृष ।

विरिचां=वि०=वृद्ध ।

विरिच्यं=स्त्री०[हि० बेला] १. समय । वनत । बेला ।

स्त्री०[सं० बार] १. बार । दफा । मरतबा । २. पारी । बारी ।

उदा०—मेरी विरियां बिरहू किन्तु बिसरायी—सूर।
विरिया—स्त्री० [हि० बाली] १ छोटी कटोरी के आकार का एक गहना जो कान में पहना जाता है। पश्चिमी जिलों में इसे 'डार' भी कहते हैं।
 २ चरखे के डेलन में की कपड़े या लकड़ी की बहू मोल टिकिया जो इस हेतु लगाई जाती है कि बल्लों की मूडी नूटें से रगड़ न लाय।
 †स्त्री० =विरिया।
विरियायी—स्त्री० [फा०] एक प्रकार का नमकीन पुलाव।
विरिा—स्त्री०—बीडी।
विरिआ—पु० [देश०] एक प्रकार का राजहंस।
विचलना—अ० [स०] विचल या हिं० उलझना] १. उलझना। २. झगडा करना। झगडना।
विचलना—स० [हिं० विरभ्रता] १ उलझना। २ लोगों से झगडा करना।
 †अ० =विचलना।
विचर्चा—पु० =विशद (यश)।
विचरित—पु० =विरदित।
विचवाई—स्त्री० =बूढावस्था।
 स्त्री० [स० विचल] विचल होने की अवस्था या भाव।
 विरोय।
विच्य—वि० =विच्य।
विरोय—पु० [स० विरोय] १ विरोय। २ दुख। ३. चिंता।
विरोयी—पु० [स्त्री० विरोयिन] =विरोयी।
विरोया—पु० दे० 'गया विरोया'।
विरोयना—अ० [स० विरोय] १ (किसी व्यक्ति या बात का) विरोय करना। २ किसी से विरोय या धान्ना करना। ३ मार्ग अवशुद्ध करना।
विरोयना—स० =विलोडना।
विरोया—स० =विलोडना।
विरोयी—स्त्री० [?] कोयो, बाजरे आदि के खानों में होनेवाली एक प्रकार की जोताई जो उनके अकुरित होने पर की जाती है।
विछे—पु० =वृक्ष।
विच्य—वि० =वृद्ध।
विलगी—स्त्री० =अलगनी।
विलदा—वि० [फा० बुलद] १ जो बुरी तरह पराजित या विफल हुआ हो। २ दे० 'बुलद'।
विलदना—अ० [हिं० विलद] १. नष्ट होना। २ हारना।
 स० १ नष्ट करना। २. हारना।
विलदा—वि० [हिं० विलदना] १ नष्ट-भ्रष्ट। २ पराजित। ३ भ्रष्ट या हीन चरित्रवाला।
विलद—पु० =विलद।
विलदता—वि० =विलवित।
विलदना—अ० [स० विलद] १ विलद करना। देर करना। २. ठहरना। रुकना।
 अ० =विरमना।
विलवी—पु० [?] एक प्रकार का बुश और उसका फल।
विल—पु० [स०/विल् (मेरन)+क] १. यमीन में, तल से नीचे

की ओर गया हुआ वह रेखाकार मार्ग या खाली स्थान जिसे क्रीड़े-मकोंड़े, चूहों आदि ने अपने रहने के लिए बनाया होता है।
बुहा—बिल्लू बूँडते फिरना = अपनी रखा का उपाय बूँडते फिरना। बहुत परेशान होकर अपने बचने की तरकीब बूँडना। (अर्थ)।
 पु० [अ०] १. वह पुरजान जिसमें उन वस्तुओं का विवरण तथा मूल्य लिखा रहता है जो किसी क ह्राथ बंधी गयी हो या, उन सेवाओं का विवरण हो जिनका पारिमयिक प्राय हो। प्रायक। २ दे० 'विधेयक'।
विलकना—अ० =विलकना।
विलकारी (रिग)—पु० [स० विल/कृ (करना)+णिनि, दीर्घ, तलोप] बूहा।
 वि० बिल में रहनेवाला।
विलकुल—अव्य० [अ० विल/कुल] १ जितना हो, उतना सब। कुल। सब। सारा। जैसे—उनका हिसाब विलकुल साफ कर दिया गया। २ निरा। निपट। जैसे—बहु भी विलकुल बेवकूफ है। ३ बिना कुछ भी बाकी छोड़े हुए। ४ कुछ भी। तनिक भी। जैसे—मैंने विलकुल देखा ही नहीं।
विलखना—अ० [स० विलक या विलाप] १ विलाप करना। रोना। २ रोते अथवा सतप्त होते हुए निरतर अपने दुःख की चर्चा करना। अ० [?] सकुचित होना। भिडुडना।
विलखाना—स० [हिं० विलखना का सं०] ऐसा काम करना जिससे कोई विलखे। बहुत ही दुःखी या सतप्त करना।
 †अ० =विलखना। उदा०—विकमित कज, कुमुद विलखाने—तुलसी।
विलग—वि० [हिं० विलगना] अलग। पृथक।
 पु० १. विलग अर्थान् अलग या पृथक होने की अवस्था या भाव। पार्थक्य। २ परकीय होने की अवस्था या भाव। परगयागन। ३. पार्थक्य आदि के कारण मन में होनेवाला कुमाय या दुर्भाव। उदा०—देवि कुरी कछु वियत सो विलगु मानव। तुलसी।
 कि० प्र०—मानना।
विलगना—अ० [स० विलग] अलग या पृथक होना।
विलगाऊ—वि० [हिं० विलग; आऊ (प्रत्य०)] अलग या पृथक करने-वाला।
विलगाना—अ० [हिं० विलग+आना (प्रत्य०)] अलग होना। पृथक होना। दूर होना।
 स० १ अलग या पृथक करना। २ चुनना। छानना।
विलगाव—पु० [हिं० विलग+आव (प्रत्य०)] विलग या अलग होने की क्रिया या भाव। अलगाव। पार्थक्य।
विलगी—पु० [देश०] एक प्रकार का मकर राग।
विलचलन—वि० =विलचलन।
विलछना—अ० [स० लछ] लछ करना। ताड़ना।
विलडना—अ० [स० विलडन] १ उलटा या विपरीत होना। उदा०—विधि ही विलडनी दीखनी है नियत नरकुल कर्म की।—सैषिकी शरण।
 २ लहस-नहस होना। विनष्ट होना। ३ परीक्षा, प्रयत्न आदि में विफल होना।
 †स० =विलडाना।

विलसना—सं० [हिं० विलसना] १. उलटा या विपरीत करना। २. तहस-नहस या विपत्त करना।
विलम्बी—स्त्री० [अं० विलम्बे] देर से भेजे जानेवाले माल की वह रहती है जिसे विलसाने पर पानेवाले को वह माल मिलता है।
विलम्बा—अ० [हिं० बेल्गा का अं०] बेला जाना।
विलम्बी—स्त्री० [हिं० विल] १. काली मीरी जो दीवारों या किचानों पर अपने रहने के लिए मिट्टी की बाँधी बनाती है। २. आँध पर होनेवाली मुहाजनी नाम की फूसी।
विलम्पना—अ० [सं० विलाप] विलाप करना। रोना।
विल-फर्न—अव्य० [अं०] यह फर्न करते हुए। यह मान कर।
विलफेल—अव्य० [अं०] वर्तमान अवस्था में। इस समय। अभी। संप्रति।
विल-कलाना—अ० [अनु०] १ छोटे-छोटे कीड़ों का इधर-उधर रेंगना। २. विकल होकर बे-सिर पैर की बातें करना। प्रलाप करना। ३ विलाप करना। रोना-विलसाना। ४. दे० 'बलकलाना'।
विलम्बा—पुं० = विलंब।
विलसना—अ० [सं० विलस] विलस करना। देर करना।
 अ० [सं० विरमण] किसी के प्रेम-पाश में बंधकर कहीं ठहर या रुक जाना।
विलमना—सं० [हिं० विलमना का सं०] १. ऐसा काम करना जिससे कोई विलने। उदा०—भाव बुद्धि के सोपानों में विलमाये न हृदय मन।—यत्न।
 सं० [सं० विरमण] किसी को अपने प्रेम-पाश में बंधकर ठहरा या रोक रखना।
विलसना—अ० [सं० विलाना अथवा अनु०] १ विलसकर रोना। विलाप करना। २ विकल होकर असबद्ध प्रलाप करना।
विलसला—वि० [हिं० लल्ला (बच्चा) का अनु०] [स्त्री० विलस्ली] जिसे कुछ भी बुद्धि या साडर न हो। निरा मूर्ख।
विलसवाना—सं० [हिं० विलाना का सं०] १ विलीन कराना। २ गुम कराना। खोवाना। ३ नष्ट या बरबाद कराना। ४ छिपवाना। लुकवाना।
 सय० कि०—देना।
 सं० [हिं० बेल्गा का सं०] किसी से बेल्गे का काम कराना।
विलबारी—स्त्री० [०] बुदेलखंड में कुआर में गाया जानेवाला एक प्रकार का गीत।
विल-भास—वि० [सं० व० सं०] दे० 'विलकारी'।
विलभासी (सिर) —वि० [सं० विल/वस् (निवास) + पिति, दीर्घ, नलोप] दे० 'विलकारी'।
विलसाय—वि० [सं० विल/शी (शयन करना) + अच्] विल में रहने-वाला।
 पु० विल में रहने वाला जन्तु।
विलसायी (यित) —वि० [सं० विल/शी (शयन रना) + पिति, दीर्घ नलोप] विल में रहनेवाला।
विलसना—अ० [सं० विलसन] विशेष रूप से शोभा देना। बहुत मला जाय पड़ना।
 सं० उपयोग में लाना। भोग करना। भोगना। जैसे—संपत्ति या सुख विलसना।

विलसना—सं० [हिं० विलसना का सं०] किसी को विलसने में प्रवृत्त करना।
विलस्ता—पुं० = बालिस्त।
विलहूरा—पुं० [हिं० बेल ?] बाँस की पतली तीलियों का बना हुआ एक प्रकार का छोटा डिब्बा जिसमें पान के बीड़े बनाकर रखे जाते हैं।
विला—अव्य० [अं०] विना। बगैर।
विलाई—स्त्री० [सं० विडाल] १. विल्ली। २. सिटकनी। ३. तंत्रों की परिभाषा में, बुटी बुद्धि। कुबुद्धि। ४. दे० 'विलेया'।
विलाई कंद—पुं० = बिहारी कंद।
विलाना—अ० [सं० विलायन] १. विलीन होना। न रह जाना। २. नष्ट या बरबाद हो जाना। ३. छिपना। लुकना।
विलायना—अ० [सं० विलाप] विलाप करना।
विलार—पुं० [सं० विडाल] [स्त्री० विलारी] विल्ला। मार्जार।
विलारी—स्त्री० = विल्ली।
बिलारी कंद—पुं० [सं० बिहारी कंद] एक प्रकार का कंद। दे० 'बिहारी कंद'।
विलाब—पुं० दे० 'विलार'।
विलाबर—पुं० = विल्ली।
विलाबल—पुं० [देश०] घाबन-सपूर्ण जाति का एक राग जो रात के पहले पहर में गाया जाता है।
विलासलानी टोड़ी—स्त्री० [विलास खाँ (व्यक्ति) + हिं० टोड़ी] सगीत में एक प्रकार की टोड़ी रागिनी।
विलासना—सं० [सं० विलसन] १. भोग करना। भोगना। २. विलास या आनंद-भोग करना।
विलिखी—स्त्री० [मलाया० बलिबा] एक प्रकार की कमरल का फल या उसका पेड़।
विलियड—पुं० [अं०] एक तरह का पाश्चात्य खेल जो लाल, सफेद तथा वितकनरे रंग के तीन गेंदों और लकी छडियों की सहायता से एक विशेष आकार-प्रकार की मेज पर खेला जाता है।
विलिया—स्त्री० [देश०] गाय, बैल आदि के गले की एक बीमारी।
 स्त्री० हिं० बेला (कटोरा) का अल्प० स्त्री०।
विलिशा—पुं० [०] १ मछली फँसाने का काँटा। २. उक्त में लमाया जानेवाला चारा।
विलुठना—अ० = लोटना।
विलुलित—वि० [सं० विलुलित] अस्तव्यस्त। उदा०—विलुलित अलक धूरि-भूतर तन, गमन लोट भुव आवनि ?—रुलित किशोरी।
विलूरी—पुं० = विल्ली।
विलेया—स्त्री० = [हिं० विल्ली] १. विल्ली।
 पद—विलेया बंधवत्=केवल विलाने के लिए विल्ली की तरह बहुत ही धुंकर किया जानेवाला नमस्कार। विलेया भवत्=वह जो केवल दूसरों को विलाने के लिए मस्तों का हाथ बेच धारण किये हो।
 २. लकड़ी का वह छोटा टुकड़ा जो अन्दर से दरवाजा कसने के लिए लमाया जाता है और आवश्यकानुसार उठायी तथा गिराया जा सकता है। काठ की सिटकनी। कुत्ता। ३. कुएँ में गिरा हुआ बरतन आदि निकालने का काँटा जो प्रायः लोहे का बनता है। ४. कदू, कषा। (देखें)

बिलोकना—सं० [सं० बिलोकन] १. अच्छी तरह या ध्यानपूर्वक देखना।

२. जीव-पशुपाल करने के लिए अच्छी तरह देखना।

बिलोकन—स्त्री० [सं० बिलोकन] देखने की क्रिया या भाव। कटाक्ष। मुष्टिपात।

बिलोडना—सं०=बिलोना।

बिलोना—वि० [सं० वि + लावण्य] =बिलोना।

बिलोना—सं० [सं० बिलोडन] १. किसी तरल पदार्थ में कोई चीज डालकर अच्छी तरह हिलाना। २. धपोलना। ३. बीजे इषर-उषर करना। अस्त-व्यस्त करना। ४. (औषु) गिराना या बहाना।

वि० [हिं० वि + लोभ = नमक] [[स्त्री० बिलोनी] १. जिससे नमक न पड़ा हो। बिना नमक का। अलोना। उदा०—लोभिन बिलोनि तहाँ को कहाँ—जायसी। २. लावण्य या सौन्दर्य से रहित। कुरूप। मद्दा। ३. नीरस। फीका।

बिलोरना—सं०=बिलोना।

बिलोरना—अ० [सं० बिलोरना] इषर-उषर लहूरे मारना।

सं० इषर-उषर हिलाना। लहराना।

बिलोचना—सं०=बिलोना।

बिलोर—पुं०=बिलोर।

बिल्कूल—अव्य०=बिल्कूल।

बिल्मुक्ता—वि० [अ० बिल्मुक्त]। सब फुटकर मर्दों को मिलाकर एक में किया हुआ। जैसे—आय बिल्मुक्ता सी छपए रैं, सब हिसाब साफ हो जायेंगे।

पुं० मध्ययुग में लगान का बहु प्रकार जिसमें सब मर्दों के लिए एक साथ कुछ निश्चित रकम दे दी जाती थी।

बिल्वा—पुं० [सं० बिडाल] [स्त्री० बिल्ली] बिल्ली का नर।

पुं० [म० पटल ?] कपड़े आदि की वह चौड़ी पट्टी जो कुछ विधिगत प्रकार का काम करनेवाले लोग अपनी पहचान के लिए छाती पर लगाते या बाँह पर बाँधते हैं। जैसे—स्वयं-सेवाकों का बिल्वा, कुलियो या चपरासियों का बिल्वा।

बिल्ली—स्त्री० [सं० बिडाल, हिं० बिलार] १. चीते, भेर आदि की जाति का, पर ओंशया बहुत ही छोटे आकार का एक प्रसिद्ध जन्तु जो प्रायः घरों में पाया जाता है।

मुहा०—बिल्ली के गले में घंटों बाँधना—किसी काम का सबसे कठिन अथवा पूरा या संपादित करना।

२. किनाड़ा की सिटकिनी जिसे कौड़े में डाल देने से छकेले पर किनारा नहीं खुल सकता। ३. भारतीय नदियों में पाई जानेवाली एक प्रकार की मछली।

बिल्ली लोटन—स्त्री० [हिं० बिल्ली + लोटन] एक प्रकार की बूटी जिसकी गंध से बिल्ली मस्त होकर लोटने लगती है।

बिल्कूर—पुं०=बिलोर।

बिल्लोर—पुं० [सं० बैट्रियं प्रा० बेल्गिरि मि० फा० बिल्कूर] [वि० बिल्लोरी] १. एक प्रकार का स्क्वॉड संकेद पत्थर जो क्षीसे के समान पारदर्शी होता है। स्फटिक। (फ्लिट्ज) २. उक्त की तरह स्क्वॉड और बक्षिण क्षीया।

बिल्लोरी—वि० [हिं० बिल्लोर] १. बिल्लोर-संबंधी। २. बिल्लोर पत्थर

का बना हुआ। ३. बिल्लोर की तरह चमकीला संकेद और स्क्वॉड। जैसे—बिल्लोरी वृत्तियाँ।

बिल्ब—पुं० [सं०] बेल का वृक्ष और फल।

बिल्बपत्र—पुं० [सं०] बेल के वृक्ष के पत्तों को पवित्र मानकर शिवजी पर चढ़ाये जाते हैं।

बिल्हण—पुं० [सं०] कश्मीर का एक प्रसिद्ध कवि जिसने विष्णुकांक्ष देव चरित की रचना की थी।

बिबरना—सं० [सं० बिबरण] १. एक में उलझी या गुथी हुई वस्तुओं को अलग-अलग करना। सुलझाना। जैसे—कभी से तिर के बाल बिबरना। २. पूरा बिबरण देना या बतलाना। ३. साफ करना। स्क्वॉड करना। उदा०—बिबरनी काया, पाबी सिद्धि—गोर्खनाय।

अ० १. सुलझाना। २. बिबरण से युक्त या विलुप्त होना।

बिबरना—सं० [हिं० बिबरना क प्रे०] १. आपस में उलझी या गुथी हुई चीजों को अलग अलग कराना। सुलझाना। जैसे—बाल बिबरना। २. बिबरण सहित वर्णन कराना।

बिबसाई—पुं०=ब्यवसायी।

बिबाई—स्त्री० [सं० विपादिका] एक रोग जिसमें प्राय जाड़े के दिनों में घेरे के तलपुए का चमड़ा फट जाता या उसमें छोटे-छोटे घाव हो जाते हैं।

बिबाना—पुं०=बिमान।

बिबाप—पुं० [अ०] मसीही धर्म का आचार्य।

बिबनी—पुं०=बिसनी।

बिबाना—पुं०=बिषाण।

बिबारा—वि० [सं० विप + आर (प्रत्य०)] जहरीला। विषाक्त।

बिबिया—स्त्री०=बिषया।

बिसब—पुं० [सं० बिसबय] १. सचय का अभाव। वस्तुओं की समाल न रचना। २. उपेक्षा। लापरवाही। ३. कार्य में होनेवाली बाधा या हानि। ४. अनामालिक या अशुभ बात की आशंका।

बिसंभर—वि० [सं० वि + हिं० संभार] १. जो ठीक स्थिति में रहू या समल न सके। २. (व्यक्ति) जो अपने आप को संभाल न सके। असावधान। ३. मामालिक। बेहोश। उदा०—राधी मारा बीजुरी। बिसंभर कष्ट न सभार—जायसी।

बिसंभर—पुं०=बिषवम्भर।

बिसंभार—वि० [सं० वि + हिं० संभार] जिसे तन-बदन की सबर न हो। मामालिक।

बिस—पुं० [सं० बिष] जहर। विष।

बब—बिस की गाँठ—ऐसा पदार्थ या व्यक्ति जिससे सदा बहुत बड़ा अपकार, अहित या हानि ही होती हो। बहुत अधिक अनर्थों, दोषों आदि का मूल।

बिसकरमा—पुं०=बिषवकर्मा।

बिसकुसुम—पुं० [मध्यम० सं०] पद्म पुष्प।

बिस-अपरा—पुं० [सं० बिष + अपर] १. मोह की जाति का एक विषैला सरोसुप जंतु। २. एक प्रकार की जड़ी या बूटी जिसकी पत्तियाँ बन-गोभी की सी पर कुछ अधिक हरी और लंबी होती हैं। ३. गवहपूरना। पुनर्ना।

विश्वनाथ— $\mu\text{ं} =$ विश्वनाथ ।
 विश्वनाथका— $\mu\text{ं} =$ विश्वनाथका ।
 विश्वती—स्त्री० [विश्व] बेवार। (हि०)
 विश्वतरणा—स० [सं० विश्वतरण] विस्तार करना। बढ़ाना। फैलाना ।
 अ० = विस्तृत होना ।
 विश्वतारा— $\mu\text{ं} =$ विस्तार ।
 विश्वचार— $\mu\text{ं} =$ विस्तार ।
 विश्वर्षा— $\mu\text{ं} =$ विश्वास ।
 विश्वाना— $\mu\text{ं} =$ विश्वास ।
 विश्वनी—वि० [सं० विश्वनी] १ जिसे किसी बात का विश्वास हो ।
 किसी काम या बात का चौकीन ।
 पृ० १. छेला । २ दुर्व्यसनी । ३. वैद्यनाथमी । रबीबाज ।
 विश्वनाथ— $\mu\text{ं} =$ [सं० विश्वनाथ] १. आश्चर्य । हाजिरबाज । २. दुःख । रंज ।
 —हृष्य समय विश्वनाथ कत कीजे ।—मुहुरी ।
 विश्वमरणा—स० [सं० विश्वमरण] विस्मृत करना । मूल जाना ।
 विश्वमर्षा— $\mu\text{ं} =$ विश्वमर्ष ।
 विश्वमाद— $\mu\text{ं} =$ विश्वास । उदा०—तहँ विश्वमाद बीच मुख सोहै ।—
 नूर मुहम्मद ।
 विश्वमिल—वि० = विश्वमिल ।
 विश्वमिल्ला (ह) —अव्य० = विश्वमिल्लाह ।
 विश्वमय— $\mu\text{ं} =$ [सं० विश्वमय] १ देश । प्रदेश । २. छोटा राज्य । रिया-
 सत ।
 विश्वराना—अ० [सं० विश्वरान, प्रा० विश्वरान, विस्स] विस्मृत होना ।
 भूलना ।
 स० विस्मृत करना । भुला देना ।
 विश्वरानत— $\mu\text{ं} =$ [सं० विश्वरान] अचर ।
 विश्वराना—स० [हि० विश्वरान] विस्मृत करना । भुला देना ।
 विश्वराम—वि० = विश्वराम ।
 विश्वरामी—वि० [सं० विश्वराम] १. विश्वराम करने या देनेवाला । २.
 सुखद । ३. किसी के साथ रहकर सुख भोगनेवाला ।
 विश्वरामनाथी—स० = विश्वराना ।
 विश्वर्षा— $\mu\text{ं} =$ विश्वास ।
 *स्त्री० = वैश्या ।
 विश्ववार— $\mu\text{ं} =$ [सं० विश्ववार] + हि० वार (प्रत्य०)] वह पेटे जिसमें
 नाई हुआमत का सामान रखते हैं । किसमत ।
 विश्ववास— $\mu\text{ं} =$ विश्वास ।
 विश्ववासी—वि० [सं० विश्ववासिन्] [स्त्री० विश्ववासिनी] १. जो विश्वास
 करे । २. जिस पर विश्वास हो । विश्वसनीय ।
 वि० [सं० विश्ववासिन्] १. जिस पर विश्वास न हो । २. विश्वास-
 नाशी । उदा०— $\mu\text{ं}$ यह पेट भएउ विश्ववासी ।—जायसी ।
 विश्वसना—स० [सं० विश्वसन्] विश्वास करना ।
 स० [सं० विश्वसन्] १. भार डालना । बध करना । सत्य करना ।
 २. शरीर के अंग काटना । ३. काटकर टुकड़े टुकड़े करना ।
 विश्वसाहना—स० = विश्वास ।
 विश्वहर— $\mu\text{ं} =$ विश्वहर (सौ) ।

वि० = विश्वास (जहरीला) ।
 विश्वहरा— $\mu\text{ं} =$ [हि० विश्वहरा + क (प्रत्य०)] मील देनेवाला ।
 शरीरदार । ब्राह्म ।
 विश्वहिनी—स्त्री० [?] एक प्रकार की बिरिया ।
 विश्वा— $\mu\text{ं} =$ विश्वास ।
 विश्वार्षा— $\mu\text{ं} =$ वैशाख ।
 स्त्री० = विश्वाक्षा (मन्त्र) ।
 विश्वास—स्त्री० [अ०] १. वह कपड़ा या बटई जिस पर छोटे टुकान-
 दार बिक्री की चीजें फैलाकर रखते हैं । २. वह कपड़ा, कागज आदि
 जिस पर चीपड़, शतरंज आदि खेलने और मोटियों, मोहरों आदि रखने
 के लिए खाने बने होते हैं । ३. धन संपत्ति, आदि के विचार से होनेवाला
 सामर्थ्य । ओकात । बिन्ना । हृषियत । ४. पास में होनेवाला धन ।
 जमा । पूंजी । ५. शारीरिक शक्ति, योग्यता आदि के विचार से होने-
 वाला सामर्थ्य । ६. कुछ पहण या धारण करने के विचार से होनेवाला
 सामर्थ्य । समार्थ ।
 विश्वास-खाना— $\mu\text{ं} =$ [अ० विश्वातखान] १. बिसाती की दुकान ।
 २. बिसाती की दुकान पर बिकनेवाले सामानों का समूह ।
 विश्वातखाना— $\mu\text{ं} =$ [हि०] वे सब सामान जो बिसातियों की दुकानों
 पर मिलते हैं ।
 बिसाती— $\mu\text{ं} =$ [अ०] १. वह जो विश्वात पर सामान फैलाकर बेचता
 हो । २. सूई, तागा, बटन, साबुन, तेल आदि फुटकर सामान बेचने,
 वाला दुकानदार ।
 बिसाता—अ० [सं० वरा] बरा चलना । काम या जोर चलना ।
 अ० [सं० विश्व-विश्व-ना (प्रत्य०)] विश्व का प्रभाव करना ।
 जहर का असर करना । जहरीला होना ।
 स० विश्व से युक्त या जहरीला करना ।
 स० = विश्वाहना (मोल लेना) ।
 विश्वाबंध—वि० [सं० वसा + मज्जा, चरबी + गंध] सबी मछली या
 मांस की-सी गंधवाला ।
 विश्वारवा— $\mu\text{ं} =$ विश्वावाद ।
 विश्वारना—स० [हि० विश्वरान] स्मरण न रखना । ध्यान में न
 रखना । विस्मृत करना । भुलाना ।
 संयो० कि० = देना ।
 विश्वारा—वि० [सं० विश्वाह] [स्त्री० बिसाती] विश्व भरा । विश्वा-
 हत । जहरीला ।
 पृ० = विश्वायें ।
 विश्वास— $\mu\text{ं} =$ १ = विश्वास । २. दे० 'विश्वासपात' ।
 विश्वासी—वि० [अ० विश्ववासिन्] [स्त्री० विश्वासिनी, विश्वासिनी]
 १ जिस पर विश्वास न किया जा सके । २. कपटी । धोखेबाज ।
 पृ० [सं० विश्व-अविश्वसिन्] विश्व का प्रसक्त, अर्थात् काल ।
 विश्वाह— $\mu\text{ं} =$ [सं० विश्वसाय] विश्वाहरी की किया या भाव ।
 † विश्वास । (पविचम)
 विश्वाहव— $\mu\text{ं} =$ [हि० विश्वाहना] मोल लेने की वस्तु । काम की वह
 चीज जो सदीवी जाय । लौहा ।
 विश्वाहना—स० [हि० विश्वाह] १. धाम देकर कोई वस्तु लेना ।

श्रय करना। खरीदना। २ जान-बूझकर अपने पीछे या साथ लगाना। जैसे—किसी से बैर विशाहना।

पु० १ विशाहने की क्रिया या भाव। २. मोल लेना। खरीदना। उदा०—पुरा किया विशाहना बहुत न आवै हूँ।—कबीर।

विशाहनी—स्त्री० [हि० विशाहना] १ श्रय-विक्रय का काम। व्यापार। २ मोल ली जानेवाली चीजें।

विशाहा—पु० [हि० विशाहना] वह वस्तु जो मोल ली जाय। सीदा।

विशिअर*—पु०—विशयः।
*वि० विशास्त।

विशिल्ल†—पु०—विशाल (सीर)।

विशिअर†—पु०, वि०—विमिश्रः।

विस्तुहर्मा†—पु०—विस्तुहर्मा।

विस्तुनगा—अ० [हि० मुरकना, मुनकना] खाने के समय किसी अन्न-कण का कण के बदले नासिका के उपरी छिद्र में चला जाना।

विस्तुनी—स्त्री० [स० विष्णु] अमरवेलः। (अनेकार्थ)

वि०—विसनी।

विस्तुवा†—पु०—विस्त्वा।
*स्त्री० देवता।

विस्तुरा—अ० [स० विस्तुरा—शोक] १ सांच करना। चिन्ता करना। श्लेद करना। मन में दुःख मानना। २ मन में दुःख होने पर निरंतर कुछ समय तक धीरे-धीरे रोते रहना। उदा०—(क) ना भेटे पथ, न पवि बल, मैं अपथ, पिय दूर। उड न सकूं, गिर गिर पड़ूं, रडूं बिमूर बिमूर। (ख) गिस्तू से मछाहरो रो रोवे कोई विस्तुर।—नबीर।

पु० १ बिमूरने की क्रिया या भाव। २ चिन्ता। फिक्र। उदा०—लालची लबार बिलकल द्वारे द्वार, दीन बदन मलीन मन भिटै ना बिस्तुरा।—तुलसी।

विसेक—वि०, पु०—विशेष।

विसेल—वि०—विशेष।

पु० विशेषता। उदा०—इन नैनन का गहो विसेल। बहु भी देखा, यहू भी देख। (कहा०)।

विसेलता†—स्त्री०—विशेषता।

विसेलना—अ० [स० विशेष] १ विशेष प्रकार से वर्णन करना। अतिवार वर्णन करना। विशेष रूप से कहना। विकृत करना। २ विशिष्ट रूप से निर्धारित या निश्चित करना। ३ विशिष्ट रूप से जान पड़ना या प्रतीत होना।

विसेवा†—पु० [स० विशेष] अधिकता अथवा विशिष्ट रूप में होने-वाला कोई काम, चीज या बात। उदा०—शोषी, शरारत, मकओ फन सब का विसेवा है यहाँ।—कोई शायर।

विसेन—पु० [?] सत्रियों की एक शाखा जिसका राज्य किसी समय वर्तमान गोरखपुर के आस-पास के प्रदेश से नैपाल तक था।

विसेवक—पु० [स० विशेषक] माथे पर लगाया जानेवाला टीका या तिलक।

विसेसा†—पु०—विशेष।

विसेतर†—पु०—विश्वेत्तर।

विसेवा†—वि० [हि० विशायेव] १ विशायेव से युक्त। उदा०—कर्मल विसेव ली मन लावा।—जायसि। २ जिसमें से विशायेव अर्थात् सबे भास या मछली आदि की-सी मध निकल पड़ी हो।

विसेला†—पु० [स० विष] उंगली पर होनेवाला एक प्रकार का जह-रीला घाव या फोड़ा।

वि०—विषेला (जहरीला)।

विसेसा—वि० [स्त्री० विसेसी]—विशेष।

विसेला*—वि० [स० विशोका] शोक-रहित।
पु०—अशोक (वृक्ष)।

विस्तुट—पु० [अ०] एक प्रकार का बस्ता मीठी या तमकीन टिकिया जो आटे को दूध में सानकर तथा उसमें धीं, बीनी (या नमक) आदि मिलाकर और साँवों में भरकर तथा मट्टी में सेककर पकाई जाती है।

विस्तर—पु० [स० विस्तर से का०] बैठने, लेटने आदि के लिए बिछाया जानेवाला कपड़ा। बिछावन। बिछाना।
पु०—विस्तार।

विस्तरना—अ० [स० विस्तरण] इधर-उधर बढना। फैलना।
स० १ विस्तृत करना। फैलाना। २ विस्तारपूर्वक वर्णन करना।

विस्तरबद—पु० [का०] कैनबस आदि का बना हुआ एक प्रकार का आधान जिसमें यात्रा के समय विस्तर बाँधकर ले जाया जाता है। (होलडाल)

विस्तरा†—पु०—विस्तर (बिछाना)।

विस्तरा†—पु०—विस्तार।

विस्तरा—स० [स० विस्तारण] १ विस्तृत करना। फैलाना। २ विस्तारपूर्वक वर्णन करना।

विस्तुप्रदा—स्त्री० [हि० विप। तुना—(टकना, वृत्ता)] छिपकली। गृहगोष्ठा।

विस्त्वाना—स० [स० विस्तरण] १ विस्तृत करना। मूलना। २ सदा के लिए छोड़ना। त्यागना।

विस्त्वल—वि० [का०] १ जवह किया हुआ। २ आहत। धायल। जस्दी।

विस्त्वला—अव्य० [अ० विस्त्वलाह] ईश्वर का नाम लेकर या लेते हुए (कोई कार्य आरम्भ करने समय)।
पु० १ कुरान की एक आयत जिसका अर्थ है—मैं उस ईश्वर का नाम लेकर प्रार्थन करता हूँ जो बड़ा दयालु और महाकृपालु है। २ ईश्वर का नाम लेकर किसी काम या बात का किया जानेवाला आराम। शुमारम। ३ उक्त पर कहेते हुए किसी पशु की हत्या करने की क्रिया या भाव। (मुसलमान)

विस्त्वाम*—पु०—विश्राम।

विस्त्वा—पु० [हि० बीसवा] जमीन की एक नाप जो एक बीघे का बीसवाँ भाग है।

पद—बीस विस्वे—(क) बहुत अधिक सचम है कि। जैसे—मैं तो समझता हूँ कि बीस विस्वे वे अवश्य यहाँ आयेंगे। (ख) निश्चित रूप से। अवश्य। निःसन्देह। उदा०—बीस विस्वे व्रत मम भयो, सो कही अब केसव को धनु तावे।—केसव।

विस्त्वावार—पु० [हि० विस्त्वा। का० दार] १. हिस्सेदार। पट्टीदार।

२. मध्ययुग में, किसी बड़े जमींदार के अर्धीन रहनेवाला छोटा जमींदार।

विश्वनाथ—पु० = विश्वनाथ।

बिहृणा—पु० = बिहृण (पत्नी)।

बिहृणस—पु० = बिहृण (पत्नी)।

वि० = बेहगम (बेहब या महा)।

बिहृडना—स० [सं० बिघटना, प्रा० बिहृडन] १ लड़-लड़कर डालना।

तोड़ना। २ काटना-छोटना या चीरना-काड़ना। ३ जोर से हिलाना।

झकझोरना। उदा०—भाइ धार अपार वेग सो बायु बिहृड़ित।

रत्ना०। ४. भार डालना। बच करना। ५. नष्ट या बर्बाद करना।

बिहृंसना—अ० [सं० बिहृसन] १. मंद मंद हंसना। मुस्कुराना। २

हंसना। ३. फूलों आदि का खिलना। ४. प्रफुल्लित या प्रसन्न होना।

बिहृंसाना—अ० = बिहृंसना।

†स० = हंसाना।

बिहृंसोही—वि० [हिं० बिहृंसना] हंसता हुआ।

बिहृा—पु० [सं० बिधि] विधाता। उदा०—छत्रपति गयद हरि हस

गति, बिहृ बनाय सचै सचिय।—बदबदरवाई।

पु० [सं० बिद्ध या वेध] किसी चीज में किया हुआ छेद। जैसे—

नथ पहनने के लिए नाक का या बाही पहनने के लिए कान का बिहृ;

भूंगे या मोती को पिरोने के लिए उसमें किया जानेवाला बिहृ।

बिहृणा—पु० = बिहृण।

बिहृडना—अ०, स० = बिहृटना।

बिहृतर—वि० = बेहतर।

बिहृतरी—स्त्री० = बेहतर।

बिहृा—वि० = बेहद।

बिहृबल—वि० = बिहृबल।

बिहृरना—अ० [सं० बिहृरण] बिहृार करना। घूमना। फिरना।

सैर करना।

स० [सं० बिघटन, प्रा० बिहृडन] १ फटना। दरकना। विदीर्ण

होना। २ टूटना-फूटना।

स० १ फाड़ना। २. तोड़ना-फोड़ना।

बिहृराना—स० [हिं० बिहृरना] बिहृरने में प्रवृत्त करना।

†अ० = बिहृराना।

बिहृरी—स्त्री० = बेहरी (चदा)।

बिहृण—पु० [?] ओडव-सम्पूर्ण जाति का एक राग जो आधी रात के बाद लगभग २ बजे के गाया जाता है। यह हिंडोले राग का पुत्र भी माना जाता है।

बिहृणगा—पु० [सं० बिहृण] संगीत में बिहृण राग का एक प्रकार या

मेद।

बिहृणा—पु० [सं० बिभात; प्रा० बिहाड, बिहाण] १. सवेरा। प्रातः

काल। २. आनेवाला दूधर दिना। आगामी कल।

पु० = बिघान।

बिहृना—स० [सं० बि+हा=छोड़ना] छोड़ना। त्यागना।

अ० = बिताना (अर्थात् करना)।

बिहृार—पु० [सं० बिहृार] १. गणतंत्र भारत का एक राज्य जो उत्तर

प्रदेश, मध्यप्रदेश, बंगाल और आसाम राज्यों से घिरा है। २. दे० 'बिहृार'।

बिहृराना—अ० [सं० बिहृरण] बिहृार करना।

बिहृरी—पु० [हिं० बिहृरी] बिहृार राज्य का निवासी।

स्त्री० बिहृार की बीड़ी।

वि० १. बिहृार-सम्बन्धी। बिहृार का। २. बिहृार में होनेवाला।

बिहृाल—वि० = बेहाल।

बिहृाला—पु० [हिं० बिहृाल] १. व्यवसाय। २. व्यवसायी। व्यापारी।

बिहृा—पु० = बिधि (बहृार)।

बिहृित—वि० = बिहृित।

बिहृित्त—पु० [फा०] स्वर्ग। बैकुण्ठ।

बिहृित्तो—वि० [फा०] १ बिहृित्त या स्वर्ग-सम्बन्धी। स्वर्गीय। ३.

स्वर्ग में होने या रहनेवाला।

पु० स्वर्ग का वासी।

†पु० = मिहृती।

बिहृी—स्त्री० [फा०] १ एक प्रकार का पेड़ जिसके फल अमरुद

में मिलते-जुलते हैं। २. उक्त पेड़ का फल। ३ अमरुद। (अम०)

स्त्री० [फा०] मलाई।

यद—बिहृीस्वाह—शुभ चिह्नक। हितैषी।

बिहृीषाणा—पु० [फा०] बिहृी नामक फल का बीज जो दवा के काम

में आता है।

बिहृीना—वि० = बिहृीन।

बिहृा—वि० [सं० द्वि] दो। उदा०—कनक बेलि बिहृापान किरि।—

प्रियीराज।

बिहृंसना—अ० = बिहृंसना।

बिहृरना—अ० = बिघटना (बिहृरना)।

बिहृण—वि० = बिहृीन।

बिहृेरणा—अ० = बिहृडना।

बींस—पु० [?] चना।

बींडा—पु० [?] घेरा। (राज०)

बींड—पु० १. = बीडा। २. = बीडा।

स्त्री० = बीड़।

बीड़ा—पु० [?] [स्त्री० अलया० बीड़ी] १. पेड़ की पतली टहनियों

से बुनकर बनाया हुआ मेढरे के आकार का लंबा नाल जो कण्ठे कुएँ में

भगाड की मजबूती के लिए लगाया जाता है। २ धान के पयाल को

बुन और लपेटकर बैठने के लिए बनाया हुआ गोला आसन। ३ धास

आदि को लपेटकर बनाई हुई गेदरी जिस पर बड़े रजते जाते हैं। ४.

किसी चीज को लपेटकर बनाया हुआ गोला पिंड। लुडा। ५. कोई

चीज बांध या लपेटकर बनाया हुआ बोझ।

बीड़ीषाणा—पु० [हिं० बीड़ी] तीन बैलवाली गाड़ी में सबसे आगे जाता

हुआ बैल।

बीड़ी—स्त्री० [हिं० बीड़ा] १. वह मोटी और फण्डे आदि में लपेटे

हुई रस्ती जो उस बैल के आगे गले के सामने छाती पर रहती है जो

तीन बैलों की गाड़ी में सबसे आगे रहता है। २ रस्ती या सूत की वह

पिंडी जो लकड़ी या किसी और चीज के ऊपर लपेटकर बनाई जाती

है। ३. वह लकड़ी जिस पर उक्त प्रकार से सूत लपेटा जाता है।
४. बोगस के नीचे रखने की गेदुरी।

बीजना—स० [स० विद्] अनुमान करना।
स०=बीजना।

बीजन—स्त्री० [हिं० बीजना] १ बीजने की क्रिया या भाव। २ बीजने पर पढ़नेवाला चिह्न या निशान। ३ कठिनता। दिक्कत। उदा०—उसने अपनी कुछ बीजने गिनवाई। बुद्धावलनकल बर्मा।

बीजना—स० [स० विद्] १. किसी बीज में आर-पार छेद करने के लिए उसमें नोकदार बीज गडाना या घँसाना। विद्द करना। छेदना। जैसे—कान बीजना, मोती बीजना। २ ऊपर से छेद करके अन्दर गडाना या घँसाना। जैसे—किसी के शरीर में तीर बीजना। ३. बहुत ही चुभती या लगती हुई बात कहना। ४. उलझाना। फँसाना। (ब०)
अ० १. विद्द या आवद्ध होना। २. फँसा या उलझा रहना।

बी—स्त्री० [फ्रा० बीवी का संज्ञित रूप] दे० 'बीवी'। उदा०—बड़ी बी, आपकी क्या हो गया है?—अकबर।

बीका—वि० [स० बक] टेडा। बक।

बुहा—शाल तक बीका न होना—कुछ भी कष्ट या हानि न पहुँचाना।

बीका—पु० [?] पद। कदम। डग।
पु०=विष।

बीज—पु० [सं० बूक] [स्त्री० बीजिन] मेडिया।

बीजना—स० [स० विक्रियण] १ छितराना। बिखेरना। २ फेंकना।

बीजहाटी—स्त्री० [हिं० बीधा+टी (प्रत्य०)] बहु लगान जो बीधे के हिसाब से लिया जाता हो।

बीधा—पु० [स० विउगह, प्रा० विगह] खेत मापने का एक बर्ग-माप जो बीस बिस्ते का होता है। एक एकड़ का ढ़ैर्धा भाग।

बीध—पु० [स० विष्-अलग करना] १. किसी वस्तु का वह केन्द्रीय अथवा भाग जहाँ से उसके सभी छोर समान दूरी पर पड़ते हों। २. किसी वस्तु के दो छोरों के मीटर का कोई बिन्दु या स्थान। जैसे—पाथी से दिल्ली जाते समय इलाहाबाद, कानपुर और जयलखी बीध के पड़ते हैं।

पद—बीध खेत—(क) खुले मैदान। सबके सामने। प्रकट रूप में। (ख) निश्चित रूप में। अवश्य। **बीध बीध में**—(क) रह-रहकर। थोड़ी थोड़ी देर में। (ख) थोड़ी थोड़ी दूर पर।

१२. जगह। स्थान। जैसे—वहाँ तिल पड़ने की बीध नहीं है। ३. अन्तर। फरक।

क्रि० प्र०—डालना।—पहना।

मुहा०—**बीध डालना** या **पारना**—पार्थक्य या मेद उत्पन्न करना। **बीध रखना**—मन में पार्थक्य का भाव रखना। दूसरा या परया सम-झना।

४. दो पक्षों में झगडा या विवाद होने पर उसे निपटाने के लिए की जाने वाली मध्यस्थता।

पद—**बीध बचाव**—दो त्रिदोशी पक्षों के बीच में आकर दोनों पक्षों के हितों की जो जानेवाली रखा।

मुहा०—**बीध करना**—(क) लड़नेवालों को लड़ने से रोकने के लिए

अलग-अलग करना। (ख) दो दलों या पक्षों का आपस का झगडा निपटाना।

५. दो वस्तुओं या खंडों के बीच का अन्तर या अन्तराल। दूरी।
मुहा०—(किसी को) **बीध मान** या **रखकर**—(क) किसी को मध्य-स्थ बनाकर। (ख) किसी को साक्षी बनाकर। जैसे—द्वैत को बीध मानकर प्रतिज्ञा करना। **बीध में बुद्धा**—अनावश्यक रूप में हस्तक्षेप करना। व्यर्थ टाँग अडाना। **बीध में पटना**—(क) झगडा निपटाने के लिए मध्यस्थ बनना या होना। पंच बनना। (ख) किसी का जमानतदार या जिम्मेदार बनना।

६. अबरार। मोका। उदा०—चतुर् गैरीर राम महतारी। बीध पाइ निज बात सवारी।—मुलसी।

अव्य० दरमियान। अन्दर। में।

स्त्री०—बीधि(लहर)।

बीधु—पु०=बीध।

बीधोबीध—क्रि० वि० [हिं० बीध] बिलकुल बीध में। जैसे—सड़क के बीचों बीच नहीं चलना चाहिए।

बीछना—स० [स० विचयन] १. चुनना। छानना। २. सबको अलग अलग करने देखना।

बीछी—स्त्री० [सं० वृषिक] बिच्छू।

मुहा०—**बीछी चढ़ना**—बिच्छू के डक का विष चढ़ना। **बीछी मारना**—बिच्छू का अपने डंक से किसी पर आघात करना। बिच्छू का काटना।

बीछू—पु० १=बिच्छू। २=बिछुआ।

बीज—पु० [स० बीज] १. अन्न का वह कण जो खेत में बोने के काम आता है।

क्रि० प्र०—उगना।—डालना।—बोना।

२. लासंगिक अर्थ में, ऐसी आरमिक बात जो आगे चलकर बहुत बड़ा रूप धारण करती हो। ३. किसी काम, चीज या बात का मुख्य अथवा मूल कारण। ४. जड़ी। ५. कारण। सबक। हेतु। ६. बीज। शक। ७. नाट्य-शास्त्र में अर्थ प्रकृति की पाँच स्थितियों में से पहली स्थिति जो उसे हेतु का संकेत करती है और जो आगे चलकर फल का कारण होता है। ८. वह माषपुंज अव्यक्त सांकेतिक बर्ण-समुदाय या शब्द जिसका अर्थ या आशय सब लोग न समझ सकते हों, केवल जानकर समझ सकते हों। ९. वह अव्यक्त ध्वनि या शब्द जिसमें ताम्रमुसा किसी देवता को प्रसन्न करने की धामति मानी गई हो।

पद—**बीज-मंत्र**—बीजाक्षर। (देखें)

१०. मंत्र का प्रधान अथवा भाग। ११. वह अक्षर या चिह्न जो कोई अज्ञात अथवा अव्यक्त राशि या सत्त्वा सूचित करने के लिए प्रयुक्त होता है।

पद—**बीजगणित**। (देखें)

१स्त्री०—बिजली।

बीजक—पु० [सं० बीजक] १ सूची। किहिरस्त। २. वह सूची जिसमें किसी को भेज जानेवाले माल का ब्यौरा, दर, मूल्य आदि लिखा रहता है। (इन्वॉयस) ३. वह सूची जो मन्म युग में जमीन में गाड़ी जानेवाली धन-संपत्ति के साथ प्रायः धातु के पत्तर पर उत्कीर्ण कर रानी जाती थी और जिस पर गाढ़नेवाले का नाम, समय और बंध संपत्ति

का विवरण संक्षिप्त रहता था। ४. किसी संत या महात्मा के प्रामाणिक परों या वागियों का संग्रह। जैसे—कबीर का बीजक, दरियादास का बीजक आदि। ५. वैद्यक में, जन्म के समय बच्चे की वह अवस्था जब उसका शिर दोनों मुखाओं के बीच में होकर योनिद्वार पर आ जाता है। ६. अनाथों, फलों आदि का दान। बीज। ७. विजोरा नीवू। ८. असना नामक वृक्ष।

बीज-कोश—पु० [सं० बीजकोश] बनस्पति का वह अंश जिसके अन्दर उसके बीज या दाने बंधे रहते हैं।

बीजकिया—स्त्री० [सं० बीजकिया] बीजगणित के नियमानुसार गणित के किसी प्रश्न का उत्तर जानने के लिए की जानेवाली क्रिया।

बीजसाध—पु० [हि० बीज-साध] वह रक्त जो मध्य युग में जमींदारों, महाजनों आदि की ओर से किसानों को बीज और खाद आदि करीदने के लिए दी जाती थी।

बीजगणित—पु० [सं० बीजगणित] गणित का वह प्रकार जिसमें अक्षरों को अज्ञात संख्याओं के स्थान पर मानकर वास्तविक मान या सख्याएँ जानी जाती हैं। (अल्जबरा)

बीजगर्म—पु० [सं० बीज गर्म] परतली।

बीजगुप्ति—स्त्री० [सं० बीजगुप्ति] १. सेम। २. फली। ३. मूसी।

बीजक्य—पु० [सं०] 'बीज' होने की अवस्था या माव। बीज-पन।

बीजदसक—पु० [सं० बीजदसक] नाटकों में वह व्यक्ति जो नाटकों के अभिनय की व्यवस्था करता हो। परिदसक।

बीजद्वय—पु० [सं० बीजद्वय] किसी पदार्थ का मूल तत्व या द्वय।

बीजधान्य—पु० [सं० बीजधान्य] धनियाँ।

बीजान—पु० [सं०] व्यजन। पत्ता।

पु० [हि० बीजान] १. बीजने या बोनने की क्रिया, डंग या भाव। २. बीज।

बीजाना—सं० [हि० बीज] १. किसी अनाज, पेड़ या पौधे का बीज बोना। २. किसी काम या बात का बीजारोपण करना।

पु० [सं०] व्यजन। पत्ता।

बीजपापय—पु० [सं० बीजपापय] मिलावटी।

बीजपुत्र्य—पु० [सं० बीजपुत्र्य] १. मर्यादा। २. मदन वृक्ष।

बीजपूर—पु० [सं० बीजपूर] १. विजोरा नीवू। २. चकोतरा।

बीजपूरक—पु० = बीजपूर।

बीजबंध—पु० [हि० बीज-बंधना] शिवरंटी या बरियारे का बीज। बला।

बीजबंध—पु० [सं० बीजबंध] १. तंत्रशास्त्र में, किसी देवता के उद्देश्य से निश्चित किया हुआ मूल-बंध। २. कोई काम करने का वह ढंग जो सबसे सुगम हो और जिससे वह काम निश्चित रूप से पूरा होता हो। मूल-बंध। गुर।

बीजमातृका—स्त्री० [सं० बीजमातृका] कमलगुट्टा।

बीजमार्ग—पु० [सं०] ५० सं०] बाममार्ग का एक मंत्र।

बीजमार्गी—पु० [सं०] बीजमार्गी] बीजमार्ग पंथ के अनुयायी।

बीजमत्स्य—पु० [सं० बीजमत्स्य] उड़क की दाल।

बीजरी—पु० = विजली।

बीजरेषस—पु० [सं० बीजरेषस] जमालोटा।

बीजल—पु० [सं० बीजल] वह जिसमें बीज हो।

वि० बीज-युक्त।

स्त्री० [हि०] विजली तलवार। (हि०)

बीजबाहुन—पु० [सं० बीजबाहुन] शिव।

बीजबुझ—पु० [सं० बीजबुझ] असना का पेड़।

बीजसि—स्त्री० [सं० द्वितीया] चांद्र मास की दूसरी तिथि। द्वितीया।
दूज। उवा—पड़वा आनंदा बीजसि चंदा पानी लेना पाली—
गोस्लनाथ।

बीजसू—स्त्री० [सं० बीजसू] पुष्पी।

बीजहरा—स्त्री० [सं० बीजहरा] १ एक डाकिली का नाम। २ जाड़-
गरती।

बीजाक प्रक्रिया—स्त्री० [सं० बीजांक प्रक्रिया] गुल रूप से पत्र आदि-
लिखने या समाचार भेजने की वह प्रक्रिया जिसमें अमिश्रित अक्षरों के
स्थान पर सांकेतिक रूप से कुछ दूसरे ही अक्षर, चिह्न आदि अंकित किये
अथवा कुछ विविध और असाधारण क्रम से रखे जाते हैं। (साक्षर
प्रोसिद्योर)

बीजाङ्कुर—पु० [सं० बीजाङ्कुर] बीज से निकलनेवाला अङ्कुर।

बीजाङ्कुर न्याय—पु० [सं० बीजाङ्कुर न्याय] तर्कशास्त्र में वह स्थिति जिसमें
यह पता न चले कि दो तर्कों में से कौन किसका कारण या मूल है। जैसे—
पहले बीज हुआ या वृक्ष अथवा पहले अन्न बना या चिड़िया।

बीजाङ्ग—पु० [सं० बीज-अङ्ग] १ जीव-विज्ञान में भ्रूण का वह आरम्भिक
और मूल रूप जिसके विकास हँमने पर भ्रूण का रूप बनता है। २.
वनस्पति विज्ञान में, बीज का आरम्भिक और मूल रूप। (ओव्यूल)

बीजा—वि० [सं० द्वितीया, पा० द्वितियो, प्रा० दुभो पु० हि० दृग्वा]
दूसरा।
पु० = बीज।

बीजाक्षर—पु० [सं० बीजाक्षर] किसी बीज मंत्र का पहला अक्षर।

बीजाक्य—पु० [सं० बीजाक्य] जमालोटा।

बीजाक्यस—पु० [सं० बीज-अक्यस] शिव।

बीजारोपण—पु० [सं० बीज-आरोपण] १ खेत में बीज बोना। २ छोटे
रूप में कोई ऐसा काम करना जिसका आगे चलकर बहुत बड़ा परिणाम
हो।

बीजावय—पु० [सं० बीज-अवय] कौतल पोड़ा।

बीजित—पु० कृ० [सं० बीजित] जिसमें बीज बोया जा चुका हो। बोया
हुआ।

बीजी—वि० [सं० बीजिन्] १ बीज या बीजों से युक्त। जिसमें बीज हो
या हो। २ बीज-सम्बन्धी।

पु० पिता। बाप।

स्त्री० [हि०] बीज १. फल के अंदर की गिरी। मीगी। २. फल की गुठली।
पु० = विजली।

बीजपाला—पु० = वजपाल।

बीजपूरी—स्त्री० = विजली।

बीजू—वि० [हि० बीज+ऊ (प्रत्य०)] १. (पौधा) जो बीज बोनने से
उगा हो। कलमी से भिन्न। २. (फल) जो उक्त प्रकार के पौधे या
वृक्ष का हो। जैसे—बीजू आम, बीजू नीवू।

पु० १.—विज्जु। २.—विज्जु।

बीबीक—पु० [स० बीज-उदक] ओला ।

बीबय—वि० [म० बीय] १. अच्छे बीज से उत्पन्न । २. अच्छे कुल में उत्पन्न । कुलीन ।

बीस*—वि० [?] घना । सघन ।

बीसना—अ०—बसना ।

बीसा—वि० [स० बिजल] (स्थान) जहाँ मनुष्य न हों। निर्जन । एकांत । पु० निर्जन स्थान ।

बीट—स्त्री० [स० बिट्] १. पत्थियों की बिट्टा। चिड़ियों का गुह । २. गुह । मल । ३. बहुत हीं चुच्च या हेय वस्तु । (भय) पु०—बिटलबग ।

बीटिका—स्त्री०—बीटिका (पान का बीडा) ।

बीठल—पु०—बिट्ठल ।

बीड—स्त्री० [स० बीट या बीटक] एक पर एक रखे हुए सिक्कों का षाक । जैसे—एप्यो को बीड । पु०—बीड ।

बीडा—पु० [स० बीटक] १. पान के पत्ते पर कल्पा, चूना आदि लगाकर तथा उस पर सुपारी आदि रखकर उसे (पत्ते को) विशेष प्रकार में माड़कर दिया जानेवाला निकोना रूप । खीली । गिलौरी ।

मुहा०—बीडा उठाना = कोई महत्वपूर्ण या विकट काम करने का उत्तरदायित्व या भार अपने ऊपर लेना । बीडा डामना या रखना—कोई कठिन काम करने के लिए सभा में लोगों के सामने पान की गिलौरी रखकर यह कहना कि जो इसका भार अपने ऊपर लेना चाहता हो, वह यह बीडा उठा ले ।

बिडो—मध्य युग में राज-दरबारों में यह प्रथा थी कि जब कोई विकट काम सामने आता था, तब थाली में पान का बीडा, सबके बीच में रख दिया जाता था । जो व्यक्ति वह काम करने का उत्तरदायित्व या भार अपने ऊपर लेने को प्रमत्त होता था, वह पान का बीडा उठा लेता था । इसी से उक्त मुहा० बन्य है ।

२. उक्त प्रथा के आधार पर, परवर्ती काल में, कोई काम करने के लिए किसी को नियुक्त करने के सबब में होनेवाला पारस्परिक निश्चय ।

मुहा०—बीडा देना = (क) किसी को कोई काम करने का भार सौंपना । (ख) नाचने-गाने, बाजा बजाने आदि का पेसा करनेवालों को कुछ पैसगी धन देकर यह निश्चय करना कि अमुक दिन या अमुक समय पर आकर तुम्हें अपनी कला का प्रदर्शन करना होगा ।

३. तलवार की म्यान के ऊपरी सिरे की वह डोरी जिससे तलवार की मुठ से म्यान बांधी जाती है ।

बीडवा—वि० [हि० बीडा : इया (प्रत्य०)] बीडा उठानेवाला । पु० अग्रजा नेता ।

बीड़ी—स्त्री० [हि० बीडा] १. पान का छोटा बीडा । २. मिस्ती, जिसे मजरे से होठ उसी प्रकार खीन हो जाते हैं, जिस प्रकार पान खाने से होने है । ३. तम्बाकू । ४. कुछ विशिष्ट प्रकार के पत्तों से तम्बाकू का चूर्ण लपेटकर बनाया जानेवाला एक तरह का छोटा लबोतरा पिंड जिसे गुल्लुकार सिगरेट की तरह पीया जाता है । ५. एक प्रकार की नाव । ६. कलाई पर पहनने का चूड़ी की तरह का एक गहना । ७

दे० 'बीड़' (गड्ढी) । ८. बह सामान तथा नकदी जो विवाह की बात पक्की होने पर कन्यापक्षवालों के यहाँ से वरपक्षों के यहाँ भेजी जाती है । (पूरव)

बील—स्त्री० [सं० वृत्] वह धन जो छोटे-मोटे काम करनेवाले लोगों नेगियों आदि को पारिश्रमिक या वृत्ति के रूप में दिया जाता है ।

बीलक—स्त्री० [सं० वृत्त या हि० बीतना] पुत्रांनी हिंदी में वह रचना जिसमें किसी पर बीवी हुई या किसी से सम्बन्ध रखनेवाली मुख्य घटनाओं या बातों का उल्लेख होता था ।

बीलना—अ० [सं० व्यतीत] १. काल-मान की दृष्टि से घटना, बात आदि का वतमान से होकर हुए मृत में जाना । जैसे—दिन या समय बीतना । २. लाक्षणिक अर्थ में किसी घटना, बात आदि का कल-मोग सहन किया जाना । जैसे—उन दिनों हम पर जो बीनी थी, वह हम ही जानते हैं । ३. किसी काम, चीज या बात का अन्त या समाप्ति होना । उदा०—

(क) बीती सारी बिसारि देह, आगे की सुख लेह ।—गिरधर । (ख) सब के सब बीते ।

बीला—पु०—बिला (जवाई की नाप) ।

बीषि (बी)—स्त्री०—बीषी ।

बीषित*—वि०—व्यपित ।

बीबर—पु० [सं० विदमं] १. विदमं देश का एक नगर । २. एक प्रकार की उपधातु जो ताँबे और जस्के के मेल से बनती है । (आरम में यह बीबर नगर म बनी थी, इसी लिए इसका यह नाम पडा) ।

बीबरी—स्त्री० [हि० बीबर] जस्के और ताँबे के मेल से बरतन आदि बनाने का काम जिसमें बीच-बीच में सोने या चाँदी के तारों में नक्काशी की हुई होती है । बीबर की धातु का नाम ।

वि० १. बीबर-सभर्षी । बीबर का । २. बीबर की धातु का बना हुआ ।

बीबरीसाल—पु० [हि० बीबर : फा० साल] वह जो बीबर की धातु से बरतन आदि बनाता हो । बीबर का काम बननेवाला ।

बीष—अव्य० [सं० विषि] विषिपूर्वक ।

बीषना—स्त्री०—बीषन ।

बीषना—स०—बीषना ।

अ०—विषना ।

बीषा—पु० [सं० विषान] भालगुजारी निश्चित करने को त्रिया या माव ।

बीन—स्त्री० [सं० बीणा] १. सितार की तरह का पर उससे बड़ा एक प्रकार का प्रसिद्ध बाजा । बीणा । २. संपीरो के बजाने की धुमरी । ३. उक्त के बजाने पर होनेवाला शब्द । ४. बाँसुरी ।

वि० [सं० बीषण में फा०] [मा० बीनी] १. देखनेवाला । यो० के अन्त में । जैसे—तमाशाबीन । २. दिखातेवाला । जैसे—दूरबीन ।

बीनकार—पु० [हि० बीन : फा० कार] [मा० बीनकारी] वह जो बीन या बीणा बजाने में प्रवीण हो ।

बीनना—सं० [सं० विनय] १. दे० 'बुनना' । २. छोटी-छोटी चीजों को उठाना । ३. चीजे अलग करना । छंटना ।

स० १ = बंधना । २ = बुनना । उदा०—बीनों तेह सुखि सधम से ढील-बसन नव मा योवन का ।—तत ।

बीनी—स्त्री० [फा०] देखने की क्रिया या माव । जैसे—तमाशाबीनी, सैरबीनी आदि ।

बीकी—पुं० [सं० बहुस्वप्ति] बहुस्वप्तिवार। गुस्कार।
बीकी—स्त्री० [फा०] १. कुल बधु। कुलीन स्त्री। महिला। २. जोर। पत्नी। ३. पश्चिम में स्थियों के लिए आदर्शसूचक सम्बोधन।
बीसे—बीकी हरबंस की। ५. अविवाहित कन्या तथा माता के लिए सम्बोधन। (पश्चिम)
बीमच्छ—वि०=बीमत्स।
बीमत्स—वि०=बीमत्स।
बीमत्सु—पुं० [सं० बधु+सन्, द्वित्वादि,+उ] १. अर्जुन। २. अर्जुन नामक वृक्ष।
बीम—पुं० [अ०] १. साहीरी। २. जहाज के पार्वर्ष में लवाई के बल में लगा हुआ बडा साहीरी। आभा। (लघ०) ३. जहाज का मस्तूल।
 पुं० [फा०] डर। मय।
बीमा—पुं० [फा० बीम+भय] १. किसी प्रकार की हानि विशेषत आर्थिक हानि पूरी करने की वह जिम्मेदारी जो कुछ निश्चित धन मिलने पर उसके बदले में अपने ऊपर ली जाती है। कुछ धन लेकर इस बात का भार अपने ऊपर लेना कि यदि अयुक्त कार्य में अयुक्त प्रकार की हानि होगी तो उसकी पूर्ति हम इतना धन देकर कर देंगे। (इन्स्योरेंस)
बिबोब—एमी जिम्मेदारी बाहर भेजी जानेवाली बीजों और कुर्बन्तानों से होनेवाली धन-जन की हानि के संबंध में, पारस्परिक समझौते से होती है, और बीमा करानेवाले को उसके बदले में कुछ निश्चित धन एक साथ अपना कुछ किस्से में देना पड़ता है।
 २. वह पत्र जिसपर उक्त प्रकार के समझौते की शर्तें लिखी होती हैं और जिस पर दोनों पक्षों के हस्ताक्षर होते हैं। ३. वह पत्र या पारसल जिसकी हानि आदि के संबंध में उक्त प्रकार की जिम्मेदारी ली या लीपी गई हो।
बीमार—वि० [फा०] १ जो किसी रोग विशेषत किसी ज्वर से पीड़ित हो।
 किं० प्र०—पडना।—होना।
 २. लाक्षणिक अर्थ में, ऐसा व्यक्ति जो किसी उग्र भाषाविषय, मताप आदि के कारण उत्सिक्त तथा अस्वस्थ बना रहता हो।
बीमारखार—वि० [फा०] [माघ० बीमारदारी] रोगी की सेवा-मुभूषण करनेवाला।
बीमारखारी—स्त्री० [फा०] रोगियों की सेवा-मुभूषण।
बीमारी—स्त्री० [फा०] १ बीमार होने की अवस्था या मास। जैसे—
 बीमारी मे भी वे मोजन किये चलते हैं। २. वह विकार जिसके फल-स्वरूप शरीर अस्वस्थ तथा कण रहता है। ३. बुद्धि आदत। बुध्यसंन।
 ४. हागड़े या हासत का काम।
बीपा—वि०=बीजा (दूसरा)
बीया—वि० [सं० द्वितीय] दूसरा।
 पुं० [हिं० बीज] बीज। (दे०)
 पुं०=बया।
बीर—पुं० [सं० बीर] १ प्रायः समस्त पर्वों के अंत में, किसी काम या बात में औरों से बहुत आगे बडा हुआ या बहादुर। २. भाई के लिए प्रयुक्त होनेवाला संबोधन। ३. वह जो टोपे, टोटके, यंत्र-यंत्र आदि का बहुत बडा माता हो। ४. ऐसी प्रेतात्मा जिसे किसी ने बध में किया हो।

स्त्री० [सं० बीरा] १. स्थियों में प्रचलित सखी या सहली के लिए संबोधन। २. काम में पहलने का विरिया नामक गहना।
 स्त्री० [सं० वृत्ति?] चरागाह में पशुओं को चराने का वह महसूल जो पशुओं की संख्या के अनुसार लिया जाता था।
 पुं०=चरागाह।
 पुं०=बीड़।
बीरउ—पुं०=विरया।
बीरख—पुं०=वीर्य।
बीरत—पुं०=बीरत्स (बीरता)।
बीरन—पुं० [सं० बीर] स्त्रियों का अपने भाई के लिए सम्बोधन। बीर।
बीरनि—स्त्री० [सं० बीर] काम में पहलने का एक प्रकार का गहना। तरना। बीरी।
बीर-बहूडी—स्त्री० [सं० वीर+बहुडी] गहरे लाल रंग का छोटा रंगने-वाला कीड़ा, जो देखने में बहुत ही सुन्दर होता है।
बीरा—पुं० [हिं० बीड़ा] १. वह फूल, फल आदि जो देवता के प्रसाद स्वरूप मन्तों आदि को मिलना है। २. दे० 'बीडा'।
बीरी—स्त्री० [सं० बीरि या हिन्दी बीरा] १. बरकी के बीच में लवाई के बल वह छेद जिसमें से नदी बरकर तथा निकाला जाता है। २. लोहे का वह छेदवाट टुकड़ा जिसपर कोई दूसरा कोहा रखकर लोहा छेद करते हैं। ३. काम में पहलने का तरना या विरिया नाम का गहना ४. दे० 'बीडी'।
बीरी—पुं०=विरया।
बील—वि० [सं० विल] अंदर से खाली। खोलका। पोला।
 पुं० वह नीची भूमि जिसमें पानी जमा होता है। जैसे—भील आदि की भूमि।
 पुं० [सं० विल्व] १. एक प्रकार की ओषधि। २. बेल (वृक्ष और फल)।
 पुं० [सं० वीज मंत्र] मंत्र। उदा०—जब तें वह सिर पड़ि दिपी हेरन मैं हिल बील—रत्नविधि।
बीबी—स्त्री०=बीबी।
बीस—वि० [सं० विंशति, प्रा० बीसति, बीसा] १ जो मलया में दस का दूना या उन्नीस से एक अधिक हो।
 पद—बीस बिसवै=(क) इस बात की बहुत अधिक समाधान है कि अधिकतम संभावित रूप में। जैसे—बीस बिसवै वे आज ही यहाँ आ जायेंगे। (ख) भली माति। अच्छी तरह। बीसहू कं- बीस बिसवै। मकी-माति। उदा०—मानु-पिता बधु हित मोको बीसहू कै ईस अनुकूल आज भो—मुलमी।
 २. किसी की तुलना में अच्छा या बढकर। जैसे—कुस्ती में यह लडका औरों से बीस पड़ता है।
 किं० प्र०—उठरना।—पड़ना।
 पुं० उक्त की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—२०।
बीसना—स० [सं० बेचन] वातरंज या बीसर आदि खेलने के लिए बिसात बिछाना।
बीसरना—अव्य०=बिसरना (भूलना)।
बीसवाँ—वि० [हिं० बीस+वाँ (प्रत्यय)] [स्त्री० बीसवाँ] क्रम, गिनती आदि में बीस के स्थान पर पड़नेवाला।

बीसो—स्त्री० [हि० बीस] ? एक ही तरह की बीस बीसों का समूह। कोड़ी। २. गिनती का वह प्रकार जिसमें बीस बीस वस्तुओं के समूह को एक-एक इकाई मान कर गिना जाता है। ३. गणित ज्योतिष में, साठ संवसरों के तीन विभागों में से कोई विभाग। इनमें पहली बड़ा-बीसो दूसरी विष्णुकीर्ण और तीसरी खंडबीसी कहलाती है। ४. भूमि का एक प्रकार की नाप जो एक एकड़ से कुछ कम होती है। ५. उतनी भूमि जिसमें बीस नाछियाँ हों। ६. वह लगान जो बीस विस्वे अर्थात् पूरे बीच के हिस्सा से लगता हो।
स्त्री० [म० विशिल] तोलने का काँटा। तुला।

बीह—पु० [म० मय] मय। डर। उदा०—भिड बड़ें ऐ भाजें नहीं, नहीं मरण रो बीह।—बाकीरास।
वि०=बीस।

बीहड़—वि० [स० विकट] ? ऊँचा-नीचा। ऊबड़खाबड़। बिपस। जैसे—बीहड़ भूमि। २. जो मम या सरल न हो, अर्थात् बहुत विकट। जैसे—बीहड़ काम।

पु० ऊँची-नीची और ऊबड़-खाबड़ भूमि। उदा०—इन लोगों ने अपनी पैदल प्लटन पूर्व और दक्षिण के बीहड़ में छिपा ली।—बृदात्तनलाल वर्मा।

बीहर—वि० [स० बहिर] अलग। पृक्क। जुदा।
बुं—स्त्री०—बूँद।

वि० बूँद भर, अर्थात् बहुत जरा सा या थोड़ा।
बूँदका—पु० [म० विदुक] [स्त्री० अत्या० बुदकी] बड़ी बुदकी।
बुदकी—स्त्री० [हि० बुदका का स्त्री-रूप] ? छोटी गोल विदी। २. किसी चीज पर बना हुआ छोटा गोल बिल्ज, दाग या निशान। ३. छोटा बुद।
बूँदकीदार—वि० [हि० बूँदकी + फा० दार] जिस पर बूँदकियाँ पड़ी या सती हों। जिसपर बूँदों के से चिह्न हों। बूँदकीवाला।

बूँदबान—स्त्री० [हि० बूँद + बान (प्रत्य०)] छोटी छोटी बूँदों की बर्षा।
बुशा—पु० [स० विडु] ? काम में पहलने का एक तरह का गहना जो प्रायः मुलता रहता है। कोलक। २. मांथे पर लगाने की बड़ी टिकली जो पत्नी, माँच आदि की बनती है। ३. बड़ी टिकली के आकार का गाँदना जो मांथे पर गोदा जाता है।
बूँदिया—स्त्री० दे० बूँदी।

स्त्री० [हि० बूँद + इया (अव्य०)] ? छोटी बूँद। २. छोटी बूँदों या दानों के रूप में बननेवाला एक पकवान जो मीठा और नमकीन दोनों प्रकार का होता है, तथा जो बेसन के पोल को पौने से छानकर और पी, तेल आदि में तलने पर तैयार होता है।
बूँदोदार—वि० [हि० बूँदी + फा० दार (प्रत्य०)] जिसमें छोटी छोटी विदियाँ बनी या लगी हों।

बूँदेलखंड—पु० [हि० बूँदेल जाति से] उत्तर प्रदेश के झाँसी, जालौन, बाँदा, सुपौलपुर आदि जिलों और उनके आस-पास के जिलों के पू-माग का नाम।
बूँदेलखंडी—वि० [हि० बूँदेल खंड + ई (प्रत्य०)] बूँदेलखंड-संबंधी बूँदेल खंड का।
पु० बूँदेलखंड का निवासी।

स्त्री० बूँदेलखंड की बोली। बूँदेली।
बूँदेल—पु० [हि० बूँद + एला (प्रत्य०)] ? क्षत्रियों की एक शाखा जो मध्ययुग में बूँदेलखंड में बसी हुई थी। २. बूँदेलखंड का निवासी।
बूँदेली—स्त्री० [हि० बूँदेलखंड] बूँदेली की बोली जो पश्चिमी हिंदी की एक शाखा मानी जाती है।
बूँदोरी—स्त्री० [हि० बूँद + ओरी (प्रत्य०)] बूँदिया या बूँदी नाम की मिठाई।

बुअजाभि—स्त्री० [स० प्रबजन] वायु। पवन।
बुआ—स्त्री०—बुआ।
बुआई—स्त्री०—बुआई।
बुअकवना—स० [स० भलाय हि० भलना] भोजन करना। खाना। उदा०—सीलणी का बेर सुदाना का तदुल मर मुठड़ी बुअक।—मीर।
बुक—स्त्री० [फा० बुक] ? कलक किया हुआ एक प्रकार का महीन कपड़ा जो बच्चों की टोपियों में अस्तर देने या अंगिया, कुरती, जनानी चादरें आदि बनाने के काम में आता है। २. एक प्रकार की महीन पत्री या बरक।
स्त्री० [अ०] किताब। पुस्तक।

बुक्का—पु० [तु० बुक्क] [स्त्री० अत्या० बुक्की] ? वह गठरी जिसमें कपड़े बंधे हुए हों। २. गठरी।

बुक्की—स्त्री० [हि० बुक्की + ई (प्रत्य०)] ? छोटी गठरी। २. वह पेली जिसमें बरजी सुई, धागा आदि रखते हैं।
† स्त्री०—बुक्की।

बुकना—अ० [हि० बुकना का अ०] बुका या पीसा जाना। चूर्ण होना।
† पु०—बुकनी।
बुकनी—स्त्री० [हि० बुकना + ई (प्रत्य०)] किसी चीज का महीन पीसा हुआ चूर्ण। जैसे—रस की बुकनी।

बुकवा—पु० [हि० बुकना] ? उबटन। वटना। २. दे० 'बुकका'।
बुकस—पु० [स० बुक्का] मगी। मेहनत। हलाल खोर।
बुका—पु०—बुक्का।

बुकार—पु० [दे०] वह बाल जो बरसात के बाद नदी अपने तट पर छोड़ जाती हो और जिसमें कुछ अन्न आदि बोया जा सकता हो। माट।
बुकुम—पु० [हि० बुकना] ? बुकनी। २. किसी प्रकार का पाचक चूर्ण।
बुकीर—पु० [हि० बुक—कलेजा] सतप्त होकर मन ही मन रोकने की क्रिया या भाव।

बुक्क—पु० [म० बुक्क (शब्द करना) अन्] ? हृदय। २. बकरा। ३. समय।
बुक्कस—पु० [स० बुक्क (कहना) + लृट् अन्] ? कुत्ते को भौकना। २. पशुओं का शब्द करना।

बुक्कस—पु० [स०—पुक्कस पु० पत्तब] ? चाहाल। २. मगी।
बुक्का—स्त्री० [म० बुक्क + टाप्] ? हृदय। कलेजा। २. गुरदे का मांस। ३. रत्त। लहू। ४. बकरा। ५. फूँकर बचाया जानेवाला एक तरह का पुरानी चाल का बाजा।
पु० [हि० बुकना] ? बुका अर्थात् पीसा हुआ चूर्ण विशेषतः चूर्ण के रूप में लाया हुआ चूर्ण। २. अबरक का चूर्ण।
बुक्की—स्त्री० [स० बुक्क + डीप्] हृदय।

बुद्धार—युं० [फा० बुद्धार] १. बाण्य। प्राप। २. शरीर में किसी प्रकार का रोग होने के कारण उत्सका बढ़ा हुआ ताप-मान। विद्धार-जन्म शारीरिक ताप-बुद्धि। ज्वर।

क्रि० प्र०—आना।—उतरना।—बधना।

२. उत्कट मनोवेग के फलस्वरूप होनेवाली उत्तेजना। जैसे—स्वप का नाम लेने पर उन्हें बुद्धार पड़ जाता है।

बुद्धारवा—युं० [फा० बुद्धारवः] १. विडम्बकी के आगे का छोटा बरामदा २. कोठरी के अंदर तस्वीं आदि की बनी हुई छोटी कोठरी।

बुध—युं० [दिश०] मच्छर। (बुधेल्लब्ध)

स्त्री०—बुक (कपड़ा)।

बुधधा—युं० [फा० बुधधः] [स्त्री० अल्पा० बुधधी] बगल में दबाई जानेवाली पोटीली।

बुधधा—युं० [अ० बुध] कसाद्यो का छूटा जिससे वे पशुओं की हत्या करते हैं।

बुधला—युं०—बयला (पत्नी)।

बुधिल्ल—युं० [दिश०] पशुओं के बचने का स्थान। बरी। चरागाह।

बुधुल—युं०—बिगुल।

बुज—युं० [अ० बुज] मन में छिपाकर रखा हुआ वीर।

क्रि० प्र०—निकासना।

बुधका—युं० [स्त्री० अल्पा० बुधकी] = बुकचा।

बुज—स्त्री० [फा० बुज] बकरी। बुजड।

वि० डरपानी।

बुज-कसाब—युं० [फा०] वह जो पशुओं की हत्या करता अबचा उनका मांस आदि बेचता हो। बकर-कसाब। कसाई।

बुजबिल—वि० [फा० बुजबिल] [माव० बुजबिली] कायर। डरपोक। मीर।

बुजबिली—स्त्री० [फा० बुजबिली] कायरता। भीस्ता।

बुजनी—स्त्री० [दिश०] करतफूल के आकार का कान का एक गहना है जिसके नीचे झुमका भी लगा होता है।

बुजियाला—युं० [फा० बुज] १. बकर का वह बच्चा जिसे कलवर लोग तमाशा करना सिखलाते हैं। २. वह बन्दर जिसे नचाकर मदारी तमाशा दिखाते हैं। (कलवर)

बुजुी—वि० [फा० बुजुी] जिसकी अवस्था अधिक हो। वृद्ध।

युं० बाप, दादा आदि। पूर्वज। पुरखे।

बुजुी—स्त्री० [फा० बुजुी] बुजुग होने की अवस्था या भाव। बड़प्पन।

बुज्जा—युं० [दिश०] करतुल की जाति का एक प्रकार का पत्नी।

बुज्जी—स्त्री० [फा० बुज] बकरी। (दि०)

बुज्जा—युं०—बुज्जा (पत्नी)।

बुज्जना—अ० [स० उत्पत्ति] १. जलते हुए पदार्थ का जलना बंद हो जाना। जलने का अंत या समाप्ति होना। जैसे—आग बुज्जना, दीया बुज्जना। २. किसी जलते या तपे हुए पदार्थ का पानी में पड़ने के कारण ठंडा होना। तपी हुई या गरम चीज का पानी में पड़कर ठंडा होना। जैसे—(क) तपी हुई घातु का पानी में बुज्जना। (ख) सफेदी करने के लिए पानी में चूना बुज्जना। ३. किसी प्रकार के ताप का पानी जबचा किसी और प्रकार के पदार्थ से सात या समाप्त होना। जैसे—प्यास बुज्जना। ४. किसी निश्चित प्रकार से प्रस्तुत किने हुए तरल पदार्थ

में किसी चीज का इस प्रकार बुझाया जाना कि उसमें तरल पदार्थ का कुछ गुण या प्रभाव आ जाय। जैसे—जहर के पानी में छुरे या तलवार का बुझना। ५. चित्त का आवेग, उत्साह, बल आदि मय पड़ना। जैसे—ज्यों-ज्यों बुझाया जाता है, त्यों-त्यों पी बुझता जाता है। उदा०—शाम से ही बुझा सा रहता है, हिल हुआ है चिराम मुफ्तिस का।—मीर।

बुहा—युं०—बुधकर रह जाना—अप्रमाणित या लज्जित होकर घुप हो जाना। उदा०—महल्लिच चमक उठी और मियां मजनुं बुधकर रह गये।—फिराक गोरखपुरी।

६. लाघ पदार्थों का जलने, पकने आदि पर मात्रा या मान में पहले से बहुत कम हो जाना। जैसे—सेर भर साग पकाने पर बुधकर पाव भर रह गया।

सयो० क्रि०—जाना।

बुहाई—स्त्री० [हिं० बुझाना] ई (प्रत्य०) बुझाने की क्रिया, भाव या मजबूती।

बुझाना—स० [हिं० बुझना का स०] १. ऐसी क्रिया करना जिससे आग अबचा किसी जलते हुए पदार्थ का जलना बंद हो जाय। जैसे—दीया बुझाना। २. किसी जलती हुई घातु या ठोस पदार्थ को ठंडे पानी में डाल देना जिससे वह पदार्थ भी ठंडा हो जाय। तपी हुई चीज को पानी में डालकर ठंडा करना। जैसे—प्यास हुआ कोहा पानी में बुझाना। पर—जहर का बुझाया हुआ—दे० 'जहर' के मुहा०।

मुहा०—(कॉई चीज) जहर में बुझाना—छुरी, बरछी आदि शस्त्रों के फलों को तपाकर किसी जहरीले तरल पदार्थ में इसलिए बुझाना कि वह फल भी जहरीला हो जाय।

३. कोई चीज तपाकर इसलिए ठंडे पानी में डालना कि उस चीज का कुछ गुण या प्रभाव उस पानी में आ जाय। पानी को छोकना। जैसे—इनको लोहे का बुझाया हुआ पानी पिलाया करना। ४. पानी की सहायता से किसी प्रकार का ताप शोष या समाप्त करने। पानी डालकर ठंडा करना। जैसे—प्यास बुझाना, चूना बुझाना। ५. किसी क्रिया से चित्त का आवेग या उत्साह आदि शांत करना। जैसे—हिल की लगी बुझाना।

सयो० क्रि०—डालना।—बेना।

स० [हिं० बुझना का प्रे० रूप] १. बुझने का काम दूसरे से कराना। किसी को बुझने में प्रवृत्त करना। जैसे—पहेली बुझाना। २. किसी को कुछ समझने में प्रवृत्त करना। बोध करना। समझाना। जैसे—किसी को समझा-बुझाकर ठीक रास्ते पर लाना। ३. समझाकर गुप्त या संतुष्ट करना।

बुझारत—स्त्री० [हिं० बुझाना—समझाना] १. किसी गाँव के जमींदारों के वार्षिक आय-व्यय आदि का लेखा। २. पहेली।

क्रि० प्र०—बुझाना।—बुझना।

बुझीअल—स्त्री० [हिं० बुझाना] १. किसी को चकित करके उसकी बुद्धि की बाह लगाने के लिए सीधे-सादे शब्दों में प्रश्नी जानेवाली कोई पेशीमी बात। पहेली। २. सांख्यिक अर्थ में इस प्रकार कही हुई बात जो किसी की समझ में जल्दी चली-भाँति न आती हो।

बुडा—स्त्री०—बूटी।

बुटना—अ० [?] दौडकर चला जाना या हट जाना। भागना।
बुटका—स्त्री० [सं० बुट्टि] बर्षा। (राज०)
बुटकी—स्त्री०—बुटकी (गोता)।
बुटना—अ०=बुटना। (बुटना)।
बुटब—वि० [हि० बुटा; बक-बगला] ना-समझ। मूर्ख।
बुटबुटाना—अ० [अनु०] मन ही मन कुदकर या क्रोध में आकर अस्पष्ट रूप से कुछ बोलना। बड़बड़ करना। बड़बड़ाना। बुट्टाये में होनेवाली हिरस।
बुटभस—स्त्री० [हि० बुटा; भस=इच्छा भोग] बुटाये में होनेवाली हिरस।
बुटभूजा—पु० दे० 'भटभूजा'
बुटाना—सं०—बुटाना।
बुटारा—स्त्री० [हि० बुटना?] एक प्रकार की छोटी पनघुन्की बतल जिसका मुख्य भोजन पानी में उगनेवाले पेड़ों की जड़ें हैं। 'करछिया' और 'लासर' इसके दो मुख्य भेद हैं।
बुटार्वा—पु०=डुवाव।
बुटिया—वि० [हि० बुटना] (प्राप्य धन) जो बसूल न हो सकता हो और इसी लिए दुबा दुबा मान लिया गया हो।
बुट्टा—वि० [सं० बुट्ट] [स्त्री० बुट्टी] १ युवावस्था पार करने के उपरांत जिसकी अवस्था अधिक हो गई हो। जैसे—बुट्टा आदमी, बुट्टा बैल। २ (जीव) जो साधारणतः मानी जानेवाली पूर्ण आयु का आधे से अधिक या लगभग तीन-चौथाई भाग पार कर चुका हो।
बुट्टा—वि०—बुट्टा।
 पु० १ बुट्टा आदमी। २ पिता या दादा जो बहुत बुट्टा हो गया हो।
बुट्टना—पु० [?] छड़ीला। पत्थर फूल।
 वि०—बुट्टा (बुट्टा)।
बुट्टा—वि० [स्त्री० बुट्टिया] बुट्टा।
बुट्टाई—स्त्री० [हि० बुट्टा; आई (प्रत्य०)] बुट्ट या बुट्टे होने की अवस्था या भाव। बुट्टावस्था। बुट्टाप।
बुट्टाना—अ० [हि० बुट्टा] ना (प्रत्य०)] बुट्टावस्था को प्राप्त होना।
 वि० बुट्टा या बुट्टाई के समान कर देना। जैसे—रोग ने उन्हे बुट्टा दिया है।
बुट्टाप—पु० [हि० बुट्टा; या (प्रत्य०)] बुट्टे होने की अवस्था या भाव। बुट्टावस्था।
बुट्टिया—स्त्री० [सं० बुट्टा] बुट्टी औरत।
 पद—बुट्टिया का काता—एक प्रकार की बीनी की मिठाई जो देखने में काने हुए सूत के लच्छी की तरह होती है।
बुट्टिया-बैठका—स्त्री० [हि० बुट्टिया; बैठक=कसरत] एक प्रकार की बैठक।
बुट्टीना—स्त्री०—बुट्टाप।
बुट—पु० [सं० बुट्ट से फा०] १ मूर्ति। प्रतिमा।
बुटब—आचीन काल से इसलाम के प्रचार से पहले स्थान स्थान पर गौतम बुद्ध की मूर्तियाँ और मन्दिर बहुत अधिक संख्या में थे। इसी लिए इसलाम का प्रचार होने पर वहाँ के लोग प्रतिमा या मूर्ति भाव को बुट कहने लगे थे।
 २ किसी की आकृति के अनुकूल बना हुआ चित्र या प्रतीक। ३ गयी हुई मूर्तियों के सीपयों और कठोरता के आधार पर फारसी-उर्दू कविताओं

में प्रियतमा या प्रेमी की राता।
 वि० १. मूर्ति की तरह मीन और निचलक। २ मूर्ख। ३. नवे में वेहोश।
बुटना—अ०=बुटना।
बुट-परस्त—पु० [फा०] [भाज० बुटपरस्ती] मूर्तिपूजक। मूर्तियों का आराधक।
बुट-परस्ती—स्त्री० [फा०] मूर्तिपूजा।
बुट-शिकन—पु० [फा०] वह जो मूर्ति-पूजा का विरोधी होने के कारण प्रतिभाओं को सोझना या नष्ट करता हो।
बुत्तल—स्त्री० [अ० बुत्तल] १ किमी बीज की मात्रा या मान। २ २ लखें। व्यय।
बुताना-बुताम—सं०=बुटाना।
 अ०—बुटना।
 पु०=बटम।
बुत—वि०, पु०=बुत।
बुता—पु० [हि० बुट मूर्त]] वानो में मूर्त बनाकर किमी को दिया जानेवाला चकमा या धोखा।
 पद—बुत बुता। (देवें)
बुभिम—वि०—बुत।
बुब—वि० [देश०] पाँच। (दलाल)
बुबबुब, **बुबबुबा**—पु० [सं० बुद बुद] पानी का बुलबुला। बुल्ला।
बुबबुवाना—अ० [अनु०] १ किमी तरल पदार्थ में बुलबुले आना। २ मन ही मन या बहुत धीरे धीरे इस प्रकार बोलना कि और लोग सुन न सके।
बुबलाय—वि० [दलाली बुद; लाय (प्रत्य०)] पन्द्रह। दस और पाँच। (दलाल)
बुद—वि० [सं० बुष् (ज्ञान करना)+क] १ जो जागा हुआ हो। जागरित। २ ज्ञान-सम्पन्न। ज्ञानी। ३ पक्वित।
 पु० शाक्य वंशीय राजा बुद्धोदन के पुत्र और बौद्ध धर्म के प्रवर्तक सिद्धार्थ गौतम का प्रचलित और प्रसिद्ध नाम (जन्म ई० पू० ५६६? मृत्यु ई० पू० ४८३?)।
बुदबुब—पु० [सं० बुद; बु] बुद होने की अवस्था या भाव।
बुदभागम—पु० [सं० बुद-भागम, घ० तं०] बौद्ध धर्म के सिद्धान्त द्वारा किसी चीज या बात के विषय में आवश्यक ज्ञान प्राप्त होता है और जिसकी सहायता से तर्क वितर्क-पूर्वक सब प्रकार के अन्तर-सम्बन्ध आदि समझ में आते हैं। ज्ञान या बोध प्राप्त करने और निश्चय विचार आदि करने की शक्ति। अवल। समझ। मनीषा। धी।
बुद्वेष—दार्शनिक दृष्टि से यह मन से मिथ तत्त्व या शक्ति है। हमारे यहाँ इसे अन्त करण की चार बुधियों में से एक बुधि माना है, पर पाश्चात्य विद्वान् इसका अधिष्ठान मस्तिष्क में मानते हैं। साध्यकार ने इसे २५ तत्त्वों के अन्तर्गत दूसरा तत्त्व माना है।
 २ एक प्रकार का छद्म जिसके चरो पदो में क्रम से १६, १५, १४, १३, मात्राएँ होती हैं। इसे लक्ष्मी भी कहते हैं। ३ उक्त बुत का चौदहवाँ भेद जिसे सिद्धि भी कहते हैं। ४. छप्य छेव का ४२ वं भेद।

बुद्धि-कृत—मू० कृ० [तु० त०] सोच-समझकर किया हुआ।
 बुद्धि-कीबाल—मू० [ब० त०] १. बहुत ही समझ-बूझकर तथा ठीक ढंग से काम करने की कला। २. चतुराई।
 बुद्धि-समर्थ—वि० [तु० त०] बुद्धि के द्वारा जिसे जाना या समझा जा सकता हो।
 बुद्धि-माहुर—वि० [तु० त०] बुद्धि द्वारा ग्रहण किये जाने के योग्य। जिसे बुद्धि ठीक मान सके।
 बुद्धि-बधु (बु) —मू० [ब० त०] धृतराष्ट्र।
 बुद्धिजीवी (बिन्नु) —वि० [सं० बुद्धि/जीव् (जीना) +गिनि] १. बुद्धि-पूर्वक काम करनेवाला। विचारशील। २. जिसकी जीविका पिपामो कामों से चलती हो। जैसे—बकील, मंत्री आदि।
 बुद्धितत्त्व—मू० = दे० 'महात्त्व'। (सात्य)
 बुद्धि-बोधस्थ—मू० [सं०] बुद्धि के बहुत ही दुबल होने की अवस्था, माघ या रोग। बालिस्थ (एमेथिया)
 बुद्धिबल—मू० [तु० त०] शतरज का खेल।
 बुद्धि-पर—वि० [पं० त०] जो बुद्धि की पहुँच से परे हो।
 बुद्धि-सामान्य-मात्र—मू० [ब० त०] यह सिद्धान्त कि बही बात ठीक मानी जानी चाहिए जो बुद्धि-माहुर हो।
 बुद्धि-बंध—मू० [ब० त० या ब० त०] दे० 'मनोबन्ध'।
 बुद्धिमत्ता—स्त्री० [सं० बुद्धि + मनुषु + तल, टाप्] बुद्धिमान् होने की अवस्था या मात्र। समझदारी। अकर्मन्दी।
 बुद्धिमान्—वि० [सं० बुद्धि + मनुषु, नुस, दीर्घ] जिसकी बुद्धि बहुत प्रबल हो। जो बहुत समझदार हो। अकर्मन्दी। जिसमें अच्छी और खेष्ट बुद्धि हो। जो सोच-समझकर कोई काम करता अथवा किसी काम में हाथ डालता हो।
 बुद्धिमानी—स्त्री० [हिं० बुद्धिमान् + ई (प्रत्य०)] १. बुद्धिमान् होने की अवस्था या मात्र। बुद्धिमत्ता। २. बुद्धिमान् का किया हुआ कोई काम।
 बुद्धि-मोह—मू० [ब० त०] वह स्थिति जिसमें बुद्धि कुछ गड़बड़ा तथा चकरा गई हो।
 बुद्धि-योग—मू० [ब० त०] पर-ब्रह्म के साथ होनेवाला बौद्धिक संपर्क।
 बुद्धिबन्ध—वि० = बुद्धिमान्।
 बुद्धि-बाध—मू० [ब० त०] १. यह दार्शनिक मत या सिद्धान्त कि मनुष्य को समस्त ज्ञान बुद्धि द्वारा ही प्राप्त होते है। (इष्टलेकनूअल्लम्) २. आज-कल यह मत या सिद्धान्त कि धार्मिक आदि विषयों में बही बातें मानी जानी चाहिए जो बुद्धि और मुक्ति की दृष्टि से ठीक सिद्ध हो। (रेशनाल्लचम)
 बुद्धिबारी (बिन्नु) —वि० [सं० बुद्धि/बर् (बोलना) +गिनि, दीर्घ, नलोप] बुद्धि-बाध सम्बन्धी।
 पू० बुद्धिबाध का अनुयायी। (इष्टलेकनूअल्लम्)
 बुद्धि-बिलास—मू० [ब० त०] १. बौद्धिक कामों में लगकर मन बहुलाना। २. कल्पना।
 बुद्धिशाली (बिन्नु) —वि० [सं० बुद्धि/शाल् पोषित होना +गिनि] बुद्धिमान्।
 बुद्धि-शील—वि० [ब० त०] बुद्धिमान्।

बुद्धि-सम्ब—मू० [ब० त०] १. मनी। २. परामर्शदाता।
 बुद्धि-सहाय—मू० [सं० त०] १. मनी। बजीर। २. परामर्शदाता।
 बुद्धि-मूल—वि० [ब० त०] जिसकी बुद्धि नष्ट या भ्रष्ट हो गई हो।
 बुद्धिहा (हनु) —वि० [सं० बुद्धि/हन् (मारना) -निवप्, दीर्घ, नलोप] (पदार्थ) जो बुद्धि का नाश करता हो। जैसे—मदिर।
 बुद्धि-हीन—वि० [तु० त०] [भाव० बुद्धिहीनता] जिसमें बुद्धि न हो। निर्बुद्धि।
 बुद्धिबिध—स्त्री० [बुद्धि-द्विध, कर्म० सं०] ज्ञानेन्द्रिय। मन।
 बुद्धी—स्त्री० = बुद्धि।
 बुद्धव—मू० [सं० बुद् + क, पूर्वो० द्विव्] पानी का बुलबुला।
 बुधपक्षी—वि० [सं० बुद्धि -हिं० अग्रङ् (प्रत्य०)] मूर्ख।
 बुध—मू० [सं० बुध् (ज्ञान प्राप्त करना) +क] १. बुद्धिमान् और विद्वान् व्यक्तित्। पंडित। २. देवता। ३. सौर जन्तु का सबसे छोटा ग्रह जो सूर्य से अन्य ग्रहों की अपेक्षा समीप है। सूर्य से इसकी दूरी ३६०००००० मील है और यह सूर्य की परिक्रमा ८८ दिनों में करता है। (मर्करी) विशेष—फलित ज्योतिष में, यह नौ ग्रहों में से चौथा यह माना गया है, और पुराणानुसार इसकी उत्पत्ति उस समय हुई थी जब चन्द्रमा ने अपने पृथु बृहस्पति की पत्नी तारा के साथ संभोग किया था।
 ५ कुत्ता।
 बुध-चक्र—मू० [ब० त० मध्य० सं०] ज्योतिष में, एक चक्र जिससे बुध नक्षत्र की गति का बुधानुमा फल जाना जाता है।
 बुधअन—मू० [सं० कर्म० सं०] पंडित। विद्वान्।
 बुधजायो—मू० [सं० बुध + हिं० जन्मना -उत्पन्न होना] बुध ग्रह को जन्म देनेवाला, चन्द्रमा।
 बुधबान्—वि० = बुद्धिमान्।
 बुधवार—मू० [सं० बर्ध० सं०] सात वारों में से एक। मंगलवार और गुरुवार के बीच का वार।
 बुधिा—स्त्री० = बुद्धि।
 बुधिपारा—वि० = बुद्धिमान्।
 बुधिल—वि० [सं० बुध + किल्च्] बुद्धिमान्।
 बुधिबाही—वि० = बुद्धिमान्।
 बुध्—वि० [सं० बोध्] जो जाना जा सके। जिसका बोध हो सके।
 बुधकर—मू० [हिं० बुनना] कपड़ा बुननेवाला कारीगर। (बीबर)
 बुनना—सं० [पुं० हिं० बिनना] १. कर्पे के द्वारा ताने तथा बाने के तारों को इस प्रकार एक दूसरे में ऊपर नीचे करके फीसना के वे बस्त्र का रूप धारण कर ले। जैसे—दरी बुनना। २. सलाखों आदि के द्वारा विशेष रूप से किसी एक ही ढोरी में बिंशित प्रकार से फाँदे डालते हुए उसे बस्त्र का रूप देना। जैसे—स्वेटर बुनना। ३. सीधे तथा बेड़े बल में बहुत से तार आदि स्थापित करके कोई चीज तैयार करना। जैसे—बटाई बुनना, जाला बुनना।
 बुनबाना—सं० [हिं० बुनना] [भाव० बुनवाई] बुनने का काम इतरे से कराना।
 बुनवाई—स्त्री० [हिं० बुनवाना] १. बुनवाने की क्रिया। मात्र या पारिश्रमिक। २. दे० 'बुनाई'।
 बुनाई—स्त्री० [हिं० बुनना + ई (प्रत्य०)] १. बुनने की क्रिया, ढंग

भाव । २. बुनने का पारिभाषिक या मजदूरी । ३. कपड़े बुनने का ढग या प्रकार । जैसे—बुनाई बनी है । ४. दे० 'बुनवाई' ।

बुनावट—स्त्री० [हि० बुनना + आवट (प्रत्य०)] बुनने में सूती की मिलावट का ढग । सूतों के बुनने का प्रकार ।

बुनिया—स्त्री०—बुनिया ।

१।००=बुनकर ।

बुनियाद—स्त्री० [फा० बुन्याद] १. आधार । नीव । २. जड़ । मूल । ३. आरम्भ ।

बुनियादी—वि० [फा० बुन्यादी] १. नीव या बुनियाद-सबध । २. नीव या बुनियाद के रूप में होनेवाला । ३. आरम्भिक । प्रारम्भिक । ४. दे० 'आधारिक' ।

बुबुका—स्त्री० [अनु०] १. जोर से रोने की क्रिया । सलाई । २. ममक ।

बुबुकना—अ० [अनु०] जोर जोर से रोना ।

बुबुकारी—स्त्री० [अनु० बुबुक + आरी (प्रत्य०)] जोर जोर से रोने का शब्द ।

फि० प्र०—देना ।—मरना ।

बुभुषा—स्त्री० [स० √भुष् (खाना)] । सन्, द्विवारि टाप्] खाने की इच्छा । मूल ।

बुभुषित—अ० कृ० [स० बुभुषा + इत्च्] जिसे मूल लगी हो । मूला । बुभुषित ।

बुभुषा—स्त्री० [स० √भुष् । सन्, द्विवारि टाप्] अन्वोषी या विधिपर चीज या बात को जानने की प्रवृत्ति इच्छा या आतुरता ।

बुध्या—पुं०—बध्याम ।

बुध—स्त्री० [स० बुधि] स्त्री की योगिनी । मय ।

बुधकना—स० [अनु०] बुधकी में चूर्ण आदि भर कर छितराना या छिड़कना ।

पुं० बच्चों के लिखने की वह दवात जिसमें खडिया मिट्टी घोलकर रखी जाती थी ।

बुधका—पुं० [अ० बुक] १. मुसलमान स्थियों का एक पहनना जिससे वे सिर में लेकर एड़ी तक अपने सब अंग ढक लेती हैं । २. नाका । ३. वह सिल्ली जिसमें जन्म के समय बच्चा लिपटा रहता है । खेंडी ।

बुधकाना—स०=बुधकाना ।

बुधकापिशा—वि० [अ० बुक + फा० पोष] १. जो बुधका पहने हुए हो । २. जो बुधका पहनती हो ।

बुधकी—स्त्री० [हि० बुधकाना] १. मन्त्र-मन्त्र आदि के समय प्रयुक्त होनेवाली धूल या राख । २. उलकी की सहायता से किया जानेवाला जादू-टोना ।

बुधका—बुधकी मारना—मन्त्र पढ़कर किसी पर कुछ धूल या राख फेंकना । उदा०—मैं आगे जानासे के कुछ बोल नहीं सकती । क्या जानिए क्या उसने मारी है मुझे बुधकी ।—रतीन ।

बुधू—पुं० [अ० बोधे] १. पाखंड । बगल । २. जहाज का बगलवाला भाग । ३. जहाज का वह भाग जो तुफान या हवा के रुक पर नहीं, बल्कि पीछे की ओर पड़ता हो । (लघ०)

बुधू—वि० [हि० बुद्धा । बक] १. अतस्मा इलने के फलस्वरूप जो दूसरों की दृष्टि में मूर्खों का-सा आचरण करने लगा हो । २. बहुत बड़ा बेवकूफ । मूर्ख ।

बुधा—वि० [स० विरूपा] [स्त्री० बुरी, भाव० बुवाई] १. जो बैसा न

हो, जैसा उसे साधारण या उचित रूप में होना चाहिए । जो अच्छा या ठीक न हो । खराब । निरूप्य । 'अच्छा' का विपर्याय । २. (व्यक्ति) जिसमें कोई स्वभावजन्य दुर्गुण या दोष हो । खराब । दूषित । ३. (आचरण) जो धार्मिक, नैतिक या सामाजिक दृष्टि से परम अनुचित और निन्दनीय हो । जैसे—बुरा चाल-चलन । ४. जिसका रूप-रंग आकार-प्रकार देखकर मन में अर्थात्, घृणा या विराग उत्पन्न हो । जैसे बुरी मूरत । ५. जो बहुत अधिक कष्ट या दुर्दशा में पड़ा हो । जैसे—आज-कल उनका बुरा हाल है । ६. जिसमें उपद्रा, कठोरता, तीव्रता आदि बहुत बढ़ी हुई हो । जैसे—(क) किसी को बुरी तरह से कोसना या मारना-पीटना । (ख) लालच बुरी बला है । ७. जिसमें क्षति, हानि या अनिष्ट की आशंका हो । जैसे—(क) आबारा लड़कों के साथ घूमना या जूआ खेलना बुरा है । (ख) बुरे आदमी का दूसरों को बुराई ही करते हैं । ८. या अमंगल-कारक या अशुभ हो अथवा सिद्ध हो सकता हो । जैसे—बुरी धडी, बुरी खबर, बुरी नजर, बुरी साधत । ९. जिसमें किसी प्रकार का अनौचित्य, खराबी या दोष हो ।

पष—बुरा काम—किसी के साथ स्थापित किया जानेवाला लेगिक सम्बन्ध । सम्भोग । बुरा-भला (क) हानि-लाभ । अच्छा और खराब परिभाषा । जैसे—अपना बुरा-भला सोचकर सब काम करने चाहिए । (ख) उचित और अनुचित सभी तरह की बातें । मुख्यत उक्त प्रकार की ऐसी बातें जो किसी की मर्स्याना करने के लिए कही जायं । जैसे—वह नित्य अपने नौकरों को बुरा-भला कहते रहते हैं । बुरे दिन ।—कष्ट, दुर्भाग्य या पतन का समय । जैसे—जब आदमी के बुरे दिन आते हैं, तब उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है । बुरी वस्तु -गदगी । मिला ।

बुधा—(किसी से) बुरा बनना—किसी की दृष्टि में दोषी या द्वेषपूर्ण भाव रखनेवाला होकर । (किसी से) बुरा मानना—मान में द्वेष या बैर रखना । बुरा खलना—अनुचित या अशुभ मान पड़ना ।

बुराई—स्त्री० [हि० बुरा + ई (प्रत्य०)] १. वह तत्त्व जिसके फलस्वरूप किसी चीज को बुरा कहा जाता है । २. किसी को बुरा कहने की क्रिया या भाव । ३. अनुचित या निन्दनीय आचरण अथवा व्यवहार । जैसे—जो तुम्हारे साथ बुराई करे, उसके साथ भी मलाई करो । ४. आपस में होनेवाला द्वेष, मनोमालिन्य या बैर-भाव । जैसे—दोनों भाइयों में बुराई पड़ गई है ।

फि० प्र०—पचना ।

५. अशुभगुण । दोष । ऐश । जैसे—उसमें बुराई यही है कि वह बहुत बोलता है । ६. किसी से की जानेवाली किसी की निन्दा या शिकायत । जैसे—वह जगह जगह तुम्हारी बुराई करता फिरता है ।

बुराई-भलाई—स्त्री० [हि०] १. अच्छी और बुरी घटनाएँ । नेकी-बर्बी । जैसे—वह छपकी बुराई-भलाई में साथ देते हैं । २. किसी की निन्दा या शिकायत और किसी की प्रशंसा या तारीफ । जैसे—तुम्हें किसी की बुराई-भलाई करने से क्या मतलब ।

बुराक—वि० [अ० बुराक] वह घोड़ा जिस पर रज्जु लकड़कर आकाश में बांधे ।

बुराबा—पुं० [फा० बुराब] १. आरे से लकड़ी पीरने पर उसमें से निकलने-वाला आटे की तरह का महीन बस । २. चूर्ण । चूरा ।

बुराफन— $\sqrt{\text{०}} = \text{बुराई}$ ।

बुरफन— $\sqrt{\text{०}} = \text{बुरे}$ ।

बुरफ— $\sqrt{\text{०}} [\text{०} \text{दिश०}]$ एक जाति की टोकरे, षटाहर्षा आदि बनाने का काम करती थी ।

बुरल— $\sqrt{\text{०}} = \text{राबरखा (बुरा)}$ ।

बुरल— $\sqrt{\text{०}} [\text{अं०}]$? टारों, बाको अथवा किसी चीज का बना हुआ वह उपकरण जिससे रगड़कर कोई चीज साफ की जाती अथवा पीती जाती है । १. तुलिका ।

बुरल— $\sqrt{\text{०}} [\text{दिश०}]$ एक प्रकार का बहुत बड़ा बुर ।

बुरैया— $\sqrt{\text{०}}$ [हि० बुरा] ? बुरा काम करनेवाला आदमी । १. दुष्ट । पाजी । ३. वह जो दूसरों की बुराई या निन्दा करता फिरे । ४. दुस्मन । धानु । (गूरज)

बुरै— $\sqrt{\text{०}}$ [अं०] ? किले आदि की दीवारों में कोनों पर ऊपर की ओर निकला हुआ गोला या पहलुदार भाग जिससे बीच में बैठने आदि के लिए थोड़ा सा स्थान होता है । गरजज । २. उक्त आकार प्रकार की मीनार का ऊपरी भाग । ३. मुबद । ४. गुम्बारा । ५. फलिप्त ज्योतिष का राशि-चक्र ।

बुरैतोष—स्त्री० [हि०] वह तोप जो मुश्कत, किले के बुरे पर रखकर चलाई जाती है ।

बुरी—स्त्री० [बुरे का अल्पा० रूप] छोटा बुरे ।

बुरे—स्त्री० [फा०] ? ऊपरी आभयनी । ऊपरी लाम । २. प्रतियोगिता । होड़ । ३. प्रतियोगिता आदि में लगाई जानेवाली बाजी या दात । ४. शतरज के खेल में किसी पक्ष की वह स्थिति जिसमें उसके बादशाह को छोड़कर अन्य मोहरे सारे जाते हैं । यह स्थिति आधी मात की सूचक होती है ।

बुरे— $\sqrt{\text{०}}$? बुरा हुआ । २. नष्ट-भ्रष्ट । चीपट । बरबाद । जैसे—उसने ज़ुए में सारा धर बुरे कर दिया ।

बुरेबार—वि० [फा०] [माव० बुरेबारी] १. शांतिप्रिय । २. सहनशील ।

बुरेफरोश— $\sqrt{\text{०}} [\text{फा०}]$ बुरे फरोशा [माव० बुरेफरोशी] ? वह जो मनुष्य बेचने का व्यापार करता हो । २. वह व्यक्ति जो जवान सिक्कों को मगाना और दूसरों के हाथ बेचकर धन कमाता हो ।

बुरेफे—वि० [फा०] १. चमकता हुआ । चमकीला । २. बहुत ही साफ और स्वच्छ । जैसे—बुरेफे कपड़े । ३. बहुत ही तीव्र गतिवाला । ४. चतुर । घालाक ।

बुरे—स्त्री० [हि० बुरफना] बोनो का वह ढंग जिसमें बीच हल की जोत में डाल दिये जाते हैं और उसमें से आपसे आप गिरते चलते हैं ।

बुरे— $\sqrt{\text{०}} = \text{बुरा}$ ।

बुरेब—वि० [फा० बरले] [माव० बुरेबी] १. जिसकी ऊँचाई बहुत अधिक हो । बहुत ऊँचा । २. उत्तुंग । भारी । जैसे—बुरेब आवाज । ३. बहुत अधिक बड़ा-बड़ा या उन्नत । जैसे—बुरेबाल बुरेब होना ।

बुरेबी—स्त्री० [फा० बरलेबी] १. बुरेब होने की अवस्था या माव । ऊँचाई ।

बुरे-जान— $\sqrt{\text{०}} [\text{अं०}]$ मझोले आकार किन्तु बराबरी सूत के कुर्सों की एक जाति ।

बुरलम—स्त्री० [फा०] एक प्रसिद्ध मानेवाली विधिवा जो कई प्रकार की होती और एशिया, यूरोप तथा अमेरिका में पाई जाती है । विवेच—यूरोप में प्रायः इसे पुंलिंग मानते हैं और इसे आधिक के प्रतीक के रूप में प्रहूय करते हैं ।

बुरलम-बनन—स्त्री० [फा०] एक प्रकार की सहिष्णी (विधिवा) ।

बुरलमुलबाना— $\sqrt{\text{०}} [\text{फा०}]$ [माव० बुरलमुलबानी] वह जो बहुत ही बुरलमुले पास्ता तथा लकड़ा हो ।

बुरलमुलबानी—स्त्री० [फा०] बुरलमुले पालने टा लकड़ने का काम या शौक । बुरलमुलहजार बास्त—स्त्री० [फा०] बहुत ही मयुर स्वरनाला एक प्रसिद्ध ईरानी पक्षी जिसकी चर्चा अरबी और फारसी काव्यों में अधिकता से होती है । संस्कृत में इसे 'कल्पविक' कहते हैं ।

बुरलमुला— $\sqrt{\text{०}} [\text{सं० बुदबुद}]$? किसी तरल पदार्थ या पानी की बूँद का वह शोथला और फूला हुआ रूप जो उसे ज्वर हुआ भर जाने के कारण प्राप्त होता है । बुरबुरा । बुल्ला । २. लालाणिक रूप में कोई लघु-मयुर चीज या दात । जैसे—जिन्वरी पानी का बुरलमुला है ।

बुरलमाना—स० [हि० बुलाना का प्रे०] १. किसी को बोलने में प्रवृत्त करना । बोलने का काम किसी दूसरे से कराना । २. किसी को किसी के द्वारा यह कहलाना कि तुम यहाँ आओ । किसी को बुलाने का काम किसी के द्वारा करना । संयो० क्रि०—मेजना ।

बुरलक— $\sqrt{\text{०}} [\text{तु०}]$ १. नाक की बीचवाली हड्डी । २. नाक में पहनी-जानेवाली चीज । ३. वह लंबोतर मोती जो नय में लटकना जाता है ।

बुरलकी— $\sqrt{\text{०}} [\text{तु० बुलक}]$ बोड़े की एक जाति । उदा०—बुरलकी और हिरमंजि इराकी । तुर्की की मूबोर बुलकी ।—जायसी ।

बुरलाना—स० [हि० बोलना का सं० रूप] १. किसी को बोलने में प्रवृत्त करना । बोलने का काम किसी से कराना । २. किसी को अपने पास आने या अपनी ओर प्रवृत्त करने के लिए आवाज देना । पुकारना । ३. किसी से यह कहना या कहलाना कि तुम यहाँ आ हमारे पास आओ । संयो० क्रि०—मेजना ।

बुरलाना— $\sqrt{\text{०}}$ [हि० बुलाना+आवा (प्रत्य०)] ? बुलाने की क्रिया या भाव । २. आवाहन । निर्मणज । क्रि० प्र०—आना ।—जाना ।—मेजना ।

बुरलह— $\sqrt{\text{०}} [\text{सं० बोलेहा}]$ वह थोड़ा जिसकी गरदन और पूँछ के बाल पीले हो । (अथ बँदक)

बुरलहट—स्त्री० [हि० बुलाना] किसी को कही बुलाने के लिए मेजी जानेवाली आवाज या संदेश । बुलवा ।

बुरलिन—स्त्री० [अं० बुलियन] एक प्रकार का रस्ता जो चौकोर पाल के लम्बे में बाँधा जाता है । (लघ०)

बुरलिटिन— $\sqrt{\text{०}} [\text{अं०}]$ किसी सार्वजनिक दात या विषय से सबब रखनेवाला वह संलिप्त सूचनापत्र जो किसी की ओर से आधिकारिक रूप से प्रकाशित किया गया हो ।

बुरेली—स्त्री० [तामिळ] मँडोले आकार का एक तरह का पेड़ ।

बुरेलीआं— $\sqrt{\text{०}} = \text{बुरावा}$ ।

बुरलम— $\sqrt{\text{०}} [\text{दिश०}]$ १. गिरई की तरह की बुरे मुरे रथ की एक मछली जिसके पूँछ नहीं होती । २. बेहरा । मूँह । (दाला)

1पू०[अनु०] पानी का बुलबुला।

बुल्लां—पू०=बुलबुला।

बुल्लाई—स्त्री०=बोलाई।

बुस—पू०[सं० तुप] अनाज आदि के ऊपर का छिलका। सूसी।

बुसना—अ०[हिं० बासी] छाव पदार्थ का बासी पड़ने के कारण दुर्गन्ध युक्त होना। जैसे—कढ़ी तो बुस गई है।

बुहारी—स्त्री०-बहुरी।

बुहारा—सं०[म० बहुरकर+ना (प्रत्य०)] झाड़ से जगह साफ करना। झाड़ देना। झाड़ना। २ लाक्षणिक अर्थ में अवांछित तत्त्व दूर करना या बाहर निकालना।

बुहारा—पू०[हिं० बुहारना] [स्त्री० अल्पा० बुहारी] ताड़ की सींको का बना हुआ बड़ा झाड़।

बुहारी—स्त्री०[सं० बहुरकरी, हिं० बुहारना +ई (प्रत्य०)] झाड़। बड़नी।

बूच—स्त्री०[हिं० मूछ] एक प्रकार की मछली जिसे गूँच भी कहते हैं।

बूच—स्त्री०[सं० बिन्दु] १. जल अथवा किसी तरल पदार्थ का कण। कतार।

बूच—बूच भर=बहुत थोड़ा। जटा-सा।

बूहा—बूँदें गिरना या पड़ना - धीमी बर्षा होना। थोड़ा-थोड़ा सा पानी बरसना।

२ पुरुष के वीर्य का वह अणु जो स्त्री के गर्भाशय में पहुँचकर उसे गर्भवती करता है।

बूहा—बूँद बुराना—स्त्री का पुरुष के समीप के कारण गर्भवती होना। ३ एक प्रकार का रगीन देसी कपड़ा जिसमें बूँदों के आकार की छोटी छोटी बुँदियाँ बनी होती हैं और जो स्त्रियों के लहंगे आदि बनाने के काम में आता है।

बि० बहुत तेज (अल्प)।

बूँबा—पू० [हिं०बूँद] १ सुराहीदार मणि या मोती जो कान में या नथ में पहना जाता है। २ दे० 'बूँदा'।

बूँबा-बोधी—स्त्री० [बूँद हलकी या थोड़ी बर्षा]।

बूँधी—स्त्री०[हिं० बूँद +ई (प्रत्य०)] १ बर्षा के जल की बूँद। २ एक प्रकार की मिठाई जो झरने में से बूले हुए बेसन की छोटी छोटी बूँदें टपकार बनाई जाती है। बुँदियाँ।

बू—स्त्री० [फा०] १ बास। गध। महक। २ दुर्गुण। बदबू। ३ लाक्षणिक रूप में, किसी प्रकार का आमास। जैसे—(फ) उसकी बातों में छरात की बू रहती है। (घ) उनमें से अभी तक रईसी की बू नहीं गई है।

पद—बू-बास-हलकी गध।

बूआ—स्त्री०[दिशा०] १ पिता की बहन। फूकी। २ बड़ी बहन। ३ स्त्रियों का परस्पर आदर-भूचक संबोधन। (मुसल०) ४. एक प्रकार की मछली। ककसी।

बूई—स्त्री०[दिशा०] एक तरह की बनस्पति।

बूक—पू०[दिशा०] ऊँची पहाड़ियों पर होनेवाला माजुकल की जाति का एक वृक्ष।

पू०[हिं० बकोटा] हाथ के पत्रों की वह स्थिति जो डेंगलियों की बिना हूँकी से लगाये किसी बस्तु को पकड़ने, उठाने या लेने के समय होती है। चपुल। बकोटा।

1पू०[सं० बल] १ कलेजा। हृदय। २. छाती। बल स्थल।

स्त्री०—बुक (कपड़ा)।

बूकना—सं०[सं० बूण—तोड़ा-फोडा हुआ] १. सिल और बट्टे की सहायता से किसी चीज को महीन पीसना। पीसकर बूण करना। २ अनावश्यक और हास्यास्पद रूप में अपने किसी गुण, योग्यता आदि का प्रदर्शन करना। बयारना। जैसे—अपरेजी या सक्कत बूकना, कानून या काही-गरी बूकना।

बूका—पू०[दिशा०] वह भूमि जो नदी के हटने से निकल आती है। गंगबारा।

1पू०—बूकना।

बूपा—पू०[दिशा०] मूसा।

बूच—पू०[अ० बच—गुच्छा] कपड़े, कामज या चमड़े आदि का वह टुकड़ा जो बट्टे आदि में गोली या बारूद को यथारथान स्थिर रखने के लिए उसके चारों ओर लगाया जाता है। (लघ०)

पू०[अ० बूच] बड़ी मेख। (लघ०)

बूहा—बूँध बाँरना—गोले या गोली आदि की मार से होनेवाला छेद गट लगाकर बंद करना

बूबड़—पू०[अ० बूबर] वह जो पशुओं का मांस आदि बेचने के लिए उनकी हत्या करता है। कसाई।

बूबड़खाना—पू०[हिं० बूबड़। फा० खाना] कसाई-खाना।

बूबा—बि०[सं० बूस=विभाग करना] [स्त्री० बूबी] १ जिसके कान कटे हुए हों। कनकटा। २ जो कुछ अंग या अवयव कट जाने के कारण कुरूप या मढ़ा जान पड़े। जैसे—बूचा पेड़। ३ जो अस्ती चीज के अभाव के कारण अधोभ्रम या मढ़ा जान पड़े। जैसे—बूचे हाथ, जिनमें बूँदियाँ या गहने न हों। (स्त्रियं)

बूबी—स्त्री०[हिं० बूचा] वह मेड जिसके कान बाहर निकले हुए न हो। बल्कि जिसके कान के स्थान में केवल छोटा मा छेद ही हो। गुजरी।

बूजन—पू०[फा० बूजन] बंदर। (कलबर)

बूजना—सं०[?] किसी की घोषा देने के लिए कुछ छिगाना।

बूस—स्त्री०[सं० बुद्धि] १. बूझने की क्रिया या भाव। २ बूझने की शक्ति। बुद्धि। समझ।

पद—समझ बूस-समझने की और ज्ञान प्राप्त करने की योग्यता या शक्ति।

३ पहेली या बुसातर।

बूसन—स्त्री०—बूँस।

बूसन—सं० [हिं० बूँस] १. किसी प्रकार का ज्ञान या बोध प्राप्त करना। जानना और समझना। २. कोई गूँझ या रहस्यपूर्ण बात समझना या उसकी तह तक पहुँचना। जैसे—पहेली बूसन। ३ प्रश्न करना। बूँसना।

बूसनी—स्त्री० [हिं० बूसन, सं० बूध्य] १. प्रश्न। सवाल। उदा०—जब अति सभिन बूसनी लई, तब हंसि कुँवरि गोद लुटि गई।—नयबारा। २ पहेली। बूसातर।

बूट—पू० [सं० बिटप, हिं० बूटा] १ चने का हटा पीषा। २ चने का हटा दाना। ३ पेड़ या पीषा।

पू०[अ०] एक तरह का चिलायती ढग का फीतेवाला जूता।

ब्रह्मणा—अ० [?] भागना।

ब्रह्मि—स्त्री० [हि० ब्रह्मी] बीर ब्रह्मी नाम का कीड़ा।

ब्रह्म पुत्राव—पु० [हि०] बहू पुत्राव जो बाबल और हरे बने को निकालकर पकवाया जाता है।

ब्रह्मा—पु० [सं० चित्त] १. छोटा ब्रह्म। पीषा। २. उक्त आकार का कोई अकन या चित्रण। जैसे—कपड़े या बीवार पर बने हुए बेल-बूटे। ३. एक प्रकार का छोटा पहाड़ी पीषा।

ब्रह्मी—स्त्री० [हि० ब्रह्म का स्त्री० रूप] १ ऐसी जंगली वनस्पति जिसका उपयोग औषध आदि के रूप में होता है।

पत्र—बड़ी-बूटी। (दे०)

२ छोटे पीषो या फूलों के आकार का कोई अकन या चित्रण। जैसे—अधरकी बूटी। ३. आंग। बिजया। ४. ताष के पत्तों पर अंकित रंग के चिह्न। ५. एक प्रकार का पीषा जिसके रेसो से रस्सियाँ बनाई जाती हैं। ऊदल। गुल-बादला।

ब्रह्मदार—वि० [हि० ब्रह्म + का० दार (प्रत्यय०)] जिस पर बूटे बने हो।

ब्रह्मा—अ० [सं० वर्षण] बरसाना। वर्षा होना। उदा०—आँधी पीछे जो जल बूटा।—जायसी।

ब्रह्म—स्त्री० [हि० ब्रह्मना] जल की इतनी गहराई जिससे आदमी डूब सके। दुबाव।

ब्रह्मन—स्त्री०—बुध (दुबाव)।

ब्रह्मना—अ० [सं० बुध=ब्रह्मना] १. निमज्जित होना। दुबाना। २. किसी काम या बात या विषय में निमग्न या लीन होना। उदा०—अनबूढ़े बुढ़े तिर्रे जे बूढ़े सब अंग।—बिहारी। संयो० क्रि०—जाना।

ब्रह्मा—पु० [हि० ब्रह्मना] १. वर्षा आदि के कारण होनेवाली जल की दाव। २. उतना गहरा पानी जिसमे आदमी डूब सकता हो। दुबाव।

क्रि० प्र०—जाना।

ब्रह्मिणा—पु० [हि० ब्रह्मना] गहरे पानी में गोता लगाकर पीछे निकालने-वाला। गोताखोर। दुबावा।

ब्रह्म—पु० [हि० ब्रह्म] १. बीरब्रह्मी। २. बीरब्रह्मी की तरह का गहरा झाल रंग।

वि०—बूटा (बूट)।

ब्रह्म—पु० [स्त्री० ब्रह्मी]—बुढ़डा (बूट)।

पत्र—बूडा आँसू=बुढ़ापे के बहुत कुछ पास पहुँचा हुआ।

स्त्री०—बुढ़िया (बूडा स्त्री)।

ब्रह्मी—स्त्री०—बीर ब्रह्मी।

ब्रह्मा—पु०—ब्रह्मा। उदा०—है काकर अस ब्रह्मा।—जायसी।

ब्रह्मा—पु० [हि० चित्त] १. बल। पराक्रम। २. शक्ति। सामर्थ्य।

ब्रह्मिणी—स्त्री० [विश०] १. आकृति। २. बेहरा। घूरल। शकल। ३. रजनी-सा रङ्ग।

ब्रह्मा—पु० [विश०] चतार नाम का वृक्ष।

ब्रह्मक—पु० [विश०] मूले व्यस्त।

ब्रह्मणा—पु० [?] भाजरे की मूली।

ब्रह्मस—स्त्री० [सा०+हि०] १. गंध। मद्गुह। २. किसी परम्परा

का चिह्न या लक्षण। (प्रायः नदिक प्रयोगों में प्रयुक्त) जैसे—उत्तम बर्षों की बु-वास नदी है।

ब्रह्म—स्त्री० [जनु०] १. बड़ी बहिन। ३. बड़ी-बूटी स्त्रियों के लिए सम्बोधन।

ब्रह्म—पु० [सा०] १. उल्लू। २. बंजर भूमि।

ब्रह्म—पु० [विश०] १. पश्चिमी भारत में होनेवाली एक प्रकार की घास जिसके साने से गोमैं, भैसों आदि का दूध और अन्य पशुओं का बल बहुत बढ़ जाता है। खोंद। २. पशुओं के खाने का कटा हुआ चारा। ३.

निकम्बो, फालतू या रही बीज। ४. कुछ विशिष्ट प्रकार के कपड़ों के ऊपर निकले हुए रोंए। जैसे—बूरदार कम्बल, बूरदार तौलिया। ५.

एक प्रकार की मिठाई जो अन्न की मूली या छिलके से तैयार की जाती है। उदा०—बूर के लखटू खाने तो पछताये, न खाने तो पछताये।

(कहा०)

स्त्री०—बूर (भाग)।

बूरना—अ०—बूडना (बुरना)।

बूरा—पु० [हि० बूरा] १. कच्ची चीनी जो मुरे रंग की होती है। शक्कर। २. एक प्रकार की साफ की हुई बरिया चीनी। ३. महीन पूर्ण।

बूरी—स्त्री० [विश०] एक प्रकार की बहुत छोटी वनस्पति जो पीछों, उनके तनों, फूलों और पत्तों आदि पर उत्पन्न हो जाती है और जिसके कारण वे सड़ने या नष्ट होने लगते हैं।

बूला—पु० [विश०] पयाल का बना हुआ जूता। लतड़ी।

बूब—पु०—दे० बूद।

बूबा—स्त्री०—दे० बूदा।

बूबारण्य—पु० [सं० बूदारण्य] बूदावन।

बूहण्य—वि० [सं० बूह् (बुद्धि करना)+ल्युट्—अन] पोषक। पुष्टिकर।

पु० १. पुष्ट करने की क्रिया या मात्र। २. एक प्रकार की मिठाई।

बूष्ठा—पु०—बूष्ठा।

बूष्टिदा—वि०—बूष्टिदा।

बूष—पु० [सं० बूष] १. साँड़। २. बैल। ३. मोरपंख। ४. हज़। ५. दे० बूष।

बूहज्जन—पु० [सं० बूहज्-जन, कर्म० सं०] नामी, यशस्वी या बहुत बड़ा आदमी।

बूहत्त—वि० [सं० बूह् (बुद्धि)+अति नि० सिद्धि] १. बहुत बड़ा या भारी। विशाल। २. बड़ा। पक्का। मजबूत। ३. बलवान। ४. (स्वर) ऊँचा या भारी। ५. पर्याप्त। यथेष्ट। ६. नाना। विविध।

पु० एक मरुत् का नाम।

बूहत्सिका—स्त्री० [सं० बूहत्त+कन्+टाप्-ह्रस्व] उपरला। डुपट्टा।

बूहती—स्त्री० [सं० बूहत्त+क्रीप्] १. कटाई। बरहँदा। बनमंटा। २. भट-कटैया। ३. बाक्क। ४. उत्तरीय वस्त्र। उपरला। ५. विस्वावसु

गंधर्व की बीषा का नाम। ६. सुभूत के अनुसार एक परमेश्वर जो टीह के दोनों ओर पीठ के बीच में है। ६. एक प्रकार का वर्णमूल जिसके प्रत्येक वर्ण में नौ अक्षर होते हैं।

बूहतीपति—पु० [सं० ष० त०] बूहत्सिका।

बूहत्कंब—पु० [सं० ब० सं०] १. विष्णुकंब। २. गाजर।

बृहत्केतु—पु० [सं० ब० सं०] अग्नि।
 बृहत्तर—वि० [सं० बृहत्+तरपु] ? किसी बड़े या बृहत् की तुलना में और नीचे बड़ा। जिसमें मूल क्षेत्र के अतिरिक्त आसपास के क्षेत्र भी मिले हों। जैसे—बृहत्तर भारत।
 बृहत्ताल—पु० [कर्म० सं०] हित्ताल।
 बृहत्पुत्र—पु० [सं० कर्म० सं०] बंस।
 बृहत्पद् (बृ)—पु० [सं० ब० सं०] नीम का वृक्ष।
 बृहत्पत्र—पु० [सं० ब० सं०] ? हाथी कद। २. सफेद लोष। ३. कासमर्द।
 बृहत्पथं—पु० [सं० ब० सं०] सफेद लोष।
 बृहत्पाद—पु० [सं० ब० सं०] वटवृक्ष। बड़ का पेड़।
 बृहत्पीतृ—पु० [सं० कर्म० सं०] महापीलु। पहाड़ी अखरोट।
 बृहत्पुत्र्य—पु० [सं० ब० सं०] ? पेड़ा। २. केले का पीप।
 बृहत्पुष्पी—स्त्री० [सं० ब० सं०, बीपु] सन का पेड़। सनर्द।
 बृहत्कल—पु० [सं० ब० सं०] ? चिचिडा। चिचडा। २. कुम्हडा।
 ३. कटहल। ४. जामुन। ५. तितलोकी। ६. महेन्द्र-वाष्पी।
 बृहत्—वि०—बृहत्।
 बृहत्वारण्यक—पु० [सं० कर्म० सं०] एक प्रसिद्ध उपनिषद् जो दस मुख्य उपनिषदों के अन्तर्गत है। यह शतपथ ब्राह्मण के मुख्य उपनिषदों में से और उसके अंतिम ६ अध्यायों या ५ प्रपाठकों में है।
 बृहदेला—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] बड़ी इलायची।
 बृहद्वृत्ती—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] एक प्रकार की दती जिसके पत्ते एरंड के पत्तों के समान होते हैं। दे० 'दती'।
 बृहद्बला—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] ? महाबला। २. सफेद लोष।
 ३. लज्जावती। लज्जालू।
 बृहद्बीज—पु० [सं० ब० सं०] अमड़ा।
 बृहद्भानु—पु० [सं० ब० सं०] ? अग्नि। २. सूर्य। ३. चित्रक नामक वृक्ष। चीता। ४. विष्णु।
 बृहत्थ—पु० [सं० ब० सं०] ? इन्द्र। २. सामवेद का एक अक्ष। २. यज्ञ-पात्र।
 बृहत्थर्म—पु० [सं० ब० सं०] सोनामकसी। स्वर्णमासिक।
 बृहत्बल्ली—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] करेला।
 बृहदाशी (विन्)—वि० [सं० बृहत्+वद् (कहना)] ; गिनि, वीर्य, नलय] बहुत अधिक या बड़-बड़कर बातें करनेवाला।
 बृहत्पद—पु० [सं० कर्म० सं०] अर्जुन।
 बृहत्पल—पु० [सं० कर्म० सं०] ? अर्जुन। २. बाहु। बांह।
 बृहत्पारवीय—पु० [सं० बृहत्-नारवीय, कर्म० सं०] एक उपपुराण।
 बृहत्पारायण—पु० [सं० बृहत्-नारायण, कर्म० सं०] याज्ञिकी उपनिषद् का दूसरा नाम।
 बृहत्सिध—पु० [सं० बृहत्-निष्प, कर्म० सं०] महाविष्णु।
 बृहत्पति—पु० [सं० बृहत्-पति, ब० सं०, सुद नि०] ? एक प्रसिद्ध देवता जो अंगिरस के पुत्र और देवताओं के गुरु कहे गये हैं। २. सौरजगत् का पाँचवाँ और सबसे बड़ा ग्रह जिसका व्यास ८७००० मील है। यह लगभग ११० वर्षों में सूर्य की परिक्रमा करता है। (जुपिटर)
 बृहत्पति चक्र—पु० [सं० सं०] १० संवत्सरों का चक्र। (सप्तित् व्योतिष)

बृहत्पतिवार—पु० [सं० तं०] बुधवार के बाद और शुक्रवार से पहले पड़नेवाले दिवस की संज्ञा। गुरुवार। बीफे।
 बेंग—पु० [सं० व्यंग] मंत्रक।
 बेंगनकुटी—स्त्री० [दश०] अवाली। (दे०)
 बेंग—स्त्री० [जं०] १. पत्थर आदि का बना हुआ पाश्चात्य डग का एक आसन जो कुत्तों से कई गुना लम्बा होता है तथा जिस पर कई आदमी एक साथ बैठ सकते हैं। २. राजकीय न्यायालयों में न्यायाधीशों के बैठने का स्थान। ३. संसद भवन में दल विशेष के सदस्यों का बैठने का स्थान।
 बेंचना—सं०=बेचना।
 बेंठ—स्त्री० [सं० बं०] औजारों आदि में लगा हुआ काठ आदि का दस्ता। मूठ। दस्ता। जैसे—छुरी की बेंठ।
 बेंठ—स्त्री०=बेंठ।
 बेंड—पु० [दश०] ? वह मेडा जो मेडों के मूड में बच्चे उत्पन्न करने के लिए छूटा रहता है। (गडरिये) २. नाग श्यामा। (दलाल)
 ३. किसी भारी चीज को गिरने से बचाने के लिए उसके नीचे लगाया जानेवाला सहारा। बाँड़। ४. पहाड़। (बन-)
 स्त्री० [हिं० बेडा] टेक। चाँड़।
 बेंडना—सं०=बेंडना (बाँड़ लगाना)।
 बेंडा—पु०=बेंवडा।
 वि० [हिं० बेडा (आधा या तिरछा)] ? आड़ा। तिरछा। २. कठिन।
 पु०=ब्योडा।
 बेंडी—स्त्री० [दश०] ? एक तरह की चौड़े मूँहवाली छिछली टोकरी जिससे गूँदें आदि में मरा हुआ पानी खेतों में उलीया जाता है।
 २. हँसिया के आकार का लोहे का एक औजार जिससे बरतनों पर चित्रा करते हैं।
 बेंड—पु० [?] अहाज के संकेत के उपरी सिरे पर लगा रहनेवाला धातु का पत्तर जो हुवा का रस बसलता है। (स्था०)
 बेंत—पु० [सं० बेतस] ? खजूर, ताड़ आदि की जाति की एक प्रसिद्ध लता जो पूर्वी एशिया और उसके आस-पास के टापुजों में अजलायों के पास अधिकता से होती है। इसकी छड़ियाँ बन्नी हैं और इसके छिलकों आदि से कुतियाँ, टोकरियाँ आदि बनी जाती हैं। २. उक्त के डठल की बनी हुई छड़ी या बंडा।
 मुहा०—बेंत की तरह काँपना=परचर काँपना। बहुत अधिक डरना। जैसे—मह लड़का आपको देखते ही बेंत की तरह काँपता है।
 बेंदली—स्त्री०=बिंदी।
 बेंदा—पु० [सं० बिन्दु] ? माथे पर लगाया जानेवाला चंदन आदि का गोल टीका। २. माथे पर पहनने का बंधी या बेबी नाम का गहना।
 बेंदी—स्त्री० [सं० बिन्दु, हिं० बिंदी] ? टिकली। बिंदी। २. बिंदी। सिफार। सुरा। ३. माथे पर पहनने का बेंदी नाम का गहना। ४. सरों के पेड़ की तरह का अकन या चित्रण।
 बेंडक़ा—पु०=ब्योडा।
 बेंडताना—सं० [हिं० ब्योतना का में०] ब्योतने का काम हुसरे से कराना। सिलाने के लिए किसी से कपड़ा नपवाना और कटवाना।

बे-अव्य० [सं० नि, वि० फा० बे] विना। बगैर। (इसका प्रयोग प्रायः अरबी, फारसी आदि शब्दों के साथ यौगिक बनाते समय पूर्व पद के रूप के रूप में होता है। जैसे—बेइच्छत, बेईसानी आदि।
 अव्य० [अनु०] हिं० अवे का संक्षिप्त रूप जिसका प्रयोग उपेक्षाबोधक संबोधन के लिए होता है।
 मुहा०—बे ते करणा—किसी को दुष्कृत समझते हुए उसके साथ अशिष्टता-पूर्वक बातें करना।
 बेअंत—वि० [फा० बे=बगैर+सं० अंत] जिसका कोई अंत न हो। अनंत। असीम। बेहूद।
 पद—बेअंत साया=अपेक्षिक भाषा में होनेवाली कोई चीज।
 बेअकल—वि० [फा० बे+अ० अकल] [भाव० बेअकली] जिसे अकल न हो। निर्बुद्धि।
 बेअकली—स्त्री० [फा० बे+अ० अकल] नासमझी। मूर्खता। बेव-कृपी।
 बेअदब—वि० [फा० बे+अ० अदब] [भाव० बेअदबी] १. जो बड़ों का अदब या आदर न करता हो। २. जो मर्यादा का ध्यान न रखकर अशिष्ट आचरण करता हो। अशिष्ट। उर्द्वं। घृष्ट।
 बेआब—वि० [फा० बे+अ० आब] [भाव० बेआबी] १. जिसमें आब (चमक) न हो। २. जिसकी कोई प्रतिष्ठा न हो।
 बेआबक—वि० [फा०] [भाव० बे-आबर्द] जिसकी कोई आबक या प्रतिष्ठा न हो। फलतः अपमानित और तिरस्कृत।
 बेआबी—स्त्री० [फा० बे+अ० आब] १. बेआब होने की अवस्था या भाव। मलिनता। निस्तेजता। २. अप्रतिष्ठा।
 बेआरा—पुं० [देष०] एक में मिला हुआ जो और बना।
 बेईतिहा—वि० [अ०+फा०] अपार। असीम। बेहूद।
 बेइसाफ—वि० [फा०] [भाव० बेइसाफी] अन्यायी।
 बेइच्छत—वि० [फा० बे+अ० इच्छत] १. जिसकी कोई इच्छत या प्रतिष्ठा न हो। अप्रतिष्ठित। २. जिसका अपमान किया गया हो अपमानित।
 बेइच्छती—स्त्री० [फा०+अ०] १. अप्रतिष्ठा। २. अपमान।
 बेइस्ति—पुं० बे० 'बेला'।
 † स्त्री०—बेल (बल्ली)।
 बेइस्ल—वि० [फा० बे+अ० इस्ल] [भाव० बेइस्ली] बे पढ़ा-लिखा। अपढ़।
 बेईमान—वि० [फा० बे+अ० ईमान] [भाव० बेइमानी] १. जिसका ईमान ठीक न हो। जिसे धर्म का विचार न हो। अधर्मी। २. अविश्वसनीय।
 बेईमानी—स्त्री० [फा० बे+अ० ईमान] १. बेईमान होने की अवस्था या भाव। २. बुरी नियत से किया जानेवाला कोई कार्य।
 बेईग—पुं० [देष०] बस का वह भाँगा जिसे कबल की पट्टियाँ बुनते समय लाने की सहाय अलग करने के लिए रखते हैं।
 बेजा—वि० [सं० द्वि+अभि] दोनों। उदा०—भाई तिकरि पसारी बेज—भिषीराज।
 बेउच्छ—वि० [फा० बे+अ० उच्छ] जो उच्च या आपत्ति न करता हो।

बेउसूल—कि० वि० [फा०+अ०] विना किसी सिद्धांत के।
 वि० जिसका कोई उल्लूख या सिद्धांत न हो। सिद्धांतहीन।
 बेएतबार—पुं० [फा०+अ०] [भाव० बे-एतबारी] अविश्वास।
 वि० १. जिस पर विश्वास न किया जा सके। २. जो विश्वास न करता हो।
 बेएदब—वि० [फा०+अ०] निर्बोध।
 बेओमी—स्त्री० [देष०] जुलाहो का कपों की तरफ का एक औजार जिसे वे लाने के सूतों के बीच में रखते हैं।
 बेओलाब—वि० [फा०+अ०] निरांतान।
 बेकति—पुं०—व्यपित।
 बेकदर—वि० [फा० बे+अ० कद] [भाव० बेकदरी] १. जिसकी कुछ भी कदर न हो। २. जो किसी की कदर न करता हो।
 बेकदरा—वि०=बेकदर।
 बेकदरी—स्त्री० [फा०] १. बेकदर होने की अवस्था या भाव। २. अनदर।
 बेकरा—पुं० [देष०] पशुओं का सूरपका नामक रोग। सूछ्हा।
 बेकरार—वि० [फा० बे+अ० करार] [भाव० बेकरारी] १. बेचैन।
 विकल। २. परम उल्लूकता।
 बेकरारी—स्त्री० [फा० बेकरारी] १. बेकरार होने की अवस्था या भाव।
 बेचैनी। व्याकुलता। २. परम उल्लूकता।
 बेकाल—वि० [सं० विकल] व्याकुल। विकल। बेचैन।
 बेकाली—स्त्री० [हिं० बेकल+ई (प्रत्यय)] १. बेकल होने की अवस्था या भाव। बेचैनी। व्याकुलता। २. रिक्यो का एक रोग जिसमें उनकी धरन या गर्भाशय अपने स्थान से कुछ हट जाता है और जिसमें रोगी को बहुत अधिक पीड़ा होती है। उदा०—मीर गूल से अब के रहने में हुई बहू बेकाली। टल गईं का नाफदानी, पेड़ू पत्थर हो गया।
 —जान साहब।
 बेकस—वि० [फा०] [भाव० बेकमी] १. निःसहाय। निराश्रय। २. दीन-हीन। ३. कष्टग्रस्त।
 बेकसूर—वि० [फा० बे+अ० कुसूर] [भाव० बेकसूरी] जिसका कोई कसूर न हो। निरपराध।
 बेकहा—वि० [फा० बे+हिं० कहना] [स्त्री० बेकही] जो किसी का कहना न मानता हो। किसी के कहने के अनुसार न चलनेवाला।
 बेकानुमी—वि० [फा० बे+कानुन्] अवैध।
 बेकाबू—वि० [फा० बे+अ० काबू] १. जो काबू में किया या बंध में लाया न जा सके। २. जिस पर किसी का काबू या बंध न हो। अनियमित। ३. निरकुल।
 बेकाम—वि० [फा० बे+हिं० कम] १. जिसे कोई काम न हो। निकम्मा। निडर। २. जिसमें कोई काम न निकल सके। रूढ़ी।
 कि० वि० निरर्थक। अर्थ्य।
 बेकायदा—वि० [फा० बे+अ० कायदा] जो कायदे अर्थात् नियम या विधान के विरुद्ध हो। अनियमित।
 बेकार—वि० [फा०] [भाव० बेकारी] १. जो काम में न लगा हुआ हो। २. जो काम न कर सकता या किसी काम में न जा सकता हो। निरर्थक। निकम्मा।

कि० वि० अर्थ। बे-कायदा।
बेकारा—पु० [सं० बेकरा=शब्द] किसी को जोर से बुलाने का शब्द।
 जैसे—अरे, हो आदि।
बेकारी—स्त्री० [फा०] बेकार होने की अवस्था या भाव। ऐसी स्थिति जिसमें आदमी या कुछ लोगों के हाथ में कोई काम, धन्धा या रोजगार न हो; और इसी लिए जिसकी आय या जीविका-निर्वाह का कोई साधन न हो। (अन्-एम्प्लॉयमेंट)
बेकूप—वि०=बेकूप। उदा०—सबै स्वान बेकूप।—भगवत रमिक।
बेस—स्त्री० [फा०] जड़। मूल।
 †पु० १ बेप। २.—स्त्रीय।
बेसटके—वि० [हि० बे+हि० सटका] बिना किसी प्रकार के सटके के। बिना किसी प्रकार की रकावट या अनमजस के। निस्सकोच।
 अर्थ०—बेसटके।
बेसटके—अर्थ० [हि० बेसटके] बिना आशंका या सटके के। फलत निमंत्र्य होकर।
बे-सता—वि० [फा० बे+अ० सता-कुलूर] १ जिसने कोई सता या अपराध न किया हो। निरपराध। बेकमूर। २. जो कही सता न करे, अपरात् कही न चूकनेवाला। अचूक। अमोघ। जैसे—बेसता निशाना लगाना।
बेसबर—वि० [फा० बे+सबर] [माब० बेसबरी] १. जिसको किसी बात की खबर न हो। अनजान। नावाकफ। २. जिसे कुछ भी खबर न हो। बेमुद्य। बेदोश। जैसे—सब लोग बेसबर सोये थे।
बेसबरी—स्त्री० [फा० बे०+अ० सबरी] १. बेसबर होने की अवस्था या भाव। अज्ञानता। २. बेहोशी।
बेसुद—वि० [फा० बेसुद] [माब० बेसुदी] जो आपे भे न हो। अपनी सुय-भूष मूला हुआ।
बेसुदी—स्त्री० [फा०] बेसुद होने की अवस्था या भाव। आपे भे न होना।
बेसुर—पु० [देश०] एक प्रकार का पत्ती जिसका शिकार किया जाता है।
बेसोकि—वि० [फा० बे+अ० सोकि] जिसे सोकि या भय न हो। निमंत्र्य।
बेग—पु० [अ० बैग] कपड़े, चमड़े, प्लस्टिक आदि लचीले पदार्थों का कोई ऐसा थैला जिसमें चीजे रखी जाती हैं और जिसका मुँह ऊपर से बंद किया जा सकता हो। थैला।
 पु० [तु०] [स्त्री० बेगम] १ अमीर। धनवान्। २ नेता। सरदार। ३ मुगलो का अल्ल।
 †पु०—बेग।
 †कि० वि० बेगपूर्वक। जल्दी से।
बेगम्मे—पु० [देश०] १. हीरा काटनेवाला कारीगर। हीरा तराश। २ जोहरी। ३. नगीने बनानेवाला कारीगर। हूक्काक।
बेगती—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की मछली।
बेगना—अ० [हि० बैग] १ बेगपूर्वक कोई काम करना। २ जल्दी करना या मथाना।
बेगम—स्त्री० [तु० बैग का स्त्री०] [बहु० बेगमत] १ मले घर की स्त्री। महिला। २ किसी बड़े नबाब, बाघशाह या सरदार की पत्नी। ३ ताश का बहु पत्ता जिस पर रानी या स्त्री का चित्र बना रहता है।

बेगम—वि० [हि० बे+अ० गम] जिसे किसी बात का गम या चिन्ता न हो। निश्चित।
बेगम-फूली—पु० [तु० बेगम हि० फूल+ई (प्रत्य०)] एक प्रकार का बड़िया आम।
बेगम-बेलिया—पु० [अं० बिगनालिया] एक प्रकार की लता जिसमें कई रंगों के फूल लगते हैं।
बेगमा—स्त्री० [हि० 'बेगम' का सम्बोधन कारक मे रूप।
बेगमी—वि० [तु० बेगम+ई (प्रत्य०)] १ बेगम-सबयी। बेगम का। २. बेगमी के लिए उपयुक्त अर्थात् उत्तम। बहुत बड़िया।
 वि० [फा० बे+अ० गमी] निश्चितता। बेफिकी।
 पु० १ एक प्रकार का बड़िया कपुरी पान। २ एक प्रकार का बड़िया चावल। ३. एक प्रकार का पनीर जिसमें मसमः कम होता है।
बेगरी—अर्थ०=बगीर।
बेगरज—वि० [फा० बे+अ० गरज] [माब० बेगरजी] जिसे कोई गरज या परवा न हो।
 कि० वि० बिना किसी गरज, प्रयोजन या मतलब के। नि स्वार्थ रूप से।
बेगरजी—स्त्री० [फा० बे+अ० गरज+ई (प्रत्य०)] बेगरज होने की अवस्था या भाव।
 †वि०=बेगरज। जैसे—बेगरजी नौकर, बेगरजी सैया।
बेगरा—वि० [?] १ अलग। २ दूर का।
 अर्थ० दूर।
बेगल—अर्थ०=बगीर।
बेगला—वि०, अर्थ०=बेगर।
बेगवती—स्त्री० [सं० बैगः मत्पु.म=व, डीप्] एक प्रकार का वर्षा-संबन्धित जिसके विषमपार्श्वों में ३ सगन, १ गूद और समपार्श्वों में ३ सगन और २ गूद होते हैं।
बेगसर—पु० [सं० बैग/सु (जाना)+अच्]। तच्चर। (हि०)
बेगा—पु० [?] आत्मीय। 'पराय' का विपर्याय। उदा०—बेगा . की मुँहई मिलल।—भाष्य।
बेगानगी—स्त्री० [फा०] १. बेगाना होने की अवस्था या परायापन। २ अपरिचय।
बेगाना—वि० [फा० बेगाना] १ जो अपना न हो। गैर। पराया। २ जिससे आरक्षीयता पूर्ण जान-भूषान, परिचय या सम्बन्ध न हो। ३. जो किसी काम या बात से अनजान या अपरिचिन हो। ना-वाकफ।
बेगार—स्त्री० [फा०] १ बहु काम जो किसी से जबरदस्ती और बिना कुछ अथवा उचित पारिव्यक्तिक दिये कराया जाय। २ उक्त के आधार पर बिना किसी पारिव्यक्तिक या दुरुस्तर की संज्ञाना के चलता किया जानेवाला काम।
मुहा०—बेगार टालना=बिना चित्त लगाये कोई काम यो ही चलता करना। पीछा छुड़ाने के लिए कोई काम जैसे-जैसे पूरा करता। ३ ऐसा अर्थ और सगड़े का काम जिसका कोई अच्छा फल न हो। उदा०—ताहि तो मब बेगारि मई परिही छूटत अति कठिनाई रे।—मुलसी।
बेगारी—पु० [फा०] १ बहु मजदूर जिससे बिना मजदूरी दिये जबरदस्ती काम लिया जाय। बेगार मे काम करनेवाला आदमी।

कि० प्र०—पकड़ना ।
 २. मन लगाकर काम न करनेवाला । काम चलता करनेवाला ।
 स्त्री०—बेचार ।
 बेचि—वि० [सं० बेच] १. जल्दी से । शीघ्रतापूर्वक । २. बटवट । उरुत ।
 बेगुना—पु०—बेगान ।
 वि०—विगुण (गुण रहित) ।
 बेगुनाह—वि० [फा०] [माब० बेगुनाही] १. जिसने कोई गुनाह न किया हो । जिसने कोई पाप न किया हो । निष्पाप । २. जिसने कोई अपराध न किया हो । निरपराध ।
 बेगुनी—स्त्री० [शेघ०] एक प्रकार की सुराही ।
 वि०—विगुण (गुण रहित) ।
 बेगैरत—वि० [फा० बे०+अ० तैरत] [माब० बेगैरती] निर्लज्ज ।
 बेचक—पु० [हि० बेचना] बेचनेवाला । विक्री करनेवाला । विक्रेता ।
 बेचना—स० [सं० विक्रम] १. अपनी कोई चीज या संपत्ति किसी से धाम लेकर उसे देना ।
 सयों कि०—डालना ।—देना ।
 मुहा०—बेच खाना—दूरी तरह से रहित, संचित या हीन हो जाना ।
 जैसे—मुझे तो लाज-शरम बेच खारि है ।
 २. स्वार्थ-सिद्धि के उद्देश्य से अपने किसी गुण को जो या छोड़ बैठना ।
 जैसे—ईमान या धर्म बेचना ।
 बेचखाना—स०—विक्रयाना ।
 बेचखाना—पु० [हि० बेचना+खाना (प्रत्य०)] खाना या मीठा बेचनेवाला ।
 'लिवाल' का विपर्याय ।
 बेखाना—स०—विक्रयाना ।
 बेचारगी—स्त्री० [फा०] बेचारा होने की अवस्था या भाव ।
 बेचारगी—वि० [फा०] बेचार । [माब० बेचारगी] [स्त्री० बेचारी] १. जिसके लिए कोई चाप (उपाय या साधन) न रह गया हो । २. जो दीन और निःसहाय हो । जिसका कोई साथी या अवलंब न हो । गरीब । दीन ।
 बेचिराग—वि० [फा० बे०+अ० चिराग] १ (स्थान) जहाँ दीया तक न जलता हो, अर्थात् उजवा डूबा । २. नि सतान । बे-ओलाय ।
 बेची—स्त्री० [हि० बेचना] १. विक्री । विक्रम । २. बेचने के सम्बन्ध में लिखा हुआ लेख । जैसे—इस टूटी पर बेची तो है ही नहीं ।
 बेचू—पु० [हि० बेचना] बेचनेवाला । विक्रेता ।
 बेचैन—वि० [फा०] जिसे किसी प्रकार बँध न पड़ता हो । व्याकुल ।
 चिक्कल । बेकल ।
 बेचैनी—स्त्री० [फा०] बेचैन होने की अवस्था या भाव । चिक्कलता । व्याकुलता । बेकली ।
 बेचड़—वि० [फा० बे०+हि० जड़] जिसकी कोई जड़ या बुनियाद न हो । जिसके मूल में कोई तन्त्र या सार न हो । जो सँ ही मन से सड़ या बना लिया गया हो । निर्मूल ।
 बेचवान—वि० [फा० बे०+अवान] [माब० बेचवानी] १. जो कुछ कहना न जानता हो । २. जो किसी बात की सिफायत न करके सब कुछ पुनःपुनः सड़ लेता हो । ३. जो दीनता या मन्नता के कारण किसी प्रकार का दुःख या विरोध न करे । दीन । गरीब ।

बेचवानी—स्त्री० [फा०] १. बेचवानी होने की अवस्था या भाव । २. चुप रहना । ३. सिफायत न करना ।
 बेजार—वि० [फा० बेजार] [माब० बेजरी] पनहीन । निर्वन ।
 बेजा—वि० [फा०] जो उचित या संगत न हो ।
 बेजान—वि० [फा०] १. जिसमें जान न हो । निर्जीव । २. मरा हुआ ।
 मृत । ३. जिसमें कुछ भी धन या संपत्ति न हो । बहुत ही अशक्त या दुर्बल ।
 बे-आखरी—स्त्री० [फा० बे०+अ० आखरी] बेजास्ता अथवा अनियमित या नियमितबद्ध होने की अवस्था या भाव ।
 बेजास्ता—वि० [फा० बे०+अ० आस्ता] [माब० बेजास्तगी] जो आस्ते के अनुसार न हो । कामून या नियम आदि के विच्छेद । अवैध ।
 बेजार—वि० [फा० बेजार] [माब० बेजारी] १ जो किसी बात से बहुत तम आ गया हो । जिसका चित किसी बात से बहुत दुखी हो चुका हो । जैसे—आप तो बिदगी से बेजार हुए जाते हैं । २. बहुत ही अप्रसन्न, खिन्न या मारुज । ३. विमूल । पराक्रम्य ।
 बेजुम—वि० [फा०+अ०] जिसने कोई जुर्म या अपराध न किया हो । निरपराध ।
 बेजू—पु० [अ० बेजार] बेड़ जो हाथ लबा एक प्रकार का जगली जानवर जो प्रायः सभी गरम देशों में पाया जाता है ।
 बेजोड़—वि० [फा० बे०+हि० जोड़] १ जिसमें जोड़ न हो । जो एक ही टुकड़े का बना हो । अखड़ । २. जिसके जोड़ या मुकाबले का और कोई न हो । अद्वितीय । अनुपम ।
 बेसा—पु० दे० 'बेसा' ।
 बेसड़—पु० [हि० मेसारा+मिलाना] एक में मिले हुए कई तरह के अन्न ।
 जैसे—गेहूँ, चने और जौ का बेसड़ ।
 बेसानी—स०—बेधना ।
 बेसारी—पु०—बेसड़ ।
 बेसा—पु० [सं० बेध] निशाना । लक्ष्य ।
 बेट—स्त्री०—बेट ।
 बेटी—स्त्री० [हि० बेटा] १ बेटा । २ पुत्री । ३. कन्या । लड़की ।
 बेटला—पु० [स्त्री० बेटली]—बेटा ।
 बेतजा—पु०—बेट ।
 बेटा—पु० [सं० बटु=बालक] [स्त्री० बेटा] पुत्र । सुत । लड़का ।
 पत्न—बेटेवाला—वर का पिता अथवा वरपत्न का और कोई बड़ा आश्रमी ।
 बेटा-बड़ी—पु० [हि० बेटा] बाल-बच्चे । औलाद ।
 बेटा—स्त्री० [सं०] १ लड़की । पुत्री ।
 पत्न—बेटा का साथ—(क) बँसा ही दीन और नम्र जैसा पिताह के समय वधू का पिता होता है । (ख) सब प्रकार से दीन-हीन और विवश ।
 बँटीवाला—वधू का पिता अथवा वधू-पत्न का और कोई बड़ा आश्रमी ।
 मुहा०—बेटा बेता—अपनी पुत्री का किसी के साथ विवाह करना ।
 उदा०—जिसने बेटा ही उसने सब कुछ दिया । (कहा०)
 बेटोभा—पु०—बेट ।
 बेड़ा—पु० [दिस०] एक प्रकार का नसा जो मैसूर देश में होता है ।
 पँपु—बेटा (पुत्र)
 बेठ—पु० [दिस०] १. एक प्रकार की ऊसर जमीन जिसे बौहूद भी कहते

है। २. ऋण के रूप में लिया हुआ वह पेशगी धन जो मजदूर, कारीगर आदि धीरे धीरे कुछ काम करने या सामान देकर उबल प्रकार का ऋण चुकाना। उदा०—निल उठ कोरिया बेठ भरल है। . .।—कबीर।

बेठन—सु०[सं० वेठन] बहु धरम ओ किन्ही चीज को बूल, मिट्टी आदि से पुरोधित रखने के उद्देश्य से उस पर लपेटा जाता है।

पब—पौषी का बेठन—(क) जो कुछ भी पड़ा-लिखा न हो। (ख) जो पड़ा-लिखा होने पर भी किन्ही काम का न हो।

बेठिकाने—वि०[फा० बे+हि० ठिकाना] १ जो अपने स्थान पर न हो। स्थानच्युत। २ जिसका कोई ठौर-ठिकाना न हो। ३ जिसका कोई स्थिर-र न हो। ४ निरर्थक। व्यर्थ।

अन्व० ठिकाने अर्थात् उपयुक्त या निश्चित स्थान पर न होकर किसी अन्य स्थान पर। अनुपयुक्त अवसर या स्थान पर।

बेठ—पु०[हि० बाढ़] खेतों या बुधों के चारों ओर लगाई हुई बाड़। मेड़।

पुं०[हि० बीड़] नगद श्रेया। सिक्का। (दलाल)

पुं०[?] [स्त्री० बेफनी, बेड़िन] नदों आदि के बग की एक छोटी जाति जो गाने-बजाने का पेशा करती है।

बेड़ना—स०[हि० बेड़+ना (प्रत्य०)] नये बुधों आदि के चारों ओर उनकी रक्षा के लिए छोटी दीवार आदि लड़ी करना। घाला बाँधना। मेड़ या बाड़ लगाना।

सं०[सं० विडवन्?] तोड़ना-फोड़ना मट्ट-भट्ट करना। उदा०—विजड़ा मुंठ बेठते बलभद्र—प्रियोराज।

बेड़नी—स्त्री०[हि० बेड़] बेड़ जाति की स्त्री जो प्रायः देहातों में गाने-बजाने का पेशा करती है।

बेड़ा—पुं०[सं० वेष्ट] १. बड़े लट्टो, लकड़ियों या तख्तों आदि की एक से बाँधकर बनाया हुआ बाँधा जिस पर बस का टट्टर बिछा देते हैं और जिस पर बैठकर नदी आदि पार करते हैं। तिरना।

मुहा०—बेड़ा बुधना -विरास में पढ़कर पूर्ण रूप से विनष्ट होना। (किसी का) बेड़ा पार करना या लगाना—किसी को सड़क से पार लगाना या छुड़ाना। विपत्ति के समय सहायता करके किसी का काम पूरा कर देना या रक्षा करना।

२ बहुत सी नावों या जहाजों आदि का समूह। जैसे—उन दिनों भारतीय महासागर में अमरीकी बेड़ा आया हुआ था। ३. नाव। (हि०) ४. डूब। समूह। (पूरब)

मुहा०—बेड़ा बाँधना—बहुत से आदिमियों को इकट्ठा करना। लोगों को एकत्र करना।

वि०[हि० आभा का अनु० या सं० बलि=ठेड़ा] १. जो आँखों के समानांतर दाहिनी ओर से बाईं ओर अथवा बाईं ओर से दाहिनी ओर गया हो। आधा। २ कठिन। मुश्किल। विकट। जैसे—बेड़ा काम।

बेठिच—पुं०[दिश०] बाँस की कमायियों की बनी हुई एक प्रकार की टोकरि जो घाल के आकार की होती है और जिससे किसान लोग खेत सींचने के लिए तालाब से पानी निकालते हैं।

बेड़िन—स्त्री० -बड़नी।

बेड़ी—स्त्री० [सं०बलय] लोहे के कड़ों की जोड़ी या जखीर जो कैंबियों

या पशुओं आदि को इसलिए पहनाई जाती है जिसमें वे स्वतन्त्रतापूर्वक घूम-फिर न सकें। निराड।

किं० प्र०—डालना।—देना।—पढ़ना।—पहनना।—पहनाना।

२ बाँस की टोकरि जिसके दोनों ओर रस्ती बाँधी रहती है और जिसकी सहायता से नीचे से पानी उठाकर खेतों में डाला जाता है।

३ साँप काटने का एक इलाज जिसमें काटे हुए स्थान को गरम लोहे से दाग देते हैं।

स्त्री०[हि० बेड़ा का स्त्री० अल्पा०] १. नदी पार करने का टट्टर आदि का बना हुआ बड़ा बेठा। २. नाव। (परिचयम)

बेडील—वि०[हि० बे+डील=रूप] १ जिसका डोल या रूप अचञ्चल न हो। मढ़ा। २ जो अपने स्थान पर उपयुक्त न जान पड़े। बेठगा।

बेडंगी—वि०=बेठगा।

बेडंगा—वि०[हि० बे+हि० डग+आ (प्रत्य०)] १ जिसका ढग ठीक न हो। नुरे डगवाला। २. जो ठीक ऋम या प्रकार में लगाया, रखा या सजाया न गया हो। बेतरतीब। ३. कुपुष्प। मढ़ा। मोड़ा।

बेडगापन—पुं०[हि० बेठगा+पन (प्रत्य०)] बेठगे होने की अवस्था या भाव।

बेड़—पुं०[?] १ नाश। बरबादी। २ बोया हुआ वह बीज जिसमें अंकुर निकल आया हो।

स्त्री० बुधों आदि के चारों ओर लगा हुआ घेरा। बाड़।

बेड़ई—स्त्री०[हि० बेड़ना] वह टोंटी या पूरी जिसमें दाल, पीठी आदि कोई चीज भरी हो। कचौड़ी।

बेड़न—पुं०[हि० बेड़ना] वह जिससे कोई चीज घेरी हुई हो। वेठन। घेरा।

बेड़ना—सं०[सं० वेठन] १. बुधों या खेतों आदि को, उनकी रक्षा के लिए चारों ओर से टट्टी बाँधकर, काटे बिछाकर या और किसी प्रकार घेरना। कंबना। २. चौरावों को घेरकर हूँक ले जाना।

बेड़नी—स्त्री०=बेड़नी।

बेड़ुष—वि०[हि० बे+हि० ष] १. जिसका ढग या ढग अचञ्चल या ठीक न हो। २ मढ़ा। मोड़ा।

किं० वि० १ बुरी तरह से। अनुचित या अनुपयुक्त रूप से। २. अनावश्यक या असाधारण रूप से।

बेड़ा—पुं०[हि० बेड़ना=घेरना] १. हाथ में पहनने का एक प्रकार का कड़ा। २. घर के आसपास बहु छोटा सा घेरा हुआ स्थान जिसमें तर-कारियाँ आदि बोई जाती हो।

बेड़गाभा—सं०[हि०बेड़ना का प्र०] १. घेरने का काम करने से कराना। घिरखाना। २ ओढ़ना या ढकनाना।

बेडुआ—पुं०[दिश०] गोल मेथी।

बेडौकूल—पुं० दे० 'सीसफूल'।

बेसा—पुं०=बेठत।

बेतकल्लुक्क—वि०[फा० बे+अ० तल्लुक्क] [भाष० बेटकल्लुकी] जो तल्लुक्क अर्थात् दिखावटी जमरी शिष्टाचार का विशेष ध्यान न रखता हो। सीमा सादा और सच्चा व्यवहार करनेवाला, और मन की बात स्पष्ट रूप में कहनेवाला।

क्रि० वि० १. बिना किसी प्रकार के तकल्लुफ या विखापटी सिष्ट-
कार के । २. निश्चिन्त । बेधक ।

बै-सकन्तुकी—स्त्री० [फा०] बैसकन्तुङ होने की अवस्था या भाव ।
सरलता । सावणी ।

बै-सकसीर—वि० [फा० बे+अ० तकसीर] जिसने कोई तकसीर या अप-
रध न किया हो । निरपरध । निर्दोष । बेगुनाह ।

बैसना—अ० [?] जान पड़ना ।

बै-समीञ—वि० [फा० बे+अ० तमीञ] [भाव० बैसमीञी] जिसे तमीञ
न हो । अथिष्ट और उद्ध ।

बै-नरह—क्रि० वि० [फा० बे+अ० तरह] १. विषट रूप से । २. असा-
धारण रूप से । बहुत अधिक । जैसे—आज तो बै-नरह पानी बरसा ।

बै-सरीका—वि० [फा० बे+अ० सरीका] जो सही ढंग से न हुआ हो ।
क्रि० वि० बिना तरीके या ठीक ढंग के ।

बै-सतौख—वि० [फा० बे+अ० तौख] [भाव० बैसतौखी] १. जो किसी
काम से न रखा हुआ हो । कम्हीन । २. अस्त-व्यस्त ।

बैसला—वि० [?] [स्त्री० बैसली] अभावा ।

बैसला—स्त्री० [स० बैसवती] बुदलख की एक नदी ।

बै-सहाया—क्रि० वि० [फा० बे+अ० सहया] १. अकस्मात् और तेजी
से । अचानक और वेगपूर्वक । २. बहुत धरकार या बिना सोचे-समझे ।

बै-साब—वि० [फा०] [भाव० बैसवी] १. जिसमें बीं या सब न हो ।
२. विकल । व्याकुल । ३. परम उल्लुक्त । ४. असाक्त ।

बै-साबी—स्त्री० [फा०] १. बेसाब होने की अवस्था या भाव ।
२. विकलता । ३. परम उल्लुक्ता ।

बैसाल—पुं० [स० बैसालिक] माटा । बदी ।
पुं० ==बैताल ।

बै-साला—वि० [फा० बे+हि० ताल] [स्त्री० बैसाली] १. जो ठीक
ताल के हिसाब से गीता या बजाता न हो । २. (माना या बजाना) जो
ताल के हिसाब से ठीक न हो । (सगीत)

बै-सुका—वि० [फा० बे+हि० तुका] [स्त्री० बैसुकी] १ (पद्यमय रचना)
जिसकी तुकी न मिलती हो । अयुगाग्रस-हीन । २ (बात) जो अच-
सर, प्रसंग आदि के बिचार से बहुत ही अनुपयुक्त तथा महल्लहीन हो ।
मुहा०—बैसुकी हुकना—बेड़गी बात कहना । ऐसी बात कहना
जिसका कोई सिद्-पर न हो ।
३. (व्यक्ति) जो अचसर-कुअवसर का ध्यान न रखकर बेड़गे या मद्दे
काम करता अपना बातें कहता हो । ४. (पदार्थ) जो ठीक ढग या
ठिकाने का न हो । जैसे—बैसुकी पयडी ।

बैसुका छंद—पुं० [हि० बैसुका+स० छंद] ऐसा छंद जिसके तुकात आपस
में न मिलते हैं । अमितासर छंद ।

बैसौर—क्रि० वि० [फा० बे+अ० तौर] बुरी तरह से । बेड़गेपन से ।
बैसरह ।
वि० जिसका तौर-तरीका या रंग-रंग ठीक न हो ।

बैव—पुं० १. ==बैद । २. बैत । ३. ==भुक्क बैद ।

बैवक—पुं० [स० वैविक] हिहू । (क्रि०)

बै-वसली—वि० [फा० बे+अ० वसली] [भाव० बैवसली] जिसका किसी
पीछ पर वसल अर्थात् कब्जा न रह गया हो । अधिकार-भ्युत्त ।

बै-वसली—स्त्री० [फा० बे+अ० वसली] वसल या कब्जे का हटाया
जाना अथवा न होना । अधिकार में न रहने देने की अवस्था
या भाव ।

बैवम—पुं० [स० वैवम] १. पशुओं का एक प्रकार का सक्तामक जीषण
जवर जिसमें रोगी पशु कोपने लगता है, और उसे पाखाने के साथ आँव
निकलती है । २. वै० वैवम ।

बैवमा—स्त्री० ==बैवमा ।

बै-वम—वि० [फा०] १. जिसमें जीवनी शक्ति न हो अथवा नहीं के समान
हो । २. मुरदा । भुतक । ३. जिसकी जीवनी-शक्ति बहुत कुछ नष्ट
हो चुकी हो । जर्जर । बोधा ।

बै-वमज—पुं० [फा०] एक प्रकार का वृक्ष जिसकी शाखाएँ बहुत मुकी
रुई रहती हैं और जो इसी कारण बहुत मुरझाया और छिठुरा हुआ जान
पड़ता है ।

बैव-माल—पुं० [देश०] लकड़ी की वह तस्ती जिस पर राहकर सिकली-
गर और चार चमकता है ।

बैव-भुक्क—पुं० [फा०] एक प्रकार का वृक्ष जो पश्चिम भारत और बिशेषतः
पंजाब में अधिकता से होता है ।

बैवरी—वि० ==बीवरी ।

बै-वई—वि० [फा०] [भाव० वैवई] जो दूसरी के दुख का अनु-
भव न करता हो । दूसरी के कष्टों को देखकर दुःखी न होनेवाला ।
कठोर हृदय । पाषाण हृदय ।

बै-वई—स्त्री० [फा०] वैवई होने की अवस्था या भाव । निर्दयता ।
बैरह्मी । कठोरता ।
वि० ==वैवई ।

बैव-सेला—पुं० [फा०] एक प्रकार का पीषा जिसमें सुन्दर फूल लगते हैं ।

बैवमा—पुं० [स० वैव] वैवो का प्राता और अनुयायी । (उपेक्षासूचक)

बैवमा—वि० [फा० वैवमा] १. जिसमें या जिसपर कोई दाग या धब्बा
न हो । साफ । २. (व्यक्ति, उसका चरित्र या स्वभाव) जिसमें कोई
ऐज या दोष न हो । बै-ऐज । निर्दोष । ३. निरपरध । बैकसूर ।
क्रि० वि० बिना किसी प्रकार की भुट्टि या दोष के । जैसे—बैवमा
निरामा लाना ।

बैवामा—पुं० [हि० विहीदामा या फा० बे+दामा] १ पतले छिलकेवाला
एक प्रकार का बरिया अनार जिसके दानों में मिठास अधिक होती है ।
२. विहीदामा नामक फल । ३. उक्त फल के बीज जो रेंचक और
छेंडे होते हैं । ४. दाह-हल्दी । ५. एक प्रकार का छोटा शहदूत ।
६. बहुत छोटे दानोंवाली बूंदिया नामक मिठाई ।
वि० ==नादान (नासमस) ।
वि० [फा० वैवाम] (फल) जिसमें बीज न हो । जैसे—बैवामा
अमरुद ।

बै-वाय—वि० [फा०] जिना दाम का । जिसका कुछ मूल्य न दिया गया
हो ।
क्रि० वि० बिना दाम या मूल्य दिये ।
† पुं० ==बादाम ।

बै-वार—वि० [फा०] [भाव० वैवारी] जो जाग्रत तथा सचेत हो । जाग
हुआ ।

बेवारी—स्त्री० [का०] जावत और सचेत होने की अवस्था या भाव ।
जाप्रति ।

बेविल—वि० [का०] [भाव० बेदिली] उदास । निराश ।

बेवी—स्त्री० = बेवी ।

*पु० [स० वेद] वेदों पर अग्र्य रखनेवाला व्यक्तिक ।

बेथ—पुं० [स० बेथ] १. छेद । २. मोती, मूँते आदि में किया हुआ छेद ।
३. दे० 'बेथ' ।

बेथक—कि० वि० [का० बे+हि० घक] १. भय, मर्यादा अथवा
सकोच की परवाह न करके हुए । २. बिना किसी आशा या लक्ष्य के या
मय के । ३. बिना किसी बात की चिन्ता या परवाह किये हुए । ४.
बिना कुछ सोच-समझे हुए ।

वि० १. जिससे किसी प्रकार का सकोच या लक्ष्य न हो । निर्दंड ।
२. जिससे किसी प्रकार की आशका या मय न हो ।

बेथना—स० [स० बेथन] १. किसी नुकीली चीज की सहायता से छेद करना ।
सूराह करना । छेदना । भेदना । जैसे—मोती बेथना । २. शरीर
पर किसी प्रकार का क्षत या घाव करना ।

बेथर्म—वि० [का० बे+स० धर्म] [भाव० बेथर्मी] १. जिससे अपने धर्म
का ध्यान न हो । २. जो अपना धर्म छोड़ चुका हो । धर्मव्युत् ।

बेथिया—पुं० [स० बेथ] अंगुशा ।

वि० बेथने या छेदनेवाला ।

बेथी—वि० = बेथी ।

*स्त्री० = बेवी ।

बेथीर—वि० = अजीर ।

बेथेय—पुं० [दिश०] एक प्रकार का छोटा पहाड़ी बाँस जो प्रायः लता के
समान होता है ।

बेथ—पुं० [स० बेथ] १. बंसी । मुरली । बाँसुरी । बाँस । ३. सपनों
के बजाने की बीन । महुअर । ४. एक प्रकार का बुझ । ५. दे० 'बेथु' ।

पुं० [अ० बेन] एक प्रकार की झाड़ी जो जहाज के मस्तूल पर लगा दी
जाती है और जिसके फहराने से यह पता चलता है कि हवा का
दक्ष किण्व है । (लास०)

पुं० [अ० विड] वायु । हवा । (लास०)

बेथर—पुं० = विनीला ।

बेथीर—वि० [का० बे+अ० नवीर] अद्वितीय । अनुपम ।

बेथेट—स्त्री० [अ० बायोनेट] लोहे की वह छोटी किरच जो सैनिकों की
बटुक के अगले सिरे पर लगी रहती है । सर्पिन ।

बेथर—पुं० = विनीला ।

बेथी—वि० [का० अ० अ०] [भाव० बेथीबी] अनामा । मायगहीन ।
बेना—पुं० [स० बीरय] लस ।

पुं० [स० बेथ] १. बाँस । २. बाँस का बना हुआ पत्ता ।

पुं० [स० बेथी] एक गहना जो माथे पर बेदी के बीच में पहना जाता
है ।

पद—बेना-बेदी-बेना और बीर नाम के गहने जो प्रायः एक साथ पहने
जाते हैं ।

बेनागा—कि० वि० [का० बे+अ० नागा] बिना नागा किये । निरंतर ।
लगातार । नित्य ।

बेनाम—वि० [का०] १. जिसका कोई नाम न हो । २. अप्रसिद्ध ।

बेनामी—वि० [हिं० बे+नाम] (सम्प्रति) जिस पर उसके वास्तविक
स्वामी ने अपना नाम न चढवाकर अपने किसी अधीनस्थ या दूसरे
विषयसंबन्धी आदमी का नाम चढवा रखा हो ।

बेनियाम—वि० [का०] [भाव० बेनियामी] निःस्पृह ।

बेनी—स्त्री० [स० बेणी] १. तिनगो की चौटी । २. चिन्नाड़ के एक
पत्ले में लगी हुई एक छोटी लकड़ी जो दूसरे पत्ले को जुलने से रोकती
है । ३. एक प्रकार का भात जो नादों के अत या कुआर के आरम में
तैयार होता है । ४. दे० 'बिबेणी' ।

बेनीयाल—पुं० = बेवी (गहना) ।

बेनु—स्त्री० १. = बेन । २. बेथु ।

बेनुली—स्त्री० [हिं० बिबली] जति या चक्की में वह छोटी सी लकड़ी
जिसके दोनों सिरों पर जोती रहती है ।

बेनौटी—वि० [हिं० बिनौठा] कपास के फूल की तरह हलके पीले रंग का ।
कपासी ।

पुं० उभय प्रकार का रंग ।

बेनौरा—पुं० = विनीला ।

बेनौरी—स्त्री० [हिं० बिनौरी] ओला ।

बेपरब—वि० [का० बेपर्दे] १. जिसपर कोई आवरण न हो । २. (स्त्री)
जिसने परदा न किया हो अथवा बुरका न पहना हो । ३. नगा । नन ।
कि० वि० बिना किसी प्रकार के परदे (आवरण या ओट) के । सुल्लम-
सुल्ला ।

बेपरबी—स्त्री० [का० बेपर्बी] १. बेपरदा होने की अवस्था या
भाव । २. स्त्री का परदे में न रहना । बिना परदा किये तथा निस्सकोच
भाव से स्त्रियों का पर-पुरुषों के सामने आना ।

बेपरबा—वि० [का० बेपर्बा] [भाव० बेपर्बाई] १. जिसे कोई परदा
न हो । बेकिण्व । २. जो किसी बात की परदा न करता हो । ला-
परवाह । ३. बहुत बड़ा उदार और दानी ।

बेपर्द—वि० = बेपरद ।

बेपाया—वि० [हिं० बे+स० उपाय] जिसे घबराहट के कारण कोई
उपाय न सूझे । भौचक । हक्काबक्का । उदा०—पाय महारथ देद
की, आय मदे बेपाय ।—बिहारी ।

बेपा—पुं० [दिश०] एक प्रकार का बहुत ऊँचा बुध जो हिमालय की तराई से
६०० से ११०० फुट की ऊँचाई तक अचकितता से पाया जाता है । फेल ।

पुं० = ब्यापार ।

वि० = अणार ।

बेपारी—पुं० = ब्यापारी ।

बेपीरा—वि० [का० बे+हिं० पीर-पीड़ा] १. जिसके हृदय में किसी के
दुःख के लिए सहानुभूति न हो । दूसरों के कष्ट को कुछ न समझनेवाला ।
२. निर्दय । बेरहम ।

बेपेदा—वि० [हिं० बे+पेदा] [स्त्री० बेपेदी] जिसमें पेदा न हो और
इसी कारण जो दूसर-उत्तर लड़कता हो ।

पद—बेपेदी का लोटा—व्यक्ति जो अपने किसी निश्चय पर स्थिर न रहता
हो बल्कि दूसरों की बातें सुन-सुनकर अपना निश्चय बार-बार बदलता
रहता हो ।

बे-कासवा—वि० [फा० बे-कासवः] जिससे कोई फासवा न हो। जिससे कोई काम न हो सके। व्यर्थ का।
 किं वि० बिना किसी फायदे या लाभ के। निरर्थक। व्यर्थ।
 बे-फिकरता—वि० [फा० बे-फिकः] १. जिसे कोई किक या चिन्ता न हो। २. अपनी ही मीज में रहनेवाला तथा घर-बार की कुछ भी चिन्ता न रखनेवाला। ३. आचारा और निकम्मा।
 बे-फिकरी—स्त्री० [फा० बे-फिकी] बेकिक होने की अवस्था या भाव। निश्चिन्ता।
 बे-फिक—कि० [फा० बे-फिक] [भाव०] [भाव० बे-फिकरी] जिसे कोई किक न हो। निश्चित। बेपरवा।
 बेबास—वि० [स० बिबास] [भाव० बेबास] १. जिसका कुछ बधा न चले। लाचारी। २. पर-बसा। पराधीन।
 बे-बसी—स्त्री० [हि० बेबस+ई (प्रत्यय)] १. बेबस होने की अवस्था या भाव। लाचारी। मजबूती। बिषयता। २. पर-बधाता।
 बे-बाह—वि० [फा० बे-अ० बाह] १. (देर) जो चुका दिया गया हो, और इसी लिए जिसका कुछ भी अथा बाकी न रह गया हो। चुकता किया हुआ। चुकया हुआ। २. क्षणमूर्त।
 वि० [फा०] [भाव० बेबाकी] निडर। निर्भय।
 बेबाकी—स्त्री० [फा० बेबाकी] ऋण का चुकता होना। पूर्ण परिशोध।
 बे-बुनियाद—वि० [फा० बे-बुनिया] १. जिसकी कोई बुनियाद या जड़ न हो। निर्मूल। बेजड़। २. आधार-रहित।
 बे-ब्याह—वि० [फा० बे+हि० ब्याह] [स्त्री० बे-ब्याही] जिसका विवाह न हुआ हो। अविवाहित। कुंभारा।
 बे-भाव—कि० वि० [फा० बे+हि० भाव] बिना किसी भाव (गिनती या हिसाब) के। बेहिमाव।
 वि० बहुत अधिक। बेहद।
 मुहा०—बेभाव की पक़्ता (क) बहुत अधिक मार पक़्ता। (ख) बहुत अधिक मर्त्सना होना।
 बेस—स्त्री० [दिसा०] जुलाहों की कमी। बया बैसर।
 बे-माज—वि० [फा० न+अ० माज] निर्दिष्ट।
 बेमजगी—स्त्री० [फा० बेमजगी] बेमजा होने की अवस्था या भाव।
 बेमजा—वि० [फा० बेमज] १. (साध पदाय) जिसमें कोई स्वाद न हो। नीरव्य और फीका। २. (स्थिति) जिसके रंग में जंग हो गया हो। ३. आनद-रहित।
 बे-मा—कि० वि० [फा० बे+हि० मा] बिना मन लगाने। बिना दत्त-चित्त हुए।
 वि० (काम में) जिसका मन न लगता हो या न लग रहा हो।
 बे-मरम्मत—वि० [फा०+अ०] [भाव० बेमरम्पती] जिसकी मरम्मत होने को हो, पर न हुई हो। टूटा-फूटा और बिगड़ा हुआ।
 बे-मरस्ती—स्त्री० [फा०] बेमरम्मत होने की अवस्था या भाव।
 †वि० बेमरम्मत।
 बेमा ई—स्त्री०—बिमाई (रोग)।
 बेमारी—स्त्री०—बीमारी।
 बेमासू—कि० वि० [फा०] ऐसे ढग से जिसमें किसी को मासूम न हो। बिना किसी को पता लभे।

वि० जो डोरे से देखने पर मासूम न पड़ता हो।
 बेमुजा—वि०—विमुक्त।
 बे-मुनासिब—वि० [फा०] जो मुनासिब न हो। अनुचित। ना-मुनासिब।
 बे-मुरख्त—वि० [फा०] जिसमें मुरख्त न हो। जिसमें शील या सकोष का अभाव हो। तोता-बखर।
 बे-मुरखती—स्त्री० [फा०] बेमुरख्त होने की अवस्था या भाव।
 बे-मेल—वि० [फा० बे+हि० मेल] जिसका किसी से मेल न बैठता हो। अनमेल।
 बे-मौका—वि० [फा० बेमौका] जो अपने मौके पर न हो। जो अपने उपयुक्त अवसर या स्थान पर न हो।
 किं वि० बिना मौके या उपयुक्त अवसर का ध्यान रखे हुए।
 पू० मौके अर्थात् उपयुक्त अवसर का अभाव।
 बे-मौल—अध्य० [फा० बे+हि० मौल] बिना मौत आयें ही। जैसे—
 हम तो बे-मौत मर गए।
 बे-मौसिम—वि० [फा०] १. जिसका मौसिम न हो। २. मौसिम न होने पर भी होनेवाला।
 बेमरा—पु०—बेरा।
 बेरंग—वि० [फा०] निर्लज्ज।
 वि० [अं० बिपरिण] (राक) द्वारा भेजा हुआ वह पत्र जिस पर टिकट लगा ही न हो अथवा कम मूल्य का लगा हुआ हो।
 बेर—पु० [सं० बदेरी] १. एक प्रसिद्ध पेड़ जिसके काष्ठ रेखा मुक्त और विधीयं होते हैं, पत्र गोल, कटिदार तथा बक, फल हरे तथा पकने पर पीले होते हैं। २. उक्त के फल चिनमें लम्बोटादी या गोल गुठली भी होती हैं।
 †स्त्री० [सं० बेला, हि० बार] १. बार। दफा। २. दर।
 वि० लंब।
 बेर-जरी—स्त्री० [हि० बेर+सरी?] झरबेरी। जंगली बेर।
 बेरला—पु०—बिरोजा।
 बेरला—पु० [दिसा०] कलाई पर पहनने का एक प्रकार का कड़ा।
 †पु०—ब्यारा (बिबरण)।
 बेरस—वि० [फा० बेर+हि० रस] १. जिसमें रस का अभाव हो। मीरस। रस-हीन। फीका २. जिसमें कुछ स्वाद न हो। ३. जिसमें कोई आनन्द या मजा न हो।
 बे-रसना—सं० [सं० बिस्सन] १. विलास करना। २. मोगना।
 बे-रहबरी—स्त्री० [बेर+हि० हहरी] बूटने के नीचे की हहरी में का उमारा।
 बे-रहम—वि० [फा० बेरहम] [भाव०] जिसके हृदय में रहम अर्थात् दया न हो। निर्भय। निष्टुर।
 बेरहमी—स्त्री० [फा०] बेरहम होने की अवस्था या भाव। निर्भयता। निष्टुरता।
 बेर—पु० [सं० बेला] १. समय। वक्त। बेला। २. प्रयात का समय। लड़का।
 पु० [हि० बेभारा?] एक में मिठा हुआ जी और बना। बेरी।
 †पु०—बेभा।
 पु० [अं० बेजरर+बाहक] चपरती, विषोषतः साहब लोगों का

वह चपरासी जिसका काम बिट्ठी-यकी, समाचार आदि पहुँचाना और के आना आदि होता है।

बे-राग—वि० [फा० बे+सं० राग] जिसमें किसी प्रकार का राग या प्रवृत्ति न हो। राग-रहित। उदा०—कौतुक देखत किरउ बेराग।
—तुलसी।

†पु० बेराग्य।

बेराबरी—स्त्री०=बिरादरी।

बेराभा—वि० [हिं० बे+आराम] बीमार। रोगी।

बेराभी—स्त्री० [हिं० बे+आरामी] बीमारी। रोग।

बेरास—पु०=बिलास।

बे-राह—वि० [फा०] गलत या बुरे रास्ते पर चलनेवाला। पथभ्रष्ट।

बेरिआ—स्त्री० [सं० बेला-समय] बेला। समय।

बेरिया—स्त्री० [हिं० बेर] समय। वक्त। काल। बेला।

बेरी—स्त्री० [हिं० बेर (फल)] १ हिमालय में होनेवाली एक प्रकार की लता। इसे 'मूरकूल' भी कहते हैं। २ बेर का छोटा वृक्ष।

स्त्री० [?] एक में मिली हुई तीली और मरसि।

स्त्री० [हिं० बार-दफा] १. उतना अनाज जितना एक बार चक्की में पीसने के लिए डाला जाता है। २. बेर। दफा।

†स्त्री० १-बेड़ी (पैरो) की। २. बेड़ी (नाब)। उदा०—नाब फाटी प्रमू पाल बाँधो बूडत है बेरी।—मीर।

बेरी-छत—पु० [देस०] एक पद जो महावत लोग हाथी को किमी काम से साना करने के लिए कहते हैं।

बेरी बेरी—पु० [मिह० बेरी-दुर्बलता] एक प्रकार का मीषण सक्कामक उखर। विशेष दे० 'वातबलासक'।

बेसभा—पु० [देस०] दौंस का बहु टुकड़ा जो नाब लीचने की गुनू में आगे की ओर बँधा रहता है और जिसे कपे पर रखकर मल्लाह नाब लीचते हुए चलते हैं।

बेसर्दी—स्त्री० [हिं० बेसिन] बेध्या। रदी।

बेसली—स्त्री० [देस०] बीलो का एक रोग जिसमें उनकी जीम पर काले छाले हो जाते हैं।

बेसल—वि० [फा० बेसल] [भाव० बेसली] १ जो समय पड़ने पर (मंहे) फेर। बेमूरब्धत। २ अप्रसन्न। नाराज।

कि० प्र०—पडना—होना।

बेसली—स्त्री० [फा० बेसली] १ बेसल होने की अवस्था या भाव। २ अपेक्षा।

वि० प्र०—दिलखाना।

बसूप—वि० [फा० बे+सं० रूप] कुरूप।

बेरोक—वि० [फा० बे+हिं० रोक] जिस पर रोक न लगी हुई हो। अर्थ० बिना रोक के। स्वच्छ रूप में।

बे-रोजगार—वि० [फा० बेरोजगार] [भाव० बेरोजगारी] व्यवसाय-हीन। बेकार।

बे-रोजगारी—स्त्री० [फा०] बेरोजगार होने की अवस्था या भाव अर्थात् व्यवसायहीन या बेकार होने की अवस्था या भाव।

बे-रीन—वि० [फा० बेरीनक] १. जिसमें या जिस पर रीनक न हो। २. बीहीन। शोभाहीन। ३. (स्वान) जहाँ बहल-पहल न हो।

बे-रीनकी—स्त्री० [बेरीनकी] बेरीनक होने की अवस्था या भाव। कि० प्र०—छाना।

बेरिया—पु० [देस०] १. मिले हुए जी और चने का आटा। २. फौई का फल।

बेरी-बदार—पु० [हिं० बेरी-जो और चना+फा० बदार=काटा हुआ] अन्न की उगाही।

बेसबा—वि० [फा० बलद] १ ऊँचा। २. जो बुरी तरह परास्त था फिफल हुआ हो। (अर्थ०)

बेसबा—पु०=बिलव।

बेस—पु० [सं० बिस] १ एक प्रसिद्ध बहुत बड़ा पेड़ जिसकी लकड़ा स्वेत वर्ण की होती तथा जिसके तने में नदी, बलिक शाखाओं में काँटे होते हैं। यह बहुत पवित्र माना जाता है और इसकी पत्तियाँ शिवजी पर बड़ाई जाती हैं। २. उक्त वृक्ष का गोलाकार फल जिसका मूड़ा पेड़ के रोग के लिए बहुत गुणकारी होता है।

स्त्री० [सं० बस्की] वनस्थिति का वह प्रकार या वर्ग जिसमें अधिक मोटा काष्ठ या तना नहीं होता और जो जमीन पर चारो ओर दूर तक फैलती या बाँसों, बूझों आदि के सहारे ऊपर की ओर बढ़ती है। लहर। लता।

मुहा०—बेल में बँधना—किसी कार्य का अन्त तक ठीक ठीक या पूरा उत्तमा। आरम्भ किये हुए कार्य में पूरी सफलता होना।

२ उक्त के आकार-प्रकार का अकन या चिचकारी। जैसे—बेल-दार फिनारे की साना।

पद—बेल-बूटे।

३. रेसामी या मजदूरी कीने आदि पर जर-रेजी आदि से बनी हुई इसी प्रकार की फूल-पत्तियाँ जो प्राय पहनने के रूपों पर टाँकी जाती हैं। जैसे—इस दुपट्टे पर बेल टँक जाय तो और भी अच्छा हो।

कि० प्र०—टीनाना।—लगाना।

४. लाशयिक रूप में, बसा या समान की परम्परा।

मुहा०—बेल बड़ना—बस-बुद्धि होना। पुत्र-पौत्र आदि होना।

५. विवाह आदि कुछ विशिष्ट अवसरों पर मवाँवों और विरादरी-वालों की ओर से हज्जामों, गानेवालों और इसी प्रकार के नेतियों को मिलनेवाला घोडा-घोडा धन, जिसे पाकर वे बस-बुद्धि का आशीर्वाद देते या शुभ कामना प्रकट करते हैं।

कि० प्र०—देना।—पडना।

६. नाव खेने का डाँडा। बली। ७. घोड़ा का एक रोग जिसमें उनके पैर सूज जाते हैं।

स्त्री० [सं० बेला] १ तरंग। लहर। २ जलाशय का किनारा। उदा०—गहि मु-बेल बिरलद समुक्ति बहिये अपर हजार।—तुलसी।

पु० [फा० बेलाक] १ एक प्रकार की कुत्तली जिससे मजदूर जमीन खोदते हैं। २ डमरुत, सबक आदि बनाने के लिए बूने आदि से जमीन पर डामी हुई लकीर जो केवल बिहू के रूप में और मिन्न-मिन्न विषाणों की सीमा निर्धारित करने के लिए होती है।

कि० प्र०—झाना।

पद—बाग-बेल।

१. एक प्रकार का बड़ा और लंबा लुरवा।
 पूं० [सं० मल्ल] या मल्ली] बहु स्थान जहाँ शककर तीवरा होती हो।
 पूं०—बेका (पीषा और उसका फूल)।
 पूं० [अं०] कपड़े, कागज आदि की वह बड़ी गठरी जो एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने के लिए बनाई जाती है। गौठ।

बेलक—पुं० [फा० बेल्व] १. फरसा। फाबड़ा। २. डाँडा।
बेलनी—पुं० [हिं० बेल] बरवाहा।
बेल-बनी—पुं० [देश०] एक प्रकार का बहुत लंबा वृक्ष जिसके हीर की लकड़ी लाग होती है।

बेल-नगरा—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की मछली।
बे-लगाव—वि० [फा०] १. (थोडा) जिसके मुँह में लगाम न लगी हो। २. लाक्षणिक अर्थ में, मुँह-फट।

बेल-गिरी—स्त्री० [हिं० बेल+गिरी=मींगी] बेल के फल का गूदा।
बेलक—पुं०=बेलघा।

बेलघा—पुं० [फा० बेल्घ] १. एक प्रकार की छोटी कुदाल जिसमें माली लोग बाग की ब्यारियाँ आदि बनाते हैं। २. कृमि प्रकार की छोटी कुदाली। ३. एक प्रकार की लबी खुरपी।

बे-लज्जत—वि० [फा० बेलज्जत] १. जिसमें किसी प्रकार की लज्जत अर्थात् स्वाद न हो। स्वाद-रहित। २. नीरस। फीका। ३. जिसमें कोई आनन्द या सुख न हो। जैसे—गुनाह बेलज्जत।

बेलकरी—स्त्री० [हिं० बेल+करी (प्रय०)] छोटी बेल या लता। बीर।
बेलवार—पुं० [फा०] बहु मजबूर जो फावडा चलाने, जमीन खोदने आदि का काम करता हो।

वि० [हिं० बेल+फा० दार] जिसमें बेल-बूटे बने हो। जैसे—बेलदार साड़ी।

बेलवारी—स्त्री० [फा०] फावडा चलाने का काम, माव या मजदूरी।
बेलन—पुं० [हिं० बेलना] १. लकड़ी, पत्थर, लोहे आदि का वह भारी, गोल और दब के आकार का खंड जो अपने अक्ष पर घूमता है और जिसे लुढ़काकर कोई चीज पीसते, फिनी स्थान को समतल करते अथवा ककड़, पत्थर आदि कूटकर सखे बनाते हैं। (रोलर) २. चक्र आदि में लगा हुआ इस आकार का कोई बड़ा पुरड़ा जो घूमकर दबाने आदि के काम में आता है। जैसे—छापने की मशीन का बेलन।

३. कोलू का आटा। ४. रुई धुनने की मूटिया या हथ्था। ५. करघे में का पीसा। ६. रोटी, पूरी आदि बेलने का 'बेलना' नामक उपकरण।

पुं० [विधा०] १. एक प्रकार का अड़हन घान। २. एक में मिलाई हुई वे धो नावें जिनकी सहायता से डूबी हुई नाव पानी में से निकाली जाती है।

बेलना—सं० [सं० बलन] १. रोटी, पूरी, कचौरी आदि के पेड़े या लोई को बकले पर रखकर बेलने (उपकरण) की सहायता से आगे-पीछे बार-बार चलाते हुए बड़ाकर बड़ा और पतला करना।

मुहा०—(कई तरह के) पापड़ बेलना—अनेक प्रकार के ऐसे काम करना जिनमें से किसी में भी सफलता न हो। जैसे—बे कई तरह के पापड़ बेल के हैं।

२. कपास बीटना। ३. चीपट या नष्ट करना।

मुहा०—पापड़ बेलना—काम बिगाना। चीपट करना। जैसे—यह सारा पापड़ आपका ही बेला हुआ है।

४. मनोविनोद के लिए अलासय में एक दूसरे पर पानी के छीटे उड़ाना।
 पूं० काठ, पीतल आदि का बना हुआ एक प्रकार का लंबा उपकरण जो नीच में मोटा और धोनों और कुछ पतला होता है और जो यात्रा रोटी, पूरी, कचौरी आदि की लोई को बकले पर रखकर बेलने के काम आता है।

बेलनी—स्त्री० [हिं० बेलना] कपास बीटने की चरली।
बेलपत्ती—स्त्री०=बेलपत्र।

बेलपत्र—पुं० [सं० बिलपत्र] बेल (वृक्ष) के पत्ते।
बेलपाता—पुं०=बेलपत्र।

बेलबागुरा—पुं० [हिं०] हिरनों को पकड़ने का जाल।
बेलबूटे—पुं० [हिं० बेल+बूटे] किसी चीज पर अकित या चिपित लताओं, पेड़-पौधों आदि के अकान या चित्र।

बेलबाना—सं० [हिं० बेलना का प्रे०] बेलन का काम दूसरे से कराना।
बेलसना—अ० [सं० बिलसना+ना (प्रत्य०)] मोग-बिलस करना। सुख लूटना। आनंद करना।

बेलहूरा—पुं०=बिलहुरा।
बेलहरी—पुं० [हिं० बेल+हरी (प्रत्य०)] सौपी पान।

बेल-हाजी—स्त्री० [हिं० बेल+हाजी?] घोंती आदि के किनारों पर लहरियेदार बेल छापने का लकड़ी का ठप्पा। (छोपी)

बेल-हासिया—पुं० [हिं० बेल+फा० हासिया] घोंती आदि के किनारों पर बेल छापने का ठप्पा।

बेला—पुं० [सं० मल्लिका?] १. बचेली आदि की जाति का एक प्रकार का छोटा पीषा जिसमें सफेद रंग के सुगंधित फूल लगते हैं। इसके मोनिया, मोगरा और मदनवान नामक तीन प्रकार होते हैं। २. मल्लिका। त्रिपुरा। ३. बेले के आकार का एक प्रकार का गहना।

स्त्री० [सं० बेला] १. समय। वक्त। जैसे—सबरे की बेला।
मुहा०—बेला बढटना—लेबरे या लम्बा के समय नियमित रूप से गरीबी को अन्न, वन आदि बढटना।

२. पानी की लहर। ३. समुद्र का किनारा जहाँ लहरे आकर टकराती हैं। ४. एक प्रकार का छोटा कटोरा। ५. चमड़े की बनी हुई एक प्रकार की छोटी कुल्हिया जिसमें लकड़ी की लबी डडी लगी रहती है और जिसकी सहायता से तेल नापते या दूसरे पात्र में डालते हैं।

स्त्री० [अ० बायोसिन] सारणी की तरह का एक प्रकार का पाश्चात्य बाजा।

बेलाई—स्त्री० [हिं० बेलना+आई (प्रत्य०)] १. बेलने की किया, माव या मजदूरी। २. धातु के पतरों को घन की सहायता से दबाकर चीज या लता करना।

स्त्री०=बिलाई (विश्लि)।
बे-लाग—वि० [फा० बे+हिं० लाग=लागवट] १. जिसमें किसी प्रकार की लगावट या संबन्ध न हो। बिचकुल अलग और साफ या स्वतंत्र। २. सच्चा और साफ। सतरा।

बेलक—पुं० [सं० बलक] १. पत्ति। २. त्रियस्तम।

†स्त्री० [सं० बल्लमा] १. पत्नी। २. भियतमा।
 ए०=बिल्लबल (राम)।
 बैलि*—स्त्री०=बेल (बल्ली)। उदा०—अँसुवन तन सीचि सीचि प्रेम
 बेल बोईं—मीर।
 बैलियां—स्त्री० [हिं० बेला का जल्मा०] छोटी कटोरी।
 बेली—पुं० [हिं० बल ?] रसक और सहायक। जैसे—मरीचों का नी
 है अल्लाह बेकी।—कोई साधार।
 स्त्री० [सं० बल्ली] १. बेल। लता। २. रहस्य-संप्रदाय मे,
 (क) विषय-भासना। (ख) ईश्वर-मन्त्रि के रूप मे कल्पनेवाली
 बेल।
 बेनुक—वि० [फा०+अ०] [मात्र० बेनुकी] जिससे कोई कुपक या
 मजा न मिल रहा हो। बेमजा।
 बे-लौस—वि० [फा० बे+अ० लौस] [मात्र० बेलीसी] जो किमी
 से लौस अर्थात् कामनापूर्ण लगाव या सम्बन्ध न रखता हो, अर्थात्
 खरा और सच्चा व्यवहार करनेवाला। पाक-साफ।
 बेवकूफ—वि० [फा० बे+अ० वकूफ] [मात्र० बेवकूफी] जिसे किसी
 प्रकार का वकूफ अर्थात् शकूर न हो। मूर्ख। निर्बुद्धि। नासमझ।
 बेवकूफी—स्त्री० [फा० बे+अ० वकूफी] १. बेवकूफ होने की अवस्था
 या भाव। २. बेवकूफ का कोई कार्य।
 बे-बन्त—अव्य० [फा०+अ०] दुःसमय मे।
 बे-बन्तह—अव्य० [फा०+अ०] बिना किसी वजह अर्थात् कारण या
 हेतु, के। निष्प्रयोजन।
 बेवट*—स्त्री० [?] १. विचरता। २. संकट।
 बे-बतन—वि० [फा०] १ जिसका कोई बतन अर्थात् देग न हो।
 २ जिसके रहने आदि का कोई ठिकाना न हो। बे-बर बार का।
 २ परदेसी। विदेशी।
 बेबसना—स०=ब्योतना।
 बेबवार—पुं०=ब्यापार।
 बेबवारी—पुं०=ब्यापारी।
 बे-बफा—वि० [फा० बे+अ० बफा] [मात्र० बेवफाई] १. जिसमे बफा
 अर्थात् निष्ठा, सद्भाव आदि बाले न हो; फलतः कृतघ्न। २. बचन
 भंग करनेवाला। बगानाबाज।
 बेवफाई—स्त्री० [फा०+अ०] १. बेवफा होने की अवस्था या भाव।
 कृतघ्नता। २. बचन भंग। बगानाबी।
 बेबर—पुं० [दिशा०] एक तरह की धास जो रस्ती बनाने के काम
 आती है।
 बेबरा—पुं०=ब्योरा।
 बेबरबाजी—स्त्री० [हिं० ब्यौरा+फा० बाजी] बालाकी। बालबाजी।
 (बाजाक)
 बेबरघार—वि० [हिं० बेबर+घार (प्रत्य०)] तफसीलवार।
 विवरण-सहित।
 बेबसाउं—पुं०=व्यवसाय।
 बेबस्था—स्त्री०=व्यवस्था।
 बेबसना—अ० [सं० व्यवहार] १. व्यवहार करना। बरताव करना।
 बरतना। २. सूद पर रुपये का लेन-देन करना।

बेबहरिया—पुं० [सं० व्यवहार+इया (प्रत्य०)] १. सूद पर रुपये
 का लेन-देन करनेवाला। महाजन। २. बही-खाता लिखनेवाला।
 लिपिक। मुनीम।
 बेबहार—पुं० [सं० व्यवहार] १. सूद पर रुपए उधार देने का व्यवसाय।
 महाजनी। २. रोजगार। व्यापार। ३. दे० 'व्यवहार'।
 बेबहारी—पुं०=बेवहरीया।
 बेबा—स्त्री० [फा० बेव.] विचवा स्त्री। रईस।
 बेबाई—स्त्री० विदाई।
 बेबायां—पुं०=विभाज।
 बेबि*—वि०=विचि (बो)। उदा०—बेबि सरोरुह उपर वेखल।—
 विद्यापति।
 बेबा—वि० [फा०] [मात्र० बेबी] अधिक। ज्यादा। जैसे—बेबा-
 कीमत बहुत अधिक मूल्य का।
 †अव्य० ऐसा ही होती। अन्ध। (पूरब)
 पु०=मेस (बेघ)।
 बे-शकर—वि० [फा० बे+अ० शकर] [मात्र० बेशकरी] जिसे शकर न हो
 अर्थात् जिसे कोई काम ठीक तरह से करने का डग न आता हो।
 मूर्ख।
 बेशकरी—स्त्री० [फा० बे+अ० शकर। हिं० ई (प्रत्य०)] ने शकर होने
 की अवस्था या भाव।
 बे-शक—अव्य० [फा० बे+अ० शक] १ बिना किसी प्रकार के शक
 या सदेह के। २. अवश्य। जम्बर। नि सन्देह।
 बेबा-कीमती—वि० [फा० बेबा; अ० कीमत] बहुमूल्य।
 बेबा-कीमती—वि०=बेबाकीमती।
 बे-शारम—वि० [फा० बेशार्म] [मात्र० बेशारी] जिमे शरम या हजा न
 हो। निर्लज्ज। बेहूया।
 बे-शरमी—स्त्री० [फा० बेशार्मी] निर्लज्जता। बेहूयाई।
 बेसी—स्त्री० [फा०] १. बेघ होने की अवस्था या भाव। २. अधिकता।
 ज्यादाती। ३. लाभ। नफा।
 बे-शुबहा—अ० [फा० बे+अ० शुब्ह] बिना किसी शक या शुभहा
 के। नि सन्देह। अशक।
 बेशुमार—वि० [फा०] [मात्र० बेशुमारी] जो गिना न जा सके।
 अगणित। असम्बद्ध। अनगिनत।
 बेशोरम—वि० [फा०] थोडा-बहुत।
 बेसम—पुं० [सं० बेसम] घर। मकान।
 बेसबर—पुं० [सं० बैबानर] अग्नि।
 बे-संभार—वि० [फा० बे। हिं० नैयाल=मुष] जो अपने आपको मैयाल
 न सफता हो अर्थात् अचेत या बेसुध।
 बेसां—स्त्री० [सं० वयम्] उम्र। अवस्था। उदा०—बाल बेस
 ससि ता समीग, अँजल रस पित्रिय।—चदबरदाई।
 पुं०, वि०=बेसा।
 बेसन—पुं० [दिशा०] चने की दाल का पूर्ण। चने का आटा।
 बेसनी—वि० [हिं० बेसन+ई (प्रत्य०)] १. बेसन का बना हुआ।
 जैसे—बेसनी लड्डू। २. जिसमे बेसन पहा या मिला हो। जैसे—
 बेसनी पूरी या टोटी।

स्त्री० १. बेसन की बनी हुई पुरी। २. बेसन भरकर बनाई हुई कचौरी।
 बे-सम्बन्ध—अव्य० [फा०] बिना कारण। अकारण।
 बे-सम्बर(र) —वि० [फा० बे+अ० सम्बर+हिं० भा (प्रत्य०)] [भाब० बेसवरी] जिसे सभ या संतोष न होता हो। जो संतोष न रख सके। बर्षांतर।
 बे-सम्बरी—स्त्री० [फा० बे+अ० सवरी] बेसवर होने की अवस्था या भाव। अभीतर।
 बे-सम्बन्ध—वि० [फा० बे+हिं० सम्बन्ध] मूर्ख। निबुद्धि। ना-सम्बन्ध।
 बे-सम्बन्धी—स्त्री० [हिं० बेसम्बन्ध+ई (प्रत्य०)] बे-सम्बन्ध होने की अवस्था या भाव। मूर्खता। नासम्बन्धी।
 बेसुर—स्त्री० [?] नाक में पहनने की एक तरह की बुलाक।
 पू० १. गधा। २. खच्चर। ३. एक अल्पज जाति।
 बेसुरा—वि० [फा० बे+सुरा=उदरने का स्थान] जिनके लिए उदरने का कोई स्थान न हो। आश्रयहीन।
 पू० एक प्रकार की विडिया।
 बे-सुरीसामान—वि० [फा०] १. जिसके पास कुछ भी सामान या सामग्री न हो। २. दरिद्र। कंगाल।
 बे-सलीका—वि० [फा० बे+अ० सलीका] [भाब० बेसलीकगी] १. जिसे काम करने का सलीका या उग न आता हो। २. अशिष्ट और असभ्य।
 बेसबाग—स्त्री०=बेसबा।
 बेसबाग—पुं० [बेश०] वह सहाया हुआ मजाला जिसे शराब चुनाई जाती है।
 बेसहना—स०=बेसाहना।
 बेसाग—स्त्री०=बेसबा।
 पू० =बेश।
 बेसाहता—अव्य० [बे+फा० साहत्.] [भाब० बेसाहतागी] बिलकुल आप से आप और स्वाभाविक रूप से।
 बेसागर—वि० [हिं० बैठागा, गुज० बैसागा] १. बैठानेवाला। २. जमाकर रखने या स्थापित करनेवाला।
 बेसाहना—स० [सं० व्यवसन] १. मोल लेना। खरीदना। २. जान-बूझकर अपने ऊपर लेना अपना पीछे या साथ लगाना। बिसहना। जैसे—किसी से झगड़ा या बैर बेसाहना।
 बेसाहनी—स्त्री० [हिं० बेसाहना] १. खरीदने या मोल लेने की क्रिया या भाव। क्रय। २. मोल ली हुई चीज। सीदा। ३. जान-बूझकर अपने पीछे लमाई हुई चीज या बात।
 बेसाहा—पुं० [हिं० बेसाहना] १. खरीदी हुई चीज। सीदा। सामग्री। २. जान-बूझकर अपने ऊपर लिया हुआ संकट।
 बे-सिलसिले—अव्य० [हिं० बे+फा० सिलसिला] बिना किसी क्रम या सिलसिले के। अव्यवस्थित रूप से।
 बेसी—स्त्री०=बेशी।
 वि०=बेश।
 बेसुध—वि० [फा० +हिं० सुध=होश] १. जिसे सुध अर्थात् होश न हो। अन्ध। बेहोशा। २. जिसका होश-बुद्धात् ठिकाने न हो। बहुत खबरामा हुआ। बन्-बुद्धात्।

बेसुधी—स्त्री० [हिं० बेसुध+ई (प्रत्य०)] बेसुध होने की अवस्था या भाव।
 बेसुर—वि०=बेसुरा।
 बेसुरा—वि० [हिं० बे+सुर=स्वर] १. जो नियमित स्वर में न हो। जो अपने नियमित स्वर से हटा हुआ हो। (संगीत) जैसे—बेसुरा गाना। २. (व्यक्ति) जो ठीक स्वर में न गाता हो। ३. जो उपयुक्त अथवा ठीक अवसर या समय पर न हो। बे-नीका।
 बेसुध—वि० [फा०] जिसमें कुछ भी लाभ न हो। बेकायदा।
 बेस्य—स्त्री० [सं० बेस्य] १. रबी। बेस्य। २. एक प्रकार की बरें जो देखने में बहुत सुन्दर होती हैं पर जिसका डक बहुत जहरीला होता है।
 बे-स्वाद—वि० [हिं० +सं० स्वादु] २. जिसमें कोई अच्छा स्वाद न हो। स्वाद-रहित। २. नीरस। कीका।
 बेहंगम—वि० [सं० बिहंगम] १. जो देखने में मद्दा हो। बेडंगा। २. बेडब। ३. विकट।
 बेहंसना—अ०=विहंसना (ठठकार हँसना)।
 बेह—पुं० [सं० बेध] १. छेद। सुरास। २. दे० 'बेध'।
 बेहर—पुं० [?] पहाड़ी इलाकों में वह नीची और ऊबड़-खाबड़ भूमि जिसकी बहुत सी मिट्टी नदी या वर्षा के जल से बह गई हो, और जगह जगह गहरे गहरे पड़ गये हो।
 बेहड़ा—वि०, पुं०=बीहड़ा।
 पुं०=बेहट।
 बेहतर—वि० [फा०] अपेक्षाकृत अच्छा। किसी की तुलना या मुकाबले में अच्छा। किसी से बढ़कर।
 अव्य० प्रार्थना या आदिवा के उत्तर में स्वीकृति-सूचक अव्यय। अच्छा। (प्रायः इस अर्थ में इसका प्रयोग 'बहुत' शब्द के साथ होता है। जैसे—आप कल सुबह आयेगा? उत्तर—बहुत बेहतर।
 बेहतर—स्त्री० [फा०] १. बेहतर होने की अवस्था या भाव। अच्छापन। २. उपकार। बला। ३. कल्याण। मंगल।
 बेहद—वि० [फा०] १. जिसकी हद या सीमा न हो। असीम। अपार। २. बहुत अधिक।
 बेहान—पुं० [सं० वपन] अनाज, आदि का बीज जो लेंत में बोया जाता है। बीया।
 कि० प्र०=बालना।=पड़ना।
 वि० [?] जर्द। पीला।
 बेहाना—पुं० [बेश०] १. जुलाहों की एक जाति जो प्रायः रुई धुनने का काम करती है। २. बुनिया।
 बेहनीर—पुं० [हिं० बेहन+ओर (प्रत्य०)] वह स्थान जहाँ घान या जड़हन का बीज डाला जाता। पनीर। बियाफा।
 बे-हया—वि० [फा०] [भाब० बेहयाई] (व्यक्ति) जिसे हया या कज्जा न हो। निर्लज्ज। बेशर्म।
 बे-हयाई—स्त्री० [फा०] बेहया होने की अवस्था या भाव। बेवर्मी। निर्लज्जता।
 बेहरा—वि० [सं० बिहू?] १. अन्ध। स्वाधर। २. अलगा। जुदा। पुण्य। उदा०=बेहर बेहर भाऊ तेहू खँब-खँब ऊपर पात।=घायसी।

पुं० [?] बापी - बावली ।

बेहरना—अ० [हि० बेहर] किसी चीज का फटना या टडक जाना । दवार पडना ।

बेहरा—पुं० [देग०] १. एक प्रकार की घास जिसे चोपाये बहुत चाब से खाते हैं । (बुदल०) २. मूँज की यनी हुई गोल या चिपटी पिटाड़ी जिसमे नाक में पहनने की नय रमी जाती है ।

वि० [हि० बेहर] अलम । जुदा । पूषक ।

†पु० बेयरा ।

बेहरना—स० [हि० बेहरना का स०] फाडना ।

बेहरो—स्त्री० [स० विहृति - चलपूर्वक लेना] १. किसी विशेष कार्य के लिए बहुत से लोगों से बचे के रूप में मांगकर थोडा-थोडा धन इकट्ठा करने की क्रिया या माव ।

क्रि० प्र०—उगाहना ।—मांगना ।

२. उक्त प्रकार में इकट्ठा किया हुआ धन । ३. वह किस्त जो असामी शिकमीदार को देता है । बाडा ।

बेहला—पुं० [अ० बायोमिन] सारंगी की तरह का एक प्रकार का पाश्चात्य बाजा ।

बेहाई—स्त्री० [फा० बे-ह्याई] बेहया होने की अवस्था या माव । निर्लेज्जता । बेशरमी ।

क्रि० वि० बे-हया बनकर । निर्लेज्जता-पूर्वक । उदा०—आए नैन धाऊ कँ लीजे, आवत अब बेहया बेहाई ।—मूर ।

बेहाय—वि० [फा० बे । हि० हाय] १. जो अपने हाय (अर्थात् कार्य करने की शक्ति या माधन) से रहित या हीन हो चुका हो । जैसे—फारखती लिलकर तो नुम बेहाय हो चुके हो । २. जो हाय (अर्थात् अधिकार या वश) के बाहर हो गया हो । जैसे—अब तो लडका तुम्हारे हाय से निकल कर बे-हाय हो चुका हो ।

बेहाना—पुं० विहान ।

बेहाल—वि० [फा० बे । अ० हाल] [माव० हाली] १. जिसका बेहाल अर्थात् दशा बहुत बिगड गई हो । मरथामन्न । ३. अचेत । मसार्दीन । ४. व्यथुल । थिकल ।

बे-हामी—स्त्री० [फा०] १. बेहाल होने की अवस्था या माव । २. बेचैनी । व्याकुलता ।

बे-हिवाब—अव्य० [फा० बे । अ० हिस्वाब] बहुत अधिक । बहुत ज्यादा । वि० असव्य ।

बेहोना—स्त्री० [?] नव विवाहित वर-बधू को गाँव के कुम्हारों द्वारा दिया जानेवाला नया बर्तन । (पुरन)

बे-हुनर—वि० [फा० बे । हुनर] १. जिसे कोई हुनर न आता हो । २. जो कुछ भी काम न कर सकता हो । मूर्ख ।

बे-हुनरी—स्त्री० [फा०] किसी प्रकार का हुनर या गुण न होने की अवस्था या माव ।

बे-हुनरत—वि० [फा०] [माव० बेहुनरती] जिसकी कोई प्रतिष्ठा न हो । बेइज्जत ।

बे-हया—स्त्री० [फा०] १. बेहया होने की अवस्था या माव । असम्पत्ता । अशिष्टता । २. बेहियेय से भर हुआ काम या बात ।

बेह्या—वि० [फा० बेहद] १. (अर्थित) जिसे तमीज या समस न हो

और इसी लिए जो शिष्टता या सम्पत्तापूर्वक आचरण या व्यवहार करना न जानता हो । (२. काम या बात) जो शिष्टता या सम्पत्ता के विरुद्ध हो । अशिष्टता-पूर्ण ।

बेहूशपन—पुं० [फा० बेहूश + पन (प्रत्यय०)] बेहूश होने की अवस्था या माव । बेहूशगी । अशिष्टता ।

बे-हूश—अ० य० [स० विहीन] बिना । बगीर । रहित ।

बे-हूक—वि० [फा० बेहूक] बेकिफ । जिससे कोई चिन्ता न हो । चिन्ता-रहित ।

बे-होश—वि० [फा०] [माव० बेहोशी] जिसे होश न रह गया हो । मूर्च्छित । बेसुध । अचेत ।

बे-होशी—स्त्री० [फा०] बेहोश होने की अवस्था या माव । मूर्च्छा । अपे-तनता ।

बंक—पुं० [अ०] दे० 'बक' (महाजनी कोटी) ।

बंकर—पुं० [अ०] महाजन ।

बेंगन—पुं० [स० वण०] १. एक पौधा जिसके लंबोतरे फलों की तरकारी बनाई जाती है । मटा । २. उक्त पौधे का फल जिसकी तरकारी बनती है । ३. दक्षिण भारत में होनेवाला एक प्रकार का धान और उसका चावल ।

बेंगनी—वि० [हि० बेंगन + ई (प्रत्यय०)] बेंगन के रंग का । जो ललाई लिये नील रंग का हो । बेंजनी ।

पु० उक्त प्रकार का रंग ।

स्त्री० एक प्रकार का पकवान जो बेंगन के टुकड़ों को घुले हुए बेसन में लोटेकर और घी या तेल में तलकर बनाया जाता है ।

बेबा—पुं० [?] एक प्रकार का वृक्ष और उसका फल ।

स्त्री० बेब ।

बेंजनी—वि० बेंगनी ।

बेंडा—पुं०—बेंट (मूठिया) ।

बेंड—पुं० [अ०] १. झुंड । दल । २. अंगरेजी बाजा बजाने वाली का दल जिसमें मय लोग मिलकर एक साथ बाजा बजाते हैं । ३. पाश्चात्य ढंग के कुछ विशिष्ट वाजों का समूह जो एक साथ बजाये जाते हैं ।

बेंडना—वि०—बेंडना ।

बेंडा—वि०—बेंडा ।

बेंटी—स्त्री० [?] तालाब या जलाशय में मीचने के लिए पानी उछालने का कार्य ।

बेंत—पुं० १. बेंत । २. बेंत ।

बें—स्त्री० [अ० बें] धपार, पेंस आदि के बदले में कोई वस्तु दूसरे को इस प्रकार दे देना कि उस पर अपना कोई अधिकार न रह जाय । बेचना । विक्री ।

स्त्री० [स० याय] करघे में की कधी । बैतर ।

स्त्री० वय (अवस्था या उमर) ।

बेंकना—अ०—बंहनना ।

बेंकल—वि० [स० बिकल, मि० फा० बेकल] १. बिकल । बेचैन । २. पागल । उन्मत्त ।

बेंकुडा—पुं०—बेंकुट ।

बेंकरी—स्त्री०—बेंकरी ।

बैद्यायस—वि०=वैद्यायस ।

बैद्यपु० [अ०] १. बैला । डोला । २. बोरा ।

बैद्यपु—पु०=वैद्यपु ।

बैद्यपा—पु०=वैद्यपा (पकवान) ।

बैद्ययंती—स्त्री० [स० बैद्ययंती] १. कुल के एक पीये का नाम जिसके पते हाथ-हाथ भर अंके और चार पाँच अंगुल चौड़े चब या मूल काष्ठ से बने हुए होते हैं । २. विष्णु के मले की माछा का नाम ।

बैद्य—पु० [अ०] १. विद्वान् । निदान । २. चपरमा । ३. संस्था आदि का चिह्न सूचित करनेवाला पट्टा या कागज अथवा कपड़े आदि का टुकड़ा । बिल्सा ।

बैद्यई—वि० [का० बैद्यायी] हलके नीले रंग का ।

पु० उक्त प्रकार का अर्थात् हलका नीला रंग ।

बैद्यनाथ—पु०=वैद्यनाथ ।

बैद्ययंती—स्त्री०=वैद्यती ।

बैद्यना—पु० [उश०] १. उदं का एक मेद । २. कनकड़ी नामक लेल ।

बैद्यवी—वि० [अ० बैद्यावी] १. अंके का । २. अक्षरका ।

बैद्या—पु० [अ० बैड] १. अडा । २. गलका नामक रोग जिसकी गिनती केचक या शीतला में होती है ।

बैद्यायी—वि० [अ० बजायी] अक्षरकार ।

बैद्यिक—वि० [म० बीज+उक्+इक] १. बीज-सबधी २. मूल-सबधी । ३. पतृक ।

पु० १. अक्रुर । २. कारण । ३. आराम ।

बैद्यरी—स्त्री० [अ०] १. तावे या पीतल आदि का बहु पात्र जिसमे रासायनिक पदार्थों के योग से रासायनिक प्रक्रिया द्वारा विजली पैदा करने काम मे लाई जाती है । (बैदरी)

मुद्रा—बैदरी षड्गाना—बैदरी या विजली की सहायता से किसी बीज पर किसी धातु का मुद्रमा करना । २. तोपखाना ।

बैद्या—स्त्री० [दिश०] कई ओठने की चरखी । ओठनी ।

बैड—पु० [हि० बैडना—पस्ता पडना] सरकारी मालगुजारी या लगान की दर । गजकीय कर या उसकी दर ।

बैडना—स्त्री० [हि० बैडना] १. बँडे की चिन्ता, बड़ माव या मुद्रा । जैसे—इस जानकर की बैडक ही ऐसी होती है । बैडकी । २. घर का बहु कपरा जिसमे प्राय अये-नये लोग बैडकर आपस मे बात-चीत करते हैं । बैडका । ३. बँडे के लिए बना हुआ कोई आसन या स्थान । उवा—अति आदर सँ बैडक दीनी ।—सूर । ४. नीचे का बहु आधर जिस पर सभा, मुति या ऐसी ही और कोई चीज खड़ी की या बैडई जाती है । पद-स्तल । ५. सभा, सम्मेलन आदि का एक बार मे और एक साथ होने-वाला कोई अधिवेशन । (सिटिंग) जैसे—आज सम्मेलन की दूसरी बैडक होगी । ६. ब्रह्म लोगों के आपस मे प्रायः सग मिलकर बँडे की चिन्ता या माव । बैडकी । ७. एक प्रकार की कसरत जिसमे बार-बार खडा होना और बैडना पड़ता है । बैडकी । ८. पान—लघाना ।

१. किसी विविष्ट उद्देश्य से किसी स्थान पर जाकर तब तक बँडे की चिन्ता, अथ तक बहू काम पुरा न हो जाय । २. कौन, धातु आदि का दीवट जिसके सिरे पर बत्ती जलती या मोमबत्ती जौंती जाती है । बैडकी । १०. डे० 'बैडकी' ।

४—२२

बैडका—पु० [हि० बैडक] १. वह चौपाल या बालान आदि जहाँ कोई बैडता हो और जहाँ जाकर लोग उससे मिलते या उसके पास बैडकर बात-चीत करते हो । २. बैडक ।

बैडकी—स्त्री० [हि० बैडक+ई (प्रत्य०)] १. किसी स्थान पर प्राय जाकर बँडे की चिन्ता । जैसे—आज-कल यकील साहब के यहाँ उपाकी बहुत बँडेकी होती है । २. बार बार बँडेने और उठने की कसरत । बैडक । ३. बँडेने का आसन । बैडक । ४. वेद्यभो का बहु गाना जिसमे वे बैडकर गाती है, नाचती नहीं । ५. सीसे का बहु झाड़ू जेमीन पर रखकर जलाया जाता है । (छत मे लटकाये जानेवाले झाड से मिश्र) ६. बहु नगीना जो किसी गहने मे अड़कर बँडेमा जाता है । (बेथकर पियेये जानेवाले नगीने से मिश्र) जैसे—अंगुठी मे जडा जाने-वाला मोती 'बैडकी' कहलाता है ।

वि० बँडेने से सम्बन्ध रखनेवाला । जैसे—बैडकी हडताल ।

बैडकी हडताल—स्त्री० [हि०] हडताल का बहु प्रकार या रूप जिसमे किसी कन्धवाला या कायलिय मे कन्धारी लोग उपस्थित तो होते हैं, पर अपने अपने स्थान पर खाली बैठे रहते हैं, अपना काम नहीं करते । बँड-हडताल । (सिट हाउन स्ट्राइक)

बैडना—स्त्री० [हि० बैडना] १. बँडेने की चिन्ता, इग या माव । २. आसन । पु०=बँडेन

बैडना—अ० [स० वेदान, चिष्ट, प्रा० बिडन्तः ना (प्रत्य०)] १. प्राणियो का अपने घुटने टेक या टाँपे भोजकर सारी को ऐसी स्थिति मे करना या लाना कि बड सोधा अरक की ओर रहें और उरक सारा भार चुलदो और जाँघो के नीचेवाले तल पर पड़े । सरीर का नीचेवाला अधा माग किसी आधार पर टिका या रखकर पुट्टो के बल आसीन या स्थित होना । (खडे रहने और लेटने या सोने से मिश्र) जैसे—कुरसी, चौकी या जमीन पर बैडना ।

विशेष—पशियो को बँडेने के लिए प्रायः अपने पैर मोड़ने नहीं पड़ते और उनका खडा रहना तथा बँडेना दोनों समान होते हैं । जब वे उठना छोडकर जमीन या पेड की डाल पर खडे होते हैं, तब उनकी वही स्थिति 'बँडेना' भी कहलाती है । पर अब सेने के समय जब वे बँडेने हैं, तब उनकी टाँपे में नुच जाती है ।

पंथ—(कहाँ या किसी के साथ) बँडेना-उठना या उठना-बँडेना—किसी के सग या साथ रहकर बात-चीत करना और समय बिताना । जैसे—उनका बँडेना-उठना सग से बडे आदमियो के यहाँ (या साथ) ही रहा है । बँडेने-उठने या उठने-बँडेने—अधिकतर अवसरो पर । प्राय । हर समय । जैसे—बँडेने उठते (या उठने-बँडेने) ईस्वर का ध्यान रखना चाहिए । बँडे-बँडे—(क) अचानक । सहसा । उदा०—बँडे-बँडे हुमे क्या जानिए क्या याद आया ।—कोई आया । (ख) बिना कुछ किये । जैसे—बलो, बँडे-बँडे तुम्हे भी सी सपे मिल गये । (ग) दे० 'बँडे-बँडे' । बँडे-बँडे—अकाल, निम्नगोचन या अर्थ । जैसे—बँडे-बँडेये तुम्हे यह झगडा माल के लिया ।

मुद्रा—बँडे रहना—कन्धक, कायं आदि का ध्यान छोडकर पया-सा-य उससे अलग या दूर रहना । जैसे—तुम जहाँ जाते हो, वही बैठ रहते हो । बँडे रहना—(क) कुछ भी काम-धाम न करना । जैसे—छुट्टी के दिन वे घर पर ही बैठे रहते हैं, कहीं आते-जाते नहीं । (ख) किसी

काम या बात में योग न देना अथवा हस्तक्षेप न करना। जैसे—(क) भी यही चुपचाप बैठ रहा, कुछ बोला नहीं।

२. किसी विशिष्ट उद्देश्य या काम की सिद्धि के लिए आसन या स्थान ग्रहण करना। जैसे—(क) विद्यार्थी का पढ़ने के लिए (या परीक्षा में) बैठना। (ख) अधिकारी का काम के समय अपनी जगह पर (या मालिक या गृही पर) बैठना। (ग) अपना विचार अंकित करने के लिए धिक्कार के सामने बैठना। (घ) बहिष्कृतों या मछलियों का अन्न देने के लिए बैठना।

३. किसी का किसी पर या स्थान पर अधिकारी या स्वामी बनकर आसीन होना। जैसे—(क) उनके बाद उनका लड़का गृही पर बैठे। (ख) कल राज्य में नये राज्यपाल बैठेंगे। ४. जिस काम के लिए कोई उद्यत, तत्पर या समर्पण हुआ हो, उससे अलग दूर या विरत होना अथवा सबंध छोड़ना। जैसे—(क) उनसे के लिए जो चार उम्मेदवार थे, उनमें से दो बैठ गये। (ख) अब उनके सभी सहायक और साथी बैठ गये हैं। ५. किसी प्रकार की सवारी पर आसीन या स्थित होना।

जैसे—(क) गाड़ी, नाव, मोटर या रेल पर बैठना। ६. किसी चीज का नीचे-बाला अथवा माग या जमीन में अच्छी तरह यथास्थान स्थित होना। ठीक तरह से लगना। जैसे—(क) यहाँ अभी एक खमा और बैठेगा। (ख) इस जमीन में जड़हूत (या घास) नहीं बैठेगा। ७. किसी स्थान पर जमकर या दृढ़तापूर्वक आसीन या स्थित होना। उदा०—

हजरते दाग जहाँ बैठ गये, बैठ गये—दाग। ८. स्त्रियों के सन्नध में, किसी के साथ अवैध सम्बन्ध स्थापित करके उसके घर में जाकर पत्नी के रूप में रहना। जैसे—विधवा होने पर वह अपने देवर के घर जा बैठे।

९. नर और मादा का समीग करने के लिए किसी स्थान पर आना या होना, अथवा समीग करना। (बाज्राक) जैसे—दस बार यह कुतिया किसी बाजाक कुत्ते के साथ बैठेी थी। १०. किसी रखी जानेवाली अथवा अपने स्थान से हटी हुई चीज का उपयुक्त और ठीक रूप से उस स्थान पर जमना, फिर से आना या स्थित होना, जहाँ उसे बन्दुत आना, रहना या होना चाहिए। जैसे—(क) घंटन या पत्थर का अपनी जगह पर बैठना। (ख) टोपी या पगड़ी का सिर पर ठीक से बैठना। (ग)

उलझी हुई नस या हड्डी का फिर से अपनी जगह पर बैठना। ११ जो ऊपर की ओर उठा या खड़ा हो, उसका गिर या हटकर नीचे आना या घरासायी होना। गिर पड़ना या जमीन से आ लगना। जैसे—(क) हाल बरसात में पहासी मकान बैठ गये। (ख) कड़ाके की धूप या पाले में शरीर फसल बैठ गई। (ग) भार की अधिकता के कारण नाव बैठ गई। १२ किसी काम, चीज या बात का अपने उचित या साधारण रूप में न रहकर चौपट या नष्ट हो जाना। जैसे—(क) लगातार कई बरसों तक घाटा होने के कारण उसका कारखाना बैठ गया। (ख)

अधिक ध्वय और कुव्यवस्था के कारण सस्था बैठ गई। १३ तरल पदार्थ में घुली या मिली हुई चीज का निष्पन्न कर तल में आ लगना। जैसे—गुली से घोंघा हुआ बाज या रस बैठना। १४. किसी उपन्यासकार चीज का नष्ट या विकृत होकर कुछ गहरा या समतल हो जाना। पिचकना जैसे—(क) पुस्तिक लगाने से फोड़ा (या दबा लगाने से सूजन) बैठेगा। (ख) धोतला के प्रकोप से किसी की आँख बैठेगा। (ग) बीमारी या बुढ़ापे में गाल बैठना। १५. किसी चीज का गल, पिचक

या सड़कर अपना गुण, रूप, स्वाद आदि गँवा देना। जैसे—(क) अधिक आँब लगने से गुड़ का बैठना। (ख) गढ़े हाथ लगने से अचार का बैठना। (ग) पानी अधिक हो जाने से मात का बैठना। (घ) अधिक उमस के कारण अमरुद या आम बैठना। १६. नापने-तीलने, पढ़ता निकालने या हिसाब लगाने पर किसी निश्चित मात्रा, मान, मूल्य या आदि का ज्ञात अथवा विश्वर होना। जैसे—(क) तीलने पर गेहूँ का बीरस सखा दो वन बैठे। (ख) नाव और उसका सामान खरीदने में तीन सौ रुपये बैठे। (ग) घर तक ले जाने में यह कपड़ा तीन रुपये गंव बैठेगा। १७. प्रहार आदि के लिए अस्त्र शस्त्र, शारीरिक अथवा अथवा ऐसा ही किसी चीज का चलाये जाने या फेंके जान पर अपने ठीक लक्ष्य पर जाकर लगना। जैसे—(क) निशाने पर गोला या गोली बैठेगा। (ख) शरीर पर शय्यक या मूषका बैठेगा। १७. यहाँ, तारो आदि का आकवास में नीचे उतरना या उतरते हुए स्थिति के नीचे जाना। अस्त होना।

जैसे—सूर्य के बैठने का समय दो चला था। १८. अर्थ, उक्ति, कथन सिद्धांत आदि का कही इस प्रकार लगना कि उसका ठीक ठीक आशय या रूप समझ में आ जाय अथवा वह उचित रूप से चर्चित या चर्चितार्थ हो। जैसे—(क) यहाँ इस चीजार्थ का ठीक अर्थ नहीं बैठेगा। (ख) आपका वह कथन (या सिद्धांत) नहीं बिलकुल ठीक बैठेगा ? १९. २०. कार्य, क्रियाओं आदि के सम्बन्ध में, हाथ का इस प्रकार अल्पस होना कि सहज में स्वभावतः उससे ठीक और दूरा परिणाम निकले। जैसे—बाजे पर (या लिखने में) अभी उसका हाथ ठीक नहीं बैठेगा ? १।

सवो०—बैठे—जाना। विशेष—'बैठना' क्रिया का प्रयोग कुछ मूषक क्रियाओं के साथ मयोज्य क्रिया के रूप में प्रायः नीचे लिखे अर्थों में ही जाता है। (क) अवधारण या अधिक निश्चय सूचित करने के लिए, जैसे—कोई चीज को या गँवा बैठेगा। (ख) कार्य की पूर्णता सूचित करने के लिए, जैसे—

—कहाँ जा बैठेगा या मालिक बत बैठेगा। (ग) अनजान में या सहसा होनेवाली आकस्मिकता सूचित करने के लिए, जैसे—कह बैठेगा, दे बैठेगा या मार बैठेगा और (घ) दुश्मन या घृष्टना सूचित करने के लिए, जैसे—बढ़ बैठेगा, पुछ बैठेगा, बिगड़ बैठेगा।

बैठनी—स्त्री०—बैठन (बैठक) बैठनी—स्त्री० [हि० बैठन] वह आसन या स्थान जिस पर बैठकर जुलाहे करधे से कपड़ा बुनते हैं। बैठबा—वि० [हि० बैठना-वर् (प्रत्य०)] [स्त्री० बैठनी] बैठा या दबा हुआ। फलत चिटटा। जैसे—बैठबाँ जूत।

बैठबाई—स्त्री० [हि० बैठना] १. बैठबायों की क्रिया या भाव। २. दे० 'बैठाई'। बैठबाणा—स० [हि० बैठना का प्रे०] बैठाने का काम दूसरे से कराना। बैठ-हड़ताल—स्त्री०—बैठकी हड़ताल।

बैठबाणा—स० [हि० बैठना का स०] १. किसी को बैठने में प्रवृत्त करना। ऐसा काम करना जिससे कोई बैठे। आसीन, उपविष्ट या स्थित करना। जैसे—जो लोग खड़े हैं, उन्हें यथा-स्थान बैठा दो। २. किसी उद्देश्य की पूर्ति या कार्य की सिद्धि के लिए किसी को किसी पर या स्थान पर आसीन या नियुक्त करना। जैसे—(क) किसी को कहीं का प्रबंधक बनाकर बैठाना। (ख) सगड़ा निपटाने के लिए पचावत बैठाना।

बैठनी—स्त्री०—बैठन (बैठक) बैठनी—स्त्री० [हि० बैठन] वह आसन या स्थान जिस पर बैठकर जुलाहे करधे से कपड़ा बुनते हैं। बैठबा—वि० [हि० बैठना-वर् (प्रत्य०)] [स्त्री० बैठनी] बैठा या दबा हुआ। फलत चिटटा। जैसे—बैठबाँ जूत।

बैठबाई—स्त्री० [हि० बैठना] १. बैठबायों की क्रिया या भाव। २. दे० 'बैठाई'। बैठबाणा—स० [हि० बैठना का प्रे०] बैठाने का काम दूसरे से कराना। बैठ-हड़ताल—स्त्री०—बैठकी हड़ताल।

बैठबाणा—स० [हि० बैठना का स०] १. किसी को बैठने में प्रवृत्त करना। ऐसा काम करना जिससे कोई बैठे। आसीन, उपविष्ट या स्थित करना। जैसे—जो लोग खड़े हैं, उन्हें यथा-स्थान बैठा दो। २. किसी उद्देश्य की पूर्ति या कार्य की सिद्धि के लिए किसी को किसी पर या स्थान पर आसीन या नियुक्त करना। जैसे—(क) किसी को कहीं का प्रबंधक बनाकर बैठाना। (ख) सगड़ा निपटाने के लिए पचावत बैठाना।

बैठनी—स्त्री०—बैठन (बैठक) बैठनी—स्त्री० [हि० बैठन] वह आसन या स्थान जिस पर बैठकर जुलाहे करधे से कपड़ा बुनते हैं। बैठबा—वि० [हि० बैठना-वर् (प्रत्य०)] [स्त्री० बैठनी] बैठा या दबा हुआ। फलत चिटटा। जैसे—बैठबाँ जूत।

बैठबाई—स्त्री० [हि० बैठना] १. बैठबायों की क्रिया या भाव। २. दे० 'बैठाई'। बैठबाणा—स० [हि० बैठना का प्रे०] बैठाने का काम दूसरे से कराना। बैठ-हड़ताल—स्त्री०—बैठकी हड़ताल।

(ग) रखवाली के लिए पहुँचा बैठाना। ३. आये हुए व्यक्ति या व्यक्तियों को आदरपूर्वक उचित आसन या स्थान पर आसीन करना। जैसे—अतिथियों को बैठाना। ४. किसी को किसी काम में इस प्रकार लगाना कि वह वही आसन जमाकर काम करे। जैसे—पंडित को पूजा-घाट के लिए या लड़के को किसी के यहाँ काम सीखने के लिए बैठाना। ५. जिस काम के लिए कोई उद्यत, तत्पर या सज्ज होना हो, उससे उसे टोककर उपमेदवार या बिजल करना। जैसे—बुलाव के लिए खड़े होनेवाले किसी उमेदवार को बैठाना। ६. जो चीज किसी प्रकार उठी, उमरी या अपने स्थान से बंदी या हटी हुई हो, उसे फिर यथा-स्थान करना या लाना। जैसे—नद, सूजन या हड़डी बैठाना। ७. किसी को किसी पान या सवारी पर आसीन कराना। जैसे—यात्रियों को अहाज या रेल पर बैठाना। किसी स्थान पर ठीक तरह से जमाकर रखना या लगाना। जैसे—बगीचे में पेड़-पौधे बैठाना। ९. उबालने, गरम करने, पकाने आदि के लिए आग या चूल्हे पर बढाना या रखना। जैसे—वाल या घुघ बैठाना। पब—बैठा भास—वह जात जो चावल और पानी एक ही साथ आग पर रख कर पकाया गया हो। १०. किसी प्रकार या रूप में नीचे की ओर गिराना, ढबाना या धँसाना। जैसे—जस कमरे के बोस ने सारा मकान बैठा दिया। ११. कोई चलता हुआ काम इस प्रकार विकृत करना कि उसका अंत या नाश हो जाय। जैसे—ये नये कार्यक्रमों तो चार दिन में कारखाने (या संस्था) को बैठा देते। १२. किसी वस्तु को या व्यक्ति को ऐसी अवस्था में लाना कि वह निष्क्रमा, रुढ़ी या बेकार हो जाय। जैसे—(क) बीमारी (या बुढ़ापे) ने उन्हें बैठा दिया है। (ख) सुपने लापरवाही से साग अचार बैठा दिया। १३. किसी स्त्री को उपपत्नी बनाकर अपने घर के आना और रखना। जैसे—उन्होंने एक बेसमा को बैठा लिया था। १४. नर और मादा को समोग करने के लिए एक साथ रखना। ओठा खिलाना। जैसे—मुझे को मुसुरी के छाप बैठाना। १५. पानी आदि में मुझे वस्तु को तल में ले जाकर जमाना। जैसे—यह दवा सब मेल नीचे बैठा देगी। १६. किसी काम में कौशल प्राप्त करने के लिए इस प्रकार अभ्यास करना कि धारदार का कोई अंग ठीक तरह से काम करने लगे। जैसे—चित्रकारी में हाथ बैठाना। १७. प्रहार के समय कंक या चलाकर कोई चीज ठीक जगह पर पहुँचाना। शिप्ट वस्तु को निश्चित लक्ष्य या स्थान पर जमाना या लगाना। जैसे—निशाना बैठाना। १८. उचित, कथम, सिद्धांत आदि किसी इस रूप में लगाना कि वह उपयुक्त या सार्थक जान पड़े। बटित करना। घटाना। जैसे—(क) जाप अपना यह सिद्धांत हर जगह नहीं बैठा सकते। (ख) इस दौड़े का अर्थ नैजामी तो जानें कि तुम भी बड़े पंडित हो। १९. गणित-सम्बन्धी किसी प्रश्न का ठीक उत्तर या फल निकालने के लिए उचित क्रिया या हिसाब करना। जैसे—ओड़, पडता या हिसाब बैठाना। २०. उगाहने आदि के लिए कर या शुल्क नियत करना। जैसे—अब तो नित्य नए नए कर बैठाये जाते हैं। २१. कोई चीज किसी के पास गिरवी या रद्द रखना। (जुजारी) जैसे—उसने दोष बुकाने के लिए अपनी अँगुठी बैठा दी। संघो० फि०—देना।

बैठारना—स०—बैठाना।
 बैठालम्बा—स०—बैठाना।
 बैठाल—वि० [सं० विडाल+अण्] विल्ली-सम्बन्धी।
 बैठाल-बल—पु० [सं० उ० सं०] विल्ली की तरह ऊपर से लोजन्य और सद्भाव प्रकट करने पर भी मन में कष्ट छिपाये रखना और घात में लगे रहना।
 बैठालवती—पु० [सं० बैठालवत+वति] १. वह जो बैठालवत धारण किये हो। विल्ली के समय ऊपर से सीधा-साधा पर समय पर धात करनीवाला। कपटी। २. ऐसा व्यक्ति जो स्त्री के अभाव में ही सदाचारी बना हुआ हो, अपनी इन्द्रियों पर बस रखने के कारण सदा-चारी न हो।
 बैठना—स०—बैठना (बेरना)।
 बैठ—पु० [सं० बैठ] बाल की लप्याचियों से टोकरीयाँ तथा अन्य सामान बनानेवाला कारीगर।
 बैठ—स्त्री० [अ०] किसी घेर (पच) के दोनों चरण। मिसरों में से कोई मिसरा।
 बैठझा—वि० [फा० बठतर?] १. बढभावा। लुब्धा। २. बेहूदा।
 बैठबाबी—स्त्री० [अ०+फा०] वह प्रतियोगिता जिसमें एक बालक एक घेर पकटा है और दूसरा बालक उस घेर के अन्तिम धक्य से आरम्भ होने-वाला दूसरा घेर पकटा है और इसी प्रकार यह प्रतियोगिता बलकी रकूटी है।
 बैठरनी—स्त्री० [सं० बैठरणी] १. एक प्रकार का पान जो अगहन में तैयार होता है। २. बैठरणी।
 बैठरा—पु०—बैठरा।
 बैठरस—पु०—बैठराल।
 बैठरालि—वि०, पु०—बैठरालिक।
 बैठरालाह—पु० [अ०] १. धुला का घर। २. मुसकमानों का काबा तीर्थ।
 बैठा—पु० [स्त्री० बैठिन]—बैठा।
 बैठही—स्त्री० [हिं० बैठ] कंध का काम, पेसा या मात। बैठगी। उदा०—अर्थ, सुगारी, बैठई, करि जानत पतिराम।—बिहारी।
 बैठई—स्त्री०—बैठई।
 बैठई—पु०—बैठई।
 बैठही—स्त्री०—बैठही।
 बैठ—पु० [सं० बचन, प्रा० वचन] १. बचन। बात।
 मुहा०—बैन झरना—मुँह से बात निकलना।
 २. बेणु। बाणुरी। उदा०—मोहन मन हर लिया सुबैन बजाय कै।—आनंदवन। ३. घर में मस्यु होने पर कुछ विशिष्ट शोकसूचक पद या वाक्य जिन्हें स्त्रियों कह कहकर रोती हैं। (पजाब)
 बैठतेय—पु०—बैठतेय।
 बैठसपार्ई—स्त्री० [हिं० बैठ+सपार्ई] रचना में होनेवाला अनुयास।
 वणमैत्री। (राज०)
 बैठा—पु० [सं० बाणप] धूम अवसरों पर इष्ट-मित्रों तथा सम्बन्धियों के यहाँ से आने अथवा उनके यहाँ भेजी जानेवाली मिठाई।
 फि० प्र०—देना।—बाटना।—जेबना।
 स० [सं० वचन] (बीज) बीना।
 पुं०—बैठा।

†पु०- बैन।

बैनामा—पु० [अ० बै। फा० नामा] वह पत्र जिसमें किसी वस्तु विशेषतः मकान या जमीन, ब्राह्मदाद आदि के बेचने और उसमें सबंध रखनेवाली शर्तों का उल्लेख होता है। विष्णु-पत्र। (सिल डीट)

बैपर—स्त्री० [सं० बयूरर हिं० बहुअर] औरत।

बैपार—पु०- व्यापार।

बैपारी—पु०- व्यापारी।

बैभातेर—वि०- वैभावेय।

बैयां—अव्य० [?] घृष्टनों के बल। घृष्टनों के महारे।

बैया—पु० [सं० बाय] बै। बैसर। (जुलाहे)

बैरंग—वि० [अ० वियरिंग] १ वह (चिट्ठी) जिस पर टिकट न लगाया हो फलतः जिसका महसूल उसे पानेवाले को चुकाना पड़ता हो। २ विफल।

मुहा०—बैरंग लौटना- बिना फिम हुए, विफल लौटना।

बैर—पु० [सं० बैर] १ किमी का बहुत बड़ा अहित या अपकार करने की मन में होनेवाली उल्टत भावना जो स्वभावजन्य, कारण-जन्य अथवा ईर्ष्याजन्य होती है। २ बदला लेने की भावना।

मुहा०—बैर काटना- किमी का अहित या अपकार करने के लिये द्वारा किये हुए अहित या अपकार का बदला चुकाना। बैर चितारना, चुकाना या सातना- पुराना बैर याद करने उम्मा बदला लेना। उदा०—परना प्यारे कब को बैर चितारियो।—मीर। बैर डामना-बदला लेने के लिए अथवा दुर्भावनाय किमी का अपकार करने के लिए तत्पर होना।

बैर डामना- विरोध उत्पन्न करना। दुश्मनी पैदा करना। बैर निकामना- बैर काटना। (किमी के) बैर पड़ना- प्रायः जान-बूझ-

कर किमी को सताना। बैर बढ़ाना-अधिक दुर्भाव उत्पन्न करना।

दुश्मनी बढ़ाना। ऐसा काम करना जिससे अप्रसन्न या कुपित मनुष्य

और भी अप्रसन्न और कुपित होता जाय। बैर बिसाहना या मोल लेना- चलि यात से अपना कोई सबंध न हो, उसमें योग देकर दूसरे को व्यर्थ

अपना विरोधी या धनु बनाना। बिना मतलब किसी में दुश्मनी पैदा

करना। बैर मानना- मन में दुर्भाव रखना। बैर मानना। दुश्मनी

रखना। बैर लेना- किमी का अपकार करने बैर का बदला चुकाना।

पु० [सं० बदरी] बैर का पेड़ और उसका फल।

पु० [दिश०] नल में लगा हुआ चिह्न के आकार का चोगा जिसमें भरे हुए बीज हल चलाने में बराबर सूँड़ में पड़ते जाते हैं।

बैरक—पु० [पु० बैरक] १ छोटा सडा। सडी। २ अधिकार में लाई हुई अथवा जीती हुई जमीन में गाड़ा जानेवाला सडा।

मुहा०—बैरक बाँचना-कोई अनुष्ठान करने अथवा दूसरे को अपना अनुयायी बनाने के लिए सडा खडा करना। उदा०—उसने नाम की बैरक बाँधे मुसब बसी इहि गाँव।—सूर।

स्त्री० [अ०] छावनी में बह इमारत अथवा इमारतों की भूखला जिसमें सैनिक समूह रहते हैं।

बैरक—पु०—बैरक (सडा)।

बैरन—स्त्री० [हिं० बैरी का स्त्री० रूप] १ वह स्त्री जो किसी से धमत्तापूर्ण व्यवहार करती हो। २. सीत।

बैरा—पु० [दिश०] १ हल के मुँड़े में बाँधा जानेवाला एक प्रकार का पौधा

जिसमें बोते समय बीज डाले जाते हैं। माला। २. ईट के दुफने, रोडे आदि जो मेहराब बनाते समय उसमें चुकी हुई ईंटों को बनी रखने के लिए खाली स्थान में भर देते हैं।

पु० [अं० बेयरर] होटलो आदि में वह व्यक्ति जो अम्पगतों को भोजन पहुँचाता है।

बैराखी—स्त्री०—बैरेखी।

बैरामा—पु०—बैराम।

बैरामर—पु० [बैर ? ; सं० आगर] रत्नों आदि की खान। उदा०—

गुणमणि बैरामर धीरख को सागर।—केसाव।

बैरामी—पु०—बैरागी।

बैराम्यां—पु०—बैराम।

बैरामा—अ० [हिं० बाह-बापु] वातप्रसत होना।

†अ०—बोराना।

बैरिस्टर—पु० [अं०] इंग्लैंड के उत्पन्न न्यायालयों में बहस करने की मान्यता प्राप्त करनेवाला अधिकारता या वकील।

बैरिस्टरी—स्त्री० [अं० बैरिस्टरी+हिं० ई (प्रत्य०)] बैरिस्टरी का काम या पेशा।

बैरी—वि० [सं० बैरी, वैर; इति] जिसका किसी से वैर हो।

पु० शत्रु।

बैरीमीटर—पु० [अं०] वायु के दबाव या मार का सूचक एक वैज्ञानिक उपकरण।

बैल—पु० [सं० बलिवर्द] १ गाय से उत्पन्न प्रसिद्ध नर चोगाया जो गाड़ी, हल आदि में जोता जाता है। २ लाक्षणिक अर्थ में, (क) बहुत बड़ा मूल्य व्यक्ति। (ख) परिश्रमी व्यक्ति। ३ रहस्य संप्रदाय में (क) शरीर (ख) त्रिगुण।

बैल-मृतनी—स्त्री० दे० 'गौमुत्रिका'।

बैलर—पु० [अं० व्यायलर] पीपे के आकार का लोहे का बड़ा देग जो माप से चलावाली कलमें में होता है।

बैलून—पु० [अं०] १ गुब्बारा। २ आज-कल वह बहुत बड़ा गुब्बारा जो विशिष्ट वैज्ञानिक अनुसंधानों आदि के लिए आकाश में उड़ाया जाता है; अथवा जिसके सहारे लोग कुछ दूर तक ऊपर आकाश में उड़ते हैं।

बैल्व—वि० [सं० बिल्व+अणु] १ बेल वृक्ष अथवा उसकी लकड़ी से सबंध रखनेवाली कलमें में होता है।

जिसमें बहुत से बेल के वृक्ष हो।

बैबागसी—पु०—बैबागस।

बैक—पु० [सं०] शिकार किये हुए पशु का मांस।

बैसबर—पु०—बैसतर (अतिन)।

बैस—स्त्री० [सं० वयस] १. वयस। वर। उमर। उदा०—बारी बैस गुलाब की, सीतल मनमय छेल।—रसनिधि। २. युवावस्था। जवानी।

फि० प्र०—बड़ना।

†पु०—बैसय।

पु० (किमी मुल पुरुष के नाम पर) क्षत्रियों की एक प्रसिद्ध शाखा जो अधिकतर कर्मीज से अवर्धे तक बनी है।

बैसाखा—स०=बैठना ।
 बैसाख—स्त्री० दे० 'कभी' (जुलाहों की) ।
 बैसाखाड़ा—पु० [हि० बैस+खाड़ा (प्रत्य०)] [वि० बैसाखाड़ी] अथक
 के दक्षिण-पश्चिमी मू-माय का नाम ।
 बैसाखाड़ी—वि० [हि० बैसाखाड़ा] बैसाखाड़े में होनेवाला ।
 स्त्री० बैसाखाड़े की बोली ।
 पु० बैसाखाड़े का निवासी ।
 बैसाखारा—वि० [सं० वयस+हि० वाळा (प्रत्य०)] [स्त्री० बैसाखारी]
 जवान । युवक ।
 पु०=बैसाखाड़ा ।
 बैसा—पु० [सं० वंश=बाँस] औजारों की मूठ या दस्ता । उदा०—बैसा
 लगी कुठार को . .।—बुद ।
 बैसाख—पु० [सं० वैसाख] बैस के बाद और जेठ के पहले का महीना ।
 वैसाख ।
 बैसाली—स्त्री० [सं० वैसाख] १ सोर वैसाख का पहला दिन । २ उक्त
 दिन मनाया जानेवाला त्योहार ।
 स्त्री० [सं० द्विषाली=दो षालाओवाला] १ वह डडा जिसे बमाल के
 नीचे रखकर लंगहे चलेते हैं । २ डडा ।
 बैसाखाना—स०=बैठाना ।
 बैसिका—पु०=बैसिक ।
 बैसाखा—स्त्री०=बैसाखा ।
 बँहरा—वि० [सं० बैर=मयानक] मयानक । विकट ।
 स्त्री० [सं० वायु] वायु । हवा ।
 बाँक—पु० [हि० बक, बाँक ?] ओढ़े की वह मुकली मोटी कील जो पुरानी
 बाल के दरवाजों में बूल का काम देती है ।
 बांगना—पु० दे० 'बहुगुण' ।
 बाँदा—पु० [?] घास-पात में रङ्गनेवाला एक प्रकार का छोटा कीड़ा ।
 बाँझरी—स्त्री०=बोहरी ।
 बाँझ—पु० [?] बाकबू के आम लगाने का पलौता ।
 बाँझी—स्त्री०=बाँझी ।
 बाँझनी—स्त्री०=बोनी (बाँझ) ।
 बाँझाई—स्त्री० [हि० बाँझा] बोने की क्रिया, डग, भाव या मजदूरी ।
 बाँझाना—स० [हि० बाँझा] बोने का काम दूसरे से कराना ।
 बाँझा—पु०=बकरा ।
 बाँझरा—पु०=बकरा ।
 बाँझरी—स्त्री०=बकरा ।
 बाँझला—पु०=बकला (छिलका) ।
 †पु०=बकरा ।
 बाँझा—पु० [हि० बाँक=बकरा] १. बकरे की खाल । २ चमड़े का बेल ।
 वि० मुर्छा । (पूरख) ।
 बाँकना—पु० [सं०] वह पात्र जिसमें घोड़े के खाने के लिए दाना आदि
 आलकर उसके गले में बाँध दिया जाता है ।
 बाँखारा—पु०=बूखारा ।
 बाँखरा—पु० [?] ऊँचे पहाड़ के बीचोबीच खोदकर बनाया हुआ रास्ता ।
 (दनेल)

बाँखरा—वि० [अं०] १. रूढ़ी । व्यर्थ का । २. कुपित । खाली ।
 ३. मूठा या नकली ।
 बाँखरा—पु० [?] घोड़े के पेट में होनेवाला एक तरह का बूल ।
 बाँख—पु० [?] घोड़े का एक भेद ।
 स्त्री० [?] पासें नामक बकरे की मादा ।
 बाँख—स्त्री० [फा० बाँख] चाक से बना हुआ मद्य । चाबल की धराब ।
 बाँ-बोस—स्त्री० [हि० बोना | बोलना] खेती-बारी । कृषि-कर्म ।
 बाँस—पु० [?] १ मारी होने की अवस्था या भाव । भार । २. भारी
 गट्टर । ३. भारी गट्टर का भार । वजन । ४. उतनी बस्तु जिसकी
 एक लेंप में ले जाई या ढोई जाती है । जैसे—भार बोस लकड़ी ।
 ५. लासणिक अर्थ में, ऐसा विकट और थम-साध्य कार्य जो भार-स्वरूप
 जान पड़ता तथा जिसे करने की रचि बिलकुल न हो ।
 मुहा०—बाँस उठाना—कोई कठिन काम करने का उत्तरदायित्व अपने
 पर लेना । बाँस उतारना—कोई विकट और थमसाध्य काम संपन्न
 करना अथवा उससे छुट्टी पाना ।
 बाँसना—स० [हि० बाँस] बाँस से युक्त करना । भार रखना । लादना ।
 जैसे—नाव या बूझाड़ी बाँसना ।
 बाँसला—वि०=बाँसिल ।
 बाँसा—पु० [?] वह कीटरी जिसमें राब के बोरे इसलिए नीचे ऊपर
 रखे जाते हैं कि धीरा या जूसी निकल जाय ।
 †पु०=बाँस (भार) ।
 बाँसाई—स्त्री० [हि० बाँसना+आई (प्रत्य०)] बाँसने या लादने का काम,
 डग, भाव या मजदूरी ।
 बाँसिल—वि० [हि० बाँस] १ अधिक बाँसवाला । भारी । वजनदार ।
 वजनी । २ जिस पर अधिक बाँस लदा हो । ३. (काम) जो विकट
 हो तथा जिसमें रचि न लगती हो ।
 बाँट—स्त्री० [अं०] १. नाम । नीका । २ जहाज ।
 पु० [?] टिड्डा नाम का कीड़ा ।
 बाँटा—पु० [सं० बूत, प्रा० बाँट=डाल, लट्ठा] [स्त्री० अल्पा० बाँटी]
 १ लकड़ी का वह मोटा टुकड़ा जो लजाई में हाथ को हाथ से अधिक
 का न हो । कुदा । २. किसी चीज का बड़ा टुकड़ा ।
 बाँटी—स्त्री० [हि० बाँटा] मास का छोटा टुकड़ा । विशेषतः ऐसा
 टुकड़ा जिसमें हड्डी भी हो ।
 मुहा०—बाँटी-बाँटी काटना—तलवार, छुरी आदि से धारी को काट
 कर सड़-सड़ करना । (किसी की) बाँटी बाँटी फड़कना—उड़दवा,
 पुष्टता, युवावस्था आदि के कारण धारी के सभी अंगो का बहुत अधिक
 चंचल होना ।
 †स्त्री०=टिड्डा ।
 बाँट—स्त्री० [देष०] सिर पर पहनने का एक आभूषण ।
 †स्त्री०=बीर (बल्ली) ।
 बाँडना—स०=डुबाना ।
 बाँझरी—स्त्री० [हि० बाँझी] तोंडी । नामि ।
 बाँझल—स्त्री० [देष०] एक प्रकार का पत्ती ।
 बाँझा—पु० [देष०] एक प्रकार की पतली लमी कली जिसकी तरकारी
 बनती है । मोबिया । बकरबट्टू ।

† पु० [सं० बोद्ध] अक्षर। (पूरज)
बोझी—स्त्री० [?] †. एक प्रकार की कोमल फली जिसका अक्षर और तरकारी बनती है। २. कौड़ी। कर्पादिका। ३. बहुत ही थोड़ा धन।
बोल—पु० [दि०] बोधो की एक जाति।
बोली [हि० बोला ?] गान की पहले वर्ष की उपज या खेती।
बोलल—स्त्री० [अ० बॉल्ल] †. काँच का लंबी गरदन का गहरा बरतन जिसमें द्रव पदार्थ रखा जाता है। शीशी। २. धाराज जो प्रायः बोललो में रखी है। जैसे—उन्हे तो हर बकल दो बोलल का नया रहता है।
मूहो—बोलल चढ़ाना—मद्य या शराब पीना।
बोललिया—वि०—बोली।
बोलली—स्त्री० [हि० बोलल] छोटी बोलल।
 वि० साधारण बोलल की तरह का कालापन लिये हरा।
 पु० उक्त प्रकार का हरा रस।
बोला—पु० [म० पीत] अंड का ऐसा बच्चा जिसपर अभी सवारी न होती हो।
बोबा—वि० बोदा। उदा०—निसेहें बोबा, बुद्धि बल मूला—जायसी।
बोबक—स्त्री० [देस०] अनुम या बर की एक जाति जिसमें कटि नहीं होते और जिसके केवल फल टंगाई के काम में आते हैं। इसके बीजों से तेल नहीं निकाला जाता।
बोबर—स्त्री० [?] बतली छठी।
बोबला—वि० बोदा।
बोबा—वि० [सं० अबोध] [स्त्री० बोदी] † जिसकी बुद्धि तीव्र या प्रखर न हो। कम-समझ। २. मट्टर। मुस्त। ३. जिसमें अधिक दुकता या क्षणित न हो। कमजोर। ४. कायर। डरपोक। ५. तुच्छ। निरुम्मा।
बोबापन—पु० [हि० बोदा। पन (प्रत्य०)] बोदे होने की अवस्था या भाव।
बोडव्य—वि० [म०√बुध् (ज्ञानना)। तजन्] †. जानने या ध्यान देने योग्य। २. जाग्रत करने योग्य।
बोडा (रूप)—पु० [सं०√बुध् + बुद्धि] नैयामिक।
बोय—पु० [सं० बुय्। पय्] † किसी के अस्तित्व, प्रकार, स्वरूप आदि का होनेवाला मानसिक मान। २. शब्दों के द्वारा होनेवाला किसी चीज या बात का ज्ञान। अर्थ। ४. तत्त्वही। धीरज। सात्वता।
बोधक—वि० [सं०√बुध्। गिबु—गबुल—अक] † बोध या ज्ञान करानेवाला। जतानेवाला। ज्ञापक।
 पु० [म०] शृंगार रस के हानों में से एक हाव जिसमें किसी संकेत या क्रिया द्वारा एक दूसरे को अपना मनोगत भाव जताया जाता है।
बोधपार्थ—वि० [सं०] (विषय) जिसका बोध हो सके। समझ में आने योग्य।
बोवन—पु० [म०√बुध्। गिबु। ल्युट्—अन] †. बोध या ज्ञान कराने की क्रिया या भाव। ज्ञापन। जताना। २. सोते हुए को जगाना। ३. अग्नि, दीपक आदि प्रज्वलित करना। ४. तेज या प्रबल करना। उदीपन। ५. मंत्र आदि सिद्ध करना या जगाना।
बोधन—सं० [सं० बोधन] † बोध या ज्ञान कराना। जताना।

२. कुछ कह-मुनकर सतुष्ट या शांत करना। समझाना-बुझाना। उदा०—मुक्ता गानि ससिस् स्वच्छ कहि कछु मन बोधत।—रत्ना०। ३. उदीपन या प्रज्वलित करना।
बोधनी—स्त्री० [सं० बोधन। डीप्] †. प्रबोधनी एकाग्रशी। २. विपयली।
बोधव्य—वि० [सं० बोडव्य] †. जिसका बोध प्राप्त किया जा सकता हो अथवा किया जाने को हो। २. जिमें किसी बात का बोध कराना जा सके या कराना जाय।
बोधि—पु० [सं०√बुध् + इन्] † एक प्रकार की समाधि। २. पीपल का पेड़।
बोधित—सं० कृ० [सं०√बुध् (जानना)। गिबु + क्त, गुण, इट्] जिसे बोध हो चुका हो।
बोधित—पु० [सं० कर्म० सं०] दे० 'बोधिवृत्'।
बोधितव्य—वि० [सं०√बुध्। गिबु + तव्य] जानने योग्य।
बोधिवृत्—पु० दे० 'बोधिवृत्'।
बोधिवृत्—पु० [सं० कर्म० सं०] बृद्धया में पीपल का वह वृक्ष जिसके नीचे बृद्ध को बोध हुआ था।
बोधिसत्त्व—पु० [सं० उपनि० सं०] वह जो बृद्धत्व प्राप्त करने का अधिकारी हो, पर बृद्ध न हो पाया हो। (बौद्ध)
बोधी (बिन्नु)—वि० [सं० बोध + इनि] जाननेवाला।
बोध्य—वि० [म०√बुध् (जानना)। षन्त्] जानने योग्य।
बोला—सं० [सं० बपन] †. बीज, पीपे आदि को इस उद्देश्य से जमीन में स्थापित करना कि वह बढ़े तथा फले-फूले। २. किसी बात का मूलपात करना। ३. ऐसा काम करना जिसका फल आगे चलकर दिखाई दे। उदा०—फलम बोली है अपने मान।—विनकर।
बोनी—स्त्री० [हि० बोना] † बोने की क्रिया या भाव। २. बीज आदि बोने का मौसम।
बोना—पु० [अभु०] [स्त्री० बोबी] † स्तन। धन। चुंबी। २. ऐसा छोटा बच्चा जो अभी माता का दूध पीकर रहता हो। ३. घर-गृहस्थी का साधन, विशेषतः टूटा-फूटा समान। अमह-अनमह। ४. बकी मठरी। मट्टर।
 वि० निरा मूर्ख। गावरी।
बोया—स्त्री० [फा० बू] † गध। बास। २. दुर्गांध। बद्ध।
बोर—पु० [हि० बोरना] † पानी आदि में बोरने अर्थात् दुबाने की क्रिया या भाव। जैसे—यौ बोर की रगार। २. मोता। डूबकी।
 फि० प्र०—देना।
 पु० [सं० वृत्क] † चर्दी या सोने का बना हुआ गोल और कोरदार चूँचक जो आभूषणों में गुंथा जाता है। जैसे—पांजव के बोर। २. मिर पर पहनने का एक गहना जिसमें मीनाकारी का काम होता है। इसे बीजू भी कहते हैं।
 पु० [?] † गडहडा। २. आहार। भोजन। (पूरज) ३. धर्मज्ञ। वर्ष।
बोरका—पु० [हि० बोरना] † मिट्टी की वह दवात जिसमें लकड़के काटिया घोलकर रखते हैं। २. दवात।
 † पु०—बुफा।

बोरका—स० [हि० बुझना] १. जल या किसी तरल पदार्थ में निमग्न करना। डूबाना। २. अच्छी तरह से तर करना। भिगोना।

३. दूरी तरह से बाँध या नष्ट करना। जैसे—कुल का नाम बोरका।
४. किसी चीज या बात में दूरी तरह से युक्त करना। उदा०—कपट बोरि बानी मुकुल बोल्लेज युगति सभने।—मुकुली।

बोरती—स्त्री० [हि० बोरती] मिट्टी का बरतन जिसमें आग रखकर जलाते हैं। अँगोठी।

बोरा—प० [स० पुर दोना या पत्र] [स्त्री० अस्या० बोरी] १ टाट का बना पैला जिसमें अनाज आदि कहीं ले जाने के लिए रखते हैं।
† प० [स० वरल्ल] घुसक। (दे० 'बोर')।

बोरबंदी—स्त्री० [हि० बोरा + बंद (करना)] १ अनाज बोरो आदि में भरकर बन्द करने का काम। २ अनाज आदि की विक्री का वह प्रकार जिसमें पूरे और भरे हुए बोरो ही बेचे जाते हैं, खोलकर फूटकर रूप में नहीं।

बोरिका—प० बोरका।
बोरिया—प० [फा०] १ चटाई। २ बिस्तर। बिछोना।

पद—बोरिया-ब्रवना-घर-गृहस्थी का बहुत थोडा-सा सामान।
मुहा०—(कहाँ से) बोरिया या बोरिया-बधना उठाना=चलने की तैयारी करना। प्रस्थान करना।

† स्त्री० बोरी (छोटा बोर)।
बोरी—स्त्री० [हि० बोरा] टाट की छोटी पैली। छोटा बोर।

बोरो—प० [म० बोरस] एक प्रकार का मोटा धान जो नदी के किनारे की सीढ़ में बोया जाता है।

बोरो-बाँस—प० [देस० बोरो + हि० बाँस] एक प्रकार का बाँस जो पूर्वी बंगाल में होता है।

बोरुआ—प० [जर०] मध्यवर्ग का ऐसा व्यक्ति जो पुरानी प्रथाएँ मानता हो, और अपने आपको निम्नवर्ग की तुलना में बहुत प्रतिष्ठित समझता हो तथा लोभी और स्वार्थी हो।

बोरा—प० [अ०] १ किसी स्थायी कार्य के लिए बनी हुई समिति। जैसे—**व्यवस्थितिकल बोर्ड**। २ माल के मामलों के फिसले या प्रबंध के लिए कहीं हुई समिति या समेती। ३. काराज की मोटी दस्तनी। गत।

बोल्ले—प० [हि० बोलना] १ बोलने पर मनुष्य के मुख से निकला हुआ लक्षक पद, वाक्य या शब्द। वाणी।
फि० प्र०—बोलना।

मुहा०—**बो बोल पड़ना**=धार्मिक दृष्टि से कुछ बुराई आदि का उच्चारण करके हुए साधारण रूप से लड़की का विवाह करा देना। जैसे—**कोई बच्चा लड़का मिले तो मैं भी इसके दो बोल पवकार छुट्टी पाऊँ**।
(किसी के काम में) बोल मारना=किसी को कोई बात अच्छी तरह सुनाओ और समझा देना। जैसे—**मुम तो उनके काम में बोल मार हो**।
क कही हुई बात। उक्ति। कथन। बचन। जैसे—**मुन्हारी बात क** की कोई माल है (अर्थात् मुन्हारी बात का कोई विश्वास नहीं)।
उदा०—(क) मुन रे डोल, बहू के बोल।—कहा०। (ख) परदेची हूर का मुख के बोल सैमाल।—लोक-गीत। ३. किसी की कही हुई बात का ऐसा नाम या महत्त्व जो उसकी प्रामाणिकता, दक्षिणवृत्ता आदि

का सूचक होता है। उदा०—पचन में मेरी पत रहे, सचियन में रहे बोल। साईं से सार्थी रहूँ, बाज बाज रे डोल।—लोकगीत।

पद—**बोल-बाला**=हर जगह होंबिवाली प्रविष्टा या सम्मान। जैसे—**सच्चे का बोला-बाला**, दूठे का मुँह काळा। (कहा०)

मुहा०—**(किसी का) बोलबाला रहना**=(क) बात की साहज बनी रहना। (ख) ऐसी प्रविष्टा या प्रशंसा बनी रहना कि हर जगह जीत और मान हो। जैसे—**सरकार का सदा बोलबाला रहे**। बोल बाला होना=प्रशंसा, भाष्य, मान-भरवाँ, यश आदि की वृद्धि होना।

(किसी का) बोल रहना=मान-भरवाँ या साहज बनी रहना। ३. चुमती या लगीत हुई अथवा ब्यंगपूर्ण उक्ति। ताना। बोली।
फि० प्र०—बुनाना।

मुहा०—**बोल मारना**=ब्यंगपूर्ण या चुमती हुई बात कहना। उदा०—**ननदिया री काहि मारे बोल**।—गीत। ४. अदब या संध्या-सूचक शब्द। जैसे—**सो बोल लखडू आये थे**, सो बार बार सब को बंट दिव। (स्थियाँ) ५. वे शब्द जिनसे गीत का कोई चरण या पद बना हो।

जैसे—**बस गीत के बोल है**।—बँसुरिया कौसी बजाईं श्याम।
मुहा०—**बोल बनाना**=सर्गीत में, गाने के समय किसी गीत के एक एक शब्द का कई बार अलग अलग तरह से बहुत ही कोमल और मुन्दर-त-पूर्वक नये नये रूपों में उच्चारण करना।

६. सर्गीत में, बाजों से निकलनेवाली अलग-अलग ध्वनियों के वे गठे या बँधे हुए शाब्दिक रूप जो विद्यार्थियों को सुगमतापूर्वक सिखाने आदि के लिए कल्पित कर लिये गये हों। जैसे—**सबले के बोल था बा धिन ता**; और सितार के बोल था बा चिर दारा आदि।

प० [देस०] एक प्रकार का सुगन्धित गोद जो स्वाद में कड़वा होता है।
बोल्लक—प० [देस०] जल-प्रमर। (हि०)

बोल-बाल—स्त्री० [हि० बोलना + बालना] १. मिलने-जुलने या साथ रहनेवाले लोगों में होनेवाली बात-नीत। बार्तालाप। जैसे—**आज-कल उन दोनों में बोल-बाल बढ़ है**। २. वह सब-सूचक अवस्था या स्थिति जिसमें परस्पर उलट प्रकार की बात-नीत होती है।

३. बात-नीत करने का रंग या प्रकार। जैसे—**बोल-बाल से तो वे पजाबी ही हो जा पड़ते हैं**। ४. साहित्यिक क्षेत्र में, मुन्हारी से भिन्न वे विविध गठे हुए पद जिनका प्रयोग कुछ निश्चित प्रकृतिक अर्थ में ही होता है और जिनके रूप में कभी किसी प्रकार का परिवर्तन या विकार नहीं होता। जैसे—(क) मुझे बर है कि कहीं कुछ उधीस-बीस (अर्थात् कोई सामान्य अनिष्ट कारक बात) न हो जाय। (ख) ये वे घर बा-खोरकर त्यागी हो गये हैं। (ग) उन लोगों में खूब तू-तू-मै-मै हुईं। (घ) आज-कल तो उन दोनों में साहज-सलामत भी बढ़ है। उक्त वाक्यों में उधीस-बीस, घर-बार, तू-तू-मै-मै और साहज-सलामत पद बोल-बाल के हैं।

बिबोब—ऐसे अक्षरों पर उधीस-बीस की जगह बीस-इक्कीस घर-बार की जगह मकान-बार, तू-तू-मै-मै की जगह हम-हम तुम-तुम और साहज-सलामत की जगह जाना-सलामत या साहज-रचित्य सटीले पदों का प्रयोग नहीं हो सकता। उर्बू में इसी को 'रोजमर' कहते हैं।

बोल्ला—प० [हि० बोलना] १. मान कराने और बोलनेवाला स्वयं अर्थात् बाल्या। उदा०—**बोल्ले तो जान के पहुचान के**। बोल्ला तो कुछ

कहें सो तान ले । २ जीवनी-वापित या प्राण । ३. शार्थक बाते कहनेवाला प्राणी, अर्थात् मनुष्य । ४ हुकम ।

बि० १ बोलनेवाला । जैसे—बोलला सिनेमा । २. बोल-बाल मे चतुर । वाक्-पटु । ३. बहुत बोलनेवाला । बहुराशी ।

बोल-बाल-स्त्री० [हि०] सर्गीत मे ऐसी तान जिसमे विस्तृत स्वरो के स्थान पर उनके नामो के मक्षिण रूपो का उच्चारण होता हो । सरयाम से युक्ततान ।

बोलीली-स्त्री० [हि० बोलना] बोलने की शक्ति । वाक् । वाणी । २. बोलने मे अत्यधिक पटु, जीम ।

मुहा०—बोलीली बह होना या मारी जाना=बहुत अधिक बहबह करना बह होना । जैसे—मुझे देखते ही उनकी बोली बह हो गई ।

बोलनहार-वि० [हि० बोलना+हार (प्रत्य०)] बोलनेवाला । १० आराम जिसन बोलने की शक्ति प्राप्त होती है ।

बोलाभा-अ० [स० बोल, प्रा० बोल] १. शब्द, शक्ति आदि का साधारण स्वर मे (गाने, बिल्लाने आदि से भिन्न) उच्चारित करना । जैसे—किसी की जय या अयजयकार बोलाता ।

मुहा०—बोल उठना=एकाएक कुछ कहने लगना । मूंह से सहसा कोई बात निकाल देना । जैसे—बीच मे तुम क्यों बोल उठे ?

२. शब्दो द्वारा कहकर अपना विचार प्रकट करना । जैसे—मुठ बोलने मे उन्हें लज्जा नहीं आती । ३. किसी से बात-चीत करना और इस प्रकार उससे आपसवारी का संबंध बनाये रखना । जैसे—उनके क्षमा मंगिने पर ही मैं उनसे बोलूंगा ।

पद—बोलाभा बालना=परस्पर बातचीत करना ।

३. किसी का नाम आदि लेकर इसलिए बिल्लाना जिसमे वह सुन सके । उदा०—बाल सजा ठेके चड़ि बोलत बार बार ली नाम ।—सूर ।

मुहा०—(किसी की) बोल पठाना=किसी के द्वारा बोलना या बला भेजना ।

५. किसी प्रकार की छेड़-छाड़ या रोक-टोक करना । किसी रूप मे बाधक होना । जैसे—तुम चुप-चाप चले जाओ, कोई कुछ नहीं बोलोगा ।

६. मस्तुओं के मन्थ मे, उनका किसी प्रकार का शब्द करना । जैसे—सिक्के का टाटन बोलना । ७. किसी चीज का विशेष रूप से अपनी उपस्थिति जतलाना । जैसे—खीर मे केसर बोल रहा है । ८. इतना जीर्ण-शीर्ण होना कि काम मे आ सकने योग्य न रहे जाय ।

सयो० कि०—जाना ।

मुहा०—(व्यक्ति का) बोल जाना= (क) मर जाना । ससार में न रहे जाना । (बाजारू) (ख) किसी के सामने बिलकुल दब या हार जाना । (ग) विवाहिया हो जाना । जैसे—सट्टे मे बड़े बड़े धनी बोल जाते हैं । (पदायं का) बोल जाना—(क) निशेध या समाप्त हो जाना ।

बाकी न रहे जाना । सूक जाना । (ख) इतना निकमना, पुराना या रूढ़ी हो जाना कि उपयोग मे आने योग्य न रहे गया हो । जैसे—यह कुरता तो अब बोल गया है ।

स० १. मजल पूरी होने पर मजिदपूर्वक कुछ करने की प्रतिज्ञा करना । जैसे—रुक रुएए का प्रसाद बोलो तो तुम्हारी कामना पूरी हो । १२. आवाज देकर पास बुलाना । उदा०—मुनिवर निकट बोल बैठोये ।

—मुसली ।

सयो० कि०—पठाना ।

३. आज्ञा या आदेश देकर किसी को किसी काम के लिए नियुक्त करना । जैसे—आज पहले पर उसकी नौकरी बोलो गई है ।

बोलपट—पू० [हि० बोलना+पट० पट] बहु बलचित्र जिसमें पात्रो के कथोपकथन गीत आदि सुनाई पड़ते हो । (टीकी)

बोलबाला—पू० [हि० बोल+का० बाला=जैना] १. बचन या बात जिसे सबोपरि महत्त्व प्राप्त हुआ हो । २. ऐसी स्थिति जिसमे किसी विशिष्ट व्यक्ति की बात को सबसे अधिक आदर मिलता या प्राप्त होता हो ।

बोलबाला—स० [हि० बोलना का प्र०] १. किसी को बोलने मे प्रवृत्त करना । २. उच्चारण करना । जैसे—पहाड़े बोलवाना ।

† स० [हि० बुलाना] बुलवाना ।

बोलसर—स्त्री०=मौलसिरी । पू० [?] एक प्रकार का घोड़ा ।

बोलासा—पू० [हि० बोला+शश] बहु अश जिसमे किसी को देने का वचन दिया गया हो ।

बोलबाली—स्त्री० =बोलाबाल ।

बोलासा—स०=बुलाना ।

बोलासा—पू०=बोलाबा ।

बोली-स्त्री० [हि० बोलना] १. बोलने की क्रिया या भाव । २. किसी प्राणी के मूंह से निकला हुआ शब्द । मूंह से निकली हुई आवाज या बात । वाणी । जैसे—आवाजरो या बच्ची की बोली । ३. ऐसी बात या वाक्य जिसका कुछ विशिष्ट अभिप्राय या अर्थ हो । ४. किसी भाषा की बहु शाखा जो किसी छोटे क्षेत्र या वर्ग मे बोली जाती हो । स्थानिक भाषा । विभाषा । जैसे—अवधी, मैथिली, ब्रज आदि की भिन्नता आधुनिक हिंदी की बोलियों मे ही होती है ।

कि० प्र०—बोलाता ।

५. विशिष्ट अर्थवाली कोई ऐसी उचित या कृपण जिसमे किसी को चिढ़ाने या लज्जित करने के लिए कोई कूट या गूढ़ ध्वय मिले हो । पर—बोली ठोली । (देखें)

मुहा०—बोली या बोली ठोली छंड़ना, बोलना या धारना—किसी को चिढ़ाने के लिए अत्यपूर्ण बात कहना ।

६. मीलाम के द्वारा बीजो के बिकने का वह दाम जो कोई खरीददार अपनी ओर से लगाता है । जैसे—उस मकान पर हमारी मो पांच हजार रुपये की बोली हुई थी ।

कि० प्र०—बोलाता ।

बोली ठोली—स्त्री० [हि० बोली । अणु० ठोली] ताने वा ध्वय से मरी हुई बात । बोली । (देखें)

कि० प्र०—छोड़ना ।—बोलाता ।—धारना ।—सुनाना ।

बोलीधार—पू० [हि० बोली+धा० धार] बहु अशमी जिसे जोतने के लिए खेत यों ही जवांनी कहकर दिया जाय, कोई लिखा-पढ़ी न की जाय ।

बोललक—पू० [स० बोल्ल ; कण्] बहु जो बहुत बोलता हो ।

बोल्लाह—पू० [देस०] बोरो की एक जाति ।

बोल्लोचिक—पू० [कृती] रुस की बोल्लोचिक दल, आधुनिक कम्युनिस्ट दल का सदस्य ।

बोल्लोचिकी—पू० [रूसी] मार्क्सवाद के सिद्धांतो का समर्थक एक रूसी

राजनीतिक दल जिसका नाम सन् १९१८ से कम्युनिस्ट पार्टी हो गया है।

बीजोत्पत्ति—पुं० [स्त्री] मातृके के सिद्धांतों के अनुसार शासन व्यवस्था अपनाते का वह विचार या सिद्धान्त जिसमें राष्ट्र की सारी प्रजा और संघर्ष पर शासन का पूरा पूरा अधिकार होता है।

बीजना—स०—बीना।

बीजार्थ—स्त्री०—बीआर्थ।

बीजाना—स० [हिं० बीना का प्रे०] बीने का काम दूसरे से कराना।

बोह—स्त्री० [हिं० बीर, या स० बाह] डुबकी। पोता।

क्रि० प्र०—देना।—लगाना।—लेना।

बोहडा—पुं०—बड (बरगद)।

बोहप्या—पुं०—बोहित।

बोहन—अ० [हिं० बोह] डुबकी लगाना।

स० [स० अयन, हिं० बीना का पुं० रूप] उत्पन्न करना। पैदा करना।

उदा०—फटिक सिला के बाद विसाल मन विस्मय बोहत।—रलना।

बोहनी—स्त्री० [स० बोधन—जगना] १. दुकान खुलने अथवा दुकान पर दीया जलाने पर या फेरीवाले की होनेवाली पहली चिकी। २. उक्त चिकी से प्राप्त होनेवाला धन। ३. लाक्षणिक अर्थ में, कोई काम आरंभ करते ही होनेवाली प्राप्ति या सफलता।

बोहनी बडा—पुं० [हिं०] किसी चीज की पहले-पहले होनेवाली चिकी और उसमें मिलनेवाला धन।

बोहरा—पुं० [हिं० अथवाहरिया—व्यापारी] १. गुरजर और महाराष्ट्र राज्यों में रहनेवाले एक प्रकार के मुसलमानों का बहुधा व्यापार करते हैं। २. रोजगारी। व्यापारी।

बोहारना—स०—बुहारना।

बोहारी—स्त्री०—बुहारी (भाइ)।

बोहित—पुं० [स० बोहिय] १. नाय। २. जहाज।

बोहिय—पुं०—बोहित (जहाज)।

बोहिया—स्त्री० [दंश०] एक तरह की काली पत्तीवाली चाय।

बोहियाना—स०—बहाना।

बोपा—पुं० [अनु०] बेवकूफ। मूर्ख।

† पुं०—बोपा।

बोष—स्त्री० [स० बोष्ट—वृत्, टहनी] १. बूल की वह टहनी जो दूर तक ठोरी के रूप में गई हो। २. बेल। लता।

बोडना—अ० [हिं० बोड़] १. लता की मंति बड़ना। २. टहनी का बड़कर फैलना।

बोडर—पुं०—बवडर।

बोड़ी—स्त्री० [हिं० बोड़] १. पीथो या लताओं के वे कच्चे फल जो सार रहित होते हैं। बोडा। जैसे—मदार या सेमल के बोड़ी। २. छीनी। फली।

बीजाना—अ० [स० वायु, हिं० वाउ+आना (प्रत्य०)] १. सपने में निरर्थक बातें कहना। स्वप्नवाक्या में प्रलाप करना। २. पागलों की तरह व्यर्थ की बातें बकना। बड़बडाना।

बीजल—वि० [हिं० बीजलाना] १. बीजलाया हुआ। २. पागल। सनकी।

बीजलाना—अ० [हिं० वाउ+सं० स्खलन] १. आवेश या क्रोध में आकर

अड-अड बकना। २. होषा-हूषा में न रहकर पागलों का-सा आचरण या व्यवहार करना।

बीसा—स्त्री० [सं० वायु+स्खलन] हवा का तेज झोका जो वेग में आंभी से कुछ हलका होता है।

बीछाड़ी—स्त्री०—बीछार।

बीछारा—स्त्री० [सं० वायु+छण] १. वायु के झोक से वर्षा की तिरछी आती हुई बूंदों का समूह। बूंदों की झड़ी जो हवा के झोक से तिरछी गिरती हो। झटास।

क्रि० प्र०—आना—पड़ना।

२. उक्त प्रकार या रूप से होने वाला बहुत-सी चीजों का पात।

जैसे—गोलियों या बेलों की बीछार। ३. बहुत अधिक सख्या में लगा-तार किसी वस्तु का उपस्थित किया जाना। बहुत सा देते जाना या सामने रखते जाना। झड़ी। जैसे—लड़के के ब्याह में उसने शय्यों की बीछार कर दी। ४. किसी के प्रति लगातार कही जानेवाली व्यंग्यपूर्ण या लगती हुई बातों की झड़ी। आक्षेप से युक्त करके कही जानेवाली बातें।

जैसे—उनके माथप में आधुनिक राजनीतिक नेताओं पर खूब बीछार की।

क्रि० प्र०—छूटना।—छोड़ना।—पड़ना।

बीड़ना—अ०—बीरना।

बीड़म—पुं० [?] पागल। सनकी।

बीड़म—वि० [सं० वायु, हिं० वाउर+हा (प्रत्य०)] [स्त्री०

बीड़ही] बाबला। पागल।

बीड़ी—स्त्री० [?] १. जमीन की एक माप। २. कोड़ी का बीसवां भाग।

बीड़—वि० [सं० बुड़+अणु] १. बुड़-सबधी। २. बुड़ द्वारा प्रचरित। जैसे—बोड़ मत। ३. योमन बुड़ के धर्म का अनुयायी।

बीड़ धर्म—पुं० [सं० कर्म सं०] बुड़ द्वारा प्रवर्तित धर्म।

बीड़क—वि० [सं० बुड़ या बुड़ि+उत्-दक] १. बुड़-सबधी। बुड़ि का। २. बुड़ि द्वारा सहण किये जाने के योग्य। (इन्दलेकनुअल)

बीध—पुं० [सं० बुध+अणु] बुध का पुत्र। पुरूरवा।

बीना—पुं० [सं० वायन] [स्त्री० बीनी] बहुत ही छोटे कद का आदमी।

बीनी—स्त्री०—बीनी (बीआर्थ)।

बीर—पुं० [सं० मुकुल, प्रा० मुउड] आम की मजरी। मोर।

वि० दे० 'बीरत' (पागल)।

बीरई—स्त्री० [हिं० बीराना] पागलपन। सनक।

बीरना—अ० [हिं० बीर+ना (प्रत्य०)] बीर से युक्त होना।

बीरहा—वि० [हिं० बीरा+हा (प्रत्य०)] [स्त्री० बीरही] पागल। विक्षिप्त।

बीरा—वि० [सं० वायु, प्रा० वाउड, पुं० हिं० वाउर] [स्त्री० बीरी] १. बाबला। पागल। विक्षिप्त। २. भोला-भाला। सीधा-मादा। ३. गुणा। (स०)।

बीरार्थ—स्त्री० [हिं० बीरा+र्थ] बाबलापन। पागलपन।

बीराना—अ० [हिं० बीरा+ना (प्रत्य०)] १. पागल हो जाना। मनक होना। विक्षिप्त हो जाना। २. विवेक आदि से रहित होकर उन्मत्त होना।

सं १. किसी को बावला या पागल बनाना। २. बेचकूफ बनाना।
अ०=बीरना।

बीराह—वि० [हि० बीरा] बावला। पागल। सनकी।

बीरी—स्त्री०=बावली।

वि० हि० 'बीरा' का स्त्री०।

बीलझा—पु० [हि० बहु लझ] सिकड़ी के आकार का सिर पर पहनने का एक गहना।

बीलसिरी—स्त्री०=मीलसिरी।

बीलाना—अ०, सं०=बीराना।

बीसाना—अ० [म० वस् रहना] १ मोग-विकास करते हुए आनन्द लेना। २ उन्मत्त करना। बड़ना।

बीहर—स्त्री०=दृष्ट (बयू)।

†पु०=अवधार।

बीहरना—स्त्री० [स० व्यवहार-लेन-देन+गत] सूद पर रुप उधार देने का व्यवसाय। (ब्रज०)

बीहरा—पु० [हि० व्यवहरिया] कर्ज देनेवाला महाजन। सहरकार। व्यवहरिया।

बीहिका—पु०=बीहित (जहाज)।

बर्ग्या—पु०=व्यय।

बर्गजव†—पु०=व्यजन।

बर्गिता—पु०=व्यवित।

बर्जन—पु०=व्यजन।

ब्यतीतना—सं० [स० ब्यतीत+हि० ना (प्रत्य०)] ब्यतीत होना। गुजरना। बीतना।

ब्यथा†—स्त्री०=व्यथा।

ब्यथिता†—वि०=व्यथित।

ब्यलीका†—वि०=व्यलीक।

ब्यवसाय†—पु०=व्यवसाय।

ब्यवस्था†—स्त्री०=व्यवस्था।

ब्यवहरिया—पु० [हि० व्यवहार] वह महाजन जो सूद पर रुप उधार देता हो।

ब्यवहार—पु० [म० व्यवहार] १ सूद पर रुपयों का किया जानेवाला लेन-देन। महाजनी। २ उक्त प्रकार के लेन-देन का लगाव या सम्बन्ध ३ आपस में होनेवाला आत्मीयता का बरताव। व्यवहार। ४ दे० 'व्यवहार'।

ब्यवहारी—पु० [स० व्यवहार] १. व्यवहरिया। २. महाजनी सूद पर रुप उधार देने का काम। ३. वह जिसके साथ मैत्री संबंध हो।

ब्यसना†—पु०=व्यसन।

ब्यसनी†—पु०=व्यसनी।

ब्यसत—पु० [म० व्याज] १ वह धन जो ऋण लेनेवाले को मूल धन के अतिरिक्त देना पड़ता है। उधार दिये हुए रुपयों का सूद। बृद्धि।

कि० प्र०=जोड़ना।—फैलाना।—छानना।

२ दे० 'व्याज'।

व्याज खोर—पु० [हि० व्याज+फा० खोर] वह जो सूद पर रुपया कर्ज दे। व्याज की कमाई खानेवाला।

व्याज—वि० [हि० व्याज] १. व्याज-संबंधी। २. व्याज अर्थात् सूद पर लगाया हुआ (धन)।

व्याधा†—पु०=व्याध।

व्याधा†—स्त्री०=व्याधि।

व्याधा†—स्त्री०=व्याधि।

व्यात—पु० [हि० व्याना] मादा पशुओं के गर्भव में, प्रसव करने की क्रिया या माव।

पुं०=व्यापन (वर्णन)।

व्याना—सं० [स० बीज, हि० विया+ना (प्रत्य०)] मादा पशुओं का सन्तान प्रसव करना। बच्चा जनना।

अ० मादा पशुओं में सन्तान का प्रसव होना।

†अ०=व्याहला।

व्यापका†—वि०=व्यापक।

व्यापना—अ० [स० व्यापन] १. किसी वस्तु या स्थान में इस प्रकार फैलना कि उसका कोई अंश बाकी न रह जाय। किसी स्थान में पूरी तरह से भर जाना। व्याप्त होना। जैसे—कर्मयोग का घर घर व्यापना। २. चारों ओर से घेरना। ३. इस प्रकार प्रयत्न होना कि किसी दूसरी चीज का प्रभाव स्पष्ट रूप में दिखाई दे। जैसे—शीतल में गरमी व्यापना। ४. मन में किसी बात की अनुमति या ज्ञान होना। उदा०—यह समा मोहिं निस दिन व्यापै, कोई न कह समजावै।—बबीर।

सयो० कि०=जाना।

व्यापारी—पु०=व्यापार।

व्यापारी†—पु०=व्यापारी।

व्यार—स्त्री०=बयार (हवा)।

व्यारी†—स्त्री० [स० विहार?] =व्यारू (रात का भोजन)।

व्यारू†—पु० [स्त्री० व्याली] =व्याल (संप)।

पु०=व्याल (सिंह)।

व्यारू—स्त्री०=व्यारू।

व्यासु—पु० [म० विहार?] संघा समय किया जानेवाला भोजन।

व्यार—पु० १. =व्याह। २. व्याज।

व्याह—पु० [स० विवाह] देस, काल और जाति के नियम और प्रथा के अनुसार वह रीति या रस्म जिससे स्त्री और पुरुष में पति-माली का संबंध स्थापित होता है। पाणि-ग्रहण। विवाह।

मुहा०—व्याह रचाना-विवाह सम्बन्धी उत्सव तथा कृत्य की व्यवस्था करना।

व्याहता—वि० [स० विवाहित] (स्त्री) जो व्याह कर लाई गई हो। रमेली से निम्न।

पु० स्त्री का विवाहित पति।

व्याहना—सं० [स० विवाह+ना (प्रत्य०)] [वि० व्याहता] विवाह का सम्बन्ध स्थापित करना। व्याह करना। जैसे—किसी की लड़की के साथ अपना लड़का व्याहना।

कि० प्र०=हालना।—देना।

व्यांगा†—पु० [देश०] रापी की तरह का लकड़ी का एक जोहार जिससे चमार चमड़ा रगड़कर मुल्लाते या सीधा करते हैं।

व्यांचना—अ० [सं० विवृणुन, प्रा० विवृचन] नस का अपने स्थान से

हुट-बड़ या जिसक जाना जिसके फलस्वरूप अंग या अंगों में पीड़ा और सूजन होने लपती है।

क्रि० प्र०—जाना।

श्रींवी—स्त्री० [हि० श्रींविना] उलटी। बमन। की।

श्रींवी—स्त्री० [हि० श्र्योतना] १. श्र्योतने की क्रिया, डग, माव या व्यवस्था। जैसे—कपड़े की श्र्योत, काम की श्र्योत।

पद—हतर-श्र्योत।

क्रि० प्र०—करना।—बैठना।—बैठाना।

मुहा०—श्र्योत खाता—शक्ति, साधना, सामग्री आदि के विचार से ऐसी अवस्था या स्थिति होना जिसमें काम ठीक तरह से और पूरा हो सके। जैसे—जहाँ तक श्र्योत खाये वही तक कोई काम (या लवच) करना चाहिए। श्र्योत फलना—श्र्योत खाना।

२. पहनने के कपड़े बनाने के लिए कपड़े को काट-छाँटकर और जोड़ या सीकर तैयार करने की क्रिया या भाव। जैसे—इस कपड़े में कुदरे और टोपी की श्र्योत नहीं बैठती।

क्रि० प्र०—बैठना। बैठाना।

३. पहनने के कपड़ों की काट-छाँट का डग। तराश। जैसे—इस बार किसी और श्र्योत की कमीज सिलवानी चाहिए। ४. कार्य-साधन की उपयुक्त प्रणाली। डंग। तरोका। विधि। ५. उपाय। तरकीब। युक्ति। क्रि० प्र०—निकलना।—निकालना।—बनना।—बनाना।—बैठना।—बैठाना।

६. किसी काम या बात का आयोजन या उपक्रम। तैयारी। ७. इस्तजाम। प्रबंध। व्यवस्था।

क्रि० प्र०—बाँधना।

८. कोई काम या बात होने का अवसर या समय। नीबत। ९. विस्तृत विवरण। श्र्योरा। हल। उदा०—बलि बामन को श्र्योत सुनि को बलि तुमहि पत्थाय।—बिहारी।

श्र्योतना—स० [?] १. कपड़े को युक्ति-पूर्वक काटने और सीने की क्रिया या भाव। २. मारना। पीटना। ३. मार डालना। (बाजाऊ)

श्र्योताना—स० [हि० श्र्योताना का प्रे०] दरजी से नाप के अनुशास कपड़ा कटाना।

श्र्योपारी—पु०—व्यापार।

श्र्योपारी—पु०—व्यापारी।

श्र्योपन—स्त्री० [हि० श्र्योपना] १. श्र्योपने अर्थात् सुलझाने, तैयारने की क्रिया या डंग। २. विवरण या श्र्योपे से युक्त कही जानेवाली बात। ३. दे० 'श्र्योरा'।

श्र्योरना—स० [स० विवरण] १. श्र्योरवार कोई बात बतलाना। २. उलझने हुए बालों या सूतों को सुलझाना। ३. (किसी बात के सब अंगों पर) अच्छी तरह विचार करना। साधना—समझना।

श्र्योरा—पु० [हि० श्र्योरना] १. किसी बटन के अंतर्गत एक एक बात का उल्लेख या कथन। विवरण से युक्त कथन या वर्णन। विस्तृत वृत्तान्त। उपसील। २. बीच में पड़ने या होनेवाली कोई ऐसी बात जो अपनी समझ में न आती हो। उदा०—बैद कइ श्र्योरनि बहै श्र्योरो कीन विचार।—बिहारी।

पद—श्र्योरवार।

२. किसी विषय के अंग-असंग से संबंध रखनेवाली भीतर की छारी बातें। किसी बात को पूरा करनेवाला एक एक खंड। जैसे—जो बड़ी बड़ी रकमें खर्च हुई हैं, उनका श्र्योरा भी जाना चाहिए।

३. पूरा वृत्तान्त। सारा हल।

श्र्योरबाक—वि० [हि०+फा०] [माथ० श्र्योरबाजी] १. युक्तिपूर्वक काम करनेवाला। २. पूर्वी। बालक।

श्र्योरबाजी—स्त्री० [हि०+फा०] बालाकी। वृत्तता।

श्र्योरबार—वि० [हि० श्र्योरा+बार (प्रत्य०)] एक एक बात के उल्लेख के साथ। विस्तार के साथ। विवरण-युक्त।

श्र्योसाथ—पु०—व्यवसाय।

श्र्योहर—पु०—व्यवहार।

स०—व्यवहारा।

श्र्योहरा—पु०—व्यवहरिया।

श्र्योहरिया—पु०—व्यवहरिया।

श्र्योहार—पु०—व्यवहार।

श्र्योहर—पु०—श्र्योहर।

श्र्योहरिया—पु०—व्यवहरिया।

श्र्योहार—पु०—व्यवहार।

श्र्यं०—पु०—श्र्यं० (समुह)।

श्र्यं०—पु०—श्र्यं०।

श्र्यं०—अ० [सं० श्र्यं०] गमन करना। चलना।

श्र्यं०—स्त्री० [सं० श्र्यं०] एक प्रकार का आम जिसका पेड़ लता के रूप में होता है।

पु० उक्त पेड़ का फल।

श्र्यं०—पु० [सं०+अथ (बोधना)+तन्, श्र्यं०] १. सूँद। २. आक। मदार। ३. शिब। ४. शिवा। ५. शिवा। ६. शिबस। ७. शोड़ा। ८. श्लश की जड़।

७. एक प्रकार का रोग।

श्र्यं०—पु० १. 'श्र्यं०'।

श्र्यं०—पु० १. 'श्र्यं०'। २. 'श्र्यं०'।

श्र्यं०—पु० [अं०] बुधवा।

श्र्यं०—पु०—श्र्यं०।

श्र्यं० (१)—पु० [सं०+वृत्+मनिन्, नकारस्य अकार; रत्वम्] १. वेदांत धर्मन के अनुसार बड़ एक मात्र चेतन, नित्य और मूल सत्ता जो अक्षर, अनंत, अनादि, निर्गुण और सत्, चिन् तथा आनंद से युक्त कही गई है।

विशेष—साधारणतः यही सत्ता सारे विश्व या सृष्टि का मूल कारण मानी जाती है। परन्तु अधिक सम्मीर दार्शनिक दृष्टि से यह माना जाता है कि यही अणु का निमित्त भी है और उपादान भी। इसी आधार पर यह अणु उस ब्रह्म का चित्रत (रेखे) मात्र माना जाता है, और कहा जाता है कि ब्रह्म ही सत्य है; और बाकी सब मिथ्या या उसका आभास मात्र है। प्रत्येक तत्त्व और प्रत्येक वस्तु के कण कण में ब्रह्म की श्र्यंति मानी जाती है। और कहा जाता है कि अत या नाश होने पर सबका इसी ब्रह्म में विलीन हो जाता है।

२. ईश्वर। परमात्मा। ३. उक्त के आधार पर एक की सत्ता का सूचक पद। ४. अंतरात्मा। चिन्तक। जैसे—हमारा ब्रह्म बहै

जाने की गद्दी कहता। ५. ब्राह्मण। (विशेषतः समस्त पदों के आरंभ में) जैसे—ब्रह्मबोधी, ब्रह्महत्या। ६. ब्रह्मा का वह रूप जो उसे समस्त पदों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—ब्रह्म-कव्यका। ७. ऐसा ब्राह्मण जो मर कर जन्म हो गया हो। ब्रह्म-राक्षस।
मूहो-—(किसी को) ब्रह्म मनना—किसी पर ब्राह्मण प्रेत का आविर्भाव होना। ब्राह्मण प्रेत से अभिमुख होना। ८. वेद। ९. फलित ज्योतिष में २७ योगों में से २५वाँ योग जो सब कार्यों के लिए शुभ कहा गया है। १०. गगीत में ताल के चार मुख्य भेदों में से एक।

ब्रह्म-कव्यका—स्त्री० [सं०] १ ब्रह्मा की कव्या; सरस्वती। २ ब्राह्मी नाम की बूटी।

ब्रह्मकर्म (नं०)—पुं० [सं० मध्य० सं०] १ वेद विहित कर्म। २ ब्राह्मणों के लिए विहित कर्म।

ब्रह्म-कव्य—वि० [सं० ब्रह्मन् + कव्यप्] जो ब्रह्म के समान हो। ब्रह्म तुल्य।

पुं० [सं० तं०] उतना काल या समय जितने में एक ब्रह्म का अस्तित्व रहता और कार्य होता है।

ब्रह्म-काण्ड—पुं० [सं० मध्य० सं०] तूत का पेड़। शहतूत।

ब्रह्मभ्रम—पुं० [सं०] ब्राह्मण और क्षत्रिय से उत्पन्न एक जाति। (विष्णु-पुराण)

ब्रह्म-मति—स्त्री० [सं० सं० तं०] १ मरने पर ब्रह्म में विलीन होने की अवस्था, अर्थात् मुक्ति। मोक्ष। २ प्रायः साम्प्रदायियों के सबंध में उनके देहावसान या मृत्यु का वाचक पद।

ब्रह्मगौड—स्त्री०—ब्रह्म-प्रथि।

ब्रह्म-प्रथि—स्त्री० [सं० सं० तं०] यशोपवीत या जनेऊ के घेरे में लगाई जानेवाली मुख्य गौड। ब्रह्मगौड।

ब्रह्म-घातक—वि० [सं० सं० तं०] ब्राह्मण की हत्या करनेवाला।

ब्रह्म-घातिनी—स्त्री० [सं० ब्रह्मन् + घातिनि। डीप्, उप० सं०] रजस्वला स्त्री की वह सजा जो उसे रजस्वला के दूसरे दिन प्राप्त होती है।

ब्रह्मवादी (तिन्) —वि० [सं० ब्रह्मन् + ह्वन् + घिनि।] [स्त्री० ब्रह्म-घातिनी] जिनमें ब्राह्मण की हत्या की हो।

ब्रह्म-धोय—पुं० [सं० सं० तं०] १ वेद-ध्वनि। २ वेद-गाय।

ब्रह्म-चक्र—पुं० [सं० मध्य० सं०] १. सत्कार चक्र। (उपनिषद्) २ एक तरह का मायावी चक्र।

ब्रह्मचर्य—पुं० [सं० सं० तं०] १ भारतीय आर्यों की वह अवस्था तथा पद जिसमें विद्यार्थी विशेषतः ब्राह्मण विद्यार्थी को वेदों का अध्ययन करना पड़ता, सब प्रकार के ससारिक बंधनों से दूर रहकर सात्विक जीवन बिताना पड़ता और अपने वीर्य को अशुद्ध रखना पड़ता है। २ अष्ट-विध मैथुनों से बचने का प्रथम। ३ योग में एक प्रकार का यम। वीर्य को रक्षित रखने का प्रतिबन्ध। मैथुन से बचने की साधना।

ब्रह्मचारिणी—स्त्री० [सं० ब्रह्मन् + चर् + घिनि, वृद्धि, डीप्] १ ब्रह्मचर्य प्रथम का पालन करनेवाली स्त्री। २ सरस्वती। ३. दुर्गा।

४ ब्राह्मी बूटी।

ब्रह्मचारी (रिप्) —पुं० [सं० ब्रह्मन् + चर् (करना) + घिनि, दीर्घ, नद्योप] [स्त्री० ब्रह्मचारिणी] वह व्यक्ति जो ब्रह्मचर्यमायम में हो।

ब्रह्मछिन्न—पुं०—ब्रह्म-रक्षे।

ब्रह्मज—वि० [सं० ब्रह्मन् + जन् (पैदा करना) : ड] जो ब्रह्मा से उत्पन्न हुआ हो।

पुं० १ यह अगत जो ब्रह्म से उत्पन्न माना गया है। २ कार्तिकेय। ३ हिरण्यनाभं।

ब्रह्म-जन्म (नं०)—पुं० [सं० मध्य० सं०] उपनयन संस्कार।

ब्रह्मजोषी (विन्)—वि० [सं० ब्रह्मन् + जोष् (जीना) + घिनि, उप० सं०] शूद्र जात का व्यापारिक काम उद्योगेवाला।

ब्रह्मज—वि० [सं० ब्रह्मन् + ज्ञा (जानना) : क] ब्रह्म का जाता। ब्रह्म-जानी।

ब्रह्मज्ञान—पुं० [सं० सं० तं०] १ ब्रह्म को जानना। २ परमतत्व का ज्ञान।

ब्रह्मज्ञानी (विन्)—वि० [सं० ब्रह्म ज्ञान : टनि, दीर्घ, नल्यप्] परमार्थ तत्त्व का बोध रखनेवाला। ब्रह्म-ज्ञान में युक्त या समग्र।

ब्रह्मण्य—वि० [सं० ब्रह्मन् + यत्] १. ब्राह्मणों में मजबूत रखनेवाला। २ ब्रह्म-संबन्धी। ३ साम्य तथा शिष्ट समाज के उपयुक्त।

पुं० १ ब्राह्मण होने की अवस्था या भाव। २ वह जो ब्राह्मणों के प्रति निष्ठा रखता हो। ३. शहयुत।

ब्रह्मताल—पुं० [सं०] संगीत में १४ भागाओं का एक ताल जिसमें १० आघात और ४ लगी रहते हैं।

ब्रह्मतीर्थ—पुं० [सं० सं० तं०] नर्मदा के नट का एक प्राचीन तीर्थ। (महा-भारत)

ब्रह्मतेज—पुं० [सं० सं० तं०] वह तेज जो उच्च कोटि के कर्मशील ब्राह्मणों के मस्तक पर झलकता है।

ब्रह्मत्व—पुं० [सं० ब्रह्मन् + त्व, नल्योप] १ ब्रह्म होने की अवस्था या भाव। २ ब्रह्मा नामक ऋत्विज होने की अवस्था या भाव। ३ ३ ब्राह्मणत्व।

ब्रह्मवद—पुं० [सं० सं० तं०] १ वह वद जो ब्राह्मण ब्रह्मचारी धारण करता है। २ ब्राह्मण के द्वारा मिला हुआ शाप। ३ ऐसा केतु जिसकी तीन शिखरें हों।

ब्रह्म-बंधी—स्त्री० [सं० सं० तं०] एक प्रकार की अगनी जड़ी जिसकी पत्तियों और फलों पर काटे होते हैं। अजदनी।

ब्रह्म-दर्भा—स्त्री० [सं० सं० तं०] अजवायन।

ब्रह्म-वाता (नृ) —पुं० [सं० सं० तं०] वेद पढ़ानेवाला आचार्य।

ब्रह्म-दान—पुं० [सं० सं० तं०] वेद पढ़ाना।

ब्रह्म-दाय—पुं० [सं० सं० तं०] वेद का वह भाग जिसमें ब्रह्म का निरूपण है।

ब्रह्म-दाघ—पुं० [सं० सं० तं०] तूत का पेड़। शहतूत।

ब्रह्म-दिन—पुं० [सं० सं० तं०] ब्रह्मा का एक दिन जो १०० चतुर्युगियों का माना जाता है।

ब्रह्म-देया—स्त्री० [सं० सं० तं०] ब्रह्म विवाह में दी जानेवाली कन्या।

ब्रह्म-देवय—पुं०—ब्रह्मराक्षस।

ब्रह्म-दोष—पुं० [सं० मध्य० सं०] ब्राह्मण को मारने का दोष। ब्रह्म-हत्या का पाप।

ब्रह्म-बोधी (विन्) —वि० [सं० ब्रह्मबोधि : टनि] जिसे ब्रह्म हुआ लगी हो,

ब्रह्म-वच—पुं० [सं० षं० सं०] गंगाजल ।
ब्रह्म-वृक्ष—पुं० [सं० षं० तं०] पलाश । टेसू ।
ब्रह्म-बोही (हिन्दु)—वि० [सं० षं० तं०] ब्राह्मणों से बँर रखनेवाला ।
ब्रह्म-द्वार—पुं० [सं० षं० तं०] ब्रह्म-रंघ्र ।
ब्रह्म-नाडी—स्त्री० [सं० षं० तं०] हृदय योग में, सुषुम्ना के अन्तर्गत वह नाडी जिससे होकर कुडलनी ब्रह्म-रंघ्र तक पहुँचती है ।
ब्रह्म-नाभ—पुं० [सं० षं० तं०] निष्पत्ति ।
ब्रह्म-निष्ठ—वि० [सं० षं० सं०] १. ब्राह्मणों के प्रति निष्ठा या यत्नित रखनेवाला । २. ब्रह्म-ज्ञान से युक्त या मग्न ।
 पुं० पीपल ।
ब्रह्म-पत्र—पुं० [सं० षं० तं०] पलाश का पत्ता ।
ब्रह्म-पद—पुं० [सं० षं० तं०] १. ब्रह्मत्व । २. ब्राह्मण का पद या स्थिति । ब्राह्मणत्व । ३. मुक्ति । मोक्ष ।
ब्रह्म-पर्णा—स्त्री० [सं० षं० सं०, +डीप्] पिठवन नाम की लता ।
ब्रह्म-परिवत्र—पुं० [सं० सं० तं० उप० मध्य० सं० वा] कुश ।
ब्रह्म-पादप—पुं० [सं० मध्य० सं०] पलाश का पेड़ ।
ब्रह्म-पाश—पुं० [सं० मध्य० सं०] एक तरह का पाश या अस्त्र जो ब्रह्म-यक्षित से परिष्कारित होता था ।
ब्रह्मपिता (सुं)—पुं० [सं० षं० तं०] विष्णु ।
ब्रह्मपुत्र—पुं० [सं० षं० तं०] १. ब्रह्मा का पुत्र । २. नारद । ३. मनु । ४. बलिष्ठा । ५. मरीचि । ६. सनकादिक । ७. एक प्रकार का विद्याभक्त कन्द । ८. असम तथा बंगाल में बहनेवाला एक प्रसिद्ध नद जिसका उदगम मानसरोवर है ।
ब्रह्म-पुत्री—स्त्री० [सं० षं० तं०] १. सरस्वती देवी । २. सरस्वती नदी । ३. बाराही कद ।
ब्रह्म-पुर—पुं० [सं० षं० तं०] १. ब्रह्मलोक । २. हृदय, जिसमें ब्रह्म की अनुभूति होती है । ३. पुराणानुसार ईशान कोण का एक देश ।
ब्रह्म-पुराण—पुं० [सं० मध्य० सं०] अठारह पुराणों में से एक ।
ब्रह्म-प्राप्ति—स्त्री० [सं० षं० तं०] मृत्यु ।
ब्रह्म-कसि—स्त्री०—ब्रह्मपाश ।
ब्रह्म-बधु—पुं० [सं० षं० तं० या षं० सं०] कर्महीन ब्राह्मण । पतित या नाम-मात्र का ब्राह्मण ।
ब्रह्म-बल—पुं० [सं० षं० तं०] वह तेज या शक्ति जो ब्राह्मण को तप आदि के द्वारा प्राप्त हो ।
ब्रह्म-भाव—पुं० [सं० षं० तं०] १. ब्रह्म में समाना या लीन होना । २. मृत्यु ।
ब्रह्म-भक्त—पुं० [सं० सं० तं०] ब्रह्म में लीन या समया हुआ ।
ब्रह्म-भूय—पुं० [सं० षं० तं०] १. ब्रह्मत्व । २. मुक्ति । मोक्ष ।
ब्रह्म-भोज—पुं० [सं० षं० तं०] बहुत से ब्राह्मणों को एक साथ पगत में बैठकर भोजन करना । ब्राह्मण-भोजन ।
ब्रह्म-मय—वि० [सं० ब्रह्मन् + मयट्] १. ब्रह्म से युक्त । २. वेदों से संबध रखनेवाला ।
ब्रह्म-मुहूर्त—पुं०—ब्राह्म मुहूर्त ।
ब्रह्म-मेखला—पुं० [सं० षं० तं०] मूँज नामक तृण । मूँज ।

ब्रह्म-यज्ञ—पुं० [सं० मध्य० सं०] विधिपूर्वक किया जानेवाला वेदों का अध्ययन और अध्यापन ।
ब्रह्म-यच्छि—स्त्री० [सं० षं० तं०] भारंगी । ब्रह्मनेटी ।
ब्रह्म-योग—पुं० [सं० षं० सं०] १. सगीते में १८ मात्राओं का एक ताल जिसमें १२ आवात और ६ सली होते हैं ।
ब्रह्म-योगिन—स्त्री० [सं० षं० तं०] १. ब्रह्म की प्राप्ति के लिए किया जानेवाला उसका ध्यान । २. [बं० सं०] गया का एक तीर्थ । ३. सरस्वती ।
 वि० ब्रह्म से उत्पन्न ।
ब्रह्म-रंघ्र—पुं० [सं० षं० तं०] हृदयगम में, मस्तिष्क के ऊपरी मध्य भाग में स्थान जानेवाला वह छिद्र या रंघ्र जहाँ सुषुम्ना, इलाहा और पिंगला ये तीनों नाडियाँ मिलती हैं । कहते हैं कि पुष्याभा लोगों और योगियों के प्राण इसी रंघ्र को भेदकर निकलते हैं ।
ब्रिचोष—ब्रह्म-रंघ्र को शरीर का दसवाँ द्वार कहा जाता है । अन्य द्वार इन्दियाँ हैं जो खुली रहती हैं । किन्तु यह दसवाँ द्वार सदा बन्द रहता है । तपस्या द्वारा इसे खोला जाता है । इसके खुलने पर सहस्रार चक्र से अमृत रस निकलते लगता है जिससे योगी को अमर काया प्राप्त हो जाती है ।
ब्रह्म-राक्षस—पुं० [सं० कर्म० सं०] १. प्रेत-योगिन में गया हुआ ब्राह्मण । वह ब्राह्मण जो मरकर प्रेत या भूत हुआ हो । कहते हैं कि जिस ब्राह्मण की अकाल-मृत्यु या हत्या होती है, वह प्राय इसी योगिन में जाता है । २. शिव का एक गण ।
ब्रह्म-रात—पुं० [सं० बं० सं०] १. शुक्रदेव । २. याज्ञवल्क्य मुनि ।
ब्रह्म-रात्र—पुं० [सं० रात्रि + अण, ब्रह्म-गत्र, षं० तं०] रात के अन्तिम चार दंड । ब्रह्म मुहूर्त ।
ब्रह्म-रात्रि—स्त्री० [सं० षं० तं०] ब्रह्मा की एक रात जो एक कल्प की मानी जाती है ।
ब्रह्म-राशि—पुं० [सं० षं० तं०] १. परशुराम का एक नाम । २. बृहस्पति से आकाश ध्वज नक्षत्र ।
ब्रह्म-रति—पुं० [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार का पीतल ।
ब्रह्म-रूपक—पुं० [सं० बं० सं०, +कृ० अथवा षं० तं०] एक प्रकार का छद जिसके प्रत्येक चरण में मूँज लघु के क्रम से १६ अक्षर होते हैं । इसे 'बँचला' और 'चित्र' भी कहते हैं ।
ब्रह्म-रूपिणी—स्त्री० [सं० षं० तं०] बौदा ।
ब्रह्म-रेखा—स्त्री० [सं० ष्यय० सं०] पुराणानुसार ललाट पर ब्रह्म द्वारा लिखी हुई माय-रेखा या माय-लिपि ।
ब्रह्मवि—पुं० [सं० ब्रह्मन्-वृध्वि, कर्म० सं०] बलिष्ठ आदि मग्नद्रव्या ऋषि ।
ब्रह्मवि-वेश—पुं० [सं० षं० तं०] वह प्राचीन मू-भाय जिसके अन्त-गत कुक्षेत्र, मत्स्य, पांचाल और शूरसेन देश थे । (मनु०)
ब्रह्म-लेख—पुं० [सं० षं० तं०] १. ब्रह्मा द्वारा मनुष्य के ललाट पर लिखी हुई वे पञ्चिदाँ जो उसके माय्य की सूचक होती हैं । २. ऐसा लेख जो कभी अन्यथा या मिथ्या न हो सकता हो ।
ब्रह्म-लोक—पुं० [सं० षं० तं०] १. वह लोक जिसमें ब्रह्म का निवास माना गया है । २. एक प्रकार का मोक्ष ।
ब्रह्म-वच—पुं० [सं० षं० तं०] ब्रह्म हत्या ।

बह्-बर्चस्—पु० [सं० व० त०] बहु वसितो जो ब्राह्मण तप और स्वा-
ध्याय द्वारा प्राप्त करे। ब्रह्मतेजः।

ब्रह्मर्षत्वे (सिन्) —वि० [सं० ब्रह्मर्षत् + विनि] ब्रह्मतेजवाला।

ब्रह्मर्षत्—पु० [सं०] ब्रह्मर्षत्। (दे०)

ब्रह्मर्षाणी—स्त्री० [सं० व० त०] वेद।

ब्रह्मर्षाव—पु० [सं० व० त०] यह सिद्धांत कि सपूर्ण विष्व ब्रह्म से
निकला है और उसी की प्रेरणा तथा शक्ति से चल रहा है।

ब्रह्मर्षादिनी—स्त्री० [सं०] गायत्री।

ब्रह्मर्षादी (सिन्)—वि० [सं० ब्रह्मर्ष् + वच् (बोलना) + णिनि] ब्रह्म-
र्षाद-सबकी।

पु० [स्त्री० ब्रह्मर्षादिनी] बहु जो सारे विष्व को ब्रह्ममय मानता
हो।

ब्रह्मर्षिन्—पु० [सं० मध्य० सं०] वेद पाठ करने समय मूँह से निकला
हुआ धूक का छोट्टा।

ब्रह्मर्षिन्—वि० [सं० ब्रह्मर्ष् + विद् (जानना) + विन्प्] १. ब्रह्म
को जानने या समझनेवाला। २. वेदों और उनके अर्थ का ज्ञाता।

ब्रह्मर्षिद्या—स्त्री० [सं० व० त०] १. बहु विद्या जिसके द्वारा ब्रह्म का
ज्ञान होता है। उपनिषद् विद्या। २. दुर्गा।

ब्रह्मर्षुष—पु० [सं० मध्य० सं०] १. पलाश। २. गुलर।

ब्रह्मर्षेसा (सु)—पु० [सं० व० त०] ब्रह्म को समझनेवाला। ब्रह्म-
ज्ञानी। तत्त्वज्ञ।

ब्रह्मर्षेस्त—पु० [सं० व० त०; अण्] १. बहु प्रतीति जो ब्रह्म के कारण
हो। जैसे—जगत् की प्रतीति। २. जगत्, जिसकी प्रतीति और सृष्टि
ब्रह्म के द्वारा होती है। ३. श्रीकृष्ण। ४. अठारह पुराणों में से एक
पुराण जो श्रीकृष्ण मन्त्रि के सम्बन्ध में है।

ब्रह्मर्षत्य—पु० [सं० व० सं०] बबूल का पेड़।

ब्रह्मर्षासन—पु० [सं० व० त०] १. वेद या स्मृति की आज्ञा। २.
ब्राह्मण को सान में मिली हुई नृ-सपत्ति।

ब्रह्मर्षिर (सु)—पु० [सं० व० त०] एक अल्प जिसका उल्लेख
रामायण और महाभारत में हुआ है।

ब्रह्मर्षती—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] सरस्वती नदी।

ब्रह्मर्षत्र—पु० [सं० मध्य० सं०] विधिपूर्वक किया जानेवाला वेदपाठ।
ब्रह्मयज्ञ।

ब्रह्मर्षवन—पु० [सं० व० त०] यज्ञ में ब्रह्म का आसन।

ब्रह्मर्षभ—स्त्री० [सं० व० त०] १. ब्रह्म की समा। २. ब्राह्मणों
की समा या समाज।

ब्रह्मर्षमाज—पु० [सं० व० त०] एक आधुनिक सप्रदाय जिसके प्रवर्तक
बंगाल के राजा राममोहन राय थे। ब्राह्मण-समाज।

ब्रह्मर्षमाजी (किन्)—वि० [सं०] ब्रह्म-समाज सन्तन्त्री।

पु० ब्रह्म-समाज का अनुयायी।

ब्रह्मर्षर (सु)—पु० [सं० व० त०] एक प्राचीन तीर्थ। (महाभारत)

ब्रह्मर्षावर्ण—पु० [सं० मध्य० सं०] दसवें मनु का नाम।

ब्रह्मर्षद्वान्त—पु० [सं० व० त०] अयोधित की एक सिद्धान्त पद्धति।

ब्रह्मर्षुत्—पु० [सं० व० त०] मरीचि आदि ब्रह्म के पुत्र।

ब्रह्मर्षुता—स्त्री० [सं० व० त०] सरस्वती।

ब्रह्मर्षुत्—पु० [सं० मध्य० सं०] १. यशोवती। जनेक। २. व्यास
का शारीरिक सूत्र जिसमें ब्रह्म का प्रतिपादन है और जो वेदान्त दर्शन
का आधार है।

ब्रह्मर्षुत्—वि० [सं० ब्रह्मर्ष् + षुत् (सिरजना) + विवप्] ब्रह्म को
उत्पन्न करनेवाला।

पु० शिव।

ब्रह्मर्षेय—पु० [सं० व० त०] मूक की अनुमति बिना अन्य को पढ़ाया
हुआ पाठ सुनकर अध्ययन करना जिसे मनु ने अनुमति कहा
है।

ब्रह्मर्ष्व—पु० [सं० व० त०] १. ब्राह्मण का अक्ष या माग। २. ब्राह्मण
का घन।

ब्रह्मर्ष्व्या—पु० [सं० व० त०] ब्राह्मण को मार डालने का पाप।

ब्रह्मर्ष्वय—पु० [सं० व० त०] प्रथम वर्ण के १९ नत्रणों में से एक
नत्रण जिसे अँगरेजी में कैपेल्ला कहते हैं।

ब्रह्मर्ष—पु० [सं० ब्रह्मर्ष-अक्ष, व० त०] १. चौदहों भुवनों का संपूर्ण
जो अक्षरकार माना गया है। संपूर्ण विष्व, जिसमें अतल लोक हैं।
विष्व-गोलक। २. मत्स्य-पुराणानुसार एक महादान जिसमें सोने
का विष्व गोलक (जिसमें लोक, लोकाग्र आदि बने रहते हैं) दान
दिवा जाता है। ३. कृपाळ। खोंपड़ी।

मूरा—**ब्रह्मर्ष चक्रकला**—(क) खोंपड़ी फटना। (स) बहुत अधिक
ताप आदि के कारण सिर में बहुत पीड़ा होना।

ब्रह्मर्षचरित्रण—स्त्री० [सं०] प्रबल अंदक दमितशाली एव प्रकार की
किरणों जो सुदूर अंतरिक्ष से आकर इस पृथ्वी पर पड़ती और कई प्रकार
के परिणामों या प्रभाव उत्पन्न करती हैं। अंतरिक्ष किरण विष्वक
किरण। (कार्मिक रेज)

विष्वे—इस किरण का पता इस शरी के पहले चरण में उस समय लगा
जा जब बायुनाम की उड़ान के लिए बायु की चालकता के संबंध में अनेक
प्रकार के प्रयोग किये जा रहे थे। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि ये किरणें
हमारी ही मंडाकिनी या आकाश गगन से निकली हैं।

ब्रह्मर्षीय—वि० [सं०] समस्त ब्रह्मर्ष में होने या उसमें मय्य रखने-
वाला। विष्वक। (कार्मिक)

ब्रह्म (ह्रस्व)—पु० [सं० दे० ब्रह्मन्] १. हिन्दू धर्म में त्रिवेदी में से
पहले देव (अन्य दो देव विष्णु और महेश्व हैं) जो ब्रह्म के तीन सगुण
रूपों में से एक और सृष्टि की रचना करनेवाले माने गये हैं; और इसी-
लिए पितृमहत्तव्य विभागात् कहे जाते हैं। २. यज्ञ का एक ऋत्विक्।
३. एक प्रकार का धान जो जल्दी पककर तैयार होता है।

ब्रह्मर्षर—पु० [सं० ब्रह्मन् (अक्षर) मध्य० सं०] ऊँकार मंत्र।

ब्रह्मर्षी—स्त्री० [सं० ब्रह्मर्ष् + अन् (कीर्तन करना) + णिप् + अण् +
डीप्] १. ब्रह्म की स्त्री। ब्रह्म की शक्ति। २. सरस्वती। ३.
रेणुका नामक गण द्रव्य। ४. उड़ीसा की एक छोटी नदी जो वैतरणी
में मिलती है।

ब्रह्मर्षव—पु० सं० ब्रह्मन्-आनन्द, मध्य० सं०] ब्रह्म के स्वभाव का
अनुभव होने पर प्राप्त होनेवाला आनन्द जो सब प्रकार के आनन्दों से
अधिक माना जाता है। ब्रह्मज्ञान से उत्पन्न आनन्द।

ब्रह्मर्ष्यास्त—पु० [सं० ब्रह्मन्-अभ्यास, व० त०] वेदाध्ययन।

ब्रह्मोपदेश—पुं० [सं० ब्रह्मन्-अपत्य, ष० तं०] १. एक प्राचीन वन।
 २. वेदवाच-भूमि।
 ब्रह्मोपदेश—पुं० [सं० ब्रह्मन्-अपत्य, ष० तं०] अपने किये हुए सभी कर्मों
 के फल परमात्मा की अर्पित करने की क्रिया।
 ब्रह्मोपदेश—पुं० [सं० ब्रह्मन्-आवर्त, ष० तं०] सरस्वती और वृषभती
 नदियों के बीच के प्रदेश का पुराना नाम।
 ब्रह्मोपदेश—पुं० [सं० ब्रह्मन्-आवर्त, ष० तं०] १. बहु आसन जिस पर
 बैठकर ब्रह्म का ध्यान किया जाता है। २. तार्किक पूजा का एक
 आसन।
 ब्रह्मोपदेश—पुं० [सं० ब्रह्मन्-अत्यन्त, मध्य० सं०] १. ब्रह्म-वस्तु से परि-
 वालित होनेवाला अमोघ अस्त्र। २. एक प्रकार का अस्त्र, जो मंत्र
 से पवित्र करने चलाया जाता था। ३. वैद्यक में, एक रसोपचय जो
 सत्पित्त में दिया जाता है।
 ब्रह्मोपदेश—वि० [सं० ब्रह्मन्-उत्पन्न] वेदों का पूर्ण ज्ञाता।
 ब्रह्मोपदेश—स्त्री० [सं० ब्रह्मोपदेश+उत्पन्न] दुर्गा।
 ब्रह्मोपदेश—पुं० [सं० ब्रह्मन्-उत्पन्न, ष० तं०] ब्रह्मज्ञान की शिक्षा।
 ब्रह्मोपदेश—पुं० [अं०] एक प्रकार की विलायती शराब।
 ब्रह्म—पुं०=आत्म।
 ब्रह्म—वि० [सं० ब्रह्मन्+अण्] ब्रह्म-संबंधी। ब्रह्मा का। जैसे—ब्रह्मविन।
 पुं० १. हिंदू धर्म-शास्त्र के अनुसार आठ प्रकार के विवाहों में से एक।
 २. ब्रह्म पुराण। ३. नारद। ४. नक्षत्र। ५. प्राचीन राजाओं का
 एक धर्म जिसमें उन्हें गुरुकुल से लौटे हुए ब्राह्मणों की पूजा करनी पड़ती
 थी।
 ब्रह्मण्य—पुं० [सं० ब्रह्मन्+अण्] [स्त्री० ब्राह्मणी] १. हिंदुओं के
 चार वर्णों में से पहला और सर्वश्रेष्ठ वर्ण जिसके मुख्य कर्म वेदों का
 पठन-पाठन, यज्ञ, श्राद्धोपदेश आदि हैं। २. उक्त जाति या वर्ण का
 मनुष्य। द्विज। विप्र। ३. वेदों का वह भाग जो उनके मंत्र भाग
 से भिन्न है। ४. विष्णु। ५. शिव। ६. अग्नि।
 ब्राह्मण्यक—पुं० [सं० ब्राह्मण+अण्] निन्दनीय या बुरा ब्राह्मण।
 ब्राह्मण्यक—पुं० [सं० ब्राह्मण+अण्] ब्राह्मण होने की अवस्था, धर्म या
 भाव। ब्राह्मण्य-पुं०।
 ब्राह्मण्यक—पुं० [सं० ब्राह्मण+क] (बोलना)+क] कर्म और संस्कार
 से हीन तथा नाममात्र का ब्राह्मण।
 ब्राह्मण्यक—पुं० [सं० ष० तं०] बहुत से ब्राह्मणों की मुलाकर कराया
 जानेवाला भोजन।
 ब्राह्मण्यक—पुं० [सं० ब्राह्मण+क]—आयन] विद्वान् और विद्युद्ध
 ब्राह्मण्यकूल में उत्पन्न ब्राह्मण।
 ब्राह्मणी—स्त्री० [सं० ब्राह्मण+ङीप्] १. ब्राह्मण जाति की स्त्री।
 २. बुद्धि। ३. एक प्राचीन सौध।
 ब्राह्मण्य—पुं० [सं० ब्राह्मण+अण्] १. ब्राह्मण का धर्म या गुण।
 ब्राह्मण्यकूल। २. ब्राह्मणों का धर्म या समाज। ३. धर्म ग्रह।

ब्राह्मण्यकूल—पुं०=ब्रह्म-समाज।
 ब्राह्मण्यकूल—पुं०=नैमित्तिक प्रलय। (देखें)
 ब्राह्मण्यकूल—पुं० [सं० कर्म० सं०] सूर्यास्त से पहले दो बड़ी तक का
 समय (जो बहुत ही पवित्र तथा शुभ माना गया है)।
 ब्राह्मण्यकूल—पुं० [सं० कर्म० सं०] दे० 'ब्राह्म' के अन्तर्गत।
 ब्राह्मण्यकूल—पुं० [सं० कर्म० सं०] यग देश में प्रचलित एक आनु-
 न्तिक संभ्रदाय। ब्रह्म-समाज।
 ब्राह्मण्यकूल (विन्)—पुं० [सं० ब्राह्मण्यकूल+विन्] ब्राह्मण्यकूल
 का अनुयायी।
 वि० १. ब्रह्म समाज-संबंधी। २. ब्रह्म समाजियों का।
 ब्राह्मणी—स्त्री० [सं० ब्राह्मण+ङीप्] १. दुर्गा। २. शिव की आठ भानु-
 काओं में से एक। ३. रोहिणी नक्षत्र। ४. भारतवर्ष की वह प्राचीन
 लिपि जिससे नागरी, बंगला आदि आधुनिक लिपियाँ विकसित हुईं
 हैं। हिंदुस्तान की एक प्रकार की पुरानी लिखावट। ५. औषध के
 काम में आनेवाली एक वृक्ष जो छत्ते की तरह जमीन में फैली है।
 यह बहुत ठंडी होती है और मस्तिष्क के लिए बहुत गुणकारी कही गई
 है।
 ब्रिगेड—पुं० [अं०] १. सेना का एक वर्ग। २. किसी विशिष्ट प्रकार
 के कार्यकर्ताओं का दल। जैसे—फायर ब्रिगेड।
 ब्रिज—पुं० [अं०] १. पुत्र। सेतु। २. ताश का एक प्रकार का खेल।
 ब्रिटिश—वि० [अं०] १. ब्रिटेन-संबंधी। २. अंगरेजों का।
 ब्रिटेन—पुं० [अं०] इंग्लैंड, वेल्स और स्कॉटलैंड नामक प्रदेशों का
 सम्मिलित नाम।
 ब्रिज—पुं०=धीड़ा।
 ब्रीडना—अं० [सं० ब्रीडन] लज्जित होना। लजाना।
 ब्रीडना—स्त्री०=धीड़ी।
 ब्रीडिया—पुं० [अं०] छापेखाने में, एक प्रकार का छोटा टाइप जो
 आठ प्वाइंट का अर्थात् पाइका का २।२ होता है।
 ब्रीडि—पुं०=धीहि।
 ब्रुस—पुं० [अं०] ब्रुस।
 ब्रुस—स्त्री० [अं०] एक प्रकार की धोड़ापाइजे जिससे ब्रुस नामक
 डाक्टर ने आँसुओं के लिए प्रचलित किया था।
 ब्रुसि—अव्य० [अं०] उच्चारण करो। करो।
 ब्रुसि—पुं० [अं०] ताद्वियों से पहिये या गति-चक्र की गति रोकनेवाला
 उपकरण।
 ब्रुसि—पुं० [अं०] विलायती डग की जनाना कुर्ती।
 ब्रुसि—पुं० [अं०] १. वह ठप्पा जिस पर से कोई विद्युत छाया जाय।
 २. भूमि का कोई चौकोर खंड या टुकड़ा। ३. किसी विशिष्ट कार्य
 के लिए नियत किया हुआ भू-भाग।
 ब्रुसि—वि०=विद्युत (वी)।
 ब्रुसि—सं०=बीना।

भ

भ—१ हिन्दी वर्णमाला का चौबीसवाँ और पचासवाँ वर्ण जो व्याकरण तथा भाषा विज्ञान के दृष्टिकोण से ओष्ठ्य, अघोष, महा-प्राण तथा स्पर्श व्यंजन है। २ छद्-शास्त्र में भंगण का अल्पायक तथा मलित रूप। [म०/म+ः] ३ नक्षत्र। ४ ग्रह। ५ राशि। ६ पर्व। ७ पहाड़। ८ भोग। ९ भ्रम। १० भ्राति। ११ शुक्राचार्य।

भँहँसा—स्त्री० भँस।

भँहँसा—पु० भँसा।

भँहँसुरा—पु० भँसुर (वेठ)।

भकार—पु० [म० म+ः/क (करना) अण्] १ भोगण शब्द। २ भनमनाहट।

भकारी—स्त्री० [म० भकार/ः/ीप्] १ मुग्धा। २ चौपायी को काटनेवाला एक प्रकार का मच्छर।

भकता (भक्)—पु० [स०/भक् (तोड़ना) !भृच्] वह जो भग या भन करता हो।

भक्त—स्त्री० [स०/भक्त्/क्तिन्] १ भग या भन करने या होने की अवस्था या भाव। २ अर्पण-भग।

भंग—पु० [स०/भङ्/भङ्] १ टूटने की क्रिया या भाव। २ विघटित करने की क्रिया या भाव। ३ ध्वंस। नाश। ४ पराजय। हार। ५ बड़ा दुःख। ६ मेव। ७ कुटिलता। टेढ़ापन। ८ बीमारी। रोग। ९ गमन। जाना। १० पानी के निकलने का स्थाव। सोप। खेत। ११ डर। भंग। १२ तरंग। लहर। १३ बाधा। विघ्न। १४ लकड़ा नामक रोग। १५ निश्चय, प्रतीति, नियम आदि में पड़नेवाला अन्तर। १६ कर्त्तव्य, व्यवस्था आदि का बीच में कुछ समय के लिए रुकना और ठीक तरह में न चल सकना। (श्रीच) जैसे—शांति-भंग।

स्त्री० [म० भगा] एक पीधा जिसकी पत्तियाँ नसीली होने के कारण लोग पीमकर पीते हैं। भाँग।

पु० विमग।

भंग—पु० [हि० भाँग; अह (प्रत्य०)] वह जो नित्य भाँग पीने का अभ्यस्त हो। जिसे भाँग पीने की लत हो।

भंगडा—पु० [हि० भंगेडी ?] बड़े डोल के तान पर होनेवाला पत्रावियों का एक प्रकार का लोक-नृत्य।

बिबेध—अग्नी कुछ दिन पहले तक पत्राव के जाट और मिक्स खूब भग पीया करते थे, हो सकता है कि उन भग की तरंग में खूब नाचने के कारण इसका नाम भंगडा पड़ा हो।

भंगना—अ० [हि० भग] १ भन होना। टूटना। २ किसी से दबना। स० १ भन करना। तोड़ना। २ किसी को दबाना या हगना।

भंग-वन्द—पु० [स० भण्य०/स०] श्लेष कथन के दो मेंदा में से एक जिसमें किसी की कही हुई बात के शब्दों के टुकड़े करके और उन्हें आगे या पीछे जोड़कर कुछ और ही मतलब निकाला जाता है।

भंगरा—पु० [हि० भंग+रा=का] भाँग के पीधों के रेशों से बुना हुआ एक प्रकार का मोटा कपड़ा।

पु०=भंगरैया।

भंगराज—पु० [स० भंगराज] १. कोयल की तरह की एक प्रकार की चिड़िया जो बहुत सुरीली और भंगुर बोनी बोलती है और प्रायः सभी पशु-पक्षियों की बोलियों को नकल करती है।

भंग-रेखा—स्त्री० [स० भण्य०/स०] चित्र-कला में ऐसी रेखा या विलकुल सीधी न हो, बल्कि आकर्षक या सुन्दर रूप में किसी और कुछ मुड़ी हुई हो। (कव)।

भंगरैया—स्त्री० [स० भंगराज] जमीन पर फैलनेवाला एक क्षुद्र जिसके फूल पीले, सफेद या नीले रंग के होते हैं और बीज काली जड़ी की तरह छोटे-छोटे होते हैं।

भगा—स्त्री० [म० भग; टाप्] भाँग का पीधा और उसकी पत्तियाँ।

भंगार—पु० [म० भग से ?] १ वह गड़्ढा जो बरसात के दिनों में वर्षा के पानी में भर जाता है। २ वह गड़्ढा जो कृत्रिम बनावे समय पटले खादा जाता है।

पु० [हि० भाँग] १ घास-फूस। २ कृश-कणक।

भंगि—स्त्री० [म०/भङ्/इन] १. भग होने की अवस्था या भाव। विच्छेद। २ कुटिलता। टेढ़ापन। ३ शरीर के अंगों की ऐसी विशिष्ट मुद्रा या मण्डलन जो किसी प्रकार के मनोभाव का सूचक हो। ४ तरंग। लहर। ५. भाँग। ६ व्याज। ७ प्रतिहिंस।

भंगिधा (भग्)—स्त्री० [म० भग; इभन्त्] १. वह कलापूर्ण शारीरिक मुद्रा, जिसमें कोई विशिष्ट मनोभाव प्रकट होता है। अदा। २ बक्रता। कुटिलता।

भंगियाना—अ० [हि० भाँग] भाँग के नये में चूर होना।

स० भाँग गिनकर नये में चूर करना।

भगी (भिग्)—वि० [म० भग; इभि] [स्त्री० भंगिनी] १ भग-पीला। नष्ट होनेवाला। २ भग करने या तोड़नेवाला।

स्त्री० [म० भग; ङीप्] १ रेखाओं के हाफव में मोचा हुआ चित्र या बेल-बूटे आदि। २ मनोभाव प्रकट करनेवाली शारीरिक मुद्रा या अंग-संचालन। भंगी।

वि० [हि० भाँग] भाँग पीनेवाला। भंगेटी।

पु० [?] [स्त्री० भंगिन] जाटू देते तथा मीठा उड़ानेवाला ब्यवित।

भंगुर—वि० [म०/भङ्/पुण्य] १ भग होने अर्थात् टूट-फूटकर या विघटित होकर नष्ट होनावाला। नाशवान्। जैसे—क्षणभंगुर। २. टेढ़ा। बक्र। उदा०—उरज मार भंगुर जाति गति जाकी।—नन्ददास।

३ छली। धूर्त।

पु० नदी का भाग या प्वाव।

भंगुरा—स्त्री० [म० भंगुर/टाप्] १ अनिर्विधा। अतीस। २. प्रियम्।

भंगेडी—पु० [हि० भाँग-एनी (प्रत्य०)] वह जिसे भाँग पीने की लत हो। प्रायः मुद्रा भाग पीनेवाला। भंगड।

भंगेरा—पु० भंगरा (भंगरैया)।

भंगेला—पु० भंगेरा।

भण्य—वि० [म०/भङ्/प्यत्] जो भंग किया जा सके अथवा भग किया जाने को हो।

५० भांग का तेल।
भंजक—वि० [स०√भञ्ज्+ल्यट्—अक] [स्त्री० भंजिका] भंग करने या तोड़ने-फोड़नेवाला।
भंजन—पु० [स०√भञ्ज्+ल्यट्—अन] १. भग करना। २. तोड़ना-फोड़ना। ३. भ्रंस। नाश। ४. आक। मवार। ५. भांग। ६. ब्रम की वह पीड़ा जो वायु के प्रकोप के कारण होती है।
 वि०=भंजक। (समस्त पर्वों के अंत में, जैसे—भग-भय-भंजन)।
भंजन—पु० [स०√भञ्ज्+ल्यट्—अन] एक तरह का रोग जिसमें दांत टूट जाते हैं और मुँह कुछ टेढ़ा हो जाता है।
भंजना—अ० [स० भंजन] १. भग होना। टुकड़े-टुकड़े होना। २. भांग या मोड़ा जाना। ३. तहो या परतो के रूप में मोड़ा जाना। जैसे—कागज भंजना। ४. धर-उधर धुमाना या बलाया जाना। जैसे—तलवार, पाटा या लाठी भंजना। ५. बड़े सिक्के का छोटे सिक्कों में परिवर्तित होना। मुनना। जैसे—रुपया भंजना।
 स०=भंजना।
भंजना—अ० [स० भंजन] पात्र आदि का टूट-फूट जाना।
 स० तोड़ना-फोड़ना।
 स०=भंजना।
 अ०=भागना।
 स०=भगना।
भंजनी—पु० [हिं० भंजना] करके की वह लकड़ी जो ताने को विस्तृत करने के लिए उसके किनारों पर लमाई जाती है। मंसार।
भंजा—स्त्री० [स० भञ्ज्+अच्—टाप्] अपभ्रूपा।
भंजाई—स्त्री० [हिं० भंजना] १. भोजने की अवस्था, क्रिया, ढग या भाव। २. कौरवे या छपे हुए कागज को परतो में मोड़ने की क्रिया, भाव या मजदूरी।
 †स्त्री० दे० 'भुनाई'।
भंजाना—स० [हिं० भंजना का स०] १. किसी को कुछ भंजने में प्रयत्न करना। २. भोजने का काम किसी में कराना। भंजवाना। (दे० 'भोजना' और 'भंजना')।
 † अ०=भंजना।
भंजकटिया—स्त्री०=भटकटिया।
भंटा—पु०=बेंगन।
भंटाकी—स्त्री० [स०√भण् (शब्द)+टाकन्+डीप्] भटा।
 बौना।
भंठी—स्त्री० [?] १. बापा। विघ्न। २. अडचन। (राज०)
भं—पु० [स०√भं (प्रसारण)+अच्]=भोत्र।
 वि० १. अश्लील या गंदी बातें बकनेवाला। २. किसी बात को स्थान-स्थान पर कहते फिरनेवाला। ३. धूर्त। ४. पाखंडी। जैसे—
 भं भं लपटवी।
 † पु०=भंड़।
भंजक—पु० [स० भंज्+क] शिंभरिच पत्ती।
भंज-ताल—पु० [हिं० भंज्+ताल] एक प्रकार का गाना और नाच जिसमें गानेवाला गाता है और शेष समाजी उसके पीछे तालियाँ बजाते हैं। भंज-तिल्ला।
 ४—२४

भंज-तिल्ला—पु० [हिं० भंज्+तिल्ला] १. भंज-ताल। २. आम्बर-पूर्ण काम।
भंजन—पु० [स०√भंज् (विगाड़ना)+ल्यट्—अन] १. हानि। क्षति। २. कवच।
भंजना—स० [स० भंजन] १. क्षति या हानि पहुँचाना। २. खराब करना। विगाड़ना। ३. तोड़ना-फोड़ना। ४. किसी को चारों ओर बंदनाम करते फिरते रहना।
भंज-कोड़—पु० [हिं० भंजा+फोड़ना] १. मिट्टी के बर्तन तोड़ना-फोड़ना। २. दे० 'मडा-कोट'।
 वि० १. मिट्टी के बर्तन तोड़-फोड़कर नष्ट करना। २. किसी का भंजा-फोड़ या रहस्योद्घाटन करना।
भंजभंडार—पु० [स० भंडार] एक प्रकार का कटीला रूप जिसकी पतियाँ नुकीली, लम्बी और कंटीली होती हैं। इसके पीछे से पीले रंग का दूध निकलता है जो भाव और चोट पर लगाया जाता है।
भंजरिया—स्त्री० [हिं० भंडारा+इया (प्रत्यय)] बीमारों में बनी हुई खानेदार तथा पल्लोवाली छोटी अलमारी।
 वि० [हिं० भंजरि] १. डोंगी। पाखंडी। २. चालाक। धूर्त।
 पु०=भंजडर।
भंजसाल—स्त्री० [हिं० पाड्+स० शाला] अथ इकट्ठा करके रखने का स्थान। खती। खता।
भंजा—पु० [स० भाड] १. पात्र। बरतन। २. भंडार। ३. मेद। रहस्य।
भुहा—(किसी का) भंजा फूटना—रहस्य विघोषत कुचक्र का पता लोगों को लगाना। मेद प्रकट होना। भंजा फोड़ना—गुप्त रहस्य खोलना। सब पर मेद प्रकट करना।
 ४. वह लकड़ी या बल्ला जिसका सहारा लगाकर भोटे और भारी बल्लो को उठाते या खिसकाते हैं।
भंजाना—स० [हिं० भंज] १. उछल-कूद मचाना। उपद्रव करना। २. तोड़ना-फोड़ना।
 स० [हिं० भंजना का प्र०] भंजने का काम किसी से कराना।
भंजा-कोड़—वि० [हिं० भंजा+फोड़ना] दूसरों का रहस्य, विघोषत कुचक्र लोगों पर प्रकट करनेवाला।
 पु० किसी के गुप्त रहस्यों या कुचक्रों का सब पर किया जानेवाला उद्घाटन।
भंजारा—पु० [स० भाडार] १. कोष। सजाना। २. किसी चीज या बात का बहुत बड़ा आधान या आश्रय स्थान। जैसे—विद्या का भंडार। ३. अनाज रखने का कोठा। खता। खती। ४. वह कमरा या कोठरी जिसमें भोजन बनाने के लिए अन्न, बरतन आदि रखे जाते हैं। ५. उदर। पेट। ६. खोपड़ी। ७. नदी का तल। तलहटी। ८. किसी राजा या जमींदार की वह मूर्धिया या गाँव जिसमें वह स्वयं खेती करता है। ९. दे० 'भंडारा'।
भंजारा—पु० [हिं० भंडार] १. साधु-सन्ध्यासियों आदि का भोज। वह भोज जिसमें सन्ध्यासियों और साधुओं को शिलकाया जाता है।
 क्रि० प्र०—करना।—देना।
 २. उदर। पेट। ३. खोपड़ी। ४. जीव-जन्तुओं का शृंग या समूह।

कि० प्र०—मुकुना ।
५ दे० 'मंभार' ।

मंभारी—पु० [हि० मंभारः ई (प्रत्य०)] १ मंभार का प्रधान अर्थव्यक्त और अर्थव्यक्त्यापक । मंभार का प्रथमक । २. रसोदया । ३. लजाजी ।

४ तोषावने का दारोणा ।

स्त्री० [हि० मंभारः ई (प्रत्य०)] १ कोषा । लजाना । २. छोटी कीठरी ।

स्त्री०—१ मंडरिया । २—मंभार ।

प्रथिमा (मनु)—स्त्री० [सं० मंड+इमनिच्] छल । धोखा ।

मंभिर—पु० [सं०√मभ्+इलच्, र—ल] सिरस का बूझ । विरीष ।

मंभिल—पु० [सं०√मभ्+इलच्] १. सिरस का पेड़ । २. दूत ।

३ कारीगर । शिल्पी ।

हि० १ अच्छा । उत्तम । २. मागलिक । धुम ।

मंभ्रहा—पु० [सं० मांड+हर] चोर ।

मंभ्रहाई—स्त्री० [हि० मंभ्र] मांझों या विदूषकों का-सा आचरण या व्यवहार ।

अव्य० [हि० मंभ्रहा] चोरी से । छिपे छिपे ।

भभी—स्त्री० [सं० मंड+भनि] १ मजीठ । २. सिरस का पेड़ ।

मंभरी—पु० [सं० मभ्+ईरन्] १. बौलाई का साथ । २. बड़ का पेड़ ।
बट । ३. मंड-मौड़ । ४. मिरस ।

मंभ्रक—पु० [सं०√मभ्+ऊक] १ माजुर नामक मछली । ध्योनाक । सोना-गाड़ा ।

मंभेर—पु० [दिस०] एक मूक जिसकी छाल चमड़ा रंगने के काम में आती है ।

स्त्री०—मंभेहर ।

मंभेरिया—पु०—मंभेहर ।

स्त्री०—मंभेरिया ।

मंभेरियापन—पु० [हि० मंभेरिया+पन (प्रत्य०)] १ डोंग । मक्कारी । २. चालाकी । धूर्तता ।

मंभेहर—स्त्री० [हि० मंभ्रा] १ मिट्टी के छोटे-छोटे बरतन । २. घड़े के आकार-प्रकार के मिट्टी के छोटे-छोटे पात्रों का एक पर एक रखा हुआ पाक । ३. लाक्षणिक अर्थ में, बहुत अलङ्कृत तथा सजाई हुई ऐसी वस्तु जो देखने में मंझी लगती हो ।

मंभेहरी—स्त्री० [हि० मंभ्र+हरी (प्रत्य०)] १ मंभ्रों का काम । २. मांभपन ।

वि० मंभ्रों का-ना ।

मंभ्रों—स्त्री० [हि० मंभ्र] १ मांभ्रों का काम या पेशा । २. मंभ्रों की-सी ओझी बाने या हास-परिहास ।

मंभ्रौआ—पु० [हि० मंभ्र] १ मंभ्रों के गाने का गीत । २. व्यंग्य और हास्य से युक्त ऐसी कविता या गीत जो कहे या गाये जाने के योग्य न हो ।

मंभ्रिता—स्त्री०—भ्रान्ति ।

अव्य०—भ्रान्ति (प्रकार) ।

मंभ्रुटी—स्त्री० [हि० मंभ्रु+टी (वृष्ण)]

मंभ्र—पु० [सं० म/मा (घोसित होना) +क] १. बूल्हे का मुँह । २. घुआ । ३. मक्खी ।

मंभ्र*—पु० [सं० भ्रमर] १ बड़ी मधु-मक्खी । सारंग । २. बरें । मिड़ ।

मंभ्रना—अ० [हि० मयः+ना (प्रत्य०)] १ मयमीत होना । उरना । अ०—मभ्रना ।

मंभ्रा—पु० [सं० भ्रम] १ बिल । विवर । २. छेद । मूराख ।

स्त्री० [सं०] दुग्गी ।

मंभ्राका—पु० [हि० मभ्रा] १ बहुत बड़ा छेद । २. बहुत बड़ा बिल या विवर ।

वि० मोटा और स्थूल-काय ।

मंभ्राना—अ० [सं० मभ्राख] गी-मो-मो आदि पशुओं का चिल्लाना । रेंवाना ।

मंभ्रीरा—पु० [अनु०] एक प्रकार का बरसान्नी फलिया ।

मंभ्रीरी—स्त्री० [अनु०] १. पीले रंग का उमानी भर लवा तथा मिल्ली के समान पारदर्शक परोबाला एक प्रसिद्ध फलिया । २. लकड़ी आदि का एक प्रकार का छोटा खिलोना जो हाथ में घुमाने पर लट्टू की तरह घूमता है । फिकरी ।

मंभ्रीरा—पु० [हि० बगुला का रूप] १ चक्रवात । बगुला । उदा०—
धरनि विरलु बिबही फिरतु पस्वी मभ्रूरे पात ।—मजीठ । २. गरम राख या रेत ।

मंभ्रेरि*—स्त्री०—मय ।

मंभ्री—स्त्री० [अनु०] १ स्थूल-काय स्त्री । मोटी औरत ।

मंभ्रीकना—पु० [?] मोच-खसोट कर सत-विधस्त करना । जैसे—शेर का हिरन को मंभ्रीकना ।

मंभ्राना—अ०—मंभ्रना (घुमाना) ।

मंभ्रन*—स्त्री० [सं० भ्रमण] १ घुमने या चक्कर लगाने की क्रिया, डग या भाव । २. भ्रमण ।

मंभ्रना—अ० [सं० भ्रमण] १ चक्कर लगाना । २. घुमाना-फिरना ।

मंभ्रर—पु० [सं० भ्रमर] १ भ्रमर (मोरा) । २. नदी के मांझ या तट पर तथा पानी का महाव चकने पर लहरी के चक्कर काटते हुए आगे बढ़ने की स्थिति । ३. गर्द्धा । गंत । ४. मीर की तरह का या काले रंग का घोड़ा । मोरा । मुक्की । उदा०—हासलु मंभ्रर कि आह बलाती ।

वि० काला ।

मंभ्ररकली—स्त्री० [हि० मंभ्रर+कली] लोहे या पीतल की बड़ कबी जो कील में इस प्रकार डीली जड़ी रहती है कि चारों ओर सहज में घुमाई जा सकती है ।

मंभ्रर-गीत—पु०—भ्रमर-गीत ।

मंभ्रर-जाल—पु० [हि० मंभ्रर+जाल] समार और उसके धगड़े-बखेड़े । भ्रमजाल ।

मंभ्रर-भोख—स्त्री० [?] [हि० मंभ्रर+भोख] चारों ओर घूम-भूमकर प्राप्त की हुई मिथा ।

मंभ्रर—पु०—मोरा ।

मंभरी—स्त्री०—१.—मोरी । २.—मंभ्रर ।

स्त्री०—मंभ्रर (नदी का) ।

स्त्री० [हि० मंभ्रना] घूम-भूमकर सोदा बेचना ।

भंषाना—स० [हि० भंषना] १ घुमाना । २. बचकर देना । ३. धोके का भ्रम में डालना ।
 भंषार—वि० [हि० भंषना+आरा (प्रत्य०)] जो प्रायः घुमाना-फिरता रहता हो। जिसे भ्रमण करने की लत पड़ी हो।
 भंषेयाना—वि० [हि० भंषना] १. घुमाने या बचकर दिखानेवाला । २. तरहूँ तरहूँ के नाच मनाने या लेख लेखानेवाला ।
 भंषतर—पु०—भंषेयती (करके की) ।
 भंषारा—पु० [सं० भाङ-शाला] १. रसीर-घर । चौका । २. दे० 'भंषार' ।
 भंषारा—पु० १.—भाङ । २.—मट्टा । ३.—'भंषा' ।
 भंषया—पु० [हि० भार्द+इया (प्रत्य०)] १. भारी । २. भारी अथवा बराबर बालों के लिए सम्बोधन-सूचक शब्द ।
 भंषि—अव्य० [हि० भार्द] संबोधन रूप में प्रयुक्त होनेवाला एक अव्यय । जैसे—भंषि बाहू ? क्या बात है ।
 भंषु—पु०—भव (संसार) ।
 भंषजार्द—स्त्री०—मौजार्द ।
 भंषु—स्त्री० [हि० भयकना] आग के एकाएक भयकने से होनेवाला शब्द । यव—भंषु से—एकाएक । सहसा ।
 भंषटना—अ०—भयकना ।
 भंषटना—अ०, स०—भयकना ।
 भंषट्टना—अ०—भगरना ।
 भंषकानाना—अ० [अनु०] १ 'भंष-भंष' शब्द करके जलना या रह-रहकर भयकना । २. भयकाना ।
 स० १ उक्त प्रकार से जलाना । सुलगाना । २. भयकाना ।
 भंष-भूर(रि)—वि० [सं० भूक] १ मूर्ख । २. उजड़ू। उदा०—'बाहू की चटक ने भयो न हिंये शोच जा के, प्रेमपरि कथा कहै कथा भंषभूर सो।—भयानद ।
 भंषरीध—स्त्री० [हि० भगरना अथवा भंष+भंष] सड़े हुए अनाज की धा । भूक-प्रत्येय ।
 भंषरीध—वि० [हि० भंषरीध+आ (प्रत्य०)] दुर्गन्ध से युक्त या सड़ा हुआ (अन्न) ।
 भंषरुई—पु० [सं० भग्न-शब्द] छिन्न-भिन्न या कटा हुआ धड़ ।
 भंषबा—वि०—मडुआ ।
 भंषसना—अ० [अनु०] इस प्रकार सड़ना कि दुर्गन्ध निकलने लगे । †स०—भंषोसना ।
 भंषसा—वि० [हि० भंषसना या भंषटाव] साध पदायं ।
 भंषसना—स० [हि० भंषसना का स०] इस प्रकार सड़ाना कि दुर्गन्ध निकलने लगे । †अ०—भंषसना ।
 भंषसी—स्त्री० [?] काल-कोठरी । (पूरव)
 भंषसा—पु० [अनु०] बर्षनों को डराने के लिए एक कल्पित जानु । हीजा ।
 भंषुआ—वि० [सं० भूक] १. मूर्ख । भूड़ । २. बहुत बबरामा हुआ ।
 भंषुआना—अ० [हि० भंषुआ] १. मूर्ख बनना । २. बचटा जाना । स० १. किसी को मडुआ बनाना । बेवकूफ बनाना । २. बहुत ही बबरामा में डालना ।

भंषुआ—पु० [हि० भंषुआ] वह मोटा गज जिससे तोप में बली आदि ठूँकी जाती है।
 भंषुआना—स० [हि० भंषुआ+आना (प्रत्य०)] १. लोहे के गज से तोप के मुँह में बली भरना । २. उक्त प्रकार से तोप का नल साफ करना ।
 भंषुरणा—अ० [?] नाराज या रुष्ट होना । मुँह फुलाना । उदा०—मडुर गई है तो भंषुरी रहे।—बूढावनलाल बर्म।
 भंषुआ—वि०—भंषुआ ।
 भंषुट—पु० [सं० ब० तं०] एक प्रकार का राशियोग जो बिवाह की गणना में शुभ माना जाता है। (फलित ज्यो०)
 भंषोसना—स० [सं० भयण] १. बहुत बड़बड़े बड़े तथा एक पर एक कीर मुँह में दूसते चलना । २. लाक्षणिक अर्थ में, बहुत बड़ी संपत्ति हजम कर या खानी जाना ।
 भंषोसु—वि० [हि० भंषोसना] १. भंषोसनेवाला । २. बहुत अधिक खानेवाला । भुखसूड़ । ३. बहुत बड़ी संपत्ति हजम करने या खानी जानेवाला ।
 भंषत—वि० [सं०/जम् (सेवा करना)+भ्त, कृत्व] [भाव० भवित] १. बाटा हुआ । शर्मों में बाटा हुआ । जिसका या जिसके बिनाग हुए हों। २. सब को बाटकर हिस्से के मुताबिक दिया हुआ । ३. अलग या पृथक् किया हुआ । ४. किसी का पक्ष लेनेवाला । पक्षपाती । ५. अनुयायी । अनुयायी । ५. किसी पर भक्ति और श्रद्धा रखनेवाला ।
 पु० १. पका हुआ चावल । मात । २. धन । ३. वह जो भंडा-पूर्वक किसी की उपासना या पूजा करता या किसी पर पूरी निष्ठा रखता हो । ४. वह जो धार्मिक दृष्टि से मांस-भण्डी खाना पाप समझता हो ।
 भंषत-गृह—पु० [सं० ब० तं०] बौद्ध सिद्धों की भोजनशाला ।
 भंषतजा—स्त्री० [सं० भंषत/जम् (उत्पत्ति)+ङ+टाप्] अमृत ।
 भंषतजा—स्त्री० [सं० भंषत+त्व+टाप्] भक्ति ।
 भंषत-मूर्ध्व—पु० [सं० मध्य० तं०] एक प्रकार का बाजा जो भोजन के समय बजाया जाता था ।
 भंषतत्थ—पु० [सं० भंषत+त्व] किसी के लख या विभाग होने का भाव ।
 भंषत-वासा (तु)—पु० [सं० ब० तं०] मरण-गोधन करनेवाला ।
 भंषत-वास—पु० [सं० सुसूया स०] वह भक्त जिसे अपने सेव्य या स्वामी से केवल भोजन-कपड़ा मिलता हो ।
 भंषत-गुलाक—पु० [सं० ब० तं०] १. मात का कीर । २. माँड । पीष ।
 भंषत-प्रिय—पु० [सं० ब० तं०] सीति में, कनटकी पदसि का एक राग ।
 भंषत-मंड—पु० [सं० ब० तं०] माँड । पीष ।
 भंषत-मंडक—पु० [सं० ब० तं०]—भंषतमंड ।
 भंषत-भण्डल—वि० दे० 'भंषतवसल' ।
 भंषत-वसल—पु० [सं० ब० तं०] [भाव० भंषत-वसलता] जो भक्तों पर कृपा करता और लोह रहता हो । पु०—विष्णु ।
 भंषत-शारंग—पु० [सं० ब० तं०] भोजनघाला । रसीर-घर ।

भक्त-शाला—स्त्री० [सं० ष० त०] १ पाकशाला। रमोई-घर। २ भक्त के बैठकर घर्मोपदेश सुनने का स्थान।

भक्त-सिन्धु—पुं० [सं० ष० त०] २ 'भक्तपुलाक'।

भक्तार्थ—स्त्री० [हिं० भक्त + आर्थ (प्रयोग)] भक्ति।

भक्ति—स्त्री० [सं० ष० भृत् + क्तिन्] १ कोई चीज काटकर या और किसी प्रकार कई टुकड़ों या भागों में बँटने की क्रिया या भाव। विभाजन। २. उक्त प्रकार से काटे हुए टुकड़े या किये हुए विभाग। ३ अंग। अवयव। ४ छटा। टुकड़ा। ५ कोई ऐसा विभाग जिसकी सीमाएँ रेखाओं के द्वारा अंकित या निर्दिष्ट हों। ६ उक्त प्रकार का विभाजन करनेवाली रेखा। ७ किसी प्रकार की रचना। ८ भावमयी। ९ उपचार। १० किसी के प्रति होनेवाली निष्ठा, विन्यास या श्रद्धा। ११ उक्त के फलस्वरूप किसी के प्रति होनेवाला अनुराग या स्नेह, अथवा की जानेवाली किसी की सेवा-शुभ्र्या या अर्चन-पूजन। १२ धार्मिक क्षेत्र में, आराध्य, ईश्वर, देवता आदि के प्रति होनेवाला वह श्रद्धापूर्ण अनुराग जिसके फल-स्वरूप वह सदा उसका अनुयायी रहता और अपने आपको उसका सबर्जन मानता है। (विभोगन)

विषय—साहित्य के भक्ति-मूत्र में यह सात्विकी, राजकी और तामसी

तीन प्रकार की कही गई है।

१२ किसी बड़े के प्रति होनेवाली पूज्य बुद्धि, श्रद्धा या आदरभाव।

१४ जैन मतानुसार वह वसन जिसमें निरतिशय आनंद हो

और जो सर्वप्रिय, अनन्य, प्रयोजनविहित तथा विगुणा का उपवकारक हो। १५ साहित्य में ध्वनि, जिससे कुछ लोग गीण

और लक्षणागम्य मानते हैं। १६ प्राचीन भारत में कपड़ों की छपाई, रंगाई आदि में बनी हुई कोई विशेष आकृति या अभिप्राय।

१७ छंद गानर में एक प्रकार का वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में तमग,

मगण और अंत में गुरु होता है।

भक्ति-गन्ध—वि० [सं० पुं० त०] भक्ति द्वारा प्राप्य।

पुं० शिव।

भक्तिभान्—(भान्)—वि० [सं० भक्ति + भान्] [स्त्री० भक्तिभान्]।

१ जिसके विभाग हुए हों। २ जिसके मन में किसी के प्रति भक्ति हो।

भक्ति-भाग्य—पुं० [सं० ष० त०] ईश्वर-दर्शन या भासा भाक्ति के तीन

भागों में से एक जिसमें ईश्वर की भक्ति से अनुरक्त तथा प्रसन्न किया

जाता है।

भक्ति-योग—पुं० [सं० ष० त०] १ उपास्यदेव से अत्यंत अनुरक्त हाकर

उनकी भक्ति में लीन रहना। सदा भगवान में श्रद्धापूर्वक मन लगाकर

उनकी उपासना करना। २ भक्ति का साधन।

भक्ति-ल—वि० [सं० भक्ति + ल (लेना) + क] १ भक्तिदायक।

२ शिवसमीप।

पुं० शिवसमीप। घोषा।

भक्ति-शब्द—पुं० [सं० ष० त०] साहित्य में, कुछ लोगों का यह मत था

सिद्धान्त कि काव्य में ध्वनि प्रमुख नहीं, बल्कि भक्ति (गीण और लक्षणा

गम्य) है।

भक्ति-शारी (सिन्)—वि० [सं० भक्तिशब्द + शिन्] भक्ति-शब्द सम्बन्धी।

भक्ति-वाद का।

पुं० वह जो भक्तिवाद का अनुयायी या समर्थक हो।

भक्ति-मूत्र—पुं० [सं० मध्य० सं०] वैष्णव सम्प्रदाय का एक सुप्र-मध्य जो शाब्दिक मुनि का रचा हुआ माना जाता है और जिसमें भक्ति का विस्तृत विवेचन है।

भक्ती—स्त्री०—भक्ति।

भक्तोपसाधक—पुं० [सं० भक्त-उपसाधक, ष० त०] १ पाषक। रसोइया। २ वह जो भोजन परमोमत हो।

भक्त—पुं० [सं० ष० भृत् (भोजन करना) + भृत्] १. भोजन करना। खाना। २ खाने का पदार्थ। मध्य। खाना। भोजन।

भक्त—वि० [सं० ष० भृत् + क्त] [स्त्री० भक्ति] १ भोजन करनेवाला। खादक। २ खा जानेवाला। जैत—नर-भक्त।

भक्तकौर—पुं० [सं० भक्त/क (करना) + क्त, उप० ग०] १ हलवाई। २ पाषक। रसोइया।

भक्षण—पुं० [सं० ष० भृत् + ल्यट्—अन] [वि० मध्य, भक्षित, भक्षणीय] १ किसी वस्तु को खाने से काटकर खाना। २ भोजन करना। ३. आहार। भोजन।

भक्षणीय—वि० [सं० ष० भृत् + अनीयर्] जो खाया जा सके अथवा जो खाया जाने को हो।

भक्षना—सं० [म० भक्षण] १ भक्षण करना। खाना। २ बुरी तरह से अपने अधिकार में कर दुष्टयोग करना।

भक्षित (तृ)।—[सं० ष० भृत् + क्त] भक्षण करनेवाला।

भक्षित—मू० कृ० [सं० ष० भृत् + क्त] खाया हुआ।

पुं० आहार।

भक्षी—वि० [सं० भक्ष + शिन्] [स्त्री० भक्षिणी] समस्त पदों के अन्त में, खानेवाला। भक्षः। जैसे—गीट-भक्षी, गाम-भक्षी।

भक्ष्य—वि० [सं० ष० भृत् + क्त] खाये जाने के योग्य जो खाया जा सके। पुं० खाने-पीने की चीजें। खाद्य पदार्थ।

भक्ष्याभक्ष्य—वि० [म० भक्ष्य-अभक्ष्य, द्व० सं०] खाद्य और अखाद्य (पदार्थ)।

भक्ष्—पुं० भोजन।

भक्षना—सं० [म० भक्षण प्रा० भक्षन] १. भोजन करना। खाना।

२ निगलना।

भक्षी—स्त्री० [देष०] एक प्रकार की घास जो छपर छाने के काम आती है।

भगवर—पुं० [म० भाग + वर (सिद्धारण करना) + णिच् + लृच्, मूच्] एक प्रकार का फोडा जो मुदावतं के किनारे होता है। यह नापूर के रूप में ही जाता है और इतना बड़ जाता है कि इसमें से मल-मूत्र निकलने लगता है। (सिमच्युला)

भा—पुं० [सं० मन् + घ] १ मूयं। २ बारह आदित्यों में से एक। ३ चंद्रमा। ४ धन-सम्पत्ति। ऐश्वर्य। ५. इच्छा। कामना।

६ महाहर्म्य। ७ प्रयत्न। ८ धर्म। ९ मोक्ष। १०. सीकर्म्य।

११. कालि। चमक। १२. पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र। १३ एक देवता।

दक्ष के यज्ञ में भीमदेव ने इनकी आँख फोड़ दी थी। १४ छ प्रकार की

विभूतियाँ सम्पूर्णवर्ग, सम्पूर्णवीर्य, सम्पूर्णसस, सम्पूर्णश्रव और

सम्पूर्णन कर्तृ हैं।

स्त्री० [सं० भग्य] कियों की योगिनी।

भगई—स्त्री० [हि० भगवा] कपड़े का वह लंबा टुकड़ा जिसे पहले कमर में लपेटकर फिर लघोटी की तरह लौंग लगाई जाती है ।

भग-काव-वि० [सं० भग+कम्+विङ्+अण्, उ० सं०] सर्वोत्तम का इच्छुक ।

भगवत्—पु० [सं० ष० त०] १ खगोल में ग्रहों का पूरा चक्कर जो ३६० वर्ष का होता है । २ छंदशास्त्र में तीन वर्णों का एक गण जिसका आदि का वर्ण गुरु और अंत के दो वर्ण लघु होते हैं । जैसे—कारण, पोषण ।

भगत—वि० [सं० भक्त] [स्त्री० भगतिन] १ भक्ति करनेवाला । भक्त । २ विचारवान् ।

पु० १ साधु या सन्यासी । २ वह जो धार्मिक विचार से मांस-मछली आदि न खाता हो । ३ वैष्णव, जो तिलक लगाता और मांस आदि न खाता हो । ४ राजपूताने की एक जाति । इस जाति की कन्याएं

वैश्या-वृत्ति और नाचने-गाणे का काम करती हैं । दे० 'भगतिया' ।

५ होली में वह स्थांग जो भक्तों आदि का रत्न जाता है । इसमें भक्तों का उपहास होता है । ६ द्रुपदारस प्रथान तथा लोक-कथा पर आश्रित एक प्रकार का संगीत रूपक जो प्राय नौटकी (दिले) की तरह होता और प्राय पुरसा भर ऊंचे मंच पर अभिनीत होता है । इसमें प्राय व्यंग्य और हास्य का भी अच्छा मिश्रण रहता है । ७ वैश्या के साथ बाजा बजायवाला संगतिवा । (राज०) ८ मन्-तन्त्र से मूल-प्रेत हाइनेवाला पुष्य । ओसा । सयाना ।

भगत-बछल*—वि० दे० 'भक्त-वत्सल' ।

भगत-बाज—पु० [हि० भगत+फा० बाज] १ स्वांग भरकर लीड़ो की अनेक रूप का बनायेवाला पुष्य । २ लीड़ो की नाच-गाना सिलाने-बाला व्यक्ति ।

भगतानना—स० भूगताना ।

भगति—स्त्री० = भक्ति ।

भगतिन—स्त्री० [हि० भगत] भक्त स्त्री ।

स्त्री० [हि० भगतिया का स्त्री०] रडी । वैश्या ।

भगतिवा—पु० [हि० भक्त] [स्त्री० भगतिन] राजपूताने की एक जाति । कहते हैं कि ये लोग वैष्णव साधुओं की संतान हैं जो अब गाने-बजाने का काम करते हैं और जिनकी कन्याएं वैश्या-वृत्ति करती और भगतिन कहलाती हैं ।

भगती—स्त्री० = भक्ति ।

भगवद्—स्त्री० [हि० भागना+दोड़ना] संकट की स्थिति में भीड़ का सनत होकर इधर-उधर भागना ।

कि० प्र० = भगना ।

भगव—वि० भग ।

भगवहा—पु० [सं० भगवहा] करेछा नामक कंटीली बेल ।

भगना—अ० = भागना

पु० = भागनेय (मान्जा) ।

भगनी—स्त्री० = भगिनी (बहन) ।

भग-भक्त—पु० [सं० ष० त०] स्त्रियों का दलाल । कुटना ।

भगर—पु० [हि० भगरना] १ सड़ा हुआ जन्न । २. दे० 'भगल' ।

† पु० [देश०] [स्त्री० भगती] १ छल । कपट । २ डोंग ।

मूहा—भगर भरना—डोंग करना ।

भगरना—अ० [सं० विकरण, हि० विगटना] लत्ते से धर्मी पाकर अनाज का सबने लगना ।

सयो० कि० = जाना ।

भगल—पु० [देश०] १. छल । कपट । पोसा । २. आहम्बर ।

डोंग । ३. इन्द्रजाल । जादू । ४. किसी तकली चीज को असली बताकर अथवा साधारण चीज को बहुमूल्य बना देने का ढोंग रखकर दूसरो को ठगने की कला या क्रिया । जैसे—ताबे या पीतल की सोना बनाने का प्रयोग करने केर दूसरो को ठगना । (सिंहखलि)

भगतिवा—पु० [हि० भगल] १. डोंगी । पाखड़ी । २. कपटी । छलिया । ३. ऐंद्रजालिक । जादूगर । ४. वह जो लोगों का विश्वास-मान बनकर उन्हें ठगता हो । (सिंहखलर)

भगली—पु० = भगलिया ।

स्त्री० = भगल ।

भगवत्—पु० [सं० भगवत् का बहु० भगवन्] भगवान् ।

भगवत्—वि० [सं० भग+मनुष्य, बल] [स्त्री० भगवती] १. ऐश्वर्य-शाली । २. पूज्य । मान्य ।

पु० १. भगवान् । २. विष्णु । ३. शिव । ४. गौतम बुद्ध ।

५. कार्तिकेय । ६. सूर्य । ७. जैनों के जिनदेव ।

भगवती—स्त्री० [सं० भगवत्+दोप] १. देवी । २. गौरी । ३. सरस्वती । ४. गंगा । ५. दुर्गा ।

भगवतीय—वि० [सं० भगवत्+छ—ईय] १. भगवद्भक्त २. भगवत्-संबधी ।

भगवद्भक्त—पु० [सं० भगवत्-भक्त, ष० त०] १. भगवान का भक्त । ईश्वर-भक्त । २. विष्णु का भक्त । ३. दक्षिण भारत के वैष्णवों का एक सम्प्रदाय ।

भगवद्भक्ति—स्त्री० [सं० भगवत्-भक्ति, ष० त०] भगवान की भक्ति ।

भगवद्भिषह—पु० [सं० भगवत्-विषह, ष० त०] भगवान का विषह या भूति ।

भगवत्कीला—स्त्री० [सं० भगवत्-कीला, ष० त०] ईश्वरिय कीला ।

भगवा—पु० [हि० भक्त] एक प्रकार का रंग जो गेरू के रंग की तरह का लाल होता है ।

वि० उक्त प्रकार के रंग में रंगा हुआ । जैसे—भगवे कपड़े, भगवा झंडा ।

भगवान (बत्)—वि० [सं० दे० भगवत्] १. ऐश्वर्यशाली । २. पूज्य । मान्य । ३. कुछ संतों में पारिभाषिक रूप में, ऐश्वर्य, बल, यश, श्री, ज्ञान और वैराग्य से सम्पन्न ।

पु० १. ईश्वर । परमेश्वर । २. शिव । ३. विष्णु । ४. गौतम बुद्ध । ५. जिनदेव । ६. कार्तिकेय । ७. कोई पूज्य और आदरणीय व्यक्ति । जैसे—भगवान वेदव्यास ।

भगवर्—स्त्री० = भगवद् ।

भगव (हर्)—पु० [सं० भग+हर् (मारना)+विबन्] १. शिव । २. विष्णु ।

भगवर्—पु० [सं० भग+अकुर, ष० त०] अर्ध रोग । बवासीर ।

भगई—स्त्री० [हि० भागना] १. भागने की क्रिया या भाव । २. भगदड़ ।

भगाइ—पु० [?] पोली जमीन में बँसने या बैठ जाने के फलस्वरूप होने-वाला गड्ढा ।

भगाना—स० [सं० बज] १. किसी की भागने में प्रवृत्त करना। ऐसा काम करना जिससे कोई मागे। २. बच्चे, स्त्री आदि को उसके अभिभावकों से थोड़ी, उठाकर या फुसलाकर कहीं ले जाना। (एवञ्चवान्) ३. बूर करना। हुदना।

†अ० -भागना।

भगाल—पु० [सं०/मञ् (गैवा करना)। कालम्, ज -य] (मनुष्य की) कोपड़ी।

भगाली—वि० [सं० भगाल + इति] १. भगाल-सबधी। २. खोपड़ी धारण करनेवाला।

पुं० निव।

भगतश्च—पु० [सं० भग-अन्, मध्य० सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र।

भगिना—पु० -मानेय (भानुजा)।

भगिनिका—स्त्री० [सं० भगिनी + कन्, + टाप्, ह्रस्व] छोटी बहन।

भगिनी—स्त्री० [सं० भग + इति + ङीप्] १. बहन। २. भाय्यवती स्त्री।

भगिनी-पति—पु० [सं० ष० तं०] बहोमी।

भगिनीय—पु० [सं० भगिनी + छ-ईव] बहन का लड़का। भगिनेय। भांजा।

भगीरथ—पु० [सं० भ-गीर, ङ० सं०, भगीर-रथ, ब० सं०] अयोध्या के एक सूर्यवशी राजा जो राजा समर के पर-भोगे थे तथा जिन्होंने तपस्या करके स्वर्ग से गया नदी की अवतारना कराई थी।

वि० [सं०] भगीरथ की तपस्या के समान बहुत बड़ा, भारी या विशाल। जैसे—भगीरथ प्रयत्न।

भगीरथ-मुता—स्त्री० [सं० ष० तं०] गधा।

भगेइ—वि० -मगेलू।

भगेलू—वि० [हि० भागना। एलू (प्रत्य०)] १ जो कहीं से छिपकर भागा हो। भागा हुआ। २ जो काम करने पर भाग जाता हो। कामर।

भगोडा—पु० [हि० भागना। ओडा (प्रत्य०)] १ वह जो कहीं से छिप या डफेर भाग गया हो। २ वह जो दण्ड भोगने के भय से कहीं भाग गया हो। (ऐम्सकाडर) ३ कायर या डरपीक व्यक्ति।

भगोल—पु० [सं० ष० तं०] नक्षत्र-चक्र। खगोल।

भगोती—स्त्री० -भगवती।

भगीहूँ—वि० [हि० भागना। ओहूँ (प्रत्य०)] १ जिससे भागने की प्रवृत्ति हो। २. कायर। डरपीक।

†वि० भगना।

भगना—वि० [हि० भागना] (पशु या पक्षी) जो प्रतिद्वंदी से डरकर या पराजित होकर भाग गया हो।

भगी—स्त्री० -भगवड।

भगलू—पु० -भगीडा।

भग्—वि० [हि० भागना। ऊ (प्रत्य०)] १ जो विपत्ति देखकर भागता हो। भागनेवाला। २. कायर। डरपीक।

भग—वि० [सं०/मञ् (टूटना)। क] १ टूटा हुआ। खडित। २. हास हुआ। पराजित।

पुं० दे० 'विभग'।

भगन-हुत—पु० [सं० कर्म० सं०] प्राचीन भारत में, राजसेन से हारकर भारी हुई वह सेना जो राजा के पराजय को समाचार देने जाती थी।

भगन-वाद—पु० [सं० ब० सं०] फ्रांज़ि अयोधिय में पुनर्वसु, उत्तरापाङ्ग, कृतिका, उत्तरा कालान्दी, पूर्वभाद्रपद और विवाला में छ नक्षत्र विनये से किसी एक में मनुष्य के मरने में प्रिपाद दोष लगता है और धर्मशास्त्र के अनुसार जिसकी शान्ति कराना आवश्यक होता है।

भगन-मना (नस)—वि० [सं० ब० सं०] जिसका मन टूट गया हो। हतोत्साह।

भगन-मान—वि० [सं० ब० सं०] जिसका मान नष्ट हो चुका हो। तिरस्कृत।

भगनांश—पु० [सं० भगन-अंश, कर्म० सं०] मूल द्रव्य का कोई अलग किया हुआ भाग का अंश।

भगनास्त्रा (स्मन्)—पु० [सं० भगन-आत्मन्, ब० सं०] चन्द्रमा।

भगनाशयेय—पु० [सं० भगन-अशयेय, व० तं०] १ किमी टूटी-फूटी चीज के बच्चे हुए टुकड़े। २ किसी टूटे-फूटे भकान या उजड़ी हुई बस्ती का बचा हुआ अंश। खंडहर।

भगक—स्त्री० [हि० भक्कना] भक्कने की अवस्था, किया या माव।

भक्कना—भ० [हि० भौक्क] आश्चर्य में निभान होकर रह जाना। अ० [अनु० भक्] चलन के समय पैर का कुछ रुककर उठना या टेढ़ा पडना कि देलने में लगडाना हुआ सा जान पड़े।

भ-क्क—पु० [सं० ष० तं०] १ राशियो या ग्रहों के चलने का मार्ग। कक्षा। २. नक्षत्रों का वर्ग या समूह।

भक्का—पु० -भक्व।

भक्कक—वि० -भक्क।

भक्कन—पु० -भक्व।

भक्कना—भ० [सं० भक्क] भक्कन करना। धाना।

भजन—पु० [सं०] भजू (गैवा करना)। म्यूज - जय] १ शब्द, टुकड़े या भाग करना। २. श्रद्धापूर्वक ईश्वर और उसकी लीलाओं का गुण-गान और स्मरण करना। ३. वह गैव पर जिममें ईश्वर और उसकी लीलाओं का गुण-नयन हो।

भजना—सं० [मं० भजन] १ किमी की सेवा-शुश्रूषा करना। २. किसी का आश्रय लेना या आश्रित होना। ३. कहीं आकर पहुँचना। ४. ईश्वर और उसकी लीलाओं का श्रद्धापूर्वक कथन और स्मरण करना। ५. बार बार किमी का नाम लेते हुए जप करना। जैसे—राम भजो, मुझ पाजोगे। ६. भोगना। ७. धारण या बहन करना। उदा०—भजत मार भगमीत है पुन चन्दपुं बन माल।—बिहारी।

अ० [सं० भजन, पा० वजन] १ भागना। उदा०—नर को मन्वी नाम मुनि मेरो, पीठ दई जमराज।—सूर। २. प्राप्त होना। पहुँचना।

भजनानंद—पु० [मं० भजन-आनंद, मध्य० सं०] वह आनंद जो परमेश्वर या देवता के नाथ का भजन करने पर मिलता हो।

भजनानदी (विन्)—पु० [सं० भजनानंद + दीर्घ] १ मह जिसे ईश्वर भजन में ही आनंद मिलता हो। २. वह जिसकी जीविका भजन आदि करने से चलती हो।

भजनी—पुं० [हि० भजन] १. वह जो प्रायः ईश्वर-भजन करता हो।
२. दे० 'भजनीक'।

भजनीक—पुं० [हि० भजनी] १. भजन गाने और उनके द्वारा लोगों का मनोरंजन करनेवाला। २. जिसका पेशा भजन गायक लोगों को उपदेश देना तथा मनोविनोद करना हो।

भजनीय—वि० [सं०/अञ्+अनीयर] १. जिसे भजना उचित हो अथवा जिसे भजना चाहिए। २. जिसका आश्रय लिया जा सकता हो या लिया जाना उचित हो।

भजनीयवेशाक—पुं० [सं० भजन-उपदेशक, सुसुपा सं०] भजन के द्वारा या माध्यम से उपदेश देनेवाला व्यक्ति।

भजना—सं० [हि० भजना का प्रे० रूप] भजने या भजन करने में प्रवृत्त करना।

अ०—भजना (भागना)।

सं० १. भगाना। २. परे करना या हटाना। उदा०—कीर पिण्ड परे अंगुरी ललन केत भजार्थे।—भूर।

भजारा—वि० [हि० भजना ?] मित्र। दोस्त।

भक्तिघाउर—पुं० [हि० भाजी+घाउर (चावल)] १. चावल, दही, धी आदि एक साथ पकाकर बनाया हुआ नमकीन खाद्य-पदार्थ। २. दही, साग-भाजी आदि मिलाकर पकाने जानेवाले चावल।

भट—पुं० [सं०/मट (बौलना)+अच्] १. युद्ध करने या लड़नेवाला योद्धा। २. पहलवान। मल्ल। ३. सिपाही। सैनिक। ४. प्राचीन काल की एक वर्णसंकर जाति। ५. दास।

भू० १. मटनास। २. =मट्ट।

भटई—स्त्री० [हि० भाट] १. भाट होने की अवस्था या भाव। २. भाट का काम या पेशा। भाटों की-नी खुसामवय या चापलूसी अथवा झूठी तारीफ।

भटक—स्त्री० [हि० मटकना] भटकने की क्रिया, दशा या भाव।

भट-भट्टैया—स्त्री० [सं० भट्टकारी, हि० कटेरी या कटाई] एक प्रकार का कौटोला छोटा धूप जो बहूना बोधक के काम में आता है।

भटकन—स्त्री० [हि० मटकना] भटकने की क्रिया या भाव। भटक।

भटकेना—अ० [सं० भ्रम] १. ब्यर्थ दृश्य-उचर घूमने-फिरने रहना। २. ठीक रास्ता भूल जाने पर दृश्य-उचर, घूम-फिरकर उसे ढूँढने फिरना। ३. धोखे या भ्रम में पड़कर निश्चित तरह तक न पहुँचना। ४. मन या विचार का ज्ञान न रहकर दृश्य-उचर जाते फिरना।

भटका—पुं० [हि० मटकना] १. ब्यर्थ घूमने की क्रिया। २. चक्कर।

भटकाई—स्त्री० =भट-भट्टैया।

भटकान—स्त्री० =भटकैया।

भटकाना—सं० [हि० मटकना का सं० रूप] किसी को भटकने में प्रवृत्त करना। ऐसा काम या बात करना जिससे कोई भटके।

भटकेय—पुं० [हि० मटकना+एया (प्रत्य०)] १. भटकनेवाला। २. भटकानेवाला।

भू० =भट-भट्टैया।

भटकीहू—वि० [हि० मटकना+ओहू (प्रत्य०)] १. भटकता दूखे-वाला। २. भटकानेवाला। मुझाने में डालनेवाला।

भट-तीतर—पुं० [हि० भट=भट्टा+तीतर] प्रायः एक फूट लंबा एक प्रकार

का पत्थी जो आड़े में उत्तर-दक्षिणी मातर में आता है। प्रायः इसके बांस के लिए इसका सिकार किया जाता है।

भट्ठाना—अ० [?] गड्डे आदि का पाटा या मरा जाना। पटना। उदा०—बहु कुंडशोभित सो भटे, पित्तु लप्यादि फिया सखी।—केवाल।

भट्ठनास—स्त्री० [ब्रह्म०] १. एक लता और उसकी फलियाँ। २. उक्त फलियों के बीज जो साल की तरह रोष कर खाये जाते हैं। भट्ठनास। भट्टेनर—पुं० [सं० भट-नगर] सिंधु नद पर स्थित एक प्राचीन राज्य।

भट्टेनर—पुं० [सं० भट+नगर] १. भट्टेनर नगर का निवासी। २. वैश्यों की एक जाति।

वि० भट्टेनर नगर का या उससे संबंध रखनेवाला।

भटभट्टी—स्त्री० [अनु०] ऐसी अवस्था जिसमें आँखों में चकाचौंध होने के कारण कुछ दिखाई न पड़े। उदा०—बात अटपटी बड़ी, बाहू चटपटी रहे, भटभट्टी लगी जो पै बीच बहनी बतै।—भवानय।

भट्टेरा—पुं० [हि० भट+भिट्ठन] १. दो बीरों का सामना। मुकाबला। भिट्ठन। २. टक्कर, ठोकर या पक्का। ३. बनायात हो जाने-वाली भेंट या मामना। उदा०—माली अंधेरी साँकरी माँ भट्टेरा आनि।—बिहारी।

भट्टेराई—पुं० =भट्टेरास।

भट्टा—पुं० =भंटा (बैंगन)।

भट्टियार—पुं० [?] सगीत में एक प्रकार का राग।

भट्टियारा—पुं० =भट्टियार।

भट्टियारी—स्त्री० [?] सगुण जाति की एक सकर रागिनी जिसमें श्चयम कोमल लगता है।

भट्टियाल—पुं० =भट्टियाल।

भट्टमा—पुं० [?] बहु सूखी हल्की भूमि जिसमें केवल जाड़े की फसल होती है।

भट्ट—स्त्री० [सं० भट का स्थानिक स्त्री०] १. स्त्रियों के संबोधन के लिए एक आदर-सूचक शब्द। २. सखी। सहेली।

भट्टेरा—पुं० [दिश०] वैश्यों की एक जाति।

भट्टेस—पुं० [?] एक प्रकार का पीथा।

भट्टे—स्त्री० =भट्टेई।

भट्टेय—पुं० [दिश०] मध्य-युग में यात्रियों के गले में फाँसी लगानेवाला ढग। (ऊठों की परिभाषा)

भट्टैया—स्त्री० =भटकटैया।

भट्टोला—वि० [हि० भाट+ओला (प्रत्य०)] १. भाट का। भाट-संबंधी। २. भाटों के लिए उपयुक्त।

पुं० बहु भूमि जो भाटों को निर्बाह के लिए पुरस्कार रूप में मिली हो।

भट्टु—पुं० [सं०/मट+तल्] १. बाह्यांशों की एक उपाधि जिसके धारण करनेवाले दक्षिण भारत, मालव आदि कई प्रांतों में पाये जाते हैं। २. विशिष्ट रूप से महाराष्ट्र बाह्यांशों की उपाधि। ३. दे० 'भट्ट'। ४. दे० 'भाट'।

भट्टाचार्य—पुं० [सं० भट्ट-आचार्य, ङं सं०, +अच्] १. सर्वानुशासन का परिचित २. सम्मानित अध्यापक (पदवी रूप में प्रयुक्त)। ३. बंगाली बाह्यांशों की एक जाति या वर्ग।

भट्टार—पु० [स० मट्ट/भ्र + अणु, वृद्धि] पुण्य। माननीय। (पदवी रूप में प्रयुक्त)

भट्टारक—वि० [स० भट्टार + क्त] [स्त्री० भट्टारिका] पुण्य। माननीय। पु० १ राजा। २ मुनि। ३ पंडित। ४ सूर्य। ५ देवता।

भट्टिनी—स्त्री० [स० भट्ट, इति, डीप्] नाटक की भाषा में राजा की वह पत्नी जिसका अंगणक न हुआ हो।

स्त्री० हिं० भट्ट का स्त्री०।

भट्टी—स्त्री० भट्टी।

भट्टा—पु० [स० भट्ट, प्रा० भट्ट] [स्त्री० अल्या० भट्टी] वह स्थान जहाँ कृषा, कोयला आदि जलाकर इँटे पकाई जाती हैं। अर्थात्।

भट्टी—स्त्री० [स० भट्ट, प्रा० भट्ट] १ वह घिरा हुआ आशान या स्थान जिसमें धानु आदि गलने अथवा कुछ विशिष्ट प्रकार की चीजे सेकने के लिए आग जलाई जाती अथवा ताप उत्पन्न किया जाता है।

भूठ—भट्टी बहुकता (क) किसी का कारोबार खोरी पर होना। बहुत आग होना। (व्यय) (स्त्र) किसी काम या बात की बहुत अधिकता या खोर होना।

२ वह स्थान जहाँ देवी शराब बनती हो।

भठ—पु० -भट्टा।

भठियाना—अ० [हिं० भाठा/इयाना (प्रत्य०)] समुद्र में भाटा आना। समुद्र के पानी का नीचे उतरना।

भठियार—पु० -भठियार (राग)।

भठियारखाना—पु० [हिं० भठियार/का० खाना] १ भठियारों के रहने का स्थान। २ वह जगह जहाँ बहुत शोरगुल होता हो। ३ कमीने तथा असत्य लोगों की बैठक।

भठियारपन—पु० [हिं० भठियार/पन (प्रत्य०)] १ भठियारों का काम। २ भठियारों की तरह की लड़ाई या अस्वील आचरण, या व्यवहार।

भठियार—पु० [हिं० भट्टा/इयार (प्रत्य०)] [स्त्री० भठियारन, भठियारिन भठियारी,] सत्य का मालिक या प्रबंधक जो पात्रियों के टिकने तथा खाने-पीने आदि की व्यवस्था करता था।

भठियारो—स्त्री० १ भठियार का स्त्री०। २ भठियारपन।

भठियार—पु० [हिं० भाटा] समुद्र के पानी का नीचे उतरना। भाटा।

भठियार—पु० [स्त्री० भठियारिन] भठियारग।

भठुनी स्त्री० [हिं० भट्टी/उली (प्रत्य०)] ठंडों की मिट्टी की बनी हुई वह छोटी भट्टी जिसमें गर्मने से पहले चीजे तपाते या लाल करते हैं।

भड—पु० [अनु०] [भाव० भडगो] १ दिखाने की झूठी बात। आडंबर। उदा०—परि हाकी आम गुन गौरव गुमान घोह गीर्णिकी का आवतन भावत भडग है।—रत्नाकर। २ भडपन।

भडगी—स्त्री० -भडक।

वि० दिखाना करनेवाला। आडंबर रचनेवाला।

भडवा—पु० [स० विडवा] १ दिखानेवाली ठाठ-भाट। आडंबर। २ व्यर्थ का बहुत बडा जंजाल या बहस।

भड—पु० [अनु०] 'भड' शब्द को प्राय किसी चीज के गिरने से होता है।

पु० -भट (घोडा)।

भडक—स्त्री० [अनु०] भडकने की अवस्था या भाव।

स्त्री० [?] तीव्र चमक-दमक।

भडकवार—वि० [हिं० भडक/का० दार] भडकीला।

भडकना—अ० [अनु० भडक/ना (प्रत्य०)] १ कोयले, मोहरे आदि का आग में स्पष्ट होने पर सहसा लौ में अग्न उठना। २ किसी प्रकार के मनाभाव का सहना नीव या प्रबल होना। जैत—जोब भडकना।

३ पशुओं का भयभीत होकर या सहक कर आर्त्ता सामान्य गति या स्थान छोड़कर उछल-कूदना या दृश्य-नगर भागने लगना। ४ व्यक्तित का प्राय दूसरों की बातों में आकर अवश या क्रोध में मुक्त होना और कुछ का कुछ करने लगना। ५ किसी के पाम या समीप जाने में हिचकना और सशक्त रहकर उभने दूर या पर रहना। जैसे—मुझे देवकर वह भडतला है।

भडकाना—स० [हिं० भडकना का सं० रूप] १ अनि परजानित करना। ज्वाला बढाना। २ उमेरजिन या नुड करना। ३ नीव या प्रबल करना।

४ ऐसा काम करना जिसमें कोई या कुछ भडने। ५ किसी को इस प्रकार भ्रम में डालना या भयभीत करना कि वह कोई काम करने के लिए तैयार न हो। जैसे—किसी का घालूक भडकाना।

सवो० कि०-देना।

भडकीला—वि० [हिं० भडक/ईला (प्रत्य०)] [भाव० भडकीलापन] जिसमें बूड चमक-दमक हो। भडकदार।

वि० [हिं० भडकना] जल्दी भडकनेवाला।

भडकी टापन—पु० [हिं० भडकीला/पन (प्रत्य०)] १ भडकीले होने की अवस्था या भाव। २ चमक-दमक।

भडकील—वि० [हिं० भडकना] जल्दी चीकने, विदकने या भडकनेवाला।

भडभड—स्त्री० [अनु०] १ भडभड शब्द जो प्राय एक चीज पर दूसरी चीज खोर जोर से पटकने अथवा बडे बडे होल आदि वजाने में उत्पन्न होता है। आषानो का शब्द। २ व्यर्थ की बातें खोर हा-हल्ला। ३ दे० 'भौड-भाड'।

भडभडना—स० [अनु०] भडभड शब्द उत्पन्न करना।

अ० किसी चीज में भे भडभड शब्द उत्पन्न होना।

भडभडिया—वि० [हिं० भड भड/इया (प्रत्य०)] १ भड भड अर्थात् व्यर्थ बहुत अधिक बातें करनेवाला। २ मन में छिपाकर बात न रख सकनेवाला। भेद की बातें दूसरों पर प्रकट कर देनेवाला। ३ जो बौग तां बहुत हाकना हा, पर काम कुछ भी न करता हो।

भडभड—पु० [य० भाडाग] एक कंटीला पीषा जिसके बीजों का तेल हडकीला होता है। सपानामी। मोह।

भडभुंजा—पु० [हिं० भाड/भुंजा] हिन्दुओं में एक जाति को भाडू में अन्न मूलन का काम करनी है। नुजवा। भुंजी।

भडरी—स्त्री० [दिना०] १ अनाज की भंडाई हो जाने पर भी पीषों में बचा हुआ अन्न। गंठा।

भडवा—पु० भडवा।

भडवाई—स्त्री० भडवाई।

भडवाई—स्त्री० [हिं० भाड] भडभुंजे का माइ या भट्टी जिसमें वह अनाज का देने भूता है।

मुहा०—भङ्गसाईं बहकना या चिकना=किसी काम या बात की बहुत उन्नति या प्रगति होना। (अभ्य)

भङ्गसार—स्त्री० [हि० सारु + शाला] बहु भँवरिया जिसमें पकया हुआ भोजन रखा जाता है।

भङ्गहर—स्त्री० = भँवरहर।

भङ्गार—पुं० = भंशार।

भङ्गाल—पुं० [सं० भट] योद्धा। वीर।

भङ्गस—स्त्री० [हि० भङ्ग से अङ्ग०] १. बहु गरमी जो तपी हुई जमीन पर पानी गिरने या छिड़कने से उत्पन्न होती है। २. आवेश में आकर तबका कठे शब्दों में किसी पर प्रकट किया जानेवाला भागसिक असलीप।
क्रि० प्र०—निकालना।

भङ्गिक—अभ्य० [अङ्ग०] १. अचानक। सहसा। २. चट-भट। तुल्लत।
३. बिना सोचे-समझे और एकदम से।

भङ्गिहा—पुं० [सं० भाङ्गहर] [भाव० भङ्गिहार] चोर। लस्कर।
(दुल्हे)।

भङ्गिहार—क्रि० वि० [हि० भङ्गिहा] चोरी की तरह। लुक-छिप या दबकर।

स्त्री० = चोरी।

भङ्गी—स्त्री० [हि० भङ्गकाना] भङ्गकाने की किया या भाव। विशेषतः किसी को मूर्ख बनाने अथवा किसी का अहित चाहने के उद्देश्य से उसे कोई गलत काम करने के लिए दिया जानेवाला बड़ावा।

क्रि० प्र०—वेना।—में आना।

भङ्गजा—पुं० [हि० भङ्ग] १. वेपथियों के साथ तबला या सारपी बजानेवाला। सपरदाई। २. वेपथियों का दलाल।

भङ्गजाई—स्त्री० = भङ्गजापन।

भङ्गजापन—पुं० [हि० भङ्गजा + पन (प्रत्य०)] भङ्ग जा होने की अवस्था, काम या भाव।

भङ्गेरिया—पुं० = भङ्गहर।

भङ्गेत—पुं० [हि० भाङ्गा] [भाव० भङ्गेती] १. बहु जिसने किसी की ब्रह्मण का भ्रमण भाङ्गे या किराये पर लिया हो। किरायेदार। २. भाङ्गे पर दूसरों का काम करनेवाला ब्यवसित।

भङ्गीलना—सं० [देव०] रहस्य प्रकट कर देना। गुप्त बात लोका देना। भेद यताना। जैसे—तेरी सब बातें भङ्गीलकर रख दूँगी।
(स्विकर्ण)

भङ्गहर—पुं० [सं० भद्र] ब्राह्मणों में निम्न श्रेणी की एक जाति। इस जाति के लोग फलित ज्योतिष या सामुद्रिक आदि की सहायता से लोगों का भविष्य बताकर अपनी जीविका चलाते हैं।

भम—पुं० [?] टाङ्क का बुझ। (डि०)

भमन—पुं० [सं० भम्/भण (बोलना) + स्फुट—अन] १. कथन। २. बातलाप।

भमना—अ० [सं० भमन] कहना।

भमिता—पुं० ङ० [सं० भम्/भण (करना) + क्त] जो कहा गया हो। कहा हुआ।

स्त्री० कही हुई बात। उक्ति।

भमिता (तु)—पुं० [सं० भम्/भण (कहना) + तुच्] बोलनेवाला। बक्ता।
५—२५

भमिता—स्त्री० [सं० भमिता] कविता में होनेवाला कवि का उपनाम। छाप।

भमिति—स्त्री० [सं० भम्/भण (कहना) + (चित्त)] १. किसी की कही हुई बात। २. उक्ति। कथन। ३. कहावत। लोकोक्ति। ४. बाणी। उदा०—ललित भमिति का किया प्रीतिवचन चरण अनुकरण।—पन्थ।

भतरौङ्ग—पुं० [हि० भात + रौङ्ग ?] १. भद्रा और बुन्दवान के बीच का एक स्थान जिसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि यहाँ श्रीकृष्ण ने श्रीवाइनों से भात मँगाकर खाया था। २. भात-प्रात की मूर्ति से कुछ ऊँची मूर्ति या स्थान। ३. भद्वर का शिखर। ४. ऊँची जगह। टीला।

भतपाम—पुं० [हि० भात + पाम] पूरुब में, बर और उसके साथ कुछ और मुँआरे लड़कों को विवाह से पहले कन्यापत्र द्वारा कच्ची रसोई बिलाने की एक रस्म।

भतहा—पुं० [हि० भात] १. बहु जो भात खाता हो, अथवा भात खाना अधिक पसन्द करता हो। २. बहु ब्यक्ति जिसके हाथ की कच्ची रसोई खाई जा सके। ३. बहु जो कच्चे-सूजे भोजन पर ही सन्तुष्ट रहकर नौकरी करता हो।

भतार—पुं० [सं० भतर] विवाहिता स्त्री का पति। आबिस। लसम।

भतिया—स्त्री० = भतिया।

भतीजा—पुं० [सं० भ्रातृज] [स्त्री० भतीजी] माई का पुत्र। माई का लड़का।

भतुआ—पुं० [देव०] सपने कुन्हुडा। पेठा।

भतुला—पुं० [देव०] आग पर पकया या मूना हुआ आटे का पेड़ा। बाटी

भत्ता—पुं० [सं० भद्र] वह धन जो किसी कर्मचारी को उसके वेतन के अतिरिक्त कुछ विशेष अवसरों (जैसे—महँगी, यात्रा आदि) पर अतिरिक्त धन्य के विचार से दिया जाता है। (एलावेन्स)

भवंत—वि० [सं० भवन्/भवन् (कल्याण) + भवच्—अन्त, न—लौप] १. पूजित। सम्मानित। २. सम्यक्त।

पुं० बौद्ध सिद्ध।

भब—स्त्री० [अङ्ग०] किसी चीज के गिरने का शब्द। जैसे—मद से गिर पड़ना।

भबई—वि० [हि० भावें] १. भावो संबंधी। भावो का। २. भावो में होनेवाला।

स्त्री० भावों में तैयार होनेवाली फसल।

भबभ—वि० [अङ्ग०] १. बहुत मोटा। २. मद्धा।

भबरना—वि० [हि० बवरण] जिसका रंग कीका पड़ गया हो। उदा०—न तो कमी उसका रक्त घुलेगा, न कमी बहु भदरना होगा।—बुन्दवानलाल वर्मा।

भबबरिया—वि० [हि० भवावर + इया (प्रत्य०)] भदावर प्रात का।

भबाक—पुं० [सं० भवन्/भवाकन्, न—लौप] १. सोनाप। २. अमृष्य।

भबावर—पुं० [सं० भद्रवर] आधुनिक स्वाकियर प्रदेश का पुराना नाम।

भवेस—पुं० [हि० भदा + देव ?] ऐसा देव जो आहार-विहार, जल-प्राय आदि के विचार से बहुत खराब हो। खराब या बुरा देव।

वि० कुरुपः महा।
भद्रेशस (सिल) —वि० [हि० भद्रेश] १ भद्रेश-मवधी। २ भद्रेश मे रहने या होनेवाला।
भद्रेशिया—वि० [हि० भद्रेश] १ भद्रेश मे रहने या होनेवाला। २ गाँव। ३. महा। भोग।
भद्रेश—पु० [हि० भाद्रेश] भेदक।
भद्रेशा—वि० [हि० भाद्रेश] भाद्रेश नाम मे उलभ होनेवाला। भाद्रेश का।
भद्रेश (हा)—वि० [हि० भाद्रेश] [स्त्री० भद्रेशी] भाद्रेश मे होनेवाला। जैसे—भद्रेशा अमरुप।
भद्रेशिया—वि० [हि० भद्रेश] भद्रेश प्रात का।
भद्रेश—पु० १ भद्रेश प्रात का निवासी। २ क्षत्रियों की एक जाति।
भद्र—स्त्री० [हि० भद्रा] १. वह स्थिति जिसमे किसी को अपमानित और अविजित होता पड़े। अपमान। २ किसी को तुच्छ ठहरानेवाला काम या बात।
भद्र—पु० -भाद्र (महीना)।
भद्रा—वि० [अनु० भद्र] [स्त्री० भद्रा] १ (पदार्थ) जिसकी बनावट में अम-प्रत्यय की सांकेतिक छोटोई-बढाई का स्थान न रखा गया हो, और इसी लिए जो देवने मे कुरुप या बेढगा हो। २ (दान) जो शिष्टों और सभ्यों के लिए उपयुक्त न हो। अक्षीक। कूटक। जैसे—भद्रा शाल्या। ३ जिसमे कला, सुविध आदि का अभाव हो। (आत्मार्थ)
भद्रापन—पु० [हि० भद्रा; पन (प्रत्यय)] भद्र होने का मात्र।
भद्रकर—वि० [म० भद्र/कर (करना)। लृच्, मुच्] मंगलकारक। शुभ।
भद्रकरण—पु० [स० भद्र/कर। क्युन्-अन, मुच्] मंगल-नायक।
भद्र—वि० [स०/भद्र; रन्, न-योग] १ शिष्ट, सभ्य और सुविहित। २ कल्याण या मंगल करनेवाला। शुभ। ३ उत्तम। श्रेष्ठ। ४ मजा। साधु।
 पु० १ क्षेम-कुशल। २ कल्याण। मंगल। ३ चल्द। ४ शिव। ५ सजान शशी। ६ बैल। ७ सुमेग पर्वत। ८ कदम्ब। ९ खजान। स्वर्ण। १० मोषा। ११. एक प्राचीन देश। १२ विष्णु का एक ढांगण। १३ उत्तर दिशा के दिग्गज का नाम। १४ रामचन्द्र की ममा का वह नामाद जिसके मूँठ मे सीता की निंदा सुनकर उन्होंने सीता को बनवास दिया था। १५ बलदेव का एक सहोदर भाई। १६ पुराणानुसार स्वयम्भुव मन्वन्तर के विष्णु से उत्पन्न एक प्रकार के देवता जो मुण्डित भी कहलाते हैं। १७ हाथियों की एक जाति जो पहले विन्ध्याचल मे हाती थी। १८ सगील मे स्वर-नायक की एक प्रणाली जो इस प्रकार है—सारसा, रेगरे, गमग, मयम, पवप, धनिध, निसानि, सारेसा। सा नि सा, नि ध नि, ध प ध, प म ध, म ग म, ग रे ग, रे मा रे, सा नि सा।
 पु० [स० भद्रकरण] सिर, दाढ़ी, मुँछो आदि के बालों का मुहन। उदा०—सो जोमी स्तिर भद्र करार।—गोरवनाथ।
भद्रकंट—पु० [म० वं० सं०] गोशूर। गोरकू।
भद्रक—पु० [स० भद्र-कन्] १. एक प्राचीन देश का नाम। २

चना, मूँग आदि अनाज। ३. नागरमोषा। ४. देवदार। ५. एक प्रकार का वृक्ष जिसके प्रत्येक करण मे 511 515 111 515 111 515 111 5 (म र न र न र न य) और ४, ६, ६, ६, पर यति होती है। ६ कोई अच्छी बात। उत्तम गुण। उदा०—सा कहुँ भिचनें है न अद्रक है, इस मछन्डर मे कुछ भी भद्रक है।—मीर। ७ द्रवता। भद्रवती। जैसे—तुम्हारी बात मे कुछ भी भद्रक नती है। उदा०—मुसलक नेरी बात में नहीं है भद्रक।—रघीन।

भद्रकाय—पु० [म० वं० सं०] हरिवन के अनुसार श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम।
भद्रकार—वि० [स० भद्र/कर (करना)। अण, उण० सं०] मंगल या कल्याण करनेवाला।
 पु० महाभारत के अनुसार एक प्राचीन देश।
भद्रकारक—वि० [म० प० तं०] मंगलकारक।
 पु० एक प्राचीन देश। (महाभारत)
भद्रकाली—स्त्री० [म० कर्म० सं०] १. दुर्गा देवी की एक ६ भुजाओ-वाली मूर्ति। २ कात्यायिनी ३ कान्तिकेय की एक मानुषा। ४ गंध-प्रसारिणी क्ता। ५ नागमोषा।
भद्रकाली—स्त्री० [म० भद्र/काल (प्रशंसित होना)। अच्, ट्ठीप्] भद्र-मुल्ला। नागरमोषा।
भद्र-काष्ठ—पु० [स० वं० सं०] देवदार वृक्ष।
भद्र-कुम्भ—पु० [म० कर्म० सं०] मंगल-घट।
भद्र-गणित—पु० [म० कर्म० सं०] बीज गणित की वह शाखा जिसमे चक्रवित्याम की सहायता मे गणना की जाती है।
भद्र-घट—पु० [म० कर्म० सं०] मंगल-घट।
भद्रबाध—पु० [स०] रक्षिणी के गर्भ मे उत्पन्न श्रीकृष्ण का एक पुत्र।
भद्रज—पु० [म० भद्र/जन् (उत्पन्न करना)। ट्] इन्द्रजी।
भद्र-लक्ष्मी—स्त्री० [म० कर्म० सं०] एक प्रकार का कुम्भ।
भद्रता—स्त्री० [स० भद्र; तन्, ट्] भद्र होने का भाव। सिद्धता। सभ्यता। शराफल। भलमननी।
भद्र-रत्न—पु० [स० वं० सं०] हाथी।
भद्र-बाध—पु० [म० कर्म० सं०] देवदार।
भद्रदेह—पु० [स०] पुराणानुसार श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम।
भद्र-द्वीप—पु० [म० कर्म० सं०] पुराणानुसार वृक्ष वंश के अनर्गल एक द्वीप का नाम।
भद्र-निधि—पु० [स० वं० सं०] पुराणानुसार एक प्रकार का महादान।
भद्र-पथा—स्त्री० [म० वं० सं०; ट्] भाद्रपथ।
भद्र-पथा—स्त्री० [स० वं० सं०; ट्] गंध-प्रसारिणी क्ता।
भद्र-वीथ—पु० [म० कर्म० सं०] १ अच्छा और बढ़िया आसन। २. वह सितलान जिम पर राजाओं या देवताओं का अभिषेक होता है।
भद्र-बला—स्त्री० [म० कर्म० सं०] १ गंध-प्रसारिणी क्ता। २. माधवी क्ता।
भद्र-बाहू—पु० [स० वं० सं०] रक्षिणी के गर्भ मे उत्पन्न कृष्ण के एक पुत्र।
भद्र-मुव—पु० [म० कर्म० सं०] हाथियों की एक जाति।
भद्रमध—पु० -भद्रमद।

भ्रमनस्त्री—स्त्री० [सं० ब० सं०, +ङीप्] ऐरावत की माता का नाम।

भ्रम-भुक्—वि० [सं० ब० सं०] १. जो देखने में मला आदमी जान पड़े। मला-मानस। २. सुन्दर।

पु० पुराणानुसार एक नाग का नाम।

भ्रमभूमी—स्त्री० [सं० ब० सं०, +ङीप्] = चंद्रभूमी। (सुन्दरी स्त्रियों के लिए संबोधन)।

भ्रमभूस्तक—पु० [सं० कर्म० सं०] नागरमोषा।

भ्रमभूस्ता—पु० [सं० कर्म० सं०] नागरमोषा।

भ्रम-रथ—पु० [सं० कर्म० सं०] इन्द्रजो।

भ्रम-रेणु—पु० [सं० ब० सं०] ऐरावत।

भ्रमवती—स्त्री० [सं० मद्र० मत्तुप्, वल्, +ङीप्] १ कटहल। २ गनजित के गर्भ से उत्पन्न श्रीकृष्ण की एक कन्या का नाम।

भ्रम-वसिष्ठा—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] अतमूल।

भ्रमवल्ली—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] मावकी लता।

भ्रमवान (वत्)—वि० [सं० मद्र० मत्तुप्, वल्] मगलमय।
पु० वेदाङ्ग बृह।

भ्रम-विराट्—पु० [सं० कर्म० सं०] एक वर्षादेसम वृत्त जिसके पहले और तीसरे चरणों में १० और दूसरे तथा चौथे चरण में ११ अक्षर होते हैं।

भ्रम-शास्त्र—पु० [म० ब० सं०] कानिकेय।

भ्रमभ्य—पु० [सं० मद्र० वधि (शोभा) +अन्] चंदन।

भ्रम-भवा (वत्)—पु० [सं० ब० सं०] पुराणानुसार धर्म के एक पुत्र का नाम।

भ्रम-भी—पु० [सं० ब० सं०] चंदन का वृक्ष।

भ्रमसेन—पु० [सं० ब० सं०] १ देवकी के गर्भ से उत्पन्न वसुदेव का एक पुत्र। २ भागवत के अनुसार कुमिराज के पुत्र का नाम। ३ बौद्धों के अनुसार मारफापीय आदि कुमरित के दलपति का नाम।

भ्रमंग—पु० [सं० मद्र० अंग, व० सं०] बलराम।

भ्रम—स्त्री० [सं० मद्र० टाप्] १ कल्याणकारिणी शक्ति। २ कंकेय-राज की कन्या जो श्रीकृष्ण को स्नाही गई थी। ३ आकाश-रंगा। ४. गौ। ५. दुर्गा। ६. पृथ्वी। ७. सुभद्रा का एक नाम। ८. रास्ता। ९. गन्ध-प्रसारिणी लता। १०. जीवती। ११. शमी। १२. बच। बचा। १३. दती। १४. हलदी। १५. वृष। वृषा। १६. चसु। १७. कटहल। १८. बरियारी। १९. छाया के गर्भ से उत्पन्न सूर्य की एक कन्या। २०. गौतम वृद्ध की एक शक्ति। २१. कामरूप देश की एक नदी। २२. पिपाळ में उपजाति वृत्त का दसवाँ भेद। २३. पुराणानुसार भद्राश्ववर्ष की एक नदी जो गंगा की शाखा कही गई है। २४. ज्योतिष में द्वितीया, सप्तमी, द्वादशी तिथियों की सजा। २५. फलित ज्योतिष में एक अनुश्रुत योग जो कृष्ण पक्ष की तृतीया और दसमी के शेषार्द्ध में तथा अष्टमी और पूर्णिमा के पूर्वार्द्ध में रहता है।

विशेष—कहते हैं कि जब यह योग कर्क, सिंह, कुम्भ या मीन राशि में होता है, तब पताक पर; जब मेष, वृष मिथुन या बुधिका राशि में होता है, तब पताक में; और जब कन्या, बल, शुक्र या मकर राशि में होता है तब यह योग स्वर्ग में होता है। इस योग के रहने पर कार्य स्रिष्टि,

पताक में रहने पर धन प्राप्ति और पृथ्वी पर रहने पर बहुत अनिष्ट होता है। इसे विविध भद्रा भी कहते हैं।

२६. कोई बहुत अनिष्टकारक बात या बाधा।

क्रि० प्र०—लगना।—लगाना।

स्त्री० [सं० मद्राकरण; हिं० मद्र] कोई ऐसा काम या बात जिससे किसी की बहुत बड़ी आर्थिक हानि या अपमान आदि हो। जैसे—आज बहो! उनकी अच्छी भद्रा हुई।

भूहा—किसी के सिर की मद्रा उतराना—(क) किसी प्रकार की हानि विशेषतः आर्थिक हानि होना। (ख) बहुत अधिक अपमान या दुर्बसा होना।

भद्राकरण—पु० [सं० मद्र० +शब्+कृ (करना)+ल्यट्—अन] सिर मुंडाना। मुंडन।

भद्राकृति—वि० [सं० भद्रा-आकृति, व० सं०] सुन्दर या मज्ज आकृति-वाला।

भद्रा(स्वप्न)—पु० [सं० मद्र-आत्मज, उपनि० सं०] स्वप्न।

भद्रानंद—पु० [सं० मद्र-आनंद, कर्म० सं०?] संगीत में, एक प्रकार की स्वर-साधना प्रणाली जो इस प्रकार है—आरोही—सा रे ग म, रे ग म प, ग म प ध, म प ध नि, प ध नि सा। अवरोही—सा नि ध प, नि ध प म, ध प म ग, प म ग रे, म ग रे सा।

भद्राभद्र—वि० [सं० मद्र-अभद्र, इ० सं०] मद्र और अभद्र। मला-भुरा।

भद्रावती—स्त्री० [सं० मद्र० मत्तुप्, वल्, दीर्घ, +ङीप्] १. कटहल का पेड़। २. एक प्राचीन नदी।

भद्राराज—पु० [सं० मद्र-अराज, व० सं०] जंबू द्वीप के नौ खंभों या बर्षों में से एक खंभ या बर्ष।

भद्रासन—पु० [सं० मद्र-आसन, कर्म० सं०] १ मणियों से बड़ा हुआ राजसिंहासन जिस पर राज्याभिषेक होता है। २ योग-साधन का एक प्रकार का आसन।

भद्रिका—स्त्री० [सं० भद्रा+कन्, +टाप्, हल्] १. एक प्रकार का वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में रघु, नगण और रघुण होते हैं। २. भद्रा तिथियां। (दे० 'भद्रा') ३. फलित ज्योतिष के अनुसार योगिनी दशा के अन्तर्गत पंचमी दशा।

भद्रौ (विन्)—वि० [सं० भद्र+इति, दीर्घ, न-लोपौ] साग्यवान्।

भ्रमक—स्त्री० [सं० भागन] १ धीमा शब्द। मन्द ध्वनि। २. यो ही उदती-सी खबर जिसकी प्राभाषिपत्ता निश्चित न हो। जैसे—भेरे धान में यो ही दूसरी भ्रमक पड़ी थी।

भ्रमकना—सं० [सं० भ्रमन] १ भ्रमन शब्द करना। २ गोलना। कहना।

अ० भ्रमन शब्द होना।

भ्रमना—सं० [सं० भ्रमन] कहना।

भ्रमपैरा—वि० [हिं० मन+पैर] [स्त्री० मनपैरी] जिनके कहीं पहुँचते ही अनेक प्रकार के दोष या हानियाँ होने लगनी हों। खराब और बुरे पैर या पोरबाला। जैसे—क्या मुझे भी आप उसी की तरह भ्रमपैरा समझते हैं—

भ्रमनम्ना—सं० [अनु०] भ्रमन शब्द करना। गुजारना।

अ० मनमन शब्द होना।

मनमनाहट—स्त्री० [हि० मनमनना+आहट (प्रत्य०)] मनमनाने की क्रिया, भाव या शब्द। गुजरात।

ममित—पुं० कृ०, स्त्री०—प्रणित।

मपाड़—पुं० [हि० मेषाना—दिलाना] छल। जैसे—उसके मपाड़े में मत आना।

क्रि० प्र०—मे आना।—मे पढ़ना।

मबकना।—अ०—मयकना।

मबकाना।—पुं०—ममका।

मबकी।—स्त्री०—ममकी।

मबूका—वि०, पुं०—ममका।

मबबट—पुं० [हि० मीठ+माह] १ मीठ-माह। २ हाड़े-बलेड़े का या ध्वर्य का काम।

ममक—स्त्री० [हि० मक मे अनु०] ममकने की अवस्था, क्रिया या भाव।

ममकना—अ० [हि० ममक] १ किसी चीज का सहसा जोर से जल उठना। ममकना। २. ताप आदि के योग से किसी चीज का जोर से उजल या फूट पड़ना। ३ जोर से बाहर निकलना। जैसे—पनाले मे से दुर्गम ममकना।

ममका—पुं० [हि० ममकना या माप] हड्डे के आकार का बर मूँहवाला बड़ उपकरण जिससे से अन्न सूखाया जाता है।

ममकी—स्त्री० [हि० ममक] ऐसी आवेशपूर्ण घमकी जो हुबल होने पर भी अपने आप की प्रबल मित्र करने के लिए दी आय। जैसे—बदर ममकी।

मभरना—अ० [हि० मय] १. मयभीत होना। २ घबरा जाना। ३ पोखे या भ्रम में पड़ना। ४ कान्तिहीन या विचर्य होना। रम-हीन होना। ५ हर्दराकर गिर पड़ना।

मभीरी—स्त्री० [अनु०] १ किसी नाम का लिलोना। (पश्चिम) २ क्षीयुर।

मभू—स्त्री० [हि० माई+बड़] छोटे माई की स्त्री। छोटी मौजाई। (विहार)

मभूका—पुं० [हि० ममक] आग की लपट। ज्वाला।

वि० १ खुर तथा हुआ लाल। २ आवेश, क्रोध आदि के कारण जिसका बर्ण लाल हो गया हो। ३. उज्ज्वल। स्वच्छ। उदा०—यह हैसता सा मुखबा, मभूका सा रंग।—कोई कवि। ४ चमकीला।

मभूल—स्त्री० [सं० विमृति] १. शिवालिंग के समस जलनेवाली आग की मध्य जिसे शीव भूयाओ, मस्तक आदि पर पोते हैं।

क्रि० प्र०—मलना।—रसाना।—सगाना।

२ दे० 'विमृति'।

मभूबर—स्त्री०—भूमल।

मभूबड़—पुं०—सकमड़।

मभना—अ०—भयना।

मभराना—पुं०—भ्रमर।

स्त्री०—सैवर।

मयंकर—वि० [सं० मय+कृ (करना)+अच्, मुप्] [माव० मयं-

करता] १ जिसे देखकर लोग भयभीत होते हैं। मयभीत करने-वाला। २ आकार-प्रकार की दृष्टि से उन्नत या डरावना। ३. बहुत अधिक तीव्र या प्रबल। अत्यधिक भीषण। जैसे—मयंकर गरभी पड़ना।

मयंकरता—स्त्री० [सं० मयंकर। तल्+टाप्] मयंकर होने की अवस्था या भाव।

मय—पुं० [सं०√भी (मय)+अच्] १ वह मानसिक स्थिति जो किसी अनिष्ट या सकट सूचक समावना से उत्पन्न होती है और जिससे प्राणी चिन्तित और विकल होने लगता है।
मूहा०—(किसी से) मय खाना—डरना।

२ बालकों का वह रोग जो उनके डर जाने के कारण होता है।

३. निश्चलित के एक पुत्र का नाम। ४ अभिमति नामक स्त्री के गर्भ से उत्पन्न शिशु का एक पुत्र।

मय-कर—वि० [सं० ष० तं] [माव० मयककारी] मय उत्पन्न करने या डरानेवाला। मयभीत करनेवाला।

मयचक—वि०—मोचक।

मयचिह्नम—पुं० [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार का बाजा जो युद्ध के समय बजाया जाता था।

मयत—पुं० [?] चंद्रमा। (हिगल)

मयव—वि० [सं० मय/दा (देना)+क] [स्त्री० मयदा] मय उत्पन्न करनेवाला। मयप्रद।

मय-वशी [विष्णु]—वि० [सं० मय/वृष् (देखना)+णिनि] मयकर। मयानक।

मय-वान—पुं० [सं० ष० तं] १ किसी प्रकार के मय से दान करना। २ वह दान जो मयभीत होकर दिया गया हो।

मय-शोक—पुं० [सं० मध्य० सं०] ऐसा शोक जो अपनी दृष्ट्या के विच्छेद परन्तु जातीय प्रथा के अनुसार कोई काम करने पर माना जाता है। (जैन)

मय-नाशन—वि० [सं० ष० तं] [स्त्री० मयनाशिनी] मय को दूर करनेवाला।

पुं० विष्णु।

मय-प्रव—वि० [सं० मय+प्र/दा (देना)+क] मय उत्पन्न करनेवाला।

मय-भीत—पुं० कृ० [सं० ष० तं] मय से आतंकित। डरा हुआ।

मय-भ्रष्ट—वि० [सं० ष० तं] [माव० मयभ्रष्टता] डर कर भागा हुआ।

मय-मोचन—वि० [सं० ष० तं] मय दूर करने या हटानेवाला।

मय-मजिता—स्त्री० [सं० त्० तं] प्राचीन भारत में, व्यवहार में दो गाँवों के बीच की वह सीमा जिसे बढी और प्रतिबद्धी आस में मिलकर स्थिर कर लें।

मयभावा—पुं० [हि० माई+आव (प्रत्य०)] १. एक ही मोच या बवा के लोग। माई-बद। २. आपसदारी के लोग। आरतीय जन।

मय-ब्यूह—पुं० [सं० मध्य० सं०] प्राचीन भारत में सकट की स्थिति में सैनिकों की होनेवाली एक प्रकार की व्यूहरचना।

मय-दरण—वि० [सं० ष० तं] मय दूर करनेवाला।

भय-हारी (रिन्) —वि० [सं० भय√हृ (हरण) + गिति] भय दूर करने-वाला ।

भय-हेतु—पुं० [सं० व० त०] भय का विषय । वह जिसके कारण भय उत्पन्न होता है ।

भया—स्त्री० [सं० भय+अच्+टाप्] १. एक राक्षसी जो काल की महान तथा विषुवकेश की माता थी । २. प्राचीन भारत में ६२ हाथ लंबी, ५६ हाथ चौड़ी तथा ३३ हाथ लंबी एक प्रकार की नाव ।
पुं० [हिं० भयया] भाई के लिए संबोधन । भयया । जैसे—सभार हे भयया तु नार आयन ।

भयाकुल—वि० [म० भय+आकुल, वृ० त०] जो भय से व्याकुल या विकल हो रहा हो । भय से भवराया हुआ ।

भयाबोधन—पुं० [सं० भय+आबोधन] किसी को भय दिखलाकर या डरा-बमका कर उससे कुछ प्राप्त करने या लाभ उठाने की क्रिया या भाव । (ब्लैकमेल) ।

भयानां—वि०=भयानक ।

भयानक—वि० [सं०√भी (हरना) +आनक] जिसकी असाधारण शारीरिक विकृति या उपतापूर्ण आचरण से भय लगता है ।

पृ० १ भाष । २. राहु । ३ साहित्य में नी रसों में एक रस जिसका स्थानीय भाव भय है । हिंसक पशु, अपराधी व्यक्ति, बीमार आचरण आदि इसके आलम्बन हैं । आलम्बन की चेष्टाएँ और अपनी असहाय अवस्था इसके उद्दीपन हैं । अशु, कृप आदि अनुभाव हैं और श्रास, मोह, चिन्ता, आदेश आदि व्यभिचारी हैं ।

भयाना—अ० [सं० भय+हिं० आना (प्रत्य०)] भयभीत होना । डरना । स० भयभीत करना । डराना ।

भयाहृ—वि० [सं० भय+अप्+हृत् (भारता) +ङ] भय दूर करनेवाला । भयारा—वि०=भयानक ।

भयार्त—पुं० वृ० [सं० भय+आर्त, वृ० त०] भय से आर्त या भय से प्रसन्न । भयावध—वि०=भयावना ।

भयावना—अ०, स०=भयाना ।
वि० [सं० भय+हिं० आना (प्रत्य०)] [स्त्री० भयावनी] भयानक ।

भयाहृ—वि० [सं० भय+आ/वहृ (पृथुवाणां)+अच्] जिसे देखने से डर लगे । भयजनक । भयकर । डरावना ।

भय्या—पुं०=मैत्रा ।

भरत—स्त्री० [सं० भ्राति] १. बोझा । भय । २. सदेह । शक ।

रत्नी० [हिं० भरता] भरने की क्रिया या भाव । विशेष से 'भरत' ।

भर—अव्य० [हिं० भरता] १. अवकाश, परिमाण, बय आदि की संपूर्णता (या समस्तता) किसी वस्तुओं के रूप में सूचित करते हुए । जैसे—कटोरा भर, गज भर, उमर भर आदि । २. तका । पर्यंत । ३. अच्छी तरह से । पूरी तरह से । जैसे—लकड़के को एक बार अक्ष भर देखने की उसकी कामना थी ।

अव्य० [सं० भार] १. के द्वारा या सहयता से । उदा०— सिर भर जाऊँ उचित अस भोरा ।—मुलसी ।

पुं० भरें हुए होने की अवस्था या भाव । पूर्णता । यथेष्टता । उदा०—भर लायों परन्तु उदोजनि मैं रघुनाथ राजी रोम राजी नाति कल अलि सैनी की ।—पद्मनाथ ।

किं० प्र०—डालना ।—पड़ना ।

वि० कुल । पूरा । समस्त ।

भूहा०—भर वाणा= (क) कुल प्राप्य वन या सामग्री प्राप्त करना । (क) पूरा बरका चुक जाना । जैसे—जैसा तुमने किया वैसा भर पाया ।

पुं० [सं० भरता या भरदाय ?] हिंदुओं में एक जाति जो किसी समय असत्य्य माती जाती थी ।

पुं०=भट (बीर) ।

पुं० [सं०] भार । बोझ । उदा०—भर सबे भंजियो निह । —भिषीराज ।

वि० [सं०√भृ (भरण करना)+अच्] (बह) जो भरण-भोषण करता हो ।

पुं० युद्ध । लड़ाई ।

पुं० [?] उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों में रहनेवाली एक निम्न जाति ।

भरई—पुं०=भरदुल या भरत (पत्नी) ।

भरक—पुं० [दिवा०] पञ्जाब और बंगाल की दलदलों में रहनेवाला एक प्रकार का पत्नी जो प्रायः अकेला रहता है, भोज के लिए इसका धाकार किया जाता है ।

पत्नी०=भरक ।

भरकना—अ०=भरकना ।

भरका—पुं० [दिवा०] १. वह जमीन जिसकी मिट्टी काली और चिकनी हो, परन्तु सूख जाने पर सफेद और मुट्ठरी हो जाय । यह प्रायः जोती नहीं जाती । २ जगलों, पहाड़ों आदि का बहु गड्ढा जिसमें बौर छिपते हैं । ३. छोटा नाला । नाली । ३ जमीन का छोटा टुकड़ा ।

उदा०—बडा रकबा काटकर छोटे छोटे भरकों में पलट दिया गया था ।—मुन्दवान लाल ।

पुं०=भरक (पत्नी) ।

भरकाना—सं०=भरकाना ।

भरकी—स्त्री०=भरकाना ।

भरकूट—पुं० [हिं०] मस्तक । माथा ।

भरट—पुं० [सं०√भृ (भरण करना)+अटच्] १. कुम्हार । २. सेवक । नौकर ।

भरटक—पुं० [सं० भरट+कन्] संवांसियो का एक वर्ग या संप्रदाय ।

भरण—पुं० [सं०√भृ (भरण करना)+स्यट्—अन्] १ भरना ।

२. खिलायिका कर जीवित रखना । पालन-भोषण आदि के लिए वी जानेवाली वृत्ति या वेतन । ४. किसी बीज के न रहने या मरने होने पर की जानेवाली उसकी वृत्ति । भरती । ५. भरणी नक्षत्र ।

वि० [स्त्री० भरणी] भरण अर्थात् पालन-भोषण करनेवाला । (यौ० के अन्त में) उदा०—तोही कर्ण हरेणी तो ही विष्व भरणी ।—विधायन सागर ।

भरण-भोषण—पुं० [सं० व० सं०] किसी का इस प्रकार पालन करना कि वह जीविका निर्वाह की विन्ता से दूर रहे । (सेन्टेनेन्स) ।

भरणी—स्त्री० [सं० भरण+डीप्] १. भोषक वस्तु । कड़वी तराई ।

२. सत्ताइस नक्षत्रों में दूसरा नक्षत्र जिसमें त्रिकोण के रूप में तीन तारे हैं । ३. भूमि खोदने की एक युग्म लक्ष । (ज्यो०)

भरणी-भू—पुं० [सं० व० सं०] राहु ।

भरणीच—वि० [स०√मू। अनि०य०] जिसका भरण किया जाने को हो या करना उचित हो। पाले-पोसे जाने के योग्य।

भरण्य—पु० [स० भरण + यत्] १ मूल्या। दाम। २ वेतन। तनवाहू। ३. नौकर। सेवक। ४ भ्रजद्वार।

भरण्या—स्त्री० [स० भरण्य + टाप्] १ वेतन। मजदूरी। २ पत्नी। जाऊ।

भरण्यु—पु० [स० भरण्य + उन्] १ ईश्वर। २. चन्द्रमा। ३. सूर्य। ४ अग्नि। ५ मित्र।

भरत—पु० [स०√मू। अन्त्य०] १ तुल्य का धातुलला के गर्भ से उत्पन्न पुत्र, जिसके नाम के आधार पर इस देश का नाम भारत पड़ा था। २ राम के मोनेले भार्दों को कैकेयों के गर्भ में उत्पन्न हुए थे। ३ नाट्यशास्त्र के एक प्रधान आधारों। ४ अग्निता। ५ दे० 'जड़ भरत'। ६ जैनों के अनुसार प्रथम तीर्थंकर ऋषभ के ज्योत्स पुत्र का नाम।

पु० [स० भरद्वाज] एक प्रकार का लबा लबा पक्षी जो झूठ में रहता है। इसका हाथ बहुत मधुर होता है और यह बहुत ऊँचाई तक उड़ सकता है।
भरती० [हि० भरती] १ भरने की क्रिया या मात्र। २ वह चीज जो किसी दूसरी चीज में भरी जाय। ३ किसी आधार के अन्दर का वह अवकाश जिसमें चीजें भरी जाती हैं। ४ कसीदे आदि के कामों में वह रचना जो बीच का खाली स्थान भरने के लिए की जाती है। ५ मातृमंजारी या लगान। (पवित्रम)
पु० [देश०] १ कांस नामक धातु। कसकुट। २ उक्त धातु के बरतन बनानेवाला ठेकेदार। ३ मरी हुई चीज। भरवा।

भरत-वध—पु० [स० व० त०] राजा भरत के किए हुए पृथ्वी के नौ खटों में से एक खट। भारतवर्ष। हिन्दुस्तान। भारतवर्ष के दक्षिण का कुमारिका खट।
भरतम—वि० [स० भरत√आ (जानना) + क] नाट्यशास्त्र का शाता।

भरत-मुत्रक—पु० [स० व० त०] अग्निता। नट।
भरत-भूमि—स्त्री० [स० व० त०] भारतवर्ष।

भरतरी—स्त्री० [स० गर्त्] पृथ्वी। (हि०)
पु० मनुहरि।

भरतवर्ष—पु०—भारतवर्ष।
भरत-वाच्य—पु० [स० व० त०] समकृत नाटकों के अंत में वह पद्य जिसमें नाट्यशास्त्र के जन्यवाता भरत मुनि की स्तुति की जाती है।

भरत-शास्त्र—पु० [सं० मध्य० स०] नाट्यशास्त्र।
भरता—पु० [देश०] १ कुछ विशिष्ट तरकारियों को आग पर मूनकर तैयार करने के मुद्दे की छोकर बनाया जानेवाला सालन। चौखा। जैसे—अंगन का भरता, आठू का भरता। २ लाक्षणिक अर्थ में, किसी चीज का मसला हुआ रूप।

पु०—भरता।
भरतार—पु० [सं० नर्मा] १ स्त्री का पति। वसय। २. मालिक। स्वामी।

भरतिया—वि० [हि० भरत (काँता) + इया (प्रत्य०)] भरत अर्थात् काँसे का बना हुआ।

पु० भरत के बरतन आदि बनानेवाला कसेरा। ठेकेदार। भरत।

भरती—स्त्री० [हि० भरना] १ किसी चीज में कोई दूसरी चीज भरने की क्रिया या मात्र। भरार्द।

पद्य—भरती का जो अनावश्यक रूप में यो ही स्थान-पूर्ति मात्र के विचार से रखा या सम्मिलित किया गया हो। जैसे—इस पुस्तकालय में बहुत सी पुस्तकें नो यो ही भरती की जान पड़ती हैं।

२ नकामी, चित्रकारी, कसीदे आदि के बीच का स्थान इस प्रकार भरता जिसमें उसका मोन्दयें बंद जाय। जैसे—कसीदे के बुटों में की भरती, नैवे में की भरती। ३ किसी दल, वर्ग, समाज आदि में कार्यकर्ता, सदस्य आदि के रूप में प्रविष्ट या सम्मिलित किये जाने की क्रिया या मात्र। जैसे—विद्यालय में विद्यार्थी की या सेना में रणरुट की होनेवाली भरती। ४ वह जहाज या नाव जिसमें माल लादा जाता हो। (लघ०) ५ जहाज या नाव में उक्त प्रकार से भर हुआ माल। (लघ०) ६ जहाज या नाव पर माल लादने की क्रिया। (लघ०) ७ मनुष्य में पानी का चढ़ाव। ज्वार। (लघ०) ८ नदी की बाढ़। (लघ०)

स्त्री० [देश०] १ एक प्रकार की घास जो पशुओं के चारे के काम में आती है। २ मौज नामक कदम।

भरतीदाता—स्त्री० [स० न० त०] केवल के अनुसार एक प्रकार का छद्म।
भरथ—पु०—भरत।

भरथ—पु०—भरत।
भरथरी—पु० दे० 'मनुहरि'।

भरतूल—पु० दे० 'भरत' (पत्नी)।
भरद्वाज—पु० [स०√मू। अन्त्य० भर, द्वि०/जन्; ड, पृथी० द्राज; भर, द्राज, कर्म०सं] १ अग्नि-म गोत्र का उत्तम ऋषि की स्त्री मयता के गर्भ से और उत्तम के भार्दों बृहस्पति के वीर्य से उत्पन्न एक वैदिक ऋषि जो गोत्र प्रवर्तक और मन्त्रकार थे। बनखाम बाल में रामचन्द्र इनके आश्रम में भी गए थे। २ उक्त ऋषि के गोत्र का व्यस्तित्ति। ३ बौद्धों के अनुसार एक अर्हन्त का नाम। ४ एक अग्नि का नाम। ५ एक प्राचीन जनपद। ६ भरत पत्नी।

भरत—स्त्री० [हि० भरना] १ भरने या भरने जान की अवस्था, क्रिया या मात्र। २ ऐसी भरपूर वर्षा जिसमें खेत आदि अच्छी तरह भर जायें। उदा०—(क) अने से उमके ढिल का भर बिल गया धमन, ऐशो तरह के अन्न की पड़ने लगी भरन।—नजीर। (स) मायन की सही, भादी की भरन। (सहा०)

भरता—स० [स० भरना] [भाव० भरार्द, भगव] १ किसी आधार या पात्र के अन्दर की खाली जगह में कोई चीज उड़नेना, गिराना, डालना या रचना। बीच के अवकाश में इस प्रकार कोई चीज रखना कि वह खाली न रहे जाय। जैसे—भाड़ी में माल, पड़े में पानी या गुब्बारे में हवा भरना।

पद्य—भरद्वाज।
२ बीच के अवकाश में कोई अपेक्षित, आवश्यक या उपयुक्त चीज रखना या लगाना। स्थापित करना। जैसे—गड्डे में मिट्टी भरना, चित्र में रंग भरना, गोंप में गोला भरना, मुँह में भाव भरना, लिफाकों में विटिडिया भरना आदि। ३ खाली आसन, पद आदि पर किसी को बैठाना या नियुक्त करके स्थान की पूर्ति करना। जैसे—उठतीं मही होते ही

सारा विभाग भाई-बन्धुओं से भर दिया । ४. पशुओं, यारों आदि पर बोझ लादना । ५. मावी लाभ के विचार से अधिक मात्रा में कोई चीज या माल खरीद कर इकट्ठा करना और रख छोड़ना । जैसे—फसल के दिनों में बेहूँ घरना, मंत्री के समय कृषि या मीना भरना । ६. सिपाई के लिए मेल के पानी पहुँचाना । ७. छेद, भूँ, विबर, सन्धि आदि बंद करने के लिए उनमें कोई चीज जड़ना, ठूसना, बैठाना या लगाना । जैसे—खिड़की या दरवाजे में ईटे, छड़ या जाली भरना ।

८. लेख आदि के द्वारा आवश्यक अर्थसाधनों की पूर्ति करना या सूचनाएँ अंकित करना । जैसे—आवेदन-पत्र, पंजी या प्रपत्र (फार्म) भरना । ९. किसी के मन में तुष्टि, पूर्णता, स्पष्टता आदि की धारणा या भावना उत्पन्न करना । किसी का मनस्तोय करना । जैसे—बातचीत या व्यवहार से किसी का मन भरना । १०. अपेक्षित समर्पण, सहमति, स्वीकृति आदि की सूचक पूर्ति करना । जैसे—किसी के कथन की सही या सखी भरना, किसी बात की हामी भरना । ११. किसी को किसी का विरोधी या विरोधी बनाने अथवा अपने अनुकूल करने के लिए उसके मन में कोई बात अच्छी तरह जमाना या बैठाना । जैसे—आपने सो उन्ने पहले ही भर रखा था, फिर वे मेरी बात क्यों सुनते ? १२. जीव-जन्तुओं का किसी को काटना या हसना । उदा०—जहाँ, सो नागिन भर गई, काला करे सो अग ।—जायसी । १३. आत्मिक देन, क्षति-पूर्ति, धार आदि के परिशोध के रूप में धन देना । चुकाना । जैसे—ऋण या बट भरना । १४. मनो आदि में कुनी धूमकूर या और किसी प्रकार ऐंसी किया करना जिसमें वे अपना काम करने लगे । जैसे—घड़ी भरना, ताजा भरना । १५. जैसे-तेैसे या कुछ कष्ट सहकर दिन काटना या समय बिताना । जैसे—नेहर जनम भरब बरु जाई ।—मुलसी । १६. (कष्ट या विपत्ति) भोगना । सहना । जैसे—करे कोई, मरे कोई । उदा०—राम बन बपु धरि विपत्ति मरे ।—मूर ।

बिबोच—मिन्न मिन्न संज्ञाओं के साथ दम किया के योग से बहुत से मुहावरे भी बनते हैं । जैसे—किसी की गोद भरना, देवी या देवता की चौकी भरना, महावर आदि से किसी के घेर भरना, (किसी बात या व्यक्ति का) दम भरना, रिश्वत देकर किसी का घर भरना, मनो-विनोद के लिए किसी का स्वांग भरना आदि । ऐसे मुहावरों के लिए सबड सज्ञाएँ देखें ।

अ० ० कि०—डालना ।—देना ।—रखना ।
ब० १. साकी जगह या आधार का किसी बाहरी या नये पदार्थ के योग से पूर्ण या युक्त होना । जैसे—बरसाली पानी से तालाब भरना, दवा से भाव भरना, पाल से हुदा भरना, कीचड़ से घेर भरना, फलों या फूलों से पेड भरना, माता (बचक) के हागों से घरीर भरना, आद्यमिषों से बाजार, मेला या समा करना आदि ।

बिबोच—ऊपर स० 'भरना' में जो अर्थ आये हैं, उनमें से अधिकतर अर्थों के प्रसंग में इसका अ० प्रयोग भी होता है । जैसे—(क) खेत, देन या रंग भर गया । (ख) मोमन से घेठ भर गया ।

२. दुर्बल या क्षय घरीर का जीवन, स्वस्थता आदि के योग से धीरे-धीरे हृष्ट-युष्ट होना । जैसे—पहले तो बहू बहुत दुबला-पतला था, पर अब धीरे-धीरे भरने लगा है । ३. शूनों पर बोझ लगाना अथवा सवारियों पर यात्रियों का बैठाना । ४. मन का असंतोष, कौच, संताप आदि

से मुक्त होना । जैसे—जब देखो, तब नुम मरे बैठे रहते हो । उवा०—बह मरी ही की, उमड़ बढ़ने लगी यों ।—मिथिलीशरण मुत्त । ५. आवेष कथना, स्नेह आदि से अभिभूत होने के कारण कुछ कहने के योग्य न रह जाना । किसी भाव की प्रबलता के कारण कुछ कहने में असमर्थ होना । उदा०—गया मर-सा मरना कनिष्ठ ।—मिथिलीशरण ।

बिबोच—(क) ऐसे अवसरों पर इसके साथ प्रायः सवो० कि० 'अना' का प्रयोग होता है । जैसे—उसे रोते देख कर मरा जी भर आना; अर्थात् उसमें कथना का आधिभाव हुआ । कुछ अवसरों पर इसका प्रयोग बिना पूरक सज्ञा के भी होता है । जैसे—उसे देखते ही मेरी अँखें भर आई; अर्थात् आँखों में आँसू भर गये । (ख) कुछ अवस्थाओं में अ० 'भरना' और 'मर जाना' के अर्थों में बहुत अधिक अन्तर भी होता है । जैसे—(क) तुम्हारी तरफ से हमारा मन मरा है; अर्थात् हम पूर्ण रूप से सनुष्ट हैं और (ख) यहाँ रहते रहते हमारा जी भर गया है; अर्थात् हम ऊब गये हैं अथवा विरक्त हो गये हैं ।

६. किसी चीज या बात से भीत-प्रोत या पूर्ण रूप से युक्त होना । जैसे—(क) इसी तरह की फालतू बातों से मारी युलक मरी है । (ख) कीचड़ भरे घेर तो पहले जो लो । ७. श्रद्ध, मन आदि का चूकम्या जाना । परिशोध होना । ८. अपेक्षा, आवश्यकता, आशा आदि की किसी रूप में पूर्ति होना । जैसे—साने-पीने की चीजों से पेट भरना, किसी के आचरण या व्यवहार से मन भरना । ९. अवकाश, छिद, विबर आदि का बंद होना । १०. (अक, मोद आदि के पूर्ण या किसी से युक्त होने के विचार से) आलंगन होना । गले लगना । भेटना । उदा०—मरी सखी सब भेटन फेरा ।—जायसी । ११. रिक्त आसन, वद आदि की पूर्ति होना । १२. कही जाकर रहना । निवास करना । बसना । उदा०—हरी बंद सो करे जगदाता सो घर नीच मरे ।—सूर । १३. किसी अंग से अधिक और कुछ समय तक निरंतर काम लेते रहने पर उम अग का कुछ पीडा-युक्त अमर भारी होना तथा काम करने में कष्ट बोध करना । जैसे—बल्ले-चलते बंध भरना, लिखते-लिखते हाथ भरना (या मर जाना) । १४. गौ, घोड़ी, भंस आदि प्रावा जन्तुओं का गमवंती होना । सवो० कि०—आना ।

प० १. भरने या मरे जाने की किया या भाव । २. भरने के लिए दी जानेवाली कोई चीज या किया जानेवाला परिधम, व्यय आदि । जैसे—हसी तरह बैठकर जनम मर दूसरों का भरना मरते रही । ३. भूस । रिश्वत । (ब००) स० [हिं० मार] मार उठाना या डोना । उदा०—मरि भरि मार कहाल आना ।—मुलसी ।

भरनि—स्त्री० [स० मरणा] १. कपड़े-लत्ते । पोशाक । २. दे० 'भरती' ।
भरनी—स्त्री० [हिं० भरना] १. भरने या मरे जाने की किया या मात्र । २. बह चीज जो मरी जाय । ३. किसी काम या बात के फलस्वरूप प्राप्त होनेवाली दशा या स्थिति । जैसे—अँसी कटनी बैसी भरती । ४. खेतों में बीज आदि बोने की किया । ५. खेतों की सिंचाई । ६. कपड़ों में की डरकी । नार । ७. बुनाई से बाने का सूत । सवो० [?] १. छड़की । २. मोरती । ३. गाछी मच । ४. एक प्रकार की जड़ी या बूटी ।

†स्त्री०- मरणी (मलत्र)।

भर-पार्श्व—स्त्री० [हि० भरना +पाना] १. बहु स्थिति जिसमें से किसी में कुछ प्राप्य धन असूल हो जाय। २ उक्त का सूचक लेख, जो इस बात का सूचक होता है कि अब हमें अमुक व्यक्ति से कुछ लेना दोष नहीं रह गया है।

क्रि० वि० पूर्ण रूप से। पूरी तरह से। उदा०—भाला दुखित कई भर-पार्श्व—सूर।

भरपूर—वि० [हि० भरना +पूर] १ जो पूरी तरह से भरा हुआ हो। परिपूर्ण। २ जिसमें किसी प्रकार की कमी या वृद्धि न हो।

क्रि० वि० १ बहुत अधिक मात्रा या परिमाण में। जितना चाहिए, उतना या उससे भी कुछ अधिक। २ पूर्ण रूप से। ३ अच्छी तरह। मली भाँति।

†पू०-ज्वार (समुद्र का)।

भरभराहट—अ० [अनु०]। भाव० भरभराहट १. रोएँ लड़ा होना। २ (आँखों में) जल भर आना। ३ (दृश्य का) आवेगपूर्ण या विह्वल होना। ४. बिफल होना। ५. घबराहट। ६ (ज्वर आदि में शरीर में) हलकी सूजन या दाँतों का उमार होना।

भर-भराहट—स्त्री० [अनु०] भरभराने की अवस्था, क्रिया या भाव। भरभूँसा—पू०=भरभूँसा।

भरभेटा—पू० [हि० भर +भेटना] १ अच्छी तरह मले मिलने की क्रिया या भाव। २. मुकाबला। मुठभेड़।

भरभ्रम—पू० [सं० भ्रम] १ भ्रांति। सशय। सदेह। २. भेद। रहस्य। ३ अपने महत्व, साक्ष आदि का रहस्य या विप्वसनीयता। क्रि० प्र०—खाना।—योजना।

भरभ्रमा—अ० [सं० भ्रमण] १ चलना-फिरना। घूमना या टहलना। २. इधर-उधर भारे भारे फिरना। ३. धोके में पडकर इधर-उधर होना। भटकना।

स्त्री० [म० भ्रम] १. मूल। यलती। २. धोखा। भ्रांति। ३ मन में होनेवाला अनिश्चय।

भरभ्राना—सं० [हि० भरमना का सं० रूप] १ ऐसा काम करना अथवा ऐसी स्थिति उत्पन्न करना जिससे किसी को भ्रम हो जाय। भ्रम में डालना। २ व्यर्थ इधर-उधर घूमना। भटकना। ३ आसक्त या मोहित करना। बिलभाना।

†अ० अचमने में आना। चकित होना।

भर-भार—स्त्री० [हि० भरना +भार=अधिकता] अनावश्यक या व्यर्थ भीजे की अधिकता। भरभोहा—वि० [हि० भरप+ओहा (प्रय०)] भ्रम उत्पन्न करनेवाला। भरभानेवाला।

वि० [हि० भरमना (घूमना) +ओहा (प्रय०)] १. घूमने या घुमाने-वाला। २ चक्कर खाने या खिलानेवाला।

भरभराना—अ० [अनु०] १. भरर शब्द करते हुए गिरना। भरउपना। २. किसी पर दृष्ट या पिल पड़ना।

सं० १ भरर शब्द के साथ गिराना। २ किसी को किसी पर दृष्ट या पिल पड़ने में प्रवृत्त करना।

भरल—स्त्री० [देस०] नीले रंग की एक प्रकार की जंगली मेड़ जो बहुत

कुछ बर्तन की तरह होती और हिमालय में भूटान से लहाल तक होती है।

भरबाई—स्त्री० [[हि० भरवाना] १. भरवाने की क्रिया, भाव या पारिध्रमिक। २. वह टोपरी जिसमें नौस रत्नकर डोया जाता है।

भरराना—सं० [म० भरना का प्र० रूप] भरने का काम दूसरों से कराना। किसी का कुछ करने में प्रवृत्त करना।

भर-सक—अव्य० [हि० भर +सकना] जितनी समयता या शक्ति हो सकती है उतनी का उपयोग करने हुए। यथासाध्य।

भरसनी—स्त्री०- भरसना।

भरसाई—स्त्री०- भरसाइ (माह)।

भरहरना—अ० [देस०] अल-व्यस्त या नितर-वितर करना।

†अ०-भरभराना।

भरहराना—अ०-भरहाना।

भरानिधि—स्त्री० [देस०] एक प्रकार की घास।

भरानि—स्त्री०-भ्रानि।

भरा—वि० [हि० भरना] [स्त्री० मरी] १ जिसमें कोई चीज पूरी तरह से ढाली गई हो या पड़ी हो। जैसे—भरा घड़ा, भरा बौरा। २. जिसमें अपेक्षित, आवश्यक, उपयुक्त या समत तत्त्व अथवा पदार्थ यथेष्ट मात्रा में हो। जैसे—मरी गोद, भरा घर, मरी बटुक, भरा बाजार, मरी समा। ३ जो यथेष्ट उत्कर्ष, उन्नति, अर्थात् पूर्णता तक पहुँच चुका हो। जैसे—मरी जवानी, मरी बरतन, भरा शरीर। ४. जो किसी विधिष्ट तत्त्व या बात में इस प्रकार बहुत कुछ मुक्त हो कि जरा सा संकेत या सहारा पाकर उबल या फूट पड़े। जैसे—वह तो पाहले ही (कोष या तुल्य सं) भरा बेंडा था, तुम्हें देपते ही विषाह खड़ा हुआ।

पद—भरी समा में—सब के सामने।

भराई—स्त्री० [हि० भरना] १. भरने की क्रिया, भाव या पारिध्रमिक। २. मध्य-युग में एक प्रकार का स्थानीय कर।

भरापूरा—वि० [हि०] १ जिसमें किसी बात की कमी या गूना न हो। मय प्रकार से या सभी अपेक्षित बातों से युक्त। २ हर तरह से सम्पन्न और सुखी। जैसे—भरा-पूरा घर या परिवार।

भरा महीना—पू० [हि० पद] बरसात के दिन जिनमें मेनी में बीज बोये जाते हैं।

भराव—पू० [हि० भरना +वाव (प्रय०)] १ मरे हुए होने की अवस्था या भाव। २ भरने की क्रिया या भाव। ३ वह पदार्थ या रचना जिससे कोई अवस्था या हाली अगुम भरी गई हो या मरी जाती हो। जैसे—कसीदे की मृदियों में तागो का भराव।

भरावदार—वि० [हि० : फा०] जिसमें भराव हो। जैसे—भरावदार कपन।

भरित—पू० क० [म० भर : इतच्] १ जो भर गया हो। भरा हुआ। २ जिसका मरण-पौषण किया गया हो।

भरिया—दि० [हि० भरना] १ भरनेवाला। २. ऋण भरने या चुकाने-वाला।

पू० वह जो बरतन आदि ढालने का काम करता हो। डलाई करनेवाला। डाकिया।

पू० [हि० भार] १. भार डोनेवाला मजदूर। २. कहर।

भरी—स्त्री० [हि० भर] दस भाषे की टोल जिससे सोना, चाँदी आदि धातुएँ लीयी जाती थीं।

स्त्री० [?] एक प्रकार की घास जिससे छपर छापे जाते हैं।

भरी घोड़ा—स्त्री० [हि०] (स्त्री की) ऐसी घोड़ जिसमें सतान हो।

गुहा—भरी घोड़ा काही होना—पुत्र या संतान का भर जाना।

भरी जवानगी—स्त्री० [हि०] पूर्णता तक पहुँची हुई ऐसी युवावस्था जिसका उतार अनी दूर हो। पूर्ण जीवन प्राप्त स्थिति।

पर—भरी जवानगी मोक्षा बीला—यौवनावस्था में भी कुदती और शक्ति न होना।

भरी वाली—स्त्री० [हि०] ऐसी स्थिति जिसमें जीविका का निर्वाह या इच्छाओं की पूर्ति सहज में होती हो। जैसे—मुनमें तो उसके आगे से भरी वाली कीच (या छान) ली।

गुहा—भरी वाली पर क्लास मारना—मिलती रोजी या लगी नौकरी जान-बूझकर छोड़ देना।

भर—पु० [स०] √ भू (भरण करना) +उत्[१. विष्णु। २. शिव। ३. सत्यु। ४. सोना। ५. स्वर्ण। ५. मालिक। स्वामी।

पुं० १ = भर। २. = मार। उदा०—मावक उमरीही घोषे कक्ष पर्यो भर आय।—बिहारी।

भरजा—पु० [दिश०] टसर।

पुं० =मडवा।

भरजाना—अ० [हि० मारी। आना (प्रत्य०)] मारी होना।

पुं० मारी करना।

भरका—पु० [हि० भरना] पुरेके के आकार का मिट्टी का बना हुआ कोई छोटा पात्र। घुसकड़।

भरक—पु० [सं०] स/रुक् (भंग करना) +क [स्त्री० भरका] १. मृगाल। २. मृना हुआ जी।

भरक—पु० [सं०] भू (भरण करना) +उट+कन् भूना हुआ मास।

भरकाना—अ० [हि० भर या मारी+आना या हाना (प्रत्य०)] अभिमयन या धमक करना।

सं० [हि० भ्रम] १. भ्रम में डालना। २. बहकाना। ३. उल्टेजित करना। उकसाना। मडकाना।

भरकी—स्त्री० [दिश०] कलय बनाने की एक प्रकार की कच्ची किलक। [स्त्री० =भरत (पत्नी)।

भरक—पु० =रेड।

भरक—पुं० [हि० मार+काठ] दरवाजे के ऊपर लगी हुई बहु लकड़ी जिससे ऊपर दीवार उठाई जाती है। इसे 'पटाव' भी कहते हैं।

भरका—वि० [हि० भरना+एवा (प्रत्य०)] भरनेवाला।

वि० [सं० भरण] भरण-पोषण करनेवाला। पालक। पोषक।

भरोड—पुं० [दिश०] एक प्रकार की जंगली घास।

भरोटा—पुं० [हि० मार+ओटा (प्रत्य०)] घास या लकड़ी आदि का गट्टा। बीस।

भरोसा—पुं० =भरोसा।

भरोसा—पुं० [?] १. मन की ऐसी स्थिति जिससे वह आधा या विश्वास ही कि अमुक व्यक्ति समय पड़ने पर हमारी सहायता करेगा। आशय या सहाय के सम्बन्ध में मन में होनेवाली प्रतीति। अवलंब। आसरा।

जैसे—हुंमे तो आप (या ईश्वर) का ही भरोसा है। २. ऐसी आधा जिसकी प्रति की बहुत संभावना हो। जैसे—मन में भरोसा रखो, वे तुम्हें निराश नहीं करेंगे।

पर—भरोसे का—जिस पर बहुत कुछ भरोसा किया जा सकता हो। विश्वसनीय।

भरोसी—वि० [हि० भरोसा+ई (प्रत्य०)] १. भरोसा या आसरा रखने-वाला। जो किसी (काम, बात या व्यक्ति) का भरोसा रखता हो।

२. जिसका भरोसा रखा जा सके। विश्वसनीय। ३. जो किसी के भरोसे रहता है। आश्रित।

भरोती—स्त्री० [हि० भरना+ओती (प्रत्य०)] १. भरने या भराने की क्रिया या भाव। २. वह स्त्रीय जिसमें भरपाई लीची गई हो। भर-पाई का कागज। ३. दे० 'भरती'।

भरोना—वि० [हि० मार+ओना (प्रत्य०)] बोझिल। मारी। बजनी।

भर—पुं० [सं०] √ भू (भूना) +भृत् १. शिव। महादेव। २. सूर्य का तेज। ३. चमक। दीप्ति। ४. एक प्राचीन जनपद।

भरन—पुं० [सं०] √ भू +भृत्—अन भ्रान में भूना हुआ अन्न।

भरन्ध्व—वि० [सं०] भू +ध्वत् १. (भार) जो बहन किया जा सके। २. (व्यक्ति) जिसका भरण-पोषण किया जा सके या किया जाने को हो। पालनीय।

भरती (भृ) —वि० [सं०] √ भू +भृत् भरण-पोषण करनेवाला।

पुं० १. विष्णु। २. स्त्री का पति। ३. मालिक। स्वामी।

पुं० =भरती।

भरतिरि—पुं० [सं०] स्त्री का पति। स्वामी।

भरती—स्त्री० =भरती।

भरुमती—स्त्री० [सं०] भृत् +भृत्, डीपु] सवधा स्त्री।

भरुस्थान—पुं० [सं०] ग्रहों के स्वामी सूर्य का मूलस्थान, अर्थात् मुस्तान नगर।

भरुहरि—पुं० [सं०] १. उज्जैन के राजा इन्द्रसेन के पीते जो अपनी स्त्री सामदेई (शिवल की राजकुमारी) की सुपरिभ्रता के कारण दुःखी होकर संसार से निरत हो गये थे। संकृत से इनके बनाए हुए भृगुभार शतक, नीति शतक, वैराग्य शतक, वाक्य परीय आदि ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। २. संगीत में एक प्रकार का सकर राग जो ललित और पुरज के मेल से बनता है।

भरसन—पुं० [सं०] √ भृत् +भृत्—अन किसी के अनुचित तथा दूषित आचरण या व्यवहार से क्रुद्ध और दुःखी होकर उसे कटु शब्दों में कुछ कहना और फलतः उसे लज्जित करना।

भरसना—स्त्री० [सं०] √ भृत् +भृत्—अन, +टापु] १. =भरसन। २. मस्तिष्क होने की अवस्था या भाव।

भरिसत—पुं० कृ० [सं०] √ भृत् +भृत् +स्त] जिसकी भरसना हुई या की गई हो।

भरि—पुं० [सं०] √ भू (भरण करना) +भृत् १. सोना। स्वर्ण। २. नामि।

पुं० =भ्रम।

भरन—पुं० =भ्रमण।

भरना—अ० =भरण।

भरना—सं० =भरण।

भर्ष—पु० [स०√भृ (मरण करना) + यत्] किसी को मरण-वीक्षण के निमित्त दिये जाने या मिलनेवाला धन। सरथा। गुजारा।

भर्षा—पु० [भर शब्द से अनु०] ? भाँसा। रमयुक्ता।
कि० प्र०—देना।

२ पथियों की उडान। ३. एक प्रकार की बिड़िया।

भर्षाया—पु० [अनु०] ? भररथ शब्द होने की अवस्था या भाव। २ कुछ समय तक बराबर होनेवाला भरमर शब्द।

कि० वि० ? भररथ शब्द करते हुए। २ बहुत जल्दी या तेजी से।

भर्षाया—अ० [भर से अनु०] भर भर शब्द होना। जैसे—आवाज भर्षाया।

स० भर भर शब्द उल्लस करना।

†अ०—भरमान।

भर्षनी—पु०—भर्षन।

भर्षनी—स्त्री०—भर्षनी।

भर्ष—पु० [सं०√भृ (मारना)। अच्] ? मार डालने की क्रिया।
वच। हत्या। २ दान। ३. निरुक्षण।

कि० वि० [हि० मला] मली भाँति।

†वि०—मला।

भर्षका—पु० [देव०] ? नथ मे दोमा के लिए जडा जानेवाला सोने या चाँदी का छोटा टुकडा। २ एक प्रकार का बीस।

भर्षटी—स्त्री० [?] हँसिया।

भर्षपति—पु० [हि० माळा + स० पति] माला धारण करनेवाला। माला-बदार।

भर्षभल—स्त्री० [अनु०] गानी या किसी तरल पदार्थ के बहने का शब्द।

स्त्री० [अनु०] नदी-नाले के जल के बहने का शब्द।

भर्षभलाहट—स्त्री० [अनु० भलमल + हि० आहट (प्रत्य०)] भलमल शब्द होने की अवस्था या भाव।

भर्षभनसत—स्त्री० [हि० मला + स० मनुष्य] ? मले मानस होने की अवस्था या भाव। २ मले आदिमियों का मा भद्रतापूर्ण व्यवहार।

३ बहु स्थिति जिसमे कोई किसी के प्रति भद्रतापूर्ण व्यवहार करता है।

भर्ष-भनसाहल—स्त्री०—भर्षभनसत।

भर्षभनसती—स्त्री०—भर्षभनसत।

भर्षा—वि० [स० भर, प्रा० मल्ल] [स्त्री० मली] ? (व्यस्त) जो सदाभारी हो और दूसरों की मलाई या हिल करता या चाहता हो। धुद हृदय और सार्विक प्रवृत्तियोंवाला। २ (आचरण या व्यवहार) जिसमे कोई नैतिक दोष न हो और जिससे मलाई या हिल होता अथवा हो सकता हो। ३ (अलु या विषय) जो (क) मन को भाता हो,

(ख) सतोषजनक और लाभप्रद हो।

पथ—भला-बया—(क) हर तरह से ठीक और सतोषजनक। जैसे—भला-बया मकान छोड़कर वे कहीं और चले गये। (ख) धारीरिक दृष्टि से स्वस्थ।

४. मगलकारी। धूम।

पु० मलाई। मगल। हिल।

मुहा०—(किसी का) भला मजाना—किसी के कुशल-मगल की कामना करना। किसी का भला मानना—उपकार मानकर अनुगृहीत करना।

उदा०—राजा का भला मानहु मारी—जायसी।

२. मला। लाभ।

पथ—भला-बरा—(क) लाभ और हानि। जैसे—पहले अपना भला-बुरा सोच लो। (ख) ऐसी बाने जिनमे कुछ बंट-फटकार भी हो।

जैसे—बहु दिन भर मुझे मला-बुरा कहते रहते हैं।

अव्य० ? मालजनक या बहुत अच्छा। प्रथम है कि। जैसे—मला आप आये तो! २ जोर देने के लिए प्रयुक्त होनेवाला अव्यय। जैसे—मला ऐसा भी कही होता है!

भर्षाई—स्त्री० [हि० मला + ई (प्रत्य०)] ? भले होने की अवस्था या भाव। भलापन। अच्छापन। २ किसी के साथ किया जानेवाला उपकार। नेकी। ३ किसी प्रकार का लाभ या हित।

भलापन—पु० भर्षाई।

भलामानस—पु० [हि०] मला व्यक्तित्व। नेक आयमी।

भले—अव्य० [हि० मला] ? मली भाँति। अच्छी तरह। पूर्ण रूप से।

उदा०—एहि विधि भलेहि सो रोग नसाही।—दुलमी।

पथ—भले को—उहित लाभ या हित के विचार से, अच्छा ही हुआ। जैसे—भले को मैं कुछ बोला ही नहीं, नहीं तो झगडा हो जाता। भले ही—ऐसा हुआ करे। इसकी विता नहीं। इसमे कोई हानि नहीं।

जैसे—भले ही यह वही रहे।

अव्य० खूब। बाह। 'काहु' से मही का सूचक। जैसे—लुग कल धाम की आनेवाले थे, भले आये।

भलेरा—वि०, पु०—मला।

भल्ल—पु० [सं०√भल्ल (बस करना)। अच्] ? वच। हत्या। २. दान। ३. माला। ४ एक प्रकार का बाण। ५ विषय का एक नाम। ६ एक प्राचीन जन्मद और तीर्थ। ७ प्राचीन काल का एक प्रकार का शस्त्र जिससे धारी मे घसा हुआ तीर निकाला जाता था। (बैद्यक) ८ मालू।

भल्लक—पु० [सं० मल्ल + क्त] ? मालू। २ भिलावाँ। ३ इगुड़ी का पेड। ४ एक प्रकार की बिड़िया। ५ मरिषयत का 'भल्ल', नामक मेद। ६ एक प्राचीन जन्मद।

भल्ल-नाथ—पु० [स० प० त०] जायवान्।

भल्ल-पति—पु० [स० प० त०] जायवान्।

भल्ल-पुच्छी—स्त्री० [स० ब० स०, डीप्] गोरवमूठी।

भल्लाश—वि० [स० भल्ल-आश य०, स०, + पच्] जिस बम विष्पार्ई देता हो। मद्दुष्टि।

भल्लाट—पु० [स० म० भल्ल + अट (जाना)। अच्] ? मालू। २. एक पर्वत का प्राचीन नाम।

भल्लात, भल्लातक—पु० [स० भल्ल + अत (नामन)। अच्, भल्लात + क्त] भिलावाँ।

भल्लातकी—स्त्री० [स० भल्लातक + डीप्] भिलावाँ।

भल्लु—पु० [ग० √भल्ल + उ] एक तरह का सन्निपात ज्वर।

भल्लुक—पु० [स० भल्लुक, पुषी० ह्ल्व] मालू।

भल्लुक—पु० [स० √भल्ल + उक्त] ? मालू। २ एक प्रकार का दमोनाक। ३ कुसा।

भर्ष—स्त्री०—भौह।

भवंच, भवंचा— $\sqrt{\text{भं}} + \text{च}$ [सं० भुजंय] साप। सर्प। उदा०—विश्व भवंच मेरो बन्धी है कलेओ।—मीरी।

भवैर—स्त्री०—भवैर।

पू०—मीरी।

भवैरी—स्त्री०—मीरी।

भव— $\sqrt{\text{भ}} + \text{व}$ (होना) +अच्। १. होने की अवस्था, किया या भाव। सत्ता। २. उत्पत्ति। ३. जन्म। ४. जगत। सत्कार। ५. सत्कार मे बार बार जन्म लेने और मरने का कष्ट। ६. प्राप्ति। ७. कारण। हेतु। ८. शिव। ९. कामदेव। १०. भांस। ११. बादल। मेघ। वि० १. समस्त पदों के अन्त मे, किसी से उत्पन्न। जन्म हुआ। उत्पन्न। २. कुशल। होशियार। ३. भगलकारक। शुभ।

पू०—भव (इर)।

भवक—वि० [सं० वृ + बुन् + अक] १. उत्पन्न। जीता हुआ।

भव-कूर— $\sqrt{\text{भ}} + \text{कूर}$ [सं० कर्म + सं०] सत्कार कपी कूड़ा, जिसमें लोग अंधेरे मे रहकर कष्ट भोगते हैं।

भव-केतु— $\sqrt{\text{भ}} + \text{केतु}$ [सं० वं० तं०] गृहसंहिता के अनुसार पूर्व में कमी कमी दिशाई देनेवाला एक पुच्छल तारा जिसकी पूछ शेर की पूछ की भाँति दक्षिणावर्त्त होती है। कहते है कि जितने मूहर्त्त तक यह दिशाई देता है, उतने महीने तक भीषण अकाल या महाभागी होती है।

भवकचक्र— $\sqrt{\text{भ}} + \text{चक्र}$ [सं० वं० तं०] १. घण्टा। २. बौद्धों में वह कल्पित चक्र जिससे यह जाना जाता है कि कौन कौन कर्म करनेसे जीवात्मा को किन किन मोक्षियों मे जन्म लेना पड़ता है।

भव-चाप— $\sqrt{\text{भ}} + \text{चाप}$ [सं० वं० तं०] शिव की का घण्टा। पिलाक।

भवच्छेद— $\sqrt{\text{भ}} + \text{च्छेद}$ [सं० वं० तं०] समार मे होनेवाले आध्यात्मन से मुक्ति।

भव-जाल— $\sqrt{\text{भ}} + \text{जाल}$ [सं०] सासारिक प्रपञ्च।

भवत्— $\sqrt{\text{भ}} + \text{वत्}$ [सं० वृ + मा (प्रकाश) + उबतु] १. मूर्ति। जमीन। २. विष्णु। वि० पुण्य। माया।

भवत्प्यत्ता—स्त्री०—भवितव्यता।

भवती—स्त्री० [सं० भव् + ती + अच्] एक प्रकार का जहरीला बाण।

भव-दाह— $\sqrt{\text{भ}} + \text{दाह}$ [सं० मय्यं + सं०] देवदाह।

भवदीय—सर्व० [सं० भवत् + इत् + ईय, स-लोप] [स्त्री० भवदीया] आपका। [प्राय पदों के अन्त मे, लेखक के नाम से पहले जालीयता और नज्रता सूचित करने के लिए प्रयुक्त।

भवन्— $\sqrt{\text{भ}} + \text{वन्}$ (होना) + ल्युट्—अच्। १. अस्तित्व मे आना। उत्पत्ति या जन्म। २. कोई धान्त्-रचना विशेषतः दास-स्वान। ३. प्रासाद। महल। ४. जगत। सत्कार। ५. आभार या आश्रय का स्थान। जैसे—कल्याणमय। ६. छप्यय का एक भेद।

पू० [सं० भ्रमण] १. चारो ओर घूमने या चक्कर लगाने की किया या भाव। भ्रमण। २. कोलू के चारों ओर का वह चक्कर जिसमे बैल घूमते हैं।

भवन्-कवचा—स्त्री० [सं०] महल या राजप्रासाद का आंगन या चौक।

भवन्-वीथिका—स्त्री० दे० 'गृह-वीथिका'।

भवन्-पति— $\sqrt{\text{भ}} + \text{पति}$ [सं० वं० तं०] १. घर का मालिक। गृहपति। २. राशि चक्र में किसी ग्रह का स्वामी। ३. जैनियों के दस देवताओं का एक वर्ग जिनके नाम ये है—अशुक्रभार, नागभार, तद्विक्रुभार,

सुपर्णकुमार, बहिकुमार, अनिलकुमार, स्तनिकुमार, उदधिकुमार, द्वीपकुमार और विक्रुमार।

भवन्वासी (सिन्धु)— $\sqrt{\text{भ}} + \text{वन्}$ [सं० भवन् + वत् (निवास करना) + गिति] जैनों के अनुसार आत्माओं के चार भेदों मे से एक।

भवन्वा—अ० [सं० भ्रमण] घूमना। फिरना। चक्कर खाना।

भव-नाशिकी—स्त्री० [सं० वं० तं०] सरयू नदी।

भवनी—स्त्री० [सं० भवन्]—गृहिणी।

भवनीय—वि० [सं० वृ + (होना) + अनीयच्] १. मध्यमे में होने-वाला। २. आसन्न। सन्निकट।

भवन्नाथ— $\sqrt{\text{भ}} + \text{नाथ}$ [सं० वं० तं०] शिव।

भवपाली—स्त्री० [सं० वं० तं०, + कीच्] ताम्रिकों के अनुसार भुवनेश्वरी देवी को सत्कार की रक्षा करनेवाली मार्गी गई है।

भव-प्रत्यय— $\sqrt{\text{भ}} + \text{प्रत्यय}$ [सं० वं० तं०] योग मे, समाधि की एक अवस्था।

भव-बंधन— $\sqrt{\text{भ}} + \text{बंधन}$ [सं० वं० तं०] १. जन्म-मरण का चक्र। २. सासारिक कष्ट और दुःख।

भव-भंग— $\sqrt{\text{भ}} + \text{भंग}$ [सं० वं० तं०] आध्यात्मन से होनेवाली छुट्टी।

भव-भंजन— $\sqrt{\text{भ}} + \text{भंजन}$ [सं० वं० तं०] १. परमेश्वर। २. समार का नाश करनेवाला, काल।

भव-भय— $\sqrt{\text{भ}} + \text{भय}$ [सं० वं० तं०] बार बार संसार में जन्म लेने और मरने का भय।

भव-भामिनी—स्त्री० [सं० वं० तं०] शिव की पत्नी-पार्वती।

भव-भाव— $\sqrt{\text{भ}} + \text{भाव}$ [सं० वं० तं०] भौतिक बातों के प्रति होनेवाला प्रेम।

भव-भौत—वि० [सं० वं० तं०] [भाव + भव-भौति] जिसे यह भय ही कि भूसे बार बार संसार मे जन्म लेना और मरना पड़ेगा।

भव-भौति—स्त्री० [सं० वं० तं०] दे० 'भव-भय'।

भव-भूति—स्त्री० [सं० वं० तं०] एश्वर्य।

पू० 'उत्तर रामचरित' नाटक के रचयिता संस्कृत के एक प्रसिद्ध महाकवि।

भव-भूषण—वि० [सं० वं० तं०] जो जन्तु के भूषण के रूप में हो।

पू० शिव का भूषण, रास आदि।

भव-भोग— $\sqrt{\text{भ}} + \text{भोग}$ [सं० वं० तं०] सासारिक सुखों का किया जानेवाला भोग।

भव-भयम्— $\sqrt{\text{भ}} + \text{भयम्}$ [सं० वं० तं०] सासारिक सुखों से होनेवाली विरक्ति।

भव-भोचन—वि० [सं० वं० तं०] भव-बंधन काटनेवाली।

पू० श्रीकृष्ण।

भवर्षा—स्त्री०—भाबरि।

भव-रस— $\sqrt{\text{भ}} + \text{रस}$ [सं० वं० तं०] सासारिक बातों के प्रति होनेवाला अनुराग और उनसे मिलनेवाला सुख।

भव-वामा—स्त्री० [वं० तं०] शिव की पत्नी, पार्वती।

भव-विलास— $\sqrt{\text{भ}} + \text{विलास}$ [सं० वं० तं०] १. माया। २. सासारिक सुखों के भोग के निमित्त की जानेवाली कीड़ाएँ।

भव-शूल— $\sqrt{\text{भ}} + \text{शूल}$ [सं० वं० तं०] लोक में जन्मने, जीवित रहने और मरने पर होनेवाला कष्ट।

भव-शेखर— $\sqrt{\text{भ}} + \text{शेखर}$ [सं० वं० तं०] चंद्रमा।

भव-सत्तार— $\sqrt{\text{भ}} + \text{सत्तार}$ [सं० कर्म + सं०] सत्कार कपी समूह।

भव-सिन्धु— $\sqrt{\text{भ}} + \text{सिन्धु}$ [सं० कर्म + सं०] सत्कार कपी समूह।

मर्वा—स्त्री० [हि० मरवा] चक्कर। फेरी। उदा०—राते कौवल करहि अलि मर्वा, पुमहि भाति बहहि अपसर्वा—जायसी।
 मर्वातर—पु० [सं० मर्पु० सं०] पहिले भाग आगे चलकर होनेवाला जर्म।
 मर्वाना—सं० [सं० अमर्प] घुमाना। फिराना। चक्कर देना।
 मर्वाधि—पु० [सं० मव-अधुधि, कर्म० सं०] संसार रूपी सागर।
 मर्वा—स्त्री० [सं० मव+टापु] १ मरानी। पार्वती। २ दुर्गा।
 मर्वाचल—पु० [सं० ष० तं०] कैलास पर्वत।
 मर्वाला—पु०—मरवाला।
 मर्वाली—स्त्री० [सं० मव+डीप, आनुक्] १ मव की भार्या। दुर्गा।
 २ छत्रपति शिवाजी की तलवार की सजा। ३ सगील मे विलावल ठाठ की एक रामिनी।
 मर्वाली-कास—पु० [सं० ष० तं०] शिव।
 मर्वाली-मूष—पु० [सं० ष० तं०] हिमपात।
 मर्वाली-नवम—पु० [सं० ष० तं०] १ गणेश। २ कातिकेय।
 मर्वाली-वति—पु० [सं० ष० तं०] शिव।
 मर्वायाना—स्त्री० [सं० मव-अयन, ब० सं०,+टापु] गया जो शिव की उता से निकली हैं। मवायनी।
 मर्वायंभ—पु० [सं० मव-अणंभ, कर्म० सं०] मव-सागर।
 मर्वा—वि०—मव्य।
 मर्वाक—वि० [सं० मव+अक्+इक] १. मंगलकारी। २ धार्मिक। ३ उपयोगी। उपयुक्त। ४. प्रसन्न। ५. समृद्ध।
 पु० कल्याण। मगल।
 मर्वात—पु० कृ० [सं०] १ अस्तित्व मे जाया हुआ। २ गल। मूल।
 मर्वातव्य—वि० [सं० √वृ। तव्यत्] [भाव० मर्वातव्यता] १ जो मर्वात्य मे विशेषत आसन्न मर्वात्य मे निश्चित रूप से होने को हो। २ जो माय्य मे बदा हो।
 मर्वातव्यता—स्त्री० [सं० मर्वातव्य+तल्लु+टापु] १ ऐसा काम या बात जो मर्वात्य मे ईश्वरीय विधान के अनुसार अवश्य होने को हो। २ माय्य।
 मर्वाता (शु)—वि० [सं० √मृ। तृप्] [स्त्री० मर्वाती] १. आगे चलकर जाने या होनेवाला। २ जो आगे चलकर अच्छा या उत्तम होने को हो। होनहार।
 मर्वातय—पु०—मर्वात्य।
 मर्वातय—पु० [सं० √वृ। (होना)+लृट्—णान्, स्य, पुषो०, त-ओप] १. आनेवाला समय। वर्तमान के बाद आनेवाला काल। २ व्याकरण मे, मर्वातय काल। (शे०)
 मर्वातय-मुत्ता—स्त्री० [सं० ष० सं०,+टापु] बहु गुणा नायिका जो रति मे प्रभुप होनेवाली ही और पहले से उसे छिपाने का प्रयत्न करे। मर्वातय सुरति गुत्ता।
 मर्वातय-नाम—पु० [सं० कर्म० सं०] होनेवाली बातों की जानकारी।
 मर्वातय्य—पु० [सं० √वृ। (होना)+लृट्—णान्, स्य] वर्तमान काल के उपरान्त आनेवाला काल। आनेवाला समय। आगामी काल। मर्वातय्य।
 मर्वातय्य-काल—पु० [सं० कर्म० सं०] व्याकरण मे, क्शिपाय का बहु रूप जो मर्वातय मे क्शिपा के वटित होने की सूचना देता है। क्शिपाय के इस रूप में गा, गी, मे आदि बुझे होते हैं।

मर्वातय्य-आसेप, कर्म० सं०] साहित्य में एक प्रकार का अर्थालंकार।
 मर्वातय्य-काल (स्य)—पु० [सं० मर्वातय्य-कल्प, ष० तं०] १. मर्वातय्य में होनेवाली घटनाओं का कथन करनेवाला। २. ज्योतिषी।
 मर्वातय्य-वाणी—स्त्री० [सं० मर्वातय्य-वाणी, ष० तं०] ऐसा कथन या वक्तव्य जो मर्वातय्य मे होनेवाली किसी घटना का अधिम सूचना देता हो। आगे या होनेवाली घटना का पहले से कथन।
 मर्वातय्य-निधि—स्त्री० [सं० ष० तं०] १ मर्वातय्य में होनेवाली आवश्यकताओं या स्थितियों के निमित्त संचित किया जानेवाला कोष या धन-राशि। २ आज-कल नियोजिता द्वारा कर्मचारी के लिए संचित किया जानेवाला धन जो कर्मचारी की सेवा छोड़ने के समय दिया जाता है। निर्वाह-निधि। (प्रविट्टे फण्ड) ३ वृह धन जो उत्तम निधि मे समय-समय पर कर्मचारी या नियोजिता जमा करते है।
 मर्वातय्य-पुराण—पु० [सं० मध्य० सं०] अठारह पुराणों मे से एक।
 मर्वातय्य सुरति गोवना—स्त्री०—मर्वातय्य गुत्ता (नायिका)।
 मर्वाली—वि० [हि० भाव+ईला (प्रत्यय०)] १ मावपूर्ण। २. बौका। तिरछा।
 मर्वाश—पु० [सं० मव-ईश, ष० तं०] १ ससार का स्वामी परमेश्वर। २. शिव।
 मर्वाश—वि० [सं० √मृ। (होना)+यत्] [भाव० मर्वाशता] १ जो देखने मे बड़ा और सुन्दर जान पड़े। शानदार। २ मगलदायक। सुम। ३ सच्चा। मय्य। ४ योग्य। लायक। ५ मर्वातय्य मे आने या होनेवाला। ६ जिसे जन्म धारण करना पड़ता हो।
 पु० १ मलता नामक वृक्ष। २ कमरूल। ३. नीम। ४. करेला।
 ५ मनु चाशुप के अत्यंत देवताओं का एक वर्ग। ६ ध्रुव का एक पुत्र। ७ मर्व जिसे लिगपद की प्राप्ति हो। मर्वसिद्धक। (जैन)
 मर्वाशता—स्त्री० [सं० मय्य+तल्लु,+टापु] मर्वाश होने की अवस्था या भाव।
 मर्वाश—स्त्री० [सं० मय्य+टापु] १ उमा। पार्वती। २ नजपीपल।
 मर्वा—पु० [सं० √मृ (मूर्कना)+अक्] कुत्ता।
 १ पु०—मय्य (आहाय या भोजन)।
 मर्वाश—पु० [सं० √मृ+लृट्—अन] १ मूर्कना। २ कुत्ता।
 १ पु०—मय्य (खाना)।
 मर्वाश—सं० [सं० मय्य] भोजन करना। खाना।
 मर्वाश—स्त्री० [सं० ष० तं०] ज्योतिष मे, अरलेखा, ज्येष्ठा, और रेवती नक्षत्रों के बीच चरण के बाद के नक्षत्रों से मर्वा।
 मर्वाशाना—सं०—मर्वाशाना। उदा०—आपु धाय मर्वाश मर्वाशकर्वे—गोरखनाथ।
 मर्वाश—पु० [सं० √मृ (प्रकाश करना)+लृट्—अन] अमर। मौरा।
 मर्वाश—अ० [बे०] १. पानी के ऊपर तैरना। २. पानी मे डाला या डबाया जाना।
 मर्वाश—वि० [सं० मय्य] जो मय्य ही चुका हो। जला हुआ।
 मर्वाश—वि०, पु०—मय्य।
 मर्वाश पत्नी—स्त्री० [सं० मय्य] गाँवा। (संज्ञेही)
 मर्वाश—पु० [सं० मय्य] पीसा हुआ आटा। (सायकों की परिभाषा)
 पु० [अ० वय्य] १. नील की पत्तियों का बुरा या दुकनी जिसके बोल

से सफेद डाल काले किये जाते थे। २. किसी प्रकार का शिवावा।

भसाकू—पु० [हि० तमाकू का अनु०] षटिया तमाकू जिसका बूझा पीने पर कड़वा न लगता हो।

भसाना—पु० [ब० भसाना] १. जल में भसाना या डुबाने की क्रिया या भाव। २. पूजा के उपरांत देवी-देवता आदि की मूर्ति को किसी नदी में प्रवाहित करना। जैसे—काली भसान, सरस्वती भसान।

भसाना—स० [ब०] १. किसी बीज को पानी में तैरने के लिए छोड़ना। जैसे—जहाज भसाना (लवण), मूर्ति भसाना। २. पानी में डालना या डुबाना।

भसिड, **भसीड**—स्त्री० [देश०] कपल की माल जिसकी तरकारी बनती है। मुरार। कपलमाल।

भसुंड—पु० [सं० मसुण्ड] हाथी। गज।
वि० बहुत मोटा-ठाका या भारी-भरकम परतु, बेबौली या महा।

भसुर—पु० [हि० भसुर का अनु०] विवाहिता स्त्री के विचार से उसके पति का बड़ा भाई। जेठ।

भसुंड—पु० [सं० मसुंड] हाथी का सूंड। (महापत)

भस्वा—स्त्री० [सं०, वस् (प्रकाश करना)। वस्+टाप्] आग सुलगाने की भाषी।

भस्म—वि० [सं० भस। भस्मिन्, न-लोप] जो पूरी तरह से जलकर राख हो गया हो।

पु० १. कोयले, लकड़ी आदि के जल जाने पर बची हुई राख। २. चिता की राख जो पुराणानुसार शिव जी अपने शरीर में लगाते हैं।

क्रि० प्र०—रमाना।—लगाना।
३. विशेष प्रकार से तैयार की हुई अथवा अभिहोत्र के की राख जो पवित्र मानी जाती है और जिसे शिव के भक्त भक्त तथा अंगी में लगाते अथवा साधु लोग सारे शरीर में लगाते हैं। ४. बैद्यक में, किसी धातु को फूँककर तैयार की हुई राख जो चिकित्सा के काम आती है। जैसे—लौह भस्म, स्वर्ण भस्म। ५. एक प्रकार का पथरी रोग।

भस्मक—पु० [सं० भस्मन्+कन् वा भस्मन्+कृ+ङ] १. भावप्रकाश के अनुसार एक प्रकार का रोग जिसमें सब कुछ लाया हुआ तुरन्त पच जाता है, और फिर खाने की इच्छा होती है। इसे 'भस्मकीट' की कहते हैं। २. आधुनिक रसायन में वह भस्म या राख जो किसी धातु के पूरी तरह से जल जाने पर बच रहती है। ३. सोना। स्वर्ण। ४. विद्वान।

भस्मकारी (भस्म करनेवाला)।
भस्मकारी—स्त्री० [सं० भस्मन्+कृ (करना)।+गिति] जलाकर भस्म करनेवाला।

भस्म-गंधा—स्त्री० [सं० ब० सं०,+टाप्] रेणुका (गंधद्रव्य)।

भस्म-गर्भ—पु० [सं० ब० सं०] तिलिख वृक्ष।

भस्म-गर्भा—स्त्री० [ब० सं०,+टाप्] १. रेणुका नामक गंध-द्रव्य। २. धौषाय।

भस्म-जावाल—पु० [सं०] एक उपनिषद् का नाम।

भस्मता—स्त्री० [सं० भस्मन्+तल्+टाप्] भस्म होने की अवस्था या भाव।

भस्म-मूल—पु० [सं० भस्मन्+मूल+क] लुघार। पाला।

भस्म-प्रिय—पु० [सं० ब० सं०] शिव। महादेव।

भस्म-वैद्यक—पु० [उप० मि० सं०] कपूर।

भस्म-शायन—पु० [सं० ब० सं०] शिव।

भस्मशापी (शिव्) —पु० [सं० भस्मन्+धी (शयन करना)।+गिति] शिव।

भस्मसात्—वि० [सं० भस्मन्+साति] जो जलकर भस्म या राख हो गया हो। भस्मीभूत।

भस्म-स्नान—पु० [सं० वृ० तं०] सारे शरीर में राख मलना। (साधु)

भस्मामि—स्त्री० [सं० भस्मन्+अग्नि, भस्म्य० सं०] भस्मक रोग।

भस्मावशेष—पु० [सं० भस्म-अवशेष, कर्म० सं० या ब० सं०] किसी बीज के पूरी तरह से जल जाने पर बचनेवाली उसकी राख या और किसी प्रकार का पूर्ण विमृष्ट अवश।

भस्मासुर—पु० [सं० भस्मन्+असुर, भस्म्य० सं०] एक प्रसिद्ध राक्षस जिसने शिव जी से यह वर प्राप्त किया था कि जिसके शिर पर मैं हाथ रखूँ वह भस्म हो जाय। पर जब वह शिव को ही भस्म करने चला, तब कृष्ण ने उसे भार डाला था।

भस्मिल—पु० कृ० [सं० भस्मन्+इत्थत्] १. भस्म किया या जलाया हुआ। २. जो जलकर भस्म हो चुका हो।

भस्मीभूत—पु० कृ० [सं० भस्मन्+भूि, इत्थ, दीर्घ, भस्मी+भू+त्स] जो पूरी तरह से जलकर राख हो चुका हो।

भस्मइ—वि० [अनु० भस्म] बहुत मोटा और महा (विशेषत आदमी)।

भस्ती—स्त्री० [?] कोयले, लूने आदि का महीन बूण।

भहराना—अ० [अनु०] १. कौके से मिर या फिसल पड़ना। एकाएक मिर पड़ना। २. किसी पर अचानक वेगपूर्वक दृष्ट पड़ना। ३. किसी काम में सारी शक्ति लगाकर और जोर से लगना। (व्यय)

भहूँ—स्त्री०—भौह।

भाई—पु० [हि० भााना-भुमाना] खरादेनवाला। खरादी। कूनी।

भाउर—स्त्री०—भावर।

भाडै—पु० [म० भाव] अभिप्राय। आशय।

भाङ्गी—पु० [देश०] एक प्रकार का जंगली साइ जो गोखरु से मिलता-जुलता होता है।

भाँग—स्त्री० [सं० भूँग या भृगी] एक प्रसिद्ध क्षुण जिसकी पत्तियाँ मादक होती हैं, और नसे के लिए पीसकर पी जाती हैं।

भूहा—भाँग छानना=भाँग की पत्तियों को पीसकर और छानकर नसे के लिए पीना। भाँग का जाना या पी जाना-नसे की सी बात करना। नासमझी की या पागलपन की बातें करना। घर में भूँगी भाँग न होना=बहुत ही कंमाल या दरिद्र होना।

पु० [?] वैद्यकी की जाति।

भाँगड़ा—पु०—भेगडा।

भाँगर—स्त्री० [हि० भोगिना=तोड़ना] धातु आदि की गर्द या छोटे छोटे कण।

भाँज—स्त्री० [हि० भाँजना] १. भाँजने की क्रिया या भाव। २. किसी बीज के पत्ते जाने के कारण पड़नेवाला चिह्न या रेखा। ३. वह पत्र

जो सपना, तोर आदि मँजाने अर्थात् सुनाने के बदले में दिया जाय।
मुनाई। ४ ताने का मूल। (जुलाई)

स्त्री० [म० मज] बारी।

भाजना—स० [हि० मँजना] ? किसी लम्बी चौड़ी चीज की परत या पत्तने लगाना। तह करना। मोड़ना। जैसे—पगडा या कागज भाजना। २ तजदार, पग, मुखदर, लाठी आदि के मखव में, हाथ में लेकर अभ्यास, प्रदर्शन, पार, व्यवहार आदि के लिए उपर-उपर घुमाना। ३ तें या पार लड़ो को एक में मिलाकर बटना या मरोड़ना।

भाजा—पु० भाजना।

भाजी—स्त्री० [हि० भाजना मोड़ना] ऐसी बात को जान-बूझकर किसी का काम बिगाड़ने के लिए किसी दूसरे से कही जाय।

मुहा०—भाजी भरना—किसी से किसी के विरुद्ध उक्त प्रकार की बात कहना।

भाट—पु० भाट।

पु०—मंटा (बैंगन)।

भाटा—पु० मंटा (बैंगन)।

भाड़—पु० [म० भाड़, प्रा० भाँडा] ? वस्तु। भाँडा। २ ची, तेल आदि रखने का कुण्ड। ३ कोई उपकरण या औजार। ४. व्याध-यत्र। बाजा। ५ खरीदा या बचा जानेवाला भाल। ६ नदी का पेट। ७ सदर्भाट वृक्ष।

पु० [म० मड़] ? एक जाति जिसके पुरुषो का पेशा नाटक आदि खेलना, गाना-रचना, हस्यपुष्पें रचाना करना, नकले उतारना आदि है। २ वरु शक्ति जो बहुत अधिक तथा प्राय निम्न कोटि के परिहास में लोगों को हँसाना रहता हो। भसवग। निरूपक। ३ बाल-बाल में ऐसा व्यक्तित्व जिसके पट में बात न पकती हो और जो कोई बात मुन खेने पर सब जगह कहना-फिरता हो। ४. भाँडो का-सा गुन-गपाडा या हो-हल्ला।

भाड़—पु० [स०√मण (शब्द)। इ; अण्] ? पात्र। बरतन। २ मूलघन। पजी। ३ मूषण। ४ सर्वभाड वृक्ष।

भाड़-कला—स्त्री० [सं०] मिट्टी के बरतन आदि बनाने की कला।

भाड़-नीरक—पु० [म०प० म०] यह जो प्राचीन काल में बौद्ध विहारों में बरतन आदि सुरक्षायुक्त रखने का काम करता था।

भाँटना—अ० [म० मड़] ? व्यर्थ इधर-उधर घूमना। मारे मारे फिरना। २ किसी पर अनुत्क होना। ३ किसी ओर प्रवृत्त होना। ४ किसी प्रकार के कष्ट का अनुभव करना। उदा०—सो बोलें जा को झिड़ भाँटें।—जायसी।

स० ? किसी के अपराधी, कुकृत्यो, दोषो को जो जगह जगह चर्चा करके उसे बदनाम करना। २ किसी का भाव फोड़ना या उसे नष्ट-ध्रष्ट करना। विनाशना।

भाड़-पति—पु० [स० प० तं०] व्यापारी।

भाड़घन—पु० [हि० भाड़; प० (प्रत्य०)] ? भाँड़ होने की अवस्था या भाव। २ भाँड़ो का ता आचरण।

भाड़-गला—स्त्री० [स० प० तं०] मंझार।

भाँड़—पु० [स० भाण्ड] खाने-पीने की चीजें आदि रखने का बरतन। बासन। पात्र। (परिचय)

मुहा०—भाँड़ भरना—वस्तुताप करना। पछताना। उदा०—रिसिन आगे कही जो आवनि अब नै भाँड़ भरति।—भूर।

पु०—मोडघन।

भांडागार—पु० [म० भाट-आगार] ? वह आगार या कोठरी जिसमें वस्तुएँ विधेय परतू उपयोग की वस्तुएँ रखी जाती हैं। २ मंझार।

भांडागारी—पु० [म० भांडागार; टन्-कृ] भांडागार या मंझार का प्रथम अधिकारी।

भांडार—पु० [स० भाट/वृह (मति)। अण्] ? वह कमरा या कोठरी जिसमें परतू उपयोग में आनेवाली तरतू रख की बहुत सी वस्तुएँ रखी जाती हैं। २ वह स्थान जहाँ बेची जानेवाली बहुत सी चीजें जमा की तथा सुरक्षित रखी जाती हैं। (स्टाक) ३. आधार स्थान। ४ कोश। खजाना।

भांडार-पजी—स्त्री० [स० प० तं०] वह पजी या वही जिसमें भांडार में रखी जानेवाली चीजों की सख्या और विवरण लिखा रहता है। (स्टाक-बुक)

भांडार-वाल—पु० [म० भांडार/वाल्+णिच्+अच्] ? भांडार का मुख्य अधिकारी। २ वह जिसका भांडार हो। भांडार का स्वामी। (स्टाकिस्ट)

भांडारी (रिन)—पु० [म० भांडार+रिन] भांडारपाल। (दे०)

भांडरियों—पु० भांडरन।

भाँव—पु० भाव (सूर्य)। उदा०—जाँगे उद्याचल उगइ छइ भाँव। नरपति नालह। पु० भाण।

भाँव—स्त्री० [स० भक्ति] ? तरह। प्रकार। २ किसी चीज की बनावट या रचना का विशिष्ट ढंग या प्रकार। तर्जें। परिस्थ। (हिजाशन)

भाँव-भरौला—वि० [हि० भाँव। अनु० भरौला] [स्त्री० भाँव-भरौली] (वस्त्र) जिस पर अनेक प्रकार की आकृतियाँ, बेल-बूटे आदि बने हो।

भाँव—स्त्री० [स० भाँव] ? तरह। प्रकार। जैसे—बढ़ी भाँव भक्ति की चीजें खेई हुई थीं। २ बाय-बाय। रग-ढग। ३ आचार, व्यवहार आदि की मर्यादा। ४ प्रथा। रीति। रग-ढग।

भाँवना—स० [?] ? किसी चीं चेष्टाओं, परिस्थितियों, लक्षणों आदि से यह अनुमान करना कि वस्तु-स्थिति क्या है, किसी के मन में क्या है अथवा कोई छिपकर क्या करना चाहता है अथवा क्या कर रहा है। २ देयना। (आजाक)

भाँव—वि० [हि० भाँव] भाँवनेवाला।

भाँव—पु० [?] भाँवी। (हि०)

भाँव भाँव—पु० [अनु०] ? निनात एकात स्थान या सत्राटे से हवा के चलने से होनेवाला शब्द। २ ऐसी परिस्थिति या वातावरण जिसमें बहुत अधिक उदागिनता या क्लगन-आग पड़े।

मुहा०—(किसी स्थान का) भाँव भाँव करना—बहुत ही उदास, डरावना और सूना मान पड़ना।

भाँवी—स्त्री०—भाँवर।

भाँवता—पु० भावता।

शर्कना—स० [सं० भ्रमण] १. किसी चीज को खराद आदि पर रख कर घूमाना। २. खरादना। कुनना ३. अच्छी तरह गड़कर सुन्दर और सुशौल बनाना। ४. ढही या मट्टा मथना। उदा०—मट्टा भावने के समय हँसुकी नाचती होगी।—व्याधनलाल वर्मा।

अ० १. चक्कर या फेर लगाना। २. व्यर्थ इधर-उधर घूमना।

शर्क—स्त्री० [सं० भ्रमण] १. चारो ओर घूमना या चक्कर काटना। घुमरी लेना। २. परिक्रमा। फेरी।

मुहा०—भाँवर भरना—परिक्रमा करना।

३. विवाह हो चुकने पर बर और बधू के द्वारा की जानेवाली अग्नि की परिक्रमा।

कि० प्र०—एडना।—पारना।—फिरना।—भरना।—लेना।

४. हल जोतने के समय एक बार खेत के चारो ओर घूम आना।
पि०—पीर।

शर्करी *—स्त्री०—शर्कर।

भाँस—स्त्री० [?] आवाज। शब्द।

भा—स्त्री० [सं०] वा (प्रकाश करना) +अद्, टाप्] १. दीप्ति। चमक। २. प्रकाश। रोशनी। ३. छटा। छवि। शोभा। ४. किरण। रश्मि। ५. बिजली। बिजुल्।

अव्य० [हिं० माना] यदि इच्छा हो।

भाइ *—पु० [सं० भाव] १. प्रेम। प्रीति। मुहब्बत। २. प्रकृति। स्वभाव। ३. मन में उठनेवाला भाव या विचार।

स्त्री० [हिं० भाँति] १. भाँति। प्रकार। तरह। २. चाल-ढाल। रग-रग।

†स्त्री०—भट्टी। (राज०)

पु० [सं० भाव] १. भाव। विचार। २. प्रीति। प्रेम। ३. स्वभाव। स्त्री० आभा। चमक।

भाइर *—पु० [हिं० भाई+प(वन) (श्रय०)] १. भाईचारा। २. गहरी दोस्ती। घनिष्ठ मित्रता।

भाई—पु० [सं० भापु] १. किसी प्राणी के सब्ब के विचार से बहुर भ्राणी जो उसी के माता-पिता अथवा माता या पिता से उत्पन्न हुआ हो। आत्मा। सहोदर। २. एक ही वंश या परिवार की किसी एक पीढ़ी के व्यक्ति को बुद्धि से उसी की का कोई दूसरा पुरुष। जैसे—चाचा का लड़का—बचेरा भाई, फूकी का लड़का—फुकेरा भाई, मौसी का लड़का—मौसेरा भाई, मामा का लड़का—ममेरा भाई। ३. अपनी जाति या समाज का कोई ऐसा व्यक्ति जिसके साथ समानता का व्यवहार होता है। जैसे—जाति भाई, मूँह बोला भाई।

†अव्य०—भई। (सम्बोधन)

भाईचारा—पु० [हिं० भाई+स० आचार] दो व्यक्तियों या एको से होनेवाला ऐसा आत्मीयतापूर्ण संबंध जिसमें सामाजिक अवसरों पर भाइयो की तरह आपस में लेन-देन होता है।

भाई-बूज—स्त्री० [हिं० भाई+बूज] काविक शब्द द्वितीया। भवाङ्ग।

(इस पदिक बहुर अपने भाई को टीका लगाती, भोजन कराती तथा फल, मिठाई आदि देती है।)

भाईपन—पु० [हिं० भाई+पन(प्रत्य०)] १. भाई होने की अवस्था या भाव। भावुत्व। २. घनिष्ठ आत्मीयता या संयुता। भाई-पारा।

भाई-बंध—पु० [हिं० भाई+बंध] १. भाई और मित्र-बधू आदि। २. अपनी जाति विचारों या नाते के ऐसे लोग जिनके साथ भाइयो का-सा व्यवहार होता हो।

भाई-बंधु—पु०—भाई-बंध।

भाई-बिरादरी—स्त्री० [हिं० भाई+बिरादरी] एक ही जाति या समाज के वे लोग जिनके साथ आत्मीयता का और भाइयो का-सा व्यवहार होता हो।

भाइ *—पु० [सं० भाव] १. मन में उत्पन्न होनेवाला भाव या विचार। २. प्रीति। प्रेम। ३. दे० 'भाव'।

पु० [सं० भाव] १. उत्पत्ति। २. जन्म।

भाऊ *—पु० [सं० भाव] १. मन में उठनेवाला भाव। भावना या विचार। २. प्रीति। प्रेम। स्नेह। ३. प्रकृति। स्वभाव। ४. अवस्था। दशा। हालत। ५. महत्त्व। महिमा। ६. आकृति। रूप। ७. प्रभाव।

८. मनोवृत्ति।

भाई *—कि० वि० [सं० भाव] समस्त। बुद्धि के अनुसार।

भाऊ—पु० [सं०] १. पुराणानुसार नैर्ऋत्य कोण में का एक देव। २. भास्कर। सूर्य।

वि० १. भा अर्थात् प्रकाश करनेवाला। २. दमकानेवाला।

भाकसी—स्त्री० [सं० भास्सी] १. मट्टी। २. भाव। भइसारी।

भाकुर—स्त्री० [सं०?] १. एक प्रकार की मछली जिसका सिर बहुत बड़ा होता है। २. दे० 'भाकल'।

वि० बहुत बड़ा और बिकराल।

भाकर—स्त्री० [सं०] एक तरह की मछली।

भा-कोश—पु० [सं० प० त०] सूर्य।

भास्त-वि० [सं० भास्ति या भस्त+अप्] १. जिसका पालन-पोषण दूसरे लोग करते हो। दूसरों की कृपा से जीवित रहनेवाला। परा-भित। २. जो खाया जाने के योग्य हो। खाद्य। ३. कम महत्व का या घट कर। गौण। जैसे—कुछ साहित्यकार ध्वनि को भास्त (गौण और लक्षण-नाम्य) मानते हैं।

पु० भासल।

भासा *—पु०—भाषण।

भासना *—सं० [सं० भाषण] कहना। बोलना।

भासुर—पु० [?] पर्वत। पहाड़। (हिं०)

भासा—स्त्री० [सं० भाषा] १. मूँह से कही हुई बात। कथन। २. मध्य-युग में हिंदी भाषा के लिए प्रयुक्त होनेवाली उपेक्षासूचक शब्दा। ३. बोली। भाषा।

भाष—पु० [सं०] मन्त्र (विभाग करना)+भञ्ज] १. किसी चीज के कई खंडों, टुकड़ों या विभागों में में हर एक। हिस्सा। (पार्ट) जैसे—पुस्तक का पहला भाग और दूसरा भाग छय गया है, तीसरा और चौथा भाग छपना बाकी है। २. किसी चीज की किसी और या किसी का अथवा पारबं। जैसे—(क) मकान का अगला भाग। ३. किसी सम्पत्ती को पूरी चीज का कोई अंश। (पॉर्शन) जैसे—पेट के बीच का भाग। ४. किसी चीज का एक चौबौटा अंश। ५. बूल की परिधि का ३६० वाँ अंश। ६. गणित की वह क्रिया जिससे कोई संख्या कई बरा-बर खंडों या टुकड़ों में बाँटी जाती है। तकसीय। (डिविडन) जैसे—

१०० को ४ से माग करो। ७ ज्योतिष मे, राशि चक्र की किसी राशि का ३२ बां अंश। ८ जगह स्थान। ९ तकदीर। भाग्य। नसीब। १०. ऐश्वर्य या वैभव से युक्त होने की अवस्था। सौभाग्य। ११ माल या ललाट जहाँ भाग्य का अवस्थान माना जाता है। १२ उच-काल। तडका। मोर। १३ पूर्वी फाल्गुनी नक्षत्र। १४. एक प्राचीन देश।
भागिक—पु० [स० भागमे] लिखाई, छापे आदि मे एक प्रकार का चिह्न जो बौ राशियों या सख्याओं के बीच मे रहकर इस बात का सूचक होता है कि सङ्केतवाली राशि या सख्या को भाग्यवाली राशि या सख्या से माग देना चाहिए। इस प्रकार लिखा जाता है, —।

भाग-कल्पना—स्त्री० [स० प० तं०] बेटवारा।
भागङ्—स्त्री० [हि० भागना।ङ् [प्रत्य०]] १ बैसी ही उतावली या जल्दी जैसी कही से भागने के समय होती है। जैसे—तुम्हें तो हर काम की भागङ् पडी रहती है। २. दे० 'भगदढ'।
कि० प्र०—पड़ना।—भगना।

भागण—वि० [स्त्री० भागणी] भाग्यवान्।
भागङ्गु—पु० [स० भाग/गुह्, (दुहना) :क] प्राचीन काल मे राजकर उगाहनेवाला एक अधिकारी।

भाग-दीङ्—स्त्री० [हि० भागना + दीङना] १ किसी काम या बात के लिए होनेवाली दीङ-बुप। २. दे० 'भागड'।

भाग-भान—पु० [स० प० तं०] कोश। खजाना।
भागधेय—पु० [स० भाग-धेय] १ भाग्य। तकदीर। किस्मत। २ राज को दिया जानेवाला उसका अथ या माग जो कर के रूप में होता है। ३ समोत्र या सपिड लोग। दायद।

भागना—अ० [म० भाग] १. आपत्ति, भय आदि उपस्थित होने अथवा दिखाई देने पर उससे बचने के लिए कही से जल्दी जल्दी चल या दौड कर दूर निकल जाना। पलायन करना। जैसे—मिणाही को देखते ही धोकर भाग गया।

सयो० कि०—जाना।—निकलना।—गडना
मुहा०—सिर पर चेर रखकर भागना—बहुत तेजी से भागना। जल्दी चलकर दूर हो जाना।

२. किसी काम या बात से पीछा छुड़ाने या बचने के लिए अगा-पीछा करना। बही से टलने या हटने का विचार करना। जैसे—जहाँ कोई कठिन काम आता है, वही चुप भागना चाहते हो।

सयो० कि०—जाना।

३. किसी काम, बात या व्यक्ति को बुरा समझकर उससे बिल्कुल अलग या दूर रहना। जैसे—मी तो सदा ऐसे कामो से दूर भागता हूँ। विशेष—प्रायः लोग भ्रम से 'दौडना' के अर्थ मे मी इसका प्रयोग करते हैं। जो ठीक नहीं है।

भागनेय—पु० [स० भागिनेय] बहुत का बेटा। भागना।
भाग-फल—पु० [स० प० तं०] गणित मे बहु सख्या जो भाग्य को माजक का भाग देने पर प्राप्त हो। लम्ब। जैसे—यदि १०० को २० से भाग दें तो भाग-फल ५ होगा।

भाग-भरा—वि० [हि० भाग्य + भरना] [स्त्री० भाग-भरी] १. भाग्य-वान् (अर्थित)। २ भाग्यवान् बनानेवाला या सौभाग्यपूर्ण (पदार्थ)।
भाग-भरी—स्त्री० [हि० भाग-भरा] १. सौभाग्यशालिनी स्त्री।

२. जोरु या पत्नी के लिए सम्बोधन। ३ सूर्य की संक्राति। (स्त्रियों)

भाग-भूक (जु)—पु० [स० भाग/भूक (बाना) + भिक्व्] राजा।

भाग्य भाग—कि० वि० [हि० भागना] १ भागते या दौडते हुए। २. बहुत अधिक जल्दी मे।

स्त्री०—भाग्य-भाग।

भागरा—पु० [देस०] संगीत मे एक स्वर राज जिमे कुछ संगीतज्ञ श्रीराम का पुत्र मानते है।

भागवत्—वि० [स० भाग्यवत्] जिसका भाग्य बहुत अच्छा हो। भाग्य-वान।

भागवत्—वि० [स० भाग्यवत् या भगवती अण्] १ भगवत् अर्थात् विष्णु सम्बन्धी। भगवत् या विष्णु का। २ भगवत् अर्थात् विष्णु की उपासना और सेवा करनेवाला।

पु० १. ईश्वर या भगवान का भक्त। हरि भक्त। २ एक पुराण जिसमें १२ स्कंध, ३१२ अध्याय और १८००० श्लोक है। ३. दे० 'देवी भागवत'। ४ वैष्णव। ५ भगवान् बुद्ध का अनुयायी या भक्त। ५ एक प्रकार का छन्द जिसके प्रत्येक चरण मे १३ भागाएँ होती हैं।

भागवत्-धर्म—पु० [स० कर्म० सं०] एक प्राचीन धर्म या भक्ति-ध्यान संभ्रदाय को कि वि० पु० तृतीय शताब्दी मे चला था।

भागवती—स्त्री० [स० भाग्यवत् + डीप्] एक तरह की कठी जो वैष्णव भक्त पहनते है।

भागवान—वि०—भाग्यवान्।

भागहर—वि० [स० भाग/हृ + अण्] भाग या अथ पाने या लेनेवाला। हिस्सेदार।

भागहारी (रिन्)—वि० [स० भाग/हृ (हरण करना) + गिनि] हिस्सेदार।

पु० उत्तराधिकारी।

भागभाग—स्त्री० [हि० भागना] बहु स्थिति जिसमे सब लोगों को भागने की पडी होती है। भाग-दीड। भागड।

कि० वि० १ जल्दी जल्दी दौटने हुए। २ बहुत जल्दी मे या तेजी से।

भागार्थ (बंनु)—वि० [स० भाग/अर्थ + गिनि, जो अपना भाग या हिस्सा प्राप्त करना या लेना चाहता हो।

भागार्ह—कि० [स० भाग-अर्ह, प० तं०] १ जिसके भाग हो सकें। विभक्त होने के योग्य। २. जिसे अपना भाग या हिस्सा प्राप्त करने का अधिकार हो।

पु० उत्तराधिकारी।

भागिक—वि० [स० भाग + इक्-इक] १ भाग या हिस्से से सब रहनेवाला। २ भाग या हिस्से के रूप मे होनेवाला। ३ (मूलधन) जिस पर सूर मिलता हो।

भागिता—स्त्री० [स० भागिन् + तल + टाप्] १ भागी अर्थात् हिस्से-दार होने की अवस्था या भाग। २ बहु स्थिति जिसमे दो या अधिक लोग हिस्सेदार बनकर कोई उद्योग या व्यापार चलाते है। (पार्टनर-शिप)

भाषिण्ये—पुं० [सं० भगिनी+ङ्क—एग] स्त्री० भाषिण्ये) बहन का लड़का। भाजजा।

भाषी (सिन्)—पुं० [सं० √भज्+णिच्] १ वह जो किसी प्रकार का भाग पाने का अधिकारी हो। हिस्सेदार। २. वह जिसने किसी के कार्य में सहायता दी हो और फलतः अपने उतने कार्य के फल का पात्र या भाजन हो। जैसे—पाप का भाषी।
पुं० सिव।

भाषीरथ—पुं०=भगीरथ।
वि० [सं० भगीरथ+अण्] भगीरथ-सबधी।

भाषीरथी—स्त्री० [सं० भाषीरथ+ङीप्] १. गंगा नदी। जाह्नवी।
३. बयाल की एक नदी जो गंगा में मिलती है। ३. हिमालय की एक चोटी जो गढ़वाल के पास है।

भाभुरि—पुं० [सं०] सार्व्य के भाग्यकर्ता एक ऋषि का नाम।

भाभू—वि० [हिं० भागना+ङ् (प्रत्यय)] भागनेवाला।

पुं० भागोडा।

भाभति—पुं०=भागवत।

भाभ्य—वि० [सं० √भज्+ष्यत्, कुत्व] जिसके भाग अर्थात् हिस्से हो सकते हों या होने को हो। भागाई।

पुं० १ वह ईश्वरीय या दैवी विधान जिसके संबंध में यह माना जाता है कि प्राणियों, विशेषतः मनुष्यों के जीवन में जो घटनाएँ घटती हैं, वे पूर्व-निर्दिष्ट और अवश्यमात्री होती हैं और उन्हीं के फलस्वरूप मनुष्यों को सब प्रकार के सुख-दुःख प्राप्त होते हैं और उनके जीवन का क्रम चलता है। किस्मत। तकदीर। नसीब।

विशेष—साधारणतः लोक में इसका निवास मनुष्य के कलत में माना जाता है।

कि० प्र०—भूलना।—चमकना।—फूटना।

पद्व—भाभ्य का सौंड-बहुत बड़ा भाग्यवान्। (परिहास और व्यंग्य)

मुहा० के लिए देखें 'किस्मत' के मुहा०।

२ उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र का एक नाम।

भाभ्यथा—स्त्री० [सं० भाभ्य+था (देना) +ङ+टाप्] चिट्ठी निफालकर टिकट खरीदनेवाले को इनाम बटौटने की पद्धति जिसमें केवल भाभ्य से ही लोगों को धन मिलता है। (लाटरी)

भाभ्य-भ्रमर—पुं० [सं० मध्य० सं०] आकस्मिक रूप से उड़ाई या चुनी हुई दो या अधिक परिचियों में से कोई एक जिस पर कुछ लिखा रहता और जिसके अनुसार धन-मालति आदि का बँटवारा, कोई नियुक्ति या नियुचय किया जाता है। (लाट)

भाभ्य-भाह—पुं० [सं० व०] जन्म-कुड़ली में जन्म-लग्न से नवाँ स्थान जहाँ से मनुष्य के भाग्य के शुभाशुभ का विचार किया जाता है। (कालित-ज्योतिष)

भाभ्य-योग—पुं० [सं० व०] ऐसा अवसर या समय जिसमें किसी का भाग्य कुलता या चमकता हो।

भाभ्य-लिपि—स्त्री० [न० व०] भाग्य में लिखी हुई बातें।

भाभ्य-बन्ध—अभ्य० [सं० व०] भाग्य या किस्मत से ही (मुद्दि बल या प्रयत्न से नहीं)।

य—२७

भाभ्य-बसात्—अभ्य० [सं० व०] = भाभ्य-वश।

भाभ्य-बाह—पुं० [सं० व०] यह विचार-धारा या सिद्धान्त कि भाग्य में जो कुछ बढा या लिखा है वह अवश्य होगा और जितना बढा या लिखा है उतना नियत समय पर अवश्य प्राप्त होगा।

भाभ्यबादी (विम)—वि० [सं० भाभ्यबाद+इति] भाभ्यवाद-सबधी।

पुं० वह जो भाग्य पर मरोसा रखता हो।

भाभ्यवान् (बद्)—वि० [सं०=भाभ्य+अभुप्] जो भाग्य का भाषी हो। अच्छे भाग्यवाला। भाग्यशाली।

भाभ्य-विधाता (सु)—पुं० [सं० व०] किसी के भाग्य का विधान अर्थात् मला-बुरा निश्चित करनेवाला।

भाभ्य-विस्मय—पुं० [सं० व०] अच्छे भाग्य का विचककर बुरा होना। दुर्भाग्य।

भाभ्यशाली (सिन्)—वि० [सं० भाभ्य+शाल्+णिनि] भाग्यवान्। (दे०)

भाभ्य-सध्व्—स्त्री० [सं० व०] अच्छा भाग्य। सौभाग्य।

भाभ्य-हीन—वि० [सं० व०] अभाग्य। अकिस्मत।

भाभ्यीबय—पुं० [सं० भाभ्य-उदय, व०] भाग्य का सुलना। सीमाय का समय आना।

भाभक—वि० [सं० √भज्+भृत्-अक] १. विभाग करनेवाला। २. बाँटनेवाला।

पुं० गणित में वह राशि या सख्या जिससे भाभ्य को भाग दिया जाता जाता है। (विभाजक)

भाभकअंश—पुं० [सं० भाभक-अंश, कर्म० सं०] गणित में, वह सख्या जिससे किसी राशि को भाग देने पर शेष कुछ भी न बचे। गुणनीयक।

भाभन—पुं० [सं० भाभ् (पृथक् करना)+भृत्-अन्] १. बरतना। २. आभार। ३. किसी काम या बात का अधिकारी या पात्र। जैसे—कृपा-भाजन, कोप-भाजन, विद्वास-भाजन आदि। ४. आढक नामक तौल। ५. भाग करना। (गणित)

भाभनता—स्त्री० [सं० भाभन+तत्+टाप्] १. भाजन होने की अवस्था या भाव। २. पात्रता। शोष्यता।

भाभना*—अ० भागना।

भाभित—पुं० कृ० [सं० √भाभ्+क्त, इत्] १. बाँटकर अलग किया हुआ। विभक्त। २. (सख्या) जिसको दूसरी सख्या में भाग दिया जाय।

भाभ्नी—स्त्री० [सं० √भाभ्+घञ्+ङीप्] १. माँद। पीछ। २. तरकारी, साग आदि बीज। ३. मेथी। ४. मार्गलिक अवसर पर सम्मनियों आदि के यहाँ भेजे जानेवाले फल और मिठाइयाँ।

कि० प्र०—देना।—बाँटना।

५. भाग। हिस्सा।

भाभ्य—पुं० [सं० √भाभ्+ष्यत्] जिसका विभाजन हो सके। जिम्मे के हिस्से किये जा सके।

पुं० गणित में वह सख्या जिसका भाभक से भाग किया जाता है।

भाट—पुं० [सं० भट्ट] स्त्री० भाटिन] १. राजाओं के यश का वर्णन करनेवाला कवि। बरग। बदी। ३. एक जाति जिसके लोग राजाओं का यश-गान करते थे; और अब कुलों, परिवारों आदि की बधाईयाँ याद रखते और उनकी कीर्ति का बर्णन करते हैं। ३. राजदूत। ४.

सुधामद करनेवाला पुख। सुधामदी पुख। सुधामदी। ५ दे०
'माटक'।

पु०=माठ।

भाटक—पु० [सं०√मट् (पालन करना)+पुबल्—अक] ? भाड़ा।
किराया। २ लगान।

भाटक-अधिकारी—पु० [सं० व० त०] ? भाड़े की उगाही करनेवाला
अधिकारी। २ वह शासक अधिकारी जो सनान मालिक और
किरायेदारों से संपर्क स्थापित करता और उनके विवादों को निर्णयित
करता है। (रिट आफिसर)

भाटा—पु० [हि० माट] ? समुद्र के जल की वह अवस्था जब वह उबार
या चढ़ान के बाद बेगपूर्वक पीछे हटने या उतरने लगता है। (एक्टाइड)
२. उक्त के फलस्वरूप आस-पास की नदियों में होनेवाला पानी का उतार।
पु०=भटा (बैंगन)।

भाटिया—पु० [सं० मट्ट] क्षत्रियो, क्षत्रियो आदि का एक वर्ग या जाति।

भाटी—स्त्री० [हि० भाटा] नदियों आदि में पानी के बहाव की दिशा।
(मल्लाह)

स्त्री०=भट्टी।

भाट्यी *—पु० [हि० माट] माट का काम। भटई। माट-पन।

भाठ—पु० [हि० भाठना या मटना] ? वह मिट्टी जो नदी अपने साथ
चढ़ान में बहाकर लाती है और उतार के समय कछार में ले जाती है।

२. नदी के दो किनारों के बीच की भूमि। ३. नदी का किनारा। तट।

४. नदी के बहाव का रस। उतार। 'चढाव' का विपर्याय। ५. दे०
'माट'।

भाठन—सं० [?] नष्ट या बरबाद करना। उदा०—जलमय बल
करि वेहु जलधि सब बल मरि भाठी।—रत्नाकर।

भाठा—पु० [हि० भाठ] ? मूड्डा। २. दे० 'माटा'।

भाठी—स्त्री० [हि० भाठा] नदी या समुद्र के पानी का उतार।

†स्त्री०=भट्टी।

भाड़—पु० [सं० आण्ट, -पा० भट्टी] ? अन्न के दाने भूनने की मक-
नूतों की भट्टी। २. लाक्षणिक अर्थ में, ऐसा स्थान जहाँ सब कुछ
नष्ट हो जाता हो।

पव—भाड़ में पड़े या जाय—हमें कुछ चिन्ता या परवाह नहीं है। (उपेक्षा-
पुत्रक)

भुआ—भाड़ झोकना=बहुत ही सुच्छ और व्यर्थ का काम करना। भाड़
में झोकना या झालना=(क) नष्ट या बरबाद करना। (ख) बहुत
ही उपेक्षापूर्वक परिचर्या करना।

पु० [सं० नाटक] ? बेर्या की आभूषणी या कर्माई। २ दे०
'माडा'।

भाड़ा—पु० [सं० माट] ? वह धन जो किसी की पीछ का कुछ समय
तक उपयोग करने के बदले में दिया जाता है। किराया। जैसे—
हूकान या मकान का भाड़ा। २ वह धन जो कोई चीज या किसी
व्यक्ति को मान आदि पर ले जाकर कहीं पहुँचाने के बदले में दिया
या लिया जाता है। किराया। जैसे—भाड़ी, मान या रेल का भाड़ा।

पव—भाड़े का टट्टु=(क) थोड़े दिन तक रहनेवाला। जो स्वामी न
है। क्षणिक। (ख) वह जो केवल धन के लोभ से (मान लगाकर नहीं)

दूसरी का कोई काम करता हो। (ग) ऐसा पदार्थ जो किसी आधार पर
ही काम करता हो, स्वतः काम देने में बहुत कुछ असमर्थ हो। जैसे—
अब तो यह शरीर भाड़े का टट्टु हो गया है।

पु० [सं० मरण] वह विद्या जिधर बापु बहती है।

भुआ—भाड़े पडना=जिधर बापु जाती हो, उधर नाव को चलाना।
[मन को बापु के सहारे ले जाना। भाड़े फेरना—जिधर हवा का चल हो,
उधर नाव का मुँह करना।

पु० एक प्रकार की धास जो प्रायः हाथ मर ऊँची होती और चारे के
काम आती है।

भाड़ु—पु० [हि० माड़] मुँस। बेचकुक।

पु०=भड़आ।

भाण—पु० [सं०√मण (कहना)+पञ्] ? एक अक का एक प्रकार
का हास्य-रस-प्रधान नाटक जिसमें एक ही पात्र होता है जो किसी
कल्पित व्यक्ति से वार्तालाप करता है। २ व्याज। मिस। ३ भान।
बोध।

भाणिका—स्त्री० [सं० भाण+कन्+टाप्, हल्] एक अक का एक तरह
का छोटा नाटक जिसका नायक मन्दगति और नायिका प्रल्म्भा होती
है।

भात—पु० [सं० मक्त, पा० मत] ? खाने के लिए उबाले हुए
चावल। २ विवाह की एक रथ जो विवाह के दूरमें या तीसरे दिन
होती है। इसमें दोनों समथी साथ बैठकर भात खाते हैं।

पु० [सं०√भा (शीघ्र)+स्त] ? प्रमात। तडना। २ चमक।
दीप्ति।

भाता—पु० [सं० मक्त=भक्त] उपज का वह भाग जो हलबाहे
को खलिहान की राशि म से मिलता है।

भाति—स्त्री० [सं०√भा+क्तिन्] ? घोमा। काति। २ चमक।
दीप्ति।

†स्त्री०=माति।

भातिजा—पु०=मतीजा।

भातु—पु० [सं०√भा+तु] मूयं।

भावा—पु० [सं० मरवा, पा० मवा] ? तरकन। २ वधो भाषी।

भाषी—स्त्री० [सं० मरवा-पा० मची] लाहारी की धौकी जिससे
वे आग सुलगाने हैं।

भाषीं—पु० [सं० माद्र, पा० मही] माद्रपद मास।

भाब—पु० [सं० भद्रा+अण्+डीप्, माडी+अण्] माद्रपद या मादो
नाम का महीना।

भाब-पव—पु० [सं० मद्र+अण्, माद्र-पद, व०स०, -टाप्, माद्रपदा; अण्+
डीप्; माद्रपदी+अण्] ? मादों नाम का महीना। २ बहुस्थिति
के उस वर्ष का नाम जब वह पूर्व माद्रपदा या उत्तर माद्रपदा में उदय
होता है।

भाब-पवा—स्त्री० [सं० दे० माद्रपद] पूर्वाभाद्रपदा और उत्तर माद्र-
पदा दो नक्षत्र।

भाब-माधुर—वि० [सं० मद्रमान्+अण्, उकारादेश] जिसकी मास
सती हो। सती का पुत्र।

भाभ—पु० [सं०√भा (प्रकाश करना)+भ्यट्टु—अन] ? प्रकाश,

रोसनी। २. बमक। बीति। ३. शान। बीष। ४. किसी बीज या बाल के कलापों से होनेवाला शान। आभास। उदा०—हो गया मत्स्य बहु प्रथम मान।—निराला।

पूर्व०=मान् (सूर्य)।

पूर्व० दे० 'तुंग' (सुख)।

मानजा—पूर्व० [हि० बहन+जा] [स्त्री० मानकी] बहिन का लड़का। भाग्येय।

मानजा*—स० [सं० मज्ज, मि० प० मज्जना] १. मज्ज करना। काटना या तोड़ना। २. मट्ट या बत्ताव करना। ३. दूर करना। हटाना। †स० [हि० मान] १. आभास देखकर मान या शान प्राप्त करना। २. अनुमान से समझना।

मानकती—स्त्री० [सं० मानुमती] जाड़ू के खेल दिखलानेवाली स्त्री। जाड़ूमती।

पद—भागमती का कुनबा—जहाँ-तहाँ से लिए हुए बेमेल उपादानों से बनी वस्तु। भागमती का पिढारा—बहु आभास जिसमें तरह-तरह की चीजें मौजूद हों। (अर्थ)

मानवीय—वि० [सं० मान्+छ=ईय, पुण] मान्+संबधी। मान् का।

पूर्व० राहिनी अंश।

माना*—अ० [सं० मान्+ज्ञान] १. मान या आभास होना। जान पड़ना। मानुम होना। २. शिष्यकर प्रतील होना। अच्छा लगना। पसन्द आना। ३. धोमिल जान पड़ना। फनना। सोहना।

स० [सं० मा] १. उज्ज्वल करना। चमकाना। २. दीप्त या प्रकाशमान करना। ३. बायों ओर चक्कर देना। घुमाना। उदा०—खले पिता का चक्र नियम से, बैठ सिला पर तु श्म-भय से, उठे एक आकृति क्रम क्रम से, मली मालि मैं माऊँ।—मैपिणीशरण गुप्त।

मान्—पूर्व० [सं० मा+न्] १. सूर्य। २. आका। मदार। ३. प्रकाश। ४. किरण। ५. विष्णु। ६. कृष्ण के एक पुत्र का नाम। ७. उत्सव मन्तर के एक देवता। ८. राजा। ९. वर्तमान अवसर्पिणी के पंद्रहवें अर्धतु के पिता का नाम। (कौट)

स्त्री० [सं०] १. सुन्दर स्त्री। सुन्दरी। २. दस की एक कन्या।

मान्-रूप—पूर्व० [सं० व० तं०] भारतीय ज्योतिष में, कुछ अवसरों पर पूर्व-महत्त्व के समय सूर्य के बिंब में होनेवाला रूप जो अर्धमल-सूचक माना गया है।

मान्-रिक्ती—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

मान्-केसर—पूर्व० [सं० ब० स०] सूर्य।

मानुज—वि० [सं० मानु/जन् (उत्पन्न करना) +इ] [स्त्री० मानुजा] मानु में उत्पन्न।

पूर्व० १. यम। २. शनैश्चर। ३. कर्ण।

मानुजा—स्त्री० [सं० मानुज+टाप्] १. यमुना (नदी)। २. राधिका।

मान्-सतया—स्त्री० [सं० व० तं०] यमुना (नदी)।

मान्-विभ—पूर्व० [सं० व० तं०] रविबार।

मान्-वीचक—पूर्व० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

मान्-बेच—पूर्व० [सं० कर्म० स०] सूर्य।

मान्-पाक—पूर्व० [सं० वृ० तं०] १. सूर्य के ताप में कोई बीज पकाने की क्रिया। २. बहु बीज विधेयतः जोषधि जो मूष ने रत्नकर पकाई गई हो।

मान्-प्राण—पूर्व० [सं० ब० स०] १. रामचरित मानस में बर्णित एक राजा जो कन्य देश के राजा सत्यकेतु का पुत्र था तथा जो दूसरे जन्म में रावण के रूप में जन्मा था। २. संगीत में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

मान्-कला—स्त्री० [सं० ब० स०,+टाप्] केला।

मान्-संबरी—स्त्री० [सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

मान्-मत्—वि० [सं० मान्+मत्पु] १. प्रकाशमान्। चमकीला। २. सुन्दर।

पूर्व० १. सूर्य। २. श्री कृष्ण का एक पुत्र।

मानुमती—स्त्री० [सं० मानुमत्+तीप्] १. विरुभाद्रिय की रानी जो राजा भोज की कन्या थी। २. अंगिरस की एक कन्या। ३. दुर्वास की स्त्री। ४. राजा सगर की एक स्त्री। ५. गंगा। ६. जाड़ू-गरी। ७. संगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

मान्-मुष्ठी—पूर्व० [सं० व० स०,+तीप्] सूयंमुष्ठी। (पीषा और फूड)

मान्-बार—पूर्व० [सं० व० तं०] रविबार।

मान्-सुत—पूर्व० [सं० व० तं०] १. यम। २. मनु। ३. शनैश्चर। ४. कर्ण।

मान्-सुता—स्त्री० [सं० व० तं०] यमुना (नदी)।

भाष—स्त्री० [सं० भाष्य; पा० वष्य] १. किसी तरहल पदार्थ विशेषतः जल का बहु अदृश्य वाष्पीय रूप जो उसे क्रीलाने पर प्राप्त होता है तथा जिसका आज-कल शक्ति के प्रमुख साधन के रूप में उपयोग होता है। (स्टीम)

कि० प्र०—उठना।—निकलना।

२. मूँह से निकलनेवाली हवा।

भूता*—भाष भरना—पिणियों का अपने छोटे बच्चों के मूँह में मूँह मिलाकर उनमें अपने हाँस की हवा फूँकना जिससे वे साहसक होते हैं। भाष लेना—भाष के द्वारा शरीर अथवा उसके किसी अंग को संकना।

३. भौतिक शास्त्र में, धन या प्रब पदार्थ की बहु अवस्था जो उनके बहुत तपकर वायु में मिलीन होते समय अथवा कुछ विशिष्ट रासायनिक प्रक्रियाओं के द्वारा होता है। (केपर)

भाषना—सं० [हि० भाष] भाष करना (भाष के अन्तर्गत मुहा०)। †अ०=भाषना।

भाषा*—स्त्री०=भाष।

भाबर—पूर्व० [सं० ब्र] १. लहट्टी और तराई के मध्य के जंगलों की संज्ञा। २. एक तरह की घास जिसे बटकर रस्ती का रूप दिया जाता है। बमकस. बवरी। बबई।

भाबर—पूर्व०=भाबर।

भाभरा*—वि० [हि० भा+भरना] १. प्रकाशयुक्त। २. लाल। रक्ताम।

भाभरी—स्त्री० [अनु०] १. गरम राख। मूमल। २. रास्ते की धूल। (पालकी डीनेवाले कहार)

भाभी—स्त्री० [दरदी पीमी बूझा] संबंध के विचार से भाई की विशेषत बड़े भाई की स्त्री। मौजाई।

भाभी रपा—पु० दे० 'बायबिद्यम्'।

भा-मङ्गल—पु० [स० ष० तं०] १. प्रकाशमान् पिंडों के चारों ओर कुछ दूरी तक दिखाई पड़नेवाला प्रकाश जो मङ्गलाकार होता है। २. तेजस्वी पुरुषों, देवताओं आदि के चित्रों में उनके मूक-मङ्गल के चारों ओर दिखाया जानेवाला प्रकाशमान घेरा। परिवेष। प्रमा-मङ्गल। (हैलो)

भाभ—पु० [स०√/भाम् [श्रौघ करना]। षच्] १ श्रौघ। २ दीप्त। चमक। ३ प्रकाश। रोशनी। ४ सूर्य। ५. बहतीई। ६ एक प्रकार का वणंभूल का नाम जिसके प्रत्येक चरण में मगण, मगण और अन्त में तीन मगण होते हैं।
† स्त्री०—माभा।

भाभक—पु० [स० भाम। क्तु] बहतीई।

भाभता—वि० [स्त्री० भाभती] भावता (भियतम्)।

भाभतीय—पु० [हिं० भ्रमना] एक जाति जो दक्षिण भारत में घुमा करती है और बोरी तथा ठगी से जीविका निर्वाह करती है।

भाभनी—वि० [स० भाम/नी (दोना)। षिष्पू] प्रकाश करनेवाला।
पु० १ ईश्वर। २ मालिक। स्वामी।

भाभा—स्त्री० [स० भाम। अच्। टापु] १ स्त्री। २ क्रुद्ध स्त्री।
३ दे० 'शरयमाभा'।

भाभिणि—स्त्री० भाभिनी।

भाभिन—स्त्री० भाभिनी।

भाभिनि—स्त्री० भाभिनी।

भाभिनी—स्त्री० [स०√/भाम्। णिनि। डीपु] १ युवती तथा सुन्दर स्त्री। कामिनी। २ सदा क्रुद्ध रहनेवाली अथवा बहुत जल्दी क्रुद्ध हो जानेवाली स्त्री। ३ मोदक नामक छत्र का दूसरा नाम।

भाभी (भिन्)—वि० [स०√/भाम्। णिनि] [स्त्री० भाभिनी] क्रुद्ध। नाराज।

स्त्री० श्रोषी स्वभाव की स्त्री।

भायां—पु० १ -भावा। २ -भाई।

पु०—भाति (प्रकार)।

भायप—पु० [हिं० भाई+प (प्रत्ये०)] १ भाईपन। भ्रातृभाव।
२ भाईभाई।

भायां—वि०—भावता।

पु०—भाई।

भायी—स्त्री० [स०] एक प्रकार का पीसा जसकी पत्तियां महुए की पत्तियों से मिलती हुई, गुदार और नरम होती है और जिनका साग बनाकर खाते हैं। बम्बोदेटी। मूजाज। असबरता।

भाय—पु० [स०√/भ्। (भरण करना)+षच्, वृद्धि] [वि० भाहित] १ कटि, तुला आदि की सहायता से जाना जानेवाला किसी बीज के परिणाम का मुख्य। बजन। (सेट) २. ऐसा बोझ जो किसी अंग, मान, वाहन आदि पर रखकर होया या कही ले जाया जाता है।
शौस। (लोड)

क्रि० प्र०—उठाना।—डोना।—रखना।—लाभना।

३ बहु बोझ जो बँहणी के दोनों पत्लों पर रखकर ले जाया जाता है। उठा—भरि भरि भार कहारन आना।—तुलसी।

क्रि० प्र०—उठाना।—कायना।—डोना।—भरना।

४ ऐसा अभिय, अशुचिकार या कठिन नाम या उत्तरदायित्व जो कही से बलान्ता आकर पडा हो, अथवा जिसका वाहन विवसता तथा कष्टपूर्वक किया जा रहा हो। (बडेन, उक्त दोनो अर्थों में) जैसे—आज-कल मूष पर बर्द कामो का भार आ पडा है।

क्रि० प्र०—उठाना।—उतरना।—उतरना।—उतरना।

५ चिन्मी प्रकार का कार्य चलाने, कोई देन चुकाने या किसी प्रकार की देखरेख, रक्षा, संभाल आदि करने का उत्तरदायित्व। कार्य-भार। (चाजें) जैसे—अब उन पर भाई के बाल-बच्चों का भी भार आ पडा है। ६ बघक या रेहन पडे रहने अथवा ऋण-प्रस्त होने की अवस्था या माव। (एकम्बरेस)

क्रि० प्र०—उठाना।—उतरना।—उठाना।—देना।—देवान।

७. आभय। सहारा। उदा०—डुहें के भार मुँटि शुभ रही।—जावसी। ८ दा इहार पल या बीम पसेरी की एक पुरानी लील।

९ विष्णु का एक नाम।

† अर्थ० ओं। बल। जैने—मूह के भार गिरना।

पु० [स० भट] बीर। धूर।

† पु० १ -भाडा। २. भाडा।

भारक—पु० [स० भार। क्तु] १ भार। २ एक लील।

भार-कत्र—पु० [स० ष० तं०] मुख्य का केन्द्र।

भारजीवी (विन्)—पु० [स० भार/जीव (जीना)। णिनि] भार डोंकर जीवित करनेवाला मजदूर। भारवाहक।

भारत—पु० [स० भरत। अणु, वृद्धि] १ वह जो भरत के गोत्र में उत्पन्न हुआ हो। २ [भारत। अणु] हमारा यह भारतवर्ष नामक देश। दे० 'भारतवर्ष'। ३ भारतवर्ष का निवासी। ४ महाभारत नामक काब्य का वह पूर्व ऋण जब यह २६००० श्लोकों का था। दे० 'महाभारत'। ५ उक्त ऋष के आश्रम पर घमानान या घोर युद्ध। ६ उक्त ऋष के आश्रम पर कोई देवता-बला-चोडा विवरण या व्याख्या। ७ अग्नि। आग। ८ अभिनेता। नट।

भारतवर्ष—पु०—भारतवर्ष।

भारतवर्ष—पु० [स०] ताल के साठ मुख्य मेदों में से एक। (सगीत)
भारत-यूरोपीय—पु० [हिं०] आधुनिक भाषा-विज्ञान के अनुसार उन भाषाओं का वर्ग या समूह जो भारत, ईरान और यूरोप, अमेरिका, के अनेक देशों में बोली जाती हैं।

भारत-रत्न—पु० [स० ष० तं०] स्वतंत्र भारत में एक सर्वोच्च उपाधि जो उच्चकोटि के विद्वानों तथा राष्ट्रसेवियों को प्रदान की जाती है।

भारत-वर्ष—पु० [स० मध्य० सं०] हमारा यह महादेश जिसके उत्तर में हिमालय, दक्षिण में भारतीय महासागर, पश्चिम में पश्चिमी पाकिस्तान और पूर्व में पूर्वी पाकिस्तान तथा बर्मा या ब्रह्मदेश है। हिन्दू। हिन्दुस्तान।

विशेष—पुराणानुसार यह अब्दु द्वीप के अन्तर्गत भी वर्षों या खड्डों में से एक है और हिमालय के दक्षिण तथा गंगोसरी से देकर कन्या-

कुमारी तक और तिस्रु नदी से ब्रह्मपुत्र तक विस्तृत है। आर्या-वर्त । हिन्दुस्तान।

भारतवर्षीय—वि० [सं० भारतवर्ष+छ—ईय] भारतवर्ष-संबधी। भारतवर्ष का।

भारतवर्षीय (सिन्)—पु० [सं० भारत/वृत्त् (निवास करना) + गिनि] भारतवर्ष का निवासी। हिन्दुस्तान का रहनेवाला।

भारत-विद्या—स्त्री० [सं०] पुरातत्त्व की वह शाखा जिसमें भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास, दर्शन, धर्म, भाषान्त, साहित्य आदि का अनुसंधानात्मक अध्ययन और विवेचन होता है। (इष्टोलॉजी)

भारति—स्त्री०—भारती।

भारती—स्त्री० [सं०√म् (सरण करना)। अतच्.-+अण्+ट्रीप्] १. बचन। बाणी। २. सरस्वती। ३. साहित्य में एक प्रकार की वृत्ति (पुराणसंसाधक व्यापार) जिसका प्रयोग मुख्यतः रौद्र तथा वीरमत्सरस में होता था परन्तु आज-कल इसका संबंध पाठ्य अनियम और रसाभिनय से जोड़ा गया है। ४ एक प्राचीन नदी का नाम। ५. एक प्राचीन तीर्थ। ६ दश-नामी सत्याभिमयों का एक भेद या वर्ग। जैसे—स्वामी परमानन्द भारती। ७ ब्राह्मी नाम की बूटी। ८ एक प्रकार का पक्षी।

भारतीय—वि० [सं० भारत। छ—ईय] १ मान्य देश में उत्पन्न होनेवाला अथवा उसमें सबंध रखनेवाला। जैसे—भारतीय पृथ्वी, भारतीय विचारधारा, भारतीय व्यापार। २ (व्यक्ति) जो भारत में बसी हुई अथवा रहनेवाली किसी जाति का हो। जैसे—भारतीय मूलज्मान या भारतीय मन्त्री।

भारतीयकरण—पु० [सं०] किसी विदेशी ज्ञान, पदार्थ, विद्या आदि को ग्रहण करके उसे आत्मसात् करते हुए भारतीय रूप देने की क्रिया या माद। (इन्डियनाइजेसन)

भारतीय वृत्त—पु० [सं० कर्म० सं०]—भारत-विद्या।

भार-मुला—स्त्री० [सं०] वास्तुविद्या के अनुसार स्तन के ती मांगों में से पाँचवाँ मांग जो बीच में होता है।

भारवृ—पु० [हिं० भारत] १. भारतवर्ष। २ महाभारत। ३. युद्ध। लडाई।

पु० [सं०] भारद्वाज नामक पक्षी। भरजूल।

भारथी—पु० [सं० भारत] योद्धा। सैनिक।

स्त्री०—भारती।

भारथ्य—पु० [सं० भारत] घमासान या घोर युद्ध।

भारथंब—पु० [सं० ष० तं०] १ एक प्रकार का साम। २ बँहणी। पु० [हिं० भार+डड] एक प्रकार का दूध जिसमें दूध करनेवाला साधारण दूध करते समय अपनी पीठ पर एक दूसरे आधमी को बैठा करता है। (कसलत)

भारद्वाज—पु० [सं० भरद्वाज+अच्] १ भारद्वाज के कुल में उत्पन्न व्यक्ति। २ एक ऋषि जिनका रथ हुआ जैतसूर और गृहसूत्र है। ३ द्रोणाचार्य। ४ बृहस्पति का एक पुत्र। ५. मंगल ग्रह। ६. एक प्राचीन देश। ७ अस्त्रि। हठी। ८. भरजूल पक्षी।

भारद्वाजी—स्त्री० [सं०] जंगली कपास का पीथा और उसकी रूई।

भार-भारक—पु० [सं० ष० तं०] वह जो भार विशेषतः कार्यभार धारण कर रहा हो। (चार्ज-होल्डर)

भारमा—सं० [हिं० भार] १ भार या बोझ लादना। २. किसी पर अपने शरीर का भार या बोझ देना या रखना। ३. दबाना।

भार-प्रमाणक—पु० [सं० भार-प्रमाणक] वह प्रमाणक (प्रमाण-पत्र) जो इस बात का सूचक हो कि अमुक व्यक्ति ने दूसरे को अमुक कार्य, पद, कर्तव्य आदि का भार सौंप दिया है। (चार्ज सर्टिफिकेट)

भारभूत—पु० [सं० भार/भू+विष्णु, पुक्-आगम] बोझ होनेवाला।

भारभाषी (सिन्)—पु० [सं० भार/वृ+अ+पिच्, पुक्, गिनि] एक प्रकार का मंत्र जिसमें पदावली का विशिष्ट गुरुत्व या तुकनात्मक भार जाना जाता है। (वैबीमीटर)

भारमिति—स्त्री० [सं० ष० तं०] [वि० भारमितीय] तरल और घन पदार्थों का विशिष्ट गुरुत्व या भार जानने की कला या विद्या।

भारय—पु० [सं० भार/वृत् (गति)। अच्] एक तरह का पक्षी। भर-दूल।

भार-यष्टि—स्त्री० [सं० ष० तं०] बँहणी।

भारवृ—पु० [सं० भार/वृ (प्राप्त होना)। क] धनुष की रस्सी। ज्या।

भारवह—वि० [सं० भार/वह (डोना)। अण्] १ भार डोनेवाला। २ कार्य-भार का वहन करनेवाला।

पु० बँहणी डोनेवाला व्यक्ति।

भारवह-अधिकारी—पु० [सं० कर्म० मं०] वह अधिकारी जिस पर किसी पद और उससे संबंध रखनेवाले कार्यों का भार हो। अवधायक अधिकारी। (आफिसर इन्चार्ज)

भारवाहक—वि०, पुं० [सं० ष० तं०]—भारवाह।

भार-बाह्वन—पु० [सं० ष० तं०] बोझ डोने की क्रिया या माद।

भार-बाही (सिन्)—वि०, पुं० [सं० भार/वह+गिनि]—भारवाह।

भारवृ—पु० [सं०] 'किराताजनीय' नामक महाकाव्य के रचयिता सस्कृत भाषा के एक प्रसिद्ध कवि।

भार-हृत्नि—स्त्री० [सं० ष० तं०] भार या वजन में होनेवाली कमी।

भारहारी (सिन्)—पुं० [सं० भार-वृह+गिनि] पृथ्वी का भार उतारनेवाले, विष्णु।

भार—वि० भारी।

पुं० [हिं० भार] १ बोझ। २ भार या बँहणी जिस पर बोझ डोते हैं। उदा०—लिज फल मूल भेट भरि मारा।—तुलसी।

पुं० माला।

भारकात—वि० [सं० भार-आकात, तृ० तं०] [सच० भारकाति] १ जिसके ऊपर किसी प्रकार का बड़ा भार हो। २ भार से पीड़ित तथा व्यथित। ३ (सर्गति) जिस पर देन आदि का भार उसे देहनु रसकर डाला गया हो। (हाइपरमेकेट)

भारकातो—स्त्री० [सं० भारकात+टाप्] एक प्रकार का वाणिक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में न म न र अ और एक लघु और एक गुरु होते हैं और चौथे, छठे तथा सातवें वर्ण पर यति होती है।

भारकाति—स्त्री० [सं० भार-आकाति, तृ० तं०] १. भारकात होने

की अवस्था या भाव । २. रेहून रखकर सपत्ति पर देन का भार रखना ।
(हाइपोथेकेसान)

भारि—पु० [सं० व० सं०, ए०-इ-लोप] मिह ।

भारिक—वि० [सं० भारि; ठन्-इक] १. बोझ ढोनेवाला । २. जिसमें भार हो या जिसमें कारण भार पड़े । दे० 'निर्णायिक' । जैसे—भारिक मत ।

भारिक मत—पु० [सं० कर्म० सं०] दे० 'निर्णायिक मत' ।

भारित्त—पु० क० [सं० भारि; इत्तच्] १. जिस पर कोई भार या बोझ हो । २. जिस पर किसी प्रकार का ऋण या देन हो । (एनुक्म्बर्ह)

भारी—वि० [हि० भार] १. अधिक भारवाला । जो आसानी से न उठाया या वहन किया जा सके अथवा जिसे उठाने या वहन करने में अधिक सामर्थ्य या शक्ति श्यय होती हो । जैसे—भारी पत्थर । २. अपेक्षित या सामान्य मात्रा आदि से बहुत अधिक । जैसे—भारी वर्षा, भारी भूकम्प, भारी फसल तथा भारी बहुमत । ३. (शरीर अथवा उमका अंग) जिसमें कुछ विकार या दर्द हो और फलन इसी लिए जो सुस्त और निकम्माना हो गया हो । जैसे—उनका शरीर या सिर आज कुछ भारी है ।

मूठ०—आधाज भारी होना—गले से ठीक तरह से आधाज या स्वर न निकलना । घेट भारी होना—साथे हुए पदार्थों का ठीक से न पचने के कारण पेट में अपच जान पड़ना । सिर भारी होना—सिर में दबाव जान पड़ना और हलकी पीड़ा होना । कान भारी होना—अच्छी तरह सुनाई न पड़ना । (स्त्री का) पैर भारी होना—गर्भवती होना । पेट में बच्चा होना ।

३. व्यक्ति के सबसे में, जिसके मन में अहिंसा, रोष या इसी प्रकार का और कोई विकार हो; और इसी लिए जो ठीक तरह से बातचीत न करना या सरल तथा स्वाभाविक व्यवहार न करना हो । जैसे—(क) आच-कल ये हमसे कुछ भारी रहते हैं । (ख) आज उनका मूठ कुछ भारी जान पड़ता है ।

मूठ०—(किसी अवसर पर) भारी रहना—(क) कुछ न बोलना । चुप रहना । (दलाल) जैसे—अभी तुम भारी रहो, पहले देख लो कि वे क्या कहते हैं । (ख) धीमी या मन्द गति से चलना । (कहारी) < कायों, प्रयत्नों आदि के सबसे में, जिसमें कोई कठिनाता या विकटता हो । जैसे—तुम्हें तो हर काम भारी मालूम होता है । ५. समय के सबसे में, जिसमें अधिक कष्ट होता हो या जिसे खिलाना सहज न हो । जैसे—(क) गर्मी के दिनों में यहाँ काँ; दोगहर भारी होती है । (ख) आज की रात देन टोपी के लिए भारी है ।

फि० प्र०—पड़ना ।—लगना ।

६. वस्तुओं, व्यक्तियों आदि के सम्बन्ध में, जिसका किसी पर कोई अनिष्ट परिणाम या प्रभाव पड़ता हो या यह सकता हो । जैसे—यह लड़का अपने पिता (या माई) पर भारी है, अर्थात्‌ही सकता है कि इसके प्रहो के फलस्वरूप इसके पिता (या माई) का कोई बहुत बड़ा अनिष्ट हो ।

फि० प्र०—पड़ना ।

७. बहुत बड़े या विशाल आकार-प्रकार या रूप-रंग वाला । बहुत बड़ा । पृष्ठ० । जैसे—(क) उनके यहाँ भारी भारी पुस्तकें देखने में आईं ।

(ख) उनका भाषण भारी भारी शब्दों से भरा था । (ग) सावन में यहाँ भारी मेला लगता है । < जो औरो की तुलना में बहुत अधिक बड़ा, महत्वपूर्ण या मान्य हो । बहुत बड़ा । जैसे—वे दर्शनशास्त्र के भारी विद्वान् हैं ।

पथ—भारी भरकम या भड़कम—बहुत बड़ा और भारी । जैसे—भारी भरकम गठरी । बहुत भारी—बहुत बड़ा ।

९. बहुत अधिक । अत्यन्त । जैसे—यह तुम्हारी भारी मूर्खता है । १०. जो किसी प्रकार से असह्य या दुर्बल हो । जैसे—(क) क्या भेरा ही दम तुम्हें मागे है? (ख) मुझे अपना मिर भारी नहीं पड़ा है, जो मैं उनसे लड़ने जाऊँ ।

फि० प्र०—पड़ना ।—लगना ।

११. किसी की तुलना में अधिक प्रबल या बलवान । जैसे—वह अकेला दो आदमियों पर भारी है ।

फि० वि० बहुत अधिक । उदा०—गो गो व्यय्य तुम पै बरपी भारी । —नबीर ।

भारीपन—पु० [हि० भारी + पन (प्रत्य०)] भारी होने की अवस्था या भाव । मुक्तव ।

भारी पानी—पु० [हि०] १. जलाशयों, नदियों आदि का ऐसा पानी जिसमें खनिज पदार्थों की मात्रा ओषधया अधिक हो । २. आधुनिक रसायनशास्त्र में पानी की तरह का एक मिश्र पदार्थ जो आधुनिक और भारी हाइड्रोजन के योग से बनता है और जिसका उपयोग परमाणुओं के विस्फोट में होता है । (हवो वाटर)

भाइर—पु० [सं०] १. रामायण के अनुसार एक वन जो पञ्जाब में सरस्वती नदी के पूर्व में था । २. एक ऋषि । ३. एक पक्षी ।

भाइर—पु० [हि० भारी] घोर चलने के लिए एक मकेत जिसका व्यवहार कहर करने है ।

वि० [हि० भार] १. भारी । २. जो बोझ या भार के रूप में हो या जान पड़े । प्रायः असह्य । जैसे—लड़की हमें भार नहीं पड़ी है ।

भा-रूप—पु० [ग० व० सं०] १. आत्मा । २. ब्रह्मा ।

भारोद्ध—वि० [सं० भारि + उद्/वृह (ढीला) + अच्] भार ले जानेवाला । भारवाहक । पु० भजदूर ।

भारोपीय—पु० भारत-यूरोपीय ।

भारिगं—वि० [सं० भारु + अच्] १. मृग के वग में उत्पन्न । २. मृग सम्बन्धी । मृग का । जैसे—भारिग अन्न ।

पु० १. मृग के वग में उत्पन्न व्यक्ति । २. परसुराम । ३. दुरुवाच्य ।

४. मार्कण्डेय । ५. जमदग्नि । ६. च्यवन ऋषि । ७. एक उप-पुराण का नाम । < पुराणानुसार भारतवर्ष के अन्तर्गत एक पृथिवी देश । ९. हीरा । १०. हाथी । ११. श्योनिका । १२. नीला रत्नरा । १३. कुम्हार । १४. उत्तर प्रदेश के उत्तरी भागों में बसी हुई एक हिन्दू जाति ।

भारिगं-श्रेत्र—पु० [सं०] दक्षिण भारत के आधुनिक मलयालम प्रदेश का पुराना नाम ।

बिभेध—प्रवाद है कि परसुराम के परशु फेकने से यह ब्रह्म बना था, इसी से इसका यह नाम पड़ा ।

शार्ङ्गी—स्त्री० [सं० शार्ङ्ग+ङीप्] १. पार्वती। २. लक्ष्मी। ३. द्रुव।
४. उड़ीसा की एक नदी।

शार्ङ्गीय—वि० [सं० शार्ङ्ग+छ—ईय] मृग-संबंधी। शार्ङ्ग।

शार्ङ्गवेश—पुं० [सं० शार्ङ्ग+ईश, व+तं] परशुराम।

शार्ङ्गधन—पुं० [सं० शर्ग+कम्+बुद्धि+धन] धर्म के गोत्र में उत्पन्न व्यक्ति।

शार्ङ्गी—स्त्री० [सं० शर्ग+अण्+ङीप्] शारंगी।

शार्ङ्ग—वि०—सं० [√मृ (मरण करना)+प्लुत्, बुद्धि] जिसका मरण किया जाने का हो या किया जाय।

पुं० १. नौकर। सेवक। २. अश्वित् व्यक्तित्। ३. आयुष्यजीवी। योद्धा।

शार्ङ्गी—स्त्री० [सं०] जोरू। पत्नी।

शार्ङ्गीजित—वि० [सं० तु० तं०] शार्ङ्गी या जोरू के वध में रहनेवाला।

पुं० एक तरह का हिरण।

शार्ङ्गी—पुं० [सं० शार्ङ्गी+अद् (जाना)+अण्, उप० सं०] बहु जो किसी दूसरे पुरुष को भोग के लिए अपनी शार्ङ्गी या पत्नी दे। अपनी स्त्री का दूसरे पुरुष के साथ सम्बन्ध करानेवाला व्यक्ति।

शार्ङ्गीटिक—वि० [सं० शार्ङ्गी+ठन्—टिक] जोरू का गुलाम। स्वैण।

प० १ एक प्राचीन मुनि। २. एक प्रकार का हिरण।

शार्ङ्गीव—पुं० [सं० शार्ङ्गी+त्व] शार्ङ्गी होने का भाव। पत्नीत्व।

शार्ङ्गीक—पुं० [सं० शार्ङ्गी+कृ (जाना)+उण्] १. एक प्रकार का हिरण।

२ एक प्राचीन पर्वत। २ बहु व्यक्ति जिसके वीर्य से परस्त्री को पुत्र हुआ हो।

शार्ङ्गीश्ल—पुं० [सं० शध्य० सं०] पतंग नामक मृग।

शाल—पुं० [सं०+श्रा (प्रकाश करना)+लच्] १. भौहो के ऊपर का भाग जो माथ्य का स्थान माना गया है। कपाल। ललाट। मस्तक।
माथा। २ तेज।

शु० १ -माला। २-मालू (रीछ)।

शाल-बंध—पुं० [सं० ब० सं०] १ महादेव। २ गणेश।

शाल-बंधी—स्त्री० [सं० ब० सं०, ङीप्] दुर्गा।

शाल-बन्धन—पुं० [सं० ब० सं०] शिरुर। शिरुर।

शालना—पुं० [सं० निमालन] १ ध्यानपूर्वक देखना। अच्छी तरह देखना।
जैसे—देखना-शालना। २ तलाश करना। ढूँढना।

शाल-नेत्र, शाल-लोचन—पुं० [सं० ब० सं०] शिव, जिनके मस्तक में एक नेत्र है।

शालगी—पुं० [सं० मल्लुक] रीछ। मालू। (हिं०)

शालक—पुं० [सं० माल-अंक, ब० सं०] १ करपत्र नामक अस्त्र। २. एक प्रकार का साग। ३. रीछ मछली। ४. कछुआ। ५. महादेव। ६. ऐसा मनुष्य जिसके शरीर में बहुत अच्छे लक्षण हों। (सामूहिक)

शाला—पुं० [सं० मल्ल] एक प्रसिद्ध अस्त्र जिसमें बड़े और छोटे बंदे के सिरे पर नुकीला बड़ा कल लगा रहता है। बरछा। नेजा।

शालाबद्धार—पुं० [हिं० शाला+फा० बद्धार] शाला या बरछा उठाने अर्थात् धारण करनेवाला। योद्धा। बरछेठ।

शालि—स्त्री० [हिं० शाला का स्त्री० अवता०] १. बरछी। साँग।
२. काँटा। शूल।

शालिम—पुं० [हिं० मला] मलपान। मलाई। उदा०—शालिम दिन दिन बढ़ि धरण।—प्रिथीराज।

शालिया—पुं० [दिश०] बहु अन्न जो हलवाहो को बेटन में दिया जाता है। माता।

शुं०—शाला-बरदा।

शाली—स्त्री० [हिं० शाला] १. छोटा माला। २. शाली की गाँधी या नोक। ३. काँटा। शूल।

शालुक—पुं० [सं०+मल्ल (हिंसा)+उक्+अण्] मालू। रीछ।

शालुनाथ—पुं० [हिं० शालू+सं० नाथ] शालुओं का राजा। जाबवान्।
जाबवत।

शालू—पुं० [सं० मल्लुक] मोटे तथा लंबे काले (या नूरे) बालोंवाला एक हिंदूक जगली तथा स्तनपायी चौपाया जिसे पकड़कर मदारौ लोय नचाते भी हैं।

शालूक—पुं० [सं०+मल्ल+उक्+अण्] मालू।

शालूकुंडा—पुं० [हिं० शालू+कुंड] नूरे रंग का एक तरह का रोंपेदार छोटा कीड़ा जो सर्पिक की फसल को हानि पहुँचाता है।

शालूकुअर—पुं० दे० 'शालू कुअर'।

शालूता—वि०—माता।

शाव—पुं० [सं०+मू (होना)+णिप्+अच्] [वि० शालिक, शानुक]

१. किसी वस्तु के अस्तित्व में आने, रहने या होने की अवस्था। प्रस्तुत या वर्तमान होने का तत्त्व या दशा। अस्तित्व। सत्ता। 'अभाव'

इसी का विपर्याय है। (एगिब्रटेन्स)। २ प्रत्येक ऐसा पदार्थ जो अस्तित्व में आता या जन्म लेता, बढ़ता या विकसित होता तथा अंत में नष्ट हो जाता हो। ३. मन में उत्पन्न होनेवाले विचार का बहु अतिरि-

पक्ष आरंभिक और मूल रूप जिसमें उसका आशय या उद्देश्य भी निहित होता है। मानस उद्भावना का बहु रूप जो परिभाषित तथा विकसित होकर विचार में परिणत होता है। जैसे—उदा समय मेरे मन में अनेक प्रकार के मान उत्पन्न हो रहे थे। ४ मन में उत्पन्न होनेवाली कोई भावना। क्षयाल। विचार। ५. कपन, लेख्य आदि का बहु उद्दिष्ट और मुख्य अभिप्राय या आशय जो कुछ अस्पष्ट तथा मूढ़ होता है, और जो महशा दूसरों की समझ में नहीं आता। अशुभ। तात्पर्य।

मतलब। (संज्ञ) जैसे—यहाँ कर्म का भाव कुछ और ही है। ६. मन में उत्पन्न होनेवाली भावनाओं, विचारों आदि का बहु आशय या छया जो कुछ अवसरों पर आकृति आदि पर पडती और उन भावनाओं, विचारों आदि की सांकेतिक रूप में सूचक होती है। जैसे—उसके चेहरे पर एक भाव आता और एक आता था।

मुहा०—भाव देना—मन का कोई भाव शारीरिक चेष्टा या अंग-संचालन से प्रकट करना। उदा०—व्याम को भाव दे गई राधा।—सूर।

७. किसी चीज के प्रति होनेवाली हार्दिक मन्त्रि, विश्वास या श्रद्धा। उदा०—मा भाव, मा सज्जत, भाव शाहियतु साँच।—तुलसी। ८. किसी काम, भाव या बात का बहु गुणात्मक अथवा धर्मत्मक तत्त्व जो उसकी मूल प्रकृति या विशेषता का आधार या सूचक होता है; और जिसकी सत्ता से पृथक् तथा स्वतंत्र मानी जाती है। (सम्बन्ध) जैसे—शील होने का भाव ही शीलत्व है; इसी लिए 'शीलत्व' भाव-वाचक संज्ञा है। ९. सांख्य में, बुद्धि-तत्त्व का कार्य, धर्म या विकार जो वेदांत के अनुसार 'कर्म' है। १०. वैशेषिक में द्रव्य, गूण, कर्म, सामान्य, विशेष और समयवाय वे छः पदार्थ जिनका अस्तित्व

निश्चिन तथा वास्तविक माना गया है। ११ व्याकरण में, धानु का अर्थ। १२ साहित्य में आश्रय की मानसिक स्थितियों का व्यञ्जक प्रदर्शन जिसमें गम की उत्पत्ति होती है, और अनेक प्रकार के शारीरिक व्यापारों से व्यक्त होती है। साहित्यकारों ने इसके स्थायी, ध्वनिधारी और साहित्यिक ये तीन प्रकार या मंडे कहे हैं। (देखें उक्त शब्द) १३ संगीत के सान अंगों में से पाँचवाँ अंग जिसमें गाये जानेवाले गीत में शक्ति समनोभाव, शारीरिक अंग-संचालनों और चेष्टाओं के द्वारा मूर्त रूप में प्रदर्शन किये जाते हैं।

मुहा०—भाव बताना—संगीत में गेय पद में बणित मनोभाव आत्मिक चेष्टाओं के द्वारा प्रदर्शित करना। १४ चोचला। नबरा।

मुहा०—भाव बताना—कोई काम करने का समय आने पर केवल हाथ-पैर हिला कर या बाने बना कर उसे टालने का प्रथम करना। (बाजाकू)

१५ फलित ज्योतिष में, ग्रहों की शयन, उपवेशन, प्रकाशन, गमन आदि बाह्य-चेष्टाओं में से प्रत्येक चेष्टा या स्थिति जिसका ध्यान जन्म-कुंडली का विचार करने के समय रखा जाता है। और जिसके आधार पर कलाफल कहे जाते हैं। १६ ज्योतिष में साठ सबस्तरों में से आठवे सबस्तर की सजा। १७ ज्योतिष में जन्म-समय का तारा। १८ बीजों आदि की बड़ दर या नृत्य जो प्रायः राजाओं में चलता और समय समय पर घटना-बदला रहता है। निम्बं। जैसे—पहले भाव पुछ कर तब बीज खरीदनी चाहिए।

पद—भाव-त. व। (देखें)

क्रि० प्र०—उतरना।—गिरना।—घटना।—चढ़ना।—बढ़ना। १९ आभा। २० जगत्। ससार। २१ जन्म। पैदाइश। २२ चित्त। मन। २३ कार्य, कृत्य या क्रिया। २४ कल्पना। २५ उपदेश। २६ विमृति। २७ पांडित्य। विद्वान्। २८ पशु। जानवर। २९ परा। यानि। ३० रति-क्रीडा। मगोम। ३१ अच्छी तरह देखना। पर्यालोचन। ३२ प्रेम। मूहम्बत। स्नेह। ३३ डग। तरीका। ३४ तारा। प्रकार। भाति। ३५ उपदेश। ३६ उद्देश्य। हेतु। ३७ प्रहर्ष। स्वभाव। ३८ कामना। वासना। ३९ अवस्था। रसा। हालत। ४० विश्वास। ४१ आदर-सम्मान। ४२ दे० 'भाव अलंकार'।

भाष-अलंकार—ए० [स० कर्म० सं०] नाट्य शास्त्र में अगज अलंकारों का एक मंड जिसमें नायिका के दो आत्मिक विचार या क्रिया व्यवहार आते हैं जो उनके निकटकार चित्तवस्था में बीजनोंद्वयम के साथ साथ काम-विचार का वपन करते हैं।

भाषद—अञ्ज० [हि० भावना या माना—अच्छा लगना, मि० प० भाँवे] अगर अच्छा होना। अगर मन चाहे तो।

भाषक—वि० [स० म०/प०/मि०/पुल्ल—अक] १ भावना करनेवाला। २ भाव से युक्त। भाव-पूर्ण। ३ उत्पन्न करनेवाला। उत्पादक। ४ किसी का अनुयायी, प्रेमी या भक्त।

पु० १ भाव। २ साहित्य-शास्त्र में, काव्य का अधिकारी पाठक। अञ्ज० [स० भावः क (प्रत्य०)] थोड़ा सा। उरा सा। किचिन्तु।

भाष-नति—स्त्री० [स० व० त०] १ हरादा। इच्छा। २ विचार। ३ मराठी साहित्य में वह गीत जिसमें मुक्कतः मनोभावों की प्रपानता हो।

भाषनामय—वि० [स० म० त०] सद्भाव से जाने के योग्य। जो अच्छे भाव की सहायता से जाना जा सके।

भाष-पंथि—स्त्री० [स०] दे० 'मनोपंथि'।

भाष-प्राप्त—वि० [स० म० त०] जिमें प्रवृत्त करने से पूर्व मन में सद्भाव भावों की आवश्यकता हो।

भाषवाही (हिंगु)—वि० [स० भाव/व०/त. (ग्रहण करना)+पिनि] भाव या भाषण समनोभाव।

भाष-चित्र—पु० [स० मध्य० म०] वह चित्र जो विशेषतः कोई मानसिक भाव प्रकट करने के उद्देश्य में बनाया गया हो।

भाषज—वि० [स० भाव/जन् (उत्पात)] १ भाव में उत्पन्न।

स्त्री० [स० श्रावुजाया, हि० भीजाई] मारि, विभंगन वड़े मारि की पत्नी। भाभी।

भाषत—वि० [स० भाव/जा (जानना) क] [भाव० भावसता] मन की प्रवृत्ति या भाव जाननेवाला।

भाषत—अञ्ज० [म० भावः/स्य] भाव की दृष्टि में। भाव के विचार में।

भाषता—वि० [हि० भावना—अच्छा लगना; ता (प्रत्य०)] [स्त्री० भावती] जो मला लग। माहक। मुभावना।

पु० प्रियतम।

भाष-ताव—पु० [म० भावः/ित० ताव] १ किसी चीज का भाव अर्थात् दर, मूल्य आदि। निम्बं। २ किसी चीज या यान का रग-दवा। क्रि० प्र०—जांचना।—देखना।

भाष-वस—पु० [स० म० त०] चारी त कर के मन में केवल चारी की भावना करना जो जैनियों के अनुसार एक प्रकार का पाप है।

भाष-वशा—वि० [स० मध्य० सं०] किसी जीव या कृमिंत देवघर उसकी रक्षा के लिए अतः करण में दया लाना। (जैन)

भाषन—पु० [म० म०/पु० (होना)ः पिन्चुः/त्पुद--अन्] १. भावना। २. ध्यान। ३. विष्णु।

वि० [हि० भावा-पला लगना] भावे या मला लगनेवाला। प्रियदर्शी। भाषना—स्त्री० [स० म०/पु०/पिन्चुः/युच्--अन्, 'ताप] १ मन में किसी बात का होनेवाला चिन्तन। ध्यान। २ मन में उत्पन्न शिंवेवली कोई कल्पना, भाव या विचार। यथाल।

विशेष—दार्शनिक दृष्टि में यह चिन्ता का एक संस्कार है जो अनुभव, स्मृति आदि के योग में उत्पन्न होता है।

३. कामना। चाह। वासना। ४ वैद्यक में, औषध आदि को किसी प्रकार के रस या तरल पदार्थ में धार धार मिला कर घोटना और सुखाता जिसमें उस औषध में रस या तरल पदार्थ के कुछ गुण आ जायें। पुट।

५. चिन्ता। फिक।

क्रि० प्र०—देना।

अ०—माना (अच्छा लगना)।

वि०—भावना या भावना (अच्छा लगनेवाला)।

भाष-नाट्य—पु० [म० मध्य० सं०] वह भाष-प्रधान नाटक जिसमें कुछ संगीत भी हो।

भाषनामय-शरीर—पु० [स० भावना; मन्द, भावनामय-शरीर, कर्म० सं०] साक्ष्य के अनुसार एक प्रकार का शरीर जो मनुष्य मृत्यु से कुछ ही

पहले धारण करता है और जो उसके जन्म भर के लिए हुए सभी कर्मों के अनुष्ण होता है। कहते हैं कि जब आत्मा इस शरीर में पहुँच जाती है, तभी मृत्यु होती है।

भाषना-सार्थ—५० [सं० ४० तं०] ईश्वर आदि का आध्यात्मिक तथा भक्तिपूर्ण भाग या साधन।

भाषति—स्त्री० [हि० भाषा या भाषना=अच्छा लगना] मन में सोचा हुआ काम या बात। वह जो जी में आया हो।

भाष-निक्षेप—५० [सं० ४० तं०] जैनों के अनुसार, किसी पदार्थ का वह नाम जो उसका केवल प्रस्तुत स्वरूप देसकर रखा गया हो।

भाषनीय—वि० [सं०√म०; निष्+अनीयर्] चिन्त या विचार में लाये जाने के योग्य। जिसकी भावना की जा सके या हो सके।

भाष-वच—५० [सं० ४० तं०] साहित्यिक रचना का वह पक्ष जिसमें उसकी निर्यात रस का सांयोग्य वर्णन या विवेचन होता है। इसमें विशेष रूप से काव्यगत भावनाओं, कल्पनाओं तथा विचारों की प्रधानता होती है।

भाष-परिग्रह—५० [सं० ४० तं०] वह स्थिति जिसमें मनुष्य धन का सग्रह करता तो नहीं है अथवा नहीं कर पाता परन्तु उसमें धन-सग्रह की भावना प्रबल होती है।

भाष-प्रदान—५०—भाववाच्य।

वि० [सं०] जिसमें भाव या भावों की तीव्रता या प्रधानता हो।

भाष-ध्व—५० [सं० तु० तं०] जैनों के अनुसार भावनाएँ या विचार जिनके द्वारा कर्म-तत्त्व से आत्मा बंधन में पड़ती है।

भाष-भगी—स्त्री० [सं० ४० तं०] मन का भाव प्रकट करनेवाला अग-विशेष। वह शारीरिक क्रिया जो मन का भाव प्रकट करनेवाली हो।

भाष-भक्ति—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] १. भक्ति-भाव। २. आदर-सत्कार। सम्मान।

भाष-मुखावृत्त—५० [सं० तु० तं०] १. वह स्थिति जिसमें मनुष्य झूठ नहीं बोलता पर उसके मन में झूठ बोलने की प्रवृत्ति जागरूक होती है। २. शास्त्र के वास्तविक अर्थ को दबाकर अपना हेतु सिद्ध करने के लिए झूठ-मूठ नया अर्थ करना। (जैन)

भाष-मैथुन—५० [सं० तु० तं०] वह स्थिति जिसमें मनुष्य प्रत्यक्ष रूप से तो मैथुन नहीं करता या नहीं करता चाहता परन्तु उसका मन विशेषतः सुख मन मैथुनिक विचारों में रत रहता है।

भाष्य—५० [देश०] वह व्यक्तित्व जो धातु की चहुर पीटने के समय पाँस को संकसे से पकड़ें रहता और उलटता रहता है।

भाषर (रि)—स्त्री० [हि० भाषा] १. भाषे की अवस्था या भाव। २. अविश्वसि। उदा०—भाषरि अतभाषरि मरे करौ करि बकवाद।—बिहारी।

†स्त्री०=भावरि।

भाष-स्य—स्त्री० [सं० ४० तं०] वह स्थिति जिसमें शूद्र भावात्मक चरतल पर क्षय की प्रतीति होती है।

भाषलसि—स्त्री० [सं० ४० तं०] लिपि का वह आरंभिक और मूल प्रकार जिसमें मन के भाव या विचार अक्षरों या बर्णों के द्वारा नहीं, बल्कि उन भावों या विचारों के प्रतीकों के द्वारा अंकित और सूचित किये जाते

थे। (आदिशिकोप्राप्ती) उत्तरी अमेरिका और मिस्र के आदिम निवासियों की लिपियों की यणना भाव-लिपि से होती है।

भाबली—स्त्री० [देश०] जमींदार और असामी के बीच उपज की होने-वाली बेटाई।

भाब-भाबक—स्त्री० [सं० ४० तं०] व्याकरण में वह संज्ञा जिससे किसी पदार्थ का भाव, धर्म या गुण आदि सूचित हो। जैसे—कुम्पता, सुखोलता, कट्टरान, बुरापन आदि।

भाब-वाच्य—५० [सं० तु० तं०] व्याकरण में वह तत्त्व जो अकर्मक क्रिया पद की उस स्थिति का सूचक होता है जब वह कर्ता का व्यापार सूचित न कर के क्रिया के व्यापार का ही बोध कराता है। उभक्त अवस्था में क्रिया पद के साथ कर्ता प्रथमा विभक्ति से युक्त न हो कर तृतीया विभक्ति से युक्त होता है। जैसे—अहं भाव से कलम उठने लगी है।

भाब-बिकार—५० [सं० ४० तं०] जन्म, अस्तित्व, परिणाम, बर्धन, क्षय और नाश ये छ. बिकार। (यास्क)

भाब-भ्यंजक—वि० [सं० ४० तं०] अच्छी तरह या स्पष्ट रूप में भाव प्रकट या व्यक्त करनेवाला।

भाब-भ्यंजन—५० [सं० ४० तं०] मन का भाव प्रकट करने की क्रिया या वशा। **भाब-शबलता**—स्त्री० [सं० ४० तं०] वह स्थिति जिसमें एक एक करके अनेक भाव शृङ्खलाबद्ध रूप में प्रकट होते हैं अथवा अनेक भावों का मिश्रण दिखाई पड़ता हो।

भाब-शक्ति—स्त्री० [सं० ४० तं०] माहिरि में वह अवस्था जब मन में किसी नये विचारों भाव के उत्पन्न होने पर पहले का कोई भाव शान्त या समाप्त हो जाता है।

भाब-सधि—स्त्री० [सं० ४० तं०] वह स्थिति या स्थल जहाँ दो अविरोधी भावों की सधि होती है।

भाब-संभर—५० [सं० ४० तं०] जैनों के अनुसार वह क्रिया या शक्ति जिससे मन में नये भावों का ग्रहण रुक जाता है।

भाब-सत्य—५० [सं० तु० तं०] ऐसा सत्य जो ध्रुव न होने पर भी भाव की दृष्टि से सत्य हो।

भाब-सर्ष—५० [सं० ४० तं०] तन्मात्राओं की व्यति। (सांख्य)

भाब-हरण—५० [सं० ४० तं०] किसी की कल्पना, लेख आदि के भाव चुरा कर उन्हें अपनी मौलिक कृति के रूप में लोगों के सामने उपस्थित करना। २ साहित्यिक चोरी। (पंजिअरिख)

भाब-हारी (रि)—५० [सं० भाव√ह-णिगिन्, उप० सं०] दूसरों की कविताओं, लेखों आदि के भाव चुरा कर उन्हें अपनी मौलिक कृति बनानेवाला व्यक्ति। (पंजिअरिख)

भाब-हिंसा—स्त्री० [सं० सं० तं०] केवल मन में किसी के प्रति हिंसापूर्ण भाव होना। ऐसी स्थिति में मनुष्य हिंसा की भावना कार्य रूप में परिणत नहीं करता।

भाबोकन—५० [सं० भाव-अकन, ४० तं०] भावों को चित्रों या विशेष प्रकार के चिह्नों में अंकित करने की क्रिया या भाव। (आदिशिकोप्राप्ती) विशेष दे० 'चित्रलिपि'।

भाबोतर—५० [सं० भाव-अतर, ४० तं०] १. मन की अवस्था का बदल कर कुछ नये भावों का उदय। २. अवन्तर।

भाबोत्सव—वि० [सं० भाव-आत्मन, ४० सं०, +कप्] १. जिसमें किसी

प्रकार का मानसिक भाव की मिला हो। २. भावों से परिपूर्ण या युक्त (रचना)। ३. जो भाव से युक्त हो अर्थात् जिसमें अभाव न हो।
वि० दे० 'सहित'।

भावाभ्यास—वि० [सं० भाव-अभ्यास, ष० सं०]। स्त्री० भावाभ्यासात् भाव का अनुसरण करनेवाला।

भावाभ्यासा—स्त्री० [सं० भावाभ्यास] टाप् छाया।

भावावहृत्—पु०—भावहृत्।

भावाभाव—पु० [सं० भाव-अभाव, इ० सं०]। भाव और अभाव। होना और न होना। २. उत्पत्ति और नाश या लय। ३. जैनों के अनुसार भाव का अभाव वे अथवा वर्तमान का भूत में होनेवाला परिवर्तन।

भावाभास—पु० [सं० भाव+आभास, ष० सं०] साहित्य में काव्यदोषों के अन्तर्गत बहु स्थिति जिसमें कोई व्यभिचारी भाव किसी रस का पोषक न होकर स्वतंत्र रूप से भाव-अवस्था को प्राप्त होता हुआ-सा दिखाई देता है।

भावार्थ—पु० [सं० भाव-अर्थ]। ऐसा विवरण या विवेचन जिसमें मूल का केवल भाव या आशय आ जाय, अक्षरशा अनुवाद न हो। (शब्दार्थ से निम्न) २. अभिप्राय। आशय। तात्पर्य। मतलब।

भावालंकार—पु० दे० 'भाव-अलंकार'।

भावालोना—स्त्री० [सं० भाव-आलोना, सं० सं०] छाया।

भावामित—वि० [सं० भाव-आमित, ष० सं०] (काव्य, गीत, नृत्य आदि) जो मानसिक भावों के आधार पर स्थित हो।

पु० समीत में हस्तक का एक भेद। गेय पद के भाव के अनुसार हाथ उठाना, घुमाना और चलाना।

भाविव—वि० [सं० भाव+ठक्+इक]। भाव-संबंधी। भाव का। २. भाव या आशय जाननेवाला। ३. मर्मज्ञ। ४. नैसर्गिक।

प्राकृतिक। ५. असली। वास्तविक। ६. भविष्य में होनेवाला। भावी।

पु० १. ऐसा अनुमान जो अभी हुआ न हो, पर आगे चल कर होने-वाला हो। भावी अनुमान। २. साहित्य में एक प्रकार का अलंकार जिसमें भूत और भविष्यत् भावी या पदावधि का एक साथ तथा प्रत्यक्षत् प्रदर्शन किया जाता है।

भावित—पु० इ० [सं० भाव (होना)+भिच्+क्त]। जिसकी भावना की गई हो। सोचा या विचार हुआ। २. मिलाया हुआ। मिश्रित। ३. बुद्ध किया हुआ। घोषित। ४. जिसमें किसी रस आदि की भावना की गई हो। जिसमें घुट दिया गया हो। ५. किसी गद्य से युक्त किया हुआ। भासा या बसाया हुआ। ६. अधिकार में आया हुआ। प्राप्त। ७. भेंट किया हुआ। अर्पित। ८. उत्पन्न। जात।

भावित्ता—स्त्री० [सं० भावित्+तल्+टाप्] भावी का भाव। हीन-हार। होनी।

भावित्तासा (स्वप्न)—वि० [सं० भावित्-आस्वप्न, ष० सं०] जिसने ईश्वर का मनन तथा चिंतन करके अपनी आत्मा शुद्ध कर ली हो।

भावित्—पु० [सं० भाव (होना)+भिच्+क्त] स्वर्ग, मर्त्य और पाताल इन तीनों का समाहार। वैलोक्य।

भावी (विन्दु)—वि० [सं० भाव+विन्, णिव्]। भविष्य में होने या घटित होनेवाला। २. जो भाव के विधान के अनुसार अवश्य होने को हो। किस्मत में बरा हुआ।

स्त्री० १. भविष्यत् काल। २. भविष्य में अनिवार्य तथा निश्चित रूप से घटित होनेवाली बात या व्यापार। अवश्य होनेवाली बात। भवि-तत्पत्त्या।

भावुक—वि० [सं० भाव (होना)+उक्त्, वृद्धि]। भावना करने या सोचने-समझनेवाला। २. जिसके मन में भावों का उदय या संचार बहुत जल्दी होता हो। ३. (व्यक्ति) जो मन में उठे हुए भाव के बन्धीभूत हो जाय और कतंभ्य-अकतंभ्य भूल जाय। ४. उत्तम भावना करनेवाला। अच्छी बातें सोचनेवाला।

पु० १. मला आदमी। सज्जन। २. कल्याण। मगल। ३. बहोनी।

भावी—अव्य०—भावे।

भावे प्रवीण—पु० [सं० व्यक्त पद] व्याकरण में क्रिया का ऐस रूप में होने-वाला प्रयोग जिसमें कर्ता या कर्म के पुष्क, लज और वचन के अनुसार उसके रूप नहीं बदलते, और क्रिया सदा अन्य पुष्क, पुल्लिङ्ग और एक वचन में रहती है। (इष्टमन्त्रल यज्ञ) जैसे—उहते यहाँ बुलाया जायमान। (विद्योप) दे० 'प्रयोग' के अन्तर्गत।

भावे—अव्य० [हिं० माना- अच्चा लगना]। चाहे जो हो। २. जी चाहे तो। अच्छा लगे तो। ३. अवधान। चाहे। या।

भावोत्सर्ग—पु० [सं० भाव-उत्सर्ग, ष० सं०] शोध आदि बुरे भावों का त्याग। (जैन)

भावोदय—पु० [सं० भाव। उदय, ष० सं०] साहित्य में एक अलंकार जिसमें किसी नवीन भाव के उदय होने का उल्लेख या वर्णन होता है।

भावोन्मेष—पु० [सं० भाव। उन्मेष, ष० सं०] मन में होनेवाला किसी भाव का उदय।

भाव्य—वि० [सं० भाव (होना)+व्यप्]। जिसका होना बिल्कुल निश्चित हो। अवश्य होनेवाला। अवश्यम्भावी। २. जिसकी भावना की जा सके। ३. जो प्रमाणित या सिद्ध किया जाने को हो।

भावक—वि० [सं० भाव+क (बोलना)+कृत्+अक]। भाषण करने-वाला। कहनेवाला। २. किसी रूप में कुछ बोलनेवाला। जैसे—उच्च भाषक।

भावण—पु० [सं० भाव+ण्यत्+अण]। मुह से कह या बोलकर कोई बात कहना। २. कही हुई बात। कथन। ३. भाषण में होनेवाली बातचीत या वार्तालाप। ४. समा, सत्त्वा आदि में किसी उपस्थित या प्रासंगिक विषय पर धारप्रवाह रूप में किसी द्वारा श्रव्य किये जाने-वाले विचार या प्रस्तुत किया जानेवाला विवरण। वक्तुता (स्त्रीक)

भावण-स्वातंत्र्य—पु० [सं० भाव+ण्यत्+अण]। अपने मन में विचार विशेषतः धार्मिक राजनैतिक या सामाजिक विषयों पर मन के विचार प्रकट करने की स्वतन्त्रता, जो शासन की ओर से प्राप्त होनेवाले अधिकारों के अन्तर्गत है।

भावना—अ० [सं० भाषण]। कहना। बोलना। २. बात-चीत करना। ३. सं० [सं० मसण] मोहन करना। लाना।

भाषांतर—पु० [सं० भाषा-अंतर, मयु० सं०]। एक भाषा में लिखे हुए लेख का दूसरी भाषा में अनुवाद करना। २. इस प्रकार किया हुआ अनुवाद।

भाषांतरकार—पु० [सं० भाषांतर+कृ (करना)+अण]। भाषांतर अर्थात् अनुवाद या उल्था करनेवाला। अनुवादक।

भाषांतर-सम—पू० [सं० वृ० तं०] एक प्रकार का शब्दात्मकार (शब्दों की ऐसी योजना जिससे शब्ध कहे भाषाओं का भाषा जा सके)।

भाषा—स्त्री० [सं०/भाष्+अ+टाप्] १. किसी विविष्ट वनसमूह द्वारा अपने भाष, विचार आदि प्रकट करने के लिए प्रयोग में लाए जाने-वाले शब्द तथा उनके संयोजन का एक व्यवस्थित क्रम। बोली। बजान। २. दे० 'बोली'।

विशेष—साहित्यकारों के अनुसार भाषा का क्षेत्र 'बोली' की तुलना में बड़ा और विस्तृत होता है, और एक भाषा के अन्तर्गत अनेक बोधियाँ होती हैं।

३. बहु अर्थकृत भाष जिससे पशु-पक्षी आदि अपने मनोविचार या भाष प्रकट करते हैं। जैसे—बंदरों की भाषा। ४. बहु बोली जो वर्तमान समय में किसी देश में प्रचलित हों। ५. आधुनिक हिंदी का पुराना नाम। ६. संगीत में एक प्रकार की रागिनी। ७. संगीत में एक प्रकार का ताल। ८. वादीषी। सरस्वती। ९. अभियोग-पत्र। अरजी-नावा।

भाषा—वि० [हिं० भाषा+ई (प्रत्य०)] भाषा-सम्बन्धी। भाषा का। भाषिक। जैसे—भाषाई आंदोलन।

भाषा-तन्त्र—पु० [सं० षं० तं०] भाषा विज्ञान।

भाषा-पत्र—पु० [सं० षं० तं०] १. वह पत्र जिसमें अपने कष्टों का निवेदन किया गया हो। २. अभियोग पत्र। अरजी-नावा।

भाषा-भाद—पु० [षं० तं०] भाषा-पत्र।

भाषाबद्ध—पु० कृ० [सं० षं० तं०] १. (भाष या विचार) जो शब्दों में (बोल या लिखकर) व्यक्त किया गया हो। २. देश भाषा में लिखा हुआ।

भाषा-विज्ञान—पु० [सं० षं० तं०] एक आधुनिक विज्ञान जिसमें भाषा की उत्पत्ति, विकास, उसके शब्दों तथा उन शब्दों के अर्थों, ध्वनियों आदि का वैज्ञानिक ढंग से प्रतिपादन तथा विवेचन किया जाता है। (फिलोलॉजी)

भाषाविद्—पु० [सं० भाषा/विद् (ज्ञानना)+विप्] १. वह जो अपनी भाषा का ज्ञाता हो। २. वह जो अनेक भाषाओं का ज्ञाता हो।

भाषा-शास्त्र—पु० [सं० षं० तं०] व्याकरण।

भाषा-तन्त्र—पु० [सं० षं० तं०] एक प्रकार का शब्दालकार जिसमें शब्दों की योजना की जाती है जो कई भाषाओं में समान रूप से प्रयुक्त होती हों।

भाषा-सामिति—स्त्री० [सं० षं० तं०] जैनियों के अनुसार एक प्रकार का आचार जिसके अन्तर्गत ऐसी बातचीत आती है जिससे सब लोग प्रसन्न और ननुष्ट हो।

भाषिक—वि० [सं० भाषा+ठक्—इक] १. भाषा-सम्बन्धी। २. भाषा के गुणों के फलस्वरूप होनेवाला। जैसे—भाषिक वैभव।

भाषिका—स्त्री० [सं० भाषा+कृ+टाप्, हल्] १. भाषा। २. राणी।

भाषिणी—स्त्री० [सं० भाषिन्+ङीप्] संगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

वि० स्त्री० सं० 'भाषी' का स्त्री०। जैसे—मधुर-भाषिणी।

भाषित—पु० कृ० [सं०/भाष् (कहना)+क्त] कहा हुआ। कथित।

पु० १. उक्ति। कथन। २. बात-चीत। बातलाप।

भाषी (विन्)—वि० [सं०/भाष्+पिप्] बोधनेवाला। (समस्त पदों के अन्त में) जैसे—मिष्ट-भाषी, संस्कृत-भाषी।

भाष्य—पु० [सं०/भाष् (कहना)+प्यत्] १. उक्ति। कथन। २. सूत्र-

पदों का विस्तृत विवरण या व्याख्या। ३. वह ग्रन्थ जिसमें किसी के सूत्रों की व्याख्या तथा स्पष्टीकरण किया गया हो। ४. बोलचाल में किसी मुद्द बात या शब्ध की विस्तृत व्याख्या। जैसे—आपके इस लेख पर तो एक भाष्य की आवश्यकता है।

भाष्यकार—पु० [सं० भाष्य/कृ (करना)+अप्] सूत्रों की व्याख्या करनेवाला लेखक।

भास—वि० [सं०/भास् (चमकना)+शष्+अल्] प्रकाशमान। सुंदर। पु० १. सूर्य। २. चमका। ३. नसा। ४. सजुप्त पत्नी।

भासोली—स्त्री० [सं० भासन्त+ङीप्] तारा।

भास—पु० [सं०/भास्+षञ्] १. चमक। दीप्ति। २. प्रकाश। रोशनी।

३. किरण। मयूख। ४. इच्छा। कामना। ५. मिथ्या ज्ञान।

६. गोशाला। ७. कुक्कुट। मुरगा। ८. गिद्ध। ९. सजुप्त पत्नी।

१०. स्वार्थ। लज्जत। ११. एक प्राचीन पर्वत।

भासक—पु० [सं०/भास्+कृ (करना)+अक] चमकानेवाला। प्रकाशक।

भासना—अ० [सं० भास] १. प्रकाशित होना। चमकना। २. लक्ष्यों से कुछ कुछ जान पड़ना। आभास होना। ३. दिखाई देना।

अ० [हिं० भासना—बुझना] १. पानो में बुझना। २. लिख या लीन होना। ३. फैलना।

सं०—भाषना (कहना)।

भासमान—वि० [सं० भास+मान] १. श्रुति या प्रकाश से युक्त। २. चमकदार। चमकीला।

भासमान—वि० [सं० भास+मान्, मुम्] जान पड़ता या दिखाई देता हुआ। भासता हुआ।

पु०—सूर्य।

भासिक—वि० [सं० भास+ठक्—इक] १. दिखाई पड़नेवाला। दृश्य।

२. लक्ष्यों से जान पड़ने या मालूम होनेवाला।

भासित—वि० [सं०/भास्+क्त] १. तेजोमान। प्रकाशमान। २. चमकदार। चमकीला।

भासु—पु० [सं०/भास्+उष्]सूर्य।

भासुर—पु० [सं०/भास्+सुर] १. कुछ रोग की ओषधि। कोड़ की वना। २. विल्लीरा। स्फटिक। ३. बहादुर। वीर।

वि० चमकदार। चमकीला।

भास्कर—पु० [सं०/भास्+कृ (करना)] १. सूर्य। २. सोना। स्वर्ण।

३. बहादुर। वीर। ४. अग्नि। आग। ५. आक। मवार। ६. सिंघ।

७. पत्थरों आदि पर नक्काशी करने की कला या विद्या।

भास्करि—पु० [सं० भास्कर+इत्] शनि ग्रह।

भास्मन्—वि० [सं० मस्मन्+अप्] १. मस्म से बना हुआ। २. मस्म सम्बन्धी।

भास्वत्—पु० [सं० भास्+वत्] १. सूर्य। २. आक। मवार।

३. चमक। दीप्ति। ४. बहादुर। वीर।

वि० चमकदार। चमकीला।

भास्वती—स्त्री० [सं० भास्वत्+ङीप्] एक प्राचीन नदी। (सहायाराष्ट्र)

भास्वर—पु० [सं०/भास्+वर] १. सूर्य। २. सूर्य का एक अनुचर।

३. विन। ४. कुछ रोग की औषधि। कोड़ की वना।

वि० चमकदार। चमकीला।

मिर्गा—पु० [सं० मृग] १. मृगी नाम का कीड़ा जिसे बिल्ली भी कहते हैं। २. मीरा।

†पु०=मग (डूटना)।

मिगराजा—पु०=भुगराज।

मिगाना—स० मिगोना।

मिगोरा—पु० [सं० मृगर] १. मृगरा नाम का पौधा। २. भुगराज पत्नी।

मिगोरी—स्त्री० [सं० भुगराज] भुगराज नामक पत्नी।

मिगाना—स० मिगोना।

मिजो(ब)ना—स० मिगोना।

मिड—पु० मीटा।

मिडा—स्त्री० [सं०√ मण (शब्द) ; ड, पृषो० सिद्धि, टाप्] मिडी।
†पु० [?] हुक्के की लम्बी सटक।

†पु० मीटा।

मिडि—पु० [सं० मिदि] गोफना। डेलबाँस।

मिडी—स्त्री० [सं० मिडा, मिड, डोंग] एक प्रकार का पौधा और उसकी फली जिसकी तलकारी बननी है। राम तरौई।

मिडीतक—पु० [सं० मिडी/तक (हसना) ; अच्] मिडी का धुप।

मिसार—पु० [सं० मान-सरण] सबेरा। प्रातःकाल।

मिशा—पु० [हि० मँया] भाई। सडया।

मिषा—पु० [सं०√ मिश (मांगना) ; ल्युट्—अन्] [मू० कृ० मिशित] १. मिशा माँगने की क्रिया या भाव। भीष माँगना। २. मिशा पर निर्वाह करना।

मिशा—स्त्री० [सं० मिश ; अ ; टाप्] १. असहाय या निरुपाय अवस्था में उदरपूर्ति के लिए लोगों से दीनतापूर्वक अपने निर्वाह के लिए हाथ-पैलाकर अन्न, कपड़ा, पैसा आदि माँगने का काम या नृसि। २. हम प्रकार माँगने पर प्राप्त होनेवाला अन्न, कपड़े, पैसे आदि। भीष। ३. विशेष अनुग्रह की प्राप्ति के लिए किसी में दीनतापूर्वक की जाने-वाली याचना ४. नीकरी।

मिशाक—पु०—मिशुक।

मिशाकर—पु० [सं० मिशा/कर (प्राप्ति) ; ट] मिशुक।

मिशा-चर्या—स्त्री० [प० तं०] मिशा माँगने के लिए इधर-उधर घूमना।

मिशाटन—पु० [सं० मिशा-अटन, मध्य० सं०] मिशमगो या साधु सत्यासियों का मिशा-प्राप्ति के लिए लोगों के द्वार पर जाना।

मिशात्र—पु० [सं० मिशा-अत्र, मध्य० सं०] मिशा में मिला हुआ अन्न।

मिशा-पात्र—पु० [सं० मध्य० सं०] वह पात्र जिसमें मिशमगो भीष माँगते हैं। वि० (व्यक्ति) जिसे मिशा देना उचित हो। मिशा प्राप्त करने का अधिकारी।

मिशाची(विन्)—वि० [सं० मिशाच्य ; इनि] भीष चाहने या माँगनेवाला। पु० मिशारी।

मिशाह—वि० [सं० मिशा/अह, (योग्य होगा) ; अच्] जिसे मिशा दी जा सकती हो।

मिशाशी(विन्)—वि० [सं० मिशा/अच् (ज्ञान) ; गिनि] मिशाजीवी।

मिशित—पु० कृ० [सं०√ मिश (मिशा माँगना) ; क्त] जो मिशा के रूप में मांगा गया हो।

मिषु—पु० [सं०√ मिशु ; ड, (स्त्री० मिशुणी)] १. वह जो मिला हुई मिशा पर निर्वाह करता हो। मिशमगा या साधु। २. सत्याशी; विशेषतः बौद्ध सत्याशी। ४. गोरख-मुर्ख।

मिषुक—पु० [सं०√ मिश ; उक्त अ वा मिशु ; कन्] [स्त्री० मिशुणी] मिशु।

वि० भीष माँगनेवाला।

मिषु-जर्वा—स्त्री० [सं० प० तं०] मिशा-नृसि।

मिषु-रूप—पु० [सं० व० सं०] महादेव।

मिषु-संघ—पु० [सं० व० सं०] बौद्ध सत्यासियों का संघ।

मिषमंगा—पु० [हि० भीष ; मांगना] १. वह जा भीष माँगता हो। जिसका पेशा भीष माँगना हो। २. बालकाल में ऐसे व्यक्ति जिसके पास सदा किसी न किसी चीज का अभाव रहता हो और अपने इस अभाव की पूर्ति दूसरों से चीजे माँगकर करता हो।

मिषमगी—स्त्री० [हि० मिषमगा] १. भीष माँगने की क्रिया या भाव। २. ऐसी स्थिति या समय जिसमें (गाँव, नगर आदि में) बहुत अधिक मिशमगो भीष माँगने फिरे हों।

मिषारता—पु०—मिषारी।

मिषारिणी—स्त्री०—मिषारिन।

मिषारिन—स्त्री० हि० 'मिषारी' का स्त्री०।

मिषारी—पु० [हि० भीष ; गति (अर्थ०)] [स्त्री० मिषारिन, मिषारिणी] १. भीष माँग कर निर्वाह करनेवाला व्यक्ति। मिशमगा।

मिषारिया—स्त्री०=मीष (मिशा)।

मिषारिवारी—पु०—मिषारिणी।

मिगाना—स० मिगोना।

मिगोना—स० [सं० अम्यज] १. कोट्टे चीज पानी में डालकर या किसी चीज पर पानी डालकर उस आर्द्र, गीला या तर करना। जैसे—कपड़ा मिगोना।

सयो० कि०—डालना—देना।

२. अन्न कणों को दसलिए पानी में डालना कि वे नरम पड़कर फूल जायें। जैसे—चने या चावल मिगोना।

मिषुछा—स्त्री० मिशा।

मिषुछारी—पु०—मिषारिणी।

मिषुछुक—पु०—मिषुक।

मिषुखाना—सं० [हि० भीजना] मिगोने का काम किसी से करना।

†सं० भोजवाना।

मिषुखार—स्त्री०=मिषारिवारी।

मिषुखाना—सं० मिगोना।

†सं० भोजवाना।

मिषोना, मिषोबना—सं०—मिगोना।

मिह—वि० [सं० अमि/श (ज्ञानता), पृषो०, अ-लोप] जानकर। †वि०—अभिज्ञ।

मिहक—स्त्री० [हि० मिहकना] १. मिहकने की अवस्था, क्रिया या भाव।

२. वह बहुत हलकी घुणा जो किसी अत्रिय वस्तु या व्यक्तित्व का सामना होने पर उत्पन्न होती और उससे दूर हट जाने के लिए प्रयुक्त करती है।
विटकना—अ० [स० विद्+हटाना] कोई अत्रिय तथा घृणित वस्तु या व्यक्तित्व सामने आने पर मन का उससे दूर हट जाने में प्रयुक्त होना।

विटका—पु० [हिं० मीटा] बीमको की बीबी। बनीठा।
मिटना—पु० [दिशा०] छोटा गोल फल। जैसे—कपास का मिटना।
 अ० [हिं० मेट] १ मेट या मुलाकात होना। २. संपर्क या सवध होना। ३. अपवित्र वस्तु या व्यक्तित्व से छू जाने पर अपवित्र होना। (पवित्रम)

मिटनी—स्त्री० [हिं० मिटना] स्तन के आगे का भाग। चुँबी।
मिटनी—स०—मिटाना।
 अ० [हिं० मिटना] किसी वस्तु या व्यक्तित्व का किसी अपवित्र वस्तु या व्यक्तित्व से छू जाना और फलतः अपवित्र या अशुद्ध हो जाना।

मिटनी—पु०—मीटा।
मिटने—स्त्री० [हिं० मिटना] १. मिटने की क्रिया या भाव। २. मुठ-मेड़।

मिटनी—पु० [स० वरटा] बरें। लतीया।
 मुहा०—**मिटने** के छत्ते में हाथ डालना—जान-बूझकर बहुत बड़ा संकट अपने पीछे लाना।

मिटनी—पु० [हिं० मिटना] ढोडा। (हिं०)
मिटनी—अ० [स० मिद्?] १. परस्पर विरुद्ध विद्या में चलनेवाली चीजों का एक दूसरे से टकराना। जैसे—गाइयों, मोटरों या साइकिलों का मिटना। २. प्राणियों के सबब में एक दूसरे से पूरी शक्ति से लड़ना। जैसे—साँड़ों का मिटना। ३. व्यक्तित्व का किसी से लड़ने या विवाद करने के लिए दृढ़तापूर्वक उससे जूझना या सवाल-जवाब करना। ४. मैथुन या संयोग करना। (बाजाक)

अ० [हिं० मीटना] १. संलग्न होना। सटना। २. दरवाजे के सम्बन्ध में, दोनों पल्लों का इस प्रकार एक दूसरे पर सटना कि मार्ग बंद हो जाय। मीडा जाना।

मिटनी—स० [हिं० मिटना का स०] १. किसी को मिटने में प्रयुक्त करना। २. एक को दूसरे के साथ लगाना या सटाना। ३. एक को दूसरे से लड़ाना। आपस में लड़ाई-झगड़ा कराना। ४. किसी को किसी के साथ रति या सम्योग करने में प्रयुक्त करना। (बाजाक) ५. कोई चीज या कुछ चीजें कहीं से एक स्थान पर लगाना। एकत्र करना।

मिटनी—पु० [हिं० मिटना] १. मिटने की क्रिया या भाव। २. आपस में होनेवाला सामना। ३. दे० 'मिबत'।

मिटरिया—वि०, पु०—मीटरिया।
मिटरिया—पु० [हिं० मीटर+सल] बोहरे कपड़े में मीटरी और का पल्ला।
 बोहरे कपड़े के मीटर की परत। अस्तर।
 कि० प्र०—लगाना।

वि० [स्त्री० मिटली] अन्धर या मीटर का।
मिटली—स्त्री० [हिं० मीटर+तल] घक्की के नीचे का पाट।
मिटनी—स० [स० मीति] नममीत होना। बटना।

मिबत—स्त्री० [स० विद्+मितन्] १. बीवार। २. वह

पदार्थ या स्तर जिस पर चित्र बनाया जाय। ३. मीति। बर। ४. बंद। टुकड़ा। (हिं०)

मिबतिका—स्त्री० [स० √मिद्+ठिकन्+टाप्] १. बीवार। २. छिन्न-कली।

मिबत-चित्र—पु० [मध्य० स०] १. बीवार पर बना हुआ चित्र। २. विवेक-वतः ऐसा चित्र जो बीवार बनाने के समय गीले पत्रस्तर से बनाया गया हो। (फेकी, म्यारल)

मिबत-बौर—पु० [सुयुषा स०] बीवार में सेध लगानेवाला चौर।
मिबु—वि० [स० √मिद् (विचारण करना)। मिव्] तोड़ने-फोड़ने या सट्ट करनेवाला। (समस्त पर्वों के अन्त में)

मिबु—पु०—मेद।
मिबुक—पु० [स० मिद्+बकुन्+अक] १. तलवार। २. बख। ३. हीरा।
मिबना—अ० [स० मिद्] १. मेदा या छेदा जाना। २. किसी के अन्धर घुसना, पैरना या पीवस्त होना। ३. बायल होना।

मिबिर—पु० [स० √मिद्+किर] बक।
मिबुर—पु० [स० √मिद्+कुरच्] बख।
मिबन—वि०—मिब्र।

मिबकना—अ० [अनु०] १. (मस्मियों का) मिन मिन शब्द करना।
 मुहा०—**किसी पर मस्मियाँ मिबकना**—(क) किसी का इतना अशक्त हो जाना कि उस पर मस्मियाँ मिनमिनाना करें और वह उन्हें उड़ा न सके। मिनान असमर्थ हो जाना। (ख) किसी चीज का इतना मन्दा या मलिन होना कि उस पर मस्मियाँ आ-आकर बैठें।
 २. गन्दवी आदि के कारण मन में घृणा उत्पन्न होना।

मिबना—अ०—मीनना।
मिन-मिन—स्त्री० [अनु०] यह शब्द जो मस्मियाँ हवा में उड़ते समय करती हैं।

मिनमिनाना—स्त्री० [अनु०] मिन मिन शब्द होना।
मिनमिनानाहट—स्त्री० [अनु० मिनमिनाना+आहट (प्रत्य०)] १. मिनमिनाने की क्रिया या भाव। २. मिन मिन शब्द।

मिनसार—पु० [स० विमिशा] प्रात काल। सवेता।
मिनहीं—अ० [स० विमिशा] प्रात काल। सवेरे।

मिब्र—वि० [स० √मिद् (विचारण करना)+क्त, नत्व] १. काट या तोड़कर अलग किया हुआ। जैसे—छिन्न-मिब्र। २. जिसके विभाग किये गये हों। विभक्त। विभाजित। ३. अलग। जुदा। पृथक्। (अन्धर) ४ जो प्रयुक्त है, उससे अलग या किसी दूसरे प्रकार का। अलग तरह का। (डिफरेंट) ५. अपने मेल या वर्ग के औरों से कुछ अलग और विशेष प्रकार का (मिस्टिफ्ट) ६. कोई और। अन्य। अन्धर। दूसरा।

पु० १. किसी चीज का लट या टुकड़ा। २. गणित में, किसी पूरी इकाई का छोटा अंग, लख या टुकड़ा जो या तो बटे वाले रूप में व्यक्त किया जाता है (जैसे—१/२, १/३) या दशमलव प्रणाली से (जैसे—३.७ अर्थात् ३/१०)। (कीथान) ३. वैद्यक में, शरीर का वह अंग या अवयव जो किसी तेज धातुवाले शस्त्र से कटकर अलग हो गया हो। ४. शत। पाव। नीलम का एक द्रव्य जिसके कारण पहनुनेवाले को पति, पिता, पुत्रादि का शोक प्राप्त होना माना जाता है। ६. फूल की कली।

मिश्रक—पु० [सं० मिश्र+कन्] ऋक्ष ।
 मिश्र-कम—वि० [ब० सं०] कम-भग दोष से युक्त ।
 मिश्रत—स्त्री० [सं० मिश्र+तल्+टाप्] १. मिश्र होने की अवस्था या भाव । अलग्नाव । पार्ष्णय । २. अंतर । भेद ।
 मिश्रत्व—पु० [सं० मिश्र+त्त्वं] मिश्र होने का भाव । जुदाई ।
 मिश्रवर्ती (सिन्) —वि० [सं० मिश्र+वृत्त्वा (देखना) + गिनि] पलाशती ।
 मिश्रमत्तावलम्बी (बिन्) —पु० [सं० मिश्र-मत, कर्म० सं०, मिश्रमत-अव+लम्ब] गिनि, उप० सं०] किसी दूसरे मत या मजहब का मानने-वाला ।
 मिश्र-मनुष्या—वि० स्त्री० [सं० ब० सं०, +टाप्] (भूमि) जिसमें मिश्र मिश्र जातियों, स्वभावों और पेशों के लोग बसते हैं ।
 मिश्र-मर्याद—वि० [ब० सं०] मर्यादा, नियमन आदि से रहित ।
 मिश्र-भूत—वि० [ब० सं०] १. कर्तव्य पथ से भ्रष्ट । २. छन्द जिसमें छन्दोभग दोष हो ।
 मिश्र-भूति—वि० [ब० सं०] १. दूसरे पेशे का । २. बुरा जीवन व्यतीत करनेवाला । ३. मिश्र भाव या रुचिवाला ।
 मिश्र-दृढत्व—वि० [ब० सं०] जिसका हृदय बहुत ही दुःखी हो गया हो ।
 मिश्राना—अ० [अनु०] १. दुर्गम आदि से गिर चकराना । २. डर कर अलग या दूर रहना ।
 अ० मिश्रमिनाना ।
 अ०—मुनमुनाना ।
 मिश्राध—वि० [सं० मिश्र-अध, ब० सं०] १. मिश्र उद्देश्यवाला । २. स्पष्ट अर्थवाला ।
 मिश्राधक—वि० [म० ब० सं०, +कप्] किसी (शब्द) से मिश्र अर्थवाला (शब्द) ।
 मिश्रावर—पुं० [सं० मिश्र-उवर, ब० सं०] सौतेला मार्ग ।
 मिश्राना—अ० [सं० भीत] भयभीत होना । डरना ।
 मिश्राना—अ०—मिडना ।
 मिश्रमना—अ०—मरमना ।
 मिश्रमाना—सं०—मरमाना ।
 मिश्राध—पुं०—मिड्वा ।
 मिश्राना—पुं०—मुग ।
 मिश्रनी—स्त्री० [हिं० मील] मील जाति की स्त्री ।
 स्त्री० [देश०] एक प्रकार का थारीदार कपडा ।
 + स्त्री०—बिलनी ।
 मिश्राध—पुं० [सं० मल्लतक] १. एक प्रकार का जगली पेड़ जिसमें आम्रुन के आकार के लाल रंग के फल लगते हैं । २. उक्त वृक्ष का फल जो औषध के काम आता है ।
 मिश्र—पुं० [सं०/मिस्] लम्ब, बा०] दे० 'मील' ।
 मिश्र-तत्त्व—पुं० [मध्य० सं०] लोष ।
 मिश्र-भूषण—पुं० [सं० मिश्र+भूष् (अलङ्कृत करना) +ल्यु—अन] बुंधी ।
 मिश्र *—पुं० [फा० बिहित] स्वर्ग ।
 मिश्रतो—वि० [फा० बिहित] स्वर्गीय ।
 पुं०[?] मत्तक द्वारा पानी डोनेवाला व्यक्तित्व । सक्का ।

मिश्रक (बु) —पुं० [सं०/वी (मय) +अच्, वुष्, ह्रस्व] वैद्य ।
 मिश्राक-प्रिया—स्त्री० [सं० सं० तं०] गुदुच ।
 मिश्राभद्रा—स्त्री० [सं० सं० तं०] भद्रदत्तिका ।
 मिश्राभद्रा (सु) —स्त्री० [सं० सं० तं०] वासक । अद्रुसा ।
 मिश्रावर—पुं० [सं० सं० तं०] अश्विनीकुमार ।
 मिश्राविश्व—पुं० [सं० मिश्र+विश्व (जानना) +विश्व] चिकित्सक ।
 वैद्य ।
 मिश्रा—वि० १. अमीश्र । २. =भ्रष्ट ।
 मिश्रा—स्त्री०—विश्रा (मल) ।
 मिश्रा—पुं० [म० मिश्र] वैद्य । (हिं०)
 मिश्रा—स्त्री०—विश्रा (मल) ।
 मिश्रा—पुं० [फा० बिहित] स्वर्ग ।
 मिश्रा—पुं० [सं० भ्रुमुर] ब्राह्मण । (हिं०)
 मिश्रा—वि० व्यसनी । (हिं०)
 मिश्रा—पुं०—बिहित (स्वर्ग) ।
 मिश्रा—पुं०—दे० मिश्रो ।
 मिश्रा—स्त्री० [म० मिश्रा] कमल की माल । मैसी ।
 भीमना—अ०—भीमना ।
 भीमि—स्त्री०—भूमि (भावा मौर) ।
 भीम—स्त्री० [हिं० भीमना] भीचने की क्रिया या भाव ।
 भीमना—न० [हिं० भीचना] १. कसकर खीचना या दबाना । जैसे—किसी को बाँहों में भीचना । २. (आँसु या मूँह) इम प्रकार जोर से दबाना कि वह बहुत कुछ बूढ़ हो जाय ।
 भीमना *—अ० [हिं० भीमना] १. आर्द्र, गीला या तर होना । भीमना । २. किसी कोमल मनोभाव से अच्छी तरह मुक्त होना । गदगद या पुलकित होना । ३. स्नान करना । नहाना । ४. किसी के साथ बहुत अधिक हिल-मिल जाना । ५. किसी के अन्दर घुसना या समाना ।
 भीमि—पुं०—भीट ।
 भीमि—पुं० [हिं० भीम ?] घर । मकान । उदा०—मागोजे तज भीमिडा, ओडे जिम तिम जत ।—कविजना सुयंल ।
 भी—अध्य० [सं० अधि या हि] एक अवयव जिसका प्रयोग नीचे लिखे अर्थ या आगव्य व्यक्त करने के लिये होता है । (क) निश्चित रूप से किसी अथवा औरो के अतिरक्त, साथ या सिवा । जैसे—दोनों भाइयों के साथ एक नौकर भी गया है । (ख) अधिक । ज्यादा । जैसे—यह और भी अच्छा है । (ग) तक या पर्यंत । ली । जैसे—उसने कुछ कहा भी नहीं, और यह चला गया । (घ) कुछ अवस्थाओं से केवल जोर देने के लिए विशेषतः किसी प्रकार की अनुयुक्तता दिखायी देने पर । जैसे—आग भी कौसी बार्ते करते है (अर्थात् समझावर होकर भी विशेषण बाते करने है) ।
 स्त्री० [सं०/वी (मय होना) +किष्प] मय । डर ।
 भीडे *—वि०, पुं०—भीम ।
 भीका—स्त्री०—भीस ।
 भील—स्त्री०—सं० मिशा] १. किसी बरिद्र का दीनता दिखाते हुए उदरपूर्ति के लिए कुछ माँगना । मिशा । २. उक्त प्रकार से माँगने पर मिलनेवाली चीज ।

पद्म—मिलसंवा, भिलारी ।

कि० प्र०—देना ।—पाना ।—माँगना ।—मिलना ।

बीजन *—वि०==बीजप ।

बीजस्य *—वि०, पुं०==बीजप ।

बीजस्यका—पुं०==बीजस्यक ।

बीजना—अ० [सं० अर्थात्] १. पानी या और किसी तरल पदार्थ के संगम के कारण तर होता । आरं होना । २. तरल पदार्थ के संयोग से अन्नकणों का नरम पचना तथा फूलना । ३. दयाई होना ।

पद्म—भीगी बिलसी—बहुत ही दैन-हीन बना हुआ तथा हल-प्रस व्यक्त ।

बीजना—अ० १.—मीवना । २.—मीगना ।

बीजर—पुं० [?] सुमट । बीर । (वि०)

बीजना—अ० [हिं० मीगना] १. किसी के साथ परचना तथा हिलना-मिलना । २. दे० 'मीगना' ।

बीट—पुं० [दिश०] १. उमरी हुई या ऊँची जमीन । २. दे० 'मीटा' । ३. मन भर के बराबर एक पुरानी लौ ।

बीटना—पुं०==मीटा ।

बीटा—पुं० [दिश०] १. मिट्टी, कंकड़ों आदि का कोई प्राकृतिक ऊँचा ढेर जो प्राय कहीं कहीं समतल भूमि पर दिखाई देता है । २. पान की सेती के लिए बनाया या तैयार किया हुआ अधिक ऊँचा और चारों ओर डालुआँ सेत जो ऊपर तथा चारों ओर से छाजन तथा लताओं से ढिंरा रहता है ।

बीड—स्त्री० [हिं० मिठना] ? किसी स्थान पर एक साथ तथा बिना किसी क्रम से जुटे हुए लोगों की संज्ञा ।

कि० प्र०—लगना ।—लगाना ।

मुहा०—बीड छंटना—बीड में आये हुए लोगों का धीरे-धीरे हजर-उधर होना जिससे बीड कम हो ।

२. किसी चीज या बात की अधिकता । जैसे—काम की बीड । उठो—परी रस बीड दूध धीर नाहिण धरो ।—जल्लला जली ।

आपति । मुसीबत । संकट । उठा—(क) जुग जुग बीरे (मीड) हरी सतन की ।—मीरी । (स) तुम हरो जन की बीर (मीड) ।—मीरी ।

कि० प्र०—कटना ।—काटना ।—पड़ना ।

३. आना-बीछा । असमजस । उठा—पर धर धालक लाज न मीरा ।—मुलसी ।

बीजन—स्त्री० [हिं० बीजना] १. बीजने की क्रिया या भाव । २. मलने, लगाने या भरने की क्रिया ।

बीजना—स० [हिं० मिड़ाना] ? मिलाना । २. लगाना । ३. मलना । ४. (बदलावा) बन्द करना । ५. दे० 'मिड़ाना' ।

बीड-भड़कना—पुं०==मीड-भाड़ ।

बीड-भाड़—स्त्री० [हिं० मीड+भाड़ अनु०] एक स्थान पर होनेवाला बहुत से मनुष्यों का जमाव । जन-समूह । मीड ।

मीड—वि० [हिं० मिड़ना] स्त्री० मीड़ी संकरा । तंग । जैसे—मीड़ी गली ।

† स्त्री०==मीड़ ।

मीड़ी—स्त्री०==मिड़ी ।

स्त्री०==मीड़ ।

वि० मीड़ा की स्त्री० रूप ।

मील—पुं० हू० [सं० √भी+कल] [स्त्री० मीला] १. डरा हुआ । जिसे भय लगा हो । २. विपद् या संकट में पड़ा हुआ ।

स्त्री०—भीति (डर) ।

†स्त्री० [सं० मिति] दीवार ।

मुहा०—(किसी को) भीत में चुनना—प्राग-वद देने के लिए किसी को कहीं लडा करके उसके चारों ओर दीवार खड़ी करना । भीत में खीड़ना—अपने सामर्थ्य से बाहर कार्य करना । भीत के बिना चित्र बनाना—बिना किसी आधार के कोई काम करना या बात कहना ।

२. बिभाय करनेवाला परदा । ३. चट्टाई । ४. कपड़े का कसबा । गज । ५. खंड । टुकड़ा । ६. जगह । स्थान । ७. दरार । ८. कसर ।

मुटि । ९. अवसर । मीका ।

भीतचारी (रिनु)—वि० [सं० भीत+चर (प्राप्त होना) +चिनि, उग+सं०] डर-डर कर काम करनेवाला ।

भीतभना (भत्)—वि० [सं० ब० सं०] मन में डरा हुआ ।

भीतर—अव्य० [सं० अव्यतर] १. घेरे, भवन आदि की सीमाओं के अन्दर । जैसे—घर के भीतर जो चाहे सो करो । २. मन में । पु० १. अव्यतरका मात्रा । २. मन । ३. अंतपट्ट ।

पद्म—भीतर का बुझा—बहु उपयोगी पदार्थ जिससे कोई काम न उठा सके । अच्छी, पर किसी के काम न आ सकने योग्य चीज ।

भीतरा—वि० [हिं० भीतर] भीतर या जना-नवाने में जानेवाला । त्रिज्यों में आने जानेवाला ।

भीतरि—अव्य०—भीतर ।

भीतरिया—पुं० [हिं० भीतर] १. बल्लभ सप्रदाय के मंदिरों में बहु पुजारी जो गर्भ-गृह अर्थात् मन्दिर के भीतरी भाग में रहकर देवता की सेवा-पूजा करता हो । २. वह जो किसी का भीतरी मंद या रहस्य जानता हो ।

वि०—भीतरी ।

भीतरी—वि० [हिं० भीतर+ई (प्रत्य०)] १. भीतरवाला । अवर का । जैसे—भीतरी कमरा, भीतरी दरवाजा । २. छिपा हुआ । गुप्त । जैसे—भीतरी बात या देव । ३. धर्मित । जैसे—भीतरी दोस्त ।

भीतरी-टीग—स्त्री० [हिं० भीतरी+टीग] कुफ़ी का एक पेश । जब विपक्षी पीठ पर रहता है, तब मोका पाकर खिलाडी भीतर ही से टीग मार कर विपक्षी को गिराता है । इनी को भीतरी टीग कहते हैं ।

भीति—स्त्री० [सं० √भी+मिन्नु] ? डर । भय । २. किसी काम, चीज, बात या स्थिति को भीषण या विकट समझने की दशा में मन में उत्पन्न होनेवाला वह तीव्र मय जो प्रायः अयुक्त होने पर नी चिंतित बना रहता और उस काम, चीज या बात से मनुष्य को बहुत दूर रखता है । (फोबिया) जैसे—जल-भीति, पाप-भीति, मोहन-भीति, दोग-भीति, स्त्री-भीति आदि ।

† स्त्री०==भीत (दीवार) ।

भीतिकर—वि० [सं० भीति+क (करना) +अच्] भयकर । भयानका ।

भीतिकारी—वि०==भीतिकर ।

भीती—स्त्री० [सं०] काश्चित्थ की एक अनुचरी या मातृका का नाम ।

†स्त्री०=१.—मिति (दीवार) । २.—भीति (डर) ।

भीम*—पुं० [हिं० बिहान] सवेरा । प्रातःकाल ।

भीमना—अ० [हिं० भीमना] १ किसी चीज के छोटे छोटे अथवा या कमी का किसी दूसरी चीज के समी भीतर भागों में पहुँचकर अच्छी तरह एकर-स और सम्मिलित होना । जैसे—कपड़े में रंग भीमना । २ लाक्षणिक रूप में किसी तत्त्व का किसी के अन्दर पहुँचकर अच्छी तरह व्याप्त तथा सम्मिलित होना । जैसे—मान में किसी का अनुराग या हवा में कोई मृगुष भीमना । ३ चारों ओर से आच्छादित होना । ४ अटकना । फैलना । उदा०—भीम अंगों यन्त्री मीने ।—पूर ।

भीमा—वि० [हिं० मानना या भीजना] [स्त्री० मीनी] बहुत ही मन्द, सूक्ष्म या हल्का । जैसे—भीनी मीनी गण्य ।

भीमलता—वि० विह्वल ।

भीम—वि० [स०/मी० क्रम करना]। मक्क १ भयकर । भीषण । २ बहुत बड़ा । ३ बहुत बड़ा उरसाही तथा बहादुर ।

प० १ साहित्य का भयानक रस । २. शिष्य । ३. विष्णु । ४ अलंकार । ५ कुली के एक पुत्र जो युधिष्ठिर से छोटे तथा अन्य पात्रों से बड़े थे और जो गदा धारण करते थे । भीमसेन । बुकोदर ।

पद्य—भीम का हाथी—भीमसेन का फेंका हुआ हाथी । (कहा जाता है कि एक बार भीमसेन ने सात हाथी आकाश में फेंक दिए थे जो आज तक बादामदल में घूम रहे हैं, लोटकर पृथ्वी पर नहीं आए । इसका प्रयोग ऐंसे पदार्थों या व्यक्तियों के लिए होता है जो एक-बार जाकर फिर न लौटें ।)

६ चित्रों के एक राजा जिन्हें दमन नामक ऋषि के वर से दम, दात और दमन नामक तीन पुत्र तथा दम्पती नाम की कन्या हुई थी । ७ महर्षि विद्वामित्र के पुत्रे-तुल्य जो पुरुगवा के पीत्र थे । ८ समीत में काफी ठाठ का एक गण ।

भीमक—पुं० [म०] पुराणानुसार एक प्रकार के गण जो पार्वती के क्रोध से उत्पन्न हुए थे ।

भीमकर्मा (मंनु)—वि० [ब० सं०] बहुत बड़ा पराक्रमी ।

भीमता—स्त्री० [स०/मी० तल् टाप्] भीम या भयानक होने की अवस्था या भाव । भयकगता । डरगवनागण ।

भीम-तिथि—स्त्री० [मध्य० सं०] भीमसेनी एकादशी ।

भीम-दर्शना—वि० [ब० सं०] [स्त्री० भीम-दर्शना] जो देखने में भयानक हो । डरावनी आकृतिवाला ।

भीम-द्रावणी—स्त्री० [मध्य० सं०] माघ शुक्ला द्वादशी ।

भीम-नाथ—वि० [ब० सं०] डरावनी आवाज करनेवाला ।

पुं० शेर । मित्र ।

भीम-वनाशी—स्त्री० [म०] सूर्यो जाति की एक सकर रागिनी ।

भीम-बल—पुं० [ब० सं०] १ एक प्रकार की अग्नि । २ वृतराष्ट्र का एक पुत्र ।

भीम-मल्ल—पुं० [ब० सं०] एक प्रकार का बाण । (रामायण)

भीम-रथ—पुं० [ब० सं०] १ पुराणानुसार एक असुर जिसे विष्णु ने अपने कूर्म अवतार में धारा था । २ वृतराष्ट्र का एक पुत्र ।

भीमरथी—स्त्री० [म०] १ सख्य पर्वत में निकली हुई एक नदी । (पुराण)

स्त्री० ७७वें वर्ष के सातवें मास की सातवीं शत की समाप्ति पर होने-

वाली मनुष्य की शारीरिक अवस्था जो असह्य तथा बहुत कठिन होती है । (वेदक)

वि० ऐसा बुढ़ा जो ७०-८० वर्षों का हो चुका हो । बहुत बुढ़ा (व्यक्ति) ।

भीमरात्री—स्त्री० भीमा (नदी) ।

भीमराज—पुं० [स० भृगराज] काले रंग की एक प्रकार की चिड़िया जिसकी टांग छोटी और पंजे बड़े होते हैं और इनकी घुम में केवल १० पंज होते हैं । यह अनेक पशुओं तथा मत्त्यों की बाली अच्छी तरह बोल सकती है ।

भीमरिका—स्त्री० [स०] सत्यमामा के गर्भ में उत्पन्न श्री कृष्ण की एक कन्या ।

भीमसेन—पुं० [म०] युधिष्ठिर के छोटे भाई भीम । बुधोदर (दे० 'मीम') ।

भीमसेनी—वि० [हिं० भीमसेन] भीमसेन नवमी । भीमसेन का । जैसे—भीमसेनी एकादशी ।

पुं० कपूर का बरस नामक प्रकार का मёд ।

भीमसेनी एकादशी—स्त्री० [हिं० भीमसेनी महादशी] १ ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी । निजला एकादशी । २ कानिज शुक्ला एकादशी । ३. माघ शुक्ला एकादशी ।

भीमसेना कपूर—पुं० [हिं०] एक विशेष प्रकार का कपूर जो बानियो, सुभात्रा आदि द्रवियों में होनेवाले एक प्रकार के बुढ़ा के निर्वास से तैयार किया जाता है । बरस ।

भीमा—स्त्री० [स० मीम+टाप्] १ रोचन नाम का गन्धद्रव्य । २ कोडा या चाबुक । ३ घुमों । ४ दक्षिणी भारत की एक नदी जो पश्चिमी घाट से निकलकर कृष्णा नदी में मिलता है । ५. ४० हाथ लम्बी, २० हाथ चौड़ी और २९ हाथ ऊँची नाव । (युक्तिवत्पत्तरह)

वि० मं० 'मीम' का स्त्री० ।

भीमान् (मत्)—वि० [स० मी+मनुप्] भयानक । भयकर ।

भीमावरी—स्त्री० [स० मीम+उदर, ब० म०, डीप्] हुमा ।

भीरा—स्त्री०—मीटा ।

वि०—मीठ ।

भीरना*—अ० [स० मी या हिं० मीठ] भयभीत होना । डरना ।

भीरा—पुं० [वेद०] एक प्रकार का वृक्ष जो मध्य भारत तथा दक्षिण-भारत में होता है । इसकी लकड़ियों में शहतीर बनते हैं और इससे से गीद, रग और तेल निकलता है ।

वि० मीठ (कायर) ।

स्त्री०—मीठा ।

वि०—मीठा ।

भीरी*—स्त्री० [देवा०] अरुण का टाल या राशि ।

भीष—वि० [स० मी+कृ] १ जिसे भय हुआ हो । डरा हुआ । २. कायर । डरपोक ।

पुं० [स०] १ अंगाल । गीदड़ । २. बाघ । ३. एक प्रकार की ईंख ।

स्त्री० [सं०] १ शनावरी । २ कटकगी । भटकटैया । ३. बकरी ।

४. छाया ।

बीक—पु० [स० बीह+कन्] १. वन। जंगल। २. कड़ी। ३. एक प्रकार की ईस। ४. उल्लू।
वि० बीह। कायर। डरपोक।
भीषता—स्त्री० [सं० भीष+तल्+टाप्] १. भीष होने की अवस्था या भाव। कायरता। झुजविली। २. डर। भय।
भीषताई+—स्त्री०=भीषता।
भीष-पत्री—स्त्री० [सं० ब० सं०, ङीप्] शतमूली।
भीष-भूष—पु० [सं० ब० सं०] हिल्ले।
भीष—स्त्री० [सं० भीह] स्त्री। (हिं०)
वि०=भीष।
भीरे—अव्य० [हिं० मित्रना] पास। समीप।
भील—पुं० [स० मिल्ल] [स्त्री० भीलनी] १. विषय की पहाड़ियों तथा खानदेव, मेवाड़, मालवा और दक्षिण के जंगलों में रहनेवाली एक वन्य जाति। २. उन्नत जाति का पुत्र।
भील [?] वह भिड़ी जो ताल के सूखने पर निकलती है तथा जिस पर पपड़ी जमी होती है।
भील-भूषण—स्त्री० [सं० मिल्लभूषण] गुजा या घुंघरी जिसकी मालाएँ भील लोग पहनते हैं।
भीली—वि० [हिं० भील] १. भील-सम्बन्धी। २. भीलों में होनेवाला। स्त्री० भीली को बोली।
भीलक—वि० [सं० भी। क्लृप्] भीर। डरपोक।
भीर्ष+—वि०=भीम।
पु०=भीम (पाइव)।
भीर्षे सेव+—पु०=भीमसेन।
भीष+—पु०=भीमसेन।
वि०=भीम।
भीषा+—स्त्री० भील।
भीषक—वि० [सं०√भी (भय करना)। गिष्, घृक्,+ल्युल्-अक] भीषण।
भीषज—पु०=मेघज।
भीषण—वि० [सं०√भी+गिष्, घृक्,+ल्यु-अन] [भाव० भीषणता] १. जो देखने में बहुत भयानक हो। डरावना। २. बहुत ही उग्र तथा दुष्ट स्वभाववाला। ३. दुष्परिणाम के रूप में होनेवाला। विकट। बहुत ही बुरा। जैसे—भीषण कांड।
पु० १. साहित्य का भयानक रस। २. कुबह। ३. कन्नूर। ४. एक प्रकार का ताल या ताड़। ५. शल्लकी। सरई। ६. ब्रह्मा। शिव।
भीषणता—स्त्री० [सं० भीषण+तल्+टाप्] भीषण होने की अवस्था या भाव।
भीषणा+—वि०=भीषण।
भीषणा+—पु०=भीषण।
भीषा—स्त्री० [सं०√भी। गिष्, घृक्,+अह्+टाप्] १. भयभीत स्त्री। २. डर। भय।
भीषिका—स्त्री० [सं० विभीषिका] १. ऐसी स्थिति जिसमें बहुत से लोग भयभीत हों। २. बहुत बड़े अनिष्ट की आशंका जिसके फलस्वरूप लोग विचलित होते तथा हृदय-उत्तर भागने लगते हैं। आतंक। (वैकिन्)

भीष्म—वि० [सं०√भी+भक्, घृक्-आगम] डरावना। भयंकर। भीषण। पु० १. शिव। २. गंगा के गर्भ से उत्पन्न राजा शापतनु का आठवाँ और सबसे छोटा पुत्र जो 'गोवर्ष' और 'वैश्वत' भी कहा जाता है। ३. साहित्य का भयानक रस। ४. राक्षस। ५. दे० 'भीष्मक'।
भीष्मक—पु० [सं० भीष्म+क] चिदमं देश के एक राजा जो दक्षिणपी के पिता थे।
भीष्म-संभक्त—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] कातिक शुक्ला एकादशी से पुणिमा तक के पौनव दिन।
भीष्म-पितामह+—पुं० [सं० कर्म० सं०] राजा शापतनु के पुत्र। भीष्म।
भीष्म-मणि+—पुं० [सं० कर्म० सं०] एक तरह का सफेद पत्थर।
भीष्म-रत्न+—पुं०=भीष्म मणि।
भीष्म-भू—स्त्री० [सं० व० त०] भीष्म की माता, गंगा।
भीष्माष्टमी—स्त्री० [सं० भीष्म-अष्टमी, मध्य० सं०] माघ शुक्ला अष्टमी। इस तिथि को भीष्म में प्राण त्यागे थे।
भीसक—वि०, पु०=भीष्म।
भूह+—स्त्री० [सं० भूमि] पृथ्वी। भूमि।
भूहा+—भूह लाना—झुपाना। उठा—कुडल गहूँ सीस भूह लाना।—जायसी।
भूह आँवला+—पुं० [सं० भूम्यामलक] एक प्रकार की घास जो बरसात में ठंडे स्थान में होती और ओषधि के काम में आती है। ब्रह्मजाँबला।
भूहकांडा+—पुं० [हिं० भूह+क] समुद्र या जलाशय के तट पर होनेवाली एक तरह की घास।
भूहचाला+—पुं०=भूचाल (भूकंप)।
भूहचोल+—पुं० [हिं० भूह+चोलना] भूकंप। भूचाल।
भूह-तरवार+—पुं० [हिं० भूह+सं० तवर] सनाय की जाति का एक पेड़।
भूहवथा+—पुं० [हिं० भूह+वथ] १. वह कर जो भूमि पर बिता जलाने के बदले में भूतक के संबंधियों से लिया जाता है। मसान कर। २. वह कर जो भूमि का मालिक किसी व्यवसायी से व्यवसाय करने के बदले में लेता है।
भूहधरा+—पुं०=भूमिहार।
भूहधरा+—पुं० [हिं० भूह+धरा] १. आर्वाँ लगाने की वह रीति या उग जिसमें बिना गर्इहा खोदे ही भूमि पर बदान आवि रत्नकर आय सुलगा देते हैं। २. दे० भूहहरा।
भूहनास+—पुं० [सं० भूम्यास] १. किसी वस्तु के एक छोर को भूमि में इस प्रकार दबाकर जमाना कि उसका कुछ अंश पृथ्वी के भीतर गड़ जाय। २. किसी चीज का वह अंग जो इस प्रकार से जमीन में गड़ या बँस जाय। ३. किवाँकों की वह सिकतनी जो नीचे की ओर पत्थर के गर्इहे में बैठती है। ४. प्रायः खेतों में होनेवाली एक प्रकार की वनस्पति जिसकी जड़े नहीं होती। ५. अजार। ६. दे० 'भूनास'।
भूहनासी+—पुं०=भूनासी।
भूहकोड़+—पुं० [हिं० भूह+कोड़ना] बरसात के दिनों में प्रायः दीमकों की बँबी के पास निकलनेवाला एक तरह का कुहुरमुस्ता। गरनुजा।
भूहहरा+—पुं० [हिं० भूह+हर] १. वह स्थान जो भूमि के नीचे खोदकर बनाया गया हो। २. जमाना की कुर्सी के नीचे बना हुआ कमर। तहखाना। ३. दे० 'भूहधरा'।

मुंहहार—पुं० [सं मुवि+हार] १ मिरजापुर जिले के दक्षिण भाग में रहनेवाली एक अनाथ जालि । २. दे० 'मुंहहार'।

मुंका—स्त्री० [हिं० मुंका] मुंके या मीके की अवस्था, माव या शब्द ।

मुंका—स० [हिं० मुंका] किसी को मुंके में प्रवृत्त करना ।

मुंगाल—पुं० [अनु०] तुर्की या मोंगल जिसके द्वारा नौ-सेना का अभ्युत्थ बोधना करता है । (खान०)

मुंजन—पुं० [सं०] भोजन करने की क्रिया । खाना ।

मुंजना—अ०—मुनना ।

मुंजवा—पुं० [हिं० मुजवा] दे० 'मड़मुंजा' ।

वि०—मुजिया ।

मुंजा—पुं०—मड़-मुंजा ।

मुंजाना—पुं० [हिं० मुंजाना+ओना (प्रत्य०)] १. मुंजा या मुंजा हुआ अन्न । २. वह अन्न या पारिवर्त्मिक जो मुंजा अन्न मुंके के बदले में लेता है ।

† सं०—मुनना ।

† पुं०—मुनाई (दे०) ।

मुंटा—पुं०—मुट्टा ।

मुंठली—स्त्री० [हिं० मुंटा या मुडा] एक प्रकार का कीड़ा जिसके धारीर पर कँटीले और जहरीले बाल होते हैं । पिल्ला ।

मुंथा—वि० [सं० पंथ का अनु०] [स्त्री० मुंठी] १. विना सीग का । जिसके सीग न हो। (पशु) २. दुष्ट । पाजी । बदमास ।

वि० [स्त्री० मुंठी] भद्दा । मोडा। उदा०—पासि बैठि सोमै नही, साधि रमाई मुंथि।—गोरखनाथ ।

मुंठी—स्त्री० [हिं० मुडा] एक प्रकार की छोटी मछली जिसे मुंछ नहीं होती । देहातियों की धारणा है कि इसके खाने से खानेवालों को मुंछ नहीं निकलती ।

मुंथम—पुं० [सं० मुजम] [स्त्री० मुजमिन] साँप । सर्प ।

मुंथम—पुं०—मुथम (साँप) ।

मुंथा—वि०, पुं०—मुंथा ।

† स्त्री०—मुंथि ।

मुंथना—पुं०—मुंथन ।

मुंथना—अ०—मुंथना ।

मुंथा—पुं०—मुंथा ।

† स्त्री०—मुंथा ।

मुंथार—पुं०—मुंथाल (मुपाल) ।

मुंथाल—पुं०—मुपाल (राजा) ।

मुंथ—स्त्री०—मुंथि ।

मुंथ—अव्य० [हिं० मुंथ] जमीन या भूमि पर ।

मुंथ—स्त्री०—मुंथि ।

मुंथ—स्त्री०—मुंथा । उदा०—हुँ भिन मरज होथ जरि मुंथि।—जायसी ।

† स्त्री० [हिं० मुंथा] एक प्रकार का कीड़ा जिसके धारीर पर लंबे-लंबे बाल होते हैं, तथा जिसका स्पर्श खुजली उत्पन्न करता है ।

मुंथ—पुं० [सं० मुज्] १. भोजन । आहार । २. अन्न । आग ।

† स्त्री०—मुंथ ।

मुंकी—स्त्री० [?] बरसात के दिनों में प्रायः सड़ी हुई बीजों पर जमने-वाली एक प्रकार की सफेद रंग की काई । फर्फूदी ।

फि० प्र०—लगना ।

मुंकी—स्त्री०—मुंकीराप्ये ।

मुंकी—स्त्री० [हिं० मुंकी+गथ] किसी चीज पर मुंकी जमने से निकलनेवाली गथ ।

मुंकी—स०—मुंकीना ।

मुंखड़—वि० [हिं० मूख+अड (प्रत्य०)] १ जिसे विशेष तेज मूख लगी हो । २ जिसकी मूख मिटती न हो। जो प्रायः कुछ न कुछ खाता रहता या खाना चाहता हो। ३. लालची । लोभू । ४. कंगाल । दरिद्र ।

मुंख—पुं० क० [सं०√मूख (खाना)+कृत, कुल्व] १ जो खाना गया हो। भक्षित। २. जिसका भोग किया गया हो। ३. (अधिकार-पत्र) जिसे मूना लिया गया हो। (कैरव)

मुंख-भोग—वि० [ब० सं०] जिसने भोग किया हो।

मुंख-भोगी—वि० [सं० मुंख-भोग] जिसे किसी बुरे काम या बात का भूषित परिणाम या फल भोगना पडा हो।

मुंख-मान—पुं० [सं० कर्म० सं०] कर्म का वह फल या भोग जो भोगा जाता हो या भोगा जाने को हो।

मुंख-मुद्धि—स्त्री० [प० सं०] साँपे दृष्ट पत्थारों का पेट में फूलना ।

मुंख-नेथ—वि० [ब० सं०] खाने से बचा हुआ। उच्छिष्ट । जूटा ।

मुंखि—स्त्री० [सं०√मूख (खाना)+कित्त, कुल्व] १ भोजन । आहार। २. किसी पदार्थ का किया जानेवाला भोग । ३. लौकिक सुख । ४. ज्योतिष में ग्रहों का किसी राशि में अवस्थित होना । ५. वह स्थिति जिसमें कोई किसी पदार्थ पर अपना अधिकार रखकर उनका भोग करता है। कब्जा । दखल । (पत्रेयान)

मुंखि-नाथ—पुं० [प० सं०] ऐसे बरतन जिनमें रखकर बीजें खाई जाती हैं ।

मुंखि-प्रथ—वि० [सं० मुंखि+प्र+वा (देना)+क] [स्त्री० मुंखि-प्रदा] भोग देनेवाला । भोगदाता । पुं० मुंथि ।

मुंखोच्छिष्ट—वि० [मुंख-उच्छिष्ट, कर्म० सं०] किसी के खाने-पीने के बाद बचा हुआ । जूटने के रूप में होनेवाला । पुं० उच्छिष्ट । जूटन ।

मुंखोच्छिष्ट—वि०, पुं० [मुंख-उच्छिष्ट, कर्म० सं०]—मुंखोच्छिष्ट ।

मुंखमरा—वि० [हिं० मूख+मरना] १. जो मूख मरता हो । २. जो खाने पीने के लिए मरा जाता हो ।

मुंखमरी—स्त्री० [हिं० मूख+मरना] मूखों विशेषत आत्मावाम के कारण मूखों मरने की अवस्था या माव । (स्तारवेदान)

मुंखमुथा—वि०—मुंखमरा ।

मुंखाना—अ० [हिं० मूख+आना (प्रत्य०)] मूखा होना । क्षुधित होना । सं० किसी को कुछ समय तक मूखा रखना ।

मुंखाना—वि० [हिं० मूख+आना (प्रत्य०)] जिसे मूख लगी हो । मूखा ।

भुगत*—स्त्री०, [हि० भुगतना] १. भुगतने की अवस्था या भाव ।
२. दे० 'भुक्ति' ।

भुगताना—स० [सं० भुक्ति] १. भोग करना। भोगना। जैसे—बंद
भुगताना, सजा भुगताना । २. कार्य, व्यव्य आदि का मार अपने ऊपर
केना। जैसे—व्याहृ का खरप हूम भुगतते ।

ब० १. समाप्त होना। पूरा होना।

संयो० कि०—लेना।

२. व्यतीत होना । ३. म्हुण, देन आदि का पटना ।

भुगतान—सु० [हि० भुगतना] १. भुगतने की अवस्था, किया या
भाव । २. भुगताने की अवस्था, किया या भाव । ३. देन, मूल्य आदि
भुक्ताने की अवस्था, किया या भाव ।

भुगतान-दुष्ठा—स्त्री० [हि०+सं०] व्यापारिक बस्तुएँ, पूँजी, दूध,
बीना-मूक, जहाज का किराया जिनके संबंध में एक देश को दूसरे
देशों से कुछ पानना हो या दूसरे देशों को देना हो। (बैलेस आक
मेंसे)

भुगताना—सं० [हि० भुगतना का सं०] १. कोई काम पूरा या संपादन
करना । २. किसी को सुख-दुख आदि का भोग करने में प्रवृत्त करना।
३. देन आदि भुक्ताना। भुगतान करना । ३. समय बिताना या
लगाना। व्यतीत करना। जैसे—जरा-से काम में तुमने सारा दिन
भुगता दिया।

भुगति*—स्त्री०-भुक्ति ।

भुगता—सं० [हि० भोगना का प्रे० रूप] भोग करना। भोगवाना।

भुगुति*—स्त्री० [सं० भुक्ति] १. भोजन। उदा०—भुगुति न मिटै
जो लहि बिधि राखा—जायसी। २. मिला। उदा०—तब लजि
भुगुति न लै सकत, राखन सिय, एक साथ—जायसी। ३. दे० 'भुक्ति' ।

भुगा*—सु० [?] कूटकर और खाँडे या बीनी मिलाकर तैयार किया
हुआ चूर्ण।

वि० बेवकूफ। भुज* ।

भुज—वि० [सं०/भुज (देहा होना)+क, कुल्य, नल्य] [स्त्री०
भुजा] १. देहा। बक्र। २. बीमार। रोगी।

भुजनेत्र—सु० [सं० ब०सं०] एक प्रकार का सजिपात जिसमें आँसू
देढ़ी हो जाती हैं।

भुजब—वि० [हि० भुज+बड़ना] बहुत बड़ा गँवार और भुज* ।
भुजब* ।

जो गँवार और भुज* होने की अवस्था या भाव। उदा०—लाख
एक पिंगल पड़े, एक भुजब लागी रहे। (कहा०)

भुजबड़—वि० [हि० भुज+बड़ना] बहुत बड़ा बेवकूफ। निरा भुज* ।

भुजबं—सु० [सं० भुज/गम् (जाना)+लघ्, मुम्] १. सप।
२. हठ-योग में, कुबलिनी स्त्री माथिन का पति या स्वामी । ३.
स्त्री का उपपति। मार। ४. प्राचीन भारत में राजा का एक प्रकार का
अनुचर। ५. सीसा नामक धातु।

†वि० लपट।

भुजबं-बासिनी—स्त्री० [सं० व० तं०] काकोली।

भुजबं-बननी—स्त्री० [सं० व० तं०] साजूकी कंद।

भुजबं-बर्नी—स्त्री० [सं० व० सं०, +कीम्] नामक नाम।

भुजबं-प्रवाल—सु० [सं० व० सं०] एक प्रकार का बर्णिक छंद जिसके
प्रत्येक चरण में चार चार वयण होते हैं।

भुजबंभुज—सु० [सं० भुजबं/भुज (जाना)+भिवप्] १. गवड़ ।
२. मयूर। मोर।

भुजबं-भौबी (भिन)—सु० [सं० भुजबं/भुज (जाना)+भिन, उप०
सं०] [स्त्री० भुजबं-भोजिनी] २. गवड़। २. मयूर। मोर।
वि० सोंप को झा जानेवाला।

भुजबंभय—सु० [सं० भुज्/गम् (जाना)+लघ्, मुम्] १. सप। २.
सीसा नामक धातु।

भुजबं-भस्ता—स्त्री० [मध्य० सं०] पान की बेल।

भुजबं-भामु—सु० [व० सं०] गवड़।

भुजबा—सु० [सं० भुजबं] १. कोड़े-मकोड़े खानेवाला काले रंग का
एक प्रकार का पशु। भुजैटा। कौतवाल। २. दे० 'भुजबं' ।

भुजबाभ्य—सु० [सं० भुजबं-आभ्य, व० सं०] नामकेसर।

भुजबी—स्त्री० [सं० भुजबं+कीम्] १. सपिन। नापिन। २. एक
प्रकार का बर्णिक भुजि का नाम जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः तीन
वयण एक लघ् और एक गुरु होता है।

भुजबैह—सु० [सं० भुजबं-बैह, व० सं०] शेषनाम।

भुजबैश—सु० [सं० भुजबं-ईश, व० सं०] १. बासुकि। २. शेषनाम।
३. पिंगल भुजि का एक नाम। ४. पंचजलि ऋषि का एक नाम।

भुज—सु० [सं०/भुज (जाना)+क] १. बाहु। बाँह। भुजा।

भुजा—सु० भुज भर भैरवा या भिलना—आलिन करना। गले लगाना।
उदा०—उन्मुक्त उर अस्तित्व खो क्यों तू उसे भुज भर मिली।—
महादेवी। भुज में भरना—आलिन करना। गले लगाना।

२. हाथ। ३. दोनों हाथों के कारण, दो की संख्या का सूचक शब्द।
४. हाथी का सूँह। ५. भुज की शासी। शाखा। ६. किनारा। सिरा।
७. केरा। लपेट। ८. ग्यामिति या रेखागणित में किसी क्षेत्र का कोई
किनारा या सिरा अथवा उस पर बिधी हुई रेखा। (साइड) जैसे—
चतुर्भुज, त्रिभुज आदि। ९. त्रिभुज का नीचेवाला किनारा या सिरा।

आधार। १०. छाया का मूल आधार। ११. रेखा गणित में, सम-
कोणों का पुरक कोण। १२. ज्योतिष में तीन राशियों के अवर्णित
ग्रहों की स्थिति या लग्नो का बहु अंश जो तीन राशि से कम हो।

भुजब्रह्मा*—सु० [सं० भुजबं] भुजगा नामक पशु।

भुज-कोटर—सु० [सं० व० सं०] बगल। कंधा।

भुजब—सु० [सं० भुज/गम्+ड] १. सप। २. अस्त्रेया नक्षत्र।
३. सीसा नामक धातु।

भुजबं-भति—सु० [सं० व० सं०] बासुकि।

भुजबांतक—सु० [सं० भुजबं-अंतक, व० सं०] १. गवड़। २. मोर।
३. नेबला।

भुजबाभल—सु० [सं० भुजबं/अल् (भोजन करना)+ल्यट—अजं
भुजबांतक। (दे०)

भुजबैह—सु० [सं० भुजबं-बैह, व० सं०] शेषनाम। बासुकि।

भुजबैश, भुजबैश्वर—सु० [सं० भुजबं-ईश, भुजबं-ईश्वर, व० सं०]
भुजगेज* बासुकि।

भुजक्या—स्त्री० [सं० व० सं०] त्रिकोणमिति में भुज की व्या।

मुञ्ज-वृक्ष—पुं० [सं० मध्य० सं०] बाहुदृढ।
मुञ्जपातः—पुं० वै० 'मुञ्जपत्र'।
मुञ्ज-वास—पुं० [सं० मध्य० सं०] चित्ती के गले में हाथ डालना। गलबन्दीही।
मुञ्ज-पत्रिमुञ्ज—पुं० [सं० इ० सं०] रेखा-गणित में, सरल क्षेत्र की समा-मांतर या आमने-सामने की मुजाएँ।
मुञ्ज-वैध—पुं० -मुञ्जवध।
मुञ्जवध—पुं० [सं० पुं० तं०] १. मुजाओं से किमी को बंधने की क्रिया या माव। २. अगद या बाजूबद नाम का (बाँह पर पहनने का) गहना।
मुञ्ज-बल—पुं० [ष० तं०] १. बाँहो अर्थात् शरीर में होनेवाला बल। शारीरिक शक्ति। २. शालिहोत्र के अनुसार एक प्रकार की भौरी जो घोड़े के अगले पैर में ऊपर की ओर होती है।
मुञ्जबाध—पुं० [हिं० अर्थात् गले में हाथ डालकर किया जाने-वाला आत्मनस] गलबन्दीही।
मुञ्जगाम—पुं० [सं० ष० तं०] रेखा-गणित में उन दो रेखाओं में से प्रत्येक रेखा, जो किसी क्षेत्र पर कोई विन्दु निश्चित करने के लिए खींची जाती है। (आडिमेन्ट)
मुञ्ज-मूल—पुं० [सं० ष० तं०] १. कम्हा, जहाँ से मुजा का आरंभ होता है। २. काल।
मुञ्जरी—स्त्री० [?] १. गेहूँ की वे वाले जो स्थिराँ पार्थिक अवसरों (जैसे—नागपंचमी, हस्तात्मिका तीज) पर टोकरियों में रखकर उगाती और नियत समय पर किमी जलाशय या नदी में प्रवाहित करती हैं। जर्ई। २. उक्त को प्रवाह के लिए ले जाने के समय माये जानेवाले विशिष्ट प्रकार के गीत।
मुञ्जपा—पुं० [हिं० मुनपा] मरुमुजा।
वि० मुँजा हुआ।
मुञ्जबाई—स्त्री० [हिं० मुञ्जबाना] मुनबाने की क्रिया, माव या पारि-श्रमिक। मुनाई।
मुञ्ज-सिन्धर—पुं० [सं० ष० तं०] कथा।
मुञ्जतर—पुं० [ष० मुञ्ज-अतर, ष० तं०] १. दोनों बाँहो के बीच का स्थान, अर्थात् क्रीड़ा। मोहा। २. छाती। बस। ३. दो मुजाओं के बीच का अंतर या दूरी।
मुजा—स्त्री० [सं० मुज+टाप] बाँह। बाहु।
मुहा—मुजा उठा या टेककर (कहना)—प्रण अथवा प्रतिज्ञा करने हुए (कहना)।
मुजा-मंट—पुं० [ष० तं०] हाथ की उँगली का नाखून।
मुजाप—पुं० [सं० मुजा-अप, ष० तं०] हाथ।
मुजा-बल—पुं० [ष० तं०] कर रूपी पल्लव।
मुजाना—स०=मुनाना।
मुजा-मध्य—पुं० [ष० तं०] कीहनी।
मुजा-मूल—पुं० [ष० तं०] कंधे का वह अगला भाग जहाँ से हाथ आरंभ होता है। बाहु-मूल।
मुजायन—पुं० [सं०] १. मुजाओं के रूप में अपने कुछ अंग शरीर के बाहर निकालना। २. दे० 'विकिरण'।

मुजाली—स्त्री० [हिं० मुज+जाली (प्रत्य०)] १. एक प्रकार की बड़ी टेढ़ी छुरी। २. छोटी बरछी।
मुजिया—वि० [हिं० मुँजना = मुनना] जो मुनकर तैयार किया या बनाया गया हो। जैसे—मुजिया चावल, मुजिया तरकारी।
 पुं० १. वह चावल जो धान को उबालकर तैयार किया गया हो।
 २. वह तरकारी जो मूची ही मुनकर बनाई जाती है और जिसमें रस या शोरका नहीं होता। सूची तरकारी।
मुजिय—पुं० [सं०+मुज (भोगना)+कियन्] [स्त्री० मुजिय्या] दास। सेवक।
मुजिय्या—स्त्री० [सं० मुजिय+टाप] १. दामी। २. गणिका। रबी। वेप्या।
मुजेना—पुं० [हिं० मुजना] मुना हुआ दाना। चबना।
मुजेल—पुं० [सं० मजप] मुजगा (पक्षी)।
मुजीना—पुं० [हिं० मुजना] १. मुना हुआ अन्न। मुना। मुजा।
 २. वह अन्न या पारिश्रमिक जो मुँजा अन्न भूजने के बदले में लेता है।
 ३. बड़े सिक्के मुनाने के लिए बदले में दिया जानेवाला पत्र। मुनाई।
मुटिया—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की घाटी जो डोरिये और चार-खाने के बूनने में चानी जाती है। (मुलाहे)
 पुं०—मोट या मोगिया।
मुट्टा—पुं० [सं० मुट्ट, प्रा० मुट्टे] १. मक्के की हरी बाल जिसे मुन-कर खाते हैं। २. ज्वार-बाजरे आदि की हरी बाल।
मुहा—मुहा सा उडना या उड जाना—एक साधारण अटक में ही कट-कर अलग हो जाना या कटकर दूर जा पडना। जैसे—तलवार के एक ही वार से उसका तिर मुट्टा-सा उड गया।
 ३. मुच्छ।
मुजार—पुं० [हिं० मुज+टो] वह छोटा या ऐसा ही और कोई पशु जो ऐसे प्रदेश में उत्पन्न हुआ हो जहाँ की भूमि बलुई या देतीली हो।
मुजौरा—पुं० [हिं० मुज+और] धाड़ो की एक जाति।
मुजली—स्त्री० [देश०] एक प्रकार का फूल और उसका पौधा।
मुजिला—पुं० दे० 'मुजा'।
मुजलाना—अ० [हिं० मुजलाना-मुजला] १. दास्ता मुलकर इधर-उधर हो जाना। २. कोई चीज मुजने के कारण गुम हो जाना।
मुज—पुं० [अनु०] मक्की आदि के बोलने का शब्द। अव्यक्त मुजार का शब्द।
मुहा—मुनमुन करना—कुड़कर अस्पष्ट स्वर में कई तरह की बातें कहना।
मुनगा—पुं० [अनु०] [स्त्री० मुनगी] १. एक प्रकार का छोटा उबनेवाला कीड़ा जो प्रायः फूलों और फलों में रहता है और विशिष्ट श्वेत रंग में प्रायः उड़ता रहता है। २. पतवा। फतिना। ३. बहुत ही तुच्छ पदार्थ या व्यक्तित्व।
मुनगी—स्त्री० [हिं० मुनगा] एक प्रकार का छोटा कीड़ा जो ईल के पीछे की हानि पहुँचाता है।
मुनघट्टी—स्त्री० [?] एक प्रकार की मछली।
मुनगा—अ० [हिं० मुनाना का अ०] १. आग की गरमी से मुना जाना।

२. तोष, बन्धक आदि की मार से मारा जाना। ३. नोट, रुपए आदि का छोटे छोटे सिक्कों में परिवर्तित होना।

मूनध्वनाना—अ० [अनु०] १. मूनमून शब्द होना।

स० १. मूनमून शब्द करना। २. कुत्कर बहुत घीरे घीरे या अस्पष्ट रूप में कई तरह की बातें कहना।

मूनबाई—स्त्री० [हि० मूनवाना] १. मूनवाने की क्रिया या भाव। २. मूनवाने के बदले में दी जानेवाली रकम। नाश।

मूनबाई—स्त्री०—मूनबाई।

मूनना—स० [हि० मूनना का प्रे०] १. मूनने का काम किसी दूसरे से कराना। २. किसी को कुछ मूनने में प्रवृत्त करना। ३. नोट रुपए आदि को छोटे सिक्कों में बदलवाना।

†अ०—मूनना (मूनना आना)।

मूनया—पुं०—मूनया।

मूनया—पुं०—[हि० मूनयास] १. दे० 'मूनयास'। २. पुरुष की इंद्रिय। प्रिया। (बाजाक)

मूनयासी—पुं० [हि० मूनयास] एक प्रकार का बड़ा देसी ताला जो प्रायः ठूकानों आदि में बन्द किया जाता है। इसमें लोहे का एक छोटा छड़ होता है जो ताला बन्द करने पर जमीन में किये हुए छेद में बैठ जाता है।

मूबि*—स्त्री०—मूमि।

मूबियाँ—पुं०—मूमियाँ (१. जमींदार, २. देवता)।

मूवंग—पुं०—मूवंग (सोप)।

मूरकना—अ० [स० मूरण] १. सखकर मूरमूर हो जाना। २. विस्मृत होना। मूलना।

†स०—मूरकना (छिड़कना)।

मूरकस—पुं० [हि० मूरकना] १. किसी चीज का बहुत बुरी तरह कुचला या मसला हुआ रूप।

मह०—(किसी का) मूरकस निकलना=(क) बुर-बुर होकर निष्पत्त होना। (ख) परिश्रम, मार आदि के कारण बहुत अधिक दुर्दशाग्रस्त होना।

२. बूकनी।

वि० बूर्ण या टुकड़े किया हुआ।

मूरका—पुं० [हि० मूरकना] १. मूरकने की अवस्था क्रिया, या भाव। २. बूर्ण। बूकनी। ३. अन्नक का बूर्ण। अबीर। ४. मिट्टी का कवोरा या प्याला। ५. कुल्हड़। कूजा। ६. मिट्टी की दवात।

मूरकाना—स० [हि० मूरकना] १. किसी चीज को इतना सुलाना कि वह मूरमुरी हो जाय। २. छिड़कना। मूरमूराना। ३. मुलाका देना। बहकाना। मूलाना।

मूरकी—स्त्री० [हि० मूरका] १. अन्न रखने की छोटी कीठिला। बूकनी। २. पानी का छोटा गड्ढा। ३. हीज। ४. छोटा मूरका या कुल्हड़। ५. छिद्र। छेद। (पूरक)

मूरकुटा—पुं० [अनु० मूर] छोटा कीडा-भकोडा।

मूरकुत्ता—पुं० [स० मूरण; हि० मूरकना] १. बूर्ण। बूर। २. दे० 'मूरकस'।

मूरकुत्ता—वि०, पुं०—मूरकस।

मूरकाला—पुं० [?] गड़। उदा०—मला चीत मूरकाला, आम लगावा सींग।—बकीदास।

मूरकी—पुं०—मूरका।

†स्त्री०—मूरकी (छोटा बूर्ण)।

मूरता—पुं० [विश०] एक प्रकार की बरसीली घास।

मूरता—पुं० [हि० मूरकाना या मूरमूर] १. वह पदार्थ जो कुचले जाने पर दबकर ऐसा विग्रह गया हो कि उसके अवशेषों और आकृति की पहचान न हो सके। २. चोखा या भरता नाम का साल।

मूरभूर—स्त्री० [विश०] एक प्रकार की घास जो ऊपर या रेतीली भूमि में होती है। मूरमूरदी। मूलनी।

मूरभुरा—वि० [अनु०] [स्त्री० मूरमुरी] साधारण स्वर्ण या हलके बनाव से जिसके कण या रवे अलग-अलग हो जायें। जैसे—मूरमुरी मिट्टी। पुं० [विश०] एक बरसीली घास।

मूरभुराना—स० [हि० मूरमुरा] १. इस प्रकार किसी चीज को स्वर्ण करना कि उसके कण या रवे अलग अलग हो जायें। २. बूटकी या उंगली में कोई बूर्ण रखकर किसी चीज पर छिड़कना। बुरकना।

मूरभुराहट—स्त्री० [हि० मूरमुरा +आहट (प्रत्य०)] मूरमुरे होने की अवस्था, गुण या भाव। मूरमूरापन।

मूरली—स्त्री० [हि० मूरली] १. कमला या सूंही नाम का कीड़ा। मू-बली। २. फसल को हानि पहुँचानेवाला एक प्रकार का कीड़ा।

मूब्वना—स० [स० भ्रमण, हि० भरतना का प्रे०] १. किसी को भ्रम में डालना। मूलना देना। २. प्रलोभन देना। फुसलाना। उदा०—वातनि मूरक राँधिका मोरी—मूर।

मूरहरा*—पुं०—मोर (तबका या खेरा)।

वि०—मूरमूर।

मूरहरे—अव्य०—मोरहरे।

मूरई—स्त्री० [हि० मोला +आई (प्रत्य०)] मोलापन। सीधापन। *स्त्री० [हि० मूर। आई (प्रत्य०)] मूरपन।

मूराना—अ० [हि० मूलाना या मूलना] १. किसी के मूलाने या धोखे में आना। २. विस्मृत होना। मूलना।

स० मूलाने या धोखे में डालना। बहकाना। मूरवाना।

मूराना*—अ०, स०—मूराना।

मूरकी—स्त्री०—मूरका।

मूरई—वि० [हि० मूर या मोरा] अत्यधिक काला या कुरूप।

पुं० एक तरह की चीनी।

मूलककड़—वि० [हि० मूलना +ककड़ (प्रत्य०)] [भाव० मूलककी-पन] (व्यक्ति) जो प्रायः कुछ न कुछ मूल जाता हो। फलतः शीघ्र स्मरण शक्तिवाला।

मूलना—वि० [हि० मूलना] अक्सर मूलता रहनेवाला। विस्मरणशील-मूलककड़। जैसे—मूलना स्वभाव।

†अ०—मूलना।

पुं० एक प्रकार की घास जिसके विषय में लोगों में यह प्रवाद है कि इसके खाने से लोग सब बातें मूल जाते हैं।

मूलभुला—पुं० [अनु०] गरम रास। मूरभल।

मूलबाना—स० [हि० मूलना का प्रे०] १. किसी को कुछ मूलने में प्रवृत्त

करता। २. ऐसा काम करना जिससे कोई भूलकर भ्रम में पड़े।
 बोले में डालना।

भूकलना।—अ०, स०=भूलना।

भूकलना—स० [हि० भूलना] १. स्मरण की हुई या रटी हुई बात स्मृति
 पथ से उतलना। २. ऐसा प्रयत्न करना कि पुरानी विशेषतः बुद्ध
 बटनार्थ या बातों स्मरण-शक्ति में न आवाँ। ३. भ्रम में डालना।
 धोखा देना।

अ० १. विस्मृत होना। भूलना। २. धोखे या भ्रम में पड़ना। भूलावे
 में आना। ३. इशर-उभर भटकना।

भूकलना—पू० [हि० भूलना] ऐसी बात जो किसी को धोखे या भ्रम में डालने
 के लिए कही जाय। छलपूर्ण बात।
 कि० प्र०—देना।

भूकलना—पू० [हि० भूल + धोखा] भूल से होनेवाला धोखा या भ्रम।

भूकलना—पू०=भूकल (सौर)।

भूकलना—पू०=भूकल (सौर)।

भूक (भूक)—पू० [स० भू + असृज] १. वह आकाश या अवकाश जो भूमि
 और सूर्य के बीच में है। अंतरिक्ष।

विशेष—यह सात लोकों के अंतर्गत दूसरा लोक कहा गया है।

२. सात महाव्याहृतियों के अंतर्गत दूसरी महाव्याहृति।

विशेष—मनुस्मृति के अनुसार यह महाव्याहृति ओफार की उकार
 मात्रा के सग यजुर्वेद से निकाली गई है।

भूक—पू० [स० भू + क] अग्नि। आय।
 †स्त्री० १.—पू० (पृथ्वी)। ३. माँह (ध्रु)।

भूकना—पू०=भवन।

भूकना—पू० [स० भू + क] (हीना) + कृत्—अन] १. जगत। ससार। २.
 पुराणानुसार चौदह लोकों में से प्रत्येक लोक की संज्ञा। सातों स्वर्गों
 और सातों पातालों में से प्रत्येक। (दे० 'लोक') ३. उक्त के आधार पर
 चौदह की संख्या का सूचक शब्द। ४. जल। पानी। ५. आकाश।
 ६. जन। लोग। ७. एक प्राचीन मुनि।

भूकनकीडा—पू० [प० तं०] १. भूकल। पृथिवी। २. चौदहो भूकनो
 की समष्टि। ३. समस्त ब्रह्माण्ड।

भूकन-भ्रम—पू० [स० प० तं०] स्वर्ग, मर्त्य और पाताल वे तीनों
 लोक।

भूकनपरि—पू० [सं प० तं०] एक देवता जो महीशर के अनुसार अग्नि
 का माई है।

भूकन-भाबनी—स्त्री० [प० तं०] गंगा।

भूकन-भावन—पू० [प० तं०] सब लोकों की सृष्टि करनेवाला; पर-
 मेववर।

भूकन-भाता (सु)—स्त्री० [प० तं०] दुर्गा।

भूकन-भोहिनी—स्त्री० [प० तं०] कौशिक का एक रूप।

भूकन-भोषीस—पू० [भूकन-भोषीस, प० तं०] एक खर का नाम।

भूकनेस—पू० [भूकन-ईश, प० तं०] १. शिव की एक मूर्ति। २. ईश्वर।

भूकनेश्वर—पू० [भूकन-ईश्वर, प० तं०] १. शिव की एक मूर्ति या रूप।

२. एक प्रसिद्ध तीर्थ जो उड़ीसा में पुरी के पास है और जहाँ उक्त शिव
 की मूर्ति है।

भूकनेश्वरी—स्त्री० [भूकन-ईश्वरी, प० तं०] इस महाविद्याओं में से एक।
 (तंत्र)

भूकन्यु—पू० [भू + कृत्सुच] १. सुर्य। २. अग्नि। जाग। ३. चक्रमा।
 ४. प्रभु। स्वामी।

भूकपाता—पू०=भूपाल (राजा)।

भूकपल्लव—पू० [सं० कप० स०] सात लोकों में से दूसरा लोक। पृथ्वी
 और सूर्य का मध्यवर्ती भाग। अंतरिक्ष।

भूका—पू० [हि० भूका] भूजा। भूई।

भूकार—पू०=भूपाल (भूपाल)।

भूकाला—पू० [स० भूपाल, प्रा० भूपाल] राजा।

भूकडी—पू० [स०] १. काक भूकडी। २. महाभारत काल का चमर्ये का
 एक प्रकार का अस्त्र। इसके बीच में एक लोक बंदोबा होता था जिसके
 साथ डोरी था तस्से से दो कर्के बंधे रहते थे, जिनसे आघात या वार होता
 था।

भूकडी—पू०=भूसा

भूकी—स्त्री०=भूसी।

भूकुंड—पू० [स० भूकुंड] कुंड।

वि० बहुत मोटा और भद्रा। जैसे—काला भूकुंड।

भूकुडी—पू०=भूसुडी।

भूसीला—पू० [हि० भूसा + शीला (प्रत्य०)] [स्त्री० भूसीली] वह कोठी
 जिसमें भूसा मरा रहता है।

भूसुरमाता—स०=भूसुरमाता।

भूसी—स्त्री० [स० भूमि] भूमि। पृथ्वी।

भूसना—अ० [अनु०] १. कुलों का नं-भू या मो-भौ शब्द करना। २.
 झूठ-भूठ या व्यर्थ में (किसी के पीछे पढ़कर उसके सबध में) बुरा-मला
 बकते फिरना।

भूसना—स्त्री०=भूल।

भूसना—वि०=भूसा।

भूसुङ्गा—पू० [हि० भूतना] भूना हुआ बना।

भूसाल—पू०=भूपाल। (पश्चिम)

भूसी—पू०=भूकडी। उदा०—करम बिहून ए दुनी, कोठ र धीवि
 भूकोक भूजा—जायसी।

भूसना—सं० १.—भूतना। २. योगना।

भूसना—पू० [हि० भूतना] १. भूना हुआ अन्न। चबेना। २. अन्न भूजने-
 वाला व्यक्ति। भड़भूजा। ३. अन्न भूजनेवालों की जाति।

भूसु—स्त्री०=भूड (बहुल भूमि या मिट्टी)।

भूसरी—स्त्री० [स० भू] मध्य युग में, नाउ, बारी आदि को जोतने-बोले के
 लिए जमींदार से मिलनेवाली ऐसी भूमि जिसपर उन्हें लगान नहीं देना
 पड़ता था।

भूसरी—वि०=भोडा।

भूसिया—पू० [हि० भूसरी=भाषी जमीन] ऐसा कृषक जो दूसरो से हल-
 बेल माँगकर खेती करता हो।

भूसीला—पू०=भूपाल।

भूसी—पू० [सं० भ्रमर] भ्रमर। मीरा। (हि०)

भूसना—अ०=भूकना।

भू-स्त्री० [सं०√भू+क्विप्] १. पृथ्वी। २. बर्षा। ३. जगह।
स्वान। ४. अस्तित्व। ५. प्राप्ति। ६. यज्ञ की अग्नि। ७.
रसावह। ८. सीता की एक स्त्री।
†स्त्री०=भू (गीह)।

भू-अभिज्ञा-भू० [सं० भूम्याभिलक्ष] एक तरह की घास।
भूजा-भू० [हि० भूजा] [सं० अस्या० भूर्ज] कई के समान हलकी और
मूलावय वस्तु का बहुत छोटा टुकड़ा। भूजा। जैसे—सेमर का भूजा।
†स्त्री०=भूजा (पिता की बहन)।

भू-आगम-भू० [सं० भूम्युपा सं०] १. भूमि से होनेवाली आय। २.
सरकार को लगान के रूप में होनेवाली आय। (लेड रेवेन्यू)

भूर्ज-स्त्री० [हि० भूजा का स्त्री० अस्या०] पुत्री।

भूर्ज-भू० [ब० सं०] अग्नीक। लुप्त।

भूर्ज-भू० [ब० सं०] कुछ भागों के लिए बरतल पर होनेवाला यह
प्राकृतिक कंकण जिस के फलस्वक पमकाना आदि हिलाने लगते या गिर पड़ते।
अग्नीन फट या दब जाती और कुछ अवस्थाओं में बल के स्थान पर जल
या जल के स्थान पर बल ही जाता है। भूर्जाल। (अर्धचक्र)

भूर्ज-भार्या-भू०=भूर्ज लेखी।

भूर्ज-लेख-भू० [सं०] बहु अंकन या लेख जो भूर्ज लेखी यंत्र से भूर्जों
की गतिविधि, वेग, व्यापकता आदि के संबंध में प्रस्तुत होता है। (सीस्मो-
ग्राम)

भूर्ज-लेखी-भू० [सं० भूर्ज-लेखिन्] एक प्रकार का यंत्र जो अग्नीन के
नीचे रहता है, और बिजले यह जाना जाता है कि भूर्ज कहां और किस
ओर से आया और कितने समय तक रहा और उसकी तीव्रता या वेग
कितना है। (सीस्मोग्राफ)

भूर्ज-विज्ञान-भू० [ब० सं०] आधुनिक विज्ञान की वह शाखा जिसमें
भूर्जों के कारणों तथा गतिविधि, वेग, स्वरूप आदि का विवेचन होता है।
(सीस्मोलोजी)

भूर्जा-स्त्री०=भूर्ज।

भूर्ज-वर्ष-भू० [सं० सं०] एक तरह का कवच।

भूर्जना-अ० दे० 'भूर्जना'।

भूर्ज-वर्ष-भू० [ब० सं०] पृथ्वी का व्यास।

भूर्ज-व्यय-भू० [सं० सं०] कृष्ण के पिता बसुदेव का एक नाम।

भूर्जा-वि०=भूजा।

भूर्ज-वृक्ष-भू० [सं० सं० सं०] १. एक तरह का बाज पत्ती। २. शीघ्र
पत्ती। ३. नीला कन्तर।

भूर्ज-व्याधी-स्त्री० [सं० सं० सं०] मूँहनुहड़ा। विद्यारी।

भूर्जवा-भू० [ब० सं०] १. बरतल का पेंडा। बट। भूज। २. सेवार।

भूर्जवा-स्त्री० [सं० ब० सं०, +क्रीप्] राक्षसी।

भूर्ज-वृक्ष-भू० [सं० ब० सं०] १. भूमि का कोई टुकड़ा। २. पृथ्वी का कोई
खंड या विभाग। (ड्रिफ्ट)

भूर्ज-स्त्री० [सं० बुभुजा] पेट साली होने पर अन्न आदि असज करने की
तीव्र इच्छा।

भूर्जा=भूर्ज बरणा=(क) ऐसी धार्मिक स्थिति उत्पन्न होना जिसमें
पूरी भूख न लगती हो और फलतः उचित मात्रा में भोजन न किया जा
सकता हो। (ख) इच्छा न रहना। भूर्ज लक्षणा=भोजन करने की

आवश्यकता प्रतीत होना। कुछ भागों की भी बाह्यता। भूर्जी बरणा=
(क) भोजन के अभाव में भूख से व्याकुल होकर मरना। (ख)
भोजन के लिए मारे मारे फिरना।

२. कोई चीज पाने या लेने की आवश्यकता और इच्छा। (व्यापारी)
जैसे—जितनी भूख होगी, उतना माल खरीद लेंगे। ३. अवकाश।
भूर्जावह। सवारों। ४. कोई चीज प्राप्त करने की उत्कण्ठ इच्छा।
उदा०—मेरे मन में स्त्री की भूख जाग उठती थी—अमृतलाल
नायर।

भूर्जन, भूर्जना-भू०=भूर्जण।

भूर्जना-भू०=सं० [सं० भूर्जण] भूषित करना। पुसम्भित करना। सजाना।
अ० भूषित होता। सजना।

भूर्जर-स्त्री० [हि० भूर्ज] १. भूख। भूजा। २. इच्छा। कामना।

भूर्जरी-स्त्री० [मध्य० सं०] छोटी बन्धु।

भूर्जा-वि० [हि० भूर्ज] १. जिसे भूख लगी हो। २. उत्कण्ठ इच्छुक
या याचक। जैसे—व्यार का भूर्जा। ३. बरिज।

भूर्जा-भार्या-वि० [हि०] अर्ध-स्वक के कण्ड से पीछित और बरिज।

भूर्जा-व्यासा-वि० [हि०] जिसे भूख तथा व्यास लगी हो। क्षुधित-
भूषित।

भूर्जा-स्त्री० [सं० ब० सं०, +टाप्] भूरा नामक गन्ध द्रव्य।

भूर्जार्ध-भू० [सं० ब० सं०] १. पृथ्वी का नीचेवाला या नीचरी भाग।
२. विष्णु। ३. संस्कृत के मन्मथि कवि का एक नाम।

भूर्ज-गर्भ-भू० [सं० मध्य० सं०] तल-वर। तहलाना।

भूर्ज-मर्मिष्ठा-स्त्री० [ब० सं०] दे० 'भूर्जाम्ब'।

भूर्ज-मंशासन-भू० [ब० सं०] भूर्जासन। (दे०)

भूर्जोल-भू० [सं० ब० सं०] १. पृथ्वी। २. बहु वालक जिसमें पृथ्वी
तल के ऊपर स्वरूप, प्राकृतिक या विभागों जगलों, नदियों, पहाड़ों
आदि कृत्रिम या मानवीय राजनीतिक विभागों (देश, नगर, गाँव
आदि) बतावर्णिक विभागों (उच्च कटिबंध, शीत कटिबंध) तथा
उद्योग-धंधों, श्रमियों, निवासियों तथा इसी प्रकार की और बातों का
विचार होता है। (विचारिकी)

भूर्जोलक-भू० [सं० भूर्जोल+कन्] भूर्जबल।

भूर्ज-भू० [सं० ब० सं०] १. पृथ्वी की परिधि। २. कर्णित भूख।
३. विपुल रेखा।

भूर्जर-वि० [सं० भू/वर (शान्)+ट] स्वल्पर।

भूर्ज १. स्वरुपर प्राणी। शिव। ३. दीमक। ४. वह सिद्धि जिससे
मनुष्य के लिए सब कुछ गम्य, प्रत्यक्ष तथा प्राप्य होता है। (तम)
भूर्जरी-स्त्री० [सं० भूर्ज+क्रीप्] योग साधन में सहायि की एक
मुद्रा जिसके द्वारा प्राण और अगान वायु दोनों एकत्र हो जाती
है।

भूर्जाल-भू० [सं० भूर्ज+हि० बाल=बलना] भूर्जप। (देवें)

भूर्जिवाबली-स्त्री० [सं० ब० सं०] दे० 'भाम-विवाबली'।

भूर्जावा-स्त्री० दे० 'अच्छावा'।

भूर्ज-भू० [सं० ब० सं०] १. हाथी। २. एक तरह का बोंबा।

३. सीखा नामक बाहु।

भूर्ज-भू० [सं० ब० सं०] १. पैरों। २. बन आयुन।

भूमा—स्त्री० [सं० भू०/भृन् (उत्पत्ति) : ङ-टाए] सीता। उदा०—
आर्यं सयन भूमा मे तत्क्षण आसीत् का बुद्ध किया निवारण।—यत्।
१। पु०—भूजा।

भूमात्—पु० [सं० पं० तं०] वृक्ष। वेद।

भूमि—स्त्री० - भूमिवा।

भूमान—पु० [सं० भोटंग] नेपाल के पूर्व तथा आसाम के उत्तर में स्थित एक
स्वतंत्र देश।

भूदानी—वि० [हि० भूदान : ई (प्रत्य०)] भूदान देस का। भूदान संघची।
पु० १. भूदान देस का निवासिनी। २. भूदान देस का धोड़ा।
स्त्री० भूदान देस की बांकी।

भूदिवा बाबा—पु० [हि० भूदान, का० बादा] एक प्रकार का मूर्खोला
पराधी वृक्ष जिसे कासी में कहते हैं। इसका फल खाया जाता है।

भूइ—स्त्री० [देश०] ? वह भूमि जिसमें बाढ़ मिला हुआ हो। बलुई
भूमि। २. कुएँ का भीतर की झील। झिर। सीत।

भूडोल—पु० [सं० भू : हि० डोलना] भूकम्प। (देवे)

भूष—पु० [सं० भ्रमण] ? नदी, समुद्र आदि की यात्रा। जल-यात्रा।
२. जल-विहार। (हि०)

भूत—वि० [सं० √भू (होना) : भत्] ? जो अस्तित्व में था चुका
या न बन चुका हो। वना हुआ। २. जो घटना आदि के रूप में घटित हो
चुका हो। ३. जो किसी विशिष्ट रूप को प्राप्त हो चुका हो। जैसे—
अतर्कित, मस्तीमूत। ४. जो समय के विचार से बीत चुका हो।
पहले का। पुराना। जैसे—भूत-काल, भूत-पूर्व मन्त्री। ५. जो किसी
के सदृश या समान हो चुका हो। जैसे—बहोमी मूत।

पु० [सं० मूत] ? शिव का एक रूप। २. चंद्रमास का कृष्णपक्ष।
३. चंद्रमास के कृष्णपक्ष की चतुर्विंशती। ४. देवताओं के एक पुरोहित।
५. पुत्र। बेट।

पु० [सं० मूल] ? वह जिसकी कोई सत्ता हो। कोई चेतन या जड़
पदार्थ। २. जीव। प्राणी। ३. दार्शनिक क्षेत्र में वे विशिष्ट मूल
तत्त्व जिन्हें सारी सृष्टि की रचना हुई है। द्रव्य। महाभूत। (इनकी
संख्या पाँच बारी गई है, यथा—पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश)। ४
बीता हुआ काल या समय। गुजरना हुआ अगमना। ५. व्याकरण में,
क्रिया के तीन कालों में से एक जो किसी घटना के पूर्व समय में समाप्त
या सम्पन्न हो चुकने का सूचक होता है। जैसे—वह चला गया। यहाँ
'चला गया' क्रिया भूतकाल की सूचक है। ६. पुराणानुसार एक प्रकार

के पिशाच या देव जो रूद्र के अनुचर हैं और जिसका मूँह नीचे की ओर
लटका हुआ या ऊपर की ओर उठा हुआ माना जाता है। ७. लोक-व्यवहार
में किसी मृत प्राणी की आत्मा जिसके सबंध में मृत माना जाता है कि
छाया के रूप में और बहुत ही सूक्ष्म शरीर वाली होती है। जिन।
जीतान।

विशेष—इनके विषय में यह भी माना जाता है, कि इनका यह रूप
तब तक बना रहता है, जब तक इनकी मूर्ति या मोक्ष नहीं हो जाता;
अथवा इन्हें दूसरा जन्म नहीं प्राप्त होता। यह भी समझा जाता है
कि ये कभी कभी लोगों को दिखाई देते हैं और अनेक प्रकार के
उपद्रव भी करती हैं। यह भी कहा जाता है कि कभी कभी ये किसी
व्यक्तित्व के शरीर और मस्तिष्क पर अधिकार करके उसके ही-सदृशत्व

विपाठ देती हैं, जिससे वह बकने-भाकने और पागलों के से काम करने
लगाता है। इसी दृष्टि से इस शब्द के साथ आना, उतरना, चड़ना,
लगना आदि क्रियाओं का भी प्रयोग होता है।

पथ—भूतों का पकवान या मिठाई —(क) ऐसा पदार्थ जो भ्रम-वच
दिखाई तो दे पर वास्तव में जिसका कोई अस्तित्व न हो। (कहते हैं
कि भूत भ्रत आकर ऐसी मिठाई रख जाते हैं, जो खाने या छूने पर मिठाई
नहीं रह जाती, राख, मिट्टी, विष्ठा आदि हो जाती है। (ख) बिना
किसी परिश्रम के या बहुत सहज में मिला हुआ धन जो शीघ्र ही गन्ध
हो जाय।

मुहा०—(किसी पर) भूत चड़ना या सवार होना (क) किसी पर
भूत का आवेश होना। (ख) किसी का बहुत अधिक भूढ़ होकर पागलो
का-सा आचरण या व्यवहार करने लगना। (किसी बात का) भूत चड़ना
या सवार होना—(किसी बात के लिए) बहुत अधिक आग्रह, तन्मयता
या हठ होना। जैसे—तुम्हें तो हर बात का भूत चढ़ जाता है। (किसी
काम या बात के लिए) भूत बनना -बहुत ही तन्मयता या दुड़तापूर्वक
और पागलों की तरह किसी काम के पीछे चड़ना या उसमें डूरी तरह से
लगना। (किसी को) भूत लगना -किसी पर भूत चढ़ना या सवार
होना। (दे० उपर)

८. वह औषध जिसके सेवन से प्रेतों और पिशाचों का उपद्रव शांत
होता हो। ९. मृत शरीर। शव। लाश। १०. शय्य। ११. कार्तिकेय।
१२. योगी। १३. भूत। १४. लोभ। लोभ।

भूतक—पु० [सं० भूत : कन्] पुराणानुसार सुमेरु के पर २१ लोकों में से
एक लोक।

भूतकर्ता (पु०—पु० [व० तं०] ब्रह्मा। स्रष्टा।

भूतकला—स्त्री० [व० तं०] एक प्रकार की घमिनी जो पंच भूतों को
उत्पन्न करनेवाली मानी गई है।

भूतकाल—पु० [कर्म० सं०] बीता हुआ समय।

भूतकालिक—वि० [सं० भूतकाल : अन्—इक] भूतकाल-संबंधी।
जो बीते हुए समय में हुआ हो या उनसे सम्बन्ध रखता हो। जैसे—भूत-
कालिक कृतत्व।

भूतकालिक कृतत्व—पु० [कर्म० सं०] क्रिया से बना हुआ भूत काल का
सूचक विशेषण रूप। जैसे—हृत्, गत, परिहृत आदि।

भूत-कृत—पु० [सं० भूत + कृ (करना)। कियत्, नन्-आगत] ? देवता।
२. विष्णु।

भूतकृतत्व—पु० [सं०] व्याकरण में क्रिया का वह रूप जिससे यह सूचित
होता है कि क्रिया भूत काल में पूरी या समाप्त हो चुकी थी। जैसे—
'चलना' क्रिया का भूतकृतत्व 'चला' और 'बैठना' क्रिया का भूतकृतत्व
'बैठा' है।

भूत-केश—पु० [व० तं०] १. सफेद बूब। २. इन्द्र-राक्षसी। ३. सफेद
तुलसी। ४. जटामासी।

भूतकान्ति—स्त्री० [व० तं०] किसी व्यक्ति पर होनेवाला भूतों का आवेश।

भूतलाना—पु० [सं० भूत : का० खाना=घर] बहुत मैला कुर्छाया या
ऐसा अंधेरा जो भूतों के रहने का स्थान बना पड़े।

भूतगंधा—स्त्री० [व० सं०, टाए] मुरा नामक गंध द्रव्य।

भूतगण—पु० [व० तं०] शिव के अनुचरों का वर्ग।

मूलशब्द—पुं० [ब० त०] देह। शरीर।
 मूलस्थ—पुं० [सं० मूल+हृत् (मारता)+स्थ, मुल्य] १. कल्पित।
 २. भोजनपत्र। ३. ऊँट।
 वि० मूर्तों का नाश करनेवाला।
 मूलस्थी—स्त्री० [सं० मूलस्थ+ङीप्] तुलसी।
 मूल-समुत्पत्ती—स्त्री० [मध्य० सं०] कातिक कृष्ण पक्ष की चतुर्थी।
 नरक चौपस।
 मूल-शरीर(रित्)—पुं० [सं० मूल+वर् (गति)+गिति] महादेव।
 शिव।
 मूल-चिन्ता—स्त्री० [ब० त०] मूल नामक तस्त्रों की छानबीन।
 मूल-जटा—स्त्री० [ब० त०] चटामासी।
 मूल-रक्ष-चिन्ता—पुं० [ब० त०] मूशरत।
 मूल-रक्ष-चिन्ता—स्त्री० [ब० त०]=मू-शासन।
 मूल-रक्षा—स्त्री० [ब० त०] चेतन और जड़ सभी के प्रति मन में रखा जानेवाला दया-भाव।
 मूल-मूल—पुं० [मध्य० सं०] देहमातक बुद्ध।
 मूल-मायी—स्त्री० [ब० त०] पृथ्वी।
 मूल-वारिणी—स्त्री० [सं० मूल+वृ (वारण करना)+गिति,+ङीप्, उप० सं०] बरती। पृथ्वी।
 मूल-वाय (वृ)—पुं० [ब० त०] दुराणामुसार ह्रद का एक पुत्र।
 मूल-वाय—पुं० [ब० त०] शिवा। महादेव।
 मूल-वायिका—स्त्री० [ब० त०] दुर्गा।
 मूल-वासान—पुं० [ब० त०] १. यज्ञाक्ष। २. सरसी। ३. निलाया।
 ४. हींग।
 मूल-निचय—पुं० [ब० त०] देह। शरीर।
 मूलनी—स्त्री० [दि० मूल+नी] १. मूल योनि की स्त्री। २. डाकिनी।
 ३. लाक्षणिक अर्थ में काले रंग की प्रायः क्रोधी तथा लड़ाके स्वभाव-वाली स्त्री।
 मूल-वक्ष—पुं० [मध्य० सं०] कृष्ण पक्ष। अंबेरा पाक्ष।
 मूल-वस्त्र—पुं० [ब० त०] १. शिव। २. अग्नि। ३. काली तुलसी।
 मूल-वशी—स्त्री० [ब० सं०+ङीप्] काली तुलसी।
 मूल-वास्त—पुं० [सं० मूल+वाल् (पालना)+गिच्+अच्] विष्णु।
 मूल-वृणिमा—स्त्री० [ब० त०] आश्विन की वृणिमा। शरद्वृणिमा।
 मूल-वृष—वि० [सुमुपुग सं०] १. पहलेवाला। प्राचीन। २. गत।
 ३. (पदाधिकारी के संबंध में) जो किसी वय पर पहले कभी रह चुका हो। जैसे—मूलवृष समापति।
 मूल-वृकृति—स्त्री० [ब० त०] १. मूर्तों अर्थात् जीवों की उत्पत्ति।
 २. वं० 'मूल-वृकृति'।
 मूल-वैत—पुं० [इ० सं०] मूल, पिशाच, प्रेत आदि की योनियाँ, अपवाह
 इन योनियों में प्रायत् होनेवाले सूक्ष्म शरीरों का बंध।
 मूल-वर्ति—स्त्री० [ब० त०] या मध्य० सं०] मूलपत्र। (दे०)
 मूल-वर्ता (वृ)—पुं० [ब० त०] १. मूर्तों का नरण-वीथय करनेवाले;
 शिव। २. नैरव का एक रूप।
 मूल-वाचन—पुं० [सं० मूल+वृ (होना)+गिच्+ल्यु=अज] १.
 १. बह्वा। २. शिव। विष्णु।

मूल-भावा—स्त्री० [सं० ब० त०] १. मूल-प्रेतों की भावा। २. वैशाखी
 भावा।
 मूल-भंरव—पुं० [सं० कर्म० सं०] १. भैरव का एक रूप। २. उक्त
 रूप की मूर्ति। ३. हुलाक, गंधक आदि के योग से बनाया जानेवाला
 रस जो ज्वर तथा वात नाशक होता है। (सैद्यक)
 मूल-भाता (वृ)—स्त्री० [ब० त०] गौरी।
 मूल-भावा—स्त्री० [ब० त०] [पार्श्वों में से हर एक] मूल का मूल सूक्ष्म
 रूप। तन्मात्र। तन्मात्रा।
 मूल-मन्त्र—पुं० [मध्य० सं०] गृहस्थ के लिए विहित पाँच यज्ञों में से एक
 जिसमें वह समस्त जीवों को आहुति देता है। मूलचलि।
 मूल-योनि—स्त्री० [ब० त०] प्रेतयोनि।
 पुं० परमेश्वर।
 मूल-राज—पुं० [ब० त०] शिव।
 मूलरत्न—पुं० [ब० त०] १. पृथ्वी का ऊपरी तल। चरातल। मू-पुच्छ।
 २. जगत। संसार। ३. पताला।
 मूल-लक्ष्मी—वि०=पूर्व-व्यापित।
 मूल-आच—पुं० [ब० त०] १. प्राचीन भारत में, एक नास्तिक दार्शनिक
 संप्रदाय जो पंच-मूर्तों को ही सृष्टि का कर्ता मानता था, ईश्वर या ब्रह्मा
 को नहीं। २. दे० 'भौतिकवाद'। (मेटेडियलिज्म)
 मूल-भायी (विन्)—वि० [सं० मूलवाय+इति] मूल-वाय सम्बन्धी।
 इ० मूल-वाय का अनुयायी।
 मूल-वास—पुं० [ब० सं०] १. महादेव। शिव। २. विष्णु। ३.
 बड़े बड़े का पेड़।
 मूल-वाहन—वि० [ब० सं०] मूर्तों पर सवारी करनेवाला।
 पुं० महादेव। शिव।
 मूल-विश्रामा—स्त्री० [ब० त०] १. मूल-प्रेतों के कारण होनेवाली बाधा।
 प्रेत-बाधा। २. [ब० सं०] अपस्मार रोग।
 मूल-विद्या—स्त्री० [मध्य० सं०] आयुर्वेद का वह अंग जिसमें देवता,
 जन्तु, पंचभू, पशु, पिशाच, नाग, ग्रह, उपग्रह आदि के प्रभाव से उत्पन्न
 होनेवाले मानसिक रोगों का निदान और निवृत्तन होता है। इन्हें हूट
 करने के लिए ब्रह्मा ब्रह्म-शांति, पुत्रा, वाय, होम, दान, रत्न पहनने और
 औषध आदि के सेवन का विधान होता है।
 मूल-विनायक—पुं० [ब० त०] मूर्तों अर्थात् जीवों के नायक, शिव।
 मूल-वृद्धि—स्त्री० [ब० त०] पुत्रन आदि से पहले मंत्रों द्वारा की जानेवाली
 शरीर की सृष्टि। (तामिक)
 मूल-संचार—पुं० [ब० त०] मूर्तोन्माह नामक रोग।
 मूल-संचारी(रित्)—पुं० [सं० मूल+वर् (चलना)+गिति] दामानक।
 मूल-संलव्य—पुं० [ब० त०] प्रलय।
 मूल-सिद्ध—पुं० [ब० सं०] वह जिसने किसी मूल-प्रेत को सिद्ध किया हो।
 (तंत्र)
 मूल-श्री—स्त्री० [सं० ब० त०] १. नीली बुध। २. बाँस कफोड़ी।
 मूल-शुद्धा—स्त्री० [ब० त०] जीवों या प्राणियों का बंध या हत्या।
 मूल-हृत्—पुं० [सं० मूल+हृत् (मारता)+गिच्] भोजनपत्र का बुद्ध।
 मूल-हर—पुं० [ब० त०] गुग्गुलु।
 मूलशब्द—पुं० [सं० मूल+हृत् (मारता)+गिच्, पुं०] भोजनपत्र का बुद्ध।

भूतहारी (रिप्)—पुं० [सं० मूल+हृ (हरण करना)+गिति] १. लाक कनेर। २. वेवदाह।
 भूतकुशा—पुं० [मूल+अंकुश, ष० तं०] १. कल्पय श्चि। २. गायत्रुवां नामक वनस्पति। ३. वैद्यक में, एक प्रकार का रतीषध जो भूतोन्माद के लिए उपयोगी कहा गया है।
 भूतलक—पुं० [मूल+अलक, ष० तं०] १. यम। २. कद।
 भूता—स्त्री० [सं० मूल+टाप्] कृष्ण पक्ष की चतुर्थी।
 भूतागत—स्त्री० [हिं० भूत। गति] भूत-प्रेत की लीला की तरह का कोई अद्भुत व्यापार। बिलक्षण कार्य या बात।
 भूतात्मा (स्मृष्णु)—पुं० [मूल+आत्मन्, ष० तं०] १. शरीर। २. परमेस्वर। ३. शिव। ४. विष्णु। ५. जीवात्मा।
 भूताधि—पुं० [मूल+आधि, ष० तं०] १. परमेस्वर। २. सांख्य में, अहकार, तत्त्व, जिससे पंचभूतों की उत्पत्ति मानी गई है।
 भूताधिपति—पुं० [मूल+अधिपति, ष० तं०] शिव।
 भूताम्य—पुं० [मूल+अम्य, ष० तं०] नारायण। परमेस्वर।
 भूतारि—पुं० [मूल+अरि, ष० तं०] हीरा।
 भूतार्त्त—वि० [मूल+आर्त्त, तु० तं०] भूतों या प्रेतों की बाधा से पीड़ित।
 भूतार्थ—वि० [मूल+अर्थ, ष० तं०] जो बहुत-धटित हुआ हो। यथार्थ में होनेवाला।
 भूतावास—पुं० [मूल+आवाग, ष० तं०] १. पंचभूतों से बना हुआ शरीर। २. जीवों का वास्तवस्थान। जगत। दुनिया। ससार। ३. विष्णु। ४. बहेड़ा।
 भूताधिष्ठ—वि० [तु० तं०] भूत-प्रेत से प्रस्त।
 भूतावेश—पुं० [मूल+आवेश, ष० तं०] किसी को भूत लगना। प्रेतबाधा।
 भूति—स्त्री० [सं०√भू (होना)+क्तिन् या क्तिच्] १. अस्तित्व में आने या घटित होने की क्रिया, दशा या भाव। प्रस्तुत या वर्तमान होना। २. उत्पत्ति। जन्म। ३. कल्पना या वैभव से युक्त वैभव और सुख। ४. सोमाय ५. धन-सम्पत्ति। ६. गौरव। महिमा। ७. अधिष्ठा। बहुलता। ८. बढ़ती। वृद्धि। ९. अधिष्ठा, महिमा आदि आठ प्रकार की सिद्धियाँ। १०. रत्नों आदि से हाथी के मस्तक पर बनयने जानेवाले बेल-मुटे। ११. लक्ष्मी। १२. मुक्ति। मोक्ष। १३. वृद्धि नाम की ओषधि। १४. भूगुण। १५. सत्ता। १६. पकामा हुआ मांस। १७. रक्षा नामक घास।
 पुं० १. शिव का एक रूप। २. विष्णु। ३. बृहस्पति। ४. पितरों का एक गण या वर्ग। राजा का मंत्री।
 वि० मागलिक और भूत।
 भूतिकाम—पुं० [सं० मूल+कम् (कृष्ण)+अण्] १. राजा का मंत्री। २. बृहस्पति।
 भूतिकल—पुं० [सं० मूल+कृ (करना)+किल्प, तुक्] शिव।
 भूतिकथ—पुं० [सं० मूल+कथ (बना)+क] शिव।
 भूतिवा—स्त्री० [सं० मूल+टाप्] गंगा।
 भूतिनि—स्त्री०=भूतनी।
 भूतिनिधान—पुं० [ष० तं०] घनिष्ठा नक्षत्र।
 भूतिनी—स्त्री०=भूतनी।
 भूतिभूषण—पुं० [ष० तं०] शिव।

भूती—पुं० [हिं० मूल+ई (प्रत्यय)] भूत-प्रेतों को पूजनेवाला अथवा उन्हें सिद्ध करनेवाला व्यक्ति।
 भूतीबानी—स्त्री० [सं० विभृति] भस्म। राक्ष। (हिं०)
 भूतुष्ण—पुं० [ष० तं०] १. रक्षा नाम की घास। रोहिण। २. कपूर।
 भूतेज्य—पुं० [सं० मध्य० सं०] भूती। (बै०)
 भूतेज्या—स्त्री० [सं० मूल+ज्या, ष० तं०] भूत-प्रेतों की पूजा।
 भूतेस—पुं० [सं० मूल+ईश, ष० तं०] १. परमेस्वर। २. शिव। ३. कातिकेय।
 भूतेस्वर—पुं० [सं० मूल+ईस्वर, ष० तं०] १. महादेव। २. एक प्राचीन तीर्थ।
 भूतेल—पुं० [सं०] पृथ्वी के कुछ बिसिष्ट भू-भागों की चट्टानों के नीचे से निकलनेवाला एक प्रकार का प्राकृतिक तैलीय और ज्वलनशील द्रव पदार्थ जो हरे रंग या काले रंग का होता है और जिसे साफ करने पर मिट्टी का तेल और कई प्रकार की चीजें निकलती हैं। (पेट्रोलियम)
 भूतोन्माद—पुं० [सं० मूल+उन्माद, मध्य० सं०] भूत, बाधा के परिणाम स्वरूप होनेवाला उन्माद।
 भूतम—पुं० [सं० भू+उत्तम, सं० तं०] सोना।
 भू-बात—पुं० [सं० ष० तं०] दान रूप में भूमि देना।
 भू-दान-वस्तु—पुं० [सं० ष० तं०] महारामा गांधी के सर्वोदय आन्दोलन के आधार पर आध्यात्मिक विनोदना नामे का चलया हुआ एक प्रसिद्ध आन्ध्रप्रदेश जिसमें भू-स्वामियों से दान रूप में भूमि प्राप्त करके ऐसे लोगों को बिना मूल्य दी जाती है जिनके पास न तो जोतने-बोने के लिए जमीन होती है और न जिनकी जीविका का कोई निश्चित तथा विशिष्ट साधन होता है।
 भू-धार—पुं० [सं० मू+ड (काठना)+अण्,] सूवर।
 भू-चारक—पुं० [सं० ष० तं०] शूरा। बीर।
 भू-बुध—पुं० [सं० ष० तं०] १. किसी स्थान से दिगाई पढ़नेवाला कोई भूखंड। २. पृथ्वी का कोई दर्शनीय खड या भाग। ३. उक्त का अंकित चिह्न। (लेड स्कैप, उक्त सभी अर्थों में)
 भू-बैध—पुं० [सं० ष० तं०] बाह्यण।
 भू-भ्रम—पुं० [ष० सं०] राजा।
 भू-भ्रम—पुं० [सं० ष० तं०] १. पर्वत। पहाड़। २. पृथ्वी को घारण करनेवाले सोचनाम। ३. विष्णु। ४. राजा। ५. बाराह अवतार। ६. रस आदि बनाने का एक उपकरण। (त्रैद्यक)
 भूभरेश्वर—पुं० [सं० भूभर+ईश्वर, ष० तं०] पर्वतों का राजा, हिमालय।
 भूभारी—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] भूईं अथवा।
 भू-भृति—स्त्री० [ष० तं०] १. लोक-व्यवहार में बहु स्थिति जिसमें कोई व्यक्ति कुछ धन देकर किसी दूसरे की भूमि कुछ समय के लिए अपने अधिकार में कर लेता और उसका उपयोग करके लाभ उठाता है। (लेड टेन्चर)
 भू-ध्र—पुं० [सं० मू+ध्र (घारण करना)+क] पर्वत। पहाड़।
 भूना—पुं०=भूण।
 भूना—सं० [सं० भर्जन] १. किसी खाद्य पदार्थ को जलसे हुए अंगारों पर सेककर पकाना। जैसे—पापक भूना, मुद्दा भूना। २. गरम बाकू में (या से) अन्न-कणों को पकाना। जैसे—दाने भूना। ३. धी, तेल आदि में कोई तरकारी अच्छी तरह लाक करना। जैसे—

मुरता या प्याज मुरना । ४. आकाशिक अर्थ में, बहुत अधिक सताना ।
कि० प्र०—हालना ।—वेना ।

५. रासायनिक क्षेत्र में, कोई भीज इस प्रकार तपाना कि उसमें के अबांछित तत्व या जल-रूप निकल जाय । (रोस्टिंग)

भूनाम—पु० [सं० सं० त०] केंचुका ।

भूनेता (तुं)—पु० [सं० सं० त०] राजा ।

भूप—पु० [सं० भू०/पा (रखा करना)+क] १. राजा । २. रात के पहले पहर में गाया जानेवाला लोकप्रजाति का एक राग ।

भूषण—पु० [सं० भूष०/गम् (जाना)+ङ] राजा । (हिं०)

भूषां—स्त्री०=भूषता ।

पुं०=भूपति ।

भूषता—स्त्री० [सं० भूष०/तल्, टाप्] १. राजा होने की अवस्था या भाव । २. राजा का पद ।

भू-यति—पु० [सं० सं० त०] १ राजा । २. सिप । २. इन्द्र । ३. ४. बटुक मंत्र । ५. संगीत में एक प्रकार का राग जो मेघ राग का पुत्र कहा गया है ।

भू-यति—पु० कृ० [सं० सं० त०] (घायल होकर या टूट-भूट कर) भूमि पर गिरा या पड़ा हुआ ।

भू-यव—पु० [सं० सं० सं०] भूसा । देह ।

भूयवी—स्त्री० [सं० भूयव+डीप्] एक तरह की चमेडी ।

भूयरा—पु० [सं० भूय से] सुय्ये । (हिं०)

भू-यर्धनाय—स्त्री० [सं० त०] भूमि अथवा उसके किसी लक्षण आदि की होनेवाली नाय-शोभा । (सं० सर्वे)

भूयाल—पु० [सं० भू०/याल् (रखा करना)+अप्] राजा ।

स्त्री०=हाइवेरी ।

भूयाली—स्त्री० [सं० भूयाल+डीप्] वर्षा ऋतु में रात के पहले पहर में गाई जानेवाली एक रागिनी जिसे कुछ लोग हिंडोल राग की रागिनी और कुछ मालकोश की पुत्रव्य मानते हैं ।

भूयुज—पु० [सं० सं० त०] १. मगल ग्रह । २. मरकातुर नामक रासस ।

भूयुजी—स्त्री० [सं० भूयुज+डीप्] जानकी । सीता ।

भू-युष्ट—वि० [सं० सं० सं०] जिसका नीचेवाला भाग या पीठ समतल भूमि पर हो । 'मैत्र पृष्ट' का विपर्याय । जैसे—भू-युष्ट यम । (तांत्रिकों का)

भूयैत्र—पु० [सं० भूय-यैत्र, सं० त०] राजाओं में श्रेष्ठ, सम्राट् ।

भू-यकंय—पु० [सं० सं० त०] भूकंप ।

भूबंभी—स्त्री० [हिं० भू०+बंधना] मृदा का वह रंग या प्रकार जिसमें दोनों पक्ष खुले मैदान में आग्नेय-सामने होकर लड़ते हैं । उदा०—बादियाँ और नदियाँ बाएँ और भूबंभी दोनों प्रकार की लड़ाइयों के लिए बहुत उपयोगी हैं ।—भूवावनकाल वर्षा ।

भू-बबरी—पु० [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार का छोटा बैर ।

भूसल—स्त्री०=भूसल ।

भू-भर्ता (तुं)—पु० [सं० सं० त०] राजा ।

भूसल—स्त्री० [सं० भू-भूर्ज या भूर्ज ?] १. ऐसी राख जो कुछ गरम हो तथा जिसमें अभी कुछ पिनागारियाँ भी बची हों । २. गरम रेत ।

भूभा—स्त्री० [सं० सं० त०] चंद्र ग्रहण के समय चंद्रमा पर पड़नेवाली पृथ्वी की छाया ।

भूभाष—पु० [सं० सं० त०] १. भूबुद्ध । प्रदेश । २. विषोपतः ऐसा प्रदेश जो किसी नगर या राज्य के किसी भाग हो और उसके अधिकतम में हो । (हेरिटरटी)

भूभागीसमूह—पु० [सं०] प्रादेशिक-समूह ।

भू-भार—पु० [सं० सं० त०] बरती पर होनेवाले पाप का भार ।

भूभुज—पु० [सं० भू०/भुज (उपयोग करना)+विभृत्] राजा ।

भूचरि—स्त्री०=भूयल ।

भूमत—पु० [सं० भू०/भू (वारण-वीथण)+विभृत्, लृप्] १. राजा ।

२. पर्वत । पहाड़ ।

भूभौतिकी—स्त्री० [सं०] आधुनिक विज्ञान की वह शाखा जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि आँधी, वर्षा के जल, नदियों और समुद्रों की लहरों आदि का पृथ्वी के मूल-तल पर कैसा और क्या प्रभाव पड़ता है । (विश्वविज्ञानिक)

भू-भंडल—पु० [सं० सं० त०] बरती । पृथ्वी ।

भूम—पु० [सं० भू०/भू+भृत्] पृथ्वी ।

स्त्री०=भूमि ।

भू-भण्ड—पु० [सं० सं० त०] चारों ओर से पृथ्वी से घिरा हुआ ।

भू-भण्डरेखा—स्त्री० [सं०] भूपोल में, वह कल्पित रेखा जो दोनों ध्रुवों से बराबर दूरी पर है और पृथ्वी को दो भागों में विभाजित करती है । (ईक्वेटर)

भूमध्य-सागर—पु० [मध्य० सं०] यूरोप और एशिया के बीच अवस्थित सागर ।

भूयय—स्त्री० [सं० भू०/ययत्] ध्रुवों की पत्नी ; छाया ।

भूया (भन्)—स्त्री० [सं० बह्+इमनिच्, भू-आदेश] १. आश्चर्य । बहुलता । २. अजीब । भूमि । ३. पृथ्वी । ४. निरर्ग । प्रकृति ।

५. ऐश्वर्य । ६. पर-बल की वह उत्तरोत्तर बढ़ती हुई अनुभूति जो मन का ढील भाव निटाती है । उदा०—यही भूया का मधुमय धान ।—असाद ।

पुं० सर्व-भ्यामी पर-बाह्य । विराट् पुत्रव ।

वि० बहुत अधिक । प्रचुर ।

भूयानंर—पु०=परयानंर ।

भू-भाषण—पु० [सं० सं० त०] किसी देश, राजा, प्रदेश, जेत आदि की नाय-शोभा करण । (सर्वे)

भूमि—स्त्री० [सं० भू०/भू+भि] १. यह सारी पृथ्वी जो खीर जगत् के एक ग्रह के रूप में है । (दे० 'पृथ्वी') २. पृथ्वी-तल के ऊपर का वह ठोस भाग जिस पर देश, नदियाँ, पर्वत आदि हैं और जिस पर हम सब लोग रहते और वास्तविकता उगती है । जमीन । (सं०)

भूतां—भूमि होना—पृथ्वी पर गिर पड़ना ।

३. उतत का कोई ऐसा छोटा टुकड़ा जिस पर किसी का अधिकार हो और जिसमें कुछ उपज आदि होती हो । (प्लेटेट)

यव—भूमिचर । (दे०)

४. जगह । स्थान । जैसे—जन्म-भूमि, मातृ-भूमि । ५. ऐसी जमीन जिस पर खेतीबारी होती हो । जैसे—भूमिचर । ६. कोई बड़ा देश

यत् प्राप्तः। जैसे—आर्यभूमि। ७. कोई ऐसा आधार जिसपर कोई दूसरी चीज बनी अथवा आबिल या स्थित हो। क्षेत्र। जैसे—पृथ्विभूमि। ८. वन समष्टि या वन्यभूमि। ९. मकान के ऐसे खड जो ऊपर-नीचे के विचार से अलग-अलग होते हैं। मंजिल। १०. कोई विशिष्ट प्रकार का ऐसा विषय जो किसी स्थिति के रूप में हो। जैसे—विद्यवात भूमि, स्नेह-भूमि। ११. किसी प्रकार का विस्तार या उसकी सीमा। १२. योगशास्त्र के अनुसार वे अवस्थाएँ जो क्रम-क्रम से योगी को प्राप्त होती हैं और जिनको पार करने के बहु-पूर्ण योगी होता है। १३. जिहा। जीम। १४. दे० 'भूमिका'।

भूमि-बंधक—भू० [मध्य० सं०] कुट्टरभूमा।

भूमि-बंध—भू० [सं० ष० तं०] भूकण। भूडोल।

भूमिका—स्त्री० [सं० भूमि/की+क; टाप् अथवा भूमि+कन्-+टाप्] १. जमीन। भूमि। २. जगह। स्थान। ३. मकान के वे खंड जो एक दूसरे के ऊपर नीचे होते हैं। मंजिल। ४. योग में क्रम क्रम से प्राप्त होनेवाली उन्नत स्थितियों से प्रत्येक। भूमि। ५. किसी प्रकार की रचना। ६. कोई ऐसा आधार जिस पर कोई चीज आबिल या स्थित हो। पृथ्विभूमि। (वैक घ्राउड) ७. आज-कल किसी वय के आरंभ में लेखक का बहु-वचन्य जिससे उस वंश से सम्बन्ध रखनेवाली आदर्शक तथा शास्त्रिक बातों का उल्लेख होता है। आमुख। भूच-बंध। (मिफेस) ८. कोई महत्त्वपूर्ण बात कहने से पहले कही जानेवाली वे बातें जिनके फल-स्वरूप उस महत्त्वपूर्ण बात का उपयुक्त परिणाम या फल होता या हो सकता हो।

भूरा—(किसी काम या बात की) भूमिका बाँधना—कुछ कहने से पहले उसे प्रभाववाली बनाने के लिए कुछ और बातें कहना। जैसे—जरा सी बात के लिए इतनी भूमिका मत बाँध करो।

९. वेदान्त के अनुसार जिस की पूर्व अवस्थाएँ, जिनके नाम ये हैं—साध, भूड, विजित, एकाग्र और विषद। १०. नाटकों आदि में किसी पात्र का अभिनय तथा कार्य। (पार्ट) जैसे—जिहा जी की भूमिका में योगनस्त्रम ने बहुत प्रशंसीय काम किया था। १२. भूमिपूर्व आदि का किया जानेवाला भूमाग या सजावट।

भूमिका-गत—भू० [सं० हिं० तं०, उप० सं०] वह जिसने नाटक में अभिनय करने के लिए कोई विशिष्ट वेद-भूमा धारण की हो।

भूमि-कुम्हार—भू० [सं० मध्य० सं०] गरमी के दिनों में होनेवाला कुम्हड़ा जो जमीन पर होता है। मुँद-कुम्हड़ा।

भूमि-ज्वरी—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार की छोटी लज्ज।

भूमि-गत—वि० [हिं० सं०] १. जमीन पर गिरा या पड़ा हुआ। २. जो भूमि की सतह के नीचे हो। ३. जो जन-साधारण के सामने से हटकर कहीं छिपा हो। (अंडर-ग्राउंड)

भूमि-गृह—भू० [सं० मध्य० सं०] तहखाना।

भूमि-पंचक—भू० [सं० मध्य० सं०] १. एक प्रकार का पीषा जिसकी छाल, चने तथा अरई आदि के रूप में प्रयुक्त होती है। मुरईचपा। २. उन्नत पीषे का फूल।

भूमि-थल—भू० [सं० ष० सं०] भूकण।

भूमिबंध—भू० [सं० मध्य० सं०] लोटा जामन।

भूमिच—वि० [सं० भूमि/च+ङ] भूमि से उत्पन्न।

भू० १. मंगल ग्रह। २. सोना। स्वर्ण। ३. सीसा। ४. नरकासुर राक्षस। ५. भू-बवंद।

भूमि-अल—भू० [मध्य० सं०] जमीन के नीचे रहने या होनेवाला पानी।

भूमिका—स्त्री० [सं० भूमि/अ+ङ, टाप्] जानकी। सीता।

भूमि-आल—वि० [सं० पं० तं०] जो भूमि से उत्पन्न हुआ हो। भूमिच। ५० पेड़। भूज।

भूमि-जीवी (विष्णु)—भू० [सं० भूमि/जीव (जीन)+जिनि, उप० सं०]

१. वह जिसकी जीविका का आधार भूमि हो। छुषक। २. बैद्य।

भूमि-तल—भू० [ष० तं०] पृथ्वी का ऊपरी भाग या सतह।

भूमि-तल—स्त्री० [सं०] १. जमीन नापने की किय। २. किसी देश, प्रदेश या भूखंड के रूप, सीमा, स्थिति आदि का चित्र या रेखा तैयार करने के लिए ज्यामितिक के सिद्धांतों के अनुसार कोणी, रेखाओं आदि का विचार करते हुए नाप-जोख करना। (सर्व) जैसे—नारत सत्कार का भू-मित विमान।

भूमि-त्व—भू० [सं० भूमि+त्व] 'भूमि' का धर्म या भाव।

भूमि-वेध—भू० [सं० ष० सं०] १. ब्राह्मण। २. राजा।

भूमि-धर—भू० [सं० ष० तं०] १. पर्वत। पहाड़। २. शेष-नाग। ३. आज-कल वह किसान जिसमें उचित वन देकर जमीन पर सेती-बारी करने का स्थयी अधिकार प्राप्त कर लिया हो।

भूमि-पति—भू० [सं० ष० सं०] राजा।

भूमिपाल—भू० [सं० भूमि/पाल (पालन करना)+जिष्+अच्] राजा।

भूमिपिशाच—भू० [सं० सं० तं०] ताड़ का पेड़।

भूमि-गुप्त—भू० [ष० सं०] १. मंगल ग्रह। २. नरकासुर का एक नाम। ३. द्योनाक। सोना-पाड़।

भूमि-गुणी—स्त्री० [ष० सं०] सीता।

भूमि-गुरदर—भू० [ष० सं०] राजा दिलीप का एक नाम।

भूमि-भूक् (भू)—भू० [सं० भूमि/भूक् (उपभोग करना)+जिष्+अच्] राजा।

भूमिभूत—भू० [सं० भूमि/भू (भरण करना)+जिष्+तुच्] राजा।

भूमि-भोग—भू० [ष० सं०] वह राष्ट्र या राजा जिसके पास बहुत अधिक भूमि हो।

भूमिया—भू० [हिं० भूमि+इया (प्रत्यय)] १. भूमि का मूल अधिकारी और स्वामी। २. जमींदार। ३. किसी देश का प्राचीन और मूल निवासी। ४. ग्राम-देवता।

भूमि-वह—भू० [सं० भूमि/वह (ऊपर चढ़ना)+ङ] भूज।

भूमि-वहा—स्त्री० [सं० भूमि/वह+टाप्] भूज।

भूमि-रुक्ता—स्त्री० [सं० सं० तं०] सफेद फूलोंवाली अपराजिता।

भूमि-रुक्ता—स्त्री० [मध्य० सं०] शाल पुष्पी।

भूमि-रुचण—भू० [ष० सं०] शीरा।

भूमि-लाभ—भू० [ष० सं०] मूल्य।

भूमि-लेप—भू० [ष० सं०] गोबर।

भूमि-बद्ध—भू० [ष० सं०] भूत घरीर। देकर।

भूमि-बल्ली—स्त्री० [मध्य० सं०] मुँद बैलगा।

भूमि-संधि—स्त्री० [मध्य० सं०] १. वह संधि जो परस्पर मित्रकर कोई

भूमि प्राप्त करने के लिए की जाय। २. शत्रु को कुछ भूमि देकर उससे की जानेवाली सन्धि।
 भूमि-संज्ञा—स्त्री० [ब० स०, + टाप्] जानकी। सीता।
 भूमि-साक्ष—वि० [सं० भूमि+साक्ष (प्रत्य०)] जो गिर कर जमीन के साथ निरूक्त गया हो। जैसे—भूमिक में मकानों का भूमिसाक्ष होता।
 भूमि-सुर—पुं० [ब० स०] १. मंगल ग्रह। २. नरकालुर। ३. केवली।
 कौष्ठ। ४. पेड़। वृक्ष।
 भूमि-सुता—स्त्री० [ब० स०] जानकी जी।
 भूमि-सुर—पुं० [प० स०] ब्राह्मण। मयूर।
 भूमि-स्वामिन—पुं० = मयूरालय।
 भूमि-स्वर्ण—पुं० [ब० स०] उपासना के लिए बीड़ों का एक प्रकार का आसन। बजासन।
 भूमि-हार—पुं० [ब० स० भूमि; हिं० हार (प्रत्य०)] एक ब्राह्मण जाति जो प्रायः उत्तर-प्रदेश और बिहार में बहानी और प्रायः सेती-नारी से जीविका-निर्वाह करती है।
 भूमि-त्रि—पुं० [भूमि+त्रि, ब० स०] राजा।
 भूमी—स्त्री० [सं० भूमि+ङीप्] भूमि।
 भूमि-च्छ—पुं० [सं० भूमि+च्छ+ङ] वृक्ष। पेड़।
 भूमि-धर—पुं० [सं० भूमि+ईधर, ब० स०] राजा।
 भूम्या-मलकी—स्त्री० [भूमि+आमलकी, मध्य० स०] मुँह अँवला।
 भूम्यच्छ—पुं० [सं० भूमि+उच्छ] ज्योतिष में, किसी ग्रह की वह स्थिति जब वह अपनी कक्षा पर चलेते समय पृथ्वी से अधिकतम दूरी पर होता है। (एपोजी)
 भूय (भू)—अव्य० [सं० भू, वृत्+प्रत्यय (प्रत्यय)+विष्णु] पुनः फिर।
 भूय०—भू (पृथ्वी)।
 भूयन्—स्त्री० [हिं० भूय] पृथ्वी। (वि०)
 भूयसाः (भूयः)—अव्य० [सं० भूयस्+शस् (वीच्यार्थं) स-लोट] बहुत अधिक रूप में।
 भूयस्—वि० [सं० बहु+ईयञ्, ई-लोट, भू-आदेश] बहुत। अधिक।
 भूयसी—वि० [सं० भूयस्+ङीप्] बहुत अधिक।
 क्रि० वि० बार बार।
 भूयसी बलिषा—स्त्री० [सं० व्यस्तपद] १. कोई धार्मिक या मंगल कृत्य सफल होने पर अन्त में ब्राह्मणों को बाँटी जानेवाली दक्षिणा। २. लाक्षणिक अर्थ में किसी बड़े शरणा के भाव होनेवाला कोई छोटा शरण।
 भूमिच्छ—वि० [सं० बहु+इच्छन्, मिट्-आगम, भू-आदेश] बहुत अधिक। अत्यधिक।
 भू-भूषता—स्त्री० [सं० भू० तं०] भूमि ऊर्ध्वरी। मुँह ऊर्ध्वर।
 भूवीभूषा—अ० [सं० भूयस्, बीषा में द्वित्व] पुनः पुनः। बार बार।
 भूवीविद्य—पुं० [सं० ब० स०] प्राचीन भारत में ऐसा विद्या जो छन्द, ब्राह्मण, कल्प, बर्ष आखण्ड, काष्ठा आदि अनेक विद्याओं का अच्छा ज्ञाता या पारंगत होता था।
 भूर्—पुं० [सं० भू/भू (होना)+रन्] अन्तरिक्षलोक से नीचे पैर रखने योग्य स्थान। लोक।
 भूर्—वि० [सं० भूर्] अधिक बहुत।
 भूर्० [हिं० भूर्भृत्] पाठ। रेत।

पुं० [?] वीलों की एक जाति।
 भूर्ज (अर्ज)—पुं० [सं० ब० स०] पृथ्वी की भूमि। नरः। मिट्टी।
 भूर्ज० [सं० भूर्] भोजन।
 भूर्जलपत्र—पुं०=भोज पत्र।
 भूर्जुर—वि०=भूर्-भूर्।
 अव्य०, वि०=भूर्-भूर्।
 भूर्जला—पुं० [विश०] वीलों की एक जाति।
 भूर्-लोखरिया—स्त्री० [हिं० भूर्=भारु+लोखरी=लोगरी] वह बसुई मिट्टी जिसमें लोगरी मीढ़ बनाती है।
 भूर्सी बलिषा—स्त्री०=भूयसी बलिषा।
 भूर्ता—वि० [सं० भूर्] मिट्टी के रंग का। मटमैले रंग का। साकी।
 पुं० १. मिट्टी का सा या मटमैला रंग। २. एक प्रकार का कच्चा विसकी पीठ काजी और पेट पर सकेद छीटें होती हैं। ३. कच्ची चीनी को पकाकर साक्ष करने के बजाई हुई चीनी। भूर्ता। ४. कच्ची चीनी। साक्ष।
 ५. चीनी। ६. यूरोप का निवासी। यूरोपियन। (राज०)
 भूर्ता कुम्हड़ा—पुं० [हिं० भूर्ता+कुम्हड़ा] पेठा।
 भूर्तामाल्य—पुं० [ब० स०] राज्य या शासन की भूमि से होनेवाली आय। (सं० देविभ्यु)
 भूर्ति—वि० [सं० भू/भू (होना)+क्ति] बहुत अधिक। प्रचुर। जैसे—भूर्ति-भूर्ति प्रशंसा करता।
 पुं० १. बह्ना। २. विष्णु। ३. विद्य। ४. इन्द्र। ५. सोना। स्वर्ण।
 अव्य० बहुत अच्छी तरह। उदा०—भूर् छोड़ो और भूर्सको भूर्ति सेटो।
 —भूमिलोचरण।
 भूर्ति शंका—स्त्री० [ब० स०] भूर्ता नामक मंत्र इन्द्र।
 भूर्तिगम—पुं० [सं० भूर्ति/भम् (जाना)+गम्] गथा।
 भूर्तिता—स्त्री० [सं० भूर्ति+तल्+टाप्] भूर्ति अर्थात् अधिक होने का भाव। अधिकता। बहुलता।
 भूर्ति-नेत्रम्—पुं० [ब० स०] १. जगिन। २. सोना। स्वर्ण।
 भूर्ति-बलिन—पुं० [ब० स०] विष्णु।
 भूर्तिषा—वि० [सं० भूर्ति/षा (देना)+ङ+टाप्] मयेष्ट दान देनेवाला।
 भूर्ति-व्याम (नृ)—पुं० [सं० ब० स०] तबं मनु के एक पुत्र का नाम।
 भूर्ति-गुष्ठा—स्त्री० [ब० स०] सात गुष्ठा।
 भूर्ति-मेना (भन्नु)—पुं० [ब० स०] चकमा।
 भूर्ति-फेता—स्त्री० [ब० स०] सातला।
 भूर्ति-बन्ध—पुं० [सं० ब० स०] भूतनाष्ट का एक पुत्र।
 भूर्ति-बला—स्त्री० [सं० ब० स०, +टाप्] अतिबला। कौहरी। ककड़ी।
 भूर्ति-नाग्य—वि० [ब० स०] भाग्यवान्।
 भूर्ति-संभरी—स्त्री० [ब० स०] सफेद तुलसी।
 भूर्ति-श्लकी—स्त्री० [सं० भूर्ति/मल्ल+अञ्+ङीप्] ब्राह्मणों या पांडवों का नाम की सता।
 भूर्ति-भाय—वि० [ब० स०] बहुत बड़ा भाग्यवी।
 पुं० १. सिवार। २. लोमड़ी।
 भूर्ति-भूलला—स्त्री० [ब० स०, कृप्+टाप्] ब्राह्मणों सता। पांडा।
 भूर्ति-रस—पुं० [ब० स०] ईश्वर। ऊँख।
 भूर्ति-रुष्ता—स्त्री० [ब० स०] सफेद अन्नपाकित।

भूरि-विभक्त—वि० [ब० सं०] बहुत बड़ा भूरिबीर।
भूरि-व्यवा (बध्)—पुं० [सं० ब० सं०] एक प्रसिद्ध योद्धा जो महाभारत के युद्ध में कौरवों की तरफ से लड़ा था तथा जिसका बध सायकवि ने किया था।

भूरिवेध—पुं० [सं० ब० सं०] मागतक के अनुसार एक मनु का नाम।
भूरिसेन—पुं० [सं० ब० सं०] राजा स्याकवि के तीन पुत्रों में से एक।
भूश्व—पुं० [सं० मू०/श्व० (उगना)+क] १. वृक्ष। पेड़। २. अर्जुन। वृक्ष। ३. शाल वृक्ष।

भूशहा—स्त्री० [सं० भूश्व+हापु] वृक्ष।
भूश्व—पुं० [सं० मू०/ऊर्ग+व्यप] भोजपत्र का वृक्ष।
भूश्व-पत्र—पुं० [सं० प० सं० वा ब० सं०] भोजपत्र।
भूश्वि—स्त्री० [सं० मू०/मरण करना]+नि,] १. पृथ्वी। २. मरुभूमि। रेगिस्तान।

भूश्वेध—पुं० [सं० श्रद्धा] के एक मानस-पुत्र का नाम।
भूर्लोक—पुं० [सं० मध्य० सं०] १. मर्त्य लोक। ससार। जगत। २. विषुवत रेखा के दक्षिण का देश।

भूश्व—स्त्री० [हिं० मूलना] १. मूलने की क्रिया या भाव। २. अज्ञान, असावधानता, भ्रम आदि के कारण कुछ का कुछ समझने और उसके फल-स्वरूप कोई अनुचित या गलत काम करने की अवस्था, या भाव। गलती। (एरर) जैसे—मैंने उन्हे बहुत समझ लिया, यह मुझसे बहुत बड़ी मूल हुई। ३. अर्थ, तथ्य, प्रक्रिया आदि ठीक तथ्य से न जानने या समझने के कारण गलत तथ्य से कुछ कर डालने की अवस्था, क्रिया या भाव। अशुद्धि। गलती। (मिस्टेक) जैसे—उनके साथ साक्षात् करके तुमने बहुत बड़ी मूल की। ४. कोई ऐसी चूक या त्रुटि जो अपनी न रहने या पूरा ध्यान न देने के कारण हो जाय। (स्लिप) जैसे—इस हिसाब में कई मूलें रह गयी हैं। ५. अनजान में या असावधानता के कारण होनेवाला कोई अपराध या दोष। कसूर। जैसे—(क) मैं अपनी इस मूल के लिये बहुत दुखी हूँ। (ख) भगवान सबकी मूलें क्षमा करता है।

भूलक—पुं० [हिं० मूल+क (प्रत्य०)] मूल करनेवाला। जिससे मूल होती हो।

भूल-भूक—स्त्री० [हिं० मूलना+भूकना] लेख वा हिसाब में ब्योरे आदि की ऐसी गलती जो द्रुष्टि-दोष आदि के कारण हो और बाद में जिसका सुधार हो सकता हो। (एरर्स एण्ड ओमिशन)
पद—भूल-भूक, लेना देना—एक पद जिसका प्रयोग लेन-देन के पुरजों, प्रायिकों आदि के अन्त में यह भूचित करने के लिए होता है कि कोई मूल रह गई हो तो उसका हिसाब वा केन-डेन बाद में हो सकेगा।

भूलमत्ता—स्त्री० [सं० सं० तं०] संक्षुप्युषी।

भूलमा—अ० [प्रा० मूल] ? उचित अज्ञान या ध्यान न रहने के कारण किसी काम या बात का स्मृति-क्षेप में न रह जाना। याद न रहना। विस्मृत होना। जैसे—मैं तो बिल्कुल मूल ही गया था, अच्छा किना जो तुमने याद दिला दिया। २. द्रुष्टि-दोष, असावधान आदि के कारण किसी प्रकार की गलती, त्रुटि या मूल करना। जैसे—मूल गया था।
पद—भूलकर भी—पुड़ता-पूर्वक प्रतिज्ञा करते हुए। कदापि कभी-भी अपवाद किसी भी वधा में। (केवल तद्विक प्रसंगों में) जैसे—(क) अब

कभी भूलकर भी उनका साथ न करना। (ख) वहाँ मैं भूलकर भी नहीं जाऊँगा।

३. किसी प्रकार के बोधे या भ्रम में पड़कर कर्तव्य न करना या उचित मार्ग से हटकर दृष्टर-उचर हो जाना। जैसे—तुम तो दूसरों की बातों में भूलकर अपनी हानि कर बैठते हो। ४. उचित प्रकार की बातों के फलस्वरूप किसी पर अनुरक्त होना। जैसे—तुम भी किसीकी बातों में भूले हो, वह तुन्हे बहुत बोला देगा। उदा०—मैं तो तोरी लाल पगिया पै मूली दे साजनी।—लोकगीत। ५. किसी प्रकार के घमण्ड के बध में होकर इतरना। सर्व पूर्वक प्रसन्न रहना। जैसे—(क) उन्हें एक मकान मिल गया है, इसी पर वह भूले हुए हैं। (ख) सांसारिक वैभव पर भूलना नहीं चाहिए। ६. किसी चीज का जो जाना। गुम होना। जैसे—हमारी कलम यहाँ कहीं मूल गई है।

सं० १. कोई बात इस प्रकार मन से हटा देना कि फिर उसका ध्यान न आवे। याद न रखना। विस्मृत करना। जैसे—अब तो वह अपनी पुरानी हालत मूल गये है। २. असावधानता, उदासीनता, उपेक्षा, द्रुष्टि-दोष, प्रयाद आदि के कारण, परन्तु अनजान में वह न करना भी करना चाहिए। जैसे—उम पत्र में मैं एक बात लिखना मूल गया था।

३. अनजान में उस ओर ध्यान न देना जिधर ध्यान देना आवश्यक और उचित हो। जैसे—मुझे अपने जो वचन दिया था वह तो आप मूल ही गये। ४. गलती या चूक के कारण कर्तव्य, ठीक मार्ग आदि से विचलित होकर दृष्टर-उचर हो जाना। जैसे—वह रास्ता भूलकर कहीं का कहीं चला गया। ५. कोई चीज जो या गवां देना। जैसे—मैं अपनी घड़ी बाजार में मूल आया हूँ।

वि०—मूलना।

भूलभूकिया—स्त्री० [हिं० मूलना+ऐया (प्रत्य०)] १. ऐसी इमारत जिसमें अत्यधिक गलियाँ तथा दरवाजे होते हैं और जिसमें जाकर आदमी रास्ता भूल जाता है और जल्दी बाहर नहीं निकल पाता। २. खेल-तमाषों के लिए रेखाओं, दीवारों आदि से बनाई हुई उचित प्रकार की रचना। चक्कड़। (लैबिरिन्थ) ३. बहुत घुसाव-फिराववाली बात। पेचीली बात।

भूलिगा—पुं० [सं०?] अरावली के उत्तर-पश्चिम में रहनेवाली एक प्राचीन जाति।

भूलोक—पुं० [सं० मध्य० सं०] मर्त्य-लोक। भूतल। जगत।

भूलोटन—वि० [हिं० पुं० लोटना] पृथ्वी पर लोटनेवाला।

भू-बल्लभ—पुं० [सं० प० तं०] राजा।

भूबा—वि०, पुं०—भूभा।

स्त्री०—भूबा।

भूबारि—पुं० [हिं०] वह ह्यान अर्हा हाथी पकड़कर रले या बांधि जाते हैं।

भू-भिक्षान—पुं० [सं० प० तं०] बहु भिक्षान जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि पृथ्वी की मिट्टी और पत्थर की तहे किस प्रकार और कब कब बनती रही हैं, और आरम्भ से कब तक किस प्रकार विकसित हुई हैं; तथा निम्न प्रकार की मिट्टी तथा चट्टानों के नीचे किस प्रकार के खनिज पदार्थ दबे रहते हैं। भूगर्भ-शास्त्र। भौतिकी (जियोलोजी)

भू-भिक्षा—स्त्री०—भू-भिक्षान।

भूभाक—पुं० [सं० सं० तं०] राजा।

मूष्य—पुं० [सं० मू०/षी (शयन करना) +अच्,] बिल बनाकर रहनेवाले जानवर। जैसे—मोह, बूहा, नेबला, लोयकी आदि।
मूष्या—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] १. जमीन पर सोना। २. शयन करने की मूषि।
मूषकर्ता—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार का कद।
मूषायी (गिम्)—वि० [सं० मू०/षी (शयन करना) +गिनि,] १. पृथ्वी पर सोनेवाला। २. जो टूट-फूट कर जमीन पर गिर पड़ा हो। ३. मरा हुआ। मृत।
मूषास्त्र—पुं० =मूषिशास्त्र।
मूषुधि—स्त्री० [ब० सं०] कीच-पीत या धोकर की जानेवाली मूषि की बुद्धि या सफाई।
मूषुष्क—पुं० [सं०] मूषुसंपत्ति पर लगनेवाला कर। (एलेट इष्टी)
मूष्य—पुं० [सं०/मूषु (भूषित करना) +स्युट्—अन] १. अलंकार। गहना। जेवर। २. सोना बढ़ानेवाली कोई वस्तु या गुण।
 ३. विष्णु।
मूषणीय—वि० [सं०/मूषु (भूषित करना)। जनीयर] अलंकृत किये जाने के योग्य।
मूषण—पुं० =मूषण।
मूषणा—सं० [सं० मूषण] भूषित करना। अलंकृत करना। सजाना। अ० अलंकृत होना। सजाना।
मूषा—स्त्री० [सं०/मूषु; गिच्+ज+टाप्] १ गहना+जेवर। २. अलंकृत करने की क्रिया या साध।
 पद—बेध-मूषा।
मूषाचार—पुं० [मूषा-आचार, ब० सं०] १. कपड़े आदि पहनने का विशिष्ट ढंग। २. समाज के उच्च दर्जा में या आहूत उग या रीति। (कैला)
भूषित—पुं० क० [सं०/मूषु+गिच्+क्त] १. मूषणों से युक्त किया हुआ। अलंकृत। २. सजा हुआ।
भूषण—वि० [सं०/मूषु (सौना) +स्युट्] १. होनेवाला। २. ऐश्वर्य का बन्धक।
भूष्य—वि० [सं०/मूषु+गिच्+तु] भूषित किये जाने योग्य। सजाये जाने के योग्य।
भूषसंपत्ति—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] जमीन के रूप में होनेवाली संपत्ति (जेत, जमींदारी आदि)।
भूषंस्कार—पुं० [सं० ब० सं०] यज्ञ करने से पहले मूषि को परिष्कृत करने, नापने, रेखाएं खीचने आदि के कार्य।
भूष—पुं०—मूषा।
भूषठ—पुं० [सं० मू०/षठ?] कुत्ता। स्वान।
भूषन—पुं० [हिं० मूँकना] कुत्तो का बोलना। मूँकना।
 पुं० =मूषण।
भूषणा—अ० [हिं० मूँकना] कुत्तो का शब्द करना। मूँकना।
भूषा—पुं० [सं० तुष] भेड़ों, गैँ आदि के पंजाओं के डठलों के सूखे छोटे महीन टुकड़े जो गाय-भैसाँ आदि को खिलाये जाते हैं।
भूषी—स्त्री० [हिं० मूषा] १. किसी बीज के पतले या महीन छिलकों के छोटे छोटे टुकड़े जैसे—ईसबगोल की भूषी। २. मूषा। ३. धोकर।

भूषीकर—पुं० [हिं० भूषी+कर] अगहन में होनेवाला एक तरह का धान जो उसका बाजल।
भूषुत—वि० [सं० ब० सं०] जो पृथ्वी से उत्पन्न हुआ हो।
 पुं० १ मंगल। २. वैश-भूष, भूष और बनस्पतियाँ। ३. नरकासुर का एक नाम।
भूषुता—स्त्री० [सं० ब० सं०] सीता।
भूषुर—पुं० [सं० सं० सं०] पृथ्वी के देवता ब्राह्मण।
भूषुस्वन्न—पुं० [सं०] चट्टानों, पहाड़ों आदि के डालुरें पाथरें पर से मिट्टी और पत्थर के बड़े-बड़े डेरों का खिसककर नीचे आना या गिरना। (लेख-स्लिप)
भूषुत्थ—पुं० [सं० ब० सं०, सुट्-आगम] एक प्रकार की भास। घटियारी।
भूष्या—पुं० [सं० सं० मू०/स्या (उहरना) +क, आ-लोप] मनुष्य।
भूषुकोट—पुं० [ब० सं०] कुडुरमुत्ता।
भूषुस्वर्ण—पुं० [सं० सं० सं०] सुमेरु पर्वत।
भूषुस्वामी (गिम्)—पुं० [ब० सं०] जमीन का मालिक। जमींदार।
भूषरा—पुं० =भूईहर।
भूंग—पुं० [सं०/मूषु (भरण करना) +गुणु, नुट्-आगम] १. गौर। २. एक प्रकार का कीड़ा जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि यह किसी कीड़े के डोले को पकड़कर ले आता है और उसे मिट्टी से ढक देता है और उस पर बैठकर और बंक मार-मार कर हत्ती डेर तक और हत्ती जोर से "मिन्न मिन्न" करता है कि कीड़ा मी उठी की तरह हो जाता है। २. भूण-राज पक्षी।
भूंगक—पुं० [सं० भूंग+कन्] भूंगराज पक्षी।
भूंगज—पुं० [सं० भूंग+जन् (उत्पन्न करना) +ङ] अण्ड।
भूंगजा—स्त्री० [सं० भूंगज+टाप्] मारपी।
भूंग-मिया—स्त्री० [ब० सं०] माघवी लता।
भूंग-बंधु—पुं० [ब० सं०] १. कृद का पेड़। २. कदम का पेड़।
भूंगमोही—पुं० [सं० मूषु/मूह (मूषण होना) +गिच्] १. बंधा। २. कनक चपा।
भूंगरज—पुं० =भूंगराज।
भूंगराज—पुं० [सं० भूंग/राज (शोभित होना) +अच्], १. भेंगरा नामक बनस्पति। मङ्करिया। घमरा। २. दे० 'भूंग' कीड़ा।
भूंगरोट—पुं० [सं० भूंग/रुट् (शब्द) +अच्, पुषी० सिद्धि] १. शिब के द्वारपाल। २. लोहा।
भूंग-बल्लभ—पुं० [ब० सं०] भूमि कदम।
भूंग-सोबर—पुं० [ब० सं०] भेंगरा।
भूंगाभीष्ट—पुं० [भूंग-अभीष्ट, ब० सं०] आम का मूष।
भूंगार—पुं० [सं० भूंग/र (गति) +अच्] १. लोण। २. सोना। स्वर्ण।
 ३. पानी पीने के लिए बना हुआ सोने का एक प्राचीन पाष। ४. जल का अभिषेक करने की शारी।
भूंगारि—स्त्री० [सं० भूंग/र (प्रप्त होना) +इनि] केवड़ा।
भूंगारिका—स्त्री० [सं० भूंगार+कन्; टाप्, स्युट्] सिल्ली नामक कीड़ा।
भूंगाबली—स्त्री० [सं० भूंग-आबली, ब० सं०] गौरों की पंक्ति।
भूंगी (गिम्)—पुं० [सं० भूंग+इनि] १. शिब जी का एक परिष्कृत

गण। २. बट वृक्ष। बड का पेड़। ३. मौर। ४. तितली।
५. अतिविधा। अवीस।

स्त्री० [सं० भृगु+ङीष्] मृग नामक कीट की भावा। बिलनी।

मूनी-कल—ए० [सं० ब० सं०] अमड़ा।

मूनीषा—स्त्री० [सं० मग्नि-ईश, ब० सं०] शिव। महादेव।

मूनीष्या—स्त्री० [सं० मृग-व्यत्, ब० सं०] १. धीकुआर। २. मारपी।
३. मृषती स्त्री। जमान औरत।

मूकुटी—स्त्री० [सं० मू+कुटी] मीह।

मृगु—ए० [सं० वृ/भ्रम्+कृ, सभ्यसागर, कुल] १. एक प्रसिद्ध मुनि जो शिव के पुत्र और सप्तर्षियों में से एक माने जाते हैं। कहते हैं कि इन्होंने भगवान विष्णु की छाती में लाल मारी थी। २. परशुराम जो उक्त मुनि के वंशज थे। ३. सूक्तार्थ्य। ४. शुकवार। ५. शिव। ६. जमदग्नि। ७. पहाड़ का ऐसा किला जहाँ से गिरने पर मनुष्य बिलकुल नीचे आ जाय, बीच से कहीं रुक न सके।

मृगुक—ए० [सं० मृगु+कन्] पुराणानुसार कर्मों तक के एक देश का नाम।

मृगुकषत्रु—ए० [सं०] आधुनिक मद्रोच नगर।

मृगुज—ए० [सं० मृगु/जन् (उल्लसि)+ज] १. मृगु के वंशज। २. सूक्तार्थ्य।

मृगु-मृगु—ए० [सं०] हिमालय की एक चोटी जो एक पवित्र तीर्थ के रूप में मानी जाती है।

मृगुमन्व—ए० [सं० मृगु/मन्व (प्रसन्न करना)+गिष्+अच्] परशुराम।

मृगुनाथ—ए० [सं० मृगु] परशुराम।

मृगु-नाथक—ए० [सं० मृगु] परशुराम।

मृगु-पति—ए० [सं० मृगु] परशुराम।

मृगु-पात—ए० [सं० मृगु] पहाड़ की चोटी पर से गिरकर आत्म-हत्या करना।

मृगु-पुत्र—ए० [सं० मृगु] एक।

मृगु-रेखा—स्त्री० [मध्य० सं०] मृगु-रस्ता।

मृगु-रस्ता—स्त्री० [मध्य० सं०] मृगु मुनि के चरण का चिह्न जो विष्णु की छाती पर अंकित है।

मृगु-रस्त्री—स्त्री० [मध्य० सं०] १. तैत्तिरीय उपनिषद् की तीसरी बल्ली जिसका अध्ययन मृगु मुनि ने किया था। २. मृगु लता।

मृगुसूत—ए० [सं० मृगु] १. शुकार्थ्य। २. शुक गृह।

मृत—ए० [सं० मृ/मरण करना]+कल्] [स्त्री०] मृता। १. मृत्यु। दास। २. सेवक। नौकर। ३. बोझ डोनेवाला दास जो मितालाभ में अथम रहा गया है।

मृ० ह० १. मरा हुआ। मृति। २. पाला-पीसा हुआ। ३. (वेतन, धन आदि) चुकाया हुआ। (पेड़)

मृतक—ए० [सं० मृत+कन्] वेतन पर काम करनेवाला नौकर।

मृतक-कल—ए० [सं० कर्म० सं०] वेतन पर रखी हुई सेना। (कौ०)

मृतकाम्यापक—ए० [सं० मृतक-अभ्यापक, कर्म० सं०] वह जो वेतन पर अध्यापन-कर्म करता हो।

मृति—स्त्री० [सं० मृ/कितन्] १. मरने की किया या भाव। २. पालन-पोषण। ३. नौकरी। ४. तनकवाह। वेतन। ५. मजदूरी। ६. धाम। मृत्यु।

मृतिमुक् (ञ्)—ए० [सं० मृति/मुक् (उपभोग करना)+विभ्य, कुल] वेतन पर काम करनेवाला नौकर।

मृति-मोपी (अथ) वि० [सं० मृति/मृभ्य+गिणि, उप० सं०] वेतन लेकर या माड़े पर किसी का काम करनेवाला। वेतन-मोपी। (मर्त-नरी)

मृति-रुच्य—ए० [सं० ब० सं०] १. पारिवर्षिक। २. पुरस्कार। इनाम। मृथ्य—ए० [सं० मृ/मृथ्य, पुक्] [स्त्री०] मृत्वा। सेवक। नौकर। मृथ्या—स्त्री० [सं० मृथ्य+लट्; टाप्] मृथ्य होने की अवस्था, धर्म या भाव।

मृथ्य-भर्ता (मृं)—ए० [सं० ब० सं०] गृह-स्वामी।

मृथ्या—स्त्री० [सं० मृथ्य+टाप्] १. दासी। २. तनकवाह। वेतन।

मृषि—ए० [सं० मृ/भ्रम्; इन्, किल्, सम्प्रसारण] १. धूमनेवाली वायु। बहडर। २. बहते हुए पानी का चक्कर। मौर। ३. वैदिक काल की एक प्रकार की दीपा।

वि० धूमने या चक्कर लगानेवाला।

मृश—कि० वि० [सं० मृ/मृश् (नीचे गिरना)+क] अत्यधिक। बहुत अधिक।

मृश-कोषण—वि० [सं० कर्म० सं०] बहुत अधिक क्रोधी।

मृष्ट—वि० [सं० मृष्ट्/प्रम् (पकाना)+कत्, सम्प्रसारण] मूना हुआ। मृष्टकार—ए० [सं० मृष्ट/कृ+अण्] मजदूर।

मृष्टाश्र—ए० [सं० मृष्ट-अश्र, कर्म० सं०] लाई।

मृष्टि—स्त्री० [सं० मृष्ट्/प्रम्+कितन्] १. मूने की किया या भाव। २. सूनी वाटिका।

मैत्रसी—स्त्री०—मौती।

मोषा—वि० [वेत्त०] (व्यक्ति) जिसकी आँखों की पुतलियाँ कुछ टेढ़ी-तिरछी चलती हो। अथवा एक पुतली कुछ ताकने में तिरछी होती हो।

मैठ—स्त्री० [हिं० मैटना] १. परिचितों में प्रायः कुछ समय के उपरान्त होनेवाला मिलन। मुलाकात। जैसे—आज तो कई महीनों पर आपने मैठ हुई है। २. पत्नी आदि में प्रकाशित करने के लिए किसी बड़े आदमी से मिलकर उसके विचार जानने का काम। ३. वह वस्तु जो बड़ों को आदर तथा नम्रतापूर्वक उपहार या सोगात के रूप में दी जाय। जैसे—समा ने इन्हे बहुत सी वस्तुके मैठ की थी।

मिथेय—उपहार और 'मैठ' में अंतर यह है कि उपहार तो प्रसन्नता, शुभासता और सद्भाव सूचित करने के लिए दिया जाता है, पर 'मैठ' में आदर और पूजनीयता का भाव प्रथान होता है।

कि० प्र०—देना।—मिलना।

४. देना, पुण्य व्यक्ति आदि की सेवा में मक्ति और श्रद्धा-पूर्वक उपस्थित की जानेवाली वस्तु या धन। जैसे—महँत जी को मक्ती से हर साल हजारों रुपये की मैठ मिलती है। ५. उपहार।

कि० प्र०—बनना।—बहाना।

६. बचिका देवी की स्तुति के रूप में गाये जानेवाले एक प्रकार के मन्त्रन। (पञ्चाब)

मैटवा—सं० [सं० मित्र्—आयने-सामने आकर मित्रना] १. मुलाकात करना। मिलना। २. गले लगाकर आलिंगन करते हुए मिलना। ३. किसी की कोई चीज मैठ रूप में देना। (पश्चिम)

भेदना—अ०=भेदना।

भेद—स्त्री०=भेद।

भेदना—स०=भिद्योना।

भेद०=पुं०[सं० भेद] भेद। मर्मः रहस्य।

भेद०=पुं०/बी (भय करना)+कन्, गुण] भेदक।

भेदात्म—पुं०[सं० भेद-आत्मन, उपनि० सं०] भेद-साधन का एक प्रकार का आसन।

भेकी—स्त्री०[सं० भेक+ङीष्] १. भेदकी। २. मङ्कलपर्णी।

भेका—पुं०=भेस (वेध)।

भेकजा—पुं०=भेकज।

भेज—स्त्री०[हिं० भेजना] १. वह जो कुछ भेजा जाय। भेजी हुई चीज। २. भूमि-कर। लगान। ३. अनेक प्रकार के कर जो जमीन और उसकी उपज पर लगाये जाते हैं।

भेजना—स०[सं० भजन्] १. आह्वय करके या आदेश देकर किसी व्यक्ति को कही जाने में प्रयुक्त करना। प्रवृत्तन करना। रवाना करना। जैसे—नीकर (या लड़के) को सामान लाने के लिए बाजार भेजना। २. किसी के द्वारा किसी साधन से ऐसी क्रिया करना कि कोई चीज किसी दूसरी जगह चली और पहुँच जाय। जैसे—झाक से पत्र या रेल से माल भेजना।

भेजवाना—स०[हिं० भेजना का प्रे०] भेजने का काम किसी दूसरे के द्वारा करना। जैसे—नीकर के ह्राप पत्र भेजवाना।

भेजो० क्रि०=भेजना।

भेजा—पुं०[सं० भज्जा ?] क्षोभणी के अन्दर का मृदा। मगज।

मुहा०=भेजा खाना=दे० 'मगज' के अन्तर्गत 'मगज खाना'।

पुं०[हिं० भेजना] १. वह चीज जो भेजी जाय। किसी के यहाँ भेजा जानेवाला पदार्थ। २. चदा।

भेजाधार—पुं०[हिं० भेजा+धार?] १. किसी के सहायताार्थ विशेषतः किसी का देय धन चुकाने के उद्देश्य से चदे के रूप में इकट्ठा किया हुआ धन। २. इस प्रकार धन इकट्ठा करने की एक मध्ययुगीन प्रथा।

भेडा—स्त्री०=भेद।

भेदना—पुं०[दिस०] कपास के पीपे का फल। कपास का डोंडा।

†सं०=भेदना।

भेड़—स्त्री०[सं० भेध] [पुं० भेडा] १. बकरी के आकार-प्रकार का एक प्रसिद्ध पालतू चौपाया जिसका ऊत तथा साल विविध कामों में आती है और मांस खाया जाता है।

पध—मेड़िया भैसान

२. उक्त पध की तरह सीधा-सादा और मूल्य व्यक्ति। उदा०=मेड़ धाबोगे, धारेपी जो दो मूत्र तुम्हें।—कोई शायर।

स्त्री०[?] भेड़ने की क्रिया या भाव। २.पथङ या धील। ३. तबि की बनी हुई एक प्रकार की तुट्टी या थोपा।

भेड़ना—स०[हिं० भिड़ना] १. कोई चीज किसी के साथ सटाकर लगाना। भिड़ाना। २. (दरवाजा) बन्द करना। ३. (बूस या रिक्श) देना। (साबाक)

भेड़ा—पुं०[हिं० भेड़] भेड़ वाति का नर। भेड़ा। भेध।

५—३१

भेड़िया—पुं०[हिं० भेड़ या सं० भेड़?] कुत्ते से कुछ बड़ा एक जगली हिंसक पशु जो झूड़ बनाकर रहता है और बस्तियों से भूमिपरा, बलखें, छोटी छोटी पेड़-बकरीपरा, नहूँ बच्चे आदि उठाकर ले जाता है।

वि०[हिं० भेड़+इया (प्रत्य०)] भेड़ या भेड़ों का ता। जैसे—भेड़िया घेंसान।

भेड़िया-धंसाण—स्त्री०[हिं० भेड़+धेंसान] भेड़ों का सा अंध अनुकरण। विशेष—जब बड़े झूड़ में बलती है तब प्रायः ऐसा होता है कि एक भेड़ जिस ओर चलने लगती है बाकी सब भेड़ें भी बिना कुछ सोचे-समझे पुपचाप उसीके पीछे चलने लगती हैं। इसी आधार पर यह पद बना है।

भेड़ियार—पुं०[हिं० भेड़] गढ़रिया। भेड़े चरानेवाला।

भेडस्थ—वि०[सं०/मी (भय करना)+स्थ] १. जिससे डर या भय लगता हो। २. जिससे डरना या भयभीत होना उचित हो।

भेडा (सु)—वि०[सं०/विभू (विचारण)+सुच्] १. भेदन करने अर्थात् छेदनेवाला। २. विमद या लड़ करनेवाला। ३. हिंसे लगानेवाला।

५. भेद रहस्य को ज्ञानेवाला ५. दो पक्षों में मत-भेद उत्पन्न करनेवाला। ६. पद्वय्य करनेवाला।

भेद—पुं०[सं०/विभू] भेज १. भेदने या छेदने की क्रिया या भाव। २. फाट-काट, तोड़कर या ओर किसी प्रकार अलग करने की क्रिया। ३. किसी तल के बीच में से होकर या एक पारबं से दूसरे पारबं तक जाना। जैसे—सड़क भेद। ४. आभिन नाचनीय राजनीति में सद्बु को बस में करने के चार उपायों में से तीसरा उपाय जिसके अनुसार सद्बु पक्ष के लोगों को धन देकर या बहुकारक अपनी ओर मिला लिया जाता था अथवा उनमें परस्पर द्वेष उत्पन्न कर दिया जाता था। ५. कोई ऐसी भीतरी छिपी हुई तथा रहस्यपूर्ण बात जो दूसरे लोग न जानते हों। रहस्य।

क्रि० प्र०=भेदना।—पाना।—बताना।—मिलना।—लेना।

६. छिपा हुआ तात्पर्य। मर्म। उदा०=बैद-बधू हूँ सि भेद सो रही नाह मुस प्राति।—बिहारी। ७. वह गुण, तत्त्व या विशेषता जो प्रायः अनेक तन्त्र होयवाली चीजों में से किसी एक में होती है और जिससे दोनों का अन्तर जाना जाता है। ८. अन्तर। फरक। ९. क्लिय। तरहू। प्रकार।

क्रि० प्र०=भेदना।—पाना।—बताना।—मिलना।—लेना।

६. छिपा हुआ तात्पर्य। मर्म। उदा०=बैद-बधू हूँ सि भेद सो रही नाह मुस प्राति।—बिहारी। ७. वह गुण, तत्त्व या विशेषता जो प्रायः अनेक तन्त्र होयवाली चीजों में से किसी एक में होती है और जिससे दोनों का अन्तर जाना जाता है। ८. अन्तर। फरक। ९. क्लिय। तरहू। प्रकार।

भेदक—वि०[सं०/विभू+कृच्] भेदन करनेवाला। भेदने या छेदने वाला। २. लोगों में भेदभाव या लड़ाई-झगडा करानेवाला।

३. अती को भेदकर उनमें का मल निकालनेवाला। दस्तावर। देवक। ४. छायाई, लिखाई आदि में वह सांकेतिक चिह्न जो किसी अक्षर या वर्ण का विनिष्ट उच्चारण बताने के लिए उसके ऊपर या नीचे लगाया जाता है। जैसे—अक्षरों के मीन वर्ण का उच्चारण बताने के लिए ए में की विन्दी। पुं०=भेदक।

भेदकर—वि०=भेदक।

भेदकानिश्चयोक्ति—स्त्री०[सं० भेदक-अतिशयोक्ति] साहित्य में अतिशयोक्ति अलंकार का एक भेद जिसमें उपमय और उसके किये हुए वर्णन में भेद दिनाई देने पर उसे 'हीर हीर कुछ' कहकर अनेक सूचित किया जाता है।

भेदकारक—वि०[सं० घ० सं०] भेदक।

भेदकारी (रिनु)—वि०[सं०भेद/कृ+पिनि, उप० सं०]=भेदक।

भेदज्ञ—वि०[सं० भेद/ज्ञा (जानना)+क] भेद या रहस्य जाननेवाला।

भेद-ज्ञान—पु० [ब० त०] द्वैतभाव का ज्ञान।

भेदङ्गी—स्त्री० [देश०] बतौपी। रबडी।

भेदसा—स्त्री० [स० भेद] ? बहु स्थिति जिसमें भेद दिखाई देता हो।
उदा०—सात धाम भेद श्रेय सहित लखाते सर्व मूषे भाव भेदत नियंघन
विषाल के।—रत्नाकर। २ भेद।

भेदवादी (विन्) —वि० [स० भेद/वृद्ध (देखना) + गिणित्, उप०स०] वि०
दे० 'द्वैतवादी'।

भेदन—पु० [स०/विद् + ल्यट्-अन्] [वि० मंदनीय, भेद्य] ? भेदने
की क्रिया। छेदना। बेचना। विदीर्ण करना। २ भेद लेने की क्रिया
या भाव।

वि० [√विद् + ल्यु-अन्] ? भेदने या छेदनेवाला। २ दस्त लाने-
वाला। रेचक।

पु० १. अमलबेत। २ हीम। ३ सूत्र।

भेदना—स० [स० भेदन] ? भेदन करना। छेदना। बेचना। २ किसी
के मन का आशय जानने के लिए उनकी और धम्भीर दृष्टि से देखना।
उदा०—ता पाछे दुःखोपन भेदी गिर दिखीं मन बर्ष धरी।—सूर।

भेद-नीति—स्त्री० [ब० त०] दूसरी में आपस में फूट डालने या भेद-भाव
उत्पन्न करने की नीति।

भेद-बुद्धि—स्त्री० [ब० त०] ? यह समझना कि अमुक और अमुक में भेद
है। २ फूट। बिलगाव।

भेद-भाव—पु० [स०] ? मन में होनेवाला यह ज्ञान या भाव कि अमुक
और अमुक में भेद है। २ एकता या एकारमता का भाव या विचार।
३ मनेष्य का अभाव। ४ अन्तर। फरक। ५ आज-काल सबके प्रति समान
व्यवहार न करके किसी के प्रति पक्षपातपूर्ण और दूसरे के प्रति अनुचित
व्यवहार करना। (द्विस्त्रिभिनैवत)

भेद-मति—स्त्री०—भेद-बुद्धि। (दे०)

भेद-बाध—पु० द्वैतबाध।

भेद-वादी (विन्) —वि० द्वैतवादी।

भेद-बन्धि—स्त्री० [ब० त०] दो वस्तुओं में अन्तर करने की प्रणाली या
दण्ड।

भेद-साक्षी (विन्) —पु० [ब० त०] साग भेद या रहस्य जाननेवाला बहु
अभियुक्त जो शासन की ओर में माक्षी बन गया हो। इकजाली यवाह।
(एश्वर)

भेदित—पु० [स०/विद् + गिञ् + क्त] तत्र के अनुसार एक प्रकार का मत्र
जो निश्चित समसा जाता है।
मू० कृ० भेदा द्रुआ। छेदा द्रुआ।

भेदनी—पु० [स० भेदित् + डीप्] घट-वक्र को भेदन करने की दक्षिण
या सिद्धि। (तत्र)

भेदसा—पु० [स० भेद। हि० द्या (प्रत्य०)] ? बहु जो कोई भेद या
रहस्य जानता हो। २ जिसने किसी का कोई भेद जान लिया हो।
३. सूत। गुल्मचर।

भेदि—पु० [स० भिदुर+पुषां०] बन्ध।

भेदी (विन्) —वि० [स०/विद् + गिणित्] भेदन करनेवाला। फोड़ने-
वाला। भेद्यक।

पु० अमलबेत।

पु० भेदिता। जैसे—घर का भेदी लंका दाहे। (कहा०)

भेदीकरण—पु० [स० भेद + क्त्वि, ईत्थ, ईत्थ/कृ + ल्युट्-अन्] ? भेदने की क्रिया
या भाव। २ भेद-भाव या विभाग करने की क्रिया या भाव।

भेदुर—पु० [स० भिदुर, पुषो० भिदि] बन्ध।

भेद्य—वि० [स० भिद् (भेदन करना) + ग्युट्, गुण] जो भेदा या छेदा जा
सके। भेदे जाने के योग्य। (परमिण्युल)

पु० बंधक में शत्रुओं आदि की सहायता से किसी पीड़ित अग या फोड़े
आदि का भेदन करने की क्रिया। चॉर-फाड।

भेन—स्त्री०—भेन (बहन)।

भेना—स० [हि० भिनोना] भिनोना। तर करना।

भेभभ—पु० [देश०] एक तरह का पतला पहाड़ी बांस जिससे टुकड़ों की
निगाहियाँ बनाई जाती हैं।

भेर—स्त्री०—भेरी

भेरबा—पु० [देश०] एक प्रकार की लजूर (वृक्ष और फल)।

भेरा—पु० [देश०] मध्य तथा दक्षिणी भारत में होनेवाला मसाले आकार
का एक प्रकार का पेड़। मीरा।

!पु०—भंडा।

भेरि—स्त्री०—भेरी।

भेरिकार—पु० [स०/भेरी+अङ्ग, भेरि/कृ। अण्] भेरी बजानेवाला।

भेरी—स्त्री० [स० भेरि + डीप्] प्राचीन काल में रण-क्षेत्र में बजाया जाने-
वाला एक प्रकार का बड़ा ढोल।

भेरीकार—पु० [स० भेरी/कृ। अण्] [स्त्री० भेरिकारी] भेरी बजाने-
वाला।

भेद्य—वि० [स०] भयानक।

पु० १. गर्भ-धारण। २ एक प्रकार का पत्ती। ३ हिव जंतु (भेडिया,
सियार आदि)।

भेल—वि० [स०] ? कायर। डरफोका। मीर। २ चकन। ३. मूर्ख।
पु० एक प्राचीन ऋषि।

भेलना—स० [स० भेलन] ? तोड़ना-फोड़ना। २ अस्त-व्यस्त करना।
३ लूटना। (राज०)

भेला—पु० [हि० भेट वा स० भेलन?] ? भेट। मुलाकात। उदा०—गुरि
भेला मित्रि किआ प्रवेज।—प्रियौराज। २ सुठ-भेड़। मिहल। ३ एकत्र
होने की क्रिया या भाव। उदा०—गर चुका हूँ हेंग रहा यह देव कोई नहीं

भेला—निराशा।

पु० [?] [स्त्री० अलगा भेले] बड़ा गोला या तिंड। जैसे—गुड़
का भेला।

पु० मिहलावा।

भेली—स्त्री० [?] ? गुड़ का छोटा टुकड़ा या पिंड। २. गुड़। (स्व०)
३. किसी चीज का डला या पिंड।

भेष—पु० [स० भेद] ? मर्म की बात। भेद। रहस्य। २. तरह। प्रकार।
३. पारी। वागी।

भेषना—स०—भिनोना।

भेषा—पु० देवा।

भेष—पु० भेन।

भेषज—पु० [स० भिपज्+अण्] ? रोगी को निरोध तथा स्वस्थ करना या

बनाना। २. औषधि। औषध। दवा। ३. जल। पानी। ४ सुख। ५. विष्णु का एक नाम।

शेषज-करण—पु० [४० तं०] दवा तैयार करना। औषध बनाना।

शेषज-संघट्ट—पु० [सं०] किसी देश या राज्य के द्वारा प्रकाशित वह आधिकारिक ग्रंथ जिसमें प्रामाणिक और मान्य औषधों की तालिका और उनके वर्णों, बर्तों, मात्राओं आदि का विवेचन हो। (फारमाकोपिया)

शेषज्या—पु० [सं० शेषज-अंग, ४० तं०] वह पदार्थ जो दवा के साथ अथवा जिसमें दवा मिलाकर खाया जाता है और इसी लिए जो दवा का अंग माना जाता है।

शेषज्यागर—पु० [सं० शेषज-आगर, ४० तं०] औषधालय।

शेषना—सं० [हिं० शेष] १. भेस बनाना। स्वाग बनाना। २ कपडे आदि धारण करना। पहनना।

शेस—पु० [सं० शेष] १. किसी व्यक्ति का वह रूप-रंग जो उसके साधारण पहनने आदि से प्रकट होता है।

किं० प्र०—बदलना।—बनाना।

२ वह बनादेरी रूप-रंग और नकली पहनना आदि जो अपना वास्तविक रूप या परिचय छिपाने के लिए धारण किया जाय। कृत्रिम रूप और वस्त्र आदि।

किं० प्र०—घरना।

शुद्धा—भेस बदलना या बनाना—किसी दूसरे का ऐसा रूप रंग धारण करना और पहनना पहनना जिसे देखकर लोग सहसा उस व्यक्ति को पहचान न सके, और वही व्यक्ति समझें जिसका भेस उसने बना रखा हो।

३. योगियों, साधु-सन्तानियों आदि का वह रूप-रंग और पहनना जो उसके विशिष्ट संप्रदाय का सूचक होता है। उदा०—कौन से भेस में, कौन गुरु के चेला।—कबीर।

शेसज*—पु०-मेषज।

शेसना—सं० [सं० हिं० शेष] १. वस्त्रादि पहनना। २ किसी का भेस धारण करना।

शेस—स्त्री० [सं० महिष] १. गाय की तरह का एक प्रसिद्ध पालतू मादा चौपाया जिसका दूध शूदा जाता है।

शुद्धा—भेस काटना—भारमी या आतपाक नाम का रोग होना। उपपदा होना। (भाषाज)

० एक प्रकार की बड़ी मछली जो पञ्जाब, बंगाल तथा दक्षिण भारत की नदियों में पाई जाती है। इसका भेस खाने में स्वादिष्ट होता है, परन्तु इसमें हृदिष्याँ अधिक होती हैं। ३. एक प्रकार की घास।

शेसवाली—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की बेल जिसकी परितर्न पंज से आठ हच तक लम्बी होती हैं।

शेस—पु० [हिं० शेष] १. भेस का नर। २. लाक्षणिक अर्थ में, हट्टा-कट्टा व्यक्ति।

शेसज—पु० [हिं० शेष+आव (प्रत्य०)] शेष और शेष के जोड़ा खाना। शेष से भेस का नाम धारण करना।

शेसजगुर—पु०—महिषासुर।

शेसिया घुगल—पु० [हिं० शेषिया+घुगल] एक प्रकार का गूगल जिसका व्यवहार औषधि के रूप में होता है।

शेसिया लहसुन—पु० [हिं० शेषिया+लहसुन] सामुद्रिक में एक प्रकार

का लाल दाय या निदान जो प्रायः गाल, मरदन आदि पर होता है। लच्छन।

शेसरी—स्त्री० [हिं० शेष+औरी (प्रत्य०)] शेष का चमड़ा।

शे—पु०—मय।

शेकर—वि० [स्त्री० शैकर]—मयकर (मयकर)।

शेष—पु० [सं० मिशा+अणु,शुद्धि] १ मिशा मांगने की क्रिया या भाव।

मिशमगो। २. वह चीज जो मिशा मंगने पर मिले। शीज।

शेष-धर्या—स्त्री० [सं० ४० तं०] भारी और घुम-घूमकर मिशा मांगने की क्रिया।

शेषज—वि० [सं० मिशु+अणु] मिशु-संबन्धी।

पु० मिशुओं का समूह।

शेष-वृत्ति—स्त्री० [तु० तं०]—मेष-चर्या।

शेषाकुल—पु० [सं० शेष-आकुल, तु० तं०] वह स्थान जहाँ बहुत से लोगों को भिला मिलती हो। दानशाला।

शेषात्र—पु० [सं० शेष-अत्र, कर्म० सं०] शीज में मिला हुआ अन्न।

शेषाशी (शित्तु)—वि० [सं० शेष+अणु (खाना)+शित्तु] मिशात्र खाने-वाला।

पु० मिशुक। मिशमयस।

शेषाहार—पु० [सं० शेष-आहार, ब० सं०] मिशुक।

शेषुक—पु० [सं० मिशुक+अणु] १ मिशुको का दल। २ सत्यान।

शेषज—पु० [सं० मिशा+अणु] मिशा-चर्या।

शेषज-चर्या—पु०—मिशु-चर्या।

शेषजशरी—स्त्री०—मिशु-चर्या।

शेष-शैक्या—स्त्री० [तु० तं०] मिशा पर जीबन बिताना।

शेष-वृत्ति—स्त्री० [तु० तं०] मिशा-वृत्ति।

शेष-शुद्धि—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] मिशा मांगने और ग्रहण करने के दोष से मुक्त होने के लिए की जानेवाली शुद्धि। (जैन)

शेषक, शेषक—वि०—मेषक।

शेषज*—वि० [हिं० शेष+जनक] मय उत्पन्न करनेवाला। मयप्रद।

शेषक—वि० [सं०] शेष-संबन्धी। शेषो का।

शेषा*—वि० [सं० मय; दा (प्रत्य०)] मयप्रद। डरावनी।

शेष—स्त्री० [हिं० बहुल] बहुत। मगिनी।

शेषा—स्त्री० [हिं० बहुल] बहुत के लिए सम्बोधन।

†स्त्री० [?] गयई नामक पत्नी।

†अ० १.—मीनना। २. मीनना।

शेषी—स्त्री० [हिं० बहुल] बहुत। मगिनी।

शेषे—पु० [सं० मागिनेय] बहुत का पुत्र। मानजग।

शेष—वि० [सं० मीम+अणु] मीम-सम्बन्धी। मीम का।

शेषी—स्त्री० [सं० मेष। डीपु] १ माघ शुक्ल एकादशी। मीमसेनी एकादशी। २. दमयन्ती जो राधा मीम की कन्या थी।

शेषज—पु० [हिं० शरी+अणु] सपत्ति में भाएथों का हिस्सा। भाएथों का अंश।

शेषा—पु० [हिं० शरी] १ शरी। २. शरीरवालों का छोटों के लिए सम्बोधन का शब्द। ३. उत्तरी भारत विशेषत उत्तर प्रदेश का वह

निवासी जो पवित्री भारत में रहसों के यहाँ दरवान का काम करता हो।
(बन्धई)

पुं० [?] ताश की पट्टी या तस्ती।

मैयाधारी—पुं०=माईधारा।

मैयाधारी—स्त्री०=माईधारा।

मैयाधूज—स्त्री०=माई-दूज।

मैरव—वि० [सं० मीर+अप्] १ जिसका रव अर्थात् शब्द मीरवण हो। ३. जो देखने में मयकर हो। मयानिक। ३ घोर विनाश करनेवाला। ४ बहुत अधिक उग्र, तीव्र या विकट। उदा०—पचमूत का मैरव मिश्रण।—पत।

पुं० [म०] १ महादेव। शिव। २. शिव के एक प्रकार के गण जो उन्हीं के अवतार माने जाते हैं। ३ साहित्य में मयानक नामक रस। ४ संगीत में सपूर्ण जाति का एक गण जो शब्द श्रुतु से प्राप्त काल गाया जाता है। ५. ताल के सात मुख्य भेदों में से एक। ६. कराली। ७. ऐसी तीव्र मदिरा जिसे पीते ही आदमी घमन करने लगे। (तामिक) ८. एक प्राचीन नद।

मैरव-शौली—स्त्री० [सं० मैरव+हिं० शौली] एक प्रकार की लंबी शौली जो प्रायः सायु-समासी अपने पास रखते हैं।

मैरव-तजक—पुं० [सं० प० तज] विष्णु।

मैरव-चहार—पुं० [म० मैरव+हिं० बहार] वसंत-श्रुतु से प्राप्त गाया जाने-वाला एक सकर राग जो मैरव और बहार के मेल से बनता है।

मैरव-भस्तक—पुं० [सं०] ताल के सात मुख्य भेदों में से एक।

मैरवाजल—पुं० [सं० मैरव-अजल, मय्यं सं०] आँसों में लगाने का एक प्रकार का अजल। (वैद्यक)

मैरवी—स्त्री० [सं० मैरव+हीप्] १. तामिकों के अनुसार एक प्रकार की देवी जो महाविद्या की मूर्ति मानी जाती है। २. पार्वती। ३. पुराणानुसार एक नदी। ४. सगीत में एक रागिनी जो मैरव राग की माया कही गई है और जो शब्द श्रुतु से प्राप्त काल के समय गाई जाती है। इसका स्वरराम इस प्रकार है:— म, प, ध, नि, सा, ऋ, ग।

वि० मैरव-सबधी। जैसे—मैरवी यातना।

मैरवी-बक—पुं० [सं० मध्य० सं०] तामिकों का वह मडल जो देवी के पूजन के लिए एकत्र होता है। मद्यपो और अनाचारियों आदि का धर्म या समूह।

मैरवी-याचना—स्त्री० दे० 'मैरवी यातना'।

मैरवी यातना—स्त्री० [सं० मैरवी+यातना व्यस्त पद] यह कष्ट जो प्राणियों को मरने समय मैरव देते हैं।

मैरवेश—पुं० [सं० मैरव-ईश, व० तं०] शिव।

मैरा—पुं०=बहेड़ा।

मैरी—पुं०=बहरी (पत्नी)।

मैरु—पुं०=मैरव।

मैरो—पुं०=मैरव।

मैया—पुं० [हिं० मैया] माई अथवा बराबरवालों के लिए संबोधन।

मैयाद—पुं० [हिं० माई+आर (प्रत्य०)] १. कुल या परिवार के लोग जिससे माप्यों का सा संबंध हो। २. एक ही वंश या परिवार के लोग। ३. माई-भार।

मैयज—पुं० [सं० मैयज+अप्] १. औषध। दवा। २. वैद्य के शिष्य और अनुचर। ३. लज्जा पत्नी।

मैयजिणी—स्त्री० [सं० मैयज से] औषध आदि बनाने की कला, विद्या या शास्त्र। (फार्मसी)

मैयज्य—पुं० [सं० मैयज+ज्य] दवा। औषध।

मैयज्यत्—पुं० [सं०] बहु जो मैयज-शास्त्र का ज्ञाता हो। योषधियों आदि की सहायता से अच्छी चिकित्सा करनेवाला चिकित्सक। काय-चिकित्सक।

मैयकी—स्त्री० [म० मीयक+इ३-हीप्] मीयक की कन्या शक्तिपत्नी।

मैया—पुं० [हिं० मय+हा (प्रत्य०)] १ मयमीत। डरा हुआ। २. जो मूल-जत आदि से डरकर उनके आश्रय में आ गया हो।

मौं—स्त्री० [अनु०] १ मौं मौं का शब्द। कुत्ते के माकने का शब्द।

मौक्या—सं० [मौ मो] १ किमी नरम पदार्थ में कोई कड़ी तथा नुकीली चीज एकद्वारा पीसना। २ नुकीला अथ किसी में पीसना। †ज० =मूकना।

मौगरा—पुं० [दिश०] एक प्रकार की बेल या लता।

मौगल—पुं० [अ० विनुत्] एक प्रकार का बड़ा मोपा।

मौबाल—पुं०=मूषप।

मौडर्रा—पुं०=मोडर।

मौडा—वि० [हिं० मूडा या मो से अनु०] [स्त्री० मोडी] बहुत ही मही और बिहत आकृतिवाला। (कलमूवी) २ जिसमें शालीनता, शिष्टता आदि का नितांत अभाव हो। ३ जो दोषों और लज्जित होने के कारण सिर न उठा सके। उदा०—माँवते मोडी करी मानिनि ते मोरी करी।—देव।

पुं० [दिश०] एक प्रकार की घास और उसके दाने जिसे पशु खाते हैं।

मौडापन—पुं० [हिं० मोडा। पन (प्रत्य०)] १ 'मौडा' होने की अवस्था या मास। २. मरुपान।

मौडी—स्त्री० [हिं० मोडा] काले रंग की भेड़ जिसके छाती पर के बाल सफेद हो।

मौतला—वि०=मुगर।

मौतण—वि०=मुगर (कुछ धारवाला)।

मौधु—वि० [हिं० वृधु] बहुत ही सीधा-सादा और बेवकूफ।

मौधु—पुं० [अनु० मो; पू (प्रत्य०)] १. फूँककर बजाया जानेवाला एक तरह का पुरानी बाल वा बाजा। २. वह ऊँची तथा लंबी सीटी जो समय सुनिश्च करने के लिए कल-नारखाने बजाते हैं। ३. मोटरों आदि में शब्द करने के लिए दबाकर बजाया जानेवाला बाजा।

मौं भौं—पुं० [अनु०] मुँकने की आवाज।

मौसला—पुं० [दिश०] महाराष्ट्र के एक राजकुल की उपाधि। महाराज सिवाजी और रघुनाथ राव आदि इसी राजकुल के थे। नागपुर के महाराष्ट्र राजा लोग मौसले ही थे।

मौं—वि० [हिं० मया] मया। हुआ।

अब्धुं [सं० भोशु] हे। हो। (सम्बोधन)

मौकस—पुं० [सं० मुकल] दानव। राक्षस।

वि०=मुकशुद।

भोजनार—स्त्री० [भो से अन्० +कार (प्रत्य०)] और और से रीना।
किं० प्र०—काइना।

भोजनार—वि० [सं० +भुज् (खाना, उपभोग करना) +तन्त्र] १. जो भोगा जाने को हो। २. जो भोगा जा सके।

भोजनार (भु)—वि० [सं० +भुज् (खाना) +भू] १. भोजन करनेवाला।
२. भोग अर्थात् उपभोग या उपयोग करनेवाला। ३. सुखों का भोग करनेवाला।

पुं० १. शिष्यु। २. स्त्री का पति। स्त्रीमी। ३. एक प्रकार के प्रेत।

भोजनार—पुं० [सं० भोजत् +त्वं] भोजता होने की अवस्था, धर्म या माव।

भोजनार—स्त्री० [सं० भ० तं०] बुद्धि।

भोग—पुं० [सं० +भुज् (उपभोग करना) +भू] १. भोगने की अवस्था, किया या माव। २. सुख-दुःख आदि का अनुभव करते हुए उन्हें अपने मन और शरीर पर प्राप्त या सहन करना। ३. इच्छाओं की पूर्ति, प्रसन्नता, मनमोह आदि के विचार से अभीष्ट, कामदायक या सुखद वस्तु मनमाने ढंग से अपने उपयोग में लाने की क्रिया या माव। जैसे—सम्पत्ति का भोग, सासांरिक सुखों का भोग। ४. किसी पदार्थ का किया जानेवाला उपभोग या व्यवहार। किसी चीज का काम में लाया जाना। ५. भोजन करना। खाना। ६. देवी-देवताओं की मूर्ति के सामने उनके काल्पनिक उपभोग के उद्देश्य से रखे जानेवाले साध पदार्थ। नैवेद्य।

मूहा—भोग लगाना—(क) देवताओं की मूर्तियों के सामने साध पदार्थ यह समझकर रखना कि वे उनका आस्वादन और उपभोग करेंगे। (ख) स्वस्व भोजन करना। खाना।

७ व्यावहारिक क्षेत्र में वह स्थिति जिसमें कोई भूमि या संपत्ति अपने अधिकार में रखकर उससे पूरा लाभ उठाया जाता है। मुक्ति। कच्चा। (पत्रेण) ८ पुरुष और स्त्री में होनेवाला मैथुन। संभोग। ९. पाप, पाप आदि का बहु फल जो भोग अर्थात् प्राप्त या सहन किया जाता है। प्रारब्ध। १०. किसी काम या बात से प्राप्त होनेवाला मूल्य। ११. किसी की दुर्दशाओं, दुष्कर्मों आदि का बहु उल्लेख जो लङ्कार-संग्रह के समय गाली-गोलीज के साथ किया जाता है। जैसे—अब अगर किसी ने मेरा नाम लिया तो मैं सँकड़ों भोग सुनाऊँगी। (स्त्रियाँ) १२. ज्योतिष में, सुख अथवा प्रहो का मीन, मेघ आदि राशियों में अवतरित रहने का काल या समय। जैसे—अभी इस राशि में बुध का भोग एक महीने और रहेगा।

१३. सुख। १४. दुःख। १५. ऐसी वस्तु जिससे किसी प्रकार का सुख प्राप्त हो। १६. दावत। भोज। १७. कल्पदा। लाभ। १८. आनन्दनी। आय। १९. धन-सम्पत्ति। २०. वह धन जो बेव्या को उसके साथ संभोग करने के बदले में दिया जाता है। २१. साय का फल। २२. साय।

२३. देह। शरीर। २४. पंक्तिबद्ध सेना। २५. किराया। भाड़ा। २६. घर। मकान। २७. पालन-पोषण २८ परिमाण। मान। २९. पुरा। मगर। ३०. एक प्रकार की सैमिक ब्यूह-रचना।

भोग-काल—पुं० [सं० भ० तं०] १. उतना समय जितने में कोई घटना या बात आदि से अन्त तक घटित हो। (इयुरेशन) २. कष्ट, रोय, सुख आदि भोगे जाने का पुरा समय।

भोग-गृह—पुं० [सं० भ० तं०] अन्त-पुरा-जानाजाना।

भोग-वित्तमणि—पुं० [सं०] संगीत में कनटिकी पदति का एक राग।

भोग-वेह—पुं० [सं० मध्य० सं०] पुराणानुसार बहु सूदन शरीर जो मनुष्य को मरने के उपरांत स्वर्ग या नरक में जाकर सुख या दुःख भोगने के लिए चारण करना पड़ता है।

भोग-द्वार—पुं० [सं० भ० तं०] सर्प। साँप।

भोगना—सं० [सं० भोग +हिं० मा (प्रत्य०)] १. किसी चीज का भोग करना। उपभोग या प्रयोग करना। २. किसी चीज या बात के अच्छे-बुरे फल बहान या सहन करना। ३. कष्ट सहना।

विद्येय—भोगना, सेलना और सहना का अन्तर जानने के लिए दे० 'सहना' का विशेषण।

४ स्त्री के साथ प्रसंग या संभोग करना।

भोग-नाथ—पुं० [सं० भ० तं०] बहु जो पालन-पोषण करता हो। पालक।

भोग-पति—पुं० [सं० भ० तं०] प्राचीन भारत में किसी क्षेत्र विशेषतः किसी जनपद या प्रदेश का शासन।

भोग-पत्र—पुं० [सं० मध्य० सं०] १ प्राचीन भारत में वह पत्र जो राजा को उपहार भेजने के संबंध में लिखा जाता था। (युक्त नीति) २. वह पत्र जिसके अनुसार किसी को कोई चीज या संपत्ति भोगने का अधिकार दिया जाय।

भोग-पाल—पुं० [सं० भोग/पाल् (पालन करना) +अण्, उप० सं०] १. भोगपति। २. साईय।

भोग-विद्याधिका—स्त्री० [सं० सं० तं०] मूख।

भोग-बंधक—पुं० [सं० भोग +हिं० बंधक] बंधक या रेहन का वह प्रकार जिसमें रेहन रानी जानेवाली चीज के भोग का अधिकार भी महाजन को रहता है। (मार्टेज विद पोवेशन)

भोग-भूमि—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] जैनों के अनुसार वह लोक जिसमें किसी प्रकार का कर्म नहीं करना पड़ता है और सुख भोग की सब आवश्यकताएँ कल्पवृक्ष के द्वारा पूरी होती हैं।

भोग-भूतक—पुं० [सं० मध्य० सं०] केवल भोजन, वस्त्र लेकर काम करने-वाला नौकर।

भोग-सवाई—स्त्री० [हिं० भोग +लदाई?] खेत में कपास का सबसे बड़ा पीषा जिसके आसपास बैटकर देहाती लोग उसकी पूजा करते हैं।

भोग-लाभ—पुं० [सं० भ० सं०] पहले दिये हुए अन्न के बदले में फसल तैयार होने पर व्याज के रूप में मिलनेवाला कुछ अधिक।

भोग लिखाल—स्त्री० [?] कटाई नाम का राख। (हिं०)

भोगली—स्त्री० [देश] १. छोटी नली। पुप्ली। २. नाक में पहुँचने का नली। ३. कान में पहुँचने की तरकी। ४. नाक (या कान) में पहुँचने के लीग (या फूल) में पीछे की ओर से बंद करने के लिए डाली जाने-वाली लम्बी पतली और पीली कील।

भोगवती—स्त्री० [सं० भोग +मनुष्य, म—व, +कीन्] १. पाताल संया। २. गंगा। ३. पुराणानुसार एक प्राचीन तीर्थे। ४. एक प्राचीन नदी। ५. नागों के रहने की नाग नाम की पुटी। ६. कार्तिकेय की एक मातृका।

भोगवती—सं०-भोगना।

भोगवसा—पुं० [सं०] संगीत में कनटिकी पदति का एक राग।

भोगवन्धु (बन्धु)—पुं० [सं० भोग +मनुष्य, म—व] १. साँप। २. अभि-म। नाट्य। ३. गीत। ४. गीत।

भोगवाता—सं० [हिं० भोगना का प्रेरक] भोगने में दूसरे को प्रवृत्त करना। भोग कराना।

भोग-बिलास—पु० [सं० इ० सं०] सब प्रकार के सुख भोगते हुए किया जाने-वाला आनन्द-प्रसन्नोद। सुख-चैन की वह स्थिति जिसमें मनुष्य वासनाओं की पूर्ति से लिप्त रहता हो।

भोग-वेदन—पु० [सं० मध्य० सं०] वह धन जो किसी घरोहर रखी हुई वस्तु के व्यवहार के बदले में उसके स्वामी को दिया जाय।

भोग-व्यूह—पु० [सं० मध्य० सं०] वह व्यूह जिसमें सैनिक एक दूसरे के पीछे लड़े किये गये हों। (को०)

भोग-शरीर—पु०—भोगा-देह।

भोग-सामर्थ—पु० [सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

भोगातराज—पु० [सं० भोग-अतराय, सुस्युपा सं०] वह अतराय जिसका उदय होने से मनुष्य के भोगों की प्राप्ति में विघ्न पड़ता है। (जैन)

भोगास—पु० [सं०] देहातर (सुगोल का)।

भोगाधिकार—पु० [सं० भोग-अधिकार, मध्य० सं०] वह अधिकार जो किसी दूसरे की वस्तु का कुछ समय तक भोग करते रहने के उपरान्त प्राप्त होता है। (आहुवैत्सी राट्ट)

भोगाना—सं० [हिं० भोगना का प्रे०] भोगने में दूसरे को प्रवृत्त करना। भोग कराना।

भोगावती—स्त्री०—भोगवती।

भोगावर—वि० [हिं० भोगना] जो भोगे जाने के योग्य हो। फलत आकर्षक या सुन्दर। (पूरुष)

भोगिक—सं० [सं० भोग; ठ—इक] १ गाय का मुखिया। २. साईंस।

भोगिन—स्त्री०—भोगिनी।

भोगिनी—स्त्री० [सं० भोग + इनि, ङीप्] १ राजा की उपपत्नी। २ रखेली स्त्री। ३ नागिन।

भोगिन्द्र—पु० [सं० भोगिन्द्र, इन्द्र, सं० तं०] पतञ्जलि का एक नाम।

भोगी (गिन्द्र)—वि० [सं० भोग-गिन्द्र] १ भोगनेवाला। जो भोगता हो। २ सुखी। ३ इन्द्रियों के सुख-भोग की इच्छा रखनेवाला। विषयासक्त। ४ विषयी। व्यसनी। ५ खानेवाला।

पु० १ वह जो गृहस्थाश्रम में रहकर सब प्रकार का सुख-दुःख भोगता हो। गृहस्थ। २. राजा। ३. जमींदार। ४ नार्दी। हज्जाम। ५ साँप। ६. घेसनाग। (हिं०) ७ संपीत में कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

भोगील—पु० [सं० भोग + ल—ईन्]—भोगी।

भोगीभूक—पु० [सं० भोगीभूक] निवला।

भोगीबरी—स्त्री० [सं०] संगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

भोगैह—पु० [सं० भोग-इन्द्र, सं० तं०] १, अधिक भागों में अच्छी चीजें खानेवाला। २ अच्छी तरह सुखों का भोग करनेवाला।

भोग्य—वि० [सं० भूज (उपभोग करना) + भ्यत्, ङ] १ (पदार्थ या सर्पति) जिसका भोग करना उचित हो, किया जाने को ही अथवा किया जा रहा हो। २ जो भोगे अर्थात् बोले या सहे जाने को ही। पु० १ धन। २ धान्य। ३ देहन या भोगबंधक का प्रकार।

भोग्य भूमि—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] १ वह स्थान जहाँ आनन्द के लिए की जाती हो। २ मत्स्य-लोच, जिसमें जीव को अपने किये हुए कर्मों

का फल भोगना पड़ता है।

भोग्या—वि० [सं० भोग्य + टाप्] भोग्य का स्त्रीलिंग रूप। स्त्री० बेष्या।

भोज—पु० [सं० भोज + अण्-बहु-लृक्] १ भोजकद नामक देश जिसे आज-कल भोजपुर कहते हैं। २ बन्दरबोी क्षत्रियों का एक कुल या शाखा। ३. महाभारत के अनुसार राजा हुण्डु के एक पुत्र का नाम। ४. पुराणानुसार वसुदेव का एक पुत्र। ५ श्रीकृष्ण का सखा, एक ग्वाल। ६ विदमं के एक प्राचीन राजा। ७ मालवे के एक प्रसिद्ध राजा जिन्होंने सरकृत भाषा में कई ग्रंथ लिखे थे। इनका जन्म-काल १०वीं शताब्दी है।

पु० [सं० भोजन्] १ किसी विशिष्ट अवसर पर या उपलक्ष में निम्न-लिखित व्यक्तियों को एक साथ बैठकर कराया जानेवाला भोजन। २. खाने-पीने की चीजें; खाद्य पदार्थ।

भोजक—वि० [सं० भूज् (खाना भोग करना) + क्त] १ भोग करनेवाला। भोगी। २ भोजन करने या खानेवाला।

पु० ऐश्या। बिलामी।

भोजकद—पु० [सं०] भोजपुर।

भोजन—पु० [सं० भूज् + क्त] १ प्रशान करना। खाना। २. भूख मिटाने के उद्देश्य से प्रायः भर पेट खाये जानेवाले खाद्य पदार्थ। खाने की सामग्री। ३. विशेष परिस्थिति या अवस्था में खाई जाने वाली कुछ विशेष प्रकार की वस्तुएँ। (ड्रायट)

भोजनखानी—स्त्री० [सं० भोजन + हिं० खानी] १ पाकशाला। रमोई-घर। २ भोजनालय।

भोजन-गृह—पु० [सं० भ० तं०] वह स्थान जहाँ बैठकर भोजन किया जाता है।

भोजनघाही (हिन्दु)—वि० [सं० भोजन + घा + णिनि, उा० सं०] भोजन ग्रहण करनेवाला। २ जो किसी विशेष अवस्था में कहीं से मिलने वाला भोजन ग्रहण करता हो। (ड्रायटेट) जैन—घस अरगताल में २० भोजनाघाही योगी हैं।

भोजन-नलिका—स्त्री० [सं० भ० तं०] गले और छाती के अन्दर की वह नली जिसमें से स्तनोदर खाई हुई चीजें नीचे उतरनी और पक्कावय में पहुँचती हैं। (सूत्र पाठश्र)

भोजन मली—स्त्री०—भोजन नानिका।

भोजन-भट्ट—वि० [सं० भ० तं०] बहुत अधिक खानेवाला। पैटू।

भोजन शाला—स्त्री० [सं० भ० तं०] १ रमोई-घर। पाकशाला २ भोजनालय।

भोजनाच्छादन—पु० [सं० भोजन-आच्छादन, इ० सं०] खाने और पहनने की सामग्री। अन्न-स्रव। खाता-कपडा।

भोजनालय—पु० [सं० भ० तं०] १ पाकशाला। रमोई-घर। २. वह स्थान जहाँ मुख्य लेकर पका हुआ भोजन परीक्षकर बिलगया जाता है। (रेस्टोरेण्ट)

भोजनीय—वि० [सं० भूज् (खाना) + नीय] जो खाया जा सके। खाये जाने के योग्य; खाद्य।

भोजनीसर—वि० [सं० भोजन-उसर, भ० तं०] जो भोजन के साथ खाया जाता हो (अपच) आदि।

किं वि० भोजन करने के उपरान्त। खाने के बाद।

भोजपत्रि—पुं० [सं० व० तं०] १ कसरज। २. राजा भोज।

भोजनत्रय—पुं० [सं० भूजंनत्रय] १. ऊँचे पर्वतों पर होनेवाला महोत्सव
भाकार का एक बृक्ष। २. उक्त वृक्ष की छाल जो प्राचीन काल में
प्रय और लेख आदि लिखने के काम आती थी। छाल।

भोजनीशकर—पुं० [सं० व० तं०] यह जो इस बात की परीक्षा करता
हो कि भोजन में विष आदि तो नहीं मिला है।

भोजपुर—पुं० [वि० भोजपुरिया, भोजपुरी] बिहार के शाहाबाद जिले
में स्थित एक गाँव।

भोजपुरिया—पुं० [हिं० भोजपुर+इया (प्रत्य०)] भोजपुर का रहने-
वाला।

वि० भोजपुर में रहने या होनेवाला।

भोजपुरी—वि० [हिं० भोजपुर] भोजपुर-सबको। जैसे—भोजपुरी भाषा।
पुं० भोजपुर का निवासी।

स्त्री० पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार के अधिकतर भागों में बोली जाने-
वाली बोली, जिसकी उत्पत्ति मागधी अपभ्रंस से हुई है।

भोजभात—पुं० [हिं०] बिरादरी आदि के लोगों का एक साथ बैठकर
भोजन करना। भोज।

भोजविता (तु०)—वि० [सं०√भुज्+णिच्+तृच्] खिलावेवाला।
भोजराज—पुं०=भोज (राजा)।

भोजविद्या—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] इद्रजाल। बाजीगरी।

भोजी—पुं० [सं० भोजित्] भोजन करने या खानेवाला। जैसे—मांस-
भोजी।

भोजू—पुं०=भोजन।

वि० [सं० भोज्य] काम में आने योग्य।

पद—कानू भोजू—काम चलाऊ।

वि० १ भोजन करनेवाला। २. भोगनेवाला। ३. भोगा जानेवाला।

भोजेबा—पुं० [सं० भोज-ईश, व० तं०] १ भोजराज। २ कस।

भोज्य—वि० [सं०√भुज्+ण्यत्] खाये जाने के योग्य। जो खाया जा
सके। खाद्य।

पुं० वे पदार्थ जो खाने जाते हैं। खाद्य पदार्थ।

भोट—पुं० [सं० भोटम्] १ भूटान देश। २. उक्त देश का निवासी। ३.
एक प्रकार का बड़ा और मोटा पत्थर जो प्राय २०। इंच मोटा,
५ फुट लम्बा और १।। फुट चौड़ा होता है।

भोटिया—वि० [हिं० भोट+इया (प्रत्य०)] भूटान देश का।
पुं० भोट या भूटान देश का निवासी।

स्त्री० भूटान देश की भाषा।

भोटिया भाषा—पुं० [हिं० भोटिया+फा० वाद्यम्] १. आलूझुलारा।
२. मृंगफली।

भोटी—वि० [हिं० भोट+ई (प्रत्य०)] भूटान देश का।
पुं० भोट।

भोबर—पुं० [दिश०] १. अन्नक। अबरक। २. अबरक का बुरा। दुष्का।
३. एक प्रकार का मुसक खिलाऊ।

भोबल—पुं० दे० अबरक।

भोबल्य—पुं० [सं० भू-अबल] नलन-समूह। (दि०)

भोडागार—पुं० [सं० भाडागार] मंडार। (दि०)

भोम—पुं०=भमन। (दि०)

भोत—वि०=बहुत।

भोषार (रा)—वि०=भुषरा।

भोषार—पुं० [?] एक प्रकार का घोड़ा।

भोना—अ० [हिं० भोना] १ किसी तेल का किसी पदार्थ में घुरी तरह
से ब्याप्त या समाहित होना। भोनाना। २. किसी काम या बात में
लिय या लीन होना। ३. किसी पर अनुरक्त या आसक्त होना। उदा०—
नारी वितवत नर रहै भोना—मुर।

स्यो० किं०—आना। पड़ना।

४. युक्त होना। मिलना। ५. धोसे में आना।

सं० १. भिगोना। २. लिप्त करना। ३. अनुरक्त करना। ४.
मिलाना। ५. धोसे में डालना।

भोषा—वि०, पुं०=भोषा।

भोबर—पुं० [दिश०] एक तरह की घास। शेरल।

भोम—स्त्री० [सं० भूमि] पृथ्वी। (दि०)

भोमि—स्त्री०—भूमि।

भोमी—स्त्री० [सं० भूमि] पृथ्वी। (दि०)

भोम्य—पुं०=भोजन।

भोर—पुं० [सं० विभावरौ] प्रातःकाल। सबैत। तबका।

पुं० [सं० भ्रम] धोखा। भ्रम।

वि०=भोला (सीधा-सादा)।

पुं० [दिश०] १. एक प्रकार का बड़ा पत्ती जिसके पर बहुत सुन्दर होते
हैं। यह जल तथा हरियाली बहुत पसन्द करता है और सेतो को बहुत
अधिक हानि पहुँचाता है। २. एक प्रकार का सदाबहार वृक्ष जिसे
'सभो' भी कहते हैं।

भोर—पुं० [दिश०] एक तरह की मछली।

वि०=भोर।

वि०=भोला (सीधा-सादा)।

पुं० [हिं० मूल] धोखा। भूलाबा। उदा०—दीन दुखी जो तुमको जाँचत
सो दानवि के भोरे।—सत्यनाट्यम्।

वि० १. धोखे या भूलावे में आया हुआ। २. मोह या भ्रम में पड़ा हुआ।
३. भूला या खोया हुआ। उदा०—रबी विरंचि विषय सुख मोरी।—
तुलसी।

भोरार्थ—स्त्री० [हिं० भोरा+आई (प्रत्य०)] भोलापन।

स्त्री० [हिं० भोराना+आई (प्रत्य०)] १. धोखा। भूलाबा। २. भ्रम।
भोराना—सं० [हिं० भँवर या भ्रम] किसी को धोखे या भ्रम में डालना।
चकमा देना।

वि० धोखे या भ्रम में आना या पड़ना।

भोरानाथ—पुं०=भोरानाथ (विश्व)।

भोरी—स्त्री० [दिश०] पोस्ते के पीछे का एक रोपा।

वि० स्त्री०=भोली (भोला का स्त्री०)।

भोष—पुं०=भोर।

भोरे—अव्य० [सं० भ्रम या हिं० मूल] भूलकर भी। उदा०—बहुत न
बखत भूपर भोरे।—गुलशही।

मोल—पु० [स० मा +उल्] वैश्य पिता और नटी माता से उत्पन्न सतान।
मोलना—स० [हि० मुलाना] धोके में डालना। मोलावा देना। बहकाना।
 उदा०—अय्यानी पुष्य को मोलि मोलि खाई।—कबीर।
मोलपना—पु०—मोलापन।
मोला—वि० [स० भ्रम, प्रा० मोल] १. (व्यक्ति) जो (क) छल-कपट न जानता हो, (ख) लोक-व्यवहार न जानता हो। सीधा-सादा। सरल।
 २. (कथन या बात) जो ऊपर से देखने में बहुत ही सरल तथा ठीक प्रतीत होती हो परन्तु प्रस्तुत प्रसंग में अनुपयुक्त या अव्यवहार्य हो।
 उदा०—आहा! यह परार्थ्य कथन है कीसा मोला साला।—मैकिली-शरण।
 ३. (व्यक्ति) जो किसी की बात पर सहसा विस्वास कर लेता हो।
मोलनाथ—पु० [हि० मोला +स० नाथ] महादेव। शिव।
मोलापन—पु० [हि० मोला +पन (प्रत्यय)] मोले होने की अवस्था, गुण या भाव। सिपारि।
मोला-माला—वि० [हि० मोला +अनु० माला] निरछल और निरीह। सरल-हृदय।
मोस—पु० [?] एक प्रकार का केला।
मोसर—वि० [देश०] मूख।
मोी—स्त्री०—मोह।
मोकना—अ०—मूकना।
मोयर—पु० [देश०] क्षत्रियो की एक जाति।
 वि० मोटर-ताजा। हूट-पुट।
मोचाल—पु०—मूकप।
मोझा—वि०—मोझा (महा)।
 स्त्री०—मोझी।
मोी—स्त्री० [देश०] १. छोटा पहाड़। पहाड़ी। २. टीला।
मोिुआ—पु० [हि० भ्रमना—भूमना] काले रंग का एक तरह का छोटा कीड़ा या जल के ऊपरी तल पर तेजी से दौड़ता और चक्कर काटता रहता है। २. एक प्रकार का रोग जिसमें मातृदूध के नीचे एक पिल्डो निकल आती है। ३. तेजो का बेल जिसे दिन भर घूमते या चक्कर लगाते रहना पड़ता है।
 वि० बराबर घूमता रहनेवाला या चक्कर लगानेवाला।
मोना—अ० [स० भ्रमण] भूमना।
मो—पु० [हि० मोर, स० भ्रमर] १. मोर। २. मुसकी घोड़ा।
 †स्त्री०—मोरी।
मोरकली—स्त्री०—मंवरकली।
मोरा—पु० [स० भ्रमर, प्रा० ममर, प्रा० मवर] [स्त्री० मंबरी] १. काले रंग का उड़नेवाला एक पतला जो फूलों पर मंडराता और उनका रस चूसता है। इसके छ-पंर, दो पर और दो मूँछें होती हैं। २. बड़ी मधुमक्खन। सागर। डार। ३. बर। मिड़। ४. ज्वार आदि की फसल को गतिन पहुँचानेवाला एक प्रकार का कीड़ा। ५. लट्टु के आकार का एक प्रकार का खिलौना जिसमें काल या छोटी डंडी लगी रहती है। इसी काल से रस्सी लटककर लड़के इसे जमीन पर नचाते हैं। ६. दिडंगले की बड़ लकड़ी जो मयारीमें लगी रहती है और जिसमें बोरी बड़ी बंधी रहती है। ७. गाड़ों के पहिये का बड़ भाग जिसके बीच के छेद में

धुरे का गज रहता है और जिसमें आरा लगाकर पहिये की पहियें बड़ी जाती हैं। नामि। लट्टा। मूँडी। ८. रट्ट का लड़ी चरकी को मंबरी को फिराती है। चकरी। (बूदेक) ९. पशुओं का एक रोग जिसे 'बिचक' भी कहते हैं। (बूदेक) १०. पशुओं को आनेवाली मिरसी। ११. गहिरि की बंधो की रखवाली करनेवाला कुला। १२. तहबाना। १३. अनाज रखने का खत्ता। खात। १४. रहस्य सम्प्रदाय में, मन।
 †पु०—मोवर।
मोराना—स० [स० भ्रमण] १. परित्रमा कराना। घूमना। २. चक्कर या घेरा देना। ३. विवाह के समय मंवर की किया सम्पन्न कराना। ४. विवाह कराना।
 †अ०—मोरना (भूमना या चक्कर खाना)।
मोराला—वि० [हि० मोर] [स्त्री० मोराली] मोरे की तरह काले रंग का।
 वि० [हि० मंवर] छल्लेदार। भूषगला। (बाल)
मोराही—स्त्री० [हि० मोराना +आही (प्रत्यय)] १. मोरे के मंडराने की किया या भाव। २. वह शब्द जो मोरा मंडरते समय करता है।
मोरी—स्त्री० [स० भ्रमण] १. प्रायः पशुओं के वरीर पर होनेवाला रोगों का मडलकाछोर छोटा बेरा जो अनेक आकृतियों आदि के विचार से शुभ या अशुभ माना जाता है। २. दे० 'मंवर'। ३. दे० 'मंवर'।
 स्त्री०—मोह।
 †पु० [देश०] लिट्टी। बाटी।
मोह—स्त्री० [स० भू] अक्षो के ऊपर की हड्डी पर के रोएं या बाल। मुकुटी। मो।
मूहा—(किसी के सामने) मोह उठाना—अंस उठाकर देखना। मोह चढ़ाना या तानना मोहें तानकर फाय या क्षीम प्रकट करना। त्योरी चढ़ाना। विगडना। (किसी को) मोह जोहना या ताकना यह देखते रहना कि कोई अप्रसन्न-मोहो जय। मोह नबाना—बराबर मोहें हिलाना जो रिम्बो के हाव-भाव और विशेष चञ्चलता का सूचक है। मोह मरोडना - (क) असंतोष, उपेक्षा, रोष आदि प्रकट करने के लिए अपनी आकृति विकृत करना। नाम-मोह चढ़ाना। उदा०—मुनि सतिनि के गुनि की चरचा द्विज जू तिय मोह मरोडन लागी।—द्विजदेव। (ख) दे० ऊपर 'मोह चढ़ाना या तानना'।
 स्त्री० [अनु०] कुत्तो के मुकने का शब्द।
मोहरा—पु०—मूहरा।
 †पु०—मोरा।
मो—[पु० स० मव] १. सवार। जगल। दुनियाँ। २. जय।
 †पु०—मय (हर)।
 अ० [हि० मवना] हुआ। (अवधि)
मोकन—स्त्री० [हि० ममक] १. आग की लपट। २. जलम। ताप।
मोका—पु० [देश०] [स्त्री० मोकी] बड़ी बीरी। टोकर।
मोमिक—वि० [स० मूर्धम; टक; दक] मूषटल के अन्तर जन्म लेने-वाला। पुष्की के मोतीर भाग में होनेवाला।
मोमिया—वि० मोमी।

भौतिकविज्ञान—वि० [सं० मूगोल + ठक्—इक] मूगोल-संबंधी। मूगोल का। (जियायीकिकल)

भौतिकी—स्त्री० [सं० भौगोलिक + ङीप्] बहु पुस्तक जिसमें किसी देश, महादेश या अथवा सारी पृथ्वी के भौगोलिक नामों और नगरों, नदियों पहाड़ों आदि के संबंध की सब बातें रहती हैं। (गजेटियर)

भौतिक—वि० [सं० भय + बर्णित] १. सहसा भयपूर्वक स्थिति उत्पन्न होने पर जो बहारा गया हो और फलतः कुछ करने-धरने में असमर्थ-सा हो गया हो। २. बर्कित। हैरान।

भौतिक—वि०=भौतिक।

भौतिक—पुं०=भौतिक।

भौज—स्त्री०=भाजन (भोजार्थ)।

भौज—पुं०=भयजाल।

भौजार्थ—स्त्री० [सं० भ्रातृजाया] माई के विचार से विधेयतः बड़े भाई की स्त्री। भाभी।

भौजी—स्त्री०=भोजार्थ।

भोट—पुं० [सं० भोट + अण्] भोट या भूटान देश का निवासी।

भौठा—पुं०=भौठा।

भौज—पुं०=भयन (भर)।

भौत—वि० [सं० भूत + अण्] १. भूत-संबधी। २. भूत-निर्मित। भौतिक। ३. भूत-प्रेत संबंधी। पैशाचिक। ४. भूताविष्ट।
पुं० १. मन्दिर। २. पुजारी। ३. वह जो भूत-प्रेतों की पूजा करता हो। ४. भूतों का दल या बर्ग। ५. भूत-यज्ञ।

वि०—बहुत।

भौतारण—वि०=भव-तारण (परमेश्वर)।

भौतिक—वि० [सं० भूत + ठक्—इक] १. पंचभूतों से सबंध रखनेवाला। २. पंचभूतों से बना हुआ। ३. इस जगत् से संबंध रखनेवाला। लौकिक। सासारिक। ४. पार्थिव। शरीर संबंधी। शारीरिक। (हेटीरियल) ५. भूत भौमि से संबंध रखनेवाला। ६. प्राकृतिक नियमों, सिद्धान्तों, रूपों आदि से संबंध रखनेवाला। (क्रिजिकल) जैसे—भौतिक विज्ञान।

पुं० १. महादेव। शिव। २. उपद्रव। ३. आधि, व्याधि, कष्ट और रोग। ४. आल, कान आदि शरीर की इत्रियाँ।

भौतिक चिकित्सा—स्त्री० [सं०] आधुनिक चिकित्सा प्रणाली की वह शाखा जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि शरीर की उसकी या टूटी हुई इद्रिक्तियों में होने या जोड़ने के उपरांत किस प्रकार मालिश, व्यायाम सेंक आदि के द्वारा उन्हें ठीक तबू से काम करने के योग्य बनता जाता है। (फिजियोथैरेपी)

भौतिक मूगोल—पुं० [सं० कर्म० सं०] मूगोल की वह शाखा जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि पृथ्वी के किस अंश की प्राकृतिक बनावट कैसी है और उसमें कैसे-कैसे उत्पादन होते हैं। (क्रिजिकल जियायीकी, क्रिजियोथैरेपी)

भौतिकवाद—पुं० [सं० व० तं० ?] १. वह दार्शनिक सिद्धान्त जिसके अनुसार पंचभूतों से बना हुआ यह सत्कार ही दार्शनिक और सत्य माना जाता है। (मिटीरियलिज्म) २. दे० 'व्यापारवाद'।

भौतिकवादी—वि० [सं०] भौतिकवाद का।

पुं० जो भौतिकवाद का अनुयायी या पोषक हो।

भौतिक विज्ञान—पुं० [सं० कर्म० सं०] वह शास्त्र जिसमें भूतों तथा तत्त्वों का विवेचन हो। २. वह विज्ञान जिसमें अर्थव्यवस्था सुनिश्चित विधेयतः ताप, प्रकाश, ध्वनि आदि पदार्थों का वैज्ञानिक विवेचन करते हैं। (फिजिक्स)

भौतिक विद्या—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] १. भूत-प्रेत से संबंध स्थापित करने, उन्हें भूताने और दूर करने की विद्या। २. दे० 'भौतिक विज्ञान'।

भौतिक वृद्धि—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] पुराणानुसार देव, मनुष्य और तिर्यक् योनियों का सहाहार।

भौतिकी—स्त्री० का दे० 'भौतिक विज्ञान'।

भौती—स्त्री० [सं० भूत + अण्, वृद्धि + ङीप्] रात। रात्रि। रजनी। स्त्री० [हि० भंभना + भूमना] एक बालिष्ठ लम्बी और पतली लकड़ी जिसकी सहायता से ताने का चरला घुमाते हैं। मेखड़ी। (बुलाहा)

भौत्व—पुं० [सं० भूति + प्यब्] १. चौबट्टें मनु जो भूतिभूमि के पुत्र थे। (पुराण)

भौम—पुं०=भवन।

भौमा—अ० [सं० भ्रमण] १. चक्कर लगाना। भूमना। २. ब्यर्थ इधर-उधर भूमना।

भौमाल—पुं० [सं० भूगाल + अण्, वृद्धि] राजकुमार।

भौम—वि० [सं० भूमि + अण्] १. भूमि-संबंधी। भूमि का। २. भूमि से उत्पन्न होनेवाला। भूमिज। ३. भूमि पर रहने या होनेवाला। पुं० १. मंगल ग्रह। २. अंबर नामक गंध द्रव्य। ३. लाल पुनर्बना। ४. योग में एक प्रकार का आसन। ५. वह केतु या पुच्छल तारा जो विष्य और अंतरिक्ष के परे हो।

भौमदेव—पुं० [सं०] एक प्राचीन लिपि।

भौम-रत्न—पुं० [सं० कर्म० सं०] भूंगा।

भौमबली—स्त्री० [सं० भौम + मत्तुप् + ङीप्] भौमासुर की स्त्री का नाम।

भौम-भार—पुं० [सं० व० तं०] मंगलवार।

भौमासुर—पुं० [सं० कर्म० सं०] नरकासुर का एक नाम।

भौमिक—पुं० [सं० भूमि + ठक्—इक] भूमि का अधिकारी या स्वामी। जमींदार।

वि०—भौम।

भौमिकी—स्त्री० [सं० भौमिक से] १.—भूगोल। २.—भू-विज्ञान।

भौमिकीय—वि० [सं०] १. भूमिका-संबंधी। भूमिका का। २. भूमिका के रूप में होनेवाला।

वि०—भौमिक।

भौमी—स्त्री० [सं० भौम + ङीप्] पृथ्वी की कन्या, सीता।

भौम्य—वि० [सं० भूमि + प्यब्] १. भूमि-संबंधी। २. पृथ्वी पर होनेवाला।

भौर—पुं० [सं० भ्रमर] १. बोड़े का एक भेद। २. भैंस। ३. भौरा।

भौरिक—पुं० [सं० भूरि + ठक्—इक] १. राजकीय कोष का प्रधान अधिकारी। २. कोषाध्यक्ष।

भौरिकी—स्त्री० [सं० भौरिक + ङीप्] १. कोषागार। २. टकसाल।

भौलिमा—स्त्री० [सं० बहुला] एक प्रकार की छोटी नाव जो ऊपर से ढकी रहती है।

भोल—पु० [सं० भा० उल्] वैश्य पिता और नटी माता से उत्पन्न संतान।
भोलना—स० [हि० भूलाना] धोखे में डालना। भुलावा देना। बहकाना।

उदा०—अध्यायी पुत्रक को भोल भोल खाई।—कबीर।

भोलयनी—पु०—भोलयन।

भोला—वि० [सं० भ्रम; प्रा० भोल] १. (व्यक्ति) जो (क) छल-कपट न जानता हो, (ख) लोक-अव्यवहार न जानता हो। सीधा-सादा। सरल।

२. (कथन या बात) जो ऊपर से देखने में बहुत ही सरल तथा ठीक प्रतीत होती हो परन्तु प्रस्तुत प्रसंग में अनुपयुक्त या अव्यवहारी हो।

उदा०—आहा! यह परमाथं कथन है कैसा भोला माला।—मीथिली-शरण। ३ (व्यक्ति) जो किसी की बात पर सहसा विश्वास कर लेता हो।

भोलानाथ—पु० [हि० भोला +सं० नाथ] महादेव। शिव।

भोलापन—पु० [हि० भोला +पन (प्रत्य०)] भोले होने की अवस्था, गुण या भाव। मिथार्थ।

भोला-भाला—वि० [हि० भोला, अनु० भाला] निरछल और निरीह। सरल-हृदय।

भोस—पु० [?] एक प्रकार का केल।

भोसर—वि० [देश०] मूर्ख।

भौं—स्त्री०—भौह।

भौकना—अ०—भूंकना।

भौगर—पु० [देश०] शनियों की एक जाति।

वि० मोटा-ताजा। हट-पुटा।

भौघाल—पु०—भूकप।

भौडा—वि०—भौडा (भटा)।

स्त्री०—भौड़ी।

भौबीं—स्त्री० [देश०] १. छोटा पहाड़। पहाड़ी। २. टीला।

भौबुआ—पु० [हि० भ्रमना—भूमना] काले रंग का एक तरह का छोटा क्रीडा जो जल के ऊपरी तल पर तेजी से दौड़ना और चक्कर काटता रहता है। २ एक प्रकार का रोग जिसमें बाहुद्वय के नीचे एक गिल्टी निकल आती है। ३ तेजी का बौल जिसे दिन भर घूमते या चक्कर लगाते रहना पड़ता है।

वि० बराबर घूमता रहनेवाला या चक्कर लगानेवाला।

भौना—अ० [सं० भ्रमण] घूमना।

भौर—पु० [हि० भौर; सं० भ्रमर] १. भौर। २. मुक्की घोड़ा।

†स्त्री०—भौरी।

भौरकली—स्त्री०—भौरकली।

भौरा—पु० [सं० भ्रमर; प्रा० भमर; प्रा० भंवर] [स्त्री० भंवरी] १. काले रंग का उड़नेवाला एक पतया जो फूलों पर भँवरता और उनका रस चूसता है। इसके छ. पैर, दो पर और दो भूँछे होती हैं। २. बड़ी मधुमक्खनी। सारंग। डंगर। ३. बर। निडू। ४. ज्वार आदि की फसल को हानि पहुँचानेवाला एक प्रकार का कीड़ा। ५. लट्टू के आकार का एक प्रकार का लिलाना जिसमें कील या छोटी बँडी लगी रहती है। इसी कील में रस्सी लपेटकर लट्टूके इसे जमीन पर नचाते हैं। ६. हिडाले की यह लकड़ी जो मयारीमें लगी रहती है और जिसमें बारी बड़ी बंधी रहती है। ७. गाड़ी के पहिये का यह भाग जिसके बीच के छेद में

घुरे का गज रहता है और जिसमें आरा लगाकर पहिये की पहियाँ बड़ी जाती हैं। नामि। लट्टू। मुँडी। ८. रट्ट के लट्टी चरबी जो भँवरी को फिराती है। चकरी। (बूदेल) ९. पशुओं का एक रोग जिसे 'बिचक' भी कहते हैं। (बूदेल०) १०. पशुओं को आनेवाली मिरगी। ११. गड़िये की भँडो की रखवाली करनेवाला कुत्ता। १२. तहखाना। १३. अनाज रखने का खता। खत। १४. रहस्य सम्प्रदाय में, भन।

†पु०—भौवर।

भौराना—स० [सं० भ्रमण] १. परिक्खा करना। घूमना। २. चक्कर या फेरा देना। ३. विवाह के समय भौवर की क्रिया सम्पन्न करना।

४. विवाह करना।

†अ०—भौरना (घूमना या चक्कर खाना)।

भौराला—वि० [हि० भौरा] [स्त्री० भौराली] भौरे की तरह काले रंग का।

वि० [हि० भँवर] छलेदार। धुंधराला। (बाल)

भौराही—स्त्री० [हि० भौराना; आही (प्रत्य०)] १. भौरे के भँडराने की क्रिया या भाव। २. यह शब्द जो भौरा भँडरते समय करता है।

भौरी—स्त्री० [सं० भ्रमयं] १. प्रायः पशुओं के वयोर पर होनेवाला रोगों का मडकाकार छोट्टा घेरा जो अनेक अङ्कितियों आदि के विचार से शुभ या अशुभ माना जाता है। २. दे० 'भौवर'। ३. दे० 'भँवर'।

स्त्री०—भौह।

†पु० [देश०] लिट्टी। बाटी।

भौह—स्त्री० [सं० भू] आँखों के ऊपर की हड्डी पर के रोगों या बाल। भुकुटी। भौ।

भूहा—(किसी के सामने) भौह उठाना—अथ उठारकर देखना।

भौह बढ़ाना या तानना अथ तानकर फोस या क्षीय प्रकट करना। त्योरी चढ़ाना। विगडना। (फिसो को) भौह जोड़ना

या ताकना—यह देखते रहना कि कोई अप्रसन्न होने पावे। भौह नचाना—बराबर भौहें हिलाना जो स्त्रियों के हाथ-हाथ और विंशय चंचलता का सूचक। भौह मरोडना—(क) असवोध, उंघासा, रोष आदि प्रकट करने के लिए अपनी आकृति विकृत करना। नाक-भौह चढ़ाना। उदा०—मुनि सौतिनि के गुनि की चरचा द्विज जू तिय भौह मरोडन लागी।—द्विजदेव। (ख) दे० ऊपर 'भौह बढ़ाना या तानना'।

स्त्री० [अनु०] कुत्तों के भूंकने का शब्द।

भौहरा—पु०—भूहरा।

पु०—भौरा।

भौ—[पु० सं० भव] १. संसार। जगत्। दुनियाँ। २. जन्म।

†पु०—भव (हर)।

अ० [हि० भवना] हुआ। (अवधि)

भौकन—स्त्री० [हि० भमक] १. आग की लपट। ज्वाल। २. जलन। ताप।

भौका—पु० [देश०] [स्त्री० भौकी] बड़ी दौरी। टोकरी।

भौगधिक—वि० [सं० भूगर्भ; दृक्—दृक्] भूपटल के अन्दर जन्म लेने-वाला। पृथ्वी के भीतरी भाग में होनेवाला।

भौमिया—वि०—भोमि।

भौतिकज्ञान—वि०[सं० भूगोल+उच्-इक] भूगोल-संबंधी। भूगोल का। (विद्यार्थिककल)

भौतिकी—स्त्री० [सं० भौतिक+कीप्] वह पुस्तक जिसमें किसी देश, महादेश अथवा धरती पृथ्वी के भौतिक नामों और नगरों, नदियों पहाड़ों आदि के संबंध की सब बातें रहती हैं। (गवर्ण्टर)

भौतिक—वि०[सं० भू+भक्ति] १. सहसा मयतपूर्व स्थिति उत्पन्न होने पर जो चबरा गया हो और फलतः कुछ करने-बचने में असमर्थ-सा हो गया हो। २. चकित। हैरान।

भौतिकता—वि०=भौतिक।

भौतिक—पु०=भूकंप।

भौजा—स्त्री०=भाजक (भोजार्थ)।

भौजल—पु०=भवजाल।

भौजार्थ—स्त्री० [सं० भ्रातृजाया] माई के विचार से विशेषतः बड़े माई की स्त्री। मायी।

भौजी—स्त्री०=भौजार्थ।

भौजे—पु०[सं० भोट+अण्] भोट या भूटान देश का निवासी।

भौडा—पु०=भौटा।

भौषा—पु०=भवन (घर)।

भौष—वि० [सं० भूत+अण्] १. भूत-संबंधी। २. भूत-निमित्त। भौतिक। ३. भूत-भेद संबंधी। पेशाबिक। ४. भूताधिक।

पु० १. मन्दिर। २. पुजारी। ३. वह जो भूत-भ्रंशों की पूजा करता हो। ४. भूतों का ढल या वर्ग। ५. भूत-यज्ञ।

†वि०=बहुत।

भौषारण—वि०=भव-तारण (परसेवर)।

भौषिक—वि०[सं० भूत+उच्-इक] १. पंचभूतों से संबंध रखनेवाला। २. पंचभूतों से बना हुआ। ३. इस जगत् से संबंध रखनेवाला। लौकिक। सासारिक। ४. पापिक। शरीर संबंधी। शारीरिक। (मैट्रीरियल) ५. भूत यंत्रों से संबंध रखनेवाला। ६. प्राकृतिक नियमों, सिद्धान्तों, रूपों आदि से संबंध रखनेवाला। (फिजिकल) जैसे—भौतिक विज्ञान।

पु० १. महादेव। शिव। २. उपद्रव। ३. आधि, व्याधि, कष्ट और रोग। ४. आँसू, कान आदि शरीर की संरिया।

भौषिक चिकित्सा—स्त्री०[सं०] आधुनिक चिकित्सा प्रणाली की वह शाखा जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि शरीर की उलझी या टूटी हुई हड्डियाँ बँडाने या जोड़ने के उपरांत किस प्रकार भ्रालिख, व्यायाम सेंक आदि के द्वारा उन्हें ठीक तर्छ से काम करने के योग्य बनाया जाता है। (फिजियोथैरेपी)

भौषिक भूगोल—पु०[सं० कर्म० सं०] भूगोल की वह शाखा जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि पृथ्वी के किस अंश की प्राकृतिक बनावट कैसी है और उसमें कैसे कैसे उत्पादन होते हैं। (फिजिकल ज्याग्रफी, फिजियोपैथी)

भौषिकवाद—पु०[सं० व० तं ?] १. वह दार्शनिक सिद्धान्त जिसके अनुसार पंचभूतों से बना अथवा इस संसार ही वास्तविक और सत्य माना जाता है। (मैट्रीरियलिज्म) २. 'पथार्थवाद'।

भौषिकवादी—वि०[सं०] भौषिकवाद का।

पु० जो भौतिकवाद का अनुयायी या पोषक हो।

भौषिक विज्ञान—पु०[सं० कर्म० सं०] वह शास्त्र जिसमें भूतों तथा तत्त्वों का विवेचन हो। २. वह विज्ञान जिसमें अजीब सृष्टि विशेषतः ताप, प्रकाश, ध्वनि आदि पदार्थों का वैज्ञानिक विवेचन करते हैं। (जीविक) भौषिक विज्ञान—स्त्री०[सं० कर्म० सं०] १. भूत-भ्रंश से संबंध स्थापित करने, उन्हें मूलाने और दूर करने की विद्या। २. वै० 'भौषिक विज्ञान'।

भौषिक सृष्टि—स्त्री०[सं० कर्म० सं०] पुराणानुसार दैव, मनुष्य और तिर्यक् योनियों का समूहाहार।

भौषिकी—स्त्री० २० 'भौषिक विज्ञान'।

भौती—स्त्री०[सं० भूत+अण्, बुद्धि+कीप्] रात। रात्रि। रजनी। स्त्री०[हि०] नैवना=भूमना] एक बालिखत कृष्णी और पतली लकड़ी जिसकी सहायता से ताने का बरना घुमाते हैं। मेकती। (बुलाहा)

भौष्य—पु०[सं० भूति+प्यञ्] चौदहवें मनु जो भूतिभूमि के पुत्र थे। (पुराण)

भौष—पु०=भवन।

भौषा—अ० [सं० भ्रमण] १. चक्कर लगाना। भूमना। २. ध्वषं इधर-उधर भूमना।

भौषाल—पु०[सं० भूपाल+अण्, बुद्धि] राजकुमार।

भौष—वि०[सं० भूमि+अण्] १. भूमि-संबंधी। भूमि का। २. भूमि से उत्पन्न होनेवाला। भूमिज। ३. भूमि पर रखने या होनेवाला। पु० १. मंगल ग्रह। २. अबर नामक ग्रह ग्रन्थ। ३. लाल पुनर्तन। ४. योग में एक प्रकार का आसन। ५. वह केतु या पुच्छल तारा जो दिव्य और अंतरिक्ष के परे हो।

भौषेव—पु०[सं०] एक प्राचीन लिपि।

भौष-रत्न—पु०[सं० कर्म० सं०] मूँगा।

भौषती—स्त्री०[सं० भौष+मत्पुर्+कीप्] भौषामुर की स्त्री का नाम।

भौष-वार—पु०[सं० व० तं] मंगलवार।

भौषामुर—पु०[सं० कर्म० सं०] नरकामुर का एक नाम।

भौषिक—पु०[सं० भूमि+उच्-इक] भूमि का अधिकारी या स्वामी। जमीदार।

वि०=भौष।

भौषिकी—स्त्री०[सं० भौषिक से] १.=भूगोल। २.-भू-विज्ञान।

भौषिकीय—वि०[सं०] १. भूमिका-संबंधी। भूमिका का। २. भूमिका के रूप में होनेवाला।

वि०=भौषिक।

भौषी—स्त्री०[सं० भौष+कीप्] पृथ्वी की कन्या, सीता।

भौष्य—वि०[सं० भूमि+प्यञ्] १. भूमि-संबंधी। २. पृथ्वी पर होनेवाला।

भौष—पु०[सं० भ्रमण] १. भोके का एक भेद। २. भँवर। ३. भौरा।

भौषिक—पु० [सं० भूति+उच्-इक] १. राजकीय कोष का प्रधान अधिकारी। २. कोषाध्यक्ष।

भौषिकी—स्त्री०[सं० भौषिक+कीप्] १. कोषागार। २. टकसाल।

भौषिया—स्त्री०[सं० बहुला]एक प्रकार की छोटी नाव जो ऊपर से बही रहती है।

नीला—पु० [दिश०] १. नील-माङ्ग। जन-समुह। २. हो-मुल्लङ्घ। धोर-गुल। बहुत अधिक कुम्यवस्था।

नीलागर—पु०=मन-सागर।

नीलागरी—पु० [स० भूगार] नीलगरी। (दि०)

नीली—पु० [स० भूमी] गुजार करनेवाला एक प्रकार का कतिगा।

स्त्री०=भग का स्त्री०।

नील—पु० [स०] √अर्थ (नीचे गिरना)+पञ्च अथ,पतन। १. नीचे गिरना। २. प्वस। नाश। ३. तोड़ना-फोड़ना।

वि०--अष्ट।

नील(स)न—पु० [स०] √अर्थ+स्युद्-जन १. नीचे गिरना। पतन। २. अष्ट होना।

वि० नीचे गिरानेवाला।

नीली (सिन्)— वि० [स० अत्र+इति] १. अष्ट होनेवाला। २. नष्ट करनेवाला। ३. छीजनेवाला।

नीलोद्धार—पु० [स० अत्र+उद्धार, ष० तं] समुद्र में डूबी हुई या आग में जलती हुई चीज को बचाने के लिए बाहर निकालना या उसका उद्धार करना। (मैल्बेज)

भूकृन्त—पु० [स० भू-कृन्त, ब० स०, पृषो० सिद्धि] स्त्री का बेश धारण करके नाचनेवाला व्यक्ति।

भूकृति—स्त्री० [स० भू-कृति, ष० तं, अर्थ] १. क्रोध के भारे नीहूँ का सिक्कड़ना। २. मोह।

भूत्ता—पु० [स० मूल्य] दास। सेवक।

भूत्ता—पु०=मूल्य।

भूद्र—पु० [स० अद्र] हाथी। (दि०)

भ्रम—पु० [स०] √अम् (आत होना)+पञ्च १. भ्रमण करने की अवस्था या भाव। २. चारों ओर घूमना। ३. वह अवस्था जिसमें दृष्टिकोण अथवा पुरानी या बर्ची हुई धारणा के कारण किसी चीज को कुछ का कुछ समझ लिया जाता है। ४. संदेह। सशय। ५. एक प्रकार का रोग जिसमें रोगी का शरीर चलने के समय चक्कर खाता है और प्रायः जमीन पर पड़ा रहता है। यह रोग मुर्छा के अन्तर्गत माना जाता है। ६. बेधोड़ी। मुर्छा। ७. नाचदान। पनाला। ८. कुम्हार का पाग।

वि० १. चक्कर काटने या घूमनेवाला। २. चलने या भ्रमण करनेवाला।

पु० [स० सम्भ्रम] प्रतिष्ठा। मान।

भ्रमकारी (रिप)—वि० [स० अम्+कृ (करना)+पिनि, उप० स०] जिससे भ्रम उत्पन्न होता है अथवा जो भ्रम उत्पन्न करता हो।

भ्रमजाल—पु० [स० ष० तं] मासार्तिक मोह का पाश।

भ्रमण—पु० [स०] √अम् (घूमना)। स्युद्-अन्त १. घूमना-फिरना। विचरण। २. आना-जाना। ३. देश-विदेश में जाना। देशाटन। ३. यात्रा। सफर।

भ्रमणकारी (रिप)—वि० [स० भ्रमण+कृ (करना)+पिनि] भ्रमण करनेवाला।

भ्रमणी—स्त्री० [स० भ्रमण+ङीप्] सैर या मनोविनाय के लिए चलना। घूमना-फिरना। २. जोक नाम का कीड़ा।

भ्रमणीय—वि० [स०] √अम्+अनीयर् १. घूमनेवाला। २. चलने-फिरनेवाला।

भ्रमकुटी—स्त्री० [स० कर्म० स०] सपत्नियों आदि का बना हुआ बड़ा छाता।

भ्रमर—वि० [स०] भ्रम+दा (देना)+क [स्त्री०] भ्रमदा] भ्रम उत्पन्न करनेवाला। उदा०—हृत्भामिनी कवित भ्रमदा वस्तुनि ली मावै।—रत्नाकर।

भ्रमर—पु०=भ्रमण।

भ्रमरा—अ० [स० भ्रमण] १. घूमना-फिरना। २. चक्कर खाना।

अ० [स० भ्रम] १. भ्रम या धोखे में पड़ना। २. भूलकर धर-उपर पटकना।

भ्रमरि—स्त्री०=भ्रमण।

भ्रम-मूलक—वि० [स० ब० स०, कप्] जिसके मूल में भ्रम हो। भ्रम के कारण उत्पन्न।

भ्रमर—पु० [स०] √अम् (घूमना)+अर्त् १. मोर नाम का कतिगा। २. उदक का एक नाम। ३. दोहे का पहला भेद जिसमें २२ गुरु और ४ लघु वर्ण होते हैं। ४ छप्य का तिरसठवां भेद जिसमें ८ गुरु, १३६ लघु, १४४ वर्ण या कुल और १५२ मात्राएँ होती हैं। ५ सतिष्य में बचल मन वाला बहु नायक जो अनेक नायिकाओं से अनुरूप अथवा संबंध रखता हो। ६ सत समाज में बचल मन को अनेक प्रकार की विषय-वासनाओं का रस लेता रहता है। वि० कामुक। लम्पट।

भ्रमरक—पु० [स०] भ्रमर+कन् १. माघे पर लटकनेवाले बाल। जुल्फ। २. भ्रमर। मँवर। ३. खेले का गेद।

भ्रमर-करडक—पु० [ष० तं] प्राचीन भारत में मधुमक्षियों की बहु पिटाटी जिसे बोर साथ रखते थे और कहीं कहीं राजनी बुझाने के लिए खोल देते हैं।

भ्रमर-कीट—पु० [उपमि० स०] एक प्रकार की बरें।

भ्रमर-गीत—पु० [स० मध्य० स०] वह गीत जिसमें उद्व और मोरियों का मजाब हो।

भ्रमर-गुन्ना—स्त्री० [स०] हठ योग में ब्रह्मरथ।

भ्रमरछल्ली—स्त्री० [स०] भ्रमर+छल (भाग देना)। अच्+ङीप् एक प्रकार का बहुत बड़ा अणकी बृक्ष जिसके पत्ते बादाम के पत्ते के समान होते हैं और जिसमें बहुत पतली-पतली फलियाँ लगनी हैं।

भ्रमर-ध्वनि—पु० [स० ष० तं] सगीत में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

भ्रमरधव—पु० [ष० तं] एक प्रकार का वृक्ष।

भ्रमरध्रिय—पु० [ष० तं] एक प्रकार का वृक्ष।

भ्रमरध्रुवी—पु० [स०] सगीत में कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

भ्रमरसारंग—पु० [स०] सगीत में कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

भ्रमर-हूसी—स्त्री० [स०] सगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

भ्रमर-हस्त—पु० [स० मध्य० स०] नाटक के चौदह प्रकार के हस्त-विध्याओं में से एक प्रकार का हस्त-विन्ध्यास।

भ्रमर-हासिनी—स्त्री० [स०] सगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

भ्रमरा—स्त्री० [स०] भ्रमर+टाप् भ्रमरछल्ली नामक पौधा।

भ्रमरतिथि—पु० [स०] भ्रमर-अतिथि, ब० स०] बघा का वृष।

भ्रमरानंद—वि० [स०] भ्रमर-आनंद, ब० स०] बहुल वृक्ष।

अभरवाची—स्त्री० [सं० अभर-आची, व० तं०] १. नीरों की पंक्ति या बेनी। २. छंद शास्त्र में मछिनी या मनुहरण नाम का वृत्त।

अभरी—स्त्री० [सं० अभर+अरीप्] १. अभर की स्त्री। नीर की माता। २. पार्वती। ३. मिरगी नामक रोग। ४. अजुका नाम की लता। ५. पत्थरी।

अभरेष्ट—पुं० [सं० अभर-इष्ट, व० तं०] एक प्रकार का स्थोताक।

अभरेष्टा—स्त्री० [सं० अभर-इष्टा, व० तं०] १. मुँई जामुन। २. मारंगी।
अभ्रवात—पुं० [सं० मध्य सं०] आकाश का वह वायु-मंडल जो सर्वदा घूना करता है।

अभ्रवातक—वि० [सं० अभ्र-आत्मन्, व० सं०, । कप्] जिससे अथवा जिसके संबंध में अभ्र उत्पन्न होता है। अभ्र से युक्त। सखिय।

अभ्रमाता—सं० [हि० अभ्रमाता का सं०] १. घुमाना-फिराना। २. चक्कर देना। ३. अभ्र या धोखे में डालना।

अभ्रमसक्त—पुं० [सं० अभ्र-आसक्त, व० सं०] वह जो अल्प-वस्त्र आदि साफ करने का काम करता है।

अभ्रि—स्त्री० [सं० अभ्र + इ] -भ्रयी।

अभ्रित—पुं० कृ० [सं० अभ्र+इत्] १. जिसे अभ्र हुआ हो। संकित। २. जिसे अभ्र में डाला गया हो। ३. घूमता या चक्कर खाता हुआ। ४ जो घूमता या चक्कर में डाला गया हो।

अभ्रित-नेत्र—वि० [सं० व० सं०] ऐषा-ताना।

अभ्री—स्त्री० [सं० अभ्रि+इरीप्] १. घुमाना-फिराना। अभ्रण। २. चक्कर खाना या लगाना। ३. तेज बहते हुए पानी का भँवर। ४. कुम्हार का वाक। ५. एक प्रकार की सैनिक व्यूह-रचना जिसमें सैनिक मंडल बाँधकर खड़े होते हैं।
वि० १. अभ्र में पका हुआ। २. मोचक।

अभ्रीम*—वि० -भ्रयी।

अष्ट—पुं० कृ० [सं०/अश्+क्त] १. जँबाई या ऊपर से नीचे गिरा हुआ। २. गिरने के कारण जो दूर-दूर गया हो। ३. बवस्त। ४. जो अपने मार्ग से इष्ट-उत्तर हो गया हो। ५. कुछ भी काम न दे सकनेवाला। ६. आचार, धर्म, नीति आदि की दृष्टि से दूषित और निन्दनीय। बुरे आचार-विचार वाला। (कोरप्ट) ७. किसी चीज या बात से बहिष्ठ।

अष्ट-किय—वि० [व० सं०] जो विहित कर्म न करता हो।

अष्ट-निद्र—वि० [व० सं०] जिसे निद्रा न आती हो।

अष्ट-श्री—वि० [व० सं०] श्री से रहित।

अष्टा—स्त्री० [सं० अष्ट+टाप्] अष्ट वरिष्ठ वाली स्त्री। कुलटा। पुरुषली।

अष्टाचार—पुं० [अष्ट-आचरण, कर्म० सं०] अष्टाचार करना।

अष्टाचार—वि० [सं० अष्ट-आचार, कर्म० सं०] जिसका आचार विगड़ गया हो।

पुं० १. दूषित और निन्दनीय आचार-विचार। २. आज-कल बहु बहुत विगड़ हुई स्थिति जिसमें अधिकारी तथा कर्मचारी विहित कर्तव्यों का पालन निष्ठापूर्वक, मली-मोर्ति और सम्यक् पर नहीं करते बल्कि मनमाने ढंग से, निर्बल से, तथा अनुचित रूप से करते हैं। (कोरप्यन)

अष्टुंड—पुं० = मूष्णुड।

आँत—वि० [सं०/अम्(घुमाना)+क्त] १. जिसे आँतियां भ्रम हुआ

हो। धोखे में डाला या पका हुआ। २. बहराया हुआ। विकल। ३. उमलत। ४. घुमाया या चक्कर में लाया हुआ।

पुं० १. घुमाना-फिराना। अभ्रण। २. तलवार चलाने का एक ढंग या हाथ जिसमें उसे चारों ओर घुमाते हुए वायु के बार विकल किये जाते हैं। ३. मस्त हाथी। ४. राज-बन्दु।

आँतपल्लुति—स्त्री० [सं० आँत-अपल्लुति, कर्म० सं०] साहित्य में अपल्लुति अलंकार का एक भेद जिसमें किसी एक बात या वस्तु में दूसरी बात या वस्तु की आँत होने पर वास्तविक बात बतलकर यह भ्रम दूर करने का उल्लेख होता है।

आँत—स्त्री० [सं०/अम्+हित्] १. चारों ओर घूमने या चक्कर लगाने की क्रिया या भाव। २. चक्कर। फेरा। ३. बहु भागसिक स्थिति जिसमें किसी चीज को ठीक तरह से पहचान या समझ न सकने के कारण कुछ और भी मान लिया जाता है। बोझा। ४. सन्दिग्ध। शक। ५. उन्माद। पागलपन। ६. तिर में चक्कर जाने का रोग। घुमे। ७. मूल-भ्रूक। ८. प्रमाद। ९. मोह। १०. साहित्य में एक प्रकार का काव्यालंकार जिसमें किसी चीज या बात को धोखे में कुछ और भाव या समझ लेना का उल्लेख होता है। जैसे—चंद्रमौली नायिका को देख कर यह कहना—अरे यह चन्द्रमा कहीं न निकल आया।

आँतिसमान(सत्)—वि० [सं० आँत+मत्तुर्] १. जिसे आँत या बोझा हुआ हो। २. चक्कर खाता हुआ।

पुं० साहित्य में एक प्रकार का काव्यालंकार जिसमें भ्रम से उपमय को उपमान समझ लेना का उल्लेख होता है।

आँतियापल्लुति—स्त्री० = प्रतापल्लुति।

आञ्जक—पुं० [सं०/आञ्ज (बमकना)+ङ्कुल-अङ्] लबाट में रहनेवाला पित्त। (वैद्यक)
वि० बमकानेवाला।

आञ्जना—अ० [सं० आञ्ज=दीपन] १. बमकना। २. सुशोभित होना। सं० १. बमकाना। २. सुशोभित करना।

आञ्जमान—वि० [सं०/आञ्ज+आत्तव, सक-आपय] शोभायमान।

आञ्जिर—पुं० [सं०] मौल्य मन्वतरक के देवता। (पुराण)

आञ्जिण्यु—वि० [सं० आञ्ज+इण्युच्] बमकनेवाला।

पुं० १. विण्यु। २. शिव।

आञ्जी (विण्यु)—वि० [सं० आञ्ज+इण्यु] बमकनेवाला। दीपितयुक्त।

आत् *—पुं० = भ्राता।

आत्ता (तु)—पुं० [सं०/आत्+तुन्, नि० सिट्ठि] सगा भाई। सहोदर।

आत्क—पुं० [सं०/आत्+उक्+क] भ्रम सम्पत्ति जो भाई से मिली हो।

आत्क—पुं० [सं०/आत्+जन् (उत्पत्ति)+ज्] [स्त्री०/भ्रातृजा] भाई का लड़का। भतीजा।

आत्क-भाया—स्त्री० [सं० व० तं०] भाई की स्त्री। भतीजा। भाभी।

आत्कत्व—पुं० [सं०/आत्+त्व] भाई होने की अवस्था, धर्म या भाव। भाईपन।

आत्-छितीया—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] कार्तिक शुक्ल छितीया। इसी दिन बहुत अपने भाइयों को राखी बाँधती है।

आत्-घुञ्ज—पुं० [सं० व० तं०] भतीजा।

आत्-भाँच—पुं० [सं० व० तं०] यमज भाई। बुढ़का बच्चे।

भ्रातृ-भाष्य—पुं० [सं० व० त०] भाई या भाइयों का ता व्यवहार और संबंध । २. भाइयों में होनेवाला परस्पर प्रेम ।
भ्रातृ-भय—स्त्री० [सं० व० त०] नीचाई; माजी; मावज ।
भ्रातृभ्य—पुं० [सं० भ्रातृ+भ्यत्] भाई का लङ्कार । मतीजा ।
भ्रातृभयम्—पुं० [सं० उपनि-सं०] पति का बड़ा भाई; जेठ; मसुर ।
भ्रात्र—पुं० [सं० भ्रातृ+अण्] भाई ।
भ्रात्रीय—वि० [सं० भ्रातृ+इ-इय] भ्राता-संबन्धी; भाई का ।
 पुं० भाई का लङ्कार । मतीजा ।
भ्रात्र—वि० [सं०/भ्रम् (संदेह)+ण] १ भ्रम-युक्त । २. वृत्तनेवाला ।
 पुं० १. घोषा। भ्रम । २. मूल-भूक ।
भ्रात्रक—वि० [सं०/भ्रम (संदेह)+गिप्+प्लुत्—अक] १. भ्रम या धोखे में डालनेवाला । मन में भ्रम उत्पन्न करनेवाला । २. सन्देह उत्पन्न करनेवाला । ३. धुमाये या बक्कर देनेवाला । ४. बालबाज । भूत । मक्कार ।
 पुं० १. कातिसार लोहा । २. वृत्तक पत्थर । ३. गीड़ । सियार ।
भ्रात्र—वि० [सं० भ्रमर+अञ्] १ भ्रमर-सम्बन्धी । भ्रमर का । २. भ्रमर के उत्पन्न या प्राप्त होनेवाला ।
 पुं० १ भ्रमर से उत्पन्न होनेवाला मयु या शहद । २. वृत्तक पत्थर । ३. अपस्मार या मिरगी नामक रोग । ४. धोखे का हूसरा भेद जिसमें २ १ गुरु और ६ लघु मात्राएँ होती हैं । उदा०—माषो भेरे ही बसो राखो भेरी लाज । कामी कोषी लपटी जानि न छडो काज । ५. ऐसा माष जिसमें बहुत से लोग फेर या मडल बाँधकर गोलाकार नापते हैं ।
भ्रात्ररी (सिन्)—वि० [सं० भ्रामर+रिन्] जिसे भ्रामर या अपस्मार रोग हुआ हो ।
 स्त्री० [भ्रामर+डीप्] १ पावेली । २. पुकडानी नाम की लता ।
भ्रात्रित—पुं० क्त० [सं०/भ्रम्+गिप्+क्त, इट्] धुमाया या ह्मर-उत्पन्न बक्कर लिलाया हुआ ।
भ्रातृ—पुं० [सं०/भ्रस्त्+प्लुत्] १ आकाश । २. वह वरतन जिसमें अनाज रखकर भङ्गूजे मूतते हैं ।
भ्रिगां—पुं०=भृग ।
भ्रिगी—स्त्री०, पुं०=भृगी ।
भ्रु-कुस—पुं० [सं० भ्रु-कुस, व० सं०, ह्रस्वा] स्त्रियों के वेष में नाचने-वाला नट ।

भ्रु-हृदि—स्त्री० =गुहृदि ।
भ्रु—स्त्री० [सं०/भ्रम्+ङ्] आँसों के ऊपर के बाल । मीं । गीह ।
भ्रु-क्षेप—पुं० [सं० व० त०] मीहें टेढ़ी करना ।
भ्रुज—पुं० [सं०/भ्रुज् (अधा करना)+ञञ्] १. स्त्री का गर्म । २. प्राणी के माता के गर्म में पहुँचने वार महीने तक रहने की अवस्था । (एम्बीय) ३. जीव का गर्म या अंडे में स्थित होने की अवस्था में प्राप्त होनेवाला रूप । (कीटशा)।
भ्रुजल—पुं० [सं० भ्रुज्/हृत् (मारना)+क] भ्रुज-हृत्या करनेवाला । वह जो गर्म में स्थित बालक को मार डालता हो ।
भ्रुज विज्ञान—पुं० [सं०] जातुविज्ञ जीव-विज्ञान की वह शाखा जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि भ्रुज किस प्रकार बनता और विकसित होता है । (एंब्रियोलोजी)
भ्रुज-हृत्या—स्त्री० [सं० व० त०] गर्म में आने हुए बालक की की जाने-वाली हृत्या जो बहुत बड़ा अपराध हो ।
भ्रुजहा (हृत्)—पुं० [सं० भ्रुज्/हृत्+क्विप्] वह जिसमें भ्रुज हृत्या की हो ।
भ्रुजाय—पुं० [सं० भ्रुज-अण, व० त०] भ्रुज का अगला माग ।
भ्रु-प्रकाश—पुं० [व० त०] एक प्रकार का काला रंग जिससे भ्रुजार आदि के लिए मीहें बनाते हैं ।
भ्रु-मंग—पुं० [व० त०] क्रोध आदि प्रकट करने के लिए मीहें बढाना । खीरी बढाना ।
भ्रु-भेद—पुं० [व० त०] क्रोध आदि में होकर मीहें टेढ़ी करना ।
भ्रु-मध्य—पुं० [व० त०] दोनों मीहों के बीच का स्थान ।
भ्रु-कला—स्त्री० [कर्म० सं०] मेहरावदार मीह ।
भ्रु-विशेष—पुं० [व० त०] खीरी बदलना । नागवनी दिखाना । भ्रु-मग ।
भ्रु-विलास—पुं० [व० त०] १. मीहों को कोई विशेष भावर्षीनी । २. मीहों का संचालन करने प्रकट किया जानेवाला कोई मोहक भाव ।
भ्रुह—स्त्री० =भ्रु ।
भ्रुष—पुं० [सं०/भ्रुष्य (गिरना)+घञ्] १. नाश । २. गमन । चलना ।
भ्रुष-हृत्या—स्त्री० [कर्म० सं०] =भ्रुज-हृत्या ।
भ्रुषिणी—स्त्री० =भ्रुष विज्ञान ।
भ्रुहृता—अ० [सं०] भ्रु-हृता (प्रत्य०) मयमीत होना । डरना ।
भ्रुहृतरा—वि० [?] बेवकूफ । मूर्ख ।

भ

भ—नागरी वर्णमाला का पचीसवाँ और पचम वर्ण जो भाषा-विज्ञान तथा उच्चारण की दृष्टि से ओष्ठ्य, म्लयप्राय, घोष, स्पर्श तथा अनुनासिक स्वर्यन है ।
 पुं० १ विष । २. ब्रह्म । ३. विष्णु । ४. चन्द्रमा । ५. यम । ६. समय । ७. विष । ८. सगीत में 'मध्यम स्वर' का सभिन्त रूप । ९. पिंगल-शास्त्र में 'मगध' का सभिन्त रूप ।
 अर्थ० [सं० मा] नहीं । उदा०—(क) मूल म हारों म्हारा भाई ।
 —मोरखनाथ । (ख) हर म करी प्रति रायहर । —त्रिभीराज ।

भं—सर्व०=भैं । उदा०—भैं ही सकल अनरप कर मूला ।
 —तुलसी ।
भंजक—पुं० [सं०] १ एक प्राचीन क्षत्रि । २. एक दक्ष का नाम । (महाभारत)
भंज—पुं० [सं०/भञ्ज (भूषित करना)+उरञ्] दर्पण ।
भंज—पुं० [सं०/भञ्ज (गति)+भ्यृट्—अन्, प्रचो० ख—ञ्] प्राचीन काल में युद्ध के समय जाँच कर बाँधा जानेवाला एक तरह का कवच । उक्थान ।

मंगल—अव्य० [सं०/मन्त्+उन्, पृथो० ल्—ञ्] ? चट-पट। तुर्पट। वीप्रता से। २. यथायं मे। वस्तुतः।

मंगल—पुं० [सं०/मन्त्+अच्] ? चारण्य। भाट। ३ सकृत् भाषा के एक प्रसिद्ध कोलकार।

मंगली—स्त्री० [देव०] बच्चों के गले का एक गहना।

मंग—पुं० [सं०/मन्त्+अच्] नाव का अगला भाग। गल्ली।

†स्त्री०=मंगि (सीमन्त)।

पुं० [देव०] आठ की संख्या। (दलाल)

वि० आठ। (दलाल)

मंगला—पुं० [हिं० मंगिना+ता (प्रत्य०)] भिलमगा। भिलुक।

वि० जो प्रायः किसी न किसी से कुछ मंगला रहता हो।

मंगला—पुं०=मंगला।

मंगला—पुं०=मंगला।

†सं०=मंगिना।

मंगनी—स्त्री० [हिं० मंगिना+ई (प्रत्य०)] ? मंगिने की क्रिया या भाव।

पद—मंगनी का—(पदायं) जो किसी अवसर पर काम चलाने के लिए मंग कर किसी ने लिया गया हो और फिर लौटाया जाने को हो। २ उक्त के आधार पर मंगनी की बीज। ३ बहू रस्म जिसमें घर और कन्या का विवाह निश्चित या पक्का किया जाय। (पवित्रम)

मंगल—वि० [सं०/मन् (गति)+अल्भृ] ? सुख-सौभाग्य आदि देनेवाला। २. हर तरह से भला। शुभ।

पुं० ? कोई ऐसा काम या बात जो हर तरह से अमीश्ट और शुभ हो तथा सुख-सौभाग्य देनेवाली हो। २. कल्याण। भलाई। हित। जैसे—इससे सबका मंगल होगा। ३ हमारे सौर जगत का एक ग्रह जिसका व्यास ४२०० मील, सूर्य से दूरी १४१०००००० मील और अर्धमास से दूरी ३५०००००००। यह सूर्य की परिक्रमा ६८७ दिनों में करता है। (मार्स) ४. उक्त ग्रह के नाम पर सात धारों में से एक धार जो सोमवार और बुधवार के बीच में पड़ता है। ५ विष्णु। ६ कोई शुभ अवसर, पदायं या अक्षय। ७. विवाह। जैसे—पार्वती-मंगल। ८. गृह।—मंगल गाना—(क) विवाह अथवा ऐं हो इससे शुभ अवसरों पर मांगलक गीत गाना। आनंद के गीत गाना। (ख) विफल होकर बुधचाप बँटना। (अव्य) जैसे—अगर हमारी बात नहीं मानते हो तो बँटकर मंगल गाओ।

८. अग्नि का एक नाम। ९. आज-कल सफेद रंग की एक कठोर धातु जिसका उपयोग सीधे के समान बनाने में होता है। (मैंगनीज)

मंगलकारी—स्त्री० [सं० मंगल/कृ (करना)+ट। डीप्] सगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

मंगल-कलश—पुं०=मंगल-घट।

मंगल-काय—वि० [सं० मंगल/काप्+णिङ्+अच्] मंगल चाहनेवाला। शुभ-चिंतक।

मंगलकारक—वि० [सं० प० त०] मंगल अर्थात् भलाई या हित करनेवाला।

मंगलकारी (रिन्)—वि० [सं० मंगल/कृ+णिनि, उप० सं०]=मंगल-कारक।

मंगल-कौम—पुं० [मध्य० सं०] किसी मांगलिक अवसर पर पहना जानेवाला बन्ध विशेषतः देगाधी बन्ध।

मंगल-गाम—पुं० [प० सं०] विवाह आदि मंगल अवसरों पर पाये जानेवाले गीत।

मंगल-गीत—पुं० [प० सं०]=मंगल-गान।

मंगल-गीरी—स्त्री० [कर्म० सं०] सगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

मंगल-घट—पुं० [मध्य० सं०] मंगल अवसरों पर पूजा के लिए अथवा यौं-ही रखा जानेवाला जल से भरा हुआ घट।

मंगल-बंधिका—स्त्री० [कर्म० सं०] दुर्गा का एक नाम।

मंगल-बंदी—स्त्री० [कर्म० सं०] एक देवी।

मंगलच्छाया—पुं० [ब० सं०] बह का पद।

मंगल-सूर्य—पुं० [मध्य० सं०] शुभ अवसर पर ब्रजया जानेवाला बाजा।

मंगलना—सं० [सं० मंगल+भृष्] किसी शुभ अवसर पर अग्नि आदि जलाना। प्रचलित करना। (मंगल-भाषित) जैसे—रीया मंगलना, होनी मंगलना। उदा० दे० 'मंगरत्ना' में।

अ० प्रचलित होता। जलना।

मंगल-याल—पुं० [प० सं०] मंगलाचरच।

मंगल-यालक—पुं० [प० सं०] बहू जो राजाओं की स्तुति आदि करता हो। बरीजन। माट।

मंगल-प्रद—वि० [सं० मंगल। प्र/दा (देना) +क] मंगलकारक। शुभ। **मंगल-प्रदा**—स्त्री० [सं० मंगलप्रद+टाप्] १. हलदी। २. धानी बुध।

मंगल-भाषण—पुं० [प० सं०] किसी अग्रिय अथवा अशुभ बात को त्रिय तथा शुभ रूप में कहने का प्रकार।

मंगल-मेरी—स्त्री० [मध्य० सं०] मांगलिक अवसरों, उत्सवों आदि के समय पर ब्रजया जानेवाला ढोल।

मंगलमय—वि० [सं० मंगल+मयट] जिससे सब प्रकार का मंगल ही होता है।

पुं० परमेश्वर।

मंगल-मन्ना—स्त्री० [प० सं०] १. मांगलिक कार्य के लिए होनेवाली यात्रा। २. आनंद-मंगल या मन-बहुलाक के लिए कही जाना।

मंगल-भाद—पुं० [प० सं०] आशीर्वाद। आशीष।

मंगल-बाध—पुं० [मध्य० सं०] मांगलिक अवसरों पर ब्रजये जानेवाले बाजे।

मंगल-बार—पुं० [प० सं०] सप्ताह का तीसरा दिन। सोमवार और बुधवार के बीच का दिन। सोमवार।

मंगल-बुध—पुं० [मध्य० सं०] कलाई पर अर्धा जानेवाला शेर का तागा।

मंगल-स्नान—पुं० [मध्य० सं०] किसी मांगलिक अवसर पर किया जानेवाला स्नान।

मंगला—स्त्री० [सं० मंगल+अच्+टाप्] १. पार्वती। २. पतिव्रता स्त्री। ३. तुलसी। ४. दूध। ५. एक प्रकार का करंज।

मंगलागुध—पुं० [सं० मंगल-अगुध, कर्म० सं०] एक तरह का अमर (गन्ध इवम्)।

मंगलाचरच—पुं० [सं० मंगल-आचरच, प० सं०] १. किसी का कार्य

श्रीगणेश करने से पहले पढ़ा जानेवाला कोई मांगलिक मंत्र, हकीक या पदमय रचना । २. शंख के आरंभ में मंगल की कामना तथा उसकी सफल समाप्ति के निमित्त लिखा जानेवाला पद्य ।

मंगलाचार—पुं० [मंगल-आचार, घ० सं०] १. मंगल कृत्य के पहले होनेवाला मंगल-मान या ऐसा ही और कोई कार्य । २. मंगलाचरण ।

मंगला-मुक्ती—स्त्री० [हिं०] श्रेया । देवी । (परिहार)

मंगलाय—पुं० [दलाली मंग. -आठ+आय (प्रान्त०)] जठरह की सख्या । (दलाल)

मंगलारंभ—पुं० [सं० मंगल-आरंभ, घ० सं०] मांगलिक कार्य का आरंभ । श्रीगणेश ।

मंगलालय—पुं० [सं० मंगल-आलय, घ० सं०] परमेश्वर ।

मंगला-भक्त—पुं० [सं० घ० सं०] १ शिष्य । २. पार्वतों को प्रसन्न करने के उद्देश्य से रखा जानेवाला व्रत ।

मंगलाष्टक—पुं० [सं० मंगल-अष्टक, घ० सं०] वे मंत्र जिनका पाठ विवाह के समय वर-वधू के कल्याण की कामना से किया जाता है ।

मंगलाह्निक—पुं० [सं० मंगल-आह्निक, मध्य० सं०] कल्याण के लिए प्रति दिन किया जानेवाला कोई मंगल कृत्य ।

मंगली (सिन्धु)—वि० [सं० मंगल+इति] १. (स्थिति) जिसकी जन्म कुंडली के पहले, चौथे, आठवे या बारहवें घर में मंगल ग्रह पड़ा हो । विशेष—कहते हैं कि ऐसा वर जल्दी ही विधुर हो जाता है, और ऐसी कन्या जल्दी ही विधवा हो जाती है ।

२. (कुंडली) जिसके चौथे आठवे या बारहवें घर में मंगल बैठे हो ।

मंगलीय—वि० [सं० मंगल+ईय] १ मंगलकारक । २. भाग्यवान् ।

मंगलीस्वभ—पुं० [सं० मंगल-उत्सव, मध्य० सं०] मांगलिक अवसरों पर होनेवाला उत्सव ।

मंगलय—वि० [सं० मंगल+यत्] १. मंगल या कल्याण करनेवाला । मंगल कारक । २. मनोहर । ३. सुन्दर । ४. सीधा-सादा । साधु ।

पुं० १. त्रायभाषा लता । २. अरवत्य । पीपल । ३. जित्त । बेल । ४. मसूर । ५. जीवक वृक्ष । ६. नासियल । ७. कपित्थ । कथ । ८. रीठ । करंज । ९. दही । १०. चदन । ११. सोना । स्वर्ण । १२. सिपूर ।

मंगलय-मुमुखा—स्त्री० [सं० व० सं०+टापु] शान्नुष्यी ।

मंगलया—स्त्री० [सं० मंगलय+टापु] १. दुर्गा का एक नाम । २. एक प्रकार का अमर जिसमें चमेरी की सी गंध होती है । ३. शशी वृक्ष । ४. सफेद बच्च । ५. रोचना । ६. शंखमुष्णी । ७. जीवती । ८. ऋद्धिनामक लता । ९. हल्दी । १०. दूब ।

मंगलाम—स० [हिं० मंगना का प्रेरें०] १. मंगने का काम दूसरे से कराना । किसी को मंगने में प्रवृत्त करना । जैसे—तुम्हारे मे लक्षण तुमसे मील मंगना कर छोड़ोवे । २. किसी से सह कहना कि अमुक स्थान से अमुक वस्तु खरीद या मंग लाओ । जैसे—बाजार से कपड़ा या मित्र के यहाँ से पुस्तक मंगवाता ।

सवों० कि०—देना ।—रचना ।—लेना ।

मंगाना—सं० [हिं० मंगना का प्रेरें०] १. लड़के या लड़की की मंगनी का सबब स्थिर कराना । विवाह की बातचीत पक्की कराना । २. दे० 'मंगवाता' ।

मंगारना—सं०—मंगलना । उदा०—बिबूह अगारिनि मंगारि हिण होरि सी ।—धनपद ।

मंगियाना—सं० [हिं० मंगि=सीमल] १. सिर के बालों में दूध प्रकार कभी करना कि जिससे मांग निकल आवे । २. अलग या विभक्त करना ।

मंगीरी—स्त्री० [?] एक प्रकार की छोटी मछली ।

मंगैतर—वि० [हिं० मंगनी+एतर (मय०)] १. (युवक या युवती) जिसकी मंगनी हो चुकी हो । २. (वह) जिसके साथ किसी की मंगनी हुई हो, अथवा विवाह होना निश्चित हुआ हो ।

मंगील—पुं० [मंगीलिया प्रदेस से] मध्य एशिया और उसके पूरब की ओर (तातार, चीन, जापान में) बसने वाली एक जाति जिसका रंग पीला, नाक चिपटी और चेहरा चौड़ा होता है ।

मंच—पुं० [स०+मञ् (उच्च होना) धञ्] १. खाट । खटिया । २. खाट की तरह बनी हुई बैठने की छोटी पांकी । मंचिया । ३. समासमितियों आदि में ऊँचा बना हुआ मञ्ज जिस पर बैठकर सब साधारण के सामने किसी प्रकार का कार्य किया जाय । (स्टेज) ४. रंगमंच । (स्टेज) ५. लाक्षणिक अर्थ में, कुछ विशिष्ट प्रकार के क्रिया-कलापों के लिए उपयुक्त क्षेत् । जैसे—राजनीतिक मंच ।

मंचक—पुं० [सं० मञ्+कञ्]—मञ्च ।

मंचकाअध्य—पुं० [सं० मञ्च-आध्य व० सं०] छतमण्ड ।

मंचन—पुं० [सं० मञ्च से] [मू० कृ० मञ्चित] किसी नाटक या रूपक का रंगमंच पर अभिनय करना या होना । जैसे—कई स्थानों पर इस नाटक का मंचन भी हो चुका है ।

मञ्च-मञ्च—पुं० [सं० उपमि० सं०] मचान । (दे०)

मञ्चिका—स्त्री० [सं० मञ्च+क] टाप, हल्ल मचिया ।

मञ्ची—स्त्री० [सं० मञ्च] लह बल म लमार्दी हुई लकड़ियों, लमो आदि की वह रचना जिसके आधार पर कोई भारी चीज ठहराई या रखी जाती है । (पेबेस्टल)

मञ्छ—पुं० [सं० मञ्छ] मछली । उदा०—बेला मछ, गुरु जस काछू ।—जायसी ।

मञ्जन—पुं० [सं०+मञ्ज (चमकना) ल्यट्—अण] वह वृक्षनी या चूर्ण जो दाँतों पर जैंगली आदि से मला तथा रगड़ा जाता है । दाँत साफ करने का चूर्ण ।

*पुं०—मञ्जन (स्नान करना) ।

मञ्जना—अ० [सं० मञ्जन] १. (दाँतों का) मजने से साफ किया जाना । २. (बतनों के संबंध में) राखी आदि में मोजा तथा साफ किया जाना । ३. किसी काम या बात का, अभ्यास के कारण ठीक तरह से सफल या पूरा होना । जैसे—(क) लिखने में हाथ मँजना । (ख) मँजी हुई कविता पढ़ना ।

मंजर—पुं० [सं०+मञ्ज+अट्] १. फूलों का गुच्छा । २. मोनी । ३. तिलक वृक्ष ।

मंजरि—स्त्री०—मंजरी ।

मंजरिका—स्त्री०—मंजरी ।

मंजरित—पुं० कृ० [सं० मंजर+इत्+अट्] १. मंजरियों से युक्त । २. पुष्पित ।

मंजरी—स्त्री० [सं० मंजर+डीष्] १. नया कल्ला । कौपल । २.

कुछ विशिष्ट वीथों के सीके में लगे हुए बहुत से दामों का समूह। जैसे—
 बाम या तुलसी की मंजीरी। ३. तुलसी। ४. तिलक बूझ। ५. मोती।
 ६. बाम नामक छंद का दूसरा नाम। ७. सगीत में, कर्नाटकी पद्धति
 की एक रागिणी।

मंजीर-ब-पु० [सं० मंजीर+कन्] १. एक तरह का सुगन्धित तुलसी
 का पौधा। २. मोती। ३. तिल का पौधा। ४. बेंत। ५. अधोक
 बूझ।

मंजीर-धामर-पु० [मध्य० सं० या उपमि० सं०] कलौ की मंजीरी से बना
 हुआ या उसकी तरह बना हुआ धामर।

मंजीर-स्त्री० [हिं० मंजीर] १. मंजि जाने की अवस्था, क्रिया या भाव।
 २. मंजिने की क्रिया, भाव या पारिभ्रमिक।

मंजीर-सं० [हिं० मंजीर का प्रे०] १. फिरी को मंजिने में प्रवृत्त
 करना। २. अच्छी तरह साफ करना। ३. अच्छी तरह अभ्यास
 करना। जैसे—लिखने में लड़के का हाथ मंजीर।

मंजीर-स्त्री० [सं० मंजीर] बिल्ली।

मंजीर-स्त्री० [सं० मंजीर] बिल्ली।

मंजीर-स्त्री० [हिं० मंजीर] १. मंजिने या मंजिने की अवस्था, क्रिया,
 रंग या भाव। २. कोई काम करने में हाथ के मंजि हुए या अभ्यस्त
 होने की अवस्था या भाव।

मंजि-स्त्री० [सं०√मञ्ज्+ङ्] १. मजरी। २. लता।

मंजिका-स्त्री० [सं०√मञ्ज्+ङ्+ङ्, -टाए, इत्थ] बेरिया। रंजी।

मंजि-कला-स्त्री० [सं० ब० सं०, +टाए] केश।

मंजिमा-स्त्री० [सं० मञ्जु+इमनिच्] सुदस्ता। मनोहस्ता।

मंजिल-स्त्री० [अ० मंजिल] १. यात्रा के मार्ग में बीच-बीच में
 यात्रियों के ठहरने के लिए बने हुए या नियत स्थान। पड़ाव।

मुहा०—मंजिल काटना एक पड़ाव से चलकर दूसरे पड़ाव तक
 का रास्ता पार करना। मंजिल बेना= कोई बड़ी या भारी पीज
 उठाकर ले चलने के समय रास्ते में सुस्तावने के लिए उसे कहीं उतारना
 या रखना। मंजिल मारना—(क) बहुत दूर से चलकर कहीं पहुँचना।

(ख) कोई बहुत बड़ा काम या उसका कोई विशिष्ट अंग पूरा करना।

२. वह स्थान जहाँ तक पहुँचना हो। अभीष्ट, उद्दिष्ट या नियत
 स्थान अथवा स्थिति। ३. ऊपर-नीचे बने हुए होने के विचार से मकान
 का छद्म। मराठिया। जैसे—(क) दो (या तीन) मंजिल का मकान।

(ख) तीसरी मंजिल की छत।

मंजिष्ठा-स्त्री० [सं० मंजिमती+इष्टन्, टि-श्लोप, -टाए] मजीठ नामक
 पेड़ और उसका फल।

मंजिष्ठा-मेह-पु० [उपमि० सं०] सुगन्ध के अनुसार एक प्रकार का
 प्रमेह जिसमें मजीठ के पानी के समान मूत्र होता है।

मंजिष्ठा-राम-पु० [ब० सं०] १. मजीठ का रंग। २. [उपमि० सं०]
 पक्का या स्वाधी अनुप्राय अथवा प्रेम।

मंजी—स्त्री०—मंजीरी।

स्त्री० दे० 'साट'।

मंजीर-पु० [सं०√मञ्ज्+ङ्] १. नूपुर। बूँझ। २. वह लंबा या
 लम्बी जिसमें मधानी का डंढा बंधा रहता है। ३. परिचयनी बंगाल की
 एक पहारी जाति।

मंजीर, मंजीरा-पु० [सं० मंजीर] १. कसि, पीतल आदि का बना हुआ
 एक प्रकार का बाजा जो दो छोटी कटोरियों के रूप में होता है, और जिसमें
 की एक कटोरी से दूसरी कटोरी पर आघात करके संगीत के समय साक
 बेंते हैं। जोड़ी।

मंजु-वि० [सं०√मञ्ज्+ङ्] सुंदर। मनोहर।

मंजु-गर्त-पु० [सं० ब० सं०] नेपाल।

मंजु-बीष-पु० [सं० ब० सं०] १. ताम्रिकों के एक देवता का नाम।
 २. एक बीज आचार्य।

वि० मधुर ध्वनि में बोलनेवाला।

मंजु-बीषा-स्त्री० [सं० ब० सं०, -टाए] एक अप्सरा का नाम।

मंजु-तिलका-स्त्री० [सं०] हंस-गति नामक नाटिक छंद का दूसरा
 नाम।

मंजुदेव-पु०—मंजुबीष (आचार्य)।

मंजुनाथी-स्त्री० [सं०] १. दुर्गा का एक नाम। ३. इंद्राणी का एक
 नाम। ३. सुंदर स्त्री।

मंजु-पाठक-पु० [सं० कर्म० सं०] दोता।

मंजु-प्राण-पु० [सं० ब० सं०] बड़ा।

मंजु-भद्र-पु०—मंजुबीष (आचार्य)।

मंजुभाषी-वि० [सं० मंजु/भाष् (बोलना)+गिनि] [स्त्री०
 मंजुभाषिणी] मधुर और प्रिय बातें करनेवाला।

मंजु-भालिनी-स्त्री० [सं० कर्म० सं०] भालिनी छंद का दूसरा नाम।

मंजुल-वि० [सं० मंजु+लच्] सुन्दर। मनोहर।

प०१. जलाशय या नदी का किनारा। २. संगीत में, कर्नाटकी पद्धति
 का एक राग।

मंजुला-स्त्री० [सं० मंजुल+टाए] एक नदी का नाम।

मंजुषी-पु०—मंजुबीष (आचार्य)।

मंजूर-वि० [सं० मंजूर] जो मान लिया गया हो। स्वीकृत। जैसे—
 बरजी या छुट्टी मंजूर होना।

१पु०—मंजूर (मोर)।

मंजुरी-स्त्री० [अ० मंजुरी] मंजूर होने की अवस्था, क्रिया या भाव।
 स्वीकृति।

मंजुबा-स्त्री० [सं०√मञ्ज्+ङ्] १. छोटा पिटारा या
 डिब्बा। पिटारी। २. पत्थर। ३. मंजीठ। ४. पक्षियों का पिंजरा।

५. हाथी का होता।

मंजुसा-स्त्री०—मंजुषा।

मंज-अव्य०, पु०—मध्य (बीच में)।

मंजधार-स्त्री० [हिं० मंजली+धार] नदी के बीच की धारा।

अव्य० नदी, समुद्र आदि की धारा के बीच में।

मंजना-अ०—मंजना।

मंजिरिया-अव्य० [सं० मध्य, हिं० मंजि] बीच में। मध्य में।

मंजला-वि० [सं० मध्य, पु० हिं० मंज+ला (प्रत्य०)] [स्त्री० मंजली]
 बय, स्थिति आदि के विचार से बीच या मध्य का। जैसे—मंजला मकान
 (दो मकानों के बीच का मकान), मंजला लड़का।

मंजला-वि० [सं० मध्य; पा० यक्ष] १. जो दो के बीच में हो। बीचवाला।
 २. दे० 'मंजला'।

पू० [सं० मध्य०; पा० मज्ज] १ सूत कतने के चरले में बहु मध्य का जयवज जिसके ऊपर माल रहती है। मूंडला। २. अटेरन के बीच की लकड़ी।

स्त्री० [सं० मध्य; पा० मज्ज] बहु मूमि जो गोयंङ और पालो के बीच में पकती ही।

पू० [सं० मं०] १ पलग। लाट। (पंजाब) २. चौकी। ३. भषिया।

मूहा०—मंसा बैठना—एक ही आसन से या स्थिति में अच्छी तरह जम कर बैठना।

पू० [हि० मोजना] वह पदार्थ जिससे रस्सी या पलग की डोर मोजते हैं। मोहा।

मूहा०—मोहा देना—डोरो, रस्सी आदि पर मसा या मोहा लगाना।

मंजाना—स० [हि० मंज नीच] बीच में डालना, रखना या लाना। अ० बीच में पड़ना या होना।

मंजारा—स्त्री०, अन्व०—मंजारा।

मंजियार—वि० [सं० मध्य, प्रा० मज्ज] मध्य का। बीच का।

मंजोला—वि० [सं० मध्य, पू० हि० मंजो मंजोला (प्रल०)] आकार, मान आदि के विचार से बीच या मध्य का। जो न बहुत बड़ा ही हो और न बहुत छोटा ही हो। जैसे—मंजोला।

मंजोली—स्त्री०—मंजोली।

मंड—पू० [सं० मंड/मंड/अच्] शरीरे में पकसा हुआ एक तरह का पकवान।

मंड—पू० [सं० मंड (मूषित कर्ता) अच्] १. मंडन करने की क्रिया या मात। सजावट। २. उबले हुए चावलों का गाढा पानी। भात का पानी। मांड। ३. रेड का पेड़। ४. मेड़क। ५. सारमाग। ६. मूष या दही की मलाई। ७. मंदिर। शामग। ८. आमूषण। गहना। ९. एक प्रकार का साम। १०. कुएँ की जगत। ११. श्वेतसार।

मंड—पू० [सं० मंड/अच्] शरीरे में पकसा हुआ एक तरह का पकवान।

मंड—पू० [सं० मंड/अच्] शरीरे में पकसा हुआ एक तरह का पकवान।

मंड—पू० [सं० मंड/अच्] शरीरे में पकसा हुआ एक तरह का पकवान।

मंड—पू० [सं० मंड/अच्] शरीरे में पकसा हुआ एक तरह का पकवान।

मंड—पू० [सं० मंड/अच्] शरीरे में पकसा हुआ एक तरह का पकवान।

मंड—पू० [सं० मंड/अच्] शरीरे में पकसा हुआ एक तरह का पकवान।

मंड—पू० [सं० मंड/अच्] शरीरे में पकसा हुआ एक तरह का पकवान।

मंड—पू० [सं० मंड/अच्] शरीरे में पकसा हुआ एक तरह का पकवान।

मंड—पू० [सं० मंड/अच्] शरीरे में पकसा हुआ एक तरह का पकवान।

मंड—पू० [सं० मंड/अच्] शरीरे में पकसा हुआ एक तरह का पकवान।

रकम मंडेना। २. किसी काम या बात में लीन होना। जैसे—सब लोग नाच-रग में मड़े थे।

स० [?] मजाना। (हि०) उदा०—आगमि सिधुपाल मंडिजे उडख।

—मिथीराज।

मंडनी—स्त्री० [हि० मंडना] अजाज के डंडलों को बेलों से रौंदवाने का काम। रौंदनी।

मंडप—पू० [सं० मंड/पा+क] १. वह छाया हुआ स्थान जहाँ बहुत से लोग भूष, वर्षा आदि से बचे हुए बैठ सकें। विश्राम-स्थान। २. किसी विशिष्ट काम के लिए छाया हुआ स्थान। जैसे—यज्ञ-मंडप, विवाह-मंडप। ३. आदमियों के बैठने योग्य चारों ओर से सुला, पर ऊपर से छाया हुआ स्थान। बारहदरी। ४. देवमंदिर का ऊपर का छाया हुआ गोलाकार अंश या भाग। ५. चढोला। शामियाना।

मंडपक—पू० [सं० मंडप; कन्] [स्त्री० मंडपिका] छोटा मंडप।

मंडप—स्त्री० [सं० मंडप/डीप] छोटा मंडप।

मंडर—पू०—मंडल।

मंडरना—अ० [सं० मंडल] चारो ओर से घिरना। स० चारो ओर से घेरना।

मंडरार्थ—स्त्री० [सं० मंडल] पक्षियों आदि का घेरा बांध या मंडल बनाकर आकाश में उड़ने की क्रिया या भाव।

मंडराना—अ० [सं० मंडल] १. मंडल या घेरा बांधकर छा जाना। २. पक्षियों, फलितों आदि का किसी चीज के ऊपर तथा चारों ओर चक्कर लगाते हुए उड़ना। ३. लाक्षणिक जय में लोग या स्वयं वश किसी के पास रह-रह कर या भूम-भूम कर पड़ना। किसी व्यक्ति या स्थान के आसपास घूमते या चक्कर लगाते रहना।

मंडरी—स्त्री० [देश०] पयाल की बनी हुई गोदरी या चट्टाई।

मंडल—पू० [सं० मंडल/कलच्] १. चक्र के आकार का घेरा। गोलाई। वृत्त। जैसे—रास मंडल।

मूहा०—मंडल बांधना—गोलाकार घेरा बनाना। जैसे—(क) मंडल बांधकर नाचना। (ख) बाइलो का मंडल बांधकर बरसाना।

२. किसी प्रकार की गोलाकार आकृति, रचना या वस्तु। जैसे—मू-मंडल। ३. चंद्रमा, सूर्य आदि के चारों ओर या फाड़नेवाला घेरा जो कभी कभी आकाश में बादलों की बहुत हल्की तह रहने पर दिखाई देता है। ४. किसी वस्तु का वह गोलाकार अंश जो दृष्टि के सम्मुख हो। जैसे—चंद्र-मंडल, सूर्य-मंडल, मूख-मंडल। ५. चारों दिशाओं का घेरा जो गोल दिखाई देता है। शिखिज। ६. प्राचीन भारत में १२ राज्यों का क्षेत्र, वर्ग या समूह। ७. प्राचीन भारत में चार्मिस योजन लंबा और चौस योजन चौड़ा क्षेत्र या मूखंड। ८. किसी विशिष्ट दृष्टि से एक माना जानेवाला क्षेत्र या मू-भाग। (जोन) ९. कुछ विशिष्ट प्रकार के लोगों का वर्ग या समाज। (संकल) जैसे—मिथ-मंडल, राजकीय मंडल। १०. एक प्रकार की गोलाकार सैनिक व्यूह-रचना। ११. एक प्रकार का संप। १२. बचनशी नामक गण-ग्रन्थ। १३. वह कस या गोलाकार मार्ग जिस पर चलते हुए यह चक्कर लगाने हैं। १४. चारों को आठ दिशियों में से एक। (सुभुट) १५. कंडुक। मंद। १६. किसी प्रकार की गोल चिह्न या दाग। १७. चक्र। १८. पहिया। १९. श्रव्येद का कोई विशिष्ट अंड या भाग।

मंडरी—स्त्री० [सं० मंडप] १. शीपड़ी। २. कुटिया।

मंडरी—स्त्री०—मंडी।

मंडक—पू० [सं० मंड/कन्] १. मंदे की एक प्रकार की रीटी। २. माधवी लता। ३. समीत में गीत का एक अंग।

वि० मंडन या सजावट करनेवाला।

मंडन—पू० [सं० मंड/कन्] १. श्रुगार करना। सजाना। २. तर्क या विचार के प्रसंग में युक्ति आदि देकर किसी कथन या सिद्धान्त का पुष्टिकरण। जैसे—अपने पक्ष का मंडन। 'खंडन' का विपर्यय।

वि० मंडित करनेवाला या सजानेवाला।

मंडना—स० [सं० मंडन] १. मंडित या सुसज्जित करना। श्रुगार करना। अच्छी तरह सजाना। २. तर्क, विवाद आदि के समय युक्तिपूर्वक अपना पक्ष या समर्थन ठीक सिद्ध करते हुए लोगों के सामने उपस्थापित करना। कोई बात अच्छी तरह प्रतिपादित और सिद्ध करना। ३. किसी रचना की रूपरेखा आदि तैयार करना या बनाना। ४. घुरी तरह से आच्छादित करना। छाना। ५. कोई बड़ा काम करना या ठानना।

स० [सं० मंदन] दलित या मंदित करना। नष्ट करना।

अ० [हि० मंडना का अ०] १. मंडा या लिखा जाना। जैसे—घाते में

मंडलक—पुं० [सं० मंडल+कन्] १. किसी प्रकार की मंडलाकार आकृति, छाया या रचना। (चित्रक)। २. वर्षण। घीषा। ३. दे० 'मंडल'।

मंडल-मूषक—पुं० [सं० सुमुषुपा सं०] घेरा बाँधकर या मंडल के रूप में होनेवाला मूषक।

मंडल-पथिका—स्त्री० [सं० ब० सं०, । कप + टापु, ह्यत्] रत्न पुनर्नवा। काल बहुरूपी।

मंडल-मुष्कल—पुं० [सं० ब० सं०, । कप] एक अहरीला कीड़ा। (सुमुत्) मंडल-मूर्च्छा (सिन्धु)—पुं० [सं० मंडल+वृत् (बरतना)+गिणि] प्राचीन भारत में, किसी मंडल या मू-नाग का शासक।

मंडल-मर्च—पुं० [सं० मध्य० सं०] सारे देश में एक साथ होनेवाली वर्षा। मंडलाकार—वि० [सं० मंडल-आकार, ब० सं०] जो बिलकुल गोल न होकर बहुत कुछ गोल या गोले के समान हो। गोलाकार। (आँचिम्प-कर)

मंडलाधिप—पुं० [सं० मंडल-अधिप, ष० सं०] दे० 'मंडलेश्वर'।

मंडलाधीश—पुं० [सं० मंडल-अधीश, ष० सं०] दे० 'मंडलेश्वर'।

मंडलाना—अ०=मंडराना।

मंडलावित—वि० [सं० मंडल+व्यहृ+क्त्] गोलाकार। वतुल।

मंडली—स्त्री० [सं० मंडल+अच्+डीप्] १. अनुष्णों की गोष्ठी या समाज। २. जीव-जंतुओं का झुंड या दल। ३. एक ही प्रकार का उद्देश्य या विचार रखनेवाले अथवा एक ही तरह का काम करनेवाले लोगों का दल या समूह। जैसे—मजल-मंडली, रास-मंडली। ४. वृक्ष। ५. गुच्छ। गिलोच।

पुं० [सं० मंडल+इनि] १. सुमुत् के अनुसार सार्यों के आठ भेदों में से एक भेद या वर्ग। २. वट वृक्ष। बड़ का पेड़। ३. बिबाल। बिल्ली। ४. नेत्रों की जाति का बिल्ली की तरह का एक जंतु जिसे बंगाल में छटाश और उत्तर प्रदेश में सेंचुआर कहते हैं। ५. सूयें।

मंडलीक—पुं० [सं० मांडलिक] एक मंडल या १२ राजाओं का अधिपति।

मंडलीकराज—पुं० [सं० मंडल+कि, ईष्य+कृ (करना)+रज्जु-अन] १. मंडल या घेरा बनाना। २. बुझकी बनाना, बाँधना या मातल।

मंडलेश्वर—पुं० [सं० मंडल-ईश्वर, ष० सं०] १. एक मंडल का अधिपति।

२. प्राचीन भारत में १२ राजाओं का अधिपति। ३. साधु समाज में बहु बहुत बड़ा साधु जो किसी क्षेत्र में सर्वप्रधान माना जाता हो।

मंडप—पुं०=मंडप।

मंडपा—पुं० [सं० मंडप; प्रा० मंडव] १. किसी विशिष्ट कार्य के लिए शकट बनाना हुआ स्थान। मंडप। २. बहु लोक ठगाना जो किसी मंडप के अन्दर बिखलाया जाता हो। (पश्चिमी)

मंड-हारक—पुं० [सं० ष० सं०] मण का व्यवसायी। कलहार।

मंडा—स्त्री० [सं० मंड+अच्+टापु] सुप।

पुं० [सं० मंडक] १. भूमि का एक मात्र जो दो सिरे के बराबर होता

है। २. एक प्रकार की बेंगला छिटाई।

†पुं० [हिं० घड़ी] बड़ी घंटी।

मंडान—स्त्री० [हिं० मंडना] १. मसित करने की क्रिया या भाव।

२. किसी बड़े कृत्य के आरम्भ में की जानेवाली व्यवस्था। ३. आजीवन। प्रबंध। इत्यत्राम। जैसे—राज-नितक या विवाह का मंडान।

किं प्र०=धीना।

मंडार—पुं० [सं० मंडल] १. गड्डा। २. सावा, टोकप या डलिया।

मंडित—पुं० कं० [सं० मंड+कृ (छानना)+क्त्] १. छाना हुआ।

विभूषित। २. ऊपर से छाया हुआ। आच्छादित। ३. भय या घृरी तरह से युक्त किया हुआ। पूरित।

मंडियार—पुं० [दिश०] इन्दोरी नाम की फेंकरी की झाड़ी।

मंडी—स्त्री० [सं० मंडप] बहु बहुत बड़ा विक्रय-स्थल जहाँ थोक माल बेचने की बहुत-सी दुकानें हो। जैसे—अनाज की मंडी, कपड़े की मंडी।

स्त्री० [सं० मंडल] दो सिरे के बराबर प्रतीत की एक पुरानी नाव।

मंडुआ—पुं० [दिश०] एक प्रकार का कदम।

†पुं० मंडवा।

मंडूक—पुं० [सं० मंड+ऊकप] १. मेढक। २. एक प्राचीन ऋषि।

३. प्राचीन काल का एक प्रकार का बाजा। ४. एक प्रकार का नृत्य।

५. संगीत में ऋताल के स्वारह भेदों में से एक। ६. एक प्रकार का फोड़ा। ७. दोहा, छंद का पंचमा भेद जिसमें १८ गुण और १२ लघु अक्षर होते हैं।

मंडूक-मूर्च्छा—स्त्री० [सं० ब० सं०, डीप्] १. बाहरी बूटी। २. मंडी।

मंडूक-कृत्ति—स्त्री० [सं० ष० सं०] १. मेढक का छलमि लगाना।

२. मेढक की तरह छलमि लगाना।

मंडूका—स्त्री० [सं० मंडूक+टापु] सजिपाटा। मण्डौ।

मंडुकी—स्त्री० [सं० मंडूक+डीप्] १. बाहरी। २. आदित्य-मस्ता।

मंडू—पुं० [सं० मंड+ऊक्] १. गलवे हुए लोहे की मूल। २.

लौह-किट्ट। ३. वैद्यक में उक्त से बनाना हुआ एक प्रकार का रसोषध।

मंडा, मंडा—पुं० [हिं० मण्डना] १. कमख्खा बुननेवालों का एक औजार।

२. किसी विशिष्ट कार्य के लिए शकट बनाना हुआ स्थान। मंडप।

३. लकड़ियों आदि का बहु ढाँचा जो किसी तरह की बेल चढ़ाने के लिए सड़ा किया या बनाया जाता है।

मुहा०—बेल मंडे (मंडे) बाँधना—किसी काम का ठीक तरह से चलने

लगाना या पूरा होना। जैसे—मुझे इतना बड़ा काम तो हाथ में ले

लिया है, पर वह बेल मंडे नहीं चबेगी।

मंत—पुं० [सं० मंत्र] १. परामर्श। सलाह। २. मंत्र।

मंतक—पुं० [अं० मतिक] तर्कवाचक।

मंतव्य—वि० [सं० मन्+ (मानना) +तव्यत्] मानने योग्य। माननीय।

मान्य।

पुं० १. किसी काम या बात के संबंध में बहु विचार जो मन में स्थिर किया गया हो। मत। (इन्स्ट) २. उद्देश्य, समा-समित आदि में उपास्थित और स्वीकृत होनेवाला प्रस्ताव या निश्चय। (रिडोब्लुगन)

३. समा, समिति आदि द्वारा किया हुआ कोई निश्चय या निर्णय।

४. संकल्प।

मंत्र—पुं० [सं० मन्+भृ+भृ+अच्] १. भारतीय वैदिक साहित्य में वेदता से की जानेवाली बहु प्रार्थना जिसमें उसकी स्तुति भी हो।

विशेष—वैदिक काल में मंत्र तीन प्रकार के होते थे। जो छंदोबद्ध वा पद्य के रूप में होते थे और जिनका उच्चारण उच्च स्वर से किया जाता था, उन्हें मंत्र कहते थे। गद्य रूप में होनेवाले और मध्य स्वर से कहे जानेवाले मंत्रों को 'मज' कहते थे, और गद्य रूप में गाये जानेवाले मंत्रों

को 'साम' कहते थे। इसके सिवा निरुक्त मे मंत्रों के तीन और श्रेय बतलाये गये हैं। जिन मंत्रों में देवता को परीक्ष में मान कर प्रथम पुरुष में उनकी स्तुति की जाती है, वे 'परीक्ष-श्रुत' कहलाते हैं। जिनमें देवताओं को प्रत्यक्ष मान कर मध्यम पुरुष में उनकी स्तुति की जाती है, उन्हें 'प्रत्यक्षश्रुत' कहते हैं। और जिन मंत्रों में स्वयं अपने आप में आरंभ करने और उत्तम पुरुष में स्तुति की जाती है, वे 'आध्यात्मिक' कहलाते हैं। वैदिक मंत्रों में प्रायः प्रार्थना और स्तुति के सिवा अधिवाच, आधीर्वाद, निदा, वाच्य आदि की भी बहुत सी बातें पाई जाती हैं। वैदिक काल में इसी प्रकार के मंत्रों के द्वारा यज्ञ-सम्बन्धी सब कृत्य किये जाते थे। १. वेदों का वह संक्षिप्त नामक भाग जिसमें उत्कल प्रकार के मंत्र सङ्गृहीत हैं और जो उनके ब्राह्मण नामक भाग से भिन्न हैं। २. कोई ऐसा शब्द, पद या शब्द जो दैवी शक्ति से युक्त माना जाता हो और जिसका उच्चारण किसी देवता का प्रसन्न करने उसके अपनी कामना पूरी कराने के लिए किया जाता हो।

विशेष—उत्कल प्रकार के मंत्रों में जो एकाक्षरी और बिना स्पष्ट अर्थवाले होते हैं, उन्हें तत्र शास्त्र में बीज-मंत्र कहते हैं।

४ राय या सल्लाह। मंत्रणा। ५. कोई ऐसी बात जो किसी प्रकार का उद्देश्य सिद्ध करने के लिए किसी को गुप्त रूप में बतलाई, समझाई या सिगाई जाय। कार्य-सिद्धि का मंत्र, द्रव या नीति। जैसे—न जाने मुझे उसे कौन सा मंत्र बता (या सिखा) दिया है कि वह लोगों से अपना काम सुरत कर लेता है।

मंत्रकार—पुं० [मं० मन्त्र/कृ० अण्, उप० मं०] मन्त्र रचनेवाला। जैसे—मन्त्रकार ऋषि।

मन्त्र-गूढ—पुं० [मं० सं० तं०] गुप्तचर। जामूस। भेदिया।

मंत्र-गूह—पुं० [मं० षं० तं०] वह स्थाप जहाँ बैठकर मंत्रणा या सल्लाह करते हैं।

मन्त्र-जल—पुं० [मं० मध्य० सं०] मन्त्र से प्रभावित किया हुआ जल।

मन्त्र-जिह्व—पुं० [मं० बं० सं०] अग्नि।

मन्त्र-जिह्व—वि० [मं० मन्त्र/ज्ञा (ज्ञानना), क] १ मन्त्र जाननेवाला। २ परामर्श या मन्त्रार्थ देने की योग्यता रखनेवाला। ३ भेद या रहस्य जाननेवाला।

मन्त्रज—पुं० [सं० मन्त्र (गुप्त भाषण) : ल्युट्—अन] १ मन्त्रणा या सल्लाह करना। २ परामर्श।

मन्त्रभाषी—स्त्री० [वृ० मन्त्र : गिन्त्र : युन्—अन, टाप्] १ किसी महत्त्वपूर्ण विषय के सबंध में आपस में होनेवाली बात-चीत या विचार-विमर्श। सल्लाह। २ उक्त बात-चीत या विचार-विमर्श के द्वारा स्थिर किया हुआ मत। मतव्य। ३ किसी काम के सबंध में किसी को दिया जानेवाला परामर्श या सल्लाह। (एश्वनाइजर)

मन्त्रभाषा—पुं० [सं० मन्त्रणा/कृ (करना)+अण्] वह जो किसी को उसके कार्यों के सबंध में मन्त्रणा देता रहता हो। (एश्वनाइजर)

मन्त्रणा-पारिषद्—स्त्री० [सं० षं० तं०] मन्त्रणाकारों की ऐसी परिषद् जो किसी बड़े अधिकांश या शासन को मन्त्रणा देती रहती हो। (एश्वनाइजर की कौसिल)

मन्त्र-मन्त्र—पुं० [सं० ङं० सं०] वे मन्त्र जो कुछ विशिष्ट प्रकार की क्रियाओं

के साथ जादू-टोना के रूप में किसी अमीष्ट की सिद्धि के लिए पड़े जाते हैं।

विशेष—ऐसे मंत्र या तो तत्रशास्त्र के क्षेत्र के होने हैं, या उनके अनु-करण पर मन-माने ढंग से बनाये हुए होते हैं।

मन्त्र-ह—वि० [सं० मन्त्र/दा (देना) : क, उप० सं०] परामर्श देनेवाला। पुं० वह पुरुष जिसने एक-मन्त्र दिया हो।

मन्त्रदर्शी (दक्षिण)—वि० [सं० मन्त्र/दृश् (देखना) : णिनि, उप० सं०] वेदविन्। वेदज्ञ।

मन्त्र-वीथिति—पुं० [बं० सं०] अग्नि। आग।

मन्त्र-व्रष्टा—वि० [षं० तं०] जो मंत्रों का अर्थ जानता हो।

पुं० मंत्रों के अर्थ जानने और बतानेवाला ऋषि।

मन्त्र-धर—पुं० [बं० तं०] मंत्री।

मन्त्र-धरि—पुं० [पं० तं०] मन्त्र का अधिष्ठाता देवता।

मन्त्र-भूत—पुं० कृ० [तुं० तं०] १ मन्त्र द्वारा पवित्र किया हुआ। २. मन्त्र पढ़कर कृपा हुआ।

मन्त्र-बीज—पुं० [षं० तं०] मूल मन्त्र।

मन्त्र-भेदक—पुं० [बं० णं०] वह जो शासन के निश्चय, भेद या रहस्य दूसरों पर प्रकट कर देता हो। (ऐसा व्यक्ति, राज्य या राष्ट्र का शत्रु माना जाता है।)

मन्त्र-मूल—पुं० [बं० सं०] राज्य।

मन्त्र-यान—पुं० [बं० सं० या सुमुष्पा सं०?] यौद्धों की एक शाखा जिसके प्रवर्तक सिद्ध नागार्जुन माने जाते हैं। इसे वज्रयान (देने) भी कहते हैं। इस शाखा में बौद्ध के उपदेशों का सारांश मंत्रों के रूप में जपा जाता है।

विशेष—बौद्ध धर्म का तीसरा यान या भाग जो महायान के बाद बला था, और जिसमें कुछ मंत्रों के उच्चारण में ही निर्वाण प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता था।

मन्त्र-युद्ध—पुं० [सुमुष्पा सं०] केवल बातचीत या वदम के द्वारा शत्रु को बश में करने की क्रिया या प्रयत्न।

मन्त्र-योग—पुं० [पं० तं०] १ मंत्रों का प्रयोग। मन्त्र पठना। २. हठयोग में प्राणायाम करने हुए मन्त्र या नाम जपना। शब्द योग। ३. दृष्टयाज। जाप।

मन्त्रवादी (विन्)—वि० [मं० मन्त्र/वद् (कहना) : णिनिन लोप] १. मन्त्रज्ञ। २. मन्त्र उच्चारण करनेवाला।

मन्त्र-विद्—वि० [सं० मन्त्र/विद् (जानना) : णिन्] १. मन्त्र जानने-वाला। मन्त्रज्ञ। २. वेदज्ञ। ३. राज्य या शासन के रहस्य और सिद्धांत जाननेवाला।

मन्त्र-विद्या—स्त्री० [पं० तं०]—मन्त्र-शास्त्र।

मन्त्र-शास्त्र—पुं० [पं० णं०] वह शास्त्र जिसमें विभिन्न प्रकार के मंत्रों के द्वारा उसके कार्य मित्र करने की क्रियाएँ और विवेचन हो। तत्र-शास्त्र।

मन्त्र-सस्कार—पुं० [मं० षं० तं०] १ मंत्रों की विधि से किया जानेवाला स्स्कार। २ मन्त्र-ग्रहण करने से पूर्व उसका किया जानेवाला स्स्कार। (मन्त्र) ३ विवाह।

मन्त्र-संहिता—स्त्री० [पं० तं०] वेदों का वह अंश जिसमें मंत्रों का सग्रह है।

मंथ-सिद्ध—वि० [यु० तं०] । जो मंत्रों के द्वारा सिद्ध किया गया हो ।

२. [ब० सं०] जिसे मंत्र सिद्ध हो ।

मंथ-सिद्धि—स्त्री० [ब० तं०] मंथ-तन्त्र का इस प्रकार सिद्ध होना कि उनसे उपप्लव काम लिया जा सके ।

मंथ-सूत्र—पुं० [मध्य० सं०] रेशम या सूत का वह तागा जो धारी के किसी अंग में बंधने के लिए मंत्र पढ़कर तैयार किया गया हो । गड़ा ।

मंथाभाष्य—पुं० [मथ-आलय, घ० तं०] १. मन्त्री का कार्यालय । २ आज-कल शासन में, कर्मचारियों का वह विभाग जो किसी मन्त्री के निर्देशान में काम करता हो । (मिनिस्टर) जैसे—सिद्धा मन्त्रालय ।

मंथित—पुं० कृ० [सं०/मथ्+क्त या मथ्+इत्त्] १ मंत्र द्वारा संस्कृत । अभिमंथित । २ जिसमें मंत्र दिया गया हो ।

मंथिता—स्त्री० [सं० मथिन्+तल्+टाप्] १. मन्त्री होने की अवस्था, पद या भाव । मन्त्रित्व । २ मन्त्री का कार्य ।

मंथित्व—पुं० [सं० मथिन्+त्व] मन्त्री का कार्य या पद । मन्त्री-पद ।

मंथि-पति—पुं० [सं० घ० तं०] प्रधान मन्त्री ।

मंथि-परिषद्—स्त्री० [घ० तं०] किसी राज्य, संस्था आदि के मंत्रियों का समूह या सभाहारा । (कॉन्ग्रेस, काउन्सिल)

मंथि-नडल—पुं० [घ० तं०] किसी राज्य के मंत्रियों का मंडल, वर्ग या समूह (मिनिस्टर)

मंथी (मिन्)—पुं० [सं० मथ्+इति,] १. वह जो मन्त्रणा अर्थात् परामर्श या सलाह देता हो । २ राजा का वह प्रधान अधिकारी जो उसे राजकार्यों के संबंध में परामर्श देता और राज-कार्यों का संचालन करता हो । अमात्य । ३ वह व्यक्ति जिसके आदेश और परामर्श से राज्य के किसी विभाग के सब काम-काज होते हो । (मिनिस्टर) जैसे—अर्थ-मन्त्री, शिला मन्त्री ।

विशेष—मन्त्री और सचिव के अन्तर के लिए दे० 'सचिव' का विशेष । ४ किसी संस्था का वह प्रधान अधिकारी जिसके आदेश तथा परामर्श से उसके सब काम होते हो । (सेक्रेटरी) जैसे—समा का मन्त्री । ५ वह जो किसी उच्च अधिकारी के साथ रहकर उसके पत्र-व्यवहार तथा महत्त्व के कार्यों की व्यवस्था करता हो । सचिव । (सेक्रेटरी) ६ शतरंज में कबूतर नाम की मोटी या मोहर ।

मंथ—पुं० [सं०/मंथ्+मथना]+घञ्] १ मथना । बिलोना । २ र हिलाना । ३ मलना । रगड़ना । ४. मारना-पीटना । ५. कृपना । कपना । ६. मथानी । ७. सूई की फिरण । ८. एक प्रकार का मृग । ९. एक प्रकार का पेय पदार्थ जो कई प्रकार के तरल पदार्थों को मथकर बनाया जाता था । १०. वृष या जल में मिलाकर मथा हुआ सतू । ११. अस्त्र का एक रोग जिसमें आँखों में पानी या कीचड़ बहुत है । १२. एक प्रकार का ज्वर जो बाल-रोग के अंतर्गत माना जाता है । मंथर ।

मंथक—पुं० [सं०/मंथ्+कूल+अक] १. एक गोत्रधार मूलि का नाम । २. उच्च ऋषिय के वंशज या अनुयायी । ३. चंद्र बुलाने पर निकलनेवाली धातु । वि० मंथन करनेवाला ।

मंथक—वि० [सं० मंथ्/जन्+उत्पन्न करना]+ङ्] मथने से उत्पन्न होनेवाला । मथकर निकाला जानेवाला ।

पुं० नवनीत ।

मंथन—पुं० [सं०/मंथ्+त्युप्+अन] १ वह प्रक्रिया जिससे वही को मथानी द्वारा चलाकर मखन निकाला जाता है । २. किसी मृदु या नवीन तत्व की खोज निकालने के लिए परिश्रमपूर्वक की जानेवाली छान-बीन । जैसे—धातुओं का मथन ।

मथन-घट—पुं० [घ० तं०] [स्त्री० अल्पा० मथन-घटी] वह घटका जिसमें दही मथा जाता है ।

मंथनी—स्त्री० [सं० मथन + टीप्] मिट्टी का वह पात्र जिसमें दही मथा जाता है । घटकी ।

मंथ-पर्वत—पुं० [सं० घ० तं०] मंदर पर्वत ।

मंथर—वि० [सं०/मंथ्+अरत्] १ धीमा । मन्द । २ मट्टर । सुस्त । ३ मन्द-बुद्धि । कम-समस । ४. बड़ा और भारी । स्थूल । ५. टेढ़ा । बद्ध । ६. अचम । नीच ।

पुं० १ बालो का गुच्छा । २ कोष । खजाना । ३. फल । ४. वाधा । रुकावट । ५ मथानी । ६. कोष । मुल्ला । ७. दूध । ८. वैशाख का महीना । ९. मंथर । १०. किला । दुर्ग । ११. मृग । हिरन । १२. नवनीत । मखन । १३. मथ (देवों) नामक ज्वर ।

मंथरा—स्त्री० [सं० मथर । टाप्] रानी कैकेयी की एक प्रसिद्ध कुबड़ी दासी जिसके बहकाने में आकर उसने राजा इक्ष्वाकु ने दो बर मर्गि थे और राम को वन-वास दिलाया था । २. १२० हाथ लंबी, ६० हाथ चौड़ी और ३० हाथ ऊँची नाव । (युक्तिरत्नसूत्र)

मथ-शैल—पुं० [घ० तं०] मंदर पर्वत ।

मथान—पुं० [सं०/मंथ्+आनम्] १ बड़ी मथानी । २. महादेव । शिव । ३. मंदर पर्वत । ४ एक मंत्र का नाम । ५. मथानी । ६. अमलतास । ७. ए.ए. प्रकार का वर्ण-वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में दो तमण होते हैं ।

मंथानक—पुं० [सं० मथान+कन्] एक तरह की घास ।

मंथिता (सु)—वि० [सं०/मंथ्+नुष्] [स्त्री० मथिनी] जो मथानी से दही मथता हो । मथनेवाला ।

मथिनी—स्त्री० [सं० मथ्+इति+औष्] दही मथने की मटकी ।

मंथिष—वि० [सं० मथिन्+वि] मथान (पीना) । ४. मथा हुआ सोम पीनेवाला ।

मंथी (मिन्)—वि० [सं० मथ्+इति,] १ मंथन करने या मथनेवाला । २. कष्ट देनेवाला । पीडाक ।

पुं० मथा हुआ सोमरस ।

मंथ—वि० [सं०/मथ्+अक] १. जिसकी गति, चाल, प्रवाह, वेग अथवाकृत अपने वर्णवालों से कम या घटकर हो । धीमा । २. जिसमें अधिक उन्नता या तीव्रता न हो । जैसे—मंद ज्वर । ३. जो जल्दी या सहसा नहीं, बल्कि धीरे-धीरे अपना प्रभाव दिखाता हो । जैसे—मंद विष । ४ जिसमें जल्दी-जल्दी तथा अच्छी तरह काम करने की शक्ति या सामर्थ्य न हो । जैसे—मंद-बुद्धि । ५. बेवकूफ । मूर्ख । ६. खल । हुट्ट ।

पुं० १. वह हाथी जिसकी छाती और मध्य-भाग की बलि डीपी हो, पेट लंबा, चमड़ा मोटा, मला, कोख और मुँह की बंदी मोटी हो ।

२. धनि नामक ग्रह । ३. यम । ४. अभाय या दुर्मयि । ५. प्रलय ।
 प्र०=मघ (साराब) ।
 प्रत्य० [सं० भाग् या मन् से का०] किसी मृग या वस्तु से प्राप्त अथवा
 संपन्न । बाला । जैसे—दीलतमद, गरलमंद, जकृतमंद ।
 मंघक—प० [देश०] घोड़े की गले की हड्डी सूजने का एक रोग ।
 मंघक—वि० [सं० मंघ, कन्] मूर्ख । ना-समझ ।
 मंघना—वि० [सं० मघ/गम् (जाना) +ङ] [स्त्री० मंघना] मघ गतिवाला ।
 धीमी चालवाला ।
 प० महाभारत के अनुसार शाकद्वीप के अन्तर्गत चार जन-पदों में से एक ।
 मंघ-गति—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] बड़े की गति की वह अवस्था जब
 वे अपनी कक्षा में घूमते हुए सूर्य से दूर निकल जाते हैं ।
 वि० [ब० सं०] धीमे चलनेवाला ।
 मंघ-ज्वर—प० [सं० कर्म० सं०] प्रायः अलात रहनेवाला ऐसा ज्वर जिसमें
 शरीर का तापमान बहुत अधिक न बढ़े । धीमा या हल्का ज्वर ।
 (स्त्री० फीवर)
 मंघट—प० [सं० मन्घ/अट्] अच् देवदास ।
 मंघता—स्त्री० [सं० मघ +तल्] टाप् । १. मघ होने की अवस्था,
 कर्म या भाव । धीमापन । २. आलस्य । सुस्ती । ३. क्षीणता ।
 मंघ-भूप—प० [सं० कर्म० सं०] काला भूप । काला ढाकर ।
 मंघना—अ० [म० मन्घ] १. मघ होना । धीमा पड़ना । २. सुस्त
 होना । ३. फीका या हल्का पड़ना ।
 मंघ-श्ल—प० [सं० ब० सं०] गणित ज्योतिष में बहों की गति का एक
 प्रकार या मंद ।
 मंघभागी—वि० [सं० मघभाग्य] अजाग । अवकिस्मत ।
 मंघर—प० [सं०/मघ +अर्] १. पुराणानुसार एक पर्वत जिसमें
 समुद्र मथा गया था । मन्दराचल । २. मंदार नामक वृक्ष । ३.
 स्वर्ग । ४. स्वर्ण । धीसा । ५. पुराणानुसार कुश द्वीप का एक पर्वत ।
 ६. पुराणानुसार प्रसाद के बीज भेदों में से दूसरा मंद या प्रकार ।
 ७. एक वर्णमूत का नाम जिसमें प्रत्येक चरण में एक भगण (51)
 होता है । ८. मीलों का वह द्वार जिसमें आठ या सोलह लड़कियाँ हों ।
 वि०=मंद ।
 मंघर-निरि—प० [सं० मघ्य० सं०] १. मंदराचल पर्वत । २. मूषेर
 के पास का एक पहाड़ जहाँ सीता-कुच नाम का गरम पानी का कुंड
 और जैनो, बौद्धों तथा हिन्दुओं के मंदिर हैं ।
 मंघरा—वि० [सं० मंदर भि० पं० मंघरा=माटा] [स्त्री० मंघरी]
 छोटे आकार का । माटा ।
 प० [सं० मघल] एक प्रकार का बाजा जिसे मंघिल भी कहते हैं ।
 मंघरी—स्त्री० [देश०] साजे की जाति का एक पेड़ ।
 मघला—प०=मंघिल (बाजा) ।
 मंघसाल—प० [सं०/मंघ (प्राप्त होना)+सालच्] १. अनिल ।
 २. प्राण । ३. मित्रा । नंद ।
 मंघा—स्त्री० [सं० मन्घ +टाप्] १. सूर्य की वह संक्रांति जो उत्तर
 फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरा भाद्रपद और रोहिणी मशर में पड़े ।
 २. बल्ली करंज ।
 वि० [सं० मंघ] [स्त्री० भाव० मंघी] १. मंघ । धीमा । २. डीला ।

शियल । ३. (शाौरिक अवस्था) जो ठीक न हो । ४. विपद्वा
 हुआ । मित्रज । ५. (बाजार या व्यापार) जिसमें तेजी न हो ।
 जिसमें लेन-देन या ऋय-विक्रम बहुत कम हो रहा हो ।
 मंघाकिनी—स्त्री० [सं०/मद् +आक, मदाक+इनि वा मद्/अक्
 (गति) +गिनि ; डीप्] १. पुराणानुसार गंगा की वह शाखा जो स्वर्ग
 में है । २. आकाश-गंगा । ३. सात प्रकार की सक्रांतियों में से एक ।
 ४. चित्रकूट के पास बहुनेशाकी एक नदी । (महाभारत) ५. एक बर्ण
 भूत जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः दो दो नगण और दो दो रगण होते
 हैं ।
 मंघाक्रीता—स्त्री० [सं० मघ-आक्रीता, कर्म० सं०] सत्रह अक्षरों का
 एक वर्ण भूत जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः भगण, भगण, नगण और
 तगण और जत में दो मूक होते हैं ।
 मंघाल—वि० [सं० मघ-अधि, भच्] सकृत्चित जाँवोंवाला ।
 प० लज्जा । दास्य ।
 मंघानि—स्त्री० [सं० मघ-अनि, कर्म० सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें
 रोगी की पाचन शक्ति मंद पड़ जाती है, मूल कम लगती है और खाई
 हुई चीज जल्दी हज़म नहीं होती ।
 मंघाल्मा (स्मन्)—वि० [सं० मघ-आत्मन्, ब० सं०] १. मूर्ख । २. नीच ।
 मंघान—प० [०] अज्ञान का अंगला भाग । (लश०)
 मंघानल—प० [सं० मघ-अनल, कर्म० सं०] मंघानि (रोग) ।
 मंघाला—अ० [हि० मघ] मंद पड़ना या होना ।
 सं० मन्घ या धीमा करना ।
 मंघानिल—प० [सं० मघ-अनिल, कर्म० सं०] धीमे चलनेवाली हलकी
 और सुखद वायु ।
 मंघार—प० [सं०/मद् +आरल्] १. स्वर्ग के पाँच वृक्षों में से एक देव
 वृक्ष । २. आक । मदार । ३. स्वर्ग । ४. हाथ । ५. बज्र ।
 ६. हाथी । ७. विन्ध्य पर्वत के पास का एक टीर्थ । ८. हिरण्य-
 कदप का एक पदार्थ ।
 मंघारक—प० [सं० मघार +कन्] =मदार ।
 मंघार-माला—स्त्री० [सं० घ० तं०] सास अलकों का एक वर्ण-भूत
 जिसके प्रत्येक चरण में सात तगण और जत में एक मूक होता है ।
 मंघालसा—स्त्री०=मदालसा ।
 मंघिसा (भन्)—स्त्री० [सं० मघ +इनिच्] १. मदता । धीमापन ।
 २. शियलता । सुस्ती । ३. अल्पता । कमी ।
 मंघिर—प० [सं०/मद् +किरच्] १. रहने का घर । मकान । २.
 वह घर या मकान जिसमें पूजन आदि के लिए कोई मूर्ति स्थापित हो ।
 देवालया । ३. किसी विशिष्ट शुभ कार्य के लिए बना हुआ भवन या
 मकान । जैसे—विद्या-मंदिर । ४. नगर । शहर । ५. छावनी ।
 ६. समुद्र । ७. घोड़े की जाघ का पिछला भाग ।
 मंघिर-पथ—प० [सं० मघ्य० सं०] विल्ली ।
 मंघिरा—स्त्री० [सं० मन्घिर +टाप्] १. बुद्धिहाल । अक्वशाळा । २.
 मँषीरा नाम का बाजा ।
 मंघिरु—प० [सं० मंघिर्] १. घर । मकान । २. देव-मन्दिर । देवालया ।
 ३. वह धन जो व्यापारी लोग किसी चीज का दास चुकाने के समय
 किसी बड़े मंदिर में भेजने के लिए फाट लेते हैं ।

कि० प्र०—काटना ।
 पू०—मंदक (बाबा) ।
मंथी—स्त्री० [हि० मंथ] १. मंथ होने की अवस्था या भाव । २. बाजार की वह स्थिति जिसमें चीजों की बरदा माव उतर रहा हो । ३. बाजार की वह स्थिति जिसमें चीजें कम विकती हों या रोजगार कम चलता हो । 'मंथी' का विपरीत । ४. अर्थ-शास्त्र में, बाजार की वह स्थिति जिसमें लोगों की क्रयविक्रय कम होने के कारण चीजों की विक्री बटने लगती है ।
मंथील—पुं० [हि० मंथ] एक प्रकार का सिरबंद जिस पर जख्मों की का काम बना रहता है ।
 †पुं०—मंथिल ।
मंथुरा—स्त्री० [सं०√मंथ्+उरच्+टाप्] १. अरब-माला । बुड़साक । २. बटाई ।
मंथोच—पुं० [सं० मंथ-उच, कर्म० सं०] ग्रहों की एक प्रकार की गति जिससे राशि आदि का सञ्चयन करते हैं ।
मंथोदर—वि० [सं० मंथ-उदर, अ० सं०] [स्त्री० मंथोदरी] छोटे या पतले पेटवाला ।
मंथोदरी—स्त्री० [सं० मंथोदर+ओच्] रावण की पटरानी जो भय दानव की कन्या थी ।
मंथोवै—स्त्री०—मंथोदरी ।
मंथोव—वि० [सं० मंथ-उव, कर्म० सं०] कम या बोझा गरम । कुमकुता ।
मंथ—पुं० [सं०√मंथ्+रच्] १. ममीर ध्वनि । जोर का शब्द । २. संगीत में तीन प्रकार के स्वरों में से एक जो अपेक्षया धीमा या मंथ होता है । ३. मुरंग । ४. हाथियों की एक जाति । वि० १. मनोहर । सुन्दर । २. प्रसन्न । ३. मंमीर । गहरा । ४. धीमा । मन्द । (शब्द या स्वर) ।
मंथान—पुं० [सं०] [स्त्री० मंथानिन] १. दक्षिण का एक प्रचान नगर जो पूर्वी भाट के किनारे है । २. उषत नगर के आसपास का प्रदेश जो अब कई राज्यों में बँट गया है । मरदास ।
मंथानी—वि०, पुं०—मरदासी ।
मंथा—स्त्री० [अ० वि० सं० मन्थ्] १. इच्छा । इरादा । २. अभिप्राय । उद्देश्य ।
मंथाना—स०—मनसना ।
मंथव—पुं० [अ०] १. बड़े अधिकारी या कार्य-कर्ता का पद । ओहदा । २. किसी पद या स्थान पर रहकर किया जानेवाला कर्तव्य या काम ।
मंथा—स्त्री० [दिसा०] एक प्रकार की घास जो बहुत धीरप्रता से बढ़ती और पशुओं के लिए बहुत पुष्टिकारक सम्मोषी जाती है । मकड़ा । †स्त्री०—मंथा (अभिप्राय या उद्देश्य) ।
मंथुल—वि० [अ०] [मा० मंथुली] (आज्ञा या निश्चय) जो रबरक दिया गया हो ।
मंथुली—स्त्री० [अ०] मंथुल अर्थात् रद किने जाने की किया, दशा या माव ।
मंथुल—पुं०—मन्थुवा ।

मंथुर—वि० [अ०] १. जिसे ईश्वरीय सहायता मिली हो । २. विचयी ।
मन्थ—पुं०—मन्थन (कामदेव) ।
मंथ, **मंथ**—सर्व०—मंथ ।
मंथवा—पुं०—मंथका ।
मंथवी—स्त्री०—मंथी ।
मंथनील—वि०—मंथील (मलवाला) ।
मंथनी—स्त्री०—मंथी (माँ) ।
मंथनी—वि०—मंथी ।
 स्त्री०—मंथ ।
मंथ—स्त्री० [सं० मंथी] १. मय जाति की स्त्री । २. जैतनी ।
 †वि० स्त्री० सं० 'मंथी' का विकृत रूप ।
 स्त्री० अंगरेजी में मंथीही वर्ष का पंचवां महीना जो अप्रैल के उपरांत और जून से पहिले आता है ।
मंथ विचल—पुं० [हि० +सं०] मंथ मास की पहली तारीख को श्रमिकों द्वारा मनाया जानेवाला एक अंतर्राष्ट्रीय समारोह जिसमें वे खुशियाँ मनाते, जलूस निकालते तथा सुभितों की रक्षा तथा बुद्धि के लिए अपना संघटन बुद्ध करते हैं ।
मथगा—पुं० [?] [स्त्री० मथगी] १. पुख्त । भरत । २. नपुंसक । हिचङ्गा ।
मथर—पुं०—मथीर ।
मथरना—अ०—मथीना ।
मथरी—स्त्री०—मथीरी ।
मथरसिरी—स्त्री०—मथरसिरी ।
मथरना—स०—मथरना ।
मथरी—स्त्री०—मथी (माता की बहिन) ।
मथर—स्त्री० [हि० मथका] १. एक प्रसिद्ध पोषा जिसकी बालों (मुट्टी) में से दाने निकलते हैं, जिनकी गिनती अर्धों में होती है । मथका । २. उषत पीधे के दाने ।
मथर-जाल—पुं० [हि० मथकी+जाल] १. मथकी का बुना हुआ जाल । २. ऐसी बात या रचना जो विशेष रूप से दूसरों की रूचिाने के लिए की या बनाई गई हो ।
मथका—पुं० [दिसा०] एक प्रकार की घास । मथाना । खमकरा । मनसा । पुं०—मर मथकी ।
मथका—अ० [हि० मथकी] १. मथकी की तरह चलना । २. अकड़कर चलना ।
मथकी—स्त्री० [सं० मथकंठ] १. एक प्रसिद्ध कीड़ा जो अपने मुँह में से निकाले हुए एक तरह के लसीले पदार्थ से चक्काकार जाल बुनता है और उसमें फँसी हुई मक्खियों आदि को खाता है । २. संतों की परिचाया में माया ।
मथकत—पुं० [अ० मथकत] १. वह स्थान जहाँ सैठकर कोई कुछ लिखाता-पढ़ता हो । २. छोटे बालकों के पढ़ने का स्थान । पाठशाला । मरदास । बटवाल । ३. छोटे अर्थों को करायामानेवाला शिक्षा का आदरस । विद्याभ्यन्त ।
मथकतबखाना—पुं० [अ० मथकत+का+खान] १. मथकत । पाठशाला । २. जुआड़ियों के अड्डे । (जुआरी)

मकरतवा—पु० [अ० मकरतव] १. पुस्तकालय । २. पुस्तक विक्रम-
स्थान ।

मकरतल—पु० [अ० मकरतल] वध-स्थान । वध-भूमि ।

मकरता—पु० [स० मकरत] मगध देश । (आईन अकबरी में मगध देश
का यही नाम दिया गया है ।)

पु० [अ० मकरत] गजल के पहले शेर का पहला चरण ।

मकरतुल—वि० [अ० मकरतुल] धर्मित । हत ।

मकरतुमिया—पु० [अ० मकरतुमि] बालक का एक प्रदेश । निकदर
यही राज्य करता था । (भैरवजिनयन)

मकरदूर—पु० [अ० मकरदूर] १. ताकत । शक्ति । सामर्थ्य । २. कादू ।
बसा । ३. गुआइश । समाई । ४. धन-न्यपति ।

मकरना—पु० [अ० मिकून] वह रानी ओंढनी जिसे विवाह के समय
दुल्हन को पहनाया जाता है । (सुसलमान)
पु० =मकुना । (दे०)

मकरनासि—पु० [अ०] [वि० मिकनानीसी] चूबक पत्थर ।
२. चूबक ।

मकरतूल—वि० [अ० मकरतूल] १. ताले में बन्ध किया हुआ । २. देहन
किया हुआ । गिरो रखा हुआ ।

मकरवरा—पु० [अ० मकरव] १. वह कब जिस पर इमारत या गुम्बद
बना हो । २. कब्र पर बनी हुई इमारत या गुम्बद ।

मकरवृत्ता—वि० [अ० मकरवृत्त] जिन पर कच्चा या अधिकार किया गया हो ।
अधिकृत ।

मकरतूल—वि० [अ० मकरतूल] [मा०] मकरकृतियत । १. जो कबूल
कर लिया या मान लिया गया हो । स्वीकृत । २. जिसे सब लोग कबूल
करते या मानते हो । मान्य और सर्वप्रिय । ३. पमद किया हुआ ।
४. शक्तिवर ।

मकरवृत्तवति—स्त्री० [अ०] १. कबूल या स्वीकृत किये जाने की अवस्था
या स्थिति । २. लोकप्रियता या सर्वप्रियता । ३. पमद । शक्ति ।

मकरवद—पु० [सं० मकरव/अन्द (शैथना)] अणु, साक० परकपु ।
१. फूलों का रस जिसे मधुमक्खियाँ और भोरे आदि चूसते हैं । २.
फूल का केशर । ३. किण्वकी । कुन्द का पौधा या फूल । ४.
सर्गास में ताल के साठ मूष्य मेले में से एक । ५. वाम नामक सर्वेया-
छद्र का दूसरा नाम ।

मकरवदती—स्त्री० [सं० मकरवद+मपुत्र, वद, ः] डीपु] पाटला लता ।

मकर—पु० [सं० मूल/कृ (फेकना)]-ट, पृथो० सिद्धि] [स्त्री० मकरी]

१. मगर या बड़ियाल नामक प्रसिद्ध जल-जन्तु जो कामदेव की
धरमा का चिह्न और मारा जी तथा बरुण का वाहन माना गया है ।
२. बारह राशियों में से दसवीं राशि जिसमें उत्तराषाढ नक्षत्र के
अन्तिम नक्षे पाप, पुरा अथवा नक्षत्र और धर्मिष्ठा के आरम्भ के दो पाद
हैं । उसकी आकृति मकर (जंतु) के समान मानी गई है । ३. सौर
माघ मास जो मकर मकराति से आरंभ होता है । उदा०—वासन मकर
चैत होता है नदी न को ।—प्रभापति । ४. कुबेर की नीधियों में से
एक निधि । ५. एक प्राचीन पर्वत । ६. मछली । ७. सुश्रुत के अनुसार
कोंडों और छोटे जीवों का एक वर्ग । ८. अरुण-साल आदि के वार
निष्फल बनाने के लिए उन पर पड़ा जानेवाला एक प्रकार का मन्त्र ।

९. प्राचीन भारत में, सैनिक व्यूह-रचना का एक प्रकार । १०. छपय
के उन्तालिखे बेंद का नाम जिसमें ३२ गुण, ८८ लघु, १२० वर्ण
की १५२ भागाएँ अवधा ३२ गुण, ८४ लघु, ११६ वर्ण, कुल १४८
भागाएँ होती हैं ।

पु० [फा० मक] १. छल । कपट । २. दूरियों को धोखे में रखने
के लिए बनाई जानेवाकी कोई स्थिति ।

कि० प्र०—रचना ।—फेकना ।

मूहा०—मकर साधना—छलपूर्वक दूरियों पर यह प्रकट करना कि हम
बहुत ही हीन दसा में हैं ।

मकर-कुंडल—पु० [मध्य० सं०] मकर के आकृति का कानों में पहनने
का कुंडल ।

मकर-केतन—पु० दे० 'मकर-केतु' ।

मकर-केतु—पु० [ब० सं०] कामदेव ।

मकर-अम्बर—पु० [ब० सं०] १. कामदेव । २. वैद्यक में चंद्रादय नामक
रशीय । ३. लीस । ४. पुराणानुसार अहिराषण का द्वारपाल जो
हनुमान का पुत्र माना जाता है । मत्स्यपंदि ।

मकर-गति—पु० [स० व० सं०] १. कामदेव । २. ब्राह्म नामक जल-जन्तु ।
मकर-व्यूह—पु० [मध्य० सं०] एक प्रकारकी सैनिक व्यूह-रचना जिसमें
सैनिक मकर के आकार में खड़े किये जाते हैं ।

मकर-संक्रांति—स्त्री० [सं० सं० सं०] वह समय जब सूर्य मकर राशि में
प्रवेश करता है । यह पुष्य काल माना जाता है ।

मकर-सप्तमी—स्त्री० [ब० सं०] माघ शुक्ला सप्तमी ।

मकरांक—पु० [म० मकर-अंक, ब० सं०] १. कामदेव । २. समुद्र ।
३. एक मनु का नाम ।

मकरा—पु० [सं० वरुण] मनुआ नामक अन्न ।

पु० [हि० मकडा] १. मूरे रग का एक कीड़ा जो दीवारों और गेडों पर
जाना बनाकर रहता है । २. हलत्रायाश की एक प्रकार की कीपिडिया
जिसमें सेव बनाया जाता है । यह एक चीकी होती है । ३. दे० 'मकडा' ।

मकराकर—स्त्री० [मकर-आकर, ब० सं०] समुद्र ।

मकराकार—वि० [मकर-आकार, ब० सं०] मकर की आकृति जैसा ।

मकराकृत—वि० [मकर-आकृत, मृ० सं०] मकर की आकृति जैसा
बनाया हुआ । जैसे—मकराकृत कुंडल ।

मकरास—पु० [मकर-असि, ब० सं०, +पञ्च] मर नामक राक्षस का पुत्र
जो रावण का मंत्री था ।

मकरास—स्त्री० =कीची ।

मकरासन—पु० [मकर-आसन, ब० सं०] शिव का एक अश्वर ।

मकरामा—पु० [दे०] गजम्बक का एक प्रसिद्ध क्षेत्र जो संगमरमर
की खाँ में लिए म्यात है ।

मकरार्राई—स्त्री० [मकरा ? राई] काली राई ।

मकरालय—पु० [मकर-आलय, ब० सं०] समुद्र ।

मकरादव—पु० [मकर-अव, ब० सं०] १. वक्त्र । २. तत्रिकों का
एक प्रकार का आसन जिसमें हाथ और पैर पीठी की ओर कर लिए जाते
हैं ।

मकरिका-पत्र—पु० [सं० उपमि० सं०] मछली के आकार का बना हुआ
चदना का चिह्न जो प्राचीन काल में रिक्तार्थ कलापट्टियों पर बनाती थी ।

मकरी—स्त्री० [सं० मकर+क्रीप्] १. मकर या मयूर नामक जल-जन्तु की मादा । २. एक प्रकार का वैदिक मीत । ३. चक्की में लगी हुई एक लकड़ी जो करीब आठ अंगुल की होती है । ४. जहाज में कर्त या खनो आदि में लगा हुआ लकड़ी या लोहे का वह चौकोर टुकड़ा जिसके अगले दोनों भाग अंकुश के आकार के होते हैं ।
†स्त्री० =मकड़ी ।

मककक—मू० कृ० [अ०] कुक किया हुआ (माल) । आसजित ।
मककक—वि० [अ० मकृञ्] कर्जदार । ऋणी ।
मककह—वि० [अ० मकृह्] १. पुणित । २. अपवित्र । ३. सराब या गन्दा, बुरा । ४. (काम) जो इस्लाम के अनुसार निषिद्ध या बर्जित हो ।

मकरेडा—मू० [हि० मक्का । एडा (प्रत्य०)] मक्के के पीचे का डंठल ।
मकरैरारा—पु० =मकोडा ।

मकलई—स्त्री० [मकालिया बंदरगाह से] एक प्रकार का मोंद जो अदन से आता है ।

मकलूच—वि० [अ० मकलूच] उलटा हुआ । औषा ।
पु० यह शब्द या पद जो सीधा और उलटा दोनों ओर से पढ़ने पर समान हो । जैसे—दरद, सरस आदि ।

मकसब—पु० [अ० मकसद] उद्देश्य । २. मनोरथ । ३. अभिप्राय ।
मकसुब—वि० [अ० मकसू] १. अभिप्रेत । २. उद्दिष्ट ।
पु० =मकसद ।

मकसुब—वि० [अ०] बांटा हुआ । विभक्त ।
पु० १. भाग्य । किस्मत । तर्कदार । २. गणित में भाग्य । ३. भाग । हिस्सा ।

मकई—पु० ..मकान ।
मकई—स्त्री० =मकई (ज्वार) ।
मकान—पु० [अ०] [बहु० मकानात] १. मूह । २. निवास-स्थान । रहने की जगह । ३. मूल निवास-स्थान । जैसे—मकान रहते तो है अम्बई में पर उनका मकान मयूरा में है ।

मकानदार—पु० [अ०] फा० मकान मालिक ।
मकाम—पु० मुकाम (स्थान) ।
मकुवा—पु० =मुकुद ।

मकु—अव्य० [सं० √ मक् +उ +आ० ?] विकल्प-वाचक शब्द । चाहे ।
२. बलिक्त । बरन् । ३. हो सकता है कि । कदाचिद् । शायद । ४. यदि ऐसा ही जाता तो अच्छा होता । उदा०—मकु तेहि भाग्य होइ परी, कत बई जहँ पाउं—जायसी ।

मकुआ—पु० [हि० मक्का] बाजरे के पत्तों का एक रोग ।
मकुटा—पु० =मकुटा ।

मकुना—पु० [सं० मनाक=हाथी] [स्त्री० मकुनी] १. वह नर हाथी जिसके दाँत न हों अपना छोटे छोटे दाँत हों । २. ऐसा बलरुक पुरुष जिसे दूँध न निकली हो या बहुत कम निकली हो । (परिहास और व्यंग्य)
वि० अपेक्षाकृत कम ऊँचाईवाला ।

मकुनी—स्त्री० [दिस०] १. माते की लोई के अन्दर बेंसन या चने की पीठी भर कर बनाई हुई कचौरी । बेंसन की रोटी । २. चने का बेंसन और

गैहूँ का आटा एक में मिलाकर उसमें नमक, मेथी, सेंगरैल आदि मिलाकर तथा मूगल पर सेंकरकर पकाई हुई बाटी । ३. मटर के आटे की रोटी ।
मकुार—पु० [सं० √ मक् +उरच्, पुषी० सिद्धि] १. कुम्हार का वह बड़ा जिससे वह चाक चलाता है । २. बकुल । मौलिसिरी । ३. दर्पण । मुकुार । बीषा । ४. फूल की कली ।

मकुउठ—पु० [सं० मकु√स्था+क] १. एक प्रकार का घान । २. मोठ नामक अन्न । बम मूंग ।

मकुउठक—पु० [सं० मकुउठ+कन्] मोठ नामक अन्न ।
मकुनी—स्त्री० =मकुनी ।

मकुलक—पु० [सं० √ मक् +ऊलच् +कन्] १. कली । २. दती का पेड़ ।
मकुला—पु० [अ० मकुल] १. उचित । कथन । बचन । २. कहावत । मोकोबित ।

मकेरा—पु० [हि० मक्का] वह खेत जिसमें ज्वार या बाजरा बोया जाता है ।
मकी—स्त्री० =मकीय ।

मकी—पु० =मकीई ।
मकीइया—वि० [हि० मकीय +इया (प्रत्य०)] मकीय के रंग के समान ।

लगाई लिए हुए पीठा रंग ।
पु० उक्त प्रकार का रंग ।
मकीई—स्त्री० =मकीय ।

मकाडा—पु० [देग०] हिन्दी 'कीडा' का अनुकरण वाचक शब्द ।
जैसे—कीडा-मकोडा । २. काले रंग का बड़ा झूटा । (परिचम)

मकीय—स्त्री० [सं० काकमाता या काकमाती] १. डेढ़-दो हाथ ऊँचा एक तरह का पीया जिसमें छोटे-छोटे बट-भीठे फल लगते हैं । २. उक्त फल । रसमरी ।

मकीरणा—सं० =मरोडना ।
मकीसल—पु० [देग०] एक प्रकार का मदाबहार ऊँचा बृक्ष जिसकी लकड़ी से नाँबे बनाई जाती हैं ।

मकीहा—स्त्री० =मकीय ।
मकीहा*—पु० [म० मतुटा या हि० मकीय ?] प्राय फसल को हानि पहुँचानेवाला एक प्रकार का लाल रंग का कीड़ा ।

मकड़ी—पु० [हि० मकड़ी] १. बड़ी मकड़ी । २. नर मकड़ी ।
मक्करी—पु० मक्क (छल या घोषा) ।

पु० =मकड़ा ।

मक्क—पु० [अ० मक्क] सज्जी अरब की राजधानी जहाँ धार्मिक विचारों वाले मुसलमान हज्ज करते जाते हैं । यही मुहम्मद साहब का जन्म हुआ था ।

†पु० =मकई (ज्वार) ।

मक्कार—वि० [अ०] [माव० मक्कारी] १. कपटी । छनी । २. दूसरी को धोखा देने के लिए अपनी हीन स्थिति बनातेवाला ।

मक्कारी—स्त्री० [अ०] १. मक्कार होने की अवस्था या याव । २. कोई छल या धूर्ततापूर्ण कार्य ।

मक्की—स्त्री० दे० 'मकई' ।

मक्कुल—पु० [सं० √ मक्क (गति) +उलच्] शिलाजीत ।

मक्काल—पु० [सं० √ मक्क +ओल] लड़िया ।
मक्कान—पु० [सं० अशमय] १. दूध, दही आदि की मक्कर उसमें से

निकाला जानेवाला एक प्रसिद्ध विनम्र सार पदार्थ जिसे तपाकर भी बनाया जाता है। नर्वनीत। (बटर)

मुहा०—(किसी की) मन्थन लगाना=बहुत अधिक खुशामद या चाप-लुमी करना। कलेजे पर मन्थन मला जाना=आपु की हानि देखकर प्रसन्नता और सगीय होना। कलेजा ठडा होना।

२. एक प्रकार का मेस (फकी)।

मन्त्री—स्त्री० [सं० मन्त्रिका] ? एक प्रसिद्ध छोटा कीड़ा जो प्राय सारे संसार में पाया जाता है। यह प्राय खाने-पाने की चीजों पर बैठकर उनमें सक्षामक टोपों के कीटाणु फैलाता है। मन्त्रिका।

पद—मन्त्रीभूत, मन्त्री-भार।

मुहा०—सीती मन्त्री निगलना=(क) जान-बूझकर कोई ऐसा अनुचित कृत्य या पाप करना जिसके कारण आगे चलकर बहुत बड़ी हानि हो। (ख) जान-बूझकर किसी के बौध आदि की ओर ध्यान न देना। नाक पर मन्त्री म बँडने देना=(क) किसी को अपने ऊपर एहसान करने का तनिक भी अवसर न देना। (ख) अपने संबंध में कोई, ऐसा काम या बात न होने देना जिसमें किसी प्रकार की दीनता सूचित होती हो। मन्त्री की तरह निकाल देना वा निकास फेंकना=किसी को किसी काम से बिल्कुल अलग या दूर कर देना। मन्त्री छोड़ना और हाथी निगलना—छोटे-छोटे पापों से बचना, पर बहुत बड़े-बड़े पाप करने में सकोच न करना। मन्त्री मारना=बिल्कुल खाली और निकम्मे बँडे रहना, अथवा तुच्छ और व्यर्थ के काम करना।

३ मनु-मन्त्री। ३ बद्रूक के अगले भाग में बहु उमरा हुआ अथ जिसकी सहायता से निदाना साधा जाता है।

मन्त्रीभूत—पुं० [हिं० मन्त्री + भूतना] ? ची आदि में पड़ी हुई मन्त्री तक को भूत लेनेवाला व्यक्तित्व। २ लाक्षणिक अर्थ में बहुत बड़ा कजूस। मन्त्रीबानी—स्त्री० [हिं० मन्त्री + बानी] एक तरह का जालीदार कपड़े का बना हुआ सद्क जिसमें मन्त्रियों फँसाई जाती हैं।

मन्त्रीभार—पुं० [हिं० मन्त्री + भारना] ? एक प्रकार का बहुत छोटा जानवर जो प्राय मन्त्रियों भार मारकर लाया करता है। २ एक प्रकार की छड़ी जिसके सिरे पर चमड़ा लगा होता है। जिसकी सहायता से लोग प्राय मन्त्रियों उखाते हैं। ३ बहुत ही धुपित व्यक्तित्व।

वि० (बीज) जिसकी सहायता से मन्त्रियों मारी जाती हैं। जैसे—मन्त्रीभार कागज।

मन्त्रीलेट—स्त्री० [हिं० मन्त्री + लेट ?] एक प्रकार की जाली जिसमें मन्त्री के आकार की बहुत छोटी छोटी बुटियाँ होती हैं।

मन्—पुं० दे० 'मन्त्र' (छल या मोह)।

मन्—पुं० [सं० मन् + चन्] ? अपना बौध छिपाना। २ शोध। ३ समूह।

मन्मथ—पुं० [सं० मन्मथपुं०] एक प्रकार का सीती जिसके विषय में लोगों की धारणा है कि इसके पहनने से पुत्र भर जाता है।

मन्त्रिका—स्त्री० [सं० मन्त्र + का (शब्द करना) + सिकर, पुं०० सिद्धि] ? मन्त्री। २ शाहद की मन्त्री।

मन्त्रिका-मन्—पुं० [सं० तं०] मोम।

मन्त्रिकावन्त—पुं० [मन्त्रिका-आवन्, वं० तं०] शाहद की मन्त्री का छता।

मन्त्री—पुं० [सं०] ? बहु सज्जा घोड़ा जिसपर काले फूल या दाग हों। २. बिल्कुल काले रंग का घोड़ा।

मन्—पुं० [सं०] यज्ञ।

मन्थन—पुं० [सं० मन्थन] ? शोध। खजाना। २ मटार।

मन्थल—पुं० [सं० मन्थं लूल] काठा रोसम।

मन्थनात—वि० [सं० मन्थना] जो यज्ञ की रक्षा करता हो।

पुं० रामचन्द्र जिन्होंने विष्णुमित्र के यज्ञ की रक्षा की थी।

मन्थन—वि० [अं०] ? जिसकी बिलदत की जाय। २ जिसकी बिल-दत या सेवा करना उचित हो। सेव्य। ३ पूज्य। मान्य।

पुं० मालिक। स्वामी।

मन्थुपी—पुं० [अं०] पूज्य। सेव्य। (संबोधन)

मन्थुस—वि० [अं० मन्थुस] ? जिससे खरसा या खतरा अथवा मय हो। २ पुंत्त।

मन्थुपी (विष्णु)—पुं० [सं० मन्थु/विष्णु (देव करना) + पितृ, उप० सं०] राक्षस।

मन्थारी (रिपु)—पुं० [सं० मन्थु/पु (धारण करना) + पितृ, उप० सं०] यज्ञ करनेवाला।

मन्थन—पुं०=मन्थन।

मन्थना—पुं०=मन्थुना।

मन्-नाथ—पुं० [सं० वं० तं०] यज्ञ के स्वामी, विष्णु।

मन्त्रिया—वि० [हिं० मन्त्रन + दया (प्रयत्न)] ? मन्थन-संबंधी। मन्त्रन का। (वच०) २ (दूध) जिसे मन्थकर उसमें से मन्त्रन निकाल लिया गया हो। सप्रेटा। ३ (बही) जो मन्त्रन निकाले हुए दूध को जमाकर बनाया गया हो।

पुं० ? मन्थन बेचनेवाला व्यक्ति। २ उबत दूध का जमाकर तैयार किया जानेवाला बही। मन्त्री—स्त्री० [हिं० मन्थन] प्राय. एक बिल्ला लम्बी एक प्रकार का मछली।

मन्-पाल—पुं० [सं० मन्थ/ पा (रक्षा करना) + पितृ + अणु] यज्ञ की रक्षा करनेवाला। यज्ञ-रक्षक।

मन्त्री—वि० [अं० मन्त्री] जिगा हुआ। गुप्त।

मन्थम—पुं० [सं० मन्थ + मथ्] विष्णु।

मन्थमल—स्त्री० [अं० मन्थमल] [विं० मन्थमली] ? एक तरह का बड़िया, महीन, चिकना तथा दोरदार कपड़ा। २. एक प्रकार की रंगीन दरी जिसके बीचोबीच एक गोले बँडोया बना रहता है।

मन्थमली—वि० [अं० मन्थमल + री (मयल०)] ? मन्थमल का बना हुआ। जैसे—मन्थमली टोपी। २ मन्थमल का-सा कोमल और चय-कीला। जैसे—मन्थमली किनारे की घोंटी।

मन्थमसा—पुं० [अं० मन्थमस] ? झगड़ा। २. झमेला। बलेड़ा। ३. डर। मय।

मन्थर—पुं० [अं० मन्थर] ? उद्यम। खोत। २. मूल। ३ कंठ (अक्षर के उच्चारण का स्थान)।

मन्थराज—पुं० [सं० वं० तं०] यज्ञों में श्रेष्ठ राजपूज्य यज्ञ।

मन्थरूक—पुं० [अं० मन्थरूक] ? ईश्वर की सृष्टि। संसार। जगत। २. मनुष्य। लोच।

मगरिणी—वि० [अ०] पश्चिम दिशा का। पश्चिमी।
मगरिणी—स्त्री० [देश०] १. बालुएँ छपर के बीच का या सबसे ऊँचा भाग। २. छपर के उभर अंश या भाग पर रखी जानेवाली मोटी लकड़ी या बाहुलीर। ३. कोई मोटी और बहुत लची लकड़ी। लाठ। ५. आसपास की भूमि से ऊँचा स्थान। ६. मूल की आकृति का एक प्रकार का कंठ।

मगरू—वि० [अ०] [भाव० मगकरी] जिसे गरूर हो। धर्मही। अभिमानी।

मगकरी—स्त्री० [अ० मगरू + ई (प्रत्य०)] १. मगरू होने की अवस्था या भाव। २. धमड़। अभिमान।

मगरी—पुं० [देश०] नदी का ऐसा किलारा जिसमें बालू के साथ कुछ मिट्टी मिली हो और जो ओतने-बोतने के योग्य हो।

मगरीसन—स्त्री० [अ० मगः + रीसन] सुंघनी। नसवार।

मगली एरड—पुं० [देश० मगली + हिं० एरड] रतनजोत। बागबेरडा।

मगलू—वि० [अ० मगलूज] १. पराजित। परास्त। २. अधीन। ३. दबल। कमबोर।

पुं० फारसी संगीत के आधार पर चौबीस धोमाजो में से एक।

मगस—पुं० [स० मग] शकद्वीप की एक प्राचीन योद्धा जाति का नाम।
 पुं० [देश०] परे हुए अन्न की सीढ़ी। लोई।

मगसि—पुं० [स० मार्गशीर्ष] अगस्त मास।

मगह—पुं० [स० मगध] मगध देश।

मगधपति—पुं० [स० मगधपति] मगध देश का राजा, जरासभ।

मगहय—पुं० [स० मगध] मगध देश।

मगहर—पुं० [स० मगध] मगध देश।

मगही—वि० [स० मगह + ई (प्रत्य०)] १. मगध-नगर्षी। मगध देश का।

पुं० मगध या विहार के कुछ भागों में होनेवाला एक प्रकार का बकिया पान।
 मगु—पुं० [स० मार्ग] मग। मार्ग। पथ।

मगौर—स्त्री० [देश०] सींगी की तरह की एक प्रकार की मछली जो बिना छिलके की और कुछ लालों लिए हुए काले रंग की होती है। मगुर।

मग—पुं० [स० मार्ग] राह। रास्ता।

मग—पुं० [अ०] १. मस्तिक। दिमाग। २. अक्ल। बुद्धि। ३. कुछ विशिष्ट फलों के अन्दर का कड़ा मूदा। गिरी। (मुहा० के लिए दे० 'भगज')।

मग-रोगल—पुं० [का०] सुंघनी। नास। दे० 'सुंघनी'।

मग—वि० [स० √ मग् (बुद्धि) + त] १. हुआ हुआ। २. किसी काम या बात में तन्मय। लीन। ३. खूब प्रसन्न। ४. नरो में चूर। मदमस्त। ५. नीचे की ओर झुका या दबा हुआ। जैसे—मग नासिक, मग स्तन।

पुं० एक प्राचीन पर्वत।

मगामुक—पुं० [स० मग-अभुफ, कर्म० स०] १. ऐसा महीन कपड़ा जो गीला होने पर शरीर से निष्पन्न जाता हो तथा जिसमें से शरीर के विभिन्न अंग साफ-साफ दिखाई पड़ते हो। २. चित्रकला में, वह अवस्था या चित्रण जिसमें गीला वस्त्र शरीर से बिचके हुए दिखाये जाते हैं। (वेद ईपरी)

मघ—पुं० [स० √ मघ् (गति) + अच्, पूर्वो० सिद्धि] १. एक प्राचीन द्वीप का नाम। २. एक प्राचीन देश। ३. आनन्द। ४. दे० 'मघा'। ५. नद। ६. घुरस्कार। ७. एक पीथा और उसका फूल।

मघी—वि०, पुं० =मगही (पान)।

मघवा (बन्)—पुं० [स० महु (प्रप्य) + म्बनिन्, ह—घ] १. इद। २. सातवें द्वारपते के म्ब्यास। ३. उल्लू।

मघवाजिन्—पुं० [स० मघवजिन्] इन्द्र। (हिं०)

मघवाप्रश्च—पुं० [स० मघवप्रश्च] इन्द्रप्रश्च (नगर)।

मघवारिपु—पुं० [स० मघवरिपु] इन्द्र का शत्रु। मेघनाद।

मघा—स्त्री० [स० √ मघ् + घ, टाप्] १. २७ नक्षत्रों में से दसवाँ नक्षत्र जो पौष तारो का है। (हिं० में यह प्रायः पुलिंग की तरह प्रयुक्त होता है) २. छोटा पीपल।

मघा-त्रयोदशी—स्त्री० [मघ्य० स०] माद्र कृष्ण त्रयोदशी।

मघाना—पुं० [देश०] एक प्रकार की बरसती घास। मकडा। (देखें)

मघाभ्र—पुं० [स० मघा + भ्र (होना) + भञ्ज्] शुक (पट्ट)।

मघारत्ना—स० [हिं० माघ + आरत्ना (प्रत्य०)] आगामी वर्षा ऋतु में भाग देने के लिए माघ के महीने में हल बलाना।

मघोना—पुं० [स्त्री० मघोनी] मघवा (इन्द्र)।

*पुं० =मेघोना।

मघोनी—स्त्री० [स० मघवन् + ङीप्, ङ] मघवा अर्थात् इन्द्र की पत्नी। इन्द्राणी। शची।

मघक—स्त्री० [हिं० मघकना] मघकने की किया या भाव।

मघकना—अ० [मघ मघ से अनु०] मघ-मघ शब्द उत्पन्न होना।

स० १. मघ मघ शब्द उत्पन्न करना। मघकाना। २. इस प्रकार दबाना कि मघ-मघ शब्द ही।

मघका—पुं० [हिं० मघकना] [स्त्री० अल्पा० मघकी] १. झोंका। २. धक्का। ३. बूले की पैग।

मघकाना—स० [हिं० मघकना का स०] १. मघ मघ शब्द उत्पन्न करना। २. किसी को दबाते हुए मघ मघ शब्द करने में प्रवृत्त करना।

मघकी—स्त्री० [हिं० मघकना] छोटा मूला।

मघकुक—पुं० [स०] १. महाभारत के अनुसार एक यज्ञ का नाम।

२. कुशकेन के समीप स्थित एक प्राचीन तीर्थ।

मघना—अ० [अनु०] १. जोरो में या घूमनाम से आरम्भ होना। जैसे—फाय या होली मघना। २. चारों ओर फैलना। छा जाना। जैसे—किसी बात की घूम मघना।

†स० मघकना।

मघमघाना—अ० [अनु०] काम-वासना के प्रबल आवेग में होना। बहुत अधिक कामगुर होना।

स० इस प्रकार दबाना कि मघ मघ शब्द होने लगे। जैसे—कुरसी या पल्ल मघमघाना।

मघमघाहट—स्त्री० [हिं० मघमघाना + आहट (प्रत्य०)] १. मघमघाने की किया या भाव। २. काम-वासना का बहुत अधिक आवेग।

मघमघी—स्त्री० =मघमघाहट।

मघल—स्त्री० [हिं० मघलना] १. मघकने की किया या भाव। २. मघलापन।

मचलन—स्त्री०—मचल ।

मचलना—अ० [अनु०] १. किसी चीज की प्राप्ति के लिए मन का आतुर या उद्विग्न होना । २. प्रायः बर्षों का कोई चीज पाने या लेने के लिए आतुरता प्रदर्शित करते हुए हठ करना ।

सवो० फि०—जाता ।—पड़ना ।

†ब०—मिचलाना ।

मचला—वि० [हि० मचलना, पं० मचला] १. मचलनेवाला । २. जो काम करने या बोलने के अन्तर पर की आन-बूझकर चुप रहे। जान-बूझकर अनजान बननेवाला ।

मचलायन—पु० [हि० मचला+यन (प्रत्य०)] १. किसी को चिढ़ाने या स्वयं दोषी बनने से बचने के लिए चुप रहने की अवस्था या भाव । २. दे० 'मचल' ।

मचली—स्त्री०—मिलली (बमन का प्रवृत्ति) ।

मचवा—पु० [सं० मच] १. खदिया या बीकी का पावा । २. नाव । दे० 'मचिया' ।

मचिया—पु०—मचान ।

मचात—स्त्री० [सं० मच+हि० आन (प्रत्य०)] १. बाँधी, लट्ठी आदि के सहारे बनाया हुआ वह ऊँचा आसन जिसपर बैठकर शिकारी शिकार शिकते या हथक सेतों की रखवाली करते हैं । २. ऊँची बैठक । मच । ३. दीपक ।

मचाना—सं० [हि० मचना का सं०] १. आरज करना । जारी करना ।

२. चारों ओर फैलाना ।

सं० [?] गदा करना ।

मचापच—स्त्री० [अनु०] किसी पदार्थ को दबाने से होनेवाला मममच शब्द । हुमचने का शब्द ।

मचिया—स्त्री० [सं० मंच+इया (प्रत्य०)] १. छोटी लाट । २. बैठने की पीढ़ी ।

मचिर्द—स्त्री०—मचलायन ।

मचुला—पु० [देश०] गिरगिट्टी नामक वृक्ष जो प्रायः बागों में शोभा के लिए लगाया जाता है ।

मचोरी—स्त्री० [देश०] बैलौ के जुर के नीचे की लकड़ी ।

मचोर—स्त्री० [?] हिलने-डुलने के कारण लगनेवाला मक्का । हिच-कोला । (मुद्दले) उदा०—बैलगाड़ी पर जब मचोरें बदन की सहलाती हुई जावगी तब बैलकुण्ड नजर आवेगा ।—मुद्दालखाल बर्मा ।

मचौला—पु० [देश०] बगाल की प्रदलकों में होनेवाला एक प्रकार का पीथा जिससे सुहागा बनता है ।

मच्छ—पु० [सं० मत्स्य; प्रा० मच्छ] १. बहुत बड़ी मछली । मत्स्य ।

२. शंके का एक भेद जिसमें ७ गुह और ३४ लघु मात्राएँ होती हैं । ३.

रहस्य संप्रदाय में मन, जो सवृत्तियों को ला जाता है ।

मच्छ-अन्तर्दारी—पु० [हि० मच्छ+सवारी] कामदेव । मदन । (हि०)

मच्छ-धातिली—स्त्री० [हि० मच्छ+सं० धातिली] मछली फँसाने की लगनी । बंसी ।

मच्छु—पु० [सं० मच्छ] हवा में उड़नेवाला एक प्रसिद्ध छोटा कीड़ा जो मन मन करता रहता है । इसकी मादा काटवी और शूल बूसती है ।

पद—मच्छु की ईक—बहुत ही पुच्छ और हास्यास्पद वस्तु ।

वि० कृप या । कंबुस ।

मच्छर—पु० [सं० मत्सर] १. बाह्य या द्वेष । मत्सर । २. शोध । गुस्ता । (वि०)

पु०—मच्छर ।

मच्छरता—स्त्री० [सं० मत्सर+ता (प्रत्य०)] मत्सर । ईर्ष्या । द्वेष ।

मच्छरवाणी—स्त्री० [हि० मच्छर+वा० वाणी] मसहरी । (दे०)

मच्छा—पु०—मच्छ ।

मच्छी—स्त्री० १. दे० मछली । २. दे० 'मचली' ।

मच्छी-काँटा—पु० [हि० मच्छी+काँटा] १. ऐसी सिलारी जिसमें जोड़े जानेवाले कपड़े के टुकड़ों के बीच में जाली सी बन जाती है । २. काशीन में होनेवाली एक विशेष प्रकार की बुनावट ।

मच्छीमार—पु० [हि० मच्छी+मार (मत्य०)] मच्छुआ ।

मच्छीचरी—स्त्री० [सं० मत्स्योदरी] भ्यास जी की माता और शांतनु की भार्या, सत्यवती ।

मच्छर—पु० [सं० मत्स्येन्द्र] १. सुप्रसिद्ध योगी मत्स्येन्द्रनाथ । २. बहुत बड़ा भुल्ले और रुष्ट व्यक्तित ।

†पु०—मुचर ।

मच्छा—पु०—मच्छ ।

मच्छरा—पु० [हि० मच्छ+मछली] मछली पकड़कर लानेवाला एक जल-मयी । राम-विधिया ।

मच्छरा—पु०—मच्छ ।

मच्छरिया—स्त्री० [सं० मत्स्य] १. एक प्रकार की बुलबुल । २. मछली ।

मच्छी—स्त्री० [सं० मत्स्य; प्रा० मच्छ] १. सदा जल में रहने और अबी से उत्पन्न होनेवाले जीवों का एक प्रसिद्ध और बहुत बड़ा भव्य जिनमें फेफड़ों के स्थान पर गलकण्डे होते हैं और जो पानी से बाहर निकालने पर प्रायः बहुत जल्दी मर जाते हैं ।

विशेष—अधिकतर मछलियों के घरीर में दोगों कीर पत्त के समान अंग होते हैं, जिनसे वे जल में खूब तैर सकती हैं। इनकी अन्धिर जालियाँ का मांस सार संसार में खाय जाता है। कुछ मछलियों की चरबी या तेल भी बहुत से कामों में आता है।

पद—मछली का शीतो—एक प्रकार का कल्पित मोती जिसके विषय में कहा जाता है कि यह मछली के पेट से निकलता है ।

२. मछली के आकार का बना हुआ सोने, चाँदी आदि का लटकन जो प्रायः कुछ गहरों में लगाया जाता है । ३. उन्नत आकार-प्रकार की कोई रचना । ४. पुच्छ बाहों में दिखाई पड़नेवाला मासक देवियों का उमार । जैसे—उनकी बाहों में मछलियाँ पकड़ी थी ।

फि० प्र०—पड़ना ।

मछली का बत—पु० [हि०] गेंडे के आकार के एक पशु का दंत जो प्रायः हाथी दात के समान होता है और उसी नाम से बिकता है ।

मछली की ह्याही—स्त्री० [हि०] एक प्रकार का कांसा रोगन जो मकसे आदि बनाने के काम में आता है ।

मछली-गोला—पु० [हि० मछली+गोला] कुस्ती का एक पेंच ।

मछली-बंड—पु० [हि० मछली+बंड] एक प्रकार का बंड । (कसरत)

मछलीमार—पु० [हि० मछली+मार (प्रत्य०)] बटी की एक प्रकार की बुनावट ।

वि० जिससे मछली के आकार-प्रकार की कोई रचना बनी या लगी हो।
मछलीमार—पु० [हि० मछली + मार (प्रत्य०)] मछुआ।

मछना—पु० [हि० मछली] १. वह नाव जिसपर बैठकर मछली का शिकार करते हैं। (लघ०) २. मछुआ।

मछुआ—पु० [हि० मछ-उआ (प्रत्य०)] मछलियों का शिकार करनेवाला व्यक्ति। मछलियां पकड़ तथा बेचकर जीविका अर्जित करनेवाला व्यक्ति।

मछेह—पु० [दिशा०] शहद की मक्खी का छसा।

मजकूर—वि० [फा० मजकूर] कहा हुआ। कथित।

मजकूराल—पु० [फा० मजकूर] मध्य-युग में कुछ लोगों के सम्मिलित गैरों का वह लयान जिसका कुछ अंश गाँव के सार्वजनिक कार्यों में लगता था।

मजकूरी—पु० [फा० मजकूरी] १. तालुकदार। २. चपरासी। ३. वह चपरासी या नौकर जिसे बेतन न मिलता हो और जो नौकरी पाने की आशा में ही काम करने लगा हो। ४. वह जमीन जिसका देवदार न हो सके और जो जन-साधारण के लिए छोड़ दी गयी हो।

मजकूब—पु० [अ० मजकूब] बालों की तरह ब्रह्म में लीन फकीर।

मजकूर—पु० [फा० मजकूर] [स्त्री० मजकूरी, मजकूरिन] १. वह व्यक्ति जो यात्रे पर शारीरिक परिश्रम सहायी कार्य करता हो। २. शारीरिक श्रम के द्वारा जीविका कमानेवाला कोई व्यक्ति। जैसे—इमारत बनाने, कल कारखानों में काम करनेवाले अथवा बोझ ढोनेवाले मजकूर।

मजकूरी—स्त्री० [फा० मजकूरी] १. मजकूर का काम। २. यात्रे या बेतन के रूप में दिया जानेवाला वह धन जो नियतिता मजकूर को उसके परिश्रम के बदले में देता है।

मजान—पु० -मजान।

↑पु० -मजान।

मजाना—अ० [स० मजान] १. बूना। निमजित होना। २. अनु-रत होना।

↑अ० -मजान।

मजनी—वि० [अ० मजनी] जिसे जन्म या उन्माद हुआ हो। पागल। विक्षिप्त।
पु० १. अरब देश का एक प्रसिद्ध प्रेमी जिसका वास्तविक नाम फैसा था और जो लैला के प्रेम में पागल हो गया था। २. पागलों की तरह आचरण करनेवाला प्रेमी। ३. दुखला-पतला या कमजोर व्यक्ति। (व्यंग्य) ४. बेद मजनी नामक वृक्ष।

मजबूह—पु० [अ० मजबूह] वषयल।

मजबूत—वि० [अ० मजबूत] [भाव० मजबूती] १. नाबवट, रचना आदि के विचार से जो दृढ़ तथा पुस्ता हो। २. जो अच्छी तरह या दृढ़ता-पूर्वक अपने स्थान पर जम बैठा या लगा हो। ३. (व्यक्ति) जो शारीरिक दृष्टि से तगड़ा और हृष्ट-पुष्ट हो। शक्तिशाली।

मजबूती—स्त्री० [अ० मजबूती] १. मजबूत होने की अवस्था या भाव। दृढ़ता। पक्कपान। २. ताकत। बल। शक्ति। साहस। हिम्मत।

मजबूत—पु० -मजबूत।

मजकूर—वि० [अ० मजकूर] १. जिस पर जब किया गया हो फलत-बाध्य। २. जिसका कुछ भी धन न चल रहा हो। विवश तथा नि-सहाय।

मजकूरन—अव्य० [अ० मजकूरन] मजकूर होने की या किये जाने पर। विचारातपूर्वक।

मजकूरी—स्त्री० [अ० मजकूर+ई (प्रत्य०)] १. मजकूर होने की अवस्था या भाव। लाचारी। विवशता। २. नि-सहायता।

मजना—पु० [मजना] १. मीढ़माड़। २. तमाशाबीनों का समूह।

मजमूआ—वि० [अ० मजमूआ] १. एकत्र किया हुआ। संगृहीत। २. बहुते को मिलाकर एक किया हुआ।

पु० १. किसी की ममत्त कृतिगो का एक स्थान पर किया हुआ संग्रह। २. खजाना। ३. जलीरा। ३. एक तरह का इत्र जिसमें कई तरह के इत्र मिले होते हैं।

मजमूई—वि० [अ०] इकट्ठा किया हुआ। सामूहिक।

मजमून—पु० [अ० मजमून] कोई ऐसी बात जिस पर कुछ कहा, लिखा या सोचा-समझा जाय, अथवा कुछ कहा, लिखा या सोचा-समझा गया हो। विषय।

मुहा०—मजमून तरासा— कोई विश्लेषण बात या विषय अपनी कल्पना के बल से प्रस्तुत करना। मजमून बाँचना— कोई विषय अथवा नवीन विचार गढ़े हुए रूप में गद्य या पद्य में लिखना। मजमून मिलना या लफ्फा— दो अलग-अलग लेखकों या कवियों के रचित विषयों या भावों का संयोग से एक तरह का होना या आगम में मिल जाना।

मजमून—वि० [अ० मजमून] १. जिसकी मजमूत या निन्दा की गई हो। निन्दित। बुरा। खराब। २. अस्वील।

मजमूत—स्त्री० [अ०] १. निन्दा। मजमूत २. निन्दाकार।

मजरी—स्त्री० [दिशा०] एक तरह का झाड़।

मजकूआ—वि० [अ० मजकूआ] जोता और बोया हुआ।

पु० जोता बोया हुआ खेत।

मजकूब—वि० [अ० मजकूब] जिस पर जरब या चोट लगाई गई हो। जिस पर आघात किया गया हो।

मजकूह—वि० [अ० मजकूह] १. चोट लाया हुआ। आहत। घायल। जल्मी। २. (बयान) जो विरह में विगड़ गया हो।

मजल—स्त्री० -मजिल।

मजलिस—स्त्री० [अ० मजलिस] [वि० मजलिसी] १. बहुत से लोगों के बैठने की जगह। २. किसी विशेष उद्देश्य से एक साथ बैठे हुए बहुत से लोगों का समाज। जैसे—गाने-बजाने की मजलिस। ३. समा-समिति आदि का अधिवेशन। ४. समा।
कि० प्र०—जमाना—बैठना—लगना।

मजलिसी—वि० [अ० मजलिसी] १. मजलिस-सभवी। मजलिस का। २. जो किसी मजलिस में सम्मिलित हो। ३. जो मजलिस के लिए उपयुक्त हो। मजलिस के शोच्य।
पु० वह जिसमें किसी मजलिस में आमंत्रित किया गया हो।

मजलूस—वि० [मजलूस] [भाव० मजलूसी] जिस पर जुस्म हुआ हो। सतया हुआ। अत्याचार-पीड़ित।

मजहब—पु० [अ० मजहब] [वि० मजहबी] १. धार्मिक सम्प्रदाय। पंथ। मत। २. धर्म। उदा०—मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना।—इफकाल।

मज्झइमी—वि० [अ० मज्झइमी] १. किसी मज्झइय या धार्मिक संप्रदाय से संबंध रखनेवाला अथवा उसमें होनेवाला। २. धार्मिक।

पुं०सिफ्त्वा का एक वर्ण या सम्प्रदाय जिसमें अधिकतर चमार, मेहतर आदि हैं।

मज्झइल—वि० [अ० मज्झइल] १. अज्ञात। नामालूम। २. सुस्त। निष्काम्ना। ३. थका हुआ। शिथिल।

मज्जा—पुं० [फा० मज्ज] १. किसी काम विशेषतः किसी बीज के भोग करने पर होनेवाली वह तुष्टि जिसमें मन और शरीर दोनों आनंद से भर उठते हैं। जैसे—(क) आज खेल मे मजा था। (ख) हमने देहात का मजा पा लिया है।

फि० प्र०—आना।—देखना।—मिलना।—लेना।

पद—मजे भे—(क) अच्छी तरह और सन्तोषजनक रूप में। जैसे—कलफते मे वह मजे मे है। (ख) अच्छे और ठीक ढंग या प्रकार से। जैसे—अब तो लडका मजे मे आखेजी बोलने लगा है।

मुहा०—मजा आ जाना या आना—ऐसी स्थिति उत्पन्न होना जिससे लोगों का यथेष्ट मनोरंजन हो अथवा वे विभिन्न रूप से प्रसन्न हों। जैसे—आज तो इन लोगों की बातचीत (या नाच-गाने) में मजा आ गया। मजा (या मजे) उड़ाना—मनमाने ढंग से यथेष्ट आनंद और सुख भोग करना। मजा फिरफिरा होना—सुखप्रद स्थिति में किसी प्रकार की बाधा या विघ्न होना। (किसी की मजा) चलाना या बिगलाना—किसी को ऐसी स्थिति में लाना कि वह अपने किये हुए किसी काम का अच्छी तरह फल भोगे और दुःखी होकर पछताने लगे। मजा चूटना—दे० अमर 'मजा उड़ाना'।

२. खाने पीने की चीजों से मिलनेवाला प्रिय स्वाद। जायका। रस। मुहा०—(किसी चीज या बात का) मजा पड़ना—रस या सुख मिलने पर किसी चीज या बात का चसका लगना।

३. किसी चीज या बात की ऐसी स्थिति जिससे वह परिपक्व होकर यथेष्ट आनंद या सुख देने के योग्य हो जाय।

मुहा०—(किसी चीज का) मजबूत बनना—अच्छी तरह परिपक्व होकर पूर्ण रूप से सुखद होना। (किसी व्यक्ति का) मजे पर आना—ऐसी स्थिति में आना या होना कि मनमाना आश्रय या व्यवहार करके आनंद या सुख प्राप्त कर सके।

४. बातचीत आदि की ऐसी स्थिति जिससे लोगों का विशेष मनोरंजन होता या उन्हें सुख मिलता हो। जैसे—मजा तो सब हो जब आप भी उन लोगों के साथ पकड़ जायें।

मजाक—पुं० [अ० मजाक] १. हँसी-उट्टा। परिहास।

मुहा०—(किसी का) मजाक उड़ाना—किसी को तुच्छ सिद्ध करने के लिए हँसी की बातें कहकर उपहासास्पद बनाना। उपहास करना। (किसी काम को) मजाक समझना—हँसी-खेल या खेलावट समझना। पद—मजाक में—किसी विविध विचार से नहीं, बल्कि परिहास में या हीं हो।

२. किसी बात या विषय में होनेवाली स्वाभाविक प्रवृत्ति या शक्ति। मजाकान—अ० [अव्य० मजाकान] मजाक या परिहास के रूप में। हँसी के तौर पर।

मजाकिया—वि० [अ० मजाकिया] १. मजाक या परिहास से सम्बन्ध

रखनेवाला। जैसे—मजाकिया मजबूत, मजाकिया धायरी। २. (अव्यक्ति) जो बहुत अधिक या प्रायः मजाक करता रहता हो। मजाक-पसंद।

फि० वि०—मजाकान।

मजाब—वि० [अ० मजाब] १. अवास्तविक। कल्पित या मिथ्या। २. अधिकार-भास।

पुं०—मिजाब।

मजाबान—अव्य० [अ० मजाबान] १. अधिकारिक रूप से। २. नियम, विधि आदि के अनुसार। ३. काल्पनिक रूप में। ४. लाक्षणिक रूप से।

मजाबी—वि० [अ० मजाबी] १. अवास्तविक। कल्पित या मिथ्या। २. कृत्रिम। बनाबटी। ३. सांसारिक। लौकिक।

मजार—पुं० [अ० मजार] १. कोई दर्शनीय स्थल। २. विशेषतः किसी पीर, फकीर या महापुरुष की कब्र।

मजारी—स्त्री० [स० मजारी] धिल्ली। बिड़ाल।

मजाल—स्त्री० [अ० मजाल] शक्तिमत्ता। सामर्थ्य। जैसे—उसकी क्या मजाल है जो मेरे सामने बोले। (प्रायः तद्विक प्रसंगो मे प्रयुक्त)

मजिल—स्त्री०—मजिल।

मजिस्तर—पुं०—मजिस्टर।

मजिस्ट्रेट—पुं० [अ०] कोजदारी अदालत का अफसर।

मजिस्ट्रेटी—स्त्री० [अ० मजिस्ट्रेट +ई (प्रत्यय)] १. मजिस्ट्रेट होने की अवस्था या मजा २. मजिस्ट्रेट का कार्य या पद। ३. मजिस्ट्रेट की अदालत।

मजीठ—स्त्री० [स० मंजिष्ठा] एक लता जिसके छोटे गोल फलों से लाल या गुलमर रंग तैयार किया जाता है।

मजीठी—वि० [हि० मजीठ] मजीठ के रंग का। लाल। सुर्ब।

पुं० उक्त प्रकार का रंग।

पुं० दे० 'मजेठी'।

मजीब—वि० [अ० मजीब] १. जितना आवश्यक या उचित हो, उससे अधिक। ज्यादा। २. और भी।

मजीर—स्त्री० [हि० मंजरी] मंजरी।

मजीर—पुं० [स० मंजीर] जोड़ी का ढाल नाम का बाजा।

मजूर—पुं०—मजूर (मोर)।

पुं०—मजदूर।

मजूरा—पुं०—मजदूर।

मजूसा—स्त्री०—मजूसा।

मजेज—वि० [फा० मिजाज] दर्द। अहका।

मजेजवंत—वि० [हि० मजेज +वंत (प्रत्य०)] दिग्मगवाला। अभि-मानी।

मजेठी—स्त्री० [सं० मज्ज] १. सूत कातने के चरले में वह लकड़ी जो नीचे से उन दोनों डंडों को जोड़ें रहती है। २. सूत कातने के चरले की डोरी या रस्ती। जैत। मजा।

मजेदार—वि० [फा० मजदार] जिसमें विशेष मजा (आनंद, सुख या स्वाद) हो। जैसे—मजेदार बात, मजेदार मिठाई।

मजेदारी—स्त्री० [फा० मजदार +ई (प्रत्य०)] मजेदार होने की अवस्था या मजा।

†वि०—मजोदार।
मज्ज—स्त्री०—मज्जा।
मज्जका—स्त्री० [सं० मज्जा से] १. शरीर की हड्डी के अंदर का मूदा। (मैद्वयला)
मज्जन—पुं० [सं० मज्ज (शुद्ध होना) + स्वृट्-अन्, स—ञ्] १. स्नान।
 २. किसी बात या विषय की गहराई में डूबना या लीन होना।
मज्जना—अ० [सं० मज्जन] १. स्नान करना। महाना। २. निमग्न या लीन होना।
मज्जा—स्त्री० [सं० मज्ज/मज्ज/अच्+टाप्] १. शरीर के अन्तर्गत नली की हड्डी के अन्दर का मूदा जो कोमल और चिकना होता है। २. पेश-पीथो, फलो आदि के अन्दर का सार-भाग।
 †स्त्री० [सं० मजरी] बीर। मंजरी।
मज्जा-रस—पुं० [सं० म० रसं] पुष्प का वीर्य। शुक्।
मज्ज—पुं० [सं० मध्य, प्रा० मज्ज] मध्य।
 वि० मध्य का। बीच का।
 कि० वि० बीच या मध्य में।
 †स्त्री० [सं० महिषी] मंस। (परिचम)
मज—वि०, पुं०, कि० वि०—मध्य।
मज्जाका—पुं० [हि० माषा+मोक्षना] वर पक्षियों का बिबाह के उप-रान्त दुहिते के घर जाकर की जानेवाली मूह-देखनी की रसम।
मज्जधार—स्त्री० [हि० मज्ज-मध्य+धार] १. नदी आदि के बीच की धारा। २. किसी काम या बात के मध्य की स्थिति।
मुहा०—(किसी की) मज्जधार में छोड़ना—(क) किसी को संकट की स्थिति में डालना। (ख) उक्त प्रकार की स्थिति में किसी का साथ छोड़ना। (कोई काम) मज्जधार में छोड़ना—अपूर्ण अवस्था में छोड़ना। अपूरा रहने देना।
मज्जारसिंघही—पुं० [हि० मज्जरा?+सिंघ] बौलों की एक जाति।
मज्जला—वि० [सं० मध्य, प्रा० मज्ज+ला (प्रत्य०)] [स्त्री० मज्जली] १. मध्य का। २. अवस्था, आकार आदि के विचार से दो के बीच का। एक छोटे और एक बड़े के बीच का। जैसे—(क) मज्जला भाई। (ख) मज्जली पुस्तक।
मज्जाना—अ० [सं० मध्य] १. मध्य या बीच में आना या पहुँचाना। २. प्रविष्ट होना।
 स० १. मध्य या बीच में करना या लाना। २. प्रवेश करना।
मज्जारा—कि० वि० [सं० मध्य, प्रा० मज्ज+आर (प्रत्य०)] मध्य में।
 पुं० बीच या मध्य का अंश या भाग।
मज्जाबाना—अ०, स०—मज्जाना।
 †अ०—संक्रियाना।
मज्जिया—स्त्री० [सं० मध्य, प्रा० मज्ज+इया (प्रत्य०)] उन पट्टियों में से हर एक जो गाड़ी, सम्राट् आदि के पेशे में लगी रहती है।
मज्जियालाना—स० [हि० माष+मध्य+इयाना (प्रत्य०)] किसी बीच को मध्य के जे लाना।
 अ० नाव लेना।
 †अ०, स०—मज्जाना।

मज्जियारा—वि० [सं० मध्य, प्रा० मज्ज+इयारा (प्रत्य०)] १. मध्य संबंधी। २. जो मध्य में स्थित हो। बीच का। ३. मज्जला।
मज्जु—सर्ष०—मै। २.—मेरा।
मज्जुआ—पुं० [सं० मध्य, प्रा० मज्ज+उवा (प्रत्य०)] हाथ में पहनने की मजिया नामक बुट्टियों में कोहनी की ओर से पहननेवाली दूसरी भूट्टी जो पछेला के बाह होती है।
मज्जेक—पुं० [सं० मध्य, प्रा० मज्ज+एक (प्रत्य०)] जुलाहों के ऊँची नामक जीवार के बीच की लकड़ी।
मज्जेला—पुं० [देश०] एक तरह का सूजा जिससे मोची जूतों के तले सीते हैं।
 †पुं०—समैला।
मज्जोला—वि० [सं० मध्य, प्रा० मज्ज+ओला (प्रत्य०)] १. मध्यम आकार का। न बहुत छोटा और न बहुत बड़ा। २. मध्य या बीच का। मज्जला।
मज्जोली—स्त्री० [हि० मज्जोला] १. एक प्रकार की बैलगाड़ी जिसमें प्रायः जतानी सवारों बैठती है। २. टेडुकी की तरह का एक जीवार जिससे जूते की नोक सी जाती है।
मट—पुं०—मटक।
 उ० 'मिट्टी' का बहु संविभूत रूप जो समस्त पदों के आरम्भ में लगता है।
 जैसे—मट-मैला।
मटक—स्त्री० [सं० मट=चलना+क (प्रत्य०)] मटकने की क्रिया, डग, मुद्रा या माव।
पह—बटक-मटक।
 २. गति। चाल। (ब०)
मटकना—अ० [सं० मट=चलना] १. चलते या बाने करते समय कुछ नाज-नखरे तथा गर्वपूर्वक अपने को बार-बार हिलाने तथा लचकाने रहना। २. सकोचवश या और किसी कारण चल-बिचल या इधर-उधर होना। उदा०—देखत रूप मदन मानत को, पियत पियस न मटके—मीरा।
 †पुं० [हि० मटका] १. छोटा मटका। २. पुटका।
मटकनी—स्त्री० [हि० मटकना] १. मटकने की क्रिया या माव। मटक। २. मटककर चलो जानेवाली चाल। ३. गति। चाल। ४. नबरा। ५. नाच। नृत्य।
मटका—पुं० [हि० मिट्टी+क (प्रत्य०)] [स्त्री० अल्पा० मटकी] मिट्टी का पत्रा। मटा। माटा।
मटकाना—सं० [हि० मटकना का सं०] १. किसी को मटकने में प्रवृत्त करना। २. किसी अंग में मटक लाना। ऐसी स्थिति में किसी को लाना कि वह हिलने-डुलने तथा लचकने लगे। नाज-नखरे से किसी अंग का संभालन करना। जैसे—कपूर मटकाना, अर्जुन मटकाना।
मटकी—स्त्री० [हि० मटका] छोटा मटका।
 स्त्री० [हि० मटकना] मटकने या मटकाने की क्रिया या माव। मटक।
मुहा०—मटककी देना या मारना—स्त्रियों की तरह नखरे से आँखें, उँगलियाँ या हाथ हिलाकर इशारा या संकेत करना।
मदकीला—वि० [हि० मटकना+ईला (प्रत्य०)] १. मटक दिखाने या मटकनेवाला। २. जिसमें किसी प्रकार की मटक हो। मटक से मुक्त।

मटकीयल, मटकीयल—स्त्री० [हि० मटकाना+कीयल (प्रत्य०)] मटकने या मटकाने की क्रिया या मात्र। जैसे—सूत न कपास चुकाहीं से मटकीयल। (कहा०)

मटकना—पुं० [हि० मटकना या मटकाना] आँखें, उँगलियाँ, हाथ आदि मटकाने की क्रिया या मात्र।

मटकीरा†—पुं० [हि० मट+कीर?] एक प्रकार का हाथी जो दूधित माना जाता है।

मटका—पुं० [देष०] एक प्रकार की ईल।

मट-पीला—वि० [हि० मट (उप०)+पीला] मटमेले या लाकी मिले पीले रंग का। कुछ पीलापन लिए हुए मिट्टी के रंग का।

मट-रंगारा—पुं० [हि० मट (उप०)+रंगल] विवाह के पहले की एक रीति जिसमें स्त्रियाँ घाती-बजाती हैं।

मटमैला—सि० [हि० मिट्टी+मैला] मिट्टी के रंग का। झाकी।

मट्टर—पुं० [सं० मयूर या वनूक] † एक प्रसिद्ध पीषा जिसकी कलियों में गोल दाने रहते हैं और जिनकी तरकारी आदि बनाई जाती है। २ उबत पीषे की कली या दाना। (पी)

मट्टर-गलत—स्त्री०, [हि० मट्टर+गलत] १. धीरे धीरे धूमना। २ निश्चित होकर प्रसन्नतापूर्वक व्यर्थ इशर-उशर धूमना।

मट्टरगलती—स्त्री०=मट्टरगलत।

मट्टर-बीर—पुं० [हि० मट्टर+बीर=बुँबक] मट्टर के बराबर बुँबक जो पाजेब आदि में लगते हैं।

मट्टराला—पुं० [हि० मट्टर+आला (प्रत्य०)] एक में मिले हुए मट्टर और जौ के दाने अथवा उनका पीसा हुआ बूझ।
‡ वि०=मटमैला।

मट्टरनी—स्त्री० [हि० मिट्टी] कच्ची मिट्टी का बरतन।

मटा—पुं० [हि० माटा] वेधो पर डूबी में रहनेवाला एक तरह का लाल रंग का च्यूटा।

मटिया †—वि०, पुं०, स्त्री०=मटिया।

मटियाना—अ०, सं०=मटियाना।

मटिया—वि० [हि० मिट्टी] १. मिट्टी का सा। २ मिट्टी का बना हुआ। जैसे—मटिया सोप। ३. झाकी। मटमैला।

पुं० मिट्टी का बरतन।

‡ स्त्री०=मिट्टी।

पुं० [?] कजला या लडोरा नाम का पशी।

मटियाना—सं० [हि० मिट्टी] १. किसी चीज पर मिट्टी लथाना, अथवा मिट्टी से युक्त करना। २. (कपड़े) मिट्टी में लपेटना। ३. बरतन, हाथ आदि मिट्टी मलकर बोना और साफ करना।
‡ अ०=मट्टियाना।

मटिया-फूस—वि० [हि० मिट्टी+फूस] इतना अधिक जर्जर, बुद्ध और दुर्बल कि मांगे मिट्टी और फूस के योग से बना हो।

मटिया-जलान—सि० [हि० मटिया+जलान] १. बहुत ही तुच्छ या हीन। गया-बीता। २. दूटा-फूटा। मट्ट-प्रथा।

पुं० उजड़ा हुआ स्थान या खँबहर।

मटिया-मेठ—पुं० दे० मटिया-मेठ†।

मटियार—पुं० [हि० मिट्टी+आर (प्रत्य०)] चिकनी मिट्टीवाला प्रदेश जो बहुत अधिक उपजाऊ होता है।

मटियार हुन्मट—स्त्री० [हि०] ऐसी भूमि जिसमें मटियार और हुन्मट दोनों के तत्व हों। (कले लोम)

मटियाल—वि०=मटमैला।

मटोला—वि० [हि० मट (उप०)+ईला (प्रत्य०)] १. जिसमें मिट्टी पकी या भिजी हुई हो। जैसे—मटोला पानी। २. मटमैला।

मटुका—पुं०=मुडुट।

मटुका—पुं० [स्त्री० अल्पा० मटुका, मटुकी] =मटका।

मट्टी—स्त्री०=मिट्टी।

मट्टर—वि० [सं० अठर=जो नये में हो] चलने-फिरने और काम-बन्धा करने में सुस्त। काहिल।

मट्टा—वि० [सं० मन्ड] १. भीमा। मन्ड। २. सुस्त।
पुं०=मठा।

मट्टी—स्त्री० [देष०] पूरी की तरह तला हुआ मदे का बना हुआ एक मीठा पकवान।

मठ—पुं० [सं०/मठ (निवास करना)+क] १. वह मकान जिसमें साधु-संन्यासी रहते हैं। २. देवालय। मन्दिर। उदा०—मठ-पूतली पाषाण-मय।—विभीषाज।

मठधारी (रिपु)—पुं० [सं० मठ/पू (रत्नना)+रिपि, उप० सं०] वह साधु या महंत जो मठ का प्रधान अधिकारी हो। मठाधीश।

मठ-पत्ति—पुं० [सं० तं०]=मठधारी।

मठर—वि० [सं० मन् (जानना)+अरन्, नू=इ] जो नये में हो। मद-मत्त।

पुं० एक प्राचीन ऋषि।

मठरना—पुं० [?] कसेरी, सुनारों आदि का एक बीजार जिससे वे बाटु के पत्तरी या चहरो की पीटते हैं।

अ० पत्तर, चहूर आदि का उबत उपकरण से पीटा जाना।

सं० दे० 'मठराल'।

मठरी (की)—स्त्री० [सं० मेठ]=मट्टी।

मठा—पुं० [सं० मथन] धरौ का वह षोडश जिसमें से मक्खन निकाल लिया गया हो। तक्र। मही। लस्वी।

मुहा०—मठे मूसल की हौकना=बड़-बड़कर इशर-उशर की बातें कहना। उदा०—... गया था, अब लगा है मठा मूसल की हौकने।—मुन्दावन लाल बर्मा।

मठाधीश—पुं० [सं० मठ-अधीश, वं० तं०] मठ में रहनेवाले साधुओं का प्रधान। महन्त।

मठान—पुं०=मठराल (बीजार)।

मठारना—सं० [हि० मठराल] १. कसेरों, सुनारों आदि का मठराल नामक बीजार से पत्तरी या चहरो की पीटना। २. पत्तरी, चहरो आदि को पीट कर गोलई में लाना।

सं० [?] १. मुँदे हुए आटे को इस प्रकार हाथों से मसलना तथा संघारना कि उपरसे लस उत्पन्न हो जाय। २. धीरे धीरे तथा बना-सँवार कर कोई बात कहना।

मठारा—पुं० [हि० मठराल] १. मठारने की क्रिया या मात्र। २. किसी

बात को सुधारते-सँवारते हुए उसकी पुष्टि करने की किया या भाव । जैसे—उन्हें जो वकन्ता देनी थी, उसी पर मठारा दे रहे थे ।
कि० प्र०—देना ।

मठिया—स्त्री० [हि० मठः इया (प्रत्य०)] छोटा मठ ।
स्त्री० [?] कानि या फूल की बनी हुई चूड़ी ।
मठी (हिन्) —पु० [सं० मठः इति] मठ का अधिकारी । मठाधीश ।
स्त्री० [हि० मठ] छोटा मठ । मठिया ।

मठुलिमा, मठुली—स्त्री०—मठुली ।
मठोला—पु० [?] कूएँ की जगत ।
मठोर—स्त्री० [हि० मट्ठः] १ वह बड़ी मटकी जिसमे दही मथा जाता है । २ नील पकाने का भाठ ।

मठोरना—स० [हि० मठारना] १ किसी लकड़ी को खरादने के लिए रदा लगा कर ठीक करना । २ दे० 'मठारना' ।

मठोरना—स० [हि० मठोला : ना (प्रत्य०)] हस्त-मैथुन करना ।
मठोला—पु० [हि० मूठोः] शोला (प्रत्य०)] मूठो मे लिंग पकड़कर उसे सहजते हुए बीर्य-पात करना । हस्त-मैथुन । उदा०—लड्डू मे न पेडे मे, न बर्फी मे मजा है, जो मर्द-मूजरे के मठोली मे मजा है ।
—नजीर ।

मठोरा—पु० [हि० मठोरना] एक प्रकार का रदा जिससे लकड़ी रद कर खरादने आदि के योग्य बनाते हैं ।

मठुरा—स्त्री० [सं० मठुरी] छोटा मद्यप । २ कुटिया । शोपड़ी ।
↑ स्त्री०—मठो ।

मठुअजा—पु०—मठुआ (मद्यप) ।
मठुरा—स्त्री० [अनु०] किसी बात के अन्दर छिपा हुआ हेतु । भीतरी सूझ आशय ।

मठुमडाना—अ०, सं०—मठुराना ।
मठुराना—अ०—मँडराना ।

मठुला—पु० [सं० मठल] अनाज रखने की छोटी कोठरी ।
मठुलाना—अ०—मँडराना । उदा०—अनुपम शोभा पर उसकी कितने न मँवर मडलते ।—निराला ।

पठुवा—पु० [सं० मठप] १ मचाना । २ मद्यप ।
पद—मद्यपे तर की गँठ—विवाह के समय वर और वधू के हुण्टो मे बाँधी जानेवाली गँठ ।

पठुवाना—पु० [हि० मँडवा =मद्यप] एक प्रकार का कर जो मध्य युग में जमीदार लोग अपने अस्वामियों से उनके यहाँ विवाह होने पर लिया करते थे ।

पठुवारी—पु०—मारवाड़ी ।
मठुष्टा—पु०—मरपट ।
मठुहा—पु० [सं० मठप] मिट्टी या धास आदि का बना हुआ छोटा घर ।
↑ पु० [?] मूना हुआ चना ।

मठुा—पु० [हि० मठी] बड़ी कोठरी । कमरा ।
पु०—मोडा (नेत्ररोग) ।
मठुा—पु०—मठार ।
मठुार—पु० [देश०] १. तालाब । २. पोखरा ।

मठुवार—पु० [हि० मारवाड़ ?] मारवाड में बसी हुई सवियों की एक जाति ।

मठुआ—पु० [देश०] १ बाजरे की जाति का एक प्रकार का कदम्र जो बहुत प्राचीनकाल से भारत में बोया जाता है । वैक मे इसे कसैला, कठुआ,हलका, बलबर्बक और रस्त-दोष की दूर करनेवाला माना गया है । २ एक प्रकार का पत्ती ।
↑ पु०—मठुआ (मद्यप) ।

मठुआ—स्त्री०—मठुई ।
मठुा—स्त्री०—मठो ।

मठुी—स्त्री० [हि० मरोडना + ई (प्रत्य०)] लोहे की छोटी पंचवार कटिया ।

मठु—वि० [हि० मठना] १ अडकर बैठनेवाला । २ जल्दी अपनी जगह से न हिलनेवाला । ३. मूड ।
↑ पु०—मठ । उदा०—काकर पर, काकर मठ माया ।—जायसी ।

मठुना—स० [सं० मठन] [माव० मठई] १ कोई चीज किसी दूसरी चीज पर बिचकाना, जड़ना, लगाना या सटाना । जैसे—किताब पर जिल्द या दीवार पर कागज मठना । २ बहुत से मठुनी से किसी को लादना । जैसे—आमूबणी से सुदरी मठी हुई थी । ३ कोई काम या बात बलपूर्वक किसी के जिम्मे लगाना । जैसे—किसी के सिर कोई काम मठना । ४. व्यर्थ किसी के सिर कोई अपराध या बोझ आरोपित करना । जैसे—काम तो तुमने बिगाडा, नीर कलक मेरे सिर मठ रहे हो ।
कि० प्र०—डालना ।—देना ।
अ० (काम या बात) भारम होना ।
अ०—मडलाना । जैसे—आकाश मे बादल मठ आये है ।

मठुबाई—स्त्री० [हि० मठुवाना] मठुवाने का कार्य तथा पारि-श्रमिक ।

मठुवाना—स० [हि० मठना का प्रे०] [माव० मठुबाई] मठने का काम दूसरे से कराना ।

मठुा—पु० [हि० मठी] १ मिट्टी का बना हुआ छोटा घर । बड़ी मठी । २ दे० 'मठुा' ।
मठुाई—स्त्री० [हि० मठना] मठने की क्रिया, भाव या पारिश्रमिक ।
मठुाना—स०—मठुवाना ।

मठुी—स्त्री० [सं० मठ] १ छोटा मठ । २ छोटा देवालय या मन्दिर । ३ कुटिया । शोपड़ी । ४ छोटा मद्यप । ५ किसी सन्तारी के समाधि-स्थल के समीप बनी हुई कुटिया ।
मठुीया—वि० [हि० मठुना + य्या (प्रत्य०)] मठनेवाला ।
स्त्री०—मठुी ।

मणि—स्त्री० [सं०/मण (अव्यक्त शब्द) ; इन्] १ बहुमूल्य रत्न । जवाहिर । २ किसी वर्ग का कोई सर्व-श्रेष्ठ पदार्थ या व्यक्ति । जैसे—रघुकुल मणि । ३. बकरी के गले में लटकनेवाली शैली । ४. पुरुष की इन्द्रिय का अण्डा भाग । ५. योनि का अण्डा भाग । ६. पहाड़ ।

मणिक—पु० [सं० मणि । कन्] १ मिट्टी का पहाड़ । २. योनि का अण्डाभाग । ३ स्फटिक निर्मित प्रसाद ।

मणि-कविता—स्त्री० [मध्य० सं०] १. मणियों से जड़ा हुआ कान में पहनने का गहना। २. काशी का एक प्रसिद्ध धात।

विशेष—मीराणिक कथा है कि शिव जी का मणि-जटित कुंडल उक्त स्थल पर उस समय गिरा था अब वे विष्णु की तपस्या से प्रसन्न होकर वृक्ष उठे थे।

मणि-कामल—पु० [ब० तं०] गला। कंठ।

मणि-कार—पु० [सं० मणि/क (करना)+अणु] जौहरि।

मणि-कूट—पु० [ब० सं०] कामरूप के गंगा का एक पर्वत। (पुराण)

मणि-मेघु—पु० [उपनि० सं०] एक बहुत छोटा पुच्छल तारा जिसकी पूछ दूध-सी संकेत मानी गई है।

मणि-गुण—पु० [ब० सं०] एक प्रकार का शक्ति वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में चार नगण और एक सगण होता है। शक्तिगण। शरभ।

मणिगुण-निकर—पु० [सं० ब० तं०] मणि-गुण नामक छंद का एक नेद जो उसके ढंके वर्ण पर विराम करने से बनता है।

मणि-नीच—पु० [ब० सं०] कुबेर का एक पुत्र।

मणिच्छिन्ना—स्त्री० [ब० सं०] १. मेघा नाम की ओषधि। २. श्रृपमा नाम की ओषधि।

मणि-कला—स्त्री० [ब० सं०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन नदी।

मणि-सारक—पु० [ब० सं०] सारस।

मणि-दीप—पु० [सं० मणिदीप] १. मणिजटित दीपक। २. दीपक की तरह प्रकाश करनेवाला रत्न।

मणि-दीप—पु० [मध्य० सं०] पुराणानुसार रत्नी का बना हुआ एक दीप जो सीतासगर में है। इसी में भिपुर सुबरी का निवास माना गया है।

मणि-धनु(सं)—पु० [मध्य० सं० या उपनि० सं०] इंद्र का धनुष।

मणि-धर—पु० [ब० तं०] सर्प। साँप।

मणिपुर—पु० [ब० तं०] १. भारत तथा बर्मा की सीमा पर स्थित केन्द्र-शासित भारतीय प्रदेश। २. उक्त प्रदेश की राजधानी।

मणिपुर—पु० [सं० मणिपुर] मुसुन्ना नाबो के अंदर माने जानेवाले छ. चक्रों में से तीसरा चक्र जो दक्षिण में स्थित है।

मणि-बंध—पु० [सुमुद्रा सं०] एक महाबारी वृत्त जिसके प्रति चरण में मगण, मगण और सगण होते हैं। २. कलाई। पड़वा।

मणि-बीज—पु० [ब० सं०] अनार का पेड़।

मणि—पु० [सं०] किसी तरल धोल को सुझाकर उसके बनाये हुए छोटे नुकीले कण। रत्ना (क्रिस्टल)

मणि-भद्र—पु० [ब० सं०] एक यक्ष।

मणि-निधि—स्त्री० [ब० सं०] शेषनाग का प्रासाद।

मणिशोकरत्न—पु० [सं०] ऐसी क्रिया करना जिससे कोई तरल धोल स्फटिक का रूप ग्रहण कर ले। निश्चित और ठोस आकार धारण करना। (क्रिस्टलाइजेशन)

मणिपु—स्त्री० [ब० तं०] वह जेठ विशेषतः ज्ञान जिसमें रत्न ही।

मणि-संघ—पु० [मध्य० सं०] १. मणियों से बनाया हुआ मंडप। २. शेषनाग का प्रासाद।

मणिमध्य—पु० [ब० सं०] मणिबंध नामक छंद।

मणिमय—पु० [सं० मणि+मय] संगीत में, कलाइकी पद्धति का एक राग।

वि० मणि या मणियों से युक्त।

मणिमान(मत्)—वि० [सं० मणि+मत्पु] मणि-युक्त।

पु० १. सूर्य। २. एक प्राचीन पर्वत।

मणि-माला—स्त्री० [ब० तं०] १. मणियों अर्थात् रत्नों की माला। २. कवनी। ३. चमक। ४. बारह अक्षरी का एक वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में तगण, मगण, तगण, मगण होते हैं। ५. आभा। चमक।

मणिमेघ—पु० [सं०] दक्षिण भारत का एक पर्वत। (पुराण)

मणि-शाम—पु० [ब० सं०] १. किशुल। शिगरक। २. रत्न का रंग।

मणि-राक्षी—स्त्री० [ब० तं०] मणियों का सन्तुह। उदा०—देख बिखरती है मणिराक्षी, अरी उठा बेसुध चबल—प्रासाद।

मणि-दीय—पु० [ब० तं०] पुर्वेद्रिय संबंधी एक रोग।

मणि-शैल—पु० [ब० तं०] मयराजल के पूर्व में स्थित एक पर्वत। (पुराण)

मणि-व्याम—पु० [सं० तं०] मीलम।

मणि-सर—पु० [सुमुद्रा सं०] मोतियों की माला।

मणि-सौभाग्य—पु० [मध्य० सं०] सोने के तार में पिरोए हुए मोतियों की ऐसी माला जिसके बीच में रत्न हो। (कौ०)

मणी—स्त्री० [सं० मणि+ङीप्]=मणि।

मणीचक्र—पु० [सं० मणी/चक्र (प्रतिपालन करना)+अणु] १. चन्द्रकांत मणि। २. पुराणानुसार शाक-द्वीप के एक वर्ष का नाम। ३. एक प्रकार की विधि।

मर्तम—पु० [सं०] १. हाथी। २. बाबल। मेघ। ३. एक प्राचीन तीर्थ। ४. एक प्राचीन श्रृपि जो शबर की गृह थे। ५. कामरूप के अग्नि-कोष का एक प्राचीन देश।

मर्तमज—पु० [सं०/मज (मस्त होना)+अणु, ङ—पु, +जण्व] हाथी।

मत्तया—पु० [सं० मर्तम] एक प्रकार का दाँस जो बगाल और बरमा में होता है। (नि)

मत्तो(मि)—पु० [सं० मत्तग+इनि, दीर्घ, ङ] हाथी का सवार।

मत्त—पु० [सं०/मज+स्त] १. शीघ्र-समसकर निश्चित की हुई बात। २. अपने किसी विचारों के रूप में किसी विषय के संबंध में कही या प्रकट की जानेवाली बात। सम्पत्ति। जैसे—सर्वसौ की सब कोई मत देता है। ३. धर्म-ग्रन्थों अथवा श्रृपि-मुनियों द्वारा प्रतिपादित अथवा समर्थित कोई कथन या सिद्धांत। (डॉक्ट्रिन) ४. किसी विशिष्ट धर्म-ग्रथ या महापुरुष के सिद्धांत का अनुयायी सप्रदाय। पक्ष। ५. लोक-तन्त्र के क्षेत्र में, अपना प्रतिनिधि चुनने के लिए किसी व्यक्ति अथवा समाज को प्राप्त बहु अधिकार जिससे वह अपनी दृच्छा, रुचि आदि के अनुसार दो या अधिक व्यक्तियों, पक्षों आदि में से किसी एक या कुछ का अधिकारिक रूप से समर्थन कर सकता है। वोट। (बोट)

विशेष—मत दो प्रकार से दिया जाता है। एक तो समाजों आदि में खुले-आप हाथ उठारकर और दूसरे गुप्त रूप से परधियों द्वारा कर।

६. उक्त से डाक किसी का किया जानेवाला समर्थन। जैसे—इस चुनाव में समाजवादी उम्मीदवारों को १५००० मत मिले थे।

स्त्री०—मति।

अव्य०—[सं० मा] निषेध-वाचक शब्द। न। नहीं। जैसे—वहूँ मत आना करे।

मत-शेष—पु० दे० 'निर्वाचन-शेष' ।
मत-गणना—स्त्री० [प० त०] दे० 'जनमत-संग्रह' ।
मत-शाखा (शु)—पु० [प० त०] बहु व्यक्ति जिसे लोकतंत्र के क्षेत्र में मत देने, विशेषतः निर्वाचन आदि में मत देने का अधिकार हो।
मतदान—पु० [प० त०] किसी विचारणीय विषय के संबंध में अथवा किसी प्रकार के चुनाव के समय किसी के पक्ष में अपना मत देने की क्रिया । (बॉटिंग)
मतदान-श्रेय—पु० [प० त०] वह केन्द्र या स्थान जहाँ निर्वाचन के समय किसी विशिष्ट क्षेत्र में मतदाता आकर मत देते हैं। (पॉलिग स्टेशन)
मतदान-कोष्ठ—पु० [प० त०] जिसमें रखी हुई पेटी में मत-पत्र छोड़ा जाता है। (पॉलिग-बूथ)
मतदान-पेटिका—स्त्री० [प० त०] वह पेटी जिसमें मतदाताओं द्वारा मत-पत्र छोड़े या डाले जाते हैं। (बैलट-बॉक्स)
मतदान—अ० [स० मति +हि० ना (प्रत्य०)] किसी विषय में अपना मत अभिव्यक्ति निरिचत या प्रकट करना ।
 †अ०=मतना (उन्मत्त होना) ।
मत-पत्र—पु० [प० त०] बहु परकी सित्त पर किसी विशेष उम्मीदवार या पक्ष के समर्थन में चिह्न आदि बनाकर उसे मतदान पेटिका में डाला जाता है। (बॉटिंग-पेपर)
मत-परिवर्तन—पु० [स० प० त०] अपना मत या विचार अथवा धर्म, संप्रदाय आदि छोड़कर दूसरे मत या विचार अथवा धर्म, संप्रदाय आदि ग्रहण करना। (कन्वर्शन)
मत-बंध—पु० [प० त०] १ किसी विवादास्पद विषय से सबब रखने-वाले सभी प्रकार के मतों या विचारों की शोषणा करने के उस पर अपना अधिकारिक मत प्रकट करना। (डिस्ट्रिक्शन) २ दे० 'बोध-निबंध'
मत-भेद—पु० [प० त०] वह अवस्था जिसमें किसी दल, वर्ग या समूह के सदस्यों में किसी विषय में एक मत नहीं, बल्कि दो या कई मत होते हैं।
मत्तरिया—स्त्री० [हि० माता] माता । माँ ।
मुहा०—**मत्तरिया बहिनिया करना**—किसी को माँ-बहन की गालियाँ देना और उनसे ऐसी ही गालियाँ चुनना ।
वि० [स० मत्र] १ मंत्र देनेवाला । मंत्री । २ मंत्र से प्रभावित किया हुआ । मंत्रित ।
मतलक—वि० [अ०] त्याग किया या छोड़ा हुआ । त्यक्त । परित्यक्त ।
मतलक—पु० [अ० मतलक] १ मत में रहनेवाला आशय या उद्देश्य । अभिप्राय । २. पद, वाक्य या शब्द का अर्थ । माने । ३ अपने मल या हित का विचार । स्वार्थ ।
पद—**मतलक का पार**—सदा अपने स्वार्थ का ध्यान रखनेवाला व्यक्ति । स्वार्थी ।
मुहा०—**मतलक गाँना**—स्वार्थी साधन करना । (अपना) मतलक निकालना—स्वार्थी सिद्ध करना । **मतलक ही जाना**—(क) स्वार्थी सिद्ध हो जाना । (क) पूरी दुर्द्विष्टि से दुर्बंसा हो जाना । (अप्यय) ४ सम्पत्ति । मजबूत । तास्ता । जैसे—हमारा उनसे कोई मतलक नहीं है ।
मतलकिया—वि०=मतलबी ।

मतलबी—वि० [अ० मतलबी +ई (प्रत्य०)] अपना ही मतलब निकालने-वाला । स्वार्थ-परायण । स्वार्थी । खुदग़रब ।
मतला—पु० [अ० मल] गबल का पहला धेर जिसके मिश्रे सामुद्रास होते हैं ।
मतली—स्त्री०—मिचकी ।
मतलब—वि० [अ० मल्लब] १. बाह्य हुआ । जिसकी इच्छा ही । अभि-प्रेत । २. प्रिय ।
मतला—स्त्री०=माता ।
मतलारा—वि०=मतलावा ।
मतवाल—स्त्री० [हि० मतवाला] १. मतवालापन । मत्तता । २. मतवालों या पागलों की तरह का कोई काम । उदा०—करत मतवाल जहँ सन्त जन मूरमा ।—कबीर ।
मतवाला—वि०, पु० [स० मत +हि० बाला (प्रत्य०)] [स्त्री० मतवाली] १ नशे आदि के कारण मत्त । नशे में चूर । २. किसी प्रकार के अभिमान या मद के कारण मत्त और ला-परवाह । ३ उन्मत्त । पागल । पु० १ बहु मारी पत्थर जो किले या पहाड़ पर से नीचे के समुद्रों की मारने के लिए लुकाया जाता है । २. कागज का बना हुआ एक प्रकार का खिलौना जो अभीर पर फेंकने से सीधा लड़ा रहकर इधर-उधर हिलता रहता है ।
मत-संग्रह—पु० [प० त०] किसी प्रश्न पर मत-दान की परिपाटी के द्वारा लोगों के मत एकत्र करना ।
मत-सुध—वि० [स० मत-सुध] मूर्ख ।
मत-स्वातन्त्र्य—पु० [प० त०] प्रत्येक व्यक्ति को अपना मत या विचार प्रकट करने की स्वतंत्रता ।
मता—पु०=मत (विचार) ।
 †स्त्री०=मति ।
मताधिकार—पु० [मत-अधिकार; प० त०] किसी चुनाव वा विषय में मत (या वोट) देने का अधिकार जो शासन से प्राप्त हो । प्रतिनिधिक स्वत्वाओं के सदस्य वा प्रतिनिधि निर्वाचित करने में वोट या मत देने का अधिकार । (फ़ैबाल्ड)
मताधिकारी (रिनु)—पु० [स० मताधिकार +इनि] मत देने का अधिकारी । वोटर ।
मताना—अ० [स० मत +हि० ना (प्रत्य०)] मत या मस्त होना । उदा०—पाइ नहै कज मे मुगध राधिका की, मजु ध्याए कदलीबन मर्तग ली मतलए है ।—रत्ना० ।
 स० मत्त या मस्त करना ।
मतानुभा—स्त्री० [मत-अनुभा, प० त०] २१ प्रकार के निग्रह स्थानों में से एक । (न्याय-दर्शन)
मतानुयायी (विन्दु)—पु० [स० मत-अनुयायिन्, प० त०] किसी मत का अनुयायी । मतवाली ।
मतारो—स्त्री०=महतारी (माता) ।
मतार्थना—स्त्री० [स० मत +अर्थना] चुनाव आदि के अवसरों पर लोगों के पास आकर उनसे अपने पक्ष में मत माँगने या उन्हें अपने अनुकूल करने की क्रिया या माग । (फ़ैनेसिय ऑफ बोद्स)

मत्स्यकाव्यी (विन्)—**पुं०** [मत्-अवकीविन्, व० स०] किसी मत, सिद्धान्त यादि का अनुयायी । जैसे—जैन मत्स्यकाव्यी ।

मत्स्यहीन—**स्त्री०** [हिं० माता=बेचक] बेचक या माता का रोग जो कहीं कुछ दूर तक फैला हो । (दूरव)
त्रि० प्र०—**कौलना** ।

मति—**स्त्री०** [स०/मत्+मित्] १. बुद्धि । अकल । २. राय । सम्पत्ति । ३. दृष्टका । कामना । ४. याद । स्मृति । ५. साहित्य में एक संचारी भाव । यह उस समय माना जाता है जब कोई अनुचित बात हो जाती है तब उसके बाद नीति की कोई बात सुझती है ।
वि० १. बुद्धिमान । २. चतुर । बालाक ।
†अर्थ०—मत ।

मति-बर्धन—**पुं०** [सं० व० स०] वह शक्ति जिसके अनुसार दूसरे की योग्यता का पता लगाया जाता है ।

मतिवा—**स्त्री०** [सं० मति/वा (देना) +क, +टाप्] १. ज्योतिष्मती नाम की छता । २. सेमल । शास्त्रमति ।

मतिना—**अव्य०** [सं० मत् या मत ?] सवृष । समान । (दूरव)
†अर्थ०—मत (निर्घोषार्थक) ।

मतिभंगी (गिन्)—**वि०** [सं० मति/अभृन् (नष्ट करना)+भिनि] मति या बुद्धि नष्ट करनेवाला ।

मति-भंग—**पुं०** [सं० व० स०] बहु अवस्था जिसमें बुद्धि कुछ भी सोच-समझ सकने में असमर्थ होती है । बुद्धि-प्रसन्न ।

मति-अभ—**पुं०** [सं० व० त०] अल्पत्व अथवा विह्वत बुद्धि या समझ के कारण होनेवाला वह प्रश्न जिसके फलस्वरूप मनुष्य कुछ का कुछ समझने लगता है, अथवा उसे किसी अवास्तविक घटना या वृष्य का मान होने लगता है । (हित्यसिन्धु)

मतिमंत—**वि०** [सं० मतिमत्] बुद्धिमान् । चतुर ।

मति-मंद—**वि०** [सं० मंदमति] मूर्ख ।

मति-मंद—**पुं०** [व० त०] मति-मंद होने की अवस्था या भाव ।

मतिमान् (मत्)—**वि०** [सं० मति+मत्पुं] बुद्धिमान । समझदार ।

मतिमाह—**वि०**—मतिमान् ।

मतिमंत—**वि०**—मतिमंत ।

मती—**वि०** [सं० मतिमान्] १. किसी प्रकार का मत या राय रखनेवाला । २. किसी मत या सम्प्रदाय का अनुयायी ।
†स्त्री० [सं० मति]—मत (विचार या सम्प्रदाय) ।

मतीस—**पुं०** [सं० मति] एक प्रकार का भावा ।

मतीस—**स्त्री०** [सं० विभात् वि० व० मतरई=विभाता] माता की छीत । विभाता ।

मतीस—**पुं०** [सं० मत्+ऐसम्] किसी विषय में दो या अधिक व्यक्तियों का एक ही मत या राय होना । मत या विचार में होनेवाली एकता या समानता ।

मत्स्य—**पुं०** [सं० कर्म० स०] छटमत्स्य ।
मत्स्य—**वि०** [सं०/मत् (मत्स्यकाव्य) +सत्] १. मत्स्ये आदि में चुर । मत्स्य । २. किसी बात की अधिकता, के कारण जिसमें विवेक न रह

या हो । जैसे—मत्स्य-मत । ३. किसी प्रकार के अन्यायिक के पूर्ण आवेश से युक्त । ४. किसी काम या बात के पीछे मत्स्यकाव्य । जैसे—रत्न-मत्स्य । ५. उन्मत्त । पागल । ६. बहुत अधिक प्रसन्न ।

पुं० १. मत्स्यकाव्य । २. चतुर । ३. कौशल ।
†स्त्री०—माया ।

मत्स्य—**वि०** [सं० मत्+कन्] जो कुछ-कुछ मत हो ।

मत्स्यकाव्यी—**वि०** [सं०] स्त्री० मत्स्यकाव्यिनी अल्पमत रूपवाच । परम सुन्दर ।

मत्स्योक्ति—**पुं०** [सं० कर्म० स०] समीत में, कर्नाटक पद्धति का एक राग ।

मत्स्य-नयन—**पुं०** [सं० मत्+हिं० गयेन्द्र] सबैया छन्द का एक मेट जिसके प्रत्येक चरण में ७ मगण और २ गुरु होते हैं ।

मत्स्यता—**स्त्री०** [सं० मत्+तल्+टाप्] मत होने की अवस्था या भाव । मत्स्यी ।

मत्स्यताही—**स्त्री०**—मत्स्यता ।

मत्स्य-चतुर—**पुं०** [सं० मध्य० स०] ब्रह्म अक्षरों का एक वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः यगण, मगण, यगण, सगण, और पिर मगण होता है ।

मत्स्य-चारण—**पुं०** [सं० कर्म० स०] १. बरायदा । २. अंगन के पास या सामने की छत । ३. मत्स्य हाथी । ४. सुपारी का चूर्ण ।

मत्स्य—**स्त्री०** [सं० मत्+टाप्] १. बारह अक्षरों का एक वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में मगण, मगण, सगण और एक गुरु होता है और ४, ६ पर यति होती है । २. मत्स्य । धरायदा ।

स्त्री० [सं० मत् का भाव] सं० मत का वह रूप जो भाव वाचक शब्द बनाने के लिए प्रत्यय के रूप में अन्त में लगता है । जैसे—नीतिमत्स्य, बुद्धिमत्स्य आदि ।
†स्त्री०—मत्स्यता ।

मत्स्य-नीका—**स्त्री०** [सं० व० स०] तेईस अक्षरों का एक छन्द जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः दो मगण, एक तगण, चार मगण एक लघु और एक गुरु अक्षर होता है ।

मत्स्य—**पुं०** [सं० मत्स्यक] १. ललाट । मत्स्यक । माया । २. किसी पदार्थ का अंगला या ऊपरी भाग ।

मत्स्य—**क्रि० वि०** [हिं० माया] १. मत्स्यक या सिर पर । २. किसी पर उत्तरदायित्व, धार आदि के रूप में ।

मुहा—(किसी के) मत्स्ये भङ्गना=उपरदस्ती देना । जैसे—वह काम तुम्हारे मत्स्ये पङ्गना । (कोई बात किसी के) मत्स्ये भङ्गना=भलात् किसी पर कोई दोष मङ्गना ।

मत्स्य—**पुं०** [सं० मत्+यत्] १. पटला । हँगा । २. ज्ञान-प्राप्ति का साधन ।

मत्स्यर—**पुं०** [सं०/मद्+सरम्] १. द्वेष । विद्वेष । २. द्वेष-अव्य और द्वेषपूर्णा मानसिक स्थिति । ३. क्रोध । गुस्सा ।

मत्स्यरी (रिन्)—**पुं०** [सं० मत्स्यर+रिनि, दीर्घ] मत्स्यर करनेवाला व्यक्तित्व । जिसके मन में मत्स्यर हो ।

मत्स्य—**पुं०** [सं०/मद्+स्यन्] १. मछली । २. विषय के दस अवतारों में से पहला अवतार जो मछली के रूप में हुआ था । ३. ज्योतिष में भी नामक राशि । ४. नारायण । ५. प्राचीन विराट् देश का दूसरा नाम ।

६ पुराणानुसार सुनहले रंग की एक प्रकार की मिला जिसका पूजन करने से मुक्ति होता माना जाता है। ७ छप्पय छत्र के २३३ में देव का नाम। ७ दे० 'मत्स्य-पुराण'।

मत्स्य-नाभा—स्त्री० [सं० ब० सं०, टाप्] ? मत्स्यवती (व्यास की माता)। २ जल-पीपल।

मत्स्यजीवी (विष्णु) —पु० [सं० मत्स्य/जीव् (जीना) +णिनि, उप० सं०] मछुआ। धीवर।

मत्स्य-डाबशी—स्त्री० [मध्य० सं०] अगहन सुदी द्वादसी।

मत्स्य-दीप—पु० [मध्य० सं०] पुराणानुसार एक द्वीप।

मत्स्य-नारी—स्त्री० [कर्म० सं०] १. वह जो आकृति में आधी मछली हो और आधी नारी। विशेषतः जिमका बच्चे से ऊपरी भाग नारी का हो और शेष भाग मछली का। (एक प्रकार का काल्पनिक प्राणी) २ सत्यवती।

मत्स्यनाशक—पु० [ब० तं०] कुरुर पक्षी।

मत्स्यनाशन—पु० =मत्स्यनाशक।

मत्स्यनी—स्त्री० [सं०] देशों की पांच प्रकार की सीमाओं में से वह सीमा जो नदी या जलाशय आदि के द्वारा निर्धारित हो।

मत्स्य-प्रायश्च—पु० [ब० तं०] ? यह मान्यता कि छोटी को बड़े अथवा दुर्बल को सबल उन्नी प्रकार खा जाने या नष्ट कर देते हैं जिस प्रकार बड़ी मछलियाँ छोटी मछलियों को खा जाती हैं। २ अराजकों या अततायियों का राज्य।

मत्स्य-पालन—पु० [ब० तं०] मछलियाँ पालकर उनकी पैदावार बढ़ाने का काम। (पिंकीकल्पर)

मत्स्य-पुराण—पु० [मध्य० सं०] अठारह पुराणों में से एक पुराण जो महापुराण माना जाता है।

मत्स्य-बध—पु० [ब० तं०] मछलियाँ पकड़नेवाला। मछुआ। धीवर।

मत्स्य-बंधल—पु० [ब० तं०] मछली पकड़ने की बशी। कैंटिया।

मत्स्य-मुद्रा—स्त्री० [मध्य० सं०] तांत्रिकों की एक मुद्रा।

मत्स्य-राज—पु० [ब० तं०] ? गेह मछली। रोहित। २ विराट-नरेश।

मत्स्य-सैधनी—स्त्री० [ब० तं०] मछली फँसाने की बसी। कैंटिया।

मत्स्य-संबर्धन—पु० [ब० तं०] मत्स्य-पालन।

मत्स्याली—स्त्री० [मत्स्य-अधि, ब० सं०, +कीष्] ? मीम लता। बाहरी नूदी। ३ गीबड़। दूब।

मत्स्यविनी—स्त्री० [मत्स्य-अविनी, मुत्सुपा सं०] ? जल पीपल। ३ दे० 'मत्स्यशांति'।

मत्स्यब्रह्मर—पु० [मत्स्य-अवतार, ब० तं०] भगवान विष्णु का पहला अवतार जिसमें उन्होंने मत्स्य का रूप धारण किया था।

मत्स्यनाशन—वि० [सं० मत्स्य/अश् (खाना) +त्यु-अन] मछली खाने-वाला।

पु० मछरप नामक पक्षी।

मत्स्यनाशन—पु० [मत्स्य-आशन, मध्य० सं०, ब० तं०] तांत्रिकों के अनुसार योग का एक आसन।

मत्स्येन्द्रनाथ—पु० [सं०] एक प्रसिद्ध हठयोगी महात्मा जो गोरखनाथ के गुरु थे।

मत्स्योदरी—स्त्री० [मत्स्य-उदरी, ब० सं०, +कीष्] सत्यवती। मत्स्यगंगा। मत्स्योपजीवी (विष्णु) —पु० [सं० मत्स्य, +उप/जीव् (जीना) +णिनि] मछुआ। धीवर।

मघन—पु० [सं०/मघ् (मघना) +त्युट्-अन] १. मघने की कृपा या भाव। बिशेला। २ एक प्रकार का प्राचीन अस्त्र। ३. मघियारी नामक वृक्ष।

वि० १ नष्ट करनेवाला। २ मार डालने या बध करनेवाला। (यी० के अन्त में) जैसे—मदन-मघन।

मघना—सं० [सं० मघन या मघनु] ? मघानी आदि के द्वारा दूध या घही को इस प्रकार चलाना या हिलाना कि उसमें से मघन निकल आये। सर्पो० किं०—डालना।—देना।—लेना।

३ कई चीजों को हिला-डुलाकर एक में मिलाना। ३ अस्त-व्यस्त या नष्ट-भ्रष्ट करना। ४ कुछ जानने या पता लगाने के लिए जगह-जगह दूँडना या देखना। ५ जैसे—(क) बड़े-बड़े शासन मघना। (ख) किसी को दूँडने के लिए सारा बाहर मघना। ५ कोई किया बहुत अधिक या बार बार करना। जैसे—तुम तो एक ही बात लेकर मघने लगते हो। ६ अन्धी तरह पीटना या मारना।

पु० मघानी। रई।

मघनियी—स्त्री०—मघनी।

मघनी—स्त्री० [हिं० मघना] ? मघने की कृपा या भाव। २ वह मटक जिसमें दही मघा जाता है। ३ मघानी। रई।

मघबाही—पु० [हिं० माघा।-बाह (प्रत्यय)] निर में होनेवाला दर्द। पु०—महावत।

मघाई—स्त्री० [हिं० मघना।-आई (प्रत्यय०)] ? मघने की कृपा या भाव। २ मघने की मजदूरी।

मघाना—सं० [हिं० मघना] मघने का काम किसी दूसरे से कराना।

अ० (दही आदि का) मघा जाना।

पु० बड़ी मघानी।

मघानी—स्त्री० [हिं० मघना] काठ का बना हुआ एक प्रकार का उपकरण जिसकी सहायता से दही मघकर मघन निकाला जाता है।

मुहा०—मघानी पड़ना या बहना—खलबली मचाना।

मघाब—पु० [मघना।-आव (प्रत्य०)] मघने की कृपा या भाव।

मघित—पु० कृ० [सं०/मघ् (मघना) +भत्] ? जिसका मघन या मघन किया गया हो। मघा हुआ। २ बोलकर अन्धी तरह मिलाया हुआ।

मघितार्थ—पु० [सं० मघित-अर्थ, कर्म० सं०] ? वह अर्थ या आशय जो किसी विषय का मघन या मघन करने पर निकलता है। २. सारंश।

मघुरा—स्त्री० [सं०/मघ् (मघना)।-उरञ्+दीप्] पश्चिमी उत्तर प्रदेश की एक प्रसिद्ध नगरी, जिसकी गिनती सात मोक्षदायिका पुरियों में होती है।

मघुरिया—वि० [हिं० मघुरा।-इया (प्रत्य०)] मघुरा का। जैसे—मघुरिया चौबे।

मघुल्ला—पु०—मत्सूल। उदा०—जानी के सोक जल जान की मघुल कियो।—रलाकर।

मघीरा—पु० [हिं० मघीरा] बड़सो का एक उपकरण या औजार।

शब्दीरी—स्त्री० [हिं० भाषा+औरी (प्रत्य०)] एक गहनता जो स्थिरावस्था
विर पर पहुँचती है।

शब्दो—पुं०=भाषा।

शब्दय—पुं० [सं० शब्दय] एक प्रकार का शब्द।

शब्दती—स्त्री० [सं०] विद्वत्त बौद्ध की चार श्रुतियों में से दूसरी
श्रुति।

शब्दय—वि०=मदाय।

शब्द—पुं० [सं०√मद्+अच्] १. मादक द्रव्य खाने या पीने से होनेवाली
बहु उद्देगपूर्ण अवस्था जिसमें मस्तिष्क ठीक तरह से काम नहीं करता।
नशा। २. अपनी किसी विशिष्टता या श्रेष्ठता के कारण उत्पन्न होने-
वाली बहु मानसिक स्थिति जिसमें मनुष्य औरों को इस प्रकार तुच्छ या
हीन समझने लगता है, मार्गों उसने किसी मादक द्रव्य का सेवन किया
हो। निर्वनीय अहंकार या गर्व। यह वर्तमान का एक निष्कृष्ट प्रकार
माना जाता है। ३. उन्मत्तता। पागलपन। ४. अज्ञान या प्रमाद के
कारण होनेवाला मतिभ्रम। ५. बहु मानसिक अवस्था जिसमें धीमे-
मे अथवा किसी प्रकार की बासना के कारण उचित-अनुचित या मले-बुरे
का विशेष ध्यान नहीं रह जाता। मस्ती।

मुहो०—मद्य वर आना=(क) युवा होना। (ख) तीव्र धा प्रबल
अर्थ में होना। (ग) काम-वासना से उन्मत्त होना।

१. वह गणयुक्त द्राव्य जो मतवाले हाथियों की कल्पदंतियों से बहता है।
दान। ७. मद्य। शराब। ८. कस्तूरी। ९. शहद। १०. बीर्य।

११. कामदेव। मदन।

वि० १. मतवाला। मत्त। २. बहुत अधिक प्रसन्न या मत्त।

स्त्री० [अ०] १. वह लंबी लकीर जिसके नीचे लेखा या हिसाब लिखा
जाता है। शीर्षक। २. लेखे या हिसाब का वह विशिष्ट भाग जो किसी
कार्य या व्यक्ति के नाम से अलग रखा जाता है। खाता। जैसे—मे
१०] भी इसी मद में लिखे जायेंगे। ३. कार्य या कार्यालय का विभाग।
संरिस्ता। ४. समुद्र की ऊँची लहर। ज्वार।

शब्द—स्त्री० [हिं० मद+क (प्रत्य०)] सवाकू की तरह पीने का एक
मादक पदार्थ जो अफीम के योग से बनाया जाता है।

शब्दकी—पुं० [हिं० मदक+की (प्रत्य०)] वह जो मदक पीता हो।
मदक पीनेवाला।

शब्दकट—पुं० [सं० मद/कट (प्रकट करना)+अच्] १. साँड़। २.
२. नृपंसक।

शब्दकर—वि० [ब० त०] जिससे मद उत्पन्न हो। मद-कारक।

पुं० धतूरा।

शब्दकल—वि० [ब० त०] [स्त्री० मद-कला] १. मत्त। मतवाला।
२. उन्मत्तता। पागल। ३. जो किसी प्रकार के मद से भिन्नज हो
रहा हो।

शब्दकी—पुं०=शब्दकी।

शब्दकू—वि० [सं० मद/कू (करना)+किच्+पुच्] १. उन्मत्त-
कारक। २. मादक।

शब्दकूला—स्त्री० [अ० मद्यकूलः] वह स्त्री जिसे कोई बिना विवाह किये
ही पत्नी बनाकर अपने घर में रख ले। गृहीता। रखनी।

शब्दकय—पुं० [ब० त०] १. छतियन। २. मद्य। शराब।

शब्दकय—स्त्री० [सं० शब्दकय+दाप्] १. मरिचा। शराब। २. अत्सी।
बकसी।

शब्दकयन—पुं० [ब० त०] मीठा। महिष।

शब्दकयल—वि० [सं० मदकल] मत्त। मत्त।

पुं०=मदकल (मिटाई)।

शब्दकयल—वि० [सं० मदकल] मदमत्त। उदा०—गमे गमे मदकलित
युवंत।—पिपीलाय।

शब्दकयी—स्त्री० [सं० मद/हृम् (मारना)+ट+ङीप्] पीई नाम का
पौधा। पृथिका।

शब्दकयल—पुं० [सं० कर्म० त०] हाथी का मद। दान।

शब्दकय—स्त्री०=मदय।

शब्दय—स्त्री० [अ०] १. वह कार्य या सेवा जो किसी कार्यकर्ता के काम
के संपादन में की जाय। सहायता। २. वह वन जो किसी की उद्देग-
सिद्धि, जीविका, निर्वहण आदि के लिए उसे दिया जाय। ३. वे पदार्थ
या व्यक्ति जो किसी काम को पूरा करने के लिए सँके जायें। ४. नीकरों,
मजदूरों आदि को दिया या बाँटा जानेवाला पारिश्रमिक अथवा वेतन
का कुछ अंश।

क्रि० प्र०=बाँटना।

शब्दयकर्म—स्त्री० [अ० मदय+फा० कर्म] १. वह वन जो किसी को
सहायता के लिए दिया जाय। २. किसी काम के लिए अग्रिम दिया
जानेवाला धन। पेशगी।

शब्दयकार—वि० [अ० मदय+फा० कार (प्रत्य०)] मदय या सहायता
करनेवाला। सहायक।

शब्दय—पुं० [सं०√मद्+निच्+स्यु—अज] १. काम-देव। २. रति-
कीर्ति। संमोग। ३. कामशास्त्र के अनुसार एक प्रकार का आत्मियन
जिसमें नायक अपना एक हाथ नायिका के गले में डालकर और दूसरा
हाथ मध्यदेश में लगाकर उसका आत्मियन करता है। ४. महादेव के
चार प्रथम अवतारों में से तीसरे अवतार का नाम। ५. ज्योतिष-
शास्त्र के अनुसार जन्म से सत्यम गृह का नाम। ६. एक प्रकार के गीत।

७. मीना नामक पक्षी। ८. मीनफल। ९. धतूरा। १०. लविर।
सैर। ११. मीनलविरि। १२. मीरा। १३. मोम। १४. अक्षरोट।

१५. प्रेम। स्नेह। १६. रूपमाल नामक छंद का धतूरा नाम।

१७. संजन पक्षी।

शब्दयकर्म—पुं० [सं० मध्य० त०] साहित्य में सात्विक रोमांच।

शब्दयक—पुं० [सं० मदय+कम्] १. मदन कुल। मीन फल। २. यमक
या दीना नाम का पौधा। ३. मोम। ४. लविर। सैर। ५.
मीनलविरि। ६. धतूरा।

शब्दयकयन—पुं० [ब० त०] योनि। महादेव।

शब्दयकगृह—पुं० [ब० त०] १. मदन कुल। मीन फल। २. यमक
के अनुसार जन्म कुंडली में सातवाँ स्थान। ३. मदनहृद नामक छन्द।

शब्दयकगीत—पुं० [उपनि० त०] श्रीछण्डनाम का एक नाम।

शब्दयकधतूरी—स्त्री० [मध्य० त०] शैव शुकल धतूरी।

शब्दयकताल—पुं० [ब० त०] सर्गीत में, एक प्रकार का ताल जिसमें पहले
दो डोल और अंत में बीस भागा होती है।

शब्दयकनवीदशी—स्त्री० [मध्य० त०] शैव शुकल नवीदशी।

मदन-वचन—पुं० [ब० त०] शिव का एक नाम ।
 मदन-विषय—पुं० [ब० त०] मदनोत्सव का दिन । वसंत ।
 मदन-वीला—स्त्री० [ब० त०] संगीत में, बन्द ताल के छ. मेघों में से एक ।
 मदन-दासिणी—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] वैद्य दासिणी जो मदन महोत्सव के अर्वात्त है ।
 मदन-मासिका—स्त्री० [ब० त०] वह स्त्री जिसका विषय न हो ।
 दुर्धरिणा या प्रष्टा स्त्री ।
 मदन-मति—पुं० [ब० त०] १. हृद्ग । २. विष्णु ।
 मदन-पाठक—पुं० [ब० त०] कौकिल ।
 मदन-फल—पुं० [सं० मध्य० सं०] मीनफल ।
 मदनबान—पुं० [सं० मदनबाण] एक प्रकार का बेल और उसका फूल ।
 मदन-जवन—पुं० [सं० ब० सं०] यौनि । मग ।
 मदन-मनोरमा—स्त्री० [उपनि० सं०] केशव के मतानुसार सवैया का एक मेद जिसे दुमिल भी कहते हैं ।
 मदन-मनोहर—पुं० [उपनि० सं०] दशकवृत्त का एक मेद जिसे मनहर भी कहते हैं ।
 मदन-मस्त—पुं० [हिं० मदन+मस्त] १. जगदी सुरत का सुखाया हुआ टुकड़ा जिसका प्रयोग औषध में होता है । २. चपा के फूल का एक मेद जिसकी गन्ध बहुत उग्र होती है ।
 मदन-महोत्सव—पुं० [ब० त०] प्राचीन भारत का एक उत्सव जो वैद्य शुक दासों से चतुर्वेदी पर्यंत होता था ।
 मदन-मोक्ष—पुं० [ब० त०] केशव के मतानुसार सवैया छंद का एक मेद जिसे सुदरी भी कहते हैं ।
 मदन-मोहन—पुं० [ब० त०] कृष्णचन्द्र का एक नाम ।
 मदन-मल्लिता—स्त्री० [सुसुप्ता सं०] एक प्रकार का बर्णिक वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में सोलह वर्ण होते हैं ।
 मदन-मेघ—पुं० [सं० मध्य० सं०] प्रेमी और प्रेमिका के पारस्परिक प्रेम-यण ।
 मदन-माला—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] १. मैना । ३. कीयल ।
 मदन-मलय—पुं० [ब० त०] १. मग । यौनि । २. फलित ज्योतिष के अनुसार, जन्म-कुंडली का सातवां स्थान ।
 मदन-सारिका—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] मैना ।
 मदन-हर—पुं० [ब० त०] मदनहर ।
 मदन-हरा—स्त्री० [सं० मदनहर+टापु] चालीस मात्राओं के एक छंद का नाम ।
 मदनकुशा—पुं० [मदन-शंकुश, ब० त०] १. लिंग । २. नख-सात ।
 मदनगतक—पुं० [मदन-अंतक, ब० त०] शिव ।
 मदनय—वि० [मदन-अंश, वृ० सं०] कामाय ।
 मदन—स्त्री० [सं० मदन+टापु] मैना ।
 मदनपत्र—पुं० [सं० मदन-अपत्र, ब० सं०, +कपु] कोर्वा ।
 मदनयुध—पुं० [सं० मदन-आयुध, ब० त०] १. कामदेव का अस्त्र । २. मग । यौनि ।
 मदनारि—पुं० [मदन-अरि, ब० त०] शिव ।
 मदनालय—पुं० [मदन-आलय, ब० त०] १. मग । यौनि । २. फलित ज्योतिष के अनुसार जन्म-कुंडली में का सातवां स्थान ।

मदनावस्था—स्त्री० [मदन अवस्था, ब० त०] वह अवस्था जिसमें काम-वासना बहुत प्रबल हो ।
 मदनारव—पुं० [मदन-अरव, ब० त०] मदनयुध ।
 मदनी—स्त्री० [सं० मदन+कीनु] १. मग । शराब । २. कल्पु । ३. मेघी । ४. वी ।
 मदनीय—वि० [सं० मद्+अनीयर] तथा उत्सव करने या कानेबाजा । मादक ।
 मदनोत्सव—पुं० [मदन-उत्सव, ब० त० या ब० त०] मदन-महोत्सव ।
 मदनोत्सवा—स्त्री० [मदन-उत्सव, ब० सं०, +टापु] कम्परा ।
 मदनोद्यान—पुं० [मदन-उद्यान, ब० त० या ब० त०] प्रमोद-वन ।
 मदवी—वि० मदाय (शराबी) ।
 मद-प्रयोग—पुं० [ब० त०] हाथियों का मद बहना ।
 मद-अव्यय—पुं० [ब० त०] दे० 'मदप्रयोग' ।
 मदकान—पुं० [अ० मद्रकान] वह स्थान जहाँ मुदे गाड़े जाते हैं । कबि-स्तान ।
 वि० १. मदीयों में गाड़ा हुआ । २. गुह्य ।
 मदर्जनी—स्त्री० [सं० मद्+मञ्जु (मग करना)+गिनि] कीपु] धातुकी ।
 मद-मत्त—वि० [सं० तृ० त०] १. (हाथी) जो मद बहने के कारण मस्त हो । २. मतभाला । मस ।
 मदर्दसिका—स्त्री० [सं० मद्+सिक् (मतवाला होना) ; गिच्+अच्-अन्त, -डीप्+कन्+टाप, ह्रस्व] मलिका ।
 मदर्दियन्—पुं० [सं० मद्+गिच्+कल्पु] १. कामदेव । २. मग । शराब । ३. कलशार ।
 मदर्दा—पुं० [सं० मंदल] मंडराने की किया या भाव । उदा०—ब्रह्म पर मदर्द करत है काम—सुर ।
 मदर्दज—पुं० मदर्दक ।
 मदर्दसा—पुं० [अ० मदर्दसि] पाठनाला । विद्यालय ।
 मदर्दस—पुं० १. दक्षिणभारत का एक प्रदेश जो अब कई राज्यों में विभक्त हो गया है । २. उत्सव प्रदेश की एक प्रसिद्ध नगरी ।
 मदर्दसी—वि० [हिं० मदर्दस] मदर्दस का ।
 पुं० मदर्दस का रहनेवाला ।
 मद-नेहा—स्त्री० [ब० त०] एक प्रकार की बर्णिक वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में सात सात वर्ण होते हैं ।
 मद-विलिप्त—वि० [वृ० त०] मद से पागल । मदमस्त ।
 पुं० मतवाला हाथी ।
 मद-शाक—पुं० [ब० सं०] पौदों का शाक ।
 मदर्दसार—पुं० [सं० मद्+शु (गति)+गिच्+अणु] शहदूत का पेड़ ।
 मदर्द—स्त्री० [अ०] प्रयसा । तारीक ।
 मदर्दहेतु—पुं० [ब० त०] धी का पेड़ ।
 मदर्दहोहा—स्त्री० [अ० मदर्द-ई-सहायः] मुखरूप के दिनों में सुधी संभ्रदाय वाली द्रावा पड़ी जानेवाली वे कवितारें जिनमें मुहम्मद साहब और उनके साथियों की प्रयसा होती है ।
 मदर्दहोस—वि० [का०] नयों के कारण जिसके होश ठिकाने न हों ।
 मदर्दहोसी—स्त्री० [का०] मदर्दहोस होने की अवस्था या भाव ।

मवात्क—पुं० [मव-अंतक, वं० तं०] मवारय्य नामक रोग ।
 मवांच—वि० [मव-अंष, तुं० तं०] [वाच० मवांचता] मव अर्थात् किसी गुण आदि की अधिकता के फलस्वरूप जो अंबा या विवेकहीन हो रहा हो।
 मवांचता—स्त्री० [सं० मवांच+तल्+टाप्] मवांच होने की अवस्था या भाव ।
 मवांचित—स्त्री० [अ०] लगाम ।
 मवांचितल—स्त्री० [अ०] १. दाखिल होने की क्रिया या भाव । प्रवेश ।
 २. बीच में दखल देने की क्रिया या भाव । ३. बीच ।
 मवांचितल बेजा—स्त्री० [अ० मवांचितल+फा० बेजा] १. अनुचित रूप से किया जानेवाला प्रवेश । २. अनुचित रूप से दखल देने की क्रिया या भाव । अनुचित हस्तक्षेप ।
 मवाच्य—तुं० [मव-आच्य, तुं० तं०] ताड़ ।
 मवाच्यय—पुं० [सं० मव-आच्य, वं० स०] बहुत अधिक मविरा या शराब पीने के फल-स्वरूप उत्पन्न होनेवाले कई प्रकार के शारीरिक विकार । (एन्कोहेलियम)
 मवाचि—वि० [?] कल्याण करनेवाला । मंगलकारक ।
 मवार—तुं० [सं०/मव्+आर्य] १. हाथी । २. सूअर । ३. एक प्रकार का मध द्रव्य । ४. आकर नाम का पौधा ।
 वि० चालाक । धूर्त ।
 पुं० [अ०] १. दौरा करने का रास्ता । भ्रमण-मार्ग । २. ग्रहों के भ्रमण का मार्ग । कक्षा । ३. आधार । आश्रय ।
 एव—हार मवार ।
 ४. मुसलमानों के एक पीर ।
 पुं०—मवारी ।
 मवार मवा—पुं० [हिं० मवार+मवा] घूम में सुलाया हुआ मवार का दूध जो प्रायः औषध के रूप में काम आता है ।
 मवारिया—पुं० [देस०] एक प्रकार का मिट्टी का हुक्का । (अवध)
 पुं०—मवारी ।
 मवारी—पुं० [अ० मवार] १. बहो जो बन्दर, मालू आदि नवाकर जीविका चलाता है। कलंवर । २. जादू आदि के लोखानेवाला साजीगर ।
 मवालता—स्त्री० [सं०] पुरानापुरात विधावयव गुणधर्म की कन्या जिसे पालाकलेतु शानव ने उठा ले आकर पालाक में रखा था ।
 मवालपरी (पिपु)—पुं० [सं० मव+आ/लपु (बोझना)+पिनि] [स्त्री० मवालपिनी] कोकिला । कोयल ।
 मवालु—वि० [सं० मव+आलुव] १. जिससे मव भरता हो । २. मस्त ।
 मवालु—पुं० [मव-माळ, वं० स०] कस्तुरी ।
 मवि—स्त्री० [सं०/मव् (पुर्ण करण)+इनि, पुषो० सिद्धि] हुँगा । पटेला ।
 मविद्या—स्त्री० [फा० भादा] पशुओं में स्त्री जाति । स्त्री जाति का जानवर । मादा । जैसे—कबूतर की भविद्या=कबूतर ।
 मविर—स्त्री० [सं०/मव्+किरप्] काल बीर ।
 वि० मव से मरा हुआ । उदा०—मूँषले जब मविर पुन में वासना के पील—प्रासव ।
 मविरा—स्त्री० [सं० मविर+टाप्] १. कुछ निश्चित प्रकार के अर्वाँ, फर्माँ, रसों आदि को सजाकर उभगत वनके से सौषकार निकाल करके

बाला नवीला रस । २. शराब । ३. कामदेव की पत्नी । रति ।
 ३. बाहर अखाँरी का एक बर्षिक छेद जिसके अत्येक चरण में सात मगण और अंत में एक गुम् होता है । इसे मालिनी, उमा और दिवा भी कहते हैं ।
 मविराल—वि० [मविर-अव, वं० स०+अव्] [स्त्री० मविराली] मस्त आर्षोचाला । अलशोका ।
 मविरामा—स्त्री० [मविरा-आमा, वं० तं०] मविरा की आमा या आमास ।
 जैसे—स्वर्णपद वी अंतर्मन में मविराशा मरती तुम शय में—पं० ।
 मविरामस्त—वि० [सं० मविरावस्तन] मव से मरा हुआ । मविर । जैसे—मविरामत नयन ।
 मविरालम्—पुं० [मविरा-आलय, वं० तं०] शराबखाना । कलशरिया ।
 मविरालस—वि० [सं० मविरा-अलस, तुं० तं०] [स्त्री० मविरालसा] अधिक शराब पीने के बाद जिसे बहुत आलस्य आ रहा हो ।
 मवी—स्त्री०—मवदि ।
 मवीना—पुं० [अ० मवीनः] अरब का एक प्रसिद्ध नगर जहाँ इस्लाम के प्रवर्तक मुहम्मद शाहू की समाधि है ।
 मवीय—वि० [सं० अरमद्+छ—ईय, मवादिस] [स्त्री० मवीया] मेरा ।
 मवीला—वि० [सं० मव+हिं० ईला (प्रत्यय)] [स्त्री० मवीली] १. मव से युक्त । मविर । २. नया लानेवाला । नवीला ।
 मवुकल—पुं० [?] ऐसा दोहा जिसके अत्येक चरण में १३ गुम् और २२ लघु मात्राएँ हों । गयंद ।
 मवुपु—पुं० [?] काठ का बना हुआ एक प्रकार का कड़ा जो योगी क्षय में पड़ते हैं ।
 मवीकड—वि० [सं० मव-उकट, तुं० तं०] मव से उन्मत्त ।
 पुं० मस्त हाथी ।
 मवीबाध—वि० [सं० मव-उध, तुं० तं०] मत्त । मतवाला ।
 मवीडत—वि० [सं० मव-उडत, तुं० तं०] १. मवोन्मत्त । मत्त । २. बहुत बड़ा अभिमानी या धमकी ।
 मवीम्भर—वि० [सं० मव-उम्भर, तुं० तं०] १. जो मव या नरे के कारण उन्मत्त हो रहा हो । मदाघ । २. थो धन, बल आदि की अधिकता के फलस्वरूप बहुत धमकी ही, इसलिए जिसे मले-पुं० का ज्ञान न रह गया हो ।
 मवीषे*—स्त्री०—मवोदरी ।
 मवुपु—पुं० [सं०/मव् (हुँवना)+इ] १. एक प्रकार का जल-पत्नी । २. पेड़ों पर रहनेवाला एक प्रकार का जंतु । ३. मंगूर या मवुगुरी नाम की मछली । ४. एक प्रकार का सोंप । ५. एक प्रकार का जहाज जो जल-युद्ध में काम आता था । ६. एक पुरानी वर्ष-संकर जाति ।
 मवुपु—पुं० [सं०/मव्+उरप्, नि० सिद्धि] १. मंगूर या मवुगुरी नामक मछली । २. मवुगु नामक संकर जाति ।
 मवु—स्त्री०—मव (विनाग) ।
 मवुता—स्त्री०—मवद ।
 मवुता—वि०—मदा ।
 मवुहा—वि० [अ०] [माव० मवुही] मवह अर्थात् प्रवासा या स्तुति करनेवाला ।
 मवुही—स्त्री०—मवदी ।
 मवु—पुं० [सं० कडुद्] साँड़ का बिरला ।

मधुसूतरी—पु० [हि० मधुसूत] तबि का एक प्रकार का पुराना सिक्का जो प्राय एक पैस के बराबर होता था।

मद्धन—वि० १=मद्धिम। २=मध्यम।

मद्धिक—पु० [स०] दास से बनाई हुई शराब। द्रास।

मद्धिम—वि० [स० मध्यम] ? गति गुण आदि के विचार से जिसमें तेजी या प्रखरता न हो। सामान्य अवस्था की अपेक्षा कम तेज या कम प्रखर। हलका। जैसे—मद्धिम चाल, मद्धिम रोशनी।

मद्धे—अव्य [स० मध्ये] ? मध्य या बीच में। २ मे। ३ किसी विभाग या विषय के क्षेत्र या मद में। जैसे—सौ रुपए मकान की दरम्भत मद्धे खरच हुए।

मद्ध—पु० [स० मधु/मधु/यत्] मधिरा। शराब। सुरा। (बाह्य)

मद्धप—वि० [स० मधु/धा (पीना) +क] जो मद्धयान करता हो। मध पीने का अभ्यस्त। शराबी।

मद्धपान—पु० [य० त०] मध पीने की क्रिया या भाव। शराब पीना।

मद्धपानाल—पु० [स० मद्धप+आ (पीना) +क] जो मद्धयान करता हो। मध पीने का अभ्यस्त। शराबी।

मद्ध-पुण्या—स्त्री० [ब० स०, +टाप्] घालकी। बी।

मद्ध-बीज—पु० [ब० स०] शराब के लिए उठाया हुआ खमीर। पीस।

२ बहु पदार्थ जिसके द्वारा खमीर या पीस उठाय जाता है।

मद्ध-मद्ध—पु० [ब० त०] =मद्धपान।

मद्धचासिनी—स्त्री० [स० मद्ध-वास, ब० त०, +इनि +ङीप्] घालकी। बी।

मद्धसपान—पु० [ब० त०] ममके से शराब खींचने की प्रक्रिया।

मद्धकर—वि० [स० मद्र/कृ +ख्व, मुमागम] मगलकारक। शुभ।

मद्र—पु० [स० मद्र+रङ्] ? पचनद में स्थित एक प्राचीन जनपद। २ उन्नत जनपद का शासक। ३ मद्र जनपद का निवासी।

मद्रक—वि० [स० मद्र। कन्] ? मद्र जनपद-सम्बन्धी। २ मद्र देश में उत्पन्न।

पु० ? मद्र जनपद का शासक। २ मद्र देश का निवासी।

मद्रकार—वि० [स० मद्र/कृ (करना) +अण्] मगलकारक। शुभ।

मद्र-भूता—स्त्री० [स० ब० त०] माद्री।

मद्रास—पु० =मदरास।

मद्रासी—वि०, पु० =मदरासी।

मधा—पु० १ =मध्य। २ =मद्ध। ३ मधु।

अव्य० [स० मध्य] मे।

मधदी—वि० [स० मध +हि० ई (प्रत्यय)] शराब पीनेवाला। शराबी।

मधय—पु० =मध्यस्थ। उदा०—दुहु दिश मधय दिवाकर मले।—विद्यापति।

मधय्य—पु० [स० मधु/यत्] वैशाख मास।

मधयाना—पु० [देस०] एक प्रकार की धास। मकड़ा।

मधि—स्त्री० [स० मध्य०] ? मध्य में होने की अवस्था या भाव। २ सुख-दुख, स्वर्ग-नरक आदि की समान भाव से देखने की अवस्था, क्रिया या भाव।

*अव्य० मध्य।

मधिम—वि० १ =मद्धिम। २ =मध्यम।

मधिपाली—वि० [स० मध्यवर्ती] बीच में रहने या होनेवाला। बीच का। उदा०—जैसे मधिपाली सब तिन सौ मिलाय छुट्टी।—सेनापति।

मधु—पु० [स० मधु/मन् (आनना) +तृ, ध—आदेश] १. सहवृ। २. बल। पानी। ३. मधिरा। शराब। ४. फूलों का रस। मकरंद। ५.

वसत ऋतु। ६. चैत का मधुना। ७. दुष्य। ८. मिसरी। ९. मक्खन। १०. घी। ११. अशोक वृक्ष। १२. मधुना। १३. मूलेठी। १४. अमृत। १५. शिव का एक नाम। १६. एक प्रकार का छेद

जिसके प्रत्येक चरण में दो लघु अक्षर होते हैं। १७. सर्गीत में एक राग जो नेत्र वरुण का पुत्र माना जाता है। १८. एक दैत्य जिसे विष्णु ने मारा था और जिसके कारण उनका नाम 'मधुसूदन' पड़ा था।

वि० १ मीठा। २ मधुर। ३ स्वादिष्ट।

स्त्री० जीवनी का पेड़।

मधुभा—पु० [?] आम के बीज में होनेवाला एक प्रकार का रोग।

मधु-ऋतु—स्त्री० [य० कर्म० सं०] वसत ऋतु।

मधु-कर्म—वि० [ब० सं०] जिसके गले में मिठास हो।

पु० कौकिल। कौयल।

मधुक—पु० [स० मधु। कन् वा मधु/क +क] ? महुए का पेड़। २ महुए का फल। ३ मूलेठी।

मधु-कर्म—पु० [ब० सं०] ? मीठा। २ कामुक व्यक्ति। ३ भँगरा।

मधुकरी—स्त्री० [स० मधुकर+ङीप्] ? मधुकर की मादा। मीठी।

२ साधु-मन्यासियों की बहु शिक्षा जो केवल पके हुए अन्न (बाजल, दाल, रोटी आदि) के रूप में होती है।

कि० प्र०—सर्गनाम।

३ सर्गीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी। ४ आटे के पेड़े की पकाई हुई रोटी। बाटी। मीरिया। छिट्टी।

मधु-कर्कटिका—स्त्री० [उपमि० सं०] बिजौरा नीबू।

मधु-कर्कटी—स्त्री० [उपमि० सं०] ? बिजौरा नीबू। २ खजूर का फल।

मधुका—स्त्री० [स० मधु। कन् +टाप्] ? मूलेठी। २ मधु। सहवृ। ३ कृष्णवर्णी लता।

मधुकार—पु० [स० मधु/कृ (करना) +अण्] ? मधुमक्खी। २ मधु-पर्णी।

मधुकारी (रिन्)—पु० [स० मधु/कृ +णिनि, उप० सं०] मधुमक्खी। पु० [हि० मधुकारी] वह सत्यानी जो मधुकारी मीनता या ब्रह्मण करता हो।

मधु-कुल्या—स्त्री० [ब० त०] बृश द्वीप की एक नदी। पुराण।

मधु-कुलत—पु० [स० मधु/कृ +क्विप, तुक्] ? १. मीठा। २. मधु-मक्खी।

मधु-कैटभ—पु० [ब० सं०] मधु और कैटभ नामक दो दैत्य जो दिव्य के कान की मूल से उत्पन्न हुए माने गये हैं। (पुराण)

मधु-कोष—पु० [ब० सं०] शहर की मक्खी का छत्रा। मधु-धक।

मधु-बीर—पु० [ब० सं०] खजूर का पेड़।

मधु-नीध—पु० [ब० सं०] ? अर्जुन (वृक्ष)। २ मीलसिरी।

मधु-भायन—पु० [ब० सं०] कौयल।

मधु-नीलन—पु० [ब० सं०] सहजिन का वृक्ष।

समु-बीज—पु० [ब० सं०] कौकिल। कौयक।
 समु-बन्ध—पु० [सं० समु-पन्न] नव-विवाहित बर और बम्बू का वह समय जो वे सब काम-धर्मों से छुट्टी लेकर वीर किसी रमणीक स्थान में प्रायः घर के लीगो से अलग रहकर आनन्द-मोग में बिताले हैं। (हृदीमन)
 विषेध—यह सम्बन्ध अगरेजी के 'हृदीमन' का तदर्थीय है, जिसका मूल अर्थ था—विवाह के बाद का पहला सहीना, परन्तु जो आसक्त इसी अर्थ में प्रयुक्त होता है जो अरब 'समु-बन्ध' का मतलबाना गया है।
 समु-बन्ध—पु० [प० तं०] शहद की मन्थियों का छत्रा।
 समु-बन्ध—वि० [सं० समु-जन् (उत्पत्ति) + ङ] मधु से उत्पन्न।
 पु० मोग।
 समु-बा—स्त्री० [सं० समु-ज+टाप्] १ मिथी। २. पुष्पी।
 समु-बिन्दु—पु० [सं० समु-बन्धि (जीतना)+विभ्+त्, तुक्] विष्णु।
 समु-बीजन्—पु० [ब० सं०] बहेजा (बुझ)।
 समु-बुध—पु० [कर्म० सं०] इहम्।
 समु-बन्ध—पु० [ब० सं०] शहद, की और चीनी का समानाहार।
 समु-बन्ध—पु० [सं० समु+त्वं] मधु का मास। शहद की मिठास।
 समु-बीज—पु० [सं० समु-दीप् (बमकना)+क] कामदेव।
 समु-बुल—पु० [प० तं०] आम का पेड़।
 समु-बुती—स्त्री० [प० तं०] पाटला।
 समु-बु—पु० [सं० समु+बु+आ (आना)+क] मीरा।
 समु-बु—पु० [ब० सं०] साल सहजिन का बुझ।
 समु-बुध—पु० [मध्य० सं०] १ महुए का पेड़। २ आम का पेड़।
 समु-बुध—स्त्री० [७० सं०] जाड़। शकरर।
 समु-बुध—स्त्री० [मध्य० सं०] दान के लिए कल्पित शहद की गाय।
 समु-बुध—पु० [सं० समु+धा (पीना)+क] १ मीरा। २. शहद की मक्की।
 ३ उद्वन का एक नाम।
 वि० मधु पीनेवाला।
 समु-बुध—पु० [ब० सं०] शहद की मन्थियों का छत्रा।
 समु-बुध—पु० [प० तं०] श्रीकण्ठ।
 समु-बुध—पु० [ब० सं०] १ दही, घी, जल, शहद और चीनी का समानाहार जिसका मोग देवता की खानाया जाता है। २ तंत्र के अनुसार घी, दही और मधु का समूह जिसका उपयोग तांत्रिक पूजन में होता है।
 समु-बुध—वि० [सं० समुपर्क+यि] जिसके सामने मधुपर्क रखा जा सके।
 मधुपर्क का अधिकारी या पात्र।
 समु-बुध—स्त्री० [ब० सं०,+डीप्] १ गृहव। २ गमारी नाम का पेड़। ३. मीली नाम का पौधा।
 समु-बुध (विभु)—पु० [सं० समु+धा (पीना)+विभि, दृक्] मीरा।
 वि० मधु पीनेवाला।
 समु-बीज—पु० [कर्म० सं०] जलरीट (बुझ)।
 समु-बुध—पु० [प० तं०] मधुरा (नगरी)।
 समु-बुध—पु० [ब० सं०] १ महुआ। २. ज्योत्सुवृक्ष। ३. सिरिस नामक वृक्ष। ४. नीलसिरी।
 समु-बुध—स्त्री० [सं० समुपुत्र+टाप्] १. नगदंती। २. वी का पेड़।
 समु-बुध—पु० [सं० समु+मेह]।

समु-मिय—पु० [ब० सं०] १ बलराम। २. मुह्द वामन।
 समु-काल—पु० [ब० सं०] मीठा नारियल।
 समु-कलिका—स्त्री० [सं० समुफल+कम्+टाप्, इत्वं] मीठी सज्जर।
 समु-बुध—पु० [सं० समुबुध] १. ब्रह्मपुत्रि का एक वन। २. सुदीप के उपवन का नाम।
 समु-बुध—पु० [ब० सं०] १. दासती लता। २. सफेद जूही।
 समु-बीज—पु० [ब० सं०] जलवा।
 समु-बाज्ज—पु० [प० तं०] मधु या शराब पीने का प्याला। बषक।
 समु-भार—पु० [सं०] एक प्रकार का नाविक छन्द जिसके प्रत्येक चरण में आठ मापाएँ होती हैं और अंत में जयण होता है।
 समु-मक्की—स्त्री० [सं० समुमक्षिका] मक्की की तरह का एक छोटा पतिगा जो कुलों पर बँधताता और उनका रस बूसता है। यह समूहों में तथा छत्रा बनाकर रहता है और उसमें शहद एकत्र करता है। यह प्राणियों को डंक भी मारता है।
 समु-मक्षिका—स्त्री० [मध्य० सं०] मधुमक्की।
 समु-मक्की—पु० [ब० सं०] जलरीट (बुझ)।
 समु-मक्की—स्त्री० [सं० समु+मनुपु+डीप्] १. योग साधन में, समाधि की वह अवस्था जो रज और तम के नष्ट होने तथा सत् का पूर्ण प्रकाश होने पर प्राप्त होती है। २. एक प्रकार का बर्ण-बुल जिसका प्रत्येक चरण दो तमण और एक गूद का होता है। ३. मधु वैद्य की कन्या और इक्ष्वाकु के पुत्र हर्षवर्ष की पत्नी का नाम। ४. तांत्रिकों के अनुसार एक प्रकार की नायिका जिसकी उपासना और सिद्धि से मनुष्य जहाँ चाहे जा-जा सकता है। ५. एक प्राचीन नदी जो नर्मदा की शाखा थी। ६. गंगा नदी।
 समु-मक्की—पु० [सं० समु+मक्+त्यु+अन्] मधु नामक वैद्य को मारने वाले, विष्णु।
 समु-मक्की—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] मालती।
 समु-मक्की—पु० [ब० सं०] प्राचीन काल का एक तरह का मीठे का पकवान जो मधु में दुबानकर खाया जाता था।
 समु-मक्की—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] मालती।
 समु-मक्की—पु० [सं०] संगीत में एक राग जो मीरज राग का सहचर माना जाता है।
 समु-मक्की—पु० [सं०] संगीत में समुभ्रात और सारंग के योग से बना हुआ एक संकर राग जिसके गाने का समय दिन में १७ ङड से २० ङड तक माना जाता है।
 समु-मक्की—पु० [ब० सं०] १. मालकी, कल्याण और मल्हार के पैल से बना हुआ एक संकर राग। २. बल्ल के दो भास—चैत्र और शैवाल।
 समु-मक्की—पु० [सं० मध्य० सं०] १. मधुमाधव और सारंग के योग से बना हुआ बौद्ध जाति का एक संकर राग जिसमें शैवल और गाधार बजित है।
 समु-मक्की—स्त्री० [मध्य० सं०] १. कौशिक में, एक रागिनी जो मीरज राग की सहचरी मानी जाती है। २. काशी की लता। ३ एक प्रकार की पुरानी शराब।
 समु-मक्की—पु० [मध्य० सं०] शराब।
 समु-मक्की (सम्)—वि० [सं० समुपर्क] [स्त्री० समुपर्क] १ जिसमें मधु

या शहद बर्तमान हो अथवा मिलाया हुआ हो। २. मधुर। मीठा ।
३. मन को प्रसन्न, सवुष्ट, सवुष्टी करनेवाला। प्रिय और सुखद ।

मधु-भारक—मू० [ब० त०] मीठा ।

मधु-भारली—स्त्री० [मध्य० सं०] मालती (लता) ।

मधु-भासी—स्त्री०—अधु-मधुकी । उदा०—कूल कुटुबी आम बैठे मगधु मधुभासी।—मीठा ।

मधु-भूक—मू० [कर्म० सं०] रत्नाक्ष नामक कंद ।

मधु-मेह—मू० [ब० सं०] एक प्रसिद्ध रोग जो अन्त्याशय में मधुमदनी (हेले) के क्रम बनने के कारण होता है और जिसमें मूत्र अधिक धारका युक्त होकर प्रायः धीरे धीरे और अधिक मात्रा में या अधिक देर तक होता है। (आयुर्विद्योच्च)

मधु-मेही (हिंजु)—मू० [स० मधुमेह+दि] वह जिसे मधुमेह रोग हो।

मधु-यष्टि—स्त्री० [कर्म० सं०] ? जेठी मधु। मूलेठी। २ ईश्व। ऊज।

मधु-यष्टिका—स्त्री० [स० मधुयष्टि+कन्+टाप्] मूलेठी।

मधु-यष्टी—स्त्री० [स० मधुयष्टि+ङीष्] मूलेठी।

मधु-वि० [स० मधु+रा (वेना)+क] [स्त्री० मधुरा] ? जिसका स्वाद मधु के समान हो। मीठा। २ जो सब प्रकार की कटुताओं से रहित, और मधु के समान मीठा जान पड़े। जैसे—मधुर वनार। ३. जो कठोरता, कर्मकता आदि से रहित होने के कारण बहुत मला जान पड़ता हो। जैसे—बीणा का मधुर स्वर। उदा०—मधुर मधुर गरजत धन घोरा।—मुलसी। ४ जो अपनी मनीहूरता, सुन्दरता आदि के कारण, श्रिय और मला लगता हो। जैसे—मधुर मूर्ति। ५ जो गति या बाल के विचार से बीमा या मंद हो। जैसे—मधुर गति। ६. धीर और शांत। ७ जो काम करने में बहुत मट्ठर या सुलत हो। जैसे—मधुर पशु।

१० ? किसी मीठी बीज का या किसी प्रकार का मीठा रस । २ हाल रग की ईश्व। लाल ऊज। ३. गुड। ४ बादाम। ५ जीबक बूज। ६ जगली बेर। ७ मज्जुआ। ८ मटर। ९. धान। १० काकोली। ११ लोहा। १२ जहर। विष।

मधुरई*—स्त्री०—मधुरता (माधुर्य)।

मधुर-कंदक—मू० [ब० सं०] एक प्रकार की मछली जिसे काजली कहते हैं।

मधुरक—मू० [स० मधुर+कन्] जीबक बूज।

मधुर-कर्मठी—स्त्री० [कर्म० सं०] मीठा नीबू।

मधुर-जंबीर—मू० [कर्म० सं०] मीठा जंबीरी नीबू।

मधुर-स्वर—मू० [कर्म० सं०] मंद-उच्चर।

मधुरता—स्त्री० [स० मधुर+तल्+टाप्] मधुर होने की अवस्था, गुण या भाव। माधुर्य।

मधुर-त्रय—मू० [ब० त०] शहद, धी और बीनी, तीनों का समाहार।

मधुर-निकासी—स्त्री० [कर्म० सं०] दाख (या किजमिष), गन्धारी और खजूर इन तीनों का समाहार।

मधुर-रत्न—मू० [स० मधुर+रत्न] मधुरता।

मधुर-रत्नक—मू० [ब० सं०] धी का पेड़।

मधुर-फल—मू० [ब० सं०] १. बीर का फल। बेर। २. तरबूज।

मधुर-फला—स्त्री० [स० मधुरफल+टाप्] मीठा नीबू।

मधुर-रस—मू० [ब० सं०] ईश्व।

मधुर-रस—स्त्री० [स० मधुररस+टाप्] १. मूर्च्छलता। २. दाख।

३ गमारी। ४ दूधिया घास। ५ शतपुष्पी। ६. गंधप्रसारिणी लता।

मधुर-रसिक—मू० [ब० त०] मीठा।

मधुर-श्रवा—स्त्री० [ब० सं०, टाप्] पिडलबजूर।

मधुर-स्वर—मू० [ब० सं०] गंधर्ब।

मधुरा—स्त्री० [स० मधुर+टाप्] १ मधुरा नगरी। २. मदरास प्रांत का एक प्राचीन नगर जो अब मडुरा या मडुरा कहलाता है। ३ मीठा नीबू। ३ मूलेठी। ४ मीठी खजूर। ५ शतावर। ६ महाभय। ७ वेदा। ८ शतपुष्पी। ९ पालक का साग। १०. सेम। ११. काकोली। १२ केल का पेड़। १३ सीफ। १४ मसूर।

मधुरा-वि० [स० मधुर] [स्त्री० मधुरी] मधुर। उदा०—लबा टीका मधुरी बानी। दगाबाज की यही निशानी। (कहा०)

स्त्री० साहित्य में वह शब्द-योजना जिसे रचना में माधुर्य या मिठास आती है।

†स्त्री० १—मदुरा। २—मधुरा।

मधुराई*—स्त्री०—मधुरता।

मधुराकर—मू० [मधुर+आकर, व० त०] ईश्व। ऊज।

मधुराज—मू० [स० व० त०] मीठा।

मधुराना—अ० [स० मधुर+आना (प्रय०)] १ मधुर होना।

२. फली नया साख वन्सुओं के सबंध में, मिठास से युक्त होना। मीठा होना।

स० मधुर बनाना।

मधुरात्र—मू० [मधुर+अत्र, कर्म० सं०] १ मीठा अत्र। २ मिठाई। मिठाइय।

मधुराम्लक—मू० [मधुर+अम्लक, कर्म० सं०] अमडा।

मधुरालापा—स्त्री० [मधुर+आलाप, व० सं०+टाप्] मैना पक्षी।

मधुरिका—स्त्री० [स० मधुर। कन्+टाप्, इश्व] सीफ।

मधुरित—मू० क० [स० मधुर+इतन्] ? मिठास से युक्त किया हुआ। २ मधुर रूप में लाया हुआ।

मधुरिन—मू० [स० मधुर में] मिसरीन (तरल पदार्थ)।

मधुरिन्दु—मू० [ब० त०] मधुराश्रय के दाग, विण्ण।

मधुरिता—स्त्री० [स० मधुर+इतन्विच्] मधुर होने की अवस्था या भाव। मधुरता।

वि०—मधुर।

मधुरी—स्त्री० [स० मधुर] मूंह से फूंककर बजाया जानेवाला एक तरह का पुराना बाजा।

†स्त्री० [स० माधुरी] ? मधुरता। २ शराब।

मधु-रीछ—मू० [हिं० मधु। रीछ] दक्षिणी अमेरिका का रीछ की तरह का एक जगली जंतु जो अंबाई में कुत्ते के बराबर होता है। यह प्रायः बूझों पर चढ़कर मधुमन्त्रियों को छूने का रस चुसता है, इसी से इसका यह नाम पड़ा है।

मधुरीबक—मू० [मधुर+उदक, कर्म० सं०] १ मधु मिलात जल। २. [ब० सं०] पुराणानुसार सात समुद्रों में से अतिम समुद्र जो मीठे जल का और पुष्कर द्वीप के निकट चारों ओर स्थित कहा गया है।

मधुल—मू० [स० मधु+ला (लेना)+क] मदिरा।

वि०=मधुर।

मधुलिका—स्त्री० [सं० मधुल+कन्+टाप्, इत्थ] १. प्राचीन काल में मधुकी नामक गेहूँ के पास से तैयार की जानेवाली मदिरा। २. राई। ३. फूली का पराग। ४. कार्तिकेय की एक मत्तुका।

मधुली—पुं० [सं० मधुलिका] भाव प्रकाश के अनुसार एक प्रकार का गेहूँ।

मधु-नीलुप—पुं० [सं० सं० तं०] नीला।

मधुनी—स्त्री० [सं० मधुनी] समीप में टोड़ी ठाठ की एक रागिणी।

मधुबती—स्त्री० [सं० ब० सं०, जोड़?] एक प्राचीन स्थान। (महा०)

मधु-वन—पुं० [मध्य० सं०] १. मधुर के पास यमुना के किनारे का एक वन जहाँ शत्रुघ्न ने स्वधन नामक दैत्य को मारकर मधुपुरी स्थापित की थी। २. ब्रह्म में यमुना तट पर स्थित एक वन। ३. कालिका में स्थित एक वन। ४. बह वन जहाँ प्रेमी और प्रेमिका मिलते हैं। ५. कोयल।

मधु-बल्ली—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] १. मुलेठी। २. करेला।

मधु-बार—पुं० [सं० सं० तं०] १. मद्य या शराब पीने का दिन। २. बार बार शराब पीने का क्रम। शराब का दौर। ३. मद्य। शराब।

मधु-बाही (हिन्दु)—पुं० [सं० मधु/बहु (डोना)+गिन, उप० सं०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन नद।

मधु-वत—पुं० [ब० सं०] नीला।

मधु-शर्करा—स्त्री० [मध्य० सं०] १. शब्द से बनाई हुई शर्करा। २. मेष। लोबिया।

मधु-शाक—पुं० [ब० सं०] मधुर का वृक्ष।

मधु-सिन्धु—पुं० [मध्य० सं०] घोमाजल। सहजल।

मधु-सिद्ध—पुं० [सं० सं० तं०] मीठा।

मधु-शेष—पुं० [ब० सं०] मीठा।

मधु-भाबणी—स्त्री० [सं०] १. मिथिला का एक पर्व जो सावन शुक्ल द्वितीया को मनाया जाता है। इसमें नव विवाहिता वधु की जलनी बसी से दागते हैं। यदि फणोले अच्छे पड़ें तो समझा जाता है कि इसका सुहाग बहुत दिनों तक बना रहेगा।

मधुकोल—पुं० [सं० मधु/कोल (केलना)+क, पृथो० लत्व] मधुर का वृक्ष।

मधु-संभव—पुं० [ब० सं०] १. मीठा। २. दास।

मधु-सक्त—पुं० [ब० सं०] कामदेव।

मधु-सहाय—पुं० [ब० सं०] कामदेव।

मधु-साराधि—पुं० [ब० सं०] कामदेव।

मधु-सिक्क—पुं० [ब० सं०, कप्] १. एक प्रकार का विष। २. मीठा।

मधु-मुद्ग—पुं० [ब० सं०] कामदेव।

मधुसूदन—पुं० [सं० मधु/सूद+गिष्+ल्यु=अन्] १. मधु नामक दैत्य को मारनेवाले, विष्णु। २. नीला।

मधुसूदनी—स्त्री० [सं० मधुसूदन+ङीप्] १. पालक का साग। २. आज-कल शरीर के अन्दर अल्पमात्र में बननेवाला वह तत्व जिसके अभाव या कमी के कारण शरीर में शर्करा का ठीक समवर्जन नहीं होने पाता, उसल विभाव होने लगता है और मूत्र सम्बन्धी अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होने लगते हैं। २. उन्नत तत्व से बनाई जानेवाली एक प्रसिद्ध दवा। (इन्सुलिन)

मधु-स्थान—पुं० [ब० सं०] मधुमयिस्थान का उद्गात।

मधु-ज्वर—पुं० [ब० सं०] १. मधुर का वृक्ष। २. पिबलज्वर का पेड़। **मधु-जवा**—स्त्री० [सं० मधुज्वर+टाप्] १. संजीवनी बूटी। २. मुलेठी। ३. मूषां कला। ४. हंसपवी लला।

मधु-भाब—पुं० [ब० सं०] मधुर का वृक्ष।

मधु-स्वर—पुं० [ब० सं०] कोयल।

मधु-हंसा (शु)—पुं० [ब० सं०] मधुसूदन। (रे०)

मधुर—पुं० [सं०/मधु+ऊक, नि० सिद्धि] १. मधुर का पेड़, फूल नीर फल। २. मुलेठी। ३. ज्वर।

मधुर-पर्वा—स्त्री० [सं० ब० सं०, +टाप्] अमहा।

मधुपुरी—स्त्री०=मधुपुरी।

मधुर-शर्करा—स्त्री० [ब० सं०] यह शक्कर जो मधुर के रस से बनाई गई हो।

मधुज—पुं०=मधुक।

मधुसिद्ध—पुं० [मधु+उच्छिष्ट, ब० सं०] मीठा।

मधुत्व—पुं० [सं० मधु+उत्/स्था (उद्गता)+क] मीठा।

मधुस्थित—पुं० [मधुस्थित, व० सं०] मीठा।

मधुस्थाना—स्त्री० [मधु+उत्पन्न, व० सं०] मधुर से बनाई हुई बीनी।

मधुत्व—पुं० [मधु+उत्सव, ब० सं०] १. चैत्र की पूर्णिमा। २. [ब० सं० तं०] वसंतोत्सव।

मधुल—पुं० [सं० मधु/उर (घ्रात होता)+क, र—ल] जल-महुवा।

मधुलक—पुं० [सं० मधुल+कन्] १. जल-महुवा। २. मद्य। शराब।

मधुलिका—स्त्री० [सं० मधुल+कन्+टाप्, इत्थ] १. मूषां (लला)। २. मुलेठी। ३. एक प्रकार की बाल। ४. मधुली नामक गेहूँ। ५. उन्नत गेहूँ से बनाई जानेवाली मदिरा।

मधुली—पुं० [सं० मधुल+ङीप्] १. आम का पेड़। २. जल में उत्पन्न होनेवाली मुलेठी। ३. मध्यदेश में होनेवाला एक प्रकार का गेहूँ। मधुली।

मध्य—पुं० [सं०/मधु+यत्, नि० सिद्धि] १. किसी चीज के बीच का भाग। २. शरीर का मध्यभाग। कटा। कभर। ३. वह जो किसी विशिष्ट दल या पक्ष में न हो। तटस्थ। निष्पक्ष। उदा—**बुद्धि** मित्र और मध्य गति तब करहिउँ आइ—मुलसी। ४. सचीत ने, तीव्र सत्ताकों में से बीचवाला सत्ताक जिसके स्वरों का उच्चारण स्वान वक्षस्थल और कंठ का भीतरी भाग कहा गया है।

बिबीच—साधारणतः गाना-बजाना इसी सत्ताक से आरंभ होता है। जब स्वर ऊँचे होकर नीचे आगे बढ़ते हैं, तब वे 'तार' नामक सत्ताक में पहुँचते हैं। और जब स्वर इस सत्ताक से नीचे होकर उतरने लगते हैं, तब 'मंड' नामक सत्ताक में पहुँच जाते हैं।

५. नृत्य में वह गति जो न बहुत तेज हो और न बहुत भीमी। ६. सुभूत के अनुसार १६ वर्ष से ७० वर्ष तक की अवस्था। ७. आपस में होनेवाला अन्तर। दूरी का अन्तर। < पश्चिम दिशा। ९. विश्राम। १०. दक्ष अरब की संख्या की सङ्ख्या।

बि० १. बीच में रहने या होनेवाला। बीच का। २. जो बहुत अच्छा भी न हो और बहुत बुरा भी न हो, फलतः काम चलाने लायक। ३. अथवा। बीच।

मध्यम—वि० [सं० मध्य मे] १. मध्य या बीच में रहने या होनेवाला ।
२ जो न बहुत बड़ा हो और न बहुत छोटा। मझोले आकार का ।

मध्यम—स्त्री० [सं० मध्य मे] दे० 'माध्यिक'।

मध्य-कुश—पु० [मध्य मे] उत्तर कुश और दक्षिण कुश के मध्य मे स्थित एक प्राचीन देश ।

मध्य-बंध—पु० [मध्य० सं०] ज्योतिष मे, पृथ्वी का वह भाग जो उत्तरी कानिष्ठ और दक्षिणी कानिष्ठ के बीच मे पड़ता है ।

मध्य-बंध—पु० [ब० सं०] आम का वृक्ष ।

मध्यम—वि० [मध्य+म् (आत्मा)+ङ] बीच मे पड़ने या स्थित होनेवाला ।

पु० दलाल ।

मध्यगत—पु० कृ० [द्वि० त०] मध्य मे आया या लाया हुआ ।

मध्यगति—स्त्री० [मध्य० सं०] तटस्थता की वह नीति या स्थिति जिसमे किसी से न तो विशेष मित्रता ही होती है और न लड़ाई या संगडा बलें ड़ा ही ।

मध्य-जीवकल्प—पु० [कर्म० सं०] भू-विज्ञान के अनुसार इस पृथ्वी की रचना के इतिहास मे, पाँच कल्पों मे से चौथा कल्प जो पुरा कल्प के बाद और आज से प्रायः बारह से बीस करोड़ वर्ष पहले का और जिसमें अनेक प्रकार के विशाल काल जन्मुओं तथा पशियों की सृष्टि हुई थी (मेगालोथिफेरा) विशेष-शेष चार कल्प ये हैं—आदि कल्प, उनर कल्प, पुरा कल्प और नव कल्प ।

मध्यता—स्त्री० [सं० मध्य+तल्+टाप्] मध्य होने की अवस्था, धर्म या भाव ।

मध्य-तापिनी—स्त्री० [सं०] एक उपनिषद् का नाम ।

मध्यदेश—पु० [मध्य० सं०] १ किसी राज का बीचवाला भाग ।
२ शरीर का मध्य भाग । कटि । ३ प्राचीन भारत का वह विस्तृत मध्य भाग जिसके उत्तर मे हिमालय, पूर्व मे बंगाल, दक्षिण मे महाराष्ट्र, पश्चिम मे पंजाब और सिंध, तथा पश्चिम-दक्षिण मे गुजरात था ।

मध्य-देश—पु० [सं० कर्म० सं०] उदर । पेट ।

मध्य पद-लोपी—पु०=मध्यम पद-लोपी । (समास)

मध्य-पात—पु० [सं०] १ ज्योतिष मे एक प्रकार का पात । २ परिचय करानेवाली बात या लक्षण । पहचान ।

मध्य-पूर्व—पु० [सं० कर्म० सं०] १. यूरोप बालों की दृष्टि से एशिया या दक्षिण पश्चिमी तथा अफ्रीका का उत्तर-पूर्वी भाग । (मिडिल ईस्ट) २ उत्तर भाग मे स्थित राज्य का अन्तर्भाग ।

मध्य-मध्य—वि० [सं० ब० सं०] किसी के बीच या मध्य में बैठाया या लगाया हुआ ।

पु० व्याकरण मे कोई ऐसा अक्षर या शब्द जो प्रत्यय के रूप मे किसी दूसरे शब्द के बीच मे लगकर उसके अर्थ मे कोई विशेषता उत्पन्न करता हो । संज्ञा । (इन्फिक्स)

मध्यम—वि० [सं० मध्य+म] १ जो विपरीत कोणों, दिशाओं या सीमाओं के बीच में हो । मध्य का । बीच का । २ न बहुत बड़ा और न बहुत छोटा ।

†वि०—मध्यि ।

पु० १. समीत के माल स्वरों मे मे चौथा स्वर जिसका मूल स्थान नासिका, अत्र स्थान कंठ और शरीर मे उत्पत्ति स्थान वसन्त्यक माना गया है । २ वह उपपत्ति जो नासिका की च्येष्टाओं से ही उसके मन का भाव जान के और उसके कोब शिलाने पर अनुपगत न प्रकट करे । यह साहित्य मे 'न प्रकाश के नायको मे से एक है । ३. एक प्रकार का ह्रित्व । ४. मंत्रों मे एक प्रकार का राग । ५. दे० 'मध्य देश' ।

मध्यमता—स्त्री० [म० मध्यम+तल्+टाप्] मध्यम होने की अवस्था या भाव ।

मध्यम पद-लोपी (विन्)—[सं० मध्यम-पद, कर्म० सं०, मध्यमपद] व्याकरण मे एक प्रकार का समास जिसमे पहले पद से दूसरे पद का सबंध अलाने-वाला शब्द अन्धाहृत या लुप्त रहता है । लुप्त पद-समास ।

मध्यम-पुश्च—पु० [सं० कर्म० सं०] व्याकरण मे वक्ता की दृष्टि से उस व्यक्तिक का वाचक सर्वनाम जिससे वह कुछ कह रहा हो । (सेकेंड पर्सन) जैसे—तु, तुम, आप ।

मध्यम-मार्ग—पु० [म० कर्म० सं०] १ दो चरम सीमाओं या परस्पर विरोधी मार्गों अथवा माथनों के बीच का ऐसा मार्ग या साधन जिसमें दोनों पक्षों या विचार-धाराओं का उचित समाधान या सामंजस्य होता हो । बीच का गन्ना । (बाया-मोडिया) २ महाराम बुद्ध द्वारा प्रवृत्तानि एक प्रसिद्ध मत या विद्यार्थ ।

मध्यम-राजा (जन्)—पु० [म० कर्म० सं०] वह राजा जो कई परस्पर विरोधी राजाओं के मध्य मे हो ।

मध्यम-लोक—पु० [म० कर्म० सं०] पृथ्वी ।

मध्यम-वर्ग—पु० [म० कर्म० सं०] मनुष्य समाज के आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि मे विभाजित वर्गों (उच्च, मध्यम और निम्न) मे से मध्य-प्रधान एक वर्ग जो सामान्य आर्थिक स्थिति तथा सामाजिक स्थितिवाला समझा जाता है और उच्च वर्ग (बनी वर्ग) और निम्नवर्ग (श्रमिक वर्ग) के बीच मे माना जाता है । (मिडिल क्लास)

मध्यम-सहाय—पु० [म० कर्म० सं०] पर-नीति की फुलाने तथा अपने वश मे करने के विचार से उसे गड़ने-कण्डे आदि मेजना । (मितासरा)

मध्यम-साहस—पु० [सं० कर्म० सं०] मनु के अनुसार पाँच सी पणों तक का अर्थ-दय या बुरताना ।

मध्यमा—स्त्री० [म० मध्यम+टाप्] १ हाथ की बीचवाली उँगली ।

२ साहित्य मे वह नायिका जो अपने प्रिय के द्वारा हित अथवा अहित का व्यवहार देखकर उसके प्रति सैदा ही हित अथवा अहित का व्यवहार करती हो । ३ २४ हाथ लंबी, १२ हाथ चौड़ी और ८ हाथ जैसी नाब । (यूमिक्कलपतन) ४ रजत्वका स्त्री । ५ कनिष्ठी । ६. छोटा जामुन । ७ काकोली ।

मध्यमगम—पु० [सं० मध्यम-आगम, कर्म० सं०] बौद्धों के चार प्रकार के आगमों मे से एक ।

मध्यमान—पु० [सं०] [वि० मध्य-मानिक] १ लेखे वा हिंसाब में बराबर का । असात । पड़ता । मध्यक । २ परस्पर विपरीत दिशाओं में स्थित दो विद्युओं या सत्ताओं के ङीक बीचोबीच में स्थित विदु या संस्था । (मीन) जैसे—यदि कहीं का तापमान घटकर ९५ अंश तक और बढ़कर १०५ अंश तक पहुँच जाता हो तो वहाँ के ताप-मान का मध्यमान १०० अंश होगा ।

वि० १. वे० 'पच्यक'। २. वे० 'मघ्या'।

३. सतीस में, एक प्रकार का ताक जिसमें ८ हूबहू अथवा ५ दीर्घ मात्राएँ होती हैं और ३ अक्षर और १ खाली होता है।

मध्याह्नक—पु० [सं०] दीर्घ ध्वनि की वह क्रिया जिसके अनुसार कोई आसन-मान जाना जाता है।

माध्यमिक—वि०—माध्यमिक।

मध्यमिका—स्त्री० [सं० मध्यम+कन्+टाप्, इत्] रजमन्ला स्त्री।

मध्यमीय—वि० [सं० मध्यम+छ=ईय] मध्यम।

मध्य-यव—पु० [सं० कर्म० सं०] प्राचीन काल का एक परिमाण जो पीली सरसों के छ' दानों की तौल के बराबर होता था।

मध्य-युग—पु० [सं० कर्म० सं०] [वि० मध्ययुगीन] १. प्राचीन युग और आधुनिक युग के बीच का युग या समय। २. एशिया यूरोप आदि के इतिहास में, ईसवी छठी से पन्द्रहवीं शताब्दी तक का काल या समय। (मिडिल एजिज) ३. आधुनिक भारतीय इतिहास में, मुसलमानी शासन काल का समय।

मध्ययुगीन—वि० [सं० मध्ययुग+स=ईत्] मध्ययुग-सम्बन्धी। मध्ययुग का। (मिडियल)

मध्य-रेखा—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] उद्योतिव और मूलोल मे वह रेखा जिसकी कल्पना देशांतर निकालने के लिए की जाती है।

मध्य-तोका—पु० [सं० कर्म० सं०] १. पृथ्वी। २. जैनों के अनुसार वह मध्यवर्ती लोक जो मेरु पर्वत पर १०००४० योजन की ऊँचाई पर है।

मध्यवर्ती (सिन्)—वि० [सं० मध्य+वृत् (बरतना)+गिति] १ जो मध्य मे वर्तमान या स्थित हो। बीच का। २. जो दो पक्षों के बीच में रहकर उनमें से सम्बन्ध स्थापित करता हो। (इन्टरमिडियरी)

मध्यविचरण—पु० [सं० ष० तं०] बृहत्संहिता के अनुसार सूर्य या चन्द्रग्रहण के मोक्ष का एक प्रकार जिसमें सूर्य या चन्द्रमा का मध्य भाग पहले प्रकाशित होता है।

मध्यसर्ग—पु०—मध्य-प्रत्यय।

मध्यसूत्र—पु०—मध्यस्था।

मध्यस्थ—वि० [सं० मध्य+स्था (ठहरना)+क] [मात्र० मध्यस्थता] जो बीच या मध्य मे स्थित हो। बीच का।

पु० १. वह जो दो विरोधी पक्षों या व्यक्तियों के बीच में पड़कर उनका झगडा या विवाद निपटाना हो। आपस में मेल या समझौता करानेवाला व्यक्ति। (मीडिएटर) २. वह जो दो पक्षों या पक्षों के बीच में रहकर उनके पारस्परिक व्यवहार या लेन-देन मे कुछ सुभीते उत्पन्न करने स्थग्य भी कुछ लाभ उठाना हो। (मिडिलमैन) जैसे—उत्पादकों और उपभोक्ताओं के बीच मे ब्यागरी, अथवा राज्य और कृषकों के बीच मे जमींदार आदि। ३. वह जो दोनों विरोधी पक्षों मे से किसी पक्ष मे न हो। उदासीन। ४. वह जो अपनी हानि न करता हुआ दूसरे का उपकार करता हो।

मध्यस्थता—स्त्री० [सं० मध्यस्थ+तल=टाप्] मध्यस्थ होने की अवस्था या भाव। (मीडिएशन) २. मध्यस्थ का काम और पद।

मध्यस्थल—पु० [सं० कर्म० सं०] १. मध्यप्रदेश। कर्मर।

मध्यस्थर—पु० [सं० मध्य+अंतर] १. दो ष्टनानों केबुजों आदि के मध्य

या बीच का अंतर। २. उक्त प्रकार के अंतर के कारण बीतनेवाला समय। ३. किसी काम या बात के बीच में मुस्ताने आदि के लिए निकाला या निकत किया हुआ थोड़ा-सा समय। (इन्टरवल)

मध्या—स्त्री० [सं० मध्य+टाप्] १. साहित्य में स्वकीया नायिका के तीन भेदों में से एक जिसमें काम और लज्जा की समान स्थिति मानी गई है। स्वकीया के अन्य दो भेद हैं—मुग्धा और प्रगल्भा। २. एक प्रकार का बर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण मे तीन अक्षर होते हैं। इसके आठ भेद हैं। ३. बीच की उंगली। मध्याना।

मध्याना—पु०—मध्याना।

मध्याह्नकाश—पु० [सं० मध्य+अवकाश]—मध्यातर।

मध्याह्न—पु० [सं० मध्य+अह्न, एकदेशित तं० सं०] १. दिन के ठीक बीच का वह समय जब सूर्य सबसे ऊपर आ जाता है। २. उक्त समय के बाद का थोड़ी देर तक का समय।

मध्याह्नतिर—पु० [सं० मध्य+अह्न+उत्तर, ष० तं०] मध्याह्न के ठीक बादवाला समय। तीसरा पहर।

मध्मे—अव्य०—मड्डे। (देखें)

मध्व—पु० वे० 'मध्वाचार्य'।

†पु०—मध्व।

मध्वक—पु० [सं० मध्व+कन्] मधुमक्षी।

मध्वल—पु० [सं० मध्व+अल् (पर्याप्त)+अण्] बार बार और बहुत शराब पीना।

मध्वाचार्य—पु० [सं० मध्व-आचार्य, कर्म० सं०] दक्षिण भारत के एक प्रसिद्ध ईश्वर आचार्य जिन्होंने माध्व या मध्वाचारि नामक संप्रदाय का प्रावर्तन किया था। इनका समय ईसवी बारहवीं शताब्दी के लगभग माना जाता है।

मध्वाचार—पु० [सं० मध्व-आचार, ष० तं०] मधुमक्षिव्यवो का छटा।

मध्वालु—पु० [सं० मध्व+आल्, कर्म० सं०] एक प्रकार के पीचे की इड़ जो खाई जाती है।

मध्वावाह—पु० [सं० मध्व+आवाह, ष० तं०] आम का पेड़।

मध्वासव—पु० [सं० मध्व+आसव, तु० तं०] महुए के रस के पंसि मे बनाई जानेवाली मृदिका।

मध्वासवनिष्क—पु० [सं० मध्वासवन+ठन्—इक] शराब बनाने तथा बेचनेवाला। कलवार।

मध्विज्ञा—स्त्री० [सं० मध्व+ईज् (प्राप्त होता)+क, पृथो० हृस्व, +टाप्] मद्य।

मनः (मध्)—पु० [सं० मध्+मन् (मानना)+अवृत्] मन।

मनःकल्पि—वि० [सं० मध्+तं०] मनगडत। फरकी।

मनःक्षेप—पु० [सं० ष० तं०] मन में होनेवाला उद्वेग।

मनःपति—पु० [सं० ष० तं०] विष्णु।

मनःपर्यप्ति—स्त्री० [सं० ष० तं०] मन से संकल्प विकल्प या बोध प्राति करने की शक्ति।

मनःपरिधि—पु० [सं० ष० तं०] सत्य का बोध होने से ठीक पहलेशाली स्थिति। (जैन)

मनःशून—वि० [सं० तु० तं०] १. पवित्र मन या शुद्ध आत्मावाला।

२ मन की दृष्टि में जो पवित्र तथा शुद्ध हो। ३. जितना मन चाहता ही उतना।

मनःअवृत्त—वि० [सं० सं० त०] १. मन में उत्पन्न होनेवाला। ३. कल्पित।

मनःअसि—स्त्री० [सं० षं० तं०] मन की प्रसन्नता।

मनःअश्रु—वि० [सं० मतो०] १. मन से उत्पन्न। २. कल्पित।

मनःविकलेषण—प० . . . मनोविकलेषण।

मनःशक्ति—स्त्री० [मं० षं० तं०] मानसिक शक्ति। मनोबल।

मनःशास्त्र—प० [सं० षं० तं०]—मानस शास्त्र। मनोविज्ञान।

मनःशिल—प० [मं० मनन्/निल (आकर्षित करना) +क] मैनसिल (मनोज्ञ द्रव्य)।

मनःशिला—स्त्री० [सं० मन शिल +टाप] मैनसिल।

मन संस्कार—प० [सं० षं० तं०] मन का परिवर्तन।

मन—प० [सं० दे० 'मन'] १. प्राणियों के अंत करण का वह अणु जिससे वे अनुभव, इच्छा, बोध, विचार और मन्त्र्य-विकल्प करते हैं।

चित्तबोध—(क) शान्तीय दृष्टि से यह उन सभी दार्शनियों का उद्गम या मूल है जिनके द्वारा हम सब काम करते, सब बातें जानते और याद रखते तथा सब कुछ सोचते-समझते हैं। इसी दृष्टि वैशेषिक ने इसे मन्त्र्यमक अर्थात् कर्मनिष्ठ और आनेदिय योगी के मूषो से युक्त माना है। यह आत्मा, शरीर तथा हृदय तीनों में मिश्र एक स्वतंत्र तत्त्व है; और अंत करण की चार वृत्तियों से से एक वृत्ति के रूप में माना गया है। (विषयगत वृत्तियाँ चित्त, बुद्धि और अहंकार हैं।) परन्तु योग-शास्त्र ने इसी को चित्त कहा गया है। शरीर के अंत के साथ इसका भी अंत ही जाता है। (ख) भाषिक क्षेत्र में यह अर्थ और प्रयोग की दृष्टि से बहुत व्यापक शब्द है। अनुमति, अनुराग, उत्साह, प्रकृति, प्रवृत्ति, विचार, मन्त्र्य आदि अनेक प्रयोगों में इसका प्रयोग होता है, और इसके बहुत से मुहाबरे उक्त बातों से सम्बद्ध हैं। कुछ अवस्थाओं में यह चित्त और हृदय के पर्याय के रूप में भी प्रयुक्त होता है।

पद—मन का आरा—बहुत ही उदात्त, विश्व और हृद्योत्साह। **मन का मिला**—जिसके मन में क्रोध, द्वेष, ईर्ष्या आदि दूषित भाव प्रबल होते हैं। **मन ही मन**—अपने हृदय में और चूपचाप। बिना किसी से कुछ कह-सुने।

मुद्रा—(किसी से) **मन अटकना**—भूगर्भिक क्षेत्र में, किसी से अनुराग या प्रेम का सम्बन्ध होना। **मन अपनाना**—अपने मन को अपने बश में करना या वैयं धारण करते हुए धारण करना। उदा०—सूर द्रव्य देवों बिन्दु खजनी कैसे मन अपनाऊँ—सूर। (किसी पर) **मन आना**—किसी के प्रति काम-मूर्च्छा अनुराग या वासना उत्पन्न होना। (किसी से) **मन उलझना**—दे० ऊपर 'किसी से मन अटकना'। **मन कषोभना**—क्रोध, पचात्ताप, विषय आदि के कारण मन में क्लेश या दुःख होना। (किसी काम, बोध या बात के लिये) **मन करना**—इच्छा या प्रवृत्ति होना। जो चाहना। जैसे—आज तो खीर खाने की मनभारा मन करता है। **मन की मन में रहना**—(क) मन की बात दूसरी पर प्रकट करने का अवसर न मिलना। (ख) इच्छा, कामना आदि की तुल्य या प्रीति न होना। जैसे—मैंने कई बार उनसे मिलना चाहा, पर मन की मन में ही रह गई; अर्थात् उनसे किसी प्रकार मेंट न हो सकी। **मन के लड़खड़ा जाना**—एसी बात पोंचकर प्रसन्न होना जिसका पुरा होना असंभव हो। स्वयं की

आशा पर प्रसन्न होना। **मन खराब होना**—(क) मन में कोई कुत्सि या विरक्त करनेवाली बात या भावना उत्पन्न होना। जैसे—तुम्हारी दुष्टताओं से सबका मन खराब होता है। (ख) मनोवृत्त अल्पव्यय या रोगयुक्त होना। (ग) जैसे या मित्रकी मालुम होना। (किसी से) **मन खोलना**—द्वारा खोलकर किसी पर अपना उद्देश्य या विचार प्रकट करना। (किसी काम, बोध या बात पर) **मन खलना**—इच्छा या प्रवृत्ति होना। जैसे—बीमारी में तरह तरह की चीजों पर मन चलता है (अर्थात् तरह तरह की चीजों खाने को भी चाहता है)। (किसी का) **मन टटालना**—बातों हो बातों में किसी के भावों, विचारों आदि से परिचिन होने का प्रयत्न करना। **मन टुटना**—उत्साह, उमंग, साहस आदि का नाश या ह्रास होना। (किसी काम, बोध या बात पर) **मन झलना**—कुछ करने, पाने आदि के लिए मन बल होना। चित्त बलायमान होना। (किसी का) **मन तोड़ना**—उत्साह या उमंग में बाधक होकर उत्साह अंत करना। हृद्योत्साह कमाना। (किसी काम या बात में) **मन देना**—अच्छी तरह चित्त या मन लगाना। जैसे—हूँ काम मन देकर किया करो। (किसी को) अपना मन देना—(क) किसी के प्रति अपने मन के भाव प्रकट करना। (ख) किसी पर पूर्ण रूप से अनुकूल होना। प्रेम के कारण किसी के बश में होना। आमनन होना। **मन भरना**—आनंद देना। मन लगाना। (किसी से) **मन कट जाना** या **कट जाना**—किसी के अनुचित कृत्य या व्यवहार के कारण उनसे विरक्त होना। **मन केरना**—किसी काम या बात से मन हटाना। (किसी और प्रवृत्ति न होने देना। **मन बढ़ना**—उत्साह या साहस बढ़ना। (अपना) **मन बढ़ाना**—अन्य को अधिक प्रकट करना। (किसी का) **मन बढ़ाना**—उत्तेजित या उत्साहित करना। बढ़ावा देना। **मन बहलाना**—विषय या दुःखी चित्त को किसी काम में लगाकर वेद और दुःख दूर करके आनंदित या प्रसन्न करना। **मन बियोजना**—दे० ऊपर 'मन खराब होना'। (अपना) **मन बुझना**—मन में डारस, नृत्ति, वैयं, शानि या सन्तोष होना। (किसी का) **मन बुझना**—किसी के मन की शांति लेना। **मन भर जाना**—अधा जाना। तुष्टि होना। विषय अनुराग या प्रवृत्ति न रह जाना। (किसी काम या बात से) **मन भरना**—(क) प्रीति न होना। (ख) तुष्टि या सन्तोष होना। (ग) अधिक तुष्टि होने के कारण अनुराग या प्रवृत्ति न रह जाना। **मन भाना**—अन्य को अच्छा या भला जान पड़ना। **मन शारी होना**—मन में किसी प्रकार की अस्वस्थता का अनुभव या बोध होना। (किसों को ओर से) **मन शारी होना**—दुःख, द्वेष आदि के कारण किसी के प्रति पहले का-सा अनुराग न रह जाना। **मन भावना**—किसी काम या बात के संबंध में, मन में तुष्टि निश्चय या मनोभाव का अनुभव या बोध होना। उदा०—(क) स्वयं की श्याम तों मन भावना।—सूर। (ख) राम नाम जाका मन माना।—तुलसी। (अपना) **मन भावना**—(क) प्रवृत्तियों को दबाकर मन को बश में करना या रखना। इच्छा या मन का माय-वधाना या रोकना। (ख) मन की उमंग पूरी न होने के कारण उत्साह या विश्व होना। उदा०—मीन गहों, मन भारे रहें, निज प्रीतम की कही हीन कहानी।—अमराप। (किसी से) **मन मिलाना**—(क) प्रकृति, प्रवृत्ति, रचित, विचार आदि

की समाप्तता के कारण किसी से आत्मीयता का संबंध होता। जैसे—मन मिले का मेला। (कहा०) (ख) भूगर्भात्क दृष्टि से अनुपलब्ध या प्रेम होता। मन में अज्ञान=(क) किसी काम या बात के लिए मनमें कोई भाव या विचार उपलब्ध होता। जैसे—आज मन में आया कि बसकर तुमसे मिल आऊँ। (ख) कोई बात ध्यान या समझ में न आना। अच्छा या ठीक मानलुन होता। उदा०—आरं देत कछु मन गाँव आवै।—सूर। (ग) मन पर किसी बात का प्रभाव पड़ना। उदा०—ता सँ उन कटु ब्रह्म सुनाये, तँ ताके मन कछु न आवै।—सूर। मन में जलना या झूलना=उचित या ठीक जान पड़ना। मन में क्षान्ता=निश्चय करना। बड़ संकल्प करना। मन में बरना=दे० ऊपर 'मन में ठानना'। मन में बसना=बहुत अच्छा लगने या पसन्द आने के कारण मन से बराबर ध्यान बना रहना। (कोई बात) मन में भरना=दृढयंत्रण करना। मन में जमाकर रखना। (कोई बात) मन में रखना=(क) अच्छी तरह धिखाकर रखना। किसी पर प्रकट न होने देना। (ख) अच्छी तरह ध्यान में या स्मरण में रखना। मन में लगना=(क) विचार करना। सोचना। (ख) कोई काम करने का विचार या संकल्प करना। जैसे—अगर मन में लाओ तो तुम अकर यह काम कर सकते हो। (किसी से) मन लेना करना=किसी की ओर से अपने मन में दुर्भाव द्वेष या बैर-विरोध रखना। (किसी से) मन मोटा होना=दे० ऊपर 'किसी की ओर से' मन मारी होना। मन मोड़ना=प्रवृत्ति या विचार को एक ओर हटाकर दूसरी ओर लगाना। (किसी का) मन रखना=किसी को प्रसन्न रखने के लिए उसको इच्छा पूरी करना। मन रहना या न रह जाना=इच्छा या कार्य को ऐसी आशिक पूर्ति होना कि निराशा या हताश न होना पड़े। (किसी काम या बात में) मन लगाना=पूरा अवधान या ध्यान होना। चित्त का प्रवृत्त और संलग्न होना। जैसे—तगीत में उनका मन लगता है। (किसी स्थान पर) मन लगाना=जला जान पड़ने के कारण रहने की इच्छा होना या जी न ऊबना। (किसी काम या बात में) मन लगाना=अच्छी तरह ध्यान देते हुए या मनीयोगपूर्वक संलग्न होना। (किसी व्यक्ति से) मन लगाना=किसी से अनुपलब्ध या प्रेम करना। मन लगाना=(क) मन लगाना। जी लगाना। (ख) मन में निश्चय या संकल्प करना। (किसी का) मन लेना=(क) किसी के मन की सीतरी पडती की बाहू या पटा लेना। जैसे—आज वह मी मेरा मन लेने आये थे, पर मैंने उन्हें इधर-उधर की बातों में टाल दिया। (ख) किसी को अपनी ओर अनुवृत्त या प्रवृत्त करना। (ग) किसी को किसी रूप में अपने अधिकार या बश में करना। मन से उतरना=(क) मन में आकर भाव न रह जाना। तिरस्कृत होना। (ख) ध्यान या स्मृति में न रह जाना। भूल जाना। विस्मृन् होना। (किसी का) मन हरना=किसी को अपने प्रति मूग्ध या मोहित करना। मन हरा होना=सिद्ध या दुःखी मन का प्रमुत्थित या प्रसन्न होना। (किसी का मन) ह्रास में लेना या करना=किसी का मन अपने अधिकार या बश में करना। अपना अनुगामी, प्रेमी या मक्त बनाना। मन होना=इच्छा होना।

पु० सापीमिन वैदिक स० मना] १. चार्लिस सेर की टील या परिभाषा।
२ उक्त टील या परिभाषा का बाट।
१००=अधि।

मनई—पु० [सं० मानव] मनुष्य।
मनचली—स्त्री०=मनचौती।
मनचला=अ० [अनु०] १. हिलना-भौलना। चेष्टा करना। हाथ-पैर चलाना।
अ०=मिनकाना।
मनकरा=वि० [हि० मणि+कर (प्रत्य०)] चमकदार। चमकीला।
मनका=पु० [सं० मणिक] १. वायु, लकड़ी, आदि का वह पोल या बंधा-कार छोटा टुकड़ा जिसके बीचोबीच छेद होता है तथा जो माला के रूप में पीरोया जाता है। एक साथ पीरोये जानेवाले बहुत से मनके माका का रूप धारण कर लेते हैं। २. माला। मुमिरनी। उदा०—करका मन का छोड़कर मनका मनका फेर।
पु० [सं० मयका=गले की मस] गरदन के पीछे की वह हड्डी जो रीढ़ के ठीक ऊपरी भाग में होती है।
मुहा०—सनका इलना या इलकना=आसन्न मनुष्य के समय रोगी की गरदन टेढ़ी होना।
मनकामना=स्त्री०=मन कामना (मनोरथ)।
मनकुमार=पु० [सं० मन कुमार] कामदेव। उदा०—कुनलय-रल सुकु-मार तन, मन-कुमार अज भार।—मतिराम।
मनकूल=वि० [अ० मन्कूल] १ जिसकी प्रतिलिपि तैयार कर ली गई हो। नकल किया हुआ। प्रतिलिपित। २. (सम्पत्ति) जो एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाई जा सके। बल।
पद=मनकूला चायराव=चल-सपति।
मनकूहा=वि० स्त्री० [अ० मन्कूह] (स्त्री) जिसका विवाह हो चुका हो। जो ब्याही हुई हो। परिणीता। विवाहिता।
मनगढ़ल=वि० [हि० मन-गढ़ना] मन डराना गढ़ा हुआ। फलत कल्पित अथवा मिथ्या। कथोल-कल्पित। जैसे—मनगढ़त किस्सा।
स्त्री०=कल्पित या मिथ्या बात।
मनबला=वि० [सं० मन+हि० बलना] [स्त्री० मनबली] १ (व्यक्ति) जिसका मन आकर्षक तथा सुन्दर वस्तुओं की प्राप्ति के लिए ललचा उठता हो। २. (व्यक्ति) जो प्रायः किसी आकर्षक तथा सुन्दर वस्तु की प्राप्ति के लिए किसी प्रकार की ओसिध का काम करने के लिए प्रस्तुत हो जाय। ३. कामुक तथा रसिक स्वभाववाला।
मन-बाहला=वि० [हि० मन+बाहना] [स्त्री० मनबाहली] १. जो मन के अनुकूल हो। २. जिसे मन बाहो। प्रिय।
मन-बाहा=वि० [हि० मन+बाहना] [स्त्री० मनबाहती] १. जिसे मन बाहता हो। जैसे—मन-बाहा काम, मनबाही नौकर। २. इच्छानु-सार किया हुआ।
मनबाहे=अव्य० [हि० मन-बाहा] इच्छानुसार।
मन-भौसना=वि०=मन-भौता।
मन-भौता=वि० [हि० मन+भौतना] [स्त्री० मनभौती] मन में बाहो और सोचा हुआ।
मनभात=पु० [सं० मनीजात] कामदेव।
मनतोरना=पु० [देवा०] एक प्रकार का पत्नी।
मनव=पु० [सं०+मनु (मानना)+स्युट्=अनु] १. मन लगाकर कोई काम सोचना या समझना। २. किसी विषय में सब जगों पर अच्छी

तरह विचार करते हुए उसे समझने के लिए किया जानेवाला प्रयत्न या प्रयास। चिन्तन। (कन्टेम्प्लेशन)। जैसे—आध्यात्मिक प्रबंधों या राजनीतिक समस्याओं का मनन। ३. बेदात शास्त्रानुसार सुने हुए वाक्यों पर बार-बार विचार करना और प्रश्नोंतर या सका-सभाषान द्वारा उसका निरवचय करना।

मनन-शैली—वि० [सं० ब० सं०] जो स्वाभावतः मनन करने में प्रवृत्त रहता हो।

मननाना—अ० [मन मन से अनु०] गुजारना। गुंजना।

मन-मंत्र—पु० [सं० मनोमंत्र] बदरिका आश्रम के पास का एक पर्वत।

मन-भरती—स्त्री० [हिं० मन भरना] १. मन भरने की क्रिया या भाव।

मनसोबा। सुशामदा। चापलूसी। उषा०—अफसरी के बगले पर आना और सत्ताम बोलकर मनभरती कर आना।—बृन्दावनलाल वर्मा।

मन-भाया—वि० [सं० मन+हिं० भाया] [स्त्री० मन-भाई] १. जो मन को माता या सचिकर प्रतीत होता हो। मन को माने या अच्छा लगने-वाला। २. प्रिय। प्यारा।

मन-भावना—वि० = मन-भाया।

मन-भावन—वि० = मनभाया। उषा०—सावन की मन भावन की, पिरि आइ बहरिया।—गीत।

मन-भक्ति—वि० [मन+भक्ति] अपने मन का काम करनेवाला। स्वेच्छा-चारी।

मन-मत्त—वि० = मत्त (मदमत्त)।

मन-मथ—पु० = मनमथ (कामदेव)।

मन-मानसा—वि० [हिं० मन+मानना] १. मनमाना। २. मनबाह्या।

मनमाना—वि० [सं० मन+हिं० मानना] १. (स्वभित्त) जो अपनी इच्छा को सर्वोपरि महत्त्व देता हो; और किसी की इच्छा बात या राय को कुछ भी महत्त्व न देता हो। २. (आचार) या व्यवहार) जो अपनी इच्छा से तथा बिना किसी के सुलभ-मुसीबत का ध्यान रखे किया गया हो।

मनमानो—स्त्री० [हिं० मन-माना] १. मनमाना कार्य। २. वह स्थिति जिसमें बिना अधिच्य आदि का विचार किये मन-भागे ढंग से काम किया जाय।

मन-मूर्खी (निम्न)—वि० [सं० मन+मूर्खी] मनमाना काम करनेवाला। स्वेच्छाचारी।

मन-मोटाख—पु० = मनमोटाख।

मन-मोटाख—पु० [सं० मन+हिं० मोटाख] द्वेष आदि के कलत्ररूप होने-वाली वह स्थिति जिसमें किसी का मन किसी दूसरे से कुछ पिन्चा रहता है।

मन-मोचक—पु० [हिं० मन+मोचक] केवल अपना मन प्रसन्न करने के लिए बनाई हुई ऐसी कल्पना जिसका कोई वास्तविक आधार न हो।

मन-मोहन—वि० [सं०] [स्त्री० मनमोहनी] १. मन को मोहनेवाला।

२. प्रिय। प्यारा।

पु० भीष्मण।

मन-मौख—पु० [सं० मन+मौख] १. मन की तरंग। २. हार्दिक प्रसन्नता।

३. अपनी प्रसन्नता या सुख के लिए किया जानेवाला काम या कर्म।

मन-मौखी—वि० [हिं० मनमौख] १. अपने मन में उठी तरंग के अनुसार

काम करनेवाला। २. अपनी प्रसन्नता के उद्देश्य से कोई विशेष आचरण या व्यवहार करनेवाला।

मनरज—वि० = मनरजन।

मनरजन—वि० [हिं० मन+रजना] मनोरजन करनेवाला। मन को प्रसन्न करनेवाला।

पु० = मनोरजन।

मन-रोचन—वि० [सं० मनरोचन] मन की मृद्य करनेवाला। सुन्दर।

मनसाहू—पु० = मनमोदक।

मनसी—पु० [देस०] देव-कणाम। रामरूपाम। नरया।

पु० = मन।

मनबाँधित—वि० = मनोबाँधित।

मनबाना—सं० [हिं० मनाना का प्रे०] १. किसी को कुछ मान लेने में प्रवृत्त या विवश करना। २. मनाने का काम किसी दूसरे से कराना।

मनसा—स्त्री० [अ० मनसा] १. आशय। मतलब। २. उद्देश्य। प्रयोजन। ३. इच्छा। इरादा। सकल्प।

मनसना—सं० [सं० मनस्य] १. मन में इच्छा विचार या सकल्प करना। उषा०—मनसं नारि किया नन छारा।—गोरखनाथ। २. मन में दृढ़ निरवचय या सकल्प करना। ३. कोई चीज दान करने के उद्देश्य से सामने रखकर या हाथ में लेकर विधि में सकल्प या मंत्र पढ़ना।

मनसब—पु० [अ० मनसब] १. राज्य, शासन आदि में ऐसा ऊँचा पद जिसके साथ कुछ विशिष्ट अधिकार भी प्राप्त हों। २. कर्तव्य। कर्म। कृत्य। ३. अधिकार। इम्तियाज।

मनसबदार—पु० [अ० मनसब+फा० दार] वह जो किसी मनसब अर्थात् ऊँचे पद पर आसीन हो।

मनसा—स्त्री० [सं० मनस+अच्] टाप्/एक देवी जो पुनराजानुसार जन्तु-त्कार मुनि की पत्नी और आसीन की माता थी तथा कश्यप की पुत्री और वामुनी की बहन थी। वह साँपो के कुल की अधिष्ठात्री मानी गई है।

वि० १. मन में उत्पन्न। २. मन-सम्बन्धी। मन का।

क्रि वि० मन के द्वारा। मन से।

स्त्री० [अ० मसा] १. इरादा। विचार। २. अमिलाष। कामना।

३. मन। ४. वृद्धि। ५. अमिप्रथम। ६. उद्देश्य।

स्त्री० [देग०] एक प्रकार की घास जो बहुत तेजी से बढ़नी और पशुओं के लिए बहुत पुष्टिकारक समझी जाती है। मकडा। मधाना। जल-कर्म।

मनसाकर—वि० [हिं० मनसा+सं० कर (प्रत्यय)] मनोबाँधित फल देनेवाला। मनोमाना पूर्ण करनेवाला।

मनसाता—अ० [हिं० मनसा] उमग में आना। तरंग में आना।

सं० [हिं० मनसना का प्रे०] किसी को कुछ मनसने में प्रवृत्त करना।

मनसवाना।

मनसा-पचमी—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] आषाढ़ की कृष्णपचमी। इस दिन मनसा देवी का उत्सव होता है।

मनसाभय—वि० [हिं० मानस+अभय (प्रत्यय)] १. ऐसी स्थिति जिसमें कुछ लोगों के रहने के कारण अच्छी चहल-पहल हो।

किं प्र०—रखना ।
 २. बहुल-बहुल की और मन समने की अर्थात् । गुलजार ।
मनसाधारण—**मू०**[सं० मनस्+राम] शोक-शाल में, अपने मन और फलतः व्यक्तित्व की संज्ञा । जैसे—बको मनसाधारण कोई अर्थात् है ।
मनसि—अव्य०[हि० मन] मन में । २. हृदय से ।
मनसिक्—**मू०**[सं० मनसि+क्] अन् (उत्पन्न करना) +ङ] १ कामयेव । २. संगीत में, कान्टिकी पदवति का एक राग ।
मनसूत्र—**वि०**[अ० मंसूत्र][भाव० मंसूत्री] १. रद्द किया हुआ । २. टाला हुआ । ३. परित्यक्त ।
मनसूत्री—**स्त्री०**[अ० मंसूत्री] मनसूत्र होने की अवस्था, किया या भाव ।
मनसूत्रा—**पुं०**[अ० मंसूत्रः] १. कोई काम करने से पहले मन में सीधी अन्वेषणाकी युक्ति ।
किं प्र०—ठानना ।—बोधना ।
 २. हगवा । विचार ।
मनसुर—**वि०**[अ० मनसुर] विजोता ।
 पुं० १वीं शताब्दी का एक प्रसिद्ध सूफी संत जो अपने को अनहलक (अह ब्रह्मात्मि) कहता था और इसी लिए जो सूफी पर चढ़ा दिया गया था ।
मनसेव—**पुं०**[सं० मनुष्य] पुत्रव । आयनी । (पूरव)
मनस्क—**वि०**[सं०] [भाव० मनस्कता] १. जिसका मन किसी विधिष्ट समय में किसी और प्रवृत्त हुआ या लगा हो । जैसे—अन्य-मनस्क । २. जिसका मन किसी कार्य या विषय की ओर अनुरक्त या प्रवृत्त हो । कुछ करने, जाने आदि की इच्छा से युक्त । (माइस्के) जैसे—अब वे भी संगीत मनस्क होने लगे हैं ।
मनस्कता—**स्त्री०**[सं० मनस्क+तल्+टाप्] मनस्क होने की अवस्था या भाव ।
मनस्कांत—**वि०**[सं० व० तं०] १ जो मन के अनुकूल हो । मनोनुकूल । २. प्रिय । प्यारा ।
 पुं० मन की अभिलाषा या इच्छा । मनोरथ ।
मनस्काय—**पुं०**[सं० व० तं०] मन की अभिलाषा । मनोरथ ।
मनस्ताप—**पुं०**[सं० व० तं०] १ मनःपीडा । आतंरिक दुःख । २. अनुताप । पश्चात्ताप । पछतावा ।
मनस्ताल—**पुं०**[सं० व० सं०] १ हस्ताल । २. दुर्गा की सवारी के सिंहा का नाम ।
मनस्ताथ—**पुं०**[सं० व० तं०] १. मन में होनेवाला तीव्र या तुष्टि । २. आनन्दकला, इच्छा, शंका, संशय आदि की पुष्टि या निवारण के फलस्वरूप मन में होनेवाली द्युति । तुष्टि । (सैटिस्केषन)
मनस्विता—**स्त्री०**[सं० मनस्विन्+तल्+टाप्] मनस्वी होने की अवस्था या भाव ।
मनस्विनी—**स्त्री०**[सं० मनस्+विनि+ङीप्] १. मुकुट श्रुति की पत्नी का नाम । २. प्रजापति की एक पत्नी ।
मनस्वी (सिक्) —**वि०**[सं० मनस्+विनि] [स्त्री० मनस्विनी] १. श्रेष्ठ मन से सम्पन्न । बुद्धिमान् । उच्च विचारवाला । २. मनमाया आचरण करनेवाला । स्नेहच्छाकारी ।
 पुं० धारण ।
मनसूत्र—**पुं०**[हि० मन+हंस] पंख अलसों का एक वनिक छन्द जिसके

प्रत्येक चरण में क्रमशः एक सपण, दो अणव, मणव और अंत में रणण होता है ।
मनहूर—**वि०**[हि० मन+हुरना या सं० मनोहूर] मन हुरनेवाला । मनो-हूर । उदा०—गिरने से नयनों से उज्ज्वल अक्षु से कम मनहूर ।—प्रसाद ।
 पुं० बनासारी छंद का एक नाम ।
मनहरण—**पुं०**[हि० मन+हरण] १. मन हुरने की क्रिया या भाव । २. पंख अलसों का एक वनिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में पाँच सपण होते हैं । इसे मलिकी और भ्रमरापकी भी कहते हैं ।
वि०—मनोहूर ।
मनहूरण—**वि०**पुं०—मनहरण ।
मनहारी—**वि०**—मनोहारी ।
मनहारी—**वि०**—मनोहारी ।
मनहूँ—**अव्य०**[हि० मानना या मानों] मानों । जैसे । यथा ।
मनहूस—**वि०**[अ०मनूस] १. अक्षुम । भृश । २. अभागा । बदकिस्मत । ३. जिसमें धमक-धमक, टौनक या सस्त्र जीवज का कोई लक्षण न हो । जैसे—मनूस लक्ष्मी, मनहूस मकान ।
मना—**वि०**[अ०] १. जिसके संबंध में निषेध हो । निषिद्ध । जैसे—यहाँ तमाकू या बीड़ी पीना मना है । २. जो कोई काम करने से रोकता गया हो । बारण किया हुआ । जैसे—लड़कों को मना कर दो; यहाँ सोर न करें ।
मनाइन—**स्त्री०**[?] बहु स्त्री जो शुभ-अशुभ सनो प्रकार के कर्मों के विधि-विधान जानती हो और इसी लिए स्त्री-समाज में मान्य हो । (पूरव)
मनाही—**स्त्री०**—मनाही ।
मनाहूँ—**वि०**[सं०+मन् (ज्ञान करना)+आह्] १ बहुत जरा ता । अल्प । पीडा । २. बीमा । मन् ।
मनाहूँ—**वि०**—मनाक (पीडा) । उदा०—जैहि बबान मति सक्ति मनाहूँ ।—मूनीहोम्भव ।
मनाही—**स्त्री०**—मनाही ।
मनाना—**सं०**[हि० मानना का प्रे०] १ किसी को कुछ मानने में प्रवृत्त करना । ऐसा काम करना जिससे कोई हुरता कुछ मान ले । २. किसी को किसी काम या बात के लिए उद्यत, तत्पर या राभी करना । ३. जो किसी कारण से असमम हो गया या रुठ गया हो उसे मीठी मीठी बातें करके अपने अनुकूल बनाना और प्रसन्न करना । ४. अपनी दृष्टि या बोध मानकर उसके लिए क्षमा माँगना । उदा०—या मूल-मूक अपनी पहले मनाई ।—मिथिलीसरण । ५. किसी प्रकार की कानना आदि की पुष्टि या कार्य की सिद्धि के लिए ईश्वर या देवी देवता से प्रार्थना करना । जैसे—मैं तो ईश्वर से यही मनाता हूँ कि वह आपकी सत्पुष्टि दे । ६ प्रार्थना या स्तुति करना । उदा०—ताके युग पद कमल मनाई, जायु कृपा निरखल मति पाई ।—तुलसी ।
मनाबी—**स्त्री०** दे० 'मनाबी' ।
मनार—**पुं०**—मीनार ।
मनाक—**पुं०**[सं० मनाक] शिमले की पहाड़ियों पर रहनेवाला एक तरह का बकौर पक्षी ।
मनाहूँ—**पुं०**[हि० मानना] १ असंतुष्ट या रुठे हुए मन मानने की क्रिया

या भाव । २ किसी पर कोई बात मान लेने के लिए डाला जानेवाला जोर ।

मनापी—स्त्री० [मनु + डीप्, ओ—आप्] मनु की स्त्री का नाम ।

मनाही—स्त्री० [अ०] ? मना करने या होने की क्रिया या भाव । २

कोई काम न करने की आज्ञा । निषेध । रोक ।

मनि—स्त्री०=मणि ।

मनिहरा—वि० [स० मणि + कर] १ सुन्दर । २ देदीप्यमान । चमकीला ।

उदा०—दुइज लिलाट अधिक मनिहरा ।—जायसी ।

मनिका—पुं० अमका (माला का) ।

मनित—पुं० कृ० [स०√मन् (जानना)+त, इत्] जान । उत्पन्न ।

मनिघर—पुं०=मणिघर ।

मनिघा—स्त्री० [स० माणिक्य, हिं० मनिका] १ माला का दाना । गुरिया । मनका । २ गले में पहनने की कड़ी या माला ।

मनिघार—वि० [हिं० मणि + आर (प्रद०)] १ उज्ज्वल । चमकीला ।

२ शोभनीय । ३ दर्शनीय । सुन्दर ।

पुं०=मनिघार ।

मनिहार—पुं० [हिं० मणिघार, प्रा० मनिघार] [स्त्री० मनिहारिन, मनिहारी] चूड़ी बनानेवाला । चुड़िहार ।

मनिहारी—स्त्री० [हिं० मनिहार] सूई, सागा, घीसा, कपे चुड़ियाँ आदि फूटकर सामान बेचने का काम ।

स्त्री० मनिहार का स्त्री० ।

मनी—स्त्री० [स० मणि] १. मणि । २ वीथी । ३ अह । उदा०—
तजे सकुच के मानु मानु तजि मान मनी के ।—सेनापति ।

स्त्री० [हि० मन=४० सेर] खेत की उपज की बढाई का वह प्रकार जिसमें जमीन का मालिक प्रति बोध कुछ मन पैदावार में से ले लेता है ।

मनीआईर—पुं० [अ०] १ शाकखाने के द्वार कही कुछ रुपये भेजने की एक प्रकार की व्यवस्था जिसमें पानेवाले को घर बैठे रुपए मिल जाते हैं । २ वह पत्रक जिसे मरकर उभर उद्देय से शाकखाने में दिया जाता है ।

मनीक—पुं० [स०√मन् + कीकन्] अजन (आँसो का) ।

मनीजर—पुं०=मनेजर ।

मनीबैग—पुं० [अ०] हाएपैस रखने का छोटा डिब्बा, पैनी या बट्ठा ।

मनीर—स्त्री० [देहा०] मोरनी ।

मनीषा—स्त्री० [स० मनम्-ईषा, ष० त०, पररूप] १ मन या मस्तिष्क की वह विशिष्ट शक्ति जिससे वह इच्छा, कामना, सोच-विचार आदि करता है ।

मानसिक शक्ति । (कैकटी) २ फलत (क) अमिलाषा या इच्छा । (ख) अकल या बुद्धि ।

मनीषिका—स्त्री० [स० मनीषा + कन्, +टाप्, इत्] मनीषा ।

मनीषित—पुं० कृ० [स० मनीषा + इत्] मनीषिलिखित । वाछित ।

मनीषिता—स्त्री० [स० मनीषिन् + तल् + टाप्] १ मनीषी होने की अवस्था या भाव । २ बुद्धिमता ।

मनीषी (मिन्)—वि० [स० मनीषा + णि] १ श्रान्ती । २ बुद्धिमन्त ।

३. पठित । विद्वान् । ४ यथेष्ट मनन और विचार करनेवाला । विचारशील ।

मनु—पुं० [स०√मन् + उ] १ ब्रह्मा के पुत्र जो मनुष्यों के मूल पुरुष माने जाते हैं ।

विशेष—(क) बेवो में मनु को ही यकों का आदि प्रवर्क भी माना गया है । पुराणों में यह भी कहा गया है कि जब एक बार महाप्रलय

के समय सारी पृथ्वी अलमल हो गई थी तब मनु ही एक नाब पर बड़कर इंसाने से बचे थे, और ज़मी से सारी मानव जाति उत्पन्न हुई थी । पुराणों

में यह भी कहा गया है कि प्रत्येक महाप्रलय के उपरांत मनु ही मानव जाति को उत्पन्न करते हैं । इसी लिए प्रत्येक भवन्तर के अलग-अलग

मनुओं के नाम भी पुराणों में मिलते हैं । चौदह भवन्तरों के १४ मनुओं के नाम ये हैं, म्वायम्बू, स्वारीषि, उत्तम, रामस, रैवत, ब्राह्म, वैवस्वत,

सर्वाण, दक्षसर्वाण, ब्रह्मसर्वाण, धर्मसर्वाण, वृद्धसर्वाण, देवसर्वाण और इन्द्रसर्वाण । (ख) इन्ड्राम्बो, मसीही आदि सभी पौराणिक

कथाओं में मनु के समकक्ष नृह और मोहा हैं । २ विष्णु । ३ ब्रह्मा । ४ अन्नकण्ठ । ५ अग्नि । ६ मनु । ७. एक षड का नाम । ८ जैनों के एक जिन देव । ९. चौदह भवन्तरों के मनुओं के आधार पर

१४ की संख्या का सूचक शब्द ।

स्त्री० १ मनु की स्त्री । मनापी । २ वन-मेथी ।

† अर्थ०=मनहूँ (मानो) ।

मनुअ—पुं०=मानव (मनुष्य) ।

पुं० [?] देव कथा । नरमा ।

मनुअ—पुं०=मनुष्य ।

मनुय—पुं० [स० मनुयम (प्राप्त होता) : उ] शिवरत के पीत्र और द्युतिमान के पुत्र का नाम ।

मनुअ—पुं० [स० मनु/जन् (उत्पन्न करना) : उ] [स्त्री० मनुजा, मनुजी] मनुष्य ।

मनु-जात—वि० [स० प० त०] मनु से उत्पन्न ।

पुं० मनुष्य ।

मनुजाव—वि० [स० मनुज/वद् (खाना) +अश्] नर-मक्षक । मनुष्यों को खानेवाला ।

पुं०=राक्षस ।

मनुजाषिप—पुं० [स० मनुज-अषिप, ष० त०] राजा ।

मनु-पुत्र—पुं० [स० ष० त०] मन्वतर ।

मनु-श्रेष्ठ—पुं० [स० ष० त०] विष्णु ।

मनुव—पुं० [स० मनुष्य] १ मनुष्य । २ स्त्री का पति । स्वामी ।

मनुवो—स्त्री० [स० मनुष्य : डीप्, य-ओण] स्त्री ।

मनुव्य—पुं० [स० मनु + यन्, एक-शयम] जगत्पूज्य जाति का एक स्तनपायी प्राणी जो अपने मस्तिष्क या बुद्धि बल की अधिकता

के कारण सब प्राणियों में श्रेष्ठ है । आदर्यो । मर ।

मनुव्यकार—पुं० [स० मनुष्य + कार] उद्योग । प्रयत्न ।

मनुव्य-गणना—स्त्री० [स० प० त०] जन-गणना ।

मनुव्य-नाति—स्त्री० [स० प० त०] अन्न शास्त्रानुसार वह कर्म जिसे करने से मनुष्य ब्राह्मण बनकर मनुष्य का ही जन्म पाता है । ऐसे कर्म पर-

स्त्री-गमन, माय-मक्षण चोरी आदि बलायें गये हैं ।

मनुष्यता—स्त्री० [स० मनुष्य + तल् + टाप्] १ मनुष्य होने की अवस्था

या भाव । आदमीपन । २ सज्जन मनुष्य के लिए सभी आवश्यक और

उपयोगी गुणों का समूह। ३ वे वाले जो किसी मनुष्य को सिद्धित और क्षम्य समाज में उठने-बीठने के लिए आवश्यक होनी हैं।
मनुष्यत्व—**वृ०** [सं० मनुष्य + वृ०] १ मनुष्य होने की अवस्था या भाव। मनुष्यता। २. मनुष्यों के लिए आवश्यक और उपयुक्त गुणों (दया, प्रेम, सहृदयता आदि) से युक्त होने की अवस्था या भाव।
मनुष्य-धर्मा—**वृ०** [सं० वं० सं०] द्वैतः।
मनुष्य-यज्ञ—**न०** [सं० वं० सं०] मनुष्य, विशेषतः अश्यागम व्यक्ति का क्रिया जानेवाला आदर-सत्कार। अतिथियज्ञ। नृयज्ञ।
मनुष्य-रथ—**प०** [सं० मध्य० सं०] प्राचीन काल में वह रथ जिसे मनुष्य (पशु नहीं) खींचते थे। नर-रथ।
मनुष्य-शोक—**प०** [सं० वं० सं०] यह जगत जिसमें मनुष्य (देवता नहीं) रहते हैं। मर्य-शोक। मृत्योः।
मनुष्य-श्रीर्ष—**प०** [सं० वं० सं०] एक प्रकार की जहरीली मछली जिसका सिर आदमी के सिर की तरह होता है। (टेटाओब्रन)
मनुस(ः)—**प०** [सं० मनुष्य] [भाव० मनुसाई] १ आदमी। मनुष्य। २ नौ-उत्पन्न। युवक। ३ स्त्री का पति। स्वामी। ४. पौरव से युक्त व्यक्ति। मर्द।
मनुसाई—**स्त्री०** [हिं० मनुस + आई (प्रत्यय०)] १ मनुष्यत्व। २ मनुष्यों का फलत शिष्टतापूर्ण व्यवहार। ३ पौरव।
मनुसामना—**अ०** [हिं० मनुस] १ पौरव का भाव जगना। २ क्रोधान्तरित होना।
 स- १ किसी में पौरव का भाव जगाना। २ क्रुद्ध या कोपित करना।
मनु-स्मृति—**स्त्री०** [सं० मध्य० सं०] मनु द्वारा प्रणीत एक प्रसिद्ध ग्रंथ जिसकी गिनती धर्म-शास्त्र में होती है। मानव-धर्मशास्त्र।
मनुहरा—**स्त्री०**—मनुहार।
मनुहार—**स्त्री०** [हिं० मान + हरना] १ किसी रुठे हुए व्यक्ति को मनाने तथा उसका मान छुड़ाने के लिए की जानेवाली विनयी या मीठी-मीठी बाले। २ इस प्रकार की विनयी करने की क्रिया, प्रयत्न या माया। ३ बुधामय। ४ तुष्टि। ५ आदर-सत्कार।
मनुहारना—**सं०** [हिं० मनुहार] १ रुठे हुए व्यक्ति में मीठी-मीठी बाले करके उसे प्रसन्न करने का प्रयत्न करना। मनाना। २ निवेदन, प्रार्थना या विनयी करना। ३ आदर-सत्कार करना। ४ बुधामय करना।
मनुहारी—**वि०** [हिं० मन + हरना] [स्त्री० मनुहारिणी] जो बात-बात पर रुठता हो तथा जिते प्रसन्न करने के लिए बार बार मनुहार करती पड़ती हो। उवा०—यासा सार खेलि कित कीन मनुहारिन मों, जीनि मनुहारि मनुहारि हारि आयो हो।—पपाकर।
मनुरी—**स्त्री०** [अ० मनीवर] एक प्रकार की बुननी जो मुरादाबादी कलई के बरतनों को उजला करने में काम आती है। यह बातु गलाने की पुरानी धरियों को कुदकर बनाई जाती है।
मने—**अव्य०** हिं० मानो का पुराना रूप।
 † वि०—मूमे। (पूज० और राज०)
मनेवर—**पुं०** दे० 'व्यवस्थापक'।
मनों—**अव्य०** [हिं० मानना] १. मान लेना पड़ता है कि। २ ऐसा भासित होता है कि। मानों।

मनोबुद्ध—**वि०** [सं० मनस्-अनुकूल, वं० सं०] मन चाहता हो बैसा। इच्छा या मन के अनुसार।
मनोकायना—**स्त्री०** [सं० मन कामना] मन में रखनेवाली कामना। अभिलाषा।
मनोगत—**पुं०** [सं० हिं० सं०] मन में आया या उठा हुआ। (विचार) पुं० १ कामदेव। मदन। २ काम वासना। ३. विचार।
मनोमति—**स्त्री०** [सं० मनस्-मति, वं० सं०] १ मन की गति। चिन्त-बुद्धि। २ अभिलाषा। इच्छा।
मनोपुत्रा—**स्त्री०** [सं० मनस्-पुत्रा, नृ० सं०] मैतसिल।
मनोव्रधि—**स्त्री०** [सं०] आधुनिक मनोविकल्पण के अनुसार इच्छाओं और स्मृतियों का एक तंत्र जिससे मन में जीवित धारणाओं की ऐसी पाठ सी बंध जाती है जो दमित होती पर भी अनजान में ही और प्रबल रूप से मनुष्य के वैयक्तिक आचरणों और व्यवहारों को प्रभावित करती रहती है। (कायप्रबल)
विशेष—कहा गया है कि यह ऐसे विचारों और सबेगों का पुत्र है जिन्हें मनुष्य को समय-समय पर जाँसिक या पुण्य रूप से दमन करना पड़ता है। ऐसे विचार अनजान में ही अचेतन मन में घर कर लेते हैं; और इन्हीं के बहावों होकर वह धार्मिक नैतिक, सामाजिक आदि क्षेत्रों में अनेक प्रकार के असाधारण तथा विलक्षण कार्य करते लगता है। मनोव्रधियाँ मनुष्य के मन की उन बुद्धियों के अंग बन जाती हैं, और मनुष्य अपने आप की ओर से छोटा या बड़ा समझने लगता है, भूत-प्रेत, स्वर्ग-नरक आदि पर विश्वास करने लगता है, नये ढंग और नई नई बातें निकालने का प्रयत्न करता है, अपने सामने अनोखे आदर्श रखने और विचित्र सिद्धांत बनाने लगता है, आदि आदि। यह भी कहा गया है कि इनका बहुत ही सुक्ष्म रूप मनुष्य में जन्मजात होता है, और अंगे चलकर थड़ता या विकसित होता रहता है। किसी मनोव्रधि की तीव्रता या प्रबलता के फलस्वरूप मनुष्य को अनेक प्रकार के विकट मानसिक विकार तथा शारीरिक रोग भी हो जाते हैं।
मनोधाही (हिं०)—**वि०** [सं० मनस् + धा + णिनि, उप० सं०] [स्त्री० मनोधाहिणी] मन की अपनी ओर ही खिंचेनाडा।
मनोज—**पुं०** [सं० मनस् + जन् (उत्पन्न करना)] +ञ् कामदेव। मदन।
मनोजव—**वि०** [सं० मनस्-जव, वं० सं०] १. मन के समान वेगवान्। अव्यत वेगवान्। २ चित्तुत्पन्न। बड़ों के समान। पुं० १ विश्व। २. दद के एक पुत्र का नाम। ३ एक प्राचीन तीर्थ। ४ छठे मन्वन्तर के इन्द्र का नाम। ५ अजिन या बायु के एक पुत्र जो उसकी शिवा नाम की परनी से उत्पन्न हुआ था।
मनोजवा—**स्त्री०** [सं० मनोजव + टाप्] १. कलिहारी। करियारी। २ स्कंद की माता का नाम। ३ कौच हीन की एक नदी। ४. अजिन की एक जिह्वा का नाम।
मनोज-बुद्धि—**स्त्री०** [सं० वं० सं०] कामबुद्धि नामक लुप। कामज्ञ।
मनोज—**वि०** [सं० मनस् + ज्ञा (जानना) + क] [स्त्री० मनोज्ञा] मनोहर। सुंदर। पुं० कुद का पौधा और फूल।
मनोज्ञता—**स्त्री०** [सं० मनोज-तत्त्वं + टाप्] सुदरता। मनोहरता। सुवसूरीती।

मनोज्ञा—स्त्री० [सं मनोज्ञ+टाप्] १. कलावी। २. मंगरला। ३. जात्रिणी। ४. मखिरा। ५. शराव। ६. आवलकी। ७. बंध कफोडा।
६. कोई सुन्दरी स्त्री, विशेषत राजकुमारी।

मनोबंध—पुं० [सं मनस्+बंध, घं० तं०] मन की वृत्तियों का विरोध।
मनोविग्रह।

मनोबध्ना—वि० [सं मनस्+दत्, तुं० तं०] १. जो अपनी प्रवृत्त रूप में
ते ही पर मन से दिया जा चुका हो। जिसे देने का मन में संकल्प कर
लिया गया हो। २. जिसका मन किसी काम में पुरी तरह लग रहा हो।
दत्त-विभक्त।

मनोबधा—स्त्री० [सं मनोबधा+टाप्] किसी कार्य या विषय के प्रति
होनेवाले राग-विराग या प्रवृत्ति-विरति आदि के विचार से सम्य-
विशेष पर होनेवाली मनकी अवस्था या दशा। (मूढ)

मनोबाह्य—पुं० [सं मनस्+बाह, घं० तं०] मन में होनेवाला दुःख मनस्साय।
मनोबाह्यी (हिंप्)—वि० [सं मनस्+वह, (जलना)+गिदि] मन से
सम्प्राप्य उत्पन्न करनेवाला।

मनोबुद्ध—वि० [सं मनस्+बुद्ध, तुं० तं०] बुद्ध प्रकृति।
मनोबेधता—पुं० [सं मनस्+बेधता, घं० तं०] अन्तःकरण। विवेक।

मनोबीर्यवन्त—पुं० [सं मनस्+बीर्यवन्त, घं० तं०] १. मन में होनेवाली
किसी प्रकार की दुर्बलता। (मेन्टल बीकनेस) २. उन्नत दुर्बलता का
सूचक कोई कार्य।

मनोभ्रान्त—पुं० [सं घं० तं०] सम्पूर्ण जाति का एक राग जिसमें सब
सूत्र स्वर लहते हैं।

मनोभयन—पुं० [सं मनस्+भयन, सं० तं० या तुं० तं०] [पुं० कृ० मनो-
नीत] १. कोई बात या विचार मन में लाना या उस पर कुछ
सोचना। २. अपनी इच्छा, शक्ति आदि के अनुसार किसी को चुनना
अथवा नामांकित, नियुक्त या प्रतिष्ठित करना।

मनोभिग्रह—पुं० [सं मनस्+भिग्रह, घं० तं०] विषय-वासनाओं में प्रवृत्त
होने से मन की रोकना। मन को दबा में रखना।

मनोनील—पुं० कृ० [सं मनस्+नील, तुं० तं०] १. मन में आया हुआ
(विचार आदि)। २. जिसका मनोव्ययन हुआ या किया गया हो।

मनोभ्रान्ती—स्त्री० [सं ?] योग-साधन से बहु अवस्था जिसमें मन सारी
वचलता छोड़कर पूर्ण रूप से शांत और स्थिर हो जाता है।
विशेष—कबीर साहित्य में 'उभयनी' का प्रयोग इसी अर्थ में हुआ है।

मनोबल—पुं० [सं मनस्+बल, घं० तं०] १. भाग्यसक बल। २. आत्मिक
शक्ति।

मनोभंग—पुं० [सं मनस्+भंग, घं० तं०] मन की दान्ति में पड़नेवाला
विघ्न। जैसे—स्निग्धता, निराशा, विचार आदि।

मनोबन्ध—पुं० [सं मनस्+बन्ध (होना)+जन्] कामदेव।
मनोबाध—पुं० [सं मनस्+बाध, घं० तं०] मन में उत्पन्न होने या रहनेवाला
मात्र या विचार। (सेन्टीमेन्ट)

मनोभिराज—वि० [सं मनस्+भिराज, घं० तं०] मनोज्ञ। सुन्दर।
मनोभू—पुं० [सं मनस्+भू (होना) रूप] कामदेव। मदन।

मनो-बंध—पुं० [सं] एक तरह का योग जिसमें मुक्ति की तरह से और
पूर्ण काम नहीं करती। (सिमोवियस)

मनोभय—वि० [सं मनस्+भयट्] १. मन से युक्त। २. मानसिक।

मनोमय-कीटा—पुं० [सं कर्म० सं०] वेदान्त में आत्मा को मायत
रखनेवाला पाँच कोशों में से तीसरा कोश जिसमें मन, अहंकार और
कर्मभ्रंदा अंतर्भूत मानी जाती हैं। इसी को बीज दर्शन में संज्ञा स्थंभ
कहते हैं।

मनोमल—पुं० [सं मनस्+मल घं० तं०] मन में होनेवाला कोई दुष्टित
मात्र या विचार।

मनोमालिन्य—पुं० [सं मनस्+मालिन्य, घं० तं०] मन में रहनेवाला
दुःख या वैर-विरोध जो जल्दी ऊपर प्रकट न होता हो। मनमुटाव।
रजिया।

मनोमोही (हिंप्)—वि० [सं मनस्+मूह, (मूष्य होना)+गिप्+गिदि]
[स्त्री० मनोमोहिनी] मन को मोहनेवाला। उदा०—मनो मोहिनी
है वह मनोरमा है।—निराला।

मनोयोग—पुं० [सं मनस्+योग, घं० तं०] किसी काम या बात में मन को
एकाग्र करने लगाना। चित्त की वृत्ति का निरोध करके एकाग्र करना
और उसे किसी एक काम या बात में लगाना।

मनोयोगि—पुं० [सं मनस्+योगि, घं० तं०] कामदेव।
मनोरञ्जक—वि० [सं मनस्+रञ्जक, घं० तं०] मनोरंजन करनेवाला।

मन को बहुलकर प्रसन्न करनेवाला। मन का रंजन करनेवाला, कलतः
जिससे समय बहुत आनन्दपूर्वक व्यतीत होता है।
मनोरंजन—पुं० [सं मनस्+रंजन, घं० तं०] [वि० मनोरंजक, मनो-
रंजनीय] १. मन का रंजन। दिल-बहुलाय। २. कोई ऐसा कार्य या
बात जिससे समय बहुत ही आनन्दपूर्वक व्यतीत होता है। (इन्टरटेन्मेन्ट,
उक्त दोनों अर्थों में) ३. एक प्रकार की बैंगला मिठाई।

मनोरंजन-कर—पुं० [घं० तं०] एक प्रकार का कर जो मनोरंजन चाहने-
वाले व्यक्तियों को किसी ध्यावसायिक मनोरंजक कार्यक्रम में सम्मिलित
होने के समय देना पड़ता है। (इन्टरटेन्मेन्ट टैक्स)

मनोरथ—पुं० [सं मनस्+रथ, घं० तं०] [वि० मनोरथिक] अभिलाषा।
वाछा। इच्छा।

मनोरथ तुलावती—स्त्री० [सं मध्य० सं०] चैत्र शुक्ल तृतीया जो व्रत
का दिन कहा गया है।

मनोरथ इच्छावती—स्त्री० [सं मध्य० सं०] चैत्र शुक्ल पक्ष को द्वादशी
जो व्रत का दिन कहा गया है।

मनोरथिक—वि० [सं मनोरथिक] १. मनोरथ से सम्बन्ध रखनेवाला।
मनोरथ का। २. मनोरथ के रूप में होनेवाला।

मनोरथ—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की कपास।
मनोरथ—वि० [सं मनस्+रथ (रथण करना)+गिप्+अण, उप० सं०]
[स्त्री० मनोरथ्या] जिसमें मन रमने लगे। सुन्दर।

पुं० सक्ती छेद का एक भेद जिसके प्रत्येक चरण में ५, ४ और ५ के
अंतर पर विराम कुल चौदह मात्राएँ होती हैं।

मनोरथा—स्त्री० [सं मनोरथ+टाप्] १. सात सत्त्ववर्तियों में से चौथी
सत्त्वती। २. गौतम बुद्ध की एक शक्ति। ३. दस वस वीर्य के
चरणों वाला एक छेद जिसके प्रत्येक चरण का पहला, दूसरा, तीसरा,
सातवाँ और नवाँ वर्ण लघु होता है। सत्था सत्त्व वर्ण गुरु होते हैं।
(छंदोमंत्ररी) ४ महाकवि चन्द्रसेनार के अनुसार आर्या के ५० सेवों
में से एक जिसमें २ गुरु और २ लघु वर्ण होते हैं। ५ दस अक्षरी

का एक बर्णिक बृत्त जिसके प्रत्येक चरण में मध्य, रघाण और अंत में वृत्त होता है। ६. केचय के मतानुसार कोईह बलरो का एक बर्णिक बृत्त जिसके प्रत्येक पाद में ४ स्वराण और अंत में दो ऋगु होते हैं। ७. केचय के अनुसार बर्णिक छंद का एक नाम जिसके प्रत्येक चरण में ४ भ्रगण और दो वृगु होते हैं। ८. सूयन के अनुसार दस असरो का एक बर्णिक बृत्त जिसके प्रत्येक चरण में तीन तयण और एक वृगु होता है। ९. गोरौचन ।

मनोरथ—पुं० [सं० मनोहर] पूजा आदि के उद्देश्य से बनाई जानेवाली गोबर की मूर्ति ।

मनोरथार्थ—पुं० मनोराग्य ।

मनोरथव्य—पुं० [सं० मनस्-राज्य, मध्य० सं०] १. मन कपी राज्य । २. मनमाने सुखों की मन में की जानेवाली कल्पना । ३. कल्पना से लड़ा किया हुआ कोई सुन्दर तथा युद्ध आयोजन ।

मनोरथ-भूषक—पुं० [?] स्त्रियों का एक प्रकार का देहानी लोक गीत । **मनोरथरा**—स्त्री० [हिं० मनोहर] एक प्रकार की सिकड़ी या जौहर जिसकी कड़ियों पर चिकनी चपटी दाल या बुड़ी जमी रहती है और जिन्में घुबड़को के गुच्छे लगातार बंधनवार की तरह टांगते या लटकते हैं ।

मनोरीला—स्त्री० [सं० मनस्-सीला, व० तं०] ऐसी कल्पित अद्भुत बात जिसका कोई आधार न हो। (फैन्ट)

मनोरथी—स्त्री० [सं० मनस्-मनुष्य, म-ब+डीप्] ? दुराणानुसार मेघ पक्ष पर की एक नारी । २. विनायक विधाधार की एक कन्या ।

मनोरथोछा—स्त्री० [सं० मनस्-बाछा, व० तं०]—मनोकाटना ।

मनोबांछिन—पुं० क० [सं० मनस्-बांछत्, वृ० तं०] जो मन में चाहा गया हो। अमिलवित् । इच्छित ।

मनोरथिकार—पुं० [सं० मनस्-विकार, व० तं०] १. मन में उठनेवाला कोई भाव या विचार । मन में होनेवाला कोई आवेग ।

मनोविज्ञान—पुं० [सं० मनस्-विज्ञान, व० तं०] वह विज्ञान या शास्त्र जिसमें मनुष्य के मन उसकी विभिन्न अवस्थाओं तथा क्रियाओं, उस पर पड़नेवाले प्रभावों आदि का अध्ययन तथा विवेचन होता है। (साइकोलोजी)

मनोविश्लेषण—पुं० [सं० मनस्-विश्लेषण, व० तं०] आधुनिक मनोविज्ञान की वह शाखा जिसमें कुछ विशिष्ट प्रकार के रोगों और विकारों का उपचार या चिकित्सा यह मानकर की जाती है कि वे रोग कुछ मनो-बोगों का दमन करने के उत्पन्न होते हैं। (साइको-एनैलिसिस) **विश्लेष**—दसका आबिकारों क्षोषण तथा उसके परवर्ती मनोवैज्ञानिकों ने किया था। इसमें रोगी के पूर्व-इतिहास का परिचय प्राप्त करने रोग का निदान किया जाता है और तब मनोवैज्ञानिक बंग से उसका उपचार या चिकित्सा की जाती है ।

मनोवृत्ति—स्त्री० [सं० मनस्-वृत्ति, व० तं०] वह भागसिक द्रवित या स्थिति जिसके कारण मनुष्य किसी और प्रवृत्त होता अथवा उससे हटता है। (मैटैसिटी)

मनोबैध—पुं० [सं० मनस्-बैध, व० तं०] मन में उत्पन्न होनेवाला तीव्र विकार ।

मनोवैकल्प—पुं० [सं० मनस्-वैकल्प, व० तं०] मनुष्य की वह भागसिक अवस्था जिसमें ठीक तरह से भागसिक विकास न होने के कारण बुद्धि

परिष्कृत नहीं होने पाती, बीर इसी लिए ठीक तरह से अपना कार्य करने के योग्य नहीं होती। (मेटल डिफ़िशिएन्सी)

मनोवैज्ञानिक—वि० [सं० मनोविज्ञान+उत्-इक] मनोविज्ञान से सम्बन्ध रखनेवाला। (साइकोलाजिकल)

पुं० वह जो मनोविज्ञान का ज्ञाता है। (साइकोलोजिस्ट)

मनोव्याध—स्त्री० [सं० मनस्-व्याध, व० तं०] मन में होनेवाली व्याध ।

भागसिक कष्ट ।

मनोव्याधि—स्त्री० [सं० मनस्-व्याधि, व० तं०] मन या मानस में होने-वाले रोग ।

मनोव्याधार—पुं० [सं० मनस्-व्याधार, व० तं०] मन की क्रिया । संकल्प-विकल्प । विचार ।

मनोहर—पुं० [सं० मन] मन की वृत्ति । मनोविकार ।

मनोहर—पुं० [सं०] एक प्रकार का सम-वृत्त बर्णिक छन्द जिसके प्रत्येक चरण में एक सवण, दो नमण, एक मणण और एक रघण होता है। (कलहर नामक छन्द से निम्न)

मनोहृत—वि० [सं० मनस्-हृत, वृ० तं०] जिसका मन टूट गया हो । निरास ।

मनोहर—वि० [सं० मनस्-हर, व० तं०] [स्त्री० मनोहृता] १. मन हरने-वाला । २. मनोह । सुन्दर ।

पुं० १. छण्य छद का एक मंत्र । २. एक संकर राग । ३. कुंद का पोषा और उसका फूल । ४. सोना । स्वर्ण ।

मनोहरता—स्त्री० [सं० मनोहर+तत्+टाप्] मनोहर होने की अवस्था या भाव । सुंदरता ।

मनोहरताई—स्त्री०—मनोहरता ।

मनोहरा—स्त्री० [सं० मनोहर+टाप्] १. जाती पुण्य । २. सोनमूही । ३. विचार की माता का नाम-। ४. स्वर्ण की एक अम्परा का नाम ।

मनोहरी—स्त्री० [हिं० मनोहर] कान में पहनने की एक प्रकार की छोटी बाकी ।

मनोहारी (रिम्)—वि० [सं० मनस्+हृ (हरण)+णिनि] [स्त्री० मनोहारीणी] मनोहर । चित्तकर्षक । सुंदर ।

मनोह्वारी (रिम्)—वि० [सं० मनस्+ह्वार (प्रसन्न होना)+णिनि] [स्त्री० मनोह्वारीणी] १. मन को आह्वारित या प्रसन्न करनेवाला । २. मनोहर । सुंदर ।

मनोह्वार—स्त्री० [सं० मनस्+ह्वार (बुलाना)+क+टाप्] मन शिला । मनसिल ।

मनो—अव्य०=मानी ।

मनोमल—स्त्री० [हिं० मानना] मन में कोई बात मानने या धारण करने की क्रिया या भाव ।

स्त्री० [हिं० मानना] कूट अथवा कड़े हुए को मानने की क्रिया या भाव । **मनो**—वि० [सं० मान-मनोमल] ।

मनोती—स्त्री० [हिं० मानना+तीति (प्रत्य०)] ? कड़े हुए को मानने की क्रिया या भाव । मनुहार । २. देवी-देवता के प्रति की जानेवाली यह प्रतिज्ञा या सफल्य कि अमुक मनोरथ सिद्ध हो जाने पर इस आपकी अमुक प्रकार से पूजा करके आपको प्रसन्न करेयें । दे० 'मन्त्र' ।

किं-प्र०—बढ़ाना ।—मानना ।

ब्रह्म—स्त्री० [हिं० मानना] किसी देवी-देवता की पूजा करने की वह प्रतिज्ञा या सकलप जो किसी विशिष्ट कामना की पूर्ति के लिए किया जाता है । मानना । मनीनी ।

ब्रह्मा—ब्रह्म उतारना या बढ़ाना—उक्त प्रकार की पूजा की प्रतिज्ञा पूरी करना । ब्रह्म मानना—ब्रह्म प्रतिज्ञा करना कि अमुक कार्य ही जाने पर अमुक पूजा की जायगी ।

ब्रह्मा—पुं० [देश०] ब्रह्म आदि में से रखनेवाला एक तरह का मीठा निर्याम ।

ब्रह्मता—अ० [हिं० मान या मनु] ? (सर्प का) फन उठाना । २ मन में बहुत अग्रसन्न या नागज होना ।

ब्रह्मची—पुं० [सं०/मध्० अच्, पुं०] सिद्धि ? कामदेव । २. काम-वासना ३ कर्णिय । कर्ष । ४ साठ सबत्सरो में से उन्नीसवाँ सबत्सर ।

ब्रह्मच-लेख—पुं० [म० मध्य० सं०] प्रेमी या प्रेमिका की विरह सम्बन्धी लिखा जानेवाला प्रेम-पत्र ।

ब्रह्मचारिण—पुं० [म० मध्य०] आ०/वद् (प्रथम होना) ; गिच्+अच्] एक प्रकार का आम जिसे महाराज पूत भी कहते हैं ।

ब्रह्मचारि—पुं० [म० मध्य०-अर्ध, प० तं०] कामदेव के शत्रु, शिव ।

ब्रह्मचारस्य—पुं० [म० मध्य०-आलय, प० तं०] ? आम का पेड़ । २ कामुकी का बिहार-स्थल ।

ब्रह्मची (विन्)—वि० [म० मध्य०] इति,] वामी । कामुक ।

ब्रह्म—वि० [सं०/ममसा के अन्त में प्रयुक्त होनेवाला पद] ममत्त्व पदों के अन्त में अपने आगको मानने या समझनेवाला । जैसे—अहमन्व, पठित-मन्व ।

ब्रह्मा—स्त्री० [म०/वद्] क्यप् ; टाप्] गरदन की एक नम ।

ब्रह्म-स्तंभ—पुं० [म० प० तं०] एक प्रकार का रोग जिसमें गले पर की मन्दा नामक शिवा कड़ी होजानी है और गरदन हवर-उधर नहीं, घूम सकनी और प्रीथण उच्च होता है । गरदन नोड बुलार । (मेने-आस्टिस)

ब्रह्म—पुं० [सं०/वद्] (ज्ञान करना) ; यृच्] ? स्तोत्र । २ कर्म । ३. दुख या शोक । ४ यज्ञ । ५ क्रोध । मुस्ता । ६ अभिमान ।

अहंकार । ७ दीनता । ८ अग्नि । ९ शिव ।

ब्रह्म-देव—पुं० [सं० प० तं०] ? क्रोध का अभिमानो देवता । २ एक प्राचीन ऋषि ।

ब्रह्मघ्न (भन्)—वि [म० मन्वु-भन्तु,] क्रोध, अहंकार या दैन्य से युक्त (व्यक्तित) ।

ब्रह्मन्तर—पुं० [सं० मन्वु-अन्तर, प० तं०] ? इहहस्तर षतुदुगियो का काल । ब्रह्मा के एक दिन का चौदहवाँ भाग । २ अकाल । दुर्मिथ । ३. दे० 'मनु' ।

ब्रह्मन्तर—स्त्री० [म० मन्वन्तर ; अच् ; टाप्] प्राचीन काल का एक प्रकार का उत्सव जो आषाढ शुक्ल दशमी, आषाढ-कृष्ण अष्टमी और साठ शुक्ल तृतीया को होता था ।

ब्रह्मिन्धार—पुं०—महिहार ।

ब्रह्महोला—पुं० [देश०] तमाल ।

ब्रह्मर—वि० [अ० मफूर] पलायित । भागा हुआ ।

ब्रह्म-सर्व—[सं० मा । उम या अहू का षष्ठी एक वचन रूप] मेरा ।

ब्रह्मता—स्त्री० [सं० मम+तल्+टाप्] ? यह भाव या विचार कि अमुक (पदार्थ या व्यक्ति) मेरा है, 'मम' का भाव, समत्व । २ परम आत्मीयता के कारण मन से होनेवाला प्रेम या स्नेह । जैसे—पिता या

माता को सत्मान के प्रति होनेवाली ममता । ३ मन में होनेवाला किसी प्रकार का मोह या लोभ । ४ अभिमान । गर्व ।

ब्रह्मता-मुक्त—वि० [सं० तू० तं०] ? जिसके मन में किसी के प्रति ममता हो । २ अभिमानी । ३ कर्म । कृपण ।

ब्रह्मत्व—पुं० [सं० मम+त्व] ? 'मम' का भाव । ममता । अपनानपन । २ स्नेह । ३ अभिमान । घमट ।

ब्रह्मनून—वि० [अ०] कुनकृत्य । अनुग्रहीत ।

ब्रह्मरक्षी—स्त्री० [फा० मुब्राकी] ? मुब्राकबादी । बर्बाई । २. बचावा ।

ब्रह्मरी—स्त्री० [म० बरबरी] चतुर्भुजी । बर्बाई ।

ब्रह्मरक्षी—स्त्री०—मपु-ब्रह्मवीर ।

ब्रह्मता—पुं० [हिं० मामा] मामा का घर । ननिश्रीग ।

ब्रह्मिया—वि० [हिं० मामा ; इया (प्रत्य०)] जो सब में मामा या मामी के स्थान पर पड़ता हो । ममेग । जैसे—भ्रमिया मनु, भ्रमिया सातु ।

ब्रह्मिन्धार—पुं०—मामिशीग ।

ब्रह्मिणी—पुं० [हिं० मामा ; शीग (प्रत्य०)] मामा का घर । मामाना ।

ब्रह्मिणी—पुं०—मामला ।

ब्रह्मिणी—पुं० [अ० मामीरान] हलदी की जाति के एक पीपे की जड़ जिसकी कई जातियाँ होती हैं । यह आण के रोगों की बहुत अच्छी औषधि मानी जाती है ।

ब्रह्मोला—पुं० [देश०] ? धोविन नामक छोटा पत्थी जिसके पेट पर काली धारियाँ होती हैं । २ छोटा, प्याग बच्चा ।

ब्रह्मा—पुं० [अनु०] ? विषयो का स्तन । छाती । २ जल । पानी । (छोटे बच्चे)

† पुं०—मामा ।

सर्वक—पुं० [म० मुनाक] चन्द्रमा ।

सर्वक-मुख—वि० [हिं० मयक ; मुख] [स्त्री० मयकमुयी] चन्द्रमा के समान मन्दर मुखवाला ।

सर्वद—पुं० [सं० मुपेर्] ? देर । मिह । २ रामकी सेना का एक बन्दर ।

सर्वी—स्त्री० [देश०] लोहे की वह छोटी सामी जो गाड़ी में चक्के की नाभि के दोनों ओर उम छेद के मूँद पर लौदकर बैठाई जाती है जिसमें घूरे का सिगा रहता है ।

सर्व—पुं० [सं०/वद्] (शोध जाना) ; अच्] [स्त्री० सर्वी] ? ऊँट । २ लच्छर । ३ घोडा । ४ आराम । सुख । ५. एक प्राचीन देश का नाम । ६ पुराणानुसार एक प्रसिद्ध दानव जो बहुत बड़ा शिल्पी था । इसे अमुरी और देव्यों का शिल्पी मानने हैं । कहते हैं कि मन्वन्दी इसी की कन्या थी । ७ अमेरिका के मोक्सिको नामक देश के प्राचीन मूल अधिवासी जो प्राचीन काल में उन्नत और सम्य समझे जाते थे ।

प्रत्य० [स०] तद्धित का एक प्रत्यय जो तद्रूप बिकार और प्राप्त्वं अर्थ में शब्दों के साथ लगाया जाता है। और जो नीचे लिखे अर्थ देता है—

१. किलो बीज या बात से अच्छी तरह पूर्ण। मरा हुआ या युक्त। जैसे—आनन्दमय। २. आचार या आवय के रूप में होनेवाला। जैसे—अन्नमय कोष, प्राणमय कोष।
स्त्री० दे० 'मी' (शराब)।

मयमल—पु० [सं० मंदकल, प्रा० मयमल] मत हाथी। मदमस्त हाथी।

मयमीना—स्त्री०—मैत्री (मित्रता)।

मयम—पु० [सं० मयम] कामदेव।

मयमीना—स्त्री०—मैत्री।

मयमंत, मयमल—वि० [सं० मयमल] मस्त। मयमंत।

मय-सुता—स्त्री० [सं० व० त०] मय दानव की कन्या, प्रन्वोदरी।

मयमस्त—वि० [अ०] १. हाथ में आया हुआ। प्राप्त। लब्ध।

मया—स्त्री० [सं० √मय्+कः टाप्] विकिस्ता। हलाज।

स्त्री० [सं० माया] १. माया। भ्रमजाल। २. मरता के कारण होनेवाला स्नेह। प्रेम का पाया या बन्धन। ३. अनुग्रहपूर्ण अनौषध। प्रेम-भाव। उदा०—जा कहूँ मया करहु मलि सोई—जायसी। ४. जप्यु। मसार। ५. जीवनी-सहित। प्राण। ६. सांसारिक धन-सम्पत्ति।

मयाजिय—वि० [सं० मायाजीव] १. जिसके मन में माया या मोह हो। २. अनुग्रह या कृपा का भाव रखनेवाला।

मयार—वि० [सं० माया, हिं० माया] [स्त्री० मयारी] दयाई। दयालु।

मयारी—स्त्री० [देवा०] १. बहु शाखा या धरन जिसपर हिंडोले की रस्सी लटकवाई जाती है। २. धरन।

मयाकां—वि०—मयार (दयाई)।

मयी—स्त्री० [सं० मय] १. डोण्टी ऊँटीनी।

अव्य० सं० 'मय' का स्त्री०। जैसे—द्वयामयी माता।

मयु—पु० [सं० √मय् (मयन करना)। कु वा √मि (मान करना)। +उ] १. किन्नर। २. मृग। हिरन।

मयुराज—पु० [सं० व० त०] कुंजरी।

मयूक—पु० [सं० √मा (मान) +ऊल, मय्+आदेश] १. किरण।

रदिस। २. चमक। दीप्ति। ३. प्रकाश। रोशनी। ४. ज्वाला।

लपट। ५. शोभा। ६. कौटा या कील। ७. पर्वत। पहाड़।

मयूर—पु० [सं० मयू०/र (शब्द)+क, पूर्वी० सिद्धि] [स्त्री० मयूरी] १. मोर। २. मयूर-शिखा नामक क्षुप। ३. पुराणानुसार सुमेरु पर्वत के अंदर का एक पर्वत।

मयूरक—पु० [सं०] १. अथामार्ग। चिचडा। २. रूयिया। ३. मयूर। मोर। ४. मयूर। शिखा नामक क्षुप।

मयूरकेयु—पु० [सं० व० स०] स्कन्द का एक नाम।

मयूर-गति—स्त्री० [सं० व० स०] पौषीस अक्षरी की एक वृत्ति जिसके प्रत्येक चरण में आदि में पाँच यण्य, फिर मयण, यण्य और अन्त में मयण होता है। (म य य य य म य म)।

मयूरगामी (मिम्)—पु० [सं० मयूर/मम् (आना) +गिनि] मयूर पर सवार करनेवाले कातिकेय।

मयूर-नीचक—पु० [सं० व० स० +कन्, ह्रस्व] दूतिया।

मयूरभूङ्गा—पु० [सं० व० स०] मयूर शिखा।

मयूरभूङ्गा—स्त्री० [सं० मयूरभूङ्गा+टाप्] मयूर शिखा नामक क्षुप।

मयूरजंब—पु० [सं० व० स०] सोनापाड़ा। स्तोनाक।

मयूर-मूषक—पु० [सं० व० त०] एक प्रकार का नाच जिसमें बिरकन अधिक होती है।

मयूर-मूषक—पु० [सं० व० त०] नलाघात। नवभत।

मयूर-रथ—पु० [सं० व० स०] कातिकेय। स्कद।

मयूर-शिखा—स्त्री० [सं० व० स०] मोर शिखा नामक क्षुप।

मयूरिका—स्त्री० [सं० मयूर+कन्, टाप्] १. अंबटा। मोहया।

२. एक प्रकार का बहरीला कोड़ा।

मयूरेश—पु० [सं० मयूर-ईश, व० त०] कातिकेय।

मवेस्वर—पु० [सं० मय-ईस्वर, व० त०] मय दानव।

मरक—पु०—मकरंद।

मर—पु० [सं० √मृ (मरण)। +अप्] १. मृत्यु। २. मृत्यु-लोक।

ससार। ३. पृथ्वी।

स्त्री०—मृता।

*वि० १. जो मरता या मर सकता हो। मरणशील। २. मृतक।

मरक—पु० [सं० √मृ (मरण)। +अप्। कन्] लोक में फलनेवाला कोई ऐसा घातक या सकामक रोग जिसके कारण बहुत से लोग जल्दी मर जाते हैं। मरी। महामारी। (ऐपिडेमिक)

[स्त्री०] [हिं० मरक] १. भेद। रहस्य। २. आकर्षण। सिखाव।

३. मन में दबा रहनेवाला द्वेष या वैर।

मुहा०—मरक काढ़ना—बदला लेना। वैर चुकाना।

४. मन की उमंग या हौसला। ५. दे० 'मरक'।

मरकज—पु० [अ० मरकज] १. वृत्त का केन्द्र। २. कोई केन्द्र स्थल, विशेषतः व्यापारिक केन्द्रस्थल। ३. राजधानी।

मरकजी—वि० [अ० मरकजी] केन्द्र-सम्बन्धी। केन्द्रीय।

मरकजी—पु०—मरकजी।

मरकनी—पु० [सं० मरकन्/वृ (तरना)+ठ] पसा नामक रत्न।

मरकताल—पु० [देवा०] समुद्र की तरंगों के उतार की सबसे अन्तिम अवस्था। माटा की चरम अवस्था जो प्रायः अनावस्था और सूनिमा से दो-चार दिन पहले होती है।

मरकतां—वि०—मरक-व्यता।

†अ०—मृङ्काना।

†सं०—मृङ्काना।

मरक-विभाष—पु० [सं० व० त०]—महामारी विज्ञान।

मरकहा—वि० [हिं० मारना+हा (प्रत्यय०)] [स्त्री० मरकही] मारनेवाला (घण्ट)।

मरकतां—सं० [हिं० मरकना] १. दबाकर बूर करना। इतना दबाना कि मरमराहट का शब्द उत्पन्न हो। २. दे० 'मृङ्काना'।

मरकी—स्त्री० [हिं० मरना] १. मरी। महामारी। २. मृत्यु।

मरकूम—वि० [अ० मरकूम] लिखित। लिखा हुआ।

मरकौटी—स्त्री० [देवा०] एक प्रकार की मिठाई।

मरकतां—वि०—मरकना (मरकहा)।

मरकतां—वि० [हिं० मारना+कता (प्रत्य०)] जल्दी मृत्से में धाकर

मार बँटनेवाला। मरकहा। जैसे—मरखना बैल या साँड़।
 २. (व्यक्ति) जिसे मारने-पीटने की आबत पड़ गई हो।
 मरकच—पु० [हि० मरकच] १. बड़ जूटा जो कातर मे गाड़ा जाता है। २. दे० 'माल खच'।
 मरखीका—वि० [हि० मरा+खाना] [स्त्री० मरखीकी] मरे हुए जीवों का मांस खानेवाला।
 वि० [हि० मार+खाना] [स्त्री० मरखीकी] जो प्रायः मार खाते रहने का अभ्यस्त हो। बहुत मार खानेवाला।
 मरखजा—वि० [हि० मरकन+पीजना] [स्त्री० मरखजी] मला-दला। मसला हुआ। मसित-दक्षित।
 पु० =मरगजा।
 मरखी—स्त्री० [हि० मरना+वि० फा० मर्ग] महामारी। मरी।
 मरखोल(ला)—पु० [अ०] गाने मे ली जानेवाली गिट्ठरी। खर-कपन। (मयीत)
 क्रि० प्र०—मरना।—लेना।
 मरखट—पु० [स०] बड़ स्थात ढाँड़ी जिताएँ जलती हैं।
 वि० १. मरकट। ३. दे० 'मनहूस'।
 मरखा—पु० =मिचं।
 मर-खिरियाँ—स्त्री०—उल्लू (पक्षी)।
 मरखोआ—पु० [देश०] एक प्रकार की तरकारी जिसका व्यवहार यूरोप मे अधिकता से होना है।
 मरख—पु० [अ० मर्ख] १. रोमा। बीमारी। २. खराब आदत। बुरी टेंव। लत।
 मरखा*—स्त्री० [स० मर्यादा] १. मर्यादा। २. सीमा। हद। ३. प्रतिष्ठा। सम्मान। ४. सामाजिक परिपाटी, रीति या विधान। ५. परिमाण। माप।
 मरखाबा—स्त्री०—मरखाव (मर्यादा)।
 मरखिया—वि० [हि० मरना+जीना] १. एक बार मरकर फिर से जीवनाला। २. मृत-प्राय। ३. जो मरने-जीने की परखाने करता हो। पु० समुद्र तल पर पड़ी हुई वस्तुएँ निकालनेवाला योताखोर।
 मरखी—स्त्री० [अ० मर्खी] १. इच्छा। कामना। २. किमी काम, बात या व्यक्ति के प्रति होनेवाला अनुकूल मनोभाव या वृत्ति। जैसे—हम तो आपकी मरखी से ही यह काम करेंगे। ३. अनुज्ञा। अनुमति। मुहा०—मरखी मिलना या पदना=(क) एक राय होना। सहमत होना। (ख) स्वभाव या प्रवृत्ति का एक-सा होना।
 मरखीबा—वि०, पु० =मर-खिया।
 मरख—पु० [स०/मू (मरना)+स्युट्+जन] १. मरने की क्रिया या भाव। मीत। २. साहित्य मे एक सचारी भाव जो विरुद्धी की उस अवस्था का सूचक होता है जब वह विरुद्ध मे मरणासन्न-सा रहता है।
 मरख-मति—स्त्री० [प० त०] आभावी या जन-सम्ख्या के विचार से उसके अनुपात मे होनेवाली मृत्युओं की दर या हिसाब। (डेथ रेट) जैसे—अनुक देल की मरख-मति धीरे धीरे घट (या बढ़) रही है।
 मरखधर्मा—वि०—मरखशील।
 मरख-समायक—पु० [म० ध० त०] व्यक्तित्व का मरख सूचित करनेवाला प्रमाण-पत्र।

मरख-शील—वि० [स० ध० त०] मर जाना जिसका धर्म या स्वभाव हो। जो अन्त मे अवश्य मरता हो। मरख-धर्मा।
 मरख-शुलक—पु० [स० ध० त०] दे० 'मृत्युकर'।
 मरखाशला—स्त्री० [स० मरख-आशला, ध० त०] शीघ्र मरने की इच्छा। जल्दी मरने की कामना। (जैन)
 मरखाशौच—पु० [स० मरख-अशौच, ध० त०] घर मे किसी की मृत्यु होने के कारण सम्बन्धियों आदि की लगनेवाला सूतक। अशौच।
 मरखीय—वि० [म० मरख+छ-ईय] १. जो मरने की हो या मरने के समीप हो। मर्यं। २. जिसका मरना अवश्यमान हो।
 मरखोम्युल—वि० [स० मरख-उम्युल, ध० त०] जो मर रहा हो या जल्दी मरने को हो। मृत्युवाला।
 मरत—पु० [स०/मू (जाल)+अतृण, गुण] मृत्यु। मीत।
 मरतबा—पु० [अ० मरतं] १. पद। पदवी। २. दका। पारी। बार। जैसे—दूसरी मरतबा।
 मरतबान—पु० [स० अमृतबान] चीनी मिट्टी का बना हुआ एक प्रसिद्ध आधान।
 मरता—वि० [हि० मरना] जो मरने के सन्निकट हो। जैसे—मरता क्या नहीं करता। (कह०)
 पद—मरते जैसे—बहुत ही कठिनता से और जैसे-तैसे। मरते बच तक—आण निकलने के समय तक। जीवन के अन्तिम क्षणों तक। मरते मरते=(क) ठीक मृत्यु के समय। जैसे—(क) वह मरते-मरते यह बात कह गया था। (ख) ठीक मृत्यु के समय तक। जैसे—वह मरते मरते मर गया, पर कमी किसी से दबा नहीं।
 मरह*—पु० [फा० मर्ह] १. पुरुष। २. बीर पुरुष।
 मरहदी—स्त्री० [हि० मर्ह+दी (प्रत्यय)] १. मनुष्यत्व। आदमीयत। २. बहादुरी। वीरता।
 मरहम—पु० =मर्दन।
 मरहना—स० [स० मर्दन] १. मसलना। २. ध्वस्त या नष्ट करना। ३. घृणना। मोड़ना। सानना।
 मरहनिया—पु० [हि० मर्दना] बहु सेवक को बड़े आदमियों के अग्रे में तेल आदि भसा करता है। मालिश करनेवाला आदमी।
 मरहामगी—स्त्री० [फा० मर्दानी] १. मरद अर्थात् पुरुष होने की अवस्था या भाव। पुरुषत्व। २. बीरता। शूरता।
 मरहाना—वि० [फा० मर्दान] [स्त्री० मरदानी] १. मरद या पुरुष-सम्बन्धी। पुरुष या पुरुषों का। जैसे—मरदना लिबास, मरदानी पीसाक। २. मरदों जैसा। बीरो जैसा। जैसे—मरदना बार। पु० मर-बीर।
 मरदी—स्त्री० [फा० मर्दी] १. मनुष्यता। २. पीष ३. काम वासित। जैसे—ना-मरदी।
 मरदुआ—पु० [फा० मर्द] मरद या पुरुष के लिए अपेक्षा-सूचक सत्ता। (स्त्रियाँ)
 मरदुय—पु० =मर्दम (आदमी)।
 मरदुह—वि० [अ० मर्द] १. निकासी हुआ। बहिष्कृत। २. सिर-रुक्त। ३. पाजी। लुच्चा। ४. नीच।

पू० बहुत ही सुख या हीन व्यक्ति ।
 मरना—स्त्री०—मरण ।
 मरना—पु० [सं० मरण] १. जीव-जंतुओं या प्राणियों के शरीर में से जीवनी शक्ति या प्राण का सदा के लिए निकल जाना जिसके फलस्वरूप उनका सभी शारीरिक क्रियाएँ या व्यापार बन्द हो जाते हैं । आगु या जीवन का अंत या समाप्त होना । मृत्यु को श्रावण होता । जान निकलना । जैसे—महाभारी से (या मुझ में) लोगों का मरना ।
 पशु—मरना—जीना । (केसे स्वतंत्र पद)
 मुहा०—मरने तक की छुट्टी (या फुरसत) न होना—काम की अधिकता के कारण तनिक भी अवकाश न होना । काम को भी संस लेने या सुस्ताने का समय न मिलना ।
 २. बनस्पतियों, बूझों आदि का मुंहला या मृतशमकर इस प्रकार मृत्यु जाना कि फिर वे मिलने-मिलने, फूलने-फलने या तुरे-मरे रहने के योग्य न हो सकें । जैसे—अधिक बरसी पड़ने या बर्षा न होने से बाग के बहुत से पीछे मर गये ।
 विशेष—प्राणियों और बनस्पतियों की उक्त प्रकार की अवस्था प्राकृतिक कारणों से भी होती है और नैतिक कारणों से भी ।
 ३. इतना अधिक कष्ट या दुःख भोगना कि मानों शरीर का अंत ही जाने की नीबत या बारी आ रही हो । जैसे—उन्होंने जन्म भर मर मर कर लाखों रुपये कमाये पर वे धन का सुख न भोग सके । उदा०—देव पूजि पूजि हिंदू मूए (मरे) तुलक मूए (मरे) हूज जाह ।—कबीर ।
 ४. किसी काम या बात के लिए बहुत अधिक चिन्तित या प्रयत्नशील रहना और परिश्रान या हैरान होना । जैसे—हम तो लड़के के सुधार के लिए मरे जाते हैं और वह ऐरे-मारे लोगों के साथ ब्रजता-किरता रहता है ।
 मुहा०—(किसी के लिए) मरना-बचना—बहुत अधिक कष्ट सहना । उदा०—बहि बहि मरु पबहु निज स्वार्थ, जग की बड सखी ।—कबीर ।
 मर विभवा—(क) प्रयत्न करते-करते बहुत बुरी बधा में पहुँचना या दुःख भोगना । जैसे—हम तो इस काम के लिए मर मिटे, और आपके लेखें अभी कुछ हुआ ही नहीं । (ख) पूर्ण रूप से अपना अस्त या विनाश करना । जैसे—हमने तो ठाग लिया है कि देस-सेवा के लिए मर मिटेंगे । मर रहना—थक या हाकर हलाश ही जाना और कुछ करने-भरने के योग्य न रह जाना । मरते-मरते—प्रयत्न करते-करते असह्य कष्ट भोगना । (किसी काम या बात के लिए) मरे जाना—(क) इतना अधिक चिन्तित या व्याकुल होना कि मानों उसके बिना जीवन या शरीर चल ही न सकता हो । जैसे—तुम तो मुकाम बनवाने के पीछे मरे जाते हो । (ख) बहुत अधिक कष्ट या दुःख भोगना । जैसे—हम तो मुझ बुकाते बुकाते मरे जाते हैं । उदा०—अब तो हम संस लेने में मरे जाते हैं ।—कोई शायर । (ग) ऐसी स्थिति में आना या होना कि मानों शरीर में प्राण ही न हों । मुठके के समान अवस्थय या निश्चिन्त ही जाना । जैसे—बह तो लज्जा (या संकोच) के मारे मरा जाता है और तुम उसके सिर पर चढ़े जा रहे हो ।
 ५. व्यावहारिक क्षेत्र में, किसी काम या बात को सबसे अधिक आवश्यक या महत्त्वपूर्ण समझते हुए उसके लिए सब प्रकार के कष्ट भोगने या त्याग करने के लिए प्रस्तुत रहना या होना । जैसे—मले

आयवी तो अपनी इच्छत (या बात) पर मरते हैं । १. श्रु गारिक क्षेत्र में किसी के प्रेम में इतना अधिक अर्पण होना कि उसके विरुद्ध में मानों प्राण निकल रहे हों या जीना हुनकर ही रहो हो । किसी के प्रेम में बहुत ही विकल या विव्वल रहना (प्रायः 'पर' विपरित के साथ प्रयुक्त) । जैसे—वे जन्म भर सुन्दर स्त्रियों पर मरते रहे । ७. भारतीय खेलों में, खेलाडियों का किसी निश्चित क्रिया, नियम या विधान के अनुसार या फलस्वरूप खेल वे सम्मिलित रहने के योग्य न रह जाना । जैसे—कबड्डी के खेल में खेलाडियों का मरना । ८. कुछ विधिष्ठ खेलों में गोटी, मोट्टे आदि का उक्त प्रकार से खेलें जाते योग्य न रह जाना और बिसतत आदि पर से हटा दिया जाना । जैसे—बीसर के खेल में गोटी या शतरंज के खेल में जैंड, चौड़ा या बजीर मरना । ९. किसी प्रकार मट्ट होना । न रह जाना । जैसे—आँसो का पानी मरना, अर्थात् लज्जा, शील, सकोच आदि न रह जाना । १०. किसी बीज का किसी दूसरी बीज में या किसी स्थान में इस प्रकार मिलीन होना या समाना कि ऊपर या बाहर से जल्दी उसका पता न चले । जैसे—छल या बीवार में पानी मरना । ११. किसी पदार्थ का अपनी क्रिया, शक्ति आदि से रहित या हीन होना । जैसे—आग मरना (बुझना या मन्द होना), पानी छिड़कने पर बूक मरना, (उड़ने योग्य न रह जाना या बँड जाना), १२. मन या शरीर के किसी वेग का दबकर नहीं के समान होना । बहुत ही पीमा होना या मन्द पड़ना । जैसे—भूख मरना, व्यास मरना, उल्लाह या मन मरना । १३. किसी से पराजित या परास्त होकर उसके अर्पण या वश में होना । (कम०)
 वि० [स्त्री०मर्त्त्य] १. मरनेवाला । २. मरण या मृत्यु की ओर अग्रसर होनेवाला । जो जल्दी ही मरने को हो । मरणासन्न या मरणोन्मुख । उदा०—आहि उग्र क्यों न, मति भई मरती ।—सुर ।
 मरना-जीना—पु० [हि०] गृहस्त्री में प्रयत्न होती रहनेवाली किसी की मृत्यु, सत्यान की उपरति, अनेक, व्याहृति कृत्य विनये आसदादी के लोगों के यहाँ आना-जाना पड़ता है । जैसे—मरना-जीना तो सभी के यहाँ लाग रहता है ।
 मरनि—स्त्री०—मरती ।
 मरनी—स्त्री० [हि० मरना] १. मृत्यु । मौत । २. वह स्थिति जिसमें घर का मनुष्य मर हो और उसके अन्त्येष्टि आदि संस्कार हो रहे हों । जैसे—मरनी-करनी तो सबके घर होती है । ३. किसी के मरने पर मनाया जानेवाला शोक । ४. बहुत अधिक कष्ट, दुःख या परेशानी । पशु—मरनी-करनी—मृत्यु और मृतक की अन्त्येष्टि क्रिया ।
 मर-दुरी—स्त्री० [हि० मरना ।-पुरी]—यमपुरी । उदा०—तू मरपुरी न कबहुँ देखी ।—जायसी ।
 मरबुकी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार का पहाड़ी कन्द जिसके टुकड़े गज गज भर गहरे गड्डे खोद कर बोये जाते हैं ।
 मरबुका—वि० [हि० मरना+बुका] १. मूल का मारा हुआ । २. मुसकड़ । ३. कवाल ।
 मरब—पु०—मर्य ।
 मरब—पु० [का० मर्मर] एक तरह का सफेद पत्थर ।
 मरबरा—वि० [अनु०] जो शहज में टूट जाय । जरा या दबाये पर मरकर का शब्द कर के टूट जानेवाला ।

पु० एक प्रकार का पत्थी ।

पु० [हि० मल या अनु०] वह पानी जो थोड़ा खारा हो ।

बल्लकी—स्त्री० [दिश०] छोटे आकार का एक मूल जिसकी लकड़ी कड़ी और बहुत टिकाऊ होती है ।

बलराना—अ० [अनु०] दूटने के समय दाब पाकर भरभर शब्द करना । स० इस प्रकार तोड़ना या दमना कि भरभर शब्द हो ।

बलनी—वि० [स० मर्म] किसी का मर्म जाननेवाला । मर्मज्ञ ।

बलम्भ—पु०=मर्म ।

बलम्भत—स्त्री० [अ०] १ अत, टूटी-फूटी अथवा बिगड़ी हुई वस्तु को फिर से ठीक करके अच्छी स्थिति में लाने का काम । (रिपेयर्स) २. लाक्षणिक अर्थ में, वह मार-पीट जो किसी को सीधे रास्ते पर लाने के लिए की जाय ।

बलम्भत-तलब—वि० [अ०] जिसमें मरम्मत की आवश्यकता हो । मरम्मत किये जाने के योग्य ।

बलम्भती—वि० [हि० मरम्मत] १. (पदार्थ) जिसकी मरम्मत करने की आवश्यकता हो । मरम्मत-तलब । २. (पदार्थ) जिसकी मरम्मत की जा चुकी हो ।

बलभ—पु० [दिश०] दो हाथ लम्बी एक प्रकार की मछली ।

बलबट—स्त्री० [हि० भरना] वह माफी जमीन जो किसी के मारे जाने पर उसके उत्तराधिकारियों को भरण-पोषण के लिए दी गई हो ।

स्त्री० [दिश०] पट्टए की कच्ची छाल जो निकालकर सुखाई गई हो । सत का उलटा ।

बलबा—पु०=मधवा (पीसा) ।

बलबासा—स० [हि० मारना का प्रे०] १ किसी को मारने-पीटने का काम किसी दूसरे से कराना । २ बध या हत्या कराना । (बाजारू) सव्यो कि०—डालना ।

बलसा—पु० [स० मारिसा] एक प्रकार का साग जिसकी पत्तियाँ योल, धुरीदार और कोमल होती हैं ।

बलसिता—पु० [अ० मसिस] १. कर्बला के मैदान में घाहीव हौनेवाले इगम हुसेन और उनके साथियों की स्मृति में लिखा हुआ शोक-गीत । २. किसी मृत व्यक्ति की स्मृति में लिखा हुआ शोक-गीत । ३. रोना-पीटना ।

कि० प्र०—पढ़ना ।

बलपूट—पु०=मरपट ।

पु० दे० 'मोट' (कदप्र) ।

बलपूटा—पु० [स० महाराष्ट्र] १. उत्तरीय साम्राज्यों के एक माणिक छद का नाम जिसमें १०, ८ और १२ पर विभाम होता है तथा अंत में एक गूह और लघु होता है । २. दे० 'मराठा' ।

बलपूठा—पु० दे० 'मराठा' ।

बलपूठी—वि०, स्त्री०=मराठी ।

बलपूठा—अव्य० [अ० महुँका] १ शाबाश । धन्य ।

बलपूष—पु० [अ० महुँम] औषधियों का वह गाढ़ा और चिकना लेप जो धाब या फोड़े पर उसे भरने या ठीक करने के लिए लगाया जाता है ।

कि० प्र०—लगाना ।—लगाना ।

पष—मरुह-गुही—(क) आघात की चिकित्साार्थ धाब पर मरुहम

और पट्टी लगाना ।

२ जीर्ण-शीर्ण या टूटी-फूटी चीज की साधारण मरम्मत ।

मरुहमत्—स्त्री० [अ० महुँमत] १. कृपा । अनुग्रह । २. कृपापूर्वक किया जानेवाला प्रदान ।

मरुहला—पु० [अ० महुँक] १. वह स्थान जहाँ यानी रात के समय ठंहरते हैं । पहाब । टिकान । २. बटिया । सोपड़ी । ३. दरजा । मरातिब । ४. कोई बहुत कठिन या विकट काम ।

कि० प्र०—डालना ।—तै करना ।—निपटाना ।—पढ़ना ।

मरुहून—वि० [अ० महुँन] शष्पक या रंहन रखा हुआ ।

मरुहूस—वि० [अ० महुँम] [स्त्री० महुँमा] जो मर गया हो । दिवंगत । स्वर्गवासी ।

मराठा—पु० [स० महाराष्ट्र] १. महाराष्ट्र देश का निवासी । २. महाराष्ट्र देश का अन्नाह्वान निवासी ।

मराठी—स्त्री० [स० महाराष्ट्री] महाराष्ट्र देश की भाषा ।

वि० मराठो का ।

पष—मराठी चित्त-चित्त—ऐसी भद्दी अवस्था जिसमें हर काम में व्यर्थ बहुत देर लगती हो ।

मरातिब—पु० [अ०] १. उत्तरोत्तर या क्रमात् आनेवाली अवस्थाएँ । २. अधिचार युक्त पद । दरजा । ३. सहा । पूछ । ४. मकान ।

मजिल । जैसे—ठीक मरातिब का मकान । ५. झडा । ध्वजा । पताका । (किसी के उच्च पद को सूचक) ६. दे० 'माही मरातिब' ।

मराना—स० [हि० मारना का प्रे०] १ मारने का काम किसी दूसरे से कराना । मरवाना । २. समोच कराना । (बाजारू)

मराप—पु० [स०] १. एकाह यज्ञ । २. एक प्रकार का साम ।

मरापल—वि० [हि० मारना+आयल (प्रत्य०)] १. जिनमें मार खाई हो । पीटा हुआ । २. जिनमें कुछ भी तत्त्व या जीवनी-शक्ति न हो । निस्सार । मरिपल ।

पु० घाटा । टोटा । (सब०)

कि० प्र०—आना ।—पढ़ना ।—लगाना ।

मरास—पु० [स० म+आलम्] १. एक प्रकार की बतल जो हलकी ललाई लिये संकेत रंग की होती है । २. हस । ३. कारकब पत्थी । ४. घोषा । ५. हाथी । ६. अनार का बाग । ७. काजल । ८. बादल । मेघ । ९. हुट्ट या पाजी व्यक्ति ।

मरासी—पु०=मिरासी ।

मरिब—पु० १. दे० 'मरिब' । २. दे० 'मरद' ।

मरिखम—पु०. माल खम ।

मरिष—पु० [स० मरिष (मरण)+इव, बा०] मरिष ।

मरिषा—पु० [स० मरिष] १. बड़ी लाल मिर्च । २. मिर्च ।

मरिषम—स्त्री० [अ० मरिष] १. वह बालिका जिसका विवाह न हुआ हो । कुमारी कन्या । ३. पतिव्रता और साध्वी स्त्री । ३. ईसा मसीह की माता का नाम ।

पष—मरिषम का पंजा—एक प्रकार की सुगन्धित वनस्पति जिमका आकार हाथ के पंजे का-सा होता है ।

मिषेब—प्राय इसका सूखा हुआ पत्ता प्रसव के समय प्रसूता के सामने पानी में रख दिया जाता है जो धीरे धीरे फैलने लगता है । कहते हैं कि

इसे देखते रहने से प्रसन्न जल्दी होता है। पर वास्तव में प्रसूता का ध्यान बढ़ाने के लिए ऐसा किया जाता है।

कारिकल—वि० [हि० मरना+इकल (प्रत्यय)] १. इतना अधिक दुर्बल कि मरा हुआ-सा जान पड़े। बे-बल।

यह—मरियल-मृदु—कमगौर तथा सुस्त आवनी।

मरी—स्त्री० [सं० मारी] एक ऐसा शासक और संक्रामक रोग जिनमें एक साथ बहुत से लोग मरते हैं। मरक। महामारी।

स्त्री० [हि० मारना] एक प्रकार का मृत।

स्त्री० [देवा०] साबूदाने का पेड़।

मरीचि—पुं० [सं० मृ+चि] १. एक प्रसिद्ध प्राचीन ऋषि जो मृग के पुत्र और कश्यप के पिता थे। २. एक मस्तक का नाम।

विशेष—मरीचि, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और बसिष्ठ ये सात सप्तवि कहलाते हैं।

३. एक प्राचीन मान जो ६ ब्रह्मण्डों के बराबर होता है। ४. किरण। मयूख। ५. कान्ति। चमक। ६. दे० 'मरीचिका'।

मरीचिका—स्त्री० [सं० मरीचि+कन्+टाप्] १. गरम की चिनी में बहुत तेज धूप के समय बालाचरण की विशिष्ट स्थितियों के कारण दिखाई देनेवाले कुछ भ्रामक दृश्य। मृग-मृष्णा। जैसे—रेगिस्तान में दूरी पर जलाशय दिखाई देना या आकाश में नगर अथवा नन दिखाई देना।

विशेष—प्रायः ऐसे भ्रामक दृश्य जिनमें देखकर यात्री या पशु उन तक पहुँचने के लिए बहुत दूर तक चले जाते हैं पर अन्त में उन्हें थककर निराशा ही होना पड़ता है।

२. बहु स्थिति जिसमें मनुष्य व्यर्थ की आशा या कल्पना के कारण किसी क्षेत्र में बहुत आगे बढ़ता जाता और अंत में विफल-मनोरथ तथा हताश होता है। मृगमृष्णा। मृगमरीचिका। (मिराज) ३. किरण। मयूख।

मरीचि-गर्भ—पुं० [सं० ब० सं०] १. सूर्य। २. दल सावणि मन्वन्तर में होनेवाले एक प्रकार के देवताओं का गण।

मरीचि-जल—पुं० [सं० कर्म० सं०] मृग-मृष्णा।

मरीचि-नीय—पुं० [सं० कर्म० सं०] मृगमृष्णा।

मरीचिवाली (सिन्धु)—पुं० [सं० मरीचिवाला+इनि] सूर्य।

मरीची (सिन्धु)—वि० [सं० मरीचि+इनि] [स्त्री० मरीचिनी] जिसमें किरणें ही। किरण युक्त।

पुं० १. सूर्य। २. चन्द्रमा।

मरीच—वि० [सं० मरीच] [स्त्री० मरीचा] रोगी। बीमार।

मरीला—पुं० [स्पेनी० मेरिलो] एक प्रकार का बहुत मृदायुक्त ऊनी पतला कपड़ा जो मेरीना नामक भेड़ के ऊन से बनता है।

मर—पुं० [सं० मृ+उ] १. ऐसी भूमि जहाँ जल न हो और केवल बड़का मैदान ही। मरस्थल। रेगिस्तान। २. ऐसा पर्वत जिससे जल न होता हो। ३. मारवाड़ प्रदेश। ४. मरुका नामक पीषा। ५. नरकानुर का साषी एक अक्षर।

मरणा—पुं० [सं० मरण] बन-मुलसी की जाति का एक पीषा जो बागों में लगाया जाता है।

↑ पुं० [?] १. बेंडेर। २. लकड़ी या धरन जिसमें हिंडीका लटकाना जाता है। ३. मीठ। पीष।

मरक—पुं० [सं० मर+कन्] १. मोर। २. मयूर। ३. एक प्रकार का हिरन।

↑ स्त्री० [हि० मुद्रकाना] १. मुद्रकने की किया या भाव। २. उत्तैवना। **मरकसातर**—पुं० [सं० म० त०] रेगिस्तान।

मर-मृष—पुं० [सं० म० त०] मरस्थल या रेगिस्तान का कुञ्ज जिसमें जल नहीं होता।

मरक—पुं० [सं० मर/जन् (उत्पन्न करना)+उ] १. मरु नामक सुगन्धित द्रव्य। २. मसि का कल्ला।

मर-भास—स्त्री० [सं० मरज+टाप्] मरस्थल में होनेवाली इंद्रायण की जाति की एक लता।

मर-भासा—स्त्री० [सं० म० त०] मीठ।

मरुत—पुं० [सं० मृ+तत्] १. एक देवगण का नाम। देवों में इन्हें धर और वृषि का पुत्र कला है। २. राजा मनुष्य का एक नाम। ३. वायु। हवा। ४. प्राण। ५. सीता। स्वर्ण। ६. तीव्र।

७. मरुका नाम का पीषा। ८. ऋषिर्क। ९. गठितन। १०. अव-यम। ११. दे० 'मरुत'।

मरुतनाम—पुं०—मरुतान्।

मरुकर—पुं० [सं० म० सं०] राजमाष। उबड़।

मरुत्पथ—पुं० [सं० म० सं०] एक प्रकार के देव-गण जिनकी संख्या पुराणों में ४९ कही गई है।

मरुत—पुं० [सं० मरुत्+तत्] पुराणानुसार एक चन्द्रवंशी राजा जो महाराज करंवर का पीष और अश्वीकित का पुत्र था।

मरुत्क—पुं० [सं० मरुत्/तत् (हूँसा)+अच्] मरुका। (पीषा) **मरुत्पति**—पुं० [सं० म० त०] इन्द्र।

मरुत्पथ—पुं० [सं० म० त०,+अच् (प्रत्यय)] आकाश।

मरुत्पथ—पुं० [सं० मरुत्/पु (हूँसा)+अच्] सिंह। शेर। **मरुत्कल**—पुं० [सं० म० त०] घोडा।

मरुत्कली—स्त्री० [सं० मरुत्क+क्रीप्] धर्म की पत्नी जो प्रजापति की कन्या थी।

मरुत्कान् (मरुत्)—पुं० [सं० मरुत् क्वत्] १. इन्द्र। २. हनुमान्।

मरुत्सवर—पुं० [सं० म० त०,+उच् प्रत्यय] १. इन्द्र। २. अग्नि।

मरुत्सहाय—पुं० [सं० म० सं०] अग्नि।

मरुत्सुत—पुं० [सं० म० सं०] १. हनुमान्। २. भीम।

मरुत्थल—पुं०—मरुत्थल।

मरुत्वांशुक—पुं० [सं० मरुत्-जांवी, म० सं०] धौकनी।

मरुत्विष्ट—पुं० [सं० मरुत्-विष्ट, म० सं०] मृगुल।

मरुत्थ—पुं० [सं० मरुत्-थ, म० सं०] घोडा।

मरुत्थ—पुं० [सं० म० सं०] १. विट्कदिर। २. बबूल।

मरुत्थर्ष (मृ) —पुं० [सं० मरुत्-थर्ष, म० सं०] आकाश।

मरुत्थाह—पुं० [सं० मरुत्-थाह, म० सं०] १. पुत्रौ। २. व्याप।

मरुत्थिच—पुं० [सं० म० सं० त० या सं० सं०] ऊँट।

मरुत्थिच—पुं० [सं० म० सं०] मरुत्थल के बीच में कोई हरा-भरा क्षेत्र।

ऐसा छोटा उपजाऊ प्रदेश जो मरुत्थल में ही।

मरघवा (मरु) --पु० [सं० व० सं०, अनह्--आदेश] मरघूमि।
मरघवल।

मरघ-वर--पु० [सं० व० सं०] मारवाड।

मरघुनि--स्त्री० [सं० व० सं०] रेतीला तथा जल-विहीन प्रदेश।
रेगिस्तान।

मरघ-भूह--पु० [सं० व० सं०] करील।

मरघ-मलिका--स्त्री० [सं० व० सं०] मरघी की तरह का एक पतिवा जो
प्राय अंधेरे और ठंडे स्थानों में रहता है। यह फुदकता ही है, उड़ नहीं
सकता। कालखर का संभरण प्राय इसी के द्वारा है। (सैबपुलाई)

मरघना--अ०... मरघना (मरोडा जाना)।
सं०--मरोडना।

मरघ--पु० [सं० मरघ+वा (प्राप्त होता) +क] मरघा।

मरघक--पु० [सं० मरघ+क] ? दौना या मरघा नाम का पीछा।
२ मीनी नाम का कौटिला पेड़। ३ तिल का पीछा। ४ बाघ नामक
जंतु। ५ राहू ग्रह।

मरघा--पु०--मरघा।

मरघसंभव--पु० [सं० व० सं०] एक तरह की मूली।

मरघसंभवा--स्त्री० [सं० मरघसंभव+टाप्] १ महेश्वर वारणी। २. एक
प्रकार का लैर। ३ एक प्रकार का कनेर। ४ छोटा जवासा।

मरघवाल--पु० [सं० व० सं०] वह बहुत बड़ा प्राकृतिक मैदान जिसमें
मिट्टी की जगह बालू का रेत ही हो। रेगिस्तान। (डिक्टेट)

मरघवा--स्त्री० [सं० मरघ+वा (उठरना)+क+टाप्] छोटा जवासा।

मरु--वि० [सं० मेरु शब्द] मुश्किल। कठिन।

मरु--मरुक (करि) --अनेक प्रकार के उपाय करके और बहुत कठि-
नता में है। उदा०--सा कहें ती अब लौं बहराई केँ राखी स्वघर मरु
करि में है।--केवाव।

मरु० [सं० मरु०] सवती में एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक जाने में सता-
ती स्वरो का आरोह अवरोह करना। से० 'मरु०'।

मरुक--पु० [सं० व० सं०] (मरना)+ऊर्ण ? एक प्रकार का मृग। २
मूर। मोर।

मरुकभवा--स्त्री० [सं० मरु-उद्भव, व० सं०,+टाप्] ? जवासा। २
कपास। ३ एक प्रकार का लैर का वृक्ष।

मरुका--पु०--मरोडा।

मरुक--पु० [सं० मरु] गौरवकरा। मरुट।

मरोटी--स्त्री० [?] वह मोटी तथा मजबूत रस्सी जिससे खेतों में हेंगा खींचा
जाता है।

†स्त्री०--मराटी।

मरोड़--पु० [हि० मरोडना] ? मरोडने की क्रिया या भाव। २ मरो-
डने के कारण पडनेवाला बल। ३ किसी प्रकार का बुसाव-किराव
या बचकर।

पव--मरोड़ की भाव = बुसाव-किराव या बचकर की कोई भाव।
मुहा०--मरोड़ खाना=(क) बचकर खाना। (ख) उलझन में पड़ना।
४ दुल, व्यथा, दुर्भाग्य आदि के फलस्वरूप मन में होनेवाला शोक या
कष्ट।

मुहा०--मरोड़ खाना या गहना =अभिमान, शोक आदि के कारण

दुःख रहना।

५ अनपच के कारण पेट में रह-रहकर होनेवाली ऐंठन जिससे पीड़ा
भी होती है। मेचिसा।

मुहा०--मरोड़ खाना--पेट में ऐंठन और पीड़ा होना।

मरोडना--सं० [हि० मरोडना] ? किसी चीज में घुमाव, बल आदि डालने
के उद्देश्य से उसे कुछ जोर से घुमाना। जैसे--किसी का काम
मरोडना।

२ किसी चीज को ऐसी स्थिति में लाना कि उसमें कुछ तनाव या ऐंठन
आ जाय। जैसे--अंग मरोडना (अंगझाई लेना)। उदा०--सब अंग
मरोरि मुरी मन मे क्षरि पूरि रही त्य मैं न मई।--भुमान। ३
गरदन मरोडकर मार डालना। ४ पीडा देना। दुःख पहुँचाना।

मरोड़कलीं--स्त्री० [हि० मरोड़+कली] मुरा। अवतरनी।

मरोड़ा--पु०--मरोड़।

मरोड़ी--स्त्री० [हि० मरोडी] ? ऐंठन। घुमाव। बल। मरोड़।

२ कीचतानी। ३ उबटन, मँल आदि का वह पतला तथा बल खाया
हुआ छोटा टुकड़ा जो शरीर को मलने तथा रगड़ने पर छूटता है। ४
हाथ से मलकर बनाई हुई गीले आटे की बनी।

मरुं--पु० [सं० मरु (गति)+अप्] ? शरीर। देह। २ प्राण।
३ बचप।

मरुंक--पु० [सं० मरुं+कन्] ? मकड़ा। २ हड्डीवाली पत्नी।

मरुंठ--पु० [सं० मरुं+अट्] ? बदर। २ मकड़ा। ३ हड्डीवाली।
४ एक प्रकार का विष। ५ दोहे का वह भेद जिसमें १७ गुरु
और १४ लघु मात्राएँ होती हैं। ६ छप्पय का एक भेद।

मरुंठक--पु० [सं० मरुंठके कन्] ? बदर। २. मकड़ी। ३. एक
प्रकार की मछली। ४ मड़भा नामक कदम। ५ मकरा नामक
पास।

मरुंठ-सिंघुल--पु० [सं० मरुंठ+सं०] कुरील।

मरुंठपाल--पु० [सं० मरुंठ+पाल (बचाना)+पिञ्+अप्] सुधीव।

मरुंठ-पिपयलीं--स्त्री० [सं० व० सं०] अणामार्ग। चिचवा।

मरुंठ-प्रिय--पु० [सं० व० सं०] शिरकी का पेड़ और उसका फल।

मरुंठ-भास--पु० [सं० व० सं०] मकड़ी का जाल।

मरुंठ-बीर्ष--पु० [सं० व० सं०] हिंगुल।

मरुंठी--स्त्री० [सं० मरुंठ+ठीप्] ? बंदरी। मावा बन्दर। बँदरिया।
२ मकड़ी। ३ केवाँच। कौछ। ४ अणामार्ग। चिचवा। ५. अज-
मोदा। ६ एक प्रकार का करज। ७ छदशास्त्र में ९ प्रत्ययों में से
अन्तिम प्रत्यय जिनके द्वारा मांश के प्रस्तार में छद के लघु, गुरु, कला
और वर्णों की संख्या का परिज्ञान होता है।

मरुंठेडु--पु० [सं० मरुंठेडु, सं० सं०] कुचला।

मरुंठ--पु०--मरुकल।

मरुंर--पु० [सं० मरुं+अर्] भुगराज। अंगरा।

मरुंरा--स्त्री० [सं० मरुंर+टाप्] ? सुरग। २ तहखाना। ३ बरतना।

४. बीर्ष स्त्री।

मरुं--स्त्री०--मिर्ष।

मरुं--पु०--मरुट।

मरुं--स्त्री०--मरवी।

मर्त्त-**पुं०** [सं०√मृ (मरण्)+तल्] १ मनुष्य। २ दे० 'मर्त्यलोक'।
मर्त्तवा-**पुं०**=मरतवा।

मर्त्तबान्-**पुं०** [दक्षिणी बरमा के मर्त्तबान् नगर के नाम पर] १. चीनी मिट्टी आदि का बना हुआ एक प्रकार का पोलोकार आभारण। २. बागु आदि का बना हुआ कोई ऐसा लम्बा वाज जिससे दवाएँ, दासापनिक पदार्थ आदि रखे जाते हैं। ३ एक प्रकार का बहिषा केला।

मर्त्त-**पुं०** [सं० मर्त्त+पल्] १. मनुष्य। २. शरीर। ३ 'दे० मर्त्यलोक'।
मर्त्त-मर्त्त (मर्म्)-**वि०** [ब० सं०] मरणशील।

मर्त्तमूत्र-**पुं०** [ब० सं०] स्त्री० मर्त्यमूत्र, मर्त्य-मूत्र डीपू] क्लिष्ट।
मर्त्तलोक-**पुं०** [ब० सं०] यह संसार जिसमें सबको अंत में मरना पड़ता है।

मर्त्त-**पुं०** [फा० मि० सं० मर्त्त और मर्त्य] १. मनुष्य। प्राणी। २. पीछे से युक्त और बीर व्यक्ति। ३ पति। स्वामी।

वि० बीर तथा साहसी।

पद-**मर्त्त** आधारी=बीर पुरुष।

मर्त्तक-**वि०** [सं०√मृ (मृ) +भिच्+ङ्लुत्-अक] मर्त्तन करनेवाला।
मर्त्तनकारक।

मर्त्तन-**पुं०** [सं०√मृ+भिच्+ङ्लुत्-अन] १ शरीर पर कोई स्निग्ध पदार्थ या औषधि लगाकर मलने की क्रिया या भाव। २ इस प्रकार किसी चीज को मलना या रगड़ना कि वह क्षत-विक्षत हो जाय। ३ कुचलना। रीदना। ४ नष्ट-भ्रष्ट करना। ५ कुस्ती के समय एक क्लृप्त का दूसरे मल्ल को मर्त्तन आदि पर हाथों से बरसा लगाना। ६ रसेस्वरदर्शन के अनुसार अठारह प्रकार के रससंस्कारों में से दूसरा संस्कार। इसमें पाएँ आदि को औषधियों के साथ ञरल करते या षंटेते हैं। षोडशा। ७. पीसना या रगड़ना।

वि० [स्त्री० मर्त्तिनी] मर्त्तन करनेवाला (धो० के अन्त में)। जैसे-
मर्त्ति-मर्त्तिनी।

वि० [स्त्री० मर्त्तिनी] १ मर्त्तन करनेवाला। २ नष्टभ्रष्ट करनेवाला (धो० के अन्त में)। जैसे-
मर्त्त-मर्त्तनी।

मर्त्तना-**पुं०** [सं० मर्त्तन] १. मासिका करना। मलना। २ तीक्ष्ण-मरिदोकर नष्ट करना। ३ चूर-चूर करना। ४ अंग-भंग करना।
खंडित करना।

मर्त्त-बध्ना-**पुं०** [फा०] बहादुर। बीर।

मर्त्तबान्-**वि०** [फा०] पुरुषको (स्त्री)।

मर्त्तल-**पुं०** [सं०√मृ+ब, मर्त्त+ला लेना]+क] मृग्य की तरह का पुरानी चाल का एक बाजा। भाव-कल बंगला में 'मादल' कहलाता है।

मर्त्ताना-**वि०**, पुं०=मरदाना।
मर्त्तानशी-**स्त्री०**=मरदानशी।

मर्त्तित-**पुं०** [सं०√मृ+भिच्+स्त] १. जिसका मर्त्तन किया गया हो या हुआ हो। २. तीक्षा-फोड़ा हुआ। ३. ध्वस्त या नष्ट किया हुआ।

मर्त्त-**स्त्री०**=मरती।

मर्त्तपु-**पुं०** [फा०] मनुष्य।

मर्त्तमन्वतरी-**स्त्री०** [फा०] मनुष्य-मन्वता।

मर्त्तनी-**स्त्री०** [फा०] १ मनुष्यता। २ पीर। बीरता। ३. पुत्रत्व।

मर्त्त-**वि०** दे० 'मूरदत्'।

मर्म-**पुं०** [सं०√मृ+मिण्] १ स्वरूप। २ भेद। रहस्य। ३. मर्म-स्थान। ४ किसी बात के अन्तर छिपा हुआ तत्व। ५.

प्राणिया के शरीर में वह स्थान जहाँ आघात पहुँचने से अधिक वेदना होती है और मृत्यु तक की सम्भावना होती है। ६ हृदय।

मर्म-**वि०** [सं० मर्म+गम् (प्राप्त होना)+ङ] नृकीला तथा तीक्ष्ण।
मर्मवेधती (विण्)-**वि०** [सं० मर्म+हृन् (मारना)+पिणित्-पुं०] मर्म पर आघात करनेवाला।

मर्मघ्न-**वि०** [सं० मर्म+हृन् (मारना)+टक्, ह-घ] अत्यन्त कष्टप्रद।
मर्मघर-**पुं०** [सं० मर्म+घर् (प्राप्त होना)+ट] हृदय।

मर्मच्छिन्न-**वि०** [सं० मर्म+च्छिन् (छेदना)+किच्+दे० 'मर्मच्छेदी']।
मर्मच्छेदक-**वि०** [सं० ब० सं०] मर्मवेधक। मर्म भेदनेवाला।

मर्मच्छेदन-**पुं०** [सं० ब० सं०] १ प्राणघातन। जान लेना। २ मर्म-स्थल पर ऐसा आघात करना जिससे बहुत अधिक कष्ट हो।

मर्मच्छेदी (विण्)-**वि०** [सं० मर्म+च्छिन् (छेदना)+पिणित्] मर्मवेधी।
मर्मज्ञ-**वि०** [सं० मर्म+ज्ञा+क] किसी बात का मर्म या गूढ़ रहस्य जाननेवाला।

मर्मग्रहण-**पुं०** [सं० सं० सं०] ऐसा आघात या प्रहार जो मर्म स्थान पर हो।

मर्म-भेद-**पुं०** [ब० सं०] १ मर्मस्थल पर किया जानेवाला आघात।
२ दूसरों के भेद या रहस्य का किया जानेवाला उद्घाटन।

मर्म-भेदक-**वि०** [ब० सं०] १. मर्म छेदनेवाला। २ हृदय विदारक।
मर्म-भेदन-**पुं०** [ब० सं०] १ मर्मस्थल पर आघात करना। २ बाग। तीर।

मर्म-वेधी (विण्)-**वि०** [सं० मर्म+विद् (फाड़ना)+पिणित्] १. मर्मस्थल अर्थात् हृदय पर आघात करनेवाला (शब्द या बात)। २ दुष्ठी तथा संतप्त करनेवाला।

मर्म-पुं० [सं०√मृ+अन्, मुद-आगम] १ पत्तों के हिलने से होनेवाली खड्डाढाट। २ ऐसा कलफदार कपडा जिसमें मर्मर चन्द निकलता हो।

पुं० दे० 'मर्मर'।

मर्मरित-**पुं०** [सं० मर्मर+इत्] मर्मर ध्वनि करता हुआ।

मर्मरी-**स्त्री०** [सं० मर्मर+ङीप] १ एक तरह का देवदार। २. हल्दी।
मर्मरीक-**पुं०** [सं० मर्मर+ईकन] १ निर्धन व्यक्ति। २ दुष्ट व्यक्ति।
मर्म-बधन-**पुं०** [ब० सं०] ऐसा कथन, बात या वचन जो मर्म या हृदय पर आघात करनेवाला हो।

मर्म-बाध-**पुं०** [ब० सं०] १ रहस्य की बात। २. दे० 'मर्मबधन'।
मर्मविद्-**वि०** [सं० मर्म+विद् (जानना)+किच्] मर्म या तत्त्व जानने-वाला। मर्मज्ञ।

मर्मविदारक-**पुं०** [ब० सं०] मर्मच्छेदक।

मर्मवेधी (विण्)-**वि०** [सं० मर्म+विद् (जानना)+पिणित्] मर्मज्ञ।
मर्मवेधी (विण्)-**वि०** [सं० मर्म+विद् (छेदना)+पिणित्] मर्म वेधी।

धर्म-स्थल—पु० [स० त०] १. शरीर का कोई ऐसा अंग जिसपर आघात लगते से बहुत अधिक पीड़ा होती है और जिससे मनुष्य मर भी सकता है। जैसे—अण्डकोष, कंठ, कपाल आदि। २. हृदय, जिसपर किसी की बात का आघात लगता है।

धर्म-स्थान—पु० [स० त०] धर्म का स्थान अर्थात् धर्म। (देखें)

धर्मस्थानि (विन्)—वि० [स० म०] म०/व्युत्प०+नि] स्त्री० धर्मस्थानिनी, भाव० धर्मस्थानिता धर्म को स्वर्ण करने अर्थात् उस पर प्रभाव डालनेवाला।

धर्मगतक—वि० [स० धर्म-अनक, ष० त०] धर्म तक पहुँचकर उस पर अग्निष्ट प्रभाव डालनेवाला। धर्ममेवक।

धर्मघात—पु० [स० धर्म-आघात, स० त०] धर्मस्थल पर होनेवाला आघात। हृदय पर लगनेवाली गहरी चोट।

धर्मसिध—वि० [स० धर्म०/अति-गम् (जाना) ड] धर्म को छेदनेवाला। धर्म-भेदी।

धर्मश्लेषण—पु० [स० धर्म-श्लेषण, ष० त०] भेद या रहस्य जानने के लिए की जानेवाली शक्ति।

धर्महित—वि० [स० धर्म-आहृत, स० त०] जिसके धर्म अर्थात् हृदय को कृष्ण चोट पहुँची हो।

धर्मिक—वि० [स० धर्म+उत्-इक] धर्मविद्। धर्मज्ञ।

धर्मि—वि० [स० धर्म] धर्म या रहस्य जाननेवाला।

धर्मोद्घाटन—पु० [स० धर्म] उद्घाटन, ष० त० धर्म या रहस्य प्रकट करना।

धर्म—पु० [स०] म०/म० (मरण)+धत् धर्मण्य।

धर्म—स्त्री० [स० धर्म+टाप्] सीमा।

धर्मि—स्त्री० [स० धर्म+वा (देना)+क] १. दे० 'धर्मिणी'। २. रीत-रिवाज। रसम। ३. बाल-डाल। ४. रम-डंग। ५. विवाह के उपरान्त होनेवाला 'बडार' नामक भोज।

धर्मो—धर्मवत् रहना—वरत का विवाह के तीसरे दिन ठहर कर 'बडार' नामक भोज में सम्मिलित होना।

धर्मवादा—स्त्री० [स० धर्मवादि+टाप्] १. सीमा। हद। २. नदी का किनारा। तट। ३. लोक में प्रचलित व्यवहार और उससे नियम आदि। ४. गदाभास। ५. गौरव। प्रतिष्ठा। मान। ६. धर्म। ७. दोगा अधिक आदमियों में होनेवाला निरुचय या प्रतिज्ञा। समझौता।

धर्मवाचक—पु० [स० धर्मवादा-अचल, मध्य० म०] सीमा पर स्थित पर्वत। सीमा सूचक पर्वत। सीमान्त पर्वत।

धर्मवाचक—पु० [स० ष० त०] १. अधिकारी की रक्षा। २. नजरबन्दी (अपराधियों आदि की)।

वि० जो धर्मवाचों से बँधा हुआ हो।

धर्मवाच-धर्म—पु० [स० त०] बेध-बिहल कर्मों का आचरण करते हुए ज्ञान-प्रतिष्ठा का प्रयत्न करना।

धर्मवाच-धर्म—पु० [स० ष० त०] ऐसा कृषन जिसमें अधिकार, कर्तव्य प्रदेश, स्थान आदि की सीमाओं का निर्धारण हो।

धर्मवाची (विन्)—वि० [स० धर्मवादा+इति] १. धर्मवादा से युक्त। धर्मवादावादी। २. सीमापति।

धर्मो—स्त्री० [हि० धर्मना] वह भूमि जो ऊर्ध्व लेनेवालों ने सूद के बदले में महाजन को दी हो।

धर्म—पु० [स०/म०/म० (धृना)+धम्] १. मनन। २. मत। सम्मति। राय।

धर्मन—पु० [स०/म०/म०+त्युट्--अन] १. विचार करना। २. सलाह देना। ३. रायना।

धर्म—पु० [स०/म०/म० (सहत्न करना)+धम्] १. क्षमा। क्षान्ति। २. धैर्य। ३. सहनशीलता।

धर्मण—पु० [स०/म०/म०+त्युट्--अन] १. क्षमा करना। माफी। २. रायना। धर्मण।

वि० १. ध्वम या नाग करनेवाला। २. दूर करने, रोकने या हटाने-वाला। (गौ० के अन्त में)

धर्मणीय—वि० [म०/म०/अनीयर्] जिसका धर्मण ही सके; या धर्मण करना उचित हो। धर्मण के योग्य।

धर्मित—पु० ङ० [म०/म०/म० (क्षमा करना)+धत्] १. सहा हुआ। २. क्षमा किया हुआ।

धर्मण—वि० [अ०] जो मर गया हो। दिवंगत। स्वर्गीय।

धर्मण—पु० [फा०] १. निश्चित तथा मत्न रहनेवाले एक तरह के मुसल-मान फकीरों की मजा। २. निश्चित तथा मत्न रहनेवाला व्यक्ति।

वि० १. मन-मौनी। २. निश्चित। ३. ला-परवाह।

पु० [दे०] पीने रस की बॉचबाला बगल।

धर्मण—पु० १. दे० 'धर्मण'। २. दे० 'धर्मण'।

वि०—मनग।

धर्मणी—पु० [फा० धर्मण] नमक बनाने का काम करनेवाला मजदूर।

धर्म—पु० [स०/म०/अच्] १. मेल। कीट। जैसे—धातुओं का मेल। २. शरीर से निकलनेवाली मेल या विकार। जैसे—कफ, पसीना, विष्टा आदि। ३. गृह। विष्टा। ४. दाँष। विकार। ५. पाप।

वि० १. गंदा। मलीन। २. दुष्ट।

अर्थ—हाथियों को उठाने के लिए कहा जानेवाला शब्द। (महावत-राना। ४. धमनान।

†स०=मलकाना।

धर्मकरन—पु० [दे०] बरतनों पर रेखाएँ खींचने का एक उपकरण।

धर्मणा—स्त्री० [अ० मलिक] १. महारानी। २. रानी। ३. बहुत ही सुन्दर स्त्री।

धर्मकाष्ठ—पु० [हि० मल्ल+काष्ठ] देवताओं के भुगार के लिए एक प्रकार की कछनी जिसमें तीन धाँबे लगते होते हैं।

धर्मकाना—स० [अनु०] १. हिलाना-डुलाना। जैसे—जीव मलकाना। २. बहुत ठमक ठमककर या एक एककर बातें करना।

†अ०=इतराना।

पु० [अ० मलिक] मुसलमानों की एक जाति। (पहले में लोग राजपूत थे)।

धर्मवीर—पु० [स० ष० त०] १. बहुत ही गन्दी धीचों या जगहों में रहने-वाला कीटा। ३. बहुत ही भुणित और नीच आदमी।

धर्मकुल मीत—पु०=मलकुल मीत।

धर्मकूल—पु० [अ०] [वि० मलकूरी] इस्लामी धर्म-शास्त्र के अनुसारा

ऊपर के नी लोकों में से दूसरा लोक । २. किरसों के रहने का लोक । देवलोक ।

मलसंभ—पु० [सं० मल+जभ] ।

मलसंभ—पु० [सं० मल+हिं० संभा] १. पुरानी बाल के कोल्हू में लकड़ी का एक लुंटा जो कातर या पाट में कोल्हू से दूसरी छोर पर गाड़ा जाता है । २. दे० 'माल-संभ' ।

मलसाला—पु० [सं० मल+साल] आरुहा-द्रव्य का चबेरा याई । पु० दे० 'मलकाना' ।

वि० [सं० मल+हिं० खाना] १. मल अर्थात् विष्ठा खानेवाला । २. बहुत ही गन्धा और मलिन (व्यवस्थित) ।

मलसाली—स्त्री० [हिं० मलसाल] वह ऊँचा और सीधा पतला खंभा जिस पर बेंत से मालसंभ की कसरत की जाती है ।

मलगया—वि० [हिं० मलना+गीया] १. मला-बला हुआ । मरगया । २. मैला-कुचैला । ३. किसी की तुलना में मख और हीन । उदा०--सर्व मरगये मूँह करी, हठी मरगये बीर ।--बिहारी ।

पं० भेसन में लपेटकर तेल या घी में तला हुआ बीसन का पतला टुकड़ा या फ्राक ।

मलगिरी—पु० [हिं० मलग्यागिरि] एक प्रकार का हल्का कर्बई रंग । चन्दन की तरह का रंग ।

वि० उन्नत प्रकार के रंग का ।

मलगोबा—पु० [पु० मलगांवा] १. गीली चीजे । २. एक प्रकार की पकी हुई बाल जिसमें पड़ी भी मिला होता है । ३. पीब । मवाद । ४. कूड़ा-करकट । ५. यदीपन ।

मलगपत्र—पु० [सं० मलग्न] एक प्रकार का कचनार, जो लता के रूप में होता है ।

मलग्नना—वि० [सं० मल+ग्न/हन् (मारना)+टक्, कुत्व] [स्त्री० मलग्नी] मलनाशक ।

पु० १ एक प्रकार का कचनार । २. सेमल का मुसला ।

मलग्नी—स्त्री० [सं० मलग्न+ङीप्] नागदीना ।

मलग्न—पु० [सं० मल+ग्न/हन् (उत्पन्न करना)+ङ] पीब । मवाद ।

मल-ग्नर-पु० [सं० मध्य० सं०] मल के रुकने के कारण होनेवाला अवर ।

मलग्नान—पु० [देश०] एक प्रकार की बेल जो बागों में लगाई जाती है ।

मलट--पु० [अ० मैलट] लकड़ी का हथौड़ा ।

मलता—वि० [हिं० मलना] [स्त्री० मलती] १. मला या चिसा हुआ (सिक्का) । जैसे--मलता पैसा या रुपया । २. जो मले-बले जाने के कारण बराब हो गया हो । उदा०--मैला मलता इह संसारा ।--कबीर ।

मलत्र—पु० [सं०] वात्मीकीय रामायण के अनुसार एक प्रदेश जहाँ ताड़का रहती थी ।

मल-भूषित—वि० [सं० तु० सं०] मलिन । मैला ।

मलभावी (विभू)—वि० [मल+भू/भृ (संचालन करना)+विभू+पिनि, भुङि, दीर्घ, लोटोप] मल को द्रवित करने या मलानेवाला । पु० ब्रह्मालोका ।

मल-हार—पु० [सं० व० सं०] १. शरीर की वे इन्द्रियाँ जिनसे मल निकलते हैं । २. मुद्रा । मोड़ ।

मल-धात्री—स्त्री० [सं० व० सं०] बच्चों का मल-मुष धोनेवाली पाय । मलधारी (पितृ)—पु० [सं० मल+धृ (धारण करना)+पिनि] एक प्रकार के जैन साधु जो शीघ्र के उपरान्त जल से मुद्रा नहीं धोते ।

मलना—सं० [सं० मर्दन] १. कोई पदार्थ किसी अन्य पदार्थ पर पीतने या लगाने के उद्देश्य से उस पर बार-बार कुछ और से रगड़ना । जैसे--(क) कपड़े पर साबुन मलना । (ख) शरीर पर तेल मलना । २. लेप करना । ३. इत प्रकार रगड़ते हुए दवाका कि बुर बुर हो जाय । जैसे--सुरती मलना । ४. खुरजाने आदि के उद्देश्य से हाथ फेरना । जैसे--बाँस-मलना । ५. एक बीज को दूसरी बीज पर बार-बार जाये पीछे या इधर-उधर रगड़ते हुए ले जाना । जैसे--हाथ मलना (परचा-साप आदि के समय) । ६. उमेठना । मरोड़ना । जैसे--किसी का काम मलना ।

मलनी—स्त्री० [सं० मलना] आठ दस अंगुल लंबा, दो अंगुल चौड़ा सुगुली और चिकना बरिस का यह टुकड़ा जिससे कुम्हार बरतनों की फालतू मिट्टी काटकर निकालते हैं ।

मलपैनी (किन्नु)—वि० [सं० मलपक, व० सं० तं०-इति] १. मलिन । मैला । २. कीचड़ आदि से सना हुआ ।

मलपट—पु० [सं० मल+हिं० पट=विभ] १. चित्र-कला में, ऐसा चित्र जिसमें केवल चेहरा दिखाया गया हो, शरीर के और अंग न दिखाये गये हों । २. दे० 'मल-पट्ट' ।

मलपट्ट—पु० [सं० व० सं० तं०] १. किसी बीज को धूल से बचाने के लिए उस पर बड़ाया जानेवाला कपड़ा, कागज या ऐसी ही और कोई चीज । २. दे० 'मल-पट्ट' ।

मल-परीषण—पु० [व० सं० तं०] एक प्रकार का छोटा कीड़ा जो वर्षा ऋतु के आरंभ में उत्पन्न होता और प्राय मल के छोटे छोटे टुकड़े इधर-उधर लुढ़काता फिरता है ।

मल-परीषा—स्त्री० [सं० व० सं० तं०] रोगी के मल (गूँह) की वह वैज्ञानिक परीक्षा या विश्लेषण जिससे यह पता चलता है कि उसके शरीर में किस किस रोग के कीटाणु हैं । (स्टूल एग्जामिनेशन)

मलपु—पु० [सं० मल+पु (पवित्र करना)+विपृ] अंगुली मूलर । कटुमर ।

मल-पुष्ट—पु० [मध्य० सं०] प्राचीन भारत में, पुस्तक का ऊपरी तथा पहला पृष्ठ, जो अक्षी मैला हो जाता था ।

मलबा—पु० [हिं० मल?] १. गिरे हुए ममान की टूटी-फूटी ईंटे, मिट्टी, बराला आदि जो फेंकबाया जाता है । २. भूगोल विज्ञान में, चट्टानों की सतह पर में टूट-फूटकर गिरे हुए कंकड़ों का समूह । बिखंड राशि । (बेट्टिस) ३. कूड़ा करकट । पु० एक तरह का मूख ।

मलभूषण—पु० [सं० मल+भू/भृ (साया) +विभू, कुत्व] कोजा । वि० मलभावेनाम् ।

मलभेदिनी—स्त्री० [सं० मल+भिद (पृथक् करना)+पिनि, ङीप्] कुटकी ।

मलमल—स्त्री० [सं० मलमलक] एक तरह का बड़िया महीन सूती कपड़ा।

मलमला—पु० [देश०] कुलफं का साग।

वि० १ बहूत ही कोमल। २ उदास या निरास।

पु० दे० 'मलोजा'।

मलमलकाना—सं० [हि० मलमला] [भाव० मलमलाहट] १ बारबार हल्का स्वप्न करना। धीरे धीरे मलना। २ (अथि या पलक) बार बार झोलना और बन्द करना। ३ बार बार गले लगाना या आलिंगन करना। ४ (मान मे) परचात्ताप करना। पछताना।

मलमलाहट—स्त्री० [हि० मलमला] १ मलमले होने की अवस्था या भाव। २ उदासी। क्रिस्ता। ३ परचात्ताप। पछताना।

मलमली—पु० १ = मलबा। २ = मलम्मा।

मल-मास—पु० [सं० कर्म० सं०] १. वह अमात मास जिसमे मंक्रान्ति न पडती हो। दो सक्रान्तियों के बीच मे पडनेवाला चाद्रमास।

विशेष—चाद्रगणना के अनुसार प्राय तीसरे या चौथे वर्ष बारह की जगह तेरह महीने की होती है। यही तेरहवाँ महीना (जो वर्ष के बीच मे पडता है) अधिमास, अधिक मास, मलमास या पुर्वोत्तम कहलाता है। इस मास मे कोई शुभ काम करने का विधान नहीं है।

२ क्षयमास।

मलय-पु० [सं० मलय+कन्यन्] १ दक्षिणी भारत का एक प्रसिद्ध पर्वत जो पुराणों मे मात कुलपर्वत मे गिनाया गया है। २ उक्त पर्वत के आस-पास का प्रदेश जो आज-कल मलाबार कहलाता है। ३ उक्त देश का निवासी। ४ उक्त प्रदेश मे होनेवाला सफेद चन्दन। ५ मन्दन कानन। ६ पुराणानुसार एक उप-द्वीप। ७ गडब का एक पुत्र। पहाट का कोई पादर्व या प्रदेश। वीरराज। ९ छप्य छन्द का एक भेद जिसके प्रत्येक चरण मे २५ गुरु, १०२ लघु, कुल १२७ वर्ण या १५२ मात्राएँ, अथवा २५ गुरु, १८ लघु, कुल १२३ वर्ण या १४८ मात्राएँ होती हैं।

मलय-गिरि—पु० [सं० मलय सं०] १ मलय नामक पर्वत जो दक्षिण मे है। २ उक्त पर्वत पर होनेवाला चन्दन। ३ अराम मे कामरूप के आम-नास के प्रदेश का पुराना नाम। ४. वार बीनी की तरह का एक वृक्ष। ५ भूरापन लिपे लाल रंग।

वि० भूरापन लिए हुए लाल रंग का।

मलय-गुं—पु० [सं० मलय/गुं (उत्पन्न करना)+ङ] १ चन्दन। २ गहु नामक पद।

वि० मलय पर्वत मे उत्पन्न होनेवाला।

मलय-मूष—पु० [मध्य० सं०] १ चन्दन। २ मदन या मैत्री नाम का पेड़।

मलय-मापल—पु० [सं० मध्य० सं०] १. सगीत मे कनटि की पद्यति का एक गान। २ मलय समीर।

मलय-बसिनी—स्त्री० [सं० मलय/बस (निवास करना) +णिनि; +ङी] दुर्गा।

मलय-समीर—पु० [मध्य० सं०] १ मलय पर्वत की ओर से आनेवाली हवा जिसमे चन्दन की सुगन्ध मिली होती है। २. अच्छी और बड़िया हवा।

मलया—स्त्री० [सं० मलय+टापु] १ भिक्षुता। निर्मोक्ष। २ सोमराजी। वकुली।

मलयगिरि—पु०=मलयगिरि।

मलयाचल—पु० [मलय-अचल, कर्म० सं०] मलय पर्वत।

मलयादिल—पु० [मलय-अदिल, कर्म० सं०] १. यलय पर्वत की ओर से आनेवाली वायु। दक्षिण की वायु। ३. शीतल और सुगन्धित वायु। ३ वसत ऋतु की वायु।

मलयासम—पु० [ता० मलय=पर्वत+असम=उपरयका] आधुनिक केरल राज्य का एक प्रदेश।

स्त्री० उक्त प्रदेश की भाषा।

मलयालम—पु० [ता० मलयालम] मलयालम मे बसनेवाली एक पहाड़ी जाति का नाम।

मलयाली—वि० [ता० मलयालम] १. मलाबार देश का। मलाबार देश सम्बन्धी। २. मलाबार मे उत्पन्न।

पु० मलाबार का निवासी।

स्त्री० मलाबार की भाषा।

मलयुग—दे० [कर्म० सं० या ष० सं०] कल्पयुग।

मलयेशिया—पु० [सं० मलया] दक्षिण-पूर्वी एशिया का एक नवीन संघ राज्य जिसके अन्तर्गत मलाया, सारवाक, बोर्नियो और सिंगापुर है। इसकी स्थापना १६ दिसम्बर १९६३ को हुई थी।

मलयोद्भव—पु० [सं० मलय-उद्भव, ब० सं०] चन्दन।

मलराना—सं० [हि० मल्लराना] बुमकारना। गुचकारना। मल्लराना। उदा०—कोऊ दुलरावे, मलरारवे, हलरारवे कोउ भुटकी बजावे, कोऊ देखि करतारवे हैं—पद्याकर।

मल-रश्चि—वि० [सं० ब० सं०] १. दूषित रश्चिवाला। २. पायी।

मल-रौषक—वि० [सं० ब० सं०] जो पेट के अन्दर के मल को रोके। कब्ज-धत करनेवाला। गाबिज।

मल-रौषन—पु० [सं० ब० सं०] पेट या अँठो मे मल रुकना। कोष्ठबद्धता। कब्जियत।

मलबा—वि० [?] मला दक्षिण और अरबि उत्पन्न करनेवाला।

मलबाना—सं० [हि० मलबाना क प्रे०] [सात मललाई] मलमे का काम दूसरे से कराना। मलमे मे किसी को प्रवृत्त कराना।

मल-भासा—स्त्री० [सं० ब० सं०] ऋतुमती या रजस्वला स्त्री।

मल-बिनाशिनी—स्त्री० [सं० ब० सं०] १ शवयुधि। २ शार।

मल-बिस्तर्जन—पु० [सं० ब० सं०] पाषाणा फिरना। हथाना।

मल-बैग—स्त्री० [सं० ब० सं०] अतीहास।

मल-शुद्धि—स्त्री० [सं० ब० सं०] पेट या अँठो मे रुके हुए मल का गुदा के रास्ते बाहर निकल आना।

मलसा—पु० [सं० मल्लक] बी रकने का एक तरह का बड़ा कुष्पा।

मलहता (हनु)—पु० [सं० ब० सं०] सेयल का मूसल।

मलह्व—पु० [अ० महर्म] चाव पर लगाने के लिए औषध का लेप। भर-हम।

मलहूर—पु० [सं० ब० सं०] जमालगोटा।

मलहारक—पु० [सं० ब० सं०] मंथी। हेक्टर।

मला—स्त्री० [सं० मल+अपु+टापु] १. चमड़ा। २ चमड़े से बना हुआ पदार्थ। ३. कासा नामक मातु। ४ मू-अबिलता। ५. बिष्णू का ढंक। ६. अजा हल्दी।

मलाई—स्त्री० [हि० मलना] १. मलने की किया या मात्र। २. मलने का पारिभ्रमिक भा मजदूरी।

स्त्री० [देख०] १. बहू गाढ़ा चिकना अंश जो दूध उबालने पर उसके ऊपर जमने और तैरने लगता है। दूध की साड़ी।

क्रि० प्र०—आना।—जमाना।—पड़ना।

१. किसी चीज का उतम स्तर भाग।

पू० दूध की मलाई या साड़ी की तरह का संकेय रंग जिसमें कुछ हलकी बायोमीयत भी रहती है।

मलकास्त्री (बिम्बु)—पु० [सं० मल+आ/इच् (पसीटना)+गिनि शीर्षं, मलोप] [स्त्री० मलकाश्रिणी] अंगी। मेहतर।

मलका—स्त्री० [सं० अमल/अच् (जाना)+अच्+टाप्] १. कामिनी। स्त्री। २. रंडी। बेव्या। ३. हूती। ४. दाहा हाथी। हथिनी।

मलकट—पु० [सं० मलपट्ट] एक प्रकार का मोटा तथा मजबूत कागज जिसमें छाये, लिखाई आदि के काम आनेवाले कागजों के दस्तों या रीम लपेटे जाते हैं।

मलकम—वि०=म्लान।

मलकामि—स्त्री०=म्लानि।

मलकपट्ट—वि० [सं० मल+अप/हृन् (भारना)+ट] [स्त्री० मलकपट्टा] १. मलनाशक। २. पापनाशक।

मलकपोह—पु० [सं०] मल या पालाना कहीं से हटाकर दूर फेंकने का काम।

मलकाबार—पु० [सं० मलय+बार=किनारा] आधुनिक केरल राज्य का एक प्रदेश।

मलकाबारी—वि० [हि० मलाबार] मलाबार-सम्बन्धी।

पु० मलाबार का निवासी।

मलापत—स्त्री० [अ०] १. किसी के कोई बुरा कार्य करने पर की जानेवाली उसकी निन्दा या भर्त्सना।

पह—अपगत-मलापत।

२. झिड़की। डाँट। ३. मल। गंदगी।

क्रि० प्र०—निकलना।

मलापत्ती—वि० [फा०] १. जिसकी मलापत की गई हो। २. जो मलापत किये जाने के योग्य हो। तुलकारे या फटकारे जाने का पात्र।

मलापतन—वि०=मलिन।

मलापयन—वि०=मलिन।

मलाया—पु० [सं० मलय] बर्मा के दक्षिण में स्थित एक द्वीप।

मलार—पु० [सं० मल्लार] संगीत शास्त्रानुसार एक प्रतिष्ठ राग जो बर्मा ऋतु में सायंकाल अथवा रात के समय गाया जाता है।

मुहा०—मलार गाया=बहुत निश्चित और प्रसन्न होकर कुछ कहना, विशेषतः माना। जैसे—आप दिन भर बैठे मलार गाया करते हैं।

मलारि—पु० [सं० मलभरि, ब० तं] शार।

मलारी—स्त्री० [सं० मलारी] बसंत राग की एक रागिनी। (संगीत)

मलाल—पु० [अ०] १. मन में होनेवाला दुःख। रंज।

मुहा०—(बिल का) मलाल निकालना=कुछ कह-सुनकर अथवा बक-झक कर मन में दबा हुआ दुःख कम करना।

२. पचवालाप। ३. उपासीनता।

मलाघटीय—पु० [सं० मल-अ-घटीय, व० तं] १. मल का रकना। २. पेट से

मल का टीक तरह से नहीं, बल्कि बहुत बक-झककर निकलने का रोग। कम्बियत।

मलाबहू—पु० [सं० मल-आ/बहू (डोना)+अच्] कुछ विविध प्रकार के पापी का समूहाहार। (मनु०)

मलाशय—पु० [सं० मल-आशय, व० तं] शरीर के अंतर्ग्रियों के नीचे का वह भाग जिसमें शीघ्र के समय बाहर निकलने से पहले मल या गुह एकत्र होता है। (रेक्टम)

मलाहू—पु०=मल्लाह।

मलाहृत—स्त्री० [अ०] २. सलोनापन। लावण्य। सौंदर्य। २. कोमलता।

मलिय—पु० [सं० मलिप] और।

मलिक—पु० [अ०] [स्त्री० मलिका] १. राजा। अधीश्वर। ३. मुसलमानी की एक जाति। ४. ईजान में रहनेवाली हिन्दुओं की एक जाति।

मलिका—स्त्री० [अ० मलिक] १. मलका। महारानी। २. अधीश्वरिणी।

†स्त्री०=मलिकी।

मलिकाना—पु० [हि० मालिक] १. मौरक की वृष्टि से उसके मालिक का घर। २. मालिक के घर के लोग।

मलिक—पु०=म्लेच्छ।

मलिकच्छ—पु०=म्लेच्छ।

मलित—पु० [देख०] सोनारों की एक छोटी कूची।

मलिन—वि० [सं० √मल्+इन्च्] [स्त्री० मलिना, मलिनी] [माब० मलिनता] १. मल से युक्त। २. मैला-कुचैला। गंदा। ३. झरझरा।

बुरा। ४. भूरे या मिट्टी के रंग का। मट-मैला। ५. हुकम में या पाप करनेवाला। पापी। ६. (योग्य या प्रकाश) जिसमें उज्ज्वलता कम हो। धीमा। गंदा। मडिमा। ७. उदास। म्लान।

पुं० १. एक प्रकार के साधू जो मैले-कुचैले कपड़े पहनते हैं। पासुपत। २. सक्। मडा। ३. सोहागा। ४. अमर। अवनन। ५. पी का ताजा दूध। ६. हूत। ७. उपकरणों आदि का दस्तान। मूठ। हूथा। ८. दोष। ९. पाप। १०. रस्मों की चमक और रंग का फीका और धुंधला होना जो उनका दोष माना जाता है।

मलिनता—स्त्री० [सं० मलिन+तत्+टाप्] मलिन होने की अवस्था या मात्र।

मलिनत्व—पु० [सं० मलिन+त्व] मलिनता।

मलिन-युक्त—पुं० [सं० ब० स०] १. अग्नि। २. बैल की दूध या पृष्ठ। प्रेत।

वि० १. जिसका मुख अर्थात् बेहूरा मलिन या उदास हो। २. क्रूर। निर्दय। ३. झल। कुष्ठ।

मलिनाब्ध—पु० [सं० मलिन-अब्ध, कर्म० सं०] स्याही।

मलिना—स्त्री० [सं० मलिन+टाप्] १. राजसंघला स्त्री। २. लाल शक्कर। ३. छोटी भटकटैया।

मलिनाई—स्त्री०=मलिनता।

मलिमाना—अ० [हि० मलिन] १. मलिन या मैला होना। २. म्लान या उदास होना।

सं० १. मैला या मलिन करना। २. म्लान या उदास करना।

मलिनपत्र—पुं० [मलिन-आवास, प० तं०] मजदूरा या गरीबों की गदी बस्तियाँ। (रुलम)

मलिनिया—स्त्री० [मलिन (माली की स्त्री)]।

मलिन्या—स्त्री० [सं० मल-ईशान+ङीप्] रजसवला स्त्री।

मलिनोत्पन्न—पुं० [म० मलिन+त्वि, ह्रस्व, दीर्घ, √कृ (करना) +ल्युट् -अन्] १ मलिन करने की क्रिया या भाव। २ पापों की एक कोटि का नाम। मलावह।

मलिनमुक्त्वा—पुं० [म० मलिन/मलुक्त्वा (प्राप्त होना)+कृ] १ मलमास। २ अर्धना। ३ चौर। ४ वायु। हवा। ५ वह जो पचयस न करता हो।

मलिया—स्त्री० [सं० मलक या मलिका; हिं० मरिया] १ तग मुँह का मिट्टी का एक प्रकार का बरतन जिसमें धी, दूध, दही आदि पदार्थ रखे जाते हैं। २ मोटी के खँल में वह चौकोर या त्रिकोना चक्र जो गोटियाँ रखने के लिए बनाया जाता है।

पद्म—मलिया भेट। (देखें)

३ भेरा। चक्कर।

मुहा०—मलिया बाँधाना—रस्दी को मोड़कर बाँधाना। (लस०)

मलिया-भेट—पुं० [हिं० मलिया+मिटाना] उनी तरह का किया जाने-वाला लोप या विनाश जैसा कि लड़के मलिया बनाने के बाद उसे मिटाकर करते हैं। पूरी तरह गे किया जानेवाला नाम। सर्वनाम।

मलिष्ठ—वि० [सं० मल+भट्टन्] अत्यन्त मलिन।

मलिष्ठा—स्त्री० [सं० मलिष्ठ; टाप्] रजसवला स्त्री।

मलीषा—वि० [फा० मालीद] मला हुआ। मवित।

पुं० १ रौटी या पकवान का पूर चूर करके और अच्छी तरह मलकर बनाया जानेवाला एक प्रकार का खाद्य पदार्थ जो चूरमे की तरह होता है। २ गुड़ से मला हुआ आटा जो प्रायः हाथिया को खिलाया जाता है।

३ एक प्रकार का ऊनी वस्त्र जो बहुत मुलायम और गरम होता है।

मलीन—वि० [सं० मलिन] १ मैला। २ विषय या दुःखी होने के कारण उदास।

मलीनता—स्त्री० [सं० मलिनता]।

मलीह—वि० [अ०] १ नमकीन। २ मलोना।

मलू—स्त्री० [सं० मालु] १ मलयन नामक कचनार। २ उक्त की छाल जो बहुत कड़ी होती है और ऊन रगने के काम आती है।

मलूक—पुं० [?] १ एक प्रकार का कीड़ा। २ एक प्रकार का पक्षी। ३ बौद्ध शास्त्रों में एक बहुत बड़ी सन्ध्या की मत्त। ४ दे० 'अमलूक'।

वि० [?] मनोहर। सुन्दर।

मलूक—वि० [अ०] १ विषम। दुःखी। २ उदास।

मलूहा—पुं० [?] संगीत में, एक प्रकार का राग।

मलूहा केदार—पुं० [मलूहा+म० केदार] संगीत में बिलावल ठाठ का एक राग।

मलेझा—पुं० [अ०] मलेच्छ।

मलेच्छा—पुं० [अ०] मलेच्छ।

मलेपंच—पुं० [देहा०] बुद्धा बोधा।

मलेरिया—पुं० [अ०] एक तरह का ज्वर जो मच्छरों के काटने से उत्पन्न होता है। बुद्धी बुकार।

मलेशिया—पुं० [अ० मिलिशिया] १ एक प्रकार का कपड़ा जो विगत महायुद्ध में प्रचलित हुआ था। २ दे० 'मलेयेशिया'।

मली—पुं० [अ०] मल्ल।

मलीसर्प—पुं० [सं० मल-उत्सर्प, प० तं०] मलययाग। हयना।

मलोलना—अ० [हिं० मलोला] मन में किसी काम या बात के लिए दुःखी होना या छुटाना। उदा०—जाति पौरो देकर टेक रोते कीधे मलोलि है।
--पनामद।

मलोला—पुं० [अ० मलाया मल्लु] १ मानसिक व्यथा। दुःख। रज।

मुहा०—मलोला या मलोले आना—रह रहकर दुःख या परवासाप होना।

मलोले खाना—मन हीन मन कष्ट सहना। (मन) के मलोले निकालना=

कुछ कह-मुनकर मन का कष्ट या व्यथा कम या दूर करना।

२ मन में दबी हुई ऐसी कामना जो रह रहकर विकल करती हो। अरमान।

कि० प्र०—आना।-उठना।-निकलना।-निकालना।

मल्लुक-मोत—पुं० [अ०] वह देववृत्त जो जीवों के प्राण लेता है।

मल्ल—पुं० [सं० मल्ल+अच्] १ एक प्राचीन प्रसिद्ध जाति।

विशेष—इस जाति के लोग इन्द्र युद्ध में बड़े नियुक्त होते थे, इसी लिए इन्द्र युद्ध का नाम मल्लयुद्ध और कुष्मन्ती लक्ष्मणकी नाम मल्ल पडा है।

२ पहलवान। ३ एक सकर जाति। ४ एक प्राचीन जनपद।

मल्लक—पुं० [सं० मल्ल+कन्] १ दात। २ बीजत। ३ दीपक।

दीआ। ४ पात्र। भरतन। ५ नायिल की खोपड़ी का बना हुआ प्याला।

मल्ल-भौड़ा—स्त्री० [सं० प० तं०] मल्लयुद्ध। कुस्ती।

मल्लखम्भा—पुं० [अ०] मालखम्भ।

मल्लज—पुं० [म० मल्ल/जम्+ङ] काली मिर्च।

मल्ल-तष—पुं० [सं० मध्य० सं०] चिरोजी।

मल्ल-ताल—पुं० [सं० मध्य० सं०] संगीत में एक प्रकार का ताल जिसमें पहले चार लघु और तब दो दून मात्राएँ हानी हैं।

मल्ल-नाग—पुं० [म० उपमि० सं०] १ ऐरावत। २ कामभूष के रचयिता वास्त्ययन का एक नाम।

मल्ल-भूमि—स्त्री० [सं० प० तं०] १ मन्दर नामक देश। २ कुस्ती लड़ने का स्थान। अखाड़ा।

मल्ल-पुद्ग—पुं० [सं० प० तं०] मल्लो का युद्ध। कुस्ती।

मल्ल-विद्या—स्त्री० [सं० प० तं०] कुस्ती के दौब-पेच।

मल्ल-शाला—स्त्री० [सं० प० तं०] मल्लभूमि। अखाड़ा।

मल्ला—स्त्री० [सं० मल्ल+टाप्] १ स्त्री। २ मल्लिका। चमेदी।

२ पत्र-वन्दी नाम की लता।

पुं० [देहा०] १ कर्णों के हृत्पे का ऊपरी भाग जिनमें पकवकर हृत्पे चलाया जाता है। २ एक प्रकार का लाल रंग जो कपड़ों को लाल या गुलाबी रंग के माठ में बचे हुए रंग में बुधाने से आता है।

मल्लार—पुं० [सं० मल्ल/कृ (प्राप्त होना)+अच्] वर्षा ऋतु में माया जानेवाला एक प्रसिद्ध राग। मलार।

मल्लारि—पुं० [सं० मल्लारि, प० तं०] १ छाप। २ शिव।

स्त्री०—मल्लारी।

मल्लारी—स्त्री० [सं० मल्लार+ङीप्] वर्षाऋतु में सवेरे के समय गाई जानेवाली एक रागिणी।

मल्लाह—पुं० [अ०] [स्त्री० मल्लाहिन, भाव० मल्लाही] वह जो नदी में नाव चैकर अपनी जीविका अर्जित करता हो। केबट। मत्स्यी।

मल्लाही—वि० [फा०] मल्लाह-सम्बन्धी। मल्लाह का।

स्त्री० १ मल्लाह होने की अवस्था या भाव। २. मल्लाह का कार्य, पेशा और पद। ३. तैरने के समय दोनों हाथ चलाने का एक विशेष ढंग। ४. उलट ढंग से की जानेवाली तैराई। ५. मल्लाही की तरह की गद्दी और भद्दी गालियाँ। उदा०—उन्होंने पूर कर लड़कियों को मल्लाही सुनाया शुरू किया।—जबोय बेग बगताई।

फि० प्र०—सुनाता।

मल्लि—पुं० [म०/मल्ल+इत्] जैनी के एक जिन।

स्त्री०—मल्लिका।

मल्लिक—पुं० [म० मल्लि+कन्] १. एक प्रकार का हंस जिसकी चोंच तथा टांगें भूरे रंग की होती हैं। २. जुलाहों की डकरी। ३. माघ मास।

पुं०—मल्लिक।

मल्लिका—स्त्री० [सं० मल्लिक+टापु] १. चमेली। २. एक प्रकार का बेला। ३. आठ अक्षरों का एक वर्णिक छन्द जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः एक एक रगण, जगण, गृह और लघु होता है। ४. सुमुखी वृत्ति का एक नाम।

मल्लिकाक्ष—पुं० [सं० मल्लिका-अक्षि, ब० सं०, ब०] १. एक प्रकार का घोड़ा जिसकी आँख पर मकंद धब्बे होते हैं। २. उलट प्रकार का सफेद धब्बा। ३. एक प्रकार का हंस। मल्लिक।

मल्लिकार्जुन—पुं० [सं०] एक तिषलिय जो श्रीवीर पर प्रतिष्ठित है।

मल्लि-मंथि—पुं० [सं० ब० सं०, इत्] अगर।

मल्लि-नाथ—पुं० [सं०] १. जैनियों के उग्रोसवे तीर्थंकर का नाम।

२. ई० १४वीं शताब्दी के एक प्रसिद्ध टीकाकार। रघुबा, कुमार-संभव मेघदूत, नीचषपरित आदि अनेक ग्रंथों पर इन्होंने टीकाएँ लिखी थी।

मल्ली—स्त्री० [सं० मल्लि+शीपु] २. मल्लिका। २. सुन्दरी नामक वृत्त का दूसरा नाम।

मल्लु—पुं० [सं०/मल्ल (धारण करना)+उ, बा०] १. भाऊ। २. बन्दर।

मल्लुनी—स्त्री० [हि० देवा०] एक तरह की नाव।

मल्लुपना—स्त्री० [हि० मल्लुपना] इठलते हुए और नवसे बीमे-धीमे चलने की क्रिया या भाव।

मल्लुपना—अ० [?] कुछ कहते हुए और इठलते हुए चलना।

मल्लुपना—अ०—मल्लाना।

मल्ला—स्त्री० [देवा०] बुझों पर चानेवाली एक बेला जो उल्टे बहुत अधिक हानि पहुँचाती है। मीला।

मल्लाना—सं०—मल्लाना।

मल्लार—पुं० [हि० मल्लाना] १. मल्लाने की क्रिया या भाव। २. लाड़-प्यार। दुलार।

पुं०—मल्लार।

मल्लारना—सं० [सं० मल्लु+पीस्तन] [भाब० मल्लार] १. दुलार

करते हुए किसी को विशेषतः बच्चों को कुछ समझाना या प्रेरित करना। २. चुपकारना।

मल्लु—वि०—मल्लु।

मल्लिकल—पुं० [अ० मल्लिकल] १. वह व्यक्ति जो बकील को अपना मुकदमा लड़ने के लिए लीपता है। बकील का आतामी। २. वह जो अपना कार्य किसी को लीपता हो।

मल्लाना—पुं०—मीन। उदा०—मेडिये प्रगवत व्यथा, हँसि भँडिये तजि मदन।—सगवत रसिक।

मल्लारिखा—वि० [अ० मल्लारिख] लिखित।

मल्लारिखा—वि०—मल्लारिख।

मल्लारिखा—पुं० [अ० मल्लारिख का बहु रूप] १. उचित रूप से प्रायश्चन। २. वेतन।

मल्लाजी—वि० [अ० मल्लाजी] १. बराबर। २. बराबरों का।

मल्लाज—पुं० [अ०] १. सामग्री। सामान। मसाला। २. प्रमाण। ३. भाव में से निकलनेवाली पीव।

मल्लारि—स्त्री० [सं० मुकुल] मीर।

मल्लाजी—पुं० [?] १. दक्षिण भारत की एक अर्थ सम्प्य जाति। २. इस जाति का व्यक्ति।

मल्लासी—पुं०—मल्लेसी।

मल्लाक—वि० [अ०] जिस पर शक किया गया या किया जा रहा हो। सदियव।

मल्लास—पुं० [?] १. आश्रय। शरण। २. कुछ समय के लिए कहीं ठहरना। टिकाना। बसेरा। उदा०—कुच पतंग निरिचर मल्लासी मीना यैन मल्लास।—बिहारी। ३. किला। दुर्ग। ४. किले के परकोटे आदि पर लगे हुए बाँस, पेड़ आदि।

मल्लासी—स्त्री० [हि० मल्लास का स्त्री० अल्पा०] १. छोटा गड़।

मुहा०—मल्लासी तीक्ष्ण= (क) किला तीक्ष्ण तथा उस पर अधिकार करना। (ख) विजय प्राप्त करना।

पुं० [हि० मल्लास+ई (प्रत्यय०)] गढ़पति।

वि० मल्लास-संबंधी। किले का।

मल्लेधी—पुं० [अ० मल्लाधी] चौपाये, विशेषतः गाय, बैल, आदि चौपाये जिन्हे मनुष्य पालता है।

पद—मल्लेधी-खाना=वह स्थान विशेषतः घेरा जहाँ पालन चौपाये रखे जाते हैं।

मल्ला—पुं० [सं०/मल्ल (गुन-गुन शब्द करना)+अच्] १. वह जो मल्ल मशू करता हो। मल्लख। २. क्रोध।

मल्लाक—पुं० [सं० मल्ल+कन्] १. मल्लख। २. शरीर पर निकलनेवाला मस। ३. शकडोष का एक प्रदेश।

स्त्री० बकरी आदि की लाल का बना हुआ पानी मल्ले का बैला।

स्त्री०—मल्लक।

मल्लाक-कुडी—स्त्री० [सं० ब० सं०] वह छोटा बीरा जिससे मल्लख हुंके जाते हैं।

मल्लाकहरी—स्त्री० [सं० मल्लाक+हृत् (हरण करना)+अच्, गुण, +शीपु] मल्लहरी।

मल्लाकी (फिन्)—पुं० [सं० मल्लाक+इत्] मूलर का पेड़।

महाकव्य—स्त्री० [अ० महाकव्य] १ कठिन परिश्रम। कड़ी मेहनत।
२ व्यायाम के द्वारा किया जानेवाला परिश्रम। ३. कष्ट। दुःख।
महाकला—पुं० [अ० महाकला] १ व्यापार। २. कोई काम, विशेषतः
समय बिताने तथा मन-बहुलाब के लिए किया जानेवाला काम। ३
विल-बहुलाब।
महामूल—वि० [अ० महामूल] काम या व्यापार में लगा हुआ। प्रवृत्त
या व्यस्त।
महाशक्ति—पुं० [अ० महाशक्ति] पूर्ण दिशा। पूरक।
महाशक्ति—वि० [अ० महाशक्ति] पूर्वीय देशों में होने अथवा उनसे सबब
रखनेवाला। पूरक का।
महाशय—पुं० [अ० महाशय] एक प्रकार का पारोदार देशीय कपड़ा।
महाशय—वि० [अ० महाशय] जो इस्लामी धर्मशास्त्र के अनुकूल या अनुकूल
हो।
महासह—वि० [अ० महासह] १. जिसकी सारह या टीका की गई हो।
२ विवरण सहित तथा विस्तारपूर्वक कहा हुआ।
महाशिरा—पुं० [अ० महाशिरा] किसी से या बहुत से लोगों से किया जानेवाला
परामर्श।
महाशूर—वि० [अ० महाशूर] जिसकी शूब शोहरत हो। प्रख्यात।
प्रसिद्ध विख्यात।
महाशूरी—स्त्री० [अ०] प्रसिद्ध। शोहरत।
महाशय—पुं० [अ० महाशय] (मरघट)।
महाशाल—पुं० [अ० महाशाल] जलाने की एक लंबी लकड़ी जिसके एक
तिर पर कपड़ा लपेटा जाता है और प्रकाश के लिए जलाया जाता है।
महाशाली—पुं० [अ० महाशाली+फा० शी] [स्त्री० महाशालिनी] बहु जो
जलती हुई महाशाल लेकर बिल्लालता हुआ चलता हो।
महाशालत—स्त्री० [अ० महाशालत] १ बहूप्यन। २ अग्निमान। धर्मद्व।
३ शेषी।
महाशान—स्त्री० [अ०] एक। कल।
महाशानि—स्त्री० [अ०] एक प्रकार की चक्राकार बन्दूक जिसमें साधारण
बन्दूक की तुलना में बहुत अधिक गोलियाँ समाप्तार चलती हैं।
महाशानि—पुं० [अ०] १ महाशान चलायेवाला कारीगर। २ विशेषतः
छापेजाने में छापे की महाशान चलायेवाला कारीगर।
महाशानरी—स्त्री० [अ०] १. मशीनों का समूह। २. मशीनों के कल-
पुरो।
महाशानरी—पुं० [अ०] महाशानरी देनेवाला। परामर्श-दाता। सलाहकार।
महाशय—स्त्री० [फा०] १ अभ्यास करने या सिद्ध होने के लिए कोई काम
बार बार करता। अभ्यास। २. बार बार करते रहने पर होनेवाले
किसी काम का अभ्यास।
†स्त्री०—महाशय।
महाशय—वि० [अ०] किसी के साथ शानि किया हुआ। सम्मिलित।
महाशय—वि० [अ० महाशय] [नाब० महाशायी] जिसे कोई काम या
बात अच्छी तरह मक हो। अभ्यास।
महाशय—पुं०—महाशय।
महाशय—स्त्री० [सं०/महाशय+इन्द्र] १. काजल। २. सुरमा। ३. स्याही।
महाशय—स्त्री० [सं० ५० त०,+डीप] दायात।

महाशय—स्त्री० [सं० ५० त०,+डीप] दायात।
महाशय—पुं० [सं० ५० त०] दायात।
महाशय—स्त्री० [सं० ५० त०] १. दायात। २. कलम।
महाशय—स्त्री० [सं० ५० त०] दायात।
महाशय—स्त्री०—महाशय।
महाशय—वि० [सं० मण्ड; प्रा० मण्ड—मण्ड] १. संस्कार शूय। २
जो मूल गया हो। ३. जो बिलकुल चुप हो। मौन।
महाशय—मण्ड धारणा, धारणा या साधना—जान-भूत कर चुप रहना।
कुछ न कहना। मचला बनना।
महाशय—स्त्री० [सं० मण्ड] मूँठ निकलने के पहले उसके स्थान पर की बालों
की हलकी-रेखा या रोमांचकी।
महाशय—प्र०—निकलना।
महाशय—महाशयना या शीना—ऊपर होठ पर मूँठों का उभना
आरंभ होना।
पुं० [सं० मास] हिं० 'मास' का सवित्त रूप जो उसे वैदिक ऋषी के
आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—महाशय—महाशय।
†पुं०—महाशय (मण्डर)।
†स्त्री०—महाशय (स्याही लिखने की)। उदा०—धरती समुद्र दुर्गे
महाशय—जान-भूत।—जायसी।
पुं० [सं०] १ तील। २ माष।
महाशय—वि० [अ०] १ मायादान। २ प्रसन्न। ३ पवित्र।
महाशय—स्त्री० [हिं० मसकना] १ मसकने की। २. मसकने या माष। ३.
किसी चीज के मसकने के कारण उस पर बननेवाला चिह्न या पड़ने-
वाली धारा।
†स्त्री०—महाशय (पाथी भरने की)।
†पुं०—महाशय (मण्डर)।
महाशय—स्त्री०—महाशय।
महाशय—सं० [अनु०] १ शिवाय या दबाव में डाल कर कपड़े को इस
प्रकार विकृत करना कि उसकी बुनावट के सूत टूटकर अलग या डूर
हो जाय। २. किसी चीज को इस प्रकार दबाना कि वह बीच में ही
फट जाय या उसमें दरार पड़ जाय। ३. इस प्रकार जोर से दबाना
कि बीच में से कुछ बह अलग हो जाय। ४. 'मसलना'।
सयो० क्रि०—डालना।—देना।
अ० १ कपड़ें आदि का (दबाव पड़ने के कारण) बीच बीच में कुछ फट
या टूट जाना। २. अपने स्थान से खिसकना या हटना। जैसे—तुमसे
मसका मी जाता नहीं, तुम काम क्या करोगे। ४. बिलित या बुझी
होना।
सयो० क्रि०—जाना।
महाशय—पुं०—महाशय।
महाशय—पुं० [अ० मिसकल] [स्त्री० महाशय] १ सोहे
का वह उपकरण जिससे रंगदर तलवारे आदि चमकाई जाती हैं।
२. तलवारे आदि चमकाने की क्रिया या मास।
महाशय—स्त्री०—महाशय।
महाशय—पुं० [फा० मसक] १. नवनीत। मखन। २. ताजा निकाला
हुआ ची। ३. दही का पानी। ४. बँधा हुआ धारा।

पुं० [हि० मसकना] १. घूमे की बरी का बहु धूपों जो पानी छिड़कने पर उस पर ही जाता है। २. घुमारी की परिभाषा मे; कायस्थ।
मसखर—पुं० [अ० मखरः] १. वह जो अपनी किमा-कलापों, बातों आदि से दूसरों को बहुत हँसाता हो। हँसी-विनोय की बातें करनेवाला व्यक्ति। २. वह जो दूसरों की नकलें उतारता हो।
मसखरपान—पुं० [अ० मसखर+हि० पन (प्रत्य०)] मसखरे होने की अवस्था या भाव।
मसखरी—स्त्री० [फा० मसखर+ई (प्रत्य०)] वह किमा, बुझुला या हँसी की बात जिसका उद्देश्य दूसरों को हँसाना हो। उट्टा, विल्ली।
मस-खवा—पुं० [हि० मास+खाना] वह जो मांस खाता हो। मासाहारी।
मसखिब—स्त्री० [फा० मसखिब] १. सिखाव करने अर्थात् ईश्वर के आगे सिर झुकाने का स्थान। २. वह मयन या स्थान जिसमें मुसलमान नमाज पढ़ते तथा ईश्वर की शंका करते हैं। मसीत।
मसखि (ही)—स्त्री० दे० 'मख'।
मसखी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार का पक्षी।
 †स्त्री०=मिसरी। (हि०)
मसखी—पुं० [हि० मस] हाथी। (हि०)
 †स्त्री०=मसती।
मसम—पुं० [सं०] १. तौल। २. माप। ३. अधिपति। ४. जोट।
 पुं० [देश०] एक प्रकार का टडुआ जिससे ऊन के कई ताने एक साथ मिलाकर बटे जाते हैं।
मसमब—स्त्री० [अ० मस्यद] १. एक प्रकार का गोल, लंबोत्तरा तथा बड़ा तकिया। गाव-तकिया। २. वह स्थान जहाँ उक्त प्रकार का तकिया रखा रहता है। ३. अमीरों और बड़े आदमियों के बैठने की गद्दी।
मसमब-नशीम—पुं० [अ० मसमद+फा० नशी] १. मसमद पर बैठने-वाला अर्थात् अमीर, रईस या राजा। २. तलानशी। सिहास-नासीन।
मसमवी—स्त्री० [अ० मसवी] उर्दू साहित्य में वह कविता जिसमें कई शेर होते हैं। इन शेरों में अंत्यानुशास नहीं होता।
मसमा—सं० [हि० मसलमा] १. मसलमा। २. गूँथना।
मसमूर्—पुं० [अ० मसूर्] १. कृषिप। बनावटी। २. अभाकृतिक ३. धिया।
मसमूर्ध—वि० [हि० मसूर्+मूर्ध] ऐसी सीधा-तानी जिसमें धकम-धकका भी हो।
मसमार—पुं० [हि० मशाल] १. वह जो मशालें जलाता हो।
 २. मशालधी। ३. मशाल।
मसरक—पुं० [अ० मसरक] उपयोग। प्रयोजन।
मसरक—पुं०=मसरक (देखी कथा)।
मसरका—वि० [अ० मसरकः] शरीर किमा या चुराया हुआ। जैसे—
 माल मसरका।
मसरक—वि० [अ० मसरक] काम में लगा हुआ। विरत। संलग्न।
मसरकधियत—स्त्री० [अ० मसरकधियत] मसरक होने की अवस्था या भाव।
मसल—स्त्री० [अ०] कहावत। लोकोक्ति।
मसलति—स्त्री० [अ०] मसलहूत।

मसलन—स्त्री० [हि० मसलना] मसलने की क्रिया या भाव। उदा०—
 मैं वह हूलकी सी मसलन हूँ जो बनरी कानों की लाठी।—प्रसाद।
अध्य [अ० मसलन] उदाहरण के रूप में। उदाहरणार्थ। जैसे।
 यथा।
मसलना—सं० [हि० मलना] १. किसी नरस चीज को ह्राप, हूनेकी या उँगलियों से स्याते हुए रगड़ना। मलना। २. और से इस प्रकार कोई चीज पतना कि बह टूट-भूट जाय। ३. गूँथना। ४. सानना।
 सयों० कि०—डालना।—वेतना।
मसलहूत—पुं० [अ० मसलहूत] १. किसी काम या बात का ऐसा बुद्धिमानपूर्ण शुभ उद्देश्य या हेतु जो ऊपर से देखने पर ससल में न आता हो। २. परामर्श। ३. हित। मलाई।
मसलहूत—अध्य० [अ०] जिसे हुए शुभ उद्देश्य या हेतु से। जैसे—हृमने मसलहूत तुम्हें वहाँ भेजा था।
मसला—पुं० [अ० मसलः] १. कहावत। लोकोक्ति। २. तमस्या।
मुहा०—मसला हूना—समस्या का निराकरण होना।
मसलास—पुं० [हि० मास+वास (प्रत्य०)] वह स्थान जहाँ प्रसूता स्त्री प्रसव के बाद एक मास रहती हो।
मसलास—पुं० [हि० मास+वास] विरक्तों, सत्यासिधों आदि का वह नियम या व्रत जिसके अनुसार किसी स्थान पर अधिक से अधिक एक मास तक रहते और तब वहाँ से दूबटी जगह चले जाते हैं।
 †पुं० दे० 'मासोपवास'।
मसलासी—पुं० [सं० मासवासी] एक स्थान पर केवल एक मास तक निवास करनेवाला विरक्त।
 स्त्री०=वेध्या।
 पुं०=मासोपवासी। (देवें)
मसखिवा—पुं० दे० 'मसीदा'।
मसहरी—स्त्री० [सं० मसहरी] १. जलीदार कपड़े का बना हुआ एक प्रकार का चौकीर आवरण जो सात या पलंग के ऊपर इसलिये टंगा जाता है कि मखर अन्दर आकर सोनेवाले को ठग न करे। २. ऐसा पलंग जिसके चारों पायों पर इस प्रकार का जालीदार कपड़ा टंगने के लिए ऊँची लकड़ियाँ या छड़ लगे हों। ३. बड़ी सटिया। पलंग।
मसहुर—पुं०=मासाहारी।
मसहुर—वि०=मसहुर (प्रसिद्ध)।
मसा—पुं० [सं० मशक] बिटु के आकार का शरीर पर होनेवाला काला चिह्न।
 †पुं०=मस्ता।
मसाभ—पुं० [सं० मसाभ] १. शव जलाने का स्थान। मरफत।
मुहा०—मसाभ जमाना—मसाभ में बैठकर तौलिक प्रयोगों के द्वारा मृत-पिशाच आदि वश मे या सिद्ध करने का प्रयत्न करना। मसाभ पड़ना—मसाभान की-सी उदासी और ससाटा छाना।
 २. मसाभान में रहनेवाले मृत-पिशाच आदि। ३. युद्ध-भूमि या रण-क्षेत्र जिसमें मसाभान की तरह लाशों का ढेर लगा रहता है।
मसाभान—पुं० [अ० मसाभः] मृगपाय। बरित।
 †पुं०=मसाभ (मसाभान)।
मसानिवा—वि० [हि० मसान+इया (प्रत्य०)] १. मसान-संबंधी।

मसान का। २. मसानों में अथवा उनकी सहायता से सिद्ध किया हुआ।
 १०. १. वह व्यक्ति विशेषतः बौध जो मसानों से रहता हो। २. मसान में
 रहकर मृत-श्रेष्ठ सिद्ध करनेवाला तांत्रिक। ३. अर्ध-विशाची। कजूस।
मसानो—स्त्री० [मं० मसानो] डाकिनी। पिशाचिनी।
मसार—पुं० [सं०] नीम। इद्रनीलमणि।
मसाल—स्त्री० १=मसाल। २.=मिसाल।
मसालची—पुं० [हिं० मसाला-ची (प्रत्य०)] वह जो बाबचीखानो
 आदि में मिर्च-मसाले पीसने तथा इसी तरह के छोटे मोटे काम
 करता हो।
 पुं०=मसालची।
मसाल-बुन्ना—पुं० [हिं० मसाल+दुन] एक प्रकार का पत्थी जिसकी
 दुम काली होती है।
मसालत—स्त्री० [अ०] १. मेल-मिलाप। २. सुलह। ३. समझौता।
मसाला—पुं० [फा० मसालह] १. चीजें जिनकी सहायता से कोई चीज
 तैयार होती हो। सामग्री। जैसे—बे किताब लिखने या मुकदमा चलाने
 के लिए दूँद-दूँदकर मसाला इकट्ठा करना। २. औषधियों, रासायनिक
 द्रव्यों आदि का तैयार किया हुआ वह मिश्रण जिसका उपयोग किसी
 विशिष्ट कार्य के लिए होता हो। जैसे—पान का मसाला, मकान बनाने
 का मसाला (गागर, चूना आदि)। ३. धनियाँ, मिर्च, लौंग, हींग, आदि
 के पदार्थ जिनका उपयोग दाल, तरकारी आदि को सुगन्धित और
 स्वादिष्ट करने में होता है। ४. सलमा-सितारे, बाँकड़ी, मोलक आदि
 चीजें जो कपडों पर शोभा के लिए बेल-बूटो आदि के रूप में टाँकी
 जाती हैं। जैसे—अँगिया, ओड़नी, साड़ी आदि में लगाया जानेवाला
 मसाला। ५. किसी काम या बात का आधार-भूत साधन। जैसे—
 लोगों को दिलगिरी उठाने का अच्छा मसाला मिल गया। ६. आतिश-
 बाजी जो कई तरह के मसालों से बनती है। ७. युवनी और सुन्दरी
 परन्तु दुष्परिभा स्त्री। (बाजाल) ८. मगल-मापित रूप में, तेल।
 जैसे—छालटेन का मसाला कष्ट हो गया है, जेते आना।
मसाले—प्रायः किसी के चलते समय तेल का नाम लेना अशुभ समझा
 जाता है इसी लिए प्रायः स्त्रियाँ इसे मसाला कहती हैं।
मसाली—स्त्री० [?] रस्ती। डोरी। (लश०)
मसाले का तेल—पुं० [हिं० मसाला+तेल] एक प्रकार का सुगन्धित तेल
 जो साधारण तिल के तेल में कपूर, कचरी, बाल-छाड़ आदि मिलाकर
 बनाया जाता है।
मसालेदार—वि० [हिं० मसाला+फा० दार] जिसमें मसाला पड़ा
 हुआ हो। जैसे—मसालेदार चना, मसालेदार तरकारी। २. मगडा
 आदि लगाने अथवा किसी को प्रसन्न करने के लिए दान-सँबाग कर अथवा
 बड़ा-पड़ाकर किया जानेवाला (कथन या बात)।
मसालत—स्त्री० [अ०] ३. नापना। पैसाइश। २. शोषमिति।
मसालति—स्त्री०=मसालत।
मसिखर—पुं० [अ० मसेखर] जहाज में, लंगर उठाने का रस्ता। (लश०)
मसि—स्त्री० [सं०] १. मस। २. रोशनार्ई। २. काजल। ३. का-
 लिल। ४. निर्गुबी का फल।
मसिजीरा—पुं० [हिं० मास+जीरा (प्रत्य०)] मांस के योग से बना हुआ
 कोई खाद्य पदार्थ।

मसिखर—पुं० [सं० प० तं०] महि अर्थात् स्याही बनानेवाला व्यक्ति।
मसि-कूपी—स्त्री० [सं० प० तं०] दावात।
मसि-जल—पुं० [सं० प० तं०] रोशनार्ई।
मसित—पुं० कृ० [सं०] मस (परिवर्तन) +कृत, इत्य' बूर किया हुआ।
मसिदानी—स्त्री० [सं० मसि+फा० दानी] दावात।
मसि-धान—पुं० [सं० प० तं०] दावात।
मसि-पथ्य—पुं० [सं० व० सं०] लेखक।
मसि-पथ—पुं० [सं० व० सं०] कलम।
मसि-विन्दु—पुं० [सं० प० तं०] दावात।
मसि-बुंदा—पुं० [सं० प० तं०] मसिबिन्दु। मसिबिन्दु।
मसि-मणि—स्त्री० [सं० मस्य० सं०] दावात।
मसि-मूख—वि० [सं० व० सं०] जिसके मुँह पर कालिल पुती या लगी
 हो अर्थात् कल-मुँही। २. दुष्कर्म करनेवाला।
मसियार—स्त्री०=मसाल।
मसियाना—अ० [हिं० मांस] शरीर का मली माँस नाम से भर जाना।
 शरीर का मसल होना।
 सं० ऐसी क्रिया करना जिसमें किसी का शरीर मामल अर्थात् दूट-पुट
 हो जाय।
मसियार—स्त्री०=मसाल।
मसियारा—पुं०=मसालची।
मसिला—पुं०=मसिखर।
मसि-विन्दु—पुं० [सं० प० तं०] काजल, कालिल आदि की वह बिन्दी जो
 स्त्रियाँ बच्चों के गाल, माथे आदि पर उन्हे नजर से बचाने के लिए लगाती
 है। दिठौना।
मसी—स्त्री०=मसि।
मसीका—पुं० [हिं० माया] १. आठ रस्ती का मान। माया। २. चबप्री।
 (दलाल)
मसीना—स्त्री०=मसजिद।
मसीबा—स्त्री०=मसमिद।
मसीना—स्त्री० [सं०] मस (परिवर्तन) +इन्-वन्-दीप्य, पूर्वा०+टाप्
 अलसि।
 [पुं०] मोटा अनाज। कदम।
मसीला—वि० [हिं० मस+ईला (प्रत्य०)] जिसकी मसं निकल अर्थात्
 मीज रहती हो। नखयुक्त।
 वि० [स्त्री० मसीली] दे० 'मसाल'।
मसीह—पुं० [अ०] हजरत ईसा। मसीहा।
मसीहा—पुं० [अ० मसीह] १. वह जिसमें रोगियों को नीरोग करने और
 मृतकों का जीवित करने की शक्ति हो। २. ईसाई धर्म के प्रवर्तक ईसा-
 मसीह। ३. उर्दू फारसी कविताओं में प्रेम-भाव की मजा या उसके
 लिए सम्बन्धन।
मसीहाई—स्त्री० [अ०] १. मसीहा का काम या भाव। मसीहापन।
 २. मूर्दा को जिन्दा करना। ३. मसीहा की सी बह अलौकिक शक्ति
 जिसमें रोगी चरे होते और मृतक जी उठते हैं।
मसीही—वि० [अ० मसीह+फा० ई (प्रत्य०)] ईसा मसीह-सम्बन्धी।
 शिष्टदीय।

पुं० ईसा मसीह का अनुयायी। ईसाई।
मसुरा—पुं०=मसूर।
मसुरिया—स्त्री०=मसूरिका।
मसुरी—स्त्री०=मसूर।
मसू—अन्य० [हि० मसू, प० मसा-मसा=कठिनता से] कठिनाई से।
 मुकिल से।
मसूझा—पुं० [स० शमझु] मूँह का वह मांसल अंग जिसमें दात जमे होते हैं।
मसूड़ी—स्त्री० [देश०] धातु गलावे की मट्टी।
मसूर—पुं० [स० √ मस् + ऊर्ज] एक प्रकार का अन्न जो द्विदल और चिपटा होता है और जिसका रस मटमैला होता है। इसकी प्रायः दाल बनती है।
मसूरक—पुं० [सं० मसूर + कन्] गोल तकिया।
मसूरसि—पुं०=मसूरसि। उदा०=मेच्छ मसूरसि सति के बच कुररानी बार। [पदवदरदायी।]
मसूरा—स्त्री० [सं० √ मस् (परिणाम) + ऊर्ज, + टाप्] १. श्रेण्या।
 रबी। २. मसूर नामक अन्न। ३. उक्त अन्न की दाल। ४. उक्त दाल की बनी हुई बढी।
 †पुं०=मसूडा।
मसूरिका—स्त्री० [सं० मसूर + कन् + टाप्, इल] १. चेचक का एक मेल जिसमें शरीर पर मसूर के बराबर दाने निकलते हैं। बसरा। २. कुटनी। जूनी।
मसूरी—स्त्री० [सं० मसूर + शीष्] मसूरिका नामक रोग।
 पुं० [देश०] एक प्रकार का पेड़ जो कद में छोटा होता है और गिगिरि फलु में जिनके पत्ते झड़ जाते हैं।
 †स्त्री०=ममूर।
मसूल—पुं०=महसूल।
मसूला—पुं० [देश०] एक प्रकार की पतली लम्बी नाव।
मसूस—स्त्री० [हि० मसूसना] १. मन मसूसने की क्रिया या भाव। २. मन में दबा रहनेवाला कष्ट या दुःख।
मसूसना—स्त्री० [हि० मसूसना] मन मसूसने की क्रिया या भाव। आन्तरिक ब्याप।
मसूसना—अ० [हि० मरोड़ना या फा० अफरोस, प्र० मसास] १. मरोड़ना।
 २. रेंडना। ३. निचोड़ना। ३. मनोबेग को बहाना या रोकना। ४. अच्छी तरह भग्न होना। उदा०—रस में मसूसी रहो आलस निवारि कै।—मारतेडु।
 †अ०=मसासना।
मसूब—वि० [सं० मस् + ऋष (दीप्त होना) + क, पृषो० सिद्धि] १. चिकना। २. मूलायम। ३. चमकीला।
मसूबा—स्त्री० [सं० मसूब + टाप्] अलसी।
मसूरा—वि० [सं० मसि] [स्त्री० मसेरी] काले रंग का। काका।
 उदा०—जा कटाच्छ ते किछै मसेरी।—नूर मुहम्मद।
मसेबारा—पुं०=मसिबोरा।
मसोझा—पुं० [देश०] सीना, बाँदी आदि गलावे की शरिया। (कुमाने)
 †पुं०=मसूडा।

मसोसना—अ० [फा० अफरोस] १. मन ही मन कुढ़ना। २. मनोबेग को बहाना या रोकना।
 †अ०=मसूसना।
मसोसा—पुं० [फा० अफरोस, हि० मसोसना] १. मन में होनेवाला दुःख या रंज। मानसिक दुःख। २. पश्चात्ताप। पछतावा।
मसोसा—पुं० [अ० मसन्विद] १. लेख, लेख्य आदि का वह आरम्भिक रूप जिसमें आगे चलकर कुछ काट-छाट या परिवर्तन किया जाने को हो या किया जा सकता हो। पांडुलिपि। मसविदा। २. किसी काम या बात के संबंध में पहले से सोचा जानेवाला उपाय या युक्ति।
 कि० प्र०=निकालना।
मसूहा—अ०=मसोहा घोटना या बाँधना=अच्छी तरह सोचकर तरकीब या युक्ति निकालना और योजना बनाना।
मसोबेबाल—पुं० [अ० मसोदा + फा० बाब् (प्रत्य०)] १. अच्छी बुक्ति सोचनेवाला। २. चालाक। भूतं।
मसोबो—पुं०=मसिबो।
मस्कर—पुं० [सं० √ मस् + अरच्] १. बंसा। सानदान। २. गति।
 बाल। ३. ज्ञान। जानकार।
मस्करा—पुं०=मसबारा।
मस्करी (रिनु)—पुं० [सं० मस्कर + रिनि] १. संन्यासी। २. भिक्षु।
 ३. चरमा।
 †स्त्री०=मसबारी।
मस्का—पुं०=मसका।
मसकुरा—पुं०=मसकुर।
मसखरा—पुं०=मसखरा।
मस्खिब—स्त्री०=मसखिब।
मस्त—वि० [फा०] [भाव० मस्ती] १. जो तबे में नूर हो। मदीमस्त।
 २. जो मद या नशे से युक्त या प्रभावित हो। जैसे—मस्त आँखें।
 ३. किसी प्रकार के मद से युक्त। जैसे—अन्या जवानों में मस्त।
 ४. जो किसी पर रीझा हो। किसी के मूग सौदर्य आदि पर अनुरक्त।
 ५. किसी बात या विषय में पूरी तरह से लीन। ६. निश्चित और लक्ष्यपराह।
मस्तक—पुं० [सं० √ मस् + तकन्] मनुष्य के शरीर का सबसे ऊपरी और पशु-पक्षियों के शरीर का सबसे आगेवाला भाग जिसमें आँखें, मूँह, कान आदि होते हैं। माल।
मसूहा—अ०=मस्तक अँधा रहना = (क) बहुत अच्छा और सम्मानपूर्वक कार्य करता। (ख) प्रतिक्रिया और सम्मानपूर्वक रहना।
मस्तकी—स्त्री०=मस्तगी।
मस्तगी—स्त्री० [अ० मस्तकी] एक प्रकार का बड़िया पीसा गाँद जो कुछ सदाबहार पेड़ों के तनों को पीछकर निकाला जाता है। रूमी मस्तगी।
मस्त-मीला—पुं०=मस्तराम।
मस्तराब—पुं० [फा० + हि०] वह व्यक्ति जो अपने विचारों, कार्यों आदि में मस्त रहता हो और सांसारिक झगड़ों-अपनों में न पड़ता हो।
मस्तरी—स्त्री० [सं० मसा] धातु गलावे की मट्टी। (पश्चिम)
मस्ताना—वि०=मस्ताना।

मस्तानी—वि० [फा० मस्तान.] [स्त्री० मस्तानी] १ मस्ती का मा।
जैसे—मस्तानी रम-अग; मस्तानी चाल। २ मत। मस्त।

अ० मस्ती मे आना। मस्ती मे भरना।

स० मस्ती में लाना। मस्त करना।

मस्तिका—पु०—मस्तिका।

मस्तिकी—स्त्री०—मस्तगी।

मस्तिक—पु० [स० मस्त/हृ+क, पृषो० सिद्धि] १ मस्तक के अदर का मुद्रा। २ बहु मानसिक शक्ति जिसके द्वारा मनुष्य सोचने-समझने आदि का काम करता है। विभाग। (ब्रैन)

वि० [स०] १ मस्तिक-सबधी। मस्तिक फा। २ मस्तिक मे रहने या होनेवाला।

मस्ती—स्त्री० [फा०] १. मस्त होने की अवस्था या मात्र। मत्वालापन।

फि० प्र०—आना।—उठना।—उतरना।—बडना।—मे आना।

मुहा०—मस्ती झड़ना—कष्ट आदि मे पड़ने के कारण मस्ती बूर होना।

मस्ती झाड़ना—इतना कष्ट देना कि मस्ती बूर हो जाय।

२. मस्ती की ऐसी प्रबल इच्छा या काम-वासना कि मले-जुने का विचार न रहे जाय।

मुहा०—मस्ती झाड़ना या निकालना—किसी के साथ प्रकम करके काम-वासना धान्त करना।

३. मद। जैसे—हाथी की मस्ती, ऊँट की मस्ती।

फि० प्र०—टपकना।—बहना।

४. वह स्त्राव जो कुछ विविध द्रवों, पत्थरों आदि मे कुछ विशेष अवसरों पर होता है। जैसे—नीम की मस्ती, पहाड़ की मस्ती।

फि० प्र०—टपकना।—बहना।

मस्तु—पु० [स०/मस्त (परिणाम)+स्तु] १. दही का पानी। २ फटे हुए दूध का पानी।

मस्तुरी—स्त्री० [स० भस्त्रा] घातु गलाने की मट्टी।

मस्तुर—पु० [पुर्न०] बडी नाभी आदि के बीच का वह बड़ा लम्बा जिसमे ब्रह्मा या पाल बाँधा जात है।

मस्ता—पु०—मसा।

मह—अव्य० [स० मध्य] मे।

महई—वि० [स० महान्] बड़ा। महान्।

अव्य०—महै (मे)।

महक—स्त्री०—महक।

महकना—अ०—महकना।

महा—वि० [स० महार्थ] [स्त्री०, भाव० महर्षी] १. जिसका मूल्य उचित या साधारण से अधिक हो। बहुमूल्य। २. जिसका मूल्य पहले की अपेक्षा अधिक हो। अपेक्षाकृत अधिक दामवाला। ३ जिते प्राप्त करने के लिए आवश्यकता से अधिक व्यय करना, कष्ट उठाना या वदनामी या हानि सहनी पड़ी हो। जैसे—यह मन्त्रिल आप को बहुत महँगा पड़ा है।

महर्षाई—स्त्री० [हि० महर्षा] १. महर्षी के कारण नौकरों को वेतन के अतिरिक्त दिया जानेवाला मासिक धन या भत्ता। (डियरनेज एलाउन्स) २. दे० 'महर्षी'।

महँ—स्त्री० [हि० महँगा] १. महँगे होने की अवस्था या मात्र। २.

ऐसा समय जिसमे चीन्हा का मात्र अधिक बढ़ गया हो। पहले की अपेक्षा अधिक मूल्य पर बस्तुएँ बिकने की स्थिति। ३ अकाल। दुर्मिष।

फि० प्र०—मड़ना।

महर्षा—पु० [दिश०] मुना हुआ बना।

महत्—पु० [स० महत्=बड़ा] [मात्र० महती] बहु संख्यासी (या साधु) जो अपने समाज अथवा किसी मठ का प्रधान हो।

वि०—महत् (बहुत बड़ा)।

महताई—स्त्री०—महती।

महति—वि०—महत् (बहुत बड़ा)। उदा०—भगति बिचारि एक ही महति।—प्रिषीराज।

महती—स्त्री० [हि० महत् +ई (प्रत्य०)] महत् का काम पद या मात्र। उदा०—मादी विपति महती आई, लगन राम सों छूटी।

महँबी—स्त्री०—महँबी।

मह—वि० [म०] १. महा। जति। बहुत। २. बहुत बड़ा। महत्।

↑अव्य०—महम्।

महक—स्त्री० [स० महक] १. दूर तक फैलनेवाली सुगंध। जैसे—कमर इत्र से या उद्यान फूलों से महक रहा था। २. (प्रिय या अप्रिय) गंध या वास। जैसे—जलते हुए कपड़े की महक।

महकवार—वि० [हि० महक +फा० वार (प्रत्य०)] जिसमे महक या सुगंध हो।

महकना—अ० [हि० महक +ना (प्रत्य०)] महक या गंध देना।

महकमा—पु० [अ० महकम] १. कचहर। ग्यालालय। २. शासनिक दृष्टि से उसका कोई विधिष्ठ विभाग।

महकान—स्त्री०—महक।

महकाना—स० [हि० महक] १. महक या सुगंध से युक्त करना। २. महक या सुगंध चारों ओर फैलाना।

महकाकी—स्त्री० [स० महाकाली] पार्वती। (हि०)

महकीला—वि० [हि० महक +ईला (प्रत्य०)] जो महक रहा हो। जिसमें से महक निकलनी हो।

महकूम—वि० [अ० महकूम] १. जिसे हुकम दिया गया हो। २. वासित। पु० प्रजा। रिआया।

↑पु० [?] सूयं। (हि०)

महज—अव्य० [अ० महज] १. केवल। निरा। जैसे—मह तो महज पानी है। २. केवल। मात्र। सिर्फ। जैसे—यह तो महज पापमयन है।

महजर—पु० [अ० महजर] लोगों के हाजिर होने का स्थान।

महजरलामा—पु० [अ० महजर +फा० नाम] १. वह प्रायनामपत्र जो बहुत से आदिमियों की ओर से दिया जाय। २. वह सामय पत्र जिसमे बहुत से गवाही की गवाही हो।

महजित्—स्त्री०—महजिब।

महजान—पु०—महजान।

महदिआना—स० [हि० मिट्टी + आना (प्रत्य०)] सुदी अनसुनी करना।

महथ—पु० [स० महार्थ] समुद्र। सागर। उदा०—महथ मथे नूँ लीध महमथेज।—प्रिषीराज।

महत्—वि० [स० महत्; जति] १. बहुत बड़ा। महान्। २. सर्वश्रेष्ठ।

१. दार्शनिक क्षेत्रों में, प्रकृति का आरंभिक या मूल विचार। महत्त्व।
२. बह्व। ३. राज्य। ४. जग। पानी।

*१००=महत्त्व।

महत्त्व—१०० [सं० महत्त्व] मालिक। स्वामी।

महत्त्ववादन—स्त्री० [हि० महत्त्व] मालकिन। स्वामिनी।

महत्त्वमान—१०० [दिश०] करके में पीछे की ओर लगी हुई वह बूटी जिससे ताने की पीछे की ओर लीने रखनेवाली बोरी लपेटकर बांधी जाती है।
हथेला। पिंडा।

महत्ता—१०० [सं० महत्] गाँव का मुखिया। महती।

*स्त्री० [म० महत्ता] १. महता। २. अभिमान। ३. एक प्राचीन नदी।

महताव—१०० [फा०] माहाताव १. चंद्रमा। २. एक तरह का अगली कीआ। मरुती।

स्त्री० १. चन्द्रिका। चाँदनी। २. महात्मी नाम की आतिशबाजी।
३. जहाँ पर रात में संकेत के लिए जलाई जानेवाली एक प्रकार की लीली रोशनी।

महात्मी—स्त्री० [फा०] १. भोमवती के आकार की एक तरह की आतिशबाजी जिसके जलने से तेज स्फेद प्रकाश होता है। २. मासो आदि के अग्रे का भाग के बीच का गोल चबूतरा जिस पर बैठकर चाँदनी का आनंद लिया जाता है। ३. बकोतरा। (तूरब)

महाताव—वि० [सं० महत्त्व] श्रेष्ठ। बड़ा। उदा०—आय रहती महताम।—जटमल।

महातारा—१०० [हि० महतारी (माता) का १००] पिंडा। बाप। (स्व०)
उदा०—अनतारी सब अवतारन को महतारी महतारी।

महातारी—स्त्री० [सं० माता] माता। माँ।

महती—स्त्री० [सं० महत् + हो] १. नारद की बीषा का नाम। २. बृहती। बन-मटा। ३. महत्त्व। महिमा। ४. कुण द्वीप की एक नदी। ५. एक प्रकार का रोग जिसमें हिचकी आती है और उसके फल-स्वरूप छाती में पीड़ा होती है। ६. योगिने के फलने का रोग। (बीषक)

महती-ड्रावणी—स्त्री० [सं० मध्य० सं० अथवा व्यस्त पद] अथवा मध्य में पड़नेवाली मात्र शुद्ध ड्रावणी।

महत्ता—१००=महत्त्व।

महत्ता—१०० [हि० महता] १. मालिक। स्वामी। २. सरकार। ३. कुछ गयाबाद पक्षी की एक उपजाति। ४. कहार। (बिहार) ५. गाँव का मुखिया। ६. किसी मंडली या समाज का मुखिया।

महत्त्व—१०० [म० महती-कथा, अ० सं०] बुद्धामयी।

महत्त्वत्व—१०० [सं० महत्त्वत्व, कर्म० सं०] १. दार्शनिक क्षेत्र में प्रकृति का पहला विचार या कार्य।

विशेष—साक्ष्यकार ने कहा है कि पहले-महल जब जगत सुधुपनावस्था में उठा था जागा था, तब सबसे पहले इही महत्त्वत्व का आदिमान हुजा था। इसी को दार्शनिक परिभाषा में बुद्धि-तत्त्व भी कहते हैं।
२. कुछ तांत्रिकों के अनुसार संसार के सात तत्त्वों में से सबसे अधिक सूक्ष्म तत्त्व। ३. जीवात्मा।

महत्त्वता—१००=महत्त्वत्व।

महत्त्वत्व—वि० [सं० महत्त्व + सम] १. जिसका महत्त्व सबसे अधिक अंका, माना या समझा जाता हो। २. सबसे बड़ा। (शेरेस्ट)

महत्त्वम-सत्त्वत्वत्वत्व—१०० [कर्म० सं०] गणित में, वह बड़ी से बड़ी संख्या जिसका भाग हो या अन्य संख्याओं में पूरा पूरा हो सके।

महत्तर—वि० [सं० महत् + तत्त्वं] किसी की अपेक्षा अधिक महत्त्ववाला।
१०० बूटा।

महत्तरक—१०० [सं० महत्तर + कन्] दरबारी। मुसाहब।

महत्ता—स्त्री० [सं० महत् + तत्त्वं + टाप्] महत्त्व।

महत्त्वत्व—१०० [सं० कर्म० सं०] पुष्पोत्तम।

महत्त्व—१०० [सं० महत् + त्व] १. महत्त्व या महा अर्थात् सबसे बड़े होने की अवस्था या भाव। २. श्रद्धा। बढ़ाई। श्रेष्ठता। ३. किसी काम, चीज या बात की वह अवस्था जिसमें वह अर्थ, उपयोग, परिणाम, प्रभाव, मूल्य आदि के विचार से औरों से बहुत बढ़कर मानी या समझी जाती है। (इम्पार्टेंस) जैसे—महत्त्व का विचार, महत्त्व का समाचार आदि।

महत्त्वपूर्व—वि० [सं० १०० तं०] जिसका कुछ या अधिक महत्त्व हो।

महत्त्वकांक्षा—स्त्री० [सं० महत्त्व-आकांक्षा, अ० तं०] दे० 'उच्चकांक्षा'।

मह्वी—वि० [अ० मह्वी] १. जिसे दीक्षा मिली हो। दीक्षित। २. धर्मनेता।

१०० बारह्वे इमान। (मुसलमान)

मह्वुह—वि० [अ० मह्वुह] १. जिसकी हँसी हो। वीभावद। सीमित।
२. चिरा हुआ। ३. कुछ। चद।

मह्वुह—वि० [अ० मह्वुह] २. नट। २. व्यस्त।

मह्वेवचर—१०० [हि०] मैत्र के होनेवाली बेलों की एक जाति।

मह्वुास्त्री—स्त्री०=मह्वुाश्री (सता)

मह्वुा—१००=मयन।

मह्वुा—सं०=मयन।

१०० [हि० मयन] बड़ी मयानी।

१००=मेहना।

महना-मयन—१०० [हि० महना—मयन] १. बार बार किसी बात पर तर्क करते चलना। २. ध्वं की बहुत अधिक तकरार या हुजमत।

महनिया—१०० [हि० महना—मयन + इया (प्रत्य०)] मयनेवाला।

महनीय—वि० [सं० महनीय + अनीय] १. माब० महनीयता १. महान्।
२. पूजनीय। मान्य।

महनु—१०० [हि० महना] १. मयन करनेवाला। २. विनाशक।

महफा—१०० [?] ३. एक प्रकार की पालकी।

महफिल—स्त्री० [अ० महफिल] १. मजलिस। समा। समाज। २. बह समाज या स्थान जिसमें नाच-रंग हो रहा हो।

कि० प्र०—जमना।—लगाना।

३. इस्लामी धार्मिक क्षेत्र में, उपासना या साधना का स्थान। ४. सूफियों की परिभाषा में संसार।

महफुज—वि० [अ० महफुज] १. जिसकी हिफाजत की गई हो। २. आवश्यकता के लिए बचाकर रखा हुआ।

महफुज—१०० [अ० महफुज] [स्त्री० महफुजा] वह जिससे प्रेम किया जाय। प्रेमपात्र। प्रिय।

महफुजा—स्त्री० [अ० महफुजा] प्रेमपात्री। प्रेयसी।

महफुज—वि० [सं० महफुज] १. मरत। २. उन्नत।

महफुज—१००=मुहम्मद।

महर्षी—वि० अ० मुहम्मदी) मुसलमान-सम्बन्धी।
 महर्षि—कि० वि० [हि० महर्षा] मह मह करते हुए। सुगन्धि के साथ।
 महर्षधन—पु० [स० महीमथन] विष्णु। (हि०) उदा०—महर्ष मने
 र्मुं लीध महर्षधन।—प्रियकारी।
 महर्षहा—वि० [हि० महर्ष] महर्षदार। सुगन्धित।
 महर्षहाना—अ० [हि० महर्ष अथवा महर्षना] गणकना। सुगन्धि देना।
 स० महर्ष या सुगन्धि स युक्त करना।
 महर्षा—स्त्री०—महिना।
 महर्षान—पु०—मेहमान।
 महर्षानी—स्त्री०—मेहमानी।
 महर्षाम्य—स्त्री० [म० महर्षाम्या] पार्वती। (हि०)
 महर्षमिल—पु० [अ० महर्षमिल] वह कजाबा जिसमें स्त्रियाँ बैठती हो।
 महर्षमूढ—वि० [अ० महर्षमूढ] जिसकी हृदय अर्थात् प्रयासा की गई हो।
 प्रयासित।
 महर्षमूर्खी—स्त्री० [फा० महर्षमूर्खी] एक तरह का मन्त्रमल।
 वि० महर्षमूढ-सम्बन्धी।
 महर्षमेख—स्त्री० [फा० महर्षमेख] जूने की एड़ी में लगाई जानवाली ताल।
 (मुहम्मदों के समय इन्हीं से पाँड़ के पेट में आधात करके उसे एक लगाई
 जाती है।)
 महर्षम्बद—पु०—मुहम्मद।
 महर्षम्बी—वि०, पु०—मुहम्मदी।
 महर्ष—पु० [म० महर्ष] [स्त्री० महर्षि] १ ब्रज में बोला जानेवाला एक
 आदरसूचक शब्द जिसका प्रयोग विशेषतः जमींदारों और बौद्धों आदि
 के सबब में होता है। २ एक प्रकार का पक्षी। ३ दे० 'महर्ष'।
 वि० महर्षहा (सुगन्धि)।
 पु० [फा०] वह रकम जो निकाह के समय दुलिन को देनी निश्चित की
 जाती है। (मुसलमान)
 कि० प्र०—बोधना।—बोधना।
 महर्षवान—पु०—मेहरवान।
 महर्षवस—पु० [अ० महर्षव] १ कन्या की दृष्टि में ऐसा व्यक्ति जिससे उसका
 विवाह न हो सकता हो। २ वह जो मीरों के रहस्य में परिनिमित्त हो।
 हादिक मिथ।
 स्त्री० [?] १ अगिया। २ अगिया की कटौती।
 महर्षा—पु० [हि० महर्षा] [स्त्री० महर्षी] १ कटार। २ मुखिया।
 सरदार। ३ पूज्य या श्रेष्ठ व्यक्ति।
 वि० १ प्रधान। मुख्य। २ पूज्य और श्रेष्ठ।
 महर्षार्थ—स्त्री० [हि० महर्षः आर्थ (प्रत्य०)] १ महर्ष होने की अवस्था
 या भाव। २ प्रथावत्।
 महर्षारज—पु०—महाराज।
 महर्षारजा—पु०—महाराज।
 महर्षारण्य—पु० [स० महर्षारण्य] समुद्र। (हि०)
 महर्षारणा—पु० [हि० महर्ष-आना (प्रत्य०)] महर्षी के रहने की जगह,
 महल्ला या गाँव।
 पु०—महाराणा।
 अ०—मेहाराणा।
 महर्षारथ—स्त्री०—मेहाराथ।

महर्षि—स्त्री० [हि० महर्षि] १ एक प्रकार का आदरसूचक शब्द जिसका
 व्यवहार ब्रज में किसी प्रतिष्ठित स्त्री विशेषतः सास के लिए होता है।
 २ बर की भालकिन। गृह-स्वामिनी। ३ स्वाकिन (विधिया)।
 †स्त्री०—मेहर।
 महर्षी—स्त्री० [दे०] खालिन (विधिया)।
 स्त्री० हि० 'महर्ष' का स्त्री०।
 महर्षआ—पु० [दे०] अस्मा। (सुनार)
 महर्ष—पु० [दे०] १ बहू पीने की नर्था। २ एक प्रकार का मूष।
 महर्षम—वि० [अ० महर्षम] १ जिसे कोई चीज न मिल सकती हो। जो
 कुछ पाने से रह गया हो। बन्धित। २ अमागा।
 महर्षमी—स्त्री० [अ० महर्षमी] महर्षम होने की अवस्था या भाव।
 २ बदकिस्ती।
 महर्षरेटा—पु० [हि० महर्ष-रेटा (प्रत्य०)] [स्त्री० महर्षरेटी] १ महर्ष
 अर्थात् मुखिया या सरदार का बेटा। २ श्रीकृष्ण।
 महर्षरेटी—स्त्री० [हि० महर्षरेटी] वृषमान् महर्ष की लड़की, राधिका।
 महर्षव—वि०—महर्षव।
 महर्षवता—स्त्री०—महर्षवता।
 महर्षलोक—पु० [स० कर्म० स०] पुराणानुसार भू, मू, स्व, आदि चौदह लोकों
 में से एक।
 विशेष—अग्निवन्द दशान में यह लोक ऊपर के तीन लोकों—मरु, चित्त
 और आनन्द तथा नीचे के तीन लोकों में भू, मू, स्व के मध्य में माना गया
 है; और इसी में प्रति-मानस (देखें) का निवास माना गया है।
 महर्षबन्धी—स्त्री० [स० महर्ष-बन्धी, कर्म० स०] कौष्ठ। केवाँच।
 महर्षि—पु० [स० महर्ष-धृषि, कर्म० स०] १ बहुत बड़ा धृषि। धृषि-
 श्वर। जैसे—वेदव्यास। २ मर्गत्त म एक प्रकार का गज या मौरव
 के आठ पुत्रों में से एक कहा गया है।
 महर्षिका—स्त्री० [स० महर्षि-कर्म० टापु] भटकटैया।
 महर्ष—पु० [अ०] १ राजाओं, रईमों आदि के गृहों में बहूत बड़ा मकान।
 मवन। प्रामद। २ अत पुर। रनिवास। ३ बहुत बड़ा और
 सजा हुआ कमरा। ४ अवसर। मौका। ५ बड़ी मधुमक्खली। सारण।
 ६ पत्नी। बाँबी।
 महर्षम—पु० [अ० महर्षम] वह जिसके पान र्दश्वर कोई विशेष सन्देश भेजे।
 उदा०—विद्यापति छवि मान महर्षम जुगपति चिरं जीवे जीवयु।—
 विद्यापति।
 महर्षम-सरा—स्त्री० [अ० महर्षः फा० सरा] अत पुर। जनानस्थान।
 रनिवास।
 महर्षलाठ—पु० [दे०] एक प्रकार का पत्ता जिसकी दुम लम्बी, डार काली,
 छाती खैरी, पीठ स्याकी रंग की और पंर काले होते हैं। इसे कौक्या
 और मूटरी भी कहते हैं।
 महर्षली—पु० [हि० महर्ष] १ वह जनवा, जो महर्षों में पहरा देता तथा
 वेगमों की सेवा करता हो। २ कच्ची।
 महर्षली-पट्टसा—पु० [हि० महर्ष-पट्टसा] एक प्रकार की बड़ी नाव जिस पर
 केवल लड़कियाँ, पायल आदि जाते जाते हैं।
 महर्षल्ला—पु० [अ० महर्षल्ला] शहर का कोई विभाग जिसमें बहुत से मकान
 तथा कई गलियाँ होती हैं। टोला। पाड़ा।

महाकेशव—पु० [अ० महत्क-+का० शर (श्रय०)] १. महत्के का शीघरी या प्रधान । २. चमार, मंगी, महेश्वर आदि जो अलग अलग महत्को में सजाई करते हैं ।

महाकेश्वरी—स्त्री० [हि० महाकेश्वर] एक ही महत्के में रहनेवाली हो होनेवाला बरताव या लेन-देन ।

महाक्षर—पु० [अ० मह०क्षर] १. कवामत । प्रलय । २. कवामत का दिन ।

महाक्षारा—स्त्री०—महाक्षीर (मछली) ।

महाक्षिप्त—पु० [अ० मह०क्षिप्त] तक्ष्मील वस्तु करनेवाला । उगाहने वाला ।

महाक्षीर—स्त्री०—महाक्षीर (मछली) ।

महक्षुब्ध—वि० [अ० मह०क्षुब्ध] १ जिससे हसत या ईर्ष्या की गई हो । २. ईर्ष्या किये जाने के योग्य ।

महक्षुब्ध—वि० [अ० मह०क्षुब्ध] घरे से पडा हुआ । घिरा हुआ ।

महक्षुब्ध—पु० [अ० मह०क्षुब्ध] १. किसी चीज पर लगनेवाला किसी प्रकार का क्र या दुःख । २. कोई चीज कही भेजने का क्रिया या माडा । ३. जमीन की मालगुजारी या लगान ।

महक्षुब्धी—वि० [अ० मह०क्षुब्धी] जिस पर किसी प्रकार का महक्षुब्ध लगा हो या लग सकता हो । महक्षुब्ध के योग्य ।

† स्त्री०—भूमि जिस पर लगान न देना पडता हो ।

महक्षुब्ध—वि० [अ० मह०क्षुब्ध] जिसका पृहसान (अर्थात् किसी ज्ञानेन्द्रिय के द्वारा ज्ञान) हुआ हो । जैसे—किसी चीज या बान की कर्मा महक्षुब्ध होता ।

महो—अव्य०—महो ।

वि०—महा ।

महा—वि० [स०] १ बहुत अधिक । अत्यन्त । २. बडा । महन् । ३. सबसे बड़कर । सर्वश्रेष्ठ ।

† पु० [हि० महना—अथवा] मडा । छाड ।

महाई—स्त्री० [स० मघन, हि० महना । आई (श्रय०)] १. महने अर्थात् मघने की क्रिया, भाव या पारिच्छ्रमिक । २. नील की मघाई ।

महाअ—पु०—महाअव ।

महाअर—पु०—महाअर ।

महाअर—पु० [स० महत्-अर, कर्म० स०] १ लहसुन । २. प्याज ।

महाअरु—पु० [स० महत्-अरु, कर्म० स०] शिव ।

महाअरु—पु० [स० महत्-अरु, कर्म० स०] १. समुद्र । सागर । २. वन्य देवता । ३. पर्वत । पहाड । ४. एक प्राचीन देश ।

महाअरु—पु० [स० महत्-अरु, कर्म० स०] १. शिव का एक अनुचर । २. एक बौधिसस्य का नाम ।

महाअरुष्य—पु० [स० महत्-अरुष्य, कर्म० स०] १. बेल का वृक्ष । २. काल लहसुन ।

महाअरुष्य—पु० [स० महत्-अरुष्य, कर्म० स०] एक तरह का अहीरासा साप ।

महाअरुष्य—पु० [स० महत्-अरुष्य, कर्म० स०] एक प्रकार का बडा करण ।

महाअरुष्य—पु० [स० महत्-अरु, कर्म० स०] एक बौधिसस्य का नाम । वि० १. खडे हाथोंवाला । २. अधिक आय करनेवाला ।

महाअरुष्य—पु० [स० महत्-अरुष्य, कर्म० स०] १. शिव । २. नाग ।

महाअरुष्य—स्त्री० [स० महाअरुष्य + टाप्] कालिकेय की एक मातृका ।

महाअरुष्यकार—पु० [स० महत्-अरुष्यकार, कर्म० स०] अमलतास ।

महाअरुष्य—पु० [स० महत्-अरुष्य, कर्म० स०] ब्रह्म कल्प । (पुराण)

महाअरुष्य—पु० [स० महत्-अरुष्य, कर्म० स०] शिव ।

महाअरुष्य—स्त्री० [स० महाअरुष्य-कार, कर्म० स०] पृथ्वी ।

महाअरुष्य—पु० [स० महत्-अरुष्य, कर्म० स०] १ शिवजी का नदी नामक गण और द्वारपाल । २. विष्णु । ३. हाथी ।

वि० बहुत बडी काया या शरीरवाला ।

महाअरुष्य—स्त्री० [स० महाअरुष्य-कार, कर्म० स०] कालिक की वह पृथिवी जो रोहिणी नद्यत में हो ।

महाअरुष्य—पु० [स० महत्-अरुष्य, कर्म० स०] १ सृष्टि और प्राणियों का अंत करनेवाले, महादेव या शिव का एक रूप । २. सारा समय जो विष्णु के समय अनंत और अक्षत है । ३. शिव का एक गण जो कुछ पुराणों में शिव का पुत्र कहा गया है । ४ प्राचीन भारत में सूर्योदय का प्राथमिक और आरम्भ काल जो उज्जयिनी के सूर्योदय काल के अनु रूप और उसके आधार पर माना जाता था । ५. उक्त के आधार पर उज्जयिनी में स्थित शिव का एक प्रसिद्ध मंदिर ।

महाअरुष्य—स्त्री० [स० महाअरुष्य-कार, कर्म० स०] १. महाअरुष्य स्वयं शिव की पत्नी जिसके पांच मुख और आठ भुजाएँ मानी जाती हैं । २. दुर्गा की एक प्रसिद्ध मूर्ति या रूप । ३. शक्ति की एक अनुचरिणी । ४. जैनी के अनुसार सोलह विद्या-देवियों में से एक जो अवसर्पिणी के पांचवें अर्हन्त की देवी हैं ।

महाअरुष्य—पु० [स० महत्-अरुष्य, कर्म० स०] बहुत बडा और विस्तृत काव्य-ग्रंथ ।

विशेष—भारतीय साहित्य में पहले महाअरुष्य वह कहलाता था जिसमें किसी व्यक्ति के आदि से अन्त तक के पूरा जीवन का विस्तृत विवरण होता था । पर बाद के साहित्यकारों ने इसके सम्बन्ध में कई प्रकार के प्रतिबंध लगा दिये थे । यथा—यह श्रुंवल-बद्ध होने के सिवा सर्व-बद्ध भी होना चाहिए, इसका नायक देवता, राजा या कीर्तिदाता क्षत्रिय होना चाहिए; इसमें वीर, शास्य या क्षुधार रसों में से शीघ्र एक रस प्रधान होना चाहिए, बीच बीच में प्रसंग-वश और रस भी होने चाहिए, अनेक प्रकार के प्राकृतिक दृश्यों और शीमाओं, मानव या लौकिक जीवन के भिन्न भिन्न अंगों, कार्यों, घटनाओं आदि का भी वर्णन होना चाहिए आदि । इस दृष्टि से महाभारत और रामायण तो महाअरुष्य हैं ही; कालिदास इत नृचर, माघ इत शिष्यपाल-रच्य, भारविइत किराता-जुनीय और श्री हर्ष-इत नैवच-चरित भी महाअरुष्य की श्रेणी में आ जाते हैं । पर आज-काल वह बहुत बडा काव्य की महाअरुष्य मान लिया जाता है जो कवित्व की दृष्टि से बहुत उच्च कौटिक का हो और जिसमें बहुत से विषयों का सुंदर रूप में वर्णन हो ।

महाअरुष्य—पु० [स० महत्-अरुष्य, कर्म० स०] १. पूरा आकाश । २. [क० स०] एक पर्वत का नाम ।

महाअरुष्य—पु० [स० महत्-अरुष्य, कर्म० स०] युवराज ।

महाअरुष्य—स्त्री० [स० महाअरुष्य-कार, कर्म० स०] गंधारी ।

महाअरुष्य—पु० [स० महत्-अरुष्य, कर्म० स०] उच्च कुल ।

वि० [ब० सं०] महाकुलीन
 महाकुलीन—वि० [सं०+महाकुल+ल+ईन] अर्धे कुल मे जन्मा हुआ।
 महाकुण्ड—पु० [सं० महत्-कुण्ड, कर्म० सं०] कुण्ड का वह मंत्र जिसमें हाथ
 पैर की उँगलियाँ गलने तथा गलकर मारने लगती हैं। गलित
 कुण्ड।
 महाकृच्छ्र—पु० [सं० महत्-कृच्छ्र, कर्म० सं०] १ विष्णु का एक नाम।
 २. पौर तपस्या।
 महाकृष्ण—पु० [सं० महत्-कृष्ण, कर्म० सं०] मृत के अनुसार एक प्रकार
 का बहुत जहरीला सप।
 प० शिव।
 महाकीश—पु० [सं० महत्-कीश, ब० सं०] शिव।
 महाकीशातकी—स्त्री० [सं० महती-कीशातकी, कर्म० सं०] मितुअं या
 धीशा नामकी तरकारी।
 महाकृपु—पु० [सं० महत्-कृपु, कर्म० सं०] बहुत बड़ा यज्ञ। राजसूय
 यज्ञ।
 महाकीध—पु० [सं० महत्-कीध, ब० सं०] शिव।
 महाल—पु० [सं० महत्-अलि, ब० सं०, षच्] १. शिव। २. विष्णु।
 महालीर—पु० [सं० महत्-लीर, ब० सं०] ईल।
 महालर्ब—पु० [सं० महत्-लर्ब, कर्म० सं०] सी लर्ब की सल्या।
 महागंगा—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] एक प्राचीन नदी। (महा०)
 महागण—पु० [सं० महत्-गण, ब० सं०] १ अचरन्। २. कृत्ज। ३
 जलमैत।
 महागथा—स्त्री० [सं० महागथ। टाप्] १ केवडा। २ नागबाल।
 ३ चामुडा देवी।
 महागज—पु० [सं० महत्-गज, कर्म० सं०] दिग्गज।
 महागणनाम्बल—पु०=महालिखापाल।
 महागणपति—पु० [सं० महत्-गणपति, कर्म० सं०] १ शिव का एक
 अम्बर। २ गणेश।
 महागम्—पु० [सं० महत्-गम्, कर्म० सं०] १. ज्वर। बुलार। २ कठिन
 रोग। ३. एक औषध।
 महागर्भ—पु० [सं० महत्-गर्भ, ब० सं०] विष्णु।
 महागर्भ—पु० [सं० महत्-गर्भ, ब० सं०] १ विष्णु। २ शिव।
 महागिरि—पु० [सं० महत्-गिरि, कर्म० सं०] बहुत बड़ा पहाड़।
 महागीत—पु० [सं० महत्-गीत, ब० सं०] शिव।
 महागुण—वि० [सं० महत्-गुण, ब० सं०] अति गुणकारी।
 महागुणी—पु०=महोगुनी।
 महागुप्त—पु० [सं० महत्-गुप्त, कर्म० सं०] माता, पिता और गुप्त इन तीनों
 का समाहार।
 महागुल्मा—स्त्री० [सं० महत्-गुल्म, ब० सं०,+टाप्] सीमलता।
 महागोधूम—पु० [सं० महत्-गोधूम, कर्म० सं०] बड़े दाने का गेहूँ।
 महागंधिक—पु० [सं० महत्-गंधिक, कर्म० सं०] वह औषध जिसके सेवन
 से रोग निश्चित रूप से रुक जाय।
 महाग्रह—पु० [सं० महत्-ग्रह, कर्म० सं०] राहु।
 महाधीच—पु० [सं० महती-धीच, ब० सं०] १. शिव। २ शिव का
 एक अम्बर। २. पुराणानुसार एक देश का नाम। ४. ऋट।

महाधूर्पा—स्त्री० [सं० महती-धूर्पा, ब० सं०,+टाप्] शराब। मरिच।
 महाधृत—पु० [सं० महत्-धृत+कर्म० सं०] बहुत पुराना की।
 महाधीच—पु० [सं० महत्-धीच, कर्म० सं०] १ मारी शब्द। २.
 [ब० सं०] बाजार। हाट।
 महाधीषा—स्त्री० [सं० महाधीषः+टाप्] काफवा सिंगी।
 महाधीच—पु० [सं० महती-धीच, ब० सं०] चंच।
 महाधीच—पु० [सं० महत्-धीच, कर्म० सं०] १ यम के दूत। २. शिव का
 एक गण।
 वि०=प्रचड।
 महाधीचा—स्त्री० [सं० महाधीच+टाप्] चामुडा।
 महाधकधर्ती (तिन्)—पु० [सं० महत्-धकधर्तिन्, कर्म० सं०] बहुत बड़ा
 चक्रवर्ती राजा। ६आट।
 महाधपला—स्त्री० [सं० महती-धपला, कर्म० सं०] ऐसा आयाँ छद जिसके
 दोनों दलों में चपला छंद के लक्षण हों।
 महाधम्—पु० [सं० महती-धम्, कर्म० सं०] बहुत बड़ी सेना।
 महाधार्म—पु० [सं० महत्-आधार्म, कर्म० सं०] १ बहुत बड़ा आधार्म।
 २. शिव।
 महाधिति—स्त्री० दे० 'महा-धिति'।
 महाधितन—पु० [सं० महत्-धितन, कर्म० सं०] वह सर्वप्रमुख वेतना-शक्ति
 जो सारे विश्व और उसमें के प्राणियों तथा पदार्थों में व्याप्त है।
 महाधिया—पु० [सं० महती-धिया, ब० सं०] बड़ का पेड़। बट वृक्ष।
 महाध्वीरी—पु० [सं० महत्-ध्वीरी, कर्म० सं०] कमला नीच।
 महाध्वीरु—पु० [सं० महती-ध्वीरु, कर्म० सं०] जानून का बड़ा तथा पुराना
 पेड़।
 महाजन—पु० [सं० महत्-जन, कर्म० सं०] १ मनुष्यों का समूह। जनता।
 २ बहुत बड़ा आधमी। ज्येष्ठ व्यक्ति। ३. मुखिया। ४. धनवान्
 व्यक्ति। ५. वह व्यक्ति (क) जो दूर पर रुपये उधार देने का व्यवसाय
 करता हो। (ख) जिससे सहायता रूप में अधिक धन प्राप्त किया
 जा सकता हो।
 महाजनी—वि० [सं० महाजन+हि० ई (प्रय०)] महाजन-संबन्धी।
 महाजनों में होनेवाला।
 स्त्री० १ महाजनों का ऐसा या व्यवसाय। दूर पर रुपये उधार
 देने के कारखाने। २ एक विशेष लिपि जिसमें महाजन लेन-देन का
 हिसाब रखते हैं। बही-खाते में प्रयुक्त होनेवाली लिपि।
 महाजल—पु० [सं० महत्-जल, ब० सं०] समुद्र।
 महाजाल—पु० [सं० महत्-जाल, कर्म० सं०] १ मछलियाँ पकड़ने का
 बहुत बड़ा जाल। २ किसी को धोने में फैसाने के लिए फैलाया हुआ
 बहुत बड़ा जाल या सोची हुई युक्ति। ३ मध्य युग में, एक प्रकार का
 बर्षिया कागज जो मछलियाँ पकड़ने के पुराने जालों को सड़ाकर बनाया
 जाता था।
 महाजिह्व—पु० [सं० महती-जिह्व, ब० सं०] शिव।
 महाजानी (निन्)—पु० [सं० महत्-जानिन्, कर्म० सं०] १ बहुत बड़ा
 शानी पुत्र। २ शिव।
 महाज्येष्ठी—स्त्री० [सं० महती-ज्येष्ठी, कर्म० सं०] ज्येष्ठ मास की
 पुषिमा।

महाय्योत्पत्तयती—स्त्री० [सं० महुती-य्योत्पत्तयती, कर्म० सं०] बड़ी मास-कर्मिणी।

महाय्यत्स—पु० [सं० महुती-य्यत्स, व० सं०] १ हवन की अग्नि।
२. महादेव। ३. एक मरकत नाम।

वि० बहुत अधिक चमकता हुआ।

महाडाकपाल—पु० [हिं०] बहु डाकपाल जिसके निरीक्षण में किसी राज्य या प्रदेश के अन्य सब डाकपाल काम करते हैं। (पिंस्टमास्टर जतरल)

महाडोल—पु० [सं० महा-+हिं० डोल] बहु बहुत बड़ी पालकी जिसमें कई स्त्रियाँ एक साथ बैठ सकती हैं। शिविका। उदा०—महाडोल डुलहिन के चारी। देवू बतया होउ जकारी।—रघुराज।

महासत्त्व—पु०—महासत्त्व।

महातया (सत्त्व)—पु० [महत-तपस्व, व० सं०] बहुत बड़ा तपस्वी।
महातया—पु०—माहात्म्य।

महातल—पु० [सं० महत्-तल, कर्म० सं०] पुराणानुसार पृथ्वी के नीचे माने जानेवाले छान तलों (लोकों) में से छठा तल। (ये सात तल दूर प्रकार हैं—अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल, और पाताल।)

महातारा—स्त्री० [सं० महुती-तारा, कर्म० सं०] एक देवी। (तत्र)
महातिथ्य—पु० [सं० महत्-तिथ्य, व० सं०] १ महानिधय। बंधायन।
२. विरायता।

महातीर्थ—वि० [सं० महत्-तीर्थ, कर्म० सं०] १ बहुत तेज। २. बहुत कदम्बा या सारदार।
पुं० मिलावा।

महातीर्थ्या—स्त्री० [सं० महुती-तीर्थ्या, कर्म० सं०] मिलावा।
महातेज (जस्व)—पु० [सं० महत्-तेजस्व, व० सं०] १ शिव। २. विरा। ३. योद्धा।

पा० १ जिसमें बहुत अधिक तेज हो। परम तेजवान्। २. पराक्रमी तथा मान्यताली।

महात्या (स्वप्न)—पु० [सं० महत्-आत्मन्, व० सं०] १. पवित्र आत्मा।
गुरु हृदय तथा उच्च विचारोंवाला व्यक्ति। जैसे—महात्या ईसा, महात्मा बुद्ध, महात्मा गांधी, आदि। २. बहुत बड़ा तपस्वी, विद्वान और सन्ध्यायी या साधु। ३. परमात्मा। ४. पितरों का एक गण या वर्ग। ५. शिव। ६. दे० 'महत्तरस्व'।

महाभिकला—स्त्री० [सं० महती-भिकला, कर्म० सं०] बहेड़ा, अथवा और हड़ इन तीनों का समाहार। (बैद्यक)
महात्याग—पु० [सं० महत्-त्याग, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा त्याग। २. महादान। (दे०)

महात्यागी (मिन्)—पु० [सं० महात्याग+इगि] १. बहुत बड़ा त्यागी या दानी। २. शिव।

महावंध—पु० [सं० महत्-वंध, कर्म० सं०] १. यम के हाथ का बंध। २. यम के डूल। ३. बहुत बड़ा या कठोर बंध।

महावंधारी (मिन्)—पु० [सं० महावंध+वृ (रत्नवा)+मिनि] यमराज।
महावंध—पु० [सं० महत्-वंध, व० सं०] १. महादेव। २. हामी। ३. [कर्म० सं०] हाथी-बाल।

वि० बहुत बड़े बड़े दाँतोंवाला।

महावन्दु—पु० [सं० महुती-वंदु, व० सं०] १. शिव। २. विद्याधर।
महावसा—स्त्री० [सं० महुती-वसा, कर्म० सं०] फलित ज्योतिष में बहु धारा समय जिसमें मोटे हिसाब से किसी एक ग्रह की पूरी अवस्थिति पृथ्वी और फल-योग बचता आता है। जैसे—आज-कल इस कुंडली में शनि की महारासा के अत्यंत बुध की दशा चल रही है।

महावान—पु० [सं० महत्-वान, कर्म० सं०] १. पुराणानुसार सोने की नौ या बोटों आदि तथा पृथ्वी आदि पदार्थों का दान विधसे स्वर्ग की प्राप्ति होती है। बहुत बड़ा दान। ३. ग्रहण आदि के समय किया जाने-वाला दान।

महावाह—पु० [म० महत्-वाह, व० म०] देववाह।

महावृत्त—पु० [सं० महत्-वृत्त, कर्म० सं०] यमवृत्त।

महादेव—पु० [सं० महत्-देव, कर्म० सं०] सबसे बड़े देव, शिव।

महादेवी—स्त्री० [सं० महुती-देवी, कर्म० सं०] १. पार्वती। २. दुर्गा।

३. प्राचीन भारत में पटरानी की उपाधि या संज्ञा।

महादेस—पु० [सं० महत्-देस, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा देस। २. पृथ्वी के पाँच बड़े स्थल-विभागों में से हर एक। महाद्वीप। जैसे—मृधिया यूरोप, अफ्रीका आदि। (कान्टिनेंट)

महादेव्य—पु० [सं० महत्-देव्य, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा देव्य। २. एकदेव्य। (पुराण)

महादावक—पु० [सं० महत्-दावक, कर्म० सं०] बैद्यक में एक प्रकार का औषध जो सोना-मन्थी, रसाजन, समुद्रफेन, सज्जी आदि से बनाया जाता है।

महादुग्ध—पु० [सं० महत्-दुग्ध, कर्म० सं०] १. पीपल। २. ताड़। ३. महुआ। ४. पुराणानुसार एक देव या बर्ष।
महाद्वार—पु० [सं० महत्-द्वार, कर्म० सं०] ग्राहाव या मन्दिर का बाहरी और सबसे बड़ा द्वार। सद्ग पाठक।

महाद्वीप—पु० [सं० महत्-द्वीप, कर्म० सं०] १. पुराणानुसार पृथ्वी के निम्न सप्त विभागों में से हर एक—अंबु, जम्ब, वास्मिक, कुष, क्रीच, शाक और फुकट। २. बहुत बड़ा द्वीप।

वि० दे० 'महादेव'।

महाद्वीपोंय—वि० [सं० महाद्वीप+छ—ईय] महाद्वीप-सम्बन्धी।
महाद्वीप का।

महादान—वि० [म० महत्-दान, व० सं०] १. बहुमूल्य। २. बहुत बड़ा धनी।
पु० १. गोदा। स्वर्ग। २. धूत नामक गन्ध-द्रव्य। ३. सेती-आरी। कृषि।

महाधनी—स्त्री० [सं० महुती-धनी, कर्म० सं०] धारी के अन्दर की वह सबसे बड़ी धमनी जो हृदय के बाएँ निम्ब से (ऊपर और नीचे की ओर) निकलकर धारी की अन्य सभी धमनियों में रक्त का संचार करती है। (आर्जेंटो)

महाधनु (ध)—पु० [सं० महत्-धनुष, व० सं०] शिव।

महाधातु—पु० [सं० महत्-धातु, कर्म० सं०] १. शिव। २. सोना। स्वर्ग। ३. मेरु (पर्वत)।

महाधिकार-पत्र—पु० [सं० महत्-अधिकार, कर्म० सं०, महाधिकार-पत्र,

प० त०] वैयक्तिक तथा राजनीतिक स्वतंत्रता प्रदान करनेवाला वह प्रसिद्ध अधिकारपत्र जो ब्रिटेन के राजा जॉन से सन् १२१५ ई० में लिखाया गया था। (पैना चार्टर)

महाविषयका (सू)—प० [महत्-अधिपत्य, कर्म० सं०] आधुनिक विधिक क्षेत्र में किसी राज्य का वह प्रमुखतम अधिकारी जो उस राज्य के शासकीय विवादों में उच्च न्यायालय के सामने राजकीय पक्ष उपस्थित करने के लिए नियत होता है। (एडवोकेट जनरल)

महाव्यक्तिक—प० [सं० अर्थव्यवस्था—इक, आर्थव्यक्तिक, महत्-आधुनिक, कर्म० सं०] वह जो पुरुष कार्य के लिए दिहालय गया हो, और वही मर गया हो।

वि० मू०।

महान् (सू)—वि० [सं० √मह० अति,] १ बहुत बड़ा। विशाल। २ बहुत अधिक बड़कर या श्रेष्ठ। उत्कृष्टकोटि का।

महान्वं—प० [सं० महत्-आनन्द, कर्म० सं०] १ अत्यंत आनन्द। २ [ब० सं०] मगध के नट बश का एक प्रसिद्ध राजा। २ मोक्ष।

महान्वय—स्त्री० [सं० अन्व० सं०, -टाप्] १ शराब। मदिरा। २ माष-शुक्ला नवमी। ३ बगाल की एक नदी जो दार्जिलिंग के पास से निकली है।

महान्वय—प० [सं० महत्-आनन्द, कर्म० सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का माया जिस पर चमड़ा मड़ा होता था।

महान्वय—प० [सं० महत्-नगर, कर्म० सं०] बहुत बड़ा नगर।

महान्वय-मालिका—स्त्री० [प० त०] महान्वयिका।

महान्वय—प० [सं० महत्-नट, कर्म० सं०] सर्वश्रेष्ठ नट, शिव।

महान्वय—प० [सं० महत्-नन्द, कर्म० सं०] १ पुराणानुसार एक नद का नाम। २ एक प्राचीन तीर्थ।

महान्वय—स्त्री० [सं० महती-नदी, कर्म० सं०] बहुत बड़ी और विशेष पवित्र नदी। जैसे—गंगा, यमुना, कृष्णा आदि। २ बगाल की एक नदी जो बगाल की खाड़ी में गिरती है।

महान्वय—प० [सं० महत्-नन्द, कर्म० सं०] पुराणानुसार २१ नरकी मे से पंचवर्ष नरक।

महान्वय—स्त्री० [सं० महती-नवमी, कर्म० सं०] आधुनिक शुक्ल नवमी जिस दिन दुर्गा की पूजा बहुत धूमधाम में होती है।

महान्वय—प० [सं० महत्-अनसु, कर्म० सं०, टच] पाकघाला। रमोई-घर।

महान्वय—प० [सं० प० त०] वह जिसके छूने में चौका या रसोई अपवित्र हो जाती हो।

महान्वय—प० [सं० महत्-नाटक, कर्म० सं०] वह बहुत बड़ा नाटक जिसमें दस अंक हो।

महान्वय—प० [सं० महत्-नाद, कर्म० सं०] १ शोरशब्द। २ [ब० सं०] हाथी। ३. ऊँट। ४ शेर। सिंह। ५. बाघ। मेघ। ६ शाल। ७ बबा डोल। ८. सिव।

वि० बहुत जोर का शब्द करनेवाला।

महान्वय—प० [सं० महत्-नासि, ब० सं०, -अन्व] १ एक मत्त जिसके बल से शत्रु द्वारा किये हुए शस्त्र व्यर्थ किये जाते हैं। २. हिरण्यकशिपु का एक पुत्र।

महान्वय—प० [सं० महत्-नारायण, कर्म० सं०] विष्णु।

महान्वय—प० [सं० महती-नासिका, ब० सं०] महादेव।
महान्वय—स्त्री० [सं० महत्-निब, कर्म० सं०] नीम की जाति का एक पेड़। बकायण।

महान्वय—प० [सं० महती-निद्रा, कर्म० सं०] मृत्यु।

महान्वय—प० [सं० महत्-निधान, कर्म० सं०] बुद्धित धातुपुंजी पारा।

महान्वय—प० [सं० महत्-नियम, ब० सं०] विष्णु।

महान्वय—प० [सं० महत्-नियम, कर्म० सं०] एक बहुत बड़ी संख्या। (बीड)

महान्वय—प० [सं० महत्-निर्वाण, कर्म० सं०] वह स्थिति जिसमें जीव की मत्ता का पूर्ण नाश हो जाता है। बीडों में इसके अधिकारी केवल अर्हन् या बुद्धगण माने गये हैं।

महान्वय—स्त्री० [सं० महती-निशा, कर्म० सं०] १. रात्रि का मध्य भाग। २ प्रत्यक्ष की गन। ३ दुर्गा।

महान्वय—प० [सं० महत्-नीच, कर्म० सं०] धोबी। रजक।

महान्वय—प० [सं० महा० हिं० नीच] बिजौरा नीच।

महान्वय—स्त्री० [सं० महती-निच, कर्म० सं०] अशानिच (बकायण)।

महान्वय—प० [सं० महत्-नील, कर्म० सं०] १ भृगराज पत्नी। २ एक प्रकार का रङ्गिया नीलम्ब। ३ एक प्रकार का गुग्गुलु। ४ एक प्रकार का सीप। ५ एक प्राचीन पर्वत। ६ नी नील की संख्या।

महान्वय—स्त्री० [सं० महती-नील, कर्म० सं०] नीली अपराजिता।

महान्वय—प० [सं० महत्-अनन्य, ब० सं०] भाव० महान्वयतात् १ बहुत बड़ा व्यक्ति। २. उच्च विचारवाला तथा सत्यनिष्ठ व्यक्ति।

महान्वय—स्त्री० [सं० महान्वय-तत्-टाप्] महान्वय होने की अवस्था या मास।

महान्वय—प० [सं० महत्-नृत्य, कर्म० सं०] १ नाच नृत्य। २ शिव।

महान्वय—प० [सं० महत्-नेत्र, ब० सं०] शिव।

महान्वय—प० [सं० आज-काल विधिक क्षेत्र में, किसी राज्य या राष्ट्र का वह प्रधान अधिकारी जिसे शर्मा के विशद कानूनी कार्यालय करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त हो। (एडवोकेट जनरल)

महान्वय—प० [सं० महत्-पक, कर्म० सं०] बहुत बड़ा पाप। महापाप। (बीड)

महान्वय—प० [सं० पचमूल द्विग सं०, महत्-पचमूल, कर्म० सं०] वैद्यक में, बेल, अरनी, मानापात्रा, कायमरी और पाटला इन पाँचों बूझों की जड़ों का समाहार।

महान्वय—प० [सं० पच-विप, द्विगु सं०, महत्-पचविप, कर्म० सं०] वैद्यक में, शूय, काकट, मूत्सक, बछनाय और शक्यकीं इन पाँचों विषों का समाहार।

महान्वय—प० [सं० पच-अगुल, द्विगु सं०, महत्-पचागुल, कर्म० सं०] लाल अर्धा या रेश का बूझ।

महान्वय—प० [सं० महत्-पल, ब० सं०] १ गहड़। २ एक प्रकार का राजहत।

वि० १ बड़े बड़े परोपकार। २ जिसके पक्ष या दल की संख्या बहुत अधिक हो।

महापत्नी—प० [सं० महापत् + द्विगु] उल्लू।

महापुत्र—पुं० [महत्-पुत्रिन्, कर्म० सं०, समासान्त अच्] १. बहुत बड़ा लडा, चौड़ा मांस। २. महाप्रस्थान का पत्र।

विशेष—प्राचीनकाल में मनुष्य स्वर्ण-प्राग्नि के उद्देश्य से हिमालय की किसी ऊँची चोटी पर जाते थे और उस पर से कूदकर प्राण त्यागते थे। ऐसी चोटी के पथ या मार्ग को महापुत्र कहते थे।

३. स्वर्गारोहण का साधन अर्थात् मृत्यु। ४. केदारनाथ और उसकी यात्रा। ५. एक नरक।

महापच-गमन—पुं० [सं० प० सं०] मरण। मृत्यु।

महापथिक—पुं० [सं० कर्म० सं०] प्राचीन काल में वह व्यक्ति जो स्वर्ग-रोहण की दृष्टि से हिमालय पर्वत पर जाता था।

महापथ—पुं० [सं० अ० सं०] १. कुजेर की नी निधियों में से एक निधि। २. कुजेर का अनुचर एक किन्नर। ३. आठ दिग्गजों में से एक दिग्गज जो दक्षिण दिशा में स्थित है। ४ हाथियों की एक जाति। ५. एक प्रकार का फलदार वृक्ष। ६. एक प्रकार के देव। ७. सफेद कमल।

८. महाभारत काल का एक नगर जो गंगा के किनारे था। ९. जैनी के अनुसार महाहिमवान् पर का एक जलाशय। १०. सौ पद्य की संख्या। ११. गण्य के नववध का अंतिम सन्नाद।

महापवित्र—पुं० [म० महत्-पवित्र, कर्म० सं०] विष्णु।

महापातक—पुं० [सं० महत्-पातक, कर्म० अ०] वह बहुत बड़ा तथा घोर पाप जिसके फल-भोग के लिए मनुष्य को नरक में जाना पड़ता है।

महापातकी (किन्) —पुं० [सं० महापातक-किन्] वह जिसने महापातक किया हो।

महापातरां—पुं०—महापातर।

महापातक—पुं० [सं० महत्-पातक, कर्म० सं०] १. वह बाह्यण जो मृत व्यक्तिक का दाह कर्म करता है तथा उसके संबंधियों से श्राद्ध का दान लेता है। महाभ्राह्मण। २. महाभगी। महाभात्य।

पुं० सं० महत्-पाद, अ० सं०] विधि।

महापाप—पुं० [सं० महत्-पाप, कर्म० सं०] बहुत बड़ा। पाप। महापातक।

महापालिका—स्त्री० [महा मंत्रपालिका का संज्ञित रूप] १. प्रमुख तथा अधिक जनसंख्यावाले नगर की स्वायत्त शासनिक इकाई, जिसे नगरपालिका की अपेक्षा अधिक अधिकार प्राप्त होते हैं। (मिटी कार्पोरेशन) २. नगर-महापालिका द्वारा शासित भू-भाग।

महापाली—स्त्री०—महापालिका।

महापाश—पुं० [सं० महत्-पाश, अ० सं०] पुराणानुसार एक प्रकार के यमदूत।

महापाशुल—पुं० [सं० महत्-पाशुल, कर्म० सं०] १. लीनों का एक प्राचीन सभ्रदाय जिसमें पशुपति की उपासना होती थी। २. बकुल। मीलसिरी।

महापीठ—पुं० [सं० महत्-पीठ, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा पीठ या पुण्य-स्थान। जैनी—कामरूप किसी समय ताम्रिकों का महापीठ माना जाता था। २. वह पवित्र आशर या स्थान जहाँ किसी देवी, देवता की प्रतिमा प्रतिष्ठित हो। मूर्ति का आशर। ३. उन प्रसिद्ध स्थानों में से हुए एक अहाँ सही के शव के अंग कटककर गिरे थे। ४. संकर मठ। ५. कोई बहुत बड़ा स्थान।

महापीलु—पुं० [सं० महत्-पीलु, कर्म० अ०] एक प्रकार का पीलु वृक्ष।

महापुत्र—पुं० [सं०] वैद्यक में, मत्स्य, रस आदि तैयार करने की एक विधि।

महापुत्र्य—पुं० [सं० महत्-पुत्र्य, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा पुत्र्य। ३. एक बोधिसत्व का नाम।

महापुत्र्या—स्त्री० [सं० महापुत्र्य+टाप्] एक नदी। (पुराण०)

महापुत्र—पुं० [सं० महत्-पुत्र, कर्म० सं०] पुत्र का पुत्र। पीता।

महापुर—पुं० [सं० महत्-पुर, कर्म० सं०] १. प्राचीन काल में वह पुर या नगर जो प्राचीर से रक्षित होता था। २. एक प्राचीन तीर्थ।

महापुराण—पुं० [सं० महत्-पुराण, कर्म० सं०] अठारह पुराणों में से एक जिसके रचयिता व्यास थे।

महापुरी—स्त्री० [महत्-पुरी-पुरी, कर्म० सं०] राजधानी।

महापुत्र्य—पुं० [सं० महत्-पुत्र्य, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा तथा उच्च विचारोंवाला पुत्र्य। २. नारायण। ३. अर्थव्यर्थ में कुट्ट व्यक्ति।

महापुत्र्य—पुं० [सं० महत्-पुत्र्य, अ० सं०] १. कुट्ट का वृक्ष। २. काशा मृग। ३. काल कनेर। ४. एक प्रकार का कीड़ा। (सुभुत)

महापुत्र्या—स्त्री० [सं० महापुत्र्य+टाप्] अपराजिता (स्ता)।

महापुत्रा—स्त्री० [सं० महत्-पुत्रा, कर्म० सं०] आश्विन के नवरात्र में की जानेवाली दुर्गा की पूजा।

महापुच्छ—पुं० [सं० महत्-पुच्छ, अ० सं०] ऊँट।

महाप्रजापति—पुं० [म० महत्-प्रजापति, कर्म० सं०] विष्णु।

महाप्रतिहार—पुं० [सं० महत्-प्रतिहार, कर्म० सं०] १. प्राचीन काल का एक उच्च राज कर्मचारी, जो आज-कल के कोतवाल के समान होता था। २. मूल्या-द्वारपाल।

महा-प्रभाह—वि० [स्त्री० महा-प्रभावा] दूसरों को अपना झूठा प्रभाव दिखानेकर उनपर आत्मिक अमाने या रोव गठिनेवाला।

महाप्रभु—पुं० [सं० महत्-प्रभु, कर्म० सं०] १. ईश्वर। २. शिव। ३. विष्णु। ४. इन्द्र। ५. राजा। ६. संघाया। ७. स्वामी बलकामाचार्य। ८. वैजयन्त।

महाप्रलय—पुं० [सं० महत्-प्रलय, कर्म० सं०] १. वह प्रलय जिसमें सब लोको, उनके निवासियों, देवताओं तथा ब्रह्मा का भी नाश हो जाता है।

महाप्रसासक—पुं० [सं० महत्-प्रसासक, कर्म० सं०] वह प्रसासक जिसके निरीक्षण तथा अधीनता में अन्य प्रसासक काम करते हैं। (ऐम्बिन्ड्रेटर जनरल)

महाप्रसाह—पुं० [सं० महत्-प्रसाद, कर्म० सं०] १. देवी देवता को चढ़ाया हुआ प्रसाद। २. अंगप्राप की को चढ़ाया हुआ मांस। ३. मांस आदि ऐसे खाद्य पदार्थ जिन्हें वैष्णव अर्थात् पदार्थ समझते हैं। (परिग्रह और अर्घ्य) ४. तिक्तों में पकाया हुआ मांस। महाप्रसाद।

महाप्रस्थान—पुं० [सं० महत्-प्रस्थान, कर्म० सं०] १. प्राचीन काल में स्वर्गारोहण के उद्देश्य से महापथ के द्वारा की जानेवाली दुर्गम पर्वतों की यात्रा। २. मृत्यु। मीत।

महाप्राय—पुं० [सं० महत्-प्राय, अ० सं०] व्याकरण के अनुसार ऐसा वर्ण जिसके उच्चारण में प्राय-वामु का विशेष व्यवहार करना पड़ता है।

जैसे—ह, ख, छ, झ, इ, ई, प, फ, म, ग, घ, ङ, स, और ह्।

महाफल—वि० [सं० महत्-फल, अ० सं०] १. (वृक्ष) जिसमें बहुत अधिक फल लगते हैं। २. (कार्य) जिसका बहुत अच्छा और अधिक फल मिलता हो।

महाफल—स्त्री० [सं० महाफल+टाप्] कन्या कष्ट।

महावकी—स्त्री० [स० महती-वकी, कर्म० सं०] पुत्रना राक्षसी का एक नाम ।
 उदा०—महावकी विमि आवति राति ।—नवदास ।
महावक—वि० [स० महत्-वक, व० सं०] १. अथयन ब्रह्मवान् । बहुत बड़ा शक्तिशाली ।
 पु० १ पितरों का एक गण । २ गीतम बुद्ध । ३. वायु । ३ शिव के एक अनुचर । ५ सीसा नामक धातु ।
महाबला—स्त्री० [स० महाबल-टापु] १ सहदेवी नाम की बड़ी । पीली सहदेव्या । २ पीतल । ३ धी का पेड़ । ४. नील का पीषा ।
 ५ कातिकेय की एक मातृका । ६ एक बहुत बड़ी सक्का की सजा ।
महाबली (हिन्) —वि० [स० महत्-बलिन्, कर्म० सं०] बहुत बड़ा बलवान् ।
 पु० मुगल सम्राट अकबर के लिए तत्कालीन दरबारियों आदि का एक सम्बन्धन ।
महाबाहु—वि० [स० महत्-बाहु, व० सं०] १ लकी मुजाबोवाना । २ बलवान् । शक्तिशाली ।
 पु० १ बिष्णु । २. पुतराष्ट्र का एक पुत्र ।
महाबुद्धि—वि० [स० महती-बुद्धि, व० सं०] १ बहुत बुद्धिमान् । २ बालाक । घूर्त्त ।
 पु० एक प्रकार का वैदिक छंद ।
महाबुधि—पु० [स०√बुध (जानना) । इन्, महत्बुधि, कर्म० सं०] १ महारथ बुद्ध द्वारा अजित किया हुआ जान । २ बुद्धदेव ।
महाबाहुष्य—पु० [स० महत्-बाहुष्य, कर्म० सं०] १ महापात्र । (दे०) २. निष्ठुट्ट बाहुष्य ।
महाभद्रा—स्त्री० [स० महत्-भद्र, व० सं०, -टापु] १ गंगा । २ काश्यपी ।
महाभाग—वि० [स० महत्-भाग, व० सं०] महाभाग ।
महाभागवत—पु० [स० महत्-भागवत, कर्म० सं०] १ परम वैष्णव ।
 २ पुराणानुसार ये बारह प्रसिद्ध भक्त—गणु, सनकवि, नारद, कपिल, जनक, ब्रह्मा, शक्ति, भीम, प्रह्लाद, सुकेश, धर्मराज और धाम् । ३ श्रीमद्भागवत पुराण । ४ एक प्राचीन छंद ।
महाभावा—स्त्री० [स० महाभाग-टापु] कश्यप की पत्नी, अदिति ।
 दासावधि ।
महाभागी (हिन्) —वि० [स० महाभाग+इति] अत्यन्त भाग्यवान् ।
महाभाट—पु० [स० महत्-भाट, कर्म० सं०] भाटी का एक वर्ग जो साधारण भाटों में उच्च माना जाता है ।
महाभारत—पु० [स० महत्-भारत, कर्म० सं० अथवा महाभार/तन् । इ] १ महर्षि व्यास रचित एक प्रसिद्ध प्राचीन ऐतिहासिक महाकाव्य जिसमें कौरवों और पांडवों के युद्ध का वर्णन है, और जिसे हिन्दू अपना प्राणीयक धर्मग्रन्थ मानते हैं ।
 बिष्णु—यह १८ पर्बों में विभक्त है और इसमें प्राय ८० हजार से अधिक श्लोक हैं । इसमें उत्पन्न-भाग, कर्म, राजनीति, व्यवहार आदि के सम्बन्ध की भी बहुत-सी अच्छी बातें हैं । कहते हैं कि पहले इसका नाम 'जय' काव्य था बाद में वैवाच्यमान ने इसे कुछ बड़ाकर इसका नाम 'मार्तण्ड' रखा, और तब अतिते ने इसमें बहुत सी कथाएँ तथा नये बड़ाकर इसे वर्तमान रूप दिया; और इसे 'महाभारत' नाम दिया ।
 २. कौरवों और पांडवों का यह बहुत बड़ा युद्ध जिसका वर्णन उक्त.

धर्म में हुआ है । ३ कोई बहुत बड़ा युद्ध या लड़ाई-अंगड़ा । ४. कोई बहुत बड़ा और विस्तृत विवरणवाला ग्रन्थ ।
महाभाष—पु० [स० महत्-भाष, कर्म० सं०] वैष्णव धर्म में ईश्वर-प्रेम का वह चरम रूप जो स्नेह, भान, प्रथम, राग और अनुराग का अन्वेषा पार कर चुकने पर प्राप्त होता है ।
महाभाष्य—पु० [स० महत्-भाष्य, कर्म० सं०] पाणिनि कृत अष्टाध्यायी पर लिखा हुआ पतञ्जलि का भाष्य ग्रन्थ ।
महाभिष्णु—पु० [स० महत्-भिष्णु, कर्म० सं०] भगवान् बुद्ध ।
महाभियोग—पु० [स० महत्-अभियोग, कर्म० सं०] राज्य के किसी प्रमुख विधेयत. सर्वप्रमुख सारथिक अधिकारी पर बलाया जानेवाला युद्धनाम । (इम्पीचमेन्ट)
महाभिषव—पु० [स० महत्-भिषव, कर्म० सं०] सोमरस ।
महाभीत—पु० [स० महत्-भीत, कर्म० सं०] १. राजा शातनु का एक नाम । २ भृंगी (डारपाल) ।
महाभीता—स्त्री० [महाभीत+टापु] लाजबगी । लजाम् ।
महाभीम—पु० [स० महत्-भीम, कर्म० सं०] १ राजा शातनु का एक नाम । २ शिव का भृंगी नामक डारपाल ।
 वि० अत्यन्त भयकर ।
महाभीष—पु० [स० महत्-भीष, कर्म० सं०] श्वालिन नाम का वरमाती कीटा ।
 वि० बहुत अधिक इन्धोपक ।
महाभीष्म—पु० [स० महत्-भीष्म, कर्म० सं०] राजा शातनु का एक नाम ।
महाभूज—वि० [स० महती-भूजा, व० सं०] वायान्त-बाहु ।
महाभूत—पु० [स० महत्-भूत, कर्म० सं०] १ भारतीय दर्शन में, पृथ्वी आकाश, जल आदि पाँचों तत्व या मूत । २ आधुनिक विज्ञान में वह मूल तत्व या परम इन्धु जो सभी तत्वों या मूतों में समान रूप में पाया जाता है और उन सबका मूल कारण है । (मैटर)
महाभूमि—स्त्री० [स० महती-भूमि, कर्म० सं०] प्राचीन भारत में वह भूमि जो साबंभिक उपयोग में आती थी और जिन्ह पर किसी व्यक्ति विदेग का अधिकार नहीं होता था । (पब्लिक प्लेस)
महाभूष—पु० [स० महत्-भूष, कर्म० सं०] नीले फूलवाला मरा ।
महाभैरव—पु० [स० महत्-भैरव, कर्म० सं०] शिव ।
महाभैरवी—स्त्री० [स० महती-भैरवी, कर्म० सं०] तात्रिकों की एक विधादेवी ।
महाभोग—पु० [स० महत्-भोग, कर्म० सं०] १ अत्यन्त भोग । २ [व० सं०] दाप ।
महाभोगा—स्त्री० [स० महाभोग-टापु] दुर्गा ।
महाभोगी (हिन्) —पु० [स० महाभोग+इति] बड़े फनवाला हाथ ।
महाभोग—पु० [स० महाभोग+इति] बड़े फनवाला हाथ ।
 २ शिव का बड़े राजाओं की उपाधि ।
महामंडल—पु० [स० महत्-मंडल, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा मंडल । २ वह मंडल जिसमें अधीनस्थ अर्थ मंडल हों ।
महामंत्र—पु० [स० महत्-मंत्र, कर्म० सं०] १. वेद का कोई मंत्र । २. बहु मंत्र जो अपना प्रभाव वा फल अवश्य बिखलाता हो । ३. अच्छा और बढ़िया परामर्श या सलाह ।

बहुवचनी (विष्णु)—पुं०[सं० महत्-वचिन्, कर्म० सं०] १. खबरे बड़ा बनी। २. प्राचीन काल में राज्य वा साम्राज्य का प्रधान बनी।
 बहुवचि—पुं०[सं० महत्-वचि, कर्म० सं०] अत्यन्त बहुमुख्य रत्न।
 बहुवचिन्—वि०[सं० महती-वचि, ब० सं०] बहुत बड़ा बुद्धिमान्।
 पुं० १. वचोस। २. एक बौधिसत्त्व।
 बहुवचिन्—पुं०[सं० महत्-वचिन्, कर्म० सं०] बहुत बड़ी अस्त्री।
 बहुवच्य—पुं०[सं० महत्-वच्य, ब० सं०] अन्त हाथी।
 बहुवच्य (वत्)—वि०[सं० महत्-वच्य, ब० सं०] जिसका मन वा अन्तःकरण बहुत उच्च स्तर पर था और सब प्रकार से सुदृढ़ हो। उदाहरित।
 जैसे—महामना मालवीय जी।
 बहुवच्य—पुं०[सं० महत्-वच्य, कर्म० सं०] महोत्सव।
 बहुवचिष (ष्)—वि०[सं० महत्-वचिष्, ब० सं०] जिसकी महिमा बहुत अधिक हो।
 विशिष्ट—इसका प्रयोग आज-कल बं० के 'हिण्ट एक्सप्लेन्सी' की तरह या उसके स्थान पर होने लगा है।
 बहुवच्योपाध्याय—पुं०[सं० महत्-वच्योपाध्याय, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा गुरु, पण्डित या विद्वान्। २. एक उपाधि जो अंग्रेजी शासन में संस्कृत के प्रकांड पंडितों को दी जाती थी।
 बहुवच्योस—पुं०[सं० महत्-वच्योस, कर्म० सं०] १. गी का गीत। गीतोस। २. मन्त्र्य का मांस।
 बहुवच्योस—स्त्री०[सं० महा+हि० मांस] १. दुर्गा। २. काकी।
 बहुवच्योस—पुं०[सं० महत्-वच्योस, कर्म० सं०] महामंत्री।
 बहुवच्योस—पुं०[सं० महती-वच्योस, ब० सं०] [स्त्री० महामात्री] १. प्राचीन भारत में, एक प्रकार का उच्चपदस्थ राजकीय अधिकारी। २. महा-मंत्री। ३. महावत।
 वि० १. बड़ा। २. उच्च कोटि का। ३. धनवान्।
 बहुवच्योस—वि०[सं० महत्-वच्योस, कर्म० सं०] बहुत अधिक माननीय।
 बहुवच्योस—वि०[सं० महती-वच्योस, ब० सं०] अत्यन्त भाषायी।
 पुं० १. शिव। २. विष्णु।
 बहुवच्योस—स्त्री०[सं० महती-वच्योस, कर्म० सं०] १. वह सांसारिक भ्रम जिसके फलस्वरूप यह मिथ्या जगत वास्तविक सा प्रतीत होता है। २. प्रकृति। ३. दुर्गा। ४. गंगा। ५. गीतम बुद्ध की माता। ६. एक छंद।
 पुं० विष्णु।
 वि० भाषायी।
 बहुवच्योस—स्त्री०[सं० महत्-वच्योस (परमा)+विष्+वच्य+की] १. ऐसा संक्रामक रोग जिससे बहुत अधिक लोग बरें। मरक। मरी। (एपिडेमिक) जैसे—हैजा, श्वेतक आदि। २. महाफाली का एक नाम।
 बहुवच्योस विद्याम—पुं०[सं०] बहु आधुनिक विद्याम जिसमें इस बात का विचार होता है कि मरक या महावच्योस किन कारणों से और कैसे फैली है और उन्हें कैसे रोका या कम किया जा सकता है। (एपिडेमियोलोजी)
 बहुवच्योस—पुं०[सं० महत्-वच्योस, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा मार्ग या रास्ता। वह बहुत बड़ा या लंबा रास्ता जिसपर से होकर कोई भीच जाती-जाती हो। जैसे—गंगा या यमुना का महामार्ग। २. परलोक वा स्वर्ग का रास्ता। महामार्ग। (रि०)

महामाला—पुं०[सं० महती-माला, ब० सं०] शिव।
 महामालिनी—स्त्री०[सं० महती-मालिनी, कर्म० सं०] नाराय (छंद)।
 महामाच—पुं०[सं० महत्-माच, कर्म० सं०] बड़ा उद्वह।
 महामुच्य—पुं०[सं० महत्-मुच्य, ब० सं०] १. पड़ियाला। २. नदी का मुहाना। ३. शिव।
 महामुद्रा—स्त्री०[सं० महती-मुद्रा, कर्म० सं०] १. योग साधन में एक विशिष्ट प्रकार की मुद्रा या अंगों की स्थिति। २. तांत्रिक उपासना में वह सिद्ध योगिनी जिसे साधक अपनी साधनरी बनाकर साधना करता है। कहते हैं कि महामुद्रा की साधना कर लेने पर साधक सब प्रकार के बाह्य अनुष्ठानों से मुक्त हो जाता है। ३. बौद्ध तांत्रिकों के अनुसार भगवती नैरात्या जिसकी उपासना परम सुख कही गई है और जिसकी साधना में उर उतरने पर ही साधक की गिनती सिद्धार्थियों में होती है।
 ४. एक बहुत बड़ी सत्त्वा की वंशा।
 महामुनि—पुं०[सं० महत्-मुनि, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा और बुनियाँ में श्रेष्ठ मुनि। जैसे—अनसूय, व्यास आदि। गीतम बुद्ध। ३. कृपा-धर्म। ४. काल। ५. एक जिन देव। ६. तुलुड नामक वृक्ष।
 महामुनि—स्त्री०[सं० महती-मुनि, ब० सं०] १. विष्णु। २. न्यायमुनि।
 महामुच्य—पुं०[सं० महत्-मुच्य, कर्म० सं०] न्याय।
 महामुच्य—पुं०[सं० महत्-मुच्य, ब० सं०] माणिक।
 वि० १. बहुमुख्य। कीमती। २. महंगा।
 महामुच्य—पुं०[सं० महत्-मुच्य, कर्म० सं०] १. सबसे बड़ा पशु, हाथी। २. बहुत बड़ा पशु। ३. धारम।
 महामुच्योस—पुं०[सं० महत्-मुच्योस, कर्म० सं०] १. शिव। २. शिव का अकाल मृत्यु निवारक एक यंत्र। ३. एक औषध।
 महामेघ—पुं०[सं० महत्-मेघ, कर्म० सं०] महामेघ।
 महामेघा—स्त्री०[सं० महामेघ+टाप्] एक प्रकार का फंद जो देखने में अचरक के समान होता है।
 महामेघ—पुं०[सं० महती-मेघ, ब० सं०] शिव।
 महामेघा—स्त्री०[सं० महामेघ+टाप्] दुर्गा।
 महामोक्ष—पुं०[सं० महत्-मोक्ष, कर्म० सं०] अत्यन्त या धीर मोक्ष।
 महामोक्षा—स्त्री०[सं० महामोक्ष+अच्+टाप्] दुर्गा।
 महामय—वि०[सं० महा] १. बहुत बड़ा। महान्। २. बहुत अधिक। महा।
 महामय—पुं०[सं० महत्-मय, कर्म० सं०] १. यज्ञों का राजा। २. एक प्रकार के बौद्ध देवता।
 महामय—पुं०[सं० महत्-मय, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा यज्ञ। २. हिन्दू धर्मशास्त्र के अनुसार नित्य किये जानेवाले पाँच प्रमुख धार्मिक कर्म। पंचमय।
 महामय—पुं०[सं० महत्-मय, कर्म० सं०] यमराज।
 महामया—स्त्री०[सं० महती-याया कर्म० सं०] मृत्यु।
 महामयान—पुं०[सं० महत्-यान, कर्म० सं०] १. उत्तम, प्रशस्त और गेयक मार्ग। २. बौद्ध धर्म की वह भक्ति प्रधान शाखा या संप्रदाय जो हीनयान की तुलना में बहुत श्रेष्ठ माना जाता था और जिसका आरम्भ सम्भवतः कनिष्क के समय हुआ था। ३. जैसे उदारता, परीयका, मदाचार आदि तत्त्वों की प्रधानता। ४. बौधिसत्त्व की भावना और बुद्ध भगवान् की

प्रतिभाएँ बनाकर उनकी पुत्रा करने की प्रयासो द्वायी मत से निकली थी। यह नामकरण बौद्धो की पूर्वी शाखा मे किया था।

महायानी (निम्न)—वि० [स० महायान-इति] महायान-सम्बन्धी। महायान का।

पु० महायान मत या परंपराय का अनुयायी।

महायुग—पु० [स० महत्-युग, कर्म० सं०] चारो युगो का समूह। चौकडी।

महायुग—पु० [स० महत्-अयुष, कर्म० सं०] सौ अयुत की सख्या की सहा।

महायुद्ध—पु० [स० महत्-युद्ध, कर्म० सं०] बहुत बडे तथा व्यापक यु-
भाय मे लडा जानेवाला ऐसा युद्ध जिसमे अनेक राष्ट्र सम्मिलित हो
और जिसमे बहुत अधिक नर-महार तथा विनाश हो। (वेद वार) जैसे
—प्रथम या द्वितीय महायुद्ध।

महायुध—पु० [स० महत्-आयुध, ब० सं०] शिख।

महायुगीनी (निम्न)—पु० [महत्-यागिनी, कर्म० सं०] १ बहुत बडा योगीनी।
२ शिव। ३ कियु। ४ मूर्ति।

महायोगेश्वर—पु० [स० महत्-योगेश्वर, कर्म० सं०] शिवताम, पुलस्त्य,
बसिष्ठ, पुलह, अगिरा, ऋषु और कल्प्य ज्यं बहुत बडे ऋषि और योगी
माने गये है।

महायोगेश्वरी—स्त्री० [स० महती-योगेश्वरी, कर्म० सं०] १ दुर्गा। नाम
दीन।

महायोग्य—पु० [स० महत्-आयोग्य, कर्म० सं०] बहुत बडा आयोग्य।
महत् आयोग्य।

महायोगिनी—स्त्री० [स० महती-योगिनी, कर्म० सं० या ब० सं०] योगि के
अधिक फलने का एक योग। (शैवक)

महारथ—वि० [स० महत्-आरथ, ब० सं०] १ बहुत बडे काम का
श्रीमण्डा करनेवाला। २ बडा काम।

महार—स्त्री०—महार (ऊँट की नकेल)।

महारक्षत—पु० [स० महत्-रक्ष, कर्म० सं०] मूर्गा।

महारक्षत—पु० [स० महत्-रक्ष, कर्म० सं०] १ सोना। २ धतूरा।

महारजन—पु० [स० महत्-रजन, कर्म० सं०] १ कुसुम का फूल। २
सोना। त्र्यम्बं।

महारथ—पु० [स० महत्-अरथ, कर्म० सं०] बहुत बडा या भारी जगल।

महारस—स्त्री० [फा०] १ हस्तकीशाल। २ निगुणता। ३ अम्यास।
महारस—पु० [स० महत्-रस, कर्म० सं०] १ मोती, हीरा, वैदूर्य, पथराग,
पोंद्रे, पुष्पराग, पद्मा, मूर्गा और नीलम इन नौ रत्नों मे से
हृर एक।

महारथ—पु० [स० महत्-रथ, ब० सं०] महारथी।

महारथी (निम्न)—पु० [महत्-रथिन्, कर्म० सं०] प्राचीन भारत मे, वह
बहुत बडा योद्धा जो अकेला दस हजार योद्धाओं से लड़ सकने मे समर्थ
माना जाता था।

महारथ्या—स्त्री० [स० महती-रथ्या, कर्म० सं०] चौडी और बडा सडक।

महारथी—स्त्री०—महारथी।

महारस—पु० [स० महत्-रस, ब० सं०] १ काँची। २ ऊँल। ३
जव्वर। ४ कसेड। ५ जामुन। ६ पारा। ७ अन्नक। ८ ईशुगर।
९ कातिसार कोहा। ११. सोला-मषकी। १२. कृपा-मषकी।

महाराज—पु० [स० महत्-राज, कर्म० सं०] बख्श्यायी तात्क साधना मे,
वह राज या परब अनुसारा को शासक के मत मे महामुद्रा के प्रति होता है।
कहते है, कि बिना दस प्रकार का राज उत्पन्न हुए इस जन्म मे बोंधि की
प्राप्ति अर्थबन होती है।

महाराज—पु० [स० महत्-राजन्, कर्म० सं०] [स्त्री० महारानी] १ बहुत
बडा राजा। अनेक राजाओं का प्रधान राजा। २. मुद्र, धर्माचार्य,
पूज्य ब्राह्मण आदि के लिए सम्बोधन सूचक पद। ३. भोजन बनानेवाला
ब्राह्मण रसोइया। ४ अगरेजी शासनकाल मे बडे राजाओं को दी जाने-
वाली उपाधि।

महाराजाधिराज—पु० [स० महत्-राजाधिराज, कर्म० सं०] १. बहुत
बडा राजा। २ अगरेजी शासन मे एक प्रकार की उपाधि जो प्राय
बडे राजाओं को मिलती थी।

महारजिक—पु० [स० महती-राजि, ब० सं०, +कृए] एक प्रकार के देवता
जिनको मन्था कही २२६ और कही ४००० कही गई है।

महाराजी—स्त्री० [स० महती-राजी, कर्म० सं०] १ दुर्गा। २ महारानी।

महाराज्य—पु० [स० महत्-राज्य, कर्म० सं०] बहुत बडा राज्य। साम्राज्य।
महाराज्यपाल—पु० [स० महत्-राज्यपाल, कर्म० सं०] किसी बहुत बडे
देश या राज्य के द्वारा नियुक्त वह सबसे बडा अधिकारी जिसके अधीन
कई प्रांतीय या प्रादेशिक राज्यपाल हों। (गवर्नर जनरल)

महाराणा—पु० [स० महा-हिं० राणा] मेवाड, चित्तौर और उदयपुर
के राजाओं की उपाधि।

महारत्रि—स्त्री० [स० महती-रत्रि, कर्म० सं०] १ महा प्रलयवाली रात,
जब कि ब्रह्मा का लयहो जाता है। २ तात्किक के अनुसार ठीक आधी
रात बीतने पर दो मुहूर्तो का समय जो बहुत ही पवित्र समझा जाता है।
३ दुर्गा।

महारावण—पु० [स० महत्-रावण, कर्म० सं०] पुराणानुसार वह रावण
जिसके हजार मुख और दो हजार भुजाएँ थी।

महारावल—पु० [स० महा-हिं० रावल] जैतलमेर, इंगरपुर आदि
राज्यों के राजाओं की उपाधि।

महाराष्ट्र—पु० [स० महत्-राष्ट्र, कर्म० सं०] १ बहुत बडा राष्ट्र। २.
दक्षिण भारत का एक सविद्ध प्रदेश जो अब भारत का एक राज्य है तथा
जिसकी राजधानी बम्बई है। ३ उक्त राज्य का निवासी।
भारता।

महाराष्ट्री—स्त्री० [स० महाराष्ट्र-अ-डोए] १ मध्ययुग मे एक
प्रकार की प्राकृत भाषा जो महाराष्ट्र देश मे बोली जाती थी। २. दे०
'भराठी'। ३ जल-पौल।

महाराष्ट्रीय—वि० [स० महाराष्ट्र-इय] महाराष्ट्र-सम्बधी। मह-
राष्ट्र का।

महाशब्द—पु० [स० महाशब्द] १ सेठुड। २. एक प्रकार का
सुन्दर त्रगकी वृक्ष।

महाशब्द—पु० [स० महत्-शब्द, कर्म० सं०] शिव।

महाशब्द—पु० [स० महत्-शब्द, कर्म० सं०] मूर्तों की एक जाति।

महाशब्द—पु० [स० महत्-शब्द, ब० सं०] शिव।

महाशब्द—पु० [स० महत्-शब्द, कर्म० सं०] साहित्य मे रूपक या नाटक
का एक प्रकार या वेद।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-द्वय, कर्म० सं०] बहुत बड़ा और प्रायः असाध्य रोग ।

महाद्वयी (मिन्)—वि० [सं० महत्-द्वयीन्] किसी महाद्वय से पीड़ित ।
महाद्वयी—पु० [सं० महत्-द्वयी, कर्म० सं०] १. शिव । २. बादस मात्राओं वाले छन्दों की सामूहिक संज्ञा ।

महाद्वयी—पु० [सं० महत्-द्वयी, कर्म० सं०] १. पुराणानुसार एक मरक का नाम । २. एक प्रकार का साम ।

महाद्वय—वि० [सं० महत्-अर्थ, ब० सं०] [भाष० महाद्वयता] १. बहुमूल्या । २. महंगा ।

महाद्वयता—स्त्री० [सं० महाद्वय-तत्त्व+टाप्] महाद्वय होने की अवस्था या भाव ।

महाद्वय—वि० =महाद्वय ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-अर्थ, कर्म० सं०] १. महासागर । २. शिव । ३. पुराणानुसार एक वैद्य जिसे मगवान् ने कर्म अवतार में अपने बाह्यिने पैर से उत्पन्न किया था ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-आद्वय, कर्म० सं०] १. जगदी अद्वय । २. मंत्र ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-अर्थ, कर्म० सं०] सौ करोड़ की मन्थ्या ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-अर्थ, ब० सं०] मजद चंदन ।
वि० =महाद्वय ।

महाद्वय—पु० [अ० महल का बहु० रूप] १. महला । टोला । २. कोई ऐसी चीज या वस्तु जिसमें एक ही तरह के बहुत से जीव एक साथ रहते हैं । जैसे—बाहर की मच्छियों का महाद्वय अर्थात् छत्ता । ३. जमीन के बंदोबस्त के काम के लिए किया हुआ जमीन का ऐसा विभाग, जिसमें कई गाँव होते हैं । ४. मध्य युग में, ऐसी जमीनदारी जिसमें बहुत-सी पट्टियाँ या हिस्सेदार होते थे ।
वि० =महाद्वय (बहुत कठिन या दुष्कर) ।

महाद्वयी—स्त्री० [सं० महती-द्वयी, कर्म० सं०] १. लक्ष्मी देवी की एक मूर्ति । २. वह कन्या जो दुर्गापूजा के उत्सव में दुर्गा का रूप धारण करती है । ३. नारायण की एक शक्ति । ४. एक प्रकार का धनिक पत्र जिसके प्रत्येक चरण में तीन रमण होते हैं ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-आलय, कर्म० सं०] १. महाप्रलय । २. पितृपक्ष । ३. तीर्थ । ४. नारायण ।

महाद्वय—स्त्री० [सं० महाद्वय+टाप्] आन्वित कृष्ण अमावस्या, यह पितृ जिसमें का दिन है ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-द्वय, ब० सं०] महादेव ।

महाद्वयपाल—पु० [सं० महत्-लेखापाल, कर्म० सं०] वह लेखापाल जिसकी अधीनता तथा निरीक्षण में अन्य लेखापाल विद्यमान हैं। किसी सार्वजनिक विभाग के सब लेखापाल काम करते हैं। (अकाउंटेंट जनरल)

महाद्वय—पु० [सं० महत्-लोक, कर्म० सं०] ऊपर के सात लोकों में से चौथा लोक । महालोक ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-लोक, कर्म० सं०] पठानी लोक ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-लोक, कर्म० सं०] कोजा ।

महाद्वय—वि० [सं० महत्-लोक, कर्म० सं०] बुँक ।

महाद्वय (सम्)—पु० [सं० महत्-वसत्, ब० सं०] महादेव ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-द्वय, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा वट वृक्ष । २. पुराणानुसार एक वट वृक्ष जिसके साथ भन्ु ने प्रलयकाल में नीका बंधी थी ।
स्त्री० [हिं० भाष+द्वय (प्रत्यय)] भाष के महाने में होनेवाली बर्षा ।

महाद्वय—पु० [सं० महाद्वय] हृत्पीनान । कीलवान ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-वन, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा वन या जंगल । २. बुद्धान्त के अंतर्गत एक वन ।

महाद्वय—पु० [सं० महाद्वय] लाव से तैयार किया जानेवाला एक तरह का महत्तर बटकीला लाल रंग जिससे स्त्रियाँ, अपने पैर चिपित करती तथा तक्षुप रंगती हैं ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-वराह, कर्म० सं०] विष्णु का तीसरा अवतार जिसमें उन्होंने वाराह का रूप धारण किया था ।

महाद्वयी—वि० [हिं० महाद्वय] १. महाद्वय-संबंधी । २. महाद्वय के रंग का ।

स्त्री० बड़ा छोटा फाहा जिससे पैरों में महाद्वय लगाया जाता है ।

महाद्वयवारा—वि० =महाद्वयवारा ।

महाद्वयी—स्त्री० [सं० महती-द्वयी, कर्म० सं०] माधवी (लला) ।

महाद्वय—पु० [सं० महती-वसा, ब० सं०] १. मर । २. सूँट ।

महाद्वय—पु० [सं०] १. सब रूपों के ऊपर अथा, कथा आदि की तरह पहला जानेवाला वह रूपका जो साधारण रूपको से अधिक चौड़ा तथा लंबा होता है और किसी बहुत बड़े अधिकार, पद आदि का सूचक होता है । (रौब) २. हे० 'सिक्खल' ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-वाय, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा वायव्य । कोई महत्त्व पूर्ण वायव्य या मंत्र । जैसे—सोम, तत्त्वमसि आदि । ३. दान देते समय पडा जानेवाला मंत्र या सकल्प ।

महाद्वयव्यवृत्त—पु० [सं० महत्-वाण्यव्यवृत्त, कर्म० सं०] किसी देश का वह वाण्यव्यवृत्त जो किसी अन्य देश की राजधानी में रहता हो और जो उस देश में स्थित अपने वहाँ के अन्य वाण्यव्यवृत्त का प्रभाव हो । (कॉन्सल जनरल)

महाद्वय—पु० [सं० महत्-वात, कर्म० सं०] बहुत जोरों से या तेज चलनेवाली हवा । जैसे—झडा, पृष्ठान, प्रवात आदि ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-वाद, कर्म० सं०] महत्त्वपूर्ण वाद-विवाद । शास्त्रार्थ ।

महाद्वयी (विन्)—वि० [सं० महावाद+इनि] महावाद-संबंधी । पु० वह जो वास्तव्य करता हो ।

महाद्वयी—स्त्री० [सं० महती-वाणी, कर्म० सं०] गंगा-स्तन का एक पर्यं या योग जो शनिवार के दिन चैत्र कृष्ण त्रयोदशी पक्ष में कर होता है ।

महाद्वय—पु० [सं० कर्म० सं०] एक बहुत बड़ी सफा की संज्ञा ।

महाद्वय—पु० [सं० महत्-विक्रम, ब० सं०] सिंह । शेर ।
वि० बहुत बड़ा लोकात् या विक्रमी ।

महाद्वय—स्त्री० [सं० महती-विद्या, कर्म० सं०] १. इन दस देवियों में से हर एक—काली, नाटा, वीरघ्नी, मुचनेश्वरी, मैत्री, सिद्धमता, धूम्राधनी, वैश्याध्वनी, मानवी और कमलात्मिका । (सं०) २. दुर्गा । ३. गंगा ।

महाविद्यालय— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-विद्यालय, कर्म० सं०] वह बड़ा विद्यालय जिसमें जैसी कक्षाओं की वहाँही होती है। (कालेज)

महाविशेषादारी—स्त्री० [सं० महती-विशेषादारी, कर्म० सं०] दुर्गा की एक मूर्ति या रूप।

महाविभूति— $\mu\text{०}$ [सं० महती-विभूति, ब० सं०] विष्णु।

महाविल— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-विल, कर्म० सं०] १ आकाश। २ अंतःकरण।

महाविष्य— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-विष्य, ब० सं०] वह बहुत अधिक जहरीला साँप जिसके काटते ही मृत्यु हो जाय।

महाविषुव— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-विषुव, कर्म० सं०] सूर्य के मीन से मेघ राशि में प्रवेश करने का समय।

महावीचि— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-वीचि, ब० सं०] मनु के अनुसार एक नरक का नाम।

महावीर—वि० [सं० महत्-वीर कर्म० सं०] बहुत बड़ा वीर।

$\mu\text{०}$ १ हनुमान जी। २ शेर। सिंह। ३. गरुड। ४. वेताल। ५. बच्छ। ६ घोड़ा। ७ बाज नामक पक्षी। ८. मनु के पुत्र भरनालक का एक नाम। ९ गौतम बुद्ध। २ रानी विशाला के गर्भ से उत्पन्न राजा सिद्धार्थ के पुत्र जो जैनियों के चौबीसवें और अंतिम जिन या तीर्थंकर माने जाते हैं।

महावीर-चक्र— $\mu\text{०}$ [मध्य० सं०] स्वतंत्र भारत में सेना के किसी वीर को परमभूमि में असाधारण वीरता दिखाने पर केन्द्रीय पदक या राष्ट्रपति की ओर से दिया जानेवाला एक विशेष पदक जो परमवीर चक्र से कुछ घटकर माना जाता है।

महावीर्य— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-वीर्य, ब० सं०] १ बहादुर। २ एक बुद्ध का नाम। ३. जैनों के एक अर्हत्। ४ तामस शीघ्र मन्त्रर के एक ऋद्ध। ५ बाराही कन्द।

महावीर्य—स्त्री० [सं० महावीर्य] टापू। १ सूर्य की पत्नी सद्मा का एक नाम। २ महा-शातादरी। ३. बने-स्पास।

महावृष— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-वृष, कर्म० सं०] १ सेंडुव। २. कज्ज। ३ ताड़। ४ महापीण्डु।

महावेणु— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-वेणु, ब० सं०] १ शिव। २ गरुड।

महावेणु—स्त्री० [सं० महावेणु + टापू] स्कंद की अनुचरी एक मातृका।

महाव्याधि—स्त्री० [सं० महत्-व्याधि, कर्म० सं०] बहुत कठिन और प्रायः अचिकित्स्य रोग।

महाव्याहृति—स्त्री० [सं० महती-व्याहृति, कर्म० सं०] ऊपर स्थित नूः मुयः और स्व. ह्यन तीनों लोको का समाहार।

महाव्योम— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-व्योम, कर्म० सं०] वह सारा अनल व्योम जिसमें सारा ब्रह्मांड स्थित है। (कर्मभित्त)

महावचन— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-वचन, कर्म० सं०] १. कभी अष्टका न होनेवाला वचन २. नासुर।

महावत— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-वत, कर्म० सं०] १ ऐसा व्रत जो लगातार १२ वर्षों तक चलता रहे। २ आश्विन की दुर्गा पूजा या नवरात्र।

महावीर (शिव)— $\mu\text{०}$ [सं० महावत + वति] १. वह जिसने महावत वारण किया हो। २. शिव।

महावध— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-वध, कर्म० सं०] १. बहुत बड़ा धंष। २.

सलाह। ४. कनपटी की हड्डी। ३. मनुष्य की ठंडी। ५. कुबेर की गी निधियों में से एक निधि। ६. एक प्रकार का साँप। ७. ली साव की सन्ध्या की संज्ञा।

महाशक्ति—स्त्री० [सं० महती-शक्ति, कर्म० सं०] १. शिव की रचना या सृष्टि करनेवाली मूल शक्ति। २. दुर्गा का एक नाम। ३. प्रकृति। ४. आज-काल की बहुत बड़ा या परम प्रबल राष्ट्र जिसकी वैशिक शक्ति बहुत बढ़ी हो। (ग्रेट पावर) $\mu\text{०}$ १ कानिकेय। २. शिव।

महाशत— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-शत, कर्म० सं०] पीला चतुर।

महाशातादरी—स्त्री० [सं० महती-शातादरी, कर्म० सं०] बड़ी शातादरी। सतादर।

महाशय— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-आशय, ब० सं०] १ उच्च और उदार आशयो या विचारोंवाला व्यक्ति। सम्बन्ध। (प्रायः भले आशयियों के नामों के साथ आदरार्थक प्रयुक्त) २ समुद्र। सागर।

महाशय्या—स्त्री० [सं० महती-शय्या, कर्म० सं०] १. राजाओं के सोने की शय्या। २. सिंहासन।

महाशरक— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-शरक, ब० सं०] ग्रीवा मछली।

महाशाखा—स्त्री० [सं० महती-शाखा, ब० सं०] नागबला।

महाशासन— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-शासन, कर्म० सं०] १ ऐसी आज्ञा जिसका पालन अनिवार्य हो। २ राजा का वह भंजी जो उनकी आज्ञाओं या दानपत्रों आदि का प्रचार करता हो।

महाशिव— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-शिव, कर्म० सं०] महादेव।

महाशीला—स्त्री० [सं० महती-शीला, कर्म० सं०] शतमूर्ती।

महाशुक्ति—स्त्री० [सं० महती-शुक्ति, कर्म० सं०] सीपी।

महाशुक्ला—स्त्री० [सं० महती-शुक्ला, कर्म० सं०] सरस्वती। (देवी)

महाशुभ्र— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-शुभ्र, कर्म० सं०] चाँदी।

महाशुष्य— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-शुष्य, कर्म० सं०] आकाश।

महाशीघ्र— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-शीघ्र, कर्म० सं०] सोन (नद)।

महाभ्रसान— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-भ्रसान, कर्म० सं०] काशी नगरी।

विशेष—ऐसा हाथ जाता है कि काशियों के मणिकणिका घाट पर चीबीसों भटे एक न एक साथ जलता रहता है।

महाव्याधिका—स्त्री० [सं० महती-व्याधिका, कर्म० सं०] गोरखमूडी।

महाव्यास— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-व्यास, कर्म० सं०] १ एक प्रकार का स्वान रोग। २ भरुके के समय का अन्तिम स्वान।

महाव्येता—स्त्री० [सं० महती-व्येता, कर्म० सं०] १ सरस्वती। (देवी) २. दुर्गा। ३ सफेद शकर। ४. सफेद अणुरजिता।

महाव्येती—स्त्री० [सं० महती-व्येती, कर्म० सं०] १ दुर्गा। २ सरस्वती (देवी)।

महाव्येती—स्त्री० [सं० महती-व्येती, कर्म० सं०] आश्विन शुक्ला अष्टमी।

महा-संशक्ति—स्त्री० [सं० महती-संशक्ति, कर्म० सं०] मकर संक्राति।

महासंस्कार— $\mu\text{०}$ [सं० महत्-संस्कार, कर्म० सं०] मृतक की श्मशानेति-क्रिया।

महासंस्कारों (रिप्ट)— $\mu\text{०}$ [सं० कर्म० सं०] सप्तह मासाओं के छंन्नों की संज्ञा।

महासत्ता—स्त्री० [सं० महती-सत्ता, कर्म० सं०] एक विस्व-व्याप्तिकी सत्ता। (बै०)

महासत्त्व—पुं० [सं० महत्-सत्त्व, ब० सं०] १. कुम्भेर। २. शाक्य मुनि। ३. एक बोधिसत्व।

महासप्त—पुं० [सं० महत्-आसन, कर्म० सं०] सिंहासन।

महासभा—स्त्री० [सं० महती-सभा, कर्म० सं०] १. कोई बहुत बड़ी सभा। २. हिन्दू महासभा नामक एक भारतीय दल। ३. राष्ट्र-संघ के उपाध्यक्षाने में होनेवाली बहु सभा जिसमें संबद्ध समस्त राष्ट्रों के प्रतिनिधि सम्मिलित होते हैं।

महासभाई—पुं० [सं० महासभा; हिं० आई (प्रत्य०)] (हिन्दू) महासभा (दल) का सदस्य या कार्यकर्ता।

महासमुद्र—पुं० [सं०] प्रादेशिक समुद्र को छोड़कर शेष समुद्र का वह सारा विस्तार जिसमें सभी देशों के अज्ञात बिना रोक-टोक आ-जा सकते हैं। (हार्ड सी)

महासर्प—पुं० [सं० महत्-सर्प, कर्म० सं०] प्रलय के उपरान्त होनेवाली सर्प।

महासर्प—पुं० [सं० महत्-सर्प, कर्म० सं०] कूटहल का वृक्ष।

महासंज्ञक—पुं० [सं० महत्-संज्ञक, कर्म० सं०] एक प्रकार का व्रत जिसमें पाँच दिनों तक क्रम से पंचमन्थ, छठे दिन कुश का जल पीकर और सातवें दिन उपवास करते हैं।

महासंविधिपरिष्कार—पुं० [सं० महत्-संविधिपरिष्कार, कर्म० सं०] गुप्त-काशीन भारत का वह उच्च अधिकारी जिसे दूसरे राज्यों से संधि और विग्रह करने का अधिकार होता था।

महासागर—पुं० [सं० महत्-सागर, कर्म० सं०] १. वह समस्त जल प्रायः जो इस लोक के स्थल भाग को चारों ओर से घेरे हुए है। २. उक्त के पाँच प्रमुख विभागों (अतलांतक, प्रशांत भारतीय, उत्तर ध्रुवीय और दक्षिण ध्रुवीय) में से हर एक।

महासामंत—पुं० [सं० महत्-सामंत, कर्म० सं०] सामंतों का सरदार।

महासारथि—पुं० [सं० महत्-सारथि, ब० सं०] अर्जुन।

महासाहसिक—पुं० [सं० महत्-साहसिक, कर्म० सं०] बोर।
वि० अत्यधिक साहसी।

महासिंह—पुं० [सं० महत्-सिंह, कर्म० सं०] वह सिंह जिस पर दुर्गा देवी सवारी करती है।

महासिद्धि—स्त्री० [सं० महती-सिद्धि, कर्म० सं०] योग में, विशिष्ट साधना के उपरान्त प्राप्त होनेवाली ये आठ सिद्धियाँ—अधिमा, महिमा, गरिमा, लक्ष्मी, प्राप्ति, प्राकाम्य, ३. मारुतुजाती। लज्जान।

महासिरा—पुं०=महासिरा (बेरा)।

महासिल—पुं० [अ०] १. वह धन जो हासिल या प्राप्त किया गया हो। २. आय। आमवनी। ३. मारुतुजाती। लज्जान।

महासीर—पुं० [दृश०] एक प्रकार की मछली।

महासूक्त—पुं० [सं० महत्-सूक्त, कर्म० सं०] १. साधकों की सिद्धि प्राप्त हो जाने पर मिलनेवाला परत्नानाम। २. मीनूज। रति। ३. मृगार।
४. गौतम बुद्ध का एक नाम।

महासूक्त्या—स्त्री० [सं० महती-सूक्त्या, कर्म० सं०] रेत।

महासेन—पुं० [सं० महती-सेना, ब० सं०] १. शिव। २. काशिकेय। ३. बहुत बड़ी सेना का सेनानायक।

महास्वर्ण—पुं० [सं० महत्-स्वर्ण, ब० सं०] लौ।

महास्वर्णा—स्त्री० [सं० महास्वर्ण+टाप्] जायुष का वृक्ष।

महास्वली—स्त्री० [सं० महती-स्वली, कर्म० सं०] पुष्पी।

महास्वाम्य—पुं० [सं० महती-स्वाम्य, कर्म० सं०] शरीर को प्रधान रख-वाहिनी नाड़ी।

महास्वर्ण—वि० [सं० महत्-जास्यद, ब० सं०] १. उच्चपदवस्त्र। २. शक्तिशाली।

महासूत—पुं० [सं० महत्-सूत, कर्म० सं०] १. एक प्रकार का हंस। २. विष्णु।

महासूनु—पुं० [सं० महती-सूनु, ब० सं०] १. शिव। २. लक्षक जाति का एक प्रकार का तीव्र।

महासूत—पुं० [सं० महत्-सूत, ब० सं०] शिव।

महाहास—पुं० [सं० महत्-हास, कर्म० सं०] अट्टहास।

महाहि—पुं० [सं० महत्-अहि, कर्म० सं०] बासुकि (नाग)।

महाहिष्का—स्त्री० [सं० महती-हिष्का, कर्म० सं०] अत्यधिक अर्थात्-कुछ समय तक निरंतर हिष्की होते रहने का रोग।

महि—अव्य०=महै (में)।

महि—स्त्री० [म०/मह (पूजा) |दत्] १. पुष्पी। २. महिमा। ३. महत्ता।

महिकांशु—पुं० [म० महिका-अशु, ब० सं०] चंद्रमा।

महिका—स्त्री० [म०/मह. (पूजा) |कुन्, यु-अक,+टाप्] १. पुष्पी। २. कुहरा। पाला। हिम।

महिला—पुं०=महिल।

महिषवती—स्त्री० [?] एक प्रकार का छद जिसके प्रत्येक चरण में अट्टा-इस मात्राएँ और चौहद मात्राओं पर यति होती है।

महिबास—पुं०=महीबास।

महिषर—पुं०=महीषर।

महिनिकी—स्त्री० दे० 'महीपुत्री'।

महिपाल—पुं०=महीपाल।

महिपुत्र—पुं०=महीपुत्र (मंगल)।

महिकल—पुं० [सं० मपकल] मधु। शहद।

महिषा (मह)—स्त्री० [सं० महत्-+इमनिष्,] १. महत्त्वपूर्ण होने की अवस्था या भाव। गौरव। २. महत्ता की होनेवाली प्रसिद्धि। ३. वह स्थिति जिसमें किन्नी की क्रियाशीलता, प्रभावोत्पादकता आदि की प्रसिद्धि तथा मान्यता के हेतु होती है। ४. उक्त क्रियाशीलता तथा प्रभावोत्पादकता। जैसे—मह तीर्थ या गीता की महिषा थी। ५. आठ सिद्धियों में से एक जिसकी प्राप्ति होने पर मनुष्य इच्छानुसार अपना विस्तार कर लेता है।

महिषाघर—वि० [सं० महिमघर]=महिसामान।

महिषाभाषा—वि० [सं० महिसवाम्] महिषा से युक्त। महिषाभाषा। पुं० फिनकों का एक गण या वर्ग।

महिष्ण—पुं० [सं० महिष्/ष्णा (अन्त्यास) |क] शिव का एक प्रसिद्ध स्तोत्र जिसे पुण्यदाचार्य ने रचा था।

महिष—स्त्री०—मही।

महिर्षी—अध्य० [सं मध्य; प्रा० मध्य—मैह] =महि (मे)।

महिषा—पुं० [हिं० महिना] [स्त्री० महिषारी] स्वाहा।

स्त्री० ऊल के रस का फेन।

महिषावर—पुं० [हिं० मही-भडा; चाउर—चावल] वही के मठे मे पकाया हुआ चावल। भरेहा।

महिर—पुं० [पुं० मह +इल्ल, ल-र] घूमं।

महिराणा—पुं० [सं महाराज] समुद्र।

महिराषण—पुं० [सं] पुराणानुसार एक गजस का नाम।

महिला—स्त्री० [सं०/मह; इल्ल; टाप्] १. स्त्री। औगन। २ स्त्री के लिए प्रयुक्त होनेवाला एक आदर्शसूचक शब्द। ३ प्रियपु (कता)। ४ रंपुका। नामक गन्ध-द्रव्य।

महिष—पुं० [सं०/मह; टिष्ण] [स्त्री० महिषी] १ भैंसा। २ बर राजा जिसका अभिषेक शास्त्रानुसार हुआ हो। ३. एक प्राचीन वर्ष-सकर जाति। ४ एक साम का नाम। ५ कुस शीप का एक पर्वत।

महिष-कंद—पुं० [सं० मध्य० सं०] भैंसा कंद।

महिषानी—स्त्री० [सं० महिष/उह्नु (भारता); टह्+डीप्] दुर्गा।

महिष-ध्वज—पुं० [सं० ब० सं०] १ यमराज। २ जैनों के एक अर्हत्।

महिष-मंडल—पुं० [सं०] प्राचीन भारत मे, आधुनिक हैदराबाद के दक्षिण भाग का एक नाम।

महिषमंदिनी—स्त्री० [सं० महिष/मूह (मर्वन करना); णिनि; डीप्] दुर्गा का एक नाम और रूप।

महिष-बल्ली—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] छिटेटा (लता)।

महिष-बाह्य—पुं० [सं० ब० सं०] यमराज।

महिषाकार—वि० [सं० महिष-आकार, ब० सं०] १ भैंसे के आकार का। २ बहुत बड़े डील-डौलवाला।

महिषाक्ष—पुं० [सं० महिष-अक्षि, ब० सं०, + भच्] १ भैंसा। २ गुग्गुलु।

महिषाछन—पुं० [सं० महिष/अर्द (मर्वन करना); ल्युट्—अन] कातिके।

महिषासुर—पुं० [सं० महिष-असुर, मध्य० सं०] भैसे के-से मूंहवाला एक प्रसिद्ध दैत्य जो रंग नामक दैत्य का पुत्र था। इसका लक्ष वर्णों के निम्ना था। (पुराण)।

महिषी—स्त्री० [सं० महिष; डीप्] १. भैंस। २ राजा की वह पटरानी जिसका उसके साथ अभिषेक हुआ हो। ३ सैरित्री। ४ एक प्रकार की औषधि।

महिषी-कद—पुं० [सं० मध्य० सं०] भैंसा कद। सुधाल।

महिषी-शिवा—पुं० [सं० ब० सं०] शुक्ती (धास)।

महिषी-सु—पुं० [सं० महिष-सु, ब० सं०] १ यमराज। २ महिषासुर। (३०)

महिषोत्सव—पुं० [सं० महिष-उत्सव, ब० सं०] एक प्रकार का यज्ञ।

महिष्ठ—वि० [सं०/मह (पूजा); षठ्ठ्] १. बहुत बड़ा। २ महिमा-पूर्ण।

महिष्ठुर—पुं०—महीभू।

मही—स्त्री० [सं०/मह; अच्+डीप्] १ पुष्पी। २ पुष्पी के आधार पर एक कौं संस्था। ३ मिट्टी। ४. शाकी स्थान। अथ हाथ।

५. नदी। ६. सेना। फौज। ७. समूह। ८. गाय। नौ। ९. एक प्रकार का छद जिसमे एक लघु और एक गुरु मात्रा होती है। जैसे—मही, लमी इत्यादि।

पुं० [हिं० मणित] मट्टा।

महीभित्त—पुं० [सं० मही/वृक्ष (निवास या हिंसा) +भित्त्, तुक्-आगम] राज।

महीभडी—स्त्री० [देश०] सिकलीगरी का एक औजार।

महीभ्र—पुं० [सं० मही/वृत् (उत्पन्न करना) +भ्र] १ मगल ग्रह। २. अदक।

मही-तल—पुं० [सं० ब० सं०] पुष्पी। सस्यार।

महीवास—पुं० [सं० ब० सं०] एतरेय ब्राह्मण के रचयिता एक प्रसिद्ध ऋषि।

महीवेध—पुं० [सं० ब० सं०] नू-वेध। बाह्यण।

महीधर—पुं० [सं० ब० सं०] १ पर्वत। पहाड़। २ शेषनाम। ३. बौद्ध के अनुगार एक देवतु। ४. एक प्रकार का वणिज वृत्त जिसमे बौद्ध ब्राह्मण क्रम से लघु और गुरु आते हैं।

महीध्र—पुं० [सं० मही/धृ (घाण)] +क] महीधर।

महीध्रक—पुं० [सं० महीध्र; क्त] =महीध्र।

महीन—वि० [सं० महत्; मीन] (सं० शीण) १ जियका घेग, लल या बिलार इतना कम या थोड़ा हो कि महत्ता दिखाने न दे। सूक्ष्म। 'मीटा' का विपर्याय। जैसे—महीन काम, महीन निशान। २ बहुत ही पतला या बारीक। शीन। जैसे—कण्डके का महीन पीत।

पद—महीन काम—ऐसा काम जिसे करने मे बहुत आंख गड़ाने और सावधानी रखने की आवश्यकता होगी हो। जैसे—मीना-गिराना, चित्रकारी, नक्काशी आदि।

३ (स्वर) जो बहुत कम ऊँचा या तेज हो। कीमल। धीना। मर। जैसे—महीना आवाज।

पुं० [सं०] राज।

महीना—पुं० [सं० मास वा मा सि० फा० माह] १ काल का एक प्रसिद्ध परिमाण जो वर्ष के बारहवें अथ के बराबर और प्राय तीस दिनों का होता है। मास। माह। २ हू महीने अर्थात् महीना पर काम करने के बदले मिलनेवाला वेतन या वृत्ति। ३ रिजयो का रजोवर्ष मे मासासक धर्म जो प्राय महीने-महीने सर पर होता है।

मूहा—(स्त्री का) महीने से होना =रजोवर्ष मे होना। गजस्वला होना।

महीष—पुं० [सं० मही/षा (रथा) +क] राज।

महीषति—पुं० [सं० ब० सं०] राज।

महीपाल—पुं० [सं० मही/पाल (पालन)] णिच्। अच्। राज।

मही-सुष—पुं० [सं० ब० सं०] मगल ग्रह।

मही-सुषी—स्त्री० [सं० सं०] सीता जी।

मही-प्राचीर—पुं० [सं० ब० सं०] समुद्र।

मही-भरती (भृत्)—पुं० [सं० सं०] [स्त्री० महीभरती] पुष्पी (के निवासियों) का मरच-योग्य करनेवाला, राजा।

महीभूह (भूह)—पुं० [सं० मही/भूह (उपभोग करना) +विभच्, कृत्] राज।

महीभू—पुं० [सं० मही/भू (पालन करना) +विभच्, तुक्] १ राज। २ पर्वत। पहाड़।

महो-संज्ञक—पुं० [सं० व० तं०] पुष्पी। मूयंडल।
 महो-सु—पुं० [देस०] एक प्रकार का नम्रा।
 महोभान (बन्धु)—वि० [सं० महन्+ईयन्] [स्त्री० महोयसी] ? किसी की तुलना में अधिक बड़ा। २. महान्। ३. शक्तिशाली।
 महोर—स्त्री० [हिं० महो] १. मक्खन की तपाने पर निकलनेवाली तलछट। २. महोरा। (दे०)
 महोरायण—पुं० [सं०] १. अद्भुत् रामायण के अनुसार रायण के एक पुत्र का नाम। २. महिरायण।
 महोच्छ्र—पुं० [सं० महो+च्छ्र (उत्सन्न होना) +क] वृक्ष।
 महोल्ला—स्त्री० [सं० व० तं०] केंचुआ।
 महोष्—पुं० [महो+ईश, व० तं०] राजा।
 महो-मुल—पुं० [व० तं०] मगल ग्रह।
 महो-मुला—स्त्री० [व० तं०] सीता जी।
 महो-सुर—पुं० [सं० तं०] श्रावण।
 महो-सुनु—पुं० [व० तं०] मगल ग्रह।
 महो—अव्य०—महो।
 महो—पुं०—मधु।
 महोवर—पुं० [सं० मधुकर; प्रा० महोवर] १. संपीरो का एक प्रकार का बाजा जिसे तुमड़ी या नुंभी भी कहते हैं। २. एक प्रकार का इन्द्रजाल का खेल जो उक्त बाजा बजाकर किया जाता है और जिसमें खिलाड़ी अपने प्रतिद्वन्दी को अपनी इच्छा के वश में करके अनेक प्रकार के शारीरिक कष्ट देने का प्रयत्न करता है।
 स्त्री० [हिं० महोआ] ? बहू भेड़ जिसका ऊन कालापन लिए लाल रंग का होता है। २. महोए की पीसकर उसके धुँसे से बनाई जानेवाली रोटी।
 महोवरि—स्त्री०—महोवर।
 महोवरी—स्त्री० [हिं० महोआ] महोए के रस से साने हुए जादे की पकाई हुई रोटी।
 महोआ—पुं० [सं० मधुक, प्रा० महोअ] अलुई मृमि में होनेवाला एक वृक्ष जिसका काष्ठ चिकना तथा घुसरित होता है और फूल सफेद तथा पीले रंग के होते हैं तथा पत्ते रोपेवार होते हैं। २. इस वृक्ष के छोटे, मीठे, सफेद फल जो खाये जाते हैं, और उनके पास से शराव बनाई जाती है। ३. घुसरित रंग का बिल। ४. हलका पीला रंग।
 १पुं०—सुमरा (मछली)।
 वि० [हिं० महना—मगना] मया हुआ। जैसे—महोआ वही।
 महोआ-वही—पुं० [हिं० महना—मगना+वही] वह मया हुआ वही जिसमें से मक्खन निकाल लिया गया हो।
 महोवारी—स्त्री० [हिं० महोआ+वारी] वह स्थान जहाँ महोए के बहुत से वृक्ष हों।
 महोकम—वि०—महोकम (पक्का)।
 महोम्भ—वि० [हिं० महोआ] महोए के रंग का। हलके पीले रंग का।
 महोरा—वि०—मधुर।
 महोरेकी—स्त्री०—मुलेठी।
 महोर्छा—पुं०—महोछा।

महोला—वि० [हिं० महोआ] [स्त्री० महोली] महोए के रंग का। हलका पीला।
 पुं० १. हलका पीला रंग। २. हलके पीले रंग का बिल।
 महोवर—पुं०—महोवर।
 महोआ—पुं०—महोआ।
 महोम्भ—पुं० [सं० मधुक] १. महोए का पेड़ और उसका फल। २. मुलेठी।
 महोरता—पुं०—महोत।
 महोष्—स्त्री०—मुहिय। उदा०—विद्या विजय काज महूम की।—पद्माकर।
 मधुष्—पुं०—मधुष् (महोआ)।
 महोद—पुं० [सं० महन्+द, कर्म० सं०] १. विष्णु। २. इन्द्र।
 महोदाल—स्त्री०—महोद्री (नदी)।
 महोबी—स्त्री० [सं०] गुजरात प्रदेश की एक नदी।
 महो—अव्य० [सं० मधु] में। अन्तर।
 महोर—पुं० [देस०] ? झगड़ा। बसेड़ा। २. व्यर्थ की देर या विलम्ब।
 किं० प्र०—काला।—डालना।
 १पुं०—महोरा।
 १स्त्री०—महेरी।
 महोरा—पुं० [हिं० मही+एरा (प्रत्य०)] ? वही। मटा। २. वही में पकाना हुआ चावल, खंसादी का आटा या ऐसी ही और कोई चीज।
 १पुं० १.—महेरा। २.—महेला।
 महोरी—स्त्री० [हिं० महेरा] ? उबाली हुई ज्वार जिसे लोग नमक मिर्च से खाते हैं। २. दही के साथ पकाना हुआ चावल। महेरा।
 वि० [हिं० महेर] १. झगडा-बसेड़ा लडा करनेवाला। २. व्यर्थ देर लगानेवाला।
 महोल्—पुं०—महोल्।
 महोला—पुं० [हिं० माथ] चने, उडद, मोठ आदि की उबालकर और भी, मूड आदि डालकर बनाया हुआ वह मिश्रण जो प्याओ को खिलाया जाता है।
 *वि० [?] सुन्दर।
 महोल्ला—स्त्री० [सं० महोल्लाक] माल डोनेवाली एक प्रकार की बड़ी नाव।
 महोष्—पुं० [सं० महन्+ईश, कर्म० सं०] १. ईश्वर। २. शिव।
 महोष्-वृ—पुं० [सं० व० तं०] बिल।
 महोशान—पुं० [सं० महन्+ईशान, कर्म० सं०] [स्त्री० महोशानी] शिव।
 महोशानी—स्त्री० [सं० महोशान] डीपू १. पाषाणी। २. दुर्गा।
 महोशी—स्त्री०—महेश्वरी (पाषाणी)।
 महोश्वर—पुं० [सं० महन्+ईश्वर, कर्म० सं०] [स्त्री० महेश्वरी] १. ईश्वर। २. शिव। ३. सफेद महार। ४. सोना। स्वर्ण।
 महेश्वरी—स्त्री० [सं० महन्+ईश्वरी, कर्म० सं०] दुर्गा।
 महोषुभि—वि० [सं० महन्+ईशुभि, व० सं०] बहुत बड़ा धनुषारी।
 महोष्वास—पुं० [सं० महन्+स्वास, कर्म० सं०] बहुत बड़ा धनुषारी योद्धा।
 महोष्—पुं०—महोष्।
 महोसिवा—पुं० [हिं० महोश] एक प्रकार का बकिया अगहनी घास।

महोत्सी—स्त्री०—महोत्सवी ।

महोत्सुर—पुं० १. =महोत्सवर । २. =माहोत्सवर ।

महोत्सु—वि० [हि० महा] गुरी तरह से व्याप्त । अतिप्राप्त ।

महोत्सु—स्त्री० [सं० महोत्सी-एका, कर्म० ६०] बड़ी इलायची ।

महोत्सी—पुं०—मभृक (महुआ) ।

पुं०—महोत्सा ।

महोत्सा—पुं० [सं० महत्-उत्सव, कर्म० ६०, + अच्] १. बड़ा वैल ।

२. कामधामन में बुधम आदि का पुष्प ।

महोत्सी—पुं०—मभृक (महुआ) ।

↑पुं०—महोत्सा ।

महोत्सा—पुं० [सं० मभृक] कीए के आकार का एक पत्ती ।

महोत्समी—पुं० [अ०] एक प्रकार का बहुत बड़ा पेड़ जो सदा हरा रहता है । इसके फल खाये जाते हैं, और लकड़ी इमारत के काम आती है ।

महोत्सवार—पुं० [सं० महत्-उत्सवार, कर्म० ६०] ऊँचा या घोर शब्द । शोष । उदा०—मूल गये देवता उचय का महोत्सवार था मैं ही।—
विनकर ।

महोत्सवार्—पुं०—१. महोत्सा । २. महोत्सव ।

महोत्सव—पुं० १. =महोत्सा । २. =महोत्सव ।

महोत्सा—पुं० [सं० महोत्सव] १. महोत्सव । २. एक उत्सव जिसमें स्त्री संप्रदाय बाबा लाल जसराज की पूजा करते हैं । यह यावधामन के कृष्ण पक्ष में होता है ।

महोत्सी—स्त्री० [सं० ब० सं०, + डीप्] कटैया ।

महोत्सी—स्त्री० [हि० महुआ] महुआ का फल । कुलेदी ।

महोत्सका—पुं०—महोत्सका ।

महोत्सव—पुं० [सं० महत्-उत्सव, कर्म० ६०] बहुत बड़ा उत्सव या समारोह ।

महोत्सवि—पुं० [सं० महत्-उत्सवि, कर्म० ६०] समुद्र ।

महोत्सव—पुं० [सं० महत्-उत्सव, ब० सं०] [स्त्री० महोत्सविया] १. अधिवास । स्वामी । २. महोत्सवनाम । महात्मा । ३. अपने से बड़े व्यक्ति के लिए अथवा औपचारिक रूप से किसी अल्प व्यक्ति के लिए प्रयुक्त क्रिया जानेवाला एक आदरसूचक संबोधन ४. स्वर्ग । ५. महापूल । ६. कामयकुम्भ प्रदेय का एक नाम ।

महोत्सवा—स्त्री० [सं० महोत्सव + टाप्] नागबला । मूलनकरी । गवेरन ।

स्त्री० सं० 'महोत्सव' का स्त्री० ।

महोत्सवर—पुं० [सं० महत्-उत्सवर, ब० सं०] १. सिव । २. भूतराष्ट्र का एक पुत्र । ३. एक अक्षुर का नाम । ४. एक नाग का नाम ।

वि० बहुत बड़े पेटवाला ।

महोत्सरी—वि० स्त्री० [सं० महोत्सरी] बड़े पेटवाली ।

स्त्री० जगबती का एक नाम ।

महोत्सार—वि० [सं० महत्-उत्सार, कर्म० ६०] बहुत अधिक उदार ।

महोत्सव—वि० [सं० महत्-उत्सव, ब० सं०] बहुत बड़ा उद्यम या बड़े बड़े काम करनेवाला ।

महोत्सा—पुं० [हि० मुँह] पशुओं के मुँह आदि पकने का एक रोग ।

महोत्सल—वि० [सं० महत्-उत्सल, कर्म० ६०] बहुत अधिक उत्सव या ऊँचा ।

महोत्साध्याय—पुं० [सं० महत्-उत्साध्याय, कर्म० ६०] बहुत बड़ा अध्यायक या पठित ।

महोत्सा—पुं० [देश०] बुदेलखण का एक प्राचीन भगर जो हमीरपुर जिले में है ।

महोत्सिया—वि०—महोत्सी ।

महोत्सी—वि० [हि० महोत्सा] ई (प्रत्य०) १. महोत्से का । महोत्सा-सवकी ।

२. महोत्से में होनेवाला ।

पुं० महोत्से का निवासी ।

महोत्सग—पुं० [सं० महत्-उत्सग, कर्म० ६०] बहुत बड़ा सौप ।

महोत्सक—वि० [सं० महत्-उत्सक, ब० सं०+कप्] जिसका बसा-स्थल विद्याल हो ।

महोत्सि—स्त्री० [सं० महोत्सी-कर्मि, कर्म० ६०] बहुत ऊँची या बड़ी लहर ।

महोत्सा—पुं० [अ० मुहेल] १. हीला-मुवाला । बहाना । २. चक्का । घोसा ।

महोत्स—पुं० [सं० महत्-ओष, कर्म० ६०] समुद्र की बाढ़ या भूकान ।

महोत्सक—वि० [सं० महत्-ओत्सक, ब० सं०,+कप्] बहुत अधिक तेजस्वी । बहुत तेजवान् ।

महोत्सा (जसु)—वि० [सं० महत्-ओत्सक, ब० सं०] बहुत अधिक तेजस्वी । पुं० एक असुर जो काल का पुत्र था ।

महोत्सी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार का वृक्ष जिसकी लकड़ी इमारत के काम आती है ।

महोत्सव—पुं० [सं० महत्-ओत्सव, कर्म० ६०] १. बहुत बड़ा और प्रायः पूरा मृष दिखानेवाला औषध । २. भुक्ति वः। मुग्माद्वय । ३. सोढ । ४. लक्ष्मण । ५. बाराही कन्द । गेठी । ६. बछनाम । ७. पीपल । ८. अतीस ।

महोत्सवि—स्त्री० [सं० महोत्सी-ओषधि, कर्म० ६०] १. कुछ विशिष्ट औषधियों का बूझ जो महात्मान या अभिवेकादि के जल में मिलाया जाता है । २. दूब । ३. सजीवनी । ४. लज्जालू नाम की लता ।

महोत्सवी—स्त्री० [सं० महोत्सी-ओषधी, कर्म० ६०] १. सफेद भटकटैया ।

२. बाह्यपी । ३. कुटकी । ४. अतिबला । ५. हिल मोंचिका ।

महोत्सी—पुं० [हि० मही] महुडा । छाछ ।

मा—स्त्री० [सं० अबा या माता] जन्म देनेवाली, माता । जननी ।

पद—माँ-बाया ।

↑अभ्य०—मे ।

माँकड़ी—स्त्री० [हि० मकड़ी] १. कमलाव बुनेवाली का एक बीजार जिसमें डेढ़ डेढ़ सालस की पीच सीलसि होवी है । २. पतवार के ऊपर सिरे पर लगी हुई और दोनों ओर निकली हुई एक लकड़ी । ३. महाज में रखे बौधे के लूटे आदि का बनाया हुआ ऊपर की माग । ४. दे० 'मकड़ी' ।

माँस—पुं०—माँस (अप्रव्रतता) ।

माँसण—पुं०—माँसण (राग) ।

माँसता—अ०—माँसना (क्रोध करना) ।

माँसा—पुं० [सं० माँसिका] मच्छर । उदा०—सू उँवरी जेहि भीतर माँसा—जायसी ।

मर्ता—स्त्री०—मर्ता।

मर्ता—स्त्री० [हि० मर्ता] १. मर्ता की किया या भाव। याचना।

२. अर्थात्तरक में यह स्थिति जिसमें लोग (मेजा) कोई चीज किसी निश्चित मूल्य पर खरीदना चाहते हैं। ३. किसी निश्चित मूल्य पर तथा किसी निश्चित अवधि में केजाओं द्वारा किसी चीज की खरीदी या बाही जानेवाली मात्रा। ४. किसी या लक्ष्य आदि के कारण किसी पदार्थ के लिए लोगों को होनेवाली आवश्यकता या चाह। जैसे—बाजार में देखी कपड़ों की माँग बढ़ रही है। ५. किसी से आधिकारिक रूप में या बुझापूर्वक यह कहना कि हमें अमुक अमुक सुनोती मिलने चाहिए। (किमात्र) जैसे—बुकानदारों की माँग, मजदूरों की माँग, राजनीतिक अधिकारों की माँग।

स्त्री० [म० मर्ता ?] १. सिर के बालों को विभक्त करके बनाई जानेवाली मेला। सीमांत।

पद—मर्ता-बोटी, मर्ता-जली, मर्ता-बट्टी।

मुहा०—मर्ता उजड़ना—विवाहिता स्त्री का विधवा होना। मर्ता कीच से सुभी रहना या बुझाना—स्त्रियों का सीमाव्यवही और संतानवती रहना (आधुनिक)। मर्ता पारना या कारना—केशों को दो ओर करके बीच में माँग निकालना। मर्ता बाँधना—कची-चोटो या केश-विन्यास करना। मर्ता संभारना—कफी करके बाल संभारना।

२. किसी पदार्थ का ऊपरती भाग। सिरा। (ब०) ३. सिल का वह ऊपरी भाग जिस पर किसी हुई चीज रखी जाती है। ४. नाव का अगला भाग। बुन सिरा। ५. दे० 'मर्ती'।

मर्ता-बोटी—स्त्री० [हि०] स्त्रियों का केश-विन्यास।

मर्ता-जली—स्त्री० [हि०] विधवा। रोंड़।

मर्ता-डीका—पुं० [हि०] एक प्रकार का माँस-कूल जिसमें मीसियों की लड़ी लगी रहती है।

मर्ता—पुं० [हि० मर्ता] १. मर्ता की किया या भाव। २. मर्ता। मिश्रण। मिश्रक।

मर्ता-हारा—पुं० [हि० मर्ता] मर्तावेवाला।

पुं०—मर्ता (मिश्रण)।

मर्ता—स० [स० मर्ता—माचना] १. किसी से यह कहना कि आप हमें अमुक वस्तु या कुछ धन दें। याचना करना। जैसे—मैंने उनसे एक पुस्तक माँगी थी। २. खरीदने के उद्देश्य से किसी से कुछ लाकर प्रस्तुत करने या दिखाने के लिए कहना। जैसे—बुकानदार से पुस्तक माँगना। ३. किसी से कोई आकांक्षा पूरी करने के लिए कहना। याचना या प्रार्थना करना। ४. अपनी कन्या या पुत्र के साथ विवाह करने के लिए किसी से उसके पुत्र या कन्या के संबंध में प्रस्ताव करना। ५. किसी से आधिकारपूर्वक यह कहना कि तुम हमें इतना धन या अमुक वस्तु उधार दो। ६. जिसका मर्ता। हाथ पसारना। १५० वीं हुई वस्तु माँग देने के लिए किसी से कहना।

मर्ता-बट्टी—स्त्री०—मर्ता बोटी।

मर्ता-बूझ—पुं० [हि० +बू] बहु पत्र जिस पर कोई किसी व्यापारी को यह लिखता है कि आप हमें अमुक अमुक वस्तुएँ दे दें। (आर्बंर फार्म) २. बहु पत्र जिसमें किसी से आधिकारपूर्वक यह कहा जाए कि अमुक चीज मुझे दे दो।

४—५२

मर्ता-बूझ—पुं० [हि०] मर्ता में लपया जानेवाला एक प्रकार का टीका।

मर्ता-बरी—वि० स्त्री० [हि० मर्ता +मर्ता] सचवा। मुहाविन।

मर्ता-क-गीत—पुं० [स० मर्ता-क-गीत] यह पुन गीत को विवाह आदि संलग्न अवसरों पर गाये जाते हैं।

मर्ता-क—वि० [स० मर्ता +क—क, बुद्धि] १. मर्ता-करनेवाला।

पुन। २. मर्ता कायों से सम्बन्ध रखनेवाला। जैसे—मर्ता-क कृत्य।

पुं० बहु जो तद आदि विशिष्ट अवसरों पर मर्ता पाठ करता है।

मर्ता-क—वि० [स० मर्ता +क—क, बुद्धि] पुन। मर्ता-कारक।

पुं० 'मर्ता' की अवस्था या भाव। मर्ता-क।

मर्ता-क-काया—स्त्री० [स० ब० स० +टाए] १. बुझ। २. बुझवी।

३. बुद्धि नामक बोधि। ४. गोरौचन। ५. हरीतकी। हर्द।

मर्ता-क-कुसुमा—स्त्री० [स० ब० स० +टाए] शंखपुष्पी।

मर्ता-क-प्रबरा—स्त्री० [स० स० व०] बर।

मर्ता-क्या—स्त्री० [स० मागत्य +टाए] १. गोरौचन। २. जीवनी। ३. धानी।

मर्ता—पुं० [हि० मर्ता] मर्ता वे विशेषतः मर्ता मर्ता की किया या भाव।

वि० [स्त्री० मर्ता] मर्ता मर्ता हुआ। मर्ता की का।

मर्ता—स्त्री० [म० मर्ता ? हि० मर्ता] बुनियों की बुनकी से यह लकड़ी जो उसकी के ऊपर लगी रहती है जिस पर तैल चढ़ाते हैं।

मर्ता—स्त्री० [?] एक प्रकार की मछली।

मर्ता—पुं० [देवा०] १. पाल में हवा लगने के लिए चलते हुए अहाज का सब कुछ तिरका करना। (लश०) २. पाल के नीचेवाले कोने में डँबा हुआ वह रस्ता जिसकी सहायता से पाल की आगे बड़ाकर या पीछे हटाकर हवा के प्रवाह पर करते हैं। (लश०)

†मर्ता—माच।

मर्ता—अ० [हि० मर्ता] १. प्रसिद्ध होना। २. लीन होना। उदा०—

स्वाम प्रेम रस मर्ता—सूर।

अ०—मर्ता।

†मर्ता—मर्ता।

मर्ता—पुं० [स० मर्ता, मर्ता] [स्त्री० अल्पा० मर्ता] १. पलक। साट। २. बैठने की पीठी। ३. मर्ता।

मर्ता—स्त्री० [स० मर्ता] मछली।

†पुं०—मर्ता।

मर्ता—अ० [स० मर्ता ?] पुनना। पैठना। (लश०)

मर्ता—स्त्री० [स० मर्ता]—मछली।

†पुं०—मर्ता।

मर्ता—स्त्री०—मर्ता।

मर्ता—स्त्री०—मर्ता।

मर्ता—स्त्री० [देवा०] १. दनदली मूर्ति। २. कछार। तराई। ३. नदी के निरसन के कारण निकली हुई मूर्ति। मर्ता-बरा।

मर्ता—स० [स० मर्ता] १. कोई चीज अच्छी तरह साफ करने के लिए किसी हलदी चीज से उठे अच्छी तरह मर्ता या रण्डना। जैसे—बलन मर्ता। २. जुलाहों का सूत बिकाना करने के लिए उस पर सरेस का पानी रण्डना। ३. डोर या मल पर माशा लगाना। ४. कुम्हारों के

बपुए के लखे पर पानी देकर उसे ठीक करने के लिए उसके किनारे झुकाना। ५. किसी काम या चीज का अभ्यास करना जैसे—
(क) लिखने के लिए हाथ मोजना। (ख) गाने के लिए गीत या राग मोजना।

बीचराना—पु०=पजर (ठठरी)।

बीछा—पु० [दिश०] पहली वर्षा का फेर जो मछलियों के लिए मांसक कहा गया है।

†पु०=मासा।

बी-भाया—पु० [हि० भा] जाया=जात [स्त्री० मोजाई] भां से उत्पन्न, अर्थात् सगा मारई। सहोदर।

बीचिच्छ—वि० [स० मजिच्छा +अण्] १ मजिठ से बना हुआ। २. मजीठ के रंग का। ३ मजीठ-सम्बन्धी। मजीठ का।

पु० एक प्रकार का मूल रोग या प्रमेह जिसमें मजीठ के रंग का पेगाव होता है।

बीत्त—अव्य० [स० मध्य] में। मीतर। बीच।

पु० १. अत्तर। फरक। २ नदी के बीच में निकली हुई रेतोली धूम।

बीत्ता—पु० [स० मध्य] १ नदी के बीच की सूखी जमीन या टापु। २. बूझ का तना। ३ वे कपड़े जो बर और कच्चा को विवाह से पहले पहनाने आते हैं। ४ पगड़ी पर लगाया जानेवाला एक तरह का आभूषण। ५. एक प्रकार का डोंचा जो गोडाई के बीच में रहता है और जो पाई को जमीन पर गिरने से रोकता है। (जुलाहे)

पु० [हि० मोजना] लेई, बीसों की बुकनी आदि का वह रूप जो धंग या मूल पर उसे तेज तथा धारदार करने के लिए चढ़ाया जाता है।

फि० प्र०—चढ़ाना।—बेना।

†पु० १.—मसा (बडी खाट)। २.—मोजा (फेन)।

बीचिख—वि० [स० मध्य] मध्य का। बीच का।

फि० वि० बीच या मध्य में।

बीची—पु० [स० मध्य, हि० मीक्ष?] केवट। मल्लाह।

†पु०=मध्यस्थ।

बीची—पु० [स० मध्य, हि० मीक्ष?] केवट। मल्लाह।

†पु० [?] बलवान। (फि०)

बीठ—पु० [स० मट्टक] १ मिट्टी का बड़ा बरतन। मटका। कुडा। २ धर के ऊपर की कोठरी। अटारी। कोठा।

बीठ—पु० [स० मट्टक] १. मटका। २ कुडा। ३ नील धोलने का बड़ा मटका।

बीठी—स्त्री० [दिश०] फूल नामक धातु की डली हुई एक प्रकार की चूड़ियाँ जो देहाती स्त्रियाँ पहनती हैं।

†स्त्री०=मठरी या मट्ठी (पकवान)।

बीठा—पु० [स० मट्टक] उबाले या पकाये हुए चाबलों में से बाकी बचा हुआ पानी जो गिरा या निकाल दिया जाता है। पसाव। पीच।

स्त्री० [हि० मोजना] १. मोजने की क्रिया या भाव। २ एक प्रकार का राग जिसका प्रचलन राजस्थान में अधिक है। ३. एक प्रकार की रोटी। उदा०—शास्त्र मोज आदि विधि पीए।—जायसी।

बीछना—स० [स० मंझन] १ मर्वन करना। मसलना। २. रूचना। क्षामना। जैसे—आटा बीछना। ३. लेप करना। पीतना। ४. सजाना

या संवारना। ५. अन्न की बालों में से दाने झाड़ना। ६. टानना। किसी प्रकार की क्रिया संपन्न करना अथवा उसका आरम्भ करना।

जैसे—खाते या बहों में कोई रकम मोजना, अर्थात् चढ़ाना या लिखना।

पुहा०—पय मोजना=नैर रोकना। ठहरना। रुकना। उदा०—आपों हूँ पय मोजि अहीर।—प्रिवीराज। बाव मोजना= (क) हठ करना। (ख) विवाह या बहस करना। उदा०—आपे बाद मोजिबी जीपण।—प्रिवीराज।

७ दे० 'मलाना'।

बीछनी—स्त्री० [स० मञ्ज; हि० मोजना] १ मोजने की क्रिया या भाव। २. किनारा। हाथिया। ३ मजबी। गोट।

बीछलिक—पु० [स० मञ्ज+ठक्, ठ-इक्, वृद्धि] १ मञ्ज का प्रधान प्रधासक। २ बहुछोटा राजा जो किसी चक्रवर्ती या बड़े राजा के अधीन हो और उसे कर देता हो।

३. शासन का कार्य।

वि० मञ्ज संबंधी।

बीछवा—पु०=मञ्ज।

बीछवी—स्त्री० [स०] राजा जनक के माई कुशावज की कन्या जिसका विवाह राजा दशरथ के पुत्र भरत से हुआ था।

बीछव्य—पु० [स०] १ एक प्राचीन ऋषि जिनको बाल्यावस्था के किये हुए अपराध के कारण यमराज ने सूजी पर चढ़वा दिया था। २ एक प्राचीन जाति। ३ एक प्राचीन नगर।

बीछा—पु० [स० मञ्ज] १. अंग्रेजों के पड़ने तक का एक रोग। २ इस प्रकार बीछ में पड़नेवाली स्त्रिली।

पु० [हि० मोजना—रूचना] १. एक प्रकार की बहुत पतली पूरी जो मँदे की होती और परे में पकती है। लुचवी। २. पराछा या पराछा नामक पकवान। ३. उलटा या नीला नामक पकवान।

†पु०=मँडेवा (मद्य)।

बीछी—स्त्री० [स० मञ्ज] १ मात का पसाव या मजि को प्राय कपड़े या सूत पर कलक करने के लिए लगाते हैं। २ उन्नत काम के लिए बनाया जानेवाला जुलाही का एक प्रकार का पील या मिश्रण।

फि० प्र०—चढ़ाना।—बेना।—लाना।

बीछक—पु० [स० मञ्जक+अण्,] प्राचीन काल के एक प्रकार के ब्राह्मण जो वैदिक मञ्जक शाखा के अंतर्गत होते थे।

बीछकायनि—पु० [स० मञ्जक+किन्, क—आपण] एक वैदिक आचार्य।

बीछव्य—पु० [स० मञ्जक+यव, वृद्धि] एक प्रसिद्ध उपनिषद्।

वि० मञ्जक संबंधी।

बीछा—पु० [स० मंझ] स्त्रियों का पीहर। भायका। उदा०—नयरी नई मांजे बीछाई।—नरपतिनाल्लह।

बीछा—पु०=मोज।

बीत्त—वि० [स० मत्त] १ मत्त। मल्ल। २ मल्ली आदि के फारण बेलसु। ३. उन्नत। पागल।

फि० [स० मन्त] जिसका रंग या शोभा बहुत कम हो गई हो। फीका पडा हुआ।

वि० [का० माए] १ घका हुआ। २ हारा हुआ।

बीतना—अ०=मातना (मत्त होना)।

मौला-वि०=माता (मत्त)।
 मांभ-वि०[सं० मंभ+अच्, वृद्धि] मंभ-संबंधी। मंभ का।
 मांभिक-सु० [सं० मंभ+अच्, ठ=इक,] १. वह जो मंभों का पाठ करने में शारीर्य हो। २. वह जो मंभ-तंत्र आदि का अच्छा ज्ञाता हो।
 मांभर्ष-सु० [सं० मंभर्ष+अच्] १. मंभर्ष होने की अवस्था या मात्र।
 मंभरतार। भीमापन। २. सुस्ती।
 मांभ-सु०[सं० मत्सक] मांभ। सिर।
 मांभ-वि०[सं० मंभ] १. जो उदास या फीका पड़ गया हो। जिसका रम उतर गया या हलका पड़ गया हो। मलिन। २. फीका। श्री-हीन।
 ३. किसी की तुलना में घटकर या हलका।
 कि० प्र०—पड़ना।
 ४. उदास या हारा हुआ। पराजित। मात।
 स्त्री०[दिस०] १. चौबेर का डेर जो बूल गया हो और जलाने के काम में जाता हो। २. जगलों, पहाड़ों, आदि में सुरंग की तरह का कोई ऐसा प्राकृतिक स्थान जिसके कोई हिस्सक पशु रहता हो।
 मांभयो०—सु०[का०] १. 'मांदा' होने की अवस्था या मात्र। २. बीमारी। रोग। ३. थकावट।
 मांभरतं—सु०=महल (बाजा)।
 मांभ-वि०[का० मांभ] १. बीमार। रोग आदि से ग्रस्त।
 पद—बघा-मांभ।
 २. छोड़ा हुआ। बघा हुआ।
 मांभर—वि०[सं० मंभर+अच्] मंभर (मंदार) संबंधी।
 मंभ-सु० [सं० मंभ+अच्] १. मंभ होने की अवस्था या मात्र।
 मंभता। जैसे—अग्नि-मंभ। २. दुर्बलता। ३. कमी। मृतता।
 ४. बीमारी। रोग। ५. मूर्खता।
 मांभता (सु) —सु० [सं० मांभ+अच् (पाना)+तुच्] अयोध्या का एक प्राचीन सुयंबंधी राजा जो विलीय के पूर्वजों में से था।
 मांभना—अ०[हि० मतिना] जैसे में चूर होना। मल होना। मातना।
 स०=मापना (नापना)।
 मांभ*—अव्य०=में।
 मांभ-सु० [सं०/मन् (ज्ञान)+स] [वि० मांभल] १. मनुष्यों तथा जीव-जंतुओं के शरीर का हृदयही, नस, चमड़ी, रक्त आदि से विभ्र अंग जो रक्त वर्ण का तथा लचीला होता है। आमिष। गोस्त।
 पद—मांस का बी=चरबी।
 २. कुछ विशिष्ट पशु-पक्षियों का मांस जिसे मनुष्य खाद्य समझता है।
 जैसे—बकरे या भूयों का मांस।
 †सु०=मास (महीना)।
 मांसकारी (सिन्धु)—सु०[सं० मांस+कार+पिणित] रक्त। लड़।
 मांस-कीलक—सु०[सं० तं] बवासीर का मस।
 मांसखोर—वि०[सं० मांस+का० खोर] †मांभ= मांसखोरी। मांसा-हारी। मांस-मानेवाला।
 मांस-मंथि—स्त्री०[सं० तं] शरीर के विभिन्न अंगों में निकलनेवाली मांस की गति।
 मांस-वि०[सं० मांस+वच् (उत्पन्न होना)+इ] मांस से उत्पन्न होनेवाला।

सु० चरबी, जो मांस से उत्पन्न होती है।
 मांस-नेत्र (सु) —सु०[सं० तं] चरबी।
 मांस-भरा—स्त्री०[सं० तं] सुभूत के अनुसार शरीर की लम्बाई की बातचीत तह। स्फुकाप।
 मांस-पिंड—सु०[सं० तं] १. शरीर। देह। २. मांस का टुकड़ा या कोयड़ा।
 मांस-पिंडी—स्त्री०[सं० तं] शरीर के अन्तर रहनेवाली मांस की गांठ।
 मांस-पेशी—स्त्री०[सं० तं] शरीर के अन्तर होनेवाली झिल्ली तथा रेशों के आकार का मांस पिंडिका मुख्य रूप गति उत्पन्न करना होता है।
 पित्तोद्य—पक्षाघात रोग में किसी अंग की मांसपेशियाँ गति उत्पन्न करना बंद कर देनी हैं जिसके फलस्वरूप वह अंग हिलना-गुलना नहीं जा सकता।
 मांस-फल—सु० [सं० उपमि० सं०] तरबूज।
 मांस-भली (सिन्धु)—वि०[सं० मांस+भल् (खाना)+पिणित] मांस मानेवाला। मांसाहारी।
 मांसभोजी (सिन्धु)—वि० [सं० मांस+भुज् (खाना)+पिणित] मांसाहारी।
 मांस-मंभ—सु०[सं० सं० तं] उबाले या पकाये हुए मांस का रस। यकनी। शोरबा।
 मांस-योनि—सु०[सं० सं०] रक्त और मांस से उत्पन्न जीव।
 मांस-रज्जु—स्त्री०[सं० सं० तं] १. सुभूत के अनुसार शरीर के अन्तर होनेवाले लम्बे जिनसे मांस बंधा रहता है। २. मांस का रस। शोरबा।
 मांस-रस—सु०[सं० सं०] मांस का रस। शोरबा।
 मांसरोहिणी—स्त्री०[सं० मांस+रुह् (उत्पन्न होना)+पिच्, +पिणित, +कीप्] एक प्रकार का जंगली वृक्ष।
 मांसल—वि०[सं० मांस+लच्] [मांभ० मांसलता] १.(शरीर का कोई अंग) जो मांस से अच्छी तरह मल हो। २. जिसमें मांस या उसकी तरह के गुण की अधिकता हो। गुग्गुलु। (स्लेथी) ३. मोटा-ताजा। हृष्ट-गुष्ट। ४. बुढ़। पक्का। मजबूत।
 सु० १. गौड़ी रीति का एक गुण। २. उबड़।
 मांसलता—स्त्री०[सं० मांसल+तल्+टाप्] १. मांस से भरे होने की अवस्था या मात्र। २. बहुत अधिक मोटे-ताजे तथा हृष्ट-गुष्ट होने की अवस्था या मात्र।
 मांस-स्फित—सु०[सं० तं] हृदय।
 मांस-बिचकी (सिन्धु)—सु०[सं० मांस+वि+की+इति, उपपद सं०] १. वह जो मांस बेचता हो। कसान। २. वह जो धन के लोभ में अपनी सन्तान किसी के हाथ बेचता हो।
 मांस-मुक्ति—स्त्री०[सं० तं] शरीर के किसी अंग के मांस का बड़ जाना।
 जैसे—बेवा, फील पाँव आदि।
 मांस-समुद्रबहा—स्त्री० [सं० सं० सं०, +टाप्] चरबी।
 मांस-सार—सु०[सं० सं०] शरीर के अत्यंत भेद नामक जालु।
 वि० हृष्ट-गुष्ट। मोटा-ताजा।
 मांस-स्नेह—सु०[सं० सं०] चरबी। बहा।
 मांस-श्लास—सु०[सं० सं०, +टाप्] चमड़ा।

भासात्—वि० [स० मास √अत् (खाना) + क्विप्] जो मांस खाता हो। मांस भक्षण।

पु० राक्षस।

भासावन—पु० [मास-अवन, ष० त०] मास खाने की क्रिया या भाव।

भासावी (विन्)—वि० [स० भास+अत्+णिनि] भास खानेवाला। भासाहारी।

भासावि—पु० [मांस-अवि, ष० त०] अम्लबन्ध।

भासागंल—पु० [मांस-अगंल, ष० त०] गले में लटकनेवाला मांस।

भासावृद्धि—पु० [मांस-अवृद्धि, ष० त०] एक प्रकार का रोग जिसमें लिंग पर कुसियी निकल आती है। २ शरीर के किसी अंग में अचात लगने से होनेवाली वह सूजन जो पथर की तरह कड़ी हो जाती है और जिसमें प्रायः पीड़ा नहीं होती।

भासाशन—पु० = भासाशन।

वि० = भासाशी।

भासाशी (विन्)—वि० [स० भास+अत् (खाना) + णिनि] जो मांस खाता हो। भासाहारी।

पु० राक्षस।

भासापटका—स्त्री० [मांस-अपटका, मध्य० सं०] माघ कृष्णाष्टमी। इस दिन मांस से पिडदान करते हैं।

भासाहारी (रिन्)—वि० [म० मांस + आ+वृद्धि + णिनि] [स्त्री० भासा-हारीणी] मांस का भोजन करनेवाला। मांसभक्षी।

भासी—वि० [स० भाष] भाष अर्थात् उडड के रंग का।

पु० उक्त प्रकार का रंग जो उडड के दाने के रंग की तरह होता है।

भासी—स्त्री० [स० भास + अच् + डीप्] १. जटामामी। २. काफ़ीली। ३. चन्दन का तेल। ४. इलायची।

भासु—पु० = भास।

भासापटका—पु० [स० मध्य० सं०] एक तरह का पुलाव जिसमें मांस के टुकड़े भी डाले जाते हैं।

भासापकोषी (विन्)—वि० [स० भास+उप+जीष् (जीना) + णिनि] जिसकी जीविका मांस से चलनी हो। २ जो मांस बेचकर जीवन निर्वाह करता हो।

भाह—अव्य० [स० मध्य] मे।

भाहरा—सर्व०—हमारा। (राज०)

भाहा—अव्य०—माह (मे)।

भाहा, **भाही**—अव्य०—माह।

भाहिनि—पु० [हि० भाष (महीना)] भाष के महीने में होनेवाली वर्षा। उदा—नैन चर्बाई जस भाहिनि नीरू—जायसी।

भाह—पु० [?] सरसो, गोबी, मूली, शलजम, आदिमें लगनेवाला एक प्रकार का हल्के हरे पीले रंग का कीड़ा जिसके शरीर के पिछले भाग पर ऊपर की ओर दो छोटी छोटी नलियाँ रहती हैं। लाही।

भाह—अव्य०—माह।

भा—स्त्री० [स० √ भा + क्विप्] १. माता। माँ। २. लक्ष्मी। ३. ज्ञान। ४. प्रकाश। रोशनी। ५. बमक। लीपति।

अव्य० नहीं। मत। (निषेधाधिक)

पु० [अ० भा] १. पानी। २. अरक। जैसे—माउल्लहम।

भाह—स्त्री० = माह (माता)।

*स्त्री० = माया।

भाहक—पु० [अ०] = ध्वनिवर्षक।

भाहा—पु० = भायका।

भाहकीधोन—पु० [अ०] = ध्वनिवर्षक।

भाहट—पु० [?] ईस की पत्तियाँ खानेवाला एक तरह का कीड़ा।

भाह—स्त्री० [स० भाह] १. माता। २. देवी। ३. वैवाहिक अवसरों पर मानपूजन के काम आनेवाला एक तरह का छोटा पुआ।

†स्त्री० = भामा।

*स्त्री० [?] बेटी। पुत्री।

भाह—स्त्री० [स० भाह] १. माता। जननी। माँ। २. मातामुख्य विशेषतः कोई बूढ़ी स्त्री। ३. औरत। स्त्री।

पद—भाह का लाल—ऐसा व्यक्ति जो जोषिम, त्याग या बीरता-प्रदर्शन के लिए प्रस्तुत हो।

स्त्री० [देश०] एक प्रकार का वृक्ष और उसका फल जो भाजू में मिलता-जुलता होता है।

भाउल्लहम—पु० [अ० भाउल्लहम] हकीमी चिकित्सा में, दवाओं में गोखर मिलकर कीया हुआ अरक।

भाक—पु० [म० √ भा + क्विप् - भा -परिमित-कन्द, व० सं०] आम का वृक्ष।

†पु० = भागकद।

भाकडी—स्त्री० [स० भाकद] डोपू १. आंवला। २. पीला चन्दन। ३. एक प्राचीन नगरी।

भाक—वि० [स० मकर] अणु] १. मकर-सवधी। २. मकर से उत्पन्न।

भाकरा—स्त्री० [म० भाकर] टाट् मरुआ।

भाकरी—स्त्री० [स० भाकर] डोपू] माघ शुक्ल सप्तमी।

भाकल—स्त्री० [देश०] इद्रायन नामक लता।

भाकूल—वि० [अ० भाकूल] १. उचित। ठीक। वाजिब। २. यथेष्ट। ३. योग्य। लाजक। ४. उत्तम। अच्छा। बढ़िया।

पद—भा-भाकूल। (देश०)
५. जिसमें वाद-विवाद में प्रतिपक्षी की बात मान ली हो। जो निश्चर हो गया हो। कायल।

भाकूलियत—स्त्री० [अ० भाकूलियत] भाकूल होने की अवस्था या भाव।

भासिक—पु० [स० मसिका + अणु] १. शहद। मधु। २. सोना-मक्खी। ३. रूपा मक्खी। ४. लोहे या ताम्र के एक प्रकार का रासायनिक विकार। (गाइराइट)

वि० [स०] १. मसिका-मक्खी। २. मसिकियों द्वारा बनाया हुआ।

भासिकज—पु० [स० भासिक + अणु (उत्पन्न करना) + ङ] मीम।

भासिकाश्रय—पु० [स० भासिक+आश्रय, ष० त०] मीम।

भासीक—पु० [स० मसिका + अणु, नि० दीर्घ] = भासिक।

भाष—पु० [स० मस] १. अमृतसत। नाराजगी। २. अभिमान। घमंड। ३. पचापाप। पछतावा। ४. अपना अंगराध का दोष छिपाने का प्रयत्न।

भाषता—पु० = भाव। (देश०)

भाषना—पु० = मन्थन।

पथ—भासन चौर—धी दुष्ण ।
भासना—अ० [हि० भास] १. मन में अग्रसप्त वा दुःखी होना । २. लुब्ध होना । ३. पश्चात्सप कर्तव्य ।
भासा—ए० [हि० मन्त्री] नरमन्त्री ।
भासी—स्त्री० [सं० भासिक] सोमाभक्षणी ।
 †स्त्री०—मन्त्री ।
भासी—स्त्री० [हि० मन्त्र] १. लोगों में फैलनेवाली चर्चा । जनरव ।
 †स्त्री०—मन्त्र मन्त्री ।
भासथ—वि० [सं० भास+अथ्,] भासथ-सम्बन्धी ।
 ए० १. एक प्राचीन जाति जो मन्त्र के अनुसार वैश्य के वीर्य से शनिय कन्या के गर्भ से उत्पन्न है । २. भासथ के राजा जरासन्ध का एक नाम ।
 ३. जीरा । ४. पिप्पलीमूल ।
भासथक—ए० [सं० भासथ+कृञ्—अक] १. भासथ देश का निवासी ।
 २. भासथ । घाट ।
भासथ-पुर—ए० [सं० ए० तं०] भासथ की पुरानी राजधानी, राजगृह ।
भासाथा—स्त्री० [सं० भासथ+टाप्] १. भासथ की राजकुमारी । २. पिप्पली ।
भासथिक—वि० [सं० भासथ+ठक्—इक,] भासथ-सम्बन्धी । भासथ का ।
 ए० १. भासथ का राजा । २. भासथ का निवासी ।
भासथी—स्त्री० [सं० भासथ+अण्+ङीप्] १. भासथ देश की प्राचीन प्रसूत भासा । २. जूही । मूषिका । ३. चीनी । शम्कर । ४. छोटी इलायची । ५. पिप्पली ।
भासरभाठी—स्त्री०—मट-मैरा (विचाह की रस) ।
भागि—ए०—भाग्य ।
भागी—स्त्री० [?] ओरल । स्त्री । (प्रख)
भाग—ए० [सं० भागी+अण्] १. १०वाँ सौर भास ११वाँ चांद्रभास जो पूस के बाद और फागुन से पहले पड़ता है । २. संस्कृत के एक प्रसिद्ध महाकवि जो दूसरी १०वीं शती में हुए थे, और जिनका बनाया 'मिशुपाल बध' संस्कृत का एक प्रसिद्ध महाकाव्य है । ३. कुट का फूल ।
भागी—वि० [सं० भाग+अण्+ङीप्] भाग-सम्बन्धी ।
 स्त्री० भाग भास की पुणिभा । कलियुग का आरम्भ इसी तिथि से माना जाता है ।
भाग्य—ए० [सं० भाग+यत्] कुंठ का फूल ।
भाग—ए० [सं० भाग/अण्+क] भाग्य । रास्ता ।
 ए० [सं० मंच या हि० मचना ?] भास्त्रे में प्रचलित एक प्रकार का भाष्य अभिनय या लोक-नाटक जो बुल्ले मैदान में खेला जाता है । इसमें प्रायः भाग सगीत के द्वारा शाय्य जीवन की घटनाएँ दिखाई जाती हैं ।
 †ए०—मचान ।
भागना—अ०—मचना ।
 सं०—मचाना ।
भागल—ए० [सं० भाग/चल (चलना) +अण्] १. बह । २. बीमारी । रोम । ३. कौड़ी । बची । ४. चौर ।
 वि० [हि० मचलना] बहुत अधिक मचलनेवाला फलतः हठी ।
 †वि०—मचला ।

भाषा—ए० [सं० मञ्च] बैठने की पीढ़ी या बड़ी मचिया या खाट की तरह बुनी होती है । भाषा ।
भाषिका—स्त्री० [सं० भा/अण् (जना) +क+कन्+टाप्, इत्थ] १. मन्त्री । २. अगड़ा या आमड़ा नामक वृक्ष और उसका फल ।
भाषिसा—स्त्री० [अं० मीमेस] बीया-सडाई ।
भाषी—स्त्री० [सं० मंच] ? हल से का यूना । २. बेलगाड़ी में बैठे स्थान जहाँ गाड़ीवान बैठता और अपना सामान रखता है । ३. खाट की तरह बुनी हुई बैठने की पीढ़ी । मचिया ।
भाष—ए० [सं० मत्स्य] मछली विशेषतः बड़ी मछली ।
 †ए०—मच्छर ।
भाषर—ए० [सं० मत्स्य] मछली ।
 †ए०—मच्छर ।
भाषरी—स्त्री०—मछली ।
भाषी—स्त्री० [सं० मञ्जिका] मन्त्री ।
 †स्त्री०—मछली ।
 †स्त्री०—मछिया (बटुक की) ।
भाषा—ए०—भाजा ।
भाजन—ए०—मज्जन ।
भाजरा—ए० [अं० १. हाल । घटना । २. घटना का विवरण । ३. बोलचाल में, कोई विनिश्चित किन्तु अज्ञात बात (किसी की दृष्टि से) ।
भाबी—वि० [अ० भाबी] १. गुजरा या बीता हुआ । गत । ३. समय के विचार में मूलकाल से सबद्ध ।
 ए० व्याकरण में, मूलकाल ।
भाजू—ए० [फा०] १. एक प्रकार की झाड़ी जो यूनान और फारस आदि देशों में बहुमायत से होती है । २. उक्त झाड़ी का फल जो औषध के काम आता है । (हकीमी)
 †ए० [?] ऐसा बर या व्यक्ति जिसकी पहली विवाहिता स्त्री मर चुकी हो ।
भाजून—स्त्री० [अं०] १. हकीमी में, शहद, शम्कर, आदि के योग से बना हुआ दवाओं का अवलेह । २. उक्त प्रकार का वह अवलेह जिसमें भांग पीसकर मिलाई गई हो ।
भाजूफल—ए० [फा० भाजू। सं० फल] भाजू नामक झाड़ी का मोटा या गाँद जो औषधि तथा रँगई के काम आता है । मादा-फल ।
भाजूक—वि० [अ० भाजूक] १. अपदस्थ । २. पदच्छेद ।
भास—अध्य०, ए०—मौष (मथ्य) ।
 सर्व० [स्त्री० भासी] मेरा ।
भाट—ए० [हि० मटणा] १. रगरेजों के रघापोले का मिट्टी का बड़ा बरतन ।
भूहा—सं०—भाट बिगड़ जाना या बिगड़ना—(क) किसी का स्वभाव ऐसा बिगड़ जाना कि उसका सुधार असम्भव हो । (ख) किसी काम या बात का पूरी तरह से बिगड़कर नष्ट-व्यर्थ हो जाना ।
 २. दही रखने की मटकी ।
 ए० [देश०] एक प्रकार की वनस्पति जिसका व्यवहार तरकारी के रूप में होता है ।
भाटा—ए० [हि० मटा] लाल रंग का चूटा जिसके मुंह आम के पेड़ों पर रहते हैं ।

†पू०=मटका।

माटी—स्त्री०[हि० मिट्टी] ? मिट्टी। २. बैलौ के संबंध में, साल मार की जोतार्ई या उसकी मेहनत। जैसे—यह बैल चार माटी का चला है। ३. पथक तर्कों में से पृथ्वी नामक तर्क। ४. धरीर, जो मिट्टी का बना हुआ माना जाता है। ५. मूत धरीर। लास। शव।

माठ—पू०[हि० मटकी] मटकी।

†पू०[?] एक प्रकार की मिठाई।

माठर—पू०[म०/मद०+अरन्;अण्] १. सूर्य के एक पारिपार्षक की यम भागे जाते हैं। २. वेद-व्यास। ३. ब्राह्मण। ४. कलाल। कलवार।

†वि०=मटहर।

माठा—वि०[हि० मीठा] १. मधुर। २. मंथीर। ३. कंजूस। (हि०)

पू०=मठा या मटठा।

माथप्या—पू०[सं० मयू०+ध्रुपद] ध्रुपद का एक मेट।

माठी—स्त्री०[देग०] एक तरह की कपास।

माठ्ठी—पू०[हि० मिट्ठ] १. बबर। बानर। २. तोला।

वि० निर्वुद्धि। मूबं।

माइ—पू०[सं०] नाइ की जाति का एक पेड़।

†पू०=माइड़।

माइना—सं०[सं० मइन] १. मंडित करना। मूषित करना। २. धारण करना। पठना। ३. आदर-सम्मान करना। ४. मथाना। ५. मांडना। ६. मलना। मसलना। ७. रेटना।

अ० मूमाना-किरना। टहलना।

†अ०, सं०=माइना।

माइबां—पू०=मंडप।

माइा—वि०[सं० मद०] १. खराब। निकम्मा। २. दुबल धरीर का। दुबला-पतला। ३. बीमार। रोगी। ४. बहुत चौड़ा।

माइी—स्त्री० १=मंडप। २=माइडी।

माइ*—पू०[सं० मडप] चर के ऊपर का चौबारा जिसकी छत मडप जैसी होती है।

†पू०=मठा या मटठा।

माइी—स्त्री०[हि० मंडी] मचिया।

स्त्री मंडी।

माया—पू०=मान।

मायक—पू०[म०/मायू (पूजा)+क्य, +कन्, नि० ण्व०]मानकद।

मायना—अ०, म० १=माइना। २=माइना।

मायक—पू०[सं० मयू०+अण्, न=अण्, मूडि] १. मनुष्य। २. बालक। लड़का। ३. ऐसा हार जिसमें १६ लड़कें हों।

मायकक—पू०[सं० मायव; कन्] १. सोलह वर्ष की अवस्थावाला पुत्रक। २. तुच्छ या हीन व्यक्ति। ३. नाटा या बीना आद्यमी। ४. बालक। लड़का। ५. विद्यार्थी। ६. सोलह लड़क्यांकी मोतियों की माला।

मायकक-कीड़ा—पू०[सं० प०+तं] एक प्रकार का वर्षे वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में ऋमदा नगण, मण्य और दो ऋषु होते हैं।

मायक-बिद्या—स्त्री०[सं० प०+तं] जादू-टोना। तंत्र-मंत्र। (कौ०)

मायसा—पू०=मानुस (मनुष्य)।

†पू०=मानस।

मायिक—पू०=मायिक्य।

मायिक्य—पू०[सं० मयि+कन्+ण्व] १. लाल नामक रत्न। २. एक प्रकार का कला।

वि० सब से श्रेष्ठ।

मायिक्या—स्त्री०[सं० मायिक्य+टाप्] छिपकली।

मायिक्यं—पू०[सं० मयिक्-न्व; अण्] संथा नामक।

मायिक्यं—पू०[सं० मयिगं+अण्] संथा नामक।

मायिण्यं—पू० [सं० मयग;अण्] १. हाथी। २. घासल। ३. किरात आदि किसी अश्वय जाति का व्यक्ति। ४. एक ऋषि। ५. अश्वय। पीपल। ६. सबर्नक मेघ।

मायिणी—स्त्री०[सं० मायग; डीप्] १. पावती। २. वसिष्ठ की पत्नी। ३. चांडाल जाति की स्त्री। ४. दम महाविद्याजी में से एक। (तंत्र)

मात—वि०[अ०] १ जो मर गया हो। मरा हुआ। २. हारा हुआ। पराजित।

स्त्री० १. धातुर के खेल में बहू स्थिति जब कोई पक्ष वादाहक को मिलने-वाली दाह को न बचा सकता हो और इस प्रकार उसकी हार हो जाती हो।

मूहा—सं०=मात करना=(क) धातुर के खेल में विपक्षी की हारना। (ख) किसी गृण, कार्य या बात में किसी से बड़-बड़कर होना। मात खाना=(क) धातुर के खेल में हार होना। (ख) पराजित होना। २. पराजय।

वि० [सं० मत] मावाला। उदा०—मात निमत सब गरजहि बाँधे। —चापसी।

†स्त्री०=माता।

मातबिलि—वि०[अ० माजतबिल] ? (पदाय) जिसका गृण या तासोर न तो अधिक गरम हो और न अधिक ठंडी। समशीतोष्ण। २. जिसमें कोई बात आवश्यकता से अधिक या कम न हो। मध्यम प्रकृति का। सतुलित।

मातना*—अ०[सं० मत] १. मस्त या मग होना। २. नचे में चूर होना।

मातबर—वि०[अ० मीतबर] [भाव० मातवरी] जिसका एतबार किया जा सके। विश्वसनीय। विश्वस्त।

मातबरी—स्त्री० [अ० मीतवरी] मातबर अर्थात् विश्वसनीय होने की अवस्था या भाव। विश्वसनीयता।

मातम—पू०[सं०] १. मूतक का शोक। मूत्युषोक। २. मूत्यु शोक के कारण होनेवाला रोना-पीटना। ३. किसी बड़न बड़ी या अशुभ घटना का दुःख या शोक।

कि० प्र०—मताना।

मातम-मुर्खी—स्त्री०[फा०] मूतक के मरबियों के यहाँ जाकर प्रकट की जानेवाली सहानुभूति।

मातमी—वि०[फा०] १. मातम-संबंधी। २. शोकसूचक। जैसे—मातमी पीशाक। ३. मातम के रूप में होनेवाला। ४. मातम करनेवाला।

मातमूक—वि०[हि०] मूक।

मातरि-बुध— $\sqrt{\text{सं० स० तं}}$, विभक्ति का अलुक्। बहु जो अपनी माँ के सामने अपनी बीरता का बखान करे, पर बाहर कुछ भी न कर सके।
 मातरि-बुध— $\sqrt{\text{सं०}} \text{१. पवन। बायु। २. एक प्रकार की अग्नि।}$
 मातरि— $\sqrt{\text{सं० भस्त्र+इध्}} \text{ ईध का शारपी।}$
 मातरि-बुध— $\sqrt{\text{सं० व० स०}} \text{ ईध।}$
 मातहत— $\sqrt{\text{अं०}} \text{ [माव० मातृहृती] जो किसी के अधीन हो।}$
 १० अधीनस्थ कर्मचारी।
 मातहतवार— $\sqrt{\text{अं०+घा०}} \text{ जमीन का वह मासिक जो दूसरे बड़े मासिक के अधीन हो।}$
 मातहृती—स्त्री० [अं०] मातहत होने की अवस्था या भाव।
 माता (बु)—स्त्री० [सं०/मा० (पूजा)+तृच्, नि० न-लोप] १. जन्म देनेवाली स्त्री। जननी। माँ। २. आधरपीथ, पूज्य या बड़ी स्त्री।
 ३. प्राचीन भारत में देवदाओं की दृष्टि से बहु बूढ़ा स्त्री जो उनका पालन पोषण करती थी और उन्हें नाच-गाना आदि सिखाकर उनसे पेशा कराती थी। खाला। ४. वैभक्त या बीतला नामक रोग। ५. गी।
 ६. ज्वनी। भूमि। ७. विभक्ति। ८. लक्ष्मी। ९. इन्द्रवारणी।
 १०. जटासासी।
 वि० [सं० मत्] [स्त्री० माती] मरमस्त। मतवाला।
 मातामह— $\sqrt{\text{सं० मा०+माहहृच्}} \text{ [स्त्री० मातामही] किसी की माता का पिता। माता।}$
 मातृ*—स्त्री०=माता।
 मातुल— $\sqrt{\text{सं० मा०+तुलच्}} \text{ [स्त्री० मातुला, मातुलानी] १. माता का भाई। मामा। २. बहुरा। ३. एक प्रकार का धान। ४. एक प्रकार का साप। ५. मयन नामक वृक्ष।}$
 मातुला—स्त्री०=मातुलानी।
 मातुलानी—स्त्री० [सं० मातुल+ऊष्+आनुक्] १. मामा की स्त्री। मामी। २. माँग।
 मातुली—स्त्री० [सं० मातुल+ऊष्] १. मामा की पत्नी। मामी। २. माँग।
 मातुल्य— $\sqrt{\text{सं० मातुल+गृच्+णच्, गुप्, पृषो० सिद्धि}} \text{ विजोरा नीच्।}$
 मातुल्ये— $\sqrt{\text{सं० मातुली+ङक्—एय?}} \text{ [स्त्री० मातुलेयी] मामा का लड़का। मनेरा भाई।}$
 मातृ—स्त्री० [सं० दे० 'माता'] जननी। माता।
 मातृक्— $\sqrt{\text{सं० समाससिं}} \text{ १. माता-संबन्धी। माता का। २. माता के पक्ष से प्राप्त होनेवाला (अधिकार, व्यवहार आदि)। 'पितृक्' का विरुद्धार्थक। (मैट्रिआर्लक)}
 १०१. मामा। २. मनिहाक।
 † वि० सं० 'मासिक' का अशुद्ध रूप।
 मातृक-शिकर्ष— $\sqrt{\text{सं० मातृक+सिर्, व०त०, मातृक्+शिक्}} \text{ (काटना) + क, तुक्} \text{ परशुराम।}$
 मातृक-प्रवाली—स्त्री० दे० 'मातृ-संघ'।
 मातृका—स्त्री० [सं० मा०+कृत्+टाप्] १. जननी। माता। २. गी।
 ३. रूप मिलानेवाली शक्ति। भाव। ४. हौतेसी माँ। उपमाका।
 ५. तांत्रिकों की एक प्रकार की देविपत्नी जिनकी संख्या सात बहूी गई है।$

६. बर्नामाला की बारहहड़ी। ७. ठोड़ी पर की आठ विधिदत्त नमें।
 ८. बहु स्त्री जो लक्ष्मियों, वाद्ययों आदि के कामों की देख-रेख करती हो। (वेद्वन)
 मातृका-शब्द— $\sqrt{\text{सं० दे० 'अक्षर'कर्म}} \text{।}$
 मातृ-गण— $\sqrt{\text{सं० व० त०}} \text{ सात अक्षरा आठ मातृकाओं का गण या वर्ग।}$
 मातृ-शब्द— $\sqrt{\text{सं० व० त०}} \text{ मातृकाओं का समूह।}$
 मातृ-संघ— $\sqrt{\text{सं० व० त०}} \text{ कुछ प्राचीन जातियों में बहु सामाजिक व्यवस्था जिसमें गृही की स्वामिनी माता मानी जाती थी और वही घर-रूठ व्यवस्था थी करती थी। (मैट्रिआर्लक)}
 मातृ-नीर्षी— $\sqrt{\text{सं० मध्य० स०}} \text{ हथेली में छोटी डँगली के मूल का उधर हुआ स्थान। (ज्योतिष)}
 मातृश्व— $\sqrt{\text{सं० मा०+श्व}} \text{ मातृ या माता अर्थात् सतानवती होने की अवस्था पर या भाव। (सैतन्दिटी)}
 मातृ-वेश— $\sqrt{\text{सं० व० त०}} \text{ १. मातृभूमि। २. विशेषतः बिदेसों में जाकर बसे हुए लोगों की दृष्टि से उनके पूर्वजों की मातृभूमि।}$
 मातृ-शेष— $\sqrt{\text{सं० व० त०}} \text{ १. कातिकेय। २. महाकरज।}$
 मातृ-श्व— $\sqrt{\text{सं० व० त०}} \text{ किसी की माता के पूर्वजों का कुल या पक्ष। ननिहाल।}$
 मातृ-पुत्रा—स्त्री० [व० त०] विवाह के दिन में पहले छोटे-छोटे मिठे भूप बनाकर पितरों का किया जानेवाला पूजन।
 मातृ-श्व— $\sqrt{\text{सं० व० त०}} \text{ माता के संबंध का अथवा मातृ-पक्ष का कोई आशय।}$
 मातृ-भाषा—स्त्री० [व० त०] १. किसी व्यक्ति की दृष्टि से उसकी माँ द्वारा बोली जानेवाली भाषा जिसे वह माँ की गोद में ही सीखने लगता है।
 २. किसी व्यक्ति की दृष्टि से वह भाषा जो उसकी राष्ट्रियता के अन्य लोग बोलते हों।
 मातृ-भूमि—स्त्री० [व० त०] बहु स्थान या देश जिसमें किसी का जन्म हुआ हो, और इसी लिए उसे माता के समान प्रिय समझता हों।
 मातृ-संघ— $\sqrt{\text{सं० व० त०}} \text{ दोनों जातों के बीच का स्थान।}$
 मातृ-माता (बु)—स्त्री० [सं० व० त०] १. माता की माता। नानी। २. दुर्गा।
 मातृ-बुध— $\sqrt{\text{सं० व० स०}} \text{ हर काम या बात में माता का मुँह ताकनेवाला अर्थात् अडमति। मर्स।}$
 मातृ-श्व— $\sqrt{\text{सं० व० त०}} \text{ एक प्रकार का यज्ञ जो मातृकाओं के उद्देश्य से किया जाता है।}$
 मातृ-रिच्छ— $\sqrt{\text{सं० व० त०}} \text{ कलित ज्योतिष के अनुसार एक दीप जिसके काष्ठ्य प्रसक्त के उपरान्त माता पर संकट आता या उसके प्राण जाने का भय होता है।}$
 मातृ-वस्त्र— $\sqrt{\text{सं० व० त०}} \text{ कातिकेय।}$
 मातृ-शासित— $\sqrt{\text{सं० व० त०}} \text{ माता के शासन में ही ठीक तरह से रहनेवाला, अर्थात् मुर्ख।}$
 मातृ-ध्वस्त (बु)—स्त्री० [सं० व० त०] मौरी। माँ की बहन।
 मातृश्वेत— $\sqrt{\text{सं० मातृश्वत्+ङक—गय}} \text{ [स्त्री० मातृश्वेती] मौसिरा माँ।}$$$$

मातृसभा—स्त्री० [सं०] = मातृवत्र ।
 मातृ-सप्तमी—स्त्री० [सं० ष० तं०] सौतेली माता । विमाता ।
 मातृ-स्तव्य—पुं० [सं० ष० तं०] माँ का दण्ड ।
 मातृ-हृष्या—स्त्री० [सं० ष० तं०] १ माँ को मार डालना । (सैदिहाइ) २. माँ को मार डालने से लहनेवाला धनुष ।
 मात्र—अध्व० [सं०√मा (मान) +त्रप्] इस, इन या इतने में अधिक या बुरा नहीं । जैसे—(क) मात्र एक रथना मुझे मिला है । (ख) मात्र १५ आदमी वहाँ पहुँचे । (ग) मनु बचू रहे, मात्र बोलनेवाले अधिकारी-मण थे ।
 मात्रक—पुं० [सं० मात्र । कन्] १ वह निश्चित मात्रा या मान जिसे एक मानकर उसी के हिसाब से या मेल से अन्य चीजों की संख्या निर्धारित की जाय । इकाई । (युनिट) २. किसी मयूह की कोई एक वस्तु या अंग । ३. वह जिसकी मिस्र या स्वतंत्र सत्ता हो । (युनिट)
 मात्रा—स्त्री० [सं० मात्र + टाप्] १. लघाई, चौड़ाई, ऊँचाई, गहराई, दूरी, विलम्बा, गच्छा आदि जानने या निश्चित करने का परिमाण या साधन । २. कोई ऐसा मानक उपकरण या साधन जिससे कोई चीज तोड़ी या नापी-जोखी जाती हो । परिमाण या माप जानने का साधन । ३. किसी वस्तु का ठीक आयतन, तोल या नाप । परिमाण । ४. किसी पुरी या समूची इकाई का उनना अंश या भाग जितना अपेक्षित, आवश्यक या प्रस्तुत हो । जैसे—(क) वहाँ सभी पदार्थ बहुत अधिक मात्रा में रहे थे । (ख) दाल में नमक कुछ अधिक मात्रा में रह गया है । ५. औषध आदि का उतना अंश या परिमाण जितना एक बार में खाना जाना हो या खाया जाना अपेक्ष हो या उचित हो । ६. किसी चीज का नियत या निश्चित छोटा भाग । ७. उतना काल या समय जितना एक हल्लव अक्षर का उच्चारण करने में लगता है । ८. उच्चारण, समीत आदि में काल का उतना अंश जितना किसी विशिष्ट ध्वनि के उच्चारण में लगना है । ९. बारह-बकी लिलखने में वह स्तर सूचक चिह्न जो किसी अक्षर के ऊपर, नीचे या आगे-पीछे लगाता है । जैसे—ह्रस्व इ की मात्रा और दीर्घ ऊ की मात्रा । १०. समीत में उतना काल जितना एक स्वर के उच्चारण में लगता है । ११. समीत में ताल का नियत या निश्चित विभाग । जैसे—तीत मात्राओं का ताल, चार मात्राओं का ताल । १२. इन्द्रिय, जिसके द्वारा विषयों का ज्ञान होता है । १३. अंग । अवयव । १४. किसी वस्तु का बहुत छोटा कण या अणु । १५. आवृत्ति कण । १६. बल । शक्ति । १७. राजाओं के वैभव के सूचक घोड़े, हाथी आदि परिच्छद । १८. काम में पहनने का एक प्रकार का गहना ।
 मात्रा-मूच—पुं० [मन्थ० सं०] मात्रिक छन्द ।
 मात्रास्य—पुं० [सं० तं०, +त्रप्] एक प्रकार का छंद जिसके प्रत्येक चरण में १६ मात्राएँ और अत में गुरु होता है ।
 मात्रा-स्यो—पुं० [सं० तं०] विषयों के साथ इन्द्रियों का संयोग ।
 मात्रिक—वि० [सं० मात्रा +ठक्—इक] १ मात्रा-संबंधी । २. किसी एक इकाई से सम्बन्ध रखनेवाला । एकारमक । (युनिटरी) ३. जिसमें मात्राओं की गणना या विचार होता हो । जैसे—मात्रिक छन्द ।
 मात्रिक-छंद—पुं० [सं० कर्म० सं०] वह छंद जिसके चरणों की गणन मात्राओं का ध्यान रख कर की गई हो ।
 मात्सर्य—वि० [सं० मत्सर +अप्] मत्सर युक्त ।

मात्सर्य—पुं० [सं० मत्सर +अप्] मत्सर का भाव । ईर्ष्या । डाह ।
 मात्स्य—वि० [सं० मत्स्य +अप्] मछली-सम्बन्धी । मछली का ।
 १० एक प्राचीन श्राद्ध ।
 मात्स्य-गव्य—पुं० [सं० कर्म० सं०] ऐसी स्थिति जिसमें बड़ा या शक्ति-शाली छोटे या दुर्बल को उसी प्रकार मत्स्य कर देता है जिस प्रकार बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है ।
 मात्स्यिक—पुं० [सं० मत्स्य +ठक्—इक] मछली मारनेवाला । मछुआ ।
 वि० मत्स्य या मछली से सम्बन्ध रखनेवाला ।
 माया—पुं० = माया ।
 मायना—पुं० [सं०] = मयना ।
 माय-बन्धन—पुं० [हिं० माया । सं० बन्धन] १ सिर पर लपेटने या बाँधने का कागड । जैसे—पगडी, माका आदि । २. स्त्रियों की चोटों बाँधने की डोरी । चोटों । परोंडा ।
 माया—पुं० [सं० मल्लक] १ सिर का अगला भाग । मल्लक ।
 पद—माथा-पच्छी, माथा-पिटुङ्ग ।
 मयू०—(किसी के आगे या सामने) माया घिसना बहुत रीतता या नम्रनापूर्वक मिस्रता या न्यायमद करना । माया देकना = सिर मुकाकर प्रणाम करना । माया उठकना = (क) सिर में हलकी धमक या पीडा होना । (ख) लाक्षणिक रूप में, पहले से ही किसी दुर्घटना या बाधा होने की आशंका होना । माया रखना = दे० ऊपर 'माया घिसना' ।
 माये चड़ना = शिरोधार्य करना । (किसी) के माये डोका होना = कोई ऐसी विशेषता होना जिसके कारण महत्त्व या श्रेष्ठता प्राप्त हो ।
 माये पर बल रहना = आङ्गनि से अप्रसन्नता, रोष आदि प्रकट होना ।
 माये भाग होना = माययात्त होना । (कोई चीज किसी) के माये भारना = बहुत उपेक्षापूर्वक या तुच्छ भाव में देना । जैसे—वह गेज तपादा करता है, उसकी किताब उसके माये भारी ।
 २. ऐसा अकन या चित्र जिसमें केवल मनु और मन्त्रक बना हो, घड आदि शेष अंग विहाय गये हो ।
 विशेष—शेष मूहपदों के लिए देवे 'सिर्' के मुहा० ।
 ३. किसी पदार्थ का अगला और ऊपरी भाग । जैसे—नाव का माया ।
 मुहा०—माथा-मारना = जहाज का वायु के विपरीत जाय मारकर चलना । (संश०)
 पुं० [दे०] एक प्रकार का ग्रेमिनी कपडा ।
 माया-पच्छी—स्त्री० [हिं० माया +पचाना] किसी काम या बात के लिए बहुत अधिक बोलने या समझने-समझाने के लिए होनेवाला ऐसा परिश्रम जिससे जो ऊब जाय या शरीर थक जाय । सिर-पच्छी ।
 माथा-पिटुङ्ग—स्त्री० [स्त्री० माथा +पिटुङ्ग] १ दुग्ध आदि के समय अपना सिर पीटने की क्रिया या भाव । २. दे० 'माथा-पच्छी' ।
 मायुर—पुं० [सं० मयूर +अप्] [स्त्री० मयूराती] १. मयूरा का निवासी । २. मयूरा में रहनेवाले चतुर्भुजी ब्राह्मण । चौबे । ३. कायस्थों में एक जाति या वर्ग । ४. वैद्यों में एक जाति या वर्ग । ५. मयूरा शीर उमक आल-ताता का प्रदेश । बज-नबल ।
 वि० मयूरा-नववी । मयूरा का ।
 माये—क्रि० वि० [हिं० माया] मत्सरक पर ।
 अन्ध० = मत्स्ये ।

माषी—अव्य०=माषी ।

माष—**मू०** [सं०/मद् (मत्त होता)+षव्] १. जमिना । २. मत्तता । हर्ष । ३. मत्त । मत्तता ।

† **पू०** [?] छोट्टा रस्ता । (मत्त०)

माषक—**वि०** [सं०/मद्+म्वल्-अक] मत्त के रूप में होनेवाला । फलतः मत्ता जानेवाला । नशीला ।

पू० १. नशा उत्पन्न करनेवाला पदार्थ । जैसे—अफीम, मग, शराब आदि ।

२. प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र । कहते हैं कि इसके प्रयोग से शत्रु में प्रभाव उत्पन्न होता था । ३. एक प्रकार का हिरण ।

माषकता—**स्त्री०** [सं० माषक+तल्+टाप्] माषक होने की अवस्था या भाव ।

माषन—**पु०** [सं०/मष्+गिष्+त्सुद्-अन वृद्धि] १. मदन नामक वृक्ष । २. कामदेव । मदन । ३. लोभ । ४. धतूरा ।

वि०—माषक । उदा०—जैसे असंख्य मुकुली का माषन विकास कर जाता ।—प्रसाद ।

माषनी—**स्त्री०** [सं० माषन+ङीप्] १. मग । २. मदिरा । शराब । ३. नशा लानेवाली कोई चीज । उदा०—बिना माषनी का जग जीवन बिना चादनी का अबर ।

माषनीय—**वि०** [सं०/मष्+गिष्+अनीवर्] माषक । नशीला ।

माषर—**स्त्री०** [सं० मात् से फा०] माँ । माता ।

† **पू०**—मादल या मर्दल नामक बाजा । उदा०—मदिर बेगि संभारा माषर तर उछाह ।—जायसी ।

माषरजाव—**वि०** [फा०] १. जन्म का । जैसे—माषरजाव अंथा । २. जैसा जन्म के समय रहा हो, ठीक वैसा । जैसे—माषरजाव रंगा । ३. एक ही माता से उत्पन्न (दो या अधिक) । सगा । सहोदर ।

माषरिशा*—**स्त्री०**—मादर ।

माषरी—**वि०** [फा०] माता-संबंधी । माता का ।

माषल—**पु०** [सं० मर्दल्] पलायन की तरह का एक बाजा ।

माषा—**स्त्री०** [फा० माद] स्त्री जाति का जीव या प्राणी । जैसे—साँझ की मादा गाय कहलाती है ।

† **पू०**—माहा ।

माषिका—**वि०**—माषक ।

माषिकता—**स्त्री०**—माषकता ।

माषिना—**स्त्री०**—मादा ।

माषी—**स्त्री०**—मादा ।

माषिन—**स्त्री०**—मादा ।

माषा—**पु०** [अ० माद्] १. वह मूल तत्व या द्रव्य जिससे सारे संसार की सृष्टि हुई है । २. वह मूल पदार्थ जिससे कोई दूसरा पदार्थ बना हो ।

३. व्याकरण में शब्द का मूल या मूल्यवृत्ति । ४. वह गुण, तत्त्व, योग्यता अथवा पाषता जिससे मनुष्य कुछ करने-भरने या समझने-बुझने के योग्य होता है । ५. कोई में से निकलनेवाली पीब । मषाव । ५. किसी पीब के अन्तर मरा हुआ कोई पीब या विकार ।

माषी—**वि०** [अ०] १. मादा-सम्बन्धी । मादा का । २. भौतिक ।

वद् । ३. वैशाखी ।

४—४३

माषवरी—**स्त्री०** [सं०] १. राजा परीक्षित की स्त्री का नाम । २. पांडु की दूसरी पत्नी का नाम । माती ।

माडी—**स्त्री०** [सं० मद्र+अण्+ङीप्] मद्र देश के राजा की कन्या जो राजा पांडु से ब्याही नहीं थी, नकुल और सहदेव इसी के पुत्र थे ।

माद्येय—**पु०** [सं० माडी+उक्, इ—एय] माडी के पुत्र नकुल और सहदेव ।

माषव—**वि०** [सं० मष्+अण्] १. मष्-संबंधी । २. मष् श्रुतु संबंधी । ३. मष् रासत का (संज्ञक) ।

पू०[सं० ष० त०] १. कृष्ण । २. वैशाख । मास । ३. वसंत ऋतु । ४. महुआ । ५. काला उत्पन्न । ६. एक प्रकार का वृत्त जिसके प्रत्येक धरण में ८ अरण होते हैं । ७. एक प्रकार का राग जो मौरव राग के आठ पुणों में से एक माना गया है । ८. एक प्रकार का सकर राग जो मल्लार बिलावल और मट-नारायण के योग से बना है ।

माषवक—**पु०** [सं० माषव+भृष्-अक] महुए की शराब ।

माषविका—**स्त्री०** [सं० माषवी+कन्+टाप्, ह्रस्व] माषवी की स्त्री ।

माषवी—**स्त्री०** [सं० माषव+ङीप्] १. एक तरह का प्राचीन पेय पदार्थ जो मष् से बनाया जाता था । २. एक प्रतिष्ठ लता जिसमें सुगंधित फूल लगते हैं । ३. उन्नत लता के फूल । ४. संगीत में, ओषध जाति की एक रागिनी जिसमें गांधार और बैवत वजित है । ५. वाम नामक सबैया छन्द का एक मेट । ६. तुलसी । ७. दुर्गा । ८. कुटनी ।

हूती । ९. शहद की चीनी ।

माषवी-लता—**स्त्री०** [सं० मष्प० सं०] माषवी नामक सुगंधित फूलों की लता ।

माषवीवृषभ—**पु०** [सं० माषव-उडव, व० सं०] विरिनी का पेड़ ।

माषी—**पु०** [दिश०] एक प्रकार का राग ।

माषुक—**पु०** [सं० मष्क+अण्] १. मैन्यक नाम की बर्षा सकर जाती । २. महुए की शराब ।

माषुक—**वि०** स्त्री० [सं० मष्कुर+अण्] [स्त्री० माषुकरि] मष्कुर या मरी की तरह का ।

माषुपाकिक—**पु०** [सं० मष्पुर्क+ठक्-इक] वह पदार्थ जो मष्पुर्क देने के समय दिया जाता है ।

वि० १. मष्पुर्क-संबंधी । मष्पुर्क का । २. अतिथि को आदरपूर्वक दिया जानेवाला ।

माषुर—**पु०** [सं० मषुर। अण्] मल्लिका । चमेली ।

माषुरई—**स्त्री०**—मषुरता ।

माषुरता—**स्त्री०**—मषुरता ।

माषुरी—**स्त्री०** [सं० माषुर्य+ङीप्, य लोप] १. मषुर होने की अवस्था या भाव । मषुरता । २. मिठास । ३. मिठाई । ४. धराव ।

माषुर्य—**पु०** [सं० मषुर। व्यञ्ज्] १. मषुर होने की अवस्था या भाव । मषुरता । २. शोभा से युक्त सुन्दरता । ३. मिठास । ४. पाषाणी रीति के अन्तर्गत काव्य का एक गुण । ५. संगीत में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग ।

माषुषा*—**पु०**—माषव ।

माषी—**पु०**—माषव ।

माषी—**पु०**—माषव ।

शाम्भविन—**पु०** [सं० मष्प+विण्पु पुषी० नृष्] मष्पाह्ला । दोषहर ।

भाष्यविधि—स्त्री० [स० भाष्यदिन+डीप्] शुक्ल यजुर्वेद की एक शाखा।

भाष्यविधीय—पु० [सं० भाष्यदिन+छ-ईय] मारायण। परमेस्वर।

भाष्य-वि० [सं० मध्य+अण्] मध्य का। विचला।

पृ० १. कई संख्याओं आदि के जोड़ की गिनती की उन संख्याओं से भाग देने पर निकलनेवाला भाग-फल जो उन सब संख्याओं का मध्यम ममान सुचित करता है। बराबर का पड़ता। औद्यत। (एवञ्ज) उदाहरणार्थ यदि किसी विद्यालय की पहली कक्षा में ३०, दूसरी कक्षा में २५, तीसरी कक्षा में २०, चौथी कक्षा में १५ और पाँचवी कक्षा में १० विद्यार्थी हों तो सब मिलाकर १०० विद्यार्थी हुए। कक्षाएँ कुल ५ हैं, अतः १०० को ५ से भाग देने पर भाग-फल २० होगा। इस आधार पर कहा जायगा कि विद्यालय की प्रत्येक कक्षा में विद्यार्थियों का मध्य २० है। २. २० 'मध्यमान'।

भाष्यम-वि० [सं० मध्यम+अण् या मध्य+मन्] मध्यम का। बीचवाला।

पृ० १. वह तत्व जिसके द्वारा कोई क्रिया संपन्न होती हो, कोई परिणाम या फल निकलता हो अथवा किसी प्रकार का प्रभाव उत्पन्न होता हो। किसी क्रिया का मध्यवर्ती उपाय या साधन। २. वह माया जिसके द्वारा शिखा दी जाय। ३. कला के क्षेत्र में, वह पदार्थ जिसके आधार या सहायता से कोई कृति प्रस्तुत की जाय। ४. वह व्यक्ति जिसमें किसी अन्य व्यक्ति की आत्मा आकर कुछ समय के लिए ठहरनी और अपनी बातें, उत्तर आदि उसी व्यक्ति के द्वारा प्रकट करती या कहती हो।

भाष्यमिक-पु० [सं० मध्यम+ठक्-इक,] १. बौद्धों के महायान की दो शाखाओं में से एक शाखा (दूसरी शाखा योगाचार है) जिसका मत है कि सब पदार्थ शून्य से उत्पन्न होते हैं और अंत में शून्य हो जाते हैं। २. मध्य देश। ३. मध्य देश का निवासी।

वि०=भाष्य।

भाष्यमिक-शिखा—स्त्री० [कर्म० सं०] प्रारंभिक शिखा के उपरांत और उच्च शिखा के पहले दी जानेवाली शिखा। (सेकेडरी एजुकेशन) बिशेष—सूक्ष्म पाँचवी कक्षा से १०वी या ११वी कक्षाओं तक दी जानेवाली शिखा।

भाष्यस्व-पु० [सं० मध्य+स्वा (ठहरना)+ङ+अण्] १. मध्यस्व। विचरई। २. मध्यस्थता। ३. दलाक। ४. प्रेमी और प्रेमिका का हुतत्व करनेवाला व्यक्ति। कुटना। ५. विवाह करानेवाला ब्राह्मण। बरेली।

भाष्यार्कषण-पु० [सं० भाष्य-आकर्षण, कर्म० सं०] भौतिक विज्ञान में यह तत्त्व या सिद्धान्त कि पृथ्वी और उसके चारों ओर के आकाश या वातावरण में अितने पदार्थ हैं, वे सब पृथ्वी के केन्द्र की ओर आकृष्ट होते हैं—पृथ्वी का मध्यभाग या केन्द्र उन्हे अपनी ओर आकृष्ट करता है। प्रत्येक पदार्थ गिरने पर पृथ्वी की ओर आकृष्ट होता है, यह इसी भाष्यार्कषण का परिणाम है। (पैविटी)

भाष्यार्त्तक-पु० [सं० मध्यार्त्त+ऊज+इक,] ठीक भाष्यार्त्त के समय किया जानेवाला धार्मिक कृत्य।

भाष्यिक-वि० [सं०] २. मध्य-संबंधी। मध्य का। २. बीच में रहने या होनेवाला।

पु० किसी क्रम या श्रृंखला के ठीक बीच का वह बिंदु जिसके उपर और नीचे दोनों ओर गिनती के विचार से बराबर इकाइयाँ हो। (मीडियम) जैसे—१, २, ३, ४ और ५ में ३ भाष्यिक है।

भाष्य-वि० [सं० मध्य+अण्] १. मधुर्निमित। २. वसत-संबंधी। पृ० १. विष्णु। २. कृष्ण। ३. वसत। ४. बंशाल। ५. मध्याह्नम द्वारा बसाया हुआ एक वैष्णव सम्प्रदाय। ६. महुए का पेड़। ६. काला मृग।

भाष्यक-पु० [सं० भाष्यीक, पृथो० ई-अ] महुए की शाखा।

भाष्यिक-पु० [सं० मधु+ठक्-इक, वृद्धि] वह जो मधु-मक्षिकियों के छतों में से शहद इकट्ठा करने का काम करता हो।

भाष्यी-स्त्री० [सं० मधु+अण्+डीप्] १ एक तरह की लता जिसमें सुगंधित फूल लगने हैं। माधवी लता। २. महुए की शराब। ३. नदिरा। शराब। ४. पुराणानुसार एक नदी का नाम। ५. मधुर कटक नामक मछली। ६. वाम नामक छद।

भाष्यीक-पु० [सं० भाष्यी+कण्] १ महुए की शराब। २. दाक्ष की शराब। ३. मकदद। ४. सेम।

भाष्यीका-स्त्री० [सं० भाष्यीक+टाप्] सेम।

मान-शिल-वि० [सं० मन शिल+अण्] १ मन शिला या मैनशिल सम्बन्धी। २. मैनशिल के रत्न में रत्ना हुआ।

मान-पु० [सं० व्+मान् (द्वजा)+घञ्] १. प्रतिष्ठा। सम्मान। इज्जत।

पव-मान-महल, मान-हासि।
मूहा-वि० (किसी का) मान रखना ऐसा काम करना जिससे किसी की प्रतिष्ठा बनी रहे।
२. अपनी प्रतिष्ठा या सम्मान अथवा गौरव का उचित अभिमान या ध्यान। आत्म-गौरव या आत्मप्रतिष्ठा का मन में रहनेवाला भाव या विचार। ३. अनुचित आर निदनीय रूप में होनेवाला अभिमान। घमण्ड। शेखी।

मूहा-वि० (किसी का) मान मचना -- अच्छी तरह दबाकर या पीड़ित करके अभिमान और प्रतिष्ठा नष्ट करना।

४. मन में होनेवाला विकार जो अपने प्रिय व्यक्ति को अनुचित तथा उपेक्षासूचक आचरण करते हुए देखकर होता है, और जिसके फलस्वरूप उस व्यक्ति के प्रति उदासीनता होने लगती है। रुझने की क्रिया या मान।

बिबोध-विश्वार्थ प्राय इयंविचल अपने पति या प्रेमी के प्रति रुठे हुए होने का जो भाव व्यक्त करता है, साहित्य में विशिष्ट रूप से बही मान कहलाता है।

पव-मान-मोचन।

मूहा-मान मनाना—रुठे हुए व्यक्ति का मान हूर करके उसको मनाना। मान मोचन—मान का त्याग करना। रुठा न रहना।

पुं० [सं० व्+मा (मानन)+भ्यृट्-अन] १. मानने या नापने की क्रिया या भाव। २. मापने या नापने पर ज्ञात होनेवाला परिमाण। माप-फल। ३. वह मापक द्रव या पात्र जिसके द्वारा कोई चीज तौली या नापी जाती है। तौल, नाप आदि जानने का साधन। जैसे—गज, सेर आदि। ४. ऐसा काम या बात जिससे कोई चीज या बात प्रमाणित अथवा सिद्ध हो जाती हो। ५. तुल्यता। समानता। ६. किसी काम

या बात के संबंध में ऐसी योग्यता या शक्ति जिससे वह काम या बात पूरी उतर सके या उस पर ठीक तरह से बहा चक सके। जैसे—यह काम उनके मान का नहीं है, अर्थात् इस काम के लिए जिस योग्यता या शक्ति की अपेक्षा है, उसका उनमें अभाव है।

मुहूर्त—(किसी की) भाग रहना—किसी के आशय में या भरोसे पर रहना। किसी के बल या सहारे पर अच्छी तरह जीवन-निर्वाह करना या समय बिताना। जैसे—यदि आज उन्हें कुछ हो जाता तो मैं किसके नाम धिन बितानी ? (निर्वात)

७. पुष्कर द्वीप का एक पर्वत। ८. उत्तर दिया का एक देश। ९. ग्रह। १०. मंत्र। ११. संयुक्त शास्त्र के अनुसार ताल में का विराम जो सम, विषम, जतीत और अनागत चार प्रकार का होता है।

मानक—पुं० [सं० मध्य + क० ?] १. एक तरह का कंठे। मान कण्ठ। २. साहित्य मिथी नामक कद।

मानक—पुं० [सं० मान + क०] मान कण्ठ। मान कंद।

पुं० [सं० मान से] विविध वस्तुओं के आधार, प्रकार महत्त्व आदि वर्णन का कोई आधिकारिक आदर्श, मानदंड या रूप। (स्टैंडर्ड)

मानक काल—पुं० [सं०] दे० 'मानक समय'।

मान कण्ठ—पुं०=मानकंद।

मानकित—पुं० क० [हिं० मानक से] मानक के रूप में किया या लाया हुआ। (स्टैंडर्डिज्ड)

मानक समय—पुं० [सं०] दिन-रात आदि के समय का वह विभाजन जो किसी क्षेत्र या देश में आधिकारिक रूप से मानक माना जाता हो। (स्टैंडर्ड टाइम)

मानकीकरण—पुं० [सं० ?] एक ही प्रकार या वर्ग की बहुत सी वस्तुओं के गुण, महत्त्व आदि का एक मानक रूप स्थिर करने की किया या भाव। (स्टैंडर्डिजेशन) जैसे—बटलरो का मानकीकरण, जको का मानकीकरण।

मानकहू—पुं० [सं० व० त०] १. प्राचीन राजमहलों में बहु कचरा जिसमें राजा से कड़ी हुई रानी मान करके बैठती थी। २. साहित्य में बहु स्थान, जहाँ पर नायिका मान करके बैठती हुईं हो।

मान-चित्र—पुं० [सं० व० त०] किसी चित्र पर किया हुआ रेखाओं का ऐसा अंकन जिसमें किसी भू-भाग की नदियों, पहाड़ों, नगरों आदि के स्थान, विस्तार आदि दिखाये गये हों। किसी स्थान का बना हुआ नक्शा। (मैप) जैसे—एशिया का मानचित्र।

मान-चित्रक—पुं० [सं०] वह जो मानचित्र बनाता या मान-चित्रण करता हो।

मान-चित्रक—पुं० [सं०] मानचित्र अर्थात् नक्शे बनाने की कला या विद्या। (मैपिंग)

मानचित्रांकन—पुं० [सं० मानचित्र-अंकन, व० त०] मानचित्र बनाने और रेखाचित्र अंकित करने की कला या विद्या।

मानचित्रांकनी—स्त्री० [सं० मानचित्र-आकली, व० त०] पृथ्वी, वृक्षों, देशों, प्रांतों आदि के भौगोलिक चित्रों का पुस्तकाकार समूह। मानचित्रों का संकलन या संग्रह। (एटलस)

मानक—पुं० [सं० मान/व० (उत्पत्ति) + क०] कौष।

वि० मान से उत्पन्न।

मानसक—पुं० [सं० मध्य + सं०] श्लेषापत्न्या।

मानसा—स्त्री०—अमनीती।

वि० व०—उदात्ता।—षडाना।—मानना।

मान-बंध—पुं० [सं० व० त०] १. मान नापने का कोई उपकरण। २. काशमिक रूप में कोई देश कल्पित परिभाषा जिससे दूसरी बातों का महत्त्व या मूल्य ज्ञात जाता हो।

मान-व०—पुं० [सं० मान/व० (देश) + क०] विष्णु।

वि० मान या प्रतिष्ठा देने या बढ़ानेवाला।

मान-वेश—पुं० [सु-सुपा सं०] किसी काम या सेवा के बदले में आदरपूर्वक दिया जानेवाला धन। (आनरैरियम)

मान-धन—पुं० [ब० सं०] १. वह जो अपने मान या प्रतिष्ठा को सबसे अधिक मूल्यवान् समझता हो। आत्म-सम्मान का ध्यान रखनेवाला। २. अस्मिता। धर्मवी।

मानधाता—पुं०—मांभाता (एक पूर्ववर्षी राजा)।

मान—पुं० [सं० व० मान + स्वरुप—अन] १. मान करने की किया या भाव। २. आदर या सम्मान करना।

मानना—अ० [सं० मानन] १. मन से यह समझ लेना कि जो कुछ कहा या किया गया है, अथवा जो कुछ प्रस्तुत है वह उचित है। ठीक समझकर अंगीकृत या महीत करना। जैसे—मैं मानता हूँ कि इसमें आपका कोई दोष नहीं है। २. मन में किसी प्रकार की धारणा या विचार स्थिर करना। जैसे—आप तो बरा ही बात में बुरा मान गये। ३. किसी प्रकार की आज्ञा, आदेश, विधान आदि को ठीक समझकर उसके अनुरूप आचरण या व्यवहार करना। जैसे—वह सीधी तरह से नहीं मानेगा।

सं० १. किसी बात को अंगीकृत, ग्रहण या स्वीकार करना। जैसे—किसी की बात मानना। २. किसी काम, बात या विषय के सम्बन्ध में तर्क के निर्वाह के लिए कुछ समय के लिए वस्तु-स्थिति के विपरीत कामना करना। जैसे—मान लीजिए कि उसने आकर आपसे सभा मींग ली, तो फिर क्या होगा ? ३. किसी को मूल्य या श्रेष्ठ समझकर उसके प्रति मन में आदर, श्रद्धा या विश्वास रखना। जैसे—जार्ज-समाजी हो जाने पर भी वे सतानत धर्म की बहुत सी बाने मानते थे। ४. किसी को विशिष्ट रूप से गुणी, योग्य या समर्थ समझना। जैसे—(क) मैं तो उसे बहुआदर मानूंगा जो यह काम पूरा कर दिखलावे। (दूरव) (ख) ऐसे ऐसे हैं जो लोगों को मैं कुछ नहीं मानता। ५. किसी प्रकार के आचरण, विधान आदि को निर्वाह या पालन के योग्य समझना और उसका अनुसरण करना। जैसे—(क) किसी का अनुसरण या आग्रह मानना। (ख) जन्माष्टमी या शिवरात्रि मानना। ६. अतीती या मगत के रूप में प्रतिष्ठा या संकल्प करना। जैसे—(क) काली जी को बकरा मानो तो लड़का जल्दी अच्छा हो जायगा अर्थात् काली जी के सामने बकरे के बलिदान की प्रतिष्ठा या संकल्प करतीतलड़का जल्दी अच्छा हो जायगा। (ख) मैंने हनुमान जी को सवा मेरे लड़कू माना है, अर्थात् वह संकल्प किया है कि अमुक काम हो जाने पर सवा से लड़कू चढ़ाऊंगा।

७. भ्रुंगारिक क्षेत्र में, किसी के प्रति यथेष्ट अनुराग या प्रेम रखना। किसी पर आसक्त होना। जैसे—दुर्बलचित्त निर्वाण कभी एक को मानती है तो कभी दूसरे को मानने लगती है। (बाबाक) ८. सहान करना। सहान। इतरे—उपगत दोष नैर्ण नति सुसत, रवि की किरण उज्ज्व

न मानत।—सूर। १ किसी बात या स्थिति को अपने लिए अनुकूल, ठीक या हितकर समझते हुए शांति और मुकुपूर्वक रहना। जैसे—मुकुते या बिल्की का पोस मानना। उदा०—कर्मर् मन बिसाम न मान्यो—मुकुली।

मानवीय—वि० [सं० √मान् + अन्यायर्] जिसका मान-सम्मान करना आवश्यक तथा उचित हो। आदर्शीय।

पू० बड़े लोगों के नाम या पद के पहले उपाधि के रूप में प्रयुक्त पद। (आनन्दबुल) जैसे—मानवीय मंत्री महोदय।

मानव्य—पु० [ब० तं०] बहु पत्र जो किसी का आदर या सम्मान करने के लिए उसे भेंट किया जाता है और जिसमें उसके सत्कार्यों, सन्पूर्णा आदि की स्तुति रहती है। अमिनन्दन-पत्र।

मान-वरेणा—पु० [हि०] १ मन में होनेवाला मान-अपमान आदि का विचार और अपमान के कारण होनेवाला क्षोभ। २. आशा। भरोसा। मानपात—पु०—मानवक।

मान-भाव—पु० [ब० तं०] १ वह अवस्था जिसमें कोई मान करके या रुठकर बैठता हो। २. चोचला। नजर।

मान-बंधि—पु० [सं० तं०] १ दे० 'मानगृह'। २. वह स्थान जिसमें दंडों आदि का बंध करने के यंत्र तथा सामग्रियों। बंधशाला।

विशेष—जयपुर के महाराज मानसहने के काशी, दिल्ली, उज्जैन आदि में अपने नाम पर कुछ बंधशालाएँ बनवाई थीं, उन्हीं के आधार पर अब बंधशाला मान को (मान-बन्धि) कहने लगे हैं।

मान-बनौअस—स्त्री० [हि०] मान—अभिमान + मनाना] रुठकर बैठनेवाले या रुठे हुए को मनाने की क्रिया या भाव।

मान-बनौती—स्त्री० [हि०] मान + मनौती] १ मानता। मनौती। २. पारस्परिक प्रेमपूर्ण सम्बन्ध। ३. दे० 'मान-बनौअस'।

मान-बनौर—स्त्री० दे० 'मन-मुटाव'।

मान-बहनु—वि० [ब० सं० ?] बहुत बड़ा अभिमान या घमंडी।

मान-बहनु—पु० [सं०] मान-मखल] प्रिष्टता और बडपन।

मान-बीचन—पु० [ब० तं०] साहित्य में, मान करनेवाले प्रिय को मनानकर या समझा-बुझाकर उसका मान छुड़ाना, और उसे अपने प्रति प्रसन्न करना।

मान-रंझा—स्त्री० [सं०] ब० सं० + टाप्] आश्रीन काल की जल-पट्टी जिसका व्यवहार समय जानने के लिए होता था।

मानव—वि० [सं०] मनु + अण्] मनु से संबंधित अथवा उससे उत्पन्न। पु० १. मनुष्य। २. मनुष्य जाति। ३. १४ मात्राओं के छन्दो की संज्ञा। इनके ६१० मंत्र हैं।

मानवक—पु०—माणवक।

मानवत्—पु० [सं०] मान + मनु, म—व] [स्त्री०] मानवती] रुठता हुआ।

मानवता—स्त्री० [सं०] मानव + तल् + टाप्] १. मनुष्य जाति। २. मानव होने की अवस्था या भाव। ३. मनुष्य के आदर्श तथा स्वामाविक गुणों, भावनाओं आदि का प्रतीक या समूह।

मानवता-वाद—पु० [ब० तं०] [वि०] मानवतावादी] बहु लौकिक सिद्धान्त जिसमें यह माना जाता है कि संसार के सभी मनुष्यों का समान रूप में कल्याण होना चाहिए और सबको उन्नत करके समुत्त तथा सुखी स्थिति की व्यवस्था होनी चाहिए। (छात्रनिरुप)

मानवतावादी (विष्) —वि० [सं०] मानवतावाद + इनि] मानवतावाद-सम्बन्धी। (छात्रनिरुप)

पु० वह जो मानवतावाद के सिद्धान्तों का अनुयायी और पोषक या समर्थक हो। (छात्रनिरुप)

मानवती—स्त्री० [मानव + टाप्] साहित्य में वह नायिका जो नामक से रुच्य या असंयुक्त होने पर मान करनी हो या मान करके बैठती हो।

मानव-बेच—पु० [सं०] ब० तं०] राजा।

मानव-पति—पु० [सं०] ब० तं०] राजा।

मानव-भूषोली—पु० [सं०] भूषोल शास्त्र का वह अंग जिसमें इन बात का विवेचन होता है कि प्राकृतिक और भौगोलिक परिस्थितियों का मानव जाति पर क्या प्रभाव पड़ता है। (एन्थ्रोपोजिअग्रफी)

मानव-बन्धि—वि० [सं०] तं०] जिसका कुछ भी मान या प्रतिष्ठा न हो अर्थात् मुच्छ या नीच।

मानव-विज्ञान—पु०—मानव-शास्त्र।

मानव-अपार—पु० [ब० तं०] मनुष्यों को बेचने-खरीदने का काम।

मानव-शास्त्र—पु० [ब० तं०] १ मनुष्यों की उत्पत्ति, उनकी जातियों, उनके स्वभावों आदि का विवेचन करनेवाला शास्त्र। (एन्थ्रोपॉलोजी) २. अर्थशास्त्र, इतिहास, दर्शन, पुरातत्त्व, मनोविज्ञान, राजनीति, मनोचि, संस्कृति, साहित्य आदि से सम्बन्ध रखनेवाले वे सभी शास्त्र जो मुख्यतः मानव जाति की उत्पत्ति, विकास आदि में महायुक्त होते हैं। (छात्रनिरुप)

मानव-शास्त्री (विज्ञान) —पु० [सं०] मानवशास्त्र + इनि] मानव-शास्त्र का ज्ञाता या पंडित। (एन्थ्रोपॉलोजिस्ट)

मानव-शास्त्रीय—वि० [सं०] मानवशास्त्र + छ—इय] मानव-शास्त्र-संबन्धी। (एन्थ्रोपॉलोजिकल)

मानवाचल—पु० [सं०] मानव-अचल, मध्य० सं०] पुराणानुसार एक पर्वत।

मानवी—स्त्री० [सं०] मानव + टाप्] १. मानव जाति की स्त्री। नारी। २. पुराणानुसार स्वयंभुव मनु की कन्या का नाम।

वि०—मानवीय।

मानवीकरण—पु० [सं०] मानव + क्वि, इत्, दीर्घ, √ क् + ल्युट्—अन] १. किसी वस्तु को मानव अर्थात् मनुष्य का रूप देने की क्रिया या भाव। मानवीकरण। (छात्रनिरुप) जैसे—कथा कहानियों में पशु-पक्षियों आदि का होनेवाला मानवीकरण। २. कला, धर्म आदि के क्षेत्र में, यह मानकर कि पदार्थों में राग-द्वेष आदि मानव गुण होते हैं, उन्हें मानव के रूप में कल्पित और प्रस्थापित करना।

मानवीय—वि० [सं०] मानव + छ—इय] १. मानव-सम्बन्धी। मानव या मनुष्य का। २. मनुष्योचित। (छात्रनिरुप)

मानव्य, मानव्य—पु० [सं०] मानव-व्यं, मानव-व्यं, ब० तं०] राजा। मानस—वि० [सं०] मानस + अण्] १. मन से उत्पन्न। मनोभव। २. मन में सोचा या विचारता हुआ। जैसे—मानस विच।

कि० वि० मन के द्वारा। मन से।

पु० १. आधुनिक मनोविज्ञान में, मनुष्य की वह आंतरिक सत्ता जिसमें अनुभूतियाँ, विचार और सचेतनएँ होती हैं। इन्हीं का सबसे अधिक चेतन, परिचित तथा प्रत्यक्ष 'रूप' चेतना कहलाता है। मन। (माइंड)

विशेष—इसके अन्वेषण, अवचेदन, अर्थ-चेदन आदि कुछ और अर्थ या पक्ष भी माने गये हैं।

२. मन में होनेवाला संकल्प-विकल्प। ३. मानसरोवर। ४. काम-वेद। ५. अतीत में एक प्रकार का राग। ६. आसनी। मनुष्य। ७. चर। हत। शाल्मली द्वीप का एक बर्ष। ९. पुष्कर द्वीप का एक पर्वत।

मानसशास्त्री (रिन्)— $\sqrt{\text{सं}} \text{मानस्/वर्}$ (गति) + [गिनि] मानसरो-
वर के आसपास रहनेवाला हस्त।

मानसता—स्त्री० [सं०] १. मन का भाव या स्थिति। २. वह विशेष स्थिति या वृत्ति जिसके बराबरी होकर मनुष्य किसी कार्य या विचार में प्रयुक्त होता है। मनीवृत्ति। (मेन्टैल्टी)

मानस-तीर्थ— $\sqrt{\text{सं}} \text{कर्म० सं०}$ [सं०] ऐसा मन जो राग, द्वेष आदि से बिल्कुल रहित हो गया हो।

मानस-गुण— $\sqrt{\text{सं}} \text{कर्म० सं०}$ [सं०] वह सन्तान जिसकी उत्पत्ति मात्र इच्छा से हुई हो या शारीरिक संयोग से न हुई हो। जैसे—सतक आदि ब्रह्मा के मानस-गुण कहे जाते हैं।

मानस-गुणा—स्त्री० [सं०] कर्म० सं० पूजा के दो प्रकारों में से वह जिसमें मन से ही सब कृपा किये जाते हैं लौकिक उपचारों या साधनों का सहारा नहीं लिया जाता।

मानसतर— $\sqrt{\text{सं}} \text{मानसरोवर}$ ।

मानसरोवर— $\sqrt{\text{सं}} \text{मानस-सरोवर}$ १. तिब्बत के क्षेत्र में एक प्रसिद्ध झील जो कैलास पर्वत के नीचे है और जो बहुत पवित्र तथा बड़े तीनों में मानी जाती है। २. हठयोग में, सहस्रार चक्र जिसके कैलास की कहते हैं और इसी दृष्टि से जिसमें उस मान-सरोवर की भी कल्पना की गई जिसमें निश्चित चित्त-स्वी हस्त विहार करता है।

मानस-विज्ञान— $\sqrt{\text{सं}} \text{कर्म० सं०}$ [सं०] वह विज्ञान या शास्त्र, जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि मनुष्य का मन किस प्रकार अपने काम करता है। (मेन्टल साइन्स)

मानस-अश्रु— $\sqrt{\text{सं}} \text{मध्य० सं०}$ [सं०] अहसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य आदि बात जिनका पालन मन से ही होता है।

मानस-शास्त्र— $\sqrt{\text{सं}} \text{मध्य० सं०}$ मनीविज्ञान।

मानस-सन्ध्यासी (सिन्)— $\sqrt{\text{सं}} \text{कर्म० सं०}$ दसनामी सन्ध्यासियों का एक उपभेद।

मानस-सर (स)— $\sqrt{\text{सं}} \text{कर्म० सं०}$ मानसरोवर।
मानस-संस— $\sqrt{\text{सं}} \text{कर्म० सं०}$ एक प्रकार का वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में 'स ज य म र' होता है। इसे 'मानसहंस' तथा 'रघहंस' भी कहते हैं।

मानसात्म्य— $\sqrt{\text{सं}} \text{मानस-आत्म्य, ब० सं०}$ हंस।

मानसिक—वि० [सं०] मानस् + ठक्—इक १. मन की कल्पना से उत्पन्न। २. मन से होने या मन से सम्बन्ध रखनेवाला। जैसे—मानसिक रोगी, मानसिक कष्ट। ३. जिसमें शोच-विचार तथा मनन की अधिक अपेक्षा हो। (शारीरिक से मित्त) जैसे—मानसिक कार्य।
 $\sqrt{\text{सं}} \text{विष्णु}$ का एक नाम।

मानसिक चिकित्सात्म्य— $\sqrt{\text{सं}} \text{कर्म० सं०}$ वह चिकित्सात्म्य जहाँ पर मानसिक रोगियों का उपचार किया जाता है। (मेन्टल हॉस्पिटल)

मानसिकी—स्त्री०—मानस-विज्ञान। (मनीविज्ञान)

मानसि—स्त्री० [सं०] मानस् + डीप् १. वह पूजा जो मन ही मन की जाय। मानसपूजा। २. एक विद्या देवी का नाम।

वि०—मानसिक।

मानसी-नीमा—स्त्री० [सं०] इज में शोचर्षण पर्वत के पास का एक सरोवर। मानसून— $\sqrt{\text{सं}} \text{सं० सं० तं०}$ करवनी।

मानसून— $\sqrt{\text{सं}} \text{सं० सं० तं०}$ 'मानसून'।
मान-संस— $\sqrt{\text{सं}} \text{सं० सं० तं०}$ एक प्रकार का बर्ण-वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में 'स ज य म र' होते हैं।

मान-हानि—स्त्री० [सं० सं० व० सं०] १. कोई ऐसा काम या बात जिसमें किसी का अपमान या अप्रतिष्ठा होती हो और जो सामाजिक आदि दृष्टियों से अनुचित और निन्दनीय हो। २. इस प्रकार होनेवाली मानहानि। (डिपेमेघान)

मानहृत्—अव्य०—मानो।

मानकन— $\sqrt{\text{सं}} \text{दे०}$ 'पूयकन'।

माना— $\sqrt{\text{सं}} \text{इव०}$ कुछ विविष्ट प्रकार के वृशो, बाँसों आदि का गोंद या निर्पित्त जो चिकित्सा के काम आता है। मन्ना।

*सं० [सं०] मान १. मानना, मापना या तोलना। २. जाँचना।
 $\sqrt{\text{सं}} \text{अत्र}$ आदि मापने का पात्र।

†अ०—अमाना।

मानाथ— $\sqrt{\text{सं}} \text{सं० सं० तं०}$ लक्ष्मी के पति। विष्णु।

मानाथिच्छेद— $\sqrt{\text{सं}} \text{सं०}$ किसी बड़े अधिकारी या प्रधान व्यक्ति के अधि-कारारूढ़ होने की क्रिया अथवा उससे सम्बन्ध रखनेवाला समारोह। (इन्वेस्टिचर)

मान-मथ— $\sqrt{\text{सं}} \text{महता-मथन}$ ।

मानिध—वि० [सं०] सदुष।

†वि०—माननीय या मान्य।

मानिक— $\sqrt{\text{सं}} \text{सं० भागिक्य}$ १. लाल रंग के एक मणि का नाम। कुशविंश। पथराय। २. आठ पल की एक पुरानी तोल।

मानिक-अंस— $\sqrt{\text{सं}} \text{हि० मानिक। सं०}$ १. वह सूँटा जो कातर के किनारे गड़ा रहता है। मरलम्प। २. विवाह के समय मरुप के बीच में गाड़ा जानेवाला सं०। ३. दे० 'मालसंस'।

मानिकचंदी—स्त्री० [हि० मानिकचंद] एक तरहू की छोटी सुपारी।

मानिक-बोध— $\sqrt{\text{सं}} \text{हि० मानिक। बोध}$ एक प्रकार का बगला जिसकी शींघ और टोंगें अधिक लंबी होती हैं।

मानिक रेत—स्त्री० [हि० मानिक + रेत] मानिक का बूट जिससे गहने साफ किये जाते हैं।

मानिका—स्त्री० [सं०] मन् (गर्व कला) + गिष् + ञ्ङ्ल—अक, + टाप्, इत्यं १. मन्ना। धराय। २. आठ पल या साठ तोले की एक पुरानी तोल।

मानित— $\sqrt{\text{सं}} \text{सं० मान + इतच्}$ जिसका मान होता हो। प्रतिष्ठित। सम्मानित।

मानिता—स्त्री० [सं०] मानित + टाप् १. मानित। सम्मान। २. गौरव। ३. अहंकार। ब्रह्मंड।

मानिनी—वि० स्त्री० [सं०] मान + इनि + डीप् [सं०] 'मानी' का स्त्री०। मान (व्यभिचार या गर्व) करनेवाली।

स्त्री० साहित्य में बहु मायिका जो नायक का दोष देखकर उससे रुठ गई हो या मान कर रही हो।

मानी (निष्)—वि० [स० मान + इनि] [स्त्री० मानीनी] १. जिसमें मान हो। मानवाला। २. अपने मान या प्रतिष्ठा का अधिक या दुरुष्ट ध्यान रखनेवाला। ३. किसी गुण या बात का अधिक मान करनेवाला। अभिमान। घमंडी। ४. मान करने या रुठने-वाला। ५. जिसका लोग मान या सम्मान करते हो। माननीय। जैसे—साहब के समी घनी-मानी बहूँ आये थे। ६. मन लगाकर काम करनेवाला। मनोयोगी।

पू० [सं०] साहित्य में शृंगार रस का आलंबन वह नायक जो बहुत बड़ा अभिमानी हो।।

स्त्री० [सं०] १. घडा। २. चक्की के नीचेवाले पाट के बीचोबीच लगी रहनेवाली वह लकड़ी जिसके चारों ओर ऊपरवाला पाट धूमता है।

३. कुदाल, बगुले आदि का वह छेद जिसमें बेट छपाई जाती है। ४. किसी चीज में बनाया हुआ वह छेद जिससे कुछ जडा जाय। ५. किसी तरह का छेद या नुराल। ६. अन्न नापने का एक मान या तोली जो सोलह मेर की होती थी।

पू० [अ० मानी] १. पत्र, वाक्य, वाक्य आदि का अभिप्राय या आशय। अर्थ। माने। २. मंद या रहस्यमूलक तत्त्व का आशय। तात्पर्य। मतलब। ३. उद्देश्य। प्रयोजन।

मानुषी—पू० मनुष्य।

मानुष-वि० [स० मनु + अङ्, लृक्,] [स्त्री० मानुषी] मनुष्य-संबन्धी। मनुष्य का।

पू० १. आदमी। मनुष्य। २. प्रमाण के तीन भेदों में से एक।

मानुषक-वि० [स० मनुष्य + वृज्-अक] मनुष्य-संबन्धी। मनुष्य का।

मानुषता-स्त्री० [स० मनुष्य + तल्; टाप्] मानुष होने की अवस्था या भाव। आदमीगत। मनुष्यत्व।

मानुषिक-वि० [सं० मनुष्य + इङ्-इक, वृद्धि, ङ-लृप्] १. मनुष्य सम्बन्धी। २. मनुष्यों का-ना। (असुरो देवताओं आदि की तरह का नहीं)

मानुषी-स्त्री० [स० मानुष + ट्रीप्] स्त्री। औरत।

वि०—मानुषीय। जैसे—मानुषी चिकित्सा।

मानुषीकरण-पू०—मानुषीकरण।

मानुषी चिकित्सा-स्त्री० [स० व्यस्तपद] वैद्यक में तीन प्रकार की चिकित्साओं में से एक। मनुष्यों के उपयुक्त चिकित्सा।

मानुषीय-वि० [सं० मनुष्य + छ-ईय] मनुष्य-संबन्धी।

मानुष्य-वि० [सं० मनुष्य + अण्, वृद्धि] १. मनुष्य-संबन्धी। २. मनुष्य या मनुष्यों में पाया जाने या होनेवाला।

मानुष्यक-वि० [सं० मनुष्य + वृज्-अक] मनुष्य-संबन्धी।

मानुषी—पू०—मनुष्य।

माने—पू० [अ० मानी] अर्थ। आशय।

मानी-अध्य० [हि० मानना] एक अध्यय जिसका प्रयोग नीचे लिखे अर्थ या भाव सूचित करने के लिए होता है—(क) अनुकृपता या तुल्यता के विचार में यह समझ लो कि। जैसे—वह मनुष्य क्या था मानो देवता

था। (ख) स्थिति आदि के विचार से कल्पना करो या मान लो कि। जैसे—दुम लोग समझ लें कि मानो हम बही बेटे हैं।

मानीकी-स्त्री० [देवा०] एक प्रकार की चिकित्सा।

मानीवाधि-स्त्री० [सं० मान + उपाधि] वह उपाधि या खिताब जो किसी का मान बढ़ाकर उसे सम्मानित करने के लिए दिया जाय। (टाइटिल ऑफ़ मान)

मानी—अध्य०—मानो।

माप्य-वि० [सं० माप् + ण्यत्] [स्त्री० माप्या] १. (बात) जिसे माप सकें। माने जाने के योग्य। २. (व्यक्ति) जिसका मान या सम्मान करना आवश्यक था उचित हो। मान या सम्मान का अधिकारी या पात्र। ३. प्रार्थना के रूप में उपस्थित किये जाने के योग्य। प्रार्थनीय।

पू० १. चिन्पु। २. विव। ३. मृदावस्त्र।

माप्यधीच कोश-पू० [म०] दे० 'मेषत्र मयह'।

माप्यता-स्त्री० [स० माप्य + तल्; टाप्] १. माप्य होने की अवस्था या भाव। २. किसी विषय में माने और सिद्ध किये हुए तत्त्व या सिद्धांत। जैसे—कविता के स्वरूप के सम्बन्ध में उनकी कुछ माप्यताएँ बहुत ही अनोखी (या नई) हैं। ३. मित्राढ, प्रथा आदि के रूप में मानने योग्य कोई तत्त्व, तथ्य या बात। ४. किसी बड़ी सम्पत्ता द्वारा किसी दूसरी छोटी सम्पत्ता के समर्थ में यह मान लिया जाना कि वह प्रागापिक है और उसके किये हुए कार्य ठोक मजसे जायगी। ५. वह अवस्था जिसमें उक्त प्रकार की बातें मान ली जाती हैं और उसके अनुसार छोटी सम्पत्ता को बड़ी सम्पत्ता के अंग के रूप में काम करने का अधिकार मिल जाता है। (रिक्वागिस्ता)

माप्य-व्यक्ति-पू० दे० 'शास्त्र-व्यक्ति'।

माप्य-स्वान-पू० [सं० ध० त०] आदर या मान्य का कारण।

मानुल-पू० [अ० मॉसिग] १. भारतीय महाद्वीप और इंडोनीशिया में चलनेवाली एक हवा जो अरब से अन्तर्गत तक दक्षिण पश्चिम की ओर से तथा अन्तर्गत से अरब तक उत्तर-पश्चिम की ओर बहती है। २. वह समय जब वह दक्षिण पश्चिम की ओर से बहती है और जिसके फलस्वरूप मानी के अधिकतर मानी से बहूँ दर्पा होती है। पावस।

भाप-स्त्री० [हि० मापना] १. मापने या मापने की क्रिया या भाव। नाप। २. भाप-भाप-नील।

पू०—मापने या तोलने पर प्राप्त होनेवाला परिमाण, मात्रा या मान। ३. वह मान जिससे कोई पदार्थ मापा जाय। मान।

मापक-वि० [सं० मा + णिच्, वृत्-वृत्-अक] माप करने या मापनेवाला। जैसे—दुग्ध-मापक।

पू० १. वह जो मापने या मापने का काम करता हो। २. वह जो तोलने का काम करता हो। ३. वह पात्र जिसमें भरकर कोई चीज मापी-जोकी जाती हो। ४. वह यंत्र जिसके द्वारा किसी प्रवाहित होनेवाले तत्त्व या पदार्थ की मात्रा, मान, वेग आदि को नाह होती हो। (मीटर) जैसे—विद्युत्-मापक।

भाप-नील-स्त्री० [सं० हि०] १. मापने, तोलने आदि की क्रिया या भाव। २. अच्छी तरह जांच या परखकर किसी चीज का महत्त्व, मान, मूल्य आदि जानने या निर्धारित करने की क्रिया या भाव।

भाषणा—सं० [सं० भाषण] १. किसी पदार्थ के विस्तार, आगत, या वर्णन और धनत्व का किसी निश्चित मान के आधार पर परिमाण जानना या जानने के लिए कोई किया करना। भाषणा। २. किसी मान या पैमाने में धारक द्रव्य, चूर्ण या अत्रादि पदार्थों को भाषणा। जैसे—दूध भाषणा, पूना भाषणा।

१३० भातना (मत्त होना)।

भाषणी—स्त्री० [सं० भाषण] १. भाषने अर्थात् भाषने-बोझने, लौकने आदि की किया या भाव। (विद्यारण्य)

भाषणक—पुं० [सं०] आज-कल मौक्तिक विद्वान् में, वह परिमाण या मान जो किसी अमूर्त परिणाम, प्रमात्र या धर्मित (लघुलीलापन, तन्वता) की किसी निश्चित इकाई या माप के आधार पर जाना या स्थिर किया जाता है। (मोह्युलस)

भाष—वि० [अ० भाष] जिसे क्षमा किया गया हो या माफी दी गई हो। भाषकत—स्त्री० [अ० मुभाषकत] १. अनुकूलता। २. मेल। मैत्री।

पक्ष—मेल-आकतत।

भाषिक—पुं० [?] एक प्रकार का छट्टा नीबू।

भाषिक—वि० [अ० मुभाषिक] १. अनुकूल। अनुसार। २. उपयुक्त। क्रि० प्र०—आना।—बढ़ना।—होना।

भाषिकत—स्त्री०—भाषकत।

भाषी—स्त्री० [अ० भाषी] १. माफ करने की किया या भाव। क्षमा। क्रि० प्र०—बाहूना।—नामाना।—मिलना।

२. ऐसी भूमि जिसका कर लेना जमींदार, राजा या सत्कार ने छोड़ दिया या माफ कर दिया हो।

पक्ष—भाषीवार। (देखें)

भाषीवार—पुं० [अ० + भा०] वह जिसे ऐसी जमीन मिली हो जिसका कर शासन ने माफ कर दिया हो।

भाष*—पुं० [सं० भाष] १. ममता। ममत्व। २. अहंकार। ३. अधि-कार। ४. बल। शक्ति।

भाषत—स्त्री० [सं० ममता] १. आत्मीयता। अपनापन। २. आत्मीयता के कारण होनेवाला प्रेम या स्नेह। ममता। ममत्व। जैसे—माँ की मांभाता बच्चे पर होती है।

भाषरी—स्त्री० [देख०] एक प्रकार का पेड़ जो हिमालय की तराई में रावी नदी से पूर्व की ओर मद्रास और तथा मध्यभारत में होता है। क्यूही।

भाषमल, भाषमलति—स्त्री० [अ० मुभाषमलति] १. बात। मामला। २. विवादास्पद बात या विषय जो विचार के लिए उपस्थित हो।

भाषमल—पुं० [अ० मुभाषमल] १. आपस में मिलकर तै या निश्चित की हुई कोई ऐसी बात जिसपर अमल करना पड़े या जिसे कार्य रूप में परिष्कृत करना हो। २. आपस में होनेवाले काम, व्यवहार या व्यापार। जैसे—कप-विष्कप, देन-लेन आदि।

मुहा०—भाषमल बनाना—ऐसी स्थिति लाना जिसमें कोई काम पूरी तरह हो जाय। कार्य-सिद्ध की व्यवस्था करना।

३. उलझान या झगड़ें का कोई ऐसा काम या बात जिसके संबंध में किसी प्रकार का आचरण, विचार या व्यवहार होने को हो या होना आवश्यक हो। प्रथम अथवा मुख्य बात या विषय। जैसे—आज-कल उनके सामने एक बहुत बड़ा मामला आ गया है।

मुहा०—भाषमल तै करना—उच्च प्रकार के काम के सम्बन्ध में बात-चीत करके निपटारा या निश्चय करना। भाषमल बनाना या साधना—

थिक्त और विचारणीय विषय का सतोषजनक रूप में निराकरण करना।

४. आपस में पक्षी या तै की हुई बात। निर्णय और निश्चय किया हुआ तथ्य। ५. ऐसी विवादास्पद बात जिसके संबंध में व्यापार में विचार हो रहा हो या होने को हो। मुकदमा।

व्यवहार। जैसे—द्वार वकील साहब ने कई बड़े-बड़े मामले जीते हैं। (मुहा० के लिए दे० 'मुकदमा' के 'मुहा०') ६. युवती और युवद्वी स्त्री। (भाषाक) ७. स्त्री-प्रसंग। मैथुन। समोग।

मुहा०—भाषमल बनाना—पर-स्त्री के साथ मैथुन या समोग करना।

भाषा—पुं० [सं०] भाष, भाषका; पा० भाषको, प्रा० भाषक [स्त्री० भाषी] संबंध के विचार से भी का माई।

स्त्री० [फा०] घर की नौकरानी। परिवारिका। दासी।

भाषागौरी—स्त्री० [फा०] १. मामा अर्थात् दूसरी की रोटी पकानेवाली स्त्री का काम या पद। २. बुढ़िया स्त्री। बूढ़ी।

भाषिला—पुं०—भाषमला।

भाषी—स्त्री० [सं०] या, निषेधाधिक [अपने ऊपर लगाया हुआ आरोप या दोष न मानने की अवस्था, किया या भाव।

मुहा०—भाषी घाला—अपने ऊपर लगाये हुए आरोप या दोष पर ध्यान न देकर चुप रह जाना अथवा मुकर जाना।

स्त्री० [हिं०] 'भाषा' का स्त्री० रूप। संबंध के विचार से मामा की पत्नी।

भाषी—पुं०—मामा।

भाषूर—वि० [अ०] १. जिसे आदेश दिया गया हो। २. नियुक्त किया हुआ। ३. पूरी तरह से मरा हुआ। ४. आबाद। ५. समृद्ध।

भाषूल—पुं० [अ०] १. नित्य-निमग्न। २. ऐसा काम या बात जो साक्षात्-रूपतः सभी अवसर पर अमल अर्थात् व्यवहार में लाई जाती है। सभी अवसरों पर साधारण रूप में होती रहनेवाली बात या व्यवहार। वस्तुतः

पक्ष—भाषूल के विषय—स्त्रियों के रजोचर्च में या रजत्वका होने के दिन। (मुचल० विषयों) उदा०—हर महीने में बुढ़ाते प, मुझे फूल के दिन

बारे अवकी तो बरे टल गये भाषूल के दिन।—रंगीन।

३. रति-रिवाज। परिपाटी। प्रथा। ४. वह घन जो किसी की परिपाटी, प्रथा, रिवाज आदि के अनुसार मिलता हो। ५. जमिंदार आदि द्वारा बेमुच किया हुआ व्यक्ति।

भाषुली—वि० [अ०] १. नित्य-निमग्न-सम्बन्धी। २. भाव होता रहनेवाला। ३. जिसमें कोई महत्त्व की विशेषता न हो। औसत दर्जे का। साधारण।

भाषीला—पुं० [?] और बघुटी। (राज०) उदा०—मामोली दिवली कुंफुंई—मिथीराज।

भाष्य—अ०—भाहि (बीच)।

भाष्य—पुं० [सं०] भाया; अञ्—१. पीतावर। २. अयुर।

स्त्री० [सं०] माता। १. माता। माँ। २. बड़ी या आदरणीय स्त्री के लिए संबोधन का शब्द।

स्त्री०—माता।

स्त्रिय०—माहि (बीच में)।

भाषक—पुं० [सं०] भाय + कत्—भायायी।

पुं०—भाषका।

भावका—पुं० [सं० भाव् + क (प्रत्यय०)] विवाहित्वा स्त्री की मृत्ति से उसके माता-पिता का धर और परिवार। नैहर। पतिहर।

भाव्य—पुं० [सं० भावा + यच्—अन्] बैद का भाव्य करनेवाले सायण के पिता का नाम।

भाव्य—पुं० [सं० भाव् + क] ? मातृका-पूजन और पिन्-निमग्न संबंधी एक कृत्य जो विवाह से पहले किया जाता है। २ उक्त दिन होनेवाला कृत्य।

भाव्यनी—स्त्री० दे० 'भाव्यानिनी'।

↑पुं०—माने (अर्थ)।

भाव्यल—वि० [अ० भावल्] ? जो किसी और प्रवृत्त हुआ हो। जैसे—किसी पर दिल मायल होना, अर्थात् किसी की ओर अनुरक्त होना। २ आसक्त। ३ कोई प्रकार के शुकवाच या प्रकृति से युक्त। जैसे—सुखी मायल काला रंग, अर्थात् ऐसा काला जिसमें लाल रंग की भी कुछ छलक हो।

भावा—स्त्री० [सं०/मा + य + टाप्] ? कोई काम करने या कोई चीज बनाने की अनीतिक अथवा असाधारण कला या शक्ति। जैसे—बुद्ध अपने भावा से अनेक रूप धारण करना है। २ बहुत ही उच्छ्रुत या प्रखर बुद्धि। प्रभा। ३ कोई ऐसी कृति, रचना या रूप जिससे लोग घांसे या भ्रम में पड़ते हैं। छलपूर्ण तथ्य या बात। जैसे—द्व-जाल या जादुगरी। ४ वेद्योत में वह ईश्वरीय शक्ति जिससे इस नाम-रूपात्मक सारे दुष्ट अमृत की मृत्ति हुई है।

विशेष—वेदात्त दर्शन का सिद्धांत है कि यह सारी मृत्ति अमृत और नित्य ब्रह्म से उत्पन्न हुई है, फिर भी यह वास्तविक नहीं है। उस ब्रह्म की अनीतिक शक्ति से ही यह हमें पुण्य जगत् के रूप में दिखाई देती है। पुराणों में इसी भावा पर चेतन धर्म का आरोप करके इसे स्त्री के रूप में माना और ब्रह्म की सहवर्धचारिणी कहा है। इसी कारण लोग मोह-वच अवस्तु को वस्तु और अवास्तविक को वास्तविक और मिथ्या को सत्य समझ लगे हैं। हमें इस जगत और उसके सब पदार्थों का जो ज्ञान या मात होना है, वह वस्तुतः भ्रम मात्र है। साम्यकार ने इसी को प्रकृति या प्रधान कहा है। शैव दर्शन में इसे आत्मा को बचन में रखनेवाले चार पाशों (जालो का फरो) में से एक पाश माना है; और वैष्णवों ने इसे विष्णु की नौ शक्तियों के अन्तर्गत एक शक्ति कहा है। परवर्ती काल में कुछ लोग इसे अनुत् की और कुछ लोग अधर्म की कन्या कहने लगे थे और मृत्यु की जननी या माता मानने लगे थे। बौद्ध इसे २४ गुण्ड मनोविकारों में से एक मनोविकार या बासना मानते हैं। पर सब मनो का सारोस्य यही है कि यह मूर्तिमान भ्रम है और लोगों को बोलों में रखकर ईश्वर या मूल्य से विमुख रखनेवाली है। इसी लिए जितने काम चीजें या बातें वास्तव में कुछ और होती हैं पर देखने में कुछ और, उन सबका अन्तर्भाव भावा में ही होता है। हिन्दू धर्म में देवी-देवताओं की कृपा प्रेरणा या शक्ति से जो अद्भुत, अनीतिक या विलक्षण कीला-पूर्ण कृत्य होते हैं, उन सबकी गिनती उन देवी-देवताओं की भावा में ही होती है।

५ उक्त के आधार पर अज्ञान या अविद्या। ६ उक्त के फलस्वरूप और भ्रम या मोह-वच किसी के प्रति होनेवाला अनुराग, प्रेम या स्नेह। ममता। ममत्व। ७. किसी प्रकार की अवास्तविक और मिथ्या धारणा या विचार। (दत्तयुक्त) ८ उक्त के कारण किसी के प्रति मन में उत्पन्न

होनेवाला अनुराग या दया का भाव। उदा०—मलेहि आई अब माया की जै।—जायसी। ९. कष्ट। छल। फरेब। जैसे—माया-मूष। १० घोषा। भ्रम। ११ ऐसी मूढ और विलक्षण बात जो जल्दी समझ में न आवे अथवा जिसे समझने के लिए बहुत मानसिक परिश्रम करना पड़े। जैसे—माया-बर्ण। १२. द्वंदजाल। जादुगरी।

पब—भावाकार, भावाजीवी।

१३. राजनीतिक चाल या दौब-पेच। १४ अनुराग। कृपा। १५. दया। मेहरबानी। १६ लक्ष्मी देवी। १७ धन-सम्पत्ति। दौलत। जैसे—उन्के पास लाखो रुपये की माया है। १८ कोई आश्चर्यगीय और पुण्य स्त्री। १९. भय दानव की कन्या जो विश्रवा को व्याही थी। २० गौतम बुद्ध की माता मायादेवी। २१ गया नामक नगरी। २२ इन्द्रवज्रा नामक वर्णवृत्त का एक उपभेद जो इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के मेल से बनता है। इसके दूसरे तथा तीसरे चरण का प्रथम वर्ण लघु होता है। २३ एक प्रकार का वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः मगध, तगण, मगध, मगध और एक गुरु वर्ण होता है।

स्त्री० [हि० माता] माता। माँ। जननी। उदा०—जिनकी रतनसेन की माया। ४।—मायायी।

भावाकार—पुं० [सं० भावा/कृ + अण्]—भावाजीवी।

भावा-ओत्र—पुं० [सं० प० त०] दक्षिण भारत का एक तीर्थ।

भावाधार—पुं० [सं० भावा/धर (भक्ति) + अण्] भावायी।

भावाजीवी (विन्)—पुं० [सं० भावा/जीव (जीना) + गिन्] ऐंद्रजालिक। जादुगर।

भावाति—स्त्री० [सं० भावा/अत् (निर्गन्तर गमन) + टण्] तांत्रिकों की वह नर-बलि जो अष्टमी या नवमी के दिन दुर्गा को प्रसन्न तथा सन्तुष्ट करने के उद्देश्य से दी जाती थी। (तांत्रिक)

भावादेवी—स्त्री० [सं०] गौतम बुद्ध की माता का नाम।

भावा-धर—पुं० [सं० प० त०] भावायी।

भावा-पति—पुं० [सं० प० त०] ईश्वर। परमेश्वर।

भावा-पात्र—पुं० [हि० भावा + धन + सं० पात्र] धनवात। अमीर।

भावा-फल—पुं० [सं० प० त०] भावफल।

भावा-मोह—पुं० [सं० भावा/मूह + पिच् + अच्] शरीर से निकला हुआ एक कल्पित पृष्ठ जिसने असुरों का दमन किया था। (पुराण०)

भावा-मंत्र—पुं० [सं० प० त०] सम्प्राप्त किया।

भावावत्—पुं० [सं० भावा + मनु। वल्] ? भावायी। २ राक्षस। ३. कंस का एक नाम।

भावावती—स्त्री० [सं० भावावत् + डीप्] कामदेव की स्त्री, रति।

भावावर—वि० [सं० त०] भावा करनेवाला। उदा०—अभियय करते विश्वधर पर तुम भावावर।—पद्म।

पुं० ? ईश्वर। २. ऐंद्रजालिक। जादुगर।

भावावर्ण—पुं० [सं० प० त०] गणित में वह बड़ा वर्ण जिसमें कई छोटे-छोटे वर्ण होते हैं और उन छोटे-छोटे वर्णों में से हर एक में कुछ अंक का संख्याएँ किसी ऐसे विविध क्रम से रखी होती हैं कि हर ओर से अर्थात् सड, डेहे तथा तिरछे बलों की संख्याओं का जोड़ एक ही जाता है। (मैजिक स्क्वेयर)

भाषा-बाध—पु०[सं० ष० त०] बद्ध को सत्य और बधत् को मिथ्या मानने का सिद्धान्त।

भाषा-बाधो (विद्)—पु०[सं० भाषा-बाध+इति] भाषाबाध का सिद्धान्त माननेवाला व्यक्ति।
वि० भाषाबाध-सम्बन्धी।

भाषाबाधन् (बन्)—वि०=भाषायी।

भाषाबाधनी—स्त्री०[सं० भाषा+विधि+ङीप्] छल या कपट करनेवाली स्त्री। उगनी।

भाषाबो (बिम्ब)—वि०[सं० भाषा+विनि] [स्त्री० भाषाबिनी] १. भाषा-संबंधी। २. भाषा के रूप में होनेवाला। ३. जापू आदि से संबध रखने-वाला।

पु० १. बहु जो अनेक प्रकार की भाषाएँ रखने अर्थात् तरह-तरह के रहस्य-मय हृद्य करने लोगो को बकित करने तथा बोले से रखने में कुशल या दक्ष हो। २. बहुत बड़ा कपटी या धोखेबाज। ३. बिड़ाल। बिल्ला।
४. ईश्वर या परमात्मा का एक नाम। ५. मय दानव के पुत्र का नाम।

भाषा-बीज—पु०[सं० ष० त०] 'ह्रीं' नामक तांत्रिक मंत्र।

भाषाभास—वि०[सं० भाषा+भास्य, ष० त०] भासा से अभिमूहल उदा०—
मुरमित विधि-विधि कृषि हुआ अन्य भाषायास।—निराला।

भाषा-नीता—स्त्री०[सं० मध्य० सं०] सीता-दूरण से पूर्व सीता द्वारा राम की आज्ञा से धारण किया गया भाषायी रूप।

भाषा-मुल—पु०[सं० ष० त०] भाषा देवी के पुत्र गौतम बुद्ध।
भाषिक—वि०[सं० भाषा+ठन्—इक] १. भाषा-संबंधी। २. भाषायी।

अवास्तविक पर वास्तविक-सा दिखाई पड़नेवाला। ३. भाषा करने या दिखानेवाला। भाषायी।

पु० भाजूकल।

भायी (विन्तु)—पु०[सं० भाषा+इति] १. भाषा का अधिष्ठाता।
परब्रह्म। ईश्वर। २. भाषा दिखानेवाला। भाषायी। ३. जादूगर।
†स्त्री०=माई (माता)।

भायु—पु०[सं० √मि (केंनाता)+उण्, आत्थ, युक्] १. पित्त। २. आवाज। शब्द। ३. वायु।

भायुस—वि०[सं० भायु+कन्] शब्द करनेवाला।

भायुस्—पु०[सं० मयूर+अञ्, वृद्धि] १. मयूर। मोर। २. वह रथ जिसे मयूर खीचकर ले चलते हो।

वि० मयूर-सम्बन्धी। मोर का।

भायुस्क—पु०[सं० मयूर+कन्] मोर पकड़नेवाला बहेलिया।

भायुस्—स्त्री०[सं० मयूर+टाप्] कदमर।

भायुरी—स्त्री०[सं० मयूर+ङीप्] अजमोदा।

भायुस—वि०[अ०] [भास० भायुसी] निराश। हताश।

भायुसी—स्त्री०[अ०] भायुस होने की अवस्था या भाव। निराशा।

भायु—पु०[सं० √भृ (भरतान्) ; षञ्] १. कामदेव। २. जहूर। विष।
३. बहुरा। ४. बाधा। विघ्न।

स्त्री०[हि० भारता] १. भारते अर्थात् चोट पहुँचाने या पीटने की क्रिया या भाव। जैसे—भार के आगे भूत भावता है।

पञ्—भार-काट, भार-बाध, भार-बीध, भार-भार। (दे० स्वतन्त्र पद)
कि० प्र०—भाना।—पड़ना।—पिटना।

५—५५

२. किसी प्रकार का अथवा किसी रूप में होनेवाला आघात या प्रहार। कोई ऐसा काम या बात जो कष्ट पहुँचानेवाला अथवा नाश या हानि करनेवाला हो। जैसे—गरीबी की मार, रोटी की मार। उदा०—बड़ी मार कबीर की बित से दिया उतार।—कबीर।

विशेष—ऐसे अवसरों पर मार का आशय यही होता है कि उसके फलस्वरूप मनुष्य की दशा बहुत ही बीम-हीन तथा धोखनीय हो जाती है। अकल की मार, शासक की मार सारी प्रयोगों में 'मार' का आशय यही होता है कि चाहे किसी भीज या बात के अभाव में ही, चाहे आधिपत्य में, मनुष्य की दशा बहुत बुरी हो जाती है। गरीबी की मार में गरीबी के आधिपत्य का भाव है, और रोटी की मार में रोटी के अभाव का, ईश्वर या खुदा की मार में कोप या प्रकोप का भाव प्रथान है।

३. उतनी दूरी जहाँ तक कोई बलाया या फेंका हुआ अथवा आकर पहुँचता और अपना काम करता या प्रभाव दिखलाता है। (रंज) जैसे—भय बंदूक की मार एक हजार गज है। ४. निसान। लक्ष्य। ५. दे० 'मार-पीट'। जैसे—गाँववालों ने अक्सर मार होती रहती है। ६. किसी प्रकार का प्रभाव या फल लष्ट करनेवाली भीज या बात। मारक तथा। जैसे—सूजली की मार पी है अर्थात् पी से सुजली सब या मिट जाती है।

अव्य० १. बहुत अधिकता से। अव्यत। जैसे—मुझसे तो सबदे से मार जाकत मचा रली है।

स्त्री०[दे०] काली मिट्टी की जमीन।

†स्त्री०=भाला।

मारकंडेय—पु०=मारकंडेय।

मारक—वि०[सं० √मृ+णिच्+भ्युल्—अक] १. जान से मार डालने-वाला। २. पीकक। ३. प्रभाव, वेग, विष आदि को दवाने या नष्ट करनेवाला। (एन्टीबोट)

मारका—पु०[अ० मार्क] १. चिह्न। निशान। २. किसी प्रकार की पहचान के लिए लगाया जानेवाला चिह्न या निशान। ३. वह विधिष्ट चिह्न या निशान जो बड़े व्यापारी अपने बनावे हुए पदार्थों पर उसकी विशिष्टता की पहचान के लिए लगाते हैं। छाप।

पुं०[अ० मारिक.] १. मुद्रा लकड़ा। २. कोई बहुत बड़ी और महत्वपूर्ण घटना। ३. कोई बहुत बड़ा और महत्वपूर्ण काम।

पञ्—मारके का=बहुत बड़ा और महत्वपूर्ण।

मार-काट—स्त्री०[हि० मारतान्+कारता] १. एक दूसरे को मारने और काटने की क्रिया या भाव। २. युद्ध का लड़ाई जिसमें आदमी मारे और काट जाते हैं।

मारकीम—स्त्री०[अ० नैनुकिन्] एक तरह का साधारण कपडा।

मारकुडा—वि०=मरकूडा (मारनेवाला)।

मारकेश—पु०[सं० मारक-केश, कर्म० सं०] किसी की जन्म-कुंडली में पड़ने-वाला ग्रहों का एक योग जो व्यक्ति के लिए घातक होता है। (ज्यो०)

मारखोर—पु०[फा०] बहुत बड़े सींगोंवाली एक प्रकार की बहुत सुन्दर जंगली बकरी जो काश्मीर और अफगानिस्तान में होती है। इसके नर के धारीर से बहुत तेज गन्ध निकलती है।

मारण—पु०[सं० मार्ग] मार्ग। रास्ता।

मुह्रा०—भारवा मारना=किसी राह चलते आदमी की लूटना। मारवा

कल्पना या लेना= (क) रास्ते पर चलना । (ख) चले जाना । दूर हो जाना ।

मारणम्—पु० [सं० मार्णं] १. बाण । तीर । २. मिथुक । याचक ।
मारणी—स्त्री० [सं० मार्ण] राह चलने को लुटने की क्रिया । बटमारी ।

उदा०—बोरी करने न मारणी।—मीर ।

मारण्यम्—पु०=मार्जनम् ।
मारणी—स्त्री०=मार्जनी ।

मारकारां—पु०=मार्कार ।

मारजित्—पु० [सं० मार०] विज (जीतना) + जित्, तुच् । वह जिसने कामधेय को जीत लिया हा । २ गिच । ३. पुञ्ज ।

मारक—पु० [सं० मार०] मारना + कृ + क्तुन्—अन्] मार डालने अर्थात् प्राण लेने की क्रिया या मार । २ वह तांत्रिक प्रयोग जो किसी के प्राण लेने या मार डालने के उद्देश्य से किया जाता है ।

मारक—पु०=मार्तक ।

मारते क्षी—पु० [हिं० मारता + फा० क्षान्] वह जो अपने बल के गर्व में दूसरों को जरा सी बात पर मार बैठता हो ।

मारतल—पु० [३० मारतली] एक प्रकार का बड़ा हथौड़ा ।

मार-वाह—स्त्री० [हिं०] १ बहुत से लोगों का तेजी में आगे बढ़कर किसी पर आक्रमण करना । जैसे—मृगल सेना मार-वाह करती हुई बढ़ती चली जा रही थी । २ गन्धकों की वह स्थिति जिसमें लोग बहुत जल्दी अपने काम में या इश्कर-उधर दौड़ने-पुगने में लगे हो ।

मारना—सं० [म० मारण] १ ऐसा आघात या क्रिया करना जिससे किसी के प्राण निकल जायें । आयु या जीवन का अंत करना । जैसे—(क) यह दवा कई तरह के जहरोंके कीड़े मारती है । (ख) इसने कल एक साँप मारा था ।

मूहा०—(किसी की) मारगिराना—आघात या प्रहार करके प्राण लेकर अथवा मृतप्राय करके जमीन पर गिराना । जैसे—सिपाहियों ने चार झाड़ू मार गिराये ।

सयो० क्रि०—डालना ।—देना ।

२ क्रोध में आकर दह देने या दबला चुकाने के लिए किसी के शरीर पर बण्ड मारना, लात आदि से या छड़ी, डंडे, बेल आदि से बार-बार आघात या प्रहार करना । जैसे—उसने नीकर को मारते-मारते बेहोश कर दिया ।
पथ—मारना-पीटना ।

३. कोई चीज किसी दूसरी चीज पर इस प्रकार जोर से गिराना या फेंकना कि वह आकर टकरा जाय और स्वयं क्षतिग्रस्त हो अथवा दूसरी चीज को क्षतिग्रस्त करे । जैसे—विधियों को ढंके पत्थर मारना ।

मृता०—(किसी की) दे मारना—उठाकर जोर से गिराना, पटकना या फेंकना । उदा०—मेरा दिल लेके शीशे की तरह पत्थर पे दे मारा ।—कोई साधर ।

४ साधारण रूप से कोई विल किसी दूसरी चीज पर पटकना । जैसे—यही बात पक्की रही, लाओ मारी होय । (अर्थात् पक्का बचन हो)

५ आघात में किसी जीव-जंतु के प्राण लेना । मारकर मारना । जैसे—कन्नूर, मछली, घेर या हिलन मारना । ६ जीव-जंतुओं के अपने किसी अंग से किसी पर आघात या प्रहार करना अथवा भाव या अक्षम करना । जैसे—बरे या विष्णु ठक मारता है, चौंका लात मारता है, बैल सींग मारता

है, कुत्ता दात मारता है आदि । ७. किसी क्रिया से किसी चीज का अंगे बढ़ा हुआ अंग या अंग काटना, निकालना या फोड़ना । जैसे—(क) बड़ई ने रंसे से इसका किनारा मार दिया है । (ख) मुग्धने कागज काटते-काटते कैंची (या चाकू) की धार मार दी है । ८ किसी प्रकार का परिणाम या फल उत्पन्न करने के लिए कोई अंग उबर उबर या ऊपर-नीचे हिलाना । जैसे—(क) किसी का उठने के लिए पर मारना । (ख) बचन से लुटने के लिए हृद्य-नैर मारना अर्थात् यथा-साध्य प्रयत्न करना । ९ किसी पदार्थ का तत्त्व या सार-भाग कम या नष्ट करके उसे निरव्यय या निर्बल करना । जैसे—यह दवा कई तरह के जहर मारती है । १० वैद्यक में रासायनिक प्रक्रियाओं से धातु आदि का मस तैयार करना । जैसे—मारा मारना, सोना मारना । ११ किसी को किसी प्रकार से या किसी रूप में अक्रिय, अयोग्य या निकम्मा करके किसी काम या बात के योग्य न रहने देना । बुरी तरह से नष्ट या बरबाद करना । जैसे—(क) हमें तो दिन-रात की चिंता ने मारा है । (ख) उन्हे तो एंगोषो (या शरान-शरीर) ने मारा है । १२ बहुत अधिक मानसिक या शारीरिक कष्ट-दुःख तंग, दुःखी या परेशान करना । (प्राय किसी दूसरी क्रिया के साथ संयोग्य क्रिया के रूप में) जैसे—(क) इस लड़के की मालायकी ने तो हमें जका मारा (या सता मारा) है । (ख) आज तो तुमने नौकर को दिन मर दौड़ा मारा ।

पथ—(किसी चीज या बात) का मारा—किसी चीज या बात के कारण बहुत अधिक मरना या दुःखी । जैसे—आफत का मारा, मूल का मारा, रोड़ियों का मारा आदि ।

१३ ब्रेष या बैरमूलक लड़ाई-संग्राम, विवाद आदि के प्रसंग में विपक्षी या विरोधी को परास्त करते हुए नीचा हिलाना या बग में करना । जैसे—इस बुनाव में इन्होंने उसे ऐसा मारा है कि अब यह कभी इनके मुकाबले में खड़े होने का नाम न लेगा ।

पथ—बहु मारा—बस अब परास्त करने बग में कर लिया । पूरी तरह से जीत लिया और हरा दिया । उदा०—बह मारा । अब कहाँ जाती है । आज का विचार तो बहुत नफीस है ।—राधाछण्यदास ।

१४ खेल, प्रतिप्रयोग आदि के प्रसंग में विपक्षी का हराकर विजय प्राप्त करना । (स्वयं खेल के बचन में भी और खेलोंकी के सम्बन्ध में भी) जैसे—(क) कुश्ती या बाजी मारना—जीतना । (ख) एक पहलवान को दूसरे पहलवान का मारना—पछानना । १५ मजीके, ताप, वातज आदि लेकों में विपक्षी के पत्ते गोंट आदि जीतना । जैसे—(क) प्यादे से हाथी मारना । (ख) दहले से नहला मारना । १६ किसी प्रकार का मानसिक या शारीरिक आवेग दबाना या रोकना । जैसे—(क) मन मारना—मन में होनेवाली इच्छाएँ दबाना । (ख) प्यास या मूत्र वाहना—प्यास या मूत्र लगने पर भी पानो न पीना या भोजन न करना । उदा०—रिस्त उर मारि रक ज़िमि राजा ।—तुलसी । १७. अनुचित रूप से चालबाजी से या बलपूर्वक किसी का धन, संपत्ति या कोई चीज प्राप्त करके अपने अधिकार में करना । जैसे—(क) किसी की गडरी मारना । (ख) किसी का माल या रक्या मारना ।

मूहा०—मार खाना—उक्त प्रकार से प्राप्त करके अधिकार में कर लेना । जैसे—इस सोदे में उसने तो रुपये मार खाये । मार रक्या—अनुचित

रूप से बनावकर अपने पास रख लेना। जैसे—अग्नी तो वह किताब मार रखी, फिर देखा जायगा। मार लेना—अनुचित रूप से प्रत्यक्ष करने अपने अधिकार में कर लेना। जैसे—इस सीपे में उसने भी ली छपये मार लिए।

१८. कुछ विशिष्ट क्रियाओं के सम्बन्ध में, पूरा या सम्बन्ध करना। जैसे—पानी में गीता मारना, किसी के चारों ओर चक्कर मारना, सिगार्ड करने के लिए टाँका मारना। १९. किचाड़े या ताले के सम्बन्ध में ऐसी क्रिया करना कि वह बड़ हो जाय, खुला न रहे। जैसे—(क) कोठरी का दरवाजा मारना। (ख) दरवाजे में ताला मारना। (पक्षिम) २०. मीषुन या संग्रोग करना। (वाजाक)

विशेष—अनेक क्रियाओं के साथ संयोग क्रिया के रूप में भी और अनेक सज्ञाओं के साथ कि० प्र० के रूप में भी 'मारना' का प्रयोग अनेक प्रकार के भाव प्रकट करने के लिए होता है। उनमें मुख्य भाव तीन हैं—(क) किसी प्रकार के आघात या शिवा या शिषा से उपेक्षापूर्वक अंत या समाप्त करना। जैसे—किसी के लिखे हुए पर लकीर मारना, किसी चीज को लाल मारना, किसी काम या बात को गौली मारना आदि। (ख) किसी प्रकार का प्रभाव विशेष रूप से प्रभाव उत्पन्न करना। जैसे—जादू या मन्त्र मारना; किसी आदमी को पीस मारना। (ग) कोई क्रिया कष्टपूर्वक रूप से या बुरी तरह से पूरी या सम्पन्न करना। जैसे—माख मारना, शीश मारना, दम मारना, कोई चीज किसी के सिर मारना (अर्थात् उपेक्षापूर्वक देना या फेंकना)। किसी काम या बात के लिए मगज या सिर मारना अर्थात् बहुत अधिक मानसिक परिश्रम करना आदि। कुछ अवस्थाओं में इसका प्रयोग (मुहावरे के प्रयोग में) अकर्मक क्रिया के रूप में भी होता है। जैसे—(क) वह सुनते ही उसे काट मार गया, अर्थात् वह काट के समान स्तब्ध हो गया। (ख) सारी फसल को पाला मार गया (अर्थात् लुप्त गया) है। (ग) उसके भाई को लकना मार गया (अर्थात् लुप्त हो गया) है। ऐसे प्रयोगों के ठीक अर्थों के लिए सबद क्रियाएँ या सज्ञाएँ देखनी चाहिएँ।

मार-पीठ—स्त्री० [हि० मारना + पीठना] बहु लड़ाई जिसमें लड़नेवाले एक दूसरे को मारने-पीटते हैं।

मार-पंच—पुं० [हि० मारना + पंच] धूर्तता। चाल-बाजी।

मारक—अव्य० [अ० मारक] १. किसी व्यक्ति के माध्यम से। जैसे—मैं कुछ रुपये श्री कृष्णचंद्र की मारफत तुम्हें भेजूंगा। २. पत्नों पर पता लिखते समय, किसी अमुक के द्वारा।

स्त्री० [अ०] १. अप्यायन। २. इलाम विशेषतः सूफी संप्रदाय में साना की चार स्थितियों में से तीसरी स्थिति जिसमें साधक अपने गुरु या पीर के उपदेश और शिक्षा से आग्नी हो जाता है।

विशेष—शेष तीन स्थितियाँ शरीरगत, तरोकत और हकीकत कहलाती हैं।

३. उर्दू कविता का वह प्रकार जिसमें साधारण रूप में तो लौकिक प्रेम का उल्लेख होता है परन्तु अन्तिम या अन्तिम भाग में वस्तुतः ईश्वर के प्रति प्रेम प्रकट होता है। (अन्योक्ति का एक प्रकार) जैसे—अगर कोई मारकन की गजल याद हो तो सुनाओ।

मारना—पुं० [देव०] १ एक प्रकार का संकर टांग जो परज, बिमास और गीरी के संकल से बनता है। इसके गाने का समय सांझाकाल है। २. संगीत में एक प्रकार का सजाय।

मारवाड़—पुं० [सं० मरवर्त] १. मेवाड़ प्रदेश। २. मेवाड़ और उसके आस-पास के अनेक प्रदेश जो अब राजस्थान के रूप में परिणत हो गये हैं। मारवाड़ी—पुं० [हि० मारवाड़] [स्त्री० मारवाड़िन]। मारवाड़ देश का निवासी।

स्त्री० मारवाड़ देश की बौली।

वि० मारवाड़ देश का। मारवाड़-सम्बन्धी।

मार—पुं० [हि० मारना] १. जो मारा गया हो। २. जिस पर मार पड़ी हो।

मूहा—मार फिरना, या मारा-मारा फिरना—बहुत ही दुर्बला भोगते हुए इशर-उपर भूमना।

३ जो किसी प्रकार के आघात या प्रकोप से त्रस्त या पीड़ित हो। जैसे—बाफल का मारा, किस्मत का मारा, बीमारी का मारा आदि।

†स्त्री०—माला।

मारसक—वि० [सं० मार-आत्मन्, व० सं० +कृ०] १. हिसक। २. प्राण-नामक। ३. दुष्ट।

मारभिमू—पुं० [सं० मार-अभि + मू (होना) + मू] गौलम बुद्ध।

मारमार—वि० [सं० हि० मारना] बहुत अधिक नेजी से या इतने बेग से कि मारों किसी को मारने जा रहे हैं।

†स्त्री० १. मार-पीठ। २. बहुत अधिक जल्दी। जैसे—दलनी मार-मार करना ठीक नहीं।

मार-मारी—स्त्री० [हि० मारना] १. ऐसी लड़ाई जिसमें मार-काट हो रही हो। २. जबरदस्ती। बल-प्रयोग।

वि० [सं०]—मारमार।

मारि—स्त्री० १. मार। २. मरी।

मारिचा—पुं० १. मारीच (राक्षस)। २. मारिच (महीना)।

मारित—पुं० कृ० [सं० √मृ + णिच् + क्त] १. जो मार डाला गया हो। २. मरने के रूप में किया या लाया हुआ। (वैद्यक) जैसे—मारित रक्त। ३. नष्ट किया हुआ।

मारिच—पुं० [सं० √मृष् (सहन करना) + अण्, निपा०] सडि, या मा/रिष् + क] १. नाटक का सूत्रधार। २. नाटकों में आवश्यक या मान्य व्यक्ति के लिए सम्बोधन। ३. मरसा नाम का साग।

मारिचा—स्त्री० [सं० मारिष् + टप्] दल की माता का नाम।

मारी—स्त्री० [सं० √मृ + णिच् + क्त + ङीष्] १. बंभी नाम की बेंबी। २. माहेश्वरी शक्ति। ३. महामारी। मरी।

मारीच—पुं० [सं०] १. एक राक्षस जिसने रावण के कहने पर सीताहरण करने के लिए सोने के ड्रिगन का रूप धारण किया था। २. हाथी। ३. मिर्च के पीधो का समूह।

वि० [सं० मरीचि + अण्] मरीचि द्वारा रचित।

मारीची—स्त्री० [सं०] बुद्ध की माता का नाम। माया देवी।

मार्ग—पुं० १. मार (कामदेव)। २. मारवाड़ (देश)।

स्त्री०—मार।

मारत—पुं० [सं० मरत + अण्] १. वायु। पवन। २. वायु या पवन के अधिपति देवता।

मारत-सुत—पुं० [सं० त०] १. हनुमान्। २. भीम।

मारसतसव्य—पुं० [सं० मारस-आत्यव, व० सं०] हनुमान्।

भाष्यतन्त्रम्—पुं० [सं० भास्व-अप-वह्न् (भास्वता) + ङ] बहण बृह ।
 भाष्यतन्त्रम्—पुं० [सं० मस्त-अनन, वं० सं०] ? कान्तिकेय का एक अनुचर ।
 २. सप ।
 भाष्य—पुं० [सं० भास्व + इञ्] ? हनुमान् । २ मीम ।
 भाष्य—पुं० [सं०] एक प्राचीन देश ।
 भास्व—वि० [हिं० भास्व] ? मार डालने या जान लेनेवाला । २. हृद्य
 या मर्मस्थल पर आघात करनेवाला । ३. मारने-पीनेवाला ।
 पुं० ? उन गीतों या गानों का वगैरे जो युद्ध के समय सौरी को उल्लेखित
 तथा उत्साहित करने के लिए गाये जाते हैं । २. युद्ध में बजाया जाने-
 वाला बहुत बड़ा ढका या मराठा ।
 पुं० [देश०] ? एक प्रकार का ग्राह्यबलुत जो शिमले और नैनीताल में
 अधिकता से पाया जाता है । २. काकरेजी रग ।
 पुं० = मारवाडी ।
 भास्व—वि० [अ० भास्व] ? अर्ज किया हुआ । निवेदित । २. उक्त ।
 कथित ।
 पुं० ? निवेदन । प्रार्थना । २. उक्ति । कथन ।
 भास्व—स्त्री० [हिं० मारवा ?] घाड़ों के पिछले पैरों की एक सौरी जो
 मनुष्य समझी जाती है ।
 पुं० = मारुति ।
 भारे—अव्य० [हिं० मारना] बजह में । कारण । (विषयतामूचक)
 जैसे—जल्दी के मारे बह अपनी पुस्तक यही मूल गया ।
 भार्कड—पुं० = भार्कडेय ।
 भार्कडेय—पुं० [सं० मुकड + ङक—एय] मुकड ऋषि के पुत्र एक प्राचीन
 मुनि जिन्होंने अपने तपोबल से अमरत्व प्राप्त किया था, इनके नाम पर
 एक पुराण भी प्रचलित है ।
 भार्क—पुं० [अं०] ? चिह्न । छाप । २. मारका । ३. लक्षण ।
 भार्क—पुं० = मारका (चिह्न) ।
 भार्कवस—पुं० [अं०] इगलैण्ड के कुछ मामनों की परंपरागत एक उपाधि ।
 भार्क—पुं० एक प्रसिद्ध जर्मन कान्तिकारी समाजवादी नेता जिसने दर्शन,
 राजनीति आदि के कई प्रसिद्ध ग्रन्थ लिखे हैं, और जिसके नाम पर भार्क-
 वाद (देखें) नाम का मत या वाद आजकल विशेष प्रचलित है । इसका
 पूरा नाम हेनरिच कार्ल भार्कस था । (सन् १८१८-१८८३ ई०)
 भार्कसवाद—पुं० [जर्मन भार्कस (नाम) + सं० वाद] जर्मन समाजवादी
 कार्ल भार्कस (देखें) का यह सिद्धान्त कि सारी सम्पत्ति श्रम से
 ही उत्पन्न होती या बनती है, अतः उससे प्राप्त होनेवाला धन श्रमिकों
 को ही मिलना चाहिए । इसमें पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्था का तिरस्कार
 किया गया है ।
 बिशेष—भार्कस का मत है कि श्रमिकों को पूँजीपतियों के साथ सभ्य करने
 रहना चाहिए और इस प्रकार पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्था का पूरी तरह से
 नाश करना चाहिए ।
 भार्कसवादी—वि० [हिं० भार्कसवाद] भार्कसवाद-सम्बन्धी । भार्कसवाद का ।
 जैसे—भार्कसवादी दृष्टिकोण ।
 पुं० वह जो भार्कसवाद के सिद्धान्तों का अनुयायी हो ।
 भार्कड—पुं० [अं०] बाजार । हूट ।
 भार्क—पुं० [सं०/भार्ग बा/मूष + भञ्] ? आने जाने का रास्ता । पथ । २. राह ।

२. कोई ऐसा द्वार, माध्यम या साधन जिसका अनुसरण, पालन या व्यवहार
 करने से कोई अविश्राम या कार्य सिद्ध होता हो । ३. मद्भार । गुप्त ।
 ४. अविश्राम, नृप और सगीत की एक उच्च कौटि की सीली । ५. गंधर्ब
 सगीत की वह शाखा जो देवी सगीत के संयोग से निकली थी । ६. मूष-
 शिरा नक्षत्र । ७. मार्गशीर्ष या अग्रहण नाम का महीना । ८. विष्णु ।
 ९. कल्पूरी । १०. अपामार्ग । चिचड़ा ।
 वि० मूष-सम्बन्धी । मूष का ।
 भार्क—स्त्री० [सं० भार्क + क्] मार्गशीर्ष या अग्रहण का महीना ।
 भार्क-कर—पुं० [सं० व० तं०] बहु कर जो यात्री को किसी विशिष्ट मार्ग से
 होकर जाने के बदले में देना पड़ता है । पथ-कर । (टोल टैक्स)
 भार्कण—पुं० [सं०/भार्क (खोजना) + ल्युट्—अन] ? अन्वेषण ।
 खोज । २. प्रेम । ३. याचना । ४. याचक । मिस्रमगा । ५. तीर । बाण ।
 भार्कणा—स्त्री० [व/भार्ग + णिच् + युच्—अन, + टाप्] ? अन्वेषण ।
 २. याचना ।
 भार्कव—पुं० [सं० मार्ग/वा (देना) + क + केवट । मल्लाह ।
 भार्क-वशक—पुं० [सं० व० तं०] ? मार्ग दिखलानेवाला व्यक्ति । २.
 वह जो यात्रियों, श्रमण करनेवालों का पथ-प्रदर्शन करता हो ।
 भार्क-वशक—पुं० [सं० व० तं०] ? रास्ता दिखलाना । २. पथ-प्रदर्शन ।
 भार्क-वैशिक—पुं० [सं०] सगीत में, कान्टिकी पद्धति का एक राग ।
 भार्क-वैशो—पुं० [हिं०] सगीत शास्त्र की दृष्टि से आज-कल का वह प्रचलित
 सगीत जिसमें ध्रुपद, अल्लाह, टप्पा, ठुमरी आदि सम्मिलित हैं ।
 भार्क-वेनु (क)—पुं० [सं० व० तं] चार कोंस की दूरी । एक योजन ।
 भार्क—पुं० [सं० मार्ग + पा (रखा करना) + क] मार्ग अर्थात् रास्ते का
 निरीक्षण करनेवाला अधिकारी ।
 पुं० = मार्गण (तीर) ।
 भार्कपति—पुं० = मार्गण ।
 भार्क-राग—पुं० [सं०] सगीत-शास्त्र में प्राचीन राग, जिसे श्रुदराम भी
 कहते हैं । जैसे—मैरव, मेघ आदि राग । (देखी रागों स निम्न)
 भार्क—पुं० [सं०] ? अयोग्यता माता और निषाद पिता से उत्पन्न एक
 प्राचीन मकर जाति । २. उक्त जाति का व्यक्ति ।
 भार्कवली—स्त्री० [सं० मार्ग + मपुण, म—ञ् + डीप्] एक देवी जो मार्ग
 चलनेवालों की रक्षा करनेवाली मानी गई है ।
 भार्कशिर—पुं० = भार्गशीर्ष ।
 भार्गशीर्ष—पुं० [सं० मूषशीर्ष + अण् + डीप्, भार्गशीर्षी + अण्] अग्रहण का
 महीना ।
 भार्गशीर्षकार—पुं० [सं० भार्ग-अधिकार, व० तं०] वह अधिकार जो किसी
 मार्ग पर आने-जाने अथवा अपने आदर्शी या चीजें मंजने-संगाने आदि
 के संबंध में किसी विशिष्ट व्यक्ति, देश आदि को प्राप्त होता है ।
 (राइट आफ पैसेज)
 भार्क—पुं० [सं० मूष + ङक—इक] ? पथिक । यात्री । २. मूर्गों
 को मारनेवाला व्याध ।
 भार्ग (गिन)—पुं० [सं० भार्ग + इति] मार्ग पर चलनेवाला व्यक्ति ।
 बटोही । यात्री ।
 स्त्री० सगीत में एक मूछंडा जिसका स्वर-धाम इस प्रकार है—नि, स,
 रे, ग, म, प, ध । म, प, ध, नि, स, रे, ग, म, प, ध, नि, स ।

भाष्य—पुं० [अं०] १. बनेजी बर्ष का तीसरा मास जो फरवरी के बाद और ब्रह्म से पहले पड़ता है और सत्रा ३१ दिनों का होता है। २. सैनिकों आदि का बल शीघ्रकर किसी उद्देश्य से आगे बढ़ना या चलना। ३. सेना का बृच या प्रस्थान।

भाष्य—पुं० [सं०/मृच (शुद्ध करना)+णिच्+अच्] १ विष्णु। २. बोधी। ३. [✓ मृच+भच्] भाज्यं।

भाष्यन्—वि० [सं० ✓ मृच्+णिच्+भृच्—अच्] भाज्यं करनेवाला।

भाष्यन्—स्त्री० [सं०/मृच् (शुद्ध करना)+णिच्+ल्यट्—अन्] १. दोग, दोष आदि दूर करने साफ करने की क्रिया या भाव। सफाई। २. अपने ऊपर जल छिड़ककर अपने आपकी शुद्ध करना। ३. मूल, दोष आदि का परिहार। ४. शोध नामक भूध।

भाष्यन्ता—स्त्री० [सं०/मृच्+णिच्+भृच्—अन्,+टाप्] १ भाज्यं करने की क्रिया या भाव। सफाई। २. क्षमा। माफी।

भाष्यन्ती—स्त्री० [सं० भाज्यन्+ङीप्] १. काङ्ग। बुहारी। २ संगीत में मध्यम स्वर की एक धुति।

भाष्यनीय—[सं०/मृच्+णिच्+अनीयर्] अजिन्।
वि० जिसका भाज्यं होना आवश्यक या उचित हो। भाज्यं के योग्य।

भाष्यर्—पुं० [सं०/मृच्+आन्, [स्त्री० भाज्यर्] १ बिल्ली। २ लाल चोटे का पेड़। ३. प्रति सारिका।

भाष्यर्क—पुं० [सं० भाज्यर्+कन्] मोर।

भाष्यर्कणिका—स्त्री० [सं० भाज्यर्+कण, बं० सं०, ङीप्+कन्, +टाप्, ह्रस्व] बामुडा (दुर्गा का एक रूप) का एक नाम।

भाष्यर्णवा—स्त्री० [सं० बं० सं० टाप्] मुद्रमर्णा।

भाष्यर्णवा—पुं० [सं० बं० सं०] एक प्रकार का बुरे लगानेवाला घोड़ा।

भाष्यर्णवह—पुं० [सं० भाज्यर्+अवि, बं० सं०, षच्+कन्] एक प्रकार का रत्न। (की०)

भाष्यर्णी—स्त्री० [सं० भाज्यर्+ङीप्] १ बिल्ली। २ कस्तूरी। ३ गन्ध-नाकुली।

भाष्यर्णी—स्त्री० [सं० भाज्यर्+हिं० टाढी] सपूर्ण जाति की एक रागिनी जिससे सब कोमल स्वर लगते हैं।

भाष्यर्णीय—पुं० [सं० भाज्यर्+ङ—ईय] १. बिल्ली। २ शुद्ध।
वि० भाज्यं करनेवाला।

भाष्यर्ण्य—पुं०=भाज्यर्।
भाष्यर्णीय—पुं० [सं०/मृच्+अनीयच्,] १ बिल्ली। २. शुद्ध। ३ शिव।
४. एक प्राचीन ऋषि।
वि०=भाज्यर्णीय।

भाष्यन्त—पुं० ङ० [सं०/मृच् (शुद्ध करना)+णिच्+न्त] जिसका भाज्यं हुआ हो या किया गया हो। साक या स्वच्छ किया हुआ।

पुं० एक प्रकार का शीघ्रचर्ष जो सही, कपूर, चीनी, सहज और मिर्च आदि मिलाकर बनाया जाता था।

भाष्यन्त—पुं० [सं० मृत-अध्, कर्म० सं०, परक्य, -अच्, वृद्धि] १. सूर्य। २. आक। मवार। ३. सुन्दर। ४. सोनामक्खी।

भाष्यन्त-बल्लभा—स्त्री० [सं० बं० सं०] १. सूर्य की पत्नी। २. छाया।

भाष्यन्त-पुं० ङ० [सं० मृत्तिका+ङ्क—इक] मिट्टी से बना या बनाया हुआ।

पुं० १. सकोरा। २. पुरवा।
मासिकावत—पुं० [सं०] १. पुराणानुसार वेदि राज्य का एक प्राचीन नगर। २. उक्त नगर के आसपास का प्रदेश। ३. उक्त देश का निवासी।

भाष्यन्त—पुं० [सं० मर्त्य+भृच्] १. मर्त्य होने की अवस्था या भाव। मरण-शीलता। २. धार्मिक मल।

भाष्यन्त—पुं० [सं० मृत्-अन्, बं० सं०, -अच्] १. मृदग बजानेवाला। २. नगर। शहर।

भाष्यन्तिक—पुं० [सं० मृदग; ठक्—इक] वह जो मृदंग बजाता हो। मृद-गिया।

भाष्यन्त—पुं० [सं० मृदु+अच्] १ मृदु होने की अवस्था या भाव। मुहुता। २ दूसरे की दुखी देखकर दुःखी होने की वृत्ति। हृदय की कोमलता और सरसता। ३. अहंकार आदि दुर्गुणों से रहित होने की अवस्था या भाव। ३. एक प्राचीन जाति।

भाष्यन्तिक—वि० [सं० मृदुका+अच्, वृद्धि] १ अमूर-संबंधी। २. अमूर से बना या बनाया हुआ।

स्त्री० [सं०] अमूरी शराब।

भाष्यन्त—अभ्य०, स्त्री०=भासरत्त।

भाष्यन्तिक—वि० [सं० मर्मन्, ठक्—इक,] [भाव० मर्मिकता] १. मर्म-मन्त्रधी। मर्म का। २. मर्म-स्थान (हृदय) पर प्रभाव डालने अथवा उसे आंदोलित करनेवाला। ३. किसी विषय का मर्म अर्थात् निहित तत्त्व के आधार पर या विचार से होनेवाला। जैसे—मार्मिक विवेचन।

भाष्यन्तिकता—स्त्री० [सं० मर्मिक तत्त्व+टाप्] १ मर्मिक होने की अवस्था या भाव। २. किसी विषय, शास्त्र आदि के गुड़ रहस्यां की अभिमता या अच्छी जानकारी।

भाष्यन्त—पुं० [अ०] सेना का एक उच्च अधिकारी।

भाष्यन्त-स्था—पुं० [अ०] १. वह आदेश जिसके द्वारा किसी देश की शासन-व्यवस्था सेना को सौंपी जाती है। २. सैनिक व्यवस्था या शासन। फौजी कानून या हुकुमत।

विषय—जब देश में विषय उपद्रव आदि की आशका होती है तब वहाँ से साधारण नागर शासन हटाकर इसी प्रकार का शासन कुछ समय के लिए प्रचलित किया जाता है।

भाष्यन्त—पुं०=भाष्यन्त।

भाष्यन्त—पुं० [?] एक प्रकार का साग जो पानी में होता है।

भाष्यन्त—पुं० [सं० मां। रत्न, -ल, पृषो०] १ सेन। २. कपट। छल। ३. वन। जगल। ४. हुरताल। ५. विष्णु। ६. एक प्राचीन अनार्य या म्लेच्छ जाति। ७. एक प्राचीन देव।

स्त्री० [सं० माता] १ गले में पहनने की माला। २. वह रस्सी या सूत की डोरी जो घरले में बेलन पर से होकर जाती है और टेकुए को घुमाती है। ३. पक्ति। श्रेणी। ४. बूझ। समूह। उदा०—बाल मृगनि का माल सधन वन मूलि परी ज्यी।—नन्ददास।

[पुं०—मल्ल (पहलवान)।

पुं० [अ०] १. मर्यक ऐसी मूल्यवान वस्तु जिसका कुछ उपयोग होता हो और इसी लिए जिसका क्रय-विक्रय होता हो। जैसे—खेतों की उपज, वृक्षों के फल, घर का सामान, खनिज पदार्थ, गहने-कपड़े आदि।

पव—मालकाना, मालगाड़ी, मालगोदाम ।

गुहा—माल काटमा, कोरमा या भारता=अवृत्त रूप से कही से मूल्यवान पदार्थ या लगानि लेकर अपने अधिकार में करना ।

२. धन-संपत्ति । स्वया-पैसा । दौलत ।

पव—माल-टाल, मालवार, माल-मता ।

३. वह धन जो राज्य को कर, लगान आदि के रूप में प्राप्त होता है । राज्यत्व ।

पव—मालगुजारी ।

४. किसी पदार्थ का वह मूल अथवा तत्त्व जो वस्तुतः उपयोगी तथा मूल्यवान हो । जैसे—दस अंगुठी का माल (अर्थात् चाँदी या सोना) अच्छा है । ५. मन्द्य और सुन्द्य भोजन । ६. युवती और सुन्दरी स्त्री । (आचार्य) ७. गणित में वर्ग का पात । वर्ग अंक ।

माल-कतानो—स्त्री० [हि० माल । कतानो] एक प्रकार की लता जिसके बीजों का तेल निकलता है । २. उक्त लता के दाने या बीज या औषध के काम आते हैं और जिसमें से एक प्रकार का तेल निकलता है ।

मालक—पु० [स० √ मल् (धारण) । षन्तु—अक] ? स्थल-पथ । २. नीम ।

[पु०]=मालिक ।

मालका—स्त्री० [स० मालक 'टाप' माला ।

मालकोला—पु० [स० माल-कोला, ष० तं० अणु] संगीत में ओष्ठ्य जाति का एक राग जिसे कोशिक गम भी कहते हैं तथा जो रात के दूसरे पहर में गाया जाता है ।

मालकंधम—पु० [स० मल । सभ] ? एक प्रकार की भारतीय कसरत या व्यायाम जो लकड़ी के खम्भे या डबे के सहारे किया जाता है और जिसमें कसरत करनेवाला अनेक प्रकार के वाय-कार ऊपर बढ़ता और कला-बाजिया करता हुआ नीचे उतरता है । कुछ लोच्य लकड़ी के खम्भे की जगह छत में लटकाने हुए लम्बे बेल का भी सहारा लेते हैं । २. वह लम्बा जिसके सहारे उक्त प्रकार की कसरत या व्यायाम किया जाता है ।

मालकाना—पु० [अ० माल । फा० खान] ? बहुमूल्य वस्तुएँ में मालकर रखने का स्थान । २. भंडार । ३. गोदाम ।

माल गाड़ी—पु० [हि० माल । गाड़ी] रेल में वह गाड़ी (सवारी-गाड़ी से मिस) जिसमें केवल माल-असबाब भरकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाया जाता है ।

मालगुजार—पु० [अ० मालगुजार] ? मालगुजारी देनेवाला व्यक्ति । २. जमींदार ।

मालगुजारी—स्त्री० [फा०] ? जोती-बौद्ध जनेवाणी जमीन का वह कर जो सरकार को दिया जाता है । लगान । २. मालगुजार होने की अवस्था या भाव ।

मालगुजारी—स्त्री० [स० मालगुजर । डी.ए.] सपूर्ण जाति की एक रागिनी जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं ।

माल गोदाम—पु० [हि० माल । गोदाम] ? वह स्थान जिसमें व्यापारी वस्तु का भंडार रखते हैं । गोदाम । २. रेलवे स्टेशन का वह स्थान जहाँ से मालगाड़ी में माल चढ़ाया और उतारा जाता है ।

माल गाभा—पु० [?] एक प्रकार का आम (फल) ।

मालकचक्र—पु० [सं०] कूहा ।

मालटा—पु० [मालटा (टापु से)] मुसम्मी की जाति का एक प्रकार का बहिया फल और उसका पेड़ । यह पहले भूमध्यसागर के मालटा द्वीप से आता था पर अब भारत में भी होता है ।

माल टाला—पु०=माल-मता ।

मालति—स्त्री०=मालती ।

मालती—स्त्री० [स० √ मल् + अतिच् धीर्, + डीप्] ? एक प्रकार की लता । जिसमें वर्णा ऋतु में सफेद रंग के पुष्पित फूल लगते हैं । २. उक्त लता का फल । ३. छ. अक्षरो की एक प्रकार की वर्णवृत्ति जिसके प्रत्येक चरण में क्रम से एक नगण, दो अणण और एक रणण होता है । ४. मरिदा नामक छंद । ५. सबैया के मतगण्यद नामक मंत्र का पुस्तक नाम । ६. युवती स्त्री । ७. चंद्रमा की चाँदीनी । ज्योत्स्ना । ८. रात्रि । रात । ९. पाठा या पाठा नाम की लता । १०. जात्री या जायफल नामक वृक्ष ।

मालती-आर—पु० [सं० ष० तं०] सुहागा ।

मालती-माल—पु० [सं० मं० तं०] सुहागा ।

मालती-दोही—स्त्री० [हि० मालती । दोही] मपूर्ण जाति की एक रागिनी जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं ।

मालती-पत्रिका—स्त्री० [सं० ष० तं०] जायिणी ।

मालती-कल्—पु० [सं० ष० तं०] जायफल ।

मालक—पु० [सं०] ? वाल्मीकीय रामायण के अनुसार एक प्रदेश का नाम जिसे शाक्यने उच्चार दिया था । २. एक प्राचीन अतार्य जाति ।

मालकह—पु० [देश०] ? पूर्वी बिहार के एक नगर का नाम । २. उक्त नगर और उसके आस-पास के स्थान में हानेवाला एक प्रकार का बहिया आम ।

मालकही—स्त्री० [हि० मालकह] एक प्रकार की नाव जिसमें माछी छप्यर के नीचे बैठकर उसे खेते हैं ।

पु० मध्यकाल में मालकह में बननेवाला एक तरह का कपड़ा ।

पु० मालकह-सवणी ।

मालका—पु०—मालकद ।

मालका—वि० [फा०] [माव० मालदारी] धनवान् । धनी ।

मालकंध—पु० [अ० मलकंधीप्] हिंद महासागर का एक द्वीपसूत्र ।

मालक—स्त्री०—मालिक ।

मालगुआ—पु० [हि० माल । स० गुआ] घी से तली हुई एक प्रकार की मीठी पूरी या पकवान ।

मालकरी—स्त्री० [हि० मालाबार] एक प्रकार की ईल ।

माल-मजिजा—स्त्री० [सं० ष० तं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का खेल ।

माल-भडारी—पु० [हि० माल-भडारी] मालगोदाम, भडार आदि का निरीषक ।

माल-भूमि—स्त्री० [सं० मल्लभूमि] नेपाल के पूर्व का एक प्रदेश ।

माल-मंथी—पु० दे० 'राज्यव्य मंत्री' ।

माल-मता—पु० [अ० माल । मताज] धन-दौलत । संपत्ति ।

मालय—हि० [सं० ष० तं०] ? मलय पर्वत का । २. मलय पर्वत पर होनेवाला ।

पु० ? चदन । २. व्यापारियों का हल । २. गरुड के एक पुत्र का नाम ।

मालव— $\sqrt{\text{मं}} \cdot [\text{सं} \cdot \text{माल} + \text{व}]$ १. आधुनिक मध्य प्रदेश का एक मू-भाषण की मध्य तथा प्राचीन काल में एक स्वतन्त्र राज्य था। मालव देश। २. उत्तर देश का निवासी। ३. सर्वात में एक राज जो मैरथ का पुत्र कहा गया है। ४. संकेत लोच।
वि० मालवा नामक देश का।
मालवबन्ध—वि० [सं० मालव + बन्ध + अक] मालव-सम्बन्धी। मालवे का।
पु० मालव देश का निवासी।
मालवबन्धो—स्त्री० [सं० वं० तं०] संपूर्ण जति की एक रागिनी जो सायकाल गाई जाती है।
मालवा—पु० [सं० मालव] आधुनिक मध्यप्रदेश के अंतर्गत एक मू-भाग।
मालव।
स्त्री० एक प्राचीन नदी।
मालविका—स्त्री० [सं० मालवा + ठक् + टाप्] नितोष।
मालवी—स्त्री० [सं० मालव + अणु + ङीप्] १. संघत में, श्री राग की एक रागिनी। २. पाड़ा नाम की लता। ३. मालवे की बोली।
वि०=मालवीय।
मालवीय—वि० [सं० मालव + छ + ईय] मालव देश-सम्बन्धी। मालव का।
पु० मालव देश का निवासी।
मालवी—स्त्री० =मालवन्धी।
मालवी—स्त्री० =मालवन्धी।
माला—स्त्री० [सं० मा=सोमा/√ला (लेना) + क, + टाप्] १. एक ही पत्निय या सोम में लगी हुई बहुत सी चीजों की स्थिति। अवली। पत्निक। जैसे—पर्वत-माला। २. एक तरह की चीजों का निरन्तर चलता रहने-बाला क्रम। जैसे—पुस्तक माला। ३. फूलों का हार। गजरा। ४. फूलों के हार की तरह बनाया हुआ सोने चाँदी, रत्नों आदि का हार। जैसे—मोतियों या हीरों की माला। ५. कुछ विविध प्रकार के दानो या मनको का हार जो धार्मिक दृष्टिको से पहना जाता है। जैसे—तुलसी की माला, श्राद्ध की माला अर्थात् जिसके दानो या मनको की गिनती के हिसाब से इष्टदेव के नाम का जप किया जाता है।
महा—माला जपना या करेना = हाथ में माला लेकर इष्टदेव का नाम जपना। (किसी के हाथ की) माला जपना = हरदम या प्राय किसी का नाम लेते रहना अथवा चर्चों या ध्यान करते रहना। ६. समूह। झुंड। जैसे—मेघमाला। ७ एक प्राचीन नदी। ८ जूत। ९. भूईं आँखला। १०. काठ की एक प्रकार की कटौरी जिसमें उदरम या तेल रखकर दरीर पर मसा या स्नाना जाता है। ११. उपजाति छद का एक मंत्र जिसके प्रथम और द्वितीय चरण में जगण, तयण, जगण और अंत में दो गुरु तौसर और चौबे चरण में दो तयण फिर जगण और अंत में दो गुरु होते हैं।
पु० [अ० महल, हिं० महला] मकान का लंबा। (महाराष्ट्र) जैसे—मकान का चौथा माला।
मालाकांड—पु० [सं० वं० सं०] १. जपामाला। चिचड़ा। २. एक प्रकार का मूल्य।
माला-कंड—पु० [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार का कंड जो वैश्वक में वैश्वक पीपन, मूल्य और गंधमाला रोग को हटानेवाला तथा घात और कृक का नाशक कहा गया है। कंचलता। बल-कंड।

मालाकार—पु० [सं० माला/√क + अणु] [स्त्री० मालाकारि] १. पुराणा-नुसार एक वर्णसंकर जाति।
विशेष—बहुवैश्वंत पुराण के अनुसार यह जति विश्वकर्मा और घृष्टा से उत्पन्न है। परासर पद्धति के अनुसार यह देकिन और कर्मकार से उत्पन्न है।
२. माली।
मालाकृति—वि० [माला-आकृति, वं० सं०] माला के आकार का। १०. 'रज्जुबक'।
मालागिरी—वि०, पुं० =मलयागिरि।
मालातुम—पु० [सं० मध्य० सं०] एक तरह की सुगन्धित घास। मूलतुण।
माला शेषक—पु० [सं० वं० तं०] साहित्य में, दीपक अलंकार का एक मंत्र जिसमें किसी वस्तु के एक ही गुण के आधार पर उत्तरोत्तर अनेक वस्तुओं का संबंध बतलाया जाता है। जैसे—रस से काव्य, काव्य से बाणी, बाणी से रसिक और रसिक से समा की घोषणा बढती है।
माला-बुद्ध—स्त्री० [सं० उपनि० सं०] एक प्रकार की द्रव जिसमें बहुत सी गठि होती है। गंधर्वां।
मालावर—पु० [सं० वं० सं०] सगह अशरो का एक वार्षिक वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में न्वाण, सगण, जगण फिर सगण और तगण में एक लघु और फिर गुरु होता है।
मालाप्रस्थ—पु० [सं०] एक प्राचीन नगर।
मालाकल—पु० [सं० वं० सं०] श्राद्ध।
माला मणि—पु० [सं० वं० सं०] श्राद्ध।
मालामाल—वि० [फा०] जिसके पास बहुत अधिक माल या धन हो। धन-धान्य से पूर्ण। संपन्न।
माला रामो—स्त्री० [हिं०] सर्वात में कल्याण ठाठ की एक रागिनी।
मालालो—स्त्री० [सं० माला/अल + अणु + ङीप्] पुष्पका। अमबरवा।
मालावर्तो—स्त्री० [सं० माला + मणुप, वल, ङीप्] एक प्रकार की सकर रागिनी जो पचम, हम्मरी, नट और कामोद के सव्याय में बनती है। कुछ लोग इसे मेघराज की पुत्रवधू मानते हैं।
मालिक—पु० [सं० माला + ठक् + इक] १. मालाई/मनानेवाला। माली। २. रजक। कौमी। ३. एक प्रकार का पत्थी।
पु० [अ०] [स्त्री० मालिका] १. बहु जो सब का स्वामी हो और सब पर अधिकार रखता हो। २. ईश्वर। जैसे—जो मालिक की भरजी होगी, वही होगा। ३. संपत्ति आदि का स्वामी। अध्यक्ष। ४. विवाहित स्त्री का पति। शोहर।
मालिका—स्त्री० [सं० माला + क्त + टाप् इत्य] १. पत्निक। श्रेणी। २. फूलों आदि की माला। ३. गले में पहनने का एक प्रकार का गहना। ४. पक्के मकान के ऊपर का कोठा। अटारी। ५. अगूर की शराव। ६. मदिता। शराव। ७. पुत्री। बेटी। ८. चमेली। ९. अलसी। १०. माली आदि की स्त्री। मालिन। ११. मूरा नामक गंध इव्य। १२. सातवा।
स्त्री० फा० 'मालिक' का स्त्री०। स्वामिनी।
मालिकाना—पु० [अ० मालिक + फा० आन.] १. स्वामी का अधिकार या स्वत्व। मिलकियत। स्वामित्व। २. वह कर या धन जो मध्ययुग में जमीन के मालिक या जमींदार को किसानों आदि से आधिकारिक रूप में प्राप्त होता था।

वि० १. मालिको का । २. मालिको जैसा ।
 अन्व० मालिक के रूप में । मालिक की तरह ।
 अन्व० वि० मालिक की भाँति । जैसे—मालिकाना नीर पर ।
 वि० मालिक या स्वामी का । जैसे—मालिकाना हक ।
मालिकी—स्त्री० [का० मालिकि । ई० (प्रथ०)] मालिक होने की अवस्था या भाव । स्वाभिव्य । मालिपत्त ।
 वि० मालिक या स्वामी का । जैसे—मालिकी माल ।
मालित—पुं० इ० [स० माला । इत्पुं०] जिसे माला पहनाई गई हो ।
 २. जो घेर लिया गया हो ।
मालिन—स्त्री० [हि० माली] १. माली की स्त्री । २. माली का काम करनेवाली स्त्री ।
मालिनी—स्त्री० [स० मालिनी] मगीत में एक प्रकार की गायिनी ।
मालिनी—स्त्री० [स० माला + इनि० दीप्] १. माली जाति की स्त्री ।
 मालिन २. चढ़ा नगरी का एक नाम । ३. गौरी । ४. गंगा ।
 ५. जवाला । ६. कल्यारो । ७. स्कन्द की सप्त मातृकाओं में से एक । ८. साहित्य में, मालिना नाम की कृति । ९. एक प्रकार का वायिक वृत्त जिसके प्रत्येक पाद में १५ अक्षर होते हैं । पहले ६ वर्ण, दूसरे और तेरहवाँ लघु और शेष गुरु होते हैं (न न म य य) । इसे कोई कोई मायिक भी मानते हैं । १०. मार्कंडेय पुराण के अनुसार रीच्य मनु की माता का नाम । ११. हिमालय की एक प्राचीन नदी ।
 कहते हैं कि इसी के तट पर मेनका के गर्भ में शकुन्तला का जन्म हुआ था ।
मालिन्य—पुं० [स० मलिन 'प्यञ्' ण वा, वृद्धि] १. मलिन होने की वस्था या भाव । मलिनता । मँजपत । २. अवहार । अरेग ।
मालिन्यत—स्त्री० [अ०] १. माल का शारंगिक मूल्य । कीमत ।
 २. धन । सर्पति । ३. मृत्यवान् पदार्थ । कीमती चीज ।
मालिन्य—पुं० [दश०] माल आदि बोधते समय दो जानवाली गन्धी में एक विशेष प्रकार की गंध । (ल०)
 पुं० [हि० माल] मालव्यूवारी । (परिचय)
मालिषान्—पुं०=माल्यवान् ।
मालिषा—स्त्री० [का०] १. शरीर पर तेल आदि मलने की क्रिया या भाव । मर्दन । २. रक्त-मचार आदि के लिए शरीर के किसी अंग पर बार-बार हाथ से मलने की क्रिया ।
मालु—स्त्री० **मालिष कर्त्ता**—उपकारि या मित्रकीर्त्ती आना । जैसे—उसे देखकर मेरा तो जो मालिष करने लगा ।
माली (किन्तु)—वि० [स० माला + इनि] १. मालिनी जो माला धारण नित्ये हो ।
 पुं० १. वाग्मीकीय रामायण के अनुसार मुकेश राक्षस का पुत्र जो माल्यवान् और सुमाली का भाई था । २. राजीव-गण नामक छन्द का दूसरा नाम ।
 पुं० [स० माला । इनि, दीप्, न-लोण, मालिन्तु, प्रा० मालियु] १. स्त्री० मालिन, मालिनि, मालिनी १. बाग को सींचने और पीछी को ठीक स्थान पर लगानेवाला व्यक्ति । बागवान । २. हिन्दुओं में उषन काम करनेवाली एक जाति । ३. उक्त जाति का व्यक्ति ।
 स्त्री० [हि० माला] छोटी माला । सुमलती । उदा०—गननारी माली पकाई और न कष्ट उपाय—बिहारी ।

वि० [अ०] माल अर्थात् धन या सर्पति से सबब रखनेवाला । अर्थे नववी । आधिक ।
माली कूलिया—पुं० [अ०] एक प्रकार का मानसिक रोग जिसमें रोगी प्रायः लिप्य या दुःखी और सन्नक रहता है । उन्मत्त ।
माली गौड़—पुं०=माल्य-गौड़ । (राग)
मालीद—पुं० [अ० मालिबंदा] एक प्रकार की उज्ज्वल और चमकदार धातु जो चाँदी से अधिक कड़ी होती है ।
मालीसा—पुं० दं० 'मलीसा' ।
माल्य—पुं० [म०/यु० (प्राप्त कर्त्ता) +उत्पु० वृद्धि, र-ल] एक प्रकार की लता जो पेड़ों से लिपटती है । पत्रलता ।
माल्यक—पुं० [स० माल्य+कन्] १. काली तुलसी । २. मद्रमेले रंग का एक प्रकार का राजहम ।
माल्यवान्—पुं० [स० माल्य+वा (रखना) +स्यु०-अन] १. एक प्रकार का साग । २. पुराणानुसार आठ प्रमुख नावों में से एक । ३. महापथ ।
माल्यवानी—स्त्री० [स० माल्यवान् +ङीप्] एक प्रकार की लता ।
माल्यवत—स्त्री० [अ०] १. जानकारी । ज्ञान । २. किसी बात या विषय की अच्छी और पूरी जानकारी ।
माल्युर—पुं० [स० मा/यु० (काटना) +र] १. वेद का पेड़ । २. कथिय । कथ ।
माल्यु—वि० [अ०] १. (बात, वस्तु या विषय) जिसका इत्तम अर्थात् ज्ञान हो चुका हो । ज्ञान हुआ । ज्ञात । सिद्धित । प्रकट । स्पष्ट ।
 पुं० गढ़ान का प्रधान अधिकारी या अफसर । (लघ०)
मालीषमा—स्त्री० [स० माला-उपमा उपमि० स०] माहित्य में उपमालिकार का एक भेद जिसमें एक उपमये के (क) एक ही धर्मवाले अथवा (ख) विभिन्न धर्मवाले अनेक उपमान बतलाने जाते हैं ।
माल्य—पुं० [स० माला । प्यञ्] १. फूल । २. माला । ३. निर पर लपेटे जानेवाली माला ।
माल्यक—पुं० [स० माल्य+कन्] १. दमनक । दीना । २. माछा ।
माल्य-पुण्य—पुं० [स० इ० स०] मन का पीषा ।
माल्यवत्—पुं०=माल्यवान् ।
माल्यवत्—वि० [न० माल्य+मतुप, वल्] १. स्त्री० माल्यवती जो माला पहने हो ।
 पुं०=माल्यवान् ।
माल्यवती—स्त्री० [न० माल्यवत्+ङीप्] पुराणानुसार एक प्राचीन नदी ।
 वि० हि० माल्यवत् का स्त्री० ।
माल्यवान् (वत्)—पुं० [स० इ० माल्यवत्] १. पुराणानुसार एक पर्वत जो केतुमाल और इलान्तु वर्ण के बीच का गीमा-पर्वत कहा गया है ।
 २. मुक्ति का पुत्र एक राक्षस जो नववर्ष की कथा देववती से उत्पन्न हुआ था ।
 वि० [स० माल्यवत्] १. स्त्री० माल्यवती जो माला पहने हो ।
माल्य—पुं० [स० मल्ल+अञ्] १. एक वर्ण सङ्कर । २. दे० 'मल्ल' ।
माल्यकी—स्त्री० [न०/मल्ल+कन्+ङीप्] १. मल्लो की विद्या या कला । २. मल्लो का जोड़ ।
माल्यी—पुं०=मल्ल ।
 स्त्री०=माला ।

भावसत †—पु०—महावसत ।

माखवा†—अ०—अमासा (किल्ली के बीच में समाना) ।

माखवा—पु० [?] [स्त्री० माखली] १ महाराष्ट्र राज्य के पहाड़ों में रहनेवाली एक खेड़ा जाति । २ उत्सव जाति का व्यक्ति ।

माखली—वि० [हिं० माखला] माखलों से संबंध रखनेवाला । माखली का । जैसे—माखली गाँव, माखली दल ।

स्त्री० 'माखला' की स्त्री ।

†पु०—माखला ।

माखस†—स्त्री०—अमावस ।

माखा—पु० [सं० मख; हिं० माई] १ माई । पीच । २ किसी चीज का सार-भाग । सत ।

मुहा०—(किल्ली का) भावा निकालना—बूढ़ मारना-पीटना ।

३. बहू प्रथम जो गेहूँ आदि की भिगोरकर या कच्चा मलकर निचोड़ने से निकलता है । ४. पूष का खोवा । ५. प्रकृति । ६ अडे के अंदर की जड़ें । ६. बदन का तेल या ऐसी ही और कोई भीज जिससे बूखटी बीजों का सार भाग निकालकर इत्र तैयार करते हैं । इत्र की जमीन ।

७ एक प्रकार का गाढ़ा लसदार सुगंधित द्रव्य जिसे तामाक में डालकर उसे सुगंधित करते हैं । ८. किसी प्रकार का मसाला या सामग्री । ९. हीरे की बुकनी जिससे मलकर धोने-बाँधी के गहने चमकाते हैं ।

माखासी†—स्त्री०—अमासी ।

माखीब—पु० [सं० भातु-पित्त] माता-पिता । (राज०) उदा०—माखीब प्रजाद मेदि बोलै मुखि ।—प्रियोरराज ।

माखा—पु० [सं० माष से फा०] उरद ।

मुहा०—मास मारना—मन पककर किसी को बस में करने के लिए उस पर उरद चेंकना । उदा०—भेड़ बन जाजोमे मारेयी जो दो माषा तुम्हे ।—जान साहब ।

पु० [सं० महाशय] १ महाशय । २. बंगाली ।

माशा अल्लाह—अब्द० [अ०] एक प्रसलाकष पद जिसका अर्थ है—बाहू क्या कहना है ! बहुत अच्छे या बुरा कहने ।

माशा—पु० [सं० माष, जद मष, माहू] आठ रस्ती मान की एक प्रकार की तील जिसका व्यवहार सोने, चाँदी, रत्नों और औषधियों के तीलने में होता है ।

†पु० [सं० महाशय] १ महाशय । २. बंगाली ।

माशी—पु० [फा० माश—उरद] १. माष अर्थात् उरद की तरह का कालापन लिये लाल रंग । २. जमीन की एक नाप ।

वि० उरद प्रकार के रंग का ।

माशूका—पु० [अ० माशूक] [स्त्री० माशूका] लौकिक अथवा आध्यात्मिक प्रेम-पाप । मिय ।

माशूका—स्त्री० [अ० माशूक] प्रेम-पापी ।

माशूकाना—वि० [अ० माशूक+फा० आन] १. माशूक-संबंधी । माशूक का । २. माशूक अर्थात् सुन्दरी तिथियों या प्रेयसियों की तरह का ।

माशूकी—स्त्री० [फा०] माशूक होने की अवस्था या भाव । प्रेम-पावता ।

माष—पु० [सं०/मप (मारना)+मप] १. उरद । २. माषा नामक तील । ३. शरीर पर होनेवाला मास ।

वि० मुहं ।

४—४५

† स्त्री०—माख ।

माषक—पु० [सं० माष+कन्] १ माषा नाम की तील । २. उरद । माष ।

माष-तेल—पु० [सं० प० त०] वैद्यक में एक प्रकार का तेल जो अर्द्धांग, कंठ आदि रोगों में उपयोगी माना जाता है ।

माषना†—अ०—माषना (मुड़ होगा) ।

माष-मक्षिका—स्त्री० [सं० ब० स०, +कन्+टाप्, इत्थ] माषपर्णी ।

माष-मर्षी—स्त्री० [सं० ब० स०, झीप्] जंगली उड़क ।

माष-योनि—स्त्री० [सं० ब० स०] पापद ।

माष-मर्दी—स्त्री० [सं० थ० त०] उरद की बनी हुई बड़ी । (दे० 'बर्दी') ।

माषाद—पु० [सं० माष+अप् (असज करना)+अप्] कछुआ ।

माषासा—पु० [सं० माष+अप् (खाना)+अप्] घोड़ा ।

माषीब—पु० [सं० माष+स—ईन] माष या उरद का खेत ।

माष्य—पु० [सं० माष+अप्] माष या उरद बोने योग्य खेत । मषार ।

माष्—पु० [सं०/मा (मानना)+अप्] १. बड़मा । २. महीना । मास ।

मास†—पु० [सं०/मष् (परिष्कार)+मष्] काल का एक विभाग जो वर्ष के बारहवें भाग के बराबर होता है । महीना ।

मिषोष—मास या महीना साधारणतः ३० दिनों का माना जाता है; परन्तु बाँद, सौर आदि गणनाओं के अनुसार कभी-कभी एक दिन अधिक या कम का भी होता है । इसके सिवा नासब मास और सावन मास भी होते हैं । जिनका विवेचन उक्त शब्दों के अन्तर्गत मिलेगा ।

एष—अधिमास, बस-मास ।

†पु०—मास (गोष्ठ) ।

मासक—पु० [सं० मास+कन्] महीना । मास ।

मासक—पु० [सं० मास+क (जानना)+क] १. दायरुह नामक पत्ती । बनुमुरी । २. एक प्रकार का हिरन ।

मास-माला—पु० [सं० ब० स०, +टाप्] एक प्रकार का बाजा ।

मासवा†—अ० [सं० मियम हिं० मीसना] मिलना ।

†सं०—मिथाना ।

मास-कल—पु० [सं० प० त०] गणित ज्योतिष में, किसी की जन्म-कुंडली के अनुसार किसी एक महीने का फल । (बर्ष-फल की तरह) ।

मास-भूत—पु० [सं० तु० त०] यह मनुष्य जिसे मासिक वेतन मिलता हो ।

मास-मान—पु० [सं० क० स०] वर्ष ।

मासर—पु० [सं०/मम् (परिष्कार)+मिष्+अरन्] १. एक प्रकार का मादक पेय पदार्थ जो चावल के माई और अंगूरों के छेड़े हुए रस से बनाया जाता था । २. कौयल ।

मास-स्तोत्र—पु० [सं० मय्य० स०] एक यज्ञ ।

माससि—पु० [सं० मास-अत्त, प० त०] १. महीने का अंत । २. महीने का अन्तिम दिन । ३. अभावस्था । ४. सौर सन्मार्ग का दिन ।

मासा—पु०—माषा ।

मासाधिष्—पु० [सं० मास-अधिष्, प० त०] यह वृह जो नास का स्वामी हो । मासेस ।

मासायुषासिक—वि० [सं० प० त०] प्रतिमास सप्तमी । प्रतिमास का ।

माहात्म्यिक—वि० [स० माम-अवधि, ब० म०,+कप्] जिसकी अवधि एक मास पर्यंत हो।

मासिक—वि० [स० मास+उठ्—इक] १ मास-सम्बन्धी। २. माम-मास पर नियमित रूप से होनेवाला।
पुं० दे० 'मासिक-धर्म'।

मासिक-धर्म—पुं० [स० कर्म० सं०] स्त्रियों की प्रति मास होनेवाला रज-स्राव।

मासी—स्त्री० [स० मात्पञ्च; पा० मातुष्ठा; प्रा० मउष्ठा] संबन्ध के विचार में माँ की पद्वत। मीठी।

मासीन—वि० [स० माम+स्रज्—ईन] एक महीने की अवस्थावाला।
मासुरकर्म—पुं० [स० मसुरकर्म+अण्] मसुरकर्म के गोत्र में उत्पन्न पुत्र।

मासुर—स्त्री० [स० मसुर+अण्+ङीप्] बीर-काष्ठ के काम में आनेवाला एक प्राचीन शास्त्र या औजार।

मासूक—वि० [अ०] १ जिसने कोई अपराध या दोष न किया हो। निरपराध। बेगुमाह। २ कल्प या पाप से रहित। ३ जो हूर प्रकार से असमर्थ, निर्धन तथा दया का पात्र हो। जैसे—मामूम बच्चा।

मासूमियत—स्त्री० [अ०] मासूम होने की अवस्था या भाव।

मासूर—वि० [स० मसूर+अण्] १. मसूर-सम्बन्धी। मसूर का। २. मसूर की आकृति का।

मासेष्टि—स्त्री० [स० मास+श्लिष्टि, मध्य० सं०] वह श्लिष्ट या यज्ञ जो प्रतिमास किया जाता हो।

मासीपवास—पुं० [स० मास+उपवास, मध्य० सं०] १. लगातार महीने भर तक किया जानेवाला उपवास। २. आश्विन शुक्ल ११ से कार्तिक शुक्ल ११ तक किया जानेवाला एक प्रकार का उपवास जिसका विधान गरुड पुराण में है।

मासीपवासी (सिन्)—पुं० [स० माम+उपवास, मध्य० सं०,+ईनि] वह जो मासीपवाम अर्थात् लगातार महीने भर तक उपवास करता हो।

मास्टर—पुं० [अ०] [भाव० मास्टरी] १ स्त्रीवादी। मासिक। २. अध्यापक। शिक्षक। ३. किसी कला, युग, विद्या या विषय में निष्णात व्यक्ति। ४ छोटे बच्चों के लिए एक प्रकार का प्रेमपूर्ण सम्बन्धन।

मास्टरी—स्त्री० [अ०] [अ० मास्टर+ई (प्रत्य०)] १ मास्टर अर्थात् अध्यापक का काम, पद या पेशा। २. किसी कला, हुनर आदि में निष्णात होने की अवस्था या भाव।

मास्तिक—वि० [स० मस्तिक+अण्] मस्तिक-सम्बन्धी। मस्तिक का। जैसे—मास्तिक-विषय।

मास्य—वि० [स० मास+यत्] महीने भर का। मासीन।

माह—अव्य० [स० मध्य, प्रा० मञ्ज] में।

पुं० [स० माघ, प्रा० माह] उदय।

‡पुं०—मास (महीना)।

‡पुं०—माघ (मास महीना)।

माहल—स्त्री० [स० महल] महल। बड़ाई।

माहात्म्य—पुं० [का०] १ चरित्र। २ चरित।

‡स्त्री०—माहाती।

माहात्म्यी—स्त्री० [का०] १ एक तरह की आतिसबाजी। २ चरित की रात का मजा लेने के लिए बैठने के लिए बनाया हुआ चतुर। ३ तरजू। ४ चक्रोत्तर। ५ एक तरह का कण्ठा।

वि० माहात्म्य अर्थात् चन्द्रमा की चरितों में बनाया या तैयार किया हुआ। जैसे—माहात्म्यी गुजजम्ब।

माहना—अ०—उमाहना (उमडना)।

माहर—पुं० [स० माहिर=इद्र] इद्रयान।

‡पुं०—माहिर का फल—ऐसा पदार्थ जो देवता में तो मुदर हो, पर दुर्गुणों से भरा हो।

‡वि०—माहिर (जानकर)।

माहरो—सर्व०—हमारो। (राज०)

माहली—पुं० [हिं० महल] १ महल अर्थात् अल्प पुर में काम करनेवाला सेवक। २ महली। खोजा। ३ नौकर। सेवक।

माहब—पुं०—माघव।

माहबार—अव्य० [का०] प्रतिमास। हर महीने।

पुं० हर महीने मिलनेवाला वेतन। मासिक वेतन।

वि० हर महीने होनेवाला। मासिक।

माहवारी—वि० [का०] मासिक।

*स्त्री० स्त्रियों का मासिक-धर्म।

माही—अव्य०—महै (बीच)।

माहाकुल—वि० [स० महाकुल+अण्] ऊँचे घराने में उत्पन्न। महाकुल।

माहाकुलीन—वि० [स० महाकुल+सञ्ज—ईन] बहुत बड़ा कुलीन।

माहाजनीन—वि० [स० महाजन+सञ्ज—ईन, श्लिष्ट] १ जो महाजन के लिए उपयुक्त हो। २ महाजन की तरह का।

माहात्म्यिक—वि० [स० महात्म्य+उठ्—इक] १ महात्मा-सम्बन्धी। महात्मा का। २ जिसकी विशेष महत्ता हो। महात्मा से युक्त।

माहात्म्य—पुं० [स० महात्म्य+अण्] १ महत् होने की अवस्था या भाव। गौरव। महिमा। २ आदर-सम्मान। ३ धार्मिक क्षेत्र में किसी पवित्र या पुण्य-कार्य से अथवा किसी स्थान के महत्त्व का वर्णन। जैसे—एकदाही माहात्म्य, काशी माहात्म्य।

माहात्मा—वि० [का०] माहाहार। मासिक।

माहि—अव्य० [स० मध्य, प्रा० मञ्ज] अन्दर। भीतर। में। (अधिकरण काक का चिह्न)

माहित—पुं० [स० महित+अण्] महित ऋषि के गोत्र में उत्पन्न व्यक्ति।

माहित्य—पुं० [स० महित+यञ्] महित ऋषि के गोत्र में उत्पन्न व्यक्ति।

माहित्य—स्त्री० [अ० माहीयान] १ भीतरी और वास्तविक तत्त्व। २ प्रकृति। ३ विवरण।

माहिवा—पुं० [प०] १ श्रियतम। प्रिय। २ एक प्रकार का प्रसिद्ध पंजाबी गेयपत्र जो तीन चरणों का होता है और जिसमें मुख्यतः कृष्ण और श्रीभारत की प्रशंसा होती है और विरह-रसा का धार्मिक वर्णन होता है।

माहिधायना—वि० [का० माहिधायनः] प्रतिभास होनेवाला। मासिक।
माह्वारी।

पुं० मासिक भैरव।

माहिधर—पुं० [सं०√मह्+इत्+बा०] इन्द्र।

वि० [अ०] किसी बात या विषय का पूर्ण माता। अच्छा जानकार।

माहिधर्मा—पुं० [सं० माहिध+अन्तः। फक्तः।

वि० [स्त्री० माहिह्री] १. मध्य या बीच का। मँसला। २. अंदर का।
आन्तरिक।

†पुं०=माहिी।

माहिधे†—अव्य० [हिं० माहि] अंदर। भीतर।

माहिधे—वि० [सं० माहिधी+अन्तः] भैस सम्बन्धी या भैस का (दूध
आदि)।

माहिधे-बल्लरी—स्त्री० [सं० उपमि० सं०] काला विषादा। कृष्ण
बुद्धदायक।

माहिधे-बल्ली—स्त्री० [सं० उपमि० सं०] छिरहटी।

माहिधिक—पुं० [सं० माहिधी+ठक्+इक, बुद्धि] १. व्यभिचारिणी स्त्री
का पति। २. भैस के द्वारा जीविका निर्वाह करनेवाला व्यक्ति।

माहिध्यती—स्त्री० [सं०] वर्तमान मध्य प्रदेश में स्थित एक बहुत पुरानी
नगरी जिसे मांधाता के पुत्र मूचकुव ने बनाया था।

माहिध्य—पुं० [सं० माहिधी+ध्व्य, बुद्धि] स्मृतियों के अनुसार एक
सकर जाति।

माही—अव्य०=माहिं।

माही—स्त्री० [सं० माहेय] एक नदी जो खमात की खाड़ी में गिरती है।
स्त्री० [का०] मछली।

पर्व—माही-नीर, माही-मुल्ल, माही-बरातिस।

माही-नीर—पुं० [का०] मछली पकड़नेवाला। मछुवा।

माही-मुल्ल—वि० [का०] जो मछली की पीठ की तरह उभरा हुआ और
किनारे-किनारे डाल्हा हो।

पुं० एक प्रकार का कारकोबी का काम जो बीच में उभरा हुआ और
दोनों ओर से डाल्हा होता है।

माही-भरातिस—पुं० [का०] मुगल बादशाही के आगे हाथी पर चलनेवाले
सात संघे जिन पर अलग-अलग मछली, माती ग्रीही आदि की आकृतियाँ
कारकोबी की बनी होती थी।

माहृति—स्त्री० [सं० माध-बटा] माध महीने की षटा या बायल।

माहृत्—पुं० [सं० मधृत्, प्रा० मधृत्=विष] विष।

पर्व—माहृत् की मीठ=(क) बहुत ही जहरीली और खराब बीज।

(ख) बहुत ही उष्ट हृदय का व्यक्ति।

माहृत्—स्त्री० [सं० माहृत्?] सगीत में कर्नाटक की पद्धति की एक
रागिणी।

माहृत्—स्त्री० [देश०] १ एक प्रकार का छोटा कीड़ा जो राई, सरसो,
पूली आदि की फसल में उनके बँडकों पर फूजने के समय या उनके पहले
अड़े दे देता है। २ कनसलाई नाम का कीड़ा।

माहृत्—वि० [सं० महेन्द्र+अन्तः] १. महेन्द्र-संबंधी। महेन्द्र का।

२. जिसका देवता महेन्द्र ही।

उपोसित में, बार के अनुसार चित्त-चित्त दंडों में पकनेवाला

एक योग जिसमें यात्रा करने का विधान है। २. एक प्रकार का
प्राचीन अस्त्र। ३. सुमुद्र के अनुसार एक देववह जिसके ब्राह्मण
करने से बहुवस्तु पुत्र में माहात्म्य, धीर्य, शास्त्र-बुद्धि आदि पुत्र
एकएक आ जाते हैं। ४. जैनियों के एक देवता जो कल्पमय नामक
वैनायक देवगण में हैं। ५. जैनों के अनुसार चौथे स्वर्ग का नाम।
माहृत्—स्त्री० [सं० महेन्द्र+अन्तः] १. महेन्द्र अर्थात् इन्द्र की शक्ति।
२. इन्द्र की पत्नी। ३. इन्द्रासन। ४. गाय। गी। ५. सात
मातृकाओं में से एक।

माहेय—वि० [सं० मही+इक्, इ+एच्] मिट्टी का बना हुआ।

पुं० १. मूँगा नामक रत्न। विद्युत्। २. मंगल ग्रह। ३. नरकासुर।

माहेयो—स्त्री० [सं० माहेय+अन्तः] १. गाय। गी। २. माही नाम की
नदी।

माहेल—पुं० [सं० महेल+अन्तः] एक मोत्र-प्रवर्धक ऋषि।

माहेल—वि० [सं० महेल+अन्तः] महेल का।

माहेली—स्त्री० [सं० महेल+अन्तः] दुर्गा।

माहेलवर—वि० [सं० महेलवर+अन्तः बुद्धि] महेलवर-संबंधी। महेलवर
का।

पुं० १. एक प्रसिद्ध वीर सम्प्रदाय। २. एक प्रकार का यज्ञ। ३.
एक उप-पुराण का नाम। ४. एक प्रकार का प्राचीन अस्त्र। ५.
पारिजित के वे भीमवह सुवृष जिन्हें प्रयागहार कहते हैं और जिन्हें पारिजित ने
अष्टाध्यायी के सूत्रों का प्रमुख आधार बनाया है।

माहेलवरी—स्त्री० [सं० माहेलवर+अन्तः] १. दुर्गा। २. एक मातृका
का नाम। ३. एक प्राचीन नदी। ४. एक प्रसिद्ध पीठ या तीर्थ-स्थान।

पुं० वैषयो की एक जाति।

माही—पुं०=माहृत् (कीड़ा)।

मिगनी—स्त्री०=मैगनी।

मिगी—स्त्री०=मीगी (मिरी)।

मिड—पुं० [अं०] टकसाल।

†पुं०=मिन्द।

मिड-हाउस—पुं० [हिं०] टकसाल।

मिडार्थी—स्त्री० [हिं० मीडा] १. मिडने या मीडने की अवस्था, क्रिया
या भाव। २. मीडने का पारिस्थितिक या मजदूरी। ३. वेदी छीटाई
की छपाई में एक क्रिया जो कपड़े की छापने के उपरांत और धोने से
पहले होती है।

मिहरी—स्त्री०=मेहरी।

मिल—पुं०=मिष।

मिबर—पुं० [अं०] मसजिद में वह स्थान जहाँ इयाम अठकर नमाजियों
को नमाज खतवाता है।

†पुं०=मेन्बर।

मिबाब—स्त्री०=मीजाब।

मिबाशी—वि०=मीबाशी।

मिबाशा—पुं०, वि०=मिषाना।

†स्त्री०=मिषान।

मिक्कवार—स्त्री० [अं० मिक्कवार] १. मात्रा। २. तौल।

मिक्कना—पुं० [अं० मिक्कना] एक प्रकार की महीन ओढ़नी या चादर।

मिकनातीस—पुं० [अ० मिकनातीस] [वि० मिकनातीसी=चुबकीय] चुबक पत्थर ।

मिकराज—स्त्री० [अ० मिकराज] कतरनी । कैंची ।

मिकरासी—पुं० [अ०] बहू लीर जितके फल मे थो नाँवियाँ होती है ।

मिकरासी—पुं० [अ०] जापान के सम्राटो की उपाधि ।

मिर्गा—पुं०=मृग ।

मिचकना—अ० [हि० मिचका] (आँखो या पलको का) बार-बार झुलना या उठना और बंद होना या गिरना । मिचना ।

मिचकलाना—अ० [हि० मिचना] बार-बार (आँखें या पलकें) झोलना या उठाना और बंद करना या गिराना ।

मिचकी—स्त्री० [हि० मिचकना] १. आँखें मिचकने या मिचकाने की अवस्था, क्रिया या भाव । २. आँखें मिचकाकर क्रिया जानेवाला संकेत । आँख का इशारा ।

स्त्री० [?] १. छलना । उछाल । २. मुले की पैंग । उदा०—कह छौड शरीर तौल के हम लेटी मिचकी किलोलेक ।—मैमिलीसारण ।

मिचनाना—अ० [हि० मीचना का अक० रूप] (आँखो का) बंद होना । मीचा जाना ।

मिचराना—अ० [मिचर, चाबने के शब्द से अनु०] बिना भूष के खाना । चरानेवस्ती खाना ।

मिचलाना—अ० [हि० मचना, मतलाना] मतली आना । कै आने को होना ।

मिचली—स्त्री० [हि० मिचलाना] जी मिचलाने की क्रिया या भाव । शरीर की ऐसी अवस्था जिसमे कै करने की इच्छा या प्रवृत्ति हो ।

मिचलाना—अ० [हि० मीचना का प्रे० रूप] मीचने का काम पूतरे से कराना । किनी को मीचने मे प्रवृत्त करना ।

मिचोही—वि० [हि० मिचना] मिचने या मीचनेवाला । बंद होनेवाला ।

मिचोनी (को)—स्त्री० [हि० मीचना] १. मीचने या मूँदने की क्रिया या भाव । जैसे—आँख-मिचोनी । २. दे० 'आँख-मिचोली' ।

मिचोनी—स०=मीचना ।

मिच्छा—वि०=मिच्छा ।

मिच्छारथ—अ० [अ०] सितार बजाने का एक तरह का छल्ला । नालुना ।

मिच्छानी—स्त्री०=मेघबानी ।

मिच्छान—पुं० [अ० मिच्छाज] १. तासीर । किसी पदार्थ का वह मूल गुण जो सत्ता बना रहे । मूल प्रकृति । २. प्राणी की प्रधान प्रवृत्ति । स्वभाव । जैसे—उनका मिच्छान बहुत सख्त है । ३. मन या शरीर की स्वाभाविक स्थिति । तबीयत । विल ।

मुहाना—मिच्छाक बरतन होना=(क) मन मे किसी प्रकार की अप्रसन्नता आदि उत्पन्न होना । (ख) कुछ अवस्था होना । (किसी का मिच्छाक पापना=(क) किसी के स्वभाव से परिचित होना ।

(ख) किसी को अपने अनुकूल या अनुरूप स्थिति मे देवना । मिच्छाक पुजना=(क) तबीयत का हाल पूछना । (ख) अच्छी तरह बंध देना या बदला चुकाना । (व्यर्थ) मिच्छाक विपुलना=(क) शरीर अवस्था-सा जान पड़ना । (ख) मन में क्रोध या रोष उत्पन्न होना ।

मिच्छाक का आलस=अप्ययन में आना । समझ मे आना । जैसे—अगर

आपके मिच्छाक मे आवे तो आप भी यहाँ बसिए । मिच्छाक लीबा होना=अनुकूल या प्रसन्न होना । तबीयत ठिकाने होना ।

५. अभिमान । धमंड ।

पथ—मिच्छाकवार ।

मुहाना—मिच्छाक करना या दिखाना=(क) कोष या मुँसे मे आना । (ख) अभिमान या धमंड करना या दिखाना । मिच्छाक न मिलना=धमंड के कारण सीधी तरह से बात न करना । जैसे—आज-कल तौ उनका मिच्छाज ही नहीं मिलता ।

मिच्छाक अली—अव्य० [अ० मिच्छाके अली] आप प्रसन्न और स्वस्थ तौ हूँ ? (अंत होने पर प्रसन्नवाचक पद की तरह प्रयुक्त ।)

मिच्छाकदार—वि० [अ० मिच्छाज+फा० दार (प्रत्य०)] धमंडी । अभिमानी ।

मिच्छाकदारी—स्त्री० [अ०+फा०] मिच्छाजदार होने की अवस्था या भाव ।

मिच्छाक-पीटा—वि० [अ० मिच्छाज+हि० पीटना] [स्त्री० मिच्छाज-पीटी] अभिमानी ।

मिच्छाक-पुरती—स्त्री० [अ० मिच्छाज+फा० पुरती] किसी का कुशल-मंगल या हाल-बाल पूछना ।

मिच्छाक-शरीक—अव्य० [अ० मिच्छाके शरीक]=मिच्छाज अली ।।

मिच्छाकी—वि० [अ० मिच्छाज+ई (प्रत्य०)] बहुत अधिक मिच्छाज अर्थात् अभिमान करने या रखनेवाला । धमंडी ।

मिच्छाकी—वि० स्त्री० [हि० मिच्छाज+ओ (प्रत्य०)] अभिमानी । धमंडी ।

मिच्छाक—स्त्री०=मीजान (जोड़) ।

मिच्छाकू—पुं०=मच्छाना ।

मिटका—पुं० [स्त्री० अल्पा० मिटकी] मटक ।

मिटना—अ० [सं० मूट; प्रा० मिट्ट] १. अंकित चिह्न, लिखित लेख आदि पर का रग, स्याही आदि का इस प्रकार पोछा जाना कि वह चिह्न या लेख ठीक तरह से दिखाई न दे या पढ़ा न जा सके । जैसे—इस पत्र के कई अक्षर मिट गये हैं । २. नष्ट हो जाना । न रह जाना । ३. दूरी तरह से खराब, चौपट या बरबाद होना । जैसे—इस जापस की लड़ाई मैं दोगों पर मिट गये ।

मुहाना—किसी के लिए बर दिखाना=दूरी तरह से चौपट या बरबाद होना । जैसे—वह अपने भाई को बचाने के लिए बर मिटा ।

मिटलाना—सं० [हि० मिटना का सक० रूप०] ऐसा काम करना जिससे कुछ या कोई मिटे । (देखें 'मिटना')

मिठ्ठी—स्त्री० [सं० मुष्टिका; प्रा० मिठ्ठीवा] १. प्रायः सनी जगह जमीन के ऊपरी भाग में पाया जानेवाला वह भुरभुरा और मुलायम तख्त जिससे पेड़-पौधे उगते हैं, जिस पर जीव-जंतु चल्ते हैं और जिससे बहुत प्राचीन काल से तरह-तरह के बरतन आदि बनाये जाते हैं । जैसे—जो मिठ्ठी ये बना है, वह बंसे में मिठ्ठी होकर रहेगा ।

मिठ्ठी—मिठ्ठी और जल के योग से ही संसार की अधिकतम वस्तुएँ बनती हैं, इसी आधार पर इससे संबद्ध बहुत से पद और मुहावरे बने हैं । पद—मिठ्ठी का तुलना=(क) मानव शरीर । (ख) बहुत ही अकर्मण्य और निकम्मा व्यक्ति । मिठ्ठी की धुरस=अमनुष्य का शरीर । मानव देह ।

मिट्टी के आचर—निरा पूर्व और अयोग्य । **मिट्टी के मोल**—बहुत सस्ता । जैसे—उन्होंने अपना सब सामान मिट्टी के मोल बेच दिया ।

मुसुरा—**मिट्टी अजीब होना**—मिट्टी सराब होना । बरबाद होना ।

मिचो—मूलतः मिट्टी 'अजीब होना' का अर्थ है—मेरी यह मिट्टी या शरीर ईश्वर को भय ही जाय अर्थात् वह मुझे इस संसार से उठा ले । पर आगे चलकर यह 'मिट्टी सराब होना' के अर्थ में चल पडा ।

मूँसे—(कोई चीज) मिट्टी करण—नष्ट करना । चीपट करना । जैसे—उसने बना-बनाया घर मिट्टी कर दिया । मिट्टी छूटे ही सोना होना—बहुत अधिक भाग्यवान् होना कि सामान्य-सी बातों में ही बहुत अधिक लाभ प्राप्त कर सके । (किसी बात पर) मिट्टी डालना—(क) किसी बात को जाने देना । ध्यान न देते हुए छोड़ देना । (ख) परदा डालना । छिपाना या दबाना । (किसी को) मिट्टी देना—(क)

मुसलमानों में किसी के मरने पर उसके प्रति स्नेह या श्रद्धा प्रकट करने के लिए उसकी कब्र में तीन-तीन मूट्टी मिट्टी डालना । (ख) मृत शरीर को कब्र में गाड़ना । मिट्टी बरसाना—दोष, शीघ्र आदि का जमीन में अच्छी तरह जम जाना । मिट्टी में मिलना—(क) नष्ट या बर्बाद होना । (ख) मर जाना । मिट्टी होना—(क) चीपट या बर्बाद होना । (ख) बहुत गंदा या मैला होना । (ग) मर जाना ।

२. किसी विशिष्ट प्रकार या रूप-रंग का अथवा किसी विशिष्ट स्थान में पाया जानेवाला उन्नत पदार्थ । जैसे—मीठी मिट्टी, बलुआ मिट्टी, मूलतानी मिट्टी आदि ।

पच—भीनी मिट्टी । (देखें)

३. जीव, जंतु या मनुष्य का शरीर जो मूलतः मिट्टी या पृथ्वी नामक तत्त्व का बना हुआ माना जाता है ।

सराब—(किसी की) मिट्टी सराब, पनीच या बरबाद करना—दुर्दशा करना । सराबी करना ।

४. स्थायित्व या स्थिरता के विचार से, शरीर की गठन और बनावट । जैसे—(क) उसकी मिट्टी अच्छी है, पचास बरस का हो जनि पर भी वह अभी ४० से अधिक का नहीं जान पड़ता । (ख) जिसकी मिट्टी ठस नहीं होती, वह जवानी में ही बुढ़ाडा लगने लगता है । ५. मृत शरीर । लाश । शव ।

मुसुरा—मिट्टी ठिकाने लगना—शय की उचित अत्येष्टि क्रिया या सस्कार होना ।

६. किसी चीज को जलाकर तैयार की हुई राख । अस्म । जैसे—यारे की मिट्टी । ७. पचन का तेल या ऐसी ही और कोई चीज जो कोई द्रव बनाने के समय आधार रूप में काम आती है । जमीन । जैसे—अगर मिट्टी अच्छी होती तो यह द्रव बहुत बढ़िया होता ।

मिट्टी का तेल—पू० [हि०] एक प्रसिद्ध तरल खनिज पदार्थ जिसका व्यवहार आग, बीमा आदि जलाने के लिए होता है ।

मिट्टी का फूल—पू० [हि० मिट्टी+फूल] रहे ।

मिट्टी बरानी—स्त्री० [हि०] १. बरबादी । विनाश । २. दुर्गति । दुर्घाता ।

मिट्टी बराना—स्त्री०—खड़िया ।

मिट्टा—वि०, पू०—भीटा ।

मिट्ठी—स्त्री० [हि० मीठा] पचन । पूजा ।

मि० प्र०—देना ।—लेना ।

मिट्ठू—वि० [हि० मीठा+क (प्रत्य०)] १. मीठी बातें बोलनेवाला । मिष्ट-भाषी । २. प्रायः कम बोलने और चुप रहनेवाला । पू० टीता । बुधा ।

† पू०—मिट्ठी ।

मिट्ठो—स्त्री०—मिट्ठी ।

मिठ—वि० [हि० मीठा] 'मीठा' का वह संश्लेष रूप जो उसे स्त्री० के आरम्भ में लगाने पर प्राप्त होता है । जैसे—मिठलोना, मिठबोला ।

मिठ-बोला—वि० [हि० मीठा+बोलना] १. मीठी बातें करनेवाला । मधुरभाषी । २. जो ऊपर से मीठी बातें करता हो परन्तु मन में कष्ट रखता हो ।

मिठरी—स्त्री०—मठरी (मिट्ठी) ।

मिठ-बोना—वि० [हि० मीठा+कम+लोग+लान] [स्त्री० मिठ-लोनी] (लाघ पदार्थ) जिसमें नमक बहुत ही कम हो । कम नमकवाला । जैसे—मिठलोनी तरकारी ।

मिठाई—स्त्री० [हि० मीठा+आई (प्रत्य०)] १. मीठे होने की अवस्था या भाव । मिठास । माफ़ी । २. कुछ विशिष्ट प्रकार की बनाई हुई खाने की मीठी चीजे । जैसे—(क) पेडा, बरकी, लड्डू आदि । (ख) सोरा या अने की मिठाई । ३. कोई अच्छी और भिन्न चीज या बात । जैसे—वहाँ तुम्हारे लिए क्या मिठाई रखी है जो दौड-दौड कर बही आते ही ।

मिठाना—अ० [हि० मीठा+आना (प्रत्य०)] मीठा होना । स० मीठा करना ।

मिठास—स्त्री० [हि० मीठा+आस (प्रत्य०)] मीठे होने की अवस्था, धर्म या भाव । मीठापन ।

मिठोरी—स्त्री० [हि० मीठा] बरी । एक तरह की बरी ।

मिठाई—स्त्री०—मिठाई ।

मिठिल—पू० [अ०] १. वह विदु, वस्तु या स्थान जो दो विशिष्ट छोरों के बीच में हो । मध्य । २. आधुनिक शिक्षा-क्रम में प्रारम्भिक और उच्च शिक्षा के बीच के बरने । साधारणतया ५ से ८ तक के दरजों का समाहार ।

मिठिलची—पू० [हि० मिठिल+ची (प्रत्य०)] वह जिसने मिठिल परीक्षा तो पास की हो परन्तु उसके आगे न पडा हो । (उपेक्षा और व्यय)

मिथबर—पू०—मिथबर (मिथबारी सर्व) ।

मिथंग—पू०—मथंग (हाथी) ।

मित—वि० [सं०/मा+क्त] १. नपा-तुला । २. सीमित । परिमित । ३. जितना चाहिए उतना ही, उससे अधिक नहीं । ४. कम । पीडा । जैसे—मित-भाषी । ५. कंका हुआ । क्षिप्र ।

मित्त—पू० [सं० मित्/द्रु (मति)+क्त] समृद्ध ।

मित-भाषिणी—वि० [सं० मित्/आप् (बोलना)+गिनि+ञोष्] संगीत में काफ़ी ठाड की एक रागिनी ।

मितभाषी (मिन्)—वि० [सं० मित्/आप्+गिनि] [स्त्री० मितभाषिणी] अपेक्षा कम तथा आश्चर्यकतानुसार बोलनेवाला । 'ककवादी' का विपर्यायक ।

मित-मति—वि०, पु० [सं० व० सं०] अल्प-बुद्धि।
मित-विषय—पु० [सं० व० सं०] तौल या नाप कर पदार्थ बेचना। (कौ०)
मित-व्यय—वि० [व० सं०] [भाव० मितव्य यत्ता] कम खर्च करनेवाला अथवा आवश्यकता से अधिक खर्च न करनेवाला। मितव्ययी।
 पु० १ जितना चाहिए, उतना ही खर्च करना, अधिक न करना।
 २. थोड़े खर्च में काम चलाना।
मितव्ययता—स्त्री० [सं० मितव्यय + तल् + टाप्] मितव्यय होने की अवस्था या भाव। कम-खर्चरी।
मितव्ययी—वि० [सं० मितव्यय] कम या थोड़ा खर्च करनेवाला।
 किफायत करनेवाला।
मिताई—स्त्री० [हि० मीन + आई (प्रत्य०)] मित्रता। दोस्ती।
मिताहर—वि० [सं० मित-आहर, व० ग०] संश्लिप्त। लघु।
मिताहरा—स्त्री० [सं० मितार्थ + टाप्] याज्ञवल्क्य स्मृति की विज्ञानेधर इत टीका।
मितार्थ—पु० =मितार्थक।
मितार्थक—पु० [सं० मित-अर्थ, व० ग०, कप्] माहिर्य में तीन प्रकार के दूतों में से एक प्रकार का दूत। ऐसा दूत जो थोड़ी बातें करने ही अपना काम निकाल लेता हो।
मिताशन—पु० [सं० मित-अशन, व० म०] १ कम या थोड़ा भोजन करना। २ अन्धाहार।
मिताशी (मित्)—वि० [सं० मित्/अश् (माना)। णिनि] [स्त्री० मितार्थिणी] अन्य आहार करनेवाला।
मिताहार—पु० [सं० मित-आहार, कर्म० सं०] परिमित या थोड़ा भोजन करना। कम खाना।
 वि० [व० सं०] -मिताहारी।
मिताहारी (मित्)—वि० [सं० मितार्हाः इति] थोड़ा और परिमित भोजन करनेवाला। कम खानेवाला।
मिति—स्त्री० [सं० व्/भा (मान)। क्तिन्] १ नाप-जोख या उसमें निकलनेवाला फल। परिणाम। मान। २. नापने-जोखने की क्रिया या प्रणाली। जैसे—अल्ल मिति, क्षार मिति। (ज्यामिनि) ३ सीमा। हद। ४ नियम, मर्यादा आदि का बंधन। उदा०—कांड न रहत मिति मानि।—भृश।
 † स्त्री० =मिती।
मिती—स्त्री० [सं० मिति] १ बाद भाग के किसी पक्ष अथवा और भाग की तिथि या तारीख।
मुहा०—**मिती बढाना**—बढ़ी-खाते में किसी दिन का हिसाब जिक्रने से पहले अन्तर (मिती) लिखना। (महाजन) **मिती-पूजना**—हुंडी के भंगदान का निवृत्त समय पूरा होना। जैसे—इस हुंडी की मिती पूरे दो दिन हो गए, पर कृपा नहीं आयी।
 २. दिन। दिवस। जैसे—चार मिती का ब्याज अभी आपकी ओर निकलता है। ३. वह तिथि अथ तक का ब्याज देना हो। जैसे—इस हुंडी की मिती में अभी चार दिन बाकी हैं। (महाजन)
मुहा०—**मिती काटना**—हिसाब में जितने दिनों का मूद देय था प्रायः न हो, उतने दिनों का ब्याज काटना या बचक करना।
मिती काटा—पु० [हि० मिती + काटना] १ हुंडी की मिती पूजने

से पहले क्षया चुकाने पर अवधि के दोष दिनों का ब्याज काटने की क्रिया। (महाजन) २ ब्याज या मूद लगाने की वह भारतीय महाजनी प्रणाली जिसमें प्रत्येक रकम का मूद उसकी अलग, अलग मिती से एक साथ जोड़ा जाता है।
मित्र—पु० [सं० मित्र] १ मित्र। दोस्त। २ लड़को के खेल में वह लड़का जो सब का अपना होता है।
मित्र—पु० [सं० व्/मि + वन्] [भाव० मित्रता] १ वह प्राणी जिसमें अधिक भेद-जोख हीं और जो समय कुमय पर साथ देता और सहायता करता हो। सखा। मुद्दूब। दोस्त। २ भारतीय आर्यों के एक प्रसिद्ध वैदिक देवता। ३ बारह आदित्यों में से पहला आदित्य। ४ सूर्य। ५ यज्ञ में साथ देनेवाला गार्ह।
मित्रहृत्—पु० [सं० मित्र/हृ (करना)। विवर्ण, तुक्] पुराणानुसार बारहवें मनु के एक पुत्र का नाम।
मित्र-वाल—पु० [सं० व० सं०] १ मित्र की हत्या। २ मित्र के साथ किया जानेवाला पंचम।
मित्रघ्न—वि० [सं० मित्र/घ्नन् (मारना)। टक्, कुल] मित्रने अपने मित्र को दगा दिया हो। फलत विद्वेषामयता।
मित्रता—स्त्री० [सं० मित्र + तल् + टाप्] मित्र होने की अवस्था, धर्म या भाव। दोस्ती।
मित्रत्व—पु० [सं० मित्र + त्व] मित्रता। दोस्ती।
मित्रवेश—पु० [सं०] १. बारहवें मनु के एक पुत्र का नाम। २. बारह आदित्यों में से एक।
मित्र-बंधक—पु० [सं० व० सं०] धी, शूद्र, चूँचक, सुहागा और गुमरा, इन पाँचों का समाहार। (बैदक)
मित्र-मङ्गल—पु० [सं० व० सं०] विजेता के चारों ओर रहनेवाले मित्र, गार्ह या राजा। (कौ०)
मित्र-भाव—पु० [सं० व० सं०] मित्रता का भाव। दोस्ती।
मित्र-भेद—पु० [सं० व० सं०] मित्रता टूटना।
मित्र-रंजनी—स्त्री० [सं० व० सं०] सखी में, कर्नाटकी पदति की एक रागिणी।
मित्रवन—पु० [सं०] पत्राक्ष के मुलतान नामक नगर का प्राचीन नाम।
मित्रवान् (वत्)—वि० [सं० मित्र + मनुष्य, वल्] [स्त्री० मित्रवती] जिसका कोई मित्र हो। मित्रवाला।
 पु० १. मनु के एक पुत्र का नाम। २ श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम।
मित्रविव—पु० [सं० मित्र/विद् (लाभ करना)। ष, नृम्] अग्नि।
मित्रविरा—स्त्री० [सं० मित्रविर + टाप्] श्रीकृष्ण की एक पत्नी। (पुराण)
मित्र-मित्रिण्य—वि० [सं० म० सं०] मित्र राजा के देश में पड़ी हुई (मेना)। (कौ०)
मित्रवित्—पु० [सं० मित्र/विद् (आनना)। षिचप्] गुप्तचर। जासूस।
मित्र-सत्पती—स्त्री० [सं० व० सं०] मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी।
मित्रसह—पु० [सं० मित्र/वह् (सहना)। षच्] कल्पापवाद राजा का एक नाम।

मिक्लेश—**मू०** [सं०] १. बारहवें मनु के एक पुत्र का नाम। २. श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम। ३. एक बृद्ध का नाम।

मिक्ला—**स्त्री०** [सं० मित्र+टाप्] १. मित्र नामक वैदिक देवता की स्त्री का नाम। २. कथुन की माता, सुमित्रा।

मिक्लाई—**स्त्री०**—मिक्ला।

मिक्लाखर—**मू०** [सं० मित्र+अखर, ब०सं०] वह छद्म जिसके दोनों चरणों की तुक मिलती हो।

मिक्लावण—**मू०** [सं० इ० सं०, आ-आदेश] मित्र और वरण नामक वैदिक देवता।

मिक्लिथा—**स्त्री०** दे० 'मायाक'।

मिक्ली—**स्त्री०** [सं० मित्र+क्रीप्] सुमित्रा।

मिक्लि—**मू०** [सं० मिप्+इन्] राजा जनक।

मिक्लि—**मू०** [सं०√मष्+इलवृ, अ-इ नि०] राजा जनक।

मिक्लि—**स्त्री०** [सं० मिक्लि+टाप्] १. वर्तमान तिरहुत का प्राचीन नाम। राजा जनक इसी प्रदेश के थे। २. उक्त प्रदेश की प्राचीन राजधानी। जनकपुरी।

मिक्लि—**वि०** [सं०√मिप्+उण्] मिथ्या। ब्रूटा।

अर्थ—मूठ-मूठ।

मिक्लुन—**मू०** [सं०√मिप्+उन्नन्,] १ स्त्री और पुत्र का युग। नर और मादा का जोड़ा। २. सर्वोम। समागम। मैयुन। ३. बारह राशियों में से तीसरी राशि।

मिक्लुनचर—**मू०**[म० मिक्लुन/चर (चलना) : ट, अलृक् म०] चक्रवाक। चक्रवा पक्षी।

मिक्लुनत्व—**मू०** [सं० मिक्लुन+त्व] मिक्लुन होने की अवस्था, धर्म या भाव।

मिक्लुनीकरण—**मू०** [सं० मिक्लुन+किञ, इत्, दीर्घ, √ङ (करना) :स्युट्—अन] नर-मादा को इकट्ठा करना। जोड़ा खिलाना या मिलाना।

मिक्लुनीभाव—**मू०** [सं० मिक्लुन+चिञ, इत्, दीर्घ, √भू (होना) :अण्] मैयुन। संयोग।

मिक्लु—**वि०** [सं०√मष् (मंथन करना) +क्वप्, नि० सिद्धि] १ जो अस्तित्व में न हो, पर फिर भी जिसका अज्ञानवश या ध्रुववश बोध होता हो। २. असत्य। ब्रूटा। ३. कृत्रिम। बनावटी। ४. निराधार। जैसे—मिक्लु आग्रह। ५. कपट-पूर्ण। ६. निराम या नीति के विरुद्ध। जैसे—मिक्लु आचरण।

मिक्लुआचर—**मू०** [सं० मिक्लु+आचार, ब० सं०] १ ऐसा आचरण या व्यवहार जिसमें सत्यता न हो। कपटपूर्ण आचरण। २. उक्त प्रकार का आचरण करनेवाला व्यक्ति।

मिक्लुत्व—**मू०** [सं० मिक्लु+त्व] १ मिक्लु होने की अवस्था, धर्म या भाव। २. माया।

मिक्लु बुद्धि—**स्त्री०** [सं० कर्म० सं०] नास्तिकता।

१०। नास्तिक।

मिक्लुव्यवसिति—**स्त्री०** [सं० मिक्लु+व्यवसिति, कर्म० सं०] साहित्य के एक अर्थोत्कार जिसमें किसी कल्पित या मिक्लु बात को आधार बनाकर कोई और मिक्लु बात कही जाती है।

मिक्लु-निरसन—**मू०** [म० कर्म० सं०] शपथपूर्वक सचनी बात अग्राह्य करना या न मानना।

मिक्लु-पुत्र—**मू०** [सं० कर्म० सं०]—छायापुत्र।

मिक्लु-मति—**स्त्री०** [सं० कर्म० सं०] १. धोखा। २. गलती।

मिक्लु-योग—**मू०** [सं० कर्म० सं०] चक्र के अनुसार बहु कार्य जो रूप, रस, प्रकृति आदि के विरुद्ध हो। जैसे—मल, मूत्र आदि को रोकना।

मिक्लु-भाव—**मू०** [सं० ष० सं०] मूठ बोलना।

मिक्लु-बादी (विन) [सं० मिक्लु+वद् (बोलीना) :णिनि, उप० सं०] [स्त्री० मिक्लुवादिनी] असत्यवादी। ब्रूटा।

मिक्लुहार—**मू०** [सं० मिक्लु+आहार, कर्म० म०] ऐसी चीजें साथ-साथ खाना जिनकी प्रकृति परस्पर भिन्न या विरुद्ध हो। जैसे—मछली या भंस के साथ दूध पीना।

मिक्लु—**अव्य०** [अं०] से।

पद—मिक्लु आनिक्—और से। तरफ से।

मिक्ली—**मू०** [सिं० मिक्लिना] बिल्ली।

मिक्लिाकिना—**मू०** [अं० मिक्लि=कुछ रखने की जगह] मिक्ला-किताब में, खरब का विभाग या मव। उदा०—मात्रिक जमा हुनी जो जोरी, मिक्लिाक तल स्यापी।—मूट।

मिक्लि—यह अरबी मिक्लुमूल से भी व्युत्पन्न हो सकता है, और इन दशा में इसका अर्थ मक्काओं का जोड़ या योग होगा।

मिक्लु—**मू०** [अं० मिक्लु] कुल मिलाकर। सब मिलाकर।

मिक्लु—**मू०** [अं०] काल-गणना में एक घंटे का माठवां भाग। माठ मेकड़ का समय।

मिक्ली—**स्त्री०** मिक्ली (बिल्ली)।

मिक्ली—**स्त्री०** [अनु० मक्ली के शब्द से] मक्ली की बोली के समान कुछ धीमा, नाक से निकला हुआ स्वर।

‡ स्त्री०—मिक्ली।

मिक्ली—**सं०** [सं० मान+वरिमाण] आयति, विस्मय आदि जानने के लिए नापना या तोलना। (पश्चिम) उदा०—मात्री न मिक्ली औ, तोलि न तुलीऊ, पाबु न मेर अडाई।—कबीर।

मिक्लि—**अव्य०** [अनु०] अस्पष्ट तथा धीमे स्वर से।

मिक्लि—**वि०** [हिं० मिक्लि] १ मिक्लिनाते अर्थात् अस्पष्ट स्वर में तथा बहुत धीरे-धीरे बोलनेवाला। २. जरा-सी बात पर कुङ्कने या चिढ़नेवाला। ३. बहुत धीरे-धीरे काम करनेवाला। मट्टर। मुल्ल।

मिक्लिना—**अं०** [अनु०] १. मिक्लि करना अर्थात् अस्पष्ट तथा धीमे स्वर में बोलना। २. नाक से स्वर निकालते हुए बोलना। नकियाना। ३. अपेक्षा बहुत धीरे-धीरे काम करना।

मिक्ली—**वि०** [अं०] [भाव० मिक्ली] कम किया, घटाया या निकाला हुआ।

मिक्ली—**स्त्री०** [अं०] मिक्ली करने की क्रिया या भाव। घटाना, कम करना या निकालना।

मिक्ली—**मू०**—मीनार।

मिक्ली—**मू०**—मिक्ली।

मिक्ली—**मू०** [अं०] १ मत्री। सचिव। २. आज-कल राज्य के मंत्री। ३. राजदूत। ४. ईसाई धर्मोपदेवक। पादरी।

पद—ब्राह्मण मिनिस्टर—प्रधान मंत्री ।

मिनिस्टर—स्त्री० [अं०] १ मिनिस्टर का काम, पद या भाव । २ मिनिस्टर का कार्यालय । ३ मिनिस्टर का विभाग । ४. सच मिनिस्टर का सम्मिलित वर्ग । मन्त्रि-मण्डल ।

मिन्त—स्त्री० [अं०, मिं० सं० विनति] १ विशेषत किसी की मनाते के उद्देश्य से बहुत नम्रतापूर्वक किया जानेवाला निवेदन । प्रार्थना । विनती । २ उपकार । एहसान ।
‡स्त्री०—मन्त्रत ।

मिन्तियाई—स्त्री० [हिं० मिन्तियाना+ई (प्रत्य०)] बकरी ।

स्त्री०—मीमियाई ।

मिन्तियाना—अ० [अनु०] १. बकरी या भेड़ का मेमे घबड़ करना । मनुष्य का बकरी की तरह मेमे करना । २ बहुत ही दबी जवान से चापलूसी करना ।

मिन्तनी—पु० [?] एक प्रकार का बेल जो अच्छा मसला जाता है ।

मिर्चा—पु० [फा०] १ स्वामी । मालिक । २ स्त्री का पति । ३ प्रसिद्ध और मास्य व्यक्ति । ४ बच्चों के लिए हुलार का सम्बोधन । ५ पढ़ाने या सिखानेवाला व्यक्ति । शिक्षक । ६ मुगलमान । ७. उत्तर भारत के पहाड़ी राजपूतों की एक उपाधि । जैसे—मियाँ रामसिंह ।

मिर्चा मिट्टू—वि० [हिं० मिर्चा+मिट्टू] मधुर-भाषी । मिठबोला ।

मुह्रा—अपने मुँह मिर्चा मिट्टू—अपनी प्रथमा स्वयं करनेवाला । पु० १ तौता । २ भोला व्यक्ति ।

मिर्चाई—स्त्री०—म्याऊँ ।

मिर्चाई—स्त्री०—मीयाड ।

मिर्चाम—पु० [फा०] मध्य भाग ।

स्त्री०—म्यान ।

मिर्चाम-सह—स्त्री० [फा० मिर्चाम+मध्य [हिं० सह] बहु कपड़ा जो किसी अच्छे कपड़े की रक्षा के लिए उस के नीचे दिया जाता है । अस्तर । जैसे—रजाई की मिर्चामतह ।

मिर्चाम-तही—स्त्री०—मिर्चामतह ।

मिर्चामा—वि० [फा० मिर्चाम] न बहुत छोटा, न बहुत बड़ा । मझोले आकार का ।

पु० एक प्रकार की बोली या पालकी ।

मिर्चामा—स्त्री० [हिं० मिर्चाम+ई (प्रत्य०)] १ पायजामे से बहु कपड़ा जो दोनों पायों के बीच से पड़ता है । २ कमरे के ऊपरी भाग से छत के नीचे बनी हुई छोटी कोठरी जो केवल सामान रखने के काम आती है । परछत्ती । (परिचय)

मिर्चाम—पु० [हिं० मन्धार ?] कूरे पर श्वभो आदि की सहायता से बड़े बल से लगाया जानेवाला बौस जिसमें गड़ारी पहनाई जाती है ।

मिर्चाल—पु०—मिर्चाल ।

मिर्चंगा—पु० [फा०] मूँगा ।

मिर्चम—पु०—मूंग ।

मिर्चम-चिड़ड़ा—पु० [हिं० मिर्चम+चिड़ड़ा] एक प्रकार का छोटा पक्षी ।

मिर्चम-छाला—स्त्री०—मूंगछाला ।

मिर्चमिया—वि० [हिं० मिर्चो+इया (प्रत्य०)] मिर्चनी रोग से ग्रस्त ।

मिर्चनी—स्त्री० [सं० मूगी] एक प्रसिद्ध स्नायविक रोग जिसमें सहस्रा हाथ-पीर एठेने लगते हैं, और प्रायः रोगी बेहोश होकर गिर पड़ता है । इसके रोगी को प्रायः दोरत आता रहता है । अपस्मार । (एपिलेप्टी) फि० प्र०—आना ।

मिर्चन—स्त्री०—मिर्च ।

मिर्चनन—स्त्री० [हिं० मिर्च+न (प्रत्य०)] इडबेरी के फलों का बूँच जो नमक-मिर्च मिलाकर चाट के रूप में बेचा जाता है ।

मिर्चना—पु० [सं० मरिच] लाल या हरी मिर्च जो फली के रूप में होती है ।

मिर्चनाई—स्त्री० [हिं० मिर्च+नाई (प्रत्य०)] १ लाल या हरी मिर्च जो फली के रूप में होती है । २. कालदाना ।

मिर्चिया—स्त्री० [हिं० मिर्च+इया (प्रत्य०)] रोहिस घास ।

वि० मिर्च की तरह का । कड़ा और तीक्ष्ण ।

मिर्चिया कंच—पु० [हिं० मिर्च+गंध] रोहिस घास ।

मिर्चिया-गंध—पु० [हिं० मिर्च+गंध] कृशा घास ।

मिर्चनी—स्त्री० [हिं० मिर्च] छोटी लाल मिर्च ।

मिर्चनी—स्त्री० [फा० मिर्च] एक प्रकार की बदवार कुर्ती । अगा ।

मिर्चना—पु० [फा०] १ मीर या जमीर का लडका । २ राजकुमार । ३ मुगलों की एक उपाधि । ४ तैमूर बस के साहजदों की उपाधि । वि० कोमल । नाजूक । (व्यक्ति)

मिर्चनाई—स्त्री० [फा०] १. मिर्च का पद या मान । २ नेतृत्व । ३ अर्थिमान ।

‡स्त्री०—मिर्चनी ।

मिर्चाना—पु० [फा०] [वि० मिर्चानी] मूँगा ।

मिर्चाना-मिर्चाना—वि० [फा० मिर्चाना+मिर्चाना] नाजूक दियाग का ।

मिर्चाना—स्त्री०—मूय्य ।

मिर्चंगा—पु०—मूय्य ।

मिर्चनी—पु० [हिं० मिर्चनी+ई (प्रत्य०)] मूय्य बजानेवाला । पत्ताबजी ।

स्त्री० [मिर्चनी का स्त्री० अल्पा० रूप] १ छोटा मूय्य । २ मूय्य के आकार की एक कर्च की आदिबवासी ।

मिर्चना—सं०—मिलाना ।

मिर्चुमसिं—स्त्री० [अं० मरहमत] १ अनुग्रह । कृपा । २ अनुग्रह या कृपा करने की हुई चीज ।

मिर्चा—स्त्री० [सं०] १ मुर्बा । २. मदिरा । घराब ।

मिर्चा—स्त्री०—मीरास ।

मिर्चाली—पु०—मिर्चाली ।

मिर्चाला—स्त्री० [सं० मिर्च+कञ+टाप्] एक तरह की लता ।

मिर्चालीनी—वि०—मूगाशी ।

मिर्चि—स्त्री०—मिर्च ।

मिर्चियास—स्त्री०—मीरास ।

मिर्च—पु०—मूय्य ।

मिर्चा—स्त्री०—मिर्चनी (रोग) ।

मिर्च—स्त्री० [सं० मरिच] १. एक प्रसिद्ध पीपल जिसमें लकी फली अथवा

गोल दाने के रूप में फल लगते हैं। २. उक्त फली अथवा उसके बीज जो आकार में चिपटे तथा स्वाय में तिक्त होते हैं।

मिथिब—इस पीछे और दूसरी फलियों के अनेक अवातर भेद हैं, जिनमें झाल मिर्च और काली मिर्च दो प्रसिद्ध भेद हैं।

भूना—**मिर्च** सगना—मिथी की तीसरी बातें सुनने पर बहुत दूरा कलना और क्रोध या झुंझलाहट होता। जैसे—मेरी सच बात सुनते ही उन्हें मिर्चें लग गईं।

३. काली मिर्च या गोल मिर्च जो छोटे दानों के रूप में होती है और जिसका व्यवहार मसाले के रूप में होता है। देवें 'काली मिर्च'।

चि० बहुत ही कटु, उग्र या तीक्ष्ण स्वभाववाला (व्यक्ति)।

मिथी—**पु०**—मीर (विजयी)।

मिल—**स्त्री०** [अ०] १. वह बहुत बड़ी मशीन जिसमें बड़े पैमाने पर चीजे बनाई अथवा तैयार की जाती हैं। जैसे—कपड़े की मिल, चीनी की मिल। २. वह स्थान जहाँ पर उक्त प्रकार की मशीन बैठी हो। ३. लाक्षणिक अर्थ में, वह व्यक्ति जो किसी मशीन की तरह लगातार तथा एक-रस काम करता चलता है।

मिलक—**स्त्री०** [अ० मिलक] १. जमीन-जायदाद। भू-संपत्ति। २. जागीर।

मिलकना—अ० [?] प्रयुक्त होता। जलना। उदा०—तब फिर जरमि भई नख-सिख तें, दिवा-बाति जनु मिलकी।—सूर।

†स०—जलाना।

मिलकियत—**स्त्री०**—मिलकियत।

मिलकी—**स्त्री०** [हि० मिलक+ई (प्रत्य०)] १. जमींदार। २. धनवान्। अमीर।

मिलगत—**स्त्री०** [हि० मिलना+गत (प्रत्य०)] बचत या मुनाफे की रकम। आधिक प्राप्ति। जैसे—इस सोधे में चार पैसे की मिलगत ही जायगी।

मिलन—**पु०** [स०√मिल् (मिलना)+न्+अन] १. मिलने की क्रिया या भाव। २. विधोषत दो विच्छेद हुए अथवा लड़ते-झगड़े तथा परस्पर न बोलनेवाले व्यक्तियों का होनेवाला मेल या मिलाप। ३. मिलावट। मिश्रण।

मिलनसार—**वि०** [हि० मिलन+सार (प्रत्य०)] [भाव० मिलन-सारी] जिसकी प्रवृत्ति सबसे मिलते रहते तथा प्यार-मुहब्बत बनाये रखने की हो।

मिलनसारी—**स्त्री०** [हि० मिलनसार+ई (प्रत्य०)] मिलनसार होने की अवस्था या भाव।

मिलना—अ० [स० मिलन] १. पदार्थों का एक दूसरे में पड़कर इस प्रकार मिश्रित या सम्मिलित होना कि वे बहुत कुछ एकाकार हो जायें और सहज में एक दूसरे से अलग न किये जा सकें। जैसे—(क) दाल में नमक या हल्दी मिलना। (ख) दूध में चीनी या पानी मिलना। २. पदार्थों का आपस में साधारण रूप से एक दूसरे में इस प्रकार आकर पड़ना कि उनका स्वतंत्र अस्तित्व बना रहे। जैसे—(क) गेहूँ के दानों में बने या जो के दाने मिलना। (ख) मोतियों में हीरे मिलना।

पद—मिलना-मुल्ला—(क) आपस में एक दूसरे के साथ अच्छी तरह मिश्रित या सम्मिलित। (ख) जिसमें कई पदार्थों का मिश्रण या मेल हो।

४—५५

जैसे—मिला-बुला अथ। ३. कितरी रेखा, बिंदु, सीमा आदि पर दो या कई चीजों का इस प्रकार आकर पहुँचना या स्थित होना कि वे एक दूसरी से लग या सट जायें। जैसे—(क) गाँवों या देशों की सीमाएँ मिलना। (ख) चौराहे पर चारों ओर की सड़कें मिलना। ४.

प्राणियों, व्यक्तियों आदि के सम्बन्ध में, किसी प्रकार या रूप में सँट, साक्षात्कार या सामना होना। जैसे—(क) अंगल में भूमने के समय घेर मिलना। (ख) रास्ते में किसी परिचित या मित्र का मिलना।

५. किसी पदार्थ का किसी रूप में आये या सामने आना। जैसे—रास्ते में झरना, नदी या पहाड़ मिलना, जानवर मिलना। ६. व्यक्तियों का इस प्रकार आमने-सामने या पास होना कि आपस में बात-चीत हो सके। जैसे—कल फिर हम लोग यहीं मिलेंगे। ७. किसी प्रकार का अभीष्ट अथवा सुख लाभ या सिद्धि होना। जैसे—(क) दवा से आराम मिलना। (ख) किसी स्थान पर रहने से सुख मिलना। ८. छान-बीन करने या ढूँढ़ने पर किसी चीज, तथ्य या बात का ज्ञान अथवा परिचय होना। जैसे—(क) अनुसंधान करने पर कोई नई दवा, द्रव्य या धातु मिलना। (ख) सोचने पर नई तरकीब या रास्ता मिलना।

९. किसी चीज या बात का किसी रूप में प्राप्त या हस्तगत होना। जैसे—(क) कही से अनुमति, आदेश, रण्य या समाचार मिलना। (ख) कोई हुई औद्योगिक या कलम मिलना। (ग) बदलाव से सजा मिलना।

१०. व्यक्तियों का किसी अभिप्राय या उद्देश्य की सिद्धि के लिए आपस में समझौता करने गुट या दल बनाना। जैसे—चोरों, डाकुओं या राजनीतिक दलों का आपस में मिलना।

पद—मिली-भगत। (दे० स्वल्पण पद)

११. अपना दल या पक्ष छोड़कर मूल अथवा प्रत्यक्ष रूप से किसी दूसरे दल या पक्ष की ओर जाना। जैसे—(क) सदन के सदस्यों का विरोधी दल में मिलना। (ख) घर के नौकर-चाकरों का चौरों से मिलना। १२. व्यक्तियों के अंगों का एक दूसरे के सामने होना या एक दूसरे से सम्बद्ध अथवा सलग होना। जैसे—किसी से अर्धें मिलाना। १३. दो या अधिक तथ्यों या पदार्थों का अवस्था, गुण, रूप आदि के विचार से एक दूसरे के अनुरूप, तुल्य या समान होना। जैसे—एक दूसरे की आकृति, मत, विचार या स्वभाव मिलना।

पद—मिलना-मुल्ला—मूल, प्रकृति, रूप आदि के विचार से बहुत कुछ किसी दूसरे के समान अथवा आपस में एक तरह का। जैसे—दूरी से मिलता-जुलता कोई और कपड़ा लाजी।

१४. दो या अधिक तथ्यों, पदार्थों आदि का इस प्रकार एक स्थान या स्थिति में आना, पहुँचना या होना कि उनका पार्ष्वस्थ या भेद-भाव दूर हो जाय। जैसे—(क) नमम पर नदियों का मिलना। (ख) संध्या के समय दिन और रात मिलना। (ग) विरोधी दलों का आपस में मिलना। १५. कुछ विशिष्ट प्रकार के बाधों के सबब में, ऐसी स्थिति में आना या लयाव आना कि उनमें से डीक तत्त्व से और एक मेल में स्वर निकल सकें और साथ के दूसरे बाधा के स्वर्णों के अनुरूप ही सकें। बाजों का अधिक उठना या बड़ा न रहना, बल्कि समतुल्य में आना या होना। जैसे—(क) पखावज या सितार मिलना। (ख) तबले से सारंगी मिलना।

†स०[?] घी, नैस आदि का दूध दूतना।

मिलनी—स्त्री० [हि० मिलना + ई (प्रत्य०)] १ बिचाह के समय की एक रसम, जिसमें वर और कन्या-पक्ष के लोग आपस में गले मिलते हैं और कन्या-पक्ष के लोग वर-पक्ष के लोगों को कुछ धन भेंट करते हैं। २ इस प्रकार कन्या-पक्ष वालों द्वारा वर-पक्षवालों को दी गयी जानेवाला धन। जैसे—उनके यहाँ दो बी रुपये की मिलनी हुई है। ३ मिलना। मिलन।

मिलवाना—स०=मिलाना।

मिलवाई—स्त्री० [हि० मिलवाना + ई (प्रत्य०)] मिलवाने की क्रिया, भाव या पारिश्रमिक अर्थात् पुरस्कार।

मिलवाना—स० [हि० मिलाना का प्रे० रूप] १. मिलाने का काम दूसरे से कराना। २ आपस में मेल कराना। ३. आपस में परिचय या भेंट कराना। ४ स्त्री और पुरुष का संयोग कराना।

मिलवाई—स्त्री० [हि० मिलाना + ई (प्रत्य०)] १ मिलाने की क्रिया, भाव या पारिश्रमिक। २ जाति से निकाले हुए लोगों का फिर से जाति में मिलाना जाना। ४ आज-कल, बेल के अधिकारियों द्वारा कैंपियों को उनके मित्रों, सम्बन्धियों आदि से भेंट कराने की क्रिया या भाव। ३ बिचाह की मिलनी नामक रसम।

मिलाना—पु० [हि० मिलाना] १ मिलाने की क्रिया या भाव। २ तुलनात्मक दृष्टि में अथवा ठीक होने की जाँच करने के लिए दो या अधिक चीजों या बातों का आपस में सापेक्ष करके मिलाना और देखा जाना। जैसे—नव रकमा का मिलान कर लो। ३ मृग, दौष, बिज्रेद, बिशेषणार्थ, समानताएँ आदि जानने के लिए दो चीजों या बातों के सबसे में किया जानेवाला बिचार या बिबेचन। तुलना (कम्पैरिजन) ४ पैदल चलनेवालों के ठहरने का बेरा या पड़ाव। (बुदेल०) उदा०—भयो महरत भोर के पीरिहि प्रथम मिलानु -- बिहारी।

मिलान-नेत्र—पु० नगर या जिले का मुख्यालय या कार्यालय जिससे वहाँ के सभी दूर-भाष वज्र सञ्चाल होते हैं और जहाँ स्थानीय लोगों से या अन्य नगरवालों से दूर-भाष करने के लिए परस्पर सबंध मिला देने की व्यवस्था की जाती है। (एक्सचेंज)

मिलाना—स० [हि० मिलना का स० रूप] १ पदार्थों का एक दूसरे में डालकर या साथ करने इत प्रकार मिश्रण या समिलित कराना कि वे बहुत कुछ एक रूप हीं जायें और सहज में एक दूसरे से अलग न हो सकें। जैसे—तरकारी में मसाला या तेल में रस मिलाना। २ एक पदार्थ में दूसरा पदार्थ इस प्रकार डालना कि वे साथ रहने पर भी अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाये रहें। जैसे—कई तरकारियों को एक में मिलाना। ३ किसी रेखा, बिन्दु या विस्तार पर कोई चीज इस प्रकार लाकर पहुँचाना या लाना कि वे आपस में लग्न या सट जायें अथवा किसी रूप में एक हो जायें। जैसे—(क) कोई दीवार बड़ाकर छत या दूसरी दीवार से मिलाना। (ख) नगर के आस-पास की बसियों को नगर में मिलाना। ४. प्राणिगणों, व्यक्तियों आदि की इस प्रकार एक दूसरे के पास लाना या सामने पहुँचाना कि उनमें किसी प्रकार का सबंध या संयोग घटित हो। जैसे—(क) भूले हुए बच्चे को उसके माँ-बाप से मिलाना। (ख) अपने किसी मित्र को और मित्रों में मिलाना। ५ किसी को अपने दल, बंधे या समूह में सम्मिलित करने उन्को अर्थ बनाना। जैसे—(क) जाति से निकाले हुए व्यक्ति को जाति में मिलाना। (ख) विधियों की

अपने बंधों में मिलाना। ६. विपक्षी या विरोधी को अपने अनुकूल बनाना या पक्ष में लाना। जैसे—किसी के गवाह या नौकर को अपनी तरफ मिलाना। ७. दलो, व्यक्ति आदि का पारस्परिक बैर-विरोध दूर करने उनके मित्रता या सद्भाव स्थापित करना। जैसे—दलबन्धी दूर करके दलो को आपस में मिलाना। ८. चीजों को आपस में बाँट लगाकर, जोड़कर या सीकर एक करना। जैसे—बाँधनी बढी करने के लिए उसमें और कपड़ा मिलाना। ९. शरीर के कुछ अंगों या उनका क्रियाओं के सबंध में, किसी प्रकार का सम्पर्क या सहयोग स्थापित करना या कराना। जैसे—किसी से अर्थ, मन या हाथ मिलाना। १०. एक पदार्थ के तल को दूसरे पदार्थ के तल के इतने पास पहुँचाना कि वे आपस में लग्न या सट जायें। जैसे—पहू अन्गारी जरा और आगे बढ़ाकर दोवार से मिला दो। ११ उद्योगिता, मृग, महत्त्व आदि स्थिर करने के लिए एक की दूसरे से तुलना करते हुए बिचार करना। जैसे—दोनों कपड़ों को मिलकर देखो कि दोनों में कौन अच्छा है। १२. इस बात की जाँच करना कि कोई चीज या लेब ठीक और शुद्ध है या नहीं। जैसे—(क) आय-व्यय का हिसाब मिला (अर्थात् उनके ठीक या शुद्ध होने की जाँच करना। १३ युव और स्त्री का संयुक्त या संयोग के लिए सापेक्ष करना। (बाजारू) १४ कुछ विशिष्ट प्रकार के बाजों के सबंध में, उनके अंगों का तुलना या बबन कसकर अथवा ढीला करके उन्हें ऐसी स्थिति में लाना कि उनके ठीक स्वर निकल सकें। जैसे—(क) तबला या सारंगी में मिलाना। (ख) सारंगी से तबना मिलाना।

मिलाना—पु० [हि० मिलाना + आप (प्रत्य०)] १ मिलने की क्रिया या भाव। २ मिले हुए होने की अवस्था या भाव। ३ दो या अधिक व्यक्तियों का आपस में प्रेमपूर्ण मिलन। रनेपूर्ण मिलन। जैसे—राम और भरत का मिलान। ४. वह स्थिति जिसमें लंग आपस में मिल-जुलकर और स्नेहपूर्वक रहते हैं। मेल।

प०=मेल-मिलान।

५ मूलाकाल। मे०। ६ स्त्री और पुरुष का संयुक्त या संयोग।

मिलावट—पु० [हि० मिलाना + आव (प्रत्य०)] १ मिलावट। २. मिलाप।

मिलावट—स्त्री० [हि० मिलाना + आवट (प्रत्य०)] १ मिलाए जाने की क्रिया या भाव। २ किसी अच्छी चीज में घटिया चीज के मिले हुए होने की अवस्था या भाव। अप-मिश्रण। काल-मेल। (एडल्टरेशन) जैसे—मिलावट का घी, दूध या चीना। ३ इस प्रकार शुद्ध चीज में मिलाया जानेवाला खराब चीज का अण या मात्रा। मोट।

मिलावारी—पु०=मिलाप।

मिलिब—पु० [सं०] भ्रमर। मौरा।

मिलिक—स्त्री० दे० 'मिलक'।

मिलिटरी—वि० [ख०] १ सेना या फौजी सैनिक संबंधी। २. युद्ध या सभ्य संबंधी। सामरिक।

स्त्री० पलटन। फौज।

मिलित—पु० क० [स०, मिल् (मिलना)। क्त] किसी के साथ मिला हुआ।

मिलि-भगत—स्त्री० [हि० मिलना + भगत] किसी को लग्न या परेगान करने के लिए आपस में मिल-जुलकर बली जानेवाली

ऐसी बुद्धापूर्ण बाल जो अजर से देखने पर बहुत-कुछ निर्वाण या साधारण जान पड़े। जैसे—यागियों को उगने के लिए दलाकों या पंथों की मिली-भास।

मिलेनी—स्त्री०—मुनेठी।

मिलेनी—सं० [हिं० मिलाना] १. री का हूब हूबना। २. मिथित करना। मिलाना।

पू० एक प्रकार की बड़िया जमीन जिसमें कुछ बाल भी मिला रहता है।

मिलेनी—स्त्री० [हिं० मिलाना + औनी (प्रत्य०)] १. मिलाने की क्रिया या भाव। मिलाई। २. मिलाबट। ३. मिलने-मिलाने आदि के समय दिया जानेवाला भन। ४. आज-कल विशिष्ट रूप से, जेल के कैदियों को उनके सम्बन्धियों, परिचितों आदि से भेंट कराने की क्रिया या भाव।

मिल्ल—मुं० [अ०] १. जमींदारी। २. माफी। मिली हुई जमीन या जागीर। ३. मध्य युग में जमीन पर होनेवाला एक विशिष्ट प्रकार का स्वामित्त्व। ४. बन-संपत्ति। ५. अधिकार।

मिल्लपत्त—स्त्री० [अ०] १. मिलक की अवस्था या भाव। २. किसी बीज के मात्तिक होने की अवस्था या भाव। स्वामित्त्व। जैसे—इस जमीन पर हमारा मिल्लपत्त है। ३. जमींदारी। ४. जागीर। ५. बन-संपत्ति। ६. कोई ऐसी बीज जिस पर किसी का स्वामित्त्व-पूर्ण भोग हो।

मिल्ली—मुं०—मिलकी।

मिल्लत—स्त्री० [अ०] [मिलक + त (प्रत्य०)] १. मेल-जोल या मेल-मिलाप होने की अवस्था या भाव। २. मिलन-सारी। ३. कोई धार्मिक वर्ग या सप्रदाय। जैसे—बड़े नगरों में आपको हर मिल्लत के आदमी मिलेंगे।

मिषान—मुं० [अ०] १ उद्देश्य। २. कुछ लोगों का वह दल जो किसी विशिष्ट उद्देश्य की सिद्धि, किसी प्रकार के सेवा-कार्य या विशिष्ट महत्वपूर्ण विषय की बात-चीत करने कोई नया सम्बन्ध स्थापित करने के लिए दूसरे देश या स्थान में भेजा जाता हो। ३. वह संस्था, विशेषतः ईसायियों की संस्था जो सचिदित रूप से धर्म-प्रचार का प्रयत्न करती हो।

मिषानरु—मुं० [अ०] १. वह जो किसी दूसरी ग्रहण या दूसरे देश में केवल लोक-सेवा के भाव से जाता था आकर रहता हो। २. वे ईसाई पादरी आदि जो किसी मिषान के सदस्य के रूप में अनेक देशों में धर्म का प्रचार करने के लिए जाते हैं। ३. उक्त प्रकार का कोई पादरी।

मिषी—स्त्री० [सं० मिष + डीप्] १. जटामती। २. सोजा नामक साग। ३. सोप। ४. मेथी। ५. डाम।

मिष—वि० [सं० मिष् + क्त] १. जो अनेक के योग से मिलकर एक हो गया हो। कड़वों को मिलाकर एक किया या बनाया हुआ। जैसे—मिष चातु। २. मिला हुआ। संयुक्त। ३. जिसने अनेक अर्थों, तर्कों, प्रक्रियाओं आदि के योग से एक नया और स्वतंत्र रूप धारण कर लिया हो। जैसे—मिष अनुपात, मिष गुणन, मिष धाक्य आदि। ४. बडा और माय्य। श्रेष्ठ।

पूर० १. कुछ विशिष्ट वर्णों बाहुल्यों (जैसे—कान्यकुब्ज, सरयूपारी, सारस्वत आदि) की एक विशिष्ट शाखा का अल्ल या जाति-नाम। २. साहित्य में इतिवृत्त के मूल के विचार से मात्को की कथा-वस्तु के तीन भेदों में से एक। ऐसी कथा-वस्तु जिसमें इतिवृत्त की पैरिका या पृच्छुमि

तो प्रख्यात या लोक-विदित हो, परन्तु उसके साथ अनेक उल्लाह या कल्पित कथाएँ अथवा बटनार्थ की मिला दी गई हो। (अथ जो श्रेष्ठ 'उल्लाह' और 'प्रख्यात' कहलाते हैं।) ३. अविश्व में सात प्रकार के वर्णों में से अंशिय या सातवर्ण गण को इतिवृत्त और विद्याका नशाप के योग में, होता है। ४. व्याकरण में तीन प्रकार के वाक्यों में से एक, जिसमें मुख्य उपवाक्य तो एक ही होता है, परन्तु आश्रित उपवाक्य एक से अधिक होते हैं। ५. हाथियों की चार जातियों में से एक जाति। ६. सपिपात रोग। ७. वृत्त। दस्त। ८. मूली।

पू०—मिष (देश)।

मिषक—वि० [सं० मिष + क्त] मिषण करने या मिलानेवाला।

पू० १. खारी नमक। २. जस्ता। ३. मूली। ४. नव्यन बन।

५. एक प्राचीन तीर्थ। ६. वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का रोग।

मिषक-स्नेह—मुं० [सं० ष + तं] एक प्रकार का औषध जो भिक्कला, बसुमूल और दली की बड़ आदि से बनता है। (शैबक)

मिषक—वि० [सं० मिष/जन् (उत्पत्ति) + ड] १. जो किसी प्रकार के मिश्रण से उत्पन्न हुआ हो। २. वह जो दो मिश्र-मिश्र जातियों के मिश्रण या मेल से बना या उत्पन्न हो। वर्ण-मंकर। दीपला।

पू० शम्बर।

मिषक—मुं० [सं० मिष् + ल्युट्—अत] १. दो या अधिक बीजों को आपस में मिलाना। मिथित करना। २. उक्त को मिलाने से तैयार होने या बननेवाला पदार्थ या रूप। ३. मिलाबट। ४. गणित में, संख्याओं का जोड़ लगाने की क्रिया। ५. रसायन विज्ञान में, द्रव, ठोस या गैस रूप में होनेवाले किसी पदार्थ को किसी द्रवसे द्रव, ठोस या गैस रूप में होनेवाले पदार्थों में मिलाना। ६. उक्त के मिलाप जाने पर तैयार होनेवाला पदार्थ विशेषतः तरल पदार्थ। बोल। (सेल्युलान, उक्त दोनों अर्थों में) ७. वह तरल औषध जो कई औषधियों के मेल से बना हो। (मिषकर)

मिषकीय—वि० [सं० मिष् + कीयत्] जो मिषण के योग्य हो; अथवा जिसका मिषण होने को हो।

मिषता—स्त्री० [सं० मिष + तल + टाप्] मिषण या मिथित होने की अवस्था या भाव।

मिष-चातु—मुं० [कर्म० सं०] वह चातु जो दो या अधिक चातुओं के मिषण से बनी हो। (एलाय) जैसे—पीतल।

मिष-धाक्य—मुं० [सं० कर्म० सं०] एक में मिलाए हुए कई प्रकार के अनाज या धान्य।

मिष-गुणा—स्त्री० [सं० ष + सं०, + टाप्] मेथी।

मिष-वर्ण—मुं० [सं० ष + सं०] १. काला अण्ड। २. गन्ना।

वि० दो या दो से अधिक रवोंवाला।

मिष-वाक्य—मुं० [सं० कर्म० सं०] व्याकरण में तीन प्रकार के वाक्यों में से एक जिसमें एक मुख्य उपवाक्य होता है और दो या दो से अधिक आश्रित उपवाक्य होते हैं।

मिष-वाक्य—पू० [सं० ष + सं०] शम्बर।

मिथित—मुं० हं० [सं० मिष् + क्त] १. एक से मिला या मिलाया हुआ। २. मिलाबटवाला (पदार्थ)।

विभिला—स्त्री० [सं० विभित् + टाप्] सात सक्रातियों में से एक ।
विभीर्—स्त्री० = भिसरी ।
विभीकरण—पुं० [सं० मित्र + बिभ, इत्य दीर्घ, √ कृ (कृत्वा) + क्युट्
 —अन्, नि] मित्रों की क्रिया या भाव । मिथत्र करना ।
विभीषण—पुं० [सं० मित्र-ओदन, कर्म० सं०] सिचड़ी ।
विभ—पुं० [सं० √ मिष् (विष्) + क्त] १ कपट । छल । धोखेवाजी ।
 २ बहाना । मित्र । ३ ईर्ष्या । डाह । ४ स्पृहा । होत्र । ५ देवता ।
 वरान । ६ सीचना । सिचन ।
विभि—स्त्री० = मिसि ।
विभिका—स्त्री० [सं० विभि + कन् + टाप्] १ सोआ । ३ जटा-
 मासी । ३ सौंफ ।
विभी—स्त्री० = मिसि ।
मिष्ट—वि० [√ मिष् (सेचन) + क्त] १ मिठास से युक्त । २ स्वादिष्ट ।
 ३. नम ।
 पुं० १ नीटा रस । २ मीठापन । मिठास । ३ मिठाई ।
मिष्ट-निच—पुं० [सं० कर्म० सं०] मीठी नीम (बृष और उसकी
 फली) ।
मिष्ट-नाक—पुं० [सं० ब० सं०] मुरखा ।
मिष्ट-पाचक—पुं० [सं० ष० ल०] स्वादिष्ट भोजन बनानेवाला । रसोईया ।
मिष्ट-वाक् (विष्)—वि० [सं० मिष्ट/भाष् (बोखना) + गिनि
 मिष्टाभाषिन्] मीठे बचन बोलनेवाला । मधुरभाषी ।
मिष्टास—पुं० [सं० मिष्ट-अत्र, कर्म० सं०] मीठा अन्न अर्थात् मिठाई ।
मिस—पुं० [सं० मिष] १. ऐसी स्थिति जिसमें किसी काम, बीच या बात
 का शास्त्रिक रूप तो कुछ और हो, पर किसी युक्त उद्देश्य से कुछ और ही
 रूप प्रकट करके दिखाया जाता हो । जैसे—परिचित जी ने उपदेश के
 मिस से श्रोताओं को उनके बहुत से बौध बतलाये और उन्हे ठीक मार्ग
 बताया ।
मिषण—'बहाना' से इसमें यह अन्तर है कि इसमें कौशल या नियुगता
 की भावना अधिक होती है, पर इसका प्रायः बुरा फल नहीं होता, और न
 इसमें अपना दोष छिपाने का ही भाव होता है ।
 २ उक्त स्थिति में या उक्त प्रकार के उद्देश्य से कही जानेवाली बात ।
 उदा—(क) मैं क्या बच्चों का सा मिस कर रहा हूँ ।—बृदानलाल ।
 (ख) भाइ तुफाने पीर बस, मिस सममें सब कोन ।—बृद । ३ दे०
 'बहाना' और 'हीला' ।
 अर्थ० १. नाते या संबंध के विचार से । जैसे—कुछो मिस लीजिए,
 मरीजे मिस दीजिए । (कहा०) २. बहाने से ।
 पुं० [फा०] लंबा ।
 स्त्री० [अ०] कुमारी कन्या या अविवाहिता स्त्री का वाचक शब्द ।
 जैसे—मिस कल्याणी ।
मिसाला—अ० दे० 'मिन्मिनाना' ।
मिसकीन—वि० [अ० मिसकीम] १ दीन-हीन । बेचारा । २ दरिद्र ।
 निर्धन । गरीब । ३ भोला-भाला । सीधा-साधा । ४ विनम्र । ५
 स्वामी या विरक्त ।
मिसकीनी—स्त्री० [अ० मिसकीन + ई (प्रत्य०)] मिसकीन होने की
 अवस्था या भाव ।

मिसपर—पुं० [फा०] [भाव० मिसपरी] ? तबिके बरतन आदि बनाने-
 वाला । कारीगर । २ ठेकर ।
मिसन—स्त्री० [हिं० मिसना=मिलना] ? वह जमीन जिसकी मिट्टी
 में बाष्प मिला हो । २ बलूई मिट्टी ।
मिसना—अ० [सं० मिथत्र] मिलाया जाना । मिश्रित होना ।
 अ० [हिं० मीसना का अक० रूप] मोटा अर्थात् मोटा या मजबूत ।
 † वि०, पुं० = मीसना ।
मिस्तल्ल—स्त्री० [अ० बिस्मिल्लाह] मुगलनानों में 'बिस्मिल्लाह'
 कहकर पशु की हत्या करने की प्रथा । उदा०—कतहूँ मिगमिल कतहूँ
 छेब ।—कबीर ।
मिसर—पुं० १. =मिष । २ =मिस्त्र (देग) ।
मिसरा—पुं० [अ० मिसरअ] ? उर्दू कारनी आदि की कविता में, किसी
 कविता आदि का आधारभूत पहला चरण । २ चरण ।
 पद ।
पद—**मिसरा चरह** ।
गुहा—**मिसरा भाषना**—किसी एक मिसरे में अपनी ओर में रचना करने
 दूसरा मिसरा जोड़ना या लगाना ।
मिसरा तरह—पुं० [अ० +फा०] वह चरण जिसे आधार बनाकर कोई
 कविता लकी जाती हो ।
मिसरी—वि० [मिस्त्र देश से] मिस्त्र या मिसर नामक देश का ।
 पुं० मिस्त्र देश का निवासी ।
 स्त्री० १ मिस्त्र देश की भाषा । २ विशेष प्रकार के कूड़े या पाल
 में जलाई हुई चीनी, जो खाने में स्वादिष्ट होती है । (यह मिस्त्र देश में
 पहले-पहल बनी थी) ।
पद—**मिसरी की डली**—बहुत ही मोटा और स्वादिष्ट पदार्थ ।
 ३ एक प्रकार की सहद की मक्खी ।
मिसरीकी—स्त्री० [हिं० मिसरा + रोटी] ? मिस्त्र आटे अर्थात् दालो
 आदि के धूप की बनी हुई रोटी । मिसरा । २ अंगकड़ी ।
 बाटी ।
मिसल—स्त्री० [अ० मिमिल] सिक्कों के वे अनेक मनुष्य जो अलग-अलग
 नामको की आधीनता में स्वतंत्र हो गये हों । २ दे० 'मिमिल' ।
 वि० = मिस्ल ।
मिसहा—वि० [हिं० मिम + हा (प्रत्य०)] मिस (दे०) या बहाना
 करनेवाला ।
मिसाल—स्त्री० [अ०] १ उपमा । २ उदाहरण । बृष्टांत । ३.
 कहान्त । लोकमिस्त ।
मिसालम—अर्थ० [अ०] उदाहरण-स्वरूप । उदाहरणार्थ ।
मिसाली—वि० [अ०] मिसाल अर्थात् उदाहरण के रूप में होनेवाला या
 प्रस्तुत किया जानेवाला ।
मिसि—स्त्री० [सं० √ मिष् (परिवर्तन करना) + क्त, इष्] ? जटा-
 मासी । २ सौंफ । ३ सोआ नामक साग । ४ अजमोदा । ५
 उशीर । क्षस ।
मिसिर—स्त्री० = मिसरी ।
मिसिल—स्त्री० [अ० मिसल] ? एक साबू रत्ने हुए अथवा नक्की किये
 हुए किसी मुकदमे, विवाद या विषय से संबंध रखनेवाले कागज-पत्र ।

२. वपस्वती खाने में, पुस्तक की सिखाई से पहले करमों का क्रमानुसार लगाया हुआ रूप ।

फि० प्र०—उठाना । —लगाना ।

मिस्रिली—वि० [हि० मिस्रिल+ई (अव्य०)] जिसके संबंध में अचालत में कोई मिस्रिल बन चुकी हो । २. जिसके न्यायालय से सजा मिल चुकी हो । जैसे—मिस्रिली चोर या डाकू ।

मिस्री—स्त्री० [फा०] मिस्री । (दे०)

मिस्कल—पु० [अ० मिस्कल] तलवारों चमकाने का एक तरह का ढोहे का यंत्र ।

मिस्की—स्त्री० [?] मगीत में गाने का वह ढंग या प्रकार जिसमें गानेवाला अपने पूरे कंठस्वर से या बुलकर नहीं बल्कि बहुत ही कोमल और धीमे कंठस्वर में गेता है । (कूल)

मिस्कीम—वि०—मिसकीम ।

मिस्कीनी—स्त्री०—मिसकीनी ।

मिस्कोट—पु० [अ० मेस=भोज] १. भोजन । २. एक साथ बैठकर खाने-पीने वालों का समूह । ३. आपस में होनेवाला गुप्त प्रामाण्य ।

मिस्टर—पु० [अ०] महाशय । (नाम के पहले प्रयुक्त) जैसे—मिस्टर जिन्ना । इसका सशक्त रूप मि० ही अधिक प्रचलित है ।

मिस्तर—पु० [हि० मिस्तर ?] १. इमारत में गंध पीटने का पिट्टना नामक उपकरण । २. दपती का वह टुकड़ा जिस पर समानांतर पर डोरे लपेटे या सी लेते हैं और जिनकी सहायता से कागज पर सीधी लकीरें खींची जाती हैं ।

पु०—मेहतर ।

मिस्तरी—पु० [अ० मास्टर=उस्ताद] वह चतुर कारीगर जो इमारत, धातु या लकड़ी का काम करता हो अपना यंत्र आदि की मरम्मत करता हो ।

मिस्त्रीखाना—पु० [हि० मिस्त्री+फा० खाना] वह स्थान जहाँ बर्ड, लोहार आदि बैठकर काम करते हैं ।

मिस्ता—पु० [देस०] १. अनाज दानि के लिए तैयार की हुई भूमि । २. बजर जमीन ।

मिस्त्रेजिस—पु०—मेस्त्रेजिम ।

मिन्न—पु० [अ०] अफ्रीका महादेश के उत्तर का एक प्रसिद्ध देश जो किसी समय बहुत अधिक उन्नत तथा सम्य था । आजकल यह समुक्त अरब गणराज्य के अन्तर्गत है ।

पु०—मिन्न ।

मिन्ना—पु०—मिसरा ।

मिन्नी—वि० [फा० मिन्न] मिन्न देश का ।

मिस्त्र—वि० [अ०] समान । तुम्ह । जैसे—यह थोड़ा मिस्त्र लीर के जाता है ।

स्त्री० दे० 'मिस्त्रि' ।

मिस्ता—पु० [हि० मिसना=मिलना या मीसना=मलना] १. मूंग, मोठ आदि का मूसा जो भेरे और ऊँटों के लिए अच्छा समझा जाता है । २. कई तरह की दालें एक साथ पीसकर तैयार किया हुआ आटा जिसकी रोटी बनती है ।

पथ—मिस्ता कुस्ता=मोटा अन्न ।

मिस्ती—स्त्री० [फा० मिसी] १. भाजूफल, लोहचून, तुलिया आदि के

योग से तैयार किया जानेवाला एक तरह का मजन जिससे स्थियां अपने दाँत नीर होठ रँगती हैं ।

फि० प्र०—मलना । —लगाना ।

मुहा०—**मिस्ती काजब करना**—स्थियों का बना-सिंजार करना । २. मुसलमान देखाओं की एक रस्म जिसमें किसी कुमारी देवता को पहले-पहले समागम कराने के लिए उसे मिस्ती लगाते हैं । नथिया उतरने या सिर-बन्दाई की रस्म । उदा०—हमको जासिक लबी बस्ती का समझकर उसने रुक्का भेजा है कि हमारी मिस्ती ।—कोई धायर ।

मिह—वि० [फा०] महार ।

मिहबना—स०—मीचना ।

मिहलर—पु०—मेहलर ।

मिहवार—पु० [फा० मिह=मिहलत+ वार (अव्य०)] वह मजदूर जिसे नकद मजदूरी दी जाती हो । (फेले०)

मिहलत—स्त्री०—मेहलत ।

मिहना—पु०—मेहना ।

स०—मेहना (अव्य०) ।

मिहनामा—पु०—मेहनाम ।

मिहर—स्त्री०—मेहर ।

पु०—मिहिर ।

मिहरबान—पु०—मेहरबान ।

मिहरा—पु० १. मेहरा । २. महारा ।

मिहराब—स्त्री०—मेहराब ।

मिहराब—स्त्री०—मेहराब (स्त्री) ।

मिहरी—स्त्री०—मेहरी (स्त्री) ।

मिहामा—अ० [स० हिमामन या हि० मेह] बर्षा ऋतु में पकवानों का नमी के कारण मूलयम पड़ जाना और फलतः कुुरकुुरा न रह जाना ।

मिहानी—स्त्री०—मयानी ।

मिहिका—स्त्री० [स०√मिह (मीचना)+कृत=अक,+टापू, दख] १. पाला । हि० । २. जीन । ३. कपूर ।

मिहिनना—स०—मीचना ।

मिहिर—पु० [स०√मिह+किरपू] १. धूप । २. आक । मदार । ३. ताँबा । ४. बाल । मेघ । ५. वायु । हवा । ६. चन्द्रमा । ७. राजा । ८. दे० 'बराह-मिहिर' ।

वि० बुद्धा । बुद्ध ।

मिह्री—वि०—महीन ।

मिह्री—स्त्री० [देस०] मध्य-प्रदेश में होनेवाला एक प्रकार का अरहर ।

मिह्रीम—वि०—महीन ।

मी—पु०—मेह (वर्षा) । (पश्चिम)

मीगनी—स्त्री०—मेगनी ।

मीपी—स्त्री० [स० मूद्रग=दाल] बीज के अंदर का मूसा ।

मीचना—स० [हि० मीचना] १. मलना । ममलना । जैसे—छाती मीचना, हाथ मीचना ।

† स०—मूदना ।

मीचू—वि० [हि० मीचना] बहुत मीठ-मीठकर अर्थात् कठिनता से बल निकालनेवाला । कठुन । कृष्ण ।

मीट—स्त्री० [हि० मीटना—बद करना] मीट की झपकी। (राज०) उदा०—जागिया मीट अजारपत।—प्रिथीराज।

मीट—स्त्री० [अ० मीटम्] १. मीटने की अवस्था, किया या भाव।

२. सीपीत में एक स्वर से दूसरे स्वर पर जाने समय मध्य का अथ ऐसी सुधरता से कहना कि दोनों स्वरो के बीच का सबब स्पष्ट हो जाय।

मीटका—सु० भेड़क।

मीटना—सु० [हि० मीटना] १. मलना। मगलना। २. गूँघना। जैसे—आटा मीटना।

मीथाव—स्त्री० [अ०] १. किसी काम या बात के लिए नियत किया हुआ समय। अवधि। २. कैंद की मजा की अवधि।

कि० प्र०—काटना।—भुगतना।

मीथादी—वि० [हि० मीआद; ई (प्रत्य०)] १. विमर्श के लिए कोई मीआद या समय नियत हो। नियत समय तक रहनेवाला। जैसे—मीआदी बुखार, मीआदी हुँडी। २. जो मीआद अर्थात् कैंद की सजा भोग चुका हो।

मीआदी बुखार—सु० [अ० मीआदी+बुखार] मासिगतिक ज्वर जो प्रायः ७, १४, २१, २८ या ४१ दिनों तक रहता है। (टाइफॉइड)

मीआदी हुँडी—स्त्री० [अ० हि०] वह हुँडी जिसका भुगतान नियत मीआदी पूजने पर होना है।

मीच—स्त्री० [स० मीति] मूख्य। मीत।

मीचना—स० [प्रा० मिचण] बद करना। जैसे—अखिं या मुँह मीचना।

मीचु—स्त्री०—मूख्य।

मीचना—सु०—मीजना।

मीना—स्त्री० [अ० मिनाज] १. पारस्परिक व्यवहार में स्वभाव आदि की अनुकूलता।

मुहा०—(किसी से) मीना पटना या मिचना—व्यभाव मिलने के कारण मेल-जोल होना।

२. राय। सम्मति। ३. सहमति। स्वीकृति।

मीजान—स्त्री० [अ० मीजान] १. तुला। तराजू। २. तुला राशि।

३. गणित में कई अंकों, सख्याओं आदि का जोड़। योग।

† स्त्री०—मीजा।

मीटना—अ०—मीचना।

मीटर—सु० [अ०] १. वह यंत्र जिसमें प्रयुक्त होनेवाली वस्तु, शक्ति आदि का माप ज्ञाना जाता हो। मापक। जैसे—बल के पानी या बिजली का मीटर। २. वह यंत्र जिससे किसी कार्य, गति आदि का माप या सख्या ज्ञानी जाती हो। मापक। जैसे—माटर गाडी का मीटर जिससे पता चलता है कि मीटर कितनी दूर चली। ३. दशांशिक प्रणाली में दूरी या लंबाई नापने की एक आधुनिक इकाई जो १०, ३७ इंच के बराबर होती है।

मीटिंग—स्त्री० [अ०] १. गोष्ठी, समिति आदि की बैठक। २. सभा, समिति आदि का अधिवेशन।

मीठा—वि० [म० मिष्ट; प्रा० मिठ] [स्त्री० मीठी] १. चीनी, गहद आदि की तरह के स्वादवाला। मधुर। जैसे—मीठा आम, मीठी मारपी, मीठा पुलाव। २. अच्छे स्वादवाला। स्वादिष्ट। ३. अनुकूल

और प्रिय। जैसे—मीठी नजर, मीठी नींद। उदा०—मीठा मीठा गप, कटुआ कटुआ धू। (कहा०) ४. भीमा। मंद। जैसे—मीठी बाल, मीठा उबर, मीठा दरद। ५. अल्प। कम। थोडा। जैसे—वाल में नमक मीठा ही रहे। ६. मामूली। साधारण। ७. कितनी की तुलना में घटकर या हल्का। ८. (व्यक्ति) जिसका स्वभाव कोमल हो और जो शय व्यवहार करता हो। ९. (व्यक्ति) जिसमें पुस्तक बहुत ही कम हो या बिल्कुल न हो। १०. (व्यक्ति) जो सुश्रु-भजन करता हो। ११. बहुत अधिक सीमा तथा प्रायः सबके साथ सद्व्यवहार करनेवाला। सुनील और सीप्य। जैसे—इतने मीठे न बनो कि लोग चट कर जायें। १२. (श्रेत) जिनकी मिट्टी भुर-भुरी हो।

पु० १ मिठाई। २ बुड। ३ हलुआ। ४. किसी प्रकार की प्राप्ति या लाभ की स्थिति।

मुहा०—मीठा होना—अपने पक्ष में कुछ अलाई होना। जैसे—हृदय ऐसा क्या मीठा है, जो हम उनके घर जायें।

५. एक प्रकार का कपडा, जो प्राय मुसलमान पहनते थे। धीरीबाफ।

६ दे० 'मीठा नीचू'। ७ दे० 'मीठा तेलिया'।

मीठा अमूलफल—सु० [हि० मीठा+अमूलफल] मीठा चकोतरा।

मीठा आलू—सु० [हि० मीठा+आलू] शकरकरंद।

मीठा इंग्रजी—सु० [हि० मीठा+इंग्रजी] काला कुटज।

मीठा कद्दू—सु० [हि० मीठा+कद्दू] कुकुरडा।

मीठा मोखर—सु० [हि० मीठा+मोखर] छोटा गोखर।

मीठा जहर—सु० [हि० मीठा+अ० जहर] बसनाभ। बछनाग विष।

मीठा जीरा—सु० [हि० मीठा+जीरा] १ काला जीरा। २ सोफ।

मीठा डग—सु० [हि० मीठा। डग] ऐसा डग या बूत जो मीठी मीठी बातें करके अपना कुछ उद्देश्य सिद्ध करता हो।

मीठा तेल—सु० [हि० मीठा+तेल] १ तिल का तेल। २ लमखस का तेल।

मीठा तेलिया—सु० [हि० मीठा+तेलिया] बसनाभ। बछनाग।

मीठा नीचू—सु० [हि० मीठा+नीचू] चकोतरा।

मीठा नीम—सु० [हि० मीठा+नीम] नीम की तरह का एक छोटा वृक्ष।

मीठा पानी—सु० [हि० मीठा+पानी] गरवत।

मीठा पोहवा—सु० [हि० मीठा+पोहवा] थोड़े की मध्यम घाल।

मीठा प्रमेह—सु० [हि० मीठा+स० प्रमेह] मधुमेह।

मीठा बरस—सु० दे० 'मीठा साल'।

मीठा भात—सु०—मीठे चावल।

मीठा विष—सु० [हि० मीठा। स० विष] बसनाभ।

मीठा साल—सु० [हि०] कियों के बय का अठारहवाँ और कुछ लोगों के मत से तेरहवाँ साल जो उनके लिए कष्टदायक और संकटात्मक समझा जाता है। मीठा बरस।

मीठी बरखोड़ी—स्त्री० [हि० मीठी+बरखोड़ी] पीली जीबकी। स्वर्ण जीबकी।

मीठी छुरी—स्त्री० [हि० मीठी+छुरी] ऐसा व्यक्ति जो मीठी बातें करके

या मित्र बनकर अन्दर ही अन्दर हमि पहुँचाने का प्रयत्न करता ही।
कपटी या कुटिल परण्डु ऊपर से बहुत अच्छा व्यवहार करनेवाला
बादमी।

बीबी सूची—स्त्री० [हिं० मीठी + सूची] कद्दू।

बीबी दिवार—स्त्री० [हिं० मीठा + दिवार] महापीठ वृक्ष।

बीबी मार—स्त्री० [हिं० मीठी + मार] ऐसी मार जिससे अन्दर तो चोट
लगे या पीड़ा हो, पर ऊपर से जिसका कोई फल्लू दिवाया न दे।

बीबी लकड़ी—स्त्री० [हिं० मीठी + लकड़ी] मूलेटी।

बीडे बाबल—मू० [हिं० मीठा + बाबल] बहूत मात्र जिसे पकाने समय चीनी
या गुड़ भी मिला दिया गया ही।

बीडुवा—स०=मीजावा।

बीडना सीपी—स्त्री०=मेडासीपी।

बीड—बि० [सं० √ मिह् (सीचना) + क्त] १. पेसाव किया हुआ। मूत्र।
हुआ। २. पेसाव या मूत्र के समान।

बीसा—पु० [सं० मित्र] मित्र। दोस्त।

बीसता—स्त्री०=मिषता।

बीसा—पु० [सं० मित्र] १. परम प्रिय मित्र। २. मित्र के लिए सम्बोधन।
३. वे० नाम-रासी।

बील—पु० [सं० √ बी (हिंसा) ; नक्, नि०] १. मछली। २. बाढ़
राशियों में से एक राशि जिसमें पूर्वा भाद्रपद, उत्तर भाद्रपद तथा रेवती
नक्षत्र हैं।

बील-केलन—पु० [सं० ब० सं०] कामदेव।

बील-केतु—पु० [सं० ब० सं०] कामदेव।

बील-शेन—पु० [सं० ष० तं०] बहुशेन जिसमें मुख्य रूप से मछलियाँ
रखकर उनका पालन और सवर्धन किया जाता है।

बील-शंभा—स्त्री० [सं० ब० सं० टार] मत्स्यवती का एक नाम। मत्स्यवती।

बीलघाती (निम्न)—पु० [सं० मीन √ हृत् (भारना) ; णिनि, ह्—च्,
न्—त्,] बगला।

बि० मछली मारनेवाला।

बील-भ्रज—पु० [सं० ब० सं०] कामदेव।

बील-भाष—पु० [सं० ब० सं० ?] योगी मत्स्येन्द्र नाथ का एक नाम।

बील-भेडा—स्त्री० [सं० ब० सं०, + टाप्] मूठ का उद्गार हुन।

बील-भेस—पु० [सं० मीन-मेय] सोच-विचार। आगा-पीछा। असमजस।
मुहू—मील-भेस करना वा भिक्तात्म= (क) बाधक होने के लिए
इतर-उपर के तर्क करना। (ख) धर्म की आलोचना करते हुए
आपत्ति खड़ी करना।

बीलरक—पु० [सं० मीनरक, पृथो० लिटि] १. जलकीवा। २. मछरक
(पत्ती)।

बीलरक—पु०=मीनरक।

बीलर—पु० [सं० मीन + र] सहोरा (वृक्ष)।

बीमासी—स्त्री० [सं० मीन-अव, ष० तं०, + षीष्] एक प्रकार की शकरी।

बीसा—स्त्री० [सं० मीन + टाप्] ऊषा की कथा जिसका विवाह कथप
से हुआ था।
पु० [विधा०] राजपूताने की एक प्रसिद्ध थोडा जाति।
पु० [फा०] १. रग-बिरंगा बीसा। २. बरीषे का एक विशिष्ट

प्रकार का पात्र जो सुराही की तरह का होता था और जिसमें सराब
रखी जाती थी। २. नीले रंग का एक प्रकार का बहुमूल्य पत्थर।
४. सोने-चाँदी आदि पर किया जानेवाला एक प्रकार का रग-बिरंगा
काम जो कड़ा तथा चमकीला होता है।

पद्य—मीनाकार, मीनाकारी।

५. कीनिया।

मीनाकार—पु० [फा०] [भाव० मीनाकारी] सोने-चाँदी पर मीने का
रग-बिरंगा काम करनेवाला कारीगर।

मीनाकारी—स्त्री० [फा०] १. सोने या चाँदी पर होनेवाला मीने का रंगीन
काम। २. इस प्रकार किया हुआ काम। मीना। ३. किसी काम में
निकाली या की हुई बहुत बड़ी बारीकी।

मीनाख—बि० [सं० मीन-अभि, ष० सं०, + षच्] [स्त्री० मीनाशी] जिसकी
अंशे मछली की तरह लंबातरी तथा सुदूर हों।

मीनाशी—स्त्री० [सं० मीनास + षीष्] १. कुबेर की कन्या का नाम।
२. गाढर दूध। ३. बाह्यी दूधी। ४. चीनी।

बि० स्त्री० जिसकी अंशे मछली के आकार की और बहुत सुदूर
हों।

मीना बाजार—पु० [फा०] १. वह बाजार जिसमें केवल स्त्रियाँ क्रय-
विक्रय करती थीं। (अकबर द्वारा प्रचलित) २. नुदर चीनो का
बाजार। ३. जौहरी बाजार।

मीनार—स्त्री० [अ० मनार] बहुत ऊँची वास्तु रचना जो स्तम्भ के रूप में
होती है। स्तूप।

मीनारा—पु०=मीनार।

मीनासय—पु० [सं० मीन-आलय, ष० तं०] समुद्र।

मीनासाय—पु० [सं० मीना-आशय, ष० तं०] मीन-श्रेण।

मीमांसक—बि० [सं० √ माप् (विचार) + सन्, द्विवादि, इत्थ, दीर्घ,
+ ष्वल्—अक] मीमांसा करनेवाला।

पु० [मीमासा + नृत्—अक] १. पूर्व मीमासा के सूत्रकार जैमिनि
अधि। २. मीमासा शास्त्र का ज्ञान या पण्डित। ३. कुमारिल भट्ट।
४. शबर स्वामी। ५. रामानुज। ६. माधवाचार्य।

मीमांसन—पु० [सं० √ मीमास् + ष्वल्—अन] मू० कर्म मीमांसित
मीमांसा करने की क्रिया या भाव।

मीमांसा—स्त्री० [सं०] १. वह योगी मजन जोर विचार जो किसी विषय
के मूल तथ्य या तत्वों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए किया जाता है।

किसी बात या विषय का ऐसा विवेचन जिसके द्वारा कोई निर्णय किया
या परिष्कार निकाला जाता ही। २. छः प्रसिद्ध भारतीय दर्शनों में से
एक दर्शन जो मूलतः पूर्व मीमांसा और उत्तर मीमांसा नामक दो
भागों में विभक्त था।

विशेष—पूर्व मीमांसा के कर्ता जैमिनि और उत्तर मीमांसा के कर्ता
शाबरदास्य कहे जाते हैं। दोनों के विनयेष विषय एक दूसरे से बहुत भिन्न
हैं। पूर्व मीमांसा में मुख्यतः वैदिक कर्मकाण्ड का विवेचन है; इसी लिए
इसे कर्ममीमांसा भी कहते हैं। इसमें वेदों के यक्षपरक सन्धिष स्वलों
का विचार करने उनका स्पष्टीकरण किया गया है। इनमें आत्मा,
जगत्, ब्रह्म आदि का विवेचन नहीं है; और वेदों तथा उसके मन्त्रों को
ही नियंत्र तथा सर्वत्र माना है; इसी लिए इसकी गणना शनीचरवाही

दशानो मे हीतो हे। इसी लिए इसे कर्म मीमासा की कहते हैं। इसके विपरीत उत्तर मीमासा मे ब्रह्म अथवा विद्यारत्ना का विवेचन है, और इसी लिए यह विद्या दर्शन कहलाता तथा पूर्व मीमासा मे मिश्र तथा स्वतंत्र दर्शन माना जाता है। आजकल 'मीमासा' शब्द से 'पूर्व मीमासा' ही अभिप्रेत होता है।

मीमांसित—मू० क० [स०/मीमांश्+त्] जिसकी मीमासा की गई हो या हुई हो।

मीमांस्य—वि० [स०/मीमांश्+यत्] जिसकी मीमासा करना आवश्यक था उचित हो।

मीयाव—त्री० -मीआदी।

मीयावी—वि० -मीआदी।

मीर—मू० [स०/मी (फैकना) +रन्] १ समुद्र। २ पर्वत। पहाड़। ३ सीमा। हद। ४ जल। पानी।

पू० [फा० अमीर का लघु रूप] १ नेता। सरदार। २ किसी वर्य का प्रधान या मुख्य व्यक्ति। ३ इस्लाम धर्म का आचार्य। ४ मैयदा की उपाधि। ५ विजेता। ६ बादशाह (ताग का)। ७ उर्दू के एक प्रसिद्ध कवि।

मीर अर्च—मू० [फा० मार+अ० अर्च] मध्ययुग मे वह कर्मचारी जो लोगों की अविद्या बाधनाह तक पहुँचाता था।

मीर अतिश—मू० [फा०] मुगल शासन मे तोपखाने का प्रधान अधिकारी।

मीरजा—मू० [फा०] [स्त्री० मीरजादी] १ किसी मीर (अमीर या सरदार) का लड़का। २ मुगल बादशाहों की एक उपाधि। ३ मैयद मुगलमानों की एक उपाधि। ४ दे० 'मिरजा'।

मीरजाई—स्त्री० [फा०] १ मीरजा होने की अवस्था या भाव। २ मीरजा की उपाधि या पद। ३ अमीरों या शाहजादों का माँ आँवा विभाग, रहन-सहन और स्वभाव। ५ अभिमान। घमड़। ६ दे० 'मिरजाई' (कुरती)।

मीर-मुबक—मू० [फा० मीर+मु० तुजुक] सेनापति।।

मीर-बहू—मू० [अ०+फा०] पुराने राज-दरबार का वह चौबदार जो राजाओं, बादशाहों अथवा उनके दरबारियों आदि के आने से पहले दरबारियों को इसलिए पुकार कर सूचना देता था कि वे आदर-मल्कार करने या उठ बैठे होने के लिए तैयार हो जायें।

मीरवा—मू०[?] १. दक्षिण भारत मे रहनेवाले यडेरियों की एक जाति। २. उक्त जाति का व्यक्ति।

मीर-कई—मू०[फा०] १. वे परधर जो बड़े-बड़े फसों या विछाई हुई बंदिगियों आदि के चारो कोनों पर इसलिये रखे जाते हैं कि हवा से वे उड़ने न पायें। २. ऐसा निकम्मा और सुस्त व्यक्ति जो एक जगह चुपचाप बैठा रहे, कुछ काम-कथना न करे। (व्यर्थ)

मीर-कशी—मू० [फा०] मुस्लिम शासन-काल मे बेतन बौदनेवाला कर्मचारी।

मीर-कहू—मू० [अ० मीर बहू] जलपेना का प्रधान। भी-सेनापति।

मीर-का—मू०[फा०] मुगलमानी शासनकाल मे वह अधिकारी जो किसी को बादशाह के नामने उपस्थित होने की आज्ञा देता था।

मीर-कूची—मू० [फा० मीर+हि० कूची] एक कल्पित पीर जिसे हिन्दू पूजते तथा अपना भूष मानते हैं। इसे पीर-कूची भी कहते हैं।

मीर-बखिल—मू०[फा० मीर+अ० मंखिल] वह कर्मचारी जो सेना के पहुँचने से पहले पड़ाव पर पहुँचकर ठहरे आदि की सब प्रकार की व्यवस्था करता था।

मीर-मजलिस—मू०[अ०] मजलिस या सभा का प्रधान। सभापति।

मीर-महला—मू०[फा० मीर+अ० महला] मुहल्ले का मुखिया।

मीर-मुकी—मू०[फा० मीर+अ० मुकी] कार्यालय के मुखियों के वर्ग का प्रधान।

मीर-शिफार—मू०[अ०] वह प्रधान कर्मचारी जो अमीरों या बादशाहों के शिकार की व्यवस्था करता था।

मीर-सामान—मू० [अ० मीर+फा० सामाँ] बानमानी।

मीरास—स्त्री० [अ०] १ बाप-दादा मे मिली हुई संपत्ति। वसीती।

२ बत-नरम्परा के पुजारों के लिए किसी की दी जानेवाली जमीन।

मीरासी—मू०[अ० मीरास] [स्त्री० मीरासिन] एक प्रकार के मुसलमान भांड जो प्रायः पंजाब मे रहते हैं। इनकी स्थिराई माने-नाचने का पेशा करती है।

मीरी—स्त्री० [अ०] १ अमीर होने की अवस्था या भाव। २ मीर अवधि प्रतिगिता मे विजेता होने की अवस्था या भाव।

पू० खेल या प्रतिगिता मे मीर होनेवाला व्यक्ति। मीर।

मीरू—मू०[अ०] १७६० गज या आठ फरसींग की दूरी।

मीरान—मू० [स०/मीरू (बद करना)+त्यट्+अन] [वि० मीरानीय, पू० कू० मीरलिङ्] १ बद करना। मूँदना। जैसे—नेत्रमीरान। २ सङ्कुचित करना। सिकोडना।

मीर-नस्पर—मू०[हि०] १ सड़की के किनारे पर लगे हुए वे पत्थर जो किसी विशिष्ट स्थान से उस स्थान तक की दूरी मीरान मे बतलाते है। २ किसी घटना, जाति, राष्ट्र आदि के इतिहास मे वह बिंदु या स्थिति जहाँ कोई नई और विशिष्ट बात हुई हो। (माइल स्टोन)

मीरित—मू० क०[स०/मीरू+त्] १ बद किया हुआ। २ सिकोडा हुआ।

पू० साहित्य मे एक अलकार जो उस समय या जगह है जब मर्दुर मे भेद नहीं होकर होता।

मीवर—वि०[स०/मी+वरच्] १ पूर्य या मान्य। २ द्विगम।

३ हानिकारक।

पू० सेनापति।

मीवा—मू०[स० मी+वन्, मीवान्] १ पेट मे होनेवाला एक प्रकार का कीड़ा। २ वायु। हवा। ३ तथ्य या मार-भाण।

मीसना—स०[मि० मिशग] १ मिश्रण-कथना। मिलाना। २ धीरे-धीरे दबाना और मसकना। जैसे—हाथ से फूल मीसना। ३. बहुत धीरे-धीरे या सुस्ती से काम करना। ४ कोष, दुःख आदि की कोई बात मन ही मन दबाकर रक्खना और प्रकट न होने देना।

वि०, पू०[स्त्री० मीसनी] १ जो कोष, दुःख आदि की बात मन ही मन दबाकर रखे, जल्दी प्रकट न होने दे। २ बहुत धीरे धीरे या अन्ध निति से काम करेवाला। मट्टर। सुस्त।

सुँगना—मू०[स०]—मुसना (सहिजन)।

सुँगर—मू०[स० मुस्रर] [स्त्री० अलया० सुँगरी] लकड़ी की बनी बड़ी हथौड़ी। जैसे—पटा बजाने का सुँगर।

मुंघरी [?] नमकीन सुंघिया।

मुंघरी—स्त्री० मुंघरा का स्त्री० अल्पा०।

मुंघरनी—पुं० [सं० मुंघर] मोठ (कथत्र)।

मुंघा—स्त्री० [सं०] एक देवी। (पुराण)

मुंघिया—वि०, पुं०=मुंघिया।

मुंघीली—स्त्री० [हिं० मुंघ + ली (प्रत्य०)] मुंघ की बरी।

मुंघरी—स्त्री० [हिं० मुंघ + बरी] मुंघ की दाल की बनी हुई बरी।

मुंघना—सं० [सं० मुक्त] मुक्त करना। छोड़ना।

अ० मुक्त होना। छुटना।

मुंघ—पुं० [सं० √ मुञ् (साफ करना) + अच्] मुञ्जातक। मुंज।

मुंघकेष—पुं० [सं० ब० सं०] १. गिब। २. बिल्लु।

मुंघकण्ड—पुं० [सं० ष० सं०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन प्रदेश।

मुंघ-मणि—स्त्री० [मं० उपमि० सं०] पुण्यराज।

मुंघ-मेखला—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] यज्ञोपवीत के समय पहनी जानेवाली मुंज की मेखला।

मुंघ—पुं० [सं० √ मुञ्/अरन्] कमल की जड़। कमल की नाल। मूषाल।

मुंघमल (मूत्)—पुं० [मं० मुज। मत्पु] १. एक तरह की सोमलता। (मूत्पुल) २. कीलास के पास का एक पर्वत।

मुंघाक—पुं० [सं० मुज्/अन् (जाना) + अच् + कन्] १. मुंज। २. मुञ्जरा नामक वन्य।

मुंघाभि—पुं० [सं० मुञ्-अभि, मध्य० सं०] पुराणानुसार एक पर्वत।

मुंघित—पुं० क्० [सं० मुज्। इतच्] मुंज से बना, डका या लपेटा हुआ।

मुंघ—पुं० [सं० √ मुघ (काटना) + घञ्। अच्] १. सिर। २. कटा हुआ सिर।

पद्म—मुंघ-माला।

३ एक दैत्य जो राजा बलि का सेनापति था। (पुराण) ४ राहु ग्रह। ५ नाई। हज्याम। ६ वृक्ष का रूँठ। ७ बोल नामक गन्धव्या। ८ मुंघूर। ९ एक उपनिषद् का नाम। १०. गौरी का मुंघ।

वि० १. मुंघा या मुंघा हुआ। २. जिस पर बाल न हो। ३. अघम। नीच।

मुंघक—पुं० [सं० मुंघ + कन्] १. सिर। २. नाई। हज्याम। ३ एक उपनिषद्।

वि० मुंघन करने या मुंघनेवाला।

मुंघकरी—स्त्री० [हिं० मुंघ + करी (प्रत्य०)] वह स्थिति जिसमें कोई घुटनी में सिर रखकर बैठता है।

कि० प्र०—मारना।

मुंघकरी—स्त्री०=मुंघकरी।

मुंघ-चिरा—वि० [हिं० मुंघ + चिरना] जिसका सिर या ऊपरी भाग चिरा हुआ हो।

पुं०=मुंघ-चीरा।

४-२७

मुंघचिरापल—पुं० [हिं० मुंघचिरा + पल (प्रत्य०)] मुंघचिरा या मुंघ-चीरा होने की अवस्था या भाव।

मुंघ-चीरा—पुं० [हिं० मुंघ + चीरना] १. एक प्रकार के मुलमान फकीर जो भीख न मिलने पर बारदार या तुकीले हथियार से अपनी बाँध, सिर या और कोई अंग चीरकर उससे से जून निकालने लाते हैं। २. ऐसा व्यक्ति जो बहुत ही धूमिल तथा बोधरूप से लड़-साइकर अपना काम निकालता हो। उदा०—लड़-मिडकर जो काम चलाये, मुंघचीरा है।—मैथिलीशास्त्र। ३. वह जो लेन-देन में बहुत अधिक हुज्जत करता हो।

मुंघन—पुं० [सं० √ मुञ् (खट करना) + ह्यट्—अन] १. सिर के बाल उतारने से मुंघने की क्रिया। २. एक संस्कार जिसमें बालक के बाल पहली बार उतारने से मुंघे जाते हैं। ३. उक्त समय पर होनेवाला उत्सव या समारोह।

मुंघनक—पुं० [सं० मुंघन + कन्] १. बीरी घान। २. बड़ का पेड़। वि० मुंघन करनेवाला।

मुंघना—अ० [सं० मुंघन] १. सिर या किसी अंग का मुंघा जाना। मुंघन होना। २. बुरी तरह से ठगा या छूटा जाना। विविधत आर्थिक हानि सहना।

सयो० कि०—जाना।

मुंघ-मल—पुं० [सं० ब० सं०] नारियल।

मुंघ-मंघली—स्त्री० [सं० ष० सं०] १. अविधित मेना। २. अवस्थितो का दल।

मुंघ-माल—पुं०=मुंघमाला।

मुंघ-माला—स्त्री० [सं० ष० सं०] १. काटे हुए सिरों की माला जो गिब या काकी देवी के गले में होती है। २. बगाल की एक नदी।

मुंघमालिनी—स्त्री० [मं० मुंघमालिन् + डीप्] काकी देवी।

मुंघमाली (लिन्)—पुं० [सं० मुंघमाला + इमि] शिव।

मुंघा—वि० [सं० मुंघिन] [स्त्री० मुंघी] १. जिसके सिर पर बाल न हों। २. जिसका सिर मुंघा हुआ हो।

पुं० १. वह जो सिर मुंघाकर किसी मान्य या सन्ध्यावी का विषय हो गया हो। २. ऐसा पशु जिसके मींग होने चाहिए, पर न हों। जैसे—मुंघा बैल। ३. वह जिसके ऊपर या इधर-उधर फँसनेवाले अंग न हों। जैसे—मुंघा पेड़। ४. बालक। लडका। (परिचम) ५. कौटीवाली महाजनी लिपि जिसके अक्षरों पर शीर्ष-रेखा तथा आगे-पीछे मात्राएँ नही होतीं। ६. एक प्रकार का देवी जूना जिनमें आगे की ओर नोक नहीं होती। ७. कर्कश से कुछ बड़ा एक प्रकार का पक्षी जिसका सिर और गर्दन काड़ी तथा बिना बालों की होती है। यह घान के खेती में मेड़की की लताय में किनारों के हल के इतने पास पास चकता है कि वे परिहास में इसे 'हग' बोता भी कहते हैं।

पुं० [?] एक प्राचीन अनाय जनजाति जिसके शशत्रु अब तक पलायु, रीची, हजारीबाग आदि स्थानों में पाये जाते हैं।

मुंघा-विज्ञान के अनुसार कुछ विविध अनाय बोलियों का एक वर्ग जिनमें अतर्पित पंजाब के उत्तरी भाग से मुंघोलीक और मैथिल्यारूप द्वीप तक बोली जानेवाली कई बोलियाँ जाती हैं। इनमें भारतीय श्रेय की उरक, मिथाड, शबर आदि कौशियाँ मुख्य हैं।

स्त्री० [सं० मुंघ + टाप्] गौरखमुंडी।

मुंदाई—स्त्री० [हि० मुंदा। आर्य (प्रत्य०)] ? मुंदा ने या मुंदा ने की किया या भाव। २ मुंदा के पारिभ्रमिक या मन्त्रद्वारी।

मुंदाणा—स० [हि० मुंदा का प्र०] मुंदा के काम दूसरे से कराना। मुंदा करना।

मुंदासा—पु० [हि० मुंदा-सिर। आसा (प्रत्य०)] सिर पर बाँधने का साका।

कि० प्र०—कसना।—बाँधना।

† स्त्री०—मुंदा (महाजनी लिपि)।

मुंदासाबंध—पु० [हि० मुंदासा + बंध (प्रत्य०)] दस्तारबंध।

मुंदा-हिरन—पु० [हि० मुंदा + हिरन] पाठी मूंग।

मुंदासा—वि० [हि० मुंदा] जिसका सिर मुंदा हुआ हो।

पु० ? वह जो सिर मुंदाकर विरक्त, संघ्यासी या साधु हो गया हो।

२. कर्पे में का एक हल्का जिससे राख बलाते हैं।

मुंदाकि—स्त्री० [सं० मुंदा + क्त्वा, टाप्, ह्रस्व, इत्थ] १. छोटा मुंदा। २. मुंडी। सिर। ३. सख्या के विचार से व्यक्ति वाचक सख्त।

जेना—बर्हा चार मुंदाएँ बँदी थीं, अर्थात् चार आदमी बँदे थे।

मुंदा—पु० [सं० मुंदा + मत्त] लोहा।

मू० क० ? जिसका मुंदा हुआ हो। २ जो मुंदा गया हो। जैसे—मुंदा मत्तक।

मुंदाकिता—स्त्री० [सं० मुंदा + क्त्वा, टाप्, इत्थ] गोरखमुंडी।

मुंदाया—स्त्री०—मुंदा (सिर)।

पु०—मुंदाया।

मुंदा (विन्)—पु० [सं० मुंदा + इति] १. वह जिसका मुंदा हुआ हो। २. मन्थाली या माधु। ३ [√मुंदा + णिच् + णिति] नाई। नापित।

ह्रस्वाम।

स्त्री० [हि० मुंदा का स्त्री०] ? वह स्त्री जिसका सिर मुंदा हो।

२. विधवा (गाळी के रूप में)। ३ एक प्रकार की बिना नोकवासी कुटी।

† स्त्री०—मुंदा (सिर)।

मुंदाकिता—स्त्री० [सं० मुंदा + क्त्वा, टाप्, इत्थ] गोरखमुंडी।

मुंदा—स्त्री० [हि० मुंदा] १. मुंदा। २. खेत की मेड़।

कि० प्र०—बँधना।—बाँधना।

मुंदा—पु० [हि० मुंदा—सिर + आ (प्रत्य०)] १. दीवार का वह ऊपरी भाग जो ऊपर की छत के चारों ओर कुछ उठा हुआ होता है। २. किसी प्रकार का बाँधा हुआ बुइला।

मुंदाई—स्त्री०—मुंदाई।

मुंदा—स्त्री० [हि० मुंदा—ओ (प्रत्य०)] ? वह स्त्री जिसका सिर मुंदा गया हो। २. विधवा। रीढ़। ३. स्त्रियों के लिए उपेक्षासूचक सम्बोधन जिसका प्रयोग प्रायः गाळी के रूप में होता है। जैसे—पर में दिया न वाली, मुंडी किये पतराली। (कहावत)

मुंदाया—स्त्री० [हि० मुंदा। इया (प्रत्य०)] बँधने का छोटा मुंदा।

मुंदाकि—वि० [अ०] ? जो एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया या हटाया गया हो। २ जो एक के अधिकार या स्वामित्व से निकलकर दूसरे के अधिकार या स्वामित्व में चला गया हो। हस्तांतरित। जैसे—आयदाद मुंदाकि करना।

मुंदाकि—वि० [अ०] ? इतखाव किया हुआ। चुना या छाँटा हुआ। २ बढिया।

मुंदाकि—पु० [अ०] इतजाव या व्यवस्था करनेवाला। प्रबंधक। व्यवस्थापक।

मुंदाकि—वि० [अ०] इतजार या प्रतीक्षा करनेवाला।

मुंदाकि—वि० [अ०] ? बिखरा हुआ। २ चितित। उड्डिम। परेखान।

मुंदाही—पु० [अ०] ? इतिहा या हद तक पहुँचनेवाला। २ पारगामी। पारगत। विद्वान्।

मुंदा—पु० [सं०] व्यंगित्थ मे नखत्री का एक मसूह जिसके प्रभाव में कोई जन्म लेता है।

मुंदा—अ० [सं० मुंदा] १. बंद होना। जैसे—आँख मुंदा। २. अन्त तक पहुँचना। समाप्त होना। जैसे—दिन मुंदा। ३. छेद आदि का बन्द होना।

सयो० कि०—आना।

मुंदाकि—वि० [अ०] ? दर्ज किया या लिखा हुआ। २ अलतर्पत। सर्मिलित।

मुंदा—पु० [हि० मुंदा] ? वह कुजल जो जोमी लोग कान में पहनते हैं। २ कान में पहनने का एक प्रकार का गहना।

मुंदा—स्त्री० [सं० मुंदा] ? उँगली में पहनने का माटा छल्ला। २ अंगुठी।

मुंदा—पु०—मुंदा।

मुंदाया—वि० [अ० मुंदा + हि० इया (प्रत्य०)] मुंदाओं की तरह का।

मुंदा—पु० [अ०] १. लेख या निबध आदि लिखनेवाला लेखक। २. किसी कार्यालय में लिखने का काम करनेवाला लिपिक। ३. वह जो बहुत सुंदर अथवा विशेषतः कारकी आदि के अक्षर लिखता है।

मुंदाया—पु० [अ० मुंदा। फा० खाना] वह स्थान जहाँ मुंदा लोग बैठकर काम करते हैं। दफ्तर।

मुंदाकिरी—स्त्री० [अ० मुंदा + फा० गिरी (प्रत्य०)] मुंदा का काम या पद।

मुंदाकि—पु० [अ०] ? इतजाव अर्थात् व्यवस्था या प्रबंध करनेवाला। प्रबंधक। २ कचहरी का वह कर्मचारी जो किन्हीं दफ्तर का प्रधान होता है।

मुंदाकि—स्त्री० [अ०] मुंदाकि का काम या पद।

मुंदाकि—वि० [अ०] साथ में बाँधा या नरथी किया हुआ।

मुंदाकि—वि० [अ०] इतजाव अर्थात् स्थाय करनेवाला।

पु० दीवानी विभाग का एक न्यायाधिकारी जो सब जय से छोटा होता है।

मुंदाका—वि० [अ० मुंदाका] न्यायोचित। न्यायसंगत।

मुंदाकि—स्त्री० [अ० मुंदाकि + ई (प्रत्य०)] ? इतजाव या स्थाय करने का काम। २ मुंदाकि का काम या पद। ३. मुंदाकि की कचहरी।

मुंदा—पु० [सं० मुंदा] १. (क) प्राणियों में आँसों और नाक के नीचे का वह अंग जो विवर के रूप में होता है और जिसके अन्दर जीभ, तालू, दाँत, स्वर-यंत्र आदि रखा बाहर होंट होते हैं। काटने-बनाने, खाने-पीने और बोलने या चिल्लाने-बोलनेवाला अंग। (ख) मनुष्यों का

यही अर्थ जो उनके बोलने-बालने या बातचीत करने और मन के भाव व्यक्त करने में भी सहायक होता है। मुख ।

विशेष—**मूँह** से संबंध रखनेवाले अधिस्तार पर और मुहावरे प्रायः उक्त कार्यों के आधार पर ही बने हैं और उनमें औपचारिक या लालचीक रूप से ही अधिपरिचा हुआ है ।

(क) **बात-पान** आदि से संबंध

मुहा०—**मूँह खरपन होना**—अज्ञान या मूँह का स्वाद बिगड़ना । **मूँह चलना** (या चलाना)—आने-गाने आदि की क्रिया संचय करना (या करना) । जैसे—तुम्हारा मूँह तो हर समय चलता ही रहता है । **मूँह जहर होना**—बहुत कड़ई चीज खाने के कारण बहुत अधिक कड़वापन भाग्न होना । जैसे—गिरफ्तारी वाली तरकारी खाने से मूँह जहर हो गया । **मूँह जूट कराना**—बहुत ही अल्प मात्रा में कुछ खा लेना । (किसी चीज में) **मूँह बालना** या **देना**—पशुओं आदि का कुछ खाने के लिए उसमें मूँह लगाना । जैसे—इन घूब में किसी ने मूँह डाला था । **मूँह बने** **खलना**—कौ और दस्त की बीमारी होना । जैसे—इतना मत खाओ कि मूँह-नेट चलने लगे । (किसी चीज पर) **मूँह मारना**—पशुओं आदि का किसी चीज पर मूँह लगाना । (किसी का) **मूँह पीठा करना** (या **कराना**)—सुगंध या प्रसन्नता की बात होने पर मिठाई खिलाता अथवा इती उपलक्ष में प्रसन्न करने के लिए कुछ बन देना । **मूँह में क्यूना**—खाया जाना । जैसे—सबरे से एक दाना मूँह में नहीं पड़ा । (किसी चीज का) **मूँह लगाना**—

(क) हथिकर या स्वादिष्ट होने के कारण किसी साध पदार्थ का अधिक उपयोग में आना । जैसे—बीड़ या सपाट (महोगनी का फल) है तो बंगली फल, पर अब वह बड़े आरमियों के मूँह लग गया है । (ख) हथिकर होने के कारण प्रिय जान पड़ना । जैसे—अब तो इस कुएँ का पानी तुम्हारे मूँह लग गया है । (किसी चीज में) **मूँह लगाना**—साध पदार्थ के खाने जाने की क्रिया आरंभ होना । जैसे—अब इन आगों में तुम्हारा मूँह लग गया है, अब वह जला स्या बचने लगे । (कौई चीज) **मूँह लगाना**—ताम माष के लिये या बहुत थोड़ा खाना । (किसी का) **मूँह लाल करना**—सत्कार के लिए पान आदि खिलाना । **मूँह लुगाना**—नारी की अधिस्तता के कारण मूँह में जलन-ही होना । (किसी के) **मूँह से घूब की गंध** (या **बू**) **आना**—बहुत ही फीटी अवस्था का (किशोर या बालक) जान देना या सिद्ध होना ।

पब—**मूँह का कीर** या **निबाला**—किसी को आधिकारिक रूप से या और किसी प्रकार आगे चलकर मिल सकनेवाली चीज । जैसे—तुमने तो उसके मूँह का कीर छीन लिया । **आपके मूँह में बी** **शास्त्र**—(किसी के) **मूँह** से आशाजनक सुगंध बात निकलने पर) ईश्वर करे आपकी बात ठीक निकले या पूरी उत्तरे ।

(ख) **बोल-बाल** आदि से संबंध

मुहा०—(किसी के) **मूँह आना**—किसी के सामने होकर उद्ब्रतापूर्वक बातें करना । (किसी के) **मूँह की बात** **जीतना**—जो बात कौई कहना चाहता हो, वही बात उससे पहले आप ही कह देता । जैसे—तुमने हमारे मूँह की बात जीत ली । (किसी का) **मूँह कीलना**—दे० नीचे (अपना या किसी का) **मूँह बंद करना** । (अपना) **मूँह खरपन करना**—मूँह से गंधी बात निकालना । **मूँह चुलना** (या **खोलना**)—बोलने का कार्य

आरंभ होना (या करना) । **मूँह खोलकर कहना**—दे० नीचे 'मूँह काटकर कहना' । **मूँह चलना** या **चलाना**—मूँह से अनियतपूर्वक या बड़-बड़ कर बातें निकलना (या निकालना) । जैसे—अब तो बड़े-बड़ों के सामने भी तुम्हारा मूँह चलने लगा । (किसी के) **मूँह खडना** या **मूँह पर आना**—किसी बड़े के सामने होकर उद्ब्रतापूर्वक बोलना या उसकी बात का उत्तर देना । (कौई बात) **मूँह तक** (या **मूँह पर**) **आना**—कौई बात कहने की जो चाहना । **मूँह चुलाना**—अप्रसन्न होने के कारण घृणन की तरह मूँह बनाना । **मूँह चुलाना** । जैसे—वह भी मूँह चुलाये बैठे रहे । (किसी का) **मूँह पकड़ना**—किसी को बोलने से रोकना । (किसी के) **मूँह पर शीहर लगाना**—किसी को बोलने से पूरी तरह रोकना । (कौई बात) **मूँह पर आना**—कुछ कहना या बोलना । (किसी के) **मूँह पर हाथ रखना**—बोलने से रोकना । **मूँह चाककर कुछ कहना**—बहुत विचाराता की वधा में लज्जा, संकोच आदि छोड़कर आह्वयपूर्वक प्रार्थना या याचना करना । जैसे—अब तुमने वह पुस्तक मुझे नहीं दी तब मुझे मूँह चाककर उसके लिए कहना पड़ा । (अपना या किसी का) **मूँह बूट कराना**—(क) स्वयं बिलकुल न बोलना । गीत बालन करना । (ख) दूसरे को बोलने से रोकना । (किसी का) **मूँह बंद कर देना** या **धनिया**—तर्क आदि में परास्त करके निवृत्त कर देना । जैसे—आपने एक ही बात कहकर उनका मूँह बन्द कर दिया । **मूँह बंधकर बैठना**—बिलकुल चुप हो जाना । **कुछ भी न बोलना** । **मूँह बिलगना**—बोल-बाल से गंधी बातें कहने या गाली-गलौज बचने की आशय पड़ना । (किसी का) **मूँह भर या भरपूर**—जितना अभीष्ट ही या मन में आवे उतना । पूरापूर । यथेष्ट । जैसे—किसी को मूँह भर गालियाँ या जबाब देना, किसी से मूँह भरपूर बातें करना, बोलना या कुछ मँगना । (किसी का) **मूँह भरना**—अभियोग, कलंक आदि की चर्चा या किसी तरह की कौई बातें करने से रोकने के लिए पूस आदि के रूप में कुछ बन देना । (कौई बात) **मूँह में आना**—कुछ कहने की इच्छा होना । जैसे—जो मूँह में आया वह कह दिया । **मूँह में अनाम होना**—कुछ कहने या बोलने की योग्यता या सामर्थ्य होना । **मूँह में बंधियाँ भर बैठे रहना**—बोलने की आवश्यकता होने पर भी बिलकुल चुप रहना । (कौई बात किसी के) **मूँह में पड़ना**—मूँह से कहा या बोला जाना । जैसे—जो बात तुम्हारे मूँह में पड़ेगी, मैं बात आर-मिती को जरूर मात्स्य ही जायगी । **मूँह में लगान** न **होना**—बोलने के समय उचित-अनुचित का ध्यान न रहना जो अभियोग, अधिष्टता, उद्ब्रता आदि का सूचक है । (किसी के) **मूँह लगाना**—(क) किसी को अनुकूल या सहयोगी देखकर उसके प्रति या सामने उद्ब्रतापूर्ण तथा बहुत बड़-बड़कर बातें करना । (ख) कहा-मुनी या मुफाकावा करने के लिए सामने आना । (किसी की) **मूँह लगाना**—किसी की उद्ब्रता, घुष्टता आदि की बातों की उपेक्षा करके उसे बातचीत में और अधिक उद्ब्रता या घुष्ट बनाना । उदा०—जैसे ही उन मूँह लगाई, तैसे ही वे डरी—दूर । **मूँह संभासकर बात करना**—इस प्रकार संघत भाव से बात करना कि कौई अनुचित या अपमानजनक बात मूँह से न निकलके पावे । **मूँह सीना**—दे० ऊपर 'मूँह बंद करना' । **मूँह से घुटना**—कुछ कहना । बोलना । (उपेक्षापूर्णक) **मूँह से फूल झड़ना**—मूँह से बहुत ही कोमल, प्रिय और सुंदर बातें निकलना । (किसी के) **मूँह से बात जीतना**—जिस समय कौई महत्त्व की बात कहने की हो, उस समय

स्वयं पहले ही वह बात कह डालना । **मूँह** से सात उलटना—बहुत ही बहुमूल्य या मयूर तथा सुंदर बाते कहना ।

पह—मूँह का कच्चा—(क) व्यक्ति जिसकी बातों का कोई ठिकाना न हो, जिसकी बात का विश्वास न हो । (ख) जो अंध या रहस्य की बात छिपा न सके और बिना समझ-बूझ दूसरों में कह दे । (ग) (घोषा) जो लगाम का झटका न सह सके, या अधिक समय तक **मूँह** में लगाम न रख सके, या लगाम का मकेल न मानकर मनमाने ढंग में बले । **मूँह का कड़ा**—(क) व्यक्ति जो प्रायः अभियोग ही ढंढार बाने कहता हो । (ख) घोषा, जो लगाम का मकेल न माने और प्रायः मनमाने ढंग से चलना चाहे । **मूँह-कट**—(देखें स्वप्नर पद) ।

(ग) मनोभावों से संबन्ध

मुहा०—मूँह कड़वाना—(अभियोग बात होने पर) ऐसी आकृति बनाना नही **मूँह** में कोई बहुत कड़वी चीज चली गई हो । उदा०—विस्वाम्बर जगदीस जगन्-गुरु, परमेश्ठ मूल कल्याणत ।—**मूँह चिड़ाना**—(उपहास या विदम्बना करने के लिए) किसी के कचन, प्रकार आदि की बड़े और विद्वत रूप में नकल करना । (बहरे, बुरी आँख के संबंध में) **मूँह डालना**—(दुमने बदे, बुरी आँख में) लड़ने को प्रवृत्त होना । (किसी के सामने) **मूँह पड़ना**—कुछ कहने का साहस या हिम्मत होना । (किसी के सामने) **मूँह पसारना**, फेंकना या **बाना**—(क) अपनी हीनता या हीनता प्रकट करना । (ख) दीनभाव से कुछ माँगना । हीनतापूर्वक याचना करना । (ग) अधिक पाने या लेने की इच्छा प्रकट करना । **मूँह बनाना**—(अभियोग बात होने पर) अस्वभावता, अस्वच्छ आदि प्रकट करनेवाली आकृति या मल-भंगी बनाना । **मूँह में कीड़े पड़ना**—बहुत ही भ्रूणित काम करने या बात कहने पर, अभिशाप के रूप में बहुत दुर्दशा होना । **मूँह में सूज** (या लूह) समाना—(जीने, भेड़िये आदि हिंसक जंतुओं के अनुकरण पर लासवधिक रूप में) अनुचित लाभ या प्राप्ति होने पर उसका चसका लगना । **मूँह में तिनका लेना**—इस प्रकार हीनता प्रकट करना कि हम अपने सामने गो के समान दुष्पापन या दयनीय है । **मूँह में धूल** (छार, रास आदि) **पड़ना**—परम दुर्दशा या दुर्गति होना । उदा०—याम नाम तम ममूषेत नाही, अत परे मूल छारा ।—कबीर । **मूँह में पानी भर आना** या **मूँह भर आना**—(सार्विक प्रक्रिया के अनुकरण पर औपचारिक रूप से) कोई अच्छी चीज देखने पर उसे पाने के लिए मन लगाना । जैसे—किताय देखकर तो इनके मूँह में पानी भर आया । **मूँह से पानी छूटना** या **सार टपकना**—दे० ऊपर 'मूँह में पानी भर आना' ।

२. सिर का वह अगला सारा भाग जिसमें उक्त अंग के अतिरिक्त आँखें, गाल, नाक और माथा भी सम्मिलित हैं । आकृति । चेहरा । (फैस) **मुहा०—(किसी का) मूँह आना**—आतंका या अपनी (राग) में **मूँह** के अन्दर छाले पड़ना और बाहर सूजन होना । **मूँह उजला होना**—अच्छा काम करने पर प्रतिष्ठा होना, अथवा कीर्ति या यश मिलना । (किसी और) **मूँह उठना**—किसी और चलने के लिए प्रवृत्त होना । जैसे—जिधर **मूँह** उठा, उधर ही चल पड़े । **मूँह उतरना**—राग, लज्जा आदि के कारण बहरे का रस फीका पड़ना । उदासी आना । (अपना) **मूँह कासा करना**—(क) अपने ऊपर बहुत बड़ा कलक लेना । (ख) बहुत ही अपमानित या अप्रतिभ होकर निवृत्त या हट जाना । (किसी

का) **मूँह कासा करना**—बहुत ही अपमानित तथा कलकित करने तथा उपेक्षापूर्वक दूर हटाना । (किसी के साथ) **मूँह कासा करना**—(पुरुष या स्त्री के साथ) बर्ष प्रमंग या समोग करना । **मूँह की खाली**—(क) अपमानजनक उतर या प्रतिकल पाना । (ख) प्रसिद्धि या प्रतिष्ठी के सामने बुरी तरह से हारना । (ग) माहमपूर्वक आगे बढ़ने पर थोसा खाना । **मूँह की मसिमायें तक न उठा** सकना—बहुत ही अस्वच्छ अथवा आलसी होना । **मूँह की लसो रहना**—अभियोगिता, प्रयत्न आदि में बहुत ही थोड़ी आशा या सम्भावना होने पर भी अत में यशस्वी या सफल होना । जैसे—दुसरे महायुद्ध में अमेरिका की महायशता से इस्लैड के **मूँह** की लसो रह गई । **मूँह के बल गिरना**—(क) ठोंकर खाकर औषे भिरना । (ख) उपहासप्रद रूप में, ठोंकर या थोसा खाकर विफल होना । (ग) बिना माँच-पमसों किसी और अनुगत या प्रवृत्त होना । (किसी का) **मूँह चाटना**—बहुत अधिक लुभावना, दुस्कार या प्यार करना । **मूँह चुराना** या छिपाना—अद्वैत या लज्जित होने के कारण सामने न आना । (किसी का) **मूँह चूमना**—बहुत उच्छुष्ट या प्रशनीय समसक वयेष्ट आकर करना । **मूँह चुभकर छोड़ देना**—अपने वचन या सामर्थ्य के बाहुर समसकर आसम्पुर्क उमग अमग या दूर हो जाना । (किसी से) **मूँह जोड़कर बाँते करना**—किसी के **मूँह** के बहुत पास अथवा **मूँह** के आकर बाने करना । (किसी का) **मूँह झलसना** या **चूँकना**—मृतक के दाह-भर्म के अनुकरण पर, मानी के रूप में बहुत ही अपमानित करने या परम उपेक्ष, तुच्छ और त्याज्य समसकर दूर कर देना । जैसे—अब आप भी उनका **मूँह** झलसे । (किसी का) **मूँह तक न देखना**—परम धृष्टित या तुच्छ समसकर बिरकु-अलम या बहुत दूर रहना । (किसी का) **मूँह ताकना** या **देखना**—अस्मय, अस्मय, चकित या विवस होकर अथवा आशा, प्रतीक्षा आदि में चुपचाप किसी और देखते रहना । (अपना) **मूँह तो देखो**—तहले यह तो देख लो कि जो कुछ तुम पाना या लेना चाहते हो, उसके योग्य तुम हो भी या नहीं । (किसी का) **मूँह चिड़ाना**—माहमपूर्वक किसी के मालने बाना या होना । (किसी का) **मूँह देखकर उठना**—मुभासुभ फल के विचार से, सोकर उठने ही किसी का सामना होना । जैसे—न जाने आज किसका **मूँह** देखकर उठे थे कि विभ भर खाने तक को न मिया । (किसी का) **मूँह देखकर जीना**—परम प्रिय होने के कारण किसी की आशा में या भरसे भर जीना । जैसे—मैं तो दोन बच्चों का **मूँह** देखकर जती हूँ । (किसी का) **मूँह देखते रह जाना**—आश्चर्य भाव से या चकित होकर किसी की ओर देखते रहना । **मूँह से खो** (रखिये या रखें)—(किसी के प्रति योग्यपूर्वक, केवल विधि के रूप में) प्राप्ति को कुछ भी आशा न रखी (रखिये या रखें) । जैसे—आन में पुरस्कार लेने चले हूँ, **मूँह** को रखिये । **मूँह पर चूकना**—बहुत ही भ्रूणित तथा निवनीय समसकर तिस्कार करना । **मूँह पर नाक न होना**—कुछ भी लज्जा या शरम न होना । (कोई भाव) **मूँह पर** (या से) **बरसना**—अधिकता से और प्रत्यक्ष विस्वादी देना । जैसे—लुच्चापत ही उसके **मूँह** पर (या से) **बरसता** है । **मूँह पर मसिमायें निगलना**—बहुत ही चिनीनी और वीन दशा में होना । (किसी का) **मूँह पाना**—किसी को अपने अनुकूल अथवा अपनी ओर अनुकूल या प्रवृत्त करने की दशा में देखना ।—जैसे जब मारिक का **मूँह** पाबो तब उनको सामने अपना बुझा दोओ । (अपना)

मूंह पीठना या **पीठ लेना**—किसी के आधारक, व्यवहार आदि पर बहुत ही खिन्न, सूझी और लज्जित होना। (किसी का) **मूंह पीठना**—अपमानित करने हुए दूरी तरह से परास्त करना। **मूंह फुलाना**—अप्रसन्न या असंतुष्ट होकर रोग की मुद्रा धारण करना। **मूंह फिरना** या **फिर जाना**—(क) **मूंह का टेडा** या खराब हो जाना। जैसे—एक बण्ड हुआ, **मूंह फिर** पाया। (ख) सामना करने से हट जाना। सामने न उठर पाया। (किसी का) **मूंह केरना**—परास्त करने भागना। दूरी तरह से हगना। जैसे—बहस में तो ये बड़े-बड़ों का **मूंह फेर** देते हैं। (किसी से) **मूंह केरना** या **मोड़ना**—उदास और खिन्न होकर अलग या दूर हो जाना। जैसे—उनकी कृतघ्नता देखकर लोगों ने उनसे **मूंह फेर** लिया। (किसी बात पर) **मूंह बनना** या **बन जाना**—बेहतर से अप्रसन्नता असंतोष आदि के लक्षण प्रकट होना। जैसे—सपने भांगते हुए उनका **मूंह बन** जाता है। **मूंह बनना** रब्बोः—मुम इस याम्य कदापि नहीं हो, अतः मारी आना छोड़ दो। जैसे—चले ही अपना हिस्सा लेने, **मूंह बनना** रब्बोः। (अपना) **मूंह बनाना**—अर्थात्, विरिधित आदि का सुखक भाग या मुद्रा धारण करना। (किसी का) **मूंह बिगाड़ना**—भार-भार का आकृति विकृत करना या कुरूप बनाना। (किसी बात पर) **मूंह बिगाड़ना**—अर्थात् या अवतौष प्रकट करना। **मूंह बुरा बनाना**—अप्रसन्नता या असंतोष प्रकट करना। **मूंह लटकाना**—खिन्नता या दुःख प्रकट करने के लिए बहुत ही उदास और चुप हो जाना। **मूंह** (या **मूंह-तिर**) **स्पेकर पर रहना**—बहुत ही उदास या खी होकर परे रहना। (किसी का) **मूंह लाल करना**—अच्छी तरह या जोर में धण्ड लगाना। **मूंह लाल होना**—आवेग, क्रोध आदि के कारण बेहरे पर झूठ की रगत अधिकता में झलकना। मारे क्रोध के बेहतरा तमनमाना। **मूंह सुजाना**—दे० 'ऊपर' **मूंह फुलाना**। **मूंह सूखना**—निराशा, भय, लज्जा आदि के कारण बेहरे पर ञ्जित या मेज न रह जाना। जैसे—आपकी फटकार मुन्ते ही उनका **मूंह सूख** गया। अपनासा **मूंह लेकर रह जाना** (या **लौट आना**)—निराशा, बिकल या हृत्विनाहित होने के कारण दीन और लज्जित भाव से पुनः बुरा हो जाना (या लौट आना)। इतना सा (या **अर-सा**) **मूंह निकलवाना**—(क) चिन्ता, रोग आदि के कारण बहुत दुर्बल हो जाना। (ख) लज्जित होने के कारण धीरीन हो जाना। **पर**—(किसी का) **मूंह बेखकर**—(क) किसी के प्रेम में लगकर। जैसे—पति मर गया है, पर बच्चों का **मूंह देखकर धीरज** परो। (ख) किनी का ध्यान रखते हुए। (ग) किनी को प्रसन्न या सन्तुष्ट करने के लिए। **मूंह पर**—उपरिधिति में सामने। जैसे—मैं तो उनके **मूंह पर** कहनेवाला हूँ। ३ मनुष्य के शरीर का उन्नत अंग के विचार में उसकी मनोवृत्ति, वील आदि। **पर**—**मूंह देखे का**—केवल सामना होने पर, मकोचवध किया जानेवाला (आचरण या व्यवहार)। जैसे—**मूंह देखे की प्रीति** या **मूंहध्वत**। **मूंह मुलाहजे का**—भारस्पर्क परिचय और उसके कारण होनेवाला (निधम या व्यवहार)। जैसे—जहाँ **मूंह मुलाहजे** की बात हो, वहाँ ऐसा रूखा व्यवहार नहीं करना चाहिये। **मूंह मुलाहजे का आबसी**—जिसके साथ पणित परिचय होने के कारण शीलपुण्य व्यवहार करना पड़ता हो। **मुहा०—(किसी का) मूंह करना**—शील या सकोचक किनी का ध्यान रखना। जैसे—सप सच कह दो, किनी का **मूंह मत** करो। **मूंह-बेची**

कहना—किनी के सामने रहने पर उसे प्रसन्न करने के लिए उसके अनुकूल बातें कहना। जैसे—न्याय की बात कहना, **मूंह-देखी** मत कहना। (किनी का) **मूंह बूना** या **परसना**—केवल ऊपरी मन से या दिखाने भर को किनी के साथ कोई अच्छा व्यवहार करना। जैसे—**मूंह छुने** के लिए के **मुझे भी निग्रह** देने आये थे। उदा०—हूँ या आप **मूंह** (**मूंह**) परसत मेरी हृदय टरति नहिं प्यारी।—सूर। (किनी के) **मूंह पर जाना**—किनी की प्रतिष्ठा व्यवहार, शील, मकोच आदि का ध्यान रखना या विचार करना। जैसे—तुम उनके **मूंह पर मत** करो, अपना काम करो। (किनी का) **मूंह पाना**—किनी को अपनी ओर अनुरक्त या प्रसुत देखना। जैसे—जब उनका **मूंह पाया**, तब मैंने भी सब बातें कह सुनाईं। उदा०—**मूंह पावति**, तब ही लीं आवति, औरै, लावति मौर।—सूर। (किनी का) **मूंह रखना**—शील, सकोच आदि के कारण किनी के महिष्य, व्यवहार आदि का ध्यान रखना। जैसे—हमें तो बाह आरमियो का **मूंह रखना ही पडता है**। ४ उन्नत के आधार पर किनी प्रकार का पशपाण या तरफदारी। जैसे—सच सब कह दो, किनी का **मूंह मत** रब्बो। ५ मनुष्य के शरीर का उन्नत अंग के विचार से उसकी योग्यता, सामर्थ्य, साहम आदि। जैसे—(क) अपना **मूंह** तो देखो (अर्थात् अपनी योग्यता या शक्ति तो देखो)। (ख) यहाँ भला किसका **मूंह है** जो तुम्हारे सामने आवे। **मुहा०—(किनी काम या बात के लिए) मूंह पशना**—कुछ करने, कहने आदि का साहस या हिम्मत होना। जैसे—उनके सामने बोलने का किनी का **मूंह ही नहीं पडता**। (किनी का) **मूंह मारना**—(क) किनी को दबाने, नीचा दिखाने या बराबर्त करके के लिए कोई उच्छुट कार्य कर दिखाना। (ख) ऐसी उच्छुट स्थिति में होना कि सहज में किनी को परास्त या लज्जित करने हीन सिद्ध किया जा सके। जैसे—यह कपडा सूती होने पर भी गेयोमी का **मूंह मान्ना है**। ६ पारिध्रमिक, प्रतिफल आदि के रूप में होनेवाली माँग। जैसे—बड़े बकीलो का **मूंह भी बडा होता है**। (अर्थात् वे अधिक पारिध्रमिक या मेहनताना माँगते हैं।) **मुहा०—(किनी का) मूंह अरना**—पूरा, पारिध्रमिक आदि के रूप में बन देना। ७. किनी प्राकृतिक या कृत्रिम रचना में उन्नत अंग से मिलना-जुलना कोई ऐसा छेद या विवर जिसमें होकर चीजें उत्पन्न जाती या उत्पन्न में निकलती हैं। जैसे—मुका, घड़े, बैरी, या फोडे का **मूंह**। **पर**—**मूंह भर** के=(क) जिनता अन्दर ममा सके, उतना डाल या रखकर। (ख) भर-पूर्ण। घषेण्ट। (ग) अच्छी या दूरी तरह में। ८. उन्नत प्रकार के माँग का बिलकुल ऊपरी निगरा या सिरा। जैसे—लाताख **मूंह तक भर** गया है। ९ किनी चीज के ऊपर का ऐना छोटा छेद जिसमें से कुछ निकलता हो। जैसे—सूनी, फोडे या तली का **मूंह**। **मुहा०—(किनी चीज का) मूंह बोलना**—अगरी मार्ग या विवर इस प्रकार बँडा करना कि अन्तर की चीज बाहर निकल सके। जैसे—बैनी का **मूंह बोलना**, फोडे का **मूंह बोलना**। १०. किनी चीज का आगेवाला पार्वत, ऊपर या सामने का भाग अथवा रूख। जैसे—मकान का **मूंह** उतर की ओर है। ११ किनी बड़ चीज का बह अंश या पार्वत जिधर से बह चुकती हो या मोची का सक्की हो।

१२ किसी चीज का वह अगला और मुख्य भाग जिससे उसका प्रधान कार्य होता हो। जैसे—तीन मूह वाला तीर या बाण, चार मूहवाला दीया आदि।

मूह-शब्दे—क्रि० वि० [हि० मूह; अंधेरा] इतने तन्त्रके या शब्देरे जब अंधेरे के कारण किसी का मूह भी न दिखाई पड़ता हो। जैसे—वह मूह-शब्देरे ही उठकर घर से निकल पड़ा।

मूह-अक्षरी—वि० [हि० मूह-अक्षर] जवानी। शाब्दिक।

मूह-उत्तरे—क्रि० वि०—मूह-उठते।

मूह-उठते—क्रि० वि० [हि० मूह-उठना] ठीक उस समय जब कोई आदमी गबरे के साथ गोंकर उठा ही हो।

मूह-काला—पु० [हि० मूह; काला] ? कोई परम निरन्धनीय काम करने पर होनेवाली बहुत अधिः अप्रतिष्ठा और बदनामी। २ पर-पुरुष या पर-स्त्री के साथ किया जानेवाला संबंध। ३ एक प्रकार की मारपी। जैसे—जा, मेरा मूह-काला।

मूह-बंध—पु०—मूल्यम।

मूह-बिजाल—स्त्री० [हि० मूह; चाटना। औषल (प्रत्य०)] १ चूवन। चूपाचाटी। २ बक-बक। बकवाद।

मूह-चोपवाल—स्त्री० [हि० मूह। चोपना] १ व्यर्थ की बकवाद। २ लडाई-झगडे में एक दूसरे की (विशेषण मूह पर) मारने, काटने, नोकने आदि की क्रिया।

मूह-चोर—पु० [हि० मूह; चोर] लोगों के सामने जाने में मूह चुराने अर्थात् सकोच करनेवाला।

मूह-छुलाई—स्त्री० [हि० मूह; छूना। आई (प्रत्य०)] मूह छुने अर्थात् ऊपरी मन में किसी से कुछ कहने की क्रिया या भाव।

मूह-छुट—वि० [हि० मूह; छूटना] जो कुछ मूह में आवे, वह सब बर जानेवाला। गवके मामले उद्घाटापूर्वक बाते करनेवाला।

मूह-जबानी—अव्य० [हि०] मूह और अजान के द्वारा। शैबिक रूप से। वि० जो अजानी याद हो। कहकर।

मूह-जला—वि० [हि० मूह; जलना] [हि० स्त्री० मूहजली] १ जिनका मूह जले हुए के गमान हो, अथवा जला दिये जाने के योग्य हो। (मागी) २ अप्रभ तथा बनी बाते कहनेवाला।

मूह-जोर—वि० [हि० मूह; फां और] [भाव० मूहजोरी] १ धृष्टतापूर्वक तथा बिना समझे-बुझे जो मूह में आवे, वह कह देनेवाला। किसी के मूह पर बिना उसका निहाज किये उल्टी-सीधी बाते कहनेवाला। २ बकवाद। ३ भलमानी करनेवाला। उद्घेष। जैसे—मूह जोर धोना।

मूह-जोरी—स्त्री० [हि० मूहजोरी; ई (प्रत्य०)] १ मूहजोर होने की अवस्था या भाव। २ धृष्टता।

मूह-जोसां—वि० [स्त्री० मूह-जोसी]—मूह-जला।

मूह-जोड़—वि० [हि०] (उत्तर या प्रत्यापत्त) जो विरोधी को पूरी तरह में परास्त करने हुए मीचा दिखानेवाला हो। जैसे—किसी को मूह-जोड़ जवान देना।

मूह-खिलारवनी—स्त्री०—मूह-खिलाई।

मूह-खिलाई—स्त्री०—मूह-देखनी।

मूह-खिलाई—स्त्री०—मूह-देखनी।

मूह-खेकनी—स्त्री० [हि० मूह-खिचना] १. मूह दिखाने की क्रिया या

भाव। २. विवाह के उपरोक्त की एक प्रथा जिसमें बर-पक्ष की रिचवाी गव-बन्धु का मूह टुटकर उसका मूह देखती और उस कुछ धन देती है। मूह-खिलाई नामक रसम। ३. वह धन या पदार्थ जो गव-बन्धु को उभत अवसर पर मूह दिखाने के बदले में मिलता है।

मूह-देखा—वि० [हि० मूह-देखना] [स्त्री० मूह-देखी] १ प्रत्यक्ष रूप से या स्वयं देखा हुआ। २ (ऐसा काम) जो किसी का सामना होने पर केवल औपचारिक रूप से उसका निहाज करते हुए या सकोच बरा तथा ऊपरी मन में किया जाता हो। जैसे—मूह देखा प्यार, मूह देखी बातें। ३. आजा की प्रतीक्षा में किसी का मूह देखा रहने-वाला।

मूहनाल—स्त्री० [हि० मूह; नाल जली] १ वह नली जिसे मूह में लगाकर हुक्के का पानी खींचते है। २ धातु का वह टुकड़ा जो म्यान के सिरे पर लगा होता है।

मूह-पड़ा—पु० [हि० मूह; पड़ना] प्रसिद्ध। मगहर। (वन०)

मूह-पातर—वि०—मूह-फट।

मूह-फट—वि० [हि० मूह-फटना] जो उचित-अनुचित का ध्यान रखे बिना मूहों बाते कहने में भी मगोच न करता हो। बर-जवान।

मूह-बंद—वि० [हि०] ? (परदा) जिसका मूह बंद हो और अंगी तक खोला न गया हो। जैसे—मूह-बंद बोलल। २ (फट) जो अभी खिला न हो। जैसे—मूह-बंद कनी। ३ (युवती या स्त्री) जिसका पुष्य से सत्यागमन न हुआ हो। अजान-यौनि। कुमारी। (बाजारू)

मूह-बनी—स्त्री० [हि० मूह बंद ं (प्रत्य०)] मूह बंद करने या होने की अवस्था, क्रिया या भाव।

मूह-बंथा—पु० [हि० मूह; बंथना] जैन साधु जो प्राय मूह पर कपडा बांधे रहते है।

वि० जिसका मूह बंथा हो।

मूह-बोला—वि० [हि० मूह; बोलना] [स्त्री० मूह-बोली] जिसके साथ केवल कहकर या बचन देकर कोई सम्बन्ध स्थापित किया गया हो। जो जन्मत या बन्धुत्व न होने पर भी मूह में कहकर मान लिया या बना लिया गया हो। जैसे—मूह बोला भाई, मूह-बोली बहन।

मूह-भराई—स्त्री० [हि० मूह; भरना] १ मूह भरन की क्रिया या भाव। २ वह धन जो किसी को कोई अपाति-जनक बात कहने अवका बाधक होने से रोकने के लिए रिचवन आदि के रूप में देना जाय।

मूह-मोपा—वि० [हि०] [स्त्री० मूह-मोपी] जो मूह में कहकर मीमा गया हो। जैसे—मूह-मोपा घाम लेना, मूह-मोमी मुराद पाना।

मूह-मोपे—अव्य० [हि० मूह-मोपा] मूह में मोगने पर। कहकर मोगने पर।

मूह-मुलाहजा—पु० [हि० मूह; अ० मुलाहज] ऐसी स्थिति जिसमें किसी आसीय या परिचित व्यक्ति के साथ होनेवाले पारस्परिक सम्बन्ध का धील-सकोचपूर्वक ध्यान रखा जाता हो।

मूह-लगा—वि० [हि० मूह; लगना] [स्त्री० मूह-लगी] जो अनधिकारी या अपात्र हो पर प्राय किसी बडे या सख्त या साथ रहने के कारण बड़-बड़ कर बोलने का अभ्यस्त हो गया हो। सिर-पक्का।

मूह-मुंभाई—स्त्री० [हि० मूह; मुंभना] १ किसी से मिल कर हस्तनी मोड़ी बात-बीत करना कि मानी उसका मूह मूँचकर छोड़ दिया हो। २. उक्त

प्रकार की क्षणिक बात-चीत के बदले में दिया या लिखा जानेवाला धन । उदा०—फिर जमींदार की हर-हुकूमत, जरिबाना-तलबाना, पटवारी-मुस्वी को पुस्त-रिसवत बानेदार को मांत-मलीदा, कचहरी के बकील-मुक्दार को मुंह-मुंहार्दा सैककों तरह के दूसरे लक्षों किने बिना तुम्हारी जान नहीं बचेगी।—राहुल साँझरयाम ।

मुंह—वि० [हि० मुंह] किसी प्रकार के मुंह से युक्त । मुंहवाला । जैसे—
दो-मुंह, शेर-मुंह आदि ।

मुंहवाहरी—स्त्री० = मुंह-बोही ।

मुंह-बोही—स्त्री० [हि० मुंह ; बाहना] १. आपस में एक दूसरे को देखना । देखा-देखी । २. आपस में होनेवाली कहा-मुनी या तकरार ।

मुंह-मुंह—अव्य० [हि० मुंह + मुंह] मुंह या ऊपरी भाग तक । जैसे—नालाब मुंहामुंह भरा है ।

मुंहसा—पुं० [हि० मुंह + आसा (प्रत्य०)] मुंह पर के वे दाते जो प्रायः युवावस्था में निकलते हैं ।

मुञ्जबन्द—पुं० [अ०] वह जो लोगों को नमाज का समय सूचित करने के लिए पसविध में अजान देता है ।

मुञ्जबन्द—वि० [अ०] परम माननीय या प्रतिष्ठित बहुत बड़ा (व्यक्ति) ।

मुञ्जबन्द—वि० [अ० मुञ्जबन्द] इज्जतदार । प्रतिष्ठित ।

मुञ्जल—वि० [अ०] [माब० मुञ्जली] १. खाली । २. जो किसी प्रकार का दोष करने पर विचाराध्य अपने काम या पद से कुछ समय के लिए अलग कर दिया गया हो ।

मुञ्जली—स्त्री० [अ०] = निम्बन । (देखें)

मुञ्जस—पुं० [अ०] स्त्रीलिंग । मादा ।

मुञ्जम्मा—पुं० [अ० मुञ्जम्] १. भेद या रहस्य की बात ।

क्रि० प्र०—खुलना ।

२. पहिली बुझीयल । ३. घुमाव-फिराव या हेर-फेर की बात ।

मुञ्जलक—वि० [अ० मुञ्जलक] १. अंधर में लटकना हुआ । २. बीच में रक्का हुआ (काम) ।

मुञ्जलिम—पुं० [अ०] १. इत्म मिथानेवाला । मिथक । २. अध्यापक ।

मुजाक—वि० = माफ ।

मुजाकलत—स्त्री० [अ०] १. मुजाफिक या अनुकूल होने की अवस्था या साथ । जैसे—भेल-मुजाफकत । २. अनुकूलता ।

मुजाफिक—वि० [अ० मुजाफिक] १. अनुकूल । २. तुल्य । समान । ३. जितना या जैसा होना चाहिए, उतना या वैसा । ठीक । ४. दृच्छा-नुसार । मनोनुकूल ।

मुजाफिकत—स्त्री० = मुजाफकत ।

मुजाफ़ी—स्त्री० = माफ़ी ।

मुजामला—पुं० = मामला ।

मुजायना—पुं० [अ० मुजायनः] निरीक्षण ।

मुजाबिल—पुं० [अ०] इजाज करनेवाला । चिकित्सक ।

मुजाबजा—पुं० [अ० मुजाबजः] १. बदला । २. किसी प्रकार की क्षति की पूर्ति करने के लिए उसके बदले में दिया जानेवाला धन ।

३. वह रहस्य जो जमीन के मालिक को उस जमीन के बदले में मिलती है, जो कानून की सहायता से सार्वजनिक काम के लिए ले ली जाती है ।

मुजाहिदा—पुं० [अ० मुजाहिदः] आपस में होनेवाला दूढ़ निश्चय । पक्का कारार ।

मुकद—पुं० = मुकुट ।

मुकदा—पुं० [दिश०] प्रायः पूजन आदि के समय पहनी जानेवाली एक प्रकार की रेशमी चीठी । (पूज)

मुकदई—स्त्री० = मुकित ।

मुकता—वि० [हि० मुकता] [स्त्री० मुकनी] जो अस्वी समारत न हो । बहुत अधिक । यथेष्ट ।

† पुं० = मुकता ।

मुकतालि—स्त्री० [स० मुकतावली] मीतियों की लड़ी । मुकतावली ।

मुकत्तर—वि० [अ०] भ्रमों से खींच या बुझाया हुआ ।

मुकत्ता—वि० [अ० मुकत्ता] १. कतरा या काटा हुआ । २. ठीक तरह से काट-छाँटकर बनाया हुआ । जैसे—मुकत्ता दाढ़ी । ३. जिसमें किसी प्रकार की कुकृपा या भद्रापन न हो । जैसे—मुकत्ता सूरत ।

मुकति—स्त्री० = मुकित ।

मुकववा—पुं० [अ० मुकव्वम] १. कोई बात या विषय अथवा विवरण विस्तारपूर्वक किसी के सामने उपस्थित करना । २. रंध आदि का प्राक्कथन या भूमिका । ३. वह विवादास्पद विषय जो न्यायलय के सामने विचार और निर्णय के लिए उपस्थित किया जाय । अभियोग । दावा । नालिष ।

मुकवे—मुकदमें दीवानी, अर्थात् केन-वेत या व्यवहार के मसब में भी होत है, और फौजदारी अर्थात् दंड-विधान के अनुसार किसी को दंडित करने के लिए भी । वादी और प्रतिवादी को आरम्भ से अत तक जितनी अवसलती कारवाय्यां करनी पड़ती है, उन सबका अंजमान मुकदमें में ही होता है ।

पब—मुकदमेबाज, मुकदमेबाजी ।

क्रि० प्र०—खडा करना । चलना ।—दायर कग्ना ।

मुहा—मुकदमा लड़ना = मुकदमा होने की दशा में अपने पक्ष के समर्थन के लिए आवश्यक और उचित कारवाय्यां करना ।

मुकदमेबाज—पुं० [अ० मुकदमा : फा० बाज (प्रत्य०)] [भा० मुकदमे-बाजी] १. वह जिनमें बहुत से मुकदमें लड़े हों । २. जो मुकदमे लड़ता रहता हो । जिसे मुकदमे लड़ने का शौक हो ।

मुकदमेबाजी—स्त्री० [अ० मुकदमा : फा० बाजी] मुकदमे लड़ने की क्रिया या साथ ।

मुकद्वध—वि० [अ०] १. प्राचीन । पुरानी । २. सबसे अच्छा या बढ़कर । ३. प्रधान । मुख्य । ४. आवश्यक । जरूरी ।

पुं० १. गाँव का मुखिया । २. पशु की रान का ऊपरी भाग जो कूल्हे से जुड़ा होता है । (कदाई)

मुकद्वधा—पुं० = मुकद्वधा ।

मुकद्वर—वि० [अ०] १. गँदला । मैला । २. चिन्तित और बुझी ।

परेशान । ३. अप्रसन्न । नाराज । रुद ।

पुं० [अ० मुकद्वर] भाग्य । प्रारब्ध ।

मुकद्वस—वि० [अ०] परम पवित्र और पूज्य ।

पब—मुकद्वस कित्ताब—धर्म-ग्रन्थ ।

मुक्ता—अ० [स० मुक्त] १ मुक्त होना। २ क्षम या समाप्त होना।
पु०=मकुता।

मुक्कफल—वि० [अ० मुक्कफल] जिममें मुक्क या ताला लगा हुआ हो।
ताले में बंद किया हुआ।

मुक्कमल—वि० [अ०] १ पूरा किया हुआ (काम)। २ संपूर्ण।
३. सवर्णपूर्ण।

मुक्करी—पु०=मुक्कुर।

मुक्करी—अ० [म० या नही। कर्ना] कोई काम कर चुकने या बान कह
चुकने पर बाद में यह कहना कि हममें ऐसा नहीं किया अथवा नहीं किया
था। नही या किस हूप से इनकार करना। जैसे—कहकर मुक्करी जाना
तो उसके अंग भाग्य बान है। उदा०—नियत परी तब भेट मनाई।
मुक्करी मये जब देनी आई। (कहा०)

सयीं क्रि०—जाना।—पटना।

†वि० कुछ करते अथवा कहकर मुक्करी जानेवाला। मुक्करी। जैसे—
ऐसे मुक्करी आदमी में हम बान नहीं करते।

अ० [म० मुक्त] मुक्त होना। छटना।

मुक्करी—स्त्री० [हि० मुक्करी] मुक्करी या कल-मुक्करी नामक कविता।
दे० 'मुक्करी'।

मुक्करी—वि० दे० 'मुक्करी'।

मुक्करी—वि० [हि० मुक्करी] वह जा कोई बात कहकर उयमें मुक्करी जाता
है। अपनी बान पर दूढ़ न रहनेवाला। उदा०—जोभी, लौद, मुक्करीवा
(मुक्करी) जगत्क बडी पवैनी लडा।—मुक्करी।

मुक्करी—स० [हि० मुक्करी] १ म० का। १ किसी को मुक्करी में प्रवृत्त
करना। २ किसी को झडा बनाना या झडा सिद्ध करना। (कव०)
म० [?] मुक्करी कगना। छुटाना।

मुक्करी—वि० [हि० मुक्करी] मुक्करी कगना १ मुक्त कगना या
छुटानेवाला। २ मुक्त या मोक्ष दिलानेवाला।

मुक्करी—स्त्री० [हि० मुक्करी] १ मुक्करी की क्रिया या भाव। २
एक प्रकार की लोक-प्रचलित कविता जिसका रूप बहुत कुछ पहेली का-
ना होता है, और जिममें पहले तो कोई वाक्यिक बात क्लिष्ट रूप में
कही जाती है, पर बाद में उस कही हुई बात से मुक्करी उयकी जगह
कोई दूसरी उययुक्त बात बनाकर कह दी जाती है जिममें मुक्करीवाला
कुछ का कुछ समझन लगना है। हिंदी में अयोग्य मुक्करी की मुक्करीय
प्रसिद्ध है। इनी की 'कल-मुक्करी' भी कहते हैं। साहित्यिक दृष्टि से
मुक्करीयों का विषय छेकापल्लुति अल्पक के अर्णत आता है।
उदा०—मगरि देन वह मो खप जाया। भोर भई तब बिछुरन लाया।
बाके बिछुरन फाटे किया। कयो मवि नामज? ना मवि दिया।—मुक्करी।

मुक्करी—वि० [अ०] १ प्रतिष्ठित। २ पूज्य।

मुक्करी—अव्य० [अ०] दीवार। फिर से।

वि० [अ० मुक्करी] भाव० मुक्करी १ जिमके सबमें इकरार हो
चुका हो। निश्चित। २ किसी गद या म्थान पर जिसे नियुक्त किया
गया हो।

मुक्करी—स्त्री० [अ०] १. मुक्करी होने की अवस्था, क्रिया या भाव।
निर्णय। २ मालमुबारका या लगान। ३ नियत रूप से या नियत
समय पर मिलना रहनेवाला धन। जैसे—बेतन, वृत्ति आदि।

मुक्कल—पु० [म०] १ अमलतास। २. गुगुल।

मुक्कला—वि० [हि० मुक्कला] १ मुक्कलाने या मुक्त कराने-
वाला। २ मुक्कलावा या द्विरागमन करा के जानेवाला।
पु०=मुक्कलावा।

मुक्कलाना—म० [स० मुक्कलने अर्थ-विरयं] १ वयन से मुक्त करना।
छोटना। उदा०—बोपा छोरि केम मुकुलाई।—जायसी। २ वयन
में मुक्त कराना। छुटाना। ३ वर का वच् को उसके मायके से पहले-
पहल आने पर करना। मुक्कलावा या द्विरागमन कराना। उदा०—
सुल मुकुलाई अपनी माउ।—कबीर।

मुक्कलावा—पु० [हि० मुक्कलाना] पति का पहले-पहल अपनी पत्नी को
उसके मायके से अपने घर ले जाने की म्थम। गीना। द्विरागमन।
(पजाव)

मुक्कली—वि० [अ०] [वहु० मुक्कलियत] १ बलवद्धक। २ काम-
वद्धक।

मुक्कली—स० [स० मुक्क] १ मुक्त कराना। छुटाना। २ क्षम
या समाप्त करना। उदा०—मुक्क नहि चडै जाइ न मुक्करी, हलकी
लौ न भारी।—कबीर।
पु०=मुक्कली।

मुक्कली—पु० [अ० मुक्कली] १ आमना-मामना। २ बराबरी।
समानता। तुलना।

मुहा०—मुक्कली में होना—तुल्य या बराबर होना।
३ प्रतीयोगिता, बलपरीक्षा या लडाई में होनेवाली जांच या हौद।
जैसे—(क) बलना के म्थान्य का मुक्कली। (ख) दौड में
होनेवाला मुक्कली। ४ तुलनात्मक निरीक्षण या परीक्षा। ५
मिलान। ६ विराम।

मुक्कली—पु० [देस०] पुरानी चाल का एक तरह का मिगारदान जिममें
कषी, मिस्सी, शीशा, गुग्गुल आदि रखा जाता है।

मुक्कलिय—वि० [अ०] १ सामनेवाला। २ तुल्य। ममान।

पु० १ प्रतिद्वी। २ विरंगी। ३ दुष्मन। गद्दु।

क्रि० वि० मसुला। ममान।

मुक्कलिया—पु०=मुक्कलीवाला।

मुक्कली—पु० [अ० मुक्कली] [वि० मुक्कली] १ उरगने का म्थान। पडाव।
मुहा०—मुक्कली डालना—पडाव के समय बीच में विधाय करने
के लिए उठाना। **मुक्कली** डोलना—अधोनिम्ब कोनों की पडाव
डालने की आज्ञा देना।

२ जगह। म्थान। ३ उरगव। विराम। ४ रहने की जगह। घर।
५ किसी के यहाँ म्थुल होने पर उसके यहाँ महाभूमित प्रकट
कगने और मानवता देने के लिए जाने और उसके पास कुछ
देर तक बैठने की क्रिया या भाव।

मुहा०—मुक्कली सेना—किसी के घर जाने पर उसके घर मातमपुस्ती
कगने जाना।

६ उपयुक्त अवसर। ठीक भौका। ७ संगीत में बान, सरीद, सितार
आदि बाजो का कोई पन्दा। ८ फारसी संगीत में, एक प्रकार का
राग।

मुक्कली—वि० [अ०] १ मुक्काम-नवधी। ठीर-नवधी। २. स्थानीय।

मुक्तिमाला—स० [हि० मुक्ती + माला] १ मुक्ती से माला । २. मुक्तियों से आटा संभारना । ३ मुक्तियों से हलका आघात करते हुए मालिका करना या कोई अंग ढबाना ।

मुक्ति—वि० [ज०] १. इकरार या प्रतिज्ञा करनेवाला । २. अपनी ओर से कोई दस्तावेज या लेखा प्रस्तुत करने उस पर हस्ताक्षर करनेवाला । लेख्य का लेखक ।

मुक्तीय—वि० [ज०] १. मुकाम-संबंधी । २. किसी स्थान पर मुकाम करनेवाला । ३. जिसने कही कयाम किया हो । चलते-चलते किसी स्थान पर उठने या बकनेवाला । ४. यात्रा आदि के समय बीच में कहीं ठहरने या पड़ाव डालनेवाला । ५. तत्कारियों आदि का थोक व्यापारी ।

मुकुट—पु० [स० मुकुट + क०] १. विष्णु । २. पुराणानुसार एक प्रकार की तिथि । ३. एक प्रकार का रत्न । ४. कुदक । ५. सकेद कनेर । ६. बगारी वृक्ष । ७. पीर का साग । ८. पारद । पारा ।

मुकुटक—पु० [स० मुकुट + क०] १. प्याज । २. गाठी धान ।

मुकुटा—पु० [स० बाल मुकुट] ऐसा व्यक्ति जिसके बाड़ी-मुँह के बाल न हों या बहुत कम हों । मुसरोमा ।

मुकुट—पु० [स० √मुक् + क०] १. मुक्ति । २. मुक्ति । ३. छुटकारा ।

मुकुट—पु० [स० √मुक् (सजाना) + उट् + क०] १. भेष्टता का मुक् एक प्रकार का प्रसिद्ध अर्ध गोलकार शिरोभूषण जो पहले राजा लोग पहनते थे, और जो प्राय देवी-देवताओं की मूर्तियों के सिर पर बांधा जाता है । अवलंत । मौलि ।

मुकुटी—पु० [स० √मुक् + क०] १. मुक्ति । २. मुक्ति । ३. छुटकारा ।

मुकुटेकाशपंच—पु० [स० अलुक, स०] प्राचीन भारत में एक प्रकार का राज-कर जो राजा का मुकुट बनवाने के लिए लिया जाता था ।

मुकुट—पु० [स०] एक प्राचीन जाति का नाम ।

मुकुत—पु०—मुक्ता (मोती) ।

वि०—मुक्ता ।

मुकुताफल—पु०—मुक्ताफल (मोती) ।

मुकुट—पु० [स० √मुक् + उट् + क०] १. दरपन । आईना । धीसा । २. मोतिसिरी । ३. मोतिया । ४. बेर । ५. कली । ६. वह ढंडा जिससे कुम्हार चाक चलाता है ।

मुकुल—पु० [स० मुकुल + उल्ल + क०] १. कली । २. वेह । शरीर । ३. आत्मा । ४. प्राचीन भारत में एक प्रकार का राज-कर्मचारी । ५. जमाल मोटा । ६. मुगुल । ७. पुष्पी ।

मुकुलक—पु० [स० मुकुल + क०] दती (वृक्ष) ।

मुकुलप—पु० [स० मुकुल-अध, ४० सं०] कली की आकृति का एक प्राचीन अस्त्र ।

मुकुलित—पु० क० [स० मुकुल + क०] १. (वेह या पीछा) जिसमें कलियाँ आई हों । कलियों से युक्त । २. (कूल) खिला हुआ ।

३ जो पूरी तरह से खुला न हो । कुछ कुछ मुँदा हुआ । अथ-खुला । ४. (नेत्र) जो अपक या मुँद रहा हो ।

मुकुली (सिन्धु)—वि० [स० मुकुल + इति, दीर्घ, नलोप] कलियों से छाया हुआ (पीछा या मुँद) ।

मुकुल—पु० [स० मुकुल + क०] १. मुकुल । २. मुकुल । ३. मुकुल । ४. मुकुल । ५. मुकुल । ६. मुकुल । ७. मुकुल । ८. मुकुल । ९. मुकुल । १०. मुकुल । ११. मुकुल । १२. मुकुल । १३. मुकुल । १४. मुकुल । १५. मुकुल । १६. मुकुल । १७. मुकुल । १८. मुकुल । १९. मुकुल । २०. मुकुल । २१. मुकुल । २२. मुकुल । २३. मुकुल । २४. मुकुल । २५. मुकुल । २६. मुकुल । २७. मुकुल । २८. मुकुल । २९. मुकुल । ३०. मुकुल । ३१. मुकुल । ३२. मुकुल । ३३. मुकुल । ३४. मुकुल । ३५. मुकुल । ३६. मुकुल । ३७. मुकुल । ३८. मुकुल । ३९. मुकुल । ४०. मुकुल । ४१. मुकुल । ४२. मुकुल । ४३. मुकुल । ४४. मुकुल । ४५. मुकुल । ४६. मुकुल । ४७. मुकुल । ४८. मुकुल । ४९. मुकुल । ५०. मुकुल । ५१. मुकुल । ५२. मुकुल । ५३. मुकुल । ५४. मुकुल । ५५. मुकुल । ५६. मुकुल । ५७. मुकुल । ५८. मुकुल । ५९. मुकुल । ६०. मुकुल । ६१. मुकुल । ६२. मुकुल । ६३. मुकुल । ६४. मुकुल । ६५. मुकुल । ६६. मुकुल । ६७. मुकुल । ६८. मुकुल । ६९. मुकुल । ७०. मुकुल । ७१. मुकुल । ७२. मुकुल । ७३. मुकुल । ७४. मुकुल । ७५. मुकुल । ७६. मुकुल । ७७. मुकुल । ७८. मुकुल । ७९. मुकुल । ८०. मुकुल । ८१. मुकुल । ८२. मुकुल । ८३. मुकुल । ८४. मुकुल । ८५. मुकुल । ८६. मुकुल । ८७. मुकुल । ८८. मुकुल । ८९. मुकुल । ९०. मुकुल । ९१. मुकुल । ९२. मुकुल । ९३. मुकुल । ९४. मुकुल । ९५. मुकुल । ९६. मुकुल । ९७. मुकुल । ९८. मुकुल । ९९. मुकुल । १००. मुकुल ।

मुकुल—पु० [स० मुकुल + क०] १. मुकुल । २. मुकुल । ३. मुकुल । ४. मुकुल । ५. मुकुल । ६. मुकुल । ७. मुकुल । ८. मुकुल । ९. मुकुल । १०. मुकुल । ११. मुकुल । १२. मुकुल । १३. मुकुल । १४. मुकुल । १५. मुकुल । १६. मुकुल । १७. मुकुल । १८. मुकुल । १९. मुकुल । २०. मुकुल । २१. मुकुल । २२. मुकुल । २३. मुकुल । २४. मुकुल । २५. मुकुल । २६. मुकुल । २७. मुकुल । २८. मुकुल । २९. मुकुल । ३०. मुकुल । ३१. मुकुल । ३२. मुकुल । ३३. मुकुल । ३४. मुकुल । ३५. मुकुल । ३६. मुकुल । ३७. मुकुल । ३८. मुकुल । ३९. मुकुल । ४०. मुकुल । ४१. मुकुल । ४२. मुकुल । ४३. मुकुल । ४४. मुकुल । ४५. मुकुल । ४६. मुकुल । ४७. मुकुल । ४८. मुकुल । ४९. मुकुल । ५०. मुकुल । ५१. मुकुल । ५२. मुकुल । ५३. मुकुल । ५४. मुकुल । ५५. मुकुल । ५६. मुकुल । ५७. मुकुल । ५८. मुकुल । ५९. मुकुल । ६०. मुकुल । ६१. मुकुल । ६२. मुकुल । ६३. मुकुल । ६४. मुकुल । ६५. मुकुल । ६६. मुकुल । ६७. मुकुल । ६८. मुकुल । ६९. मुकुल । ७०. मुकुल । ७१. मुकुल । ७२. मुकुल । ७३. मुकुल । ७४. मुकुल । ७५. मुकुल । ७६. मुकुल । ७७. मुकुल । ७८. मुकुल । ७९. मुकुल । ८०. मुकुल । ८१. मुकुल । ८२. मुकुल । ८३. मुकुल । ८४. मुकुल । ८५. मुकुल । ८६. मुकुल । ८७. मुकुल । ८८. मुकुल । ८९. मुकुल । ९०. मुकुल । ९१. मुकुल । ९२. मुकुल । ९३. मुकुल । ९४. मुकुल । ९५. मुकुल । ९६. मुकुल । ९७. मुकुल । ९८. मुकुल । ९९. मुकुल । १००. मुकुल ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

मुकुल—वि० [अ० मुकुल + क०] कड़ी । बंदी ।

पुं. पुराणानुसार एक ऋषि का नाम ।

*पुं. मुक्ता. (मोती) । उदा०—हेम हीर हार मुक्त भीर वास सावि की।—केवास ।

मुक्त-कठ—वि० [सं. ब० सं०] १. जोर से बोलनेवाला । २. वेधक-बोलनेवाला । ३. जो बोलने में बन्धन या सीमा न मानता हो । जैसे—

मुक्त-कठ होकर प्रशंसा करता ।

मुक्तक—पुं० [सं. मुक्त+कन्] १. प्राचीन काल का एक अस्त्र जो फेंककर मारा जाता था । २. शस्त्र । हथियार । ३. ऐसा सरल और सीधा गद्य जिसमें छोटे-छोटे वाक्य हों । ४. काव्य का वह प्रकार या भेद (प्रबंध-काव्य से भिन्न) जिसमें बगिच बातों का कोई पूर्वापर संबंध न हो, अर्थात् एक ही छंद में कोई पुरी बात या विषय आ गया हो, आगे या पीछे के दूसरे छंदों से उसका कोई संबंध न हो । जैसे—बिहारी सतसई मुक्तक काव्य है । ५. छंद शास्त्र में कवित्त का वह प्रकार या भेद जिसमें गणों का कोई बंधन नहीं होता, केवल अक्षरों की संख्या और कही-कही गुरु-रूप का कुछ ध्यान रखा जाता है ।

मुक्तक-व्यंग्य—पुं० [सं. कर्म० सं०] वह ऋण जिसके संबंध में कुछ लिखा-पढ़ी न हो । जबानी बातचीत पर दिया या लिया हुआ ऋण ।

मुक्तकच्छ—पुं० [सं. ब० सं०] एक बौद्ध का नाम ।
वि० जिसका कच्छ खुला हो ।

मुक्त-बंधन—पुं० [सं. मध्य० सं०] लाल बदन ।

मुक्त-बन्धु (स्)—पुं० [सं. ब० सं०] शेर । सिंह ।

मुक्त-वेला (सस्)—वि० [सं. ब० सं०] जिसमें मोक्ष प्राप्त करने की बुद्धि आ गई हो ।

मुक्त-छत्र (स्)—पुं० [सं. ब० सं०] आज-कल की ऐसी कविता जिसमें चरणों, मात्राओं, अनुप्रास आदि का बन्धन न माना जाता हो, केवल स्पष्ट का ध्यान रखा जाता हो । (ब्लैक वर्स)

मुक्तता—स्त्री० [सं. मुक्त+तन्+टाप्] मुक्त होने की अवस्था या भाव । मुक्ति ।

मुक्त-निर्मोक्ष—वि० [सं. ब० सं०] (साप) जिसने अभी हाल में कंचुली छोड़ी हो ।

मुक्त पत्र-बाह्य—पुं० [सं०] साहित्य में, यमक अलंकार का सिंहावलोकन नामक प्रकार का भेद । (दे० 'सिंहावलोकन')

मुक्त-पुण्य—पुं० [सं. कर्म० सं०] वह जिसने मोक्ष प्राप्त कर लिया हो ।

मुक्त-वधना—स्त्री० [सं. ब० सं०, टाप्] १. एक प्रकार का मोतिया ।
२. बेला ।

मुक्त-वधन—वि० [सं. ब० सं०] जिसके शरीर पर कोई वस्त्र न हो ।
नगा ।

पुं० एक प्रकार के जैन साधु जो सदा नंगे रहते हैं ।

मुक्त-वाणिज्य—पुं०=मुक्त-व्यापार ।

मुक्त-नेत्री—स्त्री० [सं. ब० सं०] १. द्रोपदी का एक नाम । २. प्रयाग का त्रिवेणी संगम ।

मुक्त-व्यापार—वि० [सं. ब० सं०] जो सांसारिक कार्यों से रहित हो गया हो । ससार-त्यागी ।

पुं० [सं. कर्म० सं०] आधुनिक राजनीति में, व्यापार की वह व्यवस्था

जिसमें विदेशों से होनेवाले आयात-निर्यात आदि पर कोई विशेष बन्धन न लगाया जाता हो । (फ्री ट्रेड)

मुक्त-भृंग—पुं० [सं. ब० सं०] रोह मछली ।

मुक्त-संग—वि० [सं. ब० सं०] जो विषय-वासना से रहित हो गया हो ।
पुं० परिवाजक ।

मुक्त-सार—पुं० [सं. ब० सं०] केले का पेड़ ।

मुक्त-हस्त—वि० [सं. ब० सं०] १. जो उदारतापूर्वक तथा अधिक मात्रा में दान, भय्य आदि करता हो । २. खुले हाथों देनेवाला ।

मुक्ताशक—पुं० [सं. मुक्ता+शक, मध्य० सं०] प्राचीन भारत में एक प्रकार का कपड़ा जिमकी बनवट में या तो मोतियों का काम होता था या जिसमें मोतियों की झालर अथवा मूब्बे टँके होते थे ।

मुक्ता—स्त्री० [सं. मुक्त+टाप्] [वि० मोक्तिक] १. मोती । २. रासना ।

मुक्तापार—पुं० [सं. मुक्ता+आपार, ष० सं०] तीप ।

मुक्तात्मा (स्मन्)—वि० [सं. मुक्त+आत्मन्, ब० सं०] १. जो सांसारिक आसक्तियों या बन्धनों से रहित हो गया हो । २. जिसने मोक्ष प्राप्त कर लिया हो ।

मुक्ताबाम (म्)—पुं० [सं. ष० सं०] मोतियों की लड़ी ।

मुक्ता-पुष्प—पुं० [सं. ब० सं०] कुइ (पींथा और फूल) ।

मुक्ता-प्रसू—पुं० [सं. ष० सं०] तीप ।

मुक्ता-कल—पुं० [सं. उपनि० सं०] १. मोती । २. कपूर । ३. लवनी फल । ४. एक प्रकार का छाटा लिप्तांग ।

मुक्ता-मणि—पुं० [सं. मयू० सं०] मोती ।

मुक्ता-मोक्ष—पुं० [सं.] मोतीपूर का लड्डू ।

मुक्ता-मत्ता—स्त्री० [सं. तु० सं०] मोतियों की लड़ी या माला ।

मुक्ताबली—स्त्री० [सं. मुक्ता+आवली, ष० सं०] मोतियों की लड़ी ।

मुक्ता-स्फोट—पुं० [सं. च० सं०] तीप ।

मुक्ताहल—पुं०=मुक्ताफल (मोती) ।

मुक्ति—स्त्री० [सं. ४ मुक्+क्तिन्] १. मुक्त करने या होने की अवस्था, क्रिया या भाव । २. किमी प्रकार के ज्वाल, झंझट, पाप, बंधन आदि से छुटकारा मिलना । ३. धार्मिक शेष में, वह स्थिति जिसमें यह समझा जाता है कि परमात्मा में मिल जाने के कारण जीव आवागमन या जन्म-मरण के बंधन से छूट जाता है । मोक्ष । (इमैनिस्मेशन) ४. मृत्यु के फलस्वरूप सांसारिक कष्ट-ओषों की होनेवागी समाप्ति अथवा उनसे मिलनेवाला छुटकारा । ५. दासत्व, देन आदि से छूटने की अवस्था या भाव ।
†स्त्री०=मोती ।

मुक्तिका—स्त्री० [सं. मुक्ता+कन्; टाप्, ह्रस्व, ह्रस्व] मोती ।

मुक्तिशेत्र—पुं० [सं. ष० सं०] १. काशी या वाराणसी जो प्राणियों को मुक्ति देनेवाली कही गई है । २. कावेरी नदी के तट पर का बकुलारण्य नामक तीर्थ ।

मुक्ति-तीर्थ—पुं० [सं. ष० सं०] १. वह तीर्थ जहाँ प्राणी को मुक्ति मिलती हो । २. काशी । ३. विष्णु ।

मुक्तिधाम (म्)—पुं० [सं. ष० सं०] १. तीर्थ-स्थान । २. स्वर्ग । ३. परलोक ।

मुक्ति-शब्द— μ ० [सं० ष० तं०] हरण मूय।

वि० मुक्ति दैतेवाला।

मुक्ति-शक्ति—स्त्री०=मुक्ति-सेवा।

मुक्ति-मंत्रण— μ ० [सं० ष० तं०] काशी क्षेत्र में विष्णुनाथ का मंत्रि।

मुक्ति-मूल— μ ० [सं० तु० तं०] सिलारस।

मुक्ति-सेवा—स्त्री० [सं० ष० तं०] ईसाई स्वामियों या विरक्तों का एक सभ्यता जिसका उद्देश्य लोगों में ईसाई धर्म और नीति का प्रचार करना तथा लोक-सेवा के दूसरे अनेक काम करना है। (संवेक्षण आर्मी)

मुक्ति-स्नान— μ ० [सं० तं० तं०] ग्रहण आदि का मोक्ष ही जाने पर किया जानेवाला स्नान।

मुर्खा— μ ० [हिं मूल+अंधा (प्रत्यय)] १ कुछ विधिष्ट बरतने में किया जानेवाला बहु छेप जिसमें टोटी लगाई जाती है। २. टोंटी का छेप।

मूज— μ ० [सं०/खन् (शोचना)। ङच्, क्तित, मूड आगम] १. जीव या प्राणी का मूह। (देखें) २. बेहरा। ३. दरवाजा। ४. प्रितिपदार्थ का अणु या ऊपरी खुला भाग। ५. आसि। आराम। मुक। ६. आगे, पहले या सामने जानेवाला अथ वा भाग। जैसे—रजनी-मूज=सन्ध्या का समय। ७. साहित्य में, रूपक की पाँच स्थियों में से पहली संधि जिसका आविर्भाव बीज, नाम, अर्थ, कृति और आरम्भ नामक अवधारणों का योग होने पर माना जाता है। ८. नाटक का पहला शब्द। ९. लहसुं। १०. नाटक। ११. वेद। १२. जीरा। १३. बड़हर। १४. मुरगावी।

वि० मुक्य। प्रथम।

मुज-सुर— μ ० [सं० ष० तं०] दाँत।

मुज-सुर— μ ०=मुजसुर।

मुज-मंत्रण— μ ० [सं० ष० तं०, कच्] मूह में दुर्गंध उपजानेवाला अर्थात् प्याज।

मुज-चपल—वि० [सं० सुपुया सं०] १. जो बहुत अधिक या बड़-बड़कर बोल्ता हो। बाबाल। मूहबोर। २. कटुभावी।

मुज-चपलता—स्त्री० [सं० मुजचपल+तल्-टा] मुज-चपल होने की अवस्था या भाव।

मुजचपल—स्त्री० [सं० मुजचपल+टा] आर्यछन्द का एक भेद।

मुज-चूर्ण— μ ० [सं० ष० तं०] मूह पर मलने का चूर्ण। (पाववर)

मुजच-वि० [सं० मुज/अन् (उत्पन्न करना)+ङ] मुज या मूह से उत्पन्न।

μ ० ब्राह्मण जिसकी उत्पत्ति ब्रह्मा के मुज से कही गई है।

मुजडा— μ ० [सं० मुज+हिं ङा (प्रत्यय)] १. मनुष्य का वह अंग जिसमें दोनों अङ्ग, नाक, गाल, माथा, मूह, टूट्टी आदि अणयव होते हैं। बेहूता। २. बहुत ही सुन्दर मुज के लिए प्रसंसा और प्रेम का सूचक शब्द।

मुजतार— μ ० [अ० मुजतार]। भाव० मुजतारी। १. बहु व्यक्तित्व जिसे किसी से विभिन्न अवसरों पर कुछ विशेष प्रकार के काम प्रतिनिधि के रूप में करने का वैध अधिकार मिला होता है। २. एक प्रकार के कानूनी सलाहकार जो पद में बनीक से छोटे होते हैं।

मुजतार आय— μ ० [अ० मुजतारआय] बहु प्रतिनिधि जिसे किसी तरह

से वे प्रकार के कार्य विशेषतः आर्थिक या कानूनी कार्य करने का अधिकार प्राप्त हो।

मुजतारकार— μ ० [अ० मुजतारे+का० कार] [भाव० मुजतारकारी] कार्यकारी। करिवा।

मुजतारकारी—स्त्री० [हिं० मुजतारकार+ई (प्रत्यय)] १. मुजतारकार का काम, पद या भाव। २. दे० 'मुजतारी'।

मुजतार-आल— μ ० [अ० मुजतारे+का० आल] बहु जिते किसी विशिष्ट कार्य या मुकदमे के लिए मुजतार वा प्रतिनिधि बनाया गया हो।

मुजतारनामा— μ ० [अ० मुजतार+का० नाम] १. बहु पत्र जिसमें कोई आधिकारिक या वैध रूप से किसी को अपना मुजतार नियुक्त करता हो। २. बहु अधिकार-पत्र जिसके अनुसार कोई पेशेवर मुजतार कोई मुकदमा लड़ने के लिए मुजतार के रूप में नियुक्त किया जाता है।

मुजतारी—स्त्री० [अ० मुजतारी] १. मुजतार अर्थात् प्रतिनिधि होने की अवस्था वा भाव। २. मुजतार का पद वा पेशा। ३. प्रतिनिधित्व। ४. एक तरह की कानूनी परीक्षा जिसे पारित करने पर मुजतार के रूप में छोटी अवदलों में मुकदमे लड़ने का अधिकार प्राप्त होता है।

मुजताल— μ ० [हिं० मुज+ताल] गीत का पहला पद। टेक।

मुजतूयन— μ ० [सं० मुज/तूय (दूषित करना)+भिच्+त्यू-अन] प्याज।

मुजतूयिका—स्त्री० [सं० ष० तं०] मूहासा।

मुजतूयी (भिच्)— μ ० [सं० मुज/तूय (दूषित करना)+भिच्, यिनि वीचं न लोप] लहसुं।

मुज-नेवाणी—वि०=मूह-नेवा।

मुज-बाबक— μ ० [सं०] कोई ऐसी चीज जो मूह के भीतरी भाग (जीभ, तारू, दाँत आदि) साफ करने के काम आती हो। (माउथ बास)

मुज-बीता—स्त्री० [सं० ष० तं०] १. भारती। २. ब्राह्मण-मण्डिका।

मुज-पट— μ ० [सं० मध्य० सं०] १. बूँद। २. नकाब।

मुज-पत्र— μ ० [सं० उपमि० सं०] किसी सत्यता या दल का वह पत्र जिसमें उसके सिद्धांतों तथा मती का प्रकाशन मुख्य रूप से होता है। (आर्गन)

मुज-पान— μ ० [हिं० मुज+पान] ताले के ऊपरी आवरण का पान के अकार का धातु का वह टुकड़ा जिसमें प्रायः ताली लगाने के लिए छेप बना होता है।

मुज-विह— μ ० [सं० ष० तं०] १. कौर। प्रास। २. मृत व्यक्तित्व की अल्पेति किया से पहले दिया जानेवाला एक तरह का पिंड।

मुज-पूरण— μ ० [सं० मुज/पूर (पूर्ण करना)+भिच् त्यू-अन] १. मूह साफ करने के लिए किया जानेवाला कुक्का। २. उतना पानी जिसतना एक तारू कुक्का करने के लिए मूह में लिया जाय।

मुज-मुक— μ ० [सं० उपमि० सं०] किसी श्च या पुस्तक का सबसे ऊपर वाला पृष्ठ जिसमें उस पुस्तक तथा उसके लेखक का नाम छपा होता है। (टाइटल पृष्ठ)

मुज-प्रशास्त्र— μ ० [सं० ष० तं०] मूह बीना या साफ करना।

मुज-भिय—वि० [सं० मुज/भी (सूत करना)+क, उप० सं०] स्वादिष्ट। μ ० १. नारंगी। २. ककड़ी।

मूलपत्रक—पु० [अ० मूलपत्रक] किन्ती बीज का लघु, संक्षिप्त या ह्रस्व रूप । जैसे—हाथ का मूलपत्रक हथ (हथकरपा) ।
 वि० लघु, संक्षिप्त स्वरूप में होनेवाला ।
मूल-बन्ध—पु० [स० मूल+हि० बन्ध] ? पीठो का एक रोग जिसमें उनका मुँह बन्द ही जाता है ।
मूल-बन्ध (म्)—पु० [स० ष० त०] किन्ती घब की प्रस्तावना या भूमिका ।
मुखारि—पु० [अ० मुखारि] [भाव० मुखारि] मूल रूप में समाचार लाने या सबर देनेवाला व्यक्ति । जातूस ।
मुखारिरी—स्त्री० [अ० मुखारिरी] मुखारि का काम, पद या भाव ।
मुख-भूषण—पु० [स० ष० त०] पान ।
मुखभेड़ा—स्त्री०—मुठभेड़ा ।
मुखमत्ता—पु० [अ० मरुतसः=विकलता या कठिणता] शगड़ा । बसेड़ा ।
मुख-मंथन—पु० [स०] मंथन या संभोग का एक अप्राकृतिक और अस्वाभाविक प्रकार जिसमें उपभोग्य बालक अथवा स्त्री के मुख में लिंगेन्द्रिय रखी जाती है ।
मुख-मोच—पु० [स० मुख/मूच (हृष) । गिन्+अण् उप० सं०] ? सलाई का पेड़ । शल्लकी । २ काला सहजिन ।
मुखमस—वि० [अ० मुखमस] जिसमें पंच कोने या अंग हो । पंचकोना । पु० वह पद्य जिसके पंच चरण हो । (उर्दू)
मुख-यन्त्र—पु० [स० ष० त०] पीठे, बेल आदि की लगाम ।
मुखर—वि० [स० मुख+रा (देना) /क] ? बहुत बोलनेवाला । बकवादी । वाचाल । २ बहुत बढ़कर या उद्दृष्टतापूर्वक बातें करनेवाला । ३ अर्थ बढ़त सी बातें कहनेवाला । बकवादी । ४ कटु-भाषी । ५ प्रधान । मुख्य । ६ बोलता हुआ । मुखरित । पु० १ कोशा । २ शल ।
मुखारि—पु० क० [स० मुखारि+किन्+क्त] अच्छी तरह बोलता या ध्वनि करता हुआ । ध्वनियों या शब्दों से युक्त ।
मुख-रोग—पु० [स० ष० त०] दाँवों, भस्मूको, हाँडो आदि में होनेवाले रोगों की संज्ञा ।
मुख-काग—पु० [स० ष० त०] सुआर ।
मुखलिप्त—वि० [अ० मुखलिप्त] [भाव० मुखलिप्ती] ? जो खलसा हो चुका हो । मुस । २ निश्छल । ३ निष्ठ । सच्चा । ४ अकेला । ५ अविवाहित ।
मुख-लेप—पु० [स० ष० त०] ? शोभा के लिए मुख पर किया जानेवाला लेप । २ एक प्रकार का मुख-रोग ।
मुख-लेपण—पु० [स० ष० त०] मुख पर लेप करना या लगाना ।
मुख-वल्गल—वि० [स० ष० त०] स्वाधिष्ठ । पु० अमार का पेड़ ।
मुख-बाध—पु० [स० ष० त०] वह बाधा जो मुँह से फूँककर बजाया जाता हो ।
मुख-बास—पु० [स० मुख/बास (सुगन्धि करना) । अण्+गिन्+उप० सं०] ? गंधपुष्प । २. तरपुष्प की लता ।
मुख-बासन—पु० [स० मुख/बास्+गिन्+त्यु=अन, उप० सं०] मुँह

की दुर्गन्ध दूर करने उसे सुगन्धित करने के उद्देश्य से मुँह में रखा जानेवाला पुष्प या जीवज ।
मुख-विच्छा—स्त्री० [स० ष० त०] तिल-चट्टा (कीड़ा) ।
मुख-मुद्रि—पु० [स० ष० त०] ? मुख को शुद्ध करने की क्रिया या भाव । २ बोलचाल में, भोजन आदि के उपरत इलायची, पान, सुपारी आदि खाना ।
विशेष—हृत्कारे यहाँ इलायची, पान, सुपारी आदि का सेवन मुख को शुद्ध करने के लिए किया जाता है ।
मुख-सोचन—पु० [स० ष० त०] ? मुख को शुद्ध करना । मुखमुद्रि । २ [मुख/सुच+गिन्+त्यु=अन, उप० सं०] मुख शुद्ध करने के निमित्त खाया जानेवाला पदार्थ । जैसे—पान, सुपारी आदि । ३ बार-चीनी । वि० चरणपरा ।
मुखशोधी (गिन्)—वि० [स० मुखशुध् (शुद्ध करना) । गिन्+गिनि शीघ्र, नल्पो, गुण] मुख को शुद्ध करने अथवा उसे शुद्ध बनानेवाला । पु० ज्वरीनी नीचु ।
मुख-शोध—पु० [स० ष० त०] ? मुख के मुखे हुए होने की अवस्था या भाव । २ [ब० सं०] वह कागज या पदार्थ जिसके फटकर मुख सूखा रहता हो । ३ प्यास ।
मुख-धी—स्त्री० [स० ष० त०] बेहरे की रीतक, घोमा या सोदस्य ।
मुख-सन्धि—स्त्री० दे० 'मुख' के अतन्त साहित्यिक सन्धि ।
मुख-समय—पु० [स० ष० त०] ? बाह्यपान । २ पुष्करामूल । वि० मुँह से निकला हुआ ।
मुख-मुष—पु० [स० ष० त०] वह स्थिति जिसमें व्यक्ति किसी शब्द का उच्चारण अपने मुख की गठन तथा सुविधा के अनुसार ऐसे रूप में करता है जो वर्णोच्चारण में कुछ भिन्न होता है ।
मुखस्थ—वि० [स० मुख/स्था (उठाना) । क] ? जो मुँह-जबानी याद हो । कठस्थ । २ मुख में आया या रखा हुआ ।
मुख-श्राव—पु० [स० ष० त०] ? धूक । लार । २ मुँह से निरन्तर लार गिरने का रोग ।
मुखांग—पु० [स० मुख-अंग, कर्म० सं०] वह जो किसी व्यक्ति की ओर से बोल रहा हो जो स्वयं किसी कारण से बूध रहना चाहता हो । (माउथपीस) जैसे—आज तो आप उनके मुखांग हीकर बातें कर रहे हैं ।
मुखांगि—स्त्री० [स० मुख-अंगि, मध्य० सं०] ? चिता पर रखे हुए धव के मुख में रखी जानेवाली अग्नि । २. इस प्रकार मुँह में अग्नि रखने की प्रथा । ३ [ब० सं०] दावानल । ४. ब्राह्मण ।
मुखाण—पु० [स० मुख-अण, ष० त०] ? किसी पदार्थ का अगला भाग । २ हाँड । वि० जो जबानी याद हो । कठस्थ ।
मुखातिव—वि० [अ० मुखातिव] ? जिसने कुछ कहा जाय । संबोधन । २ किसी की ओर (बात कहने या सुनने, देखने आदि को) प्रवृत्त । वि० [अ० मुखातिव] संबोधन कर्ता ।
मुखापेसक—वि०—मुखापेक्षी ।

मुखापेक्षा—स्त्री० [सं० मुख+अपेक्षा, षं० सं०] विचार होकर दूसरों का मुंह ताकना। (सहायता आदि के लिए)

मुखापेक्षी (विन्)—पुं० [सं० मुखापेक्ष+इनि] किसी के मुंह की ओर ताकने अर्थात् उसकी हृष्या की अपेक्षा रखनेवाला। दूसरों की कृपा पर अवलम्बित रहनेवाला।

मुखाभय—पुं० [सं० मुख+आभय, षं० सं०] मुख में होनेवाले रोग। मुखरोग।
मुखाभयविन्—पुं० [सं० मुख+अभयविन्, उपमित सं०] ऐसा मुखरोगी जो देवने में कमल के समान हो। मुख-कमल। (श्राय बड़ों के सबब में, आदरसूचक)

मुखारी—स्त्री० [सं० मुख] ? मुख की गठन या बनायट। २ आकार-प्रकार, रूप आदि का सूचक किसी वस्तु का ऊपर या सामनेवाला भाग। ३ मुख-शुद्धि के लिए कुल्हा-यतुअन आदि करने की क्रिया या भाव। उदा०—दतवनि के मुँह करी मुखारी।—सूर।

मुखालिक्—वि० [अ० मुखालिक्] ? विरोधी। २ प्रतिद्वंद्वी। पुं० दुश्मन। शत्रु।

मुखालिफत—स्त्री० [अ० मुखालिफत] १. मुखालिफ होने की अवस्था या भाव। २. इत्कार किया जानेवाला विरोध। ३. शत्रुता।

मुखासमत—स्त्री० [अ०] १. कलह। २. विवाद। ३. शत्रुता।

मुखासक—पुं० [सं० मुख+आसक, षं० सं०] १. धुक। २. लार।

मुखासक—पुं० [सं० मुख+असक, षं० सं०] केकड़ा।

मुखिया—पुं० [सं० मुख; हिं० दया (प्रत्य०)] ? वह जो अपने बर्ग या समाज में मुख्य या प्रधान हो। २. बिट्टा शासन में किसी गाँव में प्रधान बनाया हुआ वह व्यक्ति जिसे कुछ अधिकार प्राप्त होते थे। ३. वल्लभ सप्रदाय का वह कर्मचारी जो मुस्लिम का पूजन आदि करता है। ४. स्वतंत्र भारत में किसी गाँव या मजल के चुने हुए प्रतिनिधियों का प्रधान या सभापति।

मुखी (विन्)—वि० [सं० मुख+इनि] १. मुख से युक्त। मुखवाला। (पी० के अन्त में) जैसे—नाहमुखी, सूर्यमुखी आदि। उदा०—जो देखिअ सोई हँवता मुखी—आयसी। २. किसी विधिगत और या विद्या में मुख रखनेवाला। जैसे—अनामुखी, सूर्यमुखी, सर्वतोमुखी।

मुखुली—स्त्री० [सं० मुख+उल्लृ+ङीप्] एक बौद्ध देवी।

मुखौटा—पुं० [हिं० मुख+औटा (प्रत्य०)] १. मुख का अत्यार्थक रूप। छोट मुँह। २. धातु आदि का मुख के आकार का बना हुआ वह बज जो देवी-देवताओं की मूर्तियों में उनके मुख पर लगाया जाता है। ३. रूप धारण करने के लिए मुँह की बनाई जानेवाली आकृति। उदा०—अत मनुष्य चाहे जो मुखौटा पहने उसके नीचे सब मनुष्य नगै है।

मुख्तलिक्—वि० [अ० मुख्तलिक्] ? पृथक। निश्च। २. अनेक प्रकार का।

मुख्तसर—वि० [अ० मुख्तसर] ? सक्षिप्त। बटया या छोटा किया हुआ। २. संक्षेप में लाया हुआ। ३. अल्प। थोड़ा।
पद्य—मुख्तसर में—संक्षेप में।

मुख्तार—पुं० 'मुख्तार'। ('मुख्तार' के अर्थ यी० के लिए देखें 'मुख्तार' के दौ०)

मुख्य—वि० [सं० मुख+यत्] [भा०० मुख्यता] १. जो सब से आगे बड़ा हुआ या ऊपर और मुख्य के रूप में हो। प्रधान। शास। २. (अर्थों की अपेक्षा) अधिक आवश्यक। महत्वपूर्ण या सारगत। जैसे—अपने भाषण में उन्होंने मुख्य बात यही कही कि...। ३. अपने मन का सबसे बड़ा। जैसे—मुख्य मंत्री, मुख्य न्यायाधीश।

पुं० १. यज्ञ का पहला कल्प। २. वेदों का अध्ययन और अध्यापन। ३. अर्थात् मास।

मुख्य-चांद्रमास—पुं० [सं० कर्म० सं०] चांद्र मास के दो मंत्रों में से एक जो शुक्ल प्रतियशा से आरंभ होकर अमावस्या को समाप्त होता है। इसी को 'अर्मात' भी कहते हैं। (हूस्तरा) वेद 'गौण चांद्रमास' या 'पूर्णिमांत' कहलाता है।

मुख्यतः (स्त्रु)—अव्य० [सं० मुख्य+त्सु] मुख्य रूप से।

मुख्यता—स्त्री० [सं० मुख्य+तात्+टाप्] मुख्य होने की अवस्था, गुण या भाव।

मुख्य-मंत्री (विन्)—पुं० [सं० कर्म० सं०] भारतीय गणतंत्र के किसी राज्य (प्रांत) का सबसे बड़ा मंत्री। राज्य के मंत्रियों में सबसे बड़ा मंत्री। (चीफ मिनिस्टर)

मुख्य-सर्व—पुं० [सं० कर्म० सं०] संचालक मूर्ति।

मुख्याधिष्ठाता (सु)—पुं० [सं० मुख्य+अधिष्ठातृ, कर्म० सं०] किसी स्थान विशेषतः विद्या-मन्ष्या का प्रधान अधिकारी और व्यवस्थापक। जैसे—मठकुल के मुख्याधिष्ठाता।

मुख्यालय—पुं० [सं० मुख्य+आलय, कर्म० सं०] १. किसी संस्था का केन्द्रीय और प्रधान स्थान। प्रधान कार्यालय। २. किसी बड़े अधिकारी या व्यक्तित का मुख्य निवास स्थान। (हेड क्वार्टर)

मुगटा—पुं०—मकुट।

मुग्ताना—अ० [सं० मुग्त] मुग्त होना।

सं० मुग्त करना।

मुग्ताना—पुं०—मुकता।

मुगहर—पुं० [सं० मुगहर] जोड़ी। कसरत करने के लिए काठ के बड़े टुकड़ों की वह जोड़ी जो दोनों हाथों में लेकर इधर-उधर और ऊपर-नीचे घुमाई जाती है।

किं० प्र०—केरता—हिलाना।

मुगधारी—वि० [सं० मुख] मुह। मुर्छ।

मुगाना—पुं०—मुगाना (सहित)।

मुगारा—पुं०—मंगारा।

मुगरेला—पुं०—मुगरेला।

मुगल—पुं० [तु० मुगुल] [स्त्री० मुगलानी] १. मंगोल देश का निवासी। २. उक्त के वे ब्राह्मण जो ततार देश में बसकर मुसलमान हो गए थे, और जिनके एक राज-बन्ध ने अंगरेजों के भारत आने से पहले इंडी-नीन सी बर्षों तक भारत में राज्य किया था। ३. मुसलमानों के चार वर्गों में से एक वर्ग। ४. उक्त जाति का कोई व्यक्ति। ५. आज-कल अनाथ कानुल और उसके आस-पास के पठान।

मुगलई—वि० [तु० मुगुल+हिं० ई (प्रत्य०)] १. मुगल-मनबधी। २. मुगलों में होनेवाला। ३. मुगलों का-सा। मुगलों की तरह का। जैसे—मुगलई पाजाना।

स्त्री० सुगलो की सी अकड़, छेड़ या घमंड ।
सुगल्क—वि० [अ०] १ बहुत कठिन या मुश्किल । २ छिया हुआ । अथवापन ।
सुगल्क-ठाला—पु० [हि०] १. एक प्रकार का खेल जो १६ गोदियों में चौदह स्त्रीकी हुई देनाओं पर खेला जाता है । २. एक प्रकार की आदिवासी जिसमें दो पुत्रों आपस में लड़ते हुए दिखाये जाते हैं ।
सुगल्क—स्त्री० [हि० सुगल-हि० आई (प्रय०)] १ वह कपड़ा जिसमें सुगन्धका या कपडका गोदा और पट्टा टंका हो । २ दे० 'सुगल्क' ।
 वि०—सुगल्क ।
सुगल्की—स्त्री० [हि० सुगल+आनी (प्रत्य०)] १ सुगल आति की रबी । २ सुगल्मान रस्मी के वहाँ कपड़े सीनेवाली स्त्री । ३. धानी । मजदूरनी ।
सुगल्किया—वि० [फा० सुगुलीय] १ सुगलो का । जैसे—सुगल्किया खानपान । २ सुगलो की तरह का । सुगलो का-सा । सुगल्क ।
सुगली—स्त्री० [हि० सुगल-ई (प्रत्य०)] पत्नी का रोग ।
 वि०—सुगल्किया (सुगल्क) ।
सुगल्क—पु० [स० बन-सुध] मोठ ।
सुगला—स्त्री० [म०] अतिशय । मधुरकली ।
सुगल्का—पु० [अ० सुगल्क] बोधा ।
 कि० प्र०—खाना ।—देना ।—ये डाकना ।
सुध—वि० [स०√सु० (सुच्छिन्न होना)+धत्] [भाव० सुधता] १ जो सुच्छिन्न या स्वच्छ हो गया हो । २. मूँ । मूँ । ३ जो किसी पर इतना आत्मपत या लुब्ध हो गया हो कि सुध-सुध खो बैठे हो । ४ शीघ्र-साधा । सरल । ५ निरीह । ६ नया । नवीन । ७ मनोहर । सुधर ।
सुधता—स्त्री० [स० सुध-तल्ल+टाप्] १ सुध होने की अवस्था या भाव । २. सुधरता ।
सुध-सुध—वि० [स० ब० सं०] मूँ ।
सुधध—वि० [स० सुध] १ संकेत रूप में कहा हुआ । २ जिसका भेद या रहस्य और लोग न जानते हो । छिटा हुआ । गुप्त । ३ चुप । मौन ।
 पु० जूए में किसी बासी की वह स्थिति, जिसमें किसी पक्ष की न ओत होती है न हार ।
सुध—स्त्री० [स० सुध+टाप्] साहित्य में वह नायिका जिसके स्वयंसेवक निकल पड़े हों परन्तु जिसमें अभी काम बेषटा का भाव उत्पन्न न हुआ हो । इनके ज्ञात यौवना और अज्ञात यौवना वी उपभवे हैं ।
सुध—वि० [हि० सुध+अगड (प्रत्य०)] मोटा और भड़ा । जैसे—सुधयह टोटी ।
सुधक—पु० [स०√सु० (छोड़ना)+धनु०, धु—अक] लास । लाह । स्त्री०—सोधक ।
सुधक—पु० [स०] १. माघाता का पुत्र जिसने असुरों से युद्ध करने देखाता से बहुत दिनों तक कोने का बर प्राप्त किया था । २ सुधधित कुलीवाला एक प्रकार का बड़ा बृक्ष जिसके पत्ते फाल्गु के पक्षों की तरह बढ़े-बढ़े होते हैं ।

सुधका—पु० [सु० सुधका] आज-कल विविध क्षेत्र में यह प्रतिष्ठा-मय जो किसी अभिवृत्त या अपराधी से इसलिए लिखाया जाता है कि भविष्य में वह विधि-विशुद्ध काम करने पर कुछ विधि-अर्थवत् से दंडित होगा, और उस पर फिर मुकदमा भी चल सकेगा ।
 कि० प्र०—देना ।—लिखना ।—लिखाना ।—लेना ।
सुध—पु० [स०√सु० (स्वांग करना)+धत्] १ धर्म । २ धाम् । ३ देवता ।
 वि० उदार ।
सुधक—पु० [स०] १ सुधवीर राजा माघाता का पुत्र । २. एक प्रकार का बृक्ष जिसकी छाल और फूल दवा के काम आते हैं । सुधकुर ।
सुधका—पु० [देवा०] भास विधेयन कल्पे भास का टुकड़ा ।
सुधक—वि० [हि० मूँ] १ मूँखोवाला । २ बड़ी बड़ी मूँखोवाला ।
सुधक—वि० [हि० मूँ] १ जिसकी मूँ बड़ी-बड़ी हों । २ फलतः देखने में भड़ा और मोटा । ३. मूँ । (अर्थ)
 *पु०—सुधकदेवता ।
सुध—स्त्री०—मूँ ।
 उल० मूँ का वह रूप जो उपरनी की भाँति समस्त पदों के आरंभ में लगता है । जैसे—सुधकटा, सुधकुर ।
सुधकटा—वि० [हि० मूँ+कटाटा] जिसकी मूँ कटी या काट दी गई हो ।
सुधका—वि० [हि० मूँ+इना] जिसकी मूँ मूँ ही हुई हो । सफाबट ।
सुधकटा—वि० सुच्छल ।
सुधका—अ० [न० सुधका+हि० ना (प्रया०)] सुच्छिन्न होना । सं०—सुच्छिन्न करना ।
सुधकल—वि०—सुच्छल ।
सुधकल—वि० [अ०सुधकल] जिसमें पुत्र या नर के गुण, विधेयताई आदि हों । पुत्र-सखी । पतिग ।
सुधकल—वि० [अ० मन्ना] बेचन । विकल ।
सुधकल—वि० [अ० सुधकल] परिश्रमी ।
 पु० सिया मन्नायक का वह व्यक्त जो धार्मिक विषया पर अपना निर्णय देता है ।
सुधका—पु० [फा० मुज्ज] गुम सवादा । अच्छी खबर ।
सुधकल—वि० [अ० सुधकल] विजयी । विजेता ।
सुधकल—अथ० [अ०मिन् मुज्ज] १ सब मिलाकर । कुल मिलाकर । २ स्वमे में ।
 पु० सखात्री का जोड़ा । योग ।
सुधकल—पु० [अ० सुधकल] चमड़े या रस्सी का वह किरा जो मोटे की आगे बढ़ने से टोकने के लिए उसकी गामची या दुमकी में पिछाड़ी की रस्सी के साथ लगा रहता है ।
 कि० प्र०—बोधाना ।—लगाना ।
सुधकल—पु०—सुधकल ।
सुधकल—वि० [अ० सुधका] १. जो जरा किया गया हो । २ (बन) जो प्राय्य होने के कारण किसी देव में से काट लिया जाय । जैसे—हमारे देव कप इतने में सुधका कर दो ।
 पु० [अ०] १ किसी बड़े के नाममें सुधकल किया जानेवाला

अभिवाचन । २. बहु धाना जो महफिक आदि में बेध्या बैठकर जाती हो।

मुजर्राई—पुं० [फा० मुजर] १. बहु जो राजा, रईसों आदि के सामने मुकर मुजर अर्थात् अभिवाचन करता हो। जैसे—दरबार में बहुत से मुजर्राई उपस्थित थे । २. बहु जो बड़े आदरमियों को नित्य आकर सलाम कर जाने के बखले में ही बैठन पाता हो।

स्त्री० [हिं० मुजरा+ई (प्रत्य०)] १. रकम मुजरा करने अर्थात् कटाने की क्रिया या भाव । २. मुजरा की हुई अर्थात् काटकर घाटेई हुई रकम ।

मुजर(कंभ)—पुं० [सं० मुजर] एक प्रकार का कद । मुंजर ।

मुजरिस—वि० [अ० मुज्रिम] १. जिसने कोई जुर्म या अपराध किया हो।

२. जिस पर जुर्म या अपराध का आरोप हुआ या लगाया गया हो। अभियुक्त ।

मुजरब—वि० [अ०] १. अकेला । एकाकी । २. विन-व्याहारी । कुंआरा ।

३. संसार-स्थायी । विरस्त ।

मुजरब—वि० [अ०] १. जो तजबजा करने पर ठीक जान पड़ा हो।

२. आजमाया हुआ । परीक्षित । जैसे—मुजरब दवा ।

मुजस्लब—वि० [अ०] (मुस्तक) जिस पर जिल्द बीधी या मढ़ी हो। जिल्दवार । जिल्द से मुक्त ।

मुजम्बज (जा)—वि० [अ० मुजम्बज] १. तनवीज किया हुआ । प्रस्तावित । २. निर्णीत ।

मुजाब्बिज—पुं० [अ०] तजबीज करनेवाला । प्रस्तावक ।

मुजास्सिम—वि० [अ०] १. जो जिस या शरीर के रूप में हो।

२. शरीरधारी । साकार ।

अव्य० १ प्रत्यय रूप से । स्पष्टत । २. शरीर सहित । स-शरीर ।

३. शरीर धारी के रूप में ।

मुजास्सिमा—पुं० [अ०] मुक्ति । प्रतिमा ।

मुजहिद—वि० [अ० मुजिह] आदि अर्थात् प्रभट या स्पष्ट करनेवाला ।

पुं० १ गवाह । साक्षी । २. गुल्तपर ।

मुजाकर—वि० [अ० जाकरान से] जिसमें जाफरान या केसर मिला हुआ हो । केसरिया ।

पुं० एक प्रकार का मीठा गुलाब जिसमें केसर बंधेष्ट मात्रा में पड़ा होता है । केसरिया भात । (मुसल्ल०)

मुजायका—पुं० [अ० मुजायक] हानि । नुकसान ।

मुजाबरा—वि० [अ० मुजाबरा] समान । मुत्य ।

पुं० कृषक । खेतहर ।

मुजाबरा—वि० [अ०] जो जारी किया या कराया गया हो । जैसे—मुजाबरा कियी ।

मुजाबिर—पुं० [अ० मुजाबिर] [भाव० मुजाबरी] १. पडीसी । प्रति-बेसी । २. बहु फकीर जो दरगाह की चबूत लेता हो।

मुजाबरी—स्त्री० [अ० मुजाबिरी] मुजाबर का कार्य, पद या पेशा ।

मुजाबिब—वि० [अ०] १. पराक्रमी । २. विभिमियों से युद्ध करने-वाला ।

मुजाहिब—वि० [अ०] आपत्ति, रोक-टोक या हस्तक्षेप करनेवाला ।

मुजाहिबत—स्त्री० [अ०] १. रोकने या बाधा देने की क्रिया या भाव । रोक-टोक । बाधा । २. आपत्ति ।

मुजिर—वि० [अ०] हानिकारक ।

मुज—सर्व० [हिं० मुजे] सर्व० 'मै' का बहु रूप जो उसे कर्ता और संबंध कारक की विभक्तियों के अतिरिक्त अन्य कारकों की विभक्तियाँ लगने पर प्राप्त होता है । जैसे—मुजको, मुजसे, मुजपर आदि ।

विशेष—जब इस शब्द का प्रयोग सार्वभौमिक विशेषण के रूप में होता है तब इसमें माय लगनेवाली विभक्ति से पहले बक्ता से संबद्ध कोई विशेषण भी आ जाता है । जैसे—(क) मुज गरीब पर यह बहो मत रखो । (ख) मुज दुखिया को इतना मत मताओ । (ग) मुज रोमी से यह आशा मत रखो । ऐसी अवस्था में इसका प्रयोग सर्वव्यापक में भी होता है । जैसे—मुज अभागे का यहाँ तुम्हारे तिया और कीन है ।

मुजे—सर्व० [सं० मध्यम; प्रा० मज्जम] सर्व० 'मै' का कर्म और तंप्रदान में होनेवाला रूप जो उपेत कारको की विभक्तियों से मुक्त समझा जाता है ।

मुटकना—वि० [हिं० मोटा+कना (प्रत्य०)] आकार में छोटा या साधारण और मुदर । जैसे—मुटकना बाग ।

मुटका—पुं० [हिं० मोटा ?] एक प्रकार का रोखी वस्त्र ।

वि० [स्त्री० मुटकी] मोटा । (अव्यय)

मुटकी—स्त्री० [देग०] कुलवी नामक अन्न । सुरवी ।

वि० स्त्री० हिं० 'मुटका' का स्त्री० ।

मुट-मरवी—स्त्री० [हिं० मोटा+मरव] बहु स्थिति जिसमें मनुष्य अच्छी दसा में पहुँचकर अभिमानी हो जाता और दूसरों को उपेक्षा की दृष्टि से देखने लगता है ।

मुटमूरी—पुं० [देग०] साँ में होनेवाला एक प्रकार का धान ।

मुटरी—स्त्री० [देग०] एक प्रकार की चिड़िया जिसका सिर, गरदन और छाती काली तथा बाकी शरीर कर्पूरी होता है । यह कीट से कहीं बड़कर चालाक और चोर होती है ।

↑स्त्री०=मोटरी (छोटो गडरी) ।

मुटई—स्त्री०=मोटई ।

मुटाया—अ० [हिं० मोटा] १. शारीरिक स्पृलता में वृद्धि होना । मोटा हो जाना । २. किसी प्रकार की विधेयता के कारण अभिमानी होना ।

सं० किसी को मोटा करना ।

मुटाया—पुं० [हिं० मुटाया+आप (प्रत्य०)] १. शरीर के मोटे और भारी होने की अवस्था या भाव । २. किसी प्रकार की तमुद्धि के कारण मन में होनेवाला अभिमान या शेखी ।

किं० प्र०=बहुना ।

मुटार—स्त्री० [?] १. दुबकी । मोटा । २. शरीर को गडरी की तरह बनाने की एक मुद्रा जो जल में कूदने के लिए बनावी जाती है । (बुन्देल०) उवा०=जैने के लिए मुटार लगायना ।—मुदाबनलाल वर्मा ।

मुदास्त—वि० [हिं० मोटा+आसा (प्रत्य०)] [स्त्री० मुदासी] (व्यक्ति) जो कुछ या पौधा धनवान् होती हो अभिमानपूर्वक आचरण करने लगा हो ।

मुदिधा—पुं० [हिं० मोटा=गडरी+इया (प्रत्य०)] शेष या गडर डोने-वाला मनुकूर ।

मुट्टा—**पू०**[हि० मुट्ट] [स्त्री० अल्पा० मुट्टी] ? किन्नी बीज का उतना बीधा या लपेटा हुआ अंग जो हाथ की मुट्टी में पकड़कर ले जाया जा सकता हो। १ जैसे—धान-मूग का मुट्टा, कागजों या मूत का मुट्टा। २ किन्नी बीज की पूरी और भरपूर भरी मुट्टी। जैसे—मुट्टा भर चावल। ३ किसी बीज का बीधा हुआ गुलिया। जैसे—धूप-बत्ती का मुट्टा। ४ औजार आदि पकड़ने का बस्ता। बेटा। मुट्टा। ५ बुनियात का वह औजार जिसमें रूई धुनते समय ताँत पर आघात किया जाता है। ६ कपड़े की गद्दी जो प्रायः गृहलक्षणा आदि बर्तों पर माँटाई दिखलाना या मुट्टरता बढाने के लिए बाँधते हैं।

मुट्टा-मुहुरी—**स्त्री०** [दण०] युवा स्त्री। (कहार)

मुट्टी—**स्त्री०** [स० मुट्टिका, प्रा० मुट्टिआ] ? हथेली की वह मुट्टा या स्थिति जिसमें उँगलियाँ अन्दर की ओर मोड़कर जोर से बंद करनी जाती हैं।

पह-बंदी मुट्टी—ऐसी स्थिति जिसमें भीतरी रहस्य और लोगों पर प्रकट न हो सकता हो। जैसे—अनी ताँ पर की बंदी मुट्टी है, पर जब चारों भाई अलग हो जायेंगे, तब सबका पता खुल जायगा अर्थात् सबको भीतरी स्थिति का पता लग जायगा।

मुहा०—(किसी की) मुट्टी गरम करना—किसी को मत्तुष्ट या प्रमत्त करने के लिए सुपचाप उमके हाथ में कुछ श्मशे रखना। (किसी की) मुट्टी में हाँसा—पूरी तरह से अधिकार या कब्जे में होना। जैसे—उसकी छोटी हमारी मट्टी में है, वह कहाँ जा सकता है।

२ उतनी बस्तु जिसकी उपरोक्त मुट्टा के समय हाथ में आसके। जैसे—एक मुट्टी आटा साधू को देना। ३ उक्त स्थिति में लड़ाई हुई हथेली के बराबर का विस्तार जिसका प्रयोग ऊँचाई, लंबाई आदि नापने के लिए होता है। जैसे—इसका किनारा मुट्टी भर और ऊँचा होना चाहिए। ४ किसी के शरीर की पकावट, दण्ड आदि दूर करने के लिए उमके अंगों की बार-बार मुट्टी में पकड़कर दबाने की किया। चंपी। ५ बच्चों की पुस्तकी जिसे के मुट्टी में पकड़कर प्रायः धुनते रहते हैं। ६ धाँडे का धुम और टपकने के बीच का भाग।

मुट्ट-मुट्ट—**स्त्री०**[हि० मुट्टी] [भित्तना] ? ऐसी लड़ाई जिसमें दो बाल्याय बाल परस्पर एक दूसरे पर मुट्टियों में प्रहार करते हैं। २ वो पक्षों विशेषतः धनुष पक्षों में पाँडी देर के लिए परन्तु जमकर होनेवाली लड़ाई। ३ मामना। बेट।

मुट्टिका—**स्त्री०**[स० मुट्टिका] ? मुट्टी। २ पूँसा। मुक्का।

मुट्टिया—**स्त्री०**[स० मुट्टिका] ? उपकरण या औजार का बस्ता। बेटा। २ छठी, छाने आदि का वह भिरा जो हाथ में पकड़ा जाता है। मूडा। ३ रूई धुनते समय धुनकी को ताँत पर आघात करने का लकड़ी का उपकरण।

मुट्टियाला—**स०**[हि० मुट्टा] आना (प्रत्यय०) ? मुट्टी में भरना या ढँका। २ बेटा को लड़ने के लिए उत्तेजित करने के उद्देश्य से बार-बार मुट्टी में भरना। ३ दबाने के उद्देश्य में शरीर के किसी अंग को बार-बार मुट्टी में भगना और फिर डाला छाड़ देना। ४ मुट्टियों से हलका आघात करना।

मुट्टी—**स्त्री०**—मुट्टी।

मुट्टकी—**स्त्री०**—मुट्टी।

मुट्टी—हि० मुट्ट का मशिन रूप जो उमके यौगिक पदों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—मुट्ट-चिरा।

मुट्टक—**स्त्री०**[हि० मुट्टकना] मुट्टकने की किया या भाव।

मुट्टकना—**अ०**[हि० मुट्टना] ? लचक कर किसी और मुट्टकना या धुनना।

२ किसी अंग का झटके आदि के कारण किसी औरतन जाना। जैसे—लड़ाई या लुट्टवा मुट्टकना। ३ वापस आना। लौटना। ४ हिचकना। रुकना। ५ चीपट या नट्ट होना। ६ दे० मुट्टना।

मुट्टकना—**स०**[हि० मुट्टकना का म० रूप] ? ऐसा काम करना जिसमें कुछ मुट्टके। मुट्टकने में प्रवृत्त करना। जैसे—किसी का हाथ मुट्टकना। २ वापस लाना। लौटना। ३ चीपट या नट्ट करना। ४ दे० 'मोडना'।

मुट्टचिरा—**वि०**—मुट्ट-चिरा।

मुट्टना—**अ०**[स० मुरण = लिपटना, फेरना खाना, हि० 'मांडना' का अ० रूप]

१ किसी सीधी, कठी या ठोस चीज का किसी और मुट्ट जाना। २ गतिशील अथवा स्थित व्यक्ति या पदार्थ का किसी दूसरी दिशा की ओर उन्मुख या प्रवृत्त होना। ३ किसी धारदार किनारे या नाक का उस प्रकार मुट्ट जाना कि वह आगे की ओर न रह जाय। जैसे—छुटी की धार मुट्टना। ४ वापस आना। लौटना। ५ किसी काम या बात से विरत होना। ६ जमीन पर गिरना। उदा०—बिबेक महाई महिष्ठ मो मुग्ग वज्जु महि मुरे—मुट्टली ७ जमीन पर दण्ड-उत्तर लौटना। ८ सकोच करना। हिचकना। उदा०—गयो भयामत नेकु न मुरा (मुट्टा)।—मुट्टली।

मुट्ट-परना—**पू०**[हि० मुट्ट-सिर+परना-रखना] फेरी करने सोदा बेचनेवाली का मुट्टका जिसमें वे बिक्री की जोड़े रखते हैं।

मुट्टला—**वि०**—मुट्टा (बिना बाँधेवाला)।

मुट्टवाला—**स०**—मुट्टवाला (मुट्टन कराने)।

मुट्टवारी—**स्त्री०**[हि० मुट्ट+वारी (प्रत्यय०)] ? मुट्टेगा। २ गिरना।

३ सिर की ओर का अंग या भाग।

मुट्टही—**वि०**—मुट्ट (मूर्त्त)।

मुट्टहर—**पू०**[हि० मुट्ट+हर (प्रत्यय०)] ? माठी का वह अंग जा सिर पर पडता है। २ सिर का अगला भाग।

मुट्टहा—**वि०**—मुट्ट।

मुट्टना—**स०**—मुट्टाना। २ मुट्टवाना।

मुट्टना—**पू०**[हि० मुट्टना] इया (प्रत्यय०) ? वह जिसका सिर मुट्टा हुआ हो। २ वह जो सिर मुट्टाकर मवार-न्यायी या विरक्त हो गया हो।

स्त्री०[दिशा०] एक प्रकार की मछली।

मुट्टरा—**पू०**—मुट्टेगा।

मुट्ट—**पू०**[स० मुट्टा] ? प्रधान या मुख्य व्यक्ति। ३ बहुत बड़ा पुँत। उदा०—यही भित्तने की उतनी मुट्टी न थी जितनी एक मुट्ट पर विजय पाने की थी।—अमरवट।

मुट्टवानी—**अ०**—मुट्टवानी।

मुट्टवनी—**पू०**[फा०] एक प्रकार का लट-मीठा पुलाव।

मुतअधयन—**वि०**[अ०] तैनात या नियुक्त किया हुआ। (व्यक्ति)

मुतअधी—**वि०**[अ०] ? सर्वदा का उल्लंघन या सीमा का अतिक्रमण

करनेवाला । २ सुतहा। सकामक । ३. व्याकरण मे सकर्मक (क्रिया) ।

सुतसिंह - वि० [अ०] १. अर्ज करनेवाला । २. याचक ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] संबद्ध । संघवित ।
अर्थ० किसी के विषय या सम्बन्ध में ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] मतसिंहकः । संबद्ध ।

सुतसिंहकनी - पु० [अ०] घर के लोग, बाल-बच्चे और निकटस्थ सबकी ।

सुतसिंहक - पु० [अ०] १. ताकीम पाने अर्थात् इत्य सीखने-वाला । शिक्षार्थी । २ छात्र । ३ पाठक ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] तास्तुक अर्थात् पक्कासाप करनेवाला । पछतानेवाला ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] १ प्रभावित । २ कठिन । दुष्कर ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] कलाम अर्थात् भाषण या बात-चीत करने-वाला ।

सुतसिंहक - पु० [हि० मूँड़+टके] १ छोटा मुँड़ेरा । २. रत्ना । ३. मीनार । लाट ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] सुतसायः । (मुकयमा) जो सायर किया गया हो ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] सुतसाजः । जिसके विषय मे कोई झगडा ही । विवादास्पद ।
पु० -सुतसाज (झगडा) ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] बहुत तरह के फन या चालाकियाँ जाननेवाला ; अर्थात् बहुत बडा सुत । चालाक ।

सुतसिंहक - स्त्री० [अ०] सुतसिंहकालः भिन्न-भिन्न पदावर्ग ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] १ भिन्न-भिन्न । विभिन्न । २. अनेक या कई प्रकार के । विविध ।

सुतसिंहकाल - स्त्री० दे० 'सुतसिंहकालः' ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] सुतसिंहकः (सन्तान) जो भीरव न हो, पर गोबल किया गया हो । दसक ।
पु० दसक पुत्र ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] १. हरकत देनेवाला । २. पवित्र ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] सुतसिंहकः घनवान् । धनी । सम्पन्न ।

सुतसिंहक - पु० [अ०] सुतसिंहकः तरजुना करनेवाला । अनुवादक ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] जिसके मन में बहुत तरह के हैं । चिंतित ।
चिन्तमंद ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] १. समानार्थक । २. पर्यायवाची ।
अर्थ० निरंतर । लगातार ।

सुतसिंहक - पु० [अ०] गायक । गवैया ।

सुतसिंहक - अर्थ० [अ०] कुछ भी । थोडा भी । तनिक भी । (केवल नहिक् पदों मे) जैसे—इतने सुतसिंहक नमक नहीं है ।
वि० निपट । निरा । बिलकुल ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] ईश्वर मे विश्वास तथा उस पर भरोसा रखनेवाला ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] जिसने किसी और तबन्धेह की हो । जिसने ध्यान दिया हो । प्रवृत्त ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] सुत । स्वर्गीय ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] जो किसी नावालिष्ठ और उसकी संपत्ति का बली अर्थात् रक्षक बनाया गया हो ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] औसत करने का । मध्यम ।

सुतसिंहक - अर्थ० [अ०] निरंतर । लगातार । सतत ।

सुतसिंहक - पु० [अ०] १ लिपिक । मुंशी । २. पेशावर । ३. किसी काम के लिए निवृत्त किया हुआ उत्तरदायी कर्मचारी । ४ प्रबन्धकर्ता । व्यवस्थापक । ५. मुनीम ।

सुतसिंहक - स्त्री० [हि० मोती+स० स्त्री] गले में पहनने की मोतियों की कडी ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] सुतसिंहकः जिसका तसम्बर या कल्पना की गई हो । कपाल मे लाया या कल्पित किया हुआ ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] तहम्मुल अर्थात् बरदायत करनेवाला । सहनशील । सहिष्णु ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] १. हरकत करनेवाला । गतिशील । २. स्वरमुक्त (बर्ण) ।

सुतसिंहक - स्त्री० [हि० मूतना] १. मूतने की क्रिया या भाव । जैसे—बरफ-मूतना । २. पशुओं की मूत्रोत्थि ।

सुतसिंहक - स्त्री० [अ०] १. मूताधिक होने की अवस्था या भाव । २ अनुकृता । साधुष्य ।

सुतसिंहक - अर्थ० [अ०] अनुसार । बमूजिब ।
वि० १. अनुकूल । २. अनुकूप । ३. समान ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] सुतसिंहकः जो तलब किया जाने की हो ।
पु० १ प्राय धन । बाकी रुपया । २ तलब कराने की क्रिया या भाव ।

सुतसिंहक - पु० [अ०] सुतसिंहकः १ पड़ना । अभ्ययन । २ याद करने के लिए पढ़ा हुआ पाठ दोहराना ।

सुतसिंहक - स्त्री० [हि० मूतना+आस (प्रत्यय०)] मूतने की इच्छा या प्रवृत्ति । पेशाब करने की इच्छा ।

सुतसिंहक - पु० [अ०] सुतसिंहकः सुतसिंहकानो मे एक प्रकार का अस्थायी विवाह जो 'निकाह' से नीचे दरजे का समझा जाता है ।

सुतसिंहक - पु० =सुतसिंहक (मोती) । उदा०—मासा अग्नि सुतसिंहक निहम्तः—विधिराज ।

सुतसिंहक - वि० [हि० सुतसिंहक+ई (प्रत्यय०)] जिसके साथ सुतसिंहक किया गया हो या हुआ हो ।
स्त्री० रखेकी स्त्री । उपपत्नी । रखेकी ।

सुतसिंहक - पु० [हि० मोती+लड्डू] मोतीपूर का लड्डू ।

सुतसिंहक - पु० [हि० मोती+हार] कलाई पर पहनने का एक तरह का आभूषण ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] सुतसिंहकः जिसने किसी विषय मे हतकाक या मतकय हो । एकमत । सह-मत ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] जिसे इतिहास भी गई हो । सूचित या अगाह किया हुआ ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] जो किसी के पास या साथ लगा या सटा हुआ हो । संलग्न ।

सुतसिंहक - वि० [अ०] निरंतर । लगातार ।

मुसहिब—वि० [अ० मुसहब] १. क्षिप्रहाव रखनेवाला। २. किसी के साथ मिला, लगा या सटा हुआ। ३. मेल-मिलाप करानेवाला।
मुसी—स्त्री० [स० मूष] मूष। वेसाव। (बालक)
 पुं०=मीती।
मुष—पुं० [सं०] मीठ। प्रसन्नता।
मुषगर—पुं० दे० 'मुषगर'।
मुसिब—वि० [अ०] १. बुद्धिमान्। २. प्रबन्ध-कुशल। ३. राज-नीतिज्ञ।
मुसिब—वि० [अ०] अमिमान्।
मुसरा—पुं० [देश०] अफीम, मींग, शराब और चूरे के योग से बनाया जानेवाला एक तरह का मादक पेय।
मुसरिस—पुं० [अ०] [भाष० मुदरिसी] लड़कों की पढानेवाला व्यक्ति। अध्यापक।
मुसरिसी—स्त्री० [अ०] १. मुसरिस का काम, पद या भाव। अध्यापन।
मुसबत—वि० [स० मोद+हिं० बंत (प्रय०)] हर्षवृत्त। मुदित।
मुसा—पुं० [सं०/मुद् (प्रसन्न होना)+क+टाप्] मोद। आनन्द।
 पुं० [अ० मसूआ] १. अभिप्राय। तात्पर्य। २. अर्थ।
मुसाकलत—स्त्री० [अ०] १. दखल देना। हस्तक्षेप। २. रोक-टोक।
 पत्र—**मुसाकलत बेजा**—दूरदूरी के घर या जमीन में उसकी इजाजत के बिना चला जाना। अनाधिकार प्रवेश।
मुसाम—वि० [का०] नित्य। साधवत।
 अक्य० निरतर। लगातार।
 पुं० शराब।
मुसामी—वि० [का०] सदा बना रहनेवाला। सार्वकालिक।
 स्त्री० [का०] नित्यता।
 वि०=मुदाम।
मुसत—पुं० श० [सं०/मुद्+क्त] मोद से मुसत। हर्षित। प्रसन्न।
 पुं० आलमन का एक अक्षर।
मुसिता—स्त्री० [सं० मुदित+टाप्] १. मोद। हर्ष। २. साहित्य में परकीया सांगिकावों में से एक जो अनौचित्य प्रकार की स्थिति तथा प्रिय की प्राप्ति से अत्यधिक प्रसन्न हो। ३. योगशास्त्र में समाधि के योग्य संस्कार उत्पन्न करनेवाला एक परिकर्म जिससे पुण्यात्मजों की देवकर. हर्ष उत्पन्न होता है।
मुसिर—पुं० [सं०/मुद्+किरच्] १. बादल। मेघ। २. कामुक व्यक्ति। ३. मेघक।
मुसौबर—वि० [अ०] मोल। महलकार।
मुसूग—पुं० [सं०/मुद्+गृग] मूँग नामक अन्न।
मुसूग-बला—स्त्री० [सं० ब० सं०+टाप्] बममूँग।
मुसूग-पर्णी—स्त्री० [सं० ब० सं०+टीप्] बममूँग।
मुसूग-भोजी (जिम्) —पुं० [सं० मुसूग/भूज (खाना)+धिनि, उप० सं०] पीछा।
मुसूग-भोजक—पुं० [सं० व० तं०] मूँग का लहड़।
मुसूगर—पुं० [सं० मुद्/गु (सीलना)+अच्] १. पुरानी चाल का एक तरह का ढब जिसके सिरे पर गोल लहर का भारी टुकड़ा लगा होता

था। २. कसतर करने का मुसूबर नामक उपकरण। ३. एक प्रकार की मछली। ४. मोगरा नामक पीपल और उसका फूल।
मुसूगराक—पुं० [सं० मुद्गर+अक, व० तं०] प्राचीन भारत में मुसूगर का वह चिह्न जो घोड़ियों के यहाँ बन्धी पर पहचान के लिए लगाया जाता था।
मुसूगल—पुं० [सं० मुद्ग/ल (लेना)+क] १. एक उपनिषद् का नाम। २. एक गौत्रकार मुनि। ३. रोहित नामक वृष। रसा पास।
मुसूधा—पुं० [अ० मुसूधा] १. उद्देय। तात्पर्य। २. अर्थ। मतलब।
मुसूध्या—स्त्री० [अ० मुसूध्या, मुसूध का स्त्री० रूप] दावा करनेवाली स्त्री।
मुसूई—पुं० [अ०] [स्त्री० मुसूद्या] १. वह जो किसी चीज पर अपना दावा या अधिकार प्रकट करता हो। दावेदार। २. वह जिसने अदालत में किसी पर दावा किया हो। ३. बुझन। धाम्।
मुसूत—स्त्री० [अ०] १. किसी काम या बात के लिए नियत किया हुआ समय। अवधि। जैसे—इस ठुकी की मुसूत पूरी हो गई है।
मुसूठा—मुसूठ काटना—चोक माल का मूय अवधि से पहले देने पर अवधि के बाकी दिनों तक का मूद काटना। (कोठीवाल)
 २. बहुत दिनों का समय। दीर्घ काल। जैसे—यह एक मुसूत की बात है। ३. दे। किलब।
मुसूठी—वि० [अ० मुसूत+हिं० ई (प्रय०)] १. जिसमें कोई अवधि हो। जैसे—मुसूठी ठुकी। २. बहुत दिनों का। पुराना।
मुसूआ—पुं० [अ० मुसूआ] अभिप्राय। आशय।
 अक्य० अभिप्राय या आशय यह कि। तात्पर्य यह कि।
मुसूआलेह—पुं०=मुसूआलेह।
मुसूआलेह—पुं० [अ० मुसूआ अलेह] वह व्यक्ति जिस पर दावा हुआ या किया गया हो। प्रतिवादी।
मुसूआ—वि०=मुष्य।
मुसूडी—स्त्री० [देश०] रस्मी आदि की एक प्रकार की गाँठ जिसके अन्दर से दूसरी रस्सी धर-उधर लिप्तक सकती है।
मुसू—पुं० [सं०/मुद्+रक्] छपाई के काम में आनेवाला सीसे का अक्षर। (टापण)
 वि० [स्त्री० मुसू] मोद देनेवाला। हर्षकारक।
मुसूक—वि० [सं०/मुद्+णिच्+पुल्ल-अक] मुद्रण करनेवाला।
 पुं० १. मुद्रण-कला का शास्त्र। २. छापेखाने का वह अधिकारी जिसकी देख-रेख में छपाई सबकी सब कार्य होते हैं।
मुसूक—पुं० [सं०/मुद्+णिच्+लुट्ट-अन] १. मुद्रा से अंकित करने की क्रिया या भाव। छाप लगाना। २. ठीक तरह से काम चलाने के लिए नियम आदि बनाना और लगाना। ३. आज-कल उभरे, सीसे के अक्षरों आदि से कागज, पुस्तकें, पत्र आदि छापने की क्रिया या भाव।
मुसूकाना—स्त्री० [सं०/मुद्+णिच्+युच्-अन+टाप्] अँगूठी।
मुसूकालय—पुं० [सं० मुद्रण-आलय, व० तं०] १. वह स्थान जहाँ किसी प्रकार का मुद्रण होता है। २. आज-कल पुस्तकें आदि छापने का कारखाना। छापखाना। पेस।

मूत्र-वायु—स्त्री० [सं० ष० तं०] सीसे के योग या मिश्रण से बनी हुई वह वायु जिससे मूत्रधन या छापे के अक्षर बाले जाते हैं। (टाइप-सेटल)

मूत्र-विद्युत्—पुं० [सं०] टाइप करने की प्रणालि। (टाइपराइटर)

मूत्र-सेवाक—पुं० [ष० तं०] टाइप करनेवाला। (टाइपिस्ट)

मूत्रा—स्त्री० [सं०] मूत्रा-बंधक, मध्य० सं०] १. सरकारी कागज जिस पर अर्था-दाया लिखकर अदालत में दाखिल किया जाता है या जिस पर पत्रकी लिखा-पट्टी की जाती है। २. बाक का टिकट। ३. छाप। मोहर।

मूत्रांकन—पुं० [सं०] मूत्रा-अंकन, पुं० तं०] [मू०क०] मूत्रांकित] १. किसी प्रकार की मूद्रा की सहायता से चिह्न आदि अंकित करने का काम। २. छापने का काम या भाव। छपाई।

मूत्रांकित—पुं० क० [सं०] मूद्रा-अंकित, पुं० तं०] १. (पदार्थ) जिस पर मूत्रांकन हुआ है। २. मोहर किया या लगाया हुआ। ३. (व्यक्ति) जिसके शरीर पर चिह्न के आधुनिक के चिह्न गरम कोड़े से दागकर बनाए गए हैं। (वैज्यव)

मूत्रा—स्त्री० [सं०] मूत्र+टाप] १. किसी चीज पर चिह्न, नाम आदि अंकित करने की मोहर। (सील) २. ऐसी अँगूठी जिस पर किसी का नाम या बीर कोई वैयक्तिक चिह्न अंकित हो।

विद्युत्—प्राचीन भारत में प्रायः राजा, व्यापारी आदि ऐसी ही अँगूठी से लेखों आदि की प्रमाणिक सिद्ध करने के लिए उन पर अपनी मोहर करने या छाप लगाने का काम लेते थे।

३. उक्त के आधार पर प्राचीन भारत में किसी मार्ग से आने-जाने का राजकीय अधिकार-पत्र जिस पर उक्त प्रकार की छाप अंकित रहती थी। राहदारी का परवाना। ४. विष्णु के ध्वज, चक्र आदि आयुधों के वे चिह्न जो वैज्यव पत्र तथा साधु अपनी छाती, बंहू आदि अंगों पर अंकित कराते या तपे हुए कोड़े से दगवाते हैं। ५. राज्य द्वारा प्रचलित भिन्न-भिन्न मूल्योवाले वे सभी धातु-स्रब जिण पर राज्य की छाप होती है और जो किसी देश में ऋज-विक्रम के माध्यम या साधन के रूप में प्रचलित होते हैं। सिक्का। (स्वायत्त) जैसे—आजकल काल की अनाहत मूद्रा, आधुनिक काल की बाहल मूद्रा। ६ आजकल ऐसी सभी चीजें जो ऋज-विक्रम के सुचोते या देना-पानना बुकाने के लिए उक्त साधन के रूप में राज्य या राष्ट्र के द्वारा माय्य कर की गई हैं और जो जनता में निःसंकोच भाव से देन-लेन के काम में आती हैं। द्रव्य। धन। (सनी) जैसे—सरकारी नोट, सिक्के आदि। ७. किसी विशिष्ट देश या राष्ट्र में प्रचलित उक्त प्रकार के सभी उपकरण या साधन। बलायें। (करन्टी) जैसे—आरतीय मूद्रा, कसी मूद्रा, बुलम मूद्रा आदि। ८. गौरखपंथी साधुओं का काम में पहनने का काष्ठ, स्क्राटिक आदि का कुडक या बलम। ९. सजे रहने, बैठने आदि के समय शरीर के अंगों की कोई विशिष्ट स्थिति। (पोस्चर) १०. अक्ष, नाक, मूँह, हाथ आदि की कोई ऐसी किया जिससे मन की कोई विशिष्ट प्रवृत्ति या भाव प्रकट होता हो। दंगित। (जेन्चर) जैसे—उनके मध्य की मूद्रा से ही उनका आद्यय प्रकट हो गया था। ११. धार्मिक क्षेत्र में, आराधन, ध्यान, पूजन आदि के समय कुछ विशिष्ट प्रकार के बैठने के अनेक ढंगों में से कोई ऐसा ढंग जो किसी प्रकार की फल-सिद्धि करने में सहायक माना जाता हो।

जैसे—(क) ताँपिकों की वेनु मूद्रा, पत्र मूद्रा। (ख) हठयोग की खेचरी, गीचरी, मूचरी आदि मूद्राएँ। १३. आधुनिक मूद्रण कला में, पत्रों, सामयिक पत्रों आदि की छपाई के लिए सीसे के इले हुए उल्टे अक्षर जो छापने पर सीसे आते हैं। (टाइप) १४. साहित्य में एक प्रकार का शब्दांतर जो शब्द अक्षरों का एक भेद है और जिसमें किसी साधारण शब्द के आचार पर प्रवृत्त या प्रस्तुत अर्थ तो निकलता ही हो, इसके विधा शब्दों के कुछ अक्षर अपने आगे-पीछेवाले सूत्रे अक्षरों के साथ मिलाने पर कुछ और अर्थ भी निकलता हो। जैसे—की कला कराना (शिवर ने क्रांती) में कीकर, पाकर और टार या ताड़ वृक्ष की भा आते हैं। और जामन फल सा भा मिला (यह मन को बाँधित फल के रूप में प्राप्त हुआ) में जामन या आयुन, फल सा या फालसा भा मिला या अर्धक फलों के नाम भी आ जाते हैं। इसी प्रकार 'कल्पवृती पिय हे सखी, पक्कीटी पिय नाहि। बराबरी कैसे करवें, पूटी परती नाहि।' में कपोटी, पक्कीटी, बड़ा, बड़ी और पूटी नामक पदार्थों के नाम भी आ जाते हैं। १५. ताँपिकों की बोल-बाल में मूत्रा हुआ अर्थ या उसके धाने। १६. अगस्त्य ऋषि की पत्नी लोपा हुआ संक्षिप्त नाम।

मूद्रा-कर—पुं० [सं० ष० तं०] १. वह जो किसी प्रकार की मूद्रा तैयार करता हो। २. प्राचीन भारत में राज्य का वह प्रधान अधिकारी जिसके हाथ में राजा की मोहर रहती थी। ३. वह जो किसी प्रकार का मूत्रण करता हो।

मूद्रा-काण्ड—पुं० [सं०] मूद्रा+हिं० काण्ड] एक प्रकार का राय जिसमें सब कोमल स्वर लगते हैं।

मूद्राक्षर—पुं० [सं०] मूद्र-अक्षर, मयु० सं०] १. वह अक्षर जिसका उपयोग किसी प्रकार के मूत्रण के लिए होता हो। २. आजकल सीसे के वे अक्षर जिनमें छापेबाने में पुस्तकें आदि छपती हैं। टाइप।

मूद्रा-दोड़ी—स्त्री० [सं०] मूद्रा+हिं० दोड़ी] एक प्रकार की रागिणी जिसमें मात्र कोमल स्वर लगते हैं।

मूद्रा-तत्त्व—पुं० [सं० ष० तं०] वह शास्त्र जिसके अनुसार किसी देश के पुराने सिक्कों आदि की सहायता से उस देश की ऐतिहासिक बातें जानी जाती हैं।

मूद्रा-वाङ्मय, **मूद्रा-विस्तार**—पुं० दे० 'मूद्रा-स्फीति'।

मूद्रा-बंध—पुं० [सं० ष० तं०] छापने या मूत्रण करने का यंत्र।

मूद्रा-विज्ञान—पुं० दे० 'मूद्रा-तत्त्व'।

मूद्रा-शास्त्र—पुं० दे० 'मूद्रा-तत्त्व'।

मूद्रा-संकोच—पुं० [सं० ष० तं०] दे० 'अवस्फीति'।

मूद्रा-स्फीति—स्त्री० [सं० ष० तं०] आधुनिक अर्थशास्त्र में, वह स्थिति जिसमें कागजी मूद्रा या नोट देश की व्यापारिक आवायकताओं से कहीं अधिक प्रचलित कर दिए जाते हैं; और इसी लिए जिसके सञ्चलन के देय में सब चीजें बहुत महंगी बिकने लगती हैं। (इन्फ्लेशन)

मुक्ति—स्त्री०—मुद्रिका।

मुद्रिका—स्त्री० [सं०] मूद्रा+कृ+टाप] १. अँगूठी। २. कुच की वह अँगूठी जो तपय आदि करते समय पहनी जाती है। ३. सिक्का।

मुद्रित—पुं० क० [सं०] मूद्रा+इत्] १. मूद्रण किया हुआ। २. छपा या छापया हुआ। ३. मूद्रा हुआ। बंद। ४. थपया या छिपा हुआ।

परित्यक्त । ५. काम अर्थात् मैथुन या रति की मुद्रा मे स्थित । ६. ब्याह्रा हुआ । विवाहित ।

मुष्वा—अव्य० [सं०/मुष्० (मुष्प होता) +का, पृथो० ह्-प्] व्यर्थ ।

वि० १. अस्तव्य । मिथ्या । २. व्यर्थ ।

पृ० १. अस्तव्यता । २. व्यर्थता ।

मुष्कला—पृ० [अ०] एक प्रकार की बड़ी क्रियामय या सूला हुआ अंगुर ।

मुष्मता—पृ० [सं० मधुपूजन या देश०] सहजान ।

मुष्कलता—वि० [अ० मुष्कलित] १. (विवाद वा विषय) जिसका फैसला अर्थात् निर्णय हो चुका हो । निर्णीत । २. अलग । पृथक् ।

मुष्मना—पृ० [देश०] १. वैदे का बना हुआ एक प्रकार का पकवान जो रस्ती की तरह बटकर छाया जाता है । २. रेहूँ के खेत मे वैदा होनेवाली मोषा नाम की घास जिसमें काले दाने या बीज भी होते हैं ।

वि० बहुत बीदा । अल्प ।

मुष्मरां—पृ० [सं० मुद्रा] एक तरह का लोहे का बना हुआ काम का धामपुष्प ।

मुष्मरीं—स्त्री०—मुंदरी ।

मुष्मर—वि० [अ०] प्रकाशमान । चमकीला । २. प्रखलित ।

मुष्मसिर—वि० [अ० मुष्मसिर] अवलंबित । आश्रित ।

मुष्माखरा—पृ० [अ० मुष्माखर] १. शास्त्रार्थ । २. तर्कशास्त्र ।

मुष्माश—वि० [अ०] आहत । २. सर्वांधित ।

मुष्मादी—स्त्री० [अ०] १. डिंडोरा । दुग्गी ।

क्रि० प्र०—पिटना ।—पीटना ।

२. हुम्मी बजाकर की जानेवाली सार्वजनिक घोषणा ।

क्रि० प्र०—फिरना ।—केरना ।

मुष्माका—पृ० [अ०] कव्य-विक्रम मे आधिक्युष्टि से होनेवाला लाभ । नफ़ा ।

मुष्माकाक्षीर—पृ० [अ०+फा०] वह रोजगारी जो बहुत अधिक मुष्माका लेकर माल बेचता हो ।

मुष्माकाक्षीरी—स्त्री० [अ०+फा०] मुष्माकाक्षीर होने की प्रवृत्ति या स्थिति ।

मुष्मार—पृ०—मीनार ।

मुष्मार—पृ०—मीनार ।

मुष्मार—पृ० [देश०] एक प्रकार का बहुत सुदूर पहाड़ी पक्षी जिसकी हरी गरदन पर सुदूर कड़ा सा होता है और जिसके सिर पर कलंगी होती है ।

मुष्मासिख—वि० [अ०] उचित । बाजिब ।

मुष्मासिख—स्त्री० [अ०] १. मुनासिब होने की अवस्था या भाव । उपयुक्तता । औचित्य । २. पारस्परिक संबंध ।

मुष्मि—पृ० [सं०/मन् (जानना) +इन्] १. वह जो मनन करे । मननशील महारथा । २. प्राचीन भारत मे बहुत मननशील तपस्वी या त्यागी महापुरुष । जैसे—अगिरा, पुलस्त्य, मृगु, कर्हम, पचसिख आदि । ३. विशिष्ट सात मुष्मियों के व्यापार पर सात की संख्या का बाधक पद । ४. जैनी के जिन देव । ५. पिताल या पयार का वृक्ष ।

६. पलाश । ७. दमनक । बीना । ८. पुराणानुसार श्रीच ढीप का एक देव ।

स्त्री० दश की एक कन्या जो कश्यप की सव से बड़ी स्त्री थी ।

मुष्मि-कुमार—पृ० [अ० त०] १. मुष्मि का बालक या लड़का । २. अल्प-वयस्क मुष्मि ।

मुष्मिच्छर—पृ० [सं० ब० सं०] मेघी ।

मुष्मि-सच—पृ० [सं० मध्य० म०] पतंग । बकवृक्ष ।

मुष्मि-बाय—पृ० [अ० त०] पाणिनि, पतंजलि और कात्यायन ये तीनों मुष्मि ।

मुष्मि-दुष्म—पृ० [मध्य० सं०] १. श्वानाक (वृक्ष) । २. पतंग या बक नामक वृक्ष ।

मुष्मि-बाध्य—पृ० [अ० त०] तिथ्री का चावल । तिन्नी ।

मुष्मि-वाधर—पृ० [मध्य० सं०] दे० 'मुष्मि-दुष्म' ।

मुष्मि-पित्तल—पृ० [अ० त०] तंबा ।

मुष्मि-मुष्म—पृ० [अ० त०] दीना । दमनक ।

मुष्मि-मुष्मक—पृ० [सं० मुष्मि-मुष्म +कन्] खजान पक्षी ।

मुष्मि-मिय—पृ० [अ० त०] १. एक प्रकार का धातु जिसे पतिराज भी कहते हैं । २. पिंड-खजूर । ३. बिरोजे का पेड़ । पियार ।

मुष्मि-मत्त—पृ० [अ० त०] तिथ्री का चावल । तिन्नी ।

मुष्मि-भोषक—पृ० [अ० त०] १. अगस्त का फूल । २. हड्ड । हर्द । ३. उजवास । लज्जन ।

मुष्मि-भोषक—पृ० [अ० त०] तिथ्री का चावल । तिन्नी ।

मुष्मिमा—पृ० [देश०] अगहन मे तैयार होनेवाला एक तरह का धान । स्त्री० लाल नामक पक्षी की मादा ।

मुष्मि-बर—पृ० [अ० त०] १. श्लेष्म मुष्मि । २. पृढरीक वृक्ष । पृढ-रिया । ३. दमनक । बीना ।

मुष्मि-बस्त्रम—पृ० [अ० त०] विजयमार । पियासाल ।

मुष्मि-वृक्ष—पृ० [मध्य० सं०] १. श्वीनक । २. पतंग । बकवृक्ष ।

मुष्मि-धत—पृ० [अ० त०] तपस्या ।

मुष्मि-शास्त्र—पृ० [अ० त०] सकेद कुशा ।

मुष्मि-सुत—पृ० [अ० त०] दीना (पौधा) ।

मुष्मींश—पृ० [मुष्मि-इन्, अ० त०] १. बहुत बड़ा मुष्मि । मुष्मियो मे श्लेष्म । २. गीतम वृद्ध । ३. शिवा । ४. एक दानव ।

मुष्मी—पृ०—मुष्मि ।

मुष्मीब—पृ० [अ०] मुष्मीम । (दे०)

मुष्मीम—पृ० [अ० मुष्मीब] [भाव० मुष्मीमी] १. प्रतिनिधि । २. अभिकर्ता । ३. आज्ञा-कल, वह व्यक्ति जो किसी आज्ञा, कोठी, दुकान आदि के बड़ी-भाते लिखता हो । ४. सजांची ।

मुष्मीमी—स्त्री० [हिं० मुष्मीम] मुष्मीम का काम, पद या भाव । वि० मुष्मीम-साधनी ।

मुष्मीश—पृ० [अ० मुष्मि-ईन्, अ० त०] १. मुष्मियो मे श्लेष्म । २. विशाद । ३. गीतम वृद्ध का एक नाम ।

मुष्मीखर—पृ० [सं० मुष्मि-ईन्वर, अ० त०] मुष्मीश ।

मुष्मेश—पृ०—मुष्मीश ।

मुष्मियां—स्त्री०—मुष्मिया (मादा लाल) ।

मुष्मा—पृ० [सं० मावव] [स्त्री० मुष्मी] छोटे बच्चों आदि के लिए प्यार का सम्बोधन । जैसे—देखो मुष्मा, ऐसा काम नहीं करते ।

वि० प्यारा। श्रिय।

पु० [दिस०] तारफ़ी के कारखाने के वे दोनों बूटे जिनमें जंदा लगा रहता है।

मुद्र—पु०=मुद्रा (प्रेम-पूर्य सम्बोधन)।

मुद्रक—पु० [सं० मुद्रि-अथ, ष० तं०] तिथी का भाषक।

मुद्रक—वि० [अ० मुद्रक] १. एक। २. अकेला।

मुद्रकसं—पु० [अ०] फारसी भाषा द्वारा अपनाया हुआ किसी अन्य भाषा का तत्सम या तद्भव शब्द।

वि० फारसवालों का फारसी के रूप में लाया हुआ।

मुद्रकह—वि० [अ० मुद्रकह] फरहट देनेवाला। उल्लसित करनेवाला।

मुद्रकलस—वि० [अ० मुद्रकलस] [भाव० मुद्रकली] निर्धन। धनहीन। गरीब।

मुद्रकलसी—स्त्री० [अ० मुद्रकली] मुद्रकलस होने की अवस्था या भाव। गरीबी। निर्धनता।

मुद्रकलस—वि० [अ० मुद्रकलस] १. फसादी। २. उपद्रवी।

मुद्रकलसर—पु० [अ०] टीकाकार। भाष्यकार।

मुद्रकलसल—वि० [अ०] १. तफ़्तील अर्थात् व्योरे के रूप में लाया हुआ। २. स्पष्ट।

पु० किसी बड़े नगर के आस-पास के प्रदेश या स्थान। किसी बड़े सहर के आस-पास की छोटी बस्तियाँ।

मुद्रक—वि० [अ०] १. लाभकारी। फायदा देनेवाला। २. उपयोगी।

मुद्रक—वि० [अ०] १. जिसकी प्राप्ति बिना कुछ दिये अथवा बिना मूल्य चुकाये हुए ही। २. जो भी ही आपसे आप अथवा बिना प्रयास के मिला हो।

मुद्रा—मुद्रक में—(क) योही। बिना किसी कारण के। जैसे—मुद्रक मे हमारी भी जान हलाल की गई। (ख) निष्प्रयोजन। व्यर्थ।

मुद्रकखोर—वि० [फा०] [भाव० मुद्रकखोरी] (व्यक्ति) जो दूसरी का धन लेता तथा खाना जानता ही पर स्वयं कमाकर न खाता हो।

मुद्रक मे दूसरी का माल हड़पनेवाला।

मुद्रकखोरी—स्त्री० [फा०] १. मुद्रकखोर होने की अवस्था या भाव।

२. मुद्रक में दूसरी का माल खाते रहने की अवस्था या लत।

मुद्रकरी—वि० [अ०] १. झूठ इलजाम लगानेवाला। २. झूठी बातें बनानेवाला। ३. फसादी।

मुद्रती—पु० [अ०] फतवा देनेवाला नीलमी।

वि० [अ० मुद्रत] जो बिना दाम दिये मिला हो। मुफ्त का।

स्त्री० बर्दा पहनने वाले अधिकारियों, सैनिकों, सिपाहियों आदि के सादे और साधारण रूपके।

मुद्रकलस—वि०=मुद्रकलस।

मुद्रकलसा—वि० [अ० मुद्रकल] १. कष्ट या विपत्ति में पड़ा हुआ।

दुःख, सतप्त आदि से प्रसन्न। २. आनन्द। मूषक।

मुद्रकरी—वि० [अ०] १. बर्दी या मुक्त किया हुआ। २. पवित्र। ३. निर्दोष। ४. अलग। पृथक्। ५. विरक्त।

मुद्रकलस—वि० [अ० मुद्रकल] १. जो खरा ही, खोटा न हो। २. रूप आदि की संख्या का वाचक विशेषण। जैसे—मुद्रकलस ही रूपक भयल पाये।

वि० [अ० मुद्रकल] मेजनेवाला।

मुद्रकलस—वि० [अ०] १. अच्छे-बुरे तथा गुण-अवगुण की परख करनेवाला। पारखी। २. भ्रमश। ३. सटीक।

मुद्रकलस—वि० [अ० मुद्रकल] १. अस्पष्ट। २. हृष्यक (बात)।

मुद्रकलसा—पु० [अ० मुद्रकलस] अदला-बदला। आदान-प्रदान।

मुद्रकलस—वि० [अ०] १. जिसके कारण बरकत हुई हो। २. कल्याण या मंगल करनेवाला। शुभ।

या एक एक पक्ष विपक्ष प्रयोग किसी को शुभ अवसर पर बधाई देने के लिए होता है।

मुद्रकलसा—अव्य० [अ० मुद्रकल+फा० बाय] मुद्रकल हो।

पु०=मुद्रकल।

मुद्रकलसावी—स्त्री० [अ० मुद्रकल+फा० वादी] १. यह कहना कि जो अमुक अच्छा कार्य हुआ है, वह आपके लिए मुद्रकल या शुभ हो। मंगल-कामना प्रकट करने की क्रिया। २. शुभ अवसरों पर गाये जानेवाले गीत।

मुद्रकलसलमत—स्त्री० [अ०] मुद्रकल देना और सलामती अर्थात् सन्तुशल विरजित होने की कामना करना।

मुद्रकलसी—स्त्री०=मुद्रकलसावी।

मुद्रकलसा—पु० [अ० मुद्रकलसा] बहुत बढ़ाकर कही हुई बात। अतिशयोक्ति। अत्युक्ति।

मुद्रकलसल—स्त्री० [अ०] मीथून। समोय।

मुद्रकलस—वि० [अ०] १. सारीअत अर्थात् इस्लामी धर्मशास्त्र के अनुकूल होनेवाला। २. जायज। बहिशत।

मुद्रकलसा—पु० [अ० मुद्रकलस] १. तर्क-वितर्क। बहस। २. बाय-विबाय।

मुद्रकलसा—पु० [अ०] १. आरम्भ। २. व्याकरण के वाक्य-विन्यास में 'उद्देश्य' नामक तत्त्व।

वि० आरम्भ हुआ।

मुद्रकली—वि० [अ०] १. आरम्भिक। २. नौसिखिया।

मुद्रकलस—वि० [अ०]=मुद्रकलस।

मुद्रकलस—वि० [अ०] जो कार्य-सम्प में परिणत हो सकता हो। सभव।

मुद्रकलसिन—वि० [अ० मुद्रकलसिन] इन्तहान या परीक्षा लेनेवाला। परीक्षक।

मुद्रकलस—वि० [अ० मुद्रकलस] १. बहुतों में से चुनकर अलग किया हुआ। २. विशिष्ट। ३. प्रतिष्ठित।

मुद्रकलसिन—स्त्री० [अ० मुद्रकलसिन] मना करने या होने की अवस्था या भाव। मनाही।

मुद्रकली—स्त्री० [हि० मामा का उर्ध्व स्त्री०] मामा की स्त्री। मामी। जैसे—मुंह पर मुद्रकली, पीठ पीछे मैदानी। (कहा०)

मुद्रकली—स्त्री० [सं०/मुद्र (छोड़ना)+सन्+अ+टाप्] मोक्ष की कामना।

मुद्रकली—वि० [सं०/मुद्र (छोड़ना)+सन्+अ+ट] [भाव० मुद्रकलता] जिसे मोक्ष की कामना हो।

मुद्रकली—स्त्री० [सं० मुद्रकली+तल्+टाप्] मुद्रकल का बर्न या भाव। मुद्रकली होने की अवस्था या भाव।

मुद्रा—**१०** [सं०/मृच् (छोड़ना)+आनच्] १. वह जो मुक्त हो गया हो। २. बायल। मेघ।
मुद्रा—**स्त्री०** [सं०/मृच् (मरना)+सन्, द्वित्, +ञ, +टाप्] मरने की इच्छा। मृत्यु की कामना।
मुद्रा—**वि०** [सं०/मृ+सन्, द्वित्, +ञ] जिसकी मृत्यु बहुत पास या गई हो। जा अभी मर जाने की हो।
मुद्रा—**वि०** = भयस्तर।
मुद्रा—**१०** [प० मुद्रा] भूते हुए गेहूँ से मूड मिलाकर बनाया हुआ लड्डू।
मुद्रा—**मुद्रा** करना या बनाना = (क) भूना। (ख) गठरीना बना देना। (ग) बहुत मारना-पीटना।
वि० १ बहुत मूडा हुआ। २ बहुत दुबला-पतला।
मुद्रा—**१०** = मूराटा।
मुद्रा—**१०** [सं०/मृच् (लपेटना)+क] १. बेठन। बैठन। २ एक दैत्य जिसका बध श्रीकृष्ण ने किया था।
१ अर्थ = [हिं० मुद्रा=लोटना] दीवार। फिर।
१ १० = मुद्र।
मुद्रा—**स्त्री०** = मूली।
मुद्रा—**स्त्री०** = मूडक।
मुद्रा—**अ०**, **सं०** = मुद्रकना।
मुद्रा—**१०** [देश०] १. बड़े झील-झीलवाला वह हाथी जिसके बड़े-बड़े तथा सुन्दर दाँत हो। २ गेरियो की बिरादरी का मोज।
मुद्रा—**सं०** = मुद्रकान।
मुद्रा—**स्त्री०** [हिं० मुद्रकान=भूमना] १ कान में पहनने की छोटी बाकी। २ संगीत में, एक विशेष प्रकार से एक स्वर से बृत्तकर दूसरे स्वर पर आने की क्रिया।
मुद्रा—**स्त्री०** [देश०] एक तरह की लता।
मुद्रा—**स्त्री०** = मूबंता।
मुद्रा—**१०** [फा० मूर्ग] [स्त्री० मुद्रा] १ एक प्रसिद्ध मर पक्षी जिसके भिद्र पर कर्मी होती है और जो प्रायः प्रमात के समय कुकुर-हूँ बोलता है। २ चिड़िया। पक्षी।
१ १० = मूर्वा।
मुद्रा—**स्त्री०** [फा० मुद्रा] मुरगे की जाति का एक पक्षी जो जल में तैरना और मछलियाँ पकड़ कर खाता है। जल-कुक्कुट। जल-मुरगा।
मुद्रा—**स्त्री०** [हिं० मुद्रा का स्त्री०] मादा मूर्ग। मुरगे की मादा।
पद—**मुद्रा** का = एक प्रकार की गाली। जिसका अर्थ होता है—
मुद्रा की सन्तान। जैसे—आप खाता है गीत मुद्रा की, मुद्रा की देता हे वाल अरहर की।
मुद्रा—**१०** [हिं० मूडपण] मूह से फूँकर बजाया जानेवाला एक तरह का पुरानी बाल का छोड़े का बाजा। मूडपण।
मुद्रा—**मुद्रा** झाड़ना = निविचत मात्र से बैठकर व्यर्थ इधर-उधर की बातें करना।
मुद्रा—**१०** = मूराटा।
मुद्रा—**१०** [म०] पश्चिम दिशा का एक प्राचीन देश।

मुद्रा—**अ०** [सं० मूच्छन्] १ मूच्छित अर्थात् अचेत या बेसुध होता। २ शिथिल होता।
मुद्रा—**१०** = मूराटा।
मुद्रा—**स्त्री०** = मूच्छा।
मुद्रा—**अ०** [सं० मूच्छन्] मूच्छित या अचेत होना। बेहोश होना। सं० मूच्छित या अचेत करना।
मुद्रा—**वि०** = मूच्छित।
मुद्रा—**वि०** = मूच्छित।
मुद्रा—**१०** [सं० मूर/ज्वत् (उत्पत्ति)+ङ] मुद्रा। पखावज।
मुद्रा—**१०** [ब०म०] कटहल।
मुद्रा—**१०** [सं० मूर/जि (जीतना)+विषप्, युक्] मुरारि।
मुद्रा—**अ०** [म० मूच्छन्] १ हरे डठलो, पत्तो, फूली, बुधो आदि का जल न मिलने अथवा जोग किसी कारण से सूखने लगना। कुम्हलाना। २ (बेहरा या मन) उदाम या सुत होना। काँति, श्री आदि से रहित या हीन होना। ३ शिथिल तथा शक्तिहीन होना।
सवी० कि० = जाना।
मुद्रा—**१०** [हिं०] गर्ब। अभिमान। अहंकार।
मुद्रा—**१०** = मूराटा।
मुद्रा—**१०** [देश०] एक प्रकार का ऊँचा पेड़ जिसके हीर की लकड़ी बहुत सख्त होती है।
मुद्रा—**अ०** [अ० मूर्त्तिका] अपराध या दोष करनेवाला। अपराधी। दोषी।
मुद्रा—**१०** [अ० मुर्त्ति] जिसके पास कोई वस्तु नेहू न गिरो रखी गई हो। रेहनदार।
मुद्रा—**१०** [देश०] एक तरह का झाड़।
मुद्रा—**१०** [अ०] (मुद्रकान) जो इस्लामी धर्म छोड़कर काफिर हो गया हो।
मुद्रा—**वि०** [अ०] १ तरतीब अर्थात् क्रम से लगाया हुआ। क्रम-बद्ध। २ तैयार किया या बनाया हुआ। प्रस्तुत किया हुआ। सपा-दित। ३ तम किया हुआ।
मुद्रा—**स्त्री०** [फा० मूर्दनी] १ किसी के मुख पर दिखाई देनेवाले वे चिह्न या चिह्न जो मृत्यु के सूचक माने जाते हैं।
मुद्रा—**वेहेरे** पर **मुद्रा** की छाना या **किरना**—(क) मुख पर मृत्यु के चिह्न प्रकट होना। (ख) वेहेरे का उदास या श्री-हीन हो जाना।
२ शव के माथ उसके अत्येष्टि-क्रिया के लिए जाना। मूद्रा के साथ उसके माथने या जलाने के स्थान तक जाना। ३ मृतक की अत्येष्टि-क्रिया के लिए जानेवाली का समूह।
क्रि० प्र० = जाना।
मुद्रा—**१०** [फा० मूर्दः] मृत प्राणी। शव।
पद—**मुद्रा** का **मात्र** = ऐसा मात जिसका कोई वारिस न हो।
वि० १ मरा हुआ। मूह। २ इतना अधिक दुबले या शक्ति-हीन कि मरे हुए के समान जान पड़े। ३ बहुत ही कुम्हलाया, मुद्राया या सूखा हुआ। जैसे—मुरदा पान, मुरदा फल।
मुद्रा—(किसी का) **मुद्रा** उठना = मर जाना। (गाली)

जैसे—उसका मुरदा उठे। मुरदा उठाना—शव को अस्पष्टि-विद्या के लिए ले जाना। मुरदाँ से शर्त बाँधकर सोना—बहुत अधिक और गहरी नींद में सोना।

मुरदा-भर-पू० [हिं०] बहु स्नान जहाँ मृतक व्यक्तियों के शव तब तक रखे जाते हैं, जब तक उन्हें गाड़ने या जलाने की व्यवस्था न हो। (महुँ-बरी)

मिथेय—ऐसे स्नान प्रायः पूज-सौत्रो में अस्थायी रूप से निम्नत किये जाते हैं।

मुरदा-बिल—वि० [हिं० +फा०] [भाव० मुरदाबिली] जिसमें कुछ भी उत्साह या उमंग न रहे गई हो। बहुत ही निश्च तथा हलोत्साह।

मुरदा-वि० [फा० मुर्दा] [भाव० मुरदारी] १. जो अपनी मौत से मरा हो। २. मृत। ३. अपवित्र। ४. दुर्बल।

पू० वह पशु जो अपनी मौत से मरा हो। (ऐसे पशु का मांस खाना धार्मिक दृष्टि से वर्जित है।)

मुरदारी—स्त्री० [फा०] मुरदार होने की अवस्था या भाव।

मुरदाबली—वि० [हिं० मुर्दा] १. मृतक के सर्वत्र का। मुरदे का। २. बहुत ही कुण्ड या निम्न कोटि का। रही।

स्त्री०—मुरदनी।

मुरदासंज्ञ—पू० [फा० मुर्दः सय] फूँके हुए सीते और सिद्धर का मिश्रण जो औषध के रूप में व्यवहृत होता है।

मुरदासना—पू०—मुरदासंज्ञ।

मुरदासिन्धी—स्त्री०—मुरदासंज्ञ।

मुरदा-पू० [सं० मरुधरा] मारवाड़ देश का प्राचीन नाम।

मुरदाना—पू०—मुरदाना।

मुरदासा—पू० [सं० मुर-वयस्] युवाकाल। जवानी।

मुरदासा—पू० [अ०] कच्चे फल (जैसे—आंवले, आम, बेल, मेथ आदि) को पीनी की चासनी में पकाने पर तैयार होनेवाला पाक।

फि० प्र०—डालना।—रङ्गना।—बनना।—बनाना।

पू० [अ० मुरदासा] १. समकोणीय समचतुर्भुज। वर्गाकार। २. किसी अक को उसी अक से गुणन करने पर प्राप्त होनेवाला फल।

फि० १. बीकोर। २. चारों अथवा सब ओर से एक ही नाप का। जैसे—दस मुरदासा फुट।

मुरदासी—पू० [अ०] १. पालन और रक्षण करनेवाला। पालक और रक्षक। अभिभावक। २. मददगार। सहायक। ३. मित्र और स्नेही।

मुरदासर्ब—पू० [सं० मुर/मृदु (मर्दन करना)+स्यु—अन] मुर को मारनेवाले विष्णु या श्रीकृष्ण।

मुरदारी—पू० [अनु०] १. एक प्रकार का मूना हुआ चावल जो अन्धर से पीला होता है। फरबी। लार्ड। २. मकई के भुने हुए दाने।

वि० मुरदुर शब्द करनेवाला।

मुरदुराना—अ० [मुरदुर से अनु०] १. ऐंठन झाकर दूट जाना। चुरदुर-मुर ही जाना। २. मुरदुर शब्द करते हुए दूटना।

सं० १. चुरदुर करना। २. मुरदुर शब्द करते हुए टोड़ना।

मुरदुरि—पू० [सं० व० सं०] मुरदुरि।

मुरदुरिणी—स्त्री०—मुरदुरि।

मुरल—पू० [सं० मुर/ला (लेना)+क] १. धमके का एक पुरानी बाल का बाजा। २. एक प्रकार की मछली।

मुरला—स्त्री० [सं० मुरल+टापु] १. मरवाया नदी। २. केरल देश की काली नाम की नदी।

मुरलिका—स्त्री० [सं० मुरली+कन्+टापु, ह्रस्व] मुरली। वधो। मुरलिया—स्त्री०—मुरली (वधो)।

मुरली—स्त्री० [सं० मुरल+डीप] मूँह से फूँकर बजाया जानेवाला बस आदि की पीर का बना हुआ बाजा। बाँसुरी।

पू० आसाम में होनेवाला एक प्रकार का चावल।

मुरली-भर-पू० [सं० व० सं०] श्रीकृष्ण जो बाल्यावस्था में प्रायः मुरली बजाते थे।

मुरली-मनोहर—पू० [सं० सुन्द्या स०] श्रीकृष्ण।

मुरलीबाला—पू० [सं० मुरली+हिं० बाला (प्रत्य०)] श्रीकृष्ण।

मुरवाँ—पू० [देश०] १. एही के ऊपर की हड्डी जो कुछ उमरी हुई होती है। २. उक्त हड्डी के चारों ओर का स्थान जो कुछ उभरा हुआ तथा गोलकार होता है।

* पू०—मोर।

मुरवाँ—स्त्री० [सं० मौर्य] १. मुरवाँ यास की बनी हुई मेकला जिसे धनी धारण करते थे। २. वजुष की डोरी। चित्ला।

मुर-बीरी (रिपु)—पू०—मुरारि।

मुरबलत—स्त्री०—मुरीबत।

मुरबाब—पू० [अ० मुरिब] १. गुह। पथप्रबंधक। पीर। २. पूतें आवनी। (व्यय)

मुरसिल—पू० [अ० मुरसिल] भोजनेवाला। प्रेषक।

मुर-सुत—पू० [सं० व० सं०] मुर राक्षस का पुत्र, वत्सापुत्र।

मुरस्ता—वि० [अ० मुरस्तास] रत्न-जटित। जडाऊ।

मुरस्ताकार—पू० [अ० मुरस्तास+फा० कार] [भाव० मुरस्ताकारी] रत्न-जटित आभूषण बनानेवाला। जडिया।

वि० रत्नों से जडा हुआ। जडाऊ।

मुरस्ताकार—स्त्री० [अ० मुरस्तास+फा० कारी] १. गहनों में नग आदि जड़ने का काम। २. उक्त प्रकार के काम का पारिश्रमिक।

मुरदा—स्त्री० [?] १. एक प्रकार की सुली (बीबा) जिसकी पतिव्रता अच्छी समझी जाती है। २. सुली की पति हुई पतिव्रता।

मुरदा—पू० [सं० मुर/हृत् (मारना)+विषय] वह जिसने मुर का वध किया हो। मुरारि।

वि० [सं० मूल+हिं० हा (प्रत्य०)] १. जिसका जन्म मूल नक्षत्र में हुआ हो।

मिथेय—प्योतिष के अनुसार ऐसा बालक माता-पिता के लिए बातक होता है।

२. अनाथ। ३. उपद्रवी। नष्टक।

पू० [हिं० मुराना] वह जो चलने हुए कोन्हू में गड़ेरियाँ डालता है।

मुरदारी (रिपु)—पू० [सं० मुर/हृ (हरण करना)+विदि] मुरदा। मुरारि।

मुरा—स्त्री० [सं० मुर/क+टापु] १. एक वध प्रथम। मुरामांसी।

२. यह माहन जिसके गर्भ से महानद के पुत्र चन्द्रगुप्त का जन्म हुआ था।
(कथासहित सागर)

मुराका—पु० [दिघ०] ऐसी लकड़ी जिसका एक सिरा जल रहा हो।
मुआडा।

मुराब—स्त्री० [अ०] १ बहुत दिनों से मन में बनी रहनेवाली अभिलाषा।

पब—मुराब के विन—पौवन काल, जिसमें मन में अनेक प्रकार की इच्छाएँ, उमंगें और कामनाएँ रहती हैं।

क्रि० प्र०—पूरी होना।—बर आना।

मुहा०—मुराब पाना—(क) मन की चाहों हुई चीज पाना। (ख) मन की चाहों हुई बात पूरी होना। (ईश्वर या बेबता से) मुराब मँगना—मन की अभिलाषा पूरी होने की प्रार्थना करना। मुराब मिलना—मन की अभिलाषा पूरी होना।

२ मन्नत। मनीती।

मुहा०—मुराब मानना—मनीती या मन्नत मानना।
३ अभिप्राय। आशय। मतलब।

मुराबी—वि० [अ०] मन में मुराब रखनेवाला। अभिलाषी।

मुरताना*—स० [अवु०] मुररुत=चबाने का शब्द। मुंह में कोई चीज डालकर उसे मुलायम करना। चुमलाना।
†स० १—मुडाना। २—मोडाना।

मुराका—पु० [अ०] मुराफज। छोटी अदाकत में मुकदमा हार जाने पर बड़ी अदाकत में पुनर्विचार के लिए दिया जानेवाला प्रार्थना-पत्र।

मुरार—पु० [स०] मृगाल। कमल की जड़। कमलनाल।
†पु०—मुरारी।

मुरारि—पु० [सं०] मुर-अरि, प० तं०] १ मुर राक्षस के धनु (क) विष्णु, (ख) श्रीकृष्ण। २. डगप के नीसर भेद (isa) की सजा। (मिंगल)

मुरारी पु०—मुरारि।

मुरासा—पु० [अ०] मुररसा। कान में पहनने का एक तरह का रत्न—जटित फूल। तरकी।

†पु०—मुंडामा।

मुरी—स्त्री०—मुरि।

मुरीब—पु० [अ०] [भाव० मुरीवी] १ शिष्य। बेला। २ किमी विधेयत, धर्मगुरु के प्रति बहुत अधिक विश्वास और भ्रष्टा रखनेवाला तथा उसका अनुयायी।

मुरीबी—स्त्री० [अ०] मुरीब होने की अवस्था या भाव।

मुरइ—पु० [सं०] एक प्राचीन जाति जो अफगानिस्तान में बसती थी।

मुरबा—पु० [?] १ किसी चीज का ऐसा बड़ा गोल पिंड जो देखने में लड्डू की तरह हो। २ अच्छी तरह तौड़-मरोड़कर दिया जानेवाला गोलकार रूप।

मुरा—पु०—मुर।

मुराभी—पु०—मुरवा।

मुरकुटिया—वि०—मुरकट।

मुरक—वि०—मुरलं।

मुरसाई*—स्त्री०—मुरसा।
मुरछना—अ०—मुरछना (मूर्च्छित होना)।

†स्त्री०—मुरछना।
मुरसावा—अ०—मुरसाना।

मुरेडा—पु० [हिं०] मूँड—तिर+एडा (प्रत्य०)] १ पगड़ी। छाफा।
२. दे० 'मुरेडा'।

मुरेरा—स्त्री० १. —मरोड। २. —मुंडेर।
मुरेरना—अ०—मरोडना।

मुरेरा—पु० १. —मुंडेरा। २. —मरोड।
मुरेरा—पु० [हिं०] मुरेडा] १ नाव की लबाई में चारों ओर घुमी हुई मोट जो गीन चार इंच मोटे तख्ती से बनाई जाती है और 'गुडा' के ऊपर रहती है। २. दे० 'मुरेडा'।

मुरीअत—स्त्री० [अ०] मुरवत] १ ऐसा स्वाभाविक वील जिसके फल-स्वच्छ किमी के साथ कोई कठोर अवधा रूखेन का व्यवहार न किया जा सकता हो। लिहाज।

क्रि० प्र०—तोडना।—बरतना।

२ मलमसत। मज्जन्ता।

मुरीअती—वि० [हिं०] मुरीअत। जिसके स्वभाव में मुरीअत हो।
स्त्री०—मुरीअत।

मुरीअज—वि० [अ०] मुरवज] प्रचलित। लामू।
मुरीअत—स्त्री०—मुरीअत।

मुरे—पु० [सं०] मुर में का० मुरे। मुरा।

मुरेकेश—पु० [फा०] मुरे+केश (बोटी)] १. मरने की प्राति का एक पीथा जिसमें मुरे की बोटी के-मे सहूरे उन्नाबी रंग के बौडे और बड़े फूल लगते हैं। जडाघरी। २. कर्राकुल नामक पत्नी।

मुरेबाना—पु० [फा०] मुरगी के रहने के लिए बनाया हुआ स्थान।

मुरेबाज—पु० [फा०] मुरेबाज [भाव० मुरेबाजी] वह जो मुरे लडाता हो। वह जिसे मुरेगें पालने तथा लडाते में आनन्द आता हो।

मुरेबाजी—स्त्री० [फा०] मुरेबाजी। मुरे लडाते का व्यसन या भाव।

मुरे मुरल्लम—पु० [अ०] स्थान के लिए ममुचा भूना हुआ मुरगें।

मुरेबी—स्त्री०—मुरवाबी।

मुरबी—पु०—मोवावा।

मुरेकिब—वि०—मुरतकिब।

मुरेजा—वि० [अ०] मुरेजा। १. मनीवाहित। २. रीषक।
पु० हजरत अली की एक उपाधि।

मुरेहिब—वि०—मुरतहिब।

मुरेनी—स्त्री०—मुरदनी।

मुरे—वि०, पु०—मुरदा।

मुरे—वि०—मुरदा।

मुरेबली—स्त्री०—मुरदाबली।

मुरेसिगी—पु०—मुरदासग।

मुरे—पु० [सव०] मुर+क, पुषी० सिद्धि] १ कामदेव। २. मुरे के रूप के घोडे। ३. मुरी की आग। तुषामिन।

मुरा—पु० [हिं०] मरोड या मुडना। १. मरोड-फली (ओषधि)।

पेट में होनेवाली ऐंठन या मरोड़। ३. सिखाड़े के आकार की एक प्रकार की आसिखवाची।

स्त्री० कुडकाकार सीपींवाली चीर।

मूर्ति—स्त्री० [हिं० मुडगा या मरोड़ना] १. बाने, सूत आदि के दो सिरों को जोड़ने का एक प्रकार जिसमें उभयों गठ्ठी लगाई जाती बल्कि उन्हे मिलाकर मरोड़ भर दिया जाता है। २. कपड़ों आदि की मरोड़कर उनमें थाला जानेवाला बल। जैसे—थोती कपड़ पर मूर्ती देकर पहनी जाती है।

क्रि० प्र०—देना।

मुहा०—मूर्ती देना—(क) कपड़ा फाड़ते समय उसके फटे हुए अंशों को दोनों ओर बराबर बुनाने या जोड़ते जाना जिसमें कपड़ा बिलकुल सीधा फटे। (बजाज)

३. कपड़े आदि की मरोड़कर बटी हुई बची। जैसे—मूर्ती का नैचा।

४. चिकन या कब्बोरे की एक प्रकार की उभारदार कढ़ाई जिसमें बटे हुए सूत का ब्यबहार होता है।

स्त्री० [?] एक प्रकार की जगली लकड़ी।

मूर्तीघार—वि० [हिं० मूर्ती+घा० घार (प्रत्य०)] जिसमें मूर्ती पड़ी हो। ऐंठनदार।

मुश्बिब—वि०, पुं०—मूरसिब।

मुक्ता—अव्य० [सं० मुक्त] १. मुक्त. बात यह है कि। मतलब यह कि। २. किल्लु। अगर। केकिल। ३. अन्ततः। अन्त मे। आभिरकार।

मुलका—स्त्री० [हिं० मुलकना] मुलकने की किया या भाव। मुलक। १+पुं०—मुलक (देस)।

मुलकना*—अ० [हिं० मुलकित] १. पुलकित होना। उदा०—बंद मुलकयव, जल हँस्यव, जलहर कोंपी पाल।—डोला मारू। २. मुकराना। उदा०—सकृपि, सरकि मिय निकट तें, मुलकि कइक तन तोरि—बिहारी।

मुलकित*—वि० [सं० पुलकित] मन्द मन्द हँसता हुआ। मुकराता हुआ।

मुलकी—स्त्री०—मुलक।

वि०—मुलकी।

मुलकित—वि० [अ० मुलक] १. जिस पर किसी प्रकार का दूजाय लगाया गया हो। २. अपराधी।

मुलकशी—वि० [अ० मुलकशी] (कार्य आदि) जिसके सपादन को टाल दिया गया हो। स्थगित। जैसे—आज मुकयमा मुलतवी ही जायमा।

मुलतानी—वि० [हिं० मुलतान (नगर)] १. मुलतान-संबधी। २. मुलतान प्रदेश में होनेवाला। जैसे—मुलतानी मिट्टी। पुं० मुलतान का निवासी।

स्त्री० १. मुलतान और उसके आस-पास की बोली जो पश्चिमी पंजाबी की एक शाखा है। २. बीपहर के समय गाई जानेवाली एक रागिनी जिसमें गांधार और शैवक कोमल, सुद निषाद और तीक्ष्ण मध्यम लगता है। ३. एक प्रकार की बहुत कोमल और चिकनी मिट्टी जो प्रायः सिर मलने में साबुन की तरह काम में आती है। साधु आदि इसके कपड़ा भी रँगते हैं। मुलतानी मिट्टी।

मुहा०—मुलतानी करवा—छीट छापने के पहले कपड़े को मुलतानी मिट्टी में रँगना।

वि० उक्त प्रकार की मिट्टी के रंग का। केवईई। (कीम)

पुं० उक्त प्रकार की मिट्टी के रंग से मिलता-जुलता एक प्रकार का रंग। केवईई। केवई। (कीम)

मुलतानी-शवाधी—स्त्री० शीब सपुंय जाति की एक सकर रागिनी जो बिन के तीसरे पहर में गाई जाती है।

मुलतानी मिट्टी—स्त्री० दे० 'मुलतानी' के अन्वयत।

मुलना—पुं०—मुल्ला (मुस्लिम धर्माचार्य)।

मुलकशी—पुं० [अ० मुलक्या+शी, फा० श. (प्रत्य०)] किसी चीज पर सोने, चाँदी आदि का मुलक्या करनेवाला। गिळ्ट करनेवाला। मुलक्यासाज।

मुलमुलाना—अ० [अनु०] बाँकी की पलकों का बार बार धपकना या उठते और गिरते रहना जो एक प्रकार का रोग माना गया है। (गिर्लिका)

मुलक्या—वि० [अ० मुलक्या] चमकता हुआ।

पुं० १. सस्ती धातुओं पर रासायनिक प्रक्रियाओं से किया हुआ बहु-मूल्य धातु का ऐसा लेप जिसमें बहु देलने में सुन्दर और बहुमूल्य जान पड़ती हो। जैसे—गिळ्ट पर चाँदी का मुलक्या, चाँदी पर सोने का मुलक्या।

क्रि० प्र०—करना।—बड़ना।—बड़ना।—होना।

२. कलई। ३. किसी साधारण या तुच्छ चीज को आकर्षक रूप देने की किया या भाव। ४. ऊपर या बाहर से बनाया हुआ कोई ऐसा रूप जिसमें अन्दर की वृद्धि या वीथ दब जाय, और देखने पर चीज आकर्षक और बहुमूल्य जान पड़े। ५. ऊपरी तबक-बढक।

मुलक्याकार, मुलक्यागर—पुं० दे० 'मुलक्यासाज'।

मुलक्यासाज—पुं० [अ० मुलक्या+फा० साज] [आय० मुलक्या-साजी] १. मुलक्या करनेवाला कारीगर। मुलकशी। २. वह व्यक्ति जो साधारण-सी बात को चिकनाकर बहुत ही आकर्षक रूप में प्रस्तुत करता हो।

मुलहठी—स्त्री०—मुलेठी।

मुलहा—वि० [सं० मुल+नक्षत्र+हा (प्रत्य०)] १. जिसका जन्म मूल नक्षत्र में हुआ हो। २. दे० 'मुहता'।

मुलहिक—वि० [अ० मुलहिक] किसी के साथ मिला या लगा हुआ। सलम।

मुली—पुं०—मुल्ला।

मुला—अव्य०—मुल।

मुलाकात—स्त्री० [अ० मुलाकात] १. दो व्यक्तियों में होनेवाला सभात्कार। भेंट। २. जान-पहचान की अवस्था। ३. मैनुन। सयोग। रति-कीडा।

मुलाकाती—वि० [अ० मुलाकाती] १. (व्यक्ति) जिससे मुलाकात अर्थात् भेंट प्रायः या निश्च होती रहती हो। २. जान-पहचानी। परिचित।

मुलाकामत—स्त्री० [अ० मुलाकामत] १. मुलाजिम होने अर्थात् किसी की सेवा में रहने या होने का भाव। २. नीरत।

मुद्राविम—वि० [अ० मुद्राविम] १ सेवा में रहनेवाला। २ प्रस्तुत या उपस्थित रहनेवाला।

पुं० नीकर। सेवक।

मुद्राविमत—स्त्री०=मुद्राविमत।

मुद्रावा—वि०=मुद्रावाय।

मुद्रायाम—वि० [अ० मुद्रायाम] १ (पुर्वाय) जिसका तल इतना कोमल और चिकना हो कि दमने से सहज में दब जाय। जो कड़ा और खुर-दरा या रुखा न हो। कोमल। 'कड़ा' और 'सख' का विपर्याय। २ नाजूक। मुकुमार। ३. जिसे किसी प्रकार की कठोरता, कर्कशता या तीव्रता न हो। जैसे—मुद्रायाम स्वभाव।

मुद्रायाम रोजी—पुं० [हिं० मुद्रायाम+रोजी] मेढ, बकरी आदि का फल और लाल रोजी जो मुद्रायाम होता है।

मुद्रायामिमत—स्त्री० [हिं० मुद्रायाम] मुद्रायाम होने का भाव।

मुद्राहवा—पुं० [अ० मुद्राहवा] १ देव-भाल। निरीक्षण। जैसे—जहाँ मुद्राहवा कीजिए, इसमें किमती चमक है। २. ऐसा शील या नकोष जो किसी के सामने कोई अनूचित या अश्रिय बात न होने दे। जैसे—मे तो उन्हीं को मुद्राहवे मे, मुझे छोड़े चलता है।

मुद्राहिजा—पुं०=मुद्राहजा।

मुद्रुक—पुं०=मुद्रुक।

मुद्रुकी—स्त्री० [सं० मधुपट्टि, मूलपट्टी; प्रा० मूलपट्टी] १ उष्ण प्रदेशों की काली मिट्टी में होनेवाली एक लता। २ उक्त लता की अड़ जो बीचक के मत में बलवर्धक होती है तथा तुष्या, ग्लानि और अश्रय नाशक होती है।

मल्लयाम—वि० [अ० मुल्लयाम] १ मुद्रायाम करने या बनानेवाला। २ रेचक।

पुं० १ रेचक औषधि। २ पेट में निकलेवाली वह हवा जिसके फल स्वरूप मल पेट में निकलता है।

मुल्क—पुं० [अ०] १ बड़ा देश। २ देश का छोटा विभाग। प्रदेश। प्रांत। ३ जगत। संसार।

मुल्कगिरी—स्त्री० [अ० मुल्क+गिरी] देशों की जीतना। देश-विजय।

मुल्की—वि० [अ० मुल्क] १. मुल्क या देश-सम्बन्धी। २ मुल्क की सामन्त-व्यवस्था से सम्बन्ध रखनेवाला। राजनीतिक। ३ देशी। ('विदेशी' या 'विलायती' का विपर्याय)

पुं० एक प्रकार का सवत जो सौर आश्रय की पहली तिथि से प्रारम्भ होता है।

मुल्कबी—वि० [अ०] इतिहाज अर्थात् प्राचीन या भिन्नत करनेवाला।

मुल्कबी—वि०=मुल्कबी।

मुल्कह—पुं० [देस०] वह पक्षी जो पैर बाँधकर जाल में इसलिये छोड़ दिया जाता है कि उसे देखकर और पक्षी आकर जाल में फँसे। कुट्ट।

वि० बहुत अधिक मीठा-सादा या मूलै।

मुल्का—पुं० [अ०] १ मुल्लमानी धर्म-पालक का आचार्य या विद्वान्।

२ मन्तव्य में छोटे बच्चों को पढ़ानेवाला मुल्लमानी शिक्षक।

मुल्कामा—पुं० [हिं०] मुल्का के लिए उपेक्षासूचक शब्द।

मुद्रकिल—पुं० [अ०] १. मुद्रकिल धर्मशास्त्र के अनुसार किसी काम

के लिए नियुक्त परित्रा। २ आमिल या बीसा के द्वारा बस में की हुई कोई आत्मा। ३ वह जो किसी को मुद्रकमा आदि लड़ने के लिए अपना वकील नियुक्त करता हो। अपना वकील करने या रखनेवाला।

मुद्रकियत—पुं० [अ०] नमाज पढ़ने के लिए अज्ञान देकर लोगों को बुलानेवाला।

मुद्रना—अ०=मरना।

मुद्ररिखा—पुं० [अ०] इतिहास लेखक। इतिहासज्ञ।

मुद्ररिखा—वि० [अ० मन्त्रिय] १ लिखा हुआ। लिखित। २ अक्षर लिपि का लिखा हुआ।

मुद्रसिख—पुं० [अ०] पैदा करनेवाला। जनक।

मुद्रसिख—पुं० [अ०] सहायक। सकलनकर्ता।

मुद्रसिखा—वि० [अ० मुद्रसिख] मगुहीन। सकलित।

मुद्रस्ता—पुं० [अ०] वह व्यक्ति जिनके नाम वहीयत की गईं हो।

मुद्रस्तर—वि० [अ०] अंतर करनेवाला। प्रभावकारक।

मुद्राना—सं० [हिं० मुद्रना का सं० रूप] हवा करना। मार डालना।

मुद्रावी—वि० [अ०] १ बराबर। २ सह-मुख्य।

अर्थ० लगभग। प्राय (सम्बन्धासूचक विशेषणों के पहले प्रयुक्त)।

मुद्राधिक—वि०=मुद्राधिक।

मुद्राचर—पुं० [अ०] वह कपड़ा, परवर आदि जिस पर फूल-पत्तियाँ, बेल-बूटे छों या बने होते हैं।

मुद्राकिल—वि० [अ०] १ शकन्त अर्थात् कृपा करनेवाला। कृपालु। मेहरबान। २ तरत खाने या बया दिखानेवाला। बयालु।

पुं० दोस्त। मित्र।

मुद्रारब—पुं० [अ०] १ पानी पीने की जगह। २ होज। ३ अरना। ४ झील। ५ मजहब। ६ तीर-तरीका।

मुद्रारिक—पुं० [अ०] खुदा की जात में दूसरे को शरीक करनेवाला, ईश्वर के अतिरिक्त किसी और को भी पूज्य या उपास्य माननेवाला अर्थात् काफिर।

मुद्रारिज—वि० [अ०] जिसे शरक या बड़ाई दी गई हो। प्रतिष्ठित और सम्मानित।

मुद्रारह—वि० [अ०] १ जिसकी पारह या व्याख्या की गई हो। २ विस्तारपूर्वक कहा हुआ।

मुद्राल—पुं० [सं०/मुद्र+कल] मुद्राल।

मुद्राली—पुं० [सं० मुद्राल+इति] मुद्राल धारण करनेवाले; श्री बलदेव।

मुद्राबह—वि० [अ० मुद्राबह] सद्गुण। मानिद।

मुद्राबहत—स्त्री० [अ०] देखने में, एक जैसा हीना। सादृश्य। एक-रूपता।

मुद्रायरा—पुं० [अ० मुद्रायर] उर्दू-कारकी आदि के शायरी का वह सम्मेलन जिसमें वे अपनी गजलें आदि पठकर गुनाते हैं।

मुद्राहरा—पुं० [अ० मराह] १ मासिक वेतन। २. बजीका।

वृत्ति।

मुद्रो—वि० [अ०] परामर्शदाता।

मुद्रुक—पुं० [फा०] १ वस्तुरी। मृगमद। मृगमति। २ गन्ध।

वृ० ३ दे० 'कस्तुरी मृग'।

स्त्री० [देग०] कड़े और कोहनी के बीच का भाग। मुद्रा। बहि।

मुक्क—(फिती की) मुक्क कसला या बाँधना—(अपराधी आदि की) दोनों मुजाबो को पीठ की ओर करने बाँध देना। (इससे आदमी बेबस हो जाता है।)

मुक्क-भासा—पुं० [फा०] एक प्रकार की लता का बीज जो हलायकी के दाने के समान होता है और जिसके अन्दर से कस्तूरी की-सी सुगंध निकलती है।

मुक्क-नाका—पुं० [फा० मुक्के-नाकः] कस्तूरी मूत्र का नाका या लैली जिसके अन्दर कस्तूरी रहती है।

मुक्कनाम—पुं० [फा० मुक्क +सं० नाम] =मुक्कनाफा।

मुक्क-बिलाई—स्त्री० [फा० मुक्क+हिं० [बिलाई=बिल्ली] एक प्रकार का जंगली बिलाल जिसके अंडकोश का परीना बहुत सुगंधित होता है। गर्भबिलाल।

मुक्कबू—वि० [फा०] जिसकी बू कस्तूरी जैसी हो।

मुक्क-मैहरी—स्त्री० [फा० मुक्क+महरी] एक प्रकार का छोटा पीषा जो उपवन में घोषा के लिए लगाया जाता है।

मुक्किल—वि० [अ०] (काम) जो करने में बहुत कठिन हो। मुक्कर। दुस्ताध्य।

स्त्री० १. कठिना। दिक्कत। २. विपत्ति। सकट। ३. नेचीदगी।

मुक्की—वि० [फा० मुक्की] १. मुक्क अर्थात् कस्तूरी के रंग का। काला। धयाम। २. जिसमें कस्तूरी पड़ी या मिनी हो। जैसे—मुक्की तमाकू। ३. मुक्क जैसा सुगंधित।

पुं० ऐसा घोडा जिसके सारे शरीर का रंग काला हो।

मुक्कत—स्त्री० [फा०] १. मुट्ठी। २. मुट्ठी में भरी हुई बस्तु। ३. पूँसा।

मुक्कहल—वि० [अ०] १. इस्तेमाल बिलाने अर्थात् उत्तेजित करने या भडकानेवाला। २. जोरी से जलता हुआ। लपटें फेंकनेवाला।

मुक्कबहा—वि० [अ० मुक्कबह] सविग्रह।

मुक्कम्मिल—वि० [अ०] १. शामिल किया हुआ। सम्मिलित। २. व्यापक।

मुक्कबाक—वि० [अ०] १. जिसके मन में इतिहास हो। प्रबल इच्छा रखनेवाला। बहुत चाहनेवाला। २. आसिक। मेमी।

मुक्करक—वि० [अ०] =मुक्करका।

पुं० ऐसा दाम्ब जिसके कई अर्थ हैं।

मुक्करका—वि० [अ० मुक्करकः] सामे का।

मुक्करी—पुं० [अ०] १. करीबदार। केता। २. बुद्धयति बह।

मुक्कतिर—वि० [अ०] १. जिसका या जिसके सम्बन्ध में इस्तहार दिया गया हो। २. प्रसिद्ध। विख्यात। ३. इतिहास देनेवाला। विज्ञापक।

मुक्कल—पुं० [सं०/पुं०+कलच्] १. मूलस। २. विद्यमानिष के उत्र का नाम।

मुक्की—स्त्री० [सं० मुक्कल+ङीप्] १. दालमूलिका। २. छिपलकी। पुं० बलराम।

मुक्कित—पुं० क० [सं०/पुं०+क्त] १. चुराया हुआ। मूसा हुआ। २. (व्यपित) जिसकी बीज चुराई गई हो। ३. जो ठगा गया हो।

मुक्क—स्त्री० [सं० मुक्क] मूजने का दाम्ब। गुंजार। वि०=मुक्कर।

मुक्क—पुं० [सं०/पुं०+कच्] १. अंडकोश। २. चोर। ३. डेर। राशि। ४. मोखा नामक वंश द्रव्य।

वि० मत्सल।

स्त्री०=मुक्क।

मुक्कक—पुं० [सं० मुक्क+कन्] मोखा नाम का वृक्ष।

मुक्कर—पुं० [सं० मुक्क+र] १. अंडकोश। २. पुत्र की मूर्धिय। लिग।

वि० जिसके अंडकोश बड़े हैं।

मुक्क-सूय—वि० [सं० तू० सं०] जिसके अंडकोश निकाल लिए गए हों। बधिया किया हुआ।

पुं० वह व्यस्तित जो उक्त क्रिया के उपरांत अल्प दुर में काम करने के लिए नियुक्त होता था। बोजा।

मुक्क—पुं० क० [सं०/पुं० (चोरी करना)+क्त] चुराया हुआ।

पुं०=मुक्कित।

मुक्कक—पुं० [सं० मुक्क+कन्] सरलो।

मुक्कामुक्कित—स्त्री० [सं० ब० सं०] वृतिवाजी।

मुक्कित—स्त्री० [सं०/पुं०+क्तिच्] १. मुट्ठी। २. पूँसा। मुक्का। ३. चोरी। ४. अकाल। बुजिब। ५. राज्य। ६. हाथियार की बेंट या मूठ। ७. शूचि नामक जोषधि। ८. मोखा वृक्ष। ९. एक प्राचीन परिभाषा जो किसी के मत से ३ टोले का और किसी के मत से ८ टोले का होता था।

पुं०=मुक्कित।

मुक्किक—पुं० [सं० मुक्कित+कन्] १. राजा कस के पहलवानों में से एक जिसे बलदेव भी ने मारा था। २. पूँसा। मुक्का। ३. मुट्ठी। ४. मुट्ठी के बराबर की नाथ। ५. स्वर्णकार। मुनार। ६. तापिकों के अनुसार एक उपकरण जो बलिदान के योग्य होता है।

मुक्किकोत्तक—पुं० [सं० मुक्किक+उत्तक, ब० त०] मुक्किक नामक मल्ल को मारनेवाले, बलदेव।

मुक्किका—स्त्री० [सं० मुक्किक+टाप्] १. मुक्का। पूँसा। २. मुट्ठी।

मुक्किकेत्त—पुं० [सं० ब० त०] घन्घ का मध्य भाग जो मुट्ठी में पकड़ा जाता है।

मुक्किकुम्ब—पुं० [सं० तू० त०] वृतिवाजी।

मुक्किकोय—पुं० [सं० मध्य० सं०] १. हठयोग की कुछ क्रियाएँ जो शरीर की रखा करने, बल बढ़ाने और दूर करनेवाली मानी जाती हैं। २. किसी बड़े काम या बात का छोटा और सहज उपाय।

मुक्किको—पुं०=मुक्क।

मुक्किकि—स्त्री०=मुक्कनाम।

मुक्किकामा—अ०=मुक्कनामा।

मुक्किका—पुं० [दिश०] पशुओं के मुँह पर बाँधी जानेवाली जानी। घाला।

मुक्किकामा—स्त्री०=मुक्कनाम।

मुक्किकामा—अ०=मुक्कनामा।

मुक्किकामा—स्त्री०=मुक्कनाम।

मुक्किकामा—अ०=मुक्कनामा।

मुसलमानि—स्त्री०—मुस्लान (मुस्कराहट)।
 मुसकरामा—अ०—मुस्कराना।
 मुसकरामा—अ०—मुस्कराना।
 मुसकयान—स्त्री०—मुस्कान (मुस्कराहट)।
 मुसकयाना—अ०—मुस्कान।
 मुसकौरी—स्त्री० [हि० मुस=बूहा+कौरी (प्रत्य०)] खेत में बूही की होनेवाली अधिकता और उसके कारण फसलों की हानि। मुसहरी।
 मुसकर—वि०—मुसकरज।
 मुसदंभा—वि० [?] हड्डी-कट्टा और बढमास या लुच्चा। (उपेक्षा-सूचक)
 मुसदी—स्त्री० [हि० मुस=बूहा+दी (अल्पा० प्रत्य०)] छोटा बूहा। जुहिया।
 * स्त्री०—मुष्टि।
 मुसवी—स्त्री० [देवा०] मिठाई बनाने का साँचा।
 मुसद्वस—वि० [अ०] छ भूजाओंवाला।
 पू० ? उर्दू में छ. चरणों की एक प्रकार की कविता। २ वह काव्य पद्य जिसमें छ चरणोंवाले पद हों। जैसे—मुसद्वसे हाली।
 मुसद्विक—वि० [अ० मुसद्विक] जिसकी तसवीफ की जा सकी हो। जिसका ठीक होना प्रमाथित या सिद्ध ही चुका हो।
 मुसही—पु० [अ०] मुहरिर। लिफिक।
 मुसना—अ० [स० मूषण=चुराना] १. मूसा या कूटा जाना। अग्रहृत होना। उदा०—एक कबीरा ना मुनि जिति कीन्दी बारह बाट।—कबीर। २ छिपना। लुकना।
 मुसना—पु० [अ०] १ किसी असल कागज की दूसरी नकल जो मिष्ठान आदि के लिए धपने पास रखी जाती है। २. रसीद आदि का वह भाग और दूसरा भाग जो रसीद देनेवाले के पास रहता है।
 मुसशिक—पु० [अ० मुसशिक] [स्त्री० मुसशिका] पुस्तक लिखनेवाला लेखक। ग्रन्थकर्ता।
 मुसशकी—वि० [अ०] १. साफ करनेवाला। २. शोधक।
 मुसम्बर—पु० [अ०] कुछ विभिन्न क्रियाओं से सुनाया और जमाया हुआ बीजुदार का मूसा या रस।
 मुसमर—पु० [हि० मुस=बूहा+मारना] खेत के बूहे खानेवाली एक चिन्टिया।
 मुसमरबा—पु० [हि० मुस+मारना] १. मुसमर (चिन्टिया)। २. मुसहर।
 मुसमुँद—वि० [देवा०] ध्वस्त। गूट। बरबाद।
 पु० ध्वंस। नाश। बरबादी।
 मुसमुँद—वि०, पु०—मुसमुँद।
 मुसम्मा—वि० [अ०] [स्त्री० मुसम्मात] नामवाला। नामधारी।
 मुसम्मात—वि०, स्त्री० [अ० मुसम्मा का स्त्री० रूप] नामधारिणी। नामवाली।
 स्त्री० १. कीरत। स्त्री। २. कीरती।
 मुसम्माती—वि० [अ० मुसम्मात] मुसम्मात या स्त्री से सम्बन्ध रखनेवाला। कीरत या कीरती का। जैसे—मुसम्माती मामला।
 मुसम्नी—वि०—मुसम्मा।

स्त्री० [मोजेविक, अफीका का एक प्रदेश] एक प्रकार का बड़िया बीटा नीबू।
 मुसद्व्या—पु० [हि० मुसल] देसा बैल जिसके शरीर का रंग उसकी पूँठ के रंग से भिन्न हो।
 मुसरा—पु०—मुसला (जड़)।
 मुसरिया—स्त्री० [देवा०] काँच की बुियाँ डालने का साँचा।
 †स्त्री० १.—मुसरी २.—मुसकी।
 मुसरी—स्त्री० [हि० मुसा=बूहा] बूहे का बच्चा।
 स्त्री०—मुसली।
 मुसरत—स्त्री० [अ०] प्रसवता। खुशी।
 मुसरह—वि० [अ०] १. तसरीह से मुक्त। अगोरेवार। २. स्पष्ट रूप से कहा हुआ।
 मुसस—पु० [स०/पु०+कलप्]—मुसल।
 मुसलबार—कि० वि०—मुसलवार।
 मुसलमान—पु० [अ० मुसलमान] [स्त्री० मुसलमानी] वह जो मुहम्मद साहब के बलाए हुए सदायत का अनुयायी हो। इस्लाम धर्म की माननेवाला। मुहम्मदी।
 मुसलमानी—वि० [अ० मुसलमानी] मुसलमान-गवरी। मुसलमान का।
 जैसे—मुसलमानी पजहब।
 स्त्री० १. मुसलमान होने की अवस्था, गुण या भाव। उदा०—तीस रोजी में तीन रखे हैं। आग देने मेंरी मुसलमानी।—कोई शायर। २. मुसलमान का कतब या धर्म। ३. मुसलमानों में होनेवाली खतने की रसम या रीति। खतना। मुसत। उदा०—(क) कबाया साहब यह ती सोचें मुन कर लोण कहेगे क्या। हत्यन निजामी गाँधी जी की करने चले मुसलमानी।—मैथिलीराज्य गुप्त। (ख) जाहिदी तीबा ती कर ली और क्या फिर करीमें और मुसलमानी मेरी।—कोई शायर।
 कि० प्र०—कला।
 मुसलाधार—वि०—मुसलाधार।
 मुसलाधुप—पु० [स० मुसल+आधुप, व० सं०] बलराम।
 मुसलियन—पु० [अ०] मुसलमान।
 वि० मुसलमान-सम्बन्धी। मुसलमानी का। जैसे—मुसलियन राय्य।
 मुसली—स्त्री० [म० मुपली] एक पीषा जिसकी जड़ें औषध के काम में आती हैं।
 †पु०—मुशली।
 †स्त्री०—हि० 'मुसल' का स्त्री०।
 मुसल्य—वि० [स० मुसल+यद्] मुसल से मारे जाने के योग्य।
 मुसल्लम—वि० [फा० मुगं मुसल्लम] पूरा। जसठ। जैसे—मुगं मुसल्लम।
 †पु०—मुस्लिम (मुसलमान)।
 मुसल्लसम—वि० [अ०] तिजोना।
 पु० विक्रिय (आकृति या क्षेत्र)।
 मुसल्लह—वि० [अ०] सदायत।
 मुसल्ला—पु० [अ०] [स्त्री० अल्पा० मुसल्लकी] १ वह दरी या चटाई जिस पर बैठकर मुसलमान नमाज पढ़ते हैं। २. बड़े बीने के आकार

का एक प्रकार का बरतन जो बीच में उभरा हुआ होता है। इसमें मुहर्रम में चढ़ाया चढ़ाया जाता है।
 [पु०]—मुसलमान। (उपेक्षाबुधक)
मुसलसक—वि० [अ०] १. एक सिलसिले से लगा हुआ। क्रमबद्ध।
 प्रचलित। २. कैद।
 अर्थ० निरंतर। लगातार।
मुसलमाना—म० [हि० मुसना का मे० रूप] १. किसी को मुसने में प्रवृत्त करना २. किसी को ऐसी स्थिति में लाना कि वह मुसना जाय।
मुसलबिर—पु० [अ०] १. तसवीर खींचने या बनानेवाला। चित्रकार। २. किसी चीज पर बेल-बूटे बनानेवाला कारीगर।
 वि० सचित्र।
मुसहरिक—पु० [हि० मूस=बूहा+हर (प्रत्य०)] [स्त्री० मुसहरिक] एक जंगली जाति जिसका व्यवसाय अड़ी-बूटी आदि बेचना है। इस जाति के लोग प्रायः चूड़े तक मार कर खाते हैं, इसी से मुसहर कहलाते हैं।
मुसहिल—वि० [अ० मुहिल्ल] दस्तावर। रचक।
 पु० १. ऐसा हलका जुलाब जिसमें मोठे-ने दस्त आते हो। २. हकीमी चिकित्सा में किसी को जुलाब देने से पहले पिलाई जानेवाली बहू बहा जो पेट के अन्दर का मल मुलायम करती है।
मुसामा—स० [हि० मुसना का सं०] १. किसी को मुसने में प्रवृत्त करना। २. किसी के द्वारा अपनी ओर खाला जानेवाला। मूसा जाना। उदा०—मदन बोर सी जानि मुसायी।—सूर।
मुसाक—पु० [अ० मुसाक] १. युद्ध। तमर। २. युद्धस्थल। लड़ाई का मैदान। ३. मनु के चारों ओर खाला जानेवाला पेट।
 पु० [अ० मुसहक] १. केसो आदि का सकलन या सजह। २. कुरान।
मुसाफिर—पु० [अ० मुसाफिर] बटोही। पत्रिक।
मुसाफिराना—पु० [अ० मुसाफिर+आ० ज्ञानः] १. यात्रियों के विशेषतः रेल के यात्रियों के ठहरने के लिए बना हुआ विशिष्ट स्थान। २. भर्मावाला या सत्या जिसमें मुसाफिर ठहरते हैं।
मुसाफिरी—स्त्री० [अ०] १. मुसाफिर होने की अवस्था या भाव। २. प्रवास। यात्रा।
मुसाहब—पु० [अ० मुसाहब] किसी बड़े आधमि के पास उठने-बैठनेवाला व्यक्ति। परिचय।
मुसाहबत—स्त्री० [अ०] मुसाहब होने की अवस्था, काम या भाव।
मुसाहबी—स्त्री० [अ० मुसाहब+ई (प्रत्य०)] मुसाहब का काम या पद।
मुसाहबि—पु० [अ०]—मुसाहब।
मुसीबत—स्त्री० [अ०] १. तकलीफ। कष्ट। २. विपत्ति। संकट।
 कि० प्र०—आना।—उठाना।—खेलना।—पड़ना।—भोगना।—सहना।
मुसुकामा—अ०—मुसुकामा।
मुसुकहट—स्त्री०—मुसुकहट।
मुसुबिर—पु० [अ० मुसुबिर] चित्रकार।
मुसुबिरी—स्त्री० [अ० मुसुबिरी] चित्रकारी।
मुसुकामा—अ० [?] इस प्रकार बीरे से हँसना कि हँस कर फूल जाय परन्तु बसान-निकल दिखाई न दे।
मुसुकहट—स्त्री० [हि० मुसुकामा] मुसुकामे की अवस्था या भाव।

मुसकान—स्त्री०—मुसकहट।
मुसिकल—वि०, स्त्री०—मुसिकल।
मुसुबी—स्त्री०—मुसुकहट।
 वि०—मुसुकी।
मुसुकामा—स्त्री०—मुसुकामा।
मुसुब—वि०—मुसुबता।
मुसु—पु० [सं०/मुसु (इकटठा होना)+क, अथ वा] नागरमोषा।
मुसुबकी—पु० [अ०] १. इस्तीफा देनेवाला। २. माफी माँगनेवाला।
मुसुबकल—वि० [अ०] १. जो अमल में लाया गया हो। कार्यरूप में परिष्कृत किया हुआ। २. उपयोग में लाया हुआ।
मुसुक—पु० [सं० मुसु+कन्] नागरमोषा। मोषा।
मुसुकथिल—वि० [अ० मुसुथिल] आगे आनेवाला। भावी।
 पु० मन्थिव्याकाल।
मुसुकिल—वि० [अ०] १. अटल। स्थिर। २. दृढ़। मजबूत। पक्का।
 जैसे—मुसुकिल इरादा। ३. किसी पद पर स्थायी रूप से नियुक्त। (व्यक्ति)
मुसुकीम—वि० [अ०] १. जो टेढा न हो। सीधा। श्रेयु। २. टीक।
 यात्रिव।
मुसुकीम—पु० [अ०] १. वह जो किसी पर या किसी प्रकार का इस्त-यासा या अभियोग उपस्थित करे। फरियादी। २. दावेदार।
 मुसुई।
मुसुबई—पु० [अ०] इस्तबुआ या प्रार्थना करनेवाला। प्रार्थी।
मुसुबत—वि० [अ०] १. जो सन्दर्भ के अर्थात् प्रमाण के रूप में माना जाय। २. विश्वस्त।
मुसुका—वि० [अ०] १. स्वच्छ। साफ। २. पवित्र। पुरीत।
 पु० मुहम्मद साहब की एक उपाधि।
मुसुकीय—वि० [अ०] फायदा उठानेवाला। लाभ प्राप्त करनेवाला।
मुसुसना—वि० [अ० मुसुसना] १. अलग किया हुआ। छिटा हुआ।
 मित्र। २. नियम, विधि आदि के प्रयोग में जो अन्वयार्थ के रूप में हो। ३. जिस पर से किसी प्रकार की पाबंदी उठा या हटा की गई हो।
 ४. जो किसी प्रकार की आज्ञा, नियम आदि के बावरे में न आता हो।
मुसुहक—वि० [अ०] १. अधिकारी। हुकदार। २. किसी काम या बात के लिए उपयुक्त या योग्य। पात्र। ३. जकरतमद।
मुसु—स्त्री० [सं० मुसु-टापु] मोषा नामक भाव।
मुसुब—पु० [म०] जगली सुअर।
मुसुब—वि० [अ० मुसुबत] [भाव० मुसुबती] १. जो किसी कार्य के लिए पूर्ण रूप से उद्यत या तत्पर हो। कटिबद्ध। सन्नद्ध। २. हर काम में शालाक, तेज या कुलीला।
मुसुबी—स्त्री० [अ० मुसुबती] मुसुब होने की अवस्था या भाव।
 सन्नद्धता।
मुसुबि—पु० [अ०] उकेदार। हजारेदार।
मुसुबिरी—स्त्री० [अ०] उकेवारी।
मुसुबी—पु० [अ०] पर्याधिकारी जो अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के हिसाब की जाँच-पड़ताल करे। पड़तालक।

मुहकम—वि० [अ० मुह० कम] १. बृह। पक्का। मजबूत। २. टिकाऊ। पायदात। ३. अटल।
मुहकमा—पु० [अ० मुह० कम] बड़े कार्य अथवा कार्यालय का विभाग। सीमा।
मुहकिक—पु० [अ०] १. तहकीक अर्थात् अन्वेषण करनेवाला। अन्वेषक। अनुसंधाना। २. वैज्ञानिक। ३. दार्शनिक।
मुहकतमिम—वि० [अ० मुह० तमिम] एहतमाम अर्थात् बढोबस्त करनेवाला।
 पु० प्रबधक (व्यवस्थापक)।
मुहतरका—पु० [फा० मुह० तरक] वह कर जो व्यापार, वाणिज्य आदि पर लगाया जाय।
मुहतरम—वि० [अ० मुह० तरम] १. सम्मानित। २. आदरणीय। ३. महोदय। महानुभाव।
मुहतसिम—वि० [अ० मुह० तसिम] १. एहतमाम अर्थात् वैभव से युक्त। २. धनाढ्य। सम्पन्न।
मुहतसिम—पु० [अ० मुह० तसिम] वह जो लोगों के सदाचार आदि पर विशेष ध्यान रखता हो; और उन्हें सदाचारी बनाने के प्रयत्न में रहता हो।
मुहताज—वि० [अ० मुह० ताज]।
मुहताजी—स्त्री० [अ० मुह० ताजी]।
मुहदिस—पु० [अ०] हदीस अर्थात् इस्लामी धर्म-शास्त्र का ज्ञाता।
मुहनाल—स्त्री० [अ० मुह० नाल]।
मुहबनी—स्त्री० [दश०] एक प्रकार का फल जो नारपी की तरह का होता है।
मुहम्बत—स्त्री० [अ०] १. प्रीति। प्रेम। प्यार।
मुहा—मुहम्बत उच्छलना=प्रेम का आवेश होना। (व्यग्य) २. श्रुतिगारिक क्षेत्र में, स्त्री और पुरुष में होनेवाला प्रेम। इषक।
मुहम्बती—वि० [अ० मुहम्बत] १. जो सहज में सब में प्रेम या स्नेह का व्यवहार स्थापित कर लेता हो। २. मुहम्बत से भरा हुआ। प्रेमपूर्ण।
मुहम्बद—वि० [अ०] सराहा हुआ। प्रशंसित।
 पु० इस्लाम के प्रयत्नक (सन् ५७०-६२२ ई०)। अरब के प्रतिष्ठित पैगम्बर या धर्मोपाचार्य।
मुहम्मबी—पु० [अ०] हजरत मुहम्बद साहब का अनुयायी। मुसलमान। वि० मुहम्बद मन्वन्धी। मुहम्बद का।
मुहम्बा—वि०=मुहम्बा।
मुहरा—स्त्री० [अ० मुह० रा]।
मुहपुह—अव्य० [अ० मुह० पुह] १. बार बार। २. प्रति वार।
मुहरा—पु० [अ० मुह० रा]।
मुहरिया—स्त्री० १. = 'मोहरा' का स्त्री० अल्पा०। ३. = 'मोरी'।
मुहरी—स्त्री० १. 'मोहरा' का स्त्री० अल्पा०। २. मोहरा। ३. मोरी।
मुहस—वि० [अ०] जो हटाम अर्थात् लिखित हो।
 पु० १. इस्लामी धर्म का पहला महीना, जिसमें ईशाम हुसेन महीने हुए थे। २. इस महीने में ईशाम हुसेन का शोक मनाने के दस दिन।

मुहा—(किसी की) मुहस की पैदाइश होना=सया दुखी और चिन्तित रहनेवाला होना।
मुहरेमी—वि० [अ० मुह० रेम] ई (प्रत्य०) १. मुह०रेम-संबंधी। मुह०रेम का। २. शोक-सूचक। ३. बहुत ही दुःखी और मनहूस।
मुहरेक—पु० [अ०] १. हफ्तत देनेवाला। चालक। २. प्रेरक। ३. प्रस्तावक। ४. गतिशील।
 वि० [अ०] १. हफ्तत अर्थात् गति प्रदान करनेवाला। २. गतिशील। ३. अडकानेवाला। प्रेरक। ४. प्रस्ताव उपस्थित करनेवाला।
मुहरी—पु० [अ०] [भाव० मुह० री] १. किसी कार्यालय में कामज आदि लिखने का काम करनेवाला। लिपिक। २. बकीकी आदि के साथ रहनेवाला उनका मूधी।
मुहरीरी—स्त्री० [अ०] मुह०रेर का काम, पत्र या पेशा।
मुहस्त—स्त्री० [अ०] महिलान।
मुहला—पु० [स्त्री०] अल्पा० मुहली] =मूसल।
 पु० =महला।
मुहलेडी—स्त्री० [अ०] मुह०लेडी।
मुहस्ता—पु० [अ०] =महस्ता।
मुहसिम—वि० [अ० मुह० सिम] एहतमाम अर्थात् उपकार करनेवाला।
मुहसिल—वि० [अ० मुह० सिल] १. महसूल वसूल करनेवाला। २. तहसील वसूल करनेवाला। उपाहनेवाला।
 पु० वह नीबर या फेरिदार जो भूम-भूम कर खरा वसूल करता हो।
मुहाफिज—वि० [अ०] हिफाजत करनेवाला। रक्षक।
 पु० अभिभावक। संरक्षक। सपरस्त।
मुहाफिजत—स्त्री० [अ०] १. देख-रेख। रक्षवाजी। रक्षा। २. पालन-पोषण।
मुहार—स्त्री० [अ० मिह०] पशुओं के नपने में बाँधी जानवाजी रस्सी। नकेल।
मुहानी—स्त्री० [हि० मुह०+अरबी (प्रत्य०)] भारतीय शिक्षा-प्रणाली में आरम्भिक तथा छोटे विद्यालयों से कराई जानेवाली वह क्रिया जिसमें गिनती, पढ़ाई आदि विद्या कराने के लिए सामूहिक रूप से उन्हें इच्छा करने के रटाया जाता है।
मुहरा—पु० [हि०] १. मुह० अर्थात् आगे की ओर का भाग। २. प्रवेश करने का द्वार या मार्ग। जैसे—काण्ड का मुहरा।
मुहाल—पु० [हि० मुह०] आला (प्रत्य०) हाथी के दाँतों पर सोभा के लिए बढाई जानेवाली जूती।
 वि० [अ०] १. जिते करना कठिन हो। हुककर। २. जिमका होना नामुमकिन हो। अवभव।
 पु० महाल। २. मुहल्ला।
मुहावत—स्त्री० [अ०] परम्पर की बातचीत।
मुहावर—पु० [अ० मुहा० वर] १. वह शब्द, वाक्य या वाक्यांश जो अपने अभिप्राय से भिन्न किसी और अर्थ में रूढ हो गया हो। २. अम्यास।
मुहावरेार—वि० [अ० मुहा० वर+फा० दार] १. मुहावरे से युक्त (कथन या भाषा)। २. जिसमें मुहावरे का प्रयोग ठीक तरह से या मन्त्री-मति में हुआ हो।

मुहाबरेवारी—स्त्री० [हि० मुहाबरेवार+ई (प्रत्य०)] १. मुहाबरो के ठीक प्रयोग का ज्ञान। २. मुहाबरी से अभिन्न होने की अवस्था या भाव।

मुहाबसा—पुं०=मुहासिवा।

मुहासरा—पुं०=मुहासिरा।

मुहासा—पुं०=मुहास।

मुहासिब—वि० [अ०] हिसाब करनेवाला।

पुं०? गिनतारा। २. अकेवक।

मुहासिवा—पुं० [अ०] १. हिसाब। लेखा। २. लेखे या हिसाब की जाँच-पड़ताल। ३. किसी घटना के विषय में की जानेवाली पुछ-ताछ।

मुहासिरा—पुं० [अ० मुहासरः] १. चारों ओर से घेरने की क्रिया या भाव। २. हद-बन्दी।

मुहासिब—पुं० [अ०] १. भाय। आमबनी। २. नफा। मुनाफा।

मुहिं—सर्व०=मोहिं (मुझे)।

मुहिब—पुं० [अ०] १. दोस्त। मित्र। २. प्रियतम।

मुहिह—स्त्री० [अ०] १. कोई कठिन या बड़ा काम। भारी, महत्वपूर्ण अथवा जानबोझिम का काम। २. सैनिक आक्रमण। चढ़ाई। ३. युद्ध। समर।

मुहिर—पुं० [स०/मुह् (मुथ होना)+किरच्] कामदेव।

वि० बेषकृप। मुहं।

मुहोर्वा—स्त्री०=मुहिम।

मुहः (सु)—अव्य० [स० √ मुह्, उडिच्] फिर-फिर। बार-बार।
मुहुमुहो—स्त्री० [देश०] प्रायः रात के समय उड़नेवाला काले रंग का एक प्रकार का छोटा पतिया जो मूँगफली की फसल को हानि पहुँचाता है। ये पतियों पर अंडे देते हैं जिससे पतियाँ सूख जाती हैं। खुरल।

मुहुद्गः (सु)—अव्य० [स० बोध्या में द्विवच] बोधी-मोही देर पर, बार-बार या रह-रह कर।

मुहुर्त्त—पुं० [स० √ मुहृच् (देहा होना)+क्त, मुद्गामग] १. काल का एक भाग जो दिन-रात के तीसरे भाग के बराबर होता है। २. किसी काम के लिए निश्चित या स्थिर किया हुआ विशिष्ट समय। ३. फलित ज्योतिष में, कोई शुभ काम करने अथवा यात्रा, विवाह आदि के उद्देश्य से काल-गणना के द्वारा स्थिर किया जानेवाला समय। ४. श्रीगणेश। आराम।

मुहैया—वि० [अ०] आवश्यकता की पूर्ति के लिए लाकर इकट्ठा किया या रखा हुआ। प्रस्तुत। जैसे—बादी का सामान मुहैया करना।

मुहुयाम—वि०, [स०/मुह्, +तामच्, यच्, मुह्-आगम] १. मुच्छित। २. मोहपुस्त।

मुँ—सर्व०? =मेरा। २. =मुसे। (डि०)

मुँकाना—स० [स० मुक्त] १. मुक्त करना। छोड़ना। २. त्यागना।

मुँग—पुं० [स० मुद्ग] एक प्रसिद्ध अन्न विनकी दाल बनती है।

यह—मुँग की बाल खानेवाला—इरफोक, निकम्मा या पुरुषार्थहीन।

मुग—(किसी पर) मुँग पड़कर धारना—किसी प्रकार का तांत्रिक उपचार विशेषतः बघीकरण करने के लिए मंत्र पढ़ते हुए किसी पर मुँग के दाने फेंकना। (किसी की) छाती पर मुँग बलना—किसी को दिसलाते हुए ऐसा काम करना जिससे उसे ईर्ष्या या अलन हो, अथवा हादिक कष्ट हो।

मुँगकली—स्त्री० [हि० भूम (भूमि)+कली] १. जमीन पर चारों ओर फैलेवाला एक प्रकार का क्षुप जिसका खेती उसके फलों के लिए प्रायः सारे भारत में की जाती है। इसकी जड़ में मिट्टी के अन्दर फल लगते हैं, जिसके दाने या बीज रूप-रंग और स्वाद में बादाम से बहुत-कुछ मिलते-जुलते होते हैं। २. इस क्षुप का फल। बिनिया बादाम। बिलायती मुँग। (संस्कृत में इसे भू-चरवक और भू-विशिका कहते हैं।)

मुँगरी(त)—पुं० [स्त्री० अल्पा० मुँगीरी] =मोपरा।

मुँगी—स्त्री० [?] एक प्रकार की तोप।

मुँगा—पुं० [हि० मुँग] १. समूह में रहनेवाले एक प्रकार के कीड़ों के समूह-पिंड की लाल छठी जिसकी मुरिया बनाकर पहनते हैं। इसकी गिनती रलों में की जाती है। (कोरल) २. एक प्रकार का गज।

पुं०=मोगा (रेशम)।

मुँगिया—वि० [हि० मुँग+इया (प्रत्य०)] मुँग के दानों के रंग का। पुं० १. उक्त प्रकार का अमीआ या हरा रंग जिसमें कुछ नीली आभा भी होती है। मुँगी। २. उक्त रंग का पुरानी चालक का एक प्रकार का धारीदार कपड़ा।

मुँगी—वि० [हि० मुँगा] मुँगे के रंग की तरह का लाल।

पुं० उक्त प्रकार का लाल रंग। (कोरल)

मुँह—स्त्री० [स० ममुह्; प्रा० मम्-मे मम्हृ] १. पुरुषों तथा कुछ अन्य जीव-जतुओं के ऊपर वाले होठ और नासिका के बीचवाले अंग में होनेवाले बाल। लोक-व्यवहार में यह पीछे के लगन के रूप में माने जाते हैं।
मुँहा—पुं० [स० उखाङ्गना=(क) कठिन बढ देना। (ख) घमड पूर करना] मुँहों पर साध देना या हाथ फेरना—विजय या बौरता की अकड दिखाना। अभिमान या बडप्पन प्रकट करना। मुँहें मोषी होना=(क) अभिमान नष्ट होने के कारण लज्जित होना। (ख) अपमान या अप्रतिष्ठा होना।

२. कुछ विशिष्ट जीव-जतुओं के होठों पर होनेवाले उक्त प्रकार के बाल जिनके द्वारा वे चीजों का स्पर्श करने के जनाक ज्ञान प्राप्त करते हैं।

मुँही—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की कडी।

मुँक—स्त्री० [स० मुक्क] मक्कियों के ऊपरी भाग का छिलका जिसे मिर्गी और कूकर चारपाइयाँ बुनने के लिए बाध या बान (एक प्रकार की रस्सी) बनाया जाता है।

मुँह—पुं० [स० मुह] सिर। कपाल।

मुहा—पुँड मुँहाना=अप्यागी या विरक्त होकर किसी साध-सव्याही का चेला बनना। उवा०—मुँह मुँहाये, जटा बढाये, मगन फिरे ज्यो मेला—कवीर।

विशे—'मुँड' के शेष मुहा० के लिए देखें 'सिर' के मुहा०।

मुँक-कटा—वि० [हि० मुँक+कटा] सिर-कटा।

मुँकन—पुं०=मुदन।

मुँकना—स० [स० मुदन] १. उस्तरे से रगडकर धारीर के किसी अंग पर निकले हुए बाल निकालना, विशेषतः सिर के बाल विकालना। २. चालाकी से किसी से धन-दौलत ले लेना। ३. किसी को चेला बनाना।

मुँङी—स्त्री० [हि० मुँड (सिर) का स्त्री० अल्पा०] १. सिर। मस्तक। मुँड।

पद—**मूंडी-काटा**—स्त्रियो की एक गाथी जिसका आसप होता है—तेरा सिर काटा जाय अर्थात् तू मर जाय।

मूहा—(फिसी की) **मूंडी मरोड़ना**—फिसी को धोखा देकर उमका माल छीन लेना या बर्बाद करना।

२. फिसी चीज का अगला और ऊपरी भाग।

मूडीबंध—[०] [हि० मूंड+बंध] कुपती का एक पंच।

मूबना—सं० [स० मूढण] १. ऊपर से कोई वस्तु डाल या फैलाकर फिसी वस्तु को छिपाना। आच्छादित करना। २. छेद या सुराल बन्द करना। ३. अंकों के सम्बन्ध में दोनों पलके इस प्रकार मिलाना कि वे बन्दे का काम बन्द हो जाय।

सयो० फि०—देना।—लेना।

४. फिसी चीज को उलट या डककर रखना।

मूबरी—स्त्री०—मूंदरी (अंठी)।

मूधी—स्त्री०—मूधा। (राज०) उदा०—मूध मेरसी लीज।—डो० मा०।

मू—पुं० [फा०] १. बाल। २. रोजी। ३. केस।

मूआ—वि० [मूत] [स्त्री० मूई] १. मरा हुआ। मूत। २. उपेक्षा-सूचक माली के रूप में प्रयुक्त होनेवाला विशेषण। जैसे—मूआ नौकर अभी तक नहीं आया। (स्त्रियाँ)

मूक—वि० [स०/मूक् (बोधना) +कृत्, वकार को ऊठ्] [भाव० मूकता] १. जो कुछ भी बोल न रहा हो। २. मूँगा। ३. दीन-हीन। लाचार।

पुं० १. दानव। राक्षस। २. तक्षक का एक पुत्र।

मूकता—स्त्री० [स० मूक +तल्+टाप्] मूक होने की अवस्था या भाव। **मूकना**—सं० [स० मुक्त] १. मुक्त करना। २. अलग या पृथक् करना। ३. रक्षाना।

मूकाना—पुं० १. =मूकना। २. =मौला।

मूकभा (बन्) —स्त्री० [स० मूक +इमनिप्] मूक होने की अवस्था या भाव। मूकता।

मूकना—सं०—मूसना।

मूकना—सं०—मोचना।

पुं०—मोचना।

मूछ—स्त्री०—मूँछ।

मूखिब—पुं० [अ०] आविष्कारक।

मूखिब—पुं० [अ०] कारण। सबब।

मूकी—वि० [अ०] १. ईजा देने अर्थात् कष्ट पहुँचानेवाला। सतानेवाला। अत्याचारी। २. लाल। दुर्जन। ३. बहुत बड़ा कजूस। परम कृपण।

मूकी—सर्व०—मूहा।

मूहना—अ० [स० मूच्छन्] १. मूच्छित होना। २. मूरझाना।

मूठ—स्त्री० [स० मूठि] १. मूट्टी।

मूहा—**मूठ करना**—तीतर, बटेर आदि को परमाने तथा उल्टीजित करने के लिए मूट्टी में रखकर हलके हाथ से बार बार दबाना। **मूठ मारना**—(क) कजूरत की मूट्टी में पकड़ना। (ख) हलत-किया करना।

२. फिसी उपकरण, यंत्र, वास्तु आदि का वह भाग जहाँ से उसे पकड़ा या उठाया जाता है। जैसे—छाता, बक्की या तलवार की मूठ। ३.

फिसी बीजार, हथियार आदि का वह भाग जो व्यवहार करते समय हाथ में रहता है। मूठिया। दस्ता। कब्जा। जैसे—छाते या तलवार की मूठ। ४. उतनी वस्तु जितनी मूट्टी में जा सके। ५. एक प्रकार का जुआ जिसमें मूट्टी में कौबियाँ बन्द करके उनकी सक्का बूझते हैं। ६. मत्र-नत्र का प्रयोग। जाजू। टोना।

मूहा—**मूठ मारना**—फिसी पर जाजू-टोना करने के लिए मूट्टी में कौबि चीज पकड़कर और मत्र पकड़कर फिसी पर फेंकना।

मूठना—अ० [स० मूठ; प्रा० मूठ्ठ] नष्ट होना। मर मिटना। न रह जाना।

मूठा—पुं०—मूठटा।

मूठाली—स्त्री० [हि० मूठ +आमी (प्रत्य०)] तलवार। (हि०)

मूठि—स्त्री०—मूठ। २.—मूट्टी।

मूठी—स्त्री०—मूट्टी।

मूठ्—पुं०—मूँठ।

वि०—मूँठ।

मूठी—स्त्री० [?] एते मुने हुए चावल जो फूलकर अन्दर से पीले हो जाते हैं। फरबी।

†स्त्री०—मूँठी (मूठ या मस्तक)।

मूठी-काटा—वि० [हि० मूँठ +काटना] जिसका सिर काटे जाने के योग्य हो, अर्थात् परम कुट्ट। (स्त्रियों की गाथी)

मूठ—वि० [स०/मूठ्, (अधिकेक) +कृत्] [भाव० मूठना] १. जिते कुछ भी दुःख न हो। परम मुक्ति। बिलकुल नाममत्त। २. निश्चेष्ट। स्वस्थ। ३. हृत्क-बक्का।

पुं० तमोगुण की प्रधानता के कारण चित्त के निद्रामुक्त या स्वस्थ होने की अवस्था या भाव।

मूठ-मर्ब—पुं० [स० कर्म० सं०] ऐसा गर्भ जिसमें से लगान न हो सके। विछन होकर गिर जानेवाला गर्भ।

मूठना—स्त्री० [स० मूठ +तल्+टाप्] १. पठ होने की अवस्था या भाव। २. मूर्खता। ३. अज्ञान।

मूठ-बाल—पुं० [स० कर्म० सं०] १. फिसी कोश में स्त्री या बेंकी टुट्ट वायु। २. बहुत जोरो का अन्वह। तूफान। जैसे—मूठ-नाताहत जटाङ्ग—तूफान का मारा हुआ जहाज।

मूठारना (सन्) —वि० [स० मूठ-आरण्य, व० सं०] बहुत बड़ा नृत्य।

मूठी—स्त्री०—मूठी (फरबी)।

मूत—पुं० [स० मूत्र] १. पेशाब। मूत्र।

मूहा—(फिसी के आगे) मूत निकल पड़ना—जय से मन्त होना। मूत से निकल कर मू में पड़ना—वहले की अपेक्षा और भी अधिक बुरी बधा से जाना या पड़ना।

२. बीजाद। सतान। (बाजाफ)

मूतना—अ० [हि० मूत +ना (प्रत्य०)] पेशाब करना।

मूहा—(फिसी चौप पर) **मूतना**—बहुत ही तुच्छ या हेव और फलत अबाहा या अस्पृश्य समझना।

मूतरी—पुं० [विश०] एक प्रकार का जयली कौआ। महालाव। महामन्त। **मूत्र**—पुं० [स०/मूत्र (मूतना)+पञ्च] प्राणियों के उत्पन्न मान्ये या

जननेन्द्रिय से निकलनेवाला बहु दुर्गन्धमय तरल पदार्थ जिसमें शरीर के अनेक निष्कृष्ट विघातक अंश मिले रहते हैं। पेशाब। मूत्र।

मूत्र-कण्डू—पुं० [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें मूत्र पीछा-कोड़ा, कुछ कठ-बककर और प्रायः कुछ कष्ट सा होता है। (सुन्दरी)

मूत्र-अप—पुं० [सं० वं० तं०] मूत्राघात रोग का एक भेद।

मूत्र-संधि—पुं० [सं० वं० तं०] मूत्राघात रोग का एक भेद।

मूत्र-संश्लेष—पुं० [सं० वं० तं०] हाथी, भेड़, ऊँट, गाय, बकरे, भोजे, भैंसे, गधे, पृथग् और स्त्री के मूत्रों का समुह।

मूत्र-संश्लेष—पुं० [सं० वं० तं०] मूत्र-संबन्धी कोई कष्ट या विकार।

मूत्र-नाली—स्त्री० [सं० वं० तं०] उपर्युक्त के ऊपर या अन्दर की वह नाली जिसके द्वारा शरीर से मूत्र निकलता है।

मूत्र-वसन—पुं० [सं० वं० सं०] १. मूत्र गिरने की अवस्था या भाव।
२. गन्ध-बिन्धुवा, जिसका मूत्र प्रायः गिरता रहता है।

मूत्र-वन्ध—पुं० [सं० वं० तं०] मूत्र-नाली।

मूत्र-वरीक्षा—स्त्री० [सं० वं० तं०] पितृतासाध्यास्त्र में, रोगी के मूत्र की वह वैज्ञानिक जाँच जिससे यह पता चलता है कि शरीर में किस प्रकार के कटाव या विकार हैं। (यूरिन एग्जामिनेशन)

मूत्र-प्रसेक—पुं० [सं० वं० तं०] मूत्र-नाली।

मूत्र-फला—स्त्री० [सं० वं० सं०, +टाप्] ककड़ी।

मूत्र-मार्ग—पुं० [सं०] मूत्राशय के साथ लगी हुई वह नली या सुरंगिका जिससे होकर मूत्र आगे बढ़कर निकलने के लिए जननेन्द्रिय के ऊपरी भाग तक पहुँचता है। (यूरेथ्रा)

मूत्र-रोग—पुं० [सं० वं० तं०] वह अवस्था जिसमें किसी प्रकार के शारीरिक विकार के फलस्वरूप पेशाब होना बद हो जाता है। पेशाब बन्द होने का रोग।

मूत्रल—वि० [सं० मूत्र/ ल (लेना) +क] [स्त्री० मूत्रला] अधिक और अनेक बार मूत्र लानेवाला (जीषध या पदार्थ)।

मूत्रला—स्त्री० [सं० मूत्रल +टाप्] ककड़ी।

वि० सं० 'मूत्रल' का स्त्री०।

मूत्र-मुद्रि—स्त्री० [सं० वं० तं०] अधिक बार तथा अपेक्षाकृत अधिक परिमाण से पेशाब होना।

मूत्र-भोत—पुं० [सं० वं० तं०] दे० 'मूत्र-मार्ग'।

मूत्राघात—पुं० [सं० मूत्र-आघात, वं० सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें शरीर के अन्दर कुछ समय के लिए मूत्र का बनना बन्द हो जाता है।

मूत्राशय—पुं० [सं०] नाभि के नीचे की वह वैसी जिसमें मूत्र संचित होता है। मसाना। (यूरिनरी ब्लेडर)

मूत्रित—पुं० कं० [सं० मूत्र +तृत्तृ] १. मूत्र के रूप में निकलना हुआ।
२. जो पेशाब के स्पर्श के कारण गंदा हो गया हो।

मूत्रा—पुं० [देहा०] १. पीतल या लोहे की अँकुरी जो टकुर के सिरे पर जमी रहती है और जिसमें रस्सी या डोरा फँसा रहता है। २. एक तरह का झाड़ या उसका फल।

† अ० = मूत्रमा (भरना)।

मूत्र—पुं० [सं० मूल] १. मूल। जड़। २. जड़ी। मूटी। ३. मूल धन। असल मूजी। ४. मूल नक्षत्र।

पुं० अशोक की एक मूलमान जाति।

मूरजा—वि० = मूर्ख।

मूरजाई—स्त्री० = मूर्खता।

मूरचा—पुं० = मीरचा (जग)।

मूरछना—वि० [अ०] मूर्च्छित होना। बेहोया होना।

स्त्री० १. = मूर्च्छा। २. मूर्च्छना।

मूरछा—स्त्री० = मूर्च्छा।

मूरजा—स्त्री० = मूर्छा।

मूरति—स्त्री० = मूर्ति।

मूरसिंघ—वि० [सं० मूर्ति +वत् (प्रत्य०)] १. मूर्तिमान्। २. देहधारी। सधारी।

मूरख—पुं० = मूर्ख (सिर)।

मूर्रा—पुं० [सं० मूल] बड़ी तथा मोटी मूली।

मूरि—स्त्री० [सं० मूल] १. मूल। जड़। २. जड़ी। मूटी।

मूरिस—वि० [अ०] वह जिसका कोई वारिस हुआ हो।

पुं० पूर्वज।

मूर्री—स्त्री० १. = मूरि। २. मूरि।

मूरख—वि० = मूर्ख।

मूर्ख—वि० [सं० √ मूह् +त्व, मूर आवेव] [भाव० मूर्खता] १. प्राचीन भारतीय आर्यों में गायत्री न जानने अथवा अर्ध-सहित गायत्री न जानने-वाला। २. जिसमें ठीक ढंग से तथा विचारपूर्वक कोई काम करने अथवा कोई बात समझने-सोचने की योग्यता या शक्ति न हो। बुद्धि के अभाव में जो ऊट-पटांग काम करता या बातें सोचता हो। ३. लाज समझाने पर भी जिसकी समझ में कोई बात न आती हो।

मूर्खता—स्त्री० [सं० मूर्ख +तल् +टाप्] १. मूर्ख होने की अवस्था या भाव। २. कोई मूर्खतापूर्ण आचरण, कार्य या बात।

मूर्खत्व—पुं० [सं० मूर्ख +त्व] = मूर्खता।

मूर्खिनी—स्त्री० [सं० मूर्ख +नी] = मूर्ख।

मूर्खिनी—स्त्री० [सं० मूर्ख +इमनिच्] मूर्खता। बेवकूफी।

मूर्च्छन—पुं० [सं० √ मूर्च्छ (मोह) +कृत् +अन] [युं० कं० मूर्च्छत] १. किसी की चेतना या सज्ञा का, कुछ विशिष्ट अवस्थाओं में अस्थायी रूप से लोप करने की क्रिया या भाव। बेहोया करना या बेहोया लाना। २. प्राचीन काल का एक विशिष्ट तांत्रिक प्रयोग जिससे किसी व्यक्ति की चेतना या सज्ञा नष्ट कर दी जाती थी। ३. आज-कल प्रायः

दृच्छायुक्तिक के प्रयोग से किसी को इस प्रकार चेतनाहीन करना कि उसे शारीरिक कष्टों का अनुभव न हो और उसका स्नायविक तंत्र प्रायः बिकाम हो जाय। (सेसेंरिकस)

विशेष—इस प्रक्रिया का आविष्कार आस्ट्रिया के मेस्टर नामक चिकित्सक ने रोमियों की चिकित्सा के लिए किया था।

४. उक्त के आधार पर यह प्रक्रिया जिसमें आरिचक बल के द्वारा किसी को कुछ समय के लिए संज्ञायुक्त करने उसके कुछ असाधारण और चिकित्सात्मक कार्य कराये जाते हैं और जिसकी गणना इन्द्रजाल में होती है। (सेसेंरिकस)

५. वैभव में वह प्रक्रिया जिसके द्वारा पारा शुद्ध करने या उसका सस्य पैदा करने के लिए उसकी चकलता नष्ट करने उसे स्थिर कर देने है। ६. कामदेव के पाँच वाणों में से एक, जिसके प्रभाव

या प्रहारा से प्रेमासक्त व्यक्तित्व कभी-कभी अपनी चेतना भा सजा लो देता है।

मूर्च्छना—स्त्री० [स०/मूर्च्छं+मुन्-अन, टाप्] १ सगीत से किसी स्वर से आरम्भ करके सातवें स्वर तक आरोह कर चुकने के उपरान्त उन्ही स्वरों से होनेवाला अवरोह। २ उक्त प्रक्रिया के फलस्वरूप होनेवाला शब्द या निकलनेवाला स्वर।

मूर्च्छा—स्त्री० [स०/मूर्च्छं+अ+टाप्] बहु अवस्था जिससे अस्थायी रूप से किसी की सजा लुप्त हो चुकी होती है। बेहोशी।

विशेष—मूर्च्छा और तन्मया का अंतर जानने के लिए दे० 'सन्मयास' का विशेष।

मूर्च्छाल—वि० [म० मूर्च्छा+लच्] मूर्च्छित। सजाहीन।

मूर्च्छित—मू० क० [स० मूर्च्छा+इलच्] १ जो अशेषतया बेहोश पडा हुआ हो। २. (धातु) जिसकी क्रियाशीलता नष्ट कर दी गई हो। जैसे—मूर्च्छित पारा। ३ (व्यक्तित्व) जो वय अधिक होने के कारण अव्ययी तथा अशक्त हो गया हो।

मूर्च्छा—स्त्री० =मूर्च्छा।

मूर्च्छिता—मू० क० =मूर्च्छित।

मूर्त्त—वि० [स०/मूर्च्छं+इलच्] १ जिसकी कोई मूर्ति अर्थात् आकार या रूप हो। २ जो किसी प्रकार के ठोस पिंड के आकार या रूप में हो। जिसका कोई भीतिक अर्थात् कडा या ठोस रूप हो, और इसी लिए जो देखा या पकडा जा सके। साकार। (कान्कोट) ३ जिम्मा महत्त्व या स्वरूप समझ में आ सके। मूर्ति-भाण्ड। (ट्रेन्जवल) ४ मूर्च्छित। बेहोश।

मूर्त्ता—स्त्री० [स० मूर्त्+तल्; टाप्] मूर्त्त होने की अवस्था या भाव।

मूर्त्तत्व—पु० [स० मूर्त्+त्व] मूर्त्त होने की अवस्था या भाव। मूर्त्ता।

मूर्त्तविभागा—पु० [स० प० तं०] केवल कल्पना के आधार पर घटनाओं, वार्यों आदि के स्वरूप, विचित्र आदि बनाने की क्रिया या भाव। प्रतिभाश्रयी। (द्वैजगी)

मूर्त्ति—स्त्री० [स०/मूर्च्छं+वित्तु, छ-उभोप] १ मूर्त्त होने की अवस्था या भाव। मूर्त्ता। टासपन। २ आकृति। शकल। मूर्त्त। ३ देह। पूजारी। ४. किसी की आकृति के अनुकूप गयी हुई विशेषता उपासना, पूजा आदि के लिए बनाई हुई देवी-देवता की आकृति। प्रतिमा। जैसे—सरस्वती की पत्थर या मिट्टी की मूर्त्ति। १५ चित्र। तसबीर। वि० जो किसी विषय का बहुत बडा भाता या पक्कित हो। (पी० के अंत में) जैसे—बेद-मूर्त्ति।

मूर्त्तिकला—स्त्री० [स० व० तं०] मूर्त्तियां बनाने की विद्या या हुनर।

मूर्त्तिकार—पु० [स० मूर्त्ति/कृ+अण्] १ मूर्त्ति बनानेवाला कारीगर। २ चित्रकार।

मूर्त्तिप—पु० [स० मूर्त्ति/पा] १ पुजारी। २ मूर्त्तिपूजक।

मूर्त्तिपूजक—वि० [स० व० तं०] जो मूर्त्ति या प्रतिमा की पूजा करता हो।

मूर्त्तिपूजैवाला। मूर्त्तिपूजक।

मूर्त्तिपूज्य—पु० [स० व० तं०] मूर्त्तियों की पूजा करने की क्रिया या भाव।

मूर्त्तिपूजा—स्त्री० [स० व० तं०] १ सगुण भक्ति के अन्तर्गत, मूर्त्ति की जो देनेवाली पूजा। २ मूर्त्तियां की पूजा करने की पद्धति, प्रथा या विधान।

मूर्त्तिभोजक—वि० [स० व० तं०] १ मूर्त्तियां तोड़नेवाला। मूर्त्तिभक्षण।

२ फलत जिनका मूर्त्तियों में विषवास न हो।

मूर्त्तिमान् (मत्)—वि० [स० मूर्त्ति+मत्पु] [स्त्री० मूर्त्तिमती, भाव० मूर्त्तिमता] १ जो मर्त्य रूप में हो। २. फलत सगुण तथा साकार। ३ प्रत्यक्ष। साक्षात्।

मूर्त्ति-लेख—पु० [स० मध्य० स०] वह लेख जो किसी मूर्त्ति के नीचे उसके परिचय आदि के रूप में अंकित किया जाता है।

मूर्त्ति-विद्या—स्त्री० [स० व० तं०] १ मूर्त्ति या प्रतिमा गढ़ने की कला। २ चित्रकारी।

मूर्त्तिकरण—पु० [स० मूर्त्+चि, इत्थ, दीर्घ/कृ+एट्-अन्] [मू० क० मूर्त्तिकृत] किसी अमूर्त्त तत्त्व को मूर्त्त रूप देने की क्रिया या भाव।

मूर्त्त—पु० [स० मूर्त्] सिर।

मूर्त्तक—पु० [स० मूर्त्+कृ+एट्-अन्] शत्रिय।

वि० मूर्त्त या मिर से मन्वन्व रचनेवाला।

मूर्त्त-कर्णी—स्त्री० [स०] छाता या ऐसी ही और कोई वस्तु जो धूप, पानी आदि में बचन के लिए मिर के ऊपर रखी या लगाई जाती हो।

मूर्त्तकषारी—स्त्री० =मूर्त्तकर्णी।

मूर्त्तबोल—पु० =मूर्त्तकर्णी।

मूर्त्तज—वि० [स० मूर्त्+जृ+एट् (उत्पन्न-होना)] मूर्त्तों या मिर से उत्पन्न होनेवाला, अथवा उससे सम्बन्ध रखनेवाला। पु० केष। बाल।

मूर्त्त-ग्योति (स)—स्त्री० [स० व० तं०] बह्मरश्मि। (योग)

मूर्त्त-ग्वी—वि० [स० मूर्त्+ग्व] १ मूर्त्तों से संबन्ध रखनेवाला। मूर्त्त-ग्वीबी। २ मस्तक या मिर में रहने या होनेवाला। ३ (वर्ष) जिसका उच्चारण मूर्त्तों में होना हो। (दे० 'मूर्त्त-ग्वी-वर्ष')

मूर्त्त-ग्वी-वर्ष—पु० [स० कर्म० स०] देव-नागरी वर्ण-माला में के वर्ण जिनका उच्चारण मूर्त्तों में होता है। यथा—ट, ठ, ड, ङ, ङ, ङ, ङ, ङ और ष।

मूर्त्त-पिंड—पु० [स० उर्ध्व० म०] हाथी का मस्तक।

मूर्त्त-पुष्प—पु० [स० व० स०] शिरोध्वज पुष्प।

मूर्त्त-रस—पु० [स० मध्य० स०] भात का फेन।

मूर्त्त (दंत्)—पु० [स०/मूर्त्+दं (दायिणा) +कनिन्, व-ष्] १. मस्तक। सिर। २ व्याकरण में, मूर्त्त के अन्धर का तालू और अलिङ्गिता के बीच का वय जिसे जीम का अथवा ट, ठ, ड, ङ, ङ आदि का उच्चारण करने समय उलटकर फूटा है।

मूर्त्तभिषिक्त—मू० क० [स० मूर्त्+अभिषिक्त, सुमुष्वा स०] १ जिसके सिर पर अभिरेक किया गया हो। २ (राजा) जिसके राज्यारोहण के समय मूर्त्तभिषेक नामक धार्मिक कृत्य हुआ हो। पु० १ राजा। २ क्षत्रिय ३ एक बर्ण-संकर जाति जिसकी उत्पत्ति ब्राह्मण में ब्याही क्षत्रिय स्त्री के गर्भ से कही गई है।

मूर्त्तभिषेक—पु० [स० मूर्त्+अभिषेक, व० स०] प्राचीन भारत में, एक प्रकार का धार्मिक और राजकीय कृत्य जिसमें किसी नये राजा के गद्दी

पर बैठने से पहले उसके शिर पर मंत्र पत्रकर पवित्र जल छिड़का जाता था।

मूर्धा—स्त्री० [सं०/मूर्ध् (मौधना)+अच्+टाप्] मरीचकणी लता। मधुरता।

मूर्धिका—स्त्री० [सं० मूर्धा+कच्+टाप् ह्रस्व, ह्रस्व] मूर्धा।

मूर्ध्वी—स्त्री०=मूर्धा।

मूल—पुं० [सं०/मू+मल, ऊद्-आदेश] [वि० मूलक] १. पेड़-पौधों का वह भाग जो पृथ्वी के नीचे रहता है, और जिसके द्वारा वे जमीन अंश आदि खींचकर अपना पोषण करते और बढ़ते हैं। २। सौर। २. कुछ विशिष्ट प्रकार के पौधों की जड़ों को प्रायः खाने के काम आती हैं। उदा०—सहि दुख कन्द, मूल, फल माई।—तुलसी।

पद—मंत्र-मूल।

३. आदि। आरंभ। शुरु। ४. नीच। बुनियाद। ५. कोई ऐसा तथ्य जिसमें कोई दूसरी चीज या बात निकली, बही या बनी हो। उत्पादक तथ्य या बात। जैसे—इस सगड़े का मूल कारण नौ बत्ताओं। ६. वह धन जो किसी प्रकार के लाभ की आशा से किसी व्यापार से लगाया जाय अथवा सूद पर किसी को उधार दिया जाय। असल पूँजी।

मूला—मूल **पूजना**—व्यापार में लगी हुई पूँजी या मूल धन निकल आना।

७. किसी पदार्थ का वह अंग या अंश जहाँ से उस पदार्थ का आरम्भ होता है। जैसे—मूल-मूल। ८. कोई ऐसी चीज जिसकी अनुकृति पर नैसी ही और चीज या चीजें बनाई जाती हैं। ९. साहित्य में वह लेख या लेख्य जो पहले-पहल किसी ने अपनी बुद्धि या मन से तैयार किया या बनाया हो, और आगे चलकर जिसकी प्रति लिपि, व्याख्या आदि प्रस्तुत होती हो। जैसे—(क) मूल की चार प्रतिलिपियाँ हुई थीं। (ख) गीता के इस संस्करण में मूल और टीका दोनों हैं। १०. सत्ताईस नलमो में से उन्नीसवाँ नख, जिसमें बालक का अन्त समाप्त भूषित या निषिद्ध भाग जाता है। ११. जमीनकद। सूरज। १२. निष्पत्ती मूल। १३ सत्र में किसी देवता का आदि भ्रम या बीज। वि० १ असल और पहला। २. प्रधान। मुख्य। ३ जिसके आधार पर आगे चलकर किसी प्रकार का विकास होने को हो।

अव्य० निकट। पास। समीप।

मूलक—वि० [सं० मूल+कच्] १. जो किसी के मूल में हो। २. जिनके मूल में कुछ हो। ३. उत्पन्न करनेवाला। जैसे—अनर्थ मूलक।

पुं० १. मूल स्वरूप। २. मूली नामक कंद। ३. वैद्यक में ३४ प्रकार के स्वादर विषों में से एक प्रकार का विष। ऐमा विष जो बुद्धों के मूल या जड़ के रूप में होता हो।

मूलक-पर्वी—स्त्री० [सं० ब० सं०,+डीप्] सहिजान (पेड़)।

मूलक-मल—पुं० [सं० कर्म० सं०] हृद्योग के अनुसार नाभि के आस-पास का अवयव जो कमल के रूप में माना गया है। नाभि-कमल।

मूलक (शुं)—पुं० [सं० कर्म० सं०] बाजान, उन्मादत, लंका, बहीकण आदि का वह तापिक प्रयोग जो औषधियों के मूल द्वारा किया जाता है। जड़ी-बूटियों के मूल से हीनेवाला टीना-टीटका।

मूलकारक—पुं० [सं० मूल/क (करता) +अच्] मूलमंत्र का कर्ता।

मूलकारिका—स्त्री० [सं० मूलकारक+टाप्, ह्रस्व] १. मूल गद्य या पद्य जिसकी टीका की गई हो। २. उधार लिए हुए मूलधन की एक विशेष प्रकार की बुद्धि या सूझ। ३. बंहीदेवी का एक नाम।

मूल-कुण्ड—पुं० [सं० सुसुपा सं०] स्मृतियों में वर्णित ग्यारह प्रकार के पर्यङ्कश्रुतों में से एक जिसमें मूली आदि कुछ विशेष जड़ों का स्वाय या रस तीव्र एक मास तक रहना पड़ता है। (मिताक्षर)

मूल-ज्ञानक—पुं० [सं० ब० सं०] एक प्राचीन बर्णसंकर जाति जो वेदों की जड़ों से ओषिका निर्वाह करती थी।

मूलनीमा—पुं० [सं०] नाचने-नानेवाली मछली का वह व्यक्ति जो बूढ़े साधियों की गाना और नाचना सिखाता ही। (दूरव)

मूलच्छेद—पुं० [सं० ब० सं०] १. किसी चीज की जड़ काटना जिसमें फिर वह पतन या बड़ न सके। २. पूरी तरह से किया जानेवाला नाश।

मूलज—वि० [सं० मूल/जन् (उत्पत्ति)+ज] १. मूल से उत्पन्न। २. जड़ से उत्पन्न होनेवाला।

पुं० अवरक। आदी।

मूलतः (तश्)—अव्य० [सं० मूल+तश्] मूल रूप में। आदि में। प्रथमतः।

मूल-त्रिकीर्ण—पुं० [कर्म० सं०] फलित ज्योतिष में, सूर्य आदि ग्रहों की कुछ विशेष राशियों में स्थिति।

मूल-त्रय्य—पुं० [कर्म० सं०] १. मूलधन। पूँजी। २. वह मूल या द्रव्य जिससे अन्य मूर्तों या द्रव्यों की उत्पत्ति हुई है।

मूल-द्वार—पुं० [कर्म० सं०] सिंह-द्वार। सदन दरवाजा।

मूल-द्वारावली—स्त्री० [कर्म० सं०] द्वारावली नगरी का वह प्राचीन अंश जो आजकल की द्वाराका से कुछ दूर प्रायः समुद्र के अन्दर पड़ता है।

मूल-धन—पुं० [कर्म० सं०] वह धन जो और धन कमाने के उद्देश्य से लगाया जाय। पूँजी।

मूलधनी—पुं० [सं० मूलधन से] १. वह जो किसी काम में मूलधन लगाता हो। २. ३० 'पूँजीपति'।

मूल-धातु—स्त्री० [कर्म० सं०] शरीर के अन्दर की मज्जा।

मूलमौ—वि० [सं० मूल] पूरा। सम्पू।

मूल-पर्वी—स्त्री० [ब० सं०,+डीप्] मङ्कुकर्ण नामक जो औषधि।

मूल-पाठ—पुं० [कर्म० सं०] किसी लेखक के वाक्यों की वह मूल शब्दावली जिसका प्रयोग उसने स्वयं ही अपने लेख्य में किया हो। (टेक्स्ट)

मूल-पुरुष—पुं० [कर्म० सं०] किसी वश को चलातेवाला व्यक्ति। किसी वश का आदि पुरुष।

मूल-पीली—स्त्री० [मध्य० सं०] छोटी पीई नाम का राक।

मूल-प्रकृति—स्त्री० [कर्म० सं०] सत्तार की बीज-शक्ति या वह आदिम सत्ता, जिसका परिणाम तथा विकास यह सारी सृष्टि है। आकाशक। प्रकृति।

मूल-बन्ध—पुं० [सं०] १. हृद्योग की एक कक्षा जिसमें सिद्धासन या ब्रह्मासन द्वारा शिवत और मूर्तों के सम्बन्धले भाग को बन्धकर अपना बाधु की ऊपर बढाते हैं, जिससे कुंडलिनी जागकर मेरु-दंड के सहारे ऊपर की ओर चढ़ने लगती है। २. तापिक पूजन में एक प्रकार का अनुलि-ग्यास।

मूलवर्ण—पु० [स० ष० त०] १. कोई बीज जठ से काटना। **मूलच्छेद** ।
२. मूल नक्षत्र ।

मूल-मूल—पु० [स०] वह मूल जिससे अन्य मूलों की सृष्टि मानी जाती है ।
वि० १ किसी वस्तु के मूल से संबंध रखनेवाला । २ जो किसी वस्तु के आधार पर या किसी की नकल न हो । (अंतरिजिनल) ३ असल ।
मौलिक । (फाइमेटल)

मूल-मूल्य—पु० [कर्म० स०] पुरवर्ती नीकर ।

मूल-मंत्र—पु० [कर्म० स०] वह उपाय जिससे कोई कार्य या सब कार्य जल्दी और सहज में सिद्ध हो जाते हैं ।

मूल-रत्न—पु० [ष० त०] राजधानी या शासन के केंद्र-स्थान की रक्षा ।
(की०)

मूल-रस—पु० [ब० स०] मूर्वा (लसा) ।

मूल-वित्त—पु० [कर्म० स०] मूल-धन । पूंजी ।

मूल-विध—वि० [ष० म०] जिसकी जड़ विपरीत हो । (कनेर) ।

मूल-व्यसन—पु० [कर्म० स०] ऐसा व्यसन जो किसी परिवार या वंश में पुरुषानुक्रम या कई पीढ़ियों से चला आ रहा हो ।

मूल-शाकट—पु० [स० मूल] शाकट । वह खेत जिसमें मूली, गाजर आदि मोटी जड़वाले पौधे बोये जाते हैं ।

मूल-स्थली—पु० [कर्म० स०] घेड़ का थाला । आलवाला ।

मूल-स्थान—स्त्री० [कर्म० स०] १ रहने का आरंभिक स्थान । २ बा-
दादा की जगह । पूर्वजों का निवास-स्थान । ३ प्रधान स्थान । राज-
धानी । ४ दीवार । भीत । ५ ईश्वर । ६ आधुनिक मुलतान नगर
का पुराना और मूल नाम । (शाहीन काल में यह तीर्थ था ।)

मूल-हृ—वि० [ष० त०] जिसने अपना संपूर्ण धन नष्ट कर दिया हो ।
(की०)

मूला—स्त्री० [स० मूल+टाप] १ सतावर । २ मूल नामक नक्षत्र । ३
पृथ्वी । (हि०)

स्त्री० [हि० मूली] बहुत बड़ी और मोटी मूली ।

† स्त्री०—मूली ।

मूलान—पु० [स० मूल] अणु । १ किसी वस्तु का मूल अणु या तत्व । २
वह मूल अणु जो आधार के रूप में है और जिसके ऊपर किसी प्रकार
की विस्तृत रचना या विकास हुआ हो । (बैन)

मूलाधार—पु० [मूल-आधार, ष० त०] हठयोग में माने हुए मानव-शरीर
के अन्दर के छ चक्रों में से एक चक्र जिसका स्थान अग्नि-चक्र के ऊपर
गुदा और शिशन के मध्य में है ।

मूलोद्य—यह चार दलोंवाला और लाल रंग का कहा गया है, और
इसके देवता गणेश माने गये हैं । कहते हैं कि इसे सिद्ध कर लेने पर
मनुष्य सब विद्याओं का ज्ञाता हो जाता है और सदा प्रसन्न तथा स्वस्थ
रहता है ।

मूलार्थ—पु० [स० मूल+अर्थ, एक प्रकार का वक्ता] होमिओपैथी चिकित्सा
में किसी औषधि का वह मूल रस या सार जिससे आगे चलकर
चिकित्सा के लिए अधिक दक्षिणवाले रूप प्रस्तुत किये जाते हैं ।
(अदर टिचर)

मूलिक—वि० [स० मूल+अन्+इक] १ मूल-संबंधी । मूल का । २ जो
मूल में हो । जैसे—मूलिक ग्यायालय—वह ग्यायालय जिसमें पहले-

पहल कोई मुकदमा या बाद उरस्थित किया गया हो । ३ कद-मूल
साकर जीवन निवृह करनेवाला ।

मूलिन—वि० [स० मूल+इनि] मूल से उत्पन्न ।

पु० पेड़ । बूझ ।

मूलिनी—स्त्री० [स० मूलिन्+ङीप्] जड़ के रूप में होनेवाली औषधि ।
जड़ी ।

मूलिनी-बर्ग—पु० [स० ष० त०] नगधवी, डबेलबचा, इयागा, विषुत्,
बुधवारका, सतलका, खेलापरजिता, मूककपर्णी, गांठुवा, ज्योतिष्मती,
बिंदी, शगपुष्पी, विषाणिका, अश्वगधा, डबती, और लीरिणी जड़ी
का समाहार । (सुभूत)

मूली—स्त्री० [स० मूलक] १. एक पौधा जो अपनी लंबी मूलायम जड़
के लिए बोया जाता है और जिसकी तरकारी बनती है । यह जड़ खाने
में मीठी, चरपरी और तीक्ष्ण होती है ।

मूला—(किसी को) **मूला** गाजर समझना—बहुत ही तुच्छ समझना ।
किसी निमित्त में न समझना ।

२ एक प्रकार का बीस ।

स्त्री० [स०] १ ज्येटी । २ एक पीराणिक नदी ।

† स्त्री०—मूलका (जड़ी) ।

मूलौय—वि० [स० मूल+छ—ईय] मूल का या मूल से होनेवाला ।

मूल-सम्बन्धी । जैसे—जिह्वा-मूलौय ।

मूलोच्छेद—पु० [स० मूल-उच्छेद, ष० त०]—मूलच्छेद ।

मूलोद्य—पु० [स० मूल-उद्य, ष० त०] व्याज का बढ़ने-बढ़ते मूल धन के
बराबर हो जाना ।

मूल्य—पु० [स० मूल+तत्] १ मुद्रा के रूप में उताना धन जो कोई चीज
रूप करने के लिए उसके बदले में किसी को देना पड़ता है । २ वह दर
या भाव जिस पर कोई चीज बिकती है । अर्थशास्त्र के अनुसार यह किसी
वस्तु की मांग और होनेवाली पूर्ति की भाषा के आधार पर स्थिर होता
है । ३ वह गुण या तत्त्व जिसके आधार पर किसी का महत्त्व या मान होता
है । ४. वह जो कुछ किसी को किसी कारणवशात् सेलना, भुगतान
या बलिदान करना पड़ता है । जैसे—अत्यधिक परिश्रम का मूल्य स्वा-
स्थ्य-हानि के रूप में चुकाना पड़ता है ।

किं० प्र०—बुखाना ।

वि० १ प्रतिष्ठा के योग्य । कवर के लायक । २ (पौधा) जो रोपा
जा सकता हो । ३ (फल) जो जड़ से उखाड़ी जाने के योग्य हो । जैसे—
उपद्र, मूँग आदि ।

मूल्य—पु० [स० √मूल्य+शिव्+त्पुट्-भन] किसी वस्तु का मूल्य
निश्चित या स्थिर करना । दाम आँकना । मूल्याकन । (वैत्पुएशन)
मूल्यधाम् (वत्)—वि० [स० मूल्य+मत्पु] १ जिसका मूल्य अत्यधिक
हो । बहुतमूल्य । २ जिनका महत्त्व या मान किसी की दृष्टि में बहुत
अधिक हो ।

मूल्य-विमान—पु० [ष० त०] वह विज्ञान या शास्त्र जिसमें इस बात का
विवेचन होता है कि बाजारों में वस्तुओं के मूल्य किन आधारों पर या
किन कारणों से घटते-बढ़ते रहते हैं ।

मूल्य-सूचकांक—पु० [ष० त०] दे० 'सूचकांक' ।

मूल्य-हास-निधि—पु० [ष० त०] वह कोष या निधि जिसका मुख्य

उद्देश्य दैनिक उपयोग में आनेवाले उपकरणों आदि के बिस जाने, पुराने तथा बेकाम हो जाने के कारण उनके मूल्य में क्रमशः होनेवाली घटी पूरी करना होता है। (वित्तियोगेषाम ङ्रंठ)

मूल्यवर्धन—पुं० [सं० मूल्य-वर्धन, ष० ङं०] १. किसी बात या वस्तु का मूल्य निवर्धित या निवृद्धि करने की क्रिया या भाव। २. (वैद्युत्पवन) २. किसी वस्तु की उपयोगिता, गुण, महत्त्व आदि का होनेवाला अंकन। कृत।

मूल्यानुसार—अव्य० [सं० मूल्य-अनुसार, ष० ङं०] दे० 'यथा-मूल्य'।
मूल्यमा—अ० [सं० मरण] मरना।

मूल—पुं० [सं० मूल से] बूहा।
मूष—पुं० [सं०/मूष (चुराना) +क] =मूषक (बूहा)।
मूषक—पुं० [सं० मूष +कृत] [स्त्री० मूषिका] १ बूहा। २. लाक्षणिक अर्थ में, वह जो चुरा-छिपा कर या जबरदस्ती दूसरों का धन ले लेता हो। ३. रहस्य संप्रदायों में, मन जो अज्ञान के अन्धकार में बूढ़े की तरह विचरता है और जिसे अन्त में काठ-स्पर्शी संपं खा जाता है।

मूषक-कर्णी—स्त्री० [ब० सं०, + ङीप्] मूसकानी (लता)।
मूषक-वाहन—पुं० [ब० सं०] गणेश।
मूषक—पुं० [सं०/मूष +व्युत्प-जन] चुरा या छीन लेना। मूसना। चुराना।
मूषा—स्त्री० [सं० मूष +टाप्] १ सोना आदि गलाने की चरिया। तैज-सावतिनी। २ देव-ताड़ नामक वृक्ष। ३ गोलक का पीषा। ४. गवाल। शरोषा।

मूषा-मुष्य—पुं० [सं० मष्य० सं०] नीला घोषा। सुविया।
मूषिक—पुं० [सं०/मूष +इकृत्] १ बूहा। मूसा। २. दक्षिण भारत का एक प्राचीन जनपद।

मूषिक-पथी—स्त्री० [ब० सं० +ङीप्] जल में होनेवाला एक प्रकार का तृण।

मूषिक-साधन—पुं० [प० ङं०] तत्र मे एक प्रकार का प्रयोग या साधन जिसके सिद्ध हो जाने से मनुष्य बूढ़े की बंली समझकर उससे शुभ-अशुभ फल कह सकता है।

मूषिकान्त—पुं० [सं० मूषिक-अन्त, ब० सं०] गणेश।
मूषिकोद्यन—पुं० [सं० मूषिक, अञ्च (प्राप्त करना) +व्युत्प-जन] गणेश।
मूषिका—स्त्री० [सं० मूषिक +टाप्] १ छोटा बूहा। बुधिया। २. मूसकानी लता।

मूषिकाद—पुं० [सं० मूषिक, अद् (खाना) +अप्] बिबाल। बिल्ला।
मूषिकारति—पुं० [सं० मूषिकारति, ष० ङं०] बिल्ली। बिबाल।
मूषीक—पुं० [सं०/मूष +इकृत्] बड़ा बूहा।
मूषीकरण—पुं० [सं०/मूष +ङि, इत् +दीर्घ +कृ (करना) + ल्युट्] चरिया मे घातु गलाने की क्रिया या भाव।

मूस—पुं० [सं० मूष] बूहा।
मूसकानी—स्त्री० [हिं० मूस +कानी (सं० आधान)] बूहा फँसाने का मिश्रण। पुहेदानी।

मूसना—सं० [सं० मूषण] १ किसी की चीज चुराकर उठा ले जाना। २. ठगना। ३. लूटना।
मूसर—पुं० [हिं० मूसल] =मूसल।
मूसल—पुं० [सं० मूषल] १ धान कूटने का एक प्रसिद्ध उपकरण जो

लंबे मोटे ढंठे के रूप मे होता है और जिसके मध्य भाग में एकदूने के लिए खड्डा सा होता है और छोर पर लोहे की साम जड़ी रहती है। २ उन्नत जाकार का प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र। ३ राम, कृष्ण आदि के चरणों में माना जानेवाला एक प्रकार का चिह्न। ४ पानी बेल नाम की लता।

मूसलचंद—पुं० [हिं० मूसल +चंद] १. गैरार। असम्प। २. अपड। ३. मूखं। ४ हट्टा-कट्टा परन्तु अस्मयं या निकम्मा आदमी।
पय—वाल-भात में मूसल चंद=दोसा बहुत ही अनपेक्षित या अनपेक्षित व्यक्ति जो ध्वयं हस्तक्षेप करना चाहता हो।

मूसलधार—अव्य० [हिं० मूसल +धार] मूसल के समान मोटी धार मे।

मूसला बड़—पुं० [हिं० मूसल] ब्ला की दो प्रकार की जड़ों में से वह जड़ जो मोटी और सीधी कुछ दूर तक जमीन में चली गई हो, तथा जिसमें द्धर-उधर सूत या शाखाएँ न मूटी हो। 'अबरा' से निम्न। (टैप वुड)

मूसली—पुं० [सं० मूषाली] हवाई की जाति का एक पौधा।
मूसा—पुं० [सं० मूषक] बूहा।
मूसा—पुं० [इव० मीषा से अ०] यहूदियों के एक प्रसिद्ध धार्मिक और सामाजिक नेता जिन्होंने मिस्र के इस्राइलियों की दासता से मुक्त किया था। ये पैगम्बर या ईश्वरी देवतुत माने गये थे, और इन्हीं के समय से पैगम्बरी मर्यादों का आरम्भ हुआ था। इनके उपदेशों का महत्त्व 'तीरिने' के नाम से प्रसिद्ध है।

मूसाली—पुं० [अ० मूसा +हिं० आर् (प्रय०)] मूसा के धर्म का अनुयायी, यहूदी।
वि० मूसा सम्बन्धी।

मूसालानी—स्त्री० [सं० मूषाकर्णी] गीली जमीन में होनेवाली एक प्रकार की लता जिसके प्रायः सभी अंग ओषधि के रूप में काम आते हैं। विशेषतः बूढ़े के काठने से उत्पन्न होनेवाला चिबू करने के लिए इच्छे पीसकर लगाया और इसका काढ़ा पिया जाता है।

मूसाल-हिरन—पुं० [हिं०] एक प्रकार का बहुत छोटा हिरन जो प्रायः एक निता लंबा और प्रायः इतना ही ऊँचा होता है (भाउस बीयर)

मूसीकार—पुं० [अ०] १ एक प्रकार का कल्पित पक्षी जिसके सम्बन्ध मे कहा जाता है कि इसकी बोच मे बहुत से छेद होते है जिनमे से अनेक प्रकार के राम निकलते हैं। सभी जातियों का मत है कि मनुष्यों मे संगीत का प्रचार इसी का गाना सुनने से हुआ है। २ संगीतज्ञ। ३ अरब देश का एक प्रकार का भावा।

मूसीक्री—स्त्री० [अ०] संगीत-कला। गान विद्या।
मूसक—पुं० [सं० मूषकण्ट, ष० ङं०, पृषी० ग-लोप] मार्कंडेय ऋषि के पिता एक मुनि।

मूष—पुं० [सं०/मूष (अन्वेषण) + क] [स्त्री० मूषी] १. जगली जान-वर। २ हिरन। ३. कस्तुरी मूष का नाफा। ४ बैण्डवों का एक प्रकार का तिलक। ५. कामशास्त्र में चार प्रकार के मूषकों मे से एक जो चिचिपी स्त्री के लिए उपयुक्त कहा गया है। ६. ज्योतिष में शुक की नी बीषियों मे से आठवीं बीषी जो अनुत्पाधा, ज्येष्ठ और मूल मे पड़ती है। ७ हाथियों की एक जाति जिसकी जर्बों कुछ बड़ी होंगी है और गडबटल पर मक्रेट चिह्न होता है। ८ जगहन का महीना। मार्ग-शीर्ष।

१. मृग-धिरा नक्षत्र । १०. मकर राशि । ११. एक प्रकार का यज्ञ ।
 १२. अन्वेषण । खोज । तलाश ।
मृग-कावच—मृ० [ब० सं०] १ वह जगल जिसमे शिकार के लिए बहुत
 से जानवर हों । २ उद्यान । बाग ।
मृग-धर्म (धर्म) —मृ० [ब० सं०] १ हिरन की छाल । २ ओधी अथवा
 आसन के रूप मे विछाई जानेवाली हिरन की छाल ।
मृग-वेटक—मृ० [म० √ चिट् (प्रेरणा)]—णिच् + ष्वल्—अक—वेटक, मृग-
 वेटक, य० सं० गध विद्या । मुक विद्या ।
मृग-छाला—मृ० [स० म० हि० छाला] हिरन की छाल । मृगधर्म ।
मृग-छीना—मृ० [स० म० हि० छीना] हिरन का बन्धा । मृग-शाक ।
मृग-जल—मृ० [मध्य० म०]—मृग-तृण्वा ।
पध—मृगजाल स्नान—अन्तर्होनी बात ।
मृगजा—स्त्री० [म० मृगज + टाप्] कस्तूरी ।
मृग-जासिक—स्त्री० [य० सं०] वह जास जिसमे हिरन फँसाये जाते है ।
मृगजीवन—मृ० [स० मृग/जीव (जीना) ; स्व्—अन, उप० सं०]
 शिकारी
मृग-तृणा—स्त्री०—मृग-तृणा ।
मृग-तृण्वा—स्त्री० [स० ब० म०] १ ऐसी तृणा जिसकी पूति प्राय
 असंभव हो । २ दे० 'मृग-परीचिका' ।
मृग-तृणिका—स्त्री०—मृग-तृणा ।
मृग-वशाक—मृ० [य० सं०] कुत्ता ।
मृग-बाध—मृ० [स० मध्य० सं०] १ वह वन जिसमे बहुत से मृग
 हों । २ काशी के सारनाथ नामक तीर्थ के पासवाले जगल का पुराना
 नाम ।
मृग-धर—मृ० [य० सं०] चद्रमा ।
मृग-धर्म—मृ० [स० सं०] श्रृंगाल ।
मृग-नयन—वि० [ब० सं०] [स्त्री० मृग-नयनी] हिरन की आँखों
 की तरह जिसकी आँखें सुन्दर हो ।
मृग-नाथ—मृ० [य० सं०] सिंह । शेर ।
मृग-नाभि—मृ० [य० सं०] कस्तूरी ।
मृग-नाभिजा—स्त्री० [म० मृगनाभि/जन् (उत्पन्न होना) + ङ, + टाप्]
 कस्तूरी ।
मृग-नेत्रा—स्त्री० [स० ब० सं०] मृगधिरा नक्षत्र से युक्त राशि ।
मृग-नेत्र—वि० [स्त्री० मृगनेत्री]—मृग-नयन ।
मृग-पति—मृ० [य० सं०] सिंह । शेर ।
मृगप्रिय—मृ० [य० सं०] १ भूतप । २ जल-कदली ।
मृग-शब्द—मृ० [म० मृग/शब्द (हृष्ट होना) ; अप्] कस्तूरी ।
मृग-मन्दा—स्त्री० [म० मृगमन्द + टाप्] कस्तूरी ।
मृग-परीचिका—स्त्री० [ब० सं०] १ मृग की होनेवाली जल की वह
 ध्रौति या कड़ी धूप मे चमकते हुए बाजू के कणों के फलस्वरूप होती है ।
 २ 'परीचिका' । (भिरैज) २ आक्षिणिक अर्थ मे अवास्तविक
 पदार्थ ।
मृग-मिश्र—मृ० [ब० सं०] चद्रमा ।
मृग-मुक्क—म० [ब० सं०] मकर राशि ।
मृगमेहा—स्त्री०—मृगमत्र (कस्तूरी) ।

मृगम्बदा—मृ०—मृगमद (कस्तूरी) । उदा०—देव मे सीस बसायी समेह
 कै, भाव मृगम्बद विद की राक्षी ।—देव ।
मृगधा—स्त्री० [स० √ मृग् + णिच् + श, यक्, णि-ल्योप, + टाप्] १ मृग
 पशुओं के शिकार के लिए किया जानेवाला वन-गमन । २ आशेट ।
 शिकार ।
मृगध्—मृ० [स० मृग/धा (गति) + ङु] १. ब्रह्मा । २. रीदड़ ।
 ३. व्याध ।
मृग-ध्व—मृ० [य० सं०] हिणो का दल ।
मृग-रसा—स्त्री० [ब० सं०, + टाप्] सहदेई नाम का पीवा । सहदेवी ।
 मद्राबला ।
मृग-राज—मृ० [स० य० सं०] सिंह । शेर ।
मृग-रोम—मृ० [य० सं०] पशुओं विशेषतः घोड़ों के नयने सूचने का
 एक रोम ।
मृग-रोम (न)—मृ० [य० सं०] ऊन ।
मृगरोमत्र—मृ० [म० मृगरोमत्र/जन् (उत्पत्ति) + ङ] ऊनी कपड़ा ।
मृग-साछन—मृ० [ब० सं०] चद्रमा ।
मृग-लेखा—स्त्री० [मध्य० सं०] चद्रमा पर का मृगचक ।
मृग-लीचन—मृ० [म० ब० सं०] [स्त्री० मृग-लीचनी, मृगलीचनी]
 [हरत के समान सुन्दर आँखोंवाला ।
मृग-लीचनी—[ब० स्त्री०, हि०] मृगलीचन का स्त्री रूप ।
मृग-वल्लभ—मृ० [य० सं०] एक तरह की फास ।
मृग-वारि—मृ० [मध्य० सं०] १ अह जल जिसकी भ्राति मृग को कड़ी
 धूप मे चमकते हुए बाजू के फलस्वरूप होती है । २. आक्षिणिक अर्थ
 मे, काई भ्रमपूर्ण पदार्थ या बात ।
मृग-वाहन—मृ० [ब० सं०] वायु । हवा ।
मृगव्य—मृ० [म० मृग/व्यथ (वेधना) + ङ] १. वह जन्तु जिसका
 शिकार मृग या शेर करता हो । २. वह जिसे मार डालने-अथवा
 हानि पहुँचाने मे अपना कोई उद्देश्य सिद्ध होता या काम निकलता हो ।
 ३ शिकार ।
मृग-व्याध—मृ० [मध्य० सं०] १. शिकारी । २. नक्षत्र ।
मृग-धिरा—मृ० [म० मृगधिरा + टाप्] २० नक्षत्रों मे से पंचम नक्षत्र
 जो तीन तारों का है ।
मृग-धीर्य—मृ० [ब० सं०] १. मृगधिरा नक्षत्र । २. माध महीना ।
मृग-श्लेष्—मृ० [स० सं०] व्याघ्र ।
मृगाहा (हृन्)—मृ० [म० मृग/हृन् (हिना) + णिच् + णि] शिकारी ।
मृगाक—मृ० [मृग-अक, ब० सं०] १. चद्रमा । २. दे० 'मृगाक रस' ।
मृगाक-रस—मृ० [मध्य० सं०] वैद्यक मे एक प्रकार का रस जो सुवर्ण
 और रत्नादि मे बनता है और क्षयरोग मे अत्यधिक मृगकारक माना
 जाता है ।
मृगातक—वि० [मृग-अनक, ब० सं०] मृगो या जगली जानवरों का
 अन्न या नाश करनेवाला ।
 पृ० चीना नामक हिमक पत्तु ।
मृगा—स्त्री० [स० मृग । अच् + टाप्] सहदेई नाम का पीवा ।
मृगाक्ष—वि० [मृग-अक्ष, ब० सं०, + टाप्] [स्त्री० मृगाक्षी] मृग की
 आँखों के समान सुन्दर आँखोंवाला ।

मूलाक्षी—वि० स्त्री० [सं० मूलाक्ष+ङीष्] मूयनयनी । मूयलोचनी ।
 मूलाक्षि—पु० [मूग-अजिन, षं० सं०] मूग-छाला । मूग-धर्म ।
 मूलाक्षीच—स्त्री० [सं० मूग+आ+ञीष् (जीना)+अच्] १. कन्दूरी ।
 २. वायवी लता ।
 मूलाद्—पु० [सं० मूग/वद् (खाना)+क्विप्] मिह, बीता, बाध
 इत्यादि भय्य जन्तु जो मूगो को खाते हैं ।
 पि० मूगो को खानेवाला ।
 मूलाक्ष—वि०, पु० [सं०/वद्+ङीष्+अन्=अवन, मूग-अवन, षं० तं०]
 मूगाद् ।
 मूलाक्षी—स्त्री० [सं० मूगावन+ङीष्] १. इद्रवाक्षी । इद्रायतं ।
 २. सहदेई । ३. ककडी ।
 मूगाराति—पु० [सं० मूग-अरति, षं० सं०] कुत्ता ।
 मूगाक्ष—पु० [सं० मूग-अक्ष, षं० सं०] सिंह । शेर ।
 मूगित्त—मू० ह्र० [सं०/वद्+ङीष् (मोजना)+क्त] जिसके विषय में छान-
 बीन की गई हो । अन्वेषित ।
 मूगिनी—स्त्री० [सं० मूग] मूग की मादा । मादा हिरन । हिरनी ।
 मूगी—स्त्री० [सं० मूग+ङीष्] १. मादा हिरन । २. पीले रंग की
 एक प्रकार की कौडी । ३. मिरली नामक रोग । अपस्मार । ४.
 कन्दूरी । ५. कश्यप ऋषि की क्रोधवशा नाम्नी पत्नी से उत्पन्न दस
 कन्याओं में से एक, जिससे मूगो की उत्पत्ति हुई और जो पुलह ऋषि
 की पत्नी थी । ६. एक प्रकार का वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में एक
 रगण (SIS) होता है । विधावृत्त ।
 मूगीबल—पु० दे० 'मूग-नृणां' । उदा०—मूगीबल जल दरई जैसा ।
 —नदवांस ।
 मूगैत्र—पु० [सं० मूग-इत्र, षं० सं०] सिंह । शेर ।
 मूगैत्र-वटक—पु० [सं० उपमि० सं०] बाज (पक्षी) ।
 मूगेल—स्त्री० [सं० मूग+हिं० एल (प्रत्य०)] मुगहली आँखोंवाली
 एक प्रकार की मछली ।
 मूगेश—पु० [सं० मूग-ईश, षं० सं०] सिंह । शेर ।
 मूगीत्स—पु० [सं० मूग-उत्सव] मूगीतिरा वक्रधर ।
 वि० मूगो में उत्सव या श्रेष्ठ ।
 मूग्य—वि० [सं०/मूग् (सोजना)+यत्] १. जिसका पीछा किया
 जाय । २. अन्वेषण किये जाने के योग्य ।
 मूग्यकटिक—पु० [सं० मूद्-शकटि, षं० सं०,+कप्] संस्कृत का एक
 प्रसिद्ध नाटक ।
 मूज—पु० [सं०/मूज् (मूज् करना)+क] पलायक या मूदग नाम का
 बाजा ।
 मूजा—स्त्री० [सं०/मूज्+अञ्ज+टाप्] मार्जव । (दे०)
 मूजाव—स्त्री०=मर्जावा । उदा०—सति ऐश्वर्यं, मूजाव बेध की तिलके
 हाथ बिकानो।—भगवत् रसिक ।
 मूज्य—वि० [सं०/मूज्+क्यप्] जिसका मार्जन किया जा सके या
 किया जाने को हो । मार्जनीय ।
 मूज्—पु० [सं०/मूज् (समुत्तु करना)+क] [स्त्री० मूजा, मूजानी]
 सिव । महादेव ।
 मूज्व—पु० [सं०/मूज्+ल्यु—अल] अनुग्रह । रूप ।

मूजा—स्त्री० [सं० मूज्+टाप्] १. पार्वती । २. तुर्गा ।
 मूजानी—स्त्री० [सं० मूज्+ङीष्, अनुग्] पार्वती । मूजा । (दे०)
 मूडीक—पु० [सं०/मूज्+कीकन्] १. हिरन । २. शिव । ३. मछली ।
 मूजाक—स्त्री० [सं०/मूज्+कालम्] १. कमल के पौधे का डठल ।
 कमलनाल । २. कमल की डठ । ३. उत्तरी । बस ।
 मूजालिका—स्त्री० [सं० मूजाली+कन्+टाप्, ह्रस्व] कमल की डंठी ।
 कमल-नाल ।
 मूजालिनी—स्त्री० [सं० मूजाल+इति+ङीष्] १. कमलिनी । २.
 कमलों का समूह । ३. वह ताल जहाँ कमल अधिकता से होते हैं ।
 मूजाली—स्त्री० [सं० मूजाल+ङीष्] कमल का डठल । कमल-नाल ।
 मूजाप—पु० [सं० मूजाप] १. मिट्टी, बीनी मिट्टी आदि के बने हुए
 बरतन । २. विवर्धित तथा व्यापक अर्थ में, मिट्टी, बीनी मिट्टी के
 बने हुए सिलौने, मूर्तियाँ आदि सभी चीजों । (पाटरी)
 मूज्यम—वि० [सं० मूज्+मयर्] [स्त्री० मूज्यपी] मिट्टी का बना
 हुआ ।
 मूज्यति—स्त्री० [सं० मूज्+मूर्ति, षं० सं०] १. मिट्टी की बनाई हुई
 मूर्ति । २. मृग तथा प्राचीन युग में मिट्टी की बनी हुई मूर्ति का मुँह
 और सिर । (टेरां कोटा)
 मूज्—वि० [सं०/मू (मरना)+क्त] १. मरा हुआ । मूर्दा । २.
 मीमा हुआ । याचित । ३. जिसका पूर्ण रूप में अस्त या नाश हो चुका
 है ।
 मूज्य—वि० [सं० मूज्+क्त] १. मरा हुआ । मूर्दा । मृत । २.
 साहित्य में, (पद या वाक्य) जिसका कुछ भी वास्तविक अर्थ न हो ।
 जैने—(क) बादाम में सोया हुआ आदमी । (ख) चूँटो पर हाथी
 की सवारी ।
 पु० १ मर हुआ प्राणी या उसका मृत शरीर । २ घर के किसी
 प्राणी या मनुष्यो के मर जाने पर होनेवाला शोच ।
 मूजक-कर्म—पु० [सं० षं० सं०] मूजक की शूद्र गति के निमित्त किया
 जानेवाला कृत्य । श्रम कर्म । जैने—दाह, पीडयो, दशगात्र इत्यादि ।
 मूजक-भूय—पु० [सं० षं० सं०] रात्रि । भस्म ।
 मूजकल्प—वि० [सं० मूज्+कल्पप्] दे० 'मूज्-प्राय' ।
 मूजकालिक—पु० [सं० मूजक-अलक, षं० सं०] शूद्राल । गौड ।
 वि० मूज शरीर का अस्त या नाश करनेवाला ।
 मूज्-जीव—पु० [सं० कर्म० सं०] १ मरा हुआ । प्राणी । २ तिलक
 (वृक्ष) ।
 मूज्-जीवनी—स्त्री० [सं० मूज्/जीव (जीना)+ङीष्+ल्यु—अन,
 +ङीष्] १ मृत शरीर को फिर से जीवित करने की कला या विद्या ।
 २ इंधिया घास ।
 मूज्-अवत (अंज्)—वि० [षं० सं०, अनिच्] जो अन्त में मर जाता या
 नष्ट हो जाता हो । नश्वर ।
 मूज्-नश्व—पु० [तु० सं०] शूद्राल । गौड ।
 मूज्-आत्यक—वि० [षं० सं०,+कप्] जिसकी माँ मर चुकी हो ।
 मूज्-नश्व—वि० [षं० सं०] [स्त्री० मूज्-नश्व] १. (जीव या प्राणी)
 जिसके बच्चे हैं होकर मर जाते हो । २. (जीव या प्राणी) जिसका
 बच्चा होकर मर गया हो ।

मृत-संज्ञीयन—वि० [स० सम्√जीव् + णिच् + ल्यु—अन, मृत-संज्ञी-वन, प० तं।] [स्त्री० मृत-संज्ञीवनी] मृत को जीवित करनेवाला (पर्याय)।

मृत-संज्ञीवनी—स्त्री० [स० ग०जीवन + ङीप्, मृत-संज्ञीवनी, ष० तं०] १ एक प्रकार की कल्पित बूटी जिसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि इसके खिलाते से मरता भी जी उठता है। २ वैद्यक में एक प्रकार का आसव या मुरा जो बहुत पीठिक कही गई है।

मृत-संज्ञीवनी-रस—पु० [मध्य० ग०] वैद्यक में एक प्रकार का रसोपश जिमका अथवाहार उच्चर में होता है।

मृत-संज्ञीवनी मुरा—स्त्री० [स० मध्य० ग०] वैद्यक में एक प्रकार का पीठिक आसव।

मृत-स्नात—पु० कृ० [मुमुग्ना स०] १ (मृतक) जिसे दाह-कर्म से पहले स्नान कराया गया हो। २ (अश्वि) जिमने किसी क्षत्राजित या शत्रु के मरने पर उनके उद्देश्य से स्नान किया हो।

मृत-स्नान—पु० [मध्य० सं०] १ मृतक को कराया जानेवाला स्नान। २ किसी भार्द-अश्वु के मरने पर किया जानेवाला स्नान।

मृतामव—पु० [मृत-आमव, व० सं०] तुष्य। तृप्तिया।

मृताक—पु० [सं० मृत√अन् (मृपित करना आदि) + क्तुल्—अक] १ अरहर। २ गोपी-चन्दन।

मृतालीष—पु० [मृत-अलीष, मध्य० सं०] तुलक। (दे०)

मृति—स्त्री० [सं०√मृ (मरण) + णिन्त् + णिन्त् + णिन्त्] मृत्पु। मीत।

मृति-रक्षा—स्त्री० [प० तं०] साम्प्रतिक शास्त्र के अनुसार हुयेगी पर की एक ग्वा जिमने व्यथित की आयु का अनुमान लगाया जाता है।

मृति-स्थित—वि० [मृत-उत्थित, धर्म० ग०] जो मरकर फिर जी उठा हो।

मृत्कर—पु० [ष० तं०] कुम्हार।

मृत्करिष—पु० [ष० तं०] मिट्टी का बरतन।

मृत्वालक—पु० [मृत्√वल्क (प्रतिष्ठा) + णिच् + षण् + क्तु] १ अरहर। २ गोपी चन्दन।

मृत्तिका—स्त्री० [सं० मृत् + णिन्त् + टाप्] १ मिट्टी। वाक। २ अरहर।

मृत्तिका-लक्षण—पु० [प० तं०] पुराने घरों की मिट्टी की दीवारों पर सीध होने से निरुन्नेवाली एक प्रकार की नमकीन मिट्टी। नौना। छौना।

मृत्तिकावती—स्त्री० [सं० मृत्तिका + मत्पु + ष + ङीप्] नर्मदा के किनारे की एक प्राचीन नगरी। (महाभारत)

मृत्पत्र—पु० [ष० तं०] मिट्टी का बरतन।

मृत्पिच—पु० [ष० तं०] मिट्टी का देना या लोटा।

मृत्पुत्र—वि० [सं० मृत्पु + जि (जीतना) + षच्, मृत्] जिमने मृत्पु को जीत लिया हो। अमर्।

पु० १ शिव का एक नाम और रूप। २ शिव का एक मन्त्र जो अकाल-मृत्पु का निवारक माना जाता है।

मृत्पुत्र-रस—पु० [सं० मध्य० सं०] उच्चर के लिए उपयोगी एक रसोपश। (देवक)

मृत्पु—स्त्री० [सं०√मृ (मरना) + ल्यक्] १. जीव-जंतुओं, पेड़-पौधों

की आयु की वह अंतिम अवस्था जिसमें उनके जीवन का स्थायी रूप में और सदा के लिए अंत हो जाता है। मरण। मौत। २ किसी चीज या बात की उन्नत प्रकार की अंतिम अवस्था। जैसे—किसी की राजनीतिक मृत्पु, स्नेह-आचार की मृत्पु। ३. भाया। ४. [सं०] १ यम। २ ब्रह्मा। ३ विष्णु। ४. कामदेव। ५ कलिगुण। ६ एक साम मन्त्र। ७ कलित श्रौतित्व में जन्म-कुडली का आठवां घर जिससे मरण-संज्ञी फलाफल का विचार होता है। ८ बौद्ध देवता पद्मपाणि का एक अनुचर।

मृत्पु-कर—पु० [प० तं०] मृत श्ववित की सपत्नि पर लगनेवाला कर। (देख इट्टी)

मृत्पु-रुद्ध—पु० [सं०] अपराधी को जेल से मार डालने का दंड या सजा। प्राणशूल। (कैपिटल पनिशमेंट)

मृत्पु-वर—स्त्री० [सं० + हिं०] =मरणघण्टी।

मृत्पु-नाशक—पु० [ष० तं०] पारा।

मृत्पु-पात—पु० [ष० तं०] यम का पात्र।

मृत्पु-पुष्प—पु० [ब० सं०] १ ईला। गन्ना। २ केला।

मृत्पु-फल—पु० [ब० सं०] १ केला। २ महाकाल नामक लता।

मृत्पु-बीज—पु० [ब० सं०] बीस।

मृत्पु-लोक—पु० [प० तं०] १ यम-लोक। २ मर्त्य-लोक।

मृत्पु-शय्या—स्त्री० [ष० तं०] बह शय्या या विग्नर जिम पर रंगी-मरणास्त्र रूप में पड़ा हुआ हो। (देख बेड)

मृत्पु-सव्या—स्त्री० [प० तं०] किसी दुष्टंटा, महानारी आदि में मरनेवालों की शय्या। (देख-रोल)

मृत्पु-मृति—स्त्री० [ब० सं०] केरुके की मादा। (कहने हैं कि यह अंडे देने के बाद मर जाती है।)

मृत्स—वि० [ग०] विपचिपा।

मृत्सा—स्त्री० [सं० मृत् + सा + टाप्] =मृत्सता।

मृत्सना—स्त्री० [सं० मृत् + स्ना + टाप्] १ बहिया चिकनी मिट्टी। २ मिट्टी।

मृत्वा—अध०—मृत्वा (वृत्वा)।

मृत्—स्त्री० [सं०√मृ (वृणं होना) + षच्] मृत्तिका। मिट्टी।

मृत्वं—पु० [सं०√मृत् + अङ्गुत्त या मृत् + अंग, व० सं०] १. डोलक की तरह का एक प्रसिद्ध वाजा। २ शीम। ३ मृदंग (बाजे) के आकार का घोषे का एक प्रकार का उपकरण जिसमें मोम-बत्तियां जलाई जाती थी।

मृदंगिया—पु० [सं० मृदंग + हिं० इया (प्रय०)] वह जो मृदंग बजाता हो।

मृदंगी (मिन्) —पु० [सं० मृदंग + इनि] मृदंग बजाने-वाला। मृदंगिया। स्त्री० मृदंग के आकार की आतिशबाजी।

मृत्वा—स्त्री० [सं० मृत् + टाप्] मृत्तिका। मिट्टी।

मृत्वित—पु० कृ० [सं०√मृत् (वृणं होना) + षत्] कुचला, मसला या चूर किया हुआ।

मृत्विनी—स्त्री० [सं०√मृत् (वृणं करना) + क्त + इनि + ङीप्] अन्धी मिट्टी। २. गोपीचन्दन।

मृत्—वि० [सं०√मृत् (वृणं करना) + क्त, मध्यसारण] [स्त्री० मृत्वी,

भाव० मृदुता १. कोमल। नरम। मृदुलाम्। २. भिय और सुदुहनाम्।
 मधुर। ३. धीमा। मदा। हलका। ४. उग्रता, प्रबलता, तीव्रता
 आदि से रहित। जैसे—मृदु स्वभाव।
 स्त्री० १. वृत्तकुमारी। वीजुबारी। २. गृही का पीठा और फूल।
 मृदु-मंडक—मृ० [ब० सं०] कटहरया।
 मृदु काम—मृ० [प० त०] बिबा, अनुराधा, मृगशिरा और रेवती इन चारो
 नक्षत्रों का एक गण।
 मृदुपत्र—मृ० [ब० सं०] १. भोजपत्र का पत्र। २. पीजू वृक्ष।
 ३. लाल लज्जालू।
 मृदुता—स्त्री० [स० मृदु + तल् + टाप्] १. मृदु होने की अवस्था या भाव।
 कोमलता। मृदुलाम्भित। मार्दवं। २. धीमापन। मन्दता।
 मृदु-वर्ष—मृ० [कर्म० सं०] सफेद कुआ।
 मृदुपत्ता—स्त्री० [म०] एक प्रकार की समृद्धि मछली। सामन।
 (सैन्धव)
 मृदु-मुल्य—मृ० [ब० सं०] धिरीय (वृक्ष)।
 मृदु-कर्म—मृ० [ब० सं०] १. मारियल। २. विकल कर्म।
 मृदुल—वि० [स० मृदु + लच्] [भाव० मृदुलता] १. कोमल। मृदुलाम्।
 २. दयालू। दयामय। ३. सुकुमार।
 ५०१ जल। पानी। ३. अजीर।
 मृदु—वि० [स० मृदु + यच्] (पदार्थ) जो गीला होने पर मनमाने ढंग से
 और मनमाने रूप से लाया जा सके। जिसे अपने इच्छानुसार सभी
 प्रकार के स्थायी रूप दिये जा सकें। (प्लास्टिक) जैसे—गीली मिट्टी
 जिसे सैंकडो प्रकार के रूप दिये जा सकते हैं।
 मृद्धी—स्त्री० [स० मृदु + ङीप्] १. कोमल अर्धोत्पली स्त्री। कोमलायी।
 २. मकद अंगूर।
 मृद्धीका—स्त्री० [स० मृदु + ईकन + टाप्] १. कपिल दाया। सफेद अंगूर।
 २. अंगूरी सराब। दशाशख।
 मृद्धीकासख—मृ० [स० मृद्धीका-आसख, प० त०] अंगूर की सराब।
 दशाशख।
 मृध—मृ० [स० √ मृध (गीला होना) + क] मृध। लडाईं।
 मृनाल—मृ० = मृणाल।
 मृगमय—वि० [स० मृदु + मयट्] [स्त्री० मृगमयी] = मृगमय।
 मृषा—अव्य० [स० √ मृष + क] झूठ-मूठ। कथ्यं।
 वि० अमत्य। झूठा।
 मृषात्व—मृ० [स० मृषा + त्व] अमत्यता। झूठपन। मिथ्यात्व।
 मृषाभाषी (मिषु) —वि० [स० मृषा + भाष + (बोलना) + णिनि] झूठ
 बोलनेवाला।
 मृषाबाध—मृ० [स० प० त०] १. झूठ बोलना। २. झूठ बाध।
 मृषाबाधी (मिषु) —वि० [स० मृषा + बाध + (बोलना) + णिनि] झूठ
 बोलनेवाला। मिथ्याबाधी।
 मृष्ट—मृ० क० [स० √ मृष्ट (झूठ करना) + षत्] मृष्ट किया हुआ।
 बोधित।
 प० मिषं।
 मृष्टि—स्त्री० [स० √ मृष्ट + किलच्] परिशुद्धि। बोधन।
 म्रं—विभ० [स० मध्य०, प्रा० मज्ज; पु० हि० म्रं] अधिभरण का एक

का चिन्ह जो किसी शब्द के आगे लगाकर नीचे लिखे अर्थ देता है—(क)
 भीतरी भाग में या अन्दर। जैसे—(क) नले में छाले पड़ना, कमरे
 में व्यक्त होना। (ख) चारों ओर; जैसे—गले में हार पड़ना।
 (ग) किसी अवस्थान या आधार पर। जैसे—पेड़ में फल लगना।
 (घ) नियत अवधि या काल पुरा होने से पहले। जैसे—एक घंटे में
 यह काम हो जायगा। (ङ) किसी वर्ष या समूह के क्षेत्र या परिधि
 के अन्तर्गत। जैसे—कर्मियों में कालिदास सर्वश्रेष्ठ थे। (च) कार्य,
 व्यापार आदि सलमता। जैसे—बढ़ दिन भर काम में लगा रहता
 है।
 स्त्री० [अनु०] बकरी के बोलने का शब्द।
 मैगनी—स्त्री० [हि० मीगी] पशुओं की ऐसी विष्टा जो छोटी-छोटी
 गोमलियों के आकार में होती है। लंडी। जैसे—ऊँट, बूहे या बकरी
 की मैगनी।
 मैगा—मृ० मैवक। उदा०—सर्पदंन जान हुआ कर मैगा।—जायसी।
 मैङ्ग—स्त्री० [हि० डोंड का अनु० या सं० मडल] १. ऊँची उठी हुई
 तग जमीन जो दूर तक लकीर के रूप में चली गई हो। २. दो खेतों
 के बीच की कुछ ऊँची उठी हुई संकरी जमीन जो उनकी सीमा की सूचक
 होती है और जिस पर से लोग आते-जाते हैं। डांड। पगडबी। ३
 डांड। रोक। उदा०—गुहूह मल नील मैङ्गेदेनिहारा।—जायसी।
 ४. मर्यादा। उदा०—अस सम मैङ्गिनी मति खोवहु।—सूर।
 मैङ्क—मृ० = मैडक।
 मैङ्क-वन्धी—स्त्री० [हि० मैङ्ग बाधना] मैङ्क बनाने का काम।
 मैङ्गरा—मृ० [स० मडल] १. घेरने के लिए बनाया हुआ कोई गोल
 चक्कर। जैसे—ढोलक या तबले का मैङ्गरा जो चमके के चारों ओर
 लगाया जाता है। २. मेडुली। ३. किसी गोल वस्तु का उभरा हुआ
 किनारा। ४. किसी वस्तु का मडलकार ढांचा। जैसे—चलनी का
 मैङ्गरा।
 मैङ्गरामा—स० [हि० मैङ्गरा] किसी बीज के चारों ओर मैङ्गरा या
 घेग बनाना या लगाना।
 अ० १. चारों ओर घेरे या चक्कर के रूप में स्थित होना। उदा०—
 राजपरिवल तैह्र पर मैङ्गगहि।—जायसी। २. दे० 'मडलामा'।
 मैङ्गक—मृ० [स० मङ्क] १. एक प्रसिद्ध अलम्बलचारी छोटा जंतु।
 २. रहस्य मंत्रदाय में, मन जिसे अन्त से कालरूपी सृष्टि निगल जाता
 है।
 मैङ्की—स्त्री० = मैडक की माता।
 मैधी—स्त्री० [स० मा = सीमा + इव्य (रीति) + णिच् + अच् + ङीप्]
 मैही।
 मैहर—पु० [अ०] [भाव० मेवरी] सदस्य। (दे०)
 मैहरी—स्त्री० [अ० मैङ्क में] मैङ्क होने की अवस्था या भाव। सल-
 स्यता। (मैवरीधाय)
 मैह—मृ० [स० मेघ] १. आकाश से वर्षा के रूप में गिरनेवाला जल।
 २. पानी बरसना। वर्षा।
 ऋ० प्र०—पडना।
 मैह्विद्या—वि० [हि० मैह्वी] मैह्वी की तरह का हरापन लिए लाल
 रंगवाला।

पुं० उक्त प्रकार का रंग। (मट्टिल)
मैत्री—स्त्री० [सं० मैत्री] १ एक प्रसिद्ध कैंटीली छात्री या पीषा जिसकी पत्तियों से गहरा लाल रंग निकलता है और इसी लिए जिन्हे पीसकर रक्तियां अपनी हृद्येलियो और तल्लुओं में, उन्हें रपने से लिए लगती हैं। (मट्टिल) २. उक्त पीस की पत्तियों का पीसा हुआ चूर्ण।
मैत्री—मैत्री रचना—मैत्री का अन्धा और गहरा रंग आना। **मैत्री रचना** या **रचना**—मैत्री की पत्तियां पीसकर हृद्येलियो या तल्लु में लगाना।
मैत्राज—पुं० [अ०] १ उपर चढ़ने की सीढ़ी। श्रेणी। २ मुहम्मद साहब के जीवन की वह षटना जिसमे उनके आकाश पर बहकर ईश्वर से भेंट करना माना जाता है।
मैत्र—पुं० [म० मे, √के (सह्य करना)+क] बकरा।
मैत्र—पुं० [अ०] १. सौन्दर्य-वृद्धि के लिए शरीर के अंगों में प्रसाधन या सजावट की सामग्री लगाने की क्रिया या मात्रा। रूप-सज्जा। २ छात्र-आने में, सीसे के बैठाये या कपोज किए हुए लवणों की पृष्ठी के रूप में लगाना। पेज बाँधना।
मैत्रा—स्त्री०—मिकदार (मात्रा)।
मैत्र—पुं० [म०] विषय पर्वत का एक प्राग जो बीरों के बाल-पास है और जिसमें अमरकट है। नर्मदा नदी यहीं से निकलती है। यह मैत्रला के आकार का है, इसी से इसे मैत्रल भी कहते हैं।
मैत्रल-कल्पका—स्त्री० [सं० य० तं०] नर्मदा (नदी)।
मैत्रल-सुता—स्त्री० [सं०] नर्मदा (नदी)।
मैत्र—स्त्री० [फा० मे] १ लोहे का वह लम्बा उपकरण जो एक ओर मुकीला और दूसरी ओर बिपटा होता है, और जो किसी तल में गाड़ने, ठोकने आदि या चीजे कही जडने के काम में आता है। काटा। कील। २ लकड़ी आदि का बूटा।
क्रि० प्र०—उत्थापना—गाड़ना—ठोकना—मारना।
पुशा—(किसी के) मैत्र ठोकना—दूरी तरह से दबाना या हराना।
(किसी को) मैत्र ठोकना—किसी के हाथों-पैरों में कील ठोककर उसे कहीं स्थिर कर देना। (प्राचीन काल का एक प्रकार का बहुत कठोर दण्ड)। **मैत्र मारना**—(क) कील ठोककर किसी आदमी, काम या चीज का चलना या हिलना बन्द कर देना। (ख) ऐसी बात कहना जिससे चलते हुए काम में बाधा पड़े। धक्की मारना।
३. लकड़ी की फट्टी जो किसी छेद में बैठाई हुई वस्तु को डोली होने से रोकने के लिए ठोकी जाय। पच्छर। ४. धोरे का वह लंगड़ापन जो नाल जडते समय किसी कील के ऊपर टुक जाने से होता है।
 ↑पुं०—मेय।
मैत्रा—स्त्री० [सं० मैत्रला] बाँस की वह फट्टी जिसे डले या झाड़े के मुँह पर गोल घेरा बनाकर बाँध देते हैं।
मैत्रल—स्त्री० [म० मैत्रला] १. करघनी। किंकिणी। २. वह चीज जो किसी दूसरी को कसने, बाँधने आदि के लिए उसके मध्य भाग में चारों ओर लगाई या लपेटेी जाय। ३. डे० 'मैत्रला'।
मैत्रल—स्त्री० [सं०/मि (मशेरे)+लघ+टा] १. लकी पट्टी की तरह की वह वस्तु जो किसी दूसरी वस्तु के कटि-प्रदेश या मध्य

भाग के चारों ओर फैली हुई या स्थित हो। २. कमर में लपेटकर पहनने का मूत या डोरी। करघनी। जैसे—**मूत्र-मैत्रला**। ३. करघनी या नागरी नाम का गहरा जो कमर में पहना जाता है। ४. मंढलाकार घेरा। ५. कमरबन्द। पट्टी। ६. छत्री, डबे आदि की सामी। साम। ७. पर्वत का मध्य भाग। ८. नर्मदा नदी। ९. हौम-कुंड के ऊपर चारों ओर बना हुआ मिट्टी का घेरा। १०. कपड़े का टुकड़ा जो साधु कोष गले में डाले रहते हैं। ११. पुत्रिणपत्नी।
मैत्रला—स्त्री० [सं० मैत्रला] १. गले में डालकर पहना जानेवाला एक प्रकार का पहनावा जिससे पेट और पीठ ढकी रहती है और दोनों हाथ खुले रहते हैं। २. करघनी। तागरी।
मैत्री—वि० [फा०] जिसमे मैत्र से छेद किया गया हो।
पत्र—मैत्री रूपया—ऐसा रूपया जिसमे छेद करके चारों निकाल की गयी और तीसरा भर दिया गया हो।
मैत्रा—पुं० [सं० मत्त+गज] हाथी। (गज०)।
मैत्रा—पुं० [अ०] १ वह स्थान जहाँ सेना के लिए गोले, बाकू रखते हैं। बाकूखाना। २. बहूक तथा राइफल में वह स्थान जिसमें चलाने के लिए गोली रखी जाती है। ३. सामयिक-पत्र, विशेषतः पाक्षिक या मासिक पत्र।
मैत्रा—स्त्री०—मैगनी।
मैत्रा—पुं०—मेगज (हाथी)।
मैत्र—पुं० [सं०/मिह, +बन्ध, कुल] १ आकाश में होनेवाला जल-कणों का वह द्रव्य रूप जो हवा में वायु के जमने के फलस्वरूप बनता है। (कलाउड) २ समीत में छ रागों में से एक जो वर्षा ऋतु में गायता जाता है। ३. मुरतक। मोची। ४ तबुलीय शाक। ५. राक्षस।
मैत्र-काल—पुं० [य० तं०] वर्षा ऋतु। बरमात।
मैत्र-गर्जन—पुं० [य० तं०] बादलों की गहराडाहट।
मैत्र-गर्जना—स्त्री०—मैत्र-गर्जन।
मैत्र-किसक—पुं० [य० तं०] चातक।
मैत्र-काली—पुं० [य० तं०] बादलों का मनुह।
मैत्र-जीवन—पुं० [य० तं०] चातक।
मैत्र-श्रोति (स्त्री)—स्त्री० [य० तं०] बिजली।
मैत्र-अंबर—पुं० [य० तं०] १ बादलों की गरज। २ बहुत बड़ा घामियाना जिसे दल-बादल भी कहते हैं। ३ गरजों का एक प्रकार का छत्र।
मैत्रअंबर रस—पुं० [मध्य० नं०] वैद्यक में एक प्रकार का रसौषध जो पवास और हिमकी बन्द करनेवाला कहा गया है।
मैत्र-बीष—पुं० [य० तं०] बिजली।
मैत्र-हार—पुं० [य० तं०] आकाश।
मैत्र-धनु (स्त्री)—पुं० [य० तं०] इन्द्र-धनुष।
मैत्राधर—पुं० [य० तं०] इन्द्र।
मैत्र-नाभ—पुं० [य० तं०] १. मैत्र का गर्जन। २. [मैत्र/वदु (सह्य)। गिषु+अणु] वस्त्र। ३. मौर। मयूर। ४. विल्ली। ५. पवास। ६. चौलाई। ७. राक्षस का एक पुत्र; इन्द्रजित।
मैत्रावजित—पुं० [म० मैत्राव/जि (जीतना)+विषय, तुल्य-आगम] लक्ष्मण।

मेषवाच-रत्न—**पुं०** [सं० मध्य० सं०] वैदिक में एक प्रकार का च्चर नासक रत्नीयष।

मेष-निर्घोष—**पुं०** [प० तं०] बादलों की गरज।

मेष-नदल—**पुं०** [प० तं०] बादलों की धटा।

मेष-नति—**पुं०** [प० तं०] बादलों का राजा या स्वामी, इंद्र।

मेष-मुष्प—**पुं०** [प० तं०] १. जल। २. बोला। ३. बकरे का सींग।

४. घोषा। ५ [मेष/मुष्प (मिलना)+अच्] वृष का बोझ।

६ कीचुक के रथ का एक बोझ।

मेष-मुष्पा—**स्त्री०** [सं० मेष-मुष्प+टाप्] १. जल। २. बेल। ३. बोला।

मेषमुष्प—**पुं०** =मेष-मुष्प।

मेष-कल—**पुं०** [सं०] मेषों के रंगों के आधार पर बतलाया जानेवाला धुमाधुम फल।

मेष-भूति—**स्त्री०** [प० तं०] विषली।

मेष-मंसल—**पुं०** [प० तं०] आकाश।

मेष-मल्लार—**पुं०** [सं०] बौद्ध जाति का एक सकर राम जो मेष, मल्लार और सारंग रागों के मेल से बनता और प्राय वर्षा ऋतु में गंगा या जाता है।

मेषमाल—**पुं०** [सं० मेषमाला+अच्] १. रंभा के गर्भ से उत्पन्न कल्कि के एक पुत्र का नाम। (कल्कि पुराण) २ प्लक्ष-द्वीप का एक पर्वत। ३ मेष-माला।

मेष-माला—**स्त्री०** [प० तं०] १ बादलों की पंक्ति या श्रेणी। २. स्कन्द की अशुचरी एक मातृका।

मेष-माली (मिन्)—**पुं०** [सं० मेषमाला+मिन्] स्कंद का एक अनुचर।

वि० बादलो से थिरा हुआ।

मेष-मृति—**स्त्री०** [प० तं०] बिजली।

मेष-मोनि—**पुं०** [प० तं०] १. धूर्ज। २. कोहरा।

मेष-मंजनी—**स्त्री०** [सं०] संगीत में मेल ठाठ की एक रागिणी।

मेष-रथ—**पुं०** [प० तं०] मेष-मार्जन।

मेष-राज—**पुं०** [प० तं०] मेषों के राजा, इंद्र।

मेष-वर्षा—**स्त्री०** [ब० सं०,+कीप्] नील का पीषा।

मेष-वर्त—**पुं०** [सं०] प्रलय काल का एक प्रकार का मेष।

मेषवार्ध—**स्त्री०** [हिं० मेष+वार्ध (प्रत्यय)] १. बादल की धटा। २. दे० 'मेष-माला'।

मेषवाधु (वधु)—**पुं०** [सं० मेष+मनुषु, वधु] पश्चिम दिशा का एक पर्वत। (बृहत् संहिता)

मेष-वाहन—**पुं०** [ब० सं०] १. इन्द्र। २. एक बौद्ध राजा।

मेष-विष्णुविज्ञा—**स्त्री०** [शुष्पुषा सं०] एक प्रकार का बर्णवृत्त जिसके प्रत्येक वर्ण में मयण, मयण, मयण, सयण, टयण, रयण और अरुत्त में एक गुरु होता है।

मेष-विष्णुवैद्य—**पुं०** [प० तं०] बहुत बौद्धे समय में होनेवाली बीर बर्षा।

मेष-वधाम—**वि०** [उपमित सं०] मेष या बादलों के रथ की तरह का। नीला। आसमानी। (कलाउडी)

पुं० उक्त प्रकार का रंग।

मेष-वधामल—**पुं०** [उपमित सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

मेष-वार—**पुं०** [प० तं०] चीनिया कपूर।

मेष-गुह्य—**पुं०** [ब० सं०] मोर।

मेष-कोट—**पुं०** [सं०] अनामक होनेवाली ऐसी बीर या भीषण वर्षा जो प्रलय का-सा दृष्य उपस्थित कर देती हो। बादलों का फट पड़ना। (कलाउड बट्टे)

मेष-स्वन—**पुं०** [प० तं०] बादलों का शब्द। मेषों का गर्जन।

वि० [ब० सं०] बादलों की तरह गरजनेवाला।

मेषस्वनाश्रु—**पुं०** मेषस्वन-अश्रु [सं० ब० सं०] वैश्वं मणि। मिल्कारी। (कहते) हैं कि बादल के गरजते पर इसकी उत्पत्ति होती है।

मेषात्—**पुं०** [मेष-अत्, प० तं०] १. वर्षा का अरुत्। २. सारुच्छु का आरम-काल।

मेषायम—**पुं०** [मेष-आयम, प० तं०] वर्षा का आरम।

मेषाच्छन्न—**वि०** [मेष-आच्छन्न, तुं० तं०] [भाव० मेषाच्छन्नता] बादलों से ढका हुआ। बादलों से छाया हुआ (आकाश)। (कलाउडी)

मेषाश्रव—**पुं०** [मेष-आश्रव, प० तं०] १ मेष-मार्जन। बादल की गरज। २ बादलों का विस्तार।

मेषारि—**पुं०** [मेष-अरि, प० तं०] वायु जो बादलों को उडा ले जाती है।

मेषावरि—**स्त्री०** [सं० मेषावरि] गायलों की पंक्ति। मेषमाला।

मेषास्थि—**पुं०** [मेष-अस्थि, प० तं०] बोला।

मेषोदय—**पुं०** [मेष-उदय, प० तं०] आकाश में बारल छाना।

मेषीमा—**पुं०** [सं० मेष] नीले रंग का एक प्रकार का कपड़ा।

मेष—**पुं०** [देक०] आसाम की एक पहाड़ी जाति।

†पुं०=मंस।

†स्त्री०=मेज।

मेषक—**पुं०** [सं०/मेष (मिलना)+पुं०-अक] १ बंधकार। जैबेरा। २. सुरमा। ३ मोर की चंद्रिका। ४ धूर्ज। ५ बादल। ६ सहिबन। ७. पिपासाल। ८ काला नमक। ९ एक प्रकार का छोटा विष्णु।

वि० [भाव० मेषकता] काले रंग का। काला।

मेषकता—**स्त्री०** [सं० मेषक+तत्+टाप्], १ मेषक होने की अवस्था या भाव। २. कालापन। धामता। ३ अचकार। जैबेरा। ४. स्वाही।

मेषकताई—**स्त्री०**=मेषकता।

मेषक—**पुं०**=म्लेच्छ।

मेषक—**पुं०**=म्लेच्छ।

मेष—**स्त्री०** [क्रा० मेष] १. भोजन की सामग्री। २ बहु बीकी जिस पर रखकर भोजन किया जाता है। ३ आज-कल लिखने-पढ़ने के लिए बनी हुई एक प्रकार की ऊँची बीकी। (टेबुल)

स्त्री० [?] एक प्रकार की पहाड़ी भास।

मेषवीस—**पुं०** [क्रा०] बीकी या मेष के ऊपर घोषा के लिए बिछाने का कपड़ा।

मेषवाच—पु० [फा०] १. अतिथि की वृष्टि में वह व्यक्ति जिसके यहाँ वह परदेस में जाकर ठहरता हो। २. वह जो अतिथि को अपने यहाँ आवाहरपूर्वक ठहराता हो।

मेषवाची—स्त्री० [फा०] १. मेषवाच होने की अवस्था, धर्म या भाव।
आतिथ्य—२ अतिथि की की जानेवाली खातिरदारी। अतिथ्य-सकार।
 ३. वे साध पदार्थ जो बाहर से बरात आने पर पहले-पहल कन्यापक्ष से बरातियों के लिए भेजे जाते हैं।

मेजर—पु० [अ०] १. सेना में कुछ विशिष्ट अधिकारियों का पद। २. उक्त पद पर होनेवाला अधिकारी।
मेजर-जनरल—पु० [अ०] फौज का एक बड़ा अफसर जिसका दरजा लेफ्टनेंट जनरल के नीचे या बाब होता है।

मेला—पु० [स० मद्यक; हिं० मेद्यक; पूरबी हिं० मेद्यका] मेद्यक। मेद्यक।
मेद—पु० [अ०] १. मजदूरी का प्रधान या सरदार। टंडैल। जमादार। २. एक प्रकार का जहाजी कर्मचारी।

मेद्यक—वि० [हिं० मेटना +क (प्रत्यय)] मिटानेवाला। नाशक। २. नष्ट करनेवाला।
मिदनहार (१)—वि० [हिं० मेटना; हारा (प्रत्यय)] १. मिटानेवाला। २. नष्ट करनेवाला।

मेटना—स०=मिटाना।
मेद-माट—स्त्री० [हिं० मेटना=मिटाना] झगड़े, विवाद आदि के निपटने या निपटारे जाने की क्रिया या भाव। जैसे—जब उन लोगों में मेद-माट हो गई है।

मेदा—पु० [स्त्री० अल्पा० मेदिथा, मेटी] मिट्टी का पत्थर। मटका।
मेदिथा—स्त्री० हिं० 'मेदा' का स्त्री० अल्पा०।
मेटी—स्त्री०=मेदिथा (मटकी)।
मेदुआ—वि० [हिं० मेटना] १. मिटानेवाला। २. कुतूहल।

मेद्यन्—स्त्री० [अ०] वह स्त्री जो लड़कियों, दाइयों आदि के कामों की देख-रेख करती हो। मातृका। (मेदुन)
मेद—पु० [स०] १. हाथीवाल। फीलवान। २. मेड़ा।
मेडा—स्त्री०=मेद।

मेद्यक—पु०=मेद्यक।
मेद्वरा—पु० [स० मडल; हिं० मडरा] [स्त्री० अल्पा० मेद्वरी] १. मिट्टी डालकर बनाया हुआ चेरा। मेड़। २. उभरा हुआ गोलाकार किनारा। ३. किसी दस्तु का मडलाकार भाग।

मेद्वराना—अ०=मेडडलाना।
मेद्वरी—स्त्री० हिं० 'मेद्वरा' का स्त्री० अल्पा०।
स्त्री [?] चक्की के चारों ओर का वह स्थान जहाँ आटा घिसकर गिरता है।

मेदल—पु० [अ०] पदक। (दे०)
मेडकल—वि० [अ०] १. औषधि-संबंधी। भेषजिक। २. चिकित्सा-संबंधी।
मेडिया—स्त्री० [स० मडर; हिं० मड़ी] १. मड़ी। २. मंथप। ३. छोटा पर। स्त्री०=मेड।

मेडक—पु०=मेडक।
मेडासिपी—स्त्री० [स० मेडमूंगी] एक झाड़ीदार लता जिसकी जड़

औषधि के काम में आती है और सर्प का विष दूर करनेवाली मानी जाती है।

मेधि—स्त्री०=मेद।
मेठी—स्त्री० [स० मेथी] १. रम्रियों के सिर के बालों की तीन लड़ियों में पृथी हुई मोटी। मेड़ी। २. चोटों के मांसे पर एक प्रकार की मंथरी।
मेध—पु० [स०] १. सिद्ध। लग। २. मेड़ा।

मेधिका—स्त्री० [स०√मेध (मिलना)+पृषुल्ल—अक,+टापृ, हल्] मेधी।
मेधी—स्त्री० [स०√मेध; इन्+टोपृ] १. एक प्रसिद्ध पीया जिसकी खेती होती है। २. उक्त पीये के बीज।

मेधीरी—स्त्री० [हिं० मेधी; बरी] उद की पीठी में मेधी का साग मिलाकर बनाई जानेवाली बरी। उदा०—भई मेधीरी, तिरिका परा।—जायसी।

मेध (वत्)—पु० [सं०√मिद (चिकना होना)+अच्,√मिद। असुन्] १. शरीर के अन्दर की चरबी। वधा। २. शरीर म चरबी बढ़ने और बहुत मोटे होने का रोग। ३. नीलम की एक प्रकार की छाया। ४. कस्तूरी। ५. कस्तूरी, केसर आदि के योग से बनाया जानेवाला एक प्रकार का सुगंधित द्रव्य। ६. एक अत्यन्त जाति जिसकी उत्पत्ति मनुस्मृति में वैदिक पुरुष और निवार स्त्री से कही गई है। स्त्री०=मेधा।

मेधनी—स्त्री० [सं० मेदिनी] १. यात्रियों का गोल जो हाडा लेकर किमी तीर्थ-स्थान या देव-स्थान को जाता हो। २. मेदिनी।
मेधपाट—पु० [सं०] मेवाड़ देश।

मेधपुष्प—पु० [सं०] दुवा नामक जन्तु।
मेधस्वी (स्विन्)—वि० [सं० मेदस्; विन्] जिसके बदन में अधिक मेद या चरबी हो, अवर्त। मोटा।

मेवा—स्त्री० [स० मेद। अच्+टापृ] अष्टवर्ष में की एक प्रसिद्ध औषधि जो उजर और राजयुष्मा में अत्यन्त उपकारी कही गई है। पु० [अ० मेद] पाकाशय। पेट। कौटा। जैसे—मेदे की बीमारी।

मेवा—मेवा कड़ा होना—आती की क्रिया इस प्रकार की होना कि जल्दी दस्त न हो। मेवा साफ होना—मलसृष्टि होना। दस्त होने से कौटा साफ होना।
मेविनी—स्त्री० [स० मेद+इनि+टोपृ] १. मेदा। २. पृथ्वी।
मेदुर—वि० [स०√मिद (भीमना)+चूरच्] चिकना। स्तिन्ध।
मेदू—पु०=मेद।

मेदोष—पु० [स० मेदस्+जन् (उत्पन्न होना)+ञ] हड्डी। अस्थि।
मेदोर्ष—पु० [स० मेदस्+अर्षुद, मध्य० स०] १. मेदयुक्त गट या गिल्टी जिसमें पीडा हो। २. हौट का एक प्रकार का रोग।

मेदोर्षुद्धि—स्त्री० [सं० मेदस्+वृद्धि, य० तं०] १. चरबी का बढ़ना जिसमें शरीर मोटा होता है। २. अन्न-कोष बढ़ने का रोग।
मेध—पु० [सं०√मेध (मारना)+पञ] [वि० मेधक, मेधी, मेध्] १. यम। २. हवि। ३. यज्ञ-बलि का पशु।

मेधज—पु० [सं० मेध+जन् (उत्पन्न करना)+ञ] विष्णु।
मेधा—स्त्री० [स०] १. बाले समझने और स्मरण रखने की क्षमति

२. बस प्रजापति की एक कन्या । ३. बौद्ध मतानुकाओं में से एक मातृका ।
४. छप्पय छन्द का एक भेद ।

मेधाविन्—पुं० [सं०] कात्यायन मुनि ।

मेधाविधि—पुं० [सं०] १. काश्यपवंश में उत्पन्न एक ऋषि जो ऋग्वेद के प्रथम मंडल के १२-३३ सूक्तों के द्वेष्य थे । २. पुराणानुसार सायण्य के अधिपति जो शिवयज्ञ के पुत्र कहे गये हैं । ३. कर्म प्रजापति का एक पुत्र ।

मेधावती—स्त्री० [सं०] मेधा ; मत्स्य, बल्ह, +डीप् [महाज्योतिष्मती लता ।

मेधावान् (वन्)—वि० [सं०] मेधा + मत्स्य = मेधावी ।

वि० [स्त्री०] मेधावती = मेधावी ।

मेधावी (विन्)—वि० [सं०] मेधा ; विनि [स्त्री०] मेधाविनी १. असाधारण मेधा शक्तिवाला । जिसकी धारणाशक्ति तीव्र हो । २. बुद्धिमान् । ३. पंडित । विद्वान् ।

पुं० १. मरिच । सराब । २. तोता ।

मेधिर—वि० [सं०] मेधा + इत् [मेधावी ।

मेधिष्ठ—वि० [सं०] मेधा + इष्ठ [मेधावी ।

मेध्य—वि० [सं०] मेधा + यत् १. बुद्धि बढ़ानेवाला । मेधाजनक । २. पवित्र ।

पुं० १. जौ । २. बकरा । ३. कर्पा । क्षीर ।

मेध्या—स्त्री० [सं०] मेध्य + टाप् १. रेसकी, शखगुप्ती, ब्राह्मी, महुकी आदि बुद्धिवर्द्धक बृष्टियों का वर्ग ।

मेन—पुं० = मवन (कामदेव) ।

मेनका—स्त्री० [सं०] √ मान् (मानना) ; न्—अक, एल्, + टाप् १. पुराणानुसार एक अय्यरा जिले के विश्वामित्र की समाधि भंग की थी । शकुंतला हकी के गर्भ से उत्पन्न हुई थी । २. हिमवान् की पत्नी और पार्वती की माता ।

मेनकासजा—स्त्री० [सं०] मेनका-आसजा, यं० सं० १. शकुंतला । २. दुर्गा । पार्वती ।

मेना—स्त्री० [सं०] √ मान् (पूजा करना) + इन्च्, निपा० सिद्धि १. पितरों की मानसी कन्या मेनका । २. हिमवान् की पत्नी और पार्वती की माता । ३. बृषणथ की मानसी कन्या । (ऋग्वेद) ४ स्त्री । औरत । ५. वाक्शक्ति ।

पुं० = मीयन (पकवानों का) ।

मेनाह—पुं० [सं०] मे-नाह, यं० सं० १. किल्ली । २. बकरी । ३. मौर ।

मेनक धव—पुं० [सं०] यं० सं० १. हिमालय ।

मेस—स्त्री० [अ०] मीडय का सक्षिप्त रूप १. युरोप या अमेरिका आदि की स्त्री । २. ताश की बीबी या बेगम नाम का पत्ता ।

मेसल—पुं० [का०] मीमिन? गुजरात और महाराष्ट्र राज्यों में रहनेवाले एक प्रकार के मुसलमान जो बहुधा व्यापार करते हैं ।

मेसारी—पुं० [अनु०] मीं १. मंड का बच्चा । २. एक प्रकार का घोड़ा ।

मेसार—पुं० [अ०] इमारत बनाने अर्थात् प्रथम-निर्माण का काम करनेवाला शिल्पी । इमारत बनानेवाला । बवई । राजगीर ।

मेसारी—स्त्री० [हिं०] मेमार? मेमार का काम, बव या भाव ।

मेसो—पुं० [अ०] मेमोरबम का सक्षिप्त रूप ।

मेसोरियन्—पुं० [अ०] स्पारक ।

मेस—वि० [सं०] मा (मापना) + यत् १. जिसकी नाप-बौछ हो सके । जिसका परिणाम या विस्तार जाना जा सके । २. जो मापा-बौछा जाने को हो ।

मेसनां—सं० [हिं०] मेयन] गृषि हुए आटे, मँरे आदि में मीयन डालना या देना ।

मेसनां—पुं० [सं०] म्युनियल कारपोरेशन या महापालिका का निर्वाचित अध्यक्ष जो सर्वश्रेष्ठ नागरिक भी माना जाता है ।

मेर—पुं० १ = मेर । २ = मेरु ।

मेरवनां—स्त्री० [हिं०] मेरवना १. मिलने की क्रिया या भाव । २. किसी में मिलाई हुई दूसरी चीज । मेल ।

मेरवनां—सं० = मिलाना ।

मेरा—वि० [हिं०] मैं + एरा (प्रत्यय) 'मैं' का सबच-सूचक विभक्ति से युक्त सार्वनामिक विशेषण रूप ।

मुहा०—मेरा-मेरा करना = किसी को अपना और किसी को पराया समझना । आत्म और पर का भेद-भाव रखना ।

†पुं० = मेरा ।

मेराउ—पुं० = मेराव ।

मेराउ—स्त्री० [अ०] मिजराउ १. ऊपर चढ़ने का साधन । २. सीढ़ी । ३. गुप्तकामानों के विरहातानुसार मुहम्मद साहब का आसमान पर जाकर ईश्वर-साक्षात्कार करना ।

मेराणां—सं० = मिलाना ।

मेराव—पुं० [हिं०] मेर = मेरु । मिलने या मिलाने की क्रिया या भाव । मिलाना । मिलाप ।

मेरी—स्त्री० [हिं०] मेरा १. अहंभाव । अहंकार ।

सर्वे० हिं० 'मेरा' का स्त्री० ।

मेरु—पुं० [सं०] मि (प्रसेप) + ष् १. एक पुराणोक्त पर्वत जो सोम के कहा गया है । सुमेरु । २. एक विशिष्ट आकार-प्रकार का देव-मंदिर । ३. हिंडालों में ऊपरवाली वह लकड़ी जिससे मूलनेवाली रस्सियाँ बँधी रहती हैं । ४. पृथ्वी के उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों में से प्रत्येक ध्रुव । (पौल)

विशेष—उत्तरी ध्रुव सुमेरु और दक्षिणी ध्रुव सुमेरु कहलाता है ।

५. जपमाला के बीच का बड़ा दाता जो और सब वानों के ऊपर होता है । इसी से जप का आरम्भ और इसी पर उसकी समाप्ति होती है । ६.

बीणा का ऊपरी और उठा हुआ भाग । ७. छदनाम्न के प्रत्यय के अंतर्गत बहु प्रकिया जिससे यह जाना जाता है कि कितनी मात्राओं या वर्णों के (प्रत्यार के अनुसार निकाले हुए) किसी भेद या छन्द में गुण और लघु के कितने रूप होते हैं । ८. हठयोग में मुग्धना नाबी का एक नाम ।

मेसशां—पुं० [सं०] मेरु [हिं०] आ (प्रत्यय) छोर का वह अंश जिसमें रस्सियाँ बँधी होती हैं ।

मे [हिं०] मेरवना = मिलाना] मिला हुआ । मिश्रित ।

मेसक—पुं० [सं०] मेरु + कन् [इरान में स्थित एक देश । २. यज्ञ का धूर्त्ता । ३. कूप ।

मेस-शब्दीति—स्त्री० [म०] यं० सं० उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों में रात के समय बीच-बीच में दिखाई पड़ती रहनेवाली एक प्रकार की ज्योति जिससे बहुत कुछ दिन का सा प्रकाश होता है । (आरीरा बोरेल्लिख)

विशेष—दक्षिण-ध्रुव में दिखाई पड़नेवाली उक्त ज्योति को 'कुम्भे ज्योति' कहते हैं।

मेष-बंध—**मू०** [स० उपमित स०] १. मनुष्यों और बहुत से जीव-जंतुओं के पीठ के बीचोबीच गरदन से लेकर कमर पर की त्रिकोणित तक का पृष्ठ-बन्ध जिसमें कनेक्चार्स (हड्डी की गुँथियाँ) माला की तरह गुँथी रहती हैं और जिनके दाहिने बाएँ सात्वाओं के रूप में लकी-लकी हड्डीयाँ निकली होती हैं। रीढ़। (बीकबोन)

विशेष—हठयोग के अनुसार इसके मध्य सुषुम्ना, बाएँ और दाय्या (चंद्रमा) और दाहिनी ओर पिंगला (सूर्य) नाम की नाडियाँ होती हैं। २. लाक्षणिक रूप में, कोई ऐसी चीज या बात जिसके आधार पर कोई दूसरी चीज या बात ठीक तरह से आश्रित रहकर पूरी तरह से अपना काम करती है। जैसे—तुलसी-कृत रामायण हिंदू संस्कृति का मेष-बंध है। ३. भूगोल में पृथ्वी के दोनों ध्रुवों को मिलानेवाली एक कल्पित सीधी रेखा।

मेषवती (विष्णु)—**वि०** [सं० मेखरंड+इति] रीढवाला (प्राणी)।

मेषदेवी—स्त्री० [सं०] ऋषभदेव की माता।

मेष-पृष्ठ—**वि०** [मं० ब० स०] जिसकी पीठ या नीचेवाला भाग समतल भूमि पर नहीं, बल्कि अंडाकार उभरे हुए तल पर हो। जैसे—मेषपृष्ठ बंध। (तांत्रिकों का)। 'भू-पृष्ठ' का विपर्यय।

मू० १ आकाश २ स्वर्ग। ३ एक प्राचीन जाति।

मेष-बंध—**मू०** [स० उपमित स०] १. चरखा। २. बीजगणित में एक प्रकार का चक्र।

मेषरज्जु—स्त्री० [मं०] एक मोटी नस जो शरीर के तंत्रिकातंत्र के कोर के रूप में है और जो गरदन के पिछले भाग से कमर तक रीढ़ की हड्डी के साथ फैली हुई है। (स्पान्डल कार्ड) विशेष दे० १ 'तंत्रिका', २ 'तंत्रिका तंत्र'।

मेष-सिंहा—**मू०** [सं० ब० त०] १. मेष पर्वत की चोंटी। २. हठयोग में, सहस्रार चक्र का एक नाम। (दे० 'महस्रार')।

मेल—**मू०** [सं०/मिल् (मिलना)+घञ्] १ मिलने या मिले हुए होने की अवस्था या भाव। जैसे—यह रंग तीन रंगों के मेल से बनता है। २. दो या अधिक वस्तुओं, व्यक्तियों आदि का एक साथ या एक स्थान पर इकट्ठा होना। मिलाप। संयोग। समागम। जैसे—इली स्टेशन पर दोनों यात्रियों का मेल होता है। ३. सामाजिक व्यवहार में, वह स्थिति जिसमें लोग प्रसिद्धिपूर्वक साथ रहते अथवा आपस में मिलते-जुलते हैं। जैसे—दोनों भाइयों में बहुत मेल है।

पद—**मेल-बोल, मेल-मिलाप, मेल-मुहूर्त्त**।

४. वह स्थिति जिसमें बैर-विरोध या शत्रुता छोड़कर लोग फिर एक साथ होते या रहते हैं। प्रेम और मित्रता का संबंध। जैसे—अब तौ दोनों राष्ट्रो में मेल हो गया है। ५. पारस्परिक अनुकूलता, उपपुस्तता या सामंजस्य। जैसे—दूध और नमक (या टोप और चीनी) का कोई मेल नहीं है।

किं० प्र०—**बैठना**।—मिलना।

मुहा०—**मेल खाना**—किसी के साथ अनुकूल या उपपुस्त जान पड़ना या सिद्ध होना। उपपुस्त या ठीक साथ होना। जैसे—(क) इस माला के मोतियों से तुम्हारा मोती मेल नहीं खाना। (ख) इस कोर के रंग के

साथ टोपी का रंग मेल नहीं खाता।

६. जोड़। बराबारी। समता। जैसे—दनी मेल का कोई और कपड़ा लावो।

पद—**मेल का**—जोड़ या बराबारी का।
५. पदार्थों का वर्ण। जैसे—उनके यहाँ सब मेल की किताबें (या दवाइयाँ) मिलती हैं। ८. किसी अच्छी या बड़िया चीज में खराब या बर्तिया चीज के मिले हुए होने की अवस्था या भाव। मिलावट। जैसे—आज-कल खाने-पीने की चीजों में कुछ न कुछ मेल रहता ही है। स्त्री० [अ०] १. रेलवे की डाकगाड़ी। २. डाकखाने के द्वार आने-जानेवाली चिड़ियाँ, पारलल आदि जो प्रायः डाकगाड़ी से आते-जाते हैं। डाक।

मेलक—**वि०** [सं०/मिल् (मिलना)+णिच्+ण्वल्+अक] मिलाने या मेल करानेवाला।

मू० [मेल+कन्] १. संग। साथ। २. सहवास। ३. मेल। ४. आदिमियों का जमावड़ा। समूह। ५. मिलन। समागम। ६. बर तथा कन्या के यहाँ, नखसों, राशियों आदि का होनेवाला मिलन।

मेलकर—**मू०** [सं० मेलक] १. भीड़। जमावड़ा। २. मेल।

मेल-बोल—**मू०** [हिं० मिलना+जुलना] [वि० मेंती-जोली] १. व्यक्तियों के परस्पर प्रायः मिलते-जुलते रहने का भाव। २. प्रायः मिलते-जुलते रहने के फलस्वरूप दो पक्षों में होनेवाला आत्मीयतापूर्ण संबंध।

मेलन—**मू०** [सं०/मिल् (मिलना)+त्पृट्+अन] १. एक मास होना। इकट्ठा होना। मिलन। २. [मिल्+णिच्+त्पृट्+अन] मिलाने की क्रिया या भाव। ३. मिलावट। ४. आदिमियों का जमावड़ा। समूह। ५. मुठभेड़।

मिलना—**सं०** [हिं० मेल+ना (प्रत्य०)] १. मिलान करना। २. मिलाना या मिश्रित करना। ३. किसी चीज के अन्दर, ऊपर या चारों ओर पहनना या रखना। उदा०—सिय जय-माल राम उर मेंली। ४. लुप्तगी। ४. कोई चीज कहीं पहुँचाना या भेजना। उदा०—काजी हुंकि बैंग मले जो स्या साहूब बहरा है।—कबीर। ५. फँकना। ६. फँकाना। अ० किसी चीज या व्यक्ति का कहीं पहुँचाना। उदा०—जस-सागर रघुनाथ जू मले सागर तीर।

मेल-मलार—**मू०** [सं०] एक प्रकार की संकर रागिनी।

मेल-मिलाप—**मू०** [हिं०] १. मेल-जोल। २. रुठ या विरुक्त पक्षों में होनेवाला मिलन या मेल।

पद—**मेल-मिलाप** से =र्मवीपूर्ण ढग से।

मैला—**मू०** [सं० मेलक] १. उत्सव, देव-दर्शन आदि के अवसरो पर बहुत में लोगों का किसी स्थान पर एक साथ होनेवाला जमाव। २. वस्तुओं, विशेषतः चीपों के क्रम-विक्रय के निमित्त किसी विशिष्ट स्थान पर तथा किसी विशिष्ट ऋतु में होनेवाला व्यापारियों का जमावड़ा। जैसे—ददरी या हरिद्वार का मेल।

पद—**मैला-देवा**।

३. किसी तीर्थ-स्थान या पर्व पर होनेवाला लोगों का जमाव। जैसे—माघ मैला। ४. किसी स्थान पर किसी चीज को देखने अथवा किसी बात को सुनने के लिए लगनेवाली लोगों की भीड़। जैसे—बात की बात में बहाँ मैला बगै।

कि० प्र०—छमाना।
 ५. दे० 'प्रदक्षिणी'। जैसे—जीवोगिक मेला।
 स्त्री० [सं०/मिह्+गिष्+अङ्+टाप्] १. बहुत से लोगों का जमावड़ा। २. मिलन। ३. रोजानाई। स्थाही। ४. जीकों में छमाने का अंजन। ५. महागौली।
 मेला-मेला—पुं० [हिं० मेला+हिं० टेलना] मेला अथवा कोई ऐसा सार्वजनिक स्थान जहाँ भीड़-भाड़ और धक्कन-धक्कना हो।
 मेलापुं—पुं० [हिं० मिलना] पड़ाव। संजिल। उदा०—बोहो मेलान जब पहुँचिहि कोई—जायसी।
 †पुं०=मिलान।
 मेलाना—स० [हिं० मेल] १. मेलना का प्रेरणार्थक रूप। मेलने का काम दूसरे से कराना। २. रहन रखी हुई बस्तु को छुड़ाना।
 †स०=मिलाना।
 मेलापक—वि० [सं० मेलक] १. मिलानेवाला। २. इकट्ठा करनेवाला।
 पुं० १. भीड़-भाड़। जमावड़ा। २. पहो का योग।
 मेलापन—पुं० [सं० मिलन] १. मिलन। २. संयोग। समागम।
 मेली—वि० [हिं० मेल] १. जिससे मेल या मेल-जोल हो। २. (बह) जो जन्दी दूसरों में हिल-मिल जाता हो। यार-बाश।
 मेल्हना—अ० [?] १. कष्ट या पीड़ा से बार-बार इस करवट से उस करवट होना। छटपटाना। २. कोई काम करते में आनाकानी करने समय बिताना।
 †पुं० एक प्रकार की नाव।
 †स०=मेलना।
 मेघ—पुं० [देवा०] १. राजपूताने की एक जाति। २. उमत् जाति का व्यक्ति।
 मेघड़ी—स्त्री० [देवा०] निर्गुड़ी। सैभाड़।
 मेघा—पुं० [फा० मेघ] १. खाने का फल, विशेषतः सुखा फल। २. आन-कल विविध रूप से किशोमिश, बादाम, अलोटोट आदि सुभाए हुए बड़िया फल। ३. उत्तम और बहुमूल्य पदार्थ। ४. गुजरत में होनेवाला एक प्रकार का गंध।। सजूरिया।
 मेघाटी—स्त्री० [फा० मेघा+हिं० बाटी] एक प्रकार का पकवान जिससे किशोमिश, बादाम आदि भी भरे हुए होते हैं।
 मेघाड़—पुं० [देवा०] १. आधुनिक राजस्थान का एक प्रसिद्ध भूभाग जो मध्य काल में एक स्वतंत्र राज्य था। महाराणा प्रताप यहीं का राजा था। २. एक राग जो मालकोस राग का पुत्र माना गया है।
 मेघाड़-केसरी—पुं० [हिं०] महाराणा प्रताप।
 मेघाड़ी—वि० [हिं० मेघाड़] १. मेघाड़-प्रदेश में संबंध रखनेवाला।
 मेघाड़ का। २. मेघाड़ में रहने या होनेवाला।
 पुं० मेघाड़ का निवासी।
 स्त्री० मेघाड़ की बीवी।
 मेघात—पुं० [सं०] राजस्थान और सिंध के बीच के प्रदेश का पुराना नाम।
 मेघासी—पुं० [हिं० मेघात+ई (प्रत्य०)] मेघात का रहनेवाला।
 वि० मेघात का।
 स्त्री० मेघात प्रदेश की बीवी।

मेघा-करीस—पुं० [फा० मेघः करीस] फल और मेवे बेचनेवाला दुकान-दार।
 मेघासा—पुं०—मवास (दुर्ग)।
 मेघासी—वि० [हिं० मवास] १. दुर्ग में होनेवाला या रहनेवाला।
 २. फलतः सुरक्षित।
 पुं० दुर्ग का अधिकारी या स्वामी।
 मेघ—पुं० [सं०/मिष् (स्वर्ण)+अण्] १. मेड़। २. ज्योतिष में बारह राशियों में से पहली राशि जिसमें २१ मार्ग के लगनमा सूर्य प्रविष्ट होता है। ३. जीषभास। सुसना।
 मेघपाक—पुं० [सं० मेघ+पाक् (पालना)+गिष्+अण्] गड़रिया।
 मेघ-लोचन—पुं० [सं० ब० सं०] चकवड़।
 मेघ-बल्ल्ही—स्त्री० [सं० मघ्य० सं०] मेड़ासिरी।
 मेघ-बिवायिका—स्त्री० [सं० ब० सं०,+कप्,+टाप्, षष्] मेड़ासिरी।
 मेघ-भूय—पुं० [सं० भ० सं०] सिरिया (विष)।
 मेघ-भूवी—स्त्री० [सं० मेघभूय+कीप्] मेड़ासिरी।
 मेघ-संक्राति—स्त्री० [सं० घ० सं०] सूर्य के मेघ राशि में प्रविष्ट होने का समय जो पुष्पकाल माना गया है। चौर वर्ष का आरम्भ इसी वर्षवा इससे दूसरे दिन से होता है।
 मेघा—पुं० [सं० मेघ+अंड, ब० सं०] इंड।
 मेघा—स्त्री० [सं० मेघ+टाप्] १. छोटी इलायची। २. लाल मेड़ की स्वाद में बनाया जानेवाला चमड़ा।
 मेघिका—स्त्री० [सं० मेघी+कन्+टाप्, ह्रस्व] मेघी।
 मेघी—स्त्री० [सं० मेघ+कीप्] १. माया मेड़। २. जटामासी।
 मेस—पुं० [अ०] यह भोजनालय जहाँ संयुक्त रूप से किसी वर्ग के बहुत से लोगों का भोजन बनता है। जैसे—सौजन्य या विद्याविधियों का मेस।
 मेसू—पुं० [?] बेसन की बनी हुई एक प्रकार की बरकी।
 मेसूरण—पुं० [सं०] फलित ज्योतिष में दशम लग्न जो कर्म-स्थान कहा गया है।
 मेस्मेरिज्म—पुं० [अ० मेस्मेरिज्म] मेस्मेर नामक जर्मन डाक्टर का आविष्कृत यह विद्यालय कि मनुष्य किसी गुप्त शक्ति या केवल इच्छा-शक्ति से दूसरे की इच्छाशक्ति को प्रभावित या वादीयुत कर के अचेत कर सकता है। सम्मोहिनी विद्या। सम्मोहित।
 मेहोबिया—वि० [हिं० मेहवी] मेहवी के रग का। हरापन लिये लाल रग का।
 पुं० उमत् प्रकार का रंग।
 मेहोवी—स्त्री०—मेहवी।
 मेह—पुं० [सं०/मिह् (क्षरण)+षष्] १. पेसाब। मूत्र। २. प्रमेह नामक रोग। ३. कोई ऐसा रोग जिसमें मूत्र के साथ कोई और विस्तृत या दूषित तत्व भी निकलता हो। जैसे—मधु-मेह आदि।
 पुं० [सं० मेघ] १. मेघ। मेड़। २. बाबल। मेघ। ३. वर्षा। मेह।
 मेहतार—पुं० [फा० मिहतार] १. बहुत बड़ा और प्रतिष्ठित या मान्य व्यक्ति। बुजुर्ग। २. भगी विशेषतः मुसलमान भंगी।
 मेहतारानी—स्त्री० हिं० 'मेहतार' (भंगी) का स्त्री।
 मेह्व—पुं० [सं०/मिह्,+त्पुट्-जन] १. पेसाब करना। मूत्र-स्थाप। २. पेसाब। मूत्र। ३. [सं०/मिह्,+त्पुट्-जन] जननीद्वय। लिग।

मेहलत—स्त्री० [अ०] परिश्रम, विशेषतः शारीरिक परिश्रम।
मेहलताना—पु० [अ०+फा०] १. मेहलत करने के बदले में मिलने-वाला धन। पारिश्रमिक। २. विशेष रूप से बहुत धन जो वकील की मुकदमा लड़ने के बदले में दिया जाता है।
मेहलती—वि० [अ० मेहलत+हि० ई० (प्रत्य०)] १. अधिक या पूरी मेहलत करनेवाला। परिश्रमी। २. व्यायाम करनेवाला। ३. मुट्ठा।
मेहना—स्त्री० [स०/मिह्, -णिच्+पुच्+अन, +टाप्] महिला। स्त्री। पु० [अ० मिहल+परीक्षण या हि० ताना का अनु० ?] किसी के साथ किये हुए उपकार की ऐसी चर्चा जो उपकृत व्यक्ति की कृतघ्नता दिखलाने पर लज्जित करने के लिए की जाय। जैसे—वह दिन-रात नन्द को ताने-मेहने देती रहती है। (विश्या)
 क्रि० प्र०—देना।—मारना।
मेहमान—पु० [फा० मेहमान] १. अतिथि। अम्मागत। २. दामाध।
मेहमानबारी—स्त्री० [फा०] अतिथि या मेहमान की की जानेवाली आवश्यकता या आदर-सत्कार। आतिथ्य।
मेहमानी—स्त्री० [फा० मेहमान+ई (प्रत्य०)] १. मेहमान होने की अवस्था या भाव। २. मेहमान का किया जानेवाला आतिथ्य-सत्कार। ३. अपने घर मेहमानी को तरह किया जानेवाला सकोच।
मेह—स्त्री० [फा० मेह] मेहबानी। अनुग्रह। दया।
 †स्त्री०—मेहरी।
मेहना—अ० [हि० मेह+ना (प्रत्य०)] मेह अर्थात् अनुग्रह करना।
मेहरबान—वि० [फा० मेह्रबान] कृपायु। दयालु। अनुग्रह करनेवाला।
मेहरबानगी—स्त्री०—मेह्रबानी।
मेहरबानी—स्त्री० [फा० मेह्रबानी] १. मेहरबान होने की अवस्था या भाव। कृपा। अनुग्रह। २. मेहरबान द्वारा किया हुआ कोई उपकार या अनुग्रह।
मेहरा—पु० [हि० मेहरी] १. मित्रों की-सी चेष्टावाला। स्त्री-प्रकृतिवाला। जनवा।
 †पु० [?] जुलाहों की चरखी का घेरा।
 पु० [स० मिहिर] मित्रों की एक जाति या वर्ग।
मेहराना—अ० [?] तमी आदि के कारण कुरकुरे या मुरमुरे पदार्थ का कुछ आलं होना। जैसे—बरसात के कारण भुने हुए दाने या मेव मेहराना।
मेहराब—स्त्री० [अ० मिहराब] द्वार के ऊपर का अर्द्धमण्डलाकार बनाया हुआ भाग। दरवाजों के ऊपर का मोने, आंशे मोले या मडक की तरह का बनाया हुआ हिस्सा।
मेहराबवाला—वि० [अ०+फा०] जिसमें मेहराब लगी हो। मेहराबवाला।
मेहराबी—वि० [अ० मिहराबी] मेहराबवा।
 स्त्री० एक प्रकार की तलवार जो मेहराब की तरह बीच में कुछ मुकी हुई या टेढ़ी होती है।
मेहरान—स्त्री० [स० मेहना] १. महिला। स्त्री। २. जोरू। पत्नी।
मेहरिया—स्त्री०—मेहरी।
मेहरी—स्त्री० [स० मेहना] १. स्त्री। जोरत। २. जोरू। पत्नी।
मेहल—पु० [शेख०] मंडोले आकार का एक तरह का बृष जिसके फल

वाये जाते हैं। इसकी लकड़ी की छड़ियां और हुकके की निगानियां बनती हैं।
मेह—स्त्री०—मेहर (कृपा)।
मेहलबान—वि०—मेहरबान।
मे—सर्व० [स० अह] सर्वनाम उत्तम पुरुष के कर्ता का रूप। स्वयं। नृद।
मिधेय—गद्य में ही यह विभक्ति-रहित रूप है, परन्तु पद्य में यह मार्व-विभक्तिक रूप में भी प्रयुक्त होता है। जैसे—यह अपराध बड़ी उन कीन्ही। तच्छक इसन साय मैं (—भूमि) दीन्ही।—सूर।
 स्त्री० अहंभाव। अहमपत्या।
 †विभ०—हिन्दी की 'मे' विभक्ति का प्रज रूप।
मैगनीच—पु० [अ०] मगल नामक लकड़ें धातु।
मैकल—पु०—मैनकल।
मैग—पु०—मोय।
मै—स्त्री० [स० मय के फा०] शराब। मय। मदिरा।
 अर्थ० [अ०] साथ। सहित। जैसे—मै नीकर-चाकर मे वे यहाँ आनेवाले हैं।
 †पु०—मय।
 पु०—मैलना।
मैकवा—पु० [फा० मैकद] मधुवाला।
मैकवा—पु० [फा०] [माय० मैकवी] बहुत शराब पीनेवाला। मद्यप।
मैकशी—स्त्री० [फा०] शराब पीना। मद्य-पान।
मैका—पु०—मयक।
मैखाना—पु० [फा० मैखान] मधुवाला। मदिरालय।
मैगना कार्ड—पु० [अ०] वह राजकीय आज्ञापत्र जिसमें राजा की आज्ञा में प्रजाजनों को कोई स्वतंत्र या अधिकार देने की घोषणा की जाती है। शाही फरमान।
मैगनेट—पु० [अ०] चुंबक।
मैगल—पु० [स० मयकल] मत हाथी। मत्स हाथी।
 वि० मत। मत्स।
मैय—पु० [अ०] यह खेल जिसमें दो दल एक दूसरे को पराजित करने और स्वयं विजयी होने के लिए मन्मिहल होते हैं। प्रतिस्पर्धिना का खेल।
मैजल—स्त्री० [अ० मजिल] १. उतनी दूरी जिनका कोई पुरुष एक दिन में तै करता हो या कर सकता हो। मैजल। २. यात्रा। मफ़र।
मैजिक—पु० [अ०] इद्रजाल। जादू।
मैजिक लालटेन—स्त्री० [अ० मैजिक लैटर्न] एक प्रकार का यंत्र जिसमें बिजलू के प्रकाश की सहायता में परदे पर परछाईं डालकर तमबिरों आदि दिखाई जाती है।
मैटर—पु० [अ०] १. पदार्थ। मूत। २. कागज पर लिखा हुआ कोई विषय जो कर्ता करने के लिए दिया जाय। ३. कर्ताज किये हुए टाइट या अक्षर जो छापने के लिए तैयार हो।
मैत्र—पु० [स० मित्र+अणु] १. मित्र होने की अवस्था या भाव। मित्रता। २. अत्रात्रा नक्षत्र। ३. मर्याद। ४. भाषण। ५. मल-द्वार। मुदा। ६. वेद की एक भागा। ७. एक प्राचीन वर्ष-संस्कार जाति। ८. एक मुदतं। (ज्योतिष)
 वि० १. मित्र-मयी। २. मित्रों में होनेवाला।

मैत्रक—पु० [सं० मैत्र+कन्] १ मित्रता। दोस्ती। २ बौद्ध मंदिर का पुजारी।

मैत्रीध-पु० [सं० मध्य० सं०] अनुत्पाधा नक्षत्र।

मैत्रावध-पु० [सं० मित्र+वध्+आयन्] १ गृह्यसूत्र के प्रणेता एक प्राचीन ऋषि। २ मैत्र नाम की वैदिक शाखा।

मैत्रावधम, मैत्रावधधि—पु० [सं० मित्र+वध्, इ० सं०, वृद्धि+अण्, मैत्रावध+वच्] १ अथास्त्य और वसिष्ठ (इन दोनों की उत्पत्ति १६ और वध्ण दोनों के सप्तम्य ऋषिं से मानी गई है)। २ यज्ञ के १६ ऋषिजो मे से एक।

मैत्री—स्त्री० [सं० मित्र+व्यञ्ज, डीप्, य-लोप] १ दो व्यक्तियों के बीच का मित्र-भाव। मित्रता। दोस्ती। २ अपना कोई उद्देश्य सिद्ध करने के लिए किसी के साथ बढ़ाया या स्थापित किया जानेवाला बहिष्कृत मेल-जोल। संभय। (एलायन्स) ३ दो या अधिक चीजों के एक ही तरह के होने की अवस्था या भाव। समानता। जैसे—वर्ण-मैत्री। ४ अनुत्पाधा नक्षत्र।

मैत्रेय—पु० [सं० मैत्र+इच्+एय] १. एक बृद्ध। २ [मित्रपु+इच्+एय, य-लोप] सूरी। ३ एक ऋषि। ४ एक वर्ष संकर जाति।

मैत्रेयिका—स्त्री० [सं० मैत्रेय+कन्+टाप्, इत्] मित्रों या सहयोगियों में होनेवाला सचर्य।

मैत्रेयी—स्त्री० [सं० मैत्रेय+ङीप्] १ याज्ञवल्क्य की स्त्री का नाम जो ब्रह्मादिनी और बड़ी पंडिता थी। २ अहल्या का एक नाम।

मैत्र्य—पु० [सं० मित्र+व्यञ्ज] मित्रता। दोस्ती।

मैथिल—पु० [सं० मिथिला+अण्] १ मिथिला का निवासी। २ राजा जनक।

वि० मिथिला-मन्वन्धी।

मैथिली—स्त्री० [सं० मैथिल+ङीप्] १ मिथिला देश के राजा की कन्या, जानकी। सीता। २ मिथिला देश की बोली।

वि० मिथिला देश अथवा मैथिलों का।

मैथुन—पु० [सं० मिथुन+अण्] १ स्त्री के साथ पुत्रव्रत का समागम। सम्भोग। रति-श्रीष्टा। २ मन मे काम-वासना या सम्भोग का विचार रखकर स्त्री या स्त्रियों के साथ किया जानेवाला कोई व्यवहार। जैसे—केल-मैथुन। (दे०)

मैथुनिक—वि० [सं० मैथुन+उच्+इक] १ मैथुन-सम्बन्धी। मैथुन का। २ स्त्रीलिंग या पुल्लिंग अथवा दोनों से संबन्ध रखनेवाला। यौन। लैंगिक। (सेक्सुअल)

मैथुनिकी—स्त्री० [सं० मैथुनिक+ङीप्] आधुनिक चिकित्सा-प्रणाली की वह शाखा जिसमे वृद्ध मैथुन के कारण उत्पन्न होनेवाले रोगों का निदान और निवेशन होता है। (सेनेरियोलोजी)

मैथुनी (मिन्)—वि० [सं० मैथुन+इति] मैथुन करनेवाला।

मैथुन्य—पु० [सं० मिथुन+व्यञ्ज] १ मिथुन की अवस्था या भाव। २ [मैथुन+वच्] गांभर्य विवाह।

मैवा—पु० [क्रा० मैव] बहुत महीन छाना या पीसा हुआ आटा जिससे बढ़िया पकवान और मिठाइयाँ बनती हैं।

मैवान—पु० [क्रा०] १. ऐसा विस्तृत क्षेत्र या भूखंड जो प्रायः समतल हो और जिस पर किसी प्रकार की वास्तु-रचना आदि न हो। बूर तक फैली

हुई सपाट भूमि।

मुहा०—मैवान करना या छोड़ना—किसी काम के लिए बीच में कुछ जगह खाली छोड़ना। **मैवान जाना**—बीच आदि के लिए, विशेषतः बस्ती के बाहर उत्पन्न प्रकार के स्थान में जाना।

पद्य—मुझे मैवान—सब के सामने।

२ पर्वतीय प्रदेश से मित्र भूभाग जो प्रायः समतल होता है। ३. खेल, तमाशे, प्रतियोगिता आदि के लिए बनाया हुआ उत्पन्न प्रकार का क्षेत्र या भूमि।

मुहा०—मैवान बचना—लड़ने-भिड़ने के लिए स्थान नियत करना। **मैवान धारना**—प्रतियोगिता आदि मे विजय प्राप्त करना। **मैवान में जाना**—प्रतियोगिता या प्रतियोगिता के लिए सामने जाना। मुकाबले पर जाना। **मैवान साफ होना**—आगे बढ़ने के लिए मार्ग में कोई बाधा या रुकावट न होना।

४ युद्ध-क्षेत्र। रण-भूमि।

मुहा०—मैवान धरना—युद्ध-क्षेत्र मे पहुँचकर युद्ध करना। **मैवान धारना**—युद्ध मे विजय प्राप्त करना। (हिस्ती के हाथ) **मैवान रहना**—किसी पक्ष को पूरी विजय प्राप्त होना।

५. किसी प्रकार की लबाई, बीड़ाई या विस्तार। ऊपर तल का फैलाव। जैसे—(क) इस तलके मे इतना मैवान ही नहीं है कि इस पर इतने बेल-बूटे बन सकें। (ख) इस हूँदे का ऊपरी मैवान कुछ कम है।

मैवानी—वि० [क्रा०] १ (प्रदेश) जो समतल ही विशेषतः जिसमें पहाड़ आदि न हो। २. मैवान या मैवानों मे काम आने या होनेवाला अथवा उनसे सबध रखनेवाला। जैसे—मैवानी तीर्थ।

स्त्री० अंगन या मैदान मे टांगी अथवा लटकाई जानेवाली लालटेन।

स्त्री० [हिं० मैवा] मैदे का उठाया हुआ खमीर।

मैदा-लकड़ी—स्त्री० [सं० मैदा+हिं० लकड़ी] एक प्रकार की मुलायम सफेद जड़ी जो औषध के काम आती है।

मैत—पु० [सं० मयन] १ कामदेव। मदन। २ मोम। ३ राल में मिलाया हुआ मोम जिससे धातुओं की मूर्तियाँ बनाने के लिये उनका नमूना बनाया जाता है, और जिसके आधार पर मूर्तियाँ डालने का सूचना बनाया जाता है।

पु० [अ०] आदमी। मनुष्य।

मैत-कामिनी—स्त्री० [हिं० मैत=मयन+सं० कामिनी] कामदेव की स्त्री। नति।

मैतकरी—पु०=मैतफल।

मैतकल—पु० [सं० मयनफल] १ मद्योले आकार का एक प्रकार का झाड़दार और कटौला मूल जिनकी छाल हाकी रंग की, लकड़ी हलके भूरे रंग की होती है, और फूल पीलापन लिये सफेद रंग के होते हैं। २ इस मूत्र का फल जिसमे दो दन्त होते हैं और जिसमें मिथीदाने की तरह चिपटे बीज होते हैं। इसका मूदा पीलापन लिए लाल रंग का और स्वाद कड़ु-आटा होता है।

मैतमय—वि० [हिं० मैत+सं० मय] जिसे बहुत प्रबल काम-वासना हो रही हो।

मैतरा—पु०=मैतफल।

मैतसिला—स्त्री०=मैतसिल।

मैयसिक्—स्त्री० [स० मन,शिला] मटमैले रग का एक प्रकार का खनिज पदार्थ जिसे खोपकर दबा के काम में लाया जाता है।

मैना—स्त्री० [स० मयना, मदन-शालाका] १ काले रग की तथा पीली खोपकासी एक प्रसिद्ध बड़ी बिड़िया जो सिलाने से मनुष्य की-सी बौली बोलने लगती है। साक्षिका। सारी। २. सतभद्रया नामक पत्नी। ३. हिमालय की स्त्री।

†स्त्री०=मैनका।
†पु०=मीना (अगली जाति)।

मैनक—पु० [स० मैनका; अण, पुषो० सिद्धि] एक पर्वत जो मैना तथा हिमालय का पुत्र माना जाता है। (पुराण०) इसे सुनाम और हिरण्यनाम भी कहते हैं। २ हिमालय की एक चोटी।

मैनी—स्त्री० [देवा०] एक प्रकार का कौटोला वेड। मयनक।

मैयस्त्व—पु० [फा०] [भाव० मैयस्त्वती] १. मयिरा का प्रेमी और भक्त, अर्थात् मद्यप। २ बहुत अधिक शराब पीनेवाला। मदिरासक्त।

मैयस्त्वती—स्त्री० [फा०] बहुत अधिक शराब पीना।

मैकरोस—पु० [फा०] [भाव० मैकरोसी] शराब बेचनेवाला। मद्य-व्यवसायी। कलवार।

मैकरोसी—स्त्री० [फा०] शराब बेचने का घरा।
मैमंत—वि० [स० मदमल] १ मद्योपल। मद्यवाला। २. अभिमान। घमडी।

स्त्री०=ममता।

मैमल—स्त्री० [अ० मैमल] १ सत्यप्रता। २ सुख। ३. कल्याण।

मैमाता—वि० [स्त्री० मैमाती]=मैमंत।

मैयल—स्त्री० [म० मूल्य] १ मीत। मूल्य। २ मृत शरीर। लाश। शव। ३ मूक का अतिम सस्का। अत्येष्टि। जैसे—उनकी मैयल मे शहर भर के लोग शामिल हुए थे।

मैया—स्त्री० [स० मानुका, प्रा० मालुआ, माद्रया] माता। नी।

मैयार—पु० [हि० मटियार] एक तरह की बजर भूमि।
पु० [अ०] १ मायने-तीलने आदि का कोई उपकरण। २ कपोटी।

मैय—स्त्री० [स० मूय, प्रा० मिअर=साणिक] रह-पहकर होनेवाली बहू कलक जो शरीर में सोंप का जहर प्रविष्ट होने पर होती है।

मैरा—पु० [स० मयर, प्रा० मयइ] श्लेठ में स्थित मजान।

मैरीन—पु० [अ०] १ नी-नेता। २ नी-सैनिक।
वि० मयइ-सम्बन्धी। समुद्री।

मैरेय—स्त्री० [स० मार-डक्-एय, नि० सिद्धि] १. गुड़ और धो के फूल की बनी हुई एक प्रकार की प्राचीन काल की मदिरा। २. एक में मिला हुआ आसव और मद्य जिसमें ऊपर से शहद भी मिला दिया गया हो। ३. मदिरा। शराब।

मैलव—पु० [स० मिलिद] बीरा।

मैल—स्त्री० [स० मल] १ कोई ऐसी चीज जिसके पड़ने या लगने से दूसरी चीजें शराब, गंदी या मैली होती हो अथवा उनकी चमक-दमक, सफाई आदि कम होती या बिगाड़ जाती हो। मलिन या मैला करने-वाला तत्त्व या वस्तु। जैसे—विट्ट, गूँस, बूँस आदि।

पव—हाथ-पैर की मैल=बहुत ही उपेक्ष्य और तुच्छ वस्तु। जैसे—बहु रूप-एँसे को तो हाथ-पैर की मैल समझता था।

२ मन में रहने या होनेवाला किसी प्रकार का दोष या विकार।
मुहा०—मन में मैल रखना—मन में किसी प्रकार का दुर्भाव या नैमनस्य रखना।

†पु०=मैला (मलिन)।
पु० [देश०] कीलवानों का एक सकेत जिसका व्यवहार हाथी को चलाने के लिए होता है।

मैल-खोरा—वि० [हि० मैल+फा० खोर] बूल, गदाँ आदि पकने पर भी (क) जो मैला न चिटाई पड़ता हो यथवा (ख) जिसकी रगत खराब न होती हो जैसे—(क) मैल-खोरा कण्डा। (ख) मैल-खोरा रग।
पु० १ काठी या जीन के नीचे रखा जानेवाला नमदा। २ साबुन।

मैला—वि० [स० मलिन; प्रा० मडल] १ जिस पर मैल जमी हो। जिस पर गदं, धूल या कीट आदि हो। जिसकी चमक-दमक मारी गई हो। मलिन। अत्यच्छ। 'साफ' का उलटा।

पव—मैला-कुचैली।
२ दोष, विकार आदि से युक्त। प्रुषित और विकृत। गदा।
पु० १ गलीज। गु। विष्ठा। २ कूड़ा-करकट। ३ मैल।
पु० [अ० मैल] १ आकर्षण। २ प्रवृत्ति या रुचि।

मैला-कुचैली—स्त्री० [हि० मैला+म० कुचैली=मदा वरत्र] [स्त्री० मैली-कुचैली] १ बहुत अधिक मैला या गदा। २ जो बहुत मैले कपड़े आदि पहने हुए हो।

मैला-धर—पु० [हि०] बहु सार्वजनिक स्थान जहाँ गाँव या शहर का कूड़ा-कंकट, गु आदि फेका जाता हो।

मैलाम—पु० [अ०] १ आकर्षण। २ प्रवृत्ति या रुचि।

मैलापन—पु० [हि० मैला+पन (प्रत्यय०)] मैले होने की अवस्था या भाव। मलिनता। गदापन।

मैलिनरी—स्त्री०=मशीनरी।

मैहर—पु० [हि० मही=मट्टा] १ मक्खन को तपाने पर उसमें से निकलने-वाला मट्टा। २ धो की तलछट।
†पु०=मैहर (मायका)।

मै—सर्व० [स० मम] १ ब्रजभाषा में 'मै' का कर्ता से भिन्न अन्य कारकों में विभक्ति लगने में पहले बना हुआ रूप। जैसे—मोंकों, मारि श्यादि। २ मुझे। मुझको।

अव्य० में। उदा०—खील कयाट महल मो जाही—कबीर।

मैंगरा—पु० १=मैंगरा। २=मूंगरा।

मैंगला—पु० [देश०] मध्यम श्रेणी का केसर।

†पु०=मूंगरा।

†पु०=मैंगरा।

मैँछा—स्त्री०=मूँछ।

मैँडा—पु० [प० मूँडा] १ बालक। २ पुत्र।

मैँडा—पु० [स० मूँडा; प्रा० मूँडा=आधार] १. बाँस, तरफड़े या बेंत का बना हुआ एक प्रकार का ऊँचा गोलाकार आसन जो प्रायः तिरवाई से मिलता-जुलता होता है। माँचा। २ बाहु के जोड़ के पास कपड़े का घेरा। कपा।

पव—सीमा-मैँडा। (देवें)

मै—सर्व० [स० मम] १ मेरा। २. अवधी और ब्रजभाषा में 'मै'

का वह रूप जो उसे कर्ताकारक से निम्न अन्य कारकों में विभक्ति रूपसे से पहले प्राप्त होता है। जैसे—भोको, भोसा इत्यादि।

भोई—स्त्री० [हिं० भोना] भी में सना हुआ आटा।

भोक्वना—पुं०=भुक्वना।

भोक्वना—स० [सं० भुक्त्वा; हिं० भुक्वना] १ परित्याग करना। छोड़ना।

२ मुक्त करना। छुड़ाना। ३ फेंकना।

भोक्वना—स०=भोक्वना (भुक्त्वा)। उदा०—होई बंदि पिवाहि भोक्वनाबी।—नायसी।

भोक्व—वि० [सं० भुक्त्वा; हिं० भुक्वना] १ जो बंधा न हो। छूटा हुआ। आजाद। स्वच्छंद। २. दे० 'भोक्व'।

भोक्वना—स० [सं० भुक्त्वा] भोजना। उदा०—चिह्नं दिति नौ तौ भोक्वना।—नरपति नाट्य।

भोक्व—वि० [हिं० भोक्व] १. अधिक चौड़ा। कुशादा। २. लुला या छूटा हुआ। मुक्त। ३. बहुत। यथेष्ट।

भोक्वा—पुं० [सं०/भोक्त्वा] पुं० १=भोक्वा। २=भोक्वा।

भोक्व—पुं० [सं०/भोक्त्वा (छोड़ना)+भक्त्वा] १ बचन से छूटना। मुक्त होना। छुटकारा। २. धार्मिक लीन से वह अवस्था या स्थिति जिसमें मनुष्य बुद्धि, पापों आदि से रहित होने के कारण बार-बार सवार में आकर जन्म लेने और मरने के कष्टों से छूट जाता है। आवागमन से निम्नवाली मुक्ति। ३. मृत्यु। मौत। ४. गिरना। पतन। ५. पावर का वृक्ष।

भोक्व—वि० [सं०/भोक्त्वा+भक्त्वा-अक] भोक्व-दायक।

पुं० भोक्वा नामक वृक्ष।

भोक्व—पुं० [सं०/भोक्त्वा+भक्त्वा-अक] [वि० भोक्वणीय, भोक्वित, भोक्व] भोक्व देने की क्रिया या भाव।

भोक्व—वि० [सं० भोक्त्वा/दा (देना)+क] भोक्व-दायक।

भोक्व—स्त्री० [सं० भोक्त्वा-टाप्] अगहन सुदी एकादशी की संज्ञा।

भोक्व—पुं० [सं०] चीनी यात्री ज्ञानेश्वर का एक भारतीय नाम।

भोक्व—पुं० [सं० व० त०] १ सूर्य। २ काशी तीर्थ।

भोक्व—पुं० [सं० व० त०] ताल के साठ मुख्य भेदों में से एक भेद। इसमें १६ गुरु, ३२ लघु और ६४ द्रुत मात्राएँ होती हैं।

भोक्व—स्त्री० [सं० व० त०] अघ्यारम-विधा।

भोक्व—स्त्री० [सं० व० त०] वह लोक जिसमें जैन धर्मावलंबी यापु पुत्रव भोज का सुख भोगते हैं। (जैन)

भोक्व—वि० [सं० भोक्त्वा+भक्त्वा] १. जिसका भोक्व हो सकता हो। जो छूट सकता हो, छुड़ाना या सकता हो या छुड़ाना जाने को हो। २. जो धार्मिक दृष्टि से भोक्व या मुक्ति पाने का अधिकारी हो चुका हो।

भोक्वा—पुं०=भोक्वा।

भोक्वा—पुं० [सं० भुक्त्वा] १. बीवार, छल आदि में बना हुआ रोषानदान। २. ताबा। ३. एक तच्छ का वृक्ष।

भोक्वा—पुं० [सं० भुक्त्वा] १. बहिया जति का बेले का पीथा। २. उक्त पीथा का फूल जो साधारण बेले के फूल से अधिक बड़ा तथा गटा हुआ होता है।

भोक्वा—पुं०=भुक्वा।

भोक्वा—स्त्री० [सं०] एक प्रकार का जंगली वृक्ष।

भोक्व—वि० [सं०/भुक्त्वा (भुक्त्वा होना)+भक्त्वा, कुल्वा] १. (पर्याय) जो ठीक या पूरा काम न हो सकता हो। २. निष्फल। व्यर्थ।

भोक्व—स्त्री० [सं० व० त०] बंधा स्त्री। बांझ।

भोक्वा—स्त्री० [सं०] वह मोटी, भ्रमजुल और अधिक चौड़ी गरिया जो कपटरी छाजन में बंधे पर गंगरा बांधने में काम आती है।

भोक्व—पुं० [सं० भोक्त्वा+भक्त्वा] विफलता। अकृतकार्यता। नाकामयाची।

भोक्व—पुं० [सं०/भुक्त्वा (छोड़ना)+अक्त्वा] १. सेमल का पेड़। २. केला। ३. पावर वृक्ष।

भोक्व—पुं० [सं०/भुक्त्वा] १. शटका या बक्का लगने से शरीर के किसी अंग के जोड़ की नस का अपने स्थान से दृष्टर-उदरर बिसक जाना। (इसमें वह स्थान सूज जाता है और उसमें बहुत पीड़ा होती है) जैसे—नर्म में भोक्व आ गई है। २. कोई ऐसा शोच जिसमें कोई चीज भरी और लँगड़ी सी जान पड़ती हो। जैसे—पहले आप अपनी चाचा की भोक्व तो निकालें। क्रि० प्र०—जाना।—पड़ना।

भोक्व—वि० [सं०/भुक्त्वा (छोड़ना)+भक्त्वा+भक्त्वा-अक] १. भोक्व करनेवाला। छुड़ानेवाला। २. ले लेना या हारण करनेवाला। पुं० १ सेमल का पेड़। २. केला। ३. ऐसा संघासी जो सब प्रकार की विषय-आनाओं से मुक्त हो चुका हो।

भोक्व—पुं० [सं०/भुक्त्वा+भक्त्वा-अक] १. बंधन आदि से छुड़ाना। छुटकारा देना। मुक्त करना। २. दूर करना। हटाना। जैसे—दुःख-भोक्व। ३. ले लेना या हारण करना। छीनना। जैसे—बख्त भोक्व।

भोक्वा—स० [सं० भोक्व] १. भोक्व करना। २. छुड़ाना या छोड़ना। ३. गिराना। ४. बाहर निकालना।

पुं० १ लोहारों का वह औजार जिससे वे लोहे के छोटे-छोटे टुकड़े उठाते हैं। २. हज्जामों की वह चिमटी जिससे वे बाल उखाड़ते या तोचते हैं।

भोक्वी—स्त्री० [सं०/भुक्त्वा+भक्त्वा+भक्त्वा-अक, +औप्] भटकटीया। स्त्री० हिं० 'भोक्वा' का स्त्री० अलया०।

भोक्विता (शु) —वि० [सं०/भुक्त्वा+भक्त्वा+भक्त्वा] छुटकारा देने या दिलवानेवाला।

भोक्व—पुं० [सं० व० त०] सेमल वृक्ष का गाँव।

भोक्वा—स्त्री० [सं०/भुक्त्वा+भक्त्वा+टाप्] १. केला। २. नील का पीथा। ३. रुई का पीथा।

पुं० सट्टिचन (वृक्ष)।

भोक्वा—पुं० [सं० भोक्त्वा/अद (प्राप्त होना)+अक्त्वा] १. केला। २. केले की पेड़ी के बीच का कोमल भाग। केले का गांभ।

भोक्वी (भिव्) —वि० [सं०/भुक्त्वा+भक्त्वा+भक्ति] [स्त्री० भोक्वीनी] १. दूर करनेवाला। २. छुड़ानेवाला।

पुं० [सं० भोक्त्वा+भक्त्वा] (चमड़ा) छुड़ाना [स्त्री० भोक्वीनी] वह जो चमड़े के जूते आदि बनाने का व्यवसाय करता हो। जूते बनाने या सीनेवाला।

भोक्व—पुं०=भोक्वा।

भोक्व—स्त्री०=भुक्वा।

पुं०=भोक्वा।

बीजम्—पु० [हि० बीबी ?] [स्त्री० अल्पा० मोजडी] जूता। (राज०)
उदा०—पग भ्रमकती मोजडी।—नरपति नाहू।

बीजरा—पु०=मूजरा।

बीजा—पु० [का० बीज] कौशिके, मिलाई अथवा महीन द्वारा मुना जानेवाला धागा पीथ डकने का धागा, सूत आदि का आवरण। जूरीब।
१ पैर से पिडकी के नीचे का वह भाग जो मिट्टे के आग-पग और उससे कुछ ऊपर होता है और जिसपर उक्त आवरण पहना जाता है। २ कुत्तों का एक पैर जिसमें पिपकी को जमीन पर गिराकर और उसके का उलट अग पकड़कर उमें चित्त किया जाता है।

बीजिका—पु० [अ० मूजाजिङ] कोई अलौकिक या देव-कृत चमत्कार।

बीह—स्त्री० [हि० मोटरी] गठरी। मोटरी।

पु० [दिशा०] चमड़े का एक प्रकार का बड़ा बैला जिससे पिचाई के लिए कुएँ से पानी निकाला जाता है। चरसा।

बीहक—पु० [स०/मृ० (देवा करना)+घञ्+कन्] दुहने किये हुए कुवा के टुकड़ों का समूह जो पित्तुश्रावण करते समय व्यवहृत होते हैं।

बीहकी—स्त्री० [स० मोजक। ऋषि] सगीत में एक प्रकार की रागिनी।

बीहण—पु० [स०/मृ० (मोहना)+लृट्—अन] १ वायु। हवा। २ पीनला, मलना या राखना। ३ बायु। हवा।

बीहणक—पु० [स० मोहन+कन्] एक प्रकार का मम-वृत्त बणिक छन्द जिसके प्रत्येक चरण में क्रम से तगण, दो जगण और अन्त में लघु-गुह होते हैं। यथा—सौहै घन ध्यामल धोर घने। मोहै तिनमें बक-पति भने।—केशव।

बीहण—स्त्री० [अ०] १ कौयले, पेट्रोल आदि द्वारा उत्पादित दानित से सबको पर चलनेवाली एक प्रकार की मचारी गाड़ी। २ एक प्रकार का वैद्युतिक यन्त्र जिसकी दानित से अग्य महीनमें चलाई जाती है।

बीहरी—स्त्री० [तैलग० मूटा=गठरी] गठरी।

बीटा—वि० [स० मूट] १ अपेक्षाकृत अधिक स्पूल-काय फलत जिसमें अधिक मास तथा चरबी हो। 'बुबला' का विरुद्धार्थक।

पह—मोटा-बीटा या **मोटा-भाजा**—हुट्ट-मुट्ट।

२ जिसमें घनता अधिक हो। 'पलत' का विरुद्धार्थक। ३ जिसकी गोलाई का घेरा प्रसंग या साधारण से अधिक हो।

मुहा०—मोटा दिखाई देना—असो की ज्योति में ऐसी कमी होना जिससे छोटी या बारीक चीजे न दिखाई दें। बहुत कम और केवल मोटी चीजें दिखाई देना।

४ जिसके कण बहुत अधिक छोटे या बारीक न हो। जो बहुत महीन चूर्ण के रूप में न हो। जैसे—मोटा आटा, मोटा बालू, मोटा बेसन।

५ जो परिणाम, माग आदि में, साधारण से अधिक, उत्तम या यथेष्ट हो। जैसे—मोटा अक्षामी—धनवान या सम्पन्न व्यक्ति। मोटा भाग्य—अच्छा भाग्य या सौभाग्य। मोटा भार—बहुत अधिक भार। मोटी हानि—बहुत अधिक हानि। ६ जिसमें विशेष उत्तमता, कोमलता, प्रसंतीयता, सूक्ष्मता, आदि गुणों का अभाव हो, और इसी लिए जो घटिया, बुरा या महत्वहीन माना जाता है। जैसे—मोटा अनाज,

मोटी उपमा, मोटी बुद्धि, मोठे वस्त्र।

पह—मोटा-बीटा—बहुत ही घटिया या साधारण।

७ (बात या विषय) जो साधारण बुद्धि का आदमी भी सहज में

समझ सके। जिसे जानने या समझने में विशेष बुद्धि की आवश्यकता न हो। जैसे—मोटी बात, मोटी मूल।

मुहा०—मोठे तौर पर या मोठे हिसाब से—बिना व्योरे की बातों का अथवा सूक्ष्म विचार किये हुए। जैसे—मोठे हिसाब से इस काम में ती रूपए खर्च होंगे।

पह—मोटी चुनाई—बिना गड़े हुए और बेडौल पत्थरों की (दीवार के रूप में होनेवाली) चुनाई या जोड़ाई।

८ लाक्षणिक रूप में घन, बल आदि की अधिकता के कारण अपने आपको बड़ा समझनेवाला फलत अभिमानों या घमडी (व्यक्ति)। जैसे—अब तो वह मोटा ही चला है, जल्दी किसी से बात नहीं करता। पु० [?] करैकी या काकी भिट्टोवाकी जमीन। पु०—मोट (बड़ी गठरी)।

मोटाई—स्त्री० [हि० मोटा+आई (प्रत्य०)] १ मोठे होने की अवस्था या भाव। २ किसी सेवाकार वस्तु की लवाई और चौड़ाई से मित्र भाग का माप। जैसे—इस लकड़ी की मोटाई तीन इंच है। ३ घन आदि की अधिकता के फलस्वरूप किसी के व्यवहार में प्रकट होनेवाली अह-भावना, आलस्य या बोछापन।

मुहा०—मोटाई चढ़ना—धनवान आदि बनने पर घमडी, बोछा तथा आलसी बनना। **मोटाई बढ़ना** या **निकम्पना**—बहुभावं का जाने रहना।

मोटाना—अ० [हि० मोटा+आना (प्रत्य०)] १ मोटा होना। स्पूलकाय होना। २ धनवान् या संपन्न होना। ३ फलत अभिमानों या घमडी और आलसी होना।

सं—ऐसा काम करना जिसमें कुछ या कोई मोटा हो।

मोटापन—पु० [हि० मोटा+पन (प्रत्य०)] मोठे होने की अवस्था या भाव। दे० 'मोटाई'।

मोटापा—पु० [हि० मोटा+पा (प्रत्य०)] मोठे अर्थात् स्पूलकाय होने की अवस्था या भाव। मोटापन। मोटाई।

मोटा-मोटी—क्रि० वि० [हि० मोटा] स्पूल गणना के विचार से। मोठे हिसाब से।

मोटिया—पु० [हि० मोटी+इया (प्रत्य०)] मोटा और नरुदरा देशी कपड़ा। गाड़ा। गजी। हड़ड। सल्लम।

पु० [हि० मोट] बीस डोनेवाला मजदूर।

मोहायित—पु० [स०/मृ० (मोहना)+भञ्ज, टुट्+क+यञ्+त] नायिका के के हाव या व्यापार जो उस समय उत्तमके अंतर्मन का अनुराग व्यक्त करते हैं जब वह अपना अनुराग छिपाने के लिए सचेष्ट होती है।

मोठ—स्त्री० [स० महुट्ट; प्रा० मउठ] मूँग की तरह का एक प्रतिष्ठ मोटा अन्न। बनमूँग। मुगानी। मोधी।

मोठसा—वि० [?] मीन। चूप।

मोड़—पु० [हि० मुडना या मोड़ना] १ मुड़ने या मोड़ने की अवस्था, क्रिया या भाव। पृथग्व। २ किसी चीज में होनेवाला मुड़ाव। बलन। (कर्म) ३ रागने आदि का वह अल या स्थान जहाँ से वह किसी और मुड़ना है। जैसे—इम गली के मोड़ पर हलवाई की दुकान है। ४. वह स्थिति जिसमें किसी काम या बात की दिशा या प्रवृत्ति कुछ बदलकर

किसी और या नई तरह हुई हो। जैसे—यहाँ से आलोचना (या काब्य-रचना) का नया मोड़ आरंभ होता है।

†पुं०=मीर (सिर पर बाँधने का)। उदा०—(क) चाई कंकण सिर बाँधी मोड़।—नरपति नाहू। (ख) पठा लीची बैसल, पते भरसों बाँध मोड़।—बाँकीघास।

मोड़-मोड़—पुं० [हिं० मोड़+अनु० मोड़] † मोड़ने-तोड़ने, मरोड़ने आदि की शिवा या भाव। मरोड़। २. मार्गों में पड़नेवाला घुमाव-फिराव। चक्कर। ३. घुमाव फिराव की अवधा चालाकी से बारी बतों।

मोड़ना—स० [हिं० मुड़ना का सं०] † ऐसा काम करना जिससे कुछ या कोई मुड़े। सामनेवाले या सीधे मार्ग से न ले जाकर किसी दिशा में प्रवृत्त करना। जैसे—गाड़ी या घोड़ा दाहिने या बाएँ मोड़ना।

मुहा०—(किसी से) मुँह मोड़ना=विमूढ़ होना।
२. आधापन करने या दबाव डालकर सीधी चीज किसी तरह घुमाना या टेढ़ी करना। जैसे—छठ मोड़ना, छुटी की धार मोड़ना। ३. ऐसी क्रिया करना जिससे किसी सपाट तलवाली वस्तु की परतें लय जायें। जैसे—कपड़ा या कागज मोड़ना। ४. किसी को कोई काम करने में रोकना या विरत करना।

मयो० कि०—डालना।—देना।

५. कुछ या कोई जिन और उन्मूल या प्रवृत्त हो, उधर से हटाकर द्यौर-उधर करना। जैसे—पीठ मोड़ना, मुँह मोड़ना (देखें 'पीठ' और 'मुँह' के मुहा०)।

मोड़-मुड़क—स्त्री० [हिं०] चित्रकला में, अंगों आदि की वह स्थिति जिससे चित्र सजीव-सा जान पड़ने लगता है।

मोड़ा—पुं० मूड; मि० पं० मुडा=लडका][स्त्री० मोड़ी] लडका। बालक।

मोड़ी—स्त्री० [देग०] † बहुत जल्दी में लिखी हुई ऐसी अस्पष्ट लिपि जो कठिनाय में पढ़ी जाय। बनीट लिखाई। २. दक्षिण भारत की एक लिपि।

मोड़ा—पुं०=मोड़ा। (देखें)

मोय—पुं० [स०/मृ० (प्रतिमान)।अनु०] †. सूखा फल। २. कुम्भीर या मगर नामक जल-जन्तु। ३. मक्खी। ४. हावा। टीकरा। मीना।

मोत बिल—वि०=मातदिल।

मोतबन्—वि०=मातबन्।

मोतमिद—वि० [अ०] विरवसनीय।

मोतिवचाम—पुं० [स० मोतिकवचाम; प्रा० मोतिवचाम] एक प्रकार का वर्षावृत्त जिसके प्रत्येक चरण में चार जयण होते हैं।

मोतिया—वि० [हिं० मोती] †. मोती संबंधी। २. मोती के रंग का।

३. ऐसा संकेद जिसमें नाम-मात्र की पीकी झलक हो। सखसी। (पल्लं) ४ जो आकार में मोती की तरह छोटे गोल दानों के रूप में हो।

पुं०. मोती की तरह का ऐसा संकेद रंग जिसमें नाम-मात्र की पीकी झलक हो। (पल्लं) २. संकेद तथा सुगंधित फूलोंवाला एक प्रसिद्ध पीषा।

३. उभट पीषे का फूल। ४. एक प्रकार का सलमा जो छोटे गोल दानों के रूप में होता है। ५. संकेद रंग की एक चिपिया।

मोतियाबिंद—पुं० [हिं० मोतिया+सं० बिंदु] † जोख का एक रोग जिसमें उसके ऊपरी परतों में अन्दर की ओर गैल जमने के कारण गोल सिलिन्डी सी पड़ जाती है और जिससे देखने की शक्ति दिन पर दिन कम होती जाती है। तिमर। (कौटुम्ब)।

मोती—पुं० [सं० मोतिकत; प्रा० मोतिय] †. समुद्री शीपी में से निकलने-वाला एक बहुमूल्य रत्न। मुक्ता।

मुहा०—**मोती परजन्म**=आधात लगने से मोती का बटकरना या उसके तल का कुछ फट जाना। **मोती डलकामा**=असू गिराना। उदा०।

मोती पिराया—(क) बहुत ही सुन्दर और प्रिय भावण करना। (ख) बहुत ही सुन्दर और स्पष्ट अक्षर लिखना। (ग) बहुत ही बारीक और सुन्दर काम करना। (घ) असू डलकामा। रोना। (ध्वय और हास्य)।

मोती बीधना—(क) मोती को पिराए जाने के योग्य बनाने के लिए उसके बीच में छेद करना। (ख) अक्षत-योगि या कुमारी के नाथ सम्राज्य करना। (बाजाक) **मोती रोसना**=घोड़े परिरथ में या घोड़े ही बहुत अधिक बन काम या जमा कर लेना। (किसी का)

मोतियों से मुँह भरना=किसी पर प्रसन्न होने पर उसे माला-माल कर देना।

२. कसेरो का एक तरह का उपकरण। ३. रहस्य मद्रदाय मे, मन। स्त्री० धान में पढ़ने की ऐसी बानी जिसमें मोती पिराये हुए हो।

मोती-चूर—पुं० [हिं० मोती+चूर] † बेसत की बनी हुई बहुत छोटी-मोटी बुनिया (पकवान) जो शरीर में पायकर लहकू बनाने के काम आती है। जैसे—मोतीचूर का लहकू। २. अग्रहण में होनेवाला एक तरह का धान। ३. कुवती का एक दौब।

मोती-ज्वर—पुं० [हिं० मोती+ज्वर] †. ज्वरक निकलने के पहले आनेवाला ज्वर। २. वह ज्वर जिसमें शरीर में छोटे-छोटे दाने भी निकल आते हैं।

मोती-भार्या—पुं०=मोती-सिंग।

मोती-भिरा—पुं० [हिं० मोती+भिरा] † छोटी शीतला या मोतिया। माता का रोग। मथर ज्वर। मोती माता।

मोती-बेल—स्त्री० [हिं० मोतिया+बेल] † मोतिया पीषे का एक भेद जो लता के रूप में होता है।

मोती-भात—पुं० [हिं० मोती+भात] † एक विशेष प्रकार का पीठा भात। **मोती-महाभर**—पुं० [हिं०] चित्र कला में, किसी सुंदरी का चित्र अंकित कर लेने पर उसके हाथ-पैरों में महाभार का-सा लाल रंग लगाने और उसके अंगों में अलंकार अंकित करने की कला।

मोती-आता—स्त्री०=मोती-भिरा (रोग)।

मोती-लहकू—पुं० [हिं० मोती+लहकू] मोती बुनिया का बँधा हुआ लहकू। दे० 'मोती-चूर'।

मोती-सिरी—स्त्री० [हिं० मोती+सिरी] † मोतियों की कठी या माला। **मोतीहर**—पुं०=मुक्ताफल (मोती)।

मोषरा—वि०=मोषरा (मुषरा)।

मोषा—पुं० [सं० मुषरा; प्रा० मुष] † जलीय भूमि में होनेवाला एक क्षुप जिसकी जड़ कसेरन की तरह होती है। २. उभट की जड़ जो जीवच के काम आती है।

मोष—पुं० [सं०/मृ० (हर्ष)+पञ्च] †. बात-चीत, हँसी-मजाक, खेल-

तमारी आदि मे मन के बहुलने तथा चित्त-वृत्तियों के प्रफुल्लित होने की अवस्था या भाव । २ महक । सुगंध । ३ पवित्र भगण, एक भगण, एक सगण और एक गुरु वर्ण का एक वर्णवृत्त ।

मौलिक—पु० [स० √मुद्+णिच्+पृथुच्—अक] ? भूने या तले हुए किसी साहज-न्याय के कथो, दासो आदि का बंधा हुआ गौलाकार रूप जिसमे चीनी या शक्कर भी मिलाई गई होती है। जैसे—मोतीचूर या बेसन का लड्डू । २ औषध आदि का बना हुआ लड्डू । जैसे—मदननाथ मोदक । ३ गुरु । ४ एक प्रकार का वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण मे चार भगण होते है । इन आभिनो और सूदरी भी कहते है । ५ मोहिनी नामक छंद । ६ एक वर्णानुसार जाति जिसकी उत्पत्ति क्षत्रिय पिता और ब्रह्म माता से मानी जाती है ।

वि० मोद या क्षान्द देनेवाला ।

मौलिकर—पु० [स० मोद+कृ (करना) +ट] एक प्राचीन मुनि ।

वि० मोद उत्पन्न करने या क्षान्द देनेवाला ।

मौलिकी—स्त्री० [स० मौलिकी+कन्+टाप्, ह्रस्व+मिडाई] मिडाई ।

मौलकी—स्त्री० [स० मोदक+डीष] ? एक प्रकार की गदा । २ मुर्वा लता ।

मौलन—पु० [स० √मुद् (प्रमथ होना) +णिच्+पृथुच्—अन] [वि० मोद-नीय, मू० कृ० मोदित] ? बात-चीत, हँसी-मजाक, खेल-तमाशे आदि के द्वारा मन का बहुलना तथा चित्त-वृत्तियो का प्रफुल्लित होना । २ सुगंध फैलाना ।

वि० [√मुद्+णिच्+पृथुच्—अन] मोद उत्पन्न करनेवाला ।

मौलना—अ० [स० मोवन] ? मुदित होना । २ सुगंध फैलाना ।

स० ? किसी के मन मे मोद उत्पन्न करना । २ सुगंध फैलाना ।

मौलवती—स्त्री० [स० √मुद्+णिच्+पृथुच्+डीष] बत-मल्लिका ।

मौलवती—स्त्री० [स० मोदवती] वन-मल्लिका । जगली चम्पनी ।

मौवा—स्त्री० [स० √मुद्+णिच्+अच्+टाप्] ? अजमोदा । वन-अज-वाहन २ सेमल का पेड़ ।

मौवाख्य—पु० [स० मोद-आ+वृथा (विस्तार-करना) । क] आम (पेड़) ।

मौवादि—पु० [स० मोद-आदि, मध्य० स०] सूँघर के पास के एक पर्वत का पौराणिक नाम ।

मौवित्त—मू० कृ०=मुदित ।

मौविनी—स्त्री० [स० √मुद्+णिच्+पिनि+डीष] ? अजमोदा । २ जूही । ३ चमेकी । ४ कमरुती ५ मधु । ६ शाबज ।

वि० स्त्री० मोद उत्पन्न करनेवाली ।

मौवी—पु० [स० मोदक=लड्डू (बनाने वाला) ; अथवा अ० मद्दह=जिस्, रसाय ? आटा, दाल, चावल, आदि बेचनेवाला बनिया । भोजन-मागप्री देनेवाला बनिया । परचुनिया । २ वह जिसका काम बडे आदमियों के यहाँ नौकरों को भरती करना हो ।

मौवीबाना—पु० [हि० मौवी+फा० क्षान्त; अक्ष आदि रखने का पर । भटार ।

मौयुक्त—पु० [स० मोदक=एक वर्णानुसार जाति] मधुआ ।

मौयु—वि० [स० मूध] मूध ।

मौयज—पु०=मोयन ।

मौयस—पु० [स०] एक गौर-अवसंस्कृत श्रुति ।

मौना—स० [हि० मोयण] ? नृषे हुए आटे आदि मे पी का मोगन देना । २ तर करना । मिमोना ।

स० [म० मोहन] ? मोहित करना । २ मोह वर्णानु प्रम मे डालना ।

उदा०—कछुक देवमार्या मति मोई—मुलती ।

पु० [स० मुंडन] २. वह जो मुंडन कराता हो अथवा जिसके केस काटे जाते हो । २ हिल्लू । निषण से भिन्न । (पञ्जाब)

पु० [स० मोहण] [स्त्री० अलगा० मौनिया] डबकनदार पिटाटा ।

मौनाल—पु० [देश०] मधोखे की जाति का एक वृक्षी । नील-मोटा ।

मौनिया—स्त्री० [हि० मोना का स्त्री० अलगा०] छोटी डबकनदार पिटाटी ।

मौनीधाम—पु० [अ०] किसी नाम के आरम्भिक दो-तीन अक्षरों के संयोग से बना हुआ मशिन मार्केतिक रूप जो प्रायः अलकून अक्षरों में लिखा रहता है ।

मौनी-दाह्य-मशीन—स्त्री० [अ०] छापे के अक्षर कपीज करनेवाली वह मशीन जिसमें एक-एक अक्षर नया ढलता और कपीज होता चलता है ।

मौपला—पु० [?] मालाबार प्रदेश (केरल) मे रहनेवाली एक मुसलमान जाति ।

मौम—पु० [फा०] ? वह चिकना मूलायम द्रव्य जिससे गहदू की मक्खियाँ अपना छत्ता बनाती हैं । मूधमक्खी के छत्ते का उपकरण ।

पद—मौम की नाक—ऐसी प्रकृति या स्वभाव जिसे दूसरे लोग जब जिघर चाहे तब उधर प्रवृत्त कर सकें ।

मूहा—(किसी की) मौम करना या मौम बनाना—इशोचूत कर लेना । दयाई कर लेना ।

२ रूप, रंग आदि मे उक्त से मिलता-जुलता वह पदार्थ जो मधु-मक्खी की जाति के तथा कुछ और प्रकार के छोटे पराग आदि से एकत्र करते हैं अथवा जो वृक्षां पर लाज आदि के रूप मे पाया जाता है । ३ मिट्टी के तेल मे एक विशेष रासायनिक क्रिया द्वारा निकाला हुआ इसी प्रकार का एक पदार्थ । जमा हुआ मिट्टी का तेल । (मौम-बली प्रायः इसी से बनती है ।)

मौमजाभा—पु० [फा०] ऐसा कपड़ा जिस पर मौम का रोजान बड़ाया गया हो ।

विशेष—ऐसे कपडे परपानी का अमर नहीं होता ।

मौमती—स्त्री०=ममता ।

स्त्री० [मौ+मति] मेरी मति ।

मौम-बिल—वि० [फा०] मौम की तरह कोमल हृदयवाला । दूतरो के दुःख से क्षीण द्रवित होनेवाला ।

मौमना—वि० [हि० मौम+ना (प्रत्य०)] मौम का-सा, अर्थात् बहुत ही कोमल ।

मौम-बली—स्त्री० [फा० मौम । हि० बली] मौम, जमाये हुए मिट्टी के तेल या ऐगे ही किसी और जलनेवाले पदार्थ की बनी हुई बली ।

मौवन—पु० [अ०] ? मुसलमान पुण्य । २ एक प्रकार के मुसलमान जुलाहे ।

मौमिया—स्त्री० [फा०] ? एक विशेष प्रकार की औषधि जिसके लेप मे दाब सहने-मकने नहीं पाता । २ वह सब जिस पर उक्त औषधि का लेप हुआ हो ।

मौमियाई—स्त्री० [फा० मौमियायी] ? काले रंग की एक चिकनी दवा जो मौम की तरह मूलायम होती है । यह दवा दाब करने के लिए प्रसिद्ध है । २ गळकी शिलाजीत ।

गुहा—(किली की) बौधियाई विफालना—(क) किली से बहुत कठिन परिश्रम करना। (ख) बहुत मारना-पीटना।

श्री—वि०[का०] १. योग का बना हुआ। जैसे—श्री श्री, श्री श्री, श्री श्री। २. योग की तरह सुखायम। ३. बहुत जल्दी द्रवीभूत होने-का।

श्रीयम—श्री० [हि० मैन=योग] गृही हुए आते, बसत, मँदे आदि में डाला जानेवाला श्री या तेल जिसके कारण उनसे बनाये जानेवाले पकवान कुट-कुट, बस्ता और सुखायम हो जाते हैं।

कि० प्र०—डालना।—देना।

श्रीयम—श्री० [देवा०] एक प्रकार की लता जो आसाम, सिक्किम और भूटान में बहुतायत से होती है। इसके कपड़े रँगने के लिए एक प्रकार का बहुत चमकीला रंग तैयार किया जाता है।

श्रीरंग—श्री० [देवा०] नेपाल देश का पूर्वी भाग जो कीचिकी नदी के पूर्व पड़ता है। संस्कृत धर्मों में इसी भाग को 'किरात देश' कहा गया है।

श्रीरङ्गा—श्री०—मुद्रा।

श्रीर—श्री० [स०] मयूर, प्रा० मोर। [श्री० श्रीर] १. एक बहुत सुन्दर, प्रसिद्ध, बड़ा पक्षी जो प्रायः चार फुट तक लम्बा होता है और जिसकी लकीं गरदन और छाती का रंग बहुत ही गहरा और चमकीला नीला होता है। यह बाघों को देखकर प्रसन्नता से पर फेलाकर नाचने लगता है। उस समय इसके पंखों की धीमा परम दर्शनीय होती है। केकी। बच्छी। २. नीलम नामक रत्न को एक प्रकार की बड़िया रगत जो मोर के पंखों के समान होती है।

श्री० [दि०] सेना की अगली पक्ति।

†वि०=मेरा (अवधी)।

*सर्व० [स० मय] मेरा। (अवधी)

गुहा—श्रीर-श्रीर करना=दे० 'मेरा' के अत्यंत।

श्रीरंग—श्री० [हि० मूरुवगु] मूह-व्यग नामक बाजा।

श्रीरङ्गा—श्री०—श्रीर-ब्रजिका।

श्रीर-ब्रजिका—श्री० [हि० श्रीर] :स० ब्रजिका] श्रीर-पक्ष के छोरे की वह बूटी जो बड़ाकार होती है।

श्रीर—श्री० [का० मोर्चे] १. लोहे की ऊपरी सतह पर जमनेवाली वह लाल या पीले रंग की मैल की-सी तह जो वायु और नदी के योग के कारण उसके अन्दर होनेवाले रासायनिक विकार से उत्पन्न होती है और जिसके कारण लोहा कमजोर और खराब हो जाता है। जग।

कि० प्र०—जमना।—लगाना।

गुहा—श्रीरचा खाना=श्रीरचा लगने से खराब होना।

२. ध्वज या धीरे के ऊपर जमनेवाली मैल।

श्री० [का० श्रीरचाल] १. वह गड़बा जो गड़ के चारों ओर रसा के लिए लौटा जाता है। २. गड़ के अन्दर रहकर शत्रु से लड़नेवाली रत्ना।

३. वह स्थान जहाँ से सेना, गड़, नगर आदि की रक्षा की जाती है।

गुहा—श्रीरचा जीतना=शत्रु को परास्त करके उसके मोर्चे पर अधिकार कर लेना। श्रीरचा बंधना=शत्रु से लड़ने के लिए उपयुक्त स्थान पर सेनाएँ नियुक्त करना। श्रीरचा धारणा=श्रीरचा जीतना। (देखें ऊपर) श्रीरचा लेना=सामने आकर शत्रु से धारणा का युद्ध करना।

४. सांख्यिक रूप में, ऐसी स्थिति जिसमें प्रसिद्धों या विद्वानों का अच्छी

तरह जमकर सामना किया जाता है और उस पर बार किये जाते तथा उसके धारों के उत्तर दिये जाते हैं।

श्रीरचाली—श्री० [का० मोर्चे बंदी] गड़ के चारों ओर गड़बा लौकर सेना नियुक्त करना। श्रीरचा बनाना।

श्रीरचाल—श्री० [स०] वह गड़बा या खार्ई जिसमें छिपकर शत्रु पर (युद्ध के समय) मोर्ची बलाई जाती है।

श्री० [?] एक प्रकार की कसरत।

श्रीरछाड़ी—श्री०=श्रीरछल।

श्रीरछल—श्री० [हि० मोर+छड़] [श्री० अल्पा० श्रीरछली] श्रीरछलों का बना हुआ चंबर।

श्रीरछली—श्री० [हि० श्रीरछल+ई (प्रत्य०)] वह जो (क) श्रीरछल बनाता अथवा (ख) देवताओं, राजाओं आदि पर डुलाता ही।

श्री० श्रीरछल का श्री० अल्पा०।

†श्री०=मोलसिरी।

श्रीरछाँही—श्री०=श्रीरछल।

श्रीर-मुद्रना—श्री० [हि० मोर+मुद्रना] एक प्रकार का जडाऊ आभूषण जिसके बीच का भाग गोल बंदे के समान होता है और दोनों ओर मोर बने रहते हैं।

श्रीरट—श्री० [स०/श्री० (लपेटना)। अट] १. ऊल की जड़। २. अंजोल का फूल। ३. कण्ठपुत्र नामक लता। ३. न्याई हुई गाय के सातवें दिन के बाद का भुव।

श्रीरटक—श्री० [स० श्रीरट। कन्] १. सकेब खैर। २. दे० 'श्रीरट'।

श्रीरटा—श्री० [स० श्रीरट+टप्] भुव।

श्रीरध्वज—श्री० [स० मयूरध्वज] एक प्रसिद्ध पौराणिक राजा।

श्रीरध्व—श्री० [स० श्रीरट] बिक्रमोया। शिखरन। (दे०)

श्री० [हि० मोड़ना] मोड़ने की क्रिया या भाव।

श्रीरत्ना—श्री० [हि० श्रीरत्न] मधे हुए दही में से मखन निकालना।

†स०=श्रीरत्ना।

श्रीरनाथ—श्री० [हि०] एक प्रकार का नाथ जिसमें पेशवाज के अगल-अगल वाले दोनों सिरे दोनों हाथों से पकड़कर कमर तक उठा लिये जाते हैं। और तब खड़े-खड़े या घुटनों के बल कुछ बैठकर इस प्रकार नाथा जाता है कि नाचनेवाले की आकृति मॉर की-सी हो जाती है। रक्से-ताऊत।

श्रीरनी—श्री० [हि० श्रीर का श्री० रूप] १. मादा मॉर। २. मॉर के आकार का कटकन जो प्रायः गहनी में लगाया जाता है। जैसे—नय की मॉरनी। ३. मॉरनी की-सी चाल चलनेवाली बनी-जनी और सुन्दरी युवती। दुमुक-दुमुक कर चलनेवाली सुन्दरी।

श्रीर-बंध—श्री० [हि० श्रीर+बंध=वर] १. मॉर का पर या बंध। २. मॉर के पर की बनाई हुई कलशी।

श्रीर-बंधी—वि० [हि० श्रीरबंध] मॉर के पंख के रंग का। गहरा चमकीला नीला।

श्री० के पंख की तरह का गहरा, चमकीला नीला रंग।

श्री० १. एक तरह की नाथ जिसके अगले भाग में मॉर की सी आकृति बनी रहती है। २. एक तरह का छोटा पसा जो लोहने पर मंडलाकार ही आता है। ३. एक तरह की कसरत।

मौरवंशा— $\mu\circ$ [हि० मौर्यवंश] मौर का पर या पक्ष जो प्रायः सिर पर कलगी की तरह खोसा जाता था।

मौर-वीथ— $\mu\circ$ [हि० मौर-पथ] बायबॉलाने की मेज पर खड़ा जडा हुआ लोहे का छड़ जिस पर खाने के लिए मांस के बड़े बड़े टुकड़े लटकए जाते हैं। (लस०)

मौर्य— $\mu\circ$ [स० मौर्य; पा० मयम्ब] मेरूप या लाल रंग की एक तरह की पहाड़ी ककड़ी जो सबको पर बिछाई जाती है और जिससे अब सीमेट की बनने लगा है।

मौर-मुकुट— $\mu\circ$ [हि० मौर-स० मुकुट] मौर्यवंश से मुकुट मुकुट।

मौरवा— $\mu\circ$ [देग०] वह रस्मी जो नाय की किलबारी में बांधी जाती है और जिससे पतवार का काम लेते हैं।

† $\mu\circ$ —मौर (पक्षी)।

मौर-सिक्का—स्त्री० [म० मयूर-सिक्का] एक प्रकार की जड़ी जिसकी पत्तियाँ मौर की कलगी के आकार की होती हैं। यह बहुधा पुरानी दीवारा पर उगती है।

मौरा— $\mu\circ$ [देग०] अकीक नामक रत्न का एक भेद। बाबाँ चोरी।

† सि०=मेरा।

मौरना— $\mu\circ$ [हि० मौरना का प्रे०] १ रस पेगने के समय ऊब को काल्ह में दबाना या लगाना। २ दे० 'मोडना'।

अ० मोहा जाना।

मौरिया—स्त्री० [हि० मौरिया?] काल्ह में कातर की हुसरी शाखा जो बांस की होती है।

मोरी—स्त्री० [हि० मौर का स्त्री०] १ किसी वस्तु के निकलने का तग डार। २ वह छोटी टाली जिसमें से गन्ना या फाल्गू पानी बहकर निकलता है। पनाकी।

मुहा०—मोरी छुटना—व्यस्त आना। मोरी पर जाना—वेगान करना।

मोरी में डालना—नष्ट करना।

† स्त्री०—मोहरी (पाजामे आदि की)।

मोरा— $\mu\circ$ —मौरया।

मोल— $\mu\circ$ [स० मूल्य; प्रा० मूल्ल] कोमल। दाम। मूल्य। (दे०)

पद्य—अन-मोल, मोल-वाल।

मुहा०—मोल करना—(क) ग्राहक को किसी चीज का उचित से अधिक दाम बताना। (ख) किसी चीज का दाम अधिक जान पड़ने या बताये जाने पर उसे घटाने की बात-चीत करना। मोल लेना—जूठ-मूठ या जान-बूझकर कोई झूठ, काम या धार अपने ऊपर लेना। जैसे—झगड़ा या लड़ाई मोल लेना।

मोलनी— $\mu\circ$ कुछ खरीदने के लिए उसका मोल या दाम पूछना या बताना।

† $\mu\circ$ —मोलाना (मोलनी)।

मोलबी— $\mu\circ$ —मोलबी।

मोलाई—स्त्री० [हि० माल-आई (प्रत्य०)] १ मूल्य पूछने-ताछने की क्रिया या भाव। २ घटा-बढ़ाकर मूल्य ठीक करने की क्रिया या भाव। ३ उचित से अधिक मूल्य कहना। माल-वाल करना।

मोलना— $\mu\circ$ —मोलना।

अ०, स०—मोहना।

† अ०—मूना (मरना)।

मोसिये— $\mu\circ$ [फ्रा०] [संक्षिप्त रूप मोस० या एम०] [हिंदी संक्षिप्त रूप मो०] कास से नाम के पहले लगाया जानेवाला बादररूषक शब्द।

महोदय।

मोष— $\mu\circ$ [स०/मूष (चोरी करना) +ध्व०] १ चोरी। २ लूट-खसोट। ३ चप। हत्या। ४ बड़। सजा।

† $\mu\circ$ —माश।

मोषक— $\mu\circ$ [स०/मूष+ण्वत्-अक] चोर।

मोषण— $\mu\circ$ [स०/मूष+ण्वत्-अन] १ लूटना। चुराना। २. मार डालना। ३. छोड़ना। ४ दे० 'मूसना'।

वि० चोरी करने या डाक डालनेवाला।

मोषगिता (गु)— $\mu\circ$ [स०/मूष+गि+ण्वत्] १ चोरी करानेवाला। २ लूट-पाट करानेवाला।

मोसन— $\mu\circ$ [फ्रा० मूसीन] १ ययोवृद्ध। २ अनुभव व्यक्त।

मोसना— $\mu\circ$ [स० मूष] १ मरोडना। २ सन कुछ चुरा या छीन लेना। मूसना।

मोसरा—अव्य० [म० अवसर] दफा। बार। उदा०—अबके मोसर ज्ञान विचारो।—मोसरा।

मोह— $\mu\circ$ [स०/मूह, (मुष होना) +ध्व०] १ बेहोशी। मुच्छा। २ अज्ञान। नामधेी। ३ बेवकूफी। मूषेता। ४ अज्ञान या भ्रम के कारण होनेवाला बंध या मूल। ५. दार्शनिक संधाँ में, मन की वह मूल या भ्रम जो उसे आध्यात्मिक या धार्मिक नर्य का ठीक-ठीक ज्ञान नहीं होने देता, और जिसके फल-स्वरूप मनुष्य लौकिक पदार्थों की वास्तविक तथा सत्य समझकर इन्द्रियजन्य सुख-मोहा को ही प्रधान या मुख्य मान-कर सात्त्विक जडाको में फँसा रहता है। ६ उक्त के आधार पर साहित्य में, तैवीस संचारी भावों में से एक जिसमें आशत, आपत्ति, चिंता, दुःख, भय आदि के कारण चित्त बहुत ही विकल हो जाता है।

सिर में चक्कर आना, उचित-अनुचित का ज्ञान न रह जाना, साफ दिखाई न देना और मूच्छित हो जाना इसके अनुभाव बतलाये गये हैं। यथा—

अवृत्त दरान, बेग, भय, अनिचिंता, अति कोह। जहाँ मूच्छा, विग-मरन, लम्बलापि कुछ मोह—देव। उदा०—राम को रूप निहारन जानकी ककन के नग की परछाँही। याते सवे मुधि भूलि गई कर टक रही, पल टारत नही।—मुलसी। ७ प्राचीन भारत में एक प्रकार की तांत्रिक क्रिया जिसके द्वारा दानु का ज्ञान नष्ट करने उद्ये या तो भ्रम में डाल देते थे या मूच्छित कर देते थे। ८ लोक में ऐसा प्रेम या मूहम्बत जिसके फल-स्वरूप विवेक ठीक तरह से काम करने के योग्य न रह जाय। ९. कष्ट। दुःख।

मोहक—वि० [म०/मूह, +ण्वत्-अक] १. मोह उत्पन्न करने-वाला। जिसके कारण मोह हो। २. मन को आकृष्ट या मोहित करने-वाला। नृभावना। मोहनेवाला।

मोहकार— $\mu\circ$ [हि० मूह+कार (प्रत्य०)] धातु के घटे का गला समेत मूहेश। (उठेरा)

मोहटा— $\mu\circ$ [म०] दम अवरो का एक प्रकार का बर्बन्त जिसके प्रत्येक चरण में तीन रगण और एक मूष होता है। बाका।

मोहडा— $\mu\circ$ [हि० मूह+डा (प्रत्य०)] १ किसी पाप का मूह या ऊपरी बुला हुआ भाग।

मुहा०—**मोड़का लमना**—फुटकर किसी के उद्देश्य से अज के बोरे कोलना और उनकी दुकानें या डेरियाँ लगाना।

२. अगला या ऊपरी भाग। ३. पूजा। ४. दे० 'मोहरा'।

मोहलतमि—पु० [अ० मुहलतमि] एहतमाम अर्थात् प्रबन्ध करनेवाला। प्रबन्धक। व्यवस्थापक।

मोहलतिल—वि० [अ० मुहलतिल] सन्धिधः।

मोहलतरम—वि० [अ० मुहलतरम] श्रीमान्। महोदय।

मोहलता—वि० [अ०] [भाव० मोहलता] १. धनहीन। निर्धन। गरीब। २. जिसे किसी चीज या बात की विशेष अपेक्षा हो, और इसी-लिए जो औरों पर निर्भर रहता अथवा उनका मूह ताकता हो। ३. [अप्राहिज] जिसे दूसरे की सहायता की आवश्यकता हो।

मोहलासी—स्त्री० [हिं० मोहलाज+ई (प्रत्य०)] मोहलाज होने की अवस्था या भाव।

मोहली—पु० [अ० महली] सैयद मुहीउद्दीन नामक महारत्ना जो जायसी के गुरु थे। उवा०—मुह मोहली खेवचू मैं सेवा।—जायसी।

मोहल—लि० [सं०/मुह+णिच्+त्सु+अन] १. मोह लेनेवाला। २. मोहित करनेवाला।

पु० १. शिव। २. श्रीकृष्ण। ३. कामदेव के पांच बाणों में से एक बाण का नाम जिसका काम मोहित करना है। ४. धरूरा। ५. एक तांत्रिक प्रयोग जिससे किसी को मुच्छित किया जाता है। ६. प्राचीन काल का एक प्रकार का अन्न जिससे शत्रु मोह से युक्त या मुच्छित किया जाता था। ७. एक प्रकार का बर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में एक सगण और एक जगण होता है। ८. सगीत में बारह तालों का एक प्रकार का ताल जिसमें सात आघात और पांच खाली होते हैं। ९. सगीत में कण्ठिकी पद्धति का एक राग। १०. कोल्हू की कोठी अर्थात् वह स्थान जहाँ दबने के लिए ऊँच के गाँडे डाले जाते हैं। इसे कुट्टी और गणरा भी कहते हैं।

मोहलक—पु० [सं० मोहन+कन्] १. एक प्रकार का सम-सूत्र बधिक छन्द जिसके प्रत्येक चरण में गुरु और तीन सगण होते हैं। यथा—आये दशरथ बटात सजे। दिग्याल गयदनि देखि लजे।—केशव। २. चैत्र मास।

मोहन-भोग—पु० [हिं० मोहन+भोग] १. एक प्रकार का हलुआ। २. एक तरह की बगाली मिठाई। ३. एक प्रकार का केला। ४. एक प्रकार का आम। ५. एक प्रकार का बाबल।

मोहन-भासा—स्त्री० [हिं०] चीने की गुरियों या दानों की पिटीई हुई माला।

मोहन—अ० [सं० मोहन] १. मोहित होना। २. बेहोश या मुच्छित होना। ३. मोह के बहा में होना। ४. भ्रम में पड़ना।

सं० १. मोहित करना। २. मोह या भ्रम में डालना।

स्त्री० [सं० मोहन+टाप्] १. तुष। २. एक प्रकार की चनेली।

मोहनपत्र—पु० [सं० मोहन+अत्र, मध्य० सं०] एक प्रकार का प्राचीन काल का अन्न जिसके प्रभाव से शत्रु मोह के बहा में या मुच्छित हो जाता था।

मोह-निद्रा—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] १. मोह के कारण आनेवाली निद्रा या बेहोशी। २. वह अवस्था जिसमें मनुष्य अज्ञान, अहंकार या भ्रमवश वास्तविक स्थिति की अपेक्षा करता है।

मोहनी—स्त्री० [सं० मोहन+नीप्] १. ऐसी क्रिया, रूप या दामित जिससे

किसी को पूरी तरह से मोहित किया जा सके। जैसे—उसकी बाँधों में कुछ बिलअन मोहनी थी। २. कोई ऐसा तांत्रिक प्रयोग अथवा कोई ऐसी क्रिया जिससे किसी को अपने वश में किया जा सके।

मुहल—**मोहनी** डालना—ऐसा प्रभाव डालना कि कोई पूरी तरह से मोहित हो जाए। **मोहनी लमना**—उत्त प्रकार की दामित के प्रभाव से किसी पर मोहित होना। **मोहनी लाना**—मोहनी डालना। (देखें ऊपर)

३. ध्रुवावनी और सुदरी स्त्री। ४. ज्ञान-अंध में, माया जो लोगों को मोहित करने अपनी ओर आकृष्ट करती है। ५. एक अक्षरा का नाम। ६. दे० 'मोहनी' (भगवान् का स्त्री रूप)।

स्त्री० [सं० मोहन] १. एक प्रकार का लंबा सूत-ना कीड़ा जो हल्दी के खेतों में पाया जाता है। इससे तांत्रिक लोग बंधीकरण यंत्र बनाते हैं। २. एक प्रकार का बर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में सगण, भगण, तगण, भगण और सगण होते हैं। ३. एक प्रकार की मिठाई। ४. पीई का साग।

वि० स्त्री० मोहित करनेवाली।

मोहनीय—वि० [सं०/मुह+णिच्+अनीयर्] मोहित किये जाने के योग्य। जिसे मोहित किया जा सके या किया जाने को हो।

मोहणिक—स्त्री०—महणिक।

मोहणता—स्त्री०—महणता।

मोहणिल—वि० [अ० मोहणिल] १. जिसका कोई अर्थ नहीं। निरर्थक। २. जिसका अर्थ स्पष्ट नहीं। ३. छोटा हुआ। स्थपत।

मोहर—स्त्री० [का० मुह] १. कोई ऐसी चीज जिस पर किसी का नाम या और कोई चिह्न अंकित हो और जिसका ठगना कागजों आदि पर मालिक की ओर से यह सूचित करने के लिए लगाया जाता है कि यह प्रामाणिक या असली हो। मुद्रा। (सील)

फि० प्र०—करना।—देना।—लगाना।

२. उपयुक्त वस्तु की धारा जो कागज या कपड़े आदि पर ली गई हो। स्याही लगे हुए ठगने को दबाने से बने हुए चिह्न या अक्षर। ३. लाक्षणिक रूप में कोई ऐसी चीज या बात जो किसी प्रकार का मुख या विवर ऊपर से पूरी तरह से ढक कर देती हो। जैसे—सत्कारने से हम लोगों के मुह पर मोहर लगा रखी है। ४. मुगल शासन में सोने का वह सिक्का जिसकी तौल, धातु आदि की प्रामाणिकता सिद्ध करने के लिए टकसाल या शासन का ठगना लगा रहता था।

मोहरा—पु० [हिं० मुह+रा (प्रत्य०)] [स्त्री० मोहरी] १. किसी बरतन का मुह या ऊपरी स्यू भाग। २. किसी पदार्थ का ऐसा अगला या ऊपरी भाग जो प्रायः मुह के आकार या रूप का हो। ३. सेना की अगली पंक्ति जिसे सब से पहले शत्रु का सामना करना पड़ता है।

मुहा०—मोहरा लेना—सामने से जमकर मुकाबला करना और लड़ना। ४. किसी चीज के ऊपर का छेद या मुह। ५. वह जाली जो पशुओं के मुह पर इसलिए बांधी जाती है कि वे आस-पास की चीजों पर मुह न डाल सकें। ६. मोह के मुह पर पड़ना या आनेवाला एक प्रकार का साज। ७. अंगिया या गौरी की तनी या बंध जो स्तनों को अन्दर बन्द रखने के लिए ऊपर से ठोके कर बाँधे जाते हैं। ८. शतरंज की मोटी। ९. मिट्टी का वह साँचा जिसमें कड़ा, पिछेनी आदि गहने डाल

कर बनाये जाते थे। १० लकड़ी, सीसे या बिस्लीर का बह बडा टुकड़ा जिसमें रसाकर कई तरह की चीजों के चमक लाई जाती है।
 ११. सोने चांदी पर नक्काशी करनेवाला का बह औजार जिसमें रसाइ कर नक्काशी का चमकाने है। बुआली। १२ मिगिया विप।
 पु० [फा० मूह] १ कर्पाटिका। कोडी। २ माला आदि की मुखिया या मन्था।
 पु० दे० 'अहूर माहुर'।

मोह-रात्रि—स्त्री० [सं० प० त०] १. पुराणानुसार बह प्रलय का ४ जो बहदा के पचास वर्ष यौगने पर होता है। दिनैतनी प्रलय।
 पु० जन्माष्टमी की रात्रि। भाद्रपद कृष्णा अष्टमी।

मोहराना—पु० [फा० मुह्ल; आना (प्रत्य०)] बह वन जो किसी कर्मचारी को मोहर करने के बदले में दिया जाय। मोहर करने का पारिश्रमिक।

मोहरी—स्त्री० [हि० मोहरा का स्त्री० अल्पा०] १ किसी चीज का अगला या बह भाग जो मुंह की तरह हो। जैसे—गाजाम या यस्त्रन की मोहरी। २ ऊपर की खुला हुआ कुछ अण या भाग। ३ ऊँट का नकेल।

स्त्री० [देस०] एक प्रकार की मधुमक्खी जो खल देश में होती है।

मोहक—वि० [सं० मुह्य] १ जिसका मरण काल आसन्न हो। २ मुच्छित।

मोहरर—पु०=मूहरिन्।

मोहक—स्त्री० [अ०] १ फुत्तन। अवकाश। २ काम से मिलनेवाली छुट्टी। ३ किसी काम के लिए नियत को हुई अवधि।
 कि० प्र०—रेना।—मानना।—मिलना।—रेना।

मोहक—पु०=मूहकला।

मोहसिन—वि० [अ० मुहसिन] एहमान या उपकार करनेवाला। उपकारक।

मोहडा—पु० [हि० मुंह] १ तालाब का बाध। २ दे० 'मोहडा'।

मोहर—पु० [सं० मधुकर, प्रा० महुअर] १ मधुमक्खी की एक जाति जो सबसे बड़ी होती है। मारग। २ मधुमक्खी का छला। ३ भोग।

पु० [हि० मुंह; आर (प्रत्य०)] १ मुंह। २. द्वार।

पु०=मोहरग।

स्त्री०=मूहार।

मोहरानी—स्त्री०=मूहारनी।

मोहाल—पु० १=मोहाल। २=मोहार।

वि०=मूहाल।

मोहि—मर्ब० [म० मूहा, पा० मूहा] मुसे। (अवधी, पञ्ज)

मोहित—पु० कृ० [म० मोह; इलप] १ जिसके मन में मोह उत्पन्न हुआ हो या किया गया हो। २ पूर्ण रूप से आनक्त या मुग्ध। ३ मोह का अग्र में पडा हुआ।

मोहिनी—वि० स्त्री० [म० मुहू; णिच्; णिणि। डीप्] मोहित करने या मोहनेवाली।

स्त्री० १ भाया। मोह। २ भगवान् का बह सदरी स्त्रीवाला रूप जो उन्होंने समूह सयन के उपरान्त अमृत बाटने के समय अमुरी का मोहित

करके उन्हे शक्ति में डालने के लिए धारण किया था। इसी रूप में उन्होंने दननाभा का अमृत तथा अमुरी को विप दिलाया था। ३ पद्मह अक्षरी के एक त्रिजिह शब्द का नाम जिसके प्रत्येक चरण में सगण, भ्रमण, तमण, यमण और मयण होते हैं। ४ एक प्रकार की अर्धसप्त भृति जिसके पठने श्री मंत्रों पर बरणा में मात मान्यता होती है; और प्रत्येक चरण के जत में एक मयण अवश्य होता है। ५ वैशाख शुक्ला एकादशी। ६ विष्णु नामक पौधा और उसका फल।

मोहिल—वि० [हि० माह] १ माह में युक्त। २ मोहित करनेवाला। उदा०—महल मोहिलो मोहित तजो जिन, मोहित मोह विप पावन।—मदचरितरण।

मोहो (हित)—वि० [न० मोह; इति] [स्त्री० मोहिनी] १ मोह या भ्रम में पडा हुआ। अज्ञानी। २ मोह करनेवाला। ३ जिसके मन में मर्मा के प्रति मोह या प्रेम हो। ४ लालची। ५ [√मु; णिच्; णिनि] मोहित करनेवाला।

मोहेला—पु० [?] एक प्रकार का लुटा माना।

मोहेली—स्त्री० [दंत०] एक प्रकार की मछली।

मोहायमा—स्त्री० [म० मोह-उपमा, मध्व० म०] अक्षरान्-मोहाय्य में उपमा अक्षरता का एक भेद जिसे कुछ उच्च आदि अक्षर कहते हैं।

मोहा—वि०=मोहा।

मोही—वि० [म० मोत] मोत। चुप।

स्त्री०=मोत (बुर्पा)।

मोह—वि० [म० मूज; अण्] [स्त्री० मोही] १ मूज गन्धकी। २ मुँह का बना हुआ।

मोहायन—पु० [म० मूजक-कह-आयन] मूजक-रोग का वनज।

मोहिव्यय—पु० [म० कर्म० म०] यज्ञोपवीत गन्तार। त्रिवेद। त्रनेत्र।

मोही—स्त्री० [म० मूज; अण-डीप्] मूज की बनी हुई मण्डला।

मोहा—पु०=मूहा (आलक)।

प०=मोहडा।

मो—स्त्री० [हि० मोत्र] १ मन की मोत्र। तत्रय। २ युवावस्था। ३ पुण्यान। ४ परिपक्वता।

कि० प्र०—पर आना।

मोअत—स्त्री०=मोत (मुग्ध)।

मोका—पु० [अ० मोका] १ ऐसा समय जब कोई काम ठीक तरह से होने की हो या हो सकता हो। अवसर। मुपीम।

मूहा—**मोका देवना**—उपयुक्त अवसर का ताक में रहना।

२ अर्थि। मोहडात। ३ अवकाश। फुत्तन। ४ वह स्थल जहाँ कोई घटना हुई हो तबका जिसके सम्बन्ध में कोई विचार या विवाद उपस्थित हो। जैसे—आज अधिकारी काँग मोका देखने गये।

मोहक—पु० [म०] कौशा।

मोहक—वि० [अ० मोहक] [भाव० मोहक] १. मुलती। स्थगित। २ पदस्थत। बख्खस्त। ३ रू। ४ अवलंबित। आश्रित।

मोहकी—स्त्री० [अ० मोहकी] १ मोहक किये जाने अथवा होने की अवस्था, क्रिया या भाव। २ प्रलवध। रुकावट।

मोहिके-मोहिके—अ-य० [अ० मोका; फा० दे०] समय-कुसमय।

श्रीलिंग—पुं० [सं० मुक्ता-लङ्क-इक] मोती।

वि० मुक्ता-सम्बन्धी। मुक्ता का।

श्रीलिंग-माला—पुं० [सं० ष० तं०] भारत अक्षरी का एक प्रकार का बणिक् छद्म जिसके प्रत्येक चरण में दूधरा, पौषवा, आठवाँ और ग्यारहवाँ वर्ष गुरु और शिव लक्ष्मी होते हैं।

श्रीलिंग-माला—स्त्री० [सं० ष० तं०] १ मोतियों की माला। २ ग्यारह अक्षरी का एक बणिक् स्तंभ जिसके चरण का पहला, चौथा, पाँचवाँ, दसवाँ और ग्यारहवाँ अक्षर गुरु और शेष लक्ष्मी होते हैं तथा पाँचवें और छठे वर्ष पर यति होती है।

श्रीलिंगफल—स्त्री० [सं० ष० तं०] मातियों की माला।

श्रील—पुं० [सं० मूक-ल्यञ्] मूक होने का अवस्था या भाव। मुक्ता।

श्रील—पुं० [सं० मोक्ष-अणु] एक प्रकार का नाम भाव।

श्रील—वि० [सं० मूख-अणु] १ मूख-सम्बन्धी। मूख का। २ मूख से निकलने या होनेवाला। जैसे—अप्रभय पदार्थ खाना, गार्ग्यवाँ बकना आदि श्रील पाप है।

पुं० [?] ममार्ग के काम आनेवाला एक पदार्थ।

श्रील—पुं० [सं० मूख-ल्यञ्] मूख होने की अवस्था या भाव। मूखरता।

श्रीलरी—पुं० एक प्राचीन भारतीय राजवंश।

श्रीलर्य—पुं० [सं० मूख-ल्यञ्] मूखरता। बाचालता।

श्रीलिक—वि० [सं० मूल-लङ्-इक] १ मूल-सम्बन्धी। मूल का। २ मूल में कहा या बाला जानवाला। जबानी (लिखित से भिन्न)। ३ सर्पों में पाय में भिन्न कट से निकलनेवाला (स्वर आदि)। जैसे—श्रीलिक सर्पों।

श्रीलिक परीक्षा—स्त्री० [सं०] विद्यार्थियों या शिक्षार्थियों के ज्ञान और योग्यता की तरह परीक्षा जो उन्तमे श्रीलिक प्रश्न कर के की जाती है। (वाइवा योगी)

श्रील—वि० [सं० मुख] [स्त्री० मोगी] १ मुख। निम्बुडि। २ मनुष्य। द्विजघा। पुं० [स्त्री० मोगी] वृक्ष।

श्रील—पुं० [सं० मुख-ल्यञ्] मुख होने की अवस्था या भाव। मुखता।

श्रील—पुं० [सं० मोष-ल्यञ्] मोष अर्थात् निर्यक्त होने की अवस्था या भाव।

श्रील—स्त्री० [अ०] १ पानी की लहर। तरंग। द्विजघर।

क्रि० प्र०—आना।—उठना।

मुहा०—श्रील खाना—लहर भरना। द्विजघर लेना। (लज०)

श्रील भरना—अलायम या नदी आदि में जोरी की लहरे उठना।

२ मन में उठनेवाली कोई उमग। लहर।

क्रि० प्र०—आना।—उठना।

मुहा०—किसी को श्रील पाना—किसी को अपने अनुकूल या प्रवृत्त देना। किसी को श्रील आना या किसी को श्रील में आना—अबानक किसी काम की उमग होना। बुन होना।

३ मन की उमग में आकर दिया जानेवाला पुस्कार या विभूति। उदा०—श्रील निराखर हूँ भले, ऊँ लखन की श्रील।—

बिहारी। ४ मन का आनन्द। मजा। सुख।

क्रि० प्र०—करना।—उठाना।—भरना।—मिलना।—लेना।

श्रील-पानी—पुं० [हिं०] १ बहुत सुखपूर्वक और विरिचत होकर किया जानेवाला खान-पान। २ मजा।

श्रील—पुं० [अ० श्रील] १ गाँव। ग्राम। २ स्थान।

पुं० दे० 'श्रील'।

श्रीली—वि० [का० श्रील-हिं० ई (प्रत्य०)] १ अपने मन की श्रील के अनुसार मरमाना काम करनेवाला। जब जो जी में आने सब बर्ही करनेवाला। २ अच्छी तरह आनन्द या सुख भोगनेवाला। श्रील लेनेवाला।

श्रील—वि० [अ०] [भाव० श्रील] नियत। १. बजन किया हुआ। तुला या तीला हुआ। २ जो किसी स्थान पर ठीक बैठना या मालूम होता हो। उपयुक्त। ३ (छन्द या पद) जो काव्य के नियमों, विषय आदि की दृष्टि में उपयुक्त या ठीक हो।

अर्थ० ठीक-ठीक।

पुं० वर्षान, विचार आदि का विषय।

श्रील—वि० [अ०] [भाव० श्रील] १ उपस्थित। हाजिर। २. प्रस्तुत। ३ जीवित। विद्यमान।

श्रील—स्त्री० [का०] श्रील होने की अवस्था या भाव।

श्रील—वि० [अ० श्रील] १ वर्तमान काल का। जो इस समय श्रील हो। २ आधुनिक। 'प्राचीन' का विरुद्धार्थक। ३ जो सामने उपस्थित या प्रस्तुत हो। विद्यमान।

श्रील—स्त्री० [अ०] चराचर जगत्। वृष्टि।

श्रील—स्त्री० [अ०] श्रील होने की अवस्था या भाव। उपयुक्तता।

श्रील—पुं०—श्रील (सेहरा)।

श्रील—पुं०—श्रील।

पुं०—श्रील (बालक)।

पुं०—श्रील।

श्रील—पुं० [सं० मूढ-ल्यञ्] मूढ होने की अवस्था या भाव। मूढता।

श्रील—स्त्री० [अ० मि० सं० श्रील] १ मरने की अवस्था या भाव।

मरण। मृत्यु। २ मृत्यु का देवता। यम। ३ मृत्यु का समय।

क्रि० प्र०—आना।—बुलाना।—होना।

पद—श्रील का समाक—ऐसे बहुत ही घातक या शीघ्र घटना या बात जो किसी का अन्त कर सकती हो। श्रील का पसीना—बहु पसीना जो साधारणतः लोगो को मरने से कुछ ही पहले आता है। श्रील के मूँह में—श्रील सकट में।

मुहा०—श्रील मरना—ऐसे धीरे सकट में पड़ना जिसमें पूर्ण विनाश दिखाई देता हो। श्रील के दिन पूरे करना—ऐसे दुःख में दिन बिताना, जिसमें बहुत दिन जीना असमभव हो। श्रील (सिर पर) सेलना—(क) मरने को होना। मरने का समय बहुत पास आना। (ख) बहुत बुरे या दुर्भाग्य के दिन पास आना। (ग) जान-शौचिक का समय पास आना। अपनी श्रील मरना—स्वाभाविक ढंग से मरना। प्राकृतिक नियम के अनुसार मरना।

५. ऐसा कठिन या विकट काम या बात जिससे बहुत अधिक कष्ट हो। जैसे—मुझ्में तो यहाँ जाते मोत जाती है।

मौलव—स्त्री० [अ०] मीथक आदि की भाषा।

मौलक—वि० [सं० मोदक+अण्] मौलक-सम्बन्धी। मोदक का।

मौलकिक—पुं० [सं० मोदक+ठक्+इक] मोदक अर्थात् मिठाइयाँ बनानेवाला। हलवाई।

मौलक—पुं० [सं० मुद्गल+अण्] मुद्गल ऋषि के गोत्र में उत्पन्न व्यक्ति। मौलक्यत्व।

मौलक्यायन—पुं०=मौलक्यायन।

मौलक्य—पुं० [सं० मुद्गल+प्यङ्] १ मुद्गल ऋषि के पुत्र का नाम जो एक गौत्रकार ऋषि थे। २. मुद्गल ऋषि के गोत्र का व्यक्ति।

मौलक्यायन—पुं० [सं० मौलक्य+फक्+आयन] गौतम बुद्ध का शिष्य।

मौलगीन—पुं० [सं० मुद्ग+स्यङ्+ईत्] मूँग का बेट।

मौल—पुं० [सं० मुनि+अण्] १ मुनि का भाव। २. न बोलने की क्रिया या भाव। चुप रहना। चुपरी।

क्रि० प्र०—गहना।—धाना।—रहना।

मौल—मौल जौलना—देर तक चुप रहने के उपरान्त बोलना। **मौल मौल**—मौल मत लौट देना। **मौल बाँधना**—मौल धारण करना। न बोलने का प्रथम करना। **मौल लेना** या **साधना**—चुप रहने का प्रथम करना।

२ मुनियों का ब्रत। मुनिव्रत। ३ फाल्गुन मास का पहला पक्ष।

वि० [सं० मौली] जो न बोले। चुप। मौली।

५ [सं० मौण] १ बरतन। पात्र। २. डब्बा। ३. पिटाटा। ४ टोकरा।

मौल-व्रत—पुं० [सं० व० सं०] मौल धारण करने का ब्रत। चुप रहने का व्रत।

मौला—पुं० [सं० मौण] [स्त्री० अल्पा० मौली] १. बी या तेल आदि रखने का एक प्रकार का बरतन। २ टोकरा। पिटाटा।

मौली (मिणु)—वि० [सं० मौल+इति] १ मौल अर्थात् चुप रहनेवाला। न बोलनेवाला। २. जिसने मौलव्रत धारण किया हो।

पुं०=मुनि।

स्त्री० हिं० 'मौला' का स्त्री० अल्पा०।

मौली अभावस—स्त्री० [हिं०] भाषा मास में पड़नेवाली अभावस। इस दिन मौल रहने का माहात्म्य है।

मौलिय—पुं० [सं० मुनि+इक्+एय] गधर्वों, अक्षरावों आदि का एक मानविक गोत्र।

मौर—पुं० [सं० मुकुट; पा० मउड] [स्त्री० अल्पा० मौरी] १. विवाह के समय बर को पहनना या शानेवाला ताड़-पत्र या लुबधी का बना हुआ एक प्रकार का शिरोभूषण।

मुहा—मौर बाँधना—विवाह के समय सिर पर मौर पहनना।

वि० सब में मुख्य या श्रेष्ठ। शिरोमणि।

पुं० [सं० मुकुल; प्रा० मउळ] मजरी। मौर। जैसे—आम का मौर।

पुं० [सं० मौलिसिंह] १. सिर। २. गवतन का पिछला भाग जो सिर के नीचे पड़ता है।

मौर-छोराई—स्त्री० [हिं० मउर-छुडाई] १. विवाह के उपरान्त मौर बोलने की रस्म। २. उक्त रस्म के समय मिलनेवाला धन या नेम।

मौरजिक—पुं० [सं० मूरज+ठक्+इक] मूरज नामक बाजा बजानेवाला।

मौरना—सं० [हिं० मौर+ना (प्रत्य०)] बुधों पर मजरी लगना। आम आदि के पेड़ों पर बौर लगाना। बौरना।

मौरसिरी—स्त्री०=मौलसिरी।

मौरिक—वि० [सं० मुकुलिक] मौर अर्थात् मजरी से युक्त।

मौरी—स्त्री० [मौर का स्त्री० अल्पा०] कागज आदि का बना हुआ बह छोट्टा मौर जो विवाह में बधू के सिर पर बाँधा जाता है।

मौरसी—वि० [अ०] वृत्तक। जैसे—मौरसी घर या जायदाद।

मौर्य—पुं० [सं० मूर्ध+प्यङ्] मूर्धता। बेवकूफी।

मौर्य—पुं० [सं० मुरा+प्य] मगध का एक प्रसिद्ध भारतीय राजवंश।

मौरी—स्त्री० [सं० मूर्वा+अण्+औए] धनुष की प्रत्यक्षा। कमान की डोरी। डोरी।

मौल—वि० [सं० मूल+अण्] १. मूल से मन्व्य रखनेवाला। २. मूल पुरुषों से मिला हुआ। पौरुष। मौलकी।

पुं० १. प्राचीन भारत में एक प्रकार के राज-मन्त्री। २. जमींदार। मू-स्वामी।

मौल-बल—पुं० [सं० कर्म० सं०] बड़े जमींदारों की अथवा उनके द्वारा एकत्र की हुई सेना। (कौ०)

मौलकी—पुं० [अ०] १ अरबी भाषा का पंडित। २. इस्लाम धर्म का आचार्य। ३ छोटे बच्चों को पढ़ानेवाला मुसलमान गुरु।

मौलसिरी—स्त्री० [सं० मौलिकी] १ एक प्रकार का बड़ा मदा बहार पेड़ जिसकी लकड़ी अदर से लाल और चिकनी होती है और जिससे भेज, कुर्सी आदि बनाई जाती हैं। इसके बीजों में तेल निकलता है, छाल जोषधियों के काम आती है। २. उक्त वृक्ष के छोटे मकंद सुगंधित फल।

मौला—पुं० [देश०] उत्तरी भारत में होनेवाली एक प्रकार की बेल जिमकी पत्तियाँ एक बालित्व तक लम्बी होती हैं। जाड़े के दिनों में इसमें आरु बह लगे फूल लगते हैं। मुला। महाबेल।

पुं० [अ०] १. स्वामी। २. ईश्वर। परमात्मा। ३. वह गुलाम जिसे मुक्ति मिली हो।

मौलाई—स्त्री० [अ०] १ मौला होने की अवस्था या भाव। २. स्वाभिव्य। ३. सरदार। ४. प्रतिष्ठा।

मौलाना—पुं० [अ०] १. बहुत बड़ा विद्वान्, विशेषतः इस्लाम के सिद्धान्तों का पंडित। २ अरबी भाषा का पंडित।

मौलि—पुं० [सं० मूल+इङ्] १. किसी पदार्थ का सब से ऊँचा भाग। चौटी। सिरा। बुझा। २. मस्तक। सिर। ३. किरीटा। ४. नेता। सरदार। ५. अशोक बुझ। ६. पृथ्वी। ७. जमीन। मूमि।

मौलिक—वि० [सं० मूल+ठक्+इक] [भाव० मौलिकता] १ मूल या जड़ से मन्व्य रखनेवाला। २. मूल तत्त्व या सिद्धान्त से मन्व्य रखनेवाला। (अध्यात्मिक) ३ असली। वास्तविक। ४. (कृति, प्रथम या विचार) जो जिल्दुल मया हो तथा मिली की उद्भावना से उद्भूत हो। जो किसी की नकल न हो और न ही किसी के आधार पर बना हो। मूलभूत। (जीरिजिनल)

श्रीलिंगता—स्त्री० [सं० श्रीलिंग+तल्+टाप्] श्रीलिंग होने की अवस्था या भाव । २. स्वयं अपनी उद्भावना से कुछ कहने, बोलने या लिखने की शक्ति अथवा गुण । (श्रीरिजिनेलिटी)

श्रीलिंग-पद—पुं० [सं० शब्द+सं०] पदाक्षी । साफ़ ।

श्रीलिंग-मंत्रि—पुं० [सं० मन्त्र+सं०] शिरोमणि ।

श्रीली (शिल्प)—वि० [सं० श्रीलिंग+दि] जिसके शिर पर श्रीलिंग या मुकुट हो । मुकुटधारी ।

†स्त्री० [हिं० श्रीर] लाल रंग हुआ मांगलिक डोरा या सूत । नारा । (परिचयम्)

श्रीलूह—वि० [अ०] जन्मप्राप्त (शिष्य) ।

पुं० १ जन्मतिथि । २ बेटा । ३. दे० 'श्रीलूह-सारीक' ।

श्रीलूह-सारीक—पुं० [अ०] १. मूहमह साहज के जन्म से संबंध रखने-वाली धार्मिक कथा । २. मह अवसर या समाज जिसमें सब लोगों के सामने बहू कथा कही या पढ़ी जाती है ।

श्रीलूह—पुं० [सं० मूल+अण्] मूल्य ।

श्रीलूल—वि० [सं० मूलल+अण्] १. मूलल-संबंधी । २. मूलल के आकार का ।

पुं० महाभारत का एक पर्व ।

श्रीलूटा—स्त्री० [सं० मूटि+ण्+टाप्] पूंती की मार या लड़ाई । मुक्कामुक्की ।

श्रीलूम—पुं०=श्रीलूम ।

श्रीलूर—वि०=अयस्सर (उपलब्ध) ।

श्रीलूल—वि० [सं० मूलल+अण्] मूलल-संबंधी । मूलल का ।

श्रीलूसा—पुं० [हिं० श्रीलूसा का पुं०] [स्त्री० श्रीलूसा, वि० श्रीलूसा] संबन्ध के विचार से माता की बहन का पति । श्रीलूसा का पति ।

श्रीलूसिम्—पुं० [अ०] [वि० श्रीलूसिम्] १. किसी काम या बात के लिए उपयुक्त समय । अनुकूल काल । २. गर्भी, बरसात, सर्दी आदि के विचार से समय का विभाग । तु ।

श्रीलूसिमी—वि० [फा०] १. समयव्योयोगी । काल के अनुकूल । २. किसी विधिष्ट श्रीलूसिम् या ऋतु से होनेवाला ।

†स्त्री०=मूलसमी (मीठा मीठ) ।

श्रीलूसिया—वि०=श्रीलूसिया ।

पुं०=श्रीलूसिया ।

श्रीलूसियाउत्ता—वि०=श्रीलूसिया ।

श्रीलूसियापुं—स्त्री०=श्रीलूसियापुं ।

श्रीली—स्त्री० [सं० मातृलूसा; प्रा० मातृलूसा] [वि० श्रीलूसिया, श्रीलूसियाउत्ता] माता की बहन । माती ।

श्रीलूलू—वि० [अ०] [स्त्री० श्रीलूलू] १. बणित । २. प्रधांसित । पुं० विशेष्य ।

श्रीलूलूम—वि० [अ०] [स्त्री० श्रीलूलूम] जिसका कोई नाम ही । नामधारी ।

श्रीलूलूल—वि० [अ०] १. मिलाया हुआ । २. मिला हुआ । प्राप्त ।

श्रीलूसिया—वि० [हिं० श्रीलूसिया (प्रत्यय)] श्रीली के द्वारा संबद्ध । श्रीली के संबन्ध का । जैसे—श्रीलूसिया भाई, श्रीलूसिया बहन ।

श्रीलूसि—पुं० [सं० मूहर्त्त+अण्] मूहर्त्त बतलानेवाला, ज्योतिषी ।

श्रीलूसिस्त—वि० [सं० मूहर्त्त+ठण्+क] १. मूहर्त्त-सम्बन्धी । २. मूहर्त्त

से उत्पन्न ।

पुं० १. दस की मूहर्त्त नाम की कन्या से उत्पन्न एक देवपत्नी । २. मूहर्त्त बतलानेवाला; अर्थात् ज्योतिषी ।

श्रीलूसि—पुं०=श्रीलूसि ।

श्रीलूसि—स्त्री० [अनु०] विल्ली की बोली ।

श्रीलूसि—स्त्री० का शूह पकड़ना=किसी कार्य का कठिनतम अवस्था पुरा करना । श्रीलूसि-श्रीलूसि करना=भयभीत होकर धीमी आवाज से बोलना । डर के मारे बहुत धीरे-धीरे बोलना ।

श्रीलूसि—पुं० [फा० मियान] १. कोष जिसमें तलवार, कटार आदि के फल रखे जाते हैं । तलवार, कटार आदि का फल रखने का स्थान । २. अन्नय कोषा धारी ।

श्रीलूसि—पुं० [हिं० म्यान] (तलवार) म्यान में डालना या रखना । उदा०—सज्ज सुरत म्यान मई म्यान ।—रघुराज ।

पुं० मियाना (सवारी) ।

श्रीलूसि—स्त्री० [फा० मियान] १. पाजामे की काट में एक टुकड़े का नाम जो दोनों पैरों को जोड़ते समय रानों के बीच में जोड़ा जाता है । २. बीबार के ऊपरी भाग में छत के नीचे बनी हुई छोटी फौटरी या बडी मंडरिया ।

श्रीलूसि—पुं० [अ०] दे० 'सगहालय' ।

श्रीलूसिस्त—वि० [अ०] श्रीलूसिस्तिलिटी अर्थात् नगरपालिका से संबन्ध रखनेवाला । नगरपालिका का ।

श्रीलूसिस्तिलिटी—स्त्री० दे० 'नगरपालिका' ।

श्रीलूसि—स्त्री० [सं० लिनुकी] एक प्रकार का सवानहूर झाड़ जिसमें केसरिया रंग के छोटे-छोटे फूलों की मंडरिया लगी है ।

श्रीलूसि—पुं० [सं०/अण् (छिपाना)]+मृ+ट्+अण् १. अपने दीप को छिपाना । मक्कारी । २. तेल मलना । मालिश करना । ३. मसलना । मीजना ।

श्रीलूसि—पुं० [सं० मर्यादा] मर्यादा । उदा०—हसन हयग्य दस अति, पति सायर अजनाद ।—बख्तखराई ।

श्रीलूसि (शिल्प)—स्त्री० [सं० मूटु+इमनिष्] १. मुतुला । कोमलता । २. बीनता । ३. नम्रता ।

श्रीलूसि—वि० [सं० मूटु+इच्छन्] अत्यंत कोमल । बहुत मुटु ।

श्रीलूसि—वि० [सं०/आ (अभ्यास करना)+तल्] १. पढ़ा या सीखा हुआ । २. अभ्यस्त (विरप) ।

श्रीलूसि—वि० [सं०/मृ (सरण)+शानत्, मृ+मृ] सरा हुआ-सा । मुतुप्राय ।

श्रीलूसि—वि० [सं०/मूल (हृद्यस्य)+तल्, त-न्] [आव० म्यानता] १. कुम्हलाया या मुखाया हुआ । २. कमबीर । दुबल । ३. मलिन । मैला ।

स्त्री०=श्रीलूसि ।

श्रीलूसि—स्त्री० [सं० म्यान+तल्+टाप्] १. म्यान होने का भाव । मलिनता । २. मलिन ।

श्रीलूसि—स्त्री० [सं०/म्या+नि] १. मलिनता । काविसय । २. मलिन ।

श्रीलूसि (शिल्प)—वि० [सं०/म्या (हृद्यं नाश)+विनि, न-व्ये] १. म्यान । मलिनियुक्त । २. शिष्य । दुःखी ।

मिलट—वि० [म०५/स्येच्छ (अपष्ट) +न, निपा० निङि] ? अपष्ट। जैसे—मिलट वाली। ० अपष्ट रूप म वाजने-वाला।

म्लेच्छ—पु० [म०५/स्येच्छ +ञ] ? प्राचीन श्रावर्षी की दृष्टि म, ऐम लोग जो स्पष्ट उच्चारण करना नहीं जानते थे। २ पर्वतों हिन्दुश्रा की दृष्टि म, मनुष्य जो वे आदिवासी जिनमें वर्णाश्रम धर्म न ही। ३ हिण्डू। शीघ्र।

वि० ? नीच। ० श्रावर्षी।

य

य—हि० वर्षायाम् का उदना व्यजन वा श्राया विज्ञान मे विहित भेद के अनुसार अन्वय, स्थान भेद के अनुसार तात्पर्य, यत्न भेद के अनुसार धार, प्राणभेद के अनुसार अन्वय तथा प्रवचन भेद के अनुसार ईर-स्पष्ट है।

ए० [म०५/या (यति) +य] १ यम। २ योग। ३ यान। सवारी। ४ यमस। ५ यम्य। ६ यम। ७ यम्य। ८ प्रकाश। रोशनी। ९ छन्द आरम्भ में यम्य का महत्त्व रूप।

यत् (ति)—पु० [म० ११] ? मारपी। (टि०) ० चाकड़।

यति—स्त्री० [म०५/यत् (निर्वर्तन) +वित्पठ] दमन।

यत्र—पु० [म०५/यत्र (सकोप) +ञ] ? वह नीच, बात या शक्ति जो किसी दूसरी चीज या बात का अच्छी तरह बांध या संस्कार नियंत्रित, मशरित तथा मबद्ध रखती हो। जैसे—टोरी माला, फीता, वेरी, हथकड़ी आदि। २ प्राचीन भारत म तन्त्र-चिकित्सा म काम आनवाला ऐसा उपकरण जिनमें धार न हो अथवा नाम मात्र की भूषणी धार हो। जैसे—नम पकड़ने की मंडरी, हड्डों मोटने की हथोड़ी आदि। (धम्म मे मिर) ३ विशेष प्रकार के बत्त हुआ काटें ऐसा उपकरण जो किसी विशेष काम की तिष्ठि के लिए अथवा कोई चीज बनाने के लिए काम आता हो। औजार। ४ आन-कल आदि का बत्त हुआ वह उपकरण जिनमें अनेक प्रकार के कर्म-पुत्रे हों और जो बहुत-नी चोत्रें एक साथ बनाने के लिए विशेष यत्न म काम में लाया जाता हो। कल। (मर्शल) जैसे—कारें बुनने या कारें म पानी निकालने का यत्र, छापे का यत्र आदि। ५ कर्मों प्रकार का वाज्रा। वाद्य। ६ वाज्रा के द्वारा हुनिवाला मशीन। ७ बोन या बीणा नाम का वाज्रा। ८ तांत्रिक क्षेत्रों मे, रेखा आदि के द्वारा काण्डकों आदि के रूप मे बनी हुई के विरिष्ट आहुतियों जिनमें कुछ विभिन्न रत्नियों का निजाम माना जाता है और जिनका उपयोग जादू-टाने के लिए कुछ विभिन्न प्रकार का फल उत्पन्न करने के लिए होता है। ९ उक्त प्रकार के काण्डका का वह रूप जो नाश, अहित आदि में रक्षा के लिए भारत किया जाता है। जनर। जैसे—(क) निजारी या चौथिया उबर दूर करने का यत्र, किसी को बस में काने का यत्र।

यत्र—यत्र-यत्र। (हेले)

यत्रक—पु० [म०५/यत्र कन्] ? धार वह बोधी जानेवाली पट्टी। (मुद्रुत) ० दे० 'यत्रकार'।

म्लेच्छ-कर्म—पु० [म० मध्य० मं०] लक्ष्मण।

म्लेच्छ-भोजन—पु० [म० ष० तं०] ? श्रांगी नामक धान। यावक। २ गेहूँ।

म्लेच्छित—पु० [म०५/म्लेच्छ +वत्] ? म्लेच्छों की भाषा। २ अपभाषा। ३ उष्णता।

म्लो—सर्व०=म्लज।

म्लोहार—सर्व०=म्लमा।

म्लो—सर्व०=म्ले।

वि० ? यत्रय करनेवाला। २ वष म करनेवाला। ३ वयो-करण करनेवाला।

यत्र-करडिका—स्त्री० [म० पं० मं०] बाजोगरी का पिटारा जिसकी गहायना मे वे अनेक प्रकार के खेल करने है।

यत्रकार—पु० [मं० यत्र/कृ (करना) +अण्] वह जो यत्रों का परिचालन करना हो तथा यत्र विद्या मे दक्ष हो। (मौलिक)

यत्रकारी—पु० [हि०] ? यत्रकार का काम या पद। २ वह प्रक्रिया जिनके अनुसार किसी एव या कल के पुत्रे अपना काम करने और एक दूसरे को बचाने है। (मौलिक)

यत्र-गृह—पु० [म० पं० तं०] ? प्राचीन भारत मे वह स्थान जहाँ आराधियों का बंधक रखे जाता था तथा उरें गतानवीं दी जाती थीं। २ वेधशाला। ३ यत्रशाला।

यत्रण—पु० [म०५/यत्र +वत्] ? बंधक तथा रोक मे रखने की क्रिया। ० नियम, विधान आदि के द्वारा नियंत्रित रखना। ३ यत्र आदि की गहायना मे दबाने, पेनने आदि की क्रिया। ४ दे० 'यत्रण'।

यत्रण—स्त्री० [म०५/यत्र +वत्]—अन्, टाप् ? दे० 'यत्रण'। २ बहुत अधिक चीज कट या पीडा।

यत्र-शाल—पु० [मं० तं० मं०] वह मल जिनकी गहायना मे कूर् ये मल निकाला जाता है।

यत्र-नेवणी—स्त्री० [सं० कर्म० मं०] चक्की।

यत्र-मत्र—पु० [मं० तं० मं०] ऐसी क्रिया जिनम तत्र-प्रत्यय और तत्-सम्बन्धी मत्रा आदि का प्रयोग होता है। जादू-टला।

यत्र-मान्का—स्त्री० [सं० पं० तं०] चीनट कलाजी म मे एक जिसके अन्तम अनेक प्रकार के यत्र या कर्ने आदि बनाने और उनमें काम लेने की विद्याएँ आती है।

यत्र-मालव—पु० [पं०] प्राय मनुष्य के आकार का वह एव जो कई तरह के काम बहुत कुछ आदिमियों की तरह करता है।

यत्र-राज—पु० [सं० पं० तं०] उद्योगि म एक प्रकार का यत्र जिसे म्लो और तारों की गति जानी जाती है।

यत्र-विमान—पु० [सं० पं० तं०]—यत्रशाला।

यत्रविद्—पु० [मं० यत्र/विद् (जानना) +क्वप्] अभियता। (दे०)

यत्र-विद्या—स्त्री० [मं० पं० तं०]—यत्र-विज्ञान।

यत्र-शाला—स्त्री० [मं० पं० तं०] १. वह स्थान जहाँ चीयें बनाने के यत्र

आदि हों। यंत्रों की सहायता से जहाँ उत्पादन होता है। यत्रयुह।
२. वेधशाला।

यंत्र-शास्त्र—पुं० [सं० यं० तं०] वह कला या विज्ञान जिससे अनेक प्रकार के यंत्र आदि बनाते और चलाने तथा अनेक प्रकार की संरचनाएँ प्रस्तुत करने का विवेचन होता है। (इंजीनियरिंग)

विशेष—इसकी बहुत-सी शाखाएँ हैं। जैसे—वस्तु-निर्माण, यंत्र-निर्माण, विचारई, नदी-नियंत्रण, धार्मिक संरचना आदि।

यंत्र-समुच्चय—पुं० [यं० तं०] सयंत्र। (रे०)

यंत्र-सूत्र—पुं० [सं० यं० तं०] वह सूत्र या तागा जिसकी सहायता से कठ-पुलती नचाई जाती है।

यंत्रापीड—पुं० [यंत्र-आपीडा, ब० सं०] बैधक मे एक प्रकार का सधि-पात यंत्र जिससे शरीर में बहुत अधिक पीड़ा होती है और रोगी का लहू पीले रंग का हो जाता है।

यंत्रालय—पुं० [यंत्र-आलय, यं० तं०] १. वह स्थान जहाँ यंत्रों अर्थात् उपकरणों, औजारों आदि का निर्माण होता है। २. वह स्थान जहाँ कले या यंत्रादि हों। ३. छापाखाना। मुद्रणालय। प्रेस।

यंत्रिका—स्त्री० [सं० यंत्र+कृत्-अच्, टाप्, इव] १ छोटा यंत्र। २ ताला। ३ पत्नी की छोटी बहन। छोटी सान्नी। ४ छोटा ताला।

यंत्रित—पुं० कृ० [सं० यंत्र+णिच्+क्त] १ बांध तथा रोककर रखा हुआ। २. नियमों आदि से जकड़ा हुआ। ३. जिस पर ताला लगाया गया हो। ४. जिसे यंत्रणा मिली हो।

यंत्री (विन्)—पुं० [सं० यंत्र+इनि] १ यंत्र-मन करनेवाला। तांत्रिक। २. बाजा बजानेवाला। ३. नियंत्रण करनेवाला।

यंत्र—पुं० [म० इद्र] १ इन्द्र। २ स्वामी। मालिक। (डि०) पुं० [म० इद्र] चंद्रमा।

यक—वि० [म० एक से फा०] एक।

विशेष—'यक' के यी० के लिए दे० 'एक' के यी०।

यकअंगी—वि०—एकांगी।

यककलम—अव्य० [फा०] १ एक ही बार कलम चलाकर। एक ही बार लिखकर। २. पूरी तरह से। बिलकुल। ३. अचानक।

यकआ—अव्य० [फा०] [भाव० यक-आई] एक ही स्थान में एकत्र। इकट्ठा।

यक-आई—वि० [फा०] १. एक मे मिला हुआ। २. सदा एक ही पक्ष मे या एक के साथ रहनेवाला।

यकता—वि० [फा०] [भाव० यकताई] अद्वितीय। अनुपम।

यकताई—स्त्री० [फा०] १ अद्वितीयता। २ अद्वैत।

यक-अयक—अव्य० [फा०]—एकाएक।

यकवारगी—अव्य०—एक-वारगी।

यक-वार—वि०—एक-वार।

यकसौ—वि० [फा०] १. समान। २. समतल। २ एक ही तरह का। एक-रस।

यकायक—अव्य०—एकाएक।

यकार—पुं० [सं० य+कार] 'य' नामक वर्ण।

यकीन—पुं० [अ० यकीन] प्रतीति। विश्वास। एनबार।

यकीनच—अव्य० [अ०] १ निश्चित रूप से। निःसंदेह। २. अवश्य। जरूर।

यकीनी—वि० [अ० यकीनी] असहिष्णु।

अव्य०—यकीनत।

यकृत—पुं० [म० य/यज्+कृतिन्, कृत्वि] १ पेट मे दाहिनी ओर की एक धीला जिनमे पाचन रस रहता है और जिमकी क्रिया से भोजन पचना है। जियर। निल्ली। (लीवर) २ एक प्रकार का रोग जिनमे उबत अंग सूचित होकर बड़ जाता है। बर्मजिगर। ३ पंचकाशय।

यकृतोच्च—पुं० [म०] आधुनिक कालवी, कीच, जागीन आदि के आस-पास के प्रदेश का प्राचीन नाम।

यक्ष—पुं० [म० यक्ष (पूजा) +घञ्] १ एक प्रकार की देवयोगी जो कुबेर के गणो मे और उनकी निचियी की रक्षक कही गयी है। २. कुबेर।

यक्ष-कर्म—पुं० [सं० मध्य० मं०] कपूर, अगर, कस्तूरी, ककूल आदि के योग से बनेनेवाला एक प्राचीन अंगरोग।

यक्ष-ग्रह—पुं० [मं० कर्म० सं०] पुराणानुसार एक प्रकार का कल्पित ग्रह। २. प्रेत-बापा।

यक्षण—पुं० [सं० यक्ष+त्वट्—अन्] १ पूजन करना। २ भक्षण करना। खाना।

यक्ष-तश्—पुं० [मध्य० सं०] वट वृक्ष। बट का पेड़।

यक्ष-धूल—पुं० [मध्य० सं०] १ एक प्रकार का धूप। २ देवदास धूप का गाँद।

यक्ष-मायक—पुं० [यं० तं०] १ यक्षा के स्वामी, कुबेर। २ जैनों के अनुसार वर्तमान अवमर्षिणी के अर्हन्त के चौथे अनुचर का नाम।

यक्ष-पति—पुं० [यं० तं०] यक्षों के स्वामी, कुबेर।

यक्ष-पुर—पुं० [यं० तं०] कुबेर की राजधानी, अलकापुरी।

यक्ष-राज—पुं० [यं० तं०] यक्षों के राजा, कुबेर।

यक्ष-रात्रि—स्त्री० [यं० तं०] दीवाली (उत्सव)।

यक्ष-संज्ञक—पुं० [यं० तं०] वह अंग जिनमे यक्षों का निवास माना जाता है।

यक्ष-विलस—वि० [ब० मं०] जो भनवान् तो हा पर कुछ भी व्यय न करता हो। कर्मज।

यक्ष-स्वल्प—पुं० [यं० तं०] पुराणानुसार एक तीर्थ का नाम।

यक्षाधिप, यक्षाधिपति—पुं० [यक्ष-आधिप; यक्ष-अधिपति]—अक्षापति।

यक्षावास—पुं० [सं० यक्ष-आवास] बट-वृक्ष।

यक्षिणी—स्त्री० [मं० यक्ष+इनि—डीप्] १ यक्ष जाति की पत्नी। २ कुबेर की पत्नी। ३ दुर्गा की एक अनुचरी।

यकी (विन्)—वि० [मं० यक्ष+इनि] यक्षों की आराधना करनेवाला। स्त्री०—यक्षिणी।

यक्षु—पुं० [सं०] १ वह जो यक्ष करता हो। २ प्राचीन वधु (आधुनिक बदब्या) का पुराना नाम। ३ उबत जवपद का निवासी।

यक्षेद्र—पुं० [यक्ष-इद्र, यं० तं०] यक्षों के स्वामी, कुबेर।

यक्षोच्चर—पुं० [यक्ष-ईश्वर, यं० तं०] यक्षों के स्वामी, कुबेर।

यक्षपत्रह—पु० [स० उपमित स०] यक्षमा (रोग)।
यक्षपत्नी—स्त्री० [स० यक्षम्+हृन् (हिता) +टच्—डीप्] अंगर।
 दास।
यक्ष्या (यक्षन्)—स्त्री० [स०√यक्ष्+मनिन्] सती नामक रोग। दे०
 'क्षयी'।
यक्षी (यिष्न्)—वि० [स० यक्षन्+इनि] यक्षमा से घस्ता।
यक्ष्—वि० [फा० यक्ष्] बहुत अधिक ठंडा।
 पु० बरफ। हिम।
यक्षनी—स्त्री० [फा० यक्षनी] १ आवश्यकता के लिए एकत्र किया
 हुआ अन्न। २. उबले हुए मांस का रस जो बहुत अधिक पीठिका
 होता है। ३. तरकारी आदि का रस। शोरबा।
यक्ष्य—पु० [स० य० त०] छद्म शास्त्र में आठ गणों में से एक। यह एक
 लघु और दो गुरु (ISS) मात्राओं का होता है। इसका सञ्चित रूप
 'य' है।
यक्षानी—स्त्री० [फा०] १ यगाना होने की अवस्था या भाव। आत्मी-
 यता। २. समीपता। ३. अपने वर्ग में अकेले और अनुपम होने की
 अवस्था या भाव।
यक्षान्त—स्त्री०=यगानती।
यक्षाना—वि० [फा० यगान] १ जो बेगाना न हो। आत्मीय। २
 अपने ही कुल या वंश का दूसरा। ३. अकेला। एकाकी। ४. अनु-
 पम। बेजोड़।
 पु० १. नातेदार। भाई-बंद। २. परम आत्मीय या घनिष्ठ-मित्र।
यक्षुर—पु० [दिशा०] १ एक प्रकार का बहुत ऊंचा वृक्ष जिसकी लकड़ी
 का रस अत्यन्त से काला निकलता है। सेसी। २. उमक वृक्ष की लकड़ी।
यक्ष्या—पु०=यक्ष।
यक्ष्य—पु०=यक्ष।
यक्षिणी—स्त्री०=यक्षिणी।
यक्षत—पु० [स० यक्षत्] १ ऋत्विक्। २ ऋग्वेद के एक मंत्र के
 ऋचा एक ऋत्विक्।
यक्षति—पु० [स०√यज् (यज्ञा) +क्षति]=यज्ञ।
यक्षत्र—पु० [स०√यज्+अध्वन्] १ यज्ञिहोत्री। २. याज्ञिक।
यक्षत्र—पु० [स० यज्+स्पृद—अत्] १ वेद-विधि के अनुसार होता
 और ऋत्विक् आदि के द्वारा काम्य और नैमित्तिक कर्मों का विधि-
 पूर्वक अनुष्ठान करना। यज्ञ करना। २. यज्ञ-भूमि। यज्ञ-स्वल्प।
यक्षत्र-कर्ता (यु)।—वि० [स० य० त०] यज्ञ या हवन करनेवाला।
यक्षत्रान्त—पु० [स०√यज्+शानच्, मूक् आगम] १ यज्ञ करनेवाला
 व्यक्ति। २. वह व्यक्ति जो किसी ब्राह्मण से यज्ञ-कर्म करवाता हो
 और उसे बलिगा या पुस्तकार देता हो। ३. ब्राह्मण की दृष्टि से वह
 व्यक्ति जिसके धार्मिक कृत्य वह स्वयं करता हो। ४. वह जो किसी
 ब्राह्मण को भरण-पोषण के लिए अन्न-धन देता हो। ५. पित्र की एक
 मूर्ति।
यक्षत्रान्ता—स्त्री० [स० यजमान+तल्—टाप्] यजमान होने की
 अवस्था, धर्म या भाव।
यक्षत्रान्त-लोक—पु० [स० य० त०] वह लोक जिसमें यज्ञ करने मरने-
 वाली का निवास माना जाता है।

यज्ञधानी—स्त्री० [स० यजमान हि०+ई (प्रत्य०)] १. यजमान
 होने की अवस्था, धर्म या भाव। २. यज्ञधानों के यहाँ कर्मकांड आदि
 कराते तथा उनसे दान-बलिगा आदि देने की ब्राह्मणों की वृत्ति। ३.
 वह स्थान जहाँ किसी विशिष्ट पुरोहित के यज्ञमान रहते हों।
यज्ञि—पु० [स० यज्+इनि] वह जो यज्ञ करता हो। यज्ञ करने-
 वाला।
यज्ञीय—पु० [अ०] उम्रमया खानवाना का दूसरा खलीफा जिसने कर-
 बला का वह पद कराया था जिससे यजमान ब्रह्मणे शाहीय हुए थे।
यजु (यु)।—पु० [म०√यज्+उत्ति] १ बलिदान आदि के समय की
 जानेवाली प्रार्थना और तत्सम्बन्धी विधिगत कृत्य। २. बलिदान
 और यज्ञ करने के समय कहे जानेवाले गद्य मंत्र जिनका पाठ अथर्व
 करता था और जिनका समग्र यजुर्वेद में है। ३. दे० 'यजुर्वेद'।
यजुर्विष—पु० [स० यजुर्विद् (जानता) +विषप्, उप० स०] यजु-
 वेद का ज्ञाता और पठित।
यजुर्वेद—पु० [स० य० त० या कर्म० स०] भारतीय आर्यों के चार
 प्रसिद्ध वेदों में से दूसरा वेद जिसमें यज्ञ-कर्मों का विस्तृत विवेचन और
 यज्ञ संबंधी गद्य मंत्रों का समग्र है, और इसी लिए जो वेदचयी का आधार
 माना जाता है।
यज्ञोप—यह वेद दो शाखाओं में विभक्त है—(क) तैत्तिरीय या
 कृष्ण यजुर्वेद और (ख) वाजसनेयि या शुक्ल यजुर्वेद। पुराणा में
 वेद के अर्धपित शुक और वसता वैशम्पायन कहे गये हैं।
यजुर्वेदी (विद्)—पु० [स० यजुर्वेद+इनि] १ वह जो यजुर्वेद का ज्ञाता
 हो। २. यजुर्वेद के विधानों का अनुयायी।
 वि० यजुर्वेद-सम्बन्धी।
यजुष्यति—पु० [स० य० त०] विष्णु।
यजुष्य—वि० [स० यजुष्+यत्] यज्ञ-सम्बन्धी। यज्ञ का।
यज्ञ—पु० [स० यज्+नङ्] १ बलिदान और उससे संबंध रखनेवाले
 धार्मिक कृत्य। २. उपामना, पूजा आदि से संबंध रखनेवाला कोई
 धार्मिक कृत्य। जैसे—यज्ञ-महायज्ञ। ३. वैदिक काल में, प्राचीन
 भारतीय आर्यों का एक प्रसिद्ध धार्मिक कृत्य जो कुछ विधिगत उद्देश्यों
 की सिद्धि के लिए अथवा कुछ विधिगत अवसरों पर होता था, और
 जिसमें मुख्य रूप से हवन होता था, और मासिक प्रार्थनाएँ करके
 आचार्य से (जो उन दिनों ब्राह्मण कहलाता था) आशीर्वाद प्राप्त
 किये जाते थे। ऋतु। मन्त्र। याग।
यज्ञोप—आगे चलकर इन यज्ञों के सौकों भेद और रूप हो गये थे,
 जिनके साथ अनेक प्रकार के विस्तृत कर्मकांडीय कृत्य भी संबद्ध हो गये थे।
 इनके लिए बहुत बड़े बड़े हवनकुंड बनाने लगे थे, और, कई कई दिनों,
 बलि महीनों तक होने लगे थे। वनवान् या राजा-महाराजा जो बने-
 बडे यज्ञ कराते थे, उनमें चार प्रधान ऋत्विज् होते थे। यथा—(क)
 होता जो प्रार्थनाएँ करके यज्ञ में भाग लेने के लिए देवताओं को वाह्य
 करता था। (ख) उद्गाता जो यज्ञ-कुंड में सोम की आहुति देने के समय
 साम-गायन करता था। (ग) अध्वर्यू जो वैदिक मंत्रों का पाठ करता
 हुआ यज्ञ संबंधी अवस्थाएँ मुख्य कृत्य करता था और (घ) ब्रह्मा जो
 सबसे बड़ा पुरोहित होता था और जो सम प्रकार के विघ्नों से यज्ञ को
 रखा करता था। यज्ञों में अनेक प्रकार के यज्ञुओं की बलि भी होती है।

पर आगे चलकर जब लोग बलिदानों की अधिकता से बचरा गये, तब हुनका प्रचार बीरे बीरे कम होता गया। आर्यों की ईरानी शाखा में इसी यज्ञ का कुछ परिवर्तित रूप 'यजन्' के नाम से प्रचलित था जिससे आजकल का जन्म (या जघान) शब्द बना है।

३. आधुनिक शास्त्र सनातन से, कोई बड़ा बानिक कृत्य। जैसे—ब्राह्मण भोजन, यज्ञोपवीत, विवाह आदि। ४. किसी प्रकार का लुप्त अनुष्ठान या काम (नीं के अन्त में)। जैसे—वेद्ययज्ञ—वेद्यपाठ। ५. विष्णु का एक नाम।

यज-कर्म—युं० [सं० वं० तं०] यज्ञ करनेवाला। याजक। यज-मान।

यजकर्म (युं०)—युं० [सं० वं० तं०] यज्ञ-सम्बन्धी सब प्रकार के काम या कृत्य।

यजकारी (रिन्नुं०)—युं० [सं० यज्ञ/हृ (करना)+गिन्ति, उप० सं०] यज्ञ करनेवाला।

यज्ञ-काल—युं० [सं० वं० तं०] १. यज्ञ करने का समय। २. यज्ञ करने के लिए उपयुक्त या निश्चित समय। ३. पूर्णमासी।

यज्ञ-कीलक—युं० [सं० वं० तं०] वह लूटा जिससे बलि-पशु बाँधा जाता था।

यज्ञ-कुंड—युं० [सं० वं० तं०] हुन करने की बेदी या कुंड।

यज्ञ-कीच—युं० [सं० वं० तं०] १. वह जो यज्ञ से द्वेष करता हो। २. रायण की सेना का एक राजस।

यज्ञ-किर्ता—स्त्री० [सं० वं० तं०] १. यज्ञ के काम। २. कर्मकांड।

यज्ञ-माता (तुं०)—वि० [सं० वं० तं०] यज्ञ की रक्षा करनेवाला। युं० विष्णु।

यज्ञ-मत्सक—युं० [सं० त्० सं० +कन्] यज्ञ के फल के रूप में प्राप्त होने-वाला पुत्र।

यज्ञगृह—युं० [सं० यज्ञ/गृह+गिन्ति, उप० सं०] राक्षस।

यज्ञ-धर—युं० [सं० वं० तं०] विष्णु।

यज्ञ-नेमि—युं० [सं० वं० तं०] श्रीकृष्ण।

यज्ञ-वर्ति—युं० [वं० तं०] १. विष्णु। २. यज्ञ करानेवाला। यज-मान।

यज्ञ-वली—स्त्री० [वं० तं०] यज्ञ की स्त्री; दक्षिणा।

यज्ञ-पशु—युं० [वं० तं०] १. वह पशु जो यज्ञ में बलि दिया जाने को हो। २. घोड़ा। ३. बकरा।

यज्ञ-पात्र—युं० [वं० तं०] काठ आदि के बने पात्र जिनसे हुन आदि किया जाता है।

यज्ञ-पुत्र—युं० [वं० तं०] विष्णु।

यज्ञ-स्वल्प—युं० [यज्ञ-फल, वं० तं०/वा (देना)+क] यज्ञ का फल देनेवाला, विष्णु।

यज्ञ-भाग—युं० [वं० तं०] १. यज्ञ का अन्न, जो देवताओं को दिया जाता है। २. इन्द्र आदि के देवता जिन्हें उक्त अन्न था जान मिलता है।

यज्ञ-आसन—युं० [वं० तं०] यज्ञपात्र। (बे०)

यज्ञ-गुप्ति—स्त्री० [वं० तं०] यज्ञ करने के लिए उद्दिष्ट या नियत स्थान।

यज्ञ-गुह्य—युं० [वं० तं०] कुत।

यज्ञ-नीस्ता (तुं०)—युं० [वं० तं०] विष्णु।

यज्ञ-मंडप—युं० [वं० तं०] यज्ञ करने के लिए बनाया हुआ मंडप।

यज्ञ-मंडल—युं० [वं० तं०] वह स्थान जो यज्ञ करने के लिए घेरा गया हो।

यज्ञ-मदिर—युं० [वं० तं०] यज्ञशाला।

यज्ञमय—युं० [सं० यज्ञ+मयद्] विष्णु।

यज्ञ-भूष—युं० [वं० तं०] दे० 'यज्ञ-कीलक'।

यज्ञ-भोग्य—युं० [सं० तं०] गृहर का देह।

यज्ञ-रत्न—युं० [वं० तं०] सोम।

यज्ञ-राज—युं० [वं० तं०] शंभया।

यज्ञ-बराह—युं० [मध्य० सं०] विष्णु।

यज्ञ-बल्क—युं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि जो प्रसिद्ध याज्ञवल्क्य ऋषि के पिता थे।

यज्ञ-बन्धी—स्त्री० वं० तं० सोमलता।

यज्ञ-बाह—युं० [सं० यज्ञ/बह्+अन्, उप० सं०] १. यज्ञ करनेवाला। याज्ञिक। २. कातिकेय का एक अनुचर।

यज्ञ-बाह्वन—युं० [वं० तं०] १. ब्राह्मण। २. विष्णु। ३. शिव। ४. यज्ञवाही। याज्ञिक।

यज्ञवाही (हिन्नुं०)—वि० [सं० यज्ञ/वह्+गिन्ति, उप० सं०] यज्ञ का सब काम करनेवाला। युं० याज्ञिक।

यज्ञ-वीर्य—युं० [वं० तं०] विष्णु।

यज्ञ-भूष—युं० [वं० तं०] १. बट-भूष। २. विकंकल।

यज्ञ-भाषु—युं० [वं० तं०] राक्षस।

यज्ञ-शाला—स्त्री० [वं० तं०] यज्ञ करने का स्थान। यज्ञमंडप।

यज्ञ-शास्त्र—युं० [मध्य० सं०] वह शास्त्र जिसमें यज्ञों और उनके कर्त्यों आदि का विवेचन हो। मीमांसा।

यज्ञ-शील—युं० [वं० सं०] १. वह जो यज्ञ करता हो। २. ब्राह्मण।

यज्ञ-भूकर—युं० [वं० तं०] यज्ञ-बराह (विष्णु)।

यज्ञ-संस्तर—युं० [सं० वं० तं०] वह स्थान जहाँ यज्ञ-मंडप बनाया जाए। यज्ञभूमि। यज्ञस्थान।

यज्ञ-सत्त्व—युं० [वं० तं०]—यज्ञशाला।

यज्ञ-साधन—युं० [यज्ञ/साध्+गिन्त्+ल्यु—अन्, उप० सं०] १. वह जो यज्ञ की रक्षा करता हो। २. विष्णु।

यज्ञ-सार—युं० [सं० तं०] गृहर का दूध।

यज्ञ-सुष—युं० [मध्य० सं०] अनेक। यज्ञोपवीत।

यज्ञसेन—युं० [वं० सं०] १. विष्णु। २. बुध देव के राजा और द्रौपदी के पिता।

यज्ञ-स्वल्प—युं० [वं० तं०] वह क्षमा जिससे यज्ञ के समय बलि देने के लिए पशु बाँधा जाता था।

यज्ञ-स्वल्प—युं० [वं० तं०] वह स्थान जहाँ यज्ञ होता हो या हो रहा हो।

यज्ञ-स्वानु—युं०—यज्ञ-स्तम।

यज्ञ-दोषा (तुं०)—युं० [वं० तं०] १. यज्ञ में देवताओं का आवाहन करनेवाला, ऋषिजुं० होता। २. मनु के एक पुत्र का नाम।

यज्ञ-भूष—युं० [वं० तं०] विष्णु।

यज्ञान-यु० [यज्ञ-अग, ष० तं०] १ यज्ञ की सामग्री। २ विष्णु।
३ मूलर। ४. खदिर। खैर।

यज्ञांशा-स्त्री० [यज्ञ+अग+अन्-टाप्] सोमलता।

यज्ञागार-यु० [यज्ञ-आगार, ष० तं०] यज्ञ-स्थान। यज्ञशाला।

यज्ञानि-स्त्री० [यज्ञ-अनि, ष० तं०] यज्ञ की अनि जो परम पवित्र
मानी जाती है।

यज्ञात्मा (स्वप्न)-यु० [यज्ञ-आत्मन्, ष० तं०] विष्णु।

यज्ञाधिपति-यु० [यज्ञ-अधिपति, ष० तं०] यज्ञ के स्वामी, विष्णु।

यज्ञारि-यु० [यज्ञ-अरि, ष० तं०] १. शिव। २ राक्षस।

यज्ञिक-यु० [स० यज्ञत+इत्-इक, दत्त शब्द का लोप] १ यज्ञ
के प्रसाद स्वल्प प्राप्त पुत्र। २ पलाश का पेड़।

यज्ञीय-वि० [म० यज्ञ+छ-ईय] १ यज्ञ-सम्बन्धी। यज्ञ का। २
यज्ञ में होनेवाला।
पु० मूलर का पेड़।

यज्ञेश्वर-यु० [यज्ञ-ईश्वर, ष० तं०] विष्णु।

यज्ञोपवीत-यु० [यज्ञ-उपवीत, मध्य० सं०] १ हस्तिदुग्धो विशेषत
ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों का एक स्कार जिससे बालक को पहले-
पहले तीन तारोवाला मण्डलाकार सूत पहनाया जाता है। उपनयन।
अनेक। वन-बन्ध। २ तीन तारों या तारोवाला बहु सूत्र जो उक्त
अवसर पर बालक को पहले-पहले पहनाया जाता है। अनेक। यज्ञ-
सूत्र। ३ बालक को उक्त सूत्र पहनाने के समय होनेवाला उत्सव
तथा क्रिय।

यज्ञ्य-यु० [म० यज्ञ+यत् (पूजा आदि)+यञ्] १ यज्ञोर्वी ब्राह्मण।
२ यजमान।

वि० १ यज्ञ करनेवाला। २ पवित्र। पुनीत।

यज्ञ्या (अव्युत्)-यु० [स० यज्ञ+इतिप्] वैदिक ऋचाओं के अनुसार
यज्ञ करनेवाला।

यज्ञर-यु० [दश०] एक प्रकार का पक्षी।

यज्ञ-सर्व० [स० यज्ञ+अदि, इति, इतिवाहुलोप] जो।

यज्ञ-वि० [स० यम् (नियमन्)+वत्] १ नियमित। २ निय-
मित। ३ जिसका दमन हुआ हो। ४ रोकना हुआ।

यज्ञन-यु० [सं० यत् (प्रयत्न)+इत्-अन] [वि० यत्नीय] यत्न
करने की क्रिया या भाव।

प० यत्न।

यज्ञनीय-वि० [स० यत्+अनीयर] जिसके सम्बन्ध में यत्न करना
आवश्यक हो अथवा यत्न किया जाने को ही।

यज्ञमान-वि० [सं० यत्+मानच्] १ यत्न करता हुआ। कोशिश
में लगा हुआ। २ जो अनुचित विषयों का त्याग करने के धर्म कामों
की ओर प्रवृत्त होने का प्रयत्न करता हो।

यज्ञ-व्रत-वि० [सं० व्रत्] समय से रहनेवाला। समयी।

यज्ञात्मा (स्वप्न)-वि० [सं० यत्-आत्मन्, व० सं०] यत्-व्रत। समयी।

यत्नि-यु० [म० यत्+इन्] वह व्यक्ति जिसने अपनी इच्छियों
तथा मनोविकारों को वाम में कर लिया हो। फलतः जो संस्थापक धारण-
कर सासारिक प्रपञ्चों से दूर रहता हो तथा ईश्वर का अवन करता हो।
२ ब्रह्मचारी। ३. विष्णु। ४ भागवत के अनुसार ब्रह्मा के एक

पुत्र का नाम। ५ नहुष का एक पुत्र। ६ छप्यय छन्द के ६६वें मंत्र
का नाम।

स्त्री० [सं० यम्+कित्+ङीप्] १. रोक। बकावत। २. मनी-
विकार। ३. सखि। ४. विचया। स्त्री। ५. शालक राग का एक
मंत्र। ६. मूषण का एक प्रकार का प्रबन्ध या बोल। ७. छन्दःशास्त्र
के अनुसार कविता या पद्य के चरणों में बहु स्थान जहाँ पठते समय,
उनकी लय ठीक रखने के लिए, थोड़ा सा विराम होता है। विराम।
विराम।

यति-बाधायथ-यु० [सं० ष० तं०] यतियों के लिए विहित एक
प्रकार का बाधायथ वस्त्र।

यतिव्य-यु० [सं० यति+व्य] यति होने की अवस्था, धर्म या भाव।

यति-धर्म-यु० [सं० ष० तं०] सत्यास।

यतिनी-स्त्री० [सं० यत्+इति+ङीप्] १ सत्यासिनी। २ विचया।

यति-भंग-यु० [सं० ष० तं०] [वि० यति-भङ्] काश्य का समय
सम्बन्धी एक दोष जो उस समय माना जाता है जब पठते समय किसी
उद्दिष्ट या नियत स्थान पर विराम नहीं होता, बल्कि उसके कुछ पहले
या पीछे होता है।

यति-भ्रष्ट-वि० [म० व० सं०] ऐसा (चरण या छन्द) जिसमें यति
अपने उपयुक्त स्थान पर न पढ़कर कुछ आगे या पीछे पढ़ी हो। यति-
भग दोष से युक्त (छन्द)।

यती (सिन्)-यु० [सं० यत्+इति] [स्त्री० यतिनी] १. यति।
सत्यासी। २. जितेन्द्रिय। ३. श्वेताम्बर जैन साधु।

यतीम-यु० [अ०] १. ऐसा बालक जिसके माता पिता मर गये हो।
अनाथ। २. ऐसा बड़ा मंत्री जो सीप में एक ही होता हो। ३. अनु-
पम और बहुमूल्य रत्न।

यतीम-शाना-यु० [अ० यतीम+फा० शान] वह स्थान जहाँ यतीम
अर्थात् अनाथ बालकों का लायन-पालन होता है। अनाथाश्रम।

यतीमी-स्त्री० [अ०] यतीम होने की अवस्था या भाव। अनाथता।

यद्युक्त-यु० [सं० यत्+उक्त+टाप्] चक्रवर्त्त का पौधा। चक्रमर्द।

यद्येन्द्रिय-वि० [सं० यत्+इन्द्रिय, व० सं०] जितेन्द्रिय।

यत्किञ्चित्-अव्य० [सं० इन्द्र सं०] थोड़ा सा। जरा सा। कुछ।

यत्न-यु० [सं० यत्+नञ्] १. किसी काम या बात के लिए किया
जानेवाला उद्योग। कोशिश। प्रयत्न। २. किसी बीज को अच्छी
तरह और सुरक्षित रखने की क्रिया या भाव। ३. उपाय। युक्ति।

तद्यवीर। ४. रोग आदि दूर करने के लिए किया जानावाला इलाज
या उपचार। चिकित्सा। ५. कठिनाता। दिक्कत। ६. व्यायसास्त्र

में रूप आदि २४ गुणों के अन्तर्गत एक गुण जो तीन प्रकार का कहा
गया है। यथा-प्रवृत्ति, निवृत्ति और जीवन यात्रि। ७. साहित्य

में रूपक की पाँच अवस्थाओं में से दूसरी अवस्था, जिसमें फल-प्राप्ति
के लिए अच्छी तरह और जल्दी कुछ काम किये जाते हैं, और यत्न-
बाधाओं की चिंता छोड़ दी जाती है। ८. व्याकरण में स्वरो तथा

व्यंजनों का उच्चारण करते समय किया जानेवाला प्रयत्न जो अर्थात्
और धीरे धीरे प्रकार का होता है।

यलवान् (वत्)-वि० [सं० यत्+मत्सुप्] [स्त्री० यलवती] यत्न
में लगा हुआ। यत्न करनेवाला।

यथा-अव्यं—[यं यत्+अल्] १. जिस अनह। जहाँ। २. जिस समय।
जब। ३. जब यह बात ही हो। इस कारण से। यतः।

यु०—सप्त (यत्)।

यथा-सप्त—अव्यं [सं इत्थं स०] १. जहाँ-तहाँ। इधर-उधर।
२. कुछ वहाँ, कुछ वहाँ। ३. यहाँ-वहाँ सभी अनह। अनेक स्थानों
पर। जगह-जगह।

यत्—स्त्री [सं जत्] छाती के ऊपर और गले के नीचे की मजला-
कार हड्डी। हँसकी।

यथा-अव्यं—[सं यथा-अंश, अव्यं सं०] प्रत्येक के उस या भाग
के अनुसार। जिसका जितना अंश ही, उसे उतना।

यु० किसी के लिए निश्चित किया हुआ अंश या हिस्सा जो उसे दिया
जाय या उससे लिया जाय। (कोटा)

यथा-अव्यं [सं यत् (प्रकार)+पाल्] एक अव्यय जिसका प्रयोग
नीचे लिखे आशय या भाव प्रकट करने के लिए होता है—(क) जिस

प्रकार या जैसे कहा या बतलाया गया हो, उस प्रकार या वैसे। जैसे—
यथा-विधि। (ख) जिसका उल्लेख हुआ हो, उसके अनुसार। जैसे—
यथा-मति। (ग) उदाहरण के रूप में। जैसे—यथा विधाविभ।

(घ) नीचे लिखे अनुसार या निम्न क्रम से। जैसे—यजुर्वेद की दो
धाकार्य हैं, यथा—कृष्य यजुर्वेद और शूक्ल यजुर्वेद।

विशेष—कुछ अवस्थानों में इसके साथ इसका नित्य संबंध 'तथा'
आता है जैसे—यथा नाम तथा यत्।

यथाकाम—यु० [सं अव्यं सं०] १. मनमाना आचरण। २. यथा-
कामी।

यथाकामी (विभु)—यु० [सं यथा/कम् (बाहना)+जिनि] मन-
माना आचरण करनेवाला। स्वेच्छाकारी।

यथाकारी (विभु)—यु० [सं यथा/कृ (करना)+जिनि] मनमाना
काम करनेवाला। स्वेच्छाकारी।

यथा-इत्—वि० [सं सुप्पुषा सं०] जैसा आरंभ में बना हो, वैसा ही।
जैसे—यथाइत् वस्त्र—अर्थात् बिना सीधा हुआ कपड़ा।

यथा-कर्म—अव्यं [सं अव्यं सं०] ठीक और निश्चित कर्म से।
क्रमानुसार।

यथाक्यात चरित्र—यु० [सं यथा-क्यात अव्यं सं०, यथाक्यात-चरित्र
कर्म० सं०] ऐसे साधुओं का चरित्र जिन्होंने सब कथाओं (काम,
कोषादि पातकों) का अय कर दिया हो। (जैन)

यथाकृत्या—यु० [सं सुप्पुषा सं०] जो अब भी वैसा ही (अज्ञानी)
हो, जैसा अन्य के समय था; अर्थात् बहुत बड़ा ना-समझ, मूर्ख या नीच।

यथा-सप्त—वि० [सं अव्यं सं०] १. जैसा ही, वैसा। २. ऐसा वैसा,
निकम्मा, रही या बाहियत।

यथा-सप्त हीनी—स्त्री० [सं कर्म० सं०] काव्य, चित्रकला, मूर्तिकला
आदि में बहुत ही जितने हर एक चीज ज्यों की त्यों और अपने मूल रूप
में अंकित या चित्रित की अथवा अङ्गी जाती है।

यथा-सत्वा—अव्यं [सं इ० सं०] जैसे, का तैसे।

यथा-सत्त्व—वि० [सं अव्यं सं०] जैसे का तैसा। ज्यों का त्यों।
हू-मूढ़।

यथा-नित्य—अव्यं [सं अव्यं सं०] नियमानुसार।

यथानुक्य—अव्यं [सं यथा-अनुकन, अव्यं सं०] यथा-कर्म।
यथापूर्व—अव्यं [सं अव्यं सं०] १. जैसा पहले था, वैसा ही।
पहले की तरह। पूर्ववत्। २. ज्यों का त्यों।

यथापूर्व विधि—स्त्री० [सं०] किसी बात या विषय की वह स्थिति
जो किसी विहित समय में वर्तमान रही हो अथवा प्रस्तुत समय में
वर्तमान हो। (स्टेडर को)

यथाभाग—अव्यं [सं अव्यं सं०] १. अपने अपने अंश या भाग के
अनुसार जितना चाहिए, उतना। हिस्से के मूलाधिक। २. यथोचित।

यथा-मति—अव्यं [सं अव्यं सं०] मति अर्थात् बुद्धि के
अनुसार।

यथा-मूल्य—अव्यं [सं०] एक पद जिसका प्रयोग आयात
और निर्यात पर लगानेवाले करो के संबंध में उस दाम में होता है जब
कर-निर्धारण उन वस्तुओं के मूल्य के आधार पर होता है। (एड-
वैकरोम)

यथा-वीर्य—अव्यं [सं अव्यं सं०] जैसा आदि, ठीक वैसा। उप-
युक्त। यथोचित। युनादिव।

यु० यथा-व्यवहार में इस आशय का सूक्ष्म पद कि बड़ों की हमारा
नाम्सकार, बराबर बालों की प्रेमपूर्व अविधावद और छोटों की आशी-
र्वाद।

यथार्थ—अव्यं—यथार्थ।

यथावधि—अव्यं [सं अव्यं सं०] वधि के अनुसार।

यथार्थ—अव्यं [सं यथा-अर्थ, अव्यं सं०] १. जो अपने अर्थ
(आशय, उद्देश, भाव आदि) आदि के ठीक अनुकूल हो। ठीक।
वाचिक। उचित। २. जैसा हीना चाहिए, ठीक वैसा।

विशेष—यथार्थ और वास्तविक का अन्तर जानने के लिए दे० 'वास्त-
विक' का विशेष।

३. सत्यपूर्वक।

यथार्थतः (सत्)—अव्यं [सं यथार्थ+तल्] १. अपने यथार्थ रूप में।
वास्तव में। वस्तुतः। सत्पूर्वक। २. दे० 'वस्तुतः'।

यथार्थता—स्त्री० [सं यथार्थ+तल्+टाप्] १. यथार्थ होने की अव-
स्था या भाव। २. सच्चाई। सत्यता। ३. दे० 'वास्तविकता'।

यथार्थवाद—यु० [सं य० सं०] १. दार्शनिक क्षेत्र में, प्लेटो द्वारा
प्रस्तावित यह मत कि किसी पद से जिस अमूर्त या मूर्त बात या वस्तु का
बोध होता है, वह स्वतंत्र सत्तावाली इकाई होती है। २. आज-कल
साहित्यिक क्षेत्र में (यथार्थवाद में मिश्र) यह मत या सिद्धान्त कि प्रत्येक
पदना या बात अपने यथार्थ रूप में अंकित या चित्रित की जानी चाहिए।
(रियालिज्म)

विशेष—इसमें आदर्शों का ध्यान छोड़कर उची रूप में कोई चीज या
बात लोगों के सामने रखी जाती है, जिस रूप में वह नित्य या प्रायः
सबके सामने आती रहती है। इतने कर्त्ता न हो अपनी ओर से टीका-
टिप्पणी करता है, न अपना दृष्टिकोण बतलाता है और निष्कर्ष
निकालने का काम वसंतों या पाठकों पर छोड़ देता है।

यथार्थवादी (विधि)—वि० [सं यथार्थवाद+इनि] १. यथार्थवाद
से संबंध रखनेवाला। २. यथार्थवाद के अनुकूल होनेवाला। ३.
सत्यवादी।

पुं यथार्थवाद के सिद्धांतों का समर्थक।

यथास्तम्भ—अ० य० [सं० अर्थ० सं०] जितना प्राप्त हो, उसी के अनुसार।

पुं उँनियो के अनुसार, जो कुछ मिल जाय उसी से समुष्ट रहने की वृत्ति।

यथास्तम्भ—अर्थ० [सं० अर्थ० सं०] जो कुछ मिले, उसी के अनुसार।

यथास्तु—अर्थ० [सं० यथा+स्तुति] १ ज्यों का त्यों। जैसे का तैसा। २ वैसा होना चाहिए, वैसा। अच्छी या पूरी तरह से।

यथावसर—अर्थ० [सं० यथा+अवसर] अवसर के अनुसार।

यथावस्थित—अर्थ० [सं० यथा+अवस्थित, अर्थ० सं०] १ वैसा या, वैसा ही। २ सत्य। ३ अचल। स्थिर।

यथावस्थित—अर्थ० [सं० अर्थ० सं०] निश्चित की अथवा बतलाई हुई विधि के अनुसार। विधिपूर्वक।

यथावस्थित—अर्थ० [सं० अर्थ० सं०] विधान या विधि के अनुसार।

यथा-शक्ति—अर्थ० [सं० अर्थ० सं०] शक्ति के अनुसार। भरसक।

यथा-शक्त्य—अर्थ० [सं० अर्थ० सं०] शक्ति के अनुसार। भरसक।

यथा-शास्त्र—अर्थ० [सं० अर्थ० सं०] जो कुछ शास्त्रों में बतलाया गया हो, उसी के अनुसार। शास्त्रों के अनुकूल या मुताबिक।

यथासंख्य—पुं० [सं० अर्थ० सं०] क्रम नामक अलंकार का दूसरा नाम।

यथा-सम्भव—अर्थ० [सं० अर्थ० सं०] जहाँ तक या जितना संभव हो।

यथा-समय—अर्थ० [सं० अर्थ० सं०] १. ठीक या नियत समय आने पर। २ जब जैसा समय हो, तब उसके अनुसार।

यथा-साध्य—अर्थ० [सं० अर्थ० सं०] यथाशक्ति। भरसक।

यथा-सूत्र—अर्थ० [सं० अर्थ० सं०] जहाँ से सूत्र चलता हो, वहाँ से। प्रारंभ से। शुरु से।

यथा-स्थान—अर्थ० [सं० अर्थ० सं०] ठीक जगह पर। अपने उचित या उपयुक्त स्थान पर। ठीक जगह पर।

यथा-स्थित—वि० [सं०] [भाव० यथास्थिति] जिस रूप या स्थिति में अब तक चला आ रहा हो, और अब तक चल रहा हो।

यथा-स्थिति—स्त्री० दे० 'यथापूर्व स्थिति'।

अर्थ० [सं० अर्थ० सं०] अब जैसी स्थिति हो तब उसी के अनुसार।

येच्छ—अर्थ० [सं० यथा+इच्छा, अर्थ० सं०] १. जितना या जैसा इच्छित या अभीष्ट हो, उतना या वैसा। २ इच्छा के अनुसार। मनमाने ढंग से।

येच्छाचार—पुं० [सं० येच्छ+आचार, कर्म० सं०] जो जी में आवे, वही करना। मनमाना काम करना। स्वेच्छाचार।

येच्छाचारी—वि० [सं० येच्छाचार+इति] १. मनमाना आचार करनेवाला। येच्छाचार करनेवाला। २. मनमीची।

येच्छित—वि० [सं० येच्छेत्] जितना या जैसा चाहा गया हो। मन-चाहा।

येच्छेत्—वि० [सं० यथा+इच्छेत्, अर्थ० सं०] [भाव० येच्छेत्ता] १. जितना इच्छे या अभीष्ट हो। २. उतना, जितने से काम अच्छी तरह चल सकता है।

यिच्छेत्—पर्याय की तरह इसका प्रयोग भी केवल ऐसी चीजों के संबंध में होना चाहिए जो अभीष्ट या मिय हों। जैसे—येच्छेत् भोजन। अन-भीष्ट या अमिय बातों के संबंध में इसका प्रयोग ठीक नहीं जान पड़ता। यह कहना ठीक नहीं होगा—मुझे येच्छेत् कष्ट (या पिशा) है।

येच्छेत्-आचरण—पुं० [सं० येच्छेत्-आचरण, कर्म० सं०] मनमाना आचरण। स्वेच्छाचार।

येच्छेत्-आचरण—पुं०—येच्छेत्-आचरण।

येच्छेत्-आचारी—वि० [सं० येच्छेत्-आ+चर (गति)+जिति] मनमाना आचरण या व्यवहार करनेवाला।

यघोक्त—अर्थ० [सं० यथा+उक्त, अर्थ० सं०] कहे हुए के अनुसार। जैसा कहा जा चुका हो, वैसा।

यघोक्तकारी—वि० [सं० यघोक्त+कृ (करना)+जिति] १ शास्त्रों में जो कुछ कहा गया हो, वही करनेवाला। २ आज्ञाकारी।

यघोक्तित—वि० [सं० यथा+उक्तित, अर्थ० सं०] जैसा चाहिए, वैसा। जैसा उचित या मुताबिक हो, वैसा।

यघोक्तयुक्त—वि० [सं० यथा+उपयुक्त, अर्थ० सं०]—यथायोग्य।

यघपि—अर्थ०—यघपि।

यघा—अर्थ० [सं० यद्+या] १ जिस समय। जिस वकत। जब। २ जहाँ।

यघा-कथा—अर्थ० [सं०] जब-तब। कभी-कभी।

यधि—अर्थ० [सं० यद्+धि+यन्+जिज्ञोष] अमुक अवस्था हो तो। अगर जो।

यधिष, **यधिषेत्**—अर्थ० [सं० इ० सं०] यद्यपि। अगरचे।

यधीय—वि० [सं० यद्+धि+इय] जिसका।

यदु—पुं० [सं० यद्+उ, पृथो० जस्य दः] १ देवयानी के गर्भ से उत्पन्न राजा यथाति का सबसे बड़ा पुत्र। २ एक प्राचीन राज्य जो मयुरा के समीप था। ३ यदुवंश।

यदु-वंश—पुं० [सं० वं० तं०] श्रीकृष्णवंश।

यदु-मात्र—पुं० [सं० वं० तं०] श्रीकृष्ण।

यदु-पति—पुं० [सं० वं० तं०] श्रीकृष्ण।

यदु-भूप—पुं० [सं० वं० तं०] श्रीकृष्ण।

यदुराई—पुं० [सं० यदु+इति० राई=राजा] श्रीकृष्ण।

यदुराज, **यदुराट**—पुं० [सं० वं० तं०] यदुकुल के राजा श्रीकृष्ण।

यदु-वंश—पुं० [सं० वं० तं०] यदु का वंश।

यदुवंशज—पुं० [सं० यदुवंश+जन् (उत्पत्ति)+इ] श्रीकृष्ण।

यदुवंश मणि—पुं० [सं० वं० तं०] श्रीकृष्णचन्द्र।

यदुवंशी—वि० [सं० यदुवंश+इति] जितने यदुवंश में जन्म लिया हो।

पुं० श्रीकृष्ण।

यदु-वर—पुं० [सं० सं० तं०] श्रीकृष्ण।

यदु-वीर—पुं० [सं० वं० तं०] श्रीकृष्ण।

यदुसम—पुं० [सं० यदु-उत्तम, सं० तं०] श्रीकृष्ण।

यदुच्छया—अर्थ० [सं० यदुच्छा का तृतीयान्त रूप] १ अकस्मात् अचानक। २ हलफाक से। वैधर्म्य से। ३ मनमाने ढंग से।

यदुच्छयाभिन्न—पुं० [सं० यदुच्छया+भिन्न, व्यस्त पद या अलक्ष्य सं०

स्मृतिषु के अनुसार कृतसाक्षी के पाँच सेवकों में से एक। वह साक्षी जो पटना के समय आप से आप या अकस्मात् आ गया हो।

यवृच्छा—स्त्री० [सं० यवृच्छा+भ+टाप्] १. केवल अपनी इच्छा के अनुसार किया जानेवाला व्यवहार। स्वेच्छाचरण। अनमाना-पन। २. आकस्मिक संयोग। इत्यत्राक।

यद्यपि—अव्य० [सं० यधि-अपि, इन्द्र सं०] यदि ऐसा है भी। अगर ऐसा है भी।

यद्योष—इसके साथ प्रायः इसका नित्य-संबन्धी 'तथापि' भी प्रयुक्त होता है।

यद्वास्तद्धा—अव्य० [सं० व्यस्त पद्य] १. जब-तब। २. कभी-कभी। ३. जैसे-जैसे। किसी प्रकार।

यम—वि० [सं०/यम् (नियंत्रण करना)+अच्] जुड़वाँ।
 पु० १. जुड़वाँ बच्चे। यमल। २. उक्त के आभार पर दो की संख्या। ३. रोक। नियंत्रण। ४. अपने ऊपर किया जानेवाला नियंत्रण। ५. कोई बहुत बड़ा धार्मिक या नैतिक कर्तव्य। ६. मार-पीट आदि के एक प्रसिद्ध देवता जो सूर्य के पुत्र तथा दक्षिण दिशा के दिक्पाल कहे गये हैं और आज-कल मृत्यु के देवता माने जाते हैं। काल। कृतांत। ७. चित्त को धर्म में स्थिर रखनेवाले कर्मों का साधन। ८. कौशा। ९. शक्ति। १०. विष्णु। ११. वायु।

यमक—पुं० [सं० यम+क (प्राप्ति)+क] साहित्य में एक शब्दांशकार जो उस समय माना जाता है जब किसी चरण में एक ही शब्द दो या अधिक बार आता है और हर बार अलग-अलग अर्थ में आता है। जैसे—कनक कनक ते सौ गुनी मादकता अधिकार।—बिहारी।

यमकाल, **यमकालतर**—पुं० [सं० यम+काल+तर] १. यम का क्षुर या लडा। २. एक प्रकार की तलवार।

यमकीट—पुं० [सं० मध्य० सं०] केंचुआ।

यमबंध—पुं० [सं० यम+बद्ध (बद्ध करना)+पिञ् (स्वार्थ)+अच्] १. फलित ज्योतिष में, एक प्रकार का कुट्ट योग जो रविवार को मघा या पूर्वाश्रुती, सोमवार को पुष्य या श्लेषा, मंगलवार को ज्येष्ठा, बुधवार, मरुती या अश्विनी, बुधवार को हस्त या जार्द्रा, बृहस्पति को पूर्वाषाढा, रेवती या उत्तराश्रावण, शुक्र को स्वाती या रोहिणी और शनिवार को शतभिषा या श्रवण वज्र के पठने पर माना जाता है। २. कातिक शुक्ला प्रतिपदा।

यमबन्ध—पुं० [सं० यम+तं] यमराज का वस्त्र।

यमबन्ध—वि० [सं० यम/अन् (उत्पत्ति)+ङ] जुड़वाँ। यमल।
 पुं० १. जुड़वाँ बच्चे। २. ऐसा घोडा जिसका एक ओर का अंग हीन और दुबला हो और दूसरी ओर का वही अंग ठीक हो। ३. अश्विनीकुमार।

यमजित्—वि० [सं० यम+जि (जय)+क्विप्, तुम् आगम] मृत्यु को जीतनेवाला। मृत्युञ्जय।
 पुं० शिव।

यमत्व—पुं० [सं० यम+त्व] यम का धर्म, पद या भाव।

यमबंध—पुं० [सं० यम+तं] १. यम के हाथ में रहनेवाला बंधा। २. वह बंध जो यम से प्राप्त होता है।

यमबन्धु—स्त्री० [सं० यम+तं] १. यम की दाइ। २. वैधक के

अनुसार आदिबन्ध, कातिक और अश्विन के लगभग का कुछ विशिष्ट काल, जिसमें रोग और मृत्यु आदि का विशेष भय रहता है।

यमवर्णि—पुं० [सं० जमदग्नि]+यमवर्णि (परशुराम के पिता)।
यमवृत्तिया—स्त्री०—यम-द्वितीया (नैया-बुध)।

यमभूत—पुं० [सं० यम+तं] १. यमराज का भूत। २. कौजा।
 ३. नी सभियों में से एक।

यमभूतक—पुं० [सं० यमभूत+कन्] १. यम का भूत। २. कौजा।

यमभुक्ति—स्त्री० [सं० यम+तं] हमली।

यम-वेधता—स्त्री० [सं० यम+तं] भरणी नक्षत्र, जिसके वेधता यम माने जाते हैं।

यम-बुध—पुं० [सं० उपमित सं०] सेमर का पेड़। (बृह)।

यम-द्वितीया—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] कातिक शुक्ला द्वितीया। भाई-दूज।

यम-धार—पुं० [सं० यम+तं] एक तरह की घुघारी तलवार।

यम-मन्त्र—पुं० [सं० मध्य० सं०] भरणी नक्षत्र, जिसके देवता यम माने जाते हैं।

यमनाह—पुं० [सं० यमनाथ, प्रा० जयनाह] यमों के स्वामी, धर्मराज।

यमनिका—स्त्री०—यमनिका (रामचंद्र का परदा)।

यमनी—वि० [अ० यमन] यमन देश-संबन्धी।

पुं० १. यमन देश का निवासी। २. यमन देश की कृति या वस्तु।

यम-पुत्र—पुं० [सं० यम+तं] यम के रहने का स्थान। यमलोक।

मुहा०—(हिंसी को) यमपुर पहुँचाना=मार डालना। प्राण ले लेना।

यम-पुरी—स्त्री० [सं० यम+तं] यमलोक। यमपुर।

यम-पुष्य—पुं० [सं० कर्म० सं०] १. यमराज। २. यम के भूत।

यम-पिच—पुं० [सं० यम+तं] बट (बृह)।

यम-पगिनी—स्त्री० [सं० यम+तं] यमुना नदी।

यम-यातना—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] पुराणानुसार मरने के समय यम के दूतों की वी हुई पीडा।

यम-यम—पुं० [सं० यम+तं] यम की सवारी, भैंसा।

यम-राज—पुं० [सं० कर्म० सं०, टच् प्रत्यय] यमों के राजा धर्मराज, जो प्राणी के मरने के उपरान्त उसके कर्मों का विचार कर उसे बंध अथवा श्राभ फल देते हैं। (पुराणों में इनकी संख्या १४ मानी गई है)।

यम-राज्य, **यम-राष्ट्र**—पुं० [सं० यम+तं] यमलोक।

यमल—वि० [सं० यम/आ (आदान)+क] जुड़वाँ। युग्म।

पुं० ऐसी दो वस्तुओं जो एक साथ उत्पन्न हुईं हों।

यमलार्जुन—पुं० [सं० यमल-अर्जुन, कर्म० सं०] कुबेर के नलकूबर और मणिभीम नामक दोनों पुत्र जो शाप वश अर्जुन बृह हो गए थे और जिन्हें श्रीकृष्ण ने शाप से मुक्त किया था।

यमली—स्त्री० [सं० यमल+लीप्] १. एक में मिली हुईं दो चीजें। जोड़। जोड़ी। २. स्त्रियों के पाएँ और चोली की जोड़ी।

यम-लीक—पुं० [सं० यम+तं] १. वह लोक जहाँ मरने के उपरान्त मनुष्य जाते हैं। यमपुरी। २. नरक।

यम-नाथ—पुं० [सं० यम+तं] यम की सवारी, भैंसा।

यम-भक्त—पुं० [सं० यम+तं] राजा का धर्म जिसके अनुसार उसे यमराज

की भीति निवृत्त होकर सब को दह देना चाहिए। राजा का दह-नियम।

बन्ध-सम्बन्ध—पुं० [सं० पं० तं०] यमपुर।

बन्धस्यु—पुं० [सं० यम√सु (प्रमृति) : बन्धपु] सुयं।

हिं० स्त्री० जिसे एक भाग यं मराने लें हुई हो।

बन्धहता (तु) —पुं० [सं० पं० तं०] काल का नाश करनेवाले, शिव।

बन्धसिक्त—पुं० [सं० यम-अन्तक, पं० तं०] शिव।

बन्धानिका—स्त्री० [सं० यमानी + कः टाप्] अजवायन।

बन्धानी—स्त्री० [सं० यम् + ल्यट्—अन्, पृषा० सिद्धि] अजवायन।

बन्धानुजा—स्त्री० [सं० यम-अनुजा, पं० तं०] यमराज की छोटी बहन, यमुना।

बन्धारि—पुं० [सं० यम-अरि, पं० तं०] विष्णु।

बन्धालय—पुं० [सं० यम-आलय, पं० तं०]—यमपुर।

बन्धित—भ० कृ० [सं० यम] १ यमन। २ दबाया हुआ। ३ बँधा हुआ।

बन्धी—स्त्री० [सं० यम + डीप्] यम की बहन, यमुना (नदी)। (पुराण) पुं० यम, नियम आदि का पालन करनेवाला व्यक्ति। मयमी।

यमुना—स्त्री० [सं० यम् + उन्तन्। टाप्] १ दुर्गा। २ यम की बहन जो जो बाद से नदी के रूप में अवतरित हुई थी। (पुराण)

३ उत्तर भारत की एक प्रसिद्ध बड़ी नदी जो हिमालय के यमुनोत्तरी नामक स्थान से निकलकर प्रयाग के पास गंगा में मिलती है।

यमुना-कल्याणी—स्त्री० [सं० उद्यमित मं०] सर्गित में कर्नाटी पद्धति की एक गायनी।

यमुनाभिदु—पुं० [सं० यमुना√भिदु (विदारण)√विष्णु] कृष्ण के भाई बलराम जिन्होंने अपने हल से यमुना के दो भाग किये थे।

यमुनोत्तरी—स्त्री० [सं० यमुनोत्तर] हिमालय में शबवाल के पास का एक पर्वत जिससे यमुना नदी निकली है।

यमेश—पुं० [सं० यम-ईश, बं० सं०] भर्गवी नक्षत्र।

यमेश्वर—पुं० [सं० यम-ईश्वर, पं० तं०] शिव।

यमालि—पुं० [सं०] १. राजा मरुत के पुत्र तथा राजा पुरु के पिता जिनका विवाह शक्राचार्य की कन्या देवयानी के साथ हुआ था। शक्राचार्य द्वारा अभिमान होने पर इन्होंने अकालिक बुद्धावस्था प्राप्त हुई थी। बाद में इन्होंने अपनी बुद्धावस्था अपने पुत्र पुरु को देकर उससे उमका जीवन लिया था और इस प्रकार १००० वर्षों तक सुख-भोग किया था। २. लाक्षणिक अर्थ में, ऐसी व्यक्ति जो शरीर से बुद्ध परन्तु मन से युवा हो।

यमाश्वर—पुं०—यावायव।

यरी (दिल)—पुं० [सं० य+ई, द्वित्व] १ शिव। २ किसी यज्ञ विशेषत अश्वमेध यज्ञ में बलि चढाया जानेवाला घोड़ा। ३ घोड़ा। ४ मार्ग। ५ रास्ता। ५ बादल।

यसु—पुं० [सं० या + ज, द्वित्व] यरी (घोड़ा)।

यरकानु—पुं० [अ० यरकानु] कमल (रोग)।

यरकानी—पुं० [अ० यरकानी] कमल रोग से प्रसूत व्यक्ति।

यलधीस*—पुं० [सं० इलाधीस] राजा। (हिं०)

यलनाथ*—पुं०—यलधीस (राजा)।

इला—स्त्री० [सं० इला] पृथ्वी। (हिं०)

स्त्री०—इला (इलायची)।

इलाइव—पुं० [सं० इला-इव] राजा। (हिं०)

इलापत—पुं० [सं० इला-पति] राजा। (हिं०)

यव—पुं० [सं०√यु (मिश्रण)+अप्] १ जो नामक एक प्रसिद्ध धान जिसका पियान, सत्पु आदि मन्थ्य खाते हैं। २ उक्त अन्न का पौधा। ३ प्राचीन काल की एक नौल जो जो के एक दाने अबका सरसों के बारह दानों के बराबर होती थी। ४ लकड़ी की एक नाप जो एक इंच की एक गिटाई होती है। ५ सामूद्रिक से होयनी आदि में होने-वाला एक क्षुद्र लक्षण जो जो के दानों की आकृति का होता है। ६ कोई ऐसी वस्तु जो दोनों ओर उन्नतोत्तर हो।

यवक—पुं० [सं० यव + क्तु] जी।

यवक्य—वि० [सं० यवक + यन्] (श्वेत) जो जो की बीआई के लिए उपयुक्त हो।

यव-कील—पुं० [सं० तं० तं०] भरद्वाज के पुत्र एक ऋषि।

यव-आर—पुं० [मध्य० सं०] जवाहार। (दे०)

यव-चतुर्षी—स्त्री० [मध्य० सं०] बंगाल जवाहर-चतुर्षी।

यवक—पुं० [सं० यव/जन् (उदरति) : ङ] १ जवाहार। २. मेहों का पौधा। ३. अजवायन।

वि० यव से उत्पन्न या प्राप्त होनेवाला।

यव-सिक्ता—स्त्री० [उपमित मं०] शबिनी (लता)।

यव-शेष—पुं० [सं० पं० तं०] कुछ रत्नों में होनेवाला जो के आकार का चिह्न जिसकी मिनती दोनों में होती है।

यव-द्वीप—पुं० [मध्य० मं०] जावा (द्वीप)।

यवन—पुं० [सं०√यु + य्क्] [स्त्री० यवती] १ बंग। तेजी। २. तेज चलनेवाला पाड़ा। ३ प्राचीन भारत में यवान से आये हुए लोगों की सजा। ४ परकीर्ण भारत में मुसलमानों की सजा। ५ काल-यवन नामक मन्थेच्छ राजा जा कृष्ण से कई बार लडा था।

यवन-ग्रिय—पुं० [पं० तं०] मिर्च।

यवनार्थाय—पुं० [यवन-आचार्य, पं० तं०] एक प्रसिद्ध यवन ज्योतिषाचार्य। ताजिकशास्त्र, रमलमूत आदि ग्रन्थों के रचयिता।

यवनानी—स्त्री० [सं० यवन + डीप्, आनुक्] १ यवान की भाषा। २ प्राचीन भारत में, यवना की लिपि।

यवनारि—पुं० [यवन-अरि, पं० तं०] श्रीकृष्ण, जो कालयवन के सत्पु थे।

यवनाल—स्त्री० [बं० मं०] १ उबार का पौधा। २ उबार के दाने। उबार। ३ जो के सूखे डठल जो पत्तुश्री को चारे के रूप में खिलाये जाते हैं।

यवनालज—पुं० [सं० यव-नाल, पं० तं०,√जन् +ङ] जवाहार। यवशार। **यव-नाथ**—पुं० [सं०] मिथिला के एक प्राचीन राजा जो बहुलाक्ष का पिता था।

यवनिका—पुं० [सं०√यु + ल्यट्—अन्, डीप् + क्तु + टाप्, इत्थ] १. कनाल। २ पर्वत। ३ रमगभ का पर्वत।

यवनी—स्त्री० [सं० √यु + ल्यट्] अन् + डीप्] १ यवान देश की स्त्री २ यवन जाति की स्त्री। ३ विशेषत मुसलमान स्त्री।

यवनेष्ट—पुं० [सं० यवन-इष्ट, पं० तं०] १ सीसा। २ मिर्च। ३ गाजर। ४ शलजमा। ५ प्याज। ६ लक्षुमुन। ७. नीय।

यव-कान्त—पु० [सं० ब० सं०] १. इन्द्र जी। २. कुटज। ३. प्याज। ४. बाँस। ५. जटामासी। ६. पाकर नामक वृक्ष।
यव-विद्युत्—पु० [सं० ब० सं०] वह हीरा जिसमें विद्युत् सहित यवरेखा हो।
यव-मन्त्र—पु० [सं० मध्य० सं०] जो का मंत्र जो पप्य रूप में कुछ विशिष्ट प्रकार के रीतियों की दिया जाता है।
यव-मन्थ—पु० [सं० षं० सं०] जो का सत्तु।
यवमती—स्त्री० [सं० यव+मत्तु+शीघ्र] एक प्रकार का वर्षं वृत्त जिसके विषम चरणों में क्रमशः रघुप, जगुप और जगुप तथा सम चरणों में क्रमशः जगुप, रघुप और मूध होता है।
यव-मद्य—पु० [सं० मध्य० सं०] सदायै हुए जी के खनीर से बनी हुई धाराव।
यव-मन्थ—पु० [सं० ब० सं०] १. एक प्रकार का क्रांदायण वत। २. पाषादि में समाप्त होनेवाला एक प्रकार का यज्ञ। ३. एक प्राचीन नाप।
यव-रस—पु० [सं०] जी आदि अनाजों के दानों को पानी में कुलकार उनसे निकाला जानेवाला सार भाग जिसका प्रयोग मादक इव्य प्रस्तुत करने में होता है और औषधी में जिसका प्रयोग पीठिक तन्त्र के रूप में होता है। (भास्कर)
यव-रसात्—पु० [सं० ब० सं०] जवाहार।
यव-वर्णन—पु० [सं० यव-वर्णं, षं० तं, यववर्णं-आमा, ब० सं०] सुधुत के अनुभार एक प्रकार का जहरीला कीड़ा।
यव-शर्करा—स्त्री० [सं०] रासायनिक प्रक्रिया से जी से बनाई जानेवाली चीनी। (मास्टोज)
यव-शुक्ल—पु० [सं० षं० तं+अञ्] जवाधार।
यव-श्राद्ध—पु० [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार का श्राद्ध जो वैशाख के शुक्ल पक्ष में कुछ विशिष्ट दिनों और योगों में तथा विषुव सकाति अथवा अथम तृतीया के दिन होता है। इसमें जी के आटे का व्यवहार होता है।
यवस्त—पु० [सं० √ य +अञ्] १. शास। २. भूसा।
यवस्त—पु० [सं० सु+आञ्] १. जी अथवा किसी अन्य उबाले हुए अन्न का मंड। २. उक्त मंड की काँची।
यवार्ध—पु० [सं० यव-अर्ध, षं० तं] जो का भूसा।
यवार्ज—पु० [सं० यवार्ज √ जन् (उत्पत्ति) +ङ] १. यवसार। २. अजवायन।
यवार्ज (क)—पु० [सं० √ य +आस] जवासा (क्षुप)।
यवविष्ट—पु० [सं० यवन् +ईष्टन्, यवारेक्ष] १. छोटा माँही। २. अग्नि। आग। ३. अग्निदेव के एक मन्त्रपटा ऋषि। अग्निपविष्ट।
 वि० १. सबसे छोटा। कनिष्ठ। २. नौचवाना। युवा।
यवनीर—पु० [सं०] १. पुराणानुसार (क) अजमोड का एक पुत्र। (ख) द्वितीय का एक पुत्र।
यवोन्मत्त (सु)—पु०, वि० [सं० यवन् +ईयसुन्, यवारेष] =यकिष्ठ।
 वि० [सं०] १. यव, सवधी। यक्का। २. यव या जी से बना हुआ।
यव्य—पु० [सं० यव +यत्] =यव-रस।
यव (सु)—पु० [सं० √ अञ् (व्याप्ति) +असुन्, मुट् आगम] १. किसी

सम्राय या समाज में होनेवाली किसी गुणी, मने व्यक्ति आदि की नेकनामी तथा ख्याति।
युहा—यव+कामना या कुटना—बहुत अधिक ख्यात तथा नेकनाम होना।
 २. कोई काम विशेषतः किसी अन्धके काम के करने का श्रेय। बड़ाई।
 महीमा।
 किं० प्र०—पाना।—मिलना।—जैना।
युहा—(किसी का) यव याना—हर जगह किसी की बड़ाई करते फिरना। (किसी का) यव मानना—कृतकतापूर्वक किसी का उपकार करना।
यवस लोह—पु० [सं०] ऐसा लोहा जिस पर विद्युत् की धारा की सहायता में जले का पानी या ऐसा ही और कोई रासायनिक इव्य लगा हो, और इसी लिए जिसपर जन्मी मोरचा न लगता हो।
यवती-करण—पु० [सं० यवत्] कोले आदि धातुओं पर विद्युत्-धारा की सहायता से जले का पानी या ऐसा ही और कोई रासायनिक इव्य लगाना जिससे उत्पन्न मोरचा न लग सके। (गैव्नाइजेसन)
यवत्—पु० [अ० यवत्] एक प्रकार का हरा पत्थर जो चीन और क्लका में बहुत होता है। सने-यवत्।
यवत्—पु० =यवत्।
यवत्स्कर—वि० [सं० यवत् √ कृ +ट] जिसमें यव बढ़ना हो या मिलता हो। यव-दायक।
यवत्काम—वि० [म० ब० सं०] (वह) जो यवम्बी होना चाहता हो। यव की कामना करनेवाला।
यवत्थ—वि० [सं० यवत् +यत्] =यवत्स्कर।
यवत्थान्—वि० [सं० यवत् +मत्प] [स्त्री० यवत्थन्वी] यवत्थी।
यवत्थिन्वी—स्त्री० [सं० यवत्थ +वनि +डीप्] १. गगा। २. बन-रुपास। ३. महा-अप्रीतिभन्वी।
 वि० यवत्थी का स्त्री०।
यवत्थी (विष्णु)—वि० [सं० यवत्थ +विनि] [स्त्री० यवत्थिन्वी] जिसका यव चारों ओर फैला हो। कीर्तिमान्।
यव्थी—वि० =यवत्थी।
यव्थील—वि० [सं० यव +हिं ईक (प्रत्यय)] यवत्थी।
यव्थुमति—स्त्री० दे० 'यवोदा'।
यवोदा—पु० [सं० यवत् √ दा (दान) +क] यवोदा।
यवोदा—स्त्री० [सं० यवोद +टाप्] १. नद की स्त्री जिन्होंने श्रीकृष्ण का लालन-पालन किया था। २. एक प्रकार का वर्षं वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में एक जगुप और दो गुप वर्षं होते हैं।
यवोदा-वर्षं वृत्त—पु० [सं० षं० सं०] श्रीकृष्ण।
यवोधर—पु० [सं० यवत् +धर, षं० तं] १. कृष्ण का एक पुत्र जो ६मिनपी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। २. उत्सर्पिणी के एक अर्हत् का नाम। (जैन)। ३. श्वेतन मास का पौर्णमासी दिन।
यवोधरा—स्त्री० [सं० यवोधर/टाप्] १. गीतम ब्रह्म की पत्नी और राहुक की माता का नाम। २. सावन मास की चौथी रात।
यवोधरेय—पु० [सं०] यवोधरा का पुत्र, राहुक।
यवोपति, **यवोपती**—स्त्री० =यवोदा।
यवोपत्य—पु० [सं०] एक जाति। (माकंडेय पुराण)

यक्षोभाषय—पुं० [सं० यक्ष-भाषय, मध्य० सं०] विष्णु।
यक्ष्य—वि० [सं०/यज् (देवपूजा)+सञ्चय्] यज्ञ में बलि चढ़ाये जाने के योग्य।

यक्षि—स्त्री० [सं० यज्+ति] १ किसी प्रकार की छड़ी, डबा या लाठी। २ डाला का डंढा। ध्वज। ३ पेड़ की टहन्यी। ४ पत्ता। ५. मुलेठी। ६. ताँत। ६. बेल। लता। ६. बाँह। मुजा। ७. गले में पहनने का एक प्रकार का मोतियों का हार।

यक्षिक—पुं० [सं० यष्टि+कन्] १ तीतर पक्षी। २ छड़ी, डबा या लाठी। ३ यंत्रोत्।

यष्टिका—स्त्री० [सं० यष्टिक+टाप्] १ हाथ में रखने की बड़ी या छोटी लाठी। २ मुलेठी। ३. बावली। बापी। ४ एक प्रकार की मोतियों की माला।

यष्टिका-धरय—पुं० [सं० यं० सं०] सुभूत के अनुसार जल को ठंडा करने का उपाय।

यष्टि-मयु—पुं० [सं० यं० सं०] जेठी मधु। मुलेठी।

यष्टि-बंध—पुं० [सं०] अमीन में गाड़ी हुई वह लूटी या छड़ी जिसकी छाया से समय का अनुमान किया जाता है।

यष्टी—स्त्री० [सं० यष्टि+ङीप्] १. गले में पहनने का एक प्रकार का हार। २. मुलेठी।

यक्—पुं० [सं०/यज् (प्रयत्न)+विक्+कन्] एक गीज प्रवर्तक ऋषि जो यास्क के पिता थे।

यह—सर्व० [सं० इदं] [बहु० रूप में] किसी ऐसी वस्तु, विचार या व्यक्ति (सभ्य) के लिए प्रयुक्त होनेवाला शब्द जो समीप हो, वर्तमान काल का हो, अभी धोचा गया हो अथवा जिसका अभी अभी उल्लेख हुआ हो। 'वह' का विशद्व्ययं। जैसे—यह तो सबेरे से यहाँ बैठा है।

वि० जो वर्तमान या समीप हो अथवा जिसका अभी अभी उल्लेख किया जा रहा हो।

यह-बह—पुं० [हिं०] इधर-उधर की या टाल-मटोल की बात-चीत। जैसे—मुझसे यह-बह मत करो, अपना काम देखो।

यहाँ—अध्य० [सं० इह] १. (वक्ता की दृष्टि से) इस स्थान पर। २. किसी विशिष्ट स्थान या क्षेत्र के आस-पास या चारों ओर।

पह—हमारे यहाँ—जहाँ हम रहते हैं वहाँ। हमारे देश में। हमारे पास। जैसे—हमारे यहाँ मीकर नहीं है।

यह—सर्व० वि० [हिं० यह] १. 'यह' का वह रूप जो पुरानी हिन्दी में उक्त कोई विभक्ति लगने के पहले प्राप्त होता है। २. 'ए' का विभक्ति युक्त रूप, जिसका व्यवहार आगे चलकर कर्म और सम्प्रदान में ही प्राप्त होने लगा था। इसको। इसे।

यहिस—सर्व० [हिं०] १ यही। २. उसी।

यहिमा—पुं० [इव० यहया] एक यहुदी पैगम्बर जिसने ईसा के आधिपत्य की पूर्व-सूचना दी थी और जो अन्त में मार डाला गया था।

यही—अध्य० [हिं० यह+ही (प्रत्य०)] निश्चित रूप से यह। यह ही। जैसे—यही तो मैं थी कहता हूँ।

यहूय—पुं० [इव०] यहूदी लोग।

यहूयी—पुं० [इव० यहूय] [स्त्री० यहूयिनि] १. यहूद देश का निवासी।

२. उक्त देश की एक जाति जो अब सारे ससार में फैल गई है। ३. अर्ध-पिपाचक व्यक्ति।

वि० यहूद देश का। यहूद देश-सम्बन्धी।

स्त्री०—यहूद देश की भाषा।

यहूयू—पुं० [अनु०] कब्रत की एक जाति।

यै—अध्य०—यहाँ।

यौचमा—स्त्री०—याचना।

यौषा—स्त्री० [सं० याचना] मंगने की किया। प्रार्थनापूर्वक मँगना। याचना।

याचिक—पुं० [सं० यज्+ठक्+इक] मंगीने का रहस्य जाननेवाला। उनके कल-पुरजों को यथा-स्थान बैठानेवाला और उनकी मरम्मत आदि करनेवाला कारीगर। (मेकैनिक्)

वि० १. यज-सम्बन्धी। २. यज में होनेवाला अथवा उसके कल-पुरजों से संबन्ध रखनेवाला। ३. यज की भाँति एक चाल से चलने या होनेवाला। यजवत् चलनेवाला। (मेकैनिक्)

याचिकी—स्त्री० [सं० याचिक से] वह विज्ञान या शास्त्र जिसमें अनेक प्रकार के यज बनाने चलाने, सुभारने आदि के उपायों तथा रीतियों का विवेचन होता है। (मेकैनिज्म)

या—स्त्री० [सं०/या (गति)+विभ्वप्] १. गति। २. गति। चाल।

३. गाड़ी। रथ। ४. अवरोध। रुकावट। ५. मनाही। वारय। ६. ध्यान। ७. प्राप्ति। लाभ।

अध्य० [सं० या सं० कां०] १. विकल्प-सूचक शब्द। अथवा। वा। २. संबोधन का शब्द।

सर्व० १. यह। (ब्रज०) उदा०—दै गति बिना विवेक एक या और कुचाकी।—बैद्ययथाल गिरि। २. यह का वह रूप जो उसे ब्रजभाषा में कारक चिह्न लगाने के पहले प्राप्त होता है। ३. इस। उदा०—या मोहन के मैं रूप लुभानी।—मीरा।

याक—पुं० [तिव्यती याक. सं० गावक] तिब्बत तथा मध्य एशिया में होनेवाला जानकी भेडा जिसकी पूँछ का चेंबर बनता है। कुछ लोग इसकी पालकर इस पर बांध भी तैते हैं।

वि०—एक (संख्या सूचक)।

याकृत—पुं० [अ० याकृत] एक प्रकार का लाल रंग का बहुमूल्य रत्न। लाल।

याकृती—वि० [अ० याकृती] याकृत सम्बन्धी। याकृत का।

स्त्री० यूनानी चिकित्सा प्रणाली में एक प्रकार का पीटिक अवलोक्य वा शोषण जिसमें याकृत को भस्म मिलाई गई होती है।

याचिक—वि० [सं० यथमा+ठक्+इक] यथमा नामक रोग से संबंध रखनेवाला। यथमा का।

याचिकी—स्त्री० [सं० याचिक+ङीप्] आधुनिक चिकित्सा की वह शाखा जिसमें विशिष्ट रूप से यथमा रोग के कीटाणुओं आदि का नाश करने के उपायों और सिद्धान्तों का विवेचन होता है। (बाइसर्वोलोजी)

याग—पुं० [सं०/यज्+ङाप्] यज्ञ।

यागक—वि० [सं०/याज् (याचना)+प्लुल्+अक] [स्त्री० यागिका, भाव० यागकता] १. जो मँगता हो। मँगनेवाला। २. प्रार्थी। पुं० मिथुन। मिश्रमंगा।

याचकता—स्त्री० [सं० याचक+तल्—टाप्] १. याचक होने की अवस्था या भाव । २. निष्ठापूर्णा । भिक्षामयी ।
याचन—पुं० [सं०/याच्+ल्युट—अन] १. भीक्ष माँगने की क्रिया या भाव । २. मन्त्रापूर्वक कुछ माँगने की क्रिया या भाव ।
याचना—स्त्री० [सं०/ याच्+णित्(स्वार्थे)+युच्—अन, टाप्] कुछ माँगने के लिए किसी से मन्त्रापूर्वक की जानेवाली प्रार्थना । सं० याचना करना । माँगना ।
याचमान—वि० [सं०/याच्+मानच्, मुक् आगम] याचक ।
याचित्वा—स्त्री० [सं० याचक+टाप्, इत्थ] १. आवेदन-पत्र । प्रार्थना-पत्र । अर्जी । २. आज-कल निश्चित रूप से वह प्रार्थना-पत्र जो म्हायालय के सामने उपस्थित किया जाता है । (फिटिशन)
याचित—पुं० क्त० [सं०/याच्+क्त] (वात) जिसके संबंध में याचना की गई हो । जो कुछ माँगा गया हो ।
याचितक—पुं० [सं० याचित+कन्] वह चीज या बात जिसके संबंध में याचना की गई हो ।
याचिष्णु—वि० [सं०/याच्+इष्णुच्] जो प्राय याचनाएँ करता रहता हो ।
याच्य—वि० [सं०/याच्+प्यत्] (वात) जिसके संबंध में याचना की गई हो या की जा सकती हो ।
याचक—पुं० [सं०/याच्+णित्+प्लुट—अक] १. यज्ञ-विधियों का वह शाखा जो यज्ञ कराता हो । २. यज्ञ करनेवाला । ३. राजा का हाथी । ४. मस्त हाथी ।
याचन—पुं० [सं०/याच्+णित्+ल्युट—अन] यज्ञ करने या कराने-वाला ।
याजि—पुं० [सं०/यज्+इज्] यज्ञ करनेवाला ।
यात्री (जिप्)—पुं० [सं०/यज्+णित्] यज्ञ करनेवाला
याजुच्—वि० [सं० यजुच्+अच्] [स्त्री० याजुषी] यजुर्वेद-सम्बन्धी । पुं० यजुर्वेद का शाखा अथवा उसका अनुयायी ।
याजुक्—पुं० [अ०] कुरान से वर्णित एक प्राचीन जाति ।
याजुक् याजुज्—पुं० [अ० याजुजो याजुज्] १. याजुज और याजुज नाम के दो भाई जो हजुजुह के बंशज कहे जाते हैं, और जिनकी सतान जाने चलकर इसी नाम की एक जाति के रूप में प्रसिद्ध हुई थी । कहते हैं कि वे लोग बहुत ही विकट अस्तित्वाणी होते थे और आस-पास की जातियों पर शोषण अत्याचार करते थे । चीन की दीवार इन्हीं लोगों के आक्रमण से बचने के लिए बनाई गई थी । २. दो बहुत ही उपवर्गी और परम दुष्ट व्यक्तियों का जोड़ा ।
याज्य—वि० [सं०/यज्+प्यत्] १. यज्ञ कराने योग्य । २. जो यज्ञ में किसी रूप में दिया जाने की हो अथवा यज्ञ के काम में आने की हो । पुं० बहु दक्षिणा जो यज्ञ में किसी की हो ।
याज्ञ—वि० [सं० यज्ञ+अच्] यज्ञ-संबन्धी । यज्ञ का ।
याज्ञवल्क्य—पुं० [सं० यज्ञवल्+क्य्] कुरी ।
याज्ञवल्क्य—पुं० [सं०/यज्+क्य् (बौलना)+अच्, यज्ञ-वल्क, व० तं०+भ्यत्] १. एक प्रसिद्ध ऋषि जो वैशम्पायन के शिष्य थे । २. एक ऋषि जो राजा जनक के दरबार में रहते थे और जो योगीश्वर याज्ञवल्क्य के नाम से प्रसिद्ध हैं । यैनेवी और गार्गी इन्हीं की पत्नियाँ थी । ३. योगीश्वर याज्ञवल्क्य के बंशज एक स्मृतिकार ।

याज्ञसेवी—स्त्री० [सं० यज्ञसेन+अच्—डीप्] यज्ञसेन की पुत्री । प्रीयपी ।
याज्ञिक—पुं० [सं० यज्ञ+क्य्—इक] १. यज्ञ करने या करानेवाला व्यक्ति । २. गुजराती ब्राह्मणों की एक जाति ।
याज्ञिक—पुं० [सं०/यत्+णित्+ल्युट—अन] १. पत्निशोच । बदला । २. इत्यादि पारितोषिक ।
याज्ञना—स्त्री० [सं०/यत्+णित्+युच्—अन, टाप्] १. चोर घारी-रिक्त कष्ट । २. बहु कष्ट जो नरक में भूगमना पड़ता है । ३. हिंसा ।
याज्ञ-याम—वि० [सं० वं० सं०] १. जिसके महत्त्वपूर्ण दिन बीत चुके हो । २. जो पुराना पड़ने के कारण इतना निर्बल और महत्त्वहीन हो चुका हो कि प्रस्तुत काल में उसका कोई उपयोग न हो सकता हो । गतावधि । 'अद्यतन' का विपर्याय । (आउट आफ डेट) उदा०—'भारतेन्दु' ने कुछ लेख ऐसे भी निकले थे, जो आज भी यात-याम नहीं हुए हैं । —रायकृष्ण दास ।
याज्ञव्य—वि० [सं०/या (जाना)+तव्य] (पदोशी शत्रु) जिसपर सहज में आक्रमण किया जा सकता हो । (की०)
याज्ञा (वृ)—स्त्री० [सं०/यत्+वृत्] पति के भाई की स्त्री । जेठानी या देवराणी ।
 वि० [य्+वृत्] १. जानेवाला । २. रथ चलानेवाला । ३. मार डालने या हत्या करनेवाला ।
याज्ञायात—पुं० [सं०/या+स्त (भाने)] =यात-आयात, इ० सं०] [वि० यातायातिक] १. एक स्थान से दूसरे स्थान पर आते-जाते रहने की क्रिया या भाव । आना-जाना । गमनागमन । २. वह साधन जिससे एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाया जाता है । (कम्प्यूनिक्शन)
याद्यु—वि० [सं०/या+द्यु] १. आनेवाला । २. रास्ता चलनेवाला । पथिक ।
 पुं० १. काल । २. राक्षस । ३. वायु । हवा । ४. अस्त्र । ५. यातना ।
याद्युज्—पुं० [सं० याद्यु/ ह्य् (हिंसा)+टक्] गुण्युज ।
याद्युधान—पुं० [सं० याद्यु/ धा (पोषण)+ड्युच्—अन] राक्षस ।
याद्यिक—पुं० [सं० यत्+क्य्—इक] एक बीड समप्रदाय ।
याद्या—स्त्री० [सं०/या+यन्—टाप्] १. एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने की क्रिया । सफर । २. कहीं जाने के लिए चलना या निकलना । प्रयाण । प्रस्थान । ३. धार्मिक आब से किसी तीर्थ या देव-मंदिर की ओर दर्शन, पूजन आदि के उद्देश्य से जाने की क्रिया । ४. उत्सव । ५. व्यवहार । ६. आज-कल बग देश में प्रचलित एक प्रकार का धार्मिक अभियान, जिसमें नाचना और गाना भी रहता है ।
याद्याधिदेव—पुं० [सं० याद्या-अधिदेव, युद्युपात सं०] दे० 'याद्या-भस्ता' ।
याद्या-भस्ता—पुं० [सं०/याद्या+हं०] याद्या करनेवाले व्यय के बदले अर्पण कही जाने-जाने के समय किये जानेवाले व्यय के बदले में अधिकारियों, कर्मचारियों आदि की मिलनेवाला भत्ता । (ट्रैडिंग एलाउन्स)
याद्यावाल—पुं० [सं० याद्या+हं०] वाला (प्रत्यय) । तीर्थयात्रियों की अपने यहाँ टिकाने तथा देवयज्ञ करनेवाला पक्ष ।
याद्यिक—पुं० [सं० याद्या+क्य्—इक] १. यात्रा का प्रयोजन । कहीं जाने का अभिप्राय या उद्देश्य । २. यात्रा करनेवाला व्यक्ति । यात्री । ३. यात्रा के समय साथ ले जाने की सामग्री । सफर का सामान ।

वि० १ यात्रा-संबन्धी। यात्रा का। २ जो बहुत दिनों से चलता चला आ रहा हो। परंपरा-नद।

यात्री (विष्) —पु० [स० यात्रा+इनि] १ वह जो यात्रा कर रहा हो। २. देवसेन अथवा नीचटन के उद्देश्य से घर से निकला हुआ व्यक्ति।

यात्रातथ्य—पु० [स० यथातथ्य+तथ्य] यथातथ होने की अवस्था या भाव। यथायंता।

यात्रयति—पु० [स० व० तं] १. समुद्र। २. वलय।

यात्र—स्त्री० [फा०] १ स्मरण करने की क्रिया या भाव। २. स्मरण-शक्ति। स्मृति।

क्रि० प्र०—करना।—विलाना।—गडना।—रखना।—रहना।—होना।

पु० [स० यावत्] मछली, मगर आदि जल-जंतु।

यात्रवार—स्त्री० [फा०] १. चिन्हाना। २. स्मारक।

यात्रवाहक—स्त्री० [फा०] १. स्मरण-शक्ति। स्मृति। २. संस्मरण।

यात्रवृत्—पु० [स० यदु+वृत्] [स्त्री० यावरी] १. यदु के वृज। २. श्रीकृष्ण।

वि० यदु-सम्बन्धी। यदु का।

यात्रवी—स्त्री० [स० यावत्+वीप्] १. यदु-कुल की स्त्री। २. दुर्गा।

यात्रवीय—वि० [स० यावत्+य्]—ईयं यावत्-सम्बन्धी।

पु० किसी जाति या देश के लोगों में आपस में होनेवाला लड़ाई-झगडा।

यात्रुच्छिन्न-आदि—स्त्री० [स०] गिरवी या देहून रबी हुई बहू पीज जो बिना मूत्रण बुराये लौटार्ह न जा सके।

यात्रुक्—वि० [स० यत्+वृत्+क्] आकार आदेश] जिस प्रकार का। जैसा।

यात्र—पु० [स०/या+स्वृद्व्—अन्] १. वह उपकरण या साधन जिसपर सवार होकर यात्रा की जाती अथवा माल ढोया जाता है। जैसे—गाड़ी, छक्का, रथ साइकिल आदि। ३. आकाश-यान। विमान। ३. यानु देवा पर की जानेवाली सैनिक चढ़ाई। ४. गति। चाल।

यात्र-आर्य—पु० [स० व० तं] ऐसा मार्ग जिससे आवनी और सवारियाँ जाती-आती हो। जैसे—सड़क।

यात्री-अव्य० [अ०] अर्थ या आशय यह है कि। अर्थात्।

यात्रे—अव्य०=यात्री।

यात्रय—पु० [स०/या+यिष्+युक्+युक्—अन्] [पु० वृ० यापित, वि० वाय्] १. चलाना। २. समय आदि के संबंध में, व्यतीत करना। गुजराना। बिताना। जैसे—काल-यापन। ३. काम-काज के सम्बन्ध में, पूरा करना। निपटाना। ४. परिव्रयाग करना। छोड़ना।

यात्रया—स्त्री० [स०/या+यिष्, युक्+युक्—अन्, टप्] १. बाहन या सवारी चलाना। हाकिमा। २. बहू वन जो किसी की जीविका-निर्वाह के लिए दिया जाय। ३. बरतार। व्यवहार। ४. दे० 'यापन'।

यात्रनीय—वि० [स०/या+यिष्, युक्+अनीयर्] १. यापन किये जाने के योग्य। वाय्य। २. महत्त्वहीन। तुच्छ।

यात्र्य—वि० [स०/या+यिष्+युक्+यत्] १. जिसका यापन हो सके या होने को हो। यापनीय। २. छिपाये जाने के योग्य। गोपनीय। ३. तुच्छ और निवनीय। ४. रक्षित रखने के योग्य। रक्षणीय।

पु० कोई ऐसा असाध्य रोग जिसमें दीर्घकाल तक रोगी को कष्ट होयमा पड़ता है।

यास्त—स्त्री० [फा० यास्त] १. प्राप्ति। २. आय। ३. लाभ। ४. किसी प्रकार से अथवा किसी रूप में होनेवाली ऊपरी आमदनी। ५. रिश्वत।

यास्तनी—वि० [फा० यास्तनी] १. मिलनेवाला। प्राप्य। २. प्राप्त करने के योग्य। किये जाने के योग्य।

यास्ता—वि० [फा० यास्त] १. यात्रा हुआ। जैसे—सजा यास्ता। २. जिसने कोई विशेष अनुभव या ज्ञान प्राप्त किया हो। जैसे—साक्षीय यास्ता, सीटबस यास्ता।

यात्र—प्रत्य० [फा०] १. प्राप्त होनेवाला या मिलनेवाला। जैसे—दस्त-यात्र—दस्त-यात्र। २. प्राप्त करनेवाला। पानेवाला। जैसे—फतह-यात्र—फतह-यात्र।

यात्री—स्त्री० [फा०] प्राप्त करने या होने की अवस्था, क्रिया या भाव। यात्रु—पु० [पु०] १. छोटे डील-डील का चीन्हा जो प्रायः बीस डोने के काम आता है। २. टट्टू।

यात्र—पु० [स०/यत् (मैयुन्)+यत् (मैयुन्)]

यात्र—पु० [स०/यत् (मैयुन्)+यत् (मैयुन्)] १. दिन मान का आठवाँ अंश। तीन घंटे का समय। पहर। २. काल। समय। २. एक प्रकार के देवगण जो सख्या में बारह कहे गये हैं।

वि० यम-संबन्धी। यम का।

स्त्री० यामि (रात)।

यामिकिनी—स्त्री०=यामि।

याम-बीष—पु० [स० व० स०] १. मुर्रा। २. मृगाल। ३. पहरों की सूचना देनेवाला घटा। घड़ियाल।

याम-बीषा—स्त्री० [स० व० स०+टप्] बहू घटा जो समय की सूचना देने के लिए बजता हो। घड़ियाल।

याम-माली—स्त्री० [स० व० तं] समय बतानेवाली पुरानी चाल की घड़ी।

यामल—पु० [स० यमल+अण्] १. जुड़वाँ बच्चे। यमल। २. तन्त्र शास्त्र का एक ग्रन्थ।

यामवती—स्त्री० [स० याम+सतुप्+ङीप्] रात। निशा।

यामवृत्ति—स्त्री० [स० व० तं] १. रात के समय चौकाली करने या पहरा देने का काम। २. उक्त काम का परिचयिक।

यामास्ता—पु०=आमाता (सामात)।

यामायात्र—पु० [स० यम+यत्—आयन्] वह जो यम के गोत्र में उत्पन्न हो।

यामार्थ—पु० [स० यम-अर्थ, व० तं] याम अर्थात् पहर का आधा भाग। बड़े घटे का समय।

यामि—स्त्री० [स०/या+यि] १. कुल-वपु। कुल-स्त्री। २. बहून। भगिनी। ३. रात्रि। रात। ४. पुत्री। बेटी। ५. पुत्र-वपु। ६. दक्षिण दिशा। ७. धर्म की एक पत्नी।

यामिक—पु० [स० यम+इत्—इत्] रात के समय चौकनी करने या पहरा देनेवाला व्यक्ति।

यामिका—स्त्री० [म० यामिक+टाप्] रात।

भाषिक-वर्ति—पुं० [सं०] १. चंद्रमा । २. कर्पूर ।
 भाषित—पुं० [सं०] भाषित। अन्व-कुण्डली मे सज से सातवां स्थान ।
 भाषित-वेष—पुं० [सं०] भाषित वेष। वेषबाला ।
 भाषित (वि)—स्त्री०—भाषिणी ।
 भाषिणी—स्त्री० [सं०] याम+वि+क्रीप् १. रात्रि । रात । २. हृदयी ।
 भाषिणी-वर्—पुं० [सं०] यामिनी+वर्+ट १. राक्षस। निघावर । २. उल्क । ३. युग्मक ।
 भाषुन्—वि० [सं०] यमुना+अणु १. यमुना-संबन्धी । २. यमुना में रहने या होनेवाला ।
 पूं० १. यमुना के किनारे बसनेवाले लोग । २. एक प्राचीन तीर्थ ।
 ३. एक प्राचीन पर्वत । ४ एक प्राचीन जलपद । ५ एक प्राचीन वैष्णव आचार्य । ६ अक्षि में लगाने का अंजन या सुरमा ।
 भाषुनेच्छक—पुं० [सं०] यामुन-इच्छक, उपमित सं०] सीसा ।
 भाषिय—पुं० [सं०] यामि+इच्छ+एय १ यामिका पुत्र । २ बहुत का लड़का । भ्राता ।
 भाष्य—वि० [सं०] यम+ष्यञ् १. यम-संबन्धी । यम का । २. दक्षिण दिशा का । दक्षिणी ।
 पूं० [यामी+यल्] १. विष्णु । २. विवा । ३. यमवृत् । ४ अगस्त्य ऋषि का एक नाम । ५. चन्दन । ६. भरणी (नक्षत्र) ।
 भाष्य-धुव—पुं० [सं०] कर्म० सं०] सेनल का पेश ।
 भाष्या—स्त्री० [सं०] याम्य+टाप् १. दक्षिण दिशा । २. भरणी मन्त्र ।
 भाष्यावयव—पुं० [सं०] याम्य-अवय, कर्म० सं०] दक्षिणावयव ।
 भाष्योत्तर—वि० [सं०] याम्य-उत्तर, सुप्तुषा सं०] जो दक्षिण से उत्तर की ओर या उत्त लक्ष मे हो ।
 भाष्योत्तर-विषय—पुं० [सं०] कर्म० सं०] लंबांश। दिग्ग । (भूगोल, ज्योतिष)
 भाष्योत्तर-रेखा—स्त्री० [सं०] कर्म० सं०] ज्योतिष और भूगोल में बहु कल्पित रेखा जो किसी विधिगत स्थान (जैसे—प्राचीन भारत मे उपजयिनी और आज-कल हंगलैण्ड के ग्रीनविच नगर) के लक्ष-स्वस्तिक से चलकर भुमेर और भुमेर को पार करती हुई पृथ्वी का पूरा भूत बनाती है । (मेरीडियन)
 भाष्योत्तर-वृत्त—पुं० [सं०] मध्य० सं०] याम्योत्तर रेखा से बननेवाला वृत्त । (मेरीडियन)
 भाषावर—पुं० [सं०] √या (गति)+यङ्+वरच् १. अवशेष का शेष । २. वह साधु या संन्यासी जो किसी एक स्थान पर टिककर न रहता हो, बराबर भ्रमता-चिरता हो । ३. उक्त प्रकार के मुनियों का एक गण या वर्ग । ४. वह जिसके रहने का कोई निश्चित स्थान न हो और जो क्षान-क्षान आदि के सुजीने के विचार से अपना बेरा कभी कहीं और कभी कहीं लगाता हो । क्षाना-बबोश । (नोमड) ५ अस्काद मुनि का एक नाम । ६. याचना । ७. वह ब्राह्मण जिसके यह गार्हपत्य धर्म बराबर रहती हो । सामि ब्राह्मण ।
 भाषी (विग)—वि० [सं०] √या +विगि, युष् आगम] [स्त्री०] याषिकी ।
 भाषी—पुं० [सं०] [भाष०] प्राची १. मिम । बील । २. किसी स्त्री के विचार से उलका या उपपत्ति ।

भाषक—पुं० [सु०] भाषक] १. चीनी तुकिस्तान का एक प्राचीन नगर ।
 २. एक प्रकार का बेल-वृक्ष जो कालीन में बनाया जाता है ।
 भाष-भाष—वि० [सं०] [भाष०] याद-भाषी] याद-भाष । (रे०)
 भाष-भाषा—वि० [सं०] [भाष०] भाषा या भाषाणी] १. जिसके बहुत से विच हों तथा जो विचारों में ही अधिक समय बिताता हो । २. विचारों से रहकर अपना जीवन हँसी-झूठी से बितानेवाला । ३. जो सब के साथ मित्रता स्थापित कर लेता हो ।
 भाष-भाषी—स्त्री० [सं०] [सं०] भाष-भाषा होने की अवस्था या भाव ।
 भाषबंध—पुं० [सं०] [भाष०] [भाष०] यादबंधी] निष्ठापूर्वक मित्रता का निर्वह करनेवाला व्यक्ति । सम्भा मित्र ।
 भाषबंधी—स्त्री० [सं०] [सं०] सम्पत्ति मित्रता ।
 भाष-भाष—पुं० [सं०] [सं०] [भाष०] याद-भाषी] मित्र को समय पर बोला देने अथवा उसके अनूचित काम उठानेवाला व्यक्ति ।
 भाषाला—पुं० [सं०] [सं०] यादान] १. याद होने की अवस्था, धर्म या भाव । मित्रता । मैत्री । दोस्ती । २. पर-स्त्री और पर-पुत्र का अनूचित सम्बन्ध या प्रेम ।
 किं० प्र०—गाँठना ।—लगाना ।
 वि० मित्रो-का सा । मित्रता का ।
 भाषि—स्त्री० [सं०] [सं०] याद । मियतमा । प्रेयसी । उवा०—हृदित ताप सब धीस को उर लभि भाषि ब्यारि।—विहारी ।
 भाषी—स्त्री० [सं०] [सं०] १. याद होने की अवस्था या भाव । मैत्री । मित्रता । २. पर-स्त्री और पर-पुत्र का अनूचित प्रेम या सम्बन्ध ।
 किं० प्र०—गाँठना ।—जोड़ना ।
 भाषक—स्त्री० [सु०] १. भावद । २. बोझे की भावद के ऊपर के लंबे बाल । जयाल ।
 भाष—वि० [सं०] √यु (मिषण)+अप्+अणु १. यष-सम्बन्धी । यष १. २. यष या जी से बना या बनाया हुआ ।
 पूं० १. जो का सपु । २. कावा । लाख । ३. महावर ।
 वि० [सं०] √यु+अप्+अणु १. जितना । २. पूरा । सब ।
 अर्थ० १. जब तक । २. जहाँ-तक ।
 भाषक—पुं० [सं०] याव+कन् १. जो । २. जो का सपु । ३. जो की बनाई हुई कोई चीज । ४. बोरी धान । ५. साठी धान । ६. उड़क ।
 ७. कावा । लाख । ८. महावर ।
 भाषकजीव—अर्थ० [सं०] यावत्-जीवन, अर्थ० सं०] जब तक जीवन रहे या ही तब तक । जन्म-मर । आजीवन ।
 भाषक—वि० [सं०] यद्-मुत्प, आत्व] १. जितना । २. सब ।
 अर्थ० [यद्+आत्व] जहाँ तक । (इसका नित्य सबकी ताव् है) ।
 भाषक—वि० [सं०] यवन+अणु] [स्त्री०] यावनी] १ यवन-संबन्धी । यवनी का । २. मुसलमानी का ।
 पुं० लोभान ।
 भाषक—पुं० [सं०] यावन+कन्] लाल रेंव । रत्न पुरब ।
 भाषकाल—पुं० [सं०] यवनल+अणु] अवार या मरका नामक अन्न ।
 भाषकाली—स्त्री० [सं०] यावकाल+क्रीप्] मरके से बनाई हुई चीनी ।
 अवार की शक्कर ।

घाबनी—स्त्री० [स० घाबन् + डीप्] करकवालि नामक ईक। रसाक।
वि० 'घाबन्' का स्त्री०।

घावर—वि० [फा०] [आञ० घावरी] १ सहायक। मददगार। २
पोषक।

घावरी—स्त्री० [फा०] १ यावर अर्थात् सहायक होने की अवस्था या
भाव। २. पोषण।

घाबलुक—पु० [म० घबलुक + अणु] जवा-खार।

घास—पु० [स० घस् + अणु] घास, इठने आदि का डेर या पूला।

घाबा—वि० [सु० घानः] अनर्कल। बेहूदा।

घाबास—पु० [स० घबास + अणु] घाबास से बनाया हुआ भण्ड। जबासे
की शराब।

वि० घाबास-संबंधी। जबासे का।

घानी—स्त्री० [स० घान। डीप्] १ शखिनी। २ यवतिस्ता नाम की
लता।

घाष्टीक—पु० [स० घष्टि + ईकङ्] लठी बाँधनेवाला योडा। लठैत।

घास—पु० [स० घस् + अणु] (प्रयाग) + षञ्] शाल घमासा।

स्त्री० [अध०] १ निराशा। २. निराश होने पर मन में उत्पन्न होने
वाला श्रेद।

स्त्री० [फा०] चमेली।

घासमन—स्त्री० [फा० घासमीन] चमेली का फूल।

घासमीन—स्त्री० [फा०] चमेली का फूल।

घाघु—सर्व० = जागु।

घास्क—पु० [स० घस्क + अणु] १ यास्क ऋषि के गोत्र में उत्पन्न व्यक्ति।

२. वैदिक निषधन के रचयिता एक प्रसिद्ध ऋषि।

घास्कायनि—पु० [स० घास्क + फिञ् = आयन] यास्क के गोत्र में उत्पन्न
पुरुष।

घाहि—सर्व० [हि० या + हि] इतको। हते।

घाङ्ग—पद [फा०] ऐ लुदा। हे ईवकर।

पु० एक प्रकार का कदतर जो घास 'घाङ्ग घाङ्ग' शब्द करता है।

घियकु—वि० [स० घ्य् + क्त] (देवपूजा) + सन् + उ] पूजा या यम की इच्छा
करनेवाला।

घियपुत्र—वि० [स० घ्य् + अणु] (संयुक्त) + सन् + उ] संयुक्त या सभोग की इच्छा
रखनेवाला। सभोगेच्छुक।

घियासा—स्त्री० [स० घा (जाना) + सन् + अ + टाप्] जाने की इच्छा।

घीघु—पु० = ईघु (ईसा मसीह)।

घीजान—पु० [स० घ्य् + अणु] (योग) + घानच्] १ सारथी। २ ब्राह्मण।
विश्व। ३ दो प्रकार के योगियों में से वह योगी जो अभ्यास कर रहा
हो। पर मुक्त न हुआ हो।

घीजानक—पु० [स० घीजान + क] घीजान नामक योगी। दे० 'घीजान'।

घीजक—वि० [स० घ्य् + अणु] [माञ० घीजक] १ किसी के साथ जुड़ा,
मिला या लगा हुआ। २. मिश्रित। सम्मिलित। ३. नियुक्त।

घीकरर। ४. पूरा किया हुआ। सम्पन्न। ५. उचित। ठीक। वा-
जिह।

घी० १. वह योगी जिसने योग का अभ्यास कर लिया हो। २. रसक
मनु का एक पुत्र ३. बार हाथ लकी एक पुरानी नाप।

घुस्त-रसा—स्त्री० [स० घं० स०, + टाप्] १. गंधाकुली। नाकुल कंब।
२. रासना।

घुस्त-विकर्ष—पु० [स० घं० घं०] आधा-विज्ञान में शब्दों के उच्चारण
में होनेवाली वह प्रक्रिया जिससे शब्दों में रहनेवाली कोई श्रुति (शे०)
किसी मूक कर्ण का स्थान धारण करती है।

घुस्ता—स्त्री० [स० घुस्त + टाप्] १. एलापर्णी २. एक प्रकार का घुस्त
जिसमें दो नमण और एक मणण होता है।

घुस्ताभार—वि० [स० घुस्त-अभार, कर्म० सं०] संयुक्त वर्ण। मिश्रित
वर्ण।

घुस्ताप्य—वि० [स० घुस्त-अप्यं घं० सं०] ज्ञानी।

घुस्तित—स्त्री० [सं० घ्य् + क्त] १. युक्त अर्थात् मिले हुए होने की
अवस्था या भाव। मिलन। योग। २. कोई कठिन काम सरलतापूर्वक
करने का उपाय या ढंग। तरकीब ३. किसी तथ्य का लक्षण या चर्च
करने के लिए कही जानेवाली कोई बुद्धिमत्त बात। दलील। (रीजन्)
४. प्रथा। रीति। ५. कारण। ६. कौशल। चातुरी। ७. साक्षि
में एक प्रकार का अर्थात्कार जिसमें किसी उपाय या कौशल से
अपनी कोई चेष्टा या रहस्य दूसरे से छिपाने का उल्लेख या वर्णन होता
है।

घुस्तितार—वि० [स० घुस्तित + क्त] (करना) + ट] = घुस्तित-युक्त।

घुस्तित-युक्त—वि० [सं० घं० सं०] जो युक्त की दृष्टि से ठीक हो। घुस्तित-
समग। ठीक। वाजिब।

घुस्तितवाच—पु० [स० घं० सं०] = बुद्धिवाद।

घुस्तित-वाचक—पु० [स० मध्य० सं०] तर्क-वाचक।

घुस्तिकर—वि० [सं०] नया युग उपस्थित करनेवाला। युगप्रवर्तक।
जैसे—युगकर रबीन्द्रनाथ टैगोर।

घुस्तिकर—पु० [सं० घ्य् + अणु] (धारण) + णिच्, लृच्, मुच्] १. पञ्जब का
एक प्राचीन नगर जिसका वर्णन महाभारत में आया है। २. एक
प्राचीन पर्वत। ३. गाड़ी का बम। ४. नैलगार्डी का वह लंबा बस
जिसमें जुआ लगाया जाता है।

घुस्त—पु० [सं० घ्य् + क्त] (जोड़ना) + षञ्, नि० सिद्धि] [वि० घुस्त] १.
एक दो बस्तुएँ। जोड़ा। युग्म। २. ऋद्धि और सिद्धि नाम की दो
ओचधियाँ। ३. पौष्टर या पाने के खेल में एक साथ एक घर में बैठी
हुई दो गोटियाँ। ४. वस के अनुक्रम में कोई स्थान। पीठी। पुरुष।
५. बैल के कंधे पर रखा जानेवाला जुआ। ६. काल। समय।
जैसे—पूर्व युग।

घुस्त—पु० [सं० घ्य् + क्त] अलग दिनों तक। अलग काल तक।

घुस्त-गणना के विचार से कल्प के चार उप-विभागों में से प्रत्येक
—सत्य, त्रेता, द्वापर और कलि। (पुराण) ८. वह समय विभाग जिसमें
कुछ विशिष्ट प्रकार की घटनाओं, प्रवृत्तियों आदि की बहुलता रहती है।
जैसे—भारतेन्दु युग, गांधी युग, लोह युग आदि। ९. पंच वर्ष का वह
काल जिसमें बहुस्पति एक राशि में स्थित रहता है।
वि० जो गिनती में दो हो।

घुस्त-कीलक—पु० [सं० घं० सं०] वह लकड़ी या लुंटा जो बम और जुए के
मिले हुए छेदों में डाला जाता है। लैल। लैला।

घुस्तित—स्त्री० = घुस्तित।

दुग्ध-वर्ष—दु०[सं० व० सं०] कोई ऐसा काम जो किसी विशिष्ट युग में प्रायः सभी लोग साधारण रूप से करते हों। जैसे—बोरी, झूठ, बेईमानी ही आज-काल के दुग्ध-वर्ष से जान पड़ने लगे हैं।

दुग्धपत्र (पृ)—अव्य०[सं० युग्+पत्र (गति)+क्विप्] एक ही समय में : एक ही क्षण में। साध-साध।

वि० एक ही समय में और एक साथ होनेवाला। (सादमस्तेमिक्वत्)

दुग्ध-वन्ध—दु०[सं० व० सं०]१. कौबिहार। कचनार। २. युग्मपत्र नामक वृक्ष। ३. पहाड़ी आबजुह।

दुग्ध-वन्धिका—स्त्री०[सं० व० सं०,+कप्+टाप्, इत्थ] शीशम का पेड़।

दुग्ध-वृषभ—दु०[सं० व० सं०] अपने युग या समय का बहुत बड़ा महापुरुष।

दुग्ध-बाहु—वि०[सं० व० सं०] जिसके हाथ बहुत लंबे हों। दीर्घबाहु।

दुग्ध-व—वि०, पुं०=युग्म।

दुग्ध—दु०[सं०/युग्+कल्थ, कुत्थ] एक साथ और एक ही गर्भ से उत्पन्न होनेवाले दो जीव। युग।

दुग्ध-क—दु०[सं० युग्+क] (श्रवित होना) +क] साहित्य में वह कुलक (गद्य) जिसमें दो श्लोकों या पद्यों का एक साथ मिलकर अव्यय करना पड़ता हो।

दुग्ध-व्यय—दु०[सं० युग्+आ/व्यया (प्रकथन)+क] बबूल का पेड़।

दुग्धात—दु०[सं० युग्+अत, व० सं०]१. प्रलय। युग का अंत। २. युग का अंतिम काल या समय। ३. प्रलय।

दुग्धातक—दु०[सं० युग्धात+कन्]१. प्रलय-काल। २. प्रलय।

दुग्धातर—दु०[सं० युग्+अतर, मपुं० सं०]१. प्रस्तुत युग के उपरान्त आनेवाला दूसरा युग। २. कुछ और ही प्रकार का जमाना, युग या समय।

दुग्हा—दुग्धातर उपस्थित करना= समय का प्रवाह पूरी तरह से बदल देना। पुरानी प्रथा की बगहू नई प्रथा या रीति चलाना।

दुग्धाक—दु०[सं० युग्+अक, व० सं०] बत्सर। वर्ष।

वि० युग का विभाजक।

दुग्धादि—दु०[सं० युग्+आदि, व० सं०]१. सृष्टि का प्रारंभ। २. युग का आरंभ।

स्त्री०[व० सं०] दे० 'दुग्धावा'।

वि० १ युग के आरंभिक काल का। २. बहुत पुराना।

दुग्धादिह—दु०[सं० युग्धादि/ह(करण)+क्विप्, युक्+आगम] शिब।

दुग्धावा—स्त्री०[सं० युग्+आवा, व० सं०] वह तिथि जिससे युग का आरंभ होना माना जाता है। जैसे—बैशाख शुक्ल तृतीया, कार्तिक शुक्ल नवमी, भाद्र कृष्ण त्रयोदशी और पूस की अमावस्या जो क्फाल सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापर युग और कलियुग की आरंभ की तिथियाँ हैं।

दुग्धावतार—स्त्री०[सं० युग्+अवतार, व० सं०] युग का अवतारी महान् पुरुष। युग्-स्वरूप पुरुष।

दुग्धेय—दु०[सं० युग्+ईय, व० सं०] कलित ज्योतिष में, बृहस्पति के वर्ष के राशि चक्र में गति के अनुसार पौष पौष वर्ष के युगों के अधिपति।

दुग्धीचि—वि०[सं० युग्+उचि, व० सं०] अपने युग या समय के विचार से जो सबसे बढ़कर हो।

दुग्ध—दु०[सं०/युग् (पौग)+मन्, कुत्थ]१. एक ही तरह की ऐसी दो चीजों को प्रायः या सदा साथ आती या रहती हैं। जोड़ा। युग।

२. ऐसी दो बातें या वस्तुएँ जो युक्ततः एक दूसरी पर अवलम्बित या आश्रित हों। ३. ज्योतिष में, मिथुन राशि। ४. दे० 'युगलक'।

दुग्धक—दु०[सं० युग्+क]१. युग्म। जोड़ा। २. युगलक।

दुग्धक—दु०[सं० युग्+क] युग्म (उत्पत्ति)+क] एक साथ एक ही गर्भ से उत्पन्न होनेवाले दो जीव।

वि० (ऐसे दो) जो एक साथ उत्पन्न हुए हों।

दुग्ध-वर्षा (वर्षल)—वि०[सं० व० सं०,+अनिच्]१. जो स्वभावतः मिलता हो। मिलनशील। २. मैथुन करना जिसका वर्षं हो।

दुग्धल—दु० [सं० युग्+निच्+स्युद्+अन्] [यु० क्ठ० युग्मिष्ठ] १. १ दो चीजों को आपस में जोड़, बाँध या मिलकर एक साथ करने की क्रिया या भाव। (कर्पास्त्रिय) २ युग्म बनाने की क्रिया या भाव। (कौनजुगेशन)

दुग्ध-वन्ध—दु०[सं० व० सं०]१ कचनार का पेड़। २ भोजपत्र का पेड़। ३ छितवन। ४. ऐसा पेड़ जिसकी शाखा में आग्नेय-सामने चौ-दो पत्ते एक साथ होते हों। युग्मपर्ण।

दुग्ध-वर्ष—दु० [सं० व० सं०] १. लाल कचनार। २. छितवन। ३. दे० 'युग्मपर्ण'।

दुग्ध-वर्षा—स्त्री०[सं० व० सं०, टाप्]दुग्धिकाशी।

दुग्ध-वृक्षा—स्त्री०[सं० व० सं०, टाप्]दुग्धिकाशी।

दुग्धाजन—दु०[सं० युग्+अजन्, कर्म० सं०] श्रोताजन और सीबीराजन इन दोनों का समूह।

दुग्धेच्छा—स्त्री० [सं० युग्+च्छा, व० सं०] मैथुन या सभोग की इच्छा।

दुग्ध—दु०[सं० युग्+मन् वा/युक्+मप्यु नि०]१. वह गाड़ी जिसमें दो घोड़े या बैल जोते जाते हैं। जोड़ी। २. वे दो पशु जो एक साथ गाड़ी में जोते जाते हैं। जोड़ी।

वि० जो (गाड़ी आदि में) जोते जाने के योग्य हो या जोता जाने को हो।

दुग्धाह—दु० [सं० युग्+वह (शोना)+क्विप्+अणु, उप० सं०] १. रुम्य (दो बैलों या दो घोड़ोंवाली गाड़ी) हुकनेवाला। २. किसी प्रकार की गाड़ी हुकनेवाला व्यक्ति। गाड़ीवान।

दुत्—दु०[सं०/यु (मिथय)+स्त]१ किसी से मिला या मिलाया हुआ। युक्त। सहित। जैसे—जीयुत्। २ जुड़ा या सटा हुआ।

पुं० प्राचीन काल की चार हाथ की एक नाव। २ एक योग जो चंद्रमा के पाप-ग्रह के साथ होने पर होता है। (कलित ज्योतिष)

दुत्क—दु०[सं० युत्+क]१. जोड़ा। युग्म। २ कपड़े आदि का भींचल। ३ सन्देह। शक। ४ किसी को अपना मित्र बनाना। मैत्रीकरण। ५ प्राचीन मात्र में एक प्रकार का पहलवा। ६. सूप के दोनो ओर के किनारे जो ऊपर उठे हुए होते हैं और पीछे के उठे हुए भाग से जोड़कर बाँधे रहते हैं।

दुत्ति—स्त्री०[सं० युः+मिस्त]१ एक चीज का दूसरी चीज के साथ मिलना, लगना या सटना। २ गणित में, दो या अधिक संख्याओं का जोड़। ३ वह स्थिति जिसमें दो ग्रह या दो नक्षत्र इतने आपस-पास या आग्नेय-सामने होते हैं कि दोनों एक जगह पड़ने लगते हैं। 'योग' से निम्न। जैसे—चंद्रमा और रोहिणी की युति।

२. युति दो बातों या वस्तुओं को युक्ततः एक दूसरी पर अवलम्बित या आश्रित हो। ३. ज्योतिष में, मिथुन राशि। ४. दे० 'युगलक'।

दुग्धक—दु०[सं० युग्+क]१. युग्म। जोड़ा। २. युगलक।

दुग्धक—दु०[सं० युग्+क] युग्म (उत्पत्ति)+क] एक साथ एक ही गर्भ से उत्पन्न होनेवाले दो जीव।

वि० (ऐसे दो) जो एक साथ उत्पन्न हुए हों।

दुग्ध-वर्षा (वर्षल)—वि०[सं० व० सं०,+अनिच्]१. जो स्वभावतः मिलता हो। मिलनशील। २. मैथुन करना जिसका वर्षं हो।

दुग्धल—दु० [सं० युग्+निच्+स्युद्+अन्] [यु० क्ठ० युग्मिष्ठ] १. १ दो चीजों को आपस में जोड़, बाँध या मिलकर एक साथ करने की क्रिया या भाव। (कर्पास्त्रिय) २ युग्म बनाने की क्रिया या भाव। (कौनजुगेशन)

दुग्ध-वन्ध—दु०[सं० व० सं०]१ कचनार का पेड़। २ भोजपत्र का पेड़। ३ छितवन। ४. ऐसा पेड़ जिसकी शाखा में आग्नेय-सामने चौ-दो पत्ते एक साथ होते हों। युग्मपर्ण।

दुग्ध-वर्ष—दु० [सं० व० सं०] १. लाल कचनार। २. छितवन। ३. दे० 'युग्मपर्ण'।

विद्योप—यहो की 'दुति' और 'दोग' का अन्तर जानने के लिए देखें 'योग' का विद्योप।

युद्ध—पुं० [सं०/युप् (प्रहार)+क्त] १. अस्त्र-दार्पण की सहायता से बाणू सैनिकों में होनेवाली लड़ाई। रण। सग्राम। २. किसी प्रकार के साधन से आगम में होनेवाली लड़ाई। जैसे—गदा-युद्ध, मृत्पि-युद्ध, वाक्-युद्ध।

युद्धा—युद्ध माईना= लड़ाई छेड़ना।

युद्धक—पुं० [सं० युद्ध+क] युद्ध। लड़ाई। जैसे—युद्धक विराम।
युद्धकारी (रिन्नु)—वि० [सं०] [स्त्री० युद्धकारिणी] जो किसी में युद्ध कर रहा हो अथवा किसी युद्ध में किसी पक्ष से सम्मिलित हो। युद्ध-रत। (वेदिकजट्ट)

युद्धमार्गव—पुं० [सं० मध्य० सं०] युद्ध के समय सैनिकों को उत्साहित करने के लिए गाये जानेवाले गीत।

युद्धनीत—पुं० [सं० व० सं०] वह बहुत बड़ा समुद्री जहाज जिसपर से सैनिक युद्ध करते हैं। (वारसिप)

युद्धप्राप्त—वि० [सं० सं० सं०] युद्ध या लड़ाई में पकड़ा या पाया हुआ। जैसे—युद्ध-प्राप्त सामग्री।
२. युद्धबंदी।

युद्धबंदी—पुं०=युद्धबंदी।
स्त्री० [सं०+फा०] युद्ध का बंद होना। लड़ाई बंदी।

युद्धभूमि—स्त्री० [सं० व० सं०] लड़ाई का मैदान। रणक्षेत्र।
युद्धभय—वि० [सं० युद्ध+भयट] १. युद्ध-सम्बन्धी। २. युद्ध-त्रिपय।

युद्धभाम—वि० [सं० युद्धभयान]=युद्धकारी जो किसी न किसी से प्रायः युद्ध करता रहता हो। युद्ध में रत रहनेवाला।

युद्धरथ—पुं० [सं० व० सं०] १. कार्तिकेय। स्कन्द। २. युद्धस्थल। रणक्षेत्र।

युद्धलिप्त—वि० [सं० सं० सं०] [माव० युद्धलिप्तता] (दल या राष्ट्र) जो सदा किसी न किसी दल या राष्ट्र के विषय युद्ध ठाने रहता हो। (वेदिकजट्ट)

युद्धबन्धी—पुं० [सं०] वह सैनिक जो युद्ध में जीतकर बंदी बना लिया गया हो। लड़ाई का कैदी। (मिजनर आफ वार)

युद्धविराम—पुं० [सं०] बलसा हुआ युद्ध इस उद्देश्य से रोकना कि दोनों पक्ष आपस में सखि की बात-चीत या शर्तें तै कर सकें। (सीध-झायर)

युद्धसन्नाह—पुं० [सं०]
युद्धसार—पुं० [सं० व० सं०] घोड़ा।

युद्धस्थान—पुं० [सं० व० सं०] निश्चित पक्षों का अनिश्चित काल के लिए युद्ध बंद करना जिसके फलस्वरूप उनमें समझौते की बात-चीत हो सके। (सीध-झायर)

युद्धधार्म्य—पुं० [सं० युद्ध-आचार्य, व० सं०] वह जो सैनिकों को युद्ध-विद्या की शिक्षा देता हो।

युद्धपरिष्कार—पुं० [सं० युद्ध-उपकरण, व० सं०] लड़ाई का सामान। जैसे—गोला, बारूद, टॉप-नटूक, तीर-कमान, डाल-सलवार, आदि।

युद्धोन्मत्त—वि० [सं० युद्ध-उन्मत्त, व० सं०] १. जो युद्ध करने के लिए

उतावला हो रहा हो। जिसके सिर पर युद्ध करने का मूत सवार हो। २. जो युद्ध कर रहा हो।

युधामित्यु—पुं० [सं०] १. केकय राजा के पुत्र का नाम। २. श्रीकृष्ण का एक पुत्र।

युधाम—पुं० [सं०/युष्+आनच्] १. योद्धा-जाति का व्यक्ति। योद्धा। २. दुश्मन। शत्रु।

युधामस्यु—पुं० [सं०] एक राजा। (महा०)
युधिष्ठिर—पुं० [सं० युधि-स्थिर+अनुक्, सं० सं०] हस्तिनापुर के राजा पांडु के सबसे बड़े पुत्र जो परम धर्म-परायण और सत्य तथा म्यायवाची थे। महाभारत के युद्ध के बाद से हस्तिनापुर के राजा बने थे। भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव इनके छोटे भाई थे।

युधम—पुं० [सं०/युष्+मक्] १. सग्राम। युद्ध। २. बन्धु। ३. बाण। ४. अस्त्र-यन्त्र। ५. योद्धा। ६. शत्रु।

युध्य—वि० [सं० योध्य] जिससे युद्ध किया जा सके। युद्ध के योग्य।
युधिष्ठिरी—स्त्री० [अ०] =विश्वविद्यालय।

युधु—पुं० [सं०/धा+यञ+ङ्] घोड़ा।
युधुसामान—वि० [सं०/युष्+सन् (द्विस्वदि+धानच्)] १. मिलन या संयोग चाहनेवाला। २. परस्परभावों में लीन होने की कामना रखने वाला। मोक्ष का अभिलाषी।

युधुस्ता—स्त्री० [सं०/युष्+सन्, द्विस्वदि+टाप्] १. युद्ध करने की प्रबल इच्छा। लड़ने की अभिलाषा। २. युधुमनी। शत्रुता। ३. वैर-विरोध।

युधुसु—वि० [सं०/युष्+सन्, द्विस्वदि] जिसके मन में युद्ध करने की इच्छा हो।
पुं० भूतराष्ट्र का एक पुत्र।

युधुधान—पुं० [सं०/युष्+आनच्, द्विस्वदि] १. डंड। २. योद्धा। ३. क्षत्रिय। ४. सात्यकि का एक नाम।

युरोप—पुं० [अ०] यूराल्पर्वतों के बीच महाद्वीपों में से एक जो एशिया के पश्चिम में काकेशस और यूराल पर्वतों के उस पार से आरम्भ होकर हंगेरी और तुर्तगाल तक विस्तृत है।
युरोपियन—वि० [अ०] युरोप का। युरोप सम्बन्धी।
पुं० युरोप का निवासी।

युवक—पुं० [सं० युवन्+कन्] नौजवान व्यक्ति विशेषतः १६ से ३५ वर्षों के बीच की अवस्था का व्यक्ति। जवान आदमी।

युवमंड—पुं० [सं० व० सं०+अच्] मुहूर्त।

युवजन—पुं० [सं०] युवकों और युवतियों का वर्ग, समाज या समूह। जैसे—देश का सारा अभिधम हमारे युवजनों पर ही अवलम्बित है।

युवसि—स्त्री० [सं० युवन्+सि]=युवकी।
युवती—वि० स्त्री० [सं०/यु+शतु+ङीप्] प्राप्त-यौवना। जवान (स्त्री)।

स्त्री० १. जवान स्त्री। २. प्रियमल्ला। ३. सोनजुही। ४. हलदी।

युवतीष्टा—स्त्री० [सं० युवनी+इष्टा, व० सं०] स्वयं-युविका। सोनजुही।

युवनाथ—पुं० [सं०] १. एक सूर्यवंशी राजा जो प्रसेनजित् का पुत्र था तथा माघाता का पिता था। २. रामायण के अनुसार धनुषार के पुत्र का नाम।

सुवराई—स्त्री० [हिं० सुवराज] सुवराज का पद या भाव ।
 पुं०=सुवराज ।
 सुवराज—पुं० [सं० कर्म० सं०, समासात् टच्] स्त्री० सुवराजी० वह सबसे बड़ा राजकुमार जो अपने पिता के राज्य का वास्तविक अधिकारी होता है ।
 सुवराज्य—पुं० [सं० सुवराज+त्य] सुवराज का भाव या धर्म । सुवराज्य ।
 सुवराज्यी—स्त्री० [सं० सुवराज+हिं० ई (प्रत्य०)] सुवराज का पद । सुवराज्य ।
 सूरा (सूनु)—वि० [सं०√यु (मिथय)+कनिन्] स्त्री० सुवती० जिसकी अवस्था सोलह से लेकर पैंतीस वर्ष के अंदर तक हो । जवान ।
 सुपारीय—वि० [सं० सुप्पय+ङ=ईय] सुम लोभो का ।
 सुं=अर्थ=यों ।
 सुक—पुं० [सं०√यु+कन्, दीर्घ] डील । बीलर ।
 सुका—स्त्री० [सं० सुक+टाप्] १ एक प्रकार का पुराना परिमाण जो एक वर का आठवीं भाग और एक लिखा का अठ्ठमांश होता था । २. सुं नाम का कीड़ा । ३. छटमल । ४. जजबाय । ५. बूलर ।
 सुलित—स्त्री० [सं०√यु+वितन्, नि० दीर्घ] मिलाने की क्रिया । मिथय । मेल ।
 सुलू—पुं० [सं०√यु+बल् नि० दीर्घ] १. एक स्थान पर एकदूठे होकर या मिलकर चरने, बूमने-फिरने वाले आदि पशुओं का समूह । २. मनुष्यों का जल्मा । ३. सैनिकों का दल । ४. फौज । सेना ।
 सुलूक—पुं० [सं० सुलू+कन्] दल । समूह ।
 सुलूक—पुं० [सं० सुलू+कन् (गति) ङ] चाक्षुष मन्वतर के एक प्रकार के देवता ।
 वि० सुलू या झुद मे चलने या रहनेवाला ।
 सुलू-नाथ—पुं० [सं० ष० तं०] १. सुलू का स्वामी । सरदार । २. सेनापति ।
 सुलूय—पुं० [सं० सुलू+या (राज्य) +क] १. सुलू का प्रधान सरदार । २. सेनापति ।
 सुलू-पति—पुं० [सं० ष० तं०] १. झुद या दल का नेता २ सेना नायक । सेनापति ।
 सुलूपात्र—पुं० [सं० सुलू+पात्र (रत्ना) +णिवृ+अणु] =सुलूपति ।
 सुलूका—स्त्री० [सं० सुलू+अन्=इक, टाप्] १. एक प्रसिद्ध पीथा जो लता के रूप में भी होता है और जिसके सकेय रंग के छोटे छोटे फूल बहुत ही सुगंधित होते हैं । जूही । २. उक्त पीथे या लता का फूल ।
 सुली—स्त्री० [सं० सुलू+अन्=अणु] सुलूका ।
 सुलूका—पुं० [?] गरी की लकी ।
 सुलूना—पुं० [अ० घोक आयोगिया] यूरोप का एक दक्षिणी राज्य जो प्राचीन काल में अपनी समृद्धता, शिल्प, कला, साहित्य, दर्शन आदि के लिए प्रसिद्ध था ।
 सुलूनामी—वि० [अ०] १. सुलूना देश से संबंध रखनेवाला । २. सुलूना देश में होनेवाला । सुलूना के लोगों का ।
 पुं० सुलूना का निवासी ।
 स्त्री० १. सुलूना की भाषा । २. सुलूना की एक प्रसिद्ध चिकित्सा-प्रणाली । स्त्रीनी ।

सुलियल—स्त्री० [अं०] वे० 'संघ' ।
 सुलिविद्विती—स्त्री० [अं०] =विद्विद्विद्यालय ।
 सुलूकान्—पुं० [अं०] बरती ।
 सुलू—पुं० [सं०√यु+प, दीर्घ] १. यज्ञ का वह लना जिसमे बलि-गुण गाँथा जाता है । २. वह स्तम्भ जो किसी विजय अथवा कीर्ति काधि की स्मृति में बनाया गया हो ।
 सुलूक—पुं० [सं० सुलू+क] १. सुलू । २. लकड़ियों के मेव या प्रकार ।
 सुलू-कण्ठ—पुं० [सं० ष० तं०] सुलू में लगा रहनेवाला लोहे का कड़ा या छल्ला ।
 सुलू-कर्ष—पुं० [सं० ष० तं०] यज्ञ के सुलू का वह भाग जो बो से अभिषिक्त किया जाता था ।
 सुलूहु—पुं० [सं० ष० तं०] खर (वृत्त) ।
 सुलू-ज्वल—पुं० [सं० ष० तं०] यज्ञ ।
 सुलूया—पुं० [सं० सुलू-याग] सुलू-संबन्धी कोई वस्तु ।
 सुलूया—पुं० [सं० धृत्] जुआ । धृत कर्म ।
 सुलूहृति—स्त्री० [सं० सुलू-आहृति ष० तं०] यज्ञ के सुलू की स्थापना के समय का एक उत्सव जिसमे सुलू के उद्देश्य से आहुति दी जाती थी ।
 सुलूय—पुं० [सं० सुलू+यत्] पलास ।
 सुलूया—पुं०=यूरोप ।
 सुलूराज—पुं० १ एक बहुत बड़ा पहलू जो एशिया और यूरोप के बीच में है । २ उक्त पर्वत के आस-पास का प्रदेश ।
 स्त्री० उक्त पर्वत से निकलनेवाली एक नदी ।
 सुलूरस—पुं० [धी०] १ एक धीक देवता । २ हमारे सौर जगत का एक ग्रह ।
 सुलूरेणिस—पुं० [अं०] शुभ्र धातु-रस्य जो पानी से १८७ गुना भारी होता है तथा जो आभ्यिक शक्ति के उत्पादन में काम आता है ।
 सुलूरेणिस—पुं० [अं० यूरोप+एशिया] वह जिसके माता पिता में से कोई एक यूरोप का और दूसरा एशिया का हो ।
 सुलूरीय—पुं०=यूरोप ।
 सुलूरीयीय—वि० [अं० यूरोप+हिं० ईय (प्रत्य०)] यूरोप संबंधी । यूरोप का ।
 सुलू—पुं० [सं०√यु (हृया) +क] १. पकाई हुई दाल का जूस या रस । २. शहदूत का पेड़ ।
 सुलूफ—पुं० [अं० सुलूफ] धातुक जिन्की के एक पुत्र जिनकी गिनती पैगम्बरों में होती है । ये बहुत ही सुन्दर थे अत इध्यावश इन्हे भाइयों ने वास बनाकर बेच दिया था ।
 सुलूह—पुं०=सुध ।
 सु—सर्व० [‘यह’ का बहु०] निर्दिष्ट समीपस्थ वस्तुएँ या व्यक्ति ।
 वि० बी या अधिक समीपस्थ वस्तुओं, व्यक्तियों आदि का बोध कराते के लिए प्रयुक्त होनेवाला विशेषण । जैसे—ये लोग ।
 सुई—वि० सर्व०=यही ।
 सुई-अध्य० [हिं० सुे+क (प्रत्य०)] यह भी ।
 सुैती—पुं० [ने०] एक प्रकार का कल्पित जन्तु जिसके अस्तित्व का अभी तक पता नहीं चला है । यह बहुत ही मोघण और विचाल माना जाता है, और आजकल हिम मानव के नाम से प्रसिद्ध है ।

केशी—वि०=एतौ (इतना) ।

केन—सर्व० [स०] जिससे ।

कह—केश-केश-प्रकारेण=किसी न किन्सी प्रकार । जैसे हो सके, बैसे ।
 पू० [आ०] एक प्रकार का जापानी सिक्का ।

केवल—पु० [स०] श्रीमता। खाना ।

केवुं—सर्व०=यह ।

केवुं—अव्य० [वि० यह+ह] यह भी ।

कैं—अव्य० [स० एवमेव, प्रा० एमेव, अय० एणि] ? इस तरह से ।
 इस प्रकार । इस भाँति । जैसे—यों काम न चलेगा ।

२ साधारण अवस्था या रूप में । जैसे—यों देलने में यह सफेद ही
 भावूम होता है ।

कैंही—अव्य० [हि० यो+ही] १. इसी डग, तरह या प्रकार से । इसी
 भाँति । २ बिना किसी आवश्यक या प्रयोजन के । निरर्थक । ध्व्यं ।
 जैसे—यह कोठरी यो-ही बंद कर दी गई है ।

कौं—सर्व०=यह ।

कोपस्य—वि० [स० √युञ्ज् (जोड़ना)+तन्वत्] ? युक्त किये जाने
 अथवा जोड़े जाने के योग्य । २ नियुक्त किये जाने के योग्य ।

कोपका (कौं)—वि० [स० √युञ्ज्+त्प्] ? जोड़ने, मिलाने या बँधने
 वाला । २ उमाड़नेवाला । उत्सवक ।
 पू० गाथीवाला ।

कोपक—पु० [स० √युञ्ज्+ट्टन्] ? रस्सी । २. वह रस्सी जिससे गाड़ी
 का बल जुए में बँधा हो । ३ रस्सी बँधने का पेश या औजार ।

कोपंचर—पु० [स० योग्य+चू (धारण)+त्वत्, मुञ् आगम] ? अरुच
 घोषण का एक प्राचीन यंत्र । २ पीतल ।

कोष—पु० [स० √युञ्ज्+त्प्] ? दो अथवा अधिक पदार्थों का एक में
 मिलना अथवा उन्हें एक में मिलाना । मिलाप । मेल । २ एक में
 मिले हुए होने की अवस्था या भाव । मिलन । संयोग । ३ दो या
 अधिक चीजों या बातों का आपस में होनेवाला सम्पर्क या संबंध ।
 लगाव । ४ आरम-तत्त्व का चिह्नन करते हुए ईश्वर या परमात्मा के
 साथ मिलकर एक होना । ५ उक्त प्रकार की साधना के उपाय,
 प्राचीन, स्वरूप आदि बतलानेवाला शास्त्र । विशेष ३० 'योग शास्त्र' ।

६ तपस्या । ७ ध्यान । ८ आराम में होनेवाला प्रेम और सद्भाव ।
 ९ किसी चीज या बात का किया जानेवाला उपयोग प्रयोग, या व्यवहार ।

१०. उपयुक्त होने की अवस्था या भाव । उपयुक्तता । ११ नवीला ।
 परिधामा । १२ धन और सम्पत्ति प्राप्त करना तथा बढ़ाना । १३ धन-
 सम्पत्ति । दौलत । १४ आमदनी । आय । १५ नका । लाभ ।

१६ उपाय । तरकीब । युक्ति । १७ किसी काम या बात के लिए
 मिलनेवाला उपयुक्त समय या सुभीता । १८ दर्शनकार पतञ्जलि के
 अनुसार चित्त की वृत्तियों को बचल होने से रोकना । मन को ईश्वर-
 उपर भटकने न देना और आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए उसे
 एकाग्र करना ।

विशेष—महर्षि पतञ्जलि का मत है कि अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष
 और अविनिवेश्ये ये पाँच प्रकार के क्लेश, मनुष्यों को जीवन-मरण के चक्र
 में फँसाए रखते हैं और बहु योग की साधना करके ही इन क्लेशों से
 बचकर ईश्वर में मिल अथवा मोक्ष प्राप्त कर सकता है । उसे सत्ता

से विरक्त होकर प्राणायामपूर्वक ईश्वर का ध्यान करना चाहिए
 और समाधि लगानी चाहिए । यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार,
 धारणा, ध्यान और समाधि ये योग के आठ अंग कहे गये हैं । यह भी
 कहा गया है कि योग के द्वारा साक्ष अविद्या, महिमा, परिचा, लक्षिमा
 आदि आठ प्रकार की विभूतियों या सिद्धियों (३० 'सिद्धि') की प्राप्ति
 कर सकता है, और अंत में मुक्ति या कैवल्य प्राप्त कर लेता है ।

१९ गणित में, दो या अधिक राशियों अथवा सत्त्वों का जोड़ ।
 २० किसी काम या बात के लिए आया हुआ अच्छा अवसर या शुभ
 काल । २१. फलित ज्योतिष में 'कुछ' विशिष्ट काल या अवसर
 जो सूर्य और चंद्रमा के कुछ विशिष्ट स्थानों में आने के कारण होते हैं
 और जिनकी सख्या २७ है । २२ फलित ज्योतिष के अनुसार, कुछ
 विशिष्ट तिथियों, वारों और नक्षत्रों आदि का एक साथ या किसी
 निश्चित नियम के अनुसार पड़ना । २३ फलित ज्योतिष में, किसी
 एक राशि में कई ग्रहों या आकाशस्थ पिंडों का एक साथ बहुत
 पास-पास आकर स्थित होना । (कंजकनकन आफ स्टार्स) जैसे—
 अष्टग्रही योग ।

विशेष—ग्रहों की युति और योग में यह अंतर है कि युति तो उस दशा
 में मानी जाती है जब एक से अधिक ग्रह एक ही राशि में एक ही दिशा
 में एकत्र होते हैं, अपर्याप्त्युति पर से एक ही चरत्ल या तीर्थ में कहीं
 देते हैं, पर ग्रहों का योग उस दशा में माना जाता है जब वे एकत्र
 एक ही राशि में होते हैं पर उनकी क्रान्तियाँ अलग अलग
 होती हैं, अपर्यान् वे भिन्न भिन्न चरत्लों पर होते हैं । २४ छः
 शास्त्र में एक प्रकार का छद्म जिसके प्रत्येक चरण में १२, ८ के विश्राय
 से २० मार्गों और अन्त में गणन होता है । २५. शैवक में कुछ
 विशिष्ट किनायों अथवा प्रकारों से एक में मिलाई हुई अनेक
 औषधियाँ । औषध । २६ बहु उपाय जिसके द्वारा किंगों को अपने बस
 में किया जाय । वाक्यकरण । २७ साम, दाम, दण्ड और भेद ये चारों
 उपाय । २८. कायिका । निगम । २९ काम करने का कोशल या
 चानुरी । होशियारी । ३० छल । धोखा । ३१ चर-
 बाज । धोबेबाज । घूर्त । ३२ चर । दूत । ३३ गाड़ी, नाव
 आदि सवारीयों । यान । ३४. नाना सत्ता । ३५ न्यायशास्त्र
 का ज्ञाना । नैयायिक । ३६ अरुच, शास्त्र आदि धारण करने युक्त
 के लिए सुसज्जित होना । ३७ पैसा । वृत्ति । ३८ शब्द की
 निश्चित या व्युत्पत्ति । शब्दार्थ (रुद्रि से मिश्र) । ३९ किसी
 सौर जगत् का प्रयाण या मुख्य ग्रह । ४० ईश्वर । परमात्मा ।

योग-अभि—स्त्री० [स० योग-अभि=योगानि, मध्य० सं०] योग और
 साधना मार्ग में, वह अभि या अवला जो साक्ष अपने शरीर को ऊँहाकर
 मरने के लिए अपने अन्तर से उत्पन्न करता है । उदा०—अस कष्टि
 योग अभिनि तन जारा भयउ सकल मख हाहकारा ।—सुलसी ।

योग-शेष—पु० [स० इ० सं०] १. जो वस्तु अपने पास न हो उसे प्राप्त
 करना और जो मित्र चुकी ही, उसकी रक्षा करना । २ जीवन
 बिताना । गुजारा करना । ३ कुशल-मगल । शैरियत । ४ दूसरे
 की सम्पत्ति आदि की रक्षा । ५. गुप्तकार । लाभ । ६. राष्ट्र की शान्ति
 और सुख्यवस्था । ७. ऐसी वस्तु जो उत्तराधिकारियों में न बाँटी गई
 हो अथवा न बाँटी जाती हो ।

योग-बन्धु—पुं० [सं० ब० सं०] ब्राह्मण ।
योग-बन्ध—पुं० [सं० योग/बन्ध (गति) +ट, उप० सं०] हनुमान् ।
योग-बन्धु—पुं० [सं० योग/बन्धु (उत्पत्ति) +इ, उप० सं०] १ योग साधन की वह अवस्था; जिसमें योगी में अलौकिक वस्तुओं को प्रत्यक्ष कर दिखलाने की शक्ति आ जाती है।
वि० योग से उत्पन्न या प्राप्त होनेवाला ।
योग-कल—पुं० [सं० कर्म० सं०] वह अक्ष या फल जो दो अंको की जोड़ने से प्राप्त हो। जोड़। योग ।
योग-सारा—पुं० [सं० उपनिषत् ० ?] जिसमें नक्षत्र का प्रधान तारा ।
योग-सूत्र—पुं० [सं० ष० तं०] योग का धर्म या प्रभाव ।
योग-सूत्र—पुं० [सं० मयू० सं०] महर्षि पतञ्जलि कृत 'योग-सूत्र' नामक प्रसिद्ध दर्शन-ग्रन्थ जो हमारे यहाँ के छ दर्शनों में से एक है ।
विशेष—यह समाधि, साधन, विभूति और कौन्स्य नामक चार पदों या भागों में विभक्त है । इसमें योग अर्थात् ईश्वर-प्राप्ति के उद्देश्य, लक्षण तथा साधन के उपाय या प्रकार बतलाये गये हैं । और उसके भिन्न-भिन्न अंगों का विवेचन किया गया है । इसमें चित्त की भूमियों या भूमितियों का भी विवेचन है । इस योग-सूत्र का प्राचीनतम माध्य वेद-व्यास का है जिस पर बाचस्पति का वादिक भी है ।
योग-दान—पुं० [सं० पु० तं०] १. किसी को सहायता देना । (किसी का) हाथ बढ़ाना । २ योग की दौहा । ३ कण्ट-भाव से किया हुआ दान ।
योग-द्वारा—स्त्री० [सं० ष० तं०] ब्रह्मपुत्र की एक सहायक नदी ।
योग-न्या—पुं० [सं० ष० तं०] शिव ।
योग-निद्रा—स्त्री० [सं० मयू० सं०] १. पुराणानुसार प्रत्येक युग के अंत में होनेवाली विष्णु की निद्रा । २ योग-साधन में लगनेवाली समाधि । ३ रणक्षेत्र में बीरों की होनेवाली मृत्यु ।
योग-पट्ट—पुं० [सं० ष० तं०] १ प्राचीन काल का एक प्रकार का पहनावा जो पीठ पर से लेकर, कमर में बाँधा जाता था और जिसमें घुटनों तक के अंग ढके रहते थे । २ माधुओं का अँधला ।
योग-पति—पुं० [सं० ष० तं०] १ विष्णु । २ शिव ।
योग-पदक—पुं० [सं० ष० तं०] युद्ध आदि के समय ओढ़ा जानेवाला एक तरह का चार अंगुल चौड़ा उत्तरीय ।
योग-पदा—पुं० [सं० ष० तं०] ऐसा कृत्य जिससे अमीष्ट की प्राप्ति होती हो। (अन) ।
योग-पारंग—पुं० [सं० सं० तं०] शिव ।
वि० जो योग-साधन में प्रवीण हो ।
योग-पीठ—पुं० [सं० ष० तं०] देवताओं का योगासन ।
योग-कल—पुं० [सं० ष० तं०] दो या अधिक संख्याओं का जोड़ ।
योग-सं—पुं० [सं० मयू० सं०] योग से प्राप्त होनेवाला तेज या शक्ति ।
योग-सं—वि० [सं० ष० तं०] जिसकी योग की साधना चित्त-विशेष आदि के कारण पूरी न हो सकी हो या बीच में ही संकटित हो गई हो । योग-मार्ग से च्युत ।
योगमय—पुं० [सं० योग । मयट] विष्णु ।
योग-माला—पुं०—स्त्री० [सं० ष० तं०] १ बुर्गा । २ पीबरी ।
योग-माया—स्त्री० [सं० मयू० सं०] १. दार्शनिक और धार्मिक क्षेत्रों में ईश्वर या ब्रह्म की वह माया जिससे तान, गुण और रूप से युक्त यह सारी

सृष्टि बनी है और जिसके अन्तर ईश्वर या ब्रह्म का तत्त्व छिपा हुआ ब्याप्त है । २ पुराणानुसार पृथिवी के गर्भ से उत्पन्न वह कन्या जिसे वसुदेव के जाकर देवकी के पास रज आये थे और जिसके बड़े में श्रीकृष्ण को उठा लाये थे । कस में इसी को देवकी की सतान समझकर जमीन पर पटककर मार डालना चाहता था, और यही अष्टभुजा देवी का रूप धारण करके कंस को बेतावनी देती हुई ऊपर उठकर आकाश में विठौनी हुई गई थी ।

योग-भूति—पुं० [सं० ष० तं०] १ शिव । २ पितरो का एक गण या वर्ग ।
योग-यात्रा—स्त्री० [सं० मयू० सं०] फलिप्त ज्योतिष के अनुसार वह योग जो यात्रा के लिए उपयुक्त हो ।

योग-योगी—पुं० [सं० मयू० सं०] वह योगी जो योगासन लगाकर बैठता हो ।

योग-रंग—पुं० [सं० ब० सं०] नारंगी ।
योग-रच—पुं० [सं० ष० तं०] योग साधन का उपाय या मार्ग ।
योग-राज-गुण—पुं० [सं० मयू० सं०] ओषधियों के योग से बना हुआ एक प्रसिद्ध औषध जिसमें गुणल प्रभाव है । (दूधक)
योग-रक्षि—स्त्री० [सं० मयू० सं०] दो शब्दों के योग से बना हुआ वह शब्द जो अपना सामान्य अर्थ छोड़कर कोई विशेष अर्थ बतावे ।
योग-रौबना—स्त्री० [सं० मयू० सं०] इद्रजाल करनेवालों का एक प्रकार का लेप ।

योगबान्—पुं० [सं० योग + मत्पु] [स्त्री० योगवती] योगी ।
योग-वासिष्ठ—पुं० [सं० मयू० सं०] वेदात्ताचार्य का एक प्रसिद्ध ग्रंथ जो बसिष्ठ जो का बनाया कहा जाता है ।
योगबाह—पुं० [सं० योग/वह (ले जाना) +निवृ +अणु, उप० सं०] अनुस्वार और विसर्ग ।

योगबाही—पुं० [सं० योग/वह +गिति] वह माध्यम जिसमें औषध आदि मिलाकर खाई जाती हो । जैसे—तुलसी या पान को पत्तों का रस, साहूद आदि ।

योग-बिषय—पुं० [सं० पु० तं०] धोले या वेईमानी के द्वारा होनेवाली विष्णु ।

योगविष्—पुं० [सं० योग/विद् (ज्ञान) +निवृ] १ योग शास्त्र का ज्ञान । २ वह जो ओषधियों के योग से द्रव्य प्रस्तुत करना जानता हो । दकार्य बनानेवाला । ३ जादूगर । ४. शिव ।

योग-विद्या—स्त्री० [सं० ष० तं०] १ वह विद्या या शास्त्र जिसमें योग सम्बन्धी क्रियाओं का विवेचन होता है । २. दे० 'योगदर्शन' ।

योग-वृत्ति—स्त्री० [सं० मयू० सं०] चित्त की वह शुद्ध और शुभ वृत्ति जो योग के द्वारा प्राप्त होती है ।

योग-संश्लि—स्त्री० [सं० मयू० सं०] १ योग के द्वारा प्राप्त होनेवाली शक्ति । २ साहित्य में योग शब्द (देवें) का अर्थ प्रकट करनेवाली शक्ति ।

योग-संश्लि—पुं० [सं० मयू० सं०] ऐसा शब्द जिसका प्रचलित या माध्यम अर्थ ध्वन्यति से प्रकट तथा स्पष्ट होता है ।

योग-सारी—पुं० [सं० ष० तं०] योगी ।
योग-सारा—पुं० [सं० ष० तं० या मयू० सं०] १. दे० 'योग-सारा' । २. दे० 'योग-दर्शन' ।

योग-शास्त्री (स्त्रिभू.)— $यु०$ [सं० योगशास्त्र+इति] योगशास्त्र का शास्त्र।

योग-शास्त्रा—स्त्री० [सं० ष० तं०] एक उपनिषद्।

योग-सत्सिद्धि—स्त्री० [सं० ष० तं०] योग-सिद्धि।

योग-सत्य—पुं० [सं० तु० तं०] किसी प्रकार के योग के फलस्वरूप प्राप्त होनेवाला नाम। जैसे—**ब्रह्म** का योग होने पर '**ब्रह्मी**' योग-सत्य होता है।

योग-सार—पुं० [सं० ष० तं०] १. योगमुक्त तथा स्वस्थ करनेवाला उपचार या उपाय। २. सत्यता।

योग-सिद्ध—पुं० [सं० तु० तं०] वह जिसने योग की सिद्धि प्राप्त कर ली हो। सिद्ध योगी।

योग-सिद्धि—स्त्री० [सं० ष० तं०] १. योग का साधन। २. वह अवस्था जिसमें योग साधन करनेवाला अपने किसी ब्यापार द्वारा अभीष्ट सिद्ध करता है।

योग-सूत्र—पुं० [सं० मध्य० सं०] =योग-दर्शन।

योगिन—पुं० [सं० योग-अण, ष० तं०] योग के निम्न आठ अंगों में से हर एक—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।

योगीजन—पुं० [सं० योग-अजन, मध्य० सं०] १. आत्मी का एक प्रकार का अजन या प्रह्लेख जिसकी आँखों में लगाने से अनेक रोग दूर होते हैं। २. दे० 'सिद्धजन्म'।

योगीश्वर—पुं० [सं० योग-अश्वर, ष० तं०] योग में विष्व्व शालनेवाली आश्वर आदि दस बाते।

योगीश—स्त्री० [सं० योग-अंत, ष० सं०-टापु] नृप की एक मति जिसका भागकाल आठ दिनों का होता है तथा जो मूल, पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा नक्षत्रों को त्रांत करती है।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० योग-आश्वर्य, ष० तं०?] वह शक्ति जिससे परमात्मा परस्पर जुड़े हुए तथा अविभाज्य माने जाते हैं।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० योग-आश्वर्य, मध्य० सं०] योग-दर्शन।

योगीश्वर—पुं० [सं० योग-आश्वर, ष० तं०] १. योग का आचरण।

२. बौद्धों का एक सम्प्रदाय जो महायान की दो शाखाओं में से एक है तथा जिसका मत है कि पदार्थ जो दिखाई पड़ते हैं, वे धृष्य हैं।

योगीश्वर (स्वभू.)—पुं० [सं० योग-आश्वर्य, ष० सं०] योगी।

योगानुशासन—पुं० [सं० योग-अनुशासन, मध्य० सं०] योग-दर्शन।

योगाभ्यास—पुं० [सं० योग-अभ्यास, ष० तं०] योगशास्त्र के अनुसार योग के आठ अंगों का अनुष्ठान या साधन।

योगाभ्यासी (स्त्रिभू.)—पुं० [सं० योगाभ्यास+इति] योग की साधना करनेवाला योगी।

योगारंभ—पुं० [सं० योग-आरंभ, तु० तं०] मारणी।

योगारम्भ—पुं० [सं० योग-आरम्भ, ष० तं०] योग की क्रियाओं का आरम्भ करना। योगसाधन।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० ङि० तं०] वह योगी जिसने इन्द्रिय-मुक्त आदि की ओर से अपना चित्त हटाकर योगाभ्यास आरंभ कर दिया है।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० योग-आरंभ, ष० तं०] योग-साधन के लिए विहित आसन अर्थात् बैठने के उपाय या मुद्राएँ।

योगीश्वर्य—पुं० ङि० [सं० योग+इत्थत्] १. जिसपर योग का अभिचार हुआ हो या किया गया हो। २. मंत्र-मुख्य किया हुआ। ३. सम्मोहित किया हुआ। ४. पागल।

योगिता—स्त्री० [सं० योगीन्+तल्+टापु] योगी होने की अवस्था, धर्म या भाव।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० योगीन्+श्वर्य] =योगिता।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० ष० तं०] वंत्।

योगीश्वर्य—स्त्री० [सं० ष० तं०] योड़ी सी नींद। स्वप्नी।

योगिनी—स्त्री० [सं० √युज् (योग) +चिन्तु +ऋष्] १. योग की साधना करनेवाली स्त्री। योगाभ्यासिनी। २. एक प्रकार की देवियाँ जिनमें से चौमठ मुख्य मानी गई हैं। ३. एक विशिष्ट प्रकार की देवियाँ जिनकी सभ्यता आठ कही गई है। ४. एक प्रकार की पिशाचिनी। ५. जलपारणी। ६. आषाढ़। कृष्ण एकादशी। ७. पुराणानुसार एक लोक। ८. दे० 'योग-माया'।

योगिनीश्वर्य—पुं० [सं० मध्य० सं०] तत्र-शास्त्र में योगिनियों की स्थिति सूचित करनेवाला एक तरह का ऋक्। उक्त ऋक् से यह जाना जाता है कि योगिनियाँ किंचर या किस विद्या में हैं।

योगिनी—पुं० १. दे० 'योगी'। २. योगिया (राग)।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० ष० तं०] योगियों में श्रेष्ठ बहुत बड़ा योगी।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० योगीन्+इश्वर्य, सं० तं०] बहुत बड़ा योगी।

योगी (स्त्रिभू.)—पुं० [सं० √युज् +चिन्तु] १. बुद्ध, मुक्त आदि की समान भाव से प्रहृष्य करनेवाला व्यक्ति। आर्यमानी। २. वह जो योग की साधना करता हो। ३. महादेव। शिव।
वि० जुटा हुआ। सबहित।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० योगीनाथ] महादेव। शंकर।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० योगीन्+ईश्वर्य, ष० तं०] १. योगियों के स्वामी। २. बहुत बड़ा योगी। ३. शाश्वत्य का एक नाम।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० योगीन्+ईश्वर्य, ष० तं०] १. योगियों में श्रेष्ठ। २. महादेव। ३. शाश्वत्य का एक नाम।

योगीश्वर्य—स्त्री० [सं० योगीन्+ईश्वर्य, ष० तं०] दुर्गा।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० योग-इश्वर्य, ष० तं०] १. बहुत बड़ा योगी। २. वैद्यक में एक प्रकार का रसोपध।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० योग-ईश्वर्य, ष० तं०] =योगीश्वर्य।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० योग-ईश्वर्य, ष० तं०] १. परमेश्वर। २. महादेव। शिव। ३. श्रीकृष्ण। ४. एक प्राचीन तीर्थ। ५. बहुत बड़ा योगी।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० योगीश्वर्य+इश्वर्य] योगेश्वर का भाव या धर्म।

योगीश्वर्य—स्त्री० [सं० योग-ईश्वर्य, ष० तं०] १. दुर्गा। २. शक्तों की एक देवी जो दुर्गा का एक विशिष्ट रूप है। ३. कफाटकी।

योगीश्वर्य—पुं० [सं० योग-इश्वर्य, ष० तं०] सीता नामक धातु।

योगीश्वर्य—वि० [सं० √युज् +चिन्तु, यत् वे योगी यत्] भाव० योग्यता। १. जिसमें सोचने-विचारने तथा कुछ विधिपूर्वक रूप से कामों की सुचारु रूप से करने-थरने की महत्त्व समझना या क्रियाशीलता हो। काबिल। लायक। (एवले) २. विद्या समर्थ तथा धीमान्। ३. अनेक प्रकार की युक्तियाँ जानने और उनका उपयोग करनेवाला। ४. उचित। ठीक। मुनासिब। ५. जो किसी कार्य में, पद आदि के लिए

उपयुक्त हो। पात्र। ६. (युधि) जो जीतने के लिए उपयुक्त हो। ७. योग करने अर्थात् जीड़नेवाला। ८. दर्शनीय। सुन्दर। ९. आदर्शयोग। मान्य।

१०. पुष्प मलय। २. ऋद्धि नामक बोधिधि। ३. गांधी, ऊकडा, रूब, आदि सबारियाँ। ४. चन्दन।

योग्यता—स्त्री० [सं० योग्य+तल्+टाप्] ? योग्य होने की अवस्था, वर्ण या भाव। २. बुद्धिमत्ता, विद्वता या और कोई ऐसा गुण या सामर्थ्य जिससे कोई व्यक्ति किसी काम, पद या बात के लिए उपयुक्त सिद्ध हो सके। काबिलीयत। ३. बहूपन्न। महत्ता। ४. जीकात। दक्षित। सामर्थ्य। ५. अनुकूल या उपयुक्त होने की अवस्था या भाव। ६. गुण। सिफल। ७. इज्जत। प्रतिष्ठा। ८. साहित्य में, अर्थ-बोध के विचार से वाक्य के तीन गुणों में से एक गुण जिसका अस्तित्व उस दशा में माना जाता है, जिसमें वाक्य के अर्थ या आशय की ठीक संतति बैठती है अथवा उसका आशय उपयुक्त अथवा सम्यक् जान पड़ता है।

योग्यत्व—पुं० [सं० योग्य+त्व]=योग्यता।
योग्या—स्त्री० [सं० योग्य+टाप्] ? कोई काम करने का अभ्यास। मरक। २. सूर्य की स्त्री। ३. स्त्री।

योग्यक—वि० [सं०/युच्+णिच्+भृल्+अक्] जोड़ने या मिलानेवाला। पुं० मूढमध्यम्य।

योग्यन्—पुं० [सं०/युच्+णिच्+त्पृच्+अन्] ? जोड़ने, मिलाने आदि की क्रिया या भाव। योग। २. ईश्वर। परमरामा। ३. बूटी नापने की एक पुरानी नाप जो किसी के मत से दो कोस की, किसी के मत से चार कोस की और किसी के मत से आठ कोस की होती थी।

योग्यमन्धा—स्त्री० [सं० ब० सं०, टाप्] ? व्यास की माता और शौतनु की भार्या सत्यवती का एक नाम। २. सीता। ३. कस्तुरी।

योग्यमन्धिका—स्त्री० [सं० योग्यमन्धा+क+टाप्+इत्] योग्यमन्धा।

योग्यमन्धी—स्त्री० [सं० ब० सं०, झीप्] मन्धी।

योग्यमन्धली—स्त्री० [सं० ब० सं०] मन्धी।

योग्या—स्त्री० [सं०/युच्+णिच्+अन्, टाप्] ? योग्य होना। मिलना। २. प्रयोग। व्यवहार। ३. किसी भारी कार्य के निष्पन्न करने का प्रस्तावित कार्य-धम। ऐसी रूप-रेखा जिसके अनुसार कार्य किया जाने को हो। (प्लींग) ४. बनाबट। रचना। ५. स्थिरता। ६. प्रवच।

योग्या-आयोग्या—पुं० [सं० प० तं०] बहु प्रशासकीय सत्त्वा जो राजकीय योजनाओं का सञ्चालन करती है। (प्लींग कमीशन)

योग्याम्य—पुं० [सं० योग्या-आलय, ष० तं०] बहु भवन जिसमें योजनाएँ बनाई जाती हैं।

योग्यनीय—वि० [सं०/युच्+अनीय] ? जो मिलाने के योग्य हो। २. जो जोड़ा या मिलाया जाने को हो। ३. जो किसी काम या बात में लगाये जाने के योग्य हो।

योग्यिका—स्त्री० [सं० योग्य+टाप्, इत्] लेखन शैली में विशिष्ट समस्त पदों के बीच में लगाया जानेवाला चिह्न। (हाइड्रन) जैसे—जीवन-ज्योति, पति-पत्नी आदि में का चिह्न।

योग्यित—पुं० ङ० [सं०/युच्+णिच्+त्] ? जिसकी योजना की गई

हो। २. योजना के रूप में लाया हुआ। ३. जोड़ा या मिलाया हुआ। ४. किसी काम या बात में लगाया हुआ। ५. बनाया या रचा हुआ। रचित। ६. नियमों आदि से बँधा हुआ। नियमबद्ध।

योगी (विच्)—पुं० [सं०/युच्+णिच्] बहु तत्त्व या पदार्थ जो दो या अधिक अन्य तत्त्वों या पदार्थों को मिलाता हो। वि० मिलानेवाला। (कनेक्टिब्)

योग्य—वि० [सं०/युच्+णिच्+अन्] ? जोड़े या मिलाये जाने के योग्य। २. व्यवहार में लाये जाने के योग्य। पुं० मिलानेवाला। (कनेक्टिब्)

योग्य—पुं० [सं० यु (निश्चय) +भृन्] बहु रस्ती जिससे बैल की गरदन में जुआ बाँधा जाता है। जेत।

योग्य—वि० [सं०/युच् (प्रहार) +तव्य] जिसमें युद्ध करना हो या युद्ध किया जाने को हो।

योद्धा (ङ्)—पुं० [सं० युध+युच्] बहु जो युद्ध करता हो। युद्ध करने-वाला सिपाही या सैनिक। (आरियर)

योध—पुं० [सं०/युध+अच्] योद्धा। सिपाही।

योधक—पुं० [सं०/युध+भृन्+अक्] योद्धा। सिपाही।

योधक—पुं० [सं०/युध+भृन्+अन्] ? युद्ध की सामग्री। लड़ाई का सामान। २. युद्ध। लड़ाई।

योधा—पुं०=योद्धा।

योधि-वन्—पुं० [सं० प० तं० सं०] एक प्राचीन जंगल या बन।

योधी (विच्)—पुं० [सं०/युध+णिच्] योद्धा। वीर।

योध्य—वि० [सं०/युच्+भ्यत्] ? जिसके साथ युद्ध किया जा सके। २. (कार्य या बात) जिसे आधार या कारण मानकर युद्ध करता हो।

योल—पुं० [सं० यव-नाल, ब० सं०, पृषो० सिद्धि] ज्वार या मक्का नामक अन्न। यवनाल।

योनि—स्त्री० [सं०/यु (निश्चय) +नि] ? स्त्री को जननेत्रिय। गर्भ-वाय और भ्रम। २. स्त्री जाति के जीवों, पदार्थों आदि का वह अंग जिससे वे अपना बँस बढ़ाने के लिए अपने ही वर्ग के अन्य जीव, पदार्थ आदि उत्पन्न करते हैं। ३. देह। शरीर। ४. उक्त के आधार पर जीवों, पदार्थों आदि के अलग अलग वर्ग या विभाग। जैसे—पशियों, पक्षियों, मनुष्यों या बुधों की योनि में अन्व लेना।

योनि—हमारे यहाँ के पुराणों में कुल चौरासी लाख योनियाँ कही गई हैं। जैसे मनुष्यों की चार लाख, पक्षियों की तीन लाख, पशुओं की दस लाख, कीड़े मकोड़ों की ग्यारह लाख आदि आदि।

५. वह जिससे कोई वस्तु उत्पन्न हो। उत्पादक-कारण। ६. जन्म। ७. उत्पत्ति या उद्गम का स्थान। ८. आकर। ९. जल। १०. योनि। ११. अतःकरण। १२. पुराणा-नुसार कुल ४१० की एक नदी।

योनि-संघ—पुं० [सं० सं० तं०] योनि में होनेवाली एक तरह की गोंड चिह्नों से भाव या रसक बहुता रहता है।

योनि—वि० [सं० योनि+हिं० क (प्रथम)] ? योनि-संबन्धी। योनि। २. जिसमें योनि अर्थात् स्त्री-मुख या पति-पत्नीवाले सम्बन्ध की कोई बात हो (सेक्सी)

योगिन—वि० [म० योनि/वृत्त (उत्पत्ति)+इ] जिसने योनि से जन्म लिया हुआ हो। अर्द्धन से निष्पन्न।

पु० योनि से उत्पन्न जीव वा प्राणी।

योगि-नेत्रता—पु० [म० ब० म०] पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र।

योगि-शोष—पु० [म० ष० तं०] उपपन्नरोग। गरमी। आत-शक।

योगि-कृष्ण—पु० [म० योनि-हि० कृष्ण] योनि के अन्दर की वह गाँठ जिसके ऊपर एक छेद होता है।

योगि-श्लेष्म—पु० [स० ष० तं०] योनि का एक रोग जिसमें गर्भाशय अपने स्थान से कुछ हट जाता है।

योगि-मूत्रस्त—वि० [स० प० तं०] जो किसी योनि में न ही अर्थात् जो जन्म-मरण के बंधनों से मुक्ति पा चुका हो।

योगि-मूत्रा—स्त्री० [स० मध्य०] तांत्रिक पूजन आदि के समय उर्ध्व-लियां से बनाई जानेवाली योनि की आकृति।

योगि-वज्र—पु० [स० मध्य० स०] कामाक्ष्या, गया आदि कुछ विशिष्ट तीर्थ स्थानों में बना हुआ एक प्रकार का बहुत ही सकीर्ण मार्ग, जिसमें होकर निकलने पर मोक्ष की प्राप्ति मानी जाती है।

योगि-वाद—पु० [स० ष० तं०] प्राचीन भारत में एक नास्तिक दार्शनिक मतदाय।

योगिवादी (विष्णु)—वि० [म० योगिवाद/द्वि] योगिवाद-मन्थी। योगिवाद का।

पु० योगिवाद का अनुयायी व्यक्ति।

योगि-शूल—पु० [स० ष० तं०] योनि में होनेवाली पीड़ा।

योगिशूलघ्नी—स्त्री० [म० योगिशूल/हृत् (हिम्मा)+ट्/घ्नी] धनुमुष्पा।

योगि-सकर—पु० [स० पु० तं०] वर्ण-सकर।

योगि-सकीर्षण—पु० [स० ष० तं०] योनि को निकोड़ने की क्रिया। २ ऐसी दवा जिसके प्रयोग से योनि का मुख छोटा हो जाता या निकुड़ जाता हो।

योगि-समक्ष—वि० [स० योगि-सम/मू (होना)+अप्, उप० स०] जो योनि से उत्पन्न हुआ हो। योगिज।

योगि-सबरण—पु० [स० ष० तं०] स्त्रियों का एक प्रकार का रोग जिसमें गर्भाशय का द्वार एक जाता या बंद हो जाता है और जिससे दम पुटने के कारण अन्दर का बच्चा मर जाता है।

योगि-शं—पु० [स० योनि-अशं, मध्य० स०] योनिक्वद। (दे०)

योगि-श—पु० [अ० योगि] १ दिन। रोज। २ तारीख। तिथि।

योगि-श—पु०—युरोप।

योगि-शियन—पु०—युरोपियन।

योगि-श—स्त्री० [स० वृ/स+टाप्/नारी] स्त्री। औरत।

योगि-श—स्त्री० [स० वृ/स+द्वि]—योगिणी।

योगि-श—स्त्री० [स० योगि-श+टाप्] स्त्री। नारी।

योगि-श—स्त्री० [स० ष० तं०] हलदी।

योगि-श—अव्य० दे० 'योगि'।

योगि-श—सर्व०—यह।

योगि-श—वि० [स० युक्ति+ट्/इ] युक्ति के रूप में होनेवाला।

युक्तिगत। युक्तियुक्त। ठीक। २ जो क्रीडा, विनोद आदि में साथ रहता हो। नमस्तथा। ३ क्रीडा। विनोद।

योगि-श—पु० [म० युग्धर। घञ्] अर्धों को विधास्त करने का एक प्रकार का अस्त्र।

योगि-श—पु० [स० युग्धर+फक्—आयन्] १ वह जो युग्धर के शोष में उत्पन्न हुआ हो। २ उपवन का एक मन्थी।

योगि—पु० [म० योगि-अण] योग-द्वयन का अनुयायी।

वि० योगि-सम्बन्धी। योग का।

योगि—वि० [स० योगि+कन्] योगि-सम्बन्धी। योग का।

योगि—वि० [म० योगि+ठञ्—इक] १ योग अर्थात् जोड़ से सबंध रखनेवाला। २ योग अथवा जोड़ के रूप में अथवा योग के फलस्वरूप होनेवाला। जैसे—योगिक पद।

पु० १ व्याकरण में प्रकृति और प्रत्यय में बना हुआ शब्द। २ शो अर्थों के योग या मेल से बना हुआ पद। ३ छन्दशास्त्र में, अट्टाहास मात्राओं वाले छंदों की सजा।

योगि—वि० [म० योगि+ठञ्—इक] १ योगिन-सम्बन्धी। योगिन का। २ एक योगिन तक जानेवाला।

योगि—पु० [स० युक्त+अप्] योतुक। दहेज।

योगि—पु० [स० योतु+कण्] १ विवाह के समय का मिला हुआ धन। दहेज। २ श्वशुर। ३ उपहार।

योगि—वि० [म० युव+अक्—इक] १ युव-सम्बन्धी। समह का। २ युव या सड़ में रहनेवाला (जीव वा प्राणी)।

योगि—स्त्री० [स० युव से] वैष्णव भक्तों के अनुयायी ऐसी गणियों का वर्ग जो किसी समय च्छिन्-मुनियों के रूप में रहकर तपस्या कर चुकी थी, और उसके फलस्वरूप अब श्रीकृष्ण के निरत्य साथ रहकर लीला करती है।

योगि—वि० [म० युव+अक्—इक] युव-सम्बन्धी।

योगि—पु० [म० योगि+ठञ्—इक] १ योनि। २ युधिष्ठिर के एक पुत्र का नाम। ३ प्राचीन भारत की एक योद्धा ज्ञानि जो आधुनिक हरियाने के आस-पास रहती थी और जिसका उल्लेख पार्थिव तक में किया है। ४ उषन जाति के रहने का प्रदेश जो आज-कल के हरियाने के आस-पास था।

योगि—वि० [म० योनि+अप्] [भाव० योनिता] १ योनि-सम्बन्धी। २ पुष्ट और स्थिरों की जननेन्द्रिया में मजबूत रखनेवाला। जैसे—योनि विज्ञान, योनि समग्र आदि। ३ जिसमें योनि या स्त्रीनिग और पुंलिंग का मेल हो। जैसे—योनि वनस्ततिर्या या वेद-योगे। ४ उत्तराण्य की एक प्राचीन जाति जिसका उल्लेख महाभारत में है।

योगि—स्त्री० [स० योनि से] आधुनिक विज्ञान की वह शाखा या शास्त्र जिसमें इस बात का विश्लेषण होता है कि स्त्रियों और पुंशुओं की जननेन्द्रियों की कौनसी बनावट होती है, उनमें किस प्रकार योनि सम्बन्ध तथा गर्भाशय होता है आदि आदि। (नेत्रसालाजी)

योगि—स्त्री० [स० योनि+तल्—टाप्] १ योनि होने की अवस्था या भाव। योनिभाव। २ स्त्री और पुंशु या नर और मादा के स्वतन्त्र अस्तित्व की धारणा या भाव। लिगिता। (सेषमुपलब्धी)

योगि-श—स्त्री० [म० कर्म० स०] आधुनिक मनोविज्ञान में काम-

वासना की वृत्ति के लिए उत्सव होनेवाली वह विकृत स्थिति जो स्वाभाविक संभोग से भिन्न और उसके विपरीत हो। जैसे—आभरति, सम-छिन्नी रति, अय्य जातियों या बर्णों के जीव-जंतुओं के साथ की जानेवाली रति।

शौच-विज्ञान—पू० [स० कर्म० सं०] = पीनिकी।

शौच—पू० [स० युवती + अण्, पूर्वभाषा] १ युवती स्त्रियों का समूह।

२ लक्ष्य मूल्य का एक भेद जिसमें स्त्रियाँ सामूहिक रूप से नाचती हैं।

शौचतेय—पू० [स० युवती + डक = एय] युवती स्त्री का पुत्र या मतान।

शौचन—पू० [स० युवन + अण्] १ युवा या युवनी होने की अवस्था या भाव। २ अवस्था का वह मध्य भाग जो बाल्यावस्था के उपरान्त आरम्भ होता है, और जिसकी समाप्ति पर बुढ़ावस्था आती है।

जवानी। ३ किसी तत्त्व या वस्तु की वह अवस्था जिसमें वह अपने पूरे

बीज, और या बाढ़ पर हो। बीच का सर्वोत्तम समय। ४ युवतियों

का दल या समूह। ५ हे० 'जोवन'।

शौचन-केंद्रक—पू० [स० सं० त०] मूँहासा जो पुरुषों और स्त्रियों के चेहरे

पर युवावस्था में होता है।

शौचन-पिङ्गका—पू० [स० सं० त०] मूँहासा।

शौचन-लक्षण—पू० [स० व० त०] १ स्त्रियों का स्तन जो उनके शौचन का लक्षण है। २ चेहरे पर की धमक। लावण्य।

शौचनाधिकड़ा—वि० [स० शौचन-अधिकड़ा, सं० सं०] युवती। जवान (स्त्री)।

शौचनाथ—पू० [स० युवनाथ + अण्] राजा मांवाता का एक नाम।

शौचनिक—वि० [स० शौचन + डक = डक] शौचन-संबन्धी। शौचन-शौचनिक।

शौचराजिक—वि० [स० युवराज + डक = डक] युवराज-सम्बन्धी। युव-राज का।

शौचराज्य—पू० [स० युवराज + अण्] १ युवराज होने की अवस्था या भाव। २ युवराज का पद।

शौचराज्याभिषेक—पू० [स० शौचराज्य-अभिषेक, सं० त०] प्राचीन भारत में वह अभिषेक और उसके संबंध का कृत्य तथा उत्सव जो किसीको युव-राज के पद पर प्रतिष्ठित करनेके समय होता था। युवराज के अभिषेक-कृत्य।

र

र—हिंदी वर्णमाला का सत्ताईसवाँ व्यंजन जो व्यञ्जनरूप और भाषाविज्ञान की दृष्टि से अल्पव्य, मूर्धन्य, शोष, अल्पप्राग तथा ईषत्वस्युष्ट है।

पू० [मं० रा + ड] १. अग्नि। २. काम-वासना का ताप।

कामाग्नि। ३ जलना, झूलसना या तपना। ४ आँच। गरमी।

ताप। ५ सोना। स्वर्ण। ६ पिगल में रणण का सञ्चित रूप।

७. सितार का एक बोल।

वि० तीव्र। प्रखर।

रंज—वि० [स० √ रज् (रुष्ट होना) + क] १ गरीब। दरिद्र। कंगाल।

२ कंजूस। क्षण। ३ आलसी। ४ मंदतर। सुस्त।

रंज—पू० [सं० √ रज् + क्त] १. हिरनी की एक जाति। २. उक्त जाति

का हिरन जिसके पृष्ठभाग पर सफेद चित्तियाँ होती हैं।

रंज—पू० [सं० √ रज् (गति) + अच् वात् + रज्ज्, (राज) + षञ्] १.

किसी वृष्य पदार्थ का वह गुण जो उसके आकार या रूप से भिन्न होता

है और जिसका अनुभव केवल आँखों से होता है। वर्ण। जैसे—नीला,

पीला, लाल, सफेद या हरा रंग।

रंजित—वैज्ञानिक दृष्टि से, प्रकाश की भिन्न भिन्न प्रकार की और अलग

अलग लंबाईवाली किरणों के कारण होने रंग की अनुभूति या ज्ञान

होता है। जिन पदार्थों पर ऐसी किरणें पड़ती हैं, उनके रासायनिक

गुण या तत्त्व भी हमें रंगों का बोध कराने में सहायक होते हैं। जब किसी

वस्तु पर प्रकाश की किरणें पड़ती हैं, तब तीन प्रकार की किरणें होती

हैं। एक तो उनका परावर्तन या पीछे की ओर लौटना, दूसरे उनका वर्तन

या किसी और वस्तुना और तीसरे उस पदार्थ के झाँ होनेवाला शोषण

जिस पर प्रकाश की किरणें पड़ती हैं। जिन पदार्थों पर से प्रकाश किरणों

का पूरा परावर्तन होता है, वे सफेद दिखाई देती हैं। जिन पदार्थों पर से

प्रकाश परावर्तित नहीं होता, केवल कतिपय तथा शोषित होता है, वे

बिना रंग के दिखाई देते हैं। जैसे—सूक्ष्म जल। और जो पदार्थ सारा

प्रकाश सोख लेते हैं, वे काले दिखाई देते हैं। प्रकाश की किरणें

मुक्यत सात रंगों की होती हैं। यथा—बैंगनी, नीली, काली या आसमानी,

हरी, पीली, नारंगी के रंग की और लाल। इन सातों रंगों का मिश्रित

रूप सफेद होता है; और रंग मात्र का अभाव काला दिखाई देता है।

अलग अलग प्रकार के पदार्थ अलग अलग प्रकार के रंग सोखते और

इसी लिए अलग अलग रंगों के दिखाई देते हैं।

२. कुछ विशिष्ट रासायनिक किरणों से बनाया हुआ वह पदार्थ जिसका

व्यवहार किसी चीज को रंगने या रंगीन बनाने के लिए होता है।

जैसे—जल-रंग, तैल-रंग।

क्रि० प्र०—आना।—उड़ना।—उतरना।—करना।—चढाना।—

पीतना।—लगाना।

पह—रंज-विरणं।

मूँहा—रंज श्लोकन=होली के दिन में पानी में रंग धोलकर एक दूसरे

पर डालना। (किसी पर) रंज डालना=(होली में) पानी में रंग

धोलकर किसी पर डालना। रंज निखरना =रंग का चमकीला या

तेज होना और फलत सुंदर जान पड़ना। ३ किसी पदार्थ के ऊपरी

तल या शरीर का ऊपरी वर्ण। वक्ष और चेहरे की रगत।

वर्ण।

क्रि० प्र०—उड़ना।—उतरना।

मूँहा—रंज निकलना या निखरना—चेहरे के रंग का साफ होना।

चेहरे पर रौनक आना।

४. चौपड़ की गोटीयों के खेल के काम के लिए किन्ते हुए दो काल्पनिक

विभागों में से हर एक।

मूँहा—रंज जमना =चौपड़ में रंग की गोटी का किसी अच्छे और उपयुक्त

घर में या बेंडना, जिसके कारण श्लोकाधी की जीत अधिक निश्चित होती

है। रंज मारना=(क) चौपड़ के खेल में किसी रंग की गोटी मारना।

(ख) लाक्षणिक रूप में, बाजी जीतना। प्रतियोगिता आदि में विजय प्राप्त करना।

५. रूप, रंग आदि की सुंदरता के कारण दिखाई देनेवाली चीजों। छवि। रौनक। जैसे—आज तो इस पर रंग है।

कि० प्र०—आना।—उतरना।—चढ़ना।—पकड़ना।—होना।

पद्य—रंग है=बाह, क्या बाह है। बहुत अच्छे।

मुहा०—रंग पर आना=ऐसी स्थिति में आना कि यथेष्ट चीजों या सौंदर्य दिखाई पड़े। रंग बरखाना=चीजों या सौंदर्य का इतना आधिक्य होना कि चारों ओर यथेष्ट प्रभाव पड़ रहा हो।

६. भूगर्भिक क्षेत्र में होनेवाला अनुराग या प्रेम। मुहब्बत।

मुहा०—(किसी पर) रंग देना=किसी को अपने प्रेम पाव में फँसाने के उद्देश्य से उसके प्रति उत्कट प्रेम प्रकट करना। (बाजारू) (किसी पर) रंग डालना=अपनी ओर अनुरक्त करना। उदा०—सतगुरु ही महाराज मोरीं सौई रंग डारो—कबीर। (किसी के) रंग में बाँधना=

किसी पर पूर्णरूपेण अनुरक्त होना।

७. किसी पर अनुरक्त होने के कारण उसके प्रति की जानेवाली कृपा या प्रकट की जानेवाली प्रसन्नता। ८. मनोविनोद के लिए की जानेवाली क्रीड़ा, और उसके प्राप्त होनेवाला आनंद या मजा। उदा०—मोकी व्याकुल छाँड़ि कै आपुन करै नू रंग।—सूर।

कि० प्र०—आना।—उलझना।—जमना। मजाना।—रचाना

पद्य—रंगरली या रंगरलिच्छा।

मुहा०—रंग में भंग करना=आनंद में बाधा डालना। होने हुए आभोद-प्रभोद को ठग करना। रंग में होना=मन की यथेष्ट उमग या प्रसन्नता की दशा में होना। जैसे—आज तो यह रंग मे है। रंग में भंग पड़ना या होना=आनंद और हर्ष के समय कोई दुःख घटना घटित होना या कोई बाधक बात होना। रंग रक्खना=आभोद-प्रभोद करना। क्रीड़ा या भोग-विलास करना।

९. पौवन। जवानी। युवावस्था।

कि० प्र०—आना।—उतरना।—चढ़ना।

मुहा०—रंग बूना या टपकना=युवं पौवन की अवस्था मे रूप या सौंदर्य का इतना आधिक्य होना कि ओरी पर उसका पूरा पूरा प्रभाव पड़ता हो।

१०. गूण, महत्त्व, योग्यता, शक्ति आदि का हूतरी के हृदय पर पड़नेवाला आनक या प्रभाव। पाक। रौब।

कि० प्र०—उलझना।—जमना।

मुहा०—रंग बाँधना=(क) बाक या रौब जमाने के उद्देश्य से लंबी-चौड़ी होकना। (ख) प्रभावित करने के लिए व्यर्थ का आडम्बर खडा करना या डोंग रचना। (किसी का) रंग बियाड़ना=(क) प्रभाव या महत्त्व कम होना या न रह जाना। (ख) अभिमान बूण करना। सोकी फिरकीरती करना। रंग लाना=अपना गूण या प्रभाव दिखाना। उदा०—रंग लाएगी हमारी फाका मस्ती एक दिन।—गाविल।

११. किसी प्रकार का बहुभूत नुद्य। विलक्षण कार्य या व्यापार। जैसे—आज तो तुमने वहाँ एक रंग खड़ा कर दिया। १२. नृत्य, गीत आदि का उत्सव।

पद्य—गाव-रंग।

१३. वह स्थान जहाँ नृत्य या अभिनय होता हो। नाचने, गाने आदि के लिए बना हुआ स्थान।

पद्य—रंग-बैठना, रंगभूमि, रंगमंच, रंगशाला।

१४. अवस्था। दशा। हालत। जैसे—कहाँ, आज-कल उनका रंग है। १५. डंग। डब।

पद्य—रंग-डंग।

मुहा०—रंग काठना=कोई नई बाल या नया डंग अस्तिपार करना। (किसी को अपने) रंग में डालना या रंगना=किसी को अपने ही विचारों का अनुयायी बना लेना। प्रभाव डालकर अपना सा कर लेना।

१६. गति। प्रकार। तरह।

पद्य—रंग-विचारा।

१७. युद्ध। लड़ाई। समर।

कि० प्र०—डानना।—मजाना।

१८. लड़ाई का मैदान। युद्धक्षेत्र। रंगभूमि।

पुं० [सं०+अङ्] १. रीगा नामक घातु। २. कब्रिद सार।

रंगई—पुं० [हिं० रंग+ई (प्रत्य०)] १. धोवियों की एक जाति को विशेष रूप से रंगीन या छाये के कपड़े धोती है। २. उक्त जाति का व्यक्ति।

रंग-काष्ठ—पुं० [सं० वं० सं०] पतंग नामक बृश की लकड़ी। बकम।

रंग-शेर—पुं० [सं० वं० तं०] १. अभिनय करने का स्थान। रंगस्थल।

२. उत्सव आदि के लिए सजाया हुआ स्थान। रंगभूमि।

रंग-गृह—पुं० [सं० वं० तं०] रंगशाला। (दे०)

रंग-चर—पुं० [सं० रंग/चर (गति)+ट, उप० सं०] अभिनेता। नट।

रंग-चित्र—पुं० [सं० मध्य० सं०] विशेष प्रकार के रंगों के धोल से कूँची या तुलिका की सहायता से बनाया हुआ चित्र। (पेंटिंग)

रंग-चित्रक—पुं० [सं० रंगचित्र+चित्रक+अङ्] रंगचित्र बनानेवाला चित्रकार। (पेन्टर)

रंग-चित्रण—पुं० [सं० रंगचित्र+चित्रण+अङ्] रंगचित्र बनाने की कला, किया या भाव। (पेंटिंग)

रंगख—पुं० [सं० रंग/ख (उत्पत्ति)+अङ्] सिद्धर।

खि० रंग से उत्पन्न, निकला या बना हुआ।

रंग-जमनी—स्त्री० [सं० वं० तं०] लाल। लाला।

रंग-जीवक—पुं० [सं० रंग/जीव (जीना)+अङ्+अङ्, उप० सं०]

१. चित्रकार। २. अभिनेता। नट।

रंग-डंग—पुं० [सं०+हिं०] १. गति-विधि आदि की प्रवृत्ति या स्वरूप।

जैसे—दसका रंग-डंग ठीक नहीं दिखाई देता। २. आचरण, व्यवहार आदि का प्रकार या रूप। तौर-तरीका। जैसे—अब बहु धोरे-धीरे अपना रंग-डंग बदल रहा है। ३. ऐसी दशा, बात या लक्षण जो किसी भाँकी व्यापार या स्थिति का सूचक हो। आसार। जैसे—आज तो आकाश मे बर्षा का रंग-डंग है।

रंगत—स्त्री० [सं० रंग+हिं० त (प्रत्य०)] १. रंग से युक्त होने की अवस्था या भाव। २. किसी रंगीन पदार्थ की दिखाई पड़नेवाली रंग की लालक। ३. किसी विलक्षण काम या बात मे जानेवाला आनंद या मजा। ४. अवस्था। दशा। हालत। ५. वे कपड़े जो रंगिने के लिए

रंगरंगी—स्त्री० [हि० रंग+रंगी=रङ्गन्] रंगी हुई लाल चुनरी।
रंग-मालिनी—स्त्री० [सं० रंग+लम् (शोभित होना)।-णिच्+पिनि+
 झीष्] शोफालिका।

रंगपात्र—[दिश०] चौपायो का एक रोग।

रंगबाही—स्त्री० [हि० रंगवाना] रंगवती की किन्ना, भाव या पारित्र्यमिका।
 स्त्री०=रंगाई।

रंगबाना—सं० [हि० रंगना का प्रे०] रंगने का काम किसी दूसरे से
 करवाना। किसी को रंगने में प्रयुक्त करना।

रंग-बिद्या—यु० [सं० रंग+वी०] अभिनय। नट। २ नृत्य-कला
 में, कुशल नर्तक। ३ ताल के साथ मुख्य भेरी से से एक। (सगीत)

रंगबीज—यु० [सं० रंग+बी०] बीदा।

रंग-शाला—स्त्री० [सं० रंग+शाला] रंग-विलाम का स्थान। २ वह
 स्थान जहाँ दशकों को अभिनेतागण या नट लोग अपना अभिनय या
 करतब दिखाते हैं। ३ नाट्यशाला।

रंगसाज—यु० [फा० हि० रंग+सा० साज] [भाव० रंगसाजी]
 १ उपकरणों के योग से तह-तरह के रंग पैदा करनेवाला कारीगर।
 २ मेज, कुर्सी, किबाड़, आदि पर रंग चढानेवाला कारीगर। (पेंटर)

रंगसाजी—स्त्री० [हि० रंग+फा० साजी] रंगने की कला या विद्या।
 २ रंगसाज का काम, पेशा या भाव।

रंग-स्थल—यु० [सं० रंग+थ० तल] रंग आभूषण-प्रभेद के लिए नियत
 स्थान। २ रंगशाला।

रंग-स्थापक—यु० [सं० रंग+स्था०] कोई ऐसी चीज जिसकी सहायता से रंग,
 पतले पत्तर आदि दूसरी चीजों पर बिष्कय या जम जाते हैं। (मारबेट)

रंगगण—यु० [सं० रंग+गण, व० ण] नाट्यशाला। २ रंगमूमि।

रंगगंगा—स्त्री० [सं० रंग+गङ्गा, व० ङ] फिटकरी।

रंगाई—स्त्री० [हि० रंग+आई (प्रत्य०)] रंगने का काम, पेशा, भाव
 या मजदूरी।

रंगबीज—यु० [सं० रंग+बी०/जीव् (जीना)।-अण्] वह जिसकी
 जीविका का आधार रंग सम्बन्धी काम है। जैसे—रंगसाज, रंगरेज
 आदि।

रंगना—सं० [हि० रंगना का प्रे०] रंगवाना। दे०।

रंगमैत्री—स्त्री० [फा०] १. किसी चीज में यथास्थान तरह-तरह के
 रंग भरने का काम। २. तरह-तरह की चीजे एक साथ बनाने या
 रङ्गने की किन्ना या भाव। उदा०—रंगमैत्री का खेल जब ही तो
 क्यों न सब सुट्टिट बने अनुपारगी।—बालकृष्ण समान नवीन। ३. किसी
 बात को रोचक बनाने के लिए उसमें अपनी तरफ से थोड़ा कुछ भाव
 बसाना।

रंगारंग—वि० [हि०] बहुत से रंगोंवाला। ३. अनेक प्रकार का।
 तरह-तरह का। जैसे—रंगारंग कपड़े या खिलौने।

यु० आकाश-वाणी का एक प्रकार का कार्यक्रम जिसमें अनेक प्रकार के
 गीत सुनाये जाते हैं।

रंगार—यु० [दिश०] वैद्यकी की एक जाति या वर्ण। २. राजपूनी की
 एक जाति या वर्ण।

रंगारि—यु० [सं० रंग+रि, व० तं] कनेर।

रंगाख—यु० [सं० रंग+आख, व० तं] रंगमूमि। रंगशाला।

रंगाखट—स्त्री० [हि० रंग+आखट (प्रत्य०)] रंगी हुए होने का भाव।
 २ वह लकड़ या आभा जो किसी रंगी हुए वस्त्र आदि में से प्रकट होती
 है।

रंगाखारक—यु० [सं० रंग+खटाक, व० तं] रंगरेज। २ अभिनेता।
 नट।

रंगाखतारी (रिन्)—यु० [सं० रंग+ख+रू (पार करना)+पिनि]
 अभिनेता। नट।

रंगासिपार—यु० [हि०] ऐसा व्यक्ति जो ऊपर से तो मला लगता है
 परन्तु हों बहुत बड़ा चालाक और धूर्त।

रंगिया—यु० [हि० रंग+या (प्रत्य०)] रंगभेद रंगनेवाला। रंगरेज।
 २ रंगवाज।

रंगी—स्त्री० [सं० रंग+अच्+डीष्] १ धतमूली। २ कैवतिकी
 लता।

रंगी [हि० रंग] १ विनोदशील प्रकृति का। २ मनमौजी।
रंगीन—वि० [फा०] १ जिन पर कोई रंग चड़ा हो। रंगा हुआ।
 रंगदार। जैसे—रंगीन साड़ी, रंगीन लिबा २ जिसकी प्रकृति या
 स्वभाव में विनोद, बिलस आदि तरबों की प्रधानता हो। आमोदप्रिय
 और बिजली। ३ चमत्कारपूर्ण तथा विलानमय। जैसे—रंगीन
 तबीयत, रंगीन महकिल।

रंगीनबाजी—स्त्री०=रंगवाजी (चोगर का खेल)।

रंगीनी—स्त्री० [फा०] १ रंगीन होने की अवस्था या भाव। २ बनाब-
 मिगार। मजाबत। ३ प्रकृति या स्वभाव में रसिक और विनोदप्रिय
 होने की अवस्था या भाव।

रंगीरेटा—यु० [दिश०] एक प्रकार का जंगली वृक्ष जो दारजिलिंग में
 अधिकता से होता है।

रंगीला—वि० [हि० रंग+ईला (व्यय०)] [स्त्री० रंगीली] १. जिसकी
 प्रकृति या स्वभाव में रसिकता, विनोदशीलता आदि बातें मुख्य रूप
 से हों। रसिक-प्रकृति। रसिया। २ कई रंगों से युक्त होने के कारण
 आकर्षक और मनोहर लगनेवाला। जैसे—रंगीले ड्रेस लेंगे हीरे।

रंगीली टोड़ी—स्त्री० [हि० रंगीला+टोड़ी (गणिना)] सपूर्ण जाति की
 एक रागिनी जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

रंगीया—यु० [हि० रंग] रंग (प्रत्य०) रंगनेवाला।

रंगीपञ्जीवी (विन्)—यु० [सं० रंग+उप+जीव् (जीना)।-पिनि]
 अभिनय आदि के ड्राग अपनी जीविका चलानेवाला।

रंगीली—स्त्री० [सं० रंगवल्ली] माली का वह रूप जो महाराष्ट्र में
 प्रचलित है। (देखें 'माली')

रंगीकी—स्त्री० [हि० रंग+की (अधा मे) प्रत्य०] आँधों का वह
 रोग जिसमें रंगी रंग या वर्ण नहीं पहचान सकता। वर्णान्धता।
 (कलर ब्लाइन्डनेस)

रंगीनी*—स्त्री० [हि० रंग] लाल रंग की एक प्रकार की चुनरी।

रंग-रंभक—वि० [सं० न्यच, प्रा० णच्] बोझा। अल्प। तनिक।

रंग—यु० [फा०] [हि० रज्जोटा] र मन में होनेवाला दुःख। मान-
 निक दुःख। २ मृतक का शोक। ३ अप्रसन्नता। नाराजगी।

रंजक—वि० [सं० रज्जु+णिच्+ण्वल्-अक] रंगनेवाला।
 २ प्रायः आनन्द-मगल करने और प्रसन्न करनेवाला।

रं० [सं०] १. रंजसाज। २. रंजरेज। ३. रंजुर। ४. जिलाबा।
५. मेहदी। ६. सुजुल के अनुसार पेट की एक अम्ल जो पित्त के अत्यंत
भागी जाती है।

रंजी० [हि० रंजी—अल्प] १. वह घोड़ी सी बाइच जो बत्ती लगाने के
हास्ते बंदूक की प्याली पर रखी जाती है।
क्रि० प्र०—वेना 1—भरता।

रंजक—रंजक उद्धाना—बंदूक या तोप की प्याली में बत्ती लगाने के लिए
बाइच रखकर जलाना। (प्याली का) रंजक खाद जलाना—तोप या
बंदूक की प्याली में रंजी हुई बाइच का थोड़ा जलकर रजु जाना और
उससे गोला या गोली न छूटना। रंजक पिचाना—तोप या बंदूक की
प्याली में रंजक रखना।

२. गाँव, तमाकू या सुलके का दम। (बाबाक)
रंजक—रंजक बेना—गाँव आदि का दम लगाना।
३. वह मातृ जो किसी को बंधकाने या कर्तवित्त करने के लिए कही जाय।
४. किसी प्रकार का ऐसा चटपटापूरा या और कोई पदार्थ जिसके सेवन
से शरीर में तत्काल स्फूर्ति आती हो।

रंजना—रं० [सं० रंज+रज्+अन] १. रंजने की क्रिया या भाव।
२. वे पदार्थ जिनसे रंग निकलते या बनते हैं। ३. वित्त प्रसन्न करने
की क्रिया या भाव। ४. शरीर में का पित्त नामक तत्त्व। ५. काल
चयन। ६. मूज। ७. सोना। स्वर्ण। ८. जायफल। ९. कभीला
नामक वृक्ष। १०. छपय छद के पचासवें भेद का नाम।

रं० [रंजी रंजना] वित्त प्रसन्न करनेवाला। जैसे—वित्त-रंजना।

रंजना—रं० [सं० रंजना+कन्] कटवृत्त।

रंजना—सं० [सं० रंजना] १. रंजना करना। २. मन प्रसन्न करना।
आनंदित करना। ३. मन लगाकर किसी को भजना या बार बार
स्मरण करना। ४. वे० 'रंजना'।
रं० रंजी रंजना करनेवाली।

रंजनी—रंजी० [सं० रंजना+रंजी] १. श्वभ्रन स्वर की तीन ध्रुतियों में से
दूसरी ध्रुति (संगीत)। २. संगीत में कण्ठकी पद्धति की एक रागिणी।
३. नीली नामक पीषा। ४. मजीठ। ५. हल्दी। ६. पर्यटी।
७. नागवल्ली। ८. जनुका लता। पहारी।

रंजनीय—रं० [सं० रंज+अनीयर] १. जो रंजे जाने के योग्य हो। २.
जिसका वित्त प्रसन्न किया जा सकता हो या किया जाने को हो।

रंजा—रंजी० [देहा०] एक प्रकार की मछली जिसे उलभी भी कहते हैं।
रंजित—रं० क्त० [सं० रंज+कृ] १. जिस पर रंग बढ़ा या चढ़ाया
गया हो। रंजा हुआ। २. जिसका वित्त प्रसन्न किया गया हो या हुआ
हो। ३. किसी के अनुसार या श्रेय में पना हुआ। अनुरक्त।

रंजित—रंजी० [फा०] १. किसी की ओर से मन में बैठा हुआ रंज।
२. किसी के प्रति होनेवाली अभ्रप्रभता या नाराजगी। ३. आपस में
होनेवाला मन-मुटाव या बैमनस्य।

रंजीबाही—रंजी० [फा०] रंजीबाही होने की अवस्था या भाव।

रंजीबा—रं० [फा०] रंजीव। १. जिसे रंज हो। दुःखित। २. अभ्रप्रसन्न। नाराज।

रंजना—सं० [सं० रंजना] १. रंज से युक्त होना। रंजित होना। २.
फलना-मूलना। जैसे—बुली का रंजना। ३. संपन्न, समृद्ध या
सुखी होना। ४. स्थायी या स्थिर होना।

रंज—रं० [सं० रंज+कृ] (श्रीका)+रं। १. बूझें। चालाक। २. विकल।
वेकन।

रंजक—रं० [सं० रंज+कन्] ऐसा पद जो फूलता-फलता न हो।

रंजना—रं०—रंजना।

रंजा—रं० रंजी० [सं० रंज+टाप्] रंज। विचबा। वेबा।

रं०—रंजना। (पविचम)

रंजना—रं० [हि० रंज+नाया (प्रत्य०)] १. रंज अपांत विचबा होने
की वशा या भाव। २. रंज के रूप में बित्ताया जानेवाला समय।

रंजामणी (सिन्धु)—रं० [सं० रंज+आश्रम ष० सं०, रंजाश्रम+इति]
४८ वर्ष से अधिक की अवस्था में होनेवाला रंजना।

रंजिबा—रंजी०—रंज। २—रंजी।

रंजी—रंजी० [सं० रंजा] १. वह स्त्री जिसका पति मर चुका हो। रंजि।
विचबा (पविचम) २. ऐसी स्त्री जो विचबा होने पर व्यभिचार से अपनी
जीविका चलाती हो। ३. मन लेकर सभोग करनेवाली स्त्री। बेध्या।
४. युवती और सुन्दर स्त्री। (राज०)

रंजीबाही—रं० [हि० रंजी+का० बाज] [भाव० रंजीबाजी] वह जो प्रायः
रंजियों के यहाँ जाकर उनसे सभोग करता हो। बेध्यागामी।

रंजीबाही—रंजी० [हि० रंजी+का० बाजी] १. रंजीबाज होने की
अवस्था, क्रिया या भाव। २. रंजी के साथ की जानेवाली पिचता या
सभोग।

क्रि० प्र०—करना।

रंजना—रं० [सं० रंज+उवाया (प्रत्य०)] ऐसा म्यत्त जिसकी पत्नी
मर चुकी हो और जय पत्नी अभी न आई हो। विधुर।

रंजना—रं०—रंजना।

रंजीरां—रं०—रंजना।

रंजीरी—रंजी०—रंज।

रंजा (शु)—रं० [सं० रंज्+पुच्] रंजना करनेवाला।
रं०—रंजी० [सं० रंज्+पुच्] १. केरि। श्रीका। २. विराम।

रंजितेव—रं० [सं० रंज्+तिक्, रंजितेव कर्म० सं०] १. पुत्राणामुत्तार
एक बहुत बड़े दानी राजा जिन्होंने बहुत से यज्ञ किये थे। २. विष्णु का
एक नाम। ३. कुत्ता।

रंजिनी—रंजी० [सं०] बबल (नदी)।

रंजु—रंजी० [सं० रंज्+तुर्] १. सड़क। २. नदी।

रंजुला—रं०—रंजना।

रंज—रं० [सं० रंज] १. शरीका। रोशनदान। २. किले की दीवार में
का वह मोक्षा या शरीका जिसमें से बाहर गोले फेंके जाते थे।
रं० [हि० रंजना या फा०] वह छीलन जो लकड़ी को रंजने पर निकलती
है।

रंजना—सं० [हि० रंजा+ना (प्रत्य०)] १. रंजे से छीलकर लकड़ी की
सतह चिकनी और समतल करना। २. छीलना। तराशना।

रंज—रं० [सं० रंजना+कानटा, चीरना मि० फा० रंज] बड़ाभयो का एक
ओजार जिससे वे लकड़ी को सतह छील कर चिकनी और समतल करते हैं।
रंजक—रं० [सं० रंज् (पाक-क्रिया)+कृत्+अक] रंजोई बनानेवाला।
रंजोइया।

रं० नष्ट करनेवाला। नाशक।

रं०

रचना—**गु०** [स०/रप्+त्यृट्-अन्] १. रसोद्दी बनाने की क्रिया। पाक करना। रचना। २. नष्ट या नबाह करना।
रचना—**अ०** [स० रचना] भोजन करना। रचा जाता।
 †स० = रचना।
रचन—**गु०** पकाकर तैयार किया हुआ भोजन।
रचि—**गु०** कृ० [स०/रप्+क्त] १. पकाया हुआ। २. रचा हुआ।
 २. नष्ट किया हुआ।
रक्ष—**गु०** [स० रक्ष+रक्] १. छेद। सुरास।
रक्ष—**ब्रह्म-रक्ष**।
 २ स्त्री का भग। योगि। ३. छिद्र। दोष। ४ लासलिक अर्थ में कोई ऐसा छिद्र, तन्त्र या दुर्बल स्थान जिस पर सफलतापूर्वक या सहज में आक्रमण, आक्षेप या आघात किया जा सके।
रक्षा—**गु०** [सि० रमा] १. युद्धाहो का लोहे का एक जोड़ा जो लगभग एक गज लंबा होता है। २. दे० 'रमा'।
रक्ष—**गु०** [स०/रम (शब्द)+खट्] १. बहुत जोर का शब्द। जैसे—गो या मंस का रम। २ [रम+अक्ष] बौस। ३ एक प्रकार का तीर या बाण। ४. महिषासुर के पिता का नाम।
 †गु० = रक्षा।
 *गु० = अरक्ष।
रक्षा—**स्त्री०** [स०/रप्+अक्ष+टाप्] १. केला। कदली। २ गौरी। पार्वती। ३. स्वर्ग की एक प्रसिद्ध अक्षरा। ४. बेध्या। रजी। ५. उत्तर दिशा।
रक्ष—**गु०** [स० रम] लोहे का वह मोटा भारी बंडा जिसका अगला सिरा धारदार होता है और जिससे आघात करने मजदूर जमीन या दीवार में छेद करते हैं।
रक्षा सुतीया—**स्त्री०** [स० मध्य० सं०] ज्येष्ठ शुक्ला सुतीया।
रक्षामा—**अ०** [स० रमणा] गाय का बोलना। गाय का शब्द करना।
 स० गी से रक्षण करना। गी की शब्द करने में प्रवृत्त करना।
रक्षापति—**गु०** [स० ष० सं०] इन्द्र।
रक्षाफल—**गु०** [स० ष० सं०] केला।
रक्षित—**गु०** कृ० [स०/रप्+क्त] १. जिससे या जिससे शब्द उत्पन्न किया गया हो। २. बचाया हुआ।
रक्षी (भित्त)—**गु०** [स०/रप्+गिति] १. व्यक्ति जो हाथ में बेंत या दंड लिए हुए हो। २. दरवाजा जो हाथ में दंड लिये रहता था। ३. वृद्ध आदमी जो प्राय छठी या लकड़ी लेकर चलता है।
रक्षोत्त—**वि०** [स० रमा-उत्त ष० सं०] १. (स्त्री) जिसकी केले के पत्र के समान ऊपर-बढ़ावावाली जर्षी हो। २. मनोहर। सुन्दर।
रक्ष (स)—**गु०** [स०/रक्ष (गति)+अमृत्] बेग। गति। तेजी।
रक्ष बट (1)—**गु०** [सि० रस+बाट] ऐसी कालच या लोभ जो किसी प्रकार की तृप्ति पाने के उपरान्त और बढ़ गया हो। चरमा।
रक्षट—**गु०** = रक्षट।
रक्षव्यत—**स्त्री०** [अ०] १. प्रजा। रिजाया। २. मध्य-मग और सिन्धु घाटन में जमींदार के अधीन रहनेवाला काश्तकार।
रक्षज—**स्त्री०** = रक्षव्यत।
रक्षनी—**अव्य०** [स० रक्ष] जरा भी। तनिक भी। कुछ भी।

रक्षिनी—**रैन** (रात)।
रक्षारी—**गु०** [सि० राह+वारी] वह जो ऊँट चराता या पालता हो।
रक्षि—**स्त्री०** [स० रक्ष=हि०रान] वही मथने की लक्ष्मी। मथानी। धौलर।
 क्रि० प्र० = चलाना—केरना।
रक्षी [सि० र वा] १. गेहूँ का मोटा आटा। दरदार आटा। २. सूजी।
 ३. कोई महीन वृण।
वि० रक्षी [सि० रचना=स० रजना] १. डूबी हुई। पगी हुई।
 २. अनुरक्त। २. भिगी हुई।
रक्षिस—**गु०** [अ०] १. रियासत का स्वामी। इलाकेदार। ताल्लुकेदार।
 २. बहुत बड़ा बनी या सभ्य और प्रतिष्ठित व्यक्ति। ३. किसी स्थान का राजा या प्रधान अधिकारी।
रक्षिसाहा—**गु०** [का० रक्षिसाहा] [स्त्री० रक्षिसाही] रक्षिस या बहुत बड़े आदमी का लडका।
रक्षिसी—**स्त्री०** [सि० रक्षिस] १. रक्षिस होने की अवस्था या भाव। २. कोई ऐसा काम या बात जिसमें केवल शोक से और रक्षिसी की तरह बहुत अधिक श्वय किया गया हो।
रक्षिताई—**स्त्री०** [सि० रावत+आई (प्रय०)] राजत (रावत) या मालिक होने की अवस्था या भाव। प्रमूख।
रक्षित—**सर्व०** [परिचरणी राखने का पूर्वी रूप] मध्यम पुरुष के लिए आदर-सूचक शब्द। आप। जनाब।
रक्षित—**स्त्री०** [अ०] प्रजा। रिजाया।
रक्षित—**गु०** [सि० रिक्षवच] कुछ विशिष्ट प्रकार के पत्तों की बनाई हुई पकोड़ी। पतोड़ी।
रक्षत—**गु०** [स० रक्ष] लहू। खून। रक्षिर।
वि० रक्षत बर्ण का। लाल। सुर्ष।
रक्षतकंद—**गु०** [स० रक्षत+कंद] १. मूंगा। प्रवाण। विद्रुम। (हि०) २. रत्नल।
रक्षतकी—**गु०** [स० रक्षतकी] विद्रुम। प्रवाण। मूंगा। (हि०) २. केसर। ३. लाल चन्द।
रक्षवा—**गु०** [अ० रक्षव] क्षोणचल (दे०)
रक्षवाहा—**गु०** [अ०] घोड़ी का एक भेद।
रक्षम—**स्त्री०** [अ० रक्षम] १. लिखने की क्रिया या भाव। २. छाप। मोहर।
 ३. श्याम-नीला या बीजा-बिसवा आदि लिखने के कारसी के वे विशिष्ट अंक जो साधारण सभ्यासूचक अंका से भिन्न होते हैं। ४. श्याम-नीला जिसकी सभ्या नियत या सुचित की गई हो। ५. बही-खाते में लिखी जानेवाली उक्त प्रकार की सभ्या या कोई ऐसा पद जो उस सभ्या से संबद्ध हो। जैसे—(क) यह रक्षम बही में लिख लो। (ख) तुम्हारे नाम अभी दो रक्षम बाकी पड़ी हैं। ६. गहना या जेवर जो मूल्यवान होता है और जिससे धन मिल सकता है। जैसे—घर की एक रक्षम खरक दो सी रुपए लाया हूँ। ७. कोई ऐसी चीज जिसका कुछ विशेष महत्व या मूल्य हो। ८. बहुत ही बलदा-गुरजा या बालाक आदमी। ९. मुन्दरी स्त्री। (बाजारू) १०. ब्रिटिश भारत में, लगान की दर। ११. तरह। प्रकार। भाँति। जैसे—रक्षम-रक्षम की चीजें बही रक्षी थीं।
रक्षमी—**वि०** [अ० रक्षमी] १. रक्षम सवारी। रक्षम का। २. लिखा हुआ। लिखित। ३. निशान किया हुआ।

पुं० मध्य युग और ब्रिटिश भारत में बहु कास्तकार जिससे रक्तम या बन केने में कोई बास रिमास की जाती थी।

रक्तम—स्त्री० [?] १. तरीका। २. लताम।

रक्तम—स्त्री० [फा० रक्तम] १. घोड़े की काठी का झुलता हुआ पाववाप जिस पर पीर रखकर घोड़े पर सवार होते हैं और बैठने में जिससे सहाय्य मते हैं।

मुहा०—रक्तम पर घेर रखना=कही जाने या चलने के लिए विस्तुल तैयार करना। २. दे० 'रक्षावी'।

रक्षावत—स्त्री० [अ०] १. रक्षीव होने की अवस्था, धर्म या भाव। २

किन्नी प्रेमिका के सम्बन्ध में उसके प्रेमियों में होनेवाली प्रतिद्वन्द्विता।

रक्षावत—पुं० [फा०] १. मुरब्बा, मिठाई आदि बनानेवाला कारीगर या हलबार्दी। २. रक्षावतियों में खाना चुनने और परोसनेवाला। खान-सामा। ३. नवानों, बाराखाहों आदि के साथ उनका भोज लेकर चलने-वाला सेवक। खासबन्दार। ४. रक्षावत कर्कर घोड़े पर सवार-करानेवाला नौकर। सार्विस।

रक्षावा—पुं० [फा० रक्षाव] १. रथ रक्षावी। २. पराव।

रक्षावी—स्त्री० [फा०] छिछोरी गोल छोटी घाली।

वि० १. रक्षाव सम्बन्धी। २. रक्षावी की तरह का। जैसे—रक्षावी बेहरा।

रक्षावी बेहरा—पुं० [फा० हि०] गोल या चौड़ा सूँह।

रक्षावी मजहब—वि० [फा० +अ०] खुशामदी। घाटुकार।

रक्षा—पुं० [सं० र +कार] २. र वर्ण का बोध अक्षर। २।

रक्षा—वि० [अ०] १. पानी की तरह पतला। तरल द्रव। २. कोमल। नरम। मुलायम।

पुं० गुलाम। दास।

रक्षा—पुं० [अ०] १. वह जो किसी प्रेमिका के प्रेम के संबंध में उसके दूसरे प्रेमी से प्रतिस्पर्धा करता हो। प्रेमिका का दूसरा प्रेमी। २. प्रति-द्वन्दी। प्रतिस्पर्धी।

रक्षा—स्त्री०=रक्षावी।

रक्षास—पुं० [अ०] [स्त्री० रक्षासी] नाचनेवाला। नर्तक।

रक्षाना—सं०=रक्षाना।

रक्त—वि० [सं० रज्ज् (रंगमा) +क्त] १ जिसका रजन हुआ हो। २. रंगा हुआ। ३. किसी के अनुरोध या प्रेम से मुक्त। अनुरक्त। ४. लाल रंग का। मुर्छ। ५. आभोग-प्रमोद या विहार में लगा हुआ। ६. युद्ध और साफ किया हुआ।

पुं० १. लाल रंग का बहु प्रसिद्ध तरल पदार्थ जो नवीं आदि में से हीकर सारे शरीर में बहकर लाता रहता है। लहू। खून। संचिर। शोणित। (मुहा० के लिए दे० 'खून' के मुहा०) २. उपसाहस्रक अक्षर होने या आगे बढ़ने वाली का रज या वर्ण। जैसे—कापेस की अब नये रक्त की आवश्यकता है। ३. केसर। ४. लंबा। ५. कमल। ६. सिद्धू।

ईगुं। ७. लाल चन्दा। ८. लाल रंग। ९. कुसुम। १०. गुल कुपरिया। बन्धूक। ११. पतंग नामक वृक्ष की लकड़ी। १२. एक प्रकार का बैल। हिरज्ज। १३. एक प्रकार की मछली। १४. एक प्रकार का जहरीला मेड़क। १५. एक प्रकार का विच्छू। १६. अच्छी तरह पका हुआ आंवले का फल।

रक्तसं—पुं० [सं० ब० सं०] १. कोयल २. बैंगल। भंटा।

वि० जिसका कंठ या गला रक्त अर्थात् लाल हो।

रक्तसर्व—पुं० [सं० ब० सं०] १. विद्रुम। मूँगा। २. प्याज। ३. टाकू।

रक्त-श्वेत—पुं० [सं० ब० सं०] मूँगा। विद्रुम।

रक्तक—पुं० [सं० रक्त/कं (शब्द) +क] १. गुल कुपरिया का रीया और उसका फूल। बन्धूक। २. लाल रंग का पेड़। ३. लाल रेंव। ४. लाल रंग का। ५. लाल रंग का बोझ। ६. केसर।

वि० १. रक्त वर्ण का। लाल। २. अनुरक्त। ३. विनोदप्रिय।

रक्त-कर्म—पुं० [सं० कर्म० सं०] १. एक प्रकार का कर्म जिसके फूल गहरे लाल रंग के होते हैं। २. उच्च वृक्ष का फूल।

रक्त कर्मा—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] चंपा केला।

रक्त-कमल—पुं० [सं० कर्म० सं०] लाल रंग का कमल।

रक्त-करवी—पुं० [सं० कर्म० सं०] शाल रंग का कनेर।

रक्त-काचम—पुं० [सं० कर्म० सं०] कचनार का वृक्ष। कचनार।

रक्तकीटा—स्त्री० [सं० ब० सं०, टाप्] लाल पुनर्वा। लाल गवध-पूतना।

रक्त-काश—पुं० [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार का काश-रोग जिसमें फेफड़े से मूँह के रास्ते खून निकलता है।

रक्त-काष्ठ—पुं० [सं० ब० सं०] पतंग की लकड़ी।

रक्त-कुमुदा—पुं० [सं० कर्म० सं०] कूर्च। नीलीफर।

रक्त-कुचंबक—पुं० [सं० कर्म० सं०] लाल कटसरिया।

रक्तकुष्ठ—पुं० [कर्म० सं०] बिसर्प नामक रोग, जिसमें सारा शरीर लाल हो जाता है और इसमें बहुत जलन होती है और कुछ की तरह बग गलने लगते हैं।

रक्त-कुसुम—पुं० [सं० ब० सं०] १. कचनार। २. अक। मदार। ३. धामिन नामक वृक्ष। ४. फरहद। पांचिद्र।

रक्त-कुसुमा—स्त्री० [ब० सं० टाप्] अनार का पेड़।

रक्त-कुम्भिका—स्त्री० [सं० कर्म० सं०/उत्पत्ति] +उ, टाप्] लाल। लाह।

रक्त-केशर—पुं० [ब० सं०] पांचिद्रक वृक्ष। फरहद का पेड़।

रक्त केश—पुं० [कर्म० सं०] लाल कुमुद।

रक्तसद्य—पुं० [सं० व० सं०] १. रक्त का सय होना। २. दे० 'रक्त शीगता'।

रक्त-शीगता—स्त्री० [सं०] शरीर की वह स्थिति जिसमें रक्त या खून की बहुत कमी हो जाती है। (एनीमिया)

रक्त-श्वित—पुं० [कर्म० सं०] एक प्रकार का श्वेत का वृक्ष जिसके फूल लाल रंग के होते हैं। रक्तसार।

रक्त-श्वेत—पुं० [कर्म० सं०] नील नामक ग्रन्थ-द्रव्य।

रक्त-नात उबर—पुं० [रक्त गत हि० सं०, रक्त गत-उबर कर्म० सं०] बहु उबर जिसके कीटाणु रोगी के रक्त में समा गये हो।

रक्त-नर्ध—स्त्री० [ब० सं०, टाप्] मेंहरी का पेड़।

रक्त-गुल्म—पुं० [मध्य० सं०] कियर्ष का एक रोग जिसमें उनके गर्भाशय में रक्त की गांठी बंध जाती है।

रक्त-नैरिक—पुं० [कर्म० सं०] स्वर्ण नैरिक। लाल गेरू।
 रक्त-श्रीष—पुं० [सं० ब० सं०] १. कन्नूर। २. रासल।
 रक्तान—पुं० [सं० रक्त √हृन् (हिंसा)+टप्] रोहितक वृक्ष।
 वि० रक्त का मांस करनेवाला।
 रक्तानी—स्त्री० [सं० रक्तान+डीप्] एक प्रकार की वृक्ष। गडबुर्वा।
 रक्त-अंधु—पुं० [ब० सं०] शुक। सीता।
 रक्त-अंधव—पुं० [कर्म० सं०] लाल रंग का अंधन। (दे० चंदन)
 रक्त-आप—पुं० [सं० रक्त और हिं० आप] १. क्षुत् का जोर या दबाव।
 २. चिकित्सा-शास्त्र में एक रोग जो उस समय माना जाता है जब अवस्था के प्रसंग अनुपात से रक्त का दबाव या वेग घट या बढ़ गया होता है।
 (श्लघ प्रेशर)
 रक्त-चित्रक—पुं० [कर्म० सं०] लाल रंग का चित्रक या चीता वृक्ष।
 रक्तचूर्णा—पुं० [कर्म० सं०] १ सिद्धर। २. कमीला।
 रक्तच्छदि—स्त्री० [ब० सं०] क्षुत् की ही होना। रक्त-अमन।
 रक्तज—वि० [सं० रक्त/जन् (उत्पत्ति)+ङ] १ जो रक्त से उत्पन्न हो। २ (रोग) जो रक्त विकार के कारण उत्पन्न हो।
 रक्तजह्वलि—पुं० [कर्म० सं०] वह क्रमि जो रक्त-विकार के कारण उत्पन्न होता है।
 रक्तजपा—स्त्री० [कर्म० सं०] अड़हुल। जवा। देवीफूल।
 रक्तजिह्व—पुं० [ब० सं०] सिह। शेर।
 वि० लाल जीमवाला।
 रक्तजूर्य—पुं० [कर्म० सं०] अवार। जोन्धरी।
 रक्तजस्त—वि० [कर्म० सं०] इतना अधिक तथा या तपाया हुआ कि दिखने में लाल हो गया हो। बहुत अधिक तथा हुआ। (रेड हूट)।
 रक्तजर—पुं० [सं० रक्त+तरप्] गेरू।
 रक्तज्ञे—स्त्री० [सं० रक्त+ज्ञल्+टाप्] रक्त होने की अवस्था या प्राय।
 लाली। सुर्वा।
 रक्तज्ञाप—पुं० [कर्म० सं०] उस अवस्था की ताप या गरमी जब कोई बीज तपाने से लाल ही गई हो। (रेड-हूट)
 रक्तजुड—पुं० [सं० ब० सं०] सीता।
 रक्तजुडक—पुं० [सं० रक्तजुड+कन्] सीसा।
 रक्तजुड—पुं० [कर्म० सं०] एक प्रकार का लाल रंग का वृक्ष।
 रक्तज्वलिका—स्त्री० [ब० सं०, कर्+टाप्, इत्य] कुर्वा का वह रूप जो उड़ने में शुभ-निशुभ की मारने के समय धारण किया था। चरिका।
 रक्तज्वली—स्त्री० [सं० ब० सं०, डीप्] =रक्तज्वलिका।
 रक्तज्वला—स्त्री० [ब० सं०, टाप्] मालिका नामक गन्ध-द्रव्य।
 रक्तज्वलन शंक्—पुं० [सं० रक्तज्वलन+अ० बैक] वह स्थान जहाँ स्वस्थ व्यक्तिमें जो शरीर से निकाला हुआ रक्त इसजिए सुरक्षित रखा जाता है कि आवश्यकता पड़ने पर ऐसे रोगियों के शरीर में प्रविष्ट किया जा सके जो रक्त की कमी के कारण भ्रष्टासन्न हो रहे हों। (श्लघ बैंक)
 रक्तजुषय—वि० [ब० सं०] जिससे रक्तजुषित हो। क्षुत्-अन्वराज करनेवाला।
 रक्त-रूप (श)—पुं० [ब० सं०] १. कोयल। कोकिल। २. कन्नूर। ३. बकोर।
 वि० लाल आँधीवाला।
 रक्त-रुच—पुं० [कर्म० सं०] लाल बीजासन वृक्ष।

रक्त-वरा—स्त्री० [ब० सं०] बैदक के अनुसार मांस के अन्तर की हड्डी कला या शिल्ली जो रक्त को धारण किये रहती है।
 रक्त-वायु—पुं० [कर्म० सं०] १. गेव। २. तीबा।
 रक्त-वामन—पुं० [ब० सं०] १. कन्नूर। २. बकोर।
 रक्त-नाल—पुं० [ब० सं०] सुसप्त नामक साग।
 रक्त-नालिक—पुं० [ब० सं०] उल्लू।
 रक्त-नील—पुं० [कर्म० सं०] सुसुप्त के अनुसार एक प्रकार का बहुत जहरीला बिड़ड़।
 रक्त-नेत्र—पुं० [ब० सं०] १. कोयल। २. सारस पक्षी। ३. कन्नूर। ४. बकोर।
 वि० लाल आँधीवाला। जिसके नेत्र लाल हो।
 रक्तप—वि० [सं० रक्त/पा (पान)] क रक्त पान करने अर्थात् लहू पीनेवाला।
 पुं० १. रासल। २. शटमल।
 रक्त-पक्ष—पुं० [ब० सं०] गडड़।
 रक्तपट—वि० [ब० सं०] लाल रंग के कपड़े पहननेवाला।
 पुं० बौद्ध भ्रमण।
 रक्तपथ—पुं० [ब० सं०] पिडाल।
 रक्तपथा—स्त्री० [ब० सं०, टाप्] १. लाल गडधूरना। २. नाकुली।
 रक्तपथ—पुं० [ब० सं०] लाल गडधूरना।
 रक्त-पल्लव—पुं० [(सं०) ब० सं०] अशोक का वृक्ष।
 रक्तपा—स्त्री [सं० रक्तपा] टाप्] १. जोक। २. डाकिनী।
 रक्त-पात—पुं० [ब० सं०] १. लहू का गिरना या बहना। रक्तसाव।
 २. ऐसी मारपीट या लड़ाई शगडा जिसमें अधिक मारकाट के कारण अनेक शरीरों से खून बहता है। क्षुत्-अन्वराधी।
 रक्त-पात—स्त्री० [सं० रक्त/पात (गिरना)+गिष्+अच्+टाप्] जोक।
 रक्त-पाव—पुं० [ब० सं०] १. बरगद। २. तोता।
 रक्त-पायी (विन्)—वि० [सं० रक्त/पा+गिनि, युगागम] [स्त्री० रक्तपायिनी] रक्तपान करनेवाला। खून पीनेवाला।
 पुं० १. रासल। २. शटमल।
 रक्तपावर—पुं० [कर्म० सं०] हिण्डु। ईगुर।
 रक्त-पाषाण—पुं० [कर्म० सं०] १. लाल पत्थर। २. गेरू।
 रक्त-पिड—पुं० [उपमित सं०] अवाफूल।
 रक्त-पिडक—पुं० [सं० रक्तपिड+कन्] १. रतालू। २. अड़हुल। जवा।
 रक्त-पिडालू—पुं० [कर्म० सं०] रतालू।
 रक्त-पित्त—पुं० [मध्य० सं०] १. एक प्रकार का रोग जिसमें मूँह, नाक, कान, गुदा, योनि आदि द्वारियों से रक्त गिरता है। २. नाक से लहू बहने का रोग। मक्कीर।
 रक्तपित्तहा—स्त्री० [सं०/रक्तपित्त/हृन् (हिंसा)+ङ+टाप्] रक्तानी नामक वृक्ष।
 रक्तपित्ती (सिन्)—पुं० [सं० रक्तपित्त+गिनि] वह जो रक्तपित्त रोग से ग्रस्त हो।
 रक्त-पुनर्वा—स्त्री० [कर्म० सं०] लाल गडधूरना। २. बीजाधी।
 रक्त-शुद्ध—पुं० [ब० सं०] १. करबीट। कनेर। २. अन्नार का पेड़। ३. गुलजुपरुहिया। बन्धूक। ४. युष्माग।

रक्त-शुल्क— $\sqrt{0}$ [सं० रक्तशुल्क+कन्] सेमल (वेध) ।
 रक्तशुक्ला—स्त्री० [सं० रक्तशुक्ल+टाप्] १. शाल्मली वृक्ष। सेमल।
 २. पुनर्नवा। ३. सिद्धरी। ४. चंपा केला। ५. नागपौल।
 रक्तशुष्किका—स्त्री० [सं० रक्तशुष्क+कन्+टाप्, ह्रस्व] १. लाल पुन-
 नवा। २. लज्जालू। काबरी।
 रक्तशुष्की—स्त्री० [सं० रक्तशुष्क+कीप्] १. जवा। अङ्गुल। २. नाग-
 पौल। ३. शी। शब। ४. भावतकी लता। ५. पाठर।
 रक्तशुष्किका—स्त्री० [कर्म० सं०] लाल रप की पूतिका। लाल पीई।
 रक्तसूरक— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] इमली।
 रक्तसूर्य—वि० [वृ० सं०] कून से लक्षण।
 रक्त-प्रतिश्याम— $\sqrt{0}$ [मध्य० सं०] प्रतिश्याम या युक्ताम का एक भेद
 जिसमे नाक से कून भी जाने लगता है।
 रक्त-प्रहर— $\sqrt{0}$ [मध्य० सं०] रिकयो के प्रहर रोग का बहु भेद जिसमें
 उनकी योगि से रक्त बहता है।
 रक्त-भेध— $\sqrt{0}$ [कर्म० सं०] दुर्गन्धियुक्त गरम, खारा और कून के रंग
 का पेयाव होने का एक दुष्क रोग।
 रक्त-प्रवृत्ति— $\sqrt{0}$ [सं० ब० सं०] पित्त के प्रकोप के फलस्वरूप होने-
 वाला रोग।
 रक्त-प्रसव— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] १. लाल कनेर। २. मूचकुंभ वृक्ष।
 रक्तफल— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] १. शाल्मलि। सेमल। २. बड़ का पेठ।
 बटमूला।
 रक्तफलता—स्त्री० [ब० सं०, +टाप्] १. कुंदरू। तुष्टी। बिबी। २.
 स्वर्णवल्ली।
 रक्त-फूल— $\sqrt{0}$ [सं० रक्त+हिं० फूल] १. जवा फूल। अङ्गुल का फूल।
 २. डाक। पलास।
 रक्त-फेनज— $\sqrt{0}$ [सं० रक्तफेन ष० सं०, रक्तफेन/जन् (उत्पन्न होना)
 +ङ] फुफ्फुस। फेफडा।
 रक्त-बीज— $\sqrt{0}$ =रक्त-बीज।
 रक्त-मध— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] मोस्त। मांस।
 वि० रक्त से उत्पन्न।
 रक्त-मंजरी—स्त्री० [ब० सं०] लाल कनेर।
 रक्त-मंजल— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] १. लाल कमल। २. सुश्रुत के अनुसार एक
 प्रकार का सौं। ३. एक जहरीला पशु।
 रक्त-मत्त-वि० [वृ० सं०] जो रक्त पीकर तुष्ट हो। रक्त पीकर मतवाला
 होनेवाला।
 पुं० १. रासस। २. खटमल। ३. जोक।
 रक्तमत्त— $\sqrt{0}$ [सं० कर्म० सं०] एक प्रकार की लाल रंग की मछली
 जो बहुत बड़ी नहीं होती।
 रक्त-मत्तक— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] लाल रंग के सिरवाला सारस पक्षी।
 रक्तमातृका—स्त्री० [सं० रक्त-मातृ ष० सं०, कन्+टाप्] १. बैधक
 के अनुसार शरीर का बहु रस (शार्तु) जिसकी उत्पत्ति पेट में पचे हुए
 भोजन से होती है और जिससे रक्त बनता है। २. तंत्र के अनुसार
 एक प्रकार का रोग।
 रक्त-मुक्क— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] १. रोग (मछली)। २. यष्टिक घास्य।
 वि० लाल मूहुवाला।

रक्तमूर्च्छा (जैन्)— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] सारस।
 रक्तमूला— $\sqrt{0}$ [ब० सं०, कन्] देवसर्प नामक सरसो का पौधा।
 रक्तमूह— $\sqrt{0}$ =रक्त-प्रमेह।
 रक्तमौला— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] बैधक मे एक प्रकार का उपचार या क्रिया
 जिससे शरीर का अथवा उसके किसी अंग का सारा कून बाहर निकाला
 जाता है। फसप खोलना।
 रक्त-मोचन— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] =रक्त-मोचन।
 रक्त-मण्डि—स्त्री० [ब० सं०] मंजीठ।
 रक्त-रंगा—स्त्री० [ब० सं०] मेहदी।
 रक्त-रज (स्)— $\sqrt{0}$ [कर्म० सं०] सिद्धर।
 रक्त-रसा—स्त्री० [ब० सं०, टाप्] रासा (कंद)।
 रक्त-रेणु— $\sqrt{0}$ [बि० सं०] १. सिद्धर। २. पुष्पाग।
 रक्त-रोग— $\sqrt{0}$ [मध्य० सं०] १. ऐसा रोग जिसके फलस्वरूप शरीर
 का रक्त दूषित हो जाता है। २. रक्त के दूषित होने के कारण उत्पन्न
 होनेवाला रोग।
 रक्तसा—स्त्री० [सं० रक्त+√ला (आधान)+क+टाप्] १. कफ-
 तुंभी। कौजा-ठोठी २. गुंजा। पुंषची।
 रक्तलोचन— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] १. कवूरत। २. कौयल। ३. सारस।
 ४. चकार।
 वि० लाल आँखोंवाला।
 रक्त-शब्दी—स्त्री० [कर्म० सं०] शीतला रोग। चेषक। माता।
 रक्त-सर्प— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] बैधक में, अनार, डाक, लाल, हलदी, दाघहल्ली,
 कुसुम के फूल, मंजीठ और दुपहरिया के फूल, इन सबका
 समूह।
 रक्त-सर्प— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] १. कीपजहदी नामक कीड़ा। २. मोमेव या
 लहसुनिया नामक रत्न। ३. मृगा। ४. कमीला।
 वि० लाल रंग का।
 रक्त-सर्पक— $\sqrt{0}$ [कर्म० सं०] लाल बटेर।
 रक्त-सर्पक—वि० [सं० रक्त+√शुष् (वृद्धि)+णिवृ+स्य-अन] रक्त
 बढ़ानेवाला। रक्त सर्पक।
 पुं० बेंगन। भंटा।
 रक्त-सली—स्त्री० [कर्म० सं०] १. मंजीठ। २. नलिका या पचारी
 नामक मय्य इव्य। ३. बडोत्पल। ४. पित्ती नाम की लता।
 रक्त-सस्तन— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] संव्यासी।
 रक्त-सह-संघ— $\sqrt{0}$ [सं० रक्त/वह (ले जाना)+अवृ रक्तवह-
 त्तन ष० सं०] शरीर की वे सब शिराएँ और जग, जो शरीर शरीर
 में रक्त पहुँचाने में सहायक होते हैं। (सर्कुलेटो सिस्टम)
 रक्त-शास— $\sqrt{0}$ [मध्य० सं०] वात-रक्त (दे०)।
 रक्त-शास्त्रक— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] सिद्धर।
 रक्त-शिवु— $\sqrt{0}$ [ब० सं०] १. सिरप या लहू की बूँद। २. [ब० सं०]
 लाल चिचडा। ३. [कर्म० सं०] रत्न आदि में दिखाई पड़नेवाला
 भन्वा जिसकी गिनती दोषों में होती है।
 रक्त-शिक्षि— $\sqrt{0}$ [मध्य० सं०] रक्त-शिकार के फलस्वरूप होनेवाला
 एक प्रकार का कोड़ा। इसमें किसी अंग में सूजन होती है और उसके
 शरीरों और कले रंग की फुसियाँ हो जाती हैं।

रक्त-विशेषकोष—गुं [बं सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें शरीर में गुंजा के समान लाल लाल कफोले पड़ जाते हैं।

रक्त-बीज—गुं [बं सं०] १ लाल बीजवाला दाबिम। अतार। २ रीठा। ३. शूभ्र और निशूभ्र का वेतापति एक राक्षस जिसके सम्बन्ध में प्रसिद्ध है कि भरती पर गिरनेवाली उसको रक्त की हूर एक मूत्र से एक एक राक्षस उत्पन्न होते थे।

रक्त-बीजा—स्त्री० [बं सं० टाप्] मिद्धूरुष्यी। सिद्धूरिया।

रक्त-भूषक—गुं [मं कर्म० सं०] गुनर्तवा। गदकपूरुतवा।

रक्त-बुला—स्त्री० [सं० बं सं०, टाप्] मेफालिका। निम्बडी।

रक्त-बुष्टि—स्त्री० [बं० मं०] आकाश से रक्त या लाल रंग के पानी की बुष्टि होना। दे० 'सधिर-वर्षण'।

रक्त-वर्ण—गुं [मध्य० मं०] वह फोडा जिसमें मवाद के स्थान पर रक्त निकलता ही।

रक्त-शर्करा—स्त्री० [मध्य० सं०] शर्करा का वह तत्व जो शरीर के रक्त में रहता है। (सख्य शूगर)

रक्त-शालि—गुं [कर्म० मं०] एक प्रकार का लाल रंग का चावल। दाज्जतवासी।

रक्त-शासन—गुं [सं० रक्त+शास् (वश में करना)+स्यु-अन] मिद्धूर।

रक्त-शिपु—गुं [कर्म० सं०] लाल सहजन।

रक्तशीघ्रक—गुं [सं० बं सं०, कप्] १ गधा बिरोजा। २ शारस पत्ती।

रक्त-शुंग—गुं [कर्म० मं०] हिमालय की एक चाँटी।

रक्त-श्वेत—गुं [कर्म० सं०] एक तरह का अत्यधिक जहरीला विषयु। (शुधुन)।

रक्तच्छोदि—गुं [सं० रक्त+च्छोदि (धूकना)+गिति, उप० सं०] एक प्रकार का घातक और अमाध्य सप्रिपत जिसमें मूँह से रुद्ध जाता है।

रक्त-संज्ञक—गुं [बं०, सं०, कप्] कुमुद। केसर।

रक्त-संघर्ष—गुं [बं० तं०] कुलात सम्बन्ध। एक ही कुल, परिवार या वंश की दृष्टि से होनेवाला सम्बन्ध।

रक्त-संवरण—गुं [बं० तं०] सुरमा।

रक्त-संघर्ष—गुं [कर्म० सं०] लाल सरसो।

रक्त-सार—गुं [बं० सं०] १ लाल चदन। २ पत्तय। बककम। ३. अमलबेत। ४ खदिर। खैर। ४ बाराही कद। मेठी। ६ रक्त-बीजासन।

रक्त-स्तंभन—गुं [बं० तं०] शरीर के किसी अंग से बहते हुए रक्त को बंद करना या रोकना।

रक्त-आध—गुं [बं० तं०] १ शरीर के किसी अंग से रक्त निकलना या बहना। २ घोड़ी का एक रोग जिसमें उनकी आँखों से रक्त या लाल रंग का पानी बहता है।

रक्त-हर—गुं [बं० तं०] मिलावा।

वि० रक्त सुमाने या सोनेवाला।

रक्तांग—गुं [रक्त-अंग बं० सं०] १ मगल ग्रह। २. कर्मेला। ३ मूंगा। ४ खटमल। ५ केसर। ६ लाल चन्दन।

वि० लाल अंगोंवाला।

रक्तांगी—स्त्री० [सं० रक्तांग+ङीप्] १ मजीठ। २ जीवंती। ३. कुटकी।

रक्तांबर—गुं [रक्त-अंबर कर्म० सं०] १. लाल वस्त्र। रोक्का वस्त्र। २ [बं० सं०] संन्यासी, जो रोक्का वस्त्र पहनता है।

रक्ता—स्त्री० [सं० रक्त+अच्+टाप्] १ संगीत में, पचम स्वर की चार ध्रुतियों में से दूसरी ध्रुति। २. गुंजा। ध्रुपची। ३ लाखा। लाख। ४ मजीठ। ५ जैत्रकटार। ६ एक प्रकार का सेम। ७ लक्ष्मण नामक कन्द। ८ वज्र। वचा। ९ एक प्रकार की मकड़ी। १० ज्ञान के पाय की एक नस।

रक्ताकार—गुं [रक्त-आकार बं० मं०] मूंगा।

रक्तास्त्र—वि० [रक्त-अस्त्र तु० सं०] १ लाल रंग में रंगा हुआ। २ जिंममें रक्त या मून लगा हो।

गुं लाल चदन।

रक्ताक्ष—गुं [रक्त-अक्षि बं० सं०, षच् प्रत्य०] १. कौयल। २. चकोर। ३. सास। ४ कभूतर। ५ भैंसा। ६ साठ संबत्सरो में से अठदाशवने सत्सतर का नाम।

वि० लाल अर्धोवाला।

रक्तासिसार—गुं [सं० रक्त-असिसार मध्य० सं०] एक प्रकार का असिसार रोग जिसमें कूह के दन्त आते हैं।

रक्ताधर—वि० [रक्त-अधर बं० सं०] [स्त्री० रक्ताधार] लाल हीटो-वाला।

रक्ताधरा—स्त्री० [रक्त-अधर बं० सं०, टाप्] मित्ररी।

रक्ताधार—गुं [रक्त-आधार षं० तं०] चमड़ा।

रक्तापह—गुं [सं० रक्त-अप+हृत् (हिसा)+घ] ब्यां (यधप्रत्ये)।

रक्ताभ—गुं [रक्त-आभा बं० सं०] बीरवहटी।
वि० रक्त की तरह की लाल आभावाला। जो कुछ कुछ लाली लिये ही।

रक्ताभा—स्त्री० [सं० रक्ताभ+टाप्] लाल जवा।

रक्ताभ्र—गुं [रक्त-अभ्र कर्म० सं०] लाल अभ्रक।

रक्ताभ्रि—गुं [रक्त-अभ्रि षं० तं०] महागाण्डी नामक क्षुण (पीषा)।

रक्तार्बुद—गुं [रक्त-अर्बुद बं० सं०] १. एक प्रकार का रोग जिसमें शरीर में पकने और बहनेवाली गाँठें निकल आती हैं। २. सूक्ष्मदोष के कारण उत्पन्न होनेवाला एक रोग जिसमें लिंग पर, कानों फोड़े और उनके साथ लाल कुसियाँ निकल आती हैं।

रक्तासं (संघ)—गुं [रक्त-असंघ मध्य० सं०] खुरी बवासीर।

रक्तासु—गुं [रक्त-आसु कर्म० सं०] रतासु। (कद)

रक्ताशरीरक—वि० [रक्त-अशरीरक षं० तं०] बहते हुए खून को रोकने-वाला।

रक्ताश्वेज—गुं [रक्त-अश्वेज षं० तं०] १ शरीर के मात आशयो में से चोँघा जिसमें रक्त का रहना माना जाता है। २. रक्त-मोक्षण।

रक्ताशोक—गुं [रक्त-अशोक कर्म० सं०] लाल अशोक का वृक्ष।

रक्ति—स्त्री० [सं०+रत् (राग)+क्ति] १. अनुगम। प्रेम।

२ स्त्री नामक तौल या परिमाण।

रक्षिका—स्त्री० [सं० रक्ष+ङ्—इक, टाप्] १. चुंबकी। २. रक्षी नामक लौह या परिष्कार।

रक्षिता (अन्)—स्त्री० [सं० रक्ष+इमनिच्] रक्षित होने की अवस्था या भाव।

रक्षोत्पत्—पुं० [रक्ष+इत् कर्म० सं०] लाल रंग का ऊख।

रक्षोत्पत्क—पुं० [रक्ष+उत्पत्क, कर्म० सं०] १. लाल कपड़। २. धारमणि। सेमल।

रक्षोत्तर—पुं० [रक्ष+उत्तर ब० सं०] १. दौड़ मछली। २. एक प्रकार का जहूरीला बिच्छू।

रक्षोत्पर्व—पुं० [रक्ष+उपपत्, मध्य० सं०] आतषाक (रोग)।

रक्षोत्पत्क—पुं० [रक्ष+उत्पत्, कर्म० सं०] गेहूँ।

रक्ष—पुं० [सं०√रक्ष् (पालन)+अच्] १. रक्षक। रक्षवाला।

२. रक्षा। रक्षवाली। हिजाजत। ३. कासा। लास। ४. छत्पय के साठवें भेद का नाम जिसमें ११ गुह और १३० लघु मात्राएँ अथवा ११ गुह और १२६ लघु मात्राएँ होती हैं।

पु०=राक्षस।

रक्षक—पुं० [सं०√रक्ष्+ण्वल्—अक] १. रक्षा करनेवाला। बचाने-वाला। हिजाजत करनेवाला। २. पहरेदार। ३. पालन-पोषण करनेवाला।

रक्षण—पुं० [सं०√रक्ष्+ण्वल्—अन] १. रक्षा करना। हिजाजत करना। रक्षवाली। २. पालन-पोषण करना। ३. रक्षक।

रक्षणकर्ता (सं)—पुं० [ब० सं०] रक्षा करनेवाला। रक्षक।

रक्षणार्थ—वि० [सं०√रक्ष्+अर्थीयर] [स्त्री० रक्षणीया] रक्षा किये जाने के योग्य। जिसे रक्षित रखना हो।

रक्षान—पुं०=रक्षान।

रक्षाना*—स० [सं० रक्षण] रक्षा करना। हिजाजत करना। संभालना। बचाना।

रक्षपाल—पुं० [सं० रक्ष+पाल् (रक्षा)+णिच्+अण, उप० सं०] वह जिसका काम रक्षा करना हो।

रक्षमाण—वि०=रक्षमाण।

रक्षस*—पुं०=राक्षस।

रक्षा—स्त्री० [सं०√रक्ष्+अटाप्] १. ऐसा काम जो आक्रमण, आघात, अपहर, नारा आदि से बचने या बचाने के लिए किया जाता हो। हिजाजत। जैसे—अपनी रक्षा, घर की रक्षा, सकट में पड़े हुए मित्र की रक्षा। २. बालकों को भूत-प्रेत, नजर आदि से बचाने के उद्देश्य से बोधा जानेवाला यंत्र या सूत्र। कबज। ३. मोड़। ४. प्रस्न।

रक्षाद्वय*—स्त्री० [हिं० रक्ष+आद्वय (प्रत्य०)] राक्षसपन।

रक्षा-कवच—पुं० [मध्य० सं०] १. तत्र-भत्र की विधि से बनाया हुआ वह कवच या यत्र जो किसी को आपत्तियों आदि से रक्षित रखने के लिए पहनाया जाता है। २. कोई ऐसी चीज या बात जो सब प्रकार से किसी की रक्षा करने के लिए यथेष्ट मानी जाती हो। (सेफ-मार्ब)।

रक्षा-गृह—पुं० [ब० सं०] १. चौकी। २. सूतिका-गृह। जन्घा-खाना।

रक्षा-पत्ति—पुं० [ब० सं०] अगर का हासन तथा रक्षा का प्रबंध करने-वाला एक प्राचीन भारतीय अधिकारी।

रक्षा-धम—पुं० [ब० सं०] १. भोजपन। २. सफेद सरसों।

रक्षापात्र—पुं० [सं० रक्षा+पात्र् (बचाना)+णिच्+अण्] पहरेदार। प्रहरी।

रक्षा-पुष्प—पुं० [ब० सं०] पहरेदार। प्रहरी।

रक्षापेयक—पुं० [रक्षा+अपेयक ब० सं०] १. पहरेदार। प्रहरी। २. अंत-पुत्र का पहरेदार। ३. अभिनेता। मंद।

रक्षा-प्रदीप—पुं० [ब० सं०] भूत-प्रेत आदि की बाधा से बचे रहने के उद्देश्य से जलाया जानेवाला दीपक। (तंत्र)

रक्षा-बंधन—पुं० [ब० सं०] १. किसी के हाथ में रक्षासूत्र बांधने की क्रिया या भाव। २. हिंदुओं का एक त्यौहार जो श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को होता है; और जिसमें बहुत अपने भाई तथा पुरोहित अपने बचपान की कलाई पर रक्षा-सूत्र बांधता है।

रक्षा-भूषण—पुं० [ब० सं०] वह भूषण या अंतर जिसमें किसी प्रकार का कवच आदि हो और जो भूत-प्रेत या रोग आदि की बाधाओं से रक्षित रहने के लिए पहना जाय।

रक्षा-मंगल—पुं० [ब० सं०] भूत-प्रेत आदि की बाधा से रक्षित रहने के उद्देश्य से किया जानेवाला अनुष्ठान।

रक्षामणि—पुं० [ब० सं०] वह मणि या रत्न जो किसी ग्रह के प्रकोप से रक्षित रहने के लिए धारण किया जाय।

रक्षा-रत्न—पुं०=रक्षामणि।

रक्षासूत्र—पुं० [ब० सं०] वह मंत्रपूत सूत या बीरत जो हाथ की कलाई में रक्षा-काक मानकर बांधा जाता है। राक्षी।

रक्षिक—वि० [सं०√रक्ष्+णिति+कन्] रक्षक।

पु० पहरेदार। सवरी।

रक्षिका—स्त्री० [सं० रक्षकन्-टाप्, ह्रस्व, इत्] रक्षा। हिजाजत।

रक्षित—पुं० क्त० [सं०√रक्ष्+क्त] [स्त्री० रक्षिता] १. जिसकी रक्षा की गई हो। हिजाजत किया हुआ। २. पाला-पीसा हुआ। ३. संभाल कर रखा हुआ। जैसे—रक्षित वन। ४. किसी विशिष्ट कार्य, व्यक्तित्व आदि के उपयोग के लिए निश्चित किया या बहरेखा हुआ।

रक्षित-राण्य—पुं० [सं० कर्म० सं०]=संरक्षित-राजत।

रक्षिता—स्त्री० [सं० रक्षित्+तल्+टाप्] १. रक्षा। हिजाजत। २. [रक्षित+टाप्] मिना विद्याह किये रक्षी हुई स्त्री। रक्षेती स्त्री।

रक्षिता (सु)—पुं० [सं०√रक्ष्+तृच्]=रक्षक

रक्षी (लिप्)—पुं० [सं०√रक्ष्+णिति] १. रक्षक। २. पहरेदार। प्रहरी। पुं० [हिं० रक्षत् से] वह जो राक्षसों की उपसर्ना करता हो।

रक्षी-बल—पुं० [सं० रक्षि-बल] आरक्षी (गुलिस) विभाग के साधारण सिपाहियों के वर्ग का सांस्कृतिक नाम। (कान्स्टेबुलरी)

रक्षोज—पुं० [सं० रक्षसहृत् (हिंसा)+टक्] १. हींग। २. जिलावा। ३. सफेद सरसों। ४. चावल का वह वर्ण या मांस जो कुछ समय तक रखने से सफ़्टा हो गया हो।

रक्षोजी—स्त्री० [सं० रक्षोजन+डीप्] बचा। बच।

रक्ष्य—वि० [सं०√रक्ष्+ण्वल्] जिसकी रक्षा करना उचित या कर्तव्य हो। रक्षणीय।

रक्ष्यमाण—वि० [सं०√रक्ष्+लट् (कर्मणि)—शानच्, थक् मुगामग] जिसकी रक्षा की जा सके या की जाने की हो।

रक्षत्—पुं० [ब० सं०] १. नाच। नृत्य। २. किसी चीज का इस प्रकार बार

बार इबार-उबार हिलना-बोलना या भूमना कि वह नाचती हुई जान पड़े।
जैसे—बामा का रक्षक=मोमबत्ती की लौ का हुवा में हिलना-बोलना।

रक्षे-साकल—पुं० [अ०+का०]=मोर-नाच (देखें)।

रखा—स्त्री० रखा (बरी)।

रखती—स्त्री० [रि०+इ] ईश की एक जाति।

रखना—पुं०=रखती।

रखना—स० [सं० रखण, प्रा० रक्खणा] १. किसी आधार, तल, वस्तु, व्यक्ति, स्थान, आदि पर कोई चीज टिकाना, धरना, लापना या स्थापित करना। जैसे—(क) मेज पर गिलास रखना। (ख) मुँह पर हाथ रखना। (ग) बोझ पर असबाब रखना। २. किसी वस्तु को सुरक्षित की देने, सीपने या समर्पित करने के उद्देश्य से उपस्थित करना या छोड़ देना। जैसे—किसी पर नियंत्रण का भार रखना। ३. किसी व्यक्ति को किसी विशिष्ट पद पर या स्थिति में नियुक्त या स्थापित करना। वैनत या मुकदर करना। जैसे—पर के काम के लिए नौकर या कौड़ी के काम के लिए मजूरी रखना। ४. कोई बात या विषय किसी के सामने समझाने आदि के लिए उपस्थित या प्रस्तुत करना। जैसे—(क) पसंद करने के लिए गाहक के सामने चीजे रखना। (ख) अदालत के सामने मामला या सबूत रखना। (ग) श्रोताओं के सामने उदाहरण अथवा प्रसंग रखना। ५. कोई चीज या बात इस प्रकार अपने अधिकार या बचा मे करना कि उसका दुस्परयोग न हो सके, अथवा वह दूसरे के अधिकार मे न जा सके। जैसे—(क) सी रुपए हमने अपने पास रखे हैं। (ख) यह बात अपने मन मे रखना; अर्थात् किसी से कहना मत।

रखना—(किसी का) कुछ रख लेना—इस प्रकार अपने अधिकार मे कर लेना कि उसका वास्तविक स्वामी उसे पा या ले न मके। दबा लेना। जैसे—उन्होंने हमारा सारा काम भी रख लिया; और हमें रुपए भी नहीं दिये।

६. किसी प्रकार के उपयोग के लिये चीजे एकत्र करना। संचय या संचय करना। जैसे—(क) यह नूतनवार सस तरह की चीजें रखता है। (ख) हम हस्तलिखित ग्रन्थ और पुराने सिक्के रखते हैं। ७. पालन-पोषण, मनीषिणा, व्यवहार आदि के लिए अपने अधिकार में करना। अपनी अन्यायता मे लेना। जैसे—(क) कम्बूत, कुत्ता या गौ रखना। (ख) गाड़ी, घोड़ा या मोटर रखना। (ग) रबी, रबेली रखना। ८. किसी के टिकने, ठहरने या रहने के लिए स्थान की व्यवस्था करना। टिकाना। ठहराना। जैसे—बरातियों की तो उन्होंने अपने बगिचे मे रखा; और नौकर-न्कारों को धर्मशाला में। ९. किसी प्रकार का आरोप करना। जिम्मे लगाना। सिर मढ़ना। जैसे—मुस तो सदा सारा दोष मुझ पर ही रखते हैं। १०. कोई चीज गिरवी या बंधक मे देना। रखत करना। जैसे—पर के गहने रख कर ये ५०० लाया हूँ। ११. किसी का ऋणी या कर्जदार होना। जैसे—हम उनका कुछ रखते नहीं हैं, जो उनसे ढरबें। १२. किसी पुण्य का किसी स्त्री को (या किसी स्त्री का पर-पुण्य को) उपपत्नी (या उपपति) के रूप मे ग्रहण करने उसे अपने यहाँ स्थापन देना। जैसे—विष्णवा होने पर अपने अपने देवार (परपत्नी) को रख लिया था। १३. संसर्ग-संयोग या सबास करना। (बाबाए) जैसे—एक दिन तो तुमने भी उसे रखा था। १४. सामा-

जिक व्यवहार आदि में परंपरा, संबंध आदि का निर्बाह या पालन करना। बिगड़ने न देना। जैसे—(क) तुम मले ही सबसे लड़ते फिरो, पर हमें तो सबसे रखना ही पड़ता है। (ख) वह ऐसी कर्कशा और कलहणी थी, कि उसने अपने किसी रिस्तेदार से नहीं रखी। १५. किसी चीज की देख-भाल या रखवाली करना। विपत्ति, हानि आदि से रखा करना। १६. उक्त पुरुखा की बुद्धि से कोई चीज किसी के पास छोड़ना। सुरक्षित करना। जैसे—अभी यह पड़ी अथवा के पास रख दो, जकरत पड़ने पर ले लेना।

संयो० किं०=देना।

१७. ऐसी स्थिति मे रखना या लाना कि जाने, निकलने या भागने न पावे। (प्रायः संयो० किं० के रूप मे प्रयुक्त) जैसे—दबा रखना, भार रखना, रोक रखना। १८. कुछ विशिष्ट मनोवैयो के सबब मे, मन मे दृष्टापूर्वक धारण करना या स्थापन देना। जैसे—आधा या भरोसा रखना। १९. आधा, अर्द्ध आदि के रूप मे जमाना या लाना। (बव०) जैसे—उतने लठी का एक ऐसा हाथ रखा कि लठके का सिर फूट जाय। २०. कोई काम या बात किसी और समय के लिए स्थगित करना। जैसे—अब इसका निश्चय कल पर रखो। २१. किसी रूप मे किसी पर अवलम्बित या आश्रित करना। जैसे—(क) किसी के कंधे पर हाथ रखना। (ख) लभो या बीवारो पर छत रखना।
रखना—(कोई बात किसी पर) रखकर कहना—इस प्रकार कोई बात कहना कि उसका कुछ अथ किसी पर ठीक घटता या सामक होता हो। किसी को आरोप का लक्ष्य बनाकर कोई बात कहना। जैसे—मैंने तो वह बात उन पर रख कर कही थी; तुम उसे व्यर्थ अपने ऊपर ले गये। २२. पथियों आदि के सबब मे, अर्बे देना। जैसे—यह मुरची साल मे पचास अर्बे रखती है।

विशेष—(क) कुछ अहसाथो मे यह क्रिया दूसरी क्रियाओं के साथ संयो० किं० के रूप में लगकर किसी कार्य में पूर्णता, समाप्ति आदि भी सूचित करती है। जैसे—कह रखना, बचा रखना, माँग रखना, ले रखना आदि। (ख) कुछ अवस्थाओं मे साक्षात् के साथ लगाकर यह क्रिया कुछ मुद्धारभे भी आती है। जैसे—दाम रखना। ऐसे अर्थों के लिए ये सजाएँ देखें। (ग) कुछ अवस्थाओं मे इस क्रिया के साथ कुछ और क्रियाएँ भी संयो० किं० के रूप मे आती हैं। जैसे—रख छोड़ना, रख देना, रख लेना। ऐसे अवसरो पर भी प्रायः क्रिया की पूर्णता या समाप्ति ही सूचित होती है।

पुं० [अ० रखण] १ छंद। सुराख। २ ऐंव। दोष। ३ बाया। रफायत।

रखनी—स्त्री० [हिं० रखना+इ (नय०)] वह स्त्री जिससे विवाह सबब न हुआ हो और जो योही पर मे पत्नी के रूप मे रख ली गई हो। रखेली। मुरतित।

किं० प्र०=अवना।—रखना।

रख-रखाव—पुं० [हिं० रखना+रखाना] १ रखा। हिफाजत। २. मर्यादा, परंपरा, व्यवहार, सम्बन्ध आदि का उचित रूप मे होनेवाला निर्बाह। उदा०—हुनिया है रख-रखाव की, इस्से संभल के चल।—कोई बाया। ३. दोनो पत्नी की बात रखने तथा उभरें संतुष्ट करने की क्रिया या माग। ४. पालन-पोषण।

कि० प्र०—खाना।—देना।—लगाना।
रघुनी—वि० [हि० रगहा+ई (प्रत्य०)] रगहा अर्थात् लडाई-सगडा या कुञ्जत करनेवाला। सगहावाली। कुञ्जती।
रघुन—पु० [स० रघ० त०] छद्म-शास्त्र में ऐसे तीन वर्णों का गण या समूह जिसका पहला वर्ण गुह, दूसरा लघु और तीसरा किरगुह होता है (315)।
रघुन—पु०—रघुनत्।
रघुना—स०—रघुना (दे०)।
रघुनल—वि० [हि०] कुञ्जवा।
रघु-पट्टा—पु० [का० रग+हि०पट्टा] १. शरीर के भीतरी निग्र-निग्र अंग, मुख्यतः रंगे और मास-नेत्रियाँ। २. किसी विषय की भीतरी और सूक्ष्म बातें।
रघुना—(किसी के) रग पट्टे से परिचित या बार्तिक होना। किसी के रग-रंग, धास्ति, स्वभाव आदि से परिचित होना। सूत्र पहचानना।
रघुपति—पु०—रघुपति।
रघुपत्त—स्त्री० [अ० रघुपत्त] १. इच्छा। कामना। चाह। २. किसी काम या बात की ओर होनेवाली व्युत्पत्ति या रुचि।
 कि० प्र०—जाना।—खलना।—होना।
रघुरा—स्त्री०—रगइ।
रघुरा—पु०—रगइ।
रग-रेखा—पु० [का० रग+रेखा] १. शरीर के अन्दर के अंग। २. पत्नियों की नसें।
 पद—रग-रेखे में—सारे शरीर में। अंग-अंग में। जैसे—शरारत तो उसके रग-रेखे में भरी है।
 ३. किसी काम, बात या वस्तु के अन्दर की गुप्त और सूक्ष्म बातें। जैसे—यह इस काम के रग-रेखे से बार्तिक है।
रगखाना—स० [हि० रगाना का प्र०+रु] १. चुप कराना। २. शांत कराना।
रगा—पु० [देश०] मोर।
रगाना—अ० [देश०] १. चुप होना। २. शांत होना।
 स० १. चुप कराना। २. शांत करना।
रगी—स्त्री० [देश०] १. एक प्रकार का मोटा अन्न।
 [स्त्री०—रगी।
 वि०—रगीला।
रगीला—पु० [हि० रग=जिद+ईला (प्रत्य०)] [स्त्री० रगीली] १. हटा। जिद्दी। दुरावही। २. दुष्ट। पाजी।
 वि० [हि० रग] जिसमें रंगे या नरम हो। रगी से युक्त। रगीवाला।
रगेव—स्त्री० [हि० रगेवना] बोझे या भागने की क्रिया।
रगेवना—ग० [स० रंठ, हि० रगेवना] किसी को डकेलते, धक्का देते या बोझते हुए दूर करना या हटाना। बल-प्रयोग करते हुए भगाना।
 अदेवना।
 सवो० कि०—देना।
रगा—पु० [देश०] एक प्रकार का मोटा अन्न। रगी।
 [पु०—रगी।
रगी—स्त्री० [?] बहु भूप विशेषतः वर्षा ऋतु की कड़ी भूप जो पानी बरस

जाने और बादल छट जाने पर निकलती है।

[स्त्री०—रगी।

रघु—पु० [स०/लघु(गति)+ङु, नलोप, रत्न] १. सूर्यवशी रघुना दिलीप के पुत्र जो रामचन्द्र के परदादा और प्रसिद्ध रघुनाश के मूल पुत्रच तथा सस्थापक थे। २. रघु के वंश में उत्पन्न कोई व्यक्ति।
रघु-कुल—पु० [ष० त०] राजा रघु का वंश।
रघु-नायक—पु० [ष० त०] रघु/नन्द (हर्ष) +गिञ्+अच्] श्रीरामचन्द्र।
रघुनन्द—पु० [स० रघु/नन्द+गिञ्+अच्+अन] श्रीरामचन्द्र।
रघु-नाथ—पु० [ष० त०] श्रीरामचन्द्र।
रघु-नायक—पु० [ष० त०] श्रीरामचन्द्र।
रघु-पति—पु० [ष० त०] श्रीरामचन्द्र।
रघुरा—पु०—रघुराज (श्रीरामचन्द्र)।
रघुराज—पु० [ष० त०] श्रीरामचन्द्र।
रघुराय—पु०—रघुराज।
रघुरिया—पु०—रघुराय।
रघु-वत्—पु० [ष० त०] महाराज रघु का वंश या खानदान जिसमें दशरथ और रामचन्द्र जी उत्पन्न हुए थे। २. महाकवि कालिदास का रत्ना हुआ एक प्रसिद्ध महाकाव्य जिसमें राजा दिलीप की कथा और उनके बचपों का वर्णन है।
रघुवंश-कुमार—पु० [ष० त०] श्रीरामचन्द्र।
रघुवशी (गति)—ग० [स० रघुवशी+इनि] १. वह जो रघु के वंश में उत्पन्न हुआ हो। २. क्षत्रियों की एक जाति या शाखा।
रघु-वर—पु० [स० त०] श्रीरामचन्द्र।
रघु-वीर—पु० [स० त०] श्रीरामचन्द्र।
रघुसप्त—पु० [रघु+उत्तम स० त०] श्रीरामचन्द्र।
रघुद्वह—पु० [रघु+उद्वह ष० त०] श्रीरामचन्द्र।
रघुनी—स्त्री० [देश०] बड़े व्यापारियों या आबतियों की ओर से छोटे दूकानदारों या व्यापारियों की भेजा जानेवाला वह पत्र जिसमें बीजों के भाव लिखे होते हैं। दर या भाज का परिपत्र। (रंठ सवर्णुल)।
रघुनी—पु० [हि०] मतोष। सत्र।
रघुन—पु० [स०/रघु(रचना)+गिञ्+अच्+अङ] रचयिता।
 [वि०—रघुनक।
रघुना—स्त्री० [स०/रघु+गिञ्+अच्+अङ+टाप्] १. कोई बीज रघुने अर्थात् बनाने की क्रिया या भाव। जैसे—फूलों से होनेवाली मालाओं की रघुना। निर्माण। २. किसी बीज के बनाने जाने का उद्योग प्रकार जो उसका स्वच्छ निश्चित करता है। बनावट। ३. बनाकर तैयार की हुई बीज। कृति। जैसे—किसी कवि या लेखक की नई रघुना।
 ४. कोई बीज कोषालरूपक और सुंदर रूप में बनाने की क्रिया या भाव। जैसे—अनेक प्रकार की केला-रघुनाएँ। ५. स्थापित करने की क्रिया। स्थापना। ६. उद्यमपूर्वक क्रिया हुआ काम। ७. ऐसा गद्य या पद्य जिसमें कोई विशेष कोषाल या चमत्कार हो। ८. पुराणानुसार विश्वकर्मा की पत्नी का नाम।
 सं० [स० रघुन] १. कोई बीज हाथसे बनाकर तैयार करना। बनाना। गिरजना। २. किसी बात का विधान या स्वच्छ विवर करना। ३. किसी प्रकार की कृति प्रस्तुत करना।

बैसे—कविता या पुस्तक रचना। ४. उत्पन्न करना। पैदा करना।
 ५. किसी काम या बाल का अनुकूलन करना। ठानना। ६. अच्छी तरह ध्यान देते हुए कोई काम या उपाय करना या युक्ति लगाना।
 ७. यत्—रचि रचि—बहुत ही अच्छी तरह और ध्यान तथा युक्तिपूर्वक।
 ८. किसी प्रकार की काव्यनिक कृति, रूप या सृष्टि खची करना। ८. अच्छी तरह संवारना-सजवाना। सुगार करना। ९. उचित क्रम से चीजें रखना या लगाना।

बं० [सं० रचना] १. किसी के प्रेम में फँसना। किसी पर अनुरक्त होना।
 २. रंगों से युक्त होना। रंगा जाना। ३. किसी चीज का अच्छी तरह और सुन्दर रूप में बनाकर प्रस्तुत होना। ४. आकर्षक और सुन्दर जान पड़ना। फवना। जैसे—उसके मुँह में पान और हाथ-पैरों में मेहंदी अच्छी रचनी है।

सं० १. रंगों से युक्त करना। रेंगना। २. किसी के साथ अनुराग या प्रेम का सबब स्थापित करना। जैसे—बीटी से बच सपन्न से रच।—कहा०।
 वि० [स्त्री० रचनी] जो सहज में रच सके; अर्थात् अच्छा रंग या रूप ला सके। जैसे—बाहू! यह कैसी अच्छी रचनी मेहंदी है।

रचना-संज्ञ—सं० [च० तं०] १. किसी कलात्मक कृति का वह अंग या अंग जो उसके रचना-कौशल से सबब रचता ही और जो सुझों के रूप में बद्ध हो सकता हो। रचना का कलात्मक और कौशलपूर्ण प्रकार। तकनीक। (टेक्निक) २. उक्त की अवस्था या भाव। प्राविधिकता। (टेक्निकैलटी)

रचना-संज्ञी—वि० [सं० रचनासंज्ञी] रचना-संज्ञ से सबब रचनेवाला। (टेक्निकल) जैसे—किसी कृति का रचनासंज्ञी ज्ञान।

रचयिता (सु)—वि० [सं० रच+यिन्+तृच्] रचना करने या रचने वाला। बनानेवाला।

रचवाना—सं० [हिं० रचना का प्रेर० रूप] १. दूसरे को रचना करने में प्रवृत्त करना। २. हाथ-पैर में मेहंदी या महाभर लगवाना। ३. अनुरक्त करना। ४. सुन्दर रूपका विलगना।

रचाना*—सं० [सं० रचना] १. अनुकूल या आधोजन करना। जैसे—व्याह रचाना, यज्ञ रचाना। २. दे० 'रचवाना'।
 ↑अ०, सं०=रचना।

रचिका—अव्य० [हिं० रच] घोड़ा। अरप।

रचिक—सं० कृ० [सं० रच+णिकृ+क्त] १. रचा अर्थात् बनाया हुआ।

२. कृति आदि के रूप में प्रस्तुत किया हुआ।

रची—अव्य०=रचिक।

रच्छा—सं०=रक्षा।

रच्छक—सं०=रक्षक।

रच्छन+सुं=रक्षण।

रच्छसा—सं०=रक्षास।

रच्छा—स्त्री०=रक्षा।

रच्छा—स्त्री०=रक्षा। उदा०—दान करे रच्छा मेस मीर।—जायसी।

रच (सु)—सं० [सं० रच (राप्) +अनुत्, नलोप] १. गर्ब। फूल। २. गर्ब या फूल के वे छोटे-छोटे कण जो घूप में धर-उबर चलते हुए दिखाई देते हैं। ३. आठ परमाणुओं की एक पुरानी तैली या माव। ४. कुलों का पराग। ५. मोता हुआ खेत। ६. आकाल। ७. जल। पानी।

८. माप। बाष्प। ९. बादल। मेघ। १०. भुवन। लोक। ११. स्वेतपापड़ा। १२. पाप। १३. अक्षकार। अंधेरा। १४. मन में रक्षे-बाला अज्ञान; और उसके कल-स्वभाव उत्पन्न होनेवाले प्रथित भाव।

१५ एक प्रकार का पुराना बाना जिसपर चमड़ा मड़ा होता था। १६. पुराणानुसार एक ऋषि जो बलिष्ठ के पुत्र को गये हैं। १७ वायिक लोको में, प्रथम के तीन गुणों में से दूसरा जिसके कारण जीवों में भीम-विलास करते तथा बल-वीर्य के प्रदर्शन की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है।

रचीपुषा। (अथ द्यौ घृणु सत्त्व और तम हैं। १८ वह दूषित रक्त जो युवती तथा प्रौढा रिजियों और स्तनपायी मादा जंतुओं की पीमि से प्रति मास तीन बार बिना तक बराबर निकलता रहता है। आसंघ।

रक्षु। कुसुम। १९. स्वर्ण की एक सेना का नाम। २०. केसर। वि० [हिं० राजा] हिं० 'राजा' का वह सक्षिप्त रूप जो उसे वैयंगिक पथों के आरंभ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—रजबाबा।

रक्षी०=रजनी (राज)।

रक्षु० १ =रजत (चौबी)। २. रजक (चौबी)।

रजगत—स्त्री० [ब० रजगत] १. नायक जाना। लौटाना। प्रयागमान।

२. जिस स्त्री को तलाक दिया गया हो, उसे फिर से अपनी पत्नी बनाना। (पुनरालो)

रजक—सं० [सं० रच+रक्षु+अन, न-लोप] [स्त्री० रजकी] चौबी।

रजगत—सं० [हिं० रज=राजा+गत अनु०] राजसी ठाठ-बाट।

रजगीर—सं० [वि० रज] कट्ट (अव)। फफरा।

रक्षु०=राजगीर।

रजगुण—सं० दे० "रजोगुण"।

रज-संत—सं० [सं० राजसन्त] घृता। बीरता।

रजत—सं० [सं० रच+अतन्, न-लोप] १. चाँदी। रूपा। २. सोना।

स्वर्णं। ३. हाथी-बोहा। ४. गले में पहनने का हार। ५. रक्त। लहू।

६. पुराणानुसार शाकदीप के अस्तालक का नाम।

वि० १ चाँदी के रंग का। उज्ज्वल। गुञ्ज। २. चाँदी का बना हुआ।

रजत-अयसी—स्त्री० [मध्य० सं०] किसी व्यक्ति अथवा संस्था की २५वीं वर्ष-गाँठ पर मनाई जानेवाली अयसी। (सिलवर ब्यूबिली)

रजत-भुक्ति—सं० [ब० सं०] हनुमान।

रजत-वन्द—सं० [उपमित सं०] वह परदा जिस पर मिनेना-धर में पिच दिखायते जाते हैं। (सिलवर स्क्रॉन)

रजत-प्रथ—सं० [ब० सं०] कैलास पर्वत।

रजतमान—सं० [च० तं०] अर्थात्संज्ञ में वह स्थिति जिसमें कोई देस अपनी मुद्रा की इकाई या मात्रक का अर्थ चाँदी की एक निश्चित तौल के अर्थ के बराबर रखता है। (सिलवर स्टैंडर्ड)

रजत-मात्रक पु०=रजत-मान।

रजतार्थ—स्त्री० [हिं० रजत+आर्थ (प्रथ०)] गुञ्जता। सफेदी।

रजतारकर—सं० [रजत-आकर, ब० तं०] चाँदी की खान।

रजताचल—सं० [रजत-अचल, मध्य० सं०] १ चाँदी का पहाड़। २. चाँदी के टुकड़ों या आभूषणों का वह डेर या डेरो जो दान की जाती है।

महादान का भेद। ३. कैलास पर्वत।

रजतार्थि—सं० [रजत-अर्थि मध्य० सं०] रजताचल। (दे०)

रजतोपम—सं० [रजत-उपमा ब० सं०] रूपामाँची। रूपा-मन्थनी।

रजधानी—स्त्री०—रजधानी।

रज्ज—स्त्री० [अ० रज्जि] रज्ज नामक मोटा। दे० (रज्ज)।

स्त्री० [हि० रज्जा] रज्ज की अवस्था, पिघा या भाव।

रज्जाला—अ० [सं० रज्ज] १. रंग से युक्त होना। रज्जाला। २. अच्छी तरह तृप्त होना। जैसे—आजीकर रज्जाला।

सं० रज से युक्त करना। रज्जाला।

स्त्री० [सं० रज्ज] सगीत में एक प्रकार की मूछेना जिसका स्वर ग्राम इस प्रकार है—नि. स, रे, ग, म, प, ष। नि. स, रे, ग, म, प, ष, नि। स, रे, ग, म, प, ष, नि।

रज्जनी—स्त्री० [सं० रज्ज+नि+ङी] १. रज्ज। रज्जि। निशा। २. हलदी। ३. जनुका लता। ४. नीली नामक पोषा। ५. दाढ़-हलदी। ६. लाजा। लाज। ७. एक नदी। (पुराण)

रज्जनीकर—पुं० [सं० रज्जनी+कर] (करना)+ट] चंद्रमा।

रज्जनी-गंधा—स्त्री० [अ० सं०, टाप्] १. एक प्रसिद्ध पोषा जिसके फूल रात के समय फूलते हैं। २. उक्त पोषे का फूल।

रज्जनीधर—पुं० [सं० रज्जनी+धर] (गति)+ट] १. राजस। २. चंद्रमा। वि० रात के समय निकल कर भूमि-फिलते या विचरण करने वाला।

रज्जनी-बल—पुं० [सुधासा सं०] १. ओसा। २. कोहरा।

रज्जनी-पति—पुं० [अ० सं०] चंद्रमा।

रज्जनीभूष—पुं० [अ० सं०] सध्या। रात होने से कुछ पहले का समय। सूर्यास्त के चार बज बाढ़ का समय। धाम।

रज्जनीश—पुं० [रज्जनी-ईश, अ० सं०] चंद्रमा।

रज्जपूत—पुं०—राजपूत।

रज्जपूती—स्त्री० [हि० राजपूत+ई (प्रत्यय)] १. राजपूत होने की अवस्था, धर्म या भाव। २. राजपूत का कोई कार्य अथवा उसके जैसे कार्य। ३. बहादुरी। बीरता।

रज्ज—पुं० [अ०] अरबी साल का सातवां महीना।

रज्जनी—पुं० [सं० राजा+नी] राजा। (हि०)।

रज्जना—पुं० [सं० राज, राजा+ना+हि० बहुता] किसी बड़ी नदी या नहर से निकाला हुआ बड़ा नाला या छोटी नहर, जिससे और भी अनेक छोटे-छोटे नाले और नालियाँ निकलती हैं।

रज्जना—पुं०—राजद्वार।

रज्ज-बाह—पुं० [सं० जलबाह] मेघ। बायल (हि०)।

रज्जनी—वि० [सं० रज्जनी] रज्जबाल।

रज्जब—स्त्री० [हि० राज+बट (अव०)] १. क्षत्रियवत्। २. बहादुरी। बीरता।

रज्जबती—स्त्री०—रज्जबती (रज्जबाल)।

रज्जबाड़ा—पुं० [हि० राज्य-बाड़ा] १. मध्य-मूग तथा चिटिया भारत में, देशी रियासत। २. रियासत का मालिक, राजा।

रज्जबाड़ी—पुं०—राजद्वार।

रज्जबी—वि० [अ० रज्जबी] इमाम मुसा अली राजा से सबब रखनेवाला। २. वह जो इमाम का वंशज हो।

रज्ज—स्त्री०—'रज'।

रज्जबाला—वि० स्त्री० [सं० रज्ज+बल+टाप्] १. (स्त्री०) जिसका

रज प्रवाहित हो रहा हो। रज्जबती। २. (बस्ताली नदी) जिसका पानी बहुत गंदला और मट-मैला हो गया हो।

रजा—स्त्री० [अ० रिजा] १. इच्छा। मरजी। २. अनुमति। आज्ञा।

३. किसी की अनुमति से मिलनेवाली छुट्टी। रजसत। ४. मजूरी। स्वीकृति। ५. प्रसन्नता।

फि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।—लेना।

स्त्री० [अ०] आज्ञा।

रजाह—स्त्री०—रजा।

रजाहला—स्त्री० [अ० रजा+आहस (हि० प्रत्यय)] १. आज्ञा। हुकम। २. दे० 'रजा'।

रजाई—स्त्री० [सं० रजक=कपड़ा] एक प्रकार का रईयार ओढ़ना। हलका लिहाऊ।

स्त्री० [हि० रजा+आई (प्रत्यय)] राजा होने की अवस्था या भाव। राजापन।

†स्त्री०—रजा (अनुमति या आज्ञा)। उदा०—यत्ने सीस धरि राम रजाई—दुलसी।

रजाकार—पुं० [अ० रिजाकार] स्वयं-सेवक।

रजाना—सं० [हि० रजना का सं०] १. राज-सुख का भोग करना। २. बहुत अधिक सुख देना। ३. अच्छी तरह तृप्त या समुष्ट करना। ४. घेठ भरकर खिलाना।

रजामंध—वि० [अ० रिजा+कां० मध] [भाव० रजामदी] जो किसी बात पर राजी या सहमत हो।

रजामंदी—स्त्री० [अ० रिजा+कां० मंदी] रजामद अर्थात् राजी या सहमत होने की अवस्था या भाव। सहमति।

रजाध—स्त्री० [आ० रजाएस] राजा की आज्ञा।

स्त्री०—रजा।

रजायस (रु) —स्त्री० [का० रजाएस] १. राजा की आज्ञा। २. आज्ञा। हुकम। ३. अनुमति।

रजिया—स्त्री० [रिशा०] १. अनाज नापने का एक मान जो प्रायः षेड़ सेर का होता है। २. उक्त मान से नापने का काट का बरतन।

रजिस्टर—पुं० [अ०] अंगरेजी ढंग की बही या वह किताब जिसमें किसी मद का आय-व्यय अथवा किसी विषय का विस्तृत विवरण, मिलितलेखार या खातेदार लिखा जाता है। पंजी।

रजिस्टरी—स्त्री० [अ०] १. किसी लिखित प्रतिज्ञापत्र को कानून के अनुसार सरकारी रजिस्टरी में दर्ज कराने का काम। पंजीयना। २. डाक से पत्र भेजने का एक प्रकार जिसमें कुछ अधिक महसूल देकर भेजे जानेवाला पत्र का तौल, पता आदि शाकसाने के रजिस्टर में चढ़वाया जाता है।

रजिस्टर्ड—वि० [अ०] रजिस्टरी किया हुआ। पंजीकृत।

रजिस्ट्रार—पुं० [अ०] १. विधिक लेखों को राजकीय पंजियों में निबधित करनेवाला अधिकारी। २. विश्वविद्यालय का वह अधिकारी जिसकी देखरेख में कार्यालय सबकी सब कार्य होते हैं।

रजिस्ट्री—स्त्री०—रजिस्टरी।

रजिस्ट्रेशन—पुं० [अ०] रजिस्टर में दर्ज करना, कराना या होना। पंजीयन।

रहील—वि० [अ०] अथम। कमीना। नीच।

रघु—स्त्री०=रज्जु।

रघुकुल—पुं० [सं० राजकुल] राजबन्ध।

रघुगुण—पुं० [सं० रजसू-गुण मयं० सं०] प्रकृति के तीन गुणों में से दूसरा गुण (सूच और तम से मिल) जिससे जीवधारियों में मींग-मिलाल तथा बल-बैधक के प्रयत्न की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। राजस। (वे० गुण)

रघुवर्षा—पुं० [सं० रजसू-वर्षं ष० सं०] स्त्रियों का रजस्वला होना।

रघुवर्ष—पुं० [सं० रजसू-वर्षं ष० सं०] स्त्रियों का मासिक धर्म।

रघुनिवृत्ति—स्त्री० [सं० रजसू-निवृत्ति] स्त्रियों की वह अवस्था या दशा जिसमें उनका मासिक रज निकलना सदा के लिए बंद हो जाता है। (सेनेपाज)

रघुना—वि० [अ०] १. रिजक अर्थात् रोजी देनेवाला। अन्नदाता। २. खाना खिला देनेवाला। पेट भर देनेवाला।

पुं० ईश्वर।

रघु—स्त्री० [सं०√रघ् (रचना)+उ, नि० सिद्धि] १. बोरी। रस्ती। २. घोड़े की लामा। बागदोर। ३. स्त्रियों की बाँटी बांधने की बोरी।

रघुमार्ग—पुं० [सं०] ऊँची-नीची पकिल या पहाड़ी जगहों, बड़े-बड़े कल-काखानों आदि में एक स्थान से दूसरे स्थान तक धीरे-धीरे पहुँचाने के लिए बड़े बड़े खंभों में रस्ते विशेषतः जोड़े के छोटे रस्ते बाधकर बनाया जानेवाला मार्ग। (दोप-वे)

रघुसर्प-न्याय—पुं० [म० रज्जु-सर्प, सुसुपा सं०, रज्जुसर्प-न्याय, ष० सं०] रस्ती को अच्छी तरह न देख सकने के कारण भूल से साप समझ लेने अथवा इसी प्रकार और किसी भ्रम में पड़ने की स्थिति या न्याय।

रघु—स्त्री० [अ० रज्जु] युद्ध। सयाम। लड़ाई।

रघुना—पुं० [सं० रघन भा रंजन] रंगरेजो का वह पात्र, जिसमें वे रंगों हुए कपड़े का रज निचोड़ते हैं।

रदत—स्त्री० [वि० रटना+अत (प्रत्यय)] रटने की क्रिया या भाव। रटाई।

रदती—स्त्री० [सं०√रट् (रटना)] +ङ्ङि-ञत्+ङीप् माध कृष्ण चतुर्दशी।

रट—स्त्री० [हिं० रटना] रटने की अवस्था, क्रिया या भाव।

क्रि० प्र०—मचाना।-लगाना।

रटन—स्त्री० [सं०√रट् (रटना)+स्युट्—अण्] बार-बार किसी नाम, शब्द आदि का उच्चारण करने अर्थात् रटने की क्रिया या भाव। रटाई।

पुं० कहना। बोलना।

रटना—[सं० रटन] कठोर्य करने तथा स्मृति-गम्य में लाने के लिए किसी पद, वाक्य आदि का बार-बार और जोर-जोर से तथा जल्दी-जल्दी उच्चारण करना।

रटित—वि० [सं०√रट्+कत्] १. रटा हुआ। २. जो रटा जा रहा हो। उवा०—अगणित कंठ रटित बन्धे मालरत्न मंत्र से।—मंत्र।

रट—वि० [?] रक्खा। रक्कत।

रट्क—स्त्री० [हिं० रटकना] १. किसी बीज के चुनने तथा पीड़ा देने

की अवस्था या भाव। जैसे—आँसू में होनेवाली रटक। २. हल्का बरं या पीड़ा। कसक। जैसे—भाव में कुछ रटक हो रही है।

रटकना—स्त्री०=रट्क।

रटकना—अ० [अ०] १. हलका बरव होना। २. बार-बार में किसी गंदी या घुसी हुई चीज की कष्टदायक अनुभूति होना। जैसे—आँसू में पड़ी हुई बूल या उसके कण का रटकना।

† सं० बचका देना।

रटकना—पुं० [?] साहू।

† स्त्री०=रटक।

रटकाना—सं० [?] धक्का देकर निकालना या हटाना।

रटार—पुं०=रटैर।

रटना—सं० रटना।

रटिया—स्त्री० [देख० या राड़ देख०] एक प्रकार की निम्न कोटि की देशी कपास।

वि० [हिं० रार] जिद्दी। हठी।

रन—पुं० [सं०√रन् (सम्ब)+अप्] १. लड़ाई। युद्ध। जंग।

पद—रण-श्रेण, रण-भूमि, रण-स्थल।

२. रमण। ३. आवाज। शब्द। ४. गति। बाल। ५. मुंबा नामक मेड़ा।

† पुं० [सं० अरण्य] जंगल। वन।

रण-श्रेण—पुं० [सं० ष० सं०] युद्धभूमि। लड़ाई का मैदान।

रण-शंकी—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] रण-श्रेण में मार-काट करनेवाली देवी।

रण-छोड़—पुं० [सं० रण+छि०] छोड़ना। श्रीकृष्ण का एक नाम जो इस कारण पड़ा था कि वे जरासन्ध के आक्रमण के समय घेज छोड़कर द्वारका चले गये थे।

रणश्रेत* पुं०=रणलत।

रणकार—पुं० [सं०√रन्+शात्=रणत्+कार ष० सं०] १. क्षान-क्षानाहट। २. गुजन (मधु-मन्त्री का)।

रणवीर—पुं० [सं० सं० सं०] युद्ध में वीर्यपूर्वक लड़नेवाला अर्थात् बहुत बड़ा योद्धा।

रणन—पुं० [सं०√रन्+स्युट्—अण्] शब्द करना। बजना।

रणनाथ—पुं० [ष० सं०] युद्ध के समय होनेवाली योद्धाओं की गरज।

रण-मिय—पुं० [ष० सं०] १. विष्णु। २. बाज पक्षी। ३. उशीर। खस।

रण-भूमि—स्त्री० [ष० सं०] लड़ाई का मैदान।

रणभंडा—स्त्री० [सं० रण-भण्डन] पृथ्वी। (हिं०)

रण-मत्स—पुं० [सं० सं०] हाथी।

वि० जो युद्ध करने के लिए उतावला हो रहा हो।

रण-रंग—पुं० [ष० सं०] १. लड़ाई या युद्ध का उत्पाह। २. युद्ध।

लड़ाई। ३. लड़ाई का मैदान। युद्ध-संज्ञ।

रण-रण—पुं० [सं० रणगण+अप्] १. व्यथता। पबरहाट। व्याकुलता। २. पशुतावा। पशुताप।

रणरणाक—पुं० [सं० रणरणा+कन्] १. कामदेव का एक नाम। २. प्रबल कामना। ३. पबरहाट। विकलता।

रचरोज (श)—पुं० [सं०-अरघ्य-रोदन] वन में (जहाँ कोई सुननेवाला न हो) बैठकर व्यर्थ रोना जिसका कोई फल नहीं होता। अरघ्य-रोदन।
रच-लक्ष्मी—पुं० [मध्य० म०] युद्ध में विजय दिलानेवाली एक देवी।
 विजय-लक्ष्मी।
रच-बाध—पुं० [ष० त०] युद्ध का बाधा।
रच-बीर—पुं० [स० त०] बहुत बड़ा योद्धा।
रच-वृत्ति—पुं० [ब० स०] योद्धा। वह जिसको वृत्ति युद्ध लड़ते रहने की हो। सैनिक। योद्धा।
रचसिन्धु—पुं० [स० रण-त-हिं० निपा] मध्ययुग में, युद्ध के समय बजाया जानेवाला नरसिन्धु या तुम्ही नाम का बाजा।
रचसिन्धु—पुं०—रचनिपा।
रच-स्त्रंभ—पुं० [ष० त०] वह स्तम्भ जो किसी रण में विजय प्राप्त करने के स्मारक में बना हो। विजय का स्मारक।
रच-स्थल—पुं० [ष० त०] लड़ाई का मैदान।
रच-स्थानी (सिन्)—पुं० [ष० त०] १ युद्ध का प्रधान सचालक या सेनापति। २ शिव। महादेव।
रच-मूल—पुं० [मध्य० स०] एक प्रकार के वर्णवृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में सगण, जगण, भगण, और रगण होते हैं।
रचाण—पुं० [रण-अगण ष० त०] लड़ाई का मैदान।
रचाणिर—पुं० [रण-अजिर ष० त०] लड़ाई का मैदान।
रचि—स्त्री० [स० रजनी] रात्रि। रात। (हिं०)।
रचिचर—पुं० [सं० रचो/चर (मति) + चर, अलुक; स०] विष्णु।
रचोस—पुं० [रण-ईश ष० त०] १ शिव। २ विष्णु।
रचोक्त—पुं० [रण-उक्त स० त०] कात्तिकेय का एक अनुचर।
 वि०—रचोन्मत्त।
रत्न—पुं० [सं०/रत्न (श्रीदा) + क्त] १ मैयूत। प्रसंग। २ मग।
 योनि। ३ लिंग। ४ प्रीति। प्रेम।
 वि० १ जो किसी काम में पूरे मनीषा से लगा हुआ हो। २ प्रेम में पडा हुआ। आनन्द।
 * वि०, पुं०—रत्नत्।
रत्न-कील—पुं० [सं० रत्न/कील (बोधना) + क, उप० स०] कुत्ता।
रत्न-पुष्प—पुं० [सं० त०] स्त्री का पति। खसम। सोहर।
रत्न-जगण—पुं० [हिं० रत्न + जगणत्] १. रत्न में होनेवाला जगणगण।
 २ ऐसा आनन्दोत्सव जिसमें लोग रात भर जागते रहे। ३. एक व्योहार जो पूर्वी समुक्त भाग तथा बिहार आदि में भाद्रपद कृष्ण की रात को होता है और जिसमें स्थियाँ रात भर जागकर कजली माती और नाचती हैं।
रत्नग—पुं०—रत्न।
रत्न-जोत—स्त्री० [सं० रत्न-जोति] १ एक प्रकार की मणि। २ एक प्रकार की सुगन्धित लकड़ी जिसकी छाल से लाल रंग तैयार किया जाता या नेल आदि रंग जाना है। ३ बड़ी हथी।
रत्ननाकर—पुं० १ दे० 'रत्नाकर'। २ दे० 'रत्न-जोत'।
रत्ननाम—पुं०—रत्नाकर।
रत्ननागरभ—स्त्री० [सं० रत्नगर्भा] पृथ्वी। भूमि। (हिं०)
रत्ननाग—वि०—रत्ननाग।

रत्नमारा—वि० [सं० रत्न, प्रा० रत्त अथवा रत्न= मालिक+मारा (प्रत्य०)] लाल रंग का। सुर्ण।
रत्नमारी—पुं० [हिं० रत्नमार्+ई (प्रत्य०)] एक प्रकार का नाम।
 स्त्री० लाली। सुर्णी।
 वि०—रत्नमारी।
रत्नमारीच—पुं० [सं० स० त०] १. कामदेव। २ कामुक और लपट व्यक्ति।
रत्नमालिया * †—वि०—रत्नमारा।
रत्नमाली—स्त्री०—रत्नावली।
रत्न-निधि—पुं० [ब० स०] खजान पक्षी। मयोल।
रत्नबध—पुं०—रत्नबध।
रत्न-मुहा—वि० [हिं० रत्न=रत्नाज+मुह+आ (प्रत्य०)] [स्त्री० रत्नमुही] लाल मुँहवाला।
 पुं० बदर।
रत्न—स्त्री० [अ० रत्न] १ शराव का प्याल। चषक। २. एक पीठ का दखर। ३. तौल में पीठ या कोई चीज।
रत्नबाँस—पुं० [हिं० रत्न+बाँस (प्रत्य०)] हार्णिया, घोड़ी आदि का वह चारा जो उन्हे रात के समय दिया जाता है।
रत्नबाँस—स्त्री० [दिवा०] १ नई ईंख का रत्न पहने-पहल पेरना। २. उक्त रत्न को छोड़ो में बाँधने की क्रिया या भाव।
 स्त्री० [हिं० रात] १ मजहूरो का रात-भर काम करना। २ मजहूरो की रात के समय काम करने पर मिलनेवाला पारिस्थिक। ३ मेवाड़ का एक प्रकार का ग्राम गीत।
रत्नबाही—स्त्री०—रत्नबाई।
रत्नबण—पुं० [सं० ब० स०] कुत्ता।
रत्नसाथी (घिन)—पुं० [सं० रत्न/साथी (क्षीण करना) +घिनि] कुत्ता।
रत्नहृत्क—पुं० [सं० ष० त०] १ वह जो स्थियाँ बुराता हो। २. कामुक और लपट व्यक्ति।
रत्ना—स्त्री० [दिवा०] भूकडी।
रत्नाना—अ० [सं० रत्न+हिं० आना (प्रत्य०)] रत्न होना।
 सं० रत्न करना।
 अ० [हिं० रत्न+आना (प्रत्य०)] लाल होना।
 सं० रत्न करना।
रत्नायनी—स्त्री० [सं० रत्न-जयन ब० म०, डी०] देव्या।
रत्नालू—पुं० [सं० रत्नालू] १. पेशवाजी नामक कद जिसकी तरकारी बनाते हैं। २. बराही कद। गेंडी।
रत्ति—स्त्री० [सं०/रत्न+क्तिन्तु] १ किसी काम, चीज, बात या व्यक्ति में रत्त होने की अवस्था या भाव। २ उक्त अवस्था में मिलनेवाला आनन्द या होनेवाली तुष्टि। ३. विशेषतः मैयूत आदि से होनेवाली तुष्टि या मिलने बाधा आनन्द। साहित्य में इस शब्दाार-रत्त का स्थायी भाव माना गया है। ४. मैयूत। संयोग। ५. प्रीति। प्रेम। ६. छवि। शोभा। ७. सौभाग्य। ८. गुल-भेद। रहस्य। ९. कामदेव की पत्नी का नाम।
 † स्त्री०—रत्ती।
 अर्थ०—रत्ती।

स्त्री०=रात ।

रतिवत्—अव्य० [हि० रत्ती] रती भर; अर्थात् बहुत थोड़ा। जरा-सा।
वि० [सं० रति/क (करना)+ट] १. रति करनेवाला। २. काम्य
और सुख की वृद्धि करनेवाला। ३. अनुराग या प्रेम बढ़ानेवाला।
पुं० काम्य और लयट व्यक्त।

रति-करघ्न—पुं० [ब० तं०] रति या समोग करने का कौशल या ङंग।
रति-कलह—पुं० [ब० तं०] मैथुन। सम्भोग।
रति-काल—पुं० [ब० तं०] रति का पति, कामदेव।
रति-कुहर—पुं० [ब० तं०] यौनि। जग।
रति-केलि—स्त्री० [ब० तं०] मैथुन। सम्भोग।
रति-किष्का—स्त्री० [ब० तं०] मैथुन। सम्भोग।
रतिरत्न—अव्य० [हि० रात+गर ?] प्रातःकाल। सड़के। सबेरे।
रति-गृह—पुं० [ब० तं०] यौनि। भग।
रतिग—पुं० [सं० रति/ग्रा (जानना)+क] १. वह जो रति-किष्का में
चतुर हो। २. वह जो स्त्रियों को अपने प्रेम में फँसाने की कला में निपुण
हो।

रति-सत्कर—पुं० [ब० तं०] वह जो स्त्रियों को अपने साथ व्यभिचार करने
में प्रवृत्त करता हो।

रति-वान—पुं० [ब० तं०] सम्भोग। मैथुन।
रति-वेध—पुं० [ब० तं०] १. विषण्ण। २. [ब० मं०] कुता। ३.
ब्रह्मशी माकलित के पुत्र एक राजा।
रति-नाथ—पुं० [ब० तं०] कामदेव।
रति-नायक—पुं० [ब० तं०] कामदेव।
रतिनाह—पुं०=रतिनाथ (कामदेव)।
रति-पति—पुं० [ब० तं०] कामदेव।
रति-पत—पुं० [ब० तं०] सौन्दर्य प्रकार के रति-वधों में से एक भेद।
(काम-शास्त्र)

रति-प्रिय—पुं० [ब० तं०] १. कामदेव। २. [ब० सं०] मैथुन से
आनन्दित होनेवाला व्यक्ति।
वि० [स्त्री० रति-प्रिया] रति (मैथुन) का शौकीन। काम्य।
रति-प्रिया—स्त्री० [ब० सं०] १. तामिको के अनुसार प्रकृत की एक
मूर्ति का नाम। २. दाशायणी देवी का एक नाम। ३. मैथुन
से आनन्दित होनेवाली स्त्री।

रति-शोभा—स्त्री० [तु० तं०] १. वह नायिका जिसकी रति में विशेष
अनुराग हो। कामिनी। २. रति से आनन्दित होनेवाली स्त्री।

रति-बंध—पुं० [सं० तं०] काम-शास्त्र में बतलाये हुए सम्भोग करने के ८४
आमनों में से हर एक।

रति-भवन—पुं० [ब० तं०] १. रति-क्रीड़ा या मैथुन करने का कमरा या
भवन। २. यौनि। जग।

रति-भाष—पुं० [ब० तं०] १. पति और पत्नी, प्रेमी और प्रेमिका या
नायक और नायिका का पारस्परिक अनुराग। २. प्रीति। प्रेम।
मुहब्बत।

रतिभोग—पुं०=रतिभवन।

रति-भक्ति—पुं० [ब० तं०] रति-भवन (दे०)।

रतिवधा—स्त्री० [सं० ब० सं०] अन्धरा।

रति-विष—पुं० [सं० तं०] एक रतिबंध। (कामशास्त्र)
रतिवधा*—अ० [हि० रति=प्रीति+आना(प्रत्यय०)] किसी पर रस
या अनुरक्त होना।

रति-रत्न—पुं० [ब० तं०] १. रति-क्रीड़ा। मैथुन। २. कामदेव।
रतिरत्न पुं०=रतिरत्न। (कामदेव)।

रति-राज—पुं० [ब० तं०] कामदेव।

रतिरत्न—वि० [सं० रति+हि० बल (प्रत्यय०)] सुंदर। सुव्युत्त।

रति-वत्—पुं० [सं० तं०] १. रति में प्रवीण कामदेव। २. वह जग
या भेंट जो नायक नायिका को रति में प्रवृत्त करने के उद्देश्य से देता है।

रति-वर्ध—वि० [सं० व० तं०] काम-शक्ति बढ़ानेवाला।

रति-वल्ली—स्त्री० [ब० तं०] प्रेम। प्रीति। मुहब्बत।

रतिवहू (हिण्)—पुं० [सं० रति/वहू (ढोना)+णिनि] संगीत में
एक प्रकार का राग, जिसका गान-समय रात की १६ दश से २० दश
तक है।

रति-वास्तव—पुं० [मध्य० सं०] वह वास्तव जिसमें रति के ङंगों, आकारों,
आसनों आदि का विवेचन होता है। कामशास्त्र।

रति-सत्कर—स्त्री० [ब० सं०+टाप्] असवराग। पुष्पा।

रति-समर—पुं० [ब० तं०] सम्भोग। मैथुन।

रति-शासन—पुं० [ब० तं०] युष्ण का लिंग। शिष्य।

रति-मुष्ण—पुं० [सं० तं०] एक रति-बंध। (कामशास्त्र)

रती*—स्त्री० [सं० रति] १. कामदेव की पत्नी। रति। २. सौंदर्य।
३. शोभा। ४. मैथुन। सम्भोग। ५. आनन्द। मौज।

† स्त्री०=रत्ती।
अव्य० बहुत थोड़ा। जरा-सा।

रतीक—अव्य०=रतिक (थोड़ा सा)।

रतीका—पुं० [रति-ईश, ब० तं०] कामदेव।

रतुभा—पुं० [दिसा०] एक तरह की बरसाती घास।

रतून—पुं० [दिसा०] बहु ईश या गंगा, जो एक बार काट लेने पर फिर
अपनी पहली जड़ या पेड़ी से निकलता है। पेड़ी का गंगा।

रतोपल*—पुं० [सं० रत्तोपल] १. लाल कमल। २. लाल सुरमा।
३. लाल खदिया। ४. गेक।

रतोषी—स्त्री० [हि० रात+अथा] आँस का एक प्रसिद्ध रोग जिसके
कारण रोगी को रात के समय कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता।

रतोषी*—स्त्री०=रतोषी।
रस*—पुं०=रस्त।
वि०=रत्त।

रसक—पुं० [सं० रसक, प्रा० रत्त] एक तरह का लाल रंग का पत्थर।

रसरी*—स्त्री०=राति।

रस्ती—स्त्री० [सं० रत्तिक, का प्रा० रत्तीजा] १. माषों के आठवें अंग के
बराबर की एक तील या मान। २. उक्त परिमाण का बटखरा।
३. भुषकी का दाना जो साधारणतया तील में माषों के आठवें अंग के
बराबर होता है।
पद—रस्ती भर=बहुत थोड़ा। जरा-सा
वि० बहुत ही थोड़ा। किंचित् मात्र।
स्त्री० [सं० रति] १. छाँट। शोभा। २. सौंदर्य।

एल्पी—स्त्री०—अरधी।

एल्प—मु० [सं०/रम् (कीडा)+णिव्+न, तकार—अन्तादेश] १. कुछ विभिन्न छोटे, चमकीले खनिज पदार्थ या बहुमूल्य पत्थर, जो आम्-पथी आदि में जड़े जाते हैं। २. माणिक्य। मानिक। लाल। ३. वह जो अपनी जाति या धर्म में औरो से बहुत अच्छा या बड़-बड़कर हो। ४. जैनों के अनुसार सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र्य।

एल्प-बर्हल—मु० [ष० तं०] प्रवाल। मूंगा।

एल्परक—मु० [सं० रल्ल/क (करना)+ट] कुबेर का एक नाम।

एल्प-कर्मिका—स्त्री० [मध्य० सं०] कान में पहनने का एक तरह का जडाऊ गहना।

एल्प-कानि—स्त्री० [ब० सं०] सगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक गायिनी।

एल्प-कूट—मु० [ब० सं०] १. एक पीराणिक पर्वत का नाम। २. एक बोधिसत्व का नाम।

एल्प-गर्भ—मु० [ब० सं०] १. कुबेर का एक नाम। २. रत्नकर। समुद्र। ३. एक बूढ़ का नाम।

एल्प गर्भ—स्त्री० [सं० ब० सं०,+टाप्] वह जिसके गर्भ में रत्न हो। पृथ्वी।

एल्परि—मु० [मध्य० सं०] बिहार के एक पहाड़ का प्राचीन नाम।

एल्प-बुद्ध—मु० [ब० सं०] एक बोधिसत्व।

एल्पछाया—स्त्री० [ष० रल्लच्छाया] रत्न की आभा, छाया या पानी।

एल्प-नय—मु० [ष० तं०] सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चरित्र। (जैन)

एल्प-नामा—स्त्री० [ब० तं०] १. रत्नों की माला। २. सीता की माला। (गर्भ संहिता)

एल्प-वीथ—मु० [मध्य० सं०] १. रत्नों से जडा हुआ दीपक। रत्न-जटित दीपक। २. एक कल्पित रत्न का नाम बहुत उज्ज्वल माना गया है।

एल्प-भूम—मु० [ब० तं०] मूंगा।

एल्प-वीथ—मु० [मध्य० सं०] पुराणानुसार एक द्वीप का नाम।

एल्प-भर—मु० [ब० तं०] धनचाम्।
वि० रत्नधारण करनेवाला।

एल्प-भेनु—स्त्री० [मध्य० सं०] दान के उद्देश्य से रत्नी की बनाई हुई गी की मूर्ति।

एल्प-स्वज—मु० [ब० सं] एक बोधिसत्व।

एल्प-नाम—मु० [ब० सं०] विष्णु।

एल्प-निधि—मु० [ब० तं०] १. खनिज पथी। ममीला। २. समुद्र। ३. मेघ पर्वत। ४. विष्णु।

एल्प-परीलक्ष—मु० [ष० तं०] जौहरी।

एल्प-पर्वत—मु० [ष० तं०] सुमेरु पर्वत।

एल्प-वामि—मु० [ब० सं०] एक बोधिसत्व।

एल्प-वारकी—मु०—रत्न-परीलक्ष (जौहरी)।

एल्प-वीथ—मु० [मध्य० सं०] ऐसा एक कल्पित रत्न जो बीपक के समान प्रकाशमान माना गया है।

एल्प-ग्रभ—मु० [ब० सं०] देवताओं का एक वर्ग।

एल्प-ग्रभा—स्त्री० [ब० सं०,+टाप्] १. पृथ्वी। २. जैनों के अनुसार एक नरक।

एल्प-बाहु—मु० [ब० सं०] विष्णु।

एल्प-भूषण—मु० [मध्य० सं०] रत्न जटित आभूषण। जडाऊ गहना।

एल्प-माला—स्त्री० [मध्य० सं०] १. रत्नों की माला। २. राजा बलि की कन्या का नाम।

एल्प-माती (विन्दु)—मु० [सं० रत्नमाला+इणि] देवताओं का एक वर्ग।

एल्प-राज—मु० [सं० रल्ल/राज (बनकना)+णिव्, उप० सं०] माणिक्य। लाल।

एल्प-वती—स्त्री० [सं० रत्न+मत्सु+डीप्] पृथ्वी।

एल्प-शाला—स्त्री० [ष० तं०] १. रत्नों के रखने का स्थान। २. ऐसा भवन या महल जिसकी दीवारों पर रत्न जड़े हो।

एल्प-सागर—मु० [मध्य० सं०] समुद्र का वह भाग जहाँ से प्रायः रत्न निकलते हैं।

एल्प-सामु—मु० [ब० सं०] सुमेरु पर्वत।

एल्प-सू—स्त्री० [सं० रत्न/सू (प्रसव)+णिव्] पृथ्वी।

एल्पाकर—मु० [रत्न-आकर ष० तं०] १. समुद्र। २. ऐसी स्थान जिसमें से रत्न निकलते हैं। ३. वार्षिक का पुरातन नाम। ४. गौतम बुद्ध का एक नाम।

एल्परि—मु०—रत्नपरि (बिहार में स्थित एक पर्वत)।

एल्पाक्ष—मु० [रत्न-अक्ष, मध्य० सं०] दान के उद्देश्य से लगाया हुआ रत्नी का डेर।

एल्परि—मु० [रत्न-अदि, मध्य० सं०] एक पर्वत। (पुराण)

एल्परिपति—मु० [रत्न-अधिपति, ष० तं०] कुबेर।

एल्पावली—स्त्री० [रत्न-आवली, ष० तं०] १. मणियों या रत्नों की अवली या श्रेणी। २. रत्नों की माला। ३. साहित्य में एक अर्थालंकार जिसमें कोई बात ऐसे दिलचस्प शब्दों में कही जाती है कि उनसे प्रसुत अर्थों के निवा कुछ और अर्थ भी निकलते हैं। जैसे—नाम चतुरस्र, लक्ष्मीपति और सर्वज्ञ हैं का साधारण अर्थ के निवा यह भी अर्थ निकलता है कि आप ब्रह्मा, विष्णु और महेश हैं।

एल्पीर् (विष्)—वि० [सं० रति/अर्थ+णिव् (स्वाभं मे)+णिवि] उप० सं०] स्त्री० रत्नपिनी] रति की इच्छा या कामना रखनेवाला। जो रति करना चाहता हो।

एल्पीसव—मु० [सं० रति-उत्सव, ष० तं०] रति या सवर्ण का उत्सव।

एल्परक—मु० [सं० रल्ल/क (करना)+लक्, मृगामग] १. एक कल्प का नाम। २. एक प्रकार का साम। ३. एक प्रकार की जिन।

एल्—मु० [सं०/रम् (कीडा)+कण्] १. प्राचीन काल की एक प्रकार की सवारों जिसमें चार या दो पहिये हुआ करते थे। गाड़ी। बहल। शतांग। स्फंद। २. शरीर जो आस्ता का धातु या सवारों है। उदा०—तीर्थ चरल मन तीर्थ चरल है।—सेनापति। ३. पग या पैर जिससे प्राणी चलते हैं। ४. कीडा या बिहार का स्थान। ५. तिथि का पेड़। ६. वह शिवालय-भितर जो किसी पट्टान को काटकर बनाया गया हो। (दक्षिण)

एल्-कल्प—मु० [सं० ब० सं०] १. प्राचीन भारत में वह अधिकारी जो किसी राजा के रथों, यानों आदि की देख-रेख रखता था। २. वाहल।

३ घर । ४. प्राचीन भारत में, धनवालों का वह प्रधान अधिकारी जो उनके घर आदि सजाता और उनके पहनने के वस्त्र आदि रचता था ।

रचकार— μ ० [४० रच+क (करना)+अच्] १. रच बनानेवाला कारीगर । २. बड़ई । ३. माहिष्म पिता से उत्पन्न एक बर्षसंकर जाति ।

रच-कचरप— μ ० [४० त०] रच का वह भाग जिस पर ऊँचा ढाँचा जाता है ।

रच-क्रीत— μ ० [ब० सं०] समीत में एक प्रकार का ताल ।

रच-क्रीता—स्त्री० [सं० रचक्रीत+टाप्] एक प्राचीन जनपद का नाम ।

रच-नायक— μ ० [ब० सं०,+कच्] कंधे पर उड़ाई जानेवाली सवारी । जैसे—ढोला, पालकी आदि ।

रच-मुक्ति—स्त्री० [ब० सं०] रच-नीड (दे०) के चारों ओर सुरक्षा की दृष्टि से लकड़ी, ओठे आदि का लगाया जानेवाला घेरा ।

रच-भरण— μ ० [४० त०] १. रच का पहिया । [रचचरण+अच्] २. चक्रवात ।

रच-धर्मा—स्त्री० [४० त०] रच पर चढ़कर भ्रमण करना ।

रच-मु— μ ० [मध्य० सं०] १. तिनिस का पेड़ । २. बेंत ।

रच-नीर— μ ० [४० त०] रच के वह स्थान जहाँ लोग बैठते हैं । गद्दी ।

रच-यति— μ ० [४० त०] रच का नायक । रची ।

रच-पर्याय— μ ० [ब० सं०] १. तिनिस का पेड़ । २. बेंत ।

रच-पार— μ ० =रचचरण ।

रच-महोत्सव— μ ० [४० त०] रच यात्रा । (दे०)

रच-यात्रा—स्त्री० [४० त०] हिन्दुओं का एक पर्व या उत्सव जो आषाढ शुक्ल द्वितीया को होता है और जिसमें जगन्नाथ, बलराम और सुभद्रा की मूर्तियाँ रखकर उनकी सवारी निकालते हैं ।

रच-योजक— μ ० [४० त०] सारथि ।

रच-वत्स (म्)— μ ० [४० त०] राजमार्ग ।

रचवत् (वत्)— μ ० [सं० रच+वत्प्] रच हुकनेवाला । सारथि ।

रचवाह— μ ० [सं० रच+वह् (होना)+अच्] १. रच चलावेवाला । सारथि । २. रच खींचनेवाला घोड़ा ।

रच-वाहक— μ ० [सं० रचवाह+कच्] सारथि ।

रच-साला—स्त्री० [४० त०] वह स्थान जहाँ रच रखे जाते हैं । गाड़ी-खाना ।

रच-सास्त्र— μ ० [मध्य० सं०] रच चलाने की क्रिया ।

रच-सप्तमी—स्त्री० [मध्य० सं०] माघ शुक्ला सप्तमी ।

रचस्था (स्था)—स्त्री० [सं०] पंचाल देश की राम-नामा नामक नदी का पुराना नाम ।

रचाय— μ ० [रच+अय, ब० त०] १. रच का पहिया । २. [रचाय+अच्] चक्र नामक अस्त्र । ३. चक्रवा पीछी ।

रचाय-भर— μ ० [४० त०] १. श्रीकृष्ण । २. विष्णु ।

रचाय-वाणि— μ ० [ब० सं०] विष्णु ।

रचायी—स्त्री० [सं० रचाय+डीप्] ऋद्धि नामक ऋषिपति ।

रचास— μ ० [रच+असि, ब० त०] १. रच का पहिया । २. रच का बुरा । ३. कार्तिकेय का एक अनुचर । ४. चार बंगुल का एक परिष्कार ।

रचास— μ ० [रच+अस, ब० सं०] वह जिसका रच सबसे आगे हो, अर्थात् श्रेष्ठतम घोड़ा ।

रचिक— μ ० [सं० रच+कच्+इक] १. वह जो रच पर सवार हो । रची । २. तिनिस का पेड़ ।

रची (विन्)— μ ० [सं० रच+इनि] १. वह जो रच पर चढ़कर चलता हो । रची । २. रच पर चढ़कर युद्ध करनेवाला । रचवाला घोड़ा । पक्ष—महारथी ।

३. एक हजार घोड़ों से अकेला युद्ध करनेवाला घोड़ा । उवा०—पूरुष प्रकृति सात थीर और हीर है विष्वात् रची महारथी अतिरथी रच साजिके ।—रघुराज ।

वि० जो रच पर सवार हो ।

स्त्री०—अरथी (मूतक की) ।

रचीसच— μ ० [रच+उत्सव, ब० त०] रच-यात्रा । (दे०)

रचीइता—स्त्री० [रच+इत्ता, उपनिषत् सं०] ग्यारह अक्षरी का एक प्रकार का वर्णवृत्त जिसका पहला, तीसरा, सत्तरवाँ, नब्वाँ और ग्यारहवाँ वर्ण गुण तथा अन्य वर्ण लघु होते हैं ।

रच्य— μ ० [सं० रच+यच्] १. वह घोड़ा जो रच में जोता जाता हो । २. रच चलानेवाला । सारथि । ३. पहिया ।

रच्या—स्त्री० [सं० रच्य+टाप्] १. रचों का समूह । २. वह मार्ग जो वनों में रच के चलने से बन जाता था । ३. बड़े नगरो में वह चौड़ा मार्ग या सड़क जिसपर रच चलते थे । ४. घर का आँगन या चौक । ५. नावधान । पनाला ।

रच— μ ० [सं०+रच् (विलेखन)+अच्] दत्त । दत्त । वि०—रच् ।

रच-शत— μ ० [४० त०] या ब० त०] रति आदि के समय दत्तों के गठने या लगने का चिह्न ।

रचच्छव— μ ० [सं० रच+छव् (आच्छादन)+गिष्+घ, ह्रस्व] होठ । ओष्ठ ।

रच-छला— μ ०—रच-शत ।

रच-दान— μ ० [सं० ब० त०] (रति के समय) दत्तों से ऐंदा दत्तना कि चिह्न पढ़े जाय । रच-शत करना ।

रचन— μ ० [सं०+रच्+त्पुट्+अच्] दधान । दत्त । बंत ।

रचनच्छव— μ ० [सं० रचन+छव्+गिष्+घ, ह्रस्व] ओष्ठ । जघर । होठ ।

रचनी (विन्)—वि० [सं० रचन+इनि] दत्तवाला । पु० हाथी ।

रच-पक्ष— μ ० [सं० ब० त०] अघर । होठ ।

रच-पक्ष—स्त्री० [अ० रचीपक्ष] परिकर्तन

रचवास— μ ० [सं० रच+वासि=आवरण] होठ । उदा०—अन्तरपट रचवास सरीष ।—नूर मोहम्मद ।

रची (विन्)— μ ० [सं०+रच्+इनि] हाथी । गज ।

रचीक—स्त्री० [अ० रचीक] १. वह व्यक्ति जो घोड़े पर मुख्य सवार के पीछे बैठता है । २. वह शब्द जो गजलो भावि में प्रत्येक काफिए या बन्धनप्रास के बाद आनेवाला शब्द या शब्द-समूह । जैसे—चला है ओ दिल्हा रहत-तलब क्या धरिवाँ होकर । जर्मने कृए जर्मने

रंज वेनी आस्मां होकर। मे 'सादर्या' और 'आस्मां' काफिरा है, तथा 'होकर' रघोप है। ३. पीछे की ओर रहनेवाली सेना। पृष्ठ-भाग के सैनिक।

रघोपचार—अव्य० [अ०+फा०] १. रघीक के अनुसार। २. बर्णमाला के क्रम से। अक्षर-क्रम से।

रघु—वि० [अ०] १. बरला हुआ। परिवर्तित। २. (लिखित सामग्री) जो नापसंद अथवा दूषित होने पर काट या छाँट दी गई हो। जो अनुपयुक्त समझकर निरर्थक या व्यर्थ कर दिया गया हो।

स्त्री० [देश०] कैं। वयन।

रघु—पुं० [फा० रघु] १. दीवार में जुड़ाई की एक पंक्ति। २. मिट्टी की दीवार उठाने में उठाना अंश, जिसना चारों ओर एक बार में उठाया जाता है।

कि० प्र०—उठाना।—रखना।

३. वाली में एक प्रकार की मिठाइयों का चूनाब जो स्तरो के रूप में नीचे-ऊपर होता है।

कि० प्र०—रखना।—छानना।

४. नीचे ऊपर रखी हुई वस्तुओं का थक या डेर।

कि० प्र०—चुनना।

५. कुशती में अपने प्रतिपक्षी को नीचे लाकर उसकी गरदन पर कुहनी और कलाई के नीचे की हड्डी से रपड़ते हुए आघात करना।

कि० प्र०—देना।—छानना।

६. भमड़े की वह मोहरी जो मालुओं के मुँह पर बांधी जाती है।

रघु—वि० [फा० रघु] १. जो व्यर्थ हो तथा किसी उपयोग में न लया जा सकता हो। जैसे—रघी कागज। २. जिसमें कुछ भी बड़ियापन या अच्छाई न हो। बहुत ही निम्न कोटि या प्रकार का। जैसे—रघी कपड़ा। स्त्री० लिखे अथवा छपे हुए ऐसे कागज जिनका कोई उपयोग अब न होने को हो। पुराने और व्यर्थ के कागज।

रघुछानना—पुं० [हिं० रघी+फा० छाना] वह स्थान जहाँ खराब और निकम्मी चीजें रखी या फेंकी जायें।

रघुचार—स्त्री० [देश०] ओड़के का होहरा वस्त्र। दोहर।

रघेरा जाल—पुं० [स० रघु+छेद+पैरा (प्रत्यय)+जाल] मछली फँसाने का छोटे छेदोंवाला जाल।

रघु—पुं० [स० रघु] युद्ध। लड़ाई। संघाम।

पुं० [सं० अरथ्य] जंगल। बग।

पुं० [?] १. शील। ताल। २. समूह का वह छोटा अंश जो तीन ओर से स्थल से घिरा हो। छोटी खाड़ी।

पुं० [अं०] किनेट के खेल में बल्लेबाज द्वारा एक सिरे से दूसरे सिरे तक लगाई जानेवाली दौड़।

रघुनामा—अ० [देश०, स०] रघुना=शब्द करना। बृषभ आदि का मद्-मद् शब्द होना।

रघुओर—पुं०=रघुओर (श्रीकृष्ण)।

रघुना—अ० [सं०] रघुना=शब्द करना। बृषभको आदि का मद्द और मद्द र शब्द में बजना या बोलना।

रघुनामा—पुं० [सं० रघु+हिं० नामा] युद्ध-श्रेय में शीरला दिखानेवाला योद्धा।

रघु-नरिया—स्त्री० [देश०] एक तरह की बंगली प्रेड।

रघु-बोहरा—पुं०=रघु-बका।

रघु-संपिका—स्त्री० [हिं०] गी। गाय।

रघुवाही—पुं० [सं० रघु+वाही] योद्धा।

रघु-नास—पुं० [हिं० रानी+नास] १. महल का वह अंश जिसमें रानियाँ रहती थीं। अंतपुर। २. घर में स्त्रियों के रहने का स्थान। जगना-छाना।

रघु-नासन—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की फली।

रघु-साजी—स्त्री० [सं० रघु+फा० साजी] युद्ध छिड़ने या छेड़ने की अवस्था, क्रिया या भाव। उदा.—सरजा सिबाजी की स्वयं तेज बाजी चाँह गाजी गजनी के रजसाजी नु बहुत हैं।—रत्ना।

रघुना—पुं० छं०=रघुना (बजता हुआ)।

रघुनासा—पुं०=रघुनास।

रघुनी—पुं० [सं० रघु+हिं० ई (प्रत्यय)] रण करनेवाला व्यक्तित। योद्धा।

रघुना—पुं० [सं० रघु+एत (प्रत्यय)] माला। (हिं०)

रघुना—स्त्री० [हिं० रघुना] १. रघुने की क्रिया या भाव। २. ऐसा स्थान जहाँ पैर रघुना या फिसलता हो। ३. जल्दी-जल्दी रघुने अर्थात् तेजी से चलने की क्रिया या भाव। दौड़। ४. डालूजं स्थान। उत्तर। बाल।

स्त्री० [अ० रघु] आवत। देव।

कि० प्र०—छालना।—पढ़ना।—होना।

स्त्री० [अ० रिपोटे] चौकी, घाते आदि में जाकर बी जानेवाली मार-पीट, चोरी-डाके आदि घुमटनाओ की सूचना।

रघुना—अ० [सं० रघुना=सरकना, मि० फा० एतन्] १. चिकनी या बालूनी अर्थात् पर पाँव और फलत व्यक्तित आदि का फिसलकर आने वाला। २. तेजी से चलना।

सं० संयुक्त या समोज करना। (बाजारूक)

रघुना—पुं० [हिं० रघुना] १. रघुने की क्रिया या भाव। २. ऐसा स्थान या स्थिति जिसमें पैर रघुना या फिसलता हो। फिसलना। ३. डालूजं भूमि। डाल। बलान। (रैय)

रघुना—सं० [हिं० रघुना] १. किसी को रघुने में प्रवृत्त करना। २. (काम) जल्दी से घुरा करना।

रघुनीला—वि० [हिं० रघुना (ना)+रंज (प्रत्यय)] स्त्री० रघुनीली। इतना या ऐसा चिकना जिसपर पैर फिसलता या फिसल सकता हो। पिच्छल।

रघुना—पुं० [हिं० रघुना] १. फिसलने की क्रिया या भाव। रघु। २. बहुत जल्दी जल्दी चलना। तेज चलना।

रघुना—रघुना मारना=बहुत जल्दी जल्दी या तेजी से चलना। ३. दौड़-घुप। ४. दे० 'रघुना'।

रघुना—स्त्री० [?] तलवार। (हिं०)

रघुना—पुं० [सं० रघुना] स्वर्ग। (हिं०)

रघुना—पुं० [अं० रघु] अमान।

वि० [अं०] १. (कागज, कपड़ा आदि) जिसमें चिकनापन न हो। झुर-दरा। २. (विचारण, लेख आदि) जो अजी ऐसे रूप में हो कि ठीक तथा

साध किया जाने अर्थात् पुनः लिखा जाने की हो। मनुने के रूप में तैयार किया हुआ।

रकना—वि० [अ० रकतः] १. रघा या बीता हुआ। गत। २. मृत।

रकना-रकना—अव्य० [अ० रकतः रकतः] सन्-सन्नेः धीरे-धीरे।

रकने-रकने—अव्य०—रकता-रकता।

रकन—स्त्री० [अ० राहकल] रकतायती ढंग की एक प्रकार की बंदूक। राहकल।

पु० [अ० रं] एक तरह की ऊनी मोटी चादर।

रका—वि० [अ० रफूय] १. बुर किया या हटाया हुआ। २. मिटाया हुआ। ३. समाप्त या पूरा किया हुआ। ४. निवारित या शांत किया हुआ।

रक—रका-रका।

रकाह—स्त्री० [अ० रिफह] १. आराम। सुख। २. बलाई। हिल।

रकाब—वि० [अ० रकौब] १. ऊँचा। बुढ़का। २. उत्तम। श्रेष्ठ।

रकाक—पुं० [अ० रकाक] १. जाघी। संगी। २. सहायक। मददगार। ३. मित्र।

वि० प्रायः या सदा साथ रहनेवाला।

रकाबा—पुं० [अ० रकाय] १. वह गद्दी जिसके ऊपर जीन कसी जाती है। २. कपड़े की वह गद्दी जिसे हाथ से लगाकर नोनबाईं तबूरे में रोटी चिपकते हैं। काबुक। ३. एक प्रकार की गोलाकार पगड़ी।

रफू—पुं० [अ० रफू] १. एक प्रकार की खिलाई जिसमें बीच से कुछ कटा या फटा हुआ कपड़ा इस प्रकार बीच में सूत भरकर मिलाया जाता है कि साधारणतः जोड़ नहीं दिखाई पड़ता। २. असंगत या असंबद्ध बातों की संगति बैठाने की क्रिया।

मुहा—(बात) रफू करना = कही हुई वी असंबद्ध या असंगत बातों में सामंजस्य स्थापित करना। बात बनाना।

रफूगर—पुं० [फा० रफूगर] [भाव० रफूगरी] वह कारीगर जो कपड़ों में रफू करने या बनाने का काम करता हो।

रफूगरी—स्त्री० [फा०] रफूगर का काम, रफा या माथ।

रफू-बककर—वि० [अ० रफू+हिं० बककर] जो धीरे से तथा बिना आहट दिये कही चला गया हो। धंपल। गायब। (व्यक्तियों के लिए प्रयुक्त) क्रि० प्र०—बनना—हीना।

रफत—स्त्री० [फा०] चलना या जाना। जैसे—आमद रफत = आना-जाना।

रफतनी—वि० [फा०] जो जानेवाला हो।

स्त्री० १. जाने की क्रिया या माय। २. माल का कही बाहर भेजा जाना। निकाली। निर्यात।

रफतार—स्त्री० [फा०] १. गति। चाल। २. चलने-बीड़ने के समय और चार की जानेवाली दूरी के हिसाब से आनुपातिक गति। जैसे—मोटर ५० मील घंटे की रफतार से चलती है। ३. प्रगति। ४. दशा। हावला।

रफतार-मुफतार—स्त्री० [फा०] उठने-बैठने, चलने-फिरने और बात-चीत करने का ढंग या माय। चाल-चलन। तीर-तरीका।

रफता-रफता—अव्य०—रफता रफता।

रफ—पुं० [अ०] १. मालिक। २. ईश्वर।

रकना—अ० [?] [भाव० रवकी] बर से छिपना। हुकना।

रकड़—पुं० [अ० रकर] १. एक प्रकार का बूत जो बट बर्न के अन्तर्गत है, और जिसका खुरापा हुआ बूध इसी नाम से प्रसिद्ध है। २. उस बूध से बना हुआ एक प्रसिद्ध लकीला पदार्थ जिससे गैद, कोसे आदि बहुत सी चीजें बनती हैं।

स्त्री० [हिं० रकड़ा] १. बहुत अधिक परिश्रम। रकड़ा। २. व्यर्थ का श्रम। फजूल की रानी।

क्रि० प्र०—साता।—रकड़ा।

३. रास्ते की ऐसी चक्करदार दूरी जिसमें परिश्रमपूर्वक बहुत चलना पड़ता हो।

रकड़ छंभ—पुं० [हिं० +सं०] कविता का ऐसा छंभ जिसमें भाषाओं आदि की गिनती का कुछ विचार न हो। (व्यंग्य)

रकड़ना—सं० [हिं० रफटना या सं० बरतन, प्रा० बहन] १. घुमाना-फिराना। चलाना। २. किसी तरह पदार्थ में कोई वस्तु (करछी आदि) डालकर चारों ओर चलाना या फेरना। फेरना। ३. किसी से बहुत अधिक परिश्रम कराना।

अ० घुमाना-फिरना।

सं०—रकड़ना।

रकड़ी—स्त्री० [प्रा० रक्या =अबलेहु] गाबा किया हुआ बूध का लच्छेदार रूप। बसोबी।

रकबा—पुं० [हिं० रकनबा] १. वह श्रम जो कहीं बार बार आने जाने या दोड़-भूष करने से होता है। २. कीचड़।

मुहा०—रकबा पकना = ऐसा पानी भरतना कि रास्ते में कीचड़ हो जाय।

रकड़—स्त्री० [?] आवाज। शब्द।

रकर—पुं०—रकर।

रकाना—पुं० [विश०] एक प्रकार का छोटा रफ जिसके मेंढरे में मंचीरे भी लगे होते हैं।

रकाब—पुं० [अ०] सितार, सारंगी आदि की तरह का एक बाजा।

रकाबिया—पुं०—रकाबी।

रकाबी—पुं० [अ०] रकाब बजायेवाला।

रकी—स्त्री० [अ० रकीब] १. बसत ऋतु। बहार का मौसम। २. उक्त ऋतु में तैयार होनेवाली तथा काटी जानेवाली फसल। 'शरीर' से जिस।

रकीब—पुं० [अ०] स्त्री या पुुवष की दृष्टि से उसके पहले ब्याह से उत्पन्न पुत्र।

रकीब—स्त्री० [विश०] मंकीके आकार का एक प्रकार का पक्षी।

रफा—पुं० [अ०] १. अम्यास। मक्का। मुहाबरा। रफत।

क्रि० प्र०—पड़ना—हीना।

२. आपस में होनेवाला मेल-जोल और आशीर्षता का सम्बन्ध।

रफत-भात—स्त्री० [अ०] आपस में होनेवाला मेल-जोल और संग-साथ।

रफ—पुं० क० [सं० र/रफू (आरंभ करना) +वत्] [स्त्री० रक्या] आरंभ किया हुआ। शुरू किया हुआ।

रफ—पुं०—रफ।

रफा—पुं० [फा० अरफा] १. वह गद्दी जिस पर तीप लाठी जाती है। ठोपसाने की गाड़ी। २. ऐसी गाड़ी या रथ जिसे बैल कहीं बंधते हैं।

रम्या—पु०—रमाय ।

रम्य—पु० [स० √रम्+अत्च्] १ वेग। तेजी। २ प्रसन्नता। हर्ष।
३ प्रेमपूर्वक अथवा प्रेम के कारण मन में होनेवाला उदसाह। ४. उपसुप्ता। ५ मान। प्रतिष्ठा। सन्नम। ६ पश्चात्साय। पछतावा।
७ कार्य-कारण सम्बन्धी अथवा पूर्वपर का विचार। ८ अल्प
निष्फल करने की विधि।

रम—पु० [स० रम (कीडा) +अच्] १ कामदेव। २ स्त्री का पति।
३ प्रेमी। प्रेमपात्र। ४ दिव्य व्यक्ति। ५ लाल अशोक।
वि० १ प्रिय। मनोरम। सुन्दर। ३. आनन्ददायक। ४ मनोरञ्जक।
वि० [हि० राम] हि० 'राम' का बहु सक्षिप्त रूप जो उसे यौ० शब्दों के
आगम्य में रखने पर प्राप्त होता है। जैसे—रमक जरा, रमचेरा।
पु० [अ०] एक प्रकार की चिल्लाती शराब।

रम्यार्थी—पु०—राम।

रमक—पु० [स० √रम्+श्वन्—अक] १. प्रेमपात्र। २ प्रेमी। ३
उपपत्ति। जार।
स्त्री० [हि० रमकना] १ झूलने की क्रिया या भाव। २ पंगा।
३. तरंग। लहर।

रम्ये [अ० रमक] १ अतिम श्वास। २ अतिम जीवन। ३ किसी
बीज में किसी दूसरी बीज का दिया जानेवाला हल्का पुट।

रमकजरा—पु० [हि० राम+का+अक] एक प्रकार का धान जो भादों
में पकता है।

रमकना—अ० [हि० रमना] १ हिंडोले पर झूलना। हिंडोले पर पेंग
मारना। २ झूमते हुए चलना।

अ० [हि० रमक] किसी बीज में किसी दूसरी बीज की हल्की गन्ध,
छाया या प्रभाव दिखाई देना।

रमककरा—पु० [हि० राम+चक] बेसन की मोटी रोटी।

रमचा—पु० [हि० चमचा] छोटी कलछी। चमचा।

रम-बेरा—पु० [हि० राम+बेरा=बेला] छोटी-मोटी सेवारें करनेवाला
व्यक्ति। दहलुआ। (परिहास)

रमचाम—पु० [अ० रमचान] अरबी वर्ष का नया महीना जिसमें मुसलमान
रोजा रखते हैं।

रम-संस्था—पु०—झमेला।

रम-सिंगनी—स्त्री० दे० 'मिठी'।

रमसोभा—पु० [हि० राम+भूलना] घेर में पहनने के पूंफक। नपुर। (हि०)
रमसोल—पु० [?] ब्रज में, एक प्रकार का लोकगीत।

रम—पु० [स० √ रम्—अठम्] १ हांग। २ एक प्राचीन देश। ३.
उक्त देश का निवासी।

रमचना—अ० [स० रमण] १. रमण करना। रमना। २ किसी बात
में मन लगाना। ३. युक्त होना।

रमण—पु० [स० √रम्+—स्युट् अन्] १. मन प्रसन्न करनेवाली क्रिया।
श्रीडा। विलास। २. स्त्री-प्रसंग। मँपुन। सभोग। ३. धूमना-
फिरना या दहलुना। विहार। ४. [√रम्+णिच्+ल्यु—अन्]
स्त्री का पति जो उसके साथ भोग-विलास करता है। ५ कामदेव।
६ गधा। ७. बहकौशा। ८. सूर्य का अश्व नामक सारथि। ९
९ एक प्राचीन वन। १०. एक प्रकार का बर्णिक छंब।

वि० १. रमने या विहार करनेवाला। २ रमण के योग्य। ३. आनन्द
या सुख देनेवाला। ४ प्रिय।

रमणक—पु० [स० √रमण+कन्] पुराणानुसार जन्तुवैष के अर्थात् एक
वर्ष या सडा। इसे रम्यक भी कहते हैं।

रमण ममता—स्त्री० [स० ब० स० टाए] साहित्य में एक प्रकार की नायिका
जो यह समझकर दुःखी होती है कि सकेत-स्थान पर नायक आया होगा
और मैं बहुत उत्प्रेषित न थी।

रमणी—स्त्री० [स० रमण+णीए] १ रमण करने योग्य युवती और
सुन्दर स्त्री। २ और। नारी। स्त्री। ३ मगीत में कर्णाटकी
पद्धति की एक रागिनी। ४ सुगन्धवाला।

रमणीक—वि० [स० रमणीय] जिसमें मन रमण करता हो या कर सके,
अर्थात् सुन्दर। मनोहर।

रमणीय—वि० [स० √रम्+अनीयर्] जिसमें मन रमण करे या कर सके।
अर्थात् सुन्दर। मनोहर।

रमणीयता—स्त्री० [स० रमणीय+तल्+टाए] १ रमणीय होने की अवस्था,
धर्म या भाव। २ सुन्दरता। ३ साहित्य-संपर्ण के अनुसार साहित्यिक
कृति या रचना का बहु भाष्यपूर्ण जो सब अवस्थाओं में बना रहे या क्षण-
क्षण में नवीन रूप धारण किया करे।

रमता—वि० [हि० रमना=धूमना फिरना] जो एक जगह जमकर न रहे
बल्कि अत्रतत्र इधर-उधर रमण करता हो। धूमता-फिरता। जैसे—
रमता जोगी।

रमति—पु० [स० √रम्+अतिच्] १ नायक। २ स्वर्ग। ३ कामदेव।
४ काल। ५ कौआ।

रमटी—पु० [हि० राम+स० आध] एक प्रकार का जड़हन जो अगहन
के महीने में पकता है। इसका चावल कई बरस तक रह सकता है।

रमन—पु०. वि०—रमण।

रमनक—वि०—रमणक।

रमनकशोर—पु० [दि०] एक प्रकार की मछली। कैंबन-सोरा।

रमना—अ० [स० रमण] १ रमण करना। २ भोग-विलास या सुख
प्राप्ति के लिए, कहीं रहना या जड़हन। मन लगने के कारण कही ठह-
रना या रहना। ३ रति-श्रीडा या सभोग करना। ४ आनंद या मीज
करना। मजा लेना। ५ किसी बीज के अन्दर अच्छी तरह भरा हुआ
या ब्याप्त होना। ६ किसी काम, बात या व्यक्ति में अनुगम्य या लीन
होना। ७ किसी के आस-पास धूमना या चक्कर लगाना। ८ चुपके
में चल देना। गायब या बपत होना।
स्यो० कि०—आना।—देना।

९ आनन्दपूर्वक धूमना-फिरना। विहार करना।

पु० [स० रमण] १ चरागाह। बरी। २ बहु घंरा जिसमें धूमने-फिरने
के लिए पशुओं की बुला छोडा जाता है। ३ उपवन। ४ कोई सुन्दर
या रमणीक स्थान।

रमनी*—स्त्री०—रमणी।

रमनीक*—वि०—रमणीक।

रमणीय*—वि०—रमणीय।

रमल—पु० [अ०] १ भाविष्यन् घटनाओं के समय में पाये की विदियों
की गणना आदि के आधार पर किया जानेवाला कथन। २ बहु विधा जिसके

द्वारा उक्त कचन किया जाता है। (बहु फलित ज्योतिष का एक प्रकार है।)

रघा—स्त्री० [सं० √ रघ् + णिच् + अच् + टाप्] लक्ष्मी।

रघा-कांस—पुं० [ष० सं०] विष्णु।

रघाचक्र—पुं० [ष० सं०] विष्णु।

रघा-नरैसा—पुं० [हिं० रघा + नरेवा = पति] विष्णु।

रघाना—सं० [हिं० रघना का सं० रूप] ? रमण करना। २. अनु- रजित करना। अनु रक्त बनाना। मोहित करना। लुभाना। ३. अनु- रक्त करके अपने अनुकूल बनाना। ४. अनु रक्त करके अपने पास रोक रखना। ५. किसी के साथ जोड़ना या लगाना। संयुक्त करना। जैसे— किसी काय मे मन रघाना। ६. किसी काय या बात का अनुष्ठान आरंभ करना। जैसे—रास रघाना—रास की व्यवस्था करना। ७. अपने अंग या शरीर मे पीतना या लगाना। जैसे—शरीर मे भ्रमर रघाना।

रघा-निवास—पुं० [हिं० रघा + निवास] लक्ष्मीपति विष्णु।

रघा-रमण—पुं० [ष० सं०] विष्णु।

रघाली—पुं० [सा० रघाली] एक तरह का बड़िया पतला चावल।

रघा-बीज—पुं० [ष० सं०] एक प्रकार का तांत्रिक मंत्र जिसे लक्ष्मीबीज भी कहते हैं।

रघा-वेष्ट—पुं० [ष० सं०] श्रीवास चक्रन जिससे तारपीन नामक तेल निक- लता है।

रघास—पुं० = रघास (फली और दाने)।

रघित—पुं० कृ० [हिं० रघना] लुभाना हुआ। मृग्य।

रघी—स्त्री० [मलाय०] एक प्रकार की घास।

रघी [अं०] एक प्रकार का तास का खेल।

रघुज—स्त्री० [अ० रघुज का बहु०] ? कटाक्ष। २. इयारा। सकेत

३ कोई ऐसी गूड़ बात जो सहज मे न समझी जा सकती हो। गंभीर विषय। ४ पहेली। ५. स्थित कचन या बात। श्लेष। ६ भेद या रहस्य की बात।

रघेसा—पुं० [रघा + ईश, ष० सं०] रघा के पति, विष्णु।

रघेश्वर—पुं० [रघा + ईश्वर, ष० सं०] विष्णु।

रघेसरा—पुं० = रामेश्वर।

रघेसरी—स्त्री० [हिं० रघेसर] लक्ष्मी। उदा०—पार्श्व ईशरति दक्षिण रघेसरी।—जायसी।

रघेती—स्त्री० [देश०] ? किसानों की एक रीति जिसमें एक कृषक भाव- व्यक्तता पढ़ने पर दूसरे के खेत मे काम करता है और उसके बदले में वह भी उसके खेत में काम कर देता है। इसे पूर्व में तैठ और अबच के उत्तरीय भागों मे ईँड़ कहते हैं।

रघे प्र०—देना।—लघाना।

२. बहु नकरी या काम का दिन जो इस प्रकार कार्य करने में लगे।

रघनी—स्त्री० [हिं० रामायण] कबीरदास के भाँजक का एक नाम जिसमें वेही ओर बोधाइय हैं।

रघ्या—पुं० [हिं० राम + ऐया (प्रत्य०)] १. राम। २. ईश्वर।

रघ्य—स्त्री० [अ०] [बहु० रघुज] २. ओंख भीँह बादि से किया जाये- बाधा। इशारा। सकेत। २. भेद। रहस्य।

रघ्याल—पुं० [अ०] रघल विद्या का शास्त्र।

रघ्य—वि० [सं० √ रघ् + ण्यु] [स्त्री० रघ्या] ? जिसमें मन रमण करता या कर सकता हो। रमणीय। २. मनोहर। सुंदर। रमणीक। पुं० १. चंचा का पेड़। २. अगस्त का पेड़। ३. परवल की जड़। ४. पुच्छ का कीर्यं। शुक। ५. बायु के साथ भेदी मे से एक।

रघ्यक—पुं० [सं० रघ्य + कन्] १. जंबूद्वीप का एक बंद। (पुराण) २. महातिबा। बकायिन।

रघ्य-गुण्य—पुं० [बं० सं०] सेमल का पेड़।

रघ्य-कल—पुं० [बं० सं०] कुचला।

रघ्य-की—पुं० [बं० सं०] विष्णु।

रघ्य-सायु—पुं० [कर्म० सं०] पहाड़ के शिखर पर की समस्त भूमि। प्रत्य।

रघ्या—स्त्री० [सं० रघ्य + टाप्] १. रात। २. गंगा नदी। स्थल-पथिनी। ४. महेन्द्र-बाधणी। इन्द्रायन। ५. लक्षणा नामक कंद। ६. मेघ की एक कथा जो रघ्य को ब्याही थी। ७. सर्गित मे एक प्रकार की रागिनी। ७ सप्तमे मे, षष्ठे त स्वर की तीस श्रुतियों में से अंतिम श्रुति का नाम।

रघ्यामली—स्त्री० [सं० रघ्या + आमली, कर्म० सं०] मुँई जाँवल।

रघुना—अ० = रघना।

रघु—पुं० [सं० √ रघ् (गती) + ष] १. वेग। तेजी। २. प्रवाह। बहाव। ३. ऐल के ६ पुत्रों मे से एक।

† पुं० = रज (धूल)।

रघुपति—पुं० [सं० रजनीपति] चंद्रमा। (हिं०)

रघुपि—स्त्री० [सं० रजनी] रात। (हिं०)

रघु—स्त्री० = रजनि।

रघुना—सं० [सं० रजत] १. रज मे भिगोना। सराबोर करना। २. अनु- रक्त करना।

अ० ? रंग जाना। रजित होना। २. किसी के प्रेम मे अनु रक्त होना। ३. किसी से संयुक्त होना। मिलना।

रघुनि—स्त्री० [सं० रजनी, प्रा० रघनी] रात्रि।

रघा—स्त्री० [अ०] १. लोगों को धोले मे रखने के लिए बनाया हुआ बाहरी रूप। दिखावा। बनावट। २. धूर्तता। मक्कारी।

रघाकार—वि० [अ० + कार] [भाष० रघाकार] ? शूटा या शिकोआ

बाद्री रूप बनावेवाला। आबंबरी। २. धूर्त। मक्कार।

रघासता—स्त्री० = रघ्यासत।

रघ्यता—स्त्री० [अ० रघ्यत] प्रजा। रिजाया।

ररकार—पुं० [सं० रकार] रकार की ध्वनि।

रर†—स्त्री० [हिं० ररजा] ररने की क्रिया या भाव। रट। रटन।

ररका—स्त्री० = ररक।

ररकना—अ० = ररकना।

ररना—अ० [प्रा० रर = विसकना] १. अपनी जगह से विसक कर नीचे आना। २. चीन भाष से प्रायंता या याचना करते हुए रोना। ३. विलाप करना। रोना। उदा०—ररि दूबरि भइ टेक बिहूनी।—जायसी।

† सं० = ररना।

ररिहा—वि० [हिं० ररना + हा (प्रत्य०)] ररने या गिरिगिहानेवाला।

पुं० बहुत ही गिरिगिहाते हुए पीछे पड़ जानेवाला। निरसंगा या याचक।

पुं० = ररजा (उल्लू की बाति का पक्षी)।

रर्त—वि० [हि० रार=सगडा] १ रार अर्थात् सगडा करनेवाला। सगडावाङ्गु। २ अथम। नीच।
 पु०=रर्तु।

ररणा*—अ० [सं० ललन=लुब्ध होना] १ किसी चीज का दूसरी चीज में अच्छी तरह से धूल-मिल जाना। जैसे—दूध में चीनी ररणा। २ व्यक्तियों आदि का किसी भीड़, दल आदि में पहुँचना तथा मिलना। सम्मिलित होना। जैसे—दो दलको का ररणा।
 पद—ररणा-मिलना।

ररन-मिल—रती० [हि० ररणा+मिलना] १ ररने-मिलने की क्रिया या भाव। २ सम्मिश्रण। मिलघट।

ररणा*—स० [हि० ररणा का सक० रूप] १. एक चीज को दूसरी चीज में मिलाना। २ युक्त करना।

ररिका*—रती०=रली।

ररना-मिला—वि० [हि० ररणा-मिलना] [रती० रली-मिली] १ जिसमें कई चीजों का मेल या मिश्रण हो। २ जिसका किसी से घनिष्ठ सम्बन्ध हो। ३. मिला-बूझा विहित।

ररली—रती० [सं० ललन=केल, क्रीडा] १ ररने अर्थात् मिलने की क्रिया दशा या भाव। २ विहार। क्रीडा। ३ आनन्द। प्रसन्नता। हर्ष।
 पद—ररन-रली। (रे०)
 रती० [?] चेना नामक कदम।

ररल*—पु०=रेला।

ररलक—पु० [सं० रम्+विभप, म-लौप, लृक्, रत्/ल+ क; ररल+कम्] १. एक प्रकार का मृग। २. कबल।

ररव—पु० [सं० र/र(ध्वनि)+अपु] १ आवाज। शब्द। २ कुछ देर तक निरलस होता रहनेवाला जोर का शब्द। ३. मूक। शोर। हल्ला।
 † पु०=रवि (सूर्य)।
 † रती०=रौ (गति)।

ररवा*—पु० [?] एरव या रेंड का वृक्ष।

ररवना—अ० [हि० ररणा=चलना] १ तेजी से आगे बढ़ना। २ कोई चीज लेने के लिए उस पर झपटना। ३ उछलना।

ररवण—पु० [सं० र/र(ध्वनि)+अपु] १ कांस्य नामक धातु। २ कोयल।
 ३ ऊँट। ४ बिड़ुषक। ५ [√र+स्पृष्ट+अन]
 वि० १. रव अर्थात्-शब्द करता हुआ। २ तथा हुआ। गरम। ३ अस्थिर। बँचल।

ररवण-रेती—रती०=रमण-रेती।

ररवताई—रती० [हि० रावत+आई (प्रत्य०)] १ रावत होने की अवस्था या भाव। २ रावत का कर्तव्य, गुण या पद। ३ प्रभुत्व। स्वाभिव।

ररवण—पु० [सं० र/र+अपु] कोयल।

ररवण—पु० [सं० रमण] पति। स्वामी।
 वि० रमण करनेवाला।

ररवण*—अ० [सं० रव+हि० ना (प्रत्य०)] १ शब्द होना। किसी शब्द या नाम से प्रसिद्ध होना। २ बोला या पुकारा जाना।
 अ० [सं० रमण] १ रमण करना। २ कौतुक या क्रीडा करना। ३ किसी के साथ अच्छी तरह मिलना-जुलना। उदा०—राम-नाम रवि रहिऔ।—कबीर

ररवि, ररवी*—रती०=रमणी।

ररवा—पु० [फा० रवाना] घरेलू काम-काज करनेवाला तथा बाजार से सोदा-मुल्क लाने वाला नौकर। जैसे—एक मेरे घर अया; दूसरे ररवा। २. बहु कागज जिस-पर रवाना किये हुए माल का ब्योरा होता है। ३. कोई चीज कहीं ने ले जाने का अनुमति पत्र। जैसे—पुंजी बुकाने पर मिलनेवाला ररवा।
 वि०=रवाना।

ररवा—वि० [फा०] १ बहुता हुआ। प्रचलित। २. जो चल रहा हो। जाँटी। प्रचलित। ३. (कार्य) जिसका अच्छी तरह अम्यास हो गया हो, और जिसके निर्वाह या सम्पादन में कोई कठिनाता न होती हो। ४. अम्यस्त। जैसे—रवा हृथ। ५. (शस्त्र) जिस की धार चोखी या तेज हो और इसी लिए जो ठीक और पूरा काम देना हो। ५. दे० 'रवाना'।

रती० जान। रहू।

ररवाँस—पु० [देश०] बोंडे की जाति का एक पीथा और उसकी फली जिसके बीजों की तरकारी बनती है।

ररवा—पु० [सं० रज, प्रा० रज=धूल] [रती० जलपा० रई] १. किसी चीज का बहुत छोटा टुकड़ा। कण। दाना। रेखा। जैसे—वादी का रवा, मिर्छी का रवा। २. किसी चीज के रे कौपाकार या लंबाई के टुकड़े जो नमी निकल जाने पर प्रायः आपसे आप बन जाते हैं। केलस। (फिउल)

पद—रवा भर=बहुत पोंछा। जरा-सा।

३. मूजी जिसके कण उक्त प्रकार के होते हैं। ४. बाइक का कण या दाना। ५. घुंघरू में बजनेवाला कण या दाना।

वि० [फा०] १ उचित। वाजिब। २. प्रचलित।

ररवाज—रती० [फा०] १. तरीका। दस्तर। २. समाज में प्रचलित या मान्य कोई परंपरा या कृि। प्रथा। रीति।

क्रि० प्र०=चलना।=देना।=निकलना।=माना।=होना।

ररवाहार—वि० [फा०] [या० रवाहा] १ उचित प्रकार का व्यवहार करने तथा सबथ या लगाव रखनेवाला। उचारवेत्ता। २. शुभ-चित्तक। हितवीर। ३. सहमनुष्य।

† वि०=रदेवार।

ररवाहारी—रती० [फा०] १. रवादार होने की अवस्था या भाव। २. इस बात का स्थान कि किसी को कष्ट या दुःख न दिया जाय। ३ उचारता। ४ सहृदयता।

ररवाणी—रती० [फा०] रवाना होने की क्रिया या भाव। प्रस्थान। चाल।

ररवाना—वि० [फा० रवाना] १. जिसने कहीं से प्रस्थान किया हो। जो कहीं से चल पड़ा हो। प्रस्थित। २. कहीं से किसी के पास भेजा हुआ।

ररवानी—रती० [फा०] १. रवा होने की अवस्था या भाव। २. बहाव। ३. ऐसी गति जिसमें अटक आदि न होती हो। जैसे—पड़ने या बोलने में रवानी होना। ४. प्रस्थान। रवानगी। (स्व०)

ररवा—पु०=रवाव।

ररवाधिया—पु० [देश०] लाल बलुआ पत्थर।

पु०=रवाधिया।

एवाङ्गित—स्त्री० [अ०] १. कहाणी। किस्सा। २. कहावत।
 स्त्री० [अ० रिजयत] १. किसी के मुख से निकलेपतः पैगम्बर के मुख से सुनी हुई बात दूसरों से कहना। २. इस प्रकार कही जानेवाली बात।
 ३. किचबंदी। अकमारह। ४. कहावत। ५. किस्सा। कहाणी।
एवा-स्त्री०—स्त्री० [का०] १. जल्दी। सीझता। २. बल-बलाव।
 ३. माग-बीध।
एवाचन—मु० [वि०] एक प्रकार का वृथ जिसके बीच और पते बीच-बिच के काम आते हैं।
एचि—मु० [सं०/व०/त०] १. सूर्य। २. आक। मदार। ३. अग्नि। ४. नायक। नेता। सरदार। ५. लाल अघोष का पेड़। ६. पुरापानुसार एक आदिष्य का नाम। ७ एक प्राचीन वर्षत। ८. पुतराष्ट्र का एक कुल।
एचि-उच्च—पु० [स०] किसी ग्रह की कक्षा या भ्रमण-पथ का वह बिंदु जो सूर्य से दूरतम पड़ता है। 'एचि-नीच' का विपर्यय। (एकेलिपय)
एचि-कार—मु० [सं० व० त०] सूर्य की किरण।
एचि-काल-अग्नि—पु० [सं०] एचि-काल, ए० त०; रविकास्त-अग्नि, कम० स०] सूर्यकोत मणि।
एचि-कुल—पु० [व० त०] क्षत्रियों का सूर्यवंश।
एचि-वक्त्र—पु० [व० त०] १. सूर्य का मंडल। २. सूर्य के रश्मि का बक या पहिया। ३. कलित उत्पत्ति के, एक प्रकार का बक जो भूवृथ के शरीर के आकार का होता है और जिसमें यथा-स्थान नक्षत्र आवि रख कर बालक के जीवन की शुभ और अशुभ बातों के सम्बन्ध में फल कहा जाता है।
एचिज—पु० [सं०] एचि/अन् (उत्पत्ति)+ज] शनैश्चर, जिसकी उत्पत्ति एचि या सूर्य से मानी जाती है।
एचिज-केतु—पु० [सं० कम० स०] एक प्रकार के केतु या पुच्छल तारे जिनकी उत्पत्ति सूर्य से मानी गई है।
एचिजा—स्त्री० [सं०] एचिज+टापु] यमुना। कालिंदी।
एचि-जात—पु० [सं० व० त०] सूर्य की किरण।
 वि० एचि से उत्पन्न।
एचि-तणय—पु० [व० त०] १. यमराज। २. शनैश्चर। ३. लुपीड। ४. कर्ष। ५. अविनी कुमार। ६. साधवि मनु। ७. वैभवत मनु।
एचि-तनया—स्त्री० [व० त०] सूर्य की कन्या, यमुना।
एचि-तनुवा—स्त्री० [व० त०] एचि-तनया (यमुना)।
एचि-विज—पु० [व० त०] एचि-राज।
एचि-वंध, **एचि-वन्ध**—पु० [व० त०] एचि-तणय।
एचि-वन्धिनी—स्त्री० [व० त०] यमुना।
एचि-वाथ—पु० [व० स०] पथ। कमल।
एचि-वृथ—पु० [सं०] किसी तरह ग्रह की कक्षा या भ्रमण-पथ का वह बिंदु जो सूर्य से निकटतम पड़ता है। 'एचि-उच्च' का विपर्यय। (येरिडोलिपय)
एचि-वृथ—पु० [सं०] एचि-तणय।
एचि-वृथ—पु० [सं०] एचि-वृथ (एचि-तणय)।
एचि-सिध—पु० [सं०] १. लाल कमल। २. लालकनेर। ३. तर्बा।
 ४. आक। मदार। ५. लघुय या लघुट नामक वृक्ष और उसका फल।

एचि-श्रिया—स्त्री० [व० स०+टापु] एक देवी। (पुराण)
एचि-विच—पु० [व० त०] १. सूर्य का मंडल। २. माणिक्य या मानिक नामक रत्न।
एचि-वन्ध—पु० [व० त०] बहु लाल मंडलकार विच जो सूर्य के चारों ओर दिखाई देता है। एचि-विच।
एचि-वन्धि—पु० [मध्य० स०] सूर्यकोत मणि।
एचि-वन्धि—पु० [सं०] सूर्य के भ्रमण का मार्ग। कालिपुत्र। (इंकिल-विटक)
एचि-वन्ध—पु० [मध्य० स०] सूर्यकोत मणि।
एचि-वन्धि—पु० [व० स०] विष्णु।
एचि-वन्धि—पु० [मध्य० स०] तर्बा।
एचि-वन्ध—पु० [व० त०] क्षत्रियों का सूर्यकुल।
एचि-वन्धि (शिव) —वि० [सं०] एचि-वन्ध+इति] सूर्यवंशी।
एचि-वाण—पु० [सं०] उपमित स०] पौराणिक कथाओं में वर्णित बहु बाण जिसके चलने से सूर्य का हा प्रकाश उत्पन्न होता था।
एचि-वार—पु० [व० त०] शनिवार और सोमवार के बीच का वार। एतवार।
एचि-वातर—पु० [व० त०] एचि-वार।
एचि-वत्—स्त्री० [का०] १. चलने की क्रिया, ढग या गाव। गति। चाल। २. आचार-व्यवहार। ३. तीर-सरीका। रग-ढग। ४. शैली। ५. बगियों की शरारियों के बीच में चलने के लिए बना हुआ छोटा मार्ग। किं० प्र०—काटवा।—बनाना।
एचि-संक्रांति—स्त्री० [व० त०] सूर्य का एक राशि में से दूसरी राशि में जाना। सूर्य-संक्रमण। दे० संक्रांति।
एचि-संक्र—पु० [व० स०, क्] तर्बा।
एचि-सारथ—पु० [व० त०] एचि अर्थात्, सूर्य का रथ हाँकनेवाला, अचण।
एचि-सुंदर—पु० [सं०] उपमित स०] वैद्यक में एक प्रकार का रस जिसके सेवन से भगदर रोग नष्ट हो जाता है।
एचि-सुजल—पु० [सं०] एचि-वन्द (एचि-तणय)।
एचि-सुल—पु० [सं०] एचि-वन्द (एचि-तणय)।
एचि-सुपु—पु० [सं०] एचि-वन्द (एचि-तणय)।
एचि-वार—वि० [हिं०] एवा+का०] जो एचि के रूप में हो। जिसमें रथे हों।
एचि-वा—पु० [का०] एचि-वा। २. आचार-व्यवहार। ३. चाल-चलन। ३. तीर-सरीका। रग-ढग।
एचि-वत्—पु० [सं०/अणु (भोजन)+मुच-अण, +टापु, रथादेश] १. जीभ। रसता। २. रसती। ३. करधनी। मेखला।
एचि-नकाश—पु० [व० त०] चांगे आदि की बनी हुई एक प्रकार की करधनी जो प्राचीन काल में सिक्कों के रूप में पहनती थीं।
एचि-नकाश—पु० [सं०] एचि-नकाश।
एचि-नकाश—स्त्री० [सं०] एचि-नकाश (अलकार)।
एचि-व—पु० [अ०] १. सदाचार। २. सत्यता।
एचि-व—वि० [अ०] १. एचि-व अर्थात् सत्यता पर चलनेवाला तथा दूसरों की सत्यता पर चलने वाला। २. गृह-ढगा से जिसने किसी कला या विद्या में नियुक्ता प्राप्त की हो।

रक्त—गुं० [फा०] ईर्ष्याजन्य यह विचार कि जैसा वह है वैसा मुझे भी होना चाहिए, अथवा मैं किसी प्रकार उसके स्थान पर ही जाता।

रक्ति—स्त्री० [स०√अस्/सि, रसादेशे] ? किरण। २ पलकी परके बाल। बरौनी। ३ घोड़े की लगाम। बाग।

रक्तिम-कलाप—गुं० [ष० त०] माँसियों का वह हार जिसमें ६४ या ५४ लक्ष्मियाँ हो।

रक्तिम-केतु—गुं० [मध्य० सं०] ? वह केतु या पुच्छल तारा जो कुनिका नक्षत्र में स्थित होकर उदित हो।

रक्तिम-चित्रण—गुं० [स०] रेडियो-चित्रण।

रक्तिम-मायक—गुं० [ष० त०] विकिरणमापी।

रक्तिम-मूत्र—गुं० [स० रक्तिम/मूत्र (छोड़ना) ; विषय, उपपद सं०] मूत्र।
रक्त्तना—गुं० =रक्षण।

रक्त—गुं० [स०√रस् (आस्वादन) +अस्/वि०] रसात्, रक्तिक] ? वनस्पतियों अथवा उनके फूल-पत्तों आदि में रहनेवाला वह जलीय अथवा तारल पदार्थ जो उड़ने-कूटने, दहनने, निचोड़ने आदि पर निकलता या निकल सकता है। (जूत) जैसे—अमूर, ऊँह, जामुन आदि का रस। २ वृक्षों के शरीर से निकलने या पीछकर निकाला जानेवाला तारल पदार्थ। निर्वास। मदा। (मैप) जैसे—ताड़, गाल आदि वृक्षों में से निकला या निकाला हुआ रस। ३ किसी चीज की चालने पर निकलनेवाला अथवा तारल मार भाग। जूत। रसा। शीतवा। ४ प्राणियों के शरीर में से निकलनेवाला कोई तारल पदार्थ। जैसे—पसीना, दूध, रक्त आदि।

रक्त-गौर-रक्त—दूध या उममे बने हुए दही, मखन आदि पदार्थ।

५ प्राणियों, विशेषतः मनुष्यों के शरीर में साध पदार्थों के पचने पर उनका पहले-पहल बतनेवाला वह तरल रूप, जिसमें आगे चलकर रक्त बनता है। चर्मसारा। रक्तसारा। रक्तिका। (बैद्यक में इसे शरीररक्ष सात धातुओं में से पचनी धातु माना जाता है।) ६ जल। पानी।

उदा—महाराजा किर्वाणिया खोलो, रस की देव पी।—गीत। ७ पानी में घोला हुआ गूड, चीनी, मिसरों या ऐंसाँही और काँड़े चीज। जैसे—देहात में किन्हीं के घर जाने पर बट प्राय रस पिनाता है। ८ काँड़े तरल या द्रव पदार्थ। ९ धोँधे, हाथियों आदि का एक रोग जिसमें उनके पैरों में से जहरीला या दूषित पानी बहता या रसता है। १० किन्हीं पदार्थों का सार भाग। तत्त्व। सत्त। ११ पारा। उदा०—रस सारे रस्तामन होय। (कहा०) १२ धातुआ आदि की (प्राय पारे की सहायता से) पीककर तैयार किया हुआ भस्म या रसोषण। जैसे—रस-पट्टी, रस-माणिक्य, रस-सिद्धर आदि। १३ लाँटा। लुआव। १४ शीर्ष। १५ शिगरक। हिगुम। १६ गध-रसा। विलारस। १७ बोल नामक गध द्रव्य। १८ जहर। विष। १९ पहले खिनाव का धोना जो बहुत तेज होता और बड़िया माना जाता है। २० खाने-पीने की चीज मूँह में पड़ने पर उसमें बीजों को होनेवाला अनुभव या मिर्चनेवाला स्वाद। रसनेदिय में होनेवाली अनुभूति या मनेदन। (पलेवट)

विशेष—हमारे यहाँ वैद्यक में ये छ रस माने गये हैं,—अम्ल, कटु, कषाय, तिक्त, मधुर और लवण।

११. कविता आदि में उक्त रसों के आधार पर माना हुआ छ की

सत्या का वाचक शब्द। २२. कार्य, विषय, व्यक्तित्व, आदि के प्रति होनेवाला अनुराग। प्रीति। प्रेम। मूहम्बत।

पद—रस-रंग=रस-रीति।

मुहा०—**रस खोटा होना**—आपस के प्रेम-पूर्ण व्यवहार में अंतर पड़ना। २३. यौवन काल में मनुष्य के मन में अनुराग या प्रेम का होनेवाला संचार।

मुहा०—**रस बीजना या भीनना** (क) मनुष्य में यौवन का आरम्भ होना (ख) मन में किसी के प्रति अनुराग या प्रेम का संचार होना। (ग) किसी पदार्थ का ऐसा समय आना कि उससे पूरा आनंद या मुक्त मिल सके।

२४. दार्शनिक क्षेत्र में, इन्द्रियाणों के साथ इन्द्रियों का संयोग होने पर मन या आत्मा की प्राप्त होनेवाला आनंद या सुख। २५. लोक-व्यवहार में, किसी काम या बात से किसी प्रकार का संबंध होने पर उससे मिलनेवाला आनंद या उसके फल-स्वरूप उत्पन्न होनेवाली रुचि। मजा जैसे—कोई किसी रस में मगन है तो कोई किसी रस में। उदा०—राम पुनीत विषय रस रुचें। लोकगुण सुपभोग के मूखे।—कुलमी २६ उपनिषदों के अनुसार आनंद-स्वरूप ब्रह्म। २७ मन की उमग या तरंग। मोज। २८ मन का कोई आवेग। जीवा। मनवेग। २९ किसी काम या बात में रहने या होनेवाला कोई प्रिय अथवा सुखद तत्त्व। जैसे—उसके गले (या गान) में बहुत रस है। ३० किसी कार्य या व्यापार के प्रति होनेवाली कुतूहलमूलक प्रवृत्ति या उससे होनेवाली मुग्ध अनुभूति। दिलचस्पी। (इन्टरेस्ट) जैसे—(क) इस पुस्तक में हमें कोई रस नहीं मिला। (ख) वे अब सार्वजनिक कार्यों में विशेष रस लेने लगे हैं। ३१ साहित्यिक क्षेत्र में (क) तात्त्विक दृष्टि में कथानकों, काव्यों, नाटकों आदि में रहनेवाला वह तत्त्व जो अनुगम, कथना, क्रोध, प्रीति, रति आदि मनोभाव की जाग्रत, यत्न तथा संयम करीता है। यह तत्त्व कवियों, लेखकों आदि की प्रतिभा, रचना-कीर्तना और उपयुक्त शब्द-बीजना तथा वाक्य-विन्यास से उत्पन्न होता है। (ख) भारत के प्राचीन साहित्यकारों के मत से उन्नततत्त्व का वह विहात स्वरूप जिसकी निष्पत्ति, अनुभाव, विभाव और संचारों के योग से होती है और जो महदुय पाठकों या दर्शकों के मन में प्रवेगवाले स्थायी भावों की परिपक्व, पुष्ट और जाग्रत या व्यक्त रूपके उत्कृष्ट या परम सीमा तक पहुँचाना और पाठकों या दर्शकों की प्रसन्न तथा सुखद वरके उनके साथ एकात्मता स्थापित करना है। (सन्टिमेन्ट) इसके ये नौ प्रकार या भेद कहे गये हैं—अद्भुत, कथन, भयानक, रौद्र, शीघ्रमन, शीघ्र, शांत, श्रुंगार और हास्य।

विशेष—ग्रन्थक रस के ये चार अंग कहे गये हैं—स्थायी भाव, विभाव (आलम्बन और उद्दीपन), अनुभाव और संचारों भाव। ३२ कवितामें उक्त नौ रसों के आधार पर नौ की सत्या का सूचक शब्द। ३३ अनुगम, दया आदि कोपल वृत्तियों के वश में रहने की अवस्था या भाव। उदा०—राजत अम रस विरस अति, ससस-सरस रस बरै।—केतव। ३४ काम-कीड। केल। रति। विहा। ३५. काम-वाचना। ३६ गुण, तत्त्व, रूप, विशेषता आदि के विचार से होने वाला वर्ण वा विभागा। तरह। प्रकार। जैसे—एक रस, सम-रस। उदा०—(क) एक ही रस दुनी न हूय मीक सोसति सहसि।—गुलमी। (ख) सम-रस

समर-सकोच-बस, बिबस न ठिक उह्राह।—बिहारी। ३७ छग।
 तबे। उवां०—तिपका ब्यार के बस भाबे स्थीं उड़ाह लै जाइ
 कपने रस।—स्वामी हरिदास। ३८. गुण। सिफत। ३९. केवच
 के अनुसार रसग और लक्षण की सजा।

रसो[?] एक प्रकार की बेंब जो गिलगिस के पामीर आदि उत्तरी
 प्रदेशो मे पाई जाती है।

रसक—पुं० [सं० रस+कन्] १. फिटकरी। २. संगेबसरी। बपरिया।
 १पुं०=रसक।

रसक-कारिलेखक—पुं० [सं० कर्म० सं०] पतला खपरिया। संगेबसरी।

रसक-बसुर—पुं० [सं० कर्म० सं०] दलदार मोटा खपरिया या संगेबसरी।

रस-कपूर—पुं० [सं० रसकपूर] एक प्रसिद्ध उषागुण जिसमे पारे का भी
 कुछ अंश होता है और जो दवा के काम मे आता है। यह प्रायः इंगूर
 के समान होता है; इसीलिए कही कही सफेद शिगरफ भी कहलाता
 है। (कीलेलेल)

रस-कमर—पुं० [प० तं०] पारे की सहायता से रस आदि तैयार करने
 की क्रिया। (बैद्यक)

रस-कलानिधि—पुं० [सं० तं०] सगीत मे, कर्नाटकी पद्धति का एक
 राग।

रस-कुल्या—स्त्री० [प० तं०] कुशवीर्य की एक नदी। (पुराण)

रस-कीर्ति—स्त्री० [मध्य० सं०] १ प्रेमी और प्रेमिका की कीर्ति या
 विहार। २ हींसी-दिलखी। मजाक।

रसकोरा—पुं० [हिं० रस+कोर] रसगुल्ला नाम की मिठाई।

रसकीर—स्त्री० [हिं० रस+कीर] गुड या चीनी के शरबत अथवा ऊस
 के रस मे पकाए हुए चावल। मीठा भात।

रसगंध—पुं०=रसगंधक।

रसगंधक—पुं० [सं० रस-गंध, व० सं०+कन्] १. गंधक। २. रसाज।

रसीत ३ बोल नामक गन्ध द्रव्य। ४ इंगूर। शिगरफ।

रसगण-ज्वर—पुं० [सं० रस-गण, हिं० तं०, रसगण-ज्वर, कर्म० सं०] वैद्यक
 के अनुसार ऐसा ज्वर जिसके कीटाणु या विष शरीर की रस नामक
 धातु तक मे पहुँचकर समा गया हो।

रस-गर्म—पुं० [व० सं०] १. रसीत। २. स्वादिष्ट।

रस-गुणी १—पुं० [सं० रस+गुणी] काव्य, सगीत आदि का अच्छा ज्ञाता।
 रसज्ञ।

रस-गुल्ला—पुं० [हिं० रस+गोला] छेमे की एक प्रकार की बेंगला मिठाई
 जो गुलाब जामुन के समान गोल और धीरे मे पगी हुई होती है।

रस-ग्रह—पुं० [सं० रस+ग्रह (ग्रहण)+अच्] जीभ। रसना।

रस-धन—पुं० [सं० व० सं०] आम्रदन्ध, श्रीकृष्णचंद्र।

वि० १. बहुत अधिक रसवाला। २. स्वादिष्ट।

रसधन—पुं० [सं० रस+धन् (हिंसा)+टल्] सुहागा।

रसधन—पुं० [सं०] सगीत मे बिलावल ठाठ का एक राग।

रसछाया—पुं० [हिं० रस+छाया=छानने की चीज] स्त्री० अल्पा०

रसछत्री ऊस का रस छानने की एक प्रकार की चलनी।

रसच—पुं० [सं० रस+चन् (चल्पित)+क] १. गुड। २. रसीत। ३.

शरबत की सलछट।

रस-भात—पुं० [सं० व० सं०] रसीत।

रसज्ञ—वि० [सं० रस+ज्ञा (जानना)+क] [भाव० रसज्ञता] १. वह
 जो रस का ज्ञाता हो। २. ज्ञाननेवाला। ३. काव्य के रस का ज्ञाता।
 काव्य-यमंत्र। ३. रासायनिक क्रियाएँ या प्रयोग करनेवाला। रसज्ञ-
 यमी। ४ किसी विषय का अच्छा जानकार। निपुण।

रसज्ञता—स्त्री० [सं० रसज्ञ+तल+टाप्] रसज्ञ होने की अवस्था, धर्म
 या भाव।

रसज्ञा—स्त्री० [सं० रसज्ञ+टाप्] १. जीभ। २. गंगा।

रस-ज्येष्ठ-पुं० [सं० सं० तं०] १. मधुर या मीठा रस। २. साहित्य
 मे श्रृंगार रस।

रसजकी—स्त्री० [हिं० रस+जकी] दक्षिण भारत मे होनेवाला एक
 प्रकार का गन्ना जिसका रंग पीलापन लिए हुए हरा होता है।
 रसजली।

रसता—स्त्री०=रसद।

रस-तन्मात्रा—स्त्री० [प० तं०] जल की तन्मात्र।

वि० दे० 'तन्मात्र'।

रसता—स्त्री० [सं० रस+तल+टाप्] रस का धर्म या भाव। रसत्व।

रस-तेज(स्)—पुं० [व० सं०] खुद। रसत। लहू।

रस-त्याग—पुं० [व० तं०] मीठी अथवा रसपूर्ण वस्तुओ का किया जानेवाला
 त्याग। (जैन)

रसत्व—पुं० [सं० रस+त्व] रस का धर्म या भाव। रसता।

रसद—वि० [सं० रस+दा (देना)+क] १. रस देनेवाला। २. स्वादिष्ट।

३. आनन्द तथा सुख देनेवाला।

पुं० १ चिकित्सक। २ मध्ययुग मे बहु भेरिया जो किसी को विष
 आदि खिलाता था।

स्त्री० [व०] १. अश। हिंसा। २. बौट। ३. साध सामग्री। विशेषतः
 कच्चा अनाज जो अभी पकाया जाने को हो। ४ वे साध पदार्थ जो
 यामी, सैनिक, आदि प्रवास-काल मे अपने साथ ले जाते है।

रसवार—स्त्री० [सं० रसद+टाप्] सफेद निरुंजी।

रसवार—वि० [सं० रस+वार (प्रत्य०)] १. जिसमे रस अर्थात्
 जूस हो। जैसे—रसदार आम। २. जिसमे मिठास हो। जैसे—
 रसदार बात। ३. स्वादिष्ट। ४. रसेदार।

रस-वाच—पुं० [मध्य० सं०] वृक्षो मे बहु ताजी बनी हुई लकड़ी जो उसकी
 हीर की लकड़ी और छाल के बीच मे रहती है। (सैप-उब)

रस-बालिका—स्त्री० [प० तं०] ऊस। गन्ना।

रस-द्रव्य—पुं० [मध्य० सं०] बहु द्रव्य या पदार्थ जो रासायनिक प्रक्रियाओ
 से बनता या उनमे काम आता हो। (केमिकल)

रसतापी (हिन्)—पुं० [सं० रस+टप् (गति)+पिच्+पिनि, उप० सं०]
 मीठा यकीरी नीचू।

रस-धातु—पुं० [सं० मध्य० सं०] १. पार। २. शरीर मे बननेवाली
 रस नामक धातु। (दे० 'रस')

रस-बेनु—स्त्री० [मध्य० सं०] दान के उद्वेग से गुड की भेंगियो आदि
 से बनाई जानेवाली गाय की मूर्ति।

रसत—पुं० [सं० व० रत्न (बास्वार्थव)+त्सुट्—अज] १. खाने-पीने की
 चीज का स्वाद लेना। चखना। २. ध्वनि। ३. जवान। जीभ। ४. शरीर
 के अन्दर का कफ। बलगम।

वि० पत्नीना कृनेवाला (उपचार या औषध) ।

रि०—रसना (रस्ता) ।

रसना—स्त्री० [स०√रस+णिष्+युच्—अभ,+टाप्] १. जीम । जवान ।

उदा०—सोइ रसना जो हरिगुन गाये ।

सुश्रो०—रसना बोलना=कुछ समय तक बूष रहने के बाद बातें करना आरम्भ करना । बोलने लगना । रसना तालू से लगाना=कुछ भी उत्तर न देना अथवा न बोलना ।

२. व्याय के अनुसार ऐसा रस जिसका अनुभव रसना या जीम से किया जाता है । (स्वाद) । ३. नागदोनी । रासना । ४. गध-मन्दा नाम की लता । ५. रस्सी । रज्जु । ६. करघनी । मेखला । ७. लपाना ।

८. चन्द्रहा । ९. बौद्ध हठयोग में पिपला नाडी की सना ।

अ० [हि० रस+ना (प्रत्य०)] १. किसी चीज में से कोई तरल या द्रव अथ धीरे-धीरे बहना या टपकना । जैसे—छत में से पानी रसना ।

२. रस रस था रसे रसे=धीरे धीरे ।

३. गीले होने की दशा में, अन्ध का द्रव पदार्थ धीरे-धीरे निकलकर ऊपरी तल पर आना । जैसे—चन्द्रमा के सतमें चन्द्रकांस मणि रसने लगती है । ३. रसमग्न होना । प्रफुल्ल होना । ४. अनुराग या प्रेम से युक्त होना । ५. किसी प्रकार के रस में भग्न होना । अनिन्द्य या मुक्त में लीन होना । ६. किसी चीज या बात से अच्छी तरह युक्त होना ।

रस-नाथ—पु० [स० त०] पारा ।

रसना-यव—पु० [स० त०] निलव । चूतड़ ।

रस-नायक—पु० [स० त०] १. शिव । २. पारा ।

रसना-रव—पु० [स० त०] पत्नी, जो अपनी रसना से शब्द करते हैं ।

रसनीय—वि० [स०√रस+अनीयर्] १. जिसका रस या स्वाद लिया जा सके । चखे जाने या स्वाद लेने के योग्य । २. स्वादिष्ट ।

रसनेत्रिय—स्त्री० [स० रसना-द्वित्रिय, कर्म० स०] रस ग्रहण करने की द्वित्रिय, जीम । रसना

रसनेत्रिका—स्त्री० [स० रस-नेत्र, उपमित स०, +ठन्—इक, टाप्] मनीसिल (खनिज द्रव्य) ।

रसनेष्ट—पु० [स० रसना-ष्ट, ष० त०] उल्ल । गन्ना ।

रसनेष्यमा—स्त्री० [स० रसना-उपमा, उपमित स०] उपमा अलकार का एक भेद जिसमें पहले उपमेय को किसी दूसरे उपमेय का उपमान, दूसरे उपमेय को तीसरे उपमेय का उपमान और इसी प्रकार उत्तरोत्तर उपमेय को उपमान बनाया जाता है ।

रसपति—पु० [स० ष० त०] १. चन्द्रमा । २. पृथ्वी का स्वामी अर्थात् राजा । ३. पारा । ४. साहित्य का भूगौरव रस ।

रस-पर्वती—स्त्री० [स० मध्य० स०] पारे को शोधकर बनाया जानेवाला एक प्रकार का रस । (वैद्यक)

रस-पाक—पु० [स० रस-पाक, ष० त०, √ज् (उत्पत्ति)+ङ] १. गुड़ ।

२. चीनी ।

रस-पाक—पु० [स० ष० त०] मधुर भोजन बनानेवाला । रसोद्या ।

रस-पुनिका—स्त्री० [स० ब० स०, कृष्, +टाप्] मालकनी । २. शलाकर ।

रस-बंधन—पु० [स० मध्य० स०] १. ऐसी कविता जिसमें एक ही विषय बहुत से परस्पर असंबद्ध पदों में कहा गया हो । २. नाटक । ३. प्रबंध काव्य ।

रस-फल—पु० [स० ब० स०] १. नारियल का वृक्ष । २. अर्बला ।

रस-बंधन—पु० [स० ष० त०] शरीर के अंतर्गत नाडी के एक बंध का नाम ।

(वैद्यक)

रस-बत्ती—स्त्री० [हि० रस+बत्ती] एक प्रकार का पौधा जिसके ब्यवहार से पुराने रंग की तापे और बबूके दागी जाती थीं ।

रसबरी—स्त्री०—रसबरी ।

रसबरी—स्त्री० [अ० रसबरी] १. एक प्रकार का पौधा जिसमें लहट-मोठे छोटे गोल फल लगते हैं । २. उबल पौधे का फल । मकौष ।

रसभ—पु० [स० रस+भृ (होना)+अच्] रसत । लून । लहू ।

रस-भस्म—पु० [स० ष० त०] पारे का भस्म ।

रस-बीना—वि० [हि० रस+बीनना] [स्त्री० रसबीनी] १. आनन्द में भग्न । २. (अन्यत्र) आदि जो न तो अधिक रसेदार ही हो और न बिल्कुल सूखा हो । सोखे रसावाला ।

रस-भेद—पु० [स० ष० त०] वैद्यक में एक प्रकार का औषध जो पारे से बनाता है ।

रसभेदी (विन्)—वि० [स० रसभेद+इति] (फल) जो अधिक एक और फलत जूस या रस के अधिक बड़ जाने के कारण फट गया हो ।

रस-भञ्जरी—स्त्री० [स० मध्य० स०] मर्गीत में चन्द्रकी पद्धति की एक रागिनी ।

रसभङ्ग—पु० [स० मध्य० स०] वैद्यक में एक प्रकार का रसौषध जो हृद, पथक और मद्गुर से बनाता है और जिसका व्यवहार शूल रोग में होता है ।

रसभ—स्त्री०—रसभ ।

रस-भङ्ग—पु० [स० ष० त०] पारे को भस्म करने या मारने की प्रक्रिया या भाव । (वैद्यक)

रस-मल—पु० [स० ष० त०] शरीर से निकलनेवाला किसी प्रकार का मल । जैसे—विच्छा, मूत्र, पत्नीना, पृक् आदि ।

रस-मसा—वि० [हि० रस+मसा (अनु०)] १. आर्द्र । गीला । २. पत्थीने से तर और चका हुआ । ३. आनन्दमग्न । ४. किसी के प्रेम में पुरी तरह से भग्न । ५. आनन्द देनेवाला । सुखदा । जैसे—रस-मसे विन ।

रस-साधिव्य—पु० [स० स० त०] वैद्यक में एक प्रकार का औषध जो हृत्ताल से बनाता है और जो कुछ आदि रोगों में उपकारी माना जाता है ।

रस-माता—स्त्री० [स० रस-मातृका] जीम । रसना । जवान । (हि०)

वि० रस में मत्त या मस्त ।

रस-मातृका—स्त्री० [स० ष० त०] जीम । जवान ।

रस-नारण—पु० [स० ष० त०] पारा मारने अर्थात् शुद्ध करके उसका भस्म बनाने की क्रिया या भाव ।

रसमाला—स्त्री० [स० ष० त०] शिलारस नामक सुगन्धित द्रव्य ।

रसमि—स्त्री० [स० रसिम] १. किरण । २. चमक । दीप्ति । ३. प्रकाश ।

रसमूडी—स्त्री० [हि० रस+मूडी] एक प्रकार की बेंगला मिठाई ।

रसमंजी—स्त्री० [स० ष० त०] १. दो या अधिक रसों का मिश्रण । २. साहित्य में रंगों में होनेवाला पारस्परिक मेल और सामंजस्य । इसका विपर्याय 'रस-विरोध' है । ३. साध पदार्थोंकेसबभ में दो ऐसे रसों का मेल जिनसे स्वाद में वृद्धि हो । जैसे—मीठा-नमकीन, लट-मीठा आदि ।

रस-पीम—पु० [स० ष० त०] वैद्यक में एक प्रकार का औषध ।

रस-रस—**पुं०** [हि०] १. प्रेम के द्वारा, उत्पन्न या प्राप्त होनेवाला अनन्य या सुख। मुहूर्त्तक का मजा। २. प्रेम के प्रसंग में की जानेवाली मीठा। केरि।

रस-रसनी—**स्त्री०** [प० त०] संगीत में बिलावल ठाठ की एक रागिनी।

रसराज—**पुं०** [स्त्री० रसराज] =रसराज।

रस-राज—**पुं०** [सं० प० त०] १. पारर। पारा। २. साहित्य का भूषणार रस। ३. रसांजन। रसी। ४. वैद्यक में एक प्रकार का औषध जो लंबे के अम्ल, गंधक और पारे के योग से बनता है और जिसका व्यवहार सिल्ली, बरषट आदि में होता है।

रसराज्य—**पुं०** =रसराज।

रसराजि—**स्त्री०** रसरा का स्त्री० अलपना।

रस-रसि—**स्त्री०** [सं० प० त०] प्रेमी या प्रेमिका से बरताव करने का अच्छा ढंग।

रसराजा—**वि०** [सं० रस+रसमी] [स्त्री० रस-रसि] रसिक। उदा—
अति प्रगल्भ बनी रस-रसि—नंददास।

रसस—**वि०** [सं० रस+ला (लेना)+क] रस से भरा हुआ। रसपूर्ण। रसबाला।

रसलेह—**पुं०** [सं० रस+लिह (आस्वादन)+अच्] १. पारा। २. रस-जन। रसीत।

रससंत—**पुं०** [सं० रसवत्] रसिक। रसिया।

वि० रस से भरा हुआ। रसदार।

रससती—**स्त्री०** =रसती (रसांजन)।

रससदा—**पुं०** =रसदार (नाब की संघियों में भरने का मसाला)।

रसवत्—**वि०** [सं० रस+मत्प] [स्त्री० रसवती] जिसमें रस हो। रसबाला।

पुं० साहित्य में एक प्रकार का अलंकार जो उस समय माना जाता है, जब एक रस किसी दूसरे रस अथवा उसके भाव, रसाभास, भावाभास आदि का अंग बनकर आता है। जैसे—मुड़ में निहत्त शीरपति का हाथ पकड़कर पत्नी का यह कहते हुए विलाप करना—यह वही हाथ है जो प्रेमपूर्वक मुझ आंखों में भरता था। यहाँ भूषणार रस केवल कथन रस का अंग बनकर आया है।

रसवत्—**स्त्री०** १. दे० 'रसि'। २. दे० 'दासहस्वी'।

रसवती—**स्त्री०** [सं० रसवत्+कीप्] १. संपूर्ण जाति की एक रागिनी जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं। २. रसोद्-भर।

वि० स्त्री० रसवाली।

रसवत्ता—**स्त्री०** [रसवत्+तल्+टाप्] १. रसयुक्त होने की अवस्था, धर्म या भाव। रसीलपन। २. मायुर्म्य। मिठास। ३. सुन्दरता।

रसवर—**पुं०** [हि० रसना] नाब की संघि को बंद करने के लिए उसमें लगाया जानेवाला मसाला।

रस-वर्षक—**पुं०** [सं० प० त०] वैद्यक की कुछ विविध वनस्पतियाँ जिन्हें देव तैयार किये जाते हैं। जैसे—अनार का फूल, लाल, हल्दी, मंजीठ आदि।

रसवकी—**स्त्री०** =रस-वकी (गन्ना)।

रसवार्ध—**स्त्री०** [हि० रस+वार्ध (प्रत्यय)] कितानों के यहाँ किसी फल का ऊब पहली बार पढ़ने के समय होनेवाला एक कुल।

रसवाच—**पुं०** [सं० प० त०] १. रस अर्थात् प्रेम या आनंद की बातचीत। रसिकता की बातचीत। २. मन बहुलाय के लिए होनेवाला परिहास। हँसी-उद्धास। ३. प्रेमी और प्रेमिका में होनेवाली ब्यब की कहा-सुनी या बकवास। ४. साहित्यिक क्षेत्र में यह मत या सिद्धांत कि रस के सम्बन्ध में विचार करते हुए और उसके महत्त्व का ध्यान रखते हुए ही साहित्यिक रचना की जानी चाहिए।

रसवाची (विन)—**वि०** [सं० रसवाच+विन] रसवाच-संबंधी।

पुं० रसवाच के सिद्धांतों का प्रतिपादक या अनुयायी।

रसवाम् (वत्)—**पुं०** [सं० रस+मत्प] वह पदार्थ जिसमें ऐसा गुण या शक्ति हो जिसमें उसके रूप रसना से संयुक्त होने पर विशेष प्रकार की अनुभूति या संवेदन हो।

रसवात—**पुं०** [सं० प० स०] इगण के पहले अक्षर (15) की सजा।

रस-वाग्नि—**स्त्री०** [सं० रस+वह् (प्राण)+गिनि+कीप्, उप० सं०] वैद्यक के अनुसार चाए हुए पदार्थ से बने शर-भाग को फलनेवाली नादी।

रसविचयी (विन्)—**पुं०** [सं० रस-वि/की (वेचना)+गिनि, उप० सं०] यह जो परिवार बेचता हो, अर्थात् कलवार।

रसविरोध—**पुं०** [सं० प० त०] ऐसे रसों का मिश्रण या मेल जिससे स्वाद बिगड़ जाता है। (सुधुत) जैसे—तीले और मीठे में, नमकीन और मीठे में कड़वा और मीठे में रसविरोध है। २. साहित्य में एक ही पद्य में होनेवाली दो परस्पर प्रतिकूल रसों की स्थिति।

रस-वेधक—**पुं०** [सं० प० त०] सोता।

रस-वाग्विन्—**पुं०** [सं० सं० त०] वैद्यक में एक प्रकार का रस जो अम्ल, तीब्र, कोहे, मैनसिक, पारे, मंधक, सोहगे, जवाबहार, हड़ और बहेडे आदि के योग से बनता है और जो शूद्रिका रोग के लिए विशेष उपकारी कहा गया है।

रस-शास्त्र—**पुं०** [सं० प० त०] रसायन-शास्त्र।

रस-शेखर—**पुं०** [सं० सं० त०] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का रस जो पारे और अमीम के योग से बनता है और जो ज्वरत आदि रोगों में गुणकारी कहा गया है।

रस-शुभावन—**पुं०** [सं० प० त०] १. पारे को शुद्ध करने की क्रिया या भाव। २. सुभावा।

रस-संभवाय—**पुं०** [सं०] साहित्यिक क्षेत्र में ऐसे लोगों का वर्ग या समूह जो रसवाच के अनुयायी हों अथवा उसके सिद्धांतों का पालन करते हों।

रस-संभव—**पुं०** [सं० प० त०] रस। लहू। क्षुण्।

रस-संस्खन—**पुं०** [सं० प० त०] पारे को शुद्ध और मूर्च्छित करने, बांधने और अम्ल करने की ये चारों क्रियाएँ। (वैद्यक)

रस-संस्कार—**पुं०** [सं० प० त०] पारे के मूर्च्छन, बंधन, धारण आदि अठारह प्रकार के संस्कार। (वैद्यक)

रस-सागर—**पुं०** [सं० प० त०] प्लस द्वीप में स्थित उस के रस का एक सागर। (पुराण)

रस-साय—**पुं०** [सं० प० त०] रोगी की चिकित्सा करने के पहले यह देवना कि शरीर में कौन सा रस अधिक और कौन सा कम है। (वैद्यक)

रस-शार—**पुं०** [सं० प० त०] १. मद्य। शहर। २. जहर। विष। (हि०)

रस-सिधुर—पुं० [मध्य० सं०] पारे और गंधक के योग से बनाया जानेवाला एक प्रकार का रस। (सैद्यक)

रस-स्वाण—पुं० [सं० ष० तं०] हंगुर।

रसौ (सौ)—वि० [फा०] पट्टीबाने या ले जानेवाला। जैसे—चिट्ठीरसौ।

रसांगक—पुं० [सं० रस-अंग, ष० म० + कन्] घृण सरल का वृक्ष। शीघ्रेष्ठ।

रसांग—पुं० [सं० रस-अंग, मध्य० म०] रसीत। रसवत।

रसांतर—पुं० [सं० रस-अंतर, मध्य० सं०] एक रस की अवस्थिति से दूसरे रस का होनेवाला आविर्भाव या संचार।

रसांतरण—पुं० [सं० रस-अंतरण, ष० तं०] एक रस की अवस्थिति हटा कर दूसरे रस का संचार करना। जैसे—मेघ-चर्चा के समय बिगड़कर श्रावण की उपेक्षा करना या उसे भय दिखाना या क्रोध के समय हँसाकर प्रमथ करना।

रसा—स्त्री० [सं० रस + अच् + टाप्] १ पृथ्वी। जमीन। २ रासना। ३. पादा नामक लता। ४ शालकी। सलई। ५ कपानी नामक वृक्ष। ६ इक्ष्वा। दाख। ७ मेदा। ८ गिनायन। लोना। ९ आम। १० काकोली। ११ नदी। १२ रसातल। १३ रमना। जीम।

पुं० [हि० रस] १ तरकारी आदि का झोल। शोरबा।

रस-रसेवार=(तरकारी) जिसमें रसा भी ही। शंखेदार। २ जूस। रस। जैसे—कफो का रस। वि०=रसौ।

रसायन—पुं०=रसायन।

रसायनी*—स्त्री० रसायनी।

पुं०=रसायनज्ञ।

रसाई—स्त्री० [फा०] १. पट्टीबाने की किया या भाव। पट्टीब। २. बुद्धि आदि के कही तक पट्टीब तकने की शक्ति।

रसाकर्षण—पुं० [सं० रस-आकर्षण, ष० तं०] वह प्रक्रिया जिससे शरीर का कोई अंग शरीर के द्वारा बाहर का रस शोषककर अपने अन्दर करता है। (ओस्मोसिस)

रसाज—पुं० [सं० रस-अज, ष० तं०] रसीत।

रसाय—पुं० [सं० रस-अय, ष० तं०] पारा। २ रसायन। रसीत।

रसानाम—पुं० [सं० रस-अजान, ष० तं०] १ इस बात की जानकारी न हो कि अमुक रस कौन है। २ वह स्थिति या दशा जिसमें रस अर्थात् स्वाद का ज्ञान न होता हो।

रसाद्य—पुं० [सं० रस-आद्य, तु० तं०] अमड़ा। आम्रातल।

रसाद्य—स्त्री० [रसाद्य + टाप्] रासना।

रसातल—पुं० [सं० ष० तं०] पुराणानुसार पृथ्वी के नीचेवाले सात लोकों में से छठा लोक।

मूला—रसातल पट्टीबाना या रसातल में पट्टीबाना—पूरी तरह से नष्ट या मटियमित कर देना। मिट्टी में मिला देना। बरबाद कर देना।

रसांतर—वि०=रसेवार।

रसाधार—पुं० [सं० रस-आधार, ष० तं०] सूयं।

रसाधिक—पुं० [सं० रस-अधिक, ष० तं०] मुहुगा।

रसाधिका—स्त्री० [सं० रस-अधिका, पुं० तं०] किशमिस।

रसाध्या—पुं० [सं० रस-अध्या, ष० तं०] प्राचीन भारत में वह राजकर्म-

चारी, जो मादक द्रव्यों की जौब-पडताल और उनकी बिक्री आदि की व्यवस्था करता था।

रसाकर्षण—पुं० [सं० रस-आकर्षण, ष० तं०] वह प्रक्रिया जिसके द्वारा शरीर का कोई अंग अथवा अपने अंदर का ऐसा ही और कोई पदार्थ रस शरीर द्वारा बाहर निकालता है। (एन्डोस्मोसिस)

रसा-पति—पुं० [सं० ष० तं०] पृथ्वी-पति। राजा।

रसापायी (सिन्धु)—वि० [सं० रसा/पा (पीना) + गिणि] जो जीम से पानी पीता हो। जैसे—कुत्ता, साँप आदि। पुं० कुत्ता।

रसाभास—पुं० [सं० रस-आ + भास् (बमबना) + अच्] १ भारतीय साहित्य शास्त्र के अनुसार किसी साहित्यिक रचना में कही-कही दिखाई देनेवाली वह स्थिति जिसमें रस का पूरी तरह से परिष्कार नहीं होने पाता, और इसलिए जिसके फलस्वरूप सहृदयों को ऐसा ज्ञान पड़ता है कि रस की पूर्ण स्थिति नहीं हुई है उसका आभास मात्र दिखाई देता है। जैसे—यदि श्रोत्रार रस में हास्य रस का, हास्य रस में वीरस्य रस का अथवा वीर रस में मयानक रस का मिश्रण कर दिया जाय तो प्राथमिक या मूल रस का परिष्कार नहीं होने पाता और रस के परिष्कार के स्थान पर रसाभास मात्र होकर रह जाता है। कुछ आचार्यों का मत है कि रसाभास वस्तुतः रस का वाचक और चिरोधी तत्त्व है, पर कुछ आचार्यों कहते हैं कि रसाभास होने पर भी रस-दशा व्यो-की-रयो अस्वाद्य बनी रहती है।

रसाभूत—पुं० [सं० रस-अभूत, कर्म० सं०] पारे, गंधक, शिलाजीत, चयन, गुडूच, घनियाँ, बदनौ, मुलेठी आदि के योग से बनाया जानेवाला एक प्रकार का रस।

रसाम्ल—पुं० [सं० रस-अम्ल, ष० तं०] १ अम्लवैतस्य। अमलवेद। २. चूक नाम की खटाई। ३. बूझाम्ल। विषाजित।

रसाम्लक—पुं० [सं० रसाम्ल + कन्] एक प्रकार की घास।

रसाम्ला—स्त्री० [सं० रसाम्ल + टाप्] पलायी नाम की लता।

रसायन—पुं० [सं० रस-अयन, ष० तं०] १ आरंभिक भारतीय वैद्यक में औषध, चिकित्सा आदि के क्षेत्रों में रस अर्थात् पारे का प्रयोग करने की कला या विद्या। २. परवर्ती काल में उन्नत कला के आधार पर पारे के प्रयोगों से पातलो आदि में अद्रुनुत् और असाधारण तारिकक परिष्करण कर दिखाये अथवा उन्हीं मध्य करने की कला या विद्या जिसके फलस्वरूप आगे चलकर भारत, पश्चिमी एशिया तथा यूरोप के कुछ देशों में बहुत से लोग इस बात की छानबीन और प्रयोग करने लगे थे कि पीतल, कोहो आदि की किस प्रकार सोने के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। कीमियारी।

चित्सेव—वाचक्यय देशों में इसी प्रकार के प्रयोग करते करते कुछ लोगों ने वे तत्त्व और सिद्धांत हूँ निकाले थे, जिनके आधार पर आधुनिक रसायन-शास्त्र (देखें) का विकास हुआ है।

३. परवर्ती भारतीय वैद्यक में कुछ विशिष्ट प्रकार के ऐतने औषध या दवाएँ जिनके सबंध में यह माना जाता था कि इनके सेवन से मनुष्य कभी बीमार या बुढ़ा नहीं हो सकता और उनमें फिर से नया जीवन और युवावस्था आ जाती है। ४. आधुनिक भारतीय वैद्यक में कुछ विशिष्ट प्रकार की औषधियों से बनी हुई कुछ ऐसी दवाएँ जो मनुष्यों का बल-वीर्य आदि बढ़ानेवाली बनी जाती हैं। जैसे—आमलक, रस-

कन, ब्राह्मी, रसायन, हरीतकी रसायन आदि। ५. तक। मडा।
६. नायबिषय। बिबंग। ७. जहू। बिबा। ८. कटि। कनरा। ९.
गण्ड पक्षी।

रसायन—पुं० [सं० रसायन/श्वा (आनना)+क] रसायन क्रिया का
जाननेवाला। वह जो रसायन विद्या जानता हो।

रसायनकाल—स्त्री० [ब० सं०+टाप्] हरे। हड। हरीतकी।

रसायनचर—पुं० [सं० सं० तं०] लक्ष्मण।

रसायनचर—स्त्री० [सं० सं० तं०] १. कौंगनी। २. काकजवा।

रसायन-विद्या—पुं०=रसायन-शास्त्र।

रसायन-शास्त्र—पुं० [सं० व० सं०] आधुनिक काल के विज्ञान की वह
शाखा जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि पदार्थों में क्या क्या गुण
और तत्व होते हैं, दूसरे पदार्थों के योग से उनमें क्या क्या प्रतिक्रियाएँ
होती हैं, और उन्हें किस प्रकार रूपांतरित किया जा सकता है।
(कैमिस्ट्री)

विशेष—इस शास्त्र का मुख्य सिद्धान्त यह है कि सभी पदार्थ कुछ मूल
तत्वों या अणुओं के अलग अलग प्रकार के परमाणुओं से बने हुए होते
हैं। वैज्ञानिकों ने अब तक ऐसे १०० से अधिक मूल तत्व या द्रव्य ढूँढ़
निकाले हैं। उनका कहना है कि जब एक प्रकार के परमाणु किसी दूसरे
प्रकार के परमाणुओं से मिलते हैं, तब उनसे कुछ नये द्रव्य या पदार्थ बनते
हैं, इस शास्त्र में इसी बात का विचार होता है कि उन तत्वों में किस किस
प्रकार के परिवर्तन या विकार होते हैं, और उन परिवर्तनों का क्या
परिणाम होता है।

रसायन-श्रेष्ठ—पुं० [सं० सं० तं०] पारा।

रसायनिक—वि०=रसायनिक।

रसायनी—स्त्री० [सं० रस/अच् (शक्ति)+स्व-अन+डीप्] १. वह
औषध जो दुब्रापे को रोक्ती या दूर करती हो। २. गुडू। ३. काक-
माँची। मकोय। ४. महाकरज। ५. मोरल मुन्डी। अमृत सजीवनी। ६.
मासरोहिणी। ७. मजीठ। ८. कन-कीड़ा नाम की लता। ९. कौड़।
केबाँ। १०. सफेद निसोबा। ११. शालयुष्ठी। शंखाहुली। १२.
कबजिलोय। १३. नाडी नामक साग।
†पुं०=रसायन।

रसायन—वि० [सं० रस-आ/ळा (आदान)+क] १. रस से पूर्ण। रस
से भरा हुआ। रसपूर्ण। २. मीठा। मधुर। ३. रसिक।
रसीला। सुदृढ। ४. साफ किया हुआ। परिष्कारित और शुद्ध।
पुं० १. ऊल। गन्ना। २. आम। ३. गेहूँ। ४. बोल नामक गन्ध-
द्रव्य। ५. कटहल। ६. कदु। तृण। ७. अमलबेत। ८. सिलारस।
लोबाण।
पुं० [अ० हरताल] कर। राजस्व। खिराज।
वि०=रसाल।

रसालक—वि० [सं० रसाल+कन्] [स्त्री० रसालिका] १. मधुर।
मृदु। २. मरस। ३. मनीहर। सुन्दर।

रसालक—पुं० [सं० रस-आलय, व० सं०] १. आम का पेड़। २. आमोच-
प्रभोद का स्थान। श्रीकृष्ण-ल। ३. रं० 'रसाला'।

रसाल-कारक—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] गन्धे या ऊल के रस से बनाई हुई
पीनी।

रसालक—पुं० [हिं० रसाल] अद्भुत या विलक्षण बात। कौतुक।

रसालक—स्त्री० [सं० रस-अलस्ता, वृ० सं०] १. गन्ना। २. गेहूँ। ३.
कुंडर नामक तृण।

रसाला—स्त्री० [सं० रसाल+टाप्] १. सिलारन। श्रीकंड। २. वही
में मिलाया हुआ सत्तु। ३. दूब। ४. बिदारीकन्द। ५. दाख। ६.
गन्ना। ७. जीम। जवान। ८. एक तरह की बटनी।
†पुं०=रसाला।

रसालाक—पुं० [सं० रसाल-आन्न, कर्म० सं०] बड़िया कलमी आम।

रसालिका—स्त्री० [सं० रसाल+कन्+टाप्, हल्] १. छोटा आम।

अविया। २. सत्तला। सत्तला।

रसाली—स्त्री० [सं० रसाल+डीप्] गन्ना।

पुं० [सं० रस] भोग-विलास में रस या आनन्द प्राप्त करनेवाला व्यक्ति।

रसाय—पुं० [हिं० रसना] १. वह अवस्था जिसमें कोई तरल पदार्थ
किसी चीज में से रस या द्रव्य रहा हो। २. किसी चीज में से उत्सर्ज
निकलनेवाला पदार्थ। ३. सेती जोतकर और पाटे से बराबर करके
उसे कई दिनों तक यो हो की छोट सेने की क्रिया जिससे उममे रस या
उत्पादन शक्ति का आविर्भाव होता है।

रसायदा—पुं०=रसालक।

रसायक—पुं० [सं० रस] एक प्रकार का छंद जिसके प्रत्येक चरण में
दो घणग होते हैं। कुछ लोग दूसरे घणग की अगह मणग भी रखते हैं।
पर कुछ लोगों के मत से 'रसाय' ही रसायक है। अर्थ-मूर्जनी।

पुं० [हिं० रस+बाबल] १. ऊल के रस में पकाये हुए बाबल। २.
देहाती में विवाह के उपरान्त नववधू द्वारा प्रस्तुत रसालक जीमते समय
गाये जानेवाले गीत।

रसायनी—पुं० [हिं० रस+आवा (प्रत्यय)] वह मटका जिसमें ऊल
का रस रखा हुआ है।

रसाल—पुं० [सं० रस-आल, व० सं०] मदिरा पान करना। शराब पीना।

रसाली (विष्णु)—पुं० [सं० रस/अच् (मोक्षण)+णिगि] मदिरा पान
करनेवाला। शराबी।

रसायक—पुं० [सं० रस-अपक, व० सं०] पारा, इंगूर, कालिसार, लोहा,
सोनामक्खी, रूपामक्खी, वैष्णवमणि, और शंख इन आठ महारसों
का समाहार। (वैद्यक)

रसायन—पुं० [सं० रस-आस्वादन, व० सं०] १. किसी प्रकार के रस
का स्वाद लेना। रस चखना। २. किसी प्रकार के रस या आनन्द का
भोग करना। मुख लेना। ३. किसी बात या विषय का रस चखना या
लेना।

रसायनी (विष्णु)—वि० [सं० रस-आ/स्वच् (स्वाद लेना)+णिच्+
णिगि] [स्त्री० रसायिनी] १. रस चखनेवाला। स्वाद लेनेवाला।
२. आनन्द या मजा लेनेवाला। ३. किसी बात या विषय में रस लेने-
वाला।
पुं० अमर। भौरा।

रसाल—पुं० [सं० रस-आन्ना, व० सं०] गन्ना-विजोरा।

रसाल—स्त्री० [सं० रसाल+टाप्] १. सत्तल। २. रसना।

रसालाकर—पुं०=रसाल (रस में पका हुआ बाबल)।

रसिक—वि० [सं० रस+उन्-इक] [भाव० रसिकता, स्त्री० रसिका]

१ रसपान करनेवाला। २. किसी काव्य, कहानी, बातचीत आदि के रस से आनन्दित होनेवाला। ३. काव्य-मर्मज्ञ। ४. जिसके हृदय में सौंदर्य, मधुर भावों आदि के प्रति अनुराग हो। सद्बुद्धय।
पुं०. स्त्री०। २ सारस। ३ घोड़ा। ४ हाथी। ५ एक प्रकार का छंद।

रसिकता—स्त्री० [सं०रसिक+तल्+टाप्]। रसिक होने की अवस्था, भाव या धर्म। २. हठी-वृद्धता या परिश्रम करने की बुद्धि।

रसिक-बिहारी—पुं० [सं० कर्म० सं०] श्लोक्य।

रसिका—स्त्री० [सं० रसिक+टाप्]। १ दूही का घारवत। सिखरन। २ डूब का रस। ३ शरीर में होनेवाला रस या धातु। ४ जीभ। जवान। ५ मेना पत्नी।
वि०—रसिक का स्त्री०।

रसिकाई—स्त्री०—रसिकता।

रसिकद्वार—पुं० [सं० रसिक+ईश्वर, ष० सं०] श्लोक्य।

रसित—वि० [सं० रसु/रसु (शब्द)+क्त]। रस से बना हुआ। रस से मुक्त किया हुआ। २ ध्वनि या शब्द करता हुआ। बजला या बोलता हुआ। ३ जिस पर रस का रोपन किया गया हो। ४ चमकीला। पुं०। ध्वनि। शब्द। २ अक्षर की शाराव।

रसिया—पुं० [सं० रस+हिं० इया (प्रत्यय)]। रम अर्थात् आनन्द लेने का शौरीन। जैन—मानि-ब्रजाने का रसिया। २ कामुक और ध्यमनी व्यक्ति। ३ बुदेलगुण और ब्रज में होली के अवसर पर माये जानेवाले हांग-परिहास-मूलक एक तरह के गीत। ४ प्रेमी।

रसियाव—पुं० [हिं० रस+इयाव (प्रत्यय)] रसावक। (दे०)

रसी—स्त्री० [दशा०] उत्तर प्रदेश तथा बिहार के कुछ क्षेत्रों में पढ़ा जानेवाली एक तरह की सांख्युक्त मिट्टी।
वि०—रसिक (या रमिया) मिट्टी।

रसीव—स्त्री० [फा०]। १ कोई चीज कही पहुँचने या प्राप्त होने की किया या भाव। प्राप्ति। पहुँच। जैसे—पायल भेजा है, उसकी रसीव की इत्सा दीजियेगा।

मुहूर्त—रसीव करना—(पण्ड, मुक्ता आदि) लपाना। जड़ना। मारना। जैसे—पण्ड रसीव करूँगा, सीधा ही जायगा।

२ थल पत्र जिन पर अ्यारेवार यह लिखा हो कि अमुक वस्तु या द्रव्य अमुक व्यक्ति से अमुक कार्य के लिए अमुक समय पर प्राप्त हुआ।

रसीवी—वि० [हिं० रसीव]। रसीव के रूप में होनेवाला। २ रसीव के मयब में या उसके लिए काम में आनेवाला। जैसे—रसीवी टिकट—वाह विद्येय प्रकार का टिकट जो रुपये पाने की रसीव पर लगता है।

रसील—वि०—रसीला।

रसीला—वि० [हिं० रस+ईला (प्रत्यय)]। [स्त्री० रसीली, भाव० रसीलपन]। रस से भरा हुआ। रसयुक्त। २. खाने में मजेदार। स्वादिष्ट। ३ (व्यक्ति) जिसके मन में रस अर्थात् आनन्द लेने की प्रवृत्ति या भांग बिलाम के प्रति अनुराग हो। रसिक। रसिया। ४ देवता में बाका निराला या सुन्दर हो। जैसे—रसीली अम्ब।

रसीलान्त—पुं० [हिं०रसीला+पन्त (प्रत्यय)]। रसीले होने की अवस्था, धर्म या भाव।

रसुन—पुं० [सं०रस+जन्]-लहसुन।

रसुन—पुं० [अ० रसम (परिपाटी या प्रया) का बहु०]। १. नियमों, रीतियों, विधानों आदि का वर्ण या समूह। २. कर। शुल्क। ३. वह धन जो कोई काम करने के बदले में राजकीय नियमों के अनुसार राज्य को दिया जाता है। राज्य के प्रति होनेवाला देय। जैसे—दरखास्त देने या दावा दायर करनेके समय अदावात का रसुन दायित्व करना पड़ता है। ४. वह धन जो जमींदार को किसानों की और से नजराने या भेंट आदि के रूप में मिलता था।

रसुन अवाकलत—पुं० [अ०] वह धन जो अदावात में कोई मुकदमा आदि दायर करने अथवा कोई दरखास्त देने के समय कानून के अनुसार सरकारी खजाने में दायित्व किया जाता और जिसकी प्राप्ति के प्रमाण-स्वरूप टिकट आदि मिलने है। कोर्टकीस। स्ट्याप।

रसूल—पुं० [अ०] लोककल्याण के उद्देश्य से ईश्वर द्वारा पृथ्वी पर भेजा जानेवाला दूत। ईश्वरदूत।

रसूली—स्त्री० [अ० रसूल+ई (प्रत्य०)]। १ एक प्रकार का गेहूँ। २. एक प्रकार का रस। ३ एक प्रकार की काली मिट्टी।
वि० रसूल सवधी। रसूल का।

रसीव—पुं० [सं० रस+व, ष० सं०]। १ पारद। पारा। २ राजभाष। लोबिया। ३ वैद्यक में एक प्रकार की रसीवध जो जीरा, बनियाँ, पीपल, गड़द, त्रिफुट और रस-मिथुन के योग में बनती है।

रसीव-वैद्यक—पुं० [सं० ष० सं०] मगना।

रसे रसे—अशु० [हिं० रसना] धीरे-धीरे। धन-धन।

रसेवा—पुं० [सं० रस+ईश, ष० सं०]। श्लोक्य। १ शीतलपत्र जो रस और रसिकों के क्षिरोमणि माने गये है। २ दे० 'रसेवकर'।

रसेवकर—पुं० [सं० रस+ईश्वर, ष० सं०]। १ पारा। २ वैद्यक में एक प्रकार का रसीवध जो पारि, गंधक, हयग्राह और सोने आदि के योग से बनता है। ३ दे० 'रसेवकर दर्शन'।

रसेवकरदर्शन—पुं० [सं०मध्य० सं०] एक सौव दर्शन जो मुख्यतः पारद या पारि के मापनों से मयब रसनेवाली राशी पर आश्रित है।

रसीवध—सौव आगमों में रसेवकर अर्थात् पारद या पारि को शिव का वीर्य तथा गंधक को पार्वती का रज माना गया है और इसी आधार से उनके सवध में इन दर्शनों की रचना हुई है। यह प्रसिद्ध ६ दर्शनों से पुनक या चित्र है।

रसेल—पुं० [सं० रसेल] रसिक; निरोमणि, श्लोक्य।

पुं०—रसेवकर। (पारा)

रसीहना—स्त्री० [हिं० रसीवध (रसीवधार) का स्त्री०]।

रसीहना—पुं० [हिं० रसीव+इया (प्रत्यय०)] रसीव बनानेवाला।

भाजन बनानेवाला। रसीवधार। मुष्कार।

स्त्री०—रसीहना।

रसोई—स्त्री० [हिं० रस+ओई (प्रत्य०)]। १. पका हुआ खाद्यपदार्थ। बना हुआ भोजन।

बिबेध—सनातनी हिंदुओं में रसोई दो प्रकार की मानी जाती है—कच्ची और पक्की। कच्ची रसोई वह कहलाती है जो जल और आग के योग से बनी हो, और जिसमें धी की प्रधानता न हो। जैसे—बाबल, बाल, रोटी आदि। ऐसी रसोई चीके में बैठकर खाई जाती है। पक्की रसोई वह कहलाती है जिसमें पकने में धी की प्रधानता रही हो। जैसे—

परठा, घुरी, बड़े, सवोसे आदि। ऐसी चीजें जोके से बाहर की खाई जा सकती हैं और इनमें छुआछूत का विशेष विचार नहीं होता।
गुण—रसोई **कड़ना**—रसोई का बनना आरम्भ होता। रसोई **लपना**—रसोई या भोजन बनाना।
 २. दे० 'रसोई-बद'।
रसोई-बागान—गुं०=रसोई-घर।
रसोई-घर—गुं० [हि० रसोई+घर] बहु कमरा या स्थान जहाँ पर घर के लोगों के लिए भोजन पकवाया जाता है। चौका।
रसोईघर—गुं० रसोईघर।
रसोईघर—स्त्री० [हि० रसोईघर+ई (प्रत्य०)] १. रसोई बनाने का काम। भोजन बनाने का काम। २. रसोईघर का पत्र या भाव।
रसोईघरदार—गुं० [हि० रसोई+घर+दार] वह जो बड़े आदिमियों के साथ उनकी रसोई या भोजन के जाकर पहुँचता हो।
रसोता—स्त्री०=रसोत।
रसोबर—गुं० [सं० ब० सं०] हिंजुल। शिगरक।
रसोवम—गुं० [सं० रस-उद्भव, ब० सं०] १. शिगरक। इंगुर। २. रसोवन। रसोत।
रसोवमूल—वि० [सं० रस-उद्भूत, प०त०] रस से उत्पन्न।
 गुं० रसोत।
रसोन—गुं० [सं० रस-ऊन गुं० त०] लहसुन।
रसोपल—गुं० [सं० रस-उपल, उपमि० सं०] मोती।
रसोय—स्त्री० [रसोई]।
रसोत—स्त्री० [सं० रसोवमूल] एक प्रकार की प्रसिद्ध औषधि जो दाहकृत्वी की जड़ और लकड़ी को पानी में उबालकर और उसमें से निकले हुए रस को गाढ़ा करके तैयार की जाती है।
रसोता—गुं०=रसोती।
रसोती—स्त्री० [देवा०] धान की वह बीआई जिनमे वर्षा होने से पहले ही खेत जोतकर बीज डाल दिये जाते हैं।
रसोटा—गुं०=रसोतल।
रसोल—स्त्री० [?] एक प्रकार की कैंटीली लता जो दवा के काम आती और जिसकी पत्तियों को चटनी बनाई जाती है।
 गुं०=रसोतल।
रसोली—स्त्री० [देवा०] एक प्रकार का रोग जिसमे आँख के ऊपर भीहो के पास अपना शरीर के और किसी अंग में बड़ी गिलटी निकल आती है।
रस्ता—गुं०=रस्ता।
रस्तोपी—गुं० [देवा०] बँस्यो की एक जाति।
रस्त—स्त्री० [ज०] १. बाल। परिपाटी। प्रथा।
रस—रस-रस।
 २. कर। महसूल। ३. वेतन। तनकवाह। ४. मेक-जोड़।
रसु—(किसी से) रस होता—लेगिक सम्बन्ध या आशानाई होना।
रसिम—स्त्री०=रसिम।
रसमी—वि० [अ०] १. रसम सधो। २. रसम के रूप में होनेवाला।
रसोपचारिक। ३. मायवी। साधारण।
रसोपचार—गुं० [ज०] रुद्धि और परम्परा।

रस्य—गुं० [सं० रस+यत्] १. रस्त। लून। लहू। २. शरीर में का मांस।
रस्या—स्त्री० [सं० रस्य+टापु] १. रसना। २. पाठा।
रस्ता—गुं० [सं० रस्ता; प्रा० रस्ता; हिं० रस्ता] [स्त्री० अल्या० रस्ती] १. मूँज, सन आदि का बटा हुआ तथा मोटा रूप।
रस—रस्ता-कसी।
 २. अमीन की एक माप जो ७५ हाथ लंबी और ७५ हाथ चौड़ी होती है।
रसी को बीधा कहते हैं।
रुं० [हिं० रस्ता=बहुधा] बोरे के पीरो मे होनेवाला एक प्रकार का रोग।
रस्ता-कसी—स्त्री० [हिं०+का०] १. एक प्रकार का व्यायाममूलक खेल जिसमें दो प्रतियोगी दल पंक्ति बांधकर एक दूसरे के पीछे खड़े हो जाते हैं, और एक रस्ता एकदकर अपनी अपनी ओर खींचने का प्रयत्न करते हैं। २. लाक्षणिक रूप में, आपस में होनेवाली खींचतानी या प्रति-योगिता।
रस्ती—स्त्री० [हिं० रस्ता] कूई, सन या रसी प्रकार की और बीजो के रसो की एक मे बटकर बनाया हुआ लम्बा खर जिसका व्यवहार बीजो को बाँधने, कूँप से पानी खींचने आदि में होता है। डोरी। गुण। रज्जु।
रसी [?] एक प्रकार की सज्जी।
रस्ताबाद—गुं० [हिं० रस्ती+बदना] रस्ती बटनेवाला। डोरी बनाने-वाला।
रसुकरा—गुं०=रसुकरा।
रसुबटा—गुं०=रसुबटा।
रसुटा—गुं०=रसुटा।
रसुटा—गुं०=रसुटा।
रसुटी—गुं०=रसुटी।
रसु—गुं० [सं० रस] रस।
रसी—राह (रास्ता)।
प्रत्य० राह का बहु रूप जो कुछ समस्त पद्यो मे प्रत्येक रूप में लगता है।
 जैसे—रसुहमा, रसुहर।
रसुकरा—गुं० [हिं० रस+करा] १. तौप आदि बनेवाली एक तरह की घुरानी बाल की गाड़ी। २. उक्त गाड़ी पर रखी जानेवाली तौप।
रसुबटा—गुं० [सं० रस+हिं० बटा] १. वह जिसमें किसी प्रकार के रस (सुख) की चाट या बल्का लगा हो। २. उक्त प्रकार का बल्का या चाट।
रसुबट—स्त्री० [अनु०] १. चिट्टियों का बोलना। चहचहाहट। २. आदिमियों की चहलपहल।
रसी [हिं० रसुबटा] रसुबटे होने की अर्थस्था, गुण या भाव।
रसुबुर्गा—अ०=बहबुर्गा (पत्तियों का)।
रसुट—गुं० [सं० अरसुट; प्रा० अरसुट] खेतों की सिंचाई के लिए कूँप से पानी निकालने का एक प्रकार का यन्त्र, जो योनाकार पहिए के रूप में होता है और जिसपर हाँडियों की माला पड़ी रहती है। इसी पहिये के घूमने से हाँडियो आदि मे भरकर पानी ऊपर आता है।
रसुटा—गुं० [हिं० रसुट] चरखा।
रसुटी—स्त्री० [हिं० रसुटा] १. कपास ओटने की चरखी। २. ऋण देने का एक प्रकार जिसमे ऋणी से प्रति मास कुछ धन वसूल किया जाता है। हुंकी।

रहना—[वं०?] अरहर के पीछे का सूखा हुआ बटल। कथिया।
 रहान—[वं०] रहना। १ रहने का स्थान। २. जगह। स्थान।
 रहई—[वं०] [स०] स्वरूप, प्रा० स्वरूप] १ ठेला-गाड़ी। २ बेलगाड़ी।
 रहतिया—[वं०] [हि० रहना+तिया (प्रय०)] (डुकान का माल) जो बहुत बिना तक पड़ा रहने के कारण कुछ बरान हो गया हो।
 रहन—स्त्री० [हि० रहना] १ रहने की अवस्था, ढग या भाव।
 पब—रहण-सहण।

२ लोगों के भाव रहने और जीवन-निवाह तथा व्यवहार करने का ढग या प्रकार। ३ किसी के साथ प्रेमपूर्वक रहने और निभाने की क्रिया या भाव। उदा०—जै प रहनि राम सो नाही—सुलसी।
 रहन-सहन—स्त्री० [हि० रहना+सहना] पर-मुहृष्या या लोक में रहने और लोगों के साथ व्यवहार करने की क्रिया या ढग।

रहणहार—[वं०] [हि० रहना+हार (प्रय०)] १ रहने अर्थात् निवास करने-वाला। निवास। २ टिक कर या स्थायी रूप में बना रहने या रहने-वाला।

रहना—अ० [प्रा० रहण] १ किसी आधार या स्थान पर अवस्थित या स्थित होना। टिका या उठरा हुआ होना। जैसे—इन्ही खम्भों (या दीवारों) पर उत रहेगी। २ किसी विशिष्ट दशाया स्थिति में स्थिर होना। एक रूप में अवस्थान करना। जैसे—गर्म (या पेट) रहना। जीवन या जदमी रहना। उदा०—लोक है छोके छुप, ऐसो ही रहना—बिहारी।
 मुहा०—रह बलना घा* रह जाना—प्रस्थान करने का विचार छोड़ देना। रुक जाना। उठर जाना। रहू जाना—शांति या स्थिरता-पूर्वक अवस्थान करने में समर्थ होना। जैसे—(क) अब तो बिना थोड़े मुझे रहना नहीं जाता। (ख) उसके बिना तुमसे रहना नहीं जाता।

३ किसी स्थान को अस्थायी अथवा स्थायी रूप से अपने निवास का मुख्य कोष्ठ बनाकर वहाँ बसना। निवास करना। जैसे—बाज-कल वह कलफते में रहते है। ४. किसी स्थान पर कुछ समय के लिए विद्यमान होकर बड़ा समय बिताना। जैसे—दो-चार दिन यहाँ रहकर मे घर चले गये। उदा०—जैसे कता पर रहे, तैसे रहे विदेश।

मुहा०—(स्त्री का प्रयुष) से रहना—पर-पुत्र्य से सम्भोग करना। उदा०—मीरगुप्त सं अब के रहने में हुई बहु बेकली। टल गई क्या नाफरानी, पेड़, पत्थर हो गया।—जानसहब।

रहना-सहना—किसी स्थान पर निवास करने हुए कुछ समय बिताना। जैसे—जो आदमी जहाँ रहना-सहता है, वही उसका मन लगता है। ५. उपस्थित या विद्यमान रहना। जैसे—हमारे रहते तुम्हारा कोई शिवाङ्ग नहीं सकता।

मुहा०—(किसी वस्तु या व्यक्ति का) बना रहना—ठीक और अच्छी दशा में वर्तमान रहना। जैसे—तुम्हारा गज-पाट बना रहे। (किसी की) बनी रहना—किसी की प्रतिष्ठा, पर्याप्त आदि ज्यो की त्यों रहना। उदा०—किस की बनी रही है, किसकी बनी रहेगी।—कोई शायर।

६. जीविका बलाने के लिए नीकर आदि के रूप में किसी पद पर स्थित रहकर निवाह करना या समय बिताना। जैसे—इधर साह भर मे बहुत तीन चार जगह रह चुका; पर कोई टिका नहीं। ७. किसी के साथ मेलन या सम्भोग करना। (बाजार) जैसे—यह भी तो कई बार उसके साथ रह चुका है। उदा०—मीरगुप्त से अबके रहने में हुई वह

बेकली। टल गई क्या नाफरानी, पेड़, पत्थर हो गया।—जानसहब।
 ८. व्यवहार आदि में नियम या पर्यादा का पालन करना। अच्छा और ठीक आचरण करना। उदा०—(क) घर-रु विचारि समुचित कुल रहई। (ख) हम जानति तुम जो नई रहे, रहियो गारी क्षाम।—सूर।
 ९. भाषा, कला आदि मानकर किसी बात से विरत होना।—
 उदा०—चितवन रोके न रही।—सूर।

मुहा०—(व्यक्ति का) रह जाना—(क) बककर या हिम्मत हारकर आगे काम या गति से विमुख होना। (ख) प्रतिभोगिता आदि में विकल होना। (ग) परीक्षा आदि में अनुत्तीर्ण होना। जैसे—इस वर्ष प्रवेशिका परीक्षा में बहुत-से लड़के रह गये। (शरीर के अंग का) रह जाना—(क) अधिक परिश्रम के कारण इतना बुरा होना कि आगे काम न हो सके। बहुत ही विषिक्त तथा स्तब्ध हो जाना। जैसे—लिखते लिखते हाथ रह गये। (ख) रोग आदि के कारण निकम्मा या बे-काम हो जाना। जैसे—लकवे में उनका हाथ रह गया।

१०. अवस्थित रहना। बाकी बचना। जैसे—(क) अब तो सी ही रुपए हाथ में रह गये है। (ख) और मकान तो विक गये, यही एक रह गया है।

पब—रहना-सहा।
 ११. पीछे छूट जाना। पिछड़ना। १२. क्रिया, गति, भोग आदि से रहित होना। जैसे—अब तो आप वहाँ आगं स भी रहे। १३. चुपचाप बैठे रहकर या बिना कुछ किये हुए समय बिताना। उदा०—समुच्चि चतुर चित बात यह रहत विसुर विसुर।—रमनिधि।

मुहा०—रह जाना—बिना कुछ किये हुए चुपचाप या दान भाव से समय बिताना। जैसे—हम तुम्हारे कहने पर रह गये, नहीं तो उमं मज्जा बख्ता देते। रहते देना—(क) जिस अवस्था में हो, उमं में छोड़ देना। हस्तक्षेप न करना। जैसे—तुम रहने दो, मैं सबकर लूंगा। (ख) ध्यान न देना। उदा०—सुनकर छोड़ देना या जान देना। जैसे—रहने दो, इन बातों में क्या रहना है। रह-रहकर जीवन बॉच में कुछ उठर या सककर। थोड़े थोड़े अंतर पर या थोड़ी थोड़ी देर बाद। जैसे—रह-रहकर पेट (या सिर) में दरद होना।

१४. लेन-देन आदि में किसी के श्रिमे कोई रकम बाकी निकलना। बाकी पडना। जैसे—कभी का तुम्हारा कुछ रहता हो (या रह गया हो) तो बताओ।

रहना—स्त्री०—रहण।
 रहनी—स्त्री०—रहण।

रह-नुमा—वि० [फा० राहनुमा का सशित रूप] [भाव० रह-नुमाई] ठीक रास्ता बतलानेवाला। मार्ग-दर्शक।

रह-नुमाई—स्त्री० [फा०] ठीक रास्ता बतलाना। मार्ग दर्शन।

रह-बर—वि० [फा०] [भाव० रह-बरो] रास्ता दिखलानेवाला।
 रहष—[वं०] [अ० रहण] १ कथना। दया। २. अनुकम्पा। अनुपम।
 पब—रहणविक।

रहणत—स्त्री० [अ० रहण] १. ईश्वरीय कृपा। २. कृपा। दया।
 रहणविल—वि० [अ० रहण+फा० विल] कथनापूर्ण (व्यक्ति)। सहृदय।
 रहणान—वि० [अ० रहण] बहुत बड़ा दयालु। कृपायु।

पुं० ईश्वर का एक नाम ।

रहू, रूरी—स्त्री०—अरहू ।

रहू—स्त्री० [पं० रिहना=पसिदना] छोटी देहाती गाड़ी, जिसमें किसान लोग पांस या खाद बोते हैं ।

पुं० [फा०] रास्ता चलनेवाला । पथिक । बटोही ।

रहूरा—पुं० [हिं० अरहू] अरहू के पीछे का सूखा ढंडल । कविया । रहूडा ।

रहू—स्त्री० [अ०] एक विशेष प्रकार की छोटी चोकी जो आवस्यकता-नुसार खोली और बन्द की जा सकती है और जिस पर पढ़ने के समय पुस्तक रखी जाती है ।

रहूनी—स्त्री०—रहू ।

रहूना—पुं० [फा०] बोझ ।

स्त्री० बोझ की बाल ।

रहू—पुं० [सं०/रम् (श्रीडा)+असुन्, ह-आदेश] १. गुप्त भेद । छिपी बात । २. गूढ़ तत्व या रहस्य । ३. कीड़ा । लेला । ४. आनन्द । सुख । ५. एकत स्यान ।

रहूना—पुं०—रहू ।

† स्त्री०—रास (लीला) ।

रहूना—अ० [हिं० रहस +ना (प्रत्य०)] आनवित होना । प्रसन्न होना ।

रहू-बधाणा—पुं० [हिं० रहस+बधाई] विवाह की एक रीति जिसमें नव-विवाहिता वधु को वर अपने साथ जनबस में लाता है । वहा गूजन उस देवते तथा उपहार देते हैं ।

रहूनामा—सं० [सं० रहू] प्रसन्न करना । प्रसन्न होना । उदा०—किछू केराई किछू रहूलाई ।—नूरमोहम्मद ।

रहूसि—स्त्री० [सं० रहू] १. गुप्त स्यान । २. एकत स्यान ।

रहूस्य—पुं० [सं० रहूस्य+पुं०] १. वह बात जो सबको बतलाई न जा सकती हो, कुछ विशिष्ट लोग ही जिसे जानने के अधिकारी माने या समझे जाते हैं । गुप्त या भेद की बात । २. किसी चीज या बात के अन्दर छिपा हुआ वह तत्व या बात जिसका पता ऊपर से यों ही देखने पर न चलता हो, और फलतः जिसे जानने या समझने के लिए कुछ विशिष्ट पापरात, बुद्धि-योग्यता आदि की आवश्यकता होती हो । भेद । भेद । राज । ३. किसी प्रकार या किसी रूप में अन्दर छिपी हुई बात । भेद । (सीकेट) कि प्र०—खुलना ।—खोलना ।

४. आध्यात्मिक क्षेत्र में ईश्वर और उसकी सृष्टि के सबध के मे गुप्त तत्त्व या भेद जो सब लोग नहीं जानते या नहीं जान सकते; और जिनकी अनुभूति केवल सात्विक भूतिवाले लोगों के अंतःकरण में ही होती है । पय—रहूस्यबाव । (केबे)

५. ऐसा तत्व जो केवल दीक्षा के द्वारा अधिकारियों या पात्रों को ही बतकाना जाता हो । ६. एक उपनिषद् का नाम । ७. हीसी-ठूठा । परिहास । मजाक ।

वि० १. (तत्त्व या विषय) जो सबको ज्ञात न हो अथवा बतलाना न जा सके । २. (कार्य) जो जोंरों से छिपाकर किया जाय ।

रहूस्य-कीड़ा—पुं०—रहूस्य-कीड़ा ।

रहूस्य-कीड़ा—स्त्री० [सं० कर्म+सं०] एकत में दूसरों की बृष्टि से दूर रहकर की जानेवाली कीड़ा । जैसे—नायक और नायिका की ।

४—६२

रहूस्यबाव—पुं० [सं० व० सं०] [वि० रहूस्यवादी] रहस्य (केबे) अर्थात् ईश्वर तथा सृष्टि के परम तत्त्व या तत्त्व पर आश्रित और सार्वत्रिक ज्ञान-नुभूति से संबंध रखनेवाला एक भाव या सिद्धांत (छायावाद से भिन्न)

जो आध्यात्मिक तथा साहित्यिक क्षेत्रों में, परमात्मा के अति होनेवाले जीवात्मा के अनुराग या प्रेम के घोलन का सूत्रक है । (मिस्टिसिक्म)

विशेष—भ्रायः सभी कालों, जातियों, और देशों में सात्विक भूतिवाले कुछ ऐसे लोग होते आये हैं, जो अपने समाज में अशक्ति धार्मिक सिद्धांत नहीं मानते; और उनके ऊपर उठकर उसी को आध्यात्मिक तत्त्व मानकर ईश्वर की उपासना करते हैं जो उनके अंतःकरण से स्फुरित होता है ।

ऐसे लोग प्रायः संसार से विमुख तथा बिरक्त होकर जिस प्रकार अथवा जिस सिद्धांत के आश्रित होकर परम तत्त्व का प्रत्यक्ष साक्षात्कार करते और लोक में उसका अविश्वंबन करते हैं, वही साहित्य में रहूस्यबाव कहलाता है । इसके मूल में मनुष्य की बहु जिज्ञासा है जो उसके मन में सृष्टि उत्पन्न करनेवाली अलौकिक या लोकोत्तर शक्ति के प्रति उत्पन्न होती है और जिसके साथ बहु तारात्म्य स्थापित करना चाहता है ।

रहूस्यवादी (विन्)—वि० [सं० रहूस्यवाद+विनि] रहूस्यवाद-संबंधी । रहूस्यबाव का ।

पुं० वह जो रहूस्यबाव के तत्त्व समझता अथवा उसके सिद्धांतों का अनुकरण करता हो । रहूस्यबाव का अनुयायी ।

रहूस्य-सचिब—पुं०—सच-सचिब । (केबे)

रहूस्या—स्त्री० [सं० रहूस्य+ट्याप्] १. एक प्राचीन नदी । (महा०) २. रासना । ३. पाठा ।

रहाइस—स्त्री०—रिहाइस ।

रहाई—स्त्री० [हिं० रहना] १. रहने की क्रिया, ढंग या भाव । २. सुखपूर्वक रहने की अवस्था या भाव । ३. आराम । बैन । सुख । स्त्री० [फा०]=रिहाई ।

रहाऊ—पुं० [हिं० रहना] गीत मे का पहला पद । टेक । स्वायी । (पचिसव)

वि०—रहतिवा (भाळा) ।

रहाना—अ० [हिं० रहना] १. रहना । उदा०—उण जिन पलन रहाऊं ।—मौरा । २. दोना ।

रहानना—स्त्री० [हिं० रहना+आवन (प्रत्य०)] वह स्यान जहाँ गाय-भर के सब पशु एकत्र होकर रहते हैं । रहुनिया ।

रहानना—वि० [हिं० रहना+सहना (अनु०)] [स्त्री० रही-सही] बहुत बोझ बाकी बचा हुआ । बचा-बचाया घोटा-सा । जैसे—अव तो उनकी रही-सही प्रतिष्ठा भी नाष्ट हो गई ।

रहि—स्त्री०—राह (रास्ता) ।

रहित—वि० [सं०/रह (त्याग)+क्त] भाव० रहितत्व १. समस्त पदों के अन्त में, ... के बिना, ... के बिहान । जैसे—धन-रहित । २. अभावपूर्ण । ३. अलग तथा मुक्त ।

रहितत्व—पुं० [सं० रहित+त्व] १. रहित होने की अवस्था या स्थिति । २. निष्पन्न, बचन, भार आदि से मुक्त या रहित किये जाने का भाव । (एजेन्सियल)

रहित—पुं० [अ०] रहम (गर्भासय) ।

रहिताना—पुं० [?] चना ।

रहीम—वि० [अ०] जो रहम करता या तरस खाता हो। कृपावान् तथा बखालु।

पुं० १. ईश्वर का एक नाम। ३. अब्दुल रहीम खान खानां का साहित्यिक उपनाम।

रहमा—पुं० [हि० रह्मा] किसी के यहाँ पड़ा रहने तथा उसकी रोटीयों पर चलनेवाला व्यक्ति।

रहमण—पुं० [स०] १ अगिरसु गोत्र के अंतर्गत एक शाखा या गण। (गीतम ऋषि इन्ही बंस के थे)। २ उक्त बंस का व्यक्ति।

रांका—वि०=रक (रखि)।

रांकड़ा—स्त्री० [देश०] कम उपजाऊ भूमि।

रांकब—पुं० [स० रकु+अणु] रक नामक भेड़ या मृग के रोबो का बना हुआ वस्त्र।

रांया—पुं०=रंया।

रांय—वि० [स० रग+अणु] १ रंग-संबन्धी। रग या रंगों का। जैसे—रग-विन्यास। २. रणों से युक्त। रपीन।

रांयड़—पुं० [?] मुसलमान राजपूतों की एक जाति।

रांयड़ी—स्त्री० [हि० रांयड़] १ दक्षिणी-पश्चिमी मालव तथा मेवाड़ के अस्त-पास्त की प्राचीन बोली या विभाषा। २ पञ्जाब में होनेवाला एक प्रकार का चावल।

रांया—पुं० [स० रग] सफेद रग की एक प्रसिद्ध धातु जो अपेक्षया नरम या मुलायम होती है।

रांया—वि०=रच (तमिक)।

रांयना—अ० [स० रजन] १. रग से युक्त होना। रग पकड़ना। २ किसी के प्रेम में अनुरक्त होना।

स० १ किसी को अपने प्रेम में अनुरक्त करना। २ रग से युक्त करना रगना।

†स०=रचना।

रांयना—स० [स० रजन] १ रजित करना। रंयना।

म० [हि० रंया] रगि के योगे से कोई चीज जोड़ना। रंया का टाँक लगाना।

म०=अंजना (आंभी में अजन लगाना)।

रांटा—पुं० [देश०] १ टिटिहरी चिड़िया। टिट्टिम। २. चरखा। ३ चारों की सांकेतिक बोली।

†पुं०=रहट।

रांटी—स्त्री० [हि० रांटा] टिटिहरी।

रांड़—वि० स्त्री० [स० रडा] (स्त्री) जिसका पति मर चुका हो तथा जिसने दूसरा विवाह आदि न किया हो।

स्त्री० १ विधवा स्त्री। २. बेधया। ३ स्त्रियों की एक गाली।

रांड़—वि० स्त्री०—राड।

पुं० [हि० रांड़ देश] बगल में होनेवाला एक प्रकार का चावल।

रांड़ना—स० [स० दहन] बिलाय करना। रोना।

रांथ—पुं० [स० परान्त=दूसरी ओर] पड़ोस। पार्ष्व। बगल।

पथ—रांथ-पड़ोस।

अव्य० निकट। पास। समीप।

स्त्री० [हि० रांथना] रांथने की क्रिया, ढग या भाव।

रांथना—स० [स० रंथन] (भोजन आदि) पकाना। पाक करना। जैसे—दाल या चावल रांथना।

रांथपड़ोस—पुं० [हि० रांथ=पास+पड़ोस] आसपास या पार्ष्व का स्थान। प्रतिवेश। पड़ोस।

रांथी—स्त्री० [देश०] पतली खुरपी के आकार का मोचियों का एक बीजार जिससे वे चमड़ा काटते, छीलते और साफ करते हैं।

रांथना—अ०=रंथना।

रांथी—पुं० [?] १. गाँव या कस्बे के पास की जगहों या उत्तर भूमि। २ ऐसी भूमि पर पशु चराने का कर।

†सर्व० आप। श्रीमान्। (पूरब में सम्बन्धन)

रां—विभ०=का। उदा०—कामागि करम सुबाण कामरा।—प्रिथी राज।

राइ—पुं०=राजा।

राइ—पुं०=राय (राजा)।

†वि० सबसे बढ़कर। उत्तम।

†स्त्री०=राय (सम्पत्ति)।

†स्त्री०=राजि (पक्ति)।

राइता—पुं०=रायता।

राइफल—स्त्री० [अ०] वह विषाद प्रकार की बर्षिया बन्दूक जिसकी नली या नाल के अन्दर चक्करदार गगड़ियाँ बनी होती हैं, और जिसकी गोली उन गगड़ियों में से चक्कर काटती हुई निकलती है। ऐसी बन्दूक की गाली दूर तक जाती, प्राय निशाने पर ठीक लगती और पातक मार करती है।

राइरंया—पुं०=रारंयान।

राई—स्त्री० [म० राजिका प्रा० राइआ] १ एक प्रकार की बहुत छोटी सरसो जिसका स्वाद बहुत तीक्ष्ण होता है।

पथ—राई रती करके=(क) छाटो से छोटी रकम या तौल का ध्यान रखते हुए। जैसे—गाई रती करके मारा मकान छान डालना।

तुम्हारी आंभो में राई नोन—ईश्वर करने तुम्हारी बुरी नजर न लगने पावे।

मुहा०—राई काई करना=(क) बहुत छोटे छोटे टुकड़े कर डालना।

(ख) पूरी तरह से कुचल या नष्ट कर देना। **राई नोन (या लोन)**

उत्तरात्ता=नजर हटाने पर उत्तारा या टोटका करके राई और नमक आग में डालना, जिससे नजर के प्रभाव का दूर होना माना जाता है।

(किसी पर) राई नोन करना=किसी सुंदर व्यक्ति की बुरी नजर से बचाने के लिए उसके मिर के चारों ओर से राई और नमक धुआँकर या उतागर फैकना। (एक प्रकार का टोटका)। राई से पर्यंत करना=

(क) जरा सी बात को बहुत बड़ा देना। (ख) बहुत तुच्छ या हीन को बहुत बड़ा बनाना।

२ बहुत पौडी मात्रा या परिमाण। जैसे—राई भर नमक और दे दो।

†स्त्री० [हि० राइ] राइ अर्थात् राजा होने की अवस्था या भाव। राजपण।

†स्त्री० [?] १ एक प्रकार का नृत्य। २ वह मडली जो उक्त नृत्य करती हो।

राइ—पुं०=राव (छोटा राज)।

पुं० [स० रव] १ रव। शब्द। २ मधुर शब्द।

राउ—पुं०=रावत।

राखर-पुं० [सं० राज+खर, प्रा० राय+खर] राखरों के महल का अंत:पुर । रावास । अनामिकावा ।

वि० बीमान् का । बाप का ।

राखस-पुं० [सं० राखल (कोटा राजा) ।

राखस+पुं० [सं० राकसिन, राकसी] =राखस ।

राखसगद्दा-पुं० [हि० राकस+गद्दा] कब्र नामक बेल और उसकी जड़ ।

राखस ताल-पुं० =राखस ताल ।

राखस-पत्ता-पुं० [हि० राकस=राखस+हि० पत्ता] जगली बीहुआर जिसे काँटल और बबूर भी कहते हैं ।

राकसिन-स्त्री० =राकसी ।

राकसी-वि०, स्त्री० =राखसी ।

राका-स्त्री० [सं० रा (दान)+क+टाप्] १ पूर्णिमा की रात । २ पूर्णिमा या पूर्णमासी का दिन अथवा वर्ष । ३ सुखली नामक रोग ।

४. मृतवी जिसे पहले-गहल रोवोदसं हुआ ही ।

राकासिय-पुं० [सं० व० तं०] चंद्रमा ।

राकिस-वि० [अ०] लिखनेवाला । लेखक ।

राकेस-पुं० [सं० राका-ईश, व० तं०] चंद्रमा ।

राकस-पुं० [सं० रक्षसु+अणु] [स्त्री० राकसी] ? असुरों आदि की तरह ही एक बहुत ही भीषण तथा विकराल योनि । इस योनि के व्यक्ति बहुत ही अत्याचारी, क्रूर और घृषस कहते गये हैं; और कुबेर के बन-कोश के रक्षक कहे गये हैं । दैत्य । निचिचरा । पितृचर । २ आठ प्रकार के विवाहों में से एक प्रकार का विवाह जो राकसी में प्रचलित था और जिसमें लोग कन्या की जबबंस्ती उठा ले जाते और उससे विवाह कर लेते थे । ३ बहुत ही दुष्ट प्रकृति का और निर्दय व्यक्ति । ४. साठ सक्वसरो में से उनवासवाँ सक्वसरो । ५. वैद्यक में गधक और पारे के योग से बननेवाला एक प्रकार का रसोप ।

राकस-ताल-पुं० [हि०] तिम्बल की एक झील । रावण-हृद । मान-तखाई ।

राकसी-स्त्री० [सं० राकस+शीणु] ? राकस की स्त्री । २ राकस स्त्री । दुष्ट, क्रूर स्वभाववाली स्त्री ।

वि० १ राकस का । राकस संबन्धी । २ राकसी की तरह का । अमानुषिक तथा निर्दयतापूर्ण । जैसे—राकसी अत्याचार ।

राख-स्त्री० [सं० रखा ?] किसी बिलकुल जले हुए; पदार्थ का अवशेष । मरम् । श्राक । जैसे—कोयले की राख ।

राखना+पुं० [सं० रखण] ? किसी से कोई बात छिपाना । कपट करना । २. रोक रखना । जाने न देना । ३ किसी पर कोई अनियोग लगाना या आरोप करना । ४ दे० 'रखना' ५ दे० 'रखाना' ।

राखी-स्त्री० [सं० रखा] रखा-बंधन के दिन बहून द्वारा भाई की ओर बाहुण द्वारा यजमान की बाँधा जानेवाली सूत्र ।

वि० प्र०—बाँधना ।

† स्त्री० १. =राख (मरम्) । २.—रखवाली ।

राखीबंध-वि० [हि० राखी+सं० बन्ध] ? (पुत्र) जिसे किसी स्त्री ने राखी बाँधकर अपना भाई या भाई के समान बना लिया ही । २.

(स्त्री) जो किसी पुत्र के राखी बाँधती हो; और इस प्रकार उसकी बहुत बच गई हो ।

राय-पुं० [सं०√रञ्ज (रौला)+बन्धु] १. किसी चीज को रंग से युक्त करने की क्रिया या भाव । रंजित करना । रौला । २. रंगने का पदार्थ या मसाला । रंग । ३. लाल रंग । ४. लाल होने की अवस्था या भाव । लाली । ५. प्राचीन भारत में, शरीर में लगाने का यह युग्मित लेप जो कपूर, कस्तूरी, चन्द आदि से बनाया जाता था । अंगराग । ६. रंग में लगाने का अलता । ७. किसी के प्रति होनेवाला अनुराग या प्रेम । ८. किसी अच्छी चीज या बात के प्रति होनेवाला अनुराग; और उसे प्राप्त करने की इच्छा या कामना । अभिमत या प्रिय वस्तु पाने की अभिलाषा । ९. मन में रहनेवाली सुख अनुभूति । १०. सुखसूत्राती । सुंदरता । ११. श्लेष । मुस्ता । १२. कष्ट । तकलीफ । पीडा । १३. ईर्ष्या । द्वेष । अस्तर । १४. मन प्रसन्न करने की क्रिया मनोहजन । १५ राजा । १६ सुई । १७. चक्रमा । १८. भारत के शास्त्रीय संगीत में वह विशिष्ट गान-अकार, जिसका स्वरूप स्वरो के उतार-चढ़ाव के विचार से निश्चित किया हुआ और ताल, लय आदि विशिष्ट अंगों तथा अंगों से युक्त होता है ।

विशेष—आरंभ में भरत और हनुमन् के मत से ये छ मूक्य राग निरूपित हुए थे।—मैरव, कौशिक (मालकोश) द्विबोल, दीपक, श्री और मेघा कुछ परवर्ती आवायों के मत से श्री, वसंत, पंचम, मैरव, मेघ और नट नारायण, तथा कुछ आवायों के मत से मालव, मल्लार, श्री, वसंत, द्विबोल और कर्णट ये ६ राग हैं । परवर्ती आवायों ने प्रत्येक की ६-६ रागिनियाँ और ६-६ पुत्र भी माने थे; और ये सब पुत्र श्री 'राग' कहलाने लगे थे । ये रागिनियाँ और राग अपने मूल या जनक राग की छाया से बहुत कुछ युक्त होते हैं । आगे चलकर सैकड़ों नई रागिनियाँ तथा राग बने थे, जिनकी स्वर-बोजना आदि बहुत कुछ निरूपित तथा निश्चित हैं । इन सबकी गणना शास्त्रीय संगीत के अंतर्गत होती है; और लोक में इन्हें पक्का गाना कहते हैं ।

मुहा०—अपना राग अलक्षणा—अपनी ही बात कहना । अपने ही विचार-प्रेरक करना । इतरों की बात न सुनना ।

१९ एक प्रकार का वर्षावृत्त जिसके प्रत्येक चरण में १३ अक्षर (र, ज, ट, अ और म) होते हैं ।

रागभूषण-पुं० [सं० व० सं०] १ कामदेव । २ खैर का पेड़ ।

रागचक्र-पुं० [सं० रा० तं०] ? कामदेव । २ श्रीरामचन्द्र ।

रागवारी-स्त्री० [हि० राग+फा० वारी] गाने का वह प्रकार जिसमें भरत के शास्त्रीय संगीत-शास्त्र के नियमों का ठीक तरह से पालन होता हो । ठीक तरह से राग-रागिनियाँ गाने की क्रिया या प्रकार ।

विशेष—इसमें गीत के बोलों के ताल-बद्ध उच्चारण भी होते हैं और शास्त्रीय वृष्टि से तीन पल्ले भी होते हैं ।

रागवृत्त-पुं० [सं० व० तं०] राग ।

रागचर-पुं० =शारदचर (विष्णु) । उदा०—मुसलीतरो रागचर ताल, मात, सुवेवेव—मुसली ।

रागना+पुं० [सं० राग] १. रंगा जाना । रंजित होना । २. किसी के प्रति अनुरक्त होना । ३ किसी काम या बात में निमग्न या लीन होना ।

सं १. रेंगना । २. प्रयत्न करना । ३. अनुरक्त करना ।

सं [हिं० राग] १ गीत आदि गाना । २ राग अलपाना ।

राग-गुण-सू० [सं० ब० सं०] गुल-गुणहरिया नामक पीथा और उसका फूल ।

राग-गुणी-स्त्री० [सं० ब० सं०,+क्रीप्] जवा या जपा नामक फूल और उसका पीथा ।

राग-माला-स्त्री० [सं० ब० सं०] कोई ऐसा गीत या गेय पद जिसमें एक-साथ कई शास्त्रीय रागों का प्रयोग किया गया हो ।

राग-रंग-पुं० [सं० इ० सं०] १. आनन्द-मगल । २. कोई ऐसा उत्सव जिसमें आनन्द-मगल मनया जाता हो ।

राग-रश्मि-पुं० [सं० ब० सं०] कामदेव ।

राग-रत्ना-स्त्री० [सं० मध्य० सं०] कामदेव की स्त्री, रति ।

राग-साध-पुं० [सं० मध्य० सं०] १ अंपूर तथा अनार के योग से बनाया जानेवाला एक तरह का खाद्य । २. आम का मूरुवा ।

राग-सागर-पुं० [सं० ब० सं०] कोई ऐसा गीत या गेय पद जिसमें एक साथ बहुत से शास्त्रीय रागों का प्रयोग किया जाता हो ।

रागासारा-स्त्री० [सं० ब० सं०,+टाप्] मैनिलि (खनिज पदार्थ) ।

रागांगी-स्त्री० [सं० राग-अंग, ब० सं०,+क्रीप्] मणीठ (लता) ।

रागाञ्जित-हिं० [सं० राग-अञ्जित, तुं० सं०] १ जिसे राग या प्रेम हो । २. क्रोध से युक्त । क्रुद्ध । ३. अप्रसन्न । नाराज ।

रागावध-वि० [सं० राग-अवध, तुं० सं०] जो किसी प्रकार के राग (रग, प्रेम आदि) के कारण अरुण या लाल हो रहा हो । उदा०—मयूर माधवी तथा में जब रागावध रवि होता अस्त ।—यत ।

रागिणी-स्त्री० [सं० रागिणी] १ संगीत में किसी राग की पत्नी । २. भारतीय शास्त्रीय संगीत में कोई ऐसा छोटा राग जिसके स्वरो के उतर-चढ़ाव आदि का स्वयम् निश्चित और स्थिर हो । ३. चतुर और विदग्धा स्त्री । ४. मेना की बड़ी कन्या का नाम । ५. जय श्री नामक लक्ष्मी ।

रागिणी-स्त्री० [सं० रागिणी] १ संगीत में किसी राग की पत्नी । २. भारतीय शास्त्रीय संगीत में कोई ऐसा छोटा राग जिसके स्वरो के उतर-चढ़ाव आदि का स्वयम् निश्चित और स्थिर हो । ३. चतुर और विदग्धा स्त्री । ४. मेना की बड़ी कन्या का नाम । ५. जय श्री नामक लक्ष्मी ।

रागि-वि० [ब०] १. इच्छुक । २. प्रयत्न ।

रागी (गिण्) -वि० [सं०√रज्+गिन्, वा राग+इनि] [स्त्री० रागिणी] १ राग से युक्त । २. रेंगा हुआ । ३. रेंगेवाला ।

४. किसी के प्रति अनुरक्त या आसक्त । ५. लाल मुहें । ६. विषय-वासना में पड़ा या फँसा हुआ ।

पुं० [सं० रागिन्] [स्त्री० रागिणी] १. अयोध कृष्ण । २. छ भाभा-जोवाले छद्म का नाम ।

पुं० [हिं० राग+ई० (प्रत्य०)] बहुवच्ये जो राग-रागिणियाँ गाता हो । शास्त्रीय संगीत का ज्ञाता । (पंजाब)

† स्त्री० [?] मँडूआ या मकरा नामक कवच ।

† स्त्री० =रागी ।

रागेश्वरी-स्त्री० [सं० राग-ईश्वरी, ब० सं०] संगीत में लक्ष्माच ठाक की एक रागिणी ।

राग्य-पुं० [सं० रघु+अण्] १ रघु के वध में उत्पन्न व्यक्ति । २. श्रीरामचन्द्र । ३. वधारा । ४. अज । ५. एक प्रकार की बहुत बड़ी समुद्री मछली ।

राग्या-सं० [हिं० रचना] रचना करना । बनाना ।

अ० रचा या बनाया जाना । बनना ।

सं० [सं० रंचन] रंग से युक्त करना । रेंगना ।

अ० १. रग से युक्त होना । रेंगा जाना । २. किसी के प्रेम में पड़ना । अनुरक्त होना । ३. किसी काम या बात में मग्न या लीन होना । ४. प्रसन्न होना । ५. भला लगना । फलना । ६. सोच में पड़ना ।

राछ-स्त्री० [सं० रक्ष] १. कारीगरों का औजार । उपकरण । २. लकड़ी के अन्दर का टोख और पक्का अंश । हीर । ३. जुलाहीं के करपें में का कभी नामक उपकरण जिसकी सहायता से ताने के सूत ऊपर उठते और नीचे गिरते हैं । ४. बरतार ।

मुहा०—राछ घुमाना=विवाह के समय वर की पालकी पर चढ़ाकर किसी जलाशय या कूर् से परिक्रमा करना ।

५. जूस । ६. वह बूँटा जिसके चारों ओर चक्की या जति का झरपी पाट घूमता या घुमाया जाता है । ६. हूरीडा । ७. नुदेलख में, वाद्ययंत्र मांस में गाये जानेवाले एक प्रकार के गीत ।

राछ-पुं० [सं० रक्ष] १. कारीगरों का औजार । उपकरण । २. लकड़ी के अन्दर का टोख और पक्का अंश । हीर । ३. जुलाहीं के करपें में का कभी नामक उपकरण जिसकी सहायता से ताने के सूत ऊपर उठते और नीचे गिरते हैं । ४. बरतार ।

मुहा०—राछ घुमाना=विवाह के समय वर की पालकी पर चढ़ाकर किसी जलाशय या कूर् से परिक्रमा करना ।

५. जूस । ६. वह बूँटा जिसके चारों ओर चक्की या जति का झरपी पाट घूमता या घुमाया जाता है । ६. हूरीडा । ७. नुदेलख में, वाद्ययंत्र मांस में गाये जानेवाले एक प्रकार के गीत ।

राछ-पुं० [सं० रक्ष] १. कारीगरों का औजार । उपकरण । २. लकड़ी के अन्दर का टोख और पक्का अंश । हीर । ३. जुलाहीं के करपें में का कभी नामक उपकरण जिसकी सहायता से ताने के सूत ऊपर उठते और नीचे गिरते हैं । ४. बरतार ।

राछ-पुं० [सं० रक्ष] १. कारीगरों का औजार । उपकरण । २. लकड़ी के अन्दर का टोख और पक्का अंश । हीर । ३. जुलाहीं के करपें में का कभी नामक उपकरण जिसकी सहायता से ताने के सूत ऊपर उठते और नीचे गिरते हैं । ४. बरतार ।

राछ-पुं० [सं० रक्ष] १. कारीगरों का औजार । उपकरण । २. लकड़ी के अन्दर का टोख और पक्का अंश । हीर । ३. जुलाहीं के करपें में का कभी नामक उपकरण जिसकी सहायता से ताने के सूत ऊपर उठते और नीचे गिरते हैं । ४. बरतार ।

राज-पुं० [सं० राज्य] १ राजा के अधिकार में रहनेवाले क्षेत्र या भूखंड । राज्य । २. राज्यीय शासन । हुकुमत । ३. राजाओं का सा वैभव और सुख तथा उसका भोग ।

मुहा०—राज रजना = (क) राज्य का शासन करना । (ख) राजाओं की तरह रहकर सब प्रकार के सुख भोगना । (गिनी का) राज रजना = राजाओं की तरह बहुत अधिक सुखपूर्वक रहना या सुख-भोग करना । ४. किसी क्षेत्र या विषय में होनेवाले किसी का पूरा अधिकार । जैसे—आज-कल तो पेशेवर नेताओं का राज है । ५. किसी के पूर्ण अधिकार या स्वाभिवल की पूरी अवधि या काल । जैसे—मैं तो पिता जी के राज में सब सुख भोग चुका ।

वि० १ 'राज' का बहु-संज्ञित रूप जो यौगिक के आरंभ में लगाकर नीचे लिखे अर्थ देता है—(क) राज-सवधी या राजा का । जैसे—राज-मुद्र, राज-महल । (ख) प्रधान या मुख्य । जैसे—राज-वैद्य । (ग) बहुत बड़ा या बरिधा । जैसे—राजहंस । २. राज या शासन संबंधी । जैसे—राजनीति ।

सर्वे राजाओं या बड़ों के लिए एक प्रकार का संबोधन । उदा०—राज जय मेरिठ्ठी स्वर्णगण ।—प्रिथ्वीराज ।

पुं० [सं० राजन्] १ राजा । २. वह मिस्त्री जो इंदो की जुवाई तथा पलस्तर आदि करता हो । मकान बनानेवाला कारीगर ।

पुं० [फा० राज] मूल या छिपी हुई बात । भेद । रहस्य ।

राजक-वि० [सं०√राज् (शीघ्र)+अण्=अक] प्रकाशमान । चमकनेवाला ।

पुं० [राजन्+कण्] १. राजा । २. काला अण्ड ।

राजकथा-स्त्री० [सं० ब० सं०] राजाओं का इतिहास या त्पराद्रीक । राजकथं-पुं० [सं० ब० सं०, परनिपात] कथन की एक जाति ।

राजकथा-स्त्री० [सं० ब० सं०] १ राजा की डुपरी । राजकुमारी । २. केवड़े का फूल ।

राज्यकार—**सु०** [सं० मध्य० सं०] राजा या राज्य की ओर से लगाया हुआ कार ।

राज्यकारी—**स्त्री०** [सं० व० त०] एक प्रकार की बड़ी ककड़ी ।
राज्यकर्त्त—**सु०** [सं० व० त०] हाथी की सूँव ।

राज्यकर्त्ता—**सु०** [सं० व० त०] १. वह जो किसी को राजगद्दी पर बैठाता हो । २. फलत. ऐसा व्यक्ति जिसमें किसी को राजगद्दी पर बैठाने तथा उतारने की भी सामर्थ्य हो । ३. वह जो राजा या शासन-सम्बन्धी बड़े और महत्वपूर्ण कार्य करता हो ।

राज्यकर्त्त (संघ)—**सु०** [सं० व० त०] १. राजा के इत्यर्थ । २. राजा के कर्त्तव्य ।

राज्यकला—**स्त्री०** [सं० व० त०] बरामा की सोलह कलाओं में से एक ।
राज्यकल्याण—**सु०** [सं०] सगीत में कल्याण राग का एक प्रकार का भेद ।

राज्यकर्म—**सु०** [सं० व० त०, परनिपात] नागस्त्रोधा ।

राज्यकार्य—**सु०** [सं० राजकार्य] राज्य या शासन के प्रतिविक्रम के या महत्त्वपूर्ण काम ।

राज्यकीय—**वि०** [सं० राजन् + क्त—ईय, क्तृ-आगम] राज्य संबंधी । राज्य का । जैसे—राजकीय अधिकारी ।

राजकीय-समाजवाद—**सु०** [सं०] आधुनिक समाजवाद की वह शाखा जिसका मुख्य निश्चय यह है कि लोकप्रयोगी कल-कारखाने और शिल्प राज्य के अधिकार और नियंत्रण में रहने चाहिए । (स्टेट सोशलिज्म)

राजकुमारी—**सु०**—राजकुमार ।

राजकुमार—**सु०** [सं० व० त०] [स्त्री०] राजकुमारी । राजा का पुत्र ।

राजकुल—**सु०** [सं० व० त०] १. राजा का कुल या वंश । २. प्रसाद । ३. ग्यायल्य ।

राजको—**सु०** [सं० व० त०, परनिपात] बड़ा बेर (फल) और उसका भेद ।

राजकोलाहल—**सु०** [सं० व० त० परनिपात] सगीत में ताल के साठ मुख्य भेदों में से एक ।

राजकोष—**सु०** [सं०] १. वह स्थान जहाँ राजकीय धनसंपत्ति सुरक्षित रूप से रखी जाती है । सरकारी खजाना । २. आज-कल प्रभुत्व धरती में बहु विशिष्ट स्थान जहाँ से राज्य के आर्थिक लेन-देन के सब काम होते हैं । (ट्रेजरी)

राजकोषालय—**सु०** [सं० व० त०, परनिपात] बड़ी तराई । बड़ा मनुष्य ।

राजकुमारी—**स्त्री०** [सं० मध्य० सं०] पिंडलजूर ।

राज्य—**वि०, सु०**—राजगामी । (दे०)

राज्या—**स्त्री०** [हिं० राजा + गी] वह आसन या गद्दी जिस पर राजा बैठता है । राजसिंहासन । २. वह अधिकार जो उक्त आसन पर बैठने पर प्राप्त होता है । ३. नये राजा के पहले पहल गद्दी पर बैठने के समय का उत्सव तथा झूठे इत्यर्थ । राज्यमित्येक । राज्यारोहण । ४. लक्षणिक अर्थ में, बहुत बड़ा अधिकार । (व्याय)

राज्याभि—**वि०** [सं०] (संपत्ति) जो उत्तराधिकारी के अभाव में राज्य या शासन के अधिकार में आ जाय ।

सु० ऐसी संपत्ति जो उत्तराधिकारी के अभाव में राज्य के अधिकार में आ गई हो । नकूल । (एक्सीट)

राज्य-निर्द्ध—**सु०** [सं० राज-गुण] काले चमकीले रंग का एक प्रकार का मिट्टी जो प्रायः अकेला ही रहता है ।

राज्यनिरि—**सु०** [सं० मध्य० सं०] १. मगध देश का पर्वत । २. बघुआ नामक सगा । ३. दे० 'राजगद्दी' ।

राज्यनी—**स्त्री०** [हिं० राजा + नी (प्रत्यय)] राजा होने की अवस्था, पद या भाव । राज्यत्व ।

राज्यनी—**सु०** [हिं० राजा + नी + क्त] [भाव०] राजगद्दी । मकान बनानेवाला कारीगर । राज । बघई ।

राज्यनी—**स्त्री०** [हिं० राजगद्दी + नी (प्रत्यय)] राजगद्दी का कार्य या पद ।
राजगद्दी—**सु०** [सं० व० त०] १. राजा के रहने का महल । राज-प्रसाद ।

२. बिहार में पटने के पास का एक प्रसिद्ध प्राचीन स्थान जिसे पहले गिरिजज कहते थे ।

राज्य—**वि०** [सं० राजन् + हृन् (हिंसा) + क्त] १. राजा को मार डालने-वाला । राजा की हत्या करनेवाला । २. बहुत तीव्र या तेज ।

राज-यज्ञियाल—**सु०** [हिं० राज + यज्ञियाल] मध्य युग में एक प्रकार का समन-सूचक यंत्र जिसमें निश्चित समयों पर यज्ञियाल या घंटा बोलती जाती । उदा०—यत्र पीरी पर दर्शन हुआ । तेषु पर बाज राज-यज्ञियाल ।—जायसी ।

राज्यभंग—**सु०** [सं० व० त०, परनिपात] पुद्गल का फूल । सुलताना चंपा ।

राज्यभार—**सु०** [सं० राजाभार] राज्यों के यहाँ किये जाने या होनेवाले आचार-स्वभाव । उदा०—मैं भाँवरि नेबछावरि, राजभार सब कीन्हा ।—जायसी ।

राज-चिह्नक—**सु०** [सं० व० त०, परनिपात + क्त] सिंघन । उपस्य ।
राजचक्रामणि—**सु०** [सं० व० त०] ताल के साठ भेदों में से एक ।

राजघं—**सु०** [सं० व० त०, परनिपात] १. बड़ा जामुन । फरदा । जामुन । २. पिर लजूर ।

राजगीरक—**सु०** [सं० व० त० परनिपात] एक प्रकार का बीर ।
राजलं—**सु०** [सं० व० त०] १. ऐसा राज्य या शासन जिसमें सारी सत्ता एक राजा के हाथ में हो । (मॉनर्की) २. वह पद्धति या प्रणाली जिसके अनुसार उक्त प्रकार का शासन होता है । ३. राज्य के शासन करने के नियम, प्रकार और विधायक । (पॉलिटी)

राजल—**वि०** [सं०] राजल + अण् । १. राजल संबंधी । बाँधी का । ३. राजल या बाँधी का बना हुआ ।

पुं० राजल (बाँधी) ।

राजलसिन्धी—**स्त्री०** [सं० व० त०] कल्याण कृत काश्मीर का एक प्रसिद्ध संस्कृत ऐतिहासिक ग्रंथ जिसमें पीछे कई पद्यों ने बहुत सी बातें बकाई की । इसकी रचना का क्रम अब तक बखर रहा है ।

राजलघ—**सु०** [सं० व० त०, परनिपात] १. कर्मकार का बूला । कनियारी । २. अमलतास ।

राज-सन्धी—**स्त्री०** [सं० व० त०] १. सफेद तथा बड़े फूलोवाली एक तरह की मूलाय की लता । २. बड़ी सेबरी ।

राजला—**स्त्री०** [सं० राजन् + ल + टाप्] १. राजा होने की अवस्था, पद या भाव । राज्यत्व ।

राज-तिलक—**सु०** [सं० व० त०] १. राजा को लगाया जानेवाला तिलक ।

२. विषेष्टत. राज्यां रोहण के समय राजा को लगाया अनिवाला तिलक ।
३. वह उत्सव जो नये राजा को राजसिंहासन पर बैठाकर तिलक लगाने के अवसर पर होता है ।

राज्य-तुल्य—गुं [सं० राज्य् + तुल्य] ? राजा होने की अवस्था, पद या मान ।

राज्य-दंड—गुं [सं० ४० तं] ? राजा के हाथ में रहनेवाला वह दंड या डंडा जो उसके शासक होने का प्रतीक होता है । २ राजा या राज्य के द्वारा अपराधियों, दौरोषी आदि को मिलनेवाला दंड या सजा ।

राज्य-दत्त—गुं [सं० ४० तं, परनिपात] दलों की पंक्ति के बीच का वह दौत जो और दौतों से कुछ बड़ा और चौड़ा होता है । चौका ।

राज्य-धारिका—स्त्री० = राजपुत्री ।

राज्य-दूत—गुं [सं० ४० तं] किसी राजा या राज्य का वह दूत जो दूसरे राजा के यहाँ या राज्य में अपने राजा या राज्य का प्रतिनिधित्व करता है ।

राज्यदूत—स्त्री० [सं० ४० तं, परनिपात] धरती । जला ।

राज्यदेशीय—वि० [सं० राज्य् + देशीयर] जो राजन न होने पर भी राजा के बहुत कुछ समान हो । राजा के तुल्य । राज-कल्प ।

राज्य-भू-मु—गुं [सं० ४० तं, परनिपात] अवलतास ।

राज्यद्रोह—गुं [सं० ४० तं] राजा या राज्य के प्रति किया जानेवाला द्रोह । वह कृत्य जिससे राजा या राज्य के नाश या बहुत बड़े अहित की संभावना हो । बगान्त । जैसे—प्रजा या सेना को राजा या राज्य से लड़ने के लिए अथवा उसकी आज्ञाओं, नियमों, निरुपयोग आदि के विरुद्ध काम करने के लिए उत्तेजित करना या भड़काना । (सिद्धिमान)

राजद्रोही (हिन्)—गुं [सं० राज्यद्रोह + हीन्] वह जिसने राजद्रोह किया हो । धार्मी ।

राज्य-द्वार—गुं [सं० ४० तं] ? राजा के महल का द्वार । राजा की ड्योही । २ राजा का दरवार जहाँ अपराधियों का न्याय होता था । ३ कचहरी । न्यायालय ।

राज्य-धर्म—गुं [सं० ४० तं] राजा का नैतृत्व या धर्म । जैसे—प्रजा का पालन, सब से देश की रक्षा, देश में शांति और व्यवस्था बनाये रखना आदि ।

राज्यधानी—स्त्री० [सं० ४० तं] ? किसी राज्य का वह नगर जिसमें स्वामी रूप से उनका राजा निवास करता हो । २ किसी राज्य का वह नगर जो उसका शासन-केंद्र हो ।

राज्य-धान्य—गुं [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार का धान । स्वामा ।

राज्यधूसर—गुं [सं० ४० तं, परनिपात] ? एक प्रकार का धूसरा जिसके फूल बड़े और कई आवरण के होते हैं । २ कनक-धूसरा ।

राज्य-नय—गुं [सं० ४० तं] राजनीति ।

राज्यनयिक—वि० = राजनीतिक ।

गुं राजनीतिज्ञ ।

राज्या—ज० [सं० राजन + शोभित होना] ? किसी पदार्थ से किसी अन्य पदार्थ या स्थान की शोभा बढ़ाना । सुशोभित होना । उदा०—मोर-मुकुट की चन्द्रिकानि यो राजत नदनन्द ।—बिहारी । २ किसी व्यक्ति का किसी स्थान पर, बिहारासन होकर उसकी शोभा बढ़ाना । उदा०—मन्दिर में सज राजहि रानी ।—तुलसी ।

राज्यनामा (मन्)—गुं [सं० ४० म०] पटोल । परवल ।

राज्यनायक—गुं [सं०] गजमंज । (दे०)

राजनीति—स्त्री० [सं० ४० तं] [वि० राजनीतिक] ? वह नीति या पद्धति जिस के अनुसार किसी राज्य का प्रशासन किया जाता या होता है । २ युद्ध, यहाँ आदि की पारस्परिक सम्बंधावली तथा स्वार्थपूर्ण नीति । (पॉलिटिक्स) जैसे—विद्यालय की राजनीति से बच्चों में महोद्यम हुआ ही है ।

राजनीति—वि० [सं० राजनीति + उक्त्-इक] राजनीति-सम्बन्धी । राजनीति का । जैसे—राजनीतिक आंदोलन, राजनीतिक सभा ।

राजनीतिसि—वि० [सं० राजनीति + सि (जमाना) + क] राजनीति का सात ।

राज्यन्य—गुं [सं० राज्य् + न्यत्] ? क्षत्रिय । २. राजा । ३. अग्नि । ४. सिरली का पेठ और उसका फल ।

राज्यन्यधु—गुं [सं० ४० तं] क्षत्रिय ।

राज्यरक्षी—गुं = राजरक्षक ।

राज्यसं—गुं = राज्यस्य ।

राज्य—गुं [सं० राज्य् + वा (रक्षा) । क, उप० सं०] ? वह जिसे किसी राजा की अत्यन्त-व्यस्ता, अनुपस्थिति, शारीरिक अग्रगण्यता आदि के समय राजा या राज्य के शासन के सब काम सौंपे जायें । धृत्यपाल । २. कुछ सम्पत्तियों में वह गर्व-प्रधान अधिकारी जो उसके शासन-सम्बन्धी सब काम करता हो । (रीजेन्ट)

राज्यपट्ट—गुं [सं० ४० तं] ? राजा का सिंहासन । २. चुबक पत्थर ।

राज्य-पति—गुं [सं० ४० तं] राजाओं का राजा । मन्नाट ।

राज्य-पत्नी—स्त्री० [सं० ४० तं] ? राजा की स्त्री । रानी । २. पीतल नामक धातु ।

राज्यपत्र—गुं [सं०] राज्य द्वारा आधिकारिक रूप में प्रकाशित होनेवाला वह सामयिक पत्र जिसमें राजकीय घोषणाएँ, उच्च-पदस्थ कर्मचारियों की नियुक्तियाँ, नये नियम और विधान तथा इसा प्रकार की और प्रमुख सूचनाएँ प्रकाशित होती हैं । (गजट)

राज्यप्रति—गुं ४० [सं०] जिनका उल्लेख या घोषणा गजपत्र में हो चुका हो । (गजेट) जैसे—गजपत्रित पदाधिकारी, गजपत्रित सेवा ।

राज्य-पथ—गुं [सं० ४० तं] गजमार्ग । (दे०)

राज्य-पद्धति—स्त्री० [सं० ४० तं] ? गजपत्र । २. राजनीति ।

राज्य-पलाट—गुं [सं० ४० तं, परनिपात] लाल छिलकेवाला प्याज ।

राज्य-पाट—गुं [सं० गजपट्ट] ? राजा का सिंहासन और राज्य । २. राजा के अधिकार तथा कर्तव्य । ३. राज्य का शासन-प्रबंध ।

राज्य-पाल—गुं [सं० राज्य् + पाल् + अच्] वह जिसमें राजा या राज्य की रक्षा हो । जैसे—गेना आदि ।

गुं = राज्यपाल ।

राज्यपीठ—गुं [सं० मध्य० सं०] महापीठ (बुध) ।

राज्य-पुत्र—गुं [सं० ४० तं] ? राजा का पुत्र या वेदा । राज-कुमार । २. प्राचीन भारत की एक वर्षासकल जाति जिसकी उत्पत्ति क्षत्रिय पिता और कर्ण जाति की माता में कही गई है । ३. एक प्रकार का बड़ा आम । ४. बुध ग्रह ।

राज्यपुत्रक—गुं = राज्यपुत्र ।

राज्य-पुत्रा—स्त्री० [सं० ४० सं०, + टाप्] राजमाता ।

राज्यपुत्रिका—स्त्री० [सं० राजपुत्री + कन् + टाप्, ह्रस्व] ? राजा की

बेटी। राजकुमारी। २. सफेद गूही। ३. पीतल नामक धातु। ४. एक प्रकार का पत्थी जिसे शारिरी भी कहते हैं।

राजकुमारी—स्त्री० [सं० वं० तं०] १. राजा की बेटी या लक्ष्मी। राजकुमारी। २. रणका का एक नाम। ३. कड़वा कटु। ४. जाती या जाही नामक पीषा और उसका फूल। ५. मालती। ६. छद्मरत्न।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०] राजा का कोई प्रधान अधिकारी का धार्मिकता। राजकर्मकारी।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०, परनिपात] १. नागकेसर। २. कनक चपा।

राजकुम्भी—स्त्री० [सं० वं० तं०, +कीष्] १. बन मल्लिका। २. जाती या जाही। ३. कौकण प्रदेश में होनेवाला कृष्णी नामक पीषा और उसका फूल।

राजकुम्भित—वि० [सं० तृ० तं०] १. जिसकी जीविका का प्रबन्ध राजा या राज्य करता हो। पुं० ब्राह्मण।

राजकुम्भ्य—पुं० [सं० वं० तं०] सुवर्ण। सोना। वि० राजा या राज्य जिसे आदरणीय और पूज्य समझता हो।

राजकुम्भ—पुं० [सं० राजकुम्भ] १. राजकुम्भानि मे रहनेवाले क्षत्रियों के कुछ विभिन्न वंश जो एक बड़ी और स्वतन्त्र जाति के रूप में माने जाते हैं। २. राजकुम्भानि का क्षत्रिय वंश।

राजकुम्भाना—पुं० [हिं० राजकुम्भ+आना (प्रत्यय)] आधुनिक राजस्थान का पुराना नाम जो राजपूतों का गढ़ माना जाता है।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०] १. राजपक्षी। २. कौकण का कृष्णी नामक पीषा और उसका फूल। ३. लाल धान। ४. लाल प्याज।

राजकुम्भ—स्त्री० [सं० वं० तं०] १. एक प्रकार का धान जो लाल रंग का होता है और जिसका बावल संकेत तथा स्वादिष्ट होता है। तिल-वासिनी। २. दे० 'राजकुम्भ'।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०] राजकर्मकारी।

राजकुम्भ—पुं० [सं० मध्य० तं०] १. पटोल। परवल। २. बड़ा और बड़िया आम। ३. विरली।

राजकुम्भ—स्त्री० [सं० वं० तं०, टाप्] जामुन।

राजकुम्भी—पुं० [सं० राजकुम्भ] क्षत्रिय।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०, परनिपात] १. पेंबंदी या पेड़ों की बौर। २. [वं० तं०] लाल औरक, ३. ममक। लवण।

राजकुम्भ—पुं० [हिं० राज+बहुना] बहु प्रधान या बड़ी नहर जिससे अनेक छोटी छोटी नहरें खेती को सींचने के लिए निकाली जाती हैं।

राजकुम्भी—स्त्री० [सं० राजकुम्भी] १. राजा की बाटिका। राजबाटिका। २. राजा के रहने का महल।

राजकुम्भी—पुं०=राजकुम्भी।

राजकुम्भी—पुं० [सं० राजकुम्भी] राजा या राज्य का कोष या खजाना।

राजकुम्भी—वि० [सं० वं० तं०] [राज+कुम्भी] जो अपने राजा या राज्य के प्रति भक्ति तथा निष्ठा रखता हो।

राजकुम्भी—स्त्री० [सं० वं० तं०] राजा या राज्य के प्रति भक्ति अर्थात् निष्ठा और अन्ध।

राजकुम्भी—स्त्री० [सं० वं० तं०] एक प्रकार का जलपत्ती। गोमाहीर। पकरीट।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०] १. बहु भवन जिसमें राजा अथवा राज्य का प्रधान अधिकारी निवास करता हो। २. राजमहल। प्रासाद। ३. वह सरकारी भवन जिसमें राजपाल रहते हैं। ३. सरकारी अधिकारियों के अतिथि के रूप में ठहरने के लिए बना हुआ भवन।

राजकुम्भ—पुं० [सं० राजकुम्भ (संज्ञा)+कुम्भ] राजकुम्भ। राज्य।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०] राजा का सेतनमोगी भूय।

राजकुम्भ—पुं० [सं० राजकुम्भ] १. एक प्रकार का बड़िया आम। २. एक प्रकार का बड़िया आम।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०] १. जाबिनी। २. चिरीजी। पयाल। ३. एक प्रकार का धान। वि० जिसके भोग राजा लोग करते हो।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०] किसी राज्य के आसपास तथा चारों ओर के राजाओं का महल या उनका सभाघर।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०, परनिपात] एक प्रकार का बड़ा मेड़क। महामेड़क।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०, परनिपात] राजमहल।

राजकुम्भ—पुं० [सं०] वह जो राज्य के शासन की सभी सूक्ष्म बातें अच्छी तरह समझता हो और राज्य-संचालन के कार्यों में यत्न हो। (स्टेट्समैन)

राजकुम्भ—पुं० [हिं० राज+महल] १. राजा के रहने का महल। राजप्रसाद। २. बंगाल के सत्याल परचने के पास का एक पर्वत।

राजकुम्भी—स्त्री० [सं० वं० तं०] पट्टरानी।

राजकुम्भ—पुं० [सं० राजकुम्भ+मात्र] नाम मात्र का राजा।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०] १. राजधानी अथवा किसी प्रमुख नगर की सबसे बड़ी और चौड़ी सड़क। २. विशेषतः वह चौड़ी सड़क जो राजभवन की जाती हो।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०, परनिपात] काली उरद। कालामाष।

राजकुम्भ—पुं० [सं० राजकुम्भ+कुम्भ] वह लोत जिसमें माष बीया जाता हो। मसारा।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०, परनिपात] मुनहरे राग का एक प्रकार का मृग, जो बहुत स्वादिष्ट होता है।

राजकुम्भ—स्त्री० [सं० वं० तं०] १. सरकारी मोहर। २. उक्त मोहर की छाप।

राजकुम्भ—पुं० [सं० उपमित० सं०] राजकुम्भ।

राजकुम्भ—पुं० [सं० वं० तं०, परनिपात] वैद्यक में एक प्रकार का रस जो यचना रोग में उपकारी माना जाता है।

राजकुम्भ (कुम्भ) —पुं० [सं० वं० तं०, परनिपात] अय या यचना नामक रोग। तपेदिक।

राजकुम्भी (कुम्भी) —वि० [सं० राजकुम्भ+कुम्भी] जिसे राजकुम्भी रोग हुआ हो। धय रोग से पीड़ित (रोगी)।

राजकुम्भी—पुं० [सं० वं० तं०] १. प्राचीन काल में वह रस जिसपर राजा की सवारी निकलती थी। २. राज मार्ग पर निकलनेवाली राजा की सवारी। ३. पालकी, जिसपर महल के राजा लोग चढ़ते हैं।

राज-बीज—यू० [स० ष० त०, परनिपात] १. बहु मूल योग जिकरित प्रतिपादन पतञ्जलि ने योगशास्त्र में किया है। अष्टांग योग। २. फलित ज्योतिष के अनुसार कुछ विशिष्ट ग्रहों का योग जिसके जन्म-कुण्डली में पड़ने से मनुष्य राजा या राजा के तुल्य होता है।

राज-बीज्य—यू० [स० ष० त०] बज्र।

राज-रंग—यू० [स० मध्य० सं०] बर्षा।

राज-रथ—यू० [स० ष० त०] १. राजा की सवारी का रथ। २. बहुत बड़ा रथ।

राज-राज—यू० [स० ष० त०] १. राजाओं का राज। अधिराज। महाराज। २. कुबेर। ३. सन्नाट।

राज-राजेश्वर—यू० [स० राजराज-ईश्वर, ष० त०] [स्त्री० राजराजेश्वरी] १. राजाओं का राजा। अधिराज। महाराज। २. वैद्यक में एक प्रकार का रसोपचय जिसका प्रयोग दाह, कुष्ठ आदि रोगों में होता है।

राज-राजेश्वरी—स्त्री० [स० राजराज-ईश्वरी, ष० त०] १. राजराजेश्वर की पत्नी। महाराज्ञी। २. दस महाविद्याओं में से एक का नाम। भुवनेश्वरी।

राज-राज्ञी—स्त्री० [हिं०] १. राजा की राज्ञी। २. बहुत ही सम्पन्न और सुखी स्त्री।

राज-रोति—यू० [स० ष० त०, परनिपात] कौशा।

राज-रोग—यू० [ष० त०, परनिपात] ऐसा रोग जिससे पीसा घूटना असभव हो। असाध्य रोग। जैसे—वक्षमा, लक्ष्मा, श्वास आदि।

राजसि—यू० [स० राजन्-शक्ति, उपमित सं०] वह ऋषि जिसका जन्म किसी राजवश अर्थात् क्षत्रिय कुल में हुआ हो।

राजल—यू० [हिं० राजा+ल (प्रत्यय)] अगहन में तैयार होनेवाला एक प्रकार का धान।

राज-लक्षण—यू० [स० ष० त०] सामूहिक के अनुसार शरीर के वे चिह्न या लक्षण जो इस बात के सूचक होते हैं कि उनका धारणकर्ता राजा बनेगा।

राजलक्षण (शमन्)—यू० [स० ष० त०] १. राजाओं के साथ चलनेवाले प्रतीक। राजचिह्न।

राज-लक्ष्मा (शमन्)—यू० [स० ष० त०] १. वह मनुष्य जिसमें सामूहिक के अनुसार राजाओं के लक्षण हों। राज-लक्षण से युक्त पुरुष। २. युधिष्ठिर का एक नाम।

राज-लक्ष्मी—स्त्री० [स० ष० त०] १. राजाओं या राज्य का वैभव। राजश्री। २. राजा या राज्य की सोमा और सपना।

राज-वच—यू० [स० ष० त०] राजा का कुल। राजकुल।

राजवर्षी (सिन्धु)—वि० [स० राजवष+इति] १. राज-वष वर्षा। राज-वष का। २. जो राज-वष में उत्पन्न हुआ हो।

राज-वष—यू० [स० ष० त०] १. राज-वषी।

राज-वर्षा (सिन्धु)—यू० [स० ष० त०] राजा का पत्र और शक्ति।

राज-वत्स (सिन्धु)—यू० [स० ष० त०] राजमार्ग। राजपथ।

राजवला—स्त्री० [स० राज्+वा (शक्ति)+अच्+टाप्, राजा-वला, कर्म-सं०] प्रसारणी लता।

राजवत्सल्य—यू० [स० ष० त०] १. बिराणी। २. बन्धा और बन्धिया

आम। ३. पैतृवी और बन्धा बेर। ४. वैद्यक में एक विष्य बीज्य जो शूल, गुल्म, घृग्णी, अतिसार आदि में ही जाती है।

राज-वल्ली—स्त्री० [स० मध्य० सं०] करेले की लता।

राज-वसति—स्त्री० [स० ष० त०] राजा का महल। राजवसन।

राज-वाह—यू० [स० राजन्+वह, (होना)+अण, उप० सं०] घोड़ा।

राज-वाह्य—यू० [स० ष० त०] बाह्य।

राज-वि—यू० [स० ष० त०] नीलकण्ठ।

राज-विजय—यू० [स० ष० त०] सपूर्ण जित का एक राग। (सर्गीत)

राज-विद्या—स्त्री० [स० ष० त०] १. राज्य के शासन संबंधी शास्त्रिक बातें। २. राजनीति।

राज-विब्रोह—यू० [स० ष० त०] राजा या राज्य के प्रति किया जानेवाला विद्रोह जो भीषण अपराध माना गया है। राजद्रोह। बगावत।

राजविब्रोही (हिन्दु)—यू० [स० राजविब्रोह+इति] राजा या राज्य के प्रति विद्रोह करनेवाला व्यक्तित्व। बारी।

राज-विनोद—यू० [स० ष० त०] सर्गीत में एक प्रकार का ताल।

राजवी—यू० [स० राजवीणी] राजवधी। उदा०—नम नम नीलरियारह राग विना सहजीवी—यू० श्रीराज।

राजवीणी (जिन्)—वि० [स० राजन्-बीज, ष० त०+इति] राजवधी।

राज-वीची—स्त्री० [स० ष० त०] १. राजमार्ग। राजपथ। चौकी सड़क। २. प्राचीन भारत में, वह गयी या छोटी सड़क जो आकर राजमार्ग में मिली या।

राज-वृक्ष—यू० [स० ष० त०, परनिपात] १. आरवधय या अमलतास का पेड़। २. शिरोती या पताल का पेड़। ३. भद्रवृक्ष नामक वृक्ष। ४. श्योनाक। सोतापात्र।

राजवष—यू० [स० ष० त०] पटसन।

राजवषर—यू० [स० मध्य० सं०] हिरण्य (मछली)।

राज-शाशु—यू० [स० ष० त०, परनिपात वा मध्य० सं०] वास्तुक शाक। वधुप्रा।

राज-शालि—यू० [स० मध्य० सं०] एक प्रकार का जड़हन धान जिसे राजभोग्य या राजभोगी भी कहते हैं। इनका चाबक बहुत महीन और सुगन्धित होता है।

राज-शिबी—स्त्री० [स० ष० त०, परनिपात] एक प्रकार की सेम की चौकी और गूदेदार होती है।

राज-शुक—यू० [स० ष० त०, परनिपात] एक प्रकार का लाल रंग का तिला। दूरी।

राज-श्री—स्त्री० [स० ष० त०] राजा का ऐश्वर्य या वैभव। राज-लक्ष्मी।

राज-ससब—यू० [स० ष० त०] १. राजसभा। २. वह दरवार जिसमें राजा स्वयं बैठकर अभियोगों का न्याय करता हो।

राजसंस्करण—यू० [स०] किसी पुस्तक के साधारण संस्करण से निम्न वह संस्करण जो बहुत बड़िया कागज पर छपा हो और जिस पर बड़िया जित्त बंधी हो। (बीरलस एडिशन)

राजस—वि० [स० राज्+अण्] [स्त्री० राजसी] राजभोग से उत्पन्न अथवा युक्त। राजभोगी। जैसे—राजस धान, राजस बुद्धि आदि।

राज-सत्ता—स्त्री० [स० ष० त०] राजधर्मिता। राजा या राज्य के ह्राह्य में होनेवाली सत्ता या शक्ति।

राज-सभा—स्त्री० [सं० ष० त०] १. राजा की सभा। दरबार। २. बहुत से राजाओं की सभा या मजलिस।
 राज-समाज—पुं० [सं० ष० त०] १. राजा का दरबार। राज-दरबार। २. राजाओं की सभा, षण्यं या समूह।
 राज-सर्व—पुं० [सं० ष० त०, परनिपात] एक प्रकार का बड़ा तीप।
 राज्ञ-मोक्षी।
 राज-सर्वपु—पुं० [सं० ष० त०, परनिपात] राई।
 राज-सायुष्य—पुं० [सं० ष० त०] राजत्व।
 राज-सारक—पुं० [सं० ष० त०] मयूर। मौर।
 राज-सिंहासन—पुं० [सं० ष० त०] वह सिंहासन जिस पर राजा दरबार में बैठता है। राजघड़ी।
 राजसिक—वि० [सं० राज्+सिक्+इक] रजोगुण से उत्पन्न। राजस।
 राजसिरी—स्त्री०—राजकी।
 राजसी—वि० [हिं० राजा] जो राजाओं के महत्त्व, वैभव आदि के लिए उपयुक्त हो। जिसका उपयोग राजा ही करते या कर सकते हो, अथवा जो राजाओं की ही घोषणा देता हो। जैसे—राजसी डाकघर, राजसी महल।
 वि०[सं०] जिसमें रजोगुण की प्रधानता हो। रजोगुण युक्त।
 राजसूय—पुं० [सं० राजन्+सू(प्रसव)+स्यप्] एक प्रकार का यज्ञ जो बड़े बड़े राजा सम्राट्-पद के अधिकारी बनने के लिए करते थे। यह अनेक यज्ञों की समष्टि के रूप में होता और बहुत दिनों तक चलता था। इस यज्ञ के उपरान्त राजा को दिग्विजय के लिए निकलना पड़ता था और दिग्विजय कर चुकने पर वह सम्राट् पद का अधिकारी होता था।
 राजसूयिक—वि०[सं० राजसूय+इक] राजसूय यज्ञ के रूप में होनेवाला अथवा उससे संबंध रखनेवाला।
 राजसूय (सिन्धु)—पुं०[सं० राजसूय+सिन्धु] राजसूय यज्ञ करनेवाला पुरोहित।
 राज-सर्व्व—पुं०[सं० ष० त०] षोड़ा।
 राज-स्यार—पुं०[सं० ष० त०] गणतन्त्र शासन में, पंचिभोत्तर का एक राज्य जिसकी राजधानी जयपुर में है और जिसमें पुराना राजपूताना अन्तर्भूक्त है।
 राजस्य—पुं०[सं० मध्य० सं०] १. राजा या राज्य की आय। २. वह धन जो राजा या राज्य की अधिकारिक रूप से मिलता हो। ३. वह शासन जिसमें राज्य की आय के साधनों और उनकी व्यवस्था आदि का विवेचन होता है।
 राज-स्यर्ण—पुं०[सं० ष० त०, परनिपात] राजघरूरक। राजघरूरक।
 राज-स्यली (सिन्धु)—पुं०[सं० ष० त०] सिन्धु।
 राज-सूत—पुं०[सं० ष० त०, परनिपात] [स्त्री० राजहूची] १ एक प्रकार का हंस। २ संगीत से एक प्रकार का सकराग जो मालव, श्रीराम और भगोहराग के सेल से बनता है।
 राज-स्य्—पुं०[सं० ष० त०] राजप्रसाद। राजमहल।
 राजा (अण्)—पुं०[सं०/राज्(वीर्य)+कनिन्] [स्त्री० राजी, रानी] १. वह जो किसी राज्य या भू-खंड का पूरा मालिक ही और उसमें बसने-वाले लोगों पर सब प्रकार के शासन करता हो, उन्हें अपने नियंत्रण में रखता हो और दूसरे राजाओं के आक्रमणों आदि से रक्षित रखता हो।

मुपति। भूप। २. अधिपति। मालिक। स्वामी। ३. बहुत बड़ा बनवान या संपन्न व्यस्त। ४. परमशिव के लिए श्रुगाणिक संघोषण। (बाजाक)
 राजाभि—स्त्री०[सं० राजन्+अभि, ष० त०] राजा का कोप।
 राजाभा—स्त्री०[सं० राजन्+आभा, ष० त०] राजा या राज्य की भाँसा।
 राजासल—पुं०[सं० राजन्+अ/सल्(विस्तार)+अण्] चिरीजी का पेड़। पदा।
 राजावन—पुं०[सं० राजन्+वन् ॷ० त०] १. शीरिका। चिरीली। २. चिरीजी। पपार। ३. देवपु।
 राजावली—स्त्री०[सं० राजावन+अलीप्] चिरीली।
 राजाभि—पुं०[सं० राजन्+अभि, ष० त०, परनिपात] १. एक प्राचीन पर्वत। २. एक प्रकार का ज्वररोग। बबादा।
 राजाधिकारी (रिन्धु)—पुं० [सं० राजन्+अधिकारिन्, ष० त०] न्यायाधीश। विचारपालि।
 राजाधिवाक—पुं०[सं० राजन्+अधिवाक, ष० त०] राजाओं का भी राजा। सम्राट्।
 राजाधिधान—पुं०[सं० राजन्+अधिधान, ष० त०] १. राजधानी। २. वह नगर जहाँ राजा, शासक या शासकधर्म रहता हो।
 राजाध—पुं०[सं० राजन्+अध, ष० त०] १. राजा का अग्र। २. आग्र प्रदेश में होनेवाला एक प्रकार का शालिधान।
 राजाभिधोग—पुं०[सं० राजन्+अभिधोग, ष० त०] राजा का बलपूर्वक या जबरदस्ती प्रजा से कोई काम कराना।
 राजाग्र—पुं० [सं० राजन्+आग्र, ष० त०, परनिपात] एक प्रकार का बड़िया और बड़ा आम (फल)।
 राजासल—पुं०[सं० राजन्+असल, ष० त०] अन्धलेख। अमरलेख।
 राजार्क—पुं०[सं० राजन्+अर्क, ष० त०, परनिपात] सफेद फूलोंवाला आक या मधवा।
 राजार्ह—पुं० [सं० राजन्+अर्ह, (पूजा)+अण्] १. अग्र। अग्र। २. कपूर। ३. जानू का पेड़।
 वि० राजार्हों के योग्य।
 राजार्हण—पुं०[सं० राजन्+अर्हण, ष० त०] १. राजा का दिया हुआ उपहार। २. राजा का दिया हुआ दान।
 राजाधर्त—पुं०[सं० राजन्+आ/वृत्(भरतना)+णिच्+अण्] लाजबर्ह।
 राजासन—पुं०[सं० राजन्+आसन ष० त०] राजसिंहासन।
 राजासनी—स्त्री०[सं० राजन्+आसनी, ष० त०] यज्ञ में सीमा का रस रखने की धोकी या पीठा।
 राजाधि—पुं०[सं० राजन्+अधि, ष० त०, परनिपात] शोभुहा सौप।
 राजि—स्त्री० [सं०/राज् (शोभा)+इत्] १. पंक्ति। अक्की। कतार। २. रेखा। लकीर। ३. राई।
 पुं० ऐल के पौध और आयु के एक पुत्र का नाम।
 राजिक—वि० [अ०] रिजक अर्थात् रोजी देनेवाला। पालनकर्ता। परदाधार।
 पुं० ईश्वर। परमात्मा।
 राजिका—स्त्री०[सं०/राज्+अण्—अक,+टाप्, इत्] १. केपार। क्यारी। २. राई। ३. आवली। पंक्ति। ४. रेखा। कफीर।

५. लाल सरसो। ६ मकुवा नमक कदम। ७. कठमूल। कठुमार।
 ८. एक प्रकार का पुराना परिमाण या तौल। ९ एक बुद्ध राजा जिसने
 शरीर पर लसो के दानो जैसी फुसियाँ निकल आती हैं।
राजिका-चित्र—युं० [सं० ५० तं०] एक प्रकार का सौंप जिसकी लम्बा पर
 लसो की तरह छोटी छोटी बुलबुलियाँ होती हैं।
राजित—वि० [सं०√/राज्+ङ्] १. जो सोना दे रहा हो। फजता हुआ।
 सोमित। २ विराजमान।
राजिकला—स्त्री० [सं० ५० तं०, +टप्] बीजा ककड़ी।
राजिभान्—युं० [सं० राजि+भन्] एक तरह का सौंप।
राजिल—युं० [सं० राजि+लप्] एक प्रकार का सौंप जिसके शरीर
 पर सीधी रेखाएँ होती हैं।
राजिच—युं०=राजीच (कमल)।
राजी—स्त्री० [सं० राजि+ङीच्] १. पंक्ति। श्रेणी। कला।
 २ राई। ३ लाल सरसो।
 वि० [सं० राजी] १ जो कोई कड़ी हुई बात मानने को तैयार हो।
 अनुकूल। सहमत। २ प्रसन्न और सन्तुष्ट।
 क्रि० प्र०—रखना।
 ३ नीरोग। बचा। तन्मुखतः। ४. सुखी।
 पद—राजी-शुभी—सही-सकायत। कुशल और आनन्दपूर्वक।
 †स्त्री०—रजागरी।
राजीनामा—युं० [फा० राजीनामः] १. वह सुलहनामा जो बादी और
 प्रदायी न्यायालय में मुकदमा उठा केने के उद्देश से उपस्थित करते
 हैं। २ स्वीकृत-पत्र।
 पू० [फा० रजातामः] त्याग-पत्र। इस्तीफा। (महाराष्ट्र)
राजी-कल—युं० [सं० मन्थ० सं०] पटोला परबल।
राजीच—युं० [सं० राजी+च्] हाथी। १. एक प्रकार का सरस।
 ३ नीला कमल। ४ कमल।
 पद—राजीच-श्रीचम।
 ५ एक प्रकार का मृग जिसकी बीठ पर बारिच्य होती हैं। ६ रैया
 नामकी मछली।
 वि० १ जिसे राजपुत्रि मिलती हो। २. शारीदार।
राजीगण—युं० [सं० उपनि० सं०] एक प्रकार का माषिक छव जिसके
 प्रत्येक चरण में अठारह भागएँ होती हैं तथा जिसमें नी नी भाजाओ-
 पर यति होती हैं। झोली।
राजीबनी—स्त्री० [सं० राजीच+बुनि +ङीप्] कमलिन।
राजिन्—युं० [पु० राजन्-इन्द्र, ५० तं०] १. राजाओं का राजा। शायहाह।
 २ राजादि या राजगिरि नामक पर्वत।
राजिन्मसा—युं० [सं० ५० तं०] मगलन्य भारत के प्रथम राष्ट्रपति।
राजिन्वर—युं० [सं० राजन्-ईश्वर, ५० तं०] [स्त्री० राजिन्वरी] राजाओं
 का राजा। राजेंद्र।
राजिन्वरी—स्त्री० [सं० राजन्-ईश्वरी, ५० तं०] संगीत के काठी ठांडी एक
 एक रागिनी।
 स्त्री० हिं० राजेश्वर का स्त्री० रूप।
राजिष्—युं० [सं० राजन्-इष्, ५० तं०] १. राजाघ (बाग)। २ लाल
 प्याज।

- वि० जो राजाओं की इष्ट हो, अर्थात् बहुत अच्छा या बढ़िया।
राजोष्ठा—स्त्री० [सं० राजेष्ठ+टाप्] १ केला। २. पिंड सन्तुर।
राजो-निर्वाण—युं० [फा० राज् व निराज] किसी को अनुरक्त या प्रसन्न
 करने के लिए चुल-मिलकर की जानेवाकी बातें।
राजोपकरण—युं० [सं० राजन्-उपकरण, ५० तं०] राजाओं के लक्षण
 या उनके साथ रहनेवाला सामान। राजकीय वैभव की सूचक सामग्री।
 राजचिह्न। जैसे—संढा, निशान, नीबल आदि।
राजोपवीथी (विष्णु)—युं० [सं० राजन्-उप +वीथ् (जीना) +विथि] १. वह जिसे राज्य से जीविका मिलती हो। २. राजकर्मचारी।
 ३. राजा का सेवक।
राजोपस्थान—युं० [सं० राजन्-उपस्थान, ५० तं०] राजदरबार।
राजी—स्त्री० [सं० राजन्+ङीच्] १ राजा की पटरानी। राजमहिनी।
 २ रानी। ३. पुराणानुसार सूर्य की पत्नी का एक नाम। ४ करीत।
 ५. नील का पीया।
राज्य—युं० [सं० राजन्+यच्] १ राजा का काम। शासन। २ वह
 क्षेत्र जिसपर किसी राजा का शासन हो। जैसे—नेपाल या भूटान
 राज्य। ३ आज-कल निश्चित सीमाओंवाला वह भूखंड जिसकी प्रभु-
 त्वा उसके निवासियों से ही निहित हो। ४ किसी सभ-राज्य की कोई
 इकाई। (भारत) (स्टेट अलिम तौनों अर्थों में)
राज्य-कर्ता (सुँ)—युं० [सं० ५० तं०] १ राजा। २ राज्य का सर्वोच्च
 शासक। ३ राज्य कर्मचारी।
राज्यवन्ता—स्त्री० [सं० राजि अन्ता, त्० तं०] रायता।
राज्य-श्रेय—युं० [सं० ५० तं०] १ वह सारा भू-खण्ड जिसमें कोई व्यव-
 स्थित राज्य का शासन हो। २ किसी राज्य के अन्तर्गत कोई क्षेत्र।
 (टेरिटरी)
राज्य-श्रुत—युं० कृ० [सं० ५० तं०] [भाव० राज्य-श्रुति] राज-सिंहासन
 से उतारा या हटाया हुआ।
राज्य-श्रुति—स्त्री० [सं० ५० तं०] राजा को राजसिंहासन से उतारने
 या हटाने की किया या भाव।
राज्य-सच—युं० [सं० ५० तं०] १ राज्य की शासन-प्रणाली। २
 शासन की वह प्रणाली जिसमें किसी राज्य का प्रधान शासक राजा होता
 है। ३. दे० "राजतन्"।
राज्य-सन्ध—युं० [सं० ५० तं०] वे मगल वस्तुएँ जिनका उपयोग नये
 राजा को राजसिंहासन पर बैठाने समय होता है।
राज्य-सुरा—स्त्री० [सं० ५० तं०] १. राज्य-शासन। २ शासन का उत्तर-
 दायित्व।
राज्य-निधि—स्त्री० [मं० ५० तं०] वह निधि जो राज्य अपने विधिष्ठ
 कार्यों के लिए सुरक्षित रखता है। (स्टेट फण्ड)
राज्य-परिष्कृ—स्त्री० [सं० ५० तं०] गणतन्त्र भारत की दो सर्वोच्च
 विधि-निर्मात्री संस्थाओं में से एक जिसके सदस्यों का निर्वाचन अन्त्यक्ष
 रीति से होता है। दूसरी संस्था 'लोकसभा' है जिसके सदस्यों का
 निर्वाचन प्रत्यक्ष रीति से होता है।
राज्यपाल—युं० [मं० राज्य/पाल (रक्षा) +गिच्+जप्] भारत-संघ
 के अन्तर्गत किसी राज्य का प्रधान शासक जिसका मनोनयन राष्ट्रपति
 करते हैं। (गवर्नर)

राज्यवाद—वि० [४० त०] राज्य वेनेवाला। जिससे राज्य निकला हो।
 राज्य-अंग—पुं० [४० त०] वह अवस्था जिसमें किसी राज्य की प्रभुता का अन्त हो जाती है।
 राज्य-सम्पत्ती—स्त्री० [४० त०] १. राज्य का वैभव और सम्पत्ति। राज्यशी। २. विजयसम्पत्ती।
 राज्यपाल—स्त्री० [सं०] भारतीय शासन में वह विधि-निर्माण तथा जिसमें राज्यों के चुने हुए प्रतिनिधि होते हैं। 'लोक-सभा' से निम्न।
 राज्यपाल—पुं० [सं०] राज्य-अंग, ४० त०] राज्य के साधक अंग जिन्हें प्रकृति भी कहते हैं। जैसे—आयताम, कोष, दुर्ग, बल आदि।
 राज्यनिधि—पुं० क० [सं०] राज्य-अभिषिक्त, स० त०] जिसका राज्यनिधिके हुआ हो।
 राज्यनिधिके—पुं० [सं०] राज्य-अभिधिके, स० त०] १. प्राचीन भारत में राजसिंहासन पर बैठने के समय या राजन्य यज्ञ में होनेवाले राजा का अभिषेक जो वेद के मंत्रों द्वारा पवित्र तीर्थों के जल और लोषधियों से कराया जाता था। २. किसी नये राजा का राजसिंहासन पर बैठना या बैठना आना। राजगद्दी पर बैठने के कृत्य। राज्यारोहण। ३. उक्त अवसर पर होनेवाला उत्सव या समारोह।
 राज्योपकरण—पुं० [सं०] राज्य-उपकरण, ४० त०] राज्योपकरण। (रे०) रक्ष (ञ्) —पुं० [सं०] √राज् (धीप्ति) +निबच् १. राजा। २. प्रधान वा अंश व्यक्तित्व।
 वि० जो किसी काम या बात में जीरों से बहुत बढ़ा-बढ़ा हो। (यी० के अन्त में) जैसे—भूर्त्तराट्।
 राहुज्—वि० पुं० =राहुज्।
 राहो—पुं० =राहुज्।
 राहुवर्य—पुं० =राहो।
 राहो—पुं० [सं०] राहुकृत १. राजस्वना का एक प्रसिद्ध राजवंश। जैसे—अमर सिंह राहो। २. उक्त वंश का क्षत्रिय।
 राह—स्त्री० [सं०] राह्रि १. युद्ध। लड़ाई। २. रे० 'राह्रि'। वि० १. तुच्छ। नीच। २. निकम्मा। ३. क्षयर। स्त्री० =राह्रि।
 राहा—पुं० [सं०] १. सरतो। २. एक तरह की घास। राहो।
 राह—स्त्री० [सं०] राह्रि =लबाह्रि १. लबाई-सगका। २. लहरार। हुज्जत। ३. रे० 'राह्रि'। पुं० =राह्रि।
 राहा—स्त्री० [सं०] १. कान्ति। वीप्ति। २. छवि। शोभा। पुं० [सं०] राह्रि बंग देश के उत्तर भाग का पुराना नाम। स्त्री० [?] एक प्रकार की फास।
 राहो—स्त्री० [सं०] एक प्रकार की मोटी घास। पुं० [सं०] राहा (देश०) एक प्रकार का आम।
 राहा—पुं० [सं०] राह्रि [स्त्री०] राणी १. राजा। (नेपाल और राजस्थान) २. राजा के परिचारक का कोई व्यक्तित्व।
 राहावस्ति—पुं० [सं०] राहा + सं० पति। सूर्य जिसे चित्तरी के रागा अपना मूल-गुण मानते हैं।
 राहंस—पुं० [सं०] मीष। मिष्ट।
 राह—स्त्री० [सं०] राह्रि १. समय का वह भाग जिसमें सूर्य का प्रकाश

हम तक नहीं पहुँचता। सन्ध्या के प्रातःकाल तक का समय, जिसमें अर्धरात्रि के अन्तर्गत और तारे दिखाई देते हैं। 'दिन' का विपरीत। निशा। रजनी। २. काष्ठीक वर्ष में अंधकारपूर्व तथा निराशामयी स्थिति।
 रात की राहो—स्त्री० [सं०] एक प्रकार का पुष्प, जिसमें रात के समय गुच्छों में लगे हुए सुगन्धित फूल फूलते हैं। हुस्ने-हिन।
 राहो—स्त्री० =राह्रि (रात)।
 रात-पिन—अब्ज० [सं०] १. रात समय। २. सत्वा। हुस्नेवा।
 रातना—अ० [सं०] रात, प्रा० रात + ना (हिं० प्रत्ये) १. लाल रंग से रंगा आना। लाल हो जाना। २. रक्षित होना। रंग आना। ३. किसी पर आसक्त होना। ४. किसी काम वा बात में रत वा लीन होना। ५. प्रसन्न होना। स० १. रक्षित करना। रैनना। २. अनुत्सव करना। ३. प्रसन्न करना।
 रात-राहा—पुं० [सं०] उत्कृ नामक वस्ती।
 राहरी —स्त्री० =राह्रि।
 राहा—वि० [सं०] राह्रि; प्रा० राह्रि [स्त्री०] राहरी १. रक्तचर्म। लाल। २. रंगा हुआ। ३. अनुत्सव। ४. प्रसन्न तथा हर्षित।
 राहो—स्त्री० =राह्रि।
 राह्रिचर—पुं० [सं०] राह्रि + सं० चर। निशाचर। राह्रि।
 राह्रिच—पुं० [अ०] १. एक दिन की कुराक। २. किसी पशु का एक दिन की कुराक। ३. वेतन। (अ०)।
 राह्रिज्—वि० [सं०] रस्ताज्; या० रस्ताज्। सुखे रंग का। लाल। पुं० [अ०] राह्रि—एक ताल। वह बड़ा तराजू जो लक्षा भाङ्कर लटकाना जाता है और जिसपर लोहा, लकड़ी आदि भारी चीजें तौली जाती हैं।
 राह्रिज्—पुं० [सं०] राहा + ऐक (अ०)। ज्वार की फसल की हानि पहुँचानेवाला एक तरह का कीड़ा।
 राह्रिचर—वि० [सं०] राह्रि/चर (पति) + अच्, मृदामय। रात में घूमने-वाला। पुं० राह्रिच। निशाचर।
 राह्रिचिच—अ० [सं०] ह० अ०, नि० स्रिद्धि। राह्रि-चिच।
 राह्रि—स्त्री० [सं०] √रा (देशा) + निबच् १. निशा। रात। अच् =राह्रिचिच। २. हुलसी। २. दुराणानुसार कीच हीन की एक नदी।
 राह्रिच—पुं० [सं०] राह्रि + च्। एक प्रकार का विष्णु।
 राह्रिचर—पुं० [सं०] राह्रि/चर + ट् १. चरना। २. कपूर।
 राह्रिचर—पुं० [सं०] राह्रि/चर (पति) + ट् १. राह्रिच। निशाचर। वि० रात के समय चिक्चरे या घूमने-फिरनेवाला।
 राह्रिचारी (रिज्)—पुं० [सं०] राह्रि/चर + गिनि। =राह्रिचर।
 राह्रिच—पुं० [सं०] राह्रि/अच् (उत्पत्ति) + च् १. रात में उत्सव होनेवाला। पुं० राहा, नराच आदि।
 राह्रि-आगर—पुं० [सं०] राह्रि/आग् (आगना) + अच् १. रात में होने-वाला आगना। लजना। २. क्रुसा, जो रात को जगता है।
 राह्रि-नाशन—पुं० [सं०] ४० त०] सूई।
 राह्रि-गुण्य—पुं० [सं०] ४० त०] रात में चिक्चरेवाला पुष्प, हुँई।

राजि-वश—पुं० [सं० व० सं०] रावस।
 राजिमट—पुं० [सं० राजि/अट (गति) +अच्, मृ-आगम] रावस।
 राजि-निधि—पुं० [सं० व० सं०] बरदास।
 राजि-राज—पुं० [सं० व० सं०] अक्षकार। अंधेरा।
 राजि-वास (सत्त्व)—पुं० [सं० व० सं०] १ रात के समय पहनने के कपड़े।
 २. अक्षकार। अंधेरा।
 राजि-विराम—पुं० [सं० व० सं०] तड़का। प्रभात।
 राजिविध—पुं० [सं० राजि/विद (आम) पिञ्ज+अच्] मुरगा।
 राजिवाय (बन्धु)—पुं० [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार का साम।
 राजि-मूलत—पुं० [सं० मध्य० सं०] ऋग्वेद के एक सूक्त का नाम।
 राजि-हृत्स—पुं० [सं० व० सं०] क्रुमुद। कुई।
 राजि-हृत्स—पुं० [सं० व० सं०] राजाओं के अल्प-पुर का पहरेदार।
 राभी—स्त्री० [सं० राजि+अच्] १. रात। २. हलदी।
 राभयंभ—वि० [सं० राजि-अंभ, सं० सं०] जिसे रात को न दिखाई दे।
 पुं० १. रतौषी रोग। २. कौआ, बंदर आदि पशु पक्षी जिन्हें रात के समय दिखाई नहीं पड़ता।
 राब—पुं० [सं०] बिजली की कड़क।
 राब—पुं० कं० [सं० √ राष (सिद्धि)+अच्] १. पका हुआ। रोषा हुआ। २. ठीका या तैयार किया हुआ। सिद्ध। ३. पूरा किया हुआ।
 राबान्त—पुं० [सं० राब-अंत, व० सं०] सिद्धान्त। उमूल।
 राबि—स्त्री० [सं० √ राष् (सिद्धि)+पित्तन्] १. सिद्धि। २. सफलता या साफल्य।
 राब—पुं० [सं० राधा=विद्यावाक्+अच्+कीप्, =राधी+अच्] १. वैसाख मास। २. षण-सप्तति।
 स्त्री० [?] वीह। मवाह।
 राबन—पुं० [सं० √ राष् +स्युट्—अन्] १. साधने की क्रिया। साधन।
 २. प्राप्त या हस्तगत होना। मिलना। ३. तुष्ट करना। तोषण। ४. किसी प्रकार का उपकरण या औजार। ५. कोई ऐसी चीज या बात जिससे कोई काम पूरा हो। साधन।
 राबाना—सं० [सं० आराधना] १. आराधना या पूजा करना। २. पूरा या सिद्ध करना। ३. युक्ति से काम निकालना।
 राबा—स्त्री० [सं० √ राष्+अच्+पु] १. प्रीति। प्रेम। २. वृषभानु गोप की कथा जो पुराणानुसार श्रीकृष्ण की बाल्यावस्था की सबसे अधिक प्रिय सखी और प्रेयसी थी। ३. वृतराष्ट्र के सारथि अधिरथ की पत्नी जिसने कर्ण को वृषभन्तु पाला था। इसी से कर्ण का एक नाम 'राबेय' भी था। ४. एक प्रकार का वृक्ष जिसके अत्यंत बरप में रमाय, तमग, मगण, मगण और एक मुष्ट ब्रह्म मिलकर १३ अक्षर होते हैं। ५. विद्यावा नक्षत्र। ६. वैशाख की पूर्णिमा। ७. बिजली। विद्युत्। ८. अंबाला। ९. विष्णु-क्रांति ललाट।
 राबा-कास—पुं० [सं० व० सं०] श्रीकृष्ण।
 राबा-अंध—पुं० [सं० व० सं०] गोवर्धन के निकट का एक प्रख्यात सरोवर जो तीर्थ माना जाता है।
 राबा-सैध—पुं० [सं० मध्य० सं०] तब जिसमें भर्मा आदि के अतिरिक्त राधा की उदरति का भी दखलपूर्वक वर्णन है।
 राबा-बल्लभ—पुं० [सं० व० सं०] श्रीकृष्ण।

राधावल्लभी (भिन्नु)—पुं० [सं० राधावल्लभ+भिन्] १. वैष्णवों का एक प्रसिद्ध संघदाता। २. उक्त संघदाता का अनुयायी।
 राधाव्यभी—स्त्री० [सं० राधा+अप्यंभि, व० सं०] भार्या सुधी अथपत्नी।
 राधास्वाभी—पुं० [सं०] १ एक आधुनिक मत प्रवर्तक आचार्य जिनका आगरे में प्रसिद्ध केन्द्र है। २. उक्त आचार्य का चलावा हुआ संघदाता।
 राधिकाना—स्त्री० [सं० राधा+कान्, +टाप्, इत्थ] १. वृषभानु गोप की कथा, राधा। २. एक प्रकार का माणिक छत्र जिसके अत्यंत बरप में १३ मानार्द और ९ के विश्राम से २२ मानार्द होती हैं। काकनी इसी छत्र में होती है।
 राधेय—पुं० [सं० राधा+अच्—एय] (वृतराष्ट्र के सारथि अधिरथ की पत्नी राधा द्वारा पालित) कर्ण।
 राध्व—वि० [सं० √ राष् (सिद्धि)+अच्] आराधना करने के योग्य। आराध्य।
 राव—स्त्री० [का०] जया। जांच।
 रावसुरार्द—स्त्री० [हिं० रानी+सुरार्द] एक तरह की कड़की सरोई।
 रावा—पुं० =राणा।
 वि० [का०] सुन्दर।
 रानी—[सं० राभी, प्रा० राणी] १. राजा की स्त्री। २. तिवयो के नाम के साथ प्रयुक्त होनेवाला आदरसूचक पद। जैसे—देविका रानी, राधिका रानी आदि। ३. प्रेयसी या पत्नी के लिए प्रेमपूर्ण संबोधन। ४. तारा का एक पत्रा जिसमें रानी का चित्र होता है। वेगम।
 वि० [का० राणा] मिय तथा सुन्दर। जैसे—रानी बेटी।
 स्त्री० [सं०] चलाने का काम। (गौ के अन्त में) जैसे—जहाज-रानी।
 रानी-काजर—पुं० [हिं० रानी+काजल] एक प्रकार का धात।
 रानी-मक्खी—स्त्री० [हिं०] मधुमक्खियों के छत्रों की वह मक्खी जिसका काम केवल ब्रह्म देने होता है। जवनी मक्खी। (मथीन की)
 राषध—पुं० [?] बजर भूमि।
 राषी—स्त्री० [दिस०] एक छोटी नदी जो नैपाल के पहाड़ों से निकलकर गोरखपुर के निकट सरयू नदी में गिरती है।
 राष-रंगाल—पुं० [सं० रंग/अच् (वृषभ)+अच्, राष व० सं०, राष-रंगाल, कर्म० सं०] एक प्रकार का नृत्य।
 राषी—स्त्री० =राषी। (मोचियों का उपकरण)
 राब—स्त्री० [सं० राषक] १. अक्ष पर खूब औटाकर खूब गाड़ा किया हुआ गर्भ का रस जो एड से पतला और धीरे धीरे से गाड़ा होता है। इसी को हाक करके खाई बनाई जाती है। २. वह भूमि जो उस पर का घास-फूस जलकर जोतने-जोतने के लिए तैयार की गई हो। (पूरक)
 स्त्री० [दिस०] नाथ में वह बड़ी लफ्फी जो उसकी पैदी में लबाई के ब्रह्म एक सिरे से दूसरे सिरे तक होती है।
 राबकी—स्त्री० =रबकी (बत्तीची)।
 राबना—सं० [?] संत में एक विशेष प्रकार से खाद डालना।
 राबिस—स्त्री० [सं० राबिस=कृष्ण] हंडों के मट्टों आदि में से निकले हुए कोयलों का चूरा और राज जो प्रायः इमारतों में हंडों की जोड़ाई करने में काम आती है।
 राष—पुं० [सं० √ राष् (कीड़ा)+अच्] १. महाराज वमारष के पुत्र

जिनका विवाह अनक की कन्या जायकी या सीता से हुआ था और जो विष्णु के दस अवतारों में से एक माने जाते हैं। रामायण की कथा इन्हीं के चरित्र पर आधारित है। रामायण।

राम-राम नाम सत्य है—एक वाक्य जिसका प्रयोग कुछ हिन्दू जातियों में मूलकों को प्रमाण के जाने के समय होता है और संसार की असुरता और विस्थापन तथा ईश्वर की सत्यता का बोध कराया जाता है।

मुझ—राम जाने—(क) मुझ नहीं माझूम। ईश्वर जाने। (ख) यदि मैं मृत होलाता होंऊँ तो ईश्वर उसका दासी रहे और मुझे उसके लिए बध दे। राम राम करके—बहुत कठिनता से। किसी प्रकार। जैसे-तैसे।

राम राम करना—(क) राम अर्थात् ईश्वर या भगवान का नाम अपना। (ख) किसी से मँट होने पर 'राम राम' कह करके अभिवादन करना। (किसी का) राम राम होना—मर जाना। एत ही जाना। (किसी से) राम राम होना—मँट होना। मुलाकत होना। रामशरण होना—(क) साधु होना। विरक्त होना। (ख) परलोकवासी होना। मरना।

२. कृष्ण के बड़े भाई बलराम या बलवर्धन। ३. परशुराम। ४. उत्तरीनों के आधार पर तीन की सख्या का वाक्य सम्बन्ध। ५. ईश्वर। परमात्मा। ६. वधण। ७. एक प्रकार का मायिक छंद जिसमें ९ और ८ के विराम से प्रत्येक चरण में १७ मात्राएँ होती हैं और अंत में अणु होता है। ८ रति-क्रोडा। ९ घोडा। १०. अथोक वृक्ष। ११. बघुआ नाम का साग। १२. तेजपत्ता।

रिं० [सं०] रम्य० अथिराम। मुन्दर। उवा०—देखत अनूप सेनापति राम रूप छवि।—सेनापति।

वि० [का०] १. ठीक। दुस्त। २. अनुकूल। ३. राजी। सहमत। जैसे—उसने बातों ही बातों में उसे राम कर लिया। (परिचय)

राम-बीर—स्त्री० [हिं० राम+बीर] पाकर (वृक्ष)। पकरिया। राम-कबरा—पुं० [द्वेष०] अगहन में पकरत तैयार होनेवाला एक प्रकार का धान।

राम-कपास—स्त्री० [हिं० राम+कपास] देवकपास। नरवा। राम-ककी—स्त्री० [सं० व० सं०] एक रागिनी जो मँरव राम की स्त्री मानी जाती है।

राम-कहानी—स्त्री० [हिं०] अपने जीवन तथा उसके किसी प्रसंग का दूसरों को सुनाया जानेवाला वृत्तान्त। २. किसी पर बीती हुई घटनाओं का लंबा या विस्तृत वर्णन।

राम-कौटा—पुं० [हिं० राम+कौटा] एक प्रकार का बवूल। राम-कपूर—पुं० [हिं०] मँघृत्य।

राम-कुसुमी—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी। राम-कुसुमाब्जि—स्त्री० [सं०] संगीत में, कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।

राम-केला—पुं० [हिं० राम+केला] १. एक प्रकार का बर्षिमा केल। २. एक प्रकार का बर्षिमा पूर्वी आम।

राम-किय—पुं० संगीत में, कर्नाटकी पद्धति का एक राग। राम-कीच—पुं० [सं० व० सं०] दक्षिण भारत का एक माषीन लीपू। (पुराण)

राम-संसार—पुं० [हिं० राम+सागर] १. एक प्रकार की पहाड़ी चिकिया

जिसका सिर, परदन और छाती चमकीले काले रंग की होती है। यह जाड़े में भी मैदानों में उतर आती है।

राम-संवा—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] उत्तर प्रदेश की एक नदी जो फर्रुखाबाद के पास संधा में मिलती है।

राम-गिरि—पुं० [सं० मध्य० सं०] १. मेघवत में दक्षिण एक पर्वत-शिखर जो आधुनिक नागपुर में स्थित माना जाता है। राम-टेक। २. संगीत में कर्नाटकी पद्धति का एक राग।

राम-गिरी—स्त्री०—रामकली (रागिनी)। पुं०—रामगिरि।

राम-गीठी—पुं० [सं०] एक प्रकार का मायिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में ३६ मात्राएँ होती हैं।

राम-गैह—पुं० [सं० उत्पत्ति सं०] अयोध्यापति राजा दशरथ के पुत्र जिन्होंने रावण का वध किया था।

विशेष—हिन्दुओं में ये विष्णु के अवतार माने जाते हैं। राम-कबरा—पुं० [सं० राम+कब] १. उरर की पीठी को तलकर तैयार किया जानेवाला बर्षा। २. बड़ी और मोटी देहाती रोटी। ३. बाटी। लिट्टी।

राम-चित्रिया—स्त्री० [द्वेष०] मछरंगा। राम-अननी—स्त्री० [सं० व० सं०] १. कौसल्या। २. रेणुका। ३. रोहिणी।

राम-अना—पुं० [हिं० राम+अना=उत्पन्न] [स्त्री० रामजनी] १. वह जिसका पिता ईश्वर हो, अर्थात् जिसके पिता का पता न हो। बर्षासंकर। दोगला। २. एक संकर जाति जिसकी कन्याएँ वेध्यावृत्ति करती हैं।

राम-अनी—स्त्री० [हिं० राम-अना] १. ऐसी स्त्री जिसके पिता का पता न हो। २. रामजना जाति की स्त्री। ३. रबी। वेध्या।

राम-अवनी—पुं०—रामजमानी। राम-अवानी—पुं० [सं० राम+अवनी (अजवायन)] एक प्रकार का बहुत बारीक चावल।

राम-आमूत—पुं० [हिं० राम+आमूत] मसोले आकार का एक प्रकार का आमूत (वृक्ष)।

राम-गुहारी—स्त्री० [हिं०] १. एक प्रकार का अविवादन जिसका अर्थ है—राम राम या जयराम। २. दे० 'राम-दहाटी'।

राम-जी—पुं० [सं० राम+हिं० जी] एक प्रकार की जई जिसके दाने जो के दानों के आकार के होते हैं।

राम-बील—स्त्री० [सं० राम+हिं० मूलना] पाजेब। पायल। राम-डेक—पुं० [हिं० राम+डेक=डेकरी (पहाड़ी)] नागपुर जिले में स्थित एक पर्वत शिखर। रामगिरि।

रामलोकी—स्त्री० [सं० व० सं०] एक संकर रागिनी जिसमें पंचार, कोमल और शेष सब स्वर शुद्ध लगते हैं। (संगीत)

रामठ—पुं० [सं०] √रू+अट्, वृद्धि] १. नृहस्यहिता के अनुसार एक देश जो पश्चिम में है। २. उक्त देश का निवासी। ३. हींग। ४. अखरोट का पेड़। ५. मँयकला। ६. चिचकार।

रामकी—स्त्री० [सं० रामठ+कीपू] हींग। रामकीवध—पुं० [सं० रामकीय+वधु—अक] रामगीपत्त। मनीहरता। वि० रामकीय।

राम-सन्धी—स्त्री० [सं० ष० तं०] १. रामचन्द्र की पत्नी, सीता। २. सेवती (सफेद गुलाब)।

राम-सरोरि—स्त्री० [हिं० राम+सरोरि या सुररि] मिथी का पोषा और उसकी कली।

रामसा—स्त्री० [सं० राम+सत्+टाप्] राम होने की अवस्था, गुण या भाव। रामत्व। राम-पन।

राम-सायनीय—स्त्री० [सं० मध्य० सं० बा ष० तं०] एक आधुनिक साम्प्रदायिक उपनिषद्।

राम-सारक—पुं० [सं० ष० तं०] 'रा रामाय नमः' नामक मंत्र जो रामोपासक जपते हैं।

रामसि—स्त्री० [हिं० रमना = धूमना फिरना] मिसा के लिए लाई जाने वाली केरी।

राम-सिल—पुं० [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार का तिल।

राम-तीर्थ—पुं० [सं० मध्य० सं०] रामगिरि पर्यंत-सिलर ओ एक तीर्थ है।

राम-तुलसी—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] = रामा-तुलसी (सफेद बठलौ-बाड़ी तुलसी)।

राम-तेजपात—पुं० [हिं० राम+तेजपात] तेजपात की जाति का एक प्रकार का वृक्ष और उसका पत्ता।

रामत्व—पुं० [सं० राम+त्व] राम होने की अवस्था, षयं या भाव। रामता। राम-पन।

राम-वत्स—पुं० [सं० ष० तं०] १. बहरों की बहु सेना जिसकी सहायता से रामचन्द्र ने लका पर चढ़ाई की थी। २. कोई बहुत बड़ा और प्रबल समूह या सेना। ३. दहशरे के अवसर पर रामचन्द्र की स्मृति में निकलनेवाला जुकूस।

राम-वाता—पुं० [सं० राम+हिं० वाता] १. मरने या जोराई की जाति का एक पोषा जिसमें सफेद रंग के बहुत छोटे छोटे दाने या बीज लगते हैं। २. उबल पोषो के दाने जो कई रूपों में खाने के काम आते हैं। ३. एक प्रकार का धान।

राम-वास—पुं० [सं० ष० तं०] १. हनुमान्। २. विवाही के मूढ़ समर्थ रामदास। ३. एक प्रकार का धान।

राम-वृत्—पुं० [सं० ष० तं०] हनुमान्।

राम-वृत्ती—स्त्री० [सं० ष० तं०] १. एकप्रकार की तुलसी। २. नागव्रीण। ३. नामपुष्पी।

रामवेच—पुं० [सं० कर्म० सं०] १. रामचन्द्र। २. राजपुताने में प्रचलित एक सम्प्रदाय।

राम-वाम—पुं० [सं० ष० तं०] संकेत लोक, जहाँ भगवान् नित्य राम रूप में विद्यमान माने जाते हैं।

राम-वज्जुआ—पुं० [हिं० राम+वज्जुआ] १. धीया। २. कपू।

राम-वन्धी—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] भगवान् रामचन्द्र का जन्म-दिवस वैश्व सुबल नवमी।

रामना—अ० [सं० रमण] १. रमण करना। २. धूमना-फिरना।

रामनामी—स्त्री० [हिं० राम+नाम+ई (प्रत्य०)] १. गले में पहनने का एक प्रकार का हार। २. वह वस्त्र जिसपर सब जगह रामनाम छपा हुआ हो।

रामनीमी—स्त्री० = रामनवमी।

राम-वास—पुं० [हिं० राम+वास] नील की जाति की एक प्रकार की झाड़ी जिसकी पत्तियों से रंग तैयार किया जाता है।

रामपुर—पुं० [सं० ष० तं०] १. स्वर्ण। २. बयोध्या नगरी। संकेत।

राम-फल—पुं० [हिं० राम+फल] शरीका। सीताफल।

राम-बंटाई—स्त्री० [हिं० राम+बंटाई] ऐसा बंटवारा या विभाजन जिसमें आधा एक व्यक्ति और आधा दूसरे व्यक्ति को मिले। आधे-आध की बंटाई।

राम-बबूल—पुं० [हिं० राम+बबूल] एक प्रकार का बबूल।

राम-बाँस—पुं० [हिं०] १. एक प्रकार का बाँस। २. केतकी की जाति का एक पोषा।

राम-बाग—पुं० [हिं० राम+सं० बाग] १. एक प्रकार का नरसल। रामसर। २. दे० 'रामबाग'।

राम-बिलास—पुं० [हिं० राम+सं० बिलास] एक प्रकार का धान और उसका चावल।

राम-भक्त—वि० [सं० ष० तं०] रामचन्द्र का उपासक। पुं० हनुमान्।

राम-भद्र—पुं० [सं० कर्म० सं०] रामचन्द्र।

राम-भोग—पुं० [हिं० राम+भोग] १. एक प्रकार का चावल। २. एक प्रकार का आम।

राम-मंत्र—पुं० [सं० ष० तं०] 'रा रामाय नमः' मंत्र जिसे रामचन्द्र मन्त्रते हैं।

राम-रक्षा—पुं० [सं० मध्य० सं०] राम जी का एक त्थोत्र जो सब प्रकार की आपत्तियों से रक्षा करनेवाला माना जाता है।

रामरज (रु) —स्त्री० [सं० मध्य० सं०] एक प्रकार की पीली मिट्टी जिसका वैष्णव लोग तिलक लगाते हैं, तथा जो बूने आदि में मिक्काकर रीबारे, छते आदि पोलने के काम भी आती हैं।

राम-रत्न—पुं० [हिं० राम+सं० रत्न] चमड़ा। (हिं०)

राम-रस—पुं० [हिं० राम+रस] १. ममक। २. पीने के लिए पीची और धोनी हुई भोग। (रक्षिण भारत)

राम-रहारी—स्त्री० [हिं० राम राम] १. अप्ससे में मिलने पर होनेवाला अभिवादन। वास्तविक व्यवहार की वह स्थिति जिसमें किसी के बातचीत होती हो। जैसे—जब दो उन लोगों में राम-रहारी भी नहीं रह गई है।

राम-राज्य—पुं० [सं० ष० तं०] १. भगवान् राम का राज्य या शासन। २. उस के आधार पर ऐसा राज्य या शासन जिसमें प्रजा सब प्रकार से निर्विचल, संपन्न तथा सुखी हो। ३. मध्य युग में मैसूर राज्य का एक नाम।

राम-राम—अव्य० [हिं० राम] १. मेट के समय अभिवादन के लिए प्रयुक्त पद। २. आभवादि, हुन आदि का सूचक अव्यय। ३. मेट। विशेषतः आकस्मिक तथा अत्यन्तकालिक मेट। जैसे—कई दिन हुए उन्को राम राम हुई थी।

रामस—वि० [सं० रमल+अप्] रमल सम्बन्धी। रमल का।

राम-सव्य—पुं० [सं० मध्य० सं०] सौर नमक।

राम-नीला—स्त्री० [सं० ष० तं०] १. राम की कीड़ा। २. रामायण में

बर्जित षट्मात्रों के आधार पर होनेवाला अभिनय या नाटक। ३. एक प्रकार का मायिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में २४ मात्राएँ होती हैं और जल में 'जलप' का होना आवश्यक होता है।

राम-वन्दना (निष्पृ)—पु० [सं० रामवन्दना] एक वैष्णव सम्प्रदाय।

रामवास—पु० [सं० व० सं०] वैष्णव में एक प्रकार का रस जो पारे, मषक, शीघाया आदि के योग से बनता है और जो अजीर्ण रोग का नाशक कहा जाता है।

वि०? जो अत्यन्त मृणकारी ही। २. तुल्य प्रभाव दिखानेवाला। ३. न चुकनेवाला।

रामवाच—स्त्री० [सं० व० सं०] एक प्रकार की वीणा।

राम-वार—पु० [सं० व० सं०] ऊँस के आकार-प्रकार का एक प्रकार का नरसक या सरफंडा जो ऊँस के बेटों में आप से आप ही उगता है।

राम-विला—स्त्री० [सं० व० सं०] गया जिले में स्थित एक पर्वत-शिखर जो एक तीर्थ है।

राम-व्री—पु० [सं० व० सं०] एक प्रकार का रंग जो हिंदोल रंग का पुष्प धाना जाता है।

राम-संवा—पु० [सं० रामसर] एक प्रकार की भास जिससे रस्सी या बाघ बनाते हैं। काँस।

राम-सभा—पु० [सं० व० सं०] सुषीव।

राम-सनेही—पु० [हिं० राम+सनेही] १. राजस्थान का एक वैष्णव सम्प्रदाय। २. उन्मत्त सम्प्रदाय का अनुयायी।

वि० राम से स्नेह या प्रीति रखनेवाला था।

रामसर (स)—पु० [सं० मध्य० सं०] पुराणानुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

पु० रामसर।

राम-सिरी—स्त्री० [सं० राम-व्री] १ एक प्रकार की विधिमा। २ एक प्रकार की रागिणी।

राम-सीता—पु० [हिं० राम+सीता] सीताफल।

राम-सुंदर—स्त्री० [हिं० राम+सुन्दर] एक प्रकार की नाय।

राम-सेतु—पु० [सं० मध्य० सं०] रामचंद्र तीर्थ के पास समुद्र में पड़ी हुई चट्टानों का समूह जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि यह वही पुल है जिसे राम ने लका पर चढ़ाई करते समय बँधवाया था।

रामा—स्त्री० [सं० रम् (कीडा)+गिच्+ण,+टाप्] १ सुन्दर स्त्री। २ गाने-नाचने में प्रवीण स्त्री। ३. सीता। ४. लक्ष्मी। ५. लक्ष्मी। ६. राधा। ७. सीताल देवी। ८. नदी। ९. कार्तिक कृष्ण एकादशी की संज्ञा। १०. इन्द्रबच्चा और उषेन्द्रबच्चा के योग से बना हुआ एक प्रकार का उपजाति बृत्त जिसके प्रथम दो चरण इन्द्रबच्चा के होते हैं। ११. आर्या छन्द का १७ वाँ मेष जिसमें ११ पृष्ठ और ३५ लघु वर्ण होते हैं। १२. आठ अक्षरों का एक प्रकार का बृत्त जिसके प्रत्येक चरण में सगण, यगण और दो लघु वर्ण होते हैं। १३. शीघ।

१४. ईश्वर। विगुरक। १५. यिगुआर। १६. सफेद मटकदंथा।

१७. अर्धको बृत्त। १८. तमाल। १९. गौरोचन। २०. सुवर्णबाला।

२१. भयमान लता। २२. वेक।

राम-सुलोक—स्त्री० [सं०] सफेद ढठलेंवाली एक प्रकार की तुलसी (पीठा)।

रामास्य—पु० [सं०] रामास्य नामक वैष्णव सम्प्रदाय के प्रवर्तक एक प्रसिद्ध आचार्य। (१३५६-१४६७ वि०)

रामानंदी—वि० [हिं० रामानंद+ई (प्रत्य०)] १. रामानन्द-संघी। २. रामानन्द के सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखनेवाला।

पु० रामानन्द द्वारा प्रवर्तित रामानन्द सम्प्रदाय का अनुयायी।

रामानुज—पु० [सं० राम-अनुज, व० सं०] १. राम का छोटा भाई। २. लक्ष्मण। ३. एक प्रसिद्ध वैष्णव आचार्य जिन्होंने श्री वैष्णव सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया था।

रामानुज—पु० [सं० राम-अनुज, व० सं०] १. राम का पीतन-नामं अवर्षित चरित्र। २. बहु अन्य जिलमें राम के चरित्र का वर्णन ही।

रामानुजी—वि० [सं०] रामानुज संघी। रामानुज का।

पु०? बहु जो रामानुज का अच्छा ज्ञाता या पंडित हो। २. बहु जो लोगों को रामानुज की कथा सुनाता हो।

रामायणी—पु० रामायण।

रामानुज—पु० [सं० राम-अनुज, व० सं०] अनुज।

रामास्य—पु० [सं० रामास्य] रामानन्द द्वारा प्रवर्तित एक वैष्णव सम्प्रदाय।

रामिच—वि० [अ०] रम्य अर्थात् इष्टात् करनेवाला।

रामिक—पु० [सं०] १. रमण। २. कामदेव। ३. स्त्री का पति।

स्वामी। ४. प्रेमपारा। ५. एक कवि।

रामी—स्त्री० [सं० रामा] काँस नामक धास।

रामेश्वर—पु० [सं० राम-ईश्वर, व० सं०] १. दक्षिण भारत में समुद्र के तट पर एक शिवाल्य जो मगवान रामचंद्र द्वारा स्थापित किया हुआ माना जाता है। २. पुरी या बस्ती जिसमें उन्नत विचरिण्य स्थापित है।

रामोचमिक्क—स्त्री० [सं० राम-उपनिषत्, मध्य० सं०] अर्धवैद्य के अंतर्गत एक उपनिषद् का नाम।

राम—पु० [सं० राजा; प्रा० राया] १. राजा। २. छोटा राजा। सर-वार या शक्तिपुत्र। ३. मध्ययुग में एक प्रकार की सम्मान-जनक उपाधि।

पद—रामचक्रुड, रामसहस्र।

४. बबीजनों या माटों की उपाधि। ५. गणवर्ष आदि के लोगों की उपाधि। ६. दे० 'राजवर्ष'।

स्त्री० [फा०] सम्पति। सलह।

राम-करौथा—पु० [हिं० राम+करौथा] एक प्रकार का बड़ा करौथा (सल और झाड़)।

रामणी—वि० [फा० राणा] १. रास्ते में पड़ा या फँका हुआ अर्थात् निष्फल या व्यर्थ। २. नष्ट। बरबाद।

रामच—वि० [फा० राइच] जो चल रहा हो, अर्थात् जिसका प्रचल या प्रसार। प्रवर्तित।

रामा—पु० [सं० राज्यवत्] दही या मटों में बुनिया, साग आदि डालकर तथा उसमें नमक, मिर्च, जीरा आदि मिलाकर बनाया जानेवाला व्यंजन।

रामनी—स्त्री० रामकुमारी। (हिं०)

राम-बहादुर—पु० [हिं० राम+फा० बहादुर] एक प्रकार की उपाधि जो सिद्धि-शासन में भारतीय बड़े आदमियों को मिलती थी।

राज-बेल—स्त्री० [हि० राया+बेल] एक प्रकार की लता जिसमें सुन्दर और सुगन्धित दोहरे फूल लगते हैं।

राज-भोग—पुं० [स० राज+भोग] एक प्रकार का पान और उसका चावल। राज-भोग।

राज-भूमि—स्त्री० [हि० राय+भूमि] लाल (पत्थी) की मादा। सविया।

राज-राज्या—पुं० [हि० राय+राज० आन (शब्द०)] राजाओं के राज। राजाधि राज। (भुग प्रशासन-काल की एक उपाधि)

राज-राशि*—स्त्री० [स० राय+राशि] राजा का कोष। वाही खजाना।

राजल—वि० [अ०] १ राज्या। २ राजकीय। ३ राजकीय डाक-बाटवाला।

पु० छापे की कल्लो तथा कामज की एक नाप जो २० इंच चौड़ी और २६ इंच लंबी होती है।

राजसा—पुं० [स० रहस्य] बहु काम्य जिसमें किसी राजा का जीवन-चरित्र बर्णित हो। रासा। रासी। जैसे—पृथ्वीराज राजसा।

राजसाहस—पुं० [राय+सा० साहस] एक प्रकार की पदवी जो ब्रिटिश-शासन में भारतीय बड़े आदमियों की मिलती और 'राजबहादुर' की उपाधि से निम्नकोटि की होती थी।

राजहंस—पुं०=राजहंस।

राजहर—पुं० [स० राज्यम्, प्रा० राजहर] राजा का महल। राजगृह। उदा०—हरम करी अनि राजहर।—प्रिथ्वीराज।

रार—स्त्री० [स० रारि, प्रा० राडि=लडाई] १. ऐसा क्षयज्ञ जिसमें बहुत कहा-मुनी हो और जो कुछ देर तक चलता रहे। तकरार। हुज्जत। कि० प्रा०—करना।—डानना।—मचाना।

२. ऐसी ध्वनि जिसमें रह-रहकर (रकार) र का सा शब्द होता है। जैसे—वेडो की मर्मर में होनेवाली रार या वेडो के गिरने में अरर या रार का स्वर निकले। उदा०—कलरब करते किलकार रार। ये मौन मूक तुण तब दल पर।—पन्त।

[स्त्री०]=राल।

राल—स्त्री० [स०] १ एक प्रकार का बहुत बड़ा सदाहारण वेड जो दक्षिण भारत के जंगलो में होता है। २ उल्लसुध का सुगन्धित निर्यात जो प्राय सुगन्ध के लिए जलाया जाता और औषधों, मसालो आदि के काम आता है। चूना।

विशेष—धूप नामक सुगन्धित द्रव्य में प्रायः इसी की प्रधानता रहती है।

स्त्री० [स० लाला] १ मूँह में निकलनेवाला पतला रस। लार। (देखें) २. चौपायों का एक रोग जिसमें उन्हे लारि आती है और उनके मूँह से पतला लसदार पानी गिरता है।

पु० [१] एक प्रकार का देशी कंबल।

राली—स्त्री० [देश०] एक प्रकार का बाजरा जिसके दाने बहुत छोटे होते हैं।

राज—पुं० [स० राजा; प्रा० राय] १ राजा। २. राजा का दरबारी या सचदार। ३. बदीजना भा। ४. अमीर। रस। ५. कच्छ के राजाओं की पदवी। ६. चीमा कोलाहल। हलका घोर। (नीएक)

पुं०=ल (शब्द)।

पुं० [देश०] छोटे आकार का एक प्रकार का वेड़ जिसकी लकड़ी कुछ

ललाई लिये बिकनी और मजबूत होती है। इसकी लकड़ी की प्रायः छड़ियाँ बनाई जाती हैं।

राज-बाब—पुं० [हि० राज=राजा+बाब] १ नृत्य, गीत आदि का उत्सव। राग-रग। २. दुलार। लाड़। ३. अनुत्पाम। प्रेम। ४. प्रेमपूर्ण व्यवहार।

राजद—पुं० [स० राजावर्त] लाजबंद नामक रंग। उदा०—कौन पहाड़ होत है राजद की राखे गई पारि।—जायसी।

पुं०=रावल (राजबहाल)।

राखी—स्त्री० [हि० राख] १ कपड़े का बना हुआ एक प्रकार का छोटा बेल। छोलदारी। २ कपड़े का बना हुआ कोई छोटा धर। ३. बालू-दरी।

राख-वि० [स० √ध (शब्द)+गिच्+ल्यु=अन] जो दूसरों को रलता हो। रलानेवाला।

पुं० लका का एक राजा जिसका बच श्री राम ने किया था।

राखनगा—स्त्री० [स० मय्य+स०] सिंहुल दीप की एक नदी। (पुराण)

राखगारि—पुं० [स० राखन-व्रदि, प० तं०] राखन की मारनेवाले, राम-चन्द्र।

राखि—पुं० [स० राखन+इन्] १. राखन का पुत्र। २. मेघनाद। राखत—पुं० [स० राजकुत्र, प्रा० राय+उत्त] १. छोटा राजा। २. राजबरा का कोई व्यक्ति। ३. शयिय। ४. राजपुत। ५. सरदार। सामन्त। ६. शूरवीर। योद्धा। ७. सेनापति।

राखर—वि० [स० रमणीय] रम्य। रमणीय उदा०—देखा सब राखन अब राऊ।—जायसी।

पुं०=राखण।

राखनगड—पुं० [हि० राखन+गड] लंका।

राखना—स० [स० राखण=रलाना] दूसरे की रीने में प्रवृत्त करना। रलाना।

पुं० राखण।

राखनहादुर—पुं० [हि० राय+फा० बहादुर] ब्रिटिश-शासन में दक्षिण भारत के बड़े आदमियों को मिलनेवाली एक उपाधि।

राखर*—पुं० [स० राजपुर] रविनास।

सर्व०, वि० [हि० राउ+र (विभ०)] [स्त्री० राखरी] आपका। भवदीय।

राख रखा—पुं० [देश०] हिमालय में होनेवाला एक तरह का वेड़। बुरुल।

राखर—सर्व०, वि०=राखर।

राखल—पुं० [स० राजपुर, हि० राउर] अन्तपुर।

पुं० [पा० राजुल] [स्त्री० राखली] १ राजा। २. राजपूताने के कुछ राजाओं की उपाधि। ३. कुछ विशिष्ट पर्वों, महत्वो तथा योगियों की उपाधि। ४. एक आदर्शपूर्ण सवोचन। ५. श्री बबरीनारायण के मुख्य पर्व की उपाधि।

राखली—सर्व०=राखर।

राख-साहस—पुं० [हि० राय+फा० साहस] ब्रिटिश-शासन में दक्षिण भारत के बड़े आदमियों को मिलनेवाली एक प्रकार की उपाधि।

राखी—स्त्री० [स० ऐरावती] पश्चिमी पंजाब (पाकिस्तान) की एक प्रसिद्ध नदी जो मुल्तान के पास चनाब नदी में जा मिलती है।

राज— $\mu\text{०}$ [अ० मि० सं० राशि] राशि। डेर।

राजन्— $\mu\text{०}$ [अ० रेशम] १. खाने-पीने की वे चीजें जो अभी पकाईं न गई हों, परन्तु उपयोग या व्यवहार के लिए एकत्र करके रखी या लोचो की ची गई हों। रस। २. आज-कल बहु व्यवसाय जिसके अनुसार उपयोग या व्यवहार की कुछ विशिष्ट वस्तुएँ लोचो की उनको आवश्यकता के अनुसार नियमित रूप से और नियत मात्रा में बाँटी या दी जाती हैं।

३. उन्मत्त का बहु अर्थ जो किसी विशिष्ट व्यक्ति को मिला या मिलता हो।
 राशि—स्त्री०[सं०/राष्ट्र(सम्ब)+इष्ट] १. किसी चीज के कणो, धाँवो, बिंदुओं आदि का पूज्य वा समूह। जैसे—जलराशि, रत्नराशि। २. गणित में कोई ऐसी सख्या जिसके संबंध में जोड़, गुणा, भाग आदि क्रियाएँ की जाती हैं। ३. श्रांति-भूत में पकनेवाले विशिष्ट तारा समूह जिनकी सख्या बारह है और जिनके नाम इस प्रकार हैं—मेघ, ध्रुव, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुंभ और मीन।
 शिष्य—श्रान्ति-भूत अर्थात् पृथ्वी के परिभ्रमण-भाग के दोनों ओर प्राय १० अक्ष की दूरी तक लगभग सवा बीस बहुत बड़े तारे हैं जो बहुत दूर होने के कारण हमें बहुत छोटे दिखाई देते हैं। हमें अपनी पृथ्वी तो चली ही हुई दिखाई नहीं देती, और ऐसा जान पड़ता है कि चन्द्रमा और सूर्य ही इस श्रांति-भूत पर चल रहे हैं। चन्द्रमा के परिभ्रमण के विचार से उन्मत्त सत्र तारे १० तारक-भूजो में विभक्त किए गए हैं, जिन्हें सत्रम कहते हैं। परन्तु सूर्य के परिभ्रमण के विचार से इन्हीं तारो के १२ विभाग किए गए हैं, जिन्हें राशि कहते हैं। प्रत्येक राशि में प्रायः बीस बीससे कुछ अधिक तारे पड़ते हैं, और उनके योग से कुछ विशिष्ट प्रकार की कल्पित आकृतियों वाली ये राशियाँ मानी गई हैं, और उन्हीं आकृतियों के विचार से उन राशियों का नामकरण हुआ है। जैसे—तुला राशि की आकृति तराजू की तरह, मकर राशि की आकृति मगर की तरह, वृश्चिक राशि की आकृति बिच्छू की तरह, सिंह राशि की आकृति शेर की तरह आदि आदि। जब सूर्य एक राशि को पार करके दूसरी राशि में प्रवेश करता है, तब उस राशि-काल की संज्ञाति कहते हैं। शिष्य दे० 'मशत्र'।

मुहा०—(किसी से किसी की) राशि बैठना या मिलना—(क) सामाजिक व्यवहार की दृष्टि से अनुकूलता होना। मेल बैठना। (ख) कल्पित व्योमतिश की दृष्टि से ऐसी स्थिति होना जिससे दोनों में वैवाहिक संबंध होने पर अच्छी तरह जीवन-यापन या निर्वाह हो सके।

५. वह स्थिति जिसमें कोई व्यक्ति किसी की वन-संपत्ति का उत्तराधिकारी होकर मालिक बनता है। रास।

शिष्य—इस अर्थ से संबंध रखनेवाले मुहा० के लिए दे० 'रास' के अर्थगत मुहा०।

राशि-भूज— $\mu\text{०}$ [सं० व० त०] आकाशय बारह राशियों का वह मंडल जो सूर्य के परिभ्रमण के विचार से श्रांतिभूत में पड़ता है। (शोधपरक)

राशि-भाग (भाग)— $\mu\text{०}$ [सं० मध्य० सं०] व्यक्ति के पुकारने के नाम से शिष्य बहु नाम जो उसके जन्म के समय होनेवाली राशि के विचार से रखा जाता है।

शिष्य—ऐसे नामों का आरम्भ विभिन्न राशियों के विचार से विभिन्न वर्षों से होता है।

राशिय— $\mu\text{०}$ [सं० राशि/या (रजग)+क] किसी राशि का स्वामी या अधिपति देवता। (कल्पित व्योमतिश)

राशि-भाग— $\mu\text{०}$ [सं० व० त०] राशि-भूज की किसी राशि का भाग वा अंश। मशत्र। (व्योमतिश)

राशि-भूज— $\mu\text{०}$ [सं० सं० त०] १. किसी ग्रह के किसी राशि में स्थित होने का भाव। २. उसमा समय जितना किसी ग्रह को एक राशि में स्थित रहना पड़ता है।

राशि—वि०[अ०] स्थित खानेवाला। भूतधार।

†स्त्री०—राशि।

राष्ट्र— $\mu\text{०}$ [सं० राष्ट्र] फारसी सगीत में १२ मुकामों में से एक।

राष्ट्र— $\mu\text{०}$ [सं०/राष्ट्र(दीप्ति)+इष्ट] १. राज्य। देश। २. किसी निश्चित और विशिष्ट क्षेत्र में रहनेवाले लोग जिनकी एक भाषा, एक से रीति-रिवाज तथा एक-ही विचार-धारा होती है। (नेशन) ३. किसी एक शासन में रहनेवाले सब लोगों का समूह। ४. सारे देश में एक साथ बढ़ा होनेवाला कोई उपवास या भाषा। ५. पुरातानुसार पुरुषा के वंशज काशी के पुत्र का नाम।

वि० जो सब लोगों के सामने या जानकारी में आ गया हो। सर्वविदित।

अंशे—उनके कानों तक पहुँचते ही यह बात राष्ट्र हो जायगी। (सब को साम्य हो जायगा।)

राष्ट्रक— $\mu\text{०}$ [सं० राष्ट्र+कम्] १. राज्य। २. देश।

वि० राष्ट्र सम्बन्धी। राष्ट्र का।

राष्ट्र-कर्मण— $\mu\text{०}$ [सं० व० त०] राजा या शासक का प्रजा पर अत्याचार करना। राष्ट्र या जनता की हृष्ट देना।

राष्ट्र-कवि— $\mu\text{०}$ [सं० व० त०] वह कवि जिसकी कविताएँ राष्ट्र की आकांक्षाओं, आदर्शों, आदि की प्रतीक मानी जाती हैं, और इसीलिये जो सारे राष्ट्र में बहुत ही आदर की तथा पूज्य दृष्टि से देखा जाता हो। जैसे—राष्ट्र-कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त।

राष्ट्र-कुल— $\mu\text{०}$ —राष्ट्र-मंडल।

राष्ट्र-भूट— $\mu\text{०}$ [सं०] १. एक क्षत्रिय राजवंश जो आज-कल राठौर नाम से प्रसिद्ध है। २. दे० 'राठौर'।

राष्ट्र-भूषण— $\mu\text{०}$ [सं० राष्ट्र/भूषण(रक्षा)+भण] १. राजा। २. राजाओं के प्रतिनिधि के रूप में काम करनेवाला कोई बहुत बड़ा शासक।

वि० राज्य की रक्षा करनेवाला।

राष्ट्र-संन— $\mu\text{०}$ [सं० व० त०] राष्ट्र की शासन-पद्धति।

राष्ट्रपति— $\mu\text{०}$ [सं० व० त०] किसी राष्ट्र का सर्वप्रथम शासनिक अधिकारी। २. प्रजातन्त्र शासन-पद्धति में मतदाताओं द्वारा निर्वाचित बहु व्यक्ति जिसके हाथ में कुछ नियत काल के लिए राष्ट्र की प्रमुखता स्थित रहित होती है। (प्रेजिडेंट, उन्मत्त दोनों अर्थों में)

राष्ट्रपाल— $\mu\text{०}$ [सं० राष्ट्र/पाल(रक्षा)+पण] १. राजा। २. मयूर के राजा कंस का एक भाई।

राष्ट्र-भाषा—स्त्री०[सं० व० त०] किसी राष्ट्र की वह भाषा जिसका प्रयोग उसके निवासी सामंजसिक पारस्परिक कामों में करते हैं।

राष्ट्र-भूत— $\mu\text{०}$ [सं० राष्ट्र/भू(पोषण)+भूत, तुष्ट-आगम, उप० सं०] १. राजा। २. शासक। ३. भरत का एक पुत्र। ४. प्रजा।

राष्ट्र-भूय— μ_0 [सं० षं० सं०] १. वह जो राज्य की रक्षा या सामन करना हो। २. प्रजा।

राष्ट्र-भेद— μ_0 [सं० षं० सं०] प्राचीन भारतीय राजनीति में ऐसा उपाय या कार्य जिसके द्वारा किसी क्षत्र राजा के राज्य में उपद्रव, मत-भेद या विद्रोह लड़ा किया जाता था।

राष्ट्र-बंधल— μ_0 [सं० षं० सं०] समान हित और समान भाव से स्वेच्छा-पूर्वक आबद्ध होनेवाले स्वतन्त्र राष्ट्रों का मण्डल या समूह। (कामनेत्यम्) जैसे—ब्रिटिश राष्ट्र-बंधल जिसमें आस्ट्रेलिया, पाकिस्तान, भारत आदि अनेक स्वतंत्र राष्ट्र सदस्य रूप से सम्मिलित हैं।

राष्ट्र-बाद— μ_0 [सं० षं० सं०] [वि० राष्ट्रबादी] यह मत या सिद्धांत कि राष्ट्र के सभी निवासियों में राष्ट्रीयता की भावना दृढ़तापूर्वक बनी रहनी चाहिए, राष्ट्रीय परम्पराओं के गौरव का ध्यान रखते हुए उनका पालन होना चाहिए। यह धारणा कि हमें मात्र अपने राष्ट्र की उन्नति, समृद्धता, विस्तार आदि का ध्यान रखना चाहिए। (नेवानलियम)

राष्ट्रबादी (विन्)—वि० [सं० राष्ट्रबाद+इति] राष्ट्रबाद-सम्बन्धी। राष्ट्रवाद का।

μ_0 वह जो राष्ट्रवाद के सिद्धांतों का अनुयायी, पालक तथा समर्थक हो।

राष्ट्रबासी (विन्)— μ_0 [सं० राष्ट्र+वस् (निवास करना)+पिनि] [सं० राष्ट्रवासिनी] १ राष्ट्र में होनेवाला। २ परदेशी। विदेशी।

राष्ट्र-बिन्दन— μ_0 [सं० षं० सं०] राज्य में होनेवाला विन्दन। विद्रोह। बलवा।

राष्ट्र-सध— μ_0 [सं० षं० सं०] १ सत्कार के प्रमुख राष्ट्रों की वह सस्था जो पहले युरोपीय महायुद्ध की समाप्ति पर वासिंटी की सन्धि के अनुसार १० जनवरी १९२० को सब के सामूहिक कल्याण तथा सुरक्षा के उद्देश्य से बनी थी। (लीग ऑफ नेशन्स) २. दे० संपुक्त राष्ट्र-संघ।

राष्ट्रसत्पालक— μ_0 [सं० राष्ट्र-जल-पालक षं० सं०] प्राचीन भारत में वह जो राष्ट्र की सीमाओं की देख-रेख तथा रक्षा करता था। सीमा-रक्षक अधिकारी।

राष्ट्रिक— μ_0 [सं० राष्ट्र+ठक्—इक] १. राजा। २. प्रजा। वि० राष्ट्र-सम्बन्धी। राष्ट्र का।

राष्ट्रिय— μ_0 [सं० राष्ट्र+य—इय] [भा० राष्ट्रियता] १ राष्ट्र का स्वामी, राजा। २ प्राचीन भारतीय नाटकों में, राजा के सहाई की सजा। वि० राष्ट्र सम्बन्धी। राष्ट्र का। राष्ट्रिय।

राष्ट्रो (विन्)— μ_0 [सं० राष्ट्र+इति] १. राज्य का अधिकारी, राजा। २. प्रधान शासक। स्त्री० रानी।

राष्ट्रीय—वि० [सं० राष्ट्रिय] [भा० राष्ट्रीयता] राष्ट्र-सम्बन्धी। राष्ट्र का। राष्ट्रिय।

विशेष—राष्ट्रीय रूप से ३ व्याकरण से असिद्ध होने पर भी लीक में बल गया है।

राष्ट्रीयता—स्त्री० [सं० राष्ट्रीय+सत्त्व+टाप्] १. राष्ट्रीय अर्थात् राष्ट्र के अंग या सदस्य होने की अवस्था, धर्म या भाव। २ ऐसी धारणा या भावना कि हमें अपनी मत-भेद, वैर-विरोध आदि भूलकर सारे राष्ट्र की समान उन्नति, रक्षा, समृद्धि, सुरक्षा आदि का ध्यान रखना चाहिए। (नेवानलियम)

रास—स्त्री० [सं० √ रास् (शब्द)+अव्] १ कोलहल। धोतुक। हीन-दूहा। २ जोर की ध्वनि या शब्द। ३. वाणी। ४. प्राचीन भारत में योगी की एक क्रीडा जिसमें वे घेरा बाँधकर राते और नाचते थे। ५ उक्त का वह विकसित रूप जो अब तक बच में प्रचलित है और जिसमें की कृष्ण की बाल-लीलाओं का अभिनय सम्मिलित हो गया है।

रास—रास-भारी। रास-मंडली ६ मध्ययुग में एक प्रकार के गेय पद जो पुरातन और राजस्थान में प्रचलित थे और जो बाद में 'राम' (देखें) के रूप में विकसित हुए। ७ अनन्वयम क्रीडा। बिलास। ८ एक प्रकार का चलता गाना। ९ नाट्य नामक नृत्य। १० नाचने-गानेवालों की मंडली या सम्राज। ११ अजोर। श्रुतला। १२ सगीत में तेरह मात्राओं का एक ताल। स्त्री० [सं० रासि+डेर] १ किसी चीज का डेर या समूह। जैसे—सल्लहान में पड़ी हुई गेहूँ, चने या जौ की रास। २ उत्तराधिकार के विचार से धन, संपत्ति या प्राप्त होनेवाला उलका स्वामित्व। ३ गंध लिया हुआ लकड़ा। दत्तक पुत्र।

मुहा०—(किसी का) किसी की रास बैठना—दत्तक बनकर या और किसी प्रकार उत्तराधिकारी होना। जैसे—अब तो आप उनकी रास बैठेंगे। (विशेषतः परिहास में)

४ एक प्रकार का छद्म जिनके प्रत्येक चरण में ८+८+६ के बिराम से २२ मात्राएँ और अन्त में सगण होता है। ५. सव्याओं आदि का जोड़। योग। ६ व्याज। सूद। ७ एक प्रकार का धान जो अमहान में तैयार होता है। इसका चावल सैकड़ों वर्षों तक नखा जा सकता है।

स्त्री० [सं० रासि+चक मे का ताग-समूह], प्रवृत्ति, रचि, स्वभाव आदि की अनुकूलता। जैसे—उन्नयं किसी की रास नहीं बैठती।

क्रि० प्र०—बैठाना।—बैठाना। वि० २ उक्त अर्थ के विचार से, अनुकूल, लाभदायक, शुभ अथवा हितकर। जैसे—वह मकान उन्हे खूब रास आया है। (अर्थात् इसे पाकर वे अच्छे सम्पन्न या सुखी हुए हैं।) २ उन्नित। ठीक। मनासिध। बाजिब।

स्त्री० [का०, मिलाओ सं० रमिष, प्रा० रमिष] १ घोड़े, बैक आदि पशुओं को चलाने की रस्सी। जैसे—घोड़े की चांगटार या बेल की रास।

मुहा०—रास कर्षी करना—(क) घोड़े की लगाम अपनी और लींचे रहना। (ख) लासणिक रूप में कितो पर कड़ा या दूरा निवन्धन रखना। रास में लाना—अपने अधिकार या वश में करना।

२ रक्ता या रस्सी। उदा०—राधो पिमें न रास प्रचलों सांठ प्रथाय सी।—पूषी गज।

स्त्री० [एव० रास=तिर] १. चौपायों की गिनती के समय सव्या-सूचक इकायी के माध लगनेवाली सला। (देह बॉफि कैटल) जैसे—चार रास घोड़े, दो रास बैल। २ चौपायों या पशुओं का सूत्र।

रासक— μ_0 [सं० रास+कन्] एक तरह का हास्य-रस-अपमान उपरूपक जिसमें पौर अभिमत होते हैं। इनका नामक मूखं और नायिका नवुर होती है।

रास-धका— μ_0 रासिन्धक। रास-भारी (विन्)— μ_0 [सं० रास+व् (धारण)+पिनि] १. वह जो

रासलीला का व्यवस्थापक हो। २. रासलीला की मण्डली का प्रधान।
३. वह जो रासलीला में सम्मिलित होकर अभिनय, नृत्य आदि करता हो।

स्त्री० राजस्वामी नृत्य नाट्य की एक विशिष्ट शैली जो ब्रज की रास-लीला की तरह की होती और जिसमें धार्मिक लोक-नायकों के चरित्र का अभिनय होता है।

रासल—वि० [सं० रसना+अणु] स्वादिष्ट। जायकेदार।

† रू० = राधान।

रास-मण्डली—वि० [सं० रासि+फा० मण्डली] ? जो किसी का रास अर्थात् सम्पत्ति का उन-राधिकारी हुआ हो। २. गौद सैठया हुआ। दत्तक। मूलभन्ना (लक्षक)।

रासना—स्त्री० = रासना।

रास-नृत्य—पुं० [म० मण्य० सं०] गति के अनुसार नृत्य का एक भेद।

रास-पूजिमा—स्त्री० [सं० ष० त०] आगंवीर्ष पूजिमा। श्री कृष्ण ने रास-क्रीड़ा इनी तिथि को आरम्भ की थी।

रास-मंडल—पुं० [सं० ष० त०] ? श्रीकृष्ण के रास-क्रीडा करने का स्थान।
२. रास-क्रीडा या रास-लीला करनेवालों की मण्डली। ३. उक्त मण्डली का अभिनय।

रास-मंडली—स्त्री० [सं० ष० त०] रासधारियों का समाज या टोली।

रास-यात्रा—स्त्री० [सं० ष० त०] शरत् पूजिमा के दिन मनाया जानेवाला एक प्राचीन उत्सव। (पुराण) २. तारिणियों का एक उत्सव जिसे वे ब्रज पूजिमा को मनाते हैं।

रास-लीला—स्त्री० [म० ष० त०] ? वे नृत्यात्मक क्रीडाएँ जो श्रीकृष्ण अपनी सखियों के साथ करते थे। २. वह नाटक या अभिनय जिसमें कृष्ण और गोंगियों की प्रेम-वचनों की क्रीडाएँ दिखाई जाती हैं।

रास-मिलास—पुं० [सं० ष० त०] रास-क्रीडा।

रास-विहार (रिम्)—पुं० [सं० रास-वि+हृ+णिति, उप० सं०] श्रीकृष्णभ्रम।

रासा—पुं० [दि० रास=एक प्रकार के गेय पद] ? वह काव्य जिसमें किसी के शीरतापूर्ण कृत्यों या मुद्दों का सविस्तर वर्णन हो। २. किसी प्रकार का कथा-काव्य। (राज०) ३. वाह्य मानवों का एक छंद जिसके अंत में सगण होता है। ४. गहरी तकरार या झुजल। लड़ाई-झगड़ा।

रासायन—वि० [सं० रासायन+अणु] १. रासायन-संबंधी। २. रासायन के रूप में होनेवाला।

रासायनिक—वि० [सं० रासायन+इक+इक] रासायन-शास्त्र संबंधी। रासायन का।

पुं० वह जो रासायन-शास्त्र का ज्ञाता हो।

रासि—स्त्री० = रासि।

रासिच—वि० [अ० रासिच] १. पक्का। अजबूत। २. अटल। स्थिर।

रासी—स्त्री० [देस०] १. तीसरी बार कीषी हुई शराब जो सबसे निष्ठुरत समझी जाती है। २. सज्जी।

वि० १. क्षराब, मूठा या मकली। २. जिसमें खोट या मिलावट हो।
जैसे—सोने का रासी तार।
† स्त्री० = रासि।

रासु—वि० [फा० रास्त] १. सीधा। सरल। २. उचित। ठीक। जाजिब।

रासेरस—पुं० [सं० बहुकू सं०] १. गोष्ठी। २. रास-विहार। रास-क्रीडा। ३. भ्रमंसार। सजावट। ४. उत्सव। ५. परिहास। हँसी-ठट्टा।

रासेरबरी—स्त्री० [सं० रास-ईरबरी, ष० त०] राषा।

रासी—पुं० [सं० रासु] किसी राजा का पंचमय जीवन-चरित्र। जैसे—पृथ्वीराज रासी।

रास्त—वि० [फा०] १. दाहिनी ओर पड़ने या होनेवाला। दाहिना। २. सीधा। सरल। ३. ठीक। युस्त। ४. उचित। वास्तविक। जाजिब। ५. अनुकूल। मुजाफिक।

फि० प्र० = हीना। = यद्गा। = हीना।

रास्तयो—वि० [फा०] [मा० रास्तागो] सच बोलनेवाला। सत्यवक्ता।

रास्तयोई—स्त्री० [फा०] १. सत्य बोलना। २. सत्य-वचन।

रास्तबाब—वि० [फा० रास्तबा] [मा० रास्तबाजी] ईमानदार और सच्चा। विशेषतः लेन-देन में सफ़। २. नेकचलन। मवाचारी।

रास्तबाबी—स्त्री० [फा० रास्तबाबी] ? ईमानदारी। सच्चाई। २. सच्चाचार।

रास्ता—पुं० [फा० रास्त] १. वह कच्ची या पक्की जमीन जिस पर लोग सामान्यतया चलते-फिरते या आते-जाते रहते हैं।

मुहा०—रास्ता कटना=चलने से रास्ता पार या पूरा होना। जैसे—बात-चीत में ही आधा रास्ता कट गया। (किसी का) रास्ता काटना=किसी के चलने के समय उसके सामने से होकर किसी का निकल जाना।

जैसे—बिल्की रास्ता काट गई। रास्ता देखना या पकड़ना=(क) मार्ग का अवलंबन करना। रास्ते पर चलना। (ख) कहीं से हटकर चले जाना। जैसे—अच्छा, अब तुम अपना रास्ता देखो (या पकड़ो)। (किसी का) रास्ता देखना=अतीक्षा करना। आसरा देखना। (किसी को) रास्ता बताना=(क) चलता करना। हुदाना। (ख) इशर-उबर की बातें करके टालना। रास्ते पर लागना=सुमार्ग पर चलना।

अच्छे या ठीक रास्ते पर लगाना। रास्ते लगाना=(क) चल पड़ना। (ख) ऐसे मार्ग पर लगना जिससे उद्देश्य सिद्ध हो।

२. प्रथा। रीति। बाल। जैसे—अब तो आपने यह नया रास्ता चला ही दिया है। ३. उपाय। तरकीब। युक्ति। जैसे—अभी तो इस संकट से निकलने का रास्ता सोचना।

मुहा०—(किसी को) रास्ता बताना=(क) उपाय, तरकीब या युक्ति बताना। (ख) कोई काम करने का ढंग बताना या सिखाता।

रास्ता—स्त्री० [सं० √रस् (आस्वादन)+न, शीर्ष,+टापु] ? गमना-हुकी नामक कंद जो आसाम, लंका, जावा आदि में अधिकता से होता है। २. संभमाकुली। ३. ह्रद की प्रधान पत्ती।

रास्तिमा—स्त्री० [सं० रास+रस्ति+कनु+टापु, ह्रस्व, इत्थं] रास्ता।

रास्व—पुं० [सं० रास+रस्ति] शीकृष्ण।

राह—स्त्री० [फा०] १. आम। पष। रास्ता।

मुहा०—राह पकना=(क) रास्ते पर चलना या जाना। (ख) रास्ते में चलनेवाले पर छापा डालना। कटाना। राह मारना=(क)

रास्ते में चलनेवाले को लूटना। (ल) दे० 'रास्ता' के अन्तर्गत (किसी का) रास्ता काटना।

विशेष—'राह' के सब मुहा० के लिए दे० 'रास्ता' के मुहा०।

२. कोई काम या बात करने का उचित और ठीक बंग।

पद—राह राह का=ठीक बंग या तरह का। उदा०—नखरो राह-राह की गीको।—भारतेन्दु। राह राह से=सीधी या ठीक तरह से।

३. प्रथा। ४. रीति। ५. कायदा। नियम। ६. तरकीब। युक्ति।

†पु०=राह (ग्रह)।

†स्त्री०=रोह (मछली)।

राह-शरणा—पु० [का० राह+शरणा] यात्रा करते समय होनेवाला व्यय। मार्ग-व्यय।

राह-शरणी—स्त्री० राह-शरणा (मार्ग-व्यय)।

राहगी—पु० [का०] वह जो रास्ता पकड़े हुए हो। बटोही।

राह-चलता—पु० [का० राह+हि० चलता] [स्त्री० राह-चलती] १. रास्ता चलनेवाला। पथिक। राहगीर। बटोही। २. व्यक्ति जिससे विशेष परिचय न हो। जैसे—योही राह-चलतां से मजाक नहीं करना चाहिए।

राहजनी—पु० [का० राहजनी] [भाव० राहजनी] रास्ते में चलनेवालों को लूटनेवाला। बटमार।

राहजनी—स्त्री० [का० राहजनी] रास्ते में चलनेवाले लोगों को लूटना। बटमारी।

राहड़ी—पु० [देश०] एक प्रकार का घटिया कबल।

राहत—स्त्री० [अ०] १ आराम। सुख। चैन। २. वह आराम जो कष्ट, रोग आदि में कमी होने पर मिलता है। ३. बौद्ध, भार, उत्तरदायित्व से छुट्टी मिलने पर होनेवाली आसानी या सुगमता।

राहत-तलब—वि० [अ०] [भाव० राहत-तलबी] १ आराम-तलब। २ कामचीर।

राहवादी—पु० [का०] वह जो किसी रास्ते की रक्षा करता या उस पर आने-जानेवालों से कर वसूल करता हो।

राहवादी—स्त्री० [का०] १. किसी दूर देश में जाने के लिए रास्ते पर चलना। २. वह कर जो प्राचीन काल में यात्रियों को कुछ विशिष्ट स्थानों पर चुकाना पड़ता था। दे० 'राहदारी का परवाना'।

राहवादी का परखाना—पु० [हि०] प्राचीन काल में वह परवाना या अधिकार-पत्र जो दूर देश के यात्रियों को कुछ विशिष्ट मार्गों से आने-जाने के लिए राज्य की ओर से मिलता था। २. दे० 'परखना'।

राहगा—स० [हि० राह?] (राह बनाना) १. चक्की के पाटों की बुरदरा करके पीसने योग्य बनाना। जाता कूटना। २. देती आदि को बुरदरा करके पीसा रूप देना कि वह ठीक तरह से चीरों देत सके।

†पु०=रहना।

राहनुमा—वि० [का०] [भाव० राहनुमाई] पथ-प्रदर्शक।

राहनुमाई—स्त्री० [का०] पथ-प्रदर्शक।

राहबर—वि० [का०]—रहबर (मार्ग-प्रदर्शक)।

राहर—पु०=अरहर (अध)।

राह-रथ—स्त्री० [का०] १. मेल-बोझ। व्यवहार। घनिष्ठता। २. बाल। परिपक्वी। प्रथा।

राह-रीति—स्त्री० [हि० राह+सं० रीति] १. पारम्परिक राह-रथ। व्यवहार। २. जिन-पहचान। परिचय। ३. आचरण, व्यवहार आदि का उचित या ठीक तरह से किया जानेवाला पालन।

राहा—पु० [हि० रहना] मिट्टी का वह बबूतरा जिस पर चक्की के नीचे का पद जमाया रहता है।

राहिन—वि० [अ०] देहन अप्रति गिरां या बचक रखनेवाला।

राही—पु० [का०] राहगीर। मुसाफिर। रास्ता चलनेवाला व्यक्ति। पथिक।

मुहा०—राही करना=यत्ना बनाना। (बाजारू) राही होना=चलता बनाना। रास्ता पकड़ना। (बाजारू)

स्त्री० [सं० राधिका, प्रा० रहिया] राधा या राधिका। उदा०—राज मती राही जी सी। (न्याय)। उपरति नाह।

राहु—पु० [सं०/रहू. (त्याग)]-उपु] १. पुराणानुसार नौ ग्रहों में से एक जो विप्रचिति के बीर्य से सिंहिका के गर्भ से उत्पन्न हुआ था।

विशेष—प्राचीन काल में चन्द्रमा के आरौह-पात और बबूरोह-पात वाले बिन्दुओं को क्रमात् राहु और केतु कहते थे। (दे० 'पात') पर अग्नि चक्रर पीरालिक काल में राहु की राक्षस रूप में कल्पना होने लगी, और समुद्र-मंथन वाली कथा के प्रसंग में उसका सिर काटने की बात भी नमिर्मलित हुई, तब केतु उस राक्षस का कश्यप तथा राहु उसका सिर माना जाने लगा। लोक में ऐसा माना जाता है कि उसी के प्रसवे से चन्द्रमा और सूर्य को ग्रहण लगता है।

२. अक्षयिक अर्थ में, कोई ऐसा व्यक्ति या पदार्थ जो किसी की सत्ता के लिए विशेष रूप से कष्टदायक या घातक हो।

पु० [सं० राधका] रोहू मछली।

राहु-प्रसन—पु० [सं० व० तं०] ग्रहण। उपराग।

राहु-पास—पु० [सं० व० तं०] ग्रहण। उपराग।

राहु-बर्सान—पु० [सं० व० तं०] ग्रहण। उपराग।

राहु-भेदी (विण)—पु० [सं० राहु/भिदू (विदारण)+णिङि] विष्णु।

राहु-माता (तु)—स्त्री० [सं० व० तं०] राहु की माता सिंहिका।

राहु-रत्न—पु० [सं० मध्य० स०] गोमेद मणि जो राहु के दोषों का शमन करनेवाली मानी जाती है।

राहुल—पु० [सं०] यशोधरा के गर्भ से उत्पन्न गौतम बुद्ध के पुत्र का नाम।

राहु-हलक—पु० [सं० व० तं०] ग्रहण। उपराग।

राहु-स्पर्श—पु० [सं० व० तं०] ग्रहण। उपराग।

राहुत—पु० [?] सूकी मत के अनुसार अमर के नौ लोकों में से आठवां लोक।

रिण—स्त्री० [अ०] १. अँगुठी। छल्ला। २. किसी प्रकार का गोलकादर घेरा। बूड़ी। बल्य।

रिपण—पु० [सं०/रिण (गति)+पुद्गल-अन] १. रँगना। २. फिसलना। ३. खिसकना। सरकना। ४. विचलित होना। रिंगना।

रिपण—स्त्री० [सं० रिपण] घुटनों के बल चलना। रँगना।

रिपणनी—अ०=रँगना।

रिपणी—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की श्वार और उसका पौधा।

रिपल—पु० [देश०] एक तरह का पहाड़ी बौंस।

रिपलाना—सं०=रँगाना।

रिचिन—स्त्री० [अ० रिचिण] वह रस्सी जिससे जहाज के मस्तूख आदि बांधे जाते हैं। (लघ०)

रिच—पुं० [फा०] [भाव० रिची] १. ऐसा व्यक्ति जो धार्मिक बातों पर संबंध-विषयवास न रखता हो, और लक्ष्मी तथा बुद्धि के विचार से केवल बुद्धिमान बतों मानता हो। धार्मिक विषयों में उदार तथा स्वल्प विचारों-वाला व्यक्ति। २. धार्मिक दृष्टिवाले मुसलमानों की दृष्टि से ऐसा व्यक्ति जो मकान करता और श्रृंगारिक मींग-मिलस में विशेष प्रवृत्ति रखता हो, फिर भी अपने आपको अच्छा मुसलमान समझता हो। ३. मनमोही और स्वच्छन्द प्रकृतिवाला व्यक्ति। उदा०—एक तुम्ही हो जो बहक जाते हो तोबा की तरफ। वना रिचों में बुरा और बलन किसका है।—कोई शायर।
वि० मतवालों। मस्त।

रिचनी—स्त्री० [फा०] १ रिच होने की अवस्था या भाव। रिचापन।

रिचनी—वि० [फा० रिच] उर्दू, निरंकुश, निर्लेख और लुच्चा। तुच्छ और बेहदा।

रिचनी—पुं० [देश०] एक प्रकार का कीकर। रीजा।

रिचायत—स्त्री० [अ०] १. किसी चीज के सामान्य मूल्य मे किसी के लिहाज आदि के कारण की जानेवाली कमी। जैसे—उन्होंने ५० रुपए की रिचायत की। २. किसी नियम, बचन मे किसी कारणवश अथवा किसी के लिए की जानेवाली छिड़ाई या दिया जानेवाला सुभीता। ३. किसी से मन्सि न करके किया जानेवाला दयापूर्ण व्यवहार। (कस्तियान) ४. कमी। न्यूनता। ५. ब्याज। ध्यान। जैसे—इस दबा मे खासी की भी रिचायत रखी गई है, अर्थात् यह ध्यान भी रखा गया है कि खासी दूर हो।

रिचायती—वि० [अ०] १. जो रिचायत के रूप में हो। २. जिसमे किसी तरह की रिचायत की गई हो। जैसे—दुर्गा पूजा में रेल के रिचायती टिकट मिलते हैं।

रिचाया—स्त्री० [अ० रचाया] प्रजा।

रिचबँध—स्त्री० [देश०] एक प्रकार के पतईयों जो उर्ब की पीठी और अर्ब के पत्तों या इसी प्रकार के कुछ और पत्तों से बनता है। पतीड़। उदा०—पान लाइके रिचबँध छोके, हीमू मिरिच औ नाद।—जायसी।

रिचसा—पुं० [जापानी जिन्] रिक्सा=आदमी के द्वारा खींची जानेवाली गाड़ी। एक प्रकार की छोटी गाड़ी जिसे आदमी खींचते हैं और जिसमे एक या दो आदमी बैठते हैं।

विशेष—अब आदमी के बदले इसमें अधिकतर वाइसिकल के पहिए और कच्चे-पुरेसे लगीये जाते हैं, जिते वाइसिकल रिचसा कहते हैं।

रिचसा—स्त्री० [सं० रिचा] लीज।

पुं०=रिचसा।

रिचका—स्त्री०=रिचका।

रिचानी—स्त्री०=रिचानी।

रिचार्थ—पुं० दे० 'रिचार्थ'।

रिचत—वि० [सं०/ रिच्] (अलग करना)+क्त] १. खाली। शून्य। जैसे—रिचत घट, रिचत स्थान। २. गरीब। निर्धन।

पुं० बंगल। घन।

रिचल-गुंम—पुं० [सं० कर्म० स०] १. साहित्य में ऐसी भाषा जो समझ में न आये अथवा जिसका कुछ भी अर्थ न निकलता हो। साधारण लोक-व्यवहार में ऐसी चीज जो देखने भर की हो, काम में आने योग्य न हो।

रिचला—स्त्री० [सं० रिचत+लच्+टाप्] १. रिचत या खाली होने की अवस्था या भाव। २. नीकरी के लिए पद या स्थान रिचत होने की अवस्था या भाव। (बैंकसी)

रिचला—स्त्री० [सं० रिचत+टाप्] फलित ज्योतिष में चतुर्धा, नवमी और चतुर्दशी तिथियों जो शुभ कामों के लिए बजित हैं।

रिचलार्क—पुं० [सं० रिचला-अर्क, मध्य० स०] रचिबार की पढ़नेवाली कोई रिचला तिथि।

रिचप—पुं० [सं० रिच्+चकु] १. वह सम्पत्ति जो उत्तराधिकारी की हो जाय। २. वह धन-सम्पत्ति या ऐसी ही कोई और चीज जो किसी को उत्तराधिकारी के रूप में मिली हो या मिले। (लिंगेसी) ३. व्यापार मे लगी हुई सारी पूँजी और उससे संबंध रखनेवाली सारी सम्पत्ति।

रिचप-पत्र—पुं० [सं० व० त०] इच्छा-पत्र। बसीयतनामा।

रिचपहारी (रिच) —पुं० [सं० रिचप/ हू (हरप)+गिनि] १. रिचप प्राप्त करने का उचित या वास्तविक अधिकारी। २. माया।

रिचपी (विचपु) —पुं० [सं० रिचप+इनि] [स्त्री० रिचुपिनी] वह जिते उत्तराधिकार मे धन या सम्पत्ति मिले या मिलने की हो। रिचप-हारी।

रिचा—पुं०=रीस।

रिचपति—पुं० ऋषपति। जामवत।

रिचा—स्त्री० [सं० लिखा] १. जू का अडा। लीज। लिखा। २. बसरेणु।

पुं०=रिचया।

रिच—पुं० [सं० ऋष] तारा। नक्षत्र। उदा०—राजति रच रिचपति रज।—शिरीराज।

रिचन—पुं०=घन।

रिचिय—पुं०=ऋपि।

रिचू—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की अज।

रिचोसर—पुं०=ऋधीपवर।

रिप—पुं०=ऋपु।

रिपाना—त०=रेगाना।

रिचा—स्त्री० ऋचा।

रिचीक—पुं० ऋचीक (अमदमि के पिता)।

रिच्छ—पुं०=रीछ (मातृ)।

रिच्छा—स्त्री०=रक्षा।

रिच्छक—पुं० [अ० रिच्छक] रोजी। जीविका। जीवन-वृत्ति।

कि० प्र०=रेता।—याना।—मिन्दान।

मुहा०—(किसी का) रिच्छक धारणा=किसी की जीविका या रोजी में बाधक होना। जीविका के साधन से बचित करना।

रिचब—वि० [अ०] जिते किसी विविष्ट काम या व्यक्ति के लिए रचित किया गया हो। जिसका उपयोग दूसरे कामों या व्यक्तियों के लिए न हो सकता हो।

रिचाला—पुं० [अ०] १ बचनाशा। आबारा। बेधार्थ आवनी। २ कानी। नीच।

रिचाली—स्त्री० [फा० रचाल=नीच] 'रिचाला' होने की अवस्था या भाव। कानी। नीचता।

रिचु—वि०=रुचु (सीष)।

रिचुक—पुं०=रिचुक।

रिचकवार—वि० [हिं० रीक्षना + वार (प्रत्य०)] १. रीक्षनेवाला। २ जो प्राय अच्छी बातों पर रीक्ष जाता हो।

पुं०=रिचकवार (प्रेमी)।

रिचालना—स०=रिचालना।

रिचालना—वि० [हिं० रीक्षाना + चार (प्रत्य०)] [स्त्री० रिचवारी] जिसका मन किसी के गुण, रूप, व्यापार आदि पर रीक्षता हो।
पुं०=प्रेमी।

रिचाना—स० [स० रजन] अपने गुण, चेष्टा, रूप आदि से किसी का ध्यान आकृष्ट करते हुए उसे अपनी ओर अनुरक्त बनाना।

रिचालना—वि०=रिचालना।

रिचाल—पुं० [हिं० रीक्षना + आच (प्रत्य०)] १ रीक्षने की अवस्था या भाव। २ रिचाने की क्रिया या भाव।

रिचालना—स०=रिचालना।

रिचाल्य—वि० [अ०] जो अपने काम से अवसर-ग्रहण कर चुका हो। अवकाश-प्राप्त।

रिचकना—स० [?] दही आदि बिलोना। मचना।

अ० १ लटकना। २ गडना। चुमना।

रिचा—पुं०=रुच।

†पुं०=रुच। (हिं०)

रिचार्ह—वि० [सं० रुच्य + दायिन्] जिससे रुच्य लिया हो। उदा—
छिन बेही रिचार्ह रिचार्ह।—प्रियीतराज।

रिचार्ह—स्त्री०=रुचु।

रिचाना—अ० [सं० रिचत, हिं० रीता] रिचत या खाली होना। सूच्य होना।

रिचवना—स० [हिं० रीता + ना] रीता अर्थात् खाली करना। रिचत करना।

रिचु—स्त्री०=रुचु।

रिचुराज—पुं०=रुचुराज (वसत)।

रिचुभती—स्त्री०=रुचुभती (रजखला)।

रिचुसारी—पुं० [सं० रुचु + सारी] एक प्रकार का चावल।

रिच—पुं०=रुचय।

रिचि—स्त्री०=रुचिदि।

रिचि-निचि—स्त्री०=रुचि-निचिदि।

रिच—स्त्री०=रुचिदि।

रिच—पुं०=रुचण।

रिचबंभी—पुं० [सं० रुच्य + बंभ] रुचणी।

रिचिया—वि० [सं० रुच्य] जिससे रुच्य लिया हो। रुचणी।

रिची—वि०=रुचणी (कर्मदार)।

रिचटना—अ०=रचटना (फिलाना)।

रिचु—पुं० [अ० √ र्च + (कीटना) + क्त, इत्] [भाव० रिचुता] १. उन

दो व्यक्तियों, दलों आदि में से हर एक जिनमें एक दूसरे के प्रति शत्रुता का भाव हो। दुश्मन। शत्रु। २. लालचिक अर्थ में बहु गुण, तप्य या अस्तु जो अत्यन्त हानिकर तथा नाशक प्रभाववाली हो। जैसे—रुचि-रिचु। ३. जन्मकुण्डली में लग्न से छटा स्थान जिसमें लोगों के शत्रुभाव का विचार होता है।

रिचुन—वि० [सं० रिचु + लृट् (हिंया) + क्त] शत्रुओं का नाश करने-वाला।

रिचुना—स्त्री० [सं० रिचु + लृट् + टाप्] १ रिचु होने की अवस्था या भाव। दुश्मनी। शत्रुता।

रिचोर्ट—स्त्री० [अं०] १. किसी घटना आदि का वह विवरण जो किसी अधिकारी को उनकी जानकारी के लिए दिया जाता है। प्रतिवेदन। २. किसी सस्था आदि के कार्यों का विस्तृत विवरण। कार्य-विवरण। ३. किसी वस्तु या व्यक्ति के सम्बन्ध में जानने योग्य बातों का व्योरा।

रिचोर्टर—पुं० [अं०] सवादासता (समाचार पत्रों का)।

रिचालत—स्त्री० [अं० रिचाल, रचाल का बहुवचन] १ मित्रगण। साथी लोग। २ रचाल या साथी होने की अवस्था या भाव। मित्र। ३ सग-साथ।

रिचार्थ—पुं० [अं०] ऐव, बराबियाँ, बोध आदि दूर करने की क्रिया या भाव। सुधार।

रिचार्थर—पुं० [अं०] सुधारक। २ समाज-सुधारक।

रिचार्थरी—स्त्री० [अं०] वह स्थाण जहाँ छोटी अवस्था के विशेषतः अल्प-वयस्क अथवा बालक चरित्र-सुधार की दृष्टि में कैद करके रखे जाते हैं।

रिचम—पुं० [अं०] १. पत्थरी पट्टी। २ फीते के तरङ्ग की वह चौड़ी पट्टी जिसमें स्त्रियों बाल आदि बाँधनी हैं। ३ फीला। जैसे—टाख राखर का रिचम।

रिचु—पुं०=रुचु (देवना)।

रिच—पुं० [सं० अरिच्य या रुचु] शत्रु। (हिं०)

स्त्री०=रीच।

रिच-क्षिम—स्त्री० [अं०] छोटी-छोटी बूँदों का लगातार गिरना। हलकी फुहार पड़ना।

मुहा०—रिचार्थम बरसना—छोटी-छोटी बूँदों के रूप में पानी बरसना।
उदा०—मायो भय भारी लगे, रिच-क्षिम बरगे मेह।—गीत।

रिचहर—पुं० [?] शत्रु। (हिं०)

रिचार्थर—पुं० [अं०] रमणि-गर्भ। स्मारक।

रिचिका—स्त्री० [?] काजी मिचं की लता। (अनेकार्थ)

रिचा—स्त्री० [अं०] पावड़। २ प्रद्वान। ३ दिखावा।

रिचाकर—वि० [अं० + फा०] [भाव० रिचाफरी] डोंगी। मक्का।

रिचाकारी—स्त्री० [अं० + फा०] पाखंड।

रिचाज—पुं० [अं० रिचाज] १ तरपरा। २. किसी काम या बात में प्रवीणता प्राप्त करने के लिए परिश्रमपूर्वक और नियमित रूप में किया जानेवाला उसका अभ्यास। जैसे—गाने-बजाने का रिचाज करना। ३ ऐसा बखिया और बारीक काम जो उक्त प्रकार से यथेष्ट अभ्यास कर चुकने पर बहुत परिश्रमपूर्वक किया गया हो। जैसे—ताजमहल में नानाकारी का साग काम बहुत रिचाज का है।

रिवाज—स्त्री० [अ० रिवाज] १. उद्यम। परिश्रम। २. अव्यास।
३. अप-सप्त। तपस्या।
रिवाजी—वि० [अ० रिवाजी] जिसका ज्ञान रिवाज करने पर प्राप्त होता
हो।
पु० गणित की विद्या।
रिवाज—स्त्री० [अ०] १. रईस होने की अवस्था या भाव। अमीरी।
बैभव। ऐश्वर्य। २. राज्य विशेषतः ब्रिटिश भारत में देवी नरेशों
का राज्य। ३. आधिपत्य। स्वामित्य।
रिवाजती—वि० [अ०] रिवाजत सम्बन्धी। रिवाजत का।
रिवाह—पु० [अ० रेह का बहु०] शरीर के अन्दर की वायु जो विकृत होकर
किसी रोग के रूप में प्रकट होती है।
रिर—स्त्री० [अनु०] बहुत गिड़गिड़ाकर और आग्रहपूर्वक किया जाने-
वाला अनुरोध या प्रार्थना।
रिरना—अ० [अनु०] बहुत गिड़गिड़ाने हुए अपनी दीनता प्रकट करना।
रिरना—स्त्री० [स०] १. चित्त प्रमत्त करने या किसी प्रकार के विनोद
से सुख प्राप्त करने की इच्छा। २. काम-वासना तुल्य करने की इच्छा।
रिरिवाज—अ०—रिरना।
रिरिहा—वि० [हि० रिरना] बहुत गिड़गिड़ाकर या टट लगाकर प्रार्थना
करनेवाला।
रिरी—स्त्री० [म० व० रि (गति)। क्विप्. पुषो० द्विव्] पीतल।
(धातु)
†स्त्री०—रिर।
रिरलना—अ० [हि० रेलना मि० प० रलना—मिलना] प्रवेश करना।
पठना। घुसना।
†अ०—रलना (मिलना)
रिरीक—स्त्री० [अ०] १. फटपुपुं या दुःखद वातावरण या स्थिति के
उपरान्त मिलनेवाला आराम या चैन। २. सहायता। ३. उक्त प्रकार
के प्रसंगों में देवी जानेवाली सहायता।
रिश्—पु०—रि (दि०)
रिबाज—पु०—रबाज (प्रथा)।
रिबाजत—स्त्री० [अ०] १. सुनी-सुनाई बाल दूसरी से कहना। २. इस
प्रकार कही जानेवाली बात। ३. कहावत। लोकोक्ति।
रिबाजत—पु० [अ०] गोली चलाने या छोड़ने का एक प्रकार का छोट्टा
उपकरण। तमबा।
रिब्—स्त्री० [अ०] १. समीक्षा। आलोचना। २. नजरसानी।
रिबाज—स्त्री० [अ० रिबजत] बहु धन जो किसी अधिकारी को लूण करने
तथा उससे कोई आय या नाजायज काम कराने के उद्देश्य से दिया
जाता है। उत्कोच। घूस। लच।
फि० प्र०—खाना।—देना।—मिलना।—लेना।
रिबाजखोर—पु० [अ० रिबजत+फा० खोर] [भाव० रिबजखोरी]
बहु जो रिबजत लेता हो। घूस खानेवाला।
रिबाजखोरी—स्त्री० [अ० रिबजत+फा० खोरी] १. रिबजत लेने की
अवस्था या भाव। २. दूसरे से रिबजत लेने की आदत या लत।
रिस्ता—पु० [फा० रिस्त] व्यक्तिओं में होनेवाला पारिवारिक या
बैवाहिक सम्बन्ध। नाता।

रिस्तेदार—पु० [फा० रिस्त+दार] [भाव० रिस्तेदारी] वह जिससे कोई
रिस्ता हो। संबंधी। नातेदार।
रिस्तेदारी—स्त्री० [फा० रिस्त दारी] रिस्ता होने की अवस्था या भाव।
संबंध। नाता।
रिस्तेबंद—पु० [फा०]—रिस्तेदार।
रिस्तेबंदी—स्त्री०—रिस्तेदारी।
रिश्—पु० [स० √ रिष् (हिंसा)+ध्वप्] मुग।
रिश्त—स्त्री०—रिश्तबंद।
रिश्म—पु०—रुश्म (रेश)।
रिश्मि—पु०—रुश्मि।
रिष्—पु० [स० √ रिष् (हिंसा)+क्त] १. कल्याण। मंगल। २. अकल्याण।
अमंगल। ३. अभाव। ४. नाश। ५. पाप। ६. खट्ट।
वि० नष्ट। बरबाद।
वि० [स० हूट] १. मोटा-ताजा। २. प्रसन्न और संतुष्ट।
रिष्मि—स्त्री० [स० √ रिष् (हिंसा)+क्तिप्] १. खट्ट। २. अमंगल।
रिष्मूक—पु० [स० रुष्मूक] रामचरित मानस के अनुसार दक्षिण
भारत का एक पर्वत जिस पर राम और सुग्रीव की भेंट हुई थी।
रिस्त—स्त्री० [स० र्श्] १. किसी के प्रति मन में होनेवाला दोष। २.
मन में दबी हुई नाराजगी।
मुहा०—रिस्त मारना—गुस्ता कायू में करना।
रिस्तना—अ०—रसना (तरल पदार्थ अन्दर से बाहर निकलना)।
रिस्तबाना—स० [हि० रिस्तामा का प्रे०] रिस्ताने (किसी से अप्रसन्न होने)
में प्रवृत्त करना।
रिस्ता—वि० [हि० रिस्त+हा (प्रत्य०)] जो बात-बात पर क्रुद्ध हो उठता
हो।
रिस्ताया—वि० [हि० रिस्ताया] [स्त्री० रिस्ताई] कुपित। जिसके
मन में रिस्त उत्पन्न हुई हो। रष्ट। अप्रसन्न। नाराज।
रिस्तान—पु० [?] ताने के सूतों की फैलाकर उनको साफ करने का काम।
(जूलाई)
रिस्ताना—अ० [हि० रिस्त+आना (प्रत्य०)] क्रुद्ध होना। खफा होना।
गुस्ता होना।
स० किसी पर क्रोध करना। नाराजी जाहिर करना।
रिस्ताल—पु० [अ० इस्ताल] वह धन जो कर के रूप में वसूल करके
सरकारी खजाने या राजधानी में भेजा जाता था।
रिस्ताल—स्त्री० [अ०] १. रसूल अर्थात् हुत का काम, पद या भाव। २.
इस्लाम में मुहम्मद सहाब की ईश्वर का हुत मानने की अवस्था या
सिद्धान्त।
रिस्तालवार—पु० [फा० रिस्ताल दार] १. घुड़सवार। सैनिकों का
नायक। २. बहु कर्मचारी जो करवसूल करके खजाने में पहुँचाता था।
रिस्ताला—पु० [फा० रिस्तालः] १. घोड़-सवारों की सेना। अस्वारीही
सेना। २. सार्वकिक पत्र। पत्रिका। ३. पुस्तिका।
रिस्ति—स्त्री०—रिस्त।
रिस्तिबाना—अ०—रिस्ताना।
रिस्तिब—स्त्री० [स० रिस्तीक] तलवार।
रिस्तीही—वि० [हि० रिस्त+हीही (प्रत्य०)] [स्त्री० रिस्तीही] १.

क्रोध से युक्त या भरा हुआ। जैसे—रिसोही आँखें। २. रिस या क्रोध का सूचक।

रिहकी—स्त्री० [?] बहलई जमीन या रेखीली मिट्टी।

रिहल—पु० [अ०] = रेहन।

रिहलनामा—पु० = रेहननामा।

रिहसल—पु० [अ०] ? (किसी नाटक आदि में) अभिनय करनेवाले पात्रों द्वारा किसी नाटक का किया जानेवाला अभ्यास के रूप में अभिनय। २. यह अभ्यास जो किसी कार्य में ठीक समय पर करने से पहले किया जाय।

रिहल—स्त्री० [अ०] काठ की बनी हुई कैंचीनुमा चीकी जिस पर धार्मिक ग्रन्थ आदि रखकर पढ़े जाते हैं।

रिहलत—स्त्री० [अ०] ? प्रस्थान। खानगी। २. इस लोक से सदा के लिए होनेवाला प्रस्थान, अर्थात् मृत्यु।

रिहा—वि० [का० रहा] भाव० रिहाई] १. (बचन, बाधा, सकट आदि से) छुटा हुआ। मुक्त। २. (कैंची) जिस कैंचे से छुट्टी मिल गई हो।

रिहास—स्त्री० [का० रहास] ? रखने का स्थान। निवास-स्थान। २. रहते अर्थात् जीवन-निर्वाह करने का ढंग। रहन-सहन।

रिहाई—स्त्री० [का० रहाई] छूटकारा। मुक्ति। छुट्टी।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।

रीथना—स०—रीथना।

री—स्त्री० [स० √ री (गति), घाटु] ? गति। २. बच। हत्या। ३. ध्वनि। शब्द।

अव्य० [हिं० र (सम्बोधन) का स्त्री०] तबियों के लिए सम्बोधन का शब्द। अरी। एरी।

रीगन—पु० [देण०] भादों तथा कुंवार के महीनों में होनेवाला एक प्रकार का धान।

रीठ—पु० [स० ऋत्] [स्त्री० रीठनी] भालू नामक जंगली जानवर। (दे० 'भालू')।

रीथराज—पु० [स० ऋथराज] जामवत।

रीत—स्त्री० [हिं० रीतना] ? रीतने की क्रिया या भाव। २. एक बार कोई विचार काम करने की मन में होनेवाली बहुत दिनों की प्रबल भावना।

क्रि० प्र०—उतारना।

पव—रीस-सप्त—प्रवृत्ति या रुचि और समझदारी। जैसे—पहले उन लोगों की रीस-वृत्त या देख लो, तब उनके साथ सम्बन्ध की बातचीत करना।

रीथना—अ० [स० रजत] किसी की चेष्टा, गुण, रूप आदि से प्रभावित होकर उस पर अनुकृत या मनुष्य होना। २. किसी पर प्रसन्न होना।

रीठ—स्त्री० [स० रिठ] ? तलवार। २. युद्ध। (क्रि०) वि० [स० अरिष्ठ] ? खराब। बुरा। २. घातक। नासक।

रीठा—पु० [स० रिठ] ? एक प्रकार का जंगली वृक्ष। २. उल्टा का फल जिसकी क्षास से कपड़े साफ किये जाते हैं।

पु० [?] वह भट्ठा जिसमें ककड़ फूके जाते हैं। चूना बनाने की अट्टी।

रीठी—स्त्री०—रीठा।

रीठ—स्त्री० [?] ? कुछ विशिष्ट प्रकार के जतुओं में पीठ के बीचो

बीच की वह खड़ी हड्डी जो कमर तक जाती है और जिससे पसलियाँ मिली हुई रहती हैं। मेरु-पृष्ठ। २. लास्यिक अर्थ में ऐसी बात जो किसी चीज का मूल आधार हो।

रीठ-रथु—स्त्री० दे० 'मेरु-रथु'।

रीथ—वि० [स० √ री (गति) + क्त] चूआ, टपका या रसा हुआ। वृत्त।

रीत—स्त्री० [स० रीति] प्रथा। रिवाज।

रीतना—अ० [स० रिक्त, प्रा० रिक्त + मा (प्रत्यय०)] खाली होना। रिक्त होना।

स० रिक्त या खाली करना।

रीता—वि० [सं० रिक्त, प्रा० रिक्त] [स्त्री० रिता] ? (पात्र) जिसमें कोई चीज भरी या रकी हुई न हो। २. (हाथ) जिसमें अस्त्र, धनुष आदि कुछ न हो। ३. जिसके पास कुछ न हो।

रीति—स्त्री० [स० √ री (गति) + क्तन्वत् वा क्तिच्] ? गति में आना, चलना या बहना। २. पानी का बहना या नदी। ३. सीमा सुचित करनेवाली रेखा। ४. मार्ग। रास्ता। ५. काम करने का विशिष्ट ढंग या प्रकार। ६. पहले से चली आई हुई प्रथाओं या प्रथा। रस्न-रवाज। ७. कायदा। नियम। ८. सम्कृत साहित्य में, विशिष्ट प्रकार की ऐसी पद-रचना या लेख-शैली जो ओज, प्रसाद, माधुर्य आदि गुण उत्पन्न करती हो या कृति में जान लाती हो।

विशेष—हमारे यहाँ मिश्र-मिश्र देशों के सरकृत कवि तथा साहित्यकार अपनी अपनी रचनाओं में कुछ अल्प और विशिष्ट प्रकार या शैली में ओज, प्रसाद आदि गुण लाते थे, इसी से उन देशों की शैलियों के आधार पर वे चार रीतियाँ मुख्य मानी गई थी—वैदर्भी, गौड़ी, पाषाणो या पबालिका और लाटो। परवर्ती साहित्यकारों ने मागधी और मैथिली नाम की रीतियाँ भी मानी थी।

९. मध्ययुगीन हिंदी साहित्य में, काव्य-रचना की वह प्रणाली या शैली जो आचार्यों द्वारा निरूपित शास्त्रीय नियमों, लक्षणों, सिद्धान्तों आदि पर अभिष्ट होती थी। और जिसमें अलंकार, ध्वनि, पिंगल, रस आदि बातों का पूरा ध्यान रखा जाता था। इधर कुछ दिनों से इस प्रकार की काव्य-रचना क्रमशः बहुत घटती जा रही है; और इसका प्रचलन उठता जा रहा है। १०. लोहे की मेल। मट्टर। ११. लोहे हुए सोने की मेल। १२. पीतल। १३. सीता। १४. प्रवृत्ति। रचनाय। १५. प्रसास। स्तुति।

रीतिक—वि० [स० रीति से] ? रीति-संबन्धी। २. रीति के रूप में होनेवाली। ३. जो ठीक या निश्चित रीति (प्रणाली अथवा प्रथा) के अनुकूल या अनुसार हो। औपचारिक। (फार्मल) पु० पुष्पांगन।

रीतिका—स्त्री० [स० रीति + कन् + टाप्] ? जस्ते का मसम। २. पीतल।

रीति-काल—पु० [स० प० त०] हिंदी साहित्य के इतिहास में, उसका उत्तर-मध्य काल जो ई० १७ वीं शताब्दी के मध्य से ई० १९ वीं शताब्दी के मध्य तक माना जाता है और जिसमें अलंकार, नायिकाभेद, रस आदि के नियमों और लक्षणों से युक्त काव्य की रचनाएँ होती थीं।

रीतिकान्य—पु० [मध्य० स०] हिंदी में, ऐदा काव्य जो अलंकार, ध्वनि

नायिका-भेद, उस आदि तृत्थों का ध्यान रखते हुए लिखा गया है।
३०. 'रीति'।

रीतिवाच—पुं० [सं० ष० त०] [वि० रीतिवाची] १. कला, साहित्य आदि के क्षेत्रों में यह मतवाच या सिद्धांत कि परंपरा से जो रीतियाँ बली आ रही हैं, उनका दुरुदापूर्वक और पूरा-पूरा पालन होना चाहिए। (फार्म-लिपि) २. हिंदी साहित्य में यह मतवाच या सिद्धांत कि काव्य के क्षेत्र में अलंकारों, नायिकाभेदों, रसों आदि के नियमों और लक्षणों का पूरी तरह से पालन करते हुए ही सब रचनाएँ होनी चाहिए।

रीतिवाची (विन्)—वि० [सं० रीतिवाच+इनि] रीतिवाद-सचकी। रीति-वाच का।

रीचना—स०=रीचना।

रीच—स्त्री० [अं०] कागज की वह गड़की जिसमें किसी विशिष्ट आकार प्रकार के कागज के ५०० ताब होते हैं।

स्त्री० [फा०] १. पीप। मवाद। २. तलछट।

रीर—स्त्री०=रीर।

रीरि—स्त्री०=रीर। उवा०—गरी रीरि जहँ ताकर पीठी।—जायसी।

रीरक—पुं०=कृष्यमक।

रीस—स्त्री० [सं० ईर्ष्या] १. किसी को कोई काम करते देखकर बही काम करने की मन में जायत होनेवाली भावना। २. प्रतिस्पर्धा। होड़।
†स्त्री०=रिस (गुस्ता)।

रीसना—अ०=रिसाना (रुष्ट होना)।

रीसा—स्त्री० [देश०] एक प्रकार की झाड़ी, जिसकी छाल के रेशों से रस्मियाँ बनती हैं। इसे 'बनरीही' भी कहते हैं।

रीसी—स्त्री०=रीस (स्पर्धा)।

रीह—स्त्री० [अं०] [वि० रोही] १. वायु। हवा। २. अपान वायु। पाद। २. गध।

रिंड—पुं० [देश०] एक प्रकार का बाजा।

रिंड—पुं० [सं०/रुष्ट (बीर्य)+अञ्] १. ऐसा घड़ जिसका तिर कट गया हो। बिना तिर का घड़। कबध। २. ऐसा शरीर जिसके हाथ पैर कट गये हो।

रिंडिका—स्त्री० [सं० रुष्ट+ठन्—इक,+टाप्] १. मूद्यमूिम। रणजोन। २. विमूति।

रिंड—पुं० [हिं० रीचना] धानू की गोलियों आदि से रसा के लिए खड़ी की हुई कच्ची मिट्टी की दीवार। उवा०—क्या रोती खदक सब बडे। क्या बुँ, कपूर अनमोल।—नजीर।

रिंडवाना—स०=१. रींडवाना। २. रींडवाना।

रिंडती—स्त्री०=अरिंधती।

रीचना—अ० [हिं० रीचना का अं०] १. रसा, रोक आदि के विचार से मार्ग आदि का फँटीली साडियाँ आदि लगाकर रींथा या बंद किया जाना। २. छायाणिक रूप में कटकों, बाधाओं आदि से मार्ग का इस प्रकार अव-रुद्ध होना कि काम आगे बढ़ना बहुत अधिक कठिन हो। ३. काँटों, जालों आदि में उलझना या फँसना। ४. इस प्रकार दस्त-बिस्त होकर किसी काम में लगना कि और बातों के लिए अल्ती अवकाश न मिले।

रिंड—पुं० [सं०+घ घातु का अनुकरण] १. रुद्ध। २. गध। हत्या। ३. गति। बाल।

अव्य हिं० 'अव' (और) का संज्ञित रूप। उवा०—सीतलता सुगंधि की महिया बटो न मूर।—विहारी।

रवा—पुं०=रोडा (रोम)।

†पुं०=रवा (बाग)।

रवाली—स्त्री०=रवाली।

रवाना—स०=रवाना।

रवाब—पुं०=रवाब।

रवाली—स्त्री० [हिं० रुई+आलि] रुई की बनी हुई पोली बत्ती या पुनी जो रिव्याँ चलते पर सूत कातने के लिए सिरकी पर लपेट कर बनायी है। पुना। पीनी।

रई—स्त्री० [देश०] छोटे आकार का एक प्रकार का पहाड़ी पेड़। इसकी छाल और पतियाँ रंगाई के काम में आती हैं।

स्त्री०=रई।

रई—स्त्री०=रई।

रचना—अ० [हिं० रोक] १. बागे बढ़ने या चलने के समय बीच में किसी कारण से कुछ समय के लिए ठहरना। आगे चलने या बढ़ने से विरत होना। जैसे—गाड़ी, घोड़े या यात्री का रुकना। संयोग कि—रजना।—पड़ना।

२. मार्ग में किसी प्रकार की बाधा या उकाषट होने के कारण काम का कुछ समय के लिए स्थगित होना। जैसे—(क) उस पुस्तक के बिना हमारा काम चला पडा है। (ख) यह घड़ी चलते चलते बीच में रुक जाती है। ३. चलते हुए काम का बंद हो जाना। ४. किसी प्रकार के काम या सिलसिले का बंद होना। ५. संयोग करते समय पुरुष का ऐसी स्थिति में होना कि उसका अल्ती बीर्यपात न होने पावे। (बाजाब)।

रकमंगद—पुं०=रकमंगद (एक राजा)।

रकमंजनी—स्त्री० [सं० रकमंजनी] १. एक प्रकार का पीप जो बागों में सजावट के लिए लगाया जाता है। २. इस पीपे का फूल।

रकमिणी—स्त्री०=रकमिणी।

रकरा—पुं० [देश०] एक प्रकार की ऊव या गन्ना।

रकवाना—सं० [हिं० रकना का प्र०] १. ऐसा काम करना जिससे कोई चलता हुआ काम या सिलसिला ठप हो जाय। २. दूसरे को कुछ रोकने में प्रयत्न करना।

रकाव—पुं० [हिं० रकना] १. रकने की अवस्था, किया या भाव। रकाव-वट। अटकाव। अवरोध। २. पेट में माल रकना। कम्बजपट।

रकावट—स्त्री० [हिं० रकाव+वट (प्रत्य०)] यह चीज या बात जो रोक के रूप में हो। बाधा या विघ्न के रूप में होनेवाली बात।

रकाम—पुं०=रकम।

रकनी—पुं०=रकनी।

रकना—पुं० [अं० रककज] १. छोटा पत्र या चिट्ठी। पुरजा। परचा। २. वह लेख जो हुँकी या कर्जा लेनेवाले रुपये लेते समय लिखकर महा-जन को देते हैं।

रक—पुं०=रक (पेड़)।

रक—पुं० [सं०/रक (शोभित होना)+मक, कृत्व] १. स्वर्ण। सोना। २. घूरा। ३. लोहा। ४. नाग-केसर। ५. रकमिणी के एक भाई का नाम।

शक्य-कारक—यु० [सं० ब० सं०] सोने के गहने बनानेवाला अर्थात् सुनार ।
शक्यपास—यु० [सं० मध्य० सं०] सूत का बना हुआ वह फटा या लट, जिससे गहनों की मुद्रिका मनेके आदि निरौये रहते हैं ।
शक्यपुत्र—यु० [सं०] पुराणानुसार एक नगर जहाँ यक्ष का निवास है ।
शक्यरथ—यु० [सं० ब० सं०] १. वायु का एक पुत्र । २. भीष्मक का एक पुत्र । ३. द्रौपाचार्य का एक नास ।
शक्यवती—स्त्री० [सं० शक्य+यवृत्+ङीप्] १. एक प्रकार का वृत् जिसके प्रत्येक चरण में 'म म स ग' (S1555 115 S) होते हैं। इसे 'रम्यवती' तथा 'शक्यकमला' भी कहते हैं ।
शक्य-शासन—यु० [सं० ब० सं०] द्रौपाचार्य ।
शक्यसेन—यु० [सं०] शकियगी का छोटा भाई ।
शकिय—यु० [सं०] रम्यक और हिरण्यवर्ष के बीच स्थित पाँचवाँ वर्ष । (नैन)
शकियण—स्त्री०—शकियगी ।
शकियणी—स्त्री० [सं० शक्य+इति+ङीप्] श्रीकृष्ण की पट्टरानियो मे से बड़ी और पहली रात्री जो विदर्भ राजा भीष्मक की कन्या थी ।
शक्य-वर्ष—यु० [सं० ब० सं०] बलदेव ।
शकियदारी (रिपु)—यु० [सं० शकियण+वृत् (विदारण)+णिनि] बलदेव ।
शक्यी (विमल)—यु० [सं० शक्य+इति] शकियगी के बड़े भाई का नाम ।
शक्य-वि० [सं० शक्य] [भाष० कदाता] १ (बस्तु) जिसका तल चिकना तथा मूलायम न हो, बल्कि कसा तथा ऊबड़-खाबड़ हो । २ अल्पिण्य । ३. अशुद्धय । नीरस । ४. कठोर ।
शु०—शक्य (वृक्ष)
शकता—स्त्री० [सं० शक्यता] १. रुका होने की अवस्था, धर्म या भाव । २. रुकाई । ३. असुद्धयता ।
शक्य—यु० [सं०] १. कपील। गाल। २. बेहूरा या मूँह जो प्रायः भगोनाथो का वृषक होता है ।
मुद्रा०—शक्य शिला—वातपीत करने के लिए मूँह सामने करना ।
३. आश्रयि या बेहूरे से प्रकट होनेवाली प्रवृत्ति या मर्नाभाव । जैसे—
 (क) उनका शक्य देखकर ही मैंने समझ लिया कि इस बात पर राजी नहीं होंगे। (ख) आदमी का शक्य देखकर बातचीत छेड़नी चाहिए ।
मुद्रा०—(किसी मोर) शक्य देना—उन्मुख या प्रवृत्त होना। शक्य कोना (बदलना) = (क) किसी पर से ध्यान (विद्योषत) छुपायुर्ण वृष्टि) फेर या हटा लेना। (ख) अप्रसन्न या नाराज होना ।
**४. सामने या आगे का भाग । जैसे—(क) वह मकान दक्खिन शक्य का है। (ख) कुर्सी का शक्य दक्षर कर दो। ५. किसी आर का तल या पार्श्व । स्तर। जैसे—इस कागज का शक्य सफेद और दूसरा हरा है। ६. शतरंज का किसी या हार्थी नाम का मोहरा ।
 अर्थ० १. तरक । मोर । २. सामने ।
यु० [सं० शक्य] १. एक प्रकार की घास जिसे बरक तुण कहते हैं। २. पेड़ । वृक्ष ।
 †वि०—शक्या ।
वि० [सं० शक्य] शोभायमान । उदा०—राजति रत्न रत्नरत्नित दल—शिधीराज ।**

शक्य-वधवा—यु० [हि० शक्य+चक्रना] १. शाखा-भृगु । बवर । २. भूष या प्रेत जिसका निवास प्राय वृषो पर माना जाता है ।
शक्यार—वि० [शक्यदार] (आजार भाव) जिससे नित्य तेजी-धंधी आवी रहती हो ।
शक्यसत—स्त्री० [अ० शक्यत] १. कही से चलने के समय विदा होने की क्रिया या भाव । २. नीकरी । सेवा आदि से मिलनेवाली अल्पकालीन छुट्टी । अवकाश । ३. अनुत्सा । अनुमति । परवानगी । (श्व०) ४. उर्दू काश्मि में दुल्हन का दूल्हे के घर जाना ।
क्रि० प्र०—देना।—माना।—मिलना।—लेना ।
वि० जो कही से विदा होकर चल पडा हो । जिसने प्रस्थान किया हो ।
शक्यसताना—यु० [सं०] शक्यसत । शक्यसत अर्थात् विदाई के समय किया अथवा वाटा जानेवाला घन ।
शक्यसती—वि० [अ० शक्यसत+ई (प्रत्य०)] १. शक्यसत सम्बन्धी । शक्यसत का । २. जिसे शक्यसत या छुट्टी मिली हो ।
स्त्री० १. शक्यसत । विदाई । २. मँके से विवाहित कन्या के घर जाने की क्रिया या भाव । ३. उत्तल विदाई के समय कन्या या दामाध को मिलनेवाला घन ।
शक्यसार—यु० [सं०] शक्यसार । कपाल । गाल ।
शक्या—वि० [सं०] शक्य [स्त्री० शक्यी] शक्य या पार्श्व वाला । (शो० के अंत में) जैसे—शाला, चौरुका आदि ।
शक्याई—स्त्री० [हि० शक्या+आई (प्रत्य०)] १. रुके होने की अवस्था, धर्म या भाव । रुकापन । रुकावट । २. सुदर्शी । दुष्कर्ता । ३. श्वहरार आदि की कठोरता और नीरसता । बेमुरीवती ।
शक्यानी—स्त्री०—शक्यानी ।
शक्यानल—यु० [सं० शोषानल] कोषाग्नि । (हि०)
शक्याना—अ० [हि० शक्या+आना (प्रत्य०)] १. रुका होना । चिकना न रह जाना । २. नीरस या फीका होना ।
सं० १. रुका करना । २. नीरस या फीका करना ।
अ० [सं० शक्य] किसी और रुक होना ।
सं० किसी और रुक करना ।
शक्यानी—स्त्री० [सं० शोष+छेद । सनिप्र शब्दने की चीज] १. बवृषयो का लकड़ी छीलन का एक छोटा धारदार उपकरण । २. सगतराशो की टाँकी ।
शक्यावट—स्त्री०—शक्याई ।
शक्यावट—स्त्री०—शक्यावट (शक्याई) ।
शक्यता—स्त्री० [य० शक्यता] वह मायिका जो रोष या क्रोध कर रही हो । कड़ी हुई मानवती नायिका ।
शक्यिया—स्त्री० [हि० शक्य+इया (प्रत्य०)] पेठो की छाया से युक्त भूमि । वि० छायादार ।
शक्यी—स्त्री० [हि० शक्या] भूना हुआ चना आदि । चबना । (पूरक) स्त्री० [हि० शक्य] बहुत छोटा पोषा ।
शक्योद्गी—वि० [हि० शक्या +ओद्गी (प्रत्य०)] [स्त्री० शक्योद्गी] जिसमें रुकापन हो । जैसे—शक्योद्गी नैन ।
शक्या—यु० [हि० रोग] शक्योद्गी का एक रोग । टपका ।
शक्यिया—वि०—रोषो ।

शर्मा—पूर्वो [दिश०] बहुधा। घास।
शर्म—वि० [सं०/वृत्/शर्म (रीम)+कृत, ल—न] १. जो किसी रोग से बसत ही। बीमार। २. जिसमें किसी प्रकार का दूषित विकार हुआ हो। ३. टेढ़ा। ४. दुःख हुआ।
शर्मल—स्त्री० [सं० शर्म+लृप्+टाप्] शर्म होने की अवस्था या भाव।
शर्मात्म—पूर्वो [सं०] १. रोगियों के रखे जाने का स्थान। २. आज-कल किसी बड़े भवन या सभ्या में बहु कमरा या स्थान, जहाँ घायल, रोगी आदि भिक्षुता के लिए रखे जाते हैं।
शर्मावास—श—पूर्वो [सं० शर्म+अवकाश, वं० तं०] शर्मावकाश के कारण जो जानेवाली छुट्टी। बीमारी की छुट्टी। (मेडिकल लीव)
शर्माह—पूर्वो [सं० वं० सं०] एक प्रकार का सज्जिवाल जो बीस दिनों तक चलाता है; और प्रायः असाध्य माना जाता है।
शर्म—स्त्री०=शर्मि।
शर्मक—वि० [वृत्/शर्म (शीति)+कन्वृत्—अक] १. शर्मनेवाला। शर्म के अनुकूल प्रतीत होनेवाला। रोचक। २. जायकेदार। स्वादिष्ट। पुं०। ३. वास्तु विद्या के अनुसार ऐसा घर जिसके चारों ओर के अलिंद (बनूरा या परिष्काम) में से पूर्व और पश्चिम का सर्वथा मन्दि हो गया हो और उत्तर तथा दक्षिण का समुद्र या जमी का स्थान हो। इसका उत्तर का द्वार अचम और वेध द्वार शुभ माने गए हैं। २. चौकीदार खंभा। ३. पुराणांशुसार सुमेरु पर्वत के पास का एक पर्वत। ४. जैन हतिबंध के अनुसार हतिबंध का एक पर्वत। ५. मांगल्य ग्रन्थ। ६. माला। ७. बाँझों आदि को पढ़नाये जानेवाले गूठने। ८. प्राचीन काल का निष्क नामक सिक्का। ९. दांत। १०. कनूतर। ११. रोचना। १२. ममक। १३. काला ममक। १४. सज्जी खार। १५. बाय-विडंग। १६. दिशा। विजौरा नीच। १७. दक्षिण दिशा।
शर्मदास—वि० [सं० शर्म+दास=देनेवाला] भला लगने योग्य। जो अच्छा लग सके।
शर्मना—अ० [सं० शर्म+हि० ना (प्रत्यय)] शर्म के अनुकूल प्रतीत होना। प्रिय तथा भला लगना।
शर्म—शर्म शर्म=शर्मिपूर्वक।
शर्मा—स्त्री० [सं०/वृत्/शर्म+टाप्] १. शर्मिल। प्रकाश। २. छवि। घोमा। ३. इच्छा। कामना। ४. विधियों के बोलने का शब्द।
शर्मि—स्त्री० [सं०/वृत्/शर्म+हि०] १. शर्मा। चमक। २. छवि। घोमा। ३. प्रकाश की किरण। ४. शान्ति देने की चीजों में आने या होनेवाला स्वाद। ५. मन की वह प्रवृत्ति या स्थिति जिसके फलस्वरूप कुछ काम, शीर्ष या बालों अच्छी और प्रिय जान पड़ती हैं, अथवा उनकी ओर मनुष्य झुकाता या बढ़ता है। जैसे—(क) ब्राह्मण में प्रायः धर्म की ओर लोगों की शर्मि होने लगती है। (ख) इस समय कुछ शान्ति की हमारी शर्मि नहीं है। ६. मनुष्य की वह योग्यता या शक्ति जिसके आधार पर वह कला, संगीत, साहित्य आदि के गुण या विशेषताएँ परखता और उनका आदर करता है। जैसे—(क) इस विषय में उनकी शर्मि बसत-पारण और विलक्षण है। (ख) यह तो अपनी अपनी शर्मि की बात है। ७. इच्छा। कामना। ८. किसी पदार्थ या व्यक्ति के प्रति होनेवाला अनुप्राय या आसक्ति। ९. कायास्थक के अनुसार एक प्रकार का शक्तिगण। १०. गोरोचना।

वि० शर्मि।
 पुं० रोष्य मनु के पिता का नाम, जो एक प्रजापति माने गये हैं।
शर्मिकर—वि० [सं० वं० तं०] १. (विषय) जिसमें शर्म होती तथा मन रमता हो। २. भला लगनेवाला। ३. शर्मि उत्पन्न करनेवाला। ४. फूल बढ़ानेवाला। (शैबक)
शर्मिकारक—वि० [सं० वं० तं०] शर्मिकर (शे०)।
शर्मिकारी (शर्मि)—वि० [सं० शर्मि/कृत (करण)+गिणि, उप० सं०] १. शर्मि उत्पन्न करनेवाला। शर्मिकर। २. स्वादिष्ट। ३. मनोहुर। सुन्दर।
शर्मिल—पूर्वो [सं० शर्म+कितवृत्] १. जो शर्म के अनुकूल प्रतीत हुआ हो। पचाया हुआ। (शैबक)। ३. [वृत्/शर्म+कृत] वाहा हुआ। पुं०। १. इच्छा। २. मधुर और शर्मनेवाला पदार्थ।
शर्मि-शाम (शर्म)—पूर्वो [सं० वं० तं०] सूई।
शर्मि-कल—पूर्वो [सं० मध्य० सं०] तासपाटी।
शर्मिभर्त्स (शर्मि)—पूर्वो [सं० वं० सं०] १. सूयर्षी। २. मालिक। स्वामी। वि० आनन्ददायक। सुखद।
शर्मिली—स्त्री० [सं० शर्मि+मनुप्+शीप्] उपरनेन की पत्नी जो हृष्य-चन्द्रबी की नाती तथा देवकी की माता थी।
शर्मि—वि० [सं०/वृत्/शर्मि+कृत] १. जो शर्म के अनुकूल हो। अच्छा। भला। २. मनोहुर। सुन्दर। ३. मधुर। मीठा। पुं०। १. केसर। २. लौंग। ३. मूली।
शर्मिलता—स्त्री० [सं० शर्मि+लृप्+टाप्] शर्मि होने की अवस्था, धर्म या भाव।
शर्मिरोजन—पूर्वो [सं० शर्मि-रोजन, कर्म० सं०] शोभांजन। सहजिन।
शर्मिदा—स्त्री० [सं० शर्मि+टाप्] १. सुप्रिया नामक श्वं का एक नाम। २. एक प्रकार का वृक्ष जिसके प्रत्येक चरण में अ, ज, स, ल, ग, (शः शः) (शः शः) होते हैं। ३. रामायण के अनुसार एक प्राचीन नदी। ४. केसर। ५. लौंग। ६. मूली।
शर्मिदाई—स्त्री०=शर्मिदा।
शर्मि-बद्धक—वि० [सं० वं० सं०] १. शर्मि उत्पन्न करने या बढ़ानेवाला। २. भोजन की शर्मि या भुक्ष बढ़ानेवाला। (शैबक)
शर्मिष्य—पूर्वो [सं०/वृत्/शर्मि+कितवृत्] जाने का मधुर साध पदार्थ। वि० जिसके प्रति शर्मि हो अथवा हो सकती हो। शर्मनेवाला।
शर्मि—स्त्री० [सं० शर्मि+शीप्]=शर्मि।
शर्मि—वि० [सं० वृत्] १. कला। कस्त। २. अस्तवत्। नाराज। पुं०=शर्म (शुश)
शर्मि—वि० [सं०/वृत्/शर्मि+कृत] १. शर्मिकर। २. मनोहुर। सुन्दर। पुं०। ३. लौंग। ४. नरकत। ५. पति। स्वामी।
शर्म—पूर्वो [सं०/वृत्/शर्मि+कृत] १. दूटने या अस्थिरंग होने का भाव। २. कष्ट। वेदना। ३. क्षत। बाधा। ४. प्राचीन काल का एक प्रकार का बाजा जिस पर चमका मड़ा होता था।
शर्मिमार—पूर्वो=रोजाना।
शर्मि-मस्त—वि० [सं० वं० सं०] शर्म। रोगी।
शर्मा—स्त्री० [सं०/वृत्/शर्मि+टाप्] १. दूटने फूटने या भंग होने का

भाव। २. रोग। बीमारी। ३ कष्ट। पीडा। ४ कुष्ठ नामक रोग। कोष्ठ। ५ श्रेष्ठ।

व्याकरण—वि० [म० व० सं०] रोग उत्पन्न करने या बढ़ानेवाला।
 पु० १. रोग। बीमारी। २ कमरबल (फल)।

व्याली—स्त्री० [स० वजा-आली व० सं०] १ रोगी या कष्टों का समूह।
 २ ऐसी स्थिति जिसमें एक साथ कई रोग सता रहे हों। ३ एक पर एक अथवा एक न एक रोग लगा रहना।

व्यती—वि० [म० वृत्-रोग] रुग्ण। रोगी।

वृद्ध—वि० [अ० वृज-प्रवृत्त] १ जिसकी तबीयत किसी और श्रुकी या लगी हो। २ जो किसी और प्रवृत्त हो।

व्यसन—अ० [म० वृद्ध, प्रा० वृत्त] धाव आदि का भरना या पूजना।
 †अ० १ =ककना। २ =उलझना।
 अ० [स० रजन] १ मन बहलाने के लिए किसी काम में लगे रहना।
 २. मन का इस प्रकार किसी काम में लगे रहना ३ किसी कार्य के सम्पादन में प्रवृत्त होना या लगना।

व्यती—स्त्री० [देषा०] एक प्रकार की लकी चोचवाली छोटी चिड़िया जिसकी पीठ काली और छाती सफेद होती है।

वृत्—स्त्री० [स० वृष्ट, प्रा० वृष्ट] १ वृत्तों की क्रिया या भाव।
 २ श्रेय। गृहस्था। रोष।

वृत्तना—अ० =वृत्तना।

वृत्ता—स्त्री० [स०] सरस्वती नदी की एक शाखा।

वृत्तित—भू० क० [स० रणित] मधुर ध्वनि या शब्द करता हुआ। बजता हुआ।

वृत्—भू० [स० वृ/व (शब्द) +वत्] १ पक्षियों का शब्द। कलवर।
 २ ध्वनि। शब्द।
 †स्त्री० =वृत्तु।

वृत्ता—भू० [अ० वृत्त] १ सामाजिक दृष्टि से होनेवाली वह अच्छी और ऊँची स्थिति जिसमें यथेष्ट आदर, प्रतिष्ठा या मक़ार हो। २ राज्य या शासन की सेवा में मिलनेवाला कोई अच्छा और ऊँचा पद।
 ३. बड़ाई। महत्ता। श्रेष्ठता।

वृत्ती—स्त्री० [स० वृ/वृ (रोग) +वृत्त-अन्त, †-रीष्ट] एक प्रकार का छोटा शृंग। सजीवनी। श्रवणी।

वृत्त—भू० [स० वृ/वृ +अर्थ] १ बुना। २ छोटा बच्चा। ३ मुर्गा।

वृत्त—भू० [स० रोदन] १. रोगे की क्रिया या भाव। २ रोगे पर होने-वाला शब्द।

वृत्ताछ—भू० =वृत्ताश।

वृत्तित—भू० क० [स० वृ/वृ (रोग)। वृत्त] रोगा हुआ।

वृत्तुला—भू० [देषा०] अगहन मास में होनेवाला एक प्रकार का धान।

वृत्त—भू० क० [स० वृ/वृ (आवर्ण) +वत्] १ वक्रा या रोक हुआ।
 बाधित। २. घिरा या घेरा हुआ। ३ पकड़ा हुआ। ४ जिसकी चाल या गति बढ़ हो गई हो। बढ़। ५ मुँदा हुआ।

वृत्त-कंठ—वि० [स० व० सं०] कर्णना, दया, प्रेम आदि के कारण जिसका मन्त्र रक्ष गया हो, और फलतः जिसके मुँह से टीक तरह से और पूरी बात न निकलती हो।

वृत्त—भू० [स० वृत्त +कृत्] नमक।

वृत्त-भूष—भू० [स० व० सं०] मृगकृच्छ्र (रोग)।

वृत्तासंघ—भू० [स०] स्त्रियों का एक रोग जिसमें उनका मासिक धर्म उचित समय से पहले ही बंद हो जाता या रुक जाता है। (एमिनीरिया)

वृत्त—वि० [स० वृ/वृ +गिष् +रृक्, गि-लुक्] १. रुकनेवाला। २ रोगे से छुटाने या रोग बन्द करनेवाला। ३ बरताना। भयंकर।

पु० १. एक प्रकार के गण देवता जिनकी उत्पत्ति सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्मा की मोहो से मानी गई है और जो संख्या में ११ कहे गये हैं। २ उक्त के आधार पर ११ सूक्त मन्थ्या की सत्ता। ३ शिव का एक रूप। ४ प्राचीन काल का एक प्रकार का वाद्य। ५. अक या मदार का पौधा। ६ साहित्य में रीढ़ रस।

वृत्त—भू० =वृत्ताश।

वृत्त-कमल—भू० [मध्य० सं०] वृद्धाश।

वृत्त-कलस—भू० [मध्य० सं०] वह कलम जिसकी स्थापना घरों आदि की शक्ति के उद्देश्य से की जाती है।

वृत्त-काली—स्त्री० [कर्म० सं० वा व० सं०] शक्ति या दुर्गा की एक मूर्ति का नाम।

वृत्त-कोटि—भू० [स०] एक प्राचीन तीर्थ जिसमें वृद्धों का निवास माना गया है।

वृत्त-गण—भू० [सं० व० सं०] पुराणानुसार शिव के पारश्व या अनुचर जिनकी संख्या तीस करोड़ मानी जाती है।

वृत्त-गर्भ—भू० [स० व० सं०] अग्नि। आग।

वृत्त—भू० [स० वृ/वृ (उत्पत्ति) +ठ] पारा।
 वि० वृत्त से उत्पन्न।

वृत्त-जटा—स्त्री० [व० सं०] १ इसरोल। ईसरमूल। २. गोफ। ३. एक प्रकार का शृंग। जिसके पत्तें मयूर-बिल्ला के पत्तों की तरह के होते हैं।

वृत्त—भू० [स०] काव्यालंकार नामक ग्रन्थ के रचयिता संस्कृत साहित्य के एक प्रसिद्ध आचार्य जो वृत्त और शतानन्द भी कहलाते थे।

वृत्त-लघ—भू० [स०] जैन हरिवंश के अनुसार तीसरे श्रीकृष्ण का एक नाम।

वृत्त-ताल—भू० [स० मध्य० सं०] मृग का एक ताल जो सोलह मात्राओं का होता है। इसमें ११ आघात और ५ क्षाली होते हैं।

वृत्त-तेज (अस्) —भू० [स० व० सं०] स्वामी कातिकेय।

वृत्त—भू० [स० वृत्त +वृ] वृद्ध होने की अवस्था या भाव।

वृत्त-पति—भू० [व० सं०] शिव। महादेव।

वृत्त-पत्नी—स्त्री० [व० सं०] १ दुर्गा का एक नाम। २. अतर्षी। अलसी।

वृत्त-पीठ—भू० [व० सं०] ताम्रिण के अनुसार एक पीठ या तीर्थ।

वृत्त-भूष—भू० [व० सं०] बारहूके मनु। वृद्धसर्गिण का एक नाम।

वृत्त-प्रयाण—भू० [व० सं०] उत्तर प्रदेश के गढ़वाल जिले के अन्तर्गत एक तीर्थ।

वृत्त-प्रिय—भू० [व० सं०] संगीत में, कनकटीक पद्धति का एक राग।

वृत्त-प्रिया—स्त्री० [व० सं०] १ पार्वती। २ हरीशकी-देहा। हरें।

वृत्त-बीची—स्त्री० [सं० वृत्त +इ० बीस] फलित ज्योतिष में प्रमुख आदि साठ स्वस्वरो में अतिम बीस स्वस्वरो या पूर्व जो संसार के लिए बहुत कष्टदायक कहे गये हैं। वृत्त-विशति।

शब्द-सू—पुं० [ब० सं०] शब्दशाला । मरघट ।
 शब्द-स्त्री—स्त्री० [ब० सं०] १. शब्दशाला । २. एक विशेष प्रकार की मृत्ति ।
 (शब्दी)
 शब्द-शैली—स्त्री० [ब० सं०] कृता की एक मूर्ति ।
 शब्द-शक्त—पुं० [मध्य० सं०] एक प्रकार का शक्त जो शब्द के उद्देश्य से किया जाता है ।
 शब्दशाला—पुं० [मध्य० सं०] तांत्रिकों का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ जिसमें शैल्य और शैली का सहाय है ।
 शब्द-शोचन—पुं० [सं०] स्वर्ण । सोना ।
 शब्द-शोका—स्त्री० [सं०] क्रांतिकेय की एक मातृका ।
 शब्द-शला—स्त्री० [मध्य० सं०] शब्द जटा (शुभ)
 शब्द-लोक—पुं० [ब० सं०] वह लोक या स्वान जिसमें शिव और शक्ति का निवास माना जाता है ।
 शब्द-लीला—स्त्री० [सं०] एक प्रसिद्ध कवीशक्ति जिसकी गणना विद्योपधि वर्ग में होती है ।
 शब्द-लस—पुं०—शब्दशाला ।
 शब्द-मन्त्र—पुं० [ब० सं०] महादेव के पाँच मन्त्र । २. पाँच की संख्या का सूचक शब्द ।
 शब्द-मन्त्र (बन्)—वि० [सं० शब्द+मन्त्र] शब्दगणों से युक्त ।
 पुं० १. सोमा । २. अग्नि । ३. इन्द्र ।
 शब्द-निवासि—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] साठ संवत्सरो के अन्तिम २० संवत्सरो का समूह जो अमांगलिक और क्रूर-पद कहा गया है । शब्दबीसी ।
 शब्द-नीला—स्त्री० [ब० सं०] एक तरह की पुरानी चारु की बीणा ।
 शब्द-साधना—पुं० [सं० मध्य० सं०] शार्दूल में मनु । (पुराण)
 शब्द-सुंदरी—स्त्री० [ब० सं०] देवी की एक मूर्ति ।
 शब्द-सू—स्त्री० [सं० शब्द+सू (प्रसव)+विभत्] वह जननी या माता जिसकी ग्यारह सताने हो ।
 शब्द-स्वर्ण—पुं०—शब्द-शोका । (दो०)
 शब्द-हिमालय—पुं० [मध्य० सं०] हिमालय पर्वत की एक चोटी ।
 शब्द-हृदय—पुं० [ब० सं०] एक उपनिषद् जो प्राचीन वस उपनिषदों से अलग है ।
 शब्दा—स्त्री० [सं० शब्द+टाप] १. शब्दजटा नामक शुभ । २. नलिका नाम गण ग्रन्थ । अखिल-मञ्जरी । मुस्तकवाँ ।
 शब्द-कीर्ति—पुं० [शब्द-आकीर्ति, ब० सं०] शब्द या शिव का कीर्ति-स्वल्प ; अर्थात् मरघट या शब्दशाला ।
 शब्दात्—पुं० [शब्द-अधि, ब० सं०, +अच्] १ एक प्रकार का वृक्ष जिसके बीजों को सिरोंकर पहनने तथा अपने के लिए मालाएँ बनाई जाती हैं । २. उक्त पेड़ का बीज जो शिव का परम प्रिय कह गया है ।
 शब्दाती—स्त्री० [सं० शब्द+तीप्] आनुष् । १. शब्द अर्थात् शिव की पत्नी पार्वती । शिवा । २. ग्यारह वर्षों की कन्या की सजा । ३. शब्द-जटा नामक लता । ४. संगीत में एक प्रकार की रागिणी, जो मेघ-राग की पुनः-पुनः कही गई है । (कुछ लोग इसे संकर रागिणी भी मानते हैं)
 शब्दाति—पुं० [शब्द-अति, ब० सं०] कामदेव ।
 शब्दावत—पुं० [शब्द-आवत, ब० सं०] शिव का निवास स्थान । जैसे—
 काशी, कैलास, शम्भाना आदि ।

शब्दाव—पुं०=शब्दात् ।
 शब्दिय—पुं० [सं० शब्द+य—इय] १. शब्द संबंधी । शब्द का । २. शब्द से उत्पन्न । ३. शब्द की तरह भयानक । शब्दावना । ४. आनन्द देने-वाला ।
 शब्दी—स्त्री० [सं० शब्द+डीप्] १. वेद के शब्दानुवाक या अक्षरमण सूक्त की ग्यारह आवृत्तियों जिनका पाठ बहुत शुभ माना जाता है । २. एक प्रकार की बीणा । शब्दी बीणा ।
 शब्दीपविषद्—स्त्री० [सं० शब्द उपनिषद्, मध्य० सं०] एक उपनिषद् का नाम ।
 शब्दिर—पुं० [सं० व्+वृ (आवरण)+किरच्] १. शरीर में का रक्त । शोणित । लहू । खून ।
 शिष्य—पुं० [सं०] 'वृत्त' और 'लहू' के मुहा० ।
 २. कुकुम्भ । केशर । ३. मंगल ग्रह । ४. शिष्याख्य नामक रत्न ।
 शब्दिर-मुत्सव—पुं० [मध्य० सं०] स्त्रियों का एक प्रकार का रोग जिसमें उनके पेट में एक तरह का गीला-सा घुमता रहता है । (जिससे गर्भ का भ्रम होता है) । (वैद्यक)
 शब्दिरपायी (सिन्)—वि० [सं० शब्दिर+पा (पीता)+गिति, उप० सं०] [स्त्री० शब्दिरपायिनी] १. खून पीने वाला । २. रक्त पिपासक ।
 पुं० राजस ।
 शब्दिर-शोहा—स्त्री० [मध्य० सं०] ज्वीहा नामक रोग का एक भेद । (वैद्यक)
 शब्दिर-विज्ञान—पुं० [ब० सं०] आधुनिक विज्ञान की वह शाखा जिसमें शब्दिर में रहनेवाले तत्वों और उनसे उत्पन्न होनेवाले कीटाणुओं या विकारों का विवेचन होता है । (हेमोसालोजी)
 शब्दिर-वृद्धि-दाह—पुं० [सं० शब्दिर-वृद्धि, ब० सं०, शब्दिर-वृद्धि-दाह, ब० सं०] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का रोग जिसमें मुँह में से एक प्रकार की बू निकलने लगती है ।
 शब्दिराशय—वि० [सं० शब्दिर-अन्त, पुं० सं०] १ जिसमें बहुत-सा शिबिक या लहू हो । वन से भरा । २. शब्दिर या लहू की तरह लाल । ३. खून से तर या भीगा हुआ ।
 शब्दिराख्य—पुं० [शब्दिर-आख्या, ब० सं०] एक प्रकार का रत्न ।
 शब्दिरानन—पुं० [शब्दिर-आनन, ब० सं०] फलित ज्योतिष में मंगल ग्रह की एक प्रकार की वक्र गति ।
 शब्दिराम्य—पुं० [शब्दिर-आम्य, मध्य० सं०] रक्तपित्त नामक रोग ।
 शब्दिरासन—वि० [शब्दिर-आसन, ब० सं०] जिसका मोजन शब्दिर हो । (सूत्रमल, जोष, मच्छद आदि)
 शब्दिराशी (सिन्)—वि० पुं० [सं० शब्दिर+अच् (आना)+गिति]=शब्दिराशन ।
 शब्दिराशुवारी (सिन्)—पुं० [सं० शब्दिर-उच्+गु (कीलना)+गिति, उप० सं०] ब्रह्मपति के साठ संवत्सरो में से सत्तावनवाँ संवत्सर ।
 शब्दिसूत्र—स्त्री० [सं०] नूपुर के अजने से होनेवाला शब्द । २. शनकाकर विशेषतः मयूर शब्द ।
 शब्दिसूत्रा—अ० [हिं० शब्दिसूत्रा] शब्दिसूत्र शब्द होता ।
 सं० नूपुर आदि बजाकर शब्दिसूत्र शब्द उत्पन्न करना ।

धर्माई—स्त्री० [सं० अर्ध + हि० आई (प्रत्य०)] लालहोने की अवस्था या भाव। जाली। सुखी।
धर्मिल—वि०—धर्मिल (वज्रता हुआ)।
धर्मी—पुं० [दिस०] धोई की एक जाति।
धर्मक-संनूक—स्त्री० [अनु०] कनकन। (दे०)
धर्मल—पुं० [दिस०] एक प्रकार का बंस।
धर्मना—अ० [हि० रोपना का अ०] १ रोपा जाना। जैसे—संत मे धार धरना। २ द्रव्यपूर्वक गाड़ा, जमाया या लगाया जाना। जैसे—पैन धरना।
धर्मनि—वि०—धर्मवती।
धर्मना—पुं० [सं० रूप्य] १ चाँदी का सिक्का। २ पुराने ६४ पैसों या १०० नए पैसों के मूल्य का मोटा या सिक्का।
मुहा०—धर्मना उठाना—धन व्यय करना। धर्मना लड़ा करना—धर्मन धन उगाहना या प्राप्त करना। धर्मना ठीकरी करना—धर्मना का बहुत बुरी तरह से आप्तव्य करना।
 ३. धन-बोलत। सम्पत्ति।
मुहा०—धर्मना धारना—धन बरबाद करना या लूटना।
धर्म—धर्मना वेसा—धन-बोलत। सम्पत्ति।
धर्मली—स्त्री० [हि० रूपया]—रूपया (उरोला और गुच्छता का सूचक)
उदा०—ए० ए० बी० ए० पास कर के चालीस-चालीस धर्मली की नौकरी के लिए मारि-मारि फिरते हैं।—राहुल माऊल्यायन।
धर्महारा—वि०—रूपहला।
रूपहला—वि० [हि० रूपा + चाँदी] हला (प्रत्य०) [स्त्री० रूपहली] रूपा अर्थात् चाँदी के रंग का। चाँदी का सा। उज्ज्वल तथा चमकीला।
 जैसे—रूपहला मोटा, रूपहला धाम।
रुपा—पुं०—रूपया। २—रूपा (चाँदी)।
रुपया—पुं०—रूपया।
रुपीला—वि० [स्त्री० रुपीली]—रूपहला।
रुपा—वि० [फा०] [भाव० रूपाई] १ ले जानेवाला। २ मोहित करने का लुभानेवाला। जैसे—दिलरुपा।
रुपाई—स्त्री० [अ०] [बहु० रुपाईयात] १ उर्दू फारसी में एक प्रकार की मुद्रक कविता जिन्में चार चरण या मिनरे होते हैं और जो प्रायः हजाज नामक छंद में होती है। इसमें नीसरे चरण या मिनरे को छोड़कर शेष तीनों में काफिया और रवीक दोनों होते हैं। फारसी में इसे 'तराना' भी कहते हैं। २ एक प्रकार का चलता गाना।
रुपी० [फा०] रुपा होने की अवस्था या भाव।
रुपाई एमन—पुं० [हि० रुपाई + एमन] एक प्रकार का राग। (संगीत)
रुपचा—पुं०—रुपचाप।
रुपच—पुं० [म०] रामायण के अनुसार एक बानर जो सौ करोड़ बानरो का पुष्पवलि कहा गया है।
रुपचान् (धरन्)—पुं० [सं०] १ एक प्राचीन ऋषि। २ पुराणानुसार एक पर्वत।
रुपचित—वि०—रुपचित।
रुपा—स्त्री० [सं०] सुग्रीव की पत्नी। (वाल्मीकि)
रुपाल—पुं०—रुपाल।

रुमायिया—स्त्री० १—रुमाल। २—रुमाठी।
रुमाली—स्त्री० [फा० रुमाल] १. एक प्रकार का लंगोट जिसमें दोनों ओर कमर में बाँधने के लिए बंद लगे रहते हैं। २ मुग़ल धूमने का एक डग।
रुमावली—स्त्री०—रुमावली।
रुमाई—स्त्री० [हि० रुमा + आई (प्रत्य०)] रुमा होने की अवस्था या भाव। मुग़लराज।
रुम—पुं० [सं०/रु (शब्द) + क्त०] १ काला हिरन। कस्तुरी मृग। २. एक दैत्य जिसे दुर्गा ने मारा था। ३. एक भैरव का नाम। ४. एक प्रकार का फूलदार वृक्ष। ५. एक क्रूर तथा अत्यान्त वंशु। ६. एक ऋषि। ७. देवताओं का एक गण। ८ सार्वाण मनु के सत्पुत्रियों में से एक।
रुमना—पुं० [हि० ररना, ररना] एक तरह का उल्फु।
रुमना—अं० [सं० लुलन] १. स्थायी वास स्थान का अभाव होने पर कच्ची कच्ची लोकोत्पत्ती कच्ची बतकने किराना। २. दुर्शासन होकर इधर-उधर भ्रमण करना। ३. (वस्तु का) इधर-उधर पड़ी होना अथवा उठाई-पटकना या छोड़ने-मेकी होना।
रुमाई—स्त्री० [हि० रोना + आई (प्रत्य०)] १. रोने की क्रिया या भाव। २. रोने की प्रवृत्ति।
रुमि० प्र०—आना।—लूटना।
रुमना—सं० [हि० रोना का प्र०] दूसरे को रोने में प्रवृत्त करना। ऐसा काम या बात करना जिससे कोई रोने लगे।
रुमि० [हि० रुमना] ऐसा काम करना जिससे कोई बीज या व्यक्तित्व बले।
रुमनी—स्त्री० [दिस०] रोहिणी की तरह की पर उससे छोटी एक वनस्पति।
रुमल, रुमला—स्त्री० [दिस०] बहु भूमि जिसकी उपजाऊ शक्ति कम हो गई हो और जिसे परती छोड़ने की आवश्यकता हो।
रुमा—पुं०—रुमा।
रुमाई—रुमाई।
रुमाप—पुं०—रोव।
रुमना—स्त्री० [म०] रुम की एक पत्नी। (भागवत)
रुम—पुं० [सं०/रु (शब्द) + क्त०] रुम। रुमना। रोप।
रुमा—स्त्री० [सं०/रु + टाप्] रुम। रुमना।
रुमित—पुं० रुम [सं०/रु + क्त०] १ जिसे रोप हुआ हो। अप्रसन्न। रुम। नाराज। २ जिसे दुःख पहुँचा हो। दुःखित।
रुमतर—पुं०—रुमरीवर।
रुम—पुं० रुम [सं० रु + क्त०] १. रोप से भरा हुआ। रुम। २. रुम हुआ है। ३. अप्रसन्न। नाराज।
रुमता—स्त्री० [सं० रुम + तल् + टाप्] रुम होने की दशा या भाव। रुम क्यवन्ति के मत में होनेवाला भाव। अप्रसन्नता। नाराजगी।
रुम-रुम—वि०—रुम-रुम।
रुमि—स्त्री० [सं०/रु + क्त०] १. रुमता। २. रोप।
रुमना—अं०—रुमना।
रुमना—वि० [फा० रुमना] [भाव० रुमनाई] जिसकी बहुत बदनामी हो। निवृत्त। बदनामी।

कलियाई—स्त्री० [फा० कलियाई] रस्ता होनेकी अवस्था या भाव । बदनामी । निवा ।

कलिया—पुं०=कलिया (अवस्था) ।

कलिया—वि०=कलिया (व्यथ) ।

कलिया—पुं० [अ०] १. पर्वत । रस्ता । २. एतवार । विषयात् । ३. बुद्धता । ४. भेल-बोल । प्रेम-व्यवहार । ५. कुशलता । वखाता ।

कलिया—पुं० [अ०] 'रस्त' का बहु० रूप । रस्ते ।

↑ पुं०=रस्त (कर) ।

कलिया—पुं० [अ०] 'रस्त' का बहु० रूप ।

कलिया—वि०=व्यथ ।

कलिया—पुं० [अ०] १. कारर का एक प्रसिद्ध प्राचीन ईरानी पहलवान, जो अपने समय में सबसे अधिक बलवान माना जाता था ।

कलिया—किरदोली बाहानामे में इसकी वीरता का वर्णन किया है ।

२. बहुत बड़ा धुर-बीर ।

पद—छिपा दस्तम । (दे०)

कलियाखानी—स्त्री० [फा०] १. छतम का सा पीछ अथवा बल-वीर्य । २. अपने महत्व या शक्ति का बहुत बड़ा अभिमान या घमंड ।

कलिया—स्त्री० [हिं० कलिया] कठे हुए होने की अवस्था या भाव ।

कलिया—स्त्री० [स०/वह्. (उपना) +क+टाप्] १. बुध । २. अतिबला । ३. मास रोहिणी लता । ४. लज्जाल । लज्जवती ।

कलिया—पुं०=कलिया (बुध) ।

कलिया—पुं० [हिं० कलिया] अथक के उत्तर-पश्चिम पड़नेवाला प्रदेश जहाँ कलिया पठान बसे थे ।

कलिया—पुं० [?] पठानों की एक जाति जो प्रायः किसी समय अथक के उत्तर-पश्चिम में आकर बसी थी ।

कलिया—पुं०=कलिया (बुध) ।

कलिया—पुं० [हिं० कलिया] 'अलख' कह कर मिथा मांगनेवाले एक प्रकार के साधु ।

कलिया—ये साधु कमर से एक बड़ा सा धुंधक बांधे रहते हैं ।

↑ पुं०=रोगटा ।

कलिया—पुं०=रोगटा ।

कलिया—स्त्री० [हिं० कलिया+वाली=आली] भेड़ । गाबर ।

कलिया—पुं० [स० कक=उदारता] खरीदार की संतुष्ट रखने के लिए उसे सोते से अधिक या अतिरिक्त धी जनेवाली चीज । उठा—जो आज अपने सीजय के साथ क्मे में दे रहे हैं ।—अजय ।

कलिया—स० १.—रौदना । २.—कलिया ।

कलिया—स्त्री० [हिं० कलिया] कलिये या कलिये हुए होने की अवस्था, क्रिया या भाव ।

↑ वि०=कलिया (कलिया हुआ) ।

कलिया—स० [न० दधना] १. मार्ग आदि रोक या बंद कर देना । रास्ते में रुकावट लड़ी करना या बिन्न डालना । २. सेत आदि की कटिवाट छाड़ी या तारों से घेरना । ३. घेरना ।

कलिया—पुं० [फा०] १. वेदरा । मुंह ।

कलिया—कलियावत=(क) पलापत । (ख) शील-सकोष । धुरीवत । मुहा०—कलियावत । जैसे—कानून या मजहब की कलियावत ।

नहीं होता चाहिए ।

२. आये ऊपर या सामने का भाग ।

कलिया—पुं०=बाहर-बीतर, आगे-पीछे या दोनों ओर ।

३. कारगम । बजह । ४. आधा । उम्मीद ।

कलिया—स्त्री० [हिं० कलिया] एक प्रकार की बहुत सुगन्धित घास ।

कलिया—स्त्री० [सं० रोग, प्रा० रोगा=हिं० रोगा, रोगी] १. कपास के डोंडी या कोस के अन्दर का पूजा । तूल ।

कलिया—पुं०=तुमना ।—तुमना ।—तुमना ।

कलिया—कलिया गाला=(क) बई के गाले की तरह कोमल या सफेद । (ख) सुंदर तथा सुकुमार ।

मुहा०—कलिया की तरह सुम डालना=(क) अच्छी या पूरी तरह से छिन्न-भिन्न या कुर्बशावस्त करना । (ख) बहुत अधिक मारना-पीटना ।

(ग) गहरी छान-बीन करना । कलिया की तरह तुमना=अच्छी तरह मारना पीटना । (अपनी) कलिया सूत में उलझना या लिपटना=अपने काम में लगना । अपने काम-काज में फँसना ।

२. बीजों आदि के ऊपर का रोआँ । जैसे—तेमल की बई ।

कलिया—वि० [हिं० कलिया+कां+दार (प्रत्य०)] (सिद्धा) द्वारा लक्ष्य जिसमें कर्ब आगे गई हो । जैसे—कलियादार भंग, कलियादार बंदी ।

कलिया—पुं० [स० वृक्ष; प्रा० वृक्ष] एक प्रकार का पेड़ जिसकी पत्तियाँ ओपधि के काम आती हैं ।

↑ पुं० [सं० कक] कलिया हुआ । घुलजा ।

कलिया [सं० कलिया] तलवार । (हिं०)

कलिया—पुं० [?] पुकारने की क्रिया या भाव । पुकार ।

कलिया—पुं०=पड़ना ।

कलिया—वि० [सं०/वह्. (कठोर)+अच्] [स्त्री० कलिया] १. पवारों जो चिकना या कोमल न हो । कलिया । सिताय का उलटा । २. कड़ा तथा धुरधुरा । ३. (व्यक्ति) जिसके स्वभाव में, उदारता, कोमलता, सीजय, स्नेह आदि बातें न हों ।

कलिया—पुं० [सं० वृक्ष, प्रा० वृक्ष] १. पेड़ । वृक्ष । २. नरकट । नरकल ।

↑ वि०=कलिया ।

कलिया—पुं० [हिं० कलिया] [स्त्री० अल्पा=कलिया] पेड़ । वृक्ष । वि०=कलिया ।

कलिया—ज०=कलिया ।

कलिया—पुं०=कलिया (वृक्ष) ।

वि०=कलिया ।

कलिया—वि० [सं० कलिया; प्रा० कलिया] १. जिसमें चिकनाहट या लिम्बधत का अभाव हो । अलिम्बध । 'चिकना' का चिजय । २. जिसमें भी, शैल आदि चिकने पदार्थ न पड़े या न लगे हों । जैसे—कलिया रोटी ।

३. (भोजन) जिसके साथ कोई स्वादिष्ट पदार्थ न हो अथवा जिसे स्वादिष्ट बनाने पर प्रयत्न न किया गया हो । जैसे—कलिया सूखी खाकर दिन बिताना ।

पद—कलिया-पुंजा, कलिया-सूखी । (दे०)

४. जिसमें आदत या रस न हो । कलिया । शुष्क । तीरस । ५. (व्यक्ति या स्वभाव) जिसमें कोमलता, ययालुता, स्नेह आदि मधुर वृत्तियों का अभाव हो । ६. (कथन या व्यवहार) जिसमें आसीयता, उदारता,

सौजन्य आदि का अभाव हो। जैसे—रुकी बातें या रूखा व्यवहार।
मुहा०—रूखा पड़ना या होना=(क) बेमुरीबनी करना। (ख)
शुद्ध या नाराज होना।

७ उदासीन। विरक्त। ८ जिसका तल सम न हो। खुरदुरा।
जैसे—यह कागज कुछ रूखा दिखाई पड़ता है।

पह—रूखा माल—नकाशी किया हुआ बरतन। (कलेरे)
पुं० एक प्रकार की छनी।

रूखापत्र—पुं० [हि० रूखा+पत्र (प्रत्य०)] १ रुखे होने की अवस्था,
गुण या भाव। रूखाई। २ खुरकी। नीरमता। ३ व्यवहार आदि
की कठोरता या हृदयहीनता।

रूखा-गुल—वि० [हि०] [रूखी० रूखी-गुली] (रोटी या भोजन)
बिना घी तथा मसाले का बना हुआ।

रूखना—अ०, म०—रूखना।

रूख-वि०=रूख (रूखा)।

रूख—पुं० [अ०] एक प्रकार की बूझी जिसे, सोने-चांदी पर कलई
करते हैं।

रूखना—अ०—अरूखना (उलझना)।

रूठ—रूठी० [स० रुठि, प्रा० रुठि] १ रुठने की क्रिया या भाव।
२. क्रोध। गुस्सा।

रूठना—रूठी०—रूठ।

रूठना—अ० [स० रुठ प्रा० रुठि+ना (प्रत्य०)] १ किसी के विरुद्ध
आचरण करने के कारण किसी से अपसन्न होना। जैसे—पैसान
मिलने के कारण बच्चे का रुठना। २. किसी के अनुचित या अप्रत्याशित
व्यवहार से इतना दुखी होना कि उसके बूझान तथा मसाने पर
भी जल्दी न बोलना तथा न मानना।

रूठानि—रूठी०—रूठान।

रूठाना—वि०—रूठान।

रूठ—वि० [म०/रूह (उत्पन्न)+रूठ] [रूठी० रुठा] १. किसी के
ऊपर बड़ा हुआ। आरुढ़। २. उत्पन्न। जात। ३. स्थित। प्रसिद्ध।
मशहूर। ४. लोक में चलता हुआ। प्रचलित। जैसे—एम शब्द
का रूठ अर्थ तो यही है। ५. उजड़। नींकार। ६. कठोर। कडा।
७. अविनाश्य (गणित की सभ्यता)। ८. व्याकरण तथा भाषा-विज्ञान
में वह शब्द जो यौगिक से भिन्न किसी और अर्थ में प्रयुक्त होता हो।

रूठ-योजना—रूठी०—आरुढ़ योजना। (नायिका)

रूठाना—रूठी० [स० रुठि+नाम्]—रूठि-लक्षण।

रूठि—रूठी० [स०/रूह+रूठिन्] १ चढ़ाई। चढ़ाव। २ बढती।
बढ़ि। ३ उठान या उभार। ४ आधिभाव या उत्पत्ति। ५ प्रतिदि।
प्रतिदि। ६ परराज से लकी आई हुई कोई ऐसी बाल या प्रथा जिसे
साम्राज्यत सब लोग मानते हैं। अथवा जिसका पालन लोक में होता
हो। (कल्पेदान) ७. मन में की हुई धारणा। निश्चय या विचार।

८. वह शब्दव्यक्ति जिससे शब्द अपने रूठ अर्थ का ज्ञान कराता है।

रूठि-लक्षणा—रूठी० [स० मध्य०स०] साहित्य में, लक्षणा के दो प्रमुख
शब्दों में से एक, जिसमें मुख्य अर्थ के बाधित होने पर अर्थ-सम्बन्धी
कोई दूसरा लक्ष्यार्थ निकलता या लिया जाता है। (दूसरा प्रमुख शब्द
प्रयोजनवन्ती लक्षणा है।)

रूठना—अ० [स० रूठ] किसी काम में रूठ होता। लपना। उदा०—
पाणा रण रूठना नर नेही करे।—कबीर।

रूठाने—रूठी० [फा० रूठाने] १. साम्बाए। बूतल। हाल। २.
अवस्था। दशा। हालत। ३. कैफियत। विचारण। ४. प्रबंध।
व्यवस्था। ५. अदावत में किसी मुकदमे के संबंध में होनेवाली कार्य-
वाही। ६. किसी काम या बात का वह रण-अंग जिससे उसके भविष्य
का अनुमान हो सकता है।

रूठना—वि० [फा०] [याम० रूठनाई] मुंह दिखावनेवाला।

रूठनाई—रूठी० [फा०] मुंह-दिखाई।

रूठ—पुं० [म०/रूठ (बनाना, देखना आदि)+अर्थ] १. किसी पदार्थ
का वह बाह्य गुण या विशेषता (आयतन, बर्ण आदि से भिन्न)
जिससे उसकी बनावट का पता चलता है। पिठ, शरीर आदि की
बनावट का प्रकार और स्थिति सूचित करनेवाला तत्व। आकृति।
शकल। सूरत।

पह—रूठ-रूसा। (देलें)

२. देह। यरीर। किसी विशिष्ट प्रकार की आकृति, बेश-भूषा आदि से
युक्त शरीर। जैसे—बहु-रूपिया, नित्य नए-नए रूप धारण करता है।
मुहा०—रूठ भरना=(क) भेंस बनाना। बेश धारण करना। (ख)
किसी तरह का तनाव, मजक या स्थाण खडा करना।

३. चिन्ता तत्व, बात या वस्तु की वह स्थिति जिसके फलस्वरूप वह
किसी पृथक् तथा स्वतन्त्र गुण या विशेषता से युक्त होकर कुछ अलग
या नए प्रकार का काम करता या परिणाम दिखलाता है। प्रकार।
भेद। जैसे—(क) प्राचीन भारत में शासन के कई रूप प्रचलित थे।

(ख) उत्पत्ति, प्रत्यय आदि ल्पकार किसी शब्द के अनेक रूप बनाने
जा सकते हैं। (ग) इस योजना को अब एक नया रूप देने का प्रयत्न
किया जा रहा है ४. कोई कार्य करने की नियत और व्यवस्थित पद्धति
या प्रणाली। जैसे—(क) उनके कुल में विवाह सदा इसी रूप में
होता चला आया है। (ख) यह मनु सदा इसी रूप में लिखा जाता
चाहिए। ५. दुष्ट पदार्थ या वस्तु। जैसे—प्रकृति कभी पर्वत के रूप में
और कभी मनुष्य के रूप में व्यक्त होती है। ६. खूबसूरती। सुंदरता।
(फिसो का) रूप हरना=अपनी बही हुई सुन्दरता के फल-स्वरूप
ऐसी स्थिति उत्पन्न करना कि साधनेवाली चीज या व्यक्ति कुछ भी
सुन्दर न जान पड़े।

७ प्रकृति स्वभाव। ८ प्रकार। भेद। ९ नमूना। प्रतिमान।
१०. बराबरी। समता। समानता। ११. गणित में एक की सूचक
संज्ञा। १२. नाटक। रूपक।

वि० खूबसूरत। रूपवान। सुन्दर।

अव्य० किसी के रूप के तुल्य वा मनुष्य बराबर या समान। उदा०—
बोल्हू मुआ पियारे नाही। मोरे रूप कोऊ जग माही।—जायसी।
† पुं०=रूपा (चौरी)।

रूपक—वि० [म०/रूप+णिच्+व्युल्-अक] जिसका कोई रूप हो।
रूप से युक्त। रूपी।

पुं० १. किसी रूप की बनाई हुई प्रतिकृति या मूर्ति। २. किसी प्रकार
का चिह्न या लक्षण। ३. प्रकार। भेद। ४. प्राचीन काल का एक
प्रकार का प्राचीन परिमाण। ५. चौरी। ६. रूपया नाम का सिक्का

जो बाधी का होता है । ७. बाधी का जना हुआ गहना । ८. ऐसा काव्य या और कोई साहित्यिक रचना, जिसका अभिमान होता हो, या ही सकता हो। नाटक ।

विशेष—यहलें नाटक के लिए 'रूपक' शब्ध ही प्रचलित था, और रूपक के बस से ही ने नाटक की एक भेद मान था । पर अब इसकी अगहल नाटक ही विशेष प्रचलित हो गया है । रूपक के बस भेद ये हैं—नाटक, प्रकरण, बाण, आख्यायिका, समवकार, रिम, इहांगुण, अंक, बोधी और प्रहसन ।

१. साहित्य मे, एक प्रकार का अर्थालंकार जिसमें बहुत अधिक साम्य के आधार पर प्रस्तुत का आरोप करने के अर्थात् उपमेय में उपमान के साधर्म्य का आरोप करने और दोनों भेदों का अभाव दिखाते हुए उपमेय का उपमान के रूप मे ही वर्णन किया जाता है । इसके साग रूपक, अर्भेद रूपक, तद्रूप रूपक, न्यून रूपक, परम्परित रूपक आदि अनेक भेद हैं । १० बोल-बाल में कोई ऐसी बनावटी बात, जो किसी को धरा-धमकाकर अपने अनुकूल बनाने के लिए कही जाय । जैसे—सुम शरी मत, यह सब उनका रूपक भर है ।

क्रि० प्र०—कलना । —जीवना ।

११. संगीत मे सात मात्राओं का एक दो-तालाल लाल, जिसमें दो आधात और एक खाली होता है ।

कल्प-कार्यकम—[सं० ष० त०] अफास बाणी द्वारा प्रसारित होने-वाले नाटकों, प्रहसनों आदि वे सम्बन्ध रखनेवाला कार्यकम । (फीचर प्रोग्राम)

कल्प-वर्ता (तुं)—[सं० ष० त०] विवरकम ।

कल्पवर्तिसंयोगिन—स्त्री० [सं० रूपक-वर्तिसंयोजित, कर्म० सं०] अतिशयोक्ति अलंकार का एक भेद जिसमे वर्णन तो रूपक की तरह का ही होता है, पर केवल उपमान का उल्लेख करने के उपमेय का स्वरूप उपस्थित किया जाता है ।

कल्पवृत्—[सं० रूप+कृ (करना)+विभृ+विचवृत्त] विचवृत्त ।

कल्पवर्ता—स्त्री० [सं०] स्रह अक्षरी का एक वर्णवृत्त ।

कल्प-गानिका—स्त्री० [सं० तु० म०] साहित्य मे, वह नायिका जिसे अपने रूप का गर्व या अभिमान हो ।

कल्प-बनाक्षरी—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] ३२ वर्णोंवाला एक प्रकार का मुक्तक दशक छंद जिनके प्रत्येक चरण मे आठ-आठ वर्णों पर यदि होती है । इसके अंत मे लघु होना आवश्यक है ।

कल्प-चतुर्वेदी—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] कावितक बयी चौदस । तरक चतुर्वेदी ।

कल्प-जीवनी—स्त्री० [सं० रूप+जीव (जीना)+पिनि+डीप्] रूप जिनकी जीविका का आधार हो । रडी । वेध्या ।

कल्प—[सं० रूप+पिण्+ल्यट्—अन्] १. आरोप करना । आरोपण । २. प्रमाण । समुत् । ३. जांच । परीक्षा ।

कल्पता—स्त्री० [सं० रूप+तल्+टाप्] रूप का गुण, धर्म या भाव । २. सूत्रपूतनी । सौम्य ।

कल्पवृत्—वि० [सं० ष० त०] स्त्री० रूपधरा । सुंदर । सुवसूरत ।

कल्प-धेय—[सं० रूप+धेय] किसी प्रकार के ठोस पदार्थ (पिंड, मूर्ति आदि) को समोच्च रूप देना । (काँदूर)

कल्प-मासक—[सं० ष० त०] उल्लू ।

वि० रूप नष्ट करनेवाला ।

कल्प-वर्ति—[सं० ष० त०] विवरकम ।

कल्प-भेद—[सं० ष० त०] किसी काम या बात के रूप मे किया हुआ आधिक परिवर्तन ।

कल्प-मंजरी—स्त्री० [सं० रूप+मंजरी] १. एक प्रकार का फूल । २. संगीत में एक प्रकार की रागिनी ।

५० एक प्रकार का धान और उसका बावल ।

कल्प-मती—वि० [हि० रूपमान] रूपवती ।

कल्प-व्यस—वि० [सं० ष० मयट्] स्त्री० रूपमती] रूप अर्थात् सौम्य वे भरा हुआ या पूर्णत युक्त । परमसुन्दर ।

कल्प-मंजरी—स्त्री०, पु०—रूप-मंजरी ।

कल्पमान—वि० [स्त्री० रूपमती]—रूपवान् ।

कल्प-माला—स्त्री० [सं० ष० त०] १. एक प्रकार का सम-वृत्त मात्रिक छंद जिसके प्रत्येक चरण मे १४ और १० के विधान से २४ मात्राएँ होती हैं । २. एक प्रकार का सम-वृत्त षण्णिक छन्द जिसके प्रत्येक चरण में क्रमसे रगण, मगण, जगण, भगण और अत मे गुरु लघु होता है ।

कल्पमाली (लिन) —स्त्री० [सं० रूपमाला+लिन] एक प्रकार का वर्ण-वृत्त जिसके प्रत्येक चरण मे तीन मगण या नौ दीर्घ वर्ण होते हैं ।

कल्पया—पु०—रूपवा ।

कल्प-रूपक—पु० [सं० मध्य० सं०] केदाव के अनुसार रूपक अलंकार के 'सावयव रूपक' भेद का एक नाम है ।

कल्प-रेखा—स्त्री० [सं० ष० त०] १. रेखाओं आदि के रूप में होनेवाला वह अक्षर जिससे किसी पदार्थ के आकार-प्रकार का स्पृल ज्ञान होता हो, फिर भी जिससे उस पदार्थ के उभार, गहराई, मोटाई आदि का ज्ञान हो । रेखाओं द्वारा अंकित चित्र । २. किसी कार्य के संबध की वह मुख्य बात जो उसके स्पृल रूप की सूचक तथा व्योरे आदि की बातों से रहित होती और उसके सविध विवरण या सारोप के रूप में होती है । ३. किसी चित्र की वह बाहरी रेखा जिससे वह चित्र चिरा रहता है । (बाउट लाइन, सभी अर्थों में)

कल्पवृत्त—वि० [सं० रूपवृत्] स्त्री० रूपवती] जिसमे सौम्य ही । सुवसूरत । रूपवान् ।

कल्पवृत्—वि०—रूपवान् ।

कल्पवती—स्त्री० [सं० रूप+मनुपु+डीप्] १. केदाव के अनुसार एक प्रकार का छंद, जिस छंदप्रभाकर में 'गौरी' कहा गया है । २. चंपक-माला वृत्त का एक नाम ।

वि० सुदरी (स्त्री) ।

कल्पवान् (वत्)—वि० [सं० रूप+मनुपु] स्त्री० रूपवती] सुंदर रूप-वाला । सुवसूरत ।

कल्प-विधान—पु० [सं० ष० त०] १. भाषा विज्ञान और व्याकरण का वह अग या शाखा जिसमे शब्दों की बनावट या रूप और उनमे होनेवाले विकारों आदि का विवेचन होता है । (मार्कण्डेयी) २. दे० 'वाकृत विज्ञान' ।

कल्पमाली (लिन)—वि० [सं० रूप+माला (सोमित होना)+लिन] स्त्री० रूपसालिनी] रूपवान् । सुन्दर ।

कल्प-बी—स्त्री० [सं० ष० त०] सम्पूर्ण जाति की एक संकर रागिनी ।

क्य-संपत्ति—स्त्री० [सं० व० त०] स्वीद्वै। उत्तम रूप। सुन्दरता।
क्य-साधक—वि० [सं० व० त०] शब्दों का रूप साधन करनेवाला। जैसे—
फलतः, मुख्यतः आदि में 'तः' रूप साधक प्रत्यय है।

क्य-साधन—पुं० [सं० व० त०] [वि० कर्ता रूपसाधक] व्याकरण में
विभक्त-विभक्त कारकों, लिङ्गों, लक्ष्यों आदि में किसी एक शब्द के होनेवाले
अलग-अलग रूप या उनके वे रूप बनाने की प्रक्रिया। (इण्डोलेयान)
क्य-साधय—पुं० [सं० त० वा व० त०] वस्तुओं के रूपों में होनेवाली
पारस्परिक समानता।

क्यंती—स्त्री० [सं० क्य से] बहुवचन सुन्दर स्त्री।
क्यत्वी—वि० [सं० क्यवान्] [स्त्री० क्यत्विनी] रूपवान्। सुन्दर।
क्यत्कक—पुं० [सं० क्य-अकक, व० त०] किसी चीज का निर्माण करने
से पहले उसकी आकृति, रचना, प्रकार आदि की रेखाओं, नक्शों
आदि द्वारा दर्शानेवाला व्यक्तित्व। अभिकल्पक। (विजाइनर)
क्यत्कन—पुं० [सं० क्य-अकन] रेखाओं, नक्शों आदि के द्वारा किसी चीज
का रूप रंग तथा आकार-प्रकार दर्शाने की क्रिया या भाव। अभि-
कल्पन। (विजाइनिंग)

क्यत्तर—पुं० [सं० क्य-अतर, व० त०] १. रूप का बदलना। दूसरे रूप
की प्राप्ति। क्यत्तरण। २. प्राप्त होनेवाला दूसरा रूप।
क्यत्तरण—पुं० [सं० क्य-अतरण] दूसरे रूप में आना या लाया जाना।
रूप बदलना या बदला जाना। (ट्रांसफारमेशन)

क्या—पुं० [सं० क्य] १. चाँदी। २. ऐसी घटिया चाँदी जिसमें कुछ
कोट या मिलावट हो। ३. सफेद रंग का बैल जो परिश्रमी माना जाता
है। ४. सफेद रंग का घोड़ा। मुकुर।
स्त्री० [सं०] रूपवती स्त्री। सुन्दरी।

क्याबीबा—स्त्री० [सं० क्य-आ/बीब् (जीना) +अब् +टाप्] वेद्या।
रबी।

क्याधिबोष—पुं० [सं० क्य-अधिबोष, व० त०] १. जिसके रूप का ज्ञान
द्विबो से प्राप्त होता है। दुष्य या अदुष्य पदार्थ। ० उक्त पदार्थ का
द्विबो से होनेवाला ज्ञान।

क्याध्यक्ष—पुं० [सं० क्य-अध्यक्ष, व० त०] १ टकसाल का प्रधान
अफसर। २. कीर्षाध्यक्ष।

क्यायस्त्री—स्त्री० [हिं० क्या—चाँदी+यस्त्री] एक प्रकार का लज्जित
पदार्थ जिसकी गणना हमारे यहाँ उप-धातुओं में की गई है, वैद्यक में इसका
स्वभाव प्रायः चाँदी के अभाव में किया जाता है क्योंकि इसमें चाँदी का
कुछ अंश और गुण पाया जाता है।

क्यायन—पुं० [सं०] [पुं० क्य, क्यायित] १ किसी वस्तु का रूप या ढाँचा
प्रस्तुत करना। २ किसी भाव या विचार की कार्यरूप में परिणत करना।

क्यायित—पुं० क्य [सं०] जिसने कोई रूप प्राप्त किया हो, या जिसे कोई
रूप दिया गया हो।

क्यायश्च—पुं० [सं०] १. एक प्रकार के देवता। (बीड्ड) २ चित्ता की
वह अवस्था जिसमें उसे क्य-अगत अर्थात् वृत्त्य पदार्थों का ज्ञान होता
है। ३. इस प्रकार प्राप्त होनेवाला ज्ञान। ४. योग में ध्यान की एक
भूमि जिसके प्रथम आदि चार भेद कहे गए हैं।

क्याय्य—वि० [सं० क्य-आय्य, व० त०] रूपवान्। सुन्दर।
क्याय्य—पुं० [सं० क्य-अय्य, व० त०] कामदेव।

क्यिका—स्त्री० [सं० √क्य+क्यन्—इक, +टाप्] नकेद फूलोंवाला मद्यार
का पौधा।

क्यित—पुं० [सं० क्य+इत्प्] एक प्रकार का उपन्यास, जिसमें ज्ञान,
वैराग्यादि पात्र बनाए जाते हैं।

पुं० क्य० जिसे कोई रूप दिया गया या मिला हो।
क्यी (पिन्)—वि० [सं० √क्य+इति] [स्त्री० क्यीणी] १. रूप या
आकार-प्रकारवाला। २. रूपयारी। रूपवान्। सुन्दर। ३. तुल्य।
सदृश्य। समान।

क्यीय्य—स्त्री० [सं० क्य+इय्य, मध्य० त०] जिससे रूप का ज्ञान
होता है, यष्ट।

क्यीय्यर—पुं० [सं० क्य-ईय्यर, व० त०] [स्त्री० क्यीय्यरी] एक
शिवालय।

क्यीय्यरी—स्त्री० [सं० क्य-ईय्यरी, व० त०] एक देवी का नाम।

क्यीय्यरीबिनी—स्त्री० [सं० क्य+उप/जीब् (जीना)+गिनि+डीप्]
वेद्या। रटी।

क्यीय्यरीबिनी (विन्)—पुं० [सं० क्य-उप/जीब्+गिनि] [स्त्री० क्यीय्य-
जीबिनी] बहुकल्पिया।

क्यीय्य—वि० [सं० क्य] जो मूँह छिपाए हुए हो। २ जो दह आदि से
बचने के लिए छिपा या भाग गया हो।

क्यीयो—स्त्री० [सं० क्य] १. क्यीय्य होने की अवस्था या भाव।
क्य्य—वि० [सं० क्य+यत्] १ सुन्दर। सुवसूल। २. उपमेय।
पुं० क्य। चाँदी।

क्य्यक—पुं० [सं० क्य्य+कन्] शय्या।
क्य्यीय्यक्ष—पुं० [सं० क्य्य-अध्यक्ष, व० त०] टकसाल का प्रधान अवि-
कारी। मैत्रिक।

क्य्यर—पुं० [सं० क्य] १ घूँसट। २ बुरत।

क्य्यकार—पुं० [सं० क्य] सामने उपस्थित करने की क्रिया या भाव।
पेशी। २ वह वचन जिसके द्वारा किसी को कही उपस्थित होने की
आज्ञा दी जाती। ३ आज्ञापत्र। हुक्मनामा।
वि० दत्त चित्त।

क्य्यकारी—स्त्री० [सं० क्य] १. किसी के सामने उपस्थित होने की क्रिया या
भाव। २ अदाएल में मुकदमे की पेशी। ३ मुकदमे से सम्बन्ध रखने
वाली कार्यवाही। ४ दत्त चित्त होने की अवस्था या भाव।

क्य्यक—अध्य० [सं० क्य] १ आयने-सामने। मुकाबले। सम्मुखता में।
समक्ष।

क्य्य—पुं० [सं० क्य] ठकी या तुर्की देश का पुराना नाम।
पुं० [अ०] कथरा।

क्य्यना—अ० हिं० मृमना का अनु०।
क्य्यनानिया—पुं० [अ०] पूर्वी युरोप का एक देश।

क्य्यनानी—पुं० [अ०] क्य्यनानिया का निवासी।
वि० क्य्यनानिया देश का।

स्त्री० क्य्यनानिया देश की नाथा।
क्य्यना—पुं० [सं० क्य] १ जेव में रखने का कपड़े का छोटा चौकरे टुकड़ा
जिसके किनारे सिले होते हैं, तथा जिसमें मूँह-नाक पोछा जाता है।
करपट। २ चीनोना शाल या चिकन का टुकड़ा जिसके चारों ओर

बेल और बीच में काम बना रहता है और जो सिक्किमा बौद्ध कर बड़ने के काम में लाया जाता है। मुसलमानी शासन-काल में यह कमर में भी छपेटा जाता था। ३. गजामने की काट में बहू कीकीर कपड़ा जो दोनों मोहरियों की मनिष में लगाया जाता है। मियाणी। ४. डगों का बहू कुमाल जिसके एक कोने में चाँदी का एक टुकड़ा बँधा रहता था।
 कि० प्र०—लगाता।

फनाली—स्त्री० [फा० कुमाल] १. छोटा कुमाल। २. एक प्रकार का लँगोटा। ३. 'रमाली'।

फनी—वि० [फा०] १. रूस देश संबंधी। रूस का। २. जो रूस देश में उत्पन्न हो या वहाँ से आता हो। जैसे—फनी मस्तगी।

पुं० रूस देश का मियाली।
 स्त्री० रूस देश की भाषा।

फरना—अ० [सं० रोहण] १. ऊँचे स्वर में बोलना। चिल्लाना। २. बहाना करना। गरजना।

फरा—वि० [सं० रुड़=प्रवसत] [स्त्री० फरो] १. श्रेष्ठ। उत्तम। अच्छा। २. खूब घुसना। घुसना।

फरिहायत—स्त्री० [फा०+अ०] किसी का ध्यान रखते हुए उसे दिया जानेवाला सुभीता या उसके माथ की जानेवाली रियायत।

फल—पुं० [अ०] १. नियम। कायदा। २. शासन। ३. वह डंडा या पट्टी जिसकी सहायता से सीधी रेखाएँ या लकीरें खींची जाती हैं। फलर। ४. सीधी लोधी हुई रेखा या लकीर।
 कि० प्र०—खीचता।

फलवार—वि० [अ० फल+फा० दार] जिस पर समानांतर तथा सीधी रेखाएँ बिंबी या बनी हों।

फलर—पुं० [अ०] १. लकीर खींचने का डंडा या पट्टी। सलाका। २. सासक।

फव—पुं०=रुख। (वृक्ष)।

फवक—पुं० [सं०/रूप (मजाना, डकना) + फवल्=अक] अबसा। बासक।

फवण—पुं० [सं०/रूप + फवट्=अल] १. अलकृत या मूर्धित करना। २. लेप लगाना। अनुलेपन। ३. डकना। आच्छादन।

फवा—वि०=रुखा।

फस—पुं० [फा०] एक प्रसिद्ध देश जिसका भाषा माग यूरोप में और भाषा एशिया में पड़ता है।

स्त्री० [फा० रबिस] बाल। (लघा०)

स्त्री० [हि० रुसना] रुसने की क्रिया या भाव।

फसना—अ० [हि० रोष] १. दष्ट होना। रुठना।

संयो० कि०—जाना।—बैठना।

२. झूठ होना।

फसा—पुं० [सं० रोहिय] एक प्रकार की सुगंधित धास। भूवृण।

†पुं०—अडूली।

फसी—वि० [फा०] १. रूस देश का। रूस देश संबंधी।

२. रूस देश में उत्पन्न या प्रचलित।

पुं० रूस देश का मियाली।

स्त्री० रूस देश की भाषा।

स्त्री० [दिश०] सिर से पड़ी हुई भूरी की तरह दिखाई पड़नेवाली मेल।

रुह—स्त्री० [अ०] १. आत्मा। २. प्राण वायु। ३. अंतःकरण। जैसे—वहाँ जाने की मेरी रुह नहीं कर रही है। ४. कई बार का लींचा हुआ अरक या हज।

रुह-आम्ना—वि० [अ०+फा०] जीवन बढ़ानेवाला। प्राणवर्धक।

रुहड़—पुं० [हि० रुह] १. पुराने गढ़ों, तर्कियों, लुहाकों आदि में की बहू पुरानी कई जो अमकर गुठलों या गुदड़ के रूप में ही गई हों। २. कई का गुठला।

रुहना—अ० [सं० रोहण] १. ऊपर बढ़ना। २. बेगपूर्वक आगे बढ़ना। उमड़ना।

सं०—रुंथना।

रुहाभियत—स्त्री० [अ०] १. आत्मवाद। २. अत्यात्मवाद।

रुहानी—वि० [अ०] १. रुह या आत्मा संबंधी। आत्मिक। जैसे—रुहानी ताकत। २. अंतःकरण संबंधी। हार्दिक। दिली।

रुहणी—वि० [दिश०] एक बूख।

रुहीबूख—पुं० [हि० रुही+भूख] रुही नामक बूख की छाल और जड़। ईसरभूख।

रेंक—स्त्री० [हि० रेंकना] रेंकने की क्रिया, भाव या शब्द।

रेंकना—अ० [अपुं०] १. गंधे का बोलना। २. बहुत बुरी तरह से चिल्लाने हुए माना या बोलना।

रेंस—स्त्री० [हि० रेंगना] रेंगने की क्रिया या भाव।

रेंगना—पुं० [हि० रेंग +टा] गंधे का बचना।

रेंगता—अ० [सं० रेंगना] १. जमीन के साथ पेट सटाकर हाथों-पैरों के बल खिसकते हुए आगे बढ़ना या चलना। जैसे—जूंटी या तीप का रेंगना। २. बच्चों का या बच्चों की तरह धीरे-धीरे और लकड़झाले हुए चलना। (बुलेख०)

†अ०—रेंकना।

रेंगनी—स्त्री० [हि० रेंगना] भट-कटैया।

रेंगाना—सं० [हि० रेंगना] १. किसी से रेंगने की क्रिया करना। किसी को रेंगने में प्रयत्न करना। २. बच्चों आदि की धीरे-धीरे चलाना। ३. व्यक्तिक को चलाना या बीड़ाना।

रेंड—पुं० [दिश०] दलेष्मा मिश्रित मल जो नाक से (विशेषतः युक्तम होने पर) निकलता है। नाक का मल।

कि० प्र०—निकलना।—बहना।

रेंदा—पुं० [दिश०] लिसेंझा (फल)।

†पुं०—रेंट।

रेंदिया—पुं० [?] १. सूत कालने का बरत्ता। (गूज०)

रेंद—पुं० [सं० परख] १. एक प्रकार का पौधा जो ६-७ हाथ ऊँचा होता है। २. इस पौधे के बीज जिनसे तेल निकलता है और जो पचा के काम आते हैं। ३. एक प्रकार की ईंध। रेंदा।

रेंद-अरवूजा—पुं० [हि० रेंद +अरवूजा] पपीता।

रेंडना—अ० [हि० रेंद] फसली पौधों का विकसित होना।

रेंड-मेवा—पुं० [हि० रेंड +मेवा] पपीता।

रेंडा—पुं० [हि० रेंड] कुआर-कासिक में तैयार होनेवाला एक प्रकार का पेड़।

स्त्री० एक प्रकार की ईंध।

रेखी—स्त्री० [हि० रेख] रेख का बीज।
 रेखी—स्त्री० [देवा०] ककड़ी या खरबूजे की बतिया।
 रेरं—अव्य० [अनु०] लखनो के रोने का गन्ध।
 स्त्री० जिद या हठ का सूचक शब्द।
 रे—मु० [सं०] मध्यम का आदि र मध्यम स्वर का संक्षिप्त रूप। (सर्गित)
 अव्य० हि० अरे (मन्थोपनि) का संक्षिप्त रूप। रे। जैसे—रे लग, अरु ध्यान मे लग।
 रेखंडा—मु०—रेखंडा।
 रेखड़ा—मु०—रेखड़ा (बड़ी रेखड़ी)।
 रेखड़ी—स्त्री०—रेखड़ी।
 रेख—मु० [सं०] र्खि (विरचन) + धृत् । दस्त लाना। विरचन।
 २. शका। ३. मेढ़क।
 वि० नीच।
 रेखान—मु० [देवा०] ऐसी जमीन जिनके पाय तक नदी की बाढ़ का पानी न पहुँचता हो।
 रेखाई—मु० [अं०] १. अभिलेख। प्रालेख। २. कार्यालय के कागज-पत्र। ३. तबे के आकार की एक प्रकार की रासायनिक रेचना, जिसमें विद्युत् की महाप्रता से आवाज भरी होती है और जो प्रामाणिक में लगाकर बजाया जाता है।
 रेख—स्त्री० [सं० रेखा] १. रेखा। लकीर।
 क्रि० प्र०—खीचना।—बनाना।
 मुहा०—रेख काड़ना, खीचना या खीचना=कोई बात कहने के समय वृद्धता, प्रतिज्ञा सकल्प आदि सूचित करने के लिए रेखा अंकित करना।
 दे० 'रेखा'।
 पद—रूप-रेखा=रूप-रेखा।
 २. चिह्न। निशान। ३. गिनती। गणना। सुमार। हिसाब। ४. लिखावट।
 पद—कर्म-रेख।
 ५. वह जो भाग्य में लिखा हो। भाग्य-लेख। ६. वृद्धावस्था में पहले-पहल रेखा के रूप में निकलनेवाली मूछ।
 क्रि० प्र०—आना।—खीचना।—खीनना।
 ७. वह वृक्षित हीरा जिसमें रेखा हो। ८. हीरे में रेखा होने का दाँव।
 रेखता—वि० [का० रेखत] १. ऊपर से गिरा या टपका हुआ। २. (कथन-प्रकार) बिना किसी प्रकार की बनावट के आप से आप या स्वाभाविक रूप से मूह से निकला हुआ। ३. (वास्तु-कार्य) बूनें आदि से बना हुआ फल पक्का या मजबूत। जैसे—रेखता छत, दीवार या मकान।
 ३. खुसरो द्वारा प्रचलित एक प्रकार की कविता या छंद रचना जिसमें फारसी और भारतीय छंदशास्त्रों की अनेक बातें (ताल, लय आदि) का सम्मिश्रण होता था। यथा—ज-हाले मिसकी मरुन तमाफुल, दुर्गप ननीं बनाय बनिया। ३. परवर्ती काल में ऐसी कविता जिसमें कई भाषाओं के पद, वाक्य या शब्द सम्मिश्रित हो। ३. मद्य की वह भाषा, जिसमें हिन्दी के साथ-साथ अरबी-फारसी के भी कुछ विशेषण, सजाएँ आदि सम्मिश्रित हो। (आधुनिक उर्दू का आरम्भिक रूप इसी नाम से प्रसिद्ध था, और यह हमारी खड़ीबोली का एक विकसित रूप माना गया है। ४. बूने आदि की बनी हुई पत्थकी धारता।

रेखती—स्त्री० [का० रेखती] १. मुसलमान स्त्रियों में प्रचलित उर्दू का वह रूप जिनमें हिन्दी के बोल-चाल के शब्दों और हिन्दी प्रयोगों तथा मुहावरों की अधिकता रहती है।
 विशेष—ज्ञान-साहब, रफीन आदि उर्दू कवियों ने जो अनानी रहन-सहन और बाल-बाल की कविताएँ की हैं, उनकी बोली या भाषा 'रेखती' कहलाती है।
 २. उक्त बोली या भाषा में होनेवाली वह कविता, जिसमें विशेष रूप से स्त्रियों के भाव, मनोविकार आदि प्रकट किये गये हो।
 रेखन—मु० [सं० रेखन] १. रेखा या रेखाएँ अंकित करना या बनाना। २. रेखाओं आदि की महत्वता से चित्र या रूप अंकित करना। अलिखन। ३. इस प्रकार अंकित किया हुआ चित्र या रूप। (इंद्राईय) रेखाचित्र।
 रेखना—सं० [सं० रेखन] १. रेखा या लकीर खीचना। २. रेखाओं की सहायता में चित्र आदि अंकित करना। उदा०—कहा करो नीके करि हौरि को रूप देखि नहिं पावति।—सूर। ३. बनाना या रचकर तैयार करना। उदा०—(क) तप्य कही कहां भृष्ट में पावत देखो नईं जिन रेखी क्या।—केदार। (ख) पूजन प्रेम मुधा वसुधा वसुधा रमईं वसुध्वं नु रेखी।—देव।
 रेखाकन—मु० [सं० रेखा-अकन, पं० तं०] [भू० कं० रेखाकित] १. चित्र की रूप-रेखा बनाने के लिए रेखाएँ अंकित करना। २. दे० 'अधारेखन' (अडर लायनिंग)
 रेखाकित—भू० कं० [सं० रेखा-अकित, तु० तं०] १. रेखाओं से बना हुआ। २. जिनके नीचे रेखा लीची गई हो। जिसका रेखाकन हुआ हो।
 रेखांत—मु० [सं० रेखा-अंत, पं० तं०] १. अन्तगत (भूगोल का)। २. यामांतर वृत्त का कोई अंश। दायिमारा।
 रेखा—स्त्री० [सं०] वि० (लिखना) + अर्, टाप् लय्य + र । १. सूत की तरह बहुत ही पतला और लंबा अंकित किया हुआ अथवा आप से आप बना हुआ चिह्न। इण्डाकार पतला चिह्न। डोड़ी। लकीर। जैसे—फलम या खिचों से खीची हुई रेखा।
 विशेष—प्राचीन काल में हमारे यहाँ कोई बात कहने समय अपनी दृढ़ प्रतिज्ञा सूचित करने के लिए प्रायः हाथ से जमीन पर रेखा खीचने की प्रथा थी।
 क्रि० प्र०—खीचना।—बनाना।
 मुहा०—रेखा रेखना=अपने कथन आदि की वृद्धता या निश्चय सूचित करने के लिए रेखा खीचने हुए कोई बात कहना अथवा कुछ कहने समय रेखा खीचना।
 २. गणना करने की क्रिया या भाव। गिनती। सुमार।
 विशेष—आरम्भ में गिनती गिनने या सूचित करने के लिए पहले रेखाएँ ही खींची जाती थीं। उदा०—गम भगनि में आनु न रेखा।—मुलसी।
 मुहा०—रेखा रेखना=बुद्धतापूर्वक गिनती कहते हुए तलबन्धी रेखा खीचना या बनाना। उदा०—बोमित स्वकीय गण-गुण गनती में तहाँ तेरे नाम ही की रेखा रेखिस्य है।—पद्माकर।
 ३. किसी ठोस ताल पर बना या बनाया हुआ उक्त प्रकार का कोई चिह्न। जैसे—चेहरे या ललाट पर की रेखा। ४. मनुष्य के तलवे और तूथकी पर टेढ़े-मेढ़े अथवा सीधे बने हुए वे प्राकृतिक चिह्न जिनके आकार

सांख्यिक शास्त्र के अनुसार शुभामय फल कहे जाते हैं। जैसे—अंकुश-रेखा, ऊर्ध्व रेखा, कमल-रेखा आदि। ५. वह कल्पित लक्ष्मीर की आरंभिक भारतीय ज्योतिषी अथास सूचित करने के लिए सुमेरु से उज्जयिनी हुई लका तक सिन्धी या बनी हुई मानते थे। (दे० रेखा भूमि) ६. हीरेआदि रत्नोंकेबीच से लिखाई पठने वाली लक्ष्मी जो एक वीर्य मानी जाती है। ७. आकार। अक्षुण्ण। रूप। सूरत। ८. कतार। पक्ति।

- रेखा-शक्ति**—गु० [सं० ब० सं०] ज्यामिति। (दे०)।
रेखाचित्र—गु० [सं० मध्य० सं०] १ कित्ती वस्तु या व्यक्तिक के रूप का वह चित्र जो केवल रेखाओं से अंकित किया गया हो। (डाइग)
 २ ऐसा चित्र जो केवल रेखाओं से बनाया गया हो, अर्थात् जिसमें बीज के उत्तार-चढ़ाव, उभार-बीसाव आदि न हों। (डेलीनिएशन)
रेखा-भूमि—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] वह भूमि या प्रदेश जो उस कल्पित रेखा के आस-पास पड़ते थे, जो प्राचीन काल में अक्षांश स्थिर करने के लिए सुमेरु से उज्जयिनी होती हुई लका तक गई हुई मानी जाती थी।
रेखा-लेख—गु० [सं० सुसुधा सं०] १ प्राय चित्र के रूप में होनेवाला कोई ऐसा अंकन जो परिष्कल्पनाओं, विचारों, स्थितियों आदि का परिष्कार हो। अरेख। (आयाम) २ दे० 'रेखा-चित्र'
रेखावती—स्त्री० [सं० रेखा + मतुपु + डीपु, वर्य] सगीत में कर्नाटकी पद्धति की एक रागिनी।
रेखित—गु० कृ० [सं० रेखा + इतव] १ रेखा के रूप में सिखा हुआ। अंकित। लिखित। २ जिस पर रेखा अंकित की गई हो। ३ दरकने, फटने आदि के कारण जिस पर रेखा पड़ गई हो।
रेखता—वि० पुं० = रेखता।
रेखती—स्त्री० = रेखती।
रेख—स्त्री० [फा०] रेत।
रेखमही—गु० [फा०] प्राय रेतीले मैदानों में रहनेवाला एक प्रकार का जनावर जिसका मांस बहुत पोष्टिक माना जाता है। सक्कर।
रेखिस्तान—गु० [फा०] [वि० रेखिस्तानी] भूमि का वह प्राकृतिक विस्तृत भाग जिसके ऊपर रेत या बालू ही भरा हो। मरुस्थ।
रेखाना—म० [दे० ग. आदि स्वर] १ स्वर या स्वर लय से पाठ करना या गाना। २ रेकना। (दे०)
रेखक—वि० [सं० + रिच् + चित्रेत् + गिच् + ष्वल् + अक] जिसके खाने से दस्त आब। कोष्ठमुद्धि करनेवाला। दस्तावर।
 पुं० १ जमाळगोट। २ जवाखार। ३. पिचकारी। ४ प्राणायाम की तीसरी क्रिया जिसमें सींचे हुए हांस की विधिपूर्वक बाहर निकालना होता है।
रेखन्—गु० [सं० व/ रिच् + गिच् + स्युट् + अन] १ दस्त लाकर पेट से मल निकालना। २ वह औषधि जो पेट का मल निकालकर उसे साफ करे। जुलाब।
रेखन—गु० [सं० व/ रिच् + गिच् + स्यु + अन + कप्] कमीला (वृक्ष)।
रेखनी—स्त्री० [सं० रेखन + डीपु] १ कमीला। २. दंती। ३ बट-पत्नी। ४ कालांजनी।
रेखित—गु० [सं० व/ रिच् + गिच् + मत] १. छोड़ो की एक बाल। २. नृत्य में हाथ से भाव बताने का एक प्रकार।

- गु० कृ० रेखन क्रिया के द्वारा बाहर निकाला हुआ।
रेख्य—गु० [सं० व/ रिच् + गिच् + यत्] १. प्राणायाम करते समय छोड़ी जानेवाली वायु। २ पेट से मल निकालने के लिए की जानेवाली वृथा वा क्रिया जानेवाला उपचार। जुलाब।
रेखि जो रेखन क्रिया के द्वारा बाहर निकाला जाने को हो या निकाला जा सके।
रेख—स्त्री० [फा०] १. पशियों का चहचहाना। कल-रव। २. गिराना। बहाना।
रेखि गिराने या बहानेवाला। जैसे—अक्षरदेव।
रेखगारी—स्त्री० [फा० रेखगारी] १. एक रूप के मूल्य के छोटे सिक्के। २. छोटे सिक्के।
रेखनी—स्त्री० [फा०] १. छोटे सिक्के। रेखगारी। २. सोना-चाँदी के तार के छोटे टुकड़े।
रेखस—गु० [फा०] छोड़े का जुकाम।
रेखस डीपा—गु० = रेखस।
रेखा—गु० [फा० रेखः] १. कित्ती वस्तु का बहुत छोटा टुकड़ा। सूक्ष्म स्रष्ट। कण। अती। २. बहुमूल्य कपडों के खड या स्थान। ३ रत्नों आदि के खड या टुकड़े। मग। ४. मजदूर लखकों को बड़े राजगीरो के साथ काम करता है। ५. बेव्या दृष्टि कराने के उद्देश्य से कुटनियों द्वारा पाकी हुई लक्ष्मी। (वाजाक) ६. स्थियों के पहनने की अंगिया। (बुदले) ७. सुनारों का एक औजार जिसमें गला हुआ सोना या चाँदी बालकर पैसे के आकार का बना लेते हैं।
रेखिदें—गु० [अ०] दास्तामात्य। (दे०)
रेखिमेंट—स्त्री० [अ०] सेना का एक भाग। रिजमित।
रेखिस—स्त्री० [फा०] जुकाम। प्रतिष्याय।
रेखु—गु० [हि० रेखा] एक प्रकार का रेखा जो पहले वृक्ष या कूची बनाने के लिए विशेषों से आता था।
रेट—गु० [अ०] भाव। निर्भं।
 † पु० —रेट।
रेडवात—गु० [अ०] एक बहुत प्रसिद्ध अंतर्राष्ट्रीय संस्था, जिसकी शाखाएँ प्राय सभी सभ्य देशों और राष्ट्रों में हैं, और जो राजनीतिक प्रपंचों से बिलकुल अलग रहकर पुष्ट और प्राकृतिक सकटादि आदि के समय जनसेवा का काम करती है।
रेडियो—गु० —रेडियो।
रेडियम—गु० [अ०] एक प्रसिद्ध बहुमूल्य प्रकार का खनिज पदार्थ जो कुछ विशिष्ट प्रकार के खनिज द्रव्यों से बहुत ही अल्पमात्रा में पाया जाता है और अनेक वैज्ञानिक कार्यों के लिए बहुत अधिक उपयोगी होता है।
रेडियो—गु० [अ०] १ आधुनिक विज्ञान की वह क्रिया या प्रणाली जिसमें अनुनाद ध्वनियाँ, शब्द और मंत्रों बीच के तार द्वारा संचय स्थापित किये बिना ही केवल विद्युत् की सहायता में आकाश मार्ग से दूर दूर तक पहुँचाये जाते हैं। २ वे यंत्र जो उक्त प्रकार से ध्वनियों, शब्द आदि चारों ओर प्रसारित करते हैं। ३. विशिष्ट रूप से वह छोटा यंत्र जिसकी सहायता से लोंग घर बंदे उक्त प्रकार से प्रसारित की हुई ध्वनियाँ आदि सुनते हैं।
रेडियो चिकित्सा—स्त्री० [अ० + सं०] चिकित्सा की वह प्रणाली, जिसमें

रेडियो की रचियों के प्रभाव और प्रयोग से रोग अच्छे किये जाते हैं।
(रेडियो बरेली)

रेडियो-विभव—पुं० [अ०+सं०] वह वैज्ञानिक क्रिया जिसमें धन पदार्थों के भीतरी अर्गों, विकारों आदि के विच एकतरे या रेडियो की रचियों की सहायता से किये जाते अथवा किसी तत्व या पदार्थ पर किये जाते हैं।
एबसन्दे विभव। (रेडियोधार्मिक)

रेडियो नाटक—पुं० [अ०+सं०] रेडियो द्वारा प्रसारित किया जानेवाला कोई छोटा नाटक या रूपक जो श्रव्य ही होता है, दृश्य नहीं होता।

रेणु—स्त्री० [सं०/री (गति) +नृ] १. धूल। बालू। ३. किसी चीज का बहुत छोटा कण। ४. बाय विद्युत्। ५. संज्ञात् के बीज। ६. पृथ्वी। (हि०)

रेणुका—स्त्री० [सं० रेणु+कन्+टाप्] १. बालू। रेत। ३. धूल। रज। ३. सम्राट् पर्वत का एक तीर्थ। ४. पशुचराम की माता का नाम। ५. पृथ्वी। (हि०)

रेणुवाल—पुं० [सं० व० सं०] भीरु। भ्रमर।

रेणुसार—पुं० [सं० व० सं०] कपूर।

रेतः कुल्या—स्त्री० [सं० व० सं०] एक नरक का नाम।

रेत (रत्न)—पुं० [सं०/री (शरण) +अनुत्, तुद्—आगम] १. बीयों। धृक्। २. पाग। ३. जल। पानी।

स्त्री० १. बाङ्ग। २. बालू से भरी भूमि। रेत।

†पुं० [हि० रेता] बड़ी रेत। (औजार)।

रेत-कुब्ज—पुं० [सं० रेत कुब्ज] १. एक नरक। रेत कुल्या। २. कुमार्ग के पास का एक तीर्थ।

रेतन—पुं० [सं० रेतन] १. बीयों। २. बीज।

रेतना—सं० [हि० रेता] १. रेत। (औजार) से किसी बड़े पदार्थ का कुरदुगा तल इस प्रकार रगटना कि उस पर के महीन कण गिर जायें और वह तल चिकना या मुहोल् हो जाय। २. किसी वस्तु को काटने के लिए औजार की धार रगटना। जैसे—आरी से रेतना। ३. किसी तेज धारवाली चीज से धीरे-धीरे रगड़ते हुए कोई चीज काटना। जैसे—बकरी या मुरगी का सला रेतना। ४. लाक्षणिक अर्थ में किसी को निरन्तर कष्ट या हाँसि पहुँचाना।

मृहा०—(किसी का) सला रेतना। (दे०)

रेतल—पुं० [द्वेष०] भूरे रंग का एक प्रकार का छोटा पक्षी।

रेतला—वि०—रेतीला।

रेता—पुं० [हि० रेत] १. बालू। २. गर्द। धूल। ३. मिट्टी। ४. बलुआ मैदान।

रेतिया—पुं० [हि० रेतना। इया (प्रय०)] वह जो रेतने का काम करता हो। चीजें रेतनेवाला कारीगर।

वि०—रेतीला।

रेती—स्त्री० [हि० रेतना] एक प्रकार का दानेदार औजार जिससे रगड़ या रेत कर पदार्थों का तल चिकना किया या छीला जाता है। (फाइल) स्त्री० [हि० रेत + ई (प्रय०)] १. वह स्थान जहाँ रेत प्रचुर मात्रा में हो। २. रेतीला मैदान। ३. मदी की धारा के बीचों बीच टापू की तरह बलुई जमीन जो पानी घटने पर निकल आती है। मदी का टापू। जैसे—पगजी में इस साल रेती पड़ जाने से बो धारएँ ही गई हैं।

किं० प्र०—पडना।

रेतीला—वि० [हि० रेत+ईला (प्रय०)] १. [स्त्री० रेतीली] १. (स्वान) जहाँ पर बालू पड़ा या बिछा रहता हो। जैसे—रेतीला प्रदेश।

२. (मिट्टी) जिसमें बालू मिला हुआ हो। बालूकामय।

रेख—पुं० [सं०/री (शरण) +त्र] १. बीयें। धृक्। २. अमृत। पीपुषु। ३. लंबे, धरे आदि जो रहते के लिए कपड़े से बनाये जाते हैं।

रेखा—पुं० [द्वेष०] किसी वस्तु को दूसरी वस्तु में डाल या टिकाकर लटकाना।

रेनी—स्त्री० [सं० रजनी] १. वस्तु जिससे रंग निकलता हो। रंग देनेवाली वस्तु।

स्त्री० [हि० रेखा—लटकाना] (रंगरेजी की) अलगनी।

रेनु—पुं०—रेणु।

रेणुका—स्त्री०—रेणुका।

रेणु—वि० [सं०/रप् (गति) +अच्] १. निरति। बुटा। २. कूर। निर्दय। ३. कंबूल। कृपण।

रेक—पुं० [सं०/रिक्+पल्+वा+इक्त्] १. शव्य के बीच में पडनेवाले र का वह रूप जो ठीक बाँधवाले स्वर्जन व्यजन के ऊपर लगाया जाता है। जैसे—कमर्त, धर्म, विकर्म। २. रअर। रकार। ३. रग। ४. रब। शव्य।

वि० १. अथम। नीच। २. कुर्मिल। निन्द्यनीय।

रेरमा—सं०—रेला।

रेरमा—पुं०—रखडा (बडा जल्दू)।

रेरल—स्त्री० [अ०] १. जमीन पर बिछी हुई लोहे की वह पटरी जिस पर रेलगाड़ी के पहिए चलते हैं। २. रेलगाड़ी।

स्त्री० [हि० रेलना] १. रेलने की क्रिया या भाव। २. पानी का बहाव।

३. तीर्थ प्रवाह। ४. अधिकता। ५. धक्का-धक्का।

पद—रेरल-पेल।

रेरल-गाड़ी—स्त्री० [अ० रेल+हि० गाड़ी] धक्का, बिजली आदि की महायत्ता से लोहे की पटरियों पर चलनेवाली गाड़ी।

रेरलना—सं० [हि० रेलना+ना (प्रय०)] १. रेल का जोरों की डकेलते हुए आगे बढना। रेल या धक्का देना। २. प्रबल प्रवाह का किसी को अपने साथ बहाल जमाना। ३. दूत कर भरना। ४. बहुत अधिक भोजन करना।

रेरल-पेल—स्त्री० [हि० रेलना+पेलना] १. ऐसी मीड जिसमें लोह एक दूसरे को धक्के दे रहे हो या धकेल रहे हो। २. बहुत अधिकता। बाहुल्य। भर-भार। जैसे—बाजार में आमों की रेल-पेल है।

रेरलने—स्त्री० [अ०] १. रेल की बिछी हुई पटरियाँ जिन पर रेल-गाड़ी चलती है। २. रेल का महकमा या विभाग।

रेरल-पेल—स्त्री०—रेरल-पेल।

रेला—पुं० [द्वेष०] १. किसी चीज या बात का प्रबल प्रवाह। जैसे—पानी का रेल, मीठ का रेल। ३. मीठ में होमेवाला धक्का-धक्का। ३. लाकमण। बहाई। बावा। ४. किसी चीज या बात की अधिकता। बहुतायत। ५. तबला बजाने की एक रीति, जिसमें कुछ विशिष्ट प्रकार से हलके तथा मधुर बोल बजाये जाते हैं।

रेलिया—स्त्री० [अ०] मुँदरे की तरह ऊँची बहुरचना जो छत के सिरों पर बोना और सुरक्षा के लिए बनाई या लगाई जाती है।

रेवंडा—पुं० [विश०] एक विद्वल अथ विलकी नरुत्तकारण परली खंबोतरी फलियां बालिष्ठ कर संबी होती हैं।

रेवंड—पुं० [फा०] हिमालय पर प्यारह-बारह हजार फुट की ऊँचाई पर होनेवाला एक तरह का पेड़।

रेवंड-भूमी—स्त्री० [फा० रेवंड+भूमि (रेवंड)] चीन रेवंडमें होने वाला उत्तम प्रकार का पेड़, जिसकी छाल और बीज लदा के काम आते हैं।

रेवट—पुं० [स०√रेव् (गति)+अवट्] १. शूकर। सुकर। २. बास। ३. विषों की चिकित्सा करनेवाला वैद्य। विषवैद्य। ४. दक्षिण-वर्त संज्ञ।

रेवड—पुं० [विश०] १. भेड़-बकरियों का झुंड। २. झुंड। समूह।

रेवडा—पुं० [हि० रेवडी] बड़ी और मोटी रेवडी।

रेवडी—स्त्री० [विश०] पनी हुई पनी या गूध की बहुरोटी टिकिया जिस पर सकेद तिल चिपकाए रहते हैं।

मुहा०—रेवडी के कोर में आना या पचना—लालच में पड़ना।

रेवडी के लिए मसजिद डालना—अपने बहुत घोड़े लाभ के लिए सुदरो की बहुत बड़ी हानि करना।

२. लाजिक अर्थ में कोई ऐसी चीज, जिसे सरलता से नष्ट किया जा सके।

रेवत—पुं० [स०√रेव् (गति)+अवट्] १. जबोरी नीरु। २. अमल-तास। ३. बलराम की पत्नी रेवती के पिता जो एक राजा थे।

रेवतक—पुं० [सं० रेवत+कन्] १. पारावत। परेवा। २. एक प्रकार की समुद्र।

रेवती—स्त्री० [सं० रेवत+डीप्] १. ज्योतिष में सप्ताहसर्वा नक्षत्र, जिसमें ३२ तारे स्थित माने गए हैं। २. एक मातृका का नाम। ३. दुर्गा। ४. गौ। ५. रेवत मनु की माता का नाम। ६. राजा रेवत की कन्या जो बलराम की स्थायी पत्नी। ७. एक बालग्रह जो बच्चों को कष्ट देता है।

रेवती-अथ—पुं० [सं० ब० सं०] धनि (ग्रह)।

रेवती-रमण—पुं० [सं० तं०] १. बलराम। २. विष्णु।

रेवती-रंग—पुं०—रेवती-रमण।

रेवना—सं०—रेना। (दे०)

रेवरा—पुं०—रेवडा।

रेवा—स्त्री० [स०√रेव् (गति)+अव्+टाप्] १. नर्मदा नदी। २. नर्मदा नदी के आस-पास का प्रदेश। आधुनिक रीवा और बघेलखंड।

३. कामरूप की पत्नी। दलि। ४. दुर्गा। ५. एक प्रकार का साम।

६. संगीत में पूर्वी अंग की एक रागिनी जिसे कुछ लोग दीपक राग की पत्नी मानते हैं। ८. नदियों में होनेवाली एक प्रकार की मछली।

रेवाउतल—पुं० [सं० रेवा-उत्पन्न] हाथी। (हि०)

रेवा—स्त्री० [फा०] लंबी दाढ़ी।

रेवास—पुं० [फा०] [वि० रेवागो] एक विशिष्ट प्रकार के कीड़े के कोश पर के रोगों से तैयार किये जानेवाले बहुत चमकीले, चिकने और मुलायम तंतु या रेसे जो प्रायः कपड़े बनाने के काम आते हैं। कीषा। कोषिय।

विशेष—इस कीड़े की अनेक जातियाँ होती हैं, जिनसे अलग-अलग प्रकार के रेवास के ताने बनते हैं।

रेसमी—वि० [फा०] १. रेसम का बना हुआ। जैसे—रेसमी कमाछ या साड़ी। २. रेसम की तरह चमकीला और मुलायम। जैसे—रेसमी बाल।

रेसा—पुं० [फा० रेसा] १. बहुरतनु या महीन सूत, जो पीधों की छाकों आदि से निकलता है या कुछ फलों के अन्दर भी पाया जाता है। २. वे तंतु जिनसे शरीर का मांस तथा कुछ और अंग बने होते हैं। ३. कोई ऐसा तन्वु जो बुनावट के रूप में हो और जिसके तंतु या सूत अलग किये जाते हो। (काश्मिर) ४. शरीर के अस्तर की तन्वु। रत।

रेसा बस्ती—पुं० [फा०] एक प्रकार की बनस्पति, जिसका प्रयोग हकीमी दवाओं में होता है।

मुहा०—रेसा जतमी हो जाना—बहुत गद्गद् या पुलकित होना। (परिहास)

रेष—पुं० [सं०√रेष् (हिंसा)+षञ्] १. क्षति। हानि। २. हिंसा। † स्त्री०—रेस।

रेषण—पुं० [सं०√रेष् (हिंसा)+अण्] १. धोड़े का हिंसा २. बीते, बाध आदि का गरजना।

रेषा—स्त्री० [सं०√रेष्+अ+टाप्] १. धोड़े की हिंसा २. सिह की गरजना या दहाड़।

† स्त्री०—रेसा।

रेसमान—पुं० [फा० रीस मान=रेसी] डोरी। रेसी। (लश्करी)

रेसतार—पुं० [फे०] भोजनालय। आहारगृह।

रेह—स्त्री० [?] सार मिली हुई वह मिट्टी, जो ऊपर मैदानों में पाई जाती है।

† स्त्री०—रेस (रेसा)। उदा०—कुसुमवान विलास कामन कैस सुन्दर रेह।—विद्यापति।

रेहण—पुं०—रेहन (सोने की मेल)। उदा०—कायर रेहण कर गया, दीर्घ कनक दुर्गा—बाँकीदास।

रेहण—पुं० [फा० रिहण] बरपा उधार लेने की वह रीति, जिसमें महाजन के पास कुछ माल या जायदाद इस शर्त पर रखी रहती है कि जब ऋण चुका दिया जायगा, तब माल या जायदाद वापस मिलेगी। बंधक। गिरखी। (प्लेज, माटेरेज)

फि० प्र०—करला।—रखना।

पुं०—अरहल।

पुं० [?] मिलावटी सोने में से निकली हुई लच्छट या मेल।

स्त्री० [हि० रहना] रहने की क्रिया या भाव।

रेहनवार—पुं० [फा०] वह जिसके पास कोई जायदाद रेहन रखी गई हो।

रेहननामा—पुं० [फा०] वह कागज जिस पर चीज रेहन आदि रखने की शर्तें लिखी गई हों।

रेहका—स्त्री०—रिहल।

रेहना—वि० [हि० रेह] (जमीन या मिट्टी) जिसमें रेह बहुत हो।

रेह—पुं०—रोह (मछली)।

रे—अव्य० [?] के पास। के यहाँ। उदा०—राम रिहल आया राजः रे।—त्रिपौराज।

रेवति—स्त्री०—रेवत। (रिवाया)

रैकेट—पु० [अ०] ? टेनिस खेलने का बल्ब। २ आकाश बाण।
३. आकाश बाण के आकार का वह बहुत बड़ा यंत्र जो आकाश में वैज्ञानिक परीक्षणों आदि के लिए बहुत ऊपर तक जा सकता है।

रैकर—पु० [अ०] रेडियो संचित की सहायता से काम करनेवाला एक प्रकार का प्रगतिद्वि आयुक्तिक यंत्र जिससे यह पता चलता है कि किम दिया में और कितनी दूरी पर कोई चीज आकाश या समुद्र में विचर रही है और कितने से कितने आ या जा रही है।

रैर्ना—स्त्री०—रैन। (गण)

स्त्री० [म० रेणु] पूर। उदा०—वाहूत जा पर-रैन।—यूरदास।

रैणज—अव्य० [हि० रैण=गत] रात भर। सारी रात। उदा०—लोक सबै मुख नीदरी, ये क्यूँ रैणज भूली।—मीरा।

रैता—पु०—रायता।

रैतिक—वि० [स० रीति+टक=दक] रीति अर्थात् पीतल मवधी।

रैतुवा—पु०—रायता।

रैव्य—पु० [स० रीति+प्यत्] रीति अर्थात् पीतल का बना हुआ बरतन। वि० रैतिक (पीतल का)।

रैदास—पु० [स० रविदास] ? एक भक्त जो जाति के चमार थे तथा रामदास के शिष्यों में से थे। २. चमार।

रैदासी—पु० [हि० रैदास+ई] ? महात्मा रैदास के सम्प्रदाय का अनुयायी। २ एक प्रकार का मोटा जूबहन धान।

रैन, **रैनि**—स्त्री० [स० रजनी] रात्रि।

रैनी—स्त्री० [हि० रेना] तार सीचने की चाँदी-सोने की मुल्ली।

रैभुनिया—स्त्री० [हि० रामभुनी] ? एक प्रकार की अरहर। २ लाल पत्ती की मादा।

रैयत—स्त्री० [अ०] प्रजा। रिआया।

रैया-राय—पु० [हि० राजा+राय] ? छंटा राजा। २ मध्ययुग में, राजाओं द्वारा अपने मरदाओं को दी जानेवाली पदवी।

रैल—स्त्री० [?] ? रागि। २ समूह। भूट।

रैबंता—पु० [हि० रजवत] घोड़ा। (हो)

रैवत—पु० [स० रेवती+वत्] ? एक नाममंत्र। २ महादेव। शिव। ३ मेघ। बादल। ४ रैवत नामका पर्वत। ५ रेवती के पुत्र भूत। ६ एक दैत्य जिसकी गिनती बालप्रहा में होती है।

रैवतक—पु० [स० रैवत+कन्] द्वारका के पास का एक पर्वत। (पुराण)

रैवान—पु०—गवान।

रैशानिया—स्त्री०—राशानिया।

रैसा—पु०—रैहर।

रैहर—पु० [स० रैप=हैसा] झगडा। लड़ाई।

रैहू—पु० [अ०] ? एक प्रकार की सुगन्धित वनस्पति, जिसके फूल और बीज दवा के काम आते हैं। बाल्मू। २ कोई सुगन्धित घास या वनस्पति। ३ उन्नत प्रकार की घास या वनस्पति के फूल। ४. अरबी फारसी आदि लिपियों की एक प्रकार की सुन्दर लेख-प्रणाली।

रौआ—पु०—रौआ।

रौम—पु०—रौम (रौआ)।

रौमटा—पु० [हि० रौम+टा] रौम। रौआ।

मुहा०—रौंगडे खड़े होना—किसी भयानक या क्रूर कांड को देखकर शरीर में क्षोभ उत्पन्न होना। जो दहलना। रौमांच होना।

रौंगडी—स्त्री० [हि० रौंगा] ? वह अवस्था जिसमें बिलाड़ी एक दूसरे से रंग हो न लगते हैं। २ खेल में की जानेवाली चालकी या बेईमानी।

रौंगट—स्त्री० [?] ? मंड। २ मिट्टी। ३. धूल।

रौंठा—पु० [दिश०] कच्चे आम की मुबारई हुई फल। अमहर। आम-कली।

रौंठ—पु०—रौंठा (शरीर पर के रौम)।

रौसा—पु० [दश०] लीबिया या बोडे की फली।

रौआ—पु० [स० रौमत्] शरीर पर का कोई पतला छोटा तथा नरम बाल। रौम।

कि० प्र०—उलझना।—जमना।—निकलना।

मुहा०—(किसों का) रौआ तक न उलझना—कुछ भी हानि न होना।

रौआं पनीजना—मन में कषणा या दया उत्पन्न होना। रौंछे खड़े होना—रौमाच होना।

रौआई—स्त्री०—कड़ाई।

रौआब—पु०—रौआ।

रौआस—स्त्री० [हि० रौंठा+आस] रौने की प्रवृत्ति।

रौआसा—वि० [हि० रावना] [स्त्री० रौआसा] जो राते को उषत हो।

जिसे हलार्ई जाना चाहती हो।

रौईसा—पु०—कसा (घास)।

रौईया—पु० [दिश०] जमीन में गाढा हुआ कांड का वह कुदा जिस पर रख-कर गन्ने क टुकडे काटते हैं।

रौई—पु०—रौआ।

रौक—स्त्री० [म०/वृक्ष (दोपि)+पञ्च] ? नकद धन। नकदी। २. नकद धाम देकर कुछ खरीदना। ३. चमकीलापन।

वि० गनिमान।

स्त्री० [हि० रौकना] ? रौकने की क्रिया या भाव। २ वह चीज, तत्व या बात जिसके कारण कोई काम नहीं किया जा सकता। रौकनेवाली चीज।

पद—रौक-टोक।

३ निषेध। मनती।

पद—रौक-टोक।

रौक-सौक—स्त्री०—रौक टोक।

रौक-टीप—स्त्री० [म० रौक+अपु० टीप] वह पुरजा जो बिकेता केंद्र को कुछ खरीद करने पर देता है। नकदी पुर्जा। (नैम मेमो)

रौक-टीक—स्त्री० [हि० राकता+टीकना] ? किसी को रौकने और टोकने की क्रिया या भाव। २ किसी के रौकने या टोकने के कारण मार्ग में आनेवाली अड़चन। बाधा। रुकावट। ३. वह पूछ-ताछ जो किसी के कही जान या कुछ करने के समय की जाय। (अशुभ)

रौकड़—स्त्री० [स० रौक+नरद] ? नकद रुपया-पैसा आदि, विशेषतः वह रुकम निगम से प्राप्त-रुपय होना हू। नकद धनया।

मुहा०—रौकड़ मिशना—श्राव-व्यय का जोड़ लगाकर यह देखना कि रुकम घटती या बढ़ती तो नहीं है।

२. धन-सम्पत्ति । ३ मूल-धन । ४. बी. बहु बहो जिसमें प्रतिविम के आय-व्यय का हिसाब लिखा जाता है । रौक-वर्गी ।

रौक-वर्गी—स्त्री० [हि० रौक-वर्गी] दे० 'रौक-वर्गी' ४ ।

रौक-वर्गी—स्त्री० [हि०] किसी नियत समय पर आय, व्यय आदि को जोड़ने और घटाने के उपरान्त हाथ में बची रहनेवाली रौक-वर्गी का नकद नाम । (कौश-वैशेष्य)

रौक-वर्गी—स्त्री० [हि० रौक-वर्गी] नकद नाम पर की हुई विंकी ।

रौक-वर्गी—पुं० [हि० रौक-वर्गी] वह कर्मचारी जिसके पास रौक-वर्गी आय-व्यय का हिसाब रहता है । खजानगी ।

रौक-वर्गी—स्त्री० [हि० रौक-वर्गी] ऐसा काम करना जिससे प्रकिया, प्रवृत्ति आदि का पुनर्भव, प्रसार, वृद्धि आदि न होने पाये तथा वह दृष्ट या रह न जाय । जैसे—चौरियों, डकैतियों वा रोगों की रौक-वर्गी ।

रौक-वर्गी—सं० [सं० रौक-वर्गी] अधिकारत अथवा बलात् किसी को आगे न बढ़ने देना अथवा कही जाने न देना । जैसे—(क) तिहाड़ी का हाथ के दवारों से मोटर रौकना । (ख) मित्र का अपने अतिथि को रौकना ।

२. किसी को कोई किया न करने देना । जैसे—(क) ड्राइवर का मोटर रौकना । (ख) बालक का इजन रौकना । ३. आदेश, प्रार्थना, बल-प्रयोग आदि के द्वारा किसी के मार्ग में कोई ऐसी बाधा या रुकावट खड़ी करना कि वह आगे न जा सके । जैसे—(क) सरकार ने अनाज का बाहर जाना रोक दिया । (ख) पुलिस ने जूजु स रोक दिया । ४. किसी प्रकार के चलते हुए क्रम को आगे न बढ़ने देना । जैसे—(क) बाल-विवाह अब रोक दिया गया है । (ख) इस तेल

ने बालों का गिरना रोक दिया है । ५. आते हुए आपात या प्रहार के बीच में ऐसी अडचन या बाधा खड़ी करना कि वह अपना काम पूरा न कर सके । जैसे—लाठी पर तलवार का बार रौकना । ६. किसी प्रकार के नियन्त्रण या बस में रखना । जैसे—(क) इच्छा या मन को रौकना ।

(ख) बीमारी को फैलने से रोकना ।

रौक-वर्गी—[सं०/वच० (हिंसा)+वच०] [वि० रोगी, रण] १. वह अवस्था जिससे शरीर का स्वास्थ्य बिगड़ जाय और जिसके बढ़ने पर शरीर के सम्पत्त हो जान की आशंका हो । बीमारी । मर्ज । व्याधि ।

जैसे—(क) जीव-जन्तुओं, वनस्पतियों आदि में सैकड़ों प्रकार के रोग होते हैं । (ख) जान पड़ता है कि इस पेड़ को कोई रोग हो गया है ।

२. शरीर में उत्पन्न होनेवाला कोई ऐसा धातक या नाशक विकार जो कुछ विशिष्ट कार्यों से उत्पन्न होता है, और जिसके कुछ विशिष्ट लक्षण होते हैं । बीमारी । मर्ज (बिबीज) जैसे—धना (या लकवा) बहुत बुरा रोग है । ३. कोई ऐसी बुरी आदत, बीज या बात जो आगे चलकर कष्टदायक या हानिकारक सिद्ध हो । जैसे—तमाकू, बीड़ी या सिगरेट की आदत लगाना भी एक रोग ही है ।

कि० प्र०—लगाना ।—लगाना ।—होना ।

मुहा०—रोग पालना=आज-भुझकर कोई मुसीबत मोल लेना या आदत बालना ।

रोग-नाशक—पुं० [सं० मध्य० सं०] बकम की लकड़ी ।

रोग-वस्तु—वि० [सं० तू० सं०] जिस कोई रोग लगा हो । रोग से पीड़ित । बीमारी में पड़ा हुआ ।

रोग-वर्गी—पुं० [का० रोग-वर्गी] १. कोई गाड़ा और बिकना तरल पदार्थ । जैसे—बी, चरबी, तेल आदि । २. तेल, लाल आदि का बना हुआ पक्का रंग जो बीजों पर चमक आदि लाने के लिए बड़ाया जाता है । जैसे—मिट्टी के बरतनों पर लगाया जानेवाला रोग-वर्गी । ३. आज-कल कोई ऐसा रासायनिक तेल जिसे लगाने से बीजें भूष, वर्षा आदि के प्रभाव से रक्षित रहतीं और बिकनी होकर चमकने लगतीं हैं । बारिशवा । ४. ५. चमक को मूलायन करने के लिए कुमुम या बरों के तेल से बनाया हुआ एक प्रकार का मसाला ।

रोग-वर्गी—वि० [वि०] जिस पर रोग-वर्गी किया गया हो । चमकीला ।

रोग-नाशक—वि० [सं० व० सं०] बीमारी बुर कर देनेवाला ।

रोग-निवारण—पुं० [सं० व० सं०] रोग के लक्षण, उत्पत्ति के कारण आदि की पहचान । तथाबीस । (आयुर्वेदशास्त्र)

रोग-वर्गी—वि० [का०] १. रोग-वर्गी किया हुआ । २. जिस पर रोग-वर्गी पोता या लगाया गया हो । रोग-वर्गी । जैसे—रोग-वर्गी करत । ३. जिसमें रोग-वर्गी बुझा, मिलाया या लगाया गया हो । जैसे—रोग-वर्गी रोटी ।

रोग-वर्गी—पुं० [सं० व० सं०] उम्र रोग-वर्गी पर कुछ ध्यान न करके भूष-चाप कष्ट सहने की वृत्ति या मन ।

रोग-विनाशक—पुं० [सं०] आयुर्विद-चिकित्सा-शास्त्र की वह शाखा, जिसमें रोग की प्रकृति या स्वरूप और उसके कारण होनेवाले शारीरिक विकारों आदि का विश्लेषण होता है । (पैराथीजो)

रोग-विनाशक—स्त्री० [सं० व० सं०] मन-विनाश । मन-सिद्ध ।

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी, तू० सं०] रोग से प्रस्त । व्याधि से पीड़ित ।

रोग-वर्गी—पुं० [सं० रोग-वर्गी, व० सं०] वे दृष्टि या विधात अणु जो शरीर में पहुँचकर अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न करते हैं, अथवा कुछ अवस्थाओं में पदार्थों में क्षमीर उड़ते हैं । जीवाणु । (बैक्टीरियोलॉजी)

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी, तू० सं०] रोग से घबराया हुआ । व्याधि से पीड़ित ।

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी, तू० सं०] रोग से डु-डी ।

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी] जैसे रोग हुआ हो । रोग-मुक्त । रोगी ।

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी] जैसे रोग हुआ हो । रोग-मुक्त । रोगी ।

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी] जैसे रोग हुआ हो । रोग-मुक्त । रोगी ।

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी] जैसे रोग हुआ हो । रोग-मुक्त । रोगी ।

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी] जैसे रोग हुआ हो । रोग-मुक्त । रोगी ।

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी] जैसे रोग हुआ हो । रोग-मुक्त । रोगी ।

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी] जैसे रोग हुआ हो । रोग-मुक्त । रोगी ।

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी] जैसे रोग हुआ हो । रोग-मुक्त । रोगी ।

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी] जैसे रोग हुआ हो । रोग-मुक्त । रोगी ।

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी] जैसे रोग हुआ हो । रोग-मुक्त । रोगी ।

रोग-वर्गी—वि० [सं० रोग-वर्गी] जैसे रोग हुआ हो । रोग-मुक्त । रोगी ।

रोचन—वि० [सं०/चक् (शीति)+णिच्+इत्—अन्] १ अच्छा या प्रिय लगनेवाला। इचनेवाला। रोचक। २. दीप्तिमान। चमकीला।
३. सोमा देने या फलनेवाला।
पुं० १. बूट शास्त्रालि। काळा सेमल। २. कमीला। ३. सफेद सहिद्रुम। ४. प्याज। ५. अमलतास। ६. करंज। कंजा। ७. अकोट। अकोल। ८. अमार। ९. रोचना। १०. गी। १०. गोरोचन।
११. कामदेव के पाँच बाणों में से एक। १२. पुराणानुसार एक पर्वत।
१३. रोचो के अधिष्ठाता एक प्रकार के देवता। (हरिवन) १४ स्वारोचिष्य मन्वतर के इन्द्र का नाम।

रोचनक—पुं० [सं० रोचन+कन्] १. जंबीरो नीबू। २. बदा-लोकन।
रोचनकल—पुं० [सं० बं० सं०] जिब्रो नीबू।
रोचना—स्त्री० [सं०/चक्+णिच्+मुच्—अन्, +टाप्] १ उज्ज्वल आकाश। २. रक्त कमल। ३. बसलोचन। ४. काळा सेमल। ५. गोरोचन। ६. सुंदर स्त्री। ७. बाणेश्वर की पत्नी।
रोचनी—स्त्री० [सं० रोचन+नीप्] १ आमलकी। अंबला।
२. गोरोचन। ३. मैनसिल। ४ सफेद सेमल। ५. कमीला।
६ बत्ती। ७ हारागण।

रोचनक—वि० [सं०/चक् (शीति)+शानच्, मुक्-आगम] १ चमकता हुआ। २. सुशोभित होता हुआ।
पुं० १ घोड़े की गर्दन पर की एक अंबरी। २. कातिक्य का एक अनुचर।

रोचि (चिस्) —स्त्री० [सं०/चक्+इत्सुन्] १. प्रभा। दीप्ति। २. किरण। रश्मि। ३. चारो ओर फैली हुई शोभा।

रोचिष्णु—वि० [सं०/चक्+इष्णुन्] १. चमकदार। चमकीला।
२. जगमगाता हुआ।

रोचो—स्त्री० [सं०/चक्+इन्+ङीप्] एक प्रकार का शाक। हिलमो-चिका।

रोज—पुं० [फा० रोज] १. दिन। दिवस। जैसे—उसे गए बार रोज हो गए। २ प्रतिदिन के हिसाब से मिलनेवाला पारिभाषिक या मजदूरी। जैसे—आज-कल बहु ३) रोज पर काम करता है।
अर्थ—प्रतिदिन। जैसे—उसे रोज आना-जाना पड़ता है।

पुं० [सं० रोचन] १. रोना। रुदन। उदा०—रोज मराजमि के परे, हूँसी ससी की होय।—बिहारो। २. रोना-पीटना। जिलाप।

रोजगार—पुं० [फा० रोजगार] १. वह काम जो किसी को जीविका निर्वाह के लिए रोज रोज या प्रतिदिन करना पड़ता हो। पैसा। जैसे—उनका बीछ मीना रोजगार बन गया है। २. व्यवसाय। व्यापार। जैसे—उनका लकड़ी का रोजगार है।

रोजगारी—पुं० [फा० रोजगारी] वह जो कोई रोजगार करता हो। व्यापारी। सौदागर।

रोजनामचा—पुं० [फा० रोजनामच] १ वह छोटी किताब या बही जिस पर रोज का किया हुआ काम लिखा जाता है। दिनचर्या की पुस्तक। दिनदिनी। जैसे—पट्टकारियों या पुलिस का रोजनामचा। २. वह बही जिस पर नित्य प्रति की आय और व्यय लिखा जाता है।

रोज-ब-रोज—अव्य० [फा० रोज ब रोज] प्रतिदिन। नित्य।
रोजमर्रा—अव्य० [फा० रोजमर्रा] प्रतिदिन। हर रोज। नित्य।

पुं० १. नित्य प्रति होता रहनेवाला काम। २. नित्य के बोल-चाल की श्रावण। दे० 'बोल चाल' के अन्तर्गत साहित्यिक अर्थ।

रोजा—पुं० [फा० रोज़ा] १. व्रत। उपवास। २. विशेषतः रमजान के महीने में हर दिन रखा जानेवाला उपवास या व्रत।
कि० प्र०—खोलासा।—दुटना।—रखना।

३ रमजान का प्रत्येक दिन, जिसमें व्रत रखने का विधान है। जैसे—आज पाँचवाँ रोज है।

† पुं०—रोजा (समाधि)।
रोजाखोर—पुं० [फा० रोज़ाखोर] रोज न रखनेवाला व्यक्ति। (मुसलमान)

रोजावार—पुं० [फा० रोज़ावार] वह मुसलमान जो रमजान में नियमित रूप से महीने भर रोज़ो रखता हो।

रोजाना—अव्य० [फा० रोज़ान] प्रतिदिन। हर रोज। नित्य।
पुं० प्रतिदिन के हिसाब से नित्य मिलनेवाला पारिभाषिक या वेतन।

रोजी—स्त्री० [फा० रोजी] १ रोज का खाना। नित्य का भोजन। पच—रोजी, रोजगार।

कि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।
मुहा०—रोजी चलना—भोजन-व्यय मिलता जाना। जीविका का निर्वाह होता रहना। रोजी से लगना—जीविका-निर्वाह का साधन प्राप्त करना।

२. काम-धन्दा। राजगार। व्यापार। ३. मध्य युग में एक प्रकार का पुराना कर या महसूल जिसके अनुसार व्यापारियों को एक-एक दिन राज्य का काम करना पड़ता था।

स्त्री० [देग०] बुजुरात में होनेवाली एक प्रकार की कपास जिसके फूल पीले होते हैं।

रोजीदार—वि० [फा०] १ जिसको रोजाना खर्च के लिए कुछ मिलता हो। २. जो किसी रोजी में लगा हो। जिसकी जीविका का साधन बर्तमान हो।

रोजीना—वि० [फा० रोजीन] रोज का। नित्य। दैनिक।
पुं० प्रतिदिन के हिसाब से नित्य मिलनेवाली मजदूरी, वेतन, वृत्ति आदि। जैसे—उनका ३) रोजीना मिलता है।

रोजी-निबाह—वि० [फा० रोजी+हिं० बिगाह] १ अपनी या दूसरों की लगी हुई रोजी जन्मसूकर बिगाह देनवाला। २. निहट्टर।

रोजी-रोजगार—पुं० [फा०] जीविका के निर्वाह का साधन। जैसे—उनके चारो लड़के रोजी-रोजगार में लगे हैं।
कि० प्र०—से लगना।

रोझ—स्त्री० [देग०] मील गाय। गवय। उदा०—हरिन रोझ लपुना बन बस।—जायसी।

रोट—पुं० [हिं० रोटी] १ गेहूँ के आटे की बहुत मोटी रोटी। लट्ट। २. बेहतारी आदि पर चढ़ाने के लिए एक प्रकार की मोटी मोटी रोटी।
मुहा०—रोट होना या हो जाना = दब या पिसकर सपाट (अर्थात् निकम्मा और नष्ट) होना। उदा०—बिसर भूयति हृद्दि शुभ रोटा।—जायसी।

३. हाथी का दाँत।
रोटका—पुं० [देग०] बाजार।

रोडिका—स्त्री० [सं० √ रड् + क्तृन् + क्तृन् + टाप्, इत्थ] छोटी रोटी ।
चपाती ।

रोडिहा—पुं० [हि० रोटी + हा (प्रत्यय)] केवल रोटी अर्थात् साधारण
रोडिक के बन्ने में काम करनेवाला नौकर । (तुच्छता-भूषक) जैसे—
रोडिहा चाकर मुझदा घोड़ा । (बहा०)

रोडिहान—पुं० [हि० रोटी] बूढ़े के पास का मिट्टी का वह छोटा बबुलरा
जिसपर पकाई हुई रोटियाँ रखी जाती हैं ।

रोटी—स्त्री० [?] १. गेहूँ, जौ, बाजरे मक्का आदि अन्ना के गूँथे हुए आटे
से आंच पर सँककर पकाई हुई वह चिपटी, पतली और बबुलरा चीजें जो
अधिकतर देवों में लोग नित्य पेट भरने के लिए खाते हैं । (इसके चपाती,
परदा, फुलका आदि अनेक रूप होते हैं ।)

पथ—रोटी का पेट—रोटी का वह तल जो पहले गरम तवे पर डाला
जाता है । रोटी की पीठ—रोटी का वह तल या पार्श्व जो उसका
विपरीत तल या पार्श्व पक जाने पर उलटकर तवे पर डाला
जाता है ।

फि० प्र०—झाना ।—पकाना ।—बनाना ।—सँकना ।

२. एक समय पर एक साथ बनाई जानेवाली कुछ विशिष्ट चीजें जिनमें
उक्त साध पदार्थों के सिवा बाजल, दाल, सफरीजी आदि भी सम्मिलित
रहती हैं । रसोई । जैसे—(क) उनके यहाँ दोनों समय रोटी बनाने
के लिए ब्राह्मणी जाती है । (ख) हम चार दिन दिल्ली रहे, पर
जहाँमें किसी दिन रोटी तक के लिए न कहा ।

पथ—रोटी-कपडा, रोटी-बाल ।

मुहा०—(किसी की या किसी के यहाँ) रोटियाँ सोझना—किसी के
घर पर गहकर उसकी कृपा से अपना पेट पालना । बैठे-बैठे किसी का
धिया खाना । जैसे—साल भर में तो वह अपने ससुर की (या ससुर के
यहाँ) रोटियाँ सोझ रहा है । (किसी को) रोटियाँ खगना—किसी को
पूरा और मूलतः का भोजन मिलने से मोटाई सुसुना । भर-पेट भोजन
प्राप्त करवाते फिरते रहना ।

३. उक्त प्रकार की चीजें खाने के लिए किसी के यहाँ मिलनेवाला
निमन्त्रण । जैसे—आज माई साहब के यहाँ उनकी रोटी है (अर्थात्
जहाँ रोटी आदि खाने का निमन्त्रण मिला है) । ४. जीविका-निर्वाह का
ऐसा साधन जिससे अपना और अपने परिवार का पेट पाला जाता हो ।

मुहा०—रोटी कमाना—जीविका उपार्जन करना । (किसी काम या
बस्त का) रोटी खाना—किसी काम या बात के द्वारा ही अपनी जीविका
बनाना या निर्वाह करना । जैसे—वह तो दूसरों में लबाई-सपका कराने
की ही रोटी खाता है । रोडियों खगना—ऐसी स्थिति में आना या होना
कि अपना और बाल-बच्चों का पेट भरने का कष्ट न रहे जाय । जीविका
निर्वाह का साधन प्राप्त होना । जैसे—उन्हें नौकरी मिल गई, चलो
रोटियों से लग गए ।

रोटी-कपडा—पुं० [हि०] १. सोच्य पदार्थों और पहनने के वस्त्र । रोटी-
कपडे के लिए अर्थात् अल्प-पोषण के लिए दिया जानेवाला धन । जैसे—
उसने अपने पति पर रोटी-कपडे का दावा किया है ।

रोटी-बाल—स्त्री० [हि०] १. बाजल, दाल, रोटी आदि कच्ची रसोई ।
२. साधारण रूप से चलानेवाली जीविका । जैसे—आज-कल तो रोटी-
बाल चली चले यही बहुत है ।

फि० प्र०—चलना ।

रोटी-कल—पुं० [हि० रोटी + कल] १. एक प्रकार के बूझ का कल जो
खाने में बहुत अच्छा होता है । २. उक्त कि पेश जो अन्यास और कटहल
के पेशों की तरह होता है ।

रोठा—पुं० [विश०] १. एक प्रकार का बाजरा । २. मुठकी की तरह की
कोई मोलाकार कड़ी और ठोस चीज । उदा०—सँबल से सँबल
सुपारी रोठा—जायसी ।

पुं०—रोठा ।

रोडबैज—पुं० [बं०] आधुनिक भारत में किए गए चलनेवाली बड़ी मोटर
गाड़ियों (बसों) के द्वारा जनसाधारण के परिवहन का राजकीय विभाग ।

रोड़ा—पुं० [सं० लोट, प्रा० लोट्ट, १. ईट, पत्थर आदि का टुकड़ा ।
२. लास्यिक अर्थ में, कोई ऐसी चीज जो किसी काम में बाधक होती है ।
जैसे—रोड़े, चलनेवाले के मार्ग में बाधक होते हैं ।

मुहा०—(किसी काम में) रोड़ा खटकाना या डालना—विघ्न या
बाधा डालना ।

३. घर या मकान जो ईंटों, पत्थरों, रोहों (अर्थात् मकान बनाने
की सामग्री) से बनता है । उदा०—या खाय फोड़ा या खाय रोड़ा ।
(बहा०) ४. [स्त्री० अल्या० रोड़ी] किसी चीज का टुकड़ा । मेजी ।
जैसे—मुड़ की रोड़ी ।

पुं० [सं० आरट्ट] पंजाब की अरोडा नामक जाति ।

पुं० [?] पंजाब में होनेवाला एक प्रकार का घान जिसके लिए सिचाई
की आवश्यकता नहीं होती ।

रोड़ी—स्त्री० [हि० रोड़ा] वह छोटे छोटे पत्थर के टुकड़े जो सबक
आदि बनाने के काम आते हैं ।

रोध (स्)—पुं० [सं० √ र्ध् + क्तृन्] १. स्वर्ण । २. भूमि ।
पुं० [?] मूलमलान । (फि०)

रोधन—पुं० [सं० √ र्ध् + क्तृन्] १. अधुपात करना ।
रोना । २. कंधन । विलय करना ।

रोधना—ज०—रोना ।

रोधसी—स्त्री० [सं० रोधस् + स्त्री] १. स्वर्ण । २. जमीन । भूमि ।
३. पृथ्वी ।

रोधा—पुं० [सं० रोध—किनारा] १. बनुष की बोरी । विलाल ।
२. वह बारीक तंत जिससे सितार के परदे बंधे जाते हैं ।

रोध—पुं० [सं० √ र्ध् + क्तृन्] + अच्] १. अग्ने बड़ने से रोकनेवाली
चीज, तरब या बात । २. बारों और से रोकने के लिए बनाया हुआ
पेदा । (ल्लाके, सोब) ३. [√ र्ध् + पञ्] अलापनों आदि का बाध ।
(भैम) ४. [√ र्ध् + अच्] लट । किनारा । ५. छोटा बगीचा । बारी ।

रोध-अर्थकार—पुं० [सं०]—निवेशार्थकार । (रे०)

रोधक—वि० [सं० √ र्ध् + क्तृन् + क्तृन्] रोकनेवाला ।

रोधकृत्—पुं० [सं० रोध + क्तृन्] + क्तृन्] + क्तृन्] साठ
संवत्सरो में से पतालीसवाँ संवत्सर । (फलिज अर्थोत्तिथ)

रोधन—पुं० [सं० √ र्ध् + क्तृन् + अच्] १. रोकने की क्रिया या भाव ।
२. बाधा । रुकावट । ३. दमन । ४. बुध रह ।

पुं०—रुधन (रोना) ।

रोधना—सं० [सं० रोधन] १. रोकना । २. कंधना ।

रोध-प्रतिक्रमा—स्त्री०—रोध-बन्का।

रोध-बन्का—स्त्री० [सं० मुमुषुषा सं०] टेढे-मेढे किनारोंवाली नदी।

रोध—पुं० [सं० √ रुध् + रत्] १ अपराध। २ पाप। ३ लोभ।

रोमा—अ० [सं० रोदम, प्रा० रोअन] १. दुःखी व्यक्ति का ऐसी स्थिति में होना कि उसकी आँखों में आँसू बह रहे हों। रुदन करना।
२. रोना—दना।—पटना।—लेना।

मुहा०—रोमा-रुलपना या रोमा-थोना - बहुत दुःखी होकर विलाप करना शीघ्र अपने कटो की चर्चा करना। जैसे—जो चला गया, उसके लिए अब रोना कल्पना (या रोना-थोना) व्यर्थ है। रोमा-पीटना - छाती या गिर पर हाथ मार-मार कर विस्फाष करना (प्रायः किसी की मृत्यु होना अथवा बहुत बड़ी हानि होने पर)। जैसे—लडके के मरने (अथवा घर के लुटने) से लीनों में रोमा-पीटना मज गया। (किसी चीज या बात पर) रो बँटना - अच्छी तरह रो चुकने पर निराश होकर रह जाना। जैसे—हमारा हज़ारों रुपये का जो माल बे उठा ले गए, उसके लिए तो हम पहले ही रो बैठे। रो-रोकर—बहुत कठिनाता से। दुःख शीघ्र कष्ट महते हुए (प्रसन्नतापूर्वक नहीं)। जैसे—उमने रो-रोकर काम किया है। रो-रोकर घर भरना—बहुत विलाप करना।

२. किसी प्रकार का कष्ट या हानि के लिए बहुत अधिक दुःखी होना। जैसे—(क) वे तो अपने रुपये के लिए रोते हैं। (ख) वह बड़ी अनिमी किस्मत को रो रही है।

मुहा०—(किसी के आगे) रोना-बाना = सहायता आदि पाने के उद्देश्य से निनीत भाव से अपना कष्ट या दुःख किसी से कहना। अपना रोना रोना - रोते हुए अपने दुःखों को कहानी कहना।

३. किसी बात पर कुछ या चिढ़कर ऐसी आकृति बनाना या व्यवहार करना कि मानी लडकों की तरह बैठकर रो रहे हों। जैसे—वह जो जरा सी बात में रोने लगता है।

मुहा०—रून के आँसू रोमा इतना अधिक दुःखी होकर रोना कि मानों आँखों से आँसुओं की जगह खून की बूँद निकल रही हो।

पुं० अम्राह, कष्ट, हानि आदि की ऐसी स्थिति जो मृत्यु का बहुत अधिक दुःखी करती या रखती हो। जैसे—यहाँ इसी बात का रोमा है कि तुम किसी का कहना नहीं मानते।

वि० स्त्री० रोनी १. जो बात-बात पर रोने लगता हो। ३. बहुत जल्दी चिढ़ने या बुरा माननेवाला, प्रायः बहुत अधिक दुःखी रहनेवाला। जैसे—ऐसे रोने आदमी से तो सदा दूर ही रहना चाहिए।

रोमी-थोनी—स्त्री० [हि० रोना + थोना] १. रोने-पाने की वृत्ति।
२. कष्ट या दुःख की ऐसी स्थिति जिसमें आदमी को रोना पड़ता हो। ३. मनहूसी।

रोध—पुं० [सं० √ रुध् (उत्पन्न) + गिन्व्। घट्, ह—प, वा √ रुष् (विगोहन) + पश्व्] १ ठहरने की क्रिया या भाव। ठहराव। २. किसी को मूख करके उदमे बुद्धि-भ्रम उत्पन्न करना। ३. मोहित करना। मोहना। ४. तीर। बाण। ५. छेद। सुराल।

पुं० [वि०] हल की एक लकड़ी जो हरिस के छोर पर जधे के पार लगी रहती है।

रोधक—वि० [सं० √ रुध् + गिन्व् ह—प, + ष्वल्—अक] १ रोपण या स्थापन करनेवाला। २. रोपनेवाला। ३. जमाने या लगानेवाला।

पुं० [सं०] सोने-चाँदी की एक पुरानी लोह या मान जो सुवर्ण का ७०वाँ भाग होता था।

रोधक—पुं० [सं० √ रुध् + गिन्व् ह—प, + ष्वल्—अक] [भू० क० रोपित, वि० रोप्य] १ ऊपर रखना या स्थापित करना। २ (पीपे, बीज आदि) जमाना। बँटाना। लगाना। ३. बनाकर खड़ा या तैयार करना। ४. अपने मत अनुसृत या मोहित करना। ५. पाष भरनेवाली क्रिया या चिकित्सा करना। मरहम या लेप लगाना। ६. विचारों में गड़बड़ी डालना। बुद्धि फेरना।

रोधना—त्पुं० [सं० रोपण] १ पीघा या बीज जमाना। लगाना। बँटाना। बोना। ३. कुछ विधिगत प्रकार के पीघो की एक स्थान से उखाड़कर दूसरे स्थान पर लगाना। दुइतापूर्वक कोई चीज स्थापित या स्थित करना। ४. कोई वस्तु लेने के लिए हथेली या कोई चीज सामने करना। पसारना। फेंकना। जैसे—किसी के आगे हाथ रोपना। पाने, मँगने या लेने के लिए हाथ फेंकना या बढाना। ५. (आघात या दार) किसी अंग या अस्त्र पर लेना या सहना। ओडना।

रोधनी—स्त्री० [हि० रोपणा] १ रोपने की क्रिया या भाव। २. वह समय जिन दिनों धान रोपा जाता है।

रोपित—पुं० क० [सं० √ रुध् + गिन्व्—हृत्थ, प, + क्त] १ जिसका रोपण किया गया हो। जमाना या लगाया हुआ। २. रखा या स्थापित किया हुआ। ३. मूख या भ्रंत किया हुआ। ४. उड़ाया या खड़ा किया हुआ।

रोध—पुं० [अ० रुधव] [वि० रोधीला] १ किसी के बड़पन, मरहम, शक्तिशालिता आदि की वह स्थिति जिसका दूसरा पर आतंककारक प्रभाव पड़ता हो। धाक। दबदबा। जैसे—गारे शपत्त पर उसका रोध छाया रहता था।

कि० प्र०—छाना।—जमाना।
२. मरहम, शक्तिशालिता आदि का ऐसा प्रदर्शन जो जीरो के मन में आतंक उत्पन्न करने के लिए हो। जैसे—यह रोध किसी और को दिखाता।

कि० प्र०—गाँठना।—जमाना।—दिखाना।
पद—रोध-बाध।

मुहा०—किसी के रोध में आना - किसी के उचित प्रकार के बल-प्रदर्शन से प्रभावित होकर उसके सामने झुक या दब जाना। भय भानकर दब जाना।

३. किसी की आकृति, रूप आदि में दिखाई देनेवाला ऐसा बड़पन जिससे लोग प्रभावित होकर दबते हो। जैसे—उसके चेहरे पर रोध है।

रोध-नाश—पुं० [हि०] नातक और उसके कारण पड़नेवाला दबाव या प्रभाव।

रोधवार—वि० [हि० रोध + वार] जिसका दूसरा पर जल्दी प्रभाव पड़ता हो। दूसरी पर अपना आतंक जमाने में समर्थ।

रोधीला—वि० [हि० रोध + इला (प्रत्य०)] (व्यक्ति या आकृति) जो रोध से युक्त हो। रोधदार।

रोधम—पुं० [सं० रोप + मथ् (विलोडन) + अण्, पुषी० ग-लोप] जुगाली। पावुर।

रोध (भर) —पुं० [सं० √ रुध् (गति) + मनिन्व्] १. देह के बाल। रोध। २. शरीर पर का छोटा पतला तथा नरम बाक। रोधा।

मुहा०—रोम-रोम में = घाटीर के सभी छोटे-बड़े अंगों में अर्थात् सारे घाटीर में। **मुहा०**—रोम रोम से = तन-तन से। पूर्ण तथा शुद्ध हृदय से। जैसे—रोम-रोम से आशीर्वाद देना।

पद—रोमराजी, रोमकला, रोमाकली।
३. छेद। दूराक। ४. जल। पानी।
पुं० र. रम्य देश। २. इटली देश की राजधानी।
रोमक—पुं० [सं० रोमन्/की (प्रतीत होना) +क] १. तीस्र झील का नाम। साकभरी लक्षण। शीघ्र लक्षण। २. रोम नामक देश या नगर का निवासी। ३. रोम नामक देश और नगर। ५. ज्योतिष सिद्धान्त का एक भेद या शाखा।

वि० रोम देश या नगर का।
रोमकूय—पुं० [सं० व० सं०] करीर के वे छिद्र जिनमें से रोएँ निकले हुए होते हैं। कोम-छिद्र।

रोमकीरा—पुं० [सं० व० सं०] बैंगर। चामर।
रोमकुब्ज—पुं० [सं० व० सं०] बैंगर। चामर।
रोमद्वार—पुं० [सं० व० सं०] रोमकूप। (दे०)
रोमक—वि० [रोम नगर से] रोम देश सम्बन्धी। रोम का।
पुं० रोम देश का निवासी।
स्त्री० रोम देश की लिंगिका बहु परिष्कृत रूप जिसमें आज-कल अँगरेजी आदि भाषाएँ लिखी जाती हैं।

रोमन-कीर्तिक—पुं० [अ०] ईसापूर्व का एक सभ्रदाय जिसमें प्रायः ईसा की मूर्ति रखकर पूजी जाती है, और उसकी उपासना की जाती है।

रोम-पद—पुं० [सं० व० सं०] ऊनी कपड़ा।
रोम-बद्ध—वि० [सं० व० सं०] जो रोमों से बँधा, बना या बना हो।
पुं० ऊनी कपड़ा। २. उन की बनी हुई कोई चीज।

रोम-भूमि—स्त्री० [सं० व० सं०] चमड़ा। त्वक्।
रोम-राजी—स्त्री० [सं० व० सं०] १. रोमावलि। रोमों की पंक्ति। रोमों की बहु रेखा जो नाभि से ठीक ऊपर की ओर जाती है।

रोम-कला—स्त्री० [सं० व० सं०] रोमावलि। रोमराजी।
रोम-हृत्—पुं० [सं० व० सं०] आतंक, भय, बीभत्सता आदि के कारण रोंगटे खड़े होना। रोमांच। पुलक।

रोम-हृत्क—वि० [सं० व० सं०] रोम-हृत् उत्पन्न करनेवाला। रोंगटे खड़े करनेवाला अर्थात् दाबण या बीषण।

रोम-हृत्प—पुं० [सं० व० सं०] १. रोमांच। सिहरन। रोमों का खड़ा होना, जो अत्यन्त आनन्द के सहसा अनुभव अथवा भय से होता है। २. सूत पीरोपिक।

वि० रोंगटे खड़े करनेवाला। बीषण।
रोमाच—पुं० [सं० रोमन्-अच, व० सं०] १. आश्चर्य, भय, हृत् आदि के कारण घाटीर के रोमों का खड़ा होना। पुलक। २. भय आदि से अथवा बीभत्स दृश्यों आदि के कारण रोएँ खड़े होना।

रोमाचित—पुं० क० [सं० रोमाच +इत्थच्] जिसे रोमांच हुआ हो। पुलकित।

रोमासिका मयूरिका—स्त्री० [सं० रोमन्-सिकिका, व० सं०, रोमासिका और मयूरिका, श्वेत पद] केचक की तरह का एक रोग।
रोमाच—पुं० [सं० रोमन्-अच, व० सं०] रोएँ की गोक या तिरा।

रोमाली—स्त्री० [सं० रोमन्-आली, व० सं०] रोमों की पंक्ति। रोमाकली। रोमराजी।

रोमावलि, **रोमाकली**—स्त्री० [सं० रोमन्-अवलि (की), व० सं०] रोमों की पंक्ति जो पेट के बीचो-बीच नाभि से ऊपर की ओर गई होती है। रोमावली। रोमराजी।

रोमिका—स्त्री० [सं०] १. छोटा रोम। २. जेब और मानस्पतिक कोषाणुओं पर उमनेवाले बहुत छोटे-छोटे रोएँ। (सिलियम)

विशेष—गुलक और रोमाच में मुख्य अंतर यह है कि गुलक तो केवल आनन्द या हृत् से होता है, परन्तु रोमाच का कारण हृत् के सिवा आश्चर्य, भय आदि अन्य मनोविकार भी हो सकते हैं।

रोमिक—वि० [सं० रोमवत्] जिस पर रोम हों। रोएँदार। बालोंवाला।

रोमोद्वाम—पुं० [सं० रोमन उद्वाम, व० सं०] रोमांच।
रोमा—पुं० = रोमा।

रोर—स्त्री० [अ०] १. बहुत से लोगों में एक साथ चिल्लाने का शब्द। शोर-मूला। हल्ला। २. उपद्रव। उपपत्त। ३. आंदोलन। ४. शब्द। उदा—मेरे उर में भी भर मधू रोर।—पत्त।

वि० १. प्रबंड। २. उपद्रवी।
रोर—वि० [हिं० रोर] [स्त्री० रोरी] गुस्सारा। खिन्न।

पुं० १. = रोर। २. = रोडा।

रोरी—स्त्री० [हिं० रोर] १. = चहल-पहल। धूम। २. वे० 'रोर'।
[स्त्री०?] लहुनुमिया नामक रज।
स्त्री० = रोली।

रोलक—पुं० [सं० व० सं०] (शब्द) +विच्, रो/लम्+अच् १. ध्रमर। भौरा। अँवरा। २. सूजी जमीन।

वि० सहसा किसी का बिधास न करनेवाला।
रोल—पुं० [हिं० रोलक] रोलने की क्रिया या भाव।

पुं० [विश०] कसेरों का एक उपकरण।
पुं० = रोर।
पुं० = रूँटा।

रोलना—सं० [?] १. किसी चीज में जँगलियाँ डालकर उसे हिलाना-डुलाना। जैसे—मोती रोलना। २. किसी चीज को छेड़ना, हिलाना-डुलाना या घुमाना-फिराना। उदा—धोडा और फोडा जितना ही रोलो उतना ही बडे। (कदा) ३. बहुत अधिक मात्रा में कोई चीज पाकर मनमाने ढंग से उसे धूपर-उधर करना या छितराना। ४. उबटन, लेप आदि अंगों में लगाना।

रोलर—पुं० [अ०] १. डुलकनेवाली वस्तु। २. बेलन। बेलना। ३. छापी की कल में वह बेलन जिससे असरो पर स्पष्टही लगती है। ४. कंकड़ आदि दबाकर सबक चीरस करनेवाला बेलन जो मॉही लीचा या इंचन के आगे लगाकर चलाया जाता है।

रोला—पुं० [सं०] १. एक प्रकार का छंद जिमेंके चारो चरणों में ११+११ के विश्राम से २४-२४ मात्राएँ होती हैं।
पुं० = रोर। (परिचय)

पुं० [हिं० रोलना] जूट बरतन सँजने का काम और मजबूरी।

रोमी—स्त्री० [सं० रोमनी] एक प्रकार का बूज जो हल्की और चूने के योग से बनता है, और पवित्र माना जाता है।

रोचनहार—वि० [हि० रोचना + हार (प्रत्य०)] रोनेवाला।

१०० किसी के घर जाने पर उसके लिए रोकर शोक मनानेवाला उत्तराधिकारी।

रोचना—अ०, वि०—रोना।

रोचनहार—वि० रोचनहार।

रोचनी-बोचनी—स्त्री०—रोनी-घोनी।

रोची—पुं०—रोजी।

रोचिस्त—वि० [स्त्री० रोचिस्ती] रोचिस्ता।

रोचान—वि० [का०] १ रोचनी या प्रकाश में युक्त। प्रकाशमान। २ जलता हुआ। प्रवीण। जैसे—निराग रोचान होना। ३ जिसमें वृष बहल-पहल और अनन्य-मगल हो। जैसे—महफिल रोचान होना। ४ किसी प्रकार की कीर्ति या यश से युक्त, और फलतः प्रसिद्ध या विख्यात। ५ जाहिर। प्रकट। विदित। जैसे—यह बात सब पर रोचान हो जायगी।

रोचान-बोकी—स्त्री० [का०] १ नफीरी नामक जेजा। २ बहलाई नामक दाढ़-समुह।

रोचान-बान—पुं० [का०] १ कमरे की दीवार के ऊपरी भाग में बना हुआ वह खोटा कुल स्थान, जिसमें से प्रकाश आता है। २ उक्त स्थान में लगी हुई कोई जाली अथवा चकड़ी आदि का ढाँचा।

रोचानई—स्त्री० [का०] १ अथर आदि लिखने की स्थाई। मसि। १ स्त्री०—रोचानी।

रोचानी—स्त्री० [का०] १. उजाला। प्रकाश। २. निराग। बीपक। ३. आनन्दोत्सव के समय बटुन-से दीपक जलाकर किया जानेवाला प्रकाश। दीपोत्सव। ४. ज्ञान आदि का प्रकाश।

मुहा०—रोचानी बालना—किसी विषय को अधिक सुबोध तथा स्पष्ट करना।

रोच—पुं० [स०/ख्/क्रोध]+पञ् [वि० रुष्ट] १ क्रोध। कोप। मुस्ता। २ ऐसा क्रोध जो मन में ही दबा या छिपा रहे। कुडन। ३ बै। विरोध।

रोचप—पुं० [स०] १ ख्/पुञ्—अन] १ पारा। २ कनौटी। ३ ऊसर जमीन।

वि० रोच उत्पन्न करनेवाला। २ मन में रोच करनेवाला। ३ क्रोध प्रकट करनेवाला। कुड।

रोचाल—पुं० [स० रोच-अनल.कर्म० स०] क्रोध रूची अग्नि। ऐसा विकट क्रोध जो जलाकर मत्स्य या सृष्ट कर डालना चाहता हो।

रोचाभित्त—पुं० क० [स० रोच-अभित्त.तु० त०] रोच से युक्त। कुड। नाराज।

रोचित्त—पुं० क० [स० रोच+इत्त] जो क्रोध से युक्त हुआ हो। कुड। नाराज।

रोची (विन्)—वि० [स० रोच+इवि] रोच अर्थात् क्रोध करनेवाला। क्री।

रोसा—पुं०—रोष।

स्त्री०—रौंस।

रोसनाई—स्त्री०—रोसनाई।

रोसनी—स्त्री० रोसनी।

रोसा—पुं०—रुसा (बास)।

रोह—पुं० [स०/रूह (उद्भव)+अञ्] १. ऊपर बढ़ना। बढ़ाई। २. कली। ३. अक्रुर। अशुभ।

१पुं० [?] नील गाय।

पुं० [स० रोहित] अफगानिस्तान का मध्ययुगीन नाम।

रोहक—वि० [स०/रूह+पञ्च—अक] चक्रेवाला।

पुं० बहु जो किसी सवारी पर बढकर चलता हो। सवार।

रोहण—पुं० [स०] सिंह द्वीप का एक पहाड़। अथ चोट। विद्वारात्रि।

रोहण—पुं० [?] नेत्र। (हि०)

रोहण—पुं० [म०/रूह (उद्भव)+स्युट्—अन] १. ऊपर की ओर बढ़ना। २. किसी पर बढ़ना। ३. सवार होना। ४. बीज या पोषे का उगना या जमना। अक्रुर होना। ५. पीयूष। शुक्र। ६. रोहण पर्वत।

रोहण—पुं० [दश०] एक तरह का वृष।

१पुं०—रोहण।

रोहना—अ० [स० रोहण] १. ऊपर की ओर जाना या बढ़ना। ऊपर बढ़ना। २. किसी के ऊपर बढ़ना। ३. सवार होना।

स० १. ऊपर की ओर बढ़ना। २. बढ़ाना। ३. सवार कराना।

४. अपने शरीर पर धारण करना या लेना।

रोहा—पुं० [हि० रोहना] ऐसी नाली या और कोई चीज जिसका प्रवाह ऊपर की ओर होता हो।

पुं० [स० रोह—अक्रुर] पलक के भीतरी भाग में होनेवाले एक प्रकार के दाँते।

रोहि—पुं० [स०/रूह+इन्] १. वृत्त। वेड। २. बीज। ३. नपस्त्री।

रोहिण—पुं० [स०/रूह+इन्] १. रोपक। २. गूदर। ३. रुसा बास। ४. दिन का दूसरा पहर।

रोहिणिका—वि० [स० रोहिणी+कन्+टाप्, लृत्] (स्त्री) जिसका मुँह क्रोध, रो आदि के कारण लाल हो।

रोहिणी—स्त्री० [स० रोहिण+डीप्] १. माघ। गी। २. बिजकी। विद्युत्। ३. नगदस नक्षत्रों में से चौथा नक्षत्र जिसमें पाँच तारे हैं।

४. बसुदेव की स्त्री जो बलराम की माता थी। ५. जैनों की एक देवी।

६. स्मृतियों के अनुसार ऐसी कन्या, जो अभी हाल में रजस्वला होने लगी हो। ७. पंचत स्वर् की तीन श्रुतियों में से दूसरी श्रुति। ८.

रोहू की तरह की एक प्रकार की मछली। ९. करंज। १०. रीठा।

११. मजौठ। १२. ब्राह्मी। १३. काचमरी। १४. गभारी। १५.

कुटकी। १६. सफेद की आठोंठी। १७. लाल गधपूरुला। १८. छोटी, लंबी, पीली हड जो गोल न हो। इसे 'बण रोहिणी' भी कहते हैं। १९. एक प्रकार का विकट सक्काम रोग, जिसमें उबर के साथ

गले में पीड़ा और सूजन होती है। (विपुत्रीय) २०. लवचा की छठी परत। (बैद्यक)

रोहिणी-अष्टमी—स्त्री० [स० मध्य० स०] भाद्रपद मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी, जिसमें चंद्रमा रोहिणी नक्षत्र में रहता है।

रोहिणी-भक्ति—पुं० [स० ब० त०] चन्द्रमा।

रोहिणी-योग—पुं० [स० ब० त०] आषाढ़ के कृष्णपक्ष में रोहिणी का चन्द्रमा के साथ होनेवाला योग।

रोहिणी-बल्लभ—पुं० [स० ब० त०] १. चन्द्रमा। २. बसुदेव।

रौहिणी— $\mu\circ$ [सं० रौहिणी-ईश, व० स०] १. चन्द्रमा। २. बसुदेव
रौहित्य— $\text{वि}\circ$ [सं० √रूह (वृष्यन्) +इत्] काल रंग मा। रत्नवर्ण।
कोहित।

पुं० १. लाल रंग का। २. रौह मछली। ३. एक प्रकार का हिरण।
४. रौहित्य वृक्ष। ५. ब्रह्मपुत्र। ६. कुसुम या बरं का फूल।
७. केदार। ८. रत्न। लड़। ९. बाल्मीकि के अनुसार एक प्रकार के
गणधर।

रौहित्य— $\mu\circ$ [सं० रौहित्य+कन्] रौहित्य (वेष)।

रौहित्यम्— $\mu\circ$ [सं० रौहित्य+अच्, व० स०] १. जगि। २. महाराज
हिरण्यक के पुत्र का नाम। ३. आधुनिक रौहतास (गङ्गा और बस्ती)
का पुराजा नाम।

रौहित्य— $\mu\circ$ [सं०] दे० 'परिणामिण'।

रौहिणी—स्त्री० = रौहिणी।

रौहित्य— $\mu\circ$ [सं० √रूह+इत्] १. रूसा नामक घास जिसकी जड़ें
सुगन्धित होती हैं। २. एक तरह का हिरण। ३. एक तरह की मछली।
रौह।

रौही (हिन्)— $\text{वि}\circ$ [√रूह +णिनि] [स्त्री० रौहिणी] १. ऊपर की
ओर जानेवाला। २. चढ़नेवाला।

पुं० १. मूलर का पेड़। २. पीपल। ३. रौहित्य घास। ४. एक प्रकार
का हिरण। ५. रौहित्य या खड़ेवा नामक वृक्ष। ६. रौह मछली।
[पुं०?] १ जगल। वन। २. एक प्रकार का हथियार (शिरोही)।
पुं०[सं० रौहित्य] वृत्त। रत्न।

वि० लाल। सुर्ष।

रौह—स्त्री०[सं० रौहित्य] १. एक प्रकार की बड़ी मछली। २. एक प्रकार
का पहाड़ी वृक्ष।

रौहिण—स्त्री०[हि० रौणा] बोलते हुए वक्त्रों में से किसी का चिह्न या छद्म
कर रोने का-सा मुँह बना लेना, और कुछ या बिड़ जाना। उदा०—
रौहिण कल्प तुम सेलत ही मैं—सूर।

रौह—स्त्री०[हि० रौदना] रौदने की विधा या भाव।

स्त्री०[अ० राउड] पहरेदार या तिपहियों का गरत लगाना।

रौधमा—स्त्री० = रौद।

रौधमा—सं०[सं० मर्दन] १. किसी चीज को पीरो से इस प्रकार दबाना
अथवा उस पर इस प्रकार चलना कि वह टुकड़े-टुकड़े हो जाय अथवा
बहुल हो विकृत हो जाय। २. पीरो से बहुत अधिक मार-मार कर
अवर-पवर होले करना।
संयो० कि०—डालना।

रौधी—स्त्री०[हि० रौदधा] चौपायों के रूदने का घेरा या बाड़ा।

रौस—स्त्री०[फा० रौसि] १. गति। चाल। २. चाल-काल। तीर-
सरीक। रग-रंग। ३. मकान का ऐसा छत्रा, जिस पर लोग जा-जा
सुके। ४. बगोचे की बरतियों के बीच बना हुआ आग्नि-जाने का
नाम।

रौसा— $\mu\circ$ [सं० लोमश, रौमश=रौएवाला] १. केवाँच। कौड़। २.
बोग्रा। लोबिया।

रौ—स्त्री०[फा०] १. गति। चाल। २. पानी का बहाव। ३. किसी
प्रकार के मनोवेग की गति अथवा प्रवृत्ति। किसी काम या बात की

धुन। जैसे—उस समय धुन रौ में आगे बढ़ते चले गए, मेरी बात
धुनने नहीं आयी।

वि०[फा०] १. चलनेवाला। जैसे—वेग-रौ—आगे चलनेवाला,
अर्थात् नेता। २. आगे बढ़नेवाला। ३. उगने या उत्पन्न होनेवाला।
जैसे—सूद-रौ—आप से आप उगने और बढ़नेवाला।

पुं०[देश०] एक प्रकार का पेड़।

पुं०—रव (शब्द)।

रौष— $\text{वि}\circ$ [सं० रषम+अच्] १. रषम-सवधी। २. सोने का बना
हुआ।

रौष्य— $\mu\circ$ [सं० √रूष्+प्यल्] रूषापन। रूषार्ह। रूषता।

रौचर—स्त्री०[देश०] वह भूमि जिसकी मिट्टी बाढ़ के कारण बलुई हो
गई हो।

रौशन— $\mu\circ$ —रौशन।

रौशनी— $\text{वि}\circ$ —रौशनी।

रौशमिक— $\text{वि}\circ$ [सं० रौशना+ठक्+इक] १. गोरोचन या रौली
संबंधी। २. गोरोचन या रौली से बना या रंगा हुआ।

रौष्य— $\mu\circ$ [सं० रषि+प्यल्] बेल की शाखा का बड़ धारण करनेवाला
संघासी।

रौशन— $\mu\circ$ [फा० रौशन] १. छिद्र। बिल। सुराब। २. दरज। दरार।
३. गवाँच। झरोखा। बातायन।

रौषा— $\mu\circ$ [अ० रौषा] १. राग। बगीचा। २. किसी बड़े आदमी
की कब्र के ऊपर नदी हुई बड़ी इमारत। समाधि। जैसे—ताजमही की कौ
रौषा।

[पुं० दे० 'रौषा']।

रौत— $\mu\circ$ [हि० रावत] सवुर।

रौताइन—स्त्री०[हि० राव, रावत] १. राव या रावत की पत्नी।
ठकुराइन। २. स्त्रियों के लिए आभरसूत्रक संयोगन।

रौतार्ह—स्त्री०[हि० रावत+आर्ह (प्रत्यय)] १. राव या रावत होने
की अवस्था, पद या भाव। २. रावता या बड़े बादमियों की-
सी अकड़ या ऐंड। उदा०—रौतार्ह और कूसल खेमा—
आयसी।

रौषा— $\mu\circ$ [?] एक प्रकार का चावल। उदा०—खिनवा, रौषा, दाउब
खानी।—आयसी।

[पुं० = रौषा (धनुष की बोरी)।

रौह— $\text{वि}\circ$ [सं० रूह+अच्] [भाब० यत्ता] १. रूह-सवधी। रूह का।
२. बहुत ही उग्र, प्रबल, भीषण या विकट। ३. बहुत अधिक क्रोध या
क्रोध का परिचायक अथवा सूचक।

पुं० १. क्रोध। मुस्ता। रौष। २. आतप। घाम। धूप। ३. वमराज।
४. प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र। ५. साहित्य में नी रूखों
में से एक जो किसी प्रकार का अत्याचार, अत्याध, अपमान, अविष्टता
आदि का व्यवहार देखकर उसे रौष होने या उसका प्रतिकार करने के
बिचार से मन में होनेवाले क्रोध से उत्पन्न होता है। ६. गरमी। ताप।

७. प्यारह मानाजोवले छंदों की सभा। ८. सत संवत्सरो में से
५४वाँ संवत्सरो। ९. दे० 'रौह-केतु'।

रौह-केतु— $\mu\circ$ [सं० कर्म० स०] आकाश के पुरुष दक्षिण में बृहल के अथले भाग

के समान कपिया (कपासी) रुख (रुखा) ताजबर्ण किरणा से युक्त एक केतु। (बृहत्संहिता)

रौताता—स्त्री० [स० रौत+तन्+टाप्] ? दूर होने की अवस्था, भाव या मूछ। २ भयकरता। भीषणता। २ प्रखरता। प्रचञ्चता।

रौत-वर्त्मन—वि० [स० व० न०] देखने न डराना। भीषण आकृति या रूपबाला। जिस देखने से डर लग।

रौतार्क—पु० [स० रौत-अर्क+उपसर्ग+त०] ? ३ मायाओं के शब्दों की सजा।

रौती—स्त्री० [स० रौत+ङाप्] ? दूर की पत्नी, गोरी। २ गाधार स्वर की दो धुनिया में मे पहली धुति।

रौता—पु०—रमण।

रौतक—स्त्री० [अ० रौतक] ? गुदर वर्ण और आकृति या रूप। २ बमक-दमक और उनके कारण होनेवाली सोमा। जैसे—यह सुनते ही उनके चेहरे पर रौतक आ गई। ३. प्रथम बदन लोगों की बहल-पहल या जमपट। बहोर। जैसे—सन्ध्या को डग बाजार में बहुत रौतक रहती है।

रौतकी—वि० [हिं० रौतक] ? रौतक लगनेवाला। २ (स्थान) जहाँ रौतक हो।

रौता—पु० [स० रवाना] द्विरामम। गीना। मुकलावा।

†अ०—रौता।

†पु०—रावण। (उपलामूचक)

रौमी—स्त्री०—रमणी।

रौप्य—पु० [स० रूप्य+अणु] चांदी। रूप्या।

वि० चांदी का बना हुआ।

रौमक—पु० [स० रुमा+वृज्—अक] सांभर नमक।

रौम-लवण—पु० [स० अम० स०] सांभर नमक।

रौर—स्त्री०—रार।

रौरव—वि० [स० रर+अणु] ? दूर मृग-नाम्नर्थी। दूर मृग का। २ भयकर। ३ घोर। भीषण। ४ धूर्त और बेईमान। ५ अपनी बात पर दृढ़ रहनेवाला।

पु० पुराणानुसार पंचवर्षी नरक जो बहुत भीषण कहा गया है।

रौरा—पु०—रौला।

वि० रावरा (आपका)।

रौराना—स० [हिं० रौर, रौरा] व्यर्थ बोलना या हल्का करना। प्रलय करना। बकना।

रौरि—स्त्री०—रौर।

रौरि—सर्व० [हिं० राव, रावल] जाय। (आवरतदूचक संबोधन)

रौरांग—पु० [?] [स्त्री० रौरांगी] जोषी।

रौरा—पु० [स० रमण] ? धोर। हल्का। २ लसट। बसेरा। ३. ऐसा उपद्रव जिसमें बृह हल्का हो, और यह पता न लगे कि क्या हुआ।

फि० प्र०—मचना।—मचना।

रौरि—स्त्री० [दिस०] ? तमाचा। पण्ड। २ नील (तिर पर भारी जानेवाली)।

रौरान—वि०—रौरान।

रौरानदान—पु०—रौरानदान।

रौरानाई—स्त्री०—रौरानाई।

रौरानी—स्त्री०—रौरानी।

रौरा—स्त्री०—रौरा।

रौरा—पु०—रौर।

रौरा—पु०—रौर।

रौरा—पु०—रौर।

रौरा—पु०—रौर।

रौरा—पु०—रौर।

रौरा—पु०—रौर।

रौरा—पु०—रौर।

रौरा—पु०—रौर।

रौरा—पु०—रौर।

रौरा—पु०—रौर।

ल

रौ—व्याकरण तथा भाषा-विज्ञान के विचार में तात्पर्य, धाव, अल्पप्राण, ईशस्पर्श तथा अन्त रथ व्यञ्जन।

पु० [स०/ली+ङ] ? इन्द्र। २ पुष्पी।

अर्थ० कुछ स्थानों के नाम के साथ 'रौल' के मक्षितक के रूप में प्रयुक्त। जैसे—काबुल (कुमा+रौल), गौमल (गौमत+रौल)।

रौक—स्त्री० [स०] कम्मर। कटि।

†पु० [?] डेर। राशि। जैसे—देखते-देखते उसने किनावा का रौक लगा दिया।

फि० प्र०—लगाता।

† स्त्री०—लका (डीप)।

रौक-दकटा—स्त्री० [स०] ? सुकेश राक्षस की माता और विद्युत्केश

की कन्या का नाम। २ पुराणानुसार सन्ध्या की कन्या का नाम।

रौक-वीथ—पु०—लका (डीप)।

रौक-नाथ—पु० [स० लकानाथ] ? रावण। २. विभीषण।

रौकनाथक—पु०—लकानाथ।

रौक-साट—पु० [अ० लग वलाथ] एक प्रकार का चिकना घोंटा कपड़ा।

रौका—स्त्री० [स०/रुम् (रमण)+क बा०, रस्यल+टाप्] ? भारत के दक्षिण का एक प्रसिद्ध द्वीप जहाँ पहले रावण का राज्य था। कौनों का विश्वास है कि रावण के समय यह टापू सोने का था। २. मध्य-कालीन साहित्य में आधुनिक सिन्धु से मिश्र एक और द्वीप, जिसे

लंकारानुस भी कहा जाता था। २. विभी वाम्य। ५ असवरण।

५. काला बना। ६. वृक्ष की छाया। डाली।

लंकारिपति—यु० [सं० लंकार-अधिपति, व० त०] रावण।

लंकार-वसिष्ठ—यु० [सं० व० त०] १. रावण। २. विभीषण।

लंकारि—यु० [सं० लंकार-अरि, व० त०] रामचन्द्र।

लंकारिका—स्त्री० [सं०] असवरण।

लंकारस—यु० [?] शेर। सिंह। (हिं०) उदा०—ब्राह्म बरसा बापरी,

कहे बैर लंकार।—कविशारदा सूर्यमल।

लंकारिणी—स्त्री० [सं०] रामचरित मानस में बर्णित एक राक्षसी जिसे हनुमान् जी ने लंका में प्रवेश करते समय बँसी से मार डाला था।

लंकार*—यु०=लंकार।

लंकारे—यु० [सं० लंकार-ईश्वर, व० त०] १. लका के अधिपति, रावण। २. विभीषण।

लंकारेश्वर—यु० [सं० लंकार-ईश्वर, व० त०] लंकारे।

लंकारोई—स्त्री०=असवरण।

लंकारिचर—यु० [सं०] व्योमिषि में भारत के उत्तर में दोहीतक (आधुनिक रोहतक) मध्य में उज्जयिनी और दक्षिण में लंका से होकर जानेवाली देशांतर रेखा पर का सूर्यादय काल जो पंचांगी में प्रामाणिक माना जाता है।

लंघ—यु० [फ०] लंगडानप।

मुहा०—लंघ खाया=चलने से कुछ लंगडाना।

लुं० [स०/लृक् (गति)+अच्] १. मेल। योग। २. उपपत्ति या प्रेमी। स्त्री०=लंग।

लंगक—यु० [सं० लंग+क] उपपत्ति। यार।

लंगडा—वि० [स्त्री० लंगटी]=लंगटा (लंगा)। (उपेक्षासूचक)

लंगडा—वि०=लंगडा।

लुं०=लंगर।

लंगडा—वि० [फ० लंग] [स्त्री० लंगटी, भाष० लंगडानप] १. जिसका एक पैर बेकार हो गया हो या टूटा हो। २. पैर में किसी प्रकार का कष्ट, दोष या विकार होने के कारण जो लम्बकर चलता हो।

३. जिसका कोई एक आधार नष्ट या विकृत हो गया हो। और इसीलिए जो ठीक तरह से या सीधा खड़ा न रह सकता हो। ३. (पैर) जो टूटने के कारण या और किसी प्रकार टेढ़ा हो गया हो।

५०. पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहार में होनेवाला एक प्रकार का बढ़िया मीठा आम और उसका पेड़।

लंगडाना—अ० [हिं० लंगडा] चोट आदि के फलस्वरूप चलने में दोनों या चारों पैरों का ठीक-ठीक और बराबर न बैठना, बल्कि किसी एक पैर का कुछ रुक या दबकर पड़ना। लंगड़े होने के कारण कुछ बन्दे और कुछ उचकते हुए चलना।

लंगडापच—यु० [हिं० लंगडा+पच (प्रत्य०)] लंगड़े होने की अवस्था या भाव।

लंगड़ी—स्त्री० [हिं० लंगडा] एक प्रकार का छंद।

वि० [हिं० लंगर] बलवान्। शक्तिशाली। (हिं०)

लंगरी—यु०=लंगच।

लंगरी—स्त्री०=अलगनी।

५-१८

लंग-भास्व—यु० [?] १. मध्यकालीन साहित्य में, लंका द्वीप। २. दे० 'लंका' २.।

लंगर—वि० [?] १. नटखट। २. कुष्ट। पाजी।

लंगर—यु० [फा० मि० अं० एकर] १. लोहे का बना हुआ एक प्रकार का बहुत बड़ा कटा जिसे नदी, समुद्र आदि में गिराकर नाव, अहाज आदि रोके जाते हैं।

पद—लंगरपाह।

मुहा०—लंगर उठाना=अहाज या नाव का लंगर उठाकर चलने की तैयार होना। लंगर छोड़ना, डालना या कँकना=अहाज या नाव ठहराने अथवा रोकने के लिए लंगर गिराना।

२. लंकारी का बहु-कुटा जो किसी हुरहाये पशु विशेषतः गी के गले में रखी से इसलिए बाँध दिया जाता है कि वह भागकर दूर न जा सके। लंगर। ३. लोहे की भारी और मोटी बँजीर, जो प्रायः अघरावियों के पैरों में इसलिए बाँधी जाती थी कि वे भाग न सकें।

किं० प्र०—बालना।—पडना।

५. रखी, तार आदि से बाँधी और लटकनी हुई कोई भारी चीज, जिसका व्यवहार कई प्रकार की कलों में उनकी गति ठीक रखने के लिए होता है।

किं० प्र०—चलना।—चलाना।

५. अहाजों पर काम आनेवाला बड़ा और मोटा रस्ता। ६. बाग-बौर। लगाम। ७. बाँधी का बना हुआ तोड़ा जो पैर में पहना जाता है।

८. किसी चीज के नीचे का भारी और मोटा अंग या अंश। ९. कमर के नीचे का भाग। १०. पहलवानों के पहनने का लँगोटा।

मुहा०—लंगर बाँधना=पहलवान बनने के उद्देश्य से कसरत करना और कुस्ती लड़ना।

११. वह उमरी हुई रेखा, जो अङ्गुली के नीचे के भाग से आरम्भ होकर गुदा तक जाती है। सीयन। सीयन। १२. अङ्गुली। (बाजारू)

१३. कपड़े की तिलाई में वे टाँके, जो दूर दूर दसलए डाले जाते हैं जिसमें मोटा हुआ कपड़ा अथवा एक साथ सिये जानेवाले पकड़े अपने स्थान से दूर न जायें। इस प्रकार के टाँके पन्की तिलाई के पूर्वी शाले होते हैं; इसलिये इसे कम्पनी तिलाई भी कहते हैं।

किं० प्र०—डालना।—घरना।

१५. वह स्थान जहाँ बहुत से लोगो का भोजन एक साथ पकता है। १५. वह पका हुआ भोजन जो प्रायः नित्य किसी निश्चित समय पर आगतुकी, दरिद्रों आदि को बाँटा जाता है।

पद—लंगर-शान्ति।

किं० प्र०—वेना।—बाँटना।—लगाना।

१६. ऐसा व्यक्ति या स्थान जिसके द्वारा किसी को सफ़्त के समय आग्रह मिलता हो।

वि० जिसमें अधिक बोझ हो। भारी। बजनी।

†वि० लंगर (कुष्ट और पाजी)।

लंगरई*—स्त्री० [हिं० लंगर] लंगर (अर्थात् कुष्ट या पाजी) होने की अवस्था या भाव। नटखट। पाजीवन। शरारत।

लंगरखाना—यु० [फा०] वह स्थान जहाँ आगन्तुकों या दरिद्रों को बना-बनाया भोजन बाँटा जाता हो।

संघ-नाह—पु० [फा०] किनारे पर का वह स्थान जहाँ लगर डाँडकर जहाज ठहराये जाते हैं। अन्दरगाह।

बिषेध—यद्यपि फा० में गाह (जगह) स्त्री० ही है, फिर भी हिन्दी में उसने बने हुए बन्दरगाह, लगरगाह आदि शब्द प्रायः पु० रूप में ही प्रचलित हैं।

संघारा—स्त्री० [हि० लगर+आई (प्रय०)] लगर अर्थात् टुट या पाजी होने की अवस्था, किंवा या भाव। नटखटी। धारात्।

संघारमा—अ०=संघारमा।

संघरेवा—स्त्री०=संघरवाई।

संघल—पु० [स०√लघ्+कलच्] हल।

संघी—स्त्री० [फा० लघ्+संघडा] कुस्ती का एक दाँव, जिममें अपनी एक टाँग लँगड़ी करके, बिपक्षी की टाँग में अडाकर उसे गिराया जाता है।

संगुरा—पु० [?] एक तरह का धाया।

संगुर—पु० [सं० लोङ्गिन्] १ एक प्रकार का बन्दर जिसका मुँह और हाथ-पैर काले, सारा शरीर भूरा या सफेद और दुब बहुत लम्बी होती है, जिससे बहूँ प्रायः कोई भी तरह आघात करता है। २ दुम। पँछ।

संगुर-फल—पु० [हि० संगुर+सं० फल] मारियल।

संगुरी—स्त्री० [हि० संगुर+ई (प्रय०)] १. घोंडे की एक प्रकार की बाँस जिममें वह संगुरों की तरह उछल-उछल कर चलता है। २ वह इनाम जो घोड़ों की घोड़ी गए हुए भवेषियों का पता लगाने पर दिया जाता है।

संगुल—पु० [सं० लागूल] पँछ। दुम।

संगोषा—पु० [?] कीमे में भरकर तबी हुई जलवर की आँत। कुलमा। गुलमा।

संगोट—पु० [सं० लिंग+पट] [स्त्री० लँगोटी] कमर में बाँधने का एक प्रकार का वस्त्र, जिससे केवल उपस्थ इका जाता है। रुमासी। पद—संगोट-बद।

सुहा०—संगोट का डोला=स्त्री सुयोग मिलने पर पर-स्त्री ने जिम्मेकीच संयोग कर सकता हो। लँगोट का सन्ध्या=जो कर्मी पर-स्त्री में संयोग न करता हो।

संगोट-बंद—वि० [हि०] [भाव० लँगोटबंदी] जिसने स्त्री-संयोग या पर-स्त्री संयोग न करने की प्रतिज्ञा कर रखी हो।

संगोटा—पु०=लँगोट।

संगोटी—स्त्री० [हि० लँगोट] १. छोटा लँगोट। २ वह छोटा-सा कपडा, जो बच्चों की कमर में उपस्थ आदि इकने के लिए बाँधा जाता है। पद—संगोटिया धार=उस समय का मित्र जब कि दोनों लँगोटों बांध-कर फिरते थे। बचपन का मित्र।

३. गरीबों, साधुओं आदि के पहनने का बहुत छोटा पतला वस्त्र। कोपीन।

पद—लँगोटों में बसल=पास में कुछ न रहने पर भी प्रसन्न रहनेवाला। मुहा०—लँगोटों पर काम सेलमा=पास में कुछ भी न होने पर या बहुत ही कम धन होने पर भी आनंद-मगल और भोग-विलास करना। (किसी को) लँगोटी बँधवाला=बहुत दखि कर देना। इतना पनीहन कर देना कि पास में पहनने को लँगोटों के सिवा और कुछ न रह

जाय। (किसी की) लँगोटी बिचवाला=इतना दखि कर देना कि पहनने को लँगोटी तक न रह जाय।

संघक—वि० [स०√लघ् (गति)+घ्वल्=अक] १ लोषनेवाला। अतिक्रम करनेवाला। २ नियम भंग करनेवाला।

संघन—पु० [√लघ्+घ्वल्=अन] १ लोषने की क्रिया या भाव। उल्लघन करना। २ विना कुछ श्राये पिये दिन-रात बिताना। उप-वास या काका करना। ३ घोंडे की एक प्रकार की बाँस। ४. ऐसा उपाय, जिममें मार्ग में पहनेवाली बाधाएँ स्वयं सिद्ध होती हैं और काम जल्दी तथा सुगुंती से होता हो।

संघनट—पु० [सं०] कलाबाजी के खेल दिखानेवाला नट।

सघना—सं०=लोषना। (पदिचम)

वि० जिममें उपवास किया हो। भूषा।

संघनीय—वि० [स०√लघ्+अनीय] १ जिसे लोषा जा सके। जो लोषे जाने के योग्य हो, अथवा लोषा जाने को हो। २. जिसका उल्लघन या अवज्ञा हो सके। ३ उषेष्ठा या तिरस्कार के योग्य।

संघना—सं० [हि० लोषना का प्र०] १ किसी को लोषने में प्रवृत्त करना। २ रास्ते की कठिनाइयों आदि से बचाते हुए पार करना या पहुँचाना।

संघित—पु० कृ० [स०√लघ्+वत्] १. जिसे लोषा गया हो। २ अनिश्चित। ३ उपेक्षित तथा निरम्कृत।

सघ्य—वि० [स०√लघ्+घ्यल्] १. जिसे लोष सके। २. जिसे लोषना या उपवास करा सके।

संघ—पु० [अ०] दीपहर के समय किया जानेवाला भोजन।

संघ—पु० [स०√लघ्+अच्] १ पैर। पाँव। २ काष्ठ। लँग। ३ दुम। पँछ। ४ लपटता। ५ सोता। संघत।

संघा—स्त्री० [सं० लज+टाप्] १ लक्ष्मी। २ निद्रा। नीव। ३. सोता। ४ कुलटा। पृथक्की।

संघिका—स्त्री० [स०√लघ्+घ्वल्=अक+टाप्, इत्] बेरया। रडी।

संघ—वि० [देश०] [भाव० लई] १ जिममें कुछ भी बुद्धि न हो। परम मूर्ख। २ उजड़।

संघई—स्त्री० [हि० लई] लठ होने की अवस्था या भाव। लठपन। संघ—पु० [स०√लघ् (अप फेकना)+घच्] गू। विट्टा।

पु० [सं० लिंग] पुष्य की जनेप्रिय। लिंग।

संघी—स्त्री० [हि० लई] दुरचित्रा स्त्री। कुलटा।

संघुरा—वि० [देश०] [स्त्री० लँडूरी] १ (पक्षी) जिसकी पूँछ न हो अथवा काट भी गई हो। २. जिसका कोई शांभाजनक अंग नष्ट हो गया हो या रह गया हो।

संघी—स्त्री०=लडी (कुलटा)।

संघरानी—स्त्री० [अ०] शैली में आकर कही जानेवाली लंबी-चौड़ी तथा आत्म-प्रशंसा सूचक बात।

संघराज—पु० [?] एक तरह की मोटी जादर।

संघ—पु० [अ० संघ] पाषाणयुग का विशेष प्रकार का दीपक जिममें प्रकाश बढ़ाने और फैलाने के लिए प्रायः धीसे की चिमनी लगी रहती है।

संपद—वि० [सं०√रम् (कीर्वा)+अट्+ङुक्, रत्न लः] जो कामुक होने के कारण अग्रह अग्रह व्यभिचार करता फिरता हो।

सु० स्त्री का उपपत्ति। धार।

संपटता—स्त्री० [सं० संपद+तल्+टाप्] संपद होने की अवस्था या भाव। दुराचार। कुकर्मी।

संपाक—यु० [सं०] १. संपद। दुराचारी। २. पुराणाग्नसार उत्तर परिचयी भासते के मूरङ्ग देव का एक नाम।

सम्—वि० [सं०/सम् (लटकना आदि)+अच्] १ जो किसी तल से किसी और इस प्रकार सीधा गया हो कि उसके दो समकोण बनते हों। (पर्यन्तिकर) २ नीचे की ओर झुकता या लटकता हुआ। पुं० १. किसी रेखा पर खड़ी और सीधी गिरनेवाली रेखा। २ कोई लंबी और बिल्कुल सीधी रेखा। ३ ज्योतिष में, ग्रहों की एक गति। ४ एक रासस जिते श्रीकृष्ण में मारा था। इसी को 'प्रलंबासुर' भी कहते हैं। ५. नाचनेवाला। नर्तक। ६. एक प्राचीन मुनि। ७. स्त्री का पति। स्वामी। ८. शुद्ध राग का एक भेद। ९. अवा। अवयव। १०. विलम्ब। देर। वि०=लम्बा।

सम्बन्ध—यु० [सं०/सम्+कन्] १. किसी पुस्तक का अध्याय या परिच्छेद। २. मूल में होनेवाला एक प्रकार का रोग। ३. फलित ज्योतिष में, एक प्रकार के योग जिनकी संख्या १५ कही गई है।

सम्बन्ध—वि० [सं० ब० सं०] लंबे कारीवाला। जिसके कान लंबे हों।

पुं० १. बकरा। २. हाथी। ३. राक्षस। ४. बाज नामक पक्षी। ५. गया। ६. खरगोश। ७. अंकोल वृक्ष।

सम्बन्धी—वि० [सं० ब० सं०] लंबी परतनवाला। पुं० ऊँट।

सम्बन्धी—वि० [सं० लम्ब+सङ्ग] १. ताड़ के समान लंबा। बहुत लंबा। २. विशालकाय और हट्ट-पुष्ट।

सम्बन्धी—यु० [सं०/लम्ब+स्युट्+अन्] १. लंबा करने की क्रिया या भाव। २. लटकने या झूलने की क्रिया या भाव। ३. किसी काम या बात को टाकते हुए दूर करना या हटाना। ४. गले में पहनने का ऐसा धातु जो नामि तक लटकता हो। ५. अवलम्ब। आश्रय। सहारा। ६. कफ। बलघाम।

सम्बन्धी—स्त्री० [सं० ब० सं०+टाप्] कार्तिकेय की एक मातृका।

सम्बन्धी—वि० [सं०/लम्ब+शानम्] दूर तक गया या फैला हुआ। लंबाई में या सीधे बल।

सम्बन्धी—यु०=नबर।

सम्बन्धी—यु०=नबरदार।

सम्बा—वि० [सं० लम्ब] [स्त्री० लम्बी, भाव० लंबाई] १. (पदाधि) जिसका एक तिराङ्ग उसके दूसरे तिरां से अधिक दूरी पर हो। जिसके दोनों तिरां के बीच का विस्तार बहुत हो। 'शोभा' का विपर्यय। जैसे—लम्बा कपड़ा, लम्बे बाल, लम्बी लाठी।

पद—सम्बा-शोभा=(क) जिसका आयतन और विस्तार दोनों बहुत अधिक हों। जैसे—लम्बा-शोभा। (ख) अनावश्यक और

असाधारण रूप से व्यर्थ बढ़ाया हुआ। जैसे—लम्बी-शोभी बातें करना।

२. जो ऊपर की ओर दूर तक उठा हो। अथवा अथि ऊँचाईवाला। जैसे—लम्बा आदमी, लम्बा पैर, लम्बा दाँस आदि। ३. बीचबाले अन्व-काश, काल आदि के विचार से जो माप या मास में अधिक हो। जो कप या थोड़ा न हो। जैसे—लम्बी अवधि, लम्बा सफर, लम्बा स्वर।

मुहा०—(किसी को) लम्बा करना=(क) पीछा छुड़ाने के लिए किसी को चलना करना या दूर हटाना। भत्ता बताना। जैसे—जब वह बहुत निश्चिन्ताने लगा, तब मैंने उसे एक रुपया देकर लम्बा किया। (ख) इतना मारना-पीटना कि आदमी जमीन पर बेसुध होकर गिर पड़े। लम्बा साँस लेना=बहुत अधिक दुःखी या निराश होने पर दीर्घ निःस्वास लेना। ठंडी साँस लेना। लम्बा वा लम्बे होना=पीछा छुड़ाने या जान बचाने के लिए कहीं से चल देना। जिसक या हट जाना। जैसे—आप तो एक बात कहकर लम्बे हुए, और वह मेरी जान खाने लगा।

४. आयतन या विस्तार के विचार से किसी निश्चित मान का। जैसे—गज भर लम्बा साँप, दस हाथ लम्बी रस्सी। ५. जिसका विस्तार किसी नियत या साधारण मान से अधिक हो। जैसे—लम्बी कहानी, लम्बा लचन, लम्बा दाढ़। ६. जिसकी बात में अपने पूरे विस्तार तक आगे बढ़ा या विधा हुआ हो। जैसे—हाथ लम्बा करो तो देखें कि कहीं थोटा लगी है।

मुहा०—लम्बी तानना=लंबाई के बल सीधे सेटकर, खूब पैर फँलाकर और बादर आदि जोड़कर या ऊपर तानकर निश्चित भाव से सीना।

लंबाई—स्त्री० [हि० लम्बा] १. लम्बा होने की अवस्था या भाव। लम्बा-पन। २. किसी वस्तु का सबसे बड़ा आयाम या पक्ष। (शोभाई और मोटाई से भिन्न।)

लंबाम—स्त्री०=लम्बाई।

लम्बाना—स०, अ० [हि० लम्बा] लम्बा करना। लम्बा होना।

लंबायमान—वि० [सं० लम्बमान] १. लम्बा किया हुआ। २. लंबाई के बल खेटा हुआ।

लम्बा हाथ—यु० [हि०] १. ऐसा हाथ या उसका अंगी व्यक्ति जिसकी पहुँच या प्रभाव बहुत दूर तक हो। २. ऐसी बाल या दाँव, जिसमें बहुत अधिक प्राप्ति या स्वार्थ-सिद्धि हुई या होती हो। जैसे—बस बार तो तुमने लम्बा हाथ मारा।

कि० प्र०=मारना। **लम्बिका**—स्त्री० [सं०/लम्ब+ङुक्+अक+टाप्, रत्न लः] गले के अन्दर की घंटी। कीआ।

लम्बित—यु० कृ० [सं०/लम्ब+कृत्] १. लम्बा किया हुआ। २. निश्चय, विचार आदि के लिए कुछ समय तक रोका या टाला हुआ। स्वगित किया हुआ। (पेन्डिंग) ३. लटकता हुआ। ४. लम्ब के रूप में आधा हुआ। ५. आश्रयित।

पुं० गोपत। माँस।

लम्बी—वि० हि० लम्बा का स्त्री० रूप।

मुहा० दे० 'लम्बा' के अन्तर्गत।

लम्बुक्—यु० [सं०] लम्बक (योग)।

लक्ष्-वि० [हिं० लखा] जो आकार में अपेक्षया अधिक ऊँचा हो।
(परिहास और व्यंग)

पुं० [?] चित्ता पर रखे हुए मूल शरीर की जलने के लिए उसमें
आग लगाना। मूल का दाह-कर्म।

किं० प्र०—देना।

लक्ष्मण—स्त्री० [सं०] सात लक्ष्मियोंवाला हार।

लक्ष्मीतरा—वि० [हिं० लखा] जो प्रायः गोलकार होने पर कुछ-कुछ
लंबा हो। जिसमें गोलार्ध के साथ लंबार्ध भी हो। जैसे—लक्ष्मीतरा
मोती।

लक्ष्मीधर—वि० [सं० लक्ष्-उदर, ब० सं०] १ लंबे या मोटे पेटवाला।
२ बहुत अधिक खानेवाला। पेट्।

पुं० गणेश।

लक्ष्मोष्ठ—वि० [सं० लक्ष्-ओष्ठ, ब० सं०] लंबे होठोवाला।

पुं० १. ऊँट। २. एक देवता।

लक्ष्म—पुं० [सं०/लम् (शक्ति)+ध्वम्, नृम्] प्राप्ति।

लक्ष्मन—पुं० [सं०/लम्+न्युट्—अन, नृम्] १. ध्वनि। शब्द।
२. लक्ष्म। लक्ष्मन।

लक्ष्मनीय—वि० [सं०/लम्+जनीय, नृम्] प्राप्त किये जाने के
योग्य।

लक्ष्मिन्—पुं० कृ० [सं०/लम्+न्त, नृम्] १. प्राप्त किया हुआ।
२. दिया हुआ। ३. कहा हुआ।

लक्ष्म्या—पुं०=लक्ष्म्या।

लक्ष्म्या—स्त्री०=लक्ष्म्या।

लक्ष्मी—पुं०=लक्ष्मी (कहूँ या चीया)।

लक्ष्मी—स्त्री०=लक्ष्मी (छत्री)।

लक्ष्म—पुं० [अ० लक्ष्म] चाटकर खाने की औषधि। अवलेह।

लक्ष्—पुं० [सं०/लक्ष् (आस्वाह)+अन्] १. ललाट। २. जगली
धान की बाल।

लक्ष्म—पुं० [हिं० लक्ष्मी] १ हिं० लक्ष्मी का वह सक्षिप्त रूप जो
उसे यी० शब्दों के आरम्भ में लगाने पर प्राप्त होता है। जैसे—
लक्ष्महारा। २. पूर्वजों के कुछ सबसेसूचक नामों के साथ लगानेवाला
एक शब्द जो 'पर' से भी ऊपर की स्थिति का वाचक होता है। जैसे—
लक्ष्म-दादा, लक्ष्म-नाना।

लक्ष्म-बाबा—पुं० [हिं० लक्ष्म+दादा] [स्त्री० लक्ष्म-बादी] पर-दादा
से बड़ा दादा।

लक्ष्मबाबा—पुं० [हिं० लक्ष्म+बाब] भेषिये की जाति का एक पशु।
लक्ष्महारा [हिं० लक्ष्म+हारा (प्रयत्न)] वह व्यक्ति जो जगल
से लक्ष्मियाँ काटकर अपनी जीविका चलाता हो।

लक्ष्म्या—पुं० [हिं० लक्ष्मी] लक्ष्मी का मोटा कुदा। लक्ष्मिन्।

लक्ष्म्यानां—अ० [हिं० लक्ष्मी] १ सूखकर लक्ष्मी की तरह सूख
हो जाना। २. लक्ष्मी की तरह बिलकुल डूबला हो जाना। ३.
(अग, रोगी आदि का) ऐँकर लक्ष्मी की तरह कड़ा होना।

लक्ष्मी—स्त्री० [सं० लक्ष्म] १. नृणाँ, क्षात्रियों आदि के तनो और
शास्त्रियों का वह कड़ा और ठोस अंग जो छात्र के नीचे रहता है, और
काट लिये जाने पर प्रायः जलने तथा इमारतें बनाने के काम आता है।

काठ। काष्ठ। २. उक्त का वह काटा और सुखाया हुआ रूप जो
प्रायः बूढ़े आदि में जलाने के काम आता है। ईंधन। ३. कुछ विविष्ट
प्रकार के नृणाँ आदि की वह पतली और लंबी शाखा जो काटकर छड़ी,
डबे आदि के रूप में लाई जाती है, और जिससे चलने में सहारा लिया
जाता तथा आवश्यकता होने पर किसी पर आघात या प्रहार भी किया
जाता है।

वि० सुखा हुआ।

पर—लक्ष्मी-सा—बहुत डूबला-पतला।

मूला—(फिती की) लक्ष्मी सेना—फिती मूल शरीर या शय को चित्ता
पर रखकर जलाना। (पराबं का) सूखकर लक्ष्मी होना—
अपेक्षित कामलता से रहित होकर कठोर या कड़ा होना। जैसे—
सबरे की रखाँ हुई रोटी सूखकर लक्ष्मी हो गई है। (व्यक्त का)
सूखकर लक्ष्मी होना—चित्ता, यत्नाभाव, रोग आदि के कारण शरीर का
बहुत ही क्षीय या दुर्बल होना। लक्ष्मी चलाना—लाठी से मार-पीट
करना।

लक्ष्म-बक—पुं० [फा०] ऐसा मैदान जहाँ पेड़, पौधे और घास न हो।
चटियल मैदान। बज्जर।

वि० बहुत अधिक अलक्ष्मणों से लदा हुआ।

लक्ष्म—पुं० [अ० लक्ष्म] १. उपाधि। सिताब। पदवी। २. उप-
नाम।

लक्ष्मी—स्त्री०=लक्ष्मी।

लक्ष्मलक्ष्म—पुं० [अ०] लंबी जंघनवाला एक जलपपी। बेंक।

वि० बहुत डूबला-पतला।

लक्ष्मलक्षा—पुं० [अ० लक्ष्मलक्ष्म] १. सौप की बोली। २. सौपों आदि
के बार-बार जीभ हिलाने की क्रिया। ३. उच्चाकोक्षा। ४. दबदबा।
रोब।

लक्ष्म्या—पुं० [अ० लक्ष्म्या] १. एक प्रकार का प्रतिष्ठ बात रोग जिसमें
रोगी का मुँह देखा ही जाता है। २. पश्चात्ताप।

किं० प्र०—भारना।

लक्ष्मी—स्त्री० [हिं० लक्ष्मी+अँकुसी] फल आदि सोबने की ऐसी लम्गी
जिसके सिरे पर अँकुसी लगी रहती है।

लक्ष्मा—पुं० [अ० लक्ष्म] १. बेहरा। आकृति। २. लक्ष्मा कन्-
तर।

लक्ष्मी—स्त्री० [देसा०] एक प्रकार की नर बिल्ली जिसके अङ्कणों
में से एक प्रकार का मुँक निकलता है।

लक्ष्मीर—स्त्री० [सं० देखा] १. वह चिह्न जो लबाई के बल में कुछ
दूर तक बना या बनाया गया हो। जैसे—कलम से कागज पर या बाण
से जमीन पर लक्ष्मीर खीचना।

किं० प्र०—खीचना।—बनाना।

२. कोई ऐसा चिह्न जो दूर तक रेखा के समान बना हो। ३. अक्षरों
आदि की पंक्ति। सतर।

४. बहुत दिनों से रेखा आदि के रूप में चली आई हुई प्रणाली, प्रथा
या रीति।

पर—लक्ष्मीर का फकीर—वह जो बिना समझे-भूझे किसी प्राचीन प्रथा
पर चलता हो। अर्थात् बन्द करके पुराने ढंग पर चलनेवाला।

गुहा—लकीर पीढा—बिना समझे-मुझे पुरानी प्रथा पर चलना ।

लघुच—पुं० [सं०/लघ् (आस्वत्)+उचर्त्]=लघुट ।

लघुच—पुं० [सं०/लघ्+उदन्] लाठी । छड़ी ।

पुं० [सं० लघुच] १. मध्यम आकार का एक प्रकार का वृक्ष जिसका फल गुलाब-शामून के समान होता है । २. उन्नत वृक्ष का फल जो खाया जाता है । सुकाठ । लडोत ।

लघुशिपा—स्त्री०—लघुटी ।

लघुटी—स्त्री० [सं० लघुट+डीप्] छोटी लाठी । छड़ी ।

लघुटी—स्त्री०—लघुटी ।

लघुटी—पुं० [दिश०] एक प्रकार का पहाड़ी बकरा जिसके बालों से शाल, बुशाले आदि बनाये जाते हैं ।

लघुवृ—पुं० [हिं० लकड़ी] बड़ी और मोटी लकड़ी । काठ का बड़ा कुंदा ।

लघुवा—पुं० [का० लजा] एक प्रकार का कबूतर जो छाती उभार कर चलता है, और जिसकी पूँछ पंख सी होती है ।

लघुवामा—वि० [सं० लक्षण] [स्त्री० लघुवामा] लक्षणोंवाला । उदा०—शुद्धादि बतौंसे लघुवामी अस सब यहू अणुपुं—जायसी ।

लघुवा—वि० [हिं० लाख] [वि० स्त्री० लघुवामा] १ जिसमें एक ही तरह की लाखों चीजें हों । जैसे—आमों का लखना बगीचा । २ जो लाखों में एक हो । बहुत बड़ा-बड़ा । जैसे—लखना योद्धा, लघुवामी बेसवा (बहुत ही बलुर और धूर्त कुश्चरित्र स्त्री वा बेसवा) । ३. दे० 'लखौं' ।

लघुवामा—वि० [हिं० लाख (संख्या)] १. लाख (संख्या) से सम्बन्ध रखनेवाला । लाख या लाखों का । २ जिसके पास लाख या लाखों रुपये हों । लखपती ।

वि० [हिं० लाख=लाखा] लाख के रग का । लाखी ।

पुं० उन्नत प्रकार के रग का बोझा ।

लघुत—वि० [सं०/लघत्] लाला । सुधुं ।

लघुतक—पुं० [सं० लघत्+कन्] १. अलता, जो स्त्रियाँ पैरों में लगाती हैं । अलतक । २ कपड़े का बहुत फटा हुआ छोटा टुकड़ा । जिपड़ा । लता ।

लघु—वि० [सं०/लघ् (वर्षण)+अच्] सौ हजार । एक लाख । पुं० १ वह जिस पर दृष्टि रखकर काम किया जाय । २. पैर । ३. चिह्न । निशान । ४. अस्त्रों का एक प्रकार का संहार ।

लघुवामा—वि० [सं०/लघ्+वाम्—अक] लखित करनेवाला ।

पुं० [सं०/लघ् (वर्षण)+वाम्] वह शब्द जो संबंध या प्रयोजन से अपना अर्थ सूचित करे ।

लघुवामा—पुं० [सं०/लघ्+वाम्—अक] १. किसी पदार्थ की आकृति आदि से दिखाई देनेवाली वह विशेषता जिसके द्वारा वह पहचाना जाय । चिह्न । निशान । अस्तर । जैसे—आकृति से बुद्धिमत्ता के या आकाश में वर्षा के लक्षण दिखाई देना ।

विशेष—चिह्न और लक्षण में मुख्य अंतर यह है कि चिह्न तो सदा मूर्त और स्पष्ट होता है, पर लक्षण प्रायः अमूर्त और अस्पष्ट होता है । इसके सिवा चिह्न का प्रयोग तो मू, प्रस्तुत या वर्तमान के संबंध में होता है ; परंतु लक्षण का प्रयोग भावी घटनाओं आदि के प्रसंग में ही होता है ।

२. किसी वस्तु या व्यक्ति में होनेवाला कोई ऐसा गुण या विशेषता जो सहसा औरों में न दिखाई देती हो । (ट्रेट) जैसे—यही सब तो प्रतिभा के लक्षण हैं । ३. शब्दों में पदों, वाक्यों आदि की ऐसी परिभाषा या व्याख्या, जिससे उसकी ठीक ठीक स्थिति या स्वरूप प्रकट होता हो । जैसे—साहित्य में किसी अलंकार के लक्षण बतलाना । ४. शरीर में दिखाई पड़नेवाले वे चिह्न आदि जो किसी रोग के सूचक हो । जैसे—दस्त रोगी में शय के सभी लक्षण दिखाई देते हैं । ५. सामूहिक के अनुसार शरीर के वे चिह्न जो शुभाशुभ फलों के सूचक माने जाते हैं । जैसे—यदि हाथ में अंगूठ लक्षण ही तो आदमी बहुत धनी होता है । ६. शरीर में होनेवाला एक विशेष प्रकार का काला धाग जो बालक के गर्भ में रहने के समय सूर्य या चन्द्रग्रहण लगने के कारण बन जाता है । लच्छन । ७. आचार, व्यवहार आदि के ऐसे ढंग या प्रकार जो भले या बुरे होने के सूचक हों । जैसे—दस्त लकड़े के लक्षण अच्छे नहीं दिखाई देते । ८ नाम । संज्ञा । ९. वर्णन । १०. सादर पत्थी ।

पुं० लघुवाम ।

लघुवामा—पुं० [सं० लक्षण+कन्] चिह्न । निशान ।

लघुवामा—पुं० [सं० ल० त०] १. किसी जीव या बात की पहचान बतलाने के लिए उसके गुणों, विशेषताओं आदि का वर्णन करना । २. परिभाषा ।

लघुवामा—स्त्री० [सं०/लघ्+वाम्, अङ्गम, +अच्+टाप्] शब्द की तीन शक्तियों में से दूसरी शक्ति जो अभिप्रेय से भिन्न परन्तु उसी से सम्बन्धित दूसरा अर्थ प्रकट करती है । जैसे—मोहना गया है । यहाँ गया अपने अभिप्रेय अर्थ में विशिष्ट पशु का वाचक नहीं बल्कि उसी विशिष्ट पशु की ज्ञान-हीनता का सूचक है ।

लघुवामा (चिह्न)—वि० [सं० लक्षण+इनि] १. जिसमें कोई लक्षण या चिह्न हो । लक्षणोंवाला । २. लक्षण जाननेवाला ।

लघुवामा—वि० [सं० लक्षण+वाम्] १. लक्षण दा चिह्न बतलानेवाला । २ लक्षण या चिह्न का काम देनेवाला ।

लघुवामा—स्त्री०—लघुवामा ।

सं०—लघुवाम ।

लघुवामा—स्त्री० [सं० लघ्+टाप्] एक लाख की सूचक संख्या ।

लघुवामा—स्त्री०—लघुवामा ।

पुं०—लघुवाम ।

लघुवामा—पुं० कृ० [सं०/लघ्+वाम्] १. लघुवाम या ध्यान में आया या लया हुआ । जिसकी ओर लस गया हो । २ जिसकी ओर बूझों का ध्यान लगाया गया हो । निर्दिष्ट । ३. अनुभव से ज्ञान या समझ हुआ । ४ किसी प्रकार के लक्षण दा चिह्न से युक्त । ५. जिस पर चिह्न लगाया गया हो ।

पुं० वह अर्थ जो शब्द की लक्षणा शक्ति द्वारा ज्ञात होता है ।

लघुवामा-लघुवामा—स्त्री० [सं० ल० त०] शब्द की वह शक्ति जो मुख्यार्थ को छोड़कर लक्षणाओं का ग्रहण करती है ।

लघुवामा—वि० [सं०/लघ्+तन्व] १ जिसकी ओर लघुवामा उचित हो । २ जिस पर चिह्न किया जाने को हो । ३. जिसकी परिभाषा की जाने को हो ।

कलित—स्त्री० [स० लक्षित+टाप्] गार्हपत्य में, वह नायिका जिसके लक्षणों में उग्राता पर-गुण प्रथम जानकर किन्हीं सभों ने उस पर प्रकट किया हो।

लक्षितार्थ—पुं० [स० लक्षित+अर्थ, कर्म० सं०] शब्द की लक्षणा-शक्ति से निकालेवाला अर्थ।

लक्ष्मी—स्त्री० [स० लक्ष्+डीष्०] गणोदक नामक 'सर्वथा' का दूसरा नाम।

वि० अर्द्धे विह्लो या लक्ष्णोवाला।

लक्ष्म (क्षन्तु)—पुं० [स० लक्ष्+लक्ष्+मन्ति] १ चिह्न। २ दाग। ३ विवेकता। ४ परिभाषा। ५ मात्रस पक्षी। ६ लक्ष्मण।

वि० प्रधान। मुख्य।

लक्ष्मण—पुं० [स० लक्ष्मन्+अन्] १ लक्ष्मण। चिह्न। २ गुह्यता के गर्भ में उत्पन्न राजा दशरथ के एक पुत्र जो शेषनाग के अवतार माने जाते हैं। ३ दुर्योधन का एक पुत्र। ४ मात्रस। ५ नाम।

वि० १ लक्ष्मण या चिह्न में युक्त। २ भाग्यवान्। ३ उत्तमिच्छी।

लक्ष्मण-रेखा—स्त्री० [स० मध्य० सं०] ऐसी रेखाकार सीमा जो किसी प्रकार लक्ष्मण पार न की जा सकती हो। (लक्ष्मण जी की खींची हुई उस रेखा के आधार पर जो उन्होंने मोने के हिरण का पीछा करने से पहले सीता के चारों ओर खींची थी।)

लक्ष्मण-श्रीक—स्त्री० लक्ष्मण-रेखा।

लक्ष्मण—स्त्री० [स० लक्ष्मन्+टाप्] १ श्री कृष्ण की एक पत्नी जो ब्रह्मदेश के राजा द्रुह्यमन की पुत्री थी। २ दुर्योधन की एक कन्या। ३ श्रीकृष्ण के पुत्र साव की पत्नी। ४ एक प्रकार की जड़ी जो पुत्रदा मानो जाती है। यह जड़ी चौपेपत्ते तथा श्वेत कदवाली होती है तथा पर्वतों पर पाई जाती है। इसका कद औषध के लिए प्रयोग में आता है। नामपक्षी। पुत्रदा।

लक्ष्मी—स्त्री० [स० लक्ष्मी+ई, मूट्-आगम] १ भगवान् विष्णु की पत्नी जो धन की अविद्याज्ञानी देवी माना गई है। कमला। पद्मा। २ धन-सम्पत्ति। दौलत। ३ शोभा। श्री। ४ सुग्री। ५ सीता का एक नाम। ६ धन-धन्यता बढ़ानेवाली भाग्यवती स्त्री। ७ घर की मालकिन या स्वामिनी के लिए आदर्शभूतक गन्धधन या सजा। ८ कमल। पद्म। ९ हल्दी। १० गम्भी वृक्ष। ११ मोती। १२ गन्धे तुलसी। १३ मेढ्रांगनी। १४ ऋद्धि नामक औषधि। १५ बुद्धि नामक औषधि। १६ मांस की प्राप्ति। १७ फलने-फूलनेवाला अथवा फला-फला हुआ वृक्ष। फूलदार वृक्ष। १८ एक प्रकार का वर्षावन जिनके पत्थके चरण में दो रंगण, एक गुँद और एक लघु अक्षर होता है। १९ आर्यावट के २६ भेदों में से पहला भेद जिसके प्रत्येक चरण में २७ गुँद और तीन (३) लघु वर्ण होते हैं।

लक्ष्मीक—वि० [स० लक्ष्मी+क (शोभित होता)+क] १ धनवान्। अमीर। २ भाग्यवान्।

लक्ष्मी-कात—पुं० [स० प० त०] विष्णु।

लक्ष्मी-गृह—पुं० [स० प० त०] लाल कमल जिनमें लक्ष्मी का निवास माना जाता है।

लक्ष्मी-जानदार—पुं० [स० मध्य० सं०] काले रंग के एक प्रकार के शाल-ग्राम जिन पर चार चक्र बने होते हैं।

लक्ष्मी-दीर्घी—स्त्री० [स० लक्ष्मी+हि० दीर्घी] एक एक प्रकार की सुकर रागिनी जिसमें सब कोमल स्वर लगते हैं।

लक्ष्मी-लाल—पुं० [स० मध्य० सं०] १ सर्गाल में १८ मात्राओं का एक ताल जिसमें १५ आघात और तीन खाली होते हैं। २ श्रीतिल नामक वृक्ष।

लक्ष्मी-धर—पुं० [स० प० त०] १ विष्णु। २ लक्ष्मिणी छंद का दूसरा नाम।

लक्ष्मी-नारायण—पुं० [स० मध्य० सं०] १ लक्ष्मी और नारायण की मूल-मूर्ति। २ लक्ष्मी जनार्दन नामक चक्र-चिह्न युक्त तथा कृष्ण वर्ण शालग्राम।

लक्ष्मी-मिह—पुं० [मध्य० सं०] दो चक्र और धनमाला धारण किए हुए विष्णु की एक मूर्ति।

लक्ष्मी-पति—पुं० [स० प० त०] १ विष्णु। नारायण। २ श्रीकृष्ण। ३ राजा। ४ लौक का पेड़। ५ सुपारी का पेड़।

लक्ष्मी-पुत्र—पुं० [स० प० त०] धनवान् व्यक्ति। अमीर। २ सीता के पुत्र लव और कुश। ३ कामदेव। ४ माणिक्य या लाल नामक रत्न। ५ घोड़ा।

लक्ष्मी-गुण्य—पुं० [स० सं०] १ पद्म। कमल। २ लीग। ३ माणिक्य लाल।

लक्ष्मी-गुजा—स्त्री० [स० प० त०] दीपावली के रोज रात में लक्ष्मी की की जानेवाली पूजा।

लक्ष्मी-कल—पुं० [स० सं०] बेल। श्रीफल।

लक्ष्मी-रमण—पुं० [स० सं०] विष्णु।

लक्ष्मीवत्—पुं० [स० लक्ष्मी+समुप-म-व] १ नागयण। विष्णु। २ धनवान् व्यक्ति। ३ कटहल का पेड़। ४ अवलम्ब। पीपल।

लक्ष्मी-वत्सल—पुं० [स० प० त०] विष्णु।

लक्ष्मीवत् (वत्)—वि० [स० लक्ष्मी+समुप] १ धनवान्। २ सुन्दर। पुं० १ विष्णु। २ कटहल। ३ राहिल वृक्ष।

लक्ष्मी-वार—पुं० [स० प० त०] सुखवार।

लक्ष्मी-वीज—पुं० [स० प० त०] वीज (मंत्र)।

लक्ष्मील—पुं० [लक्ष्मी-ईश, प० त०] १ विष्णु। २ धनवान्। अमीर। ३ आम का पेड़।

लक्ष्मी-सहज—पुं० [स० प० त०] १ चन्द्रमा। २ कपूर। ३ इन्द्र का घोड़ा। ४ शक।

लक्ष्मी-सहोदर—पुं० [स० प० त०]—लक्ष्मी-सहज।

लक्ष्य—पुं० [स० लक्ष्+ (संज्ञा) +ध्वन्] १ वह वस्तु जिस पर किसी उद्देश्य की सिद्धि के विचार से दृष्टि रखी जाय। निदान। जैसे—(क) बिडिया का लक्ष्य करके उस पर डेला फेंकना या तीर चलाना। (ख) किसी को लक्ष्य करके उपहास या व्यंग्य की बात करना। २ वह काम या बात जिसकी सिद्धि अभीष्ट हो और इसी लिए जिस पर दृष्टि या ध्यान रखा जाय। उद्देश्य। जैसे—जीवन-भर धन संग्रह ही एक मात्र लक्ष्य रहा। ३ प्राचीन भारत में, अथवा आदि का एक प्रकार का सहारा। ४ वह जिसका अनुमान किया गया हो या किया जाय। अनुमान। ५ शब्द की लक्षणा शक्ति से निकलनेवाला अर्थ। ६ बहाना। झूठा।

वि० १. देखने योग्य। दर्शनीय। २. लास।

लक्षय—**पु०** [सं० लक्ष्य+रा (जनिता)+क] १. वह जो किसी लक्ष्य की प्रति या सिद्धि के लिए अग्रसर तथा प्रयत्नशील हो। २. वह जो यह जानता हो कि मेरा लक्ष्य क्या है।

लक्षयवाच—**पु०** [सं० लक्ष्य+वच] १. वह शान जो चित्तों को देखने से उत्पन्न हो। २. वह शान जो व्युत्पत्त के आधार पर प्राप्त हो।

लक्षयता—**स्त्री०** [सं० लक्ष्य+तल्+टाप्] लक्ष्य होने की अवस्था, धर्म या भाव। लक्षयत्व।

लक्षयत्व—**पु०** [सं० लक्ष्य+त्व] =लक्षयता।

लक्ष्य-बोध—**पु०** [प० त०] =लक्ष्य-बोध।

लक्ष्य-बीधी—**स्त्री०** [प० त०] १. वह उपाय या कर्म जिससे जीवन का उद्देश्य सिद्ध होता हो। २. बहुश्लोका जाने का मार्ग। ३. देव-ध्यान।

लक्ष्य-बोध—**पु०** [प० त०] चलते या उड़ते हुए जीव या पदार्थ पर निशाना लगाना।

लक्ष्य-बेधी (विभु)—**पु०** [सं० लक्ष्य+विभु (बेधना)+पिनि] जो लक्ष्य-बोध करता हो। उड़ते या चलते हुए पदार्थ या जीवों पर निशाना लगाने-वाला।

लक्ष्य-साधन—**पु०** [प० त०] १. कोई काम करने में पहले उसके सब अंग या ऊँच-नीच अच्छी तरह देखना। २. अस्त्र चलाने से पहले अच्छी तरह देख लेना जिससे वह निशाने या लक्ष्य पर ठीक जाकर लगे। (नाइटिंग)

लक्ष्यार्थ—**पु०** [सं० लक्ष्य+अर्थ, मध्य० मं०] शब्द की लक्षणा शक्ति से निकलनेवाला अर्थ। किसी शब्द का वाच्य अर्थ से भिन्न किन्तु उससे सबद्ध अर्थ।

लक्ष्योपमा—**स्त्री०** [सं० लक्ष्य-उपमा, मध्य० सं०] साहित्य में उपमा अलंकार का एक भेद जिनमें सम, ममान आदि शब्दों या इनके वाचक अन्य शब्दों का प्रयोग न करके यह कहा जाता है कि यह वस्तु अमुक कीटि या बर्ग की है, उसे लजित करती है, उससे होड़ करती है अथवा इसने उससे अमुक गुण या बात चुरा या छीन ली है।

लक्ष्यभार—**पु०** = लक्ष्यभार।

लक्ष्यङ्गा—**पु०** = रखटी (एक प्रकार का उल्ल)।

लक्षणा—**पु०** १. = लक्षण। २. लक्ष्यमण।

लक्ष्मण—**स्त्री०** [हिं० लक्ष्मण] लक्ष्मण की क्रिया या भाव।

† पु० = लक्षमण।

लक्ष्मण—**सं०** [सं० लक्ष] १. लक्षण देखकर अनुमान कर लेना। २. जरा सा भा एक झलक देखकर ही जान या समझ लेना। ३. देखना। ४. इस प्रकार का ध्यान देते हुए देखना कि औरो की पता न चलने पाए। उदा०—आज्ञ लक्ष्मणा कि देखता है या नहीं तुम्हारी ओर।

—बृदावनलाल वर्मा।

लक्ष्मणी—**पु०** [सं० लक्ष+पति] वह जिसके पास लक्ष्मी स्वीयो की संपत्ति हो। बड़ा अमीर या धनवान्।

लक्ष्मी-पेड़ा—**वि०** [हिं० लक्ष+पेड़ा] (भाग) जिसमें लक्ष के लक्षमण अर्थात् बहुत अधिक पेड़ हो।

लक्ष्मी-सात—**पु०** [सं० लक्ष्मी+सात] समृद्ध। (हिं०)

लक्ष्मी-भार—**पु०** [सं० लक्ष्मी+भार] विभु। (हिं०)

लक्षर—**पु०** [देश०] काकडा-सिपी (बूख)।

लक्षरार्ज (बै)—**पु०** [हिं० लक्ष] =लक्ष-पेड़ा (भाग)।

लक्षरलक्ष—**वि०** भा० लक्षलक्ष] क्षीण-काय। दुबला-मलला।

लक्षरलक्ष्मा—**पु०** [फा० लक्षलक्ष] १. अंबर, अणुर तथा कस्तूरी का बहु मिश्रण जिसके सबंध में प्रसिद्ध है कि इसके सूंघाये जाने पर बेहोशी दूर होती है। २. उक्त के आधार पर बेहोशी दूर करनेवाला कोई सुगन्धित पदार्थ। जैसे—गुलाबजल छिड़की हुई चिकनी मिट्टी आदि।

लक्षरलक्षाना—**अ०** [अनु०] अधिक भूख से विकल होना। भूख-प्यास से बिलखना।

लक्षरगुट—**वि०** [हिं० लक्ष+गुटाना] लक्ष्मी रूप गुट्टा देनेवाला, अर्थात् बहुत बड़ा अपव्ययी।

लक्षरवट*—**पु०** = लुकाठ।

लक्षार्दी—**स्त्री०** = लक्षाय।

लक्षार्थ—**पु०** = लक्षार्थ।

लक्षाना—**सं०** [हिं० लक्षना का प्रे०] १. किसी को कुछ लक्ष्मण में प्रवृत्त करना। २. दिखलाना।

† अ० १. लक्ष्मण में आना। लक्षा जाना। २. दिखाई देना।

लक्ष्मा—**पु०** [हिं० लक्ष्मणा] १. लक्ष्मण या लक्ष्मण के अर्थ जाने की अवस्था या भाव। २. पहचान। लक्षण। ३. चिह्न। निशान। ४. वृक्ष। नजारा।

लक्ष्मि*—**वि०** = लक्षित।

लक्ष्मिनी*—**स्त्री०** १. = लक्ष्मी। २. -धन-संपत्ति।

लक्ष्मिया—**वि०** [हिं० लक्ष्मणा+इया (प्रत्य०)] लक्ष्मण अर्थात् देखने या ताडनेवाला।

लक्षी—**पु०** = लक्ष्मी (पौंडा)।

लक्ष्मजा—**पु०** [हिं० लक्ष्मा+उजा (प्रत्य०)] १. गेहूँ की फसल को हानि पहुँचानेवाला लाल रंग का एक कीड़ा। २. लाल मूँहवाला बंदर।

† वि० = लक्षित।

लक्ष्मणानी—**सं०** १. = लक्ष्मणानी। २. = लक्ष्मणानी।

लक्ष्मणी—**पु०** [हिं० लक्ष्मणी+एरा (प्रत्य०)] १. लक्ष्मण की वृद्धिया बनाने-वाला कारीगर। २. हिंदुओं में उन्नत प्रकार का काम करनेवाली एक जाति।

लक्ष्मीबा—**पु०** [वि० लक्ष्मी+लाग] कई लक्ष्मण। जैसे—उत्तरे के पास लक्ष्मीबा रूप है।

लक्ष्मीबापति—**पु०** [हिं० लक्ष्मी+पति] वह जिसके पास कई लक्ष्मण रूप हो।

लक्ष्मीबापति—**पु०** [हिं० लक्ष्मी+पति] बहुत अधिक धनवान् होता है।

लक्ष्मीट—**पु०** = लक्ष्मीट।

लक्ष्मीटी—**स्त्री०** [हिं० लक्ष्मी+टी (प्रत्य०)] लक्ष्मण की चूड़ी आदि जो स्त्रियों हाथों में पहनती हैं।

लक्ष्मीटा—**पु०** [हिं० लक्ष्मी+आटा (प्रत्य०)] १. एक प्रकार का बड़िया

उबदन जिसमे केसर, चंदन आदि मिला रहता है। २. बह छोटा बम्बा जिसमे सिम्पा टिकली, सिन्दूर, आदि प्रसाधन और सोमाय्य की छोटी-मोटी चीजें रखती हैं।

† पूं०—लिखावट।

लक्ष्मी—स्त्री० [सं लक्ष, हिं० लक्ष (सख्या)] १. किसी देवता की उसके प्रिय वृक्ष की एक लक्ष पत्तियां या फल आदि चढ़ाने की क्रिया या भाव। जैसे—शिव जी को बेलपत्र की या लक्ष्मी नारायण की तुलसी की लक्ष्मी चढ़ाना।

किं० प्र०—चढ़ाना।

स्त्री० [हिं० लक्ष (सख्या)+औरी (प्रत्यय०)] २ एक प्रकार की छोटी पतली ईंट जो प्रायः पुराने मकानों में पाई जाती है। नी-तेरही ईंट। बर्कया ईंट।

लिपे—यह पहले प्रति लाख ईंटों के भाव से बिकती थी, इसी लिए 'लक्ष्मी' कहलाती थी।

स्त्री० [सं० लासा; हिं० लक्ष+औरी (प्रत्यय०)] शंकरों द्वारा अपने रहने के लिए बनाया हुआ मिट्टी का बरौदा।

लस्त—पुं० [फा० लस्त] टुकड़ा। लक्ष्ण। जैसे—लस्ते जियर=कलखे का टुकड़ा; अर्थात् परम प्रिय (प्रायः सनान के लिए प्रयुक्त)।

लगत—स्त्री० [हिं० लगना-अत (प्रत्यय०)] १. लगने की अवस्था, क्रिया या भाव। २. किसी काम या बात के लिए लगनेवाली धन। लगन। ३. स्त्री-प्रसंग। सम्भोग। (बाजारू)

लग—स्त्री० [हिं० लगना] १. लगे हुए होने की अवस्था या भाव। २. किसी काम या बात की गहरी धन। लगन। ३. अनुराग। प्रेम। † अव्य० १. निकट। पास। २. गक। पर्यन्त। ३. लिए। बास्ते। ‡ साथ। सह।

लगाविस—स्त्री० [फा० लगाविस] १. फिनलन। २. लखनवाहट। ३. मूल-बुक।

लगवेंचों—पुं०—दोब-पंच।

लगवण—अव्य०—लगवण।

लगन—पुं० [१०] पलक पर होनेवाली एक तरह की गोंठ। † पुं०—लगन।

लक्ष्मी—स्त्री० [देस०] छोटे बच्चों के गू, मूत्र आदि से सुरक्षित रखने के लिए बिल्वर पर विछाया जानेवाला कपड़ा।

लगन—स्त्री० [हिं० लगना] १. लगने की क्रिया या भाव। २. एकाग्र भाव से किसी काम या बात की ओर ध्यान या मन लगाने की अवस्था या भाव। एकांत ध्यान और प्रवृत्ति की ली। जैसे—आज-कल तो उन्हें कविताएँ लिखने की लगन लगी है, अर्थात् उनका सारा ध्यान कविताएँ लिखने की ओर है। उदा०—मुझे गरीब दिल की लूदा से लगन न हो।—नजीर। ३. श्रुगारिक क्षेत्र में, प्रगाढ़ प्रेम। बहुत अधिक मूहव्यक्त।

किं० प्र०—लगाना।—लगाना।

पुं० [सं० लग्न] १. विवाह के लिए स्थिर किया हुआ कोई शुभ मुहूर्त या साधत।

मुहा०—लगन बरना या रखना—विवाह का मुहूर्त या समय निश्चित करना।

२. वे विशिष्ट दिन और महीने जिनमें हिंदुओं के यहाँ विवाह होना विहित है। सहालग। जैसे—आज-कल लगन-बारत के दिन हैं, इसलिये मजदूर कम मिलते हैं। ३. दे० लग्न।

पुं० [फा०] १. तबिये या पीतल की एक प्रकार की वाली जिसमें रक्षक मोमबत्ती जलाई जाती है। २. किसी प्रकार की बड़ी वाली या परत। ३. मुसलमानों में ब्याह की एक रीति जिसमें विवाह से पहले पालियों में मिठाइयाँ आदि भरकर बर के यहाँ भेजी जाती हैं।

लगन-पत्नी—स्त्री० [सं० लगन-पत्नीक] कथा-पद्य द्वारा बर-पदा-बालों के यहाँ भेजा जानेवाला वह पत्र या लेख जिसमें विवाह-सम्बन्धी विभिन्न कृत्यों का समय लिखा होता है।

लगनबट—स्त्री० [हिं० लगन] श्रुगारिक क्षेत्र में किसी के साथ होने-बट प्रेम-सम्बन्ध।

लगना—अ० [सं० लग्न] १. एक पदार्थ के तल या पार्वर्ष का दूसरे पदार्थ के तल या पार्वर्ष के साथ आंशिक अथवा पूर्ण रूप से मिलना या सटना। लग्न होना। सटना। जैसे—(क) किताब की जिल्ब पर कण्डा या कागज लगना। (ख) दीवार पर तस्बिरी लगना। (ग) किसी के गले (या पीरो) लगना। २. एक चीज का दूसरी चीज पर (या) में जडा, जोडा, टोका, बैठोया, रखा या सदाया जाना। जैसे—(क) लिकाफे पर टिकट, तस्बिरी में चौहाट या साठी में पीटा लगना। (ख) दीवार में सिद्धकी या दरवाजा लगना। (ग) मकान में तल या बिजली लगना। (घ) दरवाजे में मुंडी लगना। ३. किसी चीज का उपयोग में आने के लिए अस्था-स्थान आकर अमना, बैठना या स्थित होना। जैसे—बाव में पाल लगना, बाँस में बंधी लगना। ४. किसी तल पर किसी गाडे तल पदार्थ का लेप आदि के रूप में अथवा यो ही जमाया या पीटा जाना। जैसे—पीरो में महावार लगना, शीवारी पर परलस्तर या रय लगना, चीबो पर निशान लगना, मांघे पर सिलक लगना, कागडों में कीचड लगना। ५. किसी प्रकार की गति की दशा में एक चीज का पदा-वाली दूसरी चीज से राब खाना या संपुस्त होना। जैसे—(क) यत्र के पहिए का किसी बडे या दूसरे पहिये से खाना। (ख) चलते समय घोडे का पैर लगना, अर्थात् एक पैर का दूसरे से टकराना या रगड खाना। ६. किसी रूप में शामिल या सम्मिलित होना। जैसे—(क) पुस्तक में परिशिष्ट लगना। (ख) कुत्ते का बिल्ली के पीछे लगना।

मुहा०—(किसी के पीछे या साथ) बग चलना—अनुगामी या साथी साथी बनना। जैसे—मुन्हें तो जिससे कुछ प्राप्त होयों, उसी के पीछे लग चलेंगे। (किसी के पीछे) लगना—किसी का मेद लेने या रहस्य जानने अथवा उसे किसी प्रकार की हानि पहुँचाने के लिए स्थिरकर उसके पीछे चलना। पीछा करना। जैसे—आजकल पुलिस उनके पीछे लगी है।

७. किसी अनिष्ट या कष्टदायक तत्त्व या बात का किसी के साथ संबध या संलग्न होना। जैसे—(क) किसी के पीछे कोई आफत या जहमत लगना। (ख) किसी को राग या हू लगना। (ग) मूत या प्रेम लगना। **मुहा०**—लगी-लिपटी बात कहना—पैसी बात कहना जो अवल्यख या परोक्ष रूप से किसी दूसरी बात के साथ संबध हो। अवल्यख और प्रामक या प्रामक बात कहना।

८. आचरण, निरोध आदि के रूप में रहनेवाली चीज या उसके विभागों का इस प्रकार आकार कही गिगना, बँटना या सटना कि उसके नीचे या पीछे की चीज छिप या बँक जाय अथवा बँह हो जाय। आचरण का आकार चणरासान बँटना। जैसे—दरवाजे के किबाड़ या कुञ्जी लगना, बाँकर की पल्लों या सड़क का बँकना लगना (बं होना)। ९. किसी काम, चीज, बात या व्यक्ति का ऐसे स्थान पर पहुँचना या ऐसी स्थिति में आना कि उसका उपयोग, परिणाम, सार्थकता या सिद्धि हो सके। जैसे—(क) काम ठिकाने या पार लगना। (ख) बाकसाने में पारसल या रजिस्ट्री लगना। (ग) खाने-पीने की चीजों का अग लगना (अर्थात् शरीर को पुष्ट करना)। १०. किसी चीज का ऐसे रूप या रूप में आना या प्रस्तुत होना कि उसका नियमित और यथोचित उपयोग हो सके। जैसे—(क) दूकान या बाजार लगना। (ख) कपड़े में मेज-कुर्सी या गद्दी, तकिया, बिछौना आदि लगना। (घ) पान या उसके बड़े लगना। ११. किसी चीज का अनिर्धार्य और आवश्यक रूप से उपयोग में आते हुए ब्याज होना। काम में आकर समाप्त होना। जैसे—(क) इस काम में १०० (या दो महीने) लगे। (ख) इस पुस्तक की ५०० प्रतियाँ तो सरकार में ही लगी जायँगी। (ख) दोनों मकान कर्ज चुकाने में लग गये। १२. व्यक्ति का कार्य में लगकर उसका संपादन करने का। जैसे—सवेरा होते ही वह अपने काम में लग जाता है।

पद—लगकर = अच्छी और पूरी तरह से। खूब मन लगाकर। जैसे—लुगकर हलाज करोगे तभी तुम अच्छे होगे।

१३. किसी का किसी काम या पद पर नियुक्त या नियोजित होना। कसब्य से संबद्ध होना। जैसे—(क) किसी का काम या नौकरी लगना। (ग) किसी जगह चौकी या पहरा लगना। १४. किसी प्रकार के आघात या प्रहार का आकार प्राप्त होना या अपना परिणाम उत्पन्न करना। किसी तरह की घात या बार का किसी अंग, शरीर या स्थान पर पड़ना। जैसे—(क) गोलो, पत्थर, मुक्का या लाठी लगना। (ख) मन से किसी की बात लगना।

मुहा०—लगाती हुई बात कहना = ऐसी बात कहना जिससे किसी के मन पर आघात हो या चोट लगे। मर्म-भेदी बात कहना। जैसे—बार बारियों के सामने इस तरह की लगती हुई बात नहीं कहनी चाहिए। १५. बारबार या मुकीली चीज की धार या नोक शरीर में गड़ना, घुसना, या बँसना। जैसे—(क) हजामत बताते समय गाल पर उल्टा लगना। (ख) पैर में काँटा लगना। (ग) जानबू का दाँत या नाखून लगना। १६. किसी चीज या बात का प्रमुक्त होने पर अपना ठीक और पूरा काम करना अथवा प्रभाव या फल दिखलाना। जैसे—(क) इस बीमारो में कोई दवा लगती ही नहीं। (ख) यह ताली इस ताले में लग जायगी। १७. किसी के साथ इस प्रकार की बातचीत या व्यवहार करना कि वह दुष्टे या चिन्ते अथवा लड़ने पर उताक हो। छेड़खानी या छेड़छाड़ करना। जैसे—दोसे लड़कों से लगना ठीक नहीं।

मुहा०—(किसी के) मूँह लगना = किसी बड़े के साथ उल्टता या बुध्दता की बातें करना। अस्वीकर्ता की और बड़-बड़कर बातें करना। जैसे—यह नौकर घर-घर के मूँह लगा है; अर्थात् सबसे बड़-बड़कर बातें करता है।

१८. किसी ऐसे काम, चीज, बात या संबंध का आरम्भ होना जो कुछ अधिक समय तक निरंतर चलता या बना रहे। जैसे—(क) कपहरी, दरबार या मेला लगना। (ख) नया महीना या साल लगना। (ग) किसी काम या बात की आरत या चक्का लगना। (घ) किसी से प्रेम, लड़ाई-साझा का यह लगना।

मुहा०—(किसी से) लगी होना = पहले से चले आनेवाले उस प्रकार के कार्य या संबंध का बराबर पूर्ववत् चलता रहना। जैसे—उन दोनों ने बहुत दिनों से लगी है (अर्थात् उसमें प्रेम, लड़ाई, होड़ आदि का बाब बराबर चला आ रहा है)।

१९. किसी विषय में या किसी व्यक्ति पर किसी चीज या बात का आरोप या प्रयोग होना। जैसे—(क) किसी पर कोई अयोग्य या कलंक लगना। (ख) किसी अपराध में कोई धारा या किसी विषय में कोई नियम लगना। (ग) एक के दोष के लिए दूसरे का नाम लगना।

२०. लोभार्थक रूप में और मुद्दत, बहिष्क क्षेत्र में कोई अल्पव्यय बात या स्थिति अनिर्धार्य रूप से किसी के चिन्तन में पड़ना या होना। निश्चित रूप से किसी अनिष्ट या असुख बात का भागी बनना या होना। जैसे—दोष, पाप, सूतक या हत्या लगना। २१. किसी काम, चीज या बात की किसी रूप में मानिक या सार्वरिक अनुभूति या प्रतीति होना। जान पड़ना। जैसे—(क) गर्मी, जाड़ा या बर लगना। (ख) खाने-पीने की चीज का जट्टा या मीठा लगना। (ग) किसी आदमी की काम, चीज या बात का अच्छा या बुरा लगना। २२. किसी प्रकार की मान-सिक वृत्ति का दुष्टता या स्थिरतापूर्वक किसी ओर प्रवृत्त होना। जैसे—

(क) काम से जी या मन लगना। (ख) ईश्वर का ध्यान लगना। (ग) घर पहुँचने की चिन्ता लगना। २३. किसी काम या बात का क्रियात्मक रूप धारण करना या घटित होना। जैसे—महज लगना, डेर लगना, देर लगना, नैवेद्य लगना, समाधि लगना, सेध लगना। २४. किसी प्रकार की क्रिया की पूर्णता, सिद्धि या स्थापना होना। जैसे—बाजी या शर्त लगना, कम या सिलसिला लगना। २५. किसी प्रकार के उपयोग या व्यवहार के लिए अपेक्षित या आवश्यक होना। जैसे—(क) इस महीने घर में दो मन अनाज लगना। (ख) यह पुस्तक शास्त्री परीक्षा के पाठ्य-क्रम में लगी है। (ग) जब काम लगे तब आकर यह सामान लेजाना। २६. पारिवारिक संबंध या रिस्ते के बिचार से किसी रूप में किसी के साथ संबंध होना। जैसे—बहु भी रिस्ते में हजारे आई ही लगते हैं। २७. लखने-पड़ने के क्षेत्र में, किसी पद, भाष्य या शब्द का ठीक-ठीक अर्थ या आशय समझ में आना। जैसे—किसी चौपाई या सलेक का अर्थ लगना। २८. गणित के क्षेत्र में कोई क्रिया ठीक और पूरी उत्तरना। ठीक तरह से हिसाब लगना। जैसे—जोड़ या बाकी लगना। २९. आर्थिक क्षेत्र में अनिर्धार्य रूप से किसी प्रकार का दातव्य या देन निश्चित होना अथवा हिस्से लगना।

जैसे—(क) कर, जूरामना, या महसूल लगना। (ख) उधार लिए हुए खजोय पर सूद लगना। (ग) रोजगार में दाय पर रसए लगना। ३०. यानों, सारवाग्यों आदि के समझ में किसी स्थान पर आकर, टिकना, ठहरना या रुकना। जैसे—(क) किनारे पर नाव या जहाज लगना। (ख) दरवाजे पर गाड़ी या पालकी लगना। (ग) प्लेट-फार्म पर ईंजिन या देलघानी के टिकने लगना। ३१. जहाजों, नावों

आदि के संबंध में बल्ले समय छिछले पानी में नीचे की जमीन या तल के साथ इस प्रकार उनका पेंटा टिकना या मटना कि उनको गति रुक जाय। टिकना। जैसे—रास्ते में पानी छिछला होने के कारण नाव कई जगह लग गई। ३२ वनस्पतियों आदि के संबंध में उनके अवस्थक अंग अङ्कुरित या प्रस्पष्टित होना। जैसे—फूल, फूल या मजदरी लगना। ३३ पेड़-पौधों आदि के संबंध में किसी स्थान पर जमकर जीवित रहना और फलना-फूलना। जैसे—(क) कहीं से आया हुआ पेड़ बगिचे में लगना। (ख) क्यारी में गुलाब की कलमें लगना। ३४ सेरिय पदार्थों के संबंध में किसी प्रकार के दबाव, रोग, विकार, मषयं आदि के कारण सजायें उपलब्ध होना। गलने या सड़ने की क्रिया का आरंभ होना। जैसे—(क) घोड़े की पीठ या बैल का कपा लगना, अर्थात् उसमें घाव होना। (ख) बरसात में पड़े पड़े फना का लगना, अर्थात् उनका सड़ना आरंभ होना। ३५. किसी पदार्थ में ऐसा रासायनिक विकार उपलब्ध होना जिससे उसकी आयु तथा शक्ति दिन पर दिन क्षीण होने लगती है। जैसे—(क) बीबार में मोना लगना। (ख) लोहे में जंग या मोन्चा लगना। ३६. किसी पदार्थ में ऐसे कीड़े आदि उपलब्ध होना या बाहर से आकर सम्मिलित होना जो उस चीज को क्षात्र या बीर किसी प्रकार नष्ट करते हो। जैम—(क) लकड़ी में धून या दीमक लगना। (ख) ऊनी या रेयामी कपड़ों में कीड़े लगना। (ग) गूदे में चूड़े या मिठाई में चूटियां लगना। ३७. खाद्य पदार्थों के संबंध में, कड़ी आंच पाने या कुछ आदि फस होने के कारण उबाले या पकाये जाने वाले पदार्थ का गूठ अंग बरतने के पड़े में जम, बिपक या सट जाना। जैसे—हड्डियां बल्लाते रहो, नहीं तो लग जायगा। ३८. गी, भैंस बकरी आदि दूध देनेवाले पशुओं का दुहा जाना। जैसे—यह भैंस दिन में तीन बार लगती है। ३९. आकाश या पातक जीवों, ब्यक्तियों आदि का प्रायः स्थान विमोच पर आते रहना और चोट करना, अपधा कष्ट या हाणि पहुँचाना। जैसे—(क) इस रास्ते में डाकू लाते हैं। (ख) इन जगों में भाद्रू (या सोर) लगते हैं। (ग) छत्र पर (या अंगण में) मच्छर लगते हैं। ४०. किसी चीज या दाम का भाव अंका जाना। मूल्यांकन होना। जैसे—इस अँगूठी का बाजार में जो दाम लगे, वह मुझे दे दना। ४१ स्त्री के साथ प्रसंग, संभोग या सम्भोग करना। (बाजाक)

विशेष—(क) इस क्रिया का प्रयोग बहुत सी सजाओं और क्रियाओं के साथ अलग अलग प्रकार के अर्थों में होता है। और इसीलिए तात्त्विक दृष्टि से ऐसे प्रयोगों की गणना मुश्लम में होती है। जैम—विनीची चीज पर दात या निगाह लगाना, किसी काम या चीज में हाथ लगाना, हाई चीज हाथ लगना आदि। (ख) अनेक अवसरों पर यह क्रिया दूसरी क्रियाओं के साथ सर्वो किं० के रूप में भी लगकर अनेक प्रकार के अर्थ देती है। अधिकतर ऐसे अवसरों पर इसका प्रयोग यह सूचित करता है कि किसी ऐसी क्रिया का आरंभ हुआ है, जो अर्थात् कुछ समय तक चलती या होनी रहेगी। जैसे—(क) कुछ कहने, पढ़ने बोलने या लिखने लगना। (ख) चलने, दौड़ने या भागने लगना। (घ) श्रम करने या लड़ने लगना आदि।

लगाव—स्त्री०—लगाना।

लगावी—स्त्री० [क्रा० लगाना] १. छोटी धाकी। तपस्वी। रिफाबी। २. पानवान के अन्दर की पान रखने की छोटी तपस्वी।

लगावीय—वि० [सं०/अणु (मिलना)+अनीयर] जो सबद या संयुक्त क्रिया जा सके। लगाने जाने के योग्य।

लगभग—वि० [सं०/अणु (मिलना)+अनीयर] मात्र, संख्या, समय आदि की अनुमानित अवधि या मात्रा बहुत-कुछ निश्चित भाव से प्रोक्षित करनेवाला अव्यय। जैसे—(क) इस काम में लगभग दो घण्टे लगेंगे। (ख) वे वहाँ लगभग बार महीने रहे।

लगभगत—स्त्री०—लगामात्रा।

लगामात्रा—स्त्री० [हिं० लगाना+सं०मात्रा] स्वरो के वे चिह्न जो उच्चारण के लिए व्यञ्जनों में जोड़े जाते हैं। जैसे—ए का जो का । पु० १. बहु जो किसी के साथ उभर प्रकार से प्रायः या सदा लगा रहता हो। २. स्त्री का उपपत्ति। दास। (परिहास और व्यंग)। उदा०—अच्छे ही कपड़े डूँडे के पदा वे दुगाना। लगामात्रे दोनों हैं तहसदार हुमाएँ—जान सहे।

लगारी—पु०—लघटय। (घिकारी पक्षी)।

लगभग—स्त्री० [हिं० लगाना] १. किसी प्रकार की लगावट या आरंभिक का हुलका रूप। २. किसी प्रकार के संबंध की ऐसी बात-चीत जो अभी चल रही हो। जैसे—उनके लडके का अभी ब्याह हो नहीं हुआ है पर लग-लग लगी है, अर्थात् बात-चीत चल रही है। वि० [अव्य० लकड़का] १. बहुत दुबल-पतला ल०. कोमल। सुष्ठ-दार।

लगभग—वि०—लगी (शु०)।

लगभगना—सं० [हिं० लगाना का प्रे०] १. किसी को कुछ लगाने में प्रयुक्त करना। २. सम्भोग करना (बाजाक)।

लगभगर—पु० [हिं० लगाना-प्रसंग करना+धार (प्रत्य०)] स्त्री का उपपत्ति। धार। अधाना।

लगावीलाते—स्त्री० [अ० लम्बितवयत] बेहदगी।

लगाव—पु० [हिं० लग+हूर (प्रत्य०)] ऐसा कटाया या तराजू जितने पासंग हो और इसीलिए जिससे तोलने पर बीज अपेक्षा कम तुल्यी हो।

लगा—पु० [हिं० लगाना] किसी के साथ लगा रहनेवाला, और फलतः तुच्छ या हीन ब्यक्ति। (बाजाक) जैसे—लगे की मूँडे उसइदाउगी। (रिम्पा)

लगाई—स्त्री० [हिं० लगाना] १. लगने या लगे रहने की अवस्था, भाव या मजदूरी। २. इधर की बात उधर लगाने की क्रिया या भाव।

लगाई-मुसारी—स्त्री० [हिं० लगाना+मुसारा] कही श्रमका लडा करना और फिर इधर-उधर की बातें करके उसे धातन करने का प्रयत्न करना।

लगाई-सुतरी—स्त्री० [हिं० लगाना+सुतरा] अपस में श्रमका कराने के लिए मूडी-सम्भोगी बातें इधर-उधर करते फिरना।

लगाक—वि० [हिं० लगाना] लगानेवाला।

लगाव—अव्य० [हिं० लगाना+होता=सिलसिला] बराबर एक के बाद एक। सिलसिलेकार। निरंतर। सतत। जैसे—बहु दिन बार लगावारा काम करता रहा।

क्याम—स्त्री० [हि० लगना या लगाना] १. लगाने या लगाने की क्रिया या भाव। २. किसी के साथ लगे या संडे हुए होने की अवस्था या भाव। लाग। जैसे—इस यकान में बगल वाले यकान से लगान पड़ती है। ३. बहु स्थान जहाँ मजदूर आदि मुस्ताने के लिए अपने लिए घर का बीस उतार कर रखते हैं। टिकान। ४. बहु स्थान जहाँ नारें आकर ठहरती हैं और मल्लाह विधान करते हैं। ५. किसी की टोहू में उसके पीछे लगाने की क्रिया या भाव। जैसे—उसके पीछे तो पुस्तक की लगान लगी है। ६. मूमि पर लगानेवाला बहु कर जो बेजिह्द हों की ओर से जमींदार या सरकार को मिसता है। राजस्व। नुक-क। जमाबंदी। पीत।

विषय—इस अलिप्त अर्थ में यह शब्द अधिकतर २० रूप में ही प्रयुक्त होता दिखाई देता है।

क्याम—स० [हि० लगना का सं०] १ एक पदार्थ के तल या पादर्थ को दूसरे पदार्थ के तल या पादर्थ के पास इस प्रकार पहुँचाना कि यह बाहिक या पूर्ण रूप से उसके साथ मिल या संडे जाय। सलगन करना। सटाना। जैसे—पुस्तक पर जिल्द या बीवार पर कागज लगाना। २ एक बीज को दूसरी बीज पर जोड़ना, टैकना, बँटाना या रखना। जैसे—(क) तमबीर पर या दरवाजे में बीधा लगाना। (ख) टोपी या पगड़ी पर फँसी लगाना। (ग) घड़ी में नया पुरजा या नई सूई लगाना। ३. कोई बीज ठीक तरह से काम में लाने के लिए उसे स्यास्मान सखा या स्थित करना। जैसे—(क) जहाज या नाव में पाल लगाना। (ख) दरवाजे के आगे परदा लगाना। ४. किसी तल पर कोई गाढ़ा तरल पदार्थ पोतना, फेरना या मलना। लेप करना। जैसे—(क) जिड़कियाँ या दरवाजे में रंग लगाना। (ख) पैरो या हाथों में मेहुरी लगाना। (ग) शरीर के किसी अंग में तेल या स्वा लगाना। (घ) जूते पर पालिश लगाना। ५. किसी रूप में कोई बीज किसी के पीछे या साथ समाहित करना। जैसे—पुस्तक में अनुक्रमिका या परिशिष्ट लगाना। ६. किसी व्यक्ति का बंध लेने या उससे कोई उर्द्वय सिद्ध करवाने के लिए किसी को उसके पीछे या साथ नियुक्त करना। जैसे—(क) किसी के पीछे जासूस लगाना। (ख) किसी से कोई काम कराने के लिए उसके पीछे आदमी लगाना। ७. कोई अनिष्ट या कष्टदायक तरव या बात किसी के साथ संबद्ध या सलगन करना। जैसे—(क) किसी के पीछे कोई आफत या मुकदमा लगाना। (ख) किसी को कोई बुरी बात या ब्यसन लगाना। ८. आवरण, निरोधन आदि के रूप में काम आनेवाली बीज इस प्रकार स्यास्मान बँटाना कि उससे कष्टार्थ हो सके। जैसे—(क) कमरे के किनाड़े या दरवाजे लगाना अर्थात् हमरा बन्द करना। (ख) विधिया या सँकू का डक्कन लगाना; अर्थात् विधिया या सँकू बन्द करना। ९. किसी काम, बीज, या बात या ब्यस्ति को ऐसे स्थान या स्थिति में पहुँचाना या लाना कि उसका ठीक उपयोग, साक्षरता या सिद्धि हो सके। जैसे—(क) नाम लिखने पर या पर लगाना। (ख) मनीआर्डर या रजिस्ट्री लगाना। (ग) किसी आदमी को काम या नौकरी पर लगाना। १०. बीज (या बीजे) ऐसे क्रम से या रूप से रखना कि नियमित रूप से उसका स्यास्मित उपयोग हो सके। जैसे—(क) बाँसमारी में किताबें या फर्न पर गद्दी-दिकिया लगाना। (ख) पगत

के आगे पतलें लगाना। (ग) ब्रुकान या बिस्तर लगाना। ११. किसी पदार्थ का उपयोग करने के लिए उसे ठीक स्थान पर रखना। जैसे—(क) तिर पर टोपी या पगड़ी लगाना। (ख) सड़ारे के लिए पीठ के पीछे या हाथ के नीचे तकिया लगाना। १२. कोई बीज या उसके उपकरण किसी विधिष्ठ क्रम या विधान से स्यास्मान स्थित करना। जैसे—(क) पुस्तकों का क्रम लगाना। (ख) बीधा बनाने के लिए पान लगाना, अर्थात् पान पर काया, चूना आदि रखकर उसे पीना। १३. किसी बीज का उपयोग करते हुए उसका ब्यव करना। जैसे—(क) ब्याह शायी में गपए लगाना। (ख) काम में समय लगाना। (ग) काम करने में देर लगाना, अर्थात् अधिक समय ब्यव करना। १४. किसी को किसी कार्यब, कार्य, पव आदि पर नियुक्त या नियोजित करना। मुक-रँद करना। जैसे—(क) किसी जगह पर पहुँदा लगाना। (ख) किसी को काम या नौकरी पर लगाना। १५. आशात या महार करने के लिए अरव, शत्रु आदि उद्दिष्ट स्थान पर पहुँचाना। जैसे—(क) किसी को पायब या मुकदमा लगाना। (ख) किसी पर पीठी का निसाना लगाना। (ग) किसी बीज पर दाँत या नाकून लगाना। १६. कोई कार्य पूरा करने के लिए किसी प्रकार के उपकरण या साधन का उपयोग या प्रयोग करना। जैसे—(क) कमरा बन्द करने के लिए किनाड़ा, कुञ्जी या सिटिकनी लगाना। (ख) दरवाजे में ताला या ताले में ताली लगाना। १७. किसी की कोई सुठी-सम्पत्ति निम्ना की बात किसी दूसरे से आकर कहना। कान बरना। जैसे—इचर की बात उचर लगाना। पव—क्याम-बुझाना—आपस में लोगों को लड़ाना और फिर समझा-बुझा कर बात करना।

१८. किसी प्रकार का कार्य या ब्यवहार आरंभ करना। जैसे—(क) किसी की किसी बात की आशय या चक्का लगाना। (ग) भाई-भाई में झगडा लगाना।

मुहा०—(किसी की) मुँह लगाना—किसी के साथ हतनी नग्यो या रियायत का ब्यवहार करना कि वह आशाजीता की, उद्दंडापूर्ण या बुध्दता की बातें और ब्यवहार करने लगे। जैसे—नौकरों को बहुत मुँह लगाना ठीक नहीं है।

१९. किसी विषय में या ब्यस्ति पर किसी बीज या बात का आरोप करना। जैसे—(क) किसी पर अभियोग या शोध लगाना। (ख) किसी विषय में कोई घारा या नियम लगाना। (ग) स्वयं काम बियाड़कर दूसरे का नाम लगाना। २०. किसी प्रकार की शारीरिक अनुपुत्ति कराना या अपेक्षा उत्पन्न करना। जैसे—किसी वधा का प्यास या भूख लगाना। २१. मानसिक बुद्धि को किसी और ठीक तरह से प्रवृत्त करना। जैसे—(क) किसी काम या बात में मन लगाना। (ख) पूजन या भजन में ध्यान लगाना। (ग) आसत या समाधि लगाना। २२. किसी काम या बात को क्रियारमक रूप देना। घटित करना। जैसे—(क) कपड़ों या किताबों का बेर लगाना। (ख) किसी का दाह-तर्न करने के लिए चिता लगाना अथवा चिता में आग लगाना। (ग) देर, बाजी या घात लगाना। (घ) नैवेद्य या योग लगाना। २३. किसी पद, वाक्य या शब्द का अर्थ या आशय समझकर स्थिर करना। जैसे—(क) बीनाई या सलोक का अर्थ लगाना। (ख) किसी की बातों का कुछ का कुछ

कर्षं लगाना। २४. गणित की कोई क्रिया ठीक तरह से पूरी या सम्पन्न करना। जैसे—बोझ, बाकी या हिस्सा लगाना। २५. किसी पर कोई दायित्व या देन नियत या स्थिर करना। जैसे—(क) कर या जुरमाना लगाना। (ख) किसी के ज़िम्मे कर्ज या देन लगाना। २६. यान या मक़ारी किसी स्थान पर टिकाना, ठहराना या रोकना। जैसे—बंदरगाह में जहाज़ लगाना। २७. पेड़, पौधे, बीज आदि भूमि में इस प्रकार स्थापित करना कि वे जम या लगकर बढ़ें और फूलें-फलें। जैसे—बाग़ीचे में आम या गुलाब लगाना। २८. गीत, भेंस आदि पुनाना। जैसे—पूरी खाला महल्ले सर की गीतें लगाना हैं। २९. कोई बीज देखकर लेने के लिए उसका दाम या भाव कहना या निश्चित करना। मूल्यंकन करना। जैसे—मैंने तो उस मकान का दाम इस हजार लगाया है। ३०. यन्त्री आदि के संबंध में कल-पुरजे ठीक तरह से बँटाकर उन्हें काम करने के योग्य बनाना। जैसे—आटा पीसने, चारा काटने या रुई बुनने की मशीन लगाना। ३१. किसी प्रकार के काम में प्रवृत्त या रत करना। जैसे—सामान होने के लिए भजदूर लगाना। ३२. ऐसा कार्य करना जिसमें बहुत से लोग एकत्र या समिलित हों। जैसे—गुम तो जहाँ जाते हैं वहाँ भीड़ (या मेला) लगा देते हैं। ३३. किसी के साथ किसी प्रकार का संबंध स्थापित करना। जैसे—(क) किसी से दोस्ती लगाना। (ख) किसी के साथ कोई रिश्ता लगाना।

मुहा०—किसी को लगा कर कुछ कहना या माली देना—बीच में किसी का संबंध स्थापित करके किसी प्रकार का आरोप करना। जैसे—किसी की मौत-बहल को लगाकर कुछ कहना बहुत बर्बादी नीचता है। ३४. शरीर का कोई अंग ऐसी स्थिति में लाना कि वह अपना काम ठीक तरह से कर सके। जैसे—काम में हाथ लगाना।

लगाय—स्त्री० [फा०] १. जीते जानेवाले घोड़े के मूँह में लगाया जानेवाला एक प्रकार का अर्ध चन्द्राकार बाँधा जिससे रातें बँधी होती हैं। क्रि० प्र०—बढ़ाना—लगाना।

मुहा०—अबान या मुँह में लगाय न होना—बिना सोचे-समझे बकने की आदत होना। २. बाग। रास।

मुहा०—(किसी के पीछे) लगाय लिये फिरना—धरने-पकड़ने के उद्देश्य से किसी का पीछा करना।

३. कोई ऐसी चीज या बात जो किसी को नियंत्रण में रखती हो। जैसे—उनकी जवान (या मुँह) में लगाय तो ई ही नहीं, अर्थात् वे अपनी बाल्बाल पर नियंत्रण नहीं रख सकते।

क्रि० प्र०—बढ़ाना।—लगाना।

लगामी—स्त्री० [फा० लगाय+हि० ई (प्रत्य०)] गाय-भैंस, घोड़े, बकरी आदि पशुओं के मूँह पर बाँधी जाने वाली वह जाली जिसके फल-त्वरूप्य के कुछ काटने या खाने से बचत हो जाते हैं।

लगाय—स्त्री० [हि० लगाना+आय (प्रत्य०)] १. लगावट। २. प्रेम। सबच। उदा०—लिय सो क्यों कीजिए लगाय।—सूर।

अव्य० सक। पर्यंत।

लगायत—अव्य०=लगाय।

लगायत—स्त्री० [हि० लगाना+आर (प्रत्य०)] १. काम करने-कराने

का बाँधा हुआ बंध या प्रकार। बंधी। बंधेज। २. क्रम। सिलसिला। ३. लगाव। संबंध। ४. प्रीति। प्रेम। लगाव। ५. वह जिससे किसी प्रकार का घनिष्ठ संबंध हो। ६. किसी दूसरे के लिए रहस्यमय बातों का पता लगानेवाला दूत। ७. वह स्थान जहाँ से जुआरियों को गुग के अर्द्धे पर पहुँचाया जाता हो। ठिकाना। वि०—१. किसी के पीछे या हाथ लगा रहनेवाला। २. किसी के साथ प्रेम आदि का संबंध रखनेवाला।

लगा-स्त्री०—स्त्री० [हि० लगाना] १. लगने अर्थात् प्रेम-संबंध चलता होने की अवस्था या भाव। २. मेल-जोड़। हेल-मेल। ३. लाग-डोट। **लगाव—**गु० [हि० लगाना+आय (प्रत्य०)] १. किसी के साथ लगे हुए होने की अवस्था, गुण या भाव। २. सम्बन्ध। वास्ता। ३. प्रेम-सम्बन्ध।

लगावट—स्त्री० [हि० लगाना+आवट (प्रत्य०)] १. लगने या लगे हुए होने का भाव या स्थिति। २. लगाव। संबंध। ३. श्रुगारिक क्षेत्र का अनुकर, प्रेम या सबच।

लगावताना—स्त्री०=लगाय।

लगावताना—स०=लगाना।

लगा-सगा—गु० [हि० लगाना+सगा अनु०] १. सपकं। सबच। २. अनुचित या गृह्य सबच।

लगि*—अव्य० [हि० लग] १. तक। पर्यंत। २. निकट। पास। उदा०—लोट नाहिं लगि बात की दुखा।—जायसी। ३. के लिए। वास्ते। उदा०—कोड़ी लगि मन की रज छानत।—सूर।

* स्त्री०=लगी।

लगित—गु० क० [सं०√लग् (सग)+क्त] १. लगा या लगाया हुआ। २. संपृक्त। सदृढ। ३. प्राप्त। ४. प्रविष्ट।

लगी—स्त्री० [हि० लगाना] १. वह अवस्था जिसमें पर-स्त्री-युग्म के संबंध स्थापित हो। २. लाग-डोट। (दे०)

† स्त्री०=लगी।

लगी-बधी—स्त्री० [हि० लगाना+बदना] १. वह प्रेमपूर्ण या मित्रतापूर्ण अवस्था जिसमें दोनों पक्ष एक दूसरे के कहे अनुसार दूसरी से बातचीत या व्यवहार करते हैं। २. लाग-डोट। (दे०)

लगु*†—अव्य०=लगि।

लगुआ—वि०=लगु।

लगुड—गु० [सं०√लग्+उल्लृ. ल—ड] १. डडा। २. लड़ी। २. लोहे का एक प्रकार का डडा जिसे प्राचीन काल में पैदल सिपाही हाथ में रखते थे। ३. लाल कने।

लगुडी (बिन्नु)—वि० [सं० लगुड+बिन्नु] दहधारी। † स्त्री० 'लगुड' का स्त्री० अलपान।

लगुल—गु० [सं० लगुल] १. लड़ी। लुड। २. शिखर। (हि०)

लगुबाना—वि०=लगु।

लगु (गुल)—स्त्री०=लंगुल (पुंछ)।

† गु०=लगु।

लगे—अव्य० [हि० लगाना] १. निकट। पास। २. तक। पर्यंत। (पूरव)

लगे-लगे—गु० [हि० लगाना] बढर।

विशेष—प्रायः बन्वरो के आने पर लोग 'लगे लगे' कह कर उन्हें मगाने के लिए बिल्लवते हैं। इसी से इसका यह अर्थ हुआ है।

लगी—अव्य० [हि० लगना] १. के लिए। बास्ते उदा०—**लगी** भेठिल्ली खमनी।—प्रियराज। २. तक। पर्वत।

लगी—वि० [अ०] १. जो किसी काम न हो। २. अचंगत और नेतुक।

लगी—बिलकुल झूठी और ब्यर्थ की बात।

लगीही—वि० [हि० लगना+और] (प्रत्य०) १ जिसमें लगन या लगने की कामना या प्रवृत्ति हो। लगने का अभाव। २. रिसवार।

लगना—स्त्री० [हि० लगना] १. व्यापार में लगाना हुआ बन। पूंजी। (इन्स्टेमेण्ट) २. दे० 'लगत'।

लगना—पुं० [स० लगुड] [स्त्री० अल्पा० लग्नी] १. कई प्रकार के कार्यों में काम आनेवाला कला बाँस। जैसे—नाब चलाने का लगना। २. पेठ से फल तोड़ने का लगना।

मुहा०—**लगने** से पानी पिलाना—बिलकुल अलग या बहुत दूर रहकर नान मान के लिए बोझी-सी या नहीं के बराबर सहायता करना।

३. फरसे के आकार का काठ का एक उपकरण जिससे कीचड़, घास आदि समेटते या हटाते हैं।

पू० [हि० लगना] १. कार्य आरम्भ करने के लिए उसमें हाथ लगाने की क्रिया या भाव। जैसे—मकान बनाने में लगना लग गया है।

३. किसी दाब पर जुआरी से मित्र किसी और ब्यक्ति द्वारा लगाया जानेवाला धन। ३. बराबरी की टक्कर या मुकाबला। (लगनक)

मुहा०—**लगना खाना**—किसी की टक्कर या बराबरी का होना। जैसे—इन बातों में बहुत मुमसे लगना नहीं खा सकता।

क्रि० प्र०—लगना।—लगाना।

लगना—वि० [हि० लगना] १. लगनेवाला। २. किसी के साथ रहने या आने-जानेवाला। जैसे—पिछलग्नु।

पुं० स्त्री का उपपति या यार। (बाजाक)

लगनु-बग्नु—पुं० [हि० लगना+बगना] वे लोग जो किसी बड़े आदमी के साथ लगे रहते हो और उसकी ही में हाँ पिलाने रहते हैं।

लगनु—पुं० [दिश०] १. एक प्रकार का छोटा बीता जो पशुओं का शिकार करने के लिए पाला और सघाया जाता है। २. बाज की जाति का भूरे रंग का एक प्रकार का शिकारी पक्षी जो प्रायः तीतर, बटेर आदि पकड़कर खाता है।

लगना—पुं० [स्त्री० अल्पा० लग्नी] =लगना।

लगनी—स्त्री० १. =लग्नी। २. वह हार जिससे नदी के तल पर टेक लगाकर नदी किसी ओर बहाई जाती है।

लगन—वि० [सं० √लग् (लगना)+अत, नि० त-न] १. किसी के साथ लगा या सटा हुआ। २. लजित। शरारतिया। ३. आसक्त। ४. १. फलित ज्योतिष में, किसी राशि के पूर्वी या उदय क्षितिज पर लगे हुए या वर्तमान होने की स्थिति को सभी कामों और बातों में शुभाशुभ फल देनेवाली मानी जाती है।

विशेष—पूर्व मत्त्येक राशि में एक-एक महीने रहता है। अतः जिस राशि का पूर्व जिन दिनों होता है वही राशि उन दिनों उसके उदय

क्षितिज अर्थात् पूर्वी क्षितिज पर रहती है, परन्तु पृथ्वी अपने अक्ष पर बराबर घूमती रहती है इस लिए दिन-रात में बारम्बार राशियाँ दो-दो बंटों के लिए पूर्वी क्षितिज पर आती रहती है। यही दो बंटें का समय हर राशि का लगन-काल माना जाता है। उदाहरणार्थ—यदि सूर्योदय के समय में लगे हो तो उसके दो-दो बण्टे बाह्य पृष्ठ, भिन्न, कर्क आदि राशियों का लगन-काल होता जाता है। परन्तु सूर्य और पृथ्वी दोनों अपनी कक्षा पर आगे भी बढ़ते रहते हैं और पितृमान भी घटता-बढ़ता रहता है। इसके फलस्वरूप प्रत्येक राशि का लगन-काल भी प्रतिदिन प्रायः ४ मिनट आगे बढ़ता रहता है। जितने समय तक कोई राशि पूर्वी अथवा उदय क्षितिज पर स्थित रहती है, उतना समय उसी राशि के नाम से अभिहित होता है। जैसे—यदि कक्षा जाय कि कक्षा लगन में विवाह होगा तो इसका आशय यह होगा कि जिस समय कक्षा राशि पूर्वी या उदय क्षितिज पर स्थित होगी, उस समय विवाह होगा।

२. कोई शुभ काम करने के लिए फलित ज्योतिष के अनुसार निश्चित किया हुआ मनुष्य। जैसे—यसोभित या विवाह का लगन। ३. विवाह। ब्याह। ४. वे दिन जिसमें फलित ज्योतिष के अनुसार विवाह आदि कृत्य विहित होते हैं। ५. बहोवन सूत। ६. दे० 'लगन'।

लगन-कंधन—पुं० [सं० कन्ध० सं] वह कंधन या मगल-सूत्र जो विवाह के पूर्व वर और कन्या के हाथ में बांधा जाता है।

लगनक—पुं० [सं० लगन+कन्] १. वह जो किसी की जमानत करे। प्रतिभू। जातिन। २. सगीत में एक प्रकार का राग जो हनुमान् के भक्त से भेष राग का पुत्र है।

लगन-कुंडली—स्त्री० [सं० व० सं०] फलित ज्योतिष में वह पत्र या कुंडली जिससे यह जाना जाता है कि किसी के जन्म के समय कौन-कौन से ग्रह किस किस राशि में स्थित थे। जन्म-कुंडली।

लगन-बच्च—पुं० [मं०] गाने या बजाने के समय स्वर के मुख्य वंश या धृतियों को आपस में एक दूसरे से अलग न होने देना और सुचारु रूप से उनका संयोग करना। लाग-ईट। (संगीत)

लगन-दिन—पुं० [सं० व० सं०] वह दिन जिसमें विवाह का सुहृत् निकला हो।

लगन-पत्र—पुं० [सं० व० सं०] वह पत्र जिसमें विवाह सम्बन्धी कृत्यों तथा उनके समय का विवरण रहता है।

लगन-पत्रिका—स्त्री० [सं० व० सं०] =लगनपत्र।

लगन-पत्री—स्त्री० =लगनपत्र।

लगनायु (सु)—स्त्री० [सं० लगन-आयुत्, मध्य० सं०] फलित ज्योतिष में लगन-कुंडली के अनुसार स्थिर होनेवाली आयु।

लगनेश—पुं० [सं० लगन-ईश, व० सं०] किसी लगन का स्वामी ग्रह। (ज्यो०)

लगनोदय—पुं० [सं० लगन-उदय, व० सं०] १. किसी लगन का उदय अर्थात् आरम्भ होना। २. किसी लगन के उदय होने का समय।

लगनी पुष्प—पुं० [सं० लगनी पुष्प] पपराग मिश्रित। लाल। माषि-कम। (डि०)

लग्निषा (मनु)—स्त्री० [सं० लघु+इमनिष्] १. लघु अर्थात् छोटे होने की अवस्था या भाव। २. अठ सिद्धियों में से एक, जिसकी प्राप्ति हो जाने पर मनुष्य लघुतम रूप ब्राह्मण बन सकता है।

लघु-वि० [सं०/लघु (गति) +तु, न-लोप] [माथ० लघिमां, लघुता, लाघव] १. जो बड़ा न हो। छोटा। २. किसी की तुलना में छोटा। कनिष्ठ। जैसे—लघु भाषा। ३. जिसमें उद्यता या तीव्रता न हो। कोमल। हलका। जैसे—लघु स्वर। ४. तीव्र गति वाला। तेज चाल वाला। ५. अच्छा। बढिया। ६ सुन्दर। ७. जिसमें किसी प्रकार का सार या तत्त्व न हो। निःसार। ८. पोछा। कम। ९. तुच्छ। नीचा। १०. दुबला-पसला और कमजोर। दुर्बल।
पुं० १ काला अगर। २ उधोर। लस। ३ पन्द्रह शर्णा का समय। ४. विप्लव में ऐसा वर्ष जो एक ही मासा का हो। इसका निम्न (१) है। ५ ह्रस्व स्वर। (भ्याकरण) ६ बारह भाषाओं का प्राणायाम। ७. ज्योतिष में, हस्त, आश्विनी और पुष्य नक्षत्र।
लघु-कटाई—स्त्री० [सं० लघु-कटकी] भटकटैया।
लघु-करण—पुं० [सं० षं० सं०] किसी काम चीज या बाल का छोटा या हल्का करना। छोटे आकार-प्रकार में लाना। सक्षिप्त करना। (कर्मदेशान)
लघु-कर्णी—स्त्री० [सं० षं० सं०, +ङीष्] मूर्खा। मरोड़फली।
लघु-काय—पुं० [सं० षं० सं०] बकरा।
वि० छोटे शरीर वाला।
लघु-काल—पुं० [कर्म० सं०] वह छाटा बड़ा जिनसे बड़े बड़े या बार रोका जाता है।
लघु-कर्म—पुं० [कर्म० सं०] जल्दी जल्दी चलने की क्रिया। तेज चाल।
लघु-गण—पुं० [कर्म० सं०] अश्विनी, पुष्य और हरत इन तीनों नक्षत्रों का समूह।
लघु-गति—वि० [ब० सं०] तेज चलनेवाला।
लघु-गंधम—पुं० [कर्म० सं०] अगर नाम की सुगन्धित लकड़ी।
लघु-चित्त—वि० [ब० सं०] चञ्चल चित्तवाला।
लघु-वेता (तत्)—वि० [ब० सं०] तुच्छ या छोटे विचारोवाला। नीचा। ह्य।
लघुच्छदा—स्त्री० [ब० सं०] बड़ी सतावर।
लघु-आंगल—पुं० [सं०] लवा (पत्थी)।
लघुतम—वि० [सं० लघु+तमम्] सबसे छोटा।
लघुतम-समापवर्त्य—पुं० [कर्म० सं०] वह समेत छोटी तथ्या जो दा या अधिक तथ्याओं से पूरी-पूरी बँट जाय।
लघुता—स्त्री० [सं० लघु+तल्+टाप्] लघु होने की अवस्था या भाव। लघुत्व। छोटाई।
लघु-तुपक—स्त्री० [सं०] एक तरह की छोटी बड़क। तमंचा।
लघुतमपवर्त्य—पुं० [सं० कर्म० सं०] =लघुतम समापवर्त्य।
लघुत्व—पुं० [सं० लघु+त्वं] लघु होने की अवस्था या भाव। लघुता।
लघु-भाषा—स्त्री० [कर्म० सं०] किशामिश।
लघुभाषी (विन्)—पुं० [सं० लघु+वृ (गति) +गिनि] पार।
लघु-नामा (सन्)—पुं० [सं० षं० सं०] अगर नामक सुगन्धित लकड़ी।

लघु-बंधक—पुं० [सं० कर्म० सं०] शास्त्रिणी, पिठवन, कटाई (छोटी), कटेहरी (बड़ी) और गोलक इन पाँचों की अर्जों का समूह।
लघु-पत्र—पुं० [ब० सं०] कमीठा।
लघु-पत्री—स्त्री० [ब० सं०, +ङीष्] अक्षय वृक्ष।
लघु-पर्णी—स्त्री० [ब० सं०, +ङीष्] १ मूर्खा। मरोड़फली। २ शत-मूली। जतावर।
लघु-पाक—वि० [कर्म० सं०] (साध पदार्थ) जो सहज या जल्दी में पच जाय।
लघुपाकी (किन्)—पुं० [ब० लघुपाक+इनि?] चेना नामक कदम। वि० =लघुपाक।
लघु-गुण्य—पुं० [ब० सं०] भूई कदम।
लघु-गुण्या—स्त्री० [ब० सं०, +टाप्] पीला केवडा। स्वर्ण केतकी।
लघु-प्रयत्न—वि० [ब० मं०] बहुत थोडा प्रयत्न करनेवाला। फलतः अर्थात्थ और आसानी।
लघु-फल—पुं० [ब० सं०] गुलर (वृक्ष)।
लघुभूत् (भूत्)—वि० [सं० लघु+भूत् (खाना) +भिवप्] कम खाने-वाला। अल्पाहार।
लघु-मति—वि० [ब० सं०] १ जिनमें बहुत थोड़ी बुद्धि हो। २ छोटे या तुच्छ विचारोवाला।
लघुमना (सन्)—वि० [ब० सं०] छोटे या तुच्छ मन (अर्थात् विचारो) वाला।
लघु-मांस—पुं० [ब० सं०] तीतर (पक्षी)।
लघु-मान—पुं० [कर्म० सं०] नायक के किन्नी दूसरी स्त्री सं बात-चीत करने मात्र सं नायिका द्वारा उस पर प्रकट किया जानेवाला रोष।
लघु-मेघ—पुं० [कर्म० मं०] सर्गित में एक प्रकार का साज।
लघु-मस्ता—स्त्री० [कर्म० मं०] १. करले की बेल। २ अनन्त मूल।
लघु-भक्ति—वि० [कर्म० सं०] छोटे या हल्के विचारोवाला।
लघु-शंका—स्त्री० [कर्म० सं०] मूर्खत्वमें। पेशाव करना।
लघु-शंख—पुं० [कर्म० सं०] घोषा।
लघु-हस्त—वि० [ब० सं०] १. जो बहुत जल्दी जल्दी बाण चला सकता हो। अच्छा धनुर्धर। २. फूर्ती से और अच्छा काम करनेवाला।
लघुभाषी (सिन्)—वि० [सं० लघु+वृष् (खाना) +गिनि, उप० सं०] कम खानेवाला। अल्पाहार।
लघ्वी—स्त्री० [सं० लघु+ङीष्] १. बेर नामक फल। २ असबर। स्पृकता।
†स्त्री० =लघु-शका। (महाराष्ट्र)
लघा—स्त्री० =लघक।
लघक—स्त्री० [हिं० लघकना] १. लघकने की क्रिया या भाव। लघन। मुकवा। जैसे—कमर को लघक।
क्रि० प्र०—खाना।
 २. वह गुण जिसके कारण कोई चीज लघकती या मुकती है। ३. कमर आदि में लघकने के कारण होनेवाली पीड़ा।
क्रि० प्र०—मटना।
स्त्री० [देव०] एक प्रकार की बड़ी नाव।
लघकना—अ० [?] १. किसी लघ्वी चीज का दबाव आदि के फल-

स्वल्प मध्य भाग पर से कुछ झुकना या मुड़ना । २. चलते समय कमर का बोझ झुकना या मुड़ना जो तीव्रसूचक माना जाता है ।

लक्ष्मिनि—स्त्री०=लक्ष्मि ।

लक्ष्मना—पुं० [हि० लक्ष्मना] १. लक्ष्मणे के कारण लगनेवाला श्रापित ।

वि० प्र०—जाना ।—लगना ।

२. लक्ष्मी । ३. अल-विहार के काम आनेवाली एक प्रकार की नाव । ४. कपड़े पर टीका आनेवाला एक प्रकार का साज जो सुनहला और धूलका दोनों प्रकार का होता है ।

लक्ष्मणाना—स० [हि० लक्ष्मणा] किसी पदार्थ को लक्ष्मणे में प्रवृत्त करना । झुकाना । लक्ष्मण ।

लक्ष्मीला—वि०=लक्ष्मीला ।

लक्ष्मीहृ—वि० [हि० लक्ष्मना-हृ] (प्रत्य०) १ जो रह-रह-कर लक्ष्मणता हो । २. लक्ष्मणे की प्रवृत्ति रखनेवाला । ३. लक्ष्मीला ।

लक्ष्म—स्त्री०=लक्ष्मि ।

लक्ष्मा—अ०=लक्ष्मना ।

लक्ष्मलचा—वि०=लक्ष्मीला ।

लक्ष्माकां—पुं० १. =लक्ष्मि । २. =लक्ष्मिका ।

लक्ष्मकेदार—वि० [हि० लक्ष्माकां-फा० दार (प्रत्य०)] मञ्जेदार । बड़िया । (बाबाक)

लक्ष्मनां—स० [हि० लक्ष्मना का स० रूप] लक्ष्मणे या लक्ष्मणे में प्रवृत्त करना । लक्ष्मणाना ।

लक्षार—वि०=लक्षार ।

लक्षारी—स्त्री० [हि० अक्षार] आम का एक प्रकार का लठ्ठा अक्षार जिसमें तेल नहीं छोड़ा जाता है ।

स्त्री० [?] १ मेट । २. एक तरह का गीत ।

स्त्री०=लक्षारी ।

लक्ष्मीला—वि० [हि० लक्ष्मना-ईला (प्रत्य०)] [स्त्री० लक्ष्मी] जो दमाग जाने पर कुछ या अधिक झुक या मुड़ जाता हो परन्तु दबाव झूटने पर फिर अपनी सामान्य स्थिति प्राप्त कर लेता हो ।

लक्ष्मी—स्त्री०=लक्ष्मी (मंटे की पुरी) ।

लक्ष्म—पुं०=लक्ष ।

वि०=लक्ष (लाल) ।

†स्त्री०=लक्ष्मी ।

लक्ष्मण—पुं० [स० लक्ष्मण] १. स्वभाव । (हि०) २. लक्ष्मण । (हि०)

†पुं०=लक्ष्मण ।

लक्ष्मण—पुं० १. =लक्ष्मण । २. =लक्ष्मण ।

लक्ष्मणा—स्त्री०=लक्ष्मणा ।

लक्ष्मण्य—वि० [सं० लक्ष्मीवान्] धनवान् । अमीर । (हि०)

पुं०=लक्ष्मण्य ।

लक्ष्मीनी—स्त्री०=लक्ष्मी ।

लक्ष्मी—पुं० [अनु०] [स्त्री० अल्पा० लक्ष्मी] १. कुछ विशेष प्रकार से लगाये गये बहुत से सारों या थोड़े का समूह । गुच्छे या झन्डे के रूप में लगाए हुए सार । जैसे—रेखम का लक्ष्मी, सूत का लक्ष्मी ।

२. किसी चीज के सूत की तरह ऐसे लम्बे और पतले कटे हुए टुकड़े जो आपस में उलझकर मिल जाते हों । जैसे—अदरक, पत्ती, पेठे या प्याज का लक्ष्मी । ३. किसी उबाली या पकायी हुई गाड़ी चीज के रूप के लंबोठारे अंश को प्रायः आपस में मिले रहते हैं । जैसे—मलाई या रबड़ी को लक्ष्मी । ४. मंटे की एक प्रकार की मिठाई जो प्रायः पतले लम्बे सूत की तरह और देखने में उलझी हुई होर के समान होती है । ५. पतली और तुलसी बंचीरी से बना हुआ एक प्रकार का गहना जो हाथ या पैर में पहना जाता है । ६. एक प्रकार का घंटिया और मिलावटी केसर ।

लक्ष्मा लाल—स्त्री० [दिश०] एक प्रकार की संकर टागिनी ।

लक्ष्मि*—स्त्री०=लक्ष्मी ।

लक्ष्मिनि—वि०=लक्षित ।

लक्ष्मिनाय*—पुं० [सं० लक्ष्मीनाय] लक्ष्मीपति । विष्णु । (हि०)

लक्ष्मिनिवास*—पुं० [सं० लक्ष्मीनिवास] विष्णु । नारायण ।

लक्ष्मिनी*—स्त्री०=लक्ष्मी ।

लक्ष्मी—स्त्री० [हि० लक्ष्मा का स्त्री० अल्पा०] सूत, रेखम, ऊन, कलावणु इत्यादि की लपेटो हुई गुच्छी । अट्टी । छोटा लक्ष्मा । पुं० [?] एक प्रकार का थोड़ा ।

स्त्री०=लक्ष्मी ।

लक्ष्मिदार—वि० [हि० लक्ष्मा-फा० दार (प्रत्य०)] १ (साय पदार्थ) जिसमें लक्ष्मे पाडे या बने हों । लक्ष्मावाला । जैसे—लक्ष्मिदार रबड़ी । २. (बात) जो चिकनी-चुण्डी तथा मञ्जेदार हो ।

लक्ष्मी—पुं०=लक्ष्मी ।

लक्ष्मी—अ०=लक्ष्मा ।

लक्ष्मी—पुं०=लक्ष्मण ।

लक्ष्मी भूला—पुं० [हि० लक्ष्मी-भूला] १ बदरीनारायण के मार्ग में एक स्थान जहाँ पहले पुरानी बाल का रस्सी का एक लक्ष्मीपुल था, जिसे भूला कहते थे । २. रस्सी या सारो आदि का वह पुल जो बीच में झूले की तरह नीचे लटकता हो । भूला पुल । ३. एक प्रकार की बेल या लता ।

लक्ष्मी—स्त्री०=लक्ष्मी ।

लक्ष्मी—स्त्री०=लक्ष्मी ।

लक्ष्मी—वि० [?] १. लक्ष्मी । २. बहा ।

लक्ष्मीना—स० [हि० लक्ष्मी] बोरे, सूत आदि का लक्ष्मी या लक्ष्मी बनाना ।

†अ० डारे, सूत की तरह के पदार्थों के लक्ष्मी या लक्ष्मी के रूप में जाना या बनाना ।

†अ० [सं० लक्ष्मी] दिखाई देना । प्रवृत्त या लक्षित होना । उदा०—लक्ष्मी चिट्ठे जो लक्ष्मी—नदवाम ।

लक्ष्मी—स्त्री०=लक्ष्मी ।

लक्ष्मी—अ०=लक्ष्मी ।

लक्ष्मी—स्त्री० [हि० लक्ष्मी] लक्ष्मी का पीया ।

लक्ष्मी—वि०=लक्ष्मी ।

लक्ष्मी—स्त्री०=लक्ष्मी ।

लक्ष्मी—स० [हि० लक्ष्मी] दूसरे को लक्षित करना । धारित्व करना ।

लज्जापूर—वि० [सं लज्जापूर] जो बहुत अधिक लज्जा करे। लज्जा-
भान्। शर्माका।

↑ पू०=लज्जाळू। (पीषा)।

लज्जाना—अ० [हिं लज्ज] लज्जा या शर्म से सिर नीचा करना।
लज्जित होना।

सं० किसी को लज्जित करना।

लज्जाप—वि०, पु०=लज्जाळू।

लज्जाळू—पु० [सं लज्जाळू] हाथ डेढ़ हाथ ऊंचा एक काँटेदार छोटा
पीषा जिसकी पतियाँ छुने से तिकुत्कर बह हो जाती है, और फिर
बोधी देर में धीरे धीरे फैलती है। छुई-मुई।

वि० प्रायः बहुत लज्जा करनेवाला। लज्जाशील।

लज्जावन—वि० [हिं लज्जाना=लज्जित करना] लज्जित करनेवाला।

लज्जावनहार—पु० [हिं लज्जावन] लज्जित करनेवाला।

लज्जावना—वि० [हिं लज्जाना] १. लज्जने या लज्जित करनेवाला।
लज्जानेवाला। लजीला।

सं०=लज्जाना (लज्जित करना)।

लज्जापाना—अ०, सं०=लज्जाना।

लजीब—वि० [अ०, लजीब] (परदा) जो स्वाद में बहुत अच्छा हो।
स्वादित।

लजीला—वि० [हिं लज्ज+ईला (प्रत्यय)] [स्त्री० लजीली]
शरमानेवाला। लज्जाशील।

लज्जुटी—स्त्री० [सं रज्जु, मागं लज्जु] १ कूर्प में पानी खींचने की
ढोटी। २. रस्सी।

लज्जोर—वि०=लजीला।

लज्जाना—वि० [हिं लज्जा] १ लज्जित करनेवाला। २ दे०
'लजीही'।

लजीही—वि० [सं लज्जावह] [स्त्री० लजीही] लज्ज से युक्त।

लज्ज—स्त्री० [सं रज्जु] १ कूर्प से पानी निकालने की रस्सी।
२. नकेल। ३. लगाम।

↑ स्त्री०=लज्जुटी।

लज्जत—स्त्री० [अ० लज्जत] १ लजीब होने की अवस्था या भाव।
२ खाने-पीने की वस्तुओं का स्वाद। जायका।

लज्जतार—वि० [अ० लज्जत+फा० दार] स्वादित। चायकेदार।

लज्जारी—स्त्री० [सं लज्जिर] लज्जाळू जूता। लज्जाशीली।

लज्जा—स्त्री० [सं०/लज्ज (लज्जाना)+अ+टाप्] [वि० लज्जित]
१. अन्तःकरण की वह बुद्धि जिससे स्वभावतः या किसी निन्दनीय
आचरण की भावना के कारण दूसरों के सामने बुद्धियाँ सञ्चलित हो
जाती हैं, चेष्टा मंद पड़ जाती है, मुँह से बात नहीं निकलती, सिर तथा
बुद्धि नीची हो जाती है। लज्ज। शर्म। हुषा।

मुहूह—(किसी की बात की) लज्जा करना=किसी बात की बहाई
की रक्षा का ध्यान करना। मर्यादा का विचार करना। जैसे—अपने
कुल की लज्जा करो।

२. मान। मर्यादा। प्रतिष्ठा। जैसे—ईश्वर ने लज्जा रख ली।

कि० प्र०=बचाना।—रक्षना।

लज्जापद—पुं० [मध्य० सं०] धूपट।

लज्जा-प्रव—वि० [प० तं०] (कृप्य या बात) जिसके कारण उसके
कर्त्ता को लज्जित होना पड़े।

लज्जा-प्रिया—स्त्री० [तु० तं०] केसव के अनुसार मृगा मायिका के
चार भेदों में से एक।

लज्जावृ—पुं० [सं लज्जा+वृत्] लज्जाळू नाम का पीषा। लज्ज-
वृत्ती।

वि० जो बहुत अधिक शरमाता हो। लज्जाशील। जैसे—लज्जाळू
स्त्री।

लज्जावत्—वि० [सं लज्जावत्] जिसे या जिसमें लज्जा का भाव हो।
लजीला।

लज्जावती—स्त्री० [सं लज्जा+वती, म-व,+डीप्] लज्जाळू नाम
का पीषा।

वि० लज्जावान् का स्त्री०।

लज्जावान् (वत्)—वि० [सं लज्जा+मानुप्, म-व] [स्त्री० लज्जा-
वती] जिसे अधिक व प्रायः लज्जा होती हो। शर्मदार। हुषार।

लज्जा-शील—वि० [ब० सं०] (व्यक्ति) जिसे स्वभावतः लज्जा आती
हो।

लज्जा-शून्य—वि० [तु० तं०] लज्जा से रहित। निर्लज्ज।

लज्जा-हीन—वि० [तु० तं०] लज्जाशून्य।

लज्जित—पुं० कृ० [सं लज्जा+इत्] १ किसी प्रकार के अपराध,
दोष या हीन-भावना के फलस्वरूप जो दूसरों के सम्मुख धवराये हुए
बुध्-चाप लडा हो। जिसे लज्जा हुई हो। २. जो अपने दूषित कृत्य
के लिए अपने को अपमानित तथा लज्जा का पात्र समझता हो।

लज्जया—स्त्री०=लज्जा।

लज्जका—पुं० [देश०] एक प्रकार का बौम जो बरमा से आता है।

लज्ज—स्त्री० [सं लृट् या लृट्वा] १. मुँह या गालों पर लटकता हुआ
चिकने तथा परस्पर चिकने हुए सिर के बालों का गुच्छा। बलका।
जुफ।

मुहूह—कण्ट छटकाना=स्त्रियों के सिर के बाल खोलकर इधर-उधर
गिरा या फँसा देना। (किसी के नीचे) लज्ज घनना=किसी की अधी-
नता या दबाव में होना।

२. सिर के उल्लस और एक में गूथे हुए बाल।

स्त्री० [हिं लटन] लटने की किया या भाव।

स्त्री०=लज्ज (ली)।

लज्ज—स्त्री० [हिं लटकना] १ लटकने की किया या भाव। नीचे
की ओर गिरता सा रहने का भाव। झुलना। २. चलने, फिरने आदि
में शरीर के अंगों में पड़नेवाली लज्ज जो स्त्रियों में प्रायः सुन्दर जान
पड़ती है। ३ अंगों की मनोहर चेष्टा। ४ बात-चीत करने या माने
आदि में दिखाई देनेवाली कुमल भाव-मगी। ५ मन का आकस्मिक
उद्वेग। जैसे—बैठे-बैठे मुँह में लज्ज लटक सूती। ६ डालू जमीन।
डाल। (पाठकी के कहार)

वि० (गति) जिसमें लज्ज हो। उदा०—सायलिष्या की लज्ज चाल
गोरे मन में बस गई दे—गीत।

लज्जक—पुं० [हिं लटकना] १. लटकने की किया या भाव।
नीचे की ओर झूलते रहने का भाव। २. लटकती हुई कोई वस्तु।

३. नाक में पहुँचने का एक प्रकार का यंत्र जो झुलसा रहता है। ४. रत्नों का वह पुच्छा जो कम्मो में लगाते थे। ५. पालक्य की एक कस्तुर जिसमें दोनों पैरों के बगुने में डेत फँसकर पिच्छी की लपेटते हुए नीचे की ओर लटकते हैं। ६. कोई ऐसा फालगु पदार्थ या व्यक्ति जो किसी महत्त्वपूर्ण पदार्थ या व्यक्ति के साथ बँधी लगा रहता है या लगा फिरता हो। १. अंबकोश (बाजारू)।
 पुं० १. एक प्रकार का पेड़ जिसमें लाल रंग के फूल लगते हैं। २. उन्नत रंग के फूलों से युग्मित बीज बिन्हीं पानी में पीसने से पेपला रंग निकलता है। इस रंग से प्रायः कपड़े रंगते हैं।

लक्षणा—अ० [सं० लक्ष्ण] १. किसी पदार्थ या व्यक्ति का ऐसी स्थिति में आना या होना कि उसका एक सिरा या अंग किसी ऊँचे आधार में अटका या फँसा हुआ हो और शेष भाग अधर में नीचे की ओर हो। २. किसी सीधी, खड़ी, टिकी या बनी हुई वस्तु का कोई भाग किसी ओर बाँधा झुलना। जैसे—(क) बरामदा आने की ओर कुछ लटक गया है। (ख) बेहोशी में उसका सिर पीछे की ओर लटक गया था। यह—लटक या लटकसी चाल—ऐसी चाल जिसमें मस्ती, हर्ष आदि के कारण आँखी झुलता हुआ चलता हो।

३. किसी काम, बात या व्यक्ति का ऐसी स्थिति में आना—रहना या होना कि उसके संबंध में आवश्यक और उचित निर्णय न हो अथवा अनिष्ट सिद्ध न हो। असमंजस या दुविधा की स्थिति में अपेक्षाया अधिक समय तक पड़ा या बना रहना। जैसे—(क) अदालतों में मुकदमे बरसी लटके रहते हैं। (ख) नीकरों की दरखास्त देने पर उसे महीनी लटके रहना पडा।

संयो० कि०—रहना।
 ४. पदीसा में अनुत्पत्ति होना और इस प्रकार पहलवानों की कला में ही रक्का रहना।

सयो० कि०—जाना।
 वि० [स्त्री० लटकनी] लटकवाली मनोहर अंग—मंगी से युक्त।
 उदा०—बंश जाइ लग ज्यो मिय छवि लटकनी लग।—सूर।

लटकना—स० [हिं० लटकना का प्रे०] लटकने का काम हुसरे से करना।

लटका—पुं० [हिं० लटक] १. ऐसी चाल जिसमें मनोहर लटक हो। २. बात—बीत आदि में दिखाई देनेवाली बनानी चेष्टा या हास्य—भास और स्वरो का उतार—चढ़ाव। जैसे—उन्होंने बड़े लटके से कहा कि हन नही जायेंगे। ३. उपचार, चिकित्सा, तंत्र—मंत्र आदि के क्षेत्र में कोई ऐसी छोटी प्रक्रिया या विधि जिसमें जलवी और सहज में उद्देश्य सिद्ध होता हो। जैसे—उन्हे वैद्यक के ऐसे सैकड़ों लटके धामूम हैं। ४. एक प्रकार का चलता यान। ५. अंबकोश (बाजारू)

लटकना—स० [हिं० लटकना का सं०] १. किसी को लटकाने में प्रयत्न करना। ऐसा काम करना कि कोई या कुछ लटके। जैसे—कहना या हास लटकाना।
 संयो० कि०—देना।—रखना।—लेना।

२. किसी खड़ी वस्तु को किसी ओर झुकाना। मत करना। ३. कोई काम पूरा न करके अनिश्चित रथा में अधिक समय तक पड़ा रहने देना। ४. किसी व्यक्ति को कोई आशा में रखकर उसका उद्देश्य या

कार्य पूरा न करना। असमंजस या दुविधा की स्थिति में रहना।
 संयो० कि०—रखना।

लटकीला—वि० [हिं० लटक+ईला (प्रत्यय०)] [स्त्री० लटकीली] लटकता और लहुराटा हुआ। जैसे—लटकीली चाल।

लटकू—पुं० [देश०] एक प्रकार का पेड़ जिसकी छाल से रंग निकलता है।

लटकीआ—वि० [हिं० लटकाना] जो लटकाया जाता हो। जैसे—लटकीआ कानूस।

लट-बीर—स्त्री० [हिं० लट+बीर] १. अग्रहण में होनेवाला एक प्रकार का धान और उसका चाल। २. अपामार्ग। विचष्टा।

लटना—अ० [सं० लट=हिलना, बोलना] १. परिश्रम, रोग आदि के कारण बहुत ही शिथिल, दुर्बल और प्रायः असमर्थ—ना होना। असवत और असमर्थ होना।
 संयो० कि०—जाना।

२. बेचने या विकल होना।

अ० [सं० लक, लड=ललचाना] १. लेने के लिए लपकना। लाला—मित होना। २. अनुप्राणपूर्वक प्रवृत्त होना। ३. किसी काम या बात में लिप्त या लीन होना।

लट-बट—स्त्री० [हिं० लटपटना] १. लटपटाने की अवस्था या भाव। २. अनुचित या दूषित उद्देश्य की तिद्धि के लिए होनेवाला नयान—या भेल—ओल या संबंध।
 वि०—लटपटा।

लट-बटा—वि० [हिं० लटपटना] [स्त्री० लट-पटी] १. जोषा, मस्ती, मोहन, लापरवाही आदि के कारण इधर—उधर गिरता—पड़ता या लक—खड़ाता हुआ। ठीक और सीधे तरह से न चलता हुआ। जैसे—लटपटी चाल। २. जो ठीक बँधा न रहने के कारण ढीला होकर नीचे की ओर खिसक आया हो। जो घुसत और दुकसत न हो। ढीला—काला।

३. जो ठीक तरह से संवार या सजाकर नहीं, बल्कि अलक्षुषण से बनाया लगाया गया हो। जैसे—लटपटी पाग (पगड़ी)। ४. कपण, बात या वस्तु जिसका ठीक, पूरा और स्पष्ट उच्चारण न हुआ हो। ५. अस्तव्यस्त। अव्यवस्थित। अँक—बड। ६. कयावट, दुर्बलता आदि के कारण बहुत ही शिथिल और हुरा हुआ। ७. (रसेदार का पदार्थ) जो न बहुत गाढ़ा हो और न बहुत पतला। जैसे—लटपटी तरकारी, लटपटा हलुआ। ८. पीजा और मसला हुआ।
 मला—बला।

लटपटाना—स्त्री० [हिं० लटपटाना] १. लटपटाने की क्रिया या भाव। लडखड़ाट। २. आकर्षक और मनोहर गति या चाल।

लटपटाना—अ० [सं० लट=हिलना—बोलना+पट=गिरना] १. दुर्बलता, मथता, लापरवाही आदि के कारण ठीक और सीधे ढंग से न चलकर इधर—उधर झुंके पड़ना। लडखड़ाता। उदा०—उठे धर, पैर उनके लटपटाने में—मिथिरीसाण।
 संयो० कि०—जाना।

२. अपने स्वान पर दुरतापूर्वक जमे, टिके या ठहरे न रहकर इधर—उधर होते रहना। विचलित होना। बिगना। ३. सतसत चूक या भूल जाने के कारण इधर—उधर हो जाना। लडखड़ाता। जैसे—

बोलने में भीम या बलने में पैर लटपटाना। ४ अपने आप को सेभाल न सकने के कारण किसी पर विषय भाव से आसक्त या मोहित होना।

५ किसी काम या बात में लित्त या लीन होना।
लटा—वि० [सं० लट्] [स्त्री० लटी] १. लोत्पु। लपट। २. गिरा हुआ। पतित। ३. लपट और व्यभिचारी। ४. बरमाग। लुम्बा। ५. मुच्छ। हीम। ६. नीच। हेय। ७ खराब। बुरा। ८ बहुत दुबला-पतला या कमजोर।

लटपटा—पु० [हिं० लटपटाना] १. व्यर्थ की चोज। २. व्यर्थ की बातें। ३. आडंबर। बोग। उदा०—बाहर का अनावश्यक लटपटा मुखसे सहा नहीं जाता।—अभेय।
 वि० बहुत ही क्षीय, दुर्बल या हीन।

पह—लट्टे पड़े विष—कठिनाई या कष्ट के दिन।

लटा-पटी—स्त्री० [हिं० लटपटाना] १. लटपटाने की कला या भाव। २. लड़ाई-संग्राम। ३. मूयम-गुराधा। भिड़त।

लटा-मोट—वि०=लोट-मोट।

लटिया—स्त्री० [हिं० लट] मूत आदि का छोटा लच्छा। लच्छी।

मुहा०—लटिया करना=सूत की अटी बनाना।

लटियासल—पु० [हिं० लट+सल] पतसल।

लटी—स्त्री० [हिं० लटा=बुरा] १. बुरी बात। २. झूठी या व्यर्थ की बात। गप।

मुहा०—लटी भारना=गप टुकाना।

३. भक्तिन। ४. वेधया।

लट्टा—पु०=लट्ट।

लट्टक—पु०=लकुट (बूज और फल)।

लट्टी—स्त्री० वे० 'लट्टरी'।

लट्टा—पु०=लट्ट।

लट्टरा—पु० [हिं० लट्ट] कुप्पा।

[पु० [हिं० लट] [स्त्री० लट्टरी] बड़े-बड़े बालों की उलझी हुई लट। जटा।

वि० जिसके सिर पर बड़े-बड़े बालों की लट हो। जटावाला। जैय—लट्टरा जागी।

लट्टरिया—वि० [हिं० लट] लटा अर्थात् लम्बे बालोंवाला।

पु० मूल-अेत या हीमा। (बच्चों का डराने के लिए)।

वि०=लट्टरा।

लट्टरी—स्त्री० [हिं० लट] विशेषत छोटे बच्चों के बालों की लट।

लट्टरा—पु० [देस०] एक प्रकार का पशु जिसकी गर्दन और मुँह वाला, बँने मोलापन लिये हुए भूरे और हुम काली होती है। इसके कई भेद होते हैं। जैसे—मटिया, कजला, साखल।
 पु०=लसोडा।

लट्ट-पट्ट—वि०=लट-पट।

वि०=लप-पथ।

लट्ट—पु० [देस०] १. लकड़ी का एक गोल खिलौना जिसके मध्य भाग में कील जड़ी रहती है तथा जो चारों ओर जाने पर उभर कील पर घूमने या चक्कर लगाने लगता है। २. कोई ऐसा खिलौना जो इस

प्रकार घूमता रहता हो। ३. लाक्षणिक अर्थ में, व्यक्तित्व जिसमें किसी के प्रति उल्टे प्रेम हो तथा जो उसके कारण बावला हो रहा हो।

मुहा०—(किसी पर) लट्टा होना=किसी पर पूरी तरह से मोहित होना।

४. क्षीयो का वह गोलकार उपकरण जिसके अन्दर विजली के द्वारा प्रकाश उत्पन्न होता है। बल्ब।

लट्ट-दार—वि० [हिं० लट्ट+फा० दार] जिस पर या जिसमें लट्ट, के आकार की गोल रचना बनी या लगी हो। जैसे—लट्ट-दार छड़ी, लट्ट-दार पगड़ी (एक विशेष प्रकार की पगड़ी जिसके अगले ऊपरी भाग का कपडा लट्ट, की तरह लपटा हुआ रहता है)।

लट्ट—पु० [सं०यटि, प्रा० लट्टि] बड़ी लाठी। मोटा लम्बा डंडा।
पथ—लट्टबाज, लट्टमार।

मुहा०—(किसी के पीछे) लट्ट लिये फिरना=(क) किसी के साथ इतना बैर या शत्रुता होना कि मिलते ही उसे धायल करके मार डालने की जी चाहता हो। (ख) लाक्षणिक रूप में पूरी तरह से किसी के विपक्ष में या विरुद्ध रहना। जैसे—अबल के पीछे लट्ट लिये फिरना, अर्थात् इतना निर्वृद्धि होना कि मानों बुद्धिमत्ता से बैर डाल रहा हो। वि० बहुत बडा निर्वृद्धि या मूर्ख। जैसे—वह नौकर तो गिरा लट्ट है।

लट्टबाज—वि० [हिं० लट्ट+फा० बाज] [भाव० लट्टबाजी] लाठी से लड़नेवाला। लठेत।

लट्टबाजी—स्त्री० [हिं० लट्ट+फा० बाजी] लाठियों से होनेवाली मार-पीट।

लट्टमार—वि० [हिं० लट्ट+मारना] १. (व्यक्ति) जो बहुत बडा उग्रहृ और उद्ध हो। २ (कथन या बात) जिसमें नम्रता, शास्त्रीनता, सोज्य आदि का पूर्ण अभाव हो।

लट्टर—वि० [हिं० लट्ट] १. कठोर। कडा। २. कर्षा।

लट्टा—पु० [हिं० लट्ट] १. लकड़ी का बहुत बडा मोटा और लंबा टुकडा। बल्ला। शहरांतर। जैसे—लावाल के बीच में लगा हुआ लट्टा, सीमा का सूचक लट्टा। २. धरल। ३. वह ५। फुट लंबा बाल जिससे जमान जागी जाती है।
पथ—लट्टाबाजी। (डे०)

४ लकलाट (कपडा)। (पश्चिम)

लट्टा-बाजी—स्त्री० [हिं० लट्टा+फा० बाजी] लट्टे अर्थात् ५। फुट लंबे बाँस के द्वारा जमान की की जानेवाली नाच-ओख।

लट्ट—पु० [सं०/लट्ट (बालभाव)+बज] १. धोखा। २. एक प्रकार का राम। (संगीत)

लट्टा—पु० [सं० लट्ट+टाप] १. बालों की लट। २. एक प्रकार का करज। ३. कुसुम। ४. पौरा पशु। ५. एक प्रकार का बाजा।

६. चित्र बनाने की सूँची। सुलका। ७. पुरखली। व्यभिचारिणी।

लट—पु०=लट्ट।

लटियाल—वि० [हिं० लाठी+इयल (प्रय०)] (व्यक्ति) जो लाठी धारण किये रहता हो। लठैल।

लटिया—स्त्री० [हिं० लाठी का अल्प०] छोटी लाठी, छड़ी या डंडा।

लड़क—मुं० [हिं० लड़+एत (प्रत्य०)] वह जो लड़ी बलकर लड़ने का ब्यस्त हो। लड़ी की लड़ाई लड़नेवाला। लड़टनावा।

लड़की—स्त्री० [हिं० लड़क] लड़ियों से लड़ने और मार-पीट करने की क्रिया या भाव। लड़क्याणी।

लड़क—स्त्री० [हिं० लड़] १. लड़ी। लड़। २. पंक्ति। कतार। पूं० [?] बूढ़। समूह। जैसे—बोनों या बोरों का लड़क।

लड़क—स्त्री० [हिं० लड़कना] १. लड़ने की क्रिया या भाव। जैसे—पसंगों की लड़क, पहलवानों की लड़क। २. लड़ाई-झगड़ा। ३. विरोधी दलों से होनेवाला मुकाबला या सामना।

लड़कता—वि० [हिं० लड़क] स्त्री० लड़कती १. कुस्ती आदि लड़ने-वाला। जैसे—लड़कता पहलवान। २. लड़ाई-झगड़ा करनेवाला।

लड़—मुं० [सं० यष्टि; प्रा० लट्ठि] स्त्री० अल्प० लड़ी १. सीध में गुथी हुई या एक दूसरे से लगी हुई एक ही प्रकार की वस्तुओं की पंक्ति। माला। जैसे—मोतियों का लड़। सिकड़ी का लड़।

२. रस्ती आदि के रूप में बटा हुआ लंबा बंड। जैसे—तीन लड़ का रस्ता। ३. कतार। पंक्ति। श्रेणी। ४. किसी के साथ बनिष्ठता या दुस्वभावपूर्वक गुथे या मिले हुए होने की अवस्था या भाव।

मुहूँ०—(किसी के साथ) कब मिलना—मेल मिलान करना। मिलाता स्थापित करना। (किसी के) लड़ में रहना—गुट या दल में रहना।

५. दे० 'लड़ी'।

लड़क्याणी—वि०—लड़कता।

लड़क—मुं० हिं० लड़कना का वह संचित रूप जो उसे समस्त पदों के आरम्भ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—लड़क-बुद्धि।

लड़कई—स्त्री०—लड़कपन।

लड़क-बेल—मुं० [हिं० लड़कना+बेल] १. बालकों का खेल। २. लड़कों के खेल की तरह का बहुत ही सहज या साधारण काम।

लड़कपन—मुं० [हिं० लड़कना+पन] १. 'लड़क' होने की अवस्था या भाव। बाल्यावस्था। जैसे—वह लड़कपन से ही बहुत ही चतुर था।

२. लड़कों का-सा आचरण या व्यवहार, जिसमें बुद्धि का परिणाम दिखलाई देता हो। जैसे—सुम इतने बड़े हुए पर अभी तक तुम्हारा लड़कपन नहीं गया।

लड़क-बुद्धि—स्त्री० [हिं० लड़कना+सं० बुद्धि] बालकों की-सी समझ। अपरिपक्व बुद्धि। अज्ञता। नासमझी।

लड़क-बुध—स्त्री०—लड़क बुद्धि।

लड़कना—मुं० [सं० लाकिक] स्त्री० लड़कती १. बोझी अवस्था का अनुभव। वह जिसकी उमर कम हो। वह जो अभी तक युवक न हुआ हो। बालक। २. औरत नर संतान। पुत्र। बेटा।

पद—लड़कना-बाला—संतान। बाल-बच्चा। लड़कों का खेल—बहुत ही छोटा सहज और साधारण काम।

मुहूँ०—लड़कना जनना—नर संतान प्रसव करना।

लड़कई—स्त्री०—लड़कई (लड़कपन)।

लड़कनागिनी—स्त्री०—लड़कपन।

लड़कना-बाला [हिं० लड़कना+सं० बाला] १. लड़कना और लड़की। पुत्र और पुत्री दोनों अथवा इनमें से कोई एक भीलक। संतान। २. कुटुंब। परिवार।

लड़कनी—स्त्री०—लड़कनी।

लड़कनी—स्त्री० [हिं० लड़कना] १. पुत्रव जाति का भावा बच्चा। बच्ची।

बिस्वी—बूढ़ तथा प्रौढ़ स्त्रियों को छोड़कर शेष अवस्थावाली स्त्रियों के लिए भी इसका प्रयोग होता है। जैसे—(क) इस लड़कनी ने एम० ए० पास किया है। (ख) इस लड़कनी के दो बच्चे हैं।

२. पुत्री। जैसे—वह अपनी लड़कनी को साथ लेते गए हैं। ३. अल्पवयस्क या युवा नौकरानी।

लड़कीवाला—मुं० [हिं० लड़की+वाला (प्रत्य०)] १. वह जिसके यहाँ लड़की या लड़कियाँ हों। २. कन्या-पक्ष। 'वर-पक्ष' का विपदा-पक्ष। जैसे—लड़कीवालों से जो सते बनता है वह लड़की को देते हैं।

लड़केवाला—मुं० [हिं०] विवाह-संबंध में वर का पिता या उसका अभिभावक अथवा सरसक। वर-पक्ष।

लड़कौरी (कौरी)—वि० [हिं० लड़कना+कौरी (प्रत्य०)] (स्त्री) जिसकी गोद में बच्चा हो। पुत्रवती।

लड़कड़ाना—अ० [सं० लड़+बोलना+खड़ा] [भाव० लड़कड़ाहट] चलते समय सीधे स्थित न रह सकने के कारण इधर-उधर झुक पड़ना।

चलने में झोंका खाना। झगमगाना। बिगाना। जैसे—रोज चलने में वह (या उसका पैर) लड़कड़ाया और वह गिरते गिरते बचा।

संयो० किं०—जाना।

२. चलते समय झगमगा कर गिरना। झोंका बाकर नीचे आ जाना।

३. कोई काम करते समय किसी अंग का बीच में ठीक तरह से काम न कर सकने के कारण इधर-उधर होना। बिचलित होना। जैसे—(क) बोलने में अजान लड़कड़ाना। (ख) कुछ उठते समय हाथ लड़कड़ाना।

लड़कड़ाहट—स्त्री० [हिं० लड़कड़ाना+आहट (प्रत्य०)] लड़कड़ाने की क्रिया या भाव। झगमगाहट।

लड़कड़ी—स्त्री०—लड़कड़ाहट।

लड़कना—अ० [सं० रण] [भाव० लड़ाई] १. आपस में शारीरिक बल का प्रयोग करते हुए एक दूसरे की बाधक करने, घोट पहुँचाने या मार डालने के उद्देश्य से घात-प्रतिघात करना। लड़ाई करना।

भिड़ना। जैसे—पशुओं या सींगों का आपस में लड़ना। २. आपस में एक दूसरे को गिराने, दबाने, नीचा दिखाने आदि के लिए ऐसी क्रिया, आचरण या व्यवहार करना जिसमें शक्ति का प्रयोग होता हो। जैसे—कचहरी में मुकदमा लड़ना। ३. आर्थिक, बौद्धिक, शारीरिक आदि बलों का प्रयोग करते हुए विपक्षी या विरोधी को परास्त करने या हाराने के लिए उपाय या क्रिया करना। जैसे—(क) शास्त्रार्थ के समय पंडितों का आपस में लड़ना। (ख) अबाई में पहलवानों का लड़ना।

४. अपने पक्ष का स्थापन करने के लिए अशिष्टतापूर्वक बात-चीत या धाव-विधाव करना। झगडना। जैसे—ये लोग जरा-जरा सी बात पर टोखें पों ही घंटों लड़ते रहते हैं।

पद—लड़ना-भिड़ना।

संयो० किं०—जाना।—पड़ना।—बैठना।

५. दो वस्तुओं का श्रेय के साथ एक दूसरे से जा लगना। टकराना। टकराना।

भिड़ना। जैसे—रेलगाड़ियों का लड़ना, मोटर से बेल-

गाड़ी का लड़ना। ६ दो ऐसे अंगो का परस्पर रगड़ खाना जिनमें बस्तुन-कुछ हूरी होगी चाहिए। जैसे—(क) टायर का रजि से लड़ना। (ख) जर्षों का लड़ना। ७ ऐसी स्थिति में आना, पहुँचना या होना जिसमें शर-जीत का प्रश्न हो अथवा निकट विरोधी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता हो। जैसे—(क) किसी काम में आना लड़ना। (ख) किसी बात में मुड़ि लड़ना। (ग) रोजगार में खपए या जूए में बाल लड़ना। ८ ऐसी स्थिति में आना या पहुँचना कि ठीक तरह से बराबरी या सामना हो अथवा किसी प्रकार की अनुकूलता या समता सिद्ध होती हो। जैसे—(क) किसी से अर्लें लड़ना। (ख) एक की बात से दूसरे की बात लड़ना।

मुहा०—हिस्साब लड़ना=(क) जोड़, बाकी आदि का लेखा या हिसाब की ओर पूरा उतरना। (ख) किसी काम या बात के लिए अनुकूल या उपयुक्त अवसर मिलना या सुभीता निकलना।

९. किसी जगदर का आकर काटना या रुक मानना। जैसे—उसे कुत्ता (या बिच्छु) लड़ गया है। (परिषदा)

लड़कड़ा—वि० [बनु०] १. लटपटा। २. ननुसक। ३. डीला-डाला।

लड़कड़गाना—अ०=लड़कड़गाना।

लड़कबापरा—वि० [स्त्री० लड़क-बापरी] लाड़-बाबल।

लड़क-बाबल—वि० [स० लड़=लड़को का-ता+बाबल] [स्त्री० लड़कबाबली] जिसमें अमी लड़कपन और नासमझी की बहुत ती बातें या लक्षण हों। निरा अलुह और मुलें।

लड़करीरा—वि० [स्त्री० लड़-करीरी] लड़कबाबल।

लड़ाई—स्त्री० [हिं० लड़ना+आई (प्रत्य०)] १. आपस में लड़ने की अवस्था, क्रिया या भाव। २. बहु क्रिया या स्थिति जिसमें लोग आपस में मार-पीट करके दूसरी को घायल करने या मार डालने का प्रयत्न करते हैं। मिश्रत। ३. बहु स्थिति जिसमें विरोधी दलो या पक्षों में लोग विशेषतः सशस्त्र सैनिक एक दूसरे को मार डालने या घायल करने का प्रयत्न करते हैं। जैसे—राज्यों के सीमा क्षेत्रों में प्रायः लड़ाइयाँ होती रहती हैं।

बद-लड़ाई का संघात—बहु स्थान जहाँ एकत्र होकर सैनिक युद्ध करते हैं। युद्ध-क्षेत्र। समर-स्थल।

मुहा०—लड़ाई बर जाना=योद्धा या सैनिक के रूप में रणक्षेत्र में युद्ध करने के लिए जाना।

४. ऐसी स्थिति जिसमें आपस में एक दूसरे को दवाने या हटाने का प्रयत्न करते हैं। जैसे—आज-कल दोनों भाई कचहरी की लड़ाई लड़ रहे हैं। ५. ऐसी स्थिति जिसमें आपस में अविष्टापतापूर्ण बाद-बिबाध और कट्टु शब्दों का प्रयोग होता हो। तकरार। दुजगत। जैसे—पचायत (या सभा) में लोग बातें क्या करते थे, लडाईं लड़ते थे। ६. ऐसी स्थिति जिसमें आपस में बहुत अधिक बैमन्य और वैर-विरोध हो, तथा पारस्परिक सामाजिक व्यवहार आदि बन्द हों। जैसे—बचर महीनों से दोनों भाइयों में गहरी लडाईं चल रही है। ७. किसी बस्तु पर अधिकार प्राप्त करने या अपना पक्ष ठीक सिद्ध करने के लिए होने-वाली बाद-बिबाधारम्भ बल-प्रतीक्षा या बल-प्रयोग। जैसे—दुमे तो यही बात नही चलता कि आप लोगों में लडाईं किस बात की है।

बद-लड़ाई-संगड़ा, लड़ाई-मिडाई।

८ दो बस्तुओं का वेग के साथ एक दूसरी से जा लगना। टक्कर। (बच०)

लड़ाका—वि० [हिं० लड़ना+आका (प्रत्य०)] [स्त्री० लड़ाकी]

१. युद्ध में लड़नेवाला योद्धा। सिपाही। २. बात-बात में या प्रायः सबसे लड़ाई-संगड़ा करनेवाला।

लड़ाकू—वि० [हिं० लड़ना] १. युद्ध में व्यवहृत होनेवाला। लडाईं में काम आनेवाला। जैसे—लड़ाकू जहाज। २. दे० 'लड़ाका'।

लड़गाना—स० [हिं० लड़ना का प्रे०] १. किसी को या औदों को मारने-काटने या युद्ध करने में प्रयुक्त करना। २. कलह, लडाईं-संगड़ा या वैर-विरोध में प्रयुक्त करना। जैसे—दोनों भाइयों को नुम्ही लडा रहे हो। ३. पहलुवानों का अपने शिष्यों को अभ्यास कराने के लिए अपने साथ कुश्ती लड़ाने में प्रयुक्त करना। जैसे—बहु पहलुवान रोज अखाड़े में बीसियों लड़कों को लातना जा। ४. कोशल, बल, बुद्धि आदि की परीक्षा करने के लिए दो बीबी या बीबी को किसी प्रकार की प्रतियष्ठा या हौद में प्रयुक्त करना। जैसे—पलग, बटेर, मुरगा या मेड़ा लड़ाना। ५. अपना कोई अंग दूसरे के उसी अंग के सामने लोकर बराबरी करना या उससे सवष रखनेवाली किसी प्रकार की परीक्षा करना। जैसे—अर्लें लड़ाना, पत्रा लड़ाना। ६. विकट परिस्थितियों पार करने के लिए कोशल, चातुरी, बुद्धि आदि का प्रयोग करना। जैसे—(क) तरकीब या युक्ति लड़ाना। (ख) दिमाग या बुद्धि लड़ाना। ७. एक बस्तु को दूसरी से वेग या शक्त के साथ मिलाना। टक्कर खिलाना। मिडाना। ८. दो देखाओं को एक दूसरी से छुडाना या टकराना।

स० [हिं० लाड़+प्यार] लाड़-प्यार करना। दुलार करना। प्रेम से चुपकारना।

लड़ापता—वि० [स्त्री० लड़ायती]—लडैता।

लड़ी—स्त्री० [हिं० लड़ का स्त्री० अम्पा०] १. सीप में गुथी हुई या एक दूसरे से लगी हुई एक ही प्रकार की बस्तुओं की पतित। माला। जैसे—मीतियों की लड़ी। २. बोरी, रस्सी आदि की रचना में उसी कई विभागों तारों आदि में से प्रत्येक जिन्हे बटकर बोरी या रस्सी बनाई जाती है। ३. किसी काम, चीज या बात का ऐसा कम, अष्टकल या सिलसिला जो लगातार कुछ दूर तक चला चले। जैसे—(क) टीली या पह्रायों की लड़ी। (ख) बातों की लड़ी। ४. फूलों की पतकी यही हुई माला। दे० 'लड़'।

लड़तीला—वि०=लातीला।

लड़ता—पु०=लडतू।

लड़ता—वि० [हिं० लाड़+प्यार+ऐता (प्रत्य०)] [स्त्री० लड़ती] १. जिसे बहुत लाड़-प्यार से पाला-पोसा गया हो। लाडला। २. प्यार। मिय। ३. बहुत लाड़-प्यार के कारण जिसका आचरण और व्यवहार कुछ बिगड़ गया हो।

पु० [हिं० लड़ना] योद्धा।

लड़तूक—पु० [स०] लडतू।

लड़तूक—पु० [स० लड़तूक] १. छोटे गेंब के आकार की कोई योलाकार बीबी हुई मिडाई। जैसे—झाए, बूंदी या बेसन का लड़तूक।

बद-उग के लड़तूक—किसी की बीबी में लोकर अपना काम करने के लिए

की जानेवाली युक्ति या साधन। (मध्य युग में ठग लोग दायिनों की जदूरीले या गणीले लड़कू बच्चों से बिलालकर उन्हें बेहोश कर देते थे और तब उनका माल छुट लेते थे। इसी आचार पर यह पद बना है।)
 युक्त—बन के लड़कू बच्चा—बन ही मन यह समझकर बड़ी आधा में प्रवेश होना कि हमें अबतक सुभ फल की प्राप्ति होगी या हमारा अबतक अर्थात् सिद्ध हो जायगा।

२. युक्त संज्ञा का सूत्रक शब्द। (परिहास) जैसे—उन्हें अंधेरी की लड़कू मिला है। ३. किसी प्रकार की अच्छी और लाभदायक बात। जैसे—यहाँ जाने से तुम्हें कौन-सा लड़कू मिल जायगा।

कल्याण—सं० [हि० कल्य=प्यार] कल्य=प्यार या कुशल करना।

कल्या—युं० [हि० लुङकना] [स्त्री० अल्प० लक्ष्मि] बेलगाड़ी।

कल्पिया—स्त्री० [हि० लुङकना, लुङकाना] बेलगाड़ी।

कलत—स्त्री० [अ० इलत] बुरी टेक।

कि० प्र०—पङ्कना।—कलाना।

स्त्री० [हि० लत] 'लत' का वह सन्निभ रूप जो उसे यी० के आरम्भ मे लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—लतबौर, लत-मयन।

† स्त्री० =लता।

कलत-बौर—वि० [हि० लत+फा० बौर कानेवाला] (व्यक्ति) जो प्रायः लत खाता अर्थात् बूड़की-मिठकी आदि सुमते रङ्गने का अभ्यस्त हो गया हो। जो निर्लज्ज बना रङ्कर बुटी आदतों न छोड़ता हो या ठीक तरह से काम न करता हो।

† पुं० =लत-बौर।

कलत-बौरा—युं० [हि० लत+फा० बौर=कानेवाला] [स्त्री० लत-बौरिन] दरवाजे पर पढ़ा हुआ वर पीछने का कपड़ा या पार्षवाज।

पावदान।

वि० =लतबौर।

कलतरी—स्त्री० =कलतरी।

कलतल—वि० =लक्ष्यपथ।

कलत-मयन—स्त्री० [हि० लत+सं० मयन] १. पेंरों से कुचलने या रीचने की क्रिया या भाव। २. लताओं से किसी को भारने की क्रिया या भाव।

कलत—स्त्री० [सं० लता] १. लता। बेल। २. बिचकला मे, लता की आकृति या अंकन।

कलत—युं० [देश०] एक प्रकार का मोटा अन्न। बरबर। रेवेल।

कलती—स्त्री० [हि० लतर] एक प्रकार की बास या पीछा जो खेतों में घटर के साथ बोया जाता है। इसी के बीज खेतारी कहलते हैं, जो पटोब लोग खाते हैं।

† स्त्री० [हि० लत] १. पुरानी बाल की एक तरह की हलकी बुती। २. फटा-पुराना जूता।

कलहा—वि० [हि० कल+हा (मध्य०)] [स्त्री० कलही] (पद्म) जो लत मारता हो। जैसे—कलहा घोड़ा।

कलानी—स्त्री० [सं० ब० सं०] १. कर्कटभृंगी। काकडासीपी।

२. संगीत में कर्णाटक की पद्धति की एक रागिनी।

कला—स्त्री० [सं०√कल् (कलटना)+अप्+टाप्] १. ऐसे विधिष्ट प्रकार के पीपों की संज्ञा जिनके कांड और शाखाएं पतली नरय

तथा लचीली होती हैं तथा जो किसी आचार के सहारे बड़ी होती हैं; और आचार के अभाव में जमीन पर फल जाती हैं। जैसे—अंगूर की लता।

२. कौमल कांड या शाखा। जैसे—पशुलता। ३. सुन्दरी स्त्री।

कला-करंज—युं० [मध्य० सं०] एक प्रकार का करंज या कंजा। कट-करंज।

कला-कर—युं० [मध्य० सं०] नाचने में हाथ हिलाने का एक प्रकार।

कला-कन्दूरी—स्त्री० [मध्य० सं०] दक्षिण भारत में होनेवाला एक प्रकार का पीछा जिनके अंगों का उपयोग बैद्यक मे होता है।

कला-कुञ्ज—युं० [ब० तं०] लताओं से छाया हुआ स्थान।

कला-गूह—युं० [मध्य० सं०] कला-कुञ्ज। (दे०)

कला-माल—युं० [ब० तं०] बहुत-सी लताओं के पीप से बना हुआ जाल; या उसके पीपे का छायादार स्थान।

कला-जिह्व—युं० [ब० सं०] सर्प। साँप।

कलाङ्ग—स्त्री० [हि० कलाङ्गा] १. लताबने की क्रिया या भाव। २. कठिनता। विष्कत। ३. परेशानी। हारानी। ४. दे० 'कलङ्ग'।

कलाङ्गना—सं० [हि० लत] १. लता या पेंरो से कुचलना। रीचना। २. लता से मारना। ३. किसी के छे डूब व्यक्ति के विशिष्ट अंगों पर लड़े होकर बीरे बीरे इस प्रकार चलना कि उसकी पीछा या पकटाकर दूर ही जाय और उसे आराम मिले। ४. तंग या परेशान करना।

कला-सम्भ—युं० [उपमित सं०] १. नारंगी का पेड़। २. ताड़ का पेड़। ३. शाल वृक्ष। साँप।

कला-वता—युं० [सं० लतापत्र] १. लता और पत्ते। पेड़-पत्ते। पेड़ों और पीपों का समूह। २. पीछा, बनस्पतियों आदि की हुरियाली।

३. जड़ी-बूटी। ४. निकम्मी और रदी बीजें।

कला-मयल—युं० [ब० सं०] तरपूज।

कला-मर्षी—स्त्री० [ब० सं०, -डीप] १. तालमूक। २. मधुरिका। मेवकी।

कला-मास—युं० =लता-जाल।

कलाकृत—स्त्री० [अ०] १. लवीक होने की अवस्था या भाव। सूक्ष्मता।

२. कीमलता। ३. उत्तमता। ४. स्वाधिष्टता।

कला-कल—युं० [सं० ब० सं०] पटोल। पाखल।

कला-बंध—युं० [ब० सं०] कामशास्त्र में संयोग का एक आसन। बंध या मुद्रा।

कला-मयन—युं० =लता-कुञ्ज।

कला-मंथ—युं० [मध्य० सं०] छाई हुई लताओं से बना हुआ मंथ या छायादार स्थान।

कला-मणि—युं० [उपमित सं०] प्रवाह। मूंगा।

कला-मण्डि—स्त्री० [उपमित सं०] मंजिष्ठा। मजीठ।

कलाक—युं० [लता-अर्क, ब० सं०] प्याज का पीछा।

कला-कुञ्ज—युं० [उपमित सं०] सरई का पेड़। शालक्री।

कला-कल्प—युं० [लता-आनेष्ट, ब० सं०] १. काम शास्त्र में एक प्रकार का रति-बंध या आसन। २. पुराणानुसार शारङ्गपुरी के पास का एक पर्वत।

वि० लताओं से घिरा हुआ।

लता-साधन—० [वृ० त०] तंत्र या ब्रह्म मार्ग में एक प्रकार की साधना जिसमें प्रधान अधिकरण लता अर्थात् स्त्री होती है।

लतिका—स्त्री० [स० लता+कन्+टाप्, इत्] छोटी लता।
बेल।

लतियार—वि०—लतियार (लतधार)।

लतियार—वि० [हि० लात+यार (प्रत्यय)] १ जो लतियाया जाता हो अथवा जो बिना लतियाये जाने से सीधे रास्ते पर न चलता हो। २ जिसे लात खाने अर्थात् धुइकी-सिइकी मुनने और मार खाने की आदत पड़ गई हो।

लतियाना—स० [हि० लात+आना (प्रत्यय)] १ पंरा में दवाना या रीदना। २ लातो में मानना।

स० [हि० लती] लती या डोरी से लट्टू को लोदना उदा०—
लतियावट्टु जे नौ लट्टुन लो सेतहि पावै।—रत्न०

लतिहर (हल)—वि०—लतियार।

लतीक—वि० [अ०] १. जायकेदार। स्वादिष्ट। २. मजेदार। रस-मय। ३. कोमल। मुलायम। ४. सुगन्ध (भोजन)। ५. उत्तम। बर्णिया।

लतीका—० [अ० लतीफ] १ हास्यपूर्ण छोटी कहानी। नुटकुला।
२ हँसी की अनीसी या विलक्षण बात।

लस—स्त्री०—लता।

लसा—० [स० लसक] १ फटा-पुराना कपड़ा। बीपड़ा। २ कपड़े का टुकड़ा।

पह—कपड़ा-लता।

मुहा०—लसा (या लसे) लेना—किसी की हँसी उखाते हुए उसे बहुत ही उपेक्ष्य सिद्ध करना।

† स्त्री०—लता।

लतिका—स्त्री० [स० लत् (आधात्) क्वन्+कन्+टाप्] गोधा।
गोह (अणु)।

लती—स्त्री० [हि० लात] पशुओं द्वारा लात से किया जानेवाला आघात।

स्त्री० [हि० लता] १ कपड़े की लम्बी धज्जी। २ गूइकी या पतंग के नीचेवाले कोने में बांधी जानेवाली कपड़े की धज्जी। ३. सूत की वह डोरी जो लट्टू नवाने के लिए उस पर लपेटी जाती है। ४ बस में बंधी हुई कपड़े की धज्जी जिसे ऊँचा करके कन्वत्तर उठाने है।

लस-वच—वि० [अ०] १ जो किसी तरल पदार्थ से बहुत अधिक भीग या तर हो गया हो। जैसे—बूत से लथपथ, पत्तियों से लथपथ।
२ कीचड़, धूल, मिट्टी आदि से सना हुआ।

लसाइ—स्त्री० [हि० लषाडना] १ लषाडना की क्रिया या भाव। २ जयनी पर घसीटने की क्रिया। ३ गहरी डाँट-फटकार।

क्रि० प्र०—खाना।—देना।—पड़ना।

४ बुरी तरह से होमिवाकी हार।

क्रि० प्र०—पड़ना।

५. बहुत बड़ी हानि।

लषाडना—स०—लषेडना।

† स०—लषाडना।

लषेडना—स० [देश०] १ अच्छे तथा साफ-सुधरे कपड़ों की धूल-मिट्टी में लेट अथवा खैल-कूद कर बहुत अधिक गया करना। २. किसी को इस प्रकार घसीटना कि उस पर धूल-मिट्टी लिपक जाय। ३. कुपती, लड़ाई आदि में जयनी पर गिरा या घटककर दुर्दशा करना। ४. बहुत बुरी तरह से दिक्, तन या परेशान करना। ५. धुइकी, सिइकी आदि देकर अपमानित करना। भर्त्सना करना।

संयो० क्रि०—डाँटना।

लघन—स्त्री० [हि० लघना] लघने की क्रिया या भाव। लघन।

लघना—अ० [हि० लघना का अ०] [भाव० लघान] १. लघा या भार से युक्त किया जाना। बोल से युक्त होना। २. भारी चीजों का यान या मयारी पर रखा जाना। जैसे—गाडी, नाव या बौल पर सामान लघना। ३. किसी चीज या कई तरह की चीजों के भार से युक्त होना। जैसे—आणव से लघना, गहनों में लघना, बेलगाड़ी का लघना, फलों से लघना। ४ किसी भारी या बजनी चीज का हूसरी चीज के ऊपर होना या रखा जाना। किसी वस्तु के ऊपर बोल के रूप में पड़ना या रखा जाना। जैसे—उसकी पीठ पर दो बच्चे भी लदे हुए थे। ५. सजा पाकर कैद भागने के लिए जेल-खाने जाना। जैसे—दोनों पौर साल-सात भय के तिरा लद गए। ६ मत या मृत होना। पर-सोक विधारना। (उपेक्षा सूचक और वाजाहू) जैसे—खलो आज वह भी लद गये।

संयो० क्रि०—जाना।

लघनी—स्त्री०—लघान।

लघ-लद—अव्य० [अ०] किसी भारी चीज के गिरने के संबंध में, लद लद लब्ध करते हुए। जैसे—आधो म बटुन से पेड़ों के फल लद-लद गिर गये।

लघवाना—स० [हि० लघाना का प्र०] किसी को लघाने में प्रवृत्त करना। लघाने का काम दूसरे से कराना।

लघाई—स्त्री० [हि० लघाना] लघाने की क्रिया, भाव या मज-दूरी।

लघाड—वि० [हि० लघाना] लघानेवाला।

वि०—लघूँ।

०—लघान।

लघान—स्त्री० [हि० लघाना] १ लघाने जाने की क्रिया या भाव। (कोडिग) २ एक बार में लघाया या लाद कर ले जाया जानेवाला सामान।

लघाना—स० [हि० लघाना का प्र०] लघाने का काम दूसरे से कराना।
† ० एक पर एक चीजें लादकर लगाया हुआ डेर।

क्रि० प्र०—लघाना।

लघा-रुंदा—वि० [हि० लघना+रुंदा] बोझ से भर या लघा और जगह जगह में फँसा या रँधा हुआ।

लघाव—० [हि० लघाना] १. लघाने की क्रिया या भाव। २. लघा हुआ बोल या मार। ३. लघा पटने का वह प्रकार जिसमें कपड़ों या परतें नहीं लुथती, केवल ईंध या पत्थर एक दूसरे पर टेढ़े तिरछे लादकर मेहराब के आकार की पाटन की जाती है। कड़े की पाटन। जैसे—इस मकबरे की छत लघाव की है।

लुपनी—वि०—लुप्।

लुपनी—वि० [हि० लुपनी] १. जिस पर केवल बीज लाया जाता हो।
लुपनी—वि० [हि० लुपनी] २. जो सवारी नहीं, बल्कि बोझ होता है। जैसे—लुप्, बोझा, लुप्, नाभ, लुप् बेल।

लुपनी—वि० [हि० लुपनी—आरी होना] [भाव० लुपउपन] १.
आरी भरना होने के कारण जिसमें तेजी या फुरती न हो। जैसे—
लुपनी आरनी, लुपनी बोझा। २. आलसी, निकम्मा और सुस्त।
जैसे—लुपनी नौकर।

लुपनी—यु० [हि० लुपनी+न (प्रत्य०)] लुपनी होने की अवस्था
या भाव।

लुपनी—स० [सं० लुप्य; प्रा० लुप—प्राप्] प्राप्य होता। मिला।
लुपनी—स्त्री०—लुपनी (बीज)।

लुपनी—यु० [दिश०] १. एक प्रकार का पेड़ जिससे पत्राभ में लुपनी निकाली
जाती है। इसका एक भेद 'गौरालुपनी' है। २. शीरा।

लुपनी—स्त्री० [दिश०] १. पान की बारी में की ब्यारी। २. दे०
'लुपनी'।

लुपनी—स्त्री० [अनु०] १. लपने अर्थात् लपकने की क्रिया या भाव।
२. पदार्थों का बहुभुय या स्थिति जिसमें वे बीच-से लपते या लपककर
भुके होते हैं।

क्रि० प्र०—खाना।

३. किसी चमकीली चीज के लपने के कारण रङ्-रङ्क रह उल्लस होने-
वाली चमक।

मुहा०—लुपनी—उक्त प्रकार की स्थिति में जाने के कारण चमक-
करना। लुप लुप करना=(क) रङ्-रङ्कर बीच में लपना या लपकना।
(ख) रङ्-रङ्कर चमक उत्पन्न करना। जैसे—कटार, तलवार या
हीरे का लुप लुप करना।

पु० [दिश०] १. दोनों हृदयों की मिलाकर बनाया हुआ सपुट
जिसमें कोई वस्तु रखी जा सके। अर्जुल। २. उत्तनी वस्तु जितनी
उक्त सपुट में आती हो। जैसे—एक लुप आटा।

पु० [दिश०] एक प्रकार की घास जिसे सुरारी भी कहते हैं।
लुपनी—स्त्री० [हि० लुपनी] लपकने या लपककर चलने की क्रिया
या भाव।

स्त्री० [अनु० लुप से] चमक। दीप्ति। जैसे—महती या रत्नों की
लुपक, बिजली की लुपक।

†स्त्री०—लुपट (आग की)।

लुपनी—अ० [हि० लुपक] १. सहसा बहुत जल्दी, तेजी या फुरती
से आगे बढ़ना। जैसे—(क) चौर को पकड़ने के लिए लोगों का लुप-
करना। (ख) कोई चीज पाने या लेने के लिए किसी का हाथ लुपकना।
२. जल्दी जल्दी पैर उठाते हुए तेजी से आगे बढ़ना या चलना। जैसे—
सब लोग लुपके हुए मेले की तरफ आ रहे थे।

पद—लुपककर=(क) बहुत तेजी या फुरती से। (ख) जल्दी जल्दी
आगे बढ़कर। जैसे—बाज में लुपक कर चिपिया की पकड़
लिया।

स० फुरती से आगे बढ़कर कोई चीज उठा या ले लेना। जैसे—उसने
ऊपर ही ऊपर अँगुठी लुपक ली।

लुपकनी—यु० [हि० लुपकनी+न (प्रत्य०)] लुपकनी कुछ उठा
लेने या किसी प्रकार का स्वार्थ सिद्ध करने की यत्नशीलता।

लुपनी—यु० [हि० लुपनी] १ लपकने की क्रिया या भाव। २
वह जिसे लुपकनी चीजें उठा लेने का अभ्यास और आस हो। उच-
कनी। ३. आवाज और लुपनी आदमी। ४. किसी तरह की बुद्धि
आदत, देव या बान। चकना। लत।

क्रि० प्र०—पड़ना।—लगना।

लुपकनी—स० [हि० लुपनी का स०] किसी की लपकने अर्थात्
फुरती से आगे बढ़ने में प्रवृत्त करना। जैसे—(क) किसी की पकड़ने
के लिए आदमी लुपकनी। (ख) कोई चीज उठाने के लिए हाथ लुप-
कनी।

लुपनी—स्त्री० [हि० लुपनी] १. लपकने की क्रिया या भाव। २.
एक प्रकार की सीधी सिलाई।

लुपनी—स्त्री०—लुपनी।

लुपनी—वि० [अनु० लुप+हि० लुपट] १. स्थिर न रहतेवाला। चंचल।
चपल। २. अचिर और उतावला। ३. तेज। फुरतीला। ४.
बेवंगा और भड़ा। जैसे—लुपनी चाल।

अर्थ० १. बहुत जल्दी या तेजी से। २. बेवंगी और भट्टी तरह से।
स्त्री० ऐसी चंचलतापूर्ण या चपल स्थिति या स्वभाव जिसमें आवश्यक
या उचित से अधिक चालाकी या तेजी हो। लुपनी।

लुपनी—स्त्री० [स० लोप, हि० लोप+ट=लुपट] तेज आग जलने
पर उसमें से निकलकर ऊपर उठनेवाली जलती हुई बायु की लहर।
आग की ली। अग्नि शिखा।

क्रि० प्र०—उठना।—निकलना।

२. तपी हुई बायु या धूँ का रङ्-रङ्कर आनेवाला शोका। जैसे—
जेट में रोपहूँ को आग की लुपट लगती है।

क्रि० प्र०—आना।—लगना।

३. किसी प्रकार की गंध से भरा हुआ बायु का शोका। जैसे—क्या
अच्छी गुलाब की लुपट आ रही है।

†स्त्री०—लुपट।

लुपनी—अ०—लुपनी।

लुपनी—यु० [हि० लुपनी] १. गांधी गीली वस्तु। २. कड़ी। ३.
लुपनी। ४. लेंड। ५. बोझ-बहुत लगाव या सबब।

लुपनी—स०—लुपनी।

†अ०—लुपनी।

†स०—लुपनी।

लुपनी—वि० [हि० लुपनी] [स्त्री० लुपनी] रङ्-रङ्कर लुप-
टनेवाला।
†वि०—रुपनी।

लुपनी—यु० [हि० लुपनी] एक प्रकार की घास जिसके बाल कपड़ों
में लिपटकर फँस जाते हैं।

लुपनी—यु० [स० लुप (कहना)+लुपट—अन] १. मुझ। मुँह।
२. कहना या बोलना। भाषण।

स्त्री० [हि० लुपनी] लपने की क्रिया या भाव। लप।

लुपनी—अ० [अनु० लुप-लप] १. जैत या लकीली लुपनी का एक छोटा

पकड़कर जोर से हिलाने जाने से द्यार-उधर मुकना। शोक के साथ द्यार-उधर लचना। २. मुकना या लचना।

संयो० किं०—जाना।

३ हैरान होना।

मुहा०—लपना-सपना=परेशान होना।

† अ०=लपकना।

लपलपाना—अ० [अनु० लप लप] लप लप शब्द करना।

अ० [हि० लपना] १ किसी लचीली चीज के हिलाने या हिलाने जाने पर उसके किसी अंग या अंग का बीच से थोड़ा मुकना। बार-बार या रह-रहकर लचकना या लचना। जैसे—छड़ी तलवार या बेल का लपलपाना। २ किसी लचीली चीज का द्यार-उधर हिलाना-बकना या किसी वस्तु के अन्दर से बार-बार निकलना। जैसे—साँप की जीभ का लपलपाना।

मुहा०—(किसी की) जीभ लपलपाना=कुछ कहने, बाने आदि की प्रथम उत्पत्तिका या प्रवृत्ति होना। बहुत अधिक लिखा या लोभ लोभना। २ किसी लचीली चीज की पकड़कर इस प्रकार हिलाना कि उसका कुछ अंग रह-रहकर मुँके या लचे, और फलत उसमें से कुछ चमक निकले। जैसे—(क) भाँजने के समय तलवार लपलपाना। (ख) किसी को मारने से पहले बेल लपलपाना। (ग) साँप का अपनी जीभ लपलपाना।

लपलपाहट—स्त्री० [हि० लपलपाना+आहट (प्रत्य०)] १. लपलपाने की क्रिया या भाव। लचीली छड़ी या टहनियाँ आदि का शोक के साथ द्यार-उधर लचकना। २ उभर प्रकार की क्रिया के कारण उत्पन्न होनेवाली चमक। जैसे—तलवार की लपलपाहट से आँसू चौंधि-धाना।

लपसी—स्त्री० [स० लसिका] १. एक प्रकार का पतला हलुआ। २. उभर प्रकार का वह लप जिसमें पीली के पीले के स्थान पर नमक का पीला मिलाया गया हो। ३. कोई गाँव तरल पदार्थ।

लपवा—पु० [दिव०] पान की बेल में लगनेवाली गेरुई (रोग)।

लपाना—स० [अनु० लपलप] १. किसी चीज की लपने में प्रवृत्त करना। २. लचीली छड़ी आदि की शोक के साथ द्यार-उधर लचना। ३. आने की ओर बढ़ाना या सरकाना।

लपित—पु० क० [स०√लप (कहना)+पत्] कहा या बोला हुआ। उभर। कथित।

लपेट—स्त्री० [हि० लपेटना] १ लपेटने की क्रिया या भाव। २. लपेटे हुए होने की अवस्था या भाव। ३ लपेटनेवाली चीज का हर बार का फेर या न्यून। ४. वह चिह्न या निशान जो लपेटे हुए चीज के उस अंग पर पड़ता है, जहाँ से वह किसी ओर मुड़ती है। लह या परत में सिरे पर पढ़नेवाला थोड़ा या उसका निशान। ५. ऐठन। बल। शरीर। ६. किसी मोटी लची वस्तु की मोटाई के चारों ओर का निशान। बेंटा। परिधि। जैसे—इस लपेट की लपेट ३ फुट है। ६. किसी प्रकार की उलझन, घुमाव-फिराव या चक्कर की ऐसी स्थिति जिसमें कुछ या कोई आकर उलझता या फँसता हो। जैसे—(क) वह भी इस मुकदमे की लपेट में आ गए है (ख) उनकी बातों

की लपेट में मत आना।

पद—लपेट-लपेट।

७. कुत्ती का एक पेश।

लपेट-लपेट—स्त्री० [हि० लपेटना-लपेटना] ऐसी स्थिति जिसके फल-स्वरूप कोई आकर उलझता या फँसता हो और उस पर किसी प्रकार का आघात होता हो। जैसे—उत्पत्ता (या उपद्रव) की लपेट-लपेट में बहुत से लोग आ गए थे।

लपेटन—स्त्री० [हि० लपेटना] १. लपेटने की क्रिया या भाव। लपेट। २ लपेटने के फल-स्वरूप पढ़नेवाला फेरा या बल। ३. उलझन। ४. ऐठन।

पु० १ वह वस्तु जिसे किसी वस्तु के चारों ओर घुमा या लपेटकर बाँधते हैं। २ बेलन। ३ पैरो में उलझनेवाली चीज। (पालकी के बहार) ४. जुलाही का तुर या बेलन नामक उपकरण।

लपेटना—स० [स० लपेट] १. कोई पतली और लची चीज किसी दूसरी चीज के चारों ओर घुमाकर इस प्रकार बाँधना कि उस दूसरी चीज का कुछ या सारा तल ढक जाय। बेठिन करना। जैसे—(क) खम पर कपड़ा लपेटना। (ख) बँस पर डोरी या रस्सी लपेटना। २. मोँडे हुए कपड़े, कागज आदि के अन्दर करके बँद करना। कपड़े आदि के अन्दर बाँधना। जैसे—मुलाक लपेटकर रख दो। ३. डोरी, सूत या कपड़े की सी फँसी हुई वस्तु को तह पर तह मोड़ते या घुमाते हुए समुचित करना। समेटना। जैसे—तागा लपेटकर उसकी गोली या लच्छी बनाता। ४ किसी को चारों ओर से घेरकर इस प्रकार कसना या जकड़ना कि वह कुछ कर न सके या बेवश हो जाय। जैसे—उसे ऐसा लपेटो कि वह भी याद करे। ५ लच्छी तरह पकड़ या बाँधकर अपने वश में करना। ६ उलझन, झगड़ या बल्ले में डालना या फँसाना। जैसे—उसने इस मामले में कोई आदिमियों को लपेटा है। ७ किसी तह पर कोई चीज पीतना या लगाना। जैसे—सारे शरीर में कीचड़ या अभूत लपेटना।

संयो० किं०—डालना।—देना।—लेना।

लपेटनी—स्त्री० [हि० लपेटना] जुलाही की लपेटन नाम की लकड़ी। लपेटना। तुर।

लपेटना—वि० [हि० लपेटना] १. जो लपेटा गया हो या लपेटकर बनाया गया हो। २. जो लपेटा जा सकता हो। ३. जिसके ऊपर कुछ लपेटा गया हो। ४. जितमें बहुत कुछ घुमाव-फिराव या लपेट हो। चक्करदार। जैसे—लपेटवी बात-चीत।

लपेटा—पु०=लपेट।

लपेटुआँ—वि०=लपेटवाँ।

लपेत—पु० [स०] बाल रोगों के जन्मदाता एक देवता। (शरकर गुरु सूत्र) =धपपद।

लपप—पु०=धपपद।

लप्या—पु० [दिव०] १. छत में लकड़ी हुई वह लकड़ी जिसमें कपड़े की बहुत सी रस्सियाँ बाँधी जाती हैं। २. एक प्रकार का मोटा। (अरी का)।

पु०=लप।

कनिष्का—स्त्री० [सं०] लघवी।
कनका—वि० [फा० लक्ष्म] १. संपद। व्यवहारी। २. बहुत बड़ा परिवर्द्धनी या दुष्परिच। परत कुमारी और लुब्ध का हीन।
 ३. बहुत बड़ा वदमाध या सुधमा। घोड़ेवा।
कनक—मु० [अं० लेफिन्ट] १. सेना का एक छोटा अफसर। २. किसी का अधीनत्व कर्मचारी या कार्यकर्ता।
कनका—अ०=लघना।
कनक—पु० [अं० लक्ष्म] भाषा में प्रयुक्त होनेवाला सार्धक लब्ध।
कनकी—वि० [अं० लक्ष्मी] लक्ष्म या शब्द से संबंध रखनेवाला।
 शाब्दिक। जैसे—लक्ष्मी माने=लक्ष्मार्थ।
कनकाज—वि० [अं० लक्ष्मकाज] १. श्वर लक्ष्मदेवता बाते करनेवाला।
 बातूनी। २. बहुत बड़-बड़कर बाते बनाने या शींग हुकनेवाला।
कनकाजी—स्त्री० [अं०] १. लक्ष्मकाज होने की अवस्था या भाव।
 बनवालता। २. बात-चीत में होनेवाला आडबडपूर्ण शब्दावली का प्रयोग।
कन—पु० [फा०] १. ओष्ठ। ओंठ। होठ। २. होठ पर की मूक।
 जैसे—लज लगाकर लिफाफा मन्व करना अच्छा नहीं। ३. जलाशय आदि का किनारा या तट। ४. बरतन आदि में ऊपरवाले सिंहे का घेरा।
 पब—लक्ष्मालम्।
 ५. किसी चीज का किनारा या सिरा। जैसे—लजे सड़क—सड़क के ठीक किनारे पर।
कनकाना—अ०=उलसना।
कनक-बोली—स्त्री० [हिं० लबाइ+पुंय] १. झूठ-पूठ का हल्का।
 अर्थ का गुल-गपाड़ा। २. वास्तविक बात को दबाकर झूठ-झूठ इधर-उधर की की जानेवाली बातें। बड़ी-बड़ी बातें बनाकर असल काम या बात टालना।
 कि० प्र०—मचाना।
 ३. उक्त प्रकार की बातें करनेवाला व्यक्ति। (परिचय) ४. कुम्ह-बस्त्रा। ५. अन्याय। अंधेरा।
कनकाना—अ० [हिं० लबाइ] १ झूठ बोलना। लबाड़ी करना। २. मप हुकना।
 † अ०, सं०=लिबड़ना।
कनका—पुं०=लखेदा।
कनकी—स्त्री० [वेग०] १. वह हाँडी जिसमें ताड़ के पेड़ का रस चुनाया जाता है। ताड़ी चुनाने की हाँडी। २. बड़ी बोड़ी।
कनका—वि० [स्त्री० लखटी] झूठ बोलनेवाला।
कनकली—स्त्री०=लिबलिषी।
कनकलका—वि० [हिं० लक्ष्मा+लहकना] [स्त्री० लजलहकी] १. किसी वस्तु की देखते ही उसकी ओर लपकनेवाला। अभीर और लालची। २. अकारण और अर्थमें हुर चीज इधर से उधर करनेवाला।
कनकलजा—पुं० [फा० कन+लहक] उन्मत्तपण करने या बोलने का शंग।
कनकड—वि० [सं० लयन=कनका] १. झूठा। मिथ्यावादी। २. गप्पी।
कनकिया—वि०=लबाइ।

कनकाड़ी—स्त्री० [हिं० लबाइ] १. अर्थ की कही जानेवाली झूठी बातें।
 २. गप।
 वि०=लबाइ।
कनका—पुं० [फा० लबाइ] १. कईदार बोंगा। दगला। २. बंगरके की तरह का एक प्रकार का भारी और कंठा पहनावा। अवा।
 बोंगा।
कनका—वि० [अं०] बालित। बेमेल। घुड़।
 पुं० १. शारणाग। शारतः। २. गूदा। मगज।
कनका—वि०=कनकाइ।
कनकारी—स्त्री०=कनकाडी।
कनका—वि० [अं०] लज अर्थात् किनारे या किनारों तक भरा हुआ।
 जैसे—कनकाल भरा हुआ तालाब।
कनकासी—वि०=लबाइ।
 स्त्री०=कनकाडी।
कनकी—स्त्री०=राव (गूड़ का घीरा)।
कनके—पुं० [सं० वेद का अणु०] १. ऐसी बात जो वेद शास्त्रों से सम्मत न हो, बल्कि उनके विरुद्ध भले ही हो। २. फालतू और अर्थमें की बात।
 वि० वेद विरुद्ध बातें कहनेवाला।
कनका—पुं० [सं० लघुङ] [स्त्री० अल्पा० लखेदी] मोटा तथा बड़ा शंका।
कनकी—स्त्री० [हिं० लखेइ] लखेइ के रूप में होनेवाला आचरण, रूप या व्यवहार।
कनका—पुं०=लखेदा।
कनका—पुं० क० [सं०√लम् (पाना)+कत] १. मिला या प्राप्त किया हुआ। २. उपाजित किया या कमाया हुआ। ३. भाग करने से निकला हुआ। शेषफल। भाग फल। ४. जिसने पाया या प्राप्त किया है। घी० ल० का अर्थ में। जैसे—लब्ध-काम, लब्ध कीर्ति आदि।
 पुं० दस प्रकार के दासों में से एक प्रकार का दास। (स्मृति)
लब्ध-प्रतिष्ठा—वि० [अं० सं०] जिसने किसी कार्य या श्रेय में अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त की हो। प्रतिष्ठित। सम्मानित।
लब्ध-प्रसादन—पुं० [अं० तं०] मिले हुए धन का सत्यापन की दिया जानेवाला दान। (मनु०)
लब्ध-लक्ष—पुं० [अं० सं०] १. जिसने ठीक निशाने पर बार किया हो। २. जिते अभिप्रेत वस्तु प्राप्त हो गई हो।
लब्ध-वर्ध—पुं० [सं०] वह जिसने बर्णों (अक्षरों और शब्दों) का मान प्राप्त किया हो, अर्थात् पठित।
लब्धव्य—वि० [सं०√लम् (प्राप्ति)+तव्य] प्राप्त किये जाने के योग्य।
लब्धाक—पुं० [लब्ध-अक, कर्म० सं०] भागफल। (वे०)
लब्धा (लु)—वि० [सं०√लम् (पाना)+लु] प्राप्त करनेवाला।
 स्त्री०=विप्रलब्धा (नायिका)।
लब्धि—स्त्री० [सं०√लम् (पाना)+लित्तु] १. लब्ध होने की अवस्था या भाव। प्राप्ति। २. भागफल। लब्धाक।

समान—पु० [सं०/कम् (प्राप्ति) + क्यृट्—अन] [वि० लभ्य, लब्ध] प्राप्त करना। हासिल करना। पाना।

लसत्—पु० [सं०/लम् (प्राप्ति) + असत्] १ चाड़ के पिछले पैर बाँधने की रस्ती। पिछाड़ी। २. धन। ३ मगन। याचक।

लभ्य—वि० [सं०/लभ् (प्राप्ति) + यत्] १ जो पाया जा सके या मिल सके। २. उचित। स्वयं-संपत्।

लभ्यात्—पु० [सं० लभ्य-अंत, कर्त्त० सं०] आधिक लाभ या उसका अंश। मूनाफा। लाभ। (प्रसिद्ध)

लभ—वि० [हिं० लभा] लभा का उपसर्ग की तरह प्रयुक्त बहु संपिप्त रूप जो उसे यी० शब्दों के आरम्भ में लगने पर प्राप्त होता है। जैसे—लभ-छट, लभ-बैंक, लभ-तडग।

लभई—स्त्री० [देवा०] एक तरह की मधुमक्खी।

लभक—पु० [सं०/रम् (क्रीडा) + क्वृत्—अक, र-ल] १ जार। उपपत्ति। २ लपट। ध्वनिचारी।

स्त्री० [हिं० लमकना] लमकने की क्रिया या भाव।

लमकना—अ० [हिं० लभा] लवाई के बल नीचे की ओर लटकना। (पश्चिम)

↑ अ० = लपकना।

लभ-भाजा—पु० [हिं० लभ-+गज] इकतारा नाम का बाजा।

लभ-गिरवा—पु० [हिं० लभ + ग्रा० गिर्द] एक तरह की मोटी रेशी की नारियल की जटा रेलने के काम आती है।

लभ-गोशा—वि० [हिं० लभ + गोड = वास] जिसकी टांगें लम्बी हो।

लभ-धिचा—वि० [हिं० लभ + धीच = धर्दन] स्त्री० लामधिची] लंबी गर्दनवाला।

लभचा—पु० [देवा०] एक प्रकार की बरसाती घास।

लभ-चिता—पु० [हिं० लभ (लभा) + चित्ती] तेंगुर की तरह का एक प्रकार का पहाड़ी हिंसक पशु जिसके शरीर पर बड़ी बड़ी काली चित्तियों के धब्बे होते हैं।

लभ-छट—पु० [हिं० लभ + छट] १. बरछा। भाला। २ वजूत उड़ाने की लम्पी। ३ पुरानी चाल की लम्बी बहूक।

वि० पतला और लंबा।

लभछुआ—वि० [हिं० लभ] स्त्री० लभछुई] साधारण म मुहुर अधिक लम्बा। जैसे—गोरी रंगत, बड़ी बड़ी आँखें, लभछुई नाक। (लखनऊ)

लभकम्प—पु० [सं० लभकम्प] कुग की तरह की एक मुगधिन घास जो औषध के रूप में काम आती है। लामक।

लभकजुक—पु० लभकजुक।

लभ-रंगा—वि० [हिं० लभ + रंगा] स्त्री० लभरंगी] लंबी टाँगों-वाला। जैसे—लभटगी घोषित।

पु० सरस पक्षी।

लभटगी—वि० [हिं० लभ + टेंक] बहुत अधिक लंबा।

पु० लभ डेग।

लभ-डेंक—पु० [हिं० लभ + डेंक (पक्षी)] सरस की तरह का पर उससे भी बड़ा एक प्रकार का पक्षी। हर-गीला।

लभ-तडग—वि० [हिं० लभा + तड + अग] स्त्री० [लभतडगी]

बहुत लंबा या अँबा और हूट्ट-पुष्ट। जैसे—लभतडग आधमी।

लभती—स्त्री० [हिं० लभ] कुछ दूर का स्थान। (पूरब)

लभधार—पु० [हिं० लभ + धार] कुदाल के मुँह पर का टेढ़ा भाग।

लभधी—पु० [हिं० समधी का अनु०] १. संबंध के विचार से समधी का पिता। २ समधी के विचार से समधी का दूसरा समधी।

लभहा—पु० [अ० लभह] निनेष। पल। मग।

लभाना—सं० [हिं० लभ + आना (प्रय०)] १ लंबा करना। २ दूर तक आगे बढ़ाना।

अ० बहुत आगे या दूर निकल जाना।

लभ—पु० [सं०/की (मिलना) + अक्] १ एक पदार्थ का दूसरे में मिलकर उसमें पूरी तरह से समा जाना। अपनी सत्ता पक्की हुई रूंद में बिलीन होना। बिलय। २ एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ के साथ मिलना या संपर्कित होना। ३. कार्य का आगे कारण में समाहित होना या फिर कारण के रूप में परिणत होना। ४. दार्शनिक क्षेत्र में, बहु स्थिति जिसमें वृष्टि की सभी चीजों का समाप्त होकर अत्यंत प्रकृति के रूप में परिणत या बिलीन होना। प्रलय। ५ किसी पदार्थ का होनेवाला लोप या विनाश। ६ नियत समय तक किसी अधिकार या सुभीते का उपयोग न करने के कारण उस अधिकार या सुभीते के फल-भीष से वंचित होने का भाव या स्थिति। (कैलस) ७. वित्त की बुतियों को सब ओर से हटाकर एक ओर प्रवृत्त होना। एकाग्र भाव से किसी ध्यान में डूबना। ८ उद्धार। स्थित। ९ मुच्छी।

बेहोशी। १० छिपना। लुकना। ११ पाटा जिससे खेत के डेले तोड़कर मिट्टी बराबर करते हैं। (बैंकिंग)

स्त्री० [सं० लय से लग-विपर्यय] १ कविता और गीत में गति या प्रवाह और गति या विराम पर आश्रित बहु लत्व जो नियमित रूप से होनेवाले उच्चार-चढ़ाव तथा आभिव्यक्ति पुनरावृत्तियों से उत्पन्न होता और कृतियों (कविता, पाठ, गायन, नृत्य आदि) में विशेष प्रकार की कीमती, माधुर्य और लावण्य का आधिर्भाव करता है। गति सामाज्य। (रिदियम)

विशेष—तात्विक दृष्टि में इसका मूख्य सबंध उस काल से है जो कविताओं, गीतों, मन्त्रों आदि के स-स्वर उच्चारण में लगाते हैं, और इसी को नियंत्रित या सयत रखने के लिए सर्गीत में ताल से सहायता भी जाती है।

२ शास्त्रीय संगीत में लगनेवाले समय के विचार से जल्दी, धीरे या गहन में गाने का डग या प्रकार जिसके ये तीन बड़े कहे गये हैं—विलंबित, मध्य और द्रुत। (दे० ये शब्द) ३. गीत में स्वरो के उच्चारण की दृष्टि में गाने का प्रकार। जैसे—बहुत द्रुत मधुर लय में गाता (या बजाता) है।

मुहा०—लय बेचना—गाने-बजाने, नाचने आदि में लय का ठीक और पूरा ध्यान रखना।

स्त्री० = ली (लगन) उदा०—भन ते सकल बासना आमी। कैवल रामचरण लय लागी।—मुलसी।

कि० प्र०—लगना।

लभक—वि० [सं० लय] १ लय से संबंध रखनेवाला। २. सर्गीत

की क्य के रूप में अथवा उसके ङ पर होनेवाला। (रिपिमकक)
जैसे—भाड़ी या हूबन का ककक स्थान।

ककक—पु० [सं०√की+स्युट्—अन] १. सय होने की अवस्था,
फिमा या भाव। २. विषाम। ३. सांति। ४. बाढ़ या आन्ध्र में
होने की फिमां या भाव। ५. आन्ध्र वा विषाम का स्थान।

कककीमां—वि०=कककीन।

कककक—पु० [सं० ककक-अर्क, मध्य० सं०] प्रलय काल का
सूर्य।

कककक—वि०=ककक।

कक—स्त्री०=कक (कड़ी)। उदा०—टेड़ी पाग, कक ककके।—जीरी।

कककई—स्त्री० [हि० ककका=ककका] १. कककई। कककपन।
३ ककको का-सा आन्ध्रय, व्यवहार या स्वभाव।

कककना—अ० [सं० ककन=ककना] १. कककना। २. ककना।
३. कितक कर नीचे आना।

संयो० कि०—जाना।—जाना।—पड़ना।

कककनां—पु०=ककका।

कककानां—स० [हि० कककना] किसी को कककने में प्रयुक्त
करना।

कककनीनां—स्त्री०=कककी।

ककककनी—स्त्री०=ककककाहट।

ककककनां—अ०=ककककना।

ककक—पु० [हि० ककजना] सितार के छः तारों में से चौथवां तार जो
पीतल का होता है।

कककना—अ० [फा० ककक=कक] १. कौपना। कककना। २. ककक-
उपर हिलना।

संयो० कि०—उठना।—जाना।—पड़ना।
३. कक जाना। दहल जाना।

कककनी—वि० [फा०] कौपना हुआ। कौपित।

पु० [फा० कक] १ कौपकी। कककनाहट। २. कौपना। ककक।
३. कौडी ककक आने पर रोगी ककक-पर कौपने
लगता है।

कककक—स्त्री० [फा० कककक] कौपकी। कककनाहट।

कककक—वि० [हि० ककक+अकनना] १. कककता हुआ। २. ककक
अधिक। प्रचुर।

कककनां—अ०=कककना।

ककक—स्त्री० [हि० ककना] ककने की फिमा, ङ या भाव। कककई।

कककई—स्त्री०=कककई।

कककनां—वि०=ककका।

कककई—स्त्री०=कककई।

कककक—स्त्री० [हि० ककका+कक=ककक] १. ककको
का-सा खेल। २. खेलवाड़।

कककना—पु० [स्त्री० कककनी, कककी] =ककका।

ककककई—स्त्री०=कककई।

ककककनी—स्त्री०=कककी।

ककककनी—स्त्री०=कककी।

ककक—स्त्री०=कककी।

ककककना—स्त्री० [सं०√कक+शात्+कीप्+कन्+टाप्, ह्रस्व] १.
नामि तक कककती हुई माला या हार। २. गौह नामक जंतु।

ककक—स्त्री०=कककता।

स्त्री० [दिसा०] १. कौडी बात। २. बोझा देने के लिए कही जाने-
वाली बात। जैसे—तुम उनकी कक में आकर बस रुपये पैसा बैठे।

कककक—स्त्री० [हि० कककना] कककने की अवस्था, पुण या भाव।

ककककना—अ० [दिसा०] १. किसी वस्तु को पाने की गहरी इच्छा या
काछता करना। २. अभिलाषा। चाह से भरा हुआ होना।

ककककक—स्त्री० [हि० ककककना] १. ककककने की फिमा या भाव।
२. प्रतियोगिता, कककई आदि के लिए किसी का फिमा जानेवाला
आह्वान या फिमा जानेवाला आमन्त्रण। यह कककना कि आभी सामना
करके देख लो। ३. किसी को किसी पर आक्रमण करने के लिए दिया
जानेवाला प्रोत्साहन या बढ़ावा।

कककककना—स० [दिसा०] १. प्रतियोगिता, कककई आदि के लिए
किसी को आमन्त्रित या आहूत करना। २. किसी को किसी से ककने
के लिए बढ़ावा देना।

कककककित—वि० [हि० ककक] गहरी चाह से भरा हुआ। (अतिव्य-
थ)।

ककककना—अ० [हि० कककक+ना (प्रत्य०)] १ ककक या कौम
से प्रसन्न होना। २. किसी दूसरे की अच्छी चीज देखकर उसे प्राप्त
करने के मोह से अधीर होना। ३. किसी पर आसक्त, मोहित या
कुम्भ होना।

ककककनां—स० [हि० कककना] १. ऐसा काम करना जिससे किसी के
मन में किसी काम, चीज या बात की प्राप्ति या सिद्धि का ककक उत्पन्न
हो। २. कौड़ी चीज दिखाकर किसी के मन में लोभ का भाव जागृत
करना तथा उसे वह चीज न देकर अधीर या उत्सुक करना। ३. अपने
स्व-रंग, हाव-भाव से किसी के मन में अनुराग या मोह उत्पन्न करना।
† अ०=कककना।

कककककई—वि० [हि० ककक+ओहो (प्रत्य०)] [स्त्री० कककककई]
ककक से भरा हुआ। कककनाया हुआ। जिससे प्रबल कककना प्रकट
हो।

कककककई—वि० [हि० ककक+ओहो=छाया] जिसमें हल्के ककक रंग
की ककक हो। उदा०—कककककई सूखे पत्ते की समानता पर लेता
है।—महादेवी।

कककककक—वि० [सं० ककककक] १. जीम लपलपाता हुआ।
२. मयंकटा. जीपण।
पु० १. कुसा। २. अंट।

ककककना—पु० [दिसा०] आहूत में तीयार होनेवाला एक प्रकार का
धान।

ककक—पु० [सं०√कक (चाहना)+स्युट्—अन] १. प्याप बालक।
दुलारा लडका। २. बालक। कककना। ३. प्रेमी का प्रेम सूचक
सम्बोधन। ४. केलि। कौडी। ५. साक्षू का पेड़। साल वृक्ष।
६. चिरीजी का पेड़। पयार।

कककना—स्त्री० [सं०√कक+णिप्+स्युट्—अन,+टाप्] १. सुन्दर
स्त्री। कामिनी। २. जिह्वा। जीम। ३. बीड हठ-योग में इडा

माड़ी का एक नाम। ४. एक प्रकार का बर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में भाषा, भाषण और बी सगण होते हैं।

† गुं 'ललन' का संबोधन का कबाला रूप। हे ललन।

सलना-बन्ध—गुं [सं उपनिषत् सं०] परवर्ती हठ-भाषिणी के अनुसार शरीर के अन्दर का एक कमल या चक्र। (अष्ट कमल और बट्ट चक्र से निम्न)

सलना-धिय—गुं [सं कर्म० सं०] कर्बब (वेध)।

सलमिका—स्त्री० [सं ललना+कन्+टाप्, इत्थ] ललना। स्त्री।

सलनी—स्त्री० [सं नलनी] १ बौंस की नली या पीर। २. पतली नली।

सल-मूर्हा—वि० [हिं ललन+मूर्हा] लाल मूर्हावाला।

गुं बन्दर।

सला—गुं [हिं लाल] [स्त्री० लली] हिं लाल का सम्बोधन कारकवाला रूप। उवा०—लला, फिर आइही बोलत होरी।—पचाकर। २. प्यारी का डुगला लडका। ३. बालक। लडका।

४. प्रिय अथवा प्रेमी के लिए प्रेम-मुखक सम्बोधन।

सलाह—स्त्री० [हिं लाल (प्रत्य०)] लाली। लालिमा।

सलाट—गुं [सं लल/अट् (गति)+अण्] १ भाल। माथा।

२. किस्मत। तकदीर। भाग्य। ३. किस्मत में लिखी हुई बात। भाग्य का लेख।

सलाट-रेखा—स्त्री० [सं ष० तं०] कपाल या भाग्य का लेख जो मस्तक पर बह्ना का किया हुआ चिह्न माना जाता है। भाग्य-लेख।

सलाटाख—गुं [सं ललाट-अभि, ब० सं०,+षच्] शिष्य, जिनका एक तीसरा नेत्र ललाट पर माना जाता है।

सलाटाकी—स्त्री० [सं ललाटाक्ष+कीष्] दुर्गा।

सलाटिका—स्त्री० [सं ललाट+कन्+टाप्, इत्थ] १. माथे पर बांधने का टीका नामक गहना। २. टीका। तिलक।

सलाद्य—वि० [सं ललाट+पत्] १ ललाट का। २. ललाट के लिए प्रयुक्त।

सलामा—अ० [हिं लाल] लाली पकड़ना। लाल रंग से युक्त होना।

उदा०—सलामी साँस के नाम की अकेली तारिका अब नहीं कहला।

—अमेय।

सं लाल रंग में रंगना।

† अ०—ललचाना।

† सं०—ललचाना।

सलाष—वि० [सं०/लक्ष. (विलास)+विबन्ध्,√अम् (प्रति)] अणु, इ—क] [स्त्री० ललामा] १. मनोहर। सुन्दर। २. अच्छा। उत्तम। बढ़िया। ३. प्रभाव। मुख्य। ४. लाल रंग का। सुर्वा।

गुं १. अलकार। गहना। २. रत्न। ३. चिह्न। निशान। ४.

झंडे का डंडा। ध्वज। ५. सींग। ६. घोड़ा। ७. घोड़े की पहनाया जानेवाला गहना। ८. घोड़े या गाय के भांसे पर किसी रंग का चिह्न। टीका। ९. घोड़े, शेर आदि की गरदन पर के बाल। अयाल।

१०. प्रभाव।

† गुं=नीलम।

सलाषक—गुं [सं ललाम+कण्] माथे पर लपेटने की माला।

सलामी—स्त्री० [सं ललाम+कीष्] काम में पहुँचने का एक गहना। स्त्री० [हिं ललाम+ई (प्रत्य०)] १. ललाम होने की अवस्था या भाव। सुन्दरता। २. लाली। सुर्वा।

सलित—वि० [सं०/लक्ष (इच्छा)+स्त] [स्त्री० सलित्ता] १. मनोहर। सुन्दर। २. कामल। ३. अनिलचित। ४. प्रिय। प्यार।

५. चलता या हिलता हुआ।

गुं १. शृंगार रस का एक काव्यिक हाव। २. साहित्य में एक प्रकार का अलकार जिसमें किसी प्रस्तुत कार्य का प्रत्यक्ष रूप से वर्णन न करके उसके समान या प्रतिबन्ध रूप से किसी दूसरे कार्य का इस प्रकार उल्लेख होता है कि प्रस्तुत कार्य पर ठीक बैठ जाय। ३. एक प्रकार का विषम बर्णवृत्त जिसके पहले चरण में सगण, जगण, सगण, लघु दूसरे चरण में नगण, सगण, जगण, गुरु, तीसरे में नगण, नगण, सगण, और चौथे में सगण, जगण, सगण, जगण होता है। ४. पांडव जाति का एक राग जो मेल राग का पुत्र कहा गया है, और जिसमें निषाद स्वर नहीं लगता तथा वैजत और गांधार के अतिरिक्त और सब स्वर कामल लगते हैं।

सलितार्थ—स्त्री०=सलितार्थ।

सलित-कला—स्त्री० [सं कर्म० सं०] बहु कला जिसके अभिव्यजन में सुकुमारता और सौन्दर्य की अपेक्षा हो और जिसकी सृष्टि मुख्यतः मनो-विनोद के लिए हो। (कादम आर्ट्स) जैसे—विद्य कला, संगीत आदि।

सलित-कांता—स्त्री० [सं कर्म० सं०] दुर्गा।

सलित-गोरी—स्त्री० [सं कर्म० सं०] संगीत में एक प्रकार की रागिनी।

सलित-वध—वि० [सं ब० सं०] (कथन या रचना) जिसमें सुन्दर पद या शब्द हो।

गुं 'सार' नामक छंद का दूसरा नाम।

सलित पुराण—गुं [सं मध्य० सं०]=ललित विस्तर (बौद्ध ग्रन्थ)।

सलित विस्तर—गुं [सं ब० सं०] एक प्रसिद्ध बौद्ध ग्रन्थ जिसमें मोक्षम बुद्ध का चरित्र बणित है।

सलित-म्यूह—गुं [सं ब० सं०] १ बौद्ध शास्त्र के अनुसार एक प्रकार की समाधि। २. एक वैशिशिख का नाम।

सलित-साहित्य—गुं [सं कर्म० सं०] ऐसा साहित्य जो उपयोगी या हानिवर्द्धक होने की अपेक्षा भाव-प्रवण अधिक होता है। मनोरंजक साहित्य।

सलित्ता—स्त्री० [सं ललित+टाप्] १. पार्वती का एक नाम। २. एक प्रकार का बर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में सगण, जगण, और सगण होते हैं। ३. संगीत में एक प्रकार की रागिनी जो वामोदर और हनुमत् के मत से मेघराग की और सोमेस्वर के मत से बसंत राग की पत्नी है। ४. राधिका की मुख्य सखियों में से एक। ५. कस्तूरी।

सलितार्थी—स्त्री०=सलित्व।

सलित्ता पंचमी—स्त्री० [सं मध्य० सं०] आदिजन महीने की शुक्ल पंचमी जिसमें सलित्ता देवी (पार्वती) की पूजा होती है।

सलितार्थ—वि० [सं ललित-अर्थ, ब० सं०] शृंगार-रस-प्रधान (रचना)।

सलित्ता-बन्धी—स्त्री० [सं मध्य० सं०] मात्र कृष्ण बन्धी। जिस दिन स्थिरा पुत्र की कामना से या पुत्र के हितार्थ सलित्ता देवी (पार्वती) का पूजन और व्रत कराया है।

अभिलास-सप्तमी—स्त्री० [सं० मध्य० स०] भाबों सुधी सप्तमी। भाद्र
सुखल सप्तमी।

अभिलासिषया—स्त्री० [सं० ललित-उपमा, कर्म० स०] साहित्य मे एक
प्रकार का अर्थात्कार जिसमें उपमेय और उपमान की समता दिखलने
के लिए सन, समान, तुल्य, ली, इव आदि के वाचक पद व रत्नकर
पुंसे पद लाये जाते हैं, जिनसे अदाबरी, मुकाबल, निम्नता, निरादर,
सिमां इत्यादि के भाव प्रकट होते हैं।

अभिया—पुं० [हिं० लाल+इया (प्रत्य०)] लाल रंग का बैल।
† स्त्री०—लली।

अली—स्त्री० [हिं० लाल का स्त्री०] १. लड़की के लिए प्यार का
शब्द। २. डुलारी पुत्री या बेटी। ३. नायिका या प्रेमिका के लिए
प्रेमसूचक संबोधन।

अलीही—वि० [हिं० लाल+ओही (प्रत्य०)] [स्त्री० अलीही] कुछ
कुछ लाली लिये हुए। प्रायः लाल। लल-ओही।

अल्लर—वि० [सं०] हलकालिषया।

अल्ला—पुं० [हिं० लाल, लला] [स्त्री० अल्ली] १. लड़के या बेटे
के लिए प्यार का शब्द। २. डुलारा लड़का।

अल्लो—स्त्री० [सं० अलला] जीम। जिहू बा। जवान। (स्त्रियों
में प्रयुक्त, उपेक्षासूचक) जैसे—इसकी अल्लो बहुत बलती है।

अल्लो-चप्पो—स्त्री० [हिं० अल्लो+अनु० चप्पो] किसी को प्रसन्न
रखने के लिए उसके अनुकूल कही जानेवाली चिकनी-धुपकी बात।
ठकुरमुहावी।

अल्लो-चप्यो—स्त्री०—अल्लो-चप्पो।

अल्लुरा—पुं० [देश०] एक प्रकार का पीथा जिसकी पत्तियों का साग
खाया जाता है।

अल्लो-छठ—स्त्री० [सं० हल बन्धी] भाद्र कृष्ण पक्ष की छठ या
बन्धी तिथि।

अल्लो—पुं० [सं०/लू (छेदन)+अगच्] लौंग नामक वृक्ष और उसकी
कलियां या फूल।

अल्लो-सत्ता—स्त्री० [सं० व० स०] १. लौंग या पेड़ या उसकी शाखा।
२. एक प्रकार की बेंगला मिठाई।

अल्ल—वि० [सं०/लू+अप्] बहुत ही अल्प या थोड़ा। उदा०—मोह-
निशा लव नहीं बहूँ पर—निराला।

पुं० १. काटने या छेदने की किया। २. विनासा। ३. रामचन्द्र
के बी यमज पुत्रों में से एक पुत्र का नाम। ४. काल का एक बहुत
छोटा मान जो दो काष्ठा अर्थात् छरीस निमेष का होता है।
(कुछ लोग एक निमेष के साठवें भाग को लव मानते हैं।) ५
किसी चीज की बहुत ही छोटी या थोड़ी भाग। बहुत ही थोड़ा
परिमाण।

पल—लव भर—बहुत ही थोड़ा।

६. लवा नाम की चिड़िया। ७ लवंग। लौंग। ८. जातीफल।
९. अचारीकुश या कामण्डक नामक वृक्ष। १०. पत्तियों के शरीर से
कटकर निकाला जानेवाला रस, पर या बाल। ११. सुपुट गाय की
पूँछ के बाल जिनकी चँबर बनती है।

अल्लक—वि० [सं०/लू+अनु०-अक] काटनेवाला।

अल्लकना—अ०—लौकना।

अल्लका—स्त्री० [हिं० लौकना] १. लोका। विजली। २. चमक।
अल्लक—पुं० [सं०/लू+अनु०-अन, पुषो० गत्व] १. नमक। लोम। २.
३० 'अल्लकसु। ३. ३० 'अल्लक समुद्र'।

वि० १. नमकीनी। २. लावण्ययुक्त। सुन्दर। सलोना। ३. खाटा।

अल्लक-अन—पुं० [सं० व० स०] इन तीन प्रकार के नमकों का समूह,
सैषक, विट् और साँबर।

अल्लक-आकर—पुं० [सं० उपमित स०] सैषक मे एक प्रकार का पाषक
पूर्वी।

अल्लक-मेह—पुं० [सं० मध्य० स०] सुभूत के अनुसार एक प्रकार
का प्रमेह जिसमे पेशाब के साथ लवण के समान स्वाद
होता है।

अल्लक-अन—पुं० [सं० मध्य० स०] एक प्रकार का रस जिसमें अण-
वियों का पाक बनया जाता है। (सैषक)

अल्लक-अन—पुं० [सं० मध्य० स०] कुछ तीप का एक लवण। (पुराण)

अल्लक-समुद्र—पुं० [सं० व० त०] सात समुद्री मे से खारे पानी का एक
समुद्र। (पुराण)

अल्लका—स्त्री० [स्त्री० अल्लक+टाप्] १. वीटि। आभा। २. महा-
ज्योतिष्मती नाम की लता। ३. चूक। ४. चंपीरी। ५. अमलोनी
नामक शाक। ६. लूनी नदी का पुराना नाम।

अल्लकाकर—पुं० [सं० अल्लक-आकर, व० त०] १. नमक की खान।
२. सौदव का आगार।

अल्लकाचल—पुं० [सं० अल्लक-अचल, मध्य० स०] पहाड़ के रूप में
लगाया हुआ नमक का ढेर जो दान किया जाता है।

अल्लकाणि—पुं० [सं० अल्लक-अणि, व० त०]—अल्लक-समुद्र।

अल्लकार्—पुं० [सं०] १. —अल्लक-समुद्र। २. समुद्र। सागर।

अल्लकाचल—पुं० [सं० अल्लक-आलक, व० त०] आधुनिक मधुरा नगरी
का प्राचीन नाम। मधुपुरी।

अल्लकासुर—पुं० [सं० अल्लक-असुर, कर्म० स०] एक राक्षस जो मधु का
पुत्र था तथा जिसने मधुपुरी नगरी (आधुनिक मधुरा) की बसाया
था। इसका बध शशुचन ने किया था।

अल्लकित—पुं० [सं० अ०] अ० अल्लक+इतक्] १. नमक से युक्त किया
हुआ। जिससे नमक ढाला गया हो। २. सुन्दर।

अल्लकित (अनु)—स्त्री० [सं० अल्लक+इतक्] १. नमकीनी।
सलोनापना। २. सौदव।

अल्लकोत्तम—पुं० [सं० अल्लक-उत्तम, स० त०] सेंधा नमक।

अल्लकोचक—पुं० [सं० अल्लक-उचक, मध्य० स०] १. नमक मिला
हुआ पानी। २. खारे पानीवाला समुद्र। खार समुद्र।

अल्लकोत्तमि—पुं० [सं० अल्लक-उत्तमि, व० त०] अल्लक समुद्र।

अल्लक—पुं० [सं०/लू (छेदन)+अनु०-अन] [वि० अल्लनीय, अल्ल्य]
१. काटना। छेदना। २. खेत की फसल की कटाई। अल्लनी।

अल्लनी—स्त्री०। ३. खेत की फसल काटने के बूदले में मिलनेवाला
अन्न या धान।

अल्लना—स० [हिं० अल्लना] [भाव० अल्लनी] १. पकी हुई फसल
काटना। अल्लना। २. खेत में काटकर रखे हुए ढंठलों को बढोला।

लक्षणाई—स्त्री०—लौनाई (लावण्य) ।

लक्षनी—स्त्री० [सं० लक्षन+डीप्] शरीरके का पेड़ और फल ।

स्त्री० [हिं० लक्षना] फुकी हुई फसल काटने की क्रिया, भाव और मजदूरी । लुनाई ।

*स्त्री०—अननीत (अन्नजन) ।

लक्षनीय—वि० [सं० लक्ष्+अनीयर्] (फल) जो लवने अर्थात् काटे जाने के योग्य हो ।

लक्षर—स्त्री०—लौर (आग की लपट) ।

लक्ष-लासी—स्त्री० [हिं० लक्ष=प्रेम+ लासी=लसी, लगाना] १. जो अर्थात् प्रेम सबंध स्थापित करनेकी प्रवृत्त इच्छा या आकांक्षा । २. किसी प्रकार का थोड़ा बहुत या नाममात्र का सबंध ।

लक्षली—स्त्री० [सं० लक्ष/ला (आदान)+क+डीप्] १. हरफालेरी नाम का पेड़ और उरुता फल । २. एक विषम बर्णवृत्त जिसके पहले, दूसरे, तीसरे और चौथे चरणों में क्रमशः १६, १२, ८ और २० वर्ण होते हैं ।

लक्ष-लीन—वि० [हिं० लक्ष+लीन] किसी के प्रेम में लीन । प्रेम में मग्न ।

लक्ष-नेश—पुं० [सं० लक्ष० तं०] १. अत्यंत अल्प-मात्रा । बहुत थोड़ा परिमाण । २. बहुत थोड़ा या नाममात्र का सबंध । जैसे—इसमें प्रेम का लक्षनेश भी नहीं है ।

लक्षा—पुं० [सं० लक्ष] तीतर की जाति का एक पक्षी जो तीतर से बहुत छोटा होता है ।

पुं०—लावा (लाजा) ।

लखाई—स्त्री० [देस०] मई ब्याई हुई गाय ।

† स्त्री०—लुनाई ।

लखाबसा—पुं० [अ० लखाबिस] १. किसी के साथ रहनेवाला दल और साथ-सामान । भाष में रहनेवाली भीड़-भाड़ या बहुत सा सामान । जैसे—इतना लखाबसा साथ लेकर बयां चलते हो । २. विशेष रूप से बे व्यक्त और साथ समान जो सेना के साथ रहते या चलते हैं । सेनापरिचालन । (एकाउन्ट्रिटेड) ३. आवश्यक और उपयोगी सामान ।

लखाना—सं० [हिं० लेना+जाना] अपने साथ ले जाना । उदा०—जा दिन ते मुनि गए लखाई—तुलसी ।

लखार—पुं० [हिं० लखारी] गाय का बच्चा ।

लखासी—वि० [?] १. बकबादी । २. बद-चलन । लपट ।

लखेबर—पुं० [अ०] नपडों और बालों में लगाने के लिए एक प्रकार का सुगंधित तरल पदार्थ जो एक पोथे के फूली से तैयार किया जाता है ।

लखेरी—स्त्री० [?] १. दुधार गाय । २. विशेषतः ऐसी गाय जिसके आगे बच्चा हो तथा जो दूध भी देती हो । (पश्चिम)

लख्य—वि० [सं० लक्ष्+यत्]—लक्षणीय ।

लखार—पुं० [फा० लखर] १. सेना । फौज । २. प्राणियों या मनुष्यों का बहुत बड़ा दल या समूह ।

पद्य—लक्ष-लक्षर ।

३. सैनिक पदार्थ । छावनी । ४. जहाजों पर काम करनेवाले लोगों का वर्ग ।

लखाकरी—वि० [फा० लखर] १. लखर-संबंधी । लखर या सेना का । फौजी । २. लखर में काम करनेवाला या लखर का सहाय्य । पुं० १. सैनिक । सिपाही । २. जहाज पर काम करनेवाला नावनी । जहाजी ।

स्त्री० जहाज पर काम करनेवाले लोगों की बोली ।

लखाकारना—सं० [अनु० लख् लख्] मूँह से लधा लघ्य शब्द करते हुए शिकारी कुत्ते को शिकार पर झपटने के लिए उतारित करना ।

लखादम-पदादम—किं० वि०—लस्टम परदम ।

लखन (खून)—पुं० [सं०/अण् (भोजन)+उजन्+अ=ल] लह-मुन ।

लखर—पुं०—लखारक ।

लखरी—वि०, पुं०, स्त्री०—लखरीक ।

लखण—वि० [सं०/लष् (चाहना)+ल्युट्—अन] [पुं० कृ० लखित] इच्छा करनेवाला ।

लखन—पुं०—लखन (लक्षमण) ।

लखना—सं०—लखना ।

लखन—पुं०—लखनन ।

लखी—वि०, पुं०—लखती ।

स्त्री०—लखती ।

लख—पुं० [सं०/लष् (तटना)+क (पत्रर्षे)] १. चिपकने या चिपकाने का गुण । झेपना । चिपचिपाहट । २. लासा । ३. आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में रक्त का वह अणु या तत्त्व जिसके फलस्वरूप कुछ जीव-जंतु कई विशिष्ट रोगों से बचे रहते हैं । सोम्य । (सीरम) वि० दे० 'सोम्य विज्ञान' । ४. दे० 'लसी' ।

लखक—पुं० [सं० लासक] नाचनेवाला । नर्तक ।

लखर—पुं०—लखरीक ।

लखार—वि० [हिं० लख+फा० दार (प्रय०)] जिसमें लम हो । लसनेवाला । लखीना ।

लखन (नि)—स्त्री० [हिं० लखना] १. लसने की अवस्था, किमा या भाव । २. छटा । पोभा । ३. चमक । दीर्घ ।

लखना—सं० [सं० लखन] कोई बस्तु किसी दूसरी वस्तु के साथ इस प्रकार गटाना कि वह अलग न हो । चिपकाना । लेसना । जैसे—लफाफे पर टिकट लगना । सपी० कि०—देना ।

अ० १. चिपकना । २. वासित होना । फनना । ३. विराजमान होना । ४. प्रकाशमान होना । चमकना ।

लखन—वि० [देस०] जिसमें खोट या मेल हो । खोटा या धूपिल ।

लखरफा—पुं० [हिं० लख्] बहुत ही साधारण या जैसे-जैसे चलता रहनेवाला सफक या सबंध ।

किं० प्र०—लगाना ।—लगाना रहना ।

लखलसा—वि० [हिं० लख] [स्त्री० लखलसी] गोंद की तरह चिपकनेवाला । चिपचिपा । लसीला ।

लखलसाना—अ० [हिं० लख] लस से युक्त होने के कारण चिपकना ।

कलसलसहृद—स्त्री० [हि० कलसल] कलसवार होने की अवस्था या भाव ।
चिपचिपाहृद ।

कलिका—स्त्री० [सं० कल+कन्+टाप्, इत्] १. लाला । घूक ।
२. पेसी ।

कलित—पुं० कृ० [सं०√कल् (चमकना, कीड़ा)+क्त] १. धाँसित ।
२. प्रकट । ३. कीड़ासीला ।

कली—स्त्री० [हि० कल] १. चिपचिपाहृद । बेप । लस । २. ऐसी
अवस्था जिसमें किसी प्रकार के अकर्षण, लाभ आदि के कारण साथ
लगे रहने की इच्छा या प्रवृत्ति हो । जैसे—कुछ न कुछ लसी है, तभी
वो तुम उसके साथ लगे रहते हो । ३. साधारण मेल-जोल या
संपर्क ।

किं० प्र०—लगना ।—लगाना ।

† स्त्री०—लसी ।

कलीका—स्त्री०—कलिका ।

कलीका—वि० [हि० कल+ईला (प्रत्यय)] [स्त्री० लसीली] कल-
वार । जिसमें कल हो । चिपचिपा ।

वि० [हि० कलना] औ कल रहा हो । अर्थात् घोभायुक्त । सुन्दर ।

कलुषा—पुं०—कलुषुन ।

कलुषुनिया—पुं०—कलुषुनिया ।

कलसीदा—पुं० [हि० कलस=चिपचिपाहृद] १. एक प्रकार का छोटा
पेड़ । २. उक्त पेड़ के फल जो बेर के-से होते हैं । इनमें लसदार गुदा
होता है, और ओषधि में इनका प्रयोग होता है । ३. लाक्षणिक अर्थ
में, किसी के साथ लगा रहनेवाला व्यक्ति ।

कलसीदा—पुं० [हि० कलसा+जोदा (प्रत्यय)] चिडियाँ फेंगाने की वह
लगी जिस पर लासा लगा होता है ।

कलस-पदस्य—अव्य० [अनु०] १. बहुत ही मंद गति तथा साधार-
ण रूप से । जैसे-जैसे । जैसे—अब तक कलस पदस्य थोड़ा बहुत
काम ही हीं रहा है ।

कलस—वि० [सं०√कल् (कीड़ा)+क्त] १. क्रीडित । २. घोभा-
युक्त । सुन्दर । ३. फवता या भला लगता हुआ ।

वि० [सं० कल्प] १. पका हुआ । स्थितिक । श्रम या बकावट से
ढीला । जैसे—चलते-चलते शरीर कलस हो गया । २. जिसमें कुछ
करने की शक्ति न रह गई हो । अशक्त ।

कलसक—पुं० [सं० कलस+कन्] धनुष का मध्य भाग ।

कलसकी (किन्)—पुं० [सं० कलसक+इति] धनुष ।

कलसया—पुं० [हि० कलस+लगाव] १. बहुत थोड़ा संपर्क या सव्य ।
२. क्रम । सिलसिला ।

कलसना—वि० [अ०] [भाव० कलसानी] १. अधिक बोलनेवाला ।
धावाल । २. लच्छेदार बातें कहनेवाला ।

कली—स्त्री० [सं० कलसिका] यही का घोल विशेषतः वह घोल जिसे
मयकर मन्त्रान निकाल लिया गया हो ।

वि० लाक्षणिक अर्थ में, तरल । पतला ।

† स्त्री०—कली ।

कलीया—पुं० [हि० कलक=कमर+अंगा] १. कमर के नीचे का सारा
अंग ढकने के लिए स्थियों का एक घेरदार पहनावा । धाकरा । २.

उक्त प्रकार का वह आधुनिक पहनावा जिसे स्थियाँ मोटी या सड़ी
के नीचे पहनती हैं । साया ।

कहूँडा—पुं० [?] जन्तुओं का झुंड । गल्ला । जैसे—मेड़-बकरियों का
कहूँडा । उदा०—सित्तू के कहूँडे नहीं, हसन की गँह पात ।—कबीर ।

कहूँदा—पुं०—कहूँदी ।

कहूँदी—स्त्री० [प० कहूँदा=पविचम दिया] पविचयी पजाव की बोली
की लंडा लिपि में लिखी जाती है । हिंदकी ।

कहूँक—स्त्री० [हि० कहूँकना] १. कहूँकने की क्रिया या भाव । २.
आग की लपट । ३. चमक । ४. छवि । शोभा ।

कहूँकना—अ० [सं० कलता=हिलना-डोलना या अनु०] १. हवा में हथर-
उथर रहना । झोकें खाना । कहूँकना । २. हवा का झोका जाना ।
हवा कुछ जोर से चलना । उदा०—तीर ऐसे विविध समीर लगे
कहूँकना—देव । ३. आग का प्रज्वलित होना । दहकना ।

संयो० किं०—उठना ।

४. २० 'कलकना' ।

कहूँका—पुं०—कलका (पतला गोटा) ।

कहूँकाना—सं० [हि० कहूँकना] १. हवा में हथर-उथर हिलना-डोलना ।
झोका खिलाना । २. उत्तेजित करना । उकसाना । भडकाना ।

३. प्रज्वलित करना । दहकाना । ४. लालसा से युक्त या उत्कण्ठित
करना ।

संयो० किं०—देना ।

कहूँकारना—सं०—कहूँकाना ।

कहूँकीर—स्त्री० [हि० कलता+कीर (प्रास)] १. विवाह की एक
रस्म जिसमें बर कन्या के मुख में और कन्या बर के मुख में प्रास डालती
है । २. उक्त अवसर पर गाये जानेवाले गीत । ३. बर-चपू की
कोहबर में खेलेवा जानेवाले खेल ।

कहूँका—पुं० [अ० कलू, ऊ] १. स्वरो के उतार-चढ़ाव की दृष्टि से,
बोलने का ढंग । २. बहुत बात कहने का ऐसा ढंग जो दाब्यो या स्वर
के ढंग से अच्छा या बुरा लगे । ३. बहुत थोड़ा समय । क्षण या पल ।
लम्हा ।

कहूँदोरा—पुं० [?] एक प्रकार की खाकी या सफेद रंग की चिडिया ।
जिसकी तुम लम्बी और बीच में काठी होती है । यह कीड़े-मोड़ों,
टिड्डों तथा छोटी मोटी चिडियाँ खाती है ।

कहूँदी—स्त्री० [हि० लाह=लाक्षा] लाक्ष की बूड़ी ।

कहूँनु—पुं० १—कहूँना (प्राणव्य) २—कजा (वनशक्ति) ।

कहूँनवार—पुं० [हि० कहूँना+फा० दार] वह मनुष्य जिसका कुछ
कहूँना किसी पर बाकी हो । अपना प्राण्य धन पाने या लेने का
अधिकारी व्यक्ति ।

कहूँना—सं० [सं० कलनु, प्रा० कलनु] १. प्राप्त करना । लाभ करना ।
पाना । २. आधिकारिक रूप से वह धन जो किसी से प्राण्य हो
या किसी की ओर बाकी निकलता हो । पानना ।

पथ—कहूँना-पानना—ओरी की दिया हुआ ऐसा धन जो आधिकारिक
रूप से प्राण्य हो ।

३. भाष्य ।

सं० [सं० कलनु] १. काटना । छेदना । २. खेत की फसल काटना ।

३. कतलना, छीलना या तराघाना।

सं०=लहाना।

अ० [सं० लसन] कहीं हुई बात या सोची हुई युक्ति का ठीक मोके पर बैठकर अभिप्राय की सिद्धि में सहायक होना। जैसे—यहाँ तो दुन्दुहारी बात (या तर्फीब) लह गई अर्थात् ठीक सिद्ध हुई।

लहनी—स्त्री० [हि० लहना] १. प्राय्य भन। लहना। २. प्राय्य का फल-भोग। ३. कसेरी का बरतन छीलने का एक औजार।

लहबर—पु० [?] १. लबी और डीली पोशाक। जैसे—बोगा, लबादा आदि। २. एक तरह का तोता। ३. छड़ी। ४. झवा। निशान।

लहबरी—पु० [हि० लहबर] एक तरह का तोता।

लहभ—पु० [अ० लहभ] मंसि। गोश्त।

लहना—पु० [अ० लह.म] समय का बहुत छोटा विभाग। निमेष। पल।

लहर—स्त्री० [सं० लहरी] १. तरल पदार्थों में हवा लगने पर उनके तरल के कुछ अंश में उत्पन्न होनेवाली वह गति जो कुछ पुंमावदार या टेढ़ी रेखाओं के रूप में किसी ओर चलती, फैलती या बहती है। तरप। मोज। २. हिलार। जैसे—तालाब, नदी या समुद्र में उठनेवाली लहरे। कि० प्र०—आना।—उठना।—मारना।—लेना।

गुहा०—लहर लेना—समुद्र के किनारे लहर में स्नान करना।

२. किसी पदार्थ के ऊपरी तल में होनेवाली उल्ट प्रकार की गति या कंप। जैसे—धान के पीधों में लहरे उठ रही थी। ३. मन में उत्पन्न होनेवाली कोई आवेगपूर्ण प्रवृत्ति। उमग। जैसे—जगत में आनन्द की लहर उठ रही थी। ४. सहसा मन में उत्पन्न होनेवाली इच्छा या प्रवृत्ति। मन की मोज। जैसे—मन में जब जो लहर उठी, तब वह काम कर डाला। ५. यथेष्ट मात्रा में मन को प्राप्त होनेवाला आनन्द, प्रसन्नता या हर्ष। जैसे—दो-तीन दिन बहाँ अच्छी लहर ली।

पब—लहर-बहर।

कि० प्र०—खाना।—लेना।

१. किसी पदार्थ में उत्पन्न होनेवाला वह सूक्ष्म कंप जो किसी दिशा में कुछ दूर तक बकता चला जाता हो। जैसे—स्वनि या प्रकाश की लहर।

५. कोई ऐसी गति जिसमें क्रमशः रह-रहकर कुछ उतार-चढ़ाव या पुंमाव-फिराव होता रहता हो। जैसे—(क) सौंप लहर मारता हुआ चलता है। (ख) हवा में तनुष की लहरे आ रही थी।

कि० प्र०—बेना।—मारना।

८. उल्ट प्रकार या रूप की रेखा या रेखाएँ। जैसे—पूप-छाँह के रूपके में कई रंगों की लहरे उठती हैं। ९. शरीर में होनेवाली कोई ऐसी पीड़ा जो कभी कुछ हल्की हो जाती और कभी बहुत तेज हो जाती हो। जैसे—सौंप के काटने पर शरीर में लहर आती है, जिसमें वह विष के प्रकोप से विकल होकर उठ-उठकर भागने लगता है।

विशेष—दे० 'तरप' और 'मोज' भी।

लहरदार—वि० [हि० लहर+दा०] १. जिसकी आकृति लहर या लहरी जैसी हो। २. जिस पर उल्ट आकृति या आकृतियाँ बनी हुईं हो।

लहरना—अ०=लहराना।

लहर-बारी—पु० [हि० लहर+बरी] १. एक तरह का पारोदार देसमी कपड़ा। २. सिधियों के पहनने का लहंगा जीर चोली।

लहर-बहर—स्त्री० [हि० लहर+अनु० बहर] १. आनन्द। मोज।

२. वैभव और परम सुख की स्थिति।

लहरा—पु० [हि० लहर] १. लहर। तरप। २. आनन्द। मोज। कि० प्र०—लेना।

३. गाना-नाचना आरम्भ होने से पहले बजाई जानेवाली बाजों की वह गत जो बातावरण को संगीतमय करने या सर्वा बाँधने के लिए बजाई जाती है।

† पु० [?] एक प्रकार की घास।

† पु०=लहंगा।

लहराना—अ० [हि० लहर+आना (प्रत्य०)] १. तरल पदार्थों का लहरी से युक्त होना। लहरे उठना। तरगित होना। जैसे—तालाब या नदी का (अथवा उसके पानी का) लहराना। २. किसी तल पर या विस्तार में रह-रहकर ऐसी कणयुक्त गति होना जो कभी कुछ ऊपर-नीचे या इधर-उधर की होती है या चलती हो। जैसे—(क) खेतों में फसल या हरियाली का लहराना। (ख) हवा में झड़ा या सिर के बाल लहराना। ३. लहरी की तरह कभी कुछ इधर और कभी कुछ उधर होने हुए उठना, चलना या बहना। जैसे—(क) सौंप लहरता हुआ चलता है। (ख) पहारी झरने (या रास्ते) लहरते हुए चलते हैं। (ग) हवा चलन पर आम की लपटें लहरती हैं। ४. मन की लहर अर्थात् उमग या उल्लास में आना। जैसे—बसत ऋतु की हवा लगने पर मन लहराने लगता है। ५. कोई चीज पाने या लेने के लिए उत्कण्ठ या लाजवित होना। जैसे—कुछ खाने या पीने के लिए मन लहराना। ६. किसी प्रकार की छवि या धोमा से युक्त होना। फबना। लगना। जैसे—दर्बतों पर (या वन में) प्रकृति की धोमा लहरा रही थी।

सं० [हि० लहर+आना (प्रत्य०)] १. हवा के सौंके में लहरी की तरह इधर-उधर हिलाना-डुलाना या हिलने-डुलने के लिए छोड़ देना। जैसे—सिर के बाल लहराना। २. सौंके न चलकर लहरी की तरह इधर-उधर होत हुए सौंके खाते हुए चलना या बहना। ३. किसी चीज को हाथ में लेकर इधर-उधर गति देना। जैसे—बच्चों को गीद में लहराना।

लहरि—स्त्री० [सं० ल/हृ+इन्]—लहर।

लहरिया—पु० [हि० लहर+इया (प्रत्य०)] १. लहर की आकृति की रेखाया का समूह। २. वह कपड़ा जिस पर लहरी के आकार की आकृतियाँ हो।

† स्त्री०=लहर।

लहरियादार—वि० [हि० लहरिया+दार (प्रत्य०)] (वल्ग आदि) जिस पर लहरिया बना हो।

लहरिल—वि० [सं० लहर]—लहरदार।

लहरी—स्त्री० [सं० लहरि+डीप्] १. लहर। तरप। हिलार। मोज।

वि० [हि० लहर+ई (प्रत्य०)] १. मन की तरप के अनुसार काम करनेवाला। २. सदा प्रसन्न रहनेवाला। गुहा-मिजाज।

लहरी-रब—[सं० ब० सं०] समूह। उदा०—लहरिजें लिपे जधि लहरीरब।—त्रिधोरारज।

लक्ष्मीका—वि०=कहूपाय ।

लक्ष्म-सं० [?] एक प्रकार का रंग जो शीतक रंग का पुत्र कहा गया है।

लक्ष्महा—वि० [हि० लक्ष्महागा] [स्त्री० लक्ष्मही] १ फूल-पत्तों से भरा और सरस लक्ष्महाशा हुआ।

हरा-भरा । २ परम प्रसन्न और प्रफुल्ल।

लक्ष्महा—स्त्री० [हि० लक्ष्महागा] १. लक्ष्महासे हुए होने की अवस्था या भाव । २. हरियाली। जैसे—हैं इस हवा में क्या क्या बरसात की बहारें। स्वामी की लक्ष्महाइट बनात की बहारें।—गवीर।

लक्ष्महा—अ० [हि० लक्ष्महा (पतियी का)] १. लक्ष्महादेवाली हरी पतियों से भरना। फूल-पतियों से सरस और सजीव दिखाई देना। हरा-भरा होना। २. सूखे पेड़ पौधों का फिर से हरा-भरा होना। पनपना।

संयो० कि०—उटना।—जाना।

३. आनन्द या हर्ष से पूर्ण होना। प्रफुल्ल होना। ४. बुबले शरीर का फिर से सबल या हृष्ट-मुष्ट होना।

सयो० कि०—उटना।

लक्ष्मी—स्त्री० [दश०] वह दल-दल जो किसी जलाशय के सूबाने पर रक्ष जाती है।

लक्ष्मुआ—पुं० [दश०] एक प्रकार की बरसाती भास जिसका साथ या टोटी बनाकर गरीब लोग खाते हैं। कम-कौआ।

† पुं० लिखो।

लक्ष्मुआ—पुं० [सं० लक्ष्मु] १. मसाले के काम आनेवाली प्याज की तरह की एक गति और उसका पीसा। २. शरीर पर होनेवाला उपत के आकार का एक प्रकार का बिह्व या लक्ष्मा। ३. मानिक का एक बोध जिसे सस्कृत में 'असोमिक' कहते हैं।

लक्ष्मुनिया—पुं० [हि० लक्ष्मुन] भूमिल रंग का एक प्रकार का रत्न या बहुमूल्य पत्थर। खालाक।

लक्ष्—पुं०=लाह।

लक्ष-छेह—पुं० [?] नृत्य की क्रियाओं में से चौथी क्रिया। नाच की एक गति। इसमें मुख्यतः बहुत तेजी या फुरती दिखाई जाती है। उदा०—लक्ष-छेह अति गतिन की सबन लक्षे तब पाय।—बिहारी।

वि० १. तीव्र गतिवाला। २. चंचल।

लक्ष्मा—सं० [सं० लक्ष्मा] प्राप्त कराना। मिलाना।

सं० [हि० लक्ष्मा] १. ऐसे ढंग से बात कहना या उक्ति करना कि अभिप्राय सिद्ध हो जाय। २. कोई पीज ठीक जगह पर बैठाना या लगाना।

† सं० [?] गैबाना।

लक्ष्माह—वि०=लक्ष्मा।

लक्ष्माकट—वि० [हि० लक्ष्मा, लाह+कटौटा] १. हंसी से कौटला हुआ। २. आनन्द या प्रसन्नता से भरा हुआ। ३. प्रेम में बिकोरे।

लक्ष्मास—स्त्री०=लासा।

लक्ष्मास—स्त्री० [दश०] वह काली भेड़ जिसकी कनपट्टी से दाँधे तक का भाग लाह होता है। (शकटिचिं)

लक्ष्माती—स्त्री० [सं० लक्ष्मा, स० लक्ष्मा=रस्ती] १. वह नौटी रस्ती

जिससे माँव का जहाज बंधे जाते हैं। २. डोरी। रस्ती। ३. रास्ते में निकली हुई पैदलों की बुटियाँ। (पालकी के कहार)

लक्ष्—अव्य० [हि० लक्ष्मा+प्राप्त होना, पहुँचना] पर्यटन। तक। लक्ष्मी—वि० [अ०] १. लक्ष्म अर्थात् मांस से युक्त। मांसल। २. हृष्ट-मुष्ट। मोटा-साधा।

लक्ष्—वि० [सं० लक्ष्] १. छोटा। २. अल्प। कम। पोधा।

उदा०—माथ लक्ष्मु सीत जाने।—वाच्य गीत।

लक्ष्परा—वि० [सं० लक्ष्, प्रा० लक्ष्+परा (प्रत्य०)] [स्त्री० लक्ष्पी] बध में छोटा। कनिष्ठ। जैसे—लक्ष्परा भाई।

लक्ष्—पुं० [सं० लक्ष्, हि० लक्ष्] शरीर में का रक्त। शक्ति। क्षुत्। पर—लक्ष्-मुहान।

मुहान—(खाना-पीना) लक्ष् करना=किसी का मन इतना अधिक दुःखी कर देना कि उसे खाना-पीना तक बहुत दूरा लगने लगे। लक्ष् का शब्द पीना=बहुत अधिक मानसिक कष्ट चुपचाप मन में ही बसा रखना या सह लेना। (किसी से) लक्ष् का प्यासा होना=किसी से इतना अधिक बैर या शत्रुता होना कि उसके प्राण तक से लेने की भी चाह। (औरों से) लक्ष् उपकाना=बहुत अधिक क्रोध के कारण जोरें लाल होना। (शरीर से) लक्ष् उपकाना=शरीर में अत्यंत बल-वीर्य होने के कारण उसका रंग लाल होना। (किसी का) लक्ष् पीना=किसी की बहुत अधिक तंग या दुखी करना। लक्ष् समाकर लक्ष्मीयों में मिलना=बिना कुछ भी त्याग या परिश्रम किये अपने आय की बड़े लोगों में गिनना या समझाना।

लक्ष्-मुहान—वि० [हि० लक्ष्+अनु० मुहान] अपात, क्षत आदि के कारण जिसका सारा शरीर लक्ष् से भर गया हो। रक्तक।

लक्ष्परा—पुं० [हि० लाह=लास+परा (प्रत्य०)] १. वह जो लास की चूड़ियाँ आदि बनाने या चीनों पर लाह का रंग बढ़ाने का काम करता हो। २. वह रंगरेज जो रेशमी कपड़े रंगने का काम करता हो। पुं० [?] एक प्रकार का सदा-बहार पेड़ जिसकी लक्ष्मी बड़ियाँ और मजबूत होने के कारण मेज-कुर्तियाँ आदि बनाने के काम आती हैं।

लक्ष्मेसा—सं०=लेसना (बिपकाना या सटाना)

लक्ष्—स्त्री० [सं० लक्ष्=ढंठल या बाल] १. ताजी कटी हुई फसल।

२. नूता।

स्त्री० लक्ष् (कमर)। उदा०—कटे घर प्रेत बटे तिर फाँक, लटे मन केक उहँ उर लौका।—कविराजा सुपेढाल।

लक्ष्—स्त्री० [सं० लक्ष्मु] पहनी हुई धोती या लँगोट का वह छोर जिसे जूथों के नीचे से निकाल कर पीछे कमर में बाँधा जाता है। काछ।

लक्ष्मण—पुं० [सं० लक्ष् (गति) +कल्प, पुं० बुद्धि] १. खेत जोतने का हल। २. शुक्ल पत्त की द्वितीय और उसके कुछ दिन बाद दिखाई देनेवाले चन्द्रमा के दोनो अंग या नक्षत्री तिर। ३. पुत्रक का क्रिया। शिष्य। ४. साइ का पेड़। ५. जहाज या नाव का कमर। ६. एक प्रकार का पीसा और उसके फूल।

लक्ष्मणक—पुं० [सं० लक्ष्मण+क] हल की आकृति का वह चीरा जो अग्रपर रोग में लगाया जाता है। (सुभ्रत)

लक्ष्मण-वच—पुं० [सं० लक्ष्मण+सं०] फलित ज्योतिष में, हल के आकार

का एक प्रकार का फल जिसकी सहायता से भावी फल के सबष में शुभाशुभ फल जाना जाता है।

सांगल-बंद—गुं० [सं० षं० सं०] हरिस।

सांगल-ज्वर—गुं० [सं० बं० सं०] बलराम।

सांगि—गुं० [सं० कागली] १. कलियारी नाम का जहरीला पौधा। २. मजीठ। ३. जल पीपल। ४ पिठवन। ५ केवाच। ६ गजप्रीपल। ७ चव। ८ महाराष्ट्री लता। ९. अशुभक नामक अष्ट वर्ग की ओषधि।

सांगलक—गुं० [सं० सांगल + क्तन्—इक] एक प्रकार का स्वाचर विष।

वि० सांगल अर्थात् हल-सबधी।

सांगलिका—स्त्री०—सांगली (कलियारी)।

सांगली (लिन्)—गुं० [सं० सांगल + इनि] १. श्री बलराम जी। २. नारियल। ३. साँप।

स्त्री० [सांगल + अण् + ङीष्] १ एक नदी का नाम। (पुराण)

२ कलियारी ३ मजीठ। ४ पिठवन। ५ केवाच। ङीष्।

६ जल्पीपल। ७ गजप्रीपल। ८ चव। ९. महा-
राष्ट्री लता। १०. अशुभक नामक अष्ट वर्ग की ओषधि।

सांगा—गुं०—लहंगा।

सांगल—गुं० [सं० √ लृप् + अलृप्,] १. पूँछ। दुम। २. लिग। शिखर।

सांगली (लिन्)—गुं० [सं० सांगल + इनि] १. बदर। २. अशुभ नामक ओषधि।

सांगना—स्त्री० [हिं० सांगना] १. सांगने या सांगे जाने की अवस्था, क्रिया या भाव। जैसे—बच्चे पर सांगना पड़ना। २. वह स्थिति जिसमें कोई बीज या जगह किसी ने सांगी हो। जैसे—ऐसी बीजों की तो सांगना भी बचानी चाहिए, अर्थात् उनकी लाँधी हुई बीज या जगह भी नहीं सांगनी चाहिए।
क्रि० प्र०—पड़ना।

सांगना—सं० [सं० लपन] १. डग भरकर या छलौंग लगाकर अवकाश या स्थान पार करना। जैसे—घोड़े का नाला सांगना। २. डग भर कर या छलौंग लगाकर किसी खास वस्तु के ऊपर में होकर जाना को अनुचित माना जाता है। जैसे—किसी की धाकी सांगना। ३. अवकाश, स्थान आदि की पीछे छोड़ते हुए आगे निकलना। जैसे—गाथा पढ़ाड़ो को सांगती हुई आ रही थी। ४. नर पशु का मादा के साथ संभोग करना। जैसे—वह घोड़ी अमी लाँधी नहीं गई है।

सांगनी उड़ी—स्त्री० [हिं० सांगना + उड़ी=कुदान] मालखम की एक प्रकार की कसल।

साँ—स्त्री० [देषां०] रिचत। घुस। उल्कोच। (महाराष्ट्र)
साँखन—गुं० [सं० √ लाङ् (विहित्त करना) + ल्युट्—अन] १. चिह्न। निशान। २. दाग। धब्बा। ३. कोई निन्दनीय वा बुरा काम करने पर चरित्र पर लगनेवाला धब्बा। कलक।

क्रि० प्र०—लगना।—लगाना।

४. ऐब। दोष।

साँखना—स्त्री०—साँखन।

साँखित—गुं० कृ० [सं० √ लाङ् + क्त] १. जिस पर साँख लगा है।

कलकित। २. बिहूँ से युक्त। ३. अलकृत।

साँधी—गुं० [सं० लाङ्] एक प्रकार का धान।

साँस—स्त्री० [देषां०] बाधा। विघ्न।

साँप—गुं०—लट (शिखर)।

साँपदण्ड—गुं० [सं० लपट + ष्यञ्] लपटता।

साँबा—वि० [स्त्री० लाँधी]—लबा।

साँ—प्रत्य० [अं०] एक प्रत्यय को कुछ शब्दों के आरम्भ में लगकर अभाव वा राहित्य सूचित करता है। जैसे—साँ-जवान, साँ-परबाह, साँ-नारिस आदि।

साँ—गुं० [सं० अलात=लुक; प्रा० अलप] अनि। जाय।

साँ—[हिं० लाना] लगना। लगावट।

साँक—वि०—सायक।

साँधी—स्त्री०—इलायची।

साँद—स्त्री० [अं०] रोसानी। प्रकाश। उजाला।

साँद हाडस—गुं० [अं०] प्रकाश-गृह। प्रकाश-स्तम्भ।

साँदन—स्त्री० [अं०] १. अवली। पकित। कतार। २. रेखा। लकीर। ३. रेल की पटरों। ४. धरो की वह पकित जिनमें सिपाही रहते हैं। बैरक।

साँ—साँदन सुरुब करना—किसी सिपाही पर कोई आरोप होने पर उसका विचारार्थ साँदन या बैरक में भेजा जाना।

साँभेरियन—गुं० [अं०] गुप्तकायस।

साँभेरी—स्त्री० [अं०] घुसकायल।

साँसस—गुं० [अं०] १. कोई विशेष कार्य करने के लिए दिया जाने-
वाला अनुज्ञापत्र। २. अनुज्ञा।

साँ—स्त्री० [सं० लाङ्] धान, बाजरे आदि की मुष्काकर और गरम बाण्डू में भूनकर बनाई हुई खीले। लाबा।

पब—साँ का सन्—उक्त प्रकार की खीलों को पीसकर बनाया हुआ सन् जो बहुत लची रहता है और इनाँलिए दुर्लभ रोगियों को खिलाया जाता है।

स्त्री० [हिं० लाना=लगाना] १. आपस में विरोध उत्पन्न करना या एक को दुष्टि में दूसरे को तुच्छ या बुरा सिद्ध करने के लिए एक की बात दूसरे से जाकर कहना। इधर की बात उधर लगाना। चुगली।
पब—साँ-लुत्तरी।
क्रि० प्र०—लगाना।

साँ-लुत्तरी—स्त्री० [हिं०] १. चुगली। २. शिकायत।

वि० स्त्री० एक की बात दूसरे से कह करके आपस में विरोध करना अथवा एक की दुष्टि में दूसरे को तुच्छ या बुरा सिद्ध करनेवाली (स्त्री)।

साँद स्वीकर—गुं० [अं०] बिजली की सहायता से चलनेवाला एक प्रकार का प्रसिद्ध यंत्र जिसके द्वारा सवे तरह की आवतें इच्छानुसार तेज अथवा धीमी की जा सकती हैं।

साँ—गुं०—लाँडा (पिया)।

साँका।—गुं० [स्त्री०] साँकही।—लकड़ा।

साँकुटिक—वि० [सं० लकुट + क्तन्—इक] लकुट या डंडा धारण करने-
वाला।

पुं० १. धरैदार। २. चाकर। सेवक।
काण्ड—पुं० [अं०] १. बंजर आदि में क्षोभा के लिए लगाया जाने-
 वाला लटकन। २. गले में पहनी जानेवाली वह स्वर्णशाला जिसमें
 कटवान की हो।

काजय—वि० [सं० लजय+अण्] लजय-संबंधी। लजय का।
काजयिक—वि० [सं० लजय+उच्-इक] १. लजय-संबंधी। २.
 जिससे लजय प्रकट होँ। ३. लजयों के युक्त। ४ (अर्थ या प्रयोग)
 जो शब्द की लजया दक्षित पर अस्थित या उससे संबद्ध हो। ५.
 लजय के रूप में होनेवाला।

पुं० १. वह जो लजयों का ज्ञाता हो। लजय जाननेवाला। २. ऐसा
 छंद जिसके प्रत्येक चरण में ३२ मात्राएँ होती हैं।

काजयन्—वि० [सं० लजय+अण्] १. लजय-संबंधी। २. लजय
 बतलानेवाला। ३. लजयों का ज्ञान रखनेवाला।

काका—स्त्री० [सं०/लजय+अ+टाप्] काक नामक काक पदार्थ
 जो कुछ बूझों पर कीड़े बनाते हैं। दे० 'काक'।

काका-गृह—पुं० [सं० व० तं०] काक का वह गृह जिसे दुर्घोषण ने
 पाइकी की जला देने की इच्छा से बनवाया था पर इसमें आग लगने
 से पहले ही सूचना पाकर पाइब लोग इससे निकल गये थे।

काका-रस—पुं० [सं० व० तं०] महाभार जो पहले पानी में लास उवाल
 कर बनाते थे।

काका-बुल—पुं० [सं० मध्य० तं०] १. बाक। पलास। २. कौशाळ।
 कौसम।

कासिक—वि० [सं० कासा+उक्-इक] १. कासा संबंधी। कास
 का। २. कास का बना हुआ।

कास—वि० [म० लस, प्रा० कास] जो सव्या मे सी हुआर हो।
 पद—कास ठके की बात—अत्यन्त उपयोगी तथा मूल्यवान् बात।
 पुं०सी हुआर की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—१,०००,००
 मृदा—कास से लौह होना—मन कुबेर का निरुध्न होना।

किं० वि० बहुत अधिक। बहुतेरा। जैसे—मैंने उन्हें कास सम-
 साया पर उन्होंने कुछ सुनी नहीं।

स्त्री० [सं० कासा] कास रंग का एक प्रसिद्ध पदार्थ जो पलास,
 पीपल आदि के वृक्षों की टहनियों पर कई प्रकार के कास कीड़े की
 कुछ प्राकृतिक क्रियाओं से बनता है, और जिसका उपयोग मृत्तियों
 आदि बनाने, पत्थर और कोड़े की जोड़कर एक करने तथा रंग आदि
 बनाने के कामों में होता है। काह।

कासना—अ० [हिं० कास] १. बरतनों के छेदों पर कास लगाकर
 उन्हें बन्द करना। २. कास के धौल से मिट्टी के बरतनों पर लेप
 करना।

† सं०—लक्षना।

कासपती—पुं०—लक्षपती।

कासा—पुं० [हिं० कास] १. कास का बना हुआ एक प्रकार का रंग
 जिसे स्त्रियाँ सुन्दरता के लिए हाठों पर लगाती हैं।

किं० प्र०—अज्ञान।—लजान।
 २. गेहूँ के पीसों के लगनेवाला एक रोग जिससे पीसों की नाल काल रंग
 की होकर सड़ जाती है। इसे मेरखा या कुकुहा भी कहते हैं।

किं० प्र०—लगाता।

३. मारवाड़ के एक प्रसिद्ध वैष्णव भक्त।

वि० [स्त्री० लाकी] कास के रंग का। जैसे—लाकी गाय।

कासागृह—पुं०—कासागृह। (दे०)

का-खिराज—वि० [का०] (मृगि) जिसका खिराज अर्थात् लगान
 न देना। कर या लगान से मुक्त।

का-खिराकी—स्त्री० [का० काखिराज+ई (प्रत्य०)] १. वह मृगि
 जिस पर खिराज या लगान न देना पड़े।

२. कर या लगान से होनेवाली छूट।

वि०—का-खिराज।

काकी—वि० [हिं० कास+ई (प्रत्य०)] कास के रंग का। मटमैला।
 कासा।

पुं० उक्त प्रकार का मटमैला लाल रंग।

काकी—वि० [हिं० कास] १. कई कास। २. अत्यधिक, विशेषतः
 असक्य।

काग—स्त्री० [हिं० लगना] १. लगे हुए होने की अवस्था या भाव।
 लगाव। सपर्क। सबंध। जैसे—इस यज्ञान में बगल वाले मकान से
 काग है, अर्थात् उनमें से इसमें सहज में कोई आ सकता है। २. मानसिक
 दृष्टि से होनेवाली किसी प्रकार की लगाव। जैसे—अनुराग, प्रेम,
 लगन आदि। ३. प्रतिस्पर्धा। होड़।

पद—काग-बैट।

४. दुस्मनी। चैत। शत्रुता। ५. कोई ऐसा उपाय, तरकीब या
 उक्ति जो अन्ध-अन्ध या मूढ़ रूप से काम करती हो, और अन्ध
 सहता न दिखाई देती हो। जैसे—(क) काग का खेल। (ख) जाहू
 टोना या मन्-तन्व। ६. उक्त के आधार पर एक प्रकार का ऐसा स्वर्ग,
 जिसमें विशेष कौशल हो और जो जल्दी समझ में न आवे। जैसे—

किसी के पेट या गर्दन के आर पार (बास्तव में नहीं, बल्कि कौशल से
 दिखलाने पर के लिए) तलवार या कटार गई हुई दिखलाना। ७
 वह नियत धन जो विवाह आदि शुभ अवसरों पर बाह्यगों, मादों, नाइयों
 की अलग अलग रस्मों के संबंध में दिया जाता है। ८. सा-
 पीने का कच्चा सामान। रसद। (बुन्देल) ९. मृगि-कर। लगान।

१०. धातुओं की चूँक कर तैयार किया हुआ रस। अस्म। ११. एक
 प्रकार का मृग। १२. वह शेष जिससे शेषक का अर्थात् इसी प्रकार

का और कोई टोका लगाया जाता है।

वि० काम में आने या लग सकने के योग्य। उदा०—सुरी काग के
 ताकि तिम।—मिथीराज।

* अभ्य० [सं० लक्ष] १. तक। पर्यंत। २. निकट। पास।
 ३. किए। बास्ते।

काग-बैट—स्त्री० [सं० लक्ष-बैट वा हिं० काग-बैट+बैट] १. आपस
 में होनेवाली ऐसी प्रतिस्पर्धा पूर्ण स्थिति जिसमें कुछ बैट-विरोध
 का भाव भी सम्मिलित हो। २. दे० 'काग-ब' (मृग्य)।

कागल—स्त्री० [हिं० लगना] १. किसी पदार्थ के निर्माण में होनेवाला
 मध्य। जैसे—इस कारखाने पर ५० हजार कागल बैटी है।

किं० प्र०—अज्ञान।—बैटना।—लगना।

२. वह पृथिवीतल मध्य जो विष्णुवर्ध बनाई हुई किसी वस्तु पर पड़ता है

कीर जिसमें श्रम, पूंजी, स्वधन्या आदि का पुस्तकार भी सम्मिलित होता है।

साय-बंद*—स्त्री०=साय-बंद।

सायना—वि० [हि० सायना] किसी के पीछे लगा रहनेवाला।

पुं० १. वह व्यक्ति जो टोह लेने के लिए किसी के पीछे लगा हुआ हो।
२. ब्याप। शिकारी।

† अ०=लगना।

सायन—वि० [फ्रा० सायन] [भाब० सायरी] दुबला-पतला और कमजोर। असाक्त और कुंआ।

साय-स्वपेद—स्त्री० [हि०] १. सपक। सबक। २. वह तत्त्व या भाव जो किसी बात में अपत्यक्ष रूप से जुड़ा या लगा हुआ हो। ३. विशेषतः ऐसी बात जिसमें धोखे-धोखी की कोई और बात भी छिपी हो।

सायि—अध्य० [हि० सायना] १. कारण। हेतु। २. निमित्त। लिए। वास्ते। ३. तक। पर्यंत।

† स्त्री०=लगनी।

* स्त्री०=लगन।

सायिक—वि० [सं० लघु+इ+इक] जो हाथ में बड़ा लिपे हो।

पुं० गहूरेदार। प्रहरी।

सायि—वि० [हि० सायना] १. जो लग सकता हो या लगाया जा सकता हो। प्रयुक्त होने के योग्य। चरितार्थ होनेवाला। जैसे—बही नियम यहाँ भी लागू होता है। (मराठी से गृहीत) २. जो किसी प्रकार किसी के साथ लगा रहता हो। सम्बद्ध। जैसे—(क) बुरे दिनों में कोई लागू नहीं होता। (ख) सब जिते जी के लागू है। ३. वैरी। शत्रु। जैसे—क्यों उसकी जान के लागू हो रहे हो। ४ (पद्य) जो किसी से बदला लेने का अवसर ढूँढता रहता हो। ५. किसी जगह बराबर शिकार मिलने रहने से परच जाना।

मुहा०—(जानवर) लागू बनना या होना—जानवर विशेषतः हिरक जानवर का शिकार पाने के लिए परच जाना। जैसे—बीता उस पाँव में लागू हो गया है।

साये—अध्य०=सायि।

सायक—पुं० [सं० लघु+अच्] १. लघु होने की अवस्था या भाव। २. छोट्टा या संक्षिप्त करने की क्रिया या भाव। छोड़े शब्दों में अधिक भाव प्रकट करना। (श्रेयिणी) ४. हाथ की चालाकी या सफाई।

पद—हेल्ल सायक।
५. नीरोगता। ६. हल्कापन। ७. नपुंसक। ८. फूर्ती।

अध्य० जल्दी या फुरती से और सहज में।

सायधिक वि० [सं० लायक+इक्+इक] १. लघु रूप में लाया हुआ। २. लघु रूप में होनेवाला। ३. संक्षिप्त।

सायनी—स्त्री० [सं० लायक+हि० ई (प्रथम)] १. फुली। सीपता।

† हाथ की चालाकी या सफाई।

सायार—वि० [फ्रा०] [भाब० सायारी] १. जिसके पास कोई धार या उपाय न हो। निरुपाय। मजबूर। जैसे—पास में पैसा न होने से वह सायार है। २. जो असमर्थता के फलस्वरूप कुछ कर-पर या कड़ी आ-आ न सकता हो। असमर्थ।

अध्य० निरुपाय या विवधा होकर। जैसे—सायार वह नहीं है बल पड़ा।

सायारी—स्त्री० [फ्रा०] १. सायार होने की अवस्था या भाव। विवधाता। २. असमर्थतापूर्ण स्थिति।

सायी—स्त्री० [हि० इलायची] १. एक प्रकार का सुगन्धित धान और उसका चावल। २. इलायची।

सायीदाना—पुं०=इलायचीदाना।

साय्या—पुं० १=सायन। २=लक्षण।

सायी—स्त्री०=लक्ष्मी।

साय—पुं० [सं०/लाय (भक्तना)+अच्] १. शस्य। उषार। २. पानी में भिगोया हुआ चावल। ३. धान का लावा। खील।

† स्त्री० [सं० लज्जा] १. लाज। शरम। हवा।

पद—साय के अहाज=अत्यन्त लज्जाशील। उदा०—विना ही अलौकिक रीति लाज के अहाज के।—भूषण।

मुहा०—साजो भरना=लज्जा के मारे सिर न उठा सकता।

२ प्रतिति। भाव-सम्मान।

मुहा०—साज रखना=प्रतिति बचाना। अप्रतिष्ठित न होने देना।

साज बचाना, रखना या सम्हालना=लज्जित या तिरस्कृत होने से बचना। (मिस्री की) लाज होना=किसी की प्रतिष्ठा, रक्षा आदि का भार अपने ऊपर लेना।

स्त्री० [सं० रज्जु] १. रस्सी। २. कूट से पानी खींचने का रस्सा।

लायक—पुं० [सं० लाय+कन्] धान का लावा।

लायना—अ० [हि० लाय+ना (प्रथम)] लज्जित होना। शरमाना।

† सं० किसी को लज्जित या शरमित्या करना। लजाना।

साज पेया—स्त्री० [सं०] खोई या लावे की मई। खील का मई।

सा-बबान—स्त्री० [अ०+फा०] गाली।

साय-भस्त—पुं० [सं० प० त०] लाज पेया जो पच्ची रूप में रोमी की दिया जाय।

सायबंत—वि० [हि० लाय+बत (प्रथम)] [स्त्री० लायवन्ती] लज्जादार। हवादार।

सायवती—स्त्री० [हि० लजाव] १. लज्जाशील। स्त्री २. लजाव नाम का पीसा। छुई-मुई।

सायबर्द—पुं० [सं० राजबर्दक से फा०] [वि० लायबर्दी] १. प्रायः अगली या हलके नीले रंग का एक प्रसिद्ध बहुमूल्य पत्थर या रत्न जिसके तल पर सुनहली चिचियाँ होती हैं। राखटी। २. विलायती नील जो गंधक के भेल से बनता और बहुत बड़िया तथा गहरा होता है।

सायबर्दी—वि० [फ्रा०] लायबर्द के रंग का। गहरा नीला।

सा-जबाब—वि० [फ्रा०] १. जिसके जबाब जर्मात जोड़ या बराबरी का और कोई न हो। अनुपमान। बेजोड़। २. (व्यक्ति) जो जबाब या उत्तर न दे सकता हो। निश्चर। ३. (बात) जिसका जबाब या उत्तर न दिया जा सकता हो।

साय-बाधु—पुं० [सं० प० त०] खोई या लावे का सपु।

साय-होम—पुं० [सं० तु० त०] प्राचीन काल का एक प्रकार का होम, जिसमें, खोई या धान का लाया आहुति में दिया जाता था।

कावा—स्त्री० [सं० काव+टाप्] १. बावक। २. भूने हुए धान की बीज। कावा।

काविय—वि० [अ० काविम] आवश्यक और उचित। कर्तव्य के विचार से अपरिहार्य।

कावियो—वि०=कावियम।

काव—पुं० [सं०] १. एक प्राचीन देश जहाँ अब बर्मा, अहमराबाद आदि नगर हैं। गुजरात का एक भाग। २. उक्त देश का निवासी। ३. कपडा, विशेषतः फटा-पुराना कपडा। ४. लादानुभास। स्त्री० [हिं० लट्ट?] १. ऊँचा, बड़ा और मोटा खना। जैसे—वालाक के बीच में गाड़ी हुई लाट। २. उक्त प्रकार की कोई वास्तु-रचना। मीनार। जैसे—कुतुबमीनार की लाट। ३. वह कबा बांध जो किसी सैनाप के पानी के बहाव को रोकने के लिए बनाया जाता है।

पुं० [अ० लाई] विट्ठिच शासन में भारत के किसी प्रांत या देश का सबसे बड़ा शासक। गवर्नर।

पुं० [अ० लाट] व्यापारिक क्षेत्र में कटी-फटी, टूटी-फूटी या पुरानी रस्सी हुई बहुत सी चीजों का वह विभाग या समूह जो एक ही साथ रखा, बेचा या नीलाम किया जाय।

पह—लाट-घाट, लाट-बंदी।

पुं०=लाट।

काव-भाट—पुं० [अ० काट+बेर+हिं० घाट+स्थान] व्यापारिक क्षेत्र में वह स्थिति जिसमें कटा-फटा या रहतिया माल एक साथ सस्ते दामों पर बिक बेच दिया गया हो। जैसे—इस फूकान में तो अधिकतर काट-घाट का ही माल रहता है।

काट-बंदी—स्त्री० [अ० लाट+फा० बंदी] चीजों के अलग-अलग विभाग करके उनकी राशि या बर्ग बनाने की क्रिया या भाव।

काटरी—स्त्री० [अ०] रुपये या सामान के रूप में पुरस्कार देने की व्यवस्था जिसमें बिके हुए टिकटों या दिवस हुए कुपनों के संख्याओं की चिट्ठी डाककर बिनेला का नाम निरिचय किया जाता है।

काटा—पुं० [देश०] भूने हुए मट्टए और तिखों को फूँकर बनाए हुए लट्टू।

काटानुभास—पुं० [सं० काट-अनुभास, मध्य० सं०] एक प्रकार का शब्दालंकार जिसमें शब्दों की पुनरुक्ति तो होती है परन्तु अन्वय में हेर-फेर करने से तात्पर्य भिन्न हो जाता है। जैसे—पूत सपूत तो क्यों मन संघपा। पूत कपूत तो क्यों मन संघपा। (कहो०)

काटिक—स्त्री०=लाटी (साहित्यिक शैली)।

काठी—स्त्री० [सं० काट+अपु+ठोप्] संस्कृत साहित्य में रचना की वह विशिष्ट प्रणाली या शैली जो काट तथा उसके आस-पास के देशों में प्रचलित थी और जो वैद्यों तथा पांजाबी के मध्य की रीति थी, और पौड़ी की ही तरह मयाजक, रोड, रोड, आदि उच्च रथों के लिए उपयुक्त मानी जाती थी। काटिका।

स्त्री० [अपु० लट लट+भाडा या विपरिधा होना] वह अवस्था जिसमें मूँह का पूक और हीँक सूख जाते हैं।

कि० प्र०=लगना।

काठीय—वि० [सं० काट+छ+ईय] लाट नामक देश का। लाटक।

काठ—स्त्री० [सं० यट्टि पुं० हिं० लट्ट] १. कोरू में कपी हुई वह बल्ली जो बराबर बुझती रहती है। २. दे० 'लाट'।

काठा-काठी—स्त्री० [हिं० काठी] आपस में लाठियों से होनेवाली मार-पीट या लड़ाई।

काठी—स्त्री० [सं० यट्टी; प्रा० लट्टी] ठस या ठोस बाँस का १-२ फुट लंबा टुकड़ा।

कि० प्र०=बलना।—बलाना।—बाँधना।—मारना।

२. लासभिक रूप में, तहारा। जैसे—यही लकड़ा ती हुडगपे की लाठी है।

काठी-बाँध—पुं० [हिं०+अ०] लोगों को तितर-बितर करने के लिए पुलिस का बाँध आदि पर लाठियाँ बलाना।

काठ (इ)—पुं० [सं० ललन] बच्चों को प्रसन्न करने या रखने के लिए प्रेमपुंय व्यवहार। हुलार।

कि० प्र०=करना।—लड़ाना।

काठ-बन्धा—पुं० [देश०] एक प्रकार का ताँप जो प्रायः यूर्ध्व पर रहता है।

काठ-बन्दी—वि० [हिं० लाट+लड़ाना] १ जिसका बहुत अधिक लाड़ किया गया हो। २. प्यार। हुलार।

काड़ला—वि० [हिं० काड़+ला (प्रत्य०)] [स्त्री० लाडली] जिसका या जिसके साथ बहुत लाड़ किया जाय। प्यार। हुलार।

काड़ा—स्त्री० [हिं० लाड़] [स्त्री० लाठी] बर। पूरहा। (पश्चिम)

काठी—स्त्री० [सं० लाड़ा का स्त्री०] नव-विवाहिता बच्ची। उदा०—लिखनी सकी रुसमी लाठी।—मिथीराज।

काठू—पुं० [हिं० लड्डू] १. लड्डव। मोक्क। २. दक्षिणी नारंगी।

काठी—स्त्री० [हिं० लाठ] ऐसी लड़की या युवती जिसका बहुत लाठ हुआ हो या होता हो।

लडिया—पुं० [देश०] वह दलाल जो दुकानदार से मिला रहता है और शाहूको जो बीला देकर उसका माल विक्रयता है।

लडियापन—पुं० [हिं० लडिया+पन (प्रत्य०)] १. लडिया होने की अवस्था या भाव। २. बालाकी। सुवृत्ता।

लास—स्त्री० [?] १. पैर के नीचे का भाग। पवि। २. जन्त अंग से किया जानेवाला आघात या प्रहार। पदाघात। उदा०—काहू लास, चपेटन केहू।—तुलसी।

कि० प्र०=उड़ना।—देना।—मारना।—लगाना।

मुहा०—लास लासा=(क) पैरो की ठोकर या मार सहना। (ख) मार खाना। लास बलाना=पैर से आघात या प्रहार करना। लास जाना=गो बैस आदि का बूध देते समय दुहनेवाले का लास मार कर दूर हट जाना। (किसी चीज को 'या पर) लास मारना=बहुत ही तुच्छ समझकर दूर करना या हटाना। जैसे—वह लीकरी को लास मार कर बर चला गया। (काट या रोक को) लास मार कर बड़ा होना=बहुत अधिक रणगावस्था में से विशेषतः स्वियो का प्रसव के उपरान्त, नौरोग होकर चलने-फिरने के योग्य होना।

कासर—स्त्री० [हिं० कसरी] पुराना चूना।

कासरना—अ० [हिं० कास] १. चलते-चलते थक जाना। २. पथ-भ्रष्ट होना। उदा०—विर पुन हित्दुहसन, कासरना मग जोष

लगा।—दुरसाजी।
लातीनी—वि० [अ०] लैटिन देश का।
 पु० लैटिन देश का निवासी।
लती० लैटिन देश की भाषा।
लाय—गु० [?] बहाना। हीला।
लाय—स्त्री० [हिं० लायनी] १. लादने की क्रिया या भाव। लदाई।
पद—साय-फाई।
 २. मिट्टी का वह ढाका जो पानी निकालने की बेंकी के दूसरे सिरे पर लगा रहता है।
स्त्री० [?] १ उदर। पेट।
मुहा०—**लाय निकलना**—पेट का फूल कर आगे निकलना। तोंद निकलना।
 २. अँतड़ी। आंत।
लायना—स० [स० लय, प्रा० लाइ=प्राप्त+ना (प्रत्य०)] १ किसी आदमी, जानवर या चीज-पर बहुत सी वस्तुएँ डेर या भार के रूप में रखना। जैत—गाड़ी या बैल पर माल लादना। २ किसी पर उसकी इच्छा के विरुद्ध अपना बलपूर्वक किसी प्रकार का दायित्व या भार रखना। ३ किसी पर आवश्यक या उचित से अधिक दायित्व या भार रखना। जैंगे—उपने साग काम मूल पर लाद दिया है।
 सर्व० क्रि०—देना।
 ४ कुतूहल रखने समय विपरीत को अपनी पीठ पर उठा लेना। (पहल०) सर्व० क्रि०—लेना।
लाय-फाई—स्त्री० [हिं० लादना+फाईना] बीजे लादने और बाधने की क्रिया या भाव।
लायिया—गु० [हिं० लादना+इया (प्रत्य०)] वह जो गाड़ी, पशु आदि पर बोझ लादकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाता हो।
लायी—स्त्री० [हिं० लायना] १ पशु पर लादा जानेवाला बोझ।
 २ कपडों की वह गठरी जो घोषी गधे पर लादता है।
क्रि० प्र०—लादना।
 ३ बहुत बड़ी गठरी।
लायना—स० [स० लय प्रा० लाइ] प्राप्त करना या पाना। उदा०—देवाधि देव के लार्थे दूने—प्रियोरात्र।
लाया—वि० [हिं० लायना] १ कठिनता से प्राप्त किया हुआ। २ अच्छा। बढ़िया।
लायंग—गु० [देवा०] एक प्रकार का अगूर जो कमाऊँ और देहरादून में होता है। इससे अर्क निकाला और धाराब बनाई जाती है।
लाय—गु० [अ० लयि] वह समतल मैदान जिसमें घास उभी हुई हो।
लाय डेनिंस—गु० [अ०] गेंद का एक प्रकार का खेल जो लॉन अर्थात् छोटे मैदान में खेला जाता है।
लायत—स्त्री० [अ० लयतत] दृष्टि या निन्दनीय आचरण या व्यवहार करने पर किसी की कही जानेवाली तिरस्कारपूर्ण बातें।
क्रि० प्र०—देना।—पडना।—भेजना।
लायती—वि० [हिं० लायत+ई (प्रत्य०)] १. जो सदा लायत मला-मल सुनने का अभ्यस्त हो। सदा फटकार सुननेवाला। २ परम निन्दनीय और घृणित या दुःशाचारी।

लाया—स० [हिं० लेना+आना, ले आना] १. कोई वस्तु उठाकर या व्यक्तिके को अपने साथ चलाकर कहीं से ले आना या पहुँचाना।
सर्पो० क्रि०—देना।
 २. समझ या सामने लाकर उपस्थित करना। जैसे—किसी के सामने कोई मामला या विषय लाना। ३ उत्सव या पैदा करना।
लाय—[हिं० लाय=आग+ना (प्रत्य०)] आग लगाना। जलाना।
 † स० [हिं० लायना] १. सलम करना। लगाना। उदा०—मन मुझ पेशा हरि चित लाए। २. समय व्यतीत करना। दिन लगाना। उदा०—हरि गए परदेश बहुत दिन लाए री।
पु० किर्या पर लगाया हुआ अपना दोष या लोछन। जैसे—किसी पर लाने लगाना।
क्रि० प्र० लगाना।
लाया-बंदी—स्त्री० [हिं० लाना=लगाना+फा० बंदी] श्वेत की वह पैमाइश जा जात जानेवाले हल्की की सख्या के विचार से की जाती है।
लाये—अव्य० [हिं० लाना=लगाना] वास्ते लिए। (सुदेल०)
लाय—गु० [ग० √ल्य (कयन)+यञ्] बोलना। कयन। जैसे—वातालाय।
लायता—वि० [स० ला+हिं० पता] १ जिसका पता न लगे। खोया हुआ। २ जो दस प्रकार कही चला गया या छिप गया हो कि किसी तरह उनका पता न लगा सके। ३ (पत्र आदि) जिस पर पता न लिखा गया हो और यों ही डाक में छोड़ दिया गया हो।
क्रि० प्र०—रहना।—होना।
लाय-रवाह—वि० [अ०+फा०] [भाय० लाय-रवाही] १. जिसे किसी बात की परवाह या चिन्ता न हो। निश्चिन्त। बे-फिकर। २ जो अपने काम पर डीक तरह से ध्यान न देता हो। असावधान।
लाय-रवाही—स्त्री० [अ० ला+फा० परवाह] १ लाय-रवाह होने की अवस्था या भाव। बे-फिकरी। २ असावधानी। प्रमाद।
लायसी—स्त्री०—लपरी।
लायिका—स्त्री० [स० √ल्य+शुल=अक+टाप, इत्य्] १. एक तरह की पहेली जिसके ये दा. भेद होते हैं—अतर्लायिका और बहिल्लोयिका।
लापो (चिन्)-वि० [स० √ल्य+पिनि] १. बीजनेवाला। २. पदचात्ताप करनेवाला।
लाय्य—वि० [म० √ल्य+प्यल्] १. बोलने या कहने योग्य। २. जिससे बात-चीत की जा सके। समाध्य।
लाय—स्त्री० [फा०] १. लोचनी-वती बातें होने की क्रिया या भाव।
 २ इस प्रकार कही जानेवाली बात। बीग।
लाय—वि०—लार।
लाय-दुद—वि०—अरुकी। आवश्यक।
लाय-दुधी—वि०—लायदुद।
लाय—गु० [म० √ल्य (प्राति)+यञ्] १ कोई बीज हाथ में आना। प्राप्त होना। मिलना। प्राप्ति। लभित्। जैसे—पुण्य का लाभ होना। (जैग) २ किसी प्रकार का होनेवाला हित। उपकार। फायदा। (बिनिफिट) जैसे—दवा से होनेवाला लाभ। ३. रोज-गार आदि में होनेवाला मुनाफा (प्रॉफिट)

लाम-कारक—वि० [सं० वं० तं०] जिससे लाम होता ही।

फल करानेवाला। फायदेमें।

लामकारी (विभ्)—वि० [सं० लाम/कृ+गिनि] लामकारक।

लाम-बायम्—वि० [सं० वं० तं०] जो लाम करता ही। लाम देने-वाला।

लाम-बय—पुं० [सं० मध्य० सं०] वह मय या अहंकार जिसके कारण मनुष्य अपने आपकी लामबाला और दूसरे को हीन-पुण्य समझे। (अन)

लाम-स्थान—पुं० [सं० वं० तं०] जन्म-कुचली में लम से त्पारदर्वा स्थान जो बन-चाय, संताम, विद्या, आयु आदि का सूचक होता है। (फलिज-न्यासिष)

लामांतराय—पुं० [सं० लाम-अंतराय, सं० तं०] वह अंतराय कर्म जिसके उदय होने से मनुष्य के लाम में बिच्छ्न पड़ता है। (अन)

लामाश—पुं० [सं० लाम-अश, वं० तं०] लाम का वह अंश जो किसी का रक्षाने के हिस्सेदारों को उनके द्वारा लगाई हुई पूंजी के अनुपात में मिलता है। (विजिबेन्ड)

लामाशी (विभ्)—पुं० [सं० लाम/अर्थ (चाहना)+गिनि] १. वह जो किसी प्रकार के लाम की कामना करता ही। २. दे० 'हित-धिकारी'।

लामालाम—पुं० [सं० लाम-अलाम, इ० सं०] लाम और अलाम। हानि-लाम। (प्राक्कि एक लांस)

लाम—पुं० [फा०] १. सेना। फौज।

मुहा०—लाम बाँधना=किसी पर चढ़ाई करने के लिए सेना इकट्ठी करना।

पुं० [अ०] अरबी वर्ण-माला में ल् (लघुतम) ध्वनि की इकाई के सूचक अक्षर की संज्ञा।

पब—लाम-काक—गन्दी, बेहूदी और वाहिदात बात। अप-सब्ध। कि० प्र०—कहना।—बकना।

मुहा०—लाम बाँधना=चढ़ाई के लिए सेना तैयार करना।

२. जन-समूह। भीड़-भाड़।

मुहा०—लाम बाँधना=बहुत से लोगों को इकट्ठा करना।

कि० वि० दूरी पर। दूर।

लामक—पुं० [सं० लामपत्रक] लस की तरह का पाले रग का एक प्रकार का तुण जो ओषधि के रूप में काम आता है।

लामकअक—पुं० [सं०/ल+निषव्, लामपत्रक, वं० सं०+कप्] १. लामज नामक तुण। २. उदीर। लस।

लामन—पुं० [?] १. भूलना या लटकना। २. लहंगा। उदा०—लामन लिखियो सोसली चलत फिरत रंग जय।—गीत।

लाम-बंदी—स्त्री० [हिं० लाम+फा० बंदी] सेनाओं की घारमासो से सुसज्जित कर युद्धार्थ प्रयाण के लिए तैयार रखना। युद्ध-सज्जा। (सोबिलाइजेसन)

लामा—पुं० [ति० लामा=मठापीस] तिब्बत में बौद्ध धर्मावलंबियों के युद्ध जो बहते के सर्वोच्च शासक भी है। जैसे—दलाई लामा, पचन-लामा।

पुं० [रेक देव की भाषा] पास खाने और पामूर करनेवाला एक प्रकार का जंतु जो अंट की तरह होता है। यह बर्षियों अमेरिका में

पाया जाता है। इसका बूक विषैला होता है, इसे पागी की आघचकता नहीं होती।

†वि० [स्त्री० लाम्पी] = लंबा।

लाम्पी—स्त्री० [देश०] राजपूताने का एक प्रकार का फल जो तरकारी बनाने के काम आता है।

लाम्पे—अव्य० [हिं० लाम=दूर] १. कुछ दूरी पर। २. एक और। हुटकर। जैसे—लामे रखना। (पूरज)

लाम्पे—स्त्री० [सं० अलात; प्रा० अलाप] १. आग की लपट। ज्वाला। ली। २. अनि। जग।

लाम्पे—वि० [अ०] [भाव० लामकी] १. उचित। ठीक। वाजिब। २. उपयुक्त। मूनासिब। ३. गुणवान्। गुणी। ४. कुछ कर सके के योग्य। समर्थ।

लामपियत—स्त्री० [अ०] लामक होने की अवस्था या भाव। लामकी। योग्यता।

लामकी—स्त्री० [अ० लामक+ई (प्रत्य०)] १. लामक होने की अवस्था, धर्म या भाव। २. योग्यता।

लाम्पी—स्त्री०=इलाची।

लामपे—पुं० [हिं० लगाना=बदले में देना] १. नकद दाम देकर बेची जानेवाली वस्तु। २. वह वस्तु जिसे रेटून रखकर ऋण लिया गया हो।

लार—स्त्री० [सं० लाला] १. मूँह में से तार के रूप में निकलनेवाली बूक।

मुहा०—लार टपकना=कोई चीज देखकर या सुनकर उसे पाने के लिए लाचार्य होना।

२. लचीला पदार्थ। लासा। लुआव। ३. किसी की जाल या धोखे में फँसानेवाली चीज या बात।

मुहा०—लार लगाना=किसी की जाल या धोखे में फँसाने का उपाय या काम करना।

स्त्री० [?] जवली। कतार। पकित।

अव्य० [राज० लार=रीछे] किसी के पीछे या साथ लगकर।

उदा०—दिया लिया तेरे संग चलना, और नहीं तेरे लार।

लारी—स्त्री० [अ०] बड़ी मोटर गाड़ी, जिसमें विशेष रूप से सवारियाँ और उनका सामान डोया जाता है।

† अव्य०=लार (पीछे या साथ)।

लार—पुं०=लार (लहड़)।

लारे—अव्य० [?] १. वास्ते। लिए। २. आधार पर। उदा०—राग को आदि जित्ती चतुर्दशी सुजान कहै सब याही के लारे।—मुजान।

लारे—पुं० [अं०] १. परमेस्वर। ईश्वर। २. मालिक। ३. जमींदार। ४. इसलोक के राजा द्वारा उच्च कौटिक के कार्यकर्ताओं को प्रदात की जानेवाली एक उपाधि।

लार—पुं० [सं० लालक से] १. छोटा और प्रिय बालक। प्यार बच्चा। २. पुत्र। बेटा। उदा०—तेरे लाल मेरो माखन खावी।—दूर। ३. बालक। लक्षका। ४. प्रिय व्यक्ति। ५. श्री कृष्ण का एक नाम।

पु० [सं० लालन] दुलार। लाड।

स्त्री० १.—लालसा। २.—लार।

पुं० [अ० लअल] १. भागिक या भागिक नामक रत्न। २. भागिक का रत्न।

मुहा०—लाल उगलना=बोलने के समय बहुत धच्छी और प्यारी बातें कहना।

वि० १. उक्त रत्न के रंग का। रक्त वर्ण का। सुखें। प्रैते—लाल कपड़ा, लाल कामज। २. आवेश, क्रोध तथा लज्जा आदि के कारण जिसका वर्ण रक्त हो गया हो। जैसे—अबि या चेहना लाल होना। तप कर लाल अगारा होना।

मुहा०—लाल पड़ना या होना=क्रुद्ध होना। नाराज होना।

१. (बौदर के खेल की गोटी) जो चारों ओर से घूमकर विलकुल बीच-बाहे खाने में पहुँच गई हो, और जिसके लिए कोई धाल बाकी न रह गई हो।

मुहा०—(किसी की) गोटी लाल होना =यथेष्ट प्रसिद्धि या फल-सिद्धि होना।

४. (बौदर के खेल का खिलाड़ी) जिसकी सब गोटीयाँ बीच के घर में पहुँच चुकी हो और जिसे कोई धाल बलना बाकी न रह गया हो। ऐसा खिलाड़ी जीता हुआ समझा जाता है। ५. (खिलाड़ी) जो खेल में औरों से पहले जीत गया हो। ६. धन-सम्पत्ति, सत्तान आदि से परम सुखी।

मुहा०—लाल होना या लालो लाल होना=यथेष्ट सम्पन्न और सुखी होना।

पु० १ एक प्रसिद्ध छोटी चिबिया जिसका शरीर कुछ मुरापन लिये लाल रंग का होता है। इसकी मादा को 'मुमिया' कहते हैं।

२. बीपायों के मूँह में होनेवाला एक प्रकार का रोग।

लाल अंबारी—स्त्री० [हिं० लाल+अंबारी] एक प्रकार का पट्टा जिसके काले दवा में काम आते हैं।

लाल अगिन—पुं० [हिं० लाल+अगिन] भूरे लाल रंग का एक पत्थर, जिसका लाल नीचे की ओर सफेद होता है।

लाल आलू—पुं० [हिं० लाल+आलू] १. रतालू। २. अरई। चूड़या।

लाल इलायची—स्त्री० [हिं० लाल+इलायची] बड़ी इलायची।

लालक—वि० [सं० लल+इच्छा] श्बुल—अक] (लालन अर्थात्) दुलार-प्यार करनेवाला।

पुं० विद्वेषक।

लाल कच्चा—पुं० [हिं० लाल+कच्चा] गजकपर्ण आलू। बटा।

लाल कलमी—पुं० [हिं० लाल+कलमी] चांदनी या गुल चांदनी नाम का पीसा और उसका फूल।

लाल कलन—पुं०=नामकीन।

लाल कोठी—स्त्री० [हिं०] श्वयचारिणी स्त्रियां का अर्द्धा जहाँ वे कसब बनाती हैं।

लाल धास—स्त्री० [हिं० लाल+धास] गोमूत्र नामक तृण।

लाल धवन—पुं० [हिं०+सं०] रक्त चवन।

लालध—पुं० [सं० लालसा] [वि० लालची] कोई चीज पाने या लेने

के लिए मन में होनेवाली ऐसी अत्यधिक चाह या लालसा को अभुषित या अधोमन होने के कारण सहसा बीरो पर प्रकट न की जा सकती हो। लोलुपतापूर्ण लोभ। जैसे—बहुत लालच करना अच्छा नहीं होता।

लालचही—वि०—लालची।

लालची—वि० [हिं० लालच+ई (प्रत्य०)] बहुत लालच करनेवाला। लोभी।

लाल चीता—पुं० [हिं० लाल+चीता] लाल फूलों वाला चित्रक या चीता।

लाल चीनी—पुं० [हिं० लाल+चीनी] एक प्रकार का कच्चा, जिसका सारा शरीर सफेद और सिर पर बहुत सी लाल बिबियाँ होती हैं।

लालदेन—स्त्री० [अं० लैटनं] किसी प्रकार का ऐसा आधान या उपकरण जिसमें तेल भरने का खजाना और जलाने के लए बत्ती लगी रहती है और जलती हुई बत्ती को बुझाने से बचाने के लिए चारों ओर शीसे का अजया और किसी प्रकार का आवरण भी लगा रहता है। कंबील।

लालड़ी—स्त्री० [हिं० लाल (रत्न)+ड़ी (प्रत्य०)] नरथ, बाली आदि में लगाया जानेवाला एक तरह का नग।

लालबाना—पुं० [हिं० लाल+बाना] लाल रंग की शसस्त्र। (पूरब) लालन—पुं० [सं० लाल+इच्छा]+गिच्च्+लृट्—अन] यथेष्ट प्रेम-पूँक बालकों का आदर करना। लाड-प्यार।

पद—लालन-पालन।

† पुं० [हिं० लाल] १. प्रिय पुत्र। प्यारा बेटा। २. बालक। लड़का।

† स्त्री० [?] चिरीजी। पयाल।

लालना—सं० [सं० लालन] १. लाड या दुलार करना। उदा०—लालन जोग लखन लघु लोने—गुलमी। २. पालन-पोषण करना। पालना। उदा०—कलप बेलि जिमि बहु विधि लाली।—गुलसी।

लालनीच—वि० [सं० लल+गिच्च्+अनीयर] जिसका लालन करना उचित हो या किया जाने को हो।

लाल-पगड़ी—स्त्री० [हिं०] पुलिस का सिपाही या अधिकारी। (उत्तर-प्रदेश)

लाल-पतंग—पुं० [हिं०] कपास के पीछों में लगनेवाला एक प्रकार का लाल कीटा।

लाल पानी—पुं० [हिं० लाल+पानी] धारा। मद्य।

लाल पिलका—पुं० [हिं० लाल+पिलका] सफेद बैनों तथा बुझवाला लाल रंग का एक प्रकार का कच्चातर।

लाल पेठा—पुं० [हिं० लाल+पेठा] कुम्हड़ा।

लाल-कीता—पुं० [हिं०] १. लाल रंग की पट्टी या फीता जिससे सरकारी कार्यालयों में कागज-पत्र, नसियथाँ आदि बाँधी जाती है। २. लाक्षणिक और ब्यप्यारत्मक रूप से सरकारी कार्यों के सहायन निरर्थक आदि में लगनेवाली अनारथक देर। शीथ-सूत्रता। (रेडटेप)

लाल-मुसलमन्—पुं० [हिं० लाल+मुसल] ऐसा मुसल अर्थात् जो बास्तब में जाना तो कुछ भी न हो, फिर भी अटकल-पच्चा और अटकल-पंतिन अनुमान लगाकर कुछ बातों का कारण तथा समस्यार्थों का समाधान करने में न बूझता हो।

शाल-बीज—स्त्री० [हि०] सेविका की परिभाषा में निम्न कोटि की बीर कसब कमानेवाली बेश्या।

शाल-बैग—मू० [हि० शाल+मु० बैग] १. एक कल्पित पीर। २. लाल रंग का एक प्रकार का क्रीड़ा।

शाल-बैची—मू० [हि०] शाल बैग नामक पीर का अनुयायी अर्थात् मुसलमान भंगी।

शाल-भक्त—मू० [हि० शाल+स० भक्त] कोई या लाबा का पकामा हुआ भाल, जो रोगियों को पथ्य में दिया जाता है।

शाल-भरंडा—मू० [हि०] एक तरह का छोटा भाड़ा।

शाल-भजन—मू० [हि० शाल+भजि] १. श्री कृष्ण। २. लाल रंग का एक प्रकार का तौता जिसकी बीच गुलाबी, बुभ काली और बैंगे हरे होते हैं।

शाल-बिन्धे—मू० [हि०] १. एक तरह का छोटा पीषा जिसमें फली के आकार के फल होते हैं। जो आरभ में हरे तथा पकने पर लाल हो जाते हैं। २. उक्त पीषे की फली अथवा उसकी बुझनी को कट्ट, तीक्ष्ण स्वाद वाली होती है और यमकीन व्यंजनों में डाली जाती है।

शाल-मुँह—मू० [हि०] मुँह में निकलने वाले रंग के छाले जिसकी गिनती रोग में होती है। निम्ना का एक प्रकार।

वि०—लाल मुँहवाला।

शाल-मुनियाँ—स्त्री० [हि०] एक प्रकार की छोटी बिकिया।

शाल-मुद्रा—मू० [हि०] १. एक प्रकार का पहारी चिकारी पत्थी जिसका चिकार किया जाता है। २. मुल-असलकी नाम का पीषा और उनका फूल। मधुर-शिखा।

शाल-मूकी—स्त्री० [हि० शाल+मूकी] शलजम। शलगम।

शालरी—स्त्री०—शालरी।

शाल-लाइ—मू० [हि० शाल+लाइ—लड्ड] एक प्रकार की नारंगी।

शाल शककर—स्त्री० [हि० शाल+शककर] बिना साफ की हुई बीनी।

बाँड।

शाल-सफरी—स्त्री० [हि०] अमरूप।

शाल-समुर—मू०—शाल सागर।

शाल-सर—मू० [हि० शाल+सर] एक प्रकार का पत्थी जिसकी गरदन और सिर लाल रंग का होता है।

शालसा—स्त्री० [स०√लस(वीर्य)+मह्, द्विव्, +अ+टाप्] १. बहुत चिनी से मन में बनी रहनेवाली इच्छा। साथ। जैसे—जाँ के दसनी को शालसा पूरी न हो सकती। २. गमिणी की इच्छा। दोहव। ३. अनुभव। ४. बेद। ५. एक प्रकार का नृत।

शाल-साग—मू० [हि० शाल+साग] भरसा नाम का साग।

शाल सागर—मू० [हि० शाल+स० सागर] भारतीय महासागर का वह अथ जो अरब और अफ्रीका के बीच में पड़ता है और जिसके पानी में कुछ कलाईं झलकती हैं।

शाल-सिन्धी—मू० [हि० शाल+सिन्धी] मूर्गा।

शाल-सिन्ध—मू० [हि० शाल+सिन्ध+सिन्ध] एक प्रकार की बरतज जिसका सिर लाल होता है।

शालसी—वि० [स० शालसा+ई (प्रत्य०)] शालसा या अधिलाषा करनेवाला।

शालसा—स्त्री० [स०√लस (इच्छा)+गिच्+अप्+टाप्] मुँह से निकलनेवाली लार। फूल।

शालसा—मू० [स० शालसा] १. प्रायः कायस्थो, बलियो, पञ्जाबियो आदि के नाम के पहले लयनेवाला आबरूसूचक शब्द। जैसे—लाला लालनार राय। २. बातचीत में प्रयुक्त होनेवाला एक प्रकार का आबरूसूचक संबोधन।

शालसा—(फिरी से) लाला भइया करना—फिरी को आबरूपूर्वक संबोधन करते हुए उससे बातचीत करना या उसे समझाना-मुझाना। बीच बीच में लाला, भइया आदि मध्याह्नसूचक संबोधन करते हुए बातें करना। जैसे—तुम्हें लाला भइया करके उनसे अपना काम निकालना चाहिए। ३. कायस्थ जाति या कायस्थों का सूचक शब्द। जैसे—ये लाला लोग बहुत धतुर होते हैं। ४. छोटे बच्चों के लिए प्रेमसूचक संबोधन। ५. [फा०] पान्से का लाल रंग का फूल जिसमें प्रायः काली लस-लस रंगी पंजा होती है। गुले लाला।

वि०—लाल।

शाला-पथि—स्त्री० [स० मध्य० सं०] मुँह के अन्धर की वे प्रथियाँ जो लाला या लार उत्पन्न करती हैं। (संलघुचर ग्लेब)

शालादिक्—वि० [स० ललाट+टप्—इक्] १. ललाट अर्थात् मस्तक संबंधी। २. लाक्षणिक अर्थ में, नियति या भाग्य से संबंधित अथवा उस पर आधारित। ३. सतर्क। ४. निकरमा। व्यर्थ।

शाला-प्रमेह—मू० [स० प० त०] प्रमेह का वह प्रकार जिसमें पेशाब लाला (लार) की तरह तार बाँधकर होता है।

शाला-मेह—मू०—लाला प्रमेह।

शालावित्त—मू० कृ० [स० शाला+व्यच्+वत्] १. जिसके मुँह में बहुत अधिक लालक के कारण लाला अर्थात् लार या पानी भर भाग्य हो। २. जिसका अच्छी तरह लालन अर्थात् दुलार या लाड किया गया हो।

शाल-विष—मू० [स० ब० सं०] ऐसा जंतु जिसके मुँह की लार में विष रहता हो। जैसे—मकड़ी, छिपकली आदि।

शाला-लक्ष—मू० [स० प० त०] १. मुँह से लार बहना। २. वह जिसके मुँह से लार बहती हो। जैसे—छिपकली, मकड़ी।

शाला-लाव—मू० [स० प० त०] १. मुँह से घूक या लार गिरना। २. मकड़ी का जाला।

शालि—स्त्री०—शालसा। उदा०—ये सोरहों सिंगार बरनि के करहि देवता लालि—जायसी।

शालित—मू० कृ० [स०√लत् (इच्छा)+गिच्+वत्] १. जिसका लालन किया गया हो। दुलारा हुआ। २. जो पाला-पोसा गया हो।

शालितक—मू० [स० शालितः कन्] वह म्रिय जीव या प्राणी जिसका लालन-पालन किया गया हो।

शालित्य—मू० [स० शालित+व्यच्] १. ललित होने की अवस्था, गुण या भाव। २. रमणीयता। ३. हाव-भाव।

शालिनी—स्त्री० [स०√लत्-गिनि+ङीप्] कामुक स्त्री।

शालिना—स्त्री० [हि० शाल] लाल होने की अवस्था या भाव। लाली।

शाली—स्त्री० [हि० शाल+ई (प्रत्य०)] १. लाल होने की अवस्था

या भाव । अथगता । कलाई । लालपन । सुर्धी । २. इज्जत, प्रतिष्ठा या सम्मान जिसके बने रहने पर बेहतर काल रहता है । रीनक । घोभा । (प्रायः बेहरे या मूँह के साथ प्रयुक्त) जैसे—बलो, मुम्हारे बेहरे (या मूँह) की काली रह गई; अर्थात् प्रतिष्ठा बनी रह गई । नष्ट नहीं होने गई । ४. बसा । कालिन । ५. पकी इंटो का चूर्ण । सुर्धी । पुं० [सं० कालिन्] १. लालन-पालन करनेवाला व्यक्ति । २. व्यक्तियों की कुमार्ग पर ले जानेवाला पुरुष ।

काले—पुं० बहु० [हिं० काला] अभिलषावात् ।
कालो—(किसी चीज के) काले लालन=अप्राप्य या दुष्प्राप्य वस्तु के लिए बहुत अधिक तरसना । जान के लाले पढ़ना=विकट या संकट-पूर्ण स्थिति में पढ़ना ।

कालो—पुं०=काले ।
काल्य—वि० [सं०√कल् (इच्छा)+गिच्+अत्] लालनीय ।
काल्य—पुं० दे० 'मरसा' (साग) ।
काल्य—पुं० [सं०√कृ (छेदना)+ण] १. लबा नामक पर्वी । २. लौग । ३. काटने की क्रिया या भाव ।
स्त्री० [देश० या सं० रज्जु] मोटा रस्ता ।

मूहा—**लाब बलामा**—परसे के द्वारा सूर्य से पानी निकालकर खेत सींचना ।
 २. उत्तमी भूमि जितनी एक दिन में एक चरसे से सींची जा सके । ३. अगर में बाँधने का रस्ता ४. बोरपी । रस्ती ।
पुं० [हिं० लाना] श्रृण के रूप में किसीको दिया जानेवाला धन ।
मूहा—**लाब उदाना**—(क) चीज बचक रखकर खपना उधार देना । (ख) कष्ट के समय खेतहट्टी की सहायता करने के लिए उन्हे धन देना ।
लाब लामामा—उधार लिया हुआ धन, अर्थात् देकर चुकाना ।
स्त्री० [हिं० लाब=आग] अग्नि । आग ।

लाबक—पुं० [सं० लाब+कन्] लबा (पर्वी) ।
पुं० [देश०] १. बावक की आटे की फसल । २. चरसा । ३. उतना समय जितना एक बार मोटे सींचने में लगना है ।
लाबण—पुं० [सं० लवण+अण] सूंफनी । नस्य ।
वि० १. लवण सखी । नमक क्वी । २. जिसमें नमक मिला हो । नमकीन । ३. (अथधि आदि) जिसका लवण या नमक के द्वारा संस्कार हुआ हो ।

लाबणिक—पुं० [सं० लवण+ठञ्+इक] १. वह जो नमक बनाता या बेचता हो । नमक का व्यापारी । २. नमक रखने का बर्तन । नमकदान ।
वि०—लावण ।

लाबण्य—पुं० [सं० लवण+प्यञ्] १. लवण का धर्म या भाव । नमक-पन । २. धील या स्वभाव की उत्तमता । ३. आकृति आदि में होनेवाली नमकीनी । बेहरे या घोरर का नमक अर्थात् सलोनापन ।

लाबना—स्त्री० [सं० लावण्य+अच्+टाप्] ब्राह्मी (बूटी) ।
लाबदार—वि० [हिं० लाब=आग+फा०+दार (प्रत्ये०)] भरी हुई तोंग ।

पुं० वह जो पुरानी जाल की तोंगों में बसी लगाकर उन्हे चलाता या उड़ाता था ।

लाबनाता—स्त्री०=लावण्य ।
लाबना—सुं० [हिं० लगना] १. लगना । स्पर्श करना । उदा०—अंतर पट दे खोल सब उर लावरी।—कबीर । २. पूरा करना । उदा०—मापहि गावहि लाबहि सेवा।—तुलसी ।
लाबनि—स्त्री० [सं० लावण्य] लावण्य । सुदृष्टता ।
स्त्री०—लावनी ।

लाबनी—स्त्री० [सं० लावणी] १. सर्गीत में देवी रागों के अंतर्गत एक उपराग जिसका विकास मगध के पास लावणिक नामक प्रदेश के लोक-गीतों में हुआ था । उसके कई भेद हैं । यथा—लाबनी कलिंगा, लाबनी अगला, लाबनी भूपाली, लाबनी रेखता आदि । २. लोक में प्रचलित उपराग के वे विशिष्ट प्रकार जो प्रायः चंग या डक बजाकर उसके साथ गये जाते हैं । ३. उक्त प्रकार की वह कविता या गीत जो चंग या डक बजाकर गाया जाता हो ।

लाबनी बाब—पुं० [हिं०+फा०] [भाव० लाबनी+बाजी] वह जो चंग या डक पर लावणियाँ गाता हो ।

ला-बबाल—वि० [अ० ला+फा० बबाल] १. ला-परबाह । २. आबारा । ३. अविचारी ।

ला-बबाली—स्त्री० [अ०+फा०] १. ला-बबाल होने की अवस्था या भाव । २. आबारागीर्षी । ३. अविचारी ।

ला-बबल—वि० [फा०] [भाव० ला-बबली] जो पित्त न हो अर्थात् जिसके आगे सन्तान न हो । नि सतान ।

लाबा—पुं० [सं० लाजा] श्वार, धान, रामदान आदि की बाजू में मूतने पर तैयार होनेवाला वह रूप जिसमें दाने फूटकर फैल जाते हैं ।

मूहा—(किसी पर) **लाबा** मेंलना=(क) किसी को अधिकार या बस में करने के लिए मन्त्र पढ़ते हुए उस पर लावा फेंकना । (ख) अधिकार या बस में करना ।

वि० [हिं० लावना] लगाई-मुझाई करनेवाला । दो पर्वी में झगड़ा खड़ा करनेवाला ।

पुं० [हिं० लवना] फसल काटनेवाला मजदूर ।
 † पुं०=लवा ।

पुं० [अ० लाबत] राख, पत्थर और धातु आदि मिला हुआ वह द्रव पदार्थ जो प्रायः ज्वालामुखी पर्वतों के मुख से विस्फोट होने पर निकलता है ।

लाबाणक—पुं० [सं०] मगध का निकटवर्ती एक देश ।

लाबा-परछन—पुं० [हिं०] एक वैवाहिक रीति जिसमें कन्या की झोली अथवा उसके हाथ में पकड़ी हुई बलिया में उसके भाई लावा बालते या छोड़ते हैं ।

ला-बारिस—वि० [अ०] [भाव० ला-बारिस्ती] १. (व्यक्ति) जिसका कोई बारिस अर्थात् उत्तराधिकारी न हो । २. (वस्तु) जिसे संभाल-कर न रखा गया हो और जो यँ ही इधर-उधर पड़ी रहती हो । ३. (माल) जिसकी देख-रेख करनेवाला या मालिक न हो ।

ला-बारिस्ती—स्त्री० [अ० ला-बारिस] ला-बारिस होने की अवस्था या भाव ।
वि०—ला-बारिस् ।

साधन-कुसार-वि० [हि०] दृष्टर की धातों उपर लयाकर लोभों की जासप में छानेवाला।

साधु-यु० [हि० अणु] कहु। धीया। लीजा।

साध्य-वि० [सं०/लृ० (उपल) +ध्या] लवने अर्थात् काटने के योग्य।

साध-स्त्री० [फा०] १. किसी प्राणी का मृत शरीर। शव। जैसे—हृषी की साध। २. अन्न-विहात तथा मृतप्राय शरीर। जैसे—काशें तहप रही थीं। ३. लाक्षणिक अर्थ में, बहुधा शरीर व्यक्त।

साधा-वि० [फा०] अति दुर्बल, क्षीणकाम।

यु० मृत शरीर। साध। शव।

साध-स्त्री०=साध। (साध)।

साधना-स०=साधना।

साध-यु० [सं०/लृ० (शामिल होना)+धञ्] १. एक प्रकार का नाच। २. धरकने या मटकने की क्रिया या भाव। ३. बूझ। रस। धौरवा।

साधु-वि० [हि० लसना] १. लसने अर्थात् सुमधुर जान पड़ने की अवस्था या भाव। २. छवि। बोधा। ३. चमक। दीपित।

यु० [?] उस छव के दोनों कोने जो पाल बांधने के लिए मसलू के लटकया जाता है। (लण०)

मुहा०=साध करना=चकती हुई माव को रोकने के लिए बाँधों को बहुते पानी में डेरें बल में उहराना। (लण०)

†स्त्री०=साध (शव)।

सासक-यु० [सं०/लृ० (श्रीडा) +ङ्लृ०-अक] १. लास्य अर्थात् कोमल अंग-भंगी से युक्त मृदय करनेवाला नर्तक। २. मयूर। मोर। ३. सिवा। ४. धवा। मटका। ५. एक रोग जिसमें शरीर का कोई अंग बराबर हिलता-डुलता रहता है। (लण०)

वि० १. नाचनेवाला। २. हिलता-डुलता रहनेवाला। ३. खोलबाड़ी। ४. क्रीडा रस।

सासकी-स्त्री० [सं० लासक+कीप्] नर्तकी।

सासकीय-वि० [सं० लासक+छ-ईय] १. लासक संबंधी। २. लासक रोग से प्रस्त या पीडित।

सासन-यु० [अ० लीशिंग] जहाज बांधने का मोटा रस्ता। लहासी।

यु० [सं०] नाचने की क्रिया या भाव।

सासा-यु० [हि० लस] १. कोई लसबाला या लसीला पदार्थ। विशेषतः ऐना पदार्थ जिसके द्वारा दो चीजें परस्पर चिपकाई जाती हैं। २. वह लसीला पदार्थ जिससे बहुतेजिये चिकियाँ फँसते हैं। जैसे कोपन।

मुहा०=सासा लगाना=किसी को फँसाने की युक्ति रचना। सासा होना=सदा साथ लगे रहना।

३. वह साधन जिससे किसी को फँसाया जाय।

सासानी-वि० [अ०] जिसका सानी या बाँध का कोई न हो। अति-दास्य। बेबाँझ।

सासि-यु०=सास्य।

सासिक-वि० [सं० सास+ठञ्-इक] [स्त्री० सासिका] नाचने-वाला।

सासिका-स्त्री० [सं० सासिक+टाप्] १. नर्तकी। २. वेध्या।

३. उपस्थक का एक भेद।

सासी-स्त्री० [दश०] येद्रे, सरलें आदि की फसल में लगनेवाला एक तरह का कांटा छोटा कीड़ा।

साधु-स्त्री०=साधु।

साध्य-सं० [सं०/लृ० (कीडा) +ध्या] १. मृदय। माच। २. दो प्रकार के नृत्यों में से एक। (द्वारा प्रकार तांबव कहलाता है।)

शिशव-सास्य बहु मृदय कहलाता है, जिसमें कोमल अंग-धर्मियों के द्वारा मयूर भावों का प्रदर्शन होता है, और जो भूंगाए आदि कोमल रसों को उदीप्त करने वाला होता है। इसमें गायन तथा वादन दोनों का योग रहता है।

वि० कोमल तथा मयूर। जैसे-स्वरो में र की ध्वनि सास्य है।

साह-स्त्री० [सं० साहा] साह। चपड़ा।

स्त्री० [?] चमक। दीपित।

†यु०=साह।

साहक-वि० [सं०/लृ० साह] १. इच्छा करने या चाहनेवाला। २. लाभ के रूप में प्राप्त होनेवाला। ३. आरय या कदर करनेवाला।

साहय-यु० [दश०] १. पशुओं को लिलाया जानेवाला मनुष्य का कल जिसमें से मछ लींच लिया गया हो। २. जूती और मनुष्य को मिलाकर उठाया हुआ खमीर। ३. किसी चीज का और किसी तरह उठाया हुआ खमीर। ४. गीठों आदि के ध्याने पर उन्हें पिलाई जानेवाली दवाएँ। ५. खलिहान में अनाज डोककर लाने की मजदूरी।

साहली-अव्य०=साहली।

साहा-यु०=साह (लाभ)।

साही-वि० [हि० साहा] साह या साही रंग का।

स्त्री० १. लाल रंग के बें छोटे कीड़े जो लास बनाते हैं। २. ऊस की फसल में लगनेवाला लाल रंग का एक तरह का छोटा कीड़ा।

स्त्री० [दश०] १. सरली। २. काली सरली। ३. तीसरी बार हाक किया हुआ धौर।

स्त्री०=साह (धान, बाजरे आदि का लावा)।

साही-यु०=साह (लाभ)।

साहीरी ममक-यु० [हि०] संधा ममक।

साहील-अव्य० [अ०] अरबी के एक प्रसिद्ध बाण्य का पहला धाव्य जिसका व्यवहार प्राय मृत-भूत आदि को मगाने या किसी बात के संबंध में परम उमेसा अथवा धृणा प्रकट करने के लिए किया जाता है। पूरा बाण्य इस प्रकार है—साहील ब ल म्बस्त इल्ला जिल्लाह, जिसका अर्थ है, ईश्वर के सिवा और किसी ने कुछ सामर्थ्य नहीं है।

मुहा०=साहील पचना=(क) उक्त बाण्य का उच्चारण करना। (ख) परम उमेसा, धृणा या तिरस्कार दूचित करना।

सिन्न-यु० [सं०/लृ० (गति) +ञ् वा अञ्] [त्रि० लैकिक] १. कोई ऐसा विद्वान् या निराश जिससे किसी काम, चीज या बात की पहचान होती है। लक्षण। २. किसी वर्ग या समूह का प्रतिनिधित्व करने-वाला लक्षण, पदार्थ या बात। प्रतीक। ३. अर्थ्य शब्द में कोई ऐसी चीज या बात जिससे किसी प्रकार की घटना या तथ्य का ठीक अनुमान या कल्पना होती हो अथवा प्रमाण मिलता हो। साधक हेतु। जैसे—

धूम भी अनि का एक लिग है। अपत्यि धूर्वा दिख्साई पडने पर आग का अनुमान होता या प्रमाण मिलता है।

विशेष—हमारे यहाँ ग्याल दास्थ ने यह प्रकार का कहा गया है—
(क) सबद्ध, जैसे—आग के साथ रहनेवाला धूर्वा उनका सबद्ध लिग है। (ख) गो, बोक आदि के शिर में लगे रहनेवाले सींग उनके न्यस्त लिग हैं। (ग) मनुष्य के साथ लगी रहनेवाली भाषा उसका सहवर्ती लिग है, और (घ) किसी अच्छी या बुरी बात के साथ विपरीत रूप में लगी रहनेवाली बुरी या अच्छी बात उसका विपरीत लिग है। जैसे—गुण और अवगुण, पाप और पुण्य आदि।

४. मीमांसा में वे छ लक्षण जिनके आधार पर लिग का निर्णय होता है। यथा—उपक्रम, उपसंहार, अम्प्रास, अपूर्वता, अर्थादा और उपपत्ति। ५. सांख्य में मूल प्रकृति जिसमें सारी विकृतियाँ फिर से लीन होती हैं। ६. लोक-व्यवहारों में अर्थ की दृष्टि से जीव-तन्त्रुओं, वैश-पीषों अथवा पुरुष और स्त्री बाले दो प्रसिद्ध विभागों में से प्रत्येक विभाग। बहु स्थिति जिसके कारण या द्वारा हम किसी को नर या मादा अथवा पुरुष या स्त्री कहते और मानते हैं। (अवस) ७. उत्पत्त के आधार पर वह तत्व जो पुरुषों और स्त्रियों को अपनी काम वासना पूरी करने अथवा संतान उत्पन्न करने में प्रसन्न करता है। (मेघस) ८. व्याकरण के क्षेत्र में शब्द-नाम दृष्टि में संज्ञाओं और सर्वनामों (तथा उनमें सम्बद्ध क्रियाओं और विशेषणों) का बहु वर्गीकरण जिनसे यह सूचित होता है कि कोई सज्ञा या सर्वनाम पुरुष जाति का वाचक है या स्त्री जाति का।

विशेष—संस्कृत, मराठी, कागसी, अंग्रेज़ी आदि अनेक भाषाओं में पुलिग, स्त्रीलिग और नपुमक लिग ये तीन लिग होते हैं। परन्तु हिन्दी उर्दू, पंजाबी आदि अनेक भाषाओं में स्त्रीलिग और पुलिग ये दो ही लिग होते हैं। बंगला आदि कुछ भाषाओं में यह लिग तत्व सज्ञाओं तक ही परिमित रहता है, सर्वनामों, विशेषणों, क्रियाओं आदि के रूपों पर लिग-भेद का कोई प्रभाव नहीं पड़ता, मभी लिगों में उनके रूप एक से रहते हैं। ९. साहित्य में पदों, वाक्यों आदि में सञ्चों की बहु स्थिति जिसमें यह सूचित होता है कि पद या वाक्य में आये हुए दूसरे सञ्चों के साथ किसी विशिष्ट वाक्य का कैसा अथवा क्या संबंध है।

विशेष—इसका विशेष विवेचन काव्य-प्रकाश में देखा जा सकता है। १०. पुरुष की जननेन्द्रिय या मूत्र दंडिय। उपस्थ। शिप्ल। ११. शिब का एक विशिष्ट प्रकार का प्रतीक या मूर्ति जो पुरुष की जननेन्द्रिय के रूप में होती है।

विशेष—हमारे यहाँ शिव के दो रूप माने गये हैं। पहला निष्क्रिय और निर्गुण शिव जो अलिग कहा गया है और दूसरा जगत् की उत्पत्ति करने-वाला शिव जो लिग रूप है। इसी दूसरे और लिग या प्रकृति के मूल कारण वाले रूप में शिव को 'लिगी' भी कहते हैं। और इसी रूप में भारत में उनकी पूजा होती है। (विशेष दे० 'लिग-पूजा')।

१२. बहु छोटी छिन्निया या पिटाटी जिसमें लिगायत लोग शिव-लिग की मूर्ति बंध करके गले में पहने या लटकाने रहते हैं। १३. देवता की प्रतिमा या मूर्ति। विग्रह। १४. बेजान में आत्मा का वह बहुत छोटा और सूक्ष्म रूप जो शरीर के ढाँचे के आकार का होता और मृत्यु के

उपगत शरीर से बाहर निकलता है। दे० 'लिग-शरीर' १५. दे० 'लिग-पुराण'।

लिगात—स्त्री० [स० लिग+तल्+टाप्] लिग से युक्त होने की अवस्था या भाव।

लिग-बेह—पु०=[स० मध्य० सं०] =लिग-शरीर।
लिग-बेही (हिंत्)—पु० [स० लिगबेह+इनि] बहु जिसका मत, कर्म और बचन सब एक-रूप ही।

लिगधर—पु० [स० ध० तं०] १. लिगी अर्थात् चिह्न धारण करने-वाला व्यक्ति। २. डोंगी व्यक्ति।

लिगन—पु०=आलिगन।

लिग-नाश—पु० [स० ध० तं०] १. ऐसी अवस्था जिसमें किसी लिग अर्थात् चिह्न या लक्षण की पहचान न हो सकती हो। २. अथकार। ३. अक्षता। अन्धापन।

लिग-पुराण—पु० [स० मध्य० सं०] अठारह पुराणों में से एक प्रसिद्ध पुराण जिसमें शिव और उनके लिग की पूजा का माहात्म्य बर्णित है।

लिग-पूजक—पु० [स० ध० तं०] वह जो लिग-पूजा (देखें) करता हो। (केलिस्तिम)

लिग-पूजा—स्त्री० [स० ध० तं०] पुरुष की जनन-शक्ति के प्रतीक के रूप में लिग की पूजा करने की प्रथा जो अनेक प्राचीन जातियों में प्रचलित थी और अब भी हिन्दुओं में जो शिव-लिग की पूजा के रूप में प्रचलित है। (केलिस्तिम)

विशेष—प्राचीन काल में अरब, जापान, मिस्र, रोम, यूनान आदि अनेक देशों में पुरुष की जननेन्द्रिय या लिग ही सारे जगत् का मूल कारण माना जाता था और इसी लिए वहाँ भी ईश्वर का स्रष्टा देवता के रूप में लिग की ही पूजा होती थी। वहाँ तक कि कानून के पुराने मखिरो में बहुत ही ऐसे लिग निकले हैं, जो भारतीय शिव-लिग से बहुत कुछ मिलते हैं। वैदिक काल में अनेक अनार्य भारतीय जातियों में भी यह लिग-पूजा प्रचलित थी।

लिगर्वाङ्गी—स्त्री० [सं० लिग+वृष् (अहता) +णिष्+णिनि+ङीप्] अपामार्ग। चिचडा।

लिगर्वांस—पु० [स० मध्य० सं०] =लिगर्वां (रोप)।

लिगधार् (वत्)—[स० लिग+मत्पु] जो लिग अर्थात् चिह्न या लक्षण से युक्त हो। लक्षण युक्त।
पुं० शीव का लिगायत सम्प्रदाय।

लिग-वृत्ति—पु० [सं० व० सं०] जो केवल लिग अर्थात् चिह्न या वेध बनाकर जीविका चलाता हो। आठन्वरी।

वि० बूटे चिह्न धारण करके जीविका चलातेवाला। डोंगी।

स्त्री० १. लिग अर्थात् चिह्न धारण करके जीविका उगायित करना। २. डोंग रचना।

लिग-शरीर—पु० [मध्य० सं०] हिंदू मास्कों के अनुसार मृत्यु के उप-रान्त प्राणी की आत्मा को आवृत रखनेवाला वह सूक्ष्म शरीर जो पंचों प्राणों, पंचों ज्ञानेन्द्रियों, पंचों सूक्ष्मभूतों, मन, बुद्धि और अह-कार से युक्त होता है परन्तु स्थूल अन्नमय कोष से रहित होता है। लोक-व्यवहार में इसी को सूक्ष्म-शरीर कहते हैं।

विशेष—कहते हैं कि जब तक पुनर्वसन न हो या मोक्ष की प्राप्ति न हो, तब तक यह शरीर बना रहता है।

लिखशरीरी (रिन्)—वि० [सं० लिखशरीर+इति] लिख-शरीरशारी।
लिखन्—गु० [सं० लिख+इत्था (अहृत्वा)+क] बहुशारी। (मनु-स्मृति)।

लिखायित—गु० [सं० लिख+अकित, तु० त०]—लिखायत शेष सम्प्रदाय।
लिखानुशासन—गु० [सं० लिख-अनुशासन, ष० त०] बहु शासन जिसमें इस बात का विशेषण होता है कि बाकर-रचना में कौन सा शब्द किस अवस्था में किन लिग में प्रयुक्त होता है।

विशेष—हमारे यहाँ की संस्कृत, पालि, प्राकृत, आदि पुरानी भाषाओं में एक ही शब्द भिन्न भिन्न प्रसंगों में भिन्न भिन्न लिगों में प्रयुक्त होता था। यथा—यासे या द्विष के अर्थ में 'विधिर' शब्द पु०, शीत काल के अर्थ में 'पुत्रपुसक' (बेबे) और शीतलता से युक्त पदार्थ के अर्थ में विशेष्य-लिग (बेबे) होता है। यही बात कुछ शब्दों में पर्यायों के संबंध में भी होती है। यथा—स्त्री शब्द स्त्री-लिग है और 'कलम' नपुंसक लिग है। इन सब विशेषों के कारण और नियम बतलाना ही 'लिखानुशासन' कहलाता है।

लिखाय—गु० [हि०] १. एक प्रतिष्ठ शेष सम्प्रदाय। २. उक्त सम्प्रदाय का अनुयायी।

लिखायन्—गु० [सं० लिख-अयन् ष० त०]—लिख-युजा।
लिखायत् (र)—गु० [सं० लिख-अयत्, ष० त०] पुरुष की अन्तेन्द्रिय का एक रोग।

लिगित—गु० कृ० [सं० √लिग+कित] लिग् अघात् चिह्न या लक्षण से युक्त किया हुआ।

लिगिनी—स्त्री० [सं० लिग+इति+ङीप्] एक प्रकार की लता जिसे पत्र मूरिया कहते हैं।

लिगी (मिन्)—वि० [सं० लिग+इति] स्त्री० लिगिनी। लिग अघात् चिह्न या चिह्नो से युक्त। लिग-शारीरी।
पु० १. शिव। महादेव। २. शिव लिग का उपासक या पूजक।
शैव। ३. बहुशारीरी। ४ परमात्मा। ५. बोगी। ६. हाथी। ७. दे० 'लिग-देही'।

†स्त्री० [सं० लिग] छोटा शिव लिग।

लिगोद्विग—गु० [सं० लिग-द्विग अघ्य० सं०] पुरुषों की मूत्रेन्द्रिय। लिग।
लिट-—गु० [अ०] एक तरह का मूलयम आजौदार कपड़ा जो धाव पर दबा आदि लगाकर रखा जाता है।

लिप्य—अव्य० [?] के संबंध सूचक से युक्त होकर के लिए रूप में प्रयुक्त होनेवाला सम्प्रदान कारक का विभक्ति चिह्न। जैसे—राम के लिए काल मैं लाया हूँ।

विशेष—'इसलिए' आदि में 'इत्' के बाद वाले 'के' का लोप हो गया है।

लिफटी—स्त्री० [?] चिह्न अंकित करने का आब-रंग नामक रंग।

लिफिन—गु० [दिस०] लकी टांगी वाला मटलेमें रंग का एक पत्थर।

लिफुच—गु०—अ०कृ०कृ०

लिफाड़—गु० [हि० लिखाना] सूख मेंजा हुआ और बहुत लिखनेवाला लेखक।

लिखा—स्त्री० [सं० √लिख् (गति)+श, किवच्, टाप्] १. कुं जा

अंबा। २. प्राचीन काल का एक बहुत छोटा परिधान, जो किसी के मत से चार अंगुलियों के बराबर, किसी के मत से आठ बाल के बराबर और किसी के मत से चाँई या सरसों के छठे भाग के बराबर होता है।

लिखत—स्त्री० [हि० लिखाना] १. लिखने की क्रिया या भाव।
२. लिखे हुए होने की अवस्था या भाव।

मुहा०—**लिखत सत होना**—लिखना-पढ़ी में होना।
३. बहु दस्तावेज जो विधिक दृष्टि से प्रामाणिक माना जा सकता हो। आपस में की हुई लिखा-पढ़ी। (इस्ट्रुमेंट)। ५. भाग्य का लेख।
अव्य०—लिखित।

लिखतम—स्त्री० [हि० लिखाना] १. लिखावट। २. लिखा-पढ़ी।
उदा०—इनकी लिखतम का, इनकी बात का कोई भरोसा नहीं।
बृदाजनलाल वर्मा।

लिखायार—वि० [हि० लिखाना+धार (प्रय०)] लिखनेवाला।
पु० मुहूरि। लेखक।

लिखन—स्त्री० [हि० लिखाना] १. लिखने की क्रिया या भाव। २. लेख। ३. लिखावट। ४. भाग्य का लेख। ५. दे० 'लिखत'।

लिखना—स० [सं० लिखाना] १. किसी ताल पर बर्ण, रेखाएँ, फूल, पत्तियाँ आदि अंकित करना। २. कलम, पेंसिल आदि की सहायता से कागज, पत्थरी आदि पर कोई बात, लेख या विचार अक्षरी या बर्णों के द्वारा अंकित करना। लिपिबद्ध करना।
मुहा०—(किसी के) नाम लिखना—यह लिखाना कि अमुक वस्तु या रकम अमुक व्यक्ति के जिम्मे है।

पद—लिखा-पढ़ी—गिहित व्यक्ति।
३. किसी साहित्यिक-कृति की रचना करना।
४. कूबी आदि की सहायता से चित्र विशेषतः रंग-चित्र बनाना।

उदा०—लिखित सुधाकर लिखि या राहू—तुलसी।
लिखनी—स्त्री०—लेखनी (कलम)।

लिखाई—स्त्री० [हि० लिखवाना] लिखने की क्रिया, भाव या मजहुरी।
लिखवाना—स० [हि० लिखाना] किसी दूसरे को लिखने में प्रवृत्त करना। लिखने का काम किसी से कराना।

लिखाय—वि० [हि० लिखाना] लिखनेवाला।
पु० लेखक।

लिखाहार—वि० [हि० लिखाना+हार (प्रय०)] १. लिखनेवाला।
लेखक। २. हस्ताव-किताब या लेखा रखनेवाला।

लिखा—गु० [हि० लिखाना] वह जो कुछ लिखित रूप में हो। जैसे—भाग्य में लिखा।

वि० जिसे लिखना अज्ञात हो। जैसे—पढ़ा-लिखा।

लिखाई—स्त्री० [हि० लिखाना] १. लिखने की क्रिया, उग या भाव।
पद—लिखाई-पढ़ाई—लिखने-पढ़ने आदि की शिक्षा।

२. किसी हुई लिपि और उसकी बनावट। ३. चित्र अंकित करने की क्रिया या भाव। ४. चित्र-कला में कोई विशिष्ट परिष्कृत या तरह अंकित करने की क्रिया या भाव। जैसे—कमलाब की लिखाई—भूमिका आदि का ऐसा अंकन जो देखने में कमलाब की तरह जान पड़े।

लिखाना—स० [हि० लिखाना] १. किसी को कुछ लिखने में प्रवृत्त

करना। लिखने का काम करना। २. किसी की लिखना सिखाना।
बचना लिखने का अर्थात् करना।

लिखा-बढ़ी—स्त्री० [हि० लिखना+पढ़ना] १. लिखने और पढ़ने की
क्रिया या भाव। २. पत्रों का जाना और उनके उत्तर जाना। पत्र-
व्यवहार। ३. अनुभव, सधि, समझौते आदि की बातों का लिखा
हुआ होना।

लिखावट—स्त्री० [हि० लिखना+आवट (प्रत्य०)] १. लिखने का
प्रकार या ढंग। २. किसी के हाथ के लिखे हुए अक्षर। हस्ताक्षर।
(हि०-राश्ट्रिय)

लिखित—अव्य० [सं०] एक पद जिसका प्रयोग हस्तलिखित ग्रन्थों के अंत
में या चित्रों के नीचे उनके लेखक या चित्रकार के नाम के पहले उनका
कर्मत्व सूचित करने के लिए होता था।

लिखित—म० क० [सं० लिख् (लिखना)+क्त] १. लिखा हुआ।
लिपिबद्ध किया हुआ। अंकित। २. जो लेख या लेख्य के रूप में हो।
लेख्य। (आयुर्भेदस)

पुं० १. लिखी हुई बात। लेख। २. लिखा हुआ प्रमाण पत्र। सनद।
लिखितक—पुं० [सं० लिखित] एक प्रकार की प्राचीन लिपि जिसके
अक्षर चौकोर होते थे। इसके लेख खूबन (मध्य एशिया) में पाये
गये शिला लेखों में मिलते हैं।

लिखिनी—स्त्री०—लक्ष्मी।

लिखेरा—वि०—लिखनेवाला।

लिखी—स्त्री० [दिस०] कमजोर छोटी धोड़ी।

लिखेन—पुं० [दिस०] एक प्रकार की घास जो पानी में होंती है।

लिखेच—वि०—लीचड़।

लिखिच—पुं० [सं०] २००० वर्ष पूर्व का एक प्राचीन भारतीय राज-
वंश जिसका मगध, मैपाल, कोशल आदि पर शासन था।

लिखाना—सं०—लेटना।

लिखोरा—पुं०—लसोड़ा।

लिख्—पुं० [हि० लिख्ती० पुं० रूप] बड़ी लिट्टी। (पकवान)

लिख्ती—स्त्री० [दिस०] टिकिया के आकर की वह गोल छोटी रांटी
जो आग पर आटे के पेड़े को सँकने से तैयार होती है।

लिख्ती—पुं० [दिस०] एक प्रकार का नमकीन पकवान।

लिख्तिङ्गा—वि० [दिस०] १. कमजोर। २. नपुंसक।

लिखार—पुं० [दिस०] श्रृंगाल। गीदड़।

वि० कायर। डरपोक।

लिखोरी—स्त्री० [दिस०] वे दाने जो दँबरी के बाद की बालों में लगे
रह जाते हैं।

लिखटना—अ० [सं० लिख्] १. किसी चीज का दूसरी चीज के चारों
ओर घूमते हुए उसके साथ इस प्रकार लगना कि सहसा दोनों अलग
न हो सकें। जैसे—लता का बूट में लिखटना। २. एक चीज का दूसरी चीज
पर इस प्रकार लगना, सटना या सलम होना कि जल्दी दोनों अलग न
हो सकें। जैसे—(क) पुत्र का पिता के घले में लिखटना। (ख) पैरो
में कीचड़ लिखटना। ३. अपनी सारी शक्ति लगाते हुए किसी काम में
प्रवृत्त होना। जैसे—चारों आदमी लिपट जाओ तो सम्भ्या तक यह
काम पूरा हो जाय। ४. किसी काम, चीज या बात में इस प्रकार उल-

झाना या फँसना कि जल्दी छूटकारा न हो सके। जैसे—अभी तो वे
अपने मुकदमे में ही लिपटे हुए हैं। ५. किसी रूप में लगेटा हुआ होना।
जैसे—भाग्य में लिपटे हुए रूप रखे हैं। ६. किसी के साथ झगडा
या तकरार करने में प्रवृत्त होना। उलझना। जैसे—झगडा तो घुम्हाए
उनसे है, मुझसे क्यों व्यर्थ लिपटते हो।

संयो० किं—जाना।

लिखटना—सं० [हि० लिखटना का सं०] १. एक वस्तु को दूसरी
के चारों ओर लेटना। २. सलम करना। सटाना। परिवृत्त करना।
३. आलिंगन करना। गले लगाना।

अ०—लिपटना। उदा०—जिमि जीवहि माया लिपटानी।—कुल्ली।

लिपझा—वि० [हि० लेप] लेई की तरह गीला और चिपचिपा।

पुं०—लुगडा (फटा पुराना कपड़ा)।

लिपझी—स्त्री०—लिबझी।

लिपना—अ० [हि० लीपना का अ०] १. लेप से युक्त होना। २. लेप
जाना। ३. किसी गाड़ी चीज का किसी तरफ पर अव्यवस्थित
रूप में लज्जर फैलना।

संयो० किं—जाना।

लिपनामा—सं० [हि० लीपना] लीपने का काम दूसरे से कराना।
दूसरे की लीपने में प्रवृत्त करना।

लिपार्—स्त्री० [हि० लिपना] लिपाने या लीपने की क्रिया, भाव या
मजदूरी। पोर्तार्।

लिपाना—सं०—लिपवाना।

लिपि—स्त्री० [सं० लिप् (लीपना)+इन्, किरब] १. लेप करने
की क्रिया या भाव। लीपना। २. लिखने की क्रिया या भाव। ३.
किसी लघुतम ध्वनि का सूचक अक्षर। जैसे—क, ख, ग आदि। ४.
किसी भाषा के अधुनम ध्वनि-अक्षरों का समूह जो लिखने में प्रयुक्त
होते हैं।

लिपिक—पुं० [म० लिपिकर] वह जो किसी कार्यालय में पत्रों की
प्रतिलिपियाँ या साधारण पत्र आदि लिखता हो। मुहरदार। लेखक।
(बलर्क)

लिपिकर—पुं० [सं० लिपि/क+ट] १. प्राचीन भारत में, यह शिल्पी
जो शिलालेखों आदि पर लेख अंकित करता था उकेरना था। २. दे०
'लिपिक'।

लिपिका—स्त्री० [सं० लिपि+कन्+टाप्] लिपि। लिखावट।

लिपिकार—पुं० [सं० लिपि/क+ अण्] लिखनेवाला। लेखक।
लिपिक।

लिपि-काल—पुं० [सं० प० तं०] किसी घण या लेख का वह समय
(सन् या सवर्ण) जब कि वह लिखा गया हो।

लिपि-कलत्र—पुं० [सं० प० तं०] कट, धातु, पत्थर आदि का वह
टुकडा या फलक जिस पर कोई लिपि या लेख अंकित किया
गया हो।

लिपि-कन्—पुं० क० [सं० त्० तं०] [भाव० लिपिबद्धता] १. लिपि
या लेख के रूप में लाया हुआ। लिखित। २. (कथन या बात)
जिसकी लिखा-पढी हो चुकी हो।

लिपी—स्त्री० [सं० लिपि+ङीप्]—लिपि।

लिप्य-वि० [सं०/लिप्य+कृत] १. (पदार्थ) जिस पर लेप हुआ हो।
२. (पदार्थ) जिससे लेप किया गया हो। पीता हुआ। ३. जो किसी के साथ इस प्रकार लगा हो कि जबही उससे अलग न हो सके। जैसे—
योग में लिप्य होना।

लिप्यक-वि० [सं० लिप्य+कृत] विषय में बुझाया हुआ।
पू० विषय में बुझाया हुआ। बाध।

लिप्या-स्त्री० [सं० लिप्य+टाप्] १. ज्योतिष के अनुसार काल का एक मान जो प्रायः एक मिनट के बराबर होता है। २. अंश का सप्तम भाग।

लिप्यिका-स्त्री०=लिप्या।

लिप्या-स्त्री० [सं०/ल्य (प्राप्ति)+सन्, द्विव, +ज+टाप्] प्राप्ति की इच्छा। पाने की चाह।

लिप्यस्त-पु० क्त० [सं०/ल्य+सन्, द्विवारि+कृत] चाहा हुआ।

लिप्यु-वि० [सं०/ल्य+सन्, द्विव+उ] लिप्या करने या चाहने-
वाला। इच्छुक।

लिफाफा-पु० [अ०] १. कागज की बनी हुई वह प्रथम चोकरा पैली जिसके अन्दर पिट्टी या कागज-पत्र रखकर कहीं भेजे जाते हैं। जैसे—
लिफाफे में बंद करके पत्र बांधखाने में छोड़ देना। २. किसी प्रकार का ऊपरी आवरण, विशेषतः ऐसा आवरण जो दोष या वास्तविक स्थिति लिफाने के लिए प्रयुक्त होता हो।

मुहा०—लिफाफा खुल जाना=भेद या रहस्य खुल जाना। छिपी हुई बात प्रकट हो जाना।

३. शरीर पर भारण किये जानेवाले अच्छे कपड़े। (बाजारू) ४. झूठी लटक-भड़क। आडम्बर।

मुहा०—लिफाफा बनाना=झूठा आडम्बर खड़ा करना।

५. जल्दी नष्ट हो जानेवाली और रिखावटी चीज। काजू-भोजू चीज। जैसे—यह खाली लिफाफा ही है। (अर्थात् इसमें तरब या वास्तविकता बहुत कम है।)

लिफाफिया-वि० [हिं० लिफाफा] जो ऊपर से देखने भर को अच्छा या मन्थ हो, पर अन्तर से बोधा या सारहीन हो।

लिफाफना-अ० [अनु०] कपड़े, हाथ आदि से किसी गीली चीज का चिपकना या लगना। जैसे—उँगलियो में आटा या पैरो में कीचड़ लिफाफना।

सं० लय-गम करना। अव्यवस्थित रूप से पीतना या लगाना।

लिफाफी-स्त्री० [अं० लिफाफी] १. कपडा-लता। २. छोटा-मोटा सामान।

लिफाफी-बसाना-पुं० [अं० लिफाफी+बसा+त, अटन=सिपाहियो का डडा] घर-गृहस्थी का सामान। (उपेक्षा और गुच्छता का सूचक)

लिफारल-वि० [अं०] उधार मीसिवाला।

पुं० कोई ऐसा राजनीतिक दल जिसके विचार अपेक्षया अधिक उदार हो।

लिफाफिनी-स्त्री० [अनु०] १. यंत्रों आदि में कोई ऐसा खटक जिसे खींचने या दबाने से कोई कम्पनी निकलती हो या कोई पुरजा चलता हो। २. ताम्बे, पित्तल, ब्रूक आदि में गीली तरफ का वह खटका या सिटकिनी जिसे खींचने से चोड़ा गिरता और उसके आगे की गोली निकलकर निशाने की तरफ बढ़ती हो। (डिगार)

लिफाफ-पुं० [अं०] शरीर पर पहनने के कपड़े। पोशाक।

लिफाफक-स्त्री० [अं०] १. लायक होने की अवस्था या भाव।

वीर्यता। २. व्यक्तिमें से होनेवाला किसी तरह का गुण या वीर्यता।

३. शक्ति या सामर्थ्य। ४. व्यवहार आदि की श्रद्धा।

शालीनता।

लिफाफना-अ०=लफकना।

लिफाट-पुं०=लफाट।

लिफार-पुं० [सं० लफाट] १. कूर्प का वह सिरा जहाँ मोटा का पानी उकटते हैं। २. दे० 'लफाट'।

लिफारी-पुं० [हिं० नील, लील+कार] रंगरेज।

लिफाही-पुं० [दिश०] हाथ का बटा हुआ देसी सूत।

लिफोही-वि० [म० लाल=बहुकना।] लालची। लोभी।

लिफ-स्त्री०=लौ (लान)।

लिफाना-सं० [हिं० लाना का प्रे०] १. अति समय किसी को अपने साथ लेने आना। २. उठा कर कोई चीज किसी के यहाँ ले जाना।

सं० [हिं० लेना का प्रे०] १. लेने का काम दूसरे से करना। प्रहण करना। २. घमाना। पकड़ना।

संधी० कि०=लेना।

लिफाना-पुं०=लेवावा।

लिफेवा-पुं० [हिं० लेना] कोई चीज लेने विशेषतः शरीर कर लेनेवाला व्यक्ति।

वि० [हिं० लिफाना] लिफानेवाला।

लिफाफना-अ० [अनु०] बहुत तेजी से चमकना। (परिचम) जैसे—
तलवार लिफाफना, बिजली लिफाफना। उदा०—वह खजर इस तरह लिफाफ रहा था कि मैं आँपसे क्या कहूँ।—सजावट हलान मट्टो।

लिफाफाना-सं० [अनु०] तेज चमक निकालना। खूब चमकाना। (परिचम)

लिफाना-अं०=लसना। उदा०—ता मधि माथे में हीरा गुच्छो। सुगाई गृहि केसन की छत्रि सो लिफि—देव।

लिफाना-स्त्री० [अं०] जीम। जवान। बौली।

लिफोडा-पुं० [हिं० लस=चिपचिपा गुदा] १. मंगोलो आकार का एक प्रकार का पेड़ जिसके पत्ते बीड़ियाँ बनाने के काम आते हैं। २. उक्त वृक्ष का फल जो प्रायः छोटे बेर के बराबर होता और खाली, दमे आदि रोगों में गुणकारी माना जाता है। लफारा। लिटारा। लसोडा

लिफ्ट-स्त्री० [अं०] सूची।

लिह-वि० [सं०/लिह (आश्वादन)+क] चाटनेवाला। (बहुधा समस्त पशु के अंत में प्रयुक्त)

लिहाना-सं०=लिखना।

↑सं०=लेना।

लिहाज-पुं० [अं० लिहाज] १. व्यवहार या बर्ताव में किसी बात या व्यक्ति का आवश्यक रखा जानेवाला ध्यान। जैसे—बढ़ों का लिहाज करना सीनो। २. किसी बात का किसी रूप में रखा जाने-
वाला ध्यान। जैसे—(क) इस नृत्य में खाली का नौ लिहाज रखा गया है। (ख) मैंने उसकी गरीबी का लिहाज करके उसे छोड़ दिया।
३. धीक, संकोच आदि के विचार दे रखा जानेवाला ध्यान ? जैसे—

काम-बिगड़ जाने पर वह किसी का लिहाज न करेगा, सबको निकाल देगा। ३. तरफदार। पक्षपात। ५. लज्जा। समं। हुवा।

किं प्र०—करना।—रखना।

लिहावा—अव्य० [अ०] अतः इसलिये।—

लिहावा—वि० [देवा०] १. बेइतदार और बहिष्वात। (व्यक्ति) २. निकम्मा या निरर्थक (पदार्थ)।

लिहावा—स्त्री० [देवा०] किसी को बहुतों में उपहासपरपद सिद्ध करने के लिए बिना जानेबाला मखाल।

सुहा०—(किसी की) लिहाही लेना—किसी को तुच्छ या निन्दनीय ठहराते हुए उसका उपहास करना।

लिहाफ—पु० [अ० लिहाफ] जाड़े के दिनों में सोते समय ओढ़ने की रुईदार भारी या मोटी रजाई।

लिहित—वि० [स० लीङ्] चाटा हुआ।

लीक—स्त्री० [अ० लिब्] १. लकी, पतली रेखा के रूप में बना हुआ अथवा बनाया हुआ चिह्न। लकीर। जैसे—(क) गिनती या सख्या सूचित करने के लिए लीची जानेबाली लीक। उदा०—अट मंह प्रथम लीक जग जासू।—तुलसी। (ख) कच्ची जमीन पर आने-जानेवाली बेल्गाण्डियों के पहियों के कारण बनी हुई लीक। (ख) खेतों, जंगलों आदि में आवेगियों के आने-जाने के कारण पग-इडियों के रूप में बनी हुई लीक। उदा०—लीक लीक गाड़ी चले लीकें चले कपूत। सुहा०—लीक करना या लीकना=प्राचीन परम्परा के अनुसार किसी प्रकार की प्रोत्साज करने अथवा अपने कथन को बूझता या घुट्टि सूचित करने के लिए जमीन पर तंजनी डंगीयों आदि में छोटी लीची रेखा खीचना या बनाना। लीक पकड़ना=आदमियों, गाड़ियों आदि के आने-जाने से बनी हुई लीक पर चलते हुए कहीं जाना। जैसे—यही लीक पकड़कर सीधे चले जाओ।

२. जाचक या लोक-व्यवहार के क्षेत्र में, बहुत दिनों से चली आई हुई कोई परम्परा, रीति या विधि ज्ञा कुछ प्रयोगों में तो प्रसिद्ध या मर्यादा की सूचक होती है और कुछ प्रयोगों में त्याग्य तथा निन्दनीय भी मानी जाती है। उदा०—(क) नन्द-नन्दन के नेह-मेह जित लोक-लीक लीकी।—गूढ। (ख) अजहूँ गाव सुति विहहूँ कें लीका।—तुलसी।

सुहा०—लीक पीटना=(क) किसी पुरानी चली आई हुई निकम्मी प्रथा या रीति का विना सोच-समझ अनुकरण करते चलना। जैसे—अतिविधि, गँवार आदि अब भी ब्याह-गादी में बहरी पुरानी लीक पीटते चलते हैं। (ख) कोई दुष्टदत्ता या हासि ही चुकने के उपरान्त उसके अवगिण्ट चिह्नो आदि पर अपना रोष प्रकट करना। जैसे—ताप तो चला गया, अब लीक पीटने से क्या होगा। लीक लीक चलना=पुरानी परिपाटी या प्रथा का पालन करना। उदा०—लीक लीक गाड़ी चले लीकें चले कपूत।

३. किसी काम या बात के सबब में निमत की हुई मर्यादा। सीमा। हद। ४. दुष्कर्म, दुर्नाम आदि का सूचक चिह्न। कलक की रेखा। लाछन। उदा०—तिहि देखत मेरो टट काळत, लीक लगी घुम काज।—मूर।

किं प्र०—लगना।

स्त्री० [देवा०] मरिद्याले रंग की एक चिडिया जो बसक से कुछ छोटी होती है।

लीकति—स्त्री०=लीक।

लीक—स्त्री० [स० लिहा] जूँ का अंडा।

लीग—स्त्री० [अ०] १. जातियों, देशों राष्ट्रों आदि के योग से बनी हुई ऐसी सभा या संस्था जो सबके सामूहिक कल्याण का ध्यान रखती हो। जैसे—लीग ऑफ नेशन, मुस्लिम लीग आदि। २. भारतीय राजनीति में, मुस्लिम लीग जिसके आंदोलन से भारत का बँटवारा और पाकिस्तान की स्थापना हुई थी। ३. दूरी की एक ताप जो स्थल में प्रायः तीन मील और समुद्र में प्रायः साढ़े तीन मील लंबी होती है।

लीग ऑफ नेशन—स्त्री० दे० 'राष्ट्र-संघ'।

लीगी—वि० [अ० लीग] १. किसी लीग का सदस्य। २. भारतीय राजनीति में मुस्लिम लीग का अनुयायी या सदस्य।

लीचड़—वि० [देवा०] १. जो कोई काम जल्दी-जल्दी तथा ठीक समय पर कर सकता हो। सुस्त। काहिल। २. निकम्मा। फालतू। ३. जल्दी पीछा न छोड़नेवाला। ४. लेन-देन के व्यवहार के विचार से बहुत ही तुच्छ प्रकृति का।

लीची—स्त्री० [चामी ली-चू] १. एक सदा बहारा बड़ा पेड़। २. इस पेड़ का फल जो खाने में बहुत मीठा होता है। फल के छिलके के ऊपर कटावदार-वाने और अन्दर मूदे के सिवा मोटी गुदली होती है।

लीसा—वि० [देवा०] [स्त्री० लीसा] १. नीरस। निस्तार। २. व्यर्थ का। निकम्मा। फालतू।

लीसी—स्त्री० [देवा०] १. दारी पर लगाये हुए उबटन को हथेली से रगड़ने पर छूटनेवाली मूल की बत्ती। २. संटी। फोक।

लीडर—पु० [अ०]=नेता।

लीडरी—स्त्री० [अ० लीडर से] नेतृत्व। (परिहास और व्यय्य।)

लीड—भू० कृ० [स०/लिहू, (आस्थादान)+स्त] चाटा या न्याया हुआ। चला हुआ। आस्थापित।

लीटड़ा—पु० [हिं० विषदा] फटा हुआ पुराना जूता।

लीची—पु० [अ०] चित्री, पुस्तकों आदि की छपाई का वह प्रकार जिसमें छापी जानेवाली चीज, चित्र या लेख पहले हाथ से कागज पर अंकित करते या लिखते हैं और तब उसकी प्रकृति एक विशेष प्रकार के पत्थर पर उतार कर छापते हैं। पत्थर का छापा।

लीचीप्रोक—पु० [बं०] लीची की छपाई।

लीव—स्त्री० [कश्मीरी लेव] ऊँट, गधे, घोड़े, हाथी आदि पशुओं का मूल।

लील—वि० [स०/ली (लप)+ल, त—न.] [भाव० लीलता] १. जिसका लय हो चुका हो। जो किसी में समा गया हो। २. जो किसी काम में इस प्रकार लगा हुआ हो कि उसे और कामों या बातों का ध्यान या चिन्ता न रहे। ३. अधिकार या सुभीता जो निवत अवधि तक उपयोग में न आने के कारण हाथ से निकल गया हो। (लैप्ट)

लीलता—स्त्री० [स० लील+तल्+टाप्] १. लील होने की अवस्था या भाव। २. जैनों में, वह अवस्था जब वे उदासीनापूर्वक रहते हैं।

श्रीमती दाहप यज्ञीन—स्त्री० [अं०] छापे के अक्षर-बैजने का एक प्रकार का यन्त्र।

श्रीमूर्ति—अर्थ० [हिं० श्रीमू—तिव्या] १. किरा। बास्ते। २. चक्रर या फेर में पड़कर। उदा०—संचयन मति तजि कोईहीं सैंसय या माथा के लीन्हें।—सूर।

श्रीपत्ता—स० [सं० लेपन] १. किसी चीज पर गाड़े या धरले तरल पदार्थ का लेप करना। जैसे—अग्नी पर गोबर-श्रीपत्ता। २. लिके हुए गीले अक्षरों की स्थायी को कागज, गूदी आदि पर इस प्रकार फैलाना कि वह गंभी हो जाय। ३. चौपट या बरबाद करना।

सूहा—श्रीप-नीत कर बरबाद करना—पूरी तरह से चौपट या नष्ट करना।

श्रीपा-श्रीती—स्त्री० [हिं०] १. गोबर आदि से जमीन, शीशार आदि लीपने या पीतने की क्रिया या भाव। २. किसी के कुकर्म या दुष्कर्म के लिए उसे दण्ड न देकर ऐसी कार्रवाई करना कि वह दण्ड का भारी ही न रह जाय। ३. कर-भरा काम चौपट या नष्ट करना।

श्रीबर—वि० [?] १. मील, कीचड़ आदि से भरा हुआ।
पू० १. गंधारी। मलापन। २. कीचड़। ३. अक्षो का कीचड़।

श्रीम—पु० [देवा०] १. एक प्रकार का बीड़ जिसमें से शरणीय या अलकतरा निकलता ही। २. एक प्रकार का पत्ती।

श्रीर—स्त्री० [?] १. किसी कपड़े में से निकाली हुई पट्टी या चञ्ची। २. फटे हुए या रूढ़ी कपड़े का छोटा टुकड़ा। ३. चिपका

श्रील—पु० [सं० श्रील] १. मील। २. मीले रंग का छोड़ा।
वि० नीला।

श्रीलेख—श्रील' के यो० के लिए दे० 'श्रील' के यो०।
पु० [हिं० श्रीलना] श्रीलेख की क्रिया या भाव।

श्रीलक—पु० [हिं० श्रील] यह हार चमड़ा जो देखी जूती की नोक पर लगाया जाता है।
वि० नीला।

श्रीलना—सं० [सं० मिलन या लीन] १. निगलना। २. किसी की सम्पत्ति आदि पूरी तरह से हड़प कर जाना।
संयो० किं०—जाना।—लेना।

श्रीलमा—पु०—श्रीलम।

श्रीलया—किं० वि० [सं० श्रील शब्द का तृतीयान्त रूप] १. श्रीला के रूप में। २. खेल या खेलवाड के रूप में। ३. बिना किसी परिश्रम के। बहुत ही सहज में। अनायास।

श्रीलहिं—किं० वि०—श्रीलया। उदा०—श्रीलहिं नाथऊँ जलनिधि सारा।—मुलसी।

श्रीला—स्त्री० [सं०/की (क्य) + पिचप, की/का (जायन) +क + टाप्] १. कोई ऐसा काम या व्यवहार जो चित्त की उमंग से केवल मनोरंजन के लिए किया जाय। कैल। क्रीड़ा। खेल। जैसे—

श्रीला-श्रीला। २. लड़कों का खेलवाड। ३. लड़कों के खेलवाड की तरह का बहुत ही आनन्द या सुगम काम। ४. किसी प्रकार के बिलास की इच्छा और उसके फल-स्वरूप किये जानेवाला अनेक प्रकार के आनन्द, कार्य या व्यवहार। जैसे—यह सब ईश्वर की श्रीला है।

श्रीलेख—दार्शनिक क्षेत्रों में माना जाता है कि श्रीला ऐसी वृत्ति या व्यापार है जिसका आनन्द-आप्त के सिवा और कोई अतिप्राथम्य या उद्देश्य नहीं होता। इसीलिए कहते हैं—मुष्टि और प्रलय सब ईश्वर की श्रीला ही है। अतएव धारण करने पर इस लोक में आकर समगान जो कृत्य करते हैं, उन सब की गिनती की शक्ति-नाम में श्रीलाओं में ही होती है।

५. लोक-व्यवहार में वे सब कृत्य जो भगवान के कृपि अथवा के कार्यों के अनुकरण पर अभिनय या नाटक के रूप में लोगों को दिखाये जाते हैं। जैसे—कृष्ण-श्रीला, राम-श्रीला आदि। ६. उच्च प्रकार के अभिनय का कोई ऐसा अंग या अंश जो इकारों के रूप में अभिनीत होता है। जैसे—गो-चरण श्रीला, शीर हरण श्रीला, गनुष-यज्ञ श्रीला आदि। ७. भूगर्भिक क्षेत्र में तापिकाओं का एक ह्रास जिसमें वे मधुर आगिक वेष्टाओं के द्वारा तापक की बात-नीत, बेध-भूषा आदि का अनुकरण या नकल करती हैं। जैसे—(क) गोपी का कृष्ण-नेत्र धारण करके वशी बजाना। (ख) पत्नी का अपने पति के शेष में सुरसी पर बैठना आदि।

श्रीलेख—साहित्य शास्त्र में इसकी गिनती नायिका के दस स्वभावज अलंकारों में की गई है।

८. कोई अव्यक्त या रहस्यपूर्ण काम या व्यापार। उदा०—छाया-पत्र में तरल वृत्ति ही मिल मिल की मुडू श्रीला—भ्रमा। ९. कोई ऐसा काम, चीज या बात जो वास्तविक के अनुकरण पर केवल मनोबिन्दव के लिए बना ही या होता है। (यो० के आरम्भ में) जैसे—श्रीलाकलह, श्रीलामरण श्रीलालपु। (दे०) १०. बारह मात्राओं का एक प्रकार का छंद जिसमें अंत में एक जगण होता है। ११. एक प्रकार का वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में भगण, नगण और एक गुरु होता है। १२. श्रीबीस मात्राओं का एक प्रकार का छंद जिसमें ७+७+७+३ के बिराम से २४ मात्राएँ और अंत में सगण होता है। १३. विशेषक नामक छंद का दूसरा नाम।

श्री० [स्त्री० श्रीली]—श्रीला।
पुं० नीले या काले रंग का छोड़ा।

श्रीला-कलह—पु० [सं० पं० सं०] वह कलह या लड़ाई-झगड़ा जो वास्तविक न हो बल्कि केवल दूसरों की दिखाने के लिए या नवाबटो ही। जैसे—चागक्य ने एक बार चन्द्रगुप्त के साथ श्रीला-कलह का आयोजन किया था।

श्रीला-मुच्योत्सव—पु० [सं० मध्य० सं०] धीकृष्ण।

श्रीला-चरण—पु० [सं० श्रीला-आभरण, च० सं०] केवल क्रीडा या मनो-बिन्दव के लिए बनाया हुआ किसी चीज का आभूषण। जैसे—फूलों का फंगन, फूलों की टोपी या मुहट्ट।

श्रीलाचय—वि० [सं० श्रीला+मयट्ट] क्रीडा से मरा हुआ। क्रीडा-युक्त। जैसे—श्रीला-चय भगवान।

श्रीलापुत्र—पु० [सं० श्रीला+आमूष, च० सं०] ऐसा अपुत्र जो वास्तविक न हो, बल्कि खेल या शिल्पकार के लिए हो।

श्रीलावतार—पु० सं० श्रीला-अवतार, च० सं०] भगवान के वे सब अवतार जो इस पृथ्वी पर अब तक हुए हैं, और जिनमें उन्होंने अनेक प्रकार की लीलाएँ की हैं। इनकी संख्या २४ मानी जाती है।

लीलावती—स्त्री० [सं० लीला+मत्स्य+डीप्] १. लीला या क्रीडा करनेवाली। विलासवती। २ प्रसिद्ध ज्योतिषिद् भास्कराचार्य की पत्नी का नाम जिसने लीलावती नाम की गणित की एक पुस्तक बनाई थी। पीछे भास्कराचार्य ने की इस नाम की एक पुस्तक बनाई थी। ३. संघर्ष जाति की एक रागिनी। (संगीत) ४. ३२ मात्राओं का एक प्रकार का छन्द, जिसमें लघु-गुरु का विचार नहीं होता।
लीलावतान् (वत्) —वि० [सं० लीला+मत्स्य] १ क्रीडाशील। २. बहुत ही रमणीय तथा सुन्दर।
लीला-स्वप्न—पु० [सं० प० त०] लीला या क्रीडा करने का स्थान।
लीलेषु—कि० वि० [सं० लीला-एषु] लीला करते हुए अर्थात् खेलवाड़ में ही। बहुत सहज रूप में। उदा०—लीलेषु हर की धनु सौम्यी।
 —केसव।
लीलोद्यमान—पु० [सं० लीला-उद्यमान, व० त०] १. वह उद्यमान या स्थान जहाँ रासलीला होती हो। २. क्रीडा-क्षेत्र।
लीवर—पु० [अ०] १ यमो मे लगा हुआ कोई ऐसा खटका जिसके आधात से कोई पुरजा चलता हो अथवा किसी प्रकार की कोई और क्रिया होती हो। २ पेट के अन्दर का गिल्ली या यकृत नामक अंग।
मूढा—स्त्रीवर होना या बड़ना—व्यङ्ग्य मे सूजन आना जो रोग माना जाता है।
मूह—स्त्री० [हि० मूक] १. रेखा। लकीर। २ चिह्न, निशान। ३. लकीर की तरह का बना हुआ छोटा पतला और लम्बा रास्ता लीक।
मुग्धा—पु० [दिस०] पंजाब में धान रोपने की एक रीति। माय।
 पु०—मुग्धाडा (लुष्णा)।
मुग्धा—पु० [दिस०] १. लुष्णा। २. आधारा और बदचलन।
मुग्धी—स्त्री० [हि० संगोत या लीग] १. टखनो तक लटकती हुई कमर मे बांधी जानेवाली बाईं एक लकीर छोटी घोंटी या बड़ा अंगोछा। तहमत। २ कपड़े का टुकड़ा जो हजामत बनाते समय नाई इंगलिये पीर पर आगे डाल देता है जिसमे बाल उठे पर गिरे। ३. साधना नामक लाल कपड़ा।
 स्त्री० [?] मोर की तरह का एक पहाड़ी पक्षी।
मुष्ण—पु० [सं०/लुष्ण (उत्साहना) + ल्युट्—अन] १ चूटकी से पकड़ कर झटके के साथ उखाड़ना। नोचना। उलटाना। जैसे—केस-मुष्ण। २ जैन मतिपों की एक क्रिया जिसमे उनके सिर के बाल चूटकी से पकड़कर नीचे जाते हैं। ३ काटना। तरा-दाना।
मुष्णित—पु० छ० [सं०/लुष्ण+कति] नोचा, उखाड़ा, काटा या छीला हुआ
मुष्णित-केस—पु० [सं० ब० सं०] जैन मति या साधु जिसके सिर के बाल नोच लिये गये होते हैं।
 वि० जिसके सिर के बाल नोचे हुए हो।
मुष्ण-वि० [सं० लुचन—काटना, उखाड़ना] १. बिना हाथ पीर का। संगड़ा। सूना। २. लाक्षणिक अर्थ मे ऐसा ब्यक्ति जो कोई काम-धाम न करता हो बल्कि यों ही बैठ रहा हो। ३ (पुल) जिसके पत्ते, डालियाँ आदि काट दी गई हो।

मुष्णा—वि०—मुष्ण।
मुष्णक—पु० [सं०/लुट् (स्तेय) + ल्युल्—अक] लुटेरा।
मुष्णन—पु० [सं०/लुट्+ल्युट्—अन] १ लुटना। २ लुक्कना।
 वि०—लुटित।
मुष्ठा—स्त्री० [सं०/लुट्+अ+टाप्] = लुठन (लुट्)।
मुष्णिक—वि० [सं०/लुट्+कत्] १. लुटा या चुराया हुआ (माल)।
 २. लुटा हुआ (व्यक्ति)। ३. लुक्का हुआ।
मुष्ठी—स्त्री० [सं०/लुट्+इन्+डीप्] गंध या धोरे का जमीन पर लेटना।
मुष्ण—पु० [सं०/लुट् (स्तेय) +अच्] चोर।
 पु०—मुष्ण।
मुष्ण-मूढ—वि० [सं० मूढ+मुष्ण] १ जिसका सिर, हाथ, पैर आदि कटे हो, केवल धड़ का लोभड़ा रह गया हो। २. जिसके हाथ-पैर कटे हों। लंगड़ा या लुला। ३. जिसके आवश्यकता या उपयोगी अंग कट गये हों। ४ गटरी आदि की तरह मोल-मोल किया हुआ।
मुष्णा—वि० [सं० मूढ] [स्त्री० अल्पा० लुडी] १ जिसकी पूँछ पर बाल न हों (बैल)। २ जिसके पर और पूँछ के बाल कट कर या झड़ गये हों। (पक्षी)
 पु० [हि० लुडी] बड़ा लुधा या गोला।
मुष्णिका—स्त्री० [सं०/लुट्+इन्+कन्+टाप्] मोल पिंड।
 लुडी।
मुष्णियाना—स० [हि० लुडी] सूत, रस्सी आदि को लुडी या रंगि के रूप मे लपेटना। लुडी के रूप मे लाना।
मुष्ठी—स्त्री० [सं० लुटिका] लपेटे हुए सूत की गोलाकार पिंडी।
मुष्णिनी—स्त्री० [सं०] कपिलवस्तु के पास का एक जन या उपवन जहाँ गौतम बुद्ध का जन्म हुआ था।
मुष्णाठा—पु० [सं० लीक=चमकना, प्रखण्डित+हाना+काण्ड] [स्त्री० अल्पा० लुआठी] वह लकीर पतली लकड़ी जिसका एक निरा जल रहा हो।
मुष्णाथ—पु० [अ०] चिपचिपा अथ। लासायुवत अंश।
मुष्णार—स्त्री०—लु०।
मुष्णजन—पु०—लोपाजन
मुष्णवर—वि० [हि० लुक्कना] १ (वह) जो लुक छिप जाता हो। २ कजल सामना या मुकाबला न करने वाला। भग्गु।
मुष्ण—पु० [सं० लीक=चमकना] १. वह लोच जिसे फेरने से वस्तुओं पर चमक आ जाती है। चमकदार रोगन। बानिना।
 कि० प्र०—केरना।
 २. अंग की लपक। ज्वाला। लौ।
मुष्णना—अ० [सं० लुक=लोप] ऐसी जगह जाकर रहना, जहाँ कोई देख न सके। आड़ में होना। छिपना।
 सयों० कि०—जाना।—रहना।
पुष्क-छिपकर—एते प्रकार से या रूप में जिसमे लोच देख न सके। चोरी से।
मुष्कना—पु० [अ० लुक्कना] भोजन का उतना अथ जितना एक बार भूँह मे डाला या लिया जाय। कौर। पाश। निवाला।

लुक्प्रमाण—युं० [अ०] कुरान में वणित एक लुक्मी या अपनी बुद्धिमत्ता के लिए प्रसिद्ध है।

लुक्परी—स्त्री०=लुक्पारी।

लुक्प्रकाश—युं० [हिं० लुक्=बचकीला+का० साध०] १. वह जो लुक् अर्थात् बचकीला रूप बनाता या लगाता हो। २. एक प्रकार का बचकीला जो सिलाया और बचकीला किया हुआ होता है।

लुक्प्रति—स्त्री० [हिं० लुक्प्रति+प्रति] १. लुक्ने-छिपने की किया या भाव। २. लुक्ने-छिपने का बच्चों का एक खेल।

लुक्प्रकाश—युं० [चीनी लुक्+प्रकाश से सं० लुक्प्रकाश] १. एक प्रकार का पेड़ जिसके फल आमड़े के बराबर और खाने में खट्टे-मीठे होते हैं। २. उन्नत फल।

लुक्प्रमाण—स० [हिं० लुक्प्रमाण] भाव० लुक्प्रमाण लुक्ने में प्रवृत्त करना।

प्रमाण।

प्रमाण—युं०=लुक्प्रमाण।

लुक्परी—स्त्री० [हिं० लुक्] १. फूल का पूला या लकड़ी जिसका एक छोर जलता हो। मसाल की तरह जलती हुई लकड़ी। २. अग्नि।

लुक्प्रकाश—युं० [हिं० लुक्प्रमाण] लुक्ने की किया या भाव।

लुक्प्रकाश—युं०=लुक्प्रमाण।

लुक्प्रमाण—स०=लुक्प्रमाण।

लुक्प्रकाश—युं०=लुक्प्रमाण।

लुक्प्रकाश—युं० [हिं० लुक्प्रमाण] लुक् छिपकर दुष्कर्त्तव्य करनेवाला या दुष्ट व्यक्ति। उदा०—हमने न मालूम तुम सरीखे कितने लुक्कों को तो बूटकी से ही मराल दिया है।—बुनावनलाल बर्मा।

लुक्प्रिया—स्त्री० [?] १. धूर्त औरत। २. पुरुषली। ३. बेवया।

५. कुलटा।

लुक्प्रकाश—युं० [स्त्री० अल्पा० लुक्परी]=लुक्प्रमाण (कपड़ा)।

लुक्प्रकाश—स्त्री० [दिसा०] लुक्परी पीछे की जानेवाली निवा। बुगली।

लुक्प्रकाश—स्त्री० [अ०] १. भावा। जवान। २. ऐसा शब्द जिसका अर्थ स्पष्ट या प्रसिद्ध न हो। ३. शब्द बोधा। अभिधान।

लुक्प्रकाश—युं० [दिसा०] [स्त्री० अल्पा० लुक्परी] गीले चूर्ण का पिंड या छीय।

लुक्प्रकाश—युं०=लुक्प्रमाण (कपड़ा)।

लुक्प्रकाश—स्त्री० [अ०] १. लुक्प्रमाण-सम्बन्धी। शब्दकोश का। २. शब्द कोशों में आया हुआ। कोश-गत। ३ (शब्द का अर्थ) जो मूल शास्त्रिक या व्युत्पत्तिक हो।

लुक्प्रकाश—स्त्री० [हिं० लुक्प्रमाण का स्त्री०]=औरत।

लुक्प्रकाश—स्त्री० [अ० लुक्प्रमाण का बहु०] शब्दों और उनके अर्थों का संग्रह। शब्द-कोश।

लुक्प्रकाश—स्त्री० [हिं० लुक्प्रमाण] १. छोटा कपड़ा। २. फटा घुपना कपड़ा।

३. लुक्प्रमाण आदि का लोका कितारा।

लुक्प्रकाश—युं० दे० 'लुक्प्रमाण'।

लुक्प्रकाश—अ०=लुक्प्रमाण।

लुक्प्रकाश—स० [सं० लुक्प्रमाण] शब्दों के साथ छीनना।

सं० किं०=लेना।

लुक्प्रकाश—स्त्री०=लुक्प्रमाण (मेरे की पूरी)।

लुक्प्रकाश—स०=लोचबाना।

लुक्प्रकाश—स्त्री०=लुक्प्रमाण (मेरे की पूरी)।

लुक्प्रकाश—वि० [सं० लुक्प्रमाण, हिं० लुक्प्रमाण] [स्त्री० लुक्प्रमाण] १. दूसरे के हाथ से वस्तु लुक्प्रमाण भागनेवाला। बाबा। २. कमीना, दुष्ट और पापी। ३. दुराचारी। लक्ष्मी। बोहदा।

लुक्प्रकाश—स्त्री० [?] मेरे की बनी हुई एक प्रकार की बहुत बड़ी तथा पतली पूरी।

वि० हिं० 'लुक्प्रमाण' का स्त्री० रूप।

लुक्प्रकाश—युं० [दिसा०] समूह में का गहरा स्थल। (लसा०)

लुक्प्रकाश—स्त्री०=लुक्प्रमाण।

लुक्प्रकाश—अ० [हिं० लुक्प्रमाण] १. लुक्प्रमाण। २. मारा मारा किराना।

३. इधर-उधर फीका-पटका रहना।

लुक्प्रकाश—अ० [सं० लुक्प्रमाण] १. (व्यक्ति या वस्तु का) लुट लिया जाना।

मुहा०—बर लुटाना=बर की सब सामग्री का लुटा जाना या जीरो के द्वारा अग्रहृत होना।

२. कोई अव्यक्त प्रिय और बहुमूल्य वस्तु छिन या हाथ से निकल जाना।

लुक्प्रकाश—अ०=लुटपदाना।

लुक्प्रकाश—अ० [हिं० लुटाना] १. लुटाना। २. लुटप्रमाण। ३. बिचर कर इधर-उधर गिरना। छिटकना। छितराना।

लुक्प्रकाश—वि० [स्त्री० लुटरी] धुंधला। उदा०—लुटरी, लुक्ली अलक, रज भूसर बहि आकर लिपट गईं।—प्रसाध।

लुटाना—स० [हिं० लुटाना का प्रे०] १. किसी की ऐसी स्थिति में लाना कि वह लुटा जाय। २. अपनी बीज या माल इस प्रकार दूसरों के सामने करना या रखना कि वे मनमाने रूप से उस पर अधिकार कर सकें। जैसे—उन्होंने जाबों रूप में ही लुटा दिए। ३. बरबाद करना। स्वयं में फेंकना या ब्यर्थ करना। ५. बहुत ही कोड़े या नाम मात्र के मूल्य पर जीरो की अपनी बीजें देना। सस्ते भाव से बेचना।

५. लुक्प्रमाण बंटाना या धान करना।

लुटबाना—स०=लुटाना।

लुटबाना—स्त्री० [हिं० लुटाना का स्त्री० अल्पा०] छोटा लुटा।

मुहा०—लुटबाना बूबना=सारा काम नष्ट होना या बुरी तरह से बिगड़ जाना।

लुटरी—युं० [हिं० लुटाना+एरा (प्रत्यय०)] १. वह जो दूसरों की धन-संपत्ति लुटकर अपनी जीविका सहाता हो। डाकू। २. वह लुक्प्रमाण पर जो बहुत महंगा सोदा देता हो या बड़ी धारता हो।

लुटप्रमाण—स्त्री०=लुट।

लुटप्रमाण—युं० [सं०]=लुटप्रमाण।

लुटप्रमाण—अ० १. =लुटप्रमाण। २. =लुटप्रमाण।

लुटप्रमाण—स० १. =लुटप्रमाण। २. =लुटप्रमाण।

लुटप्रमाण—अ०=लुटप्रमाण।

लुटप्रमाण—स०=लुटप्रमाण।

लुटप्रमाण—स्त्री०=लुटप्रमाण।

लुक्प्रदाना—अ०=लुक्प्रदाना ।

लुक्प्रदाना—अ० [सं० लुटन, हिं० लुटना+क] १. सीधे लखे न रहकर जमीन पर गिरते हुए इस प्रकार किसी और इष्टर-उष्टर होते हुए बहना कि कभी कोई अंग नीचे हो और कभी कोई अंग ऊपर । कुलकना । जैसे— (क) जमीन पर रखा हुआ लोटा लुटकना । (ख) पहाड़ी पर से आदमी या पत्थर का लुटककर नीचे आना । संयो० किं०—जाना । पठना ।

२. किसी और या पर झुकना । आकृष्ट होना । ३. मर जाना । जैसे—इस बार हमें मे से लेंकड़ी आदमी लुटक गये । ३. मन का व्यर्थ व्यय होना । जैसे—जरा सी बीमारी मे सेकड़ी रुपये लुटक गये । संयो० किं०—जाना ।

लुटकाना—सं० [हिं० लुटकना का सं०] किसी को लुटकने मे प्रवृत्त करना । ऐसा काम करना जिससे कुछ या कोई लुटके । संयो० किं०—देना ।

लुटकी—स्त्री० [हिं० लुटकना] बहुत गाड़े वही मे थोरी हुई भांग । †स्त्री०=लुटकी ।

लुटकना—अ०=लुटकना ।

लुटकाना—सं०=लुटकाना ।

लुटियाना—सं० १. लुटियाना । २. लुटयाना ।

लुटरा—वि० [विश०] [स्त्री०] लुटरी १ घघर की बात उचर लगानेवाला । २. बुलखोटा । ३. हुट्ट । पाजी ।

लुती—स्त्री०=लुती (लुआठी) ।

लुत्व—स्त्री०=लोच ।

लुक्—पुं० [अ०] १. अनुग्रह । कृपा । दया । २. किसी काम या बात से मिलनेवाला आनन्द या सुख । मजा ।

किं० प्र०—जाना । मिलना ।

मुहा०—लुक् उठाना=आनन्द या मजा लेना ।

२. किसी चीज या बात मे होनेवाला कोई विशिष्ट और लुब्ध गुण । शास लुक् ।

लुप्तना—सं० [सं० लुप्तन=कानना, लुप्=कटा हुआ,+ना] १. पकी खरी फसल की कटाई करना । लुनाई करना । २. चुनना । ३. काटकर या और किसी प्रकार अलग या दूर करना । हटाना । ४. नष्ट या बर्बाद करना । उदा०—बीपक हजारन अंधारन लुप्तियु ही—वेध ।

लुनाई—स्त्री० [हिं० लुनना] लुनने की क्रिया, भाव या मजहूरी । [हिं० लोच=लोच] नमकीम । लावय्य ।

लुनेरा—पुं० [हिं० लुनना] सोंत की फसल काटने या लुनेवाला मजहूर ।

†पुं०=नौमिया (जाति) ।

लुपकी—स्त्री०=लुपकी ।

लुप्तना—अ० [सं० लुप्] १. लुप्त या गायब होना । छिपना । लुक्तना । लुप्त—पुं० शं० [सं०/लुप् (छेदन)+क्त] १. जो अन्तहित हो गया हो या छिप गया हो । गायब । २. जो न रह गया हो । जिसका लोप हो गया हो ।

पुं० थोरी का वन या माल ।

लुप्त भास—पुं० [सं०] हिंदु पंचांग की चांद्र गणना में वह भास जिसका संबंध लोप होता है और जिसका नाम ही पंचांग में नहीं आते पाता । शय भास से निम्न ।

विशेष—ऐसा भास बहुत कम और बहुत विरल पर होता है ।

लुप्ताकार—पुं० [सं० लुप्त+आकार, कर्म० सं०] सरकत बर्णमाला का एक चिह्न जो आशं अ का सूचक होता है । इसका रूप यह है—ऽ ।

लुप्तापना—स्त्री० [सं० लुप्ता+उपना कर्म० सं०] उपमा अलंकार का वह प्रकार या भेद जिसमे उपमेय, उपमान, धर्म और उपमावाचक शब्द मे से कोई एक नहीं होता ।

लुप्तयना—अ० [सं० लुप्त्] लुब्ध होना ।

लुप्तय—वि०=लुब्ध ।

पुं०=लुब्धक (बहेलिया या थिकारी) ।

लुप्तयना—अ० [हिं० लुप्तय+ना (प्रत्य०)] लुब्ध होना ।

लुप्त्—वि० [सं०/लुप् (लोच करना)+क्त] १. किसी प्रकार के लोभ मे आया या पड़ा हुआ । २ जो किसी पर विशेष रूप से आसक्त हुआ हो । ३. मन मे किसी चीज या बात का बहुत लोभ या वासना रखनेवाला । जैसे—मन-लुप्त् । रूप-लुप्त् ।

लुप्तयक—पुं० [सं० लुब्ध+कृप्] १. व्यथा । बहेलिया । २. थिकारी । २. उत्तरी गोलार्द्ध का एक बहुत पक्कीला सार । (आधुनिक)

लुप्तयना—अ०=लुप्तयना । (लुब्ध होना) ।

लुप्तयपति—स्त्री० [सं० प० सं०] केसव के अनुसार प्रीक्षा नायिका का भेद । ऐसी प्रीक्षा नायिका जो पति और कुल के सब लोगों से लज्जा करे ।

लुप्त्—पुं० [अ०] १. सारभाग । २. गुदा ।

लुप्त्-लुप्त्—पुं० [अ०] १. गुदा । सार । २. सारभाग । साराश ।

लुप्ताना—अ० [हिं० लोभ+आना (प्रत्य०)] १. कुछ या किसी को पाने के लिए लोभ से युक्त होना । लालच या लालसा मे पडना । २. उक्त अवस्था के कारण तन-मन की सुष्ट मूलना । मोह मे पडना । ३. किसी पर आसक्त या मोहित होना ।

संयो० किं०—जाना ।

सं० १. अपने गुण, रूप आदि के कारण किसी के मन में लोभ या लालसा उत्पन्न करना । २. किसी के मन मे लोभ या लालसा उत्पन्न करना । २. किसी के मन मे अपने प्रति अनुकरा, आसक्ति या प्रसक्ति की कामना उत्पन्न करना और फलत ऐसी दया मे लाना कि वह सुख-बुध भूल जाय । मोह से युक्त करना ।

संयो० किं०—लेना ।

लुप्तयना—वि० [हिं० लुप्ताना] [स्त्री० लुप्तयनी] मन को मोहित या लुब्ध करनेवाला । मनोहर । सुन्दर । अ०, सं०=लुप्ताना ।

लुप्तित—पुं० शं० [सं०/लुप्+क्त] १. लोभ में आया या पडा हुआ । २. मूय । ३. बर्बादना हुआ ।

लुप्तोही—वि० [हिं० लुप्ताना+ओही (प्रत्य०)] १. प्रायः लुब्ध होनेवाला । २. दे० 'लुप्तयना' ।

लुप्त्—पुं० [?] १. ईरानी नसल की एक बहाड़ी जाति जो अपने

उपद्रवण के लिए प्रसिद्ध है। २. सुभर।
 वि० बहुत बड़ा उपद्रव या मुँह।
 सुभरणा—ज० [सं] सुभरणा। २. सुभरणा।
 सुभरका—पु० [हिं] सुभरका—सुभरणा। सुभरका (काय का गहना)।
 सुभरी—स्त्री०—सुभरी।
 स्त्री० [हिं] सुभरणा। काय में पहनने की बाकी। सुभरी।
 सुभरा—ज० [सं] सुभरी—सुभरणा। १. उभर से तनी पत्नी आई हुई बसु का इधर-उधर हिलना-डुलना। लरकना। झुलना। लहरना।
 २. सूका या हलक पड़ना। ३. अनाक या पड़ना या ना पहुँचना।
 ३. प्रवृत्त होना। ५. भ्रष्ट या मोहित होना।
 संयो० कि०—पड़ना।
 सुभराना—ज० [हिं] सुभरा। १. भ्रम-भ्रष्टक स्पर्श करना। २. भ्रम-पथाना।
 सुभरी—स्त्री० [हिं] नेरका—बडका। ऐसी गाय जिसे ध्याये कुछ ही दिन हुए हो।
 सुभर—पु० [सं]√सुल् (विभवन)+स्यद् [वि० लुक्त्वि] हिलना-डुलना। झुलना।
 सुभराना—ज० [सं] सुभर। १. हिलना-डुलना। २. झुलना। ३. लहरना।
 सुभरित—पु० क० [सं]√सुल् (हिलना)+स्य [लटकता या झुलता हुआ। आंशुलित। २. अशोभित। ३. बिजरा हुआ। ४. दबाया हुआ। ५. ध्वस्त। ६. सुभर।
 सुभराना—ज० [अनु०] सुभर से। सुभर कह करके किसी का उपहास करना।
 सुभर—स्त्री०—सुभर (सु)।
 सुभरी—स्त्री०—सुभरी।
 सुभरा—ज० [सं] सुभर। सुभर या मोहित होना।
 सुभरी—पु० [देश०] अग्रहण में होनेवाला एक प्रकार का वाम।
 सुभरी—स्त्री०—सुभरी।
 सुभर—पु०—सुभर।
 सुभरा—पु० [हिं] सुभर। १. वह स्थान जहाँ बैँकर सुभर लोहार काम करते हो। २. लोहारों की बस्ती या महल्ला।
 सुभरिन—स्त्री० [हिं] सुभर। सुभर या लोहार जाति की स्त्री।
 सुभरी—स्त्री० [हिं] सुभर+ई (प्रत्य०)। १. सुभर का काम या देखा।
 लोहे की बीज बनाने का काम। २. लोहार जाति की स्त्री। लोहारिन।
 सुभर—स्त्री० [सं] लघु, हिं लघुरा। छोटे कानोवाली भेड़।
 सुभरी—स्त्री०—सुभरी।
 सुभरी—स्त्री० [सं] लूक, हिं लू। शीघ्र श्रुत में चलनेवाली बहुत गरम हवा।
 कि० प्र०—मारना।—लगना।
 २. उगत का वह कुप्रभाव जिसमें व्यक्ति उबर से पीड़ित होता तथा जलन से छटपटाने या तड़पने लगता है।
 सुभरी—स्त्री० [सं] लूक—अजल। १. अजल की ज्वाला। आग की लपट।
 २. जलती हुई लकड़ी। सुती। ३. दे० लू।
 स्त्री० [सं] उल्का। अजला से लूटकर मिलनेवाला तारा।

सूचना—सं [हिं] लूक+ना (प्रत्य०)। आग लगना। जलाना।
 वि०—लूकना (लिनना)।
 लूका—पु० [सं] लूक—अजला। [स्त्री०] अजला० लूकी। १. आग की लौ या लपट। २. सुआटी। सुती।
 लूहा—(किसी के मुँह में) लूहा लगाना—मुँह उपभोक्त दूर हटाना।
 मुँह फूँटना। (सिखो की गाली)
 लूकी—स्त्री० [हिं] लूका। १. आग की चिनगारी। स्फुल्लिप। २. दे० लूक।
 लूक—वि०—लूक (लूक)।
 लूका—वि० [स्त्री०] लूकी—लूक।
 लूक—पु० [हिं] लूका। १. बरत। कपड़ा। २. चावर।
 लूका—पु० [सं] लूक। १. कपड़ा। बदन। २. विशेषतः फटा-पुराना कपड़ा। ३. शीतो।
 लूका—पु० [देश०] शूद्र व्यक्ति जो ठों में के साथ रूककर उन लोगों की लाशें गाढ़ने के लिए गढ़वे सोवता था, जिन्हें ठग लोग मार डालते थे।
 लूक—स्त्री० [हिं] लूकना। १. लूटने की क्रिया या भाव। २. किसी की बरा-धमका कर या मार-पीटकर जबरदस्ती उसकी चीजें छीन लेना।
 लूक—सुद-ससोद, लूक-बाद, लूक-भार। (दे०)
 ३. आज-काल किसी की विचारात् से लाभ उठाकर अप्रचित रूप से अपना आर्थिक लाभ करना। जैसे—यहाँ के दुकानदारों ने तो लूट मचा रखी है।
 कि० प्र०—पड़ना।—मचाना।—मचाना।
 ४. किसी को लूटने से मिलनेवाला धन या सम्पत्ति।
 लूकना—पु०—लूटना।
 लूक-ससोद, स्त्री० [हिं] बहुत से लोगों का किसी की पीछे लूट या छीन लेना।
 कि० प्र०—मचाना।
 लूकना—सं [सं] लूक—लूकना। १. बलात् अथवा डरा-धमका कर किसी की धन-सम्पत्ति उससे ले लेना या छीन लेना। जैसे—लूट्टेरी ने राह चलते मुसाफिरो को लूट लिया। २. किसी के घर, मकान, दुकान आदि में अनाधिकार प्रवेश कर उसमें रखा हुआ सामान उठा ले जाना। जैसे—उपद्रवियों का सारा बाजार लूटना। ३. फँके, लूटाई अथवा किसी के अधिकार या धन से निकली हुई बसु को हस्तगत करना। जैसे—(क) गृहणी या पतंग लूटना। (ख) पैसे लूटना। ४. अव्याय या धोखे से किसी का वज्र अग्रहण करना। जैसे—नीकर-बाकरी का नवाब सहाब को लूटना। ५. उचित से बहुत अधिक मूल्य लेना। अधिक दाम लेकर बेचना। जैसे—आज बाल के दुकानदार प्राधकी को बूट लूटते हैं। ६. किसी रूप में किसी का सब कुछ या बहुत कुछ मनमाने ढंग से ले लेना। जैसे—मजा लूटना। ७. किसी को अपने प्रति मोहित या लूभ्य करना, अथवा इस प्रकार अपना बनाना कि वह यकीनपूर्व हो जाय।
 लूका—पु०—लूट्टेरा। उदा०—लोमी लौद मुकरवा सगक बया पवैली लूटा।—सूर।

सूति—स्त्री०=लुट।

सुव—पुं० [सं० सुवण] नमक।

सुव—पुं० [इश्वरानां] यहुदियों के एक पैगम्बर।

सूता—स्त्री० [सं०√लु (छेदन)+तन्+टाप्] १ मकड़ी। २ मकड़ी के रेशों के विषय के कारण धारीय मे पड़नेवाले फफोले। मकड़ी का रोग। वृक्का। ३ च्यूटी।

†पुं०=लुका।

सूताभय—पुं० [सं०√लुता। भयट] मकड़ी नामक रोग।

सूती—पुं० [अ०] वह जो अस्वाभाविक रूप से मीठुन बने। बालको के साथ सभोग करनेवाला। लोभबाज।

पुं०=लुता।

सूत—वि० [सं०√लु (छेदन)+क्त, त—त] कटा हुआ। छिन। जैसे—सूत-पत्र=जिसके पर कटे हो।

†पुं०=नीम (नमक)।

सूतक—पुं० [हिं० लीन] १. सजी लार। २. अमलानी का साग।

सूतना—सं०=लुनना (लुनाई करना)।

सूतरा—स्त्री०=लोमड़ी।

†पुं०=लुमर।

सुम—पुं० [सं०√लु (छेदन)+मक] १ लामूल। पंछ। दुम। २. चक्कर। फेरा। उदा०—आता सुम लेता हुआ पूर्ण घट नीचे से।—मैथिलीराज गुप्त। २. सम्पूर्ण जाति का एक गण जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

पुं० [?] कला-बन्तु की लच्छी।

पुं० [अ०] कपडा बुनने का कर्मण।

सुमड़ी—स्त्री०=लोमड़ी।

सुमना—अ० [सं० लूम] १ लरकना। सुलना। २ लहरना। ३. (बादलों का) धिरना। ४ चक्कर खाना।

सुमर—वि० [दिसा०] अवस्था में बढ़ा। बयस्क। जैसे—इतने बड़े सुमर हुए, पर बात करने का डाऊन न आया।

सुम-विष—पुं० [सं० ब० सं०] ऐसे जन्तु जिनकी दुम या पूँछ में विष हो। जैसे—विच्छूक।

सूर—पुं० [?] कोई काम ठीक तरह से करने का ढंग। डाऊन। जैसे—तुम्हें तो किसी बात का लूर नहीं है।

सूरना—अ०=लुनना।

सूला—वि० [सं० लुन=कटा हुआ] [स्त्री० लुली] १ जिसका हाथ कट गया हो या बेकाम हो गया हो। विना हाथ का। लुला। टंडा। २. जो कुछ भी करने में असमर्थ हो।

सूलु—वि० [दिसा०] परम मूर्ख। निरा बेवकूफ।

सुहा—(किसी की) सुसू बनाना=किसी को बेवकूफ बनाकर उसका उपहास करना।

पुं० बच्चों को डराने के लिए 'जुजू' 'होआ' आदि की तरह के एक कल्पित विकट जीव की संज्ञा।

सुसना—सं० [?] मटिया-भेट करना। चोका लगाना। उदा०—सब बचपन मे पड़े जो सो सब लूस।—रत्ना०।

सं०=लुटना।

अ० दे० 'ललचाना'। (पवित्रम)

सुह—स्त्री०=लु।

सुहर—स्त्री०=लु।

सुह—पुं० [सं० लेख] मल की बेंबी हुई कड़ी बत्ती। बेंधा हुआ और मुसा मल (बीच के समय का)।

सुह—स्त्री० [हिं० लेंड] १ मल की बेंबी हुई कड़ी छोटी बत्ती। २ दे० 'मंगनी'।

सुहड़ा—पुं० [दिसा०] बच्चों का मतवाला (देखें) नाम का बिलौना। लेंस—पुं० [अ०] शीशे का ऐसा ताल जो प्रकाश की किरणों को एकत्र या केन्द्रीभूत करता हो। जैसे—बचमे का लेंस, फोटोग्राफी का लेंस।

सुहड़ा—स्त्री०=लेहड़ा।

सुहड़ा—पुं० [दिसा०] जमली जानवरों का झुंड। विशेषत घेरों का झुंड।

ले—अव्य० [सं० लन, हिं० लग० लगि] तक। पर्यंत

अव्य० [हिं० लेना] सर्वोधन के रूप में प्रयुक्त होनेवाला शब्द, जिसका अर्थ होता है—(क) अन्वय ऐसा ही सही। जैसे—ले मैं ही यहाँ से चला जाता हूँ। (ख) अब सप्तम में आया म। जैसे—ले, कौता फल मिला।

लेह—अव्य० [सं० लन; हिं० लगि] तक। पर्यंत।

लेई—स्त्री० [सं० लेहिन, लेही या लेह] १ पानी मे घुले हुए किसी पूर्ण की गाँडा करके बनाया हुआ लसीका पदार्थ। जैसे—अवलेह, लपसी आदि। २ पूजा हुआ आटा या मैदा जो आग पर पाककर गाँडा और लसदार बना लिया जाता है और काज आदि विपकाने के काम मे आता है। ३ गाँडा चोला हुआ चूना और बरी या बाळू और सीमेंट जो इमारत बनाने समय ईंटों आदि की जोड़ाई के काम आता है। गारा।

लेई-मूली—स्त्री० [हिं० सं०] सारी धन-सम्पत्ति।

लेओ—सं० हिं० लेना क्रिया का विधि-नाका रूप। लो। उदा०—पूर्ण करो गत सत्कारों को लेओ प्राण उबार।—पन्त।

लेखर—पुं० [अ०] व्याख्यान। वचनशा।

फि० प्र०=देना।

मुहा०—लेखर हाथाना=लगातार कुछ समय तक बड़-बड़कर उप-देशात्मक बातें कहते चलना।

लेखरबाज—पुं० [अ०+फा०] [भाब० लेखरबाजी] १. उपदेशात्मक बातें दूसरों से कहते रहनेवाला व्यक्ति। २. प्रायः व्याख्यान देते रहनेवाला।

लेखरबाजी—स्त्री० [अ० लेखर+फा० बाजी] लुब या प्रायः लेखर देने की क्रिया। (व्यय)

लेखर—पुं० [अ०] १ लेखर या व्याख्यान देनेवाला। २. विश्व-विद्यालय का उप-प्राध्यापक।

लेख—पुं० [सं०√लिख (लिखना)+पञ्] १ लिखे हुए अक्षर। २. लिखावट। ३ लिखी हुई बात, विचार या विषय। ४ दैनिक, मासिक आदि पत्रों मे छपनेवाला सामयिक निबंध। जैसे—आज के अक्षर मे राजा जी का भी लेख है। ५. कोई ऐसी लिखी हुई आज्ञा या आदेश जो नियम या विधान के अनुसार किसी बड़े अधिकारी ने

प्रचलित किया ही। (रिद) ६. ताड़क-पत्रों शिला-केलों, लिक्कों आदि में लिखी हुई बातों या विवरण। (इरसलिफ्शन) ७. लेखा। हिस्सा। विधि—लेख्य।

वि० [सं० लेखचर्चन] देवता।

लेखक—**मू०** [सं०√लिख्+कृप्—अक] [स्त्री० लेखिका] १. वह जो लिखता ही। लेखन कार्य करनेवाला। जैसे—कहानी लेखक, समाचार लेखक। २. वह जो मनोरंजन या औषिका के लिए कहानियाँ, उपायसा, लेख, साहित्यिक ग्रन्थ आदि लिखता ही। साहित्य-जीवी। ३. किसी गद्य या कृति का रचयिता।

लेखन—**मू०** [सं०√लिख्+स्तृप्—अन] [वि० लेखनीय, लेख्य] १. अक्षर आदि लिखने का कार्य। अक्षर-विन्यास। अक्षर बनाना। २. अक्षर आदि लिखने की कला या विद्या। ३. पुस्तिका में चित्र आदि अंकित करने की क्रिया या विद्या। चित्रांकन। ४. किसी रूप में किसी प्रकार के चिह्न आदि अंकित करना। जैसे—नाल-लेखन=नालूनो से खरोचकर किसी प्रकार की आकृति या चिह्न बनाना। ५. हिस्सा करना। लेखा समाना। कृतना। ६. की या वयन करना। छंदन। ७. ताड़कपत्र और भोजपत्र जिन पर प्राचीनकाल में लेख आदि लिखे जाते थे। ८. बँधक में वह क्रिया जिससे शरीर के अन्दर की धातुएँ तथा मूल या विकार या तो पतले करके शरीर के बाहर निकाले जाते या अन्दर ही अन्दर सुखाने जाते हैं। ९. उन्नत प्रकार की क्रियाएँ करनेवाली दवा या औषधि। १०. बँधक में शस्त्र द्वारा कोई दूषित अंग काटना या छेदना। पीर-काड़। १०. क्षीसी नायक रोग।

लेखन-वस्ति—**स्त्री०** [सं० मध्य० सं०] बँधक में पिचकारी की सहायता से शरीर के अन्दर की धातुओं और अवांति दोषों को पतला करने की क्रिया।

लेखन-सामग्री—**स्त्री०** [सं० वं० तं०] लिखने के काम आनेवाली चीजें या सामग्री। जैसे—कामज, कलम, स्थाही आदि। (स्टेशनरी)

लेखनहार—**वि०** [सं० लेखन+हृ० हार (प्रत्य०)] लिखनेवाला।

उदा०—आपुहि कागद आपु मसि आपुहि लेखनहार।—कबीर।

लेखना—**सं०** [सं० लेखन] १. अक्षर, चित्र आदि लिखना। लिखना।

२. लेखा या हिस्सा करना। गणित की क्रिया करना। ३. किसी की गिनती के योग्य या महत्वपूर्ण समझना। ४. मन ही मन कोई बात सोचना-समझना या निश्चित करना। ५. प्राप्त या भोग करना। उदा०—स्वर्ग का लाभ यहीं लेँ।—मीरजिंदरपत्र गुप्त।

लेखनिक—**मू०** [सं० लेखन+तन्—इक] १. लेखक। २. पत्रवाहक।

३. वह निरक्षर या असमर्थ जो लेख आदि पर स्वर्ण हस्ताक्षर न करके दूसरों से उन पर अपना नाम लिखावाता ही।

लेखनिका—**स्त्री०** [सं० लेखनिक+तन्पु]—लेखनी।

लेखनी—**स्त्री०** [सं० लेखन+नीप्] वह वस्तु जिससे लिखें या अक्षर बनाये। वर्ण पुस्तिका। कलम।

मुहा०—**लेखनी उठाना**=कुछ लिखना आरम्भ करना। **लेखनी चलाना**=लिखना।

लेखनीय—**वि०** [सं०√लिख् (लिखना)+अनीयर्] लिखे जाने के योग्य।

लेखन-पत्र—**मू०** [सं० वं० तं०] १. लिखित पत्र। लिखा हुआ कागज।

२. वस्तावेज। लेख्य।

लेखपाल—**मू०** [सं० लेख+पाल् (रखा)+णिप्+अण्] वह सरकारी कर्मचारी जो गाँवों के लेतों और उनकी उपाय, लगान आदि का लेखा रखता ही। (पुराने पदेवारियों की सर्व संज्ञा)

लेख-अप्राप्ती—**स्त्री०** [सं० वं० तं०] लिखने की शैली या ढंग।

लेखार्थ—**मू०** [सं० लेख-अधुषण, सं० तं०] देवताओं में श्रेष्ठ, शून्य।

लेख-शैली—**स्त्री०** [सं० वं० तं०] लिखने की वह विशेष शैली (देखें) जो लेखक की विशेषताओं से युक्त होती ही।

लेखहार—**मू०** [सं० लेख+हृ (हरण)+अण्] चिट्ठी ले जानेवाला। पत्रवाहक।

लेखा—**मू०** [सं० लेख, हिं० लिखना] १. वह लेख जो आय-व्यय की धन-राशि आदि से संबंध रखनेवाले अंकों या संख्याओं से युक्त होता ही। हिस्सा। (एकाउण्ट) २. इस बात का विचार कि कुल चीजें कितनी और किस अनुपात में हैं। जैसे—कितनी चीजें आई हैं, उन सब का लेखा तैयार करना।

वि० प्र०—समाना।—लिखना।

मुहा०—(किसी का) **लेखा** **चूकाना**=हिस्सा करने पर जो बाकी निकलता ही, वह देकर चुकता करना। **लेखा डालना**=बढ़ी आदि में कोई नया खाता खोलना या बढ़ाना। नया खाता डालना। **लेखा बँधक** **करना**=(क) हिस्सा चुकता करना। देन चुकाना। (ख) जमा और खर्च की सर्व बराबर करके हिस्सा पूरा करना। (ग) पीपद या नष्ट करना। (व्यय)

३. राशियों, संख्याओं आदि के संबंध में किया जानेवाला अनुमान। कूल। ४. किसी के महत्त्व, मान, योग्यता आदि के संबंध में मन में किया जानेवाला विचार।

मुहा०—(किसी के) **लेखे**=किसी के ध्यान, विचार या समझ के अनुसार। जैसे—हमारे लेखे उसका आना और न आना दोनों बराबर हैं। **किसी लेखे**=किसी ढंग, प्रकार या साधन से। किसी तरह। उदा०—सब कर मरनु बना एहि लेखे।—गुलसी।

५. जीवन-निर्वाह, व्यवहार आदि के संबंध रखनेवाली दशा या स्थिति। जैसे—लेखे पर चढ़ देखा। घर घर एकहि लेखा। (कहा०)

स्त्री० [सं०√लिख् (लिखना)+अ+तन्पु] १. लिपि। लिखा-वट। २. रेखा। जैसे—बन्द-लेखा।

लेखा-कर्म—**मू०** [सं० वं० तं०] आय, व्यय आदि का हिस्सा लिखने या रखने का काम। (एकाउण्टिंग)

लेखाकार—**मू०** [सं०] वह जो किसी महाजनी कीठी, सरथा आदि के आय-व्यय या लेन-देन का लेखा लिखता ही। (एकाउण्टेण्ट)

लेखागार—**मू०** [सं० लेखा+आगार] वह स्थान, विशेषतः किसी राज्य या सरकार का वह स्थान जहाँ रासन तथा सार्वजनिक हित से संबंध रखनेवाले सब प्रकार के लेख्य इसलिए सुरक्षित रखे जाते हैं कि आध-व्यकता परने पर प्रमाण या साक्ष्य के रूप में उपस्थित किये जा सकें। (आकिज)

लेखा-चित्र—**मू०** [सं० मध्य० सं०] अनेक रेखाओंवाला वह बड़ा चिकोर अकन जो किसी घटना या व्यापार में होते रहनेवाले उतार-चढ़ाव या परिवर्तन अथवा कुछ तथ्यों के पारस्परिक संबंध का सूचक

होता है। (भाऊ) जैसे—अव्य-नरण, तेजी-मंवी, आयात-नियति आदि का लेश्या-चिपन।

लेश्याप्यस—पु० [स० लेश्या-अध्यस, ष० त०] लेश्याकार।

लेश्या-नरीलक—पु० [स० ष० त०] वह जो किसी विषय, व्यपित, संस्था आदि के लेश्य या हिसाब-किताब को जींचता हो। (आडीटर)

लेश्या-नरीलक—पु० [स०] किसी प्रकार के कार-बार, लेन-देन या आद्य-व्यय आदि की जांच करने की क्रिया या भाव। (आडिटर)

लेश्यापाल—पु० [स० लेश्या/पाल् (रखना)+पिच्+अण्] वह जो आद्य-व्यय आदि लिखने का काम करता हो। बही-खाते आदि लिखने-वाला कर्मचारी। (एकाउण्टेन्ट)

लेश्या-मुस्तिका—स्त्री० [सं०] वह पुस्तिका जो बैंक की ओर से उन लोगों को मिलती है जिनके धण्ड बैंक में जमा होते हैं और जिसमें उनके खाते के लेन-देन की सब रकमें लिखी रहती हैं। (पामबुक) २ दे० 'लेश्या-बही'।

लेश्या-बही—स्त्री० [हिं० लेश्या+बही] वह बही जिसमें रोकवट के लेन-देन का ब्यौरा लिखा रहता है। (एकाउन्ट बुक)

लेश्या-शास्त्र—पु० [स० ष० त०] वह विद्या या शास्त्र जिसमें, इस बात का विवेचन होता है कि सब तरह के लेश्ये या हिसाब किस तरह से रखे या लिखे जाते हैं। (एकाउण्टेन्सी)

लेशिका—स्त्री० [सं० लेशक+टाप्, दश्] स्त्री लेशक।

लेशित—पु० कृ० [सं०√लिच् (लिखना)+पिच्+लत्] लिखवाया हुआ।

लेशी (लिच्)—वि० [स० लेश+इनि] लिखने की क्रिया करनेवाला। जैसे—चित्रकार, लेखक आदि।

स्त्री० [सं० लेश] १ खाते में लिखे जाने की क्रिया या भाव। ह्दराज। २. खाते में लिखी जानेवाली रकम या मद। (एन्ट्री)

लेश्ये—अव्य० दे० 'लेश्या' के अवर्णित मुहा०।

लेश्य—वि० [सं०√लिच् (लिखना)+प्यत्] १. लिखे जाने के योग्य। जो लिखा जा सके। २. जो लिखा जाने को हो। ३. जो लेश्य के रूप में और फलित प्रामाणिक हो। वस्तुविज्ञ। (अभ्यूमेन्टरी) पु० १. लिखी हुई कोई बात या विषय। लेख। २. विविध क्षेत्रों में, कोई ऐसा लेश्य जो प्रमाण या साध्य के रूप में काम आता या आ सकता हो। दस्तावेज। (डाक्यूमेन्ट) ३. चिपकला में, वह रेखा-चिप जो कोयले, खडिया, रंग आदि की सहायता से अंकित होता है और जिसमें किसी घटना, दृश्य आदि के सबध में चित्रकार के आत्यरिक भाव व्यक्त होते हैं। (ड्राइंग)

लेश्या—स्त्री०=लेन्गुरी (रस्सी)।

लेश्य—स्त्री० [फा०] १. कमान जिससे धनुष चलाने का अण्यास किया जाता है। २. वह कमान जिसमें लोहे की जबीर और कटींगिया रूतरी हैं और जिससे मूखलवान लोग कसरत करते हैं।

लेश्य प्र०—मौजना।—हिलाना।

लेश्यरंग—पु० [लेश् ?+हिं० रंग] मरकट या पत्ते की एक रंगत जो उसका गुण मानी जाती है।

लेश्युर—स्त्री० [स० रञ्ज, मागधी प्रा० लेन्गु] १. रस्सी। डोरी। २. क्षुर से पानी सींचने की डोरी या रस्सी।

लेश्युरा—पु० [दश०] एक प्रकार का अणुहीन घाम जिसका बावक बहुत दिनों तक रहता है।

† पु०=बही लेन्गुरी (रस्सी)।

लेन्गुरी—स्त्री०=लेन्गुर।

लेन्—पु० [दश०] १. सुरक्षी, कंकड़, और चने अथवा कंकड़ प्रथा सीमेत का वह संश्लेषण, जो फलों बनाने के लिए जमीन पर बिछाया जाता है।

कि० प्र०=शालना।—पडना।

वि० [अ०] जो देर से आया हो अथवा जिसने आने में देर लगाई हो। जैसे—आज गाड़ी लेट है।

लेटना—अ० [स० लुटन, हिं० लोटना] १. विश्वास करने के लिए हाथ-पैर और सांग शरीर लम्बाई के बल पसार जमीन या किसी सतह पर टिका कर पड़ रहना। जमीन या जिससे से पीठ लगाकर बदन की सारी लम्बाई उस पर टहलाना। पीड़ना। जैसे—जाकर बारपाई पर लेट रहो, तबीयत ठीक हो जायगी।

संयो० कि०=जाना।—रहना।

२. खड़े बल में रहनेवाली चीज या बगल की ओर झुककर जमीन पर गिरना या जमीन से सटना। जैसे—अधी में पेड़ों का फसल का लेटना।

संयो० कि०=जाना।

३. किसी पदार्थ का ठीक दशा में न रहकर बिगड़ जाना या खराब होना। ४. मर जाना। (भाजाऊ)

लेन्-येट—स्त्री० [दश०] एक प्रकार की चाय।

लेन्टर—पु० [अ०] १. अक्षर। २. चिट्ठी।

लेन्टर-बन्धस—पु० [अ० लेन्टर-बन्धस] १. शाकसाने का वह सतूक जिसमें कहीं भोजन के लिए लोग चिट्ठियाँ डालते हैं। २. प्राय घरो के दर-वाजो पर लगी हुई वह पेटी या सतूक जिसमें डाकियाे या और लोग आकर मासिक मकान की चिट्ठियाँ छोड़ वा डाल जाते हैं। पत्र-पेटी।

लेटना—न० [हिं० लेटना का प्रे०] १. ऐसी क्रिया करना जिससे कोई लेट जाय। २. खड़ी चीज को जमीन पर डेढ़े बल में रखना या फीलाना।

लेन्—पु० [अ०] सीसा नामक धातु।

पु० [अ०] प्रायः दो अणुल चौड़ी सीसे की बली हुई पत्तली पट्टी या पट्टी जो छापाखाने में अक्षरों की पकितयो के बीच में (अक्षरों को ऊपर नीचे होने से रोकने के लिए) लगाई जाती है।

लेन्डी—स्त्री० [अ०] १. भले घर की स्त्री। महिला। २. इंग्लैंड में किसी लार्ड या सरकार की पत्नी के नाम के पहले लगनेवाली उपाधि। जैसे—लेन्डी मिट्टी।

लेन्थी—पु०=लीथी।

लेन्ध—पु० [दश०] एक प्रकार के गीत जो दुन्नेलक्षध में माध फागुन में गाये जाते हैं।

लेन्धार—पु० [दश०] एक प्रकार की चिड़िया।

लेन्डी—स्त्री० [दश०] १. जलाशयो के किनारे रहनेवाली एक प्रकार की छोटी चिड़िया। २. पास का वह पूजा जो हल के नीचे के भाग में इसलिए बांध देते हैं कि कृष अधिक चौड़ी न होने पावे।

केन्दे—एकी० [हि० केना+देना] १. लेने और देने की क्रिया वा भाव।
केन्द-देन २. सांसारिक काम-धर्म और झगड़े-बाजड़े। उदा०—
 हर एक पक्ष है अपनी केन्दे में—ब्रज्जन।

केन्द-पु० [हि० केना] १. लेने की धिया वा भाव।
 पर—केन्द-देन।

२. वह वन जो किसी से लिया जाने को हो। पावना। लहना।

केन्दधार—पुं० [हि० केना+धा० धार (प्रत्य०)] १. वह जो अधि-
 कारता या व्यक्तितः किसी से अपना कुछ अथवा उसे ही हुई चीज ले सकता
 हो। २. वह जो किसी से उधार दिया हुआ वन धारने का अधिकारी
 हो। महाजन।

केन्द-वेन—पु० [हि० केना+वेना] १. लेन और देन का व्यवहार।
 आदान-प्रदान। २. व्यापारिक और सामाजिक क्षेत्रों में किसी को
 कुछ देने और उससे कुछ लेने का व्यवहार। जैसे—हुआरा उनका केन्द-
 वेन बहुत दिनों से बन्द है। ३. लोगों की रूपए उधार देने और फिर
 उससे सूच सहित मूल वन लेने का व्यवसाय। महाजनी। जैसे—
 उनके यहाँ घुसतों से केन्द-वेन चलता है।

केना—स० [सं० लभन; पु० हि० लभना] १. जो वस्तु कोई दे
 रहा हो, उसे प्रहृत या प्राप्त करना। किसी की ची हुई चीज अपने
 अधिकार या ह्रास में करना। जैसे—किसी से लिए वा वन
 लेना।

पर—लेना एक न देना हो—कोई प्रयोजन, संबंध या सरोकार नहीं है।
 कुछ गरज या बास्ता नहीं है। जैसे—लेना एक न देना दो, हम यहाँ
 स्वयं इस प्रबंध में पढने जायें।

मुहा०—लेने के देने पड़ना—प्राप्ति, लाभ आदि की आशा से कोई
 काम करने पर उल्टे पास का कुछ लौना वा गैबाना अथवा कष्ट या
 संकट में पडना। जैसे—वह चले तो वे चोरी पकचने पर उल्टे उल्टे
 लेने के देने पड़े गये।

२. कोई चीज किसी प्रकार या किसी रूप में अपने अधिकार या ह्रास
 में करना। उत्सगत करना। जैसे—(क) बाजार से कपड़े (या
 किताने) माल लेना। (ख) किराये पर मकान लेना। ३. कोई
 चीज अपने अंग पर धारण करना या किसी रूप में रखना। जैसे—
 (क) हाथ में घड़ी या छाता लेना। (ख) कर्चें पर वा गीद में बन्धा
 लेना।

मुहा०—ले लेना—अविष्टित कर लेना। बलप्रयोग से प्राप्त कर लेना।
 जैसे—(क) पौड़े ही दिनों में अंगरेजों ने सारा पञ्जाब ले लिया। (ख)
 डाकुओं ने उसका सारा वन ले लिया।

३. कोई चीज अपने अंग पर धारण करना या किसी रूप में रखना।
 ४. उधार के रूप में वा मांगकर प्राप्त करना। जैसे—महाजनों
 से रूपए ले लेकर काम चलाना। ५. खाने-पीने की चीज दूँह में रखकर
 गले के नीचे वा पेट में उतारना। सेवन करना। जैसे—दोनी का
 दवा वा बूँध लेना। ६. किसी प्रकार का उत्तरदायित्व, प्रतिज्ञा
 वा भार बंधीकृत करना। निश्चिह्न, वहन आदि के लिए उत्तरदायी
 बनना वा हुसलकल्प होना। जैसे—(क) किसी काम का उत्तर-
 दायित्व या दफ का भार लेना। (ख) व्रत, धारण वा संस्थाप
 लेना।

मुहा०—(अपने आपकी) लिये लिये रहना—अपने आपकी इस प्रकार
 संभावकर रखना कि कोई अनुचित वा अविष्टितप्रभुं आधार वा
 व्यवहार न होने पाये। (अपने) ऊपर लेना—निश्चिह्न वहन धारि का
 भार ब्रहृत करना। जैसे—उसका सारा अण (या भार) मैंने अपने
 ऊपर ले लिया है। ७. जयूतं वाता, जिवातं, जिवातं, जिवातं आदि के
 संबंध में किसी रूप में गृहीत वा प्राप्त करना। जैसे—(क) किसी
 से परामर्श या जलाह लेना। (ख) किसी के मन की बाह लेना।
 (ग) किसी का आधीर्षय वा गारुड्य लेना।

मुहा०—ले-देकर—(क) सब कुछ हो जाने पर अंत में। जैसे—
 ले-देकर यह बदनगी ही हाथ आई। ले-दे करना—(क) कृहा-सुनी,
 तकरार वा हुज्जत करना। जैसे—प्रतियारी की तरह यह ले-दे करना
 ठीक नहीं है। (ख) किसी कार्य की पूर्ति वा सिद्धि के लिए बहुत प्रयत्न
 वा प्रयत्न करना। जैसे—इतनी ले-दे करने पर सब कही दिन
 भर में यह काम पूरा हुआ है।

८. आनेवाले का पीछा करने हुए उसके पास पहुँचकर उसे
 पकड़ना। जैसे—(क) इतने में सिपाहियों ने वहाँ पहुँचकर उसे
 पकड़ लिया। (ख) लेना, जाने न पाया। ९. किसी काम या बात
 की सिद्धि करते हुए उसके संबंध में कोई किमा करना। (कुछ
 प्रविष्टि २००० कि० के साथ प्रयुक्त) जैसे—ले चळना, ले जगना,
 ले घागना, ले रखना, ले लेना आदि।

मुहा०—ले उड़ना—(क) कहीं से कुछ लेकर इस प्रकार अलग वा
 दूर होना कि कोई समझ न पाये। जैसे—कहीं से कोई बात मुन पाई,
 और ले उडे। (ख) कहीं से कुछ लेकर उसे अपना बढाते वा बनाते
 हुए आरंबपर्यंत अपना पीढ्य वा योगता प्रकट करना। ले बाळना—
 खराज, बीपट वा नष्ट करना। जैसे—(क) तुमने यह किताने नी ले
 डाली अर्थात् नष्ट कर दी। (ख) इस गोटे ने तो सारी की सारी
 सोभा ही ले डाली अर्थात् बिगाड दी। ले डूबना वा ले बीडना—स्वयं
 नष्ट वा समाप्त होने के साथ ही साथ दूसरे को भी दुरी तरह से नष्ट
 वा समाप्त करना। जैसे—उसकी यह चालानी ही उल्टे ले डूबोगे वा
 ले बीतेगी। (कोई काम वा बात) ले बीडना—अच्छा काम वा बात
 छोड़कर किसी तुच्छ अथवा साधारण काम वा बात
 में लग जाना। जैसे—तुम भी यह कहीं का गगडा (या पकवा) ले
 बैठे। (किसी की वा कोई चीज अपने साथ) ले बीडना—किसी काम,
 चीज वा बात का अपने बीच, भार आदि के कारण स्वयं नष्ट होने हुए
 दूसरे को भी अपने साथ नष्ट करना। जैसे—(क) यह छत्रवा सारा
 मकान ले बीडेगा। (ख) यह दुर्व्यसन उनका सारा कार-भार ले बीडेगा।
 ले लेना—उद्देश्य की सिद्धि अथवा कार्य की समाप्ति के बहुत निकट
 तक पहुँच जाना। जैसे—बहुत-सा काम ही चुका है, अब ले ही लिया
 है, अर्थात् समाप्ति में अधिक बिलंब नहीं है।

१०. किसी प्रकार वा किसी रूप में एक व या प्राप्त करना। जैसे—
 (क) बगोचे से फूल लेना। (ख) लोभो से चन्दा लेना। (ग) कहीं
 से लड़का गोद लेना।

मुहा०—ले पालना—क्या वा पुत्र के रूप में अपने पास रखकर पालन-
 पोषण करना।

११. किसी वस्तु वा व्यक्ति का ठीक और पूरा उपयोग करना अथवा

उत्ते काम में प्रवृत्त करना। जैसे—(क) यह काम बहुत परिश्रम लेना है। (ख) उसे नीकरो से काम लेना नहीं आता। १२ प्रयोगिता, होठ आदि में विषयी या सफल होना। जैसे—किरी म बाजी लेना या ले जाना। १३. कुछ विशिष्ट इन्द्रियों के सबध में किसी बात या विषय का ग्रहण करना। जैसे—अपने मन में किसी देवता या फूल का नाम हो।

मुहा०—(बोई बात) काम में लेना—मुनना। (बवं०)
१५ अतिथि का मकार या स्वागत करने के लिए आगे बढ़कर उनसे मिलना। अगवाणी या अभ्यर्चना करना। जैसे—उन्हे लेने के लिए बहुत से लोग स्टेसन पहुँच गे। १६ किसी का उपहास करने हुए उसे लज्जित करना और तुच्छ या हीन सिद्ध करना।

मुहा०—(किसी को) आड़े हाथों लेना—बहुत अधिक उपहास तथा मर्स्याना करते हुए निरुत्तर करना। (किसी का) लिया जाना—उप-हासास्पद और लज्जाजनक स्थिति में लाया जाना। जैसे—आज वह बहूँ अच्छी तरह लिया गया।

१६ स्त्री के साथ मेलन या संयोग करना। (बाजाऊ)
मुहा०—(किसी का) लिया जाना—मेलन या संयोग की स्थिति में लाया जाना। (किसी को) ले पकना—किसी को अपने साथ लेटाकर उससे संयोग करना।

विशेष—रचना, लगाना आदि की तरह लेना का भी बहुत सँ क्रियाओं के साथ संयोग कि० के रूप में प्रयोग होता है; और ऐंसे अवसरों पर यह प्रायः उस क्रिया की पुनः या समाति का सूचक होता है। जैसे—उठा लेना, कह लेना, खा लेना, मुन लेना आदि। कुछ अवस्थाओं में यह इस बात का भी सूचक होता है कि कर्ता कोई क्रिया बहुत ही कठिनता से, जैसे-जैसे अवस्था बढ़े या बहुत ही साधारण रूप में कोई क्रिया पूरी करने में समर्थ होता है। जैसे—(क) वह भी टूटी-पूटी डिब्बी पढ़ या बोल लेता है। (ख) मैं भी कुछ कुछ मरकत समझ लेता हूँ। (ग) रोपी अब सौ दो सौ बदन चल लेता है।

लेना-देना—गु० [हि०] १ लेने और देने की क्रिया या भाव। लेन-देन।

मुहा०—लिये-दिये—साथ में लिये हुए। साथ लेकर। उदा०—लिये-दिये ध्यान में भी उनको लिये-दिये। —मिथिली शरण गुप्त।
ले-कर—सब बातों के हो चुकने पर। अतः में। जैसे—सब ले-कर यही कलक हाथ आया। (किसी से कुछ) लेना-देना होना—कोई सबध या सरोकार होना। जैसे—वह जहनूम में जाय, हमें उससे क्या-लेना-देना है।

२. वास्ता। सबध। सरोकार।

पद—ले-ने—आपस में हँसवाली कहा-मुनी या हुज्जत। जैसे—इतनी ले-ने के बाद भी नतीजा कुछ न निकला।

के निहार—वि०—लेनदार।

लेप—गु० [स० लिप् (लपना) + घञ्] १ गली या धोली हुई वस्तु को किसी दूसरी चीज पर पीतो जाने को हो। २ इस प्रकार पीतो हुई वस्तु को परत।

कि० प्र०—बढ़ाना—लगाना।

३. धारी पर लगाया जानेवाला उबटन। बटना। ४. लगाव। सपर्क।

लेपक—वि० [स०/लिप्+प्लृप्—ङक] लेप करने अर्थात् पीतने या लगानेवाला कारीगर।

गु० १ नूना छुनेवाला मिस्त्री। ३. सौधा बनानेवाला कारीगर।
लेप-कामिनी—स्त्री० [स० मध्य० सं०] सचि में डली हुई स्त्री की मुति।

लेपकार—वि०, गु० [स० लेप/ङक (करना) + अण्]—लेपक।

लेपन—गु० [स०/लिप्+स्पृट्—अन्] [वि० लेपित्ता, लेप्य, लिप्त] १. लेप लगाना। २. नूना छूना।

लेपना—स० [स० लेपन] पतले या गाढ़े धोल में उँगलियाँ, कूची या पुचारा मिगोरक किसी अंग, बीबार, छत, बूले-चौके या और किसी पदार्थ पर इस प्रकार फेरना या लगाना कि उस पर उक्त धोल की एक परत चढ़ जाय जय आय। लीपना।

लेपनीय—वि० [स०/लिप्+अनीयर्] जो लेप के रूप में लगाया जा सके या लगाया जाने को हो।

लेपालक—गु० [हि० लेना+पालक] १. किसी दूसरे का ऐसा लड़का जो अपने आग लड़के की तरह रखकर पाला-पोसा गया हो। २ गोद लिया हुआ लड़का। दत्तक पुत्र।

लेपी (मिन्)—वि० [स०/लिप्+गिति] लेप करनेवाला।

गु०—लिपिक।

लेप्य—वि० [स०/लिप्+प्यट्] १ जो लेप के रूप में लगाया जा सकता हो। २ जिस पर लेप लगाया जा सकता हो। ३ सचि में डाले जाने के योग्य।

लेप्य-नारी—स्त्री० [स० कर्म० सं०] १. वह स्त्री जिसने धन आदि का लेप लगाया हो। २. पत्थर या मिट्टी की बनी हुई स्त्री की प्रतिकृति या मुति।

लेपिनेट—वि० [अ०] (अधिकारी) जो किसी दूसरे अधिकारी से पद में कुछ घटकर हो तथा विशिष्ट अवसरों पर उनका प्रतिनिधित्व करता हो और उसकी अल्पस्थिति में उनके सब अधिकार ग्रहण करता हो। जैसे—लेपिनेट-मार्बनर, लेपिनेट-कर्मल।

गु० १ एक सैनिक पद जो कप्तान के पद से घटकर होता है। २. उक्त पद पर काम करनेवाला अधिकारी।

लेबर—गु० [अ०] १ श्रम (बौद्धिक और शारीरिक) २ श्रमिक-वर्ग। ४. श्रमिकों का संघटन या समुदाय।

लेबर यूनिशन—स्त्री० [अ०] मजदूरों या श्रमिकों का सघ या संस्था। श्रमिक।

लेबरर—गु० [अ०] मजदूर। श्रमिक।

लेबुल—गु० [अ०] किसी चीज पर लगी हुई वह परची जिस पर उस चीज का विवरण लिखा होता है।

लेबोरेटरी—स्त्री० [अ०] वै० 'प्रयोगशाला'।

लेमन-यूस—गु० [अ० लेमन-यूस] १ बच्चों के लाने के लिए बीनी की वह छोटी टिकियाँ जिनमें नींबू का रस भाई पाया रहता है। २. चुनी जानेवाली बीनी की गोली या टिकिया।

लेमेन्डे—गु० [अ०] पाश्चात्य देश से बनाया हुआ नींबू का वह शरबत जो बोटलों में बन्द करके बाजारों में बेचा जाता है। बीडा पानी।

लिंगर—पुं० [अं०] बन्दरी से मिलता-जुलता अफ्रीका का एक प्रकार का जानु जो पेशों पर रहता है।

लिंग—पुं० [का०] लिंग।

लिंग, लिंगना—पुं० [?] गी, बकरी, भेड़, मत्त आदि का बच्चा।

लिंगा—पुं० [?] [स्त्री०] लैली। १. बच्चा। २. सिद्ध। (पश्चिम)

लिंगु—पुं० [सं०/लिंग्+अस्वादन]+यद्, लुक्, द्विरच्, लैलिङ्+अच्] १. पू। लीस। २. सों।

लिंगुलिंग—वि० [सं०/लिंग्+यद्, लुक्, द्विरच्, लैलिङ्+सानच्] १. बचने या भाटनेवाला। २. ललचाया हुआ।

पुं० १. बार-बार बातना। २. लप लप करना। लपलपाना। ३. शिब का एक नाम या रूप। ४. सर्प। सों।

लिंगुलिंग—वि० [सं०/लिंग्+यद्, लुक्, द्विरच्, लैलिङ्+प्यन्] १. बार-बार भाटे जाने के योग्य। २. जो लप लप करता या कर सकता हो।

लिंग—पुं० [सं०] लेप। १. दाल-मात आदि पकाने की बेगनी या हाँडी के निचले बाहरी अंग पर किया जानेवाला मिट्टी का लेप। २. लेप।

मुहा०—लेप चढ़ाना—आदमी का मोटा होना। (अर्थ)

लिंगक—पुं० [विश०] एक प्रकार का वृक्ष जिसकी लकड़ी इमारत के काम आती है।

लिंगलगा—वि०—लेनालना।

लेना—वि० [हिं०] लेना। लेनेवाला। जैसे—नाम-लेना, जान-लेना।

पुं० [सं०] लेप्य हिं० लेप। १. किसी चीज पर चढ़ाया जानेवाला मिट्टी आदि का लेप। लेप। २. गीली मिट्टी जो लेपने या लेना लगाने के काम आती हो। गिलावा।

वि० प्र०—लगाना।

३. अधिक पानी विशेषतः वर्षा के कारण छेत का गिलाव। ४. धन।

५. नाव की पेंदी पर का बह तक्ता जो सिर से पत्थार तक लगाया जाता है।

पुं०—लेप।

लेना-देही—स्त्री०—लेन-देन।

लेपार—पुं० [सं०] अथार।

पुं०—लेप या लेवा (गिलाव)।

लेपारना—सं० [हिं०] लेवार। लेप लगाना। लेपना। २. अंग पर चढ़ाने से पहले बरतन के पेंदे में लेवा लगाना।

लेवाल—वि० [हिं०] लेना+वाला। १. लेनेवाला। जैसे—नाम लेवाल—नाम लेनेवाला। २. खरीदनेवाला। खरीदार। 'बैचवाल' का विपयाय।

लेस—पुं० [सं०/लिंग् (कम होना)+अच्] १. अणु। २. किसी चीज का बहुत थोड़ा अंश। ३. सूभसा। ४. विश्व। निदान। ५. लगाव। संबंध। ६. साहित्य में एक अलंकार जिसमें किसी शेष के साथ अच्छाई का या अच्छाई के साथ शेष का जो उल्लेख होता है। ७. एक प्रकार का नाम।

वि० बाँटा।

लेसी (सिन्)—वि० [सं०] लिंग्+गिन्। जिसमें किसी दूसरी चीज का शेष या सूचक अंश हो।

लेसोभल—वि० [सं०] लेस-उत्त, पुं० सं०] संबंध में या संकेत रूप में कहा हुआ।

लेसना—स्त्री० [सं०] लिंग्+प्यन्+टाप्] जैनीयों के अनुसार जीव की वह अवस्था जिसमें वह कामो से बँधता है।

लेष—पुं० १—लेस। २—लेस।

लेसना—सं०—लेसना।

लेसनी—स्त्री०—लेसनी।

लेस—स्त्री० [सं०] लेष। १. ससीला पदार्थ। २. लास। ३. लेसने की किया या भाव। ४. लगाव। सबब। उदा०—निरखि नबोडा नारितन छुटत लरिकई लेस।—बिहारी।

लेसना—सं० [सं०] लेष्या (दीप्ति), प्रा० लेस्यया वा सं० लसा। जलाना। जैसे—दीया लेसना।

सं० [हिं०] लेस या लेप। १. कोई चिपचिपी चीज लगाकर चिपकाना या सटाना। जैसे—दीवार पर कागज लेसना। २. लेप लगाना। पोतना। ३. दीवार पर मिट्टी का गिलावा पोतना। ४. किसी की निन्दासूचक या लड़ाई-भागडा करनेवाली बात दूसरे से जाकर कहना। जैसे—हमने तुमका यो ही एक बात कही थी, तुमने वहाँ जाकर उनसे लेस दी।

लेसना—पुं० लहडा (जन्तुओं का)।

लेह—पुं० सं०/लिंग्+अच्] १. चाटकर खाई जानेवाली चीज। २. अल्लेह। ३. बहण का एक भेद जिसमें पृथ्वी की छाया (या राहु) सूर्य या चंद्र बिम्ब की जीभ के समान चाटती हुई अंग पकती है।

लेहना—पुं० [सं०/लिंग्+अस्वादन]+प्यन्+अन्] जीभ से चाटना।

लेहना—पुं० [हिं०] लहना। १. खेत में कटे हुए शास्य या फसल का बह अंश जो काटने वाले मजदूरों को मजदूरों के रूप में दिया जाता है। २. कटी हुई फसल की बह इच्छा जो नार्द, घोड़ी आदि को दिया जाता है। ३. डडल या पयाल आदि की बह भाग जो उठाने वाले के दोनों हाथों में आ सके। ४. दे० 'लहवा'।

पुं० [सं०] लेहना।

पुं० [सं०] लेहना।

लेहलित—वि० [हिं०] लमना। १. घोभा देने या सुन्दर लगनेवाला। २. किसी से मिश्रित या युक्त। उदा०—लखती लाल की ओर राज लेहलित नैन सिं—रत्नाकर।

लेहनुआ—पुं०—लहनुआ (घास)।

लेहाबा—अर्थ० [अं०] इसलिए। इत बास्ते। इस कारण।

लेहाबा—वि०—लेहाडा।

लेहाबी—स्त्री०—लेहाबी।

लेहाक—पुं०—लेहाक।

लेही (हिन्)—वि० [सं०/लिंग् (आस्वादन)+गिन्] चाटनेवाला।

लेह्य—पुं० [सं०/लिंग् (आस्वादन)+अच्] १. वह पदार्थ जो चाटकर खाया जाता है। जैसे—अचार, पटनी आदि, (बहु भोजन के छ' प्रकारों में से एक है।) २. अल्लेह।

वि० (पदार्थ) जो चाटकर खाया जाता हो।

लैग—वि० [सं०] लिंग्+अण्] लिंग-सम्बन्धी। लिंग का।

लैगिक—पुं० [सं०] लिंग्+इक्—इक्] वैशेषिक दर्शन के अनुसार अनुमान।

प्रमाण। बहुमान जो लिंग द्वारा प्राप्त हो। इसी को त्पय्य में अनुमान कहते हैं।
 वि० १. लिंग-सम्बन्धी। लिंग का। लैंग। २. स्त्री या पुरुष के लिंग या जननेन्द्रिय से संबंध रखनेवाला। यौनि-संबंधी। (सेक्सुअल)
 लंबो—स्त्री० [अ०] एक प्रकार की छायादार घोड़ा-नाडी।
 लम्ब० [अ०] दीर्घक। चिराग। लंब।
 लम्बो—स्त्री० = लम्ब (संगीत की)।
 पु० = लम्ब (लौचता)।
 लम्ब्य० = लंबी (तक)।
 लैटिन—स्त्री० इटली देश की प्राचीन भाषा जो किसी समय सारे युरोप में विद्यमान तथा पारसियों की भाषा थी। इसका साहित्य बहुत उन्नत था इसी लिए अब भी इसका अध्ययन किया जाता है।
 वि० प्राचीन रोम नगर से संबंध रखनेवाला।
 लैन—स्त्री० = लाइन।
 लैपा—पु० [हि० लपना] बहु धान जो अगहन में काटा जाता है।
 जड़हन। शाही। लखक।
 लैपी० = लार्ड।
 लैर—पु० [?] किसी आदिमी या चीज का पिछला भाग। पीछा। (राज०)
 ल्य० = १. साथ साथ। २. पीछे पीछे।
 लैक—पु० [?] बछड़ा।
 लैक—स्त्री० [का०] रात।
 पद—लैकोविहार = रात और दिन।
 लैला—स्त्री० [का०] १. लेला-मजदू की ग्रेम कहानी की प्रसिद्ध नायिका और मंजनु की मैयिका। २. ग्रेसरी। ३. सुन्दरी।
 लैसंसां—पु० [अ० लाइसेंस] अनुज्ञा। (दे०)
 लैस—पु० [हि० लेस] एक प्रकार का सिरका २ लंबी नोकवाला एक प्रकार का तीर। ३. कमान।
 वि० [अ० लेस] १. बर्षी और हथियारी से सजा हुआ। कटिबद्ध।
 वैदार। २. सब प्रकार के आयोजन, सामग्री आदि से युक्त लौक काम में लाये जाने के योग्य।
 फी० कफ़ूट पर टांकने का किसी प्रकार का कामदार बेल-बूटों वाला फीता या बेल।
 लै—अव्य० = लौ।
 लैला—पु० [स्त्री० अल्पा०, लौदी] १. गीले पदार्थ का बहु अंश जो ठेले की तरह गँवा हो। जैसे—बी का लौला, बही का लौला, मिट्टी का लौला।
 २. गंधा या घुनी हुई वस्तु की बहु अवस्था या आकृति जो उसे गलने के बाद ठण्डा होने के लिए छोड़ने पर प्राप्त होती है।
 लौ—अव्य० [हि० लेना] लीजिए की तरह प्रयुक्त एक निरर्थक अव्यय जिसका प्रयोग सहसा सुनी हुई कोई आश्चर्यजनक बात किसी हुस्वर की सुनाते समय किया जाता है। जैसे—लौ और सुनो।
 लौ—स्त्री० [सं० रोपि, प्रा० लौरी] १. प्रमा। दीप्ति। २. अंग की ली।
 लु० १. = लोक। २. = लोय।
 लौप—पु० १. = लोचन (अक्ष)। २. लावण्य।
 लौई—स्त्री० [सं० लौची; प्रा० लौची] मुँहे हुए आटे का उतना बंध

जो एक रोटी बनाने के लिए निकालकर गोली के आकार का बनाया जाता है और जिसे बेककर रोटी बनाते हैं।
 लौ० [सं० लौचीय = लौरी] १. एक प्रकार का कंबल जो परले रंग से बना जाता है, और साधारण कंबल से कुछ अधिक लंबा और चौड़ा होता है। २. कबीर की तथा-कथित पत्नी का नाम। प्रवाद है कि यह गब-जात लोखू के रूप में किसी को कोई में खपेटी हुई मिली थी, इसी से इसका यह नाम पड़ा था।
 लौकिकता—पु० = लोकायन।
 लौकिका—पु० [हि० लोकता] [स्त्री० लोकवी] १. विवाह में कन्या के बोले के साथ दास या दासी भोजने की क्रिया। २. वह दास जो कन्या के बोले के साथ उसकी सेवा के लिए भोजा जाता है। ३. बचल, चरित्रहीन और दुष्ट व्यक्ति। उदा०—नंद को सब वह गृह गृह लोकरा।
 लौक—पु० [सं० √ लोख (सैन्य) + घञ्] १. कोई ऐसा स्थान जिसका बोध देखने से होता हो। जगह। २. जगत् या संसार। ३. विश्व का कोई विशिष्ट भाग या स्थान जिसमें कुछ अलग प्रकार के जीव या प्राणी रहते हैं। जैसे—जीवलोक, देवलोक। ब्रह्मलोक, मनुष्यलोक आदि। ४. पुराणानुसार किसी विशिष्ट देवता के रहने का वह स्थान जहाँ मरने पर उसके भवत जाकर रहते हैं। जैसे—विष्णुलोक।
 लौक्य—हमारे यहाँ अनेक दृष्टियों से कई प्रकार के लोक माने गये हैं, और उनकी अलग अलग संख्याएँ कही गई हैं। मूलतः तीन ही लोक माने जाते थे, स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल। पर आगे चलकर चौदह लोक माने जाने लगे जिसमें से सात हमारे ऊपर और सात हमारे नीचे कहे गये हैं। ऊपर के सात लोक ये हैं मूलोक, भूवलोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपलोक और सत्यलोक या ब्रह्मलोक। नीचे के सात लोकों के नाम क्रमात् ये हैं—अतल, वितल, सुतल, रसाल, तलातल, महर्लोक, और पाताल। ४. उन्नत के आकार पर सात अथवा चौदह की सूचक संख्या। ५. पृथ्वी की कोई विशिष्ट विद्या या प्राप्त।
 पद—लोक-नाम।
 १. सारी मानवजाति। ७. किसी राजा या राज्य के अधीन रहनेवाले लोग। प्रजा। ८. किसी देश या स्थान में रहनेवाले सब मनुष्यों का वर्ग, समाज या समूह। लोग। ९. देश का कोई प्रांत या विभाग। प्रदेश। १०. लोगों में प्रचलित प्रणाली, प्रथा, या रीति। ११. जीव। प्राणी। १२. देखने की दृष्टिय या शक्ति। दृष्टि। १३. कीर्ति। यश। पुं० [?] बतलक की तरह का एक प्रकार का बड़ा पत्ती।
 लौक-संदक—पु० [सं० व० तं०] १. वह जो समाज का कलंक, विरोधी या हानिकारक हो। दुष्ट प्राणी। २. कोई ऐसा काम या बात जिसमें लोगों को कष्ट होता हो। (गुणवत्स)
 वि० जन-साधारण को कष्ट देने या पीड़ित करनेवाला।
 लौक-कथा—स्त्री० [सं० व० तं०] लोक विशेषतः ग्राम्य लोगों में प्रचलित कोई प्राचीन गाथा।
 लौक-कथा (शु)—पुं० [सं० व० तं०] १. बहाना। २. विष्णु। ३. महेश।
 लौक-काम—वि० [सं० लोक/कम् (बाह्यता) + णिङ् + अण्, उप० सं०] किसी विशेष लोक में जाने की कामना करनेवाला।
 लौककार—पुं० [सं० लोक/कृ + अण्, उप० सं०] बहाना, विष्णु और महेश।

लोक-मत—वि० [सं० छि० त०] जिसे जन-साधारण ने अपनाकर स्वीकृत कर लिया है। लोक में प्रचलित तथा प्रिय।

लोक-मति—स्त्री० [सं० व० त०] लोकाचार।

लोक-भाषा—स्त्री० [सं० मध्य० स०] परंपरा से चले आये हुए वे गीत आदि जो लोक में प्रचलित हैं।

लोक-गीत—गुं० [सं० मध्य० स० वा व० त०] गाथ-देहावी में गाये जानेवाले जन-साधारण के वे गीत जो परम्परा से किसी जन-प्रजाज में प्रचलित तथा लय-प्रधान हैं। (लोक संगीत) जैसे—निम्न भिन्न कटुगुण में स्त्रीहारी पर अबदा बार्तिक उक्तकी, संस्कारों आदि के समय गाये जानेवाले गीत।

लोक-बीचपा—स्त्री० [सं० स० त०] सब लोगों की जानकारी के लिए की जानेवाली घोषणा। (सैनिकरेटो)

लोक-बलु (सु)—गुं० [सं० व० त०] सूर्य।

लोक-चार—गुं०—लोकाचार।

लोकजित्—गुं० [सं० लोक०/वि (वच) + विजृप्, तुगागम] गौतम बुद्ध।

लोक-जीवन—गुं० [सं० मध्य० स०] १. धरेलू जीवन से निम्न बहु बर्षा जिसमें व्यक्ति सार्वजनिक महत्त्व के कार्यों में संलग्न रहता है। २. वह अवधि या भोग-काल जिसमें कोई व्यक्ति सार्वजनिक कार्य करता है। (पब्लिक लाइफ)

लोकज्ञ—वि० [सं० लोक १/ज्ञा (जानना) + क] १. लोगों की प्रवृत्तियों, मनोभाव आदि जाननेवाला। २. लौकिक या सांसारिक व्यवहारों में कुशल। बुनियादार।

लोकधी—स्त्री०—लोभधी।

लोक-तंत्र—गुं० [सं० व० त०] [वि० लोकतांत्रिक] वह शासन-प्रणाली जिसमें जन-साधारण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में अपने राष्ट्र या राज्य पर शासन करता हो। जनता का शासन। (डिमोक्रेसी)

लोक-तंत्रिक—वि० [सं० लोकतांत्रिक] लोकतन्त्र-सम्बन्धी। (डिमोक्रेटिक)

लोक-तंत्री (विन्)—वि० [सं० लोकतंत्र + इति] लोक तंत्र के सिद्धांतों का प्रतिपादक या समर्थक। (डिमोक्रेट)

लोकतांत्रिक—वि० [सं० लोकतंत्र + इत्थं + इक]—लोक-तंत्रिक।

लोक-वृषभ—वि० [सं० व० त०] १. लोगों की हानि पहुँचानेवाला। २. लोगों में दोष निकालनेवाला।

लोक-धर्म—गुं० [सं० व० त०] वास्तविक धर्म से निम्न वे बातें या क्रिया जो जन-साधारण में प्रायः धर्म के रूप में ही प्रचलित हो। जैसे—तन-यंत्र भूत-प्रेत की पूजा-वीर पूजा आदि।

लोक-धारिणी—स्त्री० [सं० व० त०] पृथ्वी।

लोक-धुनि—स्त्री० [सं० लोक-धुनि] अफवाह। किंवदंती।

लोकम—गुं० [सं०/लोक (रक्षण) + म्भृत्—अन्] अवलोकन।

लोकना—स० [?] १. उड़ती गिठियां या लेकी हुई बस्तु की जमीन कूड़े से पहरे ही हरा में पकड़ लेना। जैसे—उड़ाला हुआ गेंद या कटी हुई परतं लोकना। बीच में उड़ा या हड़प लेना। गुं० [स्त्री० लोकती] २० 'लोकधा'।

लोकनाद्वय—गुं० [सं० मध्य० स०] शास्त्रीय नियमों से बननेवाले नाटकों से निम्न वे नाटक या अभिनय जो जन-साधारण विना नाट्य-कला सीखे

अपनी उद्भावना से बनाते और जन-साधारण को विकलते हैं। जैसे—कठुगुणकी का नाच, नौटंकी, रासलीला आदि।

लोक-नाथ—गुं० [सं० व० त०] १. बह्मा। २. लोकपाल। ३. गौतम बुद्ध।

लोक-निर्वाण—गुं० [सं० व० त०] लोक-बस्तु।

लोकनी—स्त्री०—लोकनी।

लोकनीच—वि० [सं० √ लोक (वर्षान) + जनीयर्] अवलोकन करने योग्य। बर्हीनय।

लोक-नृप—गुं० [सं० मध्य० स०] शास्त्रीय नृप-कला से रहित ऐसे नाच की गति-देहात के लोग उमंग में आकर नाचते हैं। (लोक डांस) जैसे—बहुरों, बोधियों आदि के नृप, मण्डुपुरी, सन्ध्याकी आदि नृप।

लोक-वच—गुं० [सं०] लोक या जनता की सेवा से सम्बन्ध रखनेवाला राज-नीय पद या ओहदा। (पब्लिक आफिस)

लोक-वाल—गुं० [सं० लोक०/वाल (रखा) + गिच् + अच्] १. दिक्पाल। २. नरेश।

लोक-पितामह—गुं० [सं० व० त०] बह्मा।

लोक-प्रत्यक्ष—गुं० [सं० व० स०] वह जो संसार में सर्वत्र दिखाई देता या मिलता हो।

लोक-प्रवाह—गुं० [सं० स० त०] १. ऐसी साधारण बात जो संसार के सभी लोग कहते और समझते हैं। २. लोक में प्रचलित प्रवाद या किंवदंती।

लोक-प्रवाही (हिन्)—वि० [सं० लोक-प्रवाह, व० त०, + इति] लोगों की प्रवृत्ति या रुच देखकर उसी के अनुसार चलनेवाला।

लोक-प्रिय—वि० [सं० व० स०] [भाव० लोक प्रियता] १. जो जन-साधारण को प्रिय तथा रुचिकर प्रतीत होता हो। २. समाज के बहुमत की पसंद या रुचि के अनुकूल होनेवाला। जैसे—लोकप्रिय-साहित्य।

लोकप्रियता—स्त्री० [सं० लोकप्रिय + त्वा + टाप्] लोकप्रिय होने की अवस्था या भाव। (पॉपुलैरिटी)

लोक-बंधु—गुं० [सं० व० त०] १. मित्र। २. सूर्य।

लोक-बाहु—वि० [सं० व० त०] १. जो इस लोक या संसार में न होता या न दिखाई देता हो। २. जो साधारण जन-समाज में न होता हो। ३. विचारहीन या समाज से निकला हुआ। ४. सक्की। सतकी।

लोक-भाषण—गुं० [सं० व० त०] १. लोक की रचना करनेवाला। २. लोक की बलाई करनेवाला।

लोक-भाषना—स्त्री० [सं० व० त०] लोक अपर्ति जनता का उपकार, सेवा आदि करने की भावना या वृत्ति। (पब्लिक रिपरिज)

लोक-मत—गुं० [सं० व० त०] किसी ध्यत या विषय में देश या समाज में रहनेवाले सब अथवा अधिकतर लोगों का मत, राय या विचार। समाज के बहुत से लोगों का ऐसा मत जो किसी एक दल या वर्ग का नहीं बल्कि सम्मति के विचार या हित का सूचक हो। (पब्लिक ओपिनियन)

लोक-भाता (सु)—स्त्री० [सं० व० त०] १. लक्ष्मी। २. गौरी।

लोक-धाया—स्त्री० [सं० व० त०] संसार में रहकर लोगों के साथ व्यवहार करना।

लोक-रंजन—गुं० [सं० व० त०] सब को प्रसन्न तथा सुखी रखना।

वि० सबको प्रसन्न तथा सुखी रखनेवाला।

लोक-रंजनी—स्त्री० [सं० वं० तं०] सर्गीत में, कल्पटकी पद्धति की एक रागिणी।

लोक-रसक—वि० [सं० वं० तं०] सब लोगों की रसा करनेवाला।
पृ० १ राजक। २ शासक।

लोक-रसक—वि० [अं०] ? (निवासियों की दृष्टि से उनके) नगर या गाँव की सीमा के अन्दर-अन्दर होनेवाला। जैसे—लोकल पालिटिक्स। २ जिम्निका सबब किसी विशिष्ट गाँव, नगर आदि में ही सीमित हो। जैसे—लोकल पोस्टकार्ड।

लोक-रसीक—स्त्री० [सं० लोक-+हि० लीक] लोक में प्रचलित प्रथाओं और मर्यादा।

लोक-रोचन—पु० [सं० वं० तं०] सुयं।

लोक-बर्तनी—स्त्री० [सं० मध्य० सं०] लोक में प्रचलित चर्चा। अफवाह। किंवदन्ती।

लोक-बाह—पु० [सं० वं० तं०] ? कहावत। २ किंवदन्ती। अफवाह।

लोक-बात—स्त्री० [सं० वं० तं०] इतिहास, पुरातत्त्व आदि के अध्ययन का वह अंग जिसमें लोक में प्रचलित पुरानी धारणाओं, प्रथाओं, विद्वानों आदि से संबन्ध रखनेवाली बातों का विचार या विवेचन होता है। (लोक-लोक)

लोक-बास्तु—पु० [मं० वं० तं०] ? राज्य या शासन का वह विभाग जो लोक के उपयोग तथा कल्याण के लिए इमारतें, नहरें, सड़कें आदि बनाता है। (पब्लिक वर्क्स) २. जन-साधारण तथा राजकीय विभागों के काम में आनेवाली इमारतें, सड़कें आदि।

लोक-बाहक—पु० [सं० वं० तं०] जनता का सामान ढोने लिए प्रयुक्त मोटर गाड़ियाँ आदि। (पब्लिक कैरियर)

लोक-विषय—वि० [मं० तृ० तं०] (आचरण, कथन या कार्य) जो लोक में प्रचलित न हो और हमी लिए ठीक न माना जाता हो।

लोक-विधुत—वि० [मं० सं० तं०] संसार भर में अर्थात् सब जगह प्रसिद्ध। जगद्विख्यात।

लोक-वेद—पु० [सं०, लोक और वेद से] हिन्दुओं में प्रचलित वैपौराणिक और सामाजिक आचरण-विचार जिन्हें लोग वेदों के विधान के समान ही आवश्यक और मान्य समझते हैं।

लोक-व्यवहार—पु० [सं० वं० तं०] ? वह व्यवहार जो लोक में सब लोगों से मेल-जोल बनाए रखने के लिए करना पड़ता है। लोकाचार। २ समाज की मर्यादा के विचार से किया जानेवाला शिष्ट व्यवहार।

लोक-शांति—स्त्री० [सं० मं० तं०] लोक अर्थात् जन-साधारण या समाज में बनी रहनेवाली ऐसी शांति जिसमें किसी प्रकार का उत्पान, उपद्रव या लड़ाई-झगडा न हो। (पब्लिक पीस)

लोक-शासन—पु० [सं० वं० तं०] देश या राज्य का ऐसा शासन या सरकार जो लोक-मत के आधार पर चलती हो। जन-तन्त्र। (पापुलर गवर्नमेंट)

लोक-भूति—स्त्री० [सं० सं० तं०] जनभूति। अफवाह।

लोक-संघ—पु० [सं० वं० तं०] ? सब लोगों को प्रत्यक्ष रखकर उन्हे अपने साथ मिलाये रखना। २. समार के सभी लोगों के कल्याण या मंगल का ध्यान रखना। ३. लोगों को अपनी और मिलाना या अपने पक्ष में करना।

लोक-संघर्ष—वि० [सं० लोक-संघर्ष+रुग्] जो सब लोगों को प्रत्यक्ष रखकर अपने पक्ष में करता हो।

लोक-संस्कृति—स्त्री० [सं० वं० तं०] साधारण जन-सामान्य में प्रचलित वे सब बातों जो सिद्धांतत संस्कृति के क्षेत्र से संबद्ध हैं।

लोक-सत्ता—स्त्री० [सं० वं० तं०] लोक-तात्त्विक शासन प्रणाली के द्वारा लोक या सारी जनता को प्राप्त होनेवाली सत्ता।

लोक-सत्ताक—वि०=लोक-सत्तात्मक।

लोक-सत्तात्मक—वि० [सं० लोक-सत्ता-आत्मन्, वं० सं०+कप्] ? लोक-सत्ता संबंधी। लोक-सत्ता का। २. (देश या राज्य) जिसमें लोक-तात्त्विक शासन-प्रणाली प्रचलित हो।

लोक-सदम—पु० [मं० वं० तं०] लोक-सभा। (से०)

लोक-सभा—स्त्री० [सं० वं० तं०] ? प्रतिनिधि सत्तात्मक या प्रजातन्त्र शासन में साधारण जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों की वह सभा जो देश के लिए विधान आदि बनाती है। २. भारतीय संविधान में उच्च प्रकार की केन्द्रीय सभा। (हाउस आफ पीपुल्स) ३. इंग्लैण्ड में उच्च प्रकार की सभा। (हाउस आफ कॉमन्स)

लोक-सिद्ध—वि० [मं० सं० तं०] इतिहास या शास्त्र-सम्मत न होने पर भी जिस जन-साधारण ठीक मानता हो। जन-सामान्य में मान्य और प्रचलित।

लोक-सुंदर—वि० [सं० सं० तं०] जो सब की दृष्टि में अच्छा हो।

पु० गौतम बुद्ध।

लोक-सेवक—पु० [सं० वं० तं०] ? वह जो लोक अर्थात् जनता की सेवा या हित का काम में लगा रहता हो। २. वह अधिकारी या कर्मचारी जो राज्य या शासन की ओर से जनता की सेवा और हित के लिए नियुक्त हो। (पब्लिक सर्वेंट)।

लोक-सेवा—स्त्री० [मं० वं० तं०] ? जन-साधारण की सेवा अर्थात् उपकार या हित के लिए नि स्वार्थ भाव से किये जानेवाले काम। २. राज्य या शासन की नौकरी जो बस्तुतः जन-साधारण की सेवा या हित के लिए होती है। (पब्लिक सर्विस)

लोक-सेवा-आयोग—पु० [सं० वं० तं०] राज्य द्वारा नियुक्त कुछ व्यक्तिपुत्रों का वह आयोग या समिति जिसके जिम्मे राजकीय सेवाओं से सम्बन्ध रखनेवाले पदा पर नियुक्त करने के लिए प्राथिनों में से उपयुक्त तथा योग्य व्यक्ति चुनने का काम होता है। (पब्लिक सर्विस कमीशन)

लोक-स्वास्थ्य—पु० [सं०] सार्वजनिक रूप से जनता या लोगों का स्वास्थ्य। (पब्लिक हेल्थ)

लोक-हार—पु० [सं० लोक+हृ (हरण)+अण्, जप० सं०] सत्सार का नाश करनेवाले शिव।

लोक-हित—पु० [सं० वं० तं०] लोक-सेवा। (से०)

लोकान्तर—पु० [सं० अर्थ-लोक, मय० सं०] वह लोक जहाँ मरने पर जीव जाता है। पर-लोक।

लोकान्तरण—पु० [सं० लोकान्तर+णिच्+स्तृट्—अन्] इस लोक से हटाकर दूसरे लोक में कर देना।

लोकांतरित—पु० [सं० लोकान्तर+णिच्+स्तृट्] ? जो इस लोक से दूसरे लोक में चला गया हो। २. जो मर चुका हो।

लोकशास्त्र— $\mu\text{ं}$ [सं० लोक-शास्त्र, पं० तं०] १. वह व्यवहार जो दूसरों से सामाजिक संबंध बनाए या स्थिर रखने के लिए आवश्यक समझा जाता हो। २. वे 'लोक व्यवहार'।

लोकशास्त्री (रिन्नु)—वि० [सं० लोकशास्त्र+इति] १. लोकशास्त्र का आचरण या पालन करनेवाला। २. शिक्षादात्री आचरण या व्यवहार करनेवाला। डीपी। ३. लोक को प्रसन्न रखनेवाला आचरण अथवा व्यवहार करनेवाला। दुर्गिनावादा।

स्त्री०=लोकशास्त्री।

लोकशास्त्र— $\mu\text{ं}$ =लोकशास्त्र।

लोकशास्त्रिक—वि० [सं० लोक-शास्त्रिक, पं० तं०] लोक अर्थात् संसार से परे या बाहर; अर्थात् असाधारण।

लोकशास्त्री— $\mu\text{ं}$ [सं० लोक-शास्त्री, पं० तं०] १. लोकपाल। २. पुत्र।

लोकशास्त्री—सं० [हि० लोकने का प्रे०] ऊपर से फेंकना। उछालना। लोकशास्त्री— $\mu\text{ं}$ [सं० लोक अनुग्रह, सं० तं०] लोगों का कल्याण। लोक-हित।

लोकशास्त्र— $\mu\text{ं}$ [सं० लोक-शास्त्र, सं० तं०] लोक-हिता। बयनामी। लोकशास्त्र— $\mu\text{ं}$ [सं० लोक-शास्त्र=विस्तार] १. वह जो इस लोक के अतिरिक्त दूसरे लोक को न मानता हो। २. भारतीय दर्शन में एक प्राचीन मूलभूत नास्तिक सम्प्रदाय जिसके प्रवर्तक वेद-गुरु बृहस्पति कह जाते हैं। इसलिए इसे ब्राह्मिण्य भी कहते हैं। प्रवाद है कि बृहस्पति ने अगुदी का नाश कराने के लिए ही उनमें इस मत का प्रचार किया था।

विशेष—कुछ लोगो का मत है कि किसी समय लोक में इसी नास्तिक मत का सबसे अधिक प्रचार था। इसी लिए इसका नाम लोकशास्त्र पड़ा। इस मत का मुख्य सिद्धान्त यह है कि आत्मा, परलोक, नरक और स्वर्ग की कल्पनाएँ मिथ्या हैं; और वर्णाश्रम आदि का विधान व्यर्थ है।

३. बार्हक दर्शन, जिसमें परलोक या परोज्ञवाद का स्वप्न है। ४. दुर्गिल छद्म का एक नाम।

लोकशास्त्रिक—वि० [सं० लोकशास्त्र+इत्-इक] लोकशास्त्र-सम्बन्धी।

लोकशास्त्री का।

$\mu\text{ं}$ १. लोकशास्त्र सम्प्रदाय का अनुयायी। २. नास्तिक।

लोकशास्त्री— $\mu\text{ं}$ [सं० लोक-शास्त्री, कर्म० सं०] पुराणानुसार एक पवित्र जो सारतों समुद्रों और द्वीपों को चारों ओर से घेरे हुए है, और जिसके उस पार घोर अंधकार है। बौद्ध ग्रन्थों में इसी को अकाल कहा गया है।

लोकशास्त्री—वि० [सं० √ लोक (दर्शन)=क्त्] देखा हुआ।

लोकशास्त्री— $\mu\text{ं}$ [सं० लोक-ईश्वर, पं० तं०] १. लोक का स्वामी। पर-भाषा। २. गौतम बुद्ध।

लोकशास्त्री—स्त्री० [सं० लोक-एषणा, पं० तं०] १. सांसारिक अभ्युदय की कामना। समाज में प्रतिष्ठा और भय की कामना। २. स्वर्ग-सुख की कामना।

लोकशास्त्री—स्त्री० [सं० लोक-उत्पत्ति, मध्य० सं०] १. लोक में समान रूप से प्रचलित बात। कहावत। मसला। २. साहित्य में एक अलंकार जो

उस समय माना जाता है जब लोकोक्ति के प्रयोग से काव्य में अधिक रोचकता आ जाती है।

लोकशास्त्री—वि० [सं० लोक-उत्तर, पं० तं०] लोक में होनेवाले पदाथों या बातों से अधिक बढ़कर या श्रेष्ठ। जो इस लोक में न होता हो (पदाथं या बात)।

लोकशास्त्री— $\mu\text{ं}$ [सं० लोक-उपकार, पं० तं०] लोक या जन-साधारण के उपकार, लाभ या हित के काम।

लोकशास्त्री (रिन्नु)—वि० [सं० लोकशास्त्री+इति] १. लोगों का उपकार करनेवाला। २. लोकशास्त्र-संबन्धी। २. जिनसे लोगों का उपकार होता हो।

लोकशास्त्री-सेवा—स्त्री० [सं० उपयोगिनी-सेवा कर्म० सं०, लोक-उपयोगि-सेवा, पं० न०] वह सेवा या कार्य जो जनता के लिए विशेष उपयोगी या काम का हो। जैसे—नगर की जल-कल व्यवस्था, बिजली, सफाई आदि के काम। (पब्लिक यूटिलिटी सर्विस)

लोकशास्त्री—स्त्री०=लोकशास्त्री।

लोकशास्त्री—[हि० लोहा+लच्छ] १. नर्दों के अजीवार। जैसे—छुरा, कैंची, महुरी आदि। २. बड़हरीयों, लोहारों आदि के लोहे के अजीवार। ३. हुकानदारों के लोहे के बटखरे।

लोकशास्त्री—[सं० लोक] [स्त्री० लोहार] १. बहुत से मनुष्यों का दल, बर्ग समूह या समाज। २. दे० 'लोक'।

लोकशास्त्री— $\mu\text{ं}$ [हि० लोक+आम (अप०)] साधारण लोक। जन-साधारण। (बहु० में प्रयुक्त)

लोकशास्त्री—स्त्री०=लोकशास्त्री (स्त्री)।

लोकशास्त्री—[हि० लच्छ] १. वह गृध्र जिसके कारण कोई बीज दबाने पर दब जाती हो और दबाने न रहने पर फिर अपना सामान्य रूप प्राप्त कर लेती हो। २. कीमलता। मुदुता। ३. कीमलता पूर्ण सोनदर।

$\mu\text{ं}$ [सं० लुचन] जैन साधुओं का अपने सिर के बालों को उखाड़ना। लुचन।

†स्त्री०=लुचिका।

लोकशास्त्री—वि० [सं० √ लोक (दर्शन)+लुच्-अक] १. जिसका आहार दूध ही। २. मूर्ख। बेवकूफ।

$\mu\text{ं}$ १. ओख का तारा या तुलसी। २. काजल। ३. मांस-पिंड। ४. माथे पर पहनने का एक गहना। ५. केला। ६. सप का कँचुकी। ७. धनुष की पतिका।

लोकशास्त्री— $\mu\text{ं}$ [सं० √ लोक+लुच्-अन] आँख। नेत्र। नयन।

वि० चमकानेवाला।

लोकशास्त्री—सं० [सं० लोकन] १. प्रकाशित करना। चमकाना। २. हल्छा या कामना करना। ३. किसी में किसी बात का अनुभव या चिन्तन उत्पन्न करना। ४. बिचार करना। सोचना। ५. देखना।

अ० १. हल्छा, कामना या चिन्तन। २. तरलता या ललचाना। ३. सोना देना। पानना। ४. तुल्य होना। उदा०—लोकन उतावरे है; लोकें हाथ कैसे ही—बनावदं।

$\mu\text{ं}$ १. दर्शन। शोषा। विशेषण हल्छामो के पास रहनेवाला धीया।

मुहूत—(कहाँ) लोकना मेजना—भाई या हज्जाम के द्वारा संबंधियों

आदि के यहाँ शुभ समाचार अथवा धार्मिक संस्कार का निमंत्रण मेजना।

शेषपून—पू०=लौह-पून।

कोजम-स्त्री० [वेश०] एक प्रकार की नाव।

कोड-स्त्री० [हि० लोटना] १. लोटने की क्रिया या भाव।

मुहा०—कोट मारना या लामना=कोटना। (किसी पर) कोट होना=(क) आसन्न या मोहित होना। (ख) विकल होना।

२. जलाशय के किनारे पर का घाट। ३. बिचली।

† पु०=कोट।

कोटन—वि० [हि० लोटना] १. लोटने अर्थात् जमीन पर उलटबाजी लगानेवाला। जैसे—लोटन कबूतर। २. लुढ़कनेवाला।

स्त्री० १. लोटने की क्रिया या भाव। २. छोटी ककड़ियाँ जो तेज हवा चलने पर इधर-उधर लुढ़कने लगती हैं। ३. कटीली झाड़ी। ४ एक प्रकार की सब्जी।

पू० एक तरह का कबूतर जो चोच से पकड़कर जमीन पर लुढ़काये जाने पर लोटने लगता है। २ एक प्रकार का छोटा हल।

कोटना—अ० [हि० लोट] १. पकावट आदि मिटाने के उद्देश्य से लेटे लेटे देर और पीठ के बल लुढ़कना या उलटे-मुलटे होते रहना। २. क्रोध, जिद, दुःख, शोक आदि के कारण उक्त प्रकार से पकड़कर इधर-उधर होना।

मुहा०—कोट जाना=(क) बर जाना या मृतप्राय हो जाना। (ख) विहालिया हो जाना। (किसी बात) पर कोटना=जिद करना। हट करना।

३. अधिक प्रसन्नता के फलस्वरूप इधर-उधर गिरना पड़ना। जैसे—हँसते हँसते लोट जाना। ४ किसी पर पूरी तरह से आसक्त होना।

संघो० कि०—जाना।

अ० [हि० लोटना] मुँकर जाना।

कोट-बटा—पू० [हि० लोटना+नाटा] १. विवाह के समय पीड़ा या स्थान बदलने की प्रीति। इससे वर के स्थान पर बधू को और बधू के स्थान पर वर को बैठाया जाता है। २. किसी को धोखा देने के लिए किया जाने-वाला उलट-फेर या दौब-बैच।

स्त्री० लौह-स्त्री० [हि० लोटना] लेटे-लेटे करदें बढलने या लोटने की क्रिया या भाव।

वि० १. हँसते हँसते अपने को संभाल न सकने के कारण लोट जानेवाला। २ बहुत अधिक प्रसन्न। ३. उलटा-मुलटा हुआ। विपर्यस्त। ४ छिन्न-भिन्न किया हुआ।

कोटा—पू० [हि० लोटना] [स्त्री० अल्पा० लुटिया] धातु का एक प्रकार का प्रसिद्ध गोलकाकार बरतन जो पानी रखने के काम आता है।

पद—ने यँवो का लोटा—ऐसा व्यक्ति जिसका अपना कोई मत या सिद्धान्त नहीं होता, वरन् जो दूसरों की बातों पर इधर उधर झुलकता फिसला हो।

कोटिया—स्त्री०=लुटिया।

कोठी—स्त्री० [हि० लोटा+ई (प्रत्य०)] १ लोटे के आकार का बहु बरतन जिससे तमाली पान सींचते हैं। २. छोटा लोटा। लुटिया।

स्त्री० [हि० लुटना] १. लुटने की क्रिया या भाव। लुट। २. बहु

अवस्था जिसमें हर कोई किसी चीज पर लुटने के लिए सपछता है। (परिचय)

कि० प्र०=मचना।

लोडन—पू० [सं० √ लोड (मथन) + लुट्ट—अत] [पू० क० लोडिय] १. हिलाने डुलाने या लुब्ध करने की क्रिया। २. मथन।

लोडना—सं० [पं० लोड=आवश्यकता] आवश्यकता होना। दरकार होना।

लोडना—सं० [सं० लुडन] १. (पीछों से फूल) लोडना। २. (कपास) लोटना।

लोड़ा—पू० [सं० लोष्ट] [स्त्री० अल्पा० लोडिया] पत्थर का बहु संबोद्धा टुकड़ा जिससे मिला पर रखकर पीछों पीसी जाती है। बट्टा।

पद—लोड़ा डाल=दूरी तरह से पीचट या नष्ट किया हुआ।

मुहा०—लोड़ा डालना या डालना=कुचल या पीचकर नष्ट या बरबाद करना।

लोडिया—स्त्री० [हि० लोड़ा का स्त्री० अल्पा०] छोटा लोड़ा।

लोडी—स्त्री० [पं०] १. मकर संक्रान्ति से पहले ढाले दिन का एक त्यौहार जिसमें रात के समय अग्नि की पूजा होती है। (परिचय) २. उक्त त्यौहार के उपलक्ष्य में गये जानेवाले गीत।

लोथ—पू० [सं०] लोनी लाग।

पू० लोन (नमक)।

लोथ—स्त्री० [सं० लोथ या लोठ] किसी प्राणी का मृत शरीर। लाश। शव।

मुहा०—(किसी का) लोथ डालना=किसी को मारकर उसका शव जमीन पर गिराना।

लोथड़ा—पू० [हि० लोथ+ड़ा] शरीर से कटकर अलग गिरा हुआ भाग का ऐसा बड़ा टुकड़ा जिसमें हड्डी न हो। मांस पिंड।

लोथ-पीठ—वि० = लथ-पथ।

लोथारी—स्त्री० [सं० लुठ] १. कम पानी में से ताव को खींचते या धीरे-धीरे खिंचे हुए किनारे लगाना। (लश०)

लोथारी लंगर—पू० [हि० लोथारी+हि० लंगर] जहाज का सबसे छोटा लंगर जो उम जगह बांधा जाता है; जहाँ यह जानना अभिमत होता है कि यह किनारे पर जाने का मार्ग है या नहीं।

लोथ—स्त्री०=लोथ (बूझ)।

लोठी—पू० [?] पड़ानों की एक जाति।

लोथ—स्त्री० [सं० लोथ] १. पर्वतीय प्रदेश में होनेवाला एक प्रकार का बड़ा पेड़ जिसकी छाल रंगने के काम आती है।

लोथरा—पू० [सं० लोथ] एक प्रकार का तांबा।

लोथी—पू०=लोथी।

लोथ—पू० [सं०] लुथ (रीकना)+लुथ, लुथ १. लोथ नामक वृक्ष। २. एक प्राचीन जाति। ३. लोथरा नाम का तांबा।

लोथ-लिलक—पू० [सं० प० त० ?] साहित्य में एक प्रकार का अलंकार जो उपमा का एक भेद कहा गया है।

लोथ—पू० [सं० लथ] १. लथान। नरक।

मुहा०—(किसी चीज को) लोथ चराना=नमकीन बनाना। जैसे—आज को लोन चराना। (किसी का) लोथ न मानना=किसी का उप-

कार न मानना। कुतश्च होता। (निली का) कोष विकारत्ना-
कृत्यता या नयक-द्वारा की का फल योगता।

पुं० [अं०] ऋष।

श्रीमद्भारती—वि० [हि०] शोण।

श्रीमद्भारती—वि० [अं०] नयक हृदाय।

श्रीमद्भारती—वि० [हि०] शोण।

१. शाकम्बुपत्त। २. वृक्ष।

पुं० १. नयक की तरफ का वह सफेद पदार्थ जो शीघ्र के कारण हँट, पत्थर, मिट्टी आदि की बीमारों में लगता है। इससे बीमार कमजोर होकर झड़ने लगते हैं। यह रोग प्रायः नीच की बीर से आरम्भ होता है और क्रमशः ऊपर बढ़ता है। मीना।

क्रि० प्र०—लगता।

२. वह दूध या मिट्टी जो कोना लगने पर बीमार से झड़कर गिरती है। यह श्वाय के रूप में खेत में बारी जाती है।

क्रि० प्र०—झड़ना।

३. क्षार मिली हुई वह मिट्टी जिससे बोरा बनता है। ४. वह क्षार जो बने की पत्तियों पर झड़ता होता है, और जिसके कारण उसकी पत्तियाँ चाने में लड्डी जाम पड़ती हैं। ५. बोधे की जाति का एक प्रकार का कौड़ा जो प्रायः नाच के पंचे में थिपका हुआ मिलता है। ६. अमलोनी नामक घास जिसका प्रयोग धातु सिद्ध करने में करते हैं। उदा०—कहाँ जो कोए बीरी कोना।—आवसी।

स० खेत में की तैयार फलक काटना। खनना।

स्त्री० एक कल्पित चन्दारी जिसके नाम से योद्धा लोग मंत्र आदि पढ़ते हैं।

श्रीमद्भारती—स्त्री० १.—अनुनाई। २.—लवणी।

श्रीमद्भारती—पुं० [हि०] शोण। यह स्थान जहाँ नयक निकलता, बनता या बनाया जाता या मिलता हो।

श्रीमन्निशा—स्त्री०—अमलोनी (साग)।

श्रीमन्निशा—स्त्री०—अमलोनी (साग)।

पुं०—नीमियाँ (जाति)।

श्रीमदी—स्त्री०—अमलोनी।

श्रीमद्भारती—पुं० [सं०] √ लुप् (काटना) + भञ्ज्। १. किसी चीज के न रह जाने की अवस्था या भाव। जैसे—कार्या का शेष होता। २. न मिलने की अवस्था या भाव। अनाश। ३. अशुभ होने की अवस्था या भाव। अवसर्जन। ४. ब्याकरण के चार प्रधान नियमों में से एक जिसके अनुसार शब्द के साधन में कोई बर्ण उड़ा या हटा दिया जाता है।

श्रीमद्भारती—वि० [सं०] √ लुप् + गिष् + ल्युट्—अक। १. कोष करनेवाला। २. बाधक।

पुं० शीघ्र। विजयवा।

श्रीमद्भारती—पुं० [सं०] √ लुप् + गिष् + ल्युट्—अज। १. कोषन करने की क्रिया या भाव। २. छिपाना। ३. नष्ट करना। न रहने देना।

श्रीमद्भारती—स० [सं०] कोषन। १. लुप्त करना। छिपाना। २. न रहने देना। नष्ट करना। ३. उपेक्षा करना।

न० लुप्त होना।

श्रीमद्भारती—पुं० [सं०] वृ० स०] १. 'मूल-भूक' (हिसाब की)।

श्रीमद्भारती—पुं० [सं०] कोष-अंभन, मध्य० स०] एक प्रकार का कल्पित अंभन जिसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि वे लगाने से लगानेवाला अशुभ

हो जाता है, उसे कोई देख नहीं सकता।

श्रीमद्भारती—स्त्री० [सं०] √ लुप् (काटना) + गिष् + भञ्ज् + टाप्। १. विषय में नरेश की पाठिता कन्या और अगस्त्य की पत्नी। २. अगस्त्य मन्थल के पास उदित होनेवाला एक प्रकार का तारा।

श्रीमद्भारती—पुं० [सं०] कोष-अपक, व० स०] [स्त्री०] कोषापिका। गीवड़। सिवार।

श्रीमद्भारती—स्त्री० [सं०] न० √ लुप् + रा + क + टाप्—अभुम्ना, कोष-अभुम्ना, स० स०] १. अगस्त्य ऋषि की स्त्री जो उन्होंने स्वयं सब प्राणियों के उत्तम उत्तम अंगों को लेकर बनाई थी और तब विषय में राज को सोच दी थी। भूवती होने पर अगस्त्य जी ने इसी से विवाह किया। २. एक तारा जो दक्षिण में अगस्त्य मन्थल के पास उदय होता है।

श्रीमदी (भिष्) —वि० [सं०] √ लुप् + गिष्। १. कोष करनेवाला। २. छिपानेवाला। नष्ट करनेवाला। ४. जिसका कोष ही सके। जैसे—मध्यम पर शोभी समान।

श्रीमद्भारती—वि० [सं०] √ लुप् + वृष्] कोष करनेवाला।

श्रीमद्भारती—पुं० [अ०] १. आभारवा। २. लक्षणा। ३. टुकड़-गवाई।

श्रीमद्भारती—पुं० [अ०] एक प्रकार के वृक्ष का सुगन्धित गोंड। इसका वृक्ष अफीक के पूर्वी किनारों पर, और अरब के दक्षिणी समुद्र तट पर होता है। यह अरबों के काम के सिवा दवाओं में भी काम आता है। भूमा।

श्रीमद्भारती—वि० [अ०] १. शोषान संबंधी। शोषान का। २. विरसते शोषान निकलता हो। ३. शोषान के रंग का, सफेद।

पुं० शोषान की तरह का सफेद रंग।

श्रीमद्भारती—पुं० [अ०] एक प्रकार का बड़ा सफेद बोटा जिसके भीतों से दाल और दालमोठ बनते हैं।

श्रीमद्भारती—अंभन—पुं० [हि०] शोभिया + कर्जई। गहरा हरा रंग।

वि० उच्यत प्रकार के रंग का।

श्रीमद्भारती—पुं० [सं०] √ लुप् (लोभ करना) + भञ्ज्] [वि०] लुब्ध, लोभी। १. दूसरे की चीज पाने या लेने की प्रयत्न कामना या लालसा। २. कुछ प्राणत को ऐसी प्रयत्न लालसा जिसकी प्रति हो जाने पर भी तृप्ति या संतोष न हो। पूरी हो जाने पर भी बनी रहनेवाली कामना या लालसा (ग्रीह)। ३. जैन धर्म में वह काम जिसके फलस्वरूप मनुष्य किसी प्रकार का त्याग नहीं कर सकता। ४. कजूसी। ५. हृष्यता।

श्रीमद्भारती—पुं० [सं०] √ लुग्म + ल्युट्—अन। १. लालच। लोभ। २. शोभा। स्वयं।

श्रीमद्भारती—अ० [हि०] लोभ] लुब्ध होना। मृग्य होना। लुभाना। उदा०—भौर चारों ओर रहे मंत्र लोभ के चार के।—भारतेष्टु।

स० लुब्ध या मृग्य करना। लुभाना।

श्रीमद्भारती—वि० [सं०] √ लुप् + अनीयर्] जिसके प्रति लोभ हो सके। २. लुभानेवाला। मनोहर। आकर्षक।

श्रीमद्भारती—अ०, स०—लुभाना।

*वि०—लुभानवी।

श्रीमद्भारती—वि०—लुभानवा।

श्रीमद्भारती—पुं० कं० [सं०] √ लुप् + गिष् + क्त] लुभाया हुआ। जो लुब्ध किया गया हो।

श्रीमदी (भिष्) —वि० [सं०] कोष + इनि] १. जिसे किसी बात का लोभ

हो। २. जो प्रायः अधिक लोभ करता हो। लालची। ३. लुमाया हुआ। लुब्ध। (बीड़ी)

लोभ्य—वि० [सं० √ लुभ् + ध्यत्] = लोभनीय।

लोभ—सु० [सं० √ लु (लुभन) + भिन्] १. शरीर पर के छोटे-छोटे बाल। रोष। रोम। २. केश। बाल।

पु० [सं० लोभस] लोभड़ी।

लोभ-कर्म—पु० [सं० ब० सं०] शयक। खरगोधा।

लोभ-कृष—पु० = रोमकृष।

लोभजन—पु० [सं० लोभन √ ह्न् (मानना) क] सिर का गज नामक रोम।

वि० = लोभ नाशक।

लोभही—स्त्री० [सं० लोभटक] १. कुत्ते की तरह का एक जगली हिंसक पशु, जिसकी चालाकी बहुत प्रसिद्ध है। २. लाक्षणिक अर्थ में, चालाक स्त्री।

लोभ-लासक—वि० [सं० ब० सं०] (औषध या पदार्थ) जिसे लगाने से शरीर के रोएँ या बाल झड़ जाते हो।

लोभनाशक—पु० [सं० ब० सं०] बग देव के एक राजा जो दशरथ के मित्र थे। रोमपाश।

लोभनाशपुर—पु० [सं० ब० सं०] चया नगरी (आधुनिक भागलपुर) का एक पुराना नाम।

लोभ-विशोभ—पु० [सं०] साहित्य में एक प्रकार का शब्दालकार जिसमें किसी पद या वाक्य की रचना इस प्रकार की जाती है कि सीधी तरह से पढ़ने से तो उसका अर्थ निकलता ही है, उल्टी तरह से अर्थात् धन्य से आरम्भ करके पढ़ने पर भी उसका कुछ मित्र, अर्थ निकलता है। जैसे—'बीर सबे निमि काल फले' को उल्टी तरह से पढ़ें 'सो रूप होगा।—लै फल कामिनि बेस रची।

लोभस—पु० [सं० लोभन् + श] १. एक ऋषि जिन्हें पुराणों में अमर माना गया है। महाभारत के अनुसार वे युधिष्ठिर के सात तीर्थयात्रा की गये थे और उन्हें सब तीर्थों का भूतान्त इन्होंने बतलाया था। २. भेड़ा। मेघ। वि० बड़े बड़े रोमों या रोमोंवाला।

लोभस-माधार—पु० [सं० कर्म सं०] गंध-विलाय।

लोभसा—स्त्री० [सं०] १. बैदिक काल की एक स्त्री जो कई मंत्रों की रचयिता मानी जाती है। २. काक-जथा। ३. बच। ४. अति-बला। ५. केवाच।

लोभस—पु० = लोभ्य।

लोभहर्षक—वि० = रोमहर्षक।

लोभ-हृष्य—पु० [सं० ब० सं०] १. पुराणों के अनुसार व्यास के एक शिष्य का नाम जो उग्रवना के पुत्र थे। इन्हीं को सूत भी कहते हैं। २. रोमार्थ।

वि० = रोम-हर्षक।

लोभाच—पु० = रोमार्थ।

लोभाबली—स्त्री० [सं० लोभन्-आवली, ब० सं०] = छाती से नाभि तक उगे हुए बालों की पंक्ति।

लोभास—पु० [सं० लोभन् √ अष् (भोजन) + अष्] [स्त्री० लोभायिका] गीदड़। मृगाल।

लोभ—पु० [सं० लोभ] लोभ।

पु० = लोभन (लोभन)।

[स्त्री०] = लो (लपट)।

[अश्व] = लो (लक)।

लोभ्य—पु० [?] लासा, जिससे विधिया फैलाई जाती है।

लोभ—वि० [सं० लोभ] १. लोल। बचल। २. भाविसारी। इच्छुक।

पु० [सं० लोल] १. कान का कुंडल। २. लटकन।

पु० = टोर। (शम्भु)।

लोभना—अ० [सं० लोभ] १. बचल होना। २. इष्ट-उत्तर झुलना, लहराना या हिलाना। ३. पाने के लिए उत्सुक होना। ललकन। ४. पाने के लिए तेजी से आगे बढ़ना। लपकना। ५. कियटना। ६. झुकना। ७. लोटना।

सं० १. चलायमान या बचल करना। २. हिलाना-झुलाना। ३. नत करना। झुकाना। ४. किसी को नज़र अथवा विनोद करना अथवा बनाना।

सं० [?] निरर्थक या स्वच्छ करना। उदा०—हमरा जीवन निरनु कोरे।—कबीर।

लोभिक—पु० [?] १. उत्तर प्रदेश में प्रचलित एक गीत-कथा का नामक जो आभोर जाति का था, और जिसका प्रेम किसी दूसरे आभोर की चन्दा नामक पत्नी से हो गया था। २. मेमी।

लोरी—स्त्री० [सं० लाल] वे गीत जो स्त्रियाँ छोटे बच्चों को सुलाने के लिए गाती हैं। लम्बी।

पु० [?] एक प्रकार का तोता।

लोल—वि० [सं०/लोड (विक्षिप्त होना) + अष्, ष—ल] १. हिलता हुआ। लोपायमान। २. बचल। ३. परिवर्तनशील। ४. क्षणिक। ५. उत्सुक।

पु० १. समूह में उठनेवाली बहुत बड़ी तथा ऊँची लहर। २. लोपेन्द्रिय। स्त्री० [?] लोच।

लोलक—पु० [सं० लोल से] १. नप, बाली आदि में पिरोया जाने वाला लटकन। लटकन। २. कान की ली। लोलकी। ३. घंटी या घंटे के बीच लगा हुआ वह लटकन जो हिलाने से इष्ट-उत्तर टकराकर शब्द उत्पन्न करता है।

लोल-कर्म—वि० [सं० ब० सं०] जो हर किसी की बात सुनकर सहज में ही उस पर विचारस कर केता हो। कान का कर्ण।

लोलकी—स्त्री० [हिं० लोलकी] काम के बीच का वह लोल नाम जिसमें छेद करके जुबल, बाली आदि पहनते हैं।

लोल-विह्वल—वि० [सं० ब० सं०] लालची। लोभी।

पु० लोप।

लोल-विनेस—पु० [सं० कर्म सं०] लोलाक।

लोल्ना—अ० [सं० लोल] इष्ट-उत्तर लहराना या हिलाना-झुलाना।

लोला—स्त्री० [सं० लोल+दाप्] १. जिह्वा। २. लम्बी। ३. मधु नामक द्रव्य की सला। ४. एक योगिनी। ५. एक प्रकार का वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में भगण, सगण, मगण, भगण और अंत में बी गुरु होते हैं। ६. एक प्रकार का छोटा बंधा जिसके दोनों तिरों पर कई लपे रहते हैं।

श्रीमद्—पुं० [सं० लोह-वर्क, कर्म० सं०] बाह्य आविर्त्ता में से एक आविर्त्त।

श्रीमत्—पुं० कृ० [सं०/सुदृ० (विमर्षन)+वय्=लोह+वत्] १. हिला या हिलान्या हुआ। २. सुव्यं।

श्रीमित्री—स्त्री० [सं० लोह+मित्री+पु] चंचल या चपल स्त्री।

श्रीमत्—पि० [सं०/सुदृ०+यद्, कृष्, द्विधाधि+अवत्] [भाष० लोहपता] १. शोभी। कालपी। २. बटोर। ३. परम उत्कृष्ट। जैसे—युद्ध-लोहुर।

श्रीमत्पता—स्त्री० [सं० लोहुर+तल्ल+टाप्] लोहुर होने की अवस्था या भाव।

श्रीमत्पत्न्य—पुं० [सं० लोहुर+पत्न्य]=लोहुरपता।

श्रीमा—स्त्री०=श्रीमद्गी।

श्री० [सं० लोपाक] श्रीमद्गी।

श्री०=लवा (पत्नी)।

श्रीमान—पुं० [सं०] बाल।

श्रीमत्—पुं० [सं०/लोप्ट (ठेर करना)+वय्] १. पत्थर। २. मिट्टी आदि का बँटला। ३. पिच का काम बेनेवाली कोई वस्तु। ४. लोहे में लगनेवाला अंग। मोरचा।

श्रीमत्पत्न्य—पुं० [सं० लोप्ट/वृत्+क] श्रोता में मिट्टी के बँटके लोड़ने का पटेला। पाटा।

श्रीमत्—पुं० [सं० उपमित सं०] दे० 'कच्चा लोहा'।

श्रीमद्वा—पुं० [सं० लोह-वाङ्] [स्त्री० श्रीमद्गी] लोहे का एक प्रकार का बड़ा तल्ला।

श्रीह—पुं० [सं०/वृत् (खेदन)+हृ (करण)] १. लोहा मानक धातु। २. रत्न। लहू। ३. लाल बकरा। ४. मछली फँसाने का काँटा। ५. हथियार। ६. अंगार।

श्री० त्वि के रंग का, लाल। २. लोहे का बना हुआ।

श्रीह्वार—पुं० [सं० लोह्/वृत् (करना)+अण, उप० सं०] लोहार।

श्रीह-कृष्—पुं० [सं० व० तं०] लोह चूरा। (दे०)

श्रीह-भूय—पुं० [सं० लोह+भूय] १. लोहे की मँग जो गलाने पर निकलती है। लोह किट्ट। २. लोहे की काठने, रेतने आदि पर निकलनेवाले उनके छोटे छोटे कण।

श्रीह-आल—पुं० [सं० मध्य० सं०] १. लोहे की बनी हुई वाली या जाल। २. मोड़ानों के पहनने का शिल्प। ३. आच-कल बीच में लड़ा किया हुआ ऐसा आचरण या व्यवस्था जिसके कारण अन्धर की स्थिति आदि का बाहर बालों की पता न चल सके। (आचरण कटन)

श्रीहका—पुं०=श्रीहा।

श्री०=श्रीहँडा।

श्रीहकी—स्त्री०=श्रीहकी (स्त्रीह्वार)।

श्रीहवापी (विष्णु)—पुं० [सं० लोह्/वृत् (गति)+विष्णु+विदि] १. सुरदास। २. अम्बवेत।

श्रीह-नाल—पुं० [सं० व० सं०] नाराच (अलन)।

श्रीह-पत्न्य—पुं० [सं० मध्य० सं०] लोहे की जंजीर या शिल्पक।

श्रीह बँटारी—पुं० दे० 'श्रीमित्री'।

श्रीहवान—पुं०=लोहवान।

पुं० [हि० लोहा] युद्ध।

श्रीह-अंगार—पुं० [हि० लोहा+अंगार] १. जहाज का अंगार। २. बहुत धारो वस्तु।

श्रीह-अणु—पुं० [सं० व० तं०] १. लोहे का काँटा। २. एक नरक।

श्रीहल-वि० [सं० लोह से] (प्रत्य) जिसमें लोहे का भी कुछ अंग या भेक हो। (केलत)

श्रीह्वार—पुं० [सं० व० तं०] १. पक्का लोहा। फीकाट। २. फीकाट की जंजीर।

श्रीहमीनी—स्त्री० [हि० लोहा+अंग+ई] ऐसी लाठी जिसके ऊपर या निचले अथवा दोनों सिटों पर लोहा लगा हो। (हस्तका प्रयोग प्रायः मार-पीट के लिए होता है)।

श्रीहा—पुं० [सं० लोह] १. प्रायः काले रंग की एक प्रसिद्ध धातु जिससे अनेक प्रकार के अस्त्र, उपकरण बरतन, वंश आदि बनाये जाते हैं। (आचरण)

पत्न्य—लोहे की स्थाही, लोहे के बने। (दे० स्वतंत्र पत्न्य)

२. उन्नत धातु से बने हुए अन्न जो युद्ध में सशस्त्रों को काटने-मारने के काम आते हैं। जैसे—काटार, तलवार, भाला, आदि।

श्रीहा—लोहा गहना=किसी से लड़ने के लिए हथियार उठाना। लोहा बबना=ताशबंदों, मालों आदि से युद्ध या लड़ाई होना। मार-काट होना। लोहा बरतना=युद्ध-अंग में अस्त्रों आदि का बहुत अधिकता से उपयोग होना। धनासाधन युद्ध होना। (किसी का) लोहा मगना=

किसी काम या बात में किसी की योग्यता, शक्ति आदि की अंधेरा स्वीकृत करते हुए उसके सामने मुकना या बबना, और उसे अपने से अधिक योग्य या शक्तिशाली समझना। (किसी से) लोहा मैना=

(क) किसी से बटकर मार-पीट युद्ध या लड़ाई करना। (ख) किसी के सामने आकर उसके बल, योग्यता आदि का मुकाबला करना। टक्कर सेना। विजना। लोहा लहना=लोहा केना। (राज०)

३. लोहे का बना हुआ कोई उपकरण। लोहे की नीच या सामान। जैसे—लोहे का रोजवार लोहे की हुकान। ४. लाल रंग का रँगा।

वि० [स्त्री० लोही] १. लाल। २. बहुत अधिक कठोर या कड़ा।

श्रीहाना—अ० [हि० लोहा+भाना (प्रय०)] किसी चीज का अधिक समय तक लोहे के बरतन में रखे रहने के कारण लोहे के गुण, रंग, स्वाद आदि से युक्त होना।

पुं० वैश्वी की एक जाति।

श्रीह्वार—पुं० [सं० लोहकार] [स्त्री० लोहारिन या लोहारिन] एक जाति जो लोहे की चीजें बनाने का काम करती है।

श्रीह्वारजाना—पुं० [हि० लोहार+जान०] वह स्वाम जहाँ बैठकर लोहार लोग लोहे की चीजें बनाते हैं।

श्रीह्वारी—स्त्री० [हि० लोहार+ई (प्रय०)] लोहार अथवा लोहे की चीजें बनाने का काम या पेशा।

श्रीहा सारंग—पुं० [हि०] लगाने की जाति का एक प्रकार का पत्नी।

श्रीहित—पि० [सं०/वृत्, (उपना)+इत्तण, २-लक्षम्] १. लाल रंग का। लाल। २. त्वि का बना हुआ।

पुं० १. लाल रंग। २. लाल चमन। ३. मंगल ग्रह। ४. छपि। ५.

एक तरह का हिरण। ६ बह्मपुत्र नद। ७. एकक-संबंधी एक रोग।
 ८. गौतम बुद्ध का एक नाम।
लौहिक—यु० [सं० लोहित+कन्] १. पद्मराग या लाल की तरह का एक प्रकार का षट्पिंड रत्न। २. फूल नामक धातु। ३. आधुनिक रोहितक नगर का पुराना नाम। ४. दे० 'लोहित'।
लौहित-बंधन—यु० [सं० उचित सं०] केहर।
लौहित-मुक्तिका—स्त्री० [सं० कर्म० सं०] गेक।
लौहित सागर—यु० [सं०] अफ्रीका और अरब के बीच का वह समुद्र जो पहले भू-मध्य सागर से पृथक् था, पर अब बीच से स्वेज की नहर बन जाने से उक्त सागर के साथ संबद्ध हो गया। (रेड सी)
लौहित्या—यु० [सं० लोहित-अग, ब० सं०] १. मगल ग्रह। २. कामिल नृप।
लौहित्यास—यु० [सं० लोहित-अति, ब० सं०+अच्] १. एक तरह का लोप। २. कोयल। ३. विष्णु। ४. जाँस। कोश। ५. बूटब। निजब।
लौहित्यासक—यु० [सं०] एक तरह का लोप।
लौहित्यास्य—यु० [सं० लोहित-अव्य, ब० सं०] १. अग्नि। २. सिव।
लौहित्यास (मा)—स्त्री० [सं० लोहित+इमनिच्] रग के बिचार से लोहित होने की अवस्था या भाव। लालिमा। लाली।
लौहितोव—यु० [सं० लोहित-उदक, ब० सं०, उदादिच्] एक नरक। (पुरा०)
लौहिय—यु० [सं०] १. बह्मपुत्र नद। २. पुराणानुसार एक समुद्र जो कुछ द्वीप के पास है। ३. एक प्राचीन जनपद या बस्ती।
लौहिनी—स्त्री० [सं० लोहित+ङीप्, न—आदेश] लाल बर्णवाली स्त्री।
लौहिया—वि० [हिं० लोहा+इया (प्रत्य०)] १. लोहे का बना हुआ। २. लाल रंग का। जैसे—लोहिया घोडा।
 पुं० १. लोहे की चीन्ही का व्यापार करनेवाला व्यक्ति। लोहे का राजगारी। २. राजस्थानी वैष्णवी की एक जाति। ४. लाल रंग का बेल।
लोही—वि० [सं० लोहिन्] [स्त्री० लोहिणी] लाल रंग का। सुहं।
 १ स्त्री० [सं० लोह] प्रयास के समय की लाली।
मूहा—लोही कर्मना—प्रयास के समय सूर्य की किरणों की लाली दिखाई देना। पौ फटना।
 १ स्त्री० १. —लोई (पुलकी) २. —लोई (ऊनी बाहर)।
लोह—यु०—लृट् (रक्त)।
लोहे की स्थाहो—स्त्री० [हिं०] एक प्रकार का काला रंग जो सीरे के लोह-पुन का सघनी उदाकर बनाई जाती और कपड़ों की छपाई, रंगाई आदि में काम आती है।
लोहे के बने—यु० [हिं०] बहुत ही कठिन, पुष्कर तथा अम-साध्य काम।
मूहा—लोहे के बने बहाना—उतना ही दुर्लभ तथा लजमग असमम काम करता जितना लोहे के बने बहाना होता है।
लोहोत्सव—यु० [सं० लोह-उत्सव, सं० सं०] सोना।
लोह—यु० [सं०] पीतल।
लौ—अव्य० [हिं० लोप का स्थानिक रूप] १. टक। पर्यंत। २. तुल्य। बराबर। समास। ३. किसी की तरह या भाँति। (ब० व०)
लौकिक—यु० [?] अविवाहित नव-युवक। कुंआरा अर्थात्

पव—लौकिक और—हनुमान।
लौकना—उ०—लौकना (दिखाई पड़ना)।
लौग—यु० [सं० लर्गं] १. एक प्रकार का वृक्ष जो दक्षिणी भारत, आंध्र, मलया आदि में अधिकता से होता है। २. उक्त वृक्ष की कली को खिलने से पहले ही तोड़कर सुखा की जाती है और मसालों तथा दवाओं में सुगंध तथा मृग के लिए मिलाकर काम में लाई जाती है। ३. उक्त कली के आकार-प्रकार का आम्रपूषण जो नाक तथा कान में पहुँचा जाता है।
लौग-चिन्ना—यु० [हिं० लौग+चिन्ना=चिह्निया] एक प्रकार का कच्चा जो बेसन मिलाकर बनाया जाता है। २. जाग पर सेंककर फुलाई हुई रोटी। फूलका।
लौग-मुष्क—यु० [हिं० लौग+मुष्क] एक प्रकार का पीथा और उसका फूल।
लौगरा—यु० [हिं० लौग] एक तरह का साग जिसमें लौग की तरह की कलियाँ लगती हैं।
लौग-लता—स्त्री० [सं० लवग-लता] समोसे के आकार की मेदे की एक तरह की मिठाई जिसमें खोआ नरा चूहा तथा ऊपर से लौग भी खोसा जगा है।
लौगिया—वि० [हिं० लौग] १. लौग की तरह का छोटा पतला और लंबा। जैसे—लौगिया फूल, लौगिया मिर्च। २. लौग (कली) के रंग का। पुं० कुछ मटमैलपन लिये एक प्रकार का काला रंग। (मल्लोव)
लौगिया मिर्च—स्त्री० [हिं० लौग+मिर्च] एक प्रकार की बहुत कड़वी मिर्च जिसका पीथा बहुत बड़ा और फल लौग के आकार के छोटे छोटे होते हैं। मिर्चपी।
लौकी—स्त्री० [सं० सूत+काटा हुआ] आम की फाँक जो अचार पटनी आदि के काम आती है।
 १ स्त्री०—मोची।
लौका—यु० [हिं० सूझाटा] ऐसा हृष्ट-मुष्ट नवयुवक जिसके कुछ भी बुद्धि या समझ न हो।
लौका—यु० [?] [स्त्री० लौकी, लौगिया] १. छीकरा। बालक। लड़का २. अर्थात् और नासमझ अथवा छिछोरा नव-युवक। ३. ऐसा लड़का जिसके साथ लोण अस्वाभाविक मेषुन करते हो।
लौकापन—यु० [हिं० लौका+पन (प्रत्य०)] १. लौका होने की अवस्था या भाव। २. ऐसी नासमझी जिसमें छिछोरापन या लड़कपन भी मिला हो।
लौकी—स्त्री० [हिं० लौका+ई (प्रत्य०)] १. वह बालिका या स्त्री जो दूसरों के यहाँ छोटे छोटे काम करने के लिए नौकर हो। दासी।
लौकेबाज—वि० [हिं० लौका+जा० बाज] [भाव लौकेबाजी] १ (पुष्क) जो बालकों के साथ प्रकृति विरुद्ध प्रयोग करता हो। २ (स्त्री) जो नव-युवकों से प्रेम रखती हो। (भाषाकर)
लौकेबाजी—स्त्री० [हिं० लौका+जा० बाजी] १. लौकेबाज होने की अवस्था या भाव। २. लौकेबाज का अप्राकृतिक कार्य।
लौकेबेरी—स्त्री० [हिं० लौका+बेरी] ऐसी दुष्करिया स्त्री जिसके पास प्राय नवयुवक आते-जाते रहते हो।
लौव—यु० [?] अविद्यास। मलमास।

जीवरा— μ ० [हि० लव+वाङ्] बहुपानी को जीवम ऋतु में वर्षा वाऱ्म्य होने के पूर्व बरसता है। लवण। दीपरा।

जीव— μ ०=जीवा।

जीवी—स्त्री० [देस०] बहु करछी जिससे बेंबसार के बीरे का पात्र चकना जाता है। (शुक्ल०)

जीव— μ ० १. =लवन। २. =जीव। ३. =लोग (नमक)।

जी—स्त्री० [सं० लयी] १. आग की लपट। ज्वाला। २. दीपों की टैम।

दीप-जिवा।

स्त्री० दे० 'लवन'।

कि० प्र०=लवना।

जीवा— μ ० [सं० लावुक] कद्दू। बीजा।

जीवना—अ० [सं० लोकाज] १. चमकना। उदा०—होय अंधियार बीपु खग को कै अबहि पीरपहि हाँपु।—जायसी। २. अंधों में चकनाथि होना। ३. दिखाई पड़ना। ४. लपलपाना (जीम का)।

जीकातिक— μ ० [सं०] पीचवे स्वर्ग में बास करनेवाला जीव। (जीम)

जीका— μ ० [सं० लावुक] [स्त्री० लोकी] कद्दू।

जीकातिक— μ ० [सं० लोकाज] १. चमक। वीपु। २. काति। खोया।

जीकावतिस— μ ० [सं० लोकावत+उङ्=इक] १. लोकावत (सर्पण) का अनुपायी। २. नास्तिक।

जीकिक—वि० [सं० लोक+उङ्=इक] १. लोक-संबंधी। २. इत लोक अर्थात् पृथ्वी से सम्बन्ध रखनेवाला। ऐहिक। लोकारिक। ३. लोक-व्यवहार से संबंध रखने वाला। व्यावहारिक।

μ ० सात मानकों के छंदों की संज्ञा।

जीकिक-विवाह— μ ० [सं० कर्म० सं०] धर्म, सम्प्रदाय आदि का विचार छोड़कर केवल कानून या विधि द्वारा निश्चित नियमों के अनुसार होने-वाला विवाह। (तिविक मंत्रज)

जीकी—स्त्री० [सं० लावुक] १. कद्दू। बीजा। २. चमके में लगाई जाने वाली बहु नली जिससे सारा घुमाई जाती है।

जीकच—वि० [सं० लोक+अव्यङ्] १. लोक-संबंधी। लौकिक। २. सब जगह समान रूप से पाया जानेवाला या होनेवाला। सामान्य।

जीकार—स्त्री० [हि० बीछार] १. कटाक्ष, व्यंग आदि की हलकी रंगत या पुटा जैसे—इसमे हाथ्य रस को अच्छी लोकार है। २. किसी पर किया जानेवाला कटाक्ष या व्यंग्य। जैसे—उनकी बातों में कई आद-मियों पर लोकार था।

जीख— μ ० [अ० जीख] १. बाधा। २. पिते हुए बाधा का एक प्रकार की बरकी।

जी-बीरा— μ ० [हि० ली+बीराना] आग की ली या लपट की सहायता से बातुओं के टुकड़ें जोड़नेवाला कारीगर।

जीडे—स्त्री० [हि० लोटना] १. लोटने की क्रिया या भाव। २. लोडे अर्थात् उलटने किये अथवा घुमाए हुए होने की अवस्था या भाव। घुमाव।

जीटना—अ० [हि० उलटना] १. एक स्थान से किसी विषय में जाकर फिर उठी स्थान पर वापस आना। जैसे—बाहर था निसेसे से घर लोटना। २. पीछे की ओर घुमना। मुड़ना। ३. किसी की काम चलाने के लिए दी हुई चीज का वापस मिलना।

सं०=उलटना (पकटना)।

लोट-पीट—स्त्री० [हि० लोट+ (अणु०) पीट] १. कपड़े आदि की ऐसी छायाई जिसमे दोनों ओर एक से बेल-बूटे दिखाई पड़ें। बहु छायाई जिसमे उलटा चीना न हो। दो-स्त्री छायाई। २. उलटने-पलटने की क्रिया या भाव। [स्त्री०]=लोट-पीट।

लोट-फेर— μ ० [हि० लोट+फेर] १. इधर का उधर हो जाना। २. बहुत बड़ा परिवर्तन। उलट-फेर।

लोटाना—स्त्री० [हि० लोटना] लोटने की अवस्था, क्रिया या भाव।

लोटाना—स० [हि० लोटना का सं०] १. जो कही से आया हो, उसे लोटने अर्थात् वही जामे में प्रवृत्त करना। जो अहाँ से आया हो, उसे वही वापस भेजना। जैसे—किसी के नौकर को जबाब देकर लोटाना। २. किसी से ली हुई चीज उसे वापस करना या देना। जैसे—दुकानदार के यहाँ से आई हुई चीज लोटाना।

संयो० कि०=देना।

१ सं०=उलटना।

लोटानी—स्त्री० [हि० लोटना] लोटने की क्रिया या भाव।

पर-लोटानी मे=लोटते समय। लोटनी बार।

लोट्टा— μ ० [सं० लोल या हि० लट्ट] पुष्प की मूर्चन्द्रिया। लिंग।

लौह, लौबर— μ ० [सं० लव=दानी] [स्त्री० लौहरी, लौदरी] अरहर आदि की नरम डाली जिससे छानी छाने का काम लेते हैं। (दुआय ब अतबेद)

लौह— μ ० [सं० लवण] नमक।

मुहा०—(किसी का) लौह मानना—जिसने पालन-पोषण किया हो, उसके प्रति इतक या निष्ठा रहना। उदा०—बड़े भए तब लौह मानि यह जहाँ तहाँ चलत भगाई।—सूर। (उक्त पद मे यह मुहा० व्यंग्यात्मक रूप से आया है।)

लौहहार— μ ० [हि० लौह+हार (प्रत्य०)] [स्त्री० लौहहारिन] श्वेत काटनेवाला। लवनी या लौनी करनेवाला।

लौना—स० [सं० लवन] श्वेत की फसल काटना। लवना।

स्त्री०=लवनी।

μ ० [?] जलाने की लकड़ी। ईंधन।

μ ० [सं० लूम या रोम] बहु रस्सी जिसमे किसी पशु को भागने से रोकने के लिए उसका एक अंगला और एक पिछला पैर बांधा जाता है।

लौनी—स्त्री० [हि० लौना] १ फसल की कटनी। कटाई। लवनी। २ फसल के कटे हुए इठको का मुट्ठा।

[स्त्री०] [सं० नवगीत] मक्खन।

लौभना— μ ०=लौना।

लौभनी—स्त्री० ? =लौना। २.=लौनी।

लौरी—स्त्री० [?] बधिया।

लौख— μ ० [सं० लोल+प्यङ्] १. लाल होने की अवस्था या भाव। लोलता। चंचलता। २. लालच। लोभ।

लौख— μ ० [फा०] १ किसी काम या बात में लिप्त होना। लौनता। २. मिलावट। ३ धन्वा। ४ लगाव। सम्पर्क।

लौह— μ ० [सं० लोह+अणु] १. लोहा। २. शस्त्रास्त्र।

वि० लोहे का। लोह-संबंधी।

स्त्री० [अ०] १ तस्ती। २ पुस्तक का पृष्ठ।

लौहकार— μ ० [सं० लोह/क+अणु] लोहार।

लौह्य—वि० [स० लौह/अप् (उत्पत्ति) + ष] लोहे से निकला या बना हुआ।

लौह-यत्—पु० [स० मध्य स०] १ लोहे का पत्थर। २ ऐसी व्यवस्था जिसकी आद में होनेवाली बातें किसी प्रकार दूसरों पर प्रकट न हो सकती हों। (आयरन कर्टेन)

लौह-युग्—पु० [स० मध्य० स०] संस्कृत के इतिहास में यह युग जब उपकरण तथा अस्त्र-शस्त्र लोहे के ही बनने थे। अन्य धातुओं का आविष्कार नहीं हुआ था। (आयरन एज)

लौह-सार—पु० [स० व० त०] रासायनिक प्रक्रिया से बनाया हुआ एक प्रकार का लवण जो लोहे से बनाया जाता है और औद्योगिकी में काम-आता है।

लौहाचार्य—पु० [स० लौह-आचार्य व० त०] धातुओं के राज्य जानने वाला। यह जो धातु-विद्या का अन्वेषण करता है।

लौहासव—पु० [स० लौह-आसव मध्य० स०] लोहे के धातु से बनाया जानेवाला आसव।

लौहिक—वि० [स० लौह + क्त-इत्] १ लोहे का बना हुआ। लोहे

का। २ लोहे से संबंध रखनेवाला। ३. दे० 'लोह्य'।

लौहित्य—पु० [स० लोहित + अणु] धातु का विष्कम्भ।

लौहितासव—पु० [स० लोहितासव + अणु] १. जर्मि। २. धातु।

लौहित्य—पु० [स० लोहित + अणु] १. एक प्रकार का धातु जिसके धातुक प्रदेश लाल रंग के होते हैं। २. बह्मपुत्र नदी। ३. बरमा की सीमा पर स्थित प्रदेश का प्राचीन नाम। ५. लाल समुद्र या लाल सागर का पुराना नाम।

स्वाना—स० = लाना। (परिचय)

स्वारी—पु० [दि०] मेधिया।

स्त्री—स्त्री० = ली।

स्वारि—स्त्री० = दूआर (रु)।

स्वासा—पु० = लासा।

स्त्रीक—स्त्री० १. = लीक। २. = लीक

स्त्रीक—अ०, स० = लसना (विपकाता)।

स्त्रीकित—वि० = लेहित (कमनेवाला)।

